हलायुधकोशः



उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ

हिन्दी समिति प्रभाग ग्रन्थमाला—१५०

हलायुधकोशः

(अभिधानरत्नमाला)

सम्पादकः

जयशङ्करजोशी



कीरति भनिति भूति भलि सोई।
सुरसरि सम सब कहँ हित होई॥

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

(हिन्दी समिति प्रभाग)

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन

महात्मा गाँधी मार्ग, लखनऊ—२२६००१

प्रकाशक :
विनोद चन्द्र पाण्डेय
निदेशक,
उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान
राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन,
महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ–२२६००१

प्रथम संस्करण : १९५७
द्वितीय संस्करण : १९६७
तृतीय संस्करण : १९९३

प्रतियाँ : २१००

मूल्य : २२०.०० रुपये

मुद्रक :
शिवम् प्रिन्टर्स,
सी. २७/२७३, इण्डियन प्रेस कालोनी, मलदहिया
वाराणसी—२२१००२

प्रकाशकीय

शब्दों के ज्ञान के लिए किसी भी भाषा में कोशों का उल्लेखनीय योगदान होता है। वस्तुतः भाषा की समृद्धि का ज्ञान कोशों के माध्यम से किया जा सकता है। विद्यार्थियों, शोधार्थियों और जिज्ञासुओं के लिए भी शब्द कोशों की महत्ता निर्विवाद है।

भारत में अतीत काल से ही कोशों की उपादेयता और उपयोगिता का अनुभव किया जा रहा है। फलस्वरूप संस्कृत भाषा के कोशकारों में अमर सिंह, हलायुध भट्ट आदि के नाम प्रसिद्ध हैं। इन्होंने शब्दों के विभिन्न पर्यायों को ललित शैली में श्लोकबद्ध कर कोशों की रचना की है। शब्दार्थ के लिए आज भी विद्वत्त समाज में कोश प्रामाणिक ग्रन्थ के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त करते हैं।

'हलायुध कोशः' का तृतीय संस्करण सुविज्ञ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हर्ष की अनुभूति स्वाभाविक है। विश्वास है कि पूर्व संस्करणों की भाँति तृतीय संस्करण का भी स्वागत होगा और इससे भाषा और साहित्य के अध्येता लाभान्वित होंगे।

विनोद चन्द्र पाण्डेय
निदेशक

दो शब्द

भाषा का आधार शब्द है और शब्दों की व्युत्पत्ति और अर्थ के संज्ञान का माध्यम है शब्द कोश। भाषा अपनी हो या कोई अन्य भाषा, जिसे हम सीखना चाहते हों, या जिसका निरन्तर प्रयोग करना चाहते हों, उसके शब्द कोश की व्यावहारिक आवश्यकता हमें सदा रहती है।

हमारे देश में प्राचीन काल से ही संस्कृत-विद्वानों ने भाषा-परिमार्जन के लिए जहाँ व्याकरण को सुगठित किया, वहीं शब्दकोशों की भी रचना की गई। क्योंकि उस समय 'स्मृति' पर विशेष बल था, अतः शब्दकोशों की रचना भी विभिन्न श्लोकों में की गई, जिससे वे कंठस्थ हो सकें। संस्कृत भाषा के "अमर कोश" और 'अभिधान रत्नमाला' ऐसे ही शब्दकोश हैं। अमरकोश की रचना अमर सिंह ने की तथा "अभिधान रत्नमाला" की रचना हलायुध भट्ट ने की। परन्तु हलायुध भट्ट का कोश "अभिधान रत्नमाला" के स्थान पर उसके रचयिता हलायुध के नाम पर "हलायुधकोशः" के रूप में ही विख्यात हुआ।

भारत की प्रायः समस्त भाषाओं की जननी संस्कृत है। हिन्दी तो उसकी उत्तराधिकारिणी है ही। अतः इन सभी भाषाओं के शब्दों को ठीक से समझने के लिए संस्कृत के शब्दकोश अपरिहार्य ही हैं।

"हलायुध कोश" को सुसंपादित रूप में परिश्रमपूर्वक प्रस्तुत करने का कार्य संस्कृत के विद्वान् श्री जयशंकर जोशी ने किया और हिन्दी समिति ने इसका प्रकाशन सन् १९५७ में किया। इसका द्वितीय संस्करण सन् १९६७ में प्रकाशित हुआ। और अब उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, जिसमें हिन्दी समिति का अन्तर्भाव हो चुका है, इसका तृतीय संस्करण प्रकाशित कर हर्ष का अनुभव कर रहा है।

"हलायुधकोश" की विशेषता यह है कि इसमें ग्रन्थ को मूल रूप में प्रकाशित किया गया है जिसमें संपादन के माध्यम से हाशिये में अंग्रेजी में टिप्पणी देकर वर्ण्य शब्द का अर्थ और उसके पर्यायों की संख्या दे दी गई है। क्रमिक संख्या मूल पाठ में शब्दों के ऊपर भी अंकित की गई है, जिससे अंग्रेजी जानने वाले भी इसका लाभ उठा सकें। मूल ग्रन्थ के पश्चात् हलायुध कोश के शब्दों को

अकारादि क्रम से निवृत्ति सहित प्रस्तुत किया गया है। जहाँ-तहाँ उसके लोक-भाषाओं के पर्याय भी दे दिये गये हैं। इससे ग्रन्थ परम उपयोगी बन गया है और समस्त देश के विद्वान् इसका लाभ उठा सकते हैं, उठा रहे हैं।

मनीषियों की सेवा में प्रस्तुत संस्करण का समर्पण करते हुए गौरव की अनुभूति होना स्वाभाविक है।

मार्ग शीर्ष शुक्ल द्वादशी–२०४७
६ दिसम्बर, १९९२

डा० शरण बिहारी गोस्वामी
कार्यकारी उपाध्यक्ष

भूमिका

प्रस्तुतोऽयं श्रीमतो भट्टहलायुधस्य "अभिधानरत्नमाला" नामा ग्रन्थः। प्रकाशिताप्रकाशित-समुपलब्धानामस्य संस्करणानां मयात्र समुचित उपयोगः कृतः। अकारादिक्रमेण मूलग्रन्थस्य समस्तानां शब्दानामनुक्रमणिकापि समुपस्थापिता च। अनेनैव प्रस्तुतस्स ग्रन्थभागः "हलायुधकोशस्य शब्दानुक्रमकोशः" इति नामधेयः।

विदितमेव यत् संस्कृतवाणी भारतभूमेर्न केवलं प्राचीनतमा भाषा अपि तु भारतीयसभ्यतायाः संस्कृतेश्च द्योतिकाप्यस्ति। ज्ञानविज्ञानयोर्विविधग्रन्थराशिभिः सुसम्पन्ना चास्ति भाषेयम्।

तत्र भाषायाः सम्पन्नता शब्देष्वेवाश्रिता। तत्समुन्चितवाक्यानि तु भावानां द्योतकमात्राणि सन्ति। अतः शब्दैर्विना वाक्यानामसम्भव आत्मलाभः। तेन चोपजीव्यानां शब्दानामुपयोगिता स्पष्टैव। साकल्येन तत्संग्रहात्मकशब्दकोशानां प्रचुरतैव भाषायाः सुसम्पन्नतां द्योतयति।

संस्कृतभाषायां सन्ति बहवः कोशग्रन्थाः। कोशस्तु संग्रहप्रतिबोधकः शब्दः। यथा स्वर्णादि-कोशेन विना मनुष्यो दरिद्रः कथ्यते तथैव शब्दकोशेन विना भाषापि दारिद्र्यमवाप्नोति। धनकोशेन विना न सम्पाद्यन्ते यथा सांसारिककार्याणि तथैव शब्दकोशेन विना भाषाया अपि भवति कठिनतरः प्रयोगो दुर्लभञ्च ज्ञानम्। प्राचीनकालेनैव कोशग्रन्थानामुपयोगितां विचार्य विद्वद्भिः भृशं प्रयतितमस्ति। सुविख्यातेषु कोशग्रन्थेषु विपश्चिद्भूषणस्य भट्टहलायुधस्य कोशोऽयं मल्लिनाथप्रभृतिभिष्टीकाकारैष्टीका-ग्रन्थेषु स्थाने स्थाने विशिष्टार्थबोधनार्थमुद्धृतः।

मम क्षुद्रप्रयासोऽयं श्रीमतो भट्टहलायुधस्य सुविख्यातग्रन्थसम्पादने। यद्यपि मूलग्रन्थस्य "अभिधानरत्नमाला" इति भट्टहलायुधेन नामकरणं कृतं तथापि मया ग्रन्थकारस्य नामानुसरणं कृत्वा तथा टीकाकारैर्ग्रन्थकारस्य नाम्नैवास्य ग्रन्थस्य श्लोका यथोचितेषु स्थानेषु उद्धृता इङ्गिताश्चेति विचार्य ग्रन्थोऽयं "हलायुधकोशः" इति नाम्ना प्रकाशितः।

प्रस्तुतोऽयं ग्रन्थो द्वयोर्भागयोर्विभक्तः। तत्र प्रथमभागात्मको "मूलग्रन्थः", तत्पृष्ठप्रान्तयोराङ्ग्ल-भाषायां शब्दार्थो लिखितः। पर्य्यायवाचिनां शब्दानां संख्यापि तत्रैव लिखिता। प्रत्येकस्तु पर्यायवाची शब्दोऽङ्कितश्च। यथा–'घोषवती[1], वीणा[2], विपञ्ची[3], परिवादिनी[4], वल्लकी[5], एते पञ्च शब्दा वीणापर्य्यायवाचिनः, तत्प्रान्तभागेआङ्ग्लभाषायां "flute 5" इति लिखितम्। शक्नुवन्ति ज्ञातुं सरल-तयानेनाङ्ग्लभाषापाठिनो जना अपि यद् वीणायाः पञ्च पर्यायवाचिनः शब्दाः। यत्र पाठभेदोऽस्ति स मया पादटिप्पणीरूपेण निर्दिष्टः। भागे च द्वितीये मूलग्रन्थस्याकारादिक्रमेण शब्दानुक्रमणिकास्ति। मया तत्र यथाशक्ति प्रत्येकः शब्दो व्याख्यातः, तथा प्राचीनार्वाचीनेभ्यो ग्रन्थेभ्यः समुचितप्रयोगा अप्युद्धृताः। मूलग्रन्थस्य श्लोकाङ्का अपि निर्दिष्टा येन पाठकाः सरलतया मूलग्रन्थेऽपेक्षितं शब्दं तस्य पर्यायवाचिशब्दानपि च ज्ञातुं शक्नुवन्ति।

प्रथमोऽयं मम प्रयासः। त्रुटयस्त्वत्र भविष्यन्त्येव। मयात्र कियत्साफल्यं प्राप्तं विद्वज्जना एवास्य निर्णयं कर्तुं समर्थाः। तथापि यदि ममानेन क्षुद्रप्रयासेन कश्चिदपि संस्कृतानुरागिणामुपकारोऽभविष्यत्तदाहमात्मानं पूर्णरूपेण पुरस्कृतममंस्ये।

स्वकर्त्तव्यच्युतो भविष्याम्यहं यदि कृतज्ञताभारं न स्वीकरोमि समस्तानां पण्डितानां संस्कृतप्रेमिणाञ्च, येषां कृतीनां मया समुचितोपयोगः कृतस्तथा येषां सुकार्यैर्मया देववाण्याः सेवार्थं प्रेरणा प्राप्ता।

सन्ति मम कोटिशो धन्यवादा माननीयमुख्यमन्त्रिश्रीसम्पूर्णानन्दमहोदयेभ्यः। श्रीमद्भिरेतैर्ग्रन्थस्य प्रकाशने ममोपरि निजवरदहस्तः कृतः। समानरूपेण धन्यवादार्हाः सन्ति पण्डितवर्यश्रीजनार्दन जोशी येषां कृपादृष्टिर्मया बाल्यतः प्राप्ता। ग्रन्थस्यास्य रचनाकाले न केवलं श्रीमद्भ्यः साहाय्यं परन्तु निर्देशनमपि मया प्राप्तम्। न विस्मरणीया महती सहायता या मया सर्वश्रीलक्ष्मणसीताराम खेर, भगवतीशरण सिंह, पण्डितवर्यभोलानाथ शर्मा, चन्द्रलाल साह, देवकीनन्दन जोशी प्रभृतिमहोदयेभ्यः प्राप्ता। सर्व एते महोदयाः सन्ति धन्यवादार्हाः। महामहोपाध्यायपण्डितवर्य नारायणशास्त्री खिस्तेमहोदयैर्ममोत्साहो वर्द्धतोऽतएव धन्यवादार्हास्ते।

सर्वश्री पण्डित लीलाधरशर्मा 'पर्वतीय' तथा ज्योतिषाचार्य पण्डित निशाकान्त पाठक महोदयैर्ग्रन्थस्यास्य मुद्रणप्रसङ्गे महानुपकारः कृतः, तदर्थं धन्यवादार्हास्ते महानुभावाः।

अन्ते चेमं ग्रन्थं विदुषां पुरतो निधाय प्रार्थये यदत्र ये केचन दोषा मुद्रणेऽन्यथा वा सञ्जातास्तान् सर्वान् मां सूचयित्वा कृतार्थीकरिष्यन्ति। ग्रन्थस्योपयोगिताविवर्धनाय विद्वज्जनानां सम्मतिं च सविनयमभ्यर्थये।

लखनऊ
श्रीकृष्णजन्माष्टमी, वि० सं० २०१४

विदुषामनुचरः
जयशङ्कर जोशी

हलायुधकोशः

हलायुधकोशः

(अभिधानरत्नमाला)

प्रथमं स्वर्गकाण्डम्

शब्दब्रह्म यदेकं यच्चैतन्यं च सर्वभूतानाम् ।
यत्परिणामस्त्रिभुवनमखिलमिदं जयति सा वाणी ॥ १ ॥

इयमभरदत्तवररुचिभागुरिवोपालितादिशास्त्रेभ्यः ।
अभिधानरत्नमाला कविकण्ठविभूषणार्थमुद्ध्रियते ॥ २ ॥

Heaven 11. स्वः[1] स्वर्गः[2] सुरसद्म[3] त्रिदशावासस्[4]त्रिविष्टपं[5] त्रिदिवम्[6] ।
द्यौ[7]र्गौ[8]रमर्त्यभुवनं[9] नाकः[10] स्यादूर्ध्वलोकश्च[11] ॥ ३ ॥

A god, a deity 21. आदित्या[1]स्त्रिदशाः[2] सुराः[3] सुमनसः[4] स्वर्गौकसो[5] देवता,[6]
गीर्वाणा[7] ऋभवो[8]ऽमराश्च[9] मरुतो[10] वृन्दारका[11] निर्जराः[12] ।
अस्वप्ना[13] विबुधास्[14]त्रिविष्टपसदो[15] लेखाः[16] सुपर्वाण[17] इ-,
त्याख्याता अमृताशना[18] अनिमिषा[19] देवास्[20]तथा दैवतम्[21] ॥ ४ ॥

A demon 8. असुरा[1] दानवा[2] दैत्या[3] दैतेयाः[4] सुरशत्रवः[5] ।
पूर्वदेवाः[6] शुक्रशिष्याः[7] पातालनिलयाः[8] स्मृताः ॥ ५ ॥

Brahma, the creator of the universe 20.

1 2 3 4 5 6
ब्रह्मा स्रष्टा परमेष्ठी धाता पद्मभूः सुरज्येष्ठः ।
7 8 9 10 11
वेधा विधिर्विरिञ्चो हिरण्यगर्भः शतानन्दः ॥ ६ ॥
12 13 14 15 16
शम्भुः स्वयम्भूर्द्रुहिणश्चतुर्वक्त्रः प्रजापतिः ।
17 18 19 20
पितामहो जगत्कर्ता विरञ्चिः कमलासनः ॥ ७ ॥

The goddess of speech 8.

1 2 3 4 5 6 7 8
वाग्वाणी भारती भाषा गौर्गीर्ब्राह्मी सरस्वती ।

'Om' one mystic syllable 2.

1 2
ओङ्कारः प्रणवः प्रोक्तस्त्रयो वेदास्त्रयी स्मृताः ॥ ८ ॥

The vedas, the oldest sacred writings 6.

1 2 3 4 5 6
वेदः श्रुतिस्तथाम्नायः स्वाध्यायश्छन्द आगमः ।

Upanishad the scope of vedas 3.

a 1 2 3
वेदान्तश्च रहस्यं च बुधैरुपनिषन्मता ॥ ९ ॥

Reasoning logic 3.

Investigation or discussion of the vedas 2.

1 2 3 1 2
ऊहस्तर्कोऽनुमानोक्तिर्मीमांसा स्याद्विचारणा ।

Established truth or doctrine, a dogma 4.

1 2 3 4
स्मृताः कृतान्तराद्धान्तसिद्धान्तसमयाः समाः ॥ १० ॥
1 2 3 4 5 6
ईशानः शशिशेखरः पशुपतिः शूली शिवः शङ्करः,
7 8 9 10 11 12 13
शर्वः शम्भुरुमापतिश्च गिरिशः श्रीकण्ठ उग्रो हरः ।
14 15 16 17 18 19
सर्वज्ञस्त्रिपुरान्तकस्त्रिनयनो रुद्रः कपर्दी भवो,
20 21 22 23
भूतेशः परमेश्वरोऽन्धकरिपुर्दक्षाध्वरध्वंसकृत् ॥ ११ ॥
24 25 26 27

Name of Shiva 45.

स्थाणुः स्रष्टा धूर्जटिर्वामदेवः,
28 29 30
कामध्वंसी व्योमकेशः कपाली ।
31 32 33
नीलग्रीवो वह्निरेताः पिनाकी,
34 35 36 37
भीमो भर्गः कृत्तिवासा वृषाङ्कः ॥ १२ ॥
b 38 39 40 41
अहिर्बुध्नो विरूपाक्षः शिपिविष्टो गणाधिपः ।
42 43 44 45
गङ्गाधरो महादेवो मृडः स्यान्नीललोहितः ॥ १३ ॥

a वेदाङ्गश्च, वेदान्तस्य b अहिर्बध्नो, अहिबुध्न्यो, अहिबुध्न्या ।

Shiva's bow 2.

पिनाकं[2] स्यादजगवं[2] प्रमथास्तु[1] गणाः[2] स्मृताः ।

One of the chief attendants of Shiva.

Braided and matted hair of Lord Shiva.

कपर्दोऽस्य[1] जटाबन्ध[2][a]स्तण्डुः[1] स्यान्नन्दिकेश्वरः[2] ॥ १४ ॥

Name of Shiva's wife 21.

रुद्राणी[1] शर्वाणी[2] काली[3] कात्यायनी[4] भवानी[5] च ।
आर्या[6]म्बिका[7] मृडानी[8] हैमवती[9] पार्वती[10] गौरी[11] ॥ १५ ॥
उमा[12] भगवती[13] दुर्गा[14] चण्डी[15] दाक्षायणी[16] शिवा[17] ।
अपर्णा[18] स्यान्महादेवी[19] गिरिजा[20] मेनकात्मजा[21] ॥ १६ ॥

ब्रह्माण्याद्याः[1] स्मृताः सप्त देवतामातरो बुधैः ।

An incarnation of Durga.

चामुण्डा[1] कर्णमोटी[2] च चर्चा[3] स्याद्भैरवी[4] तथा ॥ १७ ॥

Name of Ganesh 9.

हेरम्बो[1] लम्बोदर[2] आखुरथो[3] गणपतिश्च[4] गजवदनः[5] ।
परशुधर[6] एकदन्तो[7] विनायको[8] विघ्नराजश्च[9] ॥ १८ ॥

Name of Kartikeya 20.

गौरीपुत्रः[1] षण्मुखः[2] शक्तिपाणिः,[3]
क्रौञ्चारातिः[4] कार्त्तिकेयो[5] विशाखः[6] ।
स्कन्दः[7] स्वामी[8] तारकारिः[9] कुमारः[10] ,
सेनानीः[11] स्यादग्निभूर्[12]बाहुलेयः[13] ॥ १९ ॥
गाङ्गेयो[14] ब्रह्मचारी[15] च गुहो[16] बर्हिणवाहनः[17] ।
महासेनो[18] महातेजाः[19] शरजन्मा[20] च कथ्यते ॥ २० ॥

Name of Vishnu 56.

विष्णुः[1] कृष्णः[2] केशवो[3] मञ्जुकेशी[4] ,
श्रीवत्साङ्कः[5] श्रीपतिः[6] पीतवासाः[7] ।
विष्वक्सेनो[8] विश्वरूपो[9] मुरारिः[10] ,
शौरिः[11] शार्ङ्गी[12] पद्मनाभो[13] मुकुन्दः[14] ॥ २१ ॥

a बन्धस्तन्द्रुः, बन्धतद्रः बधस्तद्रुः ।

[15] गोविन्दो [16] धरणिधरः [17] सुपर्णकेतु–
[18] वैकुण्ठो [19] जलशयन[20]श्चतुर्भुजश्च ।
[21] दैत्यारि[22]र्मधुमथनो [23] रथाङ्गपाणि–
[24] दाशार्हः [25] क्रतुपुरुषो [26] वृषाकपिः स्यात् ॥ २२ ॥
[27] जनार्दना[28]धोक्षज[29]वासुदेवं [30] दामोदरं [31] श्रीधर[32]मच्युतं च ।
[33] उपेन्द्र[34]मिन्द्रावरजं च [35] बभ्रुं [36] हरिं [37] हृषीकेशमुदाहरन्ति ॥ २३ ॥
[38] आत्मभूः [39] पुण्डरीकाक्षः [40] श्रीवत्सो [41] विष्टरश्रवाः ।
[42] नारायणो [43] जगन्नाथो [44] वनमाली [45] गदाधरः ॥ २४ ॥
[46] सनातनो [47][a] जिनः [48] शम्भु[49]र्विधि[50]र्वेधा [51] गदाग्रजः ।
[52] कैटभारि[53]रजो [54] जिष्णुः [55] कंसजित्[56]पुरुषोत्तमः ॥ २५ ॥

The disc of Vishnu. [1] चक्रं सुदर्शनं चापं [Vishnu's bow 1] शार्ङ्गं [1][b] कौमोदकी गदा । Vishnu's mace.
Vishnu's sword. खड्गोऽस्य [1] नन्दकः शङ्खः [1] पाञ्चजन्यः प्रकीर्तितः ॥ २६ ॥ Vishnu's conch.
The jewel suspended on Vishnu's breast. [1] कौस्तुभो वक्षसि मणिः [1] श्रीवत्सोऽस्य च लाञ्छनम् । A starlike mark on Vishnu's breast.
Name of Krishna's father 2. [1] वसुदेवस्तु कथितो बुधै[2]रानकदुन्दुभिः ॥ २७ ॥
Name of Krishna's elder brother 18. [1] बलदेवो [2] बलभद्रो [3] मुशली [4] नीलाम्बरः [5] प्रलम्बघ्नः ।
[c][6] सीरी च [7] सात्वतः स्या[8]त्तालध्वज [9] एककुण्डलो[10]ऽनन्तः ॥२८॥
[11] सङ्कर्षणो [12] रौहिणेयः [13] कालिन्दीकर्षणो [14] बलः ।
[15] रेवतीरमणो [16] रामः [17] कामपालो [18] हलायुधः ॥ २९ ॥

[1] विहङ्गराजो [2] गरुडो [3] गरुत्मान् ,
[4][d] तार्क्ष्यः [5] सुपर्णीतनयः [6] सुपर्णः ।

a जितः b कौमुदकी c शारी च सावतः, शीरी च स्यात्यतः d तार्क्षः ।

Name of Garuda, the mount of Vishnu 10.

7 8
स्याद्वैनतेयः पवनाशनाशः ,
9 10
सुरेन्द्रजित्कश्यपनन्दनश्च ॥ ३० ॥

Name of Vishnu's wife 9.

1 2 3 4 5 6
लक्ष्मीः श्रीः कमला पद्मा पद्मवासा हरिप्रिया ।
7 8 9
क्षीरोदतनया मा च शब्दज्ञैरिन्दिरा स्मृता ॥३१॥

Cupid, the god of love 30.

1 2 3 4 5
प्रद्युम्नो मकरध्वजो मनसिजः सङ्कल्पजन्माङ्गजः ,
6 7 8 9 10 11
पञ्चेषुः कुसुमायुधश्च मदनो मारः स्मरो मन्मथः ।
12 13 14 15 16
कन्दर्पो झषकेतनो रतिपतिः श्रीनन्दनो हृच्छयः ,
17 a 18 19 20
कामः शम्बरसूदनो मधुसखः शृङ्गारयोनिः स्मृतः ॥ ३२ ॥
21 b 22 23 24
दर्पकः शूपकारातिरनङ्गो विषमायुधः ।
25 26 27 28
आत्मभूर्मनसिशयः पुष्पधन्वा मनोभवः ॥ ३३ ॥
29 30 1 2
मापत्यमिरजश्चैव कामपत्नी रतिः स्मृता ।

Cupid's wife 2.

Cupid's son 2.

1 2 c
अनिरुद्धश्च तत्सूनुरुषारमण इष्यते ॥ ३४ ॥

The sun 47.

1 2 3 4 5
आदित्यः सविता सहस्रकिरणः प्रद्योतनो भास्कर–
6 7 8 9 10 11
स्तिग्मांशुस्तरणिस्तथा दिनमणिर्भास्वान्विवस्वान्हरिः ।
12 13 14 15 16 17 18
मार्तण्डस्तपनो विकर्तन इनः पूषा पतङ्गो भगः ,
19 20 21 22 23 24 25
सूर्यो गोपतिरर्यमा दिनकरः सूरोंऽशुमाली रविः ॥ ३५ ॥
d 26 27 28 29 30 31 32
मिहिरो विरोचनोऽर्कस्तिमिररिपुर्द्युमणिरंशुमानंशुः ।
33 34 35 36 37
हरिदश्वः सप्ताश्वः प्रभाकरो भानुमान्भानुः ॥ ३६ ॥
38 39 40 41 42 33
ब्रध्नो हंसः खगो मित्रश्चित्रभानुरहर्पतिः ।
44 45 46 47
कर्मसाक्षी जगच्चक्षुर्द्वादशात्मा त्रयीतनुः ॥ ३७ ॥

a शम्बरसूदन b सूर्यका, सूर्पका, c रमणमुच्यते d मिहरो ।

A ray of light 32. 1 2 3 4 5 3 7 8 रोचिः शोचिरभीशुः प्रद्योतगभस्तिरश्मिघृणिकिरणाः ।
9 10 11 12 13 14 15 16 17 रुचिरुग्दीधितिदीप्तिद्युतिप्रभाभाविभाभासः ॥ ३८ ॥
18 19 20 21 22 23 24 a 25 26 उस्रधामवसुकेतुमरीचिप्रग्रहोपधृतिवृष्णिमयूखाः ।
27 28 29 30 31 32 अंशुभानुकरपादविरोका गाव इत्यभिहितास्तु समानाः ॥ ३९ ॥

Fiery hot 7. 1 2 3 4 5 6 7 b तिग्मं तीक्ष्णं खरं तीव्रं चण्डमुष्णं पटु स्मृतम् ।

Heat of the sun 4. 1 2 3 4 आतपः कथ्यते रौद्रं निदाघो घर्म उच्यते ॥ ४० ॥

The halo round the sun or the moon. 1 2 3 4 परिधिः परिवेषः स्यान्मण्डलं चोपसूर्यकम् ।

An eclipse 3. 1 2 3 उच्यते राहुसंस्पर्श उपराग उपप्लवः ॥ ४१॥

The moon 21. 1 2 3 4 इन्दुश्चन्द्रश्चन्द्रमा ओषधीशः,
5 3 7 8 सोमो राजा रोहिणीवल्लभोऽब्जः ।
9 10 ऋक्षेशः स्यादत्रिनेत्रप्रसूतः,
11 12 13 प्रालेयांशुः श्वेतरोचिः शशाङ्कः ॥ ४२ ॥
14 c 15 16 . 17 द्विजराजो रजनिकरः पीयूषरुचिर्निशीथिनीनाथः ।
d 18 19 20 21 जैवातृको मृगाङ्को विधुश्च दाक्षायणीरमणः ॥ ४३ ॥

Moonlight 4. 1 2 3 e 4. चन्द्रिका कौमुदी ज्योत्स्ना तथा चन्द्रातपः स्मृतः ।

The disc round the sun or moon (see परिधि in 41 sloka). 1 2 f 1 मण्डलं बिम्बमाख्यातं हृदये लाञ्छनं मृगः ॥ ४४ ॥ The spots on the moon represented as a hare.

Mark, token, symbol 7. 1 2 3 4 5 6 अङ्कश्चिह्नमभिज्ञानं लाञ्छनं लक्ष्म लक्षणम् ।
7 कलङ्कश्चेति विज्ञेया नातिनानार्थवाचकाः ॥ ४५ ॥

The planet mars 5. 1 2 3 4 5 वक्रमङ्गारकं भौमं लोहिताङ्गं धरात्मजम् ।

The planet Mercury. 1 2 3 4 g रौहिणेयं बुधं सौम्यमाहुश्चान्द्रमसायनम् ॥ ४६ ॥

a धिष्ण्य, धृष्णि b तपः स्मृतम् c रजनिचरः d जोकात्रिको e चन्द्रतपः f हृदयं g सायनिः ।

The planet Jupiter, the preceptor of gods 8.

[1]वाचस्पति[2]राङ्गिरसो [3]बृहस्पतिः कथ्यते [4]गुरु[5]र्जीवः ।
[6]धिषणस्[7]त्रिदशाचार्य[8]श्चित्रशिखण्डिप्रसूतश्च ॥ ४७ ॥

The planet Venus, the preceptor of demons 7.

[1]उशना [2]शुक्रः [3]काव्यो [4]दैत्यगुरु[5]र्भार्गवः [6]कवि[7]र्धिष्ण्यः ।

The planet Saturn 6.

[1]असितः [2a]क्रोडः [3]पङ्गुश्[4]छायातनयः [5]शनैश्चरः [6]शौरिः ॥ ४८ ॥

A name of Rahu, ascending node 5.

[1]स्वर्भानुः [2]सैंहिकेयश्च [3]तमो [4]राहु[5]र्विधुन्तुदः ।

A comet, descending node 3.

[1]केतवः [2b]शिखिनः प्रोक्ता [3]आर्द्रालुब्धक उच्यते ॥ ४९ ॥

The constellation Ursa Major.

[1]सप्तर्षयस्तु विद्वद्भिः [2]स्मृताश्चित्रशिखण्डिनः ।

Pleiades 2. | Fortnight 1. The dark half of the lunar month 2.

[1]कृत्तिका [2]बहुला प्रोक्ताः [1]पक्षस्तु [1]बहुलो[2]ऽसितः ॥ ५० ॥

[1]भं [2]नक्षत्रं [3]तारकं [4]तारका च,
[5]ज्योतिस्[6]तारा [7]धिष्ण्य[8c]मृक्षं तथो[9]डु ।

A star 9. | The 23rd lunar asterism 2.

[1]पुष्यस्[2]तिष्यः स्या[1]द्धनिष्ठा [2]श्रविष्ठा ,

The eighth lunar asterism 2.

[d 1]दाक्षायण्यः [2]कीर्तिताश्चन्द्रदाराः ॥ ५१ ॥

27 Lunar asterism.

Indra, the god of heaven.

[1]इन्द्रो [2]दुश्च्यवनो [3]हरिः [4]सुरपतिः [5]सङ्क्रन्दनो [6]वासवो ,
[7]वृत्रारि[8]र्बलसूदनः [9]शतमखो [10]वृद्धश्रवाः [11]कौशिकः ।
[12]जिष्णु[13]र्वज्रधरः [14]सहस्रनयनो [15]वास्तोष्पति[16]र्गोपतिः ,
[17]पर्जन्यो [18]मघवा [19]वृषा [20]हरिहयः [21]प्राचीनबर्हिः स्मृतः ॥ ५२ ॥
[22]पुरुहूतः [23]पृतनाषाट् [24]पुरन्दरः [25]पूर्वदिक्पतिः [26]स्वाराट् ।
[27]आखण्डलस्[28]तुराषाट् [29e]सुत्रामा [30]गोत्रभित्[31]सुनासीरः ॥ ५३ ॥
[32]शक्रः [f 33]स्यादुग्रधन्वा च [34]हरिवान्[35]पाकशासनः ।
[36]दिवस्पति[g 37]र्विडौजाश्च [38]मरुत्वान्[39]मेघवाहनः ॥ ५४ ॥

a क्रौडः b शखिनः c मृक्षमथो d दाक्षायिण्यः, दाक्षरायण्यः, दक्षणायण्यः, e सूत्रामा f स्यादग्रधन्वा g विडोजाश्च ।

Indra's wife 3.	[1] इन्द्राणी [2] पौलोमी [3] शची [1] जयन्तश्च तत्सुतो ज्ञेयः ।	Indra's son.
Indra's city 1.	[1] अमरावती च नगरी [1] नन्दनमुद्यानमिन्द्रस्य ॥ ५५ ॥	Indra's garden 1.
Indra's thunder-bolt 12.	[1] पवि[2]रशनिः [3] शतधारं [4] वज्रं [5] कुलिशं च भवति [6] दम्भोलिः ।	
	[7] गौ[8]र्भिदुरं [9] व्याधामः [10] स्वरु[11]रिन्द्रप्रहरणं तथा [12 a] शम्बः ॥ ५६ ॥	
Clap of thunder 2.	[1] स्फूर्जथु[2]र्वज्रनिर्घोषो [1] वज्रज्वाला[2]ऽतिभीः स्मृता ।	The flash of lightning 2.
Indra's bow, rain--bow. } 3.	[1] ऋजु [2] रोहितमिच्छन्ति बुधाः [3] शक्रशरासनम् ॥ ५७ ॥	
A cloud 10.	[1] अभ्र[2]मब्दो [3] घनो [4] मेघः [5] स्तनयित्नुः [6] पयोधरः ।	
	[7] धाराधरो [b 8] धूमयोनि[9]र्जीमूतश्च [10] बलाहकः ॥ ५८ ॥	
Heavy fall of rain 2.	[1] धारासम्पात [2] आसारो [1] वातास्तं [2] वारिसीकरः ।	Rain driven by wind 2.
The cloudy day 2.	[1] दुर्दिनं [2] मेघतिमिरं [c 1] करकः स्याद्[2]घनोपलः ।	Hail 2.
	[d] चलन्नवा[1]भ्रमाला च बुधैः [2] कादम्बिनी स्मृता ॥ ५९ ॥	A series of clouds 2.
Lightning 10.	[1] शम्पा [2] चपला [3] क्षणिका [4] शतह्रदा [e 5] ह्लादिनी [6] तडि[7]द्विद्युत् ।	
	[8] सौदामिन्य[9]चिरांशुः [10] प्राज्ञैरैरावती च विज्ञेया ॥ ६० ॥	
Indra's elephant 3.	[1] ऐरावतो[2]ऽभ्रमातङ्गः स [3] चैरावण उच्यते ।	
Indra's horse 2.	[1] उच्चैःश्रवास्तु [2] देवाश्वो [1] मातलिः [2] शक्रसारथिः ॥ ६१ ॥	Indra's charioteer 2.
	[1] सप्तार्चि[2]र्बहुलः [3] शिखी [4] हुतवहो [5] वैश्वानरो[6]ऽग्नि[7]र्वसु–	
	[8] र्वह्नि[9]र्वायुसखः [10] सितेतरगतिः [11 f] स्वाहाप्रियः [12] पावकः ।	
	[13] अर्चिष्मान् [14] ज्वलनः [15] कृशानु[16]रनलो [17] धूमध्वजो [18] हव्यवाट्,	
Fire 39.	[19] बर्हिर्ज्योति[20]रुषर्बुधश्च [21] दहनः स्याच्[22]चित्रभानुः [23] शुचिः ॥ ६२ ॥	

a सम्ब शम्बुः, शवुः b धूमज्योति c कर्कस्तु, करका d चरभ्रमाला
e ह्लादिनी, ह्रादिनी f स्वाहापतिः ।

24 25 a 26 27
कृपीटयोनिर्दमुनाः कृष्णवर्त्माशुशुक्षणिः ।
28 29 30 31
विभावसुरपांपित्तं जातवेदास्तनूनपात् ॥ ६३ ॥
b 32 33 34 35
वीतिहोत्रो वृहद्भानुराश्रयाशो धनञ्जयः ।
36 37 38 39
हिरण्यरेतास्तमोघ्नो रोहिताश्वो हुताशनः ॥ ६४ ॥
1 2 3 4 5 6 7
Flame 14. अर्चिः कीला ज्वाला वर्चस्तेजस्त्विषस्तथा ज्योतिः ।
8 9 10 11 12 13 14
हेतिद्युतिदीप्तिरुचः शिखाप्रभारश्मयः समानार्थाः ॥ ६५ ॥
1 2 3
Light 3. स्मृतः प्रकाश आलोक उद्द्योतश्च समास्त्रयः ।
c 1 2 1 2
Wife of Agni. अग्नायी कथ्यते स्वाहा धूम्या स्याद्धूमसंहतिः ॥ ६६ ॥ Mass of smoke 2.
1 2 1 Spark 2 1 2
Steam, vapour 2. ऊष्मा वाष्पः स्फुलिङ्गश्च कणा जिह्वास्तथार्चिषः । Tongue of the fire 2.
1 2 1 2
A fire brand. अलातमुल्मुकं ज्ञेयमुल्का ज्वालास्य निर्गता ॥ ६७ ॥ High flame of fire 2.
1 2 3 4 5
Names of the seven tongues of Agni. भवति हिरण्या कनका रक्ता कृष्णा सुप्रभा चान्या ।
6 7
अतिरक्ता बहुरूपेति सप्त सप्तार्चिषो जिह्वाः ॥ ६८ ॥
1 2 3 4 5 6
Fuel 6. एधस्तर्पणमिन्धनमेधः समिदिध्म इत्यभिन्नार्थाः ।
1 2 3 4 5
Ashes 5. भूतिर्भसितं भस्म क्षारं रक्षा च निर्दिष्टा ॥ ६९ ॥
1 2 3 1 2
A wood on fire Sylvan fire Forest fire. धनवह्निर्दवो दावो मेघवह्निरिरंमदः । Flash of lightning 2.
1 2 3 d 4
Submarine fire 4. और्वः समुद्रवह्निः स्याद्वाडवो वडवामुखः ॥ ७० ॥
1 2 e 3 4 5
Name of Pluto, the God of death 16. शमनः समवर्ती च प्रेतपतिः पितृपतिश्च कीनाशः ।
6 7 8 9
वैवस्वतः कृतान्तः कालिन्दीसोदरः कालः ॥ ७१ ॥
10 11 12 13 14
अन्तको धर्मराजश्च यमो दण्डधरो हरिः ।
15 16
दक्षिणाशापतिः सद्भिः श्राद्धदेवश्च कथ्यते ॥ ७२ ॥

a दंमुना, दमना b वीतहोत्रो c आग्नेयी d वडवानलः, वाडवानलः e शमवर्ती ।

Evil spirits or demons 9.

1 2 3 4 5
यातूनि यातुधानाः क्रव्यादा राक्षसाश्च रक्षांसि ।
6 7 a 8 9
नक्तञ्चरनैर्ऋतकौणपास्तथा नैकषेयाः स्युः ॥ ७३ ॥

Name of the god of the waters and the regent of the west 6.

1 2 3 4
वरुणं यादसा नाथं पाशपाणिं प्रचेतसम् ।
5 6
जलाधिदैवतं प्राहुः प्रत्यगाशापतिं बुधाः ॥ ७४ ॥

Air, wind 20.

1 2 3 4 5 6 7
पवनः श्वसनो वायुर्मरुदनिलो मारुतो जगत्प्राणः ।
8 9 10 11 b 12
पृषदश्वः पवमानः प्रभञ्जनः स्पर्शनो वातः ॥ ७५ ॥
13 14 15 16
नभस्वान्मातरिश्वा च समीरश्च समीरणः ।
17 18 c 19 20
सदागतिर्गन्धवहो हरिः प्रोक्तो महाबलः ॥ ७६ ॥

Wind with rain. A whirlwind 2.

d 1 2
कङ्कावातः सवृष्टिः स्याद्वात्या वातस्य मण्डली ।

Fragrance.

1 2 3 4
आमोदः स्यात्परिमलः सौरभ्यं च 'सुगन्धिता ॥ ७७ ॥

Name of Kuber the treasurer, the god of wealth 17.

1 2 3 4 5
ऐलविलः पौलस्त्यो वैश्रवणः किन्नरेश्वरो धनदः ।
6 7 8 9
श्रीदः श्रीकण्ठसखो मनुष्यधर्मा धनाध्यक्षः ॥ ७८ ॥
10 11 12 13
उत्तराशापतिर्यक्षः कुवेरो नरवाहनः ।
14 15 16 17 e
गुह्यको राजराजश्च धनी पुण्यजनेश्वरः ॥ ७९ ॥

Wealth, riches 15.

1 2 3 4 5 6 f 7 8
द्युम्नं द्रव्यं द्रविणं राः सारं स्वापतेयमर्थः स्वम् ।
g 9 10 11 12 13 14 15
ऋक्थं पृक्थं वित्तं धनं हिरण्यं च वसु विभवः ॥ ८० ॥

Gold or silver. Other than gold or silver.

1 2
अकुप्यं रूप्यहेमाख्यं कुप्यमन्यद्धनं भवेत् ।

Cattle, live stock.

1 2
गोमहिष्यादिकं सर्वं बुधैर्जीवधनं स्मृतम् ॥ ८१ ॥

A deposit, a trust 2. Treasure 2.

1 2 1 2
निक्षेपः स्यादुपनिधिः कथ्यते शेवधिर्निधिः ।

An attendant of Kubera 4.

1 2 3 4
किन्नरः स्यात्किम्पुरुषो मयुरश्वमुखस्तथा ॥ ८२ ॥

a नैरतकोपा, नैऋतकोणपा, नैर्ऋतकोणपा b स्पर्शनो वायुः c गवबाहो d झंझावातः झञ्झानिलः, झञ्झामरुत् e पुण्यधनेश्वरः f मर्थं g रिक्तं पृक्यं, ऋक्यं, पित्तं, ऋच्छं पृच्छं ।

Kubera's garden.	उद्यानं स्याच्चैत्ररथं[1] विमानं चास्य पुष्पकम्[1] ।	Kubera's aeroplane.
Kubera's city.	अलका[1] नगरी ज्ञेया पुत्रस्तु नलकूवरः[1] ॥ ८३ ॥	Kubera's son.
The architect of the gods 2.	विश्वकृद्[1] विश्वकर्मा[2] च त्वष्टा[3] स्याद्देववर्धकिः[4] ।	
God's doctors or physicians 4.	नासत्यावश्विनौ[1][2] दस्रौ[3] प्रोक्तौ देवचिकित्सकौ[4] ॥ ८४ ॥	
Name of Gautam Buddha 11.	शौद्धोदनिर्[1] दशबलो[2] बुद्धः[3][a] शाक्यस्[4] तथागतः सुगतः[6] । मारजिद्[7] द्वयवादी[8] समन्तभद्रो[b][9] जिनश्च[10] सिद्धार्थः[e][11] ॥ ८५ ॥	
A Jain saint.	जिनेन्द्री[1] वीतरागो[2]ऽर्हन्[3] केवली[4] च त्रिकालवित्[5] ।	
Misfortune 2.	अलक्ष्मीर्[1] निर्ऋतिर्[2] ज्ञेया नियतिर्[1] विधिरुच्यते[2] ॥ ८६ ॥	Fate, luck 2.
Different Devayonies 11.	यक्ष[1] राक्षस[2] गन्धर्व[3] सिद्ध[4] किन्नर[5] गुह्यकाः[6] । विद्याधरा[7] प्सरो[8] भूत[9] पिशाचा[10] देवयोनयः[11] ॥ ८७ ॥	
A nymph of Indra's heaven 7.	घृताची[1] मेनका[2] रम्भा[3] उर्वशी[4] च तिलोत्तमा[5] । सुकेशी[6] मञ्जुघोषाद्याः[7] कथ्यन्तेऽप्सरसो बुधैः ॥ ८८ ॥	
Contempt. (1) Prurience. (2) Coquettishness. (3) Affectation of indifference. (4) Imitation (5) Gracefulness of gait. (6) Flurry. (7) Feminine action, emotion.	हेला[1] विलास[2] बिब्बोक[3] लीला[4] ललित[5] विभ्रमाः[6] । स्त्रीणां शृङ्गारचेष्टाः[d] स्युर्हावपर्यायवाचकाः[7] ॥ ८९ ॥ बाह्यार्थालम्बनो यस्तु विकारो मानसो भवेत् । स भावः[e][1] कथ्यते सद्भिस्तस्योत्कर्षो रसः स्मृतः ॥ ९० ॥	
(1) Love (2) Laughter (3) Grief (4) Anger (5) Effort (6) Fear (7) Disgust (8) Wonder (9) Quietness.	रतिर्[1] हासश्च[2] शोकश्च[3] क्रोधो[4] त्साहौ[5] भयं[6] तथा[f] । जुगुप्सा[7] विस्मय[8] शमाः[9] स्थायिभावाः प्रकीर्तिताः ॥ ९१ ॥	
1. Emotion of love, Erotic. 2. The emotion of laughter. Comic. 3. The emotion of pathos or tender grief. Pathetic. 4. The emotion of anger. Furious.	शृङ्गार[1] हास्य[2] करुणा[3] रौद्र[4] वीर[5] भयानकाः[6] । बीभत्सा[7] द्भुत[8] शान्ताश्च[9] नव नाट्ये रसाः स्मृताः ॥ ९२ ॥	Nine *'rasas'* used in drama 5. The emotion of heroism, heroic. 6. The emotion of fear or terror. 7. Odious, the emotion of disgust. 8. Marvellous, the emotion of wonder or admiration. 9. Pacific.

a बुधः b सुमन्तभद्रो c तुल्यार्थाः d शृङ्गारचेष्टाः स्यु०, शृङ्गारचेष्टा च e स्वभावः, भावकः f समाः ।

Singing, song 2.	गीतं[1] गानमिति[2] प्रोक्तं वाद्य[1]मातोद्य[2]मिष्यते[a] ।	A musical instrument 2.
Dancing 3.	नृत्यं[1] तु ताण्डवं[2] लास्यं[3] त्रितयं नाट्यमुच्यते ॥ ९३ ॥	
Measure, musical time 2.	ताल:[1] काल[b]क्रियामानं[2] लय:[1] साम्यमुदाहृतम्[2] ।	Equal time of music and dancing2.
Gesticulation 2	अङ्गहारो[1]ऽङ्गविक्षेप:[2] सूच्योऽर्थोऽभिनय: स्मृत: ॥ ९४ ॥	
	प्रेक्षार्थं गीतवाद्यं तु सङ्गीतमभिधीयते ।	
	आदावेव तु यन्नाट्यं पूर्वरङ्ग:[1] स उच्यते ॥ ९५ ॥	Prelude to drama.
A flute.	प्रोक्ता घोषवती[1] वीणा[2] विपञ्ची[3] परिवादिनी[4] ।	
	वल्लकी[5] चेति तद्भेदास्तन्त्रीभेदसमुद्भवा: ॥ ९६ ॥	
A stage, a dancing place 2.	रङ्ग:[1] स्यान्नर्तनस्थानं[2] मृदङ्गो[1] मुरज:[2] स्मृत: ।	A small drum 2.
A drum 4.	आनक:[1] पटहो[2] ज्ञेयो डिण्डिम:[3] पणवस्तथा[4] ॥ ९७ ॥	
The bow of a lute, a drum stick 2.	कोणो[1] वादनदण्ड:[2] स्याद्भेरी[1] दुन्दुभिरिष्यते[2] ।	A large kettle—drum.
The queen 2.	नाट्ये राज्ञी[1] स्मृता देवी[2] कुमारो[1] भर्तृदारक:[2][c] ॥ ९८ ॥	The heir-apparent, the prince.
A learned man.	भाव[1] इत्युच्यते विद्वान्[2] भावुको[1] भगिनीपति:[2] ।	Sister's husband 2.
A father 2.	आवुकस्तु[1] पिता[2] ज्ञेय आर्यो[1] मारिष[2] उच्यते ॥ ९९ ॥	A venerable person.
	d × × × × × × × ×	

a मुच्यते b काल: क्रियामानं c भद्रदारुक:, भट्टदारक

d× श्रीरागो वसन्तस्य पञ्चमो भैरवस्तथा ।
मेघरागस्तु विज्ञेयो षष्ठो नटनरायण: ॥ १ ॥
गौडी कोलाहलां धारी द्रविडी मालवकौशिका ।
षष्टीस्याद्देवगान्धारा श्रीरागा च विनिर्मिता ॥ २ ॥
आदोला कौशिकी चैव तथा पटममञ्जरी ।
गुडकुरी चैव देशाख्या रामकरी वसन्तजा ॥ ३ ॥
त्रिगुणा स्तम्भतीर्था च आभेरी ककुभ्रा तथा ।
वियराडी तथा चेरी षडेता: पञ्चमे मता: ॥ ४ ॥
भैरवी गूर्जरी चैव भाषा वेलाउली तथा ।
कर्णाटी रक्तहंसा च षडेता: भैरवे मता: ॥ ५ ॥
वङ्गुला मथुरा चैव कामोदा चोषसाटिका ।
देवगिरी च देवाला षडेता: मेघरामजा: ॥ ६ ॥
त्रोटकी मोटकी चैव दुंविनिट्ट विराटिका ।
मल्लारी सैधवी चैव एता नटनरायणे ॥ ७ ॥

1 2 3 4 5

5 Region, quarter. आशाः ककुभः काष्ठा हरितश्च दिशः समाख्याताः ।

1 2 3 4 5 6 7 8

1 The regent of the east, Indra. 2 The regent of south-east, fire 3 The regent of the south, Pluto. इन्द्रानलयमनैर्ऋतवरुणमरुद्धनदरुद्रदिक्पालाः ॥१००॥ 8 The regent of the north-east, Shiva.

4 The regent of south-west, Neptune. 5 The regent of the west, Varuna. 6 The regent of the north west- Marut. 7 The regent the of the north- Kubera.

1 2 3 1 2 3

East, belonging to Indra. ऐन्द्री पूर्वा प्राची याम्या दिग्दक्षिणा तथाऽवाची । South, belonging to Pluto (Yama).

1 2 1 2 3

West, belonging to Varuna. स्याद्वारुणी प्रतीची कौवेरी चोत्तरोदीची ॥१०१॥ North, belonging to Kubera.

1 2 3 a

Intermediate quarters. अन्तराला दिशश्चान्या विदिशः प्रदिशः स्मृताः ।

1 2 3 1 2 3

Above 3. उपरिष्टादुपर्यूर्ध्वं तथाधस्तादवागधः ॥१०२॥ Below, down, down-wards 3.

1 2 1 2

Eastern. प्राचीनं प्राक् स्मृतं प्राञ्चैरुदीचीनमुदक् तथा । Northern 2.

1 2 1 2

Western. प्रत्यक् चैव प्रतीचीनमपाचीनमपागिति ॥१०३॥ Southetn.

1 2 3 b 4 5

ऐरावतः पुण्डरीकः कुमुदाञ्जनवामनाः ।

1 Indra's elephant placed at the east quarter. 2 Agni's elephant placed at the south-east quarter. 3 Pluto's elephant placed at the south quarter. 4 Nairit's elephant placed at the south-west quarter. 5 Neptune's elephant placed at the west quarter.

6 7 8

पुष्पदन्तः सार्वभौमः सुप्रतीकश्च दिग्गजाः ॥१०४॥

6 Wind's elephant placed at the north-west quarter. 7 Kubera's elephant placed at the north quarter. 8 Shiva's elephant placed at the north-east quarter.

1 2 3 1

Time 3. दिष्टः कालस्तथानेहास्तद्भेदाः स्युः कलादयः । A measure of time.

1 2

Day and night 1. अहोरात्रं च विद्वद्भिः कथ्यते षष्टिनाडिकम् ॥१०५॥

1 2 3 4 5 6 7

Day 7. दिवसो दिवा दिनं द्युः प्रोक्तमहर्वासरस्तथा घस्रः ।

1 2 1 2 c

A period of 3 hours 1. प्रहरो यामः सन्ध्ये रजनीदिनयोः प्रवेशनिष्कासौ ॥१०६॥ Twilight 2.

1 2 3

तमी तमिस्रा कथिता तमस्विनी ,

4 5 6

विभावरी नक्तमुखा च शर्वरी ।

a प्रदिशस्तया, b कुमुदोऽञ्जनवामनौ c निष्काशौ ।

7 8 9 10
क्षपा त्रियामा क्षणदा निशीथिनी ,

11 12 13 14
निशा च दोषा रजनी च यामिनी ॥१०७॥

15 16 17 18
वसतिर्वासतेयी च श्यामा रात्रिश्च कथ्यते । Night 18.

1 2 3
any nights 3. गणरात्रो निशा बह्वयश्चिररात्रस्ततः परम् ॥१०८॥

1 2 1 2
In the evening 2. सायं दिवावसानं स्यात्प्रदोषो रजनीमुखम् । The first hour after sunset 2.

1 2 3
निशीथो मध्यमा रात्रिः प्रोक्ता सा च महानिशा ॥१०९॥ Mid-night 3.

1 2 3 4 5
Darkness 10. अवतमसमन्धतमसं संतमसं ध्वान्तमन्धकारं च ।

6 7 8 a 9 10
तिमिरं तमस्तमिस्रां तमिस्रमिच्छन्ति भूछायाम् ॥११०॥

1 2 3 4 5 6
Dawn, morning, day-break 10. कल्यमुषः प्रत्यूषं प्रगे प्रभातं भवेद्विभातं च ।

7 b 8 9 10
दिवसमुखं गोसर्गः प्रातर्व्युष्टं च निर्दिष्टम् ॥१११॥

c 1 1 2
First moonlit night. शशिनि सिनीवाली स्याद्दृष्टे नष्टे कुहूरमावास्या । The new-moon 2.

1 1
अनुमतिरूने राका सम्पूर्णे पूर्णमासी च ॥११२॥ Full-moon day.

1 2 1
A Month. त्रिंशदहोरात्रः स्यान्मासस्ताभ्यामृतुर्वसन्ताद्याः । Season, 1 spring,

4 autumnal, 5 winter, 6 cold season.

2 3 4 d 5 6
2 summer, 3 rainy, ग्रीष्मः प्रावृट् शरदा हेमन्तः शिशिर इति ते षट् ॥११३॥

e
चैत्रादिमासा मधुमाधवौ द्वौ ,

ततः परं शुक्रशुची क्रमेण ।

Names of months and seasons beginning with spring. नभोनभस्यौ कथिताविषोर्जौ ,

सहःसहस्यौ च तपस्तपस्यौ ॥११४॥

मासेन मनुष्याणां पित्र्यमहोरात्रमेकमिच्छन्ति । Measurement of time in human & divine.

f
अब्देन तु देवानां ब्राह्मं देवयुगसहस्राभ्याम् ॥११५॥

a तिमिस्रा, तमिस्रा b गोत्सर्गः c शशिनी d शरदे शरदो e चैत्रादिमासौ f ब्राह्मयं ।

1 2 3 4 5a 6
Year 6. हायनाब्दशरद्वर्षसंवत्सरसमाः समाः ।

1 2 1 2 3
Summer 2. निदाघः कथ्यते ग्रीष्मो वर्षाः प्रावृट् तपात्ययः ॥११६॥ Rainy season.

1 2 3 4 5
The periodical destruction of the universe 9. संवर्तः परिवर्तः क्षयो युगान्तो जगद्विनाशश्च ।

6 7 8 9
कल्पान्तः समसुप्तिः संहारः स्यान्महाप्रलयः ॥११७॥

b 1 2 1 2
The immediate result of actions 2. सान्दृष्टिकं फलं सद्य उदर्कः फलमुत्तरम् । The future result of action 2.

1 2 1 2
Present time 2. तत्कालं तु तदात्वं स्यादुत्तरः काल आयतिः ॥११८॥ future time 2.

c
दितिरदितिर्दनुकद्रूनिकषाविनताश्च मातरः प्रोक्ताः ।

दैत्यसुरदानवोरगपिशिताशनपक्षिराजानाम् ॥११९॥

दिति Mother of दैत्य (Demons)
अदिति „ „ सुर (Gods)
दनु „ „ दानव (Devils)
कद्रू Mother of उरग (Snakes, Serpents)
निकषा „ „ पिशाच (Ghost, eaters of raw flesh)
विनता „ „ पक्षिराज (Garuda, the mount of Vishnu)

1 d 2
The sun and the moon. चन्द्रार्कावेकवाक्येन पुष्पदन्तौ प्रकीर्तितौ ।

1 2 3
Man and his wife 3. जायापती च विद्वद्भिर्जम्पती दम्पती तथा ॥१२०॥ Husband and wife.

e 1 2 3 4
Heaven and earth 4. द्यावाभूमी च रोदस्यौ रोदसी रोदसीति च ।

1 2 1 2
Food or clothing 2. कशिपुर्भोजनाच्छादावौशीरं शयनासने ॥१२१॥ Couch or chair 2.

f 1 2 g 3 4 5
श्वः श्रेयसं स्यात्कल्याणं श्वोवसीयं शिवं शुभम् ।

6 h 7 8 9 10 11
भविकं भावुकं श्रेयो भव्यं भद्रं च मङ्गलम् ॥१२२॥ Auspicious 11.

i 1 2 3 4 5 6
Joy, delight, gay, happiness 13. प्रमोदप्रमदौ हर्षः प्रीतिरुत्कर्ष उद्भवः ।

7 8 9 10 11 12 13
सम्मदो मुत्तथानन्दः शर्म जोषं च शं सुखम् ॥१२३॥

1 2 3 4 5 6
Salvation, eternal emancipation, final beatitude 11. कैवल्यं निर्वाणं निःश्रेयसममृतमक्षरं ब्रह्म ।

7 8 9 j 10 11
अपुनर्भवोऽपवर्गो मुक्तिर्मोक्षो महानन्दः ॥१२४॥

a संवत्सरसमयाः b सांसृष्टिकं, सांसृष्टकं c निषषाश्चनताश्च
d पुष्पवन्तौ e द्यावाभूम्यौ f स्वश्रेयंसं, श्वोवशीयं, ष्वाःश्रेय, ष्वोवशीयं,
ष्वःश्रेयं, g श्वोवशीयं h भावुकं i प्रमोदः प्रमदो j मुक्तिर्मोक्षा ।

Eternal, everlasting 5.	सनातनं[1] ध्रुवं[2] नित्यं[3] शाश्वतं[4] स्यादनश्वरम्[a][5] ।	
Righteousness, virtue 5.	धर्मः[1] पुण्यं[2] वृषः[3] श्रेयः[4] सुकृतं[5] च समं स्मृतम् ॥१२५॥	
	इष्टानिष्टफलं प्राज्ञैः स्मृतं दैवमयानयम्[b][1] ।	Good luck, bad luck.
Fate, luck, destiny 4	भागधेयं[1] तथा भाग्यं[2] विपाको[3] भवितव्यता[4] ॥१२६॥	
A portent, foreboding evil omen, even omen 7.	उपलिङ्ग[1]मरिष्टं[2] स्यादुपसर्ग[3] उपद्रवस्[4]तथोत्पातः[5] ।	
	ईतिर्[6]जन्यं[7] च बुधैर्डमरो[1] डिम्बश्च[2][c] विप्लवः[3] कथितः ॥१२७॥	A scuffle or turmoil 3.
Worship 3.	अर्चा[1] पूजा[2] सपर्या[3] स्यादुपहारो[1] बलिः[2] स्मृतः ।	Present, gift 2.
Deep or profound meditation 3.	प्रणिधानं[1] समाधानं[2] समाधिश्च[3] समास्त्रयः ॥१२८॥	
Diligent service.	वरिवस्या[1] परिचर्या[2] शुश्रूषो[3]पासना[d][4] परीष्टिः[5] स्यात् ।	
	सेवा[6] भक्तिर्[7]उपास्तिः[8] प्रसादना[9][e]राधनो[10]पचाराश्च[11] ॥१२९॥	
Reflection image 11.	प्रतिबिम्बं[1] प्रतिरूपं[2] प्रतिमानं[3] प्रतिकृतिं[4][f] प्रतिच्छन्दम्[5] ।	
	प्रतिकायं[6] च प्रतिनिधि[7]माहुः प्रतियातनां[8][g] प्रतिच्छायाम्[9] ॥१३०॥	
	अर्चा[10] तु प्रतिमा[11] प्रोक्ता हरिणी[h][1] स्याद्धिरण्मयी ।	A gold image 1.
Brass or iron image.	अन्यलोहमयी प्राज्ञैः सूर्मी[1] स्थूणा[2] च कथ्यते ॥१३१॥	
	शुचिर्[1]मेध्यं[2] पवित्रं[3] च पुण्यं[4] पावन[5]मुच्यते ।	
	विमलं[6] विशदं[7] वीध्र[8]मुज्ज्वलं[9] स्यादनाविलम्[10] ॥१३२॥	Holy, pure 10.
The universe 4.	भुवनं[1] विष्टपं[2] लोको[3] जगदेकार्थवाचकाः[4] ।	
Ambrosia, nectar 4.	अमृतं[1] त्रिदशाहारः[2] सुधा[3] पीयूष[4][i]मुच्यते ॥१३३॥	
Life, creature 5.	असवो[1] जीवितं[2] प्राणा[3] जीवो[4] जीवा[5] च कथ्यते ।	
The soul 3.	क्षेत्रज्ञः[1] पुरुषो[2] ह्यात्मा[3] संसारी[1] चेतनो[2] मतः ॥१३४॥	A sentient being 2.

a स्यादनुस्वरम्, स्यादनस्वरम् b देवभयानयम्, दैवभयायनम्, c डम्बश्च, डिम्भश्च d पासनं e प्रसाधना f प्रतिकृतं g प्रतियातना, प्रतिछायम् h हिरण्यी स्याद्धिरणायां i पीयूष उच्यते ।

	1 2 3 4 5	
The five trees of the heaven.	मन्दारपारिजातकहरिचन्दनकल्पवृक्षसन्तानाः ।	
	1 2	
The Meru mountain 2.	पञ्चैते सुरतरवो मेरुः सुरपर्वतो ज्ञेयः ॥१३५॥	
	1 2 3 4	
The mountain Sumeru or Meru 7.	शक्रक्रीडाचलो मेरुः सुमेरुर्हेमपर्वतः ।	
	5 6 a 7	
	रत्नसानुरिति ख्यातो हेमाद्रिस्त्रिदशालयः ॥१३६॥	
	1 2 3 4	
The sky 15.	नभो मरुद्वर्त्म वियद्विहाय—	
	5 6 7	
	स्तारापथः पुष्करमन्तरिक्षम् ।	
	8 9 10 11 12	
	व्योमाम्बरं विष्णुपदं च खं द्यौ—	
	13 14 15	
	विहायसा स्याद्गगनं तथा द्युः ॥१३७॥	
	1 2 3 4 5 6 7 8	
Sound, noise 8.	ह्लादो नादः शब्दः स्वानो ध्वानः स्वरो रवो घोषः ।	
	1 2 3 4 b	
Speaking, speech, saying 4.	अभिधानव्याहारोदीरणकथनादयस्तु तद्भेदाः ॥१३८॥	
	1 2 3 4	
An uproar 4.	कोलाहलः कलकलस्तुमुलो व्याकुलो रवः ।	
	1 2 c	
Unconnected speech 2.	उच्चावचमिति प्रोक्तमनिबद्धं तु यद्वचः ॥१३९॥	
	1 d 2 1 2	
Higher 2.	उच्चैस्तरो ध्वनिस्तारो मन्द्रो गम्भीर उच्यते ।	Deep 2.
	1 2 1 2	
Shrill inarticulate.	कलश्च मधुरोऽव्यक्तो विक्रुष्टो निष्ठुरो मतः ॥१४०॥	Harsh 2.
	1 2 1	
Pleasing.	सान्त्वं स्यान्मधुरं वाक्यं प्रियं सत्यं च सूनृतम् ।	Sweet and true.
	1 2 1 2	
Indistinct 2.	ख्यातं म्लिष्टमविस्पष्टमबद्धं वियुतार्थकम् ॥१४१॥	Senseless 2.
	1 2 1 2	
Spoken rapidly 2.	तूर्णोदितं निरस्तं स्याद् ग्रस्तं लुप्तपदं स्मृतम् ।	Uttered with omission 2.
	1 2 1 2 e	
Sputtered 2.	अम्बूकृतं सनिष्ठीवं ग्राम्यमश्लीलमुच्यते ॥१४२॥	Vulgar 2.
	1	
Significative alteration of voice 1.	भिन्नकण्ठो ध्वनिर्धीरैः काकुरित्यभिधीयते ।	
	1 2	
Consisting of compound words.	समासप्रायमाख्यातं पदजातं च तण्डकम् ॥१४३॥	A period containing many compound words.

a भीमाद्रि, धीमद्धि b दयश्च c भिवद्धं च d उच्चैः स्वरो e श्लीलमिष्यते ।

True, correct 6.	ऋतं[1] सत्यं[2] समीचीनं[3] सम्यक्[4] तथ्यं[5] यथातथम्[6] ।	
Lie, falsehood 5.	अलीकं[1] वितथं[2] मिथ्या[3] मृषा[4] स्यादनृतं[5] तथा ॥१४४॥	
Praise 10.	अर्थवादः[1] प्रशंसा[2] च स्तोत्रमीडा[3][4] स्तुतिर्नुतिः[5][6] ।	
	[a] विकत्थनं[7] स्तवः[8] श्लाघा[9] वर्णना[10] च निगद्यते ॥१४५॥	
Pleasing discourse2.	चटु[1] चाटु[2] प्रियं वाक्यं हृद्यार्थं[1] हृदयङ्गमम्[2] ।	Congenial 2.
News, tidings 4.	वार्त्तोदन्तः[1][2] प्रवृत्तिश्च[3] वृत्तान्तश्च[4] समाः स्मृताः ॥१४६॥	
Legend 2.	अनादिवार्त्ता[1] ह्यैतिह्यं[2][b] किंवदन्ती[1] जनश्रुतिः[2] ।	Rumour 4.
	कौलीनं[3] जनवादः[4] स्याद्विगानं[1] वचनीयता[2] ॥१४७॥	Ill report, defamation 2.
Censure, blame, obloquy, taunt, reproach 8.	अपवाद[1] उपक्रोशो[2] निर्वादावर्णवादपरिवादाः[3][4][5] ।	
	एकार्थाः कथ्यन्ते गर्हा[6] निन्दा[7] जुगुप्सा[8] च ॥१४८॥	
Curse 5.	शाप[1] आक्रोश[2][c] आक्षेपः[3] क्षारणा[4] स्याद्विरूक्षणम्[5] ।	
Exaggerating with latent irony 3.	स्मृताः सोल्लुण्ठ[1]सोत्प्रास[d] सोपहासाः[2][3] समास्त्रयः ॥१४९॥	
Tautology and repetition 2.	अनुलापो[1] मुहुर्भाषा[2] प्रलापो[1]ऽनर्थकं[2] वचः ।	Senseless talk 2.
An outcry.	काक्वा वर्णनमुल्लापः संलापो[1] भाषणं[2] मिथः ॥१५०॥	Conversation 2.
The rustling of dry leaves.	मर्मरः[1] शुष्कपर्णानां विस्फारो[1] धनुषां ध्वनिः ।	The twang of a bow-string
The roaring of elephant.	वृंहितं[1] वारणानां च हेषा[1] ह्रेषा[2] च वाजिनाम् ॥१५१॥	The neighing of horses 2.
Name 6.	आख्या[1] संज्ञाभिधाह्वानं[2][3][4] नामधेयं[5] च नाम[6] च ।	
A tale, a legend 3.	आख्यायिका[1] कथाख्यानं[2][3] प्रह्लीका[e][1] प्रहेलिका[2] ॥१५२॥	A riddle 2.
Repeating twice or thrice.	विदुराम्रेडितं प्राज्ञा द्विस्त्रिर्व्याहरणं[f] च यत् ।	
Praise fame 5.	कीर्तिः[1] श्लोको[2] यशोऽभिख्यासमाख्यास्तुल्यलक्षणाः[3][4][5] ॥१५३॥	

a कविकत्थनं च b ह्यौतिह्यं, ह्यैतह्यं, ढ्यौतिर्यं c आक्षेप आक्षेक्रोशः, शाप आऽक्राशः, आपत्रश्चाक्रोश आक्षेपः d सोत्प्राशोपहासाः, सोत्प्रासः सोपहासाः e प्रबल्हिका f द्विस्त्रिव्या ।

A question 2. — प्रश्नः[1] स्यादनुयोगः[2] पर्यनुयोगो[1] भवेदुपालम्भः[2] । — Reproach 2.

Calling 3. — आकारणमा[1 a] ह्वानं[2] कथयन्त्यभिमन्त्रणं[3] प्राज्ञाः ॥१५४॥

Venerable. — तत्रभवान्[1] भगवानिति[2] शब्दो वृद्धैः प्रयुज्यते पूज्यें ।

A title added to names by way of respect. — पादा इति नामान्ते देवो[1] भट्टारको[2] वापि ॥१५५॥

इति श्रीभट्टहलायुधकृतायामभिधानरत्नमालायां
स्वर्गकाण्डं प्रथमं समाप्तम् ॥ १ ॥

a आकरण।

द्वितीयं भूमिकाण्डम्

1 2 3 4 5 6 7 8
भूर्भूमिर्वसुधावनिर्वसुमती धात्री धरित्री धरा,
9 10 11 12 13 14 15 16 17 18
गौर्गोत्रा जगती रसा क्षितिरिला क्षोणी क्षमा क्ष्माचला ।
19 20 21 22 a 23 24 25
The earth 37. कुः पृथ्वी पृथिवी स्थिरा च धरणी विश्वम्भरा मेदिनी,
26 27 28 29 30 31 32
ज्यानन्ता विपुला समुद्रवसना सर्वंसहोर्वी मही ॥१५६॥
33 34 35 36
काश्यपी भूतधात्री च रत्नगर्भा वसुन्धरा ।
37
धराधारा च विज्ञेया तद्विशेषान्निबोधत ॥१५७॥
1 2 1 b 2
Fertile soil 2. उर्वरा सर्वसस्या भूर्भवेदिरिणमूषरम् । A spot with saline soil 2.
c
खिलमप्रहतं स्थानं मरुर्धन्वा स्थलं स्थली ॥१५८॥
1 2 1 2
Clay 2. मृन्मृत्तिका प्रशस्तासौ मृत्सा मृत्स्नेति कथ्यते । Excellent soil 2.
1 d 1 2
Green with young grass. शाद्वलं हरितं प्रोक्तं नड्वलं नलसंयुतम् ॥१५९॥ Abounding in reeds.
1 1
A country with black soil. कृष्णभूमः प्रदेशोऽसौ यत्र स्यात्कृष्णमृत्तिका । Black soil.
1 1
A country with yellowish soil. पाण्डुभूमस्तथा प्रोक्त उदग्भूमश्च पण्डितैः ॥१६०॥ Fertile soil.
A country which lives on river water. नद्यम्बुजीवनो देशो नदीमातृक उच्यते । Basin.
वृष्टिनिष्पाद्यसस्यस्तु विज्ञेयो देवमातृकः ॥१६१॥ Crop which depends on rains.

a धरिणी b दिरणम् c खिलमप्रहितम् d शाड्वलम् ।

A field which grows 'Moong' a pulse.

मुद्गादीनां क्षेत्रं मौद्गीनं [1]कौद्रवीणमित्यादि ।

व्रैहेयं शालेयं भवति पुनर्व्रीहिशाल्योर्यत् ॥१६२॥

A field which grows "Kodon" a variety of rice. A field of rice or beans, fit for being sown with beans.

A field of sesame.

तिल्यं तैलीनं स्यान्माष्यं माषीणमुम्यमौमीनम् ।

A field of a variety of beans called 'Mash' 'urada'.

A field of hemp.

[1]भङ्ग्यं [2]भाङ्गीनं वा [1]यव्यं [2]षष्टिक्यमेषां च ॥१६३॥

A field of barley.

A field of vegetables.

[1]शाकशाकटमाख्यातमथवा शाकशाकिनम् ।

शाकस्य क्षेत्रमन्येषामेवं क्षेत्रेषु संहतिः ॥१६४॥

Mountain 14.

[1]अचल[2]शिलोच्चय[3]शैल[4]क्षितिधर[5]गिरि[6]गोत्र[7]पर्वता[8]हार्याः ।

[9]नग[10]शिखरि[11]सानुमन्तो [12]धरा[13]द्रि[14]कुध्राश्च तुल्यार्थाः ॥१६५॥

A side or ridge of a mountain.

[1]नितम्बः [2]कटको ज्ञेयः [a][1]सानु [2]प्रस्थं [1]तटं [2]भृगुः ।

Tableland on the top of a mountain, also on level expanse level plain 2.

A slope, declivity, precipice 2.

The top of a mountain 3.

[1]शृङ्गं च [2]शिखरं [3]कूटं [1]निर्झरः [b]प्रस्रवोऽम्भसाम् ॥१६६॥

A waterfall 1.

A cave 5.

[1]गुहा [2]पाषाणसन्धिः स्यात्[3]कन्दरः [4]कन्दरा [5]दरी ।

A bush 2.

[1]निकुञ्जं [2]गह्वरं प्रोक्तं पादाः [c]प्रत्यन्तपर्वताः ॥१६७॥

A stone, a rock 7.

[1]शिलो[2]पला[3]श्म[4]पाषाण[5]ग्रावाणः [6]प्रस्तरो [7]दृषत् ।

A rock fallen from a mountain 1.

गलिताः स्थूलपाषाणा [1]गण्डशैला इति स्मृताः ॥१६८॥

Loadstone, magnet 3.

[1]अयस्कान्तविशेषाः स्युश्[2]चुम्बक[3]भ्रामकादयः ।

A mine 3.

[1]आकरः स्यात्[2]खनि[3]र्गञ्जा [1]रुमा च [2]लवणाकरः ॥१६९॥

A salt-pit 2.

उच्यते गैरिकं धातुस्[1]ताम्रं [2]शुल्व[d][3]मुदुम्बरम् ।

Copper 3.

Brass 2.

[1]आरकूटः स्मृतो [2]रीतिः [1]कांस्यं [2]सौराष्ट्रकं तथा ॥१७०॥

Bell-metal 2.

Iron 8.

[1]गिरिसार[2]मश्मसारं [3]लोहं [4]कालायसं तथा [5]शस्त्रम् ।

[6]तीक्ष्णम[7]यः [8]पारशवं कवयः कथयन्त्यभिन्नार्थम् ॥१७१॥

Lead 2.

[1]सीसकं [2]सीसपत्रं स्याद्[1]वङ्गं च [2]मधुकं [3]त्रपु ।

Tin 3.

Silver 4.

[1]रजतं [2]कलधौतं च [3]रूप्यं [4]तारं च कथ्यते ॥१७२॥

a सानुः b प्रसवो, प्रश्रवो c पर्यन्तपर्वताः d मुदम्बरम् ।

Gold 25.

हेम[1] स्वर्णं[2] जातरूपं[3] सुवर्णं[4],
भर्मं[a 5] रुक्मं[6] हाटकं[7] शातकुम्भम्[8] ।
गाङ्गेयं[9] स्याद्गैरिकं[10] भूरि[11] चन्द्रं[12],
राः[13] कल्याणं[14] निष्कमष्टापदं[15 16] च ॥१७३॥
जाम्बूनदं[17] हिरण्यं[18] कनकमहारजतकाञ्चनानि[19 20 21] स्युः ।
कार्तस्वरचामीकरकर्बुरतपनीयनामानि[22 23 24 25] ॥१७४॥

Emerald 3. अश्मगर्भं[1] मरकतं[2] हरिन्मणिरिति[3] स्मृतः ।

Ruby 2. शोणाश्मा[1] पद्मरागः[2] स्याद्वैदूर्यं[1 b] बालवायजम्[2] ॥१७५॥ The lapis lazuli 2.

Crystal 4. स्फटिकः[1] सूर्यकान्तः[2] स्यादर्काश्मा[3] दहनोपलः[4] ।

A gem, a jewel 3. रत्नं[1] वसु[2] मणिः[3] सर्वं सर्वं[c] लोहं[1] च तैजसम्[2] ॥१७६॥ Any metal 2.

A tree 19.

वृक्षोऽङ्घ्रिपः[1 2 d] क्षितिरुहः[3] शिखरी[4] च शाखी[5],
शालो[6] वनस्पतिरगो[7 8] विटपी[9] कुठश्च[10 e] ।
अद्रिः[11] कुजस्तरुरनोकह[12 13 14] इत्यभिन्नाः,
शब्दा द्रुविष्टरनगद्रुमपादपाश्च[f 15 16 17 18 19] ॥१७७॥

A tree with fruit 1. अवकेशी[1] स विज्ञेयः फलैर्बन्ध्यस्तु यो भवेत् ।

A shrub. क्षुपो[1] ह्रस्वशिफाशाखी[g] फलवान्[1] फलिनः[2] फली[3 h] ॥१७८॥ Bearing fruit 3.

A tree bearing fruit from blossoms. वानस्पत्याः[1] स्मृता वृक्षा ये पुष्प्यन्ति[i] फलन्ति च ।
फलन्ति ये विना पुष्पं तान्वदन्ति वनस्पतीन्[1] ॥१७९॥ A tree that bears fruit without any apparent blossoms.

An annual plant or herb which dies after becoming ripe. फलपाकावसानास्तु बुधैरोषधयः स्मृताः ।

A creeper 5. लता[1] प्रतानिनी[2] वल्ली[3] प्रततिर्व्रततिस्तथा[4 5] ॥१८०॥

a भस्म, हर्म्यं b स्याद्वैडूर्यं c सर्वलोहं d घ्रिपः
e कुटश्च f रनोकुह, द्रुविष्टिरं g ह्रस्वशिखः शाखी, ह्रस्वशिख-शाखी, ह्रस्वशाखःशिखी h स्मृतः i पुष्पन्ति ।

The part below 2.	अवाग्भागो[1] भवेद् बुध्नः[2] प्राग्रं[1] तु शिखिरं[2] शिरः[3] ।	The highest point 3.
The spreading branches and foliage of a tree 2.	विस्तारो[1] विटपः[2] प्रोक्त आरोहस्तु[1] समुच्छ्रयः[2] ॥१८१॥	The heignt of a tree 2.
The trunk of a tree from the root to the branches 2.	स्कन्धादधः[1] प्रकाण्डः[2] स्यात्प्रघाणः[1] स्कन्धं[2] उच्यते ।	The upper part of the stem of a tree 2.
The upper main branch of a tree 2.	स्कन्धशाखा[a][1] तु शाला[2] स्यान्निष्कुटः[1] कोटरः[2] स्मृतः ॥१८२॥	The hollow of a tree 2.
Bark 3.	त्वग्[1]वल्कं[2] वल्कलं[3] प्रोक्तं मज्जा[1] सार[2] उदाहृतः ।	Marrow, pith 2.
The bulbous root 2.	करहाटं[1] भवेत्कन्दः[2] पादो[1] मूलं[2] जटा[3] शिफा[4] ॥१८३॥	The root of a tree 4.
A trench for water dug at the root of a tree 4.	आवाल[1] आलवालः[2] स्यादावापः[3] स्थानकं[4] तथा ।	
	लतोद्गमोऽवरोहस्तु प्रवालः[1] पल्लवाङ्कुरः[2] ॥१८४॥	
A shoot, a sprout, a germ 4.	पल्लवः[3] स्यात्किसलयं[4] वल्लरी[1] मञ्जरी[2] तथा ।	A branching footstalk 2.
A leaf 7.	वर्हं[b][1] पर्णं[2] दलं[3] पत्त्रं[4] पलाशं[5] छदनं[6] छदः[7] ।	
A sprout 1. A shoot 2.	अङ्कूर[1]श्चाङ्कुरः[2] पोक्तो वृन्तं[1] प्रसवबन्धनम्[2] ॥१८५॥	The stalk of flowers or fruit.
Flower 5.	पुष्पं[1] प्रसवः[c][2] कुसुमं[3] प्रसूनकं[4] सुमनसः[5] समाख्याताः ।	
An opening bud 5.	कोरक[1]जालक[2]कलिका[3]कुड्मल[4]मुकुलानि[5] तुल्यानि ॥१८६॥	
Budded, blown 8.	उन्मीलित[1]मुन्मिषितं[2] स्मित[3]मुन्निद्रं[4] विजृम्भितं[5] हसितम्[6] ।	
	उद्बुद्धं[d][7] व्याकोशं[8] पुष्पेषु विकाशवाचकाः[e] शब्दाः ॥१८७॥	
The pollen of flowers 2.	पौष्पं[1] रजः परागः[2] स्यान्मकरन्दो[1] मधुः[2] स्मृतः ।	The nectar of flowers 2.
A cluster of flowers 4.	स्तवको[1] गुच्छको[2] गुच्छो[3][f] गुलुञ्छः[4] परिकीर्तितः ॥१८८॥	
A new fruit.	शलाटुः[g][1] कोमलं प्रोक्त वानं[1] शुष्कफलं[2] भवेत् ।	A dry fruit 2.
A pod 3.	बीजकोशी[1] शमी[2] शिम्बा[3][h] ग्रन्थिः[1] पर्व[2] परुस्तथा[3] ॥१८९॥	A joint or knot of a tree 3.

a स्कन्धशाखास्तु, स्कन्धशाखासु b वर्हं पत्रं दलं पर्णं c प्रसवं
d उद्बद्धं e विकाशं f गुञ्छो गुलुञ्छः, गुंछोगुलुंछः, गुत्सोगुलुंछ, ग्लुछोग्लुंछः,
गुंछोग्लुंछः g शिलाटुः, शलाटुः, शलादुः h शंबा, शंवा, सिबा पर्व परः स्मृतः ।

A shrub, a bush 3.	उलप[1]स्तम्ब[2]गुल्माश्च[3] वीरुधो[1] विटपाः[2] स्मृताः ।	A far spreading creeper 2.
A young grass.	शष्पं[1] बालतृणं[2] प्रोक्तं सर्वं च तृण[1]मर्जुनम्[2] ॥१९०॥	A grass 4.
	घासस्तु[3] यवसः[4][a] प्रोक्तो बर्हि[b][1]र्दर्भः[2] कुथः[3] कुशः[4] ।	Kush grass.
A sort of grass 2.	उलपो[1] वल्वजः[2][c] प्रोक्त इषीका[d][1] काश[2] उच्यते ।	A kind of reed 2.
A sort of grass 2.	हरिताली[1] भवेद्दूर्वा[2] शरो[1] मुञ्ज[2] इति स्मृतः ॥१९१॥	A sort of grass.
Plantain, banana 3.	रम्भा[1] कदली[2] मोचा[3] तृणराजः[1] कथ्यते तल[2]स्तालः[3] ।	The palmyra tree 3.
A kind of tree 2.	कङ्केलि[1]रशोकः[2] स्यादाम्र[1]श्चूत[2]श्च सहकारः[3] ॥१९२॥	The mango tree 3.
The vine 4.	मृद्वीका[1] गोस्तनी[2] द्राक्षा[3] हारहूरा[4] च कथ्यते ।	
A medicinal plant 3.	प्रियङ्गुः[1] फलिनी[2][e] श्यामा[3] कुटजो[1] गिरिमल्लिका[2] ॥१९३॥	A kind of tree 2.
A shrub oleander 2.	करवीरो[1] हयमारो[2] मालूरः[1] श्रीफलो[2] भवेद्बिल्वः[3] ।	A sort of tree 3.
A lime tree 2.	करुणो[f][1] जम्बीरः[2] स्याद्बदरी[1] कुवली[g][2] च कर्कन्धुः[3] ॥१९४॥	The jujube tree, an edible berry 3.
A sort of tree 2.	अर्जुनं[1] ककुभं[2] प्राहुः सालं[1][h] सर्जं[2] च सूरयः ।	A kind of tree 2.
A tree 2.	झाबुकः[1] पिचुलः[2] प्रोक्त इज्जलो[i][1] निचुलः[j][2] स्मृतः ॥१९५॥	A plant 2.
A neem tree 2.	अरिष्टः[1] पिचुमन्दः[2] स्यान्न्यग्रोधो[1] वट[2] उच्यते ।	Banyan tree 2.
The holy fig tree 4.	श्रीवृक्षः[1] पिप्पलो[2]ऽश्वत्थो[3] बुधैर्बोधि[4]श्च कथ्यते ॥१९६॥	
A kind of tree 4.	ब्रह्मवृक्षः[1] पलाशः[2] स्यात्किंशुकश्च[3] त्रिपत्रकः[4] ।	
A plant 2.	महावृक्षः[1] स्नुहिः[2] प्रोक्तः शेलुः[1][k] श्लेष्मातकः[2] स्मृतः ॥१९७॥	A sort of tree 2.
A kind of tree 2.	नक्तमालः[1] करञ्जः[2] स्याद्वृषा[1] वासा[2]टरूषकः[3] ।	A kind of tree 3.
A sort of tree 2.	आरग्वधः[1] कृतमालः[2] स्वर्णपुष्पी[3] च कथ्यते ॥१९८॥	

a यवसं प्रोक्तं b वर्हिर्दर्भकुथः स्मृतः, वर्हिर्दर्भकथः स्मृतः, कुथः कुशः c विल्वजः, बिल्वजः d ईषिका काय, इषीका कास e पलिनी f करणो g कुवला h शालं i इज्जुलः j इचुलः, प्रोक्तः गञ्जलो, प्रोक्तवंजलो k शैलुः शलुः ।

A sort of tree 2.	वृक्षोत्पलः[1] कर्णिकारः[2] पीतसालो[1][a]ऽसनः[2] स्मृतः ।	A sort of tree 3.
A plant 2.	दण्डोत्पलः[1] सहदेवा[2][b] सल्लकी[1] स्याद् गजप्रिया[2] ॥१९९॥	A plant.
A shrub 2.	निर्गुण्डी[1] सिन्दुवारः[2][c] स्यान्मन्दारः[1] पारिभद्रकः[2] ।	A tree 2.
The betel plant.	ताम्बूली[1] नागवल्ली[2] स्याद् गूवाकः[1] पूग[2] उच्यते ॥२००॥	The betelnut tree 2.
The ratan 5.	वानीरो[1] वञ्जुलः[2] शीतो[d][3] विदुलो[4] वेतसः[5] स्मृतः ।	
A plant 4.	गोक्षुरः[1] स्थलश्रृङ्गाटः[e][2] श्वदंष्ट्रा[3] स्यात्त्रिकण्टकः[4] ॥२०१॥	
The cotton plant 5.	पिचव्यो[1] बादरः[2] प्रोक्तः कर्पास[3]स्तूलकं[4] पिचुः[5] ।	
A creeper 2.	कोशातकी[f][1] पटोली[2] स्याद् गिरिकर्ण्य[1]पराजिता[2] ॥२०२॥	A plant 3.
A plant 2.	कथ्यते कृष्णला[1] गुञ्जा[2] तापिच्छः[1] काकतुण्डिका[2] ।	A tree 2.
A tree 2.	किम्पाकः[1] स्यान्महाकाल[2] ओष्ठी[1] विम्बी[2] च तुण्डिका[3] ॥२०३॥	A plant 3.
A bamboo tree 5.	त्वचिसारश्च[1] यो वंशो[2] वेणु[3]त्वक्सार[4]मस्कराः[5] ।	
	स्वनन्ति येऽनिलोद्धूता वेणवस्ते तु कीचकाः[1] ॥२०४॥	A hallow bamboo.
A species of barleria with blue blossoms 1.	नीला झिण्टी भवेद्बाणः[1] पीता सहचरी[1] भवेत् ।	A species of barleria with yellow blossoms 1.
Jasmine 4.	मालती[1] कथ्यते जाति[2]र्मागधी[3] यूथिका[4] तथा ॥२०५॥	
	हेमपुष्पमिह[1] नागकेसरं[2] ,	A kind of tree 2.
	केसरं[1] च वकुलं[2] प्रचक्षते ।	A kind of tree 2.
	कोविदारमपि[1] काञ्चनारकं[2] ,	A kind of tree 2.
	मल्लिकां[1] विचकिलं[2] विचक्षणाः ॥२०६॥	Arabian jasmine 2.
The blossoms of blue amaranth 4.	वर्णपुष्प[1]मम्लानकं[g][2] तथा ,	
	किङ्किरात[3]मुदितं कुरण्टकम्[4][h] ।	

a पीतशालो b सहदेवी c शन्दुवारः, सिन्धुवारः d सीतो e स्थूलश्रृङ्गाटः f केशातकी, शाकातकी पटोला g ममिलानकं, ममिलातकं, मसिलातकं, अमलातकं h कुरुंटकं, करंटकं, कुरुंटकं ।

The china rose 2.

[1]ओड्रपुष्पमभिधीयते [2]जपा ,

Many flowered nyktanthes 2.

[1]सप्तला च [2]नवमालिका स्मृता ॥२०७॥

A plant 2. / A tree 2.

[1]बन्धूकं [2]बन्धुजीवं स्यात्[1]पुन्नागः [2]सुरर्पणिका ।

A plant 4.

[1]अतिमुक्तकमिच्छन्ति [2]वासन्तीं [3]माधवीं [a][4]लताम् ॥२०८॥

A sort of cucumber 4.

[b][1]एर्वारुश्चिर्भटः [2]प्रोक्तो [3][c]वालुकी [4]कर्कटी तथा ।

A pumpkin gourd 2. / A long white gourd 3.

[1]कर्कारुरथ [2]कूष्माण्डस्[1]तुम्ब्य[2]लाबूश्च [3][d]दुग्धिका ॥२०९॥

Forest, wood 8.

[1]अरण्यम[2]टवी [3]सत्त्रं [4]कान्तारं [5]काननं [6]वनम् ।
[7]विपिनं [8]गहनं चेति [e]नातिभिन्नार्थमिष्यते ॥२१०॥

A long tract of forest, a grove or long row of trees, a path in a forest.

तटोपकण्ठे या जाता [1]वनराजी महीभृताम् ।

A land at the foot of a mountain. / Tableland, highland.

[1]उपत्यकां तु तामाहुरुपरिष्टाद[1]धित्यकाम् ॥२११॥
नगरान्नातिदूरेण यः सद्भिरुपरोपितः ।

A grove, a plantation 2.

[f]तरुषण्डः स [1]आरामस्तथो[2]पवनमुच्यते ॥२१२॥

विज्ञेयं प्रमदवनं नृपस्तु यस्मिन् ,
शुद्धान्तैः सह रमते [g]गृहोपकण्ठे ।

A garden.

उद्यानं स्वयमपरैः समं च लोकै--
रन्येषां विभववतां च पुष्पवाटी ॥२१३॥

Elephant 14.

[1]मातङ्ग[2]द्विरद[3]द्विपाः [4]करि[5]गज[6]स्तम्बेरमा[7]नेकपाः ,
[8]कुम्भी[9]कुञ्जर[10]वारणे[11]भ[12]रदिनः [13]सामोद्भवः [14]सिन्धुरः ।

Lion 9.

तुल्यार्थाः कथिता [1]हरि[2]र्मृगपतिः [3]पञ्चाननः [4]केसरी ,
[5]हर्यक्षो [6]नखरायुधो [7]मृगरिपुः [8]सिंहश्च [9]कण्ठीरवः ॥२१४॥

One of the 3 divisions of elephants.

[1]भद्रो [2]मन्दो [3]मृगश्चेति विज्ञेयास्त्रिविधा गजाः ।
वनप्रचारसारूप्यसत्त्वभेदोपलक्षिताः ॥२१५॥

a माधवीलता, माधवीं माधवीं लतां, माधवो लता,
b ईर्वारश्चर्भटः, एर्वारुश्चिर्भटः, एर्वारश्चिर्भटः, एर्वातुश्चितिः, एर्वारुश्चिर्भिटः c वालुंकी d दुश्चिका, दुग्धिका दुधिका, e नातिनानार्थ f तरुखंडः तरुपंडः g कण्ठम् ।

A lump uopn the head of an elephant in rut. 2.	[a][1]मूर्धपिण्डौ स्मृतौ [2]कुम्भौ कुम्भयोरन्तरं विदुः ।	
An elephant's cheek, elephant's temple 3.	[b][1]करटः [2][c]स्यात्कटो [3]गण्डो [1]वमथुः [d][2]करसीकरः ॥२१६॥	Water thrown out by an elephant's trunk 2.
Ichor or juice that exudes from the temple of an elephant in rut 2.	[1]दानं [2]मदो [1]विषाणौ च [2]दशनौ [1]स्कन्ध [2]आसनम् ।	The trunk of an elephant 2. Front part of an elephant's body 2.
	[1]अपाङ्गदेशो [2]निर्याणं [1]कर्णमूलं तु [2]चूलिका ॥२१७॥	The outer corner of the eye cf an elephant 2 The root of an elephant's ear 2.
The forehead of an elephant 2.	[1]अवग्रहो [2]ललाटं [1]स्यादारक्षः [2]कुम्भयोरधः ।	The junction of the frontal sinuses of an elephant 2.
The part of an elephant's head between the tusks.	दन्तयोरुभयोर्मध्यं [1]प्रतिमानं प्रचक्ष्यते ॥२१८॥	
The tip of an elephant's trunk 4.	[1]कराग्रं [2]पुष्करं [3]प्रोक्तमङ्गुलिः [4]कर्णिका मता ।	
The tip or root of an elephant's tail 2	[1][e]पेचकः [2]पुच्छमूलं तु [1]पद्मं स्याद् [2]विन्दुजालकम् ॥२१९॥	The coloured marks on the trunk and face of an elephant2.
An elephant in rut 3.	[1]लग्नः [2]प्रभिन्नो [3]मत्तः [1][f]स्यादुपात्तो [2]मदवर्जितः ।	An elephant out of rut 2.
	[g]तिर्यग्दन्तप्रहारस्तु गजः [1]परिणतो मतः ॥२२०॥	An elephant stooping to strike with his tusks or giving a side blow with his tusks.
Arranged for war 2.	[h][1]सज्जितः [2]कल्पितो ज्ञेयो बहूनां घटना घटा ।	
An elephant's girth 3.	[i][1]चूषा [2]कक्ष्या [3]वरत्रा [h]स्यादालानं स्तम्भ उच्यते ॥२२१॥	
Spurring of an elephant by means of the rider's feet 2.	[1]पादकर्म [j][2]यतं प्रोक्तं [1]यातम[2]ङ्कुशवारणम् ।	Guiding an elephants, with the hook 2.
Pricking an elephant with the goad and striking with the legs.	[k]उभयं [1]वीतमाख्यातं भेदः [1]स्थूलोच्चयो गतेः ॥२२२॥	The middle pace of elephants, a hollow at the root of an elephant's tusk.
The root of the teeth 2.	[1]करीरी [2]दन्तमूलं [1]स्याद्वारी च [2]गजबन्धनम् ।	The place where elephants are tied up 2.
The chain used to secure the hind feet of an elephant 4.	[1]निगडः पादबन्धश्च [2]हिञ्जीरः [3]शृङ्खलो[4]ऽन्दुकः ॥२२३॥	
A young elephant.	[1]कलभः [2]करिपोतः [1]स्यादङ्कुशः [2][l]सृणिरुच्यते ।	A goad for driving an elephant 2.
A royal elephant 2.	[1]औपवाह्यो [2]राजवाह्यः [m][1]सन्नाह्यः समरोचितः ॥२२४॥	An elephant fit for war 1.
A vicious elephant2.	[1]व्यालो [2]दुष्टगजः प्रोक्तो [1]हस्तिनी तु [2]वशा स्मृता ।	The female elephant 2.

a मूर्ध्नि b करकः c कटोगुस्नो, फटो गञ्जो d करशीरः e पेचुकः, पचकः, पेयुकः f स्यादुद्धातो g तिर्यग्दत्त h सजितः i भूषा, कक्षा, वक्षा **j** युतं, पादकमायातं, पादकमायतं **k** उभयो, उभय l शृणि, श्रेणि m सान्नाह्यः, सनाह्यः ।

The china rose 2.

[1]ओड्रपुष्पमभिधीयते [2]जपा ,

Many flowered nyktanthes 2.

[1]सप्तला च [2]नवमालिका स्मृता ॥२०७॥

A plant 2. — A tree 2.

[1]बन्धूकं [2]बन्धुजीवं स्यात्[1]पुन्नागः [2]सुरपर्णिका ।

A plant 4.

[1]अतिमुक्तकमिच्छन्ति [2]वासन्तीं [3]माधवीं [a][4]लताम् ॥२०८॥

A sort of cucumber 4.

[b][1]एर्वारुश्चि[2]र्भटः प्रोक्तो [3]वालुकी[c] [4]कर्कटी तथा ।

A pumpkin gourd 2. — A long white gourd 3.

[1]कर्कारुरथ [2]कूष्माण्डस्तु[1]म्ब्यला[2]बूश्च [3]दुग्धिका[d] ॥२०९॥

Forest, wood 8.

[1]अरण्य[2]मटवी [3]सत्त्रं [4]कान्तारं [5]काननं [6]वनम् ।

[7]विपिनं [8]गहनं चेति नातिभिन्नार्थ[e]मिष्यते ॥२१०॥

A long tract of forest, a grove or long row of trees, a path in a forest.

तटोपकण्ठे या जाता [1]वनराजी महीभृताम् ।

A land at the foot of a mountain. — Tableland, highland.

[1]उपत्यकां तु तामाहुरुपरिष्टाद[1]धित्यकाम् ॥२११॥

A grove, a plantation 2.

नगरान्नातिदूरेण यः सद्भिरुपरोपितः ।

[f]तरुषण्डः स [1]आरामस्तथो[2]पवनमुच्यते ॥२१२॥

विज्ञेयं प्रमदवनं नृपस्तु यस्मिन् ,

शुद्धान्तैः सह रमते गृहोपकण्ठे[g] ।

A garden.

उद्यानं स्वयमपरैः समं च लोकै—

रन्येषां विभववतां च पुष्पवाटी ॥२१३॥

Elephant 14.

[1]मात[2]ङ्गद्विरद[3]द्विपाः [4]करि[5]गज[6]स्तम्बेरमा[7]नेकपाः ,

[8]कुम्भी[9]कुञ्जर[10]वारणे[11]भ[12]रदिनः [13]सामोद्भवः [14]सिन्धुरः ।

Lion 9.

तुल्यार्थाः कथिता [1]हरि[2]र्मृगपतिः [3]पञ्चाननः [4]केसरी ,

[5]हर्यक्षो [6]नखरायुधो [7]मृगरिपुः [8]सिंहश्च [9]कण्ठीरवः ॥२१४॥

One of the 3 divisions of elephants.

[1]भद्रो [2]मन्दो [3]मृगश्चेति विज्ञेयास्त्रिविधा गजाः ।

वनप्रचारसारूप्यसत्त्वभेदोपलक्षिताः ॥२१५॥

a माधवीलता, माधवीं माधवीं लतां, माधवौ लता,
b ईर्वारुश्चर्भटः, एर्वारुश्चिर्भटः, एर्वारश्चिर्भटः, एर्वातुश्चितिः,
एर्वारुश्चिर्भिटः c वालुंकी d दुश्चिका, दुग्धिका
दुधिका, e नातिनानार्थ f तरुखंडः तरुपंडः g कण्ठम् ।

A lump uopn the head of an elephant in rut. 2.	[a][1] मूर्धपिण्डौ स्मृतौ [2] कुम्भौ कुम्भयोरन्तरं विदुः ।	
An elephant's cheek, elephant's temple 3.	[b][1] करटः [2][c] स्यात्कटो [3] गण्डो [1] वमथुः [d][2] करसीकरः ॥२१६॥	Water thrown out by an elephant's trunk 2.
Ichor or juice that exudes from the temple of an elephant in rut 2.	[1] दानं [2] मदो [1] विषाणौ च [2] दशनौ [1] स्कन्ध [2] आसनम् ।	The trunk of an elephant 2. Front part of an elephant's body 2.
	[1] अपाङ्गदेशो [2] निर्याणं [1] कर्णमूलं तु [2] चूलिका ॥२१७॥	The outer corner of the eye cf an elephant 2 The root of an elephant's ear 2.
The forehead of an elephant 2.	[1] अवग्रहो [2] ललाटं [1] स्यादारक्षः [2] कुम्भयोरधः ।	The junction of the frontal sinuses of an elephant 2.
The part of an elephant's head between the tusks.	दन्तयोरुभयोर्मध्यं [1] प्रतिमानं प्रचक्ष्यते ॥२१८॥	
The tip of an elephant's trunk 4.	[1] कराग्रं [2] पुष्करं [3] प्रोक्तमङ्गुलिः [4] कर्णिका मता ।	
The tip or root of an elephant's tail 2	[1][e] पेचकः [2] पुच्छमूलं तु [1] पद्मं स्याद् [2] विन्दुजालकम् ॥२१९॥	The coloured marks on the trunk and face of an elephant2.
An elephant in rut 3.	[1] लग्नः [2] प्रभिन्नो [3] मत्तः [1][f] स्यादुपात्तो [2] मदवर्जितः ।	An elephant out of rut 2.
	[g] तिर्यग्दन्तप्रहारस्तु गजः [1] परिणतो मतः ॥२२०॥	An elephant stooping to strike with his tusks or giving a side blow with his tusks.
Arranged for war 2.	[h][1] सज्जितः [2] कल्पितो ज्ञेयो बहूनां घटना घटा ।	
An elephant's girth 3.	[i][1] चूषा [2] कक्ष्या [3] वरत्रा [h] स्यादालानं स्तम्भ उच्यते ॥२२१॥	
Spurring of an elephant by means of the rider's feet 2.	[1] पादकर्म [j][2] यतं प्रोक्तं [1][2] यातमङ्कुशवारणम् ।	Guiding an elephants, with the hook 2.
Pricking an elephant with the goad and striking with the legs.	[k] उभयं [1] वीतमाख्यातं भेदः [1] स्थूलोच्चयो गतेः ॥२२२॥	The middle pace of elephants, a hollow at the root of an elephant's tusk.
The root of the teeth 2.	[1] करीरी [2] दन्तमूलं [1] स्याद्वारी च [2] गजबन्धनम् ।	The place where elephants are tied up 2.
The chain used to secure the hind feet of an elephant 4.	[1] निगडः पादबन्धश्च [2] हिञ्जीरः [3][4] शृङ्खलोऽन्दुकः ॥२२३॥	
A young elephant.	[1] कलभः [2] करिपोतः [1] स्यादङ्कुशः [2][l] सृणिरुच्यते ।	A goad for driving an elephant 2.
A royal elephant 2.	[1] औपवाह्यो [2] राजवाह्यः [m][1] सन्नाह्यः समरोचितः ॥२२४॥	An elephant fit for war 1.
A vicious elephant2.	[1] व्यालो [2] दुष्टगजः प्रोक्तो [1] हस्तिनी तु [2] वशा स्मृता ।	The female elephant 2.

a मूर्ध्नि b करकः c कटोगुस्नो, फटो गञ्जो d करशीरः e पेचुकः, पचकः, पेयुकः f स्यादुद्धातो g तिर्यग्दत्त h सजितः i भूषा, कक्षा, वक्षा j युतं, पादकमायातं, पादकमायतं k उभयो, उभय l शृणि, श्रेणि m सान्नाह्यः, सनाह्यः ।

An elephant-driver 4.

[1]आधोरणा [2]हस्तिपका [3]हस्त्यारोहा [4]निषादिनः ।

An elephant keeper 2.

[1]गजाजीवास्तु शास्त्रज्ञैर्[2]महामात्रा इति स्मृताः ॥२२५॥

A hog, a boar 8.

[1]कोलः [2]क्रोडः [3]शूकरः स्याद्[4]वराहः ,
[5]पोत्री [6]दंष्ट्री [7]घृष्टिरुक्तः [8][a]किरिश्च ।

Tiger, a hyena 7.

[1]व्याघ्रो [2]द्वीपी [3]पुण्डरीकस्[4]तरक्षुः ,
[5]शार्दूलः स्याच्[6]चित्रकायो [7]मृगारिः ॥२२६॥

Buffalo 5.

[1]महिषः [2][b]सैरिभ उक्तो [3]रक्ताक्षः [4]कासरो [5]लुलायश्च ।

A rhinoceros 3.

[1]वाध्रीणसश्च [2]खड्गी [3]गण्डक इति कथ्यते सद्भिः ॥२२७॥

A bear 4.

[1]ऋक्षा[2]च्छभल्ल[3][e]भाल्लूक[4]भल्लूकाश्च समाः स्मृताः ।

A wolf 4.

[1]अरण्यश्वा [2]बुधैर्ज्ञेयः [3]कोक [3]ईहामृगो [4]वृकः ॥२२८॥

A jackal, a fox 10.

[1]गोमायु[2][d]र्भूरिमायः [e]स्याच्[3]छृगालो [4]जम्बुकः [5]शिवा ।
[f]फेरण्डः [6]फेरवः [7]फेरुः [8]क्रोष्टा [9]च [10]मृगधूर्तकः ॥२२९॥

A kind of deer, an antelope 13.

[1]एणः [2]कुरङ्गो [3]हरिणो [4]मृगः स्यात्
[5]सारङ्ग [6][g]ऋष्यः [7]पृषतो [8]रुरुश्च ।
[9]न्यङ्कुस्तथा [10]रङ्कुरिति प्रसिद्धा ,
[11]वातप्रमी[12]शम्बर[h][13]कृष्णसाराः ॥२३०॥

An ape, a monkey 11.

[1]बलीमुखो [2]मर्कटको [3]वनौकाः ,
[4]प्लवङ्गमः स्यात्[5]प्लवगः [6]प्लवङ्गः ।
[7]हरिः [8]कपिः [9]कीश इमे च शब्दाः ,
[10]शाखामृगो [11]वानर इत्यभिन्नाः ॥२३१॥

a करिश्च, किरश्च, विडिश्व b सेरभ, सेरिभ c भालूकं d भूरिमायु
e स्यात् श्रृगालो, स्याछंगोलो f फेरुण्डः g ऋक्षः
h तप्तसाराः, तप्तस्याराः ।

A kind of monkey 1. Monkey tricks, monkey like behaviour.	[1]गोलाङ्गूल इति प्रोक्तः कृष्णवक्त्रस्तु मर्कटः ।	
	कपेः क्रीडादिकं किञ्चित्कापेयमिति कथ्यते ॥२३२॥	
Porcupine 3.	[1]शललः [2][a]शल्लकः [3]श्वावित्[1]तत्सूची [2]शललं [3]शलम् ।	The quill of a Porcupine 3.
Beast of prey, wild beast.	व्याघ्रादयो वनचराः पशवः श्वापदाः स्मृताः ॥२३३॥	
A kind of lizard 2.	[1]गोधा [b][2]मुशलिका प्रोक्ता [c]गौधेरास्तत्सुता मताः ।	
The geeko 3.	[1]सरटः [2]कृकलासः स्यात्[3]प्रतिसूर्यशयानकः ॥२३४॥	
A mouse, a rat 5.	[1]आखु[2]र्वृषो [3]मूषकः [d][4]स्यादुन्दुरः [5]खनकस्तथा ।	
The musk rat.	[1]छुच्छुन्दरी च विज्ञेया विद्वद्भि[2]र्गन्धमूषिका ॥२३५॥	
The cat 4.	[1]ओतु[2]र्विडालो [3]मार्जारो [4]वृषदंशश्च कथ्यते ।	
A pole cat 3.	[1]जाहको [2]गात्रसङ्कोची [3]मण्डली च बुधैः स्मृतः ॥२३६॥	
	[1]पतन्[2]पतङ्गः [3]पतगः [4]पतत्री ,	
	[5]पत्त्री [6]शकुन्तिः [7]शकुनिः [8]शकुन्तः ।	
A bird 26.	[9]वयो [10]विहायो [11]विहगो [12]विहङ्गो ,	
	[13]विहङ्गमः [14]पत्त्ररथो [15]गरुत्मान् ॥२३७॥	
	[16]शकुनः [17]खगो [18]नगौकाः [19]पक्षी [20]वि[21]र्विष्किरस्तथा[e] [22]विकिरः ।	
	[23]अण्डज[24]नीडज[25]वाजि[26]द्विजाश्च कथिताः समानार्थाः ॥२३८॥	
The wing of a bird 9.	[1]तनूरुहं [2]गरुत्[3]पत्त्रं [4]पतत्रं [5]छदनं [6]छदः ।	
	[7]पिच्छं [8][f]वाजस्तथा [9]पक्षः [1]पक्षमूलं तु [2]पक्षतिः ॥२३९॥	The tip of a bird's wing 2
An egg 2.	[1][g]पेशीकोशः [2]स्मृतोऽण्डश्च [1]कुलायो [2]नीड उच्यते ।	A nest 2.
The beak or bill of a bird 3.	[1]चञ्चुश्च[2]ञ्चूस्तथा [3]त्रोटि[1]र्डयनं गगने गतिः ॥२४०॥	Flying in the air 1.

a शल्यकः b मुशली c गोवेरा, गोधेरा d स्यादुंदरुः, स्यादंदरः
e विर्विकरस्तथा f वाजिस्तथा g पेशी कोशः।

1 केकी 2 शिखी 3 शिखण्डी 4 प्रचलाकी 5 बर्हिणः 6 कलापी च ।
A peacock 10. 7 सर्पाशनो 8 मयूरः 9 शिखावलः 10 श्यामकण्ठश्च ॥२४१॥

A peacock's crest 2. वाणी केका 1 शिखा 2 चूडा 1 चन्द्रको 2 मेचकः स्मृतः । An eye in the feathers of a peacock's tail 2.
A peacock's tail 4. 1 प्रचलाकः 2 शिखण्डश्च 3 कलापो 4 बर्हं उच्यते ॥२४२॥

The cuckoo 5. 1 अन्यभृतः 2 परपुष्टः 3 कलकण्ठः 4 कोकिलः 5 पिकः प्रोक्तः ।
A sparrow 4. 1 कलविङ्कश्चटकः 2 स्याद् 3 गृहबलिभुक् 4 नीलकण्ठश्च ॥२४३॥

A heron 2. 1 क्रौञ्चः 2 क्रुङ्क स्यात् 1 खञ्जनः 2 खञ्जरीटः A wagtail 2.
1 कोकश्चक्र 2 श्चक्रवाको 3 रथाङ्गः । The ruddy goose.
1 दार्वाघाटः 2 सारसः 3 पुष्कराख्यः , The crane, woodpecker 3.
The female crane 2. प्रोक्ता सद्भिः 1 सारसी 2 लक्ष्मणा च ॥२४४॥

A crow 10. 1 अरिष्टः 2 करटः 3 काको 4 बलिपुष्टः 5 सकृत्प्रजः ।
6 एकदृग् 7 बलिभुक् 8 ध्वाङ्क्ष 9 श्चिरञ्जीवी च 10 वायसः ॥२४५॥

An owl 4. 1 उलूकः 2 कौशिकः प्रोक्तो 3 ध्वाङ्क्षाराति 4 र्निशाटनः ।
A raven 5. 1 काकोलो a 2 मौकलि 3 र्द्रोणः 4 कृष्णकाको 5 वनाश्रयः ॥२४६॥

A cock 4. 1 कृकवाकु 2 स्ताम्रचूडः 3 कुक्कुट 4 श्चरणायुधः ।
The blue jay 2. 1 किकिदीविः 2 स्मृतश्चाषः 1 शकुन्तो b 2 भास उच्यते ॥२४७॥ The vulture 2.

The fork tailed shrike 3. 1 भृङ्गः 2 कलिङ्गो 3 धूम्याटः 1 सारङ्ग 2 श्चातको मतः । A kind of bird 2.
A skylark 2. 1 व्याघ्राटस्तु 2 भरद्वाजः 1 शुकः 2 कीर उदाहृतः ॥२४८॥ A parrot 2.

A kind of bird 3. 1 आटिः c 2 शरारि 3 राटिः स्या 1 दुत्क्रोशः 2 कुररो मतः । An osprey 2.
A species of water bird. 1 दात्यूहो 2 जलरङ्कुः स्यात् 1 कोयष्टिः 2 शिखरी स्मृतः ॥२४९॥ A sort of aquatic bird 2.

a मौष्कलि, मौकलि, मौद्गबि　b भाश　c शरारिराख्यात उत्क्रो ।

A crane.	वको[1] वकोटो[2] विज्ञेयो बलाका[1] विसकण्ठिका[2] ।	A sort of female crane 2.
A kite 3.	आतायी[1a] शकुनिश्[2] चिल्लो[3] मद्गुः[1] स्याज्जलवायसः[2] ॥२५०॥	The diver bird 2.
A swan, a gander 4.	हंसाः[1] श्वेतच्छदाः[2] प्रोक्ताश्चक्राङ्गा[3] मानसौकसः[4] ।	
A goose 4.	वारला[1] हंसकान्ता[2] स्याद्वरला[3] वरटा[4] तथा ॥२५१॥	
A flamingo, a sort of goose with red legs and bill.	आताम्रै राजहंसाश्च[1] धार्तराष्ट्राः[1] सितेतरैः ।	A sort of goose with black legs & bill.
	मलिनैर्मल्लिकाख्याश्च कथ्यन्ते चरणाननैः ॥२५२॥	A sort of goose with brown legs and bill.
A drake, a duck.	पक्षैराधूसरैर्हंसाः कलहंसा[1] इति स्मृताः ।	
A sort of falcon 2.	प्रोच्यन्ते प्राचिकाः[1][b] श्येनाश्[2] चटिकाः[1] क्षुद्रपक्षिकाः[2] ॥२५३॥	A small bird 2.
	जीवञ्जीवकपिञ्जलचकोरहारीतवञ्जुलकपोताः ।	
	कारण्डवकादम्बक्रकराद्याः[c] पक्षिजातयो ज्ञेयाः ॥२५४॥	
A bee 13.	मधुकर[1]मधुप[2]मधुव्रत[3]शिलीमुख[4]भ्रमर[5]भृङ्ग[6]पुष्पलिहः[7] ।	
	इन्दिन्दिरा[8]लि[9]षट्चरण[10]चञ्चरीका[d][11]लिनो[12] द्विरेफाः[13] स्युः ॥२५५॥	
A cricket.	झिल्लीका[1] चीरी[2] स्यात्सरघा[1] मधुमक्षिका[2] भवेत्क्षुद्रा[3] ।	A bee 3.
A spider 5.	लूता[1]र्णनाभ[2]मर्कट[3]जालिक[4]क्रमय[e][5]श्च तुल्यार्थाः ॥२५६॥	
A moth 2.	पतङ्गः[1] शलभः[2] प्रोक्तः खद्योतो[1] द्योतिरिङ्गणः[2][f] ।	A glow-worm, a fire-fly 2.
A sort of lizard.	हालाहल[1]श्चाञ्जनिका[2] ज्येष्ठा[1] स्याद् गृहगोधिका[2] ॥२५७॥	A house-lizard.
A village 4.	ग्रामः[1] संवसथो[2] ज्ञेयो ग्रामाधानं[3] च खेटकम्[4] ।	
Born or living in a village 3.	ग्रामीणास्तु[1] निगद्यन्ते ग्राम्या[2] ग्रामेयका[3] इति ॥२५८॥	
	ग्रामान्तिकमुपशल्यं पर्यन्तः परिसरः कटः[1] प्रोक्तः ।	Out skirts of a village or town.
Limit, boundary 5.	अवधि[1]र्मर्यादा[2] स्यादाघाटः[3] सीम[4] सीमा[5] च ॥२५९॥	

a आतापी b प्राचिका सेना चटिका, सेनाश्चिटिका, सेनाश्चिटिकाः c कारंडवकादंबकचक्रकाराद्याः, कारंकारंडवकादंवकराद्याः, कादवः कदंबकः, क्रकराद्याः, कारंडवकादंबकः क्रकराद्याः, कारंडवकादंबकक्रकराद्याः d चिंचिरीका, चिंचरीका, चिरीका e क्रिमयश्च, क्रमयश्च f ज्योतिरिंगिणः, ज्योतिरिंगणः, द्योतिरिंगणः, द्योतिरंगण ।

A way, the road (also सृतिः)
1 2 3 4 5 6 7
अध्वा पन्थाः पद्धतिरेकपदी वर्त्म वर्तनी सरणिः ।
8 9 10 11 12
अयनं पदवी मार्गः पद्या च निगद्यतं निगमः ॥२६०॥

a
ग्रामयोरन्तरं दीर्घं प्रान्तरं परिकीर्त्यते । — A long lonesome or solitary path.

1 2 1 2
A hamlet, a station of cowherds 2. — घोष आभीरपल्लीस्यात्पक्कणः शवरालयः ॥२६१॥ — The hut of a barbarian or chāndāla.

1 2 3 4 5
A cowpen 5. — व्रजः स्याद् गोकुलं गोष्ठं गोवृन्दं गोधनं धनम् ।

1 2 3 1
Rich in cattle. — गोमान् गोमी च गोस्वामी गोविन्दोऽधिकृतो गवाम् ॥२६२॥ — The superintendent of cows 1.

1 2 3 4 5 6
An ox, a bull 11. — उक्षानड्वान्वलीवर्दः ककुद्मान्वृषभो वृषः ।
7 8 9 10 11
ऋषभः सौरभेयो गौर्वाडवेयोऽथ शाक्वरः ॥२६३॥

1 2 1 2
A calf 2. — तर्णकः स्मर्यते वत्सो दम्यो वत्सतरः स्मृतः । — A steer 2.

1
A bull fit for castration. — आर्षभ्यः स च विज्ञेयः षण्ढत्वे यस्य योग्यता ॥२६४॥

1 2 1 2
A large bull 2. — महोक्षः स्यादुक्षतरो वृद्धोक्षस्तु जरद्गवः । — An old ox 2.

1
The bullock attached to the shaft. — धुरं वहति यो धुर्यो धौरेयः स च कथ्यते ॥२६५॥

b 1 2 1 2
An ox carrying burden on his back 2. — स्थूरी स्यात्पृष्ठवाह्यस्तु स्कन्धिकः स्कन्धवाहकः । — An ox carrying burden on his shoulders 2.

1 2 1 2
A bull's hump 2. — अंसकूटस्तु ककुदं सास्ना स्याद् गलकम्बलः ॥२६६॥ — A dewlap 2

c 1 1
The head of an ox. — नीचकी च शिरोदेशः स्कन्धदेशो वहः स्मृतः । — The shoulder of an ox.

1 2 1 2
Nozzled with a string (नस्या) through the nose 2. — नस्योतो नस्तितः प्रोक्तः षोडन् षड्दशनः स्मृतः ॥ — A young ox that has got the first six teeth.

1 2 1 2
An ox whose horns are broken. — भग्नशृङ्गस्तु कूटः स्याद्विषाणं शृङ्गमुच्यते ॥२६७॥ — A horn 2.

1 2 3 4 5 6
अघ्न्या गौर्माहेयी सुरभिर्बहुला च सौरभेयी च ।
7 8 9 10 11
A cow 11. — उस्रार्जुनी च रोहिण्युक्तानडुही बुधैरनड्वाही ॥२६८॥

1 2 1 1 1 2
A cow that has taken the bull 2. A cow for the first time with a calf 2. — वेहद्वृषभोपगता प्रष्ठौही गर्भिणी वशा बन्ध्या । — A barren cow 2.

1 2 1 2 d
A milch cow. — धेनुर्नवप्रसूता वष्कयणी प्रौढवत्सा स्यात् ॥२६९॥ — A cow that has full grown calves.

a परिकीर्तितम् b स्थौरी स्यात्पृष्टि c नीचिकी d च ।

A cow which has miscarried 2.	[1]अवतोका [2]स्रवद्गर्भा [1]भद्रा [2]गौर्गोमतल्लिका ।	An excellent cow 2
A tractable cow 2.	[1]अचण्डी [a 2]सूरता प्रोक्ता [1]वत्सकामा तु [2]वत्सला ॥२७०॥	A cow fond of her calf 2.
An udder 2.	[1]ऊधः स्यादापीनं[2] [1]पीनोध्नी [2]पीवरस्तनी प्रोक्ता ।	A cow with a large udder 2.
An excellent cow 2.	[1]श्रेष्ठा च [2 b]नैचिकी स्याद्[1]द्रोणदुघा [2]प्रचुरदुग्धा च ॥२७१॥	A cow yielding much milk 2.
A cow fit to receive the bull 2.	[1 2]काल्योपसर्या प्रजने प्रसिद्धा,	
A cow that has many calves 2.	[1]परेष्टुका च [c 2]प्रचुरप्रसूतिः ।	
	विंजायते या प्रतिवत्सरं गौः,	
A cow bearing a calf every year.	[1]समांसमीनेति निगद्यतेऽसौ ॥२७२॥	
A cow which has had only one calf, young cow.	[1]गृष्टिः सकृत्प्रसूता स्यात्[1]पलिक्नी [2]बालगर्भिणी ।	A cow for the first time with calf 2.
Coming or got from a cow as milk, curd etc 2.	[1]गव्यं [2]गोसम्भवं सर्वं [1]करीषं [2]गोमयं स्मृतम् ॥२७३॥	Cow dung 2.
Milk 6.	[1]ऊधस्यं [2]क्षीरं स्याद्[3]दुग्धं [4]स्तन्यं [5]पयश्च [6]पीयूषम् ।	
Fresh butter 3.	[1]दधिसारं [2]नवनीतं ब्रुवते [3]हैयङ्गवीनं च ॥२७४॥	
Name of butter-milk 6.	[1]तक्रम[2]रिष्टम[3]ुदश्विद्[4]दण्डाहत[5]कालशेय[6]मथितानि ।	
Thin curd 2.	[1]द्रप्सं [2]दध्यघनं स्यात्[1]सर्पिर्[2]घृतम[3]ाज्यम[4]ाघारः ॥२७५॥	Purified butter 4.
Thick, congealed 2.	[1]शीनं [2]स्त्यानं [1]श्रृतं [2]पक्वं [1]विलीनं [2]द्रुतमुच्यते ।	Cooked, boiled 2. Melted, dissolved, liquified 2.
A churning stick 5.	[1]मन्था [2]मन्थश्च [3]मन्थानो [4]वैशाखः [5]खजकस्तथा ॥२७६॥	
A rope for tying a cattle 3.	[1]सन्दानं [2 d]दामनी [3]दाम पशूनां बन्धनं मतम् ।	
A ram 2.	[1]अजः प्रोक्तः [2]स्तभो [1 e]वस्तश्[2]छागश्[3]छगलकश्[4]छगः ॥२७७॥	A goat 4.
Any young domestic animal.	[1]वर्करः कथ्यते सद्भिः सर्वोऽपि तरुणः पशुः ।	
An animal without horns.	[1]तूवरः श्रृङ्गहीनस्तु पुमान[f]व्यञ्जनश्च यः ॥२७८॥	

a सूरिना, सूरिता b नीचकी, नैचका c प्रवृरप्रवृत्तिः d दामिनी e वस्तः छागः, गछः छागः, वस्तुः छागः, वर्त्संश्च्छागः गछछागछगल, f व्यंजनस्तु ।

1 2 3 4 5 6 7 8
A sheep 8. अविरूर्णायुरभ्रो हुडुरुरणो वृष्णिमेषमेण्ढाः स्युः ।

1 2 3
A ewe's milk 3. अविसोढमविमरीसं स्यादविदूसं च दुग्धमवेः ॥२७९॥

1 2 3 4 5 6 7
A camel 7. दासेरकः क्रमेलक उष्ट्रो मयरवणकरभशृङ्खलकाः ।

1 2 3 4 5
An ass 5. बालेयश्चक्रीवान् खरगर्दभरासभाश्च तुल्यार्थाः ॥२८०॥

1 2 3 4 5 a
A dog 8. कौलेयकः सारमेयो भषणः श्वा च कुर्कुरः ।

6 7 8
शुनको मृगदंशश्च बुधैः शालावृको मतः ॥२८१॥

1 b
A hunting dog 1. मृगव्ये कुशलः श्वा च विश्वकद्रुरिति स्मृतः ।

1 1 2
A mad dog 1. अलर्को रोगितो ज्ञेयः शुनकी सरमोच्यते ॥२८२॥ A bitch 2.

1 c
A yoke of six. पशूनां षट्कसंख्यायां षड्गवं स्मर्यते बुधैः ।

1
A pair, a couple. द्वित्वे च गोयुगं तेषां नामोच्चारणपूर्वकम् ॥२८३॥

1 2 3 d 4
A country 4. नीवृज्जनपदो देश उपवर्तनमिष्यते ।

1 2 3
People, man 3. जनो लोकः प्रजा प्रोक्ता विषयो ग्रामसंख्यया ॥२८४॥

1 2 3 4
A town 11. पत्तनं स्यादधिष्ठानं निगमः पुटभेदनम् ।

5 6 7 8 9 10 11
नगरं नगरी द्रङ्गः स्थानीयं पूः पुरी पुरम् ॥२८५॥

1 2
Capital 2. स्कन्धावार इति प्राज्ञै राजधानी निगद्यते ।

1 2
Suburb 2. शाखानगरमाख्यातं तथोपनगरं बुधैः ॥२८६॥

1 2 1 2
विदेहा मिथिला प्रोक्ता काशिर्वाराणसी स्मृता ।

1 e 2 1 2
अवन्त्युज्जयिनी ज्ञेया कन्यकुब्जा महोदया ॥२८७॥

f 1 2 1 2
An embankment at the gate of a city 2. हस्तिनखः परिकूटं च कथ्यते गोपुरं पुरद्वारम् । Gate of a city 2.

1 2 3 g 1 2
Rampart 3. वप्रं शालं प्राकारमाहुररं कपाटं च ॥२८८॥ The leaf of a door 2.

a कुक्कुरः b कद्रूरिति, विश्वद्भूरिति c षट्त्वं, षड्गु, षड्ग d उपपर्वत ।
e ज्जयनी f हस्तिनखं g हुररकं, हुररि, हुररीं, हुररं, हुररविं ।

Carriage road 3.	[1]प्रतोली [2]विशिखा [3]रथ्या [1]मुखं [2]निःसरणं स्मृतम् ।	The entranee, egress or outlet from a building 2.
A place where several roads meet.	[1]शृङ्गाटकः पथां श्लेषः [2]संस्थानं [a]तु [3]चतुष्पथम् ॥२८९॥	
Building site 2.	[1]गृहभूमिस्तु [2][b]वास्तुः [1]स्याद्वाट [2]आवेष्टको [3]वृतिः ।	A wall, an enclosure 3.
A royal tent.	गृहस्थानं स्मृतं [1]राज्ञागुपकार्यो[2]पकारिका ॥२९०॥	
A dwelling place or a dwelling house 30.	[1]आवासा[2]वसथं [3]गृहं च [4]भवनं [5]स्थानं [6]निशान्तं [7]कुलं ,	
	[8]संस्त्यायो [9]निलयो [10]निकाय्य[11]मुटजं [12]गेहं [13]कुटं [14]मन्दिरम् ।	
	[15]धिष्ण्यं [16]धाम [17]निकेतनं च [18]सदनं [19]पस्त्यं च [20]वास्तु [21]क्षयः	
	[22]शाला [23]वेश्म [24]निवेशनोदवसिते प्रोक्ते च [25]सद्मौ[26]कसी ॥२९१॥	
	[27]शरण[28]मगारं [29]निवसन[30]मालय एकार्थवाचकाः शब्दाः ।	
A lying in chamber 2.	[1]अपवरकं [2]गर्भगृहं [1]संजवनं [2]स्याच्चतुःशालम् ॥२९२॥	A square formed by four houses 2.
A palace, a temple 1.	गृहमिष्टकादिरचितं [1]प्रासादो देवतानरेन्द्राणाम् ।	
A shed for sacrifice 1.	[c][1]आयतनं देवानामन्येषां [d]धनवतां [1]हर्म्यम् ॥२९३॥	Mansion, a palace.
A palace.	सुधाधवलितं सौधं कुट्टिमं बद्धभूमिकम् ।	Paved floor 2.
A platform 2.	[e][1]इन्द्रकोश[2]स्तमङ्गः [1]स्यादट्ट[2]श्चाट्टालको मतः ॥२९४॥	An attic 2.
A kichen 3.	[1]पाकस्थानं [2]रसवती कथ्यते [3]तन्महानसम् ।	
Sleeping room 2.	उशन्ति [1]शयनस्थानं [2]वासागारं विशारदाः ॥२९५॥	
A workshop 2.	[1]आवेशनं [2]शिल्पिशाला [1]वाजिशाला तु [2]मन्दुरा ।	A stable 2.
A shop, a stall 3.	[1]पण्यविक्रयशाला [2]स्यादापणो [3]विपणिस्तथा ॥२९६॥	
A manufactory 2.	[1]कर्मशाला च [2]कारूणामन्वासनमुदाहृतम् ।	
A shed on the road for accommodating passengers with water 2	[1]प्रपा [2]पानीयशाला [1]स्यात्सत्त्रशाला [2]प्रतिश्रयः ॥२९७॥	A poor house 2.

a च   b वास्तुं   c आयतनं च   d धनवतां च
e इन्द्रकोशस्तु, आवेशिनं ।

A shelter.	उपघ्न[1] आश्रयः[2] प्रोक्तो मुनीनां स्थानमाश्रमः ।	Abode of mendicants.
The hut of an ascetic.	मठश्च[1] व्रतिनां स्थानं[a] मण्डपः[1] स्याज्जनाश्रयः ॥२९८॥	A pavilion.
A terrace before a house 3.	वेश्मैकदेशः प्रघणः[1] प्रघाणः[2] स्यादलिन्दकः[3] ।	
A court yard 2.	अजिरं[1] प्राङ्गणं[2] प्रोक्तं वेदिका[1] च वितर्दिका[2] ॥२९९॥	A raised square ground 2.
The gate of a city 3.	द्वार्द्वारं[1][2] बलजं[3] ज्ञेयमर्गला[1] परिघः[2] स्मृतः ।	A bolt 2.
The rentil of a door.	उत्तरङ्गं[1] मतं तिर्यक् द्वारस्योपरि दारु यत् ॥३००॥	
Buntings 2.	बुधैर्वन्दनमाला[1] तु[b] तोरणं[2] परिकीर्त्यते ।	
A ladder flight of stairs 4.	आरोहणं[1] स्यात्सोपानं[2] निःश्रेणि[3]रधिरोहिणी[4][c] ॥३०१॥	
Threashold 2.	गृहावग्रहणी[d][1] प्रोक्ता देहली[2] तु[e] मनीषिभिः ।	
A brush, a broom 2.	संमार्जनी[1] वर्धनी[2] स्यात्सङ्करो[1]ऽवकरः[f][2] स्मृतः ॥३०२॥	Dustsweepings 2.
The wooden frame of a roof 2.	आच्छादनं[1] स्याद्वलभी[2] गृहाणां ,	
A beam supporting the frame-work of a roof.	गोपानसी[1] दारु च वक्रसंस्थम् ।	
Eaves.	नीव्रं[g][1] वलीकं[2] पटला[3] तमाहुः ,	
A dove cot.	कपोतपाली[1][h] च विटङ्कसंज्ञा[2][i] ॥३०३॥	
An airhole, a little round window 4.	वातायनो[1] गवाक्षश्च[2][j] जालकं[3] जालमुच्यते[4] ।	
An inner court of a palace 2.	कक्षान्तरं[1] प्रकोष्ठं[2][k] च चन्द्रशाला[1] शिरोगृहम्[2] ॥३०४॥	An upper storey 2.
A kind of palace.	स्वस्तिको[1] वर्धमानश्च[2] नन्द्यावर्तादयस्तथा[3] ।	
	विच्छन्दकविशेषाः[4] स्युरमी भूपतिवेश्मनाम् ॥३०५॥	
Retinue, follower, family 7.	परिवारः[1] परिकरः[2] परिस्पन्दः[3][l] परिग्रहः[4] ।	
	तथोपकरणं[m][5] प्रोक्तं परिबर्हः[6] परिच्छदः[7][n] ॥३०६॥	

a व्रतिनां शाला b च c रोहणी d गृहाचगृहिणी e च f वस्करः, विक्किरः g नीर्ध्रं h पालीं i संज्ञाम् j गवाक्षस्तु k प्रकोष्टं स्यात्, प्रकाष्टं तु l परिस्यन्द m तथोपकारणं n परिछन्दः ।

Bed 5.	[1]पर्यङ्कः [2]शयनं [3]शय्या [4]तल्पं च [5]तलिनं स्मृतम् ।	
A fence 2.	[a][1]अपाश्रयस्तु विद्वद्भिः कथ्यते [2]मत्तवारणः ॥३०७॥	
A blanket.	[1]प्रवेण्या[2]स्तरणं [3]वर्णः [4]परिस्तोमः [5]कुथः [6]कुथा ।	
	[b][7]नवतं चेति तुल्यार्थाः [1]प्रच्छदश्चो[2]त्तरच्छदः ॥३०८॥	A cover, a wrapper 2
A screen surrounding a tent 2.	[1]अपटी [2]काण्डपटः स्यात्[1]प्रतिसीरा [2]जवनिका [3]तिरस्करिणी ।	A curtain 3.
A pillow 3.	[1]उच्छीर्षक[2]मुपधानं धीरै[3]रुपवर्हमाख्यातम् ॥३०९॥	
An awing, a canopy 4.	[1]चन्द्रोदयो [2]वितानं स्या[3]दुल्लोचः [4]कदकस्तथा ।	
A fan 2.	[1]व्यञ्जनं [2]तालवृन्तं च [1]विष्टरः [2]पीठ[3]मासनम् ॥३१०॥	A seat, a chair 3.
A couch 2.	[1]वेत्रासनं तथा[2]सन्दी [1]कङ्कतं [2]केशमार्जनम् ।	A comb 2.
A wooden shoe 4.	[1]पादुका[2]नुपदीना स्या[3]दुपानत्[4]पादरक्षणम् ॥३११॥	
A wooden spoon or ladle 4.	[1]दर्वी [2]तर्दूश्च [c][3]खजिका कथ्यते [4]दारुहस्तकः ।	
A basket 2.	[1]पेटां वदन्ति [2]मञ्जूषां [1]कुशूलं [2]धान्यकोष्ठकम् ॥३१२॥	A granary 2.
A frying pan 2.	[1]अम्बरीषो भवेद् [2]भ्राष्ट्रः [1]कन्दुः [2]स्वेदनिका स्मृता ।	An iron plate for baking cakes (तवा)
An oven 4.	[1]चुल्ल्य[2]श्मन्तक[d][3]मुद्ध्मानं स्मृता[4]धिश्रयणी बुधैः ॥३१३॥	
A portable stove 3.	[1]अङ्गारशकटीं [2]प्राहुर्हसन्तीं च [3]हसन्तिकाम् ।	
A pot 6.	[1]उखा [2]स्थाली [3]चरुः [4]कुम्भी [5]पिठरं [6]कुण्डमुच्यते ॥३१४॥	
A boiler 2.	[1]कटाहः [2]कर्परो ज्ञेयो [1]भृङ्गारः [2]कनकालुका ।	A golden vase 2.
A dish 3.	[1]शालाजिरो [2]वर्धमानः [3]शरावः स्मर्यते बुधैः ॥३१५॥	

a उपाश्रयस्तु, आयाश्रयस्तु, अपाश्रियस्तु b नवनं c खंजक, खजक, खदिका, खजाका d मुध्मानं, मुद्धानं, मुद्रानं, मध्वानं ।

A kind of drinking vessel 2. | a 1 2 1 2 कोशिका मल्लिका प्रोक्ता पिधानं स्यादुदञ्चनम् । | A lid, a cover 2.

A water-jar 14. | 1 2 3 4 5 6 घटः करीरः कलशः कुटः कुम्भो निपः स्मृतः ॥३१६॥

7 8 9 10 कर्करी करकः प्रोक्तो वर्धनी च गलन्तिका ।

11 b 12 13 14 गर्गरी मन्थनी प्रोक्ता मणिकः स्यादलिञ्जरः ॥३१७॥

Sour gruel 9. | 1 2 3 c 4 5 धान्याम्लमारनालं सन्धानं काञ्जिकं च सौवीरम् ।

6 7 8 9 d अभिषवमवन्तिसोमं तुषोदकं शुक्तमिच्छन्ति ॥३१८॥

Boiled rice 7. | 1 2 e 3 4 5 6 f 7 अन्धः कूरं भक्तं दिदीविरन्नं तथौदनो भिस्सा ।

Food 2. | 1 2 1 2 g 3 अशनं स्यादाहारः पूपापूपौ च पूपलिका ॥३१९॥ | A ricecake 3.

Rice gruel 5. | 1 2 3 4 h 5 यवागूरुष्णिका श्राणा तरला च विलेपिका ।

Savoury food, a dainty dish made of milk 3. | i 1 2 3 क्षैरेयी पायसं गोक्तं परमान्नं च सूरिभिः ॥३२०॥

Sweets 2. | j 1 2 k 1 2 मिष्टान्नं व्यञ्जनं ज्ञेयं वेषवार उपस्करः । | Condiment 2.

Whey 2. | 1 2 1 2 दधिमण्डो भवेन्मस्तु करम्भो दधिसक्तवः ॥३२१॥ | Barley meal mixed with coagulated milk 2.

A kind of broth; made of or from or mixed or sprinkled with coagulated milk 3. | 1 2 3 1 2 दाधिकं संस्कृतं दध्ना सार्पिषं सर्पिषा स्मृतम् । | Dressed or cooked with clarified butter 2.

Salted prepared with brine, briny. | लवणोदकसंसिद्धमुदलावणिकं m मतम् ॥३२२॥

1 2 3 अङ्गारेषु विपक्वं मांसं भूतिर्भरूटकं भृष्टम् । | Roasted meat 3.

Dressed or boiled in a pot 2. | n 1 2 1 2 उख्यमुखासंसिद्धं शूले शूल्यं भटित्रं च ॥३२३॥ | Roasted on a spit 2.

Coagulated milk 2. | 1 2 किलाटः कूर्चिका चेति क्षीरस्य विकृती उभे ।

Raw sugar 1. गौडी Spirit distilled from molasses 1. | o 1 1 1 2 फाणितविकृतिर्गौडी मत्स्यण्डी खण्डशर्करा: ॥३२४॥ | Granulated sugar 2.

a कौशिका b मन्थिनी c काञ्चिकं d शुक्ति, सुक्त, शिक्ल e क्रूरं f तथोदनं भित्सा, तयोदनो भित्सा, तथोदनी भित्सा g पूपिका h तरणं, तरुणं, नरणं i क्षीरेयी, क्षैरेयं, क्षेरेयं j मिष्टान्नं भोजनं ज्ञेयं k वेसवार, वेशवार l करंबो m स्मृतम् n उख्यमुखायां, उख्यमुखाया o फाणितं, फणितं ।

[1]वल्भनम[2]भ्यवहारः [3]प्रत्यवसानं च [4]जेमनं [5]जग्धिः ।
Eating 11. [6]खादन[7]मशनं [8]भक्षण[9]माहारो [10]भोजनं [11]स्वदनम् ॥३२५॥
Enough 2. [1]पर्य्याप्त[2]मुपसम्पन्नं [1]तृप्तिः [2]सौहित्यमुच्यते । Satisfaction 2.
The remnants of food 2. [1]विघसो [2]भुक्तशेषं स्याद्[1]भुक्तोच्छिष्टं तु [2]फेलिका ॥३२६॥ The leavings of foods 2.
A vessel 4. [1]अमत्रं [2]भाजनं [3]पात्रं [4]स्थालं तुल्यार्थमिष्यते ।
A goblet. [1]गल्वर्कश्चा[a 2]नुतर्षश्च [3]चषकः [4]सरकः स्मृतः ॥३२७॥
Liquor shop. [1]आपानं [2]पानगोष्ठी स्यात्[b 1]सपीतिः [2]सहपानकम् । Drinking in company 2.
A relish, a stimulant to drink3. [c 1]उपदंशा[2]वदंशौ च [3]चक्षणं सम्प्रचक्षते ॥३२८॥

Intoxicating drink 24.

[1]मध्वा[2]सवः [3 d]शीधु [4]सुरा [5]प्रसन्ना ,
[e 6]परिस्रुता स्यान्[7]मदिरा [8]मदिष्ठा ।
[9]कादम्बरी [10]स्वादुरसा च [f 11]शुण्डा ,
[12]गन्धोत्तमा [13]माधवकश्च [14]हाला ॥३२९॥

[15]कल्यं [g 16]कश्यं तथा [17]मद्यं [18]मैरेयं [19]कापिशायनम् ।
[20]माध्वीक[21]मासवः प्रोक्तः [22 h]परिस्रुद्[23]वारुणी [24]मधु ॥३३०॥
Man, people 12. [1]मनुष्यो [2]मानुषो [3]मर्त्यो [4]मनुजो [5]मानवो [6]नरः ।
[7]पुमान्[8]पञ्चजनो [9]ना च [10]पुरुषः [11]पूरुषश्च [12]विट् ॥३३१॥

Learned, intelligent, wise 28.

[1]धीरो [2]धीमान् [3]लब्धवर्णो [4]विपश्चिद् ,
[5]वृद्धो [6]विद्वान् [7]प्राप्तरूपो[8]ऽभिरूपः ।
[9]सूरिः [10]प्राज्ञः [11]पण्डितः [12]सन्[13]मनीषी ,
[14]ज्ञो [15]दोषज्ञः [16]कोविदः स्यात्[17]प्रबुद्धः ॥३३२॥

a चानुकर्षश्च b स्यात्सम्पीतिः c उपदंशौ d सीधु e परिश्रुता, परिभृता f सुंडा, सुडा g कस्यं h परिश्रुद्वा, परिशुद्धा, परिभृद्धा ।

18 19 20 21 22 23 24
बुधः सुधीः कृती कृष्टिः कविर्व्यक्तो विशारदः ।
25 26 27 28
विचक्षणश्च मेधावी संख्यावान्मतिमान्मतः ॥३३३॥

Understanding, intellect 13.

1 2 3 4 5 6 7
प्रेक्षा प्रज्ञा प्रतिभा धीर्धिषणा शेमुषी मनीषा च ।
8 9 10 11 12 13
बुद्धिर्मतिश्च मेधा संख्या संवित्तिरुपलब्धिः ॥३३४॥

Skilful, clever, dexterous, accomplished 11.

1 2 3 4 5
चतुरः स्यात्क्षेत्रज्ञः कृतहस्तः कृतमुखश्च कृतकर्मा ।
6 7 8 9 10 11
दक्षः कुशलोऽभिज्ञो निष्णातः शिक्षितः प्रवीणश्च ॥३३५॥

Stupid, foolish, ignorant 11.

1 2 3 4 5 6
वैधेयो बालिशो बालो जडो जाल्मो यथोद्गतः ।
7 8 9 10 11
मूढो मन्दो विवर्णश्च मूर्खः स्यान्मातृशासितः ॥३३६॥

Bad, inferior, low, vile 13.

1 2 3 a 4 5 6 7
अर्वाणमणकमपसदमवममवद्यं निकृष्टमपकृष्टम् ।
8 9 10 11 12 13
अधमं चेलं काण्डं खेटं पापं च रेफसं प्राहुः ॥३३७॥

A thief, a robber 10.

1 2 3 4 5
ऐकागारिकतस्करदस्युप्रतिरोधकाः परास्कन्दी ।
6 7 8 9 10
चौरो मलिम्लुचः स्यात्परिमोषी पारिपन्थिकः स्तेनः ॥३३८॥

A thief who steals in the very sight of the possessor.

1
पश्यतो यो हरत्यर्थं स चौरः पश्यतोहरः ।
1 2 3
द्रव्यं ह्यपहृतं लोप्त्रं स्तेयं चौर्यमिति स्मृतम् ॥३३९॥

Theft, stolen property 3.

A shoplifter, a cloth-stealer 2.

Bound, tied 3.

b 1 2 1 2 3
पाटच्चरः पटचौरो बद्धो नद्धश्च संयतः ।

Conferring happiness 4.

1 2 3 4
क्षेमङ्करो रिष्टतातिः शिवतातिः शिवङ्करः ॥३४०॥

Dependent, submissive 8.

1 2 3 4
परवांस्तु पराधीनो निघ्नः परवशस्तथा ।
5 6 7 8
परतन्त्रः परायत्तः परच्छन्दश्च गृह्यकः ॥३४१॥

Cruel, hard 6.

1 2 3 c 4 5 6
कठोरः कठिनः क्रूरः कक्खटः कर्कशो दृढः ।

Fat 5.

d 1 2 3 4 5
उच्यते बहुलः स्थूलः पीनः पीवा च पीवरः ॥३४२॥

a पशदम b पाटचरः पट्टचौरो c कखटः, कषडः, कषढः, कर्कशो दृढ उच्यते d बहल ।

Master, lord 10.
[a][1]अर्यः [2]परिवृढः [3]स्वामी [4]प्रभुर्[5]नेता च [6]नायकः ।
[7]अधिभूर्[8]अधिपः प्रोक्तो [9]ह्यधीशो[10]ऽधिपतिस्तथा ॥३४३॥

An ascetic 7.
[1]तपस्वी [2]संयतः [3]शान्तो [4]मुनिर्[5]लिङ्गी [6]यतिर्[7]व्रती ।

A Buddihst mendicant 7.
[b][1]रजोहरणधारी च [2]श्वेतवासाः [3]सिताम्बरः ॥३४४॥
[4]नग्नाटो [5]दिग्वासाः [6]क्षपणः [7][c]श्रमणश्च [1]जीवको [2]जैनः ।

A Jain mendicant 5.
[3]आजीवो [d][4]मलधारी [5][e]निर्ग्रन्थः कथ्यते सद्भिः ॥३४५॥

A wicked person 10.
[1]दुर्जनः [2]पिशुनः [3]क्षुद्रो [4]नीचः [5]कर्णेजपः [6]खलः ।
[7]दोषग्राही [8]पुरोभागी [9]द्विजिह्वो [10]मत्सरी मतः ॥३४६॥

Mean, miserly stingy 9.
[1]कदर्य[2]हीन[3]कीनाश[4]किम्पचान[5]मितम्पचाः ।
[6]कृपण[7]क्षुल्लक[8]क्लीव[9]क्षुद्रा एकार्थवाचकाः ॥३४७॥

Poor 6.
[1]क्षुद्र[2]दरिद्रा[3]किञ्चन[4]दुर्विध[5]दुःस्थाश्च [6]दुर्गताः प्रोक्ताः ।

Low, vile 5.
[f][1]इतर[2]प्राकृत[3]पामर[4]पृथग्जना [5]वर्वराश्च तुल्यार्थाः ॥३४८॥

Hypocrite, illusive, crafty 10.
[g][1]दाण्डाजिनिकः [2]कुहकः [h][3]कार्पटिको [4]जालिकश्च [5]कौसृतिकः ।
[6]धूर्तो [7]व्यंसक उक्तो [8]मायावी [9]मायिको [10]मायी ॥३४९॥

Voracious 5.
[1]आद्यूनः [2]स्यादौदरिको [3]भक्षको [4]घस्मरो[5]ऽद्मरः ।

Insatiable.
[1]तमसेचनकं प्राहुस्तृप्तिर्यस्य न जायते ॥३५०॥

Maintained by others 4.
[1]परान्नः [2]परपिण्डादः [3]परजातः [4][i]परैधितः ।

Eating all kinds of food 2.
[1]सर्वान्नीनः [2]सर्वभक्षो [1]मांसादी [2][j]शौष्कलः स्मृतः ॥३५१॥

Meat-eater 2.

a आर्यः परिदृढ़ः b ऋजोहरिण, ररोहरण c श्रवणश्च d मधमारी e निर्गंथः, निग्रन्थः f इतरः g दण्डाजनिका, दांडाजनिकः, दंडाजनिकः, दांडोजनिकः, दंडाजिनकः h कापटिके i परैधिकः, परैधूंतः । j सौष्कलः, मौष्कलः, मौष्कलिः, मोष्कलिः ।

Prone or inclined to, bent on or intent upon, engrossed by 4.

1 2 3 4

उच्यते प्रवणः प्रह्वस्तत्परश्च परायणः ।

Conversant with 4.

1 a 2 3 4

व्युत्पन्नः प्रहतः क्षुण्णः संस्कृतश्च निगद्यते ॥३५२॥

Hankering after, addicted to, longing for 5.

1 2 b3 4 5

लोलुभं लोलुपं लोलं लालसं लम्पटं विदुः ।

Quick 3.

1 2 3 c1 d2

प्रतूर्णस्त्वरितस्तूर्णे उत्सुकः प्रसृतः स्मृतः ॥३५३॥ Desiring 2.

A valorous warrior 5.

1 2 3 4 5

शूरो वीरश्च विक्रान्तो भटश्चारभटो भवेत् ।

Timid, frightened, afraid, agitated 8.

1 2 3 4 5 6

दरितश्चकितो भीतस्त्रस्तो भीरुश्च कातरः ॥३५४॥

7 8

क्षुभितः शङ्कितश्चेति नातिनानार्थवाचकाः ।

Generous, noble 8.

1 2 3 4

महोत्साहो महोद्योगो महेच्छः स्यान्महामनाः ॥३५५॥

5 6 e7 8

उदात्तश्च तथोदीर्णो महात्मोदार उच्यते ।

Rich, wealthy 7.

1 2 3 4 5 6 7

आढ्यः समृद्धो धनवानिन ईशो धनीश्वरः ॥३५६॥

Diligent in supporting ones family 2.

f 1 g 2

अभ्यागारिकमिच्छन्ति कुटुम्बव्यापृतं जनाः ।

A traveller 5.

1 2 3 4 5

पान्थोऽध्वगोऽध्वनीनः स्यादध्वन्यः पथिकस्तथा ॥३५७॥

Light footed, swift 3.

h1 2 3 1 2

जङ्घालो जवनो वेगी पाथेयं शम्बलं स्मृतम् । Provender for journey 2.

A guest 4.

i 1 2 j 3 4

आवेशिकः प्राघुणक आगन्तुरतिथिः स्मृतः ॥३५८॥

Hospitality 3.

1 2 3

आतिथेयं तथातिथ्यमातिथेयी च कथ्यते ।

A beggar 4.

1 2 3 4 k

अर्थी मार्गणकः प्रोक्तो याचकश्च वनीपकः ॥३५९॥

Begging, solicitation 5.

1 2 3 4 5

अध्येषणैषणा याच्ञा याचना प्रार्थना स्मृता ।

Hungry 5.

l 1 2 3 4 5

क्षुद्वान्बुभुक्षितः प्सातो जिघत्सुः क्षुधितस्तथा ॥३६०॥

a प्रहितः b प्रोक्तं c उत्सकः d प्रस्ततः, प्रसितः e महात्म्यो, माहात्म्यो f आभ्यागा g कुटम्ब h जंवालो, जांघालो, जंघाजो i आवेशकः j प्राघुणिक, प्राद्युणिक k वनीयकः l क्षुद्वान् बुभुक्षितप्सतो, क्षुद्वान्, बुभुक्षितप्सातो ।

Hunger 6.	अशनाया[1] बुभुक्षा[2] प्सा[3] जिघत्सा[4]क्षुत्[5]क्षुधा[6]: समाः ।	
Angry 5.	कोपनः[1] क्रोधनः[2] क्रोधी[3] रोषणः[4] स्यादमर्षणः[5] ॥३६१॥	
Anger 5	कोपः[1] क्रोधस्तथा[2]मर्षो[3] रोषः[4] प्रतिघ[5] उच्यते[a] ।	
Thirsty 4	तृषित[1]स्तर्षितः[2] प्रोक्तः पिपासुश्च[3] पिपासितः[4] ॥३६२॥	
Thirst 5	उदन्या[1] तर्ष[2]तृट्[3]तृष्णा[4]पिपासाश्च[5] समाः स्मृताः ।	
Covetous, greedy 6	तृष्णको[b][1] गर्धनो[2] गृध्नु[3]र्लिप्सु[4]र्लुब्धो[5]ऽभिलाषुकः[6] ॥३६३॥	
Covetousness, desire 6.	तृष्णा[1]भिलाषो[2] लिप्सा[3][c]शा[4] धनाया[5] गर्धनो[6]च्यते ।	
Dumb, speechless 2.	अधरो[1] हीनवादी[2] स्यात्प्रसक्तः[1] प्रसृतः[d][2] स्मृतः ॥३६४॥	Longing for 2.
A slave, a servant.	दासो[1] दासेरक[2]श्चेटो[3] भुजिष्यः[4] किङ्करो[5] मतः ।	
Gentle or pleasant discourse 2.	श्लक्ष्णो[1] मधुरवाक्[2] प्रोक्तः स्थूललक्षो[1] बहुव्ययी[2] ॥३६५॥	Munificient 2.
Affable in address.	प्रियवाग्दानशीलश्च[1] वदान्यः[2] परिकीर्तितः ।	
Despised 4.	भवेदक्षिगतो[1] द्वेष्यः[2] प्रणाय्यो[e][3]ऽसंमतो[4] मतः ॥३६६॥	
Handsome pleasing 5.	चक्षुष्यः[1] सुभगो[2] ज्ञेयो वल्लभो[3] दयितः[4] प्रियः[5] ।	
A poltroon, a dunghill-cock 3.	गेहेनर्दी[1] गेहेशूरः[2] पिण्डीशूरश्च[3] कथ्यते ॥३६७॥	
The dog in the manger 1.	स्थानस्थो यो परान् द्वेष्टि गोष्ठश्वं[1] तं विदुर्बुधाः ।	
	असौ पञ्चजनीनः स्याद्यो भाण्डादिरतो नरः ॥३६८॥	An actor, a mimic.
A passionless saint 2.	वैरङ्गिको[1] विरागार्हो[2] धनवानस्तिमान्[1][f][2]मतः ।	Rich 2.
A messenger 2.	प्रेष्यः[g][1] प्रोक्तः परिस्कन्दः[2] कर्मशूरश्च[1] कर्मठः[2] ॥३६९॥	A careful worker, one who works scrupulously.
Skilful, clever.	अलङ्कर्मीण[1] इत्युक्तः कर्मशीलस्तु यः पुमान् ।	
Swift, quick 2.	उत्ताल[1]स्त्वरितो[2] ज्ञेयो विश्रब्धः[1] स्थिर[2] उच्यते ॥३७०॥	Trustworthy, reliable 2.

a इष्यते b तृश्चिको c लिप्सा च शायनाया, लिप्सा च शाधनाया, लिप्सा स्याद्धनाया, लिप्सास्याद्धनाया d प्रसितः e प्राणघः, प्रेणायः, प्राणाच्छायः, प्रोणाद्यः, प्राणाय्ये f स्तिमान्स्मृतः, स्तिवान्मतः, स्तिभवामतः g प्रेक्षः प्रेक्ष्यः ।

	तीक्ष्णोपायेन योऽन्विच्छेत्स [1]आयःशूलिको मतः ।	A man who, in order to gain an object, uses forcible instead of gentle means.
Painful.	[1]अरुन्तुदः [2]स्याद्व्यथको [1]वियातो [2]धृष्ट उच्यते ॥३७१॥	Bold, impudent.
Hurtful.	[1]शरारु[2]र्घातको [3]हिंस्रो [4]नृशंसः [5]क्रूरकर्मकृत् ।	
Righteous 3.	[1]साधुः [2]सज्जन [3]आर्यः [1]स्याद्गृहमेधी [2]गृहाधिपः ॥३७२॥	A house holder 2.
	[1]कुशाग्रीयमतिः प्रोक्तः [2]सूक्ष्मदर्शी च यः पुमान् ।	Acute, sharp-minded 2.
Intelligent, thoughtful 2.	[1]चिद्रूपः [2]स्यात्सहृदयः [1]सहस्तः [2]शिक्षितायुधः ॥३७३॥	Skilled in handling weapons 2.
An eloquent.	[1 a]समुखः स खलु प्रोक्तो यो वक्ति प्रतिभान्वितः ।	
	नीलीरागः स विज्ञेयः स्थिरप्रेमा च यः पुमान् ॥३७४॥	Firm and constant in affection or attachment.
Unsteady in affection or attachment.	क्षणमात्रानुरागी च हरिद्राराग उच्यते ।	
Best 2.	[b 1]शाली [2]श्रेयान[1]धृष्टौ च प्रोक्तौ [2]शालीनशारदौ ॥३७५॥	Diffident, bashful.
	दूरार्थानर्थसन्दर्शी [1]दीर्घदृष्टिः प्रकीर्तितः ।	Foresighted.
Quick witted.	[1]प्रत्युत्पन्नमतिर्ज्ञेयस्तत्कालोत्पन्नधीर्नरः ॥३७६॥	Talking no matter, deserving no matter, deserving no reply, talking nonsense.
Fatalist.	यद्भविष्यो [1]दैवपरो [1]यद्वदः [2]स्यादनुत्तरः ।	
Stupid 2.	[1]अज्ञो [2]मातृमुखः प्रोक्तो [1]दुर्मुखो [2]मुखरः स्मृतः ॥३७७॥	A foul-mouthed 2.
Speaking improperly 2.	[1]कद्वदो [2]गर्ह्यवादी [c]स्यात्[1]कट्वरः [2]कुत्सितो भवेत् ।	Contemptible despised 2.
At the end of compounds, anything excellent or prominent of its kind.	[d 1]प्रकाण्डोद्घौ प्रशंसायामाक्षेपे [1]हतकः स्मृतः ॥३७८॥	Taunt.
Proud 2.	[1]अहंयुः [2]स्यादहङ्कारी [1]शुभंयुः [2]शुभसंयुतः ।	Happy 2.
Independent.	[1]यथाकामी [2]स्वरुचिः [3]स्यात्स्वच्छन्दो [4]निरवग्रहः ॥३७९॥	
Searching, enquiring 2.	[1]अन्वेष्टा[2]नुपदी प्रोक्तः [1]प्रतिभू[2]र्लग्नकः स्मृतः ।	Surety sponsor 2.
Convalescent 3.	[1]रोगादुन्मुक्त [2]उल्लाघः [1]कल्यो [e 2]वार्त्तो [3]निरामयः ॥३८०॥	Healthy 3.
Long lived 2.	[1]जैवातृकः [2]स्यादायुष्मान् [1 f]बलवानं[2]सलो मतः ।	Strong 2.
Goat-herd 2.	[1]जाबालः [2]स्यादजाजीवः [1]कम्रः [2]कामी च [3]कामुकः ॥३८१॥	Lustful 3.

a सुमुखः b शीली c स्यात्कद्वरः, करद्वरः, कांडूरः
d प्रकांडोद्यौ, प्रकांडोद्यौ, प्रकांडाब्धौ e नार्यश्च कथ्यते, वात्तश्च कथ्यते, नार्त्तश्च कथ्यते f बलवान्मांसलो ।

Libertine, a gallant. — वेश्यापतिर्भुजङ्गः स्याद्विटः पल्लवकः[a] स्मृतः ।

Confused 2. — विहस्तो व्याकुलः प्रोक्तः कुण्ठो मन्दः क्रियासु यः ॥३८२॥ — Slow at work 2.

Active 2. — क्रियावान्कर्मसूद्युक्तो दीर्घसूत्रो[b] जडक्रियः । — Delatory, sluggard 2.

Insulted 2. — निकृतो[c] विप्रलब्धः स्यात्समुन्नद्धोऽतिगर्वितः ॥३८३॥ — Conceited 2.

Respected, honoured 4. — प्रतीक्ष्यः कथ्यते पूज्यः पूजितोऽपचितो भवेत् ।

Envious 2. — ईर्ष्यालुः कुहनः प्रोक्तो जारो ह्युपपतिः स्मृतः ॥३८४॥ — A paramour 2.

Straight for ward 2. — सरलो दक्षिणो ज्ञेयो विदग्धश्छेक उच्यते । — Shrewd, clever 2.

Looking up wards 2. — उत्पश्यमुन्मुखं विद्यान्न्युब्जं विद्यादधोमुखम् ॥३८५॥ — Bent downwards 2

Sitting 2. — आसीन उपविष्टः स्यादूर्ध्व[d] ऊर्ध्वन्दमः स्थितः । — Erect, raised, standing up 3.

Drunk, intoxicated 2. — क्षीवो मत्तः क्षमः शक्तः प्रगल्भः प्रौढ उच्यते ॥३८६॥ — Able 2; bold 2.

Desiring, longing for 2. — उत्क उत्कण्ठितः प्रोक्तो विक्लवो विह्वलः स्मृतः । — Agitated 2.

Indolent, lazy 6. — अलसः शीतको[e] मन्दो जडो जिह्मश्च मन्थरः ॥३८७॥

Deformed 2. — पोगण्डो विकलाङ्गः[f] स्याल्लोहलोऽव्यक्तवाग्भवेत् । — Speaking indistinctly 2.

Gambler 2. — कितवः स्याद्द्यूतकारो द्यूतमक्षवती भवेत् । — Gambling 2.

Playing with dice 2. — अक्षो दुरोदरं[g] प्रोक्तं सभिको द्यूतकारकः ॥३८८॥ — The keeper of a gambling house 2.

Examiner 2. — परीक्षकः कारणिको गृह्यः पक्ष उदाहृतः । — A partisan, a follower 2.

Noble, well-born 2. — अभिजातः कुलीनः[h] स्यात्कुचरः कुटिलाशयः ॥३८९॥ — Malevolent 2.

An elephant rider 2. — निषादिनो गजारोहा अश्वारोहास्तु सादिनः । — A horse rider.

Charioteer 2. — रथिनः स्यन्दनारोहा नावारोहास्तु नाविकाः ॥३९०॥ — A boatman.

a पल्लविकः b दीर्घसूत्री c निष्कृतो, निःकृतो, निःकृष्टो d स्यादूर्द्ध्वमूर्द्ध्वंदमः स्थितः, स्यादूर्द्ध्वमूर्द्ध्वमवस्थितः, स्यात् ऊर्ध्वंमूर्ध्वमदस्थितः, स्यात ऊर्ध्वमूर्ध्वमदस्थितः, स्यादूर्द्धऊर्द्धदमस्थितिः e सीतको, शीतगो f विपुलांगः g दरोदरं h कुलीनश्च कुचरः ।

A Brahaman 10.	[1]ब्राह्मणो [2]वाडवो [3]विप्रो [4]भूमिदेवो [5]द्विजोत्तमः ।	
	[6]अग्रजन्मा [7]द्विजन्मा च [8]षट्कर्मा [9]सोमपा [10]द्विजः ॥३९१॥	
The three superior castes.	[1]ब्राह्मणः [2]क्षत्रियो [3]वैश्यस्त्रयो [(3)] वर्णा द्विजातयः ।	A kind of sudra caste
The sudra caste 2.	[1]शूद्रस्[2]तुरीयवर्णः स्यात्तद्भेदास्[1]त्वन्त्यजाः स्मृताः ॥३९२॥	The four Ashramas as specified in Vedas. (1) Brahmacharya (2) Grihastha (3) Vānprastha, (4) Sanyāsa.
	ब्रह्मचार्यादयो वेदे प्रोक्ताश्चत्वार आश्रमाः ।	
	शूद्रोऽगृहस्थ एव स्यात्क्षत्रियो न यतिर्भवेत् ॥३९३॥	
	ब्रह्मचारी भवेद्वर्णी [1]गृहस्थः [2]स्नातकस्तथा ।	A house-holder; Brahman just returned from the house of his preceptor and became an initiated house holder 2.
A hermit, one in the third order of his religious life 2.	[1]वैखानसो [2]वानप्रस्थः [a][1]कर्मसंन्यासिको [2]यतिः ॥३९४॥	An ascetic, one who has renounced the world and controlled his passions 2.
One well versed in vadas 4.	[1]अनूचानः [2]सर्ववेदः [3]श्रोत्रियश्[4]छान्दसो मतः ।	
The son of a famous father.	[1]प्रख्यातात्पितुरुत्पन्न [2]आमुष्यायण इष्यते ॥३९५॥	
Lineage, family, race 6.	[1]अन्ववायो[2]ऽन्वयो [3]वंशो [4]गोत्रं [5][b]चाभिजनः [6]कुलम् ।	
Conduct, character, behaviour 4.	[1]चरित्रं [2]चरितं [3]शीलं [4]चारित्रं च समं स्मृतम् ॥३९६॥	
	वृत्ताध्ययनसम्पत्तिरिष्यते [1]ब्रह्मवर्चसम् ।	Divine glory, spiritual pre-eminence resulting from sacred knowledge.
Religious studentship, celebacy, self-restrained.	ब्रह्मचर्यं बुधाः प्राहुः समस्तेन्द्रियसंयमम् ॥३९७॥	
	संज्ञेय [1]उपसङ्ग्राह्यो योऽभिवाद्यो यथाविधि ।	To be respectfully saluted, respectable, venerable.
Respectful salutation.	[1]उपसङ्ग्रहणं चापि प्राहुः सन्तोऽभिवादनम् ॥३९८॥	
	निवृत्तेन्द्रियलौल्यस्तु श्रान्तः [c]शान्तश्च कथ्यते ।	Calm, peaceloving, free from lust.
Patient of bodily, mortifications or austerities etc. 2.	[1]तपःक्लेशसहो [2]दा तो [1]ह्यन्तर्वाणिश्च [2]शास्त्रवित् ॥३९९॥	Skilled or versed in scriptures, very learned 2.
A teacher 2.	[1]अध्यापक [2]उपाध्यायो [1]व्याख्या [2]विवरणं स्मृतम् ।	Commentary 2.
A pupil 5.	[1]शिष्या[2]न्तेवासिनौ [3]छात्रः [d][4]शैक्षः [5]प्राथमकल्पिकः ॥४००॥	
An obstacle 4.	[1]विघ्नो[2]ऽन्तरायः [3]प्रत्यूहो [4]व्यवायश्च प्रकीर्तितः ।	
A complete perusal 2.	[1]साकल्यवचनं प्राज्ञैः [2][e]पारायणमुदाहृतम् ॥४०१॥	

a कर्मसां, कर्मसो b चाभिजनं, चाभिजनकुलम् c शांतः श्रांतश्च
d शैक्ष्यः, शिष्यः, शैष्यः e मितिस्मृतम् ।

Oral tradition 4.	1 आम्नायः 2 सम्प्रदायः 3 स्यात्पारम्पर्यं 4 गुरुक्रमः ।	
Moral 2.	1 प्रयतः 2 स्यादनुच्छिष्टः 1 a संशितश्च 2 सुनिश्चितः ॥४०२॥	Decided 2.
An astronomer, an astrologer 8.	1 सांवत्सरो b 2 ज्योतिषिको 3 ज्ञानी 4 मौहूर्तिकस्तथा ।	
	5 कार्तान्तिकस्तु 6 दैवज्ञ 7 आदेशी 8 गणकः स्मृतः ॥४०३॥	
A man of the first three classes who has lost his caste owing to non-performance of the principal purifactory rites 2.	1 व्रात्यः 2 संस्कारहीनः 1 स्यादवकीर्णी 2 क्षतव्रतः ।	A religious student who has committed an act against his vow of celibacy 2.
wicked 2.	1 शिश्विदानो 2 दुराचारस्त्यक्ताग्निर्वीरहा 2 द्विजः ॥४०४॥	A brahman who has allowed his sacred fire to become extinct.
Religious hypocrite, an imposter 2.	c 1 धर्मध्वजी 2 लिङ्गवृत्तिरस्वाध्यायो 1 2 निराकृतिः ॥	A Brahman who neglects his duties of his caste 2
One who lives by arms, a warrior, a soldier 2.	1 शस्त्राजीवः d 2 काण्डस्पृष्टो 1 ब्रह्मबन्धुर्द्विजोऽधमः 2 e ॥४०५॥	An unworthy brahman, a contemptuous term for a brahaman.
One who gets a living only by the merit of his caste.	1 जातिमात्रोपजीवी च कथ्यते f 2 ब्राह्मणब्रुवः ।	
An exclamation uttered by a brahman in the sense of "help ! help !"	g 1 अब्रह्मण्य 2 मवध्यं स्याद् 1 ब्रह्मण्यं 2 ब्रह्मणे हितम् ॥४०६॥	Fit for a brahaman.
The holy sacrificial cord worn by the Hindus over their left shoulder and under the right.	1 उपवीतं 2 ब्रह्मसूत्रं प्रक्षिप्तं दक्षिणे करे ।	
	प्राचीनावीतमन्यस्मिन्निवीतं कण्ठलम्बितम् ॥४०७॥	
	आचमनमुपस्पर्शनमाप्लवनं स्नानमिष्यते 1 सवनम् ।	Bathing, purifactory ablution, extracting the somā juice & drinking it.
Washed 3.	1 निर्णिक्तं 2 प्रक्षालितमाहु 3 र्धौतं च तुल्यार्थम् ॥४०८॥	
	1 पाराशरी 2 व्रती 3 भिक्षु 4 र्मस्करी h 5 पारिरक्षिकः ।	
A religious mendicant 9.	6 परिव्राजक 7 स्तपस्वी 8 कर्मन्दी 9 तापसः स्मृतः ॥४०९॥	
An upper garment 3	i 1 वैकक्ष 2 मुत्तरासङ्गः प्रोक्ता 3 वृहतिका तथा ।	
Loin cloth.	1 पर्यस्तिका 2 परिकरः 3 पर्यङ्कश्चेति कथ्यते ॥४१०॥	
A cloth to cover the privities 2,	1 कक्षापटः 2 स्यात्कौपीनं 1 कुण्डिका च 2 कमण्डलुः ।	A water pot 2,
A staff.	1 आषाढो व्रतिनां दण्डो 1 व्रतिनामासनं 2 j वृषी ॥४११॥	The seat of an ascetic 2.

a शंसितश्च b ज्योतिषको c धर्मध्वजी d कांडपृष्टो, कांडपृष्टे e द्विजाधमः, द्विजोत्तमः f ब्रह्मणो, ब्राह्मणे अब्रह्मण्यं, अब्रह्मण्यमवद्यं g अब्रह्मण्यवर्ण्य h पारिरक्षकः, परिरक्षकः i वेकक्ष, वेकष्य, वैकक्ष्य j वृसी, भृसी ।

A sage
1 2 3 4
ऋषिस्त्रिकालदर्शी स्यान्मुनिर्वाचंयमो मतः ।

Name of Valmiki the reputed author of the Ramayan,
1 2 3
प्राचेतसस्तु वाल्मीकिर्मैत्रावरुण उच्यते ॥४१२॥

Name of Agastya.
1 2 3 4
उक्तोऽगस्तिरगस्त्यो लोपामुद्रापतिश्च घटयोनिः ।

Name of Vyas.
1 2 3 4
सात्यवतेयः पाराशर्यो द्वैपायनो व्यासः ॥४१३॥

Sacrifice 12.
1 2 3 4 5 6 7
यागो यज्ञः क्रतुः स्तोमः सप्ततन्तुर्मखोऽध्वरः ।
8 9 10 11 12
वितानं संस्तरो बर्हिः सवः सत्रं च कथ्यते ॥४१४॥

Fire producing wooden stick 2.
1 2
निर्मन्थकाष्ठमरणिः प्रणीतोऽग्निश्च संस्कृतः ।
Fire consecrated by prayers.

An altar especially, prepared for sacrifice 2.
1 a 2 1 2
वेदी परिष्कृता भूमिः पात्रमुक्तं स्रुगादिकम् ॥४१५॥
A sort of wooden ladle used for pouring clarified butter on Sacrificial fire.

An oblation of rice or barley of the boiled in milk for presentation to Gods 2.
1 2 1 b 2
हव्यपाकश्चरुः प्रोक्तः सान्नाय्यं हविरुच्यते ।
An oblation of of burnt offering, also of clarified butter, rice or barley mixed with Ghee.

Curd of milk and whey, a mixture of boiled and coagulated milk.
1 c
शृते क्षीरे दधिक्षिप्तमामिक्षा कथ्यते बुधैः ॥४१६॥

1
उपाकृतस्तु विज्ञेयो मन्त्रेण प्रोक्षितः पशुः ।
A sacrificial animal killed during the recitation or prescribed prayers.

Offered as an oblation to fire 1.
1 2 1 2
हुतं वषट्कृतं ज्ञेयं यज्ञान्तोऽवभृथः स्मृतः ॥४१७॥
The end or completion of a principal sacrifice.

One who offers a sacrifice to Brahaspati.
1
वृहस्पतिसवेनेष्टं येनासौ स्थपतिर्भवेत् ।

सर्ववेदास्तु विज्ञेयो दत्तसर्वस्वदक्षिणः ॥४१८॥
One who performs a sacrifice by giving away all his wealth.

Gift, donation 10.
1 2 d 3 4 5
विश्राणनं विहापितमंहतिरपवर्जनं वितरणं च ।
e 6 7 8 9 10
निर्वपणं च स्पर्शनमुत्सर्गः स्यात्प्रदेशनं दानम् ॥४१९॥

One who performs sacrifice 5.
1 2 3 4 5
यष्टा च यजमानः स्यादादेष्टा दीक्षितो व्रती ।

Performer of many sacrifices 2.
1 2 1 2
इज्याशीलो यायजूको यज्वा स्यादासुतीवलः ॥४२०॥
One who performs sacrifices in accordance with vedic precepts 2.

A king 12.
1 2 3 4 5 6 7
राजा राजन्यो राट् प्रजापतिः क्षत्रियो नृपः क्षत्रम् ।
8 9 10 11 12 f
मूर्धाभिषिक्तभूपतिपार्थिवनरदेवलोकपालाः स्युः ॥४२१॥

a परिस्कृता b साम्नायं, साम्नार्यहविरुच्यते c आमिष्या, आमक्षः d विहायनमंहि, विहायितमं, विहायतमं, विदायनमं e निर्वापणं, निव्रापणं f पालाश्च ।

1
An emperor. येनेष्टं राजसूयेन स सम्राट् परिकीर्तितः ।
2 3
चक्रवर्ती सार्वभौमो मध्यमो मण्डलेश्वरः ॥४२२॥
1 2 1 a 2
Umbrella 2. आतपत्रं भवेच्छत्रं चामरं तु प्रकीर्णकम् । A fan, whisk 2.
हैमं सिंहासनं राज्ञां स्मृतं भद्रासनं बुधैः ॥४२३॥ A throne.
1 2 3 4 5
A door-keeper 8. द्वास्थो दौवारिकः क्षत्ता दण्डी वेत्रधरस्तथा ।
6 7 8
उत्सारको द्वारपालः प्रतिहारो बुधैः स्मृतः ॥४२४॥
1 2 3 4 b 5
A spy 9. अपसर्पश्चरश्चारः प्रणिधिर्गूढपूरुषः ।
6 7 8 c 9
यथार्थवर्णो मन्त्रज्ञः स्पशो हेरक उच्यते ॥४२५॥
1 2 3 4
A minister 4. मन्त्री बुद्धिसहायः स्यादमात्यः सचिवस्तथा ॥
1 2 3
Domestic priest 3. सौवस्तिक इति प्रोक्तः पुरोधाश्च पुरोहितः ॥४२६॥
d 1 2 1 2
Principal 2. महामात्रः प्रधानं स्यादध्यक्षोऽधिकृतः स्मृतः । A superintendent 2.
1 2 3 4
An attendant on women's appartment 4. सौविदः सौविदल्लश्च स्थापत्यः कञ्चुकी मतः ॥४२७॥
1 2 3 4 5
A friend 5. मित्रं सखा वयस्यश्च सुहृत्स्निग्धश्च कथ्यते ।
1 2 3 4 5
A follower 5. अनुजीवी सहायः स्या सेवकोऽनुचरोऽनुगः ॥४२८॥
1 2 3 e 1 2
A judge 3. प्राड्विवाकोऽक्षदृक् स्थेयो न्यायोऽक्ष इति कथ्यते । Justice, equity 2.
A superintendent of the harem. अन्तःपुरेष्वधिकृतः स्मृतोऽन्तर्वंशिको नरः ॥४२९॥
1 f 2 3 4 5
A eunuch 8. क्लीवो वर्षधरः षण्ढः पण्डकश्च नपुंसकः ।
g 6 h 7 8
उभयव्यञ्जनं पोटा तृतीयाप्रकृतिः स्मृताः ॥४३०॥
1 2 3 4
A cook 4. आरालिकः सूपकारः सूदः स्य द्वल्लवस्तथा ।
1 2
A kitchen superintendent 2. पौरोगवस्तु विज्ञेयः सूदाध्यक्षो मनीषिभिः ॥४३१॥

a च प्रकीर्तितम् b गूढपौरुषः, गूढपोरुषः c हरक, धेरिक, हैरिक d महामात्यः प्रधानः e स्तेयो, स्तयो, ज्ञेयो f वर्षचरः g उभयं व्यंजनं h पोटो योषीया, योषोया ।

A jester 3. — [1]वैहासिकः [2][a]केलिकिलो [3]बुधैर्वासन्तिको मतः ।

Play, jest, merriment 6. — [1]परिहासो [2]द्रवो [3]नर्म [4]केलिः [5]क्रीडा च [6]खेलनम् ॥४३२॥

A body guard 2. — [1]रक्षिवर्गो [2]ह्यनीकस्थः [1]सेनानी[2]र्वाहिनीपतिः । — A commander, a general 2.

Income 2. — [1]अर्थागमो [2]भवेदायो [1]भागधेयो [2]बलिः [3]करः ॥४३३॥ — Tax 3.

A present, bribe9. — [1]उपदा [2]प्राभृतं प्रोक्त[3]मुपग्राह्य[4]मुपायनम् ।
[b][5]लञ्चो[6]त्कोच[7]मुपादान[8]मुपचार[9]स्तथामिषम् ॥४३४॥

A bard 6. — [1]प्रबोधका [2]माग[3]धवन्दि[4]सूता ,
[5]वैतालिका [6]मङ्गलपाठकाश्च ।

Hunting, chase 5. — [c][1]अच्छोटनं [2]स्यान्मृगया [3]मृगव्यं ,
[4]पापर्द्धि[5]राखेटक[d] इत्यभिन्नम् ॥४३५॥

A horse, a pony 14. — [1]अर्वा [3]गन्धर्वो[3]ऽश्वः [4]सप्ति[5]र्वाजी [6]तुरङ्गम[7]स्तुरगः ।
[e][8]ताक्ष्यो [9]हरि[10]स्तुरङ्गो [11]युयुरुक्तो [12]घोटको [13]हयो [14]वाहः ॥४३६॥

Different varieties of horses according to their qualities. — गुणदेशकृतास्तेषां संज्ञाः स्युरनेकधा लोके ।
कर्कः श्वेतः शोणो रक्तो हेमश्च कृष्णवर्णोऽश्वः ॥४३७॥
मल्लिकाक्षः सितैर्नेत्रैः कृष्णैरिन्द्रायुधो मतः ।
श्रीवृक्षकी स विज्ञेयः श्रीवृक्षो यस्य लाञ्छनम् ॥४३८॥
आजानेयाः कुलीनाः स्युः पारसीका वनायुजाः ।
काम्बोजा वाह्लिकाः प्रोक्ताः सैन्धवाः सिन्धुपारजाः ॥४३९॥

Ill-trained or unbroken horse 2, — [f][1]शूलको [2]दुर्विनीतोऽश्वः [1]पोतः प्रोक्तः [2]किशोरकः । — Colt 2.

A mare 5. — [1]अर्वती [2]वडवा [3]वामी [4]प्रसूता [5]वाजिनी स्मृता ॥४४०॥

a केलिकलो, केलिकिरो, केलिकरो b लंबोत्को, नृचोत्को, लंकोत्को c आछोटनं, अछोएनं, आछोदनं d खोटकभि, खेटकमि - e तार्क्षो f सूकलो, शूकलो ।

A tail 3.	[1]लूनं [2]पुच्छं तु [3]लाङ्गूलं [1]वालहस्तश्च [2]वालधिः ।	A hairy tail 2.
The nostril of a horse 2.	[1]प्रोथ इत्युच्यते [2]घोणा मध्यं [a]कश्यं [1][b]खुरः [2]शफः ॥४४१॥	Hoof 2.
A saddle 2.	[1]पर्याणं [2]स्यात्पल्ययनं [1]खलीनं [2]कविकं स्मृतम् ।	The bit of a bridle 2.
A whip 2.	[1]चर्मदण्डः [c][2]कशा प्रोक्ता [1]वल्गा[2]रश्मि[d][3]कुशाः स्मृताः ॥४४२॥	Bridle, rein 3.
Speed, velocity 8.	[1]रंहस्[2]तरः [3]स्यदः स्यात्[4]प्रसरो [5]वेगो [6]रयो [7]जवो [8]वाजः ।	
Dust, powder, sand 5.	[1]पांशुः [2]क्षोदो [3]रेणुश्[4]चूर्णं [5]धूली [6]रजश्च तुल्यार्थाः ॥४४३॥	
A cart 3.	[1]अनः [2]शताङ्गः [3]शकटः [1]स्यन्दनः कथ्यते [2]रथः ।	A chariot 2.
A cart drawn by oxen.	[1]गन्त्री [2]कम्बलिवाह्यस्तु कूवरी च निगद्यते ॥४४४॥	
A carriage employed at Military exercise.	[1]योग्यारथो [2]वैनयिको [e][1]ह्यध्वन्यः [2][f]पारियानिकः ।	A carriage fit for travelling 2.
A litter borne on men's shoulders.	[1]कर्णीरथः [2]प्रवहणं [3][g]डयनं चेति कथ्यते ॥४४५॥	
A car for carrying images of gods 2.	[1]देवतार्थो [2]देवरथो [1]युद्धार्थः [h][2]साम्परायिकः ।	A war chariot 2.
A pleasure van 2.	[1]क्रीडारथः [2]पुष्परथो जेता जैत्ररथः स्मृतः ॥४४६॥	A triumphal car.
A wheel 2.	[1]चक्रं [2]रथाङ्गमाख्यातं [1]कूवरं च [2]युगन्धरम् ।	The pole of a carriage 2.
The periphery of a wheel 3.	[1]चक्रधारा [2]प्रधिर्[3]नेमिर्[1]नाभिश्चक्रस्य [2]पिण्डिका ॥४४७॥	The nave of a wheel 2.
Any part of a carriage 2.	[1]अपस्करो [2]रथाङ्गः [1]स्यादणि[2]रक्षाग्रकीलिका ।	The pin of an axle 2.
A charioteer 5.	[1]नियन्ता [2]प्राजिता [3]क्षत्ता [4]दक्षिणस्थश्च [5]सारथिः ॥४४८॥	
The charioteer who stands on the left of a champion 2.	[1]सव्येष्ठः कथ्यते [2]सूतो [1]वरूथं [2]रथगोपनम् ।	A sort of wooden defence or fender with which a chariot is provided as a defence against collision 2.
A vehicle, a carriage 5.	[1]वाहनं [2]धोरणं [i][3]युग्यं [4]यानं [5]पत्रमिति स्मृतम् ॥४४९॥	

a कस्यं b खुराः शफाः, खराः शफाः c कसा, कसाः
d वल्गारश्मिकशाः, वल्गुरश्मिःकशा, वलारश्मिकुशाः, वल्यारश्मिकुशाः
e अध्वन्यः, वैनविकोऽध्वन्यः, वैनयको अध्वन्यः f पारियात्रकः,
पारियातिकः g तनयं, नयनं h साम्परायकः i युग्मं, युग्यं, युग्यं ।

A litter, a palanquin 2. A mule 2.

1 2 1 2
शिविका याप्ययानं स्याद्वेसरोऽश्वतरो मतः ।

A foot soldier, a pedestrian 8.

a 1 2 3 4 5
पदातपत्तिपादातपदातिकपदातयः । ।
6 7 8
पद्गश्च पदगश्चेति कथ्यन्ते पादचारिणः ॥४५०॥

A tent 5.

1 2 3 4 5
दूष्यं स्थुलं पटकुटी गुणलयनी केणिका च निर्दिष्टा ।

S a pole, a post, a stake 5.

1 2 3 4 5 b
ध्रुवकः शिवकः शङ्कुः पुष्पलकः कीलकः प्रोक्तः ॥४५१॥

A march 3. A camp 2.

1 2 3 1 2
यात्रा प्रयाणं प्रस्थानं निवेशः शिविरं स्मृतम् ।

An attack 3.

1 2 3
अवस्कन्दः प्रपातश्च सौप्तिकं च निगद्यते ॥४५२॥

War, battle, contest, combat, conflict, quarrel 36.

1 2 3 4 5 6 7
सङ्ग्रामः समितिः समिच्च समरं संख्यं समीकं रणं,
8 9 10 11 12 13 c 14 15
युद्धं युत्प्रधनं मृधं समुदयः संयत्कलिः संयुगम् ।
16 17 18 19 20 21 , 22
द्वन्द्वायोधनसम्प्रहारकलहाक्रन्दाहवाभ्यागमाः ,
d 23 24 25 26 27 28
संस्फोटप्रविदारणप्रहरणानीकाजयः सङ्गरः ॥४५३॥
29 30 31 32
सम्परायः समाघातः प्रघातश्च समाह्वयः ।
33 34 35 36
जन्यं स्यादभिसम्पातः सम्मर्दो विग्रहस्तथा ॥४५४॥

An enemy, a foe, an adversary 23.

e 1 2 3 4
अभियातिररातिरमित्ररिपू ,
5 6 7 8
प्रतिपक्षविपक्षविरोध्यरयः ।
9 10 11
अहितोऽसहनश्च जिघांसुरिति ,
12 13
प्रथिताः परिपन्थिपरासुहृदः ॥४५५॥

a पदातिपादातिपादिकपदातयः, पदातिपत्तिपादातिपादिकपदातयः, पदात्तिः पादति पत्तिः पदातिकः पदातयः, पादाकः पदिकश्चेति पादाकः पदिक पदिकश्चेति, पादतः पदिकश्वेति, पदातः पदिकश्चेति b केलिका c संजित्कलिः d संस्फोटः, संस्फोटो प्रविदारणं e अभिजाति ।

14 15 16 17 a 18
प्रत्यर्थी पर्यवस्थाता द्वेषी वैरी च शात्रवः ।
19 20 21 22 23
शत्रुः सपत्नो भ्रातृव्यः प्रत्यनीको द्विषन्मतः ॥४५६॥

An army 12.
1 2 3 4 5 6 7
पृतना सेना ध्वजिनी पताकिनी वाहिनी बलं सैन्यम् ।
8 9 10 11 12
चक्रं चमूर्वरूथिन्यनीकिनी स्यादनीकं च ॥४५७॥

A flag, banner 5.
1 2 3 4 5
वैजयन्ती पताका च केतुः स्यात्केतनं ध्वजः ।

An ornament on the top of a flag.
अस्योच्चूलावचूलाख्यावूर्ध्वाधोमुखकूर्चकौ ॥४५८॥

An armour, mail 10.
b 1 2 3 4 5
सन्नाहः कवचं वर्म तनुत्राणमुरश्छदः ।
6 7 8 9 10
जगरः कङ्कटो माठी दंशनं जालिका स्मृता ॥४५९॥

A shield.
1 2 3 4
खेटकं फलकं चर्म प्रोक्तमावरणं बुधैः ।

Armed, accoutred.
1 2 3 4
वर्मितः स्यात्कवचितः सन्नद्धो दंशितस्तथा ॥४६०॥

A comple attack.
1 2
सर्वाभिसारमिच्छन्ति सर्वसन्नहनं बुधाः ।

Marching against an enemy, encountering a foe 2.
1 2
यत्सेनयाभिनिर्याणं स्मृतं तदभिषेणनम् ॥४६१॥

Weapon 5.
1 2 3 4 5
हेतिः शस्त्रं प्रहरणमायुधमस्त्रं चतुर्विधं तच्च ।

Kinds of weapon in accordance with their method of using.
मुक्तामुक्तममुक्तं करमुक्तं यन्त्रमुक्तं च ॥४६२॥
c
शक्त्यादि पाणिमुक्तं स्यादमुक्तं क्षुरादिकम् ।
मुक्तामुक्तं तु यष्टयादि यन्त्रमुक्तं शरादिकम् ॥४६३॥

A bow 7.
1 2 3 4 5 6 7
अस्त्रं धनुरिष्वासं कोदण्डं धन्व कार्मुकं चापम् ।

A bow-string 7.
1 2 d 3 4 5 6 7
बाणासनं द्रुणा स्यान्मौर्वी ज्या सिञ्जिनी गुणो जीवा ॥४६४॥

A quiver 8.
1 2 3 4 5 6
तूणीरमुपासङ्गस्तूणं तूणी निषङ्ग इषुधिश्च ।

The notched end of a bow 2.
7 8 1 e 2
वाणाश्रयः कलापः कार्मुककोटिर्भवेदटनिः ॥४६५॥

An arrow 16.
1 2 3 4 5 6 7 f 8
कङ्कपत्रशरमार्गणबाणाश्चित्रपुङ्खविशिखेषुकलम्बाः ।
9 10 11 12 13 14 15 16
सायकप्रदरकाण्डपृषत्काः पत्रिणः खगशिलीमुखरोपाः ॥४६६॥

a तु b संनाहं c क्षुरकादिकम् d स्यान्मूर्वी e वेदटिनिः, वेदटनी, वेदटिनः f कदम्बा ।

	सर्वायसस्तु बाणः [1]प्रक्ष्वेडन [2]एषणश्च [3]नाराचः ।	An iron arrow.
	तीरीतद्भूलदण्डासनादयः काण्डभेदाः स्युः ॥४६७॥	Kinds of arrow.
The feather of an arrow 2.	[1]पत्रपाली [2]भवेद्वाजः [1]कर्तरी [2]पुङ्ख उच्यते ।	The feathered part of an arrow 2.
An aim, a butt	[1]वेध्यं [2]लक्ष्यं [3]शरव्यं च [4]निमित्तं च समं विदुः ॥४६८॥	
An arrow with a crescent shaped head.	[1]अर्धचन्द्र[2]क्षुरप्रादि [1]धाराग्रं मुखमुच्यते ।	The broad edged head of an arrow.
	[1]आराग्रं तु मुखं तेषां पुष्पपत्रादिभेदतः ॥४६९॥	The point of an awl, an iron thong at the end of a whip.
Shooting, letting fly an arrow exercise or practice in general 2.	बाणमुक्ति[1]र्व्यवच्छेदो दीप्ति[1]र्वेगस्य तीव्रता ।	The flash-like flight of an arrow.
	[1]अभ्यासः कथ्यते [2]योग्या [1]श्रमस्थानं [2]खलूरिका ॥४७०॥	A place for military exercise.
An expert or skilful archer 2.	[1]लघुहस्तः [2]शीघ्रवेधी [1]कृतपुङ्खस्तु [2]शिक्षितः ।	Skilled in archery 2.
	स भवेदपराद्धेषुर्यस्य लक्ष्याच्च्युतः खगः ॥४७१॥	
A sword 10.	[1]निस्त्रिंशः [2]करवालः [3]खड्गः [4]कौक्षेयकः [5]कृपाणः स्यात् ।	
	[6]रिष्टि[7]रसि[8]चन्द्रहासौ [9]तरवारि[10]र्मण्डलाग्रं च ॥४७२॥	A handle 2.
A sheath, a scabbard 3.	[1]कोशः [2]प्रत्याकारः [3]खड्गपिधानं [1]त्सरु[2]र्भवेन्मुष्टिः ॥	
A knife 5.	[1]असिपुत्रिका[2]सिधेनुः [3]क्षुरिका [4]पत्रं च [5]शस्त्रिका ज्ञेया ॥४७३॥	
An axe, a hatchet 4.	[a][1]परश्वधः [2]कुठारः [3]स्यात्परशुः [4]स्वधितिस्तथा ।	
Sharpened, whettened 4.	[b][1]निशातं [2]निशितं [3]धौतं [4]तेजितं च समं स्मृतम् ॥४७४॥	A mallet, hammer 2.
Lance 2.	[1]प्रासो निगदितः [2]कुन्तो [1]मुद्गरो [2]द्रुघणः स्मृतः ।	An iron club.
A saw 2.	[1]क्रकचं [2]करपत्रं [1]स्यात्परिघः [2]परिघातनः ॥४७५॥	
	यष्टिपट्टि[c]स[d]दुःस्फोटमुखण्डीशङ्कुशक्तयः ।	
	[e]भिन्दमालगदादण्डचक्राद्याः शस्त्रजातयः ॥४७६॥	Kinds of different weapons.

a परस्वधः b निसानं, निशानं, निशांतं, निशान्ता c पट्टिश d मुषडी, मृशंडी, मुखंढी, मुखंडी, मखुंढी e भिंडिभाला, भिंडिभाल, भिडुमाल, भिंदिपाल ।

Killing, slaughter, slaying 21.

1 मारणं 2a निशरणं 3 निवर्हणं ,
4 सूदनं 5 निरसनं 6 निशुम्भनम् ।
7 घातनं 8 प्रशमनं 9 प्रमापणं ,
10 वर्जनं 11 विशसनं 12 प्रवासनम् ॥४७७॥
13 14 15 16 निर्वापणनिर्वासनकदनव्यापादनानि तुल्यानि ।
17 18 निर्ग्रन्थनमालम्भः c 19 प्रमया 20 हिंसा च 21 संज्ञपनम् ॥४७८॥

A runaway.

1 नष्टो 2 गृहीतदिक् प्रोक्तः 3 कान्दिशीको 4 भयद्रुतः ।

Defeated in battle 2. Victorio

1 प्रस्कन्नः 2 पतितो ज्ञेयो b 1 जितकाशी 2 जिताहवः ॥४७९॥

A royal harem.

1 शुद्धान्तमवरोधश्च 2 राज्ञोऽन्तःपुरमुच्यते 3 ।

Anointed queen.

1 कृताभिषेका 2 महिषी भट्टिन्य इतराः स्मृताः ॥४८०॥

A woman 29.

1 रामा 2 वामा 3 वामनेत्रा 4 पुरन्ध्री ,
5 नारी 6 भीरु 7 र्भामिनी 8 कामिनी च ।
9 योषा 10 योषिद्वासिता 11 12 वर्णिनी 13 स्त्री ,
14 स्यात्सीमन्तिन्यङ्गना 15 सुन्दरी 16 च ॥४८१॥
17 अबला 18 महिला 19 ललना 20 प्रमदा 21 रमणी 22 नितम्बिनी 23 वनिता ।
24 दयिता 25 प्रतीपदर्शिन्युक्ता 26 कान्ता 27 वधू 28 र्वशा 29 युवतिः ॥४८२॥

A girl 2. Half grown girl 2.

1 कुमारी कथिता 2 कन्या 1 किञ्चित्प्रौढा 2 सुवासिनी ।

A girl who chooses her husband 2. A naked womans 2.

1 वर्या 2 पतिंवरा प्रोक्ता 1 नग्ना प्रोक्ता च 2 d कौटवी ॥४८३॥

A girl before menstruation.

1 अदृष्टरजसं नारीं 2 नग्निकां ब्रुवते बुधाः ।

A woman married or single who continues to reside after maturity in her father's house; a young woman in general

1 वधूटी च 2 चिरण्टी च 3 द्वितीयवयसौ स्त्रियौ ॥४८४॥

An elderly or middle-aged widow.

1 अर्द्धवृद्धा तु या नारी सा कात्यायनिका स्मृता ।

A woman who has married a second time 2. Lustful, lascivious 2.

1 पुनर्भू 2 र्दिधिषूः प्रोक्ता 1 वृषस्यन्ती 2 रतार्थिनी ॥४८५॥

a निःसरणं, निसरणं b जितकासी c प्रमयः d कोट्टवी ।

A woman whose husband is living 2.
पतिवत्नी[1] जीवत्पतिर्[2]जीवतोका[1] च जीवसूः[2] ।
A woman whose children are lving 2.

A woman without husband and children.
रहिता पतिपुत्राभ्यां निर्वीरेत्यभिधीयते[1] ॥४८६॥

A widow 2.
विश्वस्ता[1] विधवा[2] प्रोक्ता पुष्पहीना[1] च निष्कला[a 2] ।
A woman who does not get menstruation.

A female beggar 3.
श्रमणा[1] भिक्षुकी[2] मुण्डा[3] वयस्या[1]ली[2] सखी[3] स्मृता ॥४८७॥
A woman's female friend 3.

A woman in her monthly courses 5.
अवी[1]रुदक्या[2] च रजस्वला[3] स्यात् ,
आत्रेयिका[4] पुष्पवती[5] च नारी ।

A girl in whom the menstruation has just commenced 2,
राका[1] भवेज्जातरजास्तु[2] कन्या ,
नश्यत्प्रसूतिः[1] कथिता च भिन्दुः[2 c] ॥४८८॥
A woman bringing forth a dead child 2,

A woman of excellent qualities
मुख्या[1] नारी वरारोहा[2] वरस्त्री[3] मत्तकाशिनी[d 4] ।

(i) A clever or intriguing woman. (ii) A drunken woman.
स्त्री विदग्धा[(i)] च मत्ता[(ii)] च वाणिनीत्यभिधीयते[1] ॥४८९॥

A harlot, a prostitute 5.
रूपाजीवा[1] वेश्या[2] गणिका[3] पण्याङ्गना[4] तथा क्षुद्रा[5] ।

A royal courtezan.
राजकुलप्रतिबद्धा[1] वारस्त्री[2] वारमुख्या[3] च ॥४९०॥

A group of harlots.
गाणिक्यं[1] गणिकानां च[e] समूहः कथ्यते बुधैः ।

A woman in attendance in a harem.
असिक्न्य[1]न्तःपुरप्रेष्या[2] दूती[1] सञ्चारिका[2] स्मृता ॥४९१॥
A female messenger 2.

A procuress 3.
कुट्टिनी[f 1] शम्भली[2] चुन्दी[3g] सैरन्ध्री[1] गन्धकारिका[2] ।
A toilet woman, a female perfumer 2.

A female servant, a female slave 5.
पोटा[1] वोटा[2] तथा चेटी[3] दासी[4] स्यात्कुटहारिका[h 5] ॥४९२॥

A doll 2.
पाञ्चालिका[1] पुत्रिका[2] स्यात्काष्ठदन्तादिनिर्मिता ।

An earthen doll 2.
स्मृता लेप्यमयी[1] स्त्री तु[i] बुधैरञ्जलिकारिका[2] ॥४९३॥

A wife 11.
दाराः[1] क्षेत्रं[2] कलत्रं[3] च भार्या[4] सहचरी[5] वधूः[6] ।
सधर्मचारिणी[7] पत्नी[8] जाया[9] च गृहिणी[j 10] गृहाः[11] ॥४९४॥

a च निष्फला, तु निष्फली b श्रवणा, भ्रमणा c बिडुः, विंडुः, किंडुः, भिडुः, निंडुः d मत्तकामिनी, मत्तगामिनी e तु f कुह्निनी, कुट्टनी g चुंडी, चंडी h कुट्टि, कुदि i च j गृहणी ।

A woman whose husband is living 2.	पतिवत्नी[1] जीवत्पतिर्[2]जीवतोका[1] च जीवसूः[2] ,	A woman whose children are lving 2.
A woman without husband and children.	रहिता पतिपुत्राभ्यां निर्वीरेत्यभिधीयते[1] ॥४८६॥	
A widow 2.	विश्वस्ता[1] विधवा[2] प्रोक्ता पुष्पहीना[1] च निष्कला[a 2] ।	A woman who does not get menstruation.
A female beggar 3.	श्रमणा[1] भिक्षुकी[2] मुण्डा[3] वयस्या[1]ली[2] सखी[3] स्मृता ॥४८७॥	A woman's female friend 3.
A woman in her monthly courses 5.	अवी[1]रुदक्या[2] च रजस्वला[3] स्यात् ,	
	आत्रेयिका[4] पुष्पवती[5] च नारी ।	
A girl in whom the menstruation has just commenced 2.	राका[1] भवेज्जातरजास्तु[2] कन्या ,	
	नश्यत्प्रसूतिः[1] कथिता च भिन्दुः[2 c] ॥४८८॥	A woman bringing forth a dead child 2.
A woman of excellent qualities	मुख्या[1] नारी वरारोहा[2] वरस्त्री[3] मत्तकाशिनी[d 4] ।	
(i) A clever or intriguing woman. (ii) A drunken woman.	स्त्री विदग्धा[(i)] च मत्ता[(ii)] च वाणिनीत्यभिधीयते[1] ॥४८९॥	
A harlot, a prostitute 5.	रूपाजीवा[1] वेश्या[2] गणिका[3] पण्याङ्गना[4] तथा क्षुद्रा[5] ।	
A royal courtezan.	राजकुलप्रतिबद्धा[1] वारस्त्री[2] वारमुख्या[3] च ॥४९०॥	
A group of harlots.	गाणिक्यं[1] गणिकानां च[e] समूहः कथ्यते बुधैः ।	
A woman in attendance in a harem.	असिक्न्य[1]न्तःपुरप्रेष्या[2] दूती[1] सञ्चारिका[2] स्मृता ॥४९१॥	A female messenger 2.
A procuress 3.	कुट्टिनी[f 1] शम्भली[2] चुन्दी[3g] सैरन्ध्री[1] गन्धकारिका[2] ।	A toilet woman, a female perfumer 2.
A female servant, a female slave 5.	पोटा[1] वोटा[2] तथा चेटी[3] दासी[4] स्यात्कुटहारिका[h 5] ॥४९२॥	
A doll 2.	पाञ्चालिका[1] पुत्रिका[2] स्यात्काष्ठदन्तादिनिर्मिता ।	
An earthen doll 2.	स्मृता लेप्यमयी[1] स्त्री तु[i] बुधैरञ्जलिकारिका[2] ॥४९३॥	
	दाराः[1] क्षेत्रं[2] कलत्रं[3] च भार्या[4] सहचरी[5] वधूः[6] ।	
A wife 11.	सधर्मचारिणी[7] पत्नी[8] जाया[9] च गृहिणी[j 10] गृहाः[11] ॥४९४॥	

a च निष्फला, तु निष्फली b श्रवणा, भ्रमणा c बिडुः, विंडुः, किंडुः, भिडुः, निंडुः d मत्तकामिनी, मत्तगामिनी e तु f कुट्टिनी, कुट्टनी g चुंडी, चंडी h कुट्टि, कुदि i च j गृहणी ।

Marriage, wedding 5.	[1]उपयामः [2]परिणयनं [3]पाणिग्रहणं [4]विवाह [5]उद्वाहः ।	
A respectable woman 2.	[a][1]कुलबालिका [2]कुलस्त्री [1]पतिव्रता [2]सुचरिता [3]सती [4]साध्वी ॥४९५॥	A faithful wife 4.
An unchaste woman 8.	[1]पांशुला [b][2]बन्धुकी [3]स्वैरिण्य[4]सती [5]पुंश्च[6]लीत्वरी ।	
	[c][7]धर्षिणी [8]कुलटा प्रोक्ता [d][1]त्वविनीता[2]भिसारिका ॥४९६॥	An impertinent woman 2.
A husband 14.	[1]कान्तः स्यात्[2]कमिता [3]पति[4]र्वरयिता [5]भर्ता च [6]भोक्ता [7]धवो ,	
	[8]रुच्या[9]भीक[10]वरा[11]भिकाश्च [12]रमणः [13]प्राणाधिनाथो[14]ऽनुगः ।	
A son 12.	[1]सूनुः [2]सन्तति[3]रात्मजश्च [4]तनुजः [5]पुत्रः [6]प्रसूतिः [7]सुतः ,	
	[8]तुक् [9]तोकं [10]तनयश्च [11]नन्दन इति प्राज्ञै[12]रपत्यं स्मृतम् ॥४९७॥	
A pregnant woman 4.	[1]आपन्नसत्त्वा [2]गुर्वी [3]स्यादन्तर्वत्नी च [4]गर्भिणी ।	
The longing of a pregnant woman 4.	[1]दोहदं [2]दौहृदं [3]श्रद्धा [4]लालसा च [e]समाः स्मृताः ॥४९८॥	
The last month of pregnancy 2.	[1]सूतिमासो [2]वैजननो [1]गर्भो [2]भ्रूण इति स्मृतः ।	An embryo 2.
A lying in-chamber 2,	[1]अरिष्टगृहमिच्छन्ति [2]सूतिकाभवनं बुधाः ॥४९९॥	
A woman who has born a child 3,	[1]विजाता च [2]प्रजाता च [3]प्रसूता स्त्री निगद्यते ।	
The womb.	[1]गर्भाशयो [2]जरायुः [1]स्यादुल्वं च [f][2]कललं स्मृतम् ॥५००॥	Foetus; the bag which surrounds the embryo 2.
The son of an unmarried girl 2.	[1]कन्यापुत्रस्तु [2]कानीनो [1]नाटेरः [2]स्यान्नटीसुतः ।	The son of a dancing girl 2.
A bastard 2.	[1]बन्धुको [2]बन्धुकीपुत्रो [1]गोप्यो [2]दासीसुतः स्मृतः ॥५०१॥	The son of a female slave 2,
The young of any animal 9.	[1]बालः [2]पाको[3]ऽर्भको [4]गर्भः [5]पोतश्च [6]पृथुकः [7]शिशुः ।	
	[8]शावो [9]डिम्भश्च विज्ञेयो [1]वटु[2]र्माणवको मतः ॥५०२॥	A lad.
Old 4.	[1]प्रवयाः [2]स्थविरो [3]वृद्धो [4]यातयामश्च कथ्यते ।	
Old age 2.	[1]जरा तु [g][2]विस्रसा प्रोक्ता [h][1]दारक[2]स्तरुणो [3]युवा ॥५०३॥	Young 3.

a कुलबाधिका कुलपालिका b बन्धका c धर्षणी d दुर्विनीता, ह्यभिनीता
e समा स्मृता f फलिलं, कलिलं g विश्रसा, विश्चसा h दारुक ।

Mother 4. माँ के नाम ४ — 1 अम्बा 2 सवित्री 3 जननी च 4 माता ,

Father 4. बाप के नाम ४ — 1 बप्ता च 2 तातो 3 जनकः 4 पिता च ।

A daughter-in-law4 — 1 स्नुषा 2 जनी 3 पुत्रवधूर्वधूः 4 स्यात् ,

A brother's wife 2. — 1 प्रजावती 2 भ्रातृवधूः स्मृता च ॥५०४॥

A daughter 3. — 1 दुहिता 2 तनया 3 पुत्री 1 जामाता 2 दुहितुः पतिः । — A son-in-law 2.

1 दौहित्रस्तत्सुतो 2 a नप्ता स च 3 b पौत्रश्च कथ्यते ॥५०५॥ — Daughter's son.

An elder brother 3. — 1 अग्रजः 2 पूर्वजो 3 ज्येष्ठः 1 कनिष्ठो 2 ऽवरजो 3 ऽनुजः । — A younger brother 3.

A brother's son. — 1 भ्रातृव्यो 2 भ्रातृपुत्रः स्याद् भ्रात्रीयो c 4 भ्रातृजस्तथा ॥५०६॥

A nurse. — 1 धात्री 2 स्यादुपमाता 1 भगिनी 2 जामिः 3 स्वसा च विज्ञेया । — A sister 3.

A sister's son 3. — 1 तत्पुत्रः 2 स्वस्रीयो 3 जामेयो भागिनेयः स्यात् ॥५०७॥

A brother by the same mother. — 1 समानोदर्य 2 सोदर्य 3 सगर्भाः 4 सोदराः d समाः ।

भ्रातृवर्गस्य या जाया यातरस्ताः परस्परम् ॥५०८॥ — A husband's brother's wife.

Related 9. — 1 आत्मीयः 2 स्वजनो 3 बन्धु 4 राप्तो 5 ज्ञातिश्च 6 बान्धवः ।

7 सनाभयः 8 सपिण्डाश्च 9 सगोत्राश्च समाः स्मृताः ॥५०९॥

The body 17. — 1 तनु 2 स्तनूः 3 संहननं 4 शरीरं ,

5 कलेवरं 6 विग्रह 7 देह 8 कायाः ।

9 अङ्गं 10 वपु 11 र्वर्ष्म 12 पुरं च 13 पिण्डं ,

14 क्षेत्रं च 15 गात्रं च 16 घनश्च 17 मूर्तिः ॥५१०॥

Foot 3. — e 1 अंह्रिः 2 पाद 3 श्चरणः 1 पाणिः f 2 शय 3 पञ्चशाख 4 कर 5 हस्ताः । — Hand 5.

A finger-nail 6. — 1 कामाङ्कुशाः 2 कररुहाः 3 पुनर्नवाः 4 पाणिजा 5 नखा 6 नखराः ॥५११॥

a ज्ञेयो नप्ता पौत्रश्च b पौत्रस्तु c भ्रातृजः स्मृतः d स्मृताः
e अंघिः, अंघ्रिः f पाणिशय ।

The hips and loins.	1 2 3 4 5 काञ्चीपदं कलत्रं जघनं श्रोणी ककुद्मती ज्ञेया ।	
The buttocks 5.	a 1 3 3 4 5 आरोहश्च नितम्बः कटी कटीरं त्रिकस्थानम् ॥५१२॥	
The anus 3.	1 2 3 1 2 b 3 गुदः पायुरपानं स्यात्कटिप्रोथौ स्फिजौ पुतौ ।	The buttocks.
The cavities of the loins.	c 1 2 कुकुन्दरौ समाचष्टे जनो जघनकूपकौ ॥५१३॥	
	1 2 3 4 5 भगो योनिरुपस्थश्च वराङ्गं स्मरमन्दिरम् ।	Vagina; Pudendeem muliebre.
The penis.	1 2 3 4 5 शिश्नः शेफोऽथ मेढ्रश्च तुल्ये मेहनशेफसी ॥५१४॥	
The knee 2. The leg 2.	1 2 1 2 1 2 जानुः स्यादष्ठीवान् प्रसृता जङ्घा च घुटको गुल्फः ।	An ankle 2.
The thigh 2.	1 2 1d 2 3 4e 5 6 ऊरुः सक्थि पिचण्डं जठरोदरतुन्दकुक्षिगर्भाः स्युः ॥५१५॥	The belly 6.
The finger 2.	1 2 1f 2 3 4 5 अङ्गुल्यः करशाखाः कर्णः श्रोत्रं श्रुतिः श्रवः श्रवणम् ।	An ear 5.
The neck 5.	1 2 3 4 g 5 1 2 ग्रीवा धमनिर्मन्या शिरोधरा कन्धरा गलः कण्ठः ॥५१६॥	The throat 2.
A conch shaped neck, a neck marked with three lines like a shell and is considered as a sign of great fortune 1.	1 रेखात्रयाङ्किता ग्रीवा कम्बुग्रीवेति कथ्यते ।	
The waist 4.	1 2 3 4 अवलग्नं विलग्नं च मध्यमं मध्यमुच्यते ॥५१७॥	
The head 7.	1 2 3 4 5 6 7 मुण्डोत्तमाङ्गमस्तकमौलिशिरःशीर्षमूर्धकानि स्युः ।	
The mouth 7.	1 2 3 4 5 6 7 तुण्डं वदनं वक्त्रं लपनं मुखमास्यमाननं च समम् ॥५१८॥	
The eye 9.	1 2 3 4 5 6 7 8 9 दृग्दृष्टिनेत्रलोचनचक्षुर्नयनाम्बकेक्षणाक्षीणि ।	
The tears 6.	1 2 3 4 5h 6 अश्रूणि वाष्परोदननयनजलाश्रास्रुनामानि ॥५१९॥	
The outer corner of the eye 2.	1 i 2 1 2 नयनोपान्तमपाङ्गः कनीनिका नयनमध्यतारा च ।	The pupil of the eye 2.
The part between the eye-brows. The corner of the mouth 2.	1 2 k कूर्पं भ्रुवोश्च मध्यं सृक्व स्यादोष्ठपर्यन्तः ॥५२०॥	

a आरोहस्तु b युतौ c ककुन्दरौ, ककुन्दरा d पित्विंडं e तुड्, तुंड f कर्णश्रोत्रं g कन्धरो h जलाश्राश्रुनामानि, जलास्राशिश्रिनामानि, जलास्ताशुनामानि, जलाश्रुनामानि i प्रपाङ्गः स्यात् j सृक्कः, सृक्कि, सृक्कं, सृक्वा k पर्यन्तम् ।

	a 1 2 3 4 5	
The nose 5.	सिङ्घिनी नासिका नासा घ्राणं घोणा च कथ्यते ।	
	1 2 3 1 2	
The tongue 3.	रसज्ञा रसना जिह्वा तालु काकुदमुच्यते ॥५२१॥	The palate 2.
	1 2 3 4 5	
The arm 5.	दोः प्रवेष्टो भुजो बाहुर्भुजा च स्मर्यते बुधैः ।	
	1 2 3 4	
The cheek 4.	गण्डो गल्लः कपोलश्च हनुस्तुल्यार्थवाचकाः ॥५२२॥	
	1 2 3 4 1 2 b	
The testicles,	मुष्कोऽण्डं वृषणः कोशः सङ्ग्राहो मुष्टिरुच्यते ।	The fist 2.
	1 1 c 2	
The collar bone, the clavicle.	जत्रु वक्षोंऽसयोः सन्धिरूरुसन्धिश्च वङ्क्षणः ॥५२३॥	The joint of the thigh 2.
	1 2 1 1	
Hair on the body 2,	रोम तनूरुहमुक्तं नयनगतं पक्ष्म मुखगतं श्मश्रु ।	An eye-lash. The beard.
	1 2 3 4	
The lips 4.	अधरो दन्तच्छद ओष्ठ उच्यते दन्तवासश्च ॥५२४॥	
	d1 1 2 1 2	
The chin.	ओष्ठस्याधश्चिबुकं ललाटमलिकं भुजाग्रमंसं च ।	The forhead 2. The shoulder 2.
	e 1 2 1 2 3	
Armpit 2.	कक्षां च बाहुमूलं घाटामवटुं कृकाटिकामाहुः ॥५२५॥	Nape of the neck 3.
	1 2 3 4 5 f	
The female breast 5.	उरसिजकुचवक्षोरुहपयोधराः स्तनसमाननामानि ।	
	1 2 3 4 g	
Nipple 4.	उक्ताः कुचमुखचूचुकवृन्तानि शिखा च तुल्यानि ॥५२६॥	
	1 2 3 4 h5	
The chest, the breast 5,	भुजमध्यमुरो वक्षो हृदयस्थानं च वत्समिच्छन्ति ।	
	1 2 3 4 5	
A tooth 5.	एकार्थाः कथ्यन्ते दशनद्विजदन्तरदरदनाः ॥५२७॥	
	1 2 3	
The lap 3.	क्रोडमङ्कस्तथोत्सङ्गः प्राग्भागो वपुषः स्मृतः ।	
	1 2 1 2	
The back, hinder part 2.	पृष्ठं स्यात्पश्चिमो भागः कटौ च कटिशीर्षकौ ॥५२८॥	The loins.
	1 2 1 2	
A vital member or organ 2.	जीवस्थानं भवेन्मर्म पादाग्रं प्रपदं मतम् ।	The extremity of a foot 2.
	1	
The parting line of the hair, the hair parted on each side of the head so as to leave a line.	सीमन्तः कथ्यते स्त्रीणां केशमध्ये तु पद्धतिः ॥५२९॥	
	1 2 3 4 5 6 7	
The hair of the head 7.	केशाः शिरसिजमूर्धजकचचिकुरशिरोरुहाः स्मृता वालाः ।	
	तद्बन्धविशेषाः स्युर्वेणी धम्मिल्लकुन्तलकवर्यः ॥५३०॥	Different forms of braid or lock.

a संधिनी, सिंघिनी b मुष्टिरिष्यते, मुष्टिरिच्यते c वंक्षिणः, वक्षणः d श्चुबुकं, श्चुवकं e कक्षा f नामानः g भवन्ति h वक्षमिच्छन्ति ।

Much or ornamented hair.
हस्तः पक्षः पाशः केशेषु बहुत्ववाचकाः शब्दाः ।

A curl lock of hair 1.
अलकं कुटिलाः केशा भ्रमरकमुक्तं ललाटस्थम् ॥५३१॥
A lock of hair or curl hanging down on the fore-head.

A lock of hair left on the crown of the head, a tuft 3.
बालानां तु शिखा प्रोक्ता काकपक्षः शिखण्डिका ।

Grey hair 2.
पलितं पाण्डुराः केशा व्रतिनां तु जटा सटा ॥५३२॥
An ascetics' matted hair 2.

Wrist, the extremity of the arm 2.
मणिबन्धः पाणिमूलं कफणिः[a] कूर्परः स्मृतः ।
An elbow 2.

The fore arm, the part between the wrist and elbow 1.
तयोर्मध्यं प्रकोष्ठः स्यात्प्रकाण्डः[b] कूर्परांसयोः ॥५३३॥
The upper part of the arm 2.

The mind.
चेतश्चित्तं मनः स्वान्तं हृदयं मानसं समम् ।

Intent upon one object 3.
एकायनं तथैकाग्रमेकतानं च तद्गतम् ॥५३४॥

Mental pain.
आधिस्तु मानसी पीडा वाञ्छितोऽर्थो[c] मनोरथः ।
A desired object a wish 2.

An organ of sense 6.
खमक्षमिन्द्रियं स्रोतो[d] हृषीकं करणं स्मृतम् ॥५३५॥

The distance from the elbow to the tip of the middle finger taken as a measure of length equal to 24 thumb.
मध्याङ्गुलीकूर्परयोर्मध्ये प्रामाणिकः करः ।
A cubit of the middle length from the elbow to the tip af the little finger

The closed fist, the distance from elbow to the end of the closed fist.
बद्धमुष्टिकरो रत्निररत्निः सकनिष्ठिकः[e] ॥५३६॥

The fist, a measure of capacity equal to one handful.
सम्पिण्डिताङ्गुलिर्मुष्टिः प्रसृतिः कुञ्चिताङ्गुलिः ।
The palm of the hand stretched out and hollowed, a handful considered as a measure equal to two palas.

प्रसारिताङ्गुलिः पाणिः कथ्यते प्रतलस्तलः ॥५३७॥
The palm of the hand 2.

The span of the thumb and fore finger 2.
प्रादेशः स्यात्प्रदेशिन्या तालो मध्यमया भवेत् ।
A short span.

A span from the tip of the thumb to that of the ring finger.
गोकर्णोऽनामया प्रोक्तो वितस्तिः स्यात्कनिष्ठया ॥५३८॥
A measure of length equal to 12 "angulis" being the distance between the extended thumb and the little finger.

An ornament, a decoration 9.
आकल्पो मण्डनं वेषः प्रतिकर्म प्रसाधनम् ।
भूषणं स्यादलङ्कारो नेपथ्याभरणे तथा ॥५३९॥

समालभनमिच्छन्ति[f] चर्चां मार्ष्टिं च सूरयः ।

Smearing the body with fragrance 5.
स्थासकं हस्तविम्बं स्यात्परिष्कारश्च[g] भूषणम् ॥५४०॥
An ornament 2.

A mark on the forehead.
तिलकं तमालपत्रं चित्रकमुक्तं विशेषकः पुण्ड्रम् ।

A mark made with sandal or any other fragrant powder on the fore-head.
रचिता ललाटपट्टे ललाटिका कथ्यते रेखा ॥५४१॥

a कफणः, कफेणिः, केणिः b प्रगण्डः c वांछितार्थो d श्रोतो
e सकनिष्टकः, रत्निरकनिष्ठिकः f समालंभ g परिस्कारश्च ।

Drawing lines or figures of painting on the face, arms, chest, cheek, neck etc with fragrant and coloured. Substance as a mark of decoration.

भुजशिखरस्तनमण्डलकपोलकण्ठेषु विरचिता कुशलैः ।
1 a
अनुलेपनेन लेखा निगद्यते पत्रवल्लीति ॥५४२॥

Saffron 7.

1 2 3 4
कुङ्कुमं घुसृणं वर्णं प्रोक्तं लोहितचन्दनम् ।
5 6 b 7
काश्मीरजं च विद्वद्भिः कालेयं जागुडं स्मृतम् ॥५४३॥

Sandal wood tree

1 2 3 4
चन्दनं स्यान्मलयजं श्रीखण्डं रोहणद्रुमः ।

Musk 3.

1 2 3
मृगनाभिर्मृगमदः प्रोक्ता कस्तूरिका बुधैः ॥५४४॥

A dark species of a gallochum.

Camphor 2.

1 2 1 2
कर्पूरो घनसारः स्यात्काकतुण्डोऽगरुः स्मृतः ।

The unguent for the body.

The betelnut 2.

1 2 1 2
ताम्बूलं क्रमुकं प्रोक्तमङ्गरागो विलेपनम् ॥५४५॥

A lower garment 4.

1 2 3 4
उपसंव्यानं परिधानमन्तरीयं च निवसनं तुल्यम् ।

An upper garment 4.

1 2 3 c 4
प्रावरणं संव्यानं प्रच्छादनमुत्तरीयं च ॥५४६॥

A sort of petticoat 2.

1 2
अर्धोरुकं वरस्त्रीणां वासश्चण्डातकं स्मृतम् ।

The ends of the cloth tied into a knot in front; the knot of the wearing garment 3.

1 2 3
परिधानांशुकग्रन्थिः प्रोक्ता नीवी तथोच्चयः ॥५४७॥

A cloth 12.

1 2 3 4 5 6
चेलं चीरं वासः कर्पटमाच्छादनं निवसनं च ।
7 8 9 10 11 d 12
अम्बरमंशुकमुक्तं वस्त्रं सिचयः पटः पोटः ॥५४८॥

The four sources of cloth (1) the bark and (2) fruit of trees and plants (3) hair of insects (4) and animals.

चतुर्विधं तु विज्ञेयं त्वक्सूत्रकृमिरोमजम् ।

Silken cloth, woven silk 4.

e 1 2 3 (i) (ii) 4
पत्त्रोर्णं धौतकौशेयं दुकूलं क्षौममिष्यते ॥५४९॥

(i) (ii) Also skirt.

Cotton cloth 2.

1 2 1 2
कार्पासं वादरं प्रोक्तं वस्त्रस्यान्तो मतोऽञ्चलः ।

The extreme end of the cloth 2.

New cloth 2.

1 2 1 f 2
अहतं स्यान्नवं वासो जीर्णमुक्तं पटच्चरम् ॥५५०॥

Old cloth 2.

Washed 2.

1 2 1 2 3 g 4
धौतमुद्गमनीयं च वर्तिर्वस्तिर्दशाः सिचः ।
h
एकार्था आविकौरभ्ररल्लकोर्णायुकम्बलाः ॥५५१॥

The skirt of a web or dress 4.

Woollen garments, also blanket 2.

a पत्रवल्ली तु b जांगुडं, जागुडां, जागुडीं c मन्तरीय च
d पटपोटः पटःप्रोतः e पत्तोर्णं, पूत्तूर्णं, पूत्तूर्णं f पटच्चरः
g दशा, देशां h आविको।

An armour, a mail 2. Also a dress fitting close to the upper part of the body, bodice.

A sort of bodice worn by woman 2.

1 2 1 2
कञ्चुको वारवाणः स्यात्कूर्पासश्च निचोलकः ।

A garland, wreath, chaplet 3.

Chaplet of flowers worn on the hair.

1 2 3 1
स्रग्माला माल्यमाख्यातं केशमध्ये तु गर्भकः ॥५५२॥

A chaplet of flowers leaning downwards on the forehead 2.

1 2
प्रभ्रष्टकं शिखालम्बि पुरो न्यस्तं ललामकम् ।

A garland worn over the left shoulder and under the right arm like the sacred thread.

a 1
तिर्यग्वक्षसि विक्षिप्तं वैकक्षकमुदाहृतम् ॥५५३॥

A garland worn round the neck.

1
ग्रीवायां लम्बितं प्राज्ञैः प्रालम्बकमिति स्मृतम् ।

A chaplet tied on the crown of the head 5.

b 1 2 3 4 5
आपीडः शेखरोत्तंसावतंसाः शिरसि स्रजः ।

An earring 3.

1 2 3
कर्णपूरेऽपि दृश्येते तथोत्तंसावतंसकौ ॥५५४॥

Lac 4.

Bee wax 2.

1 2 3 4 1 2
जतुयावकलाक्षाऽलक्तकाः समाः सिक्थकं मधूच्छिष्टम् ।

Lamp-black, collyrium 2.

A mirror 3.

1 2 1 2 3
कज्जलमञ्जनमभिहितमादर्शो दर्पणो मुकुरः ॥५५५॥

A large earring 4.

c 1 2 3 4
ताडङ्कस्ताडपत्रं स्यात्कुण्डलं कर्णवेष्टनम् ।

Any ornament for the ear 2.

1 2
कर्णालङ्करणं सर्वं कर्णिकेत्यभिधीयते ॥५५६॥

A bracelet worn up on the upper arm 2.

1 2 3
केयूरमङ्गदं प्रोक्तं बाहुमूलविभूषणम् ।

A bracelet 4.

1 2 3 4
आवापः परिहार्यः स्यात्कटको वलयं तथा ॥५५७॥

An amulet, a string tied round the wrist at weddings etc. 3.

1 2 3
कङ्कणं हस्तसूत्रं च विदुः प्रतिसरं बुधाः ।

An ornament for the neck 2.

1 2
ग्रीवालङ्करणं सर्वं ग्रैवेयकमितीष्यते ॥५५८॥

A finger-ring 3.

1 2 3
अङ्गुल्याभरणं प्रोक्तमङ्गुलीयकमूर्मिका ।

A seal ring, a signet ring.

1
कथ्यतेऽङ्गुलिमुद्रा च भवेद्या लिखिताक्षरा ॥५५९॥

A girdle, a zone 7.

1 2 3 4 d 5
कलापः सप्तकी काञ्ची मेखला रसना तथा ।

A small bell 2.

6 7 1 2
कटिसूत्रं सारसनं किङ्किणी क्षुद्रघण्टिका ॥५६०॥

Anklet, any ornament for the feet 7.

e 1 2 3 4
सिञ्जिनी पादकटकस्तुलाकोटिस्तु नूपुरम् ।

5 6
मञ्जीरं हंसकं स्त्रीणां चरणाभरणं स्मृतम् ॥५६१॥

a वैकक्षि b आपीडशेखरौ c ताडकं ताडपत्रं d रशना, दशमा, दशना e शिंजिनी, शिजिनी ।

A pearl-necklace having hundred strings 2.
गुच्छ-Pearl-necklace of 32 strings.
अर्धगुच्छ-A pearl-necklace of 24 strings.
हार-Necklace.
A single string of pearls 3.
A necklace of 27 pearls 2.
The central gem of a necklace 3.
A jewel of the crest or diadem.
Crown, diadem 4.
Beauty 5.
Seeing, sight 8.
A side glance 2.
Shame, bashfulness 6.
Embracing 7.
Sexual intercourse 7.
Name of the third or agricultural and mercantile class, "Vaishyas" 5.
Living subsistence 4.
A trader, a merchant 5.
A usurer 4.

देवच्छन्दः[1] शतयष्टिरर्धो[2] माणवकः[a][1] स्मृतः ।
हारो[b] गुच्छार्धगुच्छौ[1][1] च गोपुच्छश्च[1] भवेत्क्रमात् ॥५६२॥
एकावल्येकयष्टिः[1][2] स्यात्कथ्यते सा च कण्ठिका[3] ।
प्रोक्ता नक्षत्रमाला[1] च सप्तविंशतिमौक्तिका[2][c] ॥५६३॥
हारमध्यस्थितं[1] रत्नं नायकं[2] तरलं[3] विदुः ।
चूडामणिं[1] च विद्वांसो वदन्ति शिरसि स्थितम् ॥५६४॥
आहुः किरीटमुष्णीषं[1][2] कोटीरं[3] मुकुटं[4] समम् ।
राढा[1] शोभा[2] विभूषा[3] स्यादभिख्या[4] सुषमा[5] समाः ॥५६५॥
निभालनं[1] निशामनं[2] निध्यानमवलोकनम्[3][4] ।
ईक्षणं[5] दर्शनं[6] दृष्टिर्द्योतनं[7][8] च समं स्मृतम् ॥५६६॥
कटाक्षो[1] दृष्टिविक्षेप[2] ईषच्च[1] हसितं स्मितम्[2] ।
ह्रीर्लज्जापत्रपा[1][2][3] व्रीडा[4] त्रपा[5] मन्दाक्षमुच्यते[6] ॥५६७॥
आलिङ्गनमुपगूहनमाहुः[1][2] परिरम्भणं[3] परिष्वङ्गम्[4] ।
आश्लेषमङ्कपालीं[5][6] क्रोडीकरणं[7] च तुल्यार्थम् ॥५६८॥
संवेशनं[1] निधुवनं[2] सम्प्रयोगो[3] रहो[4] रतिः[5] ।
सुरतं[6] मोहनं[7] प्रोक्तं मणितं[1] रतकूजितम्[d][2] ॥५६९॥
आर्या[1] भूमिस्पृशो[2] वैश्या[3] ऊरव्याश्च[e][4] विशः[5] स्मृताः ।
जीवनं[1] वृत्तिराजीवो[2][3] वार्त्ता[4] चेति निगद्यते ॥५७०॥
पण्याजीवा[1] वणिजः[2] प्रापणिका[3] नैगमाश्च[4] वैदेहाः[5] ।
द्वैगुणिको[1] वार्धुषिको[2] वृद्ध्याजीवः[3] कुसीदिकः[f][4] प्रोक्तः ॥५७१॥

A pearl-necklace having twenty strings.
गोपुच्छ-A pearl-necklace consisting of four strings.
Smiling 2.
An inarticulate murmuring sound uttered in cohibitation 2.

a अर्धमाणकः, अर्धोमाणकः b हारी c मौक्तिकः, मौक्तिके
d रतिकूजितम् e औरव्याश्च, ओरव्याश्च, उरव्याश्च, उब्धाश्च
f कुशीदिकः कुसीदकः, कुसीदः ।

Debt 4.	1 2 3 4 अपमित्यकमुद्धार ऋणं स्यात्पर्युदञ्चनम् ।	
Interest on money 2.	1 2 1 2 वृद्धिः कलान्तरं प्रोक्तं कुसीदं वृद्धिजीवनम् ॥५७२॥	Usury 2.
Exchange, barter 3.	1 2 3 परिवृत्तिर्विनिमयो वैमेयश्च निगद्यते ।	
Bought purchased 2.	1 a 2 1 2 b प्रक्रयः क्लृप्तिकं प्रोक्तं भाटकोऽवक्रयः स्मृतः ॥५७३॥	Price 2.
A farmer 5.	1 2 3 c 4 5 क्षेत्राजीवः कृषिकः कृषीवलः कर्षकः कुटुम्बी च ।	
Corn, grain 2.	d 1 2 1 2 3 सीत्यं सस्यं प्रोक्तं वप्रं क्षेत्रं च केदारम् ॥५७४॥	A field, a farm 3.
A plough 3.	1 2 e 3 1 2 हलं स्याल्लाङ्गलं सीरः फालः कुशिक उच्यते ।	Ploughshare 2.
A bridle 3	1 2 3 1 2 f योक्त्रं तु रश्मिराबन्धः शम्या च युगकीलकः ॥५७५॥	The pin of a yoke 2.
The clod of earth 2.	1 2 1 g 2 कथितो लोष्टको लोष्टः कोटीशं लोष्टभेदनम् ।	A harrow 2.
Ploughed or furrowed twice 2.	1 2 1 2 शम्बाकृतं द्विसीत्यं स्यात्सीता लाङ्गलपद्धतिः ॥५७६॥	A furrow 2.
A spade.	1 2 1 2 गोदारणं च कुद्दालं लवित्रं दात्रमुच्यते ।	A sickle
A goad for driving cattle 3.	1 2 3 1 h 2 प्रतोदः प्राजनं तोत्रं लूनं दातमिति स्मृतम् ॥५७७॥	Cut, reaped 2.
A post of a threshing floor 2.	1 2 i 1 2 खलेवाली भवेन्मेठिः खलधान्यं खलं स्मृतम् ।	Threshing floor 2.
Chaff, husk 2.	1 2 1 2 बुशः कडङ्गरः प्रोक्तः कणः स्यात्क्षुद्रतण्डुलः ॥५७८॥	A single grain of rice 2.
The beard of corn 2.	1 2 1 2 धान्यशूकं च किंशारुः कणिशं धान्यशीर्षकम् ।	An ear of corn 2.
A stalk 2.	1 2 1 2 j 1 2 नालं काण्डं क्षुपो गुच्छो व्रीहिः स्तम्बकरिः स्मृतः ॥५७९॥	A corn, a grain 2.
क्षुपो गुच्छो A clump of grass 2,	रक्तशालिर्महाशालिः कलमाश्चेति शालयः ।	Varieties of rice, रक्तशालिः A red species of rice. महाशालिः A kind of large and sweet smelling rice. कलमः Rice sown in May-June which ripens in December-January.
Name of a plant, Condia Myxa or Latifolia 3.	1 2 3 उद्दालः कथितः प्राज्ञैः कोद्रवः कोरदूषकः ॥५८०॥	

a क्लृप्तकं b तथा c कर्बुकः कुटम्बी d सैत्यं सैन्यं e सीरं, शीरं f कीलिका किलिकम्, g कोटीरं, कीटिशं, काटीशं h दात्र, दान i मेढिः, मेटि, मेथि, मेधि j गुंछो, गुँष्टो, गुष्टो ।

A kind of pulse, Lentil 2.	मङ्गल्यको[a][1] मसूरः[2] स्यात्सिद्धार्थः[1] सर्षपः[2] स्मृतः ।	White mustard 2.
Black-mustard 3.	आसुरी[1] राजिका[2] चेति कथ्यते राजसर्षपः[3] ॥५८१॥	
A sort of millet 2.	प्रियङ्गुः[1] कथ्यते कङ्गु[2]रतसी[1] स्यादुमा[2] क्षुमा[3] ।	Linseed flax 3.
Peas 3.	कलायः[1] खण्डिको[2] ज्ञेयः सातीनश्च[3] मनीषिभिः ॥५८२॥	
Wild sesamum 2.	जर्तिलः[1] कथ्यते सद्भिररण्यप्रभवस्तिलः[2] ।	
Barren sesamum 3.	तिलपिञ्ज[1][b]स्तिलपेज[2]स्तथा षण्ढतिलः[3] स्मृतः ॥५८३॥	
Rice growing wild or without cultivation 2.	तृणधान्यं[1] तु नीवारः[2] श्यामाकः[1] श्यामको[2] भवेत् ।	A kind of edible grain or corn, also graminaceous plant 2.
A sort of pulse, also the wind caused by winnowing 2.	वल्ला[1] निष्पावकाः[2] प्रोक्ता आढकी[1] तुवरी[2] स्मृता ॥५८४॥	A kind of pulse 2. (अरहर)
लाजा panched or fried grain, rice parched and flattened 2.	भृष्टं[1] धान्यं लाजाः पृथुका[1]श्चिपिटा[2]श्च कुट्टिता[1]स्ते स्युः ।	कुट्टिता - Pounded, rice.
धाना Fried barley.	भृष्टा[c] यवास्तु धाना दरपक्वा[1] कथ्यतेऽभ्यूषः[2] ॥५८५॥	Half parched barley 2.
A person of the low class 5.	शूद्रो[1]ऽन्त्यवर्णो[2] वृषलः[3] पद्यः[4] पज्जश्च[5] कथ्यते ।	
A writer 4.	लेखकः[1] स्याल्लिपिकरः[2] कायस्थो[3]ऽक्षरजीवकः[4] ॥५८६॥	
A cow-herd 4.	आभीरः[1] स्यान्महाशूद्रो[2] गोपालो[3] वल्लवस्तथा[4] ।	
A carpenter 5.	त्वष्टा[1] च काष्ठतट्[2] तक्षा[3] रथकारश्च[d][4] वर्धकिः[5] ॥५८७॥	
A goldsmith.	नाडिन्धमः[1] कलादः[2] सुवर्णकारश्च[3] मुष्टिको[4] ज्ञेयः ।	
A jeweller 2.	वैकटिको[1] मणिकारो[2] ध्माकारो[1] लोहकारः[2] स्यात् ॥५८८॥	A Black-smith 2.
A barber 4.	क्षुरमर्दी[1] दिवाकीर्ति[2]श्चण्डिलो[3][e] नापितः स्मृतः ।	
A gardener 3.	मालाकारस्तु[1] विज्ञेयो मालिकः[2] प्रातिहारिकः[f][3] ॥५८९॥	
A potter 2	कुम्भकारः[1] कुलालः[2] स्यात्तन्तुवायः[1] कुविन्दकः[2] ।	A weaver 2.
A shampooer 2.	संवाहको[g][1]ऽङ्गमर्दी[2] स्यात्तुन्नवायश्च[1] सौचिकः[2] ॥५९०॥	A tailor 2,

a मांगल्यको b पिङ्ग c भ्रष्टं, भ्रष्टा d रथकारस्तु e श्चंडालो, श्चाडिलो f प्रातहारिकः, प्रतिहरिकः g संवाहकौऽ गमर्दः ।

A plasterer 2.	लेपकः[1] पलगण्डः[2] स्याद्रङ्गाजीवस्तु[1] चित्रकृत्[2][a] ।	A painter 2.
Plastering, painting in general.	कर्म लेप्यादिकं सर्वं पुस्तकर्म[1] स्मृतं बुधैः ॥५९१॥	
An actor, mime, a dancer 5.	शैलाली[1] शैलूषः[2] कुशीलवश्[3]चारणः[4] कृशाश्वी[5] च ।	
	जायाजीवो[6] भरतो[7] नटस्तथा[8] स्यान्नटी[1] क्षुद्रा[2] ॥५९२॥	A dancing girl 2.
An artisan, a mechanic 3.	शिल्पिनः[1] कारवः[2] प्रोक्ताः प्रकृतिश्च[3] मनीषिभिः ।	
A washerman 2.	निर्णेजकः[1] स्याद्रजकः[2] कल्पपालस्तु[1] शौण्डिकः[2][b] ॥५९३॥	A distiller of liquors 2.
A fisherman 5.	कैवर्तो[1] धीवरो[2] दासो[3] मत्स्यबन्धी[4] तु जालिकः[5] ।	
A net 2.	आनायः[1] कथ्यते जालं[2] कुवेणी[1] मत्स्यबन्धनी[c][2] ॥५९४॥	A fish basket 2.
A butcher 2.	वैतंसिकः[1] सौनिकः[2][d] स्यात्कौटिको[1] मांसविक्रयी[2] ।	A meat seller 2.
A slaughter-house 2.	सूना[e][1] स्याद् घातनस्थानं[2] कृपाणी[1]ली[2] च कर्तरी[3] ॥५९५॥	Scissors shears 3.
A shoe-maker 2.	चर्मकृत्[1]पादुकाकारो[2] नद्ध्री[1] वद्ध्री[2] च कथ्यते ।	A leather thong 2.
A fowler, a hunter 4.	मृगयु[1]र्लुब्धको[2] व्याधो[3] बुधैर्वागुरिकः[4] स्मृतः ॥५९६॥	
A rope 6.	शुल्वा[1] रज्जु[2]र्वराट[f][3]श्च वट[4]स्तन्त्री[5]र्गुणः[6] स्मृतः ।	
A noose.	पाशः[1] स्याद्बन्धनग्रन्थि[2]र्वागुरा[1] मृगजालिका[2] ॥५९७॥	A trap for catching beasts 2.
Chāndāla, an outcaste 8.	अन्तावसायी[1] चण्डालो[g][2] निषादश्च[3] जनङ्गमः[4] ।	
	श्वपचः[5] पक्वश[6][h]श्चैव मातङ्गः[7] प्लवकः[i][8] स्मृतः ॥५९८॥	
Different sects of 'Antjati' belonging to lowest caste.	किराताः शबरा[j] निष्टयाः पुलिन्दा नाहला भटाः ।	
	माला म्लेच्छादयो भिल्लाः कथ्यन्ते ह्यन्तजातयः ॥५९९॥	
Disease, sickness, invalidity12.	रोगो[1] रुक्[2] व्याधि[3]राकल्यं[4] गदो[5] मान्द्य[6]मपाटवम्[7] ।	
	आम[8] आमय[9] आतङ्क[10] उपतापो[11] रुजा[12] स्मृता ॥६००॥	

a चित्रकर्मादिकं b सौंडिकः c मत्स्यबंधिनी d शौनिकः e शूना f रज्जुर्वटारश्च, रज्जुर्वराकरटश्च, वटारक, वटस्तंत्रीगुणः, वटस्तंत्रागुण;, वटस्तंत्रीगुणस्तथा g चांडालो h पुल्कसः, पुक्कसः, पुक्कशः, बुक्कसः i प्लवगः j शिविरा ।

Cough 2.	क्षवथुः[1] कथ्यते कासो[2] वेपथुः[1] कम्प[2] उच्यते ।	Tremor 2.
Burning fever 2.	दवथुः[1] परितापः[2] स्याद् ग्लानिश्च[1] क्लमथुः[2] स्मृतः ॥६०१॥	Fatigue, languor 2.
Consumption 3.	राजयक्ष्मा[1] क्षयः[2] शोषः[3] शोफः[1] श्वयथुरिष्यते[2] ।	Swelling 2.
A sort of cutaneous eruption 2.	किलासं[1] कथ्यते सिध्म[2] पामा[1] कच्छूः[2] खसः[3][a] स्मृतः ॥६०२॥	Itch, scab 2,
	कण्डूतिः[4] कण्डूया[5] कण्डूः[6] कण्डूयनं[7] तथा खर्जूः[b][8] ।	
Waking.	जागर्या[1] जागरणं[2] प्रजागरो[3] जागरा[4] च विज्ञेया ॥६०३॥	
Boil, pimple, blister 3.	पिटकः[1] स्फोटको[2] गण्डः[3] श्वित्रं[1] कुष्ठं[2] च पाण्डुरम्[3] ।	White leprosy 3.
Elephantiasis 2.	श्लीपदं[1] पादवल्मीकः[2] पृष्ठग्रन्थि[1]र्गडुः[2][c] स्मृतः ॥६०४॥	Hump on the back 2.
A disease producing baldness 2.	केशघ्न[1]मिन्द्रलुप्तं[2] स्यादर्शश्च[1] गुदकीलकः[2] ।	Piles 2.
Bile 2. Phlegm 2.	मायुः[1] पित्तम्[2] कफः[1] श्लेष्मा[2] प्रतिश्यायश्च[1][d] पीनसः[2] ॥६०५॥	Catarrh affecting the nose 2.
Afflicted with rheumatism 2.	वातकी[1] वातरोगी[2] स्यात्सातिसारो[1]ऽतिसारकी[2] ।	Afflicted with diarrhoea or dysentry 2.
Pained with phlegm and scab, scabby, pained with leprosy, leprous.	सिध्मश्लेष्मार्शसंयोगात्सिध्मलः श्लेष्मलो[1]ऽर्शसः[2] ॥६०६॥	Afflicted with piles 2.
Afflicted with ringworms 2.	दद्रुणो[e][1] दद्रुरोगी[2] स्यान्नःक्षुद्रः[1] क्षुद्रनासिकः[2] ।	Small-nosed 2.
	क्लिन्ने यस्याक्षिणी पिल्ल[1]श्चिल्ल[2]श्चुल्ल[3]श्च स स्मृतः ॥६०७॥	Blear-eyed 3.
Big bellied; gorbellied 2.	पिचण्डिलो[f][1] वृहत्कुक्षि[2]स्तुन्दिलो[1]दरिलौ[2] च सः ।	Fat, corpulent 2.
Bald-headed 3.	खलतिः[1] शिपिविष्ट[2]ः स्यादैन्द्रलुप्तिक[3] एव च ॥६०८॥	
Blind 2.	अन्धो[1] ह्यनेडमूकः[2] स्यादेडो[1] वधिर[2] उच्यते ।	Deaf 2.
A dumb 3.	जडः[1] कडः[2] स्मृतो मूकः[3] कल्लमूक[g][1]स्त्ववाक्श्रुतिः[2] ॥६०९॥	Deaf and dumb 2.
Lame 3.	खञ्जः[1] पङ्गुस्तथा[2] श्रोणः[3] कुणि[1]र्विकलपाणिकः[2] ।	Maimed 2.
Having prominent navel 2.	तुण्डि[1]रुन्नतनाभिः[2] स्याद्विग्रो[1] विगतनासिकः[2] ॥६१०॥	Noseless. 2.

a खशः b खर्जुः c गंडः d प्रतिशायश्च, प्रतिक्रयावश्च ।
e दद्रणे दद्ररोगी, ददृणो ददृरोगी f पिचिंडिलो, पिडिलोचि,
पिचिंडोलि g कलम् ।

Hump-backed 2.	[1]गडुल: कथ्यते [2]कुब्ज: [1]खर्वशाखस्तु [2]वामन: ।	Dwarfish 2.
Dwarf 3.	[1]पृश्नि: [2]स्वल्पशरीर: स्या[3]त्किरात: स च कथ्यते ॥६११॥	
A physician 5.	[1]आयुर्वेदी [2]भिषग्[3]वैद्यो [4]दोषज्ञ: [5]स्याच्चिकित्सक: ।	
Treatment, the practice of medicine 2.	[1]उपचर्या [2]चिकित्सा [1]स्यान्निदानं [2]हेतुरुच्यते ॥६१२॥	Diagnosis, primary cause of disease 2.
A poison-doctor 2.	[1]जाङ्गुलिको [2]विषभिषक् [1][a]व्यालग्राह्या[2]हितुण्डिक: ।	A snake-catcher 2.
Medicine 6.	[1]भैषज्यं [2]भेषजं [3]जायु[4]रगद[5]स्तन्त्र[6]मौषधम् ॥६१३॥	
A sort of salt.	[1]सिन्धूत्थं [2][b]माणिमन्थं च [3]सैन्धवं [4]लवणोत्तमम् ।	
Long pepper 6.	[1]कृष्णो[2]पकुल्या [3]वैदेही [4]मागधी [5]पिप्पली [6]कणा ॥६१४॥	
Dry ginger 5.	[1][c]शुण्ठी [2]नागरमुक्ता [3]महौषधं ` [4]विश्वभेषजं [5]विश्वा ।	
Liquorice root 2.	[1]मधुकं [2]यष्टिमधु स्या[1]दमृता [2]वत्सादनी [3][d]गुडूची च ॥६१५॥	A kind of plant 3.
Ginger 2.	[1]आर्द्रकं [2]शृङ्गवेरं स्या[1]दजाजी [2]जीरक: स्मृत: ।	Cumin seed 2.
Black pepper 3.	[1]वेल्लजं [2]मरिचं प्रोक्त[e][3]मूषणं च मनीषिभि: ॥६१६॥	
A kind of salt 2.	[1]सौवर्चलस्तु [2]रुचक: [f][1]कुस्तुम्बुरु च [2]धान्यकम् ।	Coriander seed 2.
The aggregate of (1) black pepper (2) long pepper and (3) dry ginger 3.	[1]त्रिकटु [2]त्र्यूषणं [3]व्योषं [1]हिङ्गु [g][2]रामठ उच्यते ॥६१७॥	Asafoetida 2.
Yellow myrobalan3	[1]हरीतक्य[2]भया [3]पथ्या [1]धात्री [2]चामलकी [3]शिवा ।	Emblic my--robalan 3. (आँवला)
A kind of tree 3.	[1]कलि[2]रक्षो [3]विभीत: स्या[1]त्त्रितयं [2]त्रिफला स्मृता ॥६१८॥	A mixture of (1) हरीतकी, विभीतक and आमलकी ।
A ringworm shrub 4.	[1]एडगज: [h][2]प्रपुनाटो [3]दद्रुघ्नश्च[4]क्रमर्दक: प्रोक्त: ।	
Asparogus racemosus 2. शतावरी in Hindi,	[1]शतमूलिका [2]त्वभीरु[i][1]र्निदिग्धिका [2]कण्टकारिका [3]व्याघ्री ॥६१९॥	Name of a medicinal plant भटकटैया in Hindi 3.

a व्यालग्राह्योहि b माणिबंधं c सुंठी, शुंठीं, शंठी d गडूची
e प्रोक्तं त्र्यूषणं, प्रोक्तं पूषणं f कुस्ताम्बरु, कस्तंबरु, कुस्ताम्बरु, कुस्तंवरु g रामठो हिङ्गुरुच्यते, हिगु व्योषं रामठ उच्यते, h प्रपुन्नाठो, प्रमुन्नाठो i निर्दिग्धिका, निदग्धिका (गुणै: कंटकैर्वा निदिह्यते स्म उपचिता, दिह उपचये, निदिग्धा कनि निदिग्धिका)

A particular fragrant; gum resin, bedellium.	a 1 पुराख्यो 2 महिषाक्षश्च 3 गुग्गुलः 4 स्यात्पलङ्कषः ।	
Safflower, कसूंभ in Hindi.	b 1 महारजनमिच्छन्ति c 2 कुसुम्भं च सुमेधसः ॥६२०॥	
Vermillion 3, मोथा in Hindi.	1 हिङ्गुलं 2 हंसपादं च d 3 कुरुविन्दं e निगद्यते ।	
Honey 5.	1 सारघं 2 माक्षिकं 3 क्षौद्रं 4 मधु 5 पुष्परसस्तथा ॥६२१॥	
A fragrant root 2.	1 f उशीरं 2 वीरणीमूलं 1 ह्रीवेरं 2 वालकं 3 जलम् ।	A sort of perfume 3.
A kind of plant 4.	1 मुस्तकः 2 कुरुविन्दः 3 स्याद् गुन्द्रा च 4 जलदाह्वयः ॥६२२॥	

इति श्रीभट्टहलायुधकृतायामभिधानरत्नमालायां

भूमिकाण्डं द्वितीयं समाप्तम् ॥२॥

a सुराव्यो महिषाख्यश्च b महारजत c कुसंभं d करविंदं e प्रचक्षते f उसीरं।

तृतीयं पातालकाण्डम्

The infernal regions 6.

1 2 3
वडवामुखं पातालं वैरोचननिकेतनम् ।
4 5 6
तथाधोभुवनं प्रोक्तं नागलोको रसातलम् ॥६२३॥

A hole 16.

1 2 3 4 5 6 7 8
निम्नमगाधो गर्तः श्वभ्रं शुषिरं वपा बिलं विवरम् ।
a 9 10 11 12 13 14 15 16
अन्तरमवटु च्छिद्रं निर्व्यथनं रन्ध्ररोककुहरदराः ॥६२४॥

The hell 3.

1 2 3
निरयो दुर्गतिश्चैव नरकः परिकीर्तितः ।

An (evil) spirit subject to the torments of hell.

1 2 3 b
नारका जन्तवः प्रेता यात्याश्चैवातिवाहिकाः ॥६२५॥

Torment 2. — Confinement 2.

1 2 1 2
यातना कारणा प्रोक्ता कारा बन्धनमुच्यते ।

Pain 6.

1 2 3 c 4 5 6
आबाधा वेदना दुःखमर्तिः पीडा व्यथा तथा ॥६२६॥

Sin, wrong 14.

1 2 3 4 5 6 7 8
वृजिनं दुरितं दुष्कृतमघमंहः किल्विषं तमः कल्कम् ।
9 10 d 11 12 13 14
एनः कल्मषमशुभं पापं स्यात्पातकं पाप्मा ॥६२७॥

Death 11.

1 2 3 4 5 6 7
निधनं नाशो मृत्युर्मरणं पञ्चत्वमत्ययः कालः ।
8 9 10 11
संस्था स्याद्दिष्टान्तो निमीलनं दीर्घनिद्रा च ॥६२८॥

Dead 7. — Corpse 2.

1 2 3 4 5
परासुरुपसम्पन्नः प्रमीतः संस्थितो मृतः ।
6 7 1 2
प्रेतः परेतश्च तथा कुणपः शवमुच्यते ॥६२९॥

a अन्तरमवाक्, अंतरमवट b श्चैवात्यवाहकाः, श्चैवातिवाहकाः
c दुःखमार्तिः d कलुष ।

Headless trunk retaining some power of action 2.
1 2 1 2 3 4
कबन्धः कथ्यते / रुण्डः क्षतमीर्मंमरुर्व्रणः ।
Wound 4.

The skin, hide 5.
1 2 3 4 5
असृग्धराजिनं चर्म कृत्तिस्त्वक् परिकीर्तिता ॥६३०॥

Flesh 8.
1 a 2 3 4 5 6
पललं जाङ्गलं मांसं पलं पिशितमामिषम् ।

7 8 1 b 2
क्रव्यं तरसमेकार्थं विस्रं स्यादामगन्धिकम् ॥६३१॥
The smell of raw meat 2.

Blood 7.
1 2 3 4 5 6 7
क्षतजं लोहितमस्रं रुधिरमसृक् शोणितं च रक्तं स्यात् ।

A bone 4.
1 2 3 4
अस्थीनि धातुकीकसकुल्यानि भवन्ति तुल्यानि ॥६३२॥

A skeleton 3.
1 2 3
शरीरस्यास्थि कङ्कालं तथा स्यादस्थिपञ्जरम् ।

The skull 3.
1 2 3 c
शिरसोऽस्थि करोटिः स्यात्कपालं शकलं च तत् ॥६३३॥

The radius of the arm 2.
1 2 1 2
शाखास्थि नलकं प्रोक्तं पृष्ठस्यास्थि कसेरु च ।
Backbone 2.

The principal artery of the body 2.
1 2 1 2 3
कण्डरा स्यान्महास्नायुः स्नसा स्नायुः शिरा स्मृता ॥६३४॥
Sinew 3.

The brain 2.
d 1 2 1 2 3
मस्तिष्कं मस्तकस्नेहो वपा मेदो वसा स्मृता ।
The serum or the lymph of the flesh 3.

An entrail 2.
1 2 1 2
अन्त्रं पुरीतत्कथितं कालखण्डं यकृन्मतम् ॥६३५॥
Liver 2.

The heart 2.
1 2 1 2 e
बुक्कं स्यादग्रमांसं च तिलकं क्लोम कथ्यते ।
The lungs 2.

A worm.
1 2 3 4
कृमिः कीटस्तु नीलङ्गुः पुलकश्च समः स्मृतः ॥६३६॥

Excrements, ordure 12.
1 2 3 4 5
उच्यते वर्च उच्चारो वर्चस्कोऽवस्करः शकृत् ।
6 7 8 9 10 11 12
गूथं कीटं च विट् विष्ठा पुरीषं शमलं मलम् ॥६३७॥

Semen, virile 6.
1 2 3 4 5 6
शुक्रं वीर्यं बलं बीजमिन्द्रियं रेत उच्यते ।

Crematorium, cremation ground; burning ghat 2.
1 2 1 2
श्मशानं स्यात्पितृवनं चिता चित्या च कथ्यते ॥६३८॥
A funeral pile 2, a pile of fuel on which the dead body is cremated 2.

Crying 2.
1 2 1 2
क्रन्दितं रुदितं प्रोक्तं विलापः परिदेवनम् ।
Lamentation 2.

Bathing after the performance of funeral ceremony 2.
1 2 1 2
अपस्नानं मृतस्नानं निवापः पितृतर्पणम् ॥६३९॥
Presents given to the deceased 2.

a जागरं b विश्रं c यत् d मस्तक्यं, मस्तियु, मस्तिक्यं
e क्लोममिष्यते ।

1 2 3 a 4 5 6 7 b
* विषधरदन्दशूकपवनाशनसर्पसरीसृपोरगव्याल-
8 9 10 11 12 13
भुजगभुजङ्गकुम्भीनसपन्नगनागभोगिनः ।
14 15 16 17 18 19 20
A snake, a serpent 29. अहिफणभृत्पृदाकुकाकोदरकञ्चुकिचक्रिगूढपाद् ,
21 22 23 24 25
द्विरसनकाद्रवेयदर्वीकरदृक्श्रुतयो भुजङ्गमाः ॥६४०॥

c 26 27 28 29
आशीविषो दीर्घपृष्ठः कुण्डली जिह्मगः स्मृतः ।
1 2 3 1 2 3
The hood of a snake 3. फणः फणा फटा प्रोक्ता विषं स्याद्गरलं गरः ॥६४१॥ Poison 3.
1 d 1 2
The coil of a snake. अहेः शरीरं भोगः स्यादाशीदंष्ट्राभिधीयते । A serpent's fang.
e 1 2 1 2 3 f
A sort of snake 2. भवेत्तिलित्सो गोनासो वाहसोऽजगरः शयुः ॥६४२॥ The boa 3.
1 2 1 g 2
A water snake 2. अलगर्दो जलव्यालो राजिलो डुण्डुभः स्मृतः । A kind of snake 2.
h 1 i 2 1 2
A sort of snake 2. अहीरणी स्याद्द्विमुखो राजसर्पश्च सर्पभुक् ॥६४३॥ A large species of serpent 2.
j 1 2 3 4
The cast off skin or slough of a snake. निर्ल्वयनी निर्मोकः कञ्चुक उक्ता भुजङ्गमुक्ता त्वक् ।
k 1 2 3 4
Ant-hill 4. वम्रीकूटं नाकुर्वल्मीको वामलूरश्च ॥६४४॥
1 2 3 1 4
A sort of ant 4. उपजिह्वोपदीका च वम्री स्यादुपदेहिका ।
1 2 1 2 3
The sting of scorpion 2. अलं वृश्चिकलाङ्गूलं द्रुत आलिश्च वृश्चिकः ॥६४५॥ A scorpion 3.
1 2 m 3 4
A sort of poison 9. ब्रह्मपुत्रः शौल्किकेयो दारदश्च प्रदीपनः ।
5 6 7 8 9
रसः सौराष्ट्रिकः क्ष्वेडस्तीक्ष्णश्च विषमुच्यते ॥६४६॥

* The metre (छन्द) of this stanza is called धृतश्री or according to others पञ्चकवली । It consists of 4 tetrastichs, each containing 28 short syllables, arranged in the following order; ◡◡◡–◡–◡◡◡–◡◡–◡◡–◡–◡–1. It occurs again in IV । (६८६) see माघ ३–८२ ।

a पवनाशसर्पं b व्यालः, c आशीर्विषो d आशीर्दशा, आसीदंष्ट्रा e भवेतिलंगो, भवेत्तिलंसो, भवेत्रिलिंगो f स्मृतः g दुंदुभः दुंदुभिः h अहीरागी अहीरगी i द्विजिह्वः स्यात् j निर्लयनी, निर्लूयनी k वम्रीकूटं, वल्मीकूटं, व्रोल्मीकूटं l वम्री m शौल्किकेयः ।

Different kinds of poison 6.

a 1 2 3 4
शृङ्गिको वत्सनाभश्च कालकूटो हलाहलः ।
5 b 6
काकोलो विस्फुलिङ्गश्च तद्भेदाः स्युरनेकधा ॥६४७॥

Water 26.

1 2 3 4 5 6
आपस्तोयं घनरसपयः पुष्करं मेघपुष्पं ,
7 8 9 10 11 12 13
कं पानीयं सलिलमुदकं वारि वाः शम्बरं च ।
14 15 16 c 17 18 19 20 21 22
अर्णः पाथः कुशजलवनं क्षीरमम्भोऽम्बु नीरं ,
23 24 25 26
प्रोक्तं प्राज्ञैर्भुवनममृतं जीवनीयं दकं च ॥६४८॥

Deep 5.

1 2 3 4 d 5
अतलस्पर्शमगाधं गम्भीरं स्याद् गभीरमस्थागम् ।

Navigable 2. — Water just drawn out of the well.

1 2 1
नावा तार्यं नाव्यं द्राग्भूतकं तत्क्षणोद्धृतं तोयम् ॥६४९॥

Frost, cold 8 — A mass of snow 2.

1 2 3 4 5 6
प्रालेयमवश्यायस्तुहिनं शिशिरं हिमं तुषारं च ।
7 8 1 2
मिहिका स्यान्नीहारो हिमसंघातो हिमानी च ॥६५०॥

Erection of the hair of the body 8.

1 2 3 4 5
रोमाञ्चः पुलकः स्यात्कण्टकमुद्धुषणमुल्लकसनं च ।
6 e 7 8
रोमोद्गमरोमविकाररोमहर्षाः समानार्थाः ॥६५१॥

The sea, an ocean 12.

1 2 3 4 5 6
रत्नाकरः सरस्वानुदधिरुदन्वान्सरित्पतिरकूपारः ।
7 8 9 10 11 12
पारावारस्तोयनिधिरर्णवजलराशिसागरसमुद्राः ॥६५२॥

A wave, a billow 3.

1 2 3
वीची भङ्गस्तरङ्गः स्यात्तन्महत्त्वे च कथ्यते ।

A great wave 5.

1 2 3 4 5
ऊर्मिरुत्कलिकोल्लोलः कल्लोलो लहरी तथा ॥६५३॥

A shore 2. — Tide, flow, current; also sea-coast, sea-shore 2.

1 f 2 1 2
मर्यादा कूलदेशोऽस्य वेला वृद्धिश्च वारिणः ।

A wood on the sea-coast.

1
वेलावनं तु विज्ञेयमुपकण्ठेऽस्य यद्वनम् ॥६५४॥

A sea-trader 2 — A boat, a ship 2.

1 2 g 1 2
सांयात्रिकः पोतवणिक् पोतः प्रवहणं स्मृतम् ।

The mast of a ship, also a stake to which a boat is moored; also a rock or tree in the midst of a river 2. — A sailor 2.

1 2 1 2
कूपको गुणवृक्षः स्यान्निर्यामः कर्णधारकः ॥६५५॥

a शृंगिका b विस्फुलिंगः स्यात् तद्भेदा अप्यनेकधा c कुशजलवम d मस्ताङ्गं e रोमोद्गरोरोमविकारो, रोमरोमविकारो, रोमोद्गमोरोमविकारो f कूलदेशस्य, कूलदशाश्च g प्रोतः ।

Any large aquatic animal, a sea-monster 3. — [1]अन्तर्जलचरं [2]सत्त्वं [1]क्रूरं [3]यादोऽभिधीयते ।

A shark 2. — [1]अवहारः स्मृतो [2]ग्राहः [1]कुम्भीरो [2]नक्र उच्यते ॥ — A crocodile 2.

A tortoise 3. — [1]कच्छपः [2]कमठः [3]कूर्मस्तद्भार्या च [1]डुली स्मृता ॥६५६॥ — The female tortoise.

[a 1]वैसारिणो [2]विसारः [3]पृथुरोमा [4]जलचरो [5]झषो [6]मत्स्यः ।

A fish 11. — [7]तिमिर[8]निमिषश्च [9]मीनः [10]शकली [11]शल्की च विज्ञेयः ॥६५७॥

A sort of fish 2. — [1]सहस्रदंष्ट्रः [2]पाठीनः [b 1]प्रोष्ठी च [2]शफरी स्मृता ।

A shrimp or prawn; a sort of fish 2. — [1]नलमीन[2]श्चिलिचिमः [1]कुलीरः [2]कर्कटो मतः ॥६५८॥ — A crab 2.

Which are large, a sort of fish. — [1]शालः [2]शकुलः [3]कुलिशो [4]राजीवो [5 c]रोहितश्च [6 d]पल्लवकः ।

[7]शृङ्गी[e 8]मद्गुर[9]वागुस[10]नन्द्यावर्तादयो महामत्स्याः ॥६५९॥

A kind of sea-animal, a crocodile, a shark 2. — [1]मत्स्यविशेषो [2]मकरः [1]करिमकरो भवति तद्विशेषस्तु । — A fabulous sea-monster.

A sort of large fish. — [f 1]चीरिल्लि[2]तिमितिमिङ्गिल[3]गिलादयो महामत्स्याः ॥६६०॥

Having recently come out of a small egg, also a shoal of fish, a multitude of fish 2. — क्षुद्राण्डो [1]मत्स्यसंघातः [2 g]पोताधानं च कथ्यते ।

A worm 2. — [1]गण्डूपदः [2 h]किञ्चुलको [1 i]जलौकाः [2]स्युर्जलौकसः ॥६६१॥ — A leech 2.

A frog 8. — [1]मण्डूकः [2]प्लवको [3]भेकः [4]शालूरो [5]दर्दुरो [6]हरिः ।

[7]प्लवङ्गमः [8]प्लवगः [1]स्याद्वर्षाभूस्तद्वधूः स्मृता ॥६६२॥ — The female frog.

यावन्तो दृश्यन्ते नरकरितुरगादयः स्थले जीवाः ।

तावन्तः सलिलेष्वपि जलपूर्वास्ते [j]तु विज्ञेयाः ॥६६३॥

A pearl 3. — उक्ता [1]मुक्ता [2]मौक्तिकं [3]शौक्तिकेयं ,

Pearl-oyster 2. — [1]मुक्तास्फोटः [2]शुक्तिराख्यायते च ।

a वैसारणो, वैशारणो b प्रौष्ठी c लोहितश्च
d पल्लपिकः e मद्गुरु f चिरिल्लि g पोतादानं
h कंचुलको, किंजलको i जलौकाश्च, जलोकसः,
जलोकाः स्युः j तेऽपि ।

A conch, shell 2. — [1]कम्बुः [2]शङ्खः [1]क्षुल्लकाः [2]क्षुद्रशङ्खाः, — A small shell 2.

शम्बूकास्ते स्युः [1]कपर्दो [2]वराटः ॥६६४॥ — A small shell used as a coin (कौड़ी).

A river 24. — [1]सिन्धुः [2]स्रवन्ती [3]तटिनी [4]तरङ्गिणी,

[5]नदी [6]धुनी [7]निर्झरिणी च [8]निम्नगा ।

[9]कूलङ्कषा [10]शैवलिनी [11]सरस्वती,

[12]समुद्रकान्ता [13]ह्रदिनी [14]तथापगा ॥६६५॥

[15]स्रोतः [16]स्रोतस्विनी [17]कर्षूः [18]कुल्या [19]द्वीपवती [20]सरित् ।

[21]रोधो वप्रस्तु विज्ञेयो भिद्य [22]उद्धयो[a] [23]नदः [24]स्मृतः ॥६६६॥

A bank, a shore 6. — [1]तीरं [2]कूलं [3]तटं [4]कच्छः [5]प्रपातो [6]रोध उच्यते ।

Near bank 2. — [b][1]अर्वाक्कूलम[2]पारं स्यात्[1]परं [2]पारमिति स्मृतम् ॥६६७॥ — Opposite shore 2.

पात्रं तु कूलयोर्मध्यम[1]आवर्तः [2]पयसां भ्रमः । — A whirl, an pool, eddy whirl 2.

The swelling or rising of a river or sea, flood 2. — [1]पूरः स्यादम्भसो[c] [2]वृद्धिः [1]फेनो [2]डिण्डीर[d] उच्यते ॥६६८॥ — Froth, foam 2.

A stream 6. — [1]ओघः [2]प्रवाहो [3]वेणी[e] च [4]धारा [5]स्रोतो [6]रयः स्मृतः ।

Confluence or junction of two rivers 3. — [1]सम्भेदः [2]सङ्गमो नद्योः [3]संवेद्यश्च[f] निगद्यते ॥६६९॥

A mound in the middle of a river 2 — [1]सैकतं [2]पुलिनं [3]द्वीपं [1]सिकता [2]वालुका स्मृता । — Sand, gravel 2.

An island, a cape. — मध्ये द्वीपमन्तरीपं [1]ह्रदस्[2]तोयाशयो मतः ॥६७०॥ — A lake 2.

The bend of a river 2. — [1]चक्राणि [2]पुटभेदाः स्युः [1]सेतुर्[g][2]वरण उच्यते । — A bridge 2.

Fare 2. — [1]आतरस्[2]तरपण्यं च [h][1]तल्पं [2]स्यादुडुपः [3]प्लवः ॥६७१॥ — A raft, float 3.

A boat, a ship 4. — [1]तरी[2]र्नौ[3]र्मङ्गिनी [4]बेडा [1]नौदण्डः [2]क्षेपणी स्मृता । — An oar 2.

A rudder 2 — [1]अरित्रं [2]कोटिपात्रं स्यात्[1]पुलिन्दो [2]मङ्ग[i] उच्यते ॥६७२॥ — The head of a boat 2.

a उघ्यो, उयो, उद्यो, उद्वधो b अवाक्कूल c स्यादम्भसां d डिडिम e वेणी तु f संवेद्यस्तु, संवद्यरक्त निगद्यते g सेतुर्वारणमुच्यते h तल्वं स्यादुडुपं i पल्वणं ।

The ganges 9.	[1] भागीरथी [2][3] सुरसरिद्विष्णुपदी [4] जाह्नवी तथा [5] गङ्गा ।	
	[6] मन्दाकिनी [7] त्रिपथगा [8] सरिद्वरा [9] त्रिदशदीर्घिका प्रोक्ता ॥६७३॥	
The river Godawari 2.	[1] गोदावरी च [2] गोदा [1] कालिन्दी [2] दिनकरात्मजा [3] यमुना ।	The river Yamuna 3.
The river Sone 2.	[1] शोणो [2][1] हिरण्यबाहुर्मेकलकन्या च [2] नर्मदा [3] रेवा ॥६७४॥	The river Narbada 3.
A small pond 3.	[1] वेशन्तः [a][2] पल्वलं [3] तल्लं [1] कासारः [2] सरसी [3] सरः ।	A large pond 3.
A natural pond 2.	[b][1] आखातो [2] देवखातः [1] स्यात्खाता [2] पुष्करिणी भवेत् ॥६७५॥	An artificial pond 2.
A pond 2.	[1] आधारश्च [2] तडागं [1] स्यादाली [2] पाली च कथ्यते ।	A bridge 2.
A moat, a ditch 2.	[1] परिखा [2] दीर्घिका प्रोक्ता खाता या परितः पुरम् ॥६७६॥	
A drain 2.	[1] परीवाहो [2] जलोच्छ्वास [1] उत्सः [c][2] प्रस्रवणं स्मृतम् ।	A spring 2.
Drop.	[1] विप्रुषो [2] विन्दवः प्रोक्ताः [3] पृषतः [4] पृषतास्तथा ॥६७७॥	
Liquidated food; also mud 2. Mud, mire 6.	[1] पिच्छिलं [d][2] स्याद्विजपिलं [1] पङ्कः [2] शादो [3] निषद्वरः ।	
	[4] जम्बालः [5] कर्दमः प्रोक्तो [e][6] बुधैरिचिकिलस्तथा ॥६७८॥	
	[1] सहस्रपत्रं [2][3] शतपत्रमम्बुजं	
	[4] कुशेशयं [5] तामरसं [6] सरोरुहम् ।	
A lotus 17.	[f][7] विसप्रसूनं [8] कमलं [9] महोत्पलं ,	
	[10][11] सरोजमब्जं [12] नलिनं च [13] पुष्करम् ॥६७९॥	
	[14][15] राजीवमरविन्दं च [16] पद्मं [17] पङ्कजमिष्यते ।	
Red lotus.	रक्तं [1] कोकनदं प्रोक्तं [1] पुण्डरीकं [2] सिताम्बुजम् ॥६८०॥	A white lotus 2.
The white water lily 2.	[1] सौगन्धिकं च [2] कल्हारं [1][2] स्यादिन्दीवरमुत्पलम् ।	A blue lotus 4.
	[3] नीलोत्पलं [4] कुवलयं [1] कैरवं [2] कुमुदं विदुः ॥६८१॥	White lotus 2.

a पल्वणं b अखातो c प्रवहणं d स्याद्विजवलं e बुधैरिचकिल f विसप्रसूतं ।

A pericarp of lotus 2.

Fibrous root of a lotus; a lotus fibre 3.

(a) lotus plant bearing white lotuses
(b) place or pond abounding in white lotuses
(c) an assemblage of white lotuses.

A water plant moss.

A well 2
प्रधिर्नेमि A pulley, the periphery or circumference of a wheel 2.

A small pool or pond near a well or a well itself 2.

The rope and bucket of a well 2.

A canal 2.

1 a 2 b 1 2
कर्णिका बीजकोशः स्यात्किञ्जल्कं केसरं स्मृतम् ।
1 c 2 3 1 2
मृणालं स्याद्बिसं कन्दो विसिनी नलिनी भवेत् ॥६८२॥
1 2 3
कुमुद्वती कुमुदिनी बुधैः कैरविणी स्मृता ।

d 1 2 1 2
शेवालं शैवलं प्रोक्तं जलशूकं च नीलिका ॥६८३॥
1 2 1 2 1 2 e 3
अन्धुः कूपः प्रधिर्नेमिश्चुरी चुण्ढी च चूतकः ।
1 2 1 2
निपानमुदपानं च वाप्याहावश्च कथ्यते ॥६८४॥
f 1 2 1 2
उद्घाटकं घटीयन्त्रं पादावर्तोऽरघट्टकः ।
1 g 2 1 2
पानं तु सारणिः प्रोक्ता प्रणाली जलपद्धतिः ॥६८५॥

The filament of a flower 2
A lotus plant, an assemblage of lotuses, lotus fibre; also a lake abounding in lotuses 2.

Moss 2.

A small well or reservoir 3.

A trough near a well for watering cattle 2.

A wheel or machine for raising water from a well 2.

A channel, a drain, a gutter 2.

इति श्रीभट्टहलायुधकृतायामभिधानरत्नमालायां

पातालकाण्डं तृतीयं समाप्तम् ॥३॥

a वीजकोशं b किञ्जल्कः किंजः c स्याद्बिसकन्दो d शैवालं
e चंठी, चुंडी f उद्घाटनं g सारणीः, सारणं ।

चतुर्थं सामान्यकाण्डम्

* 1 2 3 4 5 6 7 8
निकरनिकायनिवहविसरव्रजपुञ्जसमूहसञ्चयाः ,
9 10 11 a 12 13 14 15
समुदयसार्थयूथनिकुरम्बकदम्बकपूगराशयः ।
16 17 18 19 20 21 22
चयसमवायवृन्दसन्दोहसमाजवितानसंहति-
23 24 25 26 27 28 29 30
Heap, collection40. प्रकरगणौघसंघसंघातव्रातकुलोत्कराः स्मृताः ॥६८६॥
31 b 32 33 34 35
पटलं पेटकं चक्रं चक्रवालं च मण्डलम् ।
36 37 38 39 40
जालं जातं तथा व्यूहवारस्तोमाश्च ते स्मृताः ॥६८७॥
1 2 3 4 5 6 7 8
Small, little, minute 15. सूक्ष्मलेशलवश्लक्ष्णक्षुद्रदभ्रकणाणवः ।
9 10 11 12 13 14 15
किञ्चिन्मात्रतनुस्तोकह्रस्वाल्पत्रुटयः समाः ॥६८८॥
c 1 2 3 4 5 6 7
प्राग्र्यं प्राग्रहरं प्रवेकमपरं वर्यं वरेण्यं वरं ,
8 9 10 11 12 13 14
Fine, pleasing 42. श्रेष्ठं प्रेष्ठमनुत्तमं च मधुरं मञ्जु प्रियं मञ्जुलम् ।
15 16 17 18 19 20 21
हृद्यं हारि मनोहरं च रुचिरं कान्तं परं सुन्दरं ,
22 23 24 25 26 27 28 29
सौम्यं साधु च वल्गु चारु सुषमं वामं शुभं पेशलम् ॥६८९॥

* This छन्द is called ध्रितश्री or पञ्चकवली consisting 4 tetrastichs each containing 28 short syllables arranged in the following order⏑⏑⏑ ⏑—⏑—⏑⏑⏑—⏑⏑—⏑⏑⏑—⏑—⏑— it also occured in sloka 640. It is also used by the poet माघ in शिशुपालवध ३–८२ ।

a निकरंव b पेटलं c प्राग्र्यं ।

Chief, Principal. [30]अग्र्यं [31]प्रधानं [32]प्रमुखं [33]पुरोगं ,
[34]मुख्यं [35]परार्ध्यं [36]प्रवरं [37]प्रवर्हम् ।
[38]अग्रेसरं [a][39][40]सत्तममुत्तमं च ,
[41][42]ग्रामण्यमग्रण्यमुदाहरन्ति ॥६९०॥

Doubt, hesitation 9. [1]शङ्का [2]वितर्कः [3]सन्देहः [4][b][5][6]संशयारेकविभ्रमाः ।
[7]विचिकित्सा [8]विकल्पश्च [9]भ्रान्तिरेकार्थवाचकाः ॥६९१॥

[1]समीपं [2]सनीडं [3][4]समर्यादमारात् ,
Near 19. [5]सदेशं [6]सवेशं [7][8]ससीमोपकण्ठम् ।
[9][10][c][11]तथाभ्यर्णमभ्यग्रमभ्याशमाहु—
र्बुधाः [12][13]सन्निधानान्तिके [14]सन्निकृष्टम् ॥६९२॥
[15]आसन्नं [16]सविधं [17][18][19]पार्श्वमुपान्तमपदान्तरम् ।

Remote, distant 5. [1]विप्रकृष्टं [2]परं [3][4]दूरमाराद् [5]व्यवहितं स्मृतम् ॥६९३॥

Like, similar 11. [1]सदृक् [2]समानः [3]सदृशः [4]सदृक्षः ,
[5]प्रख्यः [6]प्रकाशः [7]प्रतिमः [8]प्रकारः ।
[9]तुल्यः [10]समः [11]सन्निभ इत्यभिन्नाः ,
शब्दाः प्रयोगेषु गवेषणीयाः ॥६९४॥

Fickle 10. [1]लोलं [2]चपलं [3]चटुलं [4]प्रचलं [5]तरलं [6][7]परिप्लवमधीरम् ।
[8]पारिप्लवं च [9]धीराश्चलाचलं [10]चञ्चलं च कथयन्ति ॥६९५॥

[1]वक्रं [2]वृजिनं [3][4]भङ्गुरमाविद्धं [5]वेल्लितं [6]नतं [7]जिह्मम् ।
Crooked 12. [8][9]भुग्नमरालं [10]कुटिलं [11][12]व्याकुञ्चितमूर्मिमत्कथितम् ॥६९६॥

a सत्तमनुत्तमं, सतममुत्तमं, सत्तमुत्तमं b संशयांबेक, संशयाबेक, संशयोद्रेक c म्यासमा।

1 2 3 4 5 6 7 8 9 10
द्राक् चपलं लघु मङ्क्षु स्राक् तूर्णं त्वरितमाशु शीघ्रमरम् ।
11 12 13 14 15 16
Soon, quickly 16. अह्नाय सत्वरं च क्षिप्रं द्रुतमञ्जसा झटिति ॥६९७॥

1 2 3 4 5 6 7
Always, continual, unceasing 11. सततं सन्ततमनिशं नित्यमजस्रं च शश्वदश्रान्तम् ।
8 9 10 11
अविरतमनवरतं स्यादेकार्थमनारतमसक्तम् ॥६९८॥

1 2 3 4 5 6 7 8 9
Large, great 13. वृहदुरु गुरु विस्तीर्णं पुरु पृथु पृथुलं महद्विशालं च ॥।
10 11 a 12 13
व्यूढं विपुलं रुद्रं वरिष्ठमेकार्थमुद्दिष्टम् ॥६९९॥

1 2 3 4 5 6 7
A pair, a couple 7. युग्मं युगं च युगलं द्वन्द्वं द्वितयं यमं यमलम् ।
b 1
Couple of male and female. स्त्रीपुंसयोस्तु युग्मं मिथुनं परिकथ्यते सद्भिः ॥७००॥

c 1 2 3 4 5 6
Abundant; much 10. प्राज्यं भूरि प्रभूतं च प्रचुरं बहुलं बहु ।
d 7 8 9 10
पुरुजं पुष्कलं पुष्टमदभ्रमभिधीयते ॥७०१॥

1 2 3 4 5 6
Full of, gathered, accumulated 9. आचितं निचितं व्याप्तं छन्नं कीर्णं च सङ्कुलम् ।
7 8 9
आकुलं भरितं पूर्णं नातिनानार्थवाचकाः ॥७०२॥

1 2 3 4
Rejected, set aside 7. प्रत्याख्यातं प्रतिक्षिप्तं प्रत्यादिष्टं निराकृतम् ।
5 6 7
निरस्तमपविद्धं च प्राज्ञाः परिहृतं विदुः ॥७०३॥

1 2 3 4
Disrespect, dishonour, contempt 7. अत्याकारः परिभवो निकारश्च पराभवः ।
5 6 7
अनादरश्चाभिभवस्तिरस्कारश्च कथ्यते ॥७०४॥

1 2 3 4 5
Terrible, fearful 10. घोरं प्रतिभयं भीमं दारुणं स्याद्भयानकम् ।
6 7 8 9 10
आभीलं भीषणं भीष्मं भैरवं च भयावहम् ॥७०५॥

1 2 3 4 5
Friendship 10. सख्यं साप्तपदीनं सौहार्दं सौहृदं तथा स्नेहः ।
6 7 8 9 10
मैत्री प्रीतिरजर्यं सभाजनं सङ्गतं प्रोक्तम् ॥७०६॥

a वृन्दं, भद्रं, वड्रं b स्त्रीपुंसयोश्च c प्रायं d पुरुहं ।

First 7.	आदिरग्रं पुरा पूर्वं प्रथमं प्राक् पुरः स्मृतम् ।	
Beginning 3.	उपज्ञोपक्रमारम्भौ पश्चाच्च चरमं भवेत् ॥७०७॥	Final, last 2.
Solitude 7.	रहः प्रच्छन्नमेकान्तं निःशलाकमुपह्वरम् ।	
	उपांशु विजनं प्रोक्तं रहस्यं गुह्यमुच्यते ॥७०८॥	Secret, concealed 2.
Trick, deceit, deception 10.	कैतवं कपटं कूटं व्याजच्छद्मोपधिच्छलम् ।	
	मिषं निभं च निर्दिष्टं व्यपदेशश्च सूरिभिः ॥७०९॥	
Wish, desire 8.	इच्छा वाञ्छा स्पृहा काङ्क्षा कामनेप्सा रुचिस्तथा ।	
	आशंसा चेति तुल्यार्था निश्चितं नियतं स्मृतम् ॥७१०॥	Positiyely 2.
Old, ancient 6.	जीर्णं जरत्पुराणं प्रत्नं प्रतनं पुरातनं प्रोक्तम् ।	
New, fresh 6.	नव्यं नवं नवीनं स्यान्नूतनमभिनवं नूत्नम् ॥७११॥	
Enclosed, encircled; surrounded 5.	निवृतं वेष्टितमुक्तं परिवृत्तं वलयितं परिक्षिप्तम् ।	
Eradicated 4.	आवर्हितमुन्मूलितमुत्पाटितमुद्धृतं च समम् ॥७१२॥	
All, whole, entire 8.	कृत्स्नं समग्रं सकलं समस्तं,	
	सर्वं च विश्वं निखिलाखिले च ।	
Fragment, a part 7.	खण्डार्धनेमाः शकलं च भित्तं,	
	सामीत्यसम्पूर्णसमानसंज्ञाः ॥७१३॥	
Scattered 2.	अवकीर्णमवध्वस्तं त्यक्तमुत्सृष्टमुज्झितम् ।	Left, thrown away 3.
Dispised 3.	अनादृतमवज्ञातमपहस्तितमिष्यते ॥७१४॥	
Promise 6.	आगूः सङ्गरसन्धाप्रतिश्रवाः संश्रवः प्रतिज्ञा च ।	
Disregard, contempt 5.	हेला स्यादवहेलं रीढावज्ञावलीढा च ॥७१५॥	

a कामना स्याद् *b* निवृतं वेष्टशुक्तं c लीढा, रीढा ।

Sorcery. [a] [1]मूलीकर्म प्रोक्तं [2]संवननं [3]कामणं [4]वशीकरणम् ।

Respentance 4. [1]विप्रतिसारो[2]ऽनुशयः [3]पश्चातापो[4]ऽनुतापः स्यात् ॥७१६॥

Thin, spare 7. [b] [1]क्षामं [2]शातं [3]कृशं [4]क्षीणं [5]पेलवं [6]तलिनं [7]तनु ।

Dense, thick 9. [1]निरन्तरं [2]घनं [3]सान्द्रं [4]बहुलं [5]विरलेतरम् ॥७१७॥

[c] निविडं [7]निविरीशं च [8]दृढं [9]गाढं प्रचक्षते ।

Abundant 5. [1]कामं [2]प्रकामं [3]पर्याप्तं [4]नितान्तं [5]भृशमुच्यते ॥७१८॥

Excessive 3. [1]अत्यर्थ[2]मतिमर्यादम[3]तिवेलं च कथ्यते ।

Concealment 4. [1]व्यवधानं [2]तिरोधानम[d][3]न्तर्धि[4]रपवारणम् ॥७१९॥

Mutual, reciprocal 4. [1]परस्परं [2]मिथः प्रोक्त[3]मन्योन्य[4]मितरेतरम् ।

Sport, play 4. [1]कौतूहलं [2]विनोदः स्यात्[3]कौतुकं च [4]कुतूहलम् ॥७२०॥

Line, row, range 6. [1]आली [2]श्रेण्य[3]आवली [4]पङ्क्ति[5]र्वीथी [6]राजी च कथ्यते ।

Shaving, tonsure 4. [1]क्षौरं च [2]भद्राकरणं [3]मुण्डनं [4]वपनं स्मृतम् ॥७२१॥

Pride, haughtiness 11. [1]दर्पो [2]मदो[3]ऽवलेपो [4]मानो [5]गर्वो भवे[6]दहङ्कारः ।
[7]आवेशः [8]संवेगः [9]संरम्भः [10]सम्भ्रमस्[11]तथाटोपः ॥७२२॥

Power, strength, might 13. [1]प्राणः [2]स्थाम [3]बलं [4]द्युम्न[5]मोजः [6]शुष्म [7]तरः [8]सहः ।
[9]प्रतापः [10]पौरुषं [11]तेजो [12]विक्रमः [13]स्यात्पराक्रमः ॥७२३॥

Pity, kindnees, comparsion 6. [1]अनुक्रोशः [2]कृपा [3]शूकं [4]दया च [5]करुणा [6]घृणा ।

Repeatedly 5. [1]प्रतिक्षण[2]मभीक्ष्णं च [3]भूयः [4]स्यादसकृ[5]न्मुहुः ॥७२४॥

Terror, fear 6. [1]आतङ्को [2]भय[3]माशङ्का [4]दर[5]स्त्रासश्च [6]साध्वसम् ।

Forbearance patience 5. [1]मर्षः [2]क्षमा [3]तितिक्षा च [4]क्षान्तिरुक्ता [5]सहिष्णुता ॥७२५॥

a मूलकर्म b क्षामं क्षांत c निवडं निवडीशं d तर्धि-परिवारणम् ।

	1 2 3 4 5	
A staff, a stick 5.	वैणवो लगुडो रम्भो दण्डो यष्टिश्च कथ्यते ।	
	1 2 3 4 5	
Walking about, going, moving 5.	गतिर्वीखा विहारः स्यात्परिसर्पः परिक्रमः ॥७२६॥	
	1 2 3 4 5	
Corner 5.	अणिरश्रिस्तथा कोटिरश्रः कोणश्च कथ्यते ।	
	1 2 3 4	
Foul, dirty 4.	कश्मलं मलिनं म्लानं मलीमसमुदाहृतम् ॥७२७॥	
	1 2 3 a 4 5 6	
Wages, cost price6.	भृतिर्भृत्या च कर्मण्या वेता मूल्यं च वेतनम् ।	
	b 1 2 c 3	
A line of a letter or writing 3.	लिपिरालेख्यलेखा स्याल्लिपिर्लेखाक्षरस्य च ॥७२८॥	
	1 2 3 4	
Cutting, clipping 4.	कल्पनं कर्तनं प्रोक्तं वर्धनं छेदनं तथा ।	
	1 2 3 4	
Reverse 4.	व्यत्ययः स्याद्विपर्यासो वैपरीत्यं विपर्ययः ॥७२९॥	
	1 2 3 4	
Concealment of knowledge 4.	अपह्नवोऽपलापः स्यादपज्ञानमपात्ययः ।	
	1 2 3 4 5	
Composition 5.	श्रन्थनं ग्रन्थनं गुम्फः सन्दर्भो रचना स्मृता ॥७३०॥	
	1 d 2 1 2	
Rubbing the body with fragrant unguents 2.	उद्वर्तनमुत्सादनमाहुः सोत्प्रासहसितमुपहसितम् ।	Ridiculing, derision 2.
	1 2 1 2 3	
Confused 2.	उत्पिञ्जलमाकुलकं स्यादनुपदमन्वगन्वक्षम् ॥७३१॥	Following 3.
	1 2 3 4 5 6 7	
White 7.	गौरः श्वेतः सितः शुभ्रो वलक्षो धवलोऽर्जुनः ।	
	1 2 3 4 e 5	
Yellowish, white pale 5.	हरिणः पाण्डुरः पाण्डुरवदातश्च पाण्डरः ॥७३२॥	
	1 2 3 f 4 5 6	
	अरुणः शोणो रक्तो माञ्जिष्ठः पाटलस्तथा ताम्रः ।	
	7 g	
Red 7.	लोहित इत्येकार्थाः कविभिः शब्दाः प्रयुज्यन्ते ॥७३३॥	
	1 h 2 3 4 5 6	
Black 9.	असितं शिति कृष्णं च कालं नीलं च मेचकम् ।	
	7 8 9 1 2 3	
	श्यामं तु श्यामलं रामं पालाशं हरितं हरित् ॥७३४॥	Green 3.
	1 2 3 4	
Tawny, brown 4.	हरिः कद्रुः कडारश्च पिङ्गलः परिकीर्तितः ।	
	1 2 1 2	
Yellow 2.	पीतं हारिद्रमाख्यातं श्यावं तु कपिशं स्मृतम् ॥७३५॥	Dark brown 2.

a वेचा b लिविराले c लिपिर्लेखाक्षरस्य d मुछादनमाहुः e पाण्डुरः, पाण्डुकः f मांजिष्टः g शब्दाः कविभिः h सिति, सित ।

Brown tawny 5.	पिङ्गः[1] पिशङ्ग[2] इत्युक्तो बभ्रुः[3] कपिलः[4] पिङ्गलः[5] ।	
Variegated, speckled 2.	सारङ्गः[1] शबलो[2] वर्णः कल्माषः[1] कृष्णपाण्डुरः[2] ॥७३६॥	Greyish white 2.
Reddish yellow 2.	पिञ्जरः[a][1] पीतरक्तः[2] स्याद्धूसरः[1] स्तोकपाण्डुरः[2] ।	Greyish white 2.
Dark red 2.	रक्तश्यामो[b][1] भवेद्धूम्रो[2] धूमलः[3] स च कथ्यते ॥७३७॥	
Lilyleaf like lady 2.	श्येनी[1] कुमुदपत्राभा[2] शुकाभा[1] हरिणी[2] स्मृता ।	Parrot like lady 2.
The lotus leaf like, lady; rose red lady 2.	जपाकुसुमसंकाशा[1] लोहिनी[2] परिकीर्तिता ॥७३८॥	
Regular course 2.	परिपाट्यानुपूर्वी[1,2] स्यादुपशायोऽनुपात्ययः[c][1,2] ।	1. Sleeping in turn, rotation for sleeping with other.
Progression, succession 2.	अनुक्रमश्च[1] पर्यायो विशायः[2] परिकीर्तितः ॥७३९॥	2. Absence of neglect following the appointed order.
Envy, hypocrisy 5.	ईर्ष्या[1] स्यात्कुहना[2] दम्भो[3] मिथ्याचर्या[4] च कुक्कुटिः[d][5] ।	
Jugglery, delusion 5.	कुसृतिर्निकृतिर्माया[1][e][2,3] शाम्बरी[4] पथकल्पना[f][5] ॥७४०॥	
Variegated, mixed 6.	चित्रकिर्मीरकल्माषशबलोन्मिश्रकर्बुराः[g][1,2,3,4,5,6] ।	
Combined, mixed 5.	करम्बः[1] कवरः[2] शारः[3] सम्पृक्तः[4] खचितः[5] समाः ॥७४१॥	
Longing, strong desire 7.	आयल्लकमुत्कण्ठा[1,2] स्यादुत्कलिका[3] रतिश्च[4] रणरणकम्[5] ।	
	औत्सुक्यं[6] हृल्लेखो[7] विरहवियोगौ[1,2] च तुल्यार्थौ ॥७४२॥	Separation 2.
Contrary, opposed 4.	प्रतिकूलं[1] प्रतिलोमं[2] प्रतीपमुक्तं[3] प्रसव्यमेकार्थम्[4] ।	
Covered, concealed 5.	अपवारितं[1] च पिहितं[2] संवीतं[3] संवृतं[4] स्थगितम्[5] ॥७४३॥	
A part, a limb, a portion 5.	आहुः प्रतीकमवयवमपघनमङ्गं[1,2,3,4] तथैकदेशं[5] च ।	
Exceeding much 4.	उल्वणमुद्धतमुद्भटमुत्कटमिति[1,2,3,4] नातिनानार्थाः ॥७४४॥	
Assembly 6.	समाजः[1] संसदास्थानी[2,3] सभा[4] स्यात्परिषत्सदः[5,6] ।	
Wonder, surprise 5.	चित्रमद्भुतमाश्चर्यं[1,2,3] विस्मयश्चोद्यमुच्यते[4,5] ॥७४५॥	

a पिञ्जिरः, पिंजिरः परिरत्तः b रक्तश्याम c स्यादुदाशयो, स्यादुप्तशपो d कुर्कुटिः, कुकुटिः e निष्कृतिं, निःकृति f-पृथुकल्पिनी g चित्रकर्मीर ।

Shaking, trembling 4.	[1] प्रेङ्खोलितं [2] तरलितं [3] प्रेङ्खितं [4] लुलितं स्मृतम् ।	
Proper, fit 5.	[1] युक्तं [2] स्यादुचितं [3] न्याय्यं [4] प्राप्तम[5]ौपयिकं तथा ॥७४६॥	
Placed in or upon 4.	[1] आहितं [2] निहितं [3] न्यस्तम[4]ारोपितमिति स्मृतम् ।	
Put on, dressed 4.	[1] बद्धं [2] पिनद्धम[3]ामुक्तम[4]पिनद्धं च कथ्यते ॥७४७॥	
Cheating 4.	[1] वञ्चनं [2] चातिसन्धानं [3] व्यलीकं स्यात्प्रतारणम् ।	
Infraction of an engagement, deception 3.	[1] विप्रलम्भो [2] विसंवादो [3] विप्रलापश्च [a] कीर्तितः ॥७४८॥	
Offence, fault 5.	[1] व्यलीकम[2]पराधः [3] स्यादागो [4] मन्तुश्च [5] विप्रियम् ।	
Courtesy 4.	[1] प्रणतिः [2] स्यादनुनयः [3] प्रणिपातश्च [4] सान्त्वनम् ॥७४९॥	
Introduction; resolution; beginning 2.	[1] उद्घात [2] उक्तः प्रस्तावो [1] वारश्चा[2]वसरः [3] क्षणः ।	Opportunity 3.
Approached, near 3.	[1] वदन्त्युपनतं प्राज्ञा [2] उपसन्नम[3]ुपस्थितम् ॥७५०॥	
High, tall 5.	[1] प्रांशू[2]च्चम[3]ुन्नतं [4] तुङ्गम[b][5]ुदग्रं [1] दीर्घम[2]ायतम् ।	Long 2.
Unfettered, unrestrained 4.	[1] अयन्त्रितं [2] स्यादुद्दामम[3]ुच्छृङ्खलम[4]नर्गलम् ॥७५१॥	
Clear, manifest 5.	[1] विशदं [2] प्रकटं [3] स्पष्टं [4] प्रकाशं [5] स्फुटमिष्यते ।	
Forth with 2.	[1] तत्क्षणै[2]कपदे तुल्ये [1] सद्यः [2] सपदि च [c] स्मृते ॥७५२॥	On the spot 2.
Large, broad 4.	[d][1] विशङ्कटं [2] विशालं [3] स्यात्करालं [4] विकटं तथा ।	
Globular, round 3.	[1] निस्तलं [2] वर्तुलं [3] वृत्तं [1][e] स्थपुटं [2] विषमोन्नतम् ॥७५३॥	Unevenly raised 2.
A bucket 2.	[f][1] अवगाहो [2] जलद्रोणी [1] निर्वेदः [2] खेद उच्यते ।	Grief 2.
Carelessness 2	[1] प्रमादो[2]ऽनवधानं [g] स्याद[1]त्याधानम[2]तिक्रमः ॥७५४॥	Transgression 2.
Enjoyment 2.	[1] निर्वेश [2] उपभोगः [1] स्यादाभोगः [2] परिपूर्णता ।	Fulness, completeness 2.
Well known, censured.	[1] अवगीतं [h][2] मुहुर्दृष्टमुपलब्धं च यद्भवेत् ॥७५५॥	

a कीर्त्यंते, कीत्यन्ते b तुगं उदंतं c स्मृतम् d विसंकटं e छपुटं, सपुटं f अवगादो g स्यादन्याधान, स्यादत्यादान h मुहुर्दिष्ट, मुहुर्दुष्ट ।

Left 2	[1]वामं [2]सव्यं विदुः प्राज्ञा [1]अपसव्यं च [2]दक्षिणम् ॥	Not left, right 2.
	[a]प्रतिकूलानुकूलार्थे [1]अपष्ठु [2]त्वनपष्ठु च ॥७५६॥	1. Unfavourable. 2. Favourable.
Turned away, averted 4.	[1]विपरीतं [b][2]पराचीनम[3]पाचीनं [4]पराङ्मुखम् ।	
Indolence, laziness 2.	स्मृतं [1]कौसीद्य[2]मालस्य[1]मुपधा तु [2]परीक्षणम् ॥७५७॥	Trial of honesty 2.
A lath provided with slings at each end for carrying burden 4.	[1]विवधो [2]वीवधो [3]भारः [4]पर्याहारश्च कथ्यते ।	
A looped string 2.	[1]काचं [c][2]शिक्यमिति प्रोक्तं [1]भारयष्टि[2]र्विहङ्गिका ॥७५८॥	A pole for carrying burdens 2.
Excellence 2.	[1]सौष्ठवं स्याद[2]वष्टम्भो [1]हठः [d][2]प्रसभमुच्यते ।	Force, violence 2.
Captive, prisoner 2.	[1]प्रग्रहो [2]ग्रहको [3]वन्दी [e][1]पणोऽक्षेषु [2]ग्लहः स्मृतः ॥७५९॥	A stake at gambling 2.
Abstinence from all food 4.	[1]प्रायः स्याद्[2]भोजनत्यागः [3]संन्यासो[4]ऽनशनं स्मृतम् ।	
In vain, useless, to no purpose 2. Fruitless 2.	[1]मोघं [2]मुधा[1]ऽफलं [2]बन्ध्यं [1]नतं [2]नम्रं च [3]बन्धुरम् ॥७६०॥	Bent 3.
Trade traffic 3.	स्मृतं [1]वणिज्यं [2]वाणिज्यं [3]वणिज्या च समं त्रयम् ।	
Fight, battle 3.	[1]युद्धार्थे [f]द्वे प्रयुज्येते [2]दौर्मद्यं च [3]करीरकम् ॥७६१॥	
Intention, purpose 2.	[1]आकूतं स्याद[2]भिप्रायो [1]व्याकूति[2]र्भङ्गिरुच्यते ।	Deception, crooked-ness 2.
A piece of ground purified by sacrifice 2.	[1]स्थण्डिलं [2]संस्कृता भूमि[1]रयनं [g][2]स्थानमुच्यते ॥७६२॥	Site 2.
New, recent 2.	[1]प्रत्यग्रमुक्तं [2]सद्यस्क[1]मुपाग्र[2]मुपसर्जनम् ।	Inferior 2.
A swing 3.	[1]दोला [2]प्रेङ्खोलनं [3]प्रेङ्खा [1]उत्सवः स्यान्[2]महः [3]क्षणः ॥७६३॥	A festival 3.
A buffalo's horn 2.	[1]गवलं [2]माहिषं शृङ्गं [1]दृतिश्[h][2]चर्मप्रसेवकः ।	A pair of bellows 2.
A casket, a box 2.	[1]समुद्गः [2]सम्पुटो ज्ञेयो [1]वडिशं [2]मत्स्यबन्धनम् ॥७६४॥	A fish-hook 2.

a प्रतिकुलोनुकूलार्थो अपष्ठुरमपष्णु च, प्रतिकूलानुकूलार्थे अपष्टुरमपच्छ च b पराचीनपाचीनं, पराचीनं परांग्मुखम् c शक्यमिति d प्रसभ उव्यते e पणाक्षेषु, पण्यक्षेषु, पण्याक्षेषु f प्रयुज्येतां दौर्मध्यं g स्थानमिष्यते h प्रसेधकः ।

Retaliated.	कृते प्रतिकृतं[1] प्राज्ञैः प्रतिनिर्यातनं[1] स्मृतम् ।	Retaliation.
Worrying to death.	सपत्नाकरणं[1] प्रोक्तं यत्परस्यातिपीडनम् ॥७६५॥	
Conciseness 4.	समासः[1] स्यात्समाहारः[2] संक्षेपः[3] सङ्ग्रहस्तथा[4] ।	
Expanse 3.	व्यासः[1] प्रपञ्चो[2] विस्तारः[3] स च शब्दस्य विस्तरः[1] ॥७६६॥	Copiousness.
Whet 2; thrown 2.	उन्नं[1] क्लिन्नं[2] स्मृतं नुन्नं[a1] क्षिप्तं[2] तुन्नं[1] च पीडितम्[2] ।	Hurt, injured 2.
Fallen 2.	पन्नं[1] तु पतितं[2] प्रोक्तं सन्नं[b1] शान्तं[2] च सूरिभिः ॥७६७॥	Becalmed 2.
Cast down 2.	न्यञ्चितं[1] स्यादधःक्षिप्तं[2] क्षिप्तमूर्ध्व[1]मुदञ्चितम्[2] ।	Thrown upwards 2.
Suspended.	काचितं[1] सज्जितं[c2] प्रोक्तं रूषितं[1] गुण्डितं[d2] स्मृतम् ॥७६८॥	Crushed, pounded 2.
Obstacle, impediment 2.	विष्कम्भः[1] प्रतिबन्धो[2] विश्रम्भः[1] कथ्यते च विश्वासः[2] ।	Trust, confidence 2.
Pounding of fragrant substances 2.	सम्मर्दः[1] स्यात्परिमल[2] उपमर्दो[1] विप्रकारः[2] स्यात् ॥७६९॥	Hurt, injury 2.
Consideration of moral duties 2.	उपाधिर्[1]धर्मचिन्ता[2] स्यान्निःशोध्य[1]मनवस्करः[2] ।	Clean, unsoiled 2.
Wicked 2.	कुप्रियं[1] च जघन्यं[2] स्यान्निःशेषं[1] न्यक्षमिष्यते[2] ॥७७०॥	Whole 2.
Offence, injury 2.	अपकारो[1] भवेद् द्रोहो[2] दोष[1] आदीनवो[2] मतः ।	Fault 2.
Astringent 2.	कषायं[1] तुवरं[2] प्रोक्तं सुरुङ्गा[e1] सन्धिरुच्यते[2] ॥७७१॥	A tunnel 2.
	असौम्यं यद्भवेच्चक्षुरचक्षुस्तत्प्रचक्षते[1] ।	A bad or miserable eye; eye-less or blind.
Dissimulation, concealing or biding one's mental disposition 2.	अवहित्थं[1] च शब्दज्ञा आकारस्य निगूहनम्[2] ॥७७२॥	
Familiarity 2.	संस्तवः[1] स्यात्परिचयः[2] प्रसादः[1] प्रणयः[2] स्मृतः ।	Affection, favour 2.
Grant of all things desired 2.	प्रवारणं[1] महादानं[2] सङ्कल्पः[1] कर्म मानसम्[2] ॥७७३॥	Resolve 2.
Readily prepared 2.	अनायासार्थकं[1] फाण्ट[2]मन्तर्गडु[1] निरर्थकम्[2] ।	Useless 2.
Independence 3.	स्वाच्छन्द्यं[1] निर्निमित्तं[2] च यदृच्छेत्यभिधीयते[3] ॥७७४॥	

a तुन्नं क्षिप्तं नुन्नं b शन्नं शांतं c शिकियतं, सिकियतं d गुडिनं e सुरङ्गा ।

First 2.	1 2 1 2 1 2 आद्यमादिमम् अन्त्यं स्यादन्तिमं चाग्र्यमग्रिमम् ।	Last 2; prior 2.
Middle 2.	1 2 1 मध्यमं मध्यमीयं च मध्यन्दिनमुदाहृतम् ॥७७५॥	Midday, noon.
Adoration, reverance 2.	1 2 1 a 2 नमस्या वन्दना प्रोक्ता तपस्या नियमस्थितिः ।	Steady observance of religion 2.
Renunciation of the world; ascetic devotion; religious austerity 2.	1 2 1 b 2 3 परिव्रज्या व्रतादानं व्रज्याऽटचा च गतिः स्मृता ॥७७६॥	Walking. or the habit of roaming as a religious mendicant 2
Empty 2.	1 2 1 2 c 1 2 रिक्तं तुच्छमसारं तु फल्गु व्युष्टिः फलं स्मृतम् ।	Vain 2. Result, product 2.
Inaccesisble 2.	1 2 1 2 कलिलं गहनं प्रोक्तं श्लथं शिथिलमुच्यते ॥७७७॥	Loose, lax 2.
Independence of action 2.	1 2 1 2 स्वतन्त्रवृत्तिर्व्युत्थानमभ्युत्थानं च गौरवम् ।	Dignity, respect 2.
Disposition 2.	1 2 1 2 संस्थानं संनिवेशः स्यादास्थानं नृपतेः सभा ॥७७८॥	A royal waiting room 2.
Conversation 2.	1 2 1 2 सङ्कथान्योन्यसङ्गीतिः प्रतिपत्तिः प्रगल्भता ।	Decision 2.
Effort 2.	1 2 d 1 2 उच्यत ऊर्जं उत्साहो भृकुटिर्भ्रुकुटिस्तथा ॥७७९॥	Frown 2.
Disunion 2.	1 2 1 2 उपजापो भवेद्भेदः साम सान्त्वमिति स्मृतम् ।	Conciliation 2.
Trust, confidence2.	1 2 1 2 तथेति प्रत्ययः श्रद्धा संस्कारो वासना स्मृता ॥७८०॥	The realising of past perception 2.
Got, obtained.	1 2 e 1 स्मृतमास्थितमाक्रान्तं प्रतीष्टं पतदाहृतम् ।	Accepted, received.
Covered 2.	1 2 1 2 प्रच्छादितं स्यात्संवीतं प्रशस्तं संस्कृतं स्मृतम् ॥७८१॥	Excellent 2.
Snare, a trap 2.	1 2 f 1 2 उन्माथः कूटयन्त्रं स्यादवपातोऽवटः स्मृतः ।	A hole or cavity 2.
Nature 3.	1 2 3 g 1 2 धर्मः स्वभावः आत्मा स्यादवेक्षा प्रतिजागरः ॥७८२॥	Attention, watchfulness 2.
Unkind, harsh 2.	1 2 h 1 स्मृतं परुषमस्निग्धमाचारातिक्रमः क्रिया ।	A religious rite.
Quick, expeditious2.	1 2 1 i 2 उच्चण्डमप्रलम्बं स्यान्माढिः पत्रशिरा स्मृता ॥७८३॥	The vein of a leaf 2.

a नियमः स्थितिः b व्रज्याद्या, मीज्याज्या c व्युष्टचुफलं, व्युष्टिफल, व्युष्टफलं d भ्रुकुटिर्भ्रूकुटि, उत्साहो श्रुकुटि, भृकुटिर्भ्रकूटि e प्रतिष्ठं तु पदाध्रुतं, प्रतिष्टं तु यदाध्रुतं, प्रतीष्टं पतदाहृतं f स्यादवतापो, स्यादवपानो, स्यादवढः स्मृतः g स्यादपेक्षा, स्यादचेक्षा h मावारोतिक्रमः, मावारातिः कमक्षया i पत्रशरा ।

Emulation, Competition, assertion of superiority.

अहमहमिका[1] तु सा स्याद्यत्क्रियते स्पर्धयाधिकं[a] किञ्चित् ।
यत्र वृथाभिनिवेशस्तामाहोपुरुषिकां[1] विदुः प्राज्ञाः ॥७८४॥

Great self conceit or pride.

A war-cry 2. A handful of water for rinsing the mouth 2.

सिंहनादो[1] भवेत् क्ष्वेडा[2] गण्डूषो[1] मुखपूरणम्[2] ।

Power 3.

प्रभावतां[b 1] वदन्त्यार्याः प्रभुतां[2] प्रभविष्णुताम्[3] ॥७८५॥

Superiority 2. Rivalry 2.

परभागो[1] गुणोत्कर्षः[2] स्पर्धा[1] संहर्ष[2] उच्यते ।

Length 2. Width, breadth 2.

आयामः[1] स्मृत आनाहः[2] परिणाहो[1] विशालता[2] ॥७८६॥

इति श्रीभट्टहलायुधकृतायामभिधानरत्नमालयां
सामान्यकाण्डं चतुर्थं समाप्तम् ॥ ४ ॥

a स्पर्द्धया किंचित्, स्पर्द्धयाधि किंचित् b प्रभावती ।

पञ्चममनेकार्थकाण्डम्

एकोऽर्थो[a] बहुभिः शब्दैः कथितः कथ्यतेऽधुना ।
एकस्यैव तु शब्दस्य बहुष्वर्थेषु वर्तनम् ॥७८७॥

(1) Shiva.	रुद्रेऽपि[1] **खण्डपरशुर्वैश्रवणेऽप्येककुण्डलः**[1] प्रोक्तः ।	(1) Kubera.
(1) Door, gate.	द्वारेऽपि[1] **प्रतिहारः**[b] प्राकाराग्रेऽपि[c][1] **कपिशीर्षम्** ॥७८८॥	(1) The coping of a wall.
(1) Enough.	पर्याप्तेऽपि[1] **कृतं** स्यादाहवनीयादिषु[1] त्रिषु **त्रेता** ।	(1) The three sacred fires.
(1) Doubt.	सन्देहेऽपि[1] **द्वापरमाहुः** कलहेऽपि[1] **कलिशब्दम्** ॥७८९॥	(1) War, battle.
(1) An army.	सेनायामपि[1] **कटकं** **प्राणिद्यूतं** वदन्ति युद्धेऽपि[1] ।	(1) War.
(1) Demons.	रक्षस्यपि[1] **पुण्यजनं** मृद्भाण्डेऽप्युष्ट्रिकामार्याः[1] ॥७९०॥	(1) An earthen vessel.
(1) Silver.	**श्वेतं** रजतेऽप्युक्तं[1] **रजतं** हारे[1] शरेऽपि[1] **किंशारुः** ।	(1) Necklace. (1) An arrow.
(1) Hypocrisy.	दम्भेऽपि[1] **गह्वरं** स्यादुपह्वरं सन्निधानेऽपि[1] ॥७९१॥	(1) Vicinity.
(1) An eyelid.	नयनच्छदेऽपि[1] **वर्त्म** **प्रतिग्रहः** सैन्यपृष्ठभागेऽपि[1] ।	(1) The rear of an army.
(1) Phlegm.	श्लेष्मण्यपि[1] **खेटः** स्याज्जामिः कुलबालिकायां[1] च ॥७९२॥	(1) A respectable woman.
(1) A little, the mere scent of a thing.	**गन्धो** लेशेऽप्युक्तः[1] करुणाप्रतिपादने[1] **तपस्वी** च ।	(1) Exciting pity, pitiable.
(1) The distance from the wrist to the tip of the little finger.	मणिबन्धकनिष्ठिकयोर्मध्यविभागेऽपि[1] **करभः** स्यात् ॥७९३॥	

a एकार्थो b प्रतीहारः c प्राकाराग्रेपि कीर्तितम् ।

(1) Consideration, reflexion.	चिन्तायामपि **चर्चा** जगती [a]राजप्रधानलोकेऽपि ।	(1) The king and his subjects.
(1) The menses.	**ऋतु**[1]रङ्गनारजस्यपि **विकटं** [1]श्रेष्ठेऽपि निर्दिष्टम् ॥७९४॥	(1) Excellent.
(1) Mail, aimour.	[1]कवचेऽपि **वारवाणं** **जीमूतं** [1]पर्वतेऽपि कथयन्ति ।	(1) a muntains.
(1) The array or arrangement of troops in particular position.	**व्यूहं** [1]रचनायामपि दार्वाघाटेऽपि **शतपत्रम्** ॥७९५॥	(1) The wood-peckers.
(1) The body.	**करणं** [1]कायेऽपि स्यादुष्णीषो मूर्धवेष्टनेऽप्युक्तः ।	(1) A turban.
(1) Goods, property.	**मात्रा** [1]परिच्छदेऽपि **क्षुद्रः** [1]क्रूरे [1]श्रुतौ **निगमः** ॥७९६॥	(1) Cruel. (1) The vedas.
(1) Curled hair.	**वृजिनः** [1]केशेऽप्युक्तः **स्थाणुः** [1]कीलेऽपि [1]कुञ्जरे **नागः** ।	(1) A stake. (1) An elephant.
(1) A store room.	**गञ्जो** [1]भाण्डागारे **गोमुख**[1]मुपलेपनेऽपि स्यात् ॥७९७॥	(1) Ointment.
(1) Splendour, light.	[1]तेजस्यपि **धाम** [1]स्यादाधारेऽप्याशयो **घटा** [1]गोष्ठयाम् ।	(1) A receptacle. (1) An assembly.
(1) A noble, woman.	**कुल्या** [1]कुलस्त्रियामपि [b]**तारो** [1]मुक्तागुणेऽप्युक्तः ॥७९८॥	(1) A large pearl.
(1) The result of actions.	[1]कर्मविपाकेऽपि **दशागती** स्मृते [1]काननेऽपि **दवदावौ** ।	(1) A forest.
(1) The head.	**चूडाशिखे** [1]शिरस्यपि [1]हस्तिन्यां [c]**धेनुकागणिके** ॥७९९॥	(1) The female elephant.
(1) Intellect; intelligence.	[1]**प्रतिपत्**[2]प्रतिपत्तावपि **शादः** [1]शष्पे **घृणा** [2]जुगुप्सायाम् ।	(1) Young grass (2) Disgust.
(1) High, tall.	**उत्ताल**[1]मुन्नतेऽपि [1]श्रेष्ठेऽपि निगद्यते **सुरभिः** ॥८००॥	(1) Excellent.
(1) A year.	**संवर्तः** **परिवर्तश्च** [1]हायने कथ्यतेऽ[1]म्बरे **नाकः** ।	(1) Sky, heaven.
(1) A measure of quantity.	[1]परिमाणेऽपि [d]**प्रस्थः** [1]सर्वात्मनि **सर्वसन्नाहः** ॥८०१॥	(1) The universal spirit.
(1) a wife.	[1]पत्न्यामपि **द्वितीया** दर्भेऽपि **पवित्रमवधिर**[1]वटेऽपि ।	(1) Kusha grass. (1) A pit, a hole.
(1) Natured.	प्रकृतावपि **प्रधानं** **विवक्षितं** [1]शोभनेऽपि स्यात् ॥८०२॥	(1) Handsome.
(1) Excessive.	अतिमात्रेऽप्यतिवेलं [1]कायेऽप्युत्सेध इष्यते सद्भिः ।	(1) The body.
(1) The spine.	[e][1]पृष्ठास्थन्यपि **वंशः** **कदली** [1]करिवैजयन्त्यां च ॥८०३॥	(1) A flag carried by an elephant.

a रा प्रधानं, राप्रधानं b तारा, धातारो c धेनुका गणिका
d प्रस्थं e पृष्टास्थिन्यपि ।

(1) Deception.	जालं कपटेऽप्युक्तं कपालमुक्तं घटादिशकलेऽपि ।	(1) A fragment of earthen pot.
(1) Sin. (2) Misfortune.	रिष्टं पापाशुभयोररिष्टमशुभेऽपि निर्दिष्टम् ॥८०४॥	(1) Misfortune.
(1) Diffusion.	व्यासेऽपि विग्रहः स्यान्मानविशेषेऽपि पौरुषव्यामौ ।	(1) Measure.
Resolution.	हेला प्रस्तावेऽपि प्रग्रह आबन्धनेऽप्युक्तः ॥८०५॥	Captive, prisoner.
(1) An elephant's trunk.	कुञ्जरकरेऽपि शुण्डा[a] ग्रावा शैले भवश्च संसारे ।	(1) A mountain. (1) The world.
(1) Young.	बालेऽपि बालिशः स्यात्कलधौतं शातकुम्भेऽपि ॥८०६॥	(1) Gold.
Branch.	शाखायामपि परिधिर्वसतिर्जैनाश्रमेऽपि निर्दिष्टा ।	A Jain monastery.
(1) Searching.	अन्वेषणेऽपि मार्गो भद्रो[b] वृषभे वके ध्वाङ्क्षः ॥८०७॥	(1) A bull. (1) A crane.
(1) A defect in a jewel.	मणिदोषेऽपि त्रासो वत्सः संवत्सरेऽपि निर्दिष्टः ।	(1) A year.
(1) Adverse.	वामः प्रतिकूलेऽपि प्रोक्तौ शुक्लेऽपि शुचिरामौ ॥८०८॥	(1) White, bright.
(1) Yesterday.	ह्यस्तनदिनेऽपि कल्यं नेत्रं मूले रजस्यपि परागः ।	(1) Dust, powder.
(1) Pregnant.	भ्रूणो गर्भिण्यामपि भूतिर्विभवे बलः[c] काके ॥८०९॥	(1) Grandeur. (1) A crow.
(1) A tableland.	गिरिसानुन्यपि वप्रं तल्पं दारेषु चक्षुषि ज्योतिः ।	(1) A wife. (1) Eye.
(1) Injuring by theft.	चौर्यादावपि हिंसा प्रसरः प्रणयेऽपि निर्दिष्टः ॥८१०॥	(1) Affectionate solicitation.
Group, mass.	संघातेऽपि ग्रामो भूतेन्द्रियशब्दविषयकरणानाम् ।	(1) The complex of visible objects. (1) Senses.
Combined with names of trees it signifies a multitude.	षण्डश्च[d] पादपानां स्कन्धः करिनरतुरङ्गाणाम् ॥८११॥	(1) Signifying a multitude after. करि, नर and तुरङ्ग।
10 Different kinds of trees.	नन्द्यावर्तः सरलः[e] शालः काको धवोऽञ्जनस्तिलकः ।	
	पद्मस्पन्दनमोक्षा वृक्षविशेषेऽपि दृश्यन्ते ॥८१२॥	
Fragrant.	कटुतिक्तकषायास्तु सौरभ्येऽपि प्रकीर्तिताः ।	
Splendour, elegance, beauty.	शोभार्थेऽपि प्रयुज्यन्ते लक्ष्मीश्रीकान्तिविभ्रमाः ॥८१३॥	

a सुंडा b रुद्रो वृषभे c बलः काले, वलिः काके, वलिकाले
d खंड पादानां e सरलः शालः शाकोथवार्जुनतिलकः, सरलः शाकोथ-वार्जुनस्तिलकः, सरलः शालः शाको धवोऽजनस्तिलकः ।

(1) A guard of the woman's apartment.	आर्यः [1]स्यात्सौविदल्लेऽपि व्रीहावप्यणुरिष्यते ।	(1) A kind of grain.
(1) A man of a low and impure tribe.	चण्डालेऽपि दिवाकीर्तिर्विवस्वान् [1]देवतास्वपि ॥८१४॥	(1) A deity, a god.
(1) Affection.	[1]स्नेहेऽप्यपह्नवः प्रोक्तो [1]द्वेषेऽप्यनुशयः स्मृतः ।	(1) Enimity.
(1) Sexual intercourse.	[1]सुरतेऽपि व्यवायः स्यान्निगमश्च [1][a]ऋतावपि ॥८१५॥	(1) A road. (2) The vedas. (3) A trader.
1) A difficult road.	[1]दुर्गमार्गेऽपि कान्तारं [1]गृहवाट्यां च निष्कुटः ।	(1) A garden attached to a house.
(1) An animal, a beast.	रूपं [1]मृगेऽपि विज्ञेयं बभ्रुः [1]स्यान्नकुलेऽपि च ॥८१६॥	(1) A mongoose.
(1) The intestines.	[1]अन्तर्देहेऽपि कोष्ठः स्याच्चत्वरं [1]प्राङ्गणेऽपि च ।	(1) A court yard.
(1) Leprous.	[1]दुश्चर्मण्यपि निर्दिष्टः शिपिविष्टो मनीषिभिः ॥८१७॥	
(1) A couch	संस्तरः [1]प्रस्तरेऽप्युक्तो [1]हनौ कुञ्जो [1]रणे स्पशः ।	(1) The jaw. (1) War, battle.
(1) A thunder cloud.	[1]गर्जन्मेघेऽपि पर्जन्यः सन्धा [1]स्यादवधावपि ॥८१८॥	(1) A limit.
(1) Settled occupations, proper conduct.	[1]व्यवस्थायां च संस्था स्यात्संवित्तावपि [b]वेदना ।	(1) Perception, experience.
A march on.	यात्रा [1]स्यादनुवृत्तौ च [1]संज्ञायां च समाह्वयः ॥८१९॥	(1) Name, appellation.
(1) Impotent.	क्लीबो [1]विक्रमहीनेऽपि [1]समयेऽपि कटः स्मृतः ।	(1) Time.
(1) A stain, spot. (2) A fault.	[c]कलङ्कं [1]लाञ्छने [2]दोषेऽप्यद्रिः प्रोक्तो रवावपि ॥८२०॥	(1) The sun.
(1) Meeting. (2) Assembly.	समितिः [1]सङ्गति[2]सभयोः ककुदं [1]शृङ्गे [d]विदुः [2]प्रधानेऽपि ।	(1) The top of a mountain (2) Eminence, superiority.
(1) Pride, conceit. (2) An instrument for cleaning stones.	टङ्कः [1]स्यादभिमाने [2]प्रस्तरघटनोपकरणे च ॥८२१॥	
(1) A sign. (2) Consciousness.	[1]सङ्केते [2]चैतन्ये च सूरिभिः कथ्यते तथा संज्ञा ।	
(1) Punishment. (2) An army.	दण्डो [1]दमने [2]सैन्ये कुतपो [1]दर्भेऽपराह्णे च ॥८२२॥	(1) Kush grass. (2) After noon.
(1) Compassion, pity, kindness.	[1]कारुण्येऽप्यनुषङ्गः स्यात्प्रोक्तो [1]गुह्योऽप्यवस्करः ।	(1) A privity.
(1) Signet ring.	वेदिका[1]ऽङ्गुलिमुद्रायां [1]लाक्षायां च कृमिस्तथा ॥८२३॥	(1) Lac.

a दृतावपि b देवनम् c कललं d विदुः प्रभावेऽपि ।

(1) Capital, stock,	नीवी परिपणे[1]ऽप्युक्ता[a] कटिदेशे[1]ऽपि **मेखला** ।	(1) Loins.
(1) Privation. (2) Separation.	प्रत्यवाये[1]ऽपि विश्लेषे[2] **विधुरं** स्मर्यते बुधैः ॥८२४॥	
(1) End.	**निदान**मवसाने[1]ऽपि स्वामिन्यपि[1] भवे**दिनः** ।	(1) A master, a lord.
(1) Bard. (2) Old, ripe.	**जठरः** कठिने[1]ऽप्युक्तः प्राज्ञैः परिणते[2]ऽपि च ॥८२५॥	
(1) Time. (2) Ordinance.	काले[1] कल्पे[2]ऽपि **विधिर्घनाघनः**[b] शक्र[1]वर्षुक[c]ाम्बुदयोः[2] ।	(1) Indra. (2) Rainy cloud.
(1) Distress. (2) Transgression.	**अत्ययशब्दः** प्राज्ञैः कृच्छ्रे[1] चातिक्रमे[2] च निर्दिष्टः ॥८२६॥	
(1) The belly. (2) Water.	उदरे[1] जले[2] **कूपीटं** **सम्बाधः** सङ्कटे[1] भगे[2]ऽप्युक्तः ।	(1) Narrow. (2) Vulva.
(1) The rear of an army (2) The rear of a battle.	**पार्ष्णिः** प्रत्यासारे[1] च रणस्य च पश्चिमे[2] भागे ॥८२७॥	
(1) Sexual intercourse. (2) Enjoyment.	रति[1]भुक्तयोः[2] **सम्भोगः** पथिदेये[1] स्त्रीधने[2] च **शुल्कं** स्यात् ।	(1) Toll, custom, duty. (2) The property of the wife,
(1) The shoot of a bamboo. (2) A shrub.	वंशाङ्कुरे[1] **करीरं** वृक्षविशेषे[2]ऽपि कथयन्ति ॥८२८॥	
(1) Race, family. (2) Disposition.	**अनूक**मन्वये[1] शीले[2] **गोत्रं** नाम्नि[1] तथान्वये[2] ।	(1) Name. (2) Race, family.
(1) A lump of boiled rice.	**पुलाकं** भक्तसिक्थे[1] च क्षुद्रधान्ये[2] च कथ्यते ॥८२९॥	(2) Shrivelled. grain.
(1) An improper act. (2) A privy part.	अकार्ये[1] गुह्ये[2] **कौपीनं** **कीलालं** रुधिरे[1] जले[2] ।	(1) Blood. (2) Water.
(1) A hole filled with stake. (2) Conflagration of husk.	**कुकूलं** शङ्कुमद्गर्ते[1] तुषाग्नौ[2] च निगद्यते ॥८३०॥	
(1) A building containing an image of Buddha.	**चैत्यं** बुद्धाण्डके[d][1]ऽप्युक्तं देवतायतने[2] तथा ।	(2) A temple.
(1) Mushroom. (2) A sort of tree.	छत्रके[1] वृक्षजातौ[2] च **शिलीन्ध्रं**[e] स्मर्यते बुधैः ॥८३१॥	
(1) Prodigal. (2) A beast of prey.	अर्थव्ययसहे[1] **व्याल**स्तथा हिंस्र[f]पशौ[2] स्मृतः ।	
(1) A ploughshare (2) The snout of a hog.	**पोत्र**मित्युच्यते प्राज्ञैर्हल[1]शूकरयो[2]र्मुखम् ॥८३२॥	
(1) Slow. (2) Free.	मन्द[1]स्वच्छन्दयोः[2] **स्वैरं** **कक्षः** स्यात्कच्छ[1]वीरुधोः[2] ।	(1) The hem of an ornament or garment. (2) The creeper.
(1) The male elephant. (2) The female elephant.	**करेणु**र्गज[1]हस्तिन्योः[2] **पीलु**श्च गज[1]वृक्षयोः[2] ॥८३३॥	(1) The elephant. (2) A kind of tree.

a प्युक्तः, युक्तः b विधिर्धमार्घनः, विधिनाद्यनः, विविधि-नाद्यनः, विधिनाघनः c शक्रवर्ष d बुद्धांडके, बुद्धाडके, बुधांडक e शलन्ध्रं, शिलिंध्र, शिलन्ध्रं, f हिंस्त्रः ।

(1) A Spike. (2) A Javelin.	शलाकायुधयोः शल्यं बाधा दुःखनिषेधयोः ।	(1) Pain, trouble. (2) Hindrance, prohibition, opposition.
(1) A pillar. (2) Fixedness in stupor.	स्थूणास्तब्धत्वयोः स्तम्भ इला वागध्न्ययोरपि ॥८३४॥	(1) Speech. (2) A cow.
(1) Worship. (2) Price.	अर्चनामूल्ययोरर्घो विसर्गो मुक्तिवर्चसोः ।	(1) Giving up. (2) Excrements.
(1) Name of a saint. (2) A cock.	मुनिकुक्कुटयोर्दक्षः सन्धिः संश्लेषरन्ध्रयोः ॥८३५॥	(1) Union. (2) A crack.
(1) Surely, positively. (2) Much, exceedingly.	अवश्य[a]भृशयोर्बाढं दायादस्तुक्सपिण्डयोः ।	(1) Male offspring. (2) A kinsman.
(1) Of noble descent. (2) Excellent.	कुलीनश्रेष्ठयोर्जात्यं कोटिरुत्कर्षसं[b]ख्ययोः ॥८३६॥	(1) Excellence. (2) Ten millions.
(1) One of Shiva's attendant. (2) Shiva.	[c]ब्रध्नस्तण्डुगिरिशयोः स्थितिः स्थानव्यवस्थयोः ।	(1) Standing place. (2) A rule management.
(1) Manifestation. (2) Privacy.	[d]वीकाशः स्फुटरहसोः काष्ठा कालप्रकर्षयोः ॥८३७॥	(1) A measure of time. (2) Excellence.
(1) A river. (2) A sea.	नदी[e]समुद्रयोः सिन्धुर्देशपर्वतयोर्मरुः ।	(1) A desert. (2) A mountain.
(1) Pairing connection. (2) Sexual intercourse.	मैथुनं कथ्यते सद्भिः सम्बन्धग्राम्यधर्मयोः ॥८३८॥	
(1) Crookedly. (2) Binding.	प्रह्वबन्धनयोः प्राध्वं मोहः स्यान्मौढ्य[f]मूर्छयोः ।	(1) Folly. (2) Loss of consciousness.
The ebb and flow of the Sea.	व्यवस्थानेऽम्भसो [g]वेला [h]रविः पर्वतसूर्ययोः ॥८३९॥	(1) Mountain. (2) The sun.
(1) Fire. (2) Meteor.	अग्न्युत्पातौ धूमकेतू श्वशुर्यौ श्यालदेवरौ ।	(1) Wife's brother. (2) Husband's brother.
(1) An ordeal. (2) A treasury.	दिव्यार्थसंग्रहौ कोशौ नरेन्द्रौ नृपवार्त्तिकौ ॥८४०॥	(1) A king. (2) A conveyor of news or intelligence.
	आडम्बरो गजानां [i]पटहरवे गर्जिते प्रपञ्चे च ।	(1) The sounding of a trumpet. (2) The roaring of elephants (3) A show.
(1) Planet. (2) An imp, evil spirit (3) Perseverance.	ग्रहशब्दः सूर्यादिषु भूतादिष्वभिनिवेशे च ॥८४१॥	
(1) The supreme spirit (2) A fool (3) Indistinct, unclear.	अव्यक्तः परमात्मनि मूर्खे स्पष्टेतरे च निर्दिष्टः ।	
	कक्षा गुह्यपिधाने काञ्च्यां गेहे [j]प्रकोष्ठे च ॥८४२॥	(1) A piece of cloth worn between the legs to conceal privities (2) A girdle (3) A court in a palace.
(1) Elaboration, preparation. (2) Desire, wish. (3) The taking prisoner.	प्रतियत्नः संस्कारे लिप्सोपग्रहणयोश्च निर्दिष्टः ।	
(1) The arming for a battle. (2) An attack. (3) Robbing.	अभिहारः सन्नाहे स्यादभियोगे परस्वहरणे च ॥८४३॥	

a अवश्यं b कोटिरुत्कर्षशंखयोः c बुध्नस्तंडु, ब्रध्नस्तंडि, ब्रध्नस्तुंडु d विकाश e समुद्रनदयोः f मूर्खयोः, मौर्ध्ययोः g हसो वला, हसोर्वेला, h सूर्यपर्वतयो रविः i पटहः स्वे, पटहः खे j गेहप्रकोष्ठे इत्यपि पाठः ।

(1) A special present. (2) Taking, receiving.	a 1 2 3 b दानविशेषे लब्धौ **दायो** भागार्हपित्र्यरिक्थे च ।	(3) Patrimony.
(1) A line in a manuscript consisting of about 32 syllables.	1 2 3 c लिपिसंख्यायां शास्त्रे द्रव्ये च **ग्रन्थशब्द**मिच्छन्ति ॥८४४॥	(2) A code. (3) Substance.
(1)Gambling(2)Die.	1 2 3 द्यूताक्षसारिफलकास्त्रयोऽप्या**कर्ष**संज्ञकाः ।	(3)A draught-board.
(1) Connexion, association (2) Defeat.	1 2 3 d संसर्गाभिभवाक्रोशेष्व**भिषङ्गः** प्रकीर्त्तितः ॥८४५॥	(3) Reviling, imprecation.
(1) A son of त्वष्टृ the perpetual enemy of Indra.	1 2 3 त्वाष्ट्रे तमसि शत्रौ च **वृत्रशब्द**स्त्रिषु स्मृतः ।	(2) Darkness. (3) An enemy.
(1) Depression, sorrow (2) Sacrifice (3)Anger.	1 2 3 1 2 3 **मन्यु**र्दैन्ये क्रतौ कोपे नाडीस्वर्गक्षितिष्**विडा** ॥८४६॥	(1) An artery (2) Heaven (3) The earth.
	उक्तानामप्यनुक्तानां शब्दानामिह संग्रहः ।	
(1) Pleasure (2) Wind (3) Water.	1 2 3 4 5 **कशब्दः** सुखवाय्वम्बुब्रह्ममस्तकवाचकः ॥८४७॥	(4) The god Brahma. (5) Head.
(1) An oath, (2) understanding. (3) Cause.	e 1 2 3 4 5 **प्रत्ययाः** शपथज्ञानहेतुविश्वासनिश्चयाः ।	(4) Trust. (5) Certainty.
(1) Expansion. (2) Awning. (3) Empty.	1 2 3 4 5 विस्तारे कदके शून्ये **वितानं** स्यात्क्रतौ क्षणे ॥८४८॥	(4) Sacrifice. (5) Opportunity.
(1) A side (2) Fortnight.	1 2 3 4 देहावयवमासार्धपतत्रगृहभित्तिषु	(3) Wing (4) The wall of a house.
(5) A follower.	5 6 परिग्रहे समीपे च **पक्षः** षट्सु निगद्यते ॥८४९॥	(6) Neighbourhood.
(1) Fire (2) Wealth (3) The rays of the sun.	1 2 3 4 5 अग्निधनरश्मिरत्नत्रिदशविशेषेषु भवति **वसुशब्दः** ।	(4) A jewel, gem. (5) A class of gods 8 in number.
(1) Motion, action (2) Nature, character (3) Origin.	1 2 3f 4 5 चेष्टात्मजन्मसत्ताभिप्रायेष्वभिहितो **भावः** ॥८५०॥	(4) Existence (5) meaning, purport.
(1) A measure of time equal to 4 minutes.	1 2 3 4 कालविशेषेऽवसरेऽव्यापारे पारतन्त्र्ये च ।	(2) Opportunity. (3) Leisure. (4) Dependence.
(5) Middle.	5 6 g मध्ये तथोत्सवे च **क्षणशब्दः** कथ्यते सद्भिः ॥८५१॥	(6) Festival.
(1) Custom. (2) Senses.	1 2 3 4 आचारे नयनादौ द्यूतविशेषे तथा रथावयवे ।	(3) Playing at dice (4) An axle.
(5) Terminelia Balaria.	5 h **अक्षं** विभीतकेऽपि प्रयुञ्जते पञ्चसु प्राज्ञाः ॥८५२॥	
(1) Trouble (2) End (3) Good conduct,	1 2 3 4 5 **निष्ठा** क्लेशेऽवसाने च व्यवस्थोत्कर्षयोर्व्रते ।	(4) Excellence. (5) A vow.
(1) Excellent (2) Power (3) Wealth.	1 2 3 4i 5 श्रेष्ठे स्वामिनि धने शुक्रे मज्ज्ञि **सार** उदाहृतः ॥८५३॥	(4) Semen, virile.; (5) Marrow.

a दाने विशेषे, दाने विशेषलब्धौ b पितृऋक्थे, पितृरिक्थे c ग्रन्थमिच्छन्ति d भिष्वङ्गः e प्रत्ययः f जन्ममत्वाभिप्रायेष्व g कथ्यते कृतिभिः h प्रयुज्यते i शुक्ले, शुल्के ।

(1) A quarter (2) Eye (3) Rays of the sun (4) Heaven.	1 2 3 4 5 6 7 8 दिग्दृष्टिदीधितिस्वर्गवज्रवाग्वाणवारिषु	(5) Thunder bolt (6) Speech (7) An arrow (8) Water.
(9) The earth. (10) A cow.	9 10 भूमौ पशौ च गोशब्दो विद्वद्भिर्दशसु स्मृतः ॥८५४॥	
(1) An ornament. (2) A tail. (3) Excellent	1 2 3 4 5 6 भूषायां लाङ्गूले प्रधानशृङ्गप्रभावपुण्ड्रेषु ।	(4) Horn(5) Power. (6) A mark on the forehead.
(7) A flag (8) Mark, sign (9) Horse.	7 8 9 a ध्वजलक्ष्मतुरङ्गेषु च नवसु ललामं प्रचक्षते प्राज्ञाः ॥८५५॥	
(1) The sun (2) A monkey(3)Frog.	1 2 3 4 5 6 अर्कमर्कटमण्डूकविष्णुवासववायवः ।	(4) Vishnu (5) Indra (6) Wind.
(7) A horse. (8) Lion.	7 8 b 9 10 तुरङ्गसिंहशीतांशुयमाश्च हरयो दश ॥८५६॥	(9) The moon. (10) Pluto, Yama.
(1) An element of which five are enumerated	1 2 पृथिव्यादिषु भूतेषु शरीरेषु रसादिषु ।	(2) A constituent part of the body.
(3) A metal (4) Natural condition,	3 4 5 लोहेषु च स्मृतो धातुः स्वभावे गैरिकादिषु ॥८५७॥	(5) Mineral ore.
(1) The tip of an elephant's trunk (2) A lotus(3) The blade of a sword.	1 2 3 4 5 द्विरदकराग्रे पद्मे खड्गफले व्योम्नि वाद्यभाण्डमुखे ।	(4) The sky (5) The head of a drum.
(6) A medicine. (7) Water.	6 7 8 अगदे जले च तीर्थे पुष्करमष्टासु निर्दिष्टम् ॥८५८॥	(8) A place of pilgrimage.
(1) A living being.	1 2 चतुर्विधेषु जीवेषु पृथिव्यादिषु पञ्चसु ।	(2) An element.
(3) Passed (4) An evil spirit in attendance on Rudra.	3 4 अतीते देवयोनौ च भूतशब्दं प्रचक्षते ॥८५९॥	
(1) Colour (2) Caste (3) Beauty, splendour.	1 2 3 4 5 शुक्लादौ ब्राह्मणादौ च शोभायामक्षरे व्रते ।	(4) Letter (5) Vow.
(6) Arrangement of a song (7) Praise (8) Dress.	6 7 c 8 d गीतक्रमे स्तुतौ वेषे वर्णशब्दं प्रचक्षते ॥८६०॥	
(1) A sentiment of which 9 are enumerated.	1 e 2 3 4 शृङ्गारादिषु नवसु च लवणादिषु षट्सु पारदे रागे ।	(2) Taste (3) Mercury, quicksilver affection (4) Love.
(5) Juice (6) Semen, virile (7) Quality (8) Any constituent part of the body	f 5 6 7 8 9 10 निर्यासवीर्यगुणधातुविषघृतादौ रसः प्रोक्तः ॥८६१॥	(9) Poison (10) Melted butter, Ghee.
(1) Vulva (2) A landing place at a river's side.	1 2 3 योनौ जलावतारे च मन्त्र्याद्यष्टादशस्वपि ।	(3) A minister and 18 other officers of state.
(4) A holy place. (5) A vessel.	4 5 6 पुण्यक्षेत्रे तथा पात्रे तीर्थं स्याद्दर्शनेषु च ॥८६२॥	(6) A school of Philosophy.

a ललामं च b सीताशुर्यमा हरयो, सीताशुरर्यमा हरयो c वर्षे d प्रयुंजते e लवणादिषु पारदे, लवणादिकषट्सु पारदे, लवणादिषु न सु, नवसु, लवणादिपु षट्सु पारदे च f निर्यासि गुणवीर्ये, गुर्णवीर्य, धातुगुणवृतादौ रसः शब्दः, निर्यासगुणवोर्य धातुविषघृतादौररसः प्रोक्तः, निर्यासवीर्यगुणधातुविषघृतातौ रसः प्रोक्तः ।

(1) A vowel (2) A musical note.	अकारादिषु[1] वर्णेषु षड्जादिषु[a][2] च सप्तसु ।	
(3) Accent (4) Articulate sound.	उदात्तादिषु[3] विज्ञेयः प्राणिनां च स्वने[4] स्वरः ॥८६३॥	
(1) The equipoise of the 3 qualities of nature viz. *	सत्त्वादीनां साम्यावस्थां[1] प्रकृतिं वदन्ति तत्त्वज्ञाः ।	* (i) Goodness (ii) foulness and (iii) darkness.
(2) A citizen. (3) A minister. (4) A cause.	पौरामात्यादीनि[2][3] च कारणकारुस्वरूपाणि[4][5][6] ॥८६४॥	(5) A mechanic (6) The natural form.
(1) The 3 qualities of nature (2) Shape.	सत्त्वादौ[1] रूपादौ[2] शौर्यादौ[3] तन्तुषु[4][b] प्रयोगज्ञाः ।	(3) Heroism. (4) Cord or string.
(5) A bowstring.	गुणशब्दं सिञ्जिन्यां[5] प्रयोजयन्त्यप्रधानेऽपि[6] ॥८६५॥	(6) A subordinate quality or inferior degree.
(1) A tool (2) An agent (3) Wealth.	उपकरणे[1] करणे[2] च द्रविणे[3] लिङ्गे[4] च यातनायां[5] च ।	(4) Penis. (5) Torture.
(6) A component part of an army.	सेनाङ्गे[6] संसिद्धौ[7] साधनशब्दप्रयोगः स्यात् ॥८६६॥	(7) Accomplishment.
(1) Meaning. (2) Purpose. (3) Motive.	अभिधेयाभिप्रायप्रयोजनद्रव्यवाचकेष्वर्थः[1][2][3][c][4] ।	(4) Wealth.
(1) Opportunity. (2) Multitude.	प्रस्तावे[1] संघाते[2] कुत्सायामायुधे[3][4] जले[5] काण्डम् ॥८६७॥	(3) Censure (4) An arrow (5) Water.
(1) The holy scripture, the Vedas (2) The supreme spirit.	वेदाध्यात्मब्राह्मणहिरण्यगर्भेषु[1][2][3][4] कथ्यते ब्रह्म ।	(3) A Brahman. (4) The creator of the universe.
(1) The 3 qualities of nature (2) Existence (3) Power.	प्रकृतिगुणे[1] सत्तायां[2] स्थामनि[d][3] भूते[4] च सत्त्वं स्यात् ॥८६८॥	(4) Living being.
(1) The earth. (2) Speech (3) Food.	इराशब्दो बुधैर्ज्ञेयो भुवि[1] वाच्यशनेऽम्भसि[2][3][4] ।	(4) Water.
(1) Time (2) Pluto.	निमेषादौ[1] यमे[2] वर्णे[3] कालो मृत्यौ[4] च कीर्त्यते ॥	(3) Black. (4) Death.
(1) Time. (2) Convention.	कालसङ्केताचारसिद्धान्ताः[1][2][e][3][4] समयाः समाः[f] ॥८६९॥	(3) Practice. (4) Dogma.
(1) A thread. (2) Mystic prayer.	तन्त्रं[g] तन्तुषु[1] मन्त्रेषु[2] सिद्धान्तपरिच्छदप्रधानेषु[3][4][5] ।	(3) Established doctrine. (4) Retinue. (5) Chief.
(1) Effort (2) informing against.	उत्साहनसूचनयोः[1][2] प्रकाशने[3] गन्धनं प्रोक्तम् ॥८७०॥	(3) Manifestation.
(1) Clothing (2) The middle (3) A hole.	वस्त्रे[1] मध्ये[2] तथा छिद्रे[3] व्यवधानेऽन्तरात्मनि[4][5] ।	(4) Intervention. (5) The soul.
(6) Opportunity. (7) Connexion with the exterior.	अवकाशे[6] बहिर्योगे[7] विशेषेऽवसरेऽन्तरम्[8][9] ॥८७१॥	(8) Difference. (9) Occasion.

a खड्गादिषु b तन्तुषु च c प्रयोजद्रव्य प्रयोजनकचकचकश्चार्थः
d स्थाम्नि e चारे, सिद्धान्तसमयाः f स्मृताः g तन्त्रेषु ।

A particle.	प्रागेव नामपर्याये निपाताः केऽपि कीर्तिताः ।	
Auspiciously.	कथ्यन्ते केचिदन्येऽपि **दिष्टया** स्यान्मङ्गलादिषु ॥८७२॥	
A long time.	चिराय[a] चिररात्राय दीर्घकाले[1] प्रयुज्यते ।	
(1) An alternative. (2) Analogy.	चिरं चिराच्चिरेणेति **वा**[b] विकल्पोपमानयोः[1,2] ॥८७३॥	
All round.	परितः[1] सर्वतो[2] विष्वक्[3] समन्ताच्च[4] समन्ततः[5] ।	
(1) Visible. (2) Similar.	प्रत्यक्षसदृशोः[1,2] **साक्षाद्**वार्त्तासम्भाव्ययोः[1][c 2] **किल** ॥८७४॥	(1) As reported (2) Probably.
(1) Grief (2) Joy.	शोचने[1] सम्प्रहर्षे[2] च **हन्त**शब्दः[d] प्रयुज्यते ।	
(1) Grief (2) Anger. (3) Evidently. (4) Vicinity.	**हे** दुःखभावने[1] क्रोधे[2] प्रत्यक्षे[3] सन्निधावपि[4] ॥८७५॥	
Without.	पृथग्विनान्तरेणर्ते[1,2,3,4] व्यतिरेकार्थवाचकाः[5] ।	
Repeatedly.	प्रत्यारम्भे **मुहुः**[e] प्रोक्तो **हुं** सम्प्रश्नवितर्कयोः[1,2] ॥८७६॥	(1) A question. (2) A doubt.
(1) According to tradition.	**इतिह** स्यात्सम्प्रदाये[1] **प्रेत्यामुत्र** भवान्तरे[2] ।	(1) In the life to come (2) In a future world.
(1) Together.	साकं(1) सार्धं(2) समं(3) सत्रं(4) सहार्थे[1] सम्प्रकीर्तिताः ॥८७७॥	
(1) Below, beneath.	अधरस्तादधरतः स्यादधस्तादधोऽधरे[1] ।	
(1) Therefore.	**अत** **इत्युच्यते** हेतौ[1] निन्दायां[1] विस्मये[2] **बत** ॥८७८॥	(1) Disapproval. (2) Surprise.
(1) Near.	**समयानिकषाशब्दौ** सामीप्ये[1] कीर्तितौ बुधैः ।	
(1) Perhaps. (2) Surely.	तर्कनिश्चययोर्नूनं[f 1,2] **कच्चित्**स्यात्प्रश्नकामयोः[1,2][g] ॥८७९॥	(1) A question. (2) Wish, desire.
(1) Doubt.	**आहो उताहो** सन्देहे[1] **नु स्वित्**प्रश्नवितर्कयोः[h 1,2] ।	(1) Question. (2) A doubt.
(1) At present. (2) Fit, proper.	वर्तमाने[1] च युक्ते[2] च **साम्प्रतं** सम्प्रचक्षते ॥८८०॥	
(1) Manifestly. (2) Origin.	प्रकाशे[1] सम्भवे[2] **प्रादुः** प्रधानसदृशोः[1,2] **प्रति** ।	(1) Chief. (2) Like.
(1) Distinction. (2) Cause.	**हि** स्याद्विशेषणे[1] हेतौ[2] **तु** स्याद्भेदेऽवधारणे[1,2] ॥८८१॥	(1) Difference. (2) Indeed.

a चिराच्चिरेण b च विकल्पौप्रधानयोः, च विकल्पोप्रधानयोः

c संभोव्यये किल d हन्त शब्दं प्रचक्षते e महः, हनः

f तर्कनिश्चतयो, तर्कनिश्चययो g काम्ययोः h नु श्चित् प्रश्न।

(1) A question. (2) A kind enquiry. — अयि प्रश्ने[1] सानुनये[a 2] सत्ये[1] शीघ्रे[2] तथाञ्जसा । — (1) Truly. (2) Quickly.

Some, little. — ईषत्[1]किञ्चित्[2]मनाक्[3] प्रोक्ताः किञ्चन[4]स्तोक[5]वाचकाः ॥८८२॥

(1) Silently. — तूष्णीं जोषं भवेन्मौने[1] स्म स्यात्संस्मरणादिषु[1] — (1) Remembrance.

Calling to, addressing a person. — अङ्गेत्यामन्त्रणे[1] हं हो भो भो इति च कथ्यते ॥८८३॥

(1) Variously. — अनेकार्थे[1] भवेन्नाना ननु प्रश्ने[1]ऽवधारणे[2] । — (1) Question. (2) Surely.

(1) Suddenly. (2) Instantly. — आकस्मिकार्थे[1] सहसा तत्काले[b 2] च निगद्यते ॥८८४॥

(1) Expansion. (2) Acceptance. — विस्तारे[1]ऽङ्गीकृतावूरी[2] कथ्यत उररी तथा ।

(1) Surely. (2) Together. (3) Vicinity. — असंशये[1] भवेदद्धा सहार्थान्तिकयोरमा[2][3] ॥८८५॥

(1) Then. (2) Auspicious. (3) Question. — अथानन्तर[1]कल्याण[2]सम्प्रश्न[3]नादिषु कथ्यते ।

अथो इति तथा प्रोक्तो नामाभ्युपगमादिषु[1] ॥८८६॥ — (1) Granting. allowing.

(1) Always. — सदा सना च नित्यत्वे[1] स्वस्ति स्यान्मङ्गलादिषु[1] । — (1) Hail.

(1) Cause. (2) Similarity. (3) End. — इतिशब्दः स्मृतो हेतौ[1] प्रकारादिसमाप्तिषु[2][3] ॥८८७॥

इति श्रीभट्टहलायुधकृतायामभिधानरत्नमालाया-
मनेकार्थकाण्डं पञ्चमं समाप्तम् ॥ ५ ॥

a सानुशये b नित्यार्थे ।

हलायुधकोशस्य

विवृतिसहितोऽकारादिशब्दानुक्रमकोशः

हलायुधकोशस्य अकारादिशब्दानुक्रमकोशः

विवृतिसहितः

अ

अंशुः पुं. [अंशयति इति । अंश् विभाजने, मृगय्वादित्वात् कु] सूर्यः; किरणः (३९); प्रभा; वेशः; सूत्रादिसूक्ष्मांशः; लेशः; ऋषिविशेषः; लतावयवः; सोमलतावयवः; भागः । ३६

अंशुकम् क्ली. [अंशून् कायति । अंशु + कै शब्दे, आत इति क, यद्वा अंशुभिः काशते, काश् दीप्तौ, अन्येष्वपीति ड] वस्त्रमात्रं; सूक्ष्मवस्त्रम्; उत्तरीयवस्त्रं; शुक्लवस्त्रम्; अधोवस्त्रम्; पत्रम् । ५४८

अंशुमान् [त्] पुं. [अंशवो विद्यन्ते अस्य इति । तदस्यास्तीति मतुप्] सूर्यः; असमञ्जसपुत्रः सूर्यवंशीयराजविशेषः; यथा–'सगरस्यासमञ्जस्तु असमञ्जादथांशुमान् ।' सूर्यवंशीयासमञ्जसो राजपौत्रः; यथा–'ततश्चकारासमञ्जा गङ्गानयनकारणम् । लक्षवर्षं तपस्तप्त्वा ममार कालयोगतः ।। दिलीपस्तस्य तनयो गङ्गानयनकारणम् । तपः कृत्वा लक्षवर्षं ययौ लोकान्तरं नृपः । अंशुमांस्तस्य पुत्रोऽभूद्'–इत्यादि ब्रह्मवैवर्त्ते प्रकृतिखण्डे ८ अध्यायः । विश्वव्यापिप्रकाशः परमात्मा; अंशुयुक्ते त्रि., सोमलताया अवयवविशिष्टः । ३६

अंशुमाली [न्] पुं. [अंशूनां माला अस्ति अस्य इति । व्रीह्यादित्वाद् इनि] सूर्यः; यथा–'आदित्य इवांशुमाली चचार'–इति विष्णुपुराणम् । ३५

अंसः पुं.–क्ली. [अंस्यते समाहन्यते । अंस् समाघाते, घञ् । यद्वा अमति अम्यते वा भारादिना, अम् गतौ, अमेः सन्] विभागे पुं., स्कन्धः । वस्त्वेकदेशः; रिक्तभागः; चतुर्थभागः; भाज्याङ्कः; रविमूर्तिविशेषः; आदित्यविशेषः, यथा–'धाता मित्रोऽर्यमा शक्रो वरुणस्त्वंस (श) एव च । भगो विवस्वान् पूषा च सविता दशमस्तथा । एकादशस्तथा त्वष्टा द्वादशो विष्णुरेव च । जघन्यजस्तु सर्वेषामादित्यानां गुणाधिकः'–इति महाभारते । ५२३

अंसकूटः पुं. [अंसे स्कन्धे कूट इव] ककुत्; 'डिल्ला' इति भाषा । २६६

अंसलः त्रि. [अंसोऽस्यास्तीति । 'वत्सांसाभ्यां कामबले' इति लच्] बलवान् । ३८१

अंहतिः स्त्री. [हन्ति दुरितमनया । 'हन्तेरंह च' इति अति] दानं; रोगः; त्यागः । ४१९

अंहती स्त्री. ['हन्तेरंह च' इति अति, बह्वादित्वाद् ङीष्] दानम् । ४१९

अंहितिः स्त्री. [हन् अति, अंहादेशः इडागमश्च] दानम् । ४१९

अंहः [स्] क्ली. [अमति गच्छति प्रायश्चित्तादिना । अम् गत्यादिषु, 'अमेर्हुक् च' इति असुन्, हुगागमश्च । अमति गच्छति अधोऽनेन वा । अहेरसुना सिद्धे अघेरसुनि अङ्घ इति मा भूदिति अमेर्हुक् चेति सूत्रम् । तथा च–'स्यान्मध्योष्मचतुर्थत्वमंहसो रंहसस्तथा'–इति द्विरूपकोषः । एवं च 'दत्तार्घाः सिद्धसङ्घैर्विदधतु घृणयः शीघ्रमङ्घोविघातम्'–इति सूर्यशतके पाठ अनुप्रासरसिकानां प्रामादिक इति वदन्ति] पापं; दुःखं; विघ्नः; स्वधर्मत्यागः । ६२७

अंह्रिः पुं. [अहि, क्रिन्, 'वङ्क्र्यादयश्च' इति उणादिसूत्रम्] पादः; वृक्षमूलम् । ५११

अंह्रिपः पुं. [अंह्रिभिः पिबति इति । पा पाने, सुपीति योगविभागात् क] वृक्षः । १७७

अकारः पुं. ['वर्णात्कारः' इति कारप्रत्ययः] आद्यस्वरवर्णः । अस्य तत्त्वं यथा—'शृणु तत्त्वमकारस्य अति-

गोप्यं वरानने! शरच्चन्द्रप्रतीकाशं पञ्चकोणमयं सदा'—इति कामधेनुतन्त्रम्। ८६३

अकार्यम् क्ली. [न कार्यम्, नञ्समासः] कुकार्यम्; दुष्कर्म; अकर्म; अकृत्यं, यथा–'किमकार्यं कदर्याणां दुस्त्यजं किं धृतात्मनाम्'—इति भागवतम्। कार्याभावः। ८३०

अकिञ्चनः त्रि. [नास्ति किञ्चन यस्य। मयूरव्यंसकादित्वाद् बहुव्रीहिसमासः] दरिद्रः; 'अकिञ्चनः सन् प्रभवः स सम्पदाम्'— इति कुमारसम्भवे (५-७७)। ३४८

अकुप्यम् क्ली. [न कुप्यं, कुप्यादन्यदित्यर्थः। नञ्-समासः] स्वर्णं; रूप्यं; 'कुरूनकुप्यं वसु वासवोपमः'—इति भारविः (१-३५)। ८१

अकूपारः पुं. [न कूपारः। नञ्समासः। कुं पृथिवीं पिपर्ति इति। पॄ पालनपूरणयोः, कर्मणि अण्, अन्येषामपीति दीर्घः] समुद्रः; कूर्मराजः; पाषाणादिः; कमठः। ६५२

अक्षः पुं.–क्ली. [अक्ष्णोति अक्षति अक्ष्यते वा अनेन अत्र वा। अक्षू व्याप्तौ, पचाद्यच् घञ् वा। अश्नुते अत्यर्थम्। अशू व्याप्तौ, अशेर्देवने इति सो वा] पाशक्रीडा; यथाह मनुः—'मृगयाक्षो दिवास्वप्नः परीवादः स्त्रियो मदः।' पाशकः; 'अक्षैरक्षान् वा दीव्यति'—इति सिद्धान्तकौमुदी। व्यवहारः (४२९); शकटः (४४८); अक्षं क्ली., इन्द्रियम् (५३५); यथा विष्णुपुराणे—'शब्दादिष्वनुरक्तानि निगृह्याक्षाणि योगवित्। कुर्याच्चित्तानुकारीणि प्रत्याहारपरायणः॥' (६१८) कलिद्रुमः; बिभीतकवृक्षः, यथा छान्दोग्ये—'यथा वै द्वे आमलके द्वे कोले द्वौ वाक्षौ मुष्टिमनुभवति।' व्यवहारः (८५२); चक्षुः; यथा रामायणे—'सर्वे तेऽनिमिषैरक्षैस्तमनुद्रुतचेतसः।' रथावयवः; सौवर्चलं; तुत्थं; पुं., कर्षपरिमाणं; यथा—'ते षोडशाक्षः कर्षोऽस्त्री पलं कर्षचतुष्टयम्।' ज्ञातार्थं; रुद्राक्षः; इन्द्राक्षः; सर्पः; चक्रं; चक्रधारणदारुभेदः; 'छिन्ननास्ये भग्नयुगे तिर्यक् प्रतिमुखागते। अक्षभङ्गे च यानस्य चक्रभङ्गे तथैव च॥' आत्मा; रावणपुत्रः; यथा—'निशम्य राजा समरे सहोत्सुकं कुमारमक्षं प्रसमैक्षताथ वै'—इति रामायणे। जातान्धः; गरुडः; शिवः; 'अक्षश्च रथयोगी च सर्वयोगी महाबलः'—इति महाभारते। संस्कृतपलभा; 'चन्द्राश्विनिघ्ना पलभाद्धिता च लङ्कावधिः स्यादिह दक्षिणोऽक्षः'—इति भास्वती। 'प्रभा शरघ्ना स्वतुरीययोगादक्षः सदा दक्षिणदिक्प्रदिष्टः'—इति जातकार्णवः। 'दक्षिणोत्तररेखायां सा तत्र विषुवत्प्रभा। शङ्कुच्छायाहते त्रिज्ये विषुवत्कर्णभाजिते॥ लम्बाक्षज्ये तयोश्चापे लम्बाक्षौ दक्षिणौ सदा'—इति सूर्यसिद्धान्तः। ३८८

अक्षदृक् [श्] पुं. [अक्ष+दृश्, क्विप्] अक्षदर्शकः; व्यवहारस्य ज्ञाता। ४२९

अक्षरम् क्ली. [न क्षरति इति] मोक्षः; ब्रह्म; कूटस्थः; नित्यः; आत्मा; गगनं; धर्मः; तपस्या; अपामार्गः; जलम् इति वेदप्रयोगः। पुं., शिवः; अजः; जीवः; अकारादिक्षकारान्तैकपञ्चाशद्वर्णाः (८६०); यथा बृहस्पतिः—'षाण्मासिके तु सम्प्राप्ते भ्रान्तिः संजायते यतः। धात्राक्षराणि सृष्टानि पत्रारूढान्यतः पुरा॥' १२४

अक्षरजीवकः पुं. [अक्षरैः जीवति इति। ण्वुल्] लिपिकरः; 'लेखके क्षरपूर्वाः स्युश्चणजीवकचुञ्चवः'—इति हेमचन्द्रः। ५८६

अक्षरजीविकः पुं. [अक्षरैर्जीविका यस्य सः] कायस्थः; लेखकः; लिपिकरः; अक्षरजीवकः; अक्षरजीविनि त्रि.। ५८६

अक्षवती स्त्री. [अक्षाः पाशकाः सन्ति अस्याम् इति। मतुप्, लोकात् स्त्रीत्वम्] द्यूतक्रीडा; 'जूआ' इति भाषा। 'पराजितं सौबलेनाक्षवत्याम्'—इति महाभारते। ३८८

अक्षाग्रकीलकः पुं. [अक्षस्य नाभिक्षेप्यकाष्ठस्य अग्रे अन्ते बन्धनार्थं कीलकः] शकटचक्रपुरोवर्तिकीलकः; अणिः; अणी; आणिः। ४४८

अक्षाग्रकीलिका स्त्री. अक्षाग्रकीलकः [स्त्रियां टाप्] अर्थः पूर्ववत्। ४४८

अक्षि क्ली. [अश्नुते अनेन। अशू व्याप्तौ संघाते च. अशेर्निदिति क्सि। यद्वा अक्षति। अक्षू व्याप्तौ, इन्] चक्षुः; चक्षुर्गोलकः। ५१९

अक्षिगतः त्रि. [सप्तमीसमासः, अक्षिविषय इव खेदकृदित्यर्थः] द्वेष्यः। ३६६

अखिलम् त्रि. [न खिलमस्य] सर्वम् (खिलमप्रहतं स्थानम्। तत् न भवति इति) कृष्टस्थानम्। ७१३

अगः पुं. [न गच्छति। गम्लृ गतौ, अन्येभ्योऽपीति,

अन्येष्वपि इति वा ड। नगोऽप्राणिषु इति पाक्षिकोऽप्रकृतिभावः] वृक्षः; पर्वतः; सर्पः; सूर्यः। १७७

अगदः पुं. [गदविरुद्धः, न गदः अस्मात् इति] औषधम्; आयुर्वेदोक्ताष्टशाखान्तर्गतशाखाभेदः; 'औषधान्यगदो विद्या दैवी च विविधा स्थितिः। तपसैव प्रसिध्यन्ति'—इति मनुः। नीरोगे त्रि.। ६१३

अगरु क्ली.-पुं. [न गरुः दुर्भरः अस्मात् इति] अगुरु; सुगन्धिद्रव्यविशेषः। ५४५

अगस्तिः पुं. [विन्ध्याख्यमगम् अस्यति इति। अस्यतेः क्तिच् बाहुलकात् ति वा] अगस्त्यमुनिः; वकवृक्षः; यथा वैद्यके—'अगस्तिः पित्तकफजित् चतुर्थकहरो हिमः। रूक्षो वातकरस्तिक्तः प्रतिश्यायनिवारणः॥' ४१३

अगस्त्यः पुं. [अगं विन्ध्यं स्त्यायति स्तम्नाति वा। अग+स्त्यै संघाते, आतोऽनुपसर्गे इति क] मुनिविशेषः; मित्रावरुणयोः पुत्रः; कुम्भसम्भवः; मैत्रावरुणिः; अगस्तिः; पीताब्धिः; वातापिद्विट्; आग्नेयः; और्वशीयः; आग्निमारुतः; घटोद्भवः। ४१३

अगाधः पुं. [न गाधः स्थितिः अत्र। गाधृ प्रतिष्ठायाम्, घञ्, नञ्समासः] छिद्रम्; निम्नं; गर्तः; श्वभ्रं; शुषिरं; बिलं; रन्ध्रं; दरम्। अमरमते क्ली.। ६२४

अगाधः त्रि. [नास्ति गाधः स्थितिरत्र, नञोऽस्त्यर्थानामिति बहुव्रीहिः] अतिगभीरः; अतलस्पर्शः; अतिगम्भीरः; दुर्बोधाशयः। ६४९

अगारम् क्ली. [अगान् ऋच्छति। ऋ गतौ, कर्मण्यण्] आगारं; गृहं; 'शून्यानि चाप्यगाराणि वनान्युपवनानि च'—इति मनुः। २९१

अगुरु क्ली. [न गुरुः दुर्भरः अस्मात् इति बहुव्रीहिः] शिंशपावृक्षः; कालागुरु; सुगन्धिकाष्ठविशेषः; वंशिकं; राजार्हं; लोहं; कृमिजं; जोङ्गकं; शृङ्गजं; कृष्णं; लोहाख्यं; लघु; पीतकं; वर्णप्रसादनम्; अनार्यकम्; असारं; कृमिजग्धं; काष्ठकम्। 'अगर' इति भाषा। ५४५

अग्नायी स्त्री. [अग्नेः स्त्री इत्यस्मिन्नर्थे वृषाकप्यग्निकुसितेत्यादिसूत्रेण अग्निशब्दस्यैकारादेशो ङीप् च] अग्निभार्या; 'अग्नायी स्वाहा च हुतभुक्प्रिया'—इत्यमरः। त्रेतायुगम्। ६६

अग्निः पुं. [अङ्गयन्ति अग्र्यं जन्म प्रापयन्ति इति व्युत्पत्त्या हविःप्रक्षेपाधिकरणेषु गार्हपत्याहवनीयदक्षिणाग्निसभ्यावसथ्यौपासनाख्येषु षडग्निषु। यद्वा अङ्गति ऊर्द्ध्वं गच्छति इति। अगि गतौ, अङ्गेर्नलोपश्चेति नि, नलोपश्च] तेजःपदार्थविशेषः; धर्मस्य वसुभार्यायां जातः प्रथमोऽग्निः; तस्य पत्नी स्वाहा, पुत्रास्त्रयः—१ पावकः–२ पवमानः–३ शुचिः। षष्ठमन्वन्तरे अग्नेः वसोर्धारायां द्रविणकादयः पुत्राः, एतेभ्यः पञ्चचत्वारिंशदग्नयः जाताः। सर्वे मिलित्वा एकोनपञ्चाशदग्नयः। अस्य पर्यायाः— वैश्वानरः; वह्निः; वीतिहोत्रः; धनञ्जयः; कृपीटयोनिः; ज्वलनः; जातवेदाः; तनूनपात्; तनूनपाः; बर्हिःशुष्मा; बर्हिः; शुष्मा; कृष्णवर्त्मा; उषर्बुधः; आश्रयाशः; शोचिष्केशः; आशयाशः; बृहद्भानुः; कृशानुः; पावकः; अनलः; रोहिताश्वः; वायुसखा; वायुसखः; शिखावान्; शिखी; आशुशुक्षणिः; हिरण्यरेताः; हुतभुक्; हव्यभुक्; दहनः; हव्यवाहनः; सप्तार्चिः; दमुनाः; दमूनाः; शुक्रः; चित्रभानुः; विभावसुः; शुचिः; अप्पित्तः; वृषाकपिः; जुहुवालः; कपिलः; पिङ्गलः; अरणिः; अगिरः; पाचनः; विश्वप्साः; छागवाहनः; कृष्णार्चिः; जुहूवारः; उदर्चिः; भास्करः; वसुः; शुष्मः; हिमारातिः; तमोनुत्; सुशिखः; सप्तजिह्वः; अपपारिकः; सर्वदेवमुखः। ६२

अग्निभूः पुं. [अग्नेर्भवतीति। अग्नि+भू+क्विप्] कार्तिकेयः; जले क्ली., 'अग्नौ दत्ताहुतिः सम्यग् आदित्यमुपतिष्ठते। आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः।' १९

अग्रः त्रि. [अग्र्यते अगति वा। अग् कुटिलायां गतौ, ऋज्रेन्द्रेति साधुः] प्रथमः; श्रेष्ठः; उत्तमः; प्रधानम्। क्ली. उपरिभागः; शिरः; शिखरं; पुरस्तात्; अवलम्बनं; पलपरिमाणं; प्रान्तं; समूहः; भिक्षाविशेषः; ग्रासचतुष्टयम्; 'ग्रासप्रमाणा भिक्षा स्यादग्रं ग्रासचतुष्टयम्'—इति स्मृतेः। ७०७

अग्रजः पुं. [अग्रे जातः इति। सप्तम्यां जनेर्डः] ज्येष्ठभ्राता; पूर्वजः; अग्रियः; 'सर्वेषां धनजातानामाददीताग्र्यमग्रजः'—इति मनुः। ब्राह्मणः; अग्रे जाते त्रि.। ५०६

अग्रजन्मा [न्] पुं. [अग्रे जन्म यस्य सः। बहुव्रीहिः, जन्+भावे मनिन्] ब्राह्मणः; 'अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं

तथा। दानं प्रतिग्रहश्चैव षट् कर्माण्यग्रजन्मनः'—इति मनुः। ज्येष्ठभ्राता; ब्रह्मा। ३९१

अग्रणीः त्रि. [अग्रे नीयतेऽसौ। अग्र+नी+क्विप्। 'अग्रग्रामाभ्यामिति' णत्वम्] अग्रिमः; श्रेष्ठः। (वह्नौ च पुं., यथा चास्याग्रणीत्वं तथाग्निशब्दे निरुक्तव्याख्यायामुक्तम्।) ६९०

अग्रमांसम् क्ली. [अग्रं भक्ष्यत्वेन प्रधानं मांसम्] बुक्कम्। ६३६

अग्रिमः त्रि. [अग्रे भवः। अग्र+डिमन्] प्रधानम्; उत्तमः; ज्येष्ठः; अग्रजः। ७७५

अग्रेसरः त्रि. [अग्रे सरति गच्छतीति। अग्रे+सृ+ट] अग्रे गमनकर्ता; पुरोगः; प्रेष्ठः; अग्रतःसरः; पुरःसरः; अग्रगामी; अग्रसरः; अग्रगः; पुरोगमः; पुरोगामी। ६९०

अग्र्यः त्रि. [अग्रे भवः। अग्र+यत्] प्रधानम्; उत्तमः; ज्येष्ठभ्रातरि पुं., ज्येष्ठः; अग्रजः; प्रधानम्; उत्तमः (७७५)। ६९०

अघम् क्ली. [अङ्घते गच्छति दानादिना। अघि गतौ, अच्, आगमानित्यत्वान्न नुम्] पापं; दुःखं; व्यसनम्।६२७

अघनम् क्ली. [न घनं, नञ्समासः] दधि; द्रप्सम्। २७५

अघ्न्या स्त्री. [न हन्यते या। हन्+अघ्न्यादयश्च इति यक्, स्त्रियां टाप्। 'पतिं वो अघ्न्यानां धेनूनामिति'-वेदः। 'अवध्यां च स्त्रियं प्राहुस्तिर्यग्योनिगतामपि'—इति निषेधात्] गौः; स्त्रीगवी। २६८

अङ्कः पुं. [अङ्कयति चिह्नयति, अङ्क लक्षणे, अच्] चिह्नम्; 'स्वनामकाङ्कं निचखान सायकम्'—इति रघुवंशे। क्रोडम् (५२८); 'सपत्नीतनयं दृष्ट्वा तमङ्कारोहणोत्सुकम्'—इति विष्णुपुराणे। रूपकविशेषः; अपराधः; रेखा; विभूषणं; समीपं; स्थानं; नाटकांशः; 'प्रत्यक्षनेतृचरितो रसभावसमुज्ज्वलः। भवेदगूढशब्दार्थः क्षुद्रचूर्णकसंयुतः। अन्तर्निष्क्रान्तनिखिलपात्रोऽङ्क इति कीर्तितः'—इति साहित्यदर्पणे। चित्रयुद्धं; शरीरं; नवसंख्या; कुचभूषायां; अगे; कटिप्रदेशे; कलङ्के; 'एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः'—इति कुमारसम्भवे। ४५

अङ्कपाली स्त्री. [अङ्केन क्रोडेन पालयति। अङ्क+पालि+इ, स्त्रियां वा ङीप्, पक्षे अङ्कपालिः] आलिङ्गनं; धात्री; वेदिकाख्यगन्धद्रव्यं; तस्य नामान्तरं कोटिः। ५६८

अङ्कुरः पुं. [अङ्क+उरच्] बीजोद्भवः; नूतनोत्पन्नतृणादिः; अभिनवोद्भिद्; उद्भेदः; प्ररोहः; अकुरः; रोहः; अङ्करः; 'दर्भाङ्कुरेण चरणः क्षत इत्यकाण्डे, तन्वी स्थिता कतिचिदेव पदानि गत्वा'—इति शाकुन्तले। 'चूताङ्कुरास्वादकषायकण्ठः'—इति कुमारसम्भवे। जलं; रक्तं; लोम। १८५

अङ्कुशः पुं.-क्ली. [अङ्कयते हस्तिचालनार्थमाहन्यतेऽनेन। अङ्क+उशच्] हस्तिचालनार्थलोहमयवक्राग्रास्त्रं; शृणिः, सृणिः; अङ्कूरः; 'उष्ट्रान् हयान् खरान् नागान् जघ्नुर्दण्डकषाङ्कुशैः। कम्पना अङ्कुशा भल्लाः कालचक्रा गदास्तथा॥'—इति रामायणे। २२२

अङ्कुशवारणम् क्ली. [अङ्कुशेन वारणम्। वृ+ल्युट्] अङ्कुशद्वारा गजस्य पथप्रदर्शनं नियन्त्रणं वा। २२२

अङ्कूरः पुं. [अङ्क+खर्जूरादित्वाद् ऊरच्] अङ्कुरः; अभिनवोद्भित्। १८५

अङ्गम् क्ली. [अङ्गं विद्यतेऽस्य। अङ्ग+अर्श आद्यच्; अम् गत्यादौ वा, गन्। अङ्गमङ्गनाद् अञ्चनाद् वा] गात्रम्; 'अङ्गानि चम्पकदलैः स विधाय धाता'—इति शृङ्गारतिलके। ५१०

अङ्गम् क्ली. [अगि गतौ, पचाद्यच्] शरीरादेरेकदेशः; अवयवः; प्रतीकः; अपघनः; अप्रधानम्; 'एक एव भवेदङ्गी शृङ्गारो वीर एव वा। अङ्गमन्ये रसाः सर्वे कार्यनिर्वहणेऽद्भुतम्'—इति साहित्यदर्पणे। उपायः (अङ्गयते विषयो बुध्यते अनेन। अङ्ग+करणे घञ्, इति व्युत्पत्त्या) मनः; अङ्गं मनसि काये चेत्यभिधानान्तरदर्शनात्, यथा—'हिरण्यगर्भाङ्गभुवं मुनिं हरिः'—इति माघः। वेदाङ्गशास्त्राणि षट्; 'शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दसां चयः। ज्योतिषामयनं चैव वेदाङ्गानि षडेव तु॥' पुं. अङ्गदेशः; यथा—'वैद्यनाथं समारभ्य भुवनेशान्तगं शिवे। तावदङ्गाभिधो देशो यात्रायां न हि दुष्यति॥' 'अनङ्ग इति विख्यातस्ततः प्रभृति राघव। स चाङ्गविषयः श्रीमान् यत्राङ्गं स मुमोच ह॥' त्रि., अङ्गविशिष्टः; निकटः; 'अङ्गं गात्रे प्रतीकोपाययोः पुं-

भूम्नि नीवृति। क्लीबकत्वे त्वप्रधाने त्रिष्वङ्गवति चान्तिके'—इति मेदिनीकारः। ७४४

अङ्ग अव्य.—सम्बोधनम्; 'अङ्गावेक्षस्व सौमित्रे कस्येमां मन्यसे चमूम्'—इति रामायणे। पुनरर्थः। ८८३

अङ्गजः पुं. [अङ्गाद् जातः। अङ्ग+जन्, 'पञ्चम्यामजातौ' इति ड] कामदेवः; पुत्रः; केशः; मदः; गदः; स्त्रीणां यौवने सात्त्विकभावविशेषः; 'यौवने सत्त्वजास्तासामष्टाविंशतिसंख्यकाः। अलङ्कारास्तत्र भावहावहेलास्त्रयोऽङ्गजाः'—इति साहित्यदर्पणे। क्ली. रक्तम्। शरीरजे त्रि.। ३२

अङ्गदम् क्ली. [अङ्गं दयते, दायति, द्यति वा। देङ् पालने, दैप् शोधने, दोऽवखण्डने, अङ्ग+दा+क] केयूरम्। 'बाजूबंद' इति भाषा। 'धूयमानैश्च वासोभिः श्लक्ष्णैरङ्गदभूषणैः' —इति रामायणे। पुं. कपिभेदः; बालिनामवानरराजपुत्रः; 'कुमुदं पञ्चदशभिर्जाम्बवन्तं च सप्तभिः। अशीत्या बालिनः पुत्रमङ्गदं बिभिदे शरैः'—इति रामायणे। ५५७

अङ्गना स्त्री. [प्रशस्तानि अङ्गानि अस्याः] कामिनी; 'ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः'—इति मनुः। सुन्दराङ्गी; सार्वभौमनाम्न उत्तरदिग्गजस्य पत्नी; वृषकर्कटककन्यावृश्चिकमकरमीनराशयः। ४८१

अङ्गपालिः पुं. [अङ्गेन पाति सुखयति। अङ्ग+पा+अलि] आलिङ्गनम्; अङ्कपाली; अङ्कपालिः। स्त्रियां ङीप्, वेदिकाख्यगन्धद्रव्ये। ५६८

अङ्गनारजः [स्] क्ली [अङ्गनायाः रजः। षष्ठीसमासः] स्त्रीणाम् ऋतुः; आर्तवम्। ७९४

अङ्गमर्दी [न्] पुं. [अङ्गं साधु मर्दयति संवाहयति यः। अङ्ग+मर्द+णिनि] अङ्गमर्दः; अङ्गमर्दनकारकभृत्यः; संवाहकः; अङ्गमर्दकः। ५९०

अङ्गरागः पुं. [रज्यतेऽङ्गमलङ्क्रियतेऽनेन। रञ्ज्+करणे घञ्, 'घञि च भावकरणयोरिति' नलोपो वृद्धिश्च। अङ्गस्य रागः, षष्ठीतत्पुरुषः] गात्ररञ्जनम्; अङ्गे चन्दनादिलेपनं; विलेपनं; 'स्नानानि चाङ्गरागाश्च माल्यानि विविधानि च'—इति रामायणे। ५४५

अङ्गविक्षेपः पुं. [वि+क्षिप्+भावे घञ्। अङ्गस्य विक्षेपः, एकस्थानादन्यस्थाने चालनं, षष्ठीतत्पुरुषः] अङ्गहारः; अङ्गचालनरूपनृत्यम्। 'अङ्गहारोऽङ्गविक्षेपः'—इत्यमरः। ९४

अङ्गहारः पुं. [अङ्गानां हारः। एकस्थानादन्यस्थाने चालनं, षष्ठीतत्पुरुषः] अङ्गानां स्थानात् स्थानान्तरनयनम्; अङ्गविक्षेपः; अङ्गहारिः (स्थिरहस्तपर्यस्तकादिको द्वात्रिंशत्प्रकारः—इति मधुः, वृश्चिकभ्रमरादिद्वात्रिंशद्रूपः—इति रायः, अङ्गुल्यादिविन्यासस्त्रिशद्रूपः—इति कौमुदी) ९४

अङ्गारः पुं.-क्ली. [अगि+आरन्। इदित्वान्नुम्] दग्धकाष्ठखण्डं; तत्तु निरग्नि साग्निं च; अलातम्; उल्मुकम्; आलातम्; उल्मूकं; 'घृतकुम्भसमा नारी तप्ताङ्गारसमः पुमान्।' ३२३

अङ्गारकः पुं.-क्ली. [अङ्गार+स्वार्थे क] मङ्गलग्रह; 'धरात्मजः कुजो भौमो भूमिजो भूमिनन्दनः। अङ्गारको यमश्चैव सर्वरोगापहारकः'—इति. वराहपुराणम्। 'दिवीव ग्रहयोर्घोर बुधाङ्गारकयोर्महत्। कौशलानां च नक्षत्रं ज्येष्ठा मैत्राग्निदैवतम्॥ आक्रम्याङ्गारकस्तस्थौ विशाखामपि चाम्बरे'—इति रामायणे। अङ्गारः; कुरुण्टकवृक्षः; भृङ्गराजः। ४६

अङ्गारशकटी स्त्री. [शक्नोति वोढुं शकटम्। शकट+स्त्रियां ङीप्, अल्पार्थे शकटी, अङ्गारस्य शकटी, षष्ठीतत्पुरुषः] अङ्गारधानिका। 'अँगीठी' इति भाषा। ३१४

अङ्गीकृतिः स्त्री. [अङ्गीति च्व्यन्तं तत्पूर्वकात् कृ+कर्मणि क्त] स्वीकृतिः। ८८५

अङ्गुरिः स्त्री. [अगि गतौ, ऋतन्यञ्जीति उलि, बालमूलेति लस्य र] पाणिपादाङ्गुली। ५१६

अङ्गुरी स्त्री. [अङ्ग+उलि पक्षे ङीप्] अङ्गुली। ५१६

अङ्गुलिः स्त्री. [अङ्ग+उलि] करशाखा; 'कायमङ्गुलिमूलेऽग्रे दैवं पित्र्यं तयोरधः'—इति मनुः। गजकर्णिका; हस्तिशुण्डाग्रभागः; अङ्गुष्ठः। ५१६.

अङ्गुलिमुद्रा स्त्री. [अङ्गुलेः मुदं लक्षणया धारयितुं हर्षं राति ददाति या। अङ्गुलिमुद्+रा+कर्तरि क] साक्षरोर्मिका; प्रभुनाम्ना स्वनाम्ना वा अङ्कितम् अङ्गुरीयकम्। 'मोहरछाप अँगूठी' इति भाषा। ५५९

अङ्गुली स्त्री. [अङ्ग+उलि स्त्रियां वा ङीप्] शरीरावयवविशेषः; 'कनिष्ठायामप्यङ्गुल्यां भ्रातुर्मम स राक्षसः।' 'ज्वालाङ्गुलीभिर्भगवान् विष्टम्यः स हुताशनः'—इति रामायणे। तस्याः पर्यायाः—करशाखा;

अङ्गुरिः; अङ्गुरी; अङ्गुलः। सा च क्रमेण पञ्चधा, यथा—१ अङ्गुष्ठः, २ तर्जनी, ३मध्यमा,४ अनामिका, ५ कनिष्ठा। हस्तिशुण्डाग्रम्। ५१६

अङ्गुलीयकम् क्ली.–पुं. [अङ्गुलौ भवम्। जिह्वामूलाङ्गुलेश्छः, अङ्गुलीय+स्वार्थे क] अङ्गुलिभूषणम्; ऊर्मिका; अङ्गुरीयकम्; अङ्गुरीयः; अङ्गुलीयः; करारोटः; अङ्गुलीकः; 'अयं मैथिल्यभिज्ञानं काकुत्स्थस्याङ्गुलीयकः'—इति भट्टिः। ५५९

अङ्घ्रिः पुं [अङ्घ्यते गम्यतेऽनेन। अघि+करणे इक्] अङ्घ्रिः; पादः। ५११

अङ्घ्रिः पुं. [अङ्घ्यते गम्यतेऽनेन। अघि+करणे रि] पादः; 'शीर्णघ्राणाङ्घ्रिपाणीन्'—इति सूर्यशतके। वृक्षमूलम्। ५११

अङ्घ्रिपः पुं. [अङ्घ्रिणा पिबति। अङ्घ्रि+पा+ड] वृक्षः। १७७

अचक्षुः [स्] क्ली. [असौम्यं चक्षुः। नञोऽस्त्यर्थानामिति समासः] असौम्यं नेत्रम्; दुष्टनेत्रम्। ७७२

अचण्डी स्त्री. [चडि कोपने, पचाद्यच्, इदित्वान्नुम्, स्त्रियां ङीप्, नञ्समासः] सुशीला गौः 'सीधी गाय' इति भाषा। अकोपना स्त्री। २७०

अचलः पुं.[न चलति यः। चल्+पचाद्यच्, नञ्समासः] पर्वतः; 'आससाद ततो रामं स्थितं शैलमिवाचले'—इति रामायणे। कीलकः; अकम्पे त्रि., शिवः; स्थिरः; यदुक्तम्—'न स्वरूपान्न सामर्थ्यान्न च ज्ञानादिकाद् गुणात्। चलनं विद्यते यस्येत्यचलः कीर्तितोऽच्युतः।' अविकारी; कूटस्थः। १६५

अचला स्त्री. [न चला। नञ्समासः] पृथिवी; 'पृथिवीमपि कामं तं ससागरवनाचलाम्'—इति रामायणे। १५६

अचिरांशुः स्त्री. [अचिराः क्षणस्थायिनः अंशवः किरणाः यस्याः सा। बहुव्रीहिः] विद्युत्। ६०

अच्छः पुं.[न च्छयति निर्मलत्वाद् दृष्टिं नावृणोति। न+छो+कर्तरि क; उपपदसमासः] भालूकः; स्फटिकः, त्रि. (न च्छयति) स्वच्छः; निर्मलः; 'अच्छकपोलमूलगलितैः'–इत्यमरुशतके। अच्छम् अव्य. (न च्छयति सम्मुखत्वाद् दृष्टिं नावृणोति। न+छा+घञर्थे क, नञ्तत्पुरुषः) २२८

अच्छभल्लः पुं. [अच्छाः निर्मलाः भल्लाः शस्त्राणीव नखा यस्य सः। बहुव्रीहिः। यथा मेदिन्याम्—'भल्लः स्यात्पुंसि भल्लूके शस्त्रभेदे पुनर्द्वयोः।'] भालूकः (अच्छो भल्लश्चेति शब्दद्वयमपि)। २२८

अच्छोटनम् क्ली. [आ समन्तात् छोटनं छेदनम्। छुट् छेदने, पृषोदरादित्वादाङो ह्रस्वः] मृगया; मृगव्यं; पापर्द्धिः; आखेटकम्; आच्छोदनम्। ४३५

अच्युतः पुं. [न च्यवते स्वरूपतो न गच्छति यः, नित्य इति यावत्। च्यु+कर्तरि क्त, नञ्समासः] विष्णुः; 'पीताम्बरोऽच्युतः शार्ङ्गी'—इत्यमरः। 'तत्रावतीर्याच्युतदत्तहस्तः'—इति कुमारसम्भवे। स्थिरे त्रि. 'सोऽन्त्यवेलायामेतत्त्रयं प्रतिपद्येताक्षितमस्यच्युतमसि प्राणसंशितमसीति'—छान्दोग्योपनिषत्। २३

अजः पुं. [न जायते नोत्पद्यते यः। नञ्+जन्+'अन्येष्वपि दृश्यते' इति कर्तरि ड, उपपदसमासः] विष्णुः; 'न हि जातो न जायेऽहं न जनिष्ये कदाचन। क्षेत्रज्ञः सर्वभूतानां तस्मादहमजः स्मृतः'—इति भारते। 'यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम्'—इति भगवद्गीता। ब्रह्मा; शिवः; कामदेवः; सूर्यवंशीयराजविशेषः; रघुराजपुत्र; दशरथपिता; मेषः; माक्षिकधातुः; जन्मरहिते वाच्यलिङ्गः, त्रि.। छागः (२७७)। २५

अजगरः पुं. [अजं गिरति ग्रसते यः। गृ+पचाद्यच् अजस्य गरः, षष्ठीतत्पुरुषः] स्वनामख्यातबृहत्सर्पः; शयुः; वाहसः। ६४२

अजगवम् क्ली. [अजयोर्विष्णुब्रह्मणोर्गं, त्रिपुरासुरवधे गीतं, तादृशं गीतं वाति सम्बध्नाति यत्। अजग+वा+कर्तरि क, उपपदसमासः। 'गं च गीतं च गौश्चैव गूश्च धेनुः सरस्वती'–इत्येकाक्षरीयकोषे] पिनाकः; शिवधनुः; अजकवम्; अजकावम्; अजीकम्; अजगावम्। १४

अजन्यम् क्ली. [न जन्यते सम्पाद्यते केनापि। न+जन्+णिच्+यत्] उत्पातः; शुभाशुभसूचकभूकम्पादिः, अजननीये त्रि.। १२७

अजर्यम् क्ली. [न जीर्यति। जॄ+कर्तरि 'अजर्यं सङ्गतमिति' सूत्रेण यत्। 'तेन सङ्गतमार्येण रामाजर्यं द्रुतमिति' भट्टिः] सङ्गतं; सौहार्दम्; अजरार्हे त्रि., यथा रघुवंशे–'मृगैरजर्यं जरसोपदिष्टमदेहबन्धाय पुनर्बबन्ध।' ७०६

अजस्रम् क्ली. [नञ्+जस्+'नमिकम्पिस्म्यजस' इत्यादिना र, नञ्समासः] निरन्तरं; सततम्; 'अजस्रदीक्षाप्रयतस्य मद्गुरोः क्रियाविघाताय कथं प्रवर्तसे'—इति रघुवंशे। ६९८

अजाजी स्त्री. [अजम्, अजति अत्युत्कटगन्धतया दूरं क्षिपति। कर्मण्यण्, ङीप्, बहुलं तणीति व्यभावः। अजेन आजिरिति तृतीयातत्पुरुषो वा, ङीप्] जीरकः; श्वेतजीरकः; कृष्णजीरकः; काकोदुम्बरिका। ६१६

अजाजीवः पुं. [अजेन अजव्यवसायेन आजीवति सम्यक् प्राणान् धारयति यः। आ+जीव्+पचाद्यच्। अजेन आजीवः, तृतीयातत्पुरुषः] जाबालः; छागोपजीवी। ३८१

अजिनम् क्ली. [अजति धूल्यादिम् आवृणोति यत्। अज+ 'अजेरज च' इति वीभावं बाधित्वा इनच्] चर्म; 'गजाजिनं शोणितबिन्दुवर्षि च'—इति कुमारसम्भवे। ब्रह्मचर्यादिधार्यकृष्णसारादित्वक्। जिनभिन्ने त्रि.।६३०

अजिरम् क्ली. [अजति गृहान्निःसरति यत्र। अज+ अधिकरणे किरच्] चत्वरम्। 'आँगन' इति भाषा। यथा विष्णुपुराणे—'पुनश्च भरतस्याभूदाश्रयस्योटजाजिरे।' (अजति गच्छति यः) वायुः; (अजति गच्छति, क्षणभङ्गुरमिति यावत्) शरीरं; (अजन्ति इन्द्रियाणि गच्छन्त्यत्र) विषयः; मण्डूकः। २९९

अज्ञः त्रि. [ज्ञा+कर्तरि क, न ज्ञः, नञ्समासः] जडः; मूर्खः; यदुक्तम्—'अज्ञो भवति वै बालः पिता भवति मन्त्रदः। अज्ञं हि बालमित्याहुः पितेत्येव तु मन्त्रदम्॥' 'यथा चाज्ञेऽफलं दानं तथा विप्रोऽनृचोऽफलः।' 'इदं शरणमज्ञानाम्।' 'अज्ञेभ्यो ग्रन्थिनः श्रेष्ठा ग्रन्थिभ्यो धारिणो वराः। धारिभ्यो ज्ञानिनः श्रेष्ठा ज्ञानिभ्यो व्यवसायिनः॥' ३७७

अञ्चलः पुं. [अञ्चति प्रान्तभागं गच्छति। अञ्च्+ अलच्] वस्त्रप्रान्तभागः। 'आँचल' इति भाषा। 'ऊरुः कुरङ्गकदृशश्चञ्चलचेलाञ्चलो भाति'—इति साहित्यदर्पणे। ५५०

अञ्जनः पुं. [अनक्ति प्रतीच्यां दिशि रक्षकत्वेन प्रकाशते यः। अञ्ज्+कर्तरि ल्युट्] पश्चिमदिग्गजः; नैर्ऋत्यदिग्हस्ती। १०४

अञ्जनम् क्ली. [अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिषु+ भावे ल्युट्, कज्जले तु गम्यमाने करणे ल्युट्] म्रक्षणं; गमनं; व्यक्तीकरणम् इति करणार्थकप्रत्ययान्ताञ्ज्धात्वर्थः। कज्जलम्; 'दिवा न तु प्रयोक्तव्यं नेत्रयोस्तीक्ष्णमञ्जनम्। विरेकदुर्बला दृष्टिरादित्यं प्राप्य सीदति'—इति आगमः। 'सौवीरं जाम्बलं तुत्थं मयूरश्रीकरं तथा। दर्विका नीलमेघश्च अञ्जनानि भवन्ति षट्।' सौवीराञ्जनं; रसाञ्जनम्; अक्ति; मसी; अग्निः; आलङ्कारिकभाषया व्यञ्जनाख्यवृत्तिः; 'अनेकार्थस्य शब्दस्य वाचकत्वे नियन्त्रिते। संयोगाद्यैरवाच्यार्थधीकृद्व्यापृतिरञ्जनम्—इति काव्यप्रकाशः। ५५०

अञ्जनः पुं. [अञ्जयति रवेण शुभाशुभे सूचयति। अञ्ज्+ णिच्+ल्युट्] वृक्षविशेषः; ज्येष्ठी। ८१२

अञ्जनिका स्त्री. [अञ्जनम् अञ्जनवद् वर्णो विद्यतेऽस्याः सा। अञ्जन+अर्शआद्यच्, स्त्रियां टाप्, स्वार्थे क] ज्येष्ठीविशेषः; अञ्जनाधिका; हालिनी; हलाहलः; क्षुद्रमूषिका। २५७

अञ्जनी स्त्री. [अनक्ति चन्दनकुङ्कुमादिभिः शोभते। अञ्ज्+कर्तरि ल्युट्, स्त्रियां ङीप्] कटुकावृक्षः; कालाञ्जनीवृक्षः; लेप्यनारी; चन्दनादिलेपने योग्या। ८१२

अञ्जलिकारिका स्त्री. [अञ्जलेः कारिका] पुत्तलिका; लज्जालुलता। ४९३

अञ्जसा अव्य. [अञ्जं गतिं विलम्बं वा स्यति नाशयति। अञ्ज्+षो+कर्तरि क्विप्] द्रुतं; शीघ्रम्; 'आसमाप्तेः शरीरस्य यस्तु शुश्रूषते गुरुम्। स गच्छत्यञ्जसा विप्रो ब्रह्मणः सद्म शाश्वतम्'—इति मनुः। ६९०

अञ्जसा अव्य.—यथार्थं; प्रकृतं; सत्यं; शीघ्रम्। ८८२

अटनिः स्त्री. [अटति तथागच्छति ज्या यत्र। अट्+ अधिकरणे अनि] धनुरग्रभागः। 'धनुष की नोक' इति भाषा। ४६५

अटनी स्त्री. [अटनि+स्त्रियां वा ङीष्] अटनिः; धनुष्कोटिः; 'ध्वनदगुरुगुणाटनीकृतकरालकोलाहलम्'—इति उत्तरचरिते। ४६५

अटरूषकः पुं. [अटति मृत्युग्रासे पतत्यनेन। अट्+ घञर्थे क, अटं कासाख्यरोगं रोषति नाशयति। रूष्+ कर्तरि क। अटस्य रूषो वा, षष्ठीतत्पुरुषः। 'वासकः कासनाशकः'—इति वैद्यके] वासकवृक्षः; अटरूषः। १९८

अटविः स्त्री. [अटति वार्द्धक्ये गच्छति यत्र। अट्+ अधिकरणे अवि,'पञ्चाशति वनं व्रजेदिति'] वनम्।२१०

अटवी स्त्री. [अटवि+स्त्रियां ङीष्] वनम्; 'आनर्तांश्चैव मार्गेत्वं कान्ताराण्यटवीस्तथा'—इति रामायणे। २१०

अट्टः पुं. [अट्टते एकं गृहमतिक्रम्य अन्योपरि गच्छति। अट्ट+अधिकरणे घञ्] गृहविशेषः; क्षौमः; हर्म्यादिगृहम्; प्राकाराग्रस्थितरणगृहं; प्राकारमण्डपस्योपरिशाला; हर्म्यादिवातकुटिका; मण्डपोपरि हर्म्यपृष्ठं; प्राकारधारणार्थोऽभ्यन्तरे क्षौमाख्योऽट्टः—इति भट्टः; अतिशयः; हट्टः। अट्टं क्ली. (अट्ट+अच्) शुष्कं; भक्तम्; अन्नम्; 'अट्टशूला जनपदाः'—इति भागवतमाहात्म्ये। २९४

अट्टालकः पुं. [अट्टवत् प्रासादगृहवत् अलति भवति। अट्ट+अल्+अच् स्वार्थे कन्] उपरितनगृहम्; अट्टालिकोपरिगृहं; क्षौमः; अट्टः। २९४

अटया स्त्री. [अटनम्, अट्+भावे क्यप्, स्त्रियां टाप्, समस्या इतिवत्] परिभ्रमणं; पर्यटनं; 'तौर्यत्रिकं वृथाटया च कामजो दशको गणः'—इति स्मृतिः। ७७६

अणकः त्रि. [अण्+अच्+कुत्सायां कन्] कुत्सितः; अधमः। ३३७

अणिः पुं.-स्त्री. [अणति शब्दायते। अण्+इन्, स्त्रियां वा ङीप्] अक्षाग्रकीलकः; रथचक्राग्रस्थितकीलः। ४४८

अणिः पुं.-स्त्री.-अश्रिः; सूच्याद्यग्रभागः; सीमा। तस्य रूपान्तरम् अणी, आणिः [अणति शब्दायते, अण्+'इञजादिभ्यः' इति इञ्, आजिः इतिवत्] ७२७

अणु त्रि. [अणति सूक्ष्मत्वं गच्छति। अण्+उन्] क्षुद्रं; सूक्ष्मं; 'लवलेशकणाणवः'—इत्यमरः। 'न गृह्णीयाच्छुल्कमण्वपि'—इति मनुः। ६८८

अणुः पुं. [अण्+उन्] व्रीहिविशेषः, सूक्ष्मधान्यं; लेशः। ८१४

अण्डम् क्ली. [अम् संयोगे, भावे क्विप्, अमं संयोगं डयन्ते गच्छन्त्यनेन। अम्+डी+करणे ड, पुंसोऽवयवभेदे मुष्के पक्षिडिम्बे] पक्ष्यादिप्रादुर्भावककोषः; पेशी; कोषः; पेशिः; कोशः; पेशीकोषः; डिम्बः; 'तदण्डमभवद्धैमं सहस्रांशुसमप्रभम्'—इति मनुः। 'नातिस्निग्धानि वृष्याणि स्वादुपाकरसानि च। वातघ्नान्यतिशुक्राणि गुरूण्यण्डानि पक्षिणाम्'-इति वैद्यके। (५२३) मुष्कः; अण्डकः; अण्डकोषः। वीर्यं; मृगनाभिः। २४०

अण्डजः पुं. [अण्डे जातः। अण्ड+जन्+कर्तरि ड, उपपदसमासः] पक्षी; सर्पः; मत्स्यः; कृकलासः; अण्डजमात्रे त्रि.। 'अण्डजाः पक्षिणः सर्पा नक्रा मत्स्याश्च कच्छपाः। यानि चैवंप्रकाराणि स्थलजान्यौदकानि च'—इति मनुः। २३८

अतलस्पर्शः त्रि. [नास्ति तलस्य अधोभागस्य स्पर्शो यस्य सः। बहुव्रीहिः] अगाधः; अतिगभीरः; अतलस्पृक् [श्]; आस्या; आस्थागम्; अस्ताघम्। ६४९

अतः [स्] अव्य. [एतस्मात्, एतद्+एतदोऽशिति पञ्चम्यर्थे तस्, एतद्शब्दस्य अशादेशः] कारणम्; अपदेशः; निदशः। ८७८

अतसी स्त्री. [अत्+असच्, स्त्रियां ङीप्] कृष्णपुष्पक्षुद्रवृक्षविशेषः; चणका; उमा; क्षौमी; रुद्रपत्नी; सुवर्चला; पिच्छिला; देवी; मदगन्धा; मदोत्कटा; क्षुमा;-हैमवती; सुनीला; नीलपुष्पिका; 'अतसी नीलपुष्पी च पार्वती स्यादुमा क्षुमा। अतसी मधुरा तिक्ता स्निग्धा पाके कटुर्गुरुः॥ उष्णा दृक्शुक्रवातघ्नी कफपित्तविनाशिनी'—इति भावप्रकाशः। शणवृक्षः। ५८२

अतिक्रमः पुं. [अतिक्रान्तः क्रमः नियमः। अति+क्रम्+भावे घञ् वृद्ध्यभावः] क्रमोल्लङ्घनम्; अतिपातः; उपात्ययः; पर्यायः; अभिक्रमः; रणे शत्रून् प्रति अभीतयोधादेर्गमनम्। ७५४

अतिगर्वितः त्रि. [अति अधिको गर्वः, कर्मधारयः, सोऽस्य जातः। अति गर्व+इतच्] महाहङ्कृतः; अतिशयगर्वयुक्तः; समुन्नद्धः; 'अतिदाने बलिर्बद्धः अतिगर्वेण रावणः। अतिरूपे हृता सीता सर्वमत्यन्तवर्जितम्'—इति चाणक्यः। ३८३

अतिथिः त्रि. [अतति सातत्येन गच्छति, न तिष्ठति। अत्+इथिन्] अज्ञातपूर्वगृहागतव्यक्तिः; आगन्तुः; आगन्तुकः; आवेशिकः; गृहागतः; आवेशिकी; अतिथी; आगान्तुः; प्रघूर्णः; अभ्यागतः; प्राघूर्णिकः; प्राघुणिकः; प्राघुणः; 'यस्य न ज्ञायते नाम न च गोत्रं न च स्थितिः। अकस्माद् गृहमायाति सोऽतिथिः प्रोच्यते बुधैः॥' 'अतिथिर्यस्य भग्नाशो गृहात्प्रतिनिवर्तते। स तस्मै दुष्कृतं दत्त्वा पुण्यमादाय गच्छति'— इति पुराणम्। कुशपुत्रः; कोपः। ३५८

अतिभीः स्त्री. [अतिबिभेत्यस्याः। अति+भी+अपादाने क्विप्] वज्रज्वाला। ५७

अतिमर्यादः त्रि. [मर्यादामतिक्रान्तः । प्रादिसमासः] अतिशयितः; अतिशये क्ली. । ७१९

अतिमात्रम् क्ली. [मात्रामल्पमतिक्रान्तम्, प्रादिसमासः] अतिशयः; तद्युक्ते त्रि. । 'अतिमात्रलोहिततलौ बाहू घटोत्क्षेपणात्'—इति शाकुन्तले । ८०३

अतिमुक्तकः पुं. [मुच्+भावे क्त, अतिशयेन मुक्तं बन्धशैथिल्यं यस्य सः । बहुव्रीहिः, कप्] माधवीलता; अतिमुक्तः; तिन्दुकवृक्षः; तिनिशवृक्षः; पुष्पवृक्षविशेषः; पुण्ड्रकः; मल्लिनी; भ्रमरानन्दा; कामुककान्ता; 'कर्णिकारान् कुरुवकान् चम्पकान् अतिमुक्तकान्'—इति रामायणे । २०८

अतिर(रि)क्ता स्त्री. [अत्यन्तं रक्ता, तीव्रज्वलनाद् इति भावः (अथवा रिक्ता, सर्वभस्मीकरणाद् इति भावः) प्रादिसमासः] अग्नेः सप्तजिह्वासु एका । ६८

अतिवाहिकः पुं. [अतीत्य देहम् अन्यदेहे, वाहः प्रापणम्, अतिवाहोऽस्त्यस्य, ठन्] प्रेतः । ६२५

अतिवेलम् क्ली. [वेलां मर्यादां कूलं वा अतिक्रान्तम्, अव्ययीभावसमासः] अतिशयिते त्रि., 'जलमतिवेलं पयोराशेः'—इति नीतिमाला । ७१९, ८०३

अतिसन्धानम् क्ली. [अत्यधिकं सन्धानम्, भावे ल्युट्] वञ्चनं; व्यलीकं; प्रतारणम् । ७४८

अतिसारः पुं. [अतिशयेन मलं द्रवीकृत्य सरति निःसारयति । अति+सृ+व्याधिमत्स्यबलेष्विति वक्तव्यमिति कर्त्तरि घञ्,वृद्धिः दीर्घश्च] बहुद्रवमलनिःसरणरोगः; अन्नगन्धिः; उदरामयः; अतीसारः; 'संशम्यापां धातुरग्निं प्रवृद्धः शकृन्मिश्रो वायुनाधः प्रणुन्नः। सरत्यतीवातिसारं तमाहु र्व्याधिं घोरं षड्विधं तं वदन्ति ॥ आमपक्वक्रमं हित्वा नातिसारक्रिया यतः । अतोऽतिसारे सर्वस्मिन्नामं पक्वं च लक्षयेत्'–इति वैद्यके । ६०६

अतिसारकी [न्] त्रि. [अतिसार+स्वार्थे कन् । ततो मत्वर्थे इन्] सातिसारः; अतिसाररोगयुक्तः; उदरामयी । ६०६

अतीतः त्रि. [अति+इण्+कर्त्तरि क्त] गतः; भूतः; अतिक्रान्तः; यथा—'न नस्यं न्यूनसप्ताब्दे नातीताशीतिवत्सरे'—इति वैद्यकपरिभाषा। मानप्रभेदः (सङ्गीतशास्त्रमते); क्ली. भूतकालः । ८५९

अतीसारः पुं. [उपसर्गस्य घञीति बाहुलकाद्दीर्घः] अतिसाररोगः; 'गुर्वतिस्निग्धरूक्षोष्णद्रवस्थूलातिशीतलैः। विरुद्धाध्यशनाजीर्णैर्विषमैश्चापि भोजनैः॥ स्नेहाद्यैरतियुक्तैश्च मिथ्यायुक्तैर्विषैर्भयैः। शोकादुष्टाम्बुमद्यातिपानैः सात्म्यर्तुपर्ययैः॥ जलाभिरमणैर्वेगविघातैः क्रिमिदोषतः। नृणां भवत्यतीसारो लक्षणं तस्य वक्ष्यते॥' ६०६

अत्ययः पुं. [अति+इण्+भावे अच्] मृत्युः। (८२६) कृच्छ्रम्; अतिक्रमः; 'जीवितात्ययमापन्नो योऽन्नमत्ति यतस्ततः। आकाशमिव पङ्केन न स पापेन लिप्यते' —इति मनुः। दण्डः; दोषः। ६२८

अत्यर्थम् क्ली. [अर्थमतिक्रान्तम्। अत्यादीति समासः] अतिशयः; तद्विशिष्टे त्रि., 'लक्ष्मणो राममत्यर्थमुवाच हितकाम्यया'—इति रामायणे। ७१९

अत्याकारः पुं. [अति, आधिक्येन आकारः तिरस्कारः। आ+कृ+भावे घञ्] तिरस्कारः; अतिशयितः; (अति आकारो देहः, कर्मधारयः) बृहद्देहः; (अतिशयितः आकारो यस्य सः। तद्विशिष्टः); न्यक्कारः। ७०४

अत्याधानम् क्ली. [अत्यन्तमाधानम्, प्रादिसमासः] अतिक्रमः; कपटः; छलम्। ७५४

अत्रिनेत्रप्रसूतः पुं. [अत्रिनेत्रात् प्रसूतः। पञ्चमीतत्पुरुषः] चन्द्रः; अत्रिनेत्रभूः; अत्रिनेत्रजः; अत्रिदृग्जः; अत्रिजातः; अत्रिपुत्रः। ४२

अथ अव्य. [अर्थ्+ड, पृषोदरादित्वाद् रस्य लोपः] अनन्तरं; मङ्गलं; प्रश्नः; आरम्भः; कार्त्स्न्यम्; अधिकारः; संशयः; विकल्पः; समुच्चयः; 'अथ तस्य विवाहकौतुकं ललितं बिभ्रत एव पार्थिवः'—इति रघुवंशे। ८८६

अथो अव्य. [अर्थ्+डो, पृषोदरादित्वाद् रलोपः] आनन्तर्यं; मङ्गलं; प्रश्नः; समुच्चयः; आरम्भः; कार्त्स्न्यम्; अधिकारः; संशयः; विकल्पः; 'स्त्रियो रत्नान्यथो विद्या धर्मः शौचं सुभाषितम्। विविधानि च शिल्पानि समादेयानि सर्वतः'—इति मनुः। ८८६

अदभ्रः त्रि. [दम्भ्+रक् अनिदित्वान्नलोपः, दभ्रमल्पं, न दभ्रं, नञ्समासः] प्रचुरः; बहुः; किरातार्जुनीये—'अदभ्रदर्भामधिशय्य स स्थलीं जहासि निद्रामशिवैः शिवारुतैः॥' ७०१

अदितिः स्त्री. [दितिभिन्ना अदितिः,नञो दात्रो डितिरिति शाकटायनोक्तेर्डितिप्रत्ययान्तो वा, अदनाददितिः वा] दक्षप्रजापतिकन्या; कश्यपपत्नी; देवमाता; भूमिः; अखण्डः। ११९

अद्धा अव्य. [अतं सततं गमनं ज्ञानं वा दधाति। अत्+धा+क्विप्] यथार्थं; तत्त्वम्; अञ्जसा; 'अद्धा श्रियं पालितसङ्गराय प्रत्यर्पयिष्यत्यनघां स साधुः'—इति रघुवंशे। ८८५

अद्भुतः पुं. [अततीति, अत्+क्विप्, आकस्मिकार्थमव्ययं, तथा भाति, भा+डुतच्] श्रृङ्गारादिनवरसानां मध्ये रसविशेषः। ९२

अद्भुतम् क्ली.—अपूर्वं; विस्मयः; आश्चर्यं; चित्रं, तद्विशिष्टे वाच्यलिङ्गं त्रि., आश्चर्यम्; इङ्गम्। ७४५

अद्मरः त्रि. [अद् भक्षणे, सृघस्यदः क्मरच्] भक्षकः; भक्षणपरः। ३५०

अद्रिः पुं. [अदिशदीति क्रिन्] पर्वतः; वृक्षः (१७७); सूर्यः (८२०); परिमाणविशेषः; शाखी; मानभेदः; सप्ताङ्कः; पर्वतमूषिका। १६५

अद्वयवादी [न्] पुं. [अद्वयं सर्वमेव चित्स्वरूपं नात्मनोऽन्यत् किञ्चनेति वदति। अद्वय+वद्+णिनि] वैदान्तिकः; बुद्धः; अद्वयः; तथागतः; सुगतः। ८५

अद्विजः पुं. [न द्विजः, नञ्समासः। नञोऽत्र षडर्थेषु निन्द्यो रसनाग्नित्यागरूपम् अप्राशस्त्यमर्थः]त्यक्ताग्निः; वीरहा। (वह निन्दित ब्राह्मण जिसने नित्यहोम की अग्नि को त्याग दिया हो)। ४०४

अधमः त्रि. [अव् पालने+अम, वस्य धादेशः] न्यूनः; निन्दितः; अपकृष्टः; निकृष्टः; प्रतिकृष्टः; अर्वा; रेफः; याप्यः; अवमः, कुत्सितः; अवद्यः; कुपूयः; खेटः; गर्ह्यः; अणकः; रेपः; अरमः; आणकः; अनकः; 'याच्ञा मोघा वरमधिगुणे नाधमे लब्धकामा'—इति मेघदूते। उपपतिभेदे पुं.। ३३७

अधरः त्रि. [न धरः, नञ्समासः] हीनवादी। ३६४

अधरः पुं. [न ध्रियतेऽसौ। धृ+अच्, ततो नञ्समासः] मुखावयवविशेषः; ओष्ठः; रदनच्छदः; दशनवासः। पुरुषस्य रक्ताधरः प्रशस्तः, यथा—'पाणिपादतलौ रक्तौ नेत्रान्तरनखानि च। तालुकोऽधरजिह्वा च सप्त रक्तं प्रशस्यते'॥ स्त्रियास्तु—'पाटलावर्तुलः स्निग्धो रेखाभूषितमध्यभूः। सीमन्तिनीनामधरो राज्ञां चैव प्रियो भवेत्॥ श्यामः स्थूलोऽधरोष्ठः स्याद् वैधव्यकलहप्रदः। मसृणो मत्तकाशिन्याश्चोत्तरोष्ठः सुभोगदः'—इति सामुद्रकम्। 'पिबसि रतिसर्वस्वमधरम्'—इति शाकुन्तले। (८७८) अधरतः; अधस्तात्;, अधोभागः; अधः; नीचः; तलं; हीनः; अपकृष्टः (पुं., क्ली. न ध्रियते, कामुकस्य धैर्यं न तिष्ठिति यत्र) स्मरागारं; रतिगृहं; योनिः। ५२४

अधरतः [स्] अव्य. [अधर+तसिल्। प्रथमापञ्चमीसप्तम्यर्थवृत्तौ] अधस्तात्; अधोभागः। ८७८

अधरस्तात् अव्य. [अस्ताति] अधरतः। ८७८

अधः [स्] अव्य. [अधरस्य अधादेशः ततः असिच्] अधोभागः; 'लोकानुपर्युपर्यास्तेऽधोऽधोऽध्यधि च माधवः'—इति वोपदेवः। तलं; नीचः; पातालं; योनिः। ८७८

अधःक्षिप्तः त्रि. [अधः, अधोभागे क्षिप्तः पतितः] अधस्त्यक्तवस्तु। ७६८

अधस्तात् अव्य. [अधर+अस्ताति] अधोभागः; 'तस्याधस्ताद् वयमपि रतास्तेषु पर्णोटजेषु—इति उत्तरचरितम्। 'तथा निमज्जतोऽधस्तादज्ञौ दातृप्रतीच्छकौ'—इति मनुः। पश्चाद्भागः (८७८); रतिगृहं; भगम्। १०२

अधिकम् त्रि. [अध्यारूढ एव। अधि+स्वार्थे कन्] अतिरिक्तः; अनेकः; 'पुमान् पुंसोऽधिके शुक्रे स्त्री भवत्यधिके स्त्रियाः'—इति मनुः। क्ली., काव्यालङ्कारभेदः, तस्य लक्षणम्—'अधिकं पृथुलाधाराद्धेयाधिक्यवर्णनम्।' उदाहरणं यथा—'ब्रह्माण्डानि जले यत्र तत्र मान्ति न ते गुणाः'—इति कुवलयानन्दे अप्पयदीक्षितः। ७८४

अधिकृतः पुं. [अधि+कृ+क्त] अध्यक्षः; आयव्ययावेक्षकः; 'आचार इत्यधिकृतेन मया गृहीता या वेत्रयष्टिरवरोधगृहेषु राज्ञः'—इति शाकुन्तले। (४२९) त्रि. कृताधिकारद्रव्ये। ४२७

अधित्यका स्त्री. [अधिरूढा पर्वतोपरिभागम्। अधि+त्यकन्, स्त्रियां टाप्] पर्वतोपरि भूमिः; 'उपत्यकाद्रेरासन्ना भूमिरूर्ध्वमधित्यका'—इत्यमरः। 'अधित्यकायामिव धातुमय्यां लोध्रद्रुमं सानुमतः प्रफुल्लम्'—इति रघुवंशे (२-२९)। २११

अधिपः त्रि. [अधिपाति रक्षति । अधि+पा+क] अधिपतिः; स्वामी; राजा; यथा रघुवंशे—'अथ प्रजानामधिपः प्रभाते ।' ३४३

अधिपतिः पुं. [अधिपाति रक्षति । अधि+पा+उति] प्रभुः; स्वामी; 'वचो निशम्याधिपतिर्दिवौकसाम्'—इति रघुवंशे । ३४३

अधिभूः पुं. [अधि+भू+कर्त्तरि क्विप्] स्वामी; प्रभुः । ३४३

अधिरोहिणी स्त्री. [अधिरोहः आरोहणं तदेव साधनत्वेन विद्यतेऽस्य । अधि+रोह्+इन्, स्त्रियां+ङीप्] वंशकाष्ठादिनिर्मितारोहणमार्गः; निःश्रेणिः; निःश्रेणी [अधिरोहणी इत्यपि पाठः+अधिरुह्यते अनया । अधि रुह्+करणे ल्युट्, स्त्रियां ङीप्] 'सीढ़ी' इति भाषा ।३०१

अधिश्रयणी स्त्री. [अधिश्रियते पच्यतेऽत्र । अधि+श्रि+अधिकरणे ल्युट्, स्त्रियां ङीप्] चुल्ली । 'चूल्हा' इति भाषा । ३१३

अधिष्ठानम् क्ली. [अधिष्ठीयतेऽत्र । अधि+स्था+अधिकरणे ल्युट्] नगरं; चक्रं; प्रभावः; अध्यासनम्; अवस्थानम् । 'यद्भयात् सम्परित्यज्य स्वमधिष्ठानमृद्धिमत् । कैलासं पर्वतश्रेष्ठमध्यास्ते नरवाहनः'—इति रामायणे । २८५

अधीरः त्रि. [न धीरः स्थिरः । नञ्समासः] चञ्चलः; कातरः; यथा नागानन्दे–'निर्व्याजं विधुरेष्वधीर इति मां येनाभिधत्ते भवान् ।' ६९५

अधीशः त्रि. [अधिक ईशः । कर्मधारयः] अधिपतिः; प्रभुः; स्वामी; 'चन्द्रे मण्डलसंस्थे विगृह्यते राहुणा दिनाधीशः'—इति पञ्चतन्त्रे । ३४३

अधुना अव्य. [अस्मिन्काले । इदंशब्दस्य रूपं निपातनात्] अस्मिन् काले; इदानीं; सम्प्रति; साम्प्रतम् । ७८७

अधृष्टः त्रि. [धृष्+क्त, न धृष्टः, नञ्समासः] सलज्जः; अप्रगल्भः; शारदः; अप्रतिभः; शालीनः । ३७५

अधोक्षजः पुं. [अधः ज्ञातृत्वाभावात् हीनम् अक्षजं प्रत्यक्षज्ञानं यस्मै सः । अक्षात् इन्द्रियात् जातम् । अक्ष+जन्+ड] विष्णुः; 'अधो न क्षीयते जातु यस्मात्तस्मादधोक्षजः'—इति महाभारते । २३

अधोभुवनम् क्ली. [अधः नीचदेशस्थं भुवनं लोकः, कर्मधारयः] पातालम् । ६२३

अधोमुखः पुं. [अधो मुखं यस्य सः] अधोवदनः; पातालमुखः; अवाङ्मुखः; अवाचीनः; अधोमुखनक्षत्रगणः; 'अश्लेषवह्नियमपित्र्यविशाखयुक्तं पूर्वत्रयं शतभिषा च नवाप्युडूनि । एतान्यधोमुखगणानि शुभानि नित्यं विद्यार्थभूमिखननेषु च शोभितानि'—इति ज्योतिःसारसङ्ग्रहः । ३८५, ४५८

अध्यक्षः त्रि. [अक्षमिन्द्रियमधिगतः, प्रादिसमासः] अधिकृतः; आयव्ययादिनिरीक्षकः; प्रत्यक्षः; इन्द्रियजन्यज्ञानं; कुमारसम्भवे—'यदध्यक्षेण जगतां वयमारोपितास्त्वया ।' पुं. [अध्यक्ष्णोति समन्ताद् व्याप्नोति । अधि+अक्ष्+अच्] छत्रधारणादिव्यवहारेष्वधिकृतः; व्यापकः; क्षीरिकावृक्षः । ४२७

अध्ययनम् क्ली. [अधि+इङ्+भावे ल्युट्] पठन; ब्राह्मणस्य षट्कर्मान्तर्गतमिदम्, गुरुमुखादानुपूर्वीश्रवणम् । ३९७

अध्यात्मम् क्ली. [आत्मनः सम्बद्धम्, आत्मनि अधिकृते वा] ब्रह्म; 'अक्षरं परमं ब्रह्म स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते'—इति भगवद्गीतायाम् (८–३) । ८६८

अध्यापकः त्रि. [अधि+इङ+णिच्+ण्वुल्] अध्यापनकर्ता; पाठगुरुः; अध्यापयिता; उपाध्यायः । ४००

अध्येषणा स्त्री. [अधि+इष्+णिच्, भावे युच्, स्त्रियां टाप्] याच्ञा; आराध्यस्यादरपूर्वकं कर्मणि नियुक्तकरणं; गुर्वादेः सत्कारपूर्वकं क्वचिदर्थे नियोजनं सनिः; सनी । ३६०

अध्वगः पुं. [अध्वना पथा गच्छति । अध्वन्+गम्+ड, उपपदसमासः] पथिकः; उष्ट्रः; सूर्यः; खेसरः । 'खच्चर' इति भाषा । ३५७

अध्वा [न्] पुं. [अत्ति गमनेन बलं नाशयति । अद्+बाहुलकात् क्वनिप्, पृषोदरादित्वाद्दकारस्य धः] पन्थाः; कालः; संस्थानम्; अवस्कन्दः; शास्त्रं; स्कन्धः; अध्वगमनजन्यगुणः; मेदःकफस्थूलतासौकुमार्यनाशित्वम् । २६०

अध्वनीनः त्रि. [अध्वनि साधुः । अध्वन्+ख तस्य ईन्] पथिकः; पान्थः; अध्वगः । ३५७

अध्वन्यः त्रि. [अध्वनि साधुः । अध्वन्+यत्] पथिकः; 'अध्वन्येन विमुक्तकण्ठमखिलां रात्रिं तथा क्रन्दितम्'—इति अमरुशतकम् । पारियानिकः (४४५); 'बग्घीगाडी' इति भाषा । ३५७

अध्वरः पुं. [अध्वानं सन्मार्गं राति ददति। अध्वन्+रा+क। उपपदसमासः] यज्ञः; 'तमध्वरे विश्वजिति क्षितीशम्'—इति रघुवंशे। वसुभेदः; सावधानः।४१४

अनङ्गः पुं. [नास्ति अङ्गं कायो यस्य सः] कामदेवः; क्ली. (नास्ति अङ्गमवयवो यस्य तत्) आकाशं; मनः। अङ्गरहिते वाच्यलिङ्गः। 'अनङ्गो मदनेऽनङ्गमाकाशमनसोरपि'—इति मेदिनी। ३३

अनड्वान् [डुह्]पुं. [प्रथमैकवचनम्। अनः शकटं वहति। अनस्+वह्+क्विप् डादेशः] वृषः; गौः; भद्रः; बलीवर्दः; दम्यः; दान्तः; स्थिरः; बली; उक्षा; ककुद्मान्; ऋषभः; वृषभः; धुर्यः; धुरीयः; धौरेयः; शाङ्करः; शिववाहनः; रोहिणीरमणः; वोढा; गोनाथः; सौरभेयकः। 'अजमेषावनड्वाहं खरं हत्वैकहायनम्'—इति मनुः। २६३

अनडुही स्त्री. [अनडुह्+गौरादित्वाद्ङीष्] अनड्वाही। 'गाय' इति भाषा। २६८

अनड्वाही स्त्री. [अनडुह्+गौरादित्वाद् ङीष्, आमागमश्च, आमभावपक्षेकेवलं ङीष्] अनडुही; स्त्रीगवी। 'गाय' इति भाषा। २६८

अनन्तः पुं. [नास्ति अन्तः विनाशो यस्य सः] शेषनागः; बलदेवः; बलरामः; विष्णुः; अनन्तजिन्नाम जिनः; वासुकिः; सिन्दुवारवृक्षः। क्ली. (नास्ति अन्तः सीमा यस्य तत्) आकाशम्; अभ्रकम् । त्रि. (नास्ति अन्तः सीमा विनाशो वा यस्य सः) अन्तरहितः; अनवधिः; अशेषः; असीमः; यथा कुमारसम्भवे—'अनन्तरत्नप्रभवस्य यस्य।' २८

अनन्ता स्त्री. [नास्ति अन्तो यस्याः सा] पृथिवी; पार्वती; अग्निशिखावृक्षः; श्यामलता; दूर्वा; पिप्पली; दुरालभा; हरीतकी; आमलकी; गुडूची; यवासः; श्वेतदूर्वा; नीलदूर्वा; अग्निमन्थवृक्षः; अनन्तमूलं; गोपवल्ली; कराला; सुगन्धा; भद्रवल्लिका; भद्रा; नागजिह्वा; गोपी; श्यामा; शारिवा; उत्पलशारिवा। १५६

अनन्तरम् त्रि. [नास्ति अन्तरमवकाशो यस्य तत्] अनवकाशम्; अन्तररहितम्; अव्यवहितं; संसक्तम्; अपटान्तरम्। क्ली. पश्चादर्थे, पश्चात्; ततः परं; यथा रघुवंशे—'पितुरनन्तरमुत्तरकोशलान्।' ८८६

अनपष्ठ क्ली. [न अपष्ठु, अप+स्था+कु] अनुकूलम्; अवामम्। ७५६

अनयः पुं. [अयः शुभावहो विधिस्तद्भिन्नः। नञ्समासः] विपद्; 'अनयो नयसम्पन्ने यत्र ते विकृता मतिः'—इति रामायणे। दैवम्; अशुभं; व्यसनम्। १२६

अनर्गलम् त्रि. [नास्ति अर्गलं प्रतिबन्धो यस्य तत्] निरर्गलं; प्रतिबन्धकरहितम्; अबाधम्; उच्छृङ्खलम्; उद्दाम; अनियन्त्रितं; निरङ्कुशं; यथा रघुवंशे (३–३९)–'ततः परं तेन मखाय यज्वना तुरङ्गमुत्सृष्टमनर्गलं पुनः।' ७५१

अनर्थकम् क्ली. [नास्ति अर्थः यस्य तत्। समासान्तः कप्रत्ययः] निरर्थकम्; अर्थशून्यवाक्यम्; अबद्धम्; अवध्यम्। १५०

अनलः पुं. [नास्ति अलः बहुदाह्यवस्तुदहनेऽपि तृप्तिर्यस्य सः। कृत्तिकानक्षत्रे, वत्सरे, भगवति वासुदेवे] अग्निः; आग्नेयदिक्स्वामी; वसुभेदः; चित्रकः; रक्तचित्रकः; भल्लातकः; पित्तम्। ६२,१००

अनवधानम् क्ली. [न अवधानं मनोयोगः। नञ्समासः] चित्तस्य विक्षेपः; अमनोयोगः; अप्रणिधानं; तद्विशिष्टे त्रि.। ७५४

अनवधानता स्त्री. [नास्ति अवधानं मनोयोगो यस्य सः, तस्य भावः। ततस्तल्, स्त्रियां टाप्] मनोयोगशून्यता; चित्तस्यानन्यविषयाभावत्वं; कार्ये अनवहितत्वं; प्रमादः; 'कर्तव्याकरणं यत्र समर्थस्य क्वचिद्भवेत्। उच्यते द्वितयं तत्र प्रमादोऽनवधानता'—इति शब्दरत्नावली। ७५४

अनवरतम् क्ली. [अव+रम्+भावे क्त, नास्ति अवरतं विरतिर्यत्र तत्] निरन्तरं; सततम्; अनारतम्; अश्रान्तं; सन्ततम्, अविरतम्, अनिशं; नित्यम्; अजस्रं; प्रसक्तम्, आसक्तम्; अनद्धं, तद्विशिष्टे वाच्यलिङ्गम्। 'अनवरतधनुर्ज्यास्फालनक्रूरकर्मा'—इति शाकुन्तले। ६९८

अनवस्करम् त्रि. [अव अधोवर्त्मना कीर्यते क्षिप्यते। अव+कृ+अप् 'वर्चस्केऽवस्करः' इति सुडागमः, नास्ति अवस्करो मलं यस्य तत्] निर्मलं; शोधितम्। ७७०

अनशनम् क्ली. [अश्, भावे ल्युट्, न अशनं भोजनं, नञ्समासः] भोजनाभावः; उपवासः। तद्वति त्रि.। प्रायोपवेशनम्—'तदहमनशनं कृत्वा प्रातः प्राणानुत्सृजामि'—इति पञ्चतन्त्रे। ७६०

अनश्वरम् त्रि. [नश्+कर्तरि वरच्, न नश्वर, नञ्-समासः] सनातनं; नित्यं; ध्रुवं; शाश्वतम्; 'मत्वा विश्वमनश्वरं निविशते संसारकारागृहे'—इति वैराग्य-शतके। १२५

अनः [स्] क्ली. [अनिति जीवत्यनेन, जीविकोपायत्वात्। अन्+असुन्] शकटं; यथा मनुः—'होता वापि हरेद-श्वमुद्गाता चाप्यनः क्रये।' अन्नं; जननी; जन्म; जन्मी। ४४४

अनादरः पुं. [आ+दृ+भावे अप्, न आदरः, नञ्-समासः] निरादरः; परिभवः; परिभावः; तिरस्क्रिया; रीढा; अवमानना; अवज्ञा; अवहेलम्; असूक्षणम्, असुक्षणम्; असुर्क्षणम्; असूर्क्षणम्। 'गुणेषु रागो व्यसनेष्वनादरः'—इति पञ्चतन्त्रम्। ७०४

अनादिवार्ता स्त्री. [अनादेः अज्ञातकालस्य वार्ता] ऐतिह्यं; परम्परागतकथा। १४७

अनादृतः त्रि. [आ+दृ+कर्मणि क्त, न आदृतः, नञ्-समासः] कृतनिरादरः; अवज्ञातः; अवमानितः। ७१४

अनामा स्त्री. [नास्ति ब्रह्मशिरश्छेदनसाधनतया प्रशस्तं नाम यस्याः सा। अनया अङ्गुल्या शिवेन ब्रह्मशिर-श्छिन्नम्। डाप्] अनामिकाङ्गुली। ५३८

अनायासार्थकम् क्ली. [अनायासः पेषणकुट्टनादिरहितः अर्थः प्रयोजनं यस्य] फाण्टम्; अनायासकृतम्। ७७४

अनायासकृतम् त्रि. [अनायासेन अक्लेशेन कृतं, तृतीया-तत्पुरुषः] अनायासेन यत् क्रियते स्म ततः; विना यत्नेन कृतं; फाण्टम्। ७७४

अनारतम् क्ली. [आ+रम्+क्त, ततो नञ्समासः] अनवरतं; सततं; नित्यम्; 'अनारतं तेन पदेषु लम्भिता विभज्य सम्यग् विनियोगसत्क्रिया':—इति किरातार्जुनीये। ६९८

अनार्तः पुं. [नञ्समासः] कल्यः; वार्तः; निरामयः; रोगमुक्तः। ३८०

अनाविलः त्रि. [न आविलः। नञ्समासः] आविलशून्यः; निर्मलः; स्वच्छः; 'पद्मगन्धि शिवं वारि सुखं शीतम-नाविलम्'—इति रामायणे। स्वास्थ्यकरः; 'जाङ्गलं सस्यसम्पन्नमार्य्यप्रायमनाविलम्'-इति मनुः। १३२

अनिबद्धम् क्ली. [न निबद्धम्, योग्यता काङ्क्षादिरहित-मित्यर्थः] उच्चावचम्; असम्बद्धवचनम्। १३९

अनिमिषः पुं.–स्त्री. [नास्ति निमिषः निमेषः चक्षुस्पन्दनं यस्य सः] देवता; मत्स्यः (६५७); निमेषरहितः; स्थिरदृष्टिः; सावधानः; अप्रमत्तः; 'सुरेषु नापश्य-दवेक्षताक्ष्णो नृपे निमेषं निजसम्मुखे सति'—इति नैषधे। ४

अनिरुद्धः पुं. [न निरुध्यतेऽसौ। नि+रुध+कर्मणि क्त, ततो नञ्समासः] कामदेवपुत्रः; उषापतिः; ब्रह्मसूः; विश्वकेतुः; भगवतश्चतुर्व्यूहान्तर्गतव्यूहः; 'तमसो ब्रह्म सम्भूतं तमोमूलामृतात्मकम्। तद्विश्वभावसंज्ञान्तं पौरुषीं तनुमाश्रितम्॥ सोऽनिरुद्ध इति प्रोक्तस्तत् प्रधानं प्रचक्षते'—इति महाभारते। त्रि. रोधशून्यः; अप्रतिबद्धः; चरः। ३४

अनिलः पुं. [अनिति जीवत्यनेन। अन्+इलच्] वायुः; वसुविशेषः; शरीरस्थप्राणादिवायुः; वातरोगः; स्वाति-नक्षत्रम्। १५

अनिशम् क्ली. [निशा रात्रिः, उपचाराद् व्यापाररहित्यम्, नास्ति निशा यस्मिन् तत्। क्रियाविशेषणत्वे अस्य क्लीवत्वं, द्रव्यविशेषणत्वे तु त्रिलिङ्गत्वम्] अनवरतं; सततम्; 'निजमैक्षि मन्दमनिशं निशितैः कृशितं शरीर-मशरीरशरैः'—इति माघे। ६९८

अनिष्टः त्रि. [इष्+कर्मणि क्त। न इष्टः, नञ्समासः] अनभिलषितः; अवाञ्छितः। 'इष्टनाशादनिष्टाप्तेः करुणाख्यो रसो भवेत्'—इति साहित्यदर्पणे। १२६

अनीकः पुं.–क्ली. [नास्ति नीः स्वर्गप्रापको यस्मात्, कन्, अर्द्धर्चादित्वात् पुंस्त्वं क्लीवत्वं च] युद्धं; सैन्यम् (४५७)। ४५४

अनुकूलः त्रि. [अनुकूलं करोति। अनुकूल+करोत्यर्थे णिच्, पचाद्यच्] अप्रतिकूलः; दक्षिणः; सहायः; 'मयानुकूलेन नभस्वतेरितम्'—इति भागवते। [पुं. अनुकूलयति केवलं स्वपत्नीं सुखयति। अनुकूल+करो-त्यर्थे+णिच्+अच्] पतिभेदः; 'एकस्यामेव नायिका यामासक्तोऽनुकूलनायकः'—इति साहित्यदर्पणे। ७५६

अनुक्रमः पुं. [क्रममनुगतः, प्रादिसमासः] यथाक्रमम्; आनुपूर्वी; परिपाटी; आवृत्; पर्यायः; प्रतिसंक्रमणम्; अनुक्रमणिका; यथा—'द्वादशे तु पुराणोक्तसर्वार्थानुक्रमः कृतः। प्रथमस्कन्धमारभ्य प्राधान्येन समासतः'—इति भागवते १२ स्कन्धे १२ अध्यायटीकायां श्रीधरः।

'कनिष्ठा देशिन्यङ्गुष्ठमूलान्यग्रं करस्य च। प्रजापतिपितृब्रह्मदेवतीर्थान्यनुक्रमात्'—इति याज्ञवल्क्यः। ७३९

अनुक्रोशः पुं. [अनु+क्रुश्+घञ्] करुणा; दया; 'सौहार्दाद्वा विधुर इति वा मय्यनुक्रोशबुद्ध्या'—इति मेघदूते। ७२४

अनुगः त्रि. [अनुगच्छति, अनु+गम्+ड] पश्चाद्गामी; अनुचरः; अनुसरः; अन्वक्; अन्वक्षः; अनुपदः; सेवकः; दासः; 'येषां शास्त्रानुगा बुद्धिर्न ते मुह्यन्ति भारत'—इति महाभारते। पतिः (४९७)। ४२८

अनुचरः त्रि. [अनु पश्चात् साहित्येन वा चरति गच्छति। अनु+चर्+ट] सहचरः; सहायः; दास; 'अनुचरेण धनाधिपतेरथो'—इति भारविः। 'पैतृकं वाञ्छतो राज्यं पार्थस्यानुचरा व्यधुः'—इति रामायणे। ४२८

अनुच्छिष्टः त्रि. [उत्+शिष्+क्त, नञ्समासः] उच्छिष्टभिन्नः; पवित्रः; 'लक्ष्म्या निमन्त्रयाञ्चक्रे तमनुच्छिष्टसम्पदा'—इति रघुवंशे। ४०२

अनुजः पुं. [अनु पश्चाज् जातः। अनु+जन्+ड] कनिष्ठभ्राता; जघन्यजः; कनिष्ठः; यवीयान्; अवरजः; कनीयान्; यविष्ठः; जघन्यः; क्ली. प्रपौण्डरीकनाम सुगन्धद्रव्यम्। ५०६

अनुजीवी [न्] त्रि. [अनुजीवति, अनु+जीव्+णिनि] दासः; सेवकः; अर्थी; अनुचरः; 'अनुजीविना पराधिकारचर्चा न कर्तव्या'—इति हितोपदेशः। ४२८

अनुतर्षः पुं. [अनु+तृष्+भावे करणे वा घञ्]. मद्यपानपात्रं; तृष्णा; अभिलाषः। ३२७

अनुतापः पुं. [अनु+तप्+भावे घञ्] पश्चात्तापः; 'पछताना' इति भाषा। 'चिरसम्मोहशयनादुत्थितस्य य आत्मनः। हाहाकारोऽनुतापः स्यात्स्वकर्मस्मृतिसम्भवः॥' 'स्थापनानुतापेन तपसाध्ययनेन च। पापकृन्मुच्यते पापात्तथा दानेन चापदि'—इति मनुः। ७१६

अनुत्तमः त्रि. [नास्ति उत्तमः उत्कृष्टो यस्मात् सः] श्रेष्ठः; प्रधानम्; 'श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुतिष्ठन् हि मानवः। इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम्'—इति मनुः (२।९)। (नञ्समासे तु अधमः). ६८९

अनुत्तरम् त्रि. [नास्ति उत्तरः प्रधानं यस्मात्, न उत्तरम् इति नञ्समासो वा] प्रत्युत्तरहीनं; मुख्यं; श्रेष्ठं; प्रतिजल्पविवर्जितं; स्थिरम; अधः; दक्षिणदिक्। प्रत्युत्तराभावे क्ली., यथा—'भवत्यवज्ञा च भवत्यनुत्तरात्।' ३७७

अनुनयः पुं. [अनु+नी+भावे अच्] विनयः; प्रणिपातः; प्रणतिः; 'कथं नु शक्योऽनुनयो महर्षेर्विश्राणनाच्चान्यपयस्विनीनाम्'—इति रघुवंशे। सदाचारः; मोघोपनयः; 'एवं रामवचः श्रुत्वा लक्ष्मणानुनयं तथा'—इति रामायणे। ७४९

अनुपदम् अव्य. [पदस्य पश्चात् इति, अव्ययीभावे] अन्वक्; अनन्तरम्; अव्यवहितोत्तरकालम्; 'अमोघाः प्रतिगृह्णन्तावर्घ्यानुपदमाशिषः।' 'आशिषामनुपदं समस्पृशत् दर्भपाटिततलेन पाणिना।'—इति रघुवंशे। ७३१

अनुपदी [न्] त्रि. [अनुपदमन्वेष्टा, अनुपद+इन्] अन्वेष्टा; अन्वेषणकर्ता। ३८०

अनुपदीना स्त्री. [अनुपद+अनुपदं बद्धा इत्यर्थे ख, तस्य ईन, स्त्रियां टाप्] पदायतोपानत्; 'जूता' 'बूट' इत्यादि भाषा। ३११

अनुपात्ययः पुं. [उप+अति+इण् गतौ, एरच् भावे। ततो नञ्समासः] क्रमानुसरणम्; आज्ञापालनम्; अपेक्षणम्। ७३०

अनुमतिः स्त्री. [कलाहीनत्वेऽपि पूर्णिमाविहितयागादिकरणाय अनुज्ञायतेऽस्याम्। अनु+मन्+अधिकरणे भावे वा क्तिन्] न्यूनेन्दुकला पूर्णिमा, चतुर्दशीयुक्ता पूर्णिमा; 'कुह्वै चैवानुमत्यै च प्रजापतय एव च। सह द्यावापृथिव्योश्च तथा स्विष्टकृतेऽन्ततः'—इति मनुः (३।८६)। ११२

अनुमानोक्तिः स्त्री. [अनुमानेन उक्तिः कथनं, तत्पुरुषः] तर्कः; ऊहः। १०

अनुयोगः पुं. [अनु+युज्+घञ्] प्रश्नः। १५४

अनुलाप पुं. [अनु वारं वारं लपनम्। अनु+लप्+भावे घञ्] पुनः पुनः कथनं; पुनरुक्तिः; मुहुर्भाषा। १५०

अनुलेपनम् क्ली. [अनु+लिप्+भावे ल्युट्] मस्तकादौ गन्धद्रव्यादिलेपनं तद् द्रव्यं च। 'निरस्तमाल्याभरणानुलेपनाः'—इति ऋतुसंहारे। ५४२

अनुवृत्तिः स्त्री. [अनु+वृत्+क्तिन्] अनुवर्तनम्; अनुरोधः; पूर्वसूत्रस्थितपदस्य परसूत्रेषूपस्थितिः; अधिकारः; अनुसरणम्; अनुमोदनम्; अनुरञ्जनम्;

'अमङ्गलाभ्यासरतिं विचिन्त्य तं तवानुवृत्तिं न च कर्तुमुत्सहे'—इति कुमारसम्भवे। अनुकरणम्; 'यासां सत्यपि सद्गुणानुसरणे दोषानुवृत्तिः परा'—इति साहित्यदर्पणे। ८१९

अनुशयः पुं. [अनु+शी+भावे अच्, शयं हस्तमनुगतः, प्रादिसमासः] अनुतापः; 'अनुशयादनुरोदिमि चोत्सुकः।' 'अनुशयदुःखायेदं हतहृदयं सम्प्रति विबुद्धम्'—इति शाकुन्तले। द्वेषः (८१५); दीर्घद्वेषः; पूर्ववैरिता; अनुबन्धः; क्रोधः; विप्रतिपत्तिः (पश्चात्तापादि-कारणात्); 'क्रयविक्रयानुशयो विवादः स्वामि-पालयोः'—इति मनुः। ७१६

अनुषङ्गः पुं. [अनु+सञ्ज्+भावे घञ्] कारुण्यं; दया; एकत्रान्वितपदस्यान्यत्रान्वयः; तर्कशास्त्रे उपन-यस्थायमितिशब्दोपलक्षितस्य निगमनेऽनुषङ्गः; यथा—वह्निव्याप्यधूमवांश्चायं, तस्माद्वह्निमान्। प्रसङ्गः; अन्योद्देशेन प्रवृत्तावन्यस्यापि सिद्धिः; यथा—'नित्यक्रियां तथा चान्ये ह्यनुषङ्गफलां श्रुतिम्'—इति स्मृतिः। ८२३

अनूकम् क्ली. [अनु+उच्, घञर्थे क, 'न्यङ्क्वादीनाञ्च' इति कुत्वम्] वंशः; कुलं; शीलं; स्वभावः; पुं. गतजन्म; पूर्वजन्म; 'अनूकं तु कुले शीले पुंसि स्याद् गतजन्मनि'—इति मेदिनी। ८२९

अनूचानः त्रि. [अनु+वच्+लिट् तस्य कानच्, वेदस्यानु-वचनं कृतवान्। उपेयिवानित्यादिना साधुः] साङ्गवेद-विचक्षणः; शिक्षाकल्पादिषडङ्गसहितवेदाध्ययनकारी; यथा—'इदमूचुरनूचानाः प्रीतिकण्टकितत्वचः'—इति कुमारसम्भवे। 'ऋषयश्चक्रिरे धर्मं योऽनूचानः स नो महान्'—इति मनुः। विनीतः; सविनयः; 'अनूचानो विनीते स्यात् साङ्गवेदविचक्षणे'—इति मेदिनी। ३९५

अनृतम् क्ली. [न ऋतं, नञ्समासः] मिथ्या; 'विवाहकाले रतिसम्प्रयोगे प्राणात्यये सर्वधनापहारे। विप्रस्य चार्थे ह्यनृतं वदेत पञ्चानृतान्याहुरपातकानि'—इति महाभारते कर्णपर्वणि अर्जुनं प्रति श्रीकृष्णवचनम्। कृषिः। १४४

अनेकधा अव्य. [प्रकारार्थे धा] अनेकप्रकारं; बहुधा; 'पाटीसूत्रोपमं बीजं गूढमित्यवभाषते। नास्ति गूढमगूढानां नैव षोढेत्यनेकधा'—इति लीलावती। अनेकवारार्थेऽपि क्वचित् प्रयोगः। ४३७, ६४७

अनेकपः पुं. [अनेकाभ्यां मुखशुण्डाभ्यां पिबति। अनेक+पा+क, उपपदसमासः] हस्ती। २१४

अनेकार्थः पुं. [अनेके अर्थाः यस्य] बह्वर्थः; नानार्थः; विविधार्थद्योतकः। ८८४

अनेडमूकः त्रि. [नास्ति एडः बधिरः मूकः वाक्शक्ति-रहितश्च यस्मात् सः] श्रुतिवाग्विहीनः; 'गूंगा-बहरा' इति भाषा। धूर्तः; शठः। ६०९

अनहा [स्] पुं. [न हन्यते, न+हन्+असुन्। पृषोद-रादित्वात् हन्स्थाने एहादेशः, ततः सौ कृते अनङादेशः] कालः; समयः; 'तस्युस्तस्यान्तिके द्रोहनिद्रानेहःप्रती-क्षिणः'—इति राजतरङ्गिणी। १०५

अनोकहः पुं. [अनसः शकटस्य अकं गमनं, षष्ठीतत्पुरुषः, तत् हन्ति। अनोक+हन्+ड] वृक्षः; 'पृक्तस्तुषारैर्गि-रिनिर्झराणाम् अनोकहाकम्पितपुष्पगन्धी'—इति रघुवंशे। १७७

अन्तःपुरम् क्ली. [अन्तर्मध्यवर्ति पुरं गृहं, कर्मधारयः] राज्ञः स्त्रीगृहम्; अवरोधनम्; अवरोधः; शुद्धान्तः; 'दाक्षिण्येन ददाति वाचमुचितामन्तःपुरेभ्यो यदा'—इत्यभिज्ञानशाकुन्तलम्। ४२९, ४९१

अन्तःपुरप्रेष्या स्त्री. [अन्तःपुरस्य प्रेष्या] चेटी; दासी; संचारिका; असिक्नी। ४९१

अन्तःपुरेष्वधिकृतः त्रि. [अन्तःपुरेषु राजपत्नीवर्गे अधिकृतः अवेक्षणाधिकारी] वर्षवरः; क्लीवः; वृद्धो विश्वस्त-सेवकः। ४२९

अन्तकः पुं. [अन्तं विनाशं करोति। अन्त+करोत्यर्थे णिच्, ततो ण्वुल्] यमः; 'ऋषिप्रभावान्मयि नान्तकोऽपि प्रभुः प्रहर्तुं किमुतान्यहिंस्राः'—इति रघुवंशे। ७२

अन्तरम् क्ली. [अन्तं राति ददाति। अन्त+रा+क, उपपदसमासः] छिद्रं; (८७१) परिधानं; मध्यं; व्यवधानम्; अन्तरात्मा; अवकाशः; बहिर्योगः; भेदः; विशेषः; अवसरः; अवधिः; अन्तर्धानं; तादर्थ्यं; आत्मीयः; विना; सदृशः। अवकाशे—'मृणालसूत्रान्त-रमप्यलभ्यम्'—इति कुमारसम्भवे। अवधौ—'निर-न्तराभ्यन्तरवातवृष्टिषु।' परिधाने—'अन्तरे शाटकाः, परिधानीयाः' इत्यर्थः। अन्तर्द्धौ—'पर्वतान्तरितो रविः।' भेदे—'यदन्तरं सर्षपशैलराजयोः, यदन्तरं वायसवैन-तेययोः'—इति रामायणे। तादर्थ्ये—'त्वामन्तरेण ऋणं

गृहीतम्, त्वदर्थमित्यर्थः। छिद्रे—'प्रहरेदन्तरे रिपुम्'। आत्मीये—'अयमप्यन्तरो मम।' विनार्थे—'हरे त्वदालोकनमन्तरेण।' बहिरर्थे—'अन्तरे चण्डालगृहाः, बाह्याः' इत्यर्थः। अवसरे—'अत्रान्तरे च कुलटा कुलवर्त्मपातेत्यादि।' मध्ये—'आवयोरन्तरे जाताः पर्वताः परितो द्रुमाः।' सदृशे—'हकारस्य घकारोऽन्तरतमः'—इति भरतः। ८७१

अन्तरात्मा [न्] पुं. [अन्तः हृदयमध्ये स्थितः आत्मा। शाकपार्थिवादिः] प्रत्यगात्मा; साक्षी-ईश्वरः। ८७१

अन्तरायः पुं. [अन्तरं व्यवधानम् एति। अन्तर+इण्+अच्, षष्ठीतत्पुरुषः] विघ्नः; 'स चेत्स्वयं कर्मसु धर्मचारिणां त्वमन्तरायो भवसि च्युतो विधिः'—इति रघुवंशे। ४०१

अन्तरालम् क्ली. [अन्तरा मध्यं लाति। अन्तरा+ला+क] मध्यदेशः; अभ्यन्तरम्; अन्तरालकम्; 'मुहुरन्तरालभुवमस्तगिरिः सवितुश्च योषिदमिमीत दृशा'—इति माघे। 'उदेति भानुर्गगनान्तराले'—इति पद्यमाला। १०२

अन्तरि (री) क्षम् क्ली. [अन्तर्मध्ये ऋक्षाणि नक्षत्राणि यस्य तत्। पृषोदरादित्वाद् ऋकारस्य इकारः। अन्तरीक्षमिति पाठे, ऋकारस्य ईकारः] अन्तरीक्षम्; आकाशः; 'अन्तरिक्षगतांश्चैव मुनीन् देवांश्चपीडयेत्'—इति मनुः। १३७

अन्तरीपम् क्ली.-पुं. [अन्तर्गता आपोऽत्र, समासान्तः अ, द्व्यन्तरुपसर्गेभ्य इति अप ईदादेशः] द्वीपम्। ६७०

अन्तरीयम् क्ली. [अन्तरस्य परिधानस्य इदम्। अन्तर+छ तस्य ईय] अधोवस्त्रं; परिधानवस्त्रम्; 'नाभौ धृतञ्च यद्वस्त्रम् आच्छादयति जानुनी। अन्तरीयं प्रशस्तं तद् अच्छिन्नमुभयोस्तयोः।' ५४६

अन्तरीक्षम् क्ली. [अन्तर्मध्ये ऋक्षाणि नक्षत्राणि यस्य तत्। पृषोदरादित्वाद् ऋकारस्य ईकारः] गगनं; अभ्रकधातुः। १३८

अन्तर्गडुः त्रि. [अन्तर्मध्ये गडुः ग्रीवाप्रदेशजातगलमांसपिण्डमिव निरर्थकः] निरर्थकः; वृथा; 'काव्यान्तर्गडुभूता या सा तु नेह प्रशस्यते'—इति साहित्यदर्पणे। ७७४

अन्तर्देहम् क्ली. [देहस्य अन्तः मध्यम्। अव्ययीभावः] अशितपीतादेः पाचनस्थानं; कोष्ठः। ८१७

अन्तर्द्धिः पुं. [अन्तर्+धा+भावे कि] अन्तर्द्धानम्; अपवारणम्; अदर्शनम्। ७१९

अन्तर्वंशिकः पुं. [वंशः स्वावलम्बनयष्टिर्विद्यतेऽस्य। वंश+ठक्, तस्य इक्, अन्तः नृपान्तःपुरे वंशिकः यष्टिधारी नियुक्तः पुरुषः] अन्तःपुराधिकृतः; अन्तःपुराध्यक्षः। ४२९

अन्तर्वत्नी स्त्री. [अन्तर्गर्भमध्यस्थमपत्यं विद्यतेऽस्याः। अन्तर्+मतुप्, 'अन्तर्वत्पतिवतोर्नुक्' इति ङीप् नुगागमश्च] गर्भिणी; 'तस्यामेवास्य यामिन्यामन्तर्वत्नी प्रजावती। सुतावसूत सम्पन्नौ कोषदण्डाविव क्षितिः'—इति रघुवंशे। ४९७

अन्तर्वाणिः त्रि. [अन्तः अन्तःकरणे वाणी शास्त्रविहिता वाक् यस्य सः, समासे ह्रस्वः] शास्त्रवित्; शास्त्रज्ञः। ३९९

अन्तावशायी [न्] पुं. [अन्ते नीचजातितया ग्रामसीमायामवशेते तिष्ठति। अन्त+अव+शी+णिनि, उपपदसमासः] चण्डालः; मुनिविशेष; नापितः। ५९८

अन्तिकम् त्रि. [अन्तः सामीप्यं विद्यतेऽस्य। अन्त+ठन्, तस्य इक्] निकटम्; क्ली. सामीप्यम् (८८५); 'अन्तर्गतप्रार्थनमन्तिकस्थम्' 'स्वनसि मृदु कर्णान्तिकचरः'—इति शाकुन्तले। 'ननु मां प्रापय पत्युरन्तिकम्'—इति कुमारसम्भवे। ६९२

अन्तिमः त्रि. [अन्त+डिमच्, अन्ते भवः] चरमः; अन्त्यः; 'अजातमृतमूर्खाणां वरमाद्यौ न चान्तिमः। सकृद् दुःखकरावाद्यावन्तिमस्तु पदे पदे'—इति हितोपदेशः। अतिनिकटः। ७७५

अन्तेवासी [न्] पुं. [अन्ते विद्यामध्येतुमध्यापकसमीपे वसति। चण्डालपक्षे तु नीचजातितया ग्रामप्रान्ते वसति। शयवासेत्यलुक्, अन्त+वस्+णिनि] शिष्यः; छात्रः; 'कृशाश्वान्तेवासी कुशिकपतिराज्ञापयति वः'—इति महावीरचरिते। 'तात! प्राचेतसान्तेवासी लवोऽभिवादयते—'इति उत्तरचरिते। चण्डालः। प्रान्तस्थायिनि त्रि.। ४४०

अन्त्यः त्रि. [अन्ते भवः। अन्त+यत्] अन्तिमः; चरमः; शेषः; 'असह्यपीडं भगवन् ऋणमन्त्यमवेहि मे।'—इति रघुवंशे। अन्ते भवः; शेषोत्पन्नः; अधमः; जघन्यः; पुं. मुस्ता; म्लेच्छः; क्ली. अन्ते भवम्; दशसागरसंख्या;

सहस्रलक्षकोटिः; 'वृन्दं खर्वो निखर्वश्च शंखं पद्मश्च सागरः। अन्त्यं मध्यं परार्धञ्च दशवृद्धया यथाक्रमम् ॥' द्वादशलग्नम्। ७७५

अन्त्यजः पुं. [अन्त्याद् विराट्चरणदेशात् जातः। अन्त्य+जन्+ड] शूद्रः; रजकादिसप्तजातयः, यथा—'रजकश्चर्मकारश्च नटो वरुड एव च। कैवर्तमेदभिल्लाश्च सप्तैते अन्त्यजाः स्मृताः'—इति यमवचनम्। जघन्यजे त्रि.। ३९२

अन्त्यजातिः पुं. [अन्त्या जातिर्जन्म यस्य सः] चाण्डालादिः। ५९९

अन्त्यवर्णः पुं. [अन्त्यः वर्णः जातिः, कर्मधारयः] शूद्रः। ५८६

अन्त्रम् क्ली. [अन्त्यते कायः सम्बध्यतेऽनेन। अति बन्धने, करणे ष्ट्रन्] पुरीतत्। 'अँतड़ी, आँत' इति भाषा। ६३५

अन्दुकः पुं. [अन्द्यते बध्यतेऽनेन। अदि+करणे उण् बाहुलकात् ततः स्वार्थे कन्] हस्तिनिगडः; हस्तिपादबन्धनशृङ्खलः; निगडः; पादालङ्कारविशेषः; पादकटकः; स्त्रीपादभूषणम्। २२३

अन्धः त्रि. [अन्ध्+अच्] चक्षुर्द्वयहीनः; अदृक्; 'वृद्धोऽन्धः पतिरेष मञ्चकगतः'—इति साहित्यदर्पणे। 'अन्धो मत्स्यानिवाश्नाति स नरः कण्टकैः सह। यो भाषतेऽर्थवैकल्पमप्रत्यक्षं सभाङ्गतः'—इति मनुः (८।९५)। क्ली. अन्धकारः; 'सीदन्नन्धे तमसि विधुरो मज्जतीवान्तरात्मा'—इति उत्तरचरिते। जलम्। ६०६

अन्धकरिपुः पुं. [अन्धकस्य असुरस्य रिपुः नाशकतया शत्रुः। षष्ठीतत्पुरुषः] शिवः। ११

अन्धकारः पुं.-क्ली. [अन्धमन्धवत् करोति। अन्ध्+कृ+अण्] तेजःसामान्याभावः; ध्वान्तं; तमिस्रं; तिमिरं; तमः; भूच्छायं, (महान्धकारे अन्धतमसं; सर्वव्यापकान्धकारे सन्तमसम्; अल्पान्धकारे अवतमसम्)। ११०

अन्धतमसम् क्ली. [अन्धयति, अन्ध्+अच्, अन्धं तमः, कर्मधारयः, समासान्तः अच्] निविडान्धकारम्; 'प्रध्वंसितान्धतमसस्तत्रोदाहरणं रविः'—इति माघे। ११०

अन्धः [स्] क्ली. [अन्ध्+असुन्] अन्नम्। ३१९

अन्धुः पुं. [अन्धु+उण्] कूपः। ६८४

अन्नम् क्ली. [अद्+कर्मणि+क्त] स्विन्नतण्डुलं; भक्तम्; अन्धः; भिस्सा, ओदनं; दीदिविः; भिस्मा; कूरम्; अट्टं; कसिपुः; जीवातुः; कूरम्; आपूपिकं; जीवन्तिः; प्रसादनं; धान्यम्; अदनीयद्रव्यमात्रम्। 'सस्यं क्षेत्रगतं प्राहुः सतुषं धान्यमुच्यते। आमं वितुषमित्युक्तं स्विन्नमन्नमुदाहृतम् ॥' 'वारिदस्तृप्तिमायाति सुखमक्षय्यमन्नदः।' 'ब्रह्महत्याकृतं पापमन्नदानात् प्रणश्यति। अन्नदः पापकर्मापि पूतः स्वर्गे महीयते ॥' 'अन्ने प्रतिष्ठिता लोका अन्नमाश्वक्षयं परम्। तस्मादन्नं प्रशंसन्ति सदैव पितृमानवाः॥' 'अन्नस्य हि प्रदानेन नरो याति परां गतिम्। सर्वकामसमायुक्तः प्रेत्य चेहाधिकं शुभम् ॥' 'अन्नमूर्ज्जस्वलं लोके दत्त्वोर्जस्वी भवेन्नरः। सतां पन्थानमाश्रित्य सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥' 'अन्नदः पशुमान् पुत्री धनवान् भोगवानपि। प्राणवांश्चापि भवति रूपवांश्च तथा नृप! ॥' 'अन्नदस्य मनुष्यस्य बलमोजो यशांसि च। कीर्तिश्च वर्द्धते शश्वत्त्रिषु लोकेषु पाण्डव! ॥' 'तस्मादन्नं सदा देहि श्रद्धया नृपसत्तम! ब्रह्महत्यादिकं पापमन्नदस्य प्रणश्यति ॥' 'अन्नदानात् परं दानं न भूतं न भविष्यति। पुण्यं यशस्यमायुष्यं बलपुष्टिविवर्द्धनम् ॥' 'तरुणादित्यसङ्काशं विमानं हंसवाहनम्। अन्नदो लभते तिस्रः कल्पकोटीस्तथैव च॥ अन्नदानात् परं दानं न भूतं न भविष्यति। अन्नाद् भूतानि जायन्ते जीवन्ति च न संशयः॥ जीवदानात् परं दानं न किञ्चिदपि विद्यते। अन्नाज्जीवति त्रैलोक्यं त्रैलोक्यस्येह तत्फलम् ॥' ३१९

अन्यभृतः पुं. [अन्यया स्वमातृभिन्नया भृतः पालितः तृतीयातत्पुरुषः] कोकिलः; 'कलमन्यभृतासु भाषितं कलहंसीषु मदालसं गतम्'—इति रघुवंशे। २४३

अन्योन्यम् त्रि. [अन्य+व्यतिहारार्थे द्वित्वं, ततः पूर्वपदात्परः सुश्च] उभयतः; इतरेतरं; परस्परम्; 'अन्योन्यप्रतिघातसङ्कुलचलत्कल्लोलकोलाहलैः—इति उत्तरचरिते। ७२०

अन्योन्यसंगीतिः स्त्री. [अन्योन्यं परस्परं संगीतिः] संकथा; परस्परवार्ता; परस्परकथा। ७७९

अन्वक् [च्] त्रि. [अनु पश्चाद् अञ्चति गच्छति। अनु+अञ्च्+क्विन्] पश्चाद्गामी; अनुपदं; पश्चात्; 'तां देवतापित्रतिथिक्रियार्थामन्वग् ययौ मध्यमलोकपालः'—इति रघुवंशे। ७३१

अन्वक्षः त्रि. [अनु+अक्ष्+पचाद्यच्। अक्षमिन्द्रिय—

मनुगतः। प्रादिसमासः, प्रत्यक्षे, अनुगते, अनुपदे] पश्चाद्गामी। ७३१

अन्वयः पुं. [अनु+इण्+भावे अच्] वंशः; कुलम्; 'तदन्वये शुद्धिमति प्रसूतः'—इति रघुवंशे। वंश-परम्परा; 'रघूणामन्वयं वक्ष्ये तनुवाग्विभवोऽपि सन्'—इति रघुवंशे। 'काव्यदेव्यभिधा शूरवधूः शुद्धान्वया'—इति राजतरङ्गिणी। वंशजाताः; पुत्रपौत्रादयः; 'मातुर्दुहितरोऽभावे दुहितॄणां तदन्वयः'—इति नारदः। 'स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः'—इति मनुः। पदानां परस्पराकाङ्क्षा योग्यता च; परस्पर-सम्बन्धः। ३९६

अन्ववायः पुं. [अनु+अव+इण्+भावे अच्] वंशः; कुलं; 'कथमेकान्ववायोऽयमस्माकम्'—इति शकु-न्तले। ३९६

अन्वासनम् क्ली. [अनु+आस्+ल्युट्] शिल्पादिगृहं; स्नेहवस्तिः; अनुशोचनम्; उपासना; अनुवासनं; पश्चात्तापः। २९७

अन्वेषणम् क्ली. [अनु+इष्+ल्युट्] अन्वेषणा; परीष्टिः; पर्येषणा; गवेषणा; अनुसन्धानम्; 'सुग्रीवो राम-मित्रं क्व जनकतनयान्वेषणे प्रेषितोऽहम्'—इति महा-नाटकम्। 'दोषान्वेषणमेव मत्सरजुषां नैसर्गिको दुर्ग्रहः'—इत्युद्भटः। ८०७

अन्वेष्टा [ऋ] त्रि. [अनु+इष्+तृच्] अन्वेषणकर्ता; आनुपद्यः; 'अन्वेष्टारो ब्राह्मणाश्च भ्रमन्ति शतशो महीम्'—इति नलोपाख्यानम्। ३८०

अपकारः पुं. [अप+कृ+भावे घञ्] दुष्कृतिः; मन्दक-रणम्; अनिष्टसाधनम्; असद्व्यवहारः; अत्याचारः; द्वेषः; 'उपकर्त्रारिणा सन्धिर्न मित्रेणापकारिणा। उपका-रापकारौ हि लक्ष्यं लक्षणमेतयोः'—इति माघे। ७७१

अपकृष्टम् त्रि. [अप+कृष्+क्त] जघन्यम्; अधमं; निकृष्टम्; अणकं; गर्ह्यम्; अवद्यं; काण्डं; कुत्सितं; प्रतिकृष्टं; याप्यं; खेपः; वेफः; अवमं; ब्रुवं; खेटं; पापम्; अपशब्दं; कुपूयं; चेतम्; अवंचम्। ३३७

अपघनः पुं. [अपहत्य मिलित्वा वियुज्यते। अप+हन्+'अपघनोऽङ्ग'मिति पाणिनिसूत्रेण अप् हस्थाने घ] देहावयवः; अङ्गम्; 'घृणिभिरपघनैर्घर्घरव्यक्तघोषान्'—इति सूर्यशतके। ७४४

अपचितः त्रि. [अप+चाय्+पूजार्थे कर्मणि क्त, 'अपचितश्चेति' पक्षे चाय्स्थाने चिभावः। अप+चि+क्त] पूजितः; हीनः; व्ययितः; अवयवाद्यपचययुक्तः; क्षीणः; कृशः; 'अपचितमपि गात्रं व्यायतत्वादलक्ष्यम्'—इति शाकुन्तले। ३८४

अपज्ञानम् क्ली. [अपह्नुतं ज्ञानम्, शाकपार्थिवादिः] ज्ञानापनयनम्; अपलापः; अपात्ययः। ७३०

अपटी स्त्री. [अल्पः पटः, अल्पार्थे नञ्समासः, गौरा-दित्वाद् ङीष्] वस्त्रप्रावरणं, चन्द्रः; जवनिका। 'पर्दा' इति भाषा। ३०९

अपत्यम् क्ली. [न पतति वंशो यस्मात्। पत्+बाहु-लकाद् यत् ततो नञ्समासः] पुत्रः; कन्या; सन्तानः; तोकं; सन्ततिः; प्रसूतिः; 'अस्मिंस्तु निर्गुणे गोत्रे नापत्यमुपजायते'—इति हितोपदेशे। 'महीभृतः पुत्र-वतोऽपि दृष्टिस्तस्मिन्नपत्ये न जगाम तृप्तिम्।'—इति कुमारसम्भवे। ४९७

अपत्रपा स्त्री. [अपत्रपणम्, त्रपूष्+षित्वादङ टाप्] अन्यस्मात् पित्रादेः लज्जाकरणम्; लज्जामात्रम्। (अपगता त्रपा अन्यतो लज्जा यस्याः सा), लज्जाहीना; लज्जाशून्या। ५६७

अपदान्तरः त्रि. [नास्ति पदान्तरं व्यवधानं यत्र सः] सन्निकर्षः; सान्निध्यं; सामीप्यं; नैकट्यम्; अव्य-वहितः; संयुक्तः; अभिन्नपदे क्ली.। ६९२

अपमित्यकम् क्ली. [अपमित्यापमानं स्वीकृत्य गृह्यते। अप+मेङ प्रणिदाने, क्त्वा तस्य ल्यप्, 'मयतेरि-दन्यतरस्या' मिति आस्थाने इत्, ततः कन्] ऋणम्।५७२

अपरम् क्ली. [नास्ति परो यस्मात्] प्राग्र्यं; (न पूर्यते, पॄ+अप्, ततो नञ्समासः) हस्तिपश्चाद्भागः; गजान्त्यजङ्घादिभागः; त्रि. (न पृणाति प्रीणयति। पॄ+पचाद्यच्, ततो नञ्समासः) अन्यः; इतरः; अर्वाचीनः। ६८९

अपराजिता स्त्री.—आस्फोता; गिरिकर्णी; विष्णुक्रान्ता; आस्फोटा; गवाक्षी; अश्वखुरी; श्वेता; श्वेतभण्डा; गवादनी; अद्रिकर्णी; कटभी; दधिपुष्पिका; गर्दभी; सितपुष्पी; श्वेतस्पन्दा; भद्रा; सुपुत्री; विषहन्त्री; नगपर्यायकर्णी; अश्वाह्वादिखुरी; पुष्पलताविशेषः; जयन्तीवृक्षः; अशनपर्णी; स्वल्पफला; शेफाली;

शमीभेदः; शङ्खिनी; हपुषाभेद। दुर्गा; यथा—'दशम्यां च नरैः सम्यक् पूजनीयाऽपराजिता। मोक्षार्थं विजयार्थं च पूर्वोक्तविधिना नरैः॥ नवमीशेषयुक्तायां दशम्यामपराजिता। ददाति विजयं देवी पूजिता जयवर्द्धिनी'—इति स्कान्दे। २०२

अपराद्धेषुः पुं. [अपराद्धः लक्ष्यात् च्युतः इषुः बाणो यस्य सः] लक्ष्यच्युतसायकः; अपराद्धपृषत्कः; यस्य बाणो लक्ष्यात् च्युतः सः। ४७१

अपराधः पुं. [अप+राध्+भावे घञ्] अकार्यादिदोषः; आगः; मन्तुः; 'अहन्यहनि यो मर्त्यो गीताध्यायं तु संपठेत्। द्वात्रिंशदपराधैस्तु अहन्यहनि मुच्यते॥ तुलस्या कुरुते यस्तु शालग्रामशिलार्चनम्। द्वात्रिंशदपराधांश्च क्षमते तस्य केशवः॥ द्वादश्यां जागरे विष्णोर्यः पठेत्तुलसीस्तवम्। द्वात्रिंशदपराधानि क्षमते तस्य केशवः॥ यः करोति हरेः पूजां कृष्णशस्त्राङ्कितो नरः। अपराधसहस्राणि नित्यं हरति केशवः'—इति हरिभक्तिविलासे ८ विलासः। ७४९

अपराह्णः पुं. [अह्नः अपरः, एकदेशिसमासः, समासान्तः टच्, अहः स्थाने अह्नादेशः] शेषम् अहः; दिनशेषभागः; 'रामाणां रमणीयतां विदधति ग्रीष्मापराह्णागमे'—इति अमरुशतके। 'तथा श्राद्धस्य पूर्वाह्णादपराह्णो विशिष्यते'—इति मनुः। ८२२

अपर्णा स्त्री. [नास्ति पर्णं तपस्यायां पर्णभक्षणवृत्तिर्वा यस्याः सा। टाप्] दुर्गा; पार्वती; 'स्वयंविशीर्णद्रुमपर्णवृत्तिता परा हि काष्ठा तपसस्तया पुनः। तदप्यपाकीर्णमतः प्रियंवदां वदन्त्यपर्णेति च तां पुराविदः'—इति कुमारसम्भवे (५-२८)। पत्रशून्ये त्रि.। १६

अपलापः पुं. [अप+लप्+भावे घञ्] सतोऽप्यसत्त्वेन कथनं; ज्ञातस्य गोपनं; निह्नुतिः; अपह्नुतिः; अपह्नवः; निह्नवः; प्रेम। ७३०

अपवरकः पुं. [अपव्रियन्ते लोकाः सम्भज्यन्तेऽत्र। अप+वृ+'ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च' इति अप्, ततः स्वार्थे कन्। अथवा अप्+वृ+ऋादिभ्यः संज्ञायां वुन् तस्य अक] अन्तर्गृहं; गर्भागारं; वासौकः; शयनास्पदं; 'दीपोऽपवरकस्यान्तर्वर्तते तत्प्रभा बहिः।' २९२

अपवर्गः पुं. [अपवृज्यते संसारः मुच्यतेऽनेन। अप+वृज्+घञ् कुत्वम्] मोक्षः; त्यागः; क्रियावसानसाफल्यं; कर्मफलं; क्रियान्तः; कार्यसमाप्तिः; पूर्णता; निर्वाणं; मुक्तिः; 'अपवर्गमहोदयार्थयोर्भुवमंशाविव धर्मयोर्गतौ'—इति रघुवंशे। समाप्तिः; अवसानम्; 'क्रियापवर्गेष्वनुजीविसात्कृताः कृतज्ञतामस्य वदन्ति सम्पदः'—इति भारविः। १२४

अपवर्जनम् पुं. [अप+वृज्+भावे ल्युट्] दानं; मोक्षः; त्यागः। ४१९

अपवादः पुं. [अप+वद्+भावे घञ्] निन्दा; अवर्णः; आक्षेपः; निर्वादः; परीवादः; उपक्रोशः; जुगुप्सा; कुत्सा; गर्हणं; वचनीयम्; 'लोकापवादाद्भयम्'—इति नीतिशतके। 'देव्यामपि हि वैदेह्यां सापवादो यतो जनः।' 'हा कथं सीतादेव्या ईदृशमचिन्तनीयं जनापवादं देवस्य कथयिष्यामि'—इति उत्तरचरिते। आज्ञा; अनुमतिः; आदेशः; 'ततोऽपवादेन पताकिनीपतेश्चचाल निर्ह्रादवती महाचमूः'—इति भारविः। विश्वासः; विशेषः; बाधकं; 'क्वचिदपवादविषयेऽप्युत्सर्गोऽभिनिविशते'—इति व्याकरणम्। रज्जुविवर्त्तस्य सर्पस्य रज्जुमात्रत्ववद् वस्तुविवर्त्तस्यावस्तुनोऽज्ञानादेः प्रपञ्चस्य वस्तुमात्रत्वम्; तदुक्तं—'सतत्त्वतोऽन्यथा प्रथा विकार इत्युदीरितः। अतत्त्वतोऽन्यथा प्रथा विवर्त इत्युदाहृतः।' अस्य फलम्, आभ्यामध्यारोपापवादाभ्यां तत्त्वम्पदार्थशोधनमपि सिद्धं भवति'—इति वेदान्तसारः। १४८

अपवारणम् क्ली. [अप+वृ+णिच् भावे ल्युट्] व्यवधानम्; अन्तर्द्धानम्। ७१९

अपवारितम् त्रि. [अप+वृ+णिच्, कर्मणि क्त] अन्तर्हितम्। ७४३

अपविद्धः त्रि. [अप+व्यध्+क्त] प्रत्याख्यातः; निराकृतः; त्यक्तः; प्रतिक्षिप्तः; 'कुवेरस्य मनःशल्यं शंसतीव पराभवम्। अपविद्धगदो बाहुर्भग्नशाख इव द्रुमः'—इति कुमारसम्भवे। चूर्णीकृतः; दलितः; 'मृदिताश्चापविद्धाश्च दृश्यन्ते कमलस्रजः'—इति रामायणे। ७०३

अपष्ठुः पुं. [अप+स्था+कु, सुषामादित्वात् षत्वम्] प्रतिकूलः; विपरीतः; 'तव धर्मराज इति नाम कथमिदमपष्ठु पठ्यते। भौमदिनमभिदधत्यथवा भृशमप्रशस्तमपि मङ्गलं जनाः'—इति माघे। वामः; दक्षिणेतरः; समयः; असत्यः; विरुद्धार्थः। वामे त्रि.। ७५६

अपष्ठु अव्य. [अप+स्था+'अपदुःसुषुः स्थः' इति कु, सुषामादित्वात् षत्वम्] विपरीतं; शोभनं; निरवद्यम् । ७५६

अपसदः पुं. [अपसीदति अपकृष्टत्वं प्राप्नोति । अप+सद्+पचाद्यच्] नीचः; इतरलोकः; 'विप्रस्य त्रिषु वर्णेषु नृपतेर्वर्णयोर्द्वयोः । वैश्यस्य वर्णे चैकस्मिन् षडेतेऽपसदाः स्मृताः'—इति मनुः (१०-१०) । इति मनूक्ते अनुलोमस्त्रीजाते वर्णसङ्करभेदे क्षत्रियादौ पुं. स्त्री. । ३३७

अपसर्पः त्रि. [अपसर्पति, अप+सृप्+कर्तरि अच्] चरः; 'हरकारा' इति प्रसिद्धः; गूढचरः; स्पशः; 'सर्पाधिराजोरुभुजोऽपसर्पं पप्रच्छ भद्रं विजितारि; भद्रः'—इति रघुवंशे । 'यथार्हवर्णः प्रणिधिरपसर्पश्चरः स्पशः । चारश्च गूढपुरुषश्चाप्तः प्रत्ययितस्त्रिषु'—इत्यमरः । ४२५

अपसव्यः त्रि. [सव्यादपक्रान्तः, 'निरादयः क्रान्ताद्यर्थे पञ्चम्याः' इति समासः] शरीरदक्षिणभागः; प्रतिकूलः; विपरीतः; 'वाता मण्डलिनश्चैनमपसव्यं प्रचक्रमुः'—इति रामायणे । ७५६

अपस्करः पुं. [अपकीर्यते, अप+कृ+अप्, 'अपस्करो रथाङ्गमिति' सुडागमः] रथाङ्गम्; अक्षयुगचक्रादि; गुह्यद्वारं; विष्ठा । ४४८

अपस्नानम् क्ली. [अप+स्ना+भावे ल्युट्] मृतस्नानं; मृतोद्देश्यकस्नानम्; अपवित्रस्नानं; स्नानावशिष्टजलेन स्नानं; स्नानोदकं; स्नानावशिष्टं जलम्; 'उद्वर्तनमपस्नानं विण्मूत्रे रक्तमेव च । श्लेष्मनिष्ठ्यूतवान्तानि नाधितिष्ठेत्तु कामतः'—इति मनुः (४-१३२) । ६३९

अपहस्तितः त्रि. [अपहस्त्यतेऽसौ, तत्करोतीति ण्यन्तात् क्त] अनादृतः; अवज्ञात; तिरस्कृतः । ७१४

अपहृतम् क्ली. [अप+हृ+क्त] कृतचौर्यं वस्तु । ३३९

अपह्नवः पुं. [अप्+ह्नु+भावे अप्] अपलापः; स्नेहः (८१५) ; 'ऋणे देये प्रतिज्ञाते पञ्चकं शतमर्हति । अपह्नवे तद् द्विगुणं तन्मनोरनुशासनम्'—इति मनुः (८-१३९) । ७३०

अपाक् [च्] त्रि. [अप+अञ्च्+क्विन् न लोपः] दक्षिणदिग्भववस्तु; अपाचीनम्; अपाची । १०३

अपाङ्गः पुं. [अपाञ्चति वक्रं गच्छति चक्षुर्यत्र । अप+अञ्च्+अधिकरणे घञ्] नेत्रयोरन्तः; चक्षुष्कोणः; 'चलापाङ्गां दृष्टिं स्पृशसि बहुशो वेपथुमतीम्'—इति शाकुन्तले । 'कुवलयदृशां लोललोलैरपाङ्गैः'—इति शान्तिशतके । तिलकः; अङ्गहीने त्रि. । ५२०

अपाचीनम् त्रि. [अपाच्यां दक्षिणस्यां दिशि भवम् । अपाची+ख, तस्य ईन] दक्षिणदिक्स्थम्; अपाचीभवं; अपाक्; विपरीतं (७५७); विपर्यस्तम् । १०३

अपाटवम् क्ली. [पटोर्भावः; पटु+भावे अण्, नास्ति पाटवं पटुता यत्र] रोगः; (पटोर्भावः पाटवं ततो नञ्समासः) अपटुता; जडता । ६००

अपात्ययः पुं. [अप+अति+इण् भावे अप्] अपलापः; ज्ञातस्यापह्नवः; अपज्ञानम्; अपव्ययः । ७३०

अपानम् क्ली. [अपानयति मलादिनिःसारणेन जीवयति । अप+अन्+णिच्+पचाद्यच्] मलद्वारं; गुदं; पायुः; गुह्यं; गुदवर्त्म; तनुह्रदः; मार्गः; चूतिः; चूतः; चुतः; पुं. गुदस्थवायुः; 'अवाग्गमनवान् पाय्वादिस्थानवर्ती वायुः'—इति वेदान्तसारः । 'अधो नयत्यपानं तु आहारं च नृणामधः । मूत्रशुक्रवहो वायुरपान इति कथ्यते ।' 'प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ'—इति भगवद्गीतायाम् । ५१३

अपाम्पित्तम् क्ली. [अपां पित्तमिव । अलुक्समासः, तदुत्पन्नत्वात्] अग्निः; चित्रकवृक्षः; वह्निसंज्ञकः; इत्यमरेणोक्तत्वात् । ६३

अपारम् क्ली. [नास्ति पारं यस्य तत्] अवारं, नद्यादेरर्वाक्पारम्; असीमे त्रि. । ६६७

अपाश्रयः पुं. [अपाश्रियते आच्छाद्यतेऽनेन । अप+आ+श्रि+करणे अच्] प्राङ्गणावरणं; मत्तालम्बः; प्रग्रीवः; मत्तवारणः । 'सामियाना, चँदोवा' इति भाषा । आश्रयशून्ये त्रि., चन्द्रातपः; निराश्रयः; आश्रितः; अधीनः; 'ब्राह्मणापाश्रयो नित्यमुत्कृष्टां जातिमश्नुते'—इति मनुः । ३०७

अपिनद्धम् त्रि. [अपि+नह्+कर्मणि क्त, भागुरिमते पिनद्धं च] परिहितवस्त्रादिः; आमुक्तः; प्रतिमुक्तः; पिनद्धः । ७४७

अपुनर्भवः पुं. [न पुनर्भवति न पुनरुत्पद्यतेऽस्मात् । न पुनर्+भू+अपादाने अप्, मयूरव्यंसकादित्वात् समासः] मुक्तिः; कैवल्यं; पुनर्जन्माभावः; 'हेतौ

लिङ्गं प्रशमने रोगाणामपुनर्भवे । ज्ञानं चतुर्विधं यस्य स राजार्हो भिषक्तमः'—इति चरकः। कर्तरि अचि तु पुनर्जन्मशून्यः; मुक्तः इति यावत् । १२४

अपूपः पुं. [न पूयते विशीर्यति। न+पूय्+बाहुलकात् प, यलोपः] पिष्टकः; 'भीमेनातिबलेन मत्स्यभवनेऽपूपा न संघट्टिताः।' गोधूमः; 'वृथा कृसरसं यावं पायसापूपमेव च'—इति मनुः। ३१९

अप्रधानम् क्ली. [न प्रधानं, नञ्समासः] प्राधान्यरहितम्; अप्राग्र्यम्; उपसर्जनं, वाच्यलिङ्गोऽप्ययम् । ८६५

अप्रलम्बम् क्ली. [प्र+लम्ब्+घञ्, नञोऽस्त्यर्थानामिति समासः]· अविलम्बं; शीघ्रं; तद्वति त्रि., सत्वरः; विलम्बरहितः; झटिति । ७८३

अप्रहतम् त्रि. [न प्रहण्यते स्म। प्र+हन्+क्त, नञ्समासः] अकृष्टभूमिः; खिला भूमिः; वस्त्रविशेषः; 'ईषद्धौतं नवं श्वेतं सदशं यन्न धारितम्। निर्णेजकाक्षालितं चाप्रहतं वास उच्यते।' १५८

अप्सरसः स्त्री. [अद्भ्यः समुद्रजलात् सरन्ति उद्यन्ति। अप्+सृ+असुन्] स्वर्वेश्याः उर्वशीमेनकाद्याः । बहुवचनान्तोऽयं शब्दः। ८८

अप्सरा स्त्री.—स्वर्वेश्या; 'स्त्रियां बहुष्वप्सरसः स्यादेकत्वेऽप्सरा अपि'—इति शब्दार्णवे। ८७

अफलः त्रि. [नास्ति फलं वृक्षोत्पन्नं धर्मोत्पन्नं वा यस्य सः] विफलः; निष्फलः; बन्ध्यः; अवकेशी; फलकाले अनुत्पन्नफलकवृक्षः; झावुकवृक्षः। ७६०

अबद्धम् त्रि. [बन्ध्+क्त, नञ्समासः] प्रकृतानुपयोगिवचनं; समुदायार्थशून्यवाक्यम्; अनर्थकं; यथा—'जरद्गवः कम्बलपादुकाभ्यां द्वारि स्थितो गायति मङ्गलानि। तं ब्राह्मणी पृच्छति पुत्रकामा राजन् रुमायां लशुनस्य कोऽर्थः ।।' अनियन्त्रितः; स्वाधीनः; मुक्तः; बन्धनशून्यम् । १४१

अबला स्त्री. [नास्ति बलं यस्याः सा] नारी; 'तस्मिन्नद्रौ कतिचिदबलाविप्रयुक्तः स कामी'—इति मेघदूते। ४८२

अब्जः पुं. [अद्भ्यः जातः। अप्+जन्+ड] चन्द्रः; धन्वन्तरिः; निचुलवृक्षः; पुं.-क्ली. शङ्खः; जलभवशुक्तिमुक्तादिकम्; 'अब्जमश्ममयञ्चैव राजतञ्चानुपस्कृतम्।' 'अब्जेषु चैव रत्नेषु सर्वेष्वश्ममयेषु च'—इति मनुः। ४२

अब्जम् क्ली. [अप्सु जातम् । अप्+जन्+कर्तरि ड, उपपदसमासः] पद्मं; दशार्बुदसंख्या; शतकोटिः। ६७९

अब्दः पुं. [आप्यते, आप्लृ व्याप्तौ, 'अब्दादयश्च' इति दन् ह्रस्वश्च । मेघपर्वतविशेषपक्षे तु अपो ददाति, अप्+दा+कर्तरि क] मेघः; वत्सरः (११६); मुस्ता; पर्वतप्रभेदः। ५८

अब्रह्मण्यम् क्ली. [ब्रह्मणि, ब्राह्मणोचितकर्मणि, अहिंसादौ साधु । ब्रह्मन्+यत्, नञ्समासः] अवध्ययाच्ञा; अवध्योक्तिः; नाट्योक्तौ नायं वध्य इत्याकारोक्तिः; 'नेपथ्ये अब्रह्मण्यमब्रह्मण्यम्, अत्रान्तरे ब्राह्मणेन मृतं पुत्रमुत्क्षिप्य राजद्वारे सोरस्ताडनमब्रह्मण्यमुद्घोषितम्'—इति उत्तरचरिते। वेदविरुद्धम्; अतिनिन्दितं कर्म; निरतिशयव्यसनशोकादिप्रकाशोक्तिरियम् । ४०६

अभया स्त्री. [नास्ति भयं यस्याः सकाशात् सा] हरीतकी; चम्पादेशजातपञ्चशिरा हरीतकी, सा नेत्ररोगे प्रशस्ता; दुर्गा। ६१८

अभिकः त्रि. [अभिकामयते इति। 'अनुकाभिके' तिसाधुः] कामी; कामुकः। ४९७

अभिख्या स्त्री. [अभि+ख्या+अङ] कीर्तिः; शोभा (५६५); नाम; आख्यानं; सौन्दर्यं; रमणीयता; 'काप्यभिख्या तयोरासीद् व्रजतोः शुद्धवेशयोः'—इति रघुवंशे । 'कामप्यभिख्यां स्फुरितैरपुष्य—दासन्नलावण्यफलोऽधरोष्ठः'—इति कुमारसम्भवे। १५३

अभिजनः पुं. [अभिजायतेऽत्र । अभि+जन्+आधारे घञ्, वृद्ध्यभावः] वंशः; अन्वयः; कुलम्; 'अभिजनतपोविद्यावीर्यक्रियातिशयैर्निजैः'—इति महावीरचरिते। 'कथं दशरथाज्जातः शुद्धाभिजनकर्मणः'—इति रामायणे। ख्यातिः; जन्मभूमिः; कुलश्रेष्ठः। ३९६

अभिजातः त्रि. [अभि+जन्+भावे क्त, अभिमतं प्रशस्तं जातं जन्म यस्य सः] कुलीनः; श्रेष्ठवंशोद्भवः; 'जातस्तेनाभिजातेन शूरः शौर्यवता कुशः। अमन्यतैकमात्मानमनेकं वशिनां वशी'—इति रघुवंशे। 'न म्लेच्छितव्यं यज्ञादौ स्त्रीषु नापकृतं वदेत् । सङ्कीर्णं नाभिजातेषु नाप्रबुद्धेषु संस्कृतम्'—इति मनुः। सुन्दरः; न्याय्यः; कुलजः; बुधः; पण्डितः; उचितः; उपयुक्तः; योग्यः; सुरूपः; मनोहरः; मान्यः; पूज्यः; धन्यः; श्लाघ्यः; भगवान्; समृद्धः। ३८९

अभिज्ञः त्रि. [अभि साकल्येन जानाति। अभि+ज्ञा+कर्तरि क] प्रवीणः; निपुणः; विज्ञः; बोद्धा; दक्षः; कुशलः। 'अभिज्ञाश्छेदपातानां क्रियन्ते नन्दनद्रुमाः' 'अनभिज्ञास्तमिस्राणां दुर्दिनेष्वभिसारिकाः।' ३३५

अभिज्ञानम् क्ली. [अभिज्ञायतेऽनेन। अभि+ज्ञा+करणे ल्युट्] चिह्नम्; अङ्कः; लक्षणम्; 'एतस्मान्मां कुशलिनमभिज्ञानदानाद्विदित्वा, मा कौलीनाच्चकितनयने मय्यविश्वासिनी भूः'—इति मेघदूते। 'एवमुक्तस्तु रामेण हनूमान् वानरर्षभः। पूर्ववृत्तमभिज्ञानं भूयः संप्रत्यभाषत'—इति रामायणे । सोऽयमितिज्ञानसाधनं चिह्नं; स्मरणार्थमङ्गुरीयादिकं चिह्नम्; 'अयं मैथिल्यभिज्ञानं काकुत्स्थस्याङ्गुरीयकः'—इति भट्टिकाव्ये। ४५

अभिधा स्त्री. [अभि+धा+करणे भावे च अङ, स्त्रियां टाप्] नाम; आख्या; आह्वा; अभिधानं; नामधेयम्। न्यायमते शब्दशक्तिः; मीमांसामते विधिसमवेतविधिव्यापारीभूतपदार्थः; 'स मुख्योऽर्थस्तत्र मुख्यो व्यापारोऽस्याभिधोच्यते'—इति काव्यप्रकाशः । 'सङ्केतितार्थस्य बोधनादग्रिमाभिधा' इति साहित्यदर्पणम् । १५२

अभिधानम् क्ली. [अभिधीयते अनेन। अभि+धा+करणे ल्युट्] कथनम्; उक्तिः; 'तवाभिधानाद्व्यथते नताननः'—इति भारविः। नाम; आख्या; नामधेयम्; 'आख्याह्वे अभिधानं च नामधेयं च नाम च'—इत्यमरः। 'शिखरिणि क्व नु नाम कियच्चिरं किमभिधानमसावकरोत्तपः'—इति साहित्यदर्पणे । उल्लेखः; निर्देशः। १३८

अभिधेयम् क्ली. [अभिधीयते अनेनेति, करणे यत्] अभिधानं; नाम; 'इति प्रयोजनाभिधेयसम्बन्धाः' इति वोपदेवः। त्रि. (अभि+धा+कर्मणि यत्) अभिधागम्यं; वाच्यं; प्रतिपाद्यम्। ८६७

अभिनयः पुं. [अभिनयति हृद्गतक्रोधादिभावं प्रकाशयति। अभि+नी+अच्] व्यञ्जकः; हृद्गतक्रोधादिभावाभिव्यञ्जकः; अङ्गुल्यादिना व्यक्तीकृतमनःकार्यं; दृश्यकाव्यं; रङ्गादिभिर्नटैः रामयुधिष्ठिरादीनामवस्थानुकरणम्; 'तामेतां परिभावयन्त्वभिनयैर्विन्यस्तरूपा बुधाः, शब्दब्रह्मविदः कवेः परिणतप्रज्ञस्य वाणीमिमाम्'—इति उत्तरचरिते। ९४

अभिनवः त्रि. [अभि+नु+भावे अप्] नूतनः; 'अभिनवमधुलोलुपस्त्वं तथा परिचुम्ब्य चूतमञ्जरीम्—इति शाकुन्तले। ७११

अभिनिर्याणम् क्ली. [शत्रुमभिलक्षीकृत्य निर्याणं निर्गमः] विजिगीषोः प्रयाणं; युद्धयात्रा; जिगीषया गमनम्। ४६१

अभिनिवेशः पुं. [अभि+नि+विश्+भावे घञ्] दृढसङ्कल्पः; 'इत्युक्तवन्तं जनकात्मजायां नितान्तरूक्षाभिनिवेशमीशम्'—इति रघुवंशे। 'अथानुरूपाभिनिवेशतोषिणा कृताभ्यनुज्ञा गुरुणा गरीयसा'—इति कुमारसम्भवे। आसक्तिः (८४१); अनुरागः; अभिलाषः; 'बलीयान् खलु मेऽभिनिवेशः'—इति शाकुन्तले। मनःसंयोगविशेषः; मनोनिवेशः; आवेशः; शास्त्रादौ प्रवेशः; निबन्धः। योगशास्त्रमते 'मरणजन्यभयजनकाविद्याविशेषः।' आग्रहः; अवश्यमिदं कर्तव्यमित्यादिरूपोऽध्यवसायः। ७८४

अभिन्नम् त्रि. [न भिन्नं, नञ्समासः] भेदहीनं; भिन्नरहितम्। ४३५

अभिप्रायः पुं. [अभि+प्र+इण्+भावे अच्] इच्छाविशेषः; आशयः; छन्दः; आकूतं; भावः; अभिसन्धिः; हृद्गतो भावः; 'दुर्योधन! ममाप्येतद् हृदि सम्परिवर्तते। अभिप्रायस्य पापत्वान्नैवं तु विवृणोम्यहम्'—इति महाभारते। 'तेषां त्वं स्वमभिप्रायमुपलभ्य पृथक् पृथक्'—इति मनुः। ७६२

अभिभवः पुं. [अभि+भू+भावे अप्] गर्वनाशः; परिभवः; पराभवः; तिरस्कारः; 'रघोरभिभवाशङ्कि चुक्षुभे द्विषतां मनः'—इति रघुवंशे। 'बलवानपि निस्तेजाः कस्य नाभिभवास्पदम्'—इति हितोपदेशे। पराजयः (८४५)। ७०४

अभिमन्त्रणम् क्ली. [अभि+मन्त्र्+करणे ल्युट्] मन्त्रपाठेन संस्कारकरणम्; 'दत्वान्नं पृथि पात्रमिति पात्राभिमन्त्रणम्'—इति याज्ञवल्क्यः। आह्वानम्; आकारणम्। १५४

अभिमानः पुं. [अभि+मन्+भावे घञ्] अवलेपः; अवश्यायः; टङ्कः; दर्पः; अहङ्कारः; गर्वः; स्मयः; ज्ञानं; बोधः; प्रणयः; प्रेमप्रार्थना; हिंसा; हननं; 'गर्वो मदोऽभिमानः स्यादहङ्कारस्त्वहङ्कृतिः। स्यादु-

द्धतमनस्कत्वे मानश्चित्तसमुन्नतिः ॥ अहङ्कारस्य पर्य्याया इति केचित्प्रचक्षते'—इति शब्दरत्नावली। ८२१

अभियातिः पुं. [युद्धार्थमभिमुखं याति, गच्छति। अभि+या+क्तिच्] अरातिः; शत्रुः। ४५५

अभियोगः पुं. [अभि+युज्+भावे घञ्] अभिग्रहः; अपकारकरणेच्छापूर्वकाक्रमणम्; उद्योगः; 'स प्रापदप्राप्तपराभियोगं नरेन्द्रगुप्तं नगरं मुहूर्तात्'—इति कुमारसम्भवे। अपराधादियोजनम्; अन्येन विरोधे स्वार्थसम्बन्धितया राजसमीपे कथनम्; 'रपट, नालिश' इति भाषा। 'अभियोगमनिस्तीर्य नैनं प्रत्यभियोजयेत्'—इति याज्ञवल्क्यः। युद्धार्थाह्वानम्। ८४३

अभिरूपः त्रि. [अभिरूपयति शास्त्रार्थं निरूपयति, अभिरूप+णिच्+अच्] पण्डितः; 'इयं हि रसभावविशेषदीक्षागुरोः विक्रमादित्यस्याभिरूपभूयिष्ठा परिषद्'—इति शाकुन्तले। मनोहरः। ३३२

अभिलाषः पुं. [अभि+लष्+भावे घञ्] लोभः; आकाङ्क्षा; स्पृहा; ईहा; तृट्; वाञ्छा; लिप्सा; कामः; तर्षः; मनोरथः; काङ्क्षा; कान्तिः; रुक्; रुचिः; दोहदः; अभिलासः; श्रद्धा; तृष्णा; मतिः; छन्दः; इच्छा; सङ्गमेच्छा; 'भव हृदय साभिलाषं सम्प्रति सन्देहनिर्णयो जातः'—इति शाकुन्तले। 'अतोऽभिलाषे प्रथमं तथाविधे'—इति रघुवंशे। ३६४

अभिलाषुकः त्रि. [अभि+लष्+शीलार्थे उकञ्] अभिलाषयुक्तः; लुब्धः; गृध्नुः; गर्द्धनः; लोभी; विलासविभवमानसः; 'जयमत्रभवान् नूनमरातिष्वभिलाषुकः'—इति भारविः। ३६३

अभिवादनम् क्ली. [आभिमुख्येन वाद्यते आशीः कार्यतेऽनेन। ण्यन्ताद् वदेः करणे ल्युट्] नामोच्चारणपूर्वकनमस्कारः; 'अभिवादये भो अमुकशर्माहम्' इत्येवं रूपः; पादस्पर्शपूर्वकनमस्कारः; पादग्रहणम्; 'अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः। चत्वारि सम्प्रवर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम्'—इति मनुः। ३९८

अभिवाद्यः त्रि. [अभिवादयितुं योग्यः। यत्] अभिवादनीयः; अभिवादनपूर्वकं वन्दनीयः; अभिनन्दनीयः; प्रणम्यः ३९८

अभिषङ्गः पुं. [अभि+सन्ज्+घञ्, उपसर्गादिति षः] सर्वतोभावेन सङ्गः; पराजयः; आक्रोशः; शपथः; मिथ्यापवादः; आलिङ्गनं; भूताद्यावेशः; 'अभिघाताभिचाराभ्यामभिषङ्गाभिशापतः'—इति माधवकरः। पराभवः; परिभवः; परिभूतिः; 'जाताभिषङ्गो नृपतिर्निषङ्गादुद्धर्तुमैच्छत् प्रसभोद्धृतारिः'—इति रघुवंशे। 'तीव्राभिषङ्गप्रभवेण वृत्तिं मोहेन संस्तम्भयतेन्द्रियाणाम्'—इति कुमारसम्भवे। शोकः; दुःखम्; 'अभिषङ्गजडं विजज्ञिवान् इति शिष्येण किलान्वबोधयत्'—इति रघुवंशे। ८४५

अभिषवः पुं. [अभि+सु+अप्, गुणः, षत्वं च] काञ्जिकम्। 'काँजी' इति भाषा। स्नानं; यज्ञः; सुरासंधानम्। ३१८

अभिषेणनम् क्ली. [सेनया अभियानम्, सेनाशब्दाद् णिच्, ल्युट्, उपसर्गात् सुनोतीति षत्वम्] शत्रुं प्रति सेनासहितगमनं; सेनया सह करणभूतया वा विजिगीषोः शत्रोराभिमुख्येन गमनम्; 'यत् सेनयाभिगमनमसौ तदभिषेणनम्'—इत्यमरः। ४६१

अभिसम्पातः पुं. [अभिसम्पात्यते योद्धा यत्र। अभि+सम्+पत्+आधारे घञ्] युद्धम्। ४५४

अभिसारः पुं. [अभि+सृ+आधारे घञ्] युद्धं; बलं; सहायः; साधनं; स्त्रीपुंसयोरन्यतरस्यान्यतरार्थं सङ्केतस्थलगमनम्; 'रतिसुखसारे गतमभिसारे मदनमनोहरवेशम्'—इति गीतगोविन्दे। 'एवं कृताभिसाराणां पुंश्चलीनां विनोदने'—इति साहित्यदर्पणे। ४६१

अभिसारिका स्त्री. [अभिसरति कान्तनिर्दिष्टसङ्केतस्थानं गच्छति या। अभि+सृ+ण्वुल्, स्त्रियां टाप्] स्वीयादिषोडशनायिकामध्ये नायिकाभेदः; कुलटा। 'कान्तार्थिनी तु या याति सङ्केतं साभिसारिका'—इत्यमरः। 'अभिसारयते कान्तं या मन्मथवशंवदा। स्वयं वाभिसरत्येषा धीरैरुक्ताभिसारिका।'—इति साहित्यदर्पणे। ४९६

अभिहारः पुं. [अभि+हृ+घञ्,] सन्नहनं; कवचधारणं; चौर्यं; सम्मुखे हरणम्; अभिग्रहणम्; अभियोगः; अपचिकीर्षयाभिगम्याक्रमणं; साहसं; अपहरणम्; 'यस्याभिहारं कुर्याच्च स्वयमेव नराधिपः।'—इति महाभारते। ८४३

अभीकः पुं. [अभि+कन् 'अनुकाभिकाभीकः कमिता' इति निपातितः] स्वामी; कविः; पतिः; कामुकः;

कामी; 'ददृशे पर्णशालायां राक्षस्याभीकयाथ सः'—इति भट्टिकाव्ये। उत्सुकः; क्रूरः; निष्ठुरः; निर्भयः; निःशङ्कः; 'अभीकः कामुके क्रूरे निर्भये त्रिषु ना कवौ'—इति मेदिनी। ४९७

अभीक्ष्णम् अव्य. [अभि + क्ष्णु तेजने, डमु, पृषोदरादित्वाद् दीर्घः, 'स्वरादिनिपातमव्ययम्' इति अव्ययत्वम्] पुनः पुनः; अनारतम् ; अभीक्ष्णं; क्ली. (क्षणमभिगतं, प्रादिसमासः पृषोदरादित्वाद् दीर्घः, अलोपश्च) भृशं; नित्यम्; तद्युक्तक्रिययोस्त्रि.। पुनः पुनः; शश्वत्; अविरतं, निरन्तरम्; 'उदीर्णरागप्रतिरोधकं जनैः अभीक्ष्णमक्षुण्णतयातिदुर्गमम्'—इति माघे। 'इच्छन्त्यभीक्ष्णं क्षयमात्मनोऽपि न ज्ञातयस्तुल्यकुलस्य लक्ष्मीः।'—इति भट्टिकाव्ये। ७२४

अभीरुः स्त्री. [भी + कर्तरि क्रुः शीलार्थे नञ्समासः] शतमूली; शतमूलिका। पुं. भैरवः; यथा—'अभीरुभैरवो भीरुर्भूतपो योगिनीपतिः'–इति वटुकभैरवस्तवः। निर्भये त्रि. निर्भीकः; भयहीनः; निःशङ्कः; 'स्थाने युद्धे च कुशलानभीरूनविकारिणः'—इति मनुः (७-१९०)। ६१९

अभीशुः पुं. [अभितः श्यति, मुखं तनूकरोति। अभि + शो + कु, पृषोदरादित्वाद् दीर्घः] किरणः; प्रग्रहः; 'बागडोर' इति भाषा। 'स्थिरा वसन्तु नेयो रथो अश्वा स एषां सुसंस्कृता अभीशवः'—इति ऋग्वेदे। स्त्री. (अभितः अश्नुते व्याप्नोति। अभि + अश् + कर्तरि उन्, पृषोदरादित्वाद् अलोपो दीर्घः) अङ्गुलिः। ३८

अभीषुः पुं. [अभि + इष् + उ] किरणः; कामः; अनुरागः। ३८

अभ्यग्रम् त्रि. [अभिमुखमग्रं यस्य तत्] समीपं; निकटम्। ६९२

अभ्यर्णम् त्रि. [अभि + अर्द् + क्त, आविदूर्ये इडभावः, णत्वम्] निकटं; समीपं; सन्निधानम्; अन्तिकम्; 'अभ्यर्णे परिरभ्य निर्भरमुरः प्रेमान्धया राधया'—इति गीतगोविन्दे। ६९२

अभ्यवहारः पुं [अभि + अव + हृ + भावे घञ्] भक्षणम्; आहारः। ३२५

अभ्यागमः पुं. [अभि + आ + गम् + अप्] युद्धं; समीपम्; अन्तिकं; सन्निधानं; मारणं; घातः; प्रहारः; वैरं; शत्रुता; विरोधः; अभ्युत्थानम्; अभ्युद्गमनं; सम्मुखागमनम्ः; उपस्थितिः; 'का त्वं शुभे कस्य परिग्रहो वा किं वा मदभ्यागमकारणं ते'—इति रघुवंशे। ४५३

अभ्यागारिकः त्रि. [अभ्यागारे तद्गतकर्मणि व्यापृतः, ठन् तस्य इक] कुटुम्बव्यापृतः; पुत्रदारादिपोषणव्यग्रः। ३५७

अभ्याशः त्रि. [आभिमुख्येनाश्यते व्याप्यते, अशू व्याप्तौ, घञ्] समीपम्। ६९२

अभ्यासः त्रि. [आभिमुख्येनास्यते क्षिप्यते, असु क्षेपे, कर्मणि घञ्] समीपम्; अभ्यसनम्; आवृत्तिः; शराभ्यासः; चित्तस्यैकस्मिन्नभ्यन्तरे बाह्ये वा प्रतिमादावालम्बने सर्वतः समाहृत्य पुनः पुनः स्थापनमभ्यासः। यथा—'अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय !'—इति भगवद्गीताटीकायां नीलकण्ठः। ६९२

अभ्यासः पुं. [भावे घञ्] खुरली; योग्या; शराभ्यासः। ४७०

अभ्युत्थानम् क्ली. [अभि + उत् + स्था + भावे ल्युट्] गौरवम्; आसनादेरुत्थान; यथा—'यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।'—इति भगवद्गीता। ७७८

अभ्युपगमः पुं. [अभि + उप + गम् + भावे अप्] स्वाकारः; अङ्गीकारः; प्रतिज्ञा; 'प्रसीदेति ब्रूयामिदमसति कोपे न घटते, करिष्याम्येवं नो पुनरिति भवेदभ्युपगमः'—इति रत्नावली। अनुमतिः; अनुमोदनं; निकटागमनम्। ८८६

अभ्युषः पुं. [अभ्युष्यते अग्निना दह्यतेऽसौ। अभि + उष् + बाहुलकात् कर्मणि क] अभ्यूषः; पौलिः। ५८५

अभ्यूषः पुं. [अभि + ऊष् + बाहुलकात् कर्मणि क] पाकावस्थागतकलायादिः; आरब्धपाकयवसर्षपादिः; वह्निना ईषद्दग्धः 'चुट-चुट' शब्दवान् इति केचित; दरदग्धः; आपक्वं; पौलः; अभ्युषः; अभ्योषः; पोलिका। 'रोटी, रोट' इति भाषा। ईषत्पक्वम्; 'आपक्वमवपक्वं स्यादाभ्युषः पौलिपौलिके। अभ्यूषोऽभ्योष इत्येते ईषत्पक्वयवादिषु'—इति शब्दरत्नावली। ५८५

अभ्योषः पुं. [अभ्युष्यते अग्निना दह्यतेऽसौ। अभि + ऊष् + कमणि घञ्] अभ्यूषः; अभ्युषः; पौलिः। ५८५

अभ्रम् क्ली. [अपो बिभर्ति इति। अप् + भृ + क। अथवा न भ्रश्यन्त्यापो यस्मात्, अन्येभ्योपीति ड] मेघः; मेषः;

(२७९); आकाशं; स्वर्णम्; उपधातुविशेषः; अभ्रकधातुः; 'अभ्रं कषायं मधुरं सुशीतम्, आयुष्करं धातुविवर्द्धनं च। हन्यात्त्रिदोषं व्रणमेहकुष्ठं, प्लीहोदरग्रन्थिविषकृमींश्च॥ रोगान् हन्ति द्रढयति वपुर्वीर्यवृद्धिं विधत्ते, तारुण्याढ्यं रमयति शतं योषितां नित्यमेव। दीर्घायुष्कान् जनयति सुतान् विक्रमैः सिंहतुल्यान्, मृत्योर्भीतिं हरति सततं सेव्यमानं मृताभ्रम्॥ पीडां विधत्ते विविधां नराणां, कुष्ठं क्षयं पाण्डुगदं च शोथम्। हृत्पार्श्वपीडाञ्च करोत्यशुद्धम्, अभ्रं ह्यसिद्धं गुरुतापदं स्यात्॥' ५८

अभ्रमातङ्गः पुं. [अभ्रस्य मेघस्य अधिष्ठाता मातङ्गः। शाकपार्थिवादित्वात् समासः] ऐरावतः; इन्द्रहस्ती; समुद्रजातः; पूर्वदिङ्नागः। ६१

अभ्रमाला स्त्री. [अभ्राणां माला श्रेणी, षष्ठीतत्पुरुषः] मेघश्रेणी; मेघसमूहः; घनघटा; कादम्बिनी। ५९

अमत्रम् क्ली. [अमति प्राप्नोति अन्नमत्र। अम् गत्यादिषु, आधारे अत्रन्] पात्रं; भाजनं; भोजनपात्रं; स्थालं; स्थानमित्यपि पाठः। ३२७

अमरः पुं. [मृ+कर्तरि अच्, नञ्समासः] देवः; 'विबभौ देवसङ्काशो वज्रपाणिरिवामरैः'—इति महाभारते। 'फलं कर्मायत्तं किममरगणैः किञ्च विधिना'—इति शान्तिशतके। कुलिशवृक्षः; अस्थिसंहारवृक्षः; पारदः; अमरसिंहः; आदिशाब्दिकः; नागलिङ्गानुशासननामककोषकारः; विक्रमादित्यनवरत्नान्तर्गतरत्नविशेषः; 'इन्द्रश्चन्द्रः काशकृत्स्नापिषली शाकटायनः। पाणिन्यमरजैनेन्द्रा जयन्त्यष्टादिशाब्दिकाः'—इति कविकल्पद्रुमः। ४

अमरावती स्त्री. [अमरा विद्यन्तेऽस्याम्। अमर+मतुप्, वत्वं दीर्घश्च] इन्द्रनगरी; पूषभासा; देवपूः; अमरा; सुरपुरी; सहस्राक्षपुरी; महेन्द्रनगरी; 'निष्प्रत्यूहं क्रतुशतं यः कश्चित् कुरुतेऽवनौ। जितेन्द्रियोऽमरावत्यां स प्राप्नोति पुलोमजाम्'—इति स्कान्दे काशीखण्डे १० अध्यायः। ५५

अमर्त्यभवनम् क्ली. [अमर्त्यानां देवानां भुवनं वासस्थानम्] स्वर्गः। ३

अमर्षः पुं. [मृष्+भावे घञ्, नञ्समासः, नास्ति मर्षः तितिक्षा यस्य] क्रोधः; 'कश्चित्पितृवधामर्षात् पुनर्नोत्सादयिष्यति'—इति रामायणे। अक्षमा; असहिष्णुता; इष्टघाते असहिष्णुत्वम्; 'यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः। हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः'—इति भगवद्गीता। ३६२

अमर्षणः त्रि. [मृष्+बाहुलकात् कर्तरि ल्युट्, नञ्समासः] क्रोधी; क्रोधनः; कोपनस्वभावः; अतिसंक्रुद्धः; प्रकोपितः; 'रघोरवष्टम्भमयेन पत्रिणा हृदि क्षतो गोत्रभिदप्यमर्षणः'—इति रघुवंशे। असहनः; असहिष्णुः; परकृतापमानादेरसहनशीलः; 'गत्वा ह्रदे वासुदेवेन सार्द्धममर्षणं धर्षयतः सुतं मे'—इति महाभारते। 'अमर्षणः शोणितकाङ्क्षया किं पदा स्पृशन्तं दशति द्विजिह्वः।'—इति रघुवंशे। ३६१

अमलानकम् क्ली. [न म्लायति न शीर्यते, ल्युट्, पृषोदरादिः] अम्लानपुष्पवद्वृक्षविशेषः; वर्णपुष्पम्। २०७

अमा अव्य. [न मा+स्वरादित्वादव्ययत्वम्] सह; निकटम्। ८८५

अमात्यः पुं. [अमा सह विद्यते। अमा+त्यप्] मन्त्री; 'शान्तो विनीतः कुशलः सत्कुलीनः शुभान्वितः। शास्त्रार्थतत्त्वगोऽमात्यो भवेद्भूमिभुजामिह'—इति युक्तिकल्पतरुः। 'भृता हि पाण्डुनामात्या बलं च सततं भृतम्। मान्यानन्यानमात्यांश्च ब्राह्मणांश्च तपोधनान्।'—इति महाभारते। ४२६

अमावस्या स्त्री. [अमा साहित्येन वसतश्चन्द्रार्कौ यस्याम्। अमा+वस्+आधारे ण्यत्, स्त्रियां टाप्] कृष्णपक्षान्ततिथिः; अमावास्या, दर्शः; सूर्येन्दुसङ्गमः; पञ्चदशी; अमावसी; अमावासी; अमामसी; अमामासी। ११२

अमावास्या स्त्री. [अमा सह चन्द्रार्कौ वसतो यत्र तिथौ सा। अमा+वस्+आधारे ण्यत्, स्त्रियां टाप्, णित्वाद् वृद्धिः] अमावसीतिथिः; 'अमावास्यां भवेद्वारो यदि भूमिसुतस्य च। गोसहस्रफलं दद्यात् स्नानमात्रेण जाह्नवी।' 'अमावास्यां तु कन्यार्के तीर्थप्राप्तौ तथा नृप! कृत्वा श्राद्धं विधानेन दद्यात् षोडशपिण्डकम्।' ११२

अमित्रः पुं. [अम् रोगे, इत्रच्] शत्रुः; रिपुः; शत्रुपक्षीयः; प्रतिकूलः; 'मातृरूपे ममामित्रे नृशंसे राज्यकामुके। अमित्रो मित्ररूपेण भ्रातुस्त्वमसि लक्ष्मण!'—इति रामायणे। ४५५

अमुक्तम् क्ली. [मुच्+क्त, न मुक्तम्, विरोधे नञ्समासः] छुरिकादिशस्त्रम्; मुक्तिरहिते अत्यक्ते च त्रि.। अप्राप्तमोचनः; अस्वतन्त्रः; 'अमुक्ता भवता नाथ मुहूर्तमपि

सा पुरा'—इति साहित्यदर्पणे। 'अमुक्तो मानसैर्दुः- खैरिच्छाद्वेषसमुद्भवैः'—इति महाभारते। खड्गादिकम्; 'खड्गादिकममुक्तं च नियुद्धं विगतायुधम्।' ४६२

अमुत्र अव्य. [अमुष्मिन्, अदस्+त्रल् उत्वमत्वे] जन्मान्तरं; परलोकः; अमुष्मिन् इत्यर्थस्य वाचकः; 'अनेनैवार्भकाः सर्वे नगरेऽमुत्र भक्षिताः'—इति कथा-सरित्सागरे। भवान्तरे; जन्मान्तरे; 'तथैव यः क्षमाकाले क्षत्रियो नोपशाम्यति। अप्रियः सर्वभूतानां सोऽमुत्रेह च नश्यति॥' 'इच्छद्भिः सततं श्रेय इह चामुत्र चोत्तमम्'-इति महाभारते। ८७७

अमृतम् क्ली. [मृ+भावे क्त। नास्ति मृतं मरणं यस्मात् तत्, तत्पायिनां मरणाभावात् तस्य तथात्वम्] मुक्तिः। (१३३) पीयूषं; पेयूषं; सुधा; समुद्रोद्भवदेवभक्ष्या-मरत्वजनकद्रव्यविशेषः; निर्जरं; समुद्रनवनीतकम्; 'यदा पृथुराजभयेन पृथ्वी गौर्भूता तदा देवा इन्द्रं वत्सं कृत्वा हिरण्मयपात्रेऽमृतरूपं पयोऽदूदुहन्, तत्तु दुर्वाससः शापात् समुद्रमध्ये गतं पश्चात् समुद्रमथनेऽमृतपूर्णकलसं गृहीत्वा धन्वन्तरिरुत्थितः'-इति भारत-भागवते। जलं (६४८); घृतं; यज्ञशेषद्रव्यम्; अयाचितवस्तु; दुग्धम्; औषधं; विषसामान्यं; वत्सनाभः; पारदः; अन्नं; धनं; स्वर्णं; भक्षणीयद्रव्यं; हृद्यं; स्वादुद्रव्यं; पुं. धन्वन्तरिः; देवता; वाराहीकन्दः; वनमुद्गः; हृद्यः; सुन्दरः; अतिहृद्यः; आत्मा; सूर्यः; सुरपतिः; इन्द्रः; मरणर-हिते त्रिः; 'अमृते जारजः कुण्डः'—इत्यमरः। आत्मनि; 'इन्द्रियेभ्यः परा ह्यर्था अर्थेभ्यश्च परं मनः। मनसस्तु परा बुद्धिर्बुद्धेरात्मा महान्परः। महतः परमव्यक्त-मव्यक्तादमृतः परः। अमृतान्न परं किंचित् सा काष्ठा सा परा गतिः।' १२४

अमृता स्त्री. [नास्ति मृतं मरणं यस्याः सा] गुडूची; मदिरा; इन्द्रवारुणी; ज्योतिष्मती; गोरक्षदुग्धा; अतिविषा; रक्तत्रिवृत्; दूर्वा; आमलकी; हरीतकी; तुलसी; पिप्पली; चम्पादेशजस्थूलमांसा हरीतकी; सूर्यदीधितिविशेषाः; 'सौरीभिरिव नाडीभिरमृता-ख्याभिरम्मयः।'—इति रघुवंशे। ६

अमृताशनः पुं. [अमृतम् अश्नाति भुङ्क्ते। अश्+बाहु-लकात् कर्तरि ल्युट्। अमृतस्य अशनः, षष्ठीतत्पुरुषः] देवता। ४

अम्बकम् क्ली. [अम्बति नक्षत्रपर्यन्तं गच्छति। अम्ब्+ ण्वुल्। वा अम्ब्यते भूगर्भे प्राप्यते। अम्ब्+कर्मणि घञ्, स्वार्थे कन्] नेत्रं; चक्षुः; 'आसीनमासन्न-शरीरपातः त्रियम्बकं संयमिनं ददर्श'—इति कुमार-सम्भवे। ताम्रम्। ५१९

अम्बरम् क्ली. [अबि शब्दे+भावे घञ्, अम्बः शब्दस्तं राति आदत्ते। अम्ब+रा+क] वस्त्रम्; 'एवमुक्त्वा सुमित्रां सा विवर्णा मलिनाम्बरा'—इति रामायणे। आकाशं, (१३७); 'दावाग्निः कथमम्बरे'—इति साहित्यदर्पणे। कार्पासः; सुगन्धिद्रव्यविशेषः; अभ्रधातुः। ५४८

अम्बरिषम् क्ली. [अम्ब्यते पच्यतेऽत्र। अबि+अरिष वा दीर्घः निपातनात्] भ्राष्ट्रः; भर्ज्जनपात्रम्। ३१३

अम्बरीषम् क्ली. [अबि गतौ+कर्मणि घञ् अम्बा लब्धा ईर्ष्या यस्मात् तत्, सिंहवत् पृषोदरादित्वात् रवर्णविपर्ययेण साधु] भ्राष्ट्रः; भर्जनपात्रं; युद्धम्; पुं. (अम्ब्यते पच्यते अत्र, निपातनात् साधुः) विष्णुः; शिवः; किशोरः; भास्करः; नृपभेदः; सूर्यवंशीय-नाभागराजपुत्रः; 'भगीरथसुतो राजा श्रुत इत्यभि-विश्रुतः। नाभागस्तु श्रुतस्यासीत् पुत्रः परमधार्मिकः॥ अम्बरीषस्तु नाभागिः सिन्धुद्वीपपिताऽभवत्'—इति हरिवंशे। नरकभेदः; आम्रातकवृक्षः; अनुतापः। ३१३

अम्बा स्त्री. [अम्ब्यते स्नेहेनोपगम्यते। अबि गतौ+घञ्, स्त्रियां टाप्] जननी; 'अम्ब! यत्त्वमिदं प्रात्थ प्रशमाय वचो मम।' 'नान्यदत्तमभीप्सामि स्थानमम्ब! स्व-कर्मणा'—इति विष्णुपुराणे। पाण्डुराजमातुः स्वसा; अम्बष्ठा; दुर्गा। ५०४

अम्बिका स्त्री. [अम्बा+स्वार्थे कन्, स्त्रियां टाप्] दुर्गा; पार्वती; शिवा; 'ईप्सितार्थक्रियोदारं तेऽभिनन्द्य गिरेर्वचः। आशीर्भिरेधयामासुः पुरःपाकाभिरम्बि-काम्'—इति कुमारसम्भवे। माता; जैनदेवीविशेषः; कटुकीवृक्षः; अम्बष्ठा; काशीराजस्य मध्यमदुहिता; विचित्रवीर्यस्य पत्नी; धृतराष्ट्रमाता; 'अम्बा ज्येष्ठा-ऽभवत्तासामम्बिका त्वथ मध्यमा। अम्बिकाम्बालिके भार्ये प्रादाद् भ्रात्रे यवीयसे॥ भीष्मो विचित्रवीर्याय विधिदृष्टेन कर्मणा'—इति महाभारते। १५

अम्बु क्ली. [अबि शब्दे, उण्] जलं; पानीयं; 'भुक्ता-

मृणालपटली भवता निपीतान्यम्बूनि यत्र नलिनानि निषेवितानि'—इति भामिनीविलासे। 'अम्बुजमम्बुनि जातं क्वचिदपि न जायतेऽम्बुजादम्बु'—इत्युद्भटः। 'गङ्गामम्बु सितमम्बु यामुनम्'—इति काव्यप्रकाशे। बालनामौषधिः। ६४८

अम्बुजम् क्ली. [अम्बुनि जातम्। अम्बु+जन्+ड] पद्मम्; 'इन्दीवरेण नयनं मुखमम्बुजेन'—इति शृङ्गारतिलके। वज्रं; पुं. [अम्बुसमीपे जातः] हिज्जलवृक्षः; निचुलवृक्षः; 'अम्बुजं कमले क्लीबं हिज्जले तु पुमानयम्' —इति शब्दरत्नावली। 'अम्बुजो निचुले पुंसि कमले तु नपुंसकम्'—इति मेदिनी। ६७९

अम्बुदः पुं. [अम्बु जलं ददाति। दा दाने+क] मेघः; 'सदा मनोज्ञाम्बुदनादसोत्सुकम्'—इति ऋतुसंहारे। 'शशाक निर्वापयितुं न वासवः स्वतश्च्युतं वह्निमिवाद्भिरम्बुदः'—इति रघुवंशे। मुस्तकं; 'कणीसविश्वानलदं सहाम्बुदम्'—इति वैद्यकम्। ८६२

अम्बूकृतम् क्ली. [अनम्बु अम्बु सम्पद्यमानं कृतम्। अम्बु+कृ+क्त, अभूततद्भावे च्वि] 'श्लेष्मकणनिर्गमसहितवाक्यं; सनिष्ठीवं; सथूत्कारं; सनिष्ठीवमुखरावः; 'दधति कुहरभाजामत्र भल्लूकयूनामनुरसितगुरूणि स्त्यानमम्बूकृतानि'—इति उत्तरचरिते। १४२

अम्भः [स्] क्ली. [आप्यते, आप्+'उदके नुम्भौ च' इत्यसुन् ह्रस्वः] जलं; बालनामौषधं; ज्योतिषे लग्नादितश्चतुर्थराशिः; अङ्कशास्त्रे चतुर्थसंख्या; वैदिकच्छन्दोभेदः। १६६, ६४८, ६६८

अयः पुं. [एति सुखमनेन। इण्+करणे अच्] शुभावहविधिः; मङ्गलानुष्ठानं; कल्याणदायकं; दैवम्; 'स गुप्तमूलप्रत्यन्तः शुद्धपार्ष्णिरयान्वितः'—इति रघुवंशे। नरकभेदः; अयःपानम्। १२६

अयः [स्] क्ली. [इण् गतौ, असुन्] लौहं; गुडूच्यादिलौहम्; 'आयुः प्रदाता बलवीर्यधाता, रोगापहर्ता मदनस्य कर्ता। अयःसमानं न हि किञ्चिदस्ति, रसायनं श्रेष्ठतमं नराणाम्॥' 'गुडूचीसारसंयुक्तं त्रिकत्रयसमन्वयः। वातरक्तं निहन्त्याशु सर्ववातहरं परम्॥' १७१

अयनम् क्ली. [अय्+भावे ल्युट्] पन्थाः; सूर्यस्य उत्तरदक्षिणदिग्गमनं; यथा—माघादिषण्मासा उत्तरायणं, श्रावणादिषण्मासा दक्षिणायनम। गमनम्; स्थानम् (७६२); रविसंक्रान्तिविशेषः; शास्त्रं; 'ज्योतिषामयनं नेत्रं निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। २६०

अयन्त्रितः त्रि. [न यन्त्रितः, नञ्समासः] अबाधः; अनर्गलः; अनियन्त्रितः; अनियमितः; स्वाधीनः; 'सावित्री मात्रसारोऽपि वरं विप्रः सुयन्त्रितः। नायन्त्रितस्त्रिवेदोऽपि सर्वाशी सर्वविक्रयी'—इति मनुः। ७५१

अयस्कान्तः पुं. [अयस्सु कान्तः रमणीयः] लौहविशेषः; कान्तलोहं; कान्तं; लौहकान्तकं; कान्तायसं; कृष्णलोहं; महालोहं; चुम्बकप्रस्तरः; चुम्बकः; प्रस्तरप्रभेदः; स तु चतुर्विधः—भ्रामकः, चुम्बकः, रोमकः, स्वेदकः। एते रसायने उत्तरोत्तरगुणिनः। 'उमारूपेण ते यूयं संयमस्तिमितं मनः। शम्भोर्यतध्वमाक्रष्टुमयस्कान्तेन लोहवत्'—इति कुमारसम्भवे। १६९

अयानयम् क्ली. [अयश्च अनयश्च तयोः समाहारः] इष्टानिष्टफलम्। १२६

अयि अव्य. [इण्+इन्] प्रश्ने; अनुनये; सम्बोधने; अनुरागे। 'अयि कठोर! यशः किल ते प्रियम्'—इति उत्तरचरिते। 'अयि घनोरु! पदानि शनैः शनैः'—इति वेणीसंहारे। 'अयि जीवितनाथ! जीवसीत्यभिधायोत्थितया तया पुरः,।' 'अयि सम्प्रति देहि दर्शनम्'—इति च कुमारसम्भवे (४-२७)। ८८२

अरम् क्ली. [इयर्ति गच्छत्यनेन, ऋ+अच्] शीघ्रं; चक्राङ्गं; शीघ्रगे त्रि.। पुं., जिनानां कालचक्रस्य द्वादशांशः; स तु अवसर्पिण्याः षष्ठभागः; जिनानामष्टादशतीर्थङ्करः। ६९७

अरघट्टकः पुं. [अरं शीघ्रं घटयते चाल्यतेऽसौ। अर+घट्ट+अच्, अरघट्ट+स्वार्थे कन्] जलोदञ्चनयन्त्रं; पादावर्तः। 'रहट' इति भाषा। ६८५

अरणिः पुं.-स्त्री. [ऋ+अनि] निर्मन्थ्यदारु; अग्निसाधनीभूतकाष्ठं; घर्षणद्वाराग्निजनककाष्ठम्; अग्निमन्थनकाष्ठम्; अग्न्युत्पादनाय यत्काष्ठं काष्ठान्तरेण घृष्यते तदरणिनामकं काष्ठम्; 'विपक्षवक्षोऽरणिमन्थनोत्थः प्रतापवह्नेरिव धूमलेखा'—इति धनञ्जयविजयव्यायोगे। गणिकारिकावृक्षः; सूर्यः। (ङ्यन्तत्वेन दीर्घान्तोऽपि) अरणी; यथा—'विधिना मन्त्रयुक्तेन रूक्षापि मथितापि च। प्रयच्छति फलं भूमिररणीव हुताशनम्॥'—इति पञ्चतन्त्रे। ४१५

अरण्यम् क्ली. [अयंते मृगैः। ऋ गतौ, अर्त्तेर्निच्चेति अन्य] वनम्; मोक्षप्रदं दण्डकादिकं नवारण्यम्; 'दण्डकं सैन्धवारण्यं जम्बुमार्गञ्च पुष्करम् । उत्पलावर्तकारण्यं नैमिषं कुरुजाङ्गलम्। हिमवानर्बुदश्चैव नवारण्यं विमुक्तिदम् ॥' कट्फलवृक्षः; स्वनामख्यातो रैवतस्य मनोः पुत्रः; 'अरण्यश्च प्रकाशश्च निर्मोहः सत्यवान् कृती। रैवतस्य मनोः पुत्राः पञ्चमं चैतदन्तरम्—इति हरिवंशे। २१०

अरण्यश्वा [न्] पुं. [अरण्ये श्वेव हिंस्रः] वृकः। 'भेड़िया' इति भाषा। २२८

अरतिः स्त्री. [रम्+क्तिन्, नञ्समासः] औत्सुक्यम्; उद्वेगः; अनवस्थितचित्तत्वं; क्रीडाभावः; रतिविरहः; विरक्तिः; प्रीतिविरहः; अनुरागराहित्यम्; उत्साहहीनता; उद्यमाभावः; उद्योगराहित्यं; निश्चेष्टता; सुखाभावः; दुःखं; क्लेशः; इष्टवियोगाच्चित्तस्याकुलीभावः; यदुक्तं—'स्वाभीष्टवस्त्वलाभेन चेतसो यानवस्थितिः। अरतिः सा तु विज्ञेया।' सुस्थताभावः; अस्वास्थ्यम्; 'श्रमोऽरतिविवर्णत्वं वैरस्यं नयनप्लवः'—इति सुश्रुते। पुं. क्रोधः। ७४२

अरत्निः पुं. [ऋ+कत्निः, रत्निः बद्धमुष्टिकरः, स नास्ति यस्य] विस्तृतकनिष्ठाङ्गुलिमुष्टिकहस्तः; कूर्परः; कफोणिः; 'एकविंशतियूपास्ते एकविंशत्यरत्नयः'—इति रामायणे। हस्तः; करतलपार्श्वः; बद्धमुष्टिहस्तः; 'घूंसा' इति भाषा। 'पदा मूर्ध्नि महाबाहुः प्राहरद् विलपिष्यतः। तस्य जानु ददौ भीमो जघ्ने चैनमरत्निना' —इति महाभारते। ५३६

अररम् त्रि. [ऋ+अरच्] कवाटं; कपाटम्; अररिः; शरीरकोषः; आच्छादनं; पुं. रणः; युद्धं; यज्ञाङ्गं; चर्मकर्त्तनच्छुरिकाभेदः। २८८

अरविन्दम् क्ली. [अराकाराणि दलानि तत्सादृश्यात् अराः, तान् विन्दति लभते इत्यर्थे विद्+श] पद्मं; कमलं; ताम्रं; रक्तकमलं; नीलोत्पलं; सारसपक्षी। कमले—'उन्मीलितं तूलिकयेव चित्रं सूर्यांशुभिर्भिन्नमिवारविन्दम्'—इति कुमारसम्भवे। 'अरविन्दमिदं वीक्ष्य खेलत्खञ्जनमञ्जुलम्। स्मरामि वदनं तस्याश्चारुचञ्चललोचनम्।'—इति साहित्यदर्पणे। ६८०

अरातिः पुं. [न राति ददाति सुखम्। रा+क्तिच्, नञ्समासः] शत्रुः; 'अरातिविक्रमालोकविकस्वरविलोचनः'—इति साहित्यदर्पणे। 'अनेकयुद्धविजयी सन्धानं यस्य गच्छति। तत्प्रभावेण तस्याशु वशं गच्छन्त्यरातयः।'—इति पञ्चतन्त्रे। ४५५

अरालम् त्रि. [ऋ+विच्, अरम् आलाति। अर+आ+ला+क] कुटिलं; वक्रम्; 'अरालैः स्वाभाव्यादलिकरभकश्रीभिरलकैः'—इति आनन्दलहरी। पुं. सर्ज्जरसः; मत्तहस्ती; वक्रहस्तः। ६९६

अरिः पुं. [ऋ+इन्] शत्रुः; रिपुः; वैरी; 'उपकर्त्रारिणा सन्धिर्न मित्रेणापकारिणा'—इति हितोपदेशे। 'अनन्तरमरिं विद्यादरिसेविनमेव च'—इति मनुः (७-१५८)। चक्रं; खदिरभेदः; सन्दानिका; दाली; खदिरपत्रिका। ४५५

अरित्रम् क्ली. [ऋच्छत्यनेन। ऋ+इत्र] कर्णः; कोटिपात्रं; केनिपातकः; केनिपातः; 'डाँड़ा' इति भाषा। 'लोलैररित्रैश्चरणैरिवाभितः'—इति माघे। ६७२

अरिष्टम् क्ली. [रिष् हिंसायां, क्त, नञ्समासः] उपद्रवः; उपलिङ्गः; उपसर्गः; अजन्यम्; ईतिः; उत्पातः; तक्रं (२७५); अशुभं (८०४); सूतिकागृहम्; 'अरिष्टशय्यां परितो विसारिणा सुजन्मनस्तस्य निजेन तेजसा'—इति रघुवंशे। मरणचिह्नम्; 'रोगिणो मरणं यस्मादवश्यंभावि लक्ष्यते। तल्लक्षणमरिष्टं स्याद्रिष्टमप्यभिधीयते ॥' मद्यं; यथा—द्राक्षारिष्टं; दशमूलारिष्टं; बब्बूलारिष्टम्; 'अरिष्टं लघुपाकेन सर्वतश्च गुणाधिकम्। अरिष्टस्य गुणा ज्ञेया बीजद्रव्यगुणैः समाः।'—इति वैद्यके। १२७

अरिष्टः पुं. [न रिष्टम् अशुभं यस्मात्। रिष् हिंसायां, क्त, नञ्समासः] पिचुमन्दः; निम्बवृक्ष; काकः (२४५); लशुनः; फेनिलवृक्षः; अरिष्टकः; 'रीठा' इति भाषा। कङ्कपक्षी; वृषभासुरः; मद्यविशेषः; 'द्रवेषु चिरकालस्थं द्रव्यं यत्सहितं भवेत्। आसवारिष्टभेदैस्तत् प्रोच्यते भेषजोचितम् ॥ यदपक्वौषधाम्बुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसवः। अरिष्टः क्वाथसिद्धः स्यात्तयोर्मानं पलोन्मितम्'—इति शार्ङ्गधरः। 'अरिष्टो द्रव्यसंयोगसंस्कारादधिको गुणैः। बहुदोषहरश्चैव दोषाणां शमनश्च सः॥ दीपनः कफवातघ्नः सरः पित्तविरोधनः। शूलाध्मानोदरप्लीहज्वराजीर्णार्शसां हितः॥'—इति सुश्रुतश्च। १९६

अरिष्टगृहम् क्ली. [न रिष्यते हिंस्रैः, एवंभूत गृहम्] सूतिकाभवनम्; 'जच्चाखाना','सौरी' इति भाषा। ४९९

अरुणः पुं. [ऋ+उनन्] ईषद्रक्तवर्णः; सूर्यसारथिः; विनतापुत्रः; गरुडज्येष्ठभ्राता; सूरसूतः; अनूरुः; काश्यपिः; गरुडाग्रजः; सूर्यः; अर्कवृक्षः; अव्यक्तरागः; सन्ध्यारागः; शब्दरहितः; कपिलवर्णः; कुष्ठभेदः; पुन्नागवृक्षः; गुडः; त्रि रक्तः; कपिलवर्णयुक्तः; कृष्णमिश्रितरक्तवर्णविशिष्टः; 'कपोताङ्गारुणो धूमो दृश्यते विमलाम्बरे'—इति रामायणे। ७३३

अरुन्तुदः त्रि. [अरूंषि मर्माणि तुदति। अरुष्+तुद्+खश्, मुम्] मर्मपीडकः; मर्मस्पृक्; मर्मपीडाकरः; हृदयग्रन्थिरूपमर्मस्थानस्पर्शकारी; 'नारुन्तुदः स्यादार्त्तोऽपि न परद्रोहकर्मधीः'—इति मनुः। 'तीक्ष्णा नारुन्तुदा बुद्धिः कर्म शान्तं प्रतापवत्'—इति माघे। 'अरुन्तुदमिवालानमनिर्वाणस्य दन्तिनः'—इति रघुवंशे। परुषः; कठोरः; श्रवणकटुः; 'माकन्दं मकरन्दतुन्दिलममुं गाहस्व काक स्वयं, कर्णारुन्तुदमन्तरेण रणितं त्वां मन्महे कोकिलम्'—इति भामिनीविलासे। ३७१

अरुः (स्) पुं.- क्ली. [ऋ+उस्] व्रणं; क्षतं; पुं. [ऋ+उसि] सूर्यः; रक्तखदिरः; अव्य. मर्म; सन्धिस्थानम्। ६३०

अर्कः पुं. [अर्च्+कर्मणि घञ्, कुत्वम्] सूर्यः; इन्द्रः; ताम्रं; स्फटिकः; पण्डितः; ज्येष्ठभ्राता; रविवारः; वृक्षविशेषः; क्षीरदलः; पुच्छी; प्रतापः; क्षीरकण्डकः; विक्षीरः; क्षीरी; खर्जुघ्नः; शीतपुष्पकः; जम्भनः; क्षीरपर्णी; विकीरणः; सदापुष्पः; सूर्याह्वः; आस्फोतकः; तूलफलः; शुकफलः; वसुकः; आस्फोतः; गणरूपः; मन्दारः; अर्कपर्णः। अथ श्वेतार्कपर्यायाः—अलर्कः; राजार्कः; प्रतापसः; गणरूपी। अथ रक्तार्कपर्यायाः—विश्वोरः; सदापुष्पी; सूपिका; आदित्यपुष्पिका; दिव्यपुष्पिका; अर्कः। ३६

अर्काश्मा [न्] पुं. [अर्कस्य अनुगतः अश्मा। मध्यपदलोपी कर्मधारयः] सूर्यकान्तमणिः; अरुणोपलः; प्रस्तरप्रभेदः। १७६

अर्गला स्त्री. [अर्ज्+कलच्, स्त्रियां टाप्] अर्गलं; कपाटावरोधककाष्ठविशेषः; 'ससम्भ्रमेन्द्रद्रुतपातितार्गला निमीलिताक्षीव भियामरावती'—इति काव्यप्रकाशे। 'तां सत्यनाम्नीं दृढतोरणार्गलां गृहैर्विचित्रैरुपशोभितां शिवाम्'—इति रामायणे। प्रतिबन्धः; प्रत्यवायः; अन्तरायः; 'ईप्सितं तदवज्ञानाद् विद्धि सार्गलमात्मनः।' कल्लोले त्रि.। देवीमाहात्म्यपाठस्यादौ पाठ्यस्तोत्रविशेषः। ३००

अर्घः पुं. [अर्घ्+घञ्] दूर्वाक्षतसर्षपपुष्पादिविरचितो देवब्राह्मणादिसम्मानार्थः पूजोपचारभेदः; पूजाविधिविशेषः; अर्चना; पूजा; 'अये वनदेवतेयं फलकुसुमपल्लवार्घेण मामुपतिष्ठते'—इति उत्तरचरिते। 'स प्रत्यग्रैः कुटजकुसुमैः कल्पितार्घाय तस्मै'—इति मेघदूते। 'दूर्वासर्षपपुष्पाणां दत्वार्घं पूर्णमञ्जलिम्'—इति याज्ञवल्क्यः। मूल्यं; 'कुर्युरर्घं यथापण्यं ततो विंशं नृपो हरेत्।' 'मणिमुक्ताप्रबालानां लौहानां तान्तवस्य च। गन्धानां च रसानां च विद्यादर्घबलाबलम्'—इति मनुः। ८३५

अर्चना स्त्री. [अर्च्+युच्+टाप्] पूजा; अर्चा। ८३५

अर्चा स्त्री. [अर्च्+आधारे अङ्] पूजा; देवादीनां पूजनम्; 'अर्चा चेद् विधितश्च ते वद तदा किं मोक्षलाभक्लमैः'—इति शिवशतके। प्रतिमा (१३१)। १२८

अर्चिष्मान् [त्] पुं. [अर्चिर्विद्यतेऽस्य। अर्चिस्+मतुप्] अग्निः; वह्निः; सूर्यः; देवर्षिभेदः; 'अर्चिष्मांस्तम्बरुश्चैव भारिश्च वदतां वरः। नेतारो देवदेवानामेते हि तपसान्विताः' इति हरिवंशे। त्रि. दीप्तः; तेजोविशिष्टः; प्रभावान्। ६२

अर्चिः [स्] स्त्री.-क्ली. [अर्च्+इसि] अग्निशिखा; किरणः; दीप्तिः (अयं शब्दः सान्त इदन्तश्च) 'हर्म्याणां हेमशृङ्गश्रियमिव निचयैरर्चिषामादधानः।' 'विरम विरम वह्ने! मुञ्च धूमानुबन्धं, प्रकटयसि किमुच्चैरर्चिषां चक्रवालम्'—इति रत्नावली।

अर्जुनम् क्ली. [अर्ज्+उनन्] तृणं; नेत्ररोगः; 'एको यः शशरुधिरोपमस्तु बिन्दुः, शुक्लस्थो भवति तमर्जुनं वदन्ति'—इति माधवनिदाने। 'नीरुक् श्लक्ष्णोऽर्जुनं बिन्दुः शशलोहितलोहितः।'—इति वाग्भटश्च। १९०

अर्जुनः पुं. [अर्ज्+उनन्] वृक्षविशेषः, नदीसर्जः; वीरतरुः; इन्द्रद्रुः; ककुभः; शम्बरः; पार्थः; चित्रयोधी; धनञ्जयः; वैरातङ्कः; किरीटी; गाण्डीवी; शिवमल्लकः; सव्यसाची; कर्णारिः; करवीरकः; कौन्तेयः; इन्द्रसूनुः; वीरद्रुः; कृष्णसारथिः; पृथाजः;

फाल्गुनः; धन्वी; 'अर्जुनस्य त्वचा सिद्धं क्षीरं दद्याद् धृदामये'—इति वैद्यके । पाण्डुराजस्य तृतीयपुत्रः; फाल्गुनः; जिष्णुः; किरीटी; श्वेतवाहनः; बीभत्सुः; विजयः; कृष्णः; सव्यसाची; धनञ्जयः; पार्थः; शक्रनन्दनः; गाण्डीवी; मध्यपाण्डवः; मध्यमपाण्डवः; श्वेतवाजी; कपिध्वजः; राधाभेदी; सुभद्रेशः; गुडाकेशः; बृहन्नलः; ऐन्द्रिः । कार्तवीर्यार्जुनः; मयूरः; मातुरेकसुतः; श्वेतवर्णः । १९५

अर्जुनः त्रि. [अर्ज् +उनन्] श्वेतः । ७३२

अर्जुनी स्त्री. [अर्ज् +उनन्, गौरादित्वाद् ङीष्] धेनुः; करतोयानदी; कुट्टनी; उषा । २६८

अर्णः [स्] क्ली. [ऋच्छति, ऋ गतौ, 'उदके नुट् चे' त्यर्त्तेरसुन् तस्य च नुट्] जलम्। ६४८

अर्णवः पुं. [अर्णांसि जलानि सन्त्यस्मिन् । 'अर्णसो लोपश्चेति' व सलोपश्च] समुद्रः; 'अधृष्यश्चाभिगम्यश्च यादोरत्नैरिवार्णवः–' इति रघुवंशे । ६५२

अर्तिः स्त्री. [अर्द् + क्तिन्] पीडा; 'चूर्णं समं रुचकहिङ्गुमहौषधानां शुण्ठ्यम्बुना कफसमीरणसम्भवासु । हृत्पार्श्वपृष्ठजठरार्तिविसूचिकासु पेयन्तथा यवरसेन च विड्विबन्धे'—इति वैद्यके । धनुरग्रभागः । ६२६

अर्थः पुं. [अर्थ् +घञ्] धनम्; 'अर्थेन बलवान् सर्वः अर्थाद्भवति पण्डितः'—इति हितोपदेशे ।(८६७)अभिधेयः; शब्दप्रतिपाद्यः; 'वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये'–रघुवंशे (१-१) । कारणम्; अभिप्रायः; प्रयोजनं; वस्तु; द्रव्यं; पदार्थः; विषयः; याच्ञा; निवृत्तिः; प्रकारः। ८०

अर्थवादः पुं. [अर्थस्य लक्षणया स्तुत्यर्थस्य निन्दार्थस्य वा वादः । अर्थ+वद्+करणे घञ्] निन्दाप्रशंसाकरणम्; 'विरोधे गुणवादः स्यादनुवादोऽवधारिते । भूतार्थवादस्तद्धानावर्थवादस्त्रिधा मतः'—इति भट्टः । १४५

अर्थव्ययसहः पुं. [अर्थव्ययस्य सहः। अर्थ+व्यय+सह् +अच्] अपव्ययी; व्यालः । ८३२

अर्थसंग्रहः पुं [अर्थस्य संग्रहः] धनसञ्चयः; कोशः; हेमरूप्यम् । ८४०

अर्थागमः पुं. [अर्थस्य आगमः । षष्ठीतत्पुरुषः] धनागमः; आयः; 'अर्थागमो नित्यमरोगिता च प्रिया च भार्या प्रियवादिनी च । वश्यश्च पुत्रोऽर्थकरी च विद्या षड् जीवलोकस्य सुखानि राजन्!'—इति हितोपदेशे । ४३३

अर्थी [न्] त्रि. [अर्थयते इत्यर्थी] याचकः; धनी [अर्थो विद्यतेऽस्येति]; सहायः; सेवकः; विवादी । ३५९

अर्धम् क्ली. [ऋध्+घञ्] समानांशः; समभागः; 'आधा' इति भाषा । समभागेऽर्द्धशब्दः पुमान् क्लीवं च। अर्द्धशब्दः पुंल्लिङ्गः खण्डपर्यायः एव, विभागीकृत्य वण्टितस्य तुल्यवण्टिते क्लीवमेवेति । ५६२

अर्धः पुं. [ऋध्+घञ्] एकदेशः; भित्तं; शकलं; खण्डं; 'पश्चार्द्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद्भूयसा पूर्वकायम्'—इति शाकुन्तले । 'सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः। अर्धेन कुरुते कार्यं सर्वनाशो हि दुःसहः'—इति पञ्चतन्त्रे । ७१३

अर्धगुच्छः पुं. [अर्धचन्द्रसमः गुच्छः] चतुर्विंशतिगुच्छकहारः। ५६२

अर्धचन्द्रः पुं. [अर्धं चन्द्रस्य] बाणविशेषः; 'चतुर्भिरर्धचन्द्रैश्च जघान चतुरो हयान्'—इति रामायणे। नखक्षतं; गलहस्तः; 'शृगालाः सर्वेऽर्धचन्द्रं दत्त्वा निःसारिताः'—इति पञ्चतन्त्रे। 'गर्दनिया' इति यस्य प्रसिद्धिः। चन्द्रकः; चन्द्रखण्डम्; मयूरपुच्छशीर्षकम्। ४६९

अर्धोरुकम् क्ली. [अर्धमूरोः अर्द्धोरु, तत्र काशते। काश्+ड] उत्तमस्त्रीणाम् अर्धोरुपर्यन्तं चेलनाकारपरिधेयवस्त्रं; चण्डातकम् । 'लहँगा' इति भाषा । ५४७

अर्भकः पुं. [ऋधू वृद्धौ, वुन् भान्तादेशश्च] शिशुः; 'अभूच्च नम्रः प्रणिपातशिक्षया पितुर्मुदं तेन ततान सोऽर्भकः'—इति रघुवंशे। मूर्खः; कृशः; स्वल्पः; सदृशः । ५०२

अर्यः पुं. [ऋ+यत्] स्वामी; प्रभुः; वैश्यः; त्रि. श्रेष्ठः; उत्कृष्टः; न्याय्यः । ३४३

अर्यमा [न्] पुं. [अर्यं श्रेष्ठं मिमीते । अर्य+मा+कनिन्] सूर्यः; 'प्रोषितार्यमणं मेरोरन्धकारस्तटीमिव'—इति माघे। 'सूर्योऽर्यमा भगस्त्वष्टा पूषार्कः सविता रविः। गभस्तिमानजः कालो मृत्युर्धाता प्रभाकरः'—इति महाभारते। द्वादशादित्यविशेषः; 'मारीचात् कश्यपाज्जातास्तेऽदित्या दक्षकन्यया। तत्र शक्रश्च विष्णुश्च जज्ञाते पुनरेव ह॥ अर्यमा चैव धाता च त्वष्टा पूषा च भारत।

विवस्वान् सविता चैव मित्रो वरुण एव च॥ अंशो भगश्चातितेजा आदित्या द्वादश स्मृताः'—इति हरिवंशे। अर्कवृक्षः; पितृदेवविशेषः। ३५

अर्यः पुं. [ऋ+यत्] स्वामी; प्रभुः; 'अर्यः प्रेम्णा नो तथा वल्लभस्य'—इति माघे (१८-५२)। वैश्यः। त्रि. श्रेष्ठः; उत्कृष्टः; न्याय्यः। ३४३

अर्वती स्त्री. [अर्व् + वनिप् + ङीप्] घोटकी; कुट्टनी। ४४०

अर्वा [न्] त्रि. [ऋ+वनिप्] कुत्सितः; (४३६) पुं., घोटकः; माघे (१२-३१)। इन्द्रः; गोकर्णपरिमाणम् ४४०

अर्वाक्कूलम् क्ली. [अर्वाक् च तत्कूलम्] अवारम्; अर्वाक्तीरम्। 'इस पार' इति भाषा। ६६७

अर्शम् क्ली. [ऋश् + अच्] अर्शोरोगः; कलिकाकारगुह्यस्थरोगभेदः। ६०६

अर्शः [स्] क्ली. [ऋ+असुन्+शुट्] पायुरोगः; दुर्नामकं; दुर्नाम; गुदकीलः; गुदाङ्कुरः; अनामकम्; अर्शोरोगः। 'मरिचमहौषधचित्रकशूरणभागो यथोत्तरं द्विगुणः। सर्वसमो गुडभागः सेव्योऽयं मोदकः प्रसिद्धफलः। ज्वलनं ज्वलयति जाठरमुन्मूलयति शूलगुल्मगदान्। निःशेषयति श्लीपदमर्शांसि विनाशयत्याशु'— इति वैद्यके। ६०५

अर्शसः त्रि. [अर्शस् + अस्त्यर्थे अच्] अर्शोरोगयुक्तः; 'अन्नपानौषधं सर्वं तत्सेव्यं नित्यमर्शसाम्। हस्ते पादे मुखे नाभ्यां गुदे वृषणयोस्तथा॥ शोथो हृत्पार्श्वशूलं च यस्यासाध्योऽर्शसो हि सः'—इति भावप्रकाशः। ६०६

अर्हन् [त्] पुं. ['अर्हः प्रशंसायामिति' शतृ] क्षपणकः; बुद्धः; जिनः; पारगतः; त्रिकालवित्; क्षीणाष्टकर्मा; परमेष्ठी; अधीश्वरः; शम्भुः; स्वयम्भूः; भगवान्; जगत्प्रभुः; तीर्थङ्करः; तीर्थंकरः; जिनेश्वरः; वादी; अभयदः; सार्वः, सर्वज्ञः, सर्वदर्शी, केवली, देवाधिदेवः, बोधदः, पुरुषोत्तमः, वीतरागाप्तः; त्रि. पूज्यः; मान्यः; स्तुत्यः; 'यदध्यासितमर्हद्भिस्तद्धि तीर्थं प्रचक्षते'—इति कुमारसम्भवे। 'त्वमर्हतामग्रसरः स्मृतोऽसि नः'—इति शाकुन्तले। ८६

अलम् क्ली. [अल्+अच्] वृश्चिकपुच्छकण्टकः। 'बिच्छू का डंक' इति भाषा। हरितालम्; अव्य. भूषणं; पर्याप्तिः; वारणं; निरर्थकं; शक्तिः; अव्यर्थं; 'सर्वं मे विमलं वदामलमलं गोलं विजानासि चेत्'—इति लीलावती। ६४५

अलकः पुं.– क्ली. [अलति भूषयति मुखम्। अल्+क्वुन्] कुटिलकुन्तलः; चूर्णकुन्तलः; भङ्गियुतः केशः; [कर्पूरादेः क्षोदश्चूर्णं तत्सहिताः कुन्तलाश्चूर्णकुन्तलाः, तद्धि तत्र न्यस्यते। अलति भूषयति मुखमित्यलकम्।] 'कर्णेषु योग्यं नवकर्णिकारं स्तनेषु हारा अलकेष्वशोकम्'—इति ऋतुसंहारे। 'हस्ते लीलाकमलमलके बालकुन्दानुविद्धम्'—इति मेघदूते। पुं. [अल्+क्वुन्] अलर्कः; विक्षिप्तकुक्कुरः। ५३१

अलका स्त्री. [अल्+क्वुन्+टाप्] कुबेरनगरी; अष्टवर्षावधि दशवर्षपर्यन्तवयस्का कन्या। ८३

अलक्तकः पुं. [न रक्तोऽस्मात्। रस्य लत्वम्। अलक्तः, स्वार्थे कन्] निर्भर्त्सनम्; अलक्तः; लाक्षा; वृक्षनिर्यासविशेष; राक्षा; जतु; यावः; द्रुमामयः; रक्षा; अरक्तः; जतुकं; यावकः; रक्तः; पलङ्कषा; कृमिः; वरवर्णिनी; लाक्षारसः; जतुरसः; रागः; जननी; जनकरी; सम्पद्या; चक्रवर्तिनी; 'अलक्तकाङ्कानि पदानि पादयोः'—इति कुमारसम्भवे। 'पादालक्तकरक्तमौक्तिकशिलः सिद्धाङ्गनानाङ्गतैः'—इति नागानन्दे। ५५५

अलक्ष्मीः स्त्री. [न लक्ष्मीः, नञत्र विरोधे] नरकदेवता; निर्ऋतिः; कालकर्णी; कालकर्णिका; ज्येष्ठा देवी; दरिद्रा देवी; 'अलक्ष्मीस्त्वं कुरूपासि कुत्सितस्थानवासिनी। सुखरात्रौ मयादत्तां गृह्ण पूजां च शाश्वतीम्॥' 'एवं गते निशीथे तु नारीभिः स्वगृहाङ्गनात्। अलक्ष्मीश्च बहिष्कार्या अमन्त्रं च यथाविधि॥' 'एवं गते निशीथे तु जने निद्रार्धलोचने। तावन्नगरनारीभिः शूर्पडिण्डिमवादनैः। निष्काश्यते प्रहृष्टाभिरलक्ष्मीः स्वगृहाङ्गनात्'—इति निर्णयसिन्धौ मदनरत्नधृतभविष्यपुराणम्। ८६

अलगर्दः पुं. [लगति स्पृशति, क्विप्, लग्। अर्दयति, अर्द् + अच्, अर्दः, लक् चासौ अर्दश्चेति लगर्दः, लग्नः सन् पीडकः इत्यर्थः, नञ्समासे अलगर्दः। निर्विषत्वात् तद्भिन्नः] जलसर्पः (जलवोडा, अलाध); सविषो जलव्यालभेदः। 'तत्र सविषाः कृष्णाः कर्बुरा अलगर्दा इन्द्रायुधाः सामुद्रिका गोचनन्दाश्चेति'—सुश्रुते।

अलगर्द्धः, पुं. [अलं गृध्यति इति, गृध्+अच्, पृषोदरादित्वात् साधुः] जलव्यालः। ६४३

अलङ्करणम् क्ली. [अलम्+कृ+भावे ल्युट्] भूषणम्। ५५८

अलङ्कर्मीणः त्रि. [अलं समर्थः कर्मणे, ख] कार्यकुशलः; कर्मक्षमः; चतुरः। ३७०

अलङ्कारः पुं. [अलम्+कृ+भावे घञ्] भूषणम्; आभरणं; परिष्कारः; विभूषणं; मण्डनम्; अलङ्क्रिया; भूषा; अलङ्करणं; कलापः। 'रेवत्यश्विधनिष्ठासु हस्तादिष्वपि पञ्चसु। गुरुशुक्रबुधस्याह्नि वस्त्रालङ्कारधारणम्।' काव्यालङ्कारः; स च द्विविधः, शब्दालङ्कारः अर्थालङ्कारश्च। तस्य लक्षणं 'काव्यशोभाकरो धर्मः'—इति काव्यादर्शः। ५३९

अलर्कः पुं. [अलमर्कतेऽर्च्यते वा। अर्क्+अच्, अर्च्+घञ् वा] क्षिप्तकुक्कुरः, विक्षिप्तकुक्कुरः। 'पागल कूकुर' इति भाषा। 'आलर्कं विषमिव सर्वतः प्रसृप्तम्'—इति उत्तरचरिते। श्वेतार्कवृक्षः; 'अलर्को गुणरूपः स्यान् मन्दारो वसुकोऽपि च। श्वेतपुष्पः सदापुष्पः स बालार्कः प्रतापसः॥ रक्तोऽपरोऽर्कनामा स्यादर्कपर्णो विकीरिणः। रक्तपुष्पः शुक्लफलः तथास्फोटः प्रकीर्तितः'—इति भावप्रकाशः। तत्पर्यायाः— प्रतापसः; राजार्कः; गणरूपी; 'सफेद मदार' इति भाषा। शूकराकाराष्टपादतीक्ष्णदन्तसूच्याकृतिलोमजन्तुविशेषः। दंशनामासुरो भृगुशापाद् अयं जन्तुर्भूत्वा कर्णस्योरुं भित्वा परशुरामदृष्टिपातात् शापमुक्तः पूर्वरूपो बभूव। यथा—'ददर्श रामस्तं चापि कृमिं शूकरसन्निभम्। अष्टपादं तीक्ष्णदंष्ट्रं सूचीभिरिव संवृतम्॥ रोमभिः संनिरुद्धाङ्गमलर्कं नाम नामतः। सोऽब्रवीदहमासं प्राग् दंशो नाम महासुरः। पुरा देवयुगे तात! भृगोस्तुल्यवया इव॥ सोऽहं भृगोः सुदयितां भार्यामपहरं बलात्। महर्षेरभिशापेन कृमिभूतोऽपतं भुवि'—इति महाभारते राजधर्मे। नृपतिविशेषः— स्वनामख्यातो राजा; 'शैब्यः श्येनकपोतीये स्वमांसं पक्षिणे ददौ। अलर्कश्चक्षुषी दत्त्वा जगाम गतिमुत्तमाम्'—इति रामायणे। स्वनामख्यातकाशिराजः; 'वत्सपुत्रस्त्वलर्कस्तु सन्नतिस्तस्य चात्मजः। अलर्कः काशिराजस्तु ब्रह्मण्यः सत्यसङ्गरः॥ षष्टिवर्षसहस्राणि षष्टिवर्षशतानि च। तस्यासीत् सुमहद्राज्यं रूपयौवनशालिनः'—इति हरिवंशे। २८२

अलसः त्रि. [न लसति व्याप्रियते। लस्+अच्] आलस्ययुक्तः; मन्दः; तुन्दपरिमृजः; आलस्यः; शीतकः; अनुष्णः; शीतलः; कुण्ठः; मुखनिरीक्षकः; क्रियामन्दः; क्रियाजडः; अवश्यकर्तव्येषु अप्रवृत्तिशीलः; 'अव्यवसायिनमलसं दैवपरं साहसाच्च परिहीनम्। प्रमदेव वृद्धपतिं नेच्छत्युपगूहितुं लक्ष्मीः'—इति हितोपदेशे। पुं. वृक्षविशेषः; पादरोगभेदः; 'दुष्टकर्दमसंस्पर्शाः कण्डूक्लेदान्वितान्तराः। अङ्गुल्योऽलसमित्याहुः'—इति वाग्भटः। 'करञ्जबीजं रजनी कासीसं पद्मकं मधु। रोचना हरितालं च लेपोऽयमलसे हितः'—इति भावप्रकाशः। ३८७

अलातम् क्ली. [ला+क्त, नञ्समासः] अङ्गारः; अर्द्धदग्धकाष्ठं; 'कुरुतेऽस्मिन्नमोघेऽपि निर्वाणालातलाघवम्'—इति कुमारसम्भवे। ६७

अलाबूः पुं.–स्त्री. [न लम्बते। न+लबि+ऊणित् नलोपश्च वृद्धिः] लताविशेषः; तत्फलं च; तुम्बः; तुम्बकः; तुल्वा; तुम्बी; पिण्डफला; महाफला; आलाबुः; एलाबुः; लाबुः; लाबुका; तुम्बिका; तुम्बिः; 'लाउ, लौकी, तुमड़ी' इति भाषा। 'अलाबुः कथिता तुम्बी द्विधा दीर्घा च वर्तुला। मिष्टं तुम्बीफलं दीर्घं पित्तश्लेष्मापहं गुरु॥ वृष्यं रुचिकरं प्रोक्तं धातुपुष्टिविवर्धनम्'—इति भावप्रकाशः। 'वर्चोभेदीन्यलाबूनि रूक्षशीतगुरूणि च'—इति चरकः। 'अलाबुर्भिन्नविट्का तु रूक्षा गुर्व्यतिशीतला'—इति सुश्रुतः। २०९

अलिः पुं.-स्त्री. [अलति दंशे समर्थो भवति यः। अल+इन्] भ्रमरः; 'अलिपङ्क्तिरनेकशस्त्वया गुणकृत्ये धनुषो नियोजिता'—इति कुमारसम्भवे। 'अनुगतमलिवृन्दैर्गण्डभित्तीर्विहाय'—इति रघुवंशे। वृश्चिकः; काकः; कोकिलः; मदिरा; वृश्चिकराशिः। २५५

अलिकम् क्ली. [अल्यते भूष्यते, अल्+कर्मणि इकन्] ललाटम्; 'अलिकेन च हेमकान्तिना'—इति भामिनीविलासे (२-१७१)। ५२५

अलिञ्जरः पुं. [अल्+इन्, अलिं सामर्थ्यं जरयति जृणाति वा। अलि+जॄ+अच्, पृषोदरादित्वात् साधुः] मणिकं; मृण्मयं; बहुजलधरपात्रम्;

अलंजरः; मृदादिनिर्मितजलाधारविशेषः; 'घड़ा' इति भाषा। 'उदकान्तमुपानीय मत्स्यं वैवस्वतो मनुः। अलिञ्जरे प्राक्षिपत्तं चन्द्रांशुसदृशप्रभम्'—इति महाभारते। ३१७

अलिन्दकः पुं. [अल्यते, भूष्यते, अल्+कर्मणि बाहुलकात् किन्दच्+स्वार्थे कन्] बहिर्द्वारसंलग्नचतुरस्रकृत्रिमभूमिः; प्रघाणः; प्रघणः; बहिर्द्वारप्रकोष्ठः; आलिन्दः; अलिन्दः; गृहद्वारपिण्डकः; 'प्रघाणप्रघणालिन्दा द्वारबाह्यप्रकोष्ठके । गृहाभ्यन्तरशय्यार्थपिण्डिकायामपि त्रयम् ॥ आलिन्दः स्यादलिन्दोऽपि स्यादलिन्दक इत्यपि' —इति शब्दरत्नावली। २९९

अली [न्] पुं. [अलं वृश्चिकपुच्छस्थकण्टकं विद्यतेऽस्य । इनि] भ्रमरः; 'अलिनि मालिनि माधवयोषिताम्'—इति माघे। वृश्चिकः। २५५

अलीकम् क्ली. [अल्+ईकन्] मिथ्या; मृषा; 'ज्ञातेऽलीकनिमीलिते नयनयोः'—इति अमरुशतके। अप्रियं; 'तद्यथा स महाराजो नालीकमधिगच्छति'—इति रामायणे। स्वर्गः; ललाटम्। १४४

अल्पम् त्रि. [अल्+प] किञ्चित्; ईषत्; मनाक्; स्तोकं; खुल्लकं; श्लक्ष्णं; दभ्रं; कृशं; तनुः; तनूः; त्रुटिः; त्रुटी; मात्रा; लवः; लेशः; कणः; कणी; कणिका; अणुः; सूक्ष्मं; क्षुल्लं; क्षुल्लकं; खुल्लं; कणा; अतिसामान्यः; 'अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन् विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम्'—इति रघुवंशे। संक्षिप्तम्; अदीर्घम्; 'अनन्तपारं किल शब्दशास्त्रं स्वल्पं तथायुर्बहवश्च विघ्नाः'—इति पञ्चतन्त्रम्। ६८८

अवकरः पुं. [अव+कृ+अप्] सम्मार्जन्यादिनिःक्षिप्तधूल्यादिः; सङ्करः; अवस्करः; सङ्कारः; 'कूड़ा' इति भाषा। 'अवकरनिकरं विकिरति तत् किं कृकवाकुरिव हंसः'—इति नीतिशतके । ३०२

अवकाशः पुं. [अव+काश्+घञ्] अवसरः; अवस्थानदेशः; व्याप्तिरहितस्थानम्; 'न सूक्ष्मतन्तोरपि तावकस्य तत्रावकाशो भवतः कथं स्यात्'—इति रत्नावली। 'अवकाशेषु चोक्षेषु नदीतीरेषु चैव हि। विविक्तेषु च तुष्यन्ति दत्तेन पितरः सदा'—इति मानवे (३-२०७)। प्रशस्तप्रदेशः; 'अवकाशो विविक्तोऽयं महानद्योः समागमे'—इति रामायणे। द्रव्यादिसञ्चयस्थानम्; अवस्थानं; स्थितिः; 'अवकाशं किलोदन्वान् रामायाभ्यर्थितो ददौ'—इति रघुवंशे। ८७१

अवकीर्णः त्रि. [अव+कॄ+क्त] अवचूर्णितः; अवध्वस्तः; विस्तृतः; प्रसृतः; विक्षिप्तः; 'मुक्तानि यौवनसुखानि यशोऽवकीर्णं, राज्ये स्थितं स्थिरधिया चरितं तपोऽपि'—इति नागानन्दे। उल्लङ्घितः; अतिक्रान्तः। ७१४

अवकीर्णी [न्] त्रि. [अवकीर्णमनेन। अव+कॄ+क्त+इनि। अवकीर्णं ध्वस्तं व्रतमिति शेषः, अस्यास्तीति] क्षतव्रतः; स्त्रीसंसर्गादिना त्यक्तनियमः; 'कुशीलवोऽवकीर्णी च वृषलीपतिरेव च। पौनर्भवश्च काणश्च यस्य चोपपतिर्गृहे'—इति मनुः। ४०४

अवकृष्टः त्रि. [अव+कृष्+क्त] नीचः; निकृष्टः; 'प्रतिकर्तुं प्रकृष्टस्य नावकृष्टेन युज्यते'—इति रामायणे। हीनजातीयः; नीचजातीयः; अपकृष्टवर्णः; 'चान्द्रायणं चरेत् सर्वानवकृष्टान् निहत्य तु'—इति याज्ञवल्क्यः। गृहादिसम्मार्जनोदकवाहादि-कर्मकरः; 'पणो देयोऽवकृष्टस्य षडुत्कृष्टस्य वेतनम्। षाण्मासिकस्तथाच्छादो धान्यद्रोणस्तु मासिकः'—इति मनुः। बहिष्कृतः; दूरीकृतः; निष्काशितः; निःसारितः; निर्गमितः; बहिष्कारितः; निर्गलितः, आकृष्टः; 'एकाकिनापि हि मया रभसावकृष्टनिस्त्रिंशदीधितिसटाभरभासुरेण' —इति नागानन्दे। ३३७

अवकेशी [न्] त्रि. [अवच्युतं कं सुखं यस्मात्, अवकं फलशून्यतामीशितुं शीलमस्य। अवक+ईश्+णिनि] बन्ध्यः; अफलः; फलकालेऽप्यनुत्पन्नफलो वृक्षादिः। १७८

अवक्रयः पुं. [अवक्रीयते प्रतिरूपदानेन स्वाधीनं क्रियतेऽनेन। अव+क्री+अच्] एतावत्कालमुपयोगार्थं भाण्डवस्त्राश्वादिर्मया दीयते, मह्यं च युष्माभिरेतावद्धनं देयमित्येवंविधं भाटकम्; 'भाड़ा' इति भाषा। क्रयसाधनद्रव्यं; मूल्यं; राजग्राह्यं द्रव्यं; वणिग्भिः शुल्कस्थाने प्रतिभाण्डमधिपतये देयम्; 'विक्रयावक्रयाधानयाचितेषु पणान् दश'—इति याज्ञवल्क्यः। ५७३

अवगादः पुं. [अव+गद्+घञ्] जलद्रोणी; नौकाजलसेचनकाष्ठपात्रम्। 'अवगाहः' इत्यपि पाठः क्वचित्पुस्तके। ७५४

अवगीतः त्रि. [अव+गै+क्त] मुहुर्दृष्टः; ख्यात-

गर्हणः; निन्दितः; 'विधुरं किमतः परं परैरवगीतां गमिते दशामिमाम्'—इति भारविः। दुष्टः; क्ली. निर्वादः; लोकापवादः; गीतादिना निन्दाख्यापनम्; असाधुगीतम्; अशोभनगानम्। 'अवगीतं तु निर्वादेऽनूक्तदुष्टे विगर्हिते'—इत्यजयः। ७५५

अवग्रहः पुं. [अव+ग्रह्+घञ्] हस्तिललाटं; वृष्टिरोधः; अनावृष्टिः; 'वृष्टिर्भवति सस्यानामवग्रहविशोषिणाम्।' 'नभोनभस्ययोर्वृष्टिमवग्रह इवान्तरे'—इति रघुवंशे. प्रतिबन्धकः; गजसमूहः; स्वभावः; 'तौ स्मास्यतस्ते नृपतेर्निदेशे परस्परावग्रहनिर्विकारौ'—इति मालविकाग्निमित्रे। ज्ञानविशेषः; शापः; ग्रहणं; स्वीकारः; हरणम्; अपसारणं; निरोधः; अवरोधः; 'स रोचयामास परश्च बन्धं, प्रसह्य रक्षोभिरवग्रहं च'—इति रामायणे। अवान्तरपदसंज्ञां सूचयितुं पदपाठकाले किञ्चित् कालमवसानम्; अनादरः; निन्दासूचकवाक्यप्रयोगः। २१८

अवचूलः पुं. [अवनता चूडा यस्य, वा डस्य लः] ध्वजाग्रबद्धाधोमुखवस्त्रम्। ४५८

अवज्ञा स्त्री. [अव+ज्ञा+अङ्] अनादरः; अवहेला; 'आत्मन्यवज्ञां शिथिलीचकार'—इति रघुवंशे। ७१५

अवज्ञातम् त्रि. [अव+ज्ञा+क्त] अवमानितम्; अनादृतं; तिरस्कृतम्; 'अवज्ञाता भविष्यामो लोकस्य जगतीपते'—इति महाभारते। ७१४

अवटः पुं. [अव्+अटन्] गर्तः; खिलं; कूपः; 'रक्षसां गतसत्त्वानाम् एष धर्मः सनातनः। अवटे ये निधीयन्ते तेषा लोकाः सनातनाः'—इति रामायणे। कुहकजीवी। ७०२

अवटुः पुं.-स्त्री. [अव+टीक्+मितद्र्वादित्वाड् डु] ग्रीवापश्चाद्भागः; गर्तः (६२४); कूपः; वृक्षविशेषः। ५२५

अवतंसः पुं.-क्ली. [अव+तंस्+घञ्] शेखरः; शिरोभूषणं; वतंसः; उत्तंसः; मुकुटं; मकुटं; मौलिः; मौलीकः; उष्णीषकः; कौटीरकं; कोटीरं; शिरोमणिः; कर्णभूषणं; कर्णपूरः; कर्णपुरः; कुण्डलं; कर्णवेष्टनम्; दन्तपत्रं; कर्णकम्। ५५४

अवतमसम् क्ली. [अवततं व्याप्तं तमः, प्रादिसमासः, अच्] अल्पान्धकारः; 'क्षीणेऽवतमसं तमः'—इत्यमरः। 'अवतमसभिदायै भास्वताभ्युद्गमेन प्रसभगुणमणोऽसौ दर्शनीयोऽप्यपास्तः'—इति माघे (११-५७)। ११०

अवतोका स्त्री. [अवपतितं तोकमस्याः सा] पतद्गर्भा गौः; स्रवद्गर्भा। २७०

अवदंशः पुं. [अव+दंश्+घञ्] चक्षणं; विदंशः; सन्धानं; रोचकः; सुरापानरुचिजनकचर्वणद्रव्यम्। ३२८

अवदातः त्रि. [अव+दै+क्त] पाण्डुरः; शुक्लगुणविशिष्टः; 'कुन्दैः सविभ्रमवधूहसितावदातैः'—इति ऋतुसंहारे। पीतवर्णयुक्तं; निर्मलं; 'तत्त्वं क्रमेण विदुषां करुणावदाते, श्रद्धावतां हृदि मदं स्वयमादधाति'—इति शान्तिशतके। मनोज्ञम्; पुं. श्वेतवर्णः; पीतवर्णः। ७३२

अवद्यम् त्रि. [न वदति परं गुणम्। 'अवद्यावमाधमार्वरेफाः कुत्सिते'—इति वदेर्नञि कर्तरि यत्] अधमं; कुत्सितं; गर्हितं; निकृष्टम्; क्ली. अनिष्टं; पापम्; 'उदवहदनवद्यां तामवद्यादपेतः'—इति रघुवंशे। ३३७

अवधारणम् क्ली. [अव+धृ+णिच्+ल्युट्] निश्चयः; 'हि हेतावधारणे'—इत्यमरः। ८८१, ८८४

अवधिः पुं. [अव+धा+कि] सीमा; बिलम् (८०२); कालः; 'अथ चेदवधिः प्रतीक्ष्यते'—इति भारविः। अवधानम्। २५९

अवध्यम् त्रि. [वधमर्हति, यत्, ततो नञ्समासः] मारणानर्हं; वधायोग्यम्; अनर्थकवाक्यम्। ४०६

अवध्वस्तः त्रि. [अव+ध्वंस्+क्त] अवचूर्णितः; परित्यक्तः; निन्दितः। ७१४

अवनिः स्त्री. [अव्+अनि] पृथिवी; 'तामुन्निद्रामवनिशयनां सौधवातायनस्थः'—इति मेघदूते। १५६

अवनी स्त्री. [अव्+अनि+ङीप्] पृथ्वी; त्रायमाणा लता। १५६

अवन्तिः पुं. [अव्+झिच्] अवन्तीदेशः; नदीविशेषः। २८७

अवन्तिसोमम् क्ली. [अवन्तिषु अभिषुतं सोमम्। शाकपार्थिवादित्वात् समासः] काञ्जिकम्; 'काँजी' इति भाषा। ३१८

अवन्ती स्त्री. [अव्+झिच्+ङीप्] मालवदेशस्य नगरी; उज्जयिनी; विशाला; पुष्पकरण्डिनी; अवन्तिका;

'प्राप्यावन्तीनुदयनकथाकोविदग्रामवृद्धान्'—इति मेघदूते। 'उत्पन्नोऽर्कः कलिङ्गे तु यमुनायां च चन्द्रमाः। अवन्त्यां च कुजो जातो मागधे च हिमांशुजः'—इति मत्स्यपुराणम्। २८७

अवपातः पुं. [अव+पत्+घञ्] रन्ध्रं; गर्तः; अधःपतनं; गजादीनां ग्रहणार्थं कृतस्तृणादिप्रच्छन्नो गर्तः; 'अवपातस्तु हस्त्यर्थे गर्तश्छन्नस्तृणादिना'—इति यादवः (वैजयन्तीकोशः)। 'रोधांसि निघ्नन्नवपातमग्नः करीव वन्यः परुषं ररास'—इति रघुवंशे। नाटकादौ भयादिजनितपलायनसम्भ्रमादिवर्णनेन प्रस्तुतस्य परिवर्तः; 'अवपातं तु निष्क्रामप्रवेशत्रासविद्रवैः'—इति दशरूपके। ७८२

अवभृथः पुं. [अवभ्रियते अनेन, अव+भृ+क्थन्] दीक्षान्तयज्ञः; प्रधानयागसमापकापरयज्ञः; यज्ञादेर्न्यूनाधिकदोषशान्तिनिमित्तकशेषकर्तव्यहोम इति यावत्; यज्ञावशेषस्नानं; 'ततश्चकारावभृथं विधिदृष्टेन कर्मणा'—इति भारते। 'भुवं कोष्णेन कुण्डोध्नी मेध्येनावभृथादपि'—इति रघुवंशे। ४१७

अवमः त्रि. [अवति अस्माद् आत्मानम्। अव् रक्षणादौ, 'अवद्येति' सूत्रेण अवतेः अमप्रत्ययो निपातितः] अधमः; निन्दितः; 'अनलकान् अलकान् अवमां पुरीम्'—इति रघुवंशे। क्ली. तिथ्यन्तद्वयस्पृष्टैकदिनवारः। ३३७

अवयवः पुं. [अवयौति इति, 'यु मिश्रणे'+पचाद्यच्] अङ्गं; 'स्वैरेवावयवैः प्रियस्य विशतस्तन्व्या कृतं मङ्गलम्'—इति अमरुशतके। उपकरणम्; अंशः; एकदेशः; 'तेषामवयवान् सूक्ष्मान् षण्णामप्यमितौजसाम्'—इति मनुसंहितायाम्। न्यायमते आरम्भद्रव्यं च, तद् उपादानकारणतया च व्यवह्रियते, यदुक्तम्—'अनित्या तु तदन्या स्यात् सैवावयवयोगिनी'—इति भाषापरिच्छेदे। 'प्रतिज्ञाहेतूदाहरणोपनयनिगमान्यनुमानावयवाश्च।' ७४४

अवरजः पुं. [वृ+अप्, ततो नञ्समासः, अवर+जन्+ड] कनिष्ठभ्राता; 'अस्य चावरजं विद्धि भ्रातरं मां तु लक्ष्मणम्'—इति रामायणे। हीनवंशजातः; 'द्वौ शूरादरजौ धीरविश्रपाख्यौ निजाख्यया'—इति राजतरङ्गिण्याम्। शूद्रः; 'यदि स्त्री यद्यवरजः श्रेयः किञ्चित् समाचरेत्। तत्सर्वमाचरेद् युक्तो यत्र वास्य रमेन्मनः'—इति मानवे। ५०६

अवरोधः पुं. [अव+रुध्+अधिकरणे घञ्] राजस्त्रीगृहं; राजगृहम्; 'आपानभूमिगमनमवरोधस्य दर्शनम्'—इति रामायणे। राजदाराः; 'यस्यावरोधस्तनचन्दनानां प्रक्षालनाद्वारिविहारकाले। कलिन्दकन्या मथुराङ्गतापि गङ्गोर्मिसंसक्तजलेव भाति'—इति रघुवंशे। निरोधः; बाधा; अन्तरायः; आच्छादनं; केदारादिवेष्टनं; [भावे घञ्] तिरोधानम्। ४८०

अवरोहः पुं. [अव+रुह्+कर्तरि संज्ञायां घञ्] लतोद्गमः; वृक्षमूलादग्रपर्यन्तं गता लता; शाखा; शिफा; 'सुदूरमथ गत्वा तौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ। अवरोहशताकीर्णं वटमासाद्य तस्थतुः'—इति रामायणे। स्वर्गः; [अव+रुह्+भावे घञ्] अवतरणम्; आरोहणम्। १८४

अवर्णवादः पुं. [वर्ण्यते प्रशस्यते अनेन इति वर्णः, ततो विरोधे नञ्समासः। अवर्णः+वादः] निन्दा; परीवादः; 'सोढुं न तत्पूर्वमवर्णमीशे आलानिकं स्थाणुमिव द्विपेन्द्रः'—इति रघुवंशे। १४८

अवलग्नः पुं.- क्ली. [अवलग्यते इति, अव+लग्+क्त, लस्ज्+क्त वा] मध्यदेशः; 'विपुलतरोन्मुखलोचनावलग्नम्'—इति माघः। त्रि. संलग्नः; संयुक्तः। ५१७

अवलीढा स्त्री. [अव+लिह्+भावे क्त, टाप्] अवज्ञा; अवहेलनम्। ७१५

अवलीला स्त्री. [अवरा लीला] हेला; अनायासः; 'रतिज्ञं नूतनं प्राप्य विषतुल्यं पुरातनम्। कान्तं दृष्ट्वा हिनस्त्येव सोपायेनावलीलया'—इति ब्रह्मवैवर्ते। 'शूलं च भ्रमणं कृत्वा पपात दानवोपरि। चकार भस्मसात्तञ्च सरथं चावलीलया'—इति च ब्रह्मवैवर्ते। ७१५

अवलेपः पुं. [अव+लिप्+भावे घञ्] अहङ्कारः; 'दिङ्नागानां पथि परिहरन् स्थूलहस्तावलेपान्'—इति मेघदूते। लेपनं; दूषणं; सङ्गः। ७२२

अवलोकनम् क्ली. [अव+लुक्+भावे ल्युट्] दर्शनम्; आलोकनं; 'जलवेलावलोकनकुतूहली'—इति नागानन्दे। ५६६

अवश्यम् अव्य. [न वश्यं] निश्चयः; नूनं; निश्चितम्; 'अवश्यं याति तिर्यक्त्वं जग्ध्वा चैवाहुतं हविः'—इति

मनुः। त्रि. [न+वश्+ण्यत्] अनायत्तः; स्वाधीनः; स्वतन्त्रः। ८३६

अवश्यायः पुं. [अवश्यायते शैत्यमापद्यते इति। 'श्यैङ् गतौ' श्याद्व्यधेति ण, ततो 'आतो युगिति' युक्] हिमम्; 'अवश्यायनिपातेन किञ्चित्प्रक्लिन्नशाद्वला'—इति रामायणे। गर्वः। ६५०

अवष्टम्भः पुं. [अव+ष्टभि प्रतिबन्धे, घञ् षत्वं च] सौष्ठवम्; स्तम्भः; प्रारम्भः; अवलम्बनं; बोधनं; निष्पन्दता; स्वर्णं; 'रघोरवष्टम्भमयेन पत्रिणा हृदि क्षतो गोत्रभिदप्यमर्षणः'—इति रघुवंशे। ७५९

अवसरः पुं. [अव+सृ+अच्] अवकाशः; क्षणम्; योग्यकालः; क्रियास्थितियोग्यतासम्पादकरूपः कालः; 'कामस्तु बाणावसरं समीक्ष्य'—इति कुमारसम्भवे। शिष्यजिज्ञासानिवृत्तावश्यवक्तव्यरूपः सङ्गतिविशेषः; अनन्तरवक्तव्यम्; 'उपमानेऽवसरसङ्गतिः' इति जगदीशः। प्रस्तावः; मन्त्रविशेषः; वर्षणं; वत्सरः। ७५०

अवसानम् क्ली. [अव+सो+ल्युट्] क्रियासमाप्तिः; सातिः; विरामः; मृत्युः; 'पुंसोऽवसानं व्रजतोऽपि निष्ठुरैरिष्टैर्धनैः पञ्चपदीनमुच्यते'—इति पञ्चतन्त्रे। सीमा। ८२५

अवस्कन्दः पुं. [अव+स्कन्द्+अच्] विजिगीषूणां निवेशस्थानं; शिविरम्; अवगाहनम्; अवस्कन्दनं; 'लतानुपातं कुसुमान्यगृह्णात् स नद्यवस्कन्दमुपास्पृशच्च। कुतूहलाच्चारुशिलोपवेशं काकुत्स्थ ईषत् स्मयमान आस्त'—इति भट्टौ (२-११) (नद्यामवस्कन्दोऽवगाहो यत्र स्नानक्रियायाम्)। आक्रमणम्; 'अवस्कन्दभयाद् राजा प्रजागरकृतश्रमम्। दिवासुप्तं समाहन्यान्निद्राव्याकुलमन्तिकम्'—इति हितोपदेशे। ४५२

अवस्करः पुं. [अवकीर्यते क्षिप्यते इति। अव+कृ+अप्+सुट्] विष्ठा; गुह्यं (८२३); संमार्जन्यादिनिक्षिप्तधूल्यादिः। ६३७

अवहारः पुं. [अव+हृ+घञ्] ग्राहनामा जलजन्तुः; नक्रराजः; अवग्राहः; अवहारकः; चौरः; द्यूतयुद्धादिविश्रामः; निमन्त्रणम्; उपनेतव्यद्रव्यं; धर्मान्तरम्; आह्वानम्; स्वधर्मपरित्यागपूर्वकधर्मान्तरग्रहणम्; अन्यधर्मग्रहणम्; प्रत्यर्पणम्। ६५६

अवहित्थम् क्ली. [न बहिस्तिष्ठतीति। अबहिः+स्था+क, पृषोदरादित्वम्] आकारगुप्तिः; अवहित्था। ७७२

अवहित्था स्त्री. [न बहिस्तिष्ठतीति। अबहिः+स्था+क+टाप्] आकारगुप्तिः; रत्यादिसूचको मुखरागादिराकारः; अङ्गवैकृतं; भयलज्जादिना तस्य गोपनं; 'भयगौरवलज्जादेर्हर्षाद्याकारगुप्तिरवहित्था। व्यापारान्तरसक्त्यान्यथाभाषणविलोकनादिकरी' — इति साहित्यदर्पणे। यथा कुमारसम्भवे—'एवं वादिनि देवर्षौ पार्श्वे पितुरधोमुखी। लीलाकमलपत्राणि गणयामास पार्वती।' 'लज्जावशात्। कमलदलगणनाव्याजेन हर्षं जुगोप इत्यर्थः। अनेन अवहित्थाख्यसञ्चारी भाव उक्तः, तदुक्तम्—'अवहित्था तु लज्जादेर्हर्षादाकारगोपनम्'—इति मल्लिनाथः। ७७२

अवहेलम् क्ली.—स्त्री. [अव+हेड्+घञ्, डस्य लः, डलयोरेकत्वस्मरणात्] अनादरः; अवज्ञा; अवहेलनम्; अवमानना, अवहेला। ७१५

अवाक् [च्] त्रि. [नास्ति वाक् यस्य सः। क्विबन्तवच् धातोर्नञ्समासेऽयं प्रयोगः] अधोमुखं [अवपूर्व—अञ्च्धातोः प्रयोगः] दक्षिणं; वाक्यरहितः; मूकः। 'गूंगा' इति भाषा। १०२

अवाक्श्रुतिः त्रि. [नास्ति वाक् उच्चारणशक्तिः, श्रुतिः श्रवणेन्द्रियं च यस्य] कल्लमूकः; एडमूकः ६०९।

अवाग्भागः पुं. [अवाक् अधश्चासौ भागश्च] बुध्नः; निम्नभागः; मूलम्। १८१

अवाची स्त्री. [अव+अञ्च्+क्विन्+ङीप्] दक्षिण दिक्; अधोमुखी। १०१

अविः पुं. [अव्+इन्] मेषः; 'श्वशूकरखरोष्ट्राणां गोऽजाविमृगपक्षिणाम्'—इति मनुः। 'मूत्राणि हस्तिकरभमहिषीखरवाजिनाम्। गोजावीनां स्त्रियां पुंसां मत्रवर्ग उदाहृतः'—इति वैद्यके। सूर्यः; पर्वतः; नाथः; मूषिककम्बलः; प्राचीरं; वायुः; स्त्री. ऋतुमती; अवी। २७९

अविदूसम् क्ली. [अवेर्मेष्या दुग्धम्। 'अवेर्दुग्धे सोढदूसमरीसचः' इति दूसप्रत्ययः] मेषीदुग्धम्। २७९

अविनीता स्त्री. [न विनीता, नञ्तत्पुरुषः] पुंश्चली; असती; कुलटा। ६९६

अविमरीसम् क्ली. [अवि+मरीसच्, अवेर्दुग्धे मरीसच प्रत्ययः] मेषीदुग्धम्। २७९

अविरतम् क्ली. [न विरतम्, नञ्तत्पुरुषः] सततम्; अनवरतम्; 'अविरतोज्झितवारिविपाण्डुभिः, विरहितै-रचिरद्युतितेजसा'—इति किरातार्जुनीये। ६९८

अविसोढम् क्ली. [अवेर्दुग्धम्, अवि+सोढच्] मेषी-दुग्धम्। २७९

अविस्पष्टम् क्ली. [वि+स्पश्+क्त, ततो नञ्समासः] अस्पष्टवाक्यं; म्लिष्टं; 'नाविस्पष्टमधीयीत न शूद्र-जनसन्निधौ'–इति मनुः। त्रि. अस्फुटः; यथा—'विवृद्धि कम्पस्य प्रथयतितरां साध्वसवशादविस्पष्टां दृष्टिं तिरयति पुनर्वाष्पसलिलैः'—इति रत्नावल्याम्। १४१

अवी स्त्री. [अवत्यात्मानं लज्जया। अव्+ई] ऋतु-मती; रजस्वला। ४८८

अवेक्षा स्त्री. [अव+ईक्ष्+अ+टाप्] प्रत्यवेक्षणं; प्रत्यक्षदृष्टिः; प्रतिजागरः; अवधानम्; अनुसन्धानं; यथा—'अलब्धमिच्छेद्दण्डेन लब्धं रक्षेदवेक्षया। रक्षितं वर्द्धयेद् वृद्धया वृद्धं दानेन निक्षिपेत्'—इति मनुः। 'यदि रामस्य नावेक्षा त्वयि स्यान्मातृवत्सदा'–इति रामायणे ७८२

अव्यक्तः पुं. [वि+अञ्ज्+क्त, ततो नञ्समासः] मूर्खः; क्ली. परमात्मा; त्रि. अस्फुटः; विष्णुः; शिवः; कन्दर्पः; क्ली. प्रकृतिः; आत्मा; महदादि; अज्ञात-राश्यादिः; अदृश्यः; प्रधानं महदादि; ब्रह्म; पर-ब्रह्म। ८४२

अव्यक्तवाक् पुं. [अव्यक्ता अस्फुटा वाक् यस्य सः] लोहलः; अस्पष्टभाषणकर्ता। ३८७

अव्यञ्जनः पुं. [नास्ति व्यञ्जनं शुभलक्षणं शृङ्गं यस्य] शृङ्गहीनपशुः; अस्फुटे त्रि., अनुद्भिन्नरजस्वलाचिह्ना कन्या; यथा—'असम्प्राप्तरजा गौरी प्राप्ते रजसि रोहिणी। अव्यञ्जना भवेत्कन्या कुचहीना च नग्निका'–इति पञ्चतन्त्रे। २७८

अव्यापारः पुं. [न व्यापारः] व्यापाराभावः; कर्म-विरतिः; क्षणः। ८५१

अशनम् क्ली. [अश्+ल्युट्] अन्नम्; भक्षणं (३२५); 'शीतं निर्झरवारि, पानमशनं कन्दाः सहाया मृगाः'—इति नागानन्दे। 'विशिष्टमिष्टसंस्कारैः पथ्यरिष्टैरसादिभिः। मनोज्ञं शुचि नात्युष्णं प्रत्यग्रमशनं हितम्'—इति सुश्रुतः। पुं. असनवृक्षः; पीतशालवृक्षः। ३१९

अशनाया स्त्री. [अशन+क्यच्] भोजनेच्छा; क्षुधा; बुभुक्षा। ३६१

अशनिः पुं.–स्त्री. [अश्नाति संहारं करोति। निप्रत्ययः] वज्रं; विद्युत्; 'अथवा मम भाग्यविप्लवाद् अशनिः कल्पित एष वेधसा'—इति रघुवंशे। ५६

अशुभम् क्ली. [न शुभम्, नञ्तत्पुरुषः। नास्ति शुभं यस्येति समासे वाच्यलिङ्गः] पापम्; अमङ्गलं, (८०४); 'न च किञ्चिदुवाचैनं शुभं वा यदि वाशुभम्। मा च वोऽस्त्वशुभं किञ्चित्सर्वथा पाण्डुनन्दनाः'—इति भारते। तद्युक्ते त्रि., यथा—'सर्वाशुभानां परिमोक्षकारि सम्पूजनं देववरस्य विष्णोः'—इति ज्योतिषतत्त्वे'। 'अशुभं खञ्जनं दृष्ट्वा देवब्राह्मणपूजनम्। दानं कुर्वीत कुर्याच्च स्नानं सर्वौषधीजलैः'—इति तिथ्यादि-तत्त्वे। ६२७

अशोकः पुं. [नास्ति शोको यस्मात्] वृक्षविशेषः; शोकनाशः; विशोकः; वञ्जुलद्रुमः; वञ्जलः; मधु-पुष्पः; अपशोकः; कङ्केलिः; केलिकः; रक्तपल्लवः; चित्रः; विचित्रः; कर्णपूरः; सुभगः; दोहली; ताम्र-पल्लवः; रोगितरुः; हेमपुष्पः; रामा, वामाङ्घ्रि-घातनः; पिण्डीपुष्पः; नटः; पल्लवद्रुः; 'पादाघाता-दशोको विकसति बकुलो योषितामास्यमद्यैः'—इति साहित्यदर्पणे। 'पादाहतः प्रमदया विकसत्यशोकः शोकं जहाति बकुलो मुखशीधुसिक्तः।' त्रि. शोकरहितः; 'त्वामशोक हराभीष्ट मधुमाससमुद्भव। पिबामि शोक-सन्तप्तो मामशोकं सदा कुरु॥' पुं. दशरथस्य मन्त्री; यथा—धृष्टिर्जयन्तो विजयः सिद्धार्थोऽप्यर्थसाधकः। अशोको धर्मपालश्च सुमन्त्रश्चाष्टमोऽभवत्'—इति रामायणे। नृपतिविशेषः; 'अशोको नाम राजा-भून्महावीर्योऽपराजितः। तस्मादवरजो यस्तु राजन्न-श्वपतिः स्मृतः'—इति भारते। क्ली. पारदम्। १९२

अश्मः पुं.—पर्वतः; मेघः। वैदिकशब्दोऽयम्। १६९

अश्मगर्भः पुं. [अश्मेव गर्भो यस्य] हरिन्मणिः; मरकतम्; अश्मगर्भजम्। 'पन्ना' इति भाषा। ७५

अश्मा [न्] पुं. [अश्नुते इति, अशूङ व्याप्तौ, मनिन्] शिला; दृषत्। १६८

अश्मन्तकम् क्ली. [अश्मन्त+स्वार्थे कन्] चुल्ली; मल्लिकाच्छादनं; दीपाधाराच्छादनम्। ३१३

अश्मसारः पुं.– क्ली. [अश्मनः सारः] लौहः; 'प्राणाः सत्वरमश्मसारकठिना गच्छन्ति गच्छन्त्वमी'—इति साहित्यदर्पणे। १७१

अश्रम् क्ली. [अश्नुते व्याप्नोति नेत्रं कण्ठं वा। अश्+रक्] नेत्रजलं; 'तामप्यश्रं नवजलमयं मोचयिष्यस्यवश्यम्'—इति मेघदूते। 'सखीभिरश्रोत्तरमीक्षितामिमाम्'—इति कुमारसम्भवे। रक्तम्। ५१९

अश्रः पुं.— अस्रः; कोणः; अश्रिः। ७२७

अश्रान्तम् क्ली. [अविद्यमानं श्रान्तमत्र। नञ्समासः] नित्यम्; अनवरतं; श्रमरहिते त्रि., यथा—'अश्रान्तश्रुतिपाठपूतरसनाविर्भूतभूरिस्तवा जिह्माब्रह्ममुखौघविघ्नितनवस्वर्गक्रिया केलिना। पूर्वं गाधिसुतेन साभिघटिता मुक्ता नु मन्दाकिनी यत्प्रासाददुकूलवल्लिरनिलान्दोलैरखेलद्दिवि'—इति नैषधे १ सर्गः। ६९८

अश्रिः स्त्री. [अश्नाति अश्नुते वा। अश् भोजने, अशू व्याप्तौ वा। आश्रीयते प्रहारार्थम्, 'आङि श्रिहनिभ्यां ह्रस्वश्चेति' इण् स च डित्, डित्वाट् टिलोप आङो ह्रस्वश्च] गृहादेः कोणः; अस्त्रादेरग्रभागः। ७२७

अश्रु क्ली. [अश्नुते नेत्रमिति। अश्+रुक्। अथवा न श्रयति इति। न+श्रि+डुन्] चक्षुर्जलं; नेत्राम्बु; रोदनम्; अश्रम्; अस्रम्; अस्रु; वाष्पं; 'श्रुतदेहविसर्जनः पितुश्चिरमश्रूणि विमुच्य राघवः'—इति रघुवंशे। ५१९

अश्लीलः त्रि. [न श्रियं लाति, ला+क] ग्राम्यः। 'गँवारू' इति भाषा। १४२

अश्वः पुं. [अश्नुते मार्गं व्याप्नोति। अशू व्याप्तौ, अशूप्रुषिलटीति क्वन्] घोटकः; पीतिः; पीती; वीतिः; घोटः; तुरगः; तुरङ्गः; तुरङ्गमः; वाजी; वाहः; अर्वा; गन्धर्वः; हयः; सैन्धवः; सप्तिः; 'जितसिंहभया नागा यत्राश्वा बिलयोनयः'—इति कुमारसम्भवे। 'गच्छन्तमुच्चलितचामरचारुमश्वम्'—इति माघे। वृष्णिवंशीयो नृपतिश्चित्रकस्य पुत्रः; 'चित्रकस्याभवन् पुत्राः पृथुर्विप्रथुरेव च। अश्वग्रीवोऽश्वबाहुश्च सुपार्श्वकगवेषणौ॥ अरिष्टनेमिरश्वश्च'—इति हरिवंशे। दानवविशेषः; अश्वासुरः; 'चत्वारिंशद्दनोः पुत्राः ख्याताः सर्वत्र भारत। स्वर्भानुरश्वोऽश्वपतिर्वृषपर्वाजकस्तथा'—इति महाभारते। ४३६

अश्वतरः पुं.– स्त्री. [तनुः अश्वः। वत्सोक्षाश्वर्षभेभ्यश्च तनुत्वे' इति ष्टरच्। अश्वत्वं च जातिः। तत्सहचरितस्योक्तधर्मस्य तनुत्वम् अन्यपितृकत्वात्] अश्वायां गर्दभेन जातः पशुविशेषः; वेसरः; 'खच्चर' इति भाषा। 'हयानश्वतरानुष्ट्रांस्तथैव सुरभेः सुतान्'—इति रामायणे। 'सकृद्दुष्टं हि यो मित्रं पुनः सन्धातुमिच्छति। स मृत्युमुपगृह्णाति गर्भमश्वतरी यथा'—इति पञ्चतन्त्रे। पुं. वेगसरः; नागराजविशेषः; 'कम्बलाश्वतरौ चापि नागः कालीयकस्तथा। ऐरावतो महापद्मः कम्बलाश्वतरावुभौ'—इति महाभारते। गन्धर्वविशेषः; पुंवत्सः। ४५०

अश्वत्थः पुं. [अश्वत्थं जलमस्यास्ति। मूले सिक्तत्वात्। अर्श आद्यच्। अश्वत्थवत् कामकर्मवातेरितनित्यप्रचलितस्वभावत्वाद् आशुविनाशित्वेन श्वोऽपि स्थास्यतीति विश्वासानर्हत्वाच्च मायामयः संसारवृक्षः। शाल्मलिवटाद्यपेक्षया न श्वश्चिरं तिष्ठति, अश्व इव तिष्ठति वा। स्था गतिनिवृत्तौ। पृषोदरादित्वात् पूर्वोत्तरपदान्तायोः सकारयोस्तकारौ 'सुपिस्थः' इति क] वृक्षविशेषः; बोधिद्रुमः; चलदलः; पिप्पलः; कुञ्जराशनः; अच्युतावासः; चलपत्रः; पवित्रकः; शुभदः; बोधिवृक्षः; याज्ञिकः; गजभक्षकः; श्रीमान्; क्षीरद्रुमः; विप्रः; मङ्गल्यः; श्यामलः; गुह्यपुष्पः; सेव्यः; सत्यः; शुचिद्रुमः; धनुवृक्षः; 'अश्वत्थं वन्दयेन्नित्यं पूर्वाह्णे प्रहरद्वये। अत ऊर्ध्वं न वन्देत अश्वत्थं तु कदाचन॥'१९६

अश्वमुखः पुं. [अश्वस्य मुखमिव मुखं यस्य] किन्नरः; स्त्री. किन्नरी; किम्पुरुषस्त्री; 'न दुर्वहश्रोणिपयोधरार्ता भिन्दन्ति मन्दां गतिमश्वमुख्यः'—इति कुमारसम्भवे। ८२

अश्वारोहः त्रि. [अश्वमारोहतीति। अश्व+आ+रुह्+अण्] अश्वपृष्ठस्थितयोधा; सादी; अश्ववाहः; अश्ववारः; तुरगी; 'घोड़सवार' इति भाषा। ३९८

अश्विनौ पुं. द्विव. [प्रशस्ता अश्वाः सन्ति ययोः, इनि। यद्वा अश्विन्याम् जातौ। सन्धिवेलेत्यणो नक्षत्रेभ्यो बहुलमिति लुकि, लुक्तद्धितलुकीति ङीपो लुक्] अश्विनीकुमारौ; देवभिषजौ; 'त्वाष्ट्री तु सवितुर्भार्या वडवारूपधारिणी। असूयत महाभागा सान्तरीक्षेऽश्विनावुभौ'—इति महाभारते। ८४

अष्टापदम् पुं.–क्ली. [अष्टसु धातुषु पदं प्रतिष्ठा यस्य, पङ्क्तौ पङ्क्तौ अष्टौ पदानि यस्येति वा। अष्टनः संज्ञायामिति दीर्घः] स्वर्णं; धुस्तूरः; शारीणां फलकः; 'स रामकरमुक्तेन निहतो द्यूतमण्डले। अष्टापदेन बलवान् राजा वज्रधरोपमः'—इति हरिवंशे। पुं. [अष्टौ पदानि यस्य] शरभः; मर्कटः; लूता; चन्द्रमल्ली; क्रिमिः; कैलासपर्वतः; कीलकः; स्त्री. [अष्टौ पादा यस्याः। संख्यासुपूर्वस्येति पादस्यान्तलोपे पादोऽन्यतरस्यामिति ङीपि पादः पत्] चन्द्रमल्ली। १७३

अष्ठीवान् [त्] पुं.–क्ली. [अतिशयितमस्थि यस्मिन्। अस्थि+मतुप्, मस्य वः। 'आसन्दीवदष्ठीवदिति' निपातनादस्थिशब्दस्याष्ठीभावः] जानु। ५१५

असंशयम् क्ली. [नास्ति संशयो यत्र] अद्धा; निश्चितम्। ८८५

असकृत् अव्य. [न सकृत्, नञ्समासः] पुनः पुनः; वारं वारम्; 'अनेकस्यैकधा साम्यमसकृद्वाप्यनेकधा'—इति साहित्यदर्पणे। 'अन्नाद्येनासकृच्चैतान् गुणैश्च परिचोदयेत्'—इति मानवे। ७२४

असक्तम् अव्य. [सक्तस्य अभावः, सज्ज्, भावे क्त, नञाव्ययसमासः] अविरतम्; अनारतं; निरन्तरम्; असज्जनम्। ६९८

असती स्त्री. [न सती साध्वी, नञ्समासः] भ्रष्टा; व्यभिचारिणी; पुंश्चली; धर्षिणी; बन्धकी; कुलटा; इत्वरी; स्वैरिणी; पांशुला; धृष्टा; दुष्टा; धर्षिता; लङ्का; निशाचरी; त्रपारण्डा; 'आबाल्यादसती सती सुरपुरीं कुन्ती समारोहयत्'—इति धर्मविवेके। ४९६

असनः पुं. [अस्यते इति, अस्+ल्युट्] वृक्षविशेषः; महासर्जः; सौरिः; बन्धूकपुष्पम्; प्रियकः; नीलकः; बीजवृक्षः; प्रियसालकः; पियाशालः; 'प्रियविमानितमानवतीरुषां निरसनैरसनैरवृथार्थता'—इति माघे। 'बीजकः पीतसारश्च पीतशालक इत्यपि। बन्धूकपुष्पः प्रियकः सर्जकश्चासनः स्मृतः'—इति भावप्रकाशे। क्ली. क्षेपणं; 'तृणनिरसने विनियोगः।' १९९

असम्पूर्णम् त्रि. [न सम्पूर्णं, नञ्तत्पुरुषः] समाप्तिरहितम्; असमाप्तम्; अनिष्पन्नम्; अपूर्णम्। ७१३

असम्मतः त्रि. [न सम्मतः, नञ्समासः] अनभिमतः; प्रणाय्यः; 'असम्मतः कस्तव मुक्तिमार्गे पुनर्भवक्लेशभयात् प्रपन्नः'—इति कुमारसम्भवे। ३६६

असहनः पुं.–स्त्री. [न सहनः, नञ्समासः] शत्रुः; अधीरः; असहिष्णुः; 'कस्मात्प्राप्य तिरस्क्रियामसहनोऽप्यस्थादिति प्रस्तुते'—इति महावीरचरिते। 'प्रिया मुञ्चत्यद्य स्फुटमसहना जीवितमसौ'—इति रत्नावल्याम्। क्षमाराहित्यम्; 'अधिक्षेपापमानादेः प्रयुक्तस्य परेण यत्। प्राणात्ययेऽप्यसहनं तत्तेजः समुदाहृतम्'—इति साहित्यदर्पणे। ४५५

असारम् त्रि. [नास्ति सारो यस्य] साररहितं वस्तु; स्थिरांशशून्यं; फल्गु; निःसारं; निष्फलं; वार्त्तम्। ७७७

असिः पुं. [असतीति, अस् दीप्तौ, इन्] अस्त्रभेदः; खड्गः; निस्त्रिंशः; चन्द्रहासः; रिष्टिः; कौक्षेयकः; मण्डलाग्रः; करपालः; कृपाणः; प्रबालकः; भद्रात्मजः; रिष्टः; ऋष्टिः; धाराविषः; कौक्षेयः; तरवारिः; तलवारिः; तरवाजः; कृपाणकः; करवालः; कृपाणीः; शस्त्रः; विशसनः; 'पर्णशालामथ क्षिप्रं विकृष्टासिः प्रविश्य सः। वैरूप्यपौनरुक्तेन भीषणां तामयोजयत्'—इति रघुवंशे (१२-४०) 'असिर्विशसनः खड्गस्तीक्ष्णधारो दुरासदः। श्रीगर्भो विजयश्चैव धर्मपालो नमोऽस्तुते'—इति वाराहीतन्त्रम्। ४७२

असिक्नी स्त्री. [न सिता शुक्लकेशा। छन्दसि क्नमेव इति तस्य क्न्, नान्तत्वाद् ङीप् च] अवृद्धान्तःपुरचारिणी प्रेष्या; असिक्निका; नदीविशेषः; दक्षपत्नी; वीरणसुता; 'असिक्नीमावहत्पत्नीं वीरणस्य प्रजापतेः। सुतां सुतपसा युक्ताम्'—इति हिरवंशे। ४९१

असितः पुं. [न सितः शुक्लः। नञ्समासः] शनिग्रहः, कृष्णपक्षः (५०); त्रि. कृष्णः (७३४); श्यामः, 'असितगिरिनिभं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रम्'—इति पुष्पदन्तः। 'चकाशे विनिविष्टेन स सन्ध्येव निशाऽसिता'—इति रामायणे। कृष्णवर्णः; सूर्यवंशोद्भवभरतपुत्रो राजा; 'भरतात् तु महातेजा असितो समजायत'—इति रामायणे। व्यासशिष्यो मुनिः; 'असितस्यैकपर्णा तु देवलस्य महात्मनः'—इति हरिवंशे। पर्वतप्रभेदः; अद्रिभेदः; गिरिविशेषः; 'तत्र पुण्यह्रदः ख्यातो मैनाकश्चैव पर्वतः। बहुमूलफलोपेतस्त्वसितो नाम पर्वतः'—इति भारते। ४८

असिधेनुः स्त्री. [असिर्धेनुरिव यस्याः। असेर्धेनुसादृश्येन छुरिकायास्तद्वत्ससादृश्यम्] छुरिका; असिधेनुका। 'छुरी' इति भाषा। ४७३

असिपुत्रिका स्त्री. [असेः पुत्रीव] छुरिका; असिपुत्री।४७३

असुः पुं. [अस्यते इति, अस्+उ] प्राणः; पञ्चप्राणेषु बहुवचनान्तः। असवः। 'तेजस्विनः सुखमसूनपि संत्यजन्ति'—इति नीतिशतके। १३४

असुरः पुं.-स्त्री. [अस्यति देवान् क्षिपति इति। अस्+उरन्। यद्वा न सुरः, विरोधे नञ्तत्पुरुषः। यद्वा नास्ति सुरा यस्य सः] सुरविरोधी; स तु कश्यपाद् दितिगर्भजातः। दैत्यः; दैतेयः; दनुजः; इन्द्रारिः; दानवः; शुक्रशिष्यः; दितिसुतः; पूर्वदेवः; सुरद्विट्, देवरिपुः; देवारिः; 'सुराः प्रतिग्रहाद्देवाः सुरा इत्यभिविश्रुताः। अप्रतिग्रहणात्तस्य दैतेयाश्चासुराः स्मृताः—इति रामायणे। [असति दीप्यते इति, उरन्] सूर्यः; राहुः। ५

असुहृत् पुं. [न सुहृद्, नञ्समासः] शत्रुः; रिपुः; वैरिः। ४५५

असृक् [ज्] क्ली. [न+सृज्+क्विप्] रक्तम्; 'पानमप्यसृजः क्षिप्रं स्वपीडायै जलौकसाम्'—इति दृष्टान्तशतकम्। 'रसासृग्मांसमेदोऽस्थिमज्जशुक्राणि धातवः। तस्य पित्तमसृङ्मासं दग्ध्वा रोगाय कल्पते'॥ मङ्गलग्रहः; कुङ्कुमं; विष्कुम्भादि-सप्तविंशति-योगान्तर्गतषोडशयोगः; यथा—'धनी कुरूपः कुमतिर्दुरात्मा, विदेशगामी रुधिरप्रकोपः। महाप्रलोभी पुरुषो बलीयान् असृक् प्रसूतौ किल यस्य जन्तोः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। ६३२

असृग्धरा स्त्री. [असृक् शोणितं धरतीति। असृज्+धृ+अच्] चर्म। ६३०

असृग्वरा स्त्री.—त्वक्; चर्म। ६३०

असेचनकम् त्रि. [न सिच्यते मनो यस्मिन्। न सिच्+ल्युट्। संज्ञायां कन्] यस्य दर्शनात् तृप्तेरन्तो नास्ति तत्; अत्यन्तप्रियदर्शनम्; 'नयनयुगासेचनकं मानसवृत्त्यापि दुष्प्रापम्'—इति साहित्यदर्पणे। ३५०

असौम्यम् त्रि.—कठोरं; कठिनम्। ७७२

अस्तिमान् [त्] त्रि. [अस्ति विद्यमानं (धनं) विद्यते यस्य। अस्ति+मतुप्] धनी; धनवान्। ३६९

अस्त्रम् क्ली. [अस्यते क्षिप्यते यत्। अस्+ष्ट्रन्] प्रहारयोग्यद्रव्यमात्रम्; आयुधं, प्रहरण, शस्त्रं, खड्गः; धनुः; क्षेपणयोग्यबाणादि (४६४); 'प्रयुक्तमप्यस्त्रमितो वृथा स्यात्'—इति रघुवंशे। 'प्रत्याहतास्त्रो गिरिशप्रभावात्'—इति रघुवंशे। ४६२

अस्थागम् त्रि. [अस्थामस्थितिं गच्छति प्राप्नोति। न+स्था+गम्+ड] अगाधम्; अतिगभीरम्; अतलस्पर्शम्। ६४९

अस्थि क्ली. [अस्यते क्षिप्यते यत्। अस्+क्थिन्] शरीरस्थसप्तधात्वन्तर्गतधातुविशेषः; कीकसं; कुल्यं; मेदोजम्; 'मेदसोऽस्थि ततो मज्जा मज्जातः शुक्रसम्भवः'—इति सुश्रुतः। ६३२

अस्थिपञ्जरः पुं. [अस्थि पञ्जर इव] शरीरास्थिसमूहः; करङ्कः; कङ्कालः। ६३३

अस्निग्धम् त्रि. [न स्निग्धं, नञ्समासः] कठोरं; कठिनम्। ७८३

अस्रम् क्ली. [अस्यते क्षिप्यते यत्। अस्+र] रक्तं; रुधिरम्; 'पिपासादाहपित्तास्रयुक्तं पित्तज्वरं जयेत्'—इति शार्ङ्गधरः। 'क्षीणेऽस्रे मधुराकाङ्क्षा मूर्च्छा च त्वचि रूक्षता। शैथिल्यं च शिराणां स्याद्वातादुन्मार्गगामिता'—इति भावप्रकाशः। अस्रु; नेत्रजलं; 'कुर्यात्सास्रं शिराहर्षं तेनाक्ष्युद्वीक्षणाक्षमम्'—इति वाग्भटः। ६३२

अस्रः पुं. [अस्+रक्] कोणः; केशः। ७२१

अस्रुः क्ली. [अस्यते क्षिप्यते। अस्+रु] चक्षुर्जलं; नेत्राम्बु; रोदनम्; अस्रम्; अश्रु; वाष्पं; 'श्रुत्वा श्रुत्वास्रुधारां त्यजति'—इति कीचकवधः। 'रागास्रुवेदनाशान्तौ परं लेखनमञ्जनम्'—इति वाग्भटः। ५१९

अस्वप्नः पुं. [नास्ति स्वप्नो निद्रा यस्य] देवता; निद्राभावः; निद्राशून्यम्; 'अस्वप्नः सन्तताऽरुक् च मज्जास्थिकुपितेऽनिले'—इति माधवकरः। 'मज्जस्थोऽस्थिषु सौषिर्य्यमस्वप्नं स्तब्धतां रुजम्'—इति वाग्भटः। ४

अस्वाध्यायः पुं. [न विद्यते स्वाध्यायो वेदाध्ययनं यस्य] विधिपूर्वकवेदाध्ययनहीनः; निराकृतिः; अनध्यायः; अध्ययने निषिद्धदिनम्। ४०५

अहंयुः त्रि. [अहमस्यास्तीति। अहंशब्दात् 'अहंशुभमोर्युस्' इति युस्] अहङ्कारयुक्तः; गर्वान्वितः; अहङ्कारवान्; 'अहंयुनाथ क्षितिपः शुभंयुः'—इति भट्टिः। ३७९

अहः [न्] क्ली. — दिवा, दिनम्। १०६

अहङ्कारः पुं. [अहमिति ज्ञानं क्रियतेऽनेन। अहम् कृ+घञ्] अहङ्कृतिः, गर्वः, अभिमानः; मदः; स्मयः; अवलेपः; दर्पः; मानः; उद्धतमनस्कत्वं; समुन्नतिः [अहमित्यव्ययं तस्य करणम्। अहमिति किरति अत्रेति वा अहङ्कारः। करोतेः किरतेर्वा घञ् कारप्रत्यय इत्यन्ये] 'गर्वो मदोऽभिमानः स्यादहङ्कारस्त्वहंकृतिः। स्यादुद्धतमनस्कत्वे मानश्चित्तसमुन्नतिः॥ अहङ्कारस्य पर्याया इति केचित्प्रचक्षते'—इति शब्दरत्नावली। ७२२

अहङ्कारी [न्] त्रि. [अहङ्कारो विद्यते यस्येति। अस्त्यर्थे णिन् प्रत्ययेन निष्पन्नः] गर्वयुक्तः; अभिमानी; गर्वान्वितः; अहङ्कारवान्; अहंयुः; अहङ्कारान्वितः; गर्वितः; 'धीरोद्धतस्त्वहङ्कारी चलश्चण्डो विकत्थनः' —इति दशरूपके। ३७९

अहतम् क्ली. [हन्+क्त। ततो नञ्समासः] नवाम्बरं; नूतनवस्त्रम्; 'ईषद्धौतं नवं श्वेतं सदशं यन्न धारितम्। अहतं तद्विजानीयात् पावनं सर्वकर्मसु'—इति महाभारते। 'अहतैश्चैव वासोभिर्माल्यैरुच्चावचैरपि' 'अहतानि च वासांसि रथञ्च शुभलक्षणम्'—इति रामायणे। अनाहते त्रि.। ५५०

अहमहमिका स्त्री. [अहमहंशब्दोऽस्त्यत्र, वीप्सायां द्वित्वम्। व्रीह्यादित्वात् ठन् ततष्टाप्] परस्पराहङ्कारः; परस्परं परमपेक्ष्यापरस्यापरमपेक्ष्य परस्य योऽहङ्कारोऽहमेव श्रेष्ठोऽहमेव श्रेष्ठ इति मानः; 'इत्यञ्चाहमहमिकया तयोर्विवदतोः'—इति पञ्चतन्त्रे। ७८४

अहर्पतिः पुं. [अह्नः पतिः। पक्षे अहःपतिः] सूर्यः; 'द्यावापृथिव्योः प्रत्यग्रमहर्पतिरिवातपम्'—इति रघुवंशे। ३७

अहार्यः पुं. [हृ+ण्यत्, ततो नञ्समासः] पर्वतः; त्रि. [न हार्यं, नञ्समासः] हर्तुमशक्यम्; अहर्तव्यम्, अहरणीयम्; 'अहार्यं ब्राह्मणद्रव्यं राज्ञा नित्यमिति स्थितिः। तत्रात्मभूतैः कालज्ञैरहार्यैः परिचारकैः'—इति मनुः (९-१०९)। १६५

अहिः पुं. [आहन्तीति। आ+हन्+इण्। हन् हिंसागत्योः 'आङि श्रिहनिभ्यां ह्रस्वश्चेति' इण्,स च डित्। डित्वाट् टिलोप आङो ह्रस्वश्च] सर्पः; वृत्रासुरः; सूर्यः; पथिकः; राहुः; सीसकं; वप्रः; आश्लेषानक्षत्रं; खलः; 'विषधरतोऽप्यतिविषमः खल इति न मृषा वदन्ति विद्वांसः। यदहिर्नकुलद्वेषी स्वकुलद्वेषी पुनः पिशुनः'—इति वासवदत्तायाः प्रस्तावनाश्लोकः। ६४०

अहितः त्रि. [न हितः, नञ्समासः] शत्रुः; माघे (१-५७)। 'स ययौ प्रथमं प्राचीं तुल्यः प्राचीनबर्हिषा। अहितानिलोद्धूतैस्तर्जयन्निव केतुभिः'—इति रघुवंशे (४-२८) अपथ्यम्; 'एकान्ताहितानि दहनपचनमारणादिषु प्रवृत्तान्यग्निक्षारविषादीनि'—इति सुश्रुते। प्रतिकूलः; अशुभकरः; 'लोकस्तथाप्यहितमाचरतीति चित्रम्'—इति वैराग्यशतके। 'परोऽपि हितवान् शत्रुर्बन्धुरप्यहितः परः। अहितो देहजो व्याधिर्हितमारण्यमौषधम्'—इति हितोपदेशः। ४५५

अहिब्रध्नः पुं. [अहिः ब्रध्ने यस्य] शिवः; 'अजैकपादहिब्रध्नः पिनाकी चापराजितः'—इति हरिवंशे। रुद्रविशेषः; 'सुरभिः कश्यपाद्रुद्रानेकादश विनिर्ममे। महादेवप्रसादेन तपसा भाविता सती॥ अजैकपादहिब्रध्नस्त्वष्टा रुद्राश्च भारत!'—इति हरिवंशे। १३

अहीरणिः पुं. [अहीन् ईरयति दूरीकरोति, अहि+ईर्+अणि] द्विमुखसर्पः। ६४३

अहोरात्रः पुं. [अहश्च रात्रिश्च द्वयोः समाहारः। 'रात्राह्नाहाः पुंसि। अहः सर्वैकदेशेति' टच्] दिवानिशं; सूर्योदयद्वयपरिच्छिन्नत्रिंशन्मुहूर्तात्मकः कालः। १०५

अह्नाय अव्य. ['ह्नुङ् अपनयने', बाहुलकाद्भावे घञ्, वृद्धिः। पृषोदरादित्वाद् वस्य यः। ततो नञ्समासः] झटिति; द्रुतम्; 'झट' इति भाषा। 'अह्नाय सा नियमजं क्लममुत्ससर्ज'—इति कुमारसम्भवे। 'अह्नाय तावदरुणेन तमो निरस्तम्'—इति रघुवंशे। 'स्वच्छन्दोच्छलदच्छकच्छकुहरच्छातेतराम्बुच्छटा मूर्च्छन् मोहमहर्षिहर्षविहितस्नानाह्निकाह्नाय वः'—इति काव्यप्रकाशे। ६९७

आ

आकरः पुं. [आकीर्यन्ते धातवोऽत्र। आङ+कॄ+अप्, यद्वा आकुर्वन्ति सङ्घीभूय कुर्वन्ति खननादिव्यवहारमत्रेति वा, आ+कृ+घ] धातुरत्नादेरुत्पत्तिस्थानं; खनिः;

खानिः; 'आकरे पद्मरागाणां जन्म काचमणेः कुतः'–इति हितोपदेशे। 'शैलेन्द्रो हिमवान् नाम धातूनामाकरो महान्'—इति रामायणे। समूहः; 'शब्दाकरकरग्राममर्थमण्डलमण्डलम्'—इति कविकल्पद्रुमः। श्रेष्ठः। १६९

आकर्षः पुं. [आकृष्यते इति। आ+कृष्+घञ्] अक्षक्रीडा; पाशकः; 'पासा' इति भाषा। सारिफलकः; 'आकर्षस्ते वाक्फलः सुप्रणीतो हृदि प्ररूढो मन्त्रपदः समाधिः'—इति महाभारते। इन्द्रियं; धनुरभ्यासवस्तु; आकर्षणम्; [आकृष्यते अनेन, यथा—'आकर्ष इव श्वा आकर्षश्वः'—इति मुग्धबोधव्याकरणम्। आकर्षतुल्य इति ज्ञापनार्थम् इव शब्दः] अयस्कान्तः; निकषोपलः। ८४५

आकल्पः पुं. [आ+कृप्+घञ्] मण्डनं; वेशः; 'अकृतकविधिसर्वाङ्गीनमाकल्पजातं विलसितपदमाढ्यं यौवनं सा प्रपेदे'—इति रघुवंशे। 'स्तोकाप्याकल्परचना विच्छित्तिः कान्तिपोषकृत्'—इति साहित्यदर्पणे। रोगः आकल्पं; कल्पपर्यन्ते अव्ययम्; 'आकल्पं नरकं भुङ्क्ते'—इति स्मृतिः। ५३९

आकल्यम् [कलयति चेष्टाम्। अघ्न्यादयश्चेति यक्, कल्यः नीरोगः। न कल्यः अकल्यः; अकल्यस्य भावः] रोगः; गदः; मान्द्यम्। ६००

आकस्मिकम् त्रि. [अकस्मात् भवम्, अकस्मात्+ठञ्] अकस्माद्भवं; हठाज्जातम्; 'आकस्मिकप्रत्यवभासां च देवीं वाचमानुष्टुभेन छन्दसा परिणतामभ्युदैरयत्'—इति उत्तररामचरिते। ८८४

आकारः पुं. [आ+कृ+घञ्] इङ्गितम्; अभिप्रायानुरूपचेष्टाविष्करणं; सङ्केतः; 'तस्य संवृतमन्त्रस्य गूढाकारेङ्गितस्य च'—इति रघुवंशे। आकृतिः; 'आकारैरिङ्गितैर्गत्या चेष्टया भाषितेन च'—इति हितोपदेशे। मूर्तिः; 'आकारसदृशप्रज्ञः'—इति रघौ (१-१५)। ७७२

आकारणम् क्ली. [आङ+कृ+णिच्+ल्युट्] आह्वानम्; 'ललकार' इति भाषा। 'तैश्च मणिभद्राकारणाय कश्चित् प्रेषितः'—इति पञ्चतन्त्रम्। १५४

आकुलम् त्रि. [आङ+कुल्+क] व्याकुलं; व्यस्तम्; अप्रगुणम्; 'विभवगुरुभिः कृत्यैस्तस्य प्रतिक्षणमाकुला'—इति शाकुन्तले। ८०२

आकुलकम् त्रि. [आङ+कुल्+क+स्वार्थे कन्] व्याकुलं; व्यस्तम्; अप्रगुणम्; आकुलम्। १३१

आकूतम् क्ली. [आङ+कूङ+क्त] अभिप्रायः; आशयः; तात्पर्यम्, इच्छा; 'हसन्नेत्रार्पिताकूतं लीलापद्मं निमीलितम्'—इति साहित्यदर्पणे। 'हृदयनिहितं भावाकूतं वमद्भिरिवेक्षणैः'—इति शाकुन्तले। ७६२

आक्रन्दः पुं. [आङ+क्रन्द्+घञ् अच् वा] दारुणयुद्धम्; मित्रं; भ्राता; रोदनं; 'तासामाक्रन्दशब्देन सहसोद्भ्रान्तलोचनः'—इति रामायणे। ध्वनिः; 'तत्रैव निशि नागानामाक्रन्दः श्रूयते महान्'—इति रामायणे। नाथः; 'पार्ष्णिग्राहं च संप्रेक्ष्य तथाक्रन्दं च मण्डले'—इति मानवे। आह्वानम्। ४५३

आक्रान्तः त्रि. [आङ+क्रम्+क्त] आक्रमणविशिष्टः; कृताक्रमणः; अधिक्रान्तः; अभिभूतः; पराभूतः; वशीभूतः; 'न पाषण्डिगणाक्रान्ते नोपसृष्टेऽन्त्यजैर्नृभिः'—इति मनुः। ७८१

आक्रोशः पुं. [आङ+क्रुश्+घञ्] क्रोधकर्तव्यनिश्चयः; आक्षेपः; अभिषङ्गः; शापः; 'आक्रोशं मम मातुश्च प्रमार्ज्य पुरुषर्षभ'—इति रामायणे। १४९

आक्षेपः पुं. [आङ+क्षिप्+घञ्] अपवादः; आक्रोशनम्; अभिशापः; अभिषङ्गः; अभीषङ्गः; भर्त्सनं; 'क्षान्तेवाक्षेपरूक्षाक्षरमुखरमुखान् दुर्मुखान् दूषयन्तः; सन्तः साश्चर्यचर्या जगति बहुमताः कस्य नाभ्यर्थनीयाः'—इति नीतिशतके। आकर्षणं; 'नवपरिणयलज्जाभूषणां तत्र गौरीं, वदनमपहरन्तीं तत्कृपाक्षेपमीशः'—इति कुमारसम्भवे (७-९५)। विन्यासः; स्थापनं; 'गोरोचनाक्षेपनितान्तगौरे, तस्याः कपोले परभागलाभात्'—इति कुमारसम्भवे (७-१७)। अपहरणं; 'यत्रांशुकाक्षेपविलज्जितानाम्'—कुमारसम्भवे। उपस्थितिः; 'मुख्यार्थस्येतराक्षेपो वाक्यार्थेऽन्वयसिद्धये'—इति साहित्यदर्पणम्। काव्यालङ्कारः; 'आक्षेपोऽन्यो विधौ व्यक्ते निषेधे च तिरोहिते।' 'आक्षेपे हतकः स्मृतः' (३७८)। १४९

आखण्डलः पुं. [आङ+खण्ड्+कलच्] इन्द्रः; 'आखण्डलः काममिदं बभाषे'—इति कुमारसम्भवे। ५३

आखातम् पुं.—क्ली. [आङ+खन्+क्त] अखातं; देवखातम्। ६७५

आखुः पुं. [आङ+खन्+कु] मूषिकः; खनकः; मूषकः; 'कृत्वाखुर्विवरं स्वयं निपतितो नक्तं मुखे भोगिनः।' शूकरः; चौरः; देवताडवृक्षः। 'आखोर्मांसं सपदि बहुधा खण्डखण्डीकृतं यत्, तैले पाच्यं द्रवति निरतं यावदेतन्न सम्यक्'—इति वैद्यके। २३५

आखुरथः पुं. [आखुः मूषिकः रथो वाहनं यस्य] गणेशः। १८

आखेटकम् पुं.–क्ली. [आङ+खिट्+ण्वुल्] मृगया, आखेटः; 'शिकार' इति भाषा। 'आखेटकस्य धर्मेण विभवाः स्युर्वशे नृणाम्। नृप्रजाः प्रेरयत्येको हन्त्यन्योऽत्र मृगानिव'—इति पञ्चतन्त्रे। ४३५

आख्या स्त्री. [आङ+ख्या+अङ्+टाप्] नाम; संज्ञा; 'उमेति मात्रा तपसो निषिद्धा पश्चादुमाख्यां सुमुखी जगाम'—इति कुमारसम्भवे (१-२६)। १५२

आख्यानम् क्ली. [आङ+ख्या+ल्युट्] कथनं; 'कथितं षष्ट्युपाख्यानं ब्रह्मपुत्र यथागमम्। देवी मङ्गलचण्डी या तदाख्यानं निशामय'—इति ब्रह्मवैवर्ते १५२

आख्यायिका स्त्री. [आङ+ख्या+ण्वुल्+टाप्] उपलब्धार्थकथा; इतिहासः; उपन्यासः; 'प्रबन्धकल्पनां स्तोकसत्यां प्राज्ञाः कथां विदुः। परस्पराश्रया या स्यात्सा मताख्यायिका क्वचित्॥' 'आख्यायिका कथावत्स्यात्कवेर्वंशादिकीर्तनम्'—इति साहित्यदर्पणे। १५२

आगः [स्] क्ली. [इ+असुन्+आगादेशः] पापम्; अपराधः; 'सहिष्ये शतमागांसि सूनोस्त इति यत्त्वया'—इति माघे।१४९

आगन्तुः त्रि. [आङ+गम्+तुन्] अतिथिः; आगमनशीलः; अनियतः; 'अकस्मादागन्तुना सह विश्वासो न युक्तः'—इति हितोपदेशे। आकस्मिकरोगादिः; 'आगन्तवोऽपि शरीरशल्यव्यतिरेकेण यावन्तो भावा दुःखमुत्पादयन्ति'—इति सुश्रुतः। ३५८

आगमः पुं. [आ+गम्+अच्] शास्त्रमात्रं; वेदः; 'आगमादिव तमोपहादितः सम्भवन्ति मतयो भवच्छिदः'—इति किराते। आगमनम्; अर्थादीनामागमः; 'नित्यव्यया प्रचुरनित्य (रत्न) धनागमा च'—इति नीतिशतके। प्राप्तिः; उपार्जनं; 'नाधर्मेणागमः कश्चिन्मनुष्यान् प्रति वर्तते'–इति मनुः। साक्षिपत्रादिः; प्रकृतिप्रत्ययानुपघाति कार्यं; शास्त्रज्ञानं; श्रुतवत्ता; 'आकारसदृशप्रज्ञः प्रज्ञया सदृशागमः।' 'तामर्पयामास च शोकदीनां तदागमप्रीतिषु तापसीषु'—इति रघौ। ९

आगूः [र्] स्त्री.–आगूः; प्रतिज्ञा। ७१५

आगूः स्त्री. [आ+गमेः क्विपि 'गमः क्वावि'त्यन्तलोपे 'ऊ च गमादीनामि' त्यूकारादेशः] प्रतिज्ञा। ७१५

आग्नेयी स्त्री. [अग्नि+ढक्+ङीप्] स्वाहा; अग्निपत्नी; अग्निकोणम्। ६६

आघाटः पुं. [आङ+घट्+घञ्] सीमा; अपामार्गः। २५९

आघारः पुं. [आङ+घृ+घञ्] घृतम्। २७५

आङ्गिरसः पुं. [अङ्गिरस्+अण्] वृहस्पतिः; 'अध्यापयामास पितॄन् शिशुराङ्गिरसः कविः। पुत्रका इति होवाच ज्ञानेन परिगृह्य तान्'–इति मनुः (२-१५१)।४७

आचमनम् क्ली. [आङ+चम्+ल्युट्] वैधकर्मारम्भात् पूर्वं वारत्रयं जलपानपूर्वकं यथाक्रमाष्टाङ्गस्पर्शरूपशुद्धिजनकक्रिया; उपस्पर्शः; आचमः; शुचिप्रणीः; उपस्पर्शनम्। ४०८

आचारः पुं. [आङ+चर्+घञ्] व्यवहारः; चरितं; चरित्रं; चारित्रं; चरणं; वृत्तं; शीलं; विचारः; 'आचारेणावसन्नोऽपि पुनर्लेखयते यदि। सोऽभिधेयो जितः पूर्वं प्राङ्न्यायस्तु स उच्यते'—इति व्यवहारतत्त्वम्। चरित्रम्; 'आचारलाजैरिव पौरकन्याः'—इति रघुवंशे (२-१०)। ८५२, ८६९

आचारातिक्रमः पुं. [आचारस्य अतिक्रमः] अशिष्टाचारः; असद्व्यवहारः; अयोग्यक्रिया। ७८३

आचितः त्रि. [आङ्+चि+क्त] संगृहीतः; छन्नः; एकत्रसन्निवेशितः; आकीर्णः; व्याप्तः; ग्रथितः; गुम्फितः; 'कचाचितौ विष्वगिवागजौ गजौ'—इति भारविः। 'अर्द्धाचिता सत्वरमुत्थितायाः पदे पदे दुर्निमिते गलन्ती'—इति रघुवंशे। ७०२

आच्छादः पुं. [आङ्+छद्+घञ्] वस्त्रम्; आच्छादनम्। १२१

आच्छादनम् क्ली. [आङ्+छद्+ल्युट्] संपिधानम्, अपवृतिमात्रं; वलभी; वस्त्रं (५४८); 'तस्मादेताः सदा पूज्या भूषणाच्छादनाशनैः'—इति मनुः। ३०३

आच्छोवनम् क्ली. [आङ+छिद्+ल्युट् ततः पृषोदरादित्वाद् इत ओत्] मृगया; आखेटः। ४६५

आजानेयः पुं.– स्त्री. [अज्+घञ्+आज+आनेय] कुलीनाश्वः; श्रेष्ठघोटकः; 'शक्तिभिर्भिन्नहृदयाः स्खलन्तोऽपि पदे पदे। आजानन्ति यतः संज्ञामाजानेयास्ततः स्मृताः'—इति अश्वतन्त्रम्। ४३९

आजिः स्त्री. [अज्+इन्] युद्धं; रणः; संग्रामः; समरः; 'आवृण्वती लोचनमार्गमाजौ रजोऽन्धकारस्य विजृम्भितस्य'—इति रघुवंशे (७-४२)। आक्षेपः; क्षणं; समानभूमिः। ४५६

आजीवः पुं. [आङ+जीव्+घञ्] जैनः (५७०); जीविका; वृत्तिः; 'बहुमूलफलो रम्यः स्वाजीवः प्रतिभाति मे'—इति रामायणे। ३४५

आज्यम् क्ली. [आङ्पूर्वात् अञ्जेः संज्ञायामिति क्यप्] घृतं; श्रीवासः; यागक्रियादिसाधनं तैलदुग्धादिकमपि आज्यशब्देनोच्यते। यदुक्तं गृह्यसंग्रहे—'घृतं वा यदि वा तैलं पयो वा दधि यावकम्। आज्यस्थाने नियुक्तानामाज्यशब्दो विधीयते'—इति गृह्यसंग्रहे। 'तत्रार्चितो भोजपतेः पुरोधा हुत्वाग्निमाज्यादिभिरग्निकल्पः'—इति रघुवंशे (७–२०)। २७५

आटिः पुं. [आङ+अट्+इन्] पक्षिविशेषः; 'शरालि' इति ख्यातः। 'टिटिहिरी' इति भाषा। २४९

आटोपः पुं. [आङ+टुप्+घञ्] दर्पः, गर्वः, सम्भ्रमः, संरम्भः, 'विषं भवतु मावाभूत् फटाटोपो भयङ्करः'—इति पञ्चतन्त्रे। 'साटोपमुर्वीमनिशं नदन्तः'–इति माघे। 'आटोपहृल्लासवमीगुरुत्वस्तैमित्यमावाहकफप्रसेकैः' —इति माधवकरः। ७२२

आडम्बरः पुं. [आङ+दम्+वरच्, ततः द स्थाने ड। आडम्ब्यते 'डबि क्षेपे' घञ्, भावे वा। आडम्बं राति रमयति वा, आतोनुपेति क, मूलविभुजेति वा क। आडम्बयति वा, बाहुलकादरन्] तूर्यरवः; पटहरवः; गजेन्द्रगर्जनं; प्रपञ्चः; पटहः; आरम्भः; पक्ष्मः; दर्पः; क्रोधः; हर्षः; आयोजनम्; एकत्रसन्निवेशः; 'धातः किं नु विधौ विधातुमुचितो, धाराधराडम्बरः'—इति भामिनीविलासे। युद्धम्; रवार्थे यथा,–'असारस्य पदार्थस्य प्रायेणाडम्बरो महान्। नहि तादृग्ध्वनिः स्वर्णे यथा कांस्ये प्रजायते।' ८४१

आढकी स्त्री. [आङ+ढौकृ गतौ, अच्, गौरादित्वाद् ङीप्] शमीधान्यविशेषः; तुवरी; वर्या; करवीरभुजा; वृत्तबीजा; पीतपुष्पा; 'अरहर' इति भाषा। 'आढकी तुवरी चापि सा प्रोक्ता शणपुष्पिका। आढकी तुवरी रूक्षा मधुरा शीतला लघुः। ग्राहिणी वातजननी वर्ण्या पित्तकफास्रजित्'—इति भावप्रकाशः। 'मृदुः कषाया च सरक्तपित्तं निहन्ति कासानतिवातला स्यात्। गुल्मज्वरारोचककासछर्दिहृद्रोगदुर्नामहराढकी स्यात्'—इति हारीतः। 'आढकी कफपित्तघ्नी वातला'—इति चरकः। 'आढकी कफपित्तघ्नी नातिवातप्रकोपनी'—इति सुश्रुतः। ५८४

आढ्यः त्रि. [आढौकते, आ, ढौकृ गतौ, बाहुलकाड् ड य] धनवान्; युक्तः; विशिष्टः; अन्वितः; यथा—धनाढ्यः; गुणाढ्यः—'चत्वारस्तूपचीयन्ते विप्र आढ्यो वणिङ्नृपः'—इति मनुः (८–१६९)। 'आढ्योऽभिजनवानस्मि कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया'—इति भगवद्गीता। ३५६

आतङ्कः पुं [आङ+तकि+घञ्] रोगः; 'दृष्ट्वा पथि निरातङ्कं कृत्वा वा ब्रह्महा शुचिः'—इति याज्ञवल्क्यः। सन्तापः; शङ्का; 'आतङ्कश्रमसाहसव्यतिकरोत्कम्पः क्षणं सह्यताम्'—इति महावीरचरिते। मुरजध्वनिः; ज्वरः; 'नानातन्त्रविहीनानां भिषजामल्पमेधसाम्। सुखं विज्ञातुमातङ्कमयमेव भविष्यति—इति माधवकरः। 'ज्वरो विकारो रोगश्च व्याधिरातङ्क एव च। एकार्थनामपर्यायैर्विविधैरभिधीयते'—इति चरकः। रोगार्थे उदाहरणम्—'प्रश्नेन च विजानीयाद् देशं कालं जातिं सात्म्यमातङ्कसमुत्पत्तिं वेदनासमुच्छ्रायं बलमित्यादि'—इति सुश्रुते। ६००

आतपः पुं [आङ+तप्+अच्] रौद्रं; प्रकाशः; द्योतः; दिनज्योतिः; सूर्यालोकः; दिनप्रभा; रविप्रकाशः; प्रद्योतः; तमारिः; तापनः; द्युतिः; 'उजाला, धाम' इत्यादि भाषा। 'आतपः कटुको रूक्षः स्वेदमूर्च्छातृषावहः। दाहवैवर्ण्यजननो नेत्ररोगप्रकोपनः॥' 'आतपः पित्ततृष्णाग्निस्वेदमूर्च्छाभ्रमास्रकृत्। दाहवैवर्ण्यकारी च'—इति सुश्रुतः। 'कथमातपे गमिष्यसि परिबाधाकोमलैरङ्गैः'

—इति शाकुन्तले । 'मृगाः प्रचण्डातपतापिता भृशम्'—इति ऋतुसंहारे (११) । ४८

आतपत्रम् क्ली. [आङ+तप्+अच्=आतप+त्रै+क] छत्रम्; आतपत्रकम्; आतपवारणम्; 'राज्यं स्वहस्तधृतदण्डमिवातपत्रम्'—इति शाकुन्तले। 'पाण्डरेणातपत्रेण ध्रियमाणेन मूर्द्धनि'—इति रामायणे । ४२३

आतरः पुं. [आङ+तृ+अप्, आतरत्यनेन, 'पुंसि संज्ञायामिति' घ] नद्यादितरणाय देयकपर्दकादिः, तरपण्यम्; 'उतराई', 'नौकाभाड़ा' इत्यादि भाषा । ६७१

आतापी [न्] पुं. [आङ+तप्+णिनि] आतायी; चिल्लः; पक्षिभेदः; 'चील' इति ख्यातः । असुरभेदः । २५०

आतायी [न्] पुं. [आङ+ताय्+णिनि] चिल्लः, आतापी । २५०

आतिः पुं. [अत्+इण्] प्लवजातिकः पक्षी; शरारिः; आटिः; आडिः; चिल्लः । २४९

आतिथेयः त्रि. [अतिथि+ढञ् । अतिथौ साधुः] अतिथिसेवाकारकः; अतिथिभक्षणादिद्रव्यं; 'प्रत्युज्जगामातिथिमातिथेयः'—इति रघुवंशे (५-२) । 'तमातिथेयो बहुमानपूर्वया सपर्यया'—इति कुमारसम्भवे (५-३१) । 'दैवपित्र्यातिथेयानि तत्प्रधानानि यस्य तु'—इति मनुः (३-१८) । ३५९

आतिथेयी स्त्री.– आतिथ्यम्, अतिथ्यर्थवस्तु । ३५९

आतिथ्यम् त्रि. [अतिथि+ञ्य] अतिथ्यर्थवस्तु; अतिथिभक्षणादिद्रव्यम्; अतिथिसेवा; 'अरावप्युचितं कार्यमातिथ्यं गृहमागते'—इति हितोपदेशे । पुं. आतिथ्यः; अतिथिः । ३५९

आतोद्यम् क्ली. [आङ+तुद्+ण्यत्] वाद्यं तच्चतुर्विधम् । वीणादिवाद्यं ततं १, मुरजादिवाद्यम् आनद्धं २, वंशादिवाद्यं शुषिरं ३, कांस्यतालादिवाद्यं घनम् ४ । 'स्रजमातोद्यशिरो निवेशिताम्'—इति रघुवंशे (८-३४) । 'आतोद्यं ग्राहयामास समत्याजयदायुधम्'—इति रघुवंशे (१५-८८) । ९३

आत्मजः पुं. [आत्मन्+जन्+ड । 'आत्मा वै जायते पुत्र' इति श्रुतेः] पुत्रः; आत्मजन्मा; 'तस्यार्थे सर्वभूतानां गोप्तारं धर्ममात्मजम्'—इति मनुः (११-१४) । 'दिशः प्रस्थापयामास दिदृक्षुर्जनकात्मजाम्'—इति रामायणे । ४९७

आत्मभूः पुं. [आत्मन्+भू+क्विप्) विष्णुः; कामदेवः (३३); ब्रह्मा; शिवः; 'सर्वज्ञस्त्वमविज्ञातः सर्वयोनिस्त्वमात्मभूः'—इति रघुवंशे (१०-२०) । २४

आत्मा [न्] पुं. [अतति सन्ततभावेन जाग्रदादिसर्वावस्थासु अनुवर्तते । 'अत् सातत्यगमने' + मनिन्] जीवः; स्वभावः (७८२); यत्नः; धृतिः; बुद्धिः; ब्रह्म; देहः; मनः; परव्यावर्तनं; पुत्रः; अर्कः; हुताशनः; वायुः; 'यदा यदात्मा कृतिमानयं भवेत् तदामनस्तत्त्वधितिष्ठतीन्द्रियम् । ततो मनोऽधिष्ठितमिन्द्रियं घटे प्रवर्तते संशयबुद्धिसम्भवे'—इति वैद्यकवादार्थदर्पणम्]। १३४

आत्मीयः त्रि. [आत्मन्+छ] स्वकीयः; अन्तरङ्गः; 'प्रसादमात्मीयमिवात्मदर्शः'—इति रघुवंशे । 'किमिदं द्युतिमात्मीयां न बिभ्रति यथा पुरा'—इति कुमारसम्भवे (२-१९) । ५०९

आत्रेयिका स्त्री. [अत्रि+ढक्+कन्+टाप्] ऋतुमती; पुष्पवती स्त्री; आत्रेयी; रजस्वला । ४८८

आदर्शः पुं. [आङ+दृश्+घञ्] दर्पणम्; 'धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च । यथोल्वेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम्'—इति भगवद्गीता । ५५५

आदिः पुं. [आङ+दा+कि] पूर्वः; प्रथमः; पदान्ते गणसूचकः; यथा—इत्यादिः । प्रारम्भः; प्राक्सत्ता; नियतपूर्ववृत्ति कारणम्; उत्पत्तिहेतुः; सामीप्यं; व्यवस्थायां; प्रकारे; अवयवार्थे; 'सामीप्येऽथ व्यवस्थायां प्रकारेऽवयवे तथा । आदिशब्दं तु मेधावी चतुर्ष्वर्थेषु लक्षयेत् ।' 'अप एव ससर्जादौ तासु बीजमवासृजत्'—मानवे (१-८) । 'जगदादिरनादिस्त्वम्'—इति कुमारसम्भवे (१-९) । ७०७

आदित्यः पुं. [अदितेरादित्यस्य वा अपत्यम्+ण्य] देवः; अदितिपुत्रः; आदितेयः; सूर्यः (३५) । द्वादशादित्यगणे बहुवचनान्तः; तत्प्रत्येकनामानि—विवस्वान् १, अर्यमा २, पूषा ३, त्वष्टा ४, सविता ५, भगः ६, धाता ७, विधाता ८, वरुणः ९, मित्रः १०, शक्रः ११, उरुक्रमः १२ । एते कश्यपाद् अदित्यां भार्यायां जाताः । कल्पान्तरे त्वष्टृकन्या संज्ञा आदित्यपत्नी आदित्यस्य तेजः सोढुमसमर्था । अतः तस्याः पितृकृतादित्यद्वादशखण्डा द्वादशादित्याः, तेषां द्वादशमासेषु एकैकस्योदयः—इति पुराणम् । आदित्यमण्डलस्थितो

हिरण्मयो विष्णुः । 'आदित्यस्य गतागतैरहरहः संक्षीयते जीवितम्'—इति शान्तिशतके (४–२४) । 'आदित्यचन्द्रावनिलोऽनलश्च द्यौर्भूमिरापो हृदयं यमश्च'—इति महाभारते। अर्कवृक्षः । ४

आदिमम् त्रि. [आदौ भवम्, 'अग्रादिपश्चाड् डिमच्', यद्वा 'मध्यान्म' इत्यत्रादेश्चेति वचनान् म] आद्यम्, प्रथमभववस्तु; 'एते पञ्चान्यथासिद्धा दण्डत्वादिकमादिमम्। आदिमः श्येनशैलादिसंयोगः परिकीर्तितः'—इति भाषापरिच्छेदे। ७७५

आदीनवः पुं. [दीङ क्षये, भावे क्त, स्वादय ओदितः, ओदितश्चेति नत्वम्, आदीनस्य वानम्। घञर्थे क इति बाहुलकात् वातेः क] दोषः; दुरन्तः; 'यद्वासुदेवेनादीनमनादीनवमीरितम्'—इति माघे (२–२२)। क्लेशः। ७७१

आदेशी [न्] पुं. [आङ+दिश्+णिनि] दैवज्ञः; गणकः; त्रि. आदेशकर्ता; उपदेष्टा; 'कपोलपाटलादेशि बभूव रघुचेष्टितम्'—इति रघुवंशे (४–६८)। ४०३

आदेष्टा [ऋ] पुं. [आदिशति ऋत्विगादीन् यागादिष्विष्टसम्पादनाय प्रेरयति। आङ+दिश् अतिसर्जने+तृच्] यागविषये ममेष्टसम्पादनाय यथार्थं कर्म कुर्विति ऋत्विजामादेशकः; व्रती; यष्टा; यजमानः; अन्वादेष्टा; याजकः; आदेशकर्ता; उपदेष्टा। ४२०

आद्यः त्रि. [आदौ भवः, 'दिगादिभ्यो यत्', यद्वा अद्यते यः। अद् + कर्मणि ण्यत्] प्रथमः; 'तोषितोऽहं नृपश्रेष्ठ त्वयेहाद्येन कर्मणा'। ७७५

आद्यूनः त्रि. [आङ्पूर्वाद् दीव्यतेरकर्मत्वात् क्त, 'दिवोविजिगीषायामिति' निष्ठातस्य नत्वं, 'यस्य विभाषेति' नेट्, च्छ्वोरित्यूठ्] औदरिकः; 'पेटू' इति भाषा। 'आद्यूनः स्यादौदरिके विजिगीषाविवर्जिते'—इत्यमरः। 'आद्यूनः सद्गृहिण्येव प्रायो यष्ट्यावलम्बितः'—इति किराते (११–५)। आदिहीनः। ३५०

आधारः पुं. [आध्रियन्ते अस्मिन् आधारः,'अध्यायन्यायेति' सूत्रे अवहाराधारेत्युपसंख्यानादधिकरणे घञ्। व्याकरणशास्त्रे अधिकरणकारकम्। 'आधारोऽधिकरणम्'] तडागः; आशयः (७९८); अधिकरणम्; आलबालम्; अम्बुधारणं; क्षेत्रादिसेकार्थं सेतुना बहुनालं जलं निरुद्धय यत्र स्थाप्यते स आधारः बद्धकन्दरादिः; 'बाँध' इति ख्यातः। सस्याद्यर्थं जलबन्धनं; क्षेत्रादिसेकार्थं जलाधारस्थानम्; 'आधारबन्धप्रमुखैः प्रयत्नैः संवर्द्धितानां सुतनिर्विशेषम्। कच्चिन्न वाय्वादिरुपप्लवो वः श्रमच्छिदामाश्रमपादपानाम्'—इति रघुवंशे (५–६)। 'तथात्मकोऽप्यनेकस्तु जलाधारेष्विवांशुमान्'—इति याज्ञवल्क्यः। ६७६

आधिः पुं. [आङ+धा+कि] मनःपीडा; 'आधिव्याधिपरीताय अद्य श्वो वा विनाशिने। को हि नाम शरीराय धर्मापेतं समाचरेत्'—इति हितोपदेशे। 'आधिव्याधिशतैर्जनस्य विविधैरारोग्यमुन्मूल्यते'—इति वैराग्यशतके। ५३५

आधोरणः पुं. [आधोरयति, 'धोर्ऋगतिचातुर्ये', कर्तरि ल्यु] हस्तिपकः; 'महावत' इति भाषा। 'आधोरणा हस्तिपका हस्त्यारोहा निषादिनः'—इत्यमरः। 'आधोरणानां गजसन्निपाते शिरांसि चक्रैर्निशितैः क्षुराग्रैः'—इति रघुवंशे (७–४६)। २२५

आनकः पुं. [आङ+अन्+ण्वुल्] पटहः; भेरी; मृदङ्गः; 'ततः शङ्खाश्च भेर्यश्च पणवानकगोमुखाः'—इति भगवद्गीता (१–१३)। शब्दयुक्तमेघः। ९७

आनकदुन्दुभिः पुं. [आनकाः दुन्दुभयो देववाद्यविशेषाः दध्वनुः यस्य जन्मनि। वसुदेवजन्मनि देवा दुन्दुभिध्वनिं चक्रुः] वसुदेवः; कृष्णपिता; 'वसुदेवो महाबाहुः पूर्वमानकदुन्दुभिः। जज्ञे यस्य प्रसूतस्य दुन्दुभ्यः प्रानदन् दिवि। आनकानां च संह्लादः सुमहानभवद्दिवि'—इति हरिवंशे। २७

आननम् क्ली. [आनिति अनेन। आङ+अन्+ल्युट्] आस्यं; लपनं; वक्त्रं; मुखं; 'तदाननं मृत्सुरभि क्षितीश्वरः'—इति रघुवंशे (३–३)। ५१८

आनन्दः पुं. [आङ+नन्द्+घञ्] आह्लादः; आनन्दथः; शर्म; शातं; सुखं; मुत्; प्रीतिः; प्रमोदः; हर्षः; प्रमदः; आमोदः; संमदः; 'यत्रानन्दाश्च मोदाश्च यत्र स्निग्धाश्च सम्पदः'—इति उत्तरचरिते। 'आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान् न बिभेति कुतश्चन'—इति तैत्तिरीये। वासुदेवस्य बलविशेषः; त्रि. [आनन्द+अर्श आदित्वादच्] आनन्दविशिष्टः; हर्षयुक्तः; सुखी। १२३

आनायः पुं. [आङ+नीञ्+घञ्] जालम्। ५९४

आनाहः पुं. [आङ+नह्+घञ्] दैर्घ्यं; दीर्घत्वम्;

आयामः; आरोहः; मूत्रपूरीषरोधकरोगः; विबन्धः; विष्टम्भः; मलरोधनः; 'आनाहार्तं ततो दृष्ट्वा तत्सैन्यमसुखार्दितम्'—इति महाभारते। 'यस्य वातः प्रकुपितः कुक्षिमाश्रित्य तिष्ठति। नाधो व्रजति नाप्यूर्ध्वं चानाहस्तस्य जायते'—इति चरकः। ७८६

आनुपूर्वी स्त्री.– क्ली. [अनुपूर्व+अण्,ङीप्] परिपाटी; अनुक्रमः; 'षडानुपूर्व्या विप्रस्य क्षत्रस्य चतुरोऽवरान्'—मनुः (३–२३)। 'आनुपूर्व्यान् स धर्मज्ञः पप्रच्छ कुशलं कुले।' ७३९

आपगा स्त्री. [अपां समूहः आपम्, 'तस्य समूहः' इत्यण्, तत आपेन जलसमूहेन गच्छति प्रचलतीति। आप+गम्+ड+टाप्] नदी; 'आपगाः कृतपुण्यान्ताः पद्मिन्यश्च सरांसि च'—इति रामायणे। 'सम्भूयाम्भोधिमभ्येति महानद्या नगापगा'—इति माघे (२–१००)। ६६५

आपणः पुं. [आङ+पण्+अच्] पण्यविक्रयशाला; निषद्या; विपणिः; पण्यवीथिका; 'दुकान' इति भाषा। (एतच्चतुष्कं हट्टे; आपणादिद्वयं हट्टे; विपण्यादिद्वयं हट्टगृहे—इति केचित्।) 'माल्यापणेषु राजन्ते नाद्य पण्यानि वै तथा'—इति रामायणे। 'भक्ष्यमाल्यापणानां च ददृशुः श्रियमुत्तमाम्'—इति महाभारते। २९६

आपन्नसत्त्वा स्त्री. [आपन्नं प्राप्तं सत्त्वं गर्भरूपेण जन्तुरनया] गर्भवती; 'सममापन्नसत्त्वास्ता रेजुरापाण्डुरत्विषः'—इति रघुः (१०–५९)। 'नार्याश्चापन्नसत्त्वायास्तथातिद्रुतमश्नतः'—इति सुश्रुतः। ४९८

आपानम् क्ली. [आपीयते अस्मिन्। आङ+पा+अधि० ल्युट्] मद्यपानार्थसभा, पानगोष्ठिको; पानगोष्ठी; 'गन्धर्वाप्सरसो भद्रे मामापानगतं सदा।' 'आपाने पानकलिता दैवेनाभिप्रणोदिताः।' 'ददर्श यदुवीराणाम् आपाने वैशसं महत्'—इति च महाभारते। ३२८

आपीडः पुं. [आङ+पीड्+पचाद्यच्] शिखास्थितमाल्यं; शेखरः; 'तस्मिन् कुलापीडनिभे विपीडं सम्यङ्‌ मही शासति शासनाङ्काम्'—इति रघुवंशे (१८–२९)। ५५४

आपीनम् क्ली. [ओप्यायी वृद्धौ, आङ+प्याय्+क्त, 'प्यायः पी' निष्ठायां न] ऊधः; 'आपीनभारोद्वहनप्रयत्नाद् गृष्टिर्गुरुत्वाद्वपुषो नरेन्द्रः'—इति रघुवंशे (२–१८)। पुं. कूपः; त्रि. [आङ+प्याय्+क्त] ईषत्स्थूलः, सम्यक् स्थूलः। २७१

आप्तः त्रि. [आप्+क्त] आत्मीयः; सन्निकृष्टः; 'असपिण्डं द्विजं प्रेतं विप्रो निर्हृत्य बन्धुवत्। विशुध्यति त्रिरात्रेण मातुराप्तांश्च बान्धवान्'—इति मनुः (३–१२)। प्रत्ययितः; विश्वस्तः; 'सांवत्सरिकमाप्तैश्च राष्ट्रादाहारयेद् बलिम्'—इति मानवे (७–८०)। प्राप्तः; लब्धः; 'तेभ्यः किमाप्तं मया'—इति कालिदासः। सत्यं; हितः; कुशलः; 'कुमारभृत्याकुशलैरनुष्ठिते भिषग्भिराप्तैरथ गर्भभर्मणि'—इति रघुवंशे (३–१२)। बहुः; अधिकः; 'यजेत राजा क्रतुभिर्विविधैराप्तदक्षिणैः'—इति मनुः। (राजा नानाप्रकारान् बहुदक्षिणान् अश्वमेधादियज्ञान् कुर्यात्'—इति तट्टीका)। ५०९

आप्लवनम् क्ली. [आङ + प्लु + ल्युट्] स्नानम्; आप्लावः; आप्लवः। ४०८

आबन्धः पुं. [आबध्यतेऽनेन। आङ+बन्ध्+घञ्] योत्रं; भूषणं; प्रेम; बन्धनं; 'गते प्रेमाबन्धे प्रणयबहुमाने विगलिते'—इति अमरुशतके (३८)। ५७५

आबन्धनम् क्ली. [आङ+बन्ध्+ल्युट्] प्रग्रहः। ८०५

आबाधा स्त्री. [आ+बाधृ विलोडने, गुरोश्चेति अ, टाप्] वेदना; अतिपीडा। ६२६

आविद्धः त्रि. [आङ+व्यध्+क्त] वक्रः; क्षिप्तः; पराहतः; मूर्खः। ६९६

आभरणम् क्ली. [आभ्रियतेऽनेन। भृञ् भरणे, ल्युट्] भूषणम्; अलङ्कारः; 'स्याद्भूषणं त्वाभरणं चतुर्धा परिकीर्तितम्। आवेध्यं बन्धनीयं च क्षेप्यमारोप्यमेव तत्' 'वाहनानि च सर्वाणि शस्त्राण्याभरणानि च'—मनुः (७–२२२)। 'किमित्यपास्याभरणानि यौवने धृतं त्वया वार्धकशोभि वल्कलम्'—इति कुमारसम्भवे (५।४४)। ५३९

आभीरः पुं. [आ समन्ताद् भियं राति, रा दाने, आत इति क] गोपः। 'अहीर' इति भाषा। ५८७

आभीरपल्लिः स्त्री. [आभीराणां पल्लिः] गोपपल्ली। 'अहीरों का गाँव' इति भाषा। २६१

आभीरपल्ली स्त्री. [आभीराणां पल्ली] गोपगृहसमूहः; गोपग्रामः; गोपगृहं; गोपस्थानं; घोषः। २६१

आभीलः त्रि. [आङ+भी+ला+क] भयानकः; 'आभीलं न द्वयोः कृच्छ्रे वाच्यलिङ्गं भयानके'—इति मेदिनी। कष्टयुक्तः; क्ली. [आ समन्ताद् भियं लाति जनयति; आङ+भी+ला+क] कष्टं; कृच्छ्रं; भयावहः; भीतिजनकः; 'रात्रौ निशीथे स्वाभीले गतेऽर्द्धसमये नृप। प्रचारे पुरुषादानां रक्षसां घोरकर्मणाम्'—इति महाभारते। ७०५

आभेरी स्त्री.– रागिणीविशेषः। १०३ अ.

आभोगः पुं. [आङ+भुज्+घञ्] परिपूर्णता; 'मण्डाभोगात्कठिनविषमामेकवेणीं करेण'—इति मेघदूते। 'अकथितोऽपि ज्ञायत एव यथायमाभोगस्तपोवनस्य'—इति शाकुन्तले। वरुणस्य छत्रं; यत्नः; कविनामयुक्तगानसमापककविता; 'यत्रैव कविनाम स्यात् स आभोग इतीरितः'—इति सङ्गीतदामोदरः। ७५५

आमः पुं. [अम्+घञ्] रोगमात्रं; रोगभेदः; मलवैषम्यरोगः; 'पिबेत् स परिकर्तामि मले वा दाडिमाम्बुना, विडेन लवणं पिष्ठं विल्वं चित्रकनागरम्'—इति चरकः। ६००

आमगन्धिकम् क्ली. [आमस्यापक्वस्य गन्ध इव गन्धो यत्र, आमगन्धि+स्वार्थे कन्] आमगन्धि; अपक्वमांसादिगन्धविशिष्टं; विस्रं; विश्रं; चिताधूमादिगन्धयुक्तम्। ६३१

आमन्त्रणम् क्ली. [आ+मन्त्र्+भावे ल्युट्] सम्बोधनम्; आपृच्छनं; निमन्त्रणं; निमन्त्रणविशेषः। ८८३

आमयः पुं. [अम् रोगे+भावे घञ्। मीञ् हिंसायाम्, करणे अच् वा] रोगः; 'तद्युक्तं विविधैर्योगैर्निहन्यादामयान् बहून्'—इति सुश्रुतः। 'तत्र व्याधिरामयो गद आतङ्को यक्ष्मा ज्वरो विकारो रोग इत्यनर्थान्तरम्'–इति चरकः। ६००

आमलकी स्त्री. [आङ+मल+क्वुन्+जातेरिति ङीष्] फलवृक्षविशेषः; तिष्यफला; अमृता; वयस्था; वयःस्था; कायस्था; श्रीफला; धात्रिका; शिवा; शान्ता; धात्री; अमृतफला; वृष्या; वृत्तफला; रोचनी; कर्षफला; तिष्या; 'आँवला, आमला' इत्यादि भाषा। 'तुष्यत्यामलकैर्विष्णुरेकादश्यां विशेषतः। श्रीकामः सर्वदा स्नानं कुर्वीतामलकैर्नरः'—इति गारुडे (२१५ अध्यायः)। 'त्रिष्वामलकमाख्यातं धात्री तिष्यफलामृता। हरीतकीसमन्धात्रीफलं किन्तु विशेषतः॥ रक्तपित्तप्रमेहघ्नं परं वृष्यं रसायनम्। हन्ति वातं तदम्लत्वात् पित्तं माधुर्यशैत्यतः॥ कफं रूक्षकषायत्वात् फलं धात्र्यास्त्रिदोषजित्। यस्य यस्य फलस्येह वीर्यं भवति यादृशम्॥ तस्य तस्यैव वीर्येण मज्जानमपि निर्दिशत्'—इति भावप्रकाशः। ६१८

आमिक्षा स्त्री. [आमिष्यते, आ+मिषु सेचने, बाहुलकात् सक्] शृतोष्णदुग्धेदधियोगसम्भवा या; दधिकूर्चिका; पयस्या; क्षीरसन्तानिका; तक्रकूर्चिका। 'छेना' इति ख्याता। ४१६

आमिषम् क्ली.—पुं. [आमिष्यते भुज्यते, आ+मिष् श्लेषणे, घञ्, संज्ञापूर्वकत्वान्न गुणः] उत्कोचः; लञ्चा; मांसम् (६३१); भोग्यवस्तु; संभोगः; सुन्दराकाररूपादि; लोभसञ्चयः; लाभः; कामगुणः; रूपं; भोजनम्। ४३४

आमीक्षा स्त्री. [आमिष्यते,आ+मिषु सेचने, बाहुलकात् सक्, दीर्घः] आमिक्षा; तक्रकूर्चिका; आवर्तिते तप्ते क्षीरे दधियोगाद् या वटिकाकारा विकृतिः जायते सा। ४१६

आमुक्तः त्रि. [आङ+मुच्+क्त] पिनद्धः; परिहितवस्त्रादिः; परिहितकवचव्यक्तिः। ७४७

आमुष्यायणः त्रि. [अमुष्य अपत्यम्+फक्+अलुक्] ख्यातवंशोद्भवः; सत्कुलजातः। ३९५

आमोदः पुं. [आङ+मुद्+घञ्] अतिदूरगामिगन्धः; गन्धः; सुमहद्गन्धः; 'आमोदमुपजिघ्रन्तौ स्वनिःश्वासानुकारिणम्'—इति रघुवंशे (१–४३)। हर्षः। ७७

आम्नायः पुं. [आङ+म्ना+घञ्, युक्] श्रुतिः; वेदः; आगमः; निगमः; 'तृतीयो ह्येष मेध्योऽग्निराम्नायः पञ्चमोऽथवा'—इति महावीरचरिते। 'समांसो मधुपर्क इत्याम्नायं बहु मन्यमानाः'—इति उत्तरचरिते। सम्प्रदायः (४०२); गुरुपरम्पराप्राप्तोपदेशः; उपदेशः; कुलक्रमः; कुलं; शिक्षादानं; तन्त्रशास्त्रम्; अभ्यासः; आम्रेडनम्; आलोचनम्। ९

आम्रः पुं. [अम्यते, अम् गत्यादौ, अमितम्योर्दीर्घश्चेति रक्, दीर्घश्च] फलवृक्षविशेषः; चूतः; रसालः; अतिसौरभश्चेत् सहकारः; कामशरः; कामवल्लभः; कामाङ्गः; कीरेष्टः; माधवद्रुमः; भृङ्गाभीष्टः;

सीधुरसः; मधूली; कोकिलोत्सवः; वसन्तदूतः; अम्लफलः; मोदाख्यः; मन्मथालयः; मध्वावासः; सुमदनः; पिकरागः; नृपप्रियः; प्रियाम्बुः; कोकिलावासः; माकन्दः; षट्पदातिथिः; मधुव्रतः; वसन्तद्रुः; पिकप्रियः; स्त्रीप्रियः; गन्धबन्धुः; अलिप्रियः; मदिरासखः; 'आम्रमामं जलस्विन्नं मर्दितं दृढपाणिना। सिताशीताम्बुसंयुक्तं कर्पूरमरिचान्वितम् ॥ प्रपाणकमिदं श्रेष्ठं भीमसेनेन निर्मितम्। सद्यो रुचिकरं बल्यं शीघ्रमिन्द्रियतर्पणम्'—इति राजनिर्घण्टः। १९२

आम्रेडितम् क्ली. [आङ+म्रेडि+क्त] द्विस्त्रिरुक्तम्। 'दो-तीन बार कहा हुआ' इति भाषा। १५३

आयः पुं. [आङ्+या+ड] धनागमः; प्राप्तिः; लाभः; 'अहन्यहन्यवेक्षेत कर्मान्तान् वाहनानि च। आयव्ययौ च नियतावाकरान् कोषमेव च'—इति मनुः (८–४१९)। स्त्र्यगाररक्षकः; ज्योतिषप्रसिद्धमेकादशभवनम्। ४३३

आयःशूलिकः त्रि. [अयःशूलेन अर्थानन्विच्छति। 'अयःशूलदण्डाजिनाभ्यां ठक्ठञाविति' ठक्] तीक्ष्णकर्मा; क्षिप्रकारी; 'तीक्ष्णोपायेन योऽन्विच्छेत्स आयःशूलिको जनः।' ३७१

आयतः त्रि. [आङ+यम्+क्त] दीर्घः; 'लम्बा'–इति भाषा। विस्तृतः; विशालः; आकृष्टः; 'तन्तवोऽप्यायता नित्यं तन्तवो बहुलाः समाः'—इति पञ्चतन्त्रे। ७५१

आयतनम् क्ली. [आङ+यत्+ल्युट्] यज्ञस्थानं; देवस्थानं; चैत्यम्; 'येभ्यः प्रणमसे पुत्र ! चैत्येष्वायतनेषु च।' 'समित्कुशपवित्राणि वेद्यश्चायतनानि च। स्थण्डिलानि च विप्राणां शैला वृक्षा ह्रदाः क्षुपाः।' आश्रयः; विश्रामस्थानम्; 'नासमीक्ष्य परं स्थानं पूर्वमायतनं त्यजेत्'—इति चाणक्यः। 'स्नेहस्तदेकायतनं जगाम'—इति कुमारसम्भवे (७–५)। भद्रासनम् भिदा इत्यादिख्यातो वास्तुदेशः; 'आरामायतनग्रामनिपानोद्यानवेश्मसु'—इति याज्ञवल्क्यः। २९३

आयतिः स्त्री. [आङ+यम्+क्तिन्] उत्तरकालः; भविष्यत्कालः; 'यदावगच्छेदायत्यामाधिक्यं ध्रुवमात्मनः। तदात्वे चाल्पिकां पीडां तदा सन्धिं समाश्रयेत्'–इति मनुः (७–१६९)। 'आयतिं सर्वकार्याणां तदात्वं च विचारयेत्'—इति मनुः (७–१७८)। प्रभावः; कोषदण्डजं तेजः; दैर्घ्यं; सङ्गः; प्रापणं; 'प्रतापमायतिं शोभां हेमन्ताहस्य वारिदः। स्मृतिशेषां करोत्येव लोभश्च पृथिवीभुजाम्'—इति राजतरङ्गिणी। ११८

आयल्लकम् क्ली.–उत्कण्ठा; उत्कलिका; अरतिः। ७४२

आयामः पुं. [आङ+यम्+घञ्] दैर्घ्यम्, आनाहः; 'योजनायामविस्तारमेकैको धरणीतलम्'—इति रामायणे। 'तेनोदीचीं दिशमनुसरेस्तिर्यगायामशोभी'—इति मेघदूते। ७८६

आयुधः पुं. [आयुध्यते अनेनेति। आङ+युध्+क] अस्त्रम्। आयुधानां त्रयो भेदाः प्रहरणानि, पाणिमुक्तानि, यन्त्रमुक्तानि चेति। तत्र प्रहरणानि खड्गादीनि, पाणिमुक्तानि चक्रादीनि, यन्त्रमुक्तानि शरादीनि। 'धृतायुधो यावदहं तावदन्यैः किमायुधैः', 'किं वक्ष्यत्ययमेवमद्य विमुखं मामुद्यतेऽप्यायुधे'—इति उत्तरचरिते। ४६२

आयुर्वेदी [न्] त्रि. [आयुरनेन विन्दति वेत्ति वेत्यायुर्वेदः। आयुस्+विद्+करणे घञ्। आयुर्वेदो ज्ञातव्यत्वेन विद्यते यस्य, आयुर्वेद+इनि] आयुर्वेदज्ञः; चिकित्सकः; वैद्यः। ६१२

आयुष्मान् [त्] त्रि. [आयुस्+मतुप्] चिरजीवी; दीर्घायुः; जैवातृकः; चिरञ्जीवी; 'आयुष्मान् भव सौम्येति वाच्यो विप्रोऽभिवादने'—इति मनुः (२–१२५)। 'आयुष्मन्तं सुतं सूते यशोमेधासमन्वितम्'—इति मनुः (३–२६३)। ३८१

आयोधनम् क्ली. [आङ+युध्+ल्युट्] युद्धम्; 'आयोधने कृष्णगतिं सहायमवाप्य यः क्षत्रियकालरात्रिम्'—रघुवंशे (६–४२)। 'आयोधने स्थायुकमस्त्रजातम्'—इति भट्टिः। वधः। ४५३

आरकूटः पुं.– क्ली. [आरं कूटयति स्तूपीकरोति। पचाद्यच्] पित्तलम्; 'उत्तप्तस्फुरदारकूटकपिलज्योतिर्ज्वलद्दीप्तिभिः'—उत्तररामचरिते (५–१४)। 'अकाञ्चने काञ्चननायिकाङ्के किमारकूटाभरणेन न श्रियः'—इति नैषधे। १७०

आरक्षः पुं. [आङ+रक्ष्+अच्] गजकुम्भसन्धिः; त्रि. [आरक्षतीति, आङ+रक्ष्+अच्] रक्षायुक्तं; रक्षणीयम्। २१८

आरग्वधः पुं. [आ+रगे शङ्कायाम्, क्विप्, आरगं

रोगशङ्कामपि हन्ति, अच् वधादेशश्च] वृक्षविशेषः; राजवृक्षः; सम्पाकः; चतुरङ्गुलः; आरेवतः; व्याधिघातः; कृतमालः; सुवर्णकः; मन्थानः; रोचनः; दीर्घफलः; नृपद्रुमः; हिमपुष्पः; राजतरुः; कण्डुघ्नः; ज्वरान्तकः; अरुजः; स्वर्णपुष्पः; स्वर्णद्रुः; कुष्ठसूदनः; कर्णाभरणकः; महाराजद्रुमः; कर्णिकारः; स्वर्णाङ्गः; प्रग्रहः; 'अमलतास' इति ख्यातः। 'आरग्वधो राजवृक्षः सम्पाकश्चतुरङ्गुलः। आरेवतव्याधिघातकृतमालसुवर्णकाः॥ कर्णिकारो दीर्घफलः स्वर्णाङ्गः स्वर्णभूषणः। आरग्वधो गुरुः स्वादुः शीतलः स्रंसनोत्तमः॥ ज्वरहृद्रोगपित्तास्रवातोदावर्तशूलनुत्। तत्फलं स्रंसनं रुच्यं कुष्ठपित्तकफापहम्। ज्वरे तु सततं पथ्यं कोष्ठशुद्धिकरं परम्॥'—इति भावप्रकाशे। १९८

आरनालम् क्ली. [आच्छंति, आङ+ऋ+अच्, आरः। नल् गन्धे, नलतीति, ण, नालः। आरः नालो गन्धो यस्य] काञ्जिकम्; आरनालकं; 'काँजी' इति भाषा। 'आरनालं तु गोधूमैरामैः स्यान्निस्तुषीकृतैः। पक्वैर्वा सन्धितैस्तत्तु सौवीरसदृशं गुणैः'—इति राजनिघंण्टः। 'लाक्षाहरिद्रामञ्जिष्ठाकल्कैस्तैलं विपाचयेत्। षड्गुणेनारनालेन दाहशीतज्वरापहम्'—इति वैद्यके। ३१८

आरम्भः पुं. [आङ+रभि+घञ्] प्रथमकृतिः; प्रक्रमः; उपक्रमः; अभ्यादानम्; उद्घातः; प्रारम्भः; त्वरा; उद्यमः; वधः; दर्पः; प्रस्तावना; 'आगमैः सदृशारम्भ आरम्भसदृशोदयः'—इति रघुवंशे (१–१५)। ७०७

आराग्रम् क्ली. [आरायाः अग्रं, षष्ठीतत्पुरुषः] अर्द्धचन्द्राद्यस्त्रमुखम्। ४६९

आरात् अव्य. [आ राति, रा दाने, बाहुलकादातिप्रत्ययः] समीपं; निकटम्; दूरं (६९३); 'मेघमालेव यश्चायमारादपि विभाव्यते'–इति उत्तरचरिते। 'तमच्यमारादभिवर्तमानम्'—इति रघुवंशे (२–१०)। ६९२

आराधना स्त्री. [आङ+राध्+णिच्+युच्+स्त्रीत्वाट् टाप्] साधना; सेवा; भक्तिः; परिचर्या; प्रसादना; शुश्रूषा; उपास्तिः; वरिवस्या; परीष्टिः; उपचारः। १२९

आरामः पुं. [आरम्यतेऽत्र, आङ+रम्+आधारे घञ्] उपवनम्; 'क्षेत्रकूपतडागानामारामस्य गृहस्य च'—इति मनुः (८–२६२)। 'गृहं तडागमारामं क्षेत्रं वा भीषया हरन्'—इति मनुः (८–२६४)। २१२

आरालिकः त्रि. [अरालं कुटिलं चरति इति, ठक्] सूपकारः; पाचकः; सूदः; वल्लवः। 'रसोइया' इति-भाषा। ४३१

आरेकः पुं. [आ+रिच्+घञ्] शङ्का। ६९१

आरोपितम् त्रि. [आङ+रुह्+णिच्+क्त] न्यस्त; निहितं; कृतारोपणं; कल्पितं; 'तं देशमारोपितपुष्पचापे'—इति कुमारसम्भवे (३–३५)। 'समस्तवस्तुविषयं श्रौता आरोपिता यदा'—इति काव्यप्रकाशे। ७४७

आरोहः पुं. [आङ+रुह्+घञ्] समुच्छ्रयः; 'आरोहमिवरत्नानां प्रतिष्ठानमिव श्रियः'—इति रामायण। वरस्त्रियाः श्रोणिः (५१२); 'आरोहैर्निविडवृहन्नितम्बबिम्बैः'—इति माघे। नितम्बः; कटी; दैर्घ्यम्; अवरोहः; आरोहणं; गजारोहः; परिमाणविशेषः; आरोहति यः; निषादी; 'अश्वाश्च पर्यधावन्त हतारोहा दिशो दश'—इति हरिवंशे। १८१

आरोहणम् क्ली. [आरुह्यतेऽनेन। आङ+रुह्+ल्युट्] सोपानम्; 'सीढी' इति भाषा। [भावे ल्युट्] समारोहः; नीचादूर्द्ध्वगमनम्; 'आरोहणार्थं नवयौवनेन कामस्य सोपानमिव प्रयुक्तम्'—इति कुमारे (१–३९)। प्ररोहणम्; अङ्कुरादिजननम्। ३०१

आर्तिः स्त्री. [आङ+ऋ+क्तिन्] पीडा; वेदना; व्यथा; धनुष्कोटिः; रोगः; 'आपन्नार्तिप्रशमनफलाः सम्पदो ह्युत्तमानाम्'—इति मेघदूते। 'दाहातिसारपित्तासृङमूर्च्छामद्यविषार्तिषु'—इति सुश्रुते। ६२६

आर्द्रकम् क्ली. [अर्दयति कफम् आर्द्रम्। ततः कन्। यद्वा आर्द्रयति जिह्वायां, क्वुन्] कटुमूलविशेषः; शृङ्गवेरं; कटुभद्रं; कटूत्कटं; गुल्ममूलं; मूलजं; कन्दरं; वरं; महीजं; सैकतेष्टम्; अनूपजम्; अपाकशाकं; चान्द्राख्यं; राहुच्छत्रं; सुशाककं; शार्ङ्गम्; आर्द्रशाकं; सच्छाकम्; 'अदरक' इति भाषा। 'वातपित्तकफेभानां शरीरवनचारिणाम्। एक एव निहन्तास्ति लवणार्द्रककेशरी॥' 'आर्द्रकं शृङ्गवेरं स्यात्कटुभद्रं तथार्दिका। आर्द्रिका भेदिनी गुर्वी तीक्ष्णोष्णा दीपनी तथा। कटुका मधुरा पाके रूक्षवातकफापहा। ये गुणाः कथिताः शुण्ठ्यास्तेऽपि सन्त्यार्द्रके खिलाः॥ भोजनाग्रे सदा पथ्यं लवणार्द्रकभक्षणम्। अग्निसन्दीपनं रुच्यं जिह्वा-

कण्ठविशोधनम् ॥ कुष्ठे पाण्ड्वामये कृच्छ्रे रक्तपित्ते व्रणे ज्वरे। दाहे निदाघशरदोर्नैव पूजितमार्द्रकम्'–इति भावप्रकाशः। 'रोचनं दीपनं वृष्यमार्द्रकं विश्वभेषजम्। वातश्लेष्मविबन्धेषु रसस्तस्योपदिश्यते'—इति चरकः। 'कफानिलहरं स्वर्यं विबन्धानाहशूलनुत्। कटूष्णं रोचनं हृद्यं वृष्यं चैवार्द्रकं स्मृतम्'—इति सुश्रुतः ॥ ६१६

आर्द्रालुब्धकः पुं. [आर्द्रायां तन्नाम्ना प्रसिद्धनक्षत्रे लुब्धक इव] केतुग्रहः। ४९

आर्यः त्रि. [अर्तुं प्रकृतमाचरितुं योग्यः। अर्यते वा। ऋ+ण्यत्] पूज्यः; साधुः (३७२); सज्जनः; वैश्यः (५७०); सौविदः; सौविदल्लः (८१४); सत्कुलोद्भवः; श्रेष्ठ; संगतः; मान्यः; उदारचरितः; शान्तचित्तः; 'योऽहमार्येण परवान् भ्रात्रा ज्येष्ठेन भाविनि'—इति रामायणे। न्यायपथावलम्बी; प्रकृताचारशीलः; सततकर्तव्यकर्मानुष्ठाता; 'कर्तव्यमाचरन् काममकर्तव्यमनाचरन्। तिष्ठति प्रकृताचारे स तु आर्य इति स्मृतः॥' धार्मिकः; धर्मशीलः; आर्यरूपमिवानार्यं कर्मभिः स्वैर्विभावयेत्'—मनुः (१०–५७)। उचितः; 'मार्गमार्यं प्रपन्नस्य नानुमन्येत कः पुमान्।' नाटयोक्तौ सम्मानसूचकमिदं नाम प्रायेण मान्यजना ह्वाने व्यवह्रियते; 'स्वेच्छया नामभिर्विप्रैर्विप्र आर्येति चेतरैः। 'वाच्यौ नटीसूत्रधारावार्यनाम्ना परस्परम्'—इति साहित्यदर्पणे। पुं. स्वामी; बुद्धः; सुहृत्; श्रेष्ठवर्णः; म्लेच्छेतरजातिः; 'म्लेच्छाश्चान्त्ये बहुविधाः पूर्वं ये निकृता रणे। आर्याश्च पृथिवीपालाः'—इति महाभारते। सावर्णमनोः पुत्रः; 'वरीयांश्चावरीयांश्च संयतो धृतमान् वसुः। चरिष्णुरार्यो धृष्णुश्च राजः सुमतिरेव च॥ सावर्णस्य मनोः पुत्रा भविष्या दश भारत'—इति हरिवंशे। ९९

आर्या स्त्री. [ऋ+ण्यत्+स्त्रियां टाप्] पार्वती; छन्दोविशेषः; 'यस्याः पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि। अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश साऽर्य्या'—इति श्रुतबोधः। 'लक्ष्मैतत्सप्तगणा गोपेता भवति नेह विषमे जः। षष्ठो जश्च न लघुर्वा प्रथमेऽर्द्धे नियतमार्यायाः॥ षष्ठे द्वितीयलात्परके न्ले मुखलाच्च स यतिपदनियमः। चरमेऽर्द्धे पञ्चमके तस्मादिह भवति षष्ठो लः॥ पथ्या विपुला चपला मुखचपला जघनचपला च। गीत्युपगीत्युद्गीतय आर्यागीतिश्च नवधार्या'—इति छन्दोमञ्जरी। श्रेष्ठा स्त्री। १५

आर्षभ्यः पुं. [ऋषभस्य प्रकृतिः। ऋषभ+ञ्य] षण्ढोपयुक्तवृषः; षण्ढतायोग्यः (बछड़ा जो इतना बड़ा हो कि काम में लाया जा सके या साँड़ बनाकर छोड़ा जा सके)। २६४

आलम्भः पुं. [आङ+लभि+घञ्] मारणं; वधः; 'अश्वालम्भं गजालम्भम्'—इति स्मृतिः। 'व्यालम्बेथाः सुरभितनयालम्भजां मानयिष्यन्'—इति मेघदूते। छेदनं; कर्तनम्; 'कृष्टजानामोषधीनां जातानां च स्वयं वने। वृथालम्भेऽनुगच्छेद् गां दिनमेकं पयोव्रतः'—मनुः (११–१४४)। स्पर्शः; आलिङ्गनम्; 'द्यूतं च जनवादं च परिवादं तथा। नृतम्। स्त्रीणां च प्रेक्षणालम्भमुपघातं परस्य च'—इति मनुः (२–१७९)। ४७८

आलयः पुं. [आलीयतेऽस्मिन्। आ+ली+अधिकरणे अच्] गृहं; 'हिमालयो नाम नगाधिराजः'—इति कुमारे (१–१)। 'तत्रामरालयमरालमरालकेशी'—इति नैषधे। 'नहि दुष्टात्मनामार्य्या निवसन्त्यालये चिरम्' —इति रामायणे। २९२

आलवालम् क्ली. [आ समन्तात् जलस्य लवमालाति। आ+लव+ला+क] तरुमूलसेचनार्थस्वल्पजलाधारः; आवालम्; आवापः; 'थामला' 'थाला' इति भाषा। 'विश्वासाय विहङ्गानाम् आलवालाम्बुपायिनाम्'—इति रघुवंशे (१–५१)। 'विपुलालवालभृतवारिदर्पणः' —इति माघे। १८४

आलस्यम् क्ली. [अलस+ष्यञ्] अलसस्य भावः; अलसता; तन्द्रा; कौसीद्यं; मन्दता; मान्द्यं; कार्यप्रद्वेषः; 'आलस्यं श्रमगर्भाद्यैर्जाड्यं जृम्भासितादिकृत्। सुखस्पर्शप्रसङ्गित्वं दुःखद्वेषणलोलता। शक्तस्य चाप्यनुत्साहः कर्मण्यालस्यमुच्यते'—इति सुश्रुते। त्रि. [अलस एव। अलस+स्वार्थे ष्यञ्] मन्दः; तुन्दपरिमृजः; शीतकः; अलसः; अनुष्णः। ७५७

आलानम् क्ली. [आलीयतेऽत्र। आङ+ली+ल्युट्। विभाषा लीयतेरित्यात्वम्] बन्धनम्; रज्जुः; गजबन्धनस्तम्भः; गजबन्धनरज्जुः; 'अरुन्तुदमिवालानमनिर्वाणस्य दन्तिनः।'—इति रघुवंशे (१–७१)। 'इभ-

मदमलिनमालानस्तम्भयुगलमुपहसन्तमिवोरुदण्डद्वयेन'—इति कादम्बरी। २२१

आलिः पुं. [आलति, दशने समर्थो भवति। आ+अल्, बाहुलकाद् इण्] वृश्चिकः; भ्रमरः; त्रि. विशदाशयः; निर्मलान्तःकरणः; अनर्थः। स्त्री. [आलयति भूषयति, आ+अल् भूषणे, अच्, इ] वयस्या; 'निवार्यतामालि किमप्ययं वटुः पुनर्विवक्षुः स्फुरितोत्तराधरः'—इति कुमारसम्भवे (५-८३)। [आलति निर्वापयति जलम्। अल् वारणे, सर्वधातुभ्य इन्] सेतुः; [अल्यते अनया। अल्+इञ्] पङ्क्तिः; सन्ततिः। ६४५

आलिङ्गनम् क्ली. [आङ+लिगि+ल्युट्] प्रीतिपूर्वकपरस्पराश्लेषः; अङ्कपालिः; श्लिषा; परिरम्भः; परीरम्भः; परिष्वङ्गः; संश्लेषः; उपगूहनम्; 'आलिङ्गनान्यधिकृताः स्फुटमापुरेव'—इति माघः। 'यत्र स्त्रीणां प्रियतमभुजालिङ्गनोच्छ्वासितानाम्'—इति मेघदूते। ५६८

आली स्त्री. [आलि+ङीष्] सखी; वयस्या; सेतुः; पाली (६७६); पङ्क्तिः; श्रेणी (७-२१); 'तोयान्तभास्करालीव रेजे मुनिपरम्परा'—इति कुमारे (६-४९)। पुं. वृश्चिकः। ४८७

आलेख्यम् क्ली. [आङ+लिख्+ण्यत्] चित्रम्; 'इति संरम्भिणो वाणीर्बलस्यालेख्यदेवताः'—इति माघे (२-६७)। ७२८

आलेख्यलेखा स्त्री. [आलेख्यस्य लेखा] लिपिः; चित्रकर्म; प्रतिलिपिकरणम्। ७२८

आलोकः पुं. [आङ+लुक्+घञ्] द्योतः; दर्शनं; 'आलोकाय निशासु चन्द्रकिरणाः सख्यः कुरङ्गैः सह।'—इति शान्तिशतके। 'रुद्धालोके नरपतिपथे सूचिभेद्यैस्तमोभिः'—पूर्वमेघे (३७)। 'यदालोके सूक्ष्मं व्रजति सहसा तद्विपुलताम्'—इति शाकुन्तले। 'आलोकं ददृशुर्धीरा नीराशा जीविते यदा'—इति रामायणे। वन्दिभाषणं; स्तुतिः; 'उदीरयामासुरिवोन्मदानाम् आलोकशब्दं वयसां विरावैः'—इति रघुवंशे (२-९)। ६६

आवरणम् क्ली. [आङ+वृ+ल्युट्] फलकम्; 'ढाल' इति भाषा। आच्छादनम्; 'विचित्राणि च वासांसि प्रावारावरणानि च'—इति महाभारते। 'सूर्ये तपत्यावरणाय दृष्टेः कल्पेत लोकस्य कथं तमिस्रा'—इति रघुवंशे (५-१३)। 'स्रोतसां भेदको यश्च तेषाञ्चावरणे रतः'—मनुः (३-१६३)। ४६०

आवर्तः पुं. [आङ+वृत्+घञ्] जलभ्रमः; 'नृपं तमावर्तमनोज्ञनाभिः' इति रघुवंशे (६-५२)। 'भँवर' इति भाषा। चिन्ता; आवर्तनं; मेघनायकचतुष्टयान्तर्गताधिपविशेषः; 'जातं वंशे भुवनविदिते पुष्करावर्तकानाम्'—इति पूर्वमेघे (६)। राजावर्तनामोपरत्नम्। ६६८

आवर्हितः त्रि. [आङ+वृह्+क्तः] उन्मूलितः; उत्पाटितः। ७१२

आवलिः स्त्री. [आङ+वल्+इन्] श्रेणी; पङ्क्तिः; श्रेणिः। ७२१

आवली स्त्री. [आङ+वल्+इन्+ङीप्] आवलिः; पङ्क्तिः; श्रेणी; 'आलोलामलकावलीं विलुलितां बिभ्रच्चलत्कुण्डलम्'—इति अमरुशतके (३)। 'द्विजावलीव्याजनिशाकरांशुभिः'—इति माघे (१-२५)। ७२१

आवसथः पुं. [आवसन्त्यत्र। आ+वस्+अधिकरणे अथच्] गृहम्; 'अस्ति चम्पकाभिधानायां नगर्यां परिव्राजकावसथः'—इति हितोपदेशे। आर्याकोषः; आर्य्याच्छन्दसो ग्रन्थभेदः; व्रतविशेषः; क्ली. [आवसन्ति आगत्य वसन्ति अस्मिन्, आङ+वस्+अथच्] गृहं; वसतिस्थानं; विश्रामस्थानम्; अग्निगृहम्; अग्निहोत्रस्थानं; 'निवसन्नावसथे पुराद् बहिः'—इति रघुवंशे (८-१४)। 'आसनावसथौ शय्यामनुव्रज्यामुपासनाम्'—इति मनुः (३-१०७)। २९१

आवापः पुं. [आ वपन्ति सलिलमत्र। आङ+वप्+घञ्] आलवालं; वलयः (५५७); 'मोहात् पपात गाण्डीवमावापं च करादपि'—इति महाभारते। शत्रुचिन्तनं; परराष्ट्रचिन्तनं; 'तन्त्रावापविदा योगैर्मण्डलान्यधितिष्ठता'—इति माघे (२-८८)। पानभेदः; भाण्डवपनं; परिक्षेपः; निम्नोन्नतभूमिः; प्रधानहोमः। १८४

आवालम् क्ली. [आङ+वल्+घञ्] आलवालं; बालकमभिव्याप्य; बालकपर्यन्तम्। १८४

आवासः पुं [आवसन्ति अत्र इति। आङ+वस्+अधिकरणे घञ्] गृहम्; 'आवासो विपिनायते प्रियसखीमालापि जालायते'—इति गीतगोविन्दे (४-१०)। २९१

आविकः पुं. [अविना मेषलोम्ना कृतः। अवि+ठक्] कम्बलम्; त्रि. मेषलोम्ना निर्मितं; 'वसीरन्नानुपूर्व्येण शाणक्षौमाविकानि च'—मनुः (२।४१)। अविदुग्धम्; 'आविकं लवणं स्वादु स्निग्धोष्णं चाश्मरीप्रणुत्। गुरु कासेऽनिलोद्भूते केवले चानिले वरम्'—इति वैद्यके। ५५१

आविद्धः त्रि. [आङ+व्यध्+क्तः] वक्रः; क्षिप्तः; पराहतः; मूर्खः। ६९६

आवुकः पुं. [अवति रक्षतीति, अव्+बाहुलकादुण्+कन्] नाट्योक्तौ पिता। ९९

आवेशः पुं. [आङ+विश्+घञ्] अहङ्कारविशेषः; संरम्भः; आटोपः; अपस्माररोगः; भूतादिना रोगः; भूतसंचारः; भूतक्रान्तिः; ग्रहामयः; आसक्तिः; अभिनिवेशः; 'तस्मै स्मयावेशविवर्जिताय'—इति रघुवंशे (५–१०)। ७२२

आवेशनम् क्ली. [आविश्यतेऽस्मिन्। आङ+विश्+ल्युट्] शिल्पिशाला; 'जीर्णोद्यानान्यरण्यानि कारुकावेशनानि च'—मनुः (९–२६५)। [भावे ल्युट्] भूतावेशः; 'मनःक्षेपस्त्वपस्मारो ग्रहाद्यावेशनादिजः'—इति साहित्यदर्पणे। प्रवेशः; कोपः; परिवेशः। २९६

आवेशिकः त्रि. [आवेशं संरम्भं प्राप्तः। आवेश+ठञ्] आगन्तुः; अतिथिः; स्वीयम्; असाधारणम्; अन्यासाधारणं; प्रातिष्ठितम्। ३५८

आवेष्टकः पुं. [आङ+वेष्ट्+ण्वुल्] प्राचीरादिः। 'घेरा' इति भाषा। २९०

आशंसा स्त्री. [आङ+शंस्+अङ+टाप्] इच्छा; आकाङ्क्षा; 'निदधे विजयाशंसां चापे सीतां च लक्ष्मणे'—इति रघुवंशे (१२–४४)। ७१०

आशङ्का स्त्री. [आङ+शकि+अ+टाप्] भयं; त्रासः; संशयः; वितर्कः; 'नष्टाशङ्का हरिणशिशवो मन्दमन्दं चरन्ति'—इति शाकुन्तले। 'तच्छ्रुत्वा विगताशङ्कस्तामकारणदूषिताम्'—इति कथासरित्सागरे १४ तरङ्गे। ७२५

आशयः पुं [आङ+शीङ+अच्] आधारः; अभिप्रायः; 'तत्त्वालोक्याशयं बुद्ध्वा तस्य सोऽपि वसन्तकः'—इति कथासरित्सागरे १२ तरङ्गे। चेतः; 'अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः'—इति भगवद्गीतायाम् (१०–२०)। पनसवृक्षः; विभवः; किम्पचानः; अजीर्णः; कोष्ठागारं; धर्माधर्मौ; अदृष्टम्; 'आशयाः सप्त—वाताशयः, पित्ताशयः, श्लेष्माशयः, रक्ताशयः, आमाशयः, पक्वाशयः, मूत्राशयश्च। स्त्रीणां गर्भाशयोऽष्टमः'—इति सुश्रुतः। ७९८

आशा स्त्री. [आ समन्ताद् अश्नुते व्याप्नोतीति। आङ+अश+पचाद्यच्+टाप्] दिक्; 'वासवाशामुखे भाति इन्दुश्चन्दनबिन्दुवत्'—इति साहित्यदर्पणे। दीर्घाकाङ्क्षा (३६४); 'आशा नाम नदी मनोरथजला तृष्णातरङ्गाकुला'—इति शान्तिशतके (४–२६)। १००

आशी स्त्री. [आङ+अश्+अच्+ङीप्] अहिदन्तः; हिताशंसनं; सर्पविषम्; 'आशीतालुगता दंष्ट्रा तया दष्टो न जीवति'—इति विषविद्या। ६४२

आशीः [स्] स्त्री. [आङ+शास्+क्विप्+उपधाया इत्वम्] सर्पदन्तः; आशीर्वादः; वृद्धिनामौषधिः; हितप्रार्थनम्; अभीष्टवृद्धिप्रार्थनं; 'वात्सल्याद् यत्र मान्येन कनिष्ठस्याभिधीयते। इष्टावधारकं वाक्यमाशीः सा परिकीर्तिता॥' 'तस्मै जयाशीः ससृजे पुरस्तात्'—इति कुमारसम्भवे (७–४७)। ६४२

आशीविषः पुं. [आशिषि दंष्ट्रायां विषमस्य सः, पृषोदरादित्वात् साधुः] सर्पः; 'गरुत्मदाशीविषभीमदर्शनैः'—इति रघुवंशे (३–५७)। ६४१

आशु क्ली. [अश्नुते इति, अशूङ व्याप्तौ, उण्] शीघ्रम्; द्रुतम्; 'तदाशु कृतसन्धानं प्रतिसंहर सायकम्'—इति शाकुन्तले। सत्त्वगामि चेत् त्रि.। अव्ययमपि शीघ्रे। ६९७

आशुशुक्षणिः पुं. [आ समन्तात् शोष्टुमिच्छति। आङ+शुष्+सन्+अनि] अग्निः; 'मन्त्रपूतानि हवींषि प्रतिगृह्णाति एतत्प्रीत्या आशुशुक्षणिः'—इति कादम्बर्यम्। वायुः; इति सिद्धान्तकौमुद्याम् उणादिवृत्तिः। ६३

आश्चर्यम् क्ली. [आङ+चर्+ण्यत्+सुट् निपातनात्] अपूर्वं; विस्मयः; अद्भुतं; चित्रं; 'गन्धोदग्रं तदनु ववृषुः पुष्पमाश्चर्यमेघाः'—इति रघुवंशे (१६–८७)। ७४५

आश्रमः पुं.–क्ली. [आङ+श्रम्+घञ्] मुनीनां वासस्थानं; वनं; मठः। (३९३) शास्त्रोक्तधर्मविशेषः—आश्राम्यन्ति स्वं स्वं तपश्चरन्त्यत्र, स तु चतुर्विधः—ब्रह्मचर्यं १, गार्हस्थ्यं २, वानप्रस्थ्यं ३, संन्यासः ४।

ब्रह्मचारी १, गृही २, वानप्रस्थः ३, भिक्षुः संन्यासी ४। कलियुगे तु ब्रह्मचर्यवानप्रस्थ्ये न स्तः केवलं गृहस्थ-भिक्षुकाश्रमावेव—'गार्हस्थो भैक्षुकश्चैव आश्रमौ द्वौ कलौ युगे'—इति महानिर्वाणतन्त्रे। 'स दुष्प्रापयशाः प्रापदाश्रमं श्रान्तवाहनः'–इति रघुवंशे(१–४८)।२९८

आश्रयः पुं. [आङ+श्रि+अच्] गृहं; राज्ञां सन्ध्यादि-पड्गुणान्तर्गतगुणविशेषः; व्यपदेशः; 'योऽवमन्येत ते मूले हेतुशास्त्राश्रयाद् द्विजः'—इति मनुः (२–११)। सामीप्यम्; आधारः; 'वासो वल्कलमाश्रयो गिरिगुहा शय्या लतावल्लरी'—इति शान्तिशतके (४–६)। संश्रयणम; अवलम्बनम्; 'श्रीण्याद्यान्याश्रितास्त्वेषां मृगगतश्रियाप्सराः'—इति मनुः (७–७२)। राज्ञां तन्निर्णयः; 'अस्थितौ यदि कल्याणं भवेत् संश्रयणं तथा। भवति श्रेयसे राज्ञां विपरीतं न कर्हिचित्॥ उच्छिद्य-मानो बलिना आश्रयेद् बलवत्तरम्। विनीतवत्तत्र कालं नयेदिति मतिर्ध्रुवा॥ ददद् बलं वा कोषं वा भूमिं वा भूतिसम्भवाम्। आश्रयेदभियोक्तारं समाश्रयगुणा-न्वितम्'—इति युक्तिकल्पतरौ १ अध्यायः। २९८

आश्रयाशः पुं. [आश्रयमाधारमपि अश्नाति यः। आश्रय+अश्+कर्मणि उपपदे अण्] अग्निः; 'दुर्वृत्तः क्रियते धूर्तैः श्रीमानात्मविवृद्धये। किं नाम खलसंसर्गः कुरुते नाश्रयाशवत्'—इति हितोपदेशे। चित्रकवृक्षः; त्रि. आश्रयनाशकः; आश्रयध्वंसी। ६३

आश्लेषः पुं. [आङ+श्लिष्+घञ्] आलिङ्गनं; 'कण्ठा-श्लेषप्रणयिनि जने किं पुनर्दूरसंस्थे —मेघदूते। एकदेश-सम्बन्धः; [अश्लेषा एव। अण+स्त्रियां टाप्] आश्लेषा; स्त्री. आश्लेषा नक्षत्रम्। ५६८

आषाढः पुं. [आषाढया नक्षत्रेण युक्ता पूर्णिमा यस्मिन्। आषाढा+'नक्षत्रेण युक्तः कालः' इति अण्, पलाश-दण्डपक्षे आषाढः प्रयोजनमस्य इति 'विशाखाषाढादण् मन्थदण्डयो'रित्यण्] व्रतिनां दण्डः; वैशाखादिद्वादश-मासान्तर्गततृतीयमासः; रवेर्मिथुनराशिस्थितिकालः; पूर्वोत्तराषाढान्यतरनक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी यत्र मासे सः; शुचिः; आषाढकः; 'अनल्पजल्पी प्रमदाभिलाषी प्रमादशीलो गुरुवत्सलश्च। तडुव्ययो मन्दहुताशनः स्याद् आषाढमासप्रभवो मनुष्यः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। मलयपर्वतः; व्रतिनां पलाशदण्डः; 'अथाजिनाषाढधरः प्रगल्भवाग् ज्वलन्निव ब्रह्ममयेन तेजसा'—इति कुमार-सम्भवे (५–३०)। ४११

आसनम् क्ली [आस्यते उपविश्यतेऽस्मिन्। आस्+अधिकरणे+ल्युट्] हस्तिस्कन्धदेशः; यत्र महामात्र उपविशति। पीठः (३१०); उपवेशनाधारः; 'आसनं प्रथमं दद्यात् पौष्पं दारुजमेव वा'—इति पुराणे। विजिगीषोर्दुर्गादीन् धर्षयतः स्थितिः; यात्रानिवर्तनम्; अष्टाङ्गयोगस्य तृतीययोगाङ्गं; तत्तु पञ्चप्रकारकर-चरणादिसंस्थानविशेषः —'पद्मासनं स्वस्तिकाख्यं भद्रं वज्रासनं तथा। वीरासनमिति प्रोक्तं क्रमादासन-पञ्चकम्॥' पुं. [असु क्षेपणे+ल्यु+प्रज्ञाद्यण्] जीव-कवृक्षः; जीवकवृक्षशब्देऽस्य विशेषो ज्ञेयः। २१७

आसन्दी स्त्री. [आस्यतेऽस्याम्। आस्+अब्दादयश्चेति साधुः] क्षुद्रखट्वा; 'तस्मादस्मा आसन्दीमाहरन्ति सैषा खादिरी वितृण्णा भवति'—शतपथब्रा-ह्मणे (५।४।४।१) ३११

आसन्नः त्रि. [आङ+सद्+क्त] निकटस्थः; समीपवर्ती; 'आसीनमासन्नशरीरपातः'—इति कुमारसम्भवे (३–४४)। अस्ताभिमुखः सूर्यः। ६९३

आसवः पुं. [आङ+सुञ्+अप्] मद्यविशेषः; मैरेयं; शीधुः; 'शीधुरिक्षुरसैः पक्वैरपक्वैरासवो भवेत्। मैरेयं धातकीपुष्पगुडधानाम्लसंहितम्॥' मद्यमात्रम्; 'यक्ष-रक्षःपिशाचान्नं मद्यं मांसं सुरासवम्। तद्ब्राह्मणेन नात्तव्यं देवानमश्नता हविः॥' 'यदपक्वौषधाम्बुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसवः'—इति शार्ङ्गधरः। 'मृष्टो भिन्नशकृद्वातो गौडस्तर्पणदीपनः। छेदी मध्वासवस्तीक्ष्णो मैरेयो मधुरो गुरुः'—इति चरकः। 'तीक्ष्णः सुरासवो हृद्यो मूत्रलः कफवातनुत्। सुखप्रियः स्थिरमदो विज्ञेयोऽ-निलनाशनः'—इति सुश्रुते। ३२९

आसारः पुं. [आङ+सृ+घञ्] धारासम्पातः; वेग-वृष्टिः; 'त्वामासारप्रशमितवनोपप्लवं साधु मूर्ध्ना'—इति मेघदूते। प्रसरणम्; सैन्यानां सर्वतो व्याप्तिः; 'तस्माद् दुर्गं दृढं कृत्वा सुभटासारसंयुतम्'—इतिपञ्च-तन्त्रे (३–४९)। सुहृद्बलम्; 'अज्ञातवीवधासारतोय-सस्यो व्रजेत्तु यः'—पञ्चतन्त्रे (३।२९)। ५९

आसीनम् त्रि. [आस्+शानच्] उपविष्टम्। 'बैठा हुआ' इति भाषा। ३८६

आसुतीबलः पुं. [आसुतिरस्यास्ति, 'रजःकृष्यासुतिपरिषदो वलच्' दीर्घः] यज्वा; शौण्डिकः; कन्यापालः; कन्यापालकः; शूद्रजातिविशेषः। ४२०

आसुरी स्त्री. [असुरस्य इयम्, असुर+तस्येदमित्यण्, ततो ङीप्] राजिका; राजसर्षपः; 'राई' इति भाषा। त्रिविधचिकित्सान्तर्गतचिकित्साविशेषः; सा च छेदभेदाद्यात्मिका। ५८१

आस्तरणम् क्ली. [आस्तीर्यते यत् येन वा। आस् + स्तृ + कर्मणि करणे वा ल्युट्] हस्तिपृष्ठस्थितचित्रकम्बलं; प्रवेणी; वर्णः; परिस्तोमः; कुथाः; कुथः; प्रवेणिः; परिस्टोमः; 'झूल' इति भाषा। शय्या; कुशासनम्; 'राङ्कवास्तरणे पूर्वमयोध्यायामिवासने'—इति रामायणे, ३ काण्डे। 'दर्भास्तरणमास्तीर्य निश्चयाद् धृतराष्ट्रजः'—इति महाभारते। ३०८

आस्थानम् क्ली. [आस्थीयतेऽस्मिन् इति। आङ+स्था+ल्युट्] सभा; 'अनेकराजन्यरथाश्वसंकुलं तदीयमास्थाननिकेतनाजिरम्'—इति किरातार्जुनीये (१–१६)। यत्नः; आश्रयः; स्थानम्। ७७८

आस्थानी स्त्री. [आस्थान ङीप्] सभा; 'आस्थानीं समये समं नृपजनः सायन्तने सम्पतन्'—इति रत्नावली। ७४५

आस्थितः त्रि. [आस्थीयते यः, आ+स्था+कर्मणि क्त] आक्रान्तः; धृतः; स्पृष्टः; रुद्धः। ७८१

आस्यम् क्ली. [अस्यते ग्रासोऽस्मिन् इति। असु क्षेपणे, 'कृत्यल्युट्' इति ण्यत्, यदा आस्यन्दते अम्लादिना प्रस्रवति इति, स्यन्द् प्रसवणे+ड] मुखं; मुखमध्यम्; 'यस्यास्येन सदाश्नन्ति हव्यानि त्रिदिवौकसः।' आस्ये भवमास्यं; मुखभवे त्रि.। ५१८

आहवः पुं. [आहूयते अरिर्यस्मिन्। आङ+ ह्वे + अप्] युद्धम्; 'यदाश्रौषं भीष्ममत्यन्तशूरम्, हतं पार्थेनाहवेष्वप्रधृष्यम्'—इति महाभारते, आदिपर्वणि (१–१८२) [आहूयते आज्यादिकं यत्र, आङ+हु+अप्] यज्ञः। ४५३

आहवनीयः पुं. [आहूयते आज्यादिरस्मिन्। आङ+हु+अनीयर] यज्ञाग्निविशेषः; गार्हपत्यादुद्धृत्य होमार्थं यः संस्क्रियते सः; 'गुरुराहवनीयस्तु साग्नित्रेता गरीयसी'—इति मनुः (२–२३१)। ७८९

आहारः पुं. [आङ+हृ+घञ्] द्रव्यगलाधःकरणं; जग्धिः; भोजनं; जेमनं; लेपः; निघषः; न्यादः; जमनं; विघसः; प्रत्यवसानं; भक्षणम्; अशनम्; अभ्यवहारः; स्वदनं; निगरः; 'यदाहारगुणैः पानं विपरीतं तदिष्यते। अत्रानुपानं धातूनां दृष्टं यन्न विरोधि च'—इति चरकः 'आहारः प्रीणनः सद्यो बलकृद्देहधारकः। आयुस्तेजः समुत्साहस्मृत्योजोऽग्निविवर्धनः'—इति सुश्रुतः। आहरणम्; 'स पुनर्देवयान्योक्तः पुष्पाहारो यदृच्छया'—इति महाभारते। ३१९, ३२५

आहावः पुं. [आङ+ ह्वे + अप्, निपातनाद् वृद्धिः] कूपसमीपे पश्वादिजलपानार्थं कृतस्वल्पजलाशयः। पशु आदि को जल पिलाने के लिए कूप के पास का हौद। [आह्वयतेऽरिरत्र इति व्युत्पत्त्या] युद्धम्; आह्वानम्; [आहूयतेऽत्र इति, आ+हु+अधिकरणे घञ्] अग्निः। ६८४

आहितः त्रि. [आङ+धा+क्त] न्यस्तः; अर्पितः; स्थापितः; 'व्यावर्तनैरहिपतेरयमाहिताङ्कः'—इति किरातार्जुनीये। ७४७

आहितुण्डिकः पुं. [अहितुण्डेन दीव्यति, अहितुण्ड+ठक्] व्यालग्राही; 'सपेरा' इति ख्यातः। 'वैद्यसांवत्सराचार्याः स्वपक्षेऽधिकृताश्चराः। यथाहितुण्डिकोन्मत्ताः सर्वं जानन्ति शत्रुषु॥' ६१३

आहो अव्य. [आ हन्तीति। आङ+हन्+डो] विकल्पः; प्रश्नः; 'द्वारत्यागी भवाम्याहो परस्त्रीस्पर्शपांशुलः'—इति शाकुन्तले। विचारः; 'आहो निवत्स्यति समं हरिणाङ्गनाभिः'—इति शाकुन्तले। ८८०

आहोपुरुषिका स्त्री. [अहो अहमेव पुरुषः। मयूरव्यंसकादित्वात् समासः। अहोपुरुषस्य भावः। अहोपुरुष+वुञ्+स्त्रीत्वात् टाप्] दर्पाद् या आत्मनि सम्भावना सा। अधिकार्थवचनेन शक्तेरप्रतिघाताविष्करणम्; आत्मविषयकार्यसिद्धिजननशक्त्याविष्करणम्; 'आहोपुरुषिकां पश्य मम सद्रत्नकान्तिभिः'—इति भट्टौ (५–२७)। 'निजभुजबलाहोपुरुषिकाम्'—भामिनीविलासे (१–८४)। ७८४

आह्वानम् क्ली. [आहूयतेऽनेन करणे ल्युट्] नाम; संज्ञा; आख्या; [१५४, भावे ल्युट्] आवाहनं, हूतिः; आकारणम्; 'जन्म ज्येष्ठेन चाह्वानं स्वब्राह्मण्यास्वपि स्मृतम्'—इति मनुः (९–१२६)। १५२

इ

इः पुं. [अस्य विष्णोः श्रीकृष्णस्यापत्यम् पुमान्। अ+इञ्] कामदेवः; 'इः कामे रतिलक्ष्म्योरी उः शिवे ब्रह्मकाद्य ऊः।'—आग्नेये एकाक्षराभिधानम्। ३४

इचिकिलः पुं.— कर्दमः; जम्बालः। ६७८

इच्छा स्त्री. [एषणम् इच्छा। इष्+श+टाप्] मनोधर्मविशेषः; आकाङ्क्षा; वाञ्छा; दोहदः; स्पृहा; ईहा; तृट्; लिप्सा; मनोरथः; कामः; अभिलाषः; तर्षः; रुक्; इषा; श्रद्धा; तृष्णा; रुचिः; मतिः; दोहलं; छन्दः; इट्; 'योऽहिंसकानि भूतानि हिनस्त्यात्मसुखेच्छया'। 'निर्द् दुःखत्वे सुखे चेच्छा तज्ज्ञानादेव जायते। इच्छा तु तदुपाये स्यादिष्टोपायत्वधीर्यदि॥ चिकीर्षाकृतिसाध्यत्वप्रकारेच्छा तु या भवेत्। तद्धेतुः कृतिसाध्येष्टसाधनत्वमतिर्भवेत्॥' अस्याः प्रतिबन्धः– 'बलवद्द्विष्टहेतुत्वमतिः स्यात् प्रतिबन्धिका'—इति भाषापरिच्छेदे (१४८)। ७१०

इज्जलः पुं. [एतीति, इ+क्विप्+तुक्; इत् जलमस्य] हिज्जलवृक्षः; निचुलः; अम्बुजः; 'इज्जलो हिज्जलश्चापि निचुलश्चाम्बुजस्तथा। जलवेतसवद्वेद्यो हिज्जलोऽयं विषापहः'—इति भावप्रकाशे। १९५

इज्याशीलः पुं [इज्यां यज्ञं शीलयति पुनः पुनराचरतीति। इज्या+शील्+ण] पुनः पुनर्यज्ञकर्ता; यायजूकः।४२०

इडा स्त्री. [इल्+क+टाप्] शरीरस्य वामभागस्था नाडी; 'इडा नाम सैव गङ्गा यमुना पिङ्गला स्मृता। गङ्गायमुनयोर्मध्ये सुषुम्णा च सरस्वती॥ एतासां सङ्गमो यत्र त्रिवेणी सा प्रकीर्तिता। तत्र स्नातः सदा योगी सर्वपापैः प्रमुच्यते॥ इडा च वामनिःश्वासः सोममण्डलगोचरा। पितृयानमिति ज्ञेया वाममाश्रित्य तिष्ठति'—इति उत्तरगीतायाम्। स्वर्गः; पृथ्वी; 'पतत्रिसङ्घैः स जघन्यरात्रे प्रबोध्यते नूनमिडातलस्थः'–इति महाभारते। बुधग्रहभार्या; इक्ष्वाकुराजकन्या; 'तत्र दिव्याम्बरधरा दिव्याभरणभूषिता। दिव्यसंहनना चैव इडा जज्ञे इति श्रुतिः'—इति हरिवंशे। गौः; 'इडाज्यहोमाहुतिभिर्मन्त्रशिक्षाविशारदैः'–इति भारते। वचनं; देवीभेदः; 'श्रुतिः प्रीतिरिडा कान्तिः शान्तिः पुष्टिः क्रिया तथा'—इति हरिवंशे। दुर्गा। ८४६

इतरः त्रि. [इना कामेन तरतीति। इ+तृ+अप्, यद्वा इतेन ज्ञानेन क्षीयते इति। बाहुलकाद् अरः] नीचः; अन्यः (४८०); 'वामेतरस्तस्य करः प्रहर्तुः'—इति रघुवंशे (२–३१)। 'इतरो दहने स्वकर्मणाम्'—इति रघुवंशे (८–२०)। ३४८

इतरेतरम् त्रि. [वीप्सायां कर्मव्यतिहारे द्वित्वं, समासवत्त्वं च] अन्योऽन्यं; परस्परं; मिथः; 'व्यूहावुभौ तावितरेतरस्माद् भङ्गं जयञ्चापतुरव्यवस्थम्'—इति रघुवंशे (७–५४)। ७२०

इति अव्य. [इण्+क्तिच्] हेतुः; 'वत्सोत्सुकापि स्तिमिता सपर्यां प्रत्यग्रहीत्सेति ननन्दतुस्तौ'—इति रघुवंशे (२–२२)। प्रकारः; समाप्तिः; प्रकरणम्; 'उदितेऽनुदिते चैव समयाध्युसिते तथा। सर्वथा वर्तते यज्ञ इतीयं वैदिकी श्रुतिः'—मनुः (२–१५)। प्रकाशः; 'दिलीप इति राजेन्दुरिन्दुः क्षीरनिधाविव'—इति रघुवंशे (१–१२)। आदिः; निदर्शनम्; 'आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः'—इति मनुः (१–१०)। अनुकर्षः; परकृतिः; विवक्षानियमः; प्रत्यक्षम्; अवधारणं; परामर्शः; मानम्; इत्थमर्थः; एवार्थः; 'गुणानित्येव तान् विद्धि'—इति रामायणे, प्रथमकाण्डे। ८८७

इतिह अव्य. [इति एवं च, ह किल च] पारम्पर्योपदेशः; ऐतिह्यम्। ८७७

इत्वरी स्त्री. [एति परपुरुषं प्राप्नोतीति। इ+क्वरप्+ङीप्] असती; अभिसारिका। ४९६

इध्मम् क्ली. [इन्ध+मक्] अग्निसन्दीपनकाष्ठम्; इन्धनम्; 'तत्रेध्मानयने शक्रो नियुक्तः कश्यपेन ह'—इति भारते। ४६९

इनः पुं. [एतीति। इ+नक्] सूर्यः; (३५६) आढ्यः; समृद्धः; (८२५) प्रभुः; स्वामी; 'वसु न इनसपतिः' ऋग्वेदे (४३।२)। नृपभेदः। ३५

इन्दिन्दिरः पुं. [इन्दि कमलशोभां दृणाति। इदि परमैश्वर्ये, इन्, दृ, बाहुलकात् खश्] भ्रमरः– 'लोभादिन्दिन्दिरेषु नियत्सु'—इति भामिनीविलासे (२–१८३)। ३५५

इन्दिरा स्त्री. [इन्द्+किरच्+टाप्] लक्ष्मीः; 'मन्दं मन्दं मन्दिरादिन्दिरेव'—इति भामिनीविलासे। शोभा;

कान्तिः; 'निशि निःसरदिन्दिरं कथं तुलयामः कलयापि पङ्कजम्'—इति भामिनीविलासे। ३१

इन्दीवरम् क्ली. [इन्दतीति। इदि परमैश्वर्ये, इगुपधात् किदिति इन्, ततो ङीष्, इन्दीलक्ष्मीस्तस्या वरं प्रियम्] नीलोत्पलम्। ६८१

इन्दुः पुं. [उनत्ति अमृतधारया भुवं क्लिन्नां करोति इति। उन्द्+उ+आदेरिच्च] चन्द्रः; चन्द्रमाः; 'दिलीप इति राजेन्दुरिन्दुः क्षीरनिधाविव'—इति रघुवंशे (१-१२)। कर्पूरः; चन्द्रसमसंख्यः; एकसंख्यायुक्तः; मृगशिरानक्षत्रम्; 'दिवार्ककिरणैर्जुष्टं स्पृष्टमिन्दुकरैर्निशि'—इति वैद्यकद्रव्यगुणः। ४२

इन्द्रः पुं. [इन्दतीति। इदि परमैश्वर्ये, तस्माद् रन् प्रत्ययः] देवराजः; अदितिपुत्रः; पूर्वदिक्पतिः; शचीपतिः। (तस्य पुत्राः–जयन्तः १, ऋषभः २, मीढ्वांश्च। अस्त्रं वज्रम्। वाहनम् ऐरावतः। पुरी अमरावती। वनं नन्दनम्। माता अदितिः। भार्या शची) मरुत्वान्; मघवा; विडौजाः; पाकशासनः; वृद्धश्रवाः; सुनासीरः; पुरुहूतः; पुरन्दरः; जिष्णुः; लेखर्षभः; शक्रः; शतमन्युः; दिवस्पतिः; सुत्रामा; गोत्रभित्; वज्री; वासवः; वृत्रहा; वृषा; वास्तोस्पतिः; सुरपतिः; बलारातिः; जम्भभेदी; हरिहयः; स्वाराट्; नमुचिसूदनः; संक्रन्दनः; दुश्च्यवनः; तुराषाट्; मेघवाहनः; आखण्डलः; सहस्राक्षः; ऋभुक्षा; महेन्द्रः; कौशिकः; पूतक्रतुः; विश्वम्भरः; हरिः; पुरुदंशा; शतधृतिः; पृतनाषाट्; अहिद्विषः; वज्रपाणिः; पर्वतारिः; पर्यन्यः; देवताधिपः; नाकनाथः; पुलोमारिः; अर्हः; प्राचीनबर्हिः; तपस्तक्षः; 'इन्द्रश्च विश्वभुग्ज्ञेयो विपश्चित्तदनन्तरम्। विभुः प्रभुः शिखिश्चैव तथैव च मनोजवः।' पूर्वदिक्पतिः; दिक्पालविशेषः; दिक्पालभेदः; विष्कुम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतषड्विंशयोगः; 'प्रतापशीलो बलवान् गुणज्ञः श्लेष्माधिकः श्रीकमलाभ्युपेतः। किलेन्द्रयोगो यदि जन्मकाले महेन्द्रतुल्यः पुरुषः प्रसन्नः'–इति कोष्ठीप्रदीपः। अन्तरात्मा; आदित्यविशेषः; 'तत्र शक्रश्च विष्णुश्च जज्ञाते पुनरेव ह'—इति हरिवंशे। कुटजवृक्षः; रात्रिः; उपद्वीपविशेषः; परमेश्वरः; 'इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते'–इति श्रुतिः। इन्द्रियं; श्रेष्ठः; प्रथमः; यथा—नरेन्द्रो राजा, पक्षीन्द्रो गरुडः इत्यादिः। सूर्यः; वायुः। ५२

इन्द्रकोषः पुं. [इन्द्रस्य ऐश्वर्यशालिनः कोषः] मञ्चः; खट्वा; तमङ्गकः। २९४

इन्द्रप्रहरणम् क्ली. [इन्द्रस्य प्रहरणम्] इन्द्रस्यास्त्रं; वज्रम्। ५६

इन्द्रलुप्तम् क्ली. [इन्द्राणाम् इन्द्रनीलवर्णकेशानां लुप्तं लोपो यस्मात्] इन्द्रलुप्तकः; केशनाशकरोगः; इन्द्रलुप्तकः; केशघ्नः; केशरोगविशेषः; 'रोमकूपानुगं पित्तं वातेन सह मूर्च्छितम्। प्रच्यावयति रोमाणि ततः श्लेष्मा सशोणितः॥ रुणद्धि रोमकूपांस्तु ततोऽन्येषामसम्भवः। तदिन्द्रलुप्तं खालित्यं रुज्येति च विभाव्यते'—इति वैद्यके। ६०५

इन्द्राणी स्त्री. [इन्द्रस्य ऐश्वर्यशालिनः सुरराजस्य वा पत्नी। इन्द्र+'इन्द्रवरुणेति' ङीष्, आनुक् च] इन्द्रभार्या; पुलोमजा; शची; पौलोमी; पूतक्रतायी; माहेन्द्री; जयवाहिनी; ऐन्द्री; शतावरी; 'यथेन्द्राणी महेन्द्रस्य लक्ष्मीर्लक्ष्मीपतेर्यथा'—इति भविष्यपुराणे। इन्द्रशक्तिः; 'इहेन्द्राणीमुप ह्वये वरुणानीम्'—ऋग्वेदे (१-२२-१२)। 'इन्द्राणीम् इन्द्रस्य सूर्यस्य वायोर्वा शक्तिम्'—इति दयानन्दसरस्वतीकृतभाष्यम्। इन्द्रसुरिसवृक्षः; स्त्रीणां करणं; नीलसिन्दुवारवृक्षः; स्थूलैला; सूक्ष्मैला; दुर्गा; 'ऐश्वर्यं परमं यस्या वशे चैव सुरासुराः। इदि परमैश्वर्ये च इन्द्राणी तेन सा शिवा'—इति देवीपुराणे, ४५ अध्यायः। अष्टमातृकान्तर्गतमातृकाविशेषः। ५५

इन्द्रायुधः पुं. [इन्द्रस्यायुधमिव, चापाकृतित्वात्] कृष्णाक्षाश्वः; 'मल्लिकाक्षः सितैर्नेत्रैः स्याद्वाजीन्द्रायुधोऽसितैः।' क्ली. इन्द्रधनुः; 'स नादं मेघनादस्य धनुश्चेन्द्रायुधप्रभम्'—इति रघुवंशे (१२।७९)। न दिवीन्द्रायुधं दृष्ट्वा कस्यचिद्दर्शयेद्बुधः'—इति (४।५९)। 'इन्द्रधनुष' इति भाषा। ४३८

इन्द्रावरजः पुं. [इन्द्रस्य अवरजः, वामनरूपेण अनुजः] विष्णुः; उपेन्द्रः; चक्रपाणिः; चतुर्भुजः। २३

इन्द्रियम् क्ली. [इन्द्रस्यात्मनो लिङ्गमनुमापकम्, इन्द्रेण ईश्वरेण सृष्टम्, इन्द्रेणात्मना मम चक्षुर्मम श्रोत्रमित्यादिक्रमेण ज्ञातम्, इन्द्रेण जुष्टं वा, इत्याद्यर्थेषु इन्द्रशब्दात् निपातनात् घच्] ज्ञानकर्मसाधनं; हृषीकं; विषयिं; अक्षं; करणं; ग्रहणम्; 'इन्द्रियाणां विचरतां विषये-

व्यपहारिषु'—इति मनुः (२-८८)। (६३८) शुक्रं; वीर्यम्। विज्ञानं; 'यथा क्षयाम सर्ववीरया विशातन्त्रः शर्द्धाय धासयास्विन्द्रियम्'–इति ऋग्वेदे(१।१११।२)। 'इन्द्रियं विज्ञानम्'—इति दयानन्दभाष्यम्। ५३५

इन्द्रियग्रामः पुं. [इन्द्रियाणां ग्रामः] इन्द्रियसमूहः; इन्द्रियवर्गः। ८११

इन्धनम् क्ली. [इन्धे दीप्यतेऽग्निरनेन। इन्ध्+करणे +ल्युट्] अग्निसन्दीपनतृणकाष्ठादि; इध्मम्; एधः; समित्; एधं; समिन्धनम्; 'अन्नपानेन्धनादीनि ग्रामिकस्तान्यवाप्नुयात्'—इति मनुः (७–११८)। ६९

इभः पुं.– स्त्री. [एति गच्छतीति। इण्+भन्। औणादिकोऽयं प्रत्ययः] हस्ती; 'खराश्वोष्ट्रमृगेभानामजाविकवधन्तथा'—इति मनुः(११–६८)। 'इभदलितविकीर्णग्रन्थिनिष्यन्दगन्धः'—इति उत्तरचरिते। उत्तरपदे श्रेष्ठवाचकः। २१४

इरजः पुं. [इरायाः सुराया जातः। इरा+उ, बाहुलकाद् ह्रस्वः] इराजः; कामः। ३४

इरम्मदः पुं.[इरया उदकेन माद्यति दीप्यते,अबिन्धनत्वात्। 'उग्रम्पश्येरम्मदेत्यादिना' खश् प्रत्ययो मुपागमश्च निपातितः] वज्राग्निः; मेघज्योतिः; मेघाग्निः; अन्योन्यसङ्घट्टनेन मेघान्निःसृत्य यज्ज्योतिर्वृक्षादौ पतति सः; मेघ इत्युपलक्षणं वातजाग्निरपि। ६९

इरा स्त्री. [इं कामं राति ददाति इति। इ+रा+क, यद्वा इ+रन्+टाप, निपातनाद् गुणाभावः] भूमिः; वाक्यम्; अन्नं; जलम्; 'इरां वहन्तो घृतमुक्षमाणा मित्रेण साकं सह संविशन्तु'—आश्वलायनगृह्यसूत्रे (२–९)। सरस्वती; कश्यपपत्नीविशेषः; 'धर्मपत्न्यः समाख्याताः कश्यपस्य वदाम्यहम्। अदितिर्दितिर्दनुः काला अमायुः सिंहिका मुनिः॥ कद्रूः प्राधा इरा क्रोधा विनता सुरभिः खशा'—इति गारुडे, ६ अध्यायः। तस्याः सृष्टिर्यथा—'इरा वृक्षलता वल्ली तृणजातिश्च सर्वशः। खशा च यक्षरक्षांसि मुनिरप्सरसस्तथा।' दैत्यविशेषः; 'मरीचिर्मघवांश्चैव इराशङ्कुशिरा वृकः।' इति हरिवंशे (३–८२)। मद्यम्। ८६९

इराजः पुं. [इरया मद्येन जातः इति। इरा+जन्+ड] कन्दर्पः; कामदेवः; मदनः; मन्मथः। ३४

इरिणम् क्ली. [ऋच्छतीति। ऋ गतिप्रापणयोः, किदिच्चेति इनन्] ऊषरभूमिः; 'यथेरिणे बीजमुप्त्वा न वप्ता लभते फलम्'—इति मनुः (३–१४२)। शून्यम्। १५८

इला स्त्री. [इलति विष्णुवरात् पुंस्त्वं प्राप्नोति इति। इल्+क+टाप्] पृथिवी; (८३४) वाक्यं; गौः। वैवस्वतमुनिकन्या; सा च विष्णुवरात् पुंस्त्वं प्राप्य सुद्युम्ननाम्ना ख्याता, पश्चात् शङ्करशप्तकुमारवनं प्रविश्य पुनः स्त्रीत्वं गता। बुधस्तां भार्यात्वेन स्वीकृत्य पुरूरवसं जनयामास। ततस्तस्याः पुरोहितो वशिष्ठः शङ्करमाराध्य तस्यै मासं स्त्रीत्वं, मासं पुंस्त्वं दत्तवान्'– इति भागवतम्। कर्दमप्रजापतिपुत्र इलः कार्तिकेयजन्मदेशं प्रविश्य स्त्री भूत्वा इला नाम्ना ख्यातः। ततः पार्वतीमाराध्य मासं स्त्रीत्वं, मासं पुंस्त्वं च प्राप्तवान्– इति रामायणम्। १५६

इषः पुं. [इष्यते गम्यतेऽस्मिन् जिगीषुभिरिति। इष्+क] आश्विनमासः; 'इषजौ शरत्'—इति सुश्रुतः। 'यच्छरद्दूर्गस ओषधयः पच्यन्ते तेनेहैताविषश्चोर्गश्च'–इति शतपथब्राह्मणे (४–३)। ११४

इषीका स्त्री. [ईष्यते इति, ईषेः किद् ह्रस्वश्चेतीकन् ह्रस्वः टाप्]तूलिका; इषिका; काशतृणम्; 'पतङ्गानां पुच्छेषु त्वयेषीका प्रवेशिता।' 'इषीकां च यथा मुञ्जात् कश्चिन् निष्कृष्य दर्शयेत्। योगी निष्कृष्य चात्मानं तथा पश्यति देहतः'—इति महाभारते। 'तस्मिन्नास्थदिषीकास्त्रं रामो रामावबोधितः'—इति रघुः (१२-२३)। इषीकास्त्रं, काशास्त्रम्; गजचक्षुर्गोलकः; गजाक्षिकूटकः; हस्तिचक्षुर्गोलकः। १९१

इषुः पुं.– स्त्री. [इष्यति गच्छतीति। इष्+उ] बाणः; 'उत्कर्षः स च धन्विनां यदिषवः सिध्यन्ति लक्ष्ये चले'— इति शाकुन्तले। ४६६

इषुधिः स्त्री. [इषवो धीयन्तेऽस्मिन्। इषु+धा+कि] तूणः; 'धनुर्गाण्डीवमादाय तथाक्षय्ये महेषुधी'—इति महाभारते। ४६५

इष्टका, इष्टिका स्त्री. [इष्+तकन्+टाप्] गृहादिनिर्माणार्थदग्धमृत्तिकाखण्डः; 'ईंट' इति भाषा। 'कूपोदकं वटच्छाया श्यामा स्त्री इष्टकागृहम्। शीतकाले भवेदुष्णमुष्णकाले च शीतलम्'—इति चाणक्यः। 'मृण्मयात् कोटिगुणितं फलं स्याद् दारुभिः कृते। कोटिकोटिगुणं पुण्यफलं स्यादिष्टिकामये॥ द्विपरार्द्धगुणं पुण्यं

शैलजे तु विदुर्बुधाः। मृच्छिलयोः समं ज्ञेयं फलमाढच-दरिद्रयोः'—इति मठादिप्रतिष्ठातत्त्वे। २९३

इष्वासः पुं. [इषवो बाणा अस्यन्ते क्षिप्यन्तेऽनेन। इषु+अस्+करणे घञ्] धनुः; 'महोरस्को महेष्वासो गूढजत्रुररिन्दमः'—इति रामायणे। 'अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि'—इति भगवद्गीता (१-४)। त्रि. [इषून् बाणान् अस्यतीति, इषु+अस्+घञ्] इषुक्षेपकम्। ४६४

ई

ई अव्य.— दुःखभावनं; क्रोधः; प्रत्यक्षं; सन्निधिः; सम्बोधनम्; ईः पुं., कन्दर्पः; ई स्त्री. [अस्य विष्णोः पत्नी, ङीप्] लक्ष्मीः; दीर्घेकारः, चतुर्थस्वर-वर्णः; 'ई स्त्रीमूर्तिर्महामाया लोलाक्षी वामलोचनम्। गोविन्दः शेखरः पुष्टिः सुभद्रा रत्नसंज्ञकः॥ विष्णुर्लक्ष्मीः प्रहासश्च वाग्विशुद्धः परापरः। कालोत्तरीयो भेकण्डा रतिश्च पौण्ड्रवर्धनः॥ शिवोत्तमः शिवा तुष्टिश्चतुर्थी बिन्दुमालिनी। वैष्णवी वैन्दवी जिह्वा कामकला सनादका॥ पावकः कोटरः कीर्तिर्मोहिनी कालकारिका। कुचद्वन्द्वं तर्जनी च शान्तिस्त्रिपुरसुन्दरी'—इति तन्त्रोक्त-वर्णाभिधानम्। ८७५

ईक्षणम् क्ली. [ईक्ष्+भावे ल्युट्] दर्शनं; 'कृतान्धा धन-लोभान्धा नोपकारेक्षणक्षमाः'—इति कथासरित्सागरे। [ईक्षतेऽनेनेति करणे ल्युट्] चक्षुः (५१९); 'इत्यद्रि-शोभाप्रहितेक्षणेन' इति रघुवंशे (२-२७)। 'अभिमुखे मयि संवृतमीक्षणम्'—इति शाकुन्तले। 'स्वासक्षा-मेक्षणा दीना सुनीतिर्वाक्यमब्रवीत्'—इति विष्णुपुराणे (१-११-१५)। निरूपणं; पर्य्यवेक्षणम्; 'स्थापये-दासने तस्मिन् खिन्नः कार्येक्षणे नृणाम्'—इति मनुः (७-१४१)। ५५६

ईडा स्त्री. [ईड्+क+टाप्] स्तुतिः; प्रशंसा। १४५

ईतिः स्त्री. [ईयतेऽनया। ई+क्तिन्] कृषेः षट्प्रकारो-पद्रवविशेषः; 'अतिवृष्टिरनावृष्टिः शलभा मूषिकाः खगाः। प्रत्यासन्नाश्च राजानः षडेता ईतयः स्मृताः॥' डिम्बः; विप्लवः; प्रवासः; नृपतिरहितयुद्धं; कलहभेदः; 'ईतयो व्याधयस्तन्द्रा दोषाः क्रोधादयस्तथा। उपद्रवाश्च वर्तन्ते आधयः क्षुद्भयं तथा'—इति महाभारते। १२७

ईप्सा स्त्री. [आप्तुम् इच्छा।-'अ प्रत्ययात्' इति अ, टाप्] कामना; इच्छा; मनोरथः; अभिलाषः। ७१०

ईर्मम् क्ली. [ईर्+बाहुलकान्मक्] व्रणः; 'मृगयुमिव मृगोऽय दक्षिणेर्मा'—इति भट्टिकाव्ये (४-४४)। ६३०

ईर्वारुः पुं.-स्त्री. [ईरं वृणोतीति। ईर्+वृ+बाहुलकाद् उण्] स्फुटिः। 'फूट' इति भाषा। २०९

ईर्षा स्त्री. [ईर्षणम्, ईर्ष्य्+अ, 'हसाल्लोपोऽशिति'—(मु बो.७७६) इति यलोपः] अक्षमा; 'कथमीर्षां न कुरुषे सुग्रीवस्य समीपतः'—रामायणे (४।२४।३७)। ७४०

ईर्षालुः त्रि. [ईर्षा+आलुच् बाहुलकात्] ईर्षा-विशिष्टः। ३८४

ईर्ष्या स्त्री. [ईर्ष्यणम्। ईर्ष्य्+अ+टाप्] परोत्कर्षा-सहिष्णुता; अक्षान्तिः; 'पैशुन्यं साहसं द्रोह ईर्ष्या-सूयार्थदूषणम्। वाग्दण्डजं च पारुष्यं क्रोधजोऽपि गणोष्टकः'—इति मनुः (७-४८)। स्त्रियः पत्युरन्य-प्रियासङ्गदर्शनादिजनितो मानभेदः; 'वचोभिरीर्ष्याकल-हेन लीलया समस्तभावैः खलु बन्धनं स्त्रियः।' ७४०

ईर्ष्यालुः त्रि. [ईर्ष्यां लाति। ईर्ष्या+ला+डु] ईर्षा-विशिष्टः; अक्षान्तियुक्तः; कुहनः; 'दिवसे सन्निधानेन पेशुनप्रेरणा यदि। ईर्ष्यालुना स्वैरिणीव रक्षितुं यदि पार्यते'—इति राजतरङ्गिणी। ३८४

ईलिः स्त्री. [ईर्यते इति, ईर्+इन्, रस्य लः] करपाली; गुप्तिका; ह्रस्वगदाकारहस्तदण्डः; 'सोटा' इति ख्यातः। करच्छुरी; एकधारा; यवनास्त्रम्। ५९५

ईली स्त्री. [ईर्+इन्, कृदिकारादिति ङीष्] ह्रस्व-गदाकारहस्तदण्डः; करपालिका; ईलिका; ईलिः; कारपाली; गुप्तिका; एकधारा इति ख्याते, यवनास्त्रे वा। ५९५

ईशः त्रि. [ईष्टे इति, ईश्+क] ईश्वरः; 'जगदीशो निरीश्वरः'—इति कुमारसम्भवे (२-९)। प्रभुः; 'कथंचिदीशा मनसां बभूवुः'—इति कुमारसम्भवे (३-३४)। पुं. महादेवः; 'शनैः कृतप्राणविमुक्ति-रीशः पर्यङ्कबन्धं निविडं बिभेद'—इति कुमारे (३-५९)। ईशानकोणाधिपतिः। ३५६

ईशानः पुं. [ईष्टे, ईश्+'ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु चानश्'] महादेवः; 'तस्मिन् मुहूर्ते पुरसुन्दरीणामी-शानसंदर्शनलालसानाम्'—इति कुमारसम्भवे (७-५६)।

'तत्रेशानं समभ्यर्च्य त्रिरात्रोपोषितो नरः'—इति भारते। एकादशरुद्रान्तर्गतरुद्रविशेषः; '१ हराय; २ मृडाय; ३ शर्वाय; ४ शिवाय; ५ भवाय; ६ शङ्कराय; ७ ईशानाय; ८ उग्राय; ९ भीमाय; १० पशुपतये; ११ रुद्राय महादेवाय स्वाहा'—इति आश्वलायनगृह्यसूत्रे (४–९)। दूतमूर्तिधरः शिवः; धूम्रजटिलः; 'सा चाह धूम्रजटिलमीशानमपराजिता। दूत त्वं गच्छ भगवन् पार्श्वं शुम्भनिशुम्भयोः'—इति मार्कण्डेये (८८–२३)। शिवाष्टमूर्त्यन्तर्गतसूर्यमूर्तिः; परमेश्वरः; 'सर्वेन्द्रियगुणावासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम्। सर्वस्य प्रभुमीशानं सर्वस्य शरणं बृहत्'—कृष्णयजुर्वेदे। 'आद्यं पुरुषमीशानं पुरुहूतं पुरुष्टुतम्। ऋतमेकाक्षरं ब्रह्म व्यक्ताव्यक्तं सनातनम्।' साध्यापुत्रो देवताभेदः; 'धर्मल्लक्ष्म्युद्भवः कामः साध्या साध्यान् व्यजायत। प्रसवं च्यवनं चैव ईशानं सुरभिं तथा'—इति भारते। शमीवृक्षः; क्ली. ज्योतिः; पुं. तद्विशिष्टे; 'मुषाय सूर्यं कवे चक्रमीशान ओजसा'–इति ऋग्वेदे (१।१७५।४)।११

ईश्वरः पुं. [ईष्टे इति, ईश्+वरच्। यद्वा अश्नुते व्याप्नोतीति। अश्वातोर्वरट् उपधाया ईत्वं च] ऐश्वर्यशाली; राष्ट्री; अर्यः; नियुत्वान्; इनः; हरिः; 'रुद्र उवाच—हरे कथय देवेश देवदेव क ईश्वरः। को ध्येयः कश्च वै पूज्यः कैर्व्रतैस्तुष्यते परः॥ हरिरुवाच–'शृणु रुद्र प्रवक्ष्यामि ब्रह्मणा च सुरैः सह। अहं हि देवो देवानां सर्वलोकेश्वरेश्वरः'—इति गारुडे (२ अध्यायः)। नृपतिविशेषः; 'मतिमांश्च मनुष्येन्द्र ईश्वरश्चेति विश्रुतः' —इति महाभारते। कन्दर्पः; विशुद्धसत्त्वप्रधानाज्ञानोपहितचैतन्यम्; शिवः; 'तद्गौरवान्मङ्गलमण्डनश्रीः सा पस्पृशे केवलमीश्वरेण'—इति कुमारे (७–३१)। त्रि. आढ्यः; 'दरिद्रान् भर कौन्तेय मा प्रयच्छेश्वरे धनम्' —इति हितोपदेशे (१–७६)। स्वामी; 'अहं चैव हि यच्चान्यन्ममास्ति वसु किञ्चन। तत्सर्वं तव विस्रब्धं कुरु प्रणयमीश्वर'—इति महाभारते। नियन्ता; प्रभुः; 'ईश्वरः सर्वभूतानां धर्मकोषस्य गुप्तये'—इति मनुः (१–९९)। ३५६

ईषत् अव्य. [ईषणमिति। ईष्+अत्] अल्पं; किञ्चित्; मनाक्; 'न दृष्ट्वा कुपितं पुत्रं ईषत्प्रस्फुरिताधरम्'—इति विष्णुपुराणे (१–११–१२)। 'ईषत्सहासममलं परिपूर्णचन्द्रबिम्बानुकारि कनकोत्तमकान्ति कान्तम्'—इति मार्कण्डेयपुराणे। 'हृदि तिष्ठति यच्छुद्धं रक्तमीषत् सपीतकम्'—इति चरकः। ८८२

ईहामृगः पुं. [ईहाप्रधानो मृगो वृकः] कुक्कुरभेदः; वनकुक्कुरः; कुक्कुरप्रमाणहरिणघ्नकपिलवर्णजन्तुविशेषः; कोकः; वृकः; 'भेड़िया' इति भाषा। 'पुलहस्य सुता राजन् शलभाश्च प्रकीर्तिताः। सिंहाः किंपुरुषा व्याघ्रा यक्षा ईहामृगास्तथा'—इति महाभारते। नाटकरूपकभेदः (नायको मृगवदलभ्यामपि नायिकामीहते वाञ्छत्यत्र इति); 'ईहामृगो मिश्रवृत्तश्चतुरङ्कः प्रकीर्तितः'—इति साहित्यदर्पणे। २२८

ईहावृकः पुं. [ईहाप्रधानो वृकः] ईहामृगः। २२८

उ

उक्षतरः पुं. [उक्षन्+तरप्] महावृषः। २६५

उक्षा [न्] पुं. [उक्ष्+कनिन्] वृषः। 'उक्षा मिमाति प्रतियन्ति धेनवः'—इति ऋग्वेदे (८–७१–९)। 'तत्रावतीर्याच्युतदत्तहस्तः शरद्घनाद्दीधितिमानिवोक्ष्णः'—इति कुमारसम्भवे (७–७०)। ऋषभौषधिः। २६३

उखा स्त्री. [उख्+क+टाप्] स्थाली; 'इद्धः स्वतेजसा वह्निरुखागतमिवोदकम्'—इति सुश्रुते। 'बटुली' इति भाषा। ३१४

उख्यम् त्रि. [उखायां संस्कृतम्। उखा+यत्] स्थालीपक्वमांसादि; पैठरम्; 'शूल्यमुख्यं च होमवान्'—इति भट्टिः (४–९)। [उखायां भवः] अग्निः; 'उख्यान् (अग्नीन्) हस्तेषु बिभ्रतः'—इति अथर्ववेदे (४।१४।२)। ३२३

उग्रः पुं. [उच्+रक् गश्चान्तादेशः] महादेवः; 'उग्रो वंशकरो वंशो वंशनादो ह्यनिन्दितः' —महाभारते। नृपविशेषः; क्षत्रियात् शूद्रायां जातः जातिविशेषः; 'क्षत्रियात् शूद्रकन्यायां क्रूराचारविहारवान्। क्षत्रशूद्रवपुर्जन्तुरुग्रो नाम प्रजायते।' 'क्षत्त्रुग्रपुक्कसानान्तु विलौकोवधबन्धनम्'—इति मनुः (१०।९।४९)। नक्षत्रगणविशेषः—स च पूर्वाफाल्गुनीपूर्वाषाढापूर्वाभाद्रपदामघाभरण्यात्मकः; शोभाञ्जनवृक्षः; केरलदेशः; रुद्रः; उग्रो देवः; दानवविशेषः; 'वेगवान् केतुमानुग्रः सोग्रव्यग्रो महासुरः'—इति हरिवंशे। धृतराष्ट्रस्य शतपुत्रेषु एकः;

'उग्रभीमरथौ वीरौ वीरबाहुरलोलुपः'–इति महाभारते। नरेन्द्रादित्याख्यस्य कश्मीरराजस्य गुरुः; 'दिव्यानुग्रह-भागुग्राभिधो यस्य गुरुर्व्यधात्'—इति राजतरङ्गिणी। विष्णुः; स्त्री. योगिनीभेदः; 'महाकालस्य रुद्राणी उग्रा भीमा तथैव च' इति कालिक.पु. ६० अध्यायः। क्ली. वत्सनाभनामविषम्। त्रि. रौद्रम्; उत्कटम्। ११

उग्रधन्वा [न्] पुं. [उग्रं धनुर्यस्य। धनुषश्चेत्यनङ्] इन्द्रः; 'स इषुहस्तैः स निषङ्गिभिर्वशी संस्रष्टा स युध इन्द्रो गणेन। संसृष्टजित् सोमपा बाहुः शर्द्ध्युग्रधन्वा प्रतिहिताभिरस्ता'—इति ऋग्वेदे (१०-१०३-३)। शिवः; त्रि. उग्रधनुर्विशिष्टे। ५४

उचितम् त्रि. [वच्+'रुचिवचिकुचिकुटिभ्यः कितच्' इति कितच्प्रत्ययः] विदितं; न्याय्यं; परिमितं; युक्तं; ग्राह्यम्। ७४६

उच्चम् त्रि. [उच्चिनोतीति। उत्+चिञ्+'अन्येभ्योऽपि' इति ड। उच्चैस्त्वमस्ति अत्र वा, अर्श आद्यच्, अव्ययानामिति टिलोपः] उपरि; प्रांशु; उन्नतम्; उदग्रम्; उच्छ्रितं; तुङ्गम्; उत्तुङ्गम्; 'ग्रहैस्ततः पञ्चभिरुच्चसंश्रयैरसूर्यगैः सूचितभाग्यसम्पदम्'–इति रघुवंशे (३–१३)। 'अजवृषभमृगाङ्गनाकुलीरा झषवणिजौ च दिवाकरादितुङ्गाः। दशशिखिमनुयुक्तिथीन्द्रियांशैस् त्रिनवकविंशतिभिश्च तेऽस्तनीचाः'—बृहज्जातके। ७५१

उच्चण्डः त्रि. [उत्+चण्डतीति, चडि कोपे+अच्] त्वरान्वितः; अविलम्बितः। ७८३

उच्चयः पुं. [उत्+चि+अच्] परिधानवस्त्रग्रन्थिः; नीवी; किरातार्जुनीये (८-१५, ५१)। पुष्पादीनामुत्तोलनं; 'करिष्यामि शरैस्तीक्ष्णैस्तच्छिरः कमलोच्चयम्'—इति रघुवंशे (१०–४४)। 'पुष्पोच्चयं नाटयति'—इति शाकुन्तले। राशिः; समष्टिः; 'शिलोच्चयोऽपि क्षितिपालमुच्चैः'—इति रघुवंशे (२–५१)। 'वाक्यं स्याद्योग्यताकाङ्क्षासत्तियुक्तः पदोच्चयः—इति साहित्यदर्पणे (२–१७)। ५४७

उच्चारः पुं. [उच्चार्यते परित्यज्यते इति। उत्+चर्+णिच्+घञ्] विष्ठा; 'मूत्रोच्चारसमुत्सर्गं दिवा कुर्यादुदङ्मुखः' इति मनुः (४–५०)। 'यस्योच्चारं विना मूत्रं सम्यग्वायुश्च गच्छति। दीप्ताग्नेर्लघुकोष्ठस्य स्थितस्तस्योदरामयः'—इति सुश्रुते। उच्चारणं; कथनम्। ६३७

उच्चावचः त्रि. [उदक् च अवाक् च। मयूरव्यंसकादित्वात् साधुः] अनेकप्रकारः; नैकभेदः; माघे (४–४६)। 'उल्कानिर्घातकेतूंश्च ज्योतींष्युच्चावचानि च।' 'उच्चावचेषु भूतेषु स्थितं तं व्याप्य तिष्ठतः' —इति च मनुः (१–३८), (६–७३)। १३९

उच्चूलः पुं. [उद्गता चूडा यस्य, डस्य लत्वम्] ध्वजोर्द्धमुखकूर्चः; 'ध्वजा का फहरेरा' इति भाषा। अस्य पटुका अवचूलः। ४५८

उच्चैःश्रवाः [स्] पुं. [उच्चैः श्रवो यशो यस्य, यद्वा उच्चैः श्रवसी कर्णौ यस्य, यद्वा उच्चैः शृणोतीति। उच्चैः+श्रु+असुन्] इन्द्रघोटकः; स तु श्वेतवर्णः समुद्रमन्थनोत्थितः; 'उच्चैरुच्चैःश्रवास्तेन हयरत्नमहारि च'—इति कुमारे (२–४७)। ६१

उच्चैस्तरः पुं. [अतिशयार्थे तरप्] अत्युच्चः; उन्नततरः। १४०

उच्छिष्टम् त्रि. [उत् शिष्यते यत्। उत्+शिष्+क्त] भुक्तावशिष्टम्; 'जूठा' इति भाषा। 'चाण्डालपतिताद्दीनामुच्छिष्टान्नस्य भक्षणे। द्विजः शुध्येत् पराकेण शूद्रः कृच्छ्रेण शुध्यति॥' ३२६

उच्छीर्षकम् क्ली. [उत् ऊर्ध्वंस्थापितं शीर्षं मस्तकं येन। बहुव्रीह्यर्थे कन्] उपधानम्; उपबर्हः; 'तकिया' इति भाषा। ३०९

उच्छृङ्खलम् त्रि. [उद्गतं शृङ्खलं निगडं यस्य] शृङ्खलारहितम्; अबाधम्; उद्दाम; अनियन्त्रितम्; अनर्गलं; निरङ्कुशम्; 'अन्यदुच्छृङ्खलं सत्त्वमन्यत् शास्त्रनियन्त्रितम्'—इति हितोपदेशे (३–९७)। 'सम्मूर्च्छदुच्छृङ्खलशङ्खनिस्वनः'—इति माघे (१२–१३)। ७५१

उज्जयिनी (उज्जयनी) स्त्री. [उत् ऊर्ध्वः जयः अस्ति अस्याः। इनि, ङीप्। अथवा उच्चैर्जयति, ल्युट्, ङीप्] विशाला नगरी; अवन्ती; पुष्पकरण्डिनी; मालवदेशस्य नगरी; मोक्षदसप्तपुर्यन्तर्गतपुरी; अवन्तिका; विक्रमादित्यराजधानी; 'उज्जैन' इति ख्याता; 'सौधोत्सङ्गप्रणयविमुखो मा स्म भूरुज्जयिन्याः'—पूर्वमेघे (२९)। २८७

उज्ज्वलम् त्रि. [उच्चैर्ज्वलति प्रकाशते इति। उत्+ज्वल्+अच्] दीप्तं; विशदं; विकाशितम्; 'अस्माकं सखि वाससी न रुचिरे ग्रैवेयकं नोज्ज्वलम्'—इति साहित्य-

दर्पणे। 'विचित्रोज्ज्वलवेशा तु बलन्नूपुरनिःस्वना।' क्ली. स्वर्णम्। पुं. शृङ्गाररसः; 'स राशिरासीन्महसां महोज्ज्वलः'—इति नैषधे (१-१)। १३२

उज्झितम् त्रि. [उज्झ् + क्त] उत्सृष्टं, त्यक्तं; वर्जितम्; 'अविरतोज्झितवारिविपाण्डुभिः'—इति किराते (५-६)। 'उज्झितायास्त्वया नाथ! तदैव मरणं वरम्' इति रामायणे। ७१४

उटजः पुं.– क्ली. [उटास्तृणपर्णादयस्तेभ्यो जात इति। उट+जन्+ड] गृहमात्रम्; मुनीनां पत्ररचितगृहं; पर्णशाला; पर्णोटजः; 'आकीर्णमृषिपत्नीनामुटजद्वाररोधिभिः।' 'मृगैर्वर्तितरोमन्थमुटजाङ्गणभूमिषु'—इति रघुवंशे (१-५०, ५२)। २९१

उडु क्ली.–स्त्री. [उ रोषोक्तिपूर्वकं डयते इति। उ+डी+मितद्र्वादित्वाड् डु] नक्षत्रम्; 'तदोडुराजः ककुभः करैर्मुखम्'—इति भागवतम् (१०-२९)। 'इन्दुप्रकाशान्तरितोडुतुल्याः'—इति रघुवंशे (१६।६५)। जले क्ली.। ५१

उडुपः पुं.– क्ली. [उडुनो जलात् पाति रक्षतीति। उडु+पा+क] भेलकं; प्लवः; कोलः; भेलकः; उडूपः; तरणः; तारणः; तारकः; 'तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्'—इति रघुवंशे (१-२)। पुं. चन्द्रः; 'अपश्यद् वदनं तस्य रश्मिवन्तमिवोडुपम्'—इति महाभारते। चर्मावनद्धपानपात्रम्; 'चर्मावनद्धमुडुपं प्लवः काष्ठं करण्डवत्'—इति सज्जनः। ६७१

उडुम्बरम् क्ली. [उडुं वृणातीति। उडु+वृ+अच्] ताम्रम्; कर्षः। १७०

उत अव्य. [उ शब्दे, क्त] वितर्कः, अत्यर्थं; विकल्पः; समुच्चयः; प्रश्नः; पादपूरणम्; अप्यर्थे; एवार्थे; 'किमेतदारण्यम् उत ग्राम्यम्'—इति पञ्चतन्त्रे। 'तत्किमयमातपदोषः स्याद् उत यथा मे मनसि वर्तते'—इति शाकुन्तले। 'वीरो रसः किमयमित्युत दर्प एषः'—इति उत्तरचरिते। त्रि. उतम् [व्ये+क्त, यजादित्वात् सम्प्रसारणम्] तन्तुसन्तानः; ऊतं; स्यूतम्। 'बुना' इति भाषा। ८८०

उताहो अव्य. [उत च आहो च अनयोः समाहारः] विकल्पः; सन्देहः; उताहोस्वित्; 'क्षमा स्वित् श्रेयसी तात उताहो तेज इत्युत', 'यक्षी वा राक्षसी वा त्वम् उताहोऽसि सुराङ्गना'—इति महाभारते। परिप्रश्नः; विचारः। ८८०

उत्कः त्रि. [उद्गतं मनो यस्य। उत्+कन्] उन्मनाः; अन्यमनस्कः; 'तच्छ्रुत्वा ते श्रवणसुभगं गर्जितं मानसोत्काः'—इति मेघदूते (११)। 'अगमयदद्रिसुतासमागमोत्कः'—इति कुमारसम्भवे (६-९५)। ३८६

उत्कटम् त्रि. [उद्गतः कटः आवरणं यस्य] तीव्रं; मत्तं; विषमम्; 'चन्द्रांशुनिकराभासा हाराः कासाञ्चिदुत्कटाः। स्तनमध्ये सुविन्यस्ता विरेजुर्हंसपाण्डराः' —इति रामायणे। क्ली. गुडत्वक्; 'दालचीनी' इति भाषा। 'त्वक्पत्रं च वराङ्गं स्याद् भृङ्गं चोदन्तमुत्कटम्'–इति भावप्रकाशः। पुं. [उद्गतमदवृत्तेः उच्छब्दात् स्वार्थे सम्मोदश्चेति कटच्] मदः; सञ्जातमदहस्ती; शरः; रक्तेक्षुः। ७४४

उत्कण्ठा स्त्री. [उत्+कठि+अ+टाप्] उत्कलिका; इष्टलाभे कालक्षेपासहिष्णुता; कामादिजातस्मृतिः; उद्वाहुलकेन स्मरणम्; उत्केन दयितस्मरणं; प्रियाभिलाषादुन्मनस्कत्वम्; 'गाढोत्कण्ठां गुरुषु दिवसेष्वेषु गच्छत्सु बालाम्'—इति मेघदूते (८३)। 'यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया'—इति शाकुन्तले। ७४२

उत्कण्ठितम् त्रि. [उत्कण्ठा जातास्य। उत्कण्ठा+इतच्] उत्कण्ठायुक्तम्; उत्कम्; उत्सुकम्; उन्मनः; 'साश्रेणास्रद्रुतमविरतोत्कण्ठमुत्कण्ठितेन'—इति मेघदूते (१०३)। ३८६

उत्करः पुं. [उत्कीर्यते इति। उत्+कॄ+अप्] धान्यादिराशिः; स्तूपः; 'सिक्तराजपथान् रम्यान् प्रकीर्णकुसुमोत्करान्'—इति रामायणे। ६८६

उत्कर्षः पुं. [उत्+कृष्+घञ्] सुखम्; (८३६, ८५३) प्राधान्यं; श्रेष्ठता; 'उत्कर्षः स च धन्विनां यदिषवः सिध्यन्ति लक्ष्ये चले'—इति शाकुन्तले। 'निनीषुः कुलमुत्कर्षमधमानधमांस्त्यजेत्'–इति मनुः (४-२४४)। वृद्धिः; 'पञ्चानामपि भूतानामुत्कर्षं पुपुषुर्गुणाः'—इति रघुवंशे (४-११)। त्रि. अतिशययुक्तः; स्वकालात् परकालकर्तव्यः। १२३

उत्कलिका स्त्री. [उत्+कल्+वुन्+टाप्] तरङ्गः; 'वनावलीरुत्कलिकासहस्रप्रतिक्षणोत्कूलितशैवलाभाः'—

इति माघे (३–७०)। (७४२) उत्कण्ठा; उत्सुकता; औत्सुक्यम्; 'ततोऽन्येद्युः प्रतिपदं तत्तदुत्कलिकाभृता' —इति कथासरित्सागरे (२२–१०५)। कलिका; 'उद्दामोत्कलिकां विपाण्डुररुचं प्रारब्धजृम्भां क्षणात्'— इति रत्नावली। ६५३

उत्कोचः पुं.– स्त्री. [उत्कोचति अशुभं नाशयतीति। उत्+कुच्+क] प्राभृतं; ढौकनं; लम्बा; कोशलिकम्; आमिषम्; उपाच्चारः; प्रदा; आनन्दा; हारः; ग्राह्यम्; अयनम्; उपदानकम्; अपप्रदानम्; 'उत्कोचजीविनो द्रव्यहीनान् कृत्वा प्रवासयेत्'—इति याज्ञवल्क्ये (१–३–३८)। ४३४

उत्क्रोशः पुं.– स्त्री. [उत्क्रोशति प्रहरे प्रहरे शब्दं करोतीति। उत्+क्रुश्+अच्] कुररपक्षी; कुररी। २४९

उत्तंसः पुं. [उत्तंसयति उत्तंस्यतेऽनेन वा। तसिः सौत्रो भूषार्थः, पचाद्यच् हलश्चेति घञ् वा] शेखरः; शिरोभूषणं; मतान्तरे क्लीवलिङ्गोऽपि। 'नोत्तंसं क्षिपति क्षितौ श्रवणतः सा मे स्फुटेऽप्यागसि'—इति साहित्यदर्पणे। कर्णपूरः; कर्णाभरणम्। ५५४

उत्तमः त्रि. [अतिशयेन उत्कृष्टः। उत्+तमप्, द्रव्यप्रकर्षार्थत्वान्नाम्, यद्वा उत्ताम्यति, तमु+अच्, उत्तम्यते वा, घञ्। नोदात्तेति न वृद्धिः] भद्रः; उत्कृष्टः; प्रधानं; प्रमुखः; प्रवेकः; अनुत्तमः; मुख्यः; वर्यः; वरेण्यः; प्रवर्हः; अनवरार्ध्यः; परार्ध्यः; अग्रः; प्राग्रहरः; प्राग्र्यः; अग्र्य; अग्रीयः; अग्रियः; मुखः; अग्रणीः; 'उत्तमस्यापि वर्णस्य नीचोऽपि गृहमागतः'—इति हितोपदेशे। 'उत्तमाद्देवरात् पुंसः काङ्क्षन्ते पुत्रमापदि'—इति महाभारते। पुं. वैशिकनामनायकभेदः; प्रियव्रतराजपुत्रः; उत्तानपादस्य राज्ञः स्वनामख्यातपुत्रभेदः; 'तयोरुत्तानपादस्य सुरुच्यामुत्तमः सुतः'—इति विष्णुपुराणे। ६९०

उत्तमाङ्गम् क्ली. [उत्तमं प्रशस्तमङ्गम्] मस्तकम्; 'कश्चिद् द्विषत्खड्गहृतोत्तमाङ्गः'—इति रघुवंशे (७–५१)। 'बभौ पतद्गङ्ग इवोत्तमाङ्गे'—इति कुमारसम्भवे (७–४१)। मुखम्; 'उत्तमाङ्गोद्भवाज्ज्यैष्ठ्याद् ब्रह्मणश्चैव धारणात्। सर्वस्यैवास्य सर्गस्य धर्मतो ब्राह्मणः प्रभुः'—इति मानवे (१–९३)। ५१८

उत्तरः त्रि. [अतिशयेन उद्गतः। उत्+तरप्] उदीची; 'उत्तरे जाह्नवीतीरे हिमवन्तं शिलोच्चयम्'—इति रामायणे। उत्तमः; प्रधानं; श्रेष्ठः; 'नृपा इवोपप्लविनः परेभ्यो धर्मोत्तरं मध्यममाश्रयन्ते'—इति रघुवंशे (१३–७)। 'ब्रह्मधर्मोत्तरे राज्ये शान्तनुर्विनयात्मवान्'—इति महाभारते। अनन्तरम्; 'वित्तं बन्धुर्वयः कर्म विद्या भवति पञ्चमी। एतानि मान्यस्थानानि गरीयो यद्यदुत्तरम्'—इति मनुः (२–१३६)। ऊर्ध्वः। पुं. विराटराजपुत्रः; 'तमुत्तरं वीक्ष्य रथोत्तमे स्थितम्।' 'सहोत्तरेणास्तु तदद्य मङ्गलम्'—इति महाभारते। पर्वतप्रभेदः; 'दक्षिणस्योत्तरो गिरिः'—इति रामायणे। [उत्तारयति संसारसागराद् इति व्युत्पत्तेः] शिवः; हरिः;—भारते (१३।१४९।६६)। क्ली. प्रतिवाक्यम्। १०१

उत्तरकालः पुं. [उत्तरः कालः] भविष्यत्कालः; गौणकालः; 'एवमागामियागीयमुख्यकालादधस्तनः। स्वकालादुत्तरो गौणः कालः पूर्वस्य कर्मणः'—इति हरिहरपद्धतिः। ११८

उत्तरङ्गम् क्ली. [उत्तर+गम्+खश्] द्वारोर्ध्ववक्रदारु; द्वारस्योपरि तिर्यग्दारु; त्रि. उद्गततरङ्गे; 'प्रत्यग्रहीत्पार्थिववाहिनीं तां भागीरथीं शोण इवोत्तरङ्गः'—इति रघुवंशे (७–३६)। ३००

उत्तरच्छदः पुं. [उत्तरम् ऊर्ध्वभागः छाद्यतेऽनेन। छद् संवरणे, घ, छादेर्घे इति ह्रस्वः] प्रच्छदपटः, दीर्घमाच्छादनवस्त्रम्। डोलिका–सिंहासनाद्याच्छादकम्। ३०८

उत्तरा स्त्री. [उत्तर+टाप्] उत्तरा दिक्; कौवेरी; देवी; उदीची; 'एवं स पुरुषव्याघ्रो विजिग्ये दिशमुत्तराम्'—इति महाभारते। कर्कटवृश्चिकमीनराशयः; 'मेषसिंहधनुः प्राच्यां दक्षिणस्यां तु तत्परे। प्रतीच्यां तत्परे ज्ञेया उदीच्यां च ततः परे'—इति समयप्रदीपः। विराटराजकन्या; अभिमन्युपत्नी; 'स तत्र नर्मसंयुक्तमकरोत् पाण्डवो बहु। उत्तरायाः प्रमुखतः सर्वं जानन्नरिन्दमः'—इति महाभारते। १०१

उत्तराशापतिः पुं. [उत्तराशायाः उत्तरदिशः अधिपतिः अधिष्ठाता] कुवेरः। ७९

उत्तरासङ्गः पुं. [उत्तरे ऊर्ध्वभागे आसज्यते। उत्तर+आ+सञ्ज्+घञ्] उत्तरीयवस्त्रम; उत्तरीयम्। 'दुपट्टा' इति भाषा। ४१०

उत्तरीयम् क्ली. [उत्तरस्मिन् ऊर्ध्वदेहभागे भवम्।

उत्तर+छ] उत्तरीयवस्त्रं; प्रावारः; उत्तरासङ्गः; बृहतिका; संव्यानं; कक्षा; 'अथास्य रत्नग्रथितोत्तरीयमेकान्तपाण्डुस्तनलम्बि हारम्'—इति रघुवंशे (१६–४३)। 'उत्तरीयमिवासक्तं सुव्यक्तं सीतया तदा'—इति रामायणे। ५४६

उत्तालः त्रि. [उत्+तल्+घञ्] त्वरितः; उन्नतः (८००); उत्कटः; श्रेष्ठः; विकरालः; प्लवङ्गमः; 'लसदुत्तालवेतालतालवाद्यं विवेश तत्। श्मशानं कृष्णरजनीनिवासभवनोपमम्'—इति कथासरित्सागरे (२५–१३६)। 'अन्योऽन्यप्रतिघातसङ्कुलचलत्कल्लोलकोलाहलैः। उत्तालास्त इमे गभीरपयसः पुण्याः सरित्सङ्गमाः'—इति उत्तररामचरिते। ३७०

उत्पलम् क्ली. [उत्पलतीति। पल् गतौ, पचाद्यच्] नीलकमलम्; कुष्ठौषधिः; पुष्पं; जलजपुष्पमात्रं; पद्मकुसुमादि; कुवलयं; कुवलं; कुवेलम्; 'नवावतारं कमलादिवोत्पलम्'—इति रघुवंशे (३–३६)। जलपुष्पविशेषः; अनुष्णं; रात्रिपुष्पं; जलाह्वयं; हिमाब्जं; निशापुष्पम्; 'उत्पलानि कषायाणि पित्तरक्तहराणि च'—इति चरकः। 'तस्मादल्पान्तरगुणे विद्यात्कुवलयोत्पले'—इति सुश्रुते। पुं. [उद्गतं पलं मांसं यस्मात् सः] मांसशून्यः। ६८१

उत्पश्यम् त्रि. [उदूर्ध्वं पश्यतीति। उत्+दृश्+श] उन्मुखम्; ऊर्ध्वदृष्टिविशिष्टम्। ३८५

उत्पाटितम् त्रि. [उत्+पट्+णिच्+क्त] कृतोत्पाटनम्; उन्मूलितम्; उत्खातम्; आवर्हितम्; उद्धृतम्। ७१२

उत्पातः पुं. [उत्+पत्+घञ्] उत्पतति अकस्मादायाति यः; प्राणिनां शुभाशुभसूचकमहाभूतविकारभूकम्पादिः; अजन्यम्; उपसर्गः; उल्कापातः (८४०); 'नरपतिदेशविनाशे केतोरुदयेऽथवा ग्रहेऽर्केन्द्वोः। उत्पातानां प्रभवः स्वर्तुभवश्चाप्यदोषाय'—इति बृहत्संहितायाम्। उत्पतनम्; उल्लम्फः; 'एकोत्पातेन ते लङ्कामेष्यन्ति हरिपुङ्गवाः'—इति रामायणे। उन्नतिः; वृद्धिः; 'करनिहितकन्दुकसमाः पातोत्पाता मनुष्याणाम्'—इति हितोपदेशे। उत्पत्तिः; 'बुद्धिरात्मानुगातीव उत्पातेन विधीयते। तदाश्रिता हि सा ज्ञेया बुद्धिस्तस्यैषिणी भवेत्'– इति महाभारते। १२७

उत्पिञ्जलः त्रि. [उदतिशयः पिञ्जलो व्यग्रः] भृशमाकुलः; अतिशयव्याकुलः; समुत्पिञ्जः; पिञ्जलः। ७३१

उत्प्रासः पुं. [उत्+प्र+असु क्षेपणे, भावे घञ्] उच्चैर्हासः; सव्याजमुपहासः; उत्क्षेपणम्। ७३१

उत्सः पुं. [उनत्ति जलेन। उन्द्+'उन्दिगुधिकुषिभ्यश्चेति' स, किदित्यनुवृत्तेर्नलोपः] प्रस्रवणं; गिरेरुपरि निर्झरादिप्रभवजलसङ्घातः; अजस्रं मन्दवेगेन स्रवज्जलम्। ६७७

उत्सङ्गः पुं. [उत्स्वजते मिलति यत्र। उत्+सञ्ज्+घञ्] क्रोडम्; 'उत्सङ्गे वा मलिनवसने सौम्य! निक्षिप्य वीणाम्'—इति मेघदूते। 'प्रणयेनागतं पुत्रमुत्सङ्गारोहणोत्सुकम्'—इति विष्णुपुराणम्। पर्वतादीनां शिखरदेशः; सानुः; 'शिलाविभङ्गैर्मृगराजशावस्तुङ्गं नगोत्सङ्गमिवारुरोह।' 'गोद' इति भाषा। सौधादीनामुपरिभागः; 'सौधोत्सङ्गप्रणयविमुखो मास्म भूरुज्जयिन्याः'—इति मेघदूते। अभ्यन्तरभागः; 'वनेचराणां वनितासखानां दरीगृहोत्सङ्गनिषक्तभासः'—इति कुमारे (१–१०)। ऊर्ध्वतलः; बहिर्भागः; 'दृषदो वासितोत्सङ्गा निषण्णमृगनाभिभिः'—इति रघुवंशे (४–७४)। सङ्गमः; आलिङ्गनं; विवाहः; व्रणाधोभाग; 'अभ्यन्तरमुत्सङ्गं कृत्वा भूयोऽपि विकरोति'—इति सुश्रुते। गर्भः; 'आसीन्मम मतिः कृष्ण! पूर्णोत्सङ्गा जनार्दन'—इति महाभारते। ५२८

उत्सर्गः पुं. [उत्+सृज्+घञ्] दानम्; उत्सर्जनं; त्यागः; विहापितं; विसर्जनं; विश्राणनं; वितरणं; स्पर्शनं; प्रतिपादनं; प्रादेशनं; निर्वपणम्; वर्जनम्; अपवर्जनम्; अंहतिः; 'श्रीलक्षणोत्सर्गविनीतवेशाः'—इति कुमारसम्भवे (७–३५)। 'तोयोत्सर्गद्रुततरगतिस्तत्परं वर्त्म तीर्णः'—इति मेघदूते। 'तस्योत्सर्गेण शुध्यन्ति जाप्येन तपसैव च।' सामान्यविधिः; 'अपवादैरिवोत्सर्गाः कृतव्यावृत्तयः परैः'—इति कुमारे (२–२७)। साग्निकर्तव्यक्रियाविशेषः; अपानवायोर्व्यापारः; मलमूत्रादिवर्जनम्; उत्सृज्यते विण्मूत्रमनेनेति व्युत्पत्त्यापाय्विन्द्रियम्; 'मनसीन्दुं दिशः श्रोत्रे क्रान्ते विष्णुं बले हरम्। वाच्यग्निं मित्रमुत्सर्गे प्रजने च प्रजापतिम्'—इति मनुः (१२–१२१)। ४१९

उत्सवः पुं. [उत्+सू+अप्] नियताह्लादजनकव्यापारः; क्षणः; उद्धवः; उद्धर्षः; महः; 'तस्मादेताः

सदा पूज्या भूषणाच्छादनाशनैः। भूतिकामैर्नरैर्नित्यं सत्कारेषूत्सवेषु च'—इति मनुः (३–५९)। उत्सेकः; इच्छाप्रसवः; कोपः; उन्नतिः; अभ्युदयः; 'उत्सवे व्यसने चैव दुर्भिक्षे राष्ट्रविप्लवे'—इति हितोपदेशे। ७६३

उत्सादनम् क्ली. [उत्+सद्+णिच्+ल्युट्] उद्वर्तनम्; 'उत्सादनं च गात्राणां स्नापनोच्छिष्टभोजने'—इति मनुः (२–२०९)। समुल्लेखः; उद्वाहनं; विनाशः; उन्मूलनम्; 'पूर्वं क्षत्रवधं कृत्वा गतमन्युर्गतज्वरः। क्षत्रस्योत्सादनं भूयो न खल्वस्य चिकीर्षितम्'—इति रामायणे। औषधलेपनादिना व्रणस्य संशोधनम्; 'अपामार्गोऽश्वगन्धा च तालपत्री सुवर्चला। उत्सादने प्रशस्यन्ते काकोल्यादिश्च यो गणः।' 'उत्सादनाद् भवेत् स्त्रीणां विशेषात्कान्तिमद्वपुः। प्रहर्षसौभाग्यमृजालाघवादिगुणान्वितम्'—इति च सुश्रुते। ७३१

उत्सारकः पुं. [उत्सार्यन्ते प्रभुद्वारतोऽनेन इति। उत्+सृ+णिच्+वुण्] द्वारपालः; उत्सारणकर्ता। ४२४

उत्साहः पुं. [उत्+सह्+घञ्] उद्यमः; अध्यवसायः; सूत्रम्; कल्याणम्; भावविशेषः; 'रतिर्हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहौ भयं तथा। जुगुप्सा विस्मयश्चेत्थमष्टौ प्रोक्ताः शमोऽपि च'—इति साहित्यदर्पणे। ध्रुवकविशेषः; 'उत्साहः स्यात् रसे हास्ये ताले केन्दुकसंज्ञके। वंशवृद्धिकरः पादस्त्रयोदशमिताक्षरः'—इति सङ्गीतदामोदरः। ९१, ७७९

उत्साहनम् क्ली. [उत्+सह्+णिच्, भावे ल्युट्] अध्यवसायः; उद्योगः; उत्साहवृद्धिः। ८७०

उत्सुकः त्रि. [उत् उद्योगं सुवति सौति सुनोति वा। सु प्रसवैश्वर्ययोः। विचि संज्ञापूर्वकत्वाद् गुणाभावः। क्विपि आगमशास्त्रस्यानित्यत्वात् तुगभावो वा। ततः संज्ञायां कन्। यद्वा उत् सुवति, षू प्रेरणे, मितद्र्वादित्वाड् डु, सत्स्विति क्विप् वा, कनि केण इति ह्रस्वः। उत्+सू+क्विप्+कन्] वाञ्छितकर्मोद्यतः; इष्टार्थोद्युक्तः; उत्कण्ठितः; 'प्रेषयिष्यति राजा तु कुशलार्थं तवानघे। ब्राह्मणान् नित्यशः पुत्रि मोत्सुका भूः कदाचन॥' 'वत्सोत्सुकापि स्तिमिता सपर्याम्'—इति रघुवंशे (२–२२)। ३५३

उत्सृष्टः त्रि. [उत्+सृज्+क्त] कृतोत्सर्गः; त्यक्तः; हीनः; विधुतः; समुज्झितः; धूतः; 'महोक्षोत्सृष्टपशवः सूतिकागन्तुकादयः'—इति याज्ञवल्क्यः। ७१४

उत्सेधः पुं [उत्+सिध्+घञ्] शरीरम्; पर्वतवृक्षादीनां दैर्घ्यम्; 'कूर्मस्त्रियोजनोत्सेधो दशयोजनमण्डलः'—इति महाभारते। उच्छ्रयः; 'पयोधरोत्सेधविशीर्णसंहतिः'—इति कुमारसम्भवे (५–८)। उपरिभागः; 'पयोधरोत्सेधनिपातचूर्णिताः'—इति कुमारसम्भवे (५–२४)। संहननम्; 'सोत्सेधमूष्मार्थशिरातनुत्वम्'—इति भावप्रकाशः। 'उत्सेधं संहतं शोफं तमाहुर्निचयादतः'—इति वाग्भटः। ८०३

उदक् [च्] अव्य – त्रि. [उद्+अञ्च्+अस्ताति तस्य लुक्] उत्तरदिग्देशकालाः; उत्तरा दिक्; उत्तरो देशः; उत्तरः कालः। १०३

उदकम् क्ली. [उनत्तीति, उन्दी क्लेदने+क्विन्। 'उदकमिति' सूत्रेण साधु] जलम्; 'अनीत्वा पङ्कतां धूलिमुदकं नावतिष्ठते'—इति माघे (२–३४)। 'यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके'—इति भगवद्गीता (२–४६)। [उदकस्योदः, 'एकहलादौ' इति विकल्पः] उदकुम्भः; उदककुम्भः; 'तपःकृशाः शान्त्युदकुम्भहस्ताः।' उदशब्दोऽप्युदकपर्याय इति भाष्यटीका। 'उदकस्योदः संज्ञायामिति' रक्षितः। 'सहस्यरात्रीरुदवासतत्परा'—इति कुमारसम्भवे (५–२६)। ६४८

उदक्या स्त्री. [उदकं जलं शुद्धिस्नानार्थमर्हतीति। उदक्+संज्ञायामिति यत्] रजस्वला; ऋतुमती; 'नोदक्ययाभिभाषेत यज्ञं गच्छेन्नचावृतः'—इति मनुः (४–५७)। ४८८

उदग्भूमः पुं. [उदगुत्तरदिग्वत् प्रशस्ता भूमिर्यत्र। समासे अच्] सद्भूमिः; उत्कृष्टस्थानम्। १६०

उदग्रम् त्रि. [उद्गतमग्रं यस्य] उच्छ्रितम्; उच्चं; विशालं; महत्; दीर्घं; भीमम्; 'नयन् मधुलिहः श्वैत्यमुदग्रदशनांशुभिः'—इति माघे (२–२१)। 'क्षतात्किल त्रायत इत्युदग्रः क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः' 'अवन्तिनाथोऽयमुदग्रबाहुः'—इति रघुवंशे (२–५३) (६–३२)। ७५१

उदञ्चनम् क्ली. [उत्+अञ्च्+ल्युट्] पिधानपात्रम्; 'ढकना' इति भाषा। 'प्रतिप्रस्थाता संस्रावानयत्युन्नेता चमसेन वोदञ्चनेन वा'—शतपथब्राह्मणे (८–३–५)। ऊर्ध्वक्षेपणम्। ३१६

उदञ्चितम् त्रि. [उत्+अञ्च्+क्त] ऊर्द्ध्वंक्षिप्तम्; 'उदञ्चिताक्षोऽञ्चितदक्षिणोरुः'—इति भट्टिः। पूजितम्। ७६८

उदधिः पुं. [उदानि उदकानि वा धीयन्तेऽस्मिन्। उद वा उदक+धा+कि] समुद्रः; 'उदधेरिव निम्नगाशतेष्वभवन्नास्य विमानना क्वचित्'—इति रघुवंशे (८-८)। मेघः; घटः। ६५२

उदन्तः पुं. [उद्गतो निर्णीतः अन्तो यस्य] वार्ता; वृत्तान्तः; उदन्तकः; 'कान्तोदन्तः सुहृदुपनतः सङ्गमात्किञ्चिदूनः'—इति मेघदूते। 'श्रुत्वा रामः प्रियोदन्तं मेने तत्सङ्गमोत्सुकः'—रघुवंशे (१२-६६)। साधुः; वृत्तियाजनम्; त्रि. पाकवशात् प्राप्तान्ते; 'शृतमसदिति तदाहुर्यर्ह्युदन्तं तर्हि जुहुयात् तद्धैनोदन्तं कुर्यादुप ह दहेत् यद्युदन्तं कुर्यादप्रजज्ञि वैरेत उपदग्धं तस्मान्नोदन्तं कुर्यात्'—इति शतपथब्राह्मणे। १४६

उदन्या स्त्री. [उदन्यति उदकमिच्छति वा। 'सुप आत्मनः क्यच्', 'अशनायोदन्येति' ईत्वाभावः; क्यचि उदकस्योदन्भावोऽपि निपात्यते। 'अप्रत्ययादि'त्य] पिपासा; 'व्यसन्नुदन्यां शिशिरैः पयोभिः'—इति भट्टिकाव्ये (३-४०)। 'अथ यत्रैतत्पुरुषः पिपासति नाम तेज एव तत्पीतं नयते तद्यथा गोनायोऽश्वनायः पुरुषनाय इत्येवं तत्तेज आचष्ट उदन्येति'—इति छान्दोग्योपनिषदि (६-८-५)। ३६३

उदन्वान् [त्] पुं. [उदकानि सन्त्यत्र। उदक+मतुप्, 'उदन्वानुदधौ चेत्युदकस्य उदन्भावो निपातितः मतुपि] समुद्रः; 'असह्यविक्रमः सह्यं दूरान्मुक्तमुदन्वता'—इति रघुवंशे (४-५२)। ऋषिविशेषः—इति पाणिनिः (८।२।१३)। ६५२

उदपानम् क्ली.-पुं. [उदकं पीयतेऽस्मिन्। उदक+पा+अधिकरणे ल्युट्, उदकस्य उदः] कूपः; 'तडागान्युदपानानि वाप्यः प्रस्रवणानि च'—इति मनुः (२-४०)। 'निर्जलेषु च देशेषु खनयामासुरुत्तमान्। उदपानान् बहुविधान् वेदिकापरिमण्डितान्'—इति रामायणे। [भावे ल्युट्] जलपानम्। 'यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके'—इति भगवद्गीता (२-४६)। ६८५

उदरम् क्ली. [उद् दृणातीति, 'उदि दृणातेरजलौ पूर्वपदान्त्यलोपश्च,' उत्+दृ+अच अन्त्यलोपश्च] नाभिस्तनयोर्मध्यभागः; पिचण्डः; कुक्षिः; जठरम्; तुन्दम्; 'पेट' इति भाषा। युद्धम्; 'उपस्थमुदरं जिह्वा हस्तौ पादौ च पञ्चमम्'—इति मनुः (८-१२५)। पुं. रोगविशेषः। ५१५

उदरिलः त्रि. [अतिशयितमुदरमस्य। उदर+'तुन्दादिभ्य इलच्चेति' इलच्] बृहदुदरयुक्तः; पिचिण्डिलः; बृहत्कुक्षिः; तुन्दिः; तुन्दिकः; तुन्दिलः; उदरी। ६०८

उदर्कः पुं. [उत्+ऋच्+घञ्] उत्तरकालोद्भवफलम्; भविष्यत्कालः; 'परित्यजेदर्थकामौ यौ स्यातां धर्मवर्जितौ। धर्मं चाप्यसुखोदर्कं शोकविक्रुष्टमेव च'—इति मनुः (४-१७६)। 'उदर्कस्तव कल्याणि! तुष्टो देवगणेश्वरः'—इति महाभारते। मदनकण्टकम्। ११८

उदलावणिकः त्रि. [उदलवणेन लवणाम्भसा सिद्धः। उदलवण+ठक्] लवणोदकसंसिद्धव्यञ्जनादिः। ३२२

उदवसितम् क्ली. [उदूर्द्ध्वमवसीयतेऽस्मिन्। षो अन्तकर्मणि, षिञ् बन्धने वा। क्त, 'द्यतिस्यती'तीत्वम्] गृहम्। २९१

उदश्वित् क्ली. [उदकेन श्वयति वर्द्धते इति। उद+श्वि+क्विप्+तुक्] अर्द्धजलयुक्तदधिद्रवः; 'अर्द्धोदकमुदश्वित्स्यात्', 'उदश्विच्छ्लेष्मलं बल्यं श्रमघ्नं परमं मतम्'—इति हारीते। २७५

उदात्तम् त्रि. [उत्+आ+दा+क्त] दातृ; महत्; हृदयं; दयात्यागादिसम्पन्नम्; 'उदात्तदन्तानां कुञ्जराणाम्'—इति रामायणे। 'अत्युदात्तसुजनश्चन्द्रकेतुः'—इति उत्तररामचरिते। ३५६

उदात्तः पुं. [उच्चैरादीयतेऽस्मिन्। उत्+आ+दा+क्त] स्वरभेदः; स तु वेदगाने उच्चैः स्वरः; दानं; वाद्यविशेषः; काव्यालङ्कारभेदः; 'लोकातिशयसम्पत्तिवर्णनोदात्तमुच्यते। यद्वापि प्रस्तुतस्याङ्गं महतां चरितं भवेत्'—इति साहित्यदर्पणे। ८६३

उदारः त्रि. [उत्कृष्टमासमन्ताद् राति। रा+आतश्चेति क। उदर्यते, ऋ गतिप्रापणयोः, कर्मणि घञ् वा] दाता; महान्; 'उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्'—इति भगवद्गीतायाम् (७-१८)। 'उदारा महान्तो मोक्षभाज एव इत्यर्थः'—इति श्रीधरस्वामी। ऋज्वाशयः; दक्षिणः; सरलः; 'क उदारः समर्थश्च त्रैलोक्यस्यापि रक्षणे'—इति रामायणे। गभीरः;

सारवान्; रम्यः; न्याय्यः; 'इत्यर्घ्यपात्रानुमितव्ययस्य रघोरुदारामपि गां निशम्य'—इति रघुवंशे (५–१२)। असाधारणः; सरलाशयः; शिष्टः; 'स तथेति विनेतुरुदारमतेः प्रतिगृह्य वचो विससर्ज मुनिम्'—इति रघवंशे (८–९१)। ३५६

उदीची स्त्री. [उत् उत्तरम् अञ्चत्यर्कम्, उत्क्रान्तं दृष्टिपथम् अञ्चति सूर्यं वा। 'उद ईदि'त्यञ्चेरत ईकारः। ऋत्विगादिना क्विन्। उगितश्चेति ङीप्] उत्तरा दिक्; 'यदोदीच्यां गतिर्भानोस्तदा सूर्यबलाधिकम्'—इति हारीते। १०१

उदीचीनम् त्रि. [**उदीची**+ख] उदीच्यां भवम्; उत्तरदिग्जातवस्तु; 'उदीचीनप्रवणे करोत्युदीची वै मनुष्याणां दिक्'—इति शतपथब्राह्मणे (१३।८।१।६)। १०३

उदीरणम् क्ली. [उत्+ईर्+ल्युट्] कथनम्; 'उद्घातः प्रणवो यासां न्यायैस्त्रिभिरुदीरणम्'—इति कुमारसम्भवे (२–१२)। प्रेरणम्; क्षेपणम्; 'ब्रह्मास्त्रोदीरणात् शत्रोर्देवदानवकिन्नराः–इति महाभारते। ३३८

उदीर्णः त्रि. [उत्+ऋ+क्त] उदारः; महान्; 'न हि राज्ञामुदीर्णानामेवम्भूतैर्नरैः क्वचित्। सख्यं भवति मन्दात्मन्! श्रिया हीनैर्धनच्युतैः'—इति महाभारते। उत्तेजितः; उद्दीपितः; उद्धतः; 'भवल्लब्धवरोदीर्णस्तारकाख्यो महासुरः'—इति कुमारसम्भवे (२–३२)। 'ब्रह्म क्षत्रेण संसृष्टं क्षत्रं च ब्रह्मणा सह। उदीर्णौ दहतः शत्रून् वनानीवाग्निमारुतौ'—इति महाभारते। पुं. विष्णुः; 'उदीर्णः सर्वतश्चक्षुरनीशः शाश्वतः स्थिरः' —इति विष्णुसहस्रनामकथने। ३५६

उदुम्बरम् क्ली. [उं शम्भुं वृणोतीति उम्बरम्। उ+वृ+संज्ञायां खच्, 'अरुर्द्विषदिति' मुम्। उत्कृष्टमुम्बरम्] ताम्रम्; पुं. उदुम्बरवृक्षः; क्षीरवृक्षः; हेमदुग्धः; सदाफलः; कालस्कन्धः; यज्ञयोग्यः; यज्ञीयः; सुप्रतिष्ठितः; शीतवल्कः; जन्तुफलः; पुष्पशून्यः; पवित्रकः; सौम्यः; शीतफलः; 'उदुम्बरो जन्तुफलो यज्ञाङ्गो हेमदुग्धकः। उदुम्बरो हिमो रूक्षो गुरुः पित्तकफास्रजित्। मधुरस्तुवरो वर्ण्यो व्रणशोधनरोपणः'–इति भावप्रकाशः। कुष्ठविशेषः; देहली; पण्डकः; नपुंसकः। 'गूलर का पेड़' इति भाषा। १७०

उद्गमनीयम् क्ली. [उत्+गम्+अनीयर्] धौतवस्त्रद्वयं; 'सा मङ्गलस्नानविशुद्धगात्री गृहीतपत्युद्गमनीयवस्त्रा'—इति कुमारसम्भवे (७–११)। 'धोती जोड़ा' इति भाषा। ५५१

उद्घः पुं. [उद्धन्यते इति, उत्+हन्+कर्मणि **अप्**, टिलोपो घत्वं च निपातनात्। यद्वा उद्धन्ति नीचताम्। उत्+हन् ड] प्रशस्तः; प्रकाण्डः; हस्तपुटम्; अग्निः; शरीरस्थो वायुः। ३७८

उद्घाटकम् क्ली. [उत्+घट्+णिच् ण्वुल्] घटीयन्त्रं; कूपाज्जलोत्तोलनार्थं यन्त्रविशेषः। ६८५

उद्घातः पुं. [उत्+हन्+घञ्] आरम्भः; 'उद्घातः प्रणवो यासां न्यायैस्त्रिभिरुदीरणम्'—इति कुमारसम्भवे (२–१२)। 'आकुमारकथोद्घातं शालिगोप्यो जगुर्यशः'—इति रघुवंशे (४–२०)। शस्त्रं; ग्रन्थपरिच्छेदः; पादस्खलनम्; 'ययावनुद्घातसुखेन मार्गम्'–इति रघुवंशे (२–७२)। 'रथेनानुद्घातस्तिमितगतिना'–इति शाकुन्तले। समुपक्रमः; योगाभ्यासे कुम्भकादित्रयम्; उत्तुङ्गः; 'पृथुशृङ्गशिलोद्घातः–इति रामायणे। मुद्गरम्। ७५०

उद्दामः त्रि. [दाम्नः उद्गतः] बन्धनरहितः; स्वतन्त्रः; 'नदत्याकाशगङ्गायाः स्रोतस्युद्दामदिग्गजे'—इति रघुवंशे (१–७८)। 'अत्यङ्कुशमिवोद्दामं गजं मदजलोद्धतम्'—इति रामायणे। महान्; 'उद्दामदन्तुरविधुन्तुददन्तवातैः'—इति प्रव्रज्या। 'उद्दामानि प्रथयति शिलावेश्मभिर्यौवनानि'—इति मेघदूते (३७)। गम्भीरः; 'उद्दामभावपिशुनामलवल्गुहास'–इति भागवते (१ स्कन्धे)। पुं. [उद्दीप्तं दाम पाशो यस्य। समासे अच्] वरुणः; दण्डकभेदच्छन्दोविशेषः; 'यदि नयुगलं ततः सप्तरेफास्तदा दण्डवृद्धिप्रयातो भवेद्दण्डकः। प्रतिचरणविवृद्धरेफाः स्युरर्णार्णवव्यालजीमूतलीलाकरोद्दामशङ्खादयः'—इति वृत्तरत्नाकरे। ७५१

उद्दालः पुं. [उत्+दल्+घञ्] बहुवारवृक्षः; बहुवारकः; वनकोद्रवः। ५८०

उद्धतम् त्रि. [उत्+हन्+क्त] घोरः; निविडः; 'तुषारवर्षोद्धतप्रवर्षघनधारानिपातसमाहतम्'—इति पञ्चतन्त्रम्। अविनीतम्; 'धीरोद्धता नमयतीव गतिर्धरित्रीम्'—इति उत्तरचरिते। 'मदमानसमुद्धतं नृपं न वियुङ्क्ते नियमेन मूढता'—इति किराते (२–

४९)। उत्थितः; उत्क्षिप्तः; आहृतः; चालितः; 'आत्मोद्धतैरपि रजोभिरलङ्घनीयाः'—इति शाकुन्तले। पुं. राजमल्लः। ७४४

उद्धवः पुं. [उद्धुनोति दुःखमिति। उत्+धूञ्+अच्] उत्सवः; यज्ञाग्निः; यादवविशेषः; 'वृष्णीनां सम्मतो मन्त्री कृष्णस्य दयितः सखा। शिष्यो बृहस्पतेः साक्षादुद्धवो बुद्धिसत्तमः'—इति भागवतम्। १२३

उद्धानम् क्ली. [उद्धीयतेऽस्मिन्। उत्+धा+ल्युट्] चुल्ली; त्रि. उद्गतः; वमितः। ३१३

उद्धारः पुं. [उत्+हृ+घञ्] ऋणम्; उद्धृतिः; 'निमग्नस्य पुनरुद्धार एव दुर्लभः'—इति बृहदारण्यकोपनिषत्। मोचनम्, 'अश्वस्य वयमुद्धारमुद्धरामहै'—इति शतपथब्राह्मणे (१३।३।४।२)। मोक्षः; निर्वाणम्; [उद्ध्रियते साधारणधनाद् इत्युद्धारः,यद्वा साधारणद्रव्यात् यद्गरिष्ठं तदुद्धारः। उद्ध्रियते साधारणधनाद् निष्कृष्य विशेषनिष्ठतया एव बोध्यते इत्युद्धारः। साधारणत्वेन उद्ध्रियते इति उद्धारः। उद्ध्रियते साधारणधनात् बहिर्भाव्यते इत्युद्धारः।] 'ज्येष्ठस्य विंश उद्धारः सर्वद्रव्याच्च यद्वरम्। ततोऽर्द्धं मध्यमस्य स्यात् तुरीयस्तु यवीयसः'—इति मनुः (९-११२)। 'राज्ञश्च दद्युरुद्धारमित्येषा वैदिकी श्रुतिः। राज्ञा च सर्वयोधेभ्यो दातव्यमपृथग् जितम्'—इति मनुः (७-९७)। 'उद्धारं योद्धारः राज्ञे दद्युः। उद्ध्रियते इत्युद्धारः जितधनाद्युत्कृष्टधनं सुवर्णरजतभूम्यादि राज्ञे समर्पणीयम्'—इति तट्टीका। ५७२

उद्धूपणम् क्ली. [उत्+धूप्+ल्युट्] रोमाञ्चः; रोमोद्गमः। ६५१

उद्धृतः त्रि. [उत्+हृ+क्त] कृतोद्धरणः; समुदक्तः; 'तोला गया' इति भाषा। उत्क्षिप्तः; परिभुक्तोज्झितः; 'उद्धर्तुमैच्छत् प्रसभोद्धृतारिः'—इति रघुवंशे (२-३०)। 'इतीव वाहैर्निजवेगदर्पितैः पयोधिरोधक्षममुद्धृतं रजः—' इति नैषधे (१-६९)। ७१२

उदध्मानम् क्ली. [उत् ध्मायते अग्निरत्र। ध्मा शब्दाग्निसंयोगयोः, उत्पूर्वात् तस्माल्ल्युट्] चुल्ली। ३१३

उद्ध्यः पुं. [उज्झति कूलमिति। उज्झ्+क्यप्, निपातनात् सिद्धम्] नदः; 'तोयदागम इवोद्ध्यभिद्ययोः'—इति रघुवंशे (११-८)। 'कूलं भिद्योद्ध्यसन्निभौ'—इति भट्टिः (५-२२)। ६६६

उद्बुद्धः त्रि. [उत्+बुध्+क्त] विकसितः; प्रबुद्धः; 'उद्बुद्धां च जगद्धात्रीं पूजयेद् दीपमालया'—इति तिथितत्त्वे। 'उद्बुद्धं कारणैः स्वैः स्वैर्बहिर्भावं प्रकाशयन्। लोके यः कार्यरूपः सोऽनुभावः काव्यनाटचयोः'—इति साहित्यदर्पणे (३-१६२)। १८७

उद्भटः त्रि. [उत्+भट्+अप्] प्रवरः; 'पदे पदे सन्ति भटा रणोद्भटाः'—इति नैषधे। श्रेष्ठाशयः; महेच्छः; उदारः; उदात्तः; उदीर्णः; महाशयः; महामनाः; महात्मा; पुं. कच्छपः; सूर्यः; सूर्पः। ७४४

उद्यानम् क्ली. [उद्याति क्रीडार्थमस्मिन्। उत्+या+ल्युट्] राज्ञः साधारणं वनम्; आक्रीडः; 'बाह्योद्यानस्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधौतहर्म्या'—इति मेघदूते (७)। निःसरणं; प्रयोजनम्। २१३

उद्योगः पुं. [उत्+युज्+घञ्] यत्नः; चेष्टा; उत्साहः; अध्यवसायः, उद्यमः; 'उद्योगं सर्वसैन्यानां दैत्यानामादिदेश ह'—इति मार्कण्डेये (८८-२)। 'उद्योगादनिवृत्तस्य सुसहायस्य धीमतः। छायेवानुगता तस्य नित्यं श्रीः सहचारिणी'—इति नीतिवाक्यम्। 'उद्योगः सैन्यनिर्याणं श्वेतोपाख्यानमेव च'—इति महाभारते। ३५६

उद्योतः पुं. [उत्+द्युत्+घञ्] आलोकः; ज्योतिः। ६६

उद्वर्तनम् क्ली. [उत्+वृत्+णिच्+भावे करणे वा ल्युट्] घर्षणं; विलेपनम्; 'उद्वर्तनमपस्नानं विण्मूत्रे रक्तमेव च। श्लेष्मनिष्ठ्यूतवान्तानि नाधितिष्ठेत्तु कामतः॥' उत्पतनम्; 'मोघीकर्तुं चटुलशफरोद्वर्तनप्रेक्षितानि'—इति मेघदूते (४२)। शरीरनिर्मलीकरणगन्धद्रव्यादि; उत्सादनम्; 'उबटन' इति भाषा। 'उद्वर्तनं वातहरं कफमेदोविलापनम्। स्थिरीकरणमङ्गानां त्वक्प्रसादकरं परम्। शिरामुखविविक्तत्वं त्वक्स्थस्याग्नेश्च तेजनम्'—इति सुश्रुते। ७३१

उद्वाहः पुं. [उत्+वह्+घञ्] विवाहः; भार्याग्रहणम्, उद्वाहनं; रणरणम्। ४९५

उन्दुरः पुं. [उन्द्+उर] उन्दूरः; उन्दूरुः; उन्दरुः [बाहुलकाद् ऊर,ऊरु,अरु वा प्रत्ययो बोध्यः] मूषिकः; आखुः; मूषकः; मूषः; मूषीकः; खनकः; बभ्रुः; वृषः; आखनिकः; वृशः; क्षुद्रश्चेद् गिरिका, बालमूषिका, दीना; चिक्का; हालाहला, अञ्जनिका,

मुषिका; मूषा; मूषीका; मूषिका; बिलेशयः; शुषिरः; इन्दूरः। क्षुद्रस्य तस्य पर्यायः--चिक्कः; वेश्मनकुलः; 'उन्दूरुञ्चान्त्ररहितं तेन वातघ्नकल्क-वत्'-इति वाग्भटे। २३५

उन्नः त्रि. [उन्द् + क्त, 'नुदविदेति' पक्षे नत्वम्] क्लिन्नः; दयापरः। ७६७

उन्नतः त्रि. [उत् + नम् + क्त] वर्द्धितः; उच्चः; प्रांशुः; उदग्रः; उच्छ्रितः; उत्तुङ्गः; उच्चैः; तुङ्गः; 'स्थितः सर्वोन्नतेनोर्वीं क्रान्त्वा मेरुरिवात्मना'—इति रघुवंशे (१–१५)। क्ली. दिनपरिमाणज्ञानसाधनोपायः; 'दिवसस्य यद्गतं यच्च शेषं तयोर्यदल्पं तदुन्नतसंज्ञं ज्ञेयम्' इति सिद्धान्तशिरोमणौ। पुं. चाक्षुषमन्वन्तरे ऋषिभेदः; 'सुमेधा विरजाश्चैव हविष्मानुन्नतो मधुः। अतिनामा सहिष्णुश्च सप्तासन्निति चर्षयः।' ७५१

उन्नतनाभिः त्रि. [उन्नता नाभिः यस्य] उच्चनाभियुक्तः; तुण्डिलः। ६१०

उन्निद्रः त्रि. [उद्गता निद्रा स्वप्नो दुःखादिकं वा यस्मात्] प्रफुल्लः; विकसितः; 'उन्निद्रपुष्पचनचम्पकपुष्प-भासाः'—इति माघे। प्रबुद्धः; शयनादुत्थितः; 'तामु-न्निद्रामवनिशयनां सौधवातायनस्थः'—इति मेघदूते (८८)। 'शय्याप्रान्तविवर्त्तनैर्विगमयत्युन्निद्र एव क्षपाः' —इति शाकुन्तले। १८७

उन्माथः पुं. [उन्मथ्यतेऽनेनेति। उत् + मथ् + घञ्] कूटयन्त्रं; मृगवधोपयुक्तयन्त्रम्; मृगपक्षिबन्धनार्थं यत् सन्धानयन्त्रं निवेश्यते सः; [भावे घञ्] मारणं; घातः; 'प्रभो मद्बाणानां क इव भुवनोन्माथविधिषु'—इति प्रबोधचन्द्रोदये। ७८२

उन्मिश्रः त्रि. [उत् ऊर्द्ध्वं मिश्र्यते वर्णान्तरैः। घञ्] मिश्रितवर्णः; शबलः। ७४१

उन्मिषितः त्रि. [उत् + मिष् + क्त] प्रफुल्लः; विकसितः; 'व्यलोकयन्नमिषितैस्तडिन्मयैर्महातपःसाक्ष्य इव स्थिताः क्षपाः'—इति कुमारसम्भवे (५–२५)। १८७

उन्मीलितः त्रि. [उत् + मील् + क्त] विकसितः; प्रस्फुटितः; 'उन्मीलितं तूलिकयेव चित्रम्'—इति कुमारसम्भवे (१–३२)। 'ते चोन्मीलितमालतीसुरभयः प्रौढाः कदम्बानिलाः'—इति साहित्यदर्पणे। १८७

उन्मुखः त्रि. [उदूर्द्ध्वं मुखं यस्य] ऊर्द्ध्वमुखः; उत्प्लयः; 'मनोभिरामाः शृण्वन्तौ रथनेमिस्वनोन्मुखैः'—इति रघुवंशे (१–३९)। उत्सुकः; 'तस्मिन् संयमिना-माद्ये जाते परिणयोन्मुखे'–इति कुमारसंभवे (६–३४)। 'पतिः प्रतीतः प्रसवोन्मुखीं प्रियाम्'—इति रघुवंशे (३–१२)। 'अद्रेः शृङ्गं हरति पवनः किं स्विदित्युन्मुखीभिः'—इति पूर्वमेघे (१४)। 'इत्या-ख्याते पवनतनयं मैथिलीवोन्मुखी सा'—इति पूर्वमेघे (३९)। ३८५

उन्मूलितम् त्रि. [उत् + मूल् + क्त] उत्पाटितम्; 'लङ्कामुन्मूलितां कृत्वा कदा द्रक्ष्यति मां पतिः'—इति रामायणे। 'उन्मूलिता हलधरेण पदावघातैः'—इति उद्भटः। ७१२

उपकण्ठः त्रि. [उपगतः कण्ठः सामीप्यमस्य] निकटः; 'तस्योपकण्ठे घननीलकण्ठः कुतूहलादुन्मुखपौरदृष्टः'—इति कुमारसम्भवे (७–५१)। क्ली. [उपगतः० कण्ठम्, अत्यादय इति समासः] ग्रामान्तम्; उपशल्यम्; आस्कन्दितम्; अश्वपञ्चमगतिः; कण्ठ-समीपम्; 'प्रेमोपकण्ठं मुहुरङ्कभाजो रत्नावलीरम्बु-धिराबबन्ध–' इति माघे। ६९२

उपकरणम् क्ली. [उप + कृ + ल्युट्] नृपादीनां छत्र-चामरादि; परिच्छदः; परिबर्हः; तन्त्रं; प्रधानाङ्गी-भूतोपकारकद्रव्यं; भोजनादौ व्यञ्जनादि; 'तस्मादन्नं प्रधानं पूपादिकं तु उपकरणत्वेन शक्तानामावश्यकम्'—इति श्राद्धतत्त्वम्। पूजादौ नैवेद्यादि; मृगबन्धनादौ जालादि; साधनम्। ३०६, ८६६

उपकारिका स्त्री. [उपकरोतीति। उप + कृ + ण्वुल + टाप्, इत्वम्] राजगृहम्; उपकार्या; पटभवनम्; उपकारकर्त्री; पिष्टभेदः; कुशूलः, 'सराय' इति भाषा। २९०

उपकार्या स्त्री. [उपकरोतीति। उप + कृ + ण्यत् + टाप्] राजगृहं; पटभवनम्; 'तस्योपकार्यारचितोपचारा वन्येतरा जानपदोपदाभिः'—इति रघुवंशे (५–४१)। 'शत्रुघ्नप्रतिविहितोपकार्यमार्यः, साकेतोपवनमुदारमध्यु-वास'—इति रघुवंशे (१३–७९)। २९०

उपकुल्या स्त्री. [उपकोलति, कुल संस्थाने बन्धुषु च, अघ्न्यादिः] पिप्पली; 'पीपल' (छोटी-बड़ी) इत्यादि भाषा। 'कृष्णोपकुल्या मागधी'—इति वैद्यकरत्नमाला।

'उपकुल्योषणा शौण्डी'—इति भावप्रकाशः। त्रि. (उपगतः कुल्याम्) कृत्रिमसरित्समीपम्। ६१४

उपक्रमः पुं. [उप+क्रम्+घञ्, 'नोदात्तोपदेशस्य' इति न वृद्धिः] प्रथमारम्भः; आरम्भः; 'रामोपक्रममाचख्यौ रक्षःपरिभवं नवम्'—इति रघुवंशे (१२-४२)। (उपक्रम्यते इत्युपक्रमः, कर्मणि घञ्। रामस्य कर्तुरुपक्रमः रामोपक्रमम्, रामेणादौ उपक्रान्तमित्यर्थः। 'उपज्ञोपक्रमं तदाद्याचिख्यासायामिति' क्लीवत्वम् इति तट्टीका।) ज्ञात्वारम्भः; अयमस्योपायः अनेनैतत् सिध्यतीति ज्ञात्वा प्रथमारम्भः; उपधा; राज्ञां धर्मकामार्थभयैः अमात्यादेः परीक्षणं; भावतत्त्वनिरूपणम्; प्रक्रमः; विक्रमः; चिकित्सा; पलायनम्; उपाय; 'सामादिभिरुपक्रमैः' इति मनुः (७-१०७)। ७०७

उपक्रोशः पुं. [उप+क्रुश्+घञ्] निन्दा; 'राज्येन किं तद्विपरीतवृत्तेः प्राणैरुपक्रोशमलीमसैर्वा'—इति रघुवंशे (२-५३)। २४८

उपगूहनम् क्ली. [उप+गूह्+ल्युट्] आलिङ्गनम्; 'स्मरन्मुकुन्दाङ्घ्र्युपगूहनं पुनः'—इति भागवते (१।५।१९)। ५६८

उपग्रहणम् क्ली. [उप+ग्रह्+ल्युट्] उपाकरणं; संस्कारपूर्वकश्रुतिग्रहणं; स्वीकारः; 'वेदोपग्रहणार्थाय तावग्राहयत प्रभुः'—इति रामायणे (१-४-४)। ८४६

उपग्राह्यः पुं. [उपगृह्यते इति, उप+ग्रह्+ण्यत्] उपढौकनम्; 'घूस, भेट, नजराना' इत्यादि भाषा। ४३४

उपघ्नः पुं. [उप+हन्+क्त] निकटाश्रयः; 'छेदादिवोपघ्नतरोर्व्रतत्यौ'—इति रघुवंशे (१५-१)। २९८

उपचर्या स्त्री. [उप+चर्+क्यप्+टाप्] चिकित्सा। ६१२

उपचारः पुं. [उप+चर्+घञ्] सेवा; 'स मे चिरायास्खलितोपचाराम्'—इति रघुवंशे (५-२०)। उत्कोचः (४३४); रोगप्रतिकारः; उपचर्या; चिकित्सा; रुक्प्रतिक्रिया; निग्रहः; वेदनानिष्ठा; क्रिया; उपक्रमः; शमः; व्यवहारः; 'प्रयुक्तपाणिग्रहणोपचारौ'—इति कुमारसम्भवे (७-९६)। परस्य रञ्जनार्थम् असत्यभाषणम्; 'उपचारपदं न चेदिदं त्वमनङ्गः कथमक्षता रतिः'—इति कुमारसम्भवे (४-९)। 'उपचारज्ञता दाक्ष्यम्'—इति चरकः। १२९

उपजापः पुं. [उप+जप्+घञ्] भेदः; विच्छेदः; 'तेषु तेषु चाक्रतेषु प्रासरन् परोपजापाः'—इति दशकुमारचरिते। 'उपजापः कृतस्तेन तानाकोपवनस्त्वयि'—इति माघे (२-९९)। ७८०

उपजिह्वा स्त्री. [उपगता जिह्वा यस्याः] कीटविशेषः; 'दीमक' इति ख्यातः। उपदेहिका; वम्री; उद्दीका; आलजिह्वा; 'उपजिह्वा स्फिचौ बाहू' इति याज्ञवल्क्यः। तालुस्थग्रन्थिविशेषः; 'तादृगेवोपजिह्वा तु जिह्वाया उपरि स्थिता', 'उपजिह्वां परिस्राव्य यवक्षारेण घर्षयेत्'—इति वाग्भटः। [उपजिह्वा+स्वार्थे कन्] उपजिह्विका; घण्टिका; प्रतिजिह्वा; 'यदत्युपजिह्विका यद्वम्रो अतिसर्पति' इति ऋग्वेदे (४-९१-२१)। कीटभेदः; उत्पादिका; वटिः; उद्देहिका; दिवी। 'यस्य श्लेष्मा प्रकुपितो जिह्वामूलेऽवतिष्ठते। आशु संजनयेत् शोथं जायतेऽस्योपजिह्विका'—इति चरके। 'उपजिह्वां तु संलिख्य क्षारेण प्रतिसारयेत्'—इति सुश्रुते। ६४५

उपज्ञा स्त्री. [उपज्ञायते ज्ञा अवबोधने: 'आतश्चोपसर्गे' इति कर्मणि अङ] आद्यज्ञानम्; प्रथमज्ञानम्; 'अथ प्राचेतसोपज्ञं रामायणमितस्ततः'—इति रघुवंशे (१५-६३)। 'लोकेऽभूद्यदुपज्ञमेव विदुषां सौजन्यजन्यं यशः'—इति मल्लिनाथटीकामुखम्। ७०७

उपतापः पुं. [उप+तप्+घञ्] रोगः; त्वरा; उत्तापः; अशुभं; पीडा; 'विवक्षितं ह्यनुक्तम् उपतापं जनयति'—इति शाकुन्तले। त्रि. पीडादायकः; 'यो वनस्पतीनामुपतापो बभूव'—इति कौशिकसूत्रे। ६००

उपत्यका स्त्री [उप समीपे आसन्ना भूमिः। उप+'उपाधिभ्यां त्यकन्नासन्नारूढयोः' इति त्यकन्। 'त्यकनश्च निषेधः' इति इत्वाभावः] पर्वतनिकटभूमिः; 'मारीचोद्भ्रान्तहारीता मलयाद्रेरुपत्यकाः'—इति रघुवंशे (४-४६)। २११

उपदंशः पुं. [उपदश्यते इति। उप+दंश्+कर्मणि घञ्] मद्यपानरोचकभक्ष्यद्रव्यम्; अवदंशः; चक्षणं; मद्यपासनम्; 'द्वित्रान् उपदंशान् उपपाद्य,' 'ततस्तस्य शाल्योदनस्य दर्वीद्वयं दत्त्वा सर्पिर्मात्रां सूपम् उपदंशं च उपजहार'—इति च दशकुमारचरिते। मेढ्ररोगविशेषः; 'हस्ताभिघातान्नखदन्तघाताद् अधावना-

दत्युपसेवनाद्वा । योनिप्रदोषाच्च भवन्ति शिश्ने पञ्चोपदंशा विविधापचारैः'—इति भावप्रकाशः । समिष्ठिलवृक्षः; शिग्रुवृक्षः । ३२८

उपदा स्त्री. [उपदीयते इति । उप+दा+'आतश्चोपसर्गे' इत्यङ] उपढौकनम्; 'उपदा विविशुः शश्वत् नोत्सेकः कोशलेश्वरम्', 'प्रत्यर्घ्यं पूजामुपदाच्छलेन'—इति च रघुवंशे (४-१०), (७-३०) । 'घूस' 'नजराना' 'भेंट' इत्यादि भाषा । ४३४

उपदीका स्त्री. [उपदीयते क्षिणोति । उप+दीङ क्षये, ईक, टाप्] उपदेहिका । ६४५

उपदेहिका स्त्री. [उपदेहो विद्यते यस्याः । उपदेह+ठक्] कीटविशेषः; उपजिह्वा; वम्री; उपदीका । ६४५

उपद्रवः पुं. [उप्+द्रु+अप्] उत्पातः; रोगारम्भकदोषप्रकोपजन्योऽन्यो विकारः; 'यो व्याधिस्तस्य यो हेतुर्दोषस्तस्य प्रकोपतः । योऽन्यो विकारो भवति स उपद्रव उच्यते । व्याधेरुपरि यो व्याधिः उपद्रव उदाहृतः । सोपद्रवा न जीवन्ति जीवन्ति निरुपद्रवाः'-इति हारीते । 'तत्रौपसर्गिको यः पूर्वोत्पन्नं व्याधिं जघन्यकालजातो व्याधिरुपसृजति स तन्मूल एवोपद्रवसंज्ञः'-इति सुश्रुते । १२७

उपधा स्त्री. [उपधीयते शुद्धिज्ञानमत्र । उप+धा+'आतश्चोपसर्गे' इत्यङ+टाप्] राज्ञां धर्मकामार्थभयैरमात्यादेः परीक्षणं, धर्मार्थकाममोक्षद्वारा परीक्षा; 'धर्मार्थकाममोक्षैश्च प्रत्येकं परिशोधनैः । उपेत्य धीयते यस्मादुपधा परिकीर्तिता । अर्थकामोपधाभ्यां तु भार्याः पुत्रांस्तु शोधयेत् । धर्मोपधाभिर्विप्रांस्तु सर्वाभिः सचिवान् पुनः'—इति कालिकापुराणे । पदानाम् उपान्त्यवर्णः इति व्याकरणम् । ७५८

उपधानम् क्ली. [उपधीयते आरोप्यते मस्तकमत्र । उप+धा+अधिकरणे ल्युट्] शिरोधानम्; उपबर्हः; गण्डुः; 'तकिया' इति भाषा । 'सोपधानां धियं धीराः स्थेयसीं खट्वयन्ति ये'—इति माघे (२-७७) । 'पट्टोपधानाध्यासितशिरोभागेन'—इति कादम्बरी । विषं; प्रणयः; व्रतम् । ३०९

उपधिः पुं. [उपधीयते आरोप्यतेऽनेन । उप+धा+कि] कपटः; 'योगाधमनविक्रीतं योगदानप्रतिग्रहम् । यत्र वाप्युपधिं पश्येत् तत्सर्वं विनिवर्तयेत्'—इति मनुः (८-१६५) । 'अरिषु हि विजयार्थिनः क्षितीशा विदधति सोपधि सन्धिदूषणानि'—इति किराते (१-४५) । रथचक्रम् । ७०९

उपधृतिः स्त्री. [उप+धृ+क्तिन्] किरणः; मयूखः; अंशुः । ३९

उपनगरम् क्ली. [नगरमुपगतम् । अत्यादय इति समासः] शाखानगरं; नगरबाह्यवसतिः । २८६

उपनतः त्रि. [उप+नम्+क्त] उपस्थितः; प्राप्तः; 'अचिरोपनतां स मेदिनीम्'—इति रघुवंशे (८-७) । नम्रः; 'शौरेः प्रतापोपनतैरितस्ततः समागतैः प्रश्रयनम्रमूर्तिभिः'—इति माघे (१२-३३) । ७५०

उपनिधिः पुं. [उपनिधीयते इति । उप+नि+धा+कि] उपन्यस्तवस्तु; स्थाप्यद्रव्यं; न्यासः; 'वासनस्थमनाख्याय हस्ते न्यस्य यदर्पितम् । द्रव्यमुपनिधिः प्रोक्तः स्मृतिषु स्मृतिवेदिभिः ॥' वासुदेवपुत्रः । ८२

उपनिषत् [द्] स्त्री. [उपनिषद्यते प्राप्यते ब्रह्मविद्या अनया इति । उप+नि+सद्+क्विप्] धर्मः; वेदान्तशास्त्रं; ज्ञानं; निर्जनस्थानं; वेदशिरोभागः; तत्र शाखाभेदवशात् चतुर्णां वेदानाम् अशीतिसहितशताधिकसहस्रसंख्यका उपनिषदः । तथाहि 'ऋचः एकविंशतिः, यजुषो नवाधिकशतम्, साम्नः सहस्रं, पञ्चाशदुपनिषदोऽथर्वणस्येति ।' ब्रह्मविद्या; समीपसदनं; तत्त्वं; द्विजातिकर्तव्यो व्रतविशेषः; 'प्रथमं स्यान् महानाम्नी द्वितीयं च महाव्रतम् । तृतीयं स्यादुपनिषद् गोदानं च ततः परम्'—इति आश्वलायनगृह्यकारिका । मुक्तिकोपनिषदि अष्टाधिकशतोपनिषदः—'ईश-केन-कठ-प्रश्न-मुण्ड-माण्डूक्य-तित्तिरिः । ऐतरेयञ्च छान्दोग्यं बृहदारण्यकं तथा ॥ ब्रह्म-कैवल्य-जाबाल-श्वेताश्वा हंस आरुणिः । ......॥' ७९

उपपतिः पुं. [उपमितः पत्या । 'अवादयः क्रुष्टाद्यर्थे तृतीयया' इति समासः] जारः; 'पौनर्भवश्च काणश्च यस्य चोपपतिर्गृहे'—इति मनुः (३-१५५) । ३८४

उपप्लवः पुं. [उप+प्लु+अप्] ग्रहणम्; 'उपप्लवे चन्द्रमसो रवेश्च'—इति स्मृतिः । राहुग्रहः; विप्लवः; उत्पातः; 'उपप्लवाय लोकानां धूमकेतुरिवोत्थितः'—इति कुमारसम्भवे (२-३२) । उत्पातसूचकोऽनिलादिः; 'कच्चिन्न वाय्वादिरुपप्लवो वः'—इति रघुवंशे (५-६) ।

भीतिः; 'नृपा इवोपप्लविनः परेभ्यः'—इति रघुवंशे (१३–७)। 'उपप्लविनो भयवन्तः'—इति मल्लिनाथः। ४१

उपवर्हः पुं. [उप+वृह्+घञ्] उपधानम्। 'तकिया' इति भाषा। ३०९

उपभोगः पुं. [उप+भुज्+घञ्] भोजनातिरिक्तभोगः; निर्वेशः; 'प्रियोपभोगचिह्नेषु पौरोभाग्यमिवाचरन्'—इति रघुवंशे (१२–२२)। 'आगमेनोपभोगेन नष्टं भाव्यमतोऽन्यथा।' 'न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति'—इति मनुः (२–९४)। ७५५

उपमर्दः पुं. [उपसमीपे मर्दनम्। उप+मृद्+घञ्] विप्रकारः; तिरस्कारः। ७६९

उपमाता [ऋ] स्त्री. [उपमिता मात्रा] धात्री; मातुः सदृशी; सा षड्विधा, यथाह स्मृतिः—'मातुःष्वसा मातुलानी पितृव्यस्त्री पितृष्वसा। श्वश्रूः पूर्वजपत्नी च मातृतुल्याः प्रकीर्तिताः॥' त्रि. उपमानकर्तरि। ५०७

उपमानम् क्ली. [उपमीयते इति, उप+मा+ल्युट्] उपमा; 'उपमानमभूद्विलासिनां करणं यत्तव कान्तिमत्तया'—इति कुमारसम्भवे (४।५)। सादृश्यज्ञानम्; उपमितिकरणं, यथा—गौर्गवयस्तथेति वाक्ये। 'प्रसिद्धसाधर्म्यात् साध्यसाधनमुपमानम्'—इति न्यायसूत्रम्। ८७३

उपयमः पुं. [उप+यम्+अप्] विवाहः। ४९५

उपयामः पुं. [उप+यम्+घञ्] विवाहः। यज्ञाङ्गपात्रविशेषः; 'उपयामगृहीतोऽसि' [उपयाम्यतेऽनेन, उप+यम्+णिच्+अच्]। ४९५

उपरागः पुं. [उप+रञ्ज्+घञ्] ग्रहणं; राहुग्रस्तश्चन्द्रः सूर्यश्च; 'उपरागान्ते शशिनः समुपगता रोहिणी योगम्'—इति शाकुन्तले। निकटस्थितित्वाद् निजगुणादेरन्यत्रारोपणम्; यथा स्फटिकस्तम्भे रक्तपुष्पाणां रक्तिमारोपः। राहुः; विगानं; परीवादः; दुर्नयः; ग्रहकल्लोलः; व्यसनं, 'बिभर्षि चाकारमनिर्वृतानां मृणालिनी हैममिवोपरागम्'—इति रघुवंशे (१६–७)। ४१

उपरि अव्य. [ऊर्ध्व ऊर्द्ध्वायाम् ऊर्द्ध्वात् ऊर्द्ध्वायाः ऊर्द्ध्वम् ऊर्द्ध्वां वा वसत्यागतो रमणीयं वा। 'उपर्युपरिष्टात्' इति ऊर्द्ध्वस्योपादेशो रिल् प्रत्ययश्च] ऊर्द्ध्वम्; उपरिष्टात्; 'त्वय्यासन्ने नयनमुपरिस्पन्दि शङ्के मृगाक्ष्या, मीनक्षोभाच्चलकुवलयश्रीतुलामेष्यतीति'—इति उत्तरमेघे (३४)। 'अवाङ्मुखस्योपरि पुष्पवृष्टिः पपात विद्याधरहस्तमुक्ता'—इति रघुवंशे (२–६०)। 'ऊपर' इति भाषा। १०२

उपरिष्टात् अव्य. [ऊर्द्ध्वे ऊर्द्ध्वायाम् ऊर्द्ध्वात् ऊर्द्ध्वायाः ऊर्द्ध्वम् ऊर्द्ध्वां वा वसति आगतो रमणीयं वा। 'उपर्युपरिष्टात्' इत्यूर्द्ध्वस्य उपादेशो रिष्टातिल् प्रत्ययश्च] उपरि; ऊर्द्ध्वम्; 'नाधस्तान्नोपरिष्टाच्च गतिर्नाप्सु न चाम्बरे'—इति रामायणे। १०२

उपलः पुं. [उपलाति, उप+ला+क। यद्वा उं शम्भुं पलति यः। उ+पल्+अच्] पाषाणः; 'रेवां द्रक्ष्यस्युपलविषमे विन्ध्यपादे विशीर्णाम्'—इति पूर्वमेघे (१९)। रत्नम्; 'मणिमुक्ताप्रबालानां ताम्रस्य रजतस्य च। अयःकांस्योपलानां च द्वादशाहं कणान्नता'—इति मनुः (११–१६७)। बालुका; 'भिषगुपलाप्रक्षिणी नना' इति ऋग्वेदे (९।११२।३) 'उपलेषु बालुकासु'—इति भाष्यम्। १६८

उपलब्धिः स्त्री. [उप+लभ्+क्तिन्] मतिः; बुद्धिः; प्राप्तिः; 'वृथा हि मे स्यात् स्वपदोपलब्धिः'—इति रघुवंशे (५–५६)। ज्ञानम्; 'कामं तु नः स्वेषु गुणेषु सङ्गः कामं च नान्योन्यगुणोपलब्धिः। अस्मान् विना नास्ति तवोपलब्धिः तावदृते त्वां न भजेत् प्रहर्षः'—इति महाभारते। ३३४

उपलिङ्गम् क्ली. [उपमितं लिङ्गेन] उपद्रवः; अरिष्टम्; दुर्भाग्यम्; 'केनचिद् उपलिङ्गानि गायता'—इति हर्षचरिते। १२७

उपलेपनम् क्ली. [उप+लिप्+ल्युट्] गोमयादिलेपनम्; 'तत्रैव देवतायतने संमार्जनोपलेपनमण्डनादिकं कर्म समाज्ञापयति'—इति पञ्चतन्त्रे। ७९७

उपवनम् क्ली. [उपमितं वनेन] कृत्रिमवनम्; आरामः; 'पाण्डुच्छायोपवनवृतयः केतकैः सूचिभिन्नैः'—इति पूर्वमेघे (२४)। 'सा केतुमालोपवना बृहद्भिर्विहारशैलानुगतेव नागैः'—इति रघुवंशे (१६–२६)। २१२

उपवर्तनम् क्ली. [उपागत्य वर्तन्ते अत्र। उप+वृत्+ल्युट्] जनपदः; जनपदसमुदायः; जनपदैकदेशः; सजलनिर्जलस्थानमात्रं; देशः; विषयः; 'तस्योपवर्तनेऽप्येको न श्रुतो गोत्रभित् क्वचित्'—इति काशीखण्डे। २८४

उपविष्टः त्रि. [उप+विश्+क्त] आसीनः; 'उपविष्टौ कथाः काश्चित् चक्रतुर्वैश्यपार्थिवौ'—इति देवीमाहात्म्ये (८१–२८)। ३८६

उपवीतम् क्ली. [उप+वि+इ+क्त] वामस्कन्धार्पितं यज्ञसूत्रं; यज्ञसूत्रमात्रम्, 'जनेऊ' इति भाषा। 'कृतोपवीतं हिमशुभ्रमुच्चकैः'—इति माघे (१–७)। 'मुक्तायज्ञोपवीतानि बिभ्रतो हैमवल्कलाः'—इति कुमारसम्भवे (६–६)। 'ऊर्द्ध्वन्तु त्रिवृतं कार्यं तन्तुत्रयमधोवृतम्। त्रिवृतं चोपवीतं स्यात्तस्यैको ग्रन्थिरिष्यते'—इति स्मृतौ। 'यज्ञोपवीतकं कुर्यात् सूत्राणि न वतन्तवः'—इति देवलः। 'यज्ञोपवीते द्वे धार्ये श्रौते स्मार्ते च कर्मणि। तृतीयमुत्तरीयार्थं वस्त्रालाभेऽतिदिश्यते॥' 'कार्पासमुपवीतं स्याद् विप्रस्योर्द्ध्ववृतं त्रिवृत्। शणसूत्रमयं राज्ञो वैश्यस्याविकसौत्रिकम्'—इति मनुः (२–४४)। ४०७

उपशल्यम् क्ली. [उपगतं शल्यम्] ग्रामप्रान्तभागः; ग्रामान्तम्; 'उपशल्यनिविष्टैस्तैश्चतुर्द्वारमुखी बभौ'—इति रघुवंशे (१५–६०)। 'भ्रमंश्च विशालोपशल्ये कमप्याक्रीडमासाद्य'—इति दशकुमारे। २५९

उपशायः पुं. [उप+शी+घञ्] पर्यायशयनार्थकः; प्रहरिकादीनां क्रमेण शयनं; विशायः। ७३९

उपसंव्यानम् क्ली. [उपसंवीयतेऽनेन। उप+सम्+व्ये+'कृत्यल्युट' इति ल्युट्] परिधानवस्त्रम्; 'बहिर्योगोपसंव्यानयोः' इति पाणिनिः (१-१-३६)। ५४६

उपसंग्रहणम् क्ली. [उपगत्य संमानार्थं ग्रहणम्] चरणस्पर्शः; उपसंग्रहः; पादग्रहणम्; अभिवादनम्; उपाकरणम्। ३९८

उपसंग्राह्यम् त्रि. [उपसंगृह्यते इति। उप+सम्+ग्रह+ण्यत्] उपसंग्रहणीयम्; अभिवाद्यं; पादे ग्रहीतव्यम्; 'भ्रातुर्भार्योपसंग्राह्या सवर्णाऽहन्यहन्यपि'—इत मनुः (२–१३२)। ३९८

उपसन्नः त्रि. [उप+सद्+क्त] उपनतः; उपस्थितः; 'ब्रवीतु भगवांस्तन्मे उपसन्नोऽस्म्यधीहि भोः'—इति महाभारते। ७५०

उपसम्पन्नः त्रि. [उप+सम्+पद्+क्त] पर्याप्तः; मृतः (६२९); 'श्रोत्रिये तूपसम्पन्ने त्रिरात्रमशुचिर्भवेत्'—इति मनुः (५–८१)। यज्ञार्थहतपशुः; प्रमीतः; प्रोक्षितः; पाकेन रूपरसादिसम्पन्नव्यञ्जनादिः; प्रणीतः; संस्कृतः; प्राप्तः। ३२६

उपसर्गः पुं. [उप+सृज्+घञ्] उपप्लवः; उपद्रवः; 'उपसर्गानशेषांस्तु महामारीसमुद्भवान्'—इति मार्कण्डेये (९२–७)। रोगभेदः;–'क्षीणं हन्युश्चोपसर्गाः प्रभूताः'—इति सुश्रुते। धातोः पूर्ववर्तिविंशतिसंख्यकः प्राद्यव्ययगणः–१ प्र, २ परा, ३ अप, ४ सम्, ५ नि, ६ अव, ७ अनु, ८ निर् (स्), ९ दुर् (स्), १० वि, ११ अधि, १२ सु, १३ उत्, १४ परि, १५ प्रति, १६ अभि, १७ अति, १८ अपि, १९ उप, २० आङ। 'निपाताश्चादयो ज्ञेया उपसर्गास्तु प्रादयः। द्योतकत्वात् क्रियायोगे लोकादवगता इमे॥ ते त्रिधा–'धात्वर्थं बाधते कश्चित्'—यथा आदत्ते। 'कश्चित्तमनुवर्तते'—यथा प्रसूते। 'तमेव विशिनष्टयन्यः'–यथा प्रणमति,।'उपसर्गगतिस्त्रिधा॥' अपि च—'उपसर्गेण धात्वर्थो बलादन्यत्र नीयते। प्रहाराहारसंहारविहारपरिहारवत्'—इति सिद्धान्तकौमुदी। १२७

उपसर्जनम् क्ली. [उप+सृज्+ल्युट्] प्रधानभिन्नम्; अप्रधानम्; अप्राग्र्यम्; 'उपसर्जनं प्रधानस्य धर्मतो नोपपद्यते'—इति मनुः (९–२११)। विशेषणं; त्यागः; उपद्रवः; 'निर्घाते भूमिचलने ज्योतिषामुपसर्जने'—इति मनुः। ७६३

उपसर्या स्त्री. [उप+सृ+'उपसर्या काल्या प्रजने' इति साधुः] प्राप्तगर्भग्रहणकाला गौः; ऋतुमती गौः; काल्या; कालप्राप्ता; वृषरता। २७२

उपसूर्यकम् क्ली. [सूर्यमुपगतम् उपसूर्यम्। स्वार्थे कन्। चन्द्रपक्षे उपसूर्यमिव। उपसूर्यकम्, इवार्थे कन्] चन्द्रसूर्यप्रान्तस्थितमण्डलम्; परिवेषः। ४१

उपस्करः पुं. [उप+कृ+अप्, 'समवाये चेति' सुट्] व्यञ्जनादिसंस्कारार्थं धान्याकसर्षपपिष्टादिः; वेसवारः; 'मङ्गलालम्भनीयानि प्राशनीयान्युपस्करान्। उपानिन्युस्तथापुण्याः कुमारीबहुलाः स्त्रियः॥' गृहवासोपकरणं; दृषदुपलसूर्पादि; कनककुण्डलहारादि; 'गृहोपस्करबाह्यानां दोह्याभरणकर्मिणाम्। मूल्यं लब्धं तु यत्किञ्चित् शुल्कं तत्परिकीर्तितम्'—इति याज्ञवल्क्यः। 'पञ्च सूना गृहस्थस्य चूल्ली पेषण्युपस्करः'–इति मनुः (३–६८)। 'सज्जोपस्करभेषजः'—इति सुश्रुते। ३२१

उपस्थः पुं. [उप+स्था+क] भगम्; योनि; लिङ्गं; क्रोडः; 'रथोपस्थ उपाविशत्'—इति भगवद्गीता (१-४६)। गुह्यद्वारम्; 'उपस्थमुदरं जिह्वा हस्तौ पादौ च पञ्चकम्'—इति मनुः (८-१२५)। निकटे त्रि.। ५१४

उपस्थितः त्रि. [उप समीपे स्थितवान्। उप+स्था+क्त] समीपस्थितः; उपनतः; उपसन्नः; 'उपस्थितेयं कल्याणी नाम्नि कीर्तित एव यत्'—इति (१-८७), 'हैयङ्गवीनमादाय घोषवृद्धानुपस्थितान्'-इति च रघुवंशे (१-४५)। मृष्टः; शोधितः; पाणिनिव्याकरणे वेदाप्रचलितो लौकिकः शब्दः; यथा—'अप्लुतवदुपस्थिते', अत्र सिद्धान्तकौमुदी—'उपस्थितोऽनार्षः।' ७५०

उपस्पर्शनम् क्ली. [उप+स्पृश्+ल्युट्] उपस्पर्शः; आचमनम्; 'उपस्पर्शनकाले तु त्वा रक्षन्तु रघूत्तम!'—इति रामायणे (२।२५।२४)। ४०८

उपहसितम् क्ली [उप+हस्+क्त] हास्यभेदः; 'ज्येष्ठानां स्मितहसिते मध्यानां विहसितावहसिते च। नीचानामपहसितं तथातिहसितं च षड्भेदाः॥ मधुरस्वरं विहसितं सांसशिरःकम्पमवहसितम्। अपहसितं सास्राक्षं विक्षिप्ताङ्गं भवत्यतिहसितम्॥ अपहसितमत्र उपहसितम् इत्यपि पाठः'—इति साहित्यदर्पणे ७३१

उपहारः पुं. [उप+हृ+घञ्] उपढौकनद्रव्यम्; प्राभृतं; प्रदेशनम्; उपायनम्; उपग्राह्यः; उपदा; 'रत्नपुष्पोपहारेण च्छायामानर्च्च पादयोः'-इति रघुवंशे (४-८४)। 'बन्धुप्रीत्या भवनशिखिभिर्दत्तनृत्योपहारः'—इति पूर्वमेघे (३३)। 'ज्योतिषां प्रतिबिम्बानि प्राप्नुवन्त्युपहारताम्'—इति कुमारसम्भवे (६-४२)। हारनिकटस्थद्रव्यम् (उपगतो हारम्); 'उरोभुवा कुम्भयुगेन जृम्भितं नवोपहारेण वयस्कृतेन किम्'—इति नैषधे (१-४८)। १२८

उपह्वरम् क्ली. [उपह्वरन्त्यत्र। उप+ह्वृ+घ] निर्जनस्थानम्; 'उपह्वरे गिरीणाम्'—ऋग्वेदे (८।६।२८)। निकटम् (७९१); 'ऊर्मिप्रवाहैर्जाह्नव्याः समानीतमुपह्वरम्'—इति महाभारते। 'सर्वानाहूय उपह्वरे वैद्यान्'—इति हर्षचरिते। पुं. [उप+ह्वृ+घ] रथः; प्रान्तभागः; 'उपह्वरेषु यदचिध्वं ययिं वय इव मरुतः केनचिद् पथा'—इति ऋग्वेदे (१।८७।२)। ७०८

उपांशु अव्य. [उपगताः अंशवः यत्र] विजनं; रहः; 'परिचेतुमुपांशुधारणं कुशपूतं प्रवयास्तु विष्टरम्'—इति रघुवंशे (८-१८)। पुं. जपभेदः; 'जिह्वौष्ठौ चालयेत् किञ्चिद्देवतागतमानसः। निजश्रवणयोग्यः स्यादुपांशुः स जपः स्मृतः'—इत्यागमः। त्रि. निगूढे। ७०८

उपाकृतः पुं. [उप+आ+कृ+क्त] यज्ञे अभिमन्त्र्य हतः पशुः; 'अनुपाकृतमांसानि देवान्नानि हवींषि च'—इति मनुः। उपद्रवः; त्रि. उपद्रुतम्। ४१७

उपाग्रम् क्ली. [अग्रं प्रधानम् उपगतम्] उपसर्जनम्, गौणम्; अप्रधानम्। ७६३

उपात्तः पुं. [उप समीपे आत्तः गृहीतः] निर्मदहस्ती; त्रि.[उप+आ+दा+क्त 'अच उपसर्गात्तः'] प्राप्तम्; 'क्षयं केचिदुपात्तस्य'—इति भविष्यपुराणम्। २२०

उपादानम् क्ली. [उप+आङ+दा+ल्युट्] उपदा; लब्धा; स्वस्वविषयेभ्य इन्द्रियाकर्षणं; प्रत्याहारः; ग्रहणम्; 'स्यादात्मनोऽप्युपादानाद् एषोपादानलक्षणा'—इति साहित्यदर्पणे। हेतुः; समवायिकारणं; प्रवृत्तिजनकज्ञानम्। ४३४

उपाधिः पुं. [उप+आ+धा+कि] धर्मचिन्ता; कुटुम्बव्यापृतः; छलम्; 'उपाधिर्न मया कार्यो वनवासे जुगुप्सितः'—इति रामायणे। विशेषणम्; 'पदार्थविभाजकोपाधिमत्त्वम्'—इति मुक्तावली। नामचिह्नं; हेतोरव्यापकः; यथा धूमवान् वह्निरित्यत्र आर्द्रकाष्ठम् उपाधिः, अस्य प्रयोजनं व्यभिचारस्यानुमानम्। आलङ्कारिकमते जातिगुणक्रियायदृच्छास्वरूपः। ७७०

उपाध्यायः पुं. [उपेत्य अधीयतेऽस्मात्। उप+अधि+इ+घञ्] अध्यापकः; वेदैकदेशाध्यापकः; 'एकदेशं तु वेदस्य वेदाङ्गान्यपि वा पुनः। योऽध्यापयति वृत्त्यर्थमुपाध्यायः स उच्यते'—इति मानवे (२-१४५)। ४००

उपानत् [द्] स्त्री. [उपनह्यते पादावनया। उप+नह्+क्विप्, 'नहिवृतिवृषीति' पूर्वपदस्य दीर्घः] चर्मादिनिर्मितपादकोषः; 'नाक्षैः क्रीडेत् कदाचित्तु स्वयं नोपानहौ वहेत्। शयनस्थो न भुञ्जीत न पाणिस्थं न चासने'—इति मनुः (४-७४)। 'कृतावरोहस्य हयादुपानहौ'—इति नैषधे (१-१२३)। 'अनारोग्यमनायुष्यं चक्षुषोरुपघातकृत। पादाभ्यामनुपानद्भ्यां

सदा चङ्क्रमणं नृणाम्'—इति सुश्रुते। 'जूता' इति भाषा। ३११

उपान्तः त्रि. [उपगतोऽन्तम्] निकटम्; 'दिशामुपान्तेषु ससर्ज दृष्टिम्'—इति कुमारसम्भवे (३-६९)। 'उपान्तवानीरगृहाणि दृष्ट्वा'—इति रघुवंशे (१६-२१)। 'शय्योपान्तनिविष्टसस्मितमुखी'—इति साहित्यदर्पणे। ६९३

उपायनम् क्ली. [उपेयते उपाय्यते वा। उप+इण् वा अय्+ल्युट्] उपहारः; उपढौकनम्; 'तस्योपायनयोग्यानि रत्नानि सरितां पतिः'—इति कुमारसम्भवे (२-३७)। व्रतादिप्रतिष्ठा; समीपगमनम्; 'उपायन उषसां गोमतीनाम्'-इति ऋग्वेदे (२।२८।२)। ४३४

उपालम्भः पुं. [उप+आ+लभ्+घञ्, 'उपसर्गात् खल्घञोः' 'इति नुम्] दुर्वाक्यम्; स च गुणाविष्करणेन स्तुतिपूर्वकः, यथा—'महाकुलस्य भवतः किमिदमुचितमिति।' निन्दापूर्वकश्च, यथा—'बन्धकीसुतस्य भवतस्तदिदमुचितम्'—इति भागुरिः। 'उपालम्भो नाम हेतोर्दोषवचनं यथा पूर्वमहेतवो हेत्वाभासा व्याख्याताः'-इति चरकः। 'उचितस्तदुपालम्भः'—इति उत्तरचरिते। १५४

उपासङ्गः पुं. [उपासज्यन्ते शरा अत्र। उप+आङ+सञ्ज्+घञ्] तूणीरः; 'इमे च कस्य नाराचा सहस्रं लोमवाहिनः। समन्तात् कलधौताग्रा उपासङ्गे हिरण्मये'—इति महाभारते। 'तरकस' इति भाषा। ४६५

उपासना स्त्री. [उप समीपे आसनमिति। उप+आस्+युच्+टाप्] सेवा; वरिवस्या; शुश्रूषा; परिचर्या; उपासनम्; 'न विष्णूपासना नित्या वेदेनोक्ता तु कुत्रचित्। न विष्णुदीक्षा नित्यास्ति शिवस्यापि तथैव च॥ गायत्र्युपासना नित्या सर्ववेदैः समीरिता। यया विना त्वधः पातो ब्राह्मणस्यास्ति सर्वथा॥ तावता कृतकृत्यत्वं नान्यापेक्षा द्विजस्य हि। गायत्रीमात्रनिष्णातो द्विजो मोक्षमवाप्नुयात्'—इति देवीभागवतम्। १२९

उपास्तिः स्त्री. [उप+आस्+क्तिन्] सेवा; 'मुक्तिर्नर्तेऽच्युतोपास्तिं भूतं भूतमभि प्रभुः'—इति मुग्धबोधव्याकरणम्। १२९

उपेन्द्रः पुं. [इन्द्रमुपगतः; कश्यपादृषेः अदितौ वामनावतारे इन्द्रस्यानन्तरं जातत्वात् तथात्वम्] विष्णुः; 'ममोपरि यथेन्द्रस्त्वं स्थापितो गोभिरीश्वरः। उपेन्द्र इति कृष्ण त्वां गास्यन्ति दिवि देवताः'—इति हरिवंशे। २३

उभयव्यञ्जनम् क्ली. [उभयोः स्त्रीपुरुषयोः व्यञ्जनं चिह्नं यस्य] पोटा; श्मश्र्वादिचिह्नवती स्त्री। ४३०

उभयः त्रि. [उभौ अवयवौ अस्य। उभ+तयप्] युगलम्; 'पूजितं ह्यशनं नित्यं बलमूर्जं च यच्छति। अपूजितं तु तद्भुक्तमुभयं नाशयेदिदम्'—इति मनुः (२-५५)। ३२४

उमा स्त्री. [उ भो, मा तपस्यां कुर्विति, 'उमेति मात्रा तपसो निषिद्धा पश्चादुमाख्यां सुमुखी जगाम'—इति कुमारोक्तेः। यद्वा ओर्हरस्य मा लक्ष्मीरिव। उं शिवं माति मिमीते वा। 'आतोऽनुपसर्गेति' क, अजादित्वात् टाप्। अवति ऊयते वा, उङ शब्दे, 'विभाषो तिलमाषोमेति' निपातनाद् मक्] दुर्गा; 'उमामुखे बिम्बफलाधरोष्ठे व्यापारयामास विलोचनानि'—इति कुमारसम्भवे (३-६७)। अतसी(५८२); कीर्तिः; हरिद्रा; कान्तिः; शान्तिः; 'यतो हि तपसे पुत्रि वनं गन्तुं च मेनका। उमेति तेन सोमेति नाम प्राप तदा सती'—इति कालिकापुराणे। १६

उमापतिः पुं. [उमायाः पतिः] शिवः; 'तप्यते तत्र भगवान् तपो नित्यमुमापतिः'—इति महाभारते। ११

उम्यम् क्ली. [उमाया अतस्या हरिद्राया वा क्षेत्रम्। उमा+'विभाषा तिलमाषोमाभङ्गाणुभ्यः' इति यत्] औमीनम्; अतसीक्षेत्रम्; हरिद्राक्षेत्रम्। १६३

उरगः पुं. [उरसा गच्छतीति। 'उरसो लोपश्चेति' ड-प्रत्ययः सकारलोपश्च] सर्पः; 'अङ्गुलीवोरगक्षता'—इति रघुवंशे (१-२८)। सीसकम्। ११९, ६४०

उरणः पुं.-स्त्री. [ऋ+'अर्तेः क्युजुच्च' इति क्युच् उत्वं रपरत्वं च] मेषः; 'य उरणं जघान नवचख्वांसं नवतिञ्च बाहून्'—इति ऋग्वेदे (२।१४।४)। 'उत्सृष्टावुरणौ दृष्ट्वा राजा गृह्यगतो गृहम्'—इति हरिवंशे। मेघः। २७९

उरभ्रः पुं.-स्त्री. [उरु कठोरं भ्रमति। भ्रमु चलने, 'अन्येभ्योऽपीति' ड, पृषोदरादित्वात् साधुः] मेषः। २७९

उररी अव्य. [व्ये+बाहुलकात् ररीक् सम्प्रसारणञ्च]

विस्तारः; स्वीकारः; अङ्गीकारः 'इति; काल्पनिकभेदमुररीकृत्य'–इति साहित्यदर्पणे। ८८५

उरश्छदः पुं.– [उरो वक्षःस्थलं छाद्यतेऽनेनेति। उरस्+छद्+घ] कवचः; 'काञ्चनोरश्छदाश्चेमे पिशाचवदनाः खराः—इति रामायणे। ४५१

उरः [स्] क्ली. [इयर्ति, ऋ गतौ, 'अर्तेरुच्च' इति असुन् उरादेशः किन्च] वक्षःस्थलं; वक्षः; वत्सं; क्रोडं; हृत्; भुजान्तरम्; 'कौस्तुभाख्यमपां सारं बिभ्राणं बृहतोरसा'—इति रघुवंशे (१०–१०)। 'उरसि सरसपादलेखाप्रतिमतयानुययावसंशयानः–' इति माघे (७–२२)। त्रि. उत्तमः; श्रेष्ठः। ५२७

उरसिजः पुं. [उरसि वक्षःस्थले जातः। उरस्+जन्+ड, सप्तम्या अलुक्] स्त्रीस्तनः; 'परिपस्पृशिरे चैनं पीनैरुरसिजैर्मुहुः'—इति रामायणे। ५२६

उरुः त्रि. [उर्णोति, ऊर्णु+'महति ह्रस्वश्च' इति कु, नुलोपो ह्रस्वश्च] महान्; वड्रं; विपुलं; विशङ्कटं; पृथु; बृहत्; विशालं; पृथुलं; महत्, विस्तीर्णं, विकटम्; 'विस्तीर्णं ददृशतुरम्बरप्रकाशं तेऽगाधं निधिमुरुमम्भसामनन्तम्'—इति महाभारते। बहुलम्; 'तुविजिता उरुक्षयाम्'—इति ऋग्वेदे 'उरुक्षयो बहुनिवासे' इति भाष्यम्। ६९१

उर्वरा स्त्री. [ऋच्छतीति, ऋ+अच्+टाप्, उरूणाम् अरा। यद्वा उर्व्यते, उर्व्+घ, उर्वं राति, उर्व+रा+क्विप्] सर्वसस्याढ्या भूमिः; 'यथा बीजमुर्वरायां कृष्टे कालेन रोहति'—इति अथर्ववेदे। भूमिमात्रम्; अप्सरोभेदः; 'कलानिधिर्गुणनिधिः कर्पूरतिलकोर्वरा'—इति काशीखण्डे। १५८

उर्वशी स्त्री. [उरून् महतोऽपि अश्नुते व्याप्नोति वशीकरोति इति यावत्, यद्वा ऊरुं नारायणस्य महर्षेरूरुप्रदेशम् अश्नुते योनित्वेन व्याप्नोतीति। उरु+अश्+क, गौरादित्वात् ङीष्] स्वर्गवेश्या; 'ओमित्यादेशमादाय नत्वा तं सुरवन्दिनः। उर्वशीमप्सरःश्रेष्ठां पुरस्कृत्य दिवं ययुः'—इति भागवते। नदीभेदः; उर्वशीतीर्थम्; 'उर्वशीं कृत्तिकायोगे गत्वा चैव समाहितः। लौहित्ये विधिवत् स्नात्वा पुण्डरीकफलं लभेत्'—इति महाभारते। ८८

उर्वी स्त्री. [उर्णोति इति। ऊर्णु+'महति ह्रस्वश्च' इति कु, नुलोपो ह्रस्वश्च। 'वोतो गुणवचनादिति' ङीष्] पृथिवी; 'हिरण्मयोर्वीरुहवल्लितन्तुभिः'—इति माघे (१–७)। 'अनन्यशासनामुर्वीं शशासैकपुरीमिव'—इति रघुवंशे (१–३०)। १५६

उलपः पुं.– क्ली. [वलतीति, वल्+'विटपपिष्टपविशिपोलपाः' इति कप सम्प्रसारणं च] विस्तीर्णा लता; सा तु त्रपुषीद्राक्षाताम्बूल्यादिः; उलुपः; वीरुत्; गुल्मिनी; प्रताना; प्रतानिनी; वीरुधा; वरुत्; शाखापत्रप्रचययुक्तलता। १९०

उलपः पुं.—तृणविशेषः; उलूकं; सूच्यग्रः; स्थूलकः; दर्व्यः; जूर्णाख्यः; खरच्छदः; उलपः। १९१

उलूकः पुं. [उचतीति, उच् समवाये, 'उलूकादयः' इति साधुः। यद्वा वलते, उलूकादित्वाद् वलेः सम्प्रसारणम् ऊकश्च] पेचकपक्षी; तामसः; घूकः; दिवान्धः; कौशिकः; कुशिः; नक्तञ्चरः; निशाटः; काकारिः; घोरदर्शनः; 'त्यजति मुदमुलूकः प्रीतिमांश्चक्रवाकः'—इति माघे (११–६४)। 'श्वगोधोलूककाकांश्च शूद्रहत्याव्रतञ्चरेत्'—इति मनुः (११–१३१)। इन्द्रः; 'उलूकाविन्द्रपेचकौ' इत्युणादिवृत्तिः। भारतयोधी; शकुनिपुत्रः; 'आहूयोपह्वरे राजन्नुलूकमिदमब्रवीत्। उलूक गच्छ कैतव्य! पाण्डवान् सहसोमकान्'—इति महाभारते। विश्वामित्रपुत्रः; 'उलूकोऽय मुद्गलश्च तथर्षिः सैन्धवायनः–' इति भारते। त्रि. उलूकदेशवासिनि; 'उलूकानुत्तरांश्चैव तांश्च राज्ञः समानयत्'—इति महाभारते। २४६

उल्का स्त्री. [ओषतीति, उष् दाहे 'शुकवल्कोल्काः' इति उणादिसूत्रेण कप्रत्ययात् साधुः] तेजःपुञ्जः; अग्निशिखा; अग्निः; 'लक्ष्मीः सम्पूज्यतां लोका उल्काभिश्चापि वेष्टयताम्'–इति तिथितत्त्वे। आकाशात् पतितोऽग्निः; 'तञ्चेद्वायौ सरति सरलस्कन्धसङ्घट्टजन्मा, बाधेतोल्काक्षपितचमरीबालभारो दवाग्निः'—इति पूर्वमेघे (५४)। 'उल्कानिर्घातकेतूंश्च ज्योतींष्युच्चावचानि च'—इति मनुः (१–३८)। ६७

उल्मुकम् क्ली.– पुं. [ओषतीति, उष् दाहे, 'उल्मुकदर्वीति' निपातनाद् धातोः षस्य लः मुकप्रत्ययश्च] अङ्गारः; 'अन्वाहार्यपचनादुल्मुकमादाय'—इति शतपथब्राह्मणे (६।२।७)। वृष्णिवंशीयराजा; 'उल्मुको

निशठश्चैव वीरश्चाङ्गावहस्तथा। वृष्णयो निखिलाश्चान्ये समाजग्मुर्महारथाः'—इति महाभारते। ६७

उल्लकसनम् क्ली. [उल्लः ऊर्णा तद्वत् कसनं विकसनम्] रोमाञ्चः। ६५१

उल्लसनकम् क्ली. [उल्लस+स्वार्थे कन्] रोमाञ्चः। ६५१

उल्लाघः त्रि. [उत्+लाघ्, 'गत्यर्थेति'क्त, निपातनात् सिद्धम्] गदान्निर्गतः; नीरोगः; शुचिः; दक्षः; कृष्णं; मरीचं; हृष्टम्।] ३८०

उल्लापः पुं. [उत्+लप्+घञ्] शोकरोगादिना ध्वनिविकारः; काकुवाक्; 'खलोल्लापाः सोढाः कथमपि तदाराधनपरैः'—इति भर्तृहरिः। १५०

उल्लोचः पुं. [ऊर्ध्वं लोचति। उत्+लोच्+अच्। यद्वा ऊर्द्ध्वं लोच्यते, लोच्+घञ्, कुत्वं तु 'निष्ठायामनिटः' इत्यत्र अनिटः इति निषेधान्न।] चन्द्रातपः; वितानम्। 'तम्बू' इति भाषा। ३१०

उल्लोलः पुं. [उल्लोडयतीति, लोडृ उन्मादे, णिच्+पचाद्यच्, डलयोरैक्याद् डस्य लः] महातरङ्गः; कल्लोलः। 'लहर' इति भाषा। ६५३

उल्वम् क्ली. [उल्लीयते इति। उत्+लीङ श्लेषणे, 'उल्बादयश्च' इति साधु, पृषो० वत्वम्] जरायुः; कललः; गर्भवेष्टनचर्म; 'यथोल्वेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम्' इति गीतायाम् (३–३८)। 'जातमात्रं विशोध्योल्वाद् बालं सैन्धवसर्पिषा। प्रसूतिक्लेशितं चानु बलातैलेन सेचयेत्'—इति वाग्भटः। ५००

उल्वणम् त्रि. [उत्+वण्+अच्, पृषोदरादित्वात् साधु] व्यक्तं; स्पष्टम्; 'श्लेष्मोल्वणा महामूला घना मन्दरुजः सिताः' इति 'हेतुलक्षणसंसर्गाद् विद्याद् द्वन्द्वोल्वणानि च'—इति च वाग्भटः। प्रकाशः; निर्बाधः; 'तस्यासीदुल्वणो मार्गः पादपैरिव दन्तिनः'—इति रघुवंशे (४–३३)। ७४४

उशना [स्] पुं. [वश् कान्तौ+वशेः कनसिः' इति कनसि, ग्रह्यादित्वात् सम्प्रसारणम्] शुक्राचार्यः; दैत्यगुरुः; 'अध्यापितस्योशनसापि नीतिं प्रयुक्तरागप्रणिधिद्विषस्ते'—इति कुमारसम्भवे (३–६)। 'पौरोहित्येन याज्यत्वे काव्यन्तूशनसं परे'—इति महाभारते। ४८

उशीरः पुं.– क्ली. [वश् कान्तौ+'वशः कित्' इति ईरन्, सम्प्रसारणम्] वीरणमूलम्; अभयं; नलदं; सेव्यम्; अमृणालं; जलाशयं; लामज्जकं; लघुलयम्; अवदाहम्; इष्टकापथम्; उषीरं; मृणालं; लघु; लयम्; अवदानम्; इष्टं; कापथम्; अवदाहेष्टकापथम्; इन्द्रगुप्तं; जलवासं; हरिप्रियं; वीरं; वीरणं; समगन्धिकं; रणप्रियं; वीरुतरुः; शिशिरं; शीतमूलकं; वितानमूलकं; जलमेदं; सुगन्धिकं; सुगन्धिमूलकं; कम्भु; उशीरकम्; 'वीरणस्य तु मूलं स्यादुशीरं नलदं च तत्। अमृणालं च सेव्यं च समगन्धिकमित्यपि॥ उशीरं पाचनं शीतं स्तम्भनं लघु तिक्तकम्। मधुरं ज्वरहृद्वान्तिमदनुत्कफपित्तहृत्॥ तृष्णास्रविषवीसर्पदाहकृच्छ्रव्रणापहम्'—इति भावप्रकाशे। ६२२

उषर्बुधः पुं. [उषसि प्रातर्बुध्यते प्रकाशते। उषस्+बुध्+क] अग्निः; रक्तचित्रकः; वृक्षविशेषः। ६२

उषाः [स्] स्त्री.–क्ली. [ओषति नाशयत्यन्धकारम्। उष्+'उषः किदिति' असि] प्रत्यूषः; 'आसीदासन्ननिर्वाणः प्रदीपार्चिरिवोषसि'—इति रघुवंशे (१२–१)। 'पुनरुषसि विविक्तैर्मातरिश्वावचूर्ण्य'—इति माघे (११।१७)। १११

उषारमणः पुं. [उषाया रमणः] उषापतिः: अनिरुद्धः; कामदेवपुत्रः। ३४

उषीरः पुं.– क्ली. [उष्+कीरच्] उशीरः; वीरणमूलम्। ६२२

उष्ट्रः पुं. [उष्+'उषिखनिभ्यां कित्' इति ष्ट्रन् किच्च] पशुविशेषः; क्रमेलकः; मयः; महाङ्गः; दीर्घगतिः; बली; करभः; दासेरकः; धूसरः; लम्बोष्ठः; खणः; महाजङ्घः; जवी; जाङ्घिकः; दीर्घः; शृङ्खलकः; महान्; महाग्रीवः; महानादः; महाध्वगः; महापृष्ठः; बलिष्ठः; दीर्घजङ्घः; ग्रीवी; धूम्रकः; शरभः; क्रमेलः, कण्टकाशनः, भोलिः, बहुकरः, अध्वगः: मरुद्विपः; वक्रग्रीवः; वासन्तः; कुलनाशः; कुशनामा; मरुप्रियः; द्विककुत्; दुर्गलङ्घनः; भूतघ्नः; दासेरः; दीर्घग्रीवः; केलिकीर्णः; 'नाधीयीताश्वमारूढो न रथं न च हस्तिनम्। न नावं न खरं नोष्ट्रं नेरिणस्थो न यानगः'—इति मनुः (४–१२०)। 'उष्ट्रयानं समारुह्य खरयानं तु कामतः'—इति मनुः (११–२९)। वाह्यरथः। २८०

उष्ट्रिका स्त्री. [उष्ट्रस्याकृतिरिवावयवो यस्याः; उष्ट्रस्य स्त्री वा] मृत्तिकाभाण्डभेदः; 'भ्रूभङ्गविक्षेपविदारितोष्ट्रिका'—इति माघे (१२-१६)। उष्ट्रभार्या; उष्ट्री; वृश्चिकालीवृक्षः। ७९०

उष्णः त्रि. [उष् दाहे+'इणषिञ्जिदीङुष्यविभ्यो नक्' इति नक्] अशीतः; 'यावदुष्णं भवत्यन्नं यावदश्नाति वाग्यतः'—इति मनुः (३-२३७)। निरलसः; उत्साही; दक्षः; चतुरः; पेशलः; पटुः; सूत्थानः; क्ली.-पुं. ग्रीष्म-ऋतुः; ग्रीष्मः; उष्मकः; निदाघः; उष्णोपगमः; तपः; आतपः; 'उष्णे हैमे वसन्ते कामं ग्रीष्मे तु शीतलम्'—इति सुश्रुते। 'नोष्णं न शिशिरस्तत्र न वायुर्न च भास्करः'—इति महाभारते। अग्निः; सूर्यः; 'उष्णे वर्षति शीते वा मारुते वाति वा भृशम्'—इति मनुः (११।११३)। पलाण्डुः। ४०

उष्णिका स्त्री. [अल्पमन्नमस्याम्। 'ब्राह्मणकोष्णिके संज्ञायामिति' कन्। निपातनादन्नशब्दस्योष्णादेशः] यवागुः; 'लप्सी', 'हलुवा' इत्यादि भाषा। ३२०

उष्णीषः पुं.-क्ली. [उष्णमीषते हिनस्ति। उष्ण+ईष् गतिहिंसादर्शनेषु। 'इगुपधेति' क। शकन्ध्वादिः] किरीटः; 'विशीर्णमलिनोष्णीषः प्रकीर्णाम्बरमूर्द्धजः'—इति महाभारते। शिरोवेष्टः (७९६); 'पाग' इति भाषा। 'उष्णीषं कान्तिकृत् केश्यं रजोवातकफापहम्। लघु चेच्छस्यते यस्माद् गुरुपित्ताक्षिरोगकृत्—इति भावप्रकाशः। चिह्नान्तरम्। ५६५

उस्रः पुं. [वस्+'स्फायितञ्चिवञ्चिशकिक्षिपीति' रक्] रश्मिः; 'शरैरुस्रैरिवोदीच्यानुद्धरिष्यन् रसानिव'—इति रघुवंशे (४-६६)। वृषः; वृषभः; 'वन्वन्नत्वानार्वोस्रः पितेव'—इति ऋग्वेदे 'उस्रः वृषभः'—इति भाष्यम्। लताभेदः; सूर्यः; 'प्रमित्रासो न ददुरुस्रो अग्रे'—इति ऋग्वेदे (३।५८।४) 'वसति नभसीत्युस्रः सूर्यः'—इति भाष्यम्। अश्विनीपुत्रौ; 'अग्नय उस्रा जरन्ते प्रतिवस्तोरश्विनौ'—इति ऋग्वेदे (४।४५।५)। ३९

उस्रा स्त्री. [उस्र+टाप्] अर्जुनी; सुरभिः; गौः; उपचित्रा; 'गाय' इति भाषा। २६८

ऊ

ऊधः [स्] क्ली. [उन्द+असुन्+'ऊधसोऽनङिति' निर्देशाद् ऊधादेशः] आपीनम्; 'थन' इति भाषा। 'मण्डूकनेत्रां स्वाकारां पीनोधसमनिन्दिताम्'—इति महाभारते। 'यदेव स्त्रियै स्तनावाप्यायेते ऊधः पशूनाम्'—इति शतपथब्राह्मणे (२।५।१।५)। २७१

ऊधस्यम् क्ली. [ऊधसि भवम्। ऊधस्+यत्] दुग्धम्; 'ऊधस्यमिच्छामि तवोपभोक्तुम्'—इति रघुवंशे (२-६६)। २७४

ऊरव्यः पुं. [ऊरोर्जातः। ऊरु+'शरीरावयवाद् यदिति' यत्। वैश्यस्य ब्रह्मणः ऊरोर्जातत्वात् तथात्वम्] वैश्यः; 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः। ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत'—इति यजुषि (३१।११)। ५७०

ऊरुः पुं. [ऊर्णूयते आच्छाद्यते इति। ऊर्णु+'ऊर्णोतेर्नुलोपः' इति कर्मणि कु नुलोपश्च] जानूपरिभागः; सक्थिः; 'भुवनत्रितये न बिभर्ति तुलामिदमूरुयुगं न चमूरुदृशः'—इति साहित्यदर्पणे। 'भुजमूर्ध्दोरुबाहुल्यादेकोऽपि धनदानुजः'—इति रघुवंशे (१२-८८)। 'लोकानां तु विवृद्धयर्थं मुखबाहूरुपादतः'—इति मनुः (१-३१)। 'जाँघ' इति भाषा। ५१५

ऊरुसन्धिः पुं. [उर्व्वोः संधिः] वङ्क्षणः; कटयङ्घ्रयोः संधिः। ५२३

ऊर्जः पुं. [ऊर्जयति उत्साहयति जिगीषून् इति। ऊर्ज्+णिच्+अच्] कार्तिकमासः; उत्साहः (७७९); बलम्; 'वसिष्ठा हि मिहेध्य वस्त्राण्यूर्जा पते'—इति ऋग्वेदे (१।२६।१) 'ऊर्जा बलपराक्रमादीनाम्' इति भाष्यम्। प्राणनं; वीर्यम्; 'पूजनं ह्यशनं नित्यं बलमूर्जं च यच्छति'—इति मनुः (२।५५)। यस्मात् पूजितमन्नं सामर्थ्यं वीर्यं च ददाति'—इति कुल्लूकभट्टः। कान्तिकनामसंवत्सरः; स्वारोचिषस्य मनोः पुत्रभेदः; 'प्रथितश्च नभस्यश्च नभ ऊर्ज्जस्तथैव च। स्वारोचिषस्य पुत्रास्ते मनोस्तात महात्मनः'—इति हरिवंशे (७।१४)। क्ली. [ऊर्ज+घञ्] जलम्; "नभ ऊर्ज इषे एष्याः पतये यज्ञरेतसे। तृप्तिदाय च जीवानां नमः सर्वरसात्मने"—इति भागवते। स्त्री. हिरण्यगर्भकन्या; 'हिरण्यगर्भस्य सुता ऊर्जा नाम सुतेजसः'—इति हरिवंशे। ११४

ऊर्णनाभः पुं. [ऊर्णेव तन्तुर्नाभौ यस्य। यद्वा मृदुत्वादूर्णेव नाभिर्यस्य। 'नाभेरुपसङ्ख्यानमि'त्यच्। 'ङ्यापोरिति'

ह्रस्वः] कीटविशेषः; लूता; तन्तुवायः; मर्कटकः; ऊर्णनाभिः; 'मकड़ी' इति भाषा। 'नाचारेण विना सृष्टिरूर्णनाभेरपीष्यते। न च निःसाधनः कर्ता कश्चित् सृजति किञ्चन।' धृतराष्ट्रपुत्रभेदः; 'ऊर्णनाभः सुनाभश्च तथा नन्दोपनन्दकौ'—इति महाभारते। दैत्यविशेषः; 'सूक्ष्मश्चैव निचन्द्रश्चं ऊर्णनाभो महागिरिः'— इति हरिवंशे। २५६

ऊर्णनाभिः पुं. [ऊर्णावत् नाभिः यस्य] मर्कटकः; 'आत्मशक्तिमवष्टभ्य ऊर्णनाभिरिवाक्लमः'—इति भागवते (२।५।५)। २५६

ऊर्णायुः पुं. [ऊर्णा अस्यास्तीति। ऊर्णा+युस्] मेषलोमकम्बलः; मेषः; ऊर्णनाभः; क्षणभङ्गः; गन्धर्वविशेषः; 'ऊर्णायुश्चित्रसेनश्च हाहा हूहूश्च भारत !'—इति हरिवंशे। ५५१

ऊर्ध्वः त्रि. [उत्+हा+ड, आदिवर्णस्य ऊरादेशः, पृषोदरादित्वम्] उपरिष्टात्; उपरि; 'कुर्वतीरुपलैस्तुङ्गैर्भुवनं नीचमूर्द्ध्वं वजैः। तस्या वनालीरन्वेति चित्रानागचमूर्द्ध्वं वजैः'—इति कीचकवधयमकम्। 'पद्मानि यस्याग्रसरोरुहाणि प्रबोधयत्यूर्द्ध्वं वमुखैर्मयूखैः'— इति कुमारसम्भवे (१-१६)। दण्डवत्स्थितः (३८६); 'आसीन ऊर्द्ध्वः प्रह्वो वा नियमो यत्र नेदृशः। तदासीनेन कर्तव्यं न प्रह्वेन न तिष्ठता'—इति छन्दोगपरिशिष्टात्। आसीनः; उपविष्टः; 'ऊर्द्ध्वो दण्डवत् स्थितः प्रह्वोऽवनतपूर्वकायः'—इति श्राद्धतत्त्वम्। १०२

ऊर्ध्वन्दमः त्रि. [ऊर्द्ध्वम्+दम्+अच्] ऊर्द्ध्वस्थः; ऊर्ध्वङ्गमः। ३८६

ऊर्ध्वमुखः त्रि. [ऊर्ध्वं मुखं यस्य, ऊर्ध्वं मुखं वा] प्रकृते ध्वजस्य उपरितनभागः; उच्चूलः; ऊर्ध्वकोटिस्थगुच्छकः। ४५८

ऊर्ध्वलोकः पुं. [ऊर्द्ध्वः उपरिस्थो लोकः] स्वर्गः; 'रक्षांस्यखादयदनाययदूर्द्ध्वलोकमाक्रन्दयत्कपिभिरराययदाशु रामः'- इति मुग्धबोधव्याकरणे। ३

ऊर्मिः स्त्री- पुं. [ऋच्छतीति। ऋ गतौ, 'अर्ते रूच्च' इति उणादिसूत्रेण मि, अर्तेरूरादेशश्च] तरङ्गः; 'तमाधूतध्वजपटं व्योमगङ्गोर्मिवायुभिः'—इति रघुवंशे (१२-८५)। प्रकाशः; वेगः; भङ्गः; वस्त्रसङ्कोचरेखा। वेदना, पीडा, उत्कण्ठा, बुभुक्षादयः षट्, यथा—'बुभुक्षा च पिपासा च प्राणस्य मनसः स्मृतौ। शोकमोहौ शरीरस्य जरामृत्यू षडूर्मयः॥' 'शोकमोहौ जरामृत्यू क्षुत्पिपासे षडूर्मयः'—इति श्रीधरी। अश्वगतिभेदः; 'पङ्क्तीकृतानामश्वानां नमनोन्नमनाकृतिः। अतिवेगसमायुक्ता गतिरूर्मिरुदाहृता'—इति यादवः। 'तूर्णं पयोधर इवोर्मिभिरापतन्तः'—इति माघे (५।४)। ६५३

ऊर्मिका स्त्री. [ऊर्मिरिव। 'इवे प्रतिकृताविति' कन्। ऊर्मिं प्रकाशं कायतीति वा। 'आतोनुपेति' क] अङ्गुलीयकम्; अङ्गुलिमुद्रा; उत्कण्ठा; भृङ्गनादः; वस्त्रभङ्गः; वीचिः। ५५९

ऊर्मिमान् [त्] त्रि. [ऊर्मिरस्यास्तीति। ऊर्मि+मतुप्] वक्रः; तरङ्गयुक्तः; 'दीर्घेषु नीलेष्वथ चोर्मिमत्सु जग्राह केशेषु नरेन्द्रपत्नीम्'—इति महाभारते। ६९६

ऊषणम् क्ली. [ऊष्+ल्युट्] मरिचम्; 'मरिचं वेल्लजं कृष्णमूषणं धर्मपत्तनम्'—इति भावप्रकाशः। शुण्ठी; 'शुण्ठी विश्वा च विश्वं च नागरं विश्वभेषजम्। ऊषणं कटुभद्रं च शृङ्गवेरं महौषधम्'—इति भावप्रकाशः। पिप्पलीमूलम्; 'ग्रन्थिकं पिप्पलीमूलमूषणं चटकाशिरः'—इति भावप्रकाशः। ६१६

ऊषरः त्रि. [ऊष+र] क्षारभूमिः; ऊषवान्; 'तत्र विद्या न वप्तव्या शुभं बीजमिवोषरे'—इति मनुः (२।११२)। 'ऊषरा मृत् पित्तं कोपयेत्', 'पित्तमूषरा'—इति वैद्यके। १५८

ऊष्मा [न्] पुं. [ऊष्+मनिन्] उत्तापः; वाष्पः; उष्मा। ६७

ऊहः पुं.- स्त्री. [ऊह्+घञ्] पूर्वप्राप्तस्य उत्क्षेपणम्; अध्याहारः; तर्कः; वितर्कः; वूहः; व्यूहः; वितर्कणम्; अध्याहरणम्; ऊहनं; प्रतर्कणम्; अपूर्वोत्प्रेक्षणम्; असमवेतार्थकपदत्यागपूर्वकसमवेतार्थकपदसमभिव्याहारकरणम्; साकाङ्क्षवाक्यस्य पदान्तरेण आकाङ्क्षापूरणम्; ऊहनम्; आरोपः; 'इमे मनुष्या दृश्यन्ते ऊहापोहविशारदाः। ज्ञानविज्ञानसम्पन्नाः प्रजावन्तोऽथ कोविदाः'—इति महाभारते (१३।१४५।४३)। परीक्षणं; सिद्धिभेदः। १०

ऋ

ऋक्थम् क्ली. [ऋच् स्तुतौ+पातृतुदिवचिरिचिसिचिभ्यस्थक्' इति थक्] धनम्; 'हिरण्यं द्रविणं द्युम्नं विक्तमृक्थं धनं वसु'––इति शब्दार्णवः। स्वर्णम्; 'पुत्रहीनस्य ऋक्थिनः'––इति याज्ञवल्क्यः। दायभागः; 'ऋक्थमूलं हि कुटुम्बम्'—इति दायभागे पितृधनविभागकालेऽभिहितम्। ८०

ऋक्षम् क्ली.–पुं. [ऋष्+सच्, 'स्नुवश्चिकृत्यृषिभ्यः कित्' इति कित्] नक्षत्रम्; 'पूर्वां सन्ध्यां जपंस्तिष्ठेत् सावित्रीमार्कदर्शनात्। पश्चिमान्तु समासीनः सम्यगृक्षविभावनात्'––इति मनुः (२–१०१)। राशिः; 'प्रययावातिथेयेषु वसन्नृषिकुलेषु सः। दक्षिणां दिशमृक्षेषु वार्षिकेष्विव भास्करः'––इति रघुवंशे (१२–२५)। 'ऋक्षेषु नक्षत्रेषु राशिषु वा भास्कर इव'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। ५१

ऋक्षः पुं. [ऋक्ष्+अच्] भल्लूकः; 'वृको मृगेभं व्याघ्रोऽश्वं फलमूलं तु मर्कटः। स्त्रीमृक्षः स्तोकको वारि यानान्युष्ट्रः पशूनजः'—इति मनुः (१२–६७)। पर्वतविशेषः; 'माहेन्द्रशुक्तिमलयर्क्षकपारियात्राः सह्यः सविन्ध्य इह सप्त कुलाचलाख्याः'—इति सिद्धान्तशिरोमणौ। शोणाकवृक्षः; श्योनाकप्रभेदः; अजमीढपुत्रः; 'धूमिन्या स तया देव्या त्वजमीढः समेयिवान्। ऋक्षं स जनयामास धूमवर्णं सुदर्शनम्'—इति हरिवंशे। विदूरथस्य पुत्रः; 'विदूरथस्य दायाद ऋक्ष एव महारथः'–इति हरिवंशे (३२-१०४)। अरिहस्य पुत्रः; 'अरिहः खल्वाङ्गेयीमुपयेमे सुदेवां नाम तस्यां पुत्रमजीजनदृक्षम्'–इति हरिवंशे (९५–२४)। एतेन पुरुवंशे त्रय एव ऋक्षनामानो राजानः सम्भूताः। २२८

ऋक्षेशः पुं. [ऋक्षाणां नक्षत्राणामीशः] चन्द्रः; जाम्बवान्। ४२

ऋजु त्रि. [अर्जयति गुणान्। अर्ज् अर्जने, 'अर्जिदृशीति' साधु] अवक्रम्; अजिह्मं; प्रगुणं; प्राञ्जलः; सरलः; 'उमां स पश्यन् ऋजुनैव चक्षुषा'—इति कुमारसम्भवे (५–३२)। 'ऋजवस्ते तु सर्वे स्युरव्रणाः सौम्यदर्शनाः' —इति मनुः (२–४७)। स्त्रियां ङीष्पक्षे–'ऋज्वीर्दधानैरवतत्य कन्धराश्चलावचूडाः कलघघरारवैः'—इति माघे (१२–१८)। अनुकूलम्; 'ऋजुहस्त ऋजुवनिः' 'ऋजुहस्तस्तदनुकूलहस्तः'—इति भाष्यम्। शोभनम्; 'धारवाकेष्वृजुगाथः', 'ऋजुगाथः शोभनस्तुतिकः' इति भाष्यम्। पुं. वसुदेवपुत्रभेदः; 'ऋजुं समर्दनं भद्रं सङ्कर्षणमहीश्वरम्'—इति भागवते (९।२४।५४)। ५७

ऋणम् क्ली. [ऋ+क्त, 'ऋणमाधमर्ण्ये' इति णत्वम्] धारः; उद्धारः; पर्युदञ्चनम्; 'देवानां च पितॄणां च ऋषीणां च तथा नरः। ऋणवान् जायते यस्मात् तन्मोक्षे प्रयतेत् सदा॥ देवानाम् अनृणो जन्तुर्यज्ञैर्भवति मानवः। अल्पवित्तश्च पूजाभिरुपवासव्रतैस्तथा॥ श्राद्धेन प्रजया चैव पितॄणामनृणो भवेत्। ऋषीणां ब्रह्मचर्येण श्रुतेन तपसा तथा'—इति विष्णुधर्मोत्तरे। जलदुर्गमभूमिः; 'दशार्णो देशः, दशार्णा नदी, उभयत्र ऋणशब्देन जलदुर्गमभूमिरुच्यते'—इति मुग्धबोधे टीकायां दुर्गादासः। 'ऋणशब्दो दुर्गभूमौ जले च'—इति सिद्धान्तकौमुदी। अङ्कशास्त्रोक्तः कुतश्चिदपि राश्यन्तराद् वियोज्यः संख्यावान् पदार्थः; 'योगे युतिः स्यात् क्षययोः स्वयोर्वा, धनर्णयोरन्तरमेव योगः'––इति भास्करीयबीजगणिते। [ऋणतीति, ऋण् गतौ, तस्मात् क] त्रि. गन्ता; गमनशीलः; शीघ्रगन्ता; 'सद्यो यः स्यन्द्रो विषितो यवीयानृणो न तायुरतिधन्वा राट्'—इति ऋग्वेदे (६।१२।५)। 'ऋणः शीघ्रगन्ता'—इति भाष्यम्। ५७२

ऋतम् क्ली. [ऋ+क्त] सत्यम्; 'साक्ष्येऽनृतं वदन् पाशैर्बध्यते वारुणैर्भृशम्। विवशः शतमाजातीस्तस्मात् साक्ष्यं वदेदृतम्'—इति मनुः (८–८२)। उञ्छशिलम्; 'ऋतामृताभ्यां जीवेत्तु मृतेन प्रमृतेन वा। सत्यानृताभ्यामपि वा न श्ववृत्त्या कदाचन॥ ऋतमुञ्छशिलं ज्ञेयम् अमृतं स्यादयाचितम्। मृतन्तु याचितं भैक्षं प्रमृतं कर्षणं स्मृतम्—इति मनुः (४–४, ५)। जलम्; 'तन्म ऋतं पातु शतशारदाय'–इति ऋग्वेदे (७।१०१।६) 'ऋतमुदकम्'—इति भाष्यम्। कर्मफलम्; 'ऋतं पिबन्तौ सुकृतस्य लोके'––इति श्रुतिः। विष्णुः; 'भगवान् वासुदेवश्च कीर्त्यतेऽत्र सनातनः। स हि सत्यमृतञ्चैव पवित्रं पुण्यमेव च। शाश्वतं ब्रह्म परमं ध्रुवं ज्योतिः सनातनम्'—इति महाभारते (१।१।२५३)। सूर्यः; 'ब्रह्म वा ऋतं ब्रह्म हि मित्रे

ब्रह्म ऋतं ब्रह्म एवायु:'—इति शतपथब्राह्मणे। परब्रह्म; 'ऋतमेकाक्षरं ब्रह्म'—इति श्रुतिः। सत्याचारः; 'सुतो मित्राय वरुणाय पीतये चारूर्ऋताय पीतये'—इति ऋग्वेदे (१।१३७।२) 'ऋताय सत्याचाराय'—इति दयानन्दभाष्यम्। रुद्रः; 'ऋतमित्यस्य कालाग्नी रुद्र ऋषिरनुष्टुप्छन्दो रुद्रो देवता रुद्रोपस्थाने विनियोगः'—इति सामगाना सन्ध्यामन्त्रे। देवभेदः; 'ऋतस्य हि सुरधः सन्ति पूर्वीर्ऋतस्य धीतिर्वृजिनानि हन्ति'—इति ऋग्वेदे (४-२३-८) 'ऋतस्य ऋतदेवस्य'—इति भाष्यम्। यज्ञः; 'ऋतचिद्भिः सत्यम्'—इति ऋग्वेदे (१।१४५।५) 'ऋतस्य यज्ञस्य जलस्य वा चिद् ज्ञाता'—इति सायणभाष्यम्। अग्नेर्ऋषिभेदः; 'ऋतं च सत्यं च'–इति यजुषि (१७।८२)। त्रि. पूजितः; दीप्तः। १४४

ऋतिः स्त्री. [ऋ+करणे क्तिन्] वर्त्म; कल्याणं; जुगुप्सा; स्पर्द्धा; [भावे क्तिन्] गमनम्; अशुभं; पुरुषमेधयज्ञीयदेवभेदः; 'ऋतये स्तेन हृदयम्'–इति यजुर्वेदे (३०।१३)। पुं. शत्रौ इति निरुक्तिः। ८१५

ऋतुः पुं. [ऋ+'अर्त्तेश्च तुः' इति तु चकारात् कित् च] कालविशेषः; मासद्वयं; स तु षड्विधः—मार्गशीर्षौ हिमः १, माघफाल्गुनौ शिशिरः २, चैत्रवैशाखौ वसन्तः ३, ज्येष्ठाषाढौ ग्रीष्मः ४, श्रावणभाद्रौ वर्षाः ५, आश्विनकार्तिकौ शरत् ६। 'शिशिरः पुष्पसमयो ग्रीष्मो वर्षाशरद्धिमाः। माघादिमासयुग्मैः स्युर्ऋतवः षट् क्रमादमी'–इति भावप्रकाशः। (७९४) स्त्रीकुसुमं; रजः; पुष्पम्; आर्तवम्; 'ऋतुकालाभिगामी स्यात् स्वदारनिरतः सदा। पर्ववर्ज व्रजेदेनां तद्व्रतो रतिकाम्यया॥ ऋतुः स्वाभाविकः स्त्रीणां रात्रयः षोडश स्मृताः। चतुर्भिरितरैः सार्द्धमहोभिः सद्विगर्हितैः'—इति मनुः (३।४५।४६)। शिवः; 'ऋतुः संवत्सरो मासः पक्षः संख्यासमापनः'—इति महादेवसहस्रनामकथने। विष्णुः; 'ऋतुः सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः'—इति विष्णुसहस्रनामकथनं। दीप्तिः; मासः; सुवीरः। ११३

ऋते अव्य. [ऋत+के] विना; वर्जनम्; 'अवेहि मां प्रीतमृते तुरङ्गमात्'—इति रघुवंशे (३-६३)। 'अंशादृते निषिक्तस्य नीललोहितरेतसः'—इति कुमारसम्भवे (२।५७)। ८७६

ऋभुः पुं. [ऋ स्वर्गे देवमातुरदितेर्वा भवति यः। ऋ+भू+डु] देवता; 'ऋभुर्न रथ्यं नवं दधतो केतुमादिशे'–इति ऋग्वेदे (९।२१।६)। देवानामपि देवः; 'ऋभवो नाम तत्रान्ये देवानामपि देवताः। तेषां लोकाः परतरे यान्यजन्तीह देवताः'—इति महाभारते। चाक्षुषमन्वन्तरे देवगणभेदः; 'आद्याः प्रभूता ऋभवः पृथुकाश्च दिवौकसः'—इति हरिवंशे। ४

ऋश्यः पुं.–स्त्री. [ऋश्+क्यप्] मृगविशेषः, 'ऋश्यो न तृष्यन्नव पानमागहि'—इति ऋग्वेदे (८।४।१०)। २३०

ऋषभः पुं. [ऋष्+'ऋषिवृषिभ्यां कित्' इति अभच् किच्च] वृषः; 'उप ऋषभस्य रेतस्युपेन्द्र तव वीर्ये'—इति ऋग्वेदे (६।२८।८)। कर्णरन्ध्रं; कुम्भीरपुच्छः; उत्तरपदे श्रेष्ठवाचकः—'स्युरुत्तरपदे व्याघ्रपुङ्गवर्षभकुञ्जराः। सिंहशार्दूलनागाद्याः पुंसि श्रेष्ठार्थवाचकाः'—इत्यमरः। पर्वतविशेषः; वराहपुच्छः; आदिजिनः; भगवदवतारविशेषः; 'तस्य ह वा एवं मुक्तलिङ्गस्य भगवत ऋषभस्य योगमायावासनया देह इमां जगतीमभिमानाभासेन चङ्क्रममाणः'—इति भागवते (५।६।७)। स तु सत्ययुगे अग्नीध्रसुतनाभिराजपुत्रत्वेन जातः। तस्य पुत्रः जडभरतः—'अग्नीध्रसूनोर्नाभेस्तु ऋषभोऽभूत् सुतो द्विजः। ऋषभाद्भरतो जज्ञे वीरः पुत्रशताद्वरः'—इति मार्कण्डेये। स्वारोचिषे मन्वन्तरे ऋषिभेदः; 'ऊर्जस्तम्बस्तथा प्राणो दत्तोलिर्ऋषभस्तथा'—इति मार्कण्डेये। ऋषभसहस्रदक्षिण एकाहनिष्पाद्यो यागभेदः; 'पूर्वं ऋषभसंज्ञो राज्ञः'—इति गर्गः। यज्ञतुरपुत्रो नृपभेदः; 'एकविंशस्तोमेन ऋषभो याज्ञतुर ईजे शिक्नानां राजा तदेतद्गाथयाऽभिगीतम्'—इति शतपथब्राह्मणे (१३।५।४।१५)। अष्टवर्गान्तिर्गतौषधिविशेषः; वृषः; ऋषभकः; वीरः; गोपतिः; धीरः; विषाणी; दुर्द्धरः; ककुद्मान्; पुङ्गवः; वोढा; शृङ्गी; धूर्यः; भूपतिः; कामी; रूक्षप्रियः; उक्षा; लाङ्गूली; गौः; बन्धुरः; गोरक्षः; वनवासी। 'ऋषभो वृषभो धीरो विषाणी द्राक्ष इत्यपि'—इति भावप्रकाशः। सप्तस्वरान्तर्गतद्वितीयस्वरः; 'षड्जं रौति मयूरो हि गावो नर्दन्ति चर्षभम्'—इति नारदसंहितायाम्। 'स्वरमृषभं चातको ब्रूते'—इति सङ्गीतदर्पणे। 'नाभिमूलाद्यदा वर्ण उत्थितः

कुरुते ध्वनिम्। वृषभस्येव निर्याति हेलया ऋषभः स्मृतः'—इति सङ्गीतदामोदरः। 'ऋग्वेदात् षड्ज-ऋषभौ यजुषो मध्यधैवतौ। सामवेदात् समुद्भूतौ तथा गान्धारपञ्चमौ'—इति रत्नावल्याम्।२६३

ऋषिः पुं. [ऋषति प्राप्नोति सर्वान् मन्त्रान् ज्ञानेन, पश्यति संसारपारं वा इति। ऋष्+'इगुपधात् कित्' इति इन् किच्च] ज्ञानसंसारयोः पारगन्ता। शास्त्र-कृदाचार्यः; 'अग्निः पूर्वेभिर्ऋषिभिरीड्यो नूतनैरुत। स देवा एह वक्षति'—इति ऋग्वेदे (१।१।२)। रिषि-र्हलादिश्च; 'विद्याविदग्धमतयो रिषयः प्रसिद्धा—इति प्रयोगात्। 'सप्त ब्रह्मर्षि-देवर्षि-महर्षि-परमर्षयः। काण्डर्षिश्च श्रुतर्षिश्च राजर्षिश्च क्रमावराः'—इति रत्नकोशे। वेदः; किरणः; भृग्वादिमहर्षिसन्तानः; 'भृगुर्मरीचिरत्रिश्च अङ्गिराः पुलहः क्रतुः। मनुर्दक्षो वशिष्ठश्च पुलस्त्यश्चेति ते दश॥ ब्रह्मणो मनसा ह्येते उत्पन्नाः स्वयमीश्वराः। परत्वेनर्षयस्तस्माद्भू-तास्तस्मान्महर्षयः'—इति मत्स्यपुराणे। ४१२

ऋष्यः पुं.- स्त्री. [ऋष् यत्, निपातनात् सिद्धम्] मृगविशेषः; 'ऋष्यशृङ्गः कथं मृग्यामुत्पन्नः काश्य-पात्मजः'—इति महाभारते। 'ऋष्यस्य मृगविशेषस्य शृङ्गमिव शृङ्गं यस्य स ऋष्यशृङ्गः।' 'ऋष्यो नीला-ङ्गको लोके स दोह्य इति कीर्तितः'—इति भावप्रकाशः। कुरुवंशीयो देवातिथिपुत्रः; 'ततश्च क्रोधनस्तस्माद् देवातिथिरमुष्य च। ऋष्यस्तस्य दिलीपोऽभूत् प्रतीपस्तस्य चात्मजः'—इति भागवते (९।२२।११)। २३०

ए

एकम् त्रि. [एतीति, इण् गतौ, 'इणभीकापाशल्यतिम-र्चिभ्यः कन्' इति कन्] केवलं; मुख्यम्; अन्यत्; 'त्वमेको ह्यस्य सर्वस्य विधानस्य स्वयम्भुवः'—इति मनुः (१-३)। 'एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वम्'—इति रघुवंशे (२-४७)। 'ममात्र भावैकरसं मनः स्थिरम्'—इति कुमारसम्भवे (५-८२)। आदिसंख्या; परमात्मा; विधुः; क्षितिः; गणेशदन्तः; शुक्रचक्षुः; अग्निः; सूर्यः; देवराजः; यमः। पुं. ऐलवंशीयो नृपतिभेदः; 'श्रुतायोर्वसुमान् पुत्रः सत्यायोश्च श्रुतंजयः। रयश्च सुत एकश्च जयश्च तनयोऽमितः'—इति भागवते (९।१५।२)। परमेश्वरः; विष्णुः; 'एको नैकः सवः कः किम्', 'परमार्थतः सजातीयविजातीयस्वगत-भेदराहित्यादेकः'—इति भाष्यम्। ७८७

एककुण्डलः पुं. [एकं कुण्डलं यस्य] बलरामः; कुबेरः। (७८८) २८

एकतानः त्रि. [एकं भावरसं तनोति इति। तनु विस्तारे, कर्मण्यण्] एकाग्रः; एकविषयासक्तचित्तः; 'ब्रह्मादयः सुरगणा मुनयोऽथ सिद्धाः सत्त्वैकतानमतयो वचसां प्रवाहैः। नाराधितुं पुरुगुणैरधुनापि पिप्रुः किं तोष्टुमर्हति स मे हरिरुग्रजातेः॥' [एकस्तानो विस्तृतिर्यस्येति] एकताले पुं.। ५३४

एकदंष्ट्रः पुं. [एका दंष्ट्रा यस्य। परशुरामेण एकदन्तस्य उत्पाटनात् तथात्वम्] गणेशः। १८

एकदन्तः पुं. [एको दन्तो यस्य] गणेशः; 'एकदा रहसि स्थितयोःशिवाशिवयोर्द्वारपालत्वम् अङ्गीकृतं गजाननेन। एतस्मिन्नन्तरे परशुरामः शिवं द्रष्टुमागतः। शिवदर्शन-व्याकुलस्यान्तर्जिगमिषोर्द्वाररोधे कृते गणपतिना सह तस्य तुमुलं युद्धमभवत्। परशुरामक्षिप्तेन परशुना च गजाननस्यैकदन्तो भग्नः। तदा प्रभृत्येव असौ एकदन्तः कथ्यते'—इति ब्रह्मवैवर्ते। १८

एकदृक् [श्] पुं. [एकं सर्वमभिन्नं पश्यति यः। एकदृश्+क्विप्, अथवा एका दृक् यस्य। रामबाणमोक्षणेन नष्टे एकचक्षुषि काकस्य तथात्वम्] काकः; शिवः; महादेवः; काणे त्रि.। ब्रह्मज्ञानी; [एकमेव सर्वं ब्रह्मत्वेन पश्यति यः इति व्युत्पत्त्या] तत्त्ववेत्ता। (एकमेव पक्षं पश्य-तीत्यर्थे) एकपक्षाश्रयी। २४५

एकदेशः पुं. [एकश्चासौ देशः] एकभागः; अवयवः; अंशः। ७४४

एकपदम् क्ली. [एकं पदं पदमात्रोच्चारणकालो यस्मिन्] तत्कालः; तत्क्षणम्; 'कथमेकपदे निरागसं जनमा-भाष्यमिमं न मन्यसे'—इति रघुवंशे (८-४८) 'एकपदे तत्क्षणे—'स्यात् तत्क्षण एकपदमिति'—विश्वः' इति तट्टीका। एकं प्रशस्तं पदं स्थानम्, इत्यमरोक्तेस्तथात्वम्। वैकुण्ठं; सुप्तिङन्तरूपं पदम् 'निहन्त्यरीनेकपदे य उदात्तः स्वरानिव'—इति माघे (२-९५)। एकं श्रेष्ठं पदं कोष्ठरूपपूजास्थानम्; वास्तुमण्डलस्थमेककोष्ठात्मकं स्थानम्; 'इन्द्रश्चेन्द्रात्मजश्चोभावेकैकपदसंस्थितौ'—

इति देवीपुराणे। पुं. शृङ्गारबन्धविशेषः; 'पादमेकं हृदि स्थाप्य द्वितीयं स्कन्धसंस्थितम्। स्तनौ धृत्वा रमेत् कामी बन्धस्त्वेकपदः स्मृतः'—इति रतिमञ्जरी। वास्तुयागमण्डलैककोष्ठपूजनीयो देवभेदः; 'भृगुश्चैकपदो ज्ञेयः'—इति देवीपुराणे। एकपदविशिष्टः [एकं पदं चरणं यस्य इति विग्रहे त्रि.]; 'पादैर्न्यूनं शोचसि मैकपादम् आत्मानं वा वृषलैर्भोक्ष्यमाणम्'—इति भागवते (१।१६।२२)। एकेन पदा चरन् वृषरूपधरो धर्मो गोरूपधरां पृथ्वीं रुदतीं दृष्ट्वोवाच—'हे भद्रे ! पादैर्न्यूनम् एकपादं मां तथा शूद्रैर्भोक्ष्यमाणमात्मानं वा शोचसि किम्।' ७५२

एकपदी स्त्री. [एकः पादो यस्याम्। 'कुम्भपदीषु चेति' निपातः। यद्वा 'संख्यासुपूर्वस्येति' पादस्यान्तलोपः। 'पादोऽन्यतरस्यामिति' ङीप्, 'स्वाङ्गाच्चेति' ङीष् वा, पादः पत्] पन्थाः। २६०

एकयष्टिः स्त्री. [एका यष्टिरिव] हारविशेषः; एकावली; एकयष्टिका, 'एकलड़ा हार' इति भाषा। ५६३

एकाग्रः त्रि. [एकं एकस्मिन् वा अग्रं पुरोगतं ज्ञेयमस्य] अनन्यचित्तः; एकतानः; अनन्यवृत्तिः; एकायनः; एकसर्गः; एकाग्र्यः; एकायनगतः; 'मनुमेकाग्रमासीनमभिगम्य महर्षयः'—इति मनुः (१-१) 'एकाग्रं विषयान्तराव्याक्षिप्तचित्तम्'—इति कुल्लूकभट्टः। 'मनश्चैकाग्रया बुद्ध्या भगवत्यखिलात्मनि। वासुदेवे समाधाय चचार ह परव्रतम्'-इति भागवते (८।१६।३)। 'तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः। उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये'-इति भगवद्गीता (६-१२)। 'एकाग्रं विक्षेपरहितं मनः कृत्वा'—इति स्वामिटीका। अनाकुलः। ५३४

एकान्तः त्रि. [एकस्मिन्नेव अन्तः समाप्तिर्यस्य] निर्जनम्; 'अथ केनापि सस्यरक्षकेण धूसरकम्बलकृततनुत्राणेन धनुःकाण्डं सज्जीकृत्यावनतकायेन एकान्ते स्थितम्'—इति हितोपदेशे। ७०८

एकायनः त्रि. [एकम् अयनं विषयो यस्य] एकाग्रः; एकविषयासक्तचित्तः; 'तानि ह वा एतानि संङ्कल्पैकायनानि सङ्कल्पात्मकानि सङ्कल्पे प्रतिष्ठितानि'—इति छान्दोग्योपनिषदि (७-४-२)। एकमयनं गतिर्यत्र, एकमात्रगमनयोग्यः; 'अनेनैव पथा मा वै गच्छेदिति विचार्य सः। आस्त एकायने मार्गे कदलीषण्डमण्डिते'—इति महाभारते (३।१४६।६६)। 'एकायनोऽसौ द्विफलस्त्रिमल.'—इति भागवते। ५३४

एकार्थः त्रि. [एकः अर्थः यस्य] अभिन्नार्थः; तुल्यार्थः; समानार्थवाचकः। ६३१

एकावलिः स्त्री. [एका आवलिः पङ्क्तिः हारविशेषः; एकयष्टिका। ५६३

एकावली स्त्री. [एका श्रेष्ठा आवली माला] एकयष्टिका; 'एकलड़ा हार' इति भाषा। अलङ्कारविशेषः; 'पूर्वं पूर्वं प्रति विशेषणत्वेन परं परम्। स्थाप्यतेऽपोह्यते वा चेत्स्यात्तदैकावली द्विधा॥' क्रमेणोदाहरणम्—'सरो विकसिताम्भोजमम्भोजं भृङ्गसङ्गतम्। भृङ्गा यत्र ससङ्गीताः सङ्गीतं सस्मरोदयम्॥' 'न तज्जलं यन्न सुचारुपङ्कजं, न पङ्कजं तद्यदलीनषट्पदम्। न षट्पदोऽसौ न जुगुञ्ज यः कलं, न गुञ्जितं तन्न जहार यन्मनः'—इति भट्टिः (२-१९)। क्वचिद्विशेष्यमपि यथोत्तरं विशेषणतया स्थापितमपोहितञ्च दृश्यते—'वाप्यो भवन्ति विमलाः स्फुटन्ति कमलानि वापीषु। कमलेषु पतन्त्यलयः करोति सङ्गीतमलिषु पदम्॥' एवमपोहने अपि। ५६३

एडः त्रि. [इलति, इल् स्वप्ने, अच्, डलयोरैक्यम्। यद्वा आ सर्वतः ईड्यते, ईड् स्तुतौ, घञ्] वधिरः; एडकः; मेषः; 'श्वैडवराहेषूदधारा प्राचीदं विष्णुः'—इति कात्यायनः। ६०९

एडगजः पुं. [एडो मेष एव गजो यस्य, भञ्जकत्वात्] चक्रमर्दकः; 'चक्रमर्दः प्रपुन्नाटो दद्रुघ्नो मेषलोचनः। पद्माटः स्यादेडगजश्चक्री पुन्नाट इत्यपि'—इति भावप्रकाशे। 'सलोमशः सैडगजः करञ्जः'—इति चरके। ६१९

एणः पुं.-स्त्री. [एति द्रुतं गच्छतीति। इ+बाहुलकाद् ण] हरिणः; मृगविशेषः; एणकः; 'अष्टावेणस्य मांसेन रौरवेण नवैव तु'—इति मनुः (३-२६९)। 'एणः कृष्णः प्रकीर्तितः'—इति भावप्रकाशः। २३०

एधः पुं. [इध्यतेऽनेनाग्निः। इन्ध्+'हलश्च' इति करणे घञ्। 'अवोदैधोद्मप्रश्रथहिमश्रथाः' इति घञि नलोपो गुणश्च निपातितः] इन्धनम्; 'एधान् हुताशनवतः स मुनिर्ययाचे'—इति रघुवंशे (९-८१)। ६९

एधः [स्] क्ली. [एध्+असुन्] इन्धनम्; 'यथैधांसि

समिद्धोऽग्निर्भस्मसात् कुरुतेऽर्जुन'—इति भगवद्गीता (४–३७)। ६९

एनः [स्] क्ली. [एति गच्छति प्रायश्चित्तेन। इण्+आगसीत्यसुन् नुडागमश्च] पापम्; अपराधः; निन्दा; 'एनोनिवृत्तेन्द्रियवृत्तिरेनं जगाद भूयो जगदेकनाथः'—इति रघुवंशे (५।२३)। ६२७

एर्वारुः स्त्री. [एरणमिति'। आ+ईर्+सम्पदादित्वात् क्विप्। एरं वृणोति वारयति वा। वृञ्+बाहुलकात् उण्] कर्कटीभेदः; व्यालपत्रा; लोमशा; स्थूला; तोयफला; हस्तिदन्तफला; कर्कटी; 'एर्वारुकं स्वादु शीतं सक्षारं कफवातकृत्। नातिपित्तकरं रुच्यं दीपनं दाहनाशनम्'—इति हारीतः। 'त्रपुसैर्वारुकं स्वादु गुरु विष्टम्भि शीतलम्। एर्वारुकं च सम्पक्वं दाहतृष्णा-क्लमार्तिनुत्'—इति चरकः। एलविलः (७८); पुं. ऐलविलः; कुबेरः। २०९

एषण पुं. [इष् गतौ, ल्यु] लौहमयबाणः। ४६७

एषणा स्त्री. [इषु इच्छायाम्, ल्युट्] इच्छा; कामना; पुत्र-वित्त-लोकेप्सात्रितयम्; 'कामातुरं हर्षशोकभयैष-णार्तं तस्मै कथं तव गतिं विमृशामि दीनः'—इति भागवते (७।९।३८)। ३६०

ऐ

ऐकागारिकः त्रि. [एकमसहायमगारं प्रयोजनमस्य। 'ऐकागारिकट् चौरे' इति इकट् वृद्धिश्च निपातनात्] चौरः; एकागारवासी। ३३८

ऐतिह्यम् क्ली. [इतिह उपदेशपारम्पर्यम्, तदेव। इतिह+'अनन्तावसथेतिहभेषजाञ् ञ्यः' इति स्वार्थे ञ्य] पारम्पर्योपदेशः; इतिह; 'ऐतिह्यमनुमानं च प्रत्यक्ष-मपि चागमम्। ये हि सम्यक् परीक्षन्ते कुतस्तेषाम-बुद्धिता'—इति रामायणे (५।८७।२३)। 'ऐतिह्यं नाम आप्तोपदेशो वेदादिः'—इति चरकः। १४७

ऐन्द्रलुप्तिकः त्रि.— केशघ्नरोगविशिष्टः; खल्लीटः; खलतिः; 'गंजा' इति भाषा। ६०८

ऐन्द्री स्त्री. [इन्द्रस्य शक्रस्य इयम्। इन्द्र+'तस्येदम्' इत्यण् 'टिड्ढेति' ङीप्] पूर्वा दिक्; शची; 'वज्रहस्ता तथैवैन्द्री गजराजोपरि स्थिता'—इति मार्कण्डेये। [इन्द्रस्य योगैश्वर्यशालिनो महादेवस्य पत्नी] दुर्गा; अलक्ष्मीः; इन्द्रवारुणी; एला; 'इलायची' इति भाषा। 'यष्ट्या ह्वमैन्द्री नलिनानि दूर्वा'—इति चरकः। १०१

ऐरावणः पुं. [इरया जलेन वणति शब्दायते। इरा+वण्, पचाद्यच्, तत इरावण एव, स्वार्थे प्रज्ञाद्यण्। यद्वा इरा सुरा वनमुदकं यस्मिन्; 'पूर्वपदादिति' णत्वम्। तत्र भवः, इरावण+अण्] ऐरावतहस्ती; 'श्वेतैर्दन्तै-श्चतुर्भिस्तु महाकायस्ततः परम्। ऐरावणो महानागोऽ-भवद्वज्रभृता धृतः'—इति महाभारते (१।१८।४१)। ६१

ऐरावतः पुं. [इरा जलानि विद्यन्तेऽस्मिन्, मतुप्, इरावान् समुद्रः, तत्र भवः इति। इरावत्+अण्। समुद्रमथनो-त्थितत्वादस्य तथात्वम्। यद्वा इरावत्या विद्युत अयम्, 'तस्येदमि' त्यण्] इन्द्रहस्ती; अभ्रमातङ्गः; ऐरावणः; अभ्रमुवल्लभः; श्वेतहस्ती; चतुर्दन्तः; मल्लनागः; इन्द्रकुञ्जरः; हस्तिमल्लः; सदादानः; सुदामा; श्वेतकुञ्जरः; गजाग्रणीः; नागमल्लः; 'ऐरावता-स्फालनकर्कशेन'—इति कुमारसम्भवे (३–२२)। 'प्रावृषेण्यं पयोवाहं विद्युदैरावताविव'—इति रघुवंशे (१–३६)। पूर्वदिग्गजः (१०१); स तु इन्द्रहस्ती शुक्लवर्णः चतुर्दन्तः समुद्रमथनोत्थितः। नागरङ्गः; लकुचवृक्षः; 'ऐरावतं दन्तशठमम्लं शोणितपित्तकृत्'—इति सुश्रुतः। नागभेदः; इरावत्या नद्याः सन्निकृष्टो देशः [इरावती+अण्] 'बभूव परमाश्वानामैरावतपथे यथा'—इति महाभारते (३।१६२।३३)। क्ली. इन्द्रस्य ऋजुदीर्घं धनुः; 'इन्द्रधनुष' इति भाषा। ६१

ऐरावती स्त्री. [इरा जलानि विद्यन्तेऽस्य, इरावान् मेघः तस्य इयम्। इरावत्+'तस्येदम्' इति अण्+ङीप्] विद्युत्; विद्युद्विशेषः; ऐरावतभार्या; वटपत्रीवृक्षः; पञ्चालदेशीय नदीविशेषः; अधुना 'रावी' इति ख्याता। उत्तरमार्गे नक्षत्रविशेषाणां संज्ञाभेदः; 'पुष्याश्लेषा तथादित्या वीथी चैरावती स्मृता।' ६०

ऐलविलः पुं. [इलविलाया अपत्यं पुमान्। इलविल+अण्] इलविलापुत्रः; कुबेरः; ऐडविडः; ऐडविलः; ऐलविलः; एलविलः। ७८

ओ

ओकम् क्ली. [उचेरिगुपधलक्षणे के गुणः कुत्वं च 'ओक उचः के' इति निपात्यते] गृहम्; आश्रयः; पुं. पक्षी; वृषलः। २९७

ओकः [स्] क्ली. [उच्यते समवैति अस्मिन्। उच् + असुन्, गुणः, न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्] आश्रयः; गृहम्; 'जलौका अथ भल्लुके'–इति अमरकोषः। 'सप्तर्षीणां तु यत्स्थानं स्मृतं तद्वै वनौकसाम्'—इति विष्णुपुराणम् (१।६।३७)। २९७

ओघः पुं. [उच् समवाये+घञ्, पृषोदरादित्वात् साधुः] समूहः; द्रुतनृत्यगीतवाद्यं; जलवेगः; 'रविपीतजला तपात्यये पुनरोघेन हि युज्यते नदी'—इति कुमारसम्भवे (४–४४)। परम्परा; उपदेशः। ६८६

ओङ्कारः पुं. [ओम्+कारप्रत्ययः] प्रणवः; ओम्; 'ओङ्कारं पूर्वमुच्चार्यततो वेदमधीयते'—इति स्मृतिः। 'ओङ्कारश्चाथशब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा। कण्ठं भित्त्वा विनिर्यातौ तस्मान्माङ्गलिकावुभौ॥' 'प्राणायामैस्त्रिभिः पूतस्तत ओङ्कारमर्हति'–इति मनुः (२–७५)। ८

ओजः [स्] क्ली. [उब्जत्यनेन। उब्ज् आर्जवे, 'उब्जेर्बले बलोपश्च' इति असुन् बलोपश्च, गुणः] बलम्; 'रुद्रौजसा तु प्रहृतं त्वयास्याम्'—इति रघुवंशे (२–५४)। 'तेषामिदं तु सप्तानां पुरुषाणां महौजसाम्'–इति मनुः (१।१९)। दीप्तिः; अवष्टम्भः; प्रकाशः; प्रथमतृतीयपञ्चमसप्तमनवमैकादशराशयः; गौडी रीतिः; काव्यगुणः; बहुसमाससंयुक्तवर्णपदाडम्बरः; 'ओजः प्रसादमाधुर्यंगुणत्रितयभेदतः। गौडवैदर्भपाञ्चालीरीतयः परिकीर्तिताः। ओजः समासभूयस्त्वं मांसलं पदडम्बरम्।' तस्योदाहरणम्—'गङ्गोत्तुङ्गतरङ्गसङ्गतजटाजूटाग्रजाग्रत्फणिस्फूर्जत्फूत्कृतिभीतिसंभृतचमत्कारस्फुरत्सम्भ्रमा। आनन्दामृतवापिकां विदधती चित्तं गिरीशप्रभोस्त्वां पायाभ्रवसङ्गमे भगवती लज्जावती पार्वती'—इति काव्यचन्द्रिका। रसादिसप्तधातुसारभागजधातुविशेषः; 'हृदि तिष्ठति यच्छुद्धं रक्तमीषत् सपीतकम्। ओजः शरीरे संजातं तन्नाशान्नाशमृच्छति॥ भ्रमरैः फलपुष्पेभ्यो यथा सम्भ्रियते मधु। तद्वदोजः शरीरेभ्यो धातुः संभ्रियते नृणाम्'—इति वैद्यकम्। अकारान्तोऽपि — 'हृदयं चेतनास्थानमोजश्चाश्रयमुच्यते'—इति शार्ङ्गधरः। ७२३

ओड्रपुष्पम् क्ली. [ओड्रं पुष्पम्] जवा; जपा; 'ओड्रः स्यादोड्रपुष्पञ्च जवाथ हयमारकः'—इति रायमुकुटः। 'ओड्रपुष्पकुसुमप्रियेऽम्बिके'—इति हरानन्दः। २०७

ओतुः पुं.– स्त्री. [अवति गृहमाखुभ्यः। अव् रक्षणे+'सितनिगमिमसिसच्यवीति' तुन् 'ज्वरत्वरेति' ऊठ् ततो गुणः] विडालः; यथा सिद्धान्तकौमुद्याम् 'स्थूलोतुः; स्थूलौतुः।' २३६

ओदनः पुं. – क्ली. [उन्द्+'उन्देर्नलोपश्च' इति युच् नलोपश्च] अन्नं; भक्तम्; 'भात' इति भाषा। 'ओदनः क्षालितः स्विन्नः प्रस्रुतो विशदो लघुः। भृष्टतण्डुलजोऽत्यर्थमन्यथा स्याद् गुरुश्च सः'—इति वैद्यके। 'ओदनस्तैः शृतो द्विस्त्रिः प्रयोक्तव्यो यथायथम्। दोषदूष्यादिबलतो ज्वरघ्नः क्वाथसाधितः'—इति वाग्भटः। भक्तमन्नं तथान्धश्च क्वचित् कूरं च कीर्तितम्। ओदनोऽस्त्री स्त्रियां भिस्सा दीदिविः पुंसि भाषितः।' ३१९

ओषधिः स्त्री. [ओषो दाहो दीप्तिर्वा धीयतेऽत्र। ओष+धा+कि] फलपाकान्तवृक्षादिः; कदली-धान्यमित्यादिः; 'उद्भिज्जाः स्थावरा ज्ञेया बीजकाण्डाप्ररोहिणः। ओषध्यः फलपाकान्ता बहुपुष्पफलोपगाः'—इति मनुः (१–४६)। 'भवन्ति यत्रौषधयो रजन्याम्'–इति कुमारसम्भवे (१–१०)। 'अथौषधीनामधिपस्य वृद्धौ'—इति कुमारे (७–१)। 'ओषधयः प्रशुष्यन्ति गवादीनां पयांसि च'—इति हारीते। १८०

ओषधी स्त्री. [ओषधि+ङीष्] ओषधिः; फलपाकान्तवृक्षः। १८०

ओषधीशः पुं. [ओषधीनामीशः] चन्द्रः; ओषधीपतिः; 'ओषधीशः क्रियायोनिरम्भोयोनिरनुष्णभाक्'—इति हरिवंशे। कर्पूरः। ४२

ओष्ठः पुं. [उष्यते दह्यते उष्णाहारेणेति। उष् दाहे+'उषिकुषीति' थन्] दन्ताच्छादकावयवः; रदनच्छदः; दशनवासः; दन्तवासः; दन्तवस्त्रं; रदच्छदः; 'अवनिष्ठीवतो दर्पाद् द्वावोष्ठौ च्छेदयेन्नृपः'—इति मनुः (८–२८२)। 'उमामुखे विम्बफलाधरोष्ठे व्यापारयामास विलोचनानि'—इति कुमारसम्भवे (३–६७)। 'ओठ' इति भाषा। ५२४

ओष्ठी स्त्री. [ओष्ठ इवाचरति पक्वावस्थायाम्। ओष्ठ+क्विप् ततोऽच् ङीप् च] बिम्बफलम्; 'कुन्दरू' इति भाषा। २०३

औ

औत्सुक्यम् क्ली. [उत्सुकस्य भावः, उत्सुक+ष्यञ्] उत्कण्ठा; 'औत्सुक्येन कृतत्वरा सहभुवा व्यावर्तमाना ह्रिया'—इति रत्नावली। 'रथचरणसमाह्वस्तावदौत्सुक्यनुन्ना'—इति माघे (११-२६)। 'इत्यौत्सुक्यादपरिगणयन् गुह्यकस्तं ययाचे'—इति पूर्वमेघे (५)। व्यभिचारिभावभेदः; 'औत्सुक्योन्मादशङ्काः स्मृतिमतिसहिता व्याधिसन्त्रासलज्जाः'—इति साहित्यदर्पणे। इच्छा; 'औत्सुक्यमिच्छा सा च इष्यमाणप्राप्तौ निवर्तते इष्यमाणश्च स्वार्थं इष्टलक्षणत्वात् फलस्य'—इति तत्त्वकौमुद्याम्। ७४२

औदरिकः त्रि. [उदरे प्रसितः। उदर+ठक्] उदरमात्रपूरकः; आद्यूनः; विजिगीषाविवर्जितः; 'आद्यूनः स्यादौदरिके विजिगीषाविवर्जिते'—इत्यमरः। ३५०

औपयिकः त्रि. [उपायेन सञ्जातः। उपाय+ठक्+ह्रस्वश्च] न्याय्यः; उपयुक्तः; 'एतत्तव महाराज तेषु पुत्रेषु चैव ह। वृत्तमौपयिकं मन्ये भीष्मेण सह भारत'—इति महाभारते (१।२०५।१२)। 'वासमौपयिकं मन्ये तव राम महाबल'—इति रामायणे (२।५४।३९)। स्त्रियां तु ङीप्—'न वैश्यशूद्रौपयिकीः कथास्ता न च द्विजानां कथयन्ति वीराः'—इति महाभारते (२।१९४।११)। [स्वार्थे विनयादित्वात् ठक्प्रत्यये कृते उपाय एव औपयिकम्] 'शिवमौपयिकं गरीयसीम्'—इति भारविः (३५)। ७४६

औपवाह्यः पुं. [उपवाह्य, स्वार्थे अण्] राजवाह्यः। २२४

औमीनम् त्रि. [उमानां भवनं क्षेत्रं 'विभाषा तिलमाषोमेति' पक्षे खञ्] उम्यम्; उमाक्षेत्रम्। 'अलसी, तीसी का खेत' इति भाषा। १६३

औरभ्रः पुं. [उरभ्रस्य मेषस्य इदम्। उरभ्र+अण्] कम्बलः; ऊर्णायुः; उर्णयुः; आविकः, रल्लकः; मेषमांसम्; 'द्वौ मासौ मत्स्यमांसेन त्रीन् मासान् हारिणेन तु। औरभ्रेणाथ चतुरः शाकुनेनाथ पञ्च वै'—इति मनुः (३।२६८)। मेषदुग्धम्; 'औरभ्रं मधुरं रूक्षमुष्णं वातकफापहम्। न शस्तं रक्तपित्तानां वातिकानां हितं भवेत्'—इति हारीते। धन्वन्तरिं प्रति प्रश्नकारकः ऋषिभेदः; 'अथ खलु भगवन्तममरवरमृषिगणपरिवृतमाश्रमस्थं काशिराजं दिवोदासं धन्वतरिमौपधेनववैतरणौरभ्रपौष्कलावतकरवीर्यगोपुररक्षितसुश्रुतप्रभृतय ऊचुः'—इति सुश्रुते। ५५१

और्वः पुं. [और्वात् भृगुवंशीयाद् ऋषेर्जातः। और्व+अण्। और्वर्षिक्रोधजत्वात्तथात्वम्] वाडवानलः; स तु भूगोलस्य दक्षिणसीमा। तत्र सर्वे नरका दैत्याश्च वसन्ति। 'स्वादूदकान्तर्वडवानलोऽसौ पाताललोकाः पृथिवीपुटानि'—इति सिद्धान्तशिरोमणिः। भृगुवंशीयऋषिभेदः; पञ्चप्रवरान्तर्गतमुनिविशेषः; 'ततश्च क्रोधजं तात और्वोऽग्निं वरुणालये। उत्ससर्ज स चैवाप उपयुङ्क्ते महोदधौ'—इति पुराणे। उर्वस्यापत्यम्; क्ली. [उर्व्या भवम्, उर्वी+अण्] पांशवलवणम्। ७०

औशीरम् क्ली. [उश्यते, वश्+ईरन्, प्रज्ञाद्यण्। यद्वा उशीरस्येदं, 'तस्येदम्' इत्यण्] शयनासनं; शयनं; स्वापः; शय्या वा आसनम्; 'छत्रं वेष्टनमौशीरमुपानद्व्यजनानि च। यातयामानि देयानि शूद्राय परिचारिणे'—इति महाभारते (१२।६०।३१)। उशीरजं; चामरं; दण्डः; पुं. चामरदण्डः। १२१

औषधम् क्ली. [ओषधेरिदम्। ओषधिरेव वा, 'ओषधेरजातौ' इत्यण्] रोगनाशकद्रव्यम्; [ओषधिभवं, भवार्थे ण्णप्रत्ययः;] भेषजं; भैषज्यम्; अगदः; जायुः जैत्रम्; आयुर्योगः; गदारातिः; अमृतम्, आयुर्द्रव्यम्; 'शोधनं शमनं चेति समासादौषधं द्विधा। शरीरजानां दोषाणां क्रमेण परमौषधम्'—इति वाग्भटः। ६१३

क

कम् क्ली. [कायति शब्दो निर्गच्छति यतः यस्मिन् सतीत्यर्थः, सजिह्वावदास्यशिरोऽन्तर्वर्तित्वात्। यद्वा कायति वर्णात्मकं ध्वन्यात्मकं वा शब्दं करोति जीवः यस्मिन् सतीति यावत्। कै शब्दे, 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति ड। कायति शब्दायते स्रोतोवेगेनालोडनेन वेति यावत्] जलम्; 'सूर्योऽग्निः खं मरुद्गावः सोमः सन्ध्याहनी दिशः। कं कुः कालो धर्म इति ह्येते दैह्यस्य साक्षिणः॥' शिरः; 'द्वाभ्यामोष्ठौ द्विरुन्मृज्य चैकेन क्षालयेत्करम्। मुखघ्राणनेत्रश्रोत्रनाभ्युरस्कं भुजौ क्रमात्'—इति तन्त्रसारे। सुखम् [कायन्ति आनन्दोत्सवध्वनिं कुर्वन्ति यस्मिन् समागते उपस्थिते इत्यर्थः, गृहिण इति

शेषः। आनन्दध्वनेस्तु सुखानुवर्तित्वात्] 'प्राणो ब्रह्म कं ब्रह्म खं ब्रह्मेति स होवाच विजानाम्यहं यत् प्राणो ब्रह्म कञ्च तु खञ्च तु न विजानामीति। ते होचुर्यद् वाव कं तदेव खं यदेव खं तदेव कमिति प्राणं च हास्मै तदाकाशं चोचुः'–इति छान्दोग्योपनिषदि (४।१०।५)। केशः [कचते दीप्यते मस्तकोपरि शोभते इति भावः। यद्वा कच्यते बध्यते सयम्यते कराभ्याम्। कच् बन्धने, ड]; पुं. ब्रह्मा; विष्णुः; प्रजापतिः; दक्षः; कामदेवः; अग्निः; वायुः; यमः; सूर्यः; आत्मा; राजा; ग्रन्थिः; मयूरः; मनः; शरीरं; कालः; धनं; शब्दः; प्रकाशः; कः; त्रि. सर्वनाम। (८४७) सुखं; वायुः; जलं; ब्रह्म; मस्तकः (शेषार्था उपरि द्रष्टव्याः)। ६४८

कंसजित् पुं. [कंसं जयति जितवान् वा। कंस+जि, कर्तरि क्विप्] श्रीकृष्णः। २५

ककुदः पुं.–क्ली. [कं सुखम् उत्कर्षं वा कौति प्रकाशयति। धातूनामनेकार्थत्वात् कुधातुरत्र प्रकाशनार्थः अन्तर्ण्यन्तार्थश्च। कु+क्विप्+तुक् च, पृषोदरादित्वात् तस्य दः। यद्वा कस्य सुखस्य शरीरस्य वा कुं भूमिमूलम् आकरमिति यावत्, ददातीति। ककु+दा+क। यद्वा 'ककुदस्यावस्थायां लोपः', अर्द्धर्चादिः] वृषाङ्गम्; वृषपृष्ठस्थमांसपिण्डम्; 'सुपार्श्वं विपुलस्कन्धं सुरूपं चारुदर्शनम्। ककुदं तस्य चाभाति स्कन्धमापूर्य धिष्ठितम्'—इति महाभारते (३।१४।२३९)। (८२१) पर्वताग्रभागः; शृङ्गम्; प्राधान्यम्; 'इक्ष्वाकुवंश्यः ककुदं नृपाणां ककुत्स्थ इत्याहितलक्षणोऽभूत्। काकुत्स्थशब्दं यत उन्नतेच्छाः श्लाघ्यं दधत्युत्तरकोशलेन्द्राः'—इति रघुवंशे (६-७१)। 'ऊर्द्ध्वो बिन्दुरुदचरद् ब्रह्मणः ककुदादधि'—इति अथर्ववेदे (११।१०।१९)। राजचिह्नम्; तत्तु श्वेतच्छत्रादि; 'अथ स विषयव्यावृत्तात्मा यथाविधि सूनवे। नृपतिककुदं दत्त्वा यूने सितातपवारणम्'—इति रघुवंशे (३।७०)। २६६

ककुद्मान् [त्] पुं. [ककुदस्यास्तीति। मतुप्, 'मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः' इति न मस्य वकारत्वम्] वृषः; 'तुषारसंघातशिलाः खुराग्रैः समुल्लिखन् दर्पकलः ककुद्मान्'—इति कुमारे (१-५६)। पर्वतः; 'ककुद्मान् पर्वतवरः सरिन्नामानि मे शृणु'—इति विष्णुपुराणे (२।४।२)। ऋषभौषधम्; ऊर्मिः; 'ऊर्मिः प्रतूर्तिः ककुद्मान्'—इति यजुर्वेदे (९।६)। २६३

ककुद्मती स्त्री. [ककुदिव वृषस्कन्धवत् अतिशयितो मांसपिण्डः अस्त्यस्याम्। मतुप्, यवादित्वान्न मस्य वत्वं, स्त्रियां ङीप्] कटिः; 'कमर' इति भाषा। ५१२

ककुप् [भ्] स्त्री. [कं वातं स्कुभ्नाति विस्तारयति या। स्कुभ् इति सौत्रः, क्विप्, पृषोदरादित्वात् सलोपः] दिक्; प्रवेणी; शोभा; चम्पकमाला; शास्त्रम्। १००

ककुभः पुं. [कस्य वातस्य कुः भूमिः स्थानं प्रकाशरूपविशेष इति यावत्, भातऽस्मात्। ककु+भा+क। यद्वा कं वातं स्कुभ्नाति विस्तारयति, क+स्कुम्भ्+क, पृषोदरादित्वात् सलोपः] अर्जुनवृक्षः; 'गोधूमककुभचूर्णं छागपयो गव्यसर्पिषा पक्वम्। मधुशर्करासमेतं शमयति हृद्रोगमुद्धतं पुंसाम्॥ मूलं नागबलायास्तु चूर्णं दुग्धेन पाययेत्। हृद्रोगश्वासकासघ्नं ककुभस्य च वल्कलम्॥ रसायनं परं बल्यं वातजिन्मासयोजितम्। संवत्सरप्रयोगेण जीवेद् वर्षशतं नरः'—इति चक्रदत्तः। वीणाङ्गं; प्रसेवकः; वीणाप्रान्तवक्रकाष्ठम्; दण्डाधः शब्दगाम्भीर्यार्थं दारुमयं भाण्डं यच्चर्मणाच्छाद्य दीयते तदित्यन्ये। वीणास्थितालाबुफले—इत्यपरे। रागविशेषः; शिवः; 'हर्यक्षः ककुभो वज्री शतजिह्वः सहस्रपात्'—इति शिवसहस्रनामकीर्तने। १९५

ककुभा स्त्री. [केन आदित्येन कुत्सितानि भानि नक्षत्राण्यस्याम्] रागिणीविशेषः; दिक्; [केन सूर्येण दिनप्रकाशेनेति भावः; कुत्सिता भाति। भा दीप्तौ इति धातोः सुपीति क भिदाद्यङ् वा। रात्रावेवास्या माधुर्यस्याधिक्यमिति तात्पर्यार्थः] १०४ अ.

कक्खटः त्रि. [कक्खति हसति यः। प्रफुल्लमुखो जनः इति व्युत्पत्त्यर्थः, अन्यस्तु रूढ्यर्थः। कक्ख+अटन्। अथवा कक्खं प्रसन्नभावं अटति कर्कशान्तवृत्तित्वात्, कक्ख्+अट्+अच्। यदा काठिन्यं वर्तते तदा कक्खति कृष्ट्या प्रकाशयति वर्णान्, अन्तर्णिजर्थः] कठिनः। ३४२

कक्षः पुं. [कषतीति, कष् हिंसायाम्, 'वृतृवदिहनिकमिकषिभ्यः सः' इति स] कच्छः; 'कक्षघ्नः शिशिरघ्नश्च महाकक्षे बिलौकसः। न दहेदिति चात्मानं यो रक्षति स जीवति'—इति महाभारते 'महाकक्षे बृहत्कच्छे' इत्यर्थः। तृणं; वीरुत्; 'यथोद्धरति निर्दाता कक्षं धान्यं च रक्षति'—इति मनुः (७।११०)। **बाहुमूलम्**;

'काँख,बगल' इत्यादि भाषा। कक्षा (५२५); 'बदर्यरूपान् प्रतिगृह्य काञ्चनानक्षान् स कक्षे परिरभ्य वाससा'—इति महाभारते (४।६।१)। शुष्कतृणम्; 'प्रक्षिप्योर्दर्चिषं कक्षे शेरते तेऽभिमारुतम्'—इति माघे (२-४२)। शुष्कवनं; पापम्; अरण्यम्; 'अयमग्निर्दहन् कक्षमित आयाति भीषणः'-इति महाभारते (१।२३१।३)। भित्तिः; पार्श्वः; 'तस्य वानरसिंहस्य क्रममाणस्य सागरम्। कक्षान्तरगतो वायुर्जीमूत इव गर्जति'—इति रामायणे। ८३३

कक्षा स्त्री. [कष् हिंसादौ+स टाप् च] बाहुमूलम्; कक्षः; हस्तिरज्जुः; काञ्ची; गेहप्रकोष्ठकः; 'तस्मिन्नतीत्य मुनयः षडसज्जमानाः कक्षाः समानवयसावथ सप्तमायाम्'—इति भागवते (३।१५।२७)। भित्तिः; साम्यं; रथभागः; अन्तरीयपश्चिमाञ्चलम्; परिधानवस्त्रस्य पृष्ठतो निहिताञ्चलम्; उद्ग्राहिणी; 'आँचल' इति भाषा। 'परिधानाद् बहिः कक्षा निबद्धा ह्यासुरी भवेत्'-इति याज्ञवल्क्यः। 'एभिः कक्षैः परीधत्ते यो विप्रः स शुचिः स्मृतः'—इति स्मृतिः। स्पर्द्धापदं; रुद्रः; कक्ष्या; हस्तिमध्यदेशबन्धनरज्जुः; क्षुद्ररोगवशेषः; 'कक्षाञ्च गन्धनाम्नीं च चिकित्सति चिकित्सकः। पैत्तिकस्य विसर्पस्य क्रियया पूर्वमुक्तया'—इति भावप्रकाशः। 'बाहुपार्श्वांसकक्षेषु कक्षमित्यभिनिर्दिशेत्। पित्तप्रकोपसम्भूतां कृष्णस्फोटां सवेदनाम्'—इति माधवकरः। ५२५

कक्षापटः पुं. [कक्षाकारः हस्तिरज्जुतुल्यः पटो वस्त्रम्] कौपीनम्; गृहभित्तिस्थपटः; कक्षायाः गृहप्रकोष्ठस्य पटः। ४११

कक्ष्या स्त्री. [कक्षे भवा। कक्ष+शरीरावयवत्वात् यत् टाप् च] गजमध्यबन्धनचर्मरज्जुः; चूषा; वरत्रा; वृषा; दृष्या; दूष्या; कक्षा; कक्षरज्जुः; चर्मरज्जुः; हर्म्यादिप्रकोष्ठः; राजगृहादेर्वेष्टनावच्छिन्नो देशः; 'महल' इति भाषा। 'प्रविश्य प्रथमां कक्ष्यां द्वितीयायां ददर्श सः'-इति रामायणे (२।२०।११)। काञ्ची; अन्तर्गृहम्; 'क्रान्तानि पूर्वं कमलासनेन कक्ष्यान्तराण्यद्रिपतेर्विवेश'-इति कुमारसम्भवे (७-७०)। सादृश्यम्; उद्योगः; बृहतिका; उत्तरीयवस्त्रं; गुञ्जा। २२१

कङ्कटः पुं. [कं देहं कटति आवृणोतीति। क+कट्+अच्, अथवा ककि लौल्ये, कङ्कते क्षणेन नाशतां याति अचिरस्थायित्वात्, ककि+अटन्] कवचः; कङ्कटकः; 'सर्वायुधैः कङ्कटभेदिभिश्च'—इति रघुवंशे (७-५९)। ४५९

कङ्कणम् क्ली. [कं शुभं कणतीति। क+कण् शब्दे, कर्तरि अच्, पृषोदरादित्वाण्णत्वम्] हस्ताभरणभेदः; करभूषणं; कौशुकं; हस्तसूत्रम्; 'मृणालगौरं सितिवाससं स्फुरत् किरीटकेयूरकटित्रकङ्कणम्'—इति भागवते (६।१६।३०)। मण्डनं; शेखरः। ५५८

कङ्कतम् क्ली. [कङ्कते शिरोमलं प्राप्नोतीति। ककि गतौ, +अतच्] कङ्कतिका; 'कंघी' इति भाषा। ३११

कङ्कतः पुं. [कङ्कते भूमिं भित्वा उद्गच्छति झटिति नाशं गच्छति वा। 'ककि गतौ' इति धातोः अतच्] केशप्रसाधनी; कङ्कती; प्रसाधनी; प्रसाधनं; फली; फलिका; फलिः; नागबला। ३११

कङ्कपत्रः पुं. [कङ्कस्य पक्षिविशेषस्य पत्रमेव पत्रं पक्षो यस्य] बाणविशेषः; 'विव्यधुर्घोररूपास्ते कङ्कपत्रैरजिह्मगैः'—इति रामायणे (१-२८-४)। कङ्कस्य पक्षिविशेषस्य पत्रम्; 'नखप्रभाभूषितकङ्कपत्रे'—इति रघुवंशे (२-२१)। ४६६

कङ्कालः पुं. [कं सुखं शिरो वा कालयति क्षिपतीति। कम्+कालि+अच्] शरीरास्थि; समुदितशरीरास्थिसंघातस्त्वङ्मांसरहितः; करङ्कः; अस्थिपञ्जरः; 'अस्थिकङ्कालसंकीर्णा भूर्बभूव'—इति सुन्दोपसुन्दोपाख्याने। ६३३

कङ्कावातः पुं.—झञ्झावातः। ७७

कङ्केलिः पुं. [कं सुखं तस्मै केलिः यत्र] अशोकवृक्षः। १९२

कङ्केल्लिः पुं. [कङ्क+बाहुलकात् एलिः पृषोदरादित्वात् ल्लश्च] अशोकवृक्षः। १९२

कङ्गुः स्त्री. [कं सुखम् अङ्गति अङ्गयति वा। क+अगि गतौ+ण्यन्तादस्मान्मृगय्वादित्वात् कु, शकन्ध्वादित्वात्पररूपम्] पीततण्डुलाः; प्रियङ्गुः; कङ्गुः; प्रियङ्गुः; 'कांगनी' इति भाषा। कङ्गुनी; चीनकः; अत्यन्तसुकुमारः धान्यविशेषः; 'स्त्रियां कङ्गुप्रियङ्गू कृष्णरक्तसितास्तथा। पीता चतुर्विधा कङ्गुस्तासां पीता वरा स्मृता॥' ५८२

कचः पुं. [कचते शोभते शिरसीति । कच्+पचाद्यच् । कच्यते बध्यते इति, कच् बन्धने+कर्मणि अप् वा] केशः; 'कचेषु च निगृह्यैतान् विनिहत्य बलाद्बली । चकर्ष क्रोशतो भूमौ घृष्टजानुशिरोंसकान्'—इति महाभारते (१।१२८।१९) । [कचते दीप्यते तपस्तेजसि, कच् दीप्तौ+पचाद्यच्] बृहस्पतिपुत्रः; बन्धः; शुष्कव्रणः; मेघः । ५३०

कच्चित् अव्य. [कच्च+चिच्च अनयोः समाहारः, कोः कदादेशः, अथवा काम्यते इति कद्, चीयते निधीयते यस्मात्, कम्+विच्, चि+क्विप्, ततः पृषोदरादित्वान्मस्य दकारत्वम्] इष्टपरिप्रश्नः; 'कच्चिज् जीवति मे तातः।' 'आपद्यते न व्ययमन्तरायैः कच्चिन्महर्षेस्त्रिविधं तपस्तत्'—इति रघुवंशे (५–५) । कामप्रवेदनम् । ८७९

कच्छः पुं. [केन जलेन छृणत्ति दीप्यते छाद्यते वा । उच्छृदिर् दीप्तिदेवनयोः, छद् वा, 'अन्येष्वपि' इति ड । कं जलं छ्यति परिच्छिनत्ति इति वा, छो छेदने+'आतोनुपेति' क] अनूपप्रायस्थानम्; 'कछार' इति भाषा । 'कच्छान्ते सुरसरितो निधाय सेनामन्वीतः स कतिपयैः किरातवर्यैः' –किराते (१२–५४)।परिधानाञ्चलं(८३३) ; (तत्पर्यायाः–कक्षा, कच्छा, कच्छोटिका, कच्छटिका, कच्छाटिका।) सिन्धूनां सरसां च प्रान्तभागः; कूलं; तटं; तीरं; जलाशयप्रान्तदेशः; नदीपर्वतादिसमीपम्; 'नदीकच्छोद्भवं कान्तमुच्छ्रितध्वजसन्निभम्'—इति महाभारते (१।७०।१६) । तुन्नवृक्षः; नौकाङ्गं; देशविशेषः; 'गणेश्वरात् पूर्वभागे समुद्रादुत्तरे शिवे । कच्छदेशः समाख्यातस्तन्त्रे श्रीशक्तिसङ्गमे ॥' त्रि. [केन जलेन छृणत्ति दीप्यते । छृद् बाहुलकाड्ड] जलप्रान्तः । ६६७

कच्छपः पुं. [कच्छम् आत्मनो मुखसम्पुटं पाति, स हि किञ्चिद् दृष्ट्वा शरीरे एव मुखसम्पुटं प्रवेशयति, सम्पुटे च कच्छशब्दः प्रसिद्धः । यद्वा कच्छे अनूपदेशे पाति आत्मानं रक्षतीति । कच्छ+पा+कर्तरि ड] कूर्मः; कमठः; गूढाङ्गः; धरणीधरः; कच्छेष्टः; पल्वलावासः; कठिनपृष्ठकः, पञ्चसुप्तः, क्रोडाङ्गः; पञ्चनखः; गुह्यः; पीवरः; जलगुल्मः । अवतारविशेषः; 'सुरासुरेन्द्रैर्भुजवीर्यवेपितं परिभ्रमन्तं गिरिमङ्गपृष्ठतः । बिभ्रत्तदावर्तनमादिकच्छपो मेनेऽङ्गकण्डूयनमप्रमेयः'—इति भागवते (८–७–१०) । नन्दीवृक्षः; कुबेरस्य निधिविशेषः; मल्लस्य बन्धविशेष; मदिरायन्त्रविशेषः; ऋषिविशेषः; विश्वामित्रपुत्रः; 'विश्वामित्रस्य पुत्रास्तु देवराजादयः स्मृताः । विख्यातास्त्रिषु लोकेषु तेषां नामानि मे शृणु । देवश्रवाः कतिश्चैव यस्मात् कात्यायनाः स्मृताः । शालावत्यां हिरण्याक्षो जज्ञे रेणौ तु रेणुमान् । साङ्कृतिर्गालवश्चैव मुद्गलश्चेति विश्रुताः । मधुच्छन्दादयश्चैव देवलश्च तथाष्टकः । कच्छपः पूरितश्चैव विश्वामित्रस्य वै सुताः । तेषां ख्यातानि गोत्राणि कौशिकानां महात्मनाम्'—इति हरिवंशे (२७-४७-५०)। नागविशेषः; 'कर्कोटकोऽथ सर्पश्च वासुकिश्च भुजङ्गमः । कच्छपश्चाथ कुण्डश्च तक्षकश्च महोरगः'—इति महाभारते । ६५६

कच्छुः स्त्री. [कषति देहं, कष् हिंसायाम्+'कषेश्छश्चेति' ऊ छान्तादेशश्च, पृषोदरादित्वाद् वा ह्रस्वः] रोगविशेषः; 'सूक्ष्मा बह्व्यः पिडिकाः स्राववत्यः पामेत्युक्ता कण्डुमत्यः सदाहाः । सैव स्फोटैस्तीव्रदाहैरुपेता ज्ञेया पाण्योः कच्छुरुग्रा स्फिचोश्च ।' 'अर्कपत्ररसे पक्वं हरिद्राकल्कसंयुतम् । नाशयेत् सार्षपं तैलं पामाकच्छुविचर्चिकाः'– इति चक्रदत्तः । ६०२

कच्छूः स्त्री. [कषति हिनस्ति देहम्, 'कषेश्छश्च' इति ऊ छादेशश्च] रोगविशेषः; पाम; पामा; विचर्चिका; 'खाज' 'खुजली' इति भाषा । ६०२

कज्जलम् क्ली. [कु कुत्सितं जलं यस्मात्, शुभ्रमपि जलं संयोगात् स्ववर्णत्वं नयतीति यावत् । यद्वा कुत्सितम् ऊर्द्ध्वगं चक्षुषोर्जलं दूरीभूतं भवत्यस्मात् । कोः कदादेशः] अञ्जनं; लोचकः; 'काजल' इति भाषा । 'ततः साकारयद् भूरि चेटीभिः कुण्डकस्थितम् । कस्तूरिकादिसंयुक्तं कज्जलं तैलमिश्रितम्'—इति कथासरित्सागरे (४–४७) । 'धिङ मां विगर्हितं सद्भिर्दुष्कृतं कुलकज्जलम्'–इति भागवते (६।२।२७) । पुं. [कत् कुत्सितं यथा तथा जालयति आच्छादयति आतपादिकं, यद्वा कुत्सितमपि लतागुल्मादिकं चेति यावत्, जालयति जीवयति वर्षणेनेतिशेषः । कु+जल्+णिच्+अच्, ततो ह्रस्वः] मेघः । ५५५

कञ्चुकः पुं. [कञ्चते आपुच्छात् सकणमुखपर्यन्तम्, अभितो दीप्यते प्रकाशते शोभते वा, कञ्चते आवृणोति

शत्रुनिक्षिप्तास्त्रादीनि वारणाय, कचि+बाहुलकादुकन्] भटादेश्चोलाकृतिसन्नाहः; वारबाणः; बाणवारः; 'कवच' इति भाषा। 'कञ्चुकोष्णीषिणस्तत्र वेत्रकर्कशपाणयः। उत्सारयन्तः सहसा समन्तात्परिचक्रमुः'—इति रामायणे। (६४४) सर्पत्वक्; निर्मोकः; 'साँप की केंचुल' इति भाषा। 'भोगिनः कञ्चुकाविष्टाः कुटिलाः क्रूरचेष्टिताः। सुदुष्टा मन्त्रसाध्याश्च राजानः पन्नगा इव'—इति पञ्चतन्त्रे। चोलकं; चोलः; कञ्चुलिका; कूर्पासकः; अङ्गिका; वर्द्धापकगृहीताङ्गस्थितवस्त्रम्; 'सख्यः किं करवाणि यान्ति शतधा यत्कञ्चुके सन्धयः'—इत्यमरुशतके (८१)। वस्त्रम्; 'देवांश्च तच्छ्वासशिखाहतप्रभान् धूम्राम्बरस्रग्वरकञ्चुकाननान्'—इति भागवते (८-७-१५)। ५५२

कञ्चुकी [न्] पुं. [कञ्चुकोऽस्यास्तीति, कञ्चुक+अस्त्यर्थे इनि] सर्पः; कञ्चकालुः; महल्लरक्षकः; अन्तःपुराध्यक्षः; सौविदल्लः; स्थापत्यः; सौविदः; 'नष्टं वर्षवरैर्मनुष्यगणनाभावादपास्य त्रपामन्तः कञ्चुकिकञ्चुकस्य विशति त्रासादयं वामनः'—इति रत्नावली। 'अन्तःपुरचरो वृद्धो विप्रो गुणगणान्वितः। सर्वकार्यार्थकुशलः कञ्चुकीत्यभिधीयते'—इति भरतः। यवः; चणकः; षिङ्गः; जोङ्गकद्रुमः। स्त्री. [कञ्चयति शरीरकान्त्यादिकं प्रकाशयति, रोगादिकम् उपशमयति वा। कञ्च्+णिच्, बाहुलकादुकन्, गौरादित्वाद् ङीष्] ओषधिभेदः; क्षीरीशवृक्षः। ६४०

कटः पुं. [कटति मदवारि वर्षति यः। कट् वर्षणे, कर्तर्यच्] हस्तिगण्डस्थलम्; 'कण्डूयमानेन कटं कदाचिद् वन्यद्विपेनोन्मथिता त्वगस्य'—इति रघुवंशे (२-३७)। कटिदेशः (२५९); किलिञ्जकः; समयः (८२०); अतिशयः; शरः; तृणम्; 'गोऽश्वोष्ट्रयानप्रासादस्वस्तरेषु कटेषु च। आसीत गुरुणा सार्द्धं शिलाफलकनौषु च'—इति मनुः (२-२०४)। 'कटेषु तृणादिनिर्मितेषु, इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। शवः; शवरथः; ओषधी; श्मशानं; तक्षितकाष्ठं; 'तख्ता' इति भाषा। 'तां निष्ठितां बद्धकटां दृष्ट्वा रामः सुदर्शनाम्। सुश्रूषमाणामेकाग्रमिदं वचनमब्रवीत्'—इति रामायणे। राक्षसविशेषः; 'शुकनासस्य वक्रस्य कटस्य विकटस्य च। रक्षसो लोमहर्षस्य दंष्ट्रालह्रस्वकर्णयोः'—इति रामायणे। त्रि., क्रियाकारः [कट्+णिच्+अच्।] २१६

कटकः पुं.–क्ली. [कटति वर्षति अस्मिन् मेघ इति, अथवा कटचते निर्गम्यते अस्मात् निर्झरिण्यादिभिः। 'कृञादिभ्यः संज्ञायां वुन्' इति वुन्] पर्वतमध्यभागः; नितम्बः; मेखला; 'मार्गैषिणी सा कटकान्तरेषु वन्ध्येषु सेना बहुधा विभिन्ना'–इति रघुवंशे (१६-३१)। वलयः (५५७); माघे (१६।७७)। सेना (७९०); माघे (५।५९)। हितोपदेशे (१।३३२)। चक्रं; हस्तिदन्तमण्डनं; सामुद्रलवणम्; 'राजधानी; नगरी; सानुः; पर्वतस्य समभूभागः; 'गिरिकूटेषु दुर्गेषु नानाजनपदेषु च। जनाकीर्णेषु देशेषु कटकेषु परेषु च'––इति महाभारते। १६६

कटाक्षः पुं. [कटावतिशयितौ अक्षिणी यत्र। कट+अक्षि+अच्। यद्वा कटं गण्डम् अक्षति व्याप्नोति। अक्षु व्याप्तौ+अच् कर्मण्यण् वा] अपाङ्गदर्शनम्; 'तिरछा देखना' इति भाषा। 'आमोक्ष्यन्ते त्वयि मधुकरश्रेणिदीर्घान् कटाक्षान्'—इति मेघदूते (३५)। ५६७

कटाहः पुं. [कटम् उत्तापादिकम् आहन्ति निवारयतीति। कट्+आ+हन्+ड। कटं कटुगन्धादिकम् आहन्ति, तैलादिकदुर्गन्धः आहन्यतेऽत्र वा] तैलादिपाकपात्रम्; [कटं शत्रुम् आहन्त्यसौ] जायमानविषाणाग्रमहिषीशावकः; [कटः पापी आहन्यते यत्र] नरकः; कर्परः; कूपः; 'प्रस्थं सम्भवति प्रास्थिकः कटाहः'—इति सिद्धान्तकौमुद्याम् (५।१।५२)। ३१५

कटिः पुं.–स्त्री. [कटचते वस्त्रादिना व्रियतेऽसौ। 'सर्वधातुभ्य इन्' इति कट्+इन्] शरीरावयवविशेषः; कटः; शोणिफलकं; श्रोणी; ककुद्मती; श्रोणिफलं; कटी; श्रोणिः; कलत्रं; कटीरं; काञ्चीपदं; करभः; कटिपार्श्वः; 'येषां बृहत्कटितटाः स्मितशोभिमुख्यः कृष्णात्मनां न रज आदधुरुत्स्मयाद्यैः'—इति भागवते (३-१५-२०)। ५१२, ५२८

कटिदेशः पुं. [कटिश्चासौ देशः] मेखलास्थानम्; तात्स्थ्यान् मेखलाशब्दवाच्योऽपि सः। ८२४

कटिप्रोथः पुं. [प्रोथतीति, प्रोथृ पर्याप्तौ, 'पुंसीति' घ, कटयाः प्रोथः मांसपिण्डः] कटिदेशस्थमांसपिण्डं; स्फिक्; पूलकः; कटीप्रोथः; कटिः; प्रोथः; पूलः। ५१३

कटिशीर्षकः पुं. [कटिः शीर्षमिव । संज्ञायां कन्] कटिदेशः । ५२८

कटिसूत्रम् क्ली. [कटयां धार्यं सूत्रम् । शाकपार्थिवादित्वान्मध्यपदलोपः] कटयलङ्कारविशेषः । 'स्फुटकिरणप्रवरमणिमयमुकुटकुण्डलकटककटिसूत्रहारकेयूरनूपुराद्यङ्गभूषणविभूषितमृत्विक्सदस्यगृहपतयोऽधना इव'—इति भागवते (५।३।४) । ५६०

कटी स्त्री. [कटयते कटुरसेषु गृह्यतेऽसौ, कटयते आव्रियते वस्त्रादिना । 'सर्वधातुभ्य इन् ।' 'कटात् श्रोणिवचने' इति गौरादिषु पाठाद् वा ङीष्] श्रोणिदेशः; 'सव्येन च कटीदेशे गृह्य वाससि पाण्डवः । तद्रक्षो द्विगुणं चक्रे रुवन्तं भैरवं रवम्'—इति महाभारते । पिप्पली; पुं. कटी [न्]; हस्ती । ५१२, ५२८

कटीरम् पुं.– क्ली. [कटयते आव्रियतेऽसौ वाससेतिशेषः । कट्+'कृशॄपृकटिपटिशौटिभ्य ईरन्'—इति ईरन्] कटिः; जघनं; कन्दरः । ५१२

कटुः त्रि. [कटति परलक्ष्मीदर्शनेन कृपणतां गच्छतीति । कट्+उ] कटुरसयुक्तः; 'कषायो मधुरस्तिक्तः कट्वम्ल इति नैकधा । भौतिकानां विकारेण रस एको विभिद्यते' — इति भागवते (३।२६।४२) । मत्सरः; तीक्ष्णः; 'क्षारतिक्तकटुरूक्षैस्तीक्ष्णविपाकैश्चक्षुष्युपहतोऽन्धो बभूव'—इति महाभारते । अप्रियः; 'इति समगुणयोगप्रीतयस्तत्र पौराः श्रवणकटु नृपाणामेकवाक्यं विवव्रुः' — इति रघुवंशे (७।८५) । 'कटु क्वणन्तो मलदायकाः खलास्तुदन्त्यलं बन्धनशृङ्खला इव'—इति कादम्बरी । दुर्गन्धः; सुगन्धिः; 'सप्तच्छदक्षीरकटुप्रवाहमसह्यमाघ्राय मदं तदीयम्'-रघौ(५-४८) । क्ली. [कटति सदाचारमावृणोतीति, कट्+उन्] अकार्यं; दूषणम् [पुं. कटति तीक्ष्णतया रसनां मुखं वा आवृणोति । यद्वा कटति वर्षति चक्षुर्मुखनासादिभ्यो जलं स्रावयतीति । कट्+उन् 'कटिवटिभ्यां चेति'] सविशेषः; 'कटू रूक्षः स्तन्यमेदःश्लेष्मकण्डूविषापहः । वातपित्तकृदाग्नेयः शोषी पाचनरोचकृत्'—इति भावप्रकाशः । चम्पकवृक्षः; चीनकर्पूरः; पटोलः; कट्वी लता । ८१३

कट्वरः त्रि. [कटे वर्षावरणयोः, 'छित्वरछत्वरधीवर' इत्यादिना ष्वरच्] कुत्सितः; क्ली. [कटति वर्षति रसान्तरम् इति व्युत्पत्तेः] दधिसरः; व्यञ्जनं; तक्रम्; 'दध्नः ससारकस्यात्र तक्रं कट्वरमुच्यते'—इति चक्रदत्तः । ३७८

कठिनम् त्रि. [कठ्+इनन् । उणादिमते तु इनच् 'बहुलमन्यत्रापि' इत्यनन] कठरं; कक्खटं; क्रूरं; कठोरं; निष्ठुरं; दृढं; जठरं; मूर्तिमत्; मूर्तं; खक्खटं; कठोलं; जरठं; कर्करं; काठरं; कमठायितं; स्तब्धम्; 'उन्मूलयंश्च कठिनान् नृपान् वायुरिव द्रुमान्'—इति कथासरित्सागरे ।' न विदीर्ये कठिनाः खलु स्त्रियः' —इति कुमारसम्भवे (४।५) । 'भक्ष्यांश्चातिकठिनान् दन्तरोगी विवर्जयेत्'—इति सुश्रुते । ३४२

कठोरः त्रि. [कठति पारुष्यमाचरति । 'कठिरकिम्यामोरन्' इति कठ्+ओरन्] कठिनः; 'प्रवृद्धरोषः स कठोरमुष्टिना नदन् प्रहृत्यान्तरधीयतासुरः'— इति भागवते (३।१९।१५) । दारुणः; 'कठोरदंशैर्मशकैरुपद्रुतः'—इति भागवते (५।१३।३) । अतिविस्तृतः; 'युगान्ताग्निकठोरजिह्वाम्'—इति भागवते (६।१२।२) । पूर्णः; 'स तप्तकार्तस्वरभास्वराम्बरः कठोरताराधिपलाञ्छनच्छविः'—इति माघे (१।२०) 'कठोरताराधिपस्य पूर्णेन्दोः'— इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । ३४२

कडः त्रि. [कडति माद्यतीति, कड्+मदे+पचाद्यच्] मूर्खः । ६०९

कडङ्गरः पुं. [कडाद् भक्षणीयतण्डुलादेः सकाशाद् ग्रियते क्षिप्यते दूरीक्रियते इति भावः । कड+गिरतेः कर्मणि खच् । यद्वा कडं भक्षणीयं सस्यादि गिरति उद्गिरति आत्मनः सकाशात् । कड+गॄ+अच्] बुषम्; 'भूसा' इति भाषा । 'नीवारपाकादि कडङ्गरीयैरामृश्यते जानपदैर्न कच्चित्' इति—' रघुवंशे (५।९) । 'कडङ्गरं बुषम् अर्हन्तीति कडङ्गरीयाः वृषादयः'— इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । ५७८

कडारः पुं. [गड सेचने, इति 'गडेः कड् च' इति आरन् कडादेशश्च धातोः] पिङ्गलवर्णः । तद्युक्ते त्रि. 'सविद्युरम्बरविकाशि चमूसमुत्थं पृथ्वीरजः करभकण्ठकडारभासा'— इति माघे (५।३) । 'कडारस्तृणवह्निवत्'—इत्यन्ये । दासः । ७३५

कणः पुं. [कणति अग्निसूक्ष्मत्वं गच्छति । कण्+

पचाद्यच्] अग्निकणः; धान्यांशः (५७८); 'कणान् वा भक्षयेदब्दं पिण्याकं वा सकृन्निशि'—इति मनुः (११।९२)। अतिसूक्ष्मः (६८८); 'आनन्दाश्रुकणान् पिबन्ति शकुना निःशङ्कमङ्केशयाः'—इति शान्तिशतके (५)। वनजीरकः। ६७

कणा स्त्री. [कण+स्त्रियां टाप्] पिप्पली; जीरकं; कुम्भीरमक्षिका। ६१४

कणिशम् क्ली. [कणो विद्यतेऽस्य इति। इनि, तं श्यति। कणिन्+शो+क। यद्वा कणिनः शेरतेऽस्मिन्। [कणिन्+शी+ड] सस्यमञ्जरी। ५७९

कण्टकः पुं–क्ली. [कण्टति इति, कटि+ण्वुल्+अर्द्धर्चादिः] रोमाञ्चः; क्षुद्रशत्रुः; 'प्रह्लादः कथ्यतां सम्यक् तथा कण्टकशोधने'—इति विष्णुपुराणे (१।१९। ३१)। मत्स्याद्यस्थि; नैयायिकादिदोषोक्तिः; द्रुमाङ्गम्; 'काँटा' इति भाषा। 'उपकारगृहीतेन शत्रुणा शत्रुमुद्धरेत्। पादलग्नं करस्थेन कण्टकेनेव कण्टकम्' —इति चाणक्यशतके (२२)। केन्द्रम्। पुं. [कठि+ण्वुल्] सूच्यग्रं; क्षुद्रशत्रुः; लोमहर्षः; कुण्डल्यां कर्मस्थानं; दोषः; मकरः; वेणुः; लोकोपद्रवकारी। ६५१

कण्टकारिका स्त्री. [कण्टकान् इर्यति ऋच्छति वा। कण्टक+ऋ+कर्तरि ण्वुल्, स्त्रियां टाप्, इत्वं च। यद्वा कण्टकम् ऋच्छति, ऋ+कर्मण्यण् ततः कन् च, ततः प्राग्वत्। तत्फले तु अणि कृते हरीतक्यादित्वाल्लुक्] क्षुद्रवृक्षविशेषः; निदिग्धिका; स्पृशी; व्याघ्री; बृहती; प्रचोदनी; कुली; क्षुद्रा; दुष्पर्शा; राष्ट्रिका; अनाक्रान्ता; भण्टाकी; सिंही; धावनिका; कण्टकारी; कण्टकिनी; दुष्प्रधर्षिणी; निदिग्धा; धावनी; क्षुद्रकण्टका; बहुकण्टा; क्षुद्रफला; कण्टालिका; चित्रफला; 'मुस्तामृतामलक्यश्च नागरं कण्टकारिका। कणाचूर्णान्वितः क्वाथस्तथा मधुसमन्वितः। ऐकाहिकं वा वेलाद्यं ज्वरजातं व्यपोहति'—इति हारीतः। ६१९

कण्ठः पुं. [कठि+अच्, इदित्वान्नुम्। कण् शब्दे, 'कणेष्ठः' इति ठ वा] ग्रीवापुरोभागः; गलः; 'विकचसरसिजायाः स्तोकनिर्मुक्तकण्ठं निजमिव कमलिन्याः कर्कशं वन्तजालम्'—इति शाकुन्तले। निकटः; ध्वनिः; मदनवृक्षः; होमकुण्डाद् बहिरङ्गुलिपरिमितस्थानम्; 'खाताद बाह्येऽङ्गुलः कण्ठः सर्वकुण्डेष्वयं विधिः'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। ५१६

कण्ठिका स्त्री. [कण्ठो भूष्यतयास्त्यस्याः। कण्ठ+ठन्+टाप्। यद्वा कण्ठयति कण्ठं भूषयति या। कठि+णिच्+ण्वुल्+टाप्, अत इत्वञ्च] कण्ठाभरणम्। 'एकलड़ी, कंठी'—इति भाषा। ५६३

कण्ठीरवः पुं. [कण्ठ्यां रवो यस्य] सिंहः; पारावतः; मत्तहस्ती। २१४

कण्डरा स्त्री. [कडि+अरन्+टाप् च] महास्नायुः; महानाडी; 'महत्यः स्नायवः प्रोक्ताः कण्डरास्तास्तु षोडश'—इति भावप्रकाशः। 'तलं प्रत्यङ्गुलीनां याः कण्डरा बाहुपृष्ठतः'—इति सुश्रुतः। ६३४

कण्डुः स्त्री. [कण्डते शरीरं माद्यति अस्माद् उष्णशोणितत्वात्। यद्वा कण्डयति कण्डूयुक्तं करोति शरीरम्। कडि मदे, 'मृगय्वादयश्च' इति कु] कण्डूः; खर्जुः; कण्डूया; कण्डूतिः; पुं. ऋषिविशेषः; 'कण्डुर्नाममुनिः पूर्वमासीद् वेदविदां वरः। सुरम्ये गोमतीतीरे स तेपे परमं तपः'—इति विष्णुपुराणे (१।१५।११)। ६०३

कण्डूः स्त्री. [कण्डूञ्+सम्पदादित्वात् क्विप्] रोगविशेषः; खर्जुः; कण्डूया; कण्डूतिः; कण्डूयनम्; 'खुजली' इति भाषा। 'अमृतवृषपटोलं मुस्तकं सप्तपर्णं खदिरमसितवेत्रं निम्बपत्रं हरिद्रे। विविधविषविसर्पान् कुष्ठविस्फोटकण्डूरपनयति मसूरीं शीतपित्तं ज्वरं च '—इति भैषज्यरत्नावली। ६०३

कण्डूतिः स्त्री. [कण्डूञ्+क्तिन्] कण्डूः; 'राज्ञ्या बप्पटदेव्याः स निर्दयैः सुरतोत्सवैः। खण्डयामास कण्डूतिं साप्यस्यार्थैषणां घनैः'—इति राजतरङ्गिण्याम्। ६०३

कण्डूयनम् क्ली. [कण्डूञ्+भावे ल्युट्] कण्डूः; 'यन्मैथुनादिगृहमेधिसुखं हि तुच्छं, कण्डूयनेन करयोरिव दुःखदुःखम्'—इति भागवते (७।९।४५)। ६०३

कण्डूया स्त्री. [कण्डू+'कण्ड्वादिभ्यो यक्', 'अ प्रत्ययात्', स्त्रीत्वात् टाप् च] कण्डूः। ६०३

कथनम् क्ली. [कथ्यते इति, कथ वाक्यप्रबन्धे, भावे ल्युट्] कथा; 'कहना' इति भाषा। 'मिथ्याक्रमकथनं कूटतुलामानम्'—इति पञ्चतन्त्रे। १३८

कथा स्त्री. [कथ् + 'चितिपूजिकथिकुम्बिचर्चाश्चेति' अङ, टाप् च] प्रबन्धकल्पना; स्वयंरचना; 'प्रबन्धकल्पनां स्तोकसत्यां प्राज्ञाः कथां विदुः। परम्पराश्रया या स्यात् सा मताख्यायिका क्वचित्'—इति कोलाहलाचार्यः। 'यद्यद्रोचेत विप्रेभ्यस्तत्तद्दद्यादमत्सरः। ब्रह्मोद्याश्च कथाः कुर्यात्पितॄणामेतदीप्सितम्'—इति मनुः (३।२३१)। वार्ता; वाक्यम्; 'अभितप्तमयोऽपि मार्दवं भजते कैव कथा शरीरिषु'—इति रघुवंशे (८।४३)। विवरणम्; 'सनत्कुमारो भगवान् पुरा कथितवान् कथाम्। भविष्यं विदुषां मध्ये तव पुत्रसमुद्भवम्'—इति रामायणे (१।८।६)। १५२

कदकः पुं. [कदः मेघ इव कायति प्रकाशते उपरिभागे। कद+कै+क] वितानम्; 'चँदवा' इति भाषा। ३१०

कदनम् क्ली. [कदयति दुःखं वैक्लव्यं वा प्राप्नोत्यनेन, क्द्यते दुःखं प्राप्यतेऽनेन वा। कद् + णिच् + करणे ल्युट्, घटादित्वान्न वृद्धिः। कद्यते इति भावे ल्युट्, कद्यते आहन्यते विह्वलीक्रियते निहन्यते वा यत्र। अधिकरणे णिच् ल्युट्, यद्वा कद्यते म्रियते यत्र] मारणम्; उत्तररामचरिते (५।१०)। पापम्; 'त्रस्तोऽस्म्यहं कृपणवत्सल ! दुःसहोग्रसंसारचक्रकदनाद् ग्रसतां प्रणीतः'—इति भागवते (७।९।१६)। मर्दः; 'क्रोधेन कदनं चक्रे वानराणां युयुत्सताम्'—इति रामायणे (६।२८।२०)। युद्धम्; 'इति ते भर्तृनिर्देशमादाय शिरसादृताः। तथा प्रजानां कदनं विदधुः कदनप्रियाः'—इति भागवते (७।२।१३) ४७८

कदम्बम् क्ली. ['कृकदिकडिकटिभ्योऽम्बच्' इति कद् + अम्बच्] निकुरम्बं; समूहः। पुं. [कद्यते दर्शनाद् विरहिणां चित्तवैक्लव्यं जायतेऽनेन, कद् + करणे अम्बच्) वृक्षविशेषः; नीपः; प्रियकः; हलिप्रियः; कादम्ब; षट्पदेष्टः; प्रावृषेण्यः; हरिप्रियः; वृत्तपुष्पः; सुरभिः; ललनाप्रियः; कादम्बर्यः; सीधुपुष्पः; महाढ्यः; कर्णपूरकः; 'कदम्बो मधुरः शीतः कषायो लवणो गुरुः। सरो विष्टम्भकृद् रूक्षः कफस्तन्यानिलप्रदः'—इति भावप्रकाशे। ६८६

कदम्बकम् क्ली. [कदम्ब + संज्ञायां कन्] समूहः; 'गाहन्तां महिषा निपानसलिलं शृङ्गैर्मुहुस्ताडितं, छायाबद्धकदम्बकं मृगकुलं रोमन्थमभ्यस्यतु'—इति शाकुन्तले। पुं. कदम्बवृक्षः; सर्षपः; हरिद्रुः। ६८६

कदर्यः त्रिः [कुत्सितोऽर्यः स्वामी। 'कुगतीति' समासः] क्षुद्रः, कृपणः; 'आत्मानं धर्मकृत्यं च पुत्रदारांश्च पीडयन्। यो लोभात् सञ्चिनोत्यर्थान् स कदर्य इति स्मृतः'—इति स्मृतिः। 'तेभ्यो प्राप्तेभ्यः पृथगर्हाणि कारयाञ्चकार स ह प्रातः सञ्जिहान उवाच 'न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपः। नानाहिताग्निर्नाविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुतः'—इति छान्दोग्योपनिषदि (५।११।५)। ३४७

कदली स्त्री. [कदल + गौरादित्वाद् ङीष्, यद्वा काय जलाय दल्यते त्वगस्य, गौरादित्वाद्ङीष्] ओषधिविशेषः; रम्भा; मोचा; अंशुमत्फला; काष्ठीला; कदलः; वारणबुषा; सुफला; सुकुमारा; सकृत्फला; गुच्छफला; हस्तिविषाणी; गुच्छदन्तिका; निःसारा; राजेष्टा; बालकप्रिया; ऊरुस्तम्भा; भानुफला; वनलक्ष्मीः; कदलकः; मोचकः; रोचकः; लोचकः; बारबुषा; वारणवल्लभा; चर्मवती; 'केला' इति भाषा। 'कदलीशुण्डसदृशं सर्वलक्षणसंयुतम्। गजहस्तप्रतीकाशं वज्रप्रतिमगौरवम्'—इति महाभारते। करिवैजयन्ती (८०३); हरिणविशेषः; पताका। १९२

कद्रुः पुं. [कद् + रु] पिङ्गलवर्णः; तद्वति त्रि.। ७३५

कद्रूः स्त्री. [कद् + रु, यद्वा मृगय्वादित्वात् साधु :'संज्ञायाम्' इत्यूङ] नागमाता; दक्षकन्या; कश्यपपत्नी; 'रोहिण्यां जज्ञिरे गावो गन्धर्व्यां वाजिनस्तथा। सुरसाजनयन्नागान् राम! कद्रूश्च पन्नगान्'—इति रामायणे। (३।२०।२९)। ११९

कद्वदः त्रि. [कुत्सितं वदति यः। वदेः पचाद्यच्। कुत्सितः वदः इति वा। 'रथवदयोश्च' इति कदादेशः] कुत्सितवक्ता; गर्ह्यवादी; दुर्वाक्; अतिकुत्सितः; 'सर्वत्र दयिताधीनं सुव्यक्तं रामणीयकम्। येन जातं प्रियापाये कद्वदं हंसकोकिलम्'—इति भट्टिः (६।१५)। ३७८

कनकम् क्ली. [कनति दीप्यते इति, कनी दीप्तौ + 'कृञादिभ्यो वुन्'] स्वर्णम्; 'तस्मिन्नद्रौ कतिचिदबलाविप्रयुक्तः स कामी, नीत्वा मासान् कनकवलयभ्रंशरिक्तप्रकोष्ठः'—इति मेघदूते (२)। पुं. पलाशवृक्षः; नागकेशरवृक्षः; धूस्तूरवृक्षः; 'कपालं मानुषं

गृह्य कनकस्य फलानि च'—इति इन्द्रजालतन्त्रे। काञ्चनालवृक्षः; कालीयवृक्षः; चम्पकवृक्षः; कासमर्दवृक्षः; कणगुग्गुलवृक्षः; लाक्षातरुः; शिवः; 'उपकारः प्रियः सर्वः कनकः काञ्चनच्छविः'—इति महाभारते। यदुवंशीयदुर्दमपुत्रः; 'दुर्दमस्य सुतो धीमान् कनको नाम नामतः'—इति हरिवंशे (३३।६)। १७४

कनका स्त्री॰ [कनति दीप्यते। कन्+वुन्, टाप्] अग्नेः सप्तजिह्वासु एका। ६८

कनकालुका स्त्री॰ [कनकनिर्मित आलुः। सलिलाद्याधारपात्रविशेषः, संज्ञायां कन् टाप् च] स्वर्णकलसः; भृङ्गारः। ३१५

कनिष्ठः त्रि॰ [अतिशयेन युवा अल्पो वा, इष्ठन् कनादेशश्च] पश्चाज्जातः; यवीयान्; अवरजः; अनुजः; कनीयान्; कन्यसः; यविष्ठः; 'ज्येष्ठश्चैव कनिष्ठश्च संहरेतां यथोदितम्। येऽन्ये ज्येष्ठकनिष्ठाभ्यां तेषां स्यान्मध्यमं धनम्'—इति मनुः (९।११३)। शिवः; 'पवित्रं त्रिककुन्मन्त्रः कनिष्ठः कृष्णपिङ्गलः'—इति महाभारते। ५०६

कनिष्ठा स्त्री॰ [कनिष्ठ+ङीषादिकं बाधित्वा अजादित्वात् टाप्] दुर्बलाङ्गुली; दुर्बलाङ्गुलिः; 'कनिष्ठायामप्यङ्गुल्यां भ्रातुर्मम स राक्षसः। दुःखं कर्तुमपर्याप्तो देवि! कस्माद्विषीदसि'—इति रामायणे (३।५१।७)। धीरादितिसृणां द्विधाभेदान्तर्गतनायिकाविशेषः। त्रि॰ 'पुत्रः कनिष्ठो ज्येष्ठायां कनिष्ठायां च पूर्वजः—इति मनुः (९।१२२)। 'यदि प्रथमोढायां कनीयान् पुत्रो जातः पश्चादूढायां च ज्येष्ठः'—इति कुल्लूकभट्टः। ५३८

कनिष्ठिका स्त्री॰—कनिष्ठा; कनीनिका; कनीनी; कनिष्ठाङ्गुलिः। ५३६

कनीनिका स्त्री॰ [कन्+ईन, संज्ञायां कन्, ततष्टाप् अत इत्वम्] चक्षुस्तारा; कनिष्ठाङ्गुलिः। ५२०

कन्दम् क्ली॰—पुं॰ [कन्दयति जिह्वायां वैक्लव्यं जनयति रोदयति वा भक्षयन्तं जनम्। कदि+णिच्+अच्। यद्वा कन्द्यते कन्द इति नाम्ना ज्ञायते। कदि+कर्मणि घञ्] सूरणः; सस्यमूलं; गृञ्जनम्; 'वन निवसतां नित्यं कन्दमूलफलाशिनाम्'—इति महाभारते। 'शीतं निर्झरवारिपानमशनं कन्दः सहाया मृगाः'—इति शान्तिशतके (२।२०)। पुं॰ [कं जलं ददातीति, क+दा+क, कन्दति कन्दयति कन्द्यते वा, कदि आह्वाने रोदने च, अच् घञ् वा] मेघः; योनिरोगविशेषः; 'गैरिकाम्रास्थि जन्तुघ्नं रजन्यञ्जनकट्फलाः। पूरयेद्योनिमेतेषां चूर्णैः क्षौद्रसमन्वितैः। त्रिफलायाः कषायेण सक्षौद्रेण च सेवयेत्। प्रमदा योनिकन्देन व्याधिना परिमुच्यते'—इति भावप्रकाशः। ६८२

कन्दरः पुं॰-स्त्री॰ [केन जलेन दीर्यते विदीर्यतेऽसौ। दृ+कर्मणि अप्] गुहा; 'निर्ह्रादश्चेन्मुरज इव ते कन्दरेषु ध्वनिः स्यात्'—इति मेघदूते (५८)। कृत्रिमोऽकृत्रिमो वा सजलो निर्जलो वा गृहाकारो गिरिनितम्बदेशः; दरी; कन्दरी; कन्दरा; दरः; 'नानामलप्रस्रवणैर्नाना कन्दरसानुभिः'—इति भागवते (४।६।११)। पुं॰ [कं मातङ्गशिरो दीर्यतेऽनेन, दृ+करणे अप्] अङ्कुशः; क्ली॰ [केन जलेन दीर्यते, दृ विदारणे+कर्मणि अप्। कं जलं श्लेष्मजनितं दृणाति नाशयतीति वा। दृ+अच्] आर्द्रकम्। १६७

कन्दरा स्त्री॰ [कन्दर+टाप्] गुहा (ङीबन्ते कन्दरी इत्यपि)। १६७

कन्दर्पः पुं॰ [कमित्यव्ययं कुत्सायां, कं कुत्सितो दर्पः यस्मात्। यद्वा, कं सुखं तेन तत्र वा दृप्यति। कम्+दृप्+अच्। कं ब्रह्माणं प्रति दर्पितवान् वा] कामदेवः; 'साहन्त्वामभिषेकार्थमवतीर्णं समुद्रगाम्। दृष्ट्वैव पुरुषव्याघ्र! कन्दर्पेणाभिमूर्च्छिता'—इति महाभारते। ध्रुवकभेदः; 'त्रयोविंशतिवर्णाङ्घ्रिर्ध्रुवः कन्दर्पसंज्ञकः। वीरे वा करुणे वा स्यात् खण्डताले विधीयते'—इति सङ्गीतदामोदरः। ३२

कन्दुः पुं॰—स्त्री॰ [स्कन्दति शोषयति जलादिकं, 'स्कन्देः सलोपश्चे'त्यु] लौहमयपाकपात्रं; स्वेदनी; 'तन्दूर' इति भाषा। ३१३

कन्धरा स्त्री॰ [कं शिरो धरतीति, कम्+धृ+अच्+टाप्] कन्धिः; ग्रीवा; 'कन्धराबाहुसक्थ्नां च भङ्गे मध्यमसाहसः'—इति याज्ञवल्क्यः। ५१६

कन्यकुब्जा स्त्री॰—कन्याकुब्जः, देशविशेषः। २८७

कन्या स्त्री॰ [कन् दीप्तौ+अघ्न्यादित्वाद् यक्, 'कन्यायाः कनीन् चेति' निर्देशात् न ङीप् ततष्टाप्] कुमारी; दशवर्षीया; कन्यका; कन्याका; 'यस्मात् कामयते

सर्वान् कमेधतोश्च भाविनि ! तस्मात् कन्येह सुश्रोणि ! स्वतन्त्रा वरवर्णिनि'—इति महाभारते। अविवाहिता (४८८); नारी; ओषधिविशेषः; घृतकुमारी; 'कान्तैर्द्वादशभिः पत्रैर्मयूराङ्गरुहोपमैः। कन्दजा काञ्चनक्षीरी कन्या नाम महौषधी'—इति सुश्रुते। स्थूलैला; वाराहीकन्दः; वन्ध्याकर्कोटकी; मेषादिद्वादशराश्यन्तर्गतषष्ठराशिः—'पाण्डुर्द्विपात् स्त्री-द्वितनुर्यमाशा निशामरुच्छीतसमोदयक्ष्मा । कन्याद्धं-शब्दा शुभभूमिवैश्यरुक्षाल्पसङ्गप्रसवा शुभा च'—इति नीलकण्ठीजातके। 'कन्यालग्नोद्भवो मर्त्यो नाना-शास्त्रविशारदः। सौभाग्यगुणसम्पन्नः सुन्दरः सुरतप्रियः—इति कोष्ठीप्रदीपः। सुता; पुत्री; 'कन्याया निष्क्रमो नास्ति वृद्धिश्राद्धं न विद्यते। नामान्नप्राशनं चूडां कुर्यात् स्त्रीणाममन्त्रकम्'—इति महानिर्वाणतन्त्रे। तीर्थ-विशेषः; 'ततो गच्छेत धर्मज्ञ ! कन्यातीर्थमनुत्तमम्। कन्यातीर्थे नरः स्नात्वा गोसहस्रफलं लभेत्'—इति महाभारते। ४८३

कन्याकुब्जः पुं. [कन्याः कुब्जाः यत्र देशे सः, वायुना हि अस्मिन् देशे कन्याः कुब्जीकृता अतोऽस्य तथात्वम्] कान्यकुब्जदेशः; कुशस्थलम् (अयं कालीनदीतटे स्थितः); 'कन्याकुब्जेऽपिबत्सोममिन्द्रेण सह कौशिकः'—इति महाभारते । २८७

कन्यागर्भः पुं. [कन्यायाः गर्भः] कानीनः; कन्यापुत्रः। ५०१

कन्यापुत्रः पुं. [कन्यायाः पुत्रः] कन्यकया जातः; अनूढा-पत्यम्। ५०१

कपटः पुं.— क्ली. [पटतीति पटः, पट्+अच्, कस्य सतो ब्रह्मणोऽपि पटः आवरकः। यद्वा कप्+अटन्] अयथार्थ-व्यवहारः; प्रतारणा; व्याजः; दम्भः; उपधिः; छद्म; कैतवं; कूटं; कल्कं; छलम्; मिषं; कैरवम्; 'नरेन्द्रसिंह ! कपटं न वोढुं त्वमिहार्हसि'—इति महा-भारते। दनुपुत्रः; 'निचन्द्रश्च निकुम्भश्च कुपटः कपट-स्तथा। एते ख्याता दनोर्वंशे दानवाः परिकीर्तिताः'—इति महाभारते। ७०९

कपर्दः पुं. [पर्व पूरणे+सम्पदादित्वाद् भावे क्विप्, 'राल्लोपः' इति वलोपे पर् पूर्तिः। केन सुखेन जलेन वा परं पूर्तिं दादाति इति। क+पर्+दा+'सुपीति' योगविभागात् क। कस्य गङ्गाजलस्य परा पूरणेन दापयति शोधयति वा। क+पर्+दैप् शोधने, 'आतोऽनुपसर्गे कः' इति क] शिवजटा; 'कमनीय-जला कम्रा कर्पादषु कपर्दगा'—इति काशीखण्डे (२९। ४४)। वराटकः (६६४); 'पञ्चभिः कपर्दैः पञ्चिका नाम द्यूतमस्ति'—इति पाणिनि (२।१।१०) सूत्रस्य सरला टीका ।१४

कपर्दी [न्] पुं. [कपर्दो जटाजूटोऽस्त्यस्य। इनि] शिवः; 'अजश्च बहुरूपश्च गन्धधारी कपर्द्यपि'—इति महाभा-रते। 'कपर्दी कैलासं करिवरमथोऽयं कुलिशभृत्'—इति कालिदासः। 'शुनमष्ट्रा व्यचरत् कपर्दी'—इति ऋग्वेदे (१०।१०२।८)। ११

कपाटम् त्रि. [कं वायुं मस्तकं वा पाटयतीति। पट् गतौ +णिच्+कर्मणि- उपपदे अण्] द्वाराच्छादककाष्ठ-फलकविशेषः; अररं; कवाटः; कपाटी; कवाटी; अररी; अररिः; द्वारकण्टकम्; असारम्; 'चक्रे च वेश्मनस्तस्य मध्ये नाति महाबिलम्। कपाटयुक्तमज्ञातं समं भूम्याश्च भारत'—इति महाभारते। [कं शिरः इत्युपलक्षणेन मनुष्यादीनां ग्रहणमिति बोध्यम्। कं वातं वा पाटयति वारयति गृहद्वारदेशं आवृणोतीत्यर्थः, मनुष्यवातादीनां गतिं रुणद्धि वा। क+पट्+णिच्+अण्] 'द्वाराणि समुपावृण्वन् कपाटान्यवघट्टयन्'—इति रामायणे। २८८

कपालः पुं.—क्ली. [कं मस्तकं पालयतीति, क+पालि+अण्। यद्वा कम्पते यः, कपि चलने+'तमिविशि-विडिमृणिकुलिकपिपलिपञ्चिभ्यः कालन्' इति कालन्। कपिनिर्देशाद् नलोपः] शिरोऽस्थि; कर्परः; 'द्वौ शङ्खकौ कपालानि चत्वारि शिरसस्तथा'—इति याज्ञवल्क्यः (३।९०) । घटादेः खण्डम् (८०४); 'घटादीनां कपालादौ द्रव्येषु गुणकर्मणोः। तेषु जातेश्च सम्बन्धः समवायः प्रकीर्तितः॥' समूहः; मृण्मयकर्परादिभिक्षा-पात्रम्; 'कपालं वृक्षमूलानि कुचेलमसहायता। समता चैव सर्वस्मिन्नेतन्मुक्तस्य लक्षणम्'—इति मनुः (६।४४)। पुरोडाशः; 'कपालानि चोपदधाति पुरोडाशं चाधिश्रयति'—इति शतपथब्राह्मणे। कुष्ठरोगविशेषः; 'कृष्णारुणकपालाभं यद्रूक्षं परुषं तनु। कापालं तोदबहुलं तत्कुष्ठं विषमं स्मृतम्'—इति माधवकरः। ६३३

कपिः पुं. [कम्पते यः सदा । कपि चलने, 'कुण्डिकम्प्योर्नलोपश्च' इति इप्रत्ययः] वानरः; 'विड्वराहखरोष्ट्राणां गोमायोः कपिकाकयोः । प्राश्य मूत्रपुरीषाणि द्विजश्चान्द्रायणं चरेत्—इति मनुः (११।१५४) । सिह्लकः; मधुसूदनः; 'सनात्सनातनतमः कपिलः कपिरव्ययः'—इति महाभारते । धात्रिका; करञ्जभेदः; [कादुदकात् पृथ्वीं पाति इति] वराहः; रक्तचन्दनं; पिङ्गलम्; तद्वर्णवति त्रि. । ['कं जलं पिबति किरणैः इति कपिः सूर्यः'—इत्युपनिषद्व्याख्यायां रामानुजाचार्याः] । २३१

कपिञ्जलः पुं. [कपिरिव जवते वेगेन गच्छति, यद्वा कम् श्रुतिसुखदं शब्दम् पिञ्जयति, कपिवत् पिञ्जलो वा, ईषत्पिङ्गलवर्णो हरितालवर्णो वा । पृषोदरादित्वात् साधुः] चातकपक्षी; पक्षिविशेषः; तेजलः; तित्तिरिपक्षी; 'कपिञ्जल इति प्राज्ञैः कथितो गौरतित्तिरः । कपिञ्जल इति ख्यातो लोके कपिशतित्तिरः' ('तित्तिरः' अदन्तोऽपि)—इति भावप्रकाशः । 'पित्तश्लेष्मविकारेषु सरक्तेषु कपिञ्जलाः । मन्दवातेषु शस्यन्ते शैत्यमाधुर्यलाघवात्'—इति चरकः । 'रक्तपित्तहरः शीतो लघुश्चापि कपिञ्जलः । कफोत्थेषु च रोगेषु मन्दवाते च शस्यते ।' ऋषिकुमारभेदः; श्वेतकेतुपुत्रस्य पुण्डरीकस्य बन्धुः; 'सखे ! कपिञ्जल ! किं मामन्यथा सम्भावयसि' —इति कादम्बर्याम् । २५४

कपिलः पुं. [कमु कान्तौ, 'कमेः पश्च' इति इलच् पश्चान्तादेशः] पिङ्गलवर्णः; तद्युक्ते त्रि. । नीलपीतः; 'कपिलो रोचनाच्छविरित्यन्ये'—इति भरतः । 'अनन्तः कपिलो भानुः कामदः सर्वतोमुखः'—इति महाभारते । महादेवः; 'कपिलः कपिशः शुक्ल आयुश्चैव परोऽपरः'—इति महाभारते । विष्णुः; 'सनात्सनातनतमः कपिलः कपिरव्ययः'—इति महाभारते । नागविशेषः; 'शङ्खश्चशङ्खपालश्च कपिलो वामनस्तथा'—इति हरिवंशे (३।११४) । दानवभेदः; 'अयोमुखः शम्बरश्च कपिलो वामनस्तथा'—इति हरिवंशे (३।८२) । मुनिविशेषः; 'गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः'—इति भगवद्गीता (१०।२६) । कश्चित् स्वनामख्यातो मुनिः; रघुवंशे (३।५०) । अग्निः; कुक्कुरः; सिह्लकनामगन्धद्रव्यम् । ७३६

कपिशः पुं. [कपिः तद्वद् वर्णः अस्त्यस्य, कपिनामास्यास्ति वा । लोमादित्वात् श] श्यावः; कृष्णपीतमिश्रितवर्णः; तद्युक्ते त्रि.; 'सन्ध्याभ्रकपिशस्तस्य विराधो नाम राक्षसः । अतिष्ठन्मार्गमावृत्य रामस्येन्दोरिव ग्रहः'—इति रघुवंशे (१२।२८) । शिवः (सर्ववर्णमयत्वात्); 'कपिलः कपिशः शुक्ल आयुश्चैव परोऽपरः'—इति महाभारते । सिह्लकनामगन्धद्रव्यम् । ७३५

कपोतः पुं. [को वायुः पोतः नौरिवास्य । यद्वा कबृ वर्णे + 'कबेरोतच् पश्च' इति ओतच् बस्य पश्च] गृहकपोतः; कलरवः; पारावतः; पारापतः; छेद्यः; रक्तलोचनः; गृहकुक्कुटः; 'कबूतर' इति भाषा । यथा चरके—'कषायमधुराः शीता रक्तपित्तनिबर्हणाः । विपाके मधुराश्चैव कपोता गृहवासिनः ।' 'श्रूयते हि कपोतेन शत्रुः शरणमागतः । अर्चितश्च यथान्यायं स्वैश्च मांसैर्निमन्त्रितः'—इति रामायणे । वनकपोतः; चित्रकण्ठः; कोकदेवः; धूसरः; धूम्रलोचनः; दहनः; अग्निसहायः; भीषणः; गृहनाशनः; 'कपोतो बृंहणो बल्यो वातपित्तविनाशनः । तर्पणः शुक्रजननो हितो नृणां रुचिप्रदः'—इति हारीतः । २५४

कपोतपाली स्त्री. [कपोतान् पालयति इति । कपोत + पाल् + कर्मण्यण् ङीप् च । केचित्तु पाल् + अच्, गौरादित्वान् ङीष्] कपोतपालिका; विटङ्कः; सौधादिप्रान्तकाष्ठादिरचितपक्षिस्थानम्; 'चित्रंसया कृत्रिमपत्त्रिपङ्क्तेः कपोतपालीषु निकेतनानाम्'—इति माघे (३।५१) । ३०३

कपोलः पुं. [कम्पते, 'कपिगण्डिकटिपटिभ्य ओलच्' इति ओलच्, कपि इति निर्देशात् नलोपः । कं सुखं पोलतीति वा, पुल् महत्त्वे, कर्मण्यण्] सृक्वतिर्यक्सन्निधिभागः; गण्डः; गल्लः; 'गाल' इति भाषा । 'तत्र हूणावरोधानां भर्तृषु व्यक्तविक्रमम् । कपोलपाटलादेशि बभूव रघुचेष्टितम्'—इति रघुवंशे (४।६०) । ५२२

कफः पुं. [केन जलेन फलति इति । फल् निष्पत्तौ, 'अन्येष्वपि' इति ड । के शिरसि फलति वा, प्राग्वड्ड] शरीरस्थधातुविशेषः; श्लेष्मा; संघातः; सौम्यधातुः; घनः; बली; 'कफधाम्नान्तु शेषाणां यत्करोत्यवलम्बनम् । ततोऽवलम्बकाख्यातिं श्लेष्मा प्राप्नोत्युरःस्थितः ।' ६०५

कफणिः पुं.–स्त्री. [केन सुखेन फणति अनायासेन सङ्कोचविकोचनत्वं प्राप्नोति स्फुरति वा। फण् गतौ, स्फुर् संचलने इति वा धातोः इन्, पृषोदरादित्वात् साधुः] कफोणिः; कूर्परः। ५३३

कफोणिः पुं. [कं सुखं स्फोरयति, स्फुर् स्फुरणे संचलने च, ण्यन्तात् 'अच इः।' अथवा केन सुखेन फणति स्फुरति वा, स्फर् फण् वा+इन् उभयत्र पृषोदरादित्वात् साधुः] भुजमध्यग्रन्थिः; कूर्परः; 'कुहनी' इति भाषा। ५३३

कबन्धः पुं.–क्ली. [केन प्राणवायुना पुनर्बध्यते सम्बध्यते, मस्तकहीनस्यापि प्राणावेशात् जीवतो नरस्येव क्रियाकारित्वशक्तित्वात् तथात्वम्। क+बन्ध+घञ्] क्रियायुक्तापमूर्द्धकलेवरम्; 'कबन्धाश्छिन्नशिरसः खड्गशक्त्यृष्टिपाणयः'—इति मार्कण्डेये। 'नानानागयुतं तुरङ्गनियुतं सार्द्धं रथानां शतं, पत्तीनां दशकोटयो निपतिता एकः कबन्धो रणे। तादृक् कोटिकबन्धनर्त्तनविधौ खेलज्ज्वलत्खेशिरस्तेषां कोटिनिपातने रघुपतेः कोदण्डघण्टारवः।' पुं. राहुः; रक्षोविशेषः; उदरं; धूमकेतुः; क्ली. जलम्। ६३०

कबरः, कवरः त्रि. [कव् वर्णे, बाहुलकादरन्] चित्रः, मिश्रवर्णः। ७४१

कबरी, कवरी स्त्री. [कुङ् शब्दे, 'कोररन्' इत्यरन्, जानपदेति ङीष्] केशवेषः; सीमन्तः, 'जूडा' इति भाषा। ५३०

कमठः पुं. [के जले मठति वसतीति। क+मठ् निवासे, पचाद्यच्] कच्छपः; कूर्मः; 'कमठपृष्ठकठोरमिदं धनुर्मधुरमूर्तिरसौ रघुनन्दनः'—इति हनुमन्नाटके। 'कमठात्कामठं मांसं रामठन समन्वितम्। यदि सर्पिःसमायुक्तं का सुधा वसुधातले'—इत्युद्भटः। भगवद्विष्णोर्द्वितीयावतारः; 'अशेषतापतप्तानां समाश्रयमठो हठः। अशेषयोगयुक्तानामाधारकमठो हठः'—इति हठयोगदीपिकायाम्। वंशः; दैत्यविशेषः; मुनिभाजनं; शल्लकी; नृपविशेषः; 'कक्षसेनः क्षितिपतिः क्षेमकश्चापराजितः। काम्बोजराजः कमठः कम्पनश्च महाबलः'—इति महाभारते। ६५६

कमण्डलुः पुं.–क्ली. [कस्य प्रजापतेः जलस्य वा मण्डः सारः तं लाति आदत्ते। क+मण्ड+ला+मितद्र्वादित्वात् डु] संन्यासिनां मृत्काष्ठादिमयपात्रं; कुण्डी; करकः; 'मेखलामजिनं दण्डमुपवीतं कमण्डलुम्। अप्सु प्रास्य विनष्टानि गृह्णीतान्यानि मन्त्रवित्'—इति मनुः (२।६४)। प्लक्षवृक्षः; कमण्डलतरुः। ४११

कमलम् क्ली. [कमेः णिङभावे वृषादित्वात् कलच्। कम् जलम् अलति अलङ्करोति वा। कम्+अल्+अच्। अन्तर्णिजन्तो वा] जलपुष्पविशेषः; पद्मं; पाथोजं; नलं; नलिनम्; अम्भोजम्; अम्बुजम्; अम्बुजन्म; श्रीः; अम्बुरुहम्; अम्बुपद्मं; सुजलम्; अम्भोरुहं; सारसं; पङ्कजं; सरसीरुहं; कुटपं; पाथोरुहं; पुष्करं; वार्जं; तामरसं; कुशेशयं; कञ्जं; कजम्; अरविन्दः शतपत्रं; विसकुसुमं; सहस्रपत्रं; महोत्पलं; वारिरुहं; सरसिजं; सलिलजं; पङ्केरुहं; राजीवम्; 'अगच्छदंशेन गुणाभिलाषिणी नवावतारं कमलादिवोत्पलम्'—इति रघुवंशे (३।३६)। 'कमलं शीतलं वर्ण्यं मधुरं कफपित्तजित्'—इति भावप्रकाशः। जलं; ताम्रं; क्लोम; औषधं; सारसपक्षी। पुं. [कमेः कलच्, यद्वा को वायुः तस्य अमः गतिः तं लाति आदत्ते। क+अम्+ला+क] मृगभेदः; ध्रुवकविशेषः; 'उक्तो मलयतालेन लघुमध्ये स्फुरद्गुरुः। सप्तदशाक्षरैर्युक्तः कमलोऽयं भयानके'—इति सङ्गीतदामोदरः। ६७९

कमला स्त्री. [काम्यतेऽसौ, कमेः वृषादित्वात् कलच्, कमलम् अस्त्यस्याः इति वा, अर्श आद्यच् टाप् च] लक्ष्मीः; 'कमला श्रीर्हरिप्रिया'—इत्यमरः। वरस्त्री; कमलानिम्बुकः; 'रम्भाफलं तिन्तिडीकं कमला नागरङ्गकम्। फलान्येतानि भोज्यानि एम्योऽन्यानि विवर्जयेत्'—इति तन्त्रसारे। छन्दोविशेषः; 'द्विगुणनगणसहितः सगण इह हि विहितः। फणिपतिमतिविमला क्षितिप भवति कमला'—इति वृत्तरत्नाकरे। नर्तकीविशेषः; 'नर्तकी कमला नाम कान्तिमन्तं ददर्श तम्। असामान्याकृतेः पुंसः सा ददर्श सविस्मया'—इति राजतरङ्गिण्याम् (४।४२४)। पुरीविशेषः; 'राजा मल्लाणपुरकृत् चक्रे विपुलकेशवम्। कमला सा स्वनाम्नापि कमलाख्यं पुरं व्यधात्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (४।४८३)। गङ्गा; 'कमला कल्पलतिका काली कलुषवैरिणी'—इति काशीखण्डे (२९।४४)। ३१

कमलासनः पुं. [कमलमासनमस्य, विष्णोर्नाभिपद्मजात-

त्वात् तयात्वम्] ब्रह्मा; 'यस्मिन् बृहत्पुष्करं ज्वलन-शिखामलकनकपत्रायुतायुतं भगवतः कमलासनस्या-ऽयासनं परिकल्पितम्'—इति भागवते (५।२०।३०)। क्ली. (कमलाया लक्ष्म्या असनं क्षेपणं दानमित्यर्थः) 'तात्पर्यं कमलासने विचरितं गौरीहितैः पालिता'—इति राजेन्द्रकर्णपूरे (५३)। ७

कमिता [ऋ] त्रि. [कम्+णिङभावे तृच्] कामुकः। ४९७

कम्पः पुं. [कपि चलने+भावे घञ्] गात्रादिचलनं; वेपथुः; वेपनं; वेपः; कम्पनम्; 'न कम्पो वायुना विना'—इति वैद्यकम्। 'मुञ्चति न तावदस्या भयकम्पः कुसुमकोमलं हृदयम्'—इति विक्रमोर्वशीये। ६०१

कम्बलः पुं. [कं कुत्सितं शिरो वा कं सलिलं वा बलते, बल् संवरणे सञ्चारणे च, अच्। यद्वा कम्ब् गतौ इति धातोः वृषादित्वात् कलच्] मेषादिलोमरचित-वस्त्रासनादिरूपः; रल्लकः; वेशकः; रोमयोनिः; रेणुका; प्रावारः; 'न तथा सुखयत्यग्निर्न प्रावारा न कम्बलाः। शीतवातार्दितं लोकं यथा तव मरीचयः' —इति महाभारते (३।३।५१)। सास्ना; कृमिः; उत्तरासङ्गः; मृगविशेषः; नागभेदौ; अनयोरेकः अधस्तात् पाताले वासुकिप्रमुखो निवसति, अपरस्तु वरुणदेवसभास्थः। यथा—'ततोऽधस्तात् पाताले नागलोकपतयो वासुकिप्रमुखाः शङ्खकुलिकमहाशङ्ख-श्वेतधनञ्जयधृतराष्ट्रशङ्खचूडकम्बलाश्वतरदेवदत्तादयो महाभोगिनो महामर्षा निवसन्ति'—इति भागवते (५।२४।३१)। 'कम्बलाश्वतरौ नागौ धृतराष्ट्रबला-हकौ'—इति भागवते (२।९।९)। कम्बलाद्यधिष्ठित-प्रयागान्तर्वर्तिनागतीर्थविशेषः; 'प्रयागं सप्रतिष्ठानं कम्बलाश्वतरौ तथा। तीर्थं भोगवती चैव वेदिरेषा प्रजापतेः'—इति महाभारते (३।८५।७५)। ५५१

कम्बलिवाह्यम् क्ली. [कम्बलः सास्ना अस्ति एषाम् इति। इनि, कम्बलिभिर्वृषैरुह्यम्। वह्+कर्मणि ण्यत्] वृषवहनीयशकटं; गन्त्री; गान्त्री; कम्बलिवाह्यकम्। ४४४

कम्बुः पुं.–क्ली. [कम्+'जत्र्वादयश्चेति' निपातनात् साधुः, कम्+उन् बुक् चेति वा] शङ्खः; माघे (१८।५४)। 'कम्ब्वब्जचक्रशरचापगदासिचर्मव्यग्रैर्हिरण्मय-भुजैरिव कर्णिकारः'—इति भागवते (४।७।२०)। पुं. वलयं; शम्बूकः; हस्ती; कर्बुरवर्णः; ग्रीवा; नलकम्। ६६४

कम्बुग्रीवा स्त्री. [कम्बुवत् रेखात्रयशोभिता ग्रीवा] कम्ब्वाकृतिरेखात्रययुक्तग्रीवा; कम्बुः शङ्खः तद्वत् रेखात्रययुक्ता ग्रीवा यस्येति विग्रहे वाच्यलिङ्गः, यथा—'कम्बुग्रीवः पुष्कराक्षो भर्त्ता युक्तो भवेन्मम'—इति महाभारते (१।१५३।१८)। ५१७

कम्रः त्रि. [कामयतीति, कम्+'नमिकम्पीति' र] कामुकः; (काम्यतेऽसौ) कमनीयः; सुन्दरः; स्त्री. गङ्गा, यथा काशीखण्डे (२९।२४) 'कमनीयजला कम्रा कपर्दिषु कपर्दगा।' 'जह्नुं प्रतीपं शान्तनुं कामितवती कम्रा कामुका'—इति तट्टीका। 'लोलां दृष्टिमितस्ततो वितनुते सभ्रूलताविभ्रमामाभुग्नेन विवर्तिना बलिमता मध्येन कम्रस्तनी'—इति शाकुन्तले (१ अङ्के)। ३८१

करः पुं. [कं सुखं राति ददातीति। क+रा+क] किरणः; 'तीक्ष्णः पटुर्दिनकरः करैस्तापयते जगत्'—इति रामायणे (६।११।४४)। (४३३) राजस्वं; भागधेयः; बलिः; कारः; प्रत्यायः; 'यथाल्पाल्पमद-न्त्याद्यं वार्योकोवत्सषट्पदाः। तथाल्पाल्पो ग्रहीतव्यो राष्ट्राद्राज्ञाब्दिकः करः'—इति मनुः (७।१२७।१३३)। हस्तः (५११); हस्तिशुण्डः। [कीर्यते विक्षिप्यतेऽसौ, बल्याद्यर्थे कर्मणि अप्, हस्तकरिशुण्डयोस्तु करणे अप्] 'एवन्तु ब्रुवतस्तस्य मैत्रेयस्य विशाम्यते। ऊरुं गजकरा-कारं करेणाभिजघान सः।' कर्मोपपदे कर्तृवाचकः, यथा—सुखकर इत्यादिः। 'तीक्ष्णः पटुर्दिनकरः करैस्तापयते जगत्। प्रतिलोमश्च ते वायुस्त्वत्पराभवलक्षणम्'—इति रामायणे (६।११।४४)। वर्षोपलः। ३९

करकम् क्ली.–पुं. [किरति विक्षिपति जलम् अस्मात्, करोति जलमत्र वा। कॄ वा कृ 'कृञादिभ्यः संज्ञायां वुन्' इत वुन्] वर्षोपलः; घनोपलः; कमण्डलुः (३१७); करङ्कः; 'उपानहौ च वासश्च धृतमन्यैर्न धारयेत्। उपवीतमलङ्कारं स्रजः करकमेव च'—इति मनुः (४।६६)। पुं. [करोति वाय्वादिजनितदोषाभावं, कृणोति फलपत्रादिभिः वायुपित्तादिदोषं नाशयति वा। कृञ् हिंसायाम्, 'कृञादिभ्यः संज्ञायां वुन्' इति वुन्] दाडिमवृक्षः; राजकरः; पक्षिविशेषः; लट्वाकरञ्ज-

वृक्षः; पलाशवृक्षः; कोविदारवृक्षः; वकुलवृक्षः; करीरवृक्षः; नारिकेलास्थि; 'हिरण्मयैश्च करकैर्भाजनैः स्फाटिकैरपि'—इति रामायणे (५।१४।४९)। ५९

करञ्जः पुं. [कं सुखं शिरो जलं वा रञ्जयतीति। क+रञ्ज्+णिच्+अण्] करजवृक्षः; वृक्षविशेषः; 'कंजा' इति भाषा। 'करञ्जकः स्यात् करजः पत्रसूची फलाशनः। अङ्गारमञ्जी षड्ग्रन्थो मर्कटघङ्गारवल्लरी। करञ्जभेदाश्चत्वारो विज्ञेया लोकतस्त्विमे'—इति शब्दरत्नावली। 'चिरविल्लो नक्तमालः करञ्जश्च करञ्जकः। सोमवल्कः कलिङ्गस्तु पूतिकः कलिकारकः। प्रकीर्यः पूतिकरजः पट्टिलः सुमना अपि। करञ्जभेदाः षड्ग्रन्थो मर्कटघङ्गारवल्लरी'—इति जटाधरः। 'पादपानां च या माता करञ्जनिलया हि सा। वरदा सा हि सौम्या च नित्यं भूतानुकम्पिनी। करञ्जे तां नमस्यन्ति तस्मात् पुत्रार्थिनो नराः'—इति महाभारते (३।२२९।३५)। [किरति विक्षिपति धार्मिकानिति, कॄ विक्षेपे+बाहुलकादौणादिकोऽञ्जन्प्रत्ययः] धर्मद्वेष्टरि त्रि.; 'त्वं करञ्जमुत पर्ण्यं वधोस्तेजिष्ठयातिथिग्वस्य वर्तनी'—इति ऋग्वेदे (१।५३।८)। १९८

करटः पुं. [किरति विक्षिपति मदवारि इति। कॄ+अटन्। कं कुत्सितं रटति शब्दं करोतीति। रट् शब्दे, पचाद्यच् वा] हस्तिगण्डः; 'कथं हि भिन्नकरटं पद्मिनं वनगोचरम्। उपस्थाय महानागं करेणुः शूकरं स्पृशेत्'—इति महाभारते (३।२७७।३८)। काकः (२४५); 'वरमिह गङ्गातीरे सरटः करटः'—इति गङ्गास्तोत्रे। कुसुम्भवृक्षः; निन्द्यजीवनः; एकादशाहादिश्राद्धं; दुर्दुरूटः; नास्तिक इति यावत्। इदं तु क्षत्रियभेदाभिप्रायेणोक्तम्। 'मालवा वल्लवाश्चैव तथैवापरवर्तकाः। कुलिन्दाः कालदाश्चैव दण्डकाः करटास्तथा'—इति महाभारते (६।९।६२)। वाद्यविशेषः। २१६

करणम् क्ली. [क्रियतेऽनेन, कृ+करणे ल्युट्] इन्द्रियम्; 'अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम्'—इति भगवद्गीतायाम् (१८।१४)। गात्रम् (७९६); कुमारसम्भवे (४।५)। साधकतमं, षट्कारकान्तर्गतकारकविशेषः (८६६); तिथ्यर्द्धपरिमितववाद्येकादशसंज्ञककालविशेषः; तन्नामानि – १ ववः, २ बालवः, ३ कौलवः, ४ तैतिलः, ५ गरः, ६ वणिजः, ७ विष्टिः, ८ शकुनिः, ९ चतुष्पदः, १० किंस्तुघ्नः, ११ नागः। क्षेत्रं; हेतुः; कर्म; हस्तलेपः; नृत्यप्रभेदः; गीतविशेषः; ताले व्यवस्थापकस्ताडनविशेषः, यदुक्तं राजकन्दर्पेण–'नृत्यवादित्रगीतानां प्रयोगवशभेदिनाम्। संस्थानं ताडनं रोधः करणानि प्रचक्षते॥' 'शिखरासक्तमेघानां व्यज्यन्ते यत्र वेश्मनाम्। अनुगर्जितसन्दिग्धाः करणैर्मुरजस्वनाः'—इति कुमारसंभवे (६।४०)। क्रियाभेदः; संवेशनं; कायस्थः; कायस्थसंहतिः; लिपिवर्णानां स्पृष्टादि; योगिनाम् आसनादि; कृतादि; विष्णुः (सर्वेषामादिकारणत्वात्); 'करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः'—इति महाभारते (१३।१४९।५४)। लेख्यपत्रसाक्षिदिव्यादि; 'अर्थेऽपव्ययमानं तु करणेन विभावितम्। दापयेद्धनिकस्यार्थं दण्डलेशं च शक्तितः'—इति मनुः (८–४१)। [भावे ल्युट्] कृतिः; 'धर्मतः शेषकरणे प्रतीक्षिष्यामहे वयम्'—इति रामायणे (४।१७।५६)। ५३५

करणग्रामः पुं. [षष्ठीसमासः] इन्द्रियग्रामः; इन्द्रियसमूहः। ८११

करपत्रम् क्ली. [करेण कराद् वा पततीति। पत्+'सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्' इति ष्ट्रन्] क्रकच.। 'आरी, आरा' इत्यादि भाषा। (करो पत्रमिव नौरिव यत्र) जलक्रीडा। ४७५

करबालः पु. [करस्य बालः पुत्र इव। नखस्य करजातत्वात् तथात्वम्। करं बलति संवृणोति, बल्+अण्] खड्गः; तरवारिः; 'तलवार' इति भाषा। 'म्लेच्छनिवहनिधने कलयसि करबालम्'—इति गीतगोविन्दे। नखम्। ४७२

करभः पु. [कृणाति कार्यतेऽनेन वा। कॄञ् हिंसायां, कॄ विक्षेपे वा, कृशृशलिकलिगर्दिभ्योऽभच्' इति अभच्। करे भाति शोभते इति वा, भा+क] उष्ट्रः; मणिबन्धावधिकनिष्ठापर्यन्तं करस्य बहिर्भागः (७९३); 'धात्रीकराभ्यां करभोपमोरुः'—इति रघुवंशे (६।८३)। उष्ट्रशिशुः; नखनामगन्धद्रव्यं; कटिः। २८०

करमुक्तम् क्ली. [करेण धृत्वा शत्रुं प्रति मुच्यते। कर+मुच्+कर्मणि क्त] अस्त्रविशेषः; शक्त्याद्यस्त्रम्; (यथा चक्रम्)। ४६२

करम्बः त्रि. [कृञ् करणे+'कृकदिकडी'त्यम्बच्] मिश्रितः; पुं. करम्भः। ७४१

करम्भः पुं. [केन जलेन रम्यते मिश्रीक्रियते। रभि धातोरनेकार्थत्वात् 'अकर्तरि चेति' घञ्, 'रभेरशब्लिटोः' इति नुम्] दधिमिश्रितसक्तुः; 'अतुषानिव यवान् कृत्वा तानीषदीवोपतप्य तेषां करम्भपात्राणि कुर्वन्ति'—इति शतपथब्राह्मणे (२।५।२।४)। उदमन्थः; 'धानाः करम्भः सक्तवः परिवापः पयो दधि' इति यजुर्वेदे (१९।२१)। 'करम्भः उदमन्थः'—इति वेददीधितिः। भृष्टयवमात्रम्; 'करम्भवालुकातापान् कुम्भीपाकांश्च दारुणान्'—इति मनुः (१२।७६)। मिश्रगन्धः; 'करम्भपूतिसौरम्यशान्तोदग्रादिभिः पृथक्। द्रव्यावयववैषम्याद् गन्ध एको विभिद्यते'—इति भागवते (३।२६।४५)। ३२१

कररुहः पुं. [करे रोहति कराङ्गुलीभ्य उत्पद्यते इत्यर्थः। कर+रुह्+'इगुपधेति' क] नखः; 'अस्याः कररुहखण्डितकाण्डपटप्रकटनिर्गता दृष्टिः'—इति आर्यासप्तशती (३७)। खड्गः। ५११

करवीरः पुं. [करं वीरयति। वीर् विक्रान्तौ+कर्मण्यण्] वृक्षविशेषः; प्रतिहासः; शतप्रासः; चण्डातः; हयमारकः; 'दाडिमान् करवीरांश्च अशोकांस्तिलकांस्तथा'—इति रामायणे (३।११।१०)। तत्पर्यायाः—प्रतीहासः; अश्वघ्नः; हयारिः; अश्वमारकः; शीतकुम्भः; तुरङ्गारिः; अश्वहा; वीरः; हयमारः; हयघ्नः; शतकुन्दः; अश्वरोधकः; वीरकः; कुन्दः; शकुन्दः; श्वेतपुष्पकः; अश्वान्तकः; नखराह्वः; अश्वनाशनः; स्थलकुमुदः; दिव्यपुष्पः; हरिप्रियः; गौरीपुष्पः; सिद्धपुष्पः। 'करवीरः श्वेतपुष्पः शीतकुम्भोऽश्वमारकः। द्वितीयो रक्तपुष्पश्च चण्डातो लगुडस्तथा। करवीरद्वयं तिक्तं कषायं कटुकं च तत्। व्रणलाघवकृन्नेत्रकोपकुष्ठव्रणापहम्। वीर्योष्णं क्रिमिकण्डूघ्नं भक्षितं विषवन्मतम्'—इति भावप्रकाशः। नागविशेषः; खड्गः; दैत्यविशेषः; श्मशानं; ब्रह्मावर्ते दृशद्वतीनदीतीरे चन्द्रशेखरराजपुरं; पर्वतप्रभेदः; 'एवमपरेण पवनपारियात्रौ दक्षिणेन कैलासकरवीरौ प्रागायतौ'—इति भागवते (५।१६।२७); नागविशेषे उदाहरणम्—'करवीरः पुष्पदंष्ट्रो बिल्वको बिल्वपाण्डरः'—इति महाभारते (१।३५।१२)। १९४

करशाखाः स्त्री. [करस्य शाखाः इव] अङ्गुल्यः (एकत्वे अङ्गुली); अग्रुवः; अल्व्यः; क्षिपः; विशः; शर्याः; रशनाः; धीतयः; अथर्यः; विपः; कक्ष्याः; अवनयः; हरितः; स्वसारः; जामयः; सनाभयः; योक्त्राणि; योजनानि; धुरः; शाखाः; अभीशवः; दीधितयः; गभस्तयः। 'अष्टभिस्तैर्भवेज्ज्येष्ठं मध्यमं सप्तभिर्यवैः। कन्यसं षड्भिरुद्दिष्टमङ्गुलं मुनिसत्तम'—इति कात्यायनदर्शनात्। ५१६

करशीकरः पुं. [करात् करिशुण्डात् निःसृतः शीकरः। करस्य गजशुण्डस्य शीकरो वा] हस्तिशुण्डनिर्गतजलकणसमूहः; वमथुः; 'उद्यन्तमग्निं शमयाम्बभूवुर्गजा विविग्नाः करशीकरेण'—इति रघुवंशे (७।४८)। २१६

करहाटः पुं. [करेण किरणेन सूर्यस्येति यावत् हाटयते दीप्यते इति। हट्+णिच्+कर्मण्यण्] पद्ममूलम्; मदनवृक्षः; महापिण्डीतरुः। १८३

कराग्रम् क्ली. [करस्य अग्रम्] हस्तिशुण्डाग्रम्; हस्ताग्रम्; 'कराग्रे वसते लक्ष्मीः।' २१९

करालः त्रि. [कराय क्षेपाय भयप्रदर्शनाय अलति पर्याप्नोति] तुङ्गः; 'ऊँचा' इति भाषा। दन्तुरः; 'करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम्'—इति चामुण्डाध्यानम्। भीषणः; भयानकः; 'तद्वचोऽग्नि शतधा भिन्नं ददृशे दीप्तिमन्मुखम्। वपुर्महोरगस्येव करालफणमण्डलम्'—इति रघुवंशे (१२।९८)। क्ली. [कराय चक्षूरोगादिनाशाय अलति पर्याप्नोति। अल्+अच्] कृष्णकुठेरकः; 'काली तुलसी' इति भाषा। पुं. [करम् आलाति गृह्णाति, आ+ला+क। कराय क्षेपाय अलति पर्याप्नोति वा] सर्जरसयुक्ततैलं; तैले घृते वा पक्ववेसवारः; क्वचित् क्लीबेऽपि; 'तप्तस्नेहे पचेत् पूर्वं वेसवारकसंज्ञकम्। पाकप्रापितसौरम्यं करालं सूदकर्मतम्।' गन्धर्वभेदः; 'सद्मा बृहद्धा बृहकः करालश्च महामनाः—इति महाभारते (१।१२३।५४)। ७५३

करिपोतः पुं. [करिणः पोतः शिशुः] करिशावकः; गजशिशुः। २२४

करिमकरः पुं. [करीव मकरः] मत्स्यविशेषः; जलजन्तुः। ६६०

करिवैजयन्ती स्त्री. [करिणः उपरि प्रतिष्ठिता वैजयन्ती] महापताका; उत्तुङ्गो ध्वजः। ८०३

करिस्कन्धः पुं. [करिणां स्कन्धः] हस्तिसमूहः । ८११

करी [न्] पुं. [करः शुण्डः अस्यास्तीति, इनि] हस्ती; 'स घर्मतप्तः करिभिः करेणुभिर्वृतो मदच्युत्कलभैरनुद्रुतः'—इति भागवते (८।२।२२) । २१४

करीरः पुं. [कीर्यते क्षिप्यते जलमत्र, 'कृशॄपॄकटीति' ईरन्] घटः । [कीर्यते दूरे निक्षिप्यते दूरतः त्यज्यते कण्टकादिभयादिति यावत्] मरुभूमिजकण्टकिवृक्षः; क्रकरः; ग्रन्थिलः; क्रकचः; निष्पत्रिका; करिरः; गूढपत्रः; करकः; तीक्ष्णकण्टकः; 'करील' इति भाषा । [इरन् प्रत्ययपक्षे] 'करिरः' इत्यपि । 'करीरः कटुकस्तिक्तः स्वेद्युष्णो भेदनः स्मृतः । दुर्नामकफवातामगरशोथव्रणप्रणुत्'—इति भावप्रकाशे । ३१६

करीरः पुं.–क्ली. [किरति विक्षिपति स्वदेहजावरणादीनिति । 'कृशॄपॄकटिपटिशौटिभ्य ईरन्' इति ईरन्] वंशाङ्कुरः; 'रत्नैः पुनर्यत्र रुचा रुचं स्वामानिन्यिरे वंशकरीरनीलैः'–इति माघे (४।१४) । 'वेणोः करीराः कफला मधुरा रसपाकतः । विदाहिनो वातकराः सकषाया विरूक्षणाः'—इति सुश्रुतः । ८२८

करीरकम् क्ली. [संज्ञायां कन्] दौर्मद्यं; युद्धम् । ७३१

करीषः पुं.– क्ली. [कीर्यते विक्षिप्यते इति, 'कॄतॄभ्यामीषन्' इति कॄ+ईषन्] शुष्कगोमयं; छगणः; गोग्रन्थिः; 'कंडा' 'उपले' इत्यादि भाषा । 'ददर्श च वने तस्मिन् महतः सञ्चयान् कृतान् । मृगाणां महिषीणां च करीषैः शीतकारणात्'—इति रामायणे (२।१००।७) । २७३

करुणः पुं. [करोति मनः आनुकूल्याय, कृ+'कृवृदादिभ्य उनन्' इति उनन्] शृङ्गाराद्यष्टरसान्तर्गततृतीयरसः; 'इष्टनाशादनिष्टाप्तेः करुणाख्यो रसो भवेत् । धीरैः कपोतवर्णोऽयं कथितो यमदैवतः ।' वृक्षविशेषः (१९४); बुद्धभेदः; सर्वजीवेषु दयावान्; 'यदृच्छयोपलब्धेन सन्तुष्टो मितभुग् मुनिः । विविक्तशरणः शान्तो मैत्रः करुण आत्मवान्'—इति भागवते (३।२७।८) । ९२

करुणा स्त्री. ['कृवृदादिभ्य उनन्' इति कृ+उनन् टाप् च] परदुःखहानेच्छा; कारुण्यं; घृणा; कृपा; दया; अनुकम्पा; अनुक्रोशः; शूकः; 'करुणा विमुखेन मृत्युना हरता त्वां वद किं न मे हृतम्'—इति रघुवंशे (८।६७) । गङ्गानामविशेषः; 'कूटस्था करुणा कान्ता कूर्मयाना कलावती'—इति काशीखण्डे (२९।४३) 'करुणा दयास्वरूपा'—इति तट्टीका । ७२४

करेणुः पुं. ['कृहृभ्यामेनुः' इति कृ+एनु । के मस्तके रेणुः पांशुर्यस्य वा । मस्तके शुण्डाकृष्टधूलीनिक्षेपणात् तथात्वम्] हस्ती; माघे (५–४८) । 'उत्क्षिप्तगात्रः स्म विडम्बयन्नभः समुत्पतिष्यन्तमगेन्द्रमुच्चकैः । आकुञ्चितप्रोहनिरूपितक्रमं करेणुरारोहयते निषादिनम्'—इति माघे (१२।५) । कर्णिकारवृक्षः । ८३३

करेणुः स्त्री. [कृ+एनु] हस्तिनी; रघुवंशे (१६।१६) । 'शुश्रुवे चाग्रतः स्त्रीणां रुदतीनां महास्वनः । यथा नादः करेणूनां बद्धे महति कुञ्जरे'—इति रामायणे (२।४०।२९) । 'ददौ सरःपङ्कजरेणुगन्धि गजाय गण्डूषजलं करेणुः'—कुमारसम्भवे (३।३७) । ८३३

करोटम् क्ली. [कं वायुम् अन्तर्वायुम् रोटते प्रतिहन्ति, के मस्तके रोटते दीप्यते वा । रुट्+अच्] शिरोऽस्थि; 'खोपडी' इति भाषा । ६३३

करोटिः स्त्री. [केन वायुना अन्तर्वायुना रुट्यते प्रतिहन्यते, के शिरसि रोटते दीप्यते शोभते वा । रुट्+इन्] शिरोऽस्थि; 'खोपडी' इति भाषा । ६३३

करोटी स्त्री. [करोट+गौरादित्वाद् ङीष्] शिरोऽस्थि । ६३३

कर्कः पुं. [करोति आदिष्टं पालयति । 'कृदाधारार्चिकलिभ्यः कः' इति क, बहुलवचनान्न ककारस्येत् संज्ञा] शुक्लाश्वः; कुलीरः; दर्पणः; [क्रियतेऽसौ] घटः; कर्कटराशिः; [कृणोति हिनस्ति] अग्निः; कर्कटवृक्षः ; कर्कटराश्युदाहरणम्—'कर्कलग्ने समुत्पन्नो भोगी सर्वजनप्रियः । मिष्टान्नपानभोगी च जायते स्वजनप्रियः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । 'श्रुतकलामलनिर्मलवृत्तयः सक्रशगन्धजलाशयकेलयः । किल नरास्तु कुलीरगते विधौ वसुमतः सुमतोऽर्थितलब्धयः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । ४३७

कर्कटः पुं. [कर्क+अटन् प्रत्ययः] जलजन्तुविशेषः; कर्कटकः; कुलीरः; कुलीरकः; सदंशकः; पङ्कवासः; तिर्यग्गामी; 'केंकड़ा' इति भाषा । 'अयमुद्गृहीतवडिशः कर्कट इव मर्कटः पुरतः'—इति आर्याशप्तशती (३२२) । पक्षिविशेषः; पद्मकन्दः; तुम्बी; मेषादिद्वादशराश्यन्तर्गतचतुर्थराशिः; कर्कः; नागविशेषः; 'अनन्तो वासुकिः पद्मो महापद्मस्तु तक्षकः । कुलीरः कर्कटः शङ्ख-

श्चाष्टौ नागाः प्रकीर्तिताः—इति पुराणम्। ६५८

कर्कटिः स्त्री. [करं कटति प्राप्नोति, कट्+'सर्वधातुभ्य इन्', कर्क+अट्+इन् वा] कर्कटी। २०९

कर्कटी स्त्री. [कर्कं कण्टकम् अटति गच्छति, कर्क+अट्+इन्। शकन्ध्वादित्वात् साधुः, ततो ङीष्। करं कटति वा, कटे+इन् ततो ङीष्] फललताविशेषः; कटुदली; छर्दापनिका; पीनसा; मूत्रफला; बहुकन्दा; कर्कटाक्षः; शान्तनुः; चिर्भटी; बालुकी; एर्वारुः; त्रपुषी; 'ककड़ी'—इति भाषा। 'कर्कटी शीतला रूक्षा ग्राहिणी मधुरा गुरुः। रुच्या पित्तहरा सामा पक्वा तृष्णाग्निपित्तकृत्॥ त्वग्बीजरहिता प्रौढ़ा गुलिकाकारखण्डिता। तलिता सुघृते तप्ते कर्कटी वाऽवलेहिता'—इति भावप्रकाशः। शाल्मलिफलं; सर्पः; देवदालीलता; कर्कटशृङ्गीवृक्षः; घोटिकावृक्षः। २०९

कर्कन्धुः पुं.–स्त्री. [कर्कं कण्टकं दधातीति। कर्क+धा+निपातनात् कु, नुम् च] बदरीफलं; कोलिवृक्षः। १९४

कर्कन्धूः पुं.– स्त्री. [कर्कं कण्टकं दधातीति, धा+'अन्दूदृम्भूजम्बूकम्बूफलकर्कन्धूदिधिषु'—इति कू निपातनात् साधुः] बदरीवृक्षः; 'कललं त्वेकरात्रेण पञ्चरात्रेण बुद्बुदम्। दशाहेन तु कर्कन्धूः पेश्यण्डं वा ततः परम्'—इति भागवते (३।३१।२)। १९४

कर्करी स्त्री. [कर्कं हासं हास्यप्रकाशवत् निर्मलसलिलं रातीति। रा+क गौरादित्वाद् ङीष्] स्वल्पवारिधानिका; आलुः; गलन्तिका; अलुः; आरुः; कर्करीका; 'झारी' इति भाषा। ३१७

कर्कशः त्रि. [कर्कात् लोमादित्वात् श] कठोरः; 'खराश्च कर्कशैः क्षत्तः खुरैर्घ्नन्तो धरातलम्—'इति भागवते (३।१७।११)। साहसिकः; अमसृणः; 'हरेः कुमारोऽपि कुमारविक्रमः सुरद्विपास्फालनकर्कशाङ्गुलौ'—इति रघुवंशे (३।४।५)। दुष्पर्शः; क्रूरः; निर्दयः; 'तस्य तद्वचनं श्रुत्वा राक्षसाः कोपकर्कशाः' —इति रामायणे (५।४९।५)। कृपणः। ३४२

कर्कारुः पुं. [कर्कं हास्यवत् शौक्ल्यम् ऋच्छति प्राप्नोतीति। कर्क+ऋ+बाहुलकाद् उण्] कूष्माण्डः; 'कष्माण्डी तु भृशं लघ्वी कर्कारुरपि कीर्तिता। कर्कारुर्ग्राहिणी शीता रक्तपितहरा गुरुः। पक्वा तिक्ताग्निजननी सक्षारा कफवातनुत्'—इति भावप्रकाशः। २०९

कर्णः पुं. [कीर्यते क्षिप्यते शब्दो वायुना यत्र। किरति शब्दग्रहणेन मनसि सुखं क्षिपति ददातीत्यर्थः। कॄ विक्षेपे+'कॄवॄजॄसीति' नन् निच्च। यद्वा कर्ण्यते आकर्ण्यते अनेन। कर्ण+करणे अच्] श्रवणेन्द्रियं; शब्दग्रहः; श्रोत्रं; श्रुतिः; श्रवणं; श्रवः; श्रौत्रं; वचोग्रहः; 'तद्गुणैः कर्णमागत्य चापलाय प्रचोदितः'—इति रघुवंशे (१।९)। युधिष्ठिराग्रजः; राधेयः; वसुषेणः; अर्कनन्दनः; घटोत्कचान्तकः; चाम्पेशः; सूतपुत्रः; चम्पाधिपः; अङ्गराट्; राधासुतः; अर्कतनयः; अङ्गाधिपः; 'प्राङ् नाम तस्य प्रथितं वसुषेण इति क्षितौ। कर्णो वैकर्तनश्चैव कर्मणा तेन सोऽभवत्' —इति महाभारते (१।१११।३१)। सुवर्णालिवृक्षः; धृतराष्ट्रशतपुत्रेषु एकः पुत्रः; 'दुर्मर्षणो दुर्मुखश्च दुष्कर्णः कर्ण एव च'—इति महाभारते (१।११७।३)। नौकायाः क्षेपणीविशेषः; 'हतप्रवीरा विध्वस्ता निरुत्साहा निरुद्यमा। सेना भवति सङ्ग्रामे हतकर्णेव नौर्जले—'इति रामायणे (६।२३।३०)। [कर्णः अस्त्यस्य प्राशस्त्येन। अर्श आद्यच्] दीर्घकर्णे त्रि.। 'खड्गो वैश्वदेवः श्वाकृष्णा कर्णो गर्दभः'—इति यजुर्वेदे (२।४।४०)। ५१६

कर्णधारकः पुं. [कर्णं धरति धारयति वा। कर्ण+धृ+'कर्मण्यण्' —इति अण्, ण्यन्तादच् वा संज्ञायां कन्] नाविकः; कर्णधारः; 'यदि न स्यान्नरपतिः सम्यङ् नेता ततः प्रजा। अकर्णधारा जलधौ विप्लवेतेह नौरिव'—इति हितोपदेशे (३।४)। ६५५

कर्णपूरः पुं. [कर्णं पूरयति अलङ्करोतीति। कर्ण+पूर्+'कर्मण्यण्' इति अण्] अवतंसः; 'ज्याकृष्टिबद्धखटकामुखपाणिपृष्ठप्रेङ्खन्नखांशुचयसंवलितोऽम्बिकायाः। त्वां पातु मञ्जरितपल्लवकर्णपूरलोभभ्रमद्भ्रमरविभ्रमभृत्कटाक्षः'—इति अमरुशतके (१)। अशोकवृक्षः; शिरीषवृक्षः; नीलोत्पलं; कदम्बवृक्षः। ५५४

कर्णमूलम् क्ली. [कर्णस्य मूलम्] हस्तिनां कर्णमूलं; चूलिका। २१७

कर्णमोटी स्त्री. [कर्णं कर्णोपलक्षितरोगविशेषं मोटयति नाशयति। यद्वा कर्णं शरीरभेदिरोगविशेषं मोटयति नाशयति। कर्ण+मुट्+इन् वा ङीप्] चामुण्डादेवी। १७

कर्णवेष्टनम् क्ली. [कर्णौ वेष्टयतेऽनेन । वेष्ट् + करणे ल्युट्] कुण्डलम् । ५५६

कर्णाटी स्त्री. [कर्णाट+स्त्रियां ङीप्, रूढोऽयं शब्दः] रागिणीविशेषः; सा तु मालवरागस्य पत्नी। हंसपदीवृक्षः। १०४ अ.

कर्णालङ्करणम् क्ली. [कर्णयोः अलङ्करणम् । कर्ण+ अलम्+कृ+करणे ल्युट्] कर्णभूषणं; कर्णिका । ५५६

कर्णिका स्त्री. [कर्ण+इकन्+टाप् च, यद्वा, कर्ण+ ण्वुल्, ततष्टाप्, अत इत्वम्] कर्णाभरणविशेषः; ताल-पत्रं; ताडङ्कः; दन्तपत्रम् (२१९) । करमध्याङ्गुलिः; मध्यमा; करिहस्ताङ्गुलिः; पद्मबीजकोषी (६८२); 'तस्यां सचाम्भोरुहकर्णिकायामवस्थितो लोकमपश्य-मानः'—इति भागवते (३।८।१६) । करिणः शुण्डाग्र-वर्त्यङ्गुलाकृतिः; क्रमुकादिच्छटांशः; लेखनी; अग्नि-मन्थवृक्षः; अजशृङ्गीवृक्षः; अप्सरोभेदः; 'मेनका सहजन्या च कर्णिका पुञ्जिकस्थला'—इति महाभारते (१।१२३।६१) । सेवती; 'गुलाब का फूल' इति भाषा। 'शतपत्री तरुण्युक्ता कर्णिका चारुकेशरा। महाकुमारी गन्धाढ्या लक्षपुष्पातिमञ्जुला'—इति भावप्रकाशः। योनिरोगविशेषः; 'अकाले वाहमनाया गर्भेण पिहितोऽनिलः। कर्णिकाञ्जनयेद्योनौ श्लेष्मरक्तेन मूर्च्छितः'—इति चरकः। ५५६

कर्णिकारः पुं. [कर्णिं भेदनं करोतीति। कर्णि+कृ+ कर्मण्यण्। उदरमलभेदकत्वाद् अस्य तथात्वम्] वृक्ष-विशेषः; द्रुमोत्पलः; परिव्यधः; वृक्षोत्पलः; 'तच्छाल-तालाम्रमधूकनीपकदम्बसर्जार्जुनकर्णिकारैः। तपात्यये पुष्पवरैरुपेतं महाबलं राष्ट्रपतिर्ददर्श'—इति महा-भारते (३।२४।१७) । 'कर्णिकारैरशोकैश्च केशरै-रतिमुक्तकैः'—इति महाभारते (१।१२५।२) । कर्णि-कारस्य पुष्पम् ['अवयवे च प्राण्यौषधि वृक्षेभ्यः'— इति उत्पन्नस्य तद्धितस्य 'पुष्पमूलेषु बहुलम्' इति लुक्] 'वर्णप्रकर्षे सति कर्णिकारम्'—इति कुमारसम्भवे (३। २८) । आरग्वधविशेषः; राजतरुः; प्रग्रहः; कृत-मालकः; सुफलः; चक्रः; परिव्याधः; व्याधिरिपुः; पिण्डबीजकः; लघ्वारग्वधः। १९९

कर्णीरथः पुं. [कर्णसाध्या श्रवणक्रिया उपचारात् कर्णः। कर्णोऽस्यास्ति इनि। कर्णी चासौ रथश्चेति शब्दमात्रेण रथो न वस्तुतः। यद्वा सामीप्यात् कर्णशब्देन स्कन्धो लक्ष्यते। सोऽस्त्यस्य वाहकत्वेन, इनि। कर्णी चासौ रथश्च, 'अन्येषामपीति' दीर्घः] क्रीडार्थं-निर्मितस्वल्परथः; पुरुषस्कन्धनीयमानरथः; स्त्रीवह-नार्थमुपरिवस्त्राच्छादितरथविशेषः; चतुर्दोलः; स्त्री॰ रत्नवहनार्थमुपरिवस्त्राच्छादितमनुष्यवाह्ययानविशेषः; प्रवहणं; ह्ययनं; प्रहणं; डयनं; 'पालकी'—इति भाषा। ४४५

कर्णेजपः त्रि. [कर्णे जपति यः। जपादित्वात् स्तम्ब-कर्णयोरित्यच्, हलदन्तादित्यलुक्] अप्रकाशेनानुचित-प्रबोधकः; कर्णे लगित्वा परापकारं वदति यो जनः; सूचकः; पिशुनः; दुर्जनः; खलः। ३४६

कर्तनम् क्ली. [कृत्+भावे ल्युट्] छेदनं; 'काटना' इति भाषा। सूत्रनिर्मितिः; 'कातना' इति भाषा। ७२९

कर्तरी स्त्री. [कृन्ततीति, कृती छेदने+बाहुलकादर-प्रत्ययः ततो ङीष्। यद्वा कृत्+घञ्। कर्तं रातीति, 'आतोनुपेति' क, गौरादित्वान् ङीष्] पुङ्खः; कृपाणी, (५९५); पत्रीकृतस्वर्णादिः कर्तनास्त्रम्; केशकर्तनिका; 'कैंची' इति भाषा। ग्रहयोगविशेषः; 'क्रूरमध्यगत-श्चन्द्रो लग्नं वा क्रूरमध्यगम्। कर्तरी नाम योगोऽयं कन्यानिधनकारकः'—इति ज्योतिषशास्त्रे। ४६८

कर्दमः पुं. [कर्द, कुत्सितरवे+'कलिकर्द्योरमः' इति अम] कर्दः; निषद्वरः; जम्बालः; पङ्कः; शादः; 'रथ्याकर्दमतोयानि स्पृष्टान्यन्त्यश्ववायसैः। मारुतेनैव शुध्यन्ति पक्वेष्टकचितानि च'—इति याज्ञवल्क्यः (१।१९७) । 'कर्दमो दाहपित्तातिशोथघ्नः शीतलः सरः' —इति भावप्रकाशः। 'स्वायम्भुवमन्वन्तरे प्रजापति-विशेषः; पापं; छाया; वेदेषु कर्दमः शब्दश्छायायां वर्तते स्फुटम्। बभूव कर्दमाद्बालः कर्दमस्तेन कीर्तितः' —इति ब्रह्मवैवर्ते ब्रह्मखण्डे २२ अध्यायः। नाग-विशेषः; 'कर्दमश्च महानागो नागश्च बहुमूलकः' —इति महाभारते। (१।३५।१६) । ६७८

कर्पटः पुं. [कीर्यते क्षिप्यते इति, कॄ+कर्मणि विच्, कर् चासौ पटश्च इति कर्मधारयः। यद्वा करस्थः पटः। पृषोदरादित्वाद् अलोपे साधुः] मलिनत्वादि-

दुष्टजीर्णवस्त्रखण्डं; लक्तकः; नक्तकः; 'चिथड़ा' इति भाषा। 'चीरखण्डैककर्पटः'—इति कथासरित्सागरे (४।६१)। पर्वतप्रभेदः; 'नीलशैलस्य पूर्वस्मिन् स्वरूपं प्रतिपादितम्। नाभिमण्डलपूर्वस्यां भस्मकूटस्य दक्षिणे। पूर्वस्यां कर्पटो नाम पर्वतो गमरूपधृक्। तत्र याम्यशिला कृष्णा नीलाञ्जनसमप्रभा। अनेनैव तु मन्त्रेण शमनं यस्तु पूजयेत्। कर्पटाख्येऽचलवरे नापमृत्युं समाप्नुयात्'—इति कालिकापुराणे, ८१ अध्यायः। ५४८

कर्परः पुं. [कृप्+बाहुलकात् अरन् लत्वाभावश्च] कटाहः; कपालः; शिरोऽस्थि; 'खोपड़ी' इति भाषा। शस्त्रभेदः; उडुम्बरः। ३१५

कर्पासः पुं.– क्ली. ['कृञः पासः' इति कृधातोः पास] कार्पासः; 'कपास' इति भाषा। २०२

कर्पूरः पुं.– क्ली. [कृप्+खर्जूरादित्वाद् ऊर] सुगन्धिद्रव्यविशेषः; 'कपूर' इति भाषा। तत्पर्यायाः– घनसारः; चन्द्रसंज्ञः; सिताभ्रः; हिमबालुका; सिताभः; घनसारकः; सितकरः; शीतः; शशाङ्कः; शिला; शीतांशुः; हिमबालुकः; हिमकरः; शीतप्रभः; शाम्भवः; शुभ्रांशुः; स्फटिकाभ्रः; कारमिहिका; ताराभ्रः; चन्द्रार्द्रकः; चन्द्रः; लोकतुषारः; गौरः; कुमुदः; हनुः; हिमाह्वयः; चन्द्रभस्म; वेधकः; रेणुसारकः। 'कर्पूरो नूतनस्तिक्तः स्निग्धश्चोष्णास्रदाहृदः। चिरस्थो दाहशोषघ्नः स धौतः शुभकृत्परः'—इति राजनिर्घण्टः। 'कर्पूरः शीतलो वृष्यश्चक्षुष्यो लेखनो लघुः। सुरभिर्मधुरस्तिक्तः कफपित्तविषापहः॥ दाहतृष्णास्यवैरस्यमेदोदौर्गन्ध्यनाशनः। कर्पूरो द्विविधः प्रोक्तः पक्वापक्वप्रभेदतः। पक्वात् कर्पूरतः प्राहुरपक्वं गुणवत्तरम्'–इति भावप्रकाशः। ५४५

कर्बुरम् क्ली. [कर्बति गर्वत्यस्मात्, यस्मिन् सति वा गर्वो भवति, कर्बत्यनेन वा। कर्ब दर्पे, 'मद्गुरादयश्च' इति उरच्] स्वर्णं; धुस्तूरवृक्षः; जलम्। १७४

कर्बुरः पुं. [कर्बति नानावर्णतां गच्छति, कर्ब गतौ, उरच्] नानावर्णः; चित्रं; किर्मीरः; कल्माषः; शबलः; एतः; 'इति चैनमुवाच दुःखिता सुहृदः पश्य वसन्त! किं स्थितम्। तदिदं कणशो विकीर्यते पवनैर्भस्म कपोतकर्बुरम्'—इति कुमारसम्भवे (४।२७)। तद्वति त्रि.। शटी; पापं; नदीनिष्पावधान्यं; [कर्वति हिनस्ति जीवं, कर्व हिंसायाम्, 'मद्गुरादयश्च' इति उरच्] राक्षसः। ७४१

कर्म [न्] क्ली. [क्रियते तत्, कृ+मनिन्] यत् क्रियते तत्; क्रिया; कर्तव्यम्। ५९१

कर्मठः त्रि. [कर्मणि घटते इति। 'कर्मणि घटोऽठच्' इति अठच्] कर्मकुशलः; प्रयत्नेन प्रारब्धं कर्म समापयति यः; कर्मशूरः; कर्मशीलः; 'ज्ञाताशयस्तस्य ततो व्यतानीत् स कर्मठः कर्मसुतानुबन्धम्'—इति भट्टिः (१।११)। ३६९

कर्मण्या स्त्री. [कर्मणा सम्पाद्यते, 'तत्र साधुरिति' यत् टाप् च] वेतनं; मूल्यम्। ७२८

कर्मन्दी [न्] पुं. [कर्मन्देन स्वनामख्यातऋषिविशेषेण प्रोक्तं भिक्षुसूत्रमधीते यः। कर्मन्द+इनि] भिक्षुः; सन्न्यासी। ४०९

कर्मविपाकः पुं. [कर्मणः अधर्ममूलकस्य अशुभफलजनकस्येति यावत्, विपाकः परिणामः। इह रोगादिभोगजनकदुःखमयपरिणामः। अमुत्र नरकभोगादिजनकदुःखमयपरिणामश्च] अशुभकर्म; कर्मजन्यफलस्य विपाकः; रोगादिरूपजन्मान्तरीयाशुभकर्मफलभोगः। (गारुडे कर्मविपाकः २२९ अध्याये द्रष्टव्यः।) ७९९

कर्मशाला स्त्री. [षष्ठीसमासः] कारूणामन्वासनम्; कारुशाला; 'कारखाना' इति भाषा। २९७

कर्मशूरः त्रि. [कर्मणि शूरः दक्षः] कर्मठः; फलपर्यन्तकर्मसमापकः; कर्मशीलः; कार्मः। ३६८

कर्मसंन्यासिकः पुं. [कर्मणां सन्न्यासः, स अस्त्यस्य इति ठन्] यतिः; संन्यासी। ३९४

कर्मसाक्षी [न्] पुं. [कर्मणां साक्षी, यद्वा कर्म साक्षात् पश्यति प्रत्यक्षं करोति] सूर्यः; 'सूर्यः सोमो यमः कालो महाभूतानि पञ्च च। एते शुभाशुभस्येह कर्मणो नव साक्षिणः'—इति वैदिकक्रियापद्धतौ। क्रियासाक्षात्कारिणि त्रि.। 'हृदि स्थितः कर्मसाक्षी क्षेत्रज्ञो यस्य तुष्यति'—इति महाभारते (१।४७।२९)। ३७

कर्षकः त्रि. [कर्षति भूमिमिति। कृष्+ण्वुल्] कृषिजीवी; क्षेत्राजीवः; कृषिकः; कृषीवलः; कार्षकः; 'सुखमापतितं सेवेद् दुःखमापतितं सहेत्। कालप्राप्तमुपासीत सस्यानामिव कर्षकः'—इति महाभारते

(३।२५८।१५) । आकर्षणकर्त्तरि त्रि. । ५७४

कर्षूः स्त्री. [कृष् विलेखने, 'कृषिचमितनीति' ऊ] नदीमात्रं; कुल्या; अल्पा कृत्रिमा सरित्; इष्टखातः; 'तथाधःखाता वितस्त्यायतास्तिस्रः कर्षूः कुर्यात् कर्षूसमीपे अग्नित्रयमुपसमाधाय परिस्तीर्य तत्रैकैकस्मिन्नाहुतित्रयं जुहुयात्' —इति श्राद्धविवेकधृतविष्णुसूत्रम्। पुं. वार्ता; करीषाग्निः; कृषिः; जीविका। ६६६

कलः पुं. [कल्+भावे घञ् वृद्धयभावः] मधुरास्फुटध्वनिः; 'जगौ कलं वामदृशां मनोहरम्'—इति भागवतम्। 'सारसैः कलनिर्ह्रादैः क्वचिदुन्नमिताननौ'—इति रघुवंशे (१।४१)। सालवृक्षः; क्ली. [कडति माद्यति अनेन, कड् मदे+'हलश्च' इति घञ्, संज्ञापूर्वकत्वाद् वृद्धयभावः डलयोरेकत्वम्] शुक्रः; कोलिवृक्षः; त्रि. [कलयति मान्द्यं नयति जाठराग्निम्, कल्+णिच् अच्। धातूनामनेकार्थत्वाद् विशेषतः कलिहलिरित्युक्तेश्च तथात्वम्] अजीर्णः। १४०

कलकण्ठः पुं. [कलप्रधानः कण्ठो यस्य] पिकः; 'युष्माकं रतिकान्तकार्मुकलताक्रेङ्कारकान्ते रुते, सोत्कण्ठं कलकण्ठकण्ठकुहरीभूतेऽपि मा भून्मनः' —इति राजेन्द्रकर्णपूरे। २४३

कलकलः पुं. [कलादपि कलः युगपत्समुत्थितबहुलशब्दानामेकीभूततया तुमुलत्वात्तथात्वम्। कल् शब्दे, घञ्, वृद्धयभावः। यद्वा कलः नानाप्रकारः, गुणवचनत्वात् प्रकारे द्वित्वम्] कोलाहलः; 'उन्मीलन्मधुगन्धलुब्धमधुपव्याधूतचूताङ्कुरक्रीडत्कोकिलकाकलीकलकलैरुद्गीर्णकर्णज्वराः'—इति गीतगोविन्दे (१।३८)। सालनिर्यासः। १३९

कलङ्कः पुं. [कलयति इति, कल्+क्विप्, कल् चासौ अङ्कश्चेति] चिह्नम्; अपवादः (८२०); 'उत्तमस्य विशेषेण कलङ्कोत्पादको जनः'–इति कथासरित्सागरे (२४।२०४)। दोषः; भर्तृहरिशतके (३।४८)। लौहमलम्। ४५

कलत्रम् क्ली. [गड सेचने+'गडेरादेश्च कः' इति अत्रन् गकारस्य ककारश्च, डलयोरेकत्वस्मरणात् डस्य लः। यद्वा कलं त्रायते। त्रै+क। यद्वा कडयते शिष्यते इति, कड् शासने, बाहुलकात् अत्रन्] भार्या; 'तां कस्याञ्चिद् भवनवलभौ सुप्तपारावतायां नीत्वा रात्रिं चिरविलसनात् खिन्नविद्युत्कलत्रः'—इति मेघदूते (४०)। श्रोणिः (५१२)। ४९४

कलधौतम् क्ली. [कलेन अवयवेन धौतम्। धूतं शुद्धं कलधूतम् इत्यपि] कलधूत्रं; रूप्यं; रजतम्; माघे (४-४१,१२-५१)। स्वर्णम् (८०६); 'कन्येयं कलधौतकोमलरुचिः कीर्तिस्तु नातः परा'—इति हनुमन्नाटकम्। 'इमे च कस्य नाराचाः सहस्रं लोमवाहिनः। समन्तात्कलधौताग्रा उपासङ्गे हिरण्मये'—इति महाभारते (४।४०।६)। कलध्वनिः; अस्फुटमधुरध्वनिः। १७२

कलभः पुं. [कलेन करेण शुण्डेनेति यावत्, भाति। कल+भा+क, यद्वा, कल् गतौ 'कृशृशलिकलिगर्दिभ्योऽभच्' इति अभच्। कलं भाषते वा, ड] करिशावकः; तरुणगजः; दुर्दान्तः; व्यालः; 'महोक्षतां वत्सतरः स्पृशन्निव द्विपेन्द्रभावं कलभः श्रयन्निव'—इति रघुवंशे (३।३२)। धत्तूरवृक्षः। २२४

कलमः पुं. [कलते कलयति वा, अक्षरं प्रकाशयति जनयति वा। कल्+'कलिकर्द्योरमः' इति अम] शालिधान्यविशेषः; 'आपादपद्मप्रणताः कलमा इव ते रघुम्। फलैः संवर्द्धयामासुरुत्खातप्रतिरोपिताः'—इति रघुवंशे (४।३७)। 'रक्तशालिर्महाशालिः कलमः षष्टिकोऽपरः—इति हारीते। 'शूकजेषु वरस्तत्र रक्तस्तृष्णात्रिदोषहा। महांस्तस्यानुकलमस्तञ्चाप्यनु ततः परे'–इति वाग्भटः। चौरः; लिपिसाधनवस्तु; लेखनी; वर्णतूली; अक्षरतूलिका; लेखनिका। ५८२

कलम्बः पुं. [कल्यते क्षिप्यते शत्रुं प्रति। कल् क्षेपे+अम्बच्] शरः; शाकनाडिका; कदम्बः। ४६६

कललः पुं.– क्ली [कल्यते वेष्टयतेऽनेन। कल्+वृषादिभ्यः कलच्] जरायुः; गर्भवेष्टनचर्म; 'ऋतुस्नाता तु या नारी स्वप्ने मैथुनमावहेत्। आर्तवं वायुरादाय कुक्षौ गर्भं करोति हि। मासि मासि विवर्द्धेत गर्भिण्या गर्भलक्षणम्। कललं जायते तस्या वर्जितं पैतृकैर्गुणैः' —इति सुश्रुते शारीरस्थाने २ अध्यायः। ५००

कलविङ्कः पुं. [कलं मधुरास्फुटं वङ्कते रौति। वकि गतौ+अच्, पृषोदरादित्वात् अत इत्वे साधुः] चटकः; 'कलविङ्कं प्लवं हंसं चक्राङ्गं ग्रामकुक्कुटम्'

—इति मनुः (५।१२)। कलिङ्गकवृक्षः; कलङ्कः; श्वेतचामरः; त्वष्टृपुत्रविश्वरूपस्य शिरोभेदः (एतद्विवरणं तु श्रीमद्भागवते ६।९ अध्याये द्रष्टव्यम्)। २४३

कलशः त्रि. [कलं मधुराव्यक्तशब्दं शवति जलपूरणसमये प्राप्नोति। कल+शु गतौ+ड] जलाधारविशेषः; तत्पर्यायाः—घटः; कुटः; निपः; कलसः; कलसिः; कलसी; कलसं; कलशिः; कलशी; कलशं; कुम्भः; करीरः। 'पञ्चाशदङ्गुलव्याम उत्सेधः षोडशाङ्गुलः। कलशानां प्रमाणं तु मुखमष्टाङ्गुलं स्मृतम्। षट्त्रिंशदङ्गुलं कुम्भं विस्तारोन्नतिशालिनम्। षोडशं द्वादशं वापि ततो न्यूनं न कारयेत्'—इति तन्त्रसारे। ३१६

कलहः पुं.-क्ली. [कलं कामं हन्त्यत्र। कल+हन्+अधिकरणे ड] कलिः; विवादः; युद्धम्; आयोधनं; जन्यं; प्रधनं; प्रविदारणं; मृधम्; आस्कन्दनं; संख्यं; समीकं; साम्परायिकं; समरः; अनीकः; रणः; विग्रहः; सम्प्रहारः; अभिसम्पातः; संस्फोटः; संयुगः; अभ्यामर्दः; समाघातः; संग्रामः; अभ्यागमः; आहवः; समुदायः; संयत्; समितिः; आजिः; समित्; युध्; शमीकं; साम्परायकं; संस्फेटः; युत्; पुं. वाटः; खड्गकोशः; मण्डनम्। ४५३, ७८९

कलहंसः पुं. [कलेन मधुरास्फुटध्वनिना विशिष्टो हंसः। शाकपार्थिवादित्वान्मध्यपदलोपी समासः] हंसविशेषः; कादम्बः; कलनादः; मरालकः; राजहंसः। 'कुन्दावदाताः कलहंसमालाः प्रतीयिरे श्रोत्रमुखैर्निनादैः'–इति भट्टिः। नृपोत्तमः; परमात्मा; ब्रह्म; सिंहनादः; अतिजगती वृत्तिः (सा च त्रयोदशाक्षरा); 'सजसाः सगौ च कथितः कलहंसः।' 'यमुनाविहारकुतुके कलहंसो व्रजकामिनीकमलिनीकृतकेलिः। जनचित्तहारिकलकण्ठनिनादः प्रमदं तनोतु तव नन्दतनूजः'—इति छन्दोमञ्जरी। २५३

कला स्त्री. [कलयति वृद्धितो धनं संगृह्णाति, सञ्चिनोतीत्यर्थः। कल्+अच्+टाप्] कालमानम्; त्रिंशत्काष्ठात्मकः; 'त्रिंशत्काष्ठाः कला:'–इति सुश्रुते ६ अ.। मूलधनवृद्धिः; 'सूद, ब्याज' इत्यादि भाषा। शिल्पादिः; 'गीतवादित्रकुशला नृत्येषु कुशलास्तथा। उपायज्ञाः कलाज्ञाश्च वैशिके परिनिष्ठिताः—इति रामायणे (१।९।८)। अंशमात्रं; चन्द्रस्य षोडशांशः; 'सालङ्कारतया त्वया मम कथं नेन्दोः कला दृश्यते। पश्यामीन्दुकलां स्फुटं पुनरिदं लङ्कारता नास्मि यत्'—इति वक्रोक्तिपञ्चाशिकायाम्। शरीरस्यांशविशेषः; 'मांसासृङ्मेदसां तिस्रो यकृत्प्लीहोश्चतुर्थिका। पञ्चमी च तथान्त्रानां षष्ठी चाग्निधरा मता। रेतोधरा सप्तमी स्यादिति सप्तकलाः स्मृताः'—इति पूर्वखण्डे पञ्चमेऽध्याये शार्ङ्गधरेणोक्तम्। स्त्रीरजः; नौका; कपटः; राशेस्त्रिंशद्भागोंऽशस्तस्य षष्टिभागः;—'विकलानां कला षष्ट्या तत्षष्ट्या भाग उच्यते। तत्त्रिंशता भवेद्राशिर्भगणो द्वादशैव ते'—इति सूर्यसिद्धान्तः। जिह्वा; 'कलां पराङ्मुखीं कृत्वा त्रिपथे परियोजयेत्'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् (३।३७)। 'कलां जिह्वां पराङ्मुखमास्यं यस्याः सा तथा, तां प्रत्यङ्मुखीं कृत्वा तिसृणां नाडीनां पन्थाः तस्मिन् कपालकुहरे संयोजयेत्'—इति तट्टीका। शिवः; 'कलाः काष्ठा लवा मात्रा मुहूर्ताहःक्षपाः क्षणाः'—इति महाभारते।

अथ शैवतन्त्रोक्ताश्चतुःषष्टिकला लिख्यन्ते—

१ गीतं, २ वाद्यं, ३ नृत्यं, ४ नाट्यम्, ५ आलेख्यं, ६ विशेषकच्छेद्यं, ७ तण्डुलकुसुमबलिविकाराः, ८ पुष्पास्तरणं, ९ दशनवसनाङ्गरागाः, १० मणिभूमिकाकर्म, ११ शयनरचनम्, १२ उदकवाद्यम्, १३, उदकघातः, १४ चित्रायोगाः, १५ माल्यग्रथनविकल्पाः, १६ शेखरापीडयोजनं, १७ नेपथ्ययोगाः, १८ कर्णपत्रभङ्गाः, १९ गन्धयुक्तिः, २० भूषणयोजनम्, २१ ऐन्द्रजालं, २२ कौचुमारयोगाः, २३ हस्तलाघवं, २४, चित्रशाकपूपभक्ष्यविकारक्रिया, २५ पानकरसरागासवयोजनं. २६ सूचीवापककर्माणि, २७ सूत्रक्रीडा, २८ प्रहेलिका, २९ प्रतिमाला, ३० दुर्वचनकयोगाः, ३१ पुस्तकवाचनं, ३२ नाटिकाख्यायिकादर्शनं, ३३काव्यसमस्यापूरणम्, ३४ पट्टिकावेत्रबाणविकल्पाः, ३५ तर्कुकर्माणि, ३६ तक्षणं, ३७ वास्तुविद्या, ३८ रूप्यरत्नपरीक्षा, ३९ धातुवादः, ४० मणिरागज्ञानम्, ४१ आकरज्ञानं, ४२ वृक्षायुर्वेदयोगाः, ४३ मेषकुक्कुटलावकयुद्धविधिः, ४४ शुकशारिकाप्रलापनम्, ४५ उत्सादनं, ४६ केशमार्जनकौशलम्, ४७ अक्षरमुष्टिकाकथनं, ४८ म्लेच्छितकविकल्पाः, ४९ देशभाषाज्ञानं, ५० पुष्पशकटिकानिमित्तज्ञानं, ५१

यन्त्रमातृका, ५२ धारणामातृका, ५३ सम्पाटवं, ५४ मानसी काव्यक्रिया, ५५ क्रियाविकल्पाः, ५६ छलितकयोगाः, ५७ अभिधानकोषच्छन्दोज्ञानं, ५८ वस्त्रगोपनानि, ५९ द्यूतविशेषः, ६० आकर्षक्रीडा, ६१ बालकक्रीडनकानि, ६२ वैनायिकीनां विद्यानां ज्ञानं, ६३ वैजयिकीनां विद्यानां ज्ञानं, ६४ वैतालिकीनां विद्यानां ज्ञानम्। १०५

कलादः पुं. [अलङ्कारनिर्माणाय गृहस्थैः समर्पितानां स्वर्णादीनां कलाम् अंशम् आदत्ते गृह्णाति। अलङ्कारनिर्माणहेतुना गृहस्थोपार्जितधनांशं वा आदत्ते। आ+दा+क] स्वर्णकारः। ५८८

कलान्तरम् क्ली. [अन्या कला अंशः। 'सुप्सुपेति' समासः] वृद्धिः; लाभः; 'व्याज, सूद' इति भाषा। 'मासे शतस्य यदि पञ्च कलान्तरं स्यात्' —इति लीलावती। चन्द्रस्य अन्यकला; 'पुपोष लावण्यमयान् विशेषान् ज्योत्स्नान्तराणीव कलान्तराणि'—इति कुमारसम्भवे (१।२५)। ५७२

कलापः पुं. [कलां मात्राम् आप्नोति। कला+आप्+'कर्मण्यण्' इति अण्। यद्वा कला आप्यतेऽनेन, 'हलश्च' इति घञ्] मयूरपिच्छः; 'सम्प्रदीप्तकलापाग्रा विप्रकीर्णाश्च बर्हिणः'—इति रामायणे (५।५२।१३)। तूणः (४६५); 'ततः कलापान् सन्नह्य खड्गौ बद्ध्वा च धन्विनौ'—इति रामायणे (२।५२।११)। काञ्ची (५६०); समूहः; 'क्रियाकलापैरिदमेव योगिनः श्रद्धान्विताः साधु यजन्ति सिद्धये'—इति भागवते (४।२४।६२)। भूषणम्; 'कण्ठस्य तस्याः स्तनबन्धुरस्य मुक्ताकलापस्य च निस्तलस्य'—इति कुमारसम्भवे (१।४२) तट्टीकायां 'मुक्ताकलापस्य मुक्ताभूषणस्य' —इति मल्लिनाथः। चन्द्रः; विदग्धः; व्याकरणविशेषः; 'अधुना स्वल्पतन्त्रत्वात् कातन्त्राख्यं भविष्यति। तद्वाहनकलापस्य नाम्ना कालापकं तथा'—इति बृहत्कथासारः। ग्रामविशेषः; 'देवापिर्योगमास्थाय कलापग्राममाश्रितः। सोमवंशे कलौ नष्टे कृतादौ स्थापयिष्यति'—इति भागवते (९।१२।६)। अस्त्रविशेषः; 'खड्गांश्च दीप्तान् दीर्घांश्च कलापांश्च महाधनान्। विपाठान् क्षुरधारांश्च धनुर्भिर्निदधुः सह' —इति महाभारते (४।५।२८)। २४२

कलापी [न्] पुं. [कलापाः फलपत्रसमूहाः सन्त्यस्मिन्। कलाप+इनि। कलापो बर्हः अस्ति अस्य, इनि] मयूरः; 'पुरोपकण्ठोपवनाश्रयाणां कलापिनामुद्धतनृत्यहेतौ'—इति रघुवंशे (६।९)। प्लक्षवृक्षः; कोकिलः; त्रि. तूणवान्; कलापव्याकरणाध्यायी। २४१

कलायः पुं. [कलाम् अयते। 'कर्मण्यण्' इति अण्] शमीधान्यविशेषः; सतीलकः; हरेणुः; खण्डिकः; त्रिपुटः; अतिवर्तुलः; मुण्डचणकः; शमनः; नीलकः; कण्टी; सतील हरेणुकः; सतीनः; सतीनकः; 'विकसत्कलायकुसुमासितद्युतेः'—इति माघे (१३।२१)। 'कलायो वर्तुलः प्रोक्तः सतिलश्च हरेणुकः। कलायो मधुरः स्वादुः पाके रूक्षश्च वातलः'—इति भावप्रकाशः। ५८२

कलिः पुं. [कलते कलेराश्रयत्वेन वर्तते इति। कल्+'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्] युद्धम्; [कल्यते पापेषु निक्षिप्यते अनेन, यद्वा कलयति पापेन जडयति कलुषितं करोति। कल्+इन्] विभीतकवृक्षः (६१८); 'इत्येवमुक्तो देवेन ब्रह्मणा कलिरव्ययः। दीनान् दृष्ट्वा च शक्रादीन् विभीतकवनं ययौ'—वामने २७ अध्याये। (७८९) विवादः; कलहः; 'तासां कलिरभूद्भूयांस्तदर्थेऽपोह्य सौहृदम्। ममानुरूपो नायं व इति तद्गतचेतसाम्'—इति भागवते (९।६।४४)। [कलते स्पर्द्धते इति, कल्+'सर्वधातुभ्यः इन्' इति इन्] शूरः; अन्त्ययुगम्; कलियुगम्। स्त्री. [कलयति ईषत्प्रकाशते उद्भिद्यते वा, कल्+इन्] कलिका। ४५३

कलिका स्त्री. [कलिरेव, स्वार्थे कन् टाप् च] अस्फुटितपुष्पं; कोरकः; कलिः; कली; कोरकम्ः; 'मुग्धामजातरजसं कलिकामकाले व्यर्थं कदर्थयसि किं नवमल्लिकायाः'—इति साहित्यदर्पणे (३।१६०)। वीणामूलं; पदसंततियुक्तरचनाविशेषः; 'स्युर्महाकलिकारम्भे श्लोकास्तु युगशः स्मृताः। अन्यासां कलिकानान्तु भवन्त्येकैकशो हि ते। पूर्तौ द्वौ कलिकाभिस्तु विरुदास्तुल्यसङ्ख्यकाः।' 'कला नाम भवेत्तालनियता पदसन्ततिः। कलाभिः कलिका प्रोक्ता तद्भेदाः षट् समीरिताः। कलिका चण्डवृत्ताख्या द्विगादिगणवृत्तका। तथा त्रिभङ्गी वृत्ताख्या मध्या मिश्रा च केवला।' छन्दोभेदः; 'प्रथममपरचरणसमुत्थ श्रयति स यदि

लक्ष्म। इतरदितरगदितमपि यदि च तुर्यम् चरणयुगलकमविकृतमपरमिति कलिका सा' —इति वृत्तरत्नाकरे ४ अध्याये। कला; 'तन्यन्ते कलिका यस्मात्तस्मात्तास्तिथयः स्मृताः'—इति सिद्धान्तशिरोमणौ। १८६

कलिङ्गः पुं. [के मस्तके लिङ्गं पीतादिचिह्नमस्य] धूम्याटपक्षी; [कलिं पूतिगन्धादिकं गच्छति प्राप्नोति। कलि+गम्+ड, निपातनात् साधुः] पूतिकरञ्जवृक्षः; देशविशेषः; नृपतिविशेषः; 'अङ्गो वङ्गः कलिङ्गश्च पुण्ड्रः सुह्मश्च ते सुताः। तेषां देशाः समाख्याताः स्वनामप्रथिता भुवि। अङ्गस्याङ्गोऽभवद्देशो वङ्गो वङ्गस्य च स्मृतः। कलिङ्गविषयश्चैव कलिङ्गस्य च स स्मृतः'—इति महाभारते (१।१०४।४९–५०)। 'कलिङ्गः पूतिकरजे धूम्याटे भूम्नि नीवृति' —इति मेदिनी। 'ततः शकपुलिन्दाश्च कलिङ्गाश्चैव मार्गतः —इति रामायणे (४।४०।२१)। तद्देशवासिमानवादयः; 'ततः समुद्रतीरेण जगाम वसुधाधिपः। भ्रातृभिः सहितो वीरः कलिङ्गान् प्रति भारत'— इति महाभारते (३।११४।३)। कुटजवृक्षः; कलिङ्गकः; इन्द्रयवम्ः; 'उक्तं कुटजबीजं तु यवमिन्द्रयवं तथा। कलिङ्गश्चापि कालिङ्गं तथा भद्रयवा अपि।' 'बिल्वं छागमयःसिद्धं सितामोचरसान्वितम्। कलिङ्गचूर्णसंयुक्तं रक्तातीसारनाशनम्' —इति चक्रपाणि संग्रहः। शिरीषवृक्षः; प्लक्षवृक्षः। २४८

कलिलः त्रि. [कल्यते मिश्रयते इति। 'सलिकलि' इति इलच्] गहनः; 'यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति'—इति भगवद्गीतायाम् (२।५२)। मिश्रः; 'न यत्पुनः कर्मसु सज्जते मनो रजस्तमोभ्यां कलिलं ततोऽन्यथा'—इति भागवते (६।२।४६)। ७७७

कलेवरम् क्ली. [कले शुक्रे वरं श्रेष्ठं देहोत्पत्तिहेतुकत्वात् पवित्रम्। सप्तम्या अलुक्] शरीरम्; 'यं यं भावं स्मरन् देही त्यजत्यन्ते कलेवरम्। तं तमेवैति कौन्तेय! सदा तद्भावभावितः'—इति भगवद्गीतायाम् (८।६)। ५१०

कल्कः पुं.–क्ली. [कल् गतौ+'कृदाधारार्चिकलिभ्यः कः'—इति क] पापम्; 'विधूतकल्कोऽथ हरेरुदस्तात् प्रयाति चक्रं नृप! शैशुमारम्'—इति भागवते (२।२।२४)। यस्य कस्यचिद् वस्तुनो चूर्णम्; 'तां लोध्रकल्केन हृताङ्गतैलामाश्यानकालेयकृताङ्गरागाम्'—इति कुमारसम्भवे (७।९)। कर्णमलः; तुरुष्कनामगन्धद्रव्यं; घृततैलादिपाके देयमौषधद्रव्यं; पिष्टः; विनीयः; आवापः; प्रक्षेपः; 'द्रव्यमात्रं शिवापिष्टं शुष्कं वा जलमिश्रितम्। तदेव सूरिभिः पूर्वैः कल्क इत्यभिधीयते।' 'द्रव्यमार्द्रं शिलापिष्टं शुष्कं वा सजलं भवेत्। प्रक्षेपावापकल्कास्ते तन्मानं कर्षसम्मितम्'—इति शार्ङ्गधरः। शाठ्यं; विभीतकवृक्षः; विष्ठा; किट्टं; दम्भः; 'तपो न कल्कोऽध्ययनं न कल्कः स्वाभाविको वेदविधिर्न कल्कः। प्रसह्यवित्ताहरणं न कल्कः तान्येव भावोपहतानि कल्कः'—इति महाभारते (१।१।२७१)। त्रि. [कलयति पापमाचरति, कल्+क] पापाशयः; पापात्मा। ६२७

कल्पः पुं. [कल्प्यते विधीयते असौ। कृप्+कर्मणि घञ्] विधिः; 'एष वै प्रथमः कल्पः प्रदाने हव्यकव्ययोः। अनुकल्पस्त्वयं ज्ञेयः सदा सद्भिरनुष्ठितः' —इति मनु (३।१४७)। [कल्प्यते सृष्टिर्नाशो वा अत्र। कृप्+णिच्, अधिकरणे घ] प्रलयः; 'युगानां सप्ततिः सैका मन्वन्तरमिहोच्यते। कृताब्दसंख्यस्तस्यान्ते सन्धिः प्रोक्तो जलप्लवः। ससन्धयस्ते मनवः कल्पे ज्ञेयाश्चतुर्दश। कृतप्रमाणकल्पादौ सन्धिः पञ्चदश स्मृतः।' [कल्पते स्वक्रियायै समर्थो भवत्यत्र। कृप्+अधिकरणे घ] ब्राह्मं दिनं; दैवद्विसहस्रयुगम्; 'कल्पान् कल्पविकल्पांश्च चतुर्युगविकल्पितान्। कल्पान्तस्य स्वरूपञ्च युगधर्मांश्च कृत्स्नशः'—इति विष्णुपुराणे (१।१।१२)। ८२६

कल्पनम् क्ली. [कृप्+भावे ल्युट्] क्लृप्तिः; छेदनम्। ७२९

कल्पपालः पुं. [कल्प्यते इति कल्पः मद्यं तस्य पालः] शौण्डिकः; कल्यपालकः। ५९३

कल्पवृक्षः पुं. [कल्पस्य सङ्कल्पस्य दाता वृक्षः, कल्पस्थायी वृक्ष इति वा] देवतरुः; 'नमस्ते कल्पवृक्षाय चिन्तितान्नप्रदाय च। विश्वम्भराय देवाय नमस्ते विश्वमूर्तये'—इति दानसागरे। १३५

कल्पान्तः पुं. [कल्पस्य अन्तो यत्र] ब्रह्मणो दिनान्तः; प्रलयः; 'उपवासरताश्चैव जले कल्पान्तवासिनः'—इति रामायणे (३।१०।४)। ११७

कल्पितः पुं. [कल्प्यते सज्जीक्रियते असौ । कृप्+णिच्+कर्मणि क्त] सज्जितहस्ती; रचिते त्रि., 'ब्रह्मादितृण-पर्यन्तं मायया कल्पितं जगत् । सत्यमेकं परं ब्रह्म विदित्वैवं सुखी भवेत्'—इति महानिर्वाणोक्तात्मज्ञाननिर्णये । २२१

कल्मषम् क्ली. [कर्म शुभकर्म स्यति नाशयति । रस्य लत्वे षत्वे च पृषोदरादित्वात् साधु] पापम्; 'यामीस्ता यातनाः प्राप्य स जीवो वीतकल्मषः । तान्येव पञ्च-भूतानि पुनरप्येति भागशः'–इति मनुः (१२।२२) । हस्तिपुच्छं; मालिन्यम्; 'न हि कञ्चन पश्यामो राघवस्यागुणं वयम् । दुर्लभो ह्यस्य निरयः शशाङ्कस्येव कल्मषम्'—इति रामायणे (२।३६।२७) । पुं. नरक-विशेषः; मलिने त्रि. । ६२७

कल्माषः पुं. [कलयति इति, क्विप्, कल् । माषयति स्वभासा अभिभवति अन्यवर्णान् । मष् हिंसायाम्, णिच्+अच् । कल् चासौ माषश्चेति] कृष्णपाण्डुरवर्णः, तद्वति त्रि. । चित्रवर्णः; (७४१), तद्वति त्रि. । कृष्णवर्णः; [कलं शुभकर्म माषयति हिनस्ति, कल्+मष्+णिच्+अच्] राक्षसः; गन्धशालः; नाग-विशेषः; 'नीलानीलौ तथा नागौ कल्माषशबलौ तथा' —इति महाभारते (१।३५।७) । ७३६

कल्यम् क्ली. [कल्यते आगम्यते, कल् गतौ+कर्मणि यत्] प्रत्यूषः; अहर्मुखम्; 'इदं यः कल्य उत्थाय प्राञ्जलिः श्रद्धयान्वितः । शृणुयाच्छ्रावयेन्मर्त्यो मुच्यते कर्मबन्धनैः' —इति भागवते (४।२४।७८) । (३३०) मद्यम्; आसवः; ह्यस्तनदिनं (८०९); [कलयति मिष्टतां सम्पादयति । अघ्न्यादित्वाद् यक्]. मधु; त्रि. [कलासु साधुः इत्यर्थे यत्] सज्जः; 'कथयस्व कथामेतां कल्याः स्म श्रवणे तव'—इति महाभारते (१।५।३) । निरामयः; वाक्श्रुतिवर्जितः; दक्षः; कल्याणवचनम्; उपायवचनम् । १११

कल्यपालः पुं. [कल्यं मद्यं पालयतीति । कल्य+पाल्+अण्] शौण्डिकः; कल्यापालः; कल्यपालकः; प्रातराशः । ५९३

कल्याणम् क्ली. [कल्ये प्रातः अण्यते शब्द्यते इति । कल्य + अण् + 'अकर्तरि चेति' घञ्] मङ्गलं; श्वःश्रेयसं; शिवं; भद्रं; शुभं; भावुकं; भविकं; भव्यं; कुशलं; क्षेमं; शस्तं, तद्युक्ते त्रि. । 'प्राति-वेश्यानुवेश्यौ च कल्याणे विंशतिर्द्विजे'—इति मनुः (८।३९२) । स्वर्णम् (१७३) । १२२

कल्यापालः पुं. [कल्यां मद्यं पालयतीति । कल्या+पाल्+अण्] शौण्डिकः; कल्यपालः; कल्यपालकः । ५९३

कल्लमूकः त्रि. [कल्लः बधिरः मूकः अवाक्] वाक्श्रुति-वर्जितः; अवाक्श्रुतिः; 'गूंगा-बहरा' इति भाषा । ६०९

कल्लोलः पुं. [कुल्ल्+बाहुलकात् ओलच् । यद्वा कं जलं लोलं चपलं यस्मात्, निपातनात् साधुः] महातरङ्गः; उल्लोलः; 'कालिन्दी जलकल्लोलकोलाहलकुतूहली'—इत्युद्भटः । हर्षः; शत्रौ त्रि. । ६५३

कवचः पुं.–क्ली. [कं देहं वञ्चति विपक्षास्त्रेभ्यः वञ्च-यित्वा रक्षति इति शेषः । क+वञ्च्+अच्, कं वातं वञ्चति वा, अन्तर्ण्यर्थो वा । यद्वा कवते इति कुधातोरच प्रत्यय इति केचित्] सन्नाहः, तत्पर्यायाः–तनुत्रं; वर्म; दंशनम्; उरश्छदः; कङ्कटकः; जगरः; दंसनं; जागरः; अजगरः; कटकः; योगः; कञ्चुकः; 'शराश्च दिव्या नभसः कवचं च पपात ह'—इति विष्णुपुराणे (१।१३।४०) । 'यथा शस्त्रप्रहाराणां कवचं प्रति वारणम् । तथा दैवोपघातानां शान्तिर्भवति वारणम्'—इति मलमासतत्त्वम् । लौहादिवर्मवद् अङ्गादिरक्षणार्थं देवतामन्त्रविग्रहः । तत्तु पूजायां पाठ्यं (यथा देवीकवचम्) भूर्जे विलिख्य कण्ठादौ धार्यं च —इति तन्त्रम् । पटहवाद्यम् । ४५९

कवचितः त्रि. [कवचं संजातम् अस्य । इतच्] वर्मितः; सन्नद्धः; दंशितः । ४६०

कवरम् त्रि. [के मस्तके वरं शोभमानत्वात् श्रेष्ठम्] संपृक्तं; खचितं; पुं. केशपाशः; 'वल्गुस्पन्दनस्तन-कलशकवरभाररशनां देवीम्'—इति भागवते (५।२।७) । पुं.–क्ली. [कं जलं वृणोति,क+वृ+अच्] लवणः; अम्लः । [कौतीति, कु शब्दे+'कोररन्' इति अरन्] पाठकः; कर्बुरवर्णः; 'दृष्ट्वैव निर्जितकलापभरामधस्ताद्व्याकीर्णमाल्यकवरां कवरीं तरुण्याः'—इति माघे (५।१९) । ७४१

कवरी स्त्री. [कं शिरः वृणोति आच्छादयति । क+वृ+अच्, जानपदेत्यादिना ङीप् । कु+अरन् ङीष् वा]

केशविन्यासः; केशवेशः; कवरः; केशगर्भकः; केशपाशः; 'अमरीकवरीभारभ्रमरी'—इति चन्द्रालोके। 'गोपीभर्तुर्विरहविधुरा काचिदिन्दीवराक्षी, उन्मत्तेव स्खलितकवरी निःश्वसन्ती विशालम्'—इति पदाङ्कदूते(१)। ववंरा; कारवी। ५३०

कविः पुं. [कवते सर्वं जानाति, सर्वं वर्णयति, सर्वं सर्वतो गच्छति वा। कव् इन्। यद्वा कुशब्दे, 'अच इः' इति इ] शुक्राचार्यः, 'ब्रह्मणो हृदयं भित्त्वा निःसृतो भगवान् भृगुः। भृगोः पुत्रः कविर्विद्वान् शुक्रः कविसुतो ग्रहः'—इति महाभारते (१।६६।४२)। त्रि [कवते श्लोकान् ग्रथते वर्णयति वा, कव्+इन्] पण्डितः (३३३); 'अध्यापयामास पितॄन् शिशुराङ्गिरसः कविः'—इति मनुः (२।१५१)। ब्रह्मा; 'तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये'—इति भागवते (१।१)। वाल्मीकिमुनिः; 'एकोऽभून्नलिनात् ततस्तु पुलिनात् वल्मीकतश्चापरस्ते ह्येव प्रथिताः कवीन्द्रगुरवस्तेभ्यो नमस्कुर्महे'—इत्युद्भटः। सूर्यः; काव्यकरः; 'मन्दः कवियशःप्रार्थी गमिष्याम्युपहास्यताम्'—इति कालिदासः, रघौ (१।३)। [कवति शब्दायते इति, कु शब्दे 'अच इः' इति इ, अश्वमुखे शब्दायमानत्वात्] खलीने स्त्री.। विष्णुः; 'वेदो वेदविदव्यङ्गो वेदाङ्गो वेदवित् कविः'—इति महाभारते (१३।१४९।२७)। कल्किदेवस्य ज्येष्ठभ्राता; 'कल्केर्ज्येष्ठास्त्रयः शूराः कविप्राज्ञसुमन्त्रकाः। तातमातृप्रियकरा गुरुविप्रप्रतिष्ठिताः' —इति कल्किपुराणे २ अध्याये। चौरयोद्धा; 'वेधस्थान रणे भङ्गो दुर्गे खण्डिः प्रजायते। कविप्रवेशनं यत्र योधाघातश्च तत्र वै'—इति सर्वतोभद्रचक्रे ज्योतिस्तत्त्वम्। ४८

कविकम् क्ली. [कवि+स्वार्थे कन्] खलीनः; कविः; कविका; 'लगाम' इति भाषा। ४४२

कविका स्त्री. [कवि+स्वार्थे कन् टाप् च] खलीनः; केविकापुष्पं; कवयीमत्स्यः; 'कविका मधुरा स्निग्धा कफघ्ना रुचिकारिणी। किञ्चित् पित्तकरी वातनाशिनी वह्निवर्द्धिनी'—इति भावप्रकाशः। ४४२

कशा स्त्री. [कशति शब्दायते ताडयति वा। कश्+करणस्य कर्तृविवक्षया कर्तरि अच् टाप् च। ताडयत्यनया वा] अश्वादेस्ताडनी; 'कोड़ा, चाबुक' इत्यादि भाषा। 'जघान कशया मोहात् तदा राक्षसवन्मुनिम्'—इति महाभारते (१।१७७।१०)। मांसरोहिणी। ४४२

कशिपुः पुं. [कशति दुःखं, कश्यते वा, कश् गतिशासनयोः। कश्+मृगय्वादित्वाद् निपातनात् साधुः] भक्तम्; आच्छादनम्; एकोक्त्यान्नवस्त्रे कशिपू इति द्विवचनान्तं; शय्या; 'सत्यां क्षितौ किं कशिपोः प्रयासैः'—इति भागवते (२।२।४)। १२१

कशेरुः पुं.-क्ली. [के देहे शीर्यते, क+शॄ+'के श्र एरङ चास्य' इति उ एरङ चान्तादेशः] पृष्ठास्थि; 'किं कुर्वता वराहेण खाद्यन्ते हि कशेरवः'—इत्युणादिधृतचन्द्रवचनम्। क्ली. [कं जलं वातं वा शृणाति, क+शॄ+उणादित्वाद् उ एरङ चान्तादेशः] कशेरुका; तृणकन्दः; 'कसेरू' इति भाषा। 'कशेरु द्विविधं तत्तु महद्राजकशेरुकम्। मुस्ताकृति लघु स्याद् यत् तच्चिवोटमिति स्मृतम्'—इति वैद्यकम्। पुं. [क+शॄ+उ+एरङ] जम्बूद्वीपस्य खण्डविशेषः। ६३४

कश्मलम् क्ली. [कश् गतिशातनयोः+कल 'कुटिकशिकौतिभ्यः प्रत्ययस्य मुट्' इति मुट्] मलिने त्रि.। मूर्च्छा; मोहः; 'कुतस्त्वाकश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम्'—इति भगवद्गीता (२।२)। पापम्। ७२७

कश्यम् क्ली. [कशति अनेन, कश्+बाहुलकात् करणे यत्] मद्यम्; 'ब्रह्मणस्तनयो योऽभून् मरीचिरिति विश्रुतः। कश्यपस्तस्य पुत्रोऽभूत् कश्यपानात् स कश्यपः'—इति मार्कण्डेयपुराणे (१०४।३)। [कशाम् अर्हतीति। कशा+दन्तादित्वाद् यत्] अश्वमध्यभागः (४४१); कशार्हे त्रि.। ३३०

कश्यपनन्दनः पुं. [कश्यपस्य नन्दनः] गरुडः; देवासुरादयः। ३०

कषायः पुं.-क्ली. [कषति कण्ठम्,कष्+आय] रसविशेषः; तुवरः; कुवरः; तूवरः; तद्युक्ते त्रि.। 'कषैला' इति भाषा। 'शुक्तानि च कषायांश्च पीत्वा मेध्यान्यपि द्विजः'—इति मनुः (११।१५३)। 'कषायः शोषणः स्तम्भी व्रणपाकार्तिनाशनः। कफशोणितवातघ्नो रूक्षः शीतो गुरुस्तथा।' 'कषायनामा निरुणद्धि शोफं वर्णन्तनोर्दीपनपाचनश्च। सत्त्वापहोऽसौ शिथिलत्वकारी निषेवितः पाण्डुकरोऽतिमात्रम्'—इति राजनिर्घण्टः। त्रि. [कष+आयः] सुरभिः (८१३);

'प्रत्यूषेषु स्फुटितकमलामोदमैत्रीकषायः'—इति मेघदूते (३३)। पाचनादिः; क्वाथः; निर्यूहः; स्वरसः; कल्कः; क्वथितः; शीतः; फाण्टम्। 'जिह्वां कण्ठं प्रसति नितरां ग्राहकश्चातिसारे, श्लेष्मव्याधेरुपशमकरः श्वासकासापहर्ता। हिक्कां शूलं हरति नितरां शोधनं स्याद् व्रणानां, प्रोक्तश्चायं समधिकगुणो नाम श्रेष्ठः कषायः'—इति हारीतः। निर्यासः; 'घृष्टो वटकषायेण अनुलिप्तः प्रियङ्गुणा। क्षीरेण षष्टिकान् भुक्त्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते'—इति महाभारते अनुशासनपर्वणि। विलेपनम्; 'कर्णार्पितो लोध्रकषायरूक्षे गोरोचनाक्षेपनितान्तगौरे'—इति कुमारसम्भवे (७।१७)। तट्टीकायां 'लोध्रस्य वृक्षविशेषस्य कषायेण विलेपनेन'–इति मल्लिनाथः। अङ्गरागः; पुं. श्योनाकवृक्षः; रागः; कलियुगं; निर्विकल्पसमाधेर्विघ्नभेदः, त्रि. लोहितः; 'चूताङ्कुरास्वादकषायकण्ठः पुंस्कोकिलो यन्मधुरं चुकूज'—इति कुमारसम्भवे (३।३२)। रक्तपीतमिश्रितवर्णः; धववृक्षः। ७७१

कसेरुः पुं. [कं शृणातीति, शृ हिंसायां बाहुलकादुप्रत्यये प्रकृतेरेरङादेशः, निपातनात् शस्य सत्वम्] कसेरुका; पृष्ठास्थि; कशेरुः; गुण्डकन्दः; क्षुद्रमुस्ता; शूकरेष्टः; सुगन्धिः; सुकन्दः; कसेरुकः। ६३४

कस्तूरिका स्त्री. [कसति गन्धोऽस्याः। कस् गतौ, खर्जूरादित्वाद् ऊर, ङीप्, कस्तूरी+स्वार्थे कन् टाप्, पृषोदरादित्वात् साधुः] कस्तूरी; कस्तुरिका; मृगनाभिः; मृगमदः; मृगः; मृगी; नाभिः; मदः; वातामोदः; योजनगन्धिका; मदनी; गन्धकेलिका; वेधमुख्या; मार्जारी; सुभगा; बहुगन्धदा; सहस्रवेधी; श्यामा; कामान्धा; मृगाङ्गना; कुरङ्गनाभिः; ललिता; श्यामला; मोदिनी; नाभी; लता; योजनगन्धा; मार्गः; गन्धबोधिका; कालाङ्गी; धूपसञ्चारी; मिश्रा; गन्धपिशाचिका। 'मृगनाभिर्मृगमदः कथितस्तु सहस्रभित्। कस्तूरिका च कस्तूरी वेधमुख्या च सा स्मृता।' 'कस्तूरिका कटुस्तिक्ता क्षारोष्णा शुक्रला गुरुः। कफवातविषच्छर्दिशीतदौर्गन्ध्यशोषहृत्'—इति भावप्रकाशः। ५४४

कह्लारम् क्ली. [कस्य जलस्य हार इव, के जले ह्लादते वा इति। क+ह्लाद्+पचाद्यच्, पृषोदरादित्वात् साधुः] श्वेतोत्पलं; सौगन्धिकं; कत्तृणं; गन्धकम्; 'कुमुदोत्पलकह्लारशतपत्रवनर्द्धिभिः'—इति भागवते (४।६।१७)। ६८१

कांस्यम् क्ली. [कंसाय पानपात्राय हितं कंसीयं, तस्य विकारः इति। 'कंसीयपरशव्ययोरिति' यञ्; छस्य लुक् च। यद्वा कंसमेव इति स्वार्थे यञ् प्रत्ययः] ताम्ररङ्गमिश्रितधातुः; कंसं; कंसास्थि; ताम्रार्द्धं; सौराष्ट्रकं; घोषं; कांसीयं; वह्निलोहकं; दीप्तिलोहं; घोरघुष्यं; दीप्तिकांस्यं; कास्यम्। 'उपधातु भवेत् कांस्यं द्वयोस्तरणिरङ्गयोः। कांस्यस्य तु गुणा ज्ञेयाः स्वयोनिसदृशा जनैः'—इति भावप्रकाशः। १७०

काकः पुं. [कायते शब्दायते, कै शब्दे, 'इणूभीकापाशल्यतिमर्चिभ्यः कन्' इति कन्] पक्षिविशेषः; करटः; अरिष्टः; बलिपुष्टः; सकृत्प्रजः; ध्वाङ्क्षः; आत्मघोषः; परभृत्; बलिभुक्; वायसः; वातजवः; वलः; दीर्घायुः; सूचकः; कृष्णः; ग्रामीणः; पिशुनः; कटखादकः; द्विकः; कागः; काणः; धूलिजङ्घः; निमित्तकृत्; कौशिकारिः; चिरायुः; मुखरः; खरः; महालोलः; चिरञ्जीवी; चलाचलः; करटकः; नागवीरकः; गाढमैथुनः; लुण्टाकः; श्रावकः; रतज्वरः। 'अथोच्यते काकरुतं रुतानां मूर्ध्नि स्थितं शाकुनभाषितानाम्। अचिन्तितावेदितकार्यसिद्धिं पूर्वादिकाष्ठाप्रहरक्रमेण'—इति शाकुने काकचरित्रम्। पीठसर्पी; द्वीपविशेषः; परिमाणभेदः; वृक्षविशेषः; शिरोऽवक्षालनं; तिलकः; अतिधृष्टः। २४५

काकतुण्डः पुं. [काकतुण्डस्येव वर्णोऽस्त्यस्य। अर्श आदित्वाद् अच्] कालागरु; अगरुविशेषः। ५४५

काकतुण्डिका स्त्री. [काकतुण्डस्येव वर्णः फलांशे अस्याः इति। ठन्, स्त्रियां टाप् च] काकचिञ्चा; गुञ्जा। २०३

काकपक्षः पुं. [काकस्य पक्ष इव आकारोऽस्त्यस्य। काकपक्ष+अच्] मस्तकपार्श्वद्वये केशरचनाविशेषः; शिखण्डकः; शिखाण्डकः; शिखण्डः; 'जुल्फी' इति भाषा। 'कौशिकेन स किल क्षितीश्वरो राममध्वरविघातशान्तये। काकपक्षधरमेत्य याचितस्तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते'—इति रघुवंशे (११।१)। ५३२

काका स्त्री. [काकवदाकारोऽस्त्यस्याः काक, अच् ततष्टाप्]

काकनासालता; काकोलीवृक्षः; काकजङ्घावृक्षः; 'काकजङ्घा नदीकान्ता काकतिक्ता सुलोमशा । पारावतपदी दासी काका चापि प्रकीर्तिता'—इति भावप्रकाशे। रक्तिकालता; मलपूवृक्षः; काकमाची-वृक्षः। ८०९

काकुः स्त्री. [कक् लौल्ये + उण्] शोकभयादिभिर्ध्वनिविकारः; 'भिन्नकण्ठध्वनिर्धीरैः काकुरित्यभिधीयते'—इति साहित्यदर्पणे (२।२३)। 'गुरुपरतन्त्रतया बत दूरतरं देशमुद्यतो गन्तुम्। अलिकुलकोकिलललिते नैष्यति सखि! सुरभिसमयेऽसौ ?' नैष्यति, अपि तु एष्यति एवेति काक्वा व्यज्यते । इति काकुं लक्ष्यीकृत्य उदाहृतं तत्रैव। १४३

काकुदम् क्ली. [काकुं ददातीति । काकु+दा+क] तालु। ५२१

काकोदरः पुं. [कु कुत्सितम् अकति। कु+अक् वक्रगतौ+अच्, कोः कादेशः, काकं कुटिलगतिकारि उदरं यस्य] सर्पः; 'यः पूतनामारणलब्धवर्णः काकोदरो येन विनीतदर्पः। यशोदयालङ्कृतमूर्तिरव्यान्नाथो यदूनामथवा रघूणाम्'—इति राघवपाण्डवीये। ६४०

काकोलः पुं. [कं जलमाकोलति संस्त्यायतीति। क+आ+कुल् संस्त्याने+अण् । कक् लौल्ये, स्वार्थे णिच्+बाहुलकाद् ओल वा] द्रोणकाकः; 'बकं चैव बलाकां च काकोलं खञ्जरीटकम्। मत्स्यादान् विड्वराहांश्च मत्स्यानेव च सर्वशः'—इति मनुः (५।१४)। सर्पः; शूकरभेदः; काकोलीनामख्यातौषधिविशेषः; कुलालः। पुं.–क्ली. [कु कुत्सितं तीव्रतरं यथा स्यात् तथा कोलति पीडयति विह्वलीकरोति वाऽनेन। करणे घञ्] कृष्णवर्णस्थावरविषविशेषः (६४७); 'काकोलमुग्रतेजः स्यात् कृष्णच्छविमहाविषम्'—इति वैद्यके । अस्य पर्याया यथा—'काकोलो गरलः क्ष्वेडो वत्सनाभः प्रदीपनः। शौक्लिकेयो ब्रह्मपुत्रो विषं स्याद् गरलो विषः'—इति वैद्यकरत्नमाला। क्ली. [काकयति लोलयति दुःखदत्वात् । कक् लौल्ये + णिच् + ओल । काकेन उल्लायते भक्ष्यते अत्र वा। आधारे घञर्थे क, पृषोदरादित्वात् साधु] नरकविशेषः; 'महानरककाकोलं सञ्जीवनमहापथम्'—इति मनुः। २४६

काङ्क्षा स्त्री. [काङ्क्ष+अ] इच्छा। ७१०

काचः पुं. [कच् दीप्तौ+णिच्+घञ्] शिक्यं; क्षारः; मृत्तिकाविशेषः; 'काच्' इति भाषा। मणिविशेषः; 'आकरे पद्मरागाणां जन्म काचमणेः कुतः'—इत्युद्भटः। नेत्ररोगविशेषः; 'अस्मिन्नपि तमोभूते नातिरूढे महागदे। चन्द्रादित्यौ सनक्षत्रावन्तरिक्षे च विद्युतः। निर्मलानि च तेजांसि भ्राजिष्णूनीव पश्यति। स एव लिङ्गनाशस्तु नीलिका काचसंज्ञितः'—इति माधवकरः। ७५८

काचितम् त्रि. [कच्यते बध्यतेऽसौ। कच्+णिच्, कर्मणि क्त] सिक्यितं; शिक्यितं; शिक्यारोपितवस्तु। ७६८

काञ्चनम् क्ली. [काञ्चते दीप्यते इति। काचि दीप्तौ+ल्यु] स्वर्णम्; 'अमित्रादपि सद्वृत्तममेध्यादपि काञ्चनम्'।—इति मनुः (२।२३९)। पद्मकेसरं; धनं; नागकेसरपुष्पं; [भावे ल्युट्] दीप्तिः; काञ्चनमये त्रि.। 'निर्लेपं काञ्चनं भाण्डमद्भिरेव विशुध्यति'—इति मनुः (५।११२)। पुं. [काञ्चते दीप्यते इति कर्तरि ल्यु] पुष्पवृक्षविशेषः; रक्तश्वेतभेदेन स द्विविधः। आद्यस्य पर्यायाः–रक्तपुष्पः; कोविदारः; युग्मपत्रः; कुण्डलः। द्वितीयस्य पर्यायाः– काञ्चनालः; कर्बुदारः; पाकारिः; चम्पकः; नागकेसरः; उदुम्बरः; धुस्तूरः; पुरूरवसो वंश उद्भूतस्य भीमस्य पुत्रः; 'भीमस्तु विजयस्याथ काञ्चनो होत्रकस्ततः'—इति भागवते (९।१५।३)। १७४

काञ्चनारकः पुं. [काञ्चनं तद्वर्णम् ऋच्छति पुष्पैः। काञ्चन+ऋ+अण्+कन्] कोविदारवृक्षः; काञ्चनारः; काञ्चनालः; काञ्चनकः; गण्डारिः; शोणपुष्पकः; 'कचनार' इति भाषा। २०६

काञ्चिः स्त्री. [काञ्चते इति, 'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्] काञ्ची; 'हृतकाञ्चिवल्लिबन्धोत्तरजघनाद्परभोगभुक्तायाः । उल्लसति रोमराजिः स्तनशम्भोर्गरलरेखेव'—इति आर्यासप्तशती (६९३)। ५६०

काञ्ची स्त्री. [काञ्चि+कृदिकारान्तत्वाद् वा ङीष्] स्त्रीकट्याभरणं; मेखला; सप्तकी; रसना; सारसनं; काञ्चिः; रशना; कक्षा; कक्ष्या; सप्तका; सारशनं; रसनं; बन्धनम्; 'वीचिक्षोभस्तनितविहगश्रेणिकाञ्चीगुणायाः'—इति मेघदूते (३०)। केचित्तु—'एकयष्टिर्भवेत् काञ्ची मेखला त्वष्टयष्टिका। रसना षोडश

ज्ञेया कलापः पञ्चविंशकः ।' मोक्षदसप्तपुर्यन्तर्गत-पुरीविशेषः; 'अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका। पुरी द्वारवती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः।' गुञ्जा। ५६०

काञ्चीपदम् क्ली. [काञ्च्याः पदं स्थानम्] जघनम्। ५१२

काञ्जिकम् क्ली. [अञ्ज्+धात्वर्थनिर्देशे ण्वुल्, टाप् अत इत्वञ्च। अञ्जिका। कु कुत्सिता अञ्जिका व्यक्तिर्यस्य, कोः कादेशः] वारिपर्युषितान्नाम्लजलम्; आरनालकं; सौवीरं; कुल्माषम्; अभिषुतम्; अवन्तिसोमं; धान्याम्लं; कुञ्जलं; कुल्मासं; कुल्माषाभियुतं; काञ्चिकं; काञ्जीकं; काञ्जिका; कञ्जिकं; काञ्जी; भक्तवारि; धान्यमूलं; धान्ययोनि; तुषाम्बु; गृहाम्लं; महारसं; तुषोदकं; शुक्लं; चुक्रं; धातुघ्नम्; उन्नाहं; रक्षोघ्नं; कुण्डगोलकं; सुवीराम्लं; वीरम्; अभिषवम्; अम्लसारकं; 'काँजी' इति भाषा। 'काञ्जिकं दधि तैलं तु बलीपलितनाशनम्। दाहकं गात्रशैथिल्यं बल्यं सन्तर्पणं परम्'—इति राजनिर्घण्टः। 'कुल्माषधान्यमण्डेन चाश्रुतं काञ्जिकं भवेत्। यन्मस्त्वादि शुची भाण्डे सगुडक्षौद्रकाञ्जिकम्। धान्यराशौ त्रिरात्रस्थं शुक्तं चुक्रं तदुच्यते'—इति वैद्यकपरिभाषा। ३१८

काण्डः पुं.—क्ली.[कनी दीप्तौ+'ञमन्ताड्डः' 'क्वादिभ्यः कित्', 'अनुनासिकस्येति' दीर्घः] अर्वा; कुत्सितः; बाणः (४६६); 'विषये काशिराजस्य ग्रामान्निष्क्रम्य लुब्धकः। सविषं काण्डमादाय मृगयामास वै मृगम्'—इति महाभारते (१३।५।३)। नालं (५७९); प्रस्तावः(८६७); वृन्दः; समूहः; कुत्सा; दण्डः; 'पृषता वरत्राकाण्डेनाहन्ति'—इति कात्यायनश्रौतसूत्रे (८।७।२७)। 'वरत्राकाण्डेन वंशदण्डेन'—इति कर्कः। जलं; वारि; 'तास्तु गत्वा परं तीरमवरोप्य च तं जनम्। निवृत्ताः काण्डचित्राणि क्रियन्ते दाशबन्धुभिः'—इति रामायणे (२।८९।१०) 'क्रीडार्थं काण्डचित्राणि, काण्डे जले चित्राणि चित्रगमनानि लघुत्वात् क्रियन्ते स्मेत्यर्थः' इति तट्टीका। शरवृक्षः; वर्गः; एकजातीयसमवायः; 'क्रियाकाण्डेषु निष्णातो योगेषु च कुरूद्वह'—इति भागवते (४।२४।९)। परिच्छेदः; 'इदं प्रापमुत्तम काण्डमस्य यस्माल्लोकात्परमेष्ठी समाप'—इति अथर्ववेदे (१२।३।४५)। अवसरः; स्तम्बः; 'ऊरुद्वयं मृगदृशः कदलस्य काण्डौ मध्यं च वेणिरतुलं स्तनयुग्ममस्याः—इति अमरुशतके (९५)। तृणादिगुच्छः; 'दूर्वाकाण्डमिव श्यामा न्यग्रोधपरिमण्डला'—इति भट्टिः (५।१८)। तरुस्कन्धः; 'वृक्षकाण्डमितो भाति।' वृक्षाणां शाखा; 'उद्भिज्जाः स्थावराः सर्वे बीजकाण्डप्ररोहिणः'—इति मनुः (१।४६) 'केचित्काण्डात् शाखा एव रोपिता वृक्षतां यान्ति'—इति तट्टीका। रहः; निर्जनस्थानं; श्लाघा; पापीयान्। क्ली. [कणतीति, कण् शब्दे+ड, बाहुलकाद् दीर्घः] सन्धिः; विच्छिन्नैकखण्डास्थि; 'भग्नं समासाद्विविधं हुताशकाण्डे च सन्धौ च हि तत्र सन्धौ। उत्पिष्टविश्लिष्टविवर्तितं च तिर्यग्गतं क्षिप्तमधश्च षट् च'—इति रोगविनिश्चयः। सन्धिविच्छिन्नमेकखण्डमस्थिकाण्डं, काण्डेन च ललककपालवलयत्तरुणरुचकानां ग्रहणम्। तत्र भग्नं काण्डभग्नम्—इति तट्टीका मधुकोषः। ३३७

काण्डपटः पुं. [काण्डे काष्ठादिनिर्मितस्तम्भे आवरकत्वात् स्थितः पटः] जवनी; जवनिका; तिरस्करिणी; 'कनात' इति भाषा। ३०९

काण्डपृष्ठः त्रि. [काण्डः बाणः पृष्ठे यस्य] काण्डस्पृष्टः; शस्त्राजीवः; 'स्त्रीपूर्वाः काण्डपृष्ठाश्च यावन्तो भरतर्षभ। अजपा ब्राह्मणाश्चैव श्राद्धे नार्हन्ति केतनम्'—इति महाभारते (१३।२३।२२)। वैश्यापतिः; क्ली. [काण्डं तरुस्कन्ध इव स्थूलं पृष्ठं यस्य] कर्णधनुः। ४०५

काण्डस्पृष्टः त्रि. [स्पृष्टं गृहीतं काण्डं येन, निष्ठान्तत्वात् परनिपातः] काण्डपृष्ठः; शस्त्राजीवी; शस्त्राजीवः।४०५

कातरः त्रि. [कु कष्टेन तरतीति। कु+तॄ+अच्, कोः कादेशः] व्यसनाकुलचित्तः; व्याकुलः; अधीरः; 'कातरोऽसि यदि वोद्गतार्चिषा तर्जितः परशुधारया मम'—इति रघुवंशे (११।७८)। पुं. [कं जलम् आतरति, क+आ+तॄ+अच्] कातलमत्स्यः। ३५४

कात्यायनिका स्त्री. [कतस्यापत्यं स्त्री, 'गर्गादिभ्यो यञ्' इति यञ्, 'सर्वत्र लोहितादिकतन्तेभ्यः' इति ष्फ। षित्वाद् ङीष्, क, इत्वं, टाप्] अर्द्धवृद्धा; काषायवसना विधवा; दुर्गा; याज्ञवल्क्यमुनेः पत्न्योरेका; कात्यायनस्य ऋषेः पत्नी। ४८५

कात्यायनी स्त्री. [कतस्यापत्यं स्त्री । 'गर्गादिभ्यो यञ्' इति यञ् । 'सर्वत्र लोहितादिकतन्तेभ्यः' इति ष्फ, षित्वाद् ङीष्] दुर्गा; पार्वती; 'एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम् । पातु नः सर्वभूतेभ्यः कात्यायनि ! नमोऽस्तु ते'—इति मार्कण्डेये (९१।२३) । अर्द्धवृद्धा; काषायवसना विधवा; याज्ञवल्क्यमुनेः पत्न्योरेका । यथा बृहदारण्यकोपनिषदि—'याज्ञवल्क्यस्य द्वे भार्ये बभूवतुः मैत्रेयी कात्यायनी च । तयोर्हि मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी बभूव स्त्रीप्रज्ञैव तर्हि कात्यायनी ।' [पत्न्यां ङीप्] कात्यायनस्य ऋषेः पत्नी । १५

कादम्बः पुं. [कदम्बे समूहे भवः । कदम्ब+अण्] कलहंसः; 'क्वचित् खगानां प्रियमानसानां कादम्बसंसर्गवतीव पङ्क्तिः'—इति रघुवंशे (१३।१५) । [कदम्ब एव-स्वार्थे अण्] कदम्बवृक्षः; [कदम्बस्येदमिति व्युत्पत्त्या अण्] कदम्बसम्बन्धिनि त्रि., कदम्बकुसुमम्; 'गन्धश्च धाराहतपल्वलानां कादम्बमर्द्धोद्गतकेसरं च'—इति रघुवंशे (१३।२७) । वाणः; कादम्बकः; शरः । २५४

कादम्बरी स्त्री. [कु कृष्णवर्णं नीलवर्णमित्यर्थः, अम्बरं वस्त्रं यस्य, कोः कदादेशः, कदम्बरो बलरामस्तस्य प्रिया । कदम्बर+अण् ततः स्त्रियां ङीप् । यद्वा कदम्बे जातो रसः कादम्बः, 'तत्र जातः' इत्यण् । कादम्बं राति ददातीति, रा दाने+'आतोऽनुपसर्गे कः' इति क, गौरादित्वान् ङीष्] मदिरा; 'कादम्बरीमदविघूर्णितलोचनस्य युक्तं हि लाङ्गलभृतः पतनं पृथिव्याम्'—इत्युद्भटः । कोकिला; सरस्वती; सारिकापक्षिणी; बाणभट्टविरचितकाव्यविशेषः (स्वनायिकानाम्नैव प्रसिद्धोऽयं ग्रन्थः । इयं कादम्बरी तु बाणभट्टेन असमापिता पुनरस्य पुत्रेण समाप्तिं नीता) । नायिकाविशेषः (सा तु तुम्बुरुप्रभृतीनां षण्णां गन्धर्वाणां ज्येष्ठस्य हंस इत्याख्यया प्रसिद्धस्य गन्धर्वस्य कन्या । अस्या जननी सोममयूखसम्भवाप्सरसां कुले जाता गौरीति नाम्ना प्रसिद्धा) । ३२९

कादम्बिनी स्त्री. [कादम्बाः कलहंसाः सन्ति अस्याम्, कादम्ब+इनि+ङीष्] मेघमाला; मेघश्रेणिः । ५९

काद्रवेयः पुं. [कद्र्वा अपत्यं पुमान् । कद्रू+'शुभ्रादिभ्यश्च' इति ढक्, 'ढे लोपोऽकद्र्वाः' इति भस्य न लोपः] कद्रूसन्तानः; नागाः; 'शेषोऽनन्तो वासुकिश्च तक्षकश्च भुजङ्गमः । कूर्मश्च कुलिकश्चैव काद्रवेयाः प्रकीर्तिताः'—इति महाभारते (१।६५।४१) । ६४०

काननम् क्ली. [कं जलम् अननं जीवनमस्य । यद्वा कानयति दीपयति, कन् दीप्तौ+णिच्+ल्युट्] वनम्; 'शीतो वायुः परिणमयिता काननोदुम्बराणाम्—इति मेघदूते (४४) । ब्रह्मणो मुखम्; गृहम् । २१०

कानीनः पुं.– स्त्री. [कन्यायाम् अनूढायां जातः, कन्याया जातो वा । कन्या+'कन्यायाः कनीन च' इति अण् कनीनादेशश्च] अनूढापुत्रः; कन्यकाजातः; सा कन्या यद्यनूढा पितृगृह एव तिष्ठति तदा तत्पुत्रो मातामहस्यैव, यथा—'कानीनः कन्यकाजातो मातामहसुतो मतः'—इति याज्ञवल्क्यः । यद्यूढा तदा वोढुरेव, यथा—'पितृवेश्मनि कन्या तु यं पुत्रं जनयेद्रहः । तं कानीनं वदेन्नाम्ना वोढुः कन्यासमुद्भवम्'—इति मनुः । पुं. व्यासः; कर्णः । ५०१

कान्तः पुं. [कम्+क्त] पतिः; 'कान्तोदन्तः सुहृदुपनतः सङ्गमात् किञ्चिदूनः'—इति मेघदूते (१०१) । श्रीकृष्णः; चन्द्रः; चन्द्रकान्तसूर्यकान्तायस्कान्तादयः; हिज्जलवृक्षः; वसन्तऋतुः; विष्णुः; 'कामहा कामकृत् कान्तः कामः कामप्रदः प्रभुः'—इति महाभारते (१३।१४९।४५) । शिवः; 'गुहः कान्तो निजः सर्पःपवित्रं सर्वपावनः'—इति महाभारते (१३।१७।१४८) । कार्त्तिकेयः; 'कामजित् कामदः कान्तः सत्यवाग् भुवनेश्वरः'—इति महाभारते (२।२३१।४) । ४९७

कान्तः त्रि. [काम्यते इति, कम्+कर्मणि क्त, 'यस्य विभाषा' इति नेट्, 'अनुनासिकस्येति' दीर्घः] मनोरमः; शोभनः; 'मलिनमपि मृगाक्ष्या वल्कलं कान्तरूपं न मनसि रुचिभङ्गं स्वल्पमप्यादधाति'—इति शाकुन्तले १ अङ्के । क्ली. [कनते दीप्यते इति, कन्+कर्तरि क्त] कुङ्कुमं; लौहविशेषः; 'स्वादुर्यत्र भवेन्निम्बकल्को रात्रिन्दिवोषितः । कान्तं तदुत्तमं यच्च रूप्येणावर्तितं मिलेत् ।' 'पात्रे यस्मिन् विसरति जले तैलबिन्दुर्निषिक्तो, विद्धं गन्धं विसृजति निजं रूषितं निम्बकल्कैः । पाके दुग्धं भजति शिखराकारतां नैति भूमौ, कान्तं लौहं तदिदमुदितं लक्षणोक्तं न चान्यत्'—इति गुरुबोधः । ६८९

कान्ता स्त्री. [काम्यते असौ, कम्+णिच्+कर्मणिक्त+

टाप्] नारी; 'झटिति प्रविश गेहं मा बहिस्तिष्ठ कान्ते ! ग्रहणसमयवेला वर्त्तते शीतरश्मेः । अयि ! सुविमल-कान्तिं वीक्ष्य नूनं स राहुर्ग्रसति तव मुखेन्दुं पूर्णचन्द्रं विहाय'—इति शृङ्गारतिलके (६)। प्रियङ्गुवृक्षः; सर्वाङ्गसुन्दरी स्त्री; गङ्गा; 'कूटस्था करुणा कान्ता कूर्मयाना कलावती'—इति काशीखण्डे (२९।४३)। बृहदेला; रेणुका; नागरमुस्ता। ४८२

कान्तारम् क्ली. [कस्य मुखस्य अन्तम् ऋच्छति गच्छतीति। कान्त+ऋ+'कर्मण्यण्' इति अण्। कान्तं मनोज्ञम् ऋच्छति प्राप्नोति वा। 'कर्मण्यण्'] काननम्; 'सीते विमुच्यतामेषा वनवासकृता मतिः। बहुदोषं हि कान्तारं वनमित्यभिधीयते'—इति रामायणे (२।२८।५)। पथविशेषः; पुं. [कान्तं मनोज्ञं रसम् ऋच्छति प्राप्नोति, कान्त+ऋ+अण्] इक्षुविशेषः; कान्तारकः; कान्तारी; 'कान्तारतावसाविक्षुवंशकानुगुणौ मतौ'—इति सुश्रुते सूत्रस्थाने ४५ अध्यायः। कोविदारवृक्षः; वंशः; पुं.-क्ली. [कस्य सुखस्य अन्तम् ऋच्छति यत्र, हिस्रसंकुलत्वात्। कान्त+ऋ+आधारे+घञ्] महावनम्; 'कैकेयान् सिन्धुसौवीरान् कान्तारगिरयश्च ये। गिरिजालावृतां दुर्गां मार्गध्वं पश्चिमां दिशम्'—इति रामायणे (४।४३।११)। दुर्गमपथः (८१६); 'सिंहक्षुण्णकरीन्द्रकुम्भगलितं रक्तावतमुक्ताफलम्, कान्तारे बदरीभ्रमाद् द्रुतमगाद्भिल्लस्य पत्नी मुदा।' बिलं; छिद्रम्। २१०

कान्तिः स्त्री. [कमु कान्तौ, कन् दीप्तौ वा+भावे क्तिन्] दीप्तिः, शोभा; द्युतिः; छविः; शुभा; भा; श्रीः; भासा; भाः; अभिख्या; 'शशाङ्कः श्रीधरः कान्तिः श्रीस्तस्यैवानपायिनी'—इति विष्णुपुराणे (१।८।२३)। स्त्रीशोभा; 'रूपयौवनलालित्यं भोगाद्यैरङ्गभूषणम्। शोभा प्रोक्ता सैव कान्तिर्मन्मथाप्यायिता द्युतिः'—इति साहित्यदर्पणे (१३०)। इच्छा [स्पृहार्थ-कम्धातोर्भावे क्तिन् प्रत्ययः] दुर्गा; 'स्तुतिः सिद्धिरिति ख्याता श्रिया संश्रयणाच्च या। लक्ष्मीर्वा ललना वापि क्रमात् सा कान्तिरुच्यते'—इति देवीपुराणे देवीनामनिरुक्तौ ४५ अध्याये। गङ्गा; 'कुमुद्वती कमलिनी कान्तिः कल्पितदायिनी'—इति काशीखण्डे गङ्गास्तोत्रे (२९। ४०) 'कान्तिश्चन्द्रतेजोरूपा'—इति तट्टीका। ८१३

कान्दिशीकः त्रि. [कां दिशं यामि इत्याह, 'तदाहेति माशब्दादिभ्य उपसङ्ख्यानमिति' ठक्, पृषोदरादित्वात् साधुः] भयद्रुतः; भयेन पलायितः। ४७९

कान्यकुब्जम् क्ली. [कन्याः कुब्जा न्युब्जीकृता वायुना यत्र, ततः स्वार्थे अण्] गङ्गातीरस्थपुरविशेषः; महोदयं; कन्याकुब्जं; गाधिपुरं; कौशं; कुशस्थलं; 'कन्नौज' इति भाषा। 'एतस्मिन्नेव काले तु पृथिव्याः पृथिवीपतिः। कान्यकुब्जे महानासीत् पार्थिवः सुमहाबलः। गाधीति विश्रुतो लोके वनवासं जगाम ह'—इति महाभारते (३।११५।१९)। २८७

कापटिकः त्रि. [कपटेन चरति इति, ठक्] मायिकः; शठः; धूर्तः; छात्रः; अन्यमर्मज्ञः; 'तत्र परमर्मज्ञः प्रगल्भच्छात्रः कपटव्यवहारित्वात् कापटिकः, तं वृत्त्यर्थिनमर्थमानाभ्यामुपगृह्य रहसि राजा ब्रूयात् यस्य दुर्वृत्तं पश्यसि तत् तदानीमेव मयि वक्तव्यम्'—इति मनुसंहितायां ७।१५४ श्लोकस्य टीकायां कुल्लूकभट्टः। ३४९

कापिशायनम् क्ली. [कपिशैव, स्वार्थे अण्, तत्र जातम्। 'कापिश्याः ष्फक्' इति ष्फक्] मद्यं; देवता। ३३०

कापेयः त्रि. [कपेर्भावः कर्म वा, कपि+ढक्] कपिसम्बन्धी; स्त्रियां प्रमाणम्—'कच्चिन्नु खलु कापेयी सैव ते चलचित्तता।' २३२

कामः पुं. [काम्यते असौ, कर्मणि घञ्] कामदेवः; मदनः; श्रीकृष्णपुत्रः; मन्मथः; मारः; प्रद्युम्नः; मीनकेतनः; कन्दर्पः; दर्पकः; अनङ्गः; पञ्चशरः; स्मरः; शम्बरारिः; मनसिजः; कुसुमेषुः; अनन्यजः; पुष्पधन्वा; रतिपतिः; मकरध्वजः; आत्मभूः; ब्रह्मसूः; विश्वकेतुः। 'कामस्तु बाणावसरं प्रतीक्ष्य पतङ्गवद्वह्निमुखं विविक्षुः'—इति कुमारे (३।६४)। इच्छा (८७९); 'न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति। हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते।' कामस्तु ब्रह्मणो हृदयाज्जातः, यथा—'हृदि कामो भ्रुवोः क्रोधो लोभश्चाधोरदच्छदात्'—इति भागवतम्। वरः; 'सन्तानकामाय तथेति कामं राज्ञे प्रतिश्रुत्य पयस्विनी सा'—इति रघुवंशे (२।६५) 'कामं वरं प्रतिश्रुत्य प्रतिज्ञाय' इत्यर्थः। मनोरथः; 'तथेति कामं प्रतिशुश्रुवान् रघोर्यथागतं मातलिसारथिर्ययौ'—इति रघुवंशे (३।६७)। महादेवः; 'गणकर्ता गणपतिर्दिग्वासाः काम

एव च'—इति महाभारते (१३।१७।४१)। विष्णुः; 'कामहा कामकृत् कान्तः कामः कामप्रदः प्रभुः'—इति महाभारते (१३।१४९।४५)। बलदेवः; महाराजचूतः; काम्यः। क्ली. [कामाय हितं, काम+अण्] रेतः; निकामं; काम्यं; बाढम्; अनुमतिः; 'मनागनभ्यावृत्त्या वा काम क्ष्याम्यतु यः क्षमी'—इति माघे (२।४३)। कामम् अव्य.। अभ्यनुज्ञा। ३२

कामध्वंसी [न्] पुं. [कामं कन्दर्पं ध्वंसयतीति, काम+ध्वंस्+णिच्, णिनि] शिवः। १२

कामना स्त्री. [कम्+'अनुदात्तादेश्चेति' णिङन्ताद् भावे युच् टाप् च] इच्छा। ७१०

कामपत्नी स्त्री. [कामस्य पत्नी] कामदेवपत्नी; कामकला; रतिः। ३४

कामपालः पुं. [कामान् पालयति, काम+पाल्+अण्] बलदेवः। २९

कामम् अव्य. [कमेर्णिङन्ताद् अमु] प्रकामम्; अकामानुमतिः; 'महाभागः कामं नरपतिरभिन्नस्थितिरसौ, न कश्चिद्वर्णानामपथमपकृष्टोऽपि भजते'—इति शाकुन्तले ५ अङ्के। अनुमतिः; असूया; अनुगमनम्। ७१९

कामाङ्कुशः पुं. [कामे कामोद्दीपने अङ्कुश इव, नखाघातेन कामोद्दीपनादस्य तथात्वम्] नखः; [कामस्य अङ्कुश इव] शिश्नः। ५११

कामिनी स्त्री. [अतिशयेन कामः अस्या अस्ति इति। काम+इनि+ङीप्] स्त्रीसामान्यम्; 'कर्ण इव कामिनीनां न शोभते निर्भरः प्रेमा'—इति आर्यासप्तशती (२७०)। अतिशयकामयुक्ता नारी; 'कामिनीषु विवाहेषु गवाम्भक्ष्ये तथेन्धने। ब्राह्मणाभ्युपपत्तौ च शपथे नास्ति पातकम्'—इति मनुः (८।११२)। भीरुस्त्री; वन्दा; दारुहरिद्रा; मदिरा। ४८१

कामी [न्] पुं. [अतिशयेन कामयते, कम्+णिच्+णिनि] कामुकः; 'सभ्रूभङ्गं प्रहितनयनैः कामिलक्ष्येष्वमोघैः'—इति मेघदूते (७४)। चक्रवाकः; पारावतः; चटकः; चन्द्रः; ऋषभौषधिः; सारसपक्षी; (सर्वकामदत्वात्) विष्णुः; 'कामदेवः कामपालः कामी कान्तः कृतागमः'–इति महाभारते (१३।१४९।८३)। ३८१

कामुकः त्रि. [कामयते इति, 'लषपतपदेत्यादिना' उकञ्] कामी; कमिता; अनुकः; कम्रः; कामयिता; अभीकः; कमनः; कामनः; अभिकः; 'दुष्यन्तः स पुनर्भेजे स्ववंशं राज्यकामुकः'—इति भागवते (९।२३।१७)। पुं. [कम्+उकञ्] अशोकवृक्षः; अतिमुक्तलता; चटकः। ३८१

कामोदा स्त्री. [कुत्सितो मोदो आमोदो यस्याः। सहृदयमनोहरत्वाभावात्] रागिणीविशेषः। १०५ अ.

काम्बोजः पुं. [कम्बोजदेशे भवः इति, अण्] कम्बोजदेशजघोटकः; सोमवल्कः; पुन्नागवृक्षः; [कम्बोजः अभिजनो यस्य, सिन्ध्वादित्वाद् अण्] म्लेच्छजातिविशेषः; 'अर्द्धं शकानां शिरसो मुण्डयित्वा व्यसर्जयत्। यवनानां शिरः सर्वं काम्बोजानां तथैव च'—इति हरिवंशे। ४३९

कायः पुं. [कायति प्रकाशते इति, अच्] मूर्तिः; देहः; शरीरम्; 'कायः सन्निहितापायः सम्पदः पदमापदाम्। समागमाः सापगमाः सर्वमुत्पादि भङ्गुरम्'—इति हितोपदेशः। संघः; लक्ष्यः; स्वभावः; प्राजापत्यविवाहः; 'आर्षोढाजः सुतस्त्रींस्त्रीन् षट् षट् कायोढजः सुतः'—इति मनुः (३।३८)। मूलधनम्; 'कायाविरोधिनी शश्वत् पणार्द्धाद्या तु कायिका'—इति नारदः। क्ली. मनुष्यतीर्थं; [कः प्रजापतिर्देवतास्य, 'कस्येत्' इत्यण् इदन्तादेशश्च ततः आदिवृद्धिः] प्राजापत्यतीर्थं; स्वल्पाङ्गुल्योर्मूलं; कनिष्ठानामिकयोरधोभागः; 'अङ्गुष्ठमूलस्य तले ब्राह्मं तीर्थं प्रचक्षते। कायमङ्गुलिमूलेऽग्रे दैवं पित्र्यं तयोरधः'—इति मनुः (२।५९)। ५१०

कायस्थः पुं. [कायेषु सर्वभूतशरीरेषु अन्तर्यामितया तिष्ठतीति। काय+स्था+क। काये ब्रह्मकाये तिष्ठतीति] जातिविशेषः; कूटकृत्; पञ्जीकरः; करणः; पञ्जिकारकः। 'क्षणं ध्यानस्थितस्यास्य सर्वकायाद्विनिर्गतः। दिव्यरूपः पुमान् हस्ते मसीपात्रं च लेखनी। चित्रगुप्त इति ख्यातो धर्मराजसमीपतः। प्राणिनां सदसत्कर्मलेखाय स निरूपितः। ब्रह्मणातीन्द्रियज्ञानी देवाग्न्योर्यज्ञभुक् स वै। भोजनाच्च सदा तस्मादाहुतिर्दीयते द्विजैः। ब्रह्मकायोद्भवो यस्मात् कायस्थो वर्ण उच्यते। नानागोत्राश्च तद्वंश्याः कायस्था भुवि सन्ति वै'—इति पद्मपुराणे सृष्टिखण्डम्। परमात्मा; 'कायस्थोऽपि न कायस्थः कायस्थोऽपि न

जायते। कायस्थोऽपि न भुञ्जानः कायस्थोऽपि न बध्यते' —इति उत्तरगीतायाम्। ५८६

कारणम् क्ली. [कार्यतेऽनेन। णिजन्तात् कृञो ल्युट्] येन विना यन्न भवति तत्; हेतुः; बीजं; निमित्तं; प्रत्ययः; 'यतः प्रधानपुरुषौ यतश्चैतच् चराचरम्। कारणं सकलस्यास्य स नो विष्णुः प्रसीदतु'—इति विष्णुपुराणे (१।१७।३०)। करणं; [कृञ् हिंसायाम्+स्वार्थे णिच्, भावे ल्युट्] वधः; मूलम्, आदिः; 'ब्राह्मणः सम्भवेनैव देवानामपि दैवतम्। प्रमाणं चैव लोकस्य ब्रह्मात्रैव हि कारणम्'—इति मनुः (११।८४)। ८६४

कारणा स्त्री. [कृञ् हिंसायाम्, णिजन्तात् कृञो 'ण्यासश्रन्थेति' युच्, ततः टाप्] यातना; गाढवेदना; नरकरुजा; यमयातना। ६२६

कारणिकः त्रि. [करणैः कारणैर्वा चरति। 'चरतीति' ठक्] परीक्षकः। ३८९

कारण्डवः पुं.–स्त्री. ['अमन्ताड्डः' इति रमेर्डः, रण्डः। ईषत् रण्डः, 'ईषदर्थे' इति कोः कादेशः। कारण्डं वाति, वा गतौ+'आतोऽनुपेति'क। करण्डस्येदं कारण्डं तदाकारं वाति वा] हंसविशेषः; 'कारण्डवाननविघट्टितवीचिमालाः, कादम्बसारसकुलाकुलतीरदेशाः'—इति ऋतुसंहारे शरद्वर्णने (८)। २५४

कारा स्त्री. [कीर्यते क्षिप्यते दण्डार्हो यस्याम्। कॄ विक्षेपे, भिदादित्वाद् अङ्, 'ऋदृशोऽङीति' गुणे दीर्घत्वं निपात्यते] कारागारं; बन्धनालयः; बन्धनं; बन्धनगृहं; दूती; प्रसेवकः; पीडा; सुवर्णकारिका। ६२६

कारुः त्रि. [करोति इति, कृ+उण्] शिल्पी; कारुकः; 'कारयित्वा तु कर्माणि कारुं पश्चान्न वञ्चयेत्'–इति कूर्मपुराणे। 'कारुकान्नं प्रजां हन्ति बलं निर्णेजकस्य च। गणान्नं गणिकान्नं च लोकेभ्यः परिकृन्तति'—मनुः (४।२१९)। कारकः; 'राघवस्य ततः कार्यं कारुर्वानरपुङ्गवः। सर्ववानरसेनानामाश्वागमनमादिशत्'—इति भट्टिः। पुं. विश्वकर्मा; [भावे उण्] शिल्पम्। ५९३

कारुण्यम् क्ली. [करुणः करुणावान् तस्य भावः, करुणैव वा, ष्यञ्] करुणा; 'मुनेः शिष्यसहायस्य कारुण्यं समजायत'—इति रामायणे (१।२।१५)। ८२३

कार्तस्वरम् क्ली. [कृतस्वरे आकरभेदे भवम्, अण्। कृताः पठिताः स्वरा येन स कृतस्वरः सामगानकर्ता, तस्मै दक्षिणात्वेन देयं वा। 'शेषे' इत्यण्] स्वर्णम्; 'स तप्तकार्तस्वरभास्वराम्बरः'—इति माघे (१।२०)। धूस्तूरः। १७४

कार्तान्तिकः पुं. [कृतान्तं वेत्ति, 'क्रतूक्थादिसूत्रान्ताट् ठक्' इति ठक्] ज्योतिर्वित्; दैवज्ञः; ज्योतिषी। ४०३

कार्तिकेयः पुं. [कृत्तिकानामपत्यम्, 'स्त्रीभ्यो ढक्' इति ढक्] शिवपुत्रः; अग्निपुत्रः; 'कुमारश्चाभवत् तत्र तरुणार्कसमद्युतिः। वह्नितेजोभवः श्रीमान् गङ्गाकुक्षिपरिच्युतः। ततस्ता देवता ऊचुः कार्तिकेय इति प्रभुः। पुत्रोऽयं जगति ख्यातो भविष्यति न संशयः'—इति वाल्मीकिरामायणम्। 'कार्तिकेयं महाभागं मयूरोपरिसंस्थितम्। तप्तकाञ्चनवर्णाभं शक्तिहस्तं वरप्रदम्। द्विभुजं शत्रुहन्तारं नानालङ्कारभूषितम्। प्रसन्नवदनं देवं सर्वसेनासमावृतम्' –इति कार्तिकेयपूजापद्धतिः। अथ कार्तिकेयपर्यायाः— महासेनः; शरजन्मा; षडाननः; पार्वतीनन्दनः; स्कन्दः; सेनानीः; अग्निभूः; गुहः; बाहुलेयः; तारकजित्; विशाखः; शिखिवाहनः; षाण्मातुरः; शक्तिधरः; कुमारः; क्रौञ्चदारणः; आग्नेयः; दीप्तकीर्तिः; अनमेयः; मयूरकेतुः; धर्मात्मा; भूतेशः; महिषार्दनः; कामजित्; कामदः; कान्तः; सत्यवाक्; भुवनेश्वरः; शिशुः; शीघ्रः; शुचिः; चण्डः; दीप्तवर्णः; शुभाननः; अमोघः; अनघः; रौद्रः; प्रियः; चन्द्राननः; दीप्तशक्तिः; प्रशान्तात्मा; भद्रकृत्; कूटमोहनः; षष्ठीप्रियः; पवित्रः; मातृवत्सलः; कन्याहर्ता; विभक्तः; स्वाहेयः; रेवतीसुतः; प्रभुः; नेता; नैगमेयः; सुदुश्चरः; सुव्रतः; ललितः; बालक्रीडनप्रियः; खचारी; ब्रह्मचारी; शूरः; शरवणोद्भवः; विश्वामित्रप्रियः; देवसेनाप्रियः; वासुदेवप्रियः; प्रियकः; गाङ्गः; स्वामी; द्वादशलोचनः; सिद्धसेनः; शम्भुतनयः; देवसेनापतिः; बालचर्यः; कृकवाकुध्वजः; महाबाहुः; युद्धरङ्गः; शिखिध्वजः; पावकात्मजः; रुद्रसूनुः; षट्शिराः; दितिजान्तकः। १९

कार्पटिकः पुं. [कार्पटम् अन्तस्तत्त्वं वेत्ति इति, कर्पटेन चरति इति वा। ठक्। कार्पटोऽस्त्यस्य वा, ठन्] मर्मवेत्ता; तीर्थसेवी; 'सायं च तत्रैव बहिः सकुटुम्बस्तरोस्तले। समावसत् कार्पटिकैः सोऽन्यदेशागतैः सह'—इति कथासरित्सागरे। ३४९

कार्पासम् त्रि. [कर्पास्याः विकारे अवयवे वा अण्, बिल्वाद्यण् वा] कार्पासजातवस्त्रादि; फालं; बादरम्; 'श्लक्ष्णं वस्त्रमकार्पासमाविकं मृदु चाजिनम्'—इति महाभारते (२।५०।२४) । पुं.– क्ली. [कर्पास एव, स्वार्थे अण्] कर्पासवृक्षः; 'कपास' इति भाषा। अस्य पत्रादिना सर्पदष्टः पुरुषो नीरोगो भवति, इदानीं पत्रादीनां व्यवहारक्रम उच्यते। दंशनानन्तरमेव दष्टं पुरुषं सार्द्धद्वितोलकपरिमितः कार्पासरसः पाययितव्यः। अथ क्षतप्रदेशं विधौतं परिष्कृतं च विधाय तत्र पत्ररसः प्रदेयः। एवं कृतेऽपि यदि शरीरस्य कश्चिदंशः स्फीतो भवेत् तदा तत्रैव एतत्पत्ररसेन पेषयितव्यम्। आरोग्याप्तिपर्यन्तम् प्रतिसपाददण्डमेवं कृते सर्पदष्टः पुरुषः सुस्थो भविष्यतीति निश्चयः। ५५०

कार्मणम् क्ली. [कर्मैव इति, कर्मन्+'तद्युक्तात् कर्मणोऽण्' इति अण्। कर्मणे हितमिति, अण् वा] मूलकर्म; ओषध्यादिमूलकं यत् त्रासनोच्चाटनस्तम्भनवशीकरणादिकर्म तत्; 'चाटु चाकृतकसम्भ्रममासां कार्मणत्वमगमन् रमणेषु'—इति माघे (१०।३७) । 'काचित्कार्मणतत्त्वज्ञा काचिन्मौक्तिकगुम्फिका' —इति काशीखण्डे (४५।९) । [कर्म साध्यत्वेन अस्त्यस्य इति, अण्] कर्मठे त्रि.। ७१६

कार्मुकम् क्ली. [कर्मणे प्रभवतीति, 'कर्मण उकञ्' इति उकञ्] धनुः; 'धनुष' इति भाषा। 'कार्मुकेणेव गुणिना बाणः सन्धानमेष्यति'—इति माघे (२।९७) । पुं. [कार्मुकं धनुः साध्यत्वेनास्त्यस्य इति, अच्। कर्मणे कार्याय प्रभवतीति, कर्मन्+उकञ्] कर्मक्षमे त्रि.। श्वेतखदिरः; हिज्जलः; महानिम्बः। ४६४।

कार्मुककोटिः स्त्री. [कार्मुकस्य धनुषः कोटिः] अटनिः। ४६५

कालः पुं. [कलयति आयुः। कल् संख्याने, पचाद्यच् ततः प्रज्ञाद्यण्। यद्वा कालयति सर्वाणि भूतानि, कल् प्रेरणे, ण्यन्तात् पचाद्यच्] यमः; 'आपतन्तीं च तां दृष्ट्वा कालदण्डोपमां गदाम्'—इति रामायणे (३।३५। ४३)।(१०५) क्षणदण्डमुहूर्तप्रहरदिनरात्रिपक्षमासायनवत्सरादिः; दिष्टः; अनेहा; समयः; 'जन्यानां जनकः कालो जगतामाश्रयो मतः। परापरत्वधीहेतुः क्षणादिः स्यादुपाधितः।' 'परस्य ब्रह्मणो रूपं पुरुषः प्रथमं द्विज। व्यक्ताव्यक्ते तथैवान्ये रूपे कालस्तथा परम्'–इति विष्णुपुराणे (१।२।१४)। मृत्युः (६२८); 'दिलीपस्तत्सुतस्तद्वदशक्तः कालमेयिवान्। भगीरथस्तस्य पुत्रस्तेपे स सुमहत्तपः'—इति भागवते (९।९।२)। कृष्णवर्णः (७३४); कृष्णगुणवति त्रि.। 'उद्यतायुधनिस्त्रिंशे रथे च समलङ्कृते। कालाश्वयुक्ते महति स्थितः कालान्तकोपमः'—इति रामायणे (६।६१।२) । महाकालः; शनिः; कासमर्दः; रक्तचित्रकः; रालः; कोकिलः; शिवः; (सर्वकलनात्); विष्णुः (कालनियन्तृत्वात्); पर्वतविशेषः; क्ली. लौहं; कक्कोलं; कालीयकम्। ७१

कालक्रियामानम् क्ली. [गीतिवाक्ये कालः क्रिया च मीयेते अनेन इति। मा+करणे ल्युट्] तालः। ९४

कालकटम् क्ली. [कालं शिवमपि कूटयति अवसादयति, यद्वा कालस्य मृत्योः कूटम् आयोजनं समष्टिः दूत इव वा] विषम्; 'न भेतव्यं कालकूटाद् विषाज्जलधिसम्भवात्'—इति भागवते (८।६।२५) । बोलं; पुं.– क्ली. [कालस्य मृत्योः कूटः छद्मदूतः इव] स्थावरविषभेदः; 'अहो बकी यं स्तनकालकूटं जिघांसयाऽपाययदप्यसाध्वी'—इति भागवते (३।२।२३)। 'देवासुररणे देवैर्हतस्य पृथुमालिनः। दैत्यस्य रुधिराज्जातस्तरुरश्वत्थसन्निभः। निर्यासः कालकूटोऽस्य मुनिभिः परिकीर्तितः। सोऽहिक्षेत्रे शृङ्गवेरे कोङ्कणे मलये भवेत्'—इति भावप्रकाशः। देशविशेषः; 'कुरुभ्यः प्रस्थितास्ते तु मध्येन कुरुजाङ्गलम्। रम्यं पद्मसरो गत्वा कालकूटमतीत्य च'—इति महामहाभारते (२।२०।२६)। ६४७

कालखण्डम् क्ली. [कालं कृष्णं खण्डम्] यकृत्; दक्षिणकुक्षिस्थमांसपिण्डम्। ६३५

कालशेयम् क्ली. [कलश्यां भवम्, कलशी+ढक्] कालसेयं; तक्रम्। २७५

कालसेयम् क्ली. [कलस्यां+भवम्, कलसी+ढक्] कालशेयं, तक्रम्। २७५

कालायसम् क्ली. [कालं च तत् अयश्चेति, 'अनोश्मायः सरसां जातिसंज्ञयोः'— इति टच्] लौहम्; 'ददर्श वीक्षमाणश्च परिघं तोरणाश्रयम्। तमादाय महाबाहुः कालायसमयं दृढम्'—इति रामायणे

(५।४९।३२)। 'लोहोऽस्त्री शस्त्रकं तीक्ष्णं पिण्डं कालायसायसी।' १७१

कालिन्दी स्त्री. [कलिन्दाख्यपर्वते तत्सन्निहितदेशे वा जाता, कलिन्दात् निःसृता वा, 'तत्र भवः' इति अण्, ततो ङीप्] यमुनानदी; 'उपकूलं स कालिन्द्याः पुरीं पौरुषभूषणः। निर्ममे निर्ममोऽर्थेषु मथुरां मधुराकृतिः'—इति रघुवंशे (१५।२७)। रक्तत्रिवृत्। ६७४

कालिन्दीकर्षणः पुं. [कालिन्दीं कर्षति यः। कृष्+कर्तरि ल्यु। कालिन्द्याः कर्षणो वा] बलदेवः; कालिन्दीभेदनः। २९

कालिन्दीभेदनः पुं. [कालिन्दीं भिनत्ति, भिद्+कर्त्तरि ल्यु, कालिन्द्या भेदनो वा] बलदेवः। २९

कालिन्दीसोदरः पुं. [कालिन्द्याः सोदरः सहोदरः] यमुनाभ्राता; यमः। ७१

काली स्त्री. [कालः कृष्णवर्णोऽस्त्यस्याः, काल+'जानपदकुण्डगोण' इत्यादिना ङीष्, कालः शिवः तस्य पत्नीति, ङीष्] कालिका; अम्बिकाललाटनिःसृता देवी; 'ततः कोपं चकारोच्चैरम्बिका तानरीन् प्रति। कोपेन चास्या वदनं मसीवर्णमभूत्तदा। भ्रुकुटीकुटिलात्तस्या ललाटफलकाद् द्रुतम्। काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी'—इति मार्कण्डेयपुराणे (८७।५)। शान्तनुराजपत्नी; वृश्चिकालीवृक्षः; लता; भीमसेनपत्नी; मातृका। १५

कालेयम् क्ली. [कं सुखम् आलेयम् आदेयं यस्मात्] कालेयकं; कालीयनामपीतवर्णसुगन्धिकाष्ठं; कालीयकम्; 'तां लोध्रकल्केन हृताङ्गतैलामाश्यानकालेयकृताङ्गरागाम्'—इति कुमारसम्भवे (७।९)। [कलाये रक्तधारिण्ये हितम् इति ढक्] कालखण्डं; यकृत्; पुं. [कालाया अपत्यं, ढक्] दैत्यभेदः; 'कालायाः प्रथिताः पुत्राः कालकल्पाः प्रहारिणः। प्रविख्याता महावीर्या दानवेषु परन्तपाः। विनाशनश्च क्रोधश्च क्रोधहन्ता तथैव च। क्रोधशत्रुस्तथैवान्यः कालेया इति विश्रुताः।' ५४३

काल्या स्त्री. [कालः प्राप्तोऽस्याः, 'उपसर्या काल्या प्रजने' इति कालाद्यत्, टाप् च] गर्भग्रहणप्राप्तकाला ऋतुमती गौः; उपसर्या। २७२

काव्यः पुं. [कवेः भृगोरपत्यं पुमान् इति, 'कुर्वादिभ्यो ण्यः' इति ण्य, यञ् इति केचित्] शुक्राचार्यः; 'जिगीषया ततो देवा वव्रिरेऽङ्गिरसं मुनिम्। पौरोहित्येन याज्यत्वे काव्यं तूशनसं परे'—इति महाभारते (१।७६।६)। तामसमन्वन्तरीयऋषिविशेषः; 'ज्योतिर्धामा पृथुः काव्यश्चैत्रोऽग्निर्बलकस्तथा। पीवरश्च तथा ब्रह्मन् सप्त सप्तर्षयोऽभवन्'—इति मार्कण्डेये (७४।५९)। क्ली. [कवेरिदं कर्म भावो वा, ष्यञ्] ग्रन्थः; रसयुक्तवाक्यम्; 'वाक्यं रसात्मकं काव्यं दोषास्तस्यापकर्षकाः। उत्कर्षहेतवः प्रोक्ता गुणालङ्काररीतयः'—इति साहित्यदर्पणे। ४२

काशः पुं.– क्ली. [काशते दीप्यते शोभते इति यावत्, काशृ दीप्तौ, पचाद्यच्] तृणभेदः; 'कास' इति भाषा। तत्पर्यायाः—काशकः; इक्षुगन्धा; पोटगलः; कासः; काशी; काशा; वायसेक्षुः; काण्डेक्षुः; अमरपुष्पकः; काशकः; वनहासकः; इक्ष्वरिः; काकेक्षुः; इक्षुरः; इक्षुकाण्डः; शारदः; सितपुष्पकः; नादेयः; दर्भपत्रः; लेखनः; काण्डकाण्डकः; कच्छलकारकः; 'काशः काकेक्षुरुद्दिष्टः स स्यादिक्षुरसस्तथा। इक्ष्वालिकेक्षुगन्धा च तथा पोटगलः स्मृतः। काशः स्यान्मधुरस्तिक्तः स्वादुपाके हिमः सरः। मूत्रकृच्छ्राश्मदाहास्रक्षयपित्तजरोगजित्'—इति भावप्रकाशः। पुं. [केन जलेन कफात्मकेन अश्यते व्याप्यतेऽत्र। क+अश्+अधिकरणे घञ्] क्षुतम्; रोगविशेषः; क्षवथुः; काशिका; कासः [कासृ कुशब्दे, ण्यन्तात् पचाद्यच्, कासो दन्त्यान्तः। काशयति कुत्सितशब्दं कारयति काशः। कश् शब्दे इत्यस्मात् ण्यन्तात् पचाद्यचि काशस्तालव्यान्तश्च। 'शालूरकाशशल्लक्य' इत्युष्मभेदे दन्त्यतालव्यान्तमध्ये पाठात्। 'वाराणस्यां भवेत् काशी क्षवथौ ना तृणेऽस्त्रियाम्'—इति तालव्यान्तेषु रभसः।] 'पिप्पली कट्फलं शुण्ठी भृङ्गी भार्ङ्गी तथोषणम्। कारवी कण्टकारी च सिन्धुवारो यवानिका। चित्रको वासकश्चैषां कषायं विधिवत् कृतम्। कफकाशविनाशाय पिबेत् कृष्णारजोयुतम्'—इति भावप्रकाशः। 'अभयामलकं द्राक्षा पिप्पली कण्टकारिका। शृङ्गं पुनर्नवा शुण्ठी जग्धा काशं निहन्ति वै'—इति गारुडे १९९ अध्यायः। १९१

काशिः स्त्री. [काश्+'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्]

काशी; काशिका; वाराणशी; शिवपुरी; 'तथा काशिपतिं स्निग्धं सततं प्रियवादिनम्। सद्वृत्तं देवसङ्काशं स्वयमेवानयस्व हि।' मुष्टिः; 'आप इव काशिना संगृभीतो असन्नस्त्वासत इन्द्र वक्ता' --इति ऋग्वेदे (७।१०४।८) 'काशिना मुष्टिना' इति भाष्यम्। सूर्ये पुं.। २८७

काशी स्त्री. [काशते शिवत्रिशूलोपरि। काशृ दीप्तौ+ अच्, गौरादित्वाद् ङीष्, काश्+इन् ङीष् वा। अयवा काशयति प्रकाशयति इदं सर्वं या, काश्+ णिच्, अच्, ङीप्] तीर्थविशेषः; शिवपुरी; वाराणसी; तीर्थराजी; तपःस्थली; काशिका; काशिः; अविमुक्तम्; आनन्दवनम्; आनन्दकाननम्; अपुनर्भवभूमिः; रुद्रावासः; महाश्मशानं; चिच्छक्तिः; सुषुम्णाख्या नाडी; काशतृणं; मुष्टिः। २८७

काश्मीरजम् क्ली. [काश्मीरे जातम्, जन्+'सप्तम्यां जनेर्डः' इति ड] कुङ्कुमं; कश्मीरजन्म; काश्मीरं; कुष्ठं; पुष्करमूलम्। ५४३

काश्यपी स्त्री. [कश्यपस्येयम्, 'तस्येदम् 'इत्यण्, स्त्रियां ङीप्] पृथिवी; 'अथागम्य महाराज! नमस्कृत्य च कश्यपम्। पृथिवी काश्यपी जज्ञे सुता तस्य महात्मनः'—इति महाभारते (१३।१५४।७)।प्रजा। १५७

काष्ठम् क्ली. [काशते दीप्यते, काशत्यनेन वा, काश्+'हनिकुषी' त्यादिना क्थन्, 'व्रश्चेति' षत्वम्, 'तितुत्रेति' नेट्] दारु, 'काठ' इति भाषा। 'ससारमतिशुष्कं यद् मुष्टिमध्ये समेष्यति। तत्काष्ठं काष्ठमित्याहुः खदिरादिसमुद्भवम्।' ४९३

काष्ठतट् [क्ष्] पुं. [काष्ठं तक्षति, तक्षू तनूकरणे, क्विप्] वर्णसङ्करजातिविशेषः; तक्षा; वर्धकिः; त्वष्टा; रथकारः; काष्ठतक्षकः, 'बढई' इति भाषा। ५८७

काष्ठा स्त्री. [काशते प्रकाशते, काश् दीप्तौ, 'हनिकुषिनीरमिकाशिभ्यः क्थन्' इति क्थन्। 'व्रश्चेति' षत्वं ततः टाप्] दिक्; 'स्फुरति विशदमेषा पूर्वकाष्ठाङ्गनायाः'—इति माघे (११।१२)। स्थितिः; सीमा; कुमारसम्भवे (५।३८)। उत्कर्षः; 'इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः। मनसस्तु परा बुद्धिर्बुद्धेरात्मा महान् परः। महतः परमव्यक्तम् अव्यक्तात् पुरुषः परः। पुरुषान्न परं किञ्चित् सा काष्ठा सा परा गतिः'—इति कठश्रुतौ। अष्टादशनिमेषात्मककालः; 'निमेषा दश चाष्टौ च काष्ठा त्रिंशत्तु ताः कला'—इति मनुः (१।६४)। पञ्चदशनिमेषात्मककालः; 'काष्ठा पञ्चदश ख्याता निमेषा मुनिसत्तम'--इति विष्णुपुराणे (१।३।७)। दारुहरिद्रा; कश्यपपत्नीभेदः; 'अदितिर्दितिर्दनुः काष्ठा अरिष्ठा सुरसा इला'—इति भागवते (६।६।२५)। (८३७) कालविशेषः; प्रकर्षः; उत्कर्षः। १००

कासः पुं. [कासतेऽनेन। कासृ शब्दकुत्सनयोः, 'हलश्च' इति घञ्] काशतृणं; (६०१) रोगविशेषः; क्षवथुः, 'खांसी' इति भाषा। 'पञ्च कासाः स्मृता वातपित्तश्लेष्मक्षतक्षयैः। क्षयायोपेक्षिताः सर्वे बलिनश्चोत्तरोत्तरम्'—इति माधवकरः। शोभाञ्जनम्। १९१

कासरः पुं. [के जले आसरति, आ+सृ+अच्। महिषस्य प्रायेण जलत्रासात्तथात्वम्] महिषः; 'व्यारोषं मानिन्यास्तमो दिवः कासर कलमभूमेः। बद्धमलि च नलिन्याः प्रभातसन्ध्यापसारयति'—इति आर्यासप्तशती (५२१)। २२७

कासारः पुं. [कास्+'तुषारादयश्च' इति आरन् प्रत्ययः। कस्य जलस्य आसारो यत्र वा। अथवा कासं शब्दम् ऋच्छति प्राप्नोति जलगमनपतनादिकाले। ऋ+'कर्मण्यण्' इति अण्] सपद्मो निष्पद्मो वा महाजलाशयः; सरोवरः; 'दुरालोकस्तोकस्तवकनवकाशोकलतिका–विकासः कासारोपवनपवनोऽपि व्यथयति'—इति गीतगोविन्दे (२।२०)। ६७५

किंवदन्तिः स्त्री. [किम्+वद्+झिच्] किंवदन्ती, जनश्रुतिः। १४७

किंवदन्ती स्त्री. [किम्+वद्+झिच्, ङीष्] जनश्रुतिः; सत्यः असत्यो वा लोकवादः; 'अस्ति किलैषा किंवदन्ती अस्माकं कुले कालरात्रिकल्पा विद्या नाम राक्षसी समुत्पत्स्यते'— इति प्रबोधचन्द्रोदयनाटकम्। १४७

किंशारुः पुं. [किं किञ्चित् कुत्सितं वा शृणातीति, शृ हिंसायाम् + 'किञ्जरयोः श्रिणः'—इति ञुण्] सस्यशूकम्। बाणः (७९१); कङ्कपक्षी। ५७९

किंशुकः पुं. [किञ्चित् अवयवैकदेशः शुक इव, शुक-

तुण्डाभपुष्पत्वात् तथात्वमिति बोध्यम्] पलाशवृक्षः; 'पलाशः किंशुकः पर्णो यज्ञियो रक्तपुष्पकः। क्षारश्रेष्ठो वातहरो ब्रह्मवृक्षः समिद्वरः'—इति भावप्रकाशः। 'तयोः कृतव्रणौ देहौ शुशुभाते महात्मनोः। पुष्पिताविव निष्पत्रौ यथा शाल्मलिकिंशुकौ'—इति रामायणे (६।६८।३१)। पलाशपुष्पादयोऽपि; 'रूपयौवनसम्पन्ना विशालकुलसम्भवाः। विद्याहीना न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः'—इति चाणक्ये (७)। नन्दीवृक्षः। १९७

किकिदीविः पुं. [किकीति अस्फुटनादं कुर्वन् दीव्यति। 'कृविघृष्विछविस्थविकिकीदिविः' इति क्विन् निपातनात् ह्रस्वदीर्घव्यत्ययेन सिद्धम्] स्वर्णचातकः; नीलकण्ठः; चाषः; चासः; किकीदीविः; किकी; दिविः; किकिः; किकिदिवः; किकीदिविः; किकीदिवः; स्वर्णचूडः। [अकारान्तपक्षे कप्रत्ययान्तः, शिष्टप्रयोगाद् इकारे ह्रस्वदीर्घव्यत्यास ऊह्यः] २४७

किङ्करः त्रि. [किञ्चित् करोति, 'दिवाविभेत्यत्र' कियत्तद्बहुष्वित्यच्] दासः; 'विप्रस्य किङ्करो भूपो वैश्यो भूपस्य भूमिप। सर्वेषां किङ्कराः शूद्रा ब्राह्मणस्य विशेषतः'—इति पुराणे। ३६५

किङ्कणी स्त्री. [किमपि किञ्चिद् वा कणति। कण् शब्दे+इन्+ङीप् च, पृषोदरादित्वात् साधुः] कट्याभरणविशेषः; क्षुद्रघण्टिका; कङ्कणी; किङ्किणिका; किङ्किणिः; क्षुद्रघण्टी; प्रतिसरा; किङ्किणीका; कङ्कणिका; क्षुद्रिका; घर्घरी, 'घुँघुरू' इति भाषा। 'किङ्किणीस्वननिर्घोषो युक्तस्तोरणकल्पनैः'—इति महाभारते (१३।५३।३१)। विकङ्कतवृक्षः। ५६०

किङ्किरातः पुं. [किङ्किरं रक्तवर्णत्वम् अतति पुष्पकाले निरन्तरं प्राप्नोति, किङ्किर+अत्+अण्] वृक्षविशेषः; पुष्पवृक्षविशेषः; हेमगौरः; पीतकः; पीतभद्रकः; विप्रलोभी; पीताम्लानः; षट्पदानन्दः; 'किङ्किरातो हैमगौरः पीतकः पीतभद्रकः। किङ्किरातो हिमस्तिक्तः कषायश्च हरेदसौ। कफपित्तपिपासास्रदाहशोषवमिक्रिमीन्'—इति भावप्रकाशः। अशोकवृक्षः; कामदेवः; शुकपक्षी; कोकिलः; रक्ताम्लानः। २०७

किञ्चन अव्य. [किम् च चन च] असाकल्यम्; अकात्स्र्यम्। पुं. [किम्+चन्+अच्] हस्तिकर्णपलाशः। 'असाकल्ये तु किञ्चन'—इत्यमरः। ८८२

किञ्चित् अव्य. [किम् च चित् च, पदद्वयम्] अल्पम्; ईषत्; मनाक्; असाकल्यम्; 'चित्तस्य शुद्धये कर्म न तु वस्तूपलब्धये। वस्तुसिद्धिर्विचारेण न किञ्चित् कर्मकोटिभिः'—इति विवेकचूडामणौ (११)। ६८८

किञ्चिलिकः पुं. [किञ्चित् चुलुम्पति, चुलुम्प् इति सौत्रधातुः, डु, संज्ञायां कन्, पृषोदरादित्वाद् उभयत्र उस्थाने इत्वम्] किञ्चुलुकः। ६६२

किञ्चुलुकः पुं. [किञ्चित् चुलुम्पति, चुलुम्प्+डु+संज्ञायां कन्] कीटविशेषः; महीलता; गण्डूपदः, 'केंचुआ' इति भाषा। 'बाह्या यूकाः प्रसिद्धाः स्युः किञ्चुलूकास्तथान्तराः'—इति हारीते चिकित्सितस्थाने ५ अध्याये। ६६२

किञ्जल्कः पुं. [किम्+जल+बाहुलकात् क] केसरः; पद्मकेसरः; 'किञ्जल्कः केसरः प्रोक्तश्चाम्पेयश्चापि स स्मृतः। किञ्जल्कः शीतलो रूक्षः कषायो ग्राहकोऽपि सः। कफपित्ततृषादाहरक्तार्शोविषशोथजित्'—इति भावप्रकाशः। 'दूर्वासोत्पलकिञ्जल्कमञ्जिष्ठाशैलबालुका'—इति वैद्यचक्रदत्तः। क्ली. [किञ्चित् जलति, जल् अपवारणे+बाहुलकात् क]. नागकेशरपुष्पं; पद्माभ्यन्तरस्थकेशाकारं करहाटकवेष्टनं; मकरन्दः; केसरं; किञ्जं; पीतपरागः; तुङ्गं; चाम्पेयकम्; 'स तद्वक्त्रं हिमक्लिष्टकिञ्जल्कमिव पङ्कजम्। ज्योतिष्कणाहतश्मश्रु कण्ठनालादपातयत्'—इति रघुवंशे (१५।५२)। ६८२

किट्टम् क्ली. [केदति निर्गच्छति, गत्यर्थेति क्त, आगमशास्त्रानित्यत्वान् नेट्] पुरीषम्; 'शेषं किट्टं च यत्तस्य तत्पुरीषं निगद्यते'—इति भावप्रकाशः। ६३७

कितवः पुं. [कितं वायति कितेन वाति वा। कित+वा+क] अक्षदेवी; 'जटिलञ्चानधीयानं दुर्बलं कितवं तथा। याजयन्ति च ये पूगांस्तांश्च श्राद्धे न भोजयेत्।—इति मनुः (३।१५१)। धुस्तूरः; 'कितवाङशयोर्बीजं नागरं सहरीतकम्। चूर्णीकृत्यार्द्रकरसैः' इति वैद्यककषायसंग्रहे। मत्तः; वञ्चकः; 'स चाहं वित्तलोभेन प्रत्याचक्षे कथं द्विजम्। प्रतिश्रुत्य ददामीति प्राह्लादिः कितवो यथा।' धूर्तः; 'अस्थिररागः कितवो मानी चपलो विदूषकस्त्वमसि। मम सख्याः पतसि करे पश्यामि यथा ऋजुर्भवसि'—इति आर्या-

सप्तशती (३३)। खलः; 'यदाश्रौषं वाससां तत्र राशिं समाक्षिपत् कितवो मन्दबुद्धिः'—इति महाभारते (१।१।१५६)। रोचनानामगन्धद्रव्यम्। ३८८

किन्नरः पुं.–स्त्री. [किं कुत्सितो नरः; अश्वमुखत्वात् तथात्वम्] देवयोनिविशेषः; स तु अश्वमुखत्वात् कुत्सितनरः; स्वर्गगायकः; तुम्बुरुप्रभृतिः; किम्पुरुषः; तुरङ्गवदनः; मयुः; अश्वमुखः; गीतमोदी, हरिणनर्तकः; 'राक्षसाश्च पुलस्त्यस्य वानराः किन्नरास्तथा। यक्षाश्च मनुजव्याघ्र! पुत्रास्तस्य च धीमतः'—इति महाभारते (१।६६।७)। अर्हदुपासकविशेषः। ८२, ८७

किन्नरेश्वरः पुं. [किन्नराणाम् ईश्वरः] किन्नरेशः; कुबेरः; किम्पुरुषेश्वरः। ७८

किम्पचानः त्रि. [किं कुत्सितं कस्मैचिदपि न दत्त्वा केवलम् आत्मार्थं पचतीति। पच्+आनच्] किम्पचः; कृपणः। ३४७

किम्पाकः पुं. [कुत्सितः पाकः परिणामो यस्य] महाकाललता; 'न लुब्धो बुध्यते दोषान् किम्पाकमिव भक्षयन्'—इति रामायणे (२।६६।६)। त्रि. [किं कथमपि पाकः शिक्षाप्रकारो यस्य] मातृशासितः। २०३

किम्पुरुषः पुं. [कुत्सितः पुरुषः] किन्नरः; 'पुष्पासवाघूर्णितनेत्रशोभि प्रियामुखं किम्पुरुषश्चुचुम्बे'—इति कुमारसम्भवे (३।३८)। लोकभेदः; आग्नीध्रस्य नवपुत्राणामेकः; 'जम्बुद्वीपेश्वरो यस्तु आग्नीध्रो मुनिसत्तम! तस्य पुत्रा बभूवुस्ते प्रजापतिसमा इव। नाभिः किम्पुरुषश्चैव हरिवर्ष इलावृतः। हेमकूटं तथा वर्षं ददौ किम्पुरुषाय सः'—इति विष्णुपुराणे (२।१।१६–१७)। ८२

किरः पुं. [किरति विक्षिपति मलोपलक्षितस्थलम्। कॄ+क] शूकरः। २२६

किरणः पुं. [कीर्यते विक्षिप्यते इति। 'कॄपॄवृजिमन्दिनिधाञः क्युः' इति क्यु] सूर्यरश्मिः; चन्द्ररश्मिः; रत्नरश्मिः; सामान्यरश्मिः; अस्रः; मयूखः; अंशुः; गभस्तिः; घृणिः; धृष्णिः; भानुः; करः; मरीचिः; दीधितिः; त्विट्; द्युतिः; आभा; प्रभा; विभा; रुक्; रुचिः; भाः; छविः; दीप्तिः; रश्मिः; अभीषुः; महः; ज्योतिः; सहः; रोचिः; शोचिः; त्विषाः; पृश्निः; प्रकाशः; आतपः; द्योतः; पादः; आलोकः; वसुः; ऋषिः; भामः; घर्मः; लोकः; अर्चिः; भासः; वीचिः; हेतिः; धाम; वर्चः; शुष्म; तेजः; ओजः; 'भवति विरलभक्तिर्म्लानपुष्पोपहारः, स्वकिरणपरिवेषोद्भेदशून्याः प्रदीपाः'—इति रघुवंशे (५।७४)। सूर्यः। ३८

किरातः पुं. [किरं अवस्करादेर्निक्षेपस्थानभूमिम् अतति सततम् अटतीति। अत्+अण्। यद्वा किरं शूकरादिकम् अतति हिनस्तीति, अच्] म्लेच्छभेदः; निषादः; 'कच्छान्ते सुरसरितो निधाय सेनामन्वीतः स कतिपयैः किरातवर्यैः'—इति किरातार्जुनीये (१२।५५)। अल्पतनुः (६११); भूनिम्बः; 'चिरायता' इति भाषा। 'पर्पटाब्दामृताविश्वाकिरातैः साधित जलम्। पञ्चभद्रमिदं ज्ञेयं वातपित्तज्वरापहम्'—इति शार्ङ्गधरे (२।२१७)। ५९९

किरिः पुं. [किरति समलभूमिम्, 'कॄगॄशॄपॄकुटिभिदिच्छिदिभ्यः'—इति इ प्रत्ययः] शूकरः। २२६

किरीटः पुं.– क्ली. [किरति कीर्यतेऽनेन वा। 'कॄतॄकृपिभ्यः कीटन्' इति कीटन्] मुकुटः। ५६५

किर्मीरः पुं. [कॄ+गम्भीरादित्वाद् ईरन्, निपातनात् साधुः] कर्बुरवर्णः; तद्वर्णयुक्ते त्रि.। नागरङ्गवृक्षः; राक्षसविशेषः; 'प्रत्युवाचाथ तद्रक्षो धर्मराजं युधिष्ठिरम्। अहं बकस्य वै भ्राता किर्मीर इति विश्रुतः'—इति महाभारते (३।११।२२)। ७४१

किल अव्य. [किल्+क] वार्ता, संभाव्यम्; अनुनयार्थं; निश्चयः; 'इदं किलाव्याजमनोहरं वपुस्तपःक्षमं साधयितुं य इच्छति। ध्रुवं स नीलोत्पलपत्रधारया शमीलतां छेत्तुमृषिर्व्यवस्यति'—इति शाकुन्तले १ अङ्के। ८७४

किलाटः पुं. [किलेन श्वैत्येन अटति। किल+अट्, अच्] क्षीरविकृतिः; दधिकूर्चिकातक्रकूर्चिकयोः पिण्डः; किलाटकः; किलाटी; कूर्चिका; 'नष्टदुग्धस्य पक्वस्य पिण्डः प्रोक्तः किलाटकः'–इति भावप्रकाशः। 'पीयूषो मोरटं चैव किलाटा विविधाश्च ये। दीप्ताग्नीनाम् अनिद्राणां सर्वं एते सुखप्रदाः। गुरवस्तर्पणा वृष्या बृंहणाः पवनापहाः'—इति चरके सूत्रस्थाने २७ अध्याये। ३२४

किलासम् क्ली. [किलं वर्णम् अस्यति क्षिपति विकृतं करोति इति यावत्। किल+अस्+'कर्मण्यण्' इति अण्] रोगविशेषः; सिध्मा; सिध्मं; त्वक्पुष्पं; त्वक्पुष्पी; 'वचांस्यतथ्यानि कृतघ्नभावो निन्दा

सुराणां गुरुधर्षणं च। पापक्रिया पूर्वकृतं च कर्म हेतुः किलासस्य विरोधि चान्नम्'—इति चरके चिकित्सा-स्थाने ६ अध्याये। ६०२

किल्विषम् क्ली. ['किलेर्बुक् च' इति टिषच् बुगागमश्च] पापम्; अपराधः; 'यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषैः'—इति गीता। रोगः। ६२७

किशलयम् क्ली.- पुं. [किञ्चित् शलति। शल् चलने + बाहुलकात् कयन् प्रत्ययः, पृषोदरादित्वान्मलोपे साधुः] पल्लवः; किशलं; किसलयम्; 'कुल्याम्भोभिः पवनचपलैः शाखिनो धौतमूलाः, भिन्नो रागः किशलय-रुचामाज्यधूमोद्गमेन'—इति शाकुन्तले १ अङ्के। १८५

किशोरकः पुं. [किञ्चित् शृणाति, शॄ हिंसायाम् 'किशोरादयश्च' इति ओरन्, निपातनात् साधुः। संज्ञायां कन्] अश्वशिशुः; तैलपर्ण्योषधिः; सूर्यः; तरुणावस्थः; एकादशवर्षावधिपञ्चदशवर्षपर्यन्तवयस्कः; कैशोरावव-स्थायुक्ते त्रि.। 'कौमारं पञ्चमाब्दान्तं पौगण्डं दशमा-वधि। कैशोरमापञ्चदशाद् यौवनं च ततः परम्।' १८५

कीकसम् क्ली. [की इति कुत्सितेन रक्तादिना देहाभ्यन्तरे कसति उत्पद्यते। की + कस् + अच्] अस्थि। ६३२

कीचकः पुं. [चीकयति शब्दायते, चीक् मर्षणे 'चीकयते-राद्यन्तविपर्ययश्च' इति वुन् आद्यन्तविपर्ययश्च] अनि-लयोगात् शब्दायमानवंशः; सरन्ध्रकवंशः; 'यः पूरयन् कीचकरन्ध्रभागान् दरीमुखोत्थेन समीरणेन'—इति कुमारसम्भवे (१।८)। राक्षसविशेषः; दैत्यभेदः; वृक्षविशेषः; नलः; केकयराजपुत्रः; स च विराट-राजस्य श्यालः सेनापतिश्च। 'सेनापतिर्विराटस्य ददर्श द्रुपदात्मजाम्। तां दृष्ट्वा देवगर्भाभां चरन्तीं देवतामिव। कीचकःकामयामास कामबाणप्रपीडितः'—इति महाभारते (४।१३।५)। देशविशेषः, तत्र बहु-वचनान्तोऽयम्। 'मत्स्यान् त्रिगर्तान् पञ्चालान् कीच-कानन्तरेण च। रमणीयान्वनोद्देशान् प्रेक्षमाणाः सरांसि च'—इति महाभारते (१।१५७।२)। २०४

कीटः पुं. [कीट् + अच्] कृमिजातिः; 'कृमिकीटपत-ङ्गांश्च यूकामक्षिकमत्कुणम्'—इति मनुः (१।४०)। 'सर्पाणामेव विण्मूत्रशुक्राण्डशवकोथजाः। दोषैर्व्यस्तैः समस्तैश्च युक्ताः कीटाश्चतुर्विधाः। दष्टस्य कीटैर्वाय-व्यैर्दंशस्तोदरुजोल्वणः।' ६३६

कीटम्, किट्टम् क्ली. [केटति लोहादिधात्ववयवाद् निर्गच्छतीति। गत्यर्थेति क्त। आगमशास्त्रस्यानित्य-त्वात् नेट्] मलः; पुरीषम्; 'आहारस्य रसः सारः सारहीनो मलद्रवः। शिराभिस्तज्जलं नीतं वस्तिं मूत्र-त्वमाप्नुयात्। शेषं किट्टञ्च यत्तस्य तत्पुरीषं निगद्यते' —इति भावप्रकाशस्य पूर्वखण्डे प्रथमे भागे। ६३७

कीनाशः पुं. [क्लिश्नातीति, क्लिश् विबाधने वधे वा, 'क्लिशेरीच्चोपधाया लोपश्च लो नाम च' इति कन् उपधाया ईत्वं ललोपो नामागमश्च] यमः; 'विधेहि कीनाशनिकेतनातिथिम्'—इति माघे (१।७२)। वान-रविशेषः; त्रि. कर्षकः; 'कीनाशो गोवृषो यानमल-ङ्कारश्च वेश्म च। विप्रस्योद्धारिकं देयमेकांशश्च प्रधानतः'—इति मनुः (९।१५०)। क्षुद्रः (३४७); पशुघाती। ७१

कीरः पुं. [कीति अव्यक्तम् ईरयतीति। की + ईर् + णिच्, अच्] शुकपक्षी; 'खगवागियमित्यतोऽपि किं न मुदं धास्यति कीरगीरिव'—इति नैषधे (२।१५)। क्ली. [कीलति बध्नाति शरीरम्। कील् + अच् लस्य र] मांसम्। २४८

कीर्णः त्रि. [कीर्यतेऽसौ, कॄ + कर्मणि क्त] आच्छन्नः; विक्षिप्तः; 'ग्रीवाभङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने दत्तदृष्टिः, पश्चार्द्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद् भूयसा पूर्वकायम्। शष्पैरर्द्धावलीढैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभिः कीर्णवर्त्मा, पश्योदग्रप्लुतत्वाद् वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति'—इति शाकुन्तले १ अङ्के। हिंसितः। ७०२

कीर्तिः स्त्री. [कॄ + क्तिन्। यद्वा कृत् संशब्दने, 'हृपि-षिरुहीति' इरादिकार्ये इन्] सुख्यातिः; यशः; समज्ञा; समाज्ञा; समाख्या; समज्या; अभिख्या; श्लोकः; वर्णः; कीर्तना; 'दानादिप्रभवा कीर्तिः शौर्यादिप्रभवं यशः'—इति माधवी। प्रसादः; शब्दः; दीप्तिः; मातृ-काविशेषः; विस्तारः; कर्दमः। १५३

कीलः पुं.- स्त्री. [कील्यते रुध्यतेऽसौ अनेनात्र वा, कील् बन्धने + कर्मणि करणेऽधिकरणे च यथायथं घञ्, पुंसीति घ वा] अग्निशिखा; वह्निज्वाला; शङ्कुः (७९७); 'या लुप्तकीलभावं याता हृदि बहिरदृश्यापि' —इति आर्यासप्तशती (३७४)। 'परिखाश्चापि कौरव्य! कीलैः सुनिचिताः कृताः'—इति महा-

भारते (३।१५।१५)। स्तम्भः; लेशः; कफोणिः; कफोणिनिर्घातः; मूढगर्भस्य प्रकारभेदः; 'तत्र ऊर्ध्व-बाहुशिरः पादो यो योनिमुखं निरुणद्धि कील इव स कीलः'—इति सुश्रुते निदानस्थाने ८ अध्याये। ६५

कीलकः पुं. [कीलति बध्नाति अनेन। करणे घञ्, स्वार्थे क] कीलः; कीला; 'खूंटा, मेख' इत्यादि भाषा। गवां गात्रकण्डूयनार्थं गोष्ठे निखातः स्तम्भः; कण्डूय-नार्थं काष्ठं; बन्धनखण्टः; यत्र बद्ध्वा गौर्दुह्यते सः; शिवकः; शङ्कुः। ४५१

कीलालम् क्ली. [कीलं वह्निज्वालाम् अलति वारय-तीति। कील+अल्+कर्मण्यण्। यद्वा कीलात् वह्निशिखायाः (शिखाग्रहणेनात्र वह्नेरेव ग्रहणमिति ध्येयम्) अत एवाग्नेः सकाशात् अलति पर्याप्नोति उत्पद्यते इति यावत्, 'अग्नेरापः' इति श्रुतेः। कील+अल्+अच्] रक्तं; रुधिरं; जलम्; 'कूलातिगामि-भयतूलावलिज्वलनकीलानिजस्तुतिविधाकोलाहल — क्षपितकालाभरी कुशलकीलालपोषणनिभाः' — इति शङ्करकविकृते अम्बाष्टके (२)। [और्वाग्नेः कीलम् आलाति, आ ला+क] अमृतं; मधु; पुं. [कीलाय बन्धाय अलति पर्याप्नोतीति] पशुः। ८३०

कीलिका स्त्री. [कीलक+स्त्रीत्वे टाप् इत्वम्] अक्षाग्रे या कीलिका; चक्रावरोधिनी; अणिः; अणी। ४४८

कीशः पुं. [की इति शब्दं ईष्टे। की+ईश्+क। यद्वा कस्य वायोरपत्यं (अत इञ्) किः हनुमान् ईशो यस्य] वानरः; 'रासभैः करभैः कीशैः श्येनैरश्वतरैर्बकैः'—इति काशीखण्डे (४२।३१)। [के आकाशे ईष्टे प्रभव-तीति, क+ईश्+क] सूर्यः; पक्षी; नग्ने त्रि.। २३१

कुः स्त्री. [कु+मितद्र्वादित्वात् डु] पृथिवी; पृथ्वी। १५६

कुकुन्दरम् क्ली.– पुं. [स्कुन्द्यते कामिनाऽत्र। स्कुदि आप्लवने, 'मद्गुरादयश्चेति' निपातनात् साधु] पृष्ठवंशादधो गर्तद्वयं; नितम्बस्थकूपकद्वयम्। कुकुन्दरे इति द्विवचनान्तत्तोऽपि प्रयोगः। 'पार्श्वजघनबहिर्भागे पृष्ठवंशमुभयतो नातिनिम्ने कुकुन्दरे नाम मर्मणी तत्र स्पर्शाज्ञानमधःकाये चेष्टोपघातश्च'—इति सुश्रुते शारीरस्थाने। 'पृष्ठवंशं ह्युभयतो यौ सन्धी कटिपार्श्व-योः। जघनस्य बहिर्भागे मर्मणी तौ कुकुन्दरौ'—इति वाग्भटे शारीरस्थान ४ अध्याये। ५१३

कुकुभा स्त्री. [कु ईषत् कुः पृथ्व्याधिष्ठात्री देवता इव भा यस्याः] रागिणीविशेषः। १०४

कुकूलम् क्ली. [कोः भूमेः कूलं, कुत्सितं कूलं वा] शङ्कुभिः सङ्कीर्णं श्वभ्रम्; तनुत्रम्; पुं. [कु+ऊलच् कुगागमश्च] तुषानलः; 'शिरीषादपि मृद्वङ्गी क्वेय-मायतलोचना। अयं क्व च कुकूलाग्निकर्कशो मदनानलः' —इति उद्भटः। ८३०

कुक्कुटः पुं.– स्त्री. [कुक्+सम्पदादित्वात् क्विप्। कुका आदानेन कुटतीति, कुट्+क] पक्षिविशेषः; कृकवाकुः; ताम्रचूडः; चरणायुधः; कालज्ञः; नियोद्धा; विष्किरः; नखरायुधः; ताम्रशिखी; रात्रिवेदः; उषाकरः; वृताक्षः; काहलः; दक्षः; यामनादी; शिखण्डिकः; 'मुर्गा' इति भाषा। 'कुक्कुटो बृंहणःस्निग्धो वीर्योष्णोऽनिलकृद् गुरुः। चक्षुष्यः शुक्रकफकृद्बल्यो रूक्षःकषायकः। आर-ण्यकुक्कुटः स्निग्धो बृंहणः श्लेष्मलोगुरुः। वातपित्त क्षयवमिविषमज्वरनाशनः'—इति भावप्रकाशः। निषाद पुत्रः; शूद्रपुत्रः; तृणोल्का; कुक्कुभपक्षी; वह्निकणः; आसनविशेषः; 'पद्मासनं तु संस्थाप्य जान्वोरन्तरे करौ। निवेश्य भूमौ संस्थाप्य व्योमस्थं कुक्कुटासनम्' —इति हठयोगदीपिकायाम् (१।२३)। २४७

कुक्कुटिः स्त्री. [कुक्कुट इव आचरति, तस्य भावः। आचारे क्विपि इन्] दम्भचर्या; मिथ्याचारः। ७४०

कुक्षिः पुं. [कुष् निष्कर्षे+'प्लुषिकुषिशुषिभ्यः क्सिः' इति क्सि] उदरम्; 'यत्रोषितं विशालाक्षि! त्वया चन्द्रनिभानने। तत्राहमुषितो भद्रे कुक्षौ काव्यस्य भाविनि'—इति महाभारते (१।७७।१३)। दान-वविशेषः; 'कुक्षिस्तु राजन् विख्यातो दानवानां महा-बलः'— इति महाभारते (१।९७।५७)। ५१५

कुङ्कुमम् क्ली. [कुम् कुम् इति शब्दोऽस्ति वाचकत्वे-नास्य, अर्श आद्यच्। यद्वा कुक्यते आदीयतेऽसौ, कुक् आदाने, उमक् निपतनात् मुम्] गन्धद्रव्यविशेषः; कश्मीरजन्म; अग्निशिखं; वरं; बाह्लीकं; पीतनं; रक्तं; सङ्कोचं; पिशुनं; धीरं; लोहितचन्दनं; चारु; वाह्लिकं; वरवाह्लीकं; रक्तचन्दनम्; अग्निशेखरम्; असृक्; काश्मीरजं; पीतकं; काश्मीरं; रुचिरं; शठं; शोणितं; घुसृणं; वरेण्यम्; अरुणं; कालेयकं; जागुडं; कान्तं; वह्निशिखं; केशरवरं; गौरं; केसरं;

हरिचन्दनं; खलं; रजं; दीपकं; लोहितं; सौरभं; चन्दनम्। 'कश्मीरदेशजे क्षेत्रे कुङ्कुमं यद्भवेद्धि तत्। सूक्ष्मकेसरमारक्तं पद्मगन्धि तदुत्तमम्। बाल्हीकदेशसंजातं कुङ्कुमं पाण्डुरं भवेत्। केतकीगन्धयुक्तं तन्मध्यमं सूक्ष्मकेसरम्। कुङ्कुमं पारसीकेयं मधुगन्धि तदीरितम्। ईषत्पाण्डुरवर्णं तदधमं स्थूलकेसरम्' —इति भावप्रकाशः। ५४३

कुचः पुं. [कुचति संकुचतीति। कुच् संकोचे, 'इगुपधेति' क] स्तनः; 'अन्या वक्षसि चान्यस्यास्तस्याश्चाप्यपराकुचे। ऊरुपार्श्वकटीपृष्ठमन्योऽन्यं समुपाश्रिताः'—इति रामायणे (५।१३।५७)। ५२६

कुचमुखम् क्ली. [कुचस्य स्तनस्य मुखम् अग्रभागः] कुचाग्रं; स्तनाग्रभागः; चूचुकं; चुचुकम्। ५२६

कुचरः त्रि. [कुत्सितं चरतीति । कु+चर्+अच्] कुवादः; परदोषकथनशीलः; दुर्गमदेशगन्ता; 'प्रतद्विष्णुः स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः'—इति ऋग्वेदे (१।१५४।२)। [कुस्थाने चरतीति] कान्तारादिपर्यटकः; [कौ पृथ्व्यां चरतीति] भूमिचरः; 'दृष्ट्वा त्वादित्यमुद्यन्तं कुचराणां भयं भवेत्। अध्वगाः परितप्येयुरुष्णतो दुःखभागिनः। आदित्यः सत्त्वमुद्रिक्तं कुचरस्तु तथा तमः। परितापोऽध्वगानां च रजसो गुण उच्यते'—इति महाभारते (१४।३८।१३-१४)। ३८९

कुजः पुं. [कोः पृथिव्याः जातः। कु+जन्+ड] वृक्षः; मङ्गलग्रहः; 'अङ्गारकः कुजो भौमः'—इति मङ्गलग्रहस्तुतौ। नरकासुरः; 'तत्राहृतास्ता नरदेवकन्याः कुजेन दृष्ट्वा हरिमार्तबन्धुम्'—इति भागवते (३।३।८)। १७७

कुञ्जः पुं.- क्ली. [कौ जातः, जन्+ड, पृषोदरादित्वान्मुमि साधुः] हनुः; हस्तिदन्तः; पर्वतादेर्लतापल्लवादिभिः समन्तादाच्छादितगर्भो गह्वरादिदेशः; उपरि चतुर्दिक्षु च लतादिभिराच्छादितस्य स्थानस्य मध्ये शून्यदेशः; निकुञ्जः; 'गोपीभर्तुर्विरहविधुरा काचिदिन्दीवराक्षी, उन्मत्तेव स्खलितकवरी निःश्वसन्ती विशालम्। अत्रैवास्ते मुररिपुरिति भ्रान्तिदूतीसहाया, त्यक्त्वा गेहं झटिति यमुनामञ्जुकुञ्जं जगाम'—इति पदाङ्कदूते (१)। ८१८

कुञ्जरः पुं. [प्रशस्तः कुञ्जः हनुर्दन्तो वा अस्त्यस्य। कुञ्ज+'रप्रकरणे खमुखकुञ्जेभ्य उपसंख्यानम्' इति र] हस्ती; 'कुञ्जरस्येव संग्रामे परिगृह्याङ्कुशग्रहम्'—इति महाभारते (३।२६।१५)। उत्तरपदे श्रेष्ठवाचकः; यथा पुरुषकुञ्जरः इत्यादि। सर्पविशेषः; 'कुठरः कुञ्जरश्चैव तथा नागः प्रभाकरः'—इति महाभारते (३५।१५)। केशः; देशभेदः; पर्वतविशेषः; 'ततः शक्रध्वजाकारः कुञ्जरो नाम पर्वतः। अगस्त्यभवनं तत्र निर्मितं विश्वकर्मणा'—इति रामायणे (४।४१।५०)। ८०६

कुञ्जरकरः पुं. [कुञ्जरस्य गजस्य करः इव] हस्तिशुण्डः। ८०६

कुटः पुं. [कुट्+क] कोटः; शिलाकुट्टं; वृक्षः; पर्वतः; कुटिले त्रि.; 'हविषाजारो अपां पिपर्ति पपुरिर्नरा पिता कुटस्य चर्षणिः'—इति ऋग्वेदे (१।४६।४)। पुं. – क्ली. कलशः (३१६)। २९१

कुटजः पुं. [कुटे पर्वते जातः। जन्+ड] पुष्पवृक्षविशेषः; शक्रः; वत्सकः; गिरिमल्लिका; कौटजः; वृक्षकः; शक्रपर्यायः; कुटजः; काही; कालिङ्गः; मल्लिकापुष्पः; प्रावृष्यः; शत्रुपादपः; वरातिक्तः; यवफलः; संग्राही; पाण्डुरद्रुमः; प्रावृषेण्यः; महागन्धः; पाण्डरः; 'कुटजः कूटजः कौटो वत्सको गिरिमल्लिका। कालिङ्गः शत्रुशाखा च मल्लिकापुष्प इत्यापि। इन्द्रो यवफलः प्रोक्तो वृक्षकः पाण्डुरद्रुमः। कुटजः कटुको रूक्षो दीपनस्तुवरो हिमः'—इति भावप्रकाशः। अगस्त्यमुनिः; द्रोणाचार्यः। १९३

कुटहारिका स्त्री. [कुटं कलशं हरति जलाद्यानयनार्थं गृह्णाति या। कुट+हृ+ण्वुल्+टाप् इत्वं च] दासी। ४९२

कुटिलम् त्रि. [कुट् वक्रीभावे+बाहुलकाद् इलच्] अनृजु; अरालं; वृजिनं; जिह्मम्; ऊर्मिमत्; कुञ्चितं; नतम्; आविद्धं; भुग्नं; वेल्लितं; वक्रं; भङ्गुरं; वेङ्कु; विनतम्, उन्दुरम् 'ज्वलज्जटाकलापस्य भृकुटीकुटिलं मुखम्। निरीक्ष्य कस्त्रिभुवने मम यो न गतो भयम्'—इति विष्णुपुराणे (१।९।२३)। क्ली. तगरपुष्पे; 'कालानुसारिवा वक्रं तगरं कुटिलं शठम्।' महोरगं नतं जिह्मं दीनं तगरपादिकम्'—इति वैद्यक-

रत्नमालायाम् छन्दोभेदः। ६९६

कुटिलाशयः त्रि. [कुटिलः आशयो यस्य] परदोषकथनशीलः। ३८९

कुटुम्बव्यापृतः त्रि. [कुटुम्बभरणाय व्यापृतः नियुक्तः] कुटुम्बपोषणासक्तः; अभ्यागारिकः; उपाधिः; कुटुम्बेन पुत्रदारादिपोष्यवर्गेण व्यापृतः संयुक्तः; बहुपरिवारविशिष्टः पुरुषः। ३५७

कुटुम्बी [न्] त्रि. [कुटुम्बः पोष्यवर्गोऽस्त्यस्य, अस्त्यर्थे इनि] कृषकः; कुटुम्बविशिष्टः; गृही; गृहमेधी; गृहस्थः; गार्हस्थ्याश्रमविशिष्टः; 'शैलः सम्पूर्णकामोऽपि मेनामुखमुदैक्षत। प्रायेण गृहिणीनेत्राः कन्यार्थेषु कुटुम्बिनः'—इति कुमारसम्भवे (६।८५)। ५७४

कुट्टनी स्त्री. [कुट्टयति छिनत्ति नाशयति स्त्रीणां शीलं या। कुट्ट+स्वार्थे णिच्, ततः ल्युट्, ङीप्। यद्वा कुट्यते छिद्यते स्त्रीणां शीलम् अनया। कुट्ट छेदने, करणे ल्युट् ङीप् च] पुरुषेण सह परस्त्रीयोगकर्त्री; शम्भली; कुटनी; सम्भली; माधवी; रङ्गमाता; अर्जुनी; कुम्भदासी; गणेरुका; 'कुटनी' इति भाषा। 'तदालिङ्गनमवलोक्य समीपवर्तिनी कुट्टन्यचिन्तयत्'—इति हितोपदेशे (१।२४३)। ४९२

कुट्टितः त्रि. [कुट्ट+कर्मणि क्त] चूर्णितः; मुशलादिना क्षुण्णः; यथा तण्डुलपृथुकाः। ५८५

कुट्टिमः पुं.– क्ली. [कुट्ट+भावे घञ्। तेन निर्वृत्तः निष्पन्नः इत्यर्थे इमप्] बद्धभूमिः; मणिभूः; 'मम्लतुर्न मणिकुट्टिमोचितौ मातृपार्श्वपरिवर्तिनाविव'— इति रघुवंशे (११।९)। सुधाघटितभूतलं; कुटीरः; दाडिमवृक्षः। २९४

कुट्टहारिका स्त्री [कुट्टयते यत्, कुट्ट+घ, कुट्टं मत्स्यमांसादिकं हरति। कुट्ट+हृ+ण्वुल्, टाप् अत इत्वं च] दासी। ४९२

कुड्मलः पुं.–क्ली. [कुटति ईषद् विकासोन्मुखीभवतीति। 'कुटिकशीति' कल मुट् च] मुकुलः। १८६

कुठः पुं. [कुठ्यते छिद्यतेऽसौ। कुठ् छेदने+कर्मणि घञर्थे क] वृक्षः। १७७

कुठारः पुं.– स्त्री. [कोठत्यनेन। कुठ्+करणे आरन्] शस्त्रविशेषः; सुधितिः; परशुः; परश्वधः; कुठारी; पर्शुः; पर्श्वधः; कुठाटङ्कः; द्रुघनः; द्रुघणः; 'तं त्वागताहं शरणं शरण्यं स्वभृत्यसंसारतरोः कुठारम्'— इति भागवते (३।२५।१२)। पुं. [कुठ्यते छिद्यतेऽसौ। कुठ्+कर्मणि आरन्] वृक्षः। ४७४

कुड्मलः पुं. [कुड् बाल्ये+'कुटिकशी' त्यत्र 'कुडेरपी'- त्यनेन कल मुट् च] कुट्मलः; मुकुलः; कोषः; विकासोन्मुखप्रौढकलिका; ईषद्विकसिता कलिका; 'द्योतितान्तः सभैः कुन्दकुड्मलाग्रदतःस्मितैः'— इति माघे (२।७)। १८६

कुणपः पुं. [क्वणेः+कपन् सम्प्रसारणं च] शवं; मृतशरीरम्; एतदर्थे नपुसंकलिङ्गोऽपि। 'नारद उवाच— 'उन्मत्तवेशं बिभ्रत् स चङ्क्रमीति यथासुखम्। वाराणस्यां महाराज! दर्शनेप्सुर्महेश्वरम्। तस्या द्वारं समासाद्य न्यसेथाः कुणपं क्वचित्। तं दृष्ट्वा यो निवर्तेत स संवर्तो महीपते'—इति महाभारते (१४।६।२२-२३)। पूतिगन्धिः; अस्त्रविशेषः। पूतिगन्धौ त्रिलिङ्गोऽपि, यथा—'कुणपं मस्तुलुङ्गाभं सुगन्धं क्वथितं बहु'—इति माधवकरः। रोगविशेषः; 'कुणपञ्चास्रपित्ताभ्याम्'– इति शाङ्गर्धरे मध्यखण्डे १ अध्यायः। ६२९

कुणिः त्रि. [कुण+इन्] कुकरः; कुत्सितहस्तयुक्तः; रोगादिना कुञ्चितकरः; कूणिः; कोणिः; विकलपाणिकः। ६१०

कुण्ठः त्रि. [कुण्ठति क्रियासु मन्दीभवति। कुठि+अच्] क्रियासु मन्दः; अकर्मण्यः; 'वैकुण्ठीयेऽत्र कण्ठे वसतु मम मतिः कुण्ठभावं विहाय'—इति शङ्करकविकृते विष्णुस्तोत्रे (३४)। मूर्खः। ३८२

कुण्डम् क्ली.– स्त्री. [कुण्ड्यते रक्ष्यते भक्ष्यादि अस्मिन्। कुडि रक्षणे, अच्] स्थाली; कुण्डी; पुं. [कुण्ड्यते दह्यते कुलम् अनेन, कुडि दाहे+करणे घञ] अमृते भर्तरि जारजः; जीवति भर्तरि उपपतिजातः; 'पत्यौ जीवति कुण्डः स्यान्मृते भर्तरि गोलकः'— इति मनुः (३।१७४)। सर्पविशेषः; 'कच्छपश्चाथ कुण्डश्च तक्षकश्च महोरगः'—इति महाभारते (१।१२३।६८)। क्ली. [कुणतीति,'अमन्ताड् डः' इति ड] मानभेदः; [कुण्ड्यते रक्ष्यते जलं यत्र, कुडि+अधिकरणे अप्] देवजलाशयः; जलाधारविशेषः; पात्रविशेषः; 'भुवं कोष्णेन कुण्डोध्नी मेध्येनावभृथादपि'— इति रघुवंशे (१।८४)।

होमीयाग्न्यालयः, चतुरस्रं चतुष्कोणम्; 'सहस्रे त्वथ होतव्ये कुर्यात्कुण्डं करात्मकम्। द्विहस्तमयुते तच्च लक्षहोमे चतुष्करम्'--इति भविष्योत्तरम्। द्विहस्तादिके यामलः--'पूर्वपूर्वस्य कुण्डस्य कोणसूत्रेण निर्मितम्। उत्तरोत्तरकुण्डानां मानं तत्परिकीर्तितम्।' ३१४

कुण्डलम् क्ली. [कुण्ड्यते रक्ष्यते इति, कुडि रक्षायाम् + वृषादित्वात् कलच्। यद्वा कुण्डं तदाकारं लाति गृह्णातीति, ला+क] कर्णभूषणविशेषः; कर्णवेष्टनम्; 'ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः। केयूरवान् कनककुण्डलवान् किरीटी'—इति विष्णुध्याने। पाशः; वलयः; पुं. कौरव्यकुलजसर्पविशेषः; 'एरकः कुण्डलो वेणी वेणीस्कन्धः कुमारकः। बाहुकः शृङ्गवेरश्च धूर्तकः प्रातरातकौ। कौरव्यकुलजास्त्वेते प्रविष्टा हव्यवाहनम्'—इति महाभारते (१।५७।१३)। रक्तकाञ्चनवाचकः; 'रक्तपुष्पः कोविदारो युगपत्रस्तु कुण्डलः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। ५५६

कुण्डली [न्] पुं. [कुण्डलम् अस्त्यस्य इति, इनि। कुण्डलाकारेण स्थितेरस्य तथात्वम्] सर्पः; वरुणः; [कुण्डलं कुण्डलवदाकारं शरीरे अस्त्यस्य] मयूरः; चित्रलमृगः; विष्णुः; 'अरौद्रः कुण्डली चक्री विक्रम्यूर्जितशासनः'—इति महाभारते (१३।१४९।११०)। कुण्डलयुक्ते त्रि.; 'इमे च पुरुषा दिव्या यान्त्यस्य रथमन्तिकात्। परं शुभाः कुण्डलिनो युवानः खड्गपाणयः'—इति रामायणे (३।९।११)। ६४१

कुण्डिका स्त्री [कुण्ड्+स्वार्थे कन्, टाप् अत इत्वं च] कमण्डलुः; पिठरः; ताम्रकुण्डं; स्थाली; सामवेदान्तर्गतउपनिषद्विशेषः; 'अव्यक्तैकाक्षरं पूर्णां सूर्याक्षयध्यात्मकुण्डिकाः'—इति मुक्तिकोपनिषदि। ४११

कुतपः पुं.– क्ली. [कुं भुवं तपति,'सञ्ज्ञायाम्' इति खच्; आगमशास्त्रानित्यत्वेन न मुम्] कुशतृणम्; अह्नोऽष्टमोंऽशः; दिवसस्याष्टमो मुहूर्तः; अपराह्णः; एकोद्दिष्टश्राद्धारम्भकालः; 'अह्नो मुहूर्ता विख्याता दश पञ्च च सर्वदा। तत्राष्टमो मुहूर्तो यः स कालः कुतपः स्मृतः'—इति मत्स्यपुराणे। मध्याह्नः खड्गपात्रं च तथा नेपालकम्बलः। रौप्यं दर्भास्तिला गावो दौहित्रश्चाष्टमः स्मृतः। पापं कुत्सितमित्याहुस्तस्य सन्तापकारिणः। अष्टावेते यतस्तस्मात् कुतपा इति विश्रुताः'—इति मिताक्षरायाम्। 'आरभ्य कुतपे श्राद्धं कुर्यादारौहिणं बुधः। विधिज्ञो विधिमास्थाय रौहिणं तु न लङ्घयेत्'—इति श्राद्धतत्त्वम्। 'दिवसस्याष्टमे भागे मन्दीभवति भास्करः। स कालः कुतपो ज्ञेयः पितृणामन्नमक्षयम्'—इति शातातपः। दौहित्रः; दुहितृपुत्रः; पुत्रीपुत्रः; वाद्यं; छागलोमजकम्बलः; पुं. [कुत्सितं पापं तपति, कुं भूमिं तपति वा, कु+तप्+अच्, कुत्+कपन् वा] सूर्यः; द्विजन्मा; वैश्वानरः; अग्निः; अतिथिः; गौः; भागिनेयः। ८२२

कुतूहलम् क्ली. [कुतूं चर्ममयतैलादिपात्रं हलति विलिखति, तद्वद् अन्तःकरणम् उकण्ठापूर्णं करोति इति। कुतू+हल्+मूलविभुजादित्वात् क] अपूर्ववस्तुदिदृक्षाद्यतिशयः;–कौतूहलं; कौतुकं; कुतुकं; चित्रम्। 'प्रियावियोगाद्विधुरोऽपि निर्भरं कुतूहलाक्रान्तमना मनागभूत्'—इति नैषधे (१।११९)। नायिकालङ्कारविशेषः; 'रम्यवस्तुसमालोके लोलता स्यात्कुतूहलम्'—इति साहित्यदर्पणे (३।११९)। त्रि. प्रशस्तः; अद्भुतः। ७२०

कुत्सा स्त्री. [कुत्स् निन्दने + भावे अप् टाप् च] कुत्सनम्; अवर्णः; आक्षेपः; निर्वादः; परीवादः; अपवादः; उपक्रोशः; जुगुप्सा; निन्दा; गर्हणं; गर्हा; निन्दनं; कुत्सनं; परिवादः; जुगुप्सनम्; अपक्रोशः; भर्त्सनम्; अपवादः; उपरागः; अवध्वसः; घृणा; धिक्; सामि। ८६७

कुत्सितः त्रि. [कुत्स्+ कर्मणि क्त] निन्दितः; निकृष्टः; प्रतिकृष्टः; अर्वा; रेफः; याप्यः; अवमः; अधमः; कुपूयः; अवद्यः; खेटः; गर्ह्यः; अणकः; रेपः; अवमः; आणकः; अनकः; कुप्रियः; आखेटः; रेपसः; काण्डः; गर्हितः; अपकृष्टकः। ३७८

कुथः पुं. – स्त्री. [कुन्थति अशोभां क्लेशं वा। कुथि हिंसायाम्, अच्। आगमविधेरनित्यत्वात् न नुमागमः] गजपृष्ठस्थितचित्रकम्बलः; प्रवेणी; आस्तरणं; वर्णः; परिस्तोमः; प्रवेणिः; परिष्टोमः; कुथा; कुथं; वोलः, आस्तरः; 'कुथा कन्या समाख्याता कुथः स्यात्करिकम्बलम्। कुथः कुशः कुथः कीटः प्रातःस्नायी द्विजः कुथः'—इति शब्दार्थचिन्तामणौ। पुं. [कुथ्+अच्] कुशतृणम्—'शाद्वलेषु यदा शिश्ये वनान्ते वनगोचरा। कुथास्तरणतल्पेषु किं स्यात्सुखतरं ततः'—इति

रामायणे (२।३०।१४) । ३०८

कुद्दारः पुं. [कुं पृथ्वीं दारयति विदारयति । कु+दृ+णिच्+कर्मण्यण्, पृषोदरादित्वात् साधुः] कुद्दालः; 'कुदार' इति भाषा । काञ्चनवृक्षः; वृक्षमात्रम् (भूविदारणेन समुत्थितत्वात्) । ५७७

कुद्दालः पुं. [कुं भूमिं दालयति, कु+दल्+णिच+अण्, पृषोदरादित्वात् साधुः] भूमि दारणशस्त्रं; 'कुदार' इति भाषा।'समासाद्य बिलं तच्चाप्यखनन् सगरात्मजाः। कुद्दालैर्ह्रेषुकैश्चैव समुद्रं यत्नमास्थिताः'—इति महाभारते (३।१०७।२३) । कोविदारवृक्षः; 'कोविदारश्चमरिकः कुद्दालो युगपत्रकः।कुण्डली ताम्रपुष्पश्च स्मन्तकः स्वल्पकेशरी'—इति भावप्रकाशः । ५७७

कुध्रः पुं. [कुं पृथ्वीं भूमिं धरति । कु+धृ+मूलविभुजादित्वात् क] पर्वतः; 'वार्चारिड्ध्वजधंग्धृतोड्वधिपतिः कुध्रेड्जजानिर्गणेड्, गोराडारुड्डुरःसरेड्डुतरग्रैवेयकभ्राडडम् । उड्वीड्रुड्ढनरकाग्निभिस्त्रिदृगिभेडार्द्राजिनाच्छच्छविः, स स्तादम्बुमदम्बुदालिगलरुग्देवो मुदे वो मृडः'— इति कालिदासः । १६५

कुन्तः पुं. [कुं भूमिम् उनत्ति क्लेदयति, कुं शरीरम् उनत्ति भेदयति दारयति वा, धातूनामनेकार्थत्वात् । कु+उन्द्+बाहुलकात् त, शकन्ध्वादिवत् साधुः] प्रासास्त्रं; भल्लास्त्रं; 'भाला' इति भाषा । 'कुन्तदन्ता कथं कुर्याद् राक्षसीव हि सा शिवम्'—इति कथासरित्सागरे । गवेधुका; चण्डभावः; क्षुद्रजन्तुः; क्षुद्रकीटः; उत्कुनम्; उत्कुणम्; 'जूआँ, केशकीट' इत्यादिभाषा । ४७५

कुन्तलः पुं[कुन्तम् उत्कुनं लाति गृह्णाति, कुन्त+ला+क] केशः; 'कापि कुन्तलसंव्यानसंयमव्यपदेशतः । बाहुमूलं स्तनौ नाभिपङ्कजं दर्शयेत् स्फुटम्'—इति साहित्यदर्पणे (३।१२४)। ह्रीवेरं; चषकः; यवः; [कुन्तस्य अग्राकारमिव लाति] लाङ्गलः; ध्रुवकभेदः; 'वर्णैः षोडशभिः कार्यः कुन्तलो लघुशेखरे। शृङ्गारे च रसे प्रोक्त आनन्दफलदायकः'—इति सङ्गीतदामोदरः। दाक्षिणात्यजनपदविशेषः; 'आकर्षः कुन्तलश्चैव मालवाश्चान्ध्रकास्तथा। द्राविडाः सिंहलाश्चैव राजा काश्मीरकस्तथा'—इति महाभारते (२।३४।११)। ५३०

कुपिन्दकः पुं. [कुप्यति ग्राहकेभ्यः इति । कुप् क्रोधे, कुपेर्वा वश्च' इति किन्दच्, संज्ञायां क] तन्त्रवायः; कुविन्दः; तन्त्रवापः; तन्तुवापः; तन्तुवायः; कुपिन्दः । ५९०

कुप्यम् क्ली. [गुप्यते रक्ष्यते द्रव्यादिकमत्र । गुपू रक्षणे, 'राजसूयसूर्यमृषोद्यरुच्यकुप्यकृष्टपच्याव्यथ्याः' इति क्यबन्तो निपातितः, गुपेरादेः कत्वं च संज्ञायाम्] स्वणरूप्यभिन्नधातुः; ताम्रादिधातुः; 'भूमिरल्पफला देया विपरीतस्य भारत ! हिरण्यं कुप्यभूयिष्ठं भिन्नं क्षीणमथो बलम्'—इति महाभारते (१५।६।११) । ८१

कुप्रियः त्रि. [कुत्सितं प्रीणातीति, कु+प्री+'इगुपधज्ञेति' क] जघन्यः (बहुव्रीहौ तु कुत्सितप्रियः) । ७७०

कुबेरः, कुवेरः पुं. [कुम्बति धनम् अन्यस्यैश्वर्यं वा इति। कुबि आच्छादने, 'कुम्बेर्नलोपश्च' इति एरक् नलोपश्च। यद्वा कुत्सितं वेरं शरीरं यस्य 'वेरं कलेवरे क्लीवम्' —इति मेदिनी। पिङ्गलनेत्रत्वात्तथात्वम्] यक्षराजः; स च विश्रवस ऋषेरिलविलायां जातः, स तु त्रिपाद् अष्टदन्तः केकराक्षश्च। 'कुत्सायां क्विति शब्दोऽयं शरीरं वेरमुच्यते। कुवेरः कुशरीरत्वाद् नाम्ना तेनैव सोऽङ्कितः; —इति वायुपुराणे। 'कुवेरो भव नाम्ना त्वं मम रूपेर्ष्यया सुत !'—इति काशीखण्डे । ७९

कुमारः पुं. [कुत्सितो मारः कन्दर्पो यस्मात्] कार्त्तिकेयः; 'अग्नेः पुत्रः कुमारस्तु श्रीमान् शरवणालयः। तस्य शाखो विशाखश्च नैगमेयश्च पृष्ठजः। कृत्तिकाभ्युपपत्तेश्च कार्त्तिकेय इति स्मृतः'—इति महाभारते (१।६६।२३-२४)। [कौ पृथिव्यां मारयति दुष्टान्, कु+मृ+णिच्+अच्] नाट्योक्तौ युवराजः; राजकुमारः (९८); 'ततः प्रियोपात्तरसेऽधरोष्ठे निवेश्य दध्मौ जलजं कुमारः'—इति रघुवंशे (७।६३)। अश्ववारकः; शुकः; [कुमारयति क्रीडति इति, कुमार् क्रीडने+अच्] पञ्चवर्षीयबालकः; 'कन्यानां सम्प्रदानं च कुमाराणां च रक्षणम्'—इति मनुः (७।१७५) । वरुणवृक्षः; अर्हदुपासकविशेषः; सिन्धुनदः; सनकसनातनसनत्सनन्दना एते चत्वारोऽपि बाल्यत एव ब्रह्मचारित्वात् कुमारा इत्युच्यन्ते। त इव ये च कौमारतो ब्रह्मचारिणस्तेऽपि विज्ञेयाः। 'अनेकानि सहस्राणि कुमारब्रह्मचारिणाम्। दिवं गतानि विप्राणामकृत्वा कुलसन्ततिम्'—इति मनुः (५।१५९) । मङ्गलग्रहः; 'धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्पुञ्जसमप्रभम्। कुमारं शक्तिहस्तं च लोहिताङ्गं

नमाम्यहम्'—इति नवग्रहस्तोत्रे। शुक्तिमत्पर्वतोद्भूत ऋषिकुल्याविशेषः; 'ऋषिकुल्याः कुमाराद्याः शुक्तिमत्पादसम्भवाः'—इति विष्णुपुराणे। शाकद्वीपाधिपतेः सप्तपुत्राणामेकः। तन्नाम्ना तद्वर्षस्यापि तथा सञ्ज्ञा; 'शाकद्वीपेश्वरस्यापि भवस्य सुमहात्मनः। सप्तैव तनयास्तेषां ददौ वर्षाणि सप्त सः। जलदश्च कुमारश्च सुकुमारो मनीचकः। कुसुमोदश्च मौदाकिः सप्तमश्च महाद्रुमः। तत्संज्ञान्येव तत्रापि सप्तवर्षाण्यनुक्रमात्'—इति विष्णुपुराणे (२।४।५९-६०)। मन्त्रविशेषः; 'हृतवीर्यश्च भीमश्च प्रध्वस्तो बालकः पुनः। कुमारश्च युवा प्रौढो वृद्धो निस्त्रिंसकस्तथा'—इति तन्त्रसारधृतविश्वसारवचनम्। स्वरोदयोक्तबालचक्रस्थस्वरभेदः; बालोपद्रवकग्रहभेदः; 'स्कन्दः सृष्टो भगवता देवेन त्रिपुरारिणा। बिभर्त्ति चापरां संज्ञां कुमार इति स ग्रहः'—इति सुश्रुते। त्रि. सुन्दरः। १९

कुमारी स्त्री. [कुमार+प्रथमवयोवचनत्वात् स्त्रियां ङीष्] द्वादशवर्षीया कन्या; कुमारिका; 'अष्टवर्षा भवेद् गौरी दशवर्षा च कन्यका। सम्प्राप्ते द्वादशे वर्षे कुमारीत्यभिधीयते'—इति स्मृतिः। परीक्षित्पुत्रस्य भीमसेनस्य पत्नी; 'भीमसेनः खलु कैकेयीमुपयेमे कुमारीं नाम तस्यामस्य जज्ञे प्रतिश्रवा नाम'—इति महाभारते (१।९५।४३)। पार्वती; नवमल्लिका; नदीविशेषः। इयं हि शाकद्वीपान्तर्गतसप्तनदीनामेका, 'नद्यश्चात्र महापुण्याः सर्वपापभयापहाः। सुकुमारी कुमारी च नलिनी धेनुका च या'—इति विष्णुपुराणे (२।४।६५)। सहा; घृतकुमारी; अपराजिता; जम्बूद्वीपः; सीता; बन्ध्याकर्कोटकी; स्थूलैला; मोदिनीपुष्पं; तरुणीपुष्पं; श्यामापक्षी। ४८३

कुमुदः पुं. [कुत्सिते निर्ऋतिकोणे मोदते इति। कु+मुद्+क] नैर्ऋत्यकोणस्थदिग्गजः; दक्षिणकोणस्थदिग्गजो वा; वानरविशेषः; कपिभेदः; 'नाम्ना संकोचलो नाम नानाद्विजयुतो गिरिः। तत्र राज्यं प्रशास्त्येष कुमुदो नाम वानरः'—इति रामायणे (६।२।२८)। नागविशेषः; 'कुठरः कुञ्जरश्चैव तथा नागः प्रभाकरः। कुमुदः कुमुदाक्षश्च तित्तिरिर्हलिकस्तथा'—इति महाभारते (१।३५।१५)। दैत्यभेदः; सितोत्पलं; कर्पूरः; ध्रुवकभेदः 'एकविंशतिवर्णाङ्घ्रिर्भवेत् शृङ्गारके रसे। कुमुदोऽभीष्टदश्चैव ताले तुरगलोलके'—इति सङ्गीतदामोदरः। [कुं पृथ्वीं मोदयति सुखयति। अन्तर्भूतणिजन्तान्मुदः क] विष्णुः; 'शुभाङ्गः शान्तिदः स्रष्टा कुमुदः कुवलेशयः'—इति महाभारते (१३।१४९।१६)। विष्णुपार्षदः; 'कुमुदः कुमुदाक्षश्च विष्वक्सेनः पतत्रिराट्'—इति भागवते (८।२१।१०)। मेरोरुपष्टम्भगिरिविशेषः; 'मन्दरो मेरुमन्दारः सुपार्श्वः कुमुद इति। अयुतयोजनविस्तारोन्नाहा मेरोश्चतुर्दिशमवष्टम्भगिरय उपक्लृप्ताः'—इति भागवते (५।१६।१२)। शाल्मलिद्वीपान्तर्गतप्रथमपर्वतः; कुमुदश्चोन्नतश्चैव तृतीयश्च वलाहकः'—इति विष्णुपुराणे (२।४।२६)। आनूपजन्तुविशेषः; 'हंससारसचक्राद्याः कुमुदाश्च कपिञ्जलाः। आनूपास्तेषु विज्ञेयाः श्लेष्मला वातकोपनाः'—इति हारीते प्रथमस्थाने ११ अध्यायः। १०४

कुमुदम् क्ली. [कौ मोदते, कु+मुद्+'इगुपधेति' क] श्वेतोत्पलं; कैरवं; चन्द्रकान्तं; गर्दभं; कुमुत्; धवलोत्पलं; कह्लारं; शीतलकं; शशिकान्तम्; इन्दुकमलं; चन्द्रिकाम्बुजं; गन्धसोमम्। 'श्वेतं कुवलयं प्रोक्तं कुमुदं कैरवं तथा। कुमुदं पिच्छिलं स्निग्धं मधुरं ह्लादि शीतलम्'—इति भावप्रकाशः। रक्तपद्मं; रूप्यम्। ६८१

कुमुदपत्राभा स्त्री. [कुमुदपत्रमिव आभा यस्याः] पाण्डरवर्णा; श्येनी; श्वेतवर्णा; धवलवर्णा। ७३८

कुमुदिनी स्त्री. [कुमुदानि सन्त्यस्याम्। कुमुद+इनि, ङीप्] कुमुदलता; कुमुद्वती; उत्पलिनी; 'अलिरसौ नलिनीवनवल्लभः कुमुदिनी कुलकेलि कलारसः। विधिवशेन विदेशमुपागतः कुटजपुष्परसं बहु मन्यते'—इति भ्रमराष्टके (७)। कुमुदसमूहः। ६८३

कुमुद्वती स्त्री. [कुमुद+'कुमुदनडवेतसेभ्यो ड्मतुप्'] इति ड्मतुप्, 'मादुपधायाश्च' इति मस्य वः, 'उगितश्चेति' ङीप्] कुमुदिनी; 'कुमुद्वती कैरविका तथा कुमुदिनीति च'—इति भावप्रकाशः। 'प्रभातवाताहतकम्पिताकृतिः कुमुद्वतीरेणुपिशङ्गविग्रहम्। निरास भृङ्गं कुपितेव पद्मिनी न मानिनी संसहतेऽन्यसङ्गमम्'—इति भट्टिकाव्ये (२।६)। कुमुदाख्यनागराजस्य यवीयसी स्वसा, सा तु रामचन्द्रपुत्रस्य कुशस्य पत्नी; 'त स्वसा नागराजस्य कुमुदस्य कुमुद्वती। अन्वगात् कुमुदानन्दं शशाङ्क-

मिव कौमुदी'–इति रघुवंशे (१७।६)। क्रौञ्चद्वीपान्तर्गतानां सप्तनदीनामेका नदी; 'गौरी कुमुद्वती चैव सन्ध्यारात्रिर्मनोजवा। क्षान्तिश्च पुण्डरीका च सप्तैता वर्षनिम्नगाः'—इति विष्णुपुराणे (२।४।५५)। ६८३

कुम्भः पुं. [कुं भूमिम् उम्भति जलेन। उम्भ्+अच्, शकन्ध्वादित्वात् साधुः] घटः; गजकुम्भः; हस्तिशिरसः पिण्डद्वयम् (२१६); 'तैः किं मत्तकरीन्द्रकुम्भकुहरे नारोपणीयाः कराः'—इति प्रसन्नराघवे। कुम्भकर्णपुत्रः; 'सुतोऽथ कुम्भकर्णस्य कुम्भः परमकोपनः। अब्रवीत् परमक्रुद्धो रावणं लोकरावणम्'—इति रामायणे (५।७९।१५)। वेश्यापतिः; समाधिविशेषः; प्राणायामाङ्गकुम्भकः; प्रह्लादपुत्रः; 'प्रह्लादस्य त्रयः पुत्राः ख्याताः सर्वत्र भारत! विरोचनश्च कुम्भश्च निकुम्भश्चेति भारत!'—इति महाभारते (१।६५।१९) विष्णुः; 'अर्चिष्मानर्चितः कुम्भो विशुद्धात्मा विशोधनः'—इति महाभारते (१३।१४९।८१)। द्रोणद्वयपरिमाणं; शूर्पः; मेषादिद्वादशराश्यन्तर्गतैकादशराशिः; हृद्रोगः; लग्नविशेषः; 'कुम्भलग्ने समुद्भूतश्चलचिन्तोऽतिसौहृदः। परदाररतो नित्यं सत्त्वकायो महासुखी'—इति कोष्ठीप्रदीपः। ३१६

कुम्भकारः पुं. [कुम्भं करोति, कुम्भ+कृ+कर्मण्यण्' इति अण्] जातिविशेषः; कुलालः; चक्री; 'कुम्हार' इति भाषा। 'वैश्यायां विप्रतश्चौरात् कुम्भकारः स उच्यते।' 'मालाकाराच्चर्मकार्यां कुम्भकारो व्यजायत।' 'पट्टीकाराच्च तैलिक्यां कुम्भकारो बभूव ह।' कुक्कुभपक्षी। ५९०

कुम्भी [न्] पुं. [कुम्भोऽस्यास्तीति। इनि] हस्ती; कुम्भीरः; जलजन्तुविशेषः; गुग्गुलुः; अग्निप्रकृतिविषकीटविशेषः; 'वाह्यकी पिच्चिटः कुम्भी'— इति सुश्रुते कल्पस्थाने ८ अध्यायये। २१४

कुम्भी स्त्री. [कुम्भ+अल्पार्थे ङीप्] क्षुद्रकुम्भः; उखा; पाटलावृक्षः; वारिपर्णी; कट्फलः; 'कायफल' इति भाषा। वृक्षविशेषः; कुम्भीपुष्पः; रोमालुविटपी; रोमशः; पर्पटद्रुमः; दन्तीवृक्षः। ३१४

कुम्भीनसः पुं. [कुम्भीव नसा नासा यस्य] क्रूरसर्पः; वायुप्रकृतिकविषकीटविशेषः; 'कुम्भीनसस्तुण्डिकेरी'—इति सुश्रुते कल्पस्थाने ८ अध्याये। ६४०

कुम्भीरः पुं. [कुम्भिनं हस्तिनमपि ईरयति। ईर्+कर्मण्यण्] जलजन्तुविशेषः; नक्रः; कुम्भीलः; गिलग्राहः; महाबलः; वार्भटः; अम्बुकिरातः; अम्बुकण्टकः; 'गर्दभत्वं तु संप्राप्य दश वर्षाणि जीवति, संवत्सरं तु कुम्भीरस्ततो जायेत मानवः'—इति महाभारते (१३।१११।५८)। ६५६

कुरङ्गः पुं. [कौ पृथिव्यां रङ्गति चलति। रगि+अच्। यद्वा 'विडादिभ्यः किच्च' इति अङ्गच् बाहुलकात् उत्वं रपरत्वं च। 'कुरङ्गविहङ्गादयः सर्वे निपात्यन्ते' इति वा] हरिणः; 'कुरङ्गमातङ्गपतङ्गभृङ्गमीना हताः पञ्चभिरेव पञ्च'—इति भागवतटीकायां स्वामी। २३०

कुरण्टकः पुं. [कुर्यते शब्द्यते इति, कुर्+कर्मणि बाहुलकात् अण्टक्, स्वार्थे कन्] पीताम्लानः; पीतझिण्टी; वृक्षविशेषः; [पृषोदरादित्वात् कुरण्डकः इत्यपि.] 'कुरण्टकोऽत्र पीते स्याद्रक्ते कुरवकः स्मृतः'—इति भावप्रकाशः। २०७

कुररः पुं. [कुङ शब्दे 'कुवः क्ररच्' इति क्ररच् प्रत्ययः]. जलचरान्तर्गतपक्षिविशेषः; कुरलपक्षी; उत्क्रोशः; खरशब्दः; क्रौञ्चः; पङ्क्तिचरः; खरः; 'प्रोद्घुष्टां क्रौञ्चकुररैश्चक्रवाकोपकूजिताम्'— इति महाभारते (३।६४।११०)। 'कुररवकमकराः कङ्कचटकपिकभृङ्गसारसाः। आडिदात्यूहहंसा जलकरटिकपिङ्गटिट्टिभाद्याः। जलेचरा विहङ्गास्ते भासकाः खञ्जरीटकाः'—इति हारीते प्रथमे स्थाने ११ अध्याये। २४९

कुरलः पुं. [कुरर इति रस्य लः] कुररपक्षी; चूर्णकुन्तलः। २४९

कुरुण्टकः पुं. [कु+रुटि स्तेये+अच्कुण्टः+स्वार्थे कन्] पीताम्लानः। २०७

कुरुविन्दः पुं. [कुरून् विन्दति, विद् लाभे, 'अनुपसर्गात्लिम्पविन्द' इति श, मुचादित्वात् नुम् च] मुस्तकम्; हिङ्गुलं (६२१); माषः; 'मुस्तकं न स्त्रियां मुस्तं त्रिषु वारिदनामकम्। कुरुविन्दश्च सङ्ख्यातोऽपरः क्रोडकसेरुकः। भद्रमुस्तं च गुन्द्रा च तथा नागरमुस्तकः'—इति भावप्रकाशः। पुं.– क्ली. काचलवणं; माणिक्यं; कुरुविल्वरत्नं; कुल्माषसस्यम्; 'कासीससैन्धवं किण्वं कुरुविन्दो मनःशिला'—इति सुश्रुते सूत्रस्थाने ३६ अध्यायः। ६२१

कुर्कुरः पुं.–स्त्री. [कुर् इत्यस्फुटं शब्दं कुरति शब्दायते। कुर्+कुर्+क] कुक्कुरः। २८१

कुलम् क्ली. [कुल्+'इगुपधेति' क] गृहम्। वंशः (३९६); रघौ (१६।८६)। 'आचारो विनयो विद्या प्रतिष्ठा तीर्थदर्शनम्। निष्ठा वृत्तिस्तपो दानं नवधा कुललक्षणम्'—इति शिष्टोक्तौ। कुलनाशकारणम्—'गोभिश्च दैवतैर्विप्रकृष्या राजोपसेवया। कुलान्यकुलतां यान्ति यानि हीनानि वृत्ततः। कुविवाहैः क्रियालोपैर्वेदानध्ययनेन च। कुलान्यकुलतां यान्ति ब्राह्मणातिक्रमेण वै। अनृतात् पारदार्याच्च तथाऽभक्ष्यस्य भक्षणात्। अश्रौतधर्माचरणात् क्षिप्रं नश्यति वै कुलम्। अश्रोत्रिये वै वेदानां वृषलेषु तथैव च। विहिताचारहीनेषु क्षिप्रं नश्यति वै कुलम्'—इति कूर्मपुराणे। समूहः; सजातीयगणः (६८६); [कुं भूमिं लाति गृह्णाति। ला+क] जनपदः; [कौ भूमौ लीयते, 'अन्येभ्योऽपीति' ड] शरीरम्; अग्रम्; मध्यमहलद्वयेन यावती भूमिः कृष्यते तावती भूमिः; 'दशी कुलं तु भुञ्जीत विंशी पञ्चकुलानि च'—इति मनुः (७।११९)। पुं. [कुल्+क] कुलिकः; शिल्पिकुलप्रधानः। २९१

कुलटा स्त्री. [कुलानि अटतीति। कुल+अट्+अच्। शकन्ध्वादित्वात् साधुः] व्यभिचारिणी; भ्रष्टा; पुंश्चली; धर्षिणी; बन्धकी; असती; इत्वरी; स्वैरिणी; पांशुला; धर्षणी; पांसुला; धृष्टा; दुष्टा; धर्षिता; लङ्घा; निशाचरी; त्रपारण्डा; 'परपतिनिर्दयकुलटाशोषितशठ ! नेर्षया न कोपेन। दग्धममतोपतप्ता रोदिमि तव तानवं वीक्ष्य'—इति आर्यासप्तशती (३९३)। परकीयान्तर्गतनायिकाविशेषः; 'एते वारिकणान् किरन्ति पुरुषान् वर्षन्ति नाम्भोधराः, शैलाः शाद्वलमुद्वहन्ति न सृजन्त्येते पुनर्नायकान्। त्रैलोक्ये तरवः फलानि सुव्रते नैवारभन्ते जनान्, धातः ! कातरमालपामि कुलटाहेतोस्त्वया किं कृतम्'—इति रसमञ्जरी। ४९६

कुलबालिका स्त्री. [कुलस्य सदाचारवत्कुटुम्बस्य बालिका। पालिकापक्षे कुलं कुलमर्यादां पालयति। पालि+ण्वुल्+टाप् इत्वम्। यद्वा कुलपाली+स्वार्थे कन्, टाप्] कुलस्त्री; कुलवती; कुलपालिः; कुलपालिका; जामिः; कुलाङ्गना (७९२)। ४९५

कुलस्त्री स्त्री. [कुले स्थिता स्त्री] कुलपालिका; कुलवती; अनन्यगामिनी; कुलरक्षिका स्त्री; 'असन्तुष्टा द्विजा नष्टाः सन्तुष्टा इव पार्थिवाः। सलज्जा गणिका नष्टा निर्लज्जाश्च कुलस्त्रियः'—इति चाणक्यः। [कुले कुलचक्रे मूलाधारे विराजते या] कुलकुण्डलिनीशक्तिः; 'कुलस्त्रीज्ञानमात्रेण जीवन्मुक्तो भवेन्नरः'—इति कुलार्णवे। ४९५

कुलायः पुं. [कुलानां पक्षिसमूहानाम् अयः वासस्थानम्] नीडः; 'खगकुलायकुलायनिलायिताम्'—इति माघे। स्थानमात्रम्। २४०

कुलालः पुं. [कुलं घटादिनिर्माणोपयोगिमृदाद्युपादानम् आलाति सम्यगादत्ते। आ+ला+क। कुलं वंशं घटादिसमूहं वा अलति पर्याप्नोति वा। अल्+कर्मण्यण्, कुल्+'तमिविशिविडीति' कालन् वा] कुम्भकारः; कुक्कुभपक्षी। ५९०

कुलिशम् क्ली.–पुं. [कुलौ हस्ते शते अवतिष्ठते। कुलि+शी+ड। यद्वा कुलिनः पर्वतान् श्यति दारयतीति। शो+ड, 'आतोनुपसर्गे कः' इति क वा] वज्रम्; 'क्रुद्धेऽपि पक्षच्छिदि वृत्रशत्राववेदनाज्ञं कुलिशक्षतानाम्'—इति कुमारसम्भवे (१।२०)। [कु ईषत् कुत्सितं वा लिशति, कु+लिश् अल्पीभावे गतौ च+क] मत्स्यविशेषः; कण्टकाष्ठीलः (६५९); 'तिमितिमिङ्गिलकुलिशापाकमत्स्यनिरालकनन्दिवारलकमकरगर्गरकचन्द्रकमहामीनराजीवप्रभृतयः सामुद्राः'— इति सुश्रुते सूत्रस्थाने ६४ अध्याये। अस्थिसंहारवृक्षः [कौ भूमौ लिशति अल्पीभवति, कुं भूमिं लिशति गच्छति ह्रस्वतया प्राप्नोति वा]। ५६

कुलीनः पुं. [कुले प्रशस्तवंशे जातः, 'कुलात् खः' इति ख] (तन्त्रशास्त्रोक्तकुलाचारव्रते स्थितः कौलः) त्रि. उत्तमकुलोद्भवः; महाकुलः; आर्यः; सभ्यः; सज्जनः; साधुः; 'कुलीनस्य सुतां लब्ध्वा कुलीनाय सुतां ददौ। पर्यायक्रमतश्चैव स एव कुलदीपकः।' (४३९) पुं. श्रेष्ठघोटकः; आजानेयः; स्वजानेयः; जात्यः; बालाश्वः। ३८९

कुलीरः पुं. [कुल् संस्त्याने+ईरन् किच्च] कर्कटः; 'केंकडा' इति भाषा। कर्कटराशिः। ६५८

कुल्यम् क्ली. [कुल् बन्धने+क्यप्] अस्थि; 'हड्डी'

इति भाषा। अष्टद्रोणपरिमाणं; शूर्पम्; आमिषम्; त्रि. [कुलस्यापत्यम्, 'अपूर्वपदादन्यरस्यामिति'यत्, यद्वा कुले भवः, कुलाय हितः, कुले साधुः वा; दिगादित्वात् तत्र साधुरिति वा यत्] कुलोद्भवः; कुलहितः; 'गृहान् मनोज्ञोरुपरिच्छदांश्च वृत्तीश्च कुल्याः पशुभृत्यवर्गान्'—इति भागवते (७।६।१३)। मान्ये पुं.। ६३२

कुल्या स्त्री. [कुले प्राणिगणे साधुः, 'तत्र साधुरिति' यत्] नदीमात्रम्; 'सैन्धवारण्यमासाद्य कुल्यानां कुरु दर्शनम्'–इति महाभारते ३ पर्वणि। कुलस्त्री (७९८); क्षुद्रा कृत्रिमा नदी; 'कुल्याम्भोभिः पवनचपलैः शाखिनो धौतमूलाः'—इति शाकुन्तले १ अङ्के। पयःप्रणाली; 'पनाला' इति भाषा। जीवन्तिकौषधिः; स्थूलवार्ताकुः। ६६६

कुवलयम् क्ली. [कोः पृथिव्याः वलयमिव शोभाकारकत्वात्] नीलोत्पलम्; 'ज्योतिर्लेखावलयि गलितं यस्य बर्हं भवानी, पुत्रप्रेम्णा कुवलयदलप्रापि कर्णे करोति'—इति मेघदूते (४६)। उत्पलम्। ६८१

कुवली स्त्री. [कुवल+स्त्रियां गौरादित्वात् ङीष्] कोलिवृक्षः। १९४

कुविन्दकः पुं. [कुत्सितं भक्तादिम्रक्षितसूत्रादिकं कुत्सितवृत्त्या वा जीविकां विन्ददीति। श, स्वार्थे संज्ञायां वा क] तन्त्रवायः; तन्तुवायः; कुविन्दः; कुपिन्दः। ५९०

कुवेणी स्त्री. [कु ईषत् वेणन्ते गच्छन्ति मत्स्या अस्याम्। कु+वेण्+इन्। ततः कृदिकारान्तादिति वा ङीप्] मत्स्यधानी; मत्स्यबन्धनी; [कुत्सिता वेणी यस्याः] निन्दितवेणी नारी च। ५९४

कुवेरः पुं. [कुत्सितं वेरं शरीरमस्य] देवताविशेषः; स तु विश्रवोमुनेरिडविडाभार्यायां जातः। धनयक्षोत्तरदिशां पतिश्च। त्रिचरणोऽष्टदंष्ट्रोऽयं जातः। त्र्यम्बकसखः; यक्षराट्; गुह्यकेश्वरः; मनुष्यधर्मा; धनदः; राजराजः; धनाधिपः; किन्नरेशः; कुबेरः; वैश्रवणः; पौलस्त्यः; नरवाहनः; यक्षः; एकपिङ्गः; धनी; ऐलविलः; श्रीदः; पुण्यजनेश्वरः; हर्यक्षः; अलकाधिपः; नन्दीवृक्षः; अर्हदुपासकविशेषः; त्रि. [कुत्सितं वेरं क्षेपणदानादिकं गतिर्वा यस्य] मन्दः; [कुत्सितं वेरं शरीरं यस्य] कुशरीरः। ७९

कुशम् क्ली.–पुं. [कु पापं श्यति नाशयति। कु+शो+ड, यद्वा कौ भूमौ शेते राजते शोभते इत्यर्थः] तृणविशेषः; कुथः; दर्भः; पवित्रं; याज्ञिकः; ह्रस्वगर्भः; बर्हिः; कुतपः; 'कुशो दर्भस्तथा बर्हिः सूच्यग्रो यत्र भूषणम्। ततोऽन्यो दीर्घपत्रः स्यात् क्षुरपत्रस्तथैव च।' 'पूजाकाले सर्वदैव कुशहस्तो भवेच्छुचिः। तर्जन्या रजतं धार्यं स्वर्णं धार्यमनामया। कुशकार्यकरं यस्मान्न तु वन्याः कुशाः कुशाः। कुशेन रहिता पूजा विफला कथिता मया। नान्यस्य रजतं स्वर्णं धार्यं हि निजमङ्गले'—इति वरदातन्त्रे १ पटलः। क्ली. [कौ भूमौ शेते, भूलग्नत्वात् तथात्वम्] जलम् (६४८); पुं. [कु पापं श्यति नाशयति विहितराजधर्मानुष्ठानेन] रामसुतः; 'यस्तयोः पूर्वजो जातः स कुशैर्मन्त्रसत्कृतैः। निर्माजनीयस्तु तदा कुश इत्यस्य नाम तत्'—इति रामायणे। पुराणोक्तसप्तद्वीपेषु द्वीपभेदः; कुशद्वीपः; 'ज्योतिष्मतः कुशद्वीपे सप्तपुत्राः शृणुष्व तान्'—इति विष्णुपुराणे (२।४।३६)। त्रि. [कु कुत्सिते कर्मणि शेते अवतिष्ठते, कु+शी+क] पापिष्ठः; [कुत्सिते मदशय्यायां शेते इति] मत्तः। १९१

कुशलः त्रि. [कौ पृथिव्यां शलति श्लाघां प्राप्नोतीति। शल्+अच्] शिक्षितः; चतुरः; 'समुद्रयानकुशला देशकालार्थदर्शिनः। स्थापयन्ति तु यां वृद्धिं सा तत्राधिगमं प्रति'—इति मनुः (८।१५७)। [कुशं लाति गृह्णाति, कुश+ला+क] कुशग्राहकः; क्ली. [कुश्+वृषादित्वात् कलन्। यद्वा कु पापं तस्मात् शलति गच्छति पृथक्त्वं प्राप्नोनीति। कु+शल्+अच्] कल्याणम्; 'पप्रच्छ कुशलं राज्ये राज्याश्रममुनिं मुनिः—इति रघुवंशे (१।५८)। 'ब्राह्मणं कुशलं पृच्छेत् क्षत्रबन्धुमनामयम्। वैश्यं क्षेमं समागम्य शूद्रमारोग्यमेव च'—इति मनुः (२।१२७)। पर्याप्तिः; पुण्यं; तद्वति त्रि.। 'न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषज्जते'—इति भगवद्गीता (१८।१०)। ३३५

कुशा स्त्री. [कुश् संश्लेषे+क टाप् च] वल्गा; रज्जुः; मधुकर्कटिका; छन्दोगाः स्तोत्रीयगणनार्थानौदुम्बरान् शङ्कुन् कुशा इति व्यवहरन्ति। ४४२

कुशाग्रीयमतिः त्रि. [कुशाग्रमिव तीक्ष्णा कुशाग्रीया, तथा भूता मतिः यस्य। कुशाग्र+छ ततो बहुव्रीहिः] कुशाग्रबुद्धिः; सूक्ष्मदर्शी। ३७३

कुशिकः पुं. [कुशः कुशसंज्ञको महीपालो जनकत्वेनास्त्यस्य । कुश+ठन्] फालः; कुशी; नृपविशेषः; विश्वामित्र-पितामहः; गाधेः पिता; सर्जवृक्षः; विभीतकवृक्षः; अश्वकर्णवृक्षः; तैलशेषः; केकरे त्रि. । ५७५

कुशीदम् क्ली. [कुसीद+पृषोदरादित्वात् सस्य शत्वम्] वृद्धिजीविका; रक्तचन्दनम् । ५७२

कुशीलवः . [कुत्सितं शीलम् अस्य इति कुशीलः । कुगतीति समासः, 'अन्यत्रापि दृश्यते' इति व । यद्वा कुशीलं वाति गच्छति प्राप्नोतीति यावत् । वा+क] चारणः; नटविशेषः; कथकादिः; देशान्तरे कीर्तिं प्रचारयति यो नटः; 'कुशीलवोऽवकीर्णी च वृषलीपतिरेव च'—इति मनुः (३।१५५) । रामायणात्मना नाट्यशास्त्रप्रचारकत्वाद् वाल्मीकिमुनिः । ५९२

कुशूलः पुं. [कुसूल+पृषोदरादित्वात् शत्वम्] धान्यागारम्; अन्नकोष्ठकः; व्रीह्यगारम्; 'कुशूलधान्यको वा स्यात् कुम्भीधान्यक एव वा । त्र्यहैहिको वापि भवेदश्वस्तनिक एव वा'–इति मनुः (४।७) । तुषानलः । ३१२

कुशेशयम् क्ली. [कुशे जले शेते । कुश+शी+अच्, अलुक्समासः] पद्मं; कमलम्; 'कुशेशयाताम्रतलेन कश्चित् करेण रेखाध्वजलाञ्छनेन'—इति रघुवंशे (६।१८) । सारसपक्षी; पुं. [कुशेशयं पद्ममिव आकृतिर्विद्यतेऽस्य, अर्श आद्यच्] कर्णिकारवृक्षः; कुशद्वीपस्यपर्वतविशेषः । ६७९

कुषीदम् क्ली. [कुसीद+पृषोदरादित्वात् षत्वम्] कुसीदं; वृद्ध्याजीवनम्; ऋणदानजीविका; अर्थप्रयोगः । ५७२

कुष्ठम् क्ली. [कुष्णाति रोगम् । कुष्+'हनिकुषीति' क्थन्] विषभेदः; ओषधिविशेषः; व्याधिः; पारिभव्यं; वाप्यं; पाकलम्; उत्पलम्; आप्यं; जरणं; रुजा; गदः; आमयः; रामं; पारिभद्रकं; वाणीरजं; पावनं; कुत्सितं; पद्मकं; गदाह्वं; कौबेरं; भासुरं; काकलं; नीरुजम् । 'कुष्ठं रोगाह्वयं वाप्यं पारिभव्यं तथोत्पलम् । कुष्ठमुष्णं कटु स्वादु शुक्रलं तिक्तकं लघु । हन्ति वातास्रवीसर्पकासकुष्ठमरुत्कफान्'—इति भावप्रकाशः । ६०४

कुष्ठः पुं. [कुष्णाति शरीरस्थशोणितं विकुरुते । निष्कर्षार्थकस्य कुष्धातोरत्र विकारार्थत्वं बोध्यते धातूनामनेकार्थत्वात् । कुष् निष्कर्षे, 'हनिकुषीति' क्थन्] रोगविशेषः; श्वित्रं; श्वेतं; श्वेत्रम् । 'सर्वकुष्ठेषु वमनं रेचनं रक्तमोक्षणम् । वचावासापटोलानां निम्बस्य फलिनीत्वचः ।' ६०४

कुसीदम् क्ली. [कुस्+'कुसेरुम्भोमेदेताः' इति ईद प्रत्ययः । यद्वा कुत्सितं निकृष्टरूपवृद्धिदानेनेत्यर्थः, सीदति अधमर्णो यत्र, पृषोदरादित्वात् साधु] ऋणदानजीविका; वृद्ध्याजीवनम्; अर्थप्रयोगः; वृद्धिजीविका; 'सूद' इति भाषा । 'कुत्सितात् सीदतश्चैव निर्विशङ्कैः प्रगृह्यते । चतुर्गुणं वाष्टगुणं कुसीदाख्यमृणन्ततः ।' 'कुसीदकृषिवाणिज्यं प्रकुर्वीतास्वयं कृतम् । आपत्काले स्वयं कुर्वन्नैनसा युज्यते द्विजः'—इति बृहस्पतिः । ५७२

कुसीदिकः त्रि. [कुसीदं वृद्धिस्तदर्थं द्रव्यं कुसीदं तत्, प्रयच्छति । 'कुसीददशैकादशात् ष्ठन्ष्ठचौ' इति ष्ठन्] वृद्धिजीवी; वार्द्धुषिकः; वृद्ध्याजीवः; वार्द्धुषिः; कुसीदः; कुसीदी; 'वणिक् कुसीद्यदोषः स्यात् ब्राह्मणानां च पूजनात्'—इति आह्निकतत्त्वे । ५७१

कुसुमम् क्ली. ['कुसेरुम्भोमेदेताः' इति उम, निपातनात् गुणाभावः] पुष्पम्; 'वापीजलानां मणिमेखलानां शशाङ्कभासां प्रमदाजनानाम् । चूतद्रुमाणां कुसुमान्वितानां ददाति सौरम्यमयं वसन्तः'—इति ऋतुसंहारे वसन्तवर्णने (४) । फलं; नेत्ररोगविशेषः; स्त्रीरजः; 'यदा नार्याः पितुर्गेहे कुसुमस्तनसम्भवः'—इति ज्योतिषशास्त्रे । १८६

कुसुमायुधः पुं. [कुसुमानि आयुधानि अस्त्राणि अस्य] कामदेवः; 'भगवन् मन्मथ ! कुतस्ते कुसुमायुधस्य सतस्तैक्ष्ण्यमेतत्'—इति शाकुन्तले ३ अङ्के । 'कुसुमायुधपत्नि ! दुर्लभस्तव भर्त्ता न चिराद्भविष्यति'—इति कुमारसम्भवे (४।४०) । ३२

कुसुम्भः पुं. ['कुसेरुम्भोमेदेताः' इति उम्भ प्रत्ययः] महारजनवृक्षः; 'पद्मोत्तमविकाशः स्यात् कुसुम्भः शरटस्तथा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । 'कटुर्विपाके कटुकः कफघ्नो विदाहिभावादहितः कुसुम्भः ।' कमण्डलुः; 'क्लृप्तकेशनखश्मश्रुः पात्री दण्डी कुसुम्भवान्'—इति मनुः (६।५२) । क्ली. [कौ पृथिव्यां सुम्भति शोभते दीप्तिं प्राप्नोतीत्यर्थः । कु+सुभि+अच्, इदित्वात् नुम्] स्वर्णं; सुवर्णं; पुष्पविशेषः

(६२०); तत्पर्यायाः—क्रमलोत्तमं; वह्निशिखं; महारजनं; पावकं; पीतं; पद्मोत्तरं; रक्तं; लोहितं; वस्त्ररञ्जनम्; अग्निशिखम्; 'कुसुम्भं ललिताशाक वृन्ताकं पूतिकां तथा। भक्षयन् पतितस्तु स्यादपि वेदान्तगो द्विजः'—इति तिथितत्त्वम्। ६२०

कुसृतिः स्त्री. [कुत्सिता सृतिः उपायः व्यवहारो वा] इन्द्रजालं; शाठ्यं; [कुत्सितपथः इति कर्मधारये व्युत्पत्तिलब्धोऽर्थः। कुत्सितासृतिराचारो यस्येति विग्रहे दुराचारे त्रि.] 'कस्माद्वयं कुसृतयः खलयोनयस्ते दाक्षिण्यदृष्टिपदवीं भवतः प्रणीताः'—इति भागवते (८।२३।७)। ७४०

कुस्तुम्बुरु क्ली. [कुत्सितं तुम्बति अर्दयति यत्। तुबि अर्दने+बाहुलकात् उरुप्रत्ययः। जातिनिर्देशात् सुट्] धन्याकम्; 'धन्याकं धान्यकं धान्यं कुस्तुम्बुरु धनीयकम्' —इति वैद्यकरत्नमालायाम्। पुं. यक्षविशेषः; 'कुस्तुम्बुरुःपिशाचश्च गजकर्णो विशालकः। एते चान्ये च बहवो यक्षाः शतसहस्रशः'—इति महाभारते (२।१०।१५)। ६१७

कुहकः त्रि. [कुह् विस्मापने+'बहुलमन्यत्रापि' इति क्वुन्] धूर्तः; वञ्चकः; व्यंसकः; दाण्डाजिनिकः, मायी; जालिकः; दाम्भिकः; माया; इन्द्रजालं; जालं; कुसृतिः; 'जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्, तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत् सूरयः। तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गो मृषा, धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि'—इति भागवते (१।१।१)। सर्पविशेषः; 'इत्युक्तास्तेन ते सर्पाः कुहकास्तक्षकान्धकाः। अदशन्त समस्तेषु गात्रेष्वतिविषोल्वणाः'—इति विष्णुपुराणे (१।१७।३८)। ३४९

कुहनम् त्रि. [कु+ईषत् प्रयत्नेन हन्यते इति। हन्+कर्मणि अप्। कुत्सिताचारेण हन्तीति। हन्+अच्] ईर्ष्यालुः; क्ली. मृद्भाण्डविशेषः; काचभाजनम्; पुं. [कुं पृथ्वीं हन्ति खनतीत्यर्थः, हन्+अच्] मूषिकः; [कौ पृथिव्यां कुत्सितं वा हन्ति दशतीति+अच्] सर्पः। ३८४

कुहना स्त्री. [कुह्+'ण्यासश्रन्थो युच्' इति युच्] दम्भचर्या; लोभान्मिथ्यापथकल्पना; अर्थलिप्सया मिथ्याचारभेदस्य सम्पादना; दम्भमात्रकृतध्यानमौनादिः; अर्थलिप्सया धर्माश्रयणं; कुहनिका। ७४०

कुहरम् क्ली. [कुं भूमिं हरतीति। कु+हृ+अच्] गह्वरं; छिद्रम्; 'तैः किं मत्तकरीन्द्रकुम्भकुहरे नारोपणीयाः कराः'—इति प्रसन्नराघवे। कर्णः; कण्ठशब्दः; गलः; अन्तिकम्; पुं. [कुह् विस्मायने+क। कुहं विस्मायनं भयम् इत्यर्थः, राति ददाति, भयं जनयतीति भावः, रा+क] नागविशेषः। ६२४

कुहुः स्त्री. [कुह्+मृगय्वादित्वात् कु] कुहूः; पिकध्वनिः; 'कोकिलानां कुहुरवैः सुखैः श्रुतिमनोहरैः' —इति महाभारते। ११२

कुहूः स्त्री. [कुह् बाहुलकात् कू प्रत्ययः] कुहुः; नष्टेन्दुकलामावास्या; 'दृष्टचन्द्रा सिनीवाली नष्टचन्द्रा कुहूरिति'—इति व्यासः। तदधिष्ठात्री देवपत्नी; अङ्गिरसः सुता; 'सिनीवाली कुहूरिति देवपत्न्याविति'—निरुक्ते। 'श्रद्धा त्वङ्गिरसः पत्नी चतस्रोऽसूत कन्यकाः। सिनीवाली कुहूराका चतुर्थ्यनुमतिस्तथा' —इति भागवते (४।१।२९)। कोकिलालापः; 'केनाश्रावि पिकानां कुहूं विहायेतरः शब्दः'—इति आर्यासप्तशती (६३०)। ११२

कूटः पुं.–क्ली. [कूट्+घञ्] पर्वतशृङ्गम्; 'अद्रीणामिव कूटानि धातुरक्तानि शेरते'—इति महाभारते आनुशासनिके। भग्नशृङ्गखण्डः (२६७); कैतवम् (७०९); 'वाचः कूटं तु देवर्षेः स्वयं विममृशुर्धिया।' तद्वति त्रि. 'न कूटैरायुधैर्हन्यात् युध्यमानो रणे रिपून्' —इति मनुः (७।९०)। त्रि. मिथ्याभूते; 'द्विगुणा वान्यथा ब्रूयुः कूटाः स्युः पूर्वसाक्षिणः'—इति याज्ञवल्क्यः। पुरद्वारम्; 'इयं कूटे मनुष्येन्द्र! गहने महती शमी। भीमशाखा दुरारोहा श्मशानस्य समीपतः'—इति महाभारते (४।५।१४)। अग्रभागमात्रम्; 'किरीटकूटैर्ज्वलितं शृङ्गारं दीप्तकुण्डलम्।' 'स वज्रकूटाङ्गनिपातवेगविशीर्णकुक्षिः स्तनयन्नुदन्वान्। उत्सृष्टदीर्घोर्मिभुजैरिवार्तः चुक्रोश यज्ञेश्वर! पाहि मेति'—इति भागवते (३।१३।२९)। निश्चलः; राशिः; 'अभ्रकूटाश्च दृश्यन्ते बहवः पर्वतोपमाः'—इति रामायणे (१।१४।१५)। लौहमुद्गरः;—'एते त्वां सम्प्रतीक्षन्ते स्मरन्तो वैशसं तव। संपरेतम् य कूटैश्छि-

न्दन्त्युत्थितमन्ययः'—इति भागवते (४।२५।८)। माया; 'नैव धर्मेण तद्राज्यं नार्जवेन न चौजसा। अक्षकूटमधिष्ठाय हृतं दुर्योधनेन वै'—इति महाभारते वनपर्वणि। तुच्छः; सीरावयवः; यन्त्रम्; 'वागुराभिश्च पाशैश्च कूटैश्च विविधैस्तथा'—इति रामायणे। अनृतम्; पुं.-स्त्री. [कूटयते दातुं न शक्यते स्थावरत्वादिति। कूट् अप्रदाने+कर्मणि घञ्] गृहम्; पुं. [कूटयति दग्धीकरोति शापप्रभावेण सापराधान् इति। कूट् दाहे+णिच्+अच्] अगस्त्यमुनिः। १६६

कूटयन्त्रम् क्ली. [आमिषं दत्त्वा मृगपक्षिबन्धनार्थं यत् सन्धानयन्त्रं निवेश्यते तत्] उन्माथः। ७८२

कूपः पुं. [कु ईषत् आपो यत्र। 'ऋक्पूरि'त्य। यद्वा कुवन्ति मण्डूकाः अत्र। 'कुपुम्याञ्च' इति प दीर्घश्च] जलाधारविशेषः; अन्धुः; प्रहिः; उदपानम्; अवटः; कोट्टारः; कातः; कर्तः; वज्रः; काटः; खातः; अवतः; क्रिविः; सूदः; उदतः; ऋष्यदात्; कारोतरात्; कुशेषः; केवटः; 'भूमौ खातोऽल्पविस्तारो गम्भीरो मण्डलाकृतिः। बद्धोऽबद्धः स कूपः स्यात्तदम्भः कौपमुच्यते' —इति भावप्रकाशः। गर्तः; गुणवृक्षः; नदीमध्यस्थितो वृक्षः पर्वतो वा; कूपकः; नौकागुणबन्धनस्तम्भः; 'मस्तूल' इति भाषा। मृन्मानम्। ६८४

कूपकः पुं. [कूपे गर्ते कायते प्रकाशते इति। कै+क] गुणवृक्षः; नौकागुणबन्धनस्तम्भ; तैलपात्रं; 'कुप्पा' इति भाषा। कुकुन्दरम्; उदपानं; चिता; शुष्कनद्यादौ जलार्थं कृतो गर्तः। ६५५

कूरः पुं. [वेञ् तन्तुसंताने+भावे क्विप्, ऊः। कौ भूमौ उवं वयनं लाति गृह्णातीति, ला+क, लस्य रः] भक्तम्। ३१९

कूर्चकः पुं. [कुरति, कुर् शब्दे, बाहुलकाच्चट्, संज्ञायां क। कूर्च विकारे (आकृतिगणत्वात्) ण्वुल् वा] ध्वजोपरिभागस्थमलङ्करणम्। ४५८

कूर्चिका स्त्री. [कूर्चः तद्वदाकारः अस्त्यस्याः। कूर्च+ठन्] क्षीरविकृतिः; 'दध्ना सह च यत् पक्वं क्षीरं सा दधिकूर्चिका। तक्रेण पक्वं यत् क्षीरं सा भवेत्तक्रकूर्चिका'—इति भरतः। 'कूर्चिका विकृता भक्ष्या गुरवो नातिपित्तलाः'—इति सुश्रुते सूत्रस्थाने ४६ अध्याये। सूचिका; तूलिका; 'तूली' इति भाषा। कुड्मलः; 'कली' इति भाषा। कुञ्जिका; कुञ्चिका। 'कुंजी' इति भाषा। ३२४

कूर्पम् क्ली. [कुरं पाति, कुर्+पा+क] भ्रूद्वयमध्यस्थलम्। अस्मिन्नर्थे अमरमते कूर्चशब्दः। ५२०

कूर्परः, कुर्परः पुं. [कुप् क्रोधे, बाहुलकादरन्, पृषोदरादिः] कफोणिः; जानु। ५३३

कूर्पासः पुं. [कूर्परे शरीरे अस्यते आस्ते वा। अस्+घञ्, पृषोदरादित्वात् साधुः] अर्द्धचोलकः; कूर्पासकः; कञ्चुकः; वारवाणः; कुर्पासः; 'चोली' इति भाषा। 'प्रस्वेदवारिसविशेषविषक्तमङ्गे कूर्पासकं क्षतनखक्षतमुत्क्षिपन्ती'—इति माघे (५।२३)। ५५२

कूर्मः पुं. [कु कुत्सितः ईषद् वा ऊर्मिः वेगो यस्य, के जले ऊर्मिर्यस्येति वा। पृषोदरादित्वात् साधुः] जलजन्तुविशेषः; कच्छपः; कमठः; पञ्चनखः; गुह्यः; पञ्चगुप्तः; पीवरः; जलगुल्मः। 'यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः। इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता'—इति भगवद्गीता (२।५८)। परमेश्वरः; 'परमेश्वरेणेदं सकलं जगत्क्रियते तस्मात् तस्य कूर्म इति संज्ञा'—इति ऋग्वेदभाष्योपक्रमणिकायां दयानन्दः। प्रजापतेरवतारविशेषः; 'स यत् कूर्मो नाम एतद्वा रूपं कृत्वा प्रजापतिः प्रजाः असृजत् यदसृजताकरोत्तद् यदकरोत् तस्मात् कूर्मः कश्यपो वै कूर्मस्तस्मादाहुः सर्वाः प्रजाः काश्यप्य इति'—इति शतपथब्राह्मणे (१।५।१।५)। वायुविशेषः; 'उन्मीलने स्मृतः कूर्मो भिन्नाञ्जनसमप्रभः'—इति शारदातिलकटीका। मुद्राविशेषः; 'कूर्मपृष्ठसमं कुर्याद्दक्षपाणिं च सर्वतः। कूर्ममुद्रेयमाख्याता देवताध्यानकर्मणि'—इति तन्त्रसारः। आसनविशेषः; 'गुदं निरुध्य गुल्फाभ्यां व्युत्क्रमेण समाहितः। कूर्मासनं भवेदेतदिति योगविदो विदुः'—इति हठयोगदीपिकायाम्। समुद्रमन्थनकाले मन्दरपर्वतधारणार्थं कच्छपरूपभगवदवतारविशेषः; 'क्षीरोदमध्ये भगवान् कूर्मरूपी स्वयं हरिः'—इति पद्मपुराणे। 'विलोक्य विघ्नेशविधिं तदेश्वरो दुरन्तवीर्योऽवितथाभिसन्धिः। कृत्वा वपुः काच्छपमद्भुतं महत् प्रविश्य तोयं गिरिमुज्जहार'—इति भागवतम्। कश्यपपत्न्याः कद्र्वाः पुत्रेषु एकः; नागविशेषः 'शेषोऽनन्तो वासुकिश्च तक्षकश्च भुजङ्गमः।

कूर्मश्च कुलिकश्चैव काद्रवेयाः प्रकीर्त्तिताः'—इति महाभारते (१।६५।४१)। ६५६

कूलम् क्ली. [कूलति जलप्रवाहम् आवृणोतीति। कूल्+अच्] नद्याः जलसमीपस्थानं; रोधः; तीरः; तटं; प्रतीरं; तटः; तटी; रोधं; वेला। 'इत्यध्वनः कैश्चिदहोभिरन्ते कूलं समासाद्य कुशः सरय्वाः'—इति रघुवंशे (१६।३५)। [कूल्यते आव्रियतेऽसौ। कूल्+घञर्थे क] स्तूपः; सैन्यपृष्ठं; तडागः। ६६७

कूलदेशः पुं. [कूलस्य देशः] तीरप्रान्तदेशः। ६५४

कूलङ्कषा स्त्री. [कूलानि कषति, कूल+कष्+'सर्वकूलाभ्रे' ति खश्, मुम्, कूलङ्कष+टाप्] नदी; 'व्यपदेशमाविलयितुं समीहसे माञ्च नाम पातयितुम्। कूलङ्कषेव सिन्धुः प्रसन्नमोघं तटतरुञ्च'—इति शाकुन्तले ५ अङ्के। ६६५

कूवरः पुं.- स्त्री. [कु शब्दे+वरच्] युगन्धरः; यत्र रथस्य यूपकाष्ठमासज्यते सः। 'हेमचन्द्रमसम्बाधं वैदूर्यमणिकूवरम्'—इति रामायणे (३।१८।३०)। रथमित्यर्थः। विकृतपृष्ठः; 'कुबडा'—इति भाषा। ४४७

कूवरी स्त्री. [कूवर+गौरादित्वाद् ङीष्] कम्बलाच्छादितरथः। भुग्नपृष्ठवती स्त्री; कुब्जा। ४४४

कूष्माण्डः पुं. [कु ईषत् ऊष्मा अण्डेषु बीजेषु यस्य] कूष्माण्डकः; कर्कारुः; घृणावासः; तिमिषः; ग्राम्यकर्कटी; पुष्पफलः। गणदेवताविशेषः; कूष्माण्डाकारत्वात् शिवगणोऽपि तन्नाम्नाख्यायते; 'अन्ये च ये प्रेतपिशाचभूतकूष्माण्डयादोमृगपक्ष्यधीशाः' —इति भागवते (२।६।४२)। ऋषिविशेषः; 'कूष्माण्डो राजपुत्रश्चेत्यन्ते स्वाहा समन्वितैः'—इति याज्ञवल्क्यः। यजुर्मन्त्रविशेषः;-'कूष्माण्डैर्वापि जुहुयाद् घृतमग्नौ यथाविधि'—इति मनुः (८।१०६)। 'कूष्माण्डमन्त्राः 'यद्देवा देवहेलनमि' त्येवमादयः। तैर्मन्त्रदेवतायै घृतमग्नौ जुहुयात्'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। २०९

कृकलाशः पुं. [कृकं कण्ठं लासयति शोभायुक्तं करोति। कृक+लस्+णिच्+अच्। पृषोदरादित्वात् तालव्यशकारः] कृकलासः; सरटः। २३४

कृकलासः पुं. [कृकं कण्ठं लासयति शोभान्वितं करोति। कृक+लस्+णिच्, अच्] जन्तुविशेषः; सरटः; वेदारः; क्रकचपात्; तृणाञ्जनः; प्रतिसूर्यः; प्रतिसूर्यशयानकः; वृतिस्थः; कण्टकागारः; दुरारोहः; द्रुमाश्रयः; कृकूलासः; सूर्यवंशोद्भवो नृगनामको राजा ब्रह्मगोहरणेन कृकलासत्वं गतस्तद्विवरणं महाभारते (१३।७० अध्याये)। २३४

कृकवाकुः पुं. [कृकेन गलेन वक्ति। 'कृके वचः कश्च' इति कृकशब्द उपपदे वच् धातोः ञुण् कश्चान्तादेशः] कुक्कुटः; 'अनुनयमगृहीत्वा व्याजसुप्ता पराची रुतमथ कृकवाकोस्तारमाकर्ण्य कल्ये'—माघे (११।९)। मयूरः; सरटः। २४७

कृकाटिका स्त्री. [कृकंकण्ठम् अटति आप्नोति, कण्ठं व्याप्यास्तीति भावः। कृक+अट्+ण्वुल्, टाप् अत इत्वं च] घाटा; 'घांटी' इति भाषा। 'जत्रूर्ध्वं मर्माणि चतस्रो धमन्योऽष्टौ मातृका द्वे कृकाटिके'—इति सुश्रुते। 'जानुकूर्परसीमन्ताधिपतिगुल्फमणिबन्धकुकुन्दरावर्तकृकाटिकाश्चेति सन्धिमर्माणि।' ५२५

कृच्छ्रम् क्ली. [कृन्तति सुखम्। कृती छेदने, 'कृतेश्छः क्रू च' इति रक् छश्चान्तादेशः] कष्टम्; 'नदीकूलं यथा वृक्षो वृक्षं वा शकुनिर्यथा। तथा त्यजन्निमन्देहं कृच्छ्राद्ग्राहाद्विमुच्यते'—इति मनुः (६।७८)। 'सितोपला वा समयावशूका कृच्छ्रेषु सर्वेष्वपि भेषजं स्यात्। रेतोविघातप्रभवे तु कृच्छ्रे समीक्ष्य दोषं प्रतिकर्म कुर्यात्'—इति चरके चिकित्सास्थाने २६ अध्याये। तद्वति त्रि. [कृन्तत्यनेन पापमिति] सान्तपनादिव्रतम्; 'गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम्। जग्ध्वा परेऽह्न्युपवसेत् कृच्छ्रं सान्तपनं चरन्'—इति स्मृतौ। व्रते पुँल्लिङ्गोऽप्ययम्। पापं; मूत्रकृच्छ्ररोगः; व्यसनम्; 'अनृतं नोक्तपूर्वं मे चिरं कृच्छ्रेऽपि तिष्ठता। धर्मलोपपरीतेन न च वक्ष्ये कथञ्चन'—इति रामयणे (४।१४।१४)। ८२६

कृतम् क्ली. [क्रियते सत्यमेवानुष्ठीयतेऽस्मिन्, यद्वा क्रियते सत्ये स्थाप्यते लोको यत्र। कृ+क्त] पर्याप्तम्; अलमर्थः; 'अथवा कृतं सन्देहेन'—इति शाकुन्तले १ अङ्के। सत्ययुगम्; 'कृतत्रेतादिसर्गेण युगाख्यां ह्येकसप्ततिः'—इति विष्णुपुराणे (२।१।४३)। फलम्; पुं. वसुदेवस्य रोहिण्यां जातः पुत्रविशेषः; 'बलं गदं सारणं च दुर्मदं विमलं ध्रुवम्। वसुदेवस्तु रोहिण्यां कृतादीनुदयादयत्'—इति भागवते (९।२४।४६)। ७८९

कृतकर्मा [न्] त्रि. [कृतं कर्म येन सः] कार्यक्षमः; प्रवीणः; शिक्षितः; निष्णातः; निपुणः; दक्षः; कृतहस्तः; कृतमुखः; कुशलः; चतुरः; अभिज्ञः; विज्ञः; वैज्ञानिकः; पटुः; छेकः; विदग्धः; कृती; 'अथवाप्यहमेवैनं हनिष्यामि वृकोदर। कृतकर्मा परिश्रान्तः साधु तावदुपारम'—इति महाभारते (१।१५५।२९)। पुं. विष्णुः; 'इन्द्रकर्मा महाकर्मा कृतकर्मा कृतागमः' —इति महाभारते (१३।१४९।९७) । ३३५ ।

कृतपुङ्खः त्रि. [कृतः अभ्यस्तः पुङ्खः पुङ्खयुक्तो बाणो येन] बाणशिक्षाविचक्षणः; कृतहस्तः; सुप्रयोगविशिखः । ४७१

कृतमालः पुं. [कृता माला अस्य। मालावदुत्पन्नप्रसूनत्वादस्य तथात्वम्] आरग्वधवृक्षः; कर्णिकारवृक्षः, स तु लघ्वारग्वधः; 'आरेवतो राजवृक्षः प्रग्रहश्च तुरङ्गुलः। आरग्वधोऽथ शम्पाकः कृतमालः सुवर्णकः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। 'आरग्वधो राजवृक्षः सम्पाकश्चतुरङ्गुलः। प्रग्रहः कृतमालश्च कर्णिकारोऽश्वघातकः'—इति चरके कल्पस्थानेऽष्टमेऽध्याये। १९८

कृतमुखः त्रि. [कृतं संस्कृतं मुखं यस्य] कृतकर्मा; कृती। ३३५

कृतहस्तः त्रि. [कृतः अभ्यस्तः हस्तः बाणादिनिक्षेपलाघवरूपा शिक्षा येन सः] कृतपुङ्खः; सुशिक्षितशरमोक्षयोधादिः; 'अप्राप्तांश्चैव तान् पार्थश्चिच्छेद कृतहस्तवत्'—इति महाभारते (४।५६।२०) । ३३५

कृतान्तः पुं. [कृतः अन्तः नाशः शास्त्रनिर्णयः विपर्ययो वा येन। यथायथं व्युत्पत्तिर्दर्शनीया] सिद्धान्तः; 'पञ्चेमानि महाबाहो कारणानि निबोध मे। साङ्ख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम्'—इति भगवद्गीतायाम् (१४।१३) । यमः (७१); 'ऐश्वर्ये वा सुविस्तीर्णे व्यसने वा सुदारुणे। रज्ज्वेव पुरुषो बध्वा कृतान्तेनोपनीयते'—इति रामायणे (५।३५।३)। दैवं; पूर्वदेहकृतं फलोन्मुखीभूतं शुभाशुभकर्म; अकुशलकर्म; शनिवारः; 'कृतान्तकुजयोवरि यस्य जन्मदिनं भवेत्' —इति तिथितत्त्वे। यमदैवत्यभरणीनक्षत्रम्। तेन द्वित्वसङ्ख्या। १०

कृताभिषेका स्त्री. [कृतः राज्ञा सह अभिषेकः यस्याः] महिषी; पट्टराज्ञी। ४८०

कृती [न्] त्रि. [कृतं कर्म प्रशस्तमस्यास्तीति। अत इनि] निपुणः; पण्डितः; साधुः; पुण्यवान्; कृतक्रियः; 'गृहाण शस्त्रं यदि सर्ग एष ते नखल्वनिर्जित्य रघुं कृती भवान्'—इति रघुवंशे (३।५१) । ३३३

कृत्तिः स्त्री. [कृत्यते इति, कृत्+कर्मणि क्तिन्] त्वक्; कृष्णसारादिचर्म; 'पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानम्'—इति महादेवध्याने। भूर्जः; कृत्तिकानक्षत्रम्। ६३०

कृत्तिकाः स्त्री. [कृन्तन्ति उग्रत्वात्। कृत्+'कृतिभिदिलतिभ्यः कित्' इति तिकन् किच्च](एकत्वे) अश्विन्यादिसप्तविंशत्यन्तर्गततृतीयनक्षत्रम्; बहुला; अग्निदेवा; कृत्तिः। 'क्षुधाधिकः सत्यधनैर्विहीनो वृथाटनोत्पन्नमतिः कृतघ्नः। कठोरवाक् चाहितकर्मकृत् स्यात् चेत्कृत्तिकायां मनुजः प्रसूतः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। ५०

कृत्तिवासाः [स्] पुं. [कृत्तिर्गजासुरस्य चर्म वासोऽस्य] शिवः; शङ्करः। [कृत्तिवासः—इत्यकारान्तपक्षे कृत्तिं वसते इति, वस् आच्छादने, 'कर्मण्यण्'।] १२

कृत्स्नम् क्ली. [कृत्+क्स्नप्रत्ययः] सर्वम्; 'तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा। अपश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा'—इति भगवद्गीतायाम् (११।१३) । कुक्षिः; जलम्। ७१३

कृपणः त्रि. [कल्पते स्वल्पमपि दातुम्, कृप्+बाहुलकात् क्युन्, अत एव न लत्वम्] अदाता; कदर्यः; किम्पचानः; मितम्पचः; क्षुद्रः; किम्पचः; अनमितम्पचः; मन्दः; कीकटः; कुमुत्; कीनाशः; 'दाता लघुरपि सेव्यो भवति न कृपणो महानपि समृद्ध्या। कूपोऽन्तः स्वादुजलः प्रीत्यै लोकस्य न समुद्रः'—इति पञ्चतन्त्रे (२।७५)। 'दातारं कृपणं मन्ये मृतोऽप्यर्थं न मुञ्चति' —इति व्यासः। दीनः; 'ततः स पुरुषव्याघ्रस्तद्वनं सहलक्ष्मणः। द्विजेभ्यो बालवृद्धेभ्यः कृपणेभ्यो ह्यदापयत्।' पारिभाषिक कृपणानाह—महाव्यसनप्राप्तो दीनः; 'आदितः कृशवृत्तिर्यः कृपणो न स राघव! महात्मा व्यसनं प्राप्तो दीनः कृपण उच्यते'—इति रामायणे (४।२१।१९)। यो हि अक्षरं ब्रह्म अविज्ञाय लोकान्तरगामी भवति सः—'यो वा एतदक्षरमविदित्वा गार्ग्यस्माल्लोकात् प्रैति स कृपणः'—इति बृहदारण्यके याज्ञवल्क्यः। दुहिता हि कृपापात्रत्वात् कृपणा;

'भ्राता ज्येष्ठः समः पित्रा भार्या पुत्रः स्वका तनुः। छाया स्वो दासवर्गश्च दुहिता कृपणं परम्'—इति मनुः (४।१८५)। कुत्सितः; पुं. कृमिः। ३४७

कृपा स्त्री. [क्रपेः सम्प्रसारणञ्चेति भिदादिपाठादङ टाप् च] करुणा; दया; 'उवाच भीमं कल्याणी कृपान्वितमिदं वचः'—इति महाभारते। ७२४

कृपाणः पुं. [कृपां नुदति प्रेरयति दूरीकरोतीत्यर्थः। कृपा+नुद् प्रेरणे+'अन्येभ्योऽपीति' ड, पूर्वपदादिति णत्वम्] खड्गः; कृपाणकः; 'जघान दैत्यमतिरक्तलोचना कृपाणपाशाङ्कुशशूलपट्टिशैः'—इति कालिकापुराणे। ४७२

कृपाणी स्त्री. [कृपाण+गौरादित्वाद् ङीष्] कर्तरी; छुरिका; कृपाणिका। ५९५

कृपीटम् क्ली. [कृप+'कृतृकृपिभ्यः कीटन्' इति कीटन्, बाहुलकात् लत्वाभावः] उदरं; जलं; विपिनम्; इन्धनम्। ८२७

कृपीटयोनिः पुं. [कृपीटस्य जलस्य योनिः कारणम्, 'वायोरग्निरग्नेरापः'—इति श्रुतौ। यद्वा कृपीटं काष्ठं योनिरुत्पत्तिस्थानं यस्य] अग्निः; वह्निः। ६३

कृमिः पुं. [क्रामतीति, क्रमु पादविक्षेपे+'क्रमितमिशतिस्तम्भामत इच्च' इति इन् 'भ्रमेः सम्प्रसारणञ्च' इति अनुवृत्तेः सम्प्रसारणं च] कीटः; नीलाङ्गः; नीलाङ्गुः; क्रिमिः; पुण्ड्रः। (८२३) लाक्षा; कृमिलः; खरः; उदरजातकीटरोगः। 'बदरीकारवीमूलं गुडाज्येन समन्वितम्। अग्निना साधितं जग्ध्वा कृमीन्सर्वान् हरेच्छिव'—इति गारुडे १९४ अध्यायः। 'क्षीराणि मांसानि घृतानि चैव दधीनि शाकानि च पर्ववन्ति। समासतोऽम्लान् मधुरान् हिमांश्च कृमीन् जिघांसुः परिवर्जयेत्तु'—इति सुश्रुते उत्तरतन्त्रे ५४ अध्यायः। ६३६

कृशः त्रि. [कृश् धातोः क्त प्रत्यये 'अनुपसर्गात्फुल्लक्षीवेति' निपातनात् साधुः] सूक्ष्मः; क्षीणः; 'व्यायाममतिसौहित्यं क्षुत्पिपासामयौषधम्। कृशो न सहते तद्वदतिशीतोष्णमैथुनम्।' 'प्लीहा कासः क्षयः श्वासो गुल्मार्शांस्युदराणि च। कृशं प्रायोऽभिधावन्ति रोगाश्च ग्रहणीमुखाः'—इति चरके सूत्रस्थाने २१ अध्याये। अल्पः; आकाशेशाश्च विज्ञेया बालवृद्धकृशातुराः'—इति मनुः (४।१८४)। अक्षमः; 'क्षत्रियं चैव सर्पं च ब्राह्मणं वा बहुश्रुतम्। नावमन्येत वै भूष्णुः कृशानपि कदाचन'—इति मनुः (४।१३५)। पुं. विष्णुः (सर्वाकारवत्वात्); 'अणुर्बृहत्कृशः स्थूलो गुणभृन्निर्गुणो महान्'—इति महाभारते (१३।१४९।१०३)। मुनिपुत्रविशेषः; स तु परीक्षिच्छापप्रदातुः शृङ्गिणः सखा; 'स तं कृशमभिप्रेक्ष्य सूनृतां वाचमुत्सृजन्। अपृच्छत्तं कथं तातः स मेऽद्य मृतधारकः'—महाभारते (१।४१।२)। ऐरावतकुलोत्पन्नो नागविशेषः; 'पारावतः पारिजातः पाण्डरो हरिणः कृशः। ऐरावतकुलादेते प्रविष्टा हव्यवाहनम्'—इति महाभारते आस्तीकपर्वणि (५७।११)। ७१७

कृशानुः पुं. [कृश्यति तनूकरोति तृणकाष्ठादिवस्तुजातमिति। 'ऋतन्यञ्जीति' आनुक् प्रत्ययः] अग्निः; 'प्रदक्षिणप्रक्रमणात् कृशानोरुदर्चिषस्तन्मिथुनं चकाशे' —इति रघुवंशे (७।२४)। चित्रकवृक्षः। [पृषोदरादित्वात् षत्वे कृषाणुः इत्यपि]। ६२

कृशाश्वी [न्] पुं. [कृशाश्वेन धुन्धुमारवंश्यनृपविशेषेण प्रोक्तं नाट्यसूत्रादिकम् अधीते वेत्ति वा। 'कर्मन्द कृशाश्वादिनिः'—इति इनि] नटः। ५९२

कृषकः त्रि. [कृषति भूमिं यः, 'कृषेर्वृद्धिश्चोदीचाम्' इति क्वुन्] कृषिजीवी; कर्षकः; पुं. [कृषति भूमिमनेन इति करणे क्वुन्] फालः; वृषः। ५७४

कृषिकः पुं. [कृषत्यनेन, 'वृश्चिकृष्योः किकन्' इति किकन्] कृषिजीवी; कर्षकः; फालः। ५७४

कृषीवलः त्रि. [कृषिरस्यस्ति वृत्तित्वेन इति। 'रजःकृष्यासुतिपरिषदो वलच्' इति वलच्, 'वले' इति दीर्घः] कर्षकः; कृषिजीवी; 'कच्चिन्न चौरैर्लुब्धैर्वा कुमारैः स्त्रीबलेन वा। त्वया च पीड्यते राष्ट्रं कच्चित्तुष्टाः कृषीवलाः'—इति महाभारते (२।५।७७)। काकजङ्घावृक्षः। ५७४

कृष्टिः पुं. [कृषत्यन्तर्भूतं विद्यालोचनाभ्यासादिभिरसौ। कृष्+कर्तरि क्तिच्, बाहुलकात् ति वा] पण्डितः; यथा ऋग्वेदे (६।१८।२) 'बृहद्रेणुश्च्यवनो मानुषीणामेकः कृष्टीनामभवत् सहावा।' स्त्री. कर्षणे [कृष्+भावे क्तिन्] आकर्षणं; जनमात्रम्; 'विश्वा नमन्त कृष्टयः'—इति ऋग्वेदे (८।६।४)। 'कृष्टयः प्रजाः'—इति भाष्यम्। ३३३

कृष्णः पुं. [कर्षत्यरीन् महाप्रभावशक्त्या । यद्वा कर्षति आत्मसात् करोति आनन्दत्वेन परिणमयति भक्तानां मनः इति यावत् । 'कृषेर्वर्णे' इति बाहुलकात् वर्णं विनापि नक् णत्वं च । यद्वा कर्षति सर्वान् स्वकुक्षौ प्रलयकाले—'कर्षणात् कृष्णो रमणाद् रामो व्यापनाद् विष्णुः' इति श्रुतेस्तथात्वम्] भगवदवतारविशेषः—'कृषिर्भूवाचकः शब्दो णश्चनिर्वृ ति वाचकः । कृष्णस्तद्भावयोगाच्च कृष्णो भवति सात्वतः'—इति महाभारते (५।७०।५)। 'उच्चस्थाः शशिभौमचान्द्रिशनयो लग्नं वृषो लाभगो जीवः सिंहतुलालिषु क्रमवशात् पूषोशनोराहवः । नैशीथः समयोऽष्टमी बुधदिनं ब्रह्मर्क्षमत्रक्षणे श्रीकृष्णाभिधमम्बुजेक्षणमभूदाविः परं ब्रह्म तत् ।'—इति खमाणिक्ये ज्योतिर्ग्रन्थे । 'अथ भाद्रपदे मासि कृष्णाष्टम्यां कलौ युगे । अष्टाविंशतिमे जातः कृष्णोऽसौ देवकीसुतः'—इति ब्रह्मपुराणे । व्यासः; 'यो व्यस्य वेदांश्चतुरस्तपसा भगवानृषिः । लोके व्यासत्वमापेदे कार्ष्ण्यात् कृष्णत्वमेव च ।'—इति महाभारते (१।१०५।१४)। शिवः; 'दीर्घश्च हरिकेशश्च सुतीर्थः कृष्ण एव च'—इति महाभारते (१।१०५।१४) । अर्जुनः; (अयं तु तृतीयपाण्डवः; अस्य दशनामस्वन्यतमं नाम) 'कृष्णावदातस्य सदा प्रियत्वाद् बालकस्य वै । कृष्ण इत्येव दशमं नाम चक्रे पिता मम' —इति महाभारते (३।४२।२२) । [कृष्णो वर्णोऽस्यास्तीति मतुबन्ताद् 'गुणवचनेभ्यो मतुपो लुगिति' लुक्] कोकिलः; काकः; [कर्षति पापानि शरणागतानाम्, बाहुलकात् कृषेर्नक् वर्ण विनापि णत्वं च] परब्रह्म; 'कृष्णेति मङ्गलं नाम यस्य वाचि प्रवर्तते । भस्मीभवन्ति राजेन्द्र ! महापातककोटयः'—इति पौराणिकी गाथायाम् । चन्द्रह्रासकरप्रथमादिपञ्चदशकलाक्रियारूपः; प्रतिपदादिदर्शान्तात्मकपञ्चदशतिथ्यात्मकः कालभेदोऽर्द्धमासः; 'चन्द्रवृद्धिकरः शुक्लःकृष्णश्चन्द्रक्षयात्मकः'—इति तिथितत्त्वे । कृष्णापक्षाभिमानिदेवताविशेषः; 'धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम्'—इति भगवद्गीतायाम् । कृष्णसारमृगः; 'धनुश्च सशरं दृष्ट्वा तथा कृष्णजिनानि च'—इति महाभारते (१।१३०।१५) । अशुभकर्म; वेदोक्तसुरविशेषः; ऋषिविशेषः; अथर्ववेदान्तर्गतोपनिषद्विशेषः; 'गोपालतापनकृष्णहयग्रीवदत्तात्रेयगारुडानामथर्ववेदगतानामेकत्रिंशत्सङ्ख्यकानाम् उपनिषदां भद्रं कर्णेभिरिति शान्तिः ।'—इति मुक्तिकोपनिषदि । करमर्दकः; कृष्णपाकफलः । (७३४) वर्णविशेषः; कालवर्णः; नीलः; असितः; श्यामः; कालः; श्यामलः; मेचकः; बहुलः; रामः; शितिः; तद्वति त्रि. । २१

कृष्णकाकः पुं.— द्रोणकाकः । २४६

कृष्णपाण्डुरः त्रि.— कल्माषः । ७३६

कृष्णभूमः पुं. [कृष्णा कृष्णवर्णा भूमिर्मृतिका यत्र देशे, समासे अच्] कृष्णवर्णमृत्तिकायुक्तो देशः; कृष्णमृत्तिकः । १६०

कृष्णमृत्तिकः पुं. [कृष्णा मृत्तिका भूमिर्यत्र] कृष्णभूमः । १६०

कृष्णमृत्तिका स्त्री. [कृष्णा काली मृत्तिका भूमिः] कालमृत्तिका; श्लक्ष्णभूमिः । १६०

कृष्णला स्त्री. [कृष्णल+टाप्] गुञ्जा; 'साङ्गुष्ठा कृष्णला गुञ्जा रक्तिका काकणन्तिका । काकादनी काकतिक्ता कागकजङ्घा शिखण्डनी'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । २०३

कृष्णवक्त्रः पुं. [कृष्णं कृष्णवर्णं वक्त्रं मुखं यस्य] वानरः; कृष्णवानरः; कालवानरः; गोलाङ्गूलः; गौरास्यः; कपिः; कृष्णमुखः । २३२

कृष्णवर्णः त्रि.— कालवर्णः । ४३७

कृष्णवर्णोऽश्वः पुं— कालहयः । ४३७

कृष्णवर्त्मा [न्] पुं. [कृष्णं कृष्णवर्णं वर्त्म यस्य, वायुप्रसारितधूमपथाभ्यन्तर एव गतिरस्येति भावः] अग्निः; वह्निः; 'हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते' —इति महाभारते (१।८५।१२) । चित्रकवृक्षः; [कृष्णम् अपवित्रं कर्म आचरणं यस्य] दुराचारः; राहुः; [कृष्णः वासुदेवः परब्रह्म इत्यर्थः वर्त्म गतिर्यस्य] ब्रह्मनिष्ठपुरुषः । ६३

कृष्णशारः पुं. [कृष्णः शारः शबलश्च] कृष्णसारमृगः; 'काला हिरन' इति भाषा । २३०

कृष्णसारः पुं. [कृष्णश्चासौ सारः शबलश्चेति] हरिणभेदः; कृष्णसारङ्गः; कृष्णवर्णमृगः । 'कृष्णसारस्तु चरति मृगो यत्र स्वभावतः । स ज्ञेयो यज्ञियो देशो म्लेच्छदेशस्ततः परः'—इति मनुः (२।२३) । स्नुहीवृक्षः; शिंशपावृक्षः; खदिरवृक्षः । २३०

कृष्णा स्त्री. [कृषनंक् णत्वं ततः टाप्] अग्नेः सप्त-जिह्वाभेदः। ६८

कृष्णा स्त्री. [कृषेनंक् णत्वं ततः टाप्] पिप्पली; 'पिप्पली चपला शौण्डी वैदेही मागधी कणा। कृष्णोप-कुल्या मगधी कोला स्यात्तिक्ततण्डुला'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। द्रौपदी; पञ्चपाण्डवमहिषी; (कृष्णवर्णत्वादेव अस्या नाम तथा) 'कृष्णेत्येवाब्रुवन् कृष्णां कृष्णाभूत् सा हि वर्णतः। तथा तन्मिथुनं जज्ञे द्रुपदस्य महामखे'—इति महाभारते (१।१६८। ४४)। नीलीवृक्षः; द्राक्षा; नीलपुनर्नवा; कृष्णजीरकः; गम्भारी; कटुका; सारिवाविशेषः; राजसर्षपः; पर्पटी काकोली; सोमराजी; द्वादशप्रकाराणां जलौकसां मध्ये सविषप्रकारीयजलौकोविशेषः; 'तास्वञ्जनचूर्ण-वर्णा पृथुशिराः कृष्णा'—इति सुश्रुते सूत्रस्थाने १३ अध्याये। नदीविशेषः; दुर्गा। ६१४

क्लृप्तिकः त्रि. [क्लृप्तं मल्यदानेन सत्त्वं देयत्वेनास्ति अस्य। क्लृप्त+ठन्] क्रीतः। ५७३

केका स्त्री. [के मूर्ध्नि कायति शब्दायते, के+कै+क, टाप्, अलुक्समासः। यद्वा 'अन्येभ्योऽपीति' कर्मणि ड, 'हलदन्तात् सप्तम्याः संज्ञायाम्' इत्यलुक्] मयूर-वाणी; 'षड्जसंवादिनीः केका द्विधा भिन्नाः शिखण्डि-भिः'—इति रघुवंशे (१।३९)। २४२

केकी [न्] पुं. [केका ध्वनिभेदः अस्यास्तीति। 'व्रीह्यादिभ्यश्चेति' इनि] मयूरः; 'केकी केकां परित्यज्य मौनं तिष्ठति तद्भयात्। चकोरश्चन्द्रिकाभोक्ता नक्त-व्रतमिवास्थितः'—इति काशीखण्डे (३।७१)। २४१

केणिका स्त्री. [के शिरसि कुत्सितो वा अणकः, ततः टाप्, अत इत्वम्। स्त्रीत्वं लौकिकम्] पटकुटी; वस्त्र-गृहं; 'कनात्' इति भाषा। ४५१

केतनम् क्ली. [कित् निवासाद्यर्थेषु+कर्मभावकरणा-धिकरणादिषु यथायथं ल्युट्] ध्वजः; 'अपतुषारतया विशदप्रभैः सुरतसङ्गपरिश्रमनोदिभिः। कुसुमचापम-तेजयदंशुभिर्हिमकरो मकरोर्जितकेतनम्'—इति रघुवंशे (९।३९)। कार्यं; चिह्नं; निमन्त्रणम्: 'प्रतिगृह्य द्विजो विद्वान् एकोद्दिष्टस्य केतनम्। त्र्यहं न कीर्तयेद् ब्रह्म राज्ञो राहोश्च सूतके'—इति मनुः (४।११०)। गृहम्; 'स त्वं धर्मपरो भूत्वा कश्यपाय वसुन्धराम्। दत्त्वा वनमुपागम्य महेन्द्रकृतकेतनः'—इति रामायणे (१।७४।८)। स्थानम्; 'एतद्ब्राह्मासनं सर्वभूभृत्संश्रय-केतनम्'—इति विष्णुपुराणे (१।१।१९)। ४५८

केतुः पुं. [चायते दूराद् ज्ञायते, चाय्+'चायः किः' इति तुप्रत्ययः कयादेशश्च] रश्मिः; किरणः; 'उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम्' (४९)। नवग्रहान्तर्गतग्रहविशेषः; राहोः शरीरं; शिखी; 'अर्द्धोनेन्द्वर्कसौराराः पापाः सौम्यास्तथापरे। पापयुक्तो बुधः पापो राहुकेतू च पापदौ।' ३९

केतुः पुं.— पताका; 'सशोणितैस्तेन शिलीमुखाग्रैः निक्षे-पिताः केतुषु पार्थिवानाम्'—इति रघुवंशे (७।६५)। रोगः; दीप्तिः; उत्पातः, 'उल्कानिर्घातकेतूंश्च ज्योतीं-ष्युच्चावचानि च'—इति मनुः (१।३८)। चिह्नम्; 'तमार्यगृह्यं निगृहीतधेनुर्मनुष्यवाचा मनुवंशकेतुम्। विस्माययन् विस्मितमात्मवृत्तौ सिंहोरुसत्त्वं निजगाद सिंहः'—इति रघुवंशे (२।३३)। सूर्यः 'प्रकेतुना बृहता यात्यग्निः'—इति ऋग्वेदे (१०।८।१)। 'प्रारोचयन् मनवे केतुमह्नाम्'—इति ऋग्वेदे (३।३४।४)। ४९८

केदारः पुं. [कै जले दार आदरो यस्य, यद्वा केन जलेन द्रियते विदीर्यते। कर्मणि घञ्, निपातनाद् एत्वम्] क्षेत्रम्; 'क्यारी' इति भाषा। 'भूमावप्येककेदारे कालो-प्तानि कृषीवलैः। नानारूपाणि जायन्ते बीजानीह स्वभावतः'—इति मनुः (९।३८)। क्षेत्रस्थक्षुद्र-जलाधारविशेषः; 'वृषः पिबति केदारे निश्वासा-कुलितं पयः'—इति रामायणे (३।२२।१८)। [के मस्तके शिखरदेशे द्वारः प्रस्रवणादिकारणस्वरूपविदीर्ण-स्थानम् अस्य] पर्वतविशेषः; [के मस्तके शिरः-स्थितजटाभ्यन्तरे गङ्गारूपिणी दाराः पत्नी यस्य। सर्वत्र निपातनात् एत्वम्] शिवः; भूमिभेदः; आलवालं; भ्रूमध्यस्थानविशेषः; 'कालपाशमहाबन्धविमोचन-विचक्षणः। त्रिवेणीसङ्गमं धत्ते केदारं प्रापयेन्मनः' —इति हठयोगदीपिका (३।२४)। 'केदारभ्रुवोर्मध्ये शिवस्थानं केदारशब्दवाच्यं तं मनः स्वान्तं प्रापयेत्' —इति तट्टीका। तीर्थविशेषः; 'केदारे चैव राजेन्द्र, ! कपिलस्य महात्मनः। ब्रह्माणमधिगत्वा च शुचिः प्रयतमानसः। सर्वपापविशुद्धात्मात्र ह्यलोकं प्रपद्यते' —इति महाभारते (३।८३।६६) केदारनामकशिव-

लिङ्गभेदः; 'नमस्ते देवदेवेश! प्रणमत्करुणानिधे! । वद केदारमाहात्म्यं भक्तानामनुकम्पया। तस्मिन् लिङ्गे सदा प्रीतिस्तव कास्यामनुत्तमा। तद्भक्ताश्च जना नित्यं देवदेव! महाधियः'—इति काशीखण्डे ७७ अध्याये। ५७४

केयूरम् क्ली.– पुं. [के बाहुशिरसि भूषणतां याति। या प्रापणे+ऊर, अलुक्समासः] अलङ्कारविशेषः; अङ्गदं; बाहुमूलविभूषणम्; 'पादानां भूषणानां च केयूराणां च सर्वशः। राशयश्चात्र दृश्यन्ते भीष्मभीम-समागमे'—इति महाभारते (६।६७।२१)। पुं. रतिबन्धविशेषः; 'स्त्रीजङ्घे चैव सम्पीड्य दोर्भ्या-मालिङ्ग्य सुन्दरीम्। कारयेत् स्थापनं कामी बन्धः केयूरसंज्ञकः'–इति स्मरदीपिका। 'स्त्रीणां जङ्घान्तरा-विष्टो गाढमालिङ्ग्य सुन्दरीम्। कामयेद्विपुलं कामी बन्धः केयूरसंज्ञकः'—इति रतिमञ्जरी। ५५७

केलिः पुं.– स्त्री. [केल्+इन्] परीहासः; द्रवः; क्रीडा; नर्म; लीला। नायिकालङ्कारविशेषः; 'विहारे सह कान्तेन क्रीडितं केलिरुच्यते'—इति साहित्यदर्पणे। 'मालत्याः कुसुमेषु येन सततं केलिः कृता हेलया'—इति भ्रमराष्टके (४)। स्त्री. [केलति सदा गच्छतीति, 'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्] पृथिवी। ४३२

केलिकिलः पुं. [केलिना लीलया किलतीति। किल् क्रीडायाम्+क] नाट्ये नायकवयस्यः; विदूषकः; वासन्तिकः; वैहासिकः; प्रहासी; प्रीतिदः; कूष्मा-ण्डकः; शिवस्यानुचरविशेषः; [केलिना परीहासेन किलतीति विग्रहे वाच्यलिङ्गः] 'स तु केलिकिलो विप्रो भेदशीलश्च नारदः'—इति हरिवंशे। ४३२

केवली [न्] पुं. [केवलं शुद्धं ज्ञानमस्यास्तीति। इनि] जैनविशेषः; स्त्री. [केवल+ङीष्] ज्ञानभेदः; ग्रन्थ-विशेषः। ८६

केशः पुं. [के मस्तके शेते। शी+अच्। अलुक्समासः] चिकुरः; कुन्तलः; बालः; कचः; शिरोरुहः; शिरसिजः; मूर्द्धजः; अस्रः; वृजिनः; 'वटावरोहकेशिन्योश्चूर्ण-नादित्यपाचितम्। गुडूचीस्वरसेतैलमभ्यङ्गात्केश-रोहणम्।' तत्समूहार्थवाचकः; 'बालाः स्युस्तत्पराः पाशो रचनाभार उच्चयः। हस्तः पक्षः कलापश्च केशभूयस्त्ववाचकाः'—इति हेमचन्द्रः। [कस्य जलस्य ईशः] वरुणः; ह्रीवेरम्; 'बालं ह्रीवेरवर्हिष्ठोदीच्यं केशोऽम्बुनाम च'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। दैत्य-विशेषः; [कस्य ब्रह्मणोऽपि ईशः। के जले शेते वा] विष्णुः; [काशते प्रकाशते लोके, लोकं काशयति वा। काश्+अच्, पृषोदरादित्वाद् एत्वे साधुः] सूर्याग्नि-प्रभृतिरश्मिः; परब्रह्मशक्तिः; 'ब्रह्म-विष्णु-रुद्र-संज्ञाः शक्तयः केशसंज्ञिताः'—इति भागवते। ब्रह्मा; 'केशो योनौ तथा भावे हावलावण्ययोरपि। लम्पटे पुरुषे चैव प्रमदाया विशेषतः।' 'प्रजापतौ कचे चैव केशशब्दः प्रकीर्त्यते'—इति महाभारतटीकाकृन्नीलकण्ठः। ५३०

केशघ्नम् क्ली. [केशं हन्ति नाशयतीति। हन्+टक्] इन्द्रलुप्तकं, केशरोगः। ६०५

केशपक्षः पुं. [केशानां पक्षः समूहः, बाहुलकात् पक्षा-देशो वा] केशपाशः; केशकलापः; केशसमूहः; 'उत्तरं तु प्रधावन्तमनुद्रुत्य धनञ्जयः। गत्वा शतपदं तूर्णं केशपक्षे परामृशत्'—इति महाभारते (४।३६।४१)। ५३१

केशपाशः पुं. [केशानां पाशः समूहः] केशसमूहः; 'पाशः पक्षश्च हस्तश्च कलापार्थाः कचात् परे'—इत्यमरः। 'तं केशपाशं प्रसमीक्ष्य कुर्युः बालप्रियत्वं शिथिलं चमर्यः—इति कुमारसम्भवे (१।४८)। ५३१

केशमार्जकम् क्ली. [केशान् मार्ष्टि, केश+मृजूष् शुद्धौ+कर्तरि ण्वुल्] कङ्कतिका; 'कंघी' इति भाषा। ३११

केशमार्जनम् क्ली. [केशा मृज्यन्तेऽनेन। केश+मृज्+करणे ल्युट्, वृद्धिश्च] कङ्कतिका; [भावे ल्युट्] केशशोधनक्रियामात्रं; केशशुद्धिः। ३११

केशरः पुं. [केश इव केशाकृतिपदार्थः अस्यास्तीति, मत्वर्थीयो र] नागकेशरवृक्षः; 'मदनमहीपतिकनक-दण्डरुचिकेशरकुसुमविकाशे' — इति गीतगोविन्दे (१।३१)। बकुलवृक्षः; 'स्रस्तां नितम्बादवलम्बमाना पुनः पुनः केशरदामकाञ्चीम्'—इति कुमारसम्भवे (३।५५)।। पुन्नागवृक्षः; 'पलाशैस्तिलकैश्चूतैश्चम्पकैः पारिभद्रकैः। कर्णिकारैरशोकैश्च केशरैरतिमुक्तकैः'—इति महाभारते (१।१२५।३)। सिंहजटा; 'मृगपतिरिव स्कन्धावलम्बितकेशरमालः'—इति कादम्बर्याम्। हिङ्गु-वृक्षः; नीपः; 'नीपं दृष्ट्वा हरितकपिशं केशरैरर्द्धरूढैः'—इति मेघदूते (२२)। २०६

केशरी [न्] पुं. [केशराः सन्त्यस्य इति, इनि] सिंहः; 'स पाटलायां गवि तस्थिवासं धनुर्धरः केशरिणं ददर्श'—इति रघुवंशे (२।२९) । घोटकः; पुन्नागवृक्षः; नागकेशरवृक्षः; बीजपूरकवृक्षः । २१४

केशवः पुं. [कः ब्रह्मा, ईशः रुद्रः तौ आत्मनि स्वरूपे वयति, प्रलये उपाधिरूपमूर्तित्रयं मुक्त्वा एकमात्रपरमात्मस्वरूपेणावतिष्ठते इति । यथा भागवते (२।९।३३) चतुःश्लोक्याम् । तथा केशं केशिनं वाति हन्ति, केश+वा+क । यथा हरिवंशे (८०।६६) 'यस्मात्त्वया हतः केशी तस्मान्मच्छासनं शृणु । केशवो नाम नाम्ना त्वं ख्यातो लोके भविष्यति ।' यद्वा के जले शववत् भातीति । प्रलयकाले क्षीरोदशायितया तथात्वम् । कश्च अश्च ईश्च ते केशाः ब्रह्मविष्णुरुद्राः नियम्यतया सन्त्यस्य । यद्वा कश्च ईशश्च तौ केशौ पुत्रपौत्रत्वेन भवतोऽस्य । 'केशाद्वोऽन्यतरस्याम् ।' इति व प्रत्ययः । अथवा वाति गच्छति तद्वत्तया, वा+क । स्वरूपतस्तेषां भेदाभावादपि वासुदेवे सर्वात्मनि परमेश्वरेऽस्य वृत्तिः । यथा—'नरसिंहवपुः श्रीमान् केशवः पुरुषोत्तमः ।'—इति विष्णुसंहितायाम् । अभिरूपाः केशाः यस्य सः केशवः । कश्च अश्च ईशश्च केशास्त्रिमूर्तयस्ते वशे वर्तन्ते यस्य सः । केशिदानवहननाद्वा केशवः । यथा—'यस्मात्त्वयैव दुष्टात्मा हतः केशी जनार्दन ! । तस्मात्केशवनाम्ना त्वं लोके ज्ञेयो भविष्यति ।' केशसंज्ञिताः सूर्यादिसङ्क्रान्ता अंशवः तद्वत्त्वेन केशवो वा । 'अंशवो ये प्रकाशन्ते मम ते केशसंज्ञिताः । सर्वज्ञाः केशवं तस्मात्प्राहुर्मां द्विजसत्तमाः ॥'—इति महाभारते । 'त्रयः केशिनः' इति श्रुतेश्च ब्रह्मविष्णुशिवाख्या हि शक्तयः केशसंज्ञिताः । 'मत्केशा वसुधातले' इति पुराणोक्तेः । तद्वान् केशवः । 'को ब्रह्मेति समाख्यात ईशोऽहं सर्वदेहिनाम् । आवां तवांशसम्भूतौ तस्मात्केशवनामवान्'—इति हरिवंशे । तेनास्य बहुधा निरुक्तिः] विष्णुः; केशिनिषूदनः; केशिसूदनः; केशिहा; केशी; पुन्नागवृक्षः; [केशाः प्रशस्ताः सन्त्यस्य, 'केशाद्वोऽन्यतरस्याम्' इति व] केशवति त्रि. । जलस्थशवदेहः; पानीयस्थमृतशरीरम्; 'केशवं पतितं दृष्ट्वा द्रोणा हर्षमुपागताः । रुदन्ति पाण्डवाः सर्वे हा ! हा ! केशव ! केशव ! ।' (के जले शवं मृतदेहं पतितं दृष्ट्वा द्रोणाः काकाः हर्षं प्राप्तवन्तः, किन्तु पाण्डवाः शृगालाः रुदन्ति चीत्कारं कुर्वन्ति) । २१

केशहस्तः पुं. [केशानां केशस्य वा हस्तः समूहः । हस्तादयश्च केशात् समूहार्थे] केशसमूहः । ५३१

केसरः पुं. [के वृक्षशिरोऽवच्छेदे उच्छ्रितदेशे इत्यर्थः सरति, सृ+अच्] वकुलवृक्षः; 'ललितविभ्रमबन्धविचक्षणं सुरभिगन्धपराजितकेसरम्'—इति रघुवंशे (९।३६) । नागकेशरवृक्षः; तुरङ्गस्कन्धकेशाः; 'विनीताध्वश्रमास्तस्य सिन्धुतीरविचेष्टनैः । दुधुवुर्वाजिनः स्कन्धान् लग्नकुङ्कुमकेसरान्'—इति रघुवंशे (४।६७) । सिंहस्कन्धकेशाः; 'व्याकीर्णकेसरकरालमुखा मृगेन्द्रा नागाश्च भूरि मदराजिविराजमानाः'—इति पञ्चतन्त्रे पुन्नागवृक्षः; किञ्जल्कः (६८२) । २०६

केसरः पुं.–क्ली. [के जले सरतीति, के+सृ+पचाद्यच्, 'हलदन्तादिति' अलुक्] किञ्जल्कः; हिङ्गुनि पुं.–स्त्री. । [के शीर्यते, शॄ हिंसायाम् + 'ऋदोरप्' इत्यप्, ततः शकारमध्योऽपि] ६८२

केसरी [न्] पुं. [केसराः जटाः सन्त्यस्य, केसर+इनि] सिंहः; घोटकः; पुन्नागः; नागकेशरः; रक्तशिग्रुः; वानरविशेषः; हनूमत्पिता; 'अहं केसरिणः क्षेत्रे वायुना जगदायुना । जातः कमलपत्राक्ष ! हनूमान् नाम वानरः'—इति महाभारते (३।१४७।२७) । 'सूर्यदत्तवरः स्वर्णः सुमेरुर्नाम पर्वतः । यत्र राज्यं प्रशास्त्यस्य केसरी नाम वै पिता'—इति रामायणे (७।४०।१९) । २१४

कैटभारिः पुं. [कैटभासुरस्य अरिः शत्रुः । पक्षे कैटभस्य तमसः अरिर्दमयिता । सगुणावस्थायामपि ईश्वरस्य विष्णोः सत्त्वगुणप्राधान्यात् तथात्वम्] विष्णुः । २५

कैतवम् क्ली. [कितवस्य भावः कर्म वा, युवादित्वादण्] कपटः; द्यूतम्; वैदूर्यमणिः; [कितवस्य भावः] कपटता; 'धर्मः प्रोज्झितकैतवोऽत्रपरमो निर्मत्सराणां सतां वेद्यं वास्तवमत्र वस्तु शिवदं तापत्रयोन्मूलनम्'—इति भागवते (१।२।२) । ७०९

कैरवम् क्ली. [के जले रौति कलनादं करोतीति । रु+अच्, केरवः हंसः, तत्पुरुषे कृतीत्यलुक्, तस्य प्रियमित्यण्] कुमुदं; श्वेतोत्पलम्; ' पुराणपूर्णचन्द्रेण श्रुतिज्योत्स्नाः प्रकाशिताः । नृबुद्धिकैरवाणां च कृतमेत-

त्प्रकाशनम्'–इति महाभारते (१।१।८६)। पुं. [कुत्सितो रवो यस्य, स एव, स्वार्थे अण् पृषोदरादित्वाद् औकारस्य ऐकारत्वम्]. शत्रुः; कितवः। ६८१

कैरविणी स्त्री. [कैरव+पुष्करादित्वाद् इनि, ततो ङीप्] कुमुदिनी; [कैरवाणि सन्त्यस्याम् इति, इनि ङीप् च] कुमुदयुक्ता पुष्करिणी। ६८३

कैवर्तः पुं. [के जले वर्तते, वृत्+अच् अलुक्समासः, ततः स्वार्थे अण्] वर्णसङ्करजातिविशेषः; वैश्यागर्भे क्षत्रियस्यौरसजातः; दाशः; दासः; धीवरः; दाशेरकः; जालिकः; कैवर्तकः; मत्स्यबन्धी; 'निषादो मार्गवं सूते दाशं नौकर्म जीविनम्। कैवर्तमिति यं प्राहुरार्यावर्तनिवासिनः'—इति मनुः (१०।३४)।५९४

कैवल्यम् क्ली. [केवलस्य सर्वोपाधिवर्जितस्य भावः इति। केवल+ष्यञ्] मुक्तिः; 'यदाज्ञयैव कैवल्यं विनोपायैः प्रजायते। तमेकमजमीशानं चिदानन्दमयं स्तुमः।' कृष्णयजुर्वेदान्तर्गतोपनिषद्विशेषः; 'कठवल्लीतैत्तिरीयकब्रह्मकैवल्यश्वेताश्वतरेत्युपक्रम्यकृष्णयजुर्वेदगतानां द्वात्रिंशत्सङ्ख्यकानामुपनिषदां सहनाववत्विति शान्तिः'—इति मुक्तिकोपनिषदि। १२४

कोकः पुं. [कोकते आदत्ते क्षुद्रपशून् इति। कुक् आदाने+पचाद्यच्] वृकः; 'वने यूथपरिभ्रष्टा मृगी कोकैरिवार्दिता'—इति रामायणे (५।२९।९)। चक्रवाकः (२४४); 'कोकानां करुणस्वरेण सदृशी दीर्घा मदभ्यर्थना'—इति गीतगोविन्दे (५।१७)। ज्येष्ठी; खर्जूरीवृक्षः; भेकः; विष्णुः। २२८

कोकनदम् क्ली. [कोकान् चक्रवाकान् नदति नादयति वात्मविकासेन। कोक+नद्+अन्तर्भावितण्यन्तादच्, मूलविभुजादित्वात् क वा] रक्तकुमुदं; रक्तपद्मं; रक्तराजीवम्; 'रक्तं कोकनदं पद्ममल्पमन्यदलोहितम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। 'नीलनलिनाभमपि तन्वि! तव लोचनं धारयति कोकनदरूपम्'—इति गीतगोविन्दे (१०।५)। ६८०

कोकिलः पुं. [कुक् आदाने+'सलिकल्यनिमहिभडिभण्डिशण्डिपिण्डितुण्डिकुकिभूभ्य इलच्' इति इलच्] कृष्णवर्णमधुरस्वरपक्षिविशेषः; वनप्रियः; परभृतः; पिकः; परपुष्टः; कालः; वसन्तदूतः; ताम्राक्षः; गन्धर्वः; मधुगायनः; वासन्तः; कलकण्ठः; कामान्धः; काकलीरवः; कुहूरवः; अन्यपुष्टः; मत्तः; मदनपाठकः; 'कोकिलः श्लेष्मलो ज्ञेयः पित्तसंशमनस्तथा'— इति हारीते १ स्थाने ११ अध्याये। मूषिककल्पान्तर्गतशुक्रविषजातीयविशेषः; 'ग्रन्थयः कोकिलैर्नोग्रा ज्वरो दाहश्च दारुणः'—इति सुश्रुते कल्पस्थाने षष्ठाध्याये। अङ्गारः; छन्दोविशेषः; कोकिलकम्; (अस्य सप्तमे षष्ठं चतुर्थे च यतिः) 'हयऋतुसागरैर्यतियुतं यदि कोकिलकम्'। 'अलिललितद्युति रविसुतावनकोकिलकम्। ननु कलयामि तं सखि! सदा हृदि नन्दसुतम्। २४३

कोटरम् क्ली.–पुं. [कोटं कौटिल्याकारं स्थानं गर्तमिति यावत्, रातीति। रा+क] वृक्षस्थितगह्वरं; निष्कुहः; निर्गूढः; प्रान्तरम्; [कोट शब्दात् चतुरर्थ्यां वुञ्छण्कठेत्यश्मरादित्वाद् र दुर्गसन्निहितदेशादौ त्रि.]। १८२

कोटवी स्त्री. [कोटं कौटिल्यं निर्लज्जतां वाति गच्छतीति। कोट+वा+क, ङीष्] कौटवी; नग्ना। ४८३

कोटिः स्त्री. [कोट्यते छिद्यतेऽनया। कुट् छेदने, 'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्, बाहुलकाद् गुणः] अस्त्रादेः कोणः; 'हृतान्यपि श्येननखाग्रकोटिव्यासक्तकेशानि चिरेण पेतुः'—इति रघुवंशे (७।४६)। उत्कर्षः (८३६); शतलक्षसङ्ख्या; 'करोड़' इति भाषा। 'एकं दशं शतं चैव सहस्रमयुतं तथा। लक्षं च नियुतं चैव कोटिरर्बुदमेव च'—इत्यङ्कशास्त्रे। धनुरग्रम्; 'तस्य स्कन्धे मृतं सर्पं क्रुद्धो राजा समासृजत्। समुत्क्षिप्य धनुष्कोट्या स चैनं समुपैक्षत'—इति महाभारते (१।४०।२२)। रेखा; 'आवर्जितजटामौलिविलम्बिशशिकोटयः। रुद्राणामपि मूर्द्धानः क्षतहुङ्कारशंसिनः'—इति कुमारसम्भवे (२।२६)। वादविचारः; संशयनिर्णयाय पूर्वपक्षः; 'विप्रतिपत्ति वाक्यजन्यकोट्युपस्थितिः'–इति गादाधरीसंशय हेतूक्तिः। त्रिकोणादिक्षेत्रावयवरेखाभेदः; 'इष्टाद्बाह्वोर्यः स्यात् तत्स्पर्द्धिन्यां दिशीतरो बाहुः। त्र्यस्रे चतुरस्रे वा सा कोटिः कीर्तिता तज्ज्ञैः'—इति लीलावती। राशिचक्रस्य तृतीयांशः; 'त्रिभिर्भैः पदं तानि चत्वारि चक्रे, क्रमात् स्यादयुग् युग्मसंज्ञा च तेषाम्। अयुग्मे पदे यातमेष्यन्तु युग्मे, भुजं बाहुहीनं त्रिभं कोटिरुक्ता'—इति सिद्धान्तशिरोमणौ। छायानिरूपणार्थं कल्प्यमानक्षेत्रावयवरेखाभेदः; 'दिक्सूत्रसम्पातगतस्य शङ्कोः छायाग्रपूर्वापरसूत्रमध्यम्। दोर्दोः प्रभा वर्ग-

वियोगमूलं कोटिर्नरात् प्रागपरा ततः स्यात्'—इति सिद्धान्तशिरोमणौ। 'दिवसम्पातस्थस्य शङ्कोर्भाग्रं यत्र पतति तस्य पूर्वापरसूत्रस्य च यदन्तरं स दोरित्युच्यते। दोश्छाययोर्वर्गान्तरपदं पूर्वपरा कोटिः' इति। चन्द्रस्य शृङ्गोन्नतिज्ञानार्थं क्षेत्रावयवविशेषः; 'योऽधो नरो दिनकृतः स विधोरुदग्रशङ्कुरन्वितो मम मता खलु सैव कोटिः'—इति सिद्धान्तशिरोमणौ। अर्कस्य योऽसौ अधः शङ्कुः यस्य ऊर्ध्वशङ्कुना युक्तश्चेत् तर्ह्येव कोटिर्मतेति। यो रवेरधः शङ्कुरसौ विधोरूर्ध्वशङ्कुना युतः। सैव कोटिर्मम मता। उदयास्तसूत्रकल्पित क्षेत्रावयवविशेषः; 'तदन्तरैक्यं समवृत्तखेटमध्यांशजीवां भुवि बाहुमाहुः। दृग्ज्यां श्रुतिं चाथ तयोस्तु कोटिं पूर्वापरां वर्गवियोगमूलम्।' पृक्का। ७२७

कोटिपात्रः पुं. [कोटिः अग्रभागः पात्रं पत्राकारम् अस्य। यद्वा कोटिः अग्रं पात्रे जलांशेऽस्य, जलक्षेपणादिति भावः] केनिपातकः; 'डाँड़ा' इति भाषा। ६७२

कोटिशः पुं. [कोट्या अग्रेण श्यति नाशयति चूर्णीकरोतीत्यर्थः। कोटि+शो+क] लोष्टभङ्गसाधनमुद्गरः; लेष्टुभेदनः; लेष्टुघ्नः; कोटीशः; लेष्टुभेदी; चूर्णदण्डः; लोष्टभञ्जार्थमुद्गरः; लोष्टघ्नः। [कोटिरस्यास्तीति, लोमादित्वात् श] कोटियुक्ते त्रि.; वासुकिवंशीयनागविशेषः; 'कोटिशो मानसः पूर्णः शलः पालो हलामकः'—इति महाभारते (१।५७।५)। कोटिशः [स्] अव्य. [कोटि+वारार्थे शस्] कोटिः कोटिः; 'गाः कोटिशः स्पर्शयता घटोघ्नीः'—इति रघुवंशे (२।४९)। ५७६

कोटी स्त्री. [कुट्, 'सर्वधातुभ्य इन्' इतीन् ततो वा ङीष्] कोणः; उत्कर्षः (८३६); शतलक्षसंख्या; 'प्रतोदैश्चापकोटीभिर्हुङ्कारैः साधुवाहितैः। कशापार्ष्णिभिघातैश्च वाग्भिरुग्राभिरेव च'–इति महाभारते (७।८७।३०)। खड्गादेरग्रभागः; पृक्काशाकम्। ७२७

कोटीरः पुं. [कोटिभिः ईरयति प्रेरयति। कोटि+ईर्+णिच्+अच्] किरीटं; जटा; 'किरीटं वैरञ्चं परिहर पुरः कैटभभिदः, कठोरे कोटीरे स्खलसि जहि जम्भारिमुकुटम्'—इति आनन्दलहर्याम् (३०)। ५६५

कोटीशः पुं. [कोटीं लोष्टादीनां कोटिसंख्यां श्यति चूर्णयतीति। कोटी+शा+क] कोटिशः। ५७६

कोट्टवी स्त्री.– नग्ना स्त्री; नग्निका; दुर्गा; नग्नमुक्तकेशी नारी; 'या त्ववासा मुक्तकेशी कोट्टवी नग्निका च सा'–इति जटाधरः। [कोट्टं कुट्टनं छेदनं स्वपुत्रस्येति यावत्, वाति हिनस्ति निवारयतीति भावः। यद्वा कोट्टे कुट्टने संग्रामे स्वसुतस्य रक्षार्थं वाति गच्छतीति। कोट्ट+वा गतिहिंसयोः+क, गौरादित्वाद् ङीष्] नग्ना स्त्रीरूपिणी दुर्गा; 'तन्माता कोट्टवी नाम नग्ना मुक्तशिरोरुहा। पुरोऽवतस्थे कृष्णस्य पुत्रप्राणरिरक्षया'—इति भागवते (१०।६३।२०)। नहीयं स्वयमाद्याशक्तिरूपिणी दुर्गा, किन्त्वस्याः लम्बाख्योऽष्टमो भागः। 'व्याविध्यमाने चक्रे तु कृष्णेनाप्रतिमौजसा। कुमाररक्षणार्थाय बिभ्रती सुतनुं तदा। दिग्वासा देववचनात् प्रातिष्ठत्तत्र कोट्टवी। लम्बा नाम महाभागा भागो देव्यास्तथाष्टमः। चित्राकनकशक्तिस्तु सा च नग्ना स्थितान्तरे'–इति हरिवंशे बाणकृष्णयुद्धे १८२ अध्याये (२२।२३)। ४८३

कोणः पुं. [कुणति वादयत्यनेन। कुणति वादयतीति वा। कुण् शब्दे+करणे घञ्, कर्तरि अच् वा] वीणादिवादनम्; 'भेरीमृदङ्गवीणानां कोणसंघट्टितः पुनः'—इति रामायणे (२।७१।२९)। (७२७) अस्त्रादेरग्रभागः; पालिः; अश्रिः; कोटिः; 'कनककोणैरभिहन्यमानः'—इति कादम्बर्याम्। वाद्यप्रभेदः; गृहादेरेकदेशः; 'स्वगृहस्याङ्गणे तेन चत्वारः स्वर्णपूरिताः। कुम्भाश्चतुर्षु कोणेषु निगूढाः स्थापिता भुवि'—इति कथासरित्सागरे (१९।३३)। लगुडः; मङ्गलग्रहः; शनिः; द्वयोर्दिशोर्मध्यभागः; विदिक्; कोणमात्रम्; 'विन्दुत्रिकोणवसुकोणदशारयुग्मम्'—इति तन्त्रसारे। ९८

कोदण्डम् क्ली.–पुं. [कु शब्दे+विच्, गुणः, ओदन्तकोशब्दः। कौः शब्दायमानो दण्डोऽस्य] धनुः; 'विस्फूर्जच्चण्डकोदण्डो रथेन त्रासयन्नघान्'—इति भागवते (३।२१।५२)। पुं. [कोदण्ड धनुः तत्सदृश आकारो विद्यते अस्य, अर्श आदित्वादच्] भ्रूः; जनपदविशेषः। ४६४

कोद्रवः पुं. [कु+विच्, कौः सन् द्रवतीति, द्रु+अच्, कौद्रेव इति कर्मधारयो वा। केन वायुना द्रवति वा, पृषोदरादित्वात् पूर्वस्य ओकारादेशे साधुः] धान्यविशेषः; कोरदूषकः; कुद्रवः; कोरदूषः; उद्दालः; मदनाग्रकः; कोद्रवः; कोरदुष्कः; वनकोद्रवः; 'कोदों' इति

भाषा। 'कोद्रवः कोरदूषः स्याद्दुद्दलो वनकोद्रवः। कोद्रवो वातलो ग्राही हिमः पित्तकफापहः। उद्दालस्तु भवेदुष्णो ग्राही वातकरो भृशम्'—इति भावप्रकाशः। ५८०

कोपः पुं. [कुप्यते इति, कुप्+भावे घञ्] क्रोधः; 'वत्स! कः कोपहेतुस्ते कश्च त्वां नाभिनन्दति'—इति विष्णुपुराणे (१।११।१३)। ३६२

कोपनः त्रि. [कुप्+युच्] कोपविशिष्टः; 'आसीद्विभावसुर्नाम महर्षिः कोपनो भृशम्'—इति महाभारते (१।२९।१६)। पुं. बलिवंशीयः कोपनो नामासुरः; 'शरभः शलभश्चैव कुपनः कोपनः क्रथः'—इति हरिवंशे (४१।८४)। क्ली. [कुप्+णिच् भावे ल्युट्] दोषविकारकारकव्यापारविशेषकोपनिष्पादनम्; 'स्वदोषकोपनाद्रोगं लभते मरणान्तिकम्। अपि वोद्बन्धनादीनि परीतानि व्यवस्यति'—इति महाभारते अनुगीतायाम् (१४।१७।१३)। ३६१

कोपी [न्] त्रि. [अवश्यं कुप्यति इति, आवश्यके णिनि] क्रोधनः; पुं. जलपारावते। ३६१

कोमलम् क्ली. [कौति शब्दायते वाय्वादियोगेन स्रोतोवेगेन वा। कु शब्दे, वृषादित्वात् कलच्, तस्य मुट् च, बाहुलकाद् गुणः] जलम्; त्रि. [कमु कान्तौ+बाहुलकात् कलच् अत उत्वं गुणश्च] अकठिनः; सुकुमारः; मृदुलः; मृदुः; पेलवः; मनोज्ञः; 'श्रुतिसुखभ्रमरस्वनगीतयः कुसुमकोमलदन्तरुचो बभुः। उपवनान्तलताः पवनाहतैः किसलयैः सलयैरिव पाणिभिः'—इति रघुवंशे (९।३५)। १८९

कोयष्टिः पुं. [कं जलं यष्टिरिवास्य। पृषोदरादित्वाद् अत उत्वे गुणत्वे च साधुः] जलकुक्कुभपक्षी; 'प्रतुदान् जालपादांश्च कोयष्टि नखविष्किरान्'—इति मनुः (५।१३)। २४९

कोरकः पुं. [कुल् संस्त्याने+कर्तरि ण्वुल्, लस्य रत्वम्] कलिका; 'कली' इति भाषा। 'कलिका कोरकः पुमान्' इत्यमरः। पुं.—क्ली. [कुल्+ण्वुल्। लस्य रः] मुकुलं; 'कोरकोऽस्त्री कुड्मले स्यात्।' 'मरुदवनिरुहां रजोवधूभ्यः समुपहरन् विचकार कोरकाणि'—इति माघे (७।२६)। कक्कोलं; मृणालम्; 'कोरकं कुड्मलेऽपि स्यात् कक्कोलकमृणालयोः'—इति विश्वमेदिन्यौ। चोरनामगन्धद्रव्यम्। १८६

कोरदूषकः पुं. [कोलं संस्त्यानं दूषयति। दूष्+णिच्। 'कर्मण्यण्' इत्यण्, लस्य रत्व, संज्ञायां कन्] कोद्रवः; धान्यविशेषः; कोरदूषः; 'कोदों' इति भाषा। 'ईदृशो भविता लोको युगान्ते पर्य्युपस्थिते। वस्त्राणां प्रवरा शाणी धान्यानां कोरदूषकः। भार्यामित्राश्च पुरुषा भविष्यन्ति युगक्षये'—इति महाभारते (३।१९०।१८–१९)। 'स कोरदूषः श्यामाकः कषायमधुरो लघुः। वातलः कफपित्तघ्नः शीतसंग्राहि शोषणः'—इति चरके सूत्रस्थाने सप्तविंशेऽध्याये। ५८०

कोलः पुं. [कोलति कामपि बाधां न मत्वैव शत्रुं प्रति धावतीति। कुल्+अच्] शूकरः; [कोलति प्लवते जले इति] प्लवः; 'तरणसाधनकाष्ठादिः; अङ्कपालिः; शनिः; चित्रं; [कोलन्ति आलिङ्गन्त्यङ्गान्यत्र। कुल्+अधिकरणे हलश्चेति घञ्] क्रोडं; देशविशेषः; अस्त्रभेदः; वर्णसङ्करजातिविशेषः; 'पाण्डयश्च केरलश्चैव कोलश्चोलश्च पार्थिव! तेषां जनपदाः स्फीताः पाण्ड्याश्चोलाः सकेरलाः'—इति हरिवंशे (३२।१२३)। स तु लेटात् तीवरकन्यायां जातः। श्मश्रुधारिम्लेच्छजातिविशेषः। २१६

कोलाहलः पुं. [कोल एकीभूताव्यक्तशब्दविशेषः तम् आहलति आलिखतीति। हल् विलेखने+अच्] बहुविधदूरगाव्यक्तध्वनिः; कलकलः; कालकीलः; 'ततो हलहलाशब्दः पुनः कोलाहलो महान्। महान् राक्षसनादस्तु पुनस्तूर्यरवो महान्'—इति रामायणे (३।३१।४१)। १३९

कोल्या स्त्री. [कोलमर्हतीति यत्] पिप्पली। ६१४

कोविदः त्रि. [कुङ शब्दे, विच्, कोः वेदः तं वेत्ति जानातीति। को+विद्+'इगुपधेति' कः] पण्डितः; 'इति राज्ञ उपादिश्य विप्रा जातककोविदाः। लब्धापचितयः सर्वे प्रतिजग्मुः स्वकान् गृहान्—इति भागवते (१।१२।२९)। ३३२

कोविदारः पुं. [कुं भुवं विदृणाति विदारयति, भूमिं विदार्योद्भवतीत्यर्थः। दृ+'कर्मण्यण्' इति अण्, ततः पृषोदरादित्वात् साधुः] रक्तकाञ्चनवृक्षः; चमरिकः; कुद्दालः; युगपत्रकः; काञ्चनारः; कणकारकः; कान्तपुष्पः; करकः; कान्तारः; यमलच्छदः; काञ्चनालः; ताम्रपुष्पः; कुदारः; रक्तकाञ्चनः; विदलः; 'कचनार' इति भाषा। 'कोऽप्ययं दारुरित्याहुरजानन्तो

यतो जनाः। कोविदार इति ख्यातस्ततः स सुमहातरुः। मन्दारः कोविदारश्च पारिजातश्च नामभिः। स वृक्षो ज्ञायते दिव्यो यस्यैतत्कुसुमोत्तमम्'—इति हरिवंशः (१२४।७०-७१)। २०६

कोशः पुं. [कुश्यते संश्लिष्यते अत्र। कुश् संश्लेषणे+'अकर्तरि चेति' अधिकरणादौ घञ्] खड्गपिधानं; 'म्यान' इति भाषा। 'कस्यायं विपुलः खड्गो गव्ये कोशे समर्पितः'—इति महाभारते (४।४०।१३)। अण्डम् (५२३); दिव्यम् (८४०); 'ततो निक्षिप्य चरणं रक्ताक्ते मेषचर्मणि। कोशं चक्रतुरन्योऽन्यं सखड्गौ नृपडामरौ'—इति राजतरङ्गिण्याम् (५।३३५)। घनसंहतिः; अर्थसंग्रहः; 'कोशो बलं चापहृतं तत्रापि स्वपुरे ततः'—इति मार्कण्डेयपुराणे देवीमाहात्म्ये। [कुष्यते-आकृष्यते आयस्थानेभ्यः कोषः, कुष् निष्कर्षे, घञ्। कोषो मूर्द्धन्यान्तः, तालव्यान्त इत्यन्ये] कृताकृतं हेमरूप्यम्; हिरण्यम्; आवरणविशेषः; 'अव्यक्तमाहुर्हृदयं मनश्च स चन्द्रमाः सर्वविकारकोशः'—इति भागवते (२।१।३४)। मुकुलम्; 'तिरश्चकार भ्रमराभिलीनयोः सुजातयोः पङ्कजकोशयोः श्रियम्'—इति रघुवंशे (३।८)। ४७३

कोशातकी स्त्री. [कोशम् अततीति, अत्+क्वुन्, ततः कोशातक+गौरादित्वाद् ङीष्] पटोली; घोषकः; फलशाकविशेषः; कृतच्छिद्रा; जालिनी; कृतवेधना; क्ष्वेडा; सुतिक्ता; घण्टाली; मृदङ्गफलिनी; कर्कशच्छदा। 'कोशातकीफलं स्वादु मधुरं वातपित्तनुत्। विपाके च कफं हन्ति ज्वरे शस्तं प्रदिश्यते'—इति हारीते प्रथमस्थाने १० अध्याये। कोशातकी [न्] पुं. [कोशातकोऽस्यास्तीति, इनि] वाणिज्यं; वणिक्; वाडवाग्निः। २०२

कोशिका स्त्री. [कोश+संज्ञायां क, टाप्, इत्वम्] मल्लिका; 'कुल्हड़, पुरवा' इत्यादि भाषा। ३१६

कोषः पुं.–क्ली. [कुष्यन्ते आकृष्यन्ते अस्यादयोऽस्मात्। कुष् निष्कर्षे+'अकर्तरि चेति' अपादाने घञ्] खड्गपिधानम्; 'कस्य पाञ्चनखे कोषे सायको हेमविग्रहः। प्रमाणरूपसम्पन्नः पीत आकाशसन्निभः। कस्य हेममये कोषे सुतप्ते पावकप्रभे। निस्त्रिंशोऽयं गुरुः पीतः शैक्यः परमनिर्व्रणः'—इति महाभारते (४।४०।१४-१५)। अण्डं (५२३); दिव्यम् (८४०); अर्थसमूहः; 'तमध्वरे विश्वजिति क्षितीशं निःशेषविश्राणितकोषजातम्'—इति रघुवंशे (५।१)। कृताकृतं हेमरूप्यं; पात्रं; जातीकोषः, 'जायफल' इति भाषा। शब्दादिसंग्रहः, यथा—अमरकोषः। भाण्डागारं; पानपात्रचषकः; योनिः; शिम्बा; पनसादिफलस्यान्तः; शब्दान्तरसंयोगे गोलकवाचकः; घनसंहतिः। ४७३

कोषातकी स्त्री. [कोषातक+गौरादित्वाद् ङीष्] घोषालता; राजकोषातकी; ज्योत्स्निका; ज्योत्स्नावती रात्रिः। २०२

कोष्ठः पुं. [कुष् निष्कर्षे+'उषिकुषिगतिभ्यस्थन्' इति थन्] कुक्षिमध्यम्; 'स्थानान्यामाग्निपक्वानां मूत्रस्य रुधिरस्य च। हृद्दूण्डुकः फुष्फुषश्च कोष्ठ इत्यभिधीयते।' उदरम्; 'पतिं भार्योपतिष्ठेत ध्यायेत्कोष्ठगतं च तम्'—इति भागवते (६।१८।५३)। नाभेरुपरिस्थितमणिपूरपद्मम्; 'संपीड्य पायुं पार्ष्णिभ्यां वायुमुत्सारयन् शनैः। नाभ्यां कोष्ठेष्ववस्थाप्य हृदुरःकण्ठशीर्षणि'—इति भागवते (४।२३।१४) प्राकारः; 'पञ्चारामं नवद्वारमेकपालं त्रिकोष्ठकम्। षट्कुलं पञ्चविपणं पञ्चप्रकृति स्त्रीधवम्'—इति भागवते (४।२८।५६)। कुसूलः; 'कच्चित् कोषश्च कोष्टश्च वाहनं द्वारमायुधम्। आयश्च कृतकल्याणैस्तव भक्तैरनुष्ठितः।' गृहमध्यम्; 'सा वानरेन्द्रबलरुद्धविहारकोष्ठश्रीद्वारगोपुरसदोवलभीविटङ्का'—इति भागवते (९।१०।१७)। आत्मीये त्रि.। ८१७

कौक्षेयकः पुं. [कुक्षौ कोषे तिष्ठति इति, ढकञ्] खड्गः। ४७२

कौटकिकः त्रि. [कूटमेव इति स्वार्थे कन्, कूटकं मासं पण्यमस्य इति, ठञ्] मांसिकः मांसविक्रयी। ५९५

कौटवी, कोटवी स्त्री.–विवस्त्रा स्त्री; नग्ना, दुर्गा। ४८३

कौटिकः त्रि. [कूटेन मृगादिबन्धनयन्त्रेण चरति। 'चरति' इति ठक्] मांसविक्रेता; कौटकिकः; वैतंसिकः; मांसिकः; 'कसाई' इति भाषा। ५९५

कौणपः पुं. [कुणपः शरीरं शवो वा, तं भक्षयितुं शीलमस्य। अण्] राक्षसः; 'न कौणपाः शृङ्गिणो वा न च देवाञ्जनसृजः'—इति महाभारते (१।१७१।१४)। वासुकिवंशोद्भवः सर्पविशेषः; 'पिच्छलः कौणपश्चक्रः काल-

वेगः प्रकालनः। हिरण्यबाहुः शरणः कक्षकः कालदण्डकः। एते वासुकिजा नागाः प्रविष्टा हव्यवाहने'—इति महाभारते (१।५७।५)। ७३

कौतुकम् क्ली. [कुतुक+प्रज्ञादित्वात् स्वार्थे अण्। कुतुकस्य भावः इति युवादित्वाद् अण् वा] कुतूहलम्; कौतूहलम्; 'चक्रतुः कौतुकोद्ग्रीवां सभां चित्रार्पितामिव—इति राजतरङ्गिणी (१५।३६४)। अभिलाषः; 'पश्यन्त्यास्तं नृपं तस्या लज्जाकौतुकयोर्दृशि। अभूदन्योऽन्यसंमर्दो रचयन्त्या गतागतम्'—इति कथासरित्सागरे। उत्सवः; 'कथं सुतायाः पितृगेहकौतुकं निशम्य देहः सुरवर्य! नेङ्गते'—इति भागवते (४।३।१३)। नर्म; हर्षः; 'इयं च भूर्भगवता न्यासितोरुभरा सती। श्रीमद्भिस्तत्पदन्यासैः सर्वतः कृतकौतुका'—इति भागवते (१।१७।२५)। परस्परायातमङ्गलं; विवाहसूत्रम्; 'वैवाहिकैः कौतुकसंविधानैर्गृहे गृहे व्यग्रपुरन्ध्रिवर्गम्'—इति कुमारसंभवे (७।२)। गीतादिभोगः; गीतादिः; भोगकालः। ७२०

कौतूहलम् क्ली. [कुतूहलस्य भावः कर्म वा। युवादित्वाद् अण्। यद्वा कुतूहलमेव इति, प्रज्ञाद्यण्] कुतूहलम्; अपूर्ववस्तुदिदृक्षाद्यतिशयः; 'भवद्भिरिदमाख्यातं यथाप्रश्नमनुक्रमात्। महत् कौतूहलं मेऽस्ति हरिश्चन्द्रकथां प्रति'—इति मार्कण्डेये (८।१)। ७३०

कौद्रवीणम् त्रि. [कुत्सितं यथा तथा द्रवति इति। पृषोदरादित्वात् सिद्धे कोद्रवं कुत्सितधान्यभेदः, तस्य भवनम् उत्पत्तिस्थानम्। 'धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ्' इति खञ्] कोद्रवधान्योद्भवयोग्यक्षेत्रम्। १६२

कौपीनम् क्ली. [कूपपतनमर्हतीति। 'शालीनकौपीने अधृष्टाकार्ययोः' इति साधुः] कच्छटिका; कच्छा; मेखलाबद्धपरिधेयवस्त्रखण्डं; कक्षा; घटी; 'बिभृयाद् यद्यसौ वासः कौपीनाच्छादनं परम्'—इति भागवते (७।१३।२)। अकार्यं (८३०); गुह्यदेशः; चीरं; पापम्; 'तत्साधनत्वात् तद्वद् गोप्यत्वात् पुरुषलिङ्गमपि, तत्सम्बन्धात् तदाच्छादनमपि'—इति सिद्धान्तकौमुदी। ४११

कौपोदकी स्त्री. [कौमोदकी इति, पृषोदरादित्वाद् मस्य पत्वम्] कौमोदकी; विष्णुगदा। २६

कौमदी स्त्री. [कुमुदस्य इयं प्रकाशकत्वात्। 'तस्येदम्' इत्यण् ततो ङीप्] ज्योत्स्ना; 'शशिना सह याति कौमुदी सह मेघेन तडित्प्रलीयते। प्रमदाः पतिवर्त्मगा इति प्रतिपन्नं हि विचेतनैरपि'—इति कुमारसम्भवे (४।३३)। उत्सवः; 'अकालकौमुदीञ्चैव चक्रतुः सार्वकालिकीम्'—इति महाभारते १३ पर्वणि। [कुमुदस्य कार्तिकमासस्य इयम्, 'तस्येदम्' इति अण् ततो ङीप्] 'कु शब्देन मही ज्ञेया मुद हर्षे ततो द्वयम्। धातुज्ञैर्नियमैश्चैव तेन सा कौमुदी स्मृता।' कार्तिकोत्सवः; कार्तिकीपूर्णिमा; आश्विनीपूर्णिमा; कोजागरपूर्णिमा; शारदी; 'आश्विने पौर्णमास्यां तु चरेज्जागरणं निशि। कौमुदी सा समाख्याता कार्या लोकविभूतये।' 'कौ मोदन्ते जना यस्यां तेनासौ कौमुदी स्मृता।' दीपोत्सवतिथिः; कुमुदान्येव कौमुदी। ४४

कौमोदकी स्त्री. [कोः पृथिव्याः पालकत्वान् मोदकः इति कुमोदको विष्णुः, तस्येयम्। 'तस्येदम्' इत्यण् ततो ङीप्] कौमोदी; कौपोदकी; विष्णुगदा; 'श्रीवत्सं कौस्तुभं मालां गदां कौमोदकीं मम'—इति भागवते (८।४।१९)। २६

कौलीनम् क्ली. [कौ पृथिव्यां लीनम्, भूलीनपदार्थानामिव एतेषामप्रकाशतया तथात्वम्। ली, भावे क्त, तस्य नत्वम्। लीनं लयः कौ पृथिव्यां लीनं लयो यस्मात्, कुलीनं भूमिलयमर्हतीति अण् वा] लोकापवादः; 'कौलीनभीतेन गृहान्निरस्ता न तेन वैदेहसुता मनस्तः'—इति रघुवंशे (१४।८४)। निन्दा; 'कौलीनमात्माश्रयमाचचक्षे तेभ्यः पुनश्चेदमुवाच वाक्यम्'—इति रघुवंशे (१४।३६) गुह्यं; जन्यं; कुकर्म; [कुलीनस्य भावः, युवादित्वादण्] कुलीनत्वं; कुलीनता; 'सदश्व इव मर्यादां कौलीनां नाभ्यवर्तत'—इति रामायणे। पश्वहिपक्षिणां युद्धं; पुं. कौलेयकः। १४७

कौलेयकः पुं. [कुले भवः, 'कुलकुक्षिग्रीवाभ्यः श्वास्यलङ्कारेषु' इति ढकञ्] कुक्कुरः; [कुलस्यापत्यम्, 'अपूर्वपदादन्यतरस्यां यड्ढकञौ' इति ढकञ्] कुलीने त्रि.। २८१

कौबेरी स्त्री. [कुबेरः देवता अस्याः। 'सास्य देवता' इत्यण् ततो ङीप्] उत्तरादिक्; 'दिग्विभागे तु कौबेरी दिक् शिवा प्रीतिदायिनी'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। कुबेरशक्तिः। १०१

कौशिकः पुं. [कुशिकस्यापत्यम्, ऋष्यण्। कुशिके तद्वंशे

भवो वा, अण्] इन्द्रः; 'कुशिकस्तु तपस्तेपे पुत्रमिन्द्रसमं विभुः। लभेयमिति तं शक्रस्त्रासादभ्येत्य जज्ञिवान्'--इति हरिवंशे (२७।१३)। उलूकः (२४६); गुग्गुलुः; व्यालग्राही; कोशज्ञः; मगधराजजरासन्धस्य सेनापतिहंसनामा नरपतिरपि कौशिकनाम्ना विश्रुत आसीत्; 'स तु सेनापतिं राजा सस्मार भरतर्षभ! कौशिकं चित्रसेनं च तस्मिन् युद्ध उपस्थिते। ययोस्तु नामनी राजन्! हंसेति डिम्भकेति च। पूर्वं संकथिते पुम्भिर्नृलोके लोकसत्कृते'--इति महाभारते (२।२२।३१–३२)। [कुशिकस्य गोत्रापत्यम् इति, विदाद्यञ्। कुशिकस्य पुत्रो गाधिस्तत्पुत्रो विश्वामित्रोऽपि कुशिकवंशजातत्वात् कौशिकः] विश्वामित्रमुनिः; 'तच्छ्रुत्वा वचनं तस्य स्नेहपर्याकुलाक्षरम्। समन्युः कौशिको वाक्यं प्रत्युवाच महीपतिम्'–इति रामायणे (१।१२।१)। पुरुवंशीयनृपविशेषः; 'प्रतिष्ठायाश्च द्वौ पुत्रौ पैप्पलादिश्च कौशिकः'--इति हरिवंशे। [कोशं करोतीति, कोश+ठक् ठञ् वा बाहुलकात्] कोषकारः; शृङ्गाररसः; मज्जा; अश्वकर्णवृक्षः; नकुलः; [कोशात् कृमिकोशाज्जातम्] कृमिकोषोद्भवे त्रि। 'या त्वाहं कौशिकैर्वस्त्रैः शुभैराच्छादितं पुरा। दृष्टवत्यस्मि राजेन्द्र! सा त्वां पश्यामि चीरिणम्'—इति महाभारते (३।२७।१४)। ५२

कौसीद्यम् क्ली [कुत्सितं सीदति अस्मिन् इति। कु+सीद्+श, ततः स्वार्थे ष्यञ्] आलस्यं; तन्द्रा; [कुसीदस्य कर्म भावो वा, ष्यञ्] कुसीदत्वम्। ७५७

कौसृतिकः त्रि. [कुसृत्या कुत्सितगत्या चरति इति। ठक्] मायाकारः। ३४९

कौस्तुभः पु. [कुं भुवं स्तुभ्नाति व्याप्नोति इति कुस्तुभः सागरः। 'तत्र भव' इत्यण्। यद्वा कुं भूमिं जगदित्यर्थः, स्तुभ्नाति व्याप्नोति सर्वमाक्रम्य तिष्ठतीति भावः, कुस्तुभो विष्णुः। तस्यायं मणिरित्यण्] विष्णुवक्षःस्थो मणिः; 'कौस्तुभाख्यमभूद्रत्नं पद्मरागो महोदधेः। तस्मिन् हरिः स्पृहां चक्रे वक्षोऽलङ्करणे मणौ'—इति भागवते (८।८।५)। 'कौस्तुभस्तु महातेजाः कोटिसूर्यसमप्रभः। इदं किमुत वक्तव्यं प्रदीपाद्दीप्तिमानिति'—इति भागवतामृतम्। मुद्राविशेषः; 'अनामाङ्गुष्ठसंलग्ना दक्षिणस्य कनिष्ठिका। कनिष्ठयान्यया बद्धा तर्जन्या दक्षया तथा। वामानामाञ्च बध्नीयाद् दक्षिणाङ्गुष्ठमूलके। अङ्गुष्ठमध्यमे भूयः संयोज्य सरलाः पराः। चतस्रोऽप्यग्रसंलग्ना मुद्रा कौस्तुभसंज्ञिका' —इति तन्त्रसारः। २७

क्रकचः पु.–क्ली. [क्र इति कृत्वा कचति शब्दायते, कच् शब्दे, पचाद्यच्] करपत्रं; काष्ठविदारणास्त्रविशेषः; 'करवत्, आरा' इति भाषा। 'मध्येन पाटयामास क्रकचो दार्विवोच्छ्रितम्'—इति महाभारते (३।२२।३४)। ग्रन्थिलवृक्षः; ज्योतिषोक्तयोगभेदः; 'षष्ठ्यादितिथयो मन्दाद् विलोमं क्रकचः स्मृतः।' 'त्रयोदशस्य मिलने संख्ययोस्तिथिवारयोः। क्रकचो नाम योगोऽयं मङ्गलेष्वतिगर्हितः'--इति नारदोक्तिः। ४७५

क्रकरः पुं. [क्र इति शब्दं कर्तुं शीलमस्य इति। क्र+कृ+ताच्छील्ये ट] क्रकणपक्षी; पक्षिविशेषः; 'पत्रोर्णं चोरयित्वा तु क्रकरत्वं नियच्छति' 'चकोरकलविङ्कमयूरक्रकर' इत्याद्युपक्रम्य 'लघवः क्रकरा हृद्यास्तथा चैवोपचक्रकाः'--इति सुश्रुते। दीनः; क्रकचः; करपत्रं; काष्ठविदारणास्त्रविशेषः; करीरवृक्षः। २५४

क्रतुः पुं. [क्रियतेऽसौ इति, कृ+'कृञः क्तुः' इति कर्मणि क्तु प्रत्ययः] यज्ञः; सप्तर्ष्यन्तर्गतब्रह्ममानसपुत्रविशेषः; 'ब्रह्मणो मानसाः पुत्रा विदिताः षण् महर्षयः। मरीचिरत्र्यङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः।' 'क्रतोरपि क्रिया भार्या वालखिल्यानसूयत। ऋषीन् षष्टिसहस्राणि ज्वलतो ब्रह्मतेजसा'—इति भागवते (४।१।३८)। विश्वेदेवविशेषः; 'दक्षं मरीचिमत्रिञ्च पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम्। वशिष्ठं गौतमं चैव भृगुमङ्गिरसं मनुम्।' यूपसहितः सोमसाध्यो यज्ञः; विष्णुः; 'यज्ञ ईज्यो महेज्यश्च क्रतुः सत्रं सतां गतिः'--इति विष्णुसहस्रनामसु। अश्वमेधयज्ञः; 'यजेत राजा क्रतुभिर्विविधैराप्तदक्षिणैः। धर्मार्थञ्चैव विप्रेभ्यो दद्याद्भोगान् धनानि च'—इति मनुः (७।७९)। आषाढमासः; 'वाजाय स्वाहा, प्रसवाय स्वाहा, अपिजाय स्वाहा, क्रतवे स्वाहा, वसवे स्वाहा'—इति यजुर्वेदे (१८।२८)। 'क्रतवे यागरूपाय, चातुर्मास्यादियागप्राचुर्यात् क्रतुराषाढः'—इति वेददीधितिः। प्रज्ञा; 'अथ खलु क्रतुमयः पुरुषो यथाक्रतुरस्मिल्ँ लोके पुरुषो भवति। तथेतः प्रेत्य भवति स क्रतुं कुर्वीत'—इति छान्दोग्योपनिषदि। ४१४

क्रतुपुरुषः पुं. [क्रतुः यज्ञः तन्मयः तदधिष्ठाता वा पुरुषः] विष्णुः। २२

क्रन्दितम् क्ली. [क्रदि+भावे क्त] रोदनम्; आह्वानं; योधचीत्करणम्। ६३९

क्रमुकः पुं. [क्रमु+संज्ञायां कन्] गुवाकवृक्षः; माघे (३।८१)। पट्टिकालोध्रः; ब्रह्मदारुवृक्षः; भद्रमुस्तकं; कार्पासिकाफलम्। ५४५

क्रमेलकः पुं. [क्रममालम्ब्य इलति क्षिपतीति। इल् क्षेपे +ण्वुल्। यद्वा क्रामतीति क्रम्, क्विप्। इलतीति एलः, अच्। क्रम् चासौ एलः। क्रमेल+स्वार्थे कन्] उष्ट्रः; क्रमेलः; 'भो ममाग्रेऽपि क्रमेलकहृदयं भक्षयित्वा अधुना मम मुखमवलोकयसि'—इति पञ्चतन्त्रे (१।४१४)। २८०

क्रव्यम् क्ली. [क्लव्+यत्। लस्य रत्वम्] मांसम्; 'क्रव्यादाः प्राणिनः क्रव्यं दुदुहुः स्वे कलेवरे। सुपर्णवत्सा विहगाश्चरं वाऽचरमेव च'—इति भागवते (४।१८। २४)। ६३१

क्रव्यात् [द्] पुं. [क्रव्यं मांसम् अत्तीति। 'क्रव्ये चेति' विट्] राक्षसः; त्रि. मांसाशिनि; गृध्रादिमांसभुक्पक्षिविशेषः; 'धूमधूम्रो वसागन्धी ज्वालाबभ्रुशिरोरुहः। क्रव्याद्गणपरीवारश्चिताग्निरिव जङ्गमः'—इति रघुवंशे (१५।१६)। तट्टीकायां 'क्रव्यादो गृध्रादयः'—इति मल्लिनाथः। व्याघ्रादिहिंस्रपशुभेदः; 'श्वभिर्हतस्य यन्मांसं शुचि तन्मनुरब्रवीत्। क्रव्याद्भिश्च हतस्यान्यैश्चाण्डालाद्यैश्च दस्युभिः'—इति मनुः (५।१३१)। 'क्रव्याद्भिः व्याघ्रश्येनादिभिः'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। शवदाहकाग्निभेदः; 'अपाग्ने! अग्निमामादं जहि निष्क्रव्यादं सेध इत्ययं वा आमाद् येनेदं मनुष्याः पक्त्वाश्नन्ति अथ येन पुरुषं दहन्ति स क्रव्याद् एतावेवैतद्भावतोऽपहन्ति। हे अग्ने! गार्हपत्य! आमादमग्निमपजहि परित्यज, क्रव्यादमग्निं निःसेध निःशेषं दूरे गमय'—इति भाष्यम्। 'योऽग्निं क्रव्यात् प्रविवेश यो गृहम्'—इति ऋग्वेदे (१०।१६।१०)। ७३

क्रव्यादः पुं. [क्रव्यं मांसमत्ति, अद्+उपपदे 'कर्मण्यण्' इति अण्। कृत्तं छिन्नं तदेव पुनर्विशेषतः कृत्तं पक्वं च भुङ्क्ते इति, कृत्तविकृत्तपक्वशब्दस्य पृषोदरादित्वात् क्रव्यादेशः] राक्षसः; सिंहः; श्येनः; शवभक्षकाग्निः; 'क्रव्यादो मृतभक्षणे'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। मांसाशिनि त्रि.। ७३

क्रिमिः पुं. [क्रमु पादविक्षेपे, 'क्रमितमिशतिस्तम्भामत इच्च' इति इन्, कित् अत इच्च] कीटः; कृमिः; द्रुमामयः; रोगविशेषः; 'ज्वरो विवर्णता शूलं हृद्रोगश्छर्दनं भ्रमः। भक्तद्वेषोऽतिसारश्च संजातक्रिमिलक्षणम्'—इति माधवकरः। ६३६

क्रिया स्त्री. [क्रियते अनया, असौ अस्याम् इति वा। डुकृञ् करणे, करणकर्माधिकरणादौ च यथायथं श प्रत्ययः, 'रिङ् शयग्लिङ्क्षु' इति रिङादेशः, 'अचि-श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ' इति इयङ्] कर्म; आरम्भः; निष्कृतिः; शिक्षा; पूजनं; सम्प्रधारणम्; उपायः; चेष्टा; चिकित्सा; 'आरम्भो निष्कृतिः शिक्षा पूजनं सम्प्रधारणम्। उपायः कर्म चेष्टा च चिकित्सा च नव क्रियाः'—इति भावप्रकाशे। कारणं; श्राद्धं; शौचम्। आचारातिक्रमः (७८३)। ३८२

क्रियावान् [त्] त्रि. [क्रिया अस्यास्तीति, मतुप्, मस्य वः] कर्मसूद्यतः; क्रियासु नियुक्तः; 'पुत्रीयता तेन वराङ्गनाभिरानायि विद्वान् क्रतुषु क्रियावान्'—इति भट्टिः (१।१०)। ३८३

क्रीडा स्त्री. [क्रीड्+भावे अप् ततष्टाप्] परीहासः; खेला; 'स वै भागवतो राजा पाण्डवेयो महारथः। बालक्रीडनकैः क्रीडन् कृष्णक्रीडां य आददे'—इति भागवते (२।३।१५)। अवज्ञानम्। ४३२

क्रीडारथः पुं. [क्रीडार्थं रथः] क्रीडार्थरथः; पुष्परथः। ४४६

क्रुञ्चः पुं. [क्रुञ्च्+अच्] बकविशेषः; पक्षिभेदः; क्रौञ्चः; क्रुङ्; क्रुञ्चा; क्रौञ्चा; कालिकः; कलिकः; 'वायवे बलाका इन्द्राग्निभ्यां क्रुञ्चान्'—इति यजुर्वेदे (२४।२२)। क्रौञ्चपर्वतः; अयं हिमवतः पौत्रः मैनाकस्य पुत्रः। २४४

क्रूरः त्रि. [कृत् छेदन + 'कृतेश्छः क्रू च' इति रक्प्रत्ययः धातोः क्रूवादेशश्च] निर्दयः; नृशंसः; घातुकः; पापः; 'स्त्रियो ह्यकरुणाः क्रूरा दुर्मर्षाः प्रियसाहसाः'—इति भागवते (९।१४।३७)। 'तस्मिन्नुपायाः सर्वे नः क्रूरे प्रतिहतक्रियाः।' कठिनः; 'तस्याभिषेकसम्भारं कल्पितं क्रूरनिश्चया'—इति रघुवंशे (१२।४)। पर-

द्रोहकारी; 'क्रूरस्तस्मिन्नपि न सहते सङ्गमं नौ कृतान्तः' —इति मेघदूते (१०७)। घोरः; 'क्रूरो लुब्धोऽलसोऽसत्यः प्रमादी भीरुरस्थिरः'—इति पञ्चतन्त्रे (३।२५)। उष्णः; प्रथम-तृतीय-पञ्चम-सप्तम-नवमैकादशराशयः; 'ओजोऽथ युग्मं विषमः समश्च क्रूरोऽथ सौम्यः पुरुषोऽङ्गना च। चरस्थिरद्व्यात्मकनामधेया मेषादयोऽमी क्रमशः प्रदिष्टाः'—इति दीपिका। पुं. भूताङ्कुशवृक्षः; रक्तकरवीरवृक्षः; श्येनपक्षी; कङ्कपक्षी। ३४२

क्रूरकर्मकृत् पुं. [क्रूरकर्म + कृ + क्विप् तुक्] उग्रकर्मकारी। ३७२

क्रूरकर्मा [न्] पुं. [क्रूरं कर्म यस्य] भयानककर्मकर्त्ता; हिंस्रः। ३७२

क्रोडः पुं. [क्रुड् + घञ्। क्रोडोऽस्यास्तीति, अर्श आदित्वादच् वा] शनिः; शूकरः (२२६); वाराहीकन्दः; 'नदीशैवालदिग्धाङ्गं हरिश्मश्रुजटाधरम्। नग्नैः शङ्खनखैर्गात्रैः क्रोडैश्चित्रैरिवार्पितम्'—इति महाभारते (१३।५०।२०)। ४८

क्रोडम् क्ली.–स्त्री. [क्रुड् + घञ्] बाह्वोर्मध्यम्; भुजान्तरम्; उरः; वत्सं; वक्षः; उत्सङ्गः; भोगः; वपुषः प्राक्; 'इन्द्रस्य क्रोडोऽदित्यै पाजस्यम्'—इति यजुर्वेदे (२५।८)। 'शेषमिडापात्र्यामासिच्य क्रोडमनस्थीनि च पास्यति'—इति कात्यायनश्रौतसूत्रे (६।८।१३)। 'तत्र तरोर्निर्मितनीडक्रोडे पक्षिणः सुखं वर्षासु निवसन्ति'—इति हितोपदेशे। ५२८

क्रोडीकरणम् क्ली. [क्रोड + कृ + भावे ल्युट्। अभूततद्भावे च्वि] आलिङ्गनं; क्रोडीकृतिः। ५६८

क्रोधः पुं. [क्रुध् + भावे घञ्] प्रतिकूले सति तैक्ष्ण्यस्य प्रबोधः; कोपः; अमर्षः; रोषः; प्रतिघः; रुट्; क्रुत्; आमर्षः; भीमः; क्रुधा; रुषा; हेलः; हरः; हृणिः; त्यजः; भामः; एहः; ह्वरः; तपुषी; जूर्णिः; मन्युः; व्यथिः। 'काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः। महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम्'—इति भगवद्गीतायां ३ अध्याये। ३६२

क्रोधनः त्रि. [क्रुध् + 'क्रुधमण्डार्थेभ्यश्च'—इति युच्] क्रोधविशिष्टः; अमर्षणः; कोपी; क्रोधी; रोषणः; 'यद्रामेण कृतं तदेव कुरुते द्रौणायनिः क्रोधनः'—इति वेणीसंहारे तृतीयाङ्के। कुरुवंशीयनृपविशेषः; 'ततश्च क्रोधनस्तस्माद् देवातिथिरमुष्य च'—इति भागवते (९।२२।२१)। षष्टिवर्षान्तर्गतोनषष्टितमवर्षभेदः; 'रोगो मरणदुर्भिक्षं विरोधोतरसङ्कुलम्। क्रोधने विषयं सर्वं समाख्यातं हरप्रिये'—इति तन्त्रे। भैरवभेदः; 'असिताङ्गो रुरुश्चण्ड उन्मत्तः क्रोधनस्तथा'—इति तन्त्रे। ३६१

क्रोष्टा [ष्टु] पुं.–स्त्री. [क्रोशति रौतीति। क्रुश् + 'सितनिगमिमसीति' तुन्, 'तृज्वत् क्रोष्टुः'—इति तृज्वत्] शृगालः; 'ब्राह्मणस्य प्रशान्तस्य हविर्ध्वाङ्क्षैः प्रलुप्यते। शार्दूलस्य गुहां शून्यां नीचः क्रोष्टाभिमर्दति' —इति महाभारते (१।२१४।८)। यदुवंशीयो राजविशेषः; 'क्रोष्टोस्तु शृणु राजेन्द्र वंशमुत्तमपौरुषम्। यदोर्वंशधरस्याथ यज्वनः पुण्यकर्मणः। क्रोष्टोर्हि वंशं श्रुत्वेमं सर्वपापैः प्रमुच्यते'—इति हरिवंशे (३३।६१)। २२९

क्रौञ्चः पुं. [क्रुञ्च + प्रज्ञाद्यण् स्वार्थे] पक्षिभेदः; कुङः; क्रुञ्चः; क्रुञ्चा; क्रौञ्चा; कालिकः; कालीकः; कलिकः; 'क्रौञ्चो वृष्योऽतिरुचिकृदश्मरीं हन्ति नित्यशः। शोषमूर्च्छाहरो दीप्यो हन्ति कासमरोचकम्।' पर्वतविशेषः; 'एतेषां मानसी कन्या मेना नाम महागिरेः। पत्नी हिमवतः श्रेष्ठा यस्या मैनाक उच्यते। मैनाकस्य सुतः श्रीमान् क्रौञ्चो नाम महागिरिः। पर्वतप्रवरः शुभ्रो नानारत्नसमन्वितः'—इति हरिवंशे (१९।१३।१४)। कुररपक्षी; द्वीपभेदः; 'क्रौञ्चद्वीपः समुद्रेण दधिमण्डोदकेन च। आवृतः सर्वतः क्रौञ्चद्वीपतुल्येन मानतः। दधिमण्डोदकश्चापि शाकद्वीपेन संवृतः। क्रौञ्चद्वीपस्य विस्तारद् द्विगुणेन महामुने!'—इति विष्णुपुराणे (२।४।५७–५८)। क्रौञ्चद्वीपाधिपतिः प्रियव्रतराजपुत्रो घृतपृष्ठः; 'तथा च बहिः क्रौञ्चद्वीपो द्विगुणः स्वमानेन क्षीरोदेन परीत उपक्लृप्तो वृतो यथा, कुशद्वीपो घृतोदेन यस्मिन् क्रौञ्चो नाम पर्वतराजो द्वीपनामनिर्वर्तक आस्ते। तस्मिन्नपि प्रैयव्रतो घृतपृष्ठो नामाधिपतिः–इति भागवते (५।२०।१८-२०)। दैत्यविशेषः; मयदानवपुत्रः; 'ईहामृगगणाकीर्णां पवनाघूर्णितद्रुमाम्। निर्मितां स्वेन पुत्रेण क्रौञ्चेन दिवि कामगाम्'—इति हरिवंशे (४६।२४)। 'क्रौञ्चे क्रौञ्चो हतो दैत्यः क्रौञ्चाद्रौ हेमकन्दरे। स्कन्देन युद्ध्वा सुचिरं चित्रमायी सुमायिना। स शैलस्तस्य दैत्यस्य ख्यातश्चित्रेण कर्मणा।

केतुतामगमत्तस्य नाम्ना क्रौञ्चः स उच्यते'—इति मृगेन्द्रसंहितायाम्। अर्हतां ध्वजः; राक्षसविशेषः। २४४

क्रौञ्चारातिः पुं. [क्रौञ्चस्य क्रौञ्चपर्वतस्य दैत्यस्य वा अरातिः शत्रुः] कार्तिकेयः; क्रौञ्चारिः; परशुरामः। १९

क्लमथः, क्लमथुः पुं. [क्लम् + 'शमादिभ्योऽथच्' इति अथच् (१), बाहुलकादथुच् अट्वित्त्वात् (२)] आयासः; क्लमः; (६०१) **क्लिन्नम्** त्रि. [क्लिद् + कर्तरि क्त]; आर्द्रम्; 'गङ्गायाः सलिलक्लिन्ने भस्मन्येषां महात्मनाम्। स्वर्गं गच्छेयुरत्यन्तं सर्वे च प्रपितामहाः'—इति रामायणे (१।४२।१९)। 'गीला' इति भाषा। ६०१

क्लिन्नाक्षः त्रि. [श्लेष्मादिक्लेदेन क्लिन्ने क्लेदयुक्ते अक्षिणी यस्य] श्लेष्मादिना क्लिन्नचक्षुः; कफादिजनितक्लेदयुक्तं चक्षुर्यस्य सः; चुल्लः; चिल्लः; पिल्लः [कर्मधारयेण क्लिन्ने चक्षुषि क्ली.] ६०७

क्लीबः पुं.-क्ली. [क्लीबृ अध्याष्टर्ये, 'इगुपधेति' क, पृषोदरादित्वाद् वत्वम्] स्त्रीपुरुषभिन्नः; पण्डः; नपुंसकं; तृतीयप्रकृतिः; षण्डः; सण्डः; शण्ढः; पुरुषत्वहीनः; 'न मूत्रं फेनिलं यस्य विष्ठा चाप्सु निमज्जति। मेढ्रश्चोन्मादशुक्राभ्यां हीनः क्लीबः स उच्यते'—इति उद्वाहतत्त्वे। 'नष्टे मृते प्रव्रजिते क्लीबे च पतिते पतौ। पञ्चस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते'—इति पराशरसंहितायाम्। त्रि. विक्रमहीनः (८२०); कच्चिद्राजन् न निर्वेदादापन्नः क्लीबजीविकाम्'—इति महाभारते (३।३३।१३)। धर्मकार्यादौ निरुत्साहः; 'आचारहीनः क्लीबश्च नित्यं याचनकस्तथा'—इति मनुः (३।१६५)। ३४७

क्लेशः पुं. [क्लिश् + भावे घञ्] दुःखम्; आदीनवः; आस्रवः; 'क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्'—इति भगवद्गीतायाम् (१२।५)। कोपः; व्यवसायः। ८५३

क्लोम [न्] क्ली. [क्लुङ् गतौ + मनिन्] फुप्फुसं; पुप्फुसं; तिलकं; क्लोमं; कोमम्; 'फेफड़ा' इति भाषा। 'बाह्वोर्द्वयोर्मध्ये वक्षः तन्मध्ये हृदयं तत्पार्श्वे क्लोम पिपासास्थानम्'—इति वैद्यकम्। 'उदकवहे द्वे तयोर्मूलं तालु क्लोम च'—इति सुश्रुते शारीरस्थाने नवमोऽध्यायः। (क्लोमम् इत्यकारान्तोऽपि)। ६३६

क्षणः पुं. [क्षणोति हन्ति नाशयति वा सर्वं यथाकालम् आयुरवसानं वा। काल एव युगान्ते सर्वमात्मसात् करोतीत्यर्थः। स एवांशभेदेन नानाख्यो भवतीत्यर्थः] अवसरः; [क्षणोति दुःखं नाशयति उत्सवकाले, क्षणु हिंसायाम् + अच्] उत्सवः (७६३); 'नवानघोऽघो बृहतः पयोधरान् समूढकर्पूरपरागपाण्डुरम्। क्षणं क्षणोत्क्षिप्तगजेन्द्रकृत्तिना स्फुटोपमं भूतिसितेन शम्भुना'—इति माघे (१।४)। (८५१) त्रिंशत्कलापरिमितकालः; दशपलपरिमितः; निमेषक्रियावच्छिन्नस्य कालस्य चतुर्थभागः; 'आयुषः क्षण एकोऽपि न लभ्यः स्वर्णकोटिभिः। स चेत्तु विफलो याति का नो हानिस्ततोऽधिका'—इति शब्दार्थचिन्तामणिः। 'क्वचिद्रुष्टः क्वचित्तुष्टो रुष्टस्तुष्टः क्षणे क्षणे। अव्यवस्थितचित्तस्य प्रसादोऽपि भयावहः'—इति शिष्टोपदेशः। अवसरः; निर्व्यापारस्थितिः; परतन्त्रत्वं; मध्यम्; उत्सवः; पर्व; प्रशस्तमुहूर्तः; 'अथ काले शुभे प्राप्ते तिथौ पुण्ये क्षणे तथा'—इति नलोपाख्याने (५।१)। ७५०

क्षणदा स्त्री. [क्षणम् उत्सवं ददाति। क्षणद + स्त्रियां टाप्] रात्रिः; 'इमं लोकममुं चैव रमयन् सुतरां यदून्। रेमे क्षणदया दत्तक्षणस्त्रीक्षणसौहृदः'—इति भागवते (३।३।२१)। हरिद्रा। १०७

क्षणमात्रानुरागी [न्] त्रि. [क्षणमात्रं स्वल्पकालम् अनुरागो यस्य] हरिद्रारागः; हरिद्रारागकः। ३७५

क्षणिका स्त्री. [क्षणिक + स्त्रियां टाप्] विद्युत्; क्षणकालमात्रस्थायिनी; 'योऽस्ति यस्य यदा मांसमुभयोः पश्यतान्तरम्। एकस्य क्षणिका प्रीतिरन्यः प्राणैर्वियुज्यते'—इति हितोपदेशे (१।१५४)। ६०

क्षतम् क्ली. [क्षण्यते वध्यतेऽनेन। क्षण् + करणे क्त] स्रवद्रक्तपूयादि; व्रणः; अरुः; ईर्मं; क्षणनुः; तद्वति त्रि.। विदारणम्; 'नखक्षतानीव वनस्थलीनाम्'—इति कुमारसम्भवे (३।२९)। विनाशः; 'क्षतात् किल त्रायत इत्युदग्रः क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः'। त्रि. ताडितः; विद्धः; 'रघोरवष्टम्भमयेन पत्रिणा हृदि क्षतो गोत्रभिदप्यमर्षणः'—इति रघुवंशे (३।५३)। क्षतियुक्तः; 'रुद्राणामपि मूर्द्धानः क्षतहुङ्कारशंसिनः।' रोगविशेषः; 'मधुकाष्टपलं द्राक्षा प्रस्थक्वाथे घृतं पचेत्। पिप्पल्यष्टपले कल्के प्रस्थं सिद्धे च शीतले। पृथगष्टपलं क्षौद्रशर्कराभ्यां विमिश्रयेत्। समं सक्तु-

क्षतक्षीणे रक्तगुल्मेषु तद्धितम्'—इति चरकः। ६३०

क्षतजम् क्ली. [क्षतात् व्रणात् जातम् उत्पन्नम् इति। जन्+ड] रक्तः; 'स च्छिन्नमूलः क्षतजेन रेणुः तस्योपरिष्टात् पवनावधूतः।' पूयम्। ६३२

क्षतव्रतः त्रि. [क्षतं भ्रष्टं व्रतमस्य] ध्वस्तनियमः; अवकीर्णी। ४०४

क्षत्ता [ऋ] पुं. [क्षद् संवृतौ। सौत्रधातुरयम्। 'तृन्तृचौ शंसिक्षदादिभ्यः संज्ञायां चानिटौ' इति संज्ञायां तृच् स चानिट्] द्वाःस्थः; सारथिः (४४८); दासीपुत्रः; 'ततः प्रीतमनाः क्षत्ता धृतराष्ट्रं विशाम्पते! उवाच दिष्ट्या कुरवो वर्द्धन्त इति विस्मितः'—इति महाभारते (१।२०१।१७)। नियुक्तः; ब्रह्मा; क्षत्रियायां शूद्राज्जातः; 'शूद्रादायोगवः क्षत्ता चाण्डालश्चाधमो नृणाम्। वैश्यराजन्यविप्रासु जायन्ते वर्णसङ्कराः'—इति मनुः (१०।१२)। मत्स्यः। ४२४

क्षत्त्रः पुं. [क्षद्+'गुधुवीपचिवचियमिसदिक्षदिभ्यस्त्रः' इति त्र। यद्वा क्षतः क्षतात् त्रायते इति, त्रै+क] क्षत्त्रियः; 'क्षतात् किल त्रायत इत्युदग्रः क्षत्त्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः'—इति रघुवंशे (२।५३)। 'नाश्वकर्णादिवत् केवलरूढः किन्तु पङ्कजादिवद् योगरूढः'—इति मल्लिनाथः। क्ली. [क्षतः त्रायते इति, क्षत्+त्रै+क] शरीरं; तगरं; क्षत्त्रियकुलं; 'अक्रविहस्ता सुकृते परस्पायं त्रासाथे वरुणेना स्वन्तः। राजानां क्षत्रमहृणीयमाना सहस्रस्थूणं बिभृथः सह द्वौ'—इति ऋग्वेदे (५।६२।६)। ४२१

क्षत्त्रियः पुं. [क्षत्त्रे राष्ट्रे साधुः, क्षत्त्रस्यापत्यं वा, 'क्षत्त्राद् घः' इति जातौ घ। क्षदति रक्षति जनान् इति क्षत्त्रः। क्षद् संवृतौ सौत्रः, ततः 'गुधीत्यदिना' त्र। क्षतात् त्रायते इति डे पृषोदरादित्वात् क्षतान्त्याकारलोपे वा क्षत्त्रः। क्षत्त्रो द्वितकारः। पुंनपुंसकयोः क्षत्रः। 'पतिर्मम क्षत्त्रमशेषभूभृत्प्रभाभिरामो भरतश्च जिष्णुः'—इति राघवपाण्डवीये। क्षत्त्र एव क्षत्त्रियः, स्वार्थे अपत्यार्थे वा घ इत्यन्ये] ब्रह्मबाहुजवर्णविशेषः; 'लोकानां तु विवृद्धयर्थं मुखबाहूरुपादतः। ब्राह्मणं क्षत्त्रियं वैश्यं शूद्रं च निरवर्तयत्'—इति मनुः (१-३१)। (४२१) मूर्द्धाभिषिक्तः; राजन्यः; बाहुजः; विराट्; क्षत्त्रः; द्विजलिङ्गी; राजा; नाभिः; नृपः; मूर्द्धकः; पार्थिवः; सार्वभौमः; 'बाह्वायत्तं क्षत्त्रियैर्मानवानां लोकश्रेष्ठं धर्ममासेवमानैः। सर्वे धर्माः सोपधर्मास्त्रयाणां राज्ञो धर्मादिति वेदात् शृणोमि'—इति भागवतम्। वटुकभैरवः; 'क्षेत्रदः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रज्ञः क्षत्रियो विराट्। श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी मखान्तकृत्'—इति विश्वसारोद्धारतन्त्रे आपदुद्धारकल्पे वटुकभैरवस्तोत्रम्। ३९२

क्षपणः त्रि. [क्षपयति क्षिपति दूरीकरोति लज्जाम् इति। क्षप्+प्रेरणे, कर्तरि ल्यु। क्षपयति विषयरागम् इति वा] क्षपणकः; जैनः; निर्लज्जः; बौद्धसंन्यासी; [भावे ल्युट्] क्षपणम्; 'भुवत्वाऽतोऽन्यतमस्यान्नममत्या क्षपणं त्वहम्'—इति मनुः (४।२२२)। ३४५

क्षपा स्त्री. [क्षपयति दूरयति चेष्टामिन्द्रियाणाम्। क्षप्+अच् टाप्] रात्रिः; 'राजानं तु कुरुश्रेष्ठ ते हंसमधुरस्वराः। आश्वासयन्तो विप्राग्र्याः क्षपां सर्वां व्यनोदयन्'—इति महाभारते (३।१।४३)। हरिद्रा। १०७

क्षमः त्रि. [क्षमते इति, क्षम्+अच्] शक्तः; सहः; प्रभूष्णुः; रघुवंशे (११।६)। 'इदं किलाव्याजमनोहरं वपुः तपःक्षमं साधयितुं य इच्छति'—इति शाकुन्तले। हितः; क्ली. [क्षम्+पचाद्यच्] युक्तम्; 'यदि यथा वदति क्षितिपस्तथा त्वमसि किं पुनरुत्कुलया त्वया। अथ तु वेत्सि शुचिव्रतमात्मनः पतिगृहे तव दास्यमपि क्षमम्'—इति शाकुन्तले। ३८६

क्षमा स्त्री. [क्षमते आत्मोपरिस्थितानां जीवानाम् अपराधं या। क्षम्+अच्+षित्वादङ् वा ततष्टाप्] पृथिवी; 'विभूषणान्युन्मुमुचुः क्षमायां पेतुर्बभञ्जुर्वलयानि चैव'—इति भट्टिः (३।२२)। क्षान्तिः (७२५); 'बाह्ये चाध्यात्मिके चैव दुःखे चोत्पादिते क्वचित्। न कुप्यति न वा हन्ति सा क्षमा परिकीर्तिता'—इत्येकादशीतत्त्वम्। रात्रिः; दुर्गा; 'जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी। दुर्गा शिवा क्षमा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते'—इति दुर्गार्चातत्त्वम्। 'क्षमा तु श्रीमुखे कार्या योगपट्टोत्तरीयका। पद्मासनकृताधारा वरदोद्यतपाणिनी। शूलमेखलसंयुक्ता प्रशान्ता योगसंस्थिता। सितपुष्पोपहारेण सितहोमेन सिद्धिदा'—इति देवीपुराणे। खदिरः; गोपीविशेषः; 'मया पूर्वं

च त्वं दृष्टो गोप्या च क्षमया सह। सुवेशयुक्तो मालावान् गन्धचन्दनसंयुतः'—इति ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिखण्डे। १५६

क्षयः पुं. [क्षि क्षये, 'नन्दिग्रहिपचादिभ्यः' इति अच्] लयः; संवर्तः; प्रलयः; कल्पः; कल्पान्तः; निलयः (२९१); नीतिवेदिनां त्रिवर्गान्तर्गतप्रथमवर्गः; 'क्षयः स्थानं च वृद्धिश्च त्रिवर्गो नीतिवेदिनाम्'—इत्यमरः। कासरोगविशेषः; यक्ष्मा; शोषः; राजयक्ष्मा; रोगराजः; गदाग्रणीः; उष्मा; अतिरोगः; रोगाधीशः; नृपामयः; 'शृणुत गुणगरिष्ठा व्याधिघोरं नराणां भवति रहितचेष्टो वातुलः प्राणिनां वै। चिरनिरयकरोऽयं प्राकृतैः कर्मपाकैरिह परिभवकारी मानुषस्य क्षयोऽधम्।' [क्षयत्यस्मादनेन वा, क्षि+क्षये, अप्। क्षयति विनाशयति इति अन्तर्भूतणिजन्तादच्] रोगमात्रम्। ११७

क्षवथुः पुं. [क्षु+'ट्वितोऽथुच्' इति अथुच्] कासः; 'भवन्ति गाढं क्षवथोर्विघाताच्छिरोऽक्षिनासाश्रवणेषु रोगाः। कण्ठास्यपूर्णत्वमतीवतोदः कूजश्च वायोरथवा प्रवृत्तिः'—इति उत्तरतन्त्रे। क्षुतं; कण्डूयनम्। ६०१

क्षान्तिः स्त्री. [क्षम्+भावे क्तिन्] सत्यपि सामर्थ्ये अपकारिणि अपकाराचिकीर्षा; तितिक्षा; सहिष्णुता; क्षमा। 'शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च'—इति भगवद्गीतायाम् (१८।४२)। ७२५

क्षामः त्रि. [क्षै+कर्तरि क्त, 'क्षायो मः' इति निष्ठातस्य मत्वम्] क्षीणः; अबलः; 'विद्योतमानं वपुषा तपस्युग्रयुजा चिरम्। नातिक्षामं भगवतः स्निग्धापाङ्गावलोकनात्'—इति भागवते (३।२१।४६)। विष्णुः (सर्वरूपत्वात्); 'आश्रमः श्रमणः क्षामः सुपर्णो वायुवाहनः'—इति महाभारते (१३।१४९।१०४)। [स्त्रियां टाप्] 'आधिक्षामां विरहशयने सन्निषण्णैकपार्श्वाम्'—इति मेघदूते (८९)। ७१७

क्षारः पुं. [क्षर्+सञ्चलने+ज्वलादित्वाद् ण] भस्म; रसविशेषः; 'क्षारः क्लेदं जनयति मुखे स्वादुरुष्णो विदाही शूलश्लेष्मारुचिभृत्तृषामूत्रकृच्छ्रोपणश्च। आनाहं सञ्जनयति पुनर्वह्निसन्धुक्षणः स्यादेवं प्रोक्तं विदितगुणकैः कोविदैः क्षारवीर्यम्'—इति हारीते प्रथमस्थाने ६ अध्याये। लवणम्; 'दुःखे मे दुःखमकरोर्व्रणे क्षारमिवाददाः। राजानं प्रेतभावस्थं कृत्वा रामं च तापसम्'—इति रामायणे (२।७३।३)। काचः; गुडः; टङ्कणः; 'सौभाग्यं टङ्कणं क्षारो धातुद्रावकमुच्यते—' इति भावप्रकाशः। सर्जिक्षारः। ६९

क्षारणा स्त्री. [क्षर् संचलने, ण्यन्ताद् भावे युच्, टाप्] निन्दा; आक्रोशः। १४९

क्षितिः स्त्री. [क्षियति वसत्यस्याम्, क्षि निवासगत्योः, संज्ञायां क्तिच्] पृथ्वी; 'महालये क्षयं याति क्षितिस्तेन प्रकीर्तिता। काश्यपी कश्यपस्येयमचला स्थिररूपतः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। 'मृतं शरीरमुत्सृज्य काष्ठलोष्टसमं क्षितौ। विमुखा बान्धवा यान्ति धर्मस्तमनुगच्छति'—इति मनुः (४।२४१)। वासः; क्षयः; कालभेदः; प्रलयः। रोचनानामगन्धद्रव्यम्। १५६

क्षितिधरः पुं. [धरतीति धरः, धृ+अच्, क्षितेः धरः; षष्ठीसमासः] पर्वतः; 'अथ विबुधगणांस्तानिन्दुमौलिर्विसृज्य क्षितिधरपतिकन्यामाददानः करेण'—इति कुमारसम्भवे (७।९४)। कूर्मवासुकिदिग्गजाः। १६५

क्षितिरुहः पुं. [क्षितौ रोहतीति, रुह्+क] वृक्षः; 'सन्धानं वः करिष्यामि सह क्षितिरुहैरहम्'—इति विष्णुपुराणे। (१।१५।६), १७७

क्षिप्तः त्रि. [क्षिप्+कर्मणि क्त] त्यक्तः; नुत्तः; नुन्नः; अस्तः; निष्ठ्युतः; विद्धः; ईरितः; निक्षेपकृतवस्तु; उद्गीर्णः; 'क्षिप्ता इवेन्दोः स रुचोऽब्धिवेलं मुक्तावलीराकलयाञ्चकार'—इति माघे (३।७३)। पतितः; 'क्षिप्तमायतमदर्शयदुर्व्यां काञ्चिदामजघनस्य महत्त्वम्'—इति माघे (१०।७७)। 'रतेषु उर्व्यां क्षिप्तं पतितम्'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। हतः; 'केशरी निष्ठुरक्षिप्तमृगयूथो मृगाधिपः।' अवज्ञातः; 'तिरस्कृता विप्रलब्धाः शप्ताः क्षिप्ता हता अपि'—इति भागवते (२।१८।४८)। विस्रस्तः; 'नारसिंही नृसिंहस्य बिभ्रती सदृशं वपुः। प्राप्ता तत्र सटाक्षेपक्षिप्तनक्षत्रसंहतिः'—इति मार्कण्डेये (८८।१९)। वायुग्रस्तः; विक्षिप्तः। 'पागल' इति भाषा। ७६७

क्षिप्रम् क्ली. [क्षिप्+'स्फायितञ्चिवञ्चीति' इति रक्] शीघ्रं; तद्युक्ते त्रि. 'विनाशं व्रजति क्षिप्रमामपात्रमिवाम्भसि'—इति मनुः (३।१७९)। मर्मविशेषः; 'तत्र पादाङ्गुष्ठाङ्गुल्योर्मध्ये क्षिप्रं नाम मर्म, तत्र विद्धस्याक्षेपकेण मरणम्'—इति सुश्रुते शारीरस्थाने

षष्ठेऽध्याये। ६९७

क्षीणः त्रि [क्षि+क्त, 'निष्ठायामण्यदर्थे' इति दीर्घः, 'क्षियो दीर्घात्' तस्य नः] अबलः; दुर्बलः; कृशः; क्षामः; तनुः; छातः; तलिनः; अमांसः; पेलवः; 'ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति।' पुं. राजयक्ष्मान्तर्गतरोगविशेषः; 'क्षीणे सरक्तमूत्रत्वं पार्श्वपृष्ठकटीग्रहः।' 'यद्यत् सन्तर्पणं शीतम् अविदाहि हितं लघु। अन्नपानं निषेव्यन्तत् क्षतक्षीणैः सुखार्थिभिः'—इति चरकः। ६९८

क्षीरम् क्ली. [अद्यते इति, 'घसेः किच्च' इति ईरन् उपधालोपे कत्वं षत्वं च] दुग्धं; 'स्त्रीक्षीरं चैव वर्ज्यानि सर्वशुक्तानि चैव हि'—इति मनुः (५।९)। जलं (६४८): 'अव त्मना भरते केतवेदा अव त्मना भरते फेन मुदन्। क्षीरेण स्नातः कुयवस्य योषे हते ते स्यातां प्रवणे शिफायाः'—इति ऋग्वेदे (१।१०४।३)। सरलद्रवः; 'जटाः कृत्वा गमिष्यामि न्यग्रोधक्षीरमानय। तत्क्षीरं राजपुत्राय गुहः क्षिप्रमुपाहरत्'—इति रामायणे (२।५२।६९)। २७४

क्षीरोदतनया स्त्री. [क्षीरोदस्य क्षीरसमुद्रस्य तनया] क्षीरसागरसुता; लक्ष्मीः। ३१

क्षीवः त्रि. [क्षीवृ मदे, कर्तरि क्त, 'अनुपसर्गात् फुल्लक्षीवेति' तलोपो निपातनात्] सुरामत्तः; 'मत्ते शौण्डोत्कटक्षीवाः'—इत्यमरः। 'उन्मत्तभूताः प्लवगा मधुपानप्रहर्षिताः। क्षीवाः कुर्वन्ति हास्यं च कलहांश्च तथापरे'—इति रामायणे (५।६०।१२)। ३८६

क्षुण्णम् त्रि. [क्षुद्यते इति, क्षुद् संपेषणे, कर्मणि क्त] प्रहतम्; अभ्यस्तम्; 'रेखामात्रमपि क्षुण्णादामनोर्वर्त्मनः परम्'—इति रघुवंशे (१।१७)। 'उदीर्णरागप्रतिरोधकं जनैः, अभीक्ष्णमक्षुण्णतयातिदुर्गमम्। उपेयुषो मोक्षपथं मनस्विनः, त्वमग्रभूमिर्निरपायसंश्रया'—इति माघे (१।३२)। चूर्णीकृतम्; 'सोऽपि कोपान्महावीर्यः खुरक्षुण्णमहीतलः। शृङ्गाभ्यां पर्वतानुच्चांश्चिक्षेप च ननाद च। वेगभ्रमणविक्षुण्णा मही तस्य व्यशीर्यत'—इति मार्कण्डेये (८३।२४–२५)। ३५२

क्षुत् [ध्] स्त्री. [क्षुध्+संपदादित्वाद् भावे क्विप्] क्षुधा; 'तात! तात! ददस्वान्नम् अम्बाम्ब! भोजनं दद। क्षुन्मे बलवती जाता जिह्वाग्रं शुष्यते तथा'—इति मार्कण्डेयपुराण (२।९।५४)। ३६१

क्षुद्रः त्रि. [क्षुणत्ति सौजन्यं चूर्णीकरोति। क्षुद्+'स्फायितञ्चीति' इति रक्] अधमः; 'क्षुद्रेऽपि नूनं शरणं प्रपन्ने ममत्वमुच्चैः शिरसां सतीव'—इति कुमारसम्भवे (१।१२)। कृपणः (३४७); दरिद्रः (३४८); अल्पः (६८८); 'तं भीमः समरश्लाघी बलेन बलिनाम्बरः। जघान पशुमारेण व्याघ्रः क्षुद्रमृगं यथा'—इति महाभारते (३।१०।२४)। क्रूरः (७९६); तुच्छः; 'क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप!'—इति भगवद्गीतायाम् (२।३)। ३४६

क्षुद्रघण्टिका स्त्री. [घण्टा+अल्पार्थे कन्, टाप् इत्वञ्च, तत. क्षुद्रा घण्टिका इति कर्मधारयः] कटचलङ्कारविशेषः; किङ्किणी; क्षुद्रघण्टी; प्रतिसरा; किङ्किणीका; कङ्कणी; कङ्कणिका; क्षुद्रिका; घर्घरी। 'घंटी' 'घूंघरू' इत्यादि भाषा। ५६०

क्षुद्रतण्डुलः पुं. [क्षुद्रः हीनश्चासौ तण्डुलः] कणः; कणरूपो व्रीहिः। ५७८

क्षुद्रधान्यम् क्ली.– पुलाकः; अणु-अन्नम्। ८२९

क्षुद्रनासिकः त्रि. [क्षुद्रा नासिका नासाऽस्य] स्वल्पनासायुक्तः; नःक्षुद्रः। ६०७

क्षुद्रपक्षिका स्त्री.– चटकिका; ग्रामचटका; कलविङ्की। २५३

क्षुद्रशङ्खः पुं. [क्षुद्रः शङ्खः स्वल्पशङ्खजातिः] शङ्खनखः; शङ्खनकः; क्षुल्लकः; शम्बूकः; भषशङ्खकः। ६६४

क्षुद्रा स्त्री. [क्षुद्+स्फायितञ्चिवञ्चिशकिक्षिपिक्षुदीति' इति रक् ततष्टाप्] सरघा; मधुमक्षिका; वेश्या (४९०); नटी (५९२); व्यङ्गा; कण्टकारिका; 'अनाक्रान्ता स्पृही व्याघ्री भण्टाकी च निदिग्धिका। सिंही धामनिका क्षुद्रा बृहती कण्टकारिका।' 'कण्टकारी तु दुष्पर्शा क्षुद्रा व्याघ्री निदिग्धका। कण्टालिका काण्टकिनीं धावनी बृहती तथा।' चाङ्गेरिका; हिंस्रा; मक्षिकामात्रं; वादरता; गवेधुका। २५६

क्षुद्राण्डः त्रि. [अण्डाद् अण्डसंघाताद् उत्पन्नः क्षुद्रः मत्स्यशिशुसंघः। 'वाहिताग्न्यादिषु' इति पूर्वनिपातः] मत्स्यशिशुसमूहः; पोताधानम्। ६६१

क्षुधा स्त्री. [क्षुध् बुभुक्षायाम्, सम्पदादित्वात् क्विप्, हलन्तत्वाद् वा टाप्] भोजनेच्छा; अशनाया; बुभुक्षा;

क्षुत्; जिघत्सा; 'व्याधयो निर्जिताः सर्वे क्षुधया नृपसत्तम! कुण्डली मुकुटी स्रग्वी तथैवालङ्कृतो नरः। क्षुधार्तो न विराजेत प्रेतवत्तृषितो नृणाम्। स्त्रीरत्नं विविधान् भोगान् वस्त्राण्याभरणानि च। न चेच्छति नरः कश्चित् क्षुधया कलुषीकृतः। यथा भूमिगतं तोयं रविरश्मिभिः शुष्यति। शरीरस्थस्तथा धातुः शुष्यते जाठराग्निना। न शृणोति न चाघ्राति चक्षुषा न च पश्यति। दह्यते वेपते मूढः शुष्यते च क्षुधार्दितः। मूकत्वं बधिरत्वं च जरान्धत्वं तु पङ्गुताम्। रौद्रं मर्यादहीनत्वं क्षुधा सर्वं प्रवर्तते। भगिनीं जननीं पुत्रं भार्यां दुहितरं तथा। भ्रातरं स्वजनं वापि क्षुधाविष्टो न विन्दति'—इति वह्निपुराणे। ३६१

क्षुधितः त्रि. [क्षुध्+कर्तरि क्त, यद्वा क्षुधा जातास्य इति। तारकादित्वादितच् प्रत्ययः] क्षुधान्वितः; बुभुक्षितः; जिघत्सुः; अशनायितः। ३६०

क्षुपः पुं. [क्षुप्+'इगुपधेति' क] क्षुपकः; ह्रस्वशाखाशिफः; क्षुद्रवृक्षः; 'तस्या रूपेण स गिरिर्वेशेन च विशेषतः। स सवृक्षक्षुपलतो हिरण्मय इवाभवत्'—इति महाभारते (१।१७२।२८)। गुच्छः (५७९); श्रीकृष्णात् सत्यभामायां जातपुत्रविशेषः; 'जज्ञिरे सत्यभामायां भानुर्भीमरथः क्षुपः। रोहितो दीप्तिमांश्चैव ताम्रजाक्षो जलान्तकः'—इति हरिवंशे १६३ अध्यायः। इक्ष्वाकुराजपिता; 'आसीत् कृतयुगे तात! मनुर्दण्डधरः प्रभुः। तस्य पुत्रो महाबाहुः प्रसन्धिरिति विश्रुतः। प्रसन्धेरभवत् पुत्रः क्षुप इत्यभिसंज्ञितः। क्षुपस्य पुत्रस्त्विक्ष्वाकुर्महीपालोऽभवत्प्रभुः'—इति महाभारते (१४।४।२–४) द्वारकापश्चिमदिक्स्थपर्वतः; 'दक्षिणस्यां लतावेष्टः पञ्चवर्णो विराजते। इन्द्रकेतुप्रतीकाशः पश्चिमस्यां तथा क्षुपः'—इति हरिवंशे १५७ अध्यायः। १७८

क्षुभितः त्रि. [क्षुभ्+कर्तरि क्त] भीतः; रुषाद्याविष्टः; सञ्चलितः (इति क्षुभ्धात्वर्थदर्शनात्)। ३५५

क्षुमा स्त्री. [क्षु+मक्+टाप्] अतसी; शणः; नीलिका; लताभेदः। ५८२

क्षुरप्रः पुं. [क्षुर इव पृणाति हिनस्ति छेदनक्रियां पूरयति वा। पृ+क, कित्वान्न गुणः] बाणविशेषः; 'स तु द्रोणं त्रिसप्तत्या क्षुरप्राणां समार्पयत्'—इति महाभारते (४।५३।४६)। क्षुरपानामकघासच्छेदनास्त्रम्। ४६९

क्षुरमर्दी [न्] पुं. [क्षुरं मृद्नातीति। क्षुर+मृद्+णिनि] नापितः; 'पुस्तं लेप्यादिकर्म स्यात् नापितश्चण्डिलः क्षुरी। क्षुरमर्दी दिवाकीर्तिर्मुण्डकोऽन्तावसाय्यपि'—इति हेमचन्द्रः। ५८९

क्षुरिका स्त्री. [क्षुर+ङीप् स्वार्थे कन्, टाप्, पूर्वं ह्रस्वश्च] क्षुरी; छुरिका; शस्त्री; असिपुत्री; असिधेनुका; खुरी; छूरी; कृपाणिका; धेनुपुत्री; छूरिका; पालङ्कघशाकं; मृत्पात्रविशेषः; कृष्णयजुर्वेदान्तर्गतोपनिषद्विशेषः; 'अमृतनादकालाग्निरुद्रक्षुरिकासर्वसारेत्युपक्रम्य सरस्वतीरहस्यानां कृष्णयजुर्वेदगतानां द्वात्रिंशत्सङ्ख्याकानाम् उपनिषदां सहनाववत्विति शान्तिः'—इति मुक्तिकोपनिषदि। ४७३

क्षुल्लकः त्रि. [क्षुधं लाति, क, क्षुल्ल+स्वार्थे कन्] क्षुद्रः; स्वल्पः; नीचकः; कनिष्ठः; दरिद्रः; दुःखितः; पामरः; 'येनोपशान्तिर्भूतानां क्षुल्लकानामपीहताम्। अन्तर्हितोऽन्तर्हृदये कस्मान्नो वेद नाशिषः'—इति भागवते (४।३०।२९)। खलः। ३४७

क्षुल्लकः पुं. [क्षुल्ल+संज्ञायां स्वल्पार्थे वा कन्] क्षुद्रशङ्खः; 'कङ्कुष्ठं गैरिकं शङ्खं कासीसं टङ्कणं तथा। नीलाञ्जनं शुक्तिभेदाः क्षुल्लकाः सवराटकाः। जम्बीरवारिणा स्विन्नाः क्षालिताः कोष्णवारिणा। शुद्धिमायान्त्यमी योज्या भिषग्भिर्योगसिद्धये'—इति भावप्रकाशः। ६६४

क्षेत्रम् क्ली. [क्षि+ष्ट्रन्] कलत्रम्; 'क्षेत्रभूता स्मृता नारी बीजभूतः स्मृतः पुमान्। क्षेत्रबीजसमायोगात् सम्भवः सर्वदेहिनाम्–' इति मनुः (९।३३)। शरीरम् (५१०); 'इदं शरीरं कौन्तेय! क्षेत्रमित्यभिधीयते—इति भगवद्गीता (१३।१)। (५७४) भूमिः; वप्रं; केदारः; वलजं; निष्कुटः; राजिका; पाटीरः; 'कैदारकं तु कैदार्यं क्षेत्रं कैदारकं तथा। वारटं चेति पर्यायः क्षेत्रवृन्दे निगद्यते'—इति शब्दरत्नावली। मेषादिद्वादशराशयः; 'राशिनामानि च क्षेत्रं भमृक्षं गृहनाम च। मेषादीनां च पर्यायं लोकादेव विचिन्तयेत्।' ग्रहाणां क्षेत्राणि—'कुजशुक्रबुधेन्द्वर्कसौम्यशुक्रावनीभुवाम्। जीवार्किभानुजेज्यानां क्षेत्राणि स्युरजादयः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। 'मेषमङ्गारकक्षेत्रं वृषं शुक्रस्य कीर्तितम्। मिथुनस्य बुधो ज्ञेयः सोमः कर्कटकस्य तु।

सूर्यक्षेत्रं भवेत्सिहः कन्याक्षेत्रं बुधस्य च। धनुः सुरगुरोश्चैव शनेर्मकरकुम्भकौ। मीनः सुरगुरोश्चैव ग्रहक्षेत्रं प्रकीर्तितम्'—इति गारुडे ६० अध्यायः। महाभूतादि-धृत्यन्तगीतापरिभाषितः पदार्थसमूहः। यथा—'महाभूतान्यहङ्कारो बुद्धिरव्यक्तमेव च। इन्द्रियाणि दशैकं च पञ्च चेन्द्रियगोचराः। इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं सङ्घातश्चेतना धृतिः। एतत् क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतम्' (१३।६)। मनः; सप्तद्वीपा पृथिवी; 'यावत् सूर्य उदेति स्म यावच्च प्रतितिष्ठति। सर्वं तद्यौवनाश्वस्य मान्धातुः क्षेत्रमुच्यते'—इति भागवते (९।६।३७)। सिद्धस्थानम्; 'पाटलिपुत्रं क्षेत्रं लक्ष्मीसरस्वत्योः'—इति कथासरित्सागरे (३।७८)। गृहं; नगरम्। ४९४

क्षेत्रज्ञः पुं. [क्षेत्रं शरीर ममेति कृत्वा यो जानाति, आपादतलमस्तकं ज्ञानेन विषयीकरोति, स्वाभाविकेन औपदेशिकेन वेदनेन विषयीकरोति वा, कृषीवलवत् तत्फलभोक्तृत्वादित्यर्थः। ज्ञा+'इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः' इति क] शरीराधिदैवतम्; आत्मा; पुरुषः; क्षेत्रेषु सर्वदेहेषु सर्वान्तर्यामितया विराजमानः सन् 'सर्वज्ञः सर्वशक्तिमान् सर्वक्षेत्रपालयिता' इत्यात्मस्वरूपं जानाति अनुभवति यः प्रज्ञानघनः परमपुरुषः स सर्वान्तरात्मा असंसारी परमेश्वरः [क्षेत्रं शरीरं जानातीति, क्षेत्रे शरीरे जानाति ज्ञानवान् भवतीति वा क्षेत्रज्ञः]; सुबीजः; पुरुषः; अन्तर्यामी; ईश्वरः; पुद्गलः; परसंज्ञकः; प्रधानम्; 'इदं शरीरं कौन्तेय! क्षेत्रमित्यभिधीयते। एतद् यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः।' क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत। क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम'—इति भगवद्गीता (१३।१।२)। विष्णुः; 'पूतात्मा परमात्मा च मुक्तानां परमा गतिः। अव्ययः पुरुषः साक्षी क्षेत्रज्ञोऽक्षर एव च'—इति महाभारते (१३।१४९।१५)। वटुकभैरवः; 'क्षेत्रज्ञः क्षत्रियो विराट्' इति वटुकभैरवस्तोत्रे। छेकः; कृषकः; त्रि. विदग्धः; कुशलः; चतुरः (३३५)। १३४

क्षेत्राजीवः त्रि [क्षेत्रेण क्षेत्रोद्भवसस्यादिना आजीवतीति। क्षेत्र+आ+जीव्+कर्तरि अच्] कर्षकः। ५७४

क्षेपणिः, क्षेपणी स्त्री. [क्षिप्+बाहुलकाद् अनि, ङीप् वा] नौकादण्डः; 'डाँडा' इति भाषा। जालभेदः; अस्त्रविशेषः; 'क्षेपण्यस्तोमराश्चोग्राश्चक्राणि मुशलानि च'—इति रामायणे (६।७।२४)। ६७२

क्षेमङ्करः त्रि. [क्षेमं करोतीति। क्षेम+कृ+'क्षेमप्रियमद्रेऽण् च' इति अण् चात् खच् मुम् च] मङ्गलकारकः; अरिष्टतातिः; शिवतातिः; शिवङ्करः; क्षेमकारः; भद्रङ्करः; शुभङ्करः। ३४०

क्षैरेयी स्त्री. [क्षीरे संस्कृतं यदन्नम्। ढक् ततः स्त्रियां ङीप्] परमान्नं; क्षीरसम्बधिनि त्रि.। ३२०

क्षोणिः, क्षोणी स्त्री. [क्षै+बाहुलकात् डोनि, वा ङीष्] पृथिवी, 'अक्रन्दयो नद्योऽरोरुवद्वना कथा न क्षोणीर्भियसा समारत'—इति ऋग्वेदे (१।५४।१)। १५६

क्षोदः पुं. [क्षुद्यते इति, क्षुद् संपेषणे+कर्मणि भावे च घञ्] चूर्णः; 'सापि प्राग्वासनायोगाल्लिङ्गार्चनरता सती। हित्वा मलयजक्षोदं विभूतिं बह्वमंस्त वै'—इति काशीखण्डे (३३।९३)। रजः; पेषणम्; 'कीर्णैः पिष्टातकौघैः कृतदिवसमुखैः कुङ्कुमक्षोदगौरैर्हेमालङ्कारभाभिर्भरनमितशिरःशेखराङ्कैः किरातैः'—इति रत्नावलीनाटिका। ४४३

क्षौणिः, क्षौणी स्त्री. [क्षु+बाहुलकात् नि, णत्वं, वृद्धिः, वा ङीप् च] पृथिवी; 'इज्या च यागधाराच्च क्षौणी क्षीणालये च या। महालये क्षयं याति क्षितिस्तेन प्रकीर्तिता'—इति ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिखण्डे। 'तस्य चोद्धरतः क्षौणीं स्वदंष्ट्राग्रेण लीलया'—इति भागवते। १५६

क्षौद्रम् क्ली. [क्षुद्राभिः पिङ्गलवर्णमक्षिकाभिः सरघाभिर्निर्मितम्। क्षुद्र+'क्षुद्राभ्रमरवटरपादपादञ्' इति अञ्] मधु; जलं; पिङ्गलवर्णक्षुद्रमक्षिकाकृतकपिलवर्णमधु; 'माक्षिकाः कपिलाः सूक्ष्माः क्षुद्राख्यास्तत्कृतं मधु। मुनिभिः क्षौद्रमित्युक्तं तद्वर्णात् कपिलं भवेत्। गुणैर्माक्षिकवत् क्षौद्रं विशेषान्मेहनाशनम्'—इति भावप्रकाशः। पुं. [क्षुद्र+अण्] चम्पकवृक्षः; वर्णसङ्करविशेषः; 'चतुरो मागधी सूते क्रूरान् मायोपजीविनः। मांसं स्वादुकरं क्षौद्रं सौगन्ध्यमिति विश्रुतम्'—इति महाभारते (१३।४८।२२)। क्षुद्रता। ६२१

क्षौमम् पुं.-क्ली. [क्षु+मन्। ततोऽण् वृद्धिश्च] पट्टवस्त्रं; दुकूलम्; 'क्षौममट्टे दुकूले स्यादतसीवसनेऽपि च'—इति विश्वप्रकाशः। अट्टालकः; अट्टः; अतसीवस्त्रम्।

'स गौरसर्षपैः क्षौमं पुनः पाकान्महीमयम्। कारुहस्तः शुचिः पण्यं भैक्षं योषिन्मुखं तथा'—इति याज्ञवल्क्यः। शणजवस्त्रं; [क्षुमाया विकारः; स्त्रियां क्षौमी] कन्था इत्यादिः। 'क्षौमं दुकूले स्यादट्टे पुंनपुंसकयोरिह। क्षौमं तु शणजेऽपि स्यादतसीजे नपुंसकम्'—इति शब्द-रत्नावल्याम्। 'कृष्णा च क्षौमसंवीता कृतकौतुकमङ्गला। कृताभिवादनाश्वश्रवास्तस्थौ प्रह्वा कृताञ्जली'—इति महाभारते (१।२००।३)। ५४९

क्षौरम् क्ली. [क्षुरस्य कार्यं कर्म, क्षुरकृतं कर्मेति भावः, क्षुरस्येदं वा] क्षुरकर्म; मुण्डनं; भद्राकरणं; वपनं; परिवापनम्; 'स्वयं माल्यं स्वयं पुष्पं स्वयं घृष्टं च चन्दनम् नापितस्य गृहे क्षौरं शक्रादपि हरेत् श्रियम्। रवौ दुःखं सुखं चन्द्रे कुजे मृत्युर्बुधे धनम्। मानं हन्ति गरोर्वारि शुक्रे शुक्रक्षयो भवेत्। शनौ च सर्वदोषाः स्युः क्षौरमत्र विवर्जयेत्'—इति कर्मलोचनम्। ७२१

क्षमा स्त्री. [क्षमते सहते भारम् अपराधजनितं वात्मस्थानां जीवानां चतुर्विधानाम् इति। क्षम्+अच् उपधाया लोपश्च] पृथ्वी; 'द्यौस्तत्सटोत्क्षिप्तविमानसङ्कुला प्रोत्सर्पत क्ष्मा च पदातिपीडिता'—इति भागवते (७।८।३३)। १५६

क्ष्वेडः पुं. [क्ष्विड्+भावादौ घञ्, क्ष्वेडते इति अच् वा] विषम्; 'करालं यत्क्ष्वेडं कवलितवतः कालकलना न शम्भोस्तन्मूलं जननि तव ताटङ्कमहिमा'—इति आनन्दलहर्याम् (२९)। ध्वनिः; कर्णामयः; कर्णरोगः; पीतघोषावृक्षः; त्रि. दुरासदः; कुटिलः; क्ली. घोषापुष्पं; लोहिताकपर्णफलम्। ६४६

क्ष्वेडा स्त्री. [क्ष्विड्+घञ्+टाप्] सिंहनादः; शब्द-विशेषः; 'एषा सागरसङ्गताभिमततां याता न मे कर्हिचित्, मुग्धे कण्ठभुवं ब्रवीषि मम किं सक्ष्वेडतामीयुषीम्। क्ष्वेडाराव इहोचितस्तवगणव्रातैः सह क्रीडतो, यस्मान्नीलगतोऽवतादिति गिरा गौर्या कृतोऽनुत्तरः'—इति वक्रोक्तिपञ्चाशिकायाम् (३६) 'क्ष्वेडा जनस्य शब्द-विशेषः'—इति तट्टीका। वंशशलाका; कोषातकी। ७८५

ख

खम् क्ली. [खर्वति मनोऽस्मिन्, खन्यते क्षुभ्यते मनोऽनेन वा। खर्व गतौ, खन अवदारणे वा, अन्येभ्योऽपीति ड] आकाशम्; 'खं सन्निवेशयेत् खेषु चेष्टनस्पर्शनेऽनिलम्'—इति मनुः (१२।१२०)। इन्द्रियम्; 'त्रिराचामेदपः पूर्वं द्विः प्रमृज्यात् ततो मुखम्। खानि चैव स्पृशेदद्भिरात्मानं शिर एव च'—इति मनुः (२।६०)। पुरं; क्षेत्रं; शून्यम्; 'पतस्युदीर्णाम्बुधरान्धकारात् खात्खेचराणां प्रवरो यथार्कः'—इति महाभारते (१।८८।७)। बिन्दुः; 'वेदाग्निबाणखाश्वैश्च खखाभ्राभ्ररसैः क्रमात्'—इति लीलावत्यां क्षेत्रव्यवहारे। संवेदनं; देवलोकः; शर्म; लग्नाद् दशमराशिः; 'तनुनिधनखभेशाः केन्द्र-कोणे त्रिलाभे' इति—जातकप्रकरणे। अभ्रकं; छिद्रम्; 'खे खानि वायौ निःश्वासांस्तेजस्युष्माणमात्मवान्'—इति भागवते (७।१२।२५)। शब्दतन्मात्रम्; 'एतस्माज्जायते प्राणो मनः सर्वेन्द्रियाणि च। खं वायुर्ज्योतिरापः पृथ्वी सर्वस्य धारिणी'—इति माण्डूक्योपनिषदि। चिदानन्दमयब्रह्माकाशम्; 'कं ब्रह्म खं ब्रह्म यद् वाव कं तदेव खं यदेव खं तदेव कमिति प्राणं च हास्मै तदाकाशं चोचुः'—इति छान्दोग्योपनिषदि। पुं. [खर्वयति स्वरश्मिभिरिति, खर्व+अन्तर्भूतणिच्+ड] सूर्यः; खकारः; व्यञ्जनद्वितीयवर्णः; 'खकारं परमाश्चर्यं शङ्खकुन्द-समप्रभम्। कोणत्रययुतं शून्यं बिन्दुत्रयसमन्वितम्। गुणत्रययुतं देवि! पञ्चदेवमयं सदा। त्रिशक्तिसंयुतं वर्णं खकारं प्रणमाम्यहम्'—इति कामधेनुतन्त्रे। 'खः प्रचण्डः कामरूपी ऋद्धिर्वह्निः सरस्वती। आकाश-मिन्द्रियं दुर्गा चण्डीशस्तापिनी गुरुः। शिखण्डी दन्त-जातीशः कफोणिर्गरुतो यदि। शून्यं कपाली कल्याणी सूर्पकर्णोऽजरामरः। शुभ्राग्नेया चण्डलिङ्गो जना व्यङ्गारखङ्गकौ'—इति नानातन्त्रेषु। १३७

खगः पुं. [खे आकाशे गच्छति। ख+गम्+ड] सूर्यः; पक्षी (२३८); 'तं व्रजन्तं खगश्रेष्ठं वज्रेणेन्द्रोऽभ्यताडयत्।' बाणः (४४६); ग्रहः; 'आपोक्लिमे यदि खगाः स किलेन्दुवारः'—इति ज्योतिषे। देवः; वायुः; 'तमांसीव यथा सूर्यो वृक्षानग्निर्घनान् खगः' इति महाभारते वनपर्वणि। शलभः; 'मांसं गृध्रो वपां मद्गुस्तैलं तैलपकः खगः'—इति मनुः (१२।६३)। महादेवः; 'आकाशनिर्विरूपश्च निपाती ह्यवशः खगः'—इति महाभारते (१३।१७।६६)। ३७

खचितम् त्रि. [खच्+क्त] संयुक्तं; करम्बितं; रूषितं; गुरुगुण्डितं; करम्बं; कवरं; मिश्रं; सम्पृक्तं; व्याप्तं;

गुण्ठितं; छुरितम्। ७४१

खजकः पु. [खजति मथ्नातीति। खज्+ण्वुल्] मन्थानदण्डः। २७६

खजाका स्त्री.– पुं. [खजति मथ्नाति पाकम्। खज् मन्थे+ 'खजेराकः' इति आकः ततष्टाप्] दर्वी; चमसः; 'खजाकः पक्षिणि ख्यातः खजाका दर्विरुच्यते—' इत्युणादिवृत्तिटीका। ३१२

खञ्जः त्रि. [खजि गतिवैकल्ये+अच्] विकलगतिः; खोडः; खोलः; खोरः; खञ्जकः; खोटः; 'लँगड़ा' इति भाषा। 'खञ्जो वा यदि वा काणो दातुः प्रेष्योऽपि वा भवेत्'—इति मनुः (३।२४२)। 'वायुः कटयाश्रितः सक्थ्नः कण्डरामाक्षिपेद्यदा। खञ्जस्तदा भवेज्जन्तुः पङ्गुः सक्थ्नोर्द्वयोर्वधात्'—इति माधवकरः। ६१०

खञ्जनः पुं. [खजि+कर्तरि ल्यु] पक्षिविशेषः; खञ्जरीटः; कणाटीनः; काकच्छर्दिः; खञ्जखेलः; तातनः; मुनिपुत्रकः; भद्रनामा; रत्ननिधिः; खञ्जखेटः; गूढनीडः; तण्डकः; चरः; काकच्छदः; नीलकण्ठः; कणाटीरः; कणाटारकः; 'वित्तं ब्रह्मणि कार्यसिद्धिरतुला शक्रे हुताशे भयं, याम्यामग्निभयं सुरद्विषि कलिर्लाभः समुद्रालये। वायव्यां वरवस्त्रगन्धसलिलं दिव्याङ्गना चोत्तरे, ऐशान्यां मरणं ध्रुवं निगदितं दिग्लक्षणं खञ्जने।' २४४

खञ्जरीटः पुं. [खञ्ज इव ऋच्छतीति। ऋ गतौ+ बाहुलकात् कीटन्] खञ्जनपक्षी; 'तन्वी शरत् त्रिपथगापुलिने कपोलौ लोले दृशौ रुचिरचञ्चलखञ्जरीटौ'—इति अमरुशतके (९९)। २४४

खड्गः पुं. [खडति भिनत्ति। खड्+'छापूखडिभ्यः कित्' इति गन्] अस्त्रविशेषः; निस्त्रिंशः; चन्द्रहासः; असिः; रिष्टिः; कौक्षेयकः; मण्डलाग्रः; करबालः; कृपाणः; ऋष्टिः; करपालः; विशसनः; तीक्ष्णधारः; दुरासदः; श्रीगर्भः; विजयः; धर्मपालः; कौक्षेयः; तरवारिः; तलवारिः; तवराजः; कृपाणीः; कृपाणकः; शस्त्रम्। 'यस्त्वयं विपुलः खड्गो गव्ये कोषे समर्पितः। सहदेवस्य विद्ध्येनं सर्वभारसहं दृढम्'—इति महाभारते (४। ४१।२५)। गण्डकः; 'गैंडा' इति भाषा। 'कालशाकं महाशल्काः खड्गलोहामिषं मधु। आनन्त्यायैव कल्पन्ते मुन्यन्नानि च सर्वशः'—इति मनुः (३।२७२)। 'खड्गो गण्डकः' लोहो लोहितवर्णश्छागः'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। गण्डकशृङ्गं; बुद्धभेदः; चोरकनामगन्धद्रव्यम्। ४७२

खड्गपिधानम् क्ली. [खड्गस्य पिधानम् आच्छादनम्] खड्गकोषः; प्रत्याकारः; परीवारः; कोशः; खड्गाधारः; खड्गपिधानकं; 'म्यान' —इति भाषा। ४७३

खड्गफलम् क्ली. [खड्गस्य फलम्] पुष्करं; खड्गधारा; करवालकोटिः। ८५८

खड्गी [न्] पुं. [खड्गस्तदाकार शृङ्गमस्यास्तीति। इनि] वनजन्तुविशेषः; गण्डकः; खड्गः; खड्गमृगः; क्रोडीमुखः; तुङ्गमुखः; बली; वज्रचर्मा; वार्ध्रीणसः; एकचरः; गण्डः; गणोत्साहः; 'गैंडा' इति भाषा। 'कफघ्नं खड्गिपिशितं कषायमनिलापहम्। पित्र्यं पवित्रमायुष्यं बद्धमूत्रं विरूक्षणम्'—इति सुश्रुते सूत्रस्थाने। महादेवः; 'अशनी शतघ्नी खड्गी पट्टिशी चायुधी महान्'—इति महाभारते (१३।१७।४२)। [खड्गो विद्यतेऽस्य इति व्युत्पत्त्या वाच्यलिङ्गः] 'सुस्रग्धरोऽथ सन्नह्य धन्वी खड्गी धृतेषुधिः'—इति भागवते (८।१५।१८)। १२२७

खण्डः पुं.–– क्ली.[खडि+घञ्, इदित्वात् नुम्] एकदेशः; भित्तं; शकलम्; 'धुतशृङ्गविभिन्नाश्च खण्डं खण्डं ययुर्घनाः'—इति मार्कण्डेये (८३।२६)। अब्जादिसमूहः; पुं. इक्षुविकारः; 'खाँड' इति भाषा। 'खण्डं तु मधुरं वृष्यं चक्षुष्यं बृंहणं हिमम्। वातपित्तहरं स्निग्धं बल्यं वान्तिहरं परम्'—इति भावप्रकाशः। पुं. मणिदोषः; योगिविशेषः; 'भानुकी नारदेवश्च खण्डः कापालिकस्तथा'—इति हठयोगदीपिकायाम् (१।८)। क्ली., विडलवणम्। ७१३।

खण्डपरशुः पुं. [खण्डयति शत्रून् इति, तादृशः परशुरस्य] शिवः; 'पिनाकिनं खण्डपरशुं लोकानां पतिमीश्वरम्'—इति महाभारते (७।२००।४१)। विष्णुः; 'सुधन्वा खण्डपरशुर्द्रारुणो द्रविणप्रदः'—इति महाभारते (१३।१४९।७४)। ७८८

खण्डशर्करा स्त्री. [खण्डरूपा कणरूपा शर्करा। मध्यपदलोपी कर्मधारयः] मत्स्यण्डी; फाणितम्; 'खणसारी चीनी' इति भाषा। ३२४

खण्डिकः पुं. [खण्डोऽस्यास्तीति, ठन्] कलायः; त्रिपुटः;

'मटर' इति भाषा । 'त्रिपुटः खण्डिकोऽपि स्यात् कथ्यन्ते तद्गुणा अथ'—इति भावप्रकाशः । कक्षः; 'बगल' इति भाषा । ५८२

खद्योतः पुं. [खम् आकाशं द्योतयति, खे आकाशे द्योतते वा । द्युत्+अच्] कीटविशेषः; ज्योतिरिङ्गणः; खज्योतिः; प्रभाकीटः; उपसूर्यकः; ध्वान्तोन्मेषः; तमोमणिः; दृष्टिबन्धुः; तमोज्योतिः; ज्योतिरिङ्गः; निमेषकः; 'विदितमनन्तसमस्तं तव जगदात्मनो जनैरिहाचरितम् । विज्ञाप्यं परमगुरोः कियदिव सवितुरिव खद्योतैः'—इति भागवते (६।१६।४६) । सूर्यः; 'खद्योताविर्मुखी चात्र नेत्रे एकत्र निर्मिते । रूपं विभ्राजितं ताभ्यां विचष्टे चक्षुषेश्वरः'—इति भागवते (४।२९।१०) । २५७

खनकः पुं. [खन्+'शिल्पिनि ष्वुन्' इति ष्वुन् स च षित्] उन्दुरुः; मूषकः; सन्धितस्करः; भूमिवित्तज्ञः; स्वर्णाद्युत्पत्तिस्थानज्ञः; विदुरस्य बन्धुविशेषः; 'विदुरस्य सुहृत्कश्चित् खनकः कुशलो नरः'—इति महाभारते (१।१४८।१) । त्रि.; अवदारकः; खननकर्ता; 'स्थापत्ये चेह स्थाप्यन्तां वृद्धाः परमधार्मिकाः । कर्मान्तिका लिपिकरा वर्धकाः खनका अपि'—इति रामायणे (१।१२।६) । २३५

खनिः स्त्री. [खनु अवदारणे, 'खनिकष्यज्जसीति'—इन्] रत्नाद्युत्पत्तिस्थानम्; आकरः; खानी; खनी; खानिः; गञ्जा; 'खान' इति भाषा । १६९

खनी स्त्री. [खनि+वा ङीष्] रत्नाद्युत्पत्तिस्थानम् । १६९

खरम् क्ली. [खाय अन्तरिन्द्रियाय खस्य वा तीव्रतारूपगुणं रातीति । ख+रा+क] तीव्रं; तिग्मं; तीक्ष्णं; 'कृत्वाट्टहासं खरमुत्स्वनोल्बणं निमीलिताक्षं जगृहे महाजवः'—इति भागवते (७।८।२८) । तद्वति त्रि., 'न खरो न च भूयसा मृदुः पवमानः पृथिवीरुहानिव'—इति रघुवंशे (८।९) । ४०

खरः पुं. [खं मुखकुहरं छिद्रमतिशयेनास्यास्तीति । र] गर्दभः; 'परीवादात् खरो भवति श्वा वै भवति निन्दकः'—इति मनुः (२।२०१) । अश्वतरः; 'उष्ट्रयानं समारुह्य खरयानं तु कामतः'—इति मनुः (११।२०) । घर्मः; निष्ठुरः; राक्षसविशेषः; रावणभ्राता; 'वधं खरत्रिशिरसोरुत्थानं रावणस्य । च'—इति रामायणे (१।३।२७) । दैत्यः; 'ये च प्रलम्बखरदर्दुरकेश्यरिष्टमल्लेभकंसयवनाः कुजपौण्ड्रकाद्याः'—इति भागवते (२।७।३४) । कण्टकिवृक्षविशेषः; कङ्कः; काकः; कुररपक्षी; वत्सरविशेषः; 'उपद्रुतं जगत् सर्वं तस्करैर्मूषिकैः खगैः । पीडिताश्च प्रजाः सर्वाः देशभङ्गः खरे प्रिये'—इति ज्योतिषतत्त्वे । कठिनं; रविपार्श्वगः; पश्चिमद्वारगृहम् । २८०

खर्जुः पुं. [खर्ज्+उन्] कण्डुः; खर्जूरी; कीटः । ६०३

खर्जूः स्त्री. [खर्ज् व्यथने+'कृषिचमितनीति' ऊ] कण्डुः; कीटः । ६०३

खर्वशाखः त्रि. [खर्वा शाखा हस्तपादाद्यवयवा यस्य] वामनः; खर्वः; ह्रस्वः । ६११

खलः त्रि. [खं छिद्रं लाति, आत इति क] नीचः; अधमः; क्रूरः; दुर्जनः; पिशुनः; दुर्विधः; विश्वकद्रुः; नृशंसः; घातुकः; पापः; 'खलस्वभावं भवितव्यतां तथा चकार सर्वं किल शूद्रको नृपः'—इति मृच्छकटिके १अङ्के । पुं. [खल्+अच्] सूर्यः; तमालवृक्षः; धत्तूरवृक्षः; प्रवाहिकारोगे भेषजादिविहितपथ्यविशेषः; 'कल्को बिल्वशलाटूनां तिलकल्कश्च तत्समः । दध्नः सरोऽम्लः सस्नेहः खलो हन्ति प्रवाहिकाम्'—इति वाग्भटः । क्ली. भूः; स्थानं; कल्कः; खलाधानं (५७८); 'खलिहान' इति भाषा । ३४६

खलतिः पुं. [स्खलन्ति केशाः अस्मात् । स्खल् सञ्चलने +'खलतिः' इति निपातनात् साधुः] इन्द्रलुप्तरोगयुक्तः; खल्वाटः; ऐन्द्रलुप्तिकः; शिपिविष्टः; बभ्रुरथः; खल्लीटः; खल्लिटः; 'रोमकूपानुगं पित्तं वातेन सह मूर्च्छितम् । प्रच्यावयति रोमाणि ततः श्लेष्मा सशोणितः । रोमकूपान् रुणद्धयस्य तेनान्येषामसम्भवः । तदिन्द्रलुप्तं रूढघाञ्च प्राहुश्चाचेति चापरे । खलतेरपि जन्मैवं सदनं तत्र तु क्रमात्—इति वाग्भटः । ६०८

खलधान्यम् क्ली. [धान्यार्थं खलम् । वाहिताग्न्यादित्वात् पूर्वनिपातः] खलं; खलाधानम; 'खलिहान' इति भाषा । ५७८

खलिनः पुं.– क्ली. [खे अश्वमुखछिद्रे लीनः । पृषोदरादित्वाद् वा ह्रस्वः] खलीनः, 'लगाम' इति भाषा । 'उभयतः खलिनकनककटकावलग्नाभ्यां पदे पदे कृता-

कुञ्चत्प्रयत्नाभ्यां पुरुषाभ्यामवकृष्यमाणम्'—इति कादम्बर्याम्। ४४२

खलीनः पुं.– क्ली. [खे अश्वमुखछिद्रे लीनः] कविका; वल्गा; 'शतं रथानां वरहेममालिनां वतुर्युजां हेमखलीनशालिनाम्'—इति महाभारते (१।१९९।१५)। ४४२

खलु अव्य. [खल्+बाहुलकाद् उन्] निश्चितम्; 'दयितास्वनवस्थितं नृणां न खलु प्रेम चलं सुहृज्जने' —इति कुमारसम्भवे (४।२८)। निषेधः; वाक्यालङ्कारः; 'सम्प्रत्यसाम्प्रतं वक्तुमुक्ते मुशलपाणिना। निर्द्धारितेऽर्थे लेखेन खलूक्त्वा खलु वाचिकम्'—इति माघे (२।७०) 'अत्राद्यः खलुशब्दः प्रतिषेधार्थे द्वितीयो वाक्यालङ्कारे' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। जिज्ञासा; 'स खल्वधीते वेदम्?' इति गणरत्ने। अनुनयः; 'न खलु न खलु मुग्धे साहसं कार्यमेतत्'—इति गणरत्ने। पदवाक्यादिपूरणम्; 'वध्याः खलु न वध्यन्ते सचिवास्तव रावण! ये त्वामुत्पथमारूढं न निगृह्णन्ति सर्वशः'—इति रामायणे (३।४१।६)। वीप्सा; 'न खलु न खलु बाणः सन्निपात्योऽयमस्मिन्, मृदुनि मृगशरीरे तूलराशाविवाग्निः'—इति शाकुन्तले १ अङ्के। ३७४

खलूरिका स्त्री. [खलु+रिष्+निपातनात् साधुः] शस्त्राभ्यासभूमिः; व्यूहशिक्षास्थानम्। ४७०

खलेधानी स्त्री. [खले धीयन्ते वृषभा अस्मिन्। धा+अधिकरणे ल्युट्, ततो ङीप्] मेधिः; खले पशुबन्धनदारु। ५७८

खलेवाली स्त्री. [खले वाल्यन्ते चाल्यन्तेऽत्र वृषभा इति। वल्+अधिकरणे घञ्, गौरादित्वाद् ङीष्] खले गोबन्धनदारु; 'खलेवालीयूपो लाङ्गलेषा'—इति कात्यायनश्रौतसूत्रे (२२।३।४८)। ५७८

खसः पुं. [खं हस्तादीन्द्रियं स्यति निश्चलीकरोतीति। ख+सो+क] पामा; पाम; कच्छूः; विचर्चिका; 'खाज' इति भाषा। देशविशेषः; 'पौण्ड्रकाश्चौड्रद्रविडाः काम्बोजा यवनाः शकाः। पारदाः पह्लवाश्चीनाः किराता दरदाः खसाः (शाः)'—इति मनुः (१०।४४)। ६०२

खातम् क्ली. (खाता स्त्री.) [खन्यते इति, खन्+कर्मणि क्त] पुष्करिणी; 'यस्य खातस्य वेधोऽपि द्विचतुस्त्रिकरः सखे। तत्र खाते कियन्तः स्युर्घनहस्ताः प्रचक्ष्व मे'—इति लीलावत्याम्। ६७५

खादनम् क्ली. [खाद्+भावे ल्युट्] भक्षणम्; आहारः; [खादति चर्वत्यनेन इति] दन्ते पुं.। ३२५

खिलम् त्रि. [खिल्+क] अकृष्टभूमिः; अप्रहतं; 'बंजर भूमि' इति भाषा। सारसंक्षिप्ते वेधसि च पुं. 'खिलो नारायणः प्रोक्त इषवस्तद्गुणाः स्मृताः' —इति नीलकण्ठः। १५८

खुरः पुं. [खुर् छेदने+क] शफं; गवादीनां पादाग्रम्; 'न भिन्नशृङ्गाक्षिखुरैर्न बालधिविरूपितैः'—इति मनुः (४।६७)। कोलदलं; नखीनामगन्धद्रव्यं; छेदनवस्तु; नापितस्य क्षुरः; खट्वादीनां पादुकं; 'खाट का पाया' इति भाषा। ४४१

खेटः त्रि. [खिट्+अच्] अधमः; घोटकः; सुनिन्दकः; सुनन्दकः; बलरामस्य गदा। ३३७

खेटः पुं.– क्ली. [खिटयते भयमुत्पद्यते अस्मादनेन वा। खिट्+अपादाने करणे वा घञ्] कफः; मृगया; [खेटयते भक्षोपयोगिसस्यादिना उपजीव्यते अस्मात्] ग्रामभेदः; कर्षकग्रामः; 'खेटखर्वटवाटीश्च वनान्युपवनानि च', 'खेटाः कर्षकग्रामाः' इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। चर्म; पुं. [खे आकाशे अटति, खे+अट्+अच्] ग्रहः; 'यस्मिन् राशौ स्थितः खेटस्तेन तं परिपूरयेत्'—इति भावविवेके। क्ली. [खे+अट्+अच्] तृणं; खेट्टम्। ७९२

खेटकः पुं. [खेट+स्वार्थे क] ग्रामभेदः। (४६०) फलकं; चर्म; खेटः; 'खेटकं वसुनन्दके'—इति हारावली। वसुनन्दको धनवृद्धिजीवकः। 'खेटकं तु सुनन्दके' इति पाठान्तरे 'सुनन्दकः बलदेवस्य गदा' इति। पुं. [खेटति भयमुत्पादयत्यनेन। खिट्+करणे घञ्, खेट+स्वार्थे क] यष्टिः; 'यष्टिरूपेण खेट त्वमरिसंहारकारकः। देवीहस्तस्थितो नित्यं मम रक्षां कुरुष्व च'—इति शारदीयदुर्गापूजापद्धतौ अस्त्रपूजाप्रकरणे। 'खेटकं पूर्णचापं च पाशमङ्कुशमेव च'—इति तत्र दुर्गाया ध्यानम्। २५०

खेदः पुं. [खिद्+भावे घञ्] शोकः; अवसन्नता; विषण्णता; 'अद्यापीदं वनं दुर्गं विचिन्वन्तु वनौकसः।

खेदं त्यक्त्वा पुनः सर्वं वनमेव विचिन्वताम्'—इति रामायणे (४।४९।७)। ७५४

खेलनम् क्ली. [खेल्+भावे ल्युट्] क्रीडनं; खेला; क्रीडा; कूर्दनम्; 'कापि विलासविलोलविलोचनखेलनजनितमनोजम्'—इति गीतगोविन्दे (१।४१)। ४३२

ग

गगनम् क्ली. [गं गानं शब्दात्मकं गुणं गच्छति। यद्वा गकार भूतेषु प्रथमभूतत्वात् प्राधान्यं गच्छति। यद्वा गच्छन्त्यस्मिन् देवादय इति। 'गमेर्गश्च' इति युच् गश्चान्तादेशः] आकाशम्। (बर्हिः; धन्वः; आपः; पृथिवी; भूः; स्वयम्भूः; अध्वा; सगरः; समुद्रः; अध्वरः—एतेऽर्था वेदे प्रसिद्धा इति निघण्टुः।) 'गगनाम्बु त्रिदोषघ्नं गृहीतं यत्सुभाजने। बल्यं रसायनं मेध्यं पात्रापेक्षि ततः परम्। रक्षोघ्नं शीतलं ह्लादि ज्वरदाहविषापहम्'—इति सुश्रुते। 'प्रेक्षिष्यन्ते गगनगतयो नूनमावर्ज्य दृष्टी—रेकं मुक्तागुणमिव भुवः स्थूलमध्येन्द्रनीलम्'—इति मेघदूते (४८)। १३७

गङ्गा स्त्री. [गमयति प्रापयति ज्ञापयति वा भगवत्पदं या शक्तिः। यद्वा गम्यते प्राप्यते ज्ञाप्यते मोक्षार्थिभिर्या। गम्लृ गतौ+'गन् गम्यद्योः' इति गन् ततष्टाप्] नदीविशेषः; विष्णुपदी; जह्नुतनया; सुरनिम्नगा; भागीरथी; त्रिपथगा; त्रिस्रोताः; भीष्मसूः; अर्ध्यतीर्थ; तीर्थराजः; त्रिदशदीर्घिका; कुमारसूः; सरिद्वरा; सिद्धापगा; स्वरापगा; स्वर्ग्यापगा; स्वापगा; ऋषिकुल्या; हैमवती; स्वर्वापी; हरशेखरा; सुरापगा; धर्मद्रवी; सुधा; जह्नुकन्या; गान्दिनी; रुद्रशेखरा; नन्दिनी; अलकनन्दा; सितसिन्धुः; अध्वगा; उग्रशेखरा; सिद्धसिन्धुः; स्वर्गसरिद्वरा; मन्दाकिनी; जाह्नवी; पुण्या; समुद्रसुभगा; स्वर्णदी; सुरदीर्घिका; सुरनदी; स्वर्धुनी; ज्येष्ठा; जह्नुसुता; भीष्मजननी; शुभ्रा; शैलेन्द्रजा; भवायना; गङ्गका; गङ्गाका गङ्गिका। 'गङ्गा सरस्वती कोनं यमुना सरयूः सची। वेणा इरावती नीला उत्तरात् पूर्ववाहिनी। हिमवत्प्रभवा ह्येता हिमसम्भवशीतलाः। समाः सर्वगुणैर्नद्यो वातश्लेष्महरा नृणाम्। आसां नवशतैर्युक्ता गङ्गा पूर्वसमुद्रगा'—इति हारीते प्रथमस्थाने सप्तमेऽध्याये। ६७३

गङ्गाधरः पुं. [धरतीति धरः, धृ+अच्। गङ्गाया धरः स्वशिरोजटाभिरिति शेषः] शिवः; समुद्रः; जीर्णातिसाररोगनाशकौषधविशेषः; 'धातक्यामलकीपयोधरवृकीकट्वङ्गयष्टीमधु, श्रीजम्ब्वाम्बफलास्थिनागरविषाह्रीवेरलोध्रेन्द्रजैः। तुल्यांशं विहितं सतण्डुलजलं गङ्गाधराख्यं महत्, चूर्णं तूर्णमपाकरोति सकलं जीर्णातिसारं परम्'—इति शब्दार्थचिन्तामणिः। १३

गजः पुं. [गजति मदेन मत्तो भवतीति। गज्+अच्] हस्ती; 'भद्रो मन्दो मृगश्चैव विज्ञेयास्त्रिविधा गजाः' —इति शब्दार्थचिन्तामणिः। 'हया जिहेषिरे हर्षाद्गम्भीरं जगजुर्गजाः'—इति भट्टिः (१४।५) परिमाणविशेषः; स तु हस्तद्वयं पादोनहस्तद्वयं च; 'अरत्नीनां शतान्यष्टावेकः षष्ट्यधिकानि च। गजप्रमाणमाख्यातं मुनिभिर्ब्रह्मवादिभिः'—इति शब्दार्थचिन्तामणिः। वास्तुनः स्थानभेदः; 'प्रस्तारे दैर्घ्यमानं तु स्वहस्तेन तथा नरैः। कृत्वा त्रिघ्नं गजैर्हृत्वा वास्तुस्थाननिरूपणम्। ध्वजो धूमश्च सिंहश्च श्वा वृषः खर एव च। गजः काकपदं चैव स्थानान्यष्टौ च वास्तुनः।' 'ध्वजे विभूतिर्मरणं च धूमे सिंहे जयः श्वा च करोत्यनर्थम्। वृषे च भोगी क्षयणं खरे च पुष्टिर्गजे काकपदे विनाशः' —इति ज्योतिषम्। औषधपाकार्थगर्तविशेषः; 'हस्तप्रमाणगर्तो यः पुटः स तु गजाह्वयः। इत्थं चारत्निके कुण्डे पुटो वाराह उच्यते'—इति वैद्यकप्रयोगामृतम्। असुरविशेषः; महिषासुरपुत्रः; 'महिषासुरपुत्रोऽसौ समायाति गजासुरः। प्रमथन् प्रमथान् सर्वान् निजवीर्यमदोद्धतः'—इति काशीखण्डे (६८।३)। २१४

गजप्रिया स्त्री. [गजस्य प्रिया] शल्लकीवृक्षः; गजभक्ष्या। १९९

गजबन्धनम् क्ली. [गजः हस्ती बध्यते अत्र। बन्ध्+ल्युट्] गजबन्धनस्थानम्। २२३

गजबन्धनी स्त्री. [गजः हस्ती बध्यते लौहशृङ्खलादिभिः रुध्यतेऽस्याम्। बन्ध्+ल्युट् ङीप् च] गजबन्धनस्थानं; वारी; वारिः; प्रारब्धिः। २२३

गजवदनः पुं. [गजस्य वदनमिव वदनं यस्य] गणेशः। १८

गजाजीवः पुं [गजैःआजीवति,इगुपधेति क। गजः आजीवः जीवनोपायोऽस्य। गजपरिचालनपालनादिकार्यमालम्ब्य आजीवतीति। जीव+कर्तरि अच् वा] हस्तिपालकः;

आधोरणः; हस्तिपकः; इभपालकः। २२५

गजारोहः पुं. [गजम् आरोहति, गज+आ+रुह्+अच्] गजारूढः; निषादी। ३९१

गञ्जः पुं. [गजि+भावे घञ्] भाण्डागारम्; अवज्ञा; खनिः; खानिः; गोष्ठागारम्। 'गोठ', 'गोशाला' इत्यादिभाषा। भाण्डागारे क्लीवमपि। ७९७

गञ्जा स्त्री. [गञ्ज+टाप्] खनिः; खानिः; मदिरा-गृहं; पामरसद्म; मद्यभाण्डम्। १६९

गडुः पुं. [गड्+बाहुलकाद् उन्] पृष्ठग्रन्थिः; गलगण्डः; घाटामस्तकयोर्मध्ये मांसवृद्धिः; कुब्जत्वकरः पिण्डः; शल्यास्त्रं; किञ्चुलुकः; विषमग्रन्थिः; 'न च अजागल-स्तनवदन्तर्गडुना तेन किं वेति वाच्यम्'—इति वेदान्त-भाष्यम्। ६०४

गडुरः त्रि. [गडुल+रस्य लत्वम्] कुब्जकः; मेषः। ६११

गडुलः त्रि. [गडुः स्थूलमांसपिण्डविशेषः अस्यास्तीति। गडु+सिध्मादिभ्यश्चेति' लच्] कुब्जः; न्युब्जः। ६११

गणः पुं. [गण्यते गणयति वा, कर्मण्यप् कर्तरि अच् वा] प्रमथः; 'भर्तुः कण्ठच्छविरिति गणैः सादरं वीक्ष्यमाणः' —इति मेघदूते (३५)। समूहः (६८६); 'न गणस्या-ग्रतो गच्छेत् सिद्धे कार्ये समं फलम्'—इति हितोपदेशे। रुद्रानुचरः; 'धनाध्यक्षसभां देवः प्राप्तो हि वृषभध्वजः। उमासहायो देवेशो गणैश्च बहुभिर्वृतः'—इति रामायणे (५।८९।७)। सेनासंख्याविशेषः, तद्यथा—गजाः २७, रथाः २७, अश्वाः ८१, पदातिकाः १३५; समुदायेन २७०। 'त्रयो गुल्मा गणो नाम वाहिनी तु गणास्त्रयः' —इति महाभारते। संख्या; चोरकनामगन्धद्रव्यं; गणेशः; 'गाणपस्तु महेशानि! गणदीक्षाप्रवर्तकः' —इति महानिर्वाणतन्त्रे। अश्विन्यादिजन्मनक्षत्रानुसा-रेण देवमानुषराक्षसगण इति तु पारिभाषिकम्। दे म रा म दे म दे दे रा रा म म द रा द रा। दे रा रा म म दे रा रा म म देतिगणत्रयम्'—इति ज्योतिषरत्नमाला। धातुसमूहः; 'भ्वाद्यदादिजु-होत्यादिदिवादिः स्वादिरेव च। तुदारुधातनुक्र्यादि-श्चुरादिश्च गणा दश'—इति मनोरमा। छन्दः-शास्त्रोक्तपारिभाषिकाक्षरविशेषः, स तु 'म-न-भ-य-ज-र-स-त-ग-ल-संज्ञः'—इति छन्दोमञ्जरी। महादेवः; 'विश्वरूपः स्वयं श्रेष्ठो बलवीरो बलो गणः'—इति महाभारते (१३।१७।४०)। दैत्यविशेषः, स तु अभिजिदिति नामान्तरस्य दैत्यस्य गुणवतो भार्यायां गुणवत्यां सम्भूतः। एषा कथा स्कन्दपुराणे गणेश-खण्डे ३ अध्याये विस्तरशो द्रष्टव्या। १४

गणकः पुं. [गणयति शुभाशुभग्रहभोगजनितफलं निरू-पयतीति। गण सङ्ख्याने+कर्तरि ण्वुल्] दैवज्ञः; ज्योतिर्वित्; सांवत्सरः; ज्यौतिषिकः; दैवज्ञः; मौहूर्तिकः; मौहूर्तः; ज्ञानी; कार्तान्तिकः; ज्योति-षिकः। वर्णसङ्करजातिविशेषः, देवलाद् वैश्यागर्भजातः। तस्य कर्म तिथिवारादिज्ञापनं, स तु अस्पृश्यः; 'कलि-काले महेशानि! पाषण्डा बहवो जनाः। सङ्गदोषान्-महेशानि! तत्क्षणाद्धानितां व्रजेत्। तस्मात् प्रयत्नतो देवि! संसर्गं वर्जयेत् सुधीः। वरं चाण्डालसंस्पर्शं कुर्यात्तु साधकोत्तमः। तथाप्यस्पृश्यगणकं सर्वदा तं परित्यजेत्'—इति महिषमर्दिनीतन्त्रवचनम्। 'ज्योतिःशास्त्रविशेषज्ञः सुन्दराङ्गः सभापटुः। कुलक्र-मागतः शुद्धो गणकः स्यान्महीपतेः'—इति युक्ति-कल्पतरुः। यच्च शास्त्रविशेषे गणकस्य निन्दादिकं श्रूयते तत्तु केवलं नक्षत्रजीविन एवेति बोध्यम्। प्रकृत-ज्योतिःशास्त्रं तु द्विजातिभिरेवावश्यमध्येतव्यं वेदाङ्ग-त्वात्, यथा—'संयुतोऽपीतरैः कर्णनासादिभिश्चक्षु-षाङ्गेन हीनो न किञ्चित् करः। तस्माद् द्विजैर-ध्ययनीयमेतत् पुण्यं रहस्यं परमं च तत्त्वम्'—इति सिद्धान्तशिरोमणिः। प्रजापतिपुत्रास्ताराविशेषाः केतवः; 'ताराः पुञ्जनिकाशा गणका नाम प्रजापते-रष्टौ पुत्राः'—इति बृहत्संहिता (११।२५)। संकीर्ण-जातिविशेषः; 'चर्मकारस्य द्वौ पुत्रौ गणको वाद्यपूरकः।' ४०३

गणपतिः पुं. [गणानां गणसंज्ञकानां देवानां पतिः अधीश्वरः स्वामी वा] गणेशः; 'अत्तुं वाञ्छति शाम्भवो गणपते-राखुं क्षुधार्त्तः फणी। तं च क्रौञ्चरिपोः शिखी गिरि-सुतासिंहोऽपि नागाशनम्'—इति पञ्चतन्त्रे (१।१७०)। अग्रपूजनीयप्रधानदेवताविशेषः; 'नमो गणेभ्यो गणपति-भ्यश्च वो नमो नम इति'—यजुर्वेदीयसंहितायाम् (१६।२६)। बृहस्पतिः; 'गणानां त्वा गणपतिं हवामहे कविं कवीनामुपश्रवस्तमम्'—इति ऋग्वेदे (२।२३।१)। शिवः; 'गणकर्ता गणपतिर्दिग्वासाः काम एव च। मन्त्र-

वित् परमो मन्त्रः सर्वभावकरो हरः'—इति महाभारते (१३।११।४१)। आथर्वणोपनिषद्विशेषः; 'त्रिपुरातपनदेवीभावनाभस्मजाबालगणपतिमहावाक्यगोपालतपनकृष्णहयग्रीवेति'—मौक्तिकोपनिषदि प्रथमाध्याये। १८

गणरात्रः पुं. [गणानां बह्वीनां रात्रीणां समाहारः। गणशब्दस्य सङ्ख्यावत्त्वात् तद्धितार्थेतिसमासः—'अहःसर्वैकदेशसङ्ख्यातपुण्याच्च रात्रेः' इत्यच्। 'रात्राह्नाहाः पुंसि' इति पुंस्त्वम्] रात्रिसमूहः। १०८

गणाधिपः पुं. [गणानाम् अधिपः अधीश्वरः] शिवः; गणेशः। १३

गणिका स्त्री. [गणः लम्पटगणः उपपतित्वेनास्त्यस्याः इति। ठन्] वेश्या; 'गणिकानां पृथङ् मञ्चाः शुभैरास्तरणाम्बरैः'—इति हरिवंशे। हस्तिनी (७९९); यूथिका; गणिकारिकावृक्षः। ४९०

गण्डः पुं. [गडि आस्यैकदेशे+अच्। यद्वा गम्+'ञमन्ताड्डः' इति ड] हस्तिकपोलः; कटः; करटः; कटकः; हस्तिगण्डकः, कपोलः (५२२); 'गाल' इति भाषा। 'तदीषदार्द्रारुणगण्डलेखम् उच्छ्वासिकालाञ्जनरागमक्ष्णोः'—इति कुमारसम्भवे (७।८२)। पिटकः (६०४); खड्गी; वीथ्यङ्गं; चिह्नं; स्फोटकः; वीरः; हयभूषणं; वुद्‌बुदः; ग्रन्थिः; विष्कुम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतदशमयोगः; 'गण्डो वृद्धिर्ध्रुवश्चैव व्याघातो हर्षणस्तथा' —इति ज्योतिषवचने। 'स्वकार्यकर्ता परकार्यहर्ता गण्डोद्भवः स्यादतिगण्डवाक्यः। अत्यन्तधूर्तः पुरुषः कुरूपः सुहृद्गणानामतितापदाता'—इति कोष्ठीप्रदीपः। दोषजनकोऽश्विन्यादिनक्षत्राणां भागविशेषः; 'अश्विनीमघमूलानां तिस्रो गण्डाद्यनाडिकाः। अन्त्याः पौष्णोरगेन्द्राणां पञ्चैव यवना जगुः। मूलेन्द्रयोर्दिवा गण्डो निशायां पितृसर्पयोः। संध्याद्वये तथा ज्ञेयो रेवतीतुरगर्क्षयोः।' 'सन्ध्यारात्रिदिवाभागे गण्डयोगोद्भवः शिशुः। आत्मानं मातरं तातं विनिहन्ति यथाक्रमम्।' 'दिवा जाता तु या कन्या निशि जातस्तु यः पुमान्। नोभयोर्गण्डदोषः स्यात् नाचलो हन्ति पर्वतम्'—इति ज्योतिषतत्त्वम्। २१६

गण्डकः पुं. [गण्ड+स्वार्थे कन्] खड्गी; 'गैंडा' इति भाषा। खड्गः; संख्याप्रभेदः; 'गण्डा' इति भाषा। विद्याविशेषः; अवच्छेदः; अन्तरायः; दर्शाविशेषः; 'ततः स गण्डकान् शूरो विदहान् भरतर्षभः'—इति महाभारते (२।२९।४)। भूषणम्; 'व्याघ्रनखपङ्क्ति मण्डिता गण्डकाभरणा च'—इति कादम्बर्याम्। ग्रन्थिः; 'गोरोचनालिखितभूर्जपत्रगर्भान् मन्त्रगण्डकान्'—इति कादम्बर्याम्। स्फोटकरोगविशेषः; 'अनेकवेत्राघातनिर्मितबहुगात्रगण्डकम्'—इति कादम्बर्याम्। २२७

गण्डशैलः पुं. [गण्ड इव शैलः, स्खलितस्थूलोपलः। शैलशब्दोऽत्र शैलावयवे वर्तते। 'विशेषणं विशेष्येण बहुलम्'—इति समासः। यद्वा शैलस्य पर्वतस्य गण्ड इव राजदन्तादित्वात् पूर्वनिपातः] गिरेश्च्युतः स्थूलोपलः; भूकम्पादिना पर्वताद् गलितो महान् प्रस्तरः; 'किं पुत्रि! गण्डशैलभ्रमेण नवनीरदेषु निद्रासि। अनुभव चपलाविलसितगर्जितदेशान्तरभ्रान्तीः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (१७९)। ललाटम्। १६८

गण्डूपदः पुं. [गण्ड्वः ग्रन्थयः पदानि यस्य] किञ्चुलुकः; 'गण्डूपदस्य रूपाणि पिच्छिलानि मृदूनि च'—इति माधवकररोगविनिश्चये अर्शोऽधिकारे। ६६१

गण्डूषः पुं. [गडि+'गण्डेश्च' इति ऊषन्] मुखपूरणम्; 'भीमस्तु विजयस्याथ काञ्चनो होत्रकस्ततः। तस्य जह्नुः सुतो गङ्गां गण्डूषीकृत्य योऽपिबत्'—इति भागवते (९।१५।३)। हस्तिशुण्डाग्रभागः; प्रसृतिपरिमितम्; 'अगाधजलसञ्चारी विकारी न च रोहितः। गण्डूषजलमात्रेण शफरी फर्फरायते।' ७८५

गण्डूषा स्त्री. [गण्डूष+टाप्] मुखपूर्णतोयं; मुखपूरणं; गण्डूषः। [पुंलिङ्गस्तु गण्डूषशब्दश्चुलुकपरिमाणे, यथा—'अपां द्वादशगण्डूषैर्मुखशुद्धिर्विधीयते'। ७८५

गतिः स्त्री. [गम्+भावे क्तिन्] गमनकर्म। तदर्थकवर्तमानकालिकक्रियापदानि निघण्टुप्रोक्तानि—'वर्तते, अयते, लोटते, लोठते, स्यन्दते, कसति, सर्पति, स्यमति, स्रवति, स्रंसते, अवति, श्चोतति, ध्वंसति, वेनति, मार्ष्टि, गुरण्यति, शवति, कालयति, पेलयति, कण्टति, पिस्यति, विस्यति, मिस्यति, प्रवते, प्लवते, च्यवते, कवते, गवते, नवते, क्षोदति, नक्षति, सक्षति, म्यक्षति, सचति, ऋच्छति, तुरीयति, चतति, अतति, गाति, इयक्षति, सञ्चति, सरति, रंहति, यतते, भ्रमति, घजति, रजति, लजति, क्षिपति, धमति, मिनाति, ऋण्वति, ऋणोति, स्वरति, सिसर्ति, वेषिष्टि, योषिष्टिः, ऋणाति, ऋयते, तेजति, दघ्यति, दघ्नोति, युध्यति,

धन्वति, अरुषति, आर्यन्ति, डीयते, तकति, टीयते, इषति, फणति, हनति, अर्द्धति, मर्दति, ससृते, नसते, हर्षति, इर्यति, ईर्ते, ईङ्खते, त्सयति, स्वात्रति, गन्ति, आगनीगन्ति, जङ्गन्ति, जिन्वति, जसति, गमति, ध्रति, ध्नाति, ध्रयति, वहते, रथर्यति, जेहते, स्वःकति, क्षुम्पति, प्साति, वाति, याति, दृयति, द्राति, डूलति, एजति, जमति, जवति, वञ्चति, अनिति, पवते, हन्ति, सेधति, अगन्, अजगन्, जिगाति, पतति, इन्वति, द्रमति, द्रवति, वेति, हयन्तात्, एति, जगायात्, अयुथुः–इति द्वाविंशं शतं गतिकर्म'—इति वेदनिघण्टौ २ अध्याये । कर्मफलम् (७९९); 'गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत्'–इति भगवद्गीतायाम् (९।१८)। 'गतिः कर्मफलम्' इति शाङ्करभाष्यम्। दशा; 'अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः। अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण ! गच्छति'—इति भगवद्गीतायाम् (६।३७)। [गम्यतेऽस्यामिति। गम्+अधिकरणे क्तिन्] मार्गः; 'शुक्लकृष्णे गती ह्येते जगतः शाश्वते मते । एकया यात्यनावृत्तिमन्ययावर्तते पुनः'—इति भगवद्गीतायाम् (८।२६)। [गम्यते ज्ञायतेऽनया, करणे क्तिन्] ज्ञानम्; 'न ते विदुः स्वार्थगतिं हि विष्णुं दुराशया ये बहिरर्थमानिनः । अन्धा यथान्धैरुपनीयमानास्तेऽपीशतन्त्र्यामुरुदाम्नि बद्धाः'—इति भागवते (७।५।३१) 'स्वस्मिन्नेव आत्मन्येव अर्थः प्रयोजनं येषां ते स्वार्थास्तत्त्वविदस्तेषां गतिं ज्ञानस्वरूपं विष्णुं ते दुराशया बहिरर्थमानिनो न विदुः जानन्ति'—इति तट्टीकायां स्वामी । [गम्यते प्राप्यतेऽनया इति, गम्+करणे क्तिन्] यात्रा; अभ्युपायः; 'यज्ञ इज्यो महेज्यश्च क्रतुः सत्रं सतां गतिः'—इति महाभारते (१३।१४९।६१)। नाडीव्रणः; सरणी; [गम्+भावे क्तिन्] परिणतिः; 'मदनमुपदधे स एव तासां दुरधिगमा हि गतिः प्रयोजनानाम्'—इति किरातार्जुनीये (१०।४०) 'गतिः परिणतिः'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। प्रमाणम्; 'कृपेति चेदस्तु मृगः क्षतः क्षणादनेन पूर्वं न मयेति का गतिः'—इति किराते (१४।१५) 'मया नेत्यत्र का गतिः किं प्रमाणम्' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । [गम्यते इति, गम्+कर्मणि क्तिन्] स्वरूपम्; 'चरतस्तपस्तव वनेषु सहा न वयं निरूपयितुमस्य गतिम्'—किराते (६।३६) 'तव वनेषु तपश्चरतोऽस्य गतिं स्वरूपं निरूपयितुम्' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। विषयः; 'तपः किलेदं तदवाप्तिसाधनं मनोरथानामगतिर्न विद्यते'—इति कुमारे (५।६४) 'मनोरथानां कामानाम् अगतिः अविषयः'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। ग्रहभेदेन गतिभेदः; 'अदृश्यरूपाः कालस्य मूर्तयो भगणाश्रिताः। शीघ्रमन्दोच्चपाताख्या ग्रहाणां गतिहेतवः'—इति सूर्यसिद्धान्तः। ७२६, ७७६

गदः पुं. [गद्यते रुज्यतेऽनेन, गदयति वा। गद्+करणे अप्, णिजन्तादच् वा] रोगः; 'शत्रुः स्थानबलं प्राप्य विक्रमं कुरुते बली। तथा धात्वन्तरं प्राप्य विक्रमं कुरुते गदः।' 'यावत्स्थानं समाश्रित्य विकारं कुरुते गदः । तावत्तस्य प्रतीकारः स्थानत्यागाद् बलीयसः'—इति हारीते चिकित्सास्थाने द्वितीयेऽध्याये। श्रीकृष्णभ्राता; 'हृदीकः ससुतोऽक्रूरो जयन्तगदसारणाः'—इति भागवते (११।१४।२८)। भाषणम्; औषधम्; 'अथ शुश्राव गच्छन् स तक्षको जगतीपतिम्। मन्त्रैर्गदैर्विषहरै रक्ष्यमाणं प्रयत्नतः'—इति महाभारते (१।४३।२१)। असुरविशेषः; 'गदो नामासुरो ह्यासीद् वज्राद्वज्रतरो दृढः'—इति वायुपुराणे ५ अध्याये। क्ली. [गद्यते पीड्यतेऽस्मादनेन वा। गद्+अपादाने करणे वा अप्] विषम्। ६००

गदा स्त्री. [गदयति पीडयत्यनया, विपक्षमितिशेषः। गद्+णिच्+करणे अप् टाप् च। गदयतीति णिच् अच् वा] लौहमयास्त्रभेदः; 'तं महात्मा महात्मानं गदामुद्यम्य पाण्डवः। अभिदुद्राव वेगेन धार्तराष्ट्रं वृकोदरः'—इति महाभारते (९।५६।४५)। विष्णुगदा तु देवशिल्पिना गदसंज्ञकस्यासुरविशेषस्यास्थ्ना निर्मिता; 'गदो नामासुरो ह्यासीद् वज्राद् वज्रतरो दृढः। प्रार्थितो ब्रह्मणे प्रादात् स्वशरीरास्थि दुस्त्यजम्। ब्रह्मोक्तो विश्वकर्मापि गदां चक्रेऽद्भुतां तदा।' योगविशेषः; 'अनन्तरयोः केन्द्रयोर्यदा सर्वे ग्रहा भवन्ति तदा गदानाम योगो भवति'—इति लघुजातके (१०।३)। पाटलवृक्षः। ४७६

गदाग्रजः पुं. [गदस्य वसुदेवपुत्रभेदस्य अग्रजः] श्रीकृष्णः;

धन्वति, अरुषति, आर्यन्ति, डीयते, तकति, टीयते, इषति, फणति, हनति, अर्द्धति, मर्दति, ससृते, नसते, हर्षति, इर्यति, ईर्ते, ईङ्खते, व्ययति, स्वात्रति, गन्ति, आगनीगन्ति, जङ्गन्ति, जिन्वति, जसति, गमति, घ्रति, ध्नाति, घ्रयति, वहते, रथर्यति, जेहते, स्वःकति, क्षुम्पति, प्साति, वाति, याति, दृयति, द्राति, डूलति, एजति, जमति, जवति, वञ्चति, अनिति, पवते, हन्ति, सेधति, अगन्, अजगन्, जिगाति, पतति, इन्वति, द्रमति, द्रवति, वेति, हयन्तात्, एति, जगायात्, अयुथुः—इति द्वाविंशं शतं गतिकर्म'—इति वेदनिघण्टौ २ अध्याये । कर्मफलम् (७९९); 'गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत्'—इति भगवद्गीतायाम् (९।१८) । 'गतिः कर्मफलम्' इति शाङ्करभाष्यम् । दशा; 'अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः । अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण ! गच्छति'—इति भगवद्गीतायाम् (६।३७) । [गम्यतेऽस्यामिति । गम्+अधिकरणे क्तिन्] मार्गः; 'शुक्लकृष्णे गती ह्येते जगतः शाश्वते मते । एकया यात्यनावृत्तिमन्ययावर्तते पुनः'—इति भगवद्गीतायाम् (८।२६) । [गम्यते ज्ञायतेऽनया, करणे क्तिन्] ज्ञानम्; 'न ते विदुः स्वार्थगतिं हि विष्णुं दुराशया ये बहिरर्थमानिनः । अन्धा यथान्धैरुपनीयमानास्तेऽपीशतन्त्र्यामुरुदाम्नि बद्धाः'—इति भागवते (७।५।३१) 'स्वस्मिन्नेव आत्मन्येव अर्थः प्रयोजनं येषां ते स्वार्थास्तत्त्वविदस्तेषां गतिं ज्ञानस्वरूपं विष्णुं ते दुराशया बहिरर्थमानिनो न विदुः जानन्ति'—इति तट्टीकायां स्वामी । [गम्यते प्राप्यतेऽनया इति, गम्+करणे क्तिन्] यात्रा; अभ्युपायः; 'यज्ञ इज्यो महेज्यश्च क्रतुः सत्रं सतां गतिः'—इति महाभारते (१३।१४९।६१)। नाडीव्रणः; सरणी; [गम्+भावे क्तिन्] परिणतिः; 'मदनमुपदधे स एव तासां दुरधिगमा हि गतिः प्रयोजनानाम्'—इति किरातार्जुनीये (१०।४०) 'गतिः परिणतिः'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । प्रमाणम्; 'कृपेति चेदस्तु मृगः क्षतः क्षणादनेन पूर्वं न मयेति का गतिः'—इति किराते (१४।१५) 'मया नेत्यत्र का गतिः किं प्रमाणम्' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । [गम्यते इति, गम्+कर्मणि क्तिन्] स्वरूपम्; 'चरतस्तपस्तव वनेषु सदा न वयं निरूपयितुमस्य गतिम्'—किराते (६।३६) 'तव वनेषु तपश्चरतोऽस्य गतिं स्वरूपं निरूपयितुम्' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । विषयः; 'तपः किलेदं तदवाप्तिसाधनं मनोरथानामगतिर्न विद्यते'—इति कुमारे (५।६४) 'मनोरथानां कामानाम् अगतिः अविषयः'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । ग्रहभेदेन गतिभेदः; 'अदृश्यरूपाः कालस्य मूर्तयो भगणाश्रिताः । शीघ्रमन्दोच्चपाताख्या ग्रहाणां गतिहेतवः'—इति सूर्यसिद्धान्तः । ७२६, ७७६

गदः पुं. [गद्यते रुज्यतेऽनेन, गदयति वा । गद्+करणे अप्, णिजन्तादच् वा] रोगः; 'शत्रुः स्थानबलं प्राप्य विक्रमं कुरुते बली । तथा धात्वन्तरं प्राप्य विक्रमं कुरुते गदः ।' 'यावत्स्थानं समाश्रित्य विकारं कुरुते गदः । तावत्तस्य प्रतीकारः स्थानत्यागाद् बलीयसः'—इति हारीते चिकित्सास्थाने द्वितीयेऽध्याये । श्रीकृष्णभ्राता; 'हृदीकः ससुतोऽक्रूरो जयन्तगदसारणाः'—इति भागवते (१।१४।२८) । भाषणम्; औषधम्; 'अथ शुश्राव गच्छन् स तक्षको जगतीपतिम् । मन्त्रैर्गदैर्विषहरै रक्ष्यमाणं प्रयत्नतः'—इति महाभारते (१।४३।२१) । असुरविशेषः; 'गदो नामासुरो ह्यासीद् वज्राद्वज्रतरो दृढः'—इति वायुपुराणे ५ अध्याये । क्ली. [गद्यते पीड्यतेऽस्मादनेन वा । गद्+अपादाने करणे वा अप्] विषम् । ६००

गदा स्त्री. [गदयति पीडयत्यनया, विपक्षमितिशेषः । गद्+णिच्+करणे अप् टाप् च । गदयतीति णिच् अच् वा] लौहमयास्त्रभेदः; 'तं महात्मा महात्मानं गदामुद्यम्य पाण्डवः । अभिदुद्राव वेगेन धार्तराष्ट्रं वृकोदरः'—इति महाभारते (९।५६।४५) । विष्णुगदा तु देवशिल्पिना गदसंज्ञकस्यासुरविशेषस्यास्थ्ना निर्मिता; 'गदो नामासुरो ह्यासीद् वज्राद् वज्रतरो दृढः । प्रार्थितो ब्रह्मणे प्रादात् स्वशरीरास्थि दुस्त्यजम् । ब्रह्मोक्तो विश्वकर्मापि गदां चक्रेऽद्भुतां तदा ।' योगविशेषः; 'अनन्तरयोः केन्द्रयोर्यदा सर्वे ग्रहा भवन्ति तदा गदानाम योगो भवति'—इति लघुजातके (१०।३) । पाटलवृक्षः । ४७६

गदाग्रजः पुं. [गदस्य वसुदेवपुत्रभेदस्य अग्रजः] श्रीकृष्णः;

'तावन्न योगगतिभिर्यतिरप्रमत्तो यावद् गदाग्रजकथासु रतिं न कुर्यात्'—इति भागवते (४।२३।१२)। २५

गदाधरः पुं. [गदां धरति धारयति वा। धृ+अच्। यद्वा धरति इति धरः, गदायाः धरः। धृ+अन्तर्णिजन्तात् अजित्येके] विष्णुः; गदाभृत्; 'नेयं शोभिष्यते तत्र यथेदानीं गदाधर। त्वत्पदैरङ्किता भाति स्वलक्षणविलक्षितैः'—इति भागवते (१।८।३८)। गदाधारणकथा वायुपुराणे गयामाहात्म्ये ५ अध्याये द्रष्टव्या। 'मनस्तत्त्वात्मकं चक्रं बुद्धितत्त्वात्मिकां गदाम्। धारयन् लोकरक्षार्थमुक्तश्चक्रगदाधरः'—इति विष्णुसहस्रनामभाष्ये। महादेवः; 'भोजपुरे भोजनाथो गयायां च गदाधरः'—इति महालिङ्गेश्वरतन्त्रे शिवशतनामस्तोत्रे। गदाधारिणि त्रि.। २४

गन्ता [ऋ] त्रि. [गच्छतीति, गम्+कर्तरि तृच्] गमनकर्ता। ४४४

गन्त्री स्त्री. [गम्यतेऽनया इति। गम्+करणे ष्ट्रन् ततो ङीष्] वृषवहनीयशकटं; 'बैलगाडी' इति भाषा। [गच्छतीति, गम्+कर्तरि तृन्+स्त्रियां ङीप्] गमनशीला; गमनकारिणी; 'गन्त्री वसुमती नाशमुदधिर्दैवतानि च। फेनप्रख्यः कथं नाशं मर्त्यलोको न यास्यति'—इति याज्ञवल्क्यः (३।१०)। ४४४

गन्धः पुं. [गन्ध्+पचाद्यच्] लेशः; आमोदः; 'घ्राणग्राह्यो भवेद् गन्धो घ्राणस्यैवोपकारकः। सौरभश्चासौरभश्च स द्वेधा परिकीर्तितः'—इति भाषापरिच्छेदे (१०३)। 'गन्धो मलयजो यस्तु दैवे पैत्र्ये च सम्मतः। तत्पङ्को वा रसो वापि चूर्णो वा विष्णुतुष्टिदः। सर्वेषु गन्धजातेषु प्रशस्तो मलयोद्भवः। तस्मात्सर्वप्रयत्नेन दद्यान्मलयजं सदा। कृष्णागरुः सकर्पूरः सहितो मलयोद्भवैः। वैष्णवीप्रीतिदो गन्धः कामाख्यायाश्च भैरव! । कुङ्कुमागरुकस्तूरीचन्द्रभागैः समीकृतैः। त्रिपुराप्रीतिदो गन्धस्तथा चण्डयाश्च शम्भुना। दैवतोद्देशपूर्वेण गन्धान् सम्पूज्य साधकः। देवायेज्याय वितरेत् सर्वसाध्येषु पूजकः। गन्धेन लभते कामं गन्धो धर्मप्रदः सदा। अर्थानां साधको गन्धो गन्धे मोक्षः प्रतिष्ठितः। अयं वा कथितो गन्धः पुत्रौ वैतालभैरवौ' —इति कालिकापुराणे ६८ अध्यायः। प्रतिवेशी; सम्बन्धः; गन्धकः; 'शोधितो यस्तु गन्धः स्यात् जरामृत्युरुजापहः। अग्निसन्दीपनः श्रेष्ठो वीर्यवृद्धिकरोऽस्थिकृत्'—इति प्रयोगामृते। गर्वः; शोभाञ्जनः; घृष्टचन्दनम्; 'घृष्टो मलयजो गन्धः' इति शुद्धितत्त्वम्। क्ली.[गन्धो विद्यतेऽस्य, अर्शआदित्वादच्] कृष्णागरुः। ७९३

गन्धकारिका स्त्री. [गन्धं सुरभिप्रधानं मण्डनं करोतीति। गन्ध+कृ+ण्वुल् ततष्टाप् अत इत्वञ्च] सैरिन्ध्री; सैरन्ध्री; सा तु परवेश्मस्था स्ववशा शिल्पकारि[illegible]। ४९२

गन्धनम् क्ली. [गन्ध् गतिहिंसायाचनेषु+भावे ल्युट्] उत्साहः; सूचनं; प्रकाशनं; हिंसा। ८७०

गन्धमूषिका स्त्री. [गन्धा दुर्गन्धप्रधाना मूषी, ततष्टाप्] छुच्छुन्दरी; गन्धमूषिकः। २३५

गन्धर्वः पुं. [गन्धं सङ्गीतवाद्यादिजनितप्रमोदम् अर्वति प्राप्नोतीति। गन्ध+अर्व् गतौ+अण्, शकन्ध्वादित्वात् अलोपे साधुः] स्वर्गगायकः; गातुः; दिव्यगायनः; 'भ्रातरौ स्वरसम्पन्नौ गन्धर्वाविव रूपिणौ'—इति रामायणे (१।४।११)। घोटकः (४३६); 'रथं संयोजयामासुर्गन्धर्वैर्हममालिभिः'—इति महाभारते (३।१६१।२३)। पशुजातिविशेषः; कस्तूरीमृगः; अन्तराभवसत्त्वः; अन्तराभवसत्त्वस्तु जन्ममरणयोर्मध्यभवः प्राणी, यो मृतो नैव कायान्तरं प्राप्तः नापि जन्म, सः। मरणजन्मनोरन्तरा भवत्वादन्तराभवसत्त्वम्, तच्च यातनाशरीरम्। गुप्तप्राणीति केचित्; 'गन्धर्वाः पतयो मम'-इति विराटे। 'न चाप्यहं चालयितुं शक्या केनचिदङ्गने! दुःखशीला हि गन्धर्वास्ते च मे बलवत् प्रियाः। प्रच्छन्नाश्चापि रक्षन्ति ते मां नित्यं शुचिस्मिते'—इति महाभारते (४।८।३४)। पुंस्कोकिलः; गायनमात्रं; शिवः; 'गन्धर्वो ह्यदितिस्तार्क्ष्यः सुविज्ञेयः सुशारदः'—इति महाभारते (१३।१७।९७)। ग्रहविशेषः; 'देवास्तथा शत्रुगणाश्च तेषां गन्धर्वयक्षाः पितरो भुजङ्गाः। रक्षांसि या चापि पिशाचजातिरेषोऽष्टधा देवगणो ग्रहाख्यः'—इति सुश्रुते। [गाः रश्मीन् वर्षणोपयोगीनि वारीणि वा धारयति इति। गो+धृ+व, गोर्गमादेशश्च] सोमः; 'गन्धर्वो अस्य रशनामगृभ्णात् सूरादश्वं वसवो निरतष्ट।' 'गन्धर्वः सोमः' इति भाष्यम्—इति ऋग्वेदे (१।१६३।२)।

रश्मिमात्रधारकः; 'ऊर्ध्वो गन्धर्वो अधिनाके अस्थात् विश्वारूपा प्रतिचक्षाणो अस्य।' 'गन्धर्वो रश्मीनां धारकः' इति भाष्यम्—इति ऋग्वेदे (९।५८६।१२)। उदकधारकसूर्यांशादित्यविशेषः, सूर्यश्च, एते सर्वे एव बोधिताः; 'गन्धर्व इत्था पदमस्य रक्षति पाति देवानां जनिमान्यद्भुतः।' 'गन्धर्वः उदकानां स्तुतीनां वा धारकः आदित्यः' इति भाष्यम्—इति ऋग्वेदे (९।८३।४)। 'वहत् कुत्समार्जुनेयं शतक्रतुः त्सरद्-गन्धर्वमस्तृतम्।' 'गन्धर्वं गवां रश्मीनां धर्तारं सूर्यम्' इति भाष्यम्—इति ऋग्वेदे (८।१।११)। अहः; दिवससमूहः; 'तस्याहानीह गन्धर्वा गन्धर्व्यो रात्रयः स्मृताः'—इति भागवते (४।२९।२१)। राज्ञां स्तुति-पाठकः; 'नटनर्तकगन्धर्वाः सूतमागधवन्दिनः। गायन्ति चोत्तमश्लोकचरितान्यद्भुतानि च'—इति भागवते (१।११।२०)। शरीराधिष्ठातृदेवविशेषः; 'सोमः प्रथमो विविदे गन्धर्वो विविद उत्तरः। तृतीयो अग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः'—इति ऋग्वेदे (१०।५०।४०)। तथा च पञ्चतन्त्रे (३।२१०–२१३)। ८७

गन्धवहः पुं. [गन्धं वहतीति, वह्+अच्। गन्धस्य वहो वा] वायुः; 'मन्दाराणामुदाराणां वनानि परि-लोडयन्। सौगन्धिकवनानां च गन्धं गन्धवहो वहन्'—इति महाभारते (२।१०।७)। गन्धयुक्ते त्रि.। ७६

गन्धवाहः पुं. [गन्धं वहतीति। गन्ध+वह्+'कर्मण्यण्'] वायुः; 'इह हि दहति चेतः केतकीगन्धबन्धुः प्रसर-दसमबाणप्राणवद् गन्धवाहः'—इति गीतगोविन्दे (१।३६)। मृगविशेषः; कस्तूरीमृगः। ७६

गन्धोत्तमा स्त्री. [गन्धेन उत्तमा, गन्धप्रधानेत्यर्थः] मदिरा। ३२९

गभस्तिः पुं. [गम्यते ज्ञायते इति गः विषयः। गम्+ड। तं बभस्ति दीपयति प्रकाशयतीति। भस्+'क्तिच्क्तौ चेति' क्तिच्] किरणः; 'मामुपसृतमृगतनयं शिशिर-शान्तानुरागगुणितनिजवदनसलिलामृतमयगभस्तिभिः स्वधयतीति च'—इति भागवते (५।८।२२)। [गम्यते ज्ञायते इति, गम्+ड, गम् इदं सर्वं जगत् बभस्ति भासयति निजकिरणजालैरिति शेषः। ग+भस्+क्तिच्] सूर्यः; 'गभस्तिमान् गभस्तिश्च विश्वात्मा भासकस्तथा। त्वं योनिर्वेदविद्यानां वेदवेद्यस्तथैव च'—इति सूर्यस्तोत्रे। शिवः; 'गभस्तिर्ब्रह्मकृद् ब्रह्मा ब्रह्मविद् ब्राह्मणो गतिः'—इति महाभारते (१३।१७।१३३)। स्त्री. [गच्छति प्राप्नोति हव्यादिकमिति गः अग्निस्तं बभस्त्यनया इति। ग+भस्+करणे क्तिच्] स्वाहा। ३८

गभीरम् त्रि. [गच्छति जलमत्र। गम्+'गभीरगम्भीरौ' इति ईरन् भश्चान्तादेशः] गम्भीरं; नीचस्थानं; निम्नं; गम्भीरकम्; अगाधं; गहनं; प्रचण्डम्। १४१

गम्भीरम् त्रि. [गच्छति जलमत्र, गच्छतेरीरन् भश्चान्ता-देशः नुमागमश्च] गभीरं; नीचस्थानं; निम्नं; गभीरकम्; 'ततः सागरगम्भीरो वानरः पवनो जवे'—इति रामायणे (५।१।५०)। पुं. जम्बीरः; पङ्कजम्; ऋङ्मन्त्रः; शिवः; 'गम्भीरघोषो गम्भीरो गम्भीरबलवाहनः'—इति महाभारते (१३।१७।५२)। स्त्रियां हिक्कारोगः; 'नाभिप्रवृत्ता या हिक्का घोरा गम्भीरनादिनी। शुष्कोष्ठ-कण्ठजिह्वास्यश्वासपार्श्वरुजाकरी। अनेकोपद्रवयुता गम्भीरा नाम सा स्मृता'—इति सुश्रुते उत्तरतन्त्रे ५० अध्याये। १४०

गरः पुं. [गीर्यते इति, गॄ+कर्मणि अप्] विषम्; 'विद्वेष-नष्टमतयः स्त्रियो दारुणचेतसः। गरं ददुः कुमाराय दुर्मर्षा नृपतिं प्रति'—इति भागवते (६।१४।४३)। उपविषं; रोगः। क्ली. [गिरति दोषबहुलं नाशयति स्वस्मिन् जातस्य बालस्येति भावः। गॄ+पचाद्यच्] ववाद्येकादशकरणान्तर्गतं पञ्चमकरणम्; 'बवबालव-कौलवतैतिलाख्यगरवणिजविष्टिसंज्ञानाम्'—इति बृह-त्संहितायाम् (९९।४)। 'विचारदक्षो विजितारिपक्षः शूरोऽतिधीरो मृदुहास्ययुक्तः। दाता दयालुर्गुणवान् नरः स्याद् गरे परेषामुपकारकर्ता'—इति कोष्ठी-प्रदीपः। 'कृषिबीजगृहाश्रयजानि गरे वणिजि ध्रुवकार्य-वणिग्युतयः'—इति बृहत्संहितायाम् (९९।७)। [गीर्यते भक्ष्यते इति, गॄ+कर्मण्यप्] विषम्; 'तस्मादिदं गरं भुञ्जे प्रजानां स्वस्तिरस्तु मे'—इति भागवते (८।७।४१)। वत्सनाभाख्यविषं; सम्मोहजं विषम्। ६४१

गरलम् क्ली. [गिरति ग्रसति नाशयति। गॄ+अलच्। गरात् भक्षणात् लाति आदत्ते जीवनं वा। गर+ला+क] विषम्; 'व्यालनिलयमिलनेन गरलमिव कलयति मलयसमीरम्।' पन्नगविषं; परिमाणम्; तृणपूलकम्।
६४१

गरुडः पुं. [गरुद्भ्यां पक्षाभ्यां डयते उड्डीयते इति। गरुत्+डी+ड। पृषोदरादित्वात् तलोपे साधुः। यद्वा 'गिर उडच्' इति उडच्] पक्षिविशेषः; गरुत्मान्; तार्क्ष्यः; वैनतेयः; खगेश्वरः; नागान्तकः; विष्णुरथः; सुपर्णः; पन्नगाशनः; महावीरः; पक्षिसिंहः; उरगाशनः; शाल्मली; हरिवाहनः; अमृताहरणः; नागाशनः; शाल्मलिस्थः; खगेन्द्रः; भुजगान्तकः; तरस्वी; तार्क्ष्यनायकः; 'प्रतिगृह्य वरौ तौ तु गरुडो विष्णुमब्रवीत्। भवतेऽपि वरं दद्मि वृणोतु भगवानपि'—इति महाभारते (१।३१।३३)। व्यूहविशेषः; 'वराहमकराभ्यां वा सूच्या वा गरुडेन वा'—इति मनुः (७।१८७)। 'सूक्ष्ममुखपश्चाद्भागः पृथुमध्यो वराहव्यूहः। एष एव पृथुतरमध्यो गरुडव्यूहः' इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। ३०

गरुत् पुं. [गृणाति शब्दायते वायुवेगवशादिति। गॄ शब्दे, 'मृग्रोरुतिः' इति उति] पक्षः; 'पंख' इति भाषा। [गिरतीति, गॄ+निगरणे+उति] निगरणं; भक्षणं; 'सुपर्णोऽसि गरुत्मान् पृष्ठे'—इति यजुर्वेदे (१७।७२) 'अग्ने ! त्वं सुपर्णोऽसि सुपर्णपक्षाकारो गरुडोऽसि गरुत्मान् गरुत् गरणं गिलनं भक्ष अस्यास्तीति गरुत्मान् अशनायत्वानित्यर्थः'—इति वेददीधितिः। २३९

गरुत्मान् [त्] पुं. [गरुतः पक्षाः सन्त्यस्य। गरुत्+मतुप्] गरुडः; 'जग्राह लीलया प्राप्तां गरुत्मानिव पन्नगीम्'—इति भागवते (३।१९।११)। पक्षिमात्रम् (२३७)। ३०

गर्गरी स्त्री. [गर्ग शब्दं रातीति। गर्ग+रा+क, गौरादित्वाद् ङीष्] मन्थनी; दधिमन्थनपात्रं; 'कलसी, गगरी' इति भाषा। 'मेषादौ सक्तवो देया वारिपूर्णा च गर्गरी'—इति तिथ्यादितत्त्वे। ३१७

गर्जन्मेघः पुं. [गर्जन् यः मेघः, कर्मधारयः] नादवन्मेघः; स च पर्जन्यः कथ्यते। ८१८

गर्जितम् क्ली. [गर्ज्+भावे क्त] मेघशब्दः; रणादौ आस्फालनम्; 'बाण ! किं गर्जसे मोहात् शूराणां नास्ति गर्जितम्'—इति हरिवंशे (१८२।४९)। कृतशब्दे त्रि. 'सन्ध्यायां गर्जिते मेघे शास्त्रचिन्तां करोति यः। चत्वारि तस्य नश्यन्ति आयुर्विद्या यशो बलम्'—इति स्मृतौ। पुं. [गर्जो गर्जनं जातोऽस्य, जातार्थे इतच्] मत्तहस्ती। ८४१

गर्तः पुं. [गिरति ग्रसति स्वस्मिन् पतितं जीवजातादिकमिति। गॄ निगरणे+'हसिमृग्रिण्वामिदमीति' तन्] अवटः; भूरन्ध्रं; दरः; श्वभ्रम्; आवटिः; आवटुः; पृथिवीरन्ध्रं; 'गड्ढा' इति भाषा। 'धरण्यां विवृते गर्ते निपपात लघुक्रमः'—इति मार्कण्डेये (२१।९)। त्रिगर्तदेशः; कुकुन्दरः; रोगभेदः; मातृगर्भरूपग ह्वरम्; 'शेते विण्मूत्रयोर्गर्ते स जन्तुर्जन्तुसम्भवे'—इति भागवते (३।३१।५)। कूपः; 'यद्रोमगर्तेषु निलिल्युरध्वरास्तस्मै नमः कारणशूकराय ते।' नरकविशेषः; 'निपपात महागर्ते तिमिरौघसमावृते'—इति मार्कण्डेये (२१।१०)। अष्टधनुःसहस्रेभ्यो न्यूनगतिदेवखातभेदः; 'धनुःसहस्राण्यष्टौ च गतिर्यासां न विद्यते। न ता नदीशब्दवहा गर्तास्ते परिकीर्तिताः'—इति छन्दोगपरिशिष्टे। 'नदीषु देवखातेषु तडागेषु सरःसु च। स्नानं समाचरेन्नित्यं गर्तप्रस्रवणेषु च'—इति मनुः (४।२०३)। [गीर्यते स्तूयते वेदस्तुतिं कुर्वता जनेनेति, गॄ+तन् गुणश्च] देवरथः; 'आरोहथो वरुण ! मित्र ! गर्तमतश्चाक्षाथे अदितिं दितिं च।' 'गर्तं रथम्' इति भाष्ये—इति ऋग्वेदे (५।६२।७)। ६२४

गर्दभः पुं. [गर्दति गर्दयति वा, कर्कशशब्दं करोतीत्यर्थः। गर्द रवे+'कशृशलिकल्लीति' इति अभच्] पशुविशेषः; चक्रीवान्; बालेयः; रासभः; खरः; राशभः; शङ्कुकर्णः; भारगः; भूरिगमः; धूसराह्वयः; वेशवः; धूसरः; स्मरसूर्यः; चिरमेही; पशुचरिः; चारपुङ्खः; चारटः; ग्राम्याश्वः। 'गार्दभं वा घनं मूत्रं तैलयोग्यं क्वचिद्भवेत्। सक्षारं तिक्तकटुकमुन्मादकुष्ठरोगजित्'—इति हारीते। 'गरचेतोविकारघ्नं तीक्ष्णं ग्रहणिरोगनुत्। दीपनं गार्दभं मूत्रं कृमिवातकफापहम्'—इति सुश्रुते। 'अविश्रामं वहेद्भारं शीतोष्णं च न विन्दति। ससन्तोषस्तथा नित्यं त्रीणि शिक्षेत गर्दभात्'—इति चाणक्ये (७०)। २८०

गर्धनः त्रि. [गृध्यति स्पृहयतीति। गृध्+'जुचङ्क्रम्यदन्द्रम्यसृगृधीति' इति युच्] लुब्धः। ३६३

गर्धना स्त्री. [भावे युच्] तृष्णा; अभिलाषः। ३६४

गर्भः पुं. [गीर्यते जीवसञ्चितकर्मफलदात्रा ईश्वरेण प्रकृतिबलाद् जठरगह्वरे स्थाप्यते पुरुषशुक्रयोगेणासौ। गॄ+'अर्तिगृभ्यां भन्' इति कर्मणि भन्] भ्रूणः; 'स्वर्गाच्च नरकान्मुक्तः स्त्रीणां गर्भो भवत्यपि'—इति

गारुडे २२९ अध्यायः । 'वातसम्प्रेरिते गर्भे अपूर्णे दिवसे यदि । प्रसूतये वाप्यय तद्गर्भे बालः प्रदृश्यते'—इति हारीते। शिशुः (५०२); [गीर्यते निगीर्यते निःक्षिप्यते वीर्यं योनिरन्ध्रेण अस्मिन् । गिरति सिञ्चति निषेकं करोति रेतोऽत्र वा । गॄ गॄ वा+भन्] कुक्षिः (५१५); 'यथा लोहस्य निस्यन्दो निषिक्तो बिम्ब-विग्रहम् । उपैति तद्विजानीहि गर्भे जीवप्रवेशनम्'—इति महाभारते (१४।१८।९) । सन्धिः; पनसकण्टकं; मध्यम्; 'केतकगर्भे गन्धादरेण दूरादमी द्रुतमुपेताः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (१७६) । अपवरकः; गङ्गादि-सन्निहितदेशः; 'भाद्रकृष्णचतुर्दश्यां यावदाक्रमते जलम् । तावद् गर्भं विजानीयात् तदूर्ध्वं तीरमुच्यते'—इति प्रायश्चित्ततत्त्वम् । आभ्यन्तरिकवस्तुमात्रम्; 'अष्ट-मासधृतं गर्भं भास्करस्य गभस्तिभिः । रसं सर्वसमुद्राणां द्यौः प्रसूते रसायनम्'—इति रामायणे (३।२७।३) । ४९९

गर्भकः पुं. [गर्भे केशगर्भे केशमध्ये इति यावत्, कायते प्रकाशते शोभते इत्यर्थः, यद्वा गर्भ इव प्रतिकृतिः । 'इवे प्रतिकृतौ' इति कन्] केशमध्यस्थितमाल्यं; क्ली. [गर्भ+संज्ञायां कन्, यद्वा चन्द्रस्य गर्भद्वयमिव काय-तीति, कै+क] रजनीद्वन्द्वम् ; 'रात्रियुग्म' इति भाषा । ५५२

गर्भगृहम् क्ली. [गर्भरूपम् आभ्यन्तरं गृहम्] अपवरकं; गर्भभवनं; गर्भवेश्म; 'भीतरी घर' इति भाषा । २९२

गर्भाशयः पुं. [आशेतेऽस्मिन्निति । आ+शी+अधिकरणे अच् । गर्भस्य भ्रूणस्य आशयः शय्यावदाश्रयस्थानम्] जरायुः; येन वेष्टितो गर्भः कुक्षौ तिष्ठति सः; गर्भ-शय्या; 'शुक्रं शोणितसंसृष्टं स्त्रिया गर्भाशयं गतम् । क्षेत्रं कर्मजमाप्नोति शुभं वा यदि वाशुभम्'—इति महाभारते (१४।१८।५) । 'पूर्णषोडशवर्षा स्त्री पूर्णविंशेन सङ्गता । शुद्धे गर्भाशये मार्गे रक्ते शुक्रेऽनिले हृदि । वीर्यवन्तं सुतं सूते ततो न्यूनाब्दयोः पुनः । रोग्यल्पायुरधन्यो वा गर्भो भवति नैव वा'—इति वाग्भटे शारीरस्थाने प्रथमेऽध्याये । ५००

गर्भिणी स्त्री. [गर्भोऽस्त्यस्याम् । गर्भ+'अत इनिठनौ' इति इनि, ततो ङीप्] गर्भवती; 'सुवासिनीः कुमारांश्च रोगिणो गर्भिणीस्तथा । अतिथिभ्योऽग्र एवैतान् भोजये-दविचारयन्'—इति मनुः (३।११४) । 'गर्भिणीकुञ्ज-राश्वादिशैलहर्म्यादिरोहणम् । व्यायामं शीघ्रगमनं शकटारोहणं त्यजेत् । शोकं रक्तविमोक्षं च साध्वसं कुक्कुटाशनम् । व्यवायं च दिवास्वप्नं रात्रौ जागरणं त्यजेत्'—इति काश्यपः । क्षीराबीवृक्षः । ४९८

गर्वः पुं. [गर्व मदे+भावे घञ्, यद्वा गिरति मदमत्त-स्यात्मानमुद्गिरतीव इति । गॄ निगरणे+'कॄ गॄ शॄ-दॄभ्यो वः' इति व] अहङ्कारः; 'यदि दुःस्थो न रक्षेत भरतो राज्यमुत्तमम् । प्राप्य दुर्मनसा वीर ! गर्वेण च विशेषतः'—इति महाभारते । व्यभिचारिभाव-विशेषः; 'गर्वो मदः प्रभावश्रीविद्यासत्कुलतादिजः । अवज्ञासविलासाङ्गदर्शनाविनयादिकृत्'—इति साहित्य-दर्पणे (३।१५०) । ७२२

गर्हणम् क्ली. [गर्ह कुत्सने+भावे ल्युट्] निन्दा । १४८

गर्हा स्त्री. [गर्ह्यते निन्द्यते इति । गर्ह्+'गुरोश्च हलः' इति स्त्रियां अ ततष्टाप्] निन्दा; 'कुलपतनं जनगर्हां बन्धनमपि जीवितव्यसन्देहम् । अङ्गीकरोति कुलटा सततं परपुरुषसंसक्ता'—इति पञ्चतन्त्रे (१।१८७) । १४८

गर्ह्यवादी [न्] त्रि. [गर्ह्यं वदतीति, गर्ह्य+वद्+'सुप्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये' इति णिनि] कद्वदः; निन्द्यवादी । ३७८

गलः पुं. [गलति भक्षयत्यनेन । गल्+करणे अप् । यद्वा गीर्यतेऽनेन । गॄ+करणे अप्] कण्ठः; 'प्रजा न रञ्जयेद् यस्तु राजा रक्षादिभिर्गुणैः । अजागलस्तनस्येव तस्य राज्यं निरर्थकम्'—इति पञ्चतन्त्रे (३।१६४) । [गलति क्षरति शालवृक्षादेरिति । गल्+पचाद्यच्] सर्जरसः; 'राल' इति भाषा । वाद्यभेदः; [गलति निःसरति जालादेरिति] गडकमत्स्यः; गलकः । ५१६

गलकम्बलः पुं. [गले कम्बल इव] गवां गलस्थितकम्बला-कृतिमांसम्; सास्ना; 'सास्ना गोगलकम्बलः'—इत्यु-ज्ज्वलदत्तः । २६६

गलन्तिका स्त्री. [गलतीति । गल्+शतृ, उगित्वान्ङीप्, नुम्, स्वार्थे कन् ह्रस्वश्च] कर्करी; स्वल्पवारिधानिका; 'प्रपा कार्या च वैशाखे देवे देया गलन्तिका'—इति काशीखण्डे । ३१७

गलितः त्रि. [गल्+क्त] पतितः; स्रस्तः; ध्वस्तः;

भ्रष्टः; स्कन्नः; पन्नः; च्युतः; 'निगमकल्पतरोर्गलितं फलं शुकमुखादमृतद्रवसंयुतम्'-इति भागवते (२।१।३)। १६८

गल्लः पुं. [गमनं गत्, संपदादित्वात्क्विप्। गतं लाति, गत्+ला+क] गण्डः; 'गाल' इति भाषा। ५२२

गल्वर्कः पुं. [गलुर्मणिविशेषः स इव अर्को दीप्तिर्यस्य] चषकः; मद्यपानपात्रं; मसारवन्मणिः; 'मसारगल्वर्क-सुवर्णरूप्यैर्वज्रप्रवालस्फटिकैश्च मुख्यैः'—इति महाभारते (७।१५।५३)। ३२७

गवलम् क्ली. [गुङ शब्दे, गवनं गवः, गवं लाति। क] महिषशृङ्गं; पुं. वनमहिषः; 'गवलालिकुलाहिनिभा विसृजन्ति पयः पयोवाहाः'—इति बृहत्संहितायाम् (२३।१७)। ७६४

गवाक्षः पुं. [गवामक्षीव, 'अक्ष्णोऽदर्शनात्' इत्यच्। यद्वा गावः रश्मयः अक्ष्णुवन्ति व्याप्नुवन्ति अनेन इति। अक्षू व्याप्तौ, अकर्तर्यथ घञ्] गवामक्षीव यः; वातायानं; वधूदृगयनं; जालं; जालकं; 'खिडकी, जाली' इति भाषा। 'उत्सृष्टलीलागतिरागवाक्षा-दलक्तकाङ्कां पदवीं ततान'—इति रघुवंशे (७।७)। वानरविशेषः; वैवस्वतपुत्रः; 'पुत्रा वैवस्वतस्यात्र पञ्च कालान्तकोपमाः। गयो गवाक्षो गवयः शरभो गन्धमादनः'—इति रामायणे। ३०४

गव्यम् त्रि. [गोरिदं गोर्विकारो वा। 'गोपयसोर्यत्' इति यत्, 'वान्तो यि प्रत्यये' इति अव्] गवां सर्वं; गोसम्बन्धि; दुग्धगोमयादि; 'संवत्सरं तु गव्येन पयसा पायसेन च'—इति मनुः (३।७१)। गोहितं; क्ली. [गवि बाणे साधुः। गो+यत् ततोऽव्] ज्या; [गवि नेत्रे साधु इति] रागद्रव्यम्। २७४

गहनम् क्ली. [गाह्यते दुर्गम्यतेऽस्मिन्निति। गाह्+'बहुल-मन्यत्रापि' इति युच्, कृच्छ्रगहनयोरिति निर्देशाद् वा ह्रस्वः] वनम्; 'सखीस्नेहेन तद्भीरु मया सर्वं प्रति-श्रुतम्। निलीय गहने शून्ये भयमुत्सृज्य रावणात्'-इति रामायणे (६।९।६)। गह्वरं; दुःखं; पुं. विष्णुः (दुर्ज्ञेयत्वादस्य तथात्वम्); 'करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः'—इति महाभारते (१३।१४९।५४)। (७७७) त्रि. [गाह्यते दुःखेन गम्यते इति। गाह+युच्। कृच्छ्रगहनयोरिति निर्देशाद् वा ह्रस्वः] दुर्गमः; दुष्प्रवेशः; कलिलः; 'गहनेष्वाश्रमान्तेषु लीलाविकृत-दर्शनाः। रमन्ते तापसास्तत्र त्रासयन्तः सुदारुणाः'—इति रामायणे (३।१।२३)। २१०

गह्वरम् क्ली. [गाह्यते विलोड्यते आत्मानेन इति] गाह्+'छित्वरच्छत्वरेति' वरच्प्रत्ययेन निपातनात् साधु] दम्भः; [गाह्यते इति] गुहा; 'गङ्गाप्रपातान्त-विरूढशष्पं गौरीगुरोर्गह्वरमाविवेश'—इति रघुवंशे (२।२६)। वनं; रोदनं; गहने त्रि., 'नलवेणुशरस्तम्ब-कुशकीचकगह्वरम्। एक एवातियातोऽहमद्राक्षं विपिनं महत्'—इति भागवते (१।६।१३)। ७९१

गाङ्गेयः पुं. [गङ्गाया अपत्यं पुमान्। 'शुभ्रादिभ्यश्च' इति ढक्] कार्तिकेयः; 'आग्नेयः कृत्तिकापुत्रो रौद्रो गाङ्गेय इत्यपि। श्रूयते भगवान् देवः सर्वदेवमयो गुहः'-इति महाभारते (१।१३८।१३)। इल्लीशमत्स्यः; भद्रमुस्ता; भीष्मः; 'वसुदेवं विदित्वैनं सुखं भुङ्क्ष्व सुतोद्भवम्। गाङ्गेयोऽयं महाभाग! भविष्यति बला-धिकः।' क्ली. स्वर्णम् (१७३); 'यं गर्भं सुषुवे गङ्गा पावकाद्दीप्ततेजसम्। तदुल्वं पर्वते न्यस्तं हिरण्यं समपद्यत।' धुस्तूरः; कशेरु; मुस्तम्; 'मेघाख्यं मुस्तकं मुस्ता गाङ्गेयं भद्रमुस्तकम्।' गङ्गाजातजलादौ त्रि., योगमास्थाय धर्मात्मा वायुभक्ष्यो जितेन्द्रियः। गाङ्गेयं वार्युपस्पृश्य प्राणायामेन तस्थिवान्'—इति महाभारते (३।३।३४)। २०

गाढम् क्ली. [गाहते स्म इति, गाह् विलोडने+क्त] दृढम्; 'आलिङ्गति सा गाढं पुनः पुनर्यामिनीप्रथमे'—इति आर्यासप्तशत्याम्। अतिशयः; तद्युक्ते त्रि. दृढम्; 'श्रमफेनमुचा तपस्विगाढां तमसां प्राप नदीं तुरङ्गमेण'—इति रघुवंशे (९।७२)। ७१८

गाणिक्यम् क्ली. [गणिकानां वेश्यानां समूहः। 'गणि-काया यञिति वक्तव्यम्' इति यञ्] गणिकासमूहः; बहुवेश्याः। ४९१

गात्रम् क्ली. [गच्छत्यनेन, गम्+'गमेरा च' इति त्रन् आकारादेशश्च] हस्तपादाद्यवयवसमुदायः; कलेवरं; वपुः; संहननं; शरीरं; वर्ष्म; विग्रहः; कायः; देहः; मूर्तिः; तनुः; तनूः; इन्द्रियायतनम्; अङ्गं; क्षेत्रं; भूषणम्; मत्करणं; वेरं; सञ्चरः; घणः; बन्धः; पुरं; पिण्डः; पुद्गलं; भूतात्मा; स्वर्गलोकेशः;

स्कन्धः; पञ्जरः; कुलं; बलम्। 'गात्रवक्त्रनखैर्वाद्यं हस्तकेशावधूननम्। तोयाग्निपूज्यमध्येन यानं धूमं शवाश्रयम्। मद्यातिसक्ति विश्रम्भस्वातन्त्र्ये स्त्रीषु च त्यजेत्—इति वाग्भटे। हस्तिपूर्वजङ्घादिदेशः; हस्त्यग्रपादादिसम्मुखभागः; 'आपस्कारात्लूनगात्रस्य भूमिं निःसाधारङ्गच्छतोऽत्राङ्मुखस्य'—इति माघे (१८।४६) 'लूनगात्रस्य छिन्नजङ्घस्य' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। [गच्छति मरणात् परं स्वकारणभूतपञ्चत्वं प्राप्नोति, यद्वा गम्यते स्थानात् स्थानान्तरं प्राप्यते सञ्चाल्यते वाऽनेन] अङ्गम्। ५१०

गात्रसङ्कोची [न्] पुं. [गात्रं सङ्कोचयतीति। सम्+कुच्+णिच्+णिनि, यद्वा गात्रस्य सङ्कोची] जाहकजन्तुः; गन्धमार्जारः; विडालविशेषः। २३६

गानम् क्ली. [गीयते इति, गै+भावे ल्युट्] गीतम्; गेयं; गीतिः; गान्धर्वम्; 'जपकोटिगुणं ध्यानं ध्यानकोटिगुणो लयः। लयकोटिगुणं गानं गानात् परतरं न हि।' ध्वनिः। ९३

गिरा स्त्री. [गॄ+भावे क्विप्, स्त्रियां टाप्] वचनम्; 'तां गिरां करुणां श्रुत्वा'—इति दशरथविलापनाटके। ९

गिरिः पुं. [गिरति धारयति पृथ्वीं,ग्रियते स्तूयते गुरुत्वाद्वा। 'कॄगॄशॄपकुटिभिदिछिदिभ्यश्च' इति इ किच्च) पर्वतः; 'मेरुमन्दरकैलासमलया गन्धमादनः। महेन्द्रः श्रीपर्वतश्च हेमकूटस्तथैव च।' गेण्डुकः; चक्षूरोगविशेषः; पारदस्य दोषविशेषः; 'नागो वङ्गो मलो वह्निश्चाञ्चल्यं च विषं गिरिः। असह्याग्निर्महादोषा निसर्गात् पारदे स्थिताः।' संन्यासिनां भेदविशेषः; 'सदोर्ध्वबाहुर्यो वीरो मुक्तकेशो दिगम्बरः। सर्वत्र समभावेन भावयेद्यो नरोत्तमः। इष्टदेवीधिया नारीं स गिरिः परिकीर्तितः'—इति तन्त्रशास्त्रम्। शङ्कराचार्यकृतदशनामपरिव्राजकानामन्यतमः; 'तीर्थाश्रमवनारण्यगिरिपर्वतसागराः। पुरिः सरस्वती चैव भारती च तथा दश।' 'वासो गिरिवरे नित्यं गीताभ्यासे हि तत्परः। गम्भीराचलबुद्धिश्च गिरिनामा स उच्यते।' यदुवंशीयश्वफल्कस्य द्वादशपुत्राणामन्यतमः; 'अक्रूरप्रमुखा आसन् पुत्रा द्वादश विश्रुताः। आसङ्गः सारमेयश्च मृदुरो मृदुविद् गिरिः'—इति भागवते (९।२४।१५)। स्त्री. निगरणं; बालमूषिका; पूज्ये त्रि.। १६५

गिरिकर्णी स्त्री. [गिरेर्बालमूषिकायाः कर्ण इव पत्रमस्याः] अपराजिता; 'गवाक्ष्यश्वखुरीश्वेता श्वेतभण्डापराजिता। द्विविधा सा सिता नीला गिरिकर्णी गवादिनी। गिरिकर्णी महाश्वेता स्थूलपुष्पा सिता क्वचित्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। यवासः इति शब्दचन्द्रिका। २०२

गिरिजा स्त्री. [गिरेर्हिमालयपर्वतात् जाता। जन्+ड, स्त्रियां टाप् च] पार्वती; "स्त्रीषु प्रवीरजननी जननी तत्रैव देवी स्वयं भगवती गिरिजापि यस्यै'—इति अनर्घ्यराघवे (४।३३)। गायत्रीरूपा देवी; 'गिरिजा गुह्यमातङ्गी गरुडध्वजवल्लभा'—इति देवीभागवते (१२।६।४३)। [गिरौ पर्वते जाता इति, जन्+ड] गङ्गा; मातुलुङ्गी; 'मातुलुङ्गी सुगन्धान्या गिरिजा पूतिपुष्पिका। अत्यम्ला देवदूती च सा क्वचिन्मधुकुक्कुटी'—इति वैद्यकरत्नमाला। श्वेतवुह्ना; क्षुद्रपाषाणभेदः; त्रायमाणा लता; कारीवृक्षः; मल्लिका; गिरिकदली। १६

गिरिमल्लिका स्त्री. [गिरौ जाता मल्लिकेव, मध्यपदलोपिसमासः] कुटजवृक्षः; 'वृक्षकः शक्रपर्यायो वत्सको गिरिमल्लिका। कुटजस्तत्फलं चेन्द्रयवश्चापि कलिङ्गकः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। १९३

गिरिशः पुं. [गिरिराश्रयत्वेन वसतित्वेनास्त्यस्य इति। 'लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यः शनेलचः' इति श। यद्वा गिरौ कैलासाख्यपर्वते, आध्यात्मिकार्थे तु नित्यशुद्धमनसीत्यर्थः, शेते विराजते इति। यद्वा गिरिं त्रिगुणवृत्तात्मकं मनः श्यति तनूकरोति विशुद्धं करोति शरणागतभक्तसाधकानाम्। शीङ् शयने, शो तनूकरणे वा, 'गिरौ डश्छन्दसि'। छान्दसानां क्वचिद्भाषायामपि प्रयोग आशुशुक्षणिवदित्याह स्वामी] शिवः; 'इति प्रगल्भं पुरुषाधिराजो मृगाधिराजस्य वचो निशम्य। प्रत्याहतास्त्रो गिरिशप्रभावाद् आत्मन्यवज्ञां शिथिलीचकार'—इति रघुवंशे (२।४१)। ११

गिरिसानु क्ली. [षष्ठीसमासः) वप्रः; गिरिशिखरः। ८१०

गिरिसारः पुं. [गिरेः सार इव] लौहम्; 'तत्तैलधौतं विमलं गिरिसारमयं महत्। शस्त्रं परमसंक्रुद्धो बालिपुत्रे न्यपातयत्'—इति रामायणे (६।७८।१९)। वङ्गं;

मलयपर्वतः । १७१

गिरीशः पुं. [गिरेः कैलासस्य ईशः] शिवः; 'चिन्ता मेऽत्र न वेश्मनि प्रियतमे किं चिन्तया स्यान्नवग्राण्णीत्यद्रिसुतां जयन्नवतु वः सूक्तया गिरीशोऽनिशम्'—इति वक्रोक्तिपञ्चाशिकायाम् (३३) । [गिरीणां पर्वतानाम् ईशः श्रेष्ठः] हिमालयपर्वतः; [गिरां वाचां शास्त्राणां वा ईशः] बृहस्पतिः । ११

गीतम् क्ली. [गीयते इति, गै शब्दे+भावे क्त] गानम्; 'धातुमातुसमायुक्तं गीतमित्युच्यते बुधैः । तत्र नादात्मको धातुर्मातुरक्षरसञ्चयः ।' 'गीतं च द्विविधं प्रोक्तं यन्त्रगात्रविभागतः । यन्त्रं स्याद्वेणुवीणादि गात्रं तु मुखजं मतम् ।' 'गीतं पीनपयोधरा समदना नारी विचित्रा कथा, रम्यं हर्म्यतलं सुधांशुकिरणप्रोद्दीपिता यामिनी । चित्तज्ञाः सुहृदः सुता सुमनसो भक्ताः पुनः सेवकाः, शुद्धं गीतफलं कवित्वमतुलं संसारसारा मताः ।' ९३

गीः [र्] स्त्री. [गृ+सम्पदादित्वात् क्विप्] वाणी; वचनं; सरस्वती । ९

गीतक्रमः पुं. [षष्ठीसमासः] गीतारम्भः; गानारम्भोपक्रमः । ८६०

गीतवाद्यम् क्ली. [समाहारद्वन्द्वः] संगीतम्; 'गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते ।' ९५

गीर्वाणः पुं. [गीर्वागेव बाणोऽस्त्रं यस्य, अव्यर्थवाक्यतयास्य तथात्वम् । अन्तःस्थवकारमध्यपाठे तु गिरं वनुते याचते कांक्षतीत्यर्थः, स्तुतिप्रियत्वादिति । वनु याच्ञायाम्+'कर्मण्यण्' इत्यण्, 'पूर्वपदात् संज्ञायामगः' इति णत्वम्] देवता; 'एवं सुमन्त्रितार्थास्ते गुरुणार्थानुर्दशिना । हित्वा त्रिविष्टपं जग्मुर्गीर्वाणाः कामरूपिणः'—इति भागवते (८।१५।३२) । ४

गुग्गुलः पुं. [गुजति शब्दायतेऽनेनेति । गुज्+क्विप्, गुक् रोगस्तस्मात् गुडति रक्षतीति । गुड्+'इगुपधज्ञेति' क, डलयोरैक्याड्डस्य लत्वम्] गुग्गुलुः । ६२०

गुग्गुलुः पुं. [गुज्यतेऽनेनेति, गुज् शब्दे+क्विप्, गुक् रोगस्तस्माद् गुडतीति । गुड् रक्षणे+बाहुलकात् कु । डलयोरैक्याड् डस्य लत्वम्] वृक्षविशेषः; गोमूत्रोद्भवः; अस्य निर्यासः; सुगन्धिद्रव्यम्, तत्पर्यायाः—कुम्भम्; उलूखलकं; कौशिकः; पुरः; कुम्भोलुः; खलकं; कुम्भोलूखलकं; गुग्गुलः; जटायुः; कालनिर्यासः; देवधूपः; सर्वसहः; महिषाक्षः; पलङ्कषा; यवनद्विष्टः; भवाभीष्टः; निशाटकः; जटालः; पुटः; भूतहरः; शिवः; शाम्भवः; दुर्गः; यातुघ्नः; महिषाक्षकः; देवेष्टः; मरुदिष्टः; रक्षोहा; रूक्षगन्धकः; दिव्यम् । 'माधुर्याच्छमयेद्वातं कषायत्वाच्च पित्तहा । तिक्तत्वात् कफजित्तेन गुग्गुलुः सर्वदोषहा ।' 'महिषाक्षो महानीलः कुमुदः पद्म इत्यपि । हिरण्यः पञ्चमो ज्ञेयो गुग्गुलोः पञ्च जातयः ।' ६२०

गुच्छः पुं. [गुङ शब्दे+क्विप्, गुतं शब्दं छ्यति नाशयतीति । गुत्+छो+'आतोऽनुपसर्गे कः' इति क] स्तवकः; 'फूल आदि का गुच्छा' इति भाषा । 'अक्ष्णोर्निक्षिपदञ्जनं श्रवणयोस्तापिच्छगुच्छावलीम्'— इति गीतगोविन्दे (११।११) । मुक्ताहारः (५६२); स्तम्बः (५७९); 'तृण, शाक आदि का गुच्छा या मूठा' इति भाषा । उद्भिद्विशेषः; मल्लिकादिः; 'गुच्छगुल्मं तु विविधं तथैव तृणजातयः–' इति मनुः (१।४९)। 'मूलत एव यत्र लतासमूहो भवति न च प्रकाण्डानि ते गुच्छा मल्लिकादयः'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । कलापः; 'मोरपंख' इति भाषा । द्वात्रिंशद्यष्टिकहारः । १८८

गुच्छकः पुं. [गुच्छ+स्वार्थे कन्] स्तवकः; गुलञ्चः; स्तम्बः; कुसुमोच्चयः; गुच्छः; गुत्सः; गुत्सकः; रीठाकरञ्जः [स्वार्थे कप्रत्ययाद् गुच्छशब्दार्थोऽप्यत्र] क्ली. [गुच्छ+संज्ञायां कन्] ग्रन्थिपर्णम् । १८८

गुञ्जा स्त्री. [गुञ्जतीति, गुजि+अच् टाप् । अस्याः पक्वफलगुच्छे शब्दबाहुल्यात्तथात्वम्] लताविशेषः; काकचिञ्ची; कृष्णला; साङ्गुष्ठा; रक्तिका; काकणन्तिका; काकादनी; काकतिक्ता; काकजङ्घा; शिखण्डिनी; चूडामणिः; सौम्या; शिखण्डी; अरुणा; ताम्रिका; शीतपाकी; उच्चटा; रक्ता; कृष्णचूडिका; काम्बोजी; भिल्लभूषणा; वन्या; गुञ्जिका; श्यामलचूडा; काकचिञ्चिका; 'श्वेतरक्तप्रभेदेन ज्ञेयं गुञ्जाद्वयं बुधैः । गुञ्जाद्वयं तु केश्यं स्याद् वातपित्तज्वरापहम् । मुखशोषश्रमश्वासतृष्णामदविनाशनम् । नेत्रामयहरं वृष्यं बल्यं कण्डूव्रणं हरेत् । कृमीन्द्रलुप्तकुष्ठानि रक्ता च धवलापि च'—इति भावप्रकाशे । 'अन्तर्विषमया ह्येता बहिश्चैव मनोरमाः । गुञ्जाफलसमाकाराः

स्वभावादेव योषितः।' चतुर्यवपरिमाणं; 'रत्ती' इति भाषा; 'यवोऽष्टसर्षपैः प्रोक्तो गुञ्जा स्यात्तच्चतुष्टयम्' —इति शार्ङ्गधरे प्रथमेऽध्याये। चतुर्धान्यपरिमाणं; गोधूमद्वयमानं; पटहः; [गुञ्जनमिति, भावे अप्] कलध्वनिः; [गुञ्ज्यते भ्रमरादिभिर्मद्यपायिभिर्वा यत्र। अधिकरणे अप् घञ् वा] मदिरागृहं; चर्चा। २०३

गुडकरी स्त्री. [गुडं गुडवत्सुमिष्टं श्रुतिसुखकरमित्यर्थः, करोतीति। गुड+कृ+'कृञो हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु' इति ट, स्त्रियां ङीप्] रागिणीविशेषः। १०२

गुडची स्त्री. [चि+क्विप् निपातनाद्दीर्घत्वे साधुः। गुडवत् ची चयनं क्षरितो रसो यस्याः। अमृतोद्भवत्वादेवास्यास्तथात्वम्] गुडूची। [गुडची+निपातनादुत्वागमः] गुडुची। ६१५

गुडूची स्त्री.– लताविशेषः; वत्सादनी; छिन्नरुहा; तन्त्रिका; अमृता; जीवन्तिका; सोमवल्ली; विशल्या; मधुपर्णी; गुडची; कुण्डली; चक्रलक्षणा; अमृतवल्ली; ज्वरारिः; श्यामा; वरा; सुरकृता; मधुपर्णिका; छिन्नोद्भवा; अमृतलता; रसायनी; छिन्ना; सोमलतिका; भिषक्प्रिया; कुण्डलिनी; वयःस्था; छद्मिका; नागकुमारिका; चन्द्रहासा; अमृतवल्लरी; सुधा; जीवन्ती; सोमा; चक्रलक्षणिका; वयस्या; मण्डली; देवनिर्मिता। 'गुडूची क्वाथकल्काभ्यां सपयस्कं घृतं शृतम्। हन्ति वातं तथारक्तकुष्ठं जयति दुस्तरम्'—इति चक्रपाणिः। ६१५

गुणः पुं. [गुण्यते मन्त्र्यते, मन्त्रणादिभिर्निश्चीयते राजभिरिति शेषः। गुण् आमन्त्रणे+घञ्] धनुराकर्षणरज्जुः; मौर्वी; ज्या; शिञ्जिनी; शिञ्ज्या; ज्यावा; पतञ्चिका; जीवा। 'अथ नभस्य इव त्रिदशायुधं कनकपिङ्गतडिद्गुणसंयुतम्। धनुरधिज्यमनाधिरुपाददे नरवरो रवरोषितकेशरी'—इति रघुवंशे (९।५४)। (८६१) द्रव्याश्रितः; शौर्यादिः; रसगन्धादिः; रूपं, रसः, गन्धः, स्पर्शः, शब्दः। (८६५) सत्त्वरजस्तमांसि; 'सत्त्वं रजस्तम इति प्रकृतेर्गुणास्तैर्युक्तः परः पुरुष एक इहास्य धत्ते। स्थित्यादये हरिविरिञ्चिहरेति संज्ञाः श्रेयांसि तत्र खलु सत्त्वतनोर्नृणां स्युः'—इति भागवते (१।२।२३)। रूपादयः, तद्यथा—रूपं, रसः, गन्धः, स्पर्शः, संख्या, परिमाणं, पृथक्त्वं, संयोगः, विभागः, परत्वम्, अपरत्वं, बुद्धिः, सुखं, दुःखम्, इच्छा, द्वेषः, यत्नः, गुरुत्वं; द्रवत्वं, स्नेहः, संस्कारः, धर्मः; अधर्मः, शब्दः। तन्तुः; शिञ्जिनी; अप्रधानं; सूदः; इन्द्रियं; त्यागः; वटी; रज्जुः; 'गुणवन्तोऽपि सीदन्ति न गुणग्राहको यदि। सगुणोऽपि पूर्णकुम्भो यथा कूपे निमज्जति।' सूत्रम्; 'काञ्चीगुण इव पतितः स्थितैकरत्नः फणी स्फुरति'—इति आर्यासप्तशत्याम्। शुक्लकृष्णरक्तपीतादिः; दोषान्यविशेषणं; विद्यादि; व्यञ्जनम्; 'गुणांश्च सूपशाकाद्यान् पयो दधि घृतं मधु। विन्यसेत् प्रयतः सम्यक् भूमावेव समाहितः'—इति मनुः (३।२२६) 'गुणान् व्यञ्जनानि अन्नापेक्षयाऽप्राधान्याद् गुणयुक्तान् वा' इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। आवृत्तिः; 'आहारो द्विगुणः स्त्रीणां बुद्धिस्तासां चतुर्गुणा। षड्गुणो व्यवसायश्च कामश्चाष्टगुणः स्मृतः'—इति महाभारते। व्याकरणोक्तसंज्ञाविशेषः; यथा—'अदेङ गुणः।' काव्यगुणः; 'ये रसस्याङ्गिनो धर्माः शौर्यादय इवात्मनः। उत्कर्षहेतवस्ते स्युरचलस्थितयो गुणाः'—इति काव्यप्रकाशः। ४६४

गुणलयनी स्त्री. [गुणाः गुणमयपटाः लीयन्ते यत्र। गुण+ली+ल्युट्, ङीप्] गुणलयनिका; वस्त्रनिर्मितगृहं; केणिका; पटकुटी। ४५१

गुणवृक्षः पुं. [गुणानां तरणीस्थरज्जूनां वृक्ष इव] गुणवृक्षकः, नौकागुणबन्धनस्तम्भः; कूपकः; 'मस्तूल' इति भाषा। ६५५

गुणोत्कर्षः पुं. [गुणानाम् उत्कर्षः उत्कर्षणं प्राधान्यमित्यर्थः] गुणप्राधान्यम्; 'स्वभावजैर्गुणैर्दिव्यैः कामजैर्बहुलैर्वृतः। भूयस्तव गुणोत्कर्षमेते विद्ये करिष्यतः'—इति रामायणे (१।२५।१९)। अतिशयः; परभागः। ७८६

गुण्ठितः त्रि. [गुठि वेष्टने+कर्मणि क्त] गुण्डितः; रूषितः; धूल्यादिभिर्धूसरितः; 'यत्र युद्धेन मे कार्यं न प्राणैर्नापि सीतया। लक्ष्मणं निहतं दृष्ट्वा भ्रातरं पांशुगुण्ठितम्'—इति रामायणे (६।८२।८)। आवृतः। ७६८

गुण्डितः त्रि. [गुडि वेष्टने, कर्मणि क्त] रूषितः; धूल्यादिभिः धूसरितः; चूर्णीकृतः। ७६८

गुत्सः पुं. [गुध्यते तृणपत्रपुष्पादिभिः परिवेष्ट्यतेऽसौ। गुध् परिवेष्टने+'उन्दिगुधिकुषिभ्यश्च' इति कर्मणि

स किन्च] स्तवकः; स्तम्बः; [हारादौ तु गुध्यते परिवेष्टयते कण्ठवक्षःस्थलादिकमनेन] द्वात्रिंशद्यष्टिकहारः; ग्रन्थिपर्णवृक्षः। १८८

गुदम् क्ली. [गोदते खेलति चलतीत्यर्थः, अपानसंज्ञकवायुः अनेन । गुद्+'इगुपधेति' क] मलत्यागद्वारम्; अपानं; पायुः; गुह्यं; गुदवर्त्म; चूतः; गुदद्वारं; च्युतिः। ५१३

गुदकीलकः पुं. [गुदकील+स्वार्थे कन्। गुदस्य अपानस्य मलद्वारस्येत्यर्थः, यद्वा गुदे, कील इव गुदकीलः] अर्शोरोगः; गुदकीलः। ६०५

गुन्द्रः पुं. [गुद्रि+अच्] शरतृणं; वृक्षविशेषः; पटरकः; अच्छः; शृङ्गवेरा ह्वमूलकः; 'गुन्द्रान् दग्ध्वा कृतं भस्म हरितालं मनःशिला । उपदंशविसर्पाणामेतच्छान्तिकरं परम्'—इति सुश्रुतः। ६२२

गुम्फः पुं. [गुम्फ्+घञ्] ग्रन्थनम्; 'सततमरुणितमुखे सखि ! निगरन्ती गिरां गुम्फम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (६०६)।' निगुम्फनिर्भरक्षरन्मधूलिकामनोहरम्'—इति रावणकृतशिवताण्डवस्तोत्रे (१३)। बाहोरलङ्कारः; श्मश्रु। ७३०

गुरुः पुं. [गृणाति उपदिशति वेदादिशास्त्राणि इन्द्रादिदेवेभ्यः इति। यद्वा गीर्यते स्तूयते देवगन्धर्वमनुष्यादिभिः। गृ+'कृग्रोरुच्च' इति उत्] बृहस्पतिः; 'इत्याश्वास्य गुरुं शक्रो दूतं वक्तु विचक्षणः'—इति देवीभागवते (१।११।४४)। निषेकादिकृत्; 'निषेकादीनि कर्माणि यः करोति यथाविधि। सम्भावयति चान्नेन स विप्रो गुरुरुच्यते'—इति मनुः(२।१४२)। निषेको गर्भाधानम्, आदिना सीमन्तोन्नयनादेर्मन्त्रविद्यादानादेश्च ग्रहणम्। तत्कर्ता पित्रादिर्गुरुः; मन्त्रदाता; 'अभिशप्तमपुत्रं च सन्नद्धं कितवं तथा। क्रियाहीनमकल्पाङ्गं वामन गुरुनिन्दकम्। सदा मत्सरसंयुक्तं गुरुं मन्त्रेषु वर्जयेत्। गुरुर्मन्त्रस्य मूलं स्यान्मूलशुद्धौ सदा शुभम्—' इति कालिकापुराणे। कपिकच्छः; द्विमात्रः; दीर्घः; [गृणाति उपदिशति वेदान्] वेदाध्यापयिताचार्यः; 'षट्त्रिंशदाब्दिकं चर्य्यं गुरौ त्रैवेदिकं व्रतम्। तदर्द्धिकं पादिकं वा ग्रहणान्तिकमेव वा'—इति मनुः (३।१)। [गृणाति उपदिशति किञ्चिदपि यः] उपाध्यायः; 'अल्पं वा बहु वा यस्य श्रुतस्योपकरोति यः। तमपीह गुरुं विद्याच्छ्रुतोपक्रियया तया' इति मनुः (२।१४९)। [गीर्यते स्तूयतेऽसौ ज्ञानतपोवृद्धत्वात्] ज्ञानप्रभावान्वितत्वात् तपोबलप्राधान्याद् वा पूज्यतमो महात्मा। 'मातुलांश्च पितृव्यांश्च श्वशुरानृत्विजो गुरून्'—इति मनुः (२।१३०)। 'भूयिष्ठाः खलु गुरव इत्युपक्रम्य ज्ञानवृद्धतपोवृद्धयोरपि हारीतेन गुरुत्वकीर्तनात् तयोश्च कनिष्ठयोरपि सम्भवात् तद्विषयोऽयं गुरुशब्दः' इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। [गृणाति उपनीय सन्ध्योपासनाचारादीनि कर्माणि उपदिशति] उपनेता; सन्ध्योपासनाद्युपदेष्टा; 'उपनीय गुरुः शिष्यं शिक्षयेच्छौचमादितः। आचारमग्निकार्यं च सन्ध्योपासनमेव च—' इति मनुः (२।६९)। पिता; 'गतो दशरथः स्वर्गं यो नो गुरुतरो गुरुः'—इति रामायणम् (२।७९।२)। चक्रवर्ती सम्राट्; 'गुरुर्नृपाणां गुरवे निवेद्य'—इति रघुवंशे (२।६८)।[गिरति अज्ञानमन्तर्यामिरूपेणाविद्यां नाशयतीत्यर्थः। गीर्यते स्तूयते जीवनिकरैरिति वा]विष्णुः; 'आदिदेवो महादेवो देवेशो देवभृद् गुरुः'–इति महाभारते (१३।१४९।६५)। शिवः; 'सहस्रमूर्द्धा देवेन्द्रः सर्वदेवमयो गुरुः'—इति महाभारते (१३।१७।१३०)। ब्रह्मा; माननीयः; 'बिभ्रत् सहजकाठिन्यं जातो गौरीगुरुर्गुरुः। शम्भुं प्रपूज्य सुतया स्रजा विश्वगुरोरपि'—इति काशीखण्डे (६६।७१) 'विश्वगुरोर्ब्रह्मणोऽपि गुरुर्माननीयः पूज्यो वा' इति तट्टीका। ज्येष्ठभ्राता; मातुलादिः; 'उपाध्यायः पिता ज्येष्ठभ्राता चैव महीपतिः। मातुलः श्वशुरस्त्राता मातामहपितामहौ। बन्धुर्ज्येष्ठः पितृव्यश्च पुंस्येते गुरवः स्मृताः।' मातुलानीत्यादिः; 'मातामही मातुलानी तथा मातुश्च सोदरा। श्वश्रूः पितामही ज्येष्ठा धात्री च गुरवः स्त्रिषु।' ४७

गुरुः त्रि. [गीर्यते स्तूयते महत्त्वात्। गृ+'कृग्रोरुच्च' इति उत्] महान्; 'इदं मे अग्ने ! क्रियते पावकामिनते गुरुं भारं न मन्म'–इति ऋग्वेदे (४।५।६)। दुर्जरः; अलघुः; 'प्राप्तो बन्धनमप्ययं गुरुमृगस्तावत् त्वया मे हृतः'—इति पञ्चतन्त्रम् (२।१९८)। पराक्रान्तः; 'सोत्साहशक्तिसम्पन्नो हन्याच्छत्रुं लघुर्गुरुम्'—इति पञ्चतन्त्रे (३।२८)। भारायमाणः; 'अथ मदगुरुपक्षैर्लोकपालद्विपानाम्'—इति रघुवंशे (१२।१०२)।

'अथ मदेन गजगण्डसञ्चारसंक्रान्तेन गुरुपक्षैः भारायमाणपक्षैः अलिवृन्दैः' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। अतिशयः; 'कश्चित्कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारप्रमत्तः। शापेनास्तङ्गमितमहिमा वर्षभोग्येण भर्तुः'— इति मेघदूते (१।१)। ६९९

गुरुक्रमः पुं. [गुरुरेव क्रमः पारम्पर्यं यत्र] इतिह; पारम्पर्योपदेशः; सम्प्रदायः। ४०२

गुर्विणी स्त्री. [गर्वति कुक्षौ सन्तानम् प्राप्नोति। गर्व् गतौ, 'गर्वेरत उच्च' इति उत् इनन् च, गौरादित्वान् ङीष्। यद्वा गुरुर्गुरुभारयुक्तो गर्भोऽस्त्यस्याः। गुरु+ 'व्रीह्यादिभ्यश्च' इति इनि] गर्भिणी; 'बन्धकीपद्मशरभशूलिकागुर्विणीस्तनात्। प्रज्ञा नृपेण चादेया तथा गोपालयोषितः'—इति मार्कण्डेये (२७।२०)। ४९८

गुर्वी स्त्री. [गुरुर्भारयुक्तो गर्भोऽस्याः। गुरु+ङीष्] गर्भवती; 'न हि बन्ध्या विजानाति गुर्वीं प्रसववेदनाम्'— इति हितोपदेशः। गुरुपत्नी [गुरोः पत्नीति, गुरु+ ङीष्]; गौरवयुक्ता [गुरु+'वोतो गुणवचनात्' इति विभाषया ङीष्] 'अनन्यगुर्व्यास्तिव केन केवलः पुराणमूर्तेर्महिमावगम्यते'—इति माघः। गुरुभारविशिष्टा; 'ततः शाल्वं गदां गुर्वीमाविध्यन्तं महाहवे। द्विधा चकार सहसा प्रजज्वाल च तेजसा'—इति महाभारते (३।२२।३७)। गायत्री; 'गुहावासा गुणवती गुरुपापप्रणाशिनी। गुर्वी गुणवती गुह्या गोप्तव्या गुणरूपिणी'—इति देवीभागवते (१२।६।४२)। ४९८

गुलुच्छः पुं. [गुच्छ+पृषोदरादित्वात् साधुः] गुच्छः; स्तवकः; गुलुञ्छः। १८८

गुलुञ्छः पुं. [गुण्डति गोलाकारेण वेष्टयतीति। गुड्+क्विप्, गुड्, त तदाकारम् उञ्छति आदत्ते उपार्जयति वा। 'कर्मण्यण्', ततो डस्य लत्वे साधुः] गुच्छः; गुलुञ्छकः; गुलुच्छः। १८८

गुल्फः पुं. [गल्+'कलिगलिभ्यां फगस्योच्च' इति फक् अकारस्योत्वं च] पादग्रन्थिः; घुटिका; चरणग्रन्थिः; घुटिकः; घुण्टकः; घुण्टः; 'समवेतौ करौ पादौ गुल्फौ चावनतौ मम।' ५१५

गुल्मः पुं. [गुडति वेष्टयति, गुड्यते वेष्ट्यते वानेन। गुड्+ करणे बाहुलकान्मक्, डलयोरैक्याद् डस्य लत्वे साधुः] अप्रकाण्डवृक्षः; स्तम्बः; 'गुच्छगुल्मं तु विविधं तथैव तृणजातयः'—इति मनुः (१।४८) 'यत्र लतासमूहा भवन्ति न च प्रकाण्डानि ते गुच्छा मल्लिकादयः, गुल्मा एकमूलाः सङ्घातजाताः' इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। सेनासंख्याविशेषः; 'एको रथो गजश्चैको नराः पञ्च पदातयः। त्रयश्च तुरगास्तज्ज्ञैः पत्तिरित्यभिधीयते। पत्तिन्तु त्रिगुणामेतामाहुः सेनामुखं बुधाः। त्रीणि सेनामुखान्येको गुल्म इत्यभिधीयते।' अत्र गजा नव, रथा नव, अश्वाः सप्तविंशतिः, पदातयः पञ्चचत्वारिंशत्, समुदायेन नवतिः। प्लीहा; उदरजरोगविशेषः; 'श्वयथूत्योपचारैश्च दोषैः संकुप्यतेऽनिलः। मन्दाग्निना हि जठरे जायते गुल्मरुङ् नृणाम्।' 'शुण्ठी सौवर्चलं जीरे द्वे वा हिङ्गुसमन्वितम्। काञ्जिकं पानमेतेषां रूक्षणं गुल्मशान्तये। गुल्मचिकित्सिते क्षारपाकोऽत्र प्रतियुज्यते'—इति सुश्रुतः। घट्टभेदः; सैन्यरक्षणं; रक्षितृपुरुषसमूहः; 'द्वयोस्त्रयाणां पञ्चानां मध्ये गुल्ममधिष्ठितम्।' गुल्मं रक्षितृपुरुषसमूहमित्यस्य टीकायां कुल्लूकभट्टः।' सैन्यैकदेशः; 'गुल्मांश्च स्थापयेदाप्तान् कृतसंज्ञान् समन्ततः।' 'गुल्मान् सैन्यैकदेशान्' इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। १९०

गुवाकः पुं. [गुवति मलवत् क्वाथमुत्सृजतीति। गु+ 'पिनाकादयश्च' इति आक, तुदादित्वाद् गुणाभावः निपातनाद् दीर्घोऽपि दृश्यते] घोण्टा; पूगः; क्रमुकः; खपुरः; गूवाकः; पूगवृक्षः; दीर्घपादपः; वल्कतरुः; दृढवल्कः; चिक्कणः; पूगी; सुरञ्जनः; गोपदलः; राजतालः; छटाफलः। एतत्फलस्य पर्यायाः— क्रमुकफलं; पूगं; चिक्कणी; चिक्का; चिक्कणं; श्लक्ष्णकम्; उद्वेगं; पूगफलं; पूगीफलम्। 'ताम्बूलं न मुखे दत्वा गुवाकं भक्षयेद्यदि। तावच्चाण्डालतां याति यावद् गङ्गां न पश्यति।' २००

गुहः पुं. [गूहति रक्षति देवसेनाम्। गुह्+'इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः' इति क। नामनिरुक्तौ तु गुहा आवासत्वेनास्त्यस्येति अच्] कार्त्तिकेयः; 'रुद्रसूनुं ततः प्राहुर्गुहं गुणवतां वरम्'—इति महाभारते (३।२२८)। 'दिव्यं शरवणं प्राप्य ववृधेऽद्भुतदर्शनः। ददृशुः कृत्तिकास्तन्तु बालार्कसदृशद्युतिम्। स्कन्नत्वात् स्कन्दताञ्चापि गुहावासाद् गुहोऽभवत्'—इति महाभारते

(१३।८३)। घोटकः, श्रीरामसखः; शृङ्गवेरपुरवासी निषादाधिपतिः; 'तत्र राजा गुहो नाम रामस्यात्मसमः सखा। निषादजात्यो बलवान् स्थपतिश्चेति विश्रुतः'— इति रामायणे (२।५०।३३)। [गूहते संवृणोति स्वरूपादीनि मायया इति। गुह्+क] विष्णुः; 'करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः'—इति महाभारते (१३। १४९।५४)। महादेवः; 'व्यालरूपो गुहावासी गुहो माली तरङ्गवित्'—इति महाभारते (१३।१७।६०)। कायस्थानां पद्धतिविशषः; 'अयं गुहकुलोद्भवो दशरथाभिधानो महान् कुलाम्बुजमधुव्रतो विविधपुण्यपुञ्जान्वितः'—इति कायस्थकुलदीपिका। २०

गुहा स्त्री. [गुह्+क टाप् च] गर्तः; पर्वतादेर्गह्वरं; बिलं; शिलासन्धिः; देवखातं, गह्वरम्; 'किष्किन्धां रामसुग्रीवौ जग्मतुस्तौ गुहां तदा'—इति रामायणे (१।१।७०)। सिंहपुच्छीलता; शालपर्णीवृक्षः; हृदयम्; 'तस्मादिदं गुहाहृदयम्'–इति शतपथब्राह्मणे(११।२।६।५)। [गूढा ज्ञातृज्ञानज्ञेयपदार्थाः अस्यां, गूहतेऽस्यामात्मा इति वा। गुह्+भिदादित्वादधिकरणे अङ टाप् च] बुद्धिः; 'अणोरणीयान् महतो महीयान् आत्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः'—इति श्वेताश्वतरोपनिषदि। १६७

गुह्यम् त्रि. [गुहां गोपनम् अर्हति, वस्त्राद्यभ्यन्तरस्थानं लब्धुमर्हतीति यावत्। गुहा+'तदर्हति' इति यत्, गुह्+कर्मणि क्यबित्येके] रहस्यं; गोप्यं; विविक्तः; विजनः; छन्नः; निःशलाकः; रहः; उपांशु; गूढम्; उपह्वरम्; 'राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम्'— इति भगवद्गीतायाम्। 'पुराणगुह्यं सकलं समेतं गुरोः प्रसादात् करुणानिधेश्च'—इति देवीभागवते (१।३। ३७)। क्ली. उपस्थः (८२३); स तु भगं लिङ्गञ्च। भगार्थे यदुक्तम्—'कामार्त्तः पुरुषो ह्यत्र चुम्बयेद् गुह्यमादृतः।' पुं. [गुहां सरस्यादेर्गर्तमर्हतीति, गुहा+ 'दन्तादिभ्यो यत्' इति यत्] कमठः; दम्भः; [गूहितुमर्हति योग्यो भवति उपनिषद्वेद्यत्वात्, यद्वा गुहायां बुद्धौ हृदयाकाशे वस्तुमर्हति ध्यानायार्हतीति यावत्] विष्णुः; 'गुह्यो गभीरो गहनो गुप्तश्चक्रगदाधरः'— इति महाभारते (१३।१४९।७१)। महादेवः; 'यजुःपादभुजो गुह्यः प्रकाशो जङ्गमस्तथा'—इति महाभारते (१३।१७।९१)। गुणशालिप्रभावान्वितजीवविशेषः; 'गुह्यानि गूहति गुणान् प्रकटीकरोति' इति। 'अध्वर्यवो घर्मिणः सिष्विदाना आविर्भवन्ति गुह्या न केचित्'— इति ऋग्वेदे (७।१०३।८)। उपदेवताविशेषः; 'गुह्याः पितृगणाः सप्त ये दिव्या ये च मानुषाः'–इति महाभारते (३।३।४३)। [स्त्रियां टाप्] गायत्रीस्वरूपा देवी; 'गुर्वी गुणवती गुह्या गोप्तव्या गुणदायिनी'—इति देवीभागवते (१२।६।४२)। गोपनीये त्रि., 'स गुह्योऽन्यस्त्रिवृद् वेदो यस्तं वेद स वेदवित्'—इति मनुः। 'प्रणवाख्यो गुह्यो गोपनीयः'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। ७०८

गुह्यकः पुं. [गूहति निधिं धनविशेषं रक्षतीति। गुह्+ ण्वुल्, पृषोदरादित्वाद् यगागमे साधुः] कुबेरः। (८७) देवयोनिविशेषः; कुबेरानुचरः; निधिरक्षकः; मणिभद्रादियक्षभेदः; 'निधिं रक्षन्ति ये यक्षास्ते स्युर्गुह्यकसंज्ञकाः'—इति व्याडिः। [गुह्यं कुत्सितं कायति शब्दायते प्रकाशयति वा। कै+क। यद्वा गुह्यं गोप्यं कं सुखं यस्य। 'शंसिदुहिगुहिभ्यो वेति' काशिकोक्तेः क्यप् वा। यद्वा गुह्यात् सृष्टिं चिकीर्षोः परब्रह्मणः कृष्णस्य गुह्यदेशात् कायति आविर्भवतीति] यदुक्तं ब्रह्मवैवर्ते ब्रह्मखण्डे (५।६०)—'आविर्बभूव कृष्णस्य गुह्यदेशात्ततः परम्। पिङ्गलश्च पुमानेकः पिङ्गलैश्च गणैः सह। आविर्भूता यतो गुह्यात् तेन ते गुह्यकाः स्मृताः।' पक्वान्नविशेषः; 'समितां सर्पिषा भृष्टां सिताद्राक्षादिसम्भृताम्। एलालवङ्गकर्पूरमरीचपरिवासिताम्। क्षिप्तान्यसमितालम्बपुटे वेष्टय घृते पचेत्। ततः खण्डे न्यसेत् पक्वे गुह्यकोऽयमुदाहृतः।' 'गुह्यको बृंहणो हृद्यो वृष्यः पित्तानिलापहः। मधुरोऽतिगुरुः पाके किञ्चित् सन्धानकृत्सरः'—इति शब्दार्थचिन्तामणिः। ७९

गुह्यदीपकः पुं. [गुह्येन गुह्यस्थज्योतिषा दीपयति प्रकाशयतीति। स्वयं गुह्यः सन् दीपयतीत्येके। दीप्+ ण्वुल्] खद्योतः। २५७

गुह्यपिधानम् क्ली [षष्ठीसमासः] कक्षा; कौपीनम्। ८४२

गूढपात् [द्] पुं. [गूढं पादयति, पद् गतौ+णिजन्तात् क्विप्। यद्वा गूढाः पादा अस्य, पृषोदरादित्वादल्लोपे साधुः] सर्पः। ६४०

गूढपादः पुं. [गूढाः संवृताः पादा अस्य] सर्पः । 'पादानामपि विज्ञेये द्वे शते द्वे च विंशती'—इत्यागमः । आच्छादितपादे त्रि., 'सन्तोषामृततृप्तस्य विश्वैश्वर्यं करे स्थितम् । उपानद्गूढपादस्य सर्वा चर्मावृतेव भूः'—इति महाभारते । ६४०

गूढपुरुषः पुं. [गूढः गुप्तः पुरुषः, छद्मवेशी राजप्रेरितो जनः इत्यर्थः] चरः; प्रणिधिः; स्पशः । ४२५

गूथम् क्ली.-पुं. [गवते शब्दायते, गूयते उत्सृज्यते वा । गुङ शब्दे विष्ठोत्सर्गे वा+'तिथपृष्टगूथयूथप्रोथाः' इति थक् दीर्घश्च] विष्ठा । शरीरादिमलेऽपि, कर्णगूथादिशब्ददर्शनात् । ६३७

गूवाकः पुं. [गुवति पुरीषमुत्सृजत्यनेन, यद्वा गुवति बहुलभक्षणेन मुखविवरात् पुरीषवदुत्सृजतीति । गु विष्ठोत्सर्गे+'पिनाकादयश्च' इति आक, कुटादित्वाद् गुणाभावः । निपातनाद् दीर्घत्वम्] गुवाकः; क्रमुकः; पूगः । २००

गृध्नुः त्रि. [गृध्यति कामयते लिप्सति वा धनमिति शेषः । गृध्+'त्रसिगृधिधृषिक्षिपेः क्नुः' इति क्नु] लुब्धः; 'न वयं प्रभवस्तां त्वामनुकर्तुं गृहेश्वरि ! अप्यायुषा वा कार्त्स्न्येन ये चान्ये गुणगृध्नवः'—इति भागवते (३।१४।२०)। (क्वचिद् गृघ्नोऽपि पाठः ।) ६३६

गृष्टिः स्त्री. [गृह्णाति सकृद् गर्भमिति । ग्रह् उपादाने+कर्तरि क्तिच्, पृषोदरादित्वात् साधुः] एकवारप्रसूता गौः; सकृत्प्रसूतिका; 'प्रष्ठौहीनां पीवरीणां च तावत् अग्र्या गृष्ट्यो धेनवः सुव्रताश्च'—इति महाभारते (१३।९३।३३) । सकृत्प्रसूतस्त्रीमात्रं; वराहक्रान्ता; बदरवृक्षः; काश्मरी । २७३

गृहम् क्ली. [गृह्णाति धान्यादिकं जीवनार्थम् । ग्रह्+'गेहे कः' इति क] इष्टकादिरचितवासस्थानं; गेहम्; उदवसितं; वेश्म; सद्म; निकेतनं; निशान्तं; वस्त्यं; सदनं; भवनम्; अगारं; मन्दिरं; गृहाः; निकाय्यः; निलयः; आलयः; वासः; कुटः; शाला; सभा; पस्त्यं; सादनम्; आगारं; कुटिः; कुटी; गेहः; निकेतः; साला; मन्दिरा; ओकः; निवासः; संवासः; आवासः; अधिवासः; निवसतिः; वसतिः; केतनं; गयः; क्षयः; कृदरः; गर्तः; हर्म्यम्; अस्तम्; दुरोणे; नीलं; दुर्य्यः; स्वसराणि; अमा; दमे; कृत्तिः; योनिः; शरणं; वरूथं; छर्दिः; छदिः; छाया; शर्म; अजम् । 'घर' इति भाषा । 'वैशाखश्रावणाषाढमार्गफाल्गुनकार्तिकाः । सुप्रशस्ता गृहारम्भे पत्नीपुत्रसमृद्धिदाः ।' [गृह्यते स्वीक्रियते धर्माचरणायासौ] कलत्रम् (४९४); 'न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते । तया हि सहितः सर्वान् पुरुषार्थान् समश्नुते'—इति स्मृतौ । [गृह्यते निर्दिश्यतेऽनेन इति] नाम । २९१

गृहगोधिका स्त्री. [क्षुद्रा गोधा, अल्पार्थे क, अत इत्वं टाप् च । गृहस्य गोधिका गोधिरिव] ज्येष्ठी; 'छिपकली' इति भाषा । 'शिवा श्यामा रला छुच्छुः पिङ्गला गृहगोधिका । शूकरी परपुष्टा च पुन्नामानश्च वामतः'—इति बृहत्संहितायाम् (८६।३७) । 'मार्जारश्ववानरमकरमण्डूकपाकमत्स्यगोधाशम्बूकप्रचलाकगृहगोधिकाचतुष्पादकीटास्तथान्ये दंष्ट्रानखविषाः'—इति सुश्रुतः । २५७

गृहगोलिका स्त्री. [गृहे गृहस्था वा गोधिकेव । निपातनात् साधुः] ज्येष्ठी । २५७

गृहबलिभुक् [ज्] पुं. [गृहे दत्तं बलिं भक्ष्यद्रव्यं भुङ्क्ते इति । भुज्+क्विप्] चटकः; बकः; काकः । २४३

गृहभित्तिः स्त्री. [गृहस्य भित्तिः, गृह+भिद्+क्तिच्] पक्षः, 'भींत, दीवाल' इति भाषा । ८४९

गृहभूमिः स्त्री. [गृहयोग्या भूमिः] वास्तुः; वेश्मभूः । २९०

गृहमेधी [न्] पुं. [गृहैर्दारैर्मेधते सङ्गच्छते इति । गृह+मेधृ सङ्गमे+'सुप्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये' णिनि] गृहस्थः; 'वेदविद्याव्रतस्नातान् श्रोत्रियान् गृहमेधिनः । पूजयेद्धव्यकव्येन विपरीतांश्च वर्जयेत्'—इति मनुः (३।४१) । ३७२

गृहवाटी स्त्री. [गृहसमीपस्था वाटी आरामः] गृहवाटिका; गृहसमीपवनम्; निष्कुटः । ८१६

गृहस्थः पुं. ['न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते', अतएव गृहेषु दारेषु तिष्ठति अभिरमते इति । गृह+स्था+'सुपि स्थः' इति क] गृही; द्वितीयाश्रमी; ज्येष्ठाश्रमी; गृहमेधी; स्नातकः; गृहपतिः; सत्री; गृहयाय्यः; गृहाधिपः; कुटुम्बी; गृहायनिकः । 'गृहस्थो ब्रह्मचारी च वानप्रस्थोऽथ भिक्षुकः । चत्वार आश्रमाः प्रोक्ताः सर्वे गार्हस्थ्यमूलकाः ।' गृहस्थानम् (२९०) । ३९३

गृहाधिपः पुं. [गृहस्य अधिपः] गृहस्थः। ३७२

गृहावग्रहणी स्त्री. [गृहमवगृह्यतेऽनया इति। गृह+अव+ग्रह्+करणे ल्युट् ततो ङीप्] देहली। ३०२

गृहिणी स्त्री. [गृहं गृहस्वामित्वमस्त्यस्या इति। इनि ङीप् च] भार्या; 'गृहिणी सचिवः सखी मिथः प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ। करुणाविमुखेन मृत्युना हरता त्वां वद किं न मे हृतम्'—इति रघुवंशे (८।६७)। [गृहं गृहकार्यं साध्यतयाऽस्त्यस्या इति, इनि ङीप् च] गृहकर्मकुशला स्त्री; 'शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने, भर्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः। भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भोगेष्वनुत्सेकिनी, यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः'—इति शकुन्तलायां चतुर्थाङ्के। ४९४

गृहीतदिक् [श्] त्रि. [गृहीता आश्रिता दिक् हन्तुः प्रहर्तुर्वा भयाद्येन] पलायितः; तिरोहितः। ४७९

गृह्यः त्रि. [गृह्यते स्वाम्यादिभिरिति। ग्रह्+क्यप्] पक्षः; 'ननु वक्तृविशेषनिस्पृहा गुणगृह्या वचने विपश्चितः'—इति भारविः। अस्वैरी; अस्वतन्त्रः; गृह्यकः; पराधीनः; [गृहे भव इति यत्] गृहोत्पन्नवस्तु; क्ली. [गृह्यते आक्रम्यते अर्श-आदिभी रोगैरिति। ग्रह्+'पदास्वैरिबाह्यापक्ष्येषु च' इति क्यप्] गुदं; [गृह्यन्ते संगृह्यन्ते सामवेदाद्युक्तानि कर्मविधानान्यत्र इति। ग्रह्+क्यप्] कात्यायनगोभिलादिकृतसूत्रग्रन्थभेदः। तत्र तु गोभिलादिकृतसामवेदाद्युक्तकर्मकाण्डनिर्णयः। पुं. [गृह्यते मानवेनेति, ग्रह्+'पदास्वैरिबाह्यापक्ष्येषु च' इति क्यप्। पञ्जरादिबन्धनेन परस्वीकृतत्वादस्य तथात्वम्] गृहासक्तमृगादिः; अग्निः; 'वैश्वदेवस्य सिद्धस्य गृह्येऽग्नौ विधिपूर्वकम्। आभ्यः कुर्याद्देवताभ्यो ब्राह्मणो होममन्वहम्'— इति मनुः (३।८४)। ३८९

गृह्यकः त्रि. [गृह्य+स्वार्थे अनुकम्पायां वा कन्] गृह्यः; अस्वतन्त्रः; पराधीनः। ३४१

गेहम् क्ली. [गो गन्धर्वो गणेशश्च। गेन गन्धर्वेण गणेशेन वा ईह्यते काम्यते इति। ग+ईह्+कर्मणि घञ्। यद्वा गो गन्धर्वो गणेशो वा ईहः ईप्सितो यस्मिन्] गृहम्; 'तृणानि भूमिरुदकं वाक् चतुर्थी च सूनृता। एतान्यपि सतां गेहे नोच्छिद्यन्ते कदाचन'—इति हितोपदेशः। २९१

गेहेनर्दी [न्] पुं. [गेहे नर्दति गर्जतीति। गेह+नर्द्+णिनि, अलुक्समासः। अस्य गृह एव गर्जनं नान्यत्र। अतस्तथात्वम्] कापुरुषः; गेहेशूरः; पिण्डीशूरः। ३६७

गेहेशूरः पुं. [गेहे एव शूरः। अलुक्समासः। अन्यत्र शूरत्वाभावादस्य तथात्वम्] गेहेनर्दी; पिण्डीशूरः; कापुरुषः। ३६७

गैरिकम् क्ली. [गिरौ भवतीति। अध्यात्मादित्वात् ठञ्] रक्तवर्णधातुभेदः; रक्तधातुः; गिरिधातुः; गवेधुकं; धातुः; सुरङ्गधातुः; गिरिमृद्भवं; वनालक्तं; गवेरुकं; प्रत्यश्मा; गिरिमृत्; लोहितमृत्तिका; गिरिजं; 'गेरू' इति भाषा। 'गैरिकं रक्तधातुश्च गैरेयं गिरिजं तथा। सुवर्णगैरिकं त्वन्यत्ततो रक्ततरं हि तत्। गैरिकाद्वितयं स्निग्धं मधुरं तुवरं हिमम्। चक्षुष्यं दाहपितास्रकफहिक्काविषापहम्'—इति भावप्रकाशः। १७०

गोकर्णः पुं. [गोः कर्ण इव। तत्तुल्यपरिमाणवत्त्वादस्य तथात्वम्] परिमाणविशेषः; अनामिकायुक्तविस्तृताङ्गुष्ठम्; वितस्तिः; [गोः कर्णाविव कर्णौ यस्य] मृगभेदः; 'मुनिविनियोगविलूनप्ररूढमृदुशाद्वलानि बर्हींषि। गोकर्णतर्णकोऽयं तर्णोत्युपकण्ठकच्छेषु'—इति अनर्घराघवे (२।२३)। 'गोकर्णमांसं मधुरं स्निग्धं मृदु कफापहम्। विपाके मधुरं चापि रक्तपित्तविनाशनम्'—इति सुश्रुते। अश्वतरः; [गोश्चक्षुरेव कर्णौ यस्य] सर्पभेदः; [गोरिव कर्णौ यस्य] गणदेवताविशेषः; तीर्थविशेषः; 'ततोऽभिव्रज्य भगवान् केरलांस्तु त्रिगर्तकान्। गोकर्णाख्यं शिवक्षेत्रं सान्निध्यं यत्र धूर्जटेः'—इति भागवते। पीठस्थानम्; 'केदारपीठे सम्प्रोक्ता देवी सन्मार्गदायिनी। मन्दा हिमवतः पृष्ठे गोकर्णे भद्रकर्णिका'—इति देवीभागवते (७।३०।६०)। ५३८

गोकुलम् क्ली. [गवां कुलम्] गोसमूहः; गोधनं; गवां व्रजः; 'गोकुलाकुलतीराया स्तमसाया विदूरतः। अवसत् तत्र तां रात्रिं रामः प्रकृतिभिः सह।' गोस्थानम्; 'गोकुले कन्दुशालायां तैलयन्त्रेक्षुयन्त्रयोः। अमीमांस्यानि शौचानि स्त्रीषु बालातुरेषु च।' मथुरैकदेशो श्रीनन्दस्य वासस्थानम्; 'कालेन व्रजता तात! गोकुले रामकेशवौ। जानुभ्यां सह पाणिभ्यां रिङ्गमाणौ विजह्रतुः'—इति भागवतम्। 'गोकुले गोपिनीपूज्यो गोपीश्वर

इतीरितः'—इति महालिङ्गेश्वरतन्त्रे शिवशतनामस्तोत्रे। पण्डितविशेषः; (अयं तु सप्तदशशतपरिमितशकाब्दप्रारम्भे एव मिथिलादेशान्तर्वर्तिनि 'मगरौणी' संज्ञकग्रामे विद्यानिधिपीताम्बरपण्डितात् जातः। अद्यावधि ज्ञाता अनेन विरचिता ग्रन्थास्त्वेते–१ दीधितिविद्योतः (शिरोमणिटीका), २ न्यायसिद्धान्ततत्त्वं, ३ पदवाक्यरत्नाकरः, ४ मासमीमांसा, ५ मिथ्यात्वनिरुक्तिः, ६ रश्मिचक्रम् (चिन्तामणिटीका), ७ रसमहार्णवः, ८ लाघवगौरवरहस्यं, ९ शिवशतकम्)। २६२

गोक्षुरः पुं. [क्षुरति विलिखतीति। क्षुर् विलेखने+'इगुपधज्ञेति' क। ततो गोः पृथिव्याः क्षुरः अस्त्रविशेषः इव। बहुकण्टकाकीर्णत्वात् तथात्वम्] क्षुद्रक्षुपविशेषः; त्रिकण्टकः; स्थलशृङ्गाटः; गोकण्टः; त्रिकण्टकः; त्रिपुटः; कण्टकफलः; क्षुरः; गोक्षुरकः; पलङ्कषा; इक्षुगन्धा; श्वदंष्ट्रा; स्वादुकण्टकः; गोकण्टकः; वनशृङ्गाटः; क्षुरकः; भक्ष्यकण्टः; इक्षुगन्धिका; क्षुरङ्गः; श्वदंष्ट्रकः; कण्टकी; भद्रकण्टः; व्यालदंष्ट्रः; षडङ्गः; गोखुरः; त्रिकटः; त्रिकः; इक्षुरः। २०१

गोत्रः पुं. [गां पृथिवीं त्रायते रक्षतीति। गो+त्रै+'आतोऽनुपसर्गे कः' इति क.] पर्वतः; 'नाड्यो नदनदीनान्तु गोत्राणामस्थिसंहतिः'–इति भागवते (२।६।९)। १६५

गोत्रम् क्ली. [गवते शब्दायति पूर्वपुरुषान् यत्। गु+'गृधृवीपचीति' त्र] सन्ततिः; जननं; कुलम्; अभिजन; अन्वयः; वंशः; अन्ववायः; सन्तानः। (८२९) आख्या; नाम; 'स्मरसि स्मरमेखलागुणैरुत गोत्रस्खलितेषु बन्धनम्'—इति कुमारसम्भवे (४।८)। सम्भावनीयबोधः; काननं; क्षेत्रं; वर्त्म; छत्रं; सङ्घः; वृद्धिः; वित्तं; मेघः। 'त्वं गोत्रमङ्गिरोभ्योऽवृणोरपोतात्रये शतदूरेषु गातुवित्'—इति ऋग्वेदे (१।५१।३)। ३९६

गोत्रभित् [द्] पुं. [गोत्रं पर्वतं भिनत्तीति। गोत्र+भिद्+'सत्सूद्विषे'त्यादिना क्विप् ततस्तुगागमः] इन्द्रः; 'यो गोत्रभिद्वज्रभृद्यो हरिष्ठाः स इन्द्र चित्राँ अभितृण्धि वाजान्'–इति ऋग्वेदे (६।१७।२)। 'सहासनं गोत्रभिदाध्यवात्सीत्'—इति भट्टिः (१।३)। ५३

गोत्रा स्त्री. [गाः पशून् सर्वान् जीवानित्यर्थः, त्रायते इति। त्रै+क स्त्रियां टाप् च] पृथिवी; [गवां समूहः 'इनित्रकट्यचश्च' इति त्र टाप् च] गोसमूहः; गायत्रीस्वरूपा महादेवी; 'गन्धर्वी गह्वरी गोत्रा गिरिशा गहना गमी'—इति देवीभागवते (१२।६।४१)। १५६

गोदा स्त्री. [गां जलं स्वर्गं वा ददाति स्नानेनेति। गो+दा+क, स्त्रियां टाप्] गोदावरी नदी; गायत्रीस्वरूपा महादेवी; 'गर्वापहारिणी गोदा गोकुलस्था गदाधरा'—इति देवीभागवते (१२।६।४३)। [गाः ददातीति, दा+क्विप्] गोदातरि त्रि.। 'गोदा इन्द्रेवतो मदः'—इति ऋग्वेदे (१।४।२) 'गोदाश्चक्षुरिन्द्रियव्यवहारप्रदः'—इति दयानन्दभाष्यम्। ६७४

गोदारणम् क्ली. [गौर्भूमिर्दार्यतेऽनेनेति। गो+दॄ+णिच्+करणे ल्युट्] कुद्दालः; लाङ्गलम्। ५७७

गोदावरी स्त्री. [गां जलं स्वर्गं वा ददतीति गोदाः, तासु वरी श्रेष्ठा। गोदा+वर+ङीष् संज्ञायाम्। यद्वा गां स्वर्गं ददाति, गो+दा+वनिप्+ङीप् रान्तादेशश्च] नदीविशेषः; गोदा; गौतमसम्भवाः; ब्रह्माद्रिजाता; गौतमी; 'विप्रो रोषेण तत्याज तं च पुत्रं स्वकामिनीम्। सरिद् बभूव योगेन सा च गोदावरी स्मृता'—इति ब्रह्मवैवर्ते। 'गोदावर्यां त्रिसन्ध्या तु गङ्गाद्वारे रतिप्रिया'–इति देवीभागवते (७।३०।६८)। ६७४

गोधनम् क्ली. [गवां धनं समूहः] गोसमूहः; 'स आत्मनो दृढां कक्षां बद्ध्वा सम्भ्रान्तमानसः। दण्डमुद्यम्य सहसा प्रतस्थे गोधनं प्रति'—इति रामायणे (२।३२।४२)। पुं. [धन् शब्दे, अप्, धनं शब्दः। गोर्वज्रस्येव धन यस्य] स्थूलाग्रबाणः; 'तुक्का' इति भाषा। २६२

गोधा स्त्री. [गुध्यते परिवेष्टयते बाहुर्यया। गुध्+'हलश्चेति' करणे घञ्] जन्तुविशेषः; निहाका; गोधिका; दारुमुख्याह्वा; 'गोह' इति भाषा। 'गोधा विपाके मधुरा कषायकटुका रसे। वातपित्तप्रशमनी बृंहणी बलवर्द्धनी'—इति चरके। धनुर्गुणाघातवारणाय प्रकोष्ठबद्धा चर्मकृतपट्टिका; तला; ज्याघातवारणा; तलम्। 'विक्षिपन्नादयंश्चापि धनुःश्रेष्ठं महाबलैः। तूणखड्गधरः शूरो बद्धगोधाङ्गुलित्रवान्'—इति महाभारते (३।१७।३)। २३४

गोनसः पुं. [गोरिव नासिका यस्य । 'अञ् नासिकायाः संज्ञायां नसं चास्थूलात्' इति अच् नसादेशश्च] सर्पविशेषः; तिलित्सः; गोनासः; घोनसः; मण्डलीवोड्रः; वोड्रः; 'मिलिन्दको गोनसो वृद्धगोनसः पनसी'—इति सुश्रुतः । वैक्रान्तमणिः । ६४२

गोनासः पुं. [गोर्नासा इव नासा यस्य] गोनससर्पः । ६४२

गोपतिः पुं. [गवां रश्मीनां पतिः] सूर्यः; 'परिभ्रमन्तमुल्काभां भ्रामयन्तं गदां मुहुः । अस्त्रतेजः स्वगदया नीहारमिव गोपतिः ।' शक्रः इन्द्रः (५२); [गोर्वृषभस्य पतिः, यद्वा गवां पशूनां जीवानां पतिः] महादेवः; शिवः रुद्रः । 'गोपालिर्गोपतिर्ग्रामो गोचर्मवसनो हरिः'—इति महाभारते । [गां पृथ्वीं जगदित्यर्थः, पाति पालयतीति । गो+पा+डति] विष्णुः; 'उत्तरो गोपतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यः पुरातनः'—इति महाभारते (१३।१४९।६६) । गोपेन्द्रनन्दनकृष्णः; 'अमानुषाणि कर्माणि पश्यामस्तव गोपते'—इति हरिवंशे (७६।४) । असुरभेदः; 'गोपतिस्तालुकेतुश्च त्वया विनिहतावुभौ'—इति महाभारते (३।१२।३५) । [गोः पृथिव्याः पतिः] राजा; [गवां सौरभेयीणां पतिः] वृषः; 'शार्दूलहंससमदद्विपगोपतीनां तुल्या भवन्ति गतिभिः शिखिनां च भूपाः । येषां च शब्दरहितं स्तिमितं च यातं तेऽपीश्वरा द्रुतपरिप्लुतगादरिद्राः'—इति बृहत्संहितायाम् (६८।११५) । ऋषभनामौषधिः । ३५

गोपानसी स्त्री. [गोपायति रक्षति गृहमिति । गुपू रक्षणे+बाहुलकाद् नसट्, यलोपस्ततो ङीप् च] गृहाणामग्रभागे दत्तवक्रकाष्ठं; वलभी; वडभी, गृहचूडा; वडभी, चतुष्किकादिचूडा, एतयोश्छादनार्थं वक्रीकृत्य यत्काष्ठं दीयते सा; पटलाधोवंशपञ्जरं; कर्णिकाविष्कम्भि दारु; वक्रीभूतं धरणकाष्ठम्; 'गोपानसीषु क्षणमास्थितानामालम्बिभिश्चन्द्रकिणांक लापैः । हरिन्मणिश्यामतृणाभिरामैर्गृहाणि नीध्रैरिव यत्र रेजुः' —इति माघे (३।४९) । ३०३

गोपालः पुं. [गाः पालयतीति । गो+पाल्+'कर्मण्यण्' इत्यण्] गवां पालकः; वृन्दावनस्यगोपालानां स्वरूपम्; 'गोपाला मुनयः सर्वे वैकुण्ठानन्दमूर्तयः'—इति पद्मपुराणे । [गां पृथिवीं पालयतीति । गो+पाल्+अण्] राजा; [गां पृथिवीं वेदं वा पालयतीति] नन्दनन्दनः; कृष्णः; 'गोवर्द्धनं तथापश्यं कृष्णवामकरोद्धृतम् । महेन्द्रदर्पनाशाय गोगोपालसुखावहम् । दृष्ट्वा विहृष्टो ह्यभवं सर्वभूषणभूषणम् । गोपालमबलासङ्गमुदितं वेणुनादितम्'—इति पद्मपुराणे । ५८७

गोपुच्छः पुं. [गोः पुच्छ इव आकृतिर्यस्य, गोपुच्छाकारत्वादस्य तथात्वम्] हारभेदः; वाद्यविशेषः; गोलाङ्गूलवानरः; 'शार्दूलमृगसंघुष्टं सिंहैर्भीमबलैर्वृतम् । ऋक्षवानरगोपुच्छैर्मार्जारैश्च निषेवितम्'—इति रामायणे । गवां लाङ्गूलम् क्ली.; 'गोपुच्छस्थे वल्मीकगेऽथवा दर्शनं भुजङ्गस्य'—इति बृहत्संहितायाम् । ५६२

गोपुरम् क्ली. [गोपायति नगरं रक्षतीति । गुप्+बाहुलकाद् उरच्, यद्वा गाः पिपर्त्तीति, पॄ पालनपूरणयोः+'मूलविभुजादिभ्यः' इति क] नगरद्वारं; पुरद्वारं; दुर्गपुरद्वारं; द्वारमात्रम्; 'द्विपक्षगरुडप्रख्यैर्द्वारैः सौधैश्च शोभितम् । गुप्तमभ्रचयप्रख्यैर्गोपुरैर्मन्दरोपमैः'—इति महाभारते (१।२०८।३१) । [गौर्जलं पुरमस्य, यद्वा गवा जलेन पिपर्ति पूरयति आत्मानमिति । पॄ+क] कैवर्तीमुस्तकम्; वैद्यकशास्त्रप्रणेतृऋषिभेदः; 'अथ खलु भगवन्तममरवरमृषिगणपरिवृतम् आश्रमस्थं काशिराजं दिवोदासं धन्वन्तरिमौपधेनववैतरणौरभ्रपौष्कलावतकरवीर्यगोपुररक्षितसुश्रुतप्रभृतय ऊचुः'—इति सुश्रुते सूत्रस्थाने १ अध्याये । २८८

गोप्यः पुं. [गोप्यते रक्ष्यतेऽसौ इति । गुपू रक्षणे+'ऋहलोर्ण्यत्' इति ण्यत्] दासीपुत्रः; दासः; रक्षणीये त्रि., 'सहदेवं समीपस्थं नित्यमेव समादिशत् । तेन गोप्यो हि नृपतिः सर्वावस्थो विशाम्पते !'—इति महाभारते (१२।४१।१५) । [गोप्यतेऽसाविति । गुप् गोपने+कर्मणि ण्यत्] गोपनीयः; 'आयुर्वित्तं गृहच्छिद्रं मन्त्रमैथुनभेषजम् । अपमानन्तपो दानं नव गोप्यानि यत्नतः'—इति पुराणम् । गोपीसमूहश्च [तत्र गोपीशब्दात् प्रथमाविभक्तेर्बहुवचनप्रयोगः] । ५०१

गोमतल्लिका स्त्री. [प्रशस्ता गौर्गोजातिः, 'प्रशंसावचनैश्च' इति नित्यसमासेन परनिपातः] सुशीला गौः । २७०

गोमयम् क्ली.— पुं. [गोः पुरीषम् । 'गोश्च पुरीषे' इति मयट्] गवां गूथं; गोविट्; जगलं; गोहन्नं; गोशकृत्; गोपुरीषं; गोविष्ठा; गोमलं; 'गोबर' इति भाषा । २७३

गोमान् [त्] त्रि. [बहवो गावोऽस्यास्मिन् वा सन्तीति। 'तदस्यास्तीति' मतुप्] बहूनां गवां स्वामी; गवीश्वरः; गोमी; 'येनावपत् सविता क्षुरेण सोमस्य राज्ञो वरुणस्य विद्वान्। तेन ब्रह्माणो वपते दमस्य गोमानश्ववानयमस्तु प्रजावान्'—इति अथर्ववेदे (६।६८।३)। २६२

गोमायुः पुं. [गां विकृतां वाचं मिनोतीतिप्गो+डुमिञ्+कृवापेत्युण्] शृगालः; 'ततो राज्ञो धृतराष्ट्रस्य गेहे गोमायुरुच्चैर्व्याहरदग्निहोत्रे'—इति महाभारते (२।६७। २३) गन्धर्वविशेषः; गोपित्ते सान्तक्लीवोऽयम्। २२९

गोमी [न्] त्रि. [गौरस्त्यस्य। 'ज्योत्स्नातमिस्राशृङ्गिणोर्जस्विन्निति' इति मिनि] गोमान्; 'यद्यन्यगोषु वृषभो वत्सानां जनयेच्छतम्। गोमिनामेव ते वत्सा नोद्यं स्कन्दितमार्षभम्'—इति मनुः (९।५०)। [गौर्बीजमन्त्रवाक्यम् अस्यास्तीति] उपासकः। २६२

गोमुखम् क्ली. [गोर्मुखमिव मुखं प्रवेशद्वारमस्य] लेपनम्; 'शुकाङ्गनीलोपलनिर्मितानां लिप्तेषु भासा गृहदेहलीनाम्। यस्यामलिन्देषु न चक्रुरेव मुग्धाङ्गना गोमयगोमुखानि'—माघे (३।४८)। वाद्यभाण्डम् पुं.—क्ली.; 'ततः शङ्खाश्च भेर्यश्च पणवानकगोमुखाः। सहसैवाभ्यहन्यन्त सशब्दस्तुमुलोऽभवत्'—इति भगवद्गीतायाम् (१।१३)। 'आडम्बरान् गोमुखांश्च डिण्डिमांश्च महास्वनान्'—इति महाभारते (९।४६।५७)। चौरक्रियमाणसुरङ्गाभेदः; 'सेंध' इति भाषा। आसनविशेषः; 'सव्ये दक्षिणगुल्फं तु पृष्ठपार्श्वे नियोजयेत्। दक्षिणेऽपि तथा सव्यं गोमुखं गोमुखाकृति'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम्। जपमालागोपनार्थं वस्त्रनिर्मितयन्त्रम्; 'चतुर्विंशाङ्गुलमितं पट्टवस्त्रादिसम्भवम्। निर्मायाष्टाङ्गुलिमुखं ग्रीवां तत् षड् दशाङ्गुलम्। ज्ञेयं गोमुखयन्त्रं च सर्वतन्त्रेषु गोपितम्। तन्मुखे स्थापयेन्मालां ग्रीवामध्यगतः करः। प्रजपेद्विधिना गुह्यं वर्णमालाधिकं प्रिये'—इति मुण्डमालातन्त्रम्। 'गोमुखादौ ततो मालां गोपयेन्मातृजारवत्'—इति मायातन्त्रे। पुं. [गोर्मुखमिव मुखं यस्य] नक्रः; यज्ञविशेषः; मातलिपुत्रः; 'बहुशो मातले! त्वं च तव पुत्रश्च गोमुखः'—इति महाभारते (५।१००।८)। वत्सराजमन्त्रिपुत्रविशेषः; 'ततो नित्योदिताख्यस्य प्रतीहाराधिकारिणः। इत्यकापरसंज्ञस्य पुत्रोऽजायत गोमुखः'—इति कथासरित्सागरे (२३।५७)। ७९७

गोयुगम् क्ली. ['द्वित्वे गोयुगच्' इति विहितोऽयं प्रत्ययः पशुमात्रद्वित्वसंख्यायां भवति। उष्ट्रगोयुगम् इतिवत्। गोः युगं युग्मम् इति समासपक्षे तु] पशुद्वयम्; पशुयुग्मं; धेनुयुग्मम्। २८३

गोलाङ्गूलः पुं. [गोर्लाङ्गूलवल्लाङ्गूलमस्य] वानरः; कपित्थास्यः; दधिशोणः; नगाटनः; 'निरुजो निर्व्रणांश्चैव संपन्नबलपौरुषान्। गोलाङ्गूलान् तथैवर्क्षान् द्रष्टुमिच्छामि मानद'—इति रामायणे (६।१०५।८)। कृष्णवानरः। २३२

गोविन्दः पुं. [गां पृथ्वीं धेनुं वा विन्दतीति। विन्द्+'अनुपसर्गाल्लिम्प' इत्यस्य 'गवादिषु विन्देः संज्ञायाम्' इति वार्तिकोक्त्या श] श्रीकृष्णः; विष्णुः; 'किं नो राज्येन गोविन्द! किं भोगैर्जीवितेन वा'—इति भगवद्गीतायाम् (१।३२)। 'युगे युगे प्रनष्टां गां विष्णो! विन्दसि तत्त्वतः। गोविन्देति ततो नाम्ना प्रोच्यसे ऋषिभिस्तथा'—इति ब्रह्मवैवर्ते। [विन्दतीति विन्दः पालकः स्वामी वा। विन्द्+श। गवां गोसमूहस्य विन्दः] गवाध्यक्षः; [गवां शास्त्रमयीनां वाणीनां विन्दः पतिः] बृहस्पतिः; गौडपादाचार्यशिष्यः योगिविशेषः; 'तस्योपदर्शितवतश्चरणौ गुहायां द्वारे न्यपूजयदुपेत्य स शङ्करार्यः। आचार इत्युपदिदेश स तत्र तस्मै गोविन्दपादगुरवे स गुरुर्यतीनाम्'—इति माधवीये संक्षिप्तशङ्करजये (५।१०१)। पञ्जाबस्थसिक्खजातीनां गुरुभेदः; गुरुगोविन्दसिंहः; [गाः मनःप्रधानानीन्द्रियाणि तेषां विन्दः प्रवर्तयिता चेतयिता वा। अन्तर्यामी आत्मेत्यर्थः] परब्रह्म; 'फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुवदनं बर्हावतंसप्रियं, श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम्। गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनुं गोगोपसङ्घावृतं, गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्याङ्गभूषं भजे'—इति वह्निपुराणे। २२

गोवृन्दम् क्ली. [गवां वृन्दं सङ्घः] गोसमूहः। २६२

गोष्ठम् क्ली. [गावस्तिष्ठन्त्यत्र इति। स्था+'सुपि स्थः' इति घञर्थे क] गोसङ्घात; गोवृन्दं; गोस्थानं; 'गोठ' इति भाषा। 'सिंहेन निहतं गोष्ठे गौः सवत्सेव गोपितम्। दृष्ट्वा संग्रामयज्ञेन रामबाणमहाम्भसा'—

इति रामायणे (४।२२।३१)। प्रत्ययविशेषः। स तु स्थानार्थे पशुवाचकशब्देभ्यो भवति, यथा—गोगोष्ठं, महिषगोष्ठम्। गोष्ठीश्राद्धम्; 'पित्र्ये स्वदितमित्येव वाच्यं गोष्ठे तु सुश्रुतम्। सम्पन्नमित्यभ्युदये दैवे रुचितमित्यपि'—इति मनुः (३।२५४)। २६२

गोष्ठश्वः त्रि. [गोष्ठे श्वा, 'अचतुरविचतुरेति' समासे अच्। षष्ठीतत्पुरुषसमासे तु गोष्ठश्वा इत्येव स्यात्] स्वगृहाङ्गणे स्थितो यः परान् द्वेष्टि सः (न च भीतो बहिर्याति); स्थानस्थः परद्वेषी। ३६८

गोसम्भवम् क्ली. [गावः सम्भवो यस्य] गव्यं; गोजातवस्तु। २७३

गोसर्गः पुं. [गवां सर्गो वनगमनाय मोचनं, यद्वा गवां सूर्यकिरणानां सर्गो विसृष्टिः यस्मिन्] प्रभातम्; 'गोसर्गे चार्द्धरात्रे च तथा मध्यन्दिनेषु च'—इति सुश्रुते। १११

गोस्तना स्त्री. [गोः स्तन इव फलमस्याः। ङीषोऽभावपक्षे टाप्] गोस्तनी; द्राक्षा। १९३

गोस्तनी स्त्री. [गोः स्तन इव फलमस्याः। 'स्वाङ्गाच्चोपसर्जनादसंयोगोपधात्' इति ङीष] द्राक्षा; कपिलद्राक्षा; 'दाख' 'मुनक्का' इति भाषा। 'द्राक्षा स्वादुफला प्रोक्ता तथा मधुरसापि च। मृद्वीका हारहूरा च गोस्तनी चापि कीर्तिता। वृष्या स्याद्गोस्तनी द्राक्षा गुर्वी च कफपित्तनुत्'—इति भावप्रकाशः। कुमारानुचारिणी मातृगणानामन्यतमा; 'प्रभावती विशालाक्षी पलिता गोस्तनी तथा'—इति महाभारते (९।४६।३)। १९३

गोस्वामी [न्] त्रि. [गवां स्वामी] गोपतिः; 'गोपः क्षीरभृतो यस्तु स दुह्याद्दशतो वराम्। गोस्वाम्यनुमते भृत्यः सा स्यात् पालेऽभृते भृतिः'—इति मनुः (८।२३१)। स्वर्गस्य भुवो वा प्रभुः; गवाम् इन्द्रियाणां स्वामी (जितेन्द्रियतया एव तथात्वम्)। यथा—'श्रीसनातनगोस्वामी प्रिया श्रीरतिमञ्जरी'—इत्यन्तसंहिता।२६२

गौः [गो] पुं.—स्त्री. [गच्छतीति। गम्+गमेर्डोः' इति डो। यद्वा गच्छत्यनेनेति करणे डो। वृषस्य यानसाधनत्वात् स्त्रीगव्या दानेन स्वर्गगमनसाधनत्वाच्च उभयोरपि दानेन स्वर्गगमनत्वाद्वा तथात्वम्। वस्तुतस्त्वयं रूढ एव शब्दः, यदुक्तम्—'रूढा गवादयः प्रोक्ता यौगिकाः पाचकादयः। योगरूढाश्च विज्ञेयाः पङ्कजाद्या मनीषिभिः।'] पशुविशेषः; 'गोरु' 'गाय' इति भाषा। २६८

गौः [गो] पुं. [गम्यते कर्मिभिः यज्ञदानपरोपकारादिधर्ममूलककर्मफलैर्यस्मिन्। गम्+'गमेर्डोः'—इति अधिकरणे डो] स्वर्गः; [गम्यते ज्ञायते चित्ताभिप्रायो यया, करणे डो] वाक् (८); 'इत्यर्घ्यपात्रानुमितव्ययस्य रघोरुदारामपि गां निशम्य'—इति रघुवंशे (५।१२)। [गम्यन्ते ज्ञायन्ते विषया येन, यद्वा गच्छति शीघ्रमिति करणे कर्तरि वा डो। किरणसम्पर्केण विना चाक्षुषज्ञानाभावात् किरणस्य ज्ञानप्रकाशधर्मवत्वात् शीघ्रगामित्वाच्च तथात्वम्] रश्मिः (३९); 'त्रयोदशद्वीपवतीं गोभिर्भासयसे महीम्। त्रयाणामपि लोकानां हितायैकः प्रवर्त्तसे'—इति महाभारते (३।३।५२)। वज्रः (५६); (१५६) भूः; भूमिः; 'दुदोह गां स यज्ञाय सस्याय मघवा दिवम्। सम्पद्विनिमयेनोभौ दधतुर्भुवनद्वयम्'—इति रघुवंशे (१। २६) पुं. वृषः (२६३); (२६८) स्त्री. माहेयी; सौरभेयी; उस्रा; माता; शृङ्गिणी; अर्जुनी; अघ्न्या; रोहिणी, माहेन्द्री; इज्या; धेनुः; अघ्ना; दोग्ध्री; भद्रा; भूरिमही; अनडुही; कल्याणी; पावनी; गौरी; सुरभिः; महा; निलिनाचिः; सुरभी; अनड्वाही; द्विडा; अधमा; बहुला; मही; सरस्वती; उस्रिया; अही; अदितिः; इला; जगती; शर्करी। 'पराशरः प्राह बृहद्रथाय गोलक्षणं यत्क्रियते ततोऽयम्। मया समासः शुभलक्षणास्ताः सर्वास्तथाप्यागमतोऽभिधास्ये'—इति बृहत्संहितायाम् ६१ अध्याये। ३

गौः [गो] स्त्री. दिक्; [गम्यते विषयज्ञानं यया, 'गमेर्डोः' इति करणे डो] चक्षुः; रश्मिः; स्वर्गः; वज्रः; वाक्; [गच्छति शीघ्रमिति कर्तरि डो] बाणः; [गच्छति निम्नदेशमिति कर्तरि डो, निम्नप्रवणादेवास्य तथात्वम्] जलं; भूमिः; पशुविशेषः; [गम्यते पुण्यवद्भिर्यस्मिन्। अधिकरणे डो, इष्टपूर्तादिसकामकर्मभिः पुण्यवतां चन्द्रलोकगमनात् तथात्वम्] चन्द्रः; [गच्छति प्राप्नोति विश्वं प्रकाशकात्मकेन स्वतेजसेति, जानाति सर्वमिति वा। कर्तरि डो] सूर्यः; गोमेधयज्ञः; ऋषभनामौषधिः; जलम्। जले बहुवचनान्तोऽयम् इति मेदिनीकोषः। जले एकवचनान्तोऽपि इति भरतः। 'स्वमिव भुजं गवि शेषं व्युपधाय स्वपिति यो भुजङ्ग-

विशेषम्। नवपुष्करसमकरया श्रियोर्मिपङ्क्त्या च सेवितः समकरया'—इति वृन्दावनयमके (२)। माता; शुकदौहित्रस्य ब्रह्मदत्तस्य भार्या; 'स कीर्त्यां शुककन्यायां ब्रह्मदत्तमजीजनत्। स योगी गवि भार्यायां विष्वक्सेनमधात् सुतम्'—इति भागवते (९।२१।२५)। [गवि सरस्वत्यां भार्यायाम्'—इति कश्चिद् व्याचष्टे] पुं.— क्ली. [गम्यते ज्ञायते स्पर्शसुखमनेन। त्वचि जातत्वादेवास्य तथात्वम्] लोम। ८५४

गौडी स्त्री. [गुडस्य विकारः, गुडविकारेण सम्पादिता इत्यर्थः। गुड+अण् स्त्रियां ङीप्] गुडादिकृता सुरा; वाल्कली; 'गौडी पैष्टी च माध्वी च विज्ञेया त्रिविधा सुरा।' 'गौडी कषाया मधुराम्लशीता सन्दीपनी शूलरुजापहन्त्री। हृद्या त्रिदोषं शमयत्यजीर्णं पाण्ड्वामयार्शःश्वसनं निहन्ति'—इति हारीते प्रथमस्थाने ११ अध्याये। रागिणीविशेषः; मेघरागस्य पत्नी; गौडानां गौडदेशवासिनां प्रिया; काव्यरीतिविशेषः; 'ओजः प्रसादमाधुर्य—गुणत्रितयभेदतः। गौडवैदर्भपाञ्चाल–रीतयः परिकीर्तिताः—इति काव्यचन्द्रिका। 'ओजःप्रकाशकैवर्णैबन्ध आडम्बरः पुनः। समासबहुला गौडी'—इति साहित्यदर्पणे (९।४)। 'बहुतरसमासयुक्ता सुमहाप्राणाक्षरा च गौडीया। रीतिरनुप्रासमहिमपरतन्त्रा स्तोभवाक्या च'—इति पुरुषोत्तमः। ३२४

गौधेरः पुं. [गोधाया अपत्यम्, 'गोधाया ढ्रक्' इति ढ्रक्] गोधिकात्मजः; गोधिकासुतः। २३४

गौरः पुं. [गवते अव्यक्तं शब्दयतीति। गुङ शब्दे+ 'ऋज्रेन्द्रेति' रन्प्रत्ययेन निपातनात् सिद्धः] श्वेतवर्णः; तद्वति त्रि., 'तरुणादित्यगौरैश्च शरगौरैश्च वानरैः'—इति रामायणे (४।३९।१४)। 'कैलासगौरं वृषमारुरुक्षोः पादार्पणानुग्रहपूतपृष्ठम्। अवेहि मां किङ्करमष्टमूर्तेः कुम्भोदरं नाम निकुम्भमित्रम्'—इति रघुवंशे (२।३५)। चैतन्यदेवः; मृगविशेषः; 'खरोऽश्वोऽश्वतरो गौरः शरभश्चमरी तथा। एते चैकशफाः क्षत्तः! शृणु पञ्चनखान् पशून्'—इति भागवते (३।१०।२२)। त्रि. विशुद्धः; क्ली. [गुरते चित्तं यत्र। गुरी उद्यमने+हलश्चेति घञ्। ततः स्वार्थे अण्। यद्वा गवते इति] गुङ शब्दे+'ऋज्रेन्द्रेति' रन् प्रत्ययेन निपातनात् साधुः] पद्मकेशरः; कुङ्कुमं; स्वर्णं; पुं. [गवते अव्यक्तं शब्दयतीति] श्वेतसर्षपः; 'गौरस्तु सर्षपः प्राज्ञैः सिद्धार्थ इति कथ्यते। सर्षपस्तु रसे पाके कटुस्निग्धः सतिक्तकः। तीक्ष्णोष्णः कफवातघ्नो रक्तपित्ताग्निवर्द्धनः। रक्षोहरो जयेत्कण्डूं कुष्ठकोष्ठकृमिग्रहान्। यथा रक्तस्तथा गौरः किन्तु गौरो वरो मतः'—इति भावप्रकाशे। चन्द्रः; धववृक्षः; पीतवर्णः; पीतवर्णकरणौषधम्; 'कूष्माण्डनालक्षारस्तु सगोमूत्रश्च तत्त्वचः। जलपिष्टा हरिद्रा च सिद्धा मन्दानलेन हि। माहिषेण पुरीषेण वेष्ठिता वृषभध्वज। अस्या उद्वर्तनं कुर्यादङ्गगौरत्वमीश्वर'—इति गारुडे १९४ अध्यायः। अरुणवर्णः। ७३२

गौरवम् क्ली. [गौरवं साधनत्वेनास्त्यस्य। 'अर्श आदिभ्योऽच्' इत्यच्] अभ्युत्थानं; [गुरोर्भावः, गुरु+ 'इगन्ताच्च लघुपूर्वात्' इत्यण्] गुरुत्वम्; 'शरीरगौरवादस्य शिला गात्रैर्विचूर्णिता'—इति महाभारते (१।१६३।१८)। उत्कर्षः; 'शुश्राव तेभ्यः प्रभवादिवृत्तं स्वविक्रमे गौरवमादधानम्'—इति रघुवंशे (१४।१९)। आदरः; 'प्रयोजनापेक्षितया प्रभूणां प्रायश्चलं गौरवमाश्रितेषु'—इति कुमारसम्भवे (३।१)। ७७८

गौरा स्त्री. [गौरादिगणे वर्णवाचिन एव गौरशब्दस्य ग्रहणाद् अत्र विशुद्धार्थपरत्वे टाप्] गौरी। १५

गौरी स्त्री. [गौर+'षिद्गौरादिभ्यश्च' इति ङीष्] पार्वती; 'गौरीगुरोर्गह्वरमाविवेश'—इति रघुवंशे (२।२६)। 'गौरी प्रोक्ता कान्यकुब्जे रम्भा तु मलयाचले'—देवीभागवते (७।३०।५)। असञ्जातरजःकन्या; अष्टवर्षवयस्ककन्यका; 'अष्टवर्षा भवेद् गौरी नववर्षा तु रोहिणी'—इति स्मृतौ। 'स्त्रीणां सहस्रं गौरीणां सुवेशानां सुवर्चसाम्'—इति महाभारते (१।१२२।४७)। हरिद्रा; दारुहरिद्रा; गोरोचना; प्रयङ्गुवृक्षः; वसुधा; नदीविशेषः; 'वस्तु सुवर्णां गौरीं च किम्पुनां सहिरण्वतीम्'—इति महाभारते (६।९।२५)। गङ्गा; 'गङ्गा गन्धवती गौरी गन्धर्वनगरप्रिया'—इति काशीखण्डे (२९।४९)। वरुणभार्या; सूर्यवंशीयप्रसेनजिद्राजभार्या; 'लेभे प्रसेनजिद् भार्यां गौरीं नाम पतिव्रताम्। अभिशस्ता तु सा भर्त्रा नदी वै बाहुदाभवत्'—इति हरिवंशे। बुद्ध-

शक्तिविशेषः; मञ्जिष्ठा; श्वेतदूर्वा; मल्लिका; तुलसी; सुवर्णकदली; आकाशमांसी; रागिणी-विशेषः; मालवरागपत्नी; 'आराममध्यगता कुमारिका शारदेन्दुमुखलक्ष्मीः। राडी दाडिमबीजं दधती कीराननें गौरी'—इति सङ्गीतदामोदरे। केषाञ्चिन्मते तु इयं कौशिकरागपत्नी; 'तोडी खाम्बावती गौरी गुणक्री ककुभा तथा। रागिण्यो रागराजस्य कौशिकस्य वराङ्गनाः'—इति सङ्गीतदर्पणे रागाध्याये (३३)। केषाञ्चिन्मते इयं श्रीरागस्य पत्नी; 'मालश्री त्रिवर्णी गौरी केदारी मधुमाधवी। ततः पाहाडिका ज्ञेया श्रीरागस्य वराङ्गनाः'—इति सङ्गीतदर्पणे रागाध्याये (१४)। अस्या रागवेला तृतीयप्रहरात् परम् अर्द्धरात्रावधिः। १५

गौरीपुत्रः पुं. [गौर्याः पुत्रः] कार्त्तिकेयः। १९

ग्रन्थः पुं. [ग्रन्थ् संदर्भे+भावे घञ्] अनुष्टुप्छन्द-श्लोकः; द्वात्रिंशद्वर्णनिर्मितिः; [ग्रथ्यते विरच्यते इति, ग्रन्थ्+कर्मणि क] शास्त्रम्; 'ग्रन्थग्रन्थिं तदा चक्रे मुनिर्गूढं कुतूहलात्'—इति महाभारते (१।१।८०)। धनं; गुम्फः; ग्रन्थना। ८४४

ग्रन्थनम् क्ली. [ग्रन्थ्+भावे ल्युट्] गुम्फनं; ग्रन्थना; सन्दर्भः; रचना; गुम्फः; श्रन्थनम्। ७३०

ग्रन्थना स्त्री. [ग्रन्थ+भावे युच्। स्त्रियां टाप्] ग्रन्थनम्। ७३०

ग्रन्थिः पुं. [ग्रन्थ् सन्दर्भे+'खनिकष्यज्यसिवसिवनिसनिध्वनिग्रन्थिचारिभ्यश्च' — इति भावकरणादौ यथायथम् इ] वंशादिसन्धिः; काण्डसन्धिः; पर्व; परुः; 'गाँठ' इति भाषा। 'इक्षोरिव सुन्दरि! मानस्य ग्रन्थिरपि काम्यः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (१६८)। भद्रमुस्ता; हिलावली; पिण्डालुः; अन्योऽन्याध्यासः; मायापाशः; 'भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः'—इति भागवते (१।२।२१)। कौटिल्यं; ग्रन्थिपर्णवृक्षः; 'मनःशिला त्वक् कुटजात् सकुष्ठः सलोमशः सैडगजः करञ्जः। ग्रन्थिश्च भौर्जः करवीरमूलं चूर्णानि साध्यानि तुषोदकेन'—इति चरके। बन्धनं; रुग्भेदः; 'वातादयो मांसमसृक् प्रदुष्टाः सन्दूष्य मेदाश्च तथा शिराश्च। वृत्तोन्नतं विग्रथितं तु शोथं कुर्वन्त्यतो ग्रन्थिरिति प्रदिष्टः'—इति माधवकरः। १८९

ग्रस्तम् त्रि. [ग्रस्यते स्म इति। ग्रस्+क्त, 'यस्य विभाषा'—इति इडभावः] लुप्तवर्णपदम्; असम्पूर्णवाक्यं; भुक्तम्; 'राज्ञो नातिबभौ रूपं ग्रस्तस्यांशुमतो यथा'—इति रामायणे (२।४२।१२)। खादितम्; आक्रान्तम; 'दीर्घतीव्रामयग्रस्तं ब्राह्मणं गामथापि वा'—इति याज्ञवल्क्ये (३।२४४)। १४२

ग्रहः पुं. [गृह्णाति गतिविशेषानिति। यद्वा गृह्णाति फलदातृत्वेन जीवानिति। ग्रह+'विभाषा ग्रहः' इति पक्षे अच्] सूर्यादयो नव; 'सूर्यश्चन्द्रो मङ्गलश्च बुधश्चापि बृहस्पतिः। शुक्रः शनैश्चरो राहुः केतुश्चेति नव ग्रहाः।' भूतादिः; पूतनादयः; बालग्रहाः; अभिनिवेशः; [गृह्यते अनुगृह्यते अभ्युपपद्यते इति, ग्रह्+'ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च' इति अप्] अनुग्रहः; निर्बन्धः; महति स्नेहे निहितः कुसुमं बहु दत्तमर्चितो बहुशः। वक्रस्तदपि शनैश्चर इव सखि! दुष्टग्रहो दयितः'—इति आर्यासप्तशत्याम्। 'दुष्टः ग्रह आग्रहो यस्य, पक्षे दुष्टश्चासौ ग्रहश्चेति विग्रहः'—इति तट्टीका। ग्रहणम्; 'सद्यो हरेरनुचरावुरु बिभ्यतुस्तत्, पादग्रहावपततामतिकातरेण'—इति भागवते (३।१५।३५)। रणोद्यमः; सैंहिकेयः; 'सन्ध्याभ्रकपिशस्तस्य विराधो नाम राक्षसः। अतिष्ठन्मार्गमावृत्य रामस्येन्दोरिव ग्रहः'—इति रघुवंशे (१२।२८)। उपरागः; चन्द्रसूर्ययोर्ग्रहणम्; 'भत्रिपादान्तरे राहोः केतोर्वा संस्थितो रविः। चतुष्पादान्तरे चन्द्रस्तदा सम्भाव्यते ग्रहः'—इति तिथितत्त्वे। ग्रहाणां नवसंख्यात्वेन ग्रहशब्देनापि नवसंख्या बोध्यते; 'चतुर्दशसहस्रं च मात्स्यमाद्यं प्रकीर्तितम्। तथा ग्रहसहस्रं तु मार्कण्डेयं महाद्भुतम्'—इति देवीभागवते (१।३।३)। महादेवः; 'चन्द्रः सूर्यः शनिः केतुर्ग्रहो ग्रहपतिर्वरः'—इति महाभारते (१३।१७।३७)। ।८४१

ग्रहकः पुं. [गृह्यते, कर्मण्यप्, संज्ञायां क] वन्दी। ७५९

ग्रामः पुं. [ग्रस्+'ग्रसेरात्'—इति मन् धातोराकारान्तादेशश्च] विप्रादिवर्णप्राया प्राकारपरिखादिरहिता बहुजनवसतिः; संवसथः; हट्टादिशून्यवसतिः; 'तथा शूद्रजनप्राया सुसमृद्धकृषीवला। क्षेत्रोपयोगभूमध्ये वसतिर्ग्रामसंज्ञिका'—इति मार्कण्डेयपुराणे। 'अन्नमेषां पराधीनं देयं स्याद्भिन्नभाजने। रात्रौ न विचरेयुस्ते ग्रामेषु

नगरेषु च'—इति मनुः(१०।५४)। शब्दादिपूर्वकश्चेत् समूहार्थः(८११), यथा–शब्दग्रामः, भूतग्रामः, गुणग्रामः इत्यादि। 'बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वांसमपि कर्षति'—इति मनुः (२।२१५)। शिवः; 'गोपालिर्गोपतिर्ग्रामो गोचर्मवसनो हरिः'–इति महाभारते(१३।१७।११३)। स्वरभेदः; 'षड्जमध्यमगान्धारास्त्रयो ग्रामा मता इह। षड्जग्रामो भवेदत्र मध्यमग्राम एव च। सुरलोके च गान्धारो ग्रामः प्रचरति स्वयम्।' २५८

ग्रामणीः त्रि. [ग्रामं संवसथं तत्रत्यान् जनान् नयति दोषगुणविचारादिभिः परिचालयति प्रेरयति वा क्विप्] प्रधानम्; अधिपतिः; 'दानामोदविनोदलुब्धमधुपप्रोत्सारणाविर्भवत्, कर्णान्दोलनखेलनो विजयते देवो गणग्रामणीः'—इति महागणपतिस्तोत्रे (८)। 'दक्षिणावान् प्रथमो हूत एति दक्षिणावान् ग्रामणीरग्रमेति'—इति ऋग्वेदे(१०।१०७।५)। [ग्रामेण ग्राम्येण भोग्यद्रव्येण आयुर्नयति क्षपयतीति। ग्रामान् भोग्यवस्तूनि नयति आत्मानं प्रापयतीति वा] भोगिकः। ६९०

ग्रामाधानम् क्ली. [आधीयते उपजीविका यत्र तत्। आ+धा+ल्युट्। ग्रामस्य मृगयुसमूहस्य आधानं पोषणकम्] मृगया। २५८।

ग्रामान्तिकम् क्ली. [ग्रामस्य अन्तिकं समीपम्] ग्रामसमीपम्; उपशल्यं; ग्रामान्तम्। २५९

ग्रामीणः त्रि. [ग्रामे भवः, 'ग्रामाद्यखञौ' इति खञ्] ग्रामोत्पन्नः; 'ग्रामीणस्य प्रथमतः पश्यतो गवयादिकम्। सादृश्यधीर्गवादीनां या स्यात् सा करणं मतम्'—इति भाषापरिच्छेदे (७९)। पुं. ग्राम्यशूकरः; कुक्कुरः; काकः। २५८

ग्रामेयकः त्रि. [ग्रामे भव, ग्राम+'कत्र्यादिभ्यो ढकञ्' इति ढकञ्] ग्राम्यः। २५८

ग्राम्यम् त्रि. [ग्रामे भवम्, हालिकशाकटिकप्रधानत्वात्] भण्डादिवचनम्; अश्लीलम्; [ग्रामे भवः, 'ग्रामाद् यखञौ' इति य] ग्रामोत्पन्नः; ग्रामेयकः; ग्रामीणः (२५८); 'श्वशृगालस्वरैर्दंष्टो ग्राम्यैः क्रव्याद्भिरेव च'—इति मनुः (११।१९९)। 'ग्राम्यानपश्यत् कपिशपिपासतः'—इति माघे (१२।३)। मूढः; प्राकृतः। 'ग्राम्यभावमपहातुमिच्छवो योगमार्गपतितेन चेतसा'—इति माघे (१२।३८)। काव्यस्य दोषविशेषः, स च शब्दगतः अर्थगतश्च। तत्र शब्दगतो यथा—'दुःश्रवत्रिविधाश्लीलानुचितार्थाप्रयुक्तताः'। ग्राम्याप्रतीतसन्दिग्धनेयार्थनिहतार्थता;—इति साहित्यदर्पणे (७।३)। अस्य उदाहरणं तत्रैव; 'कटिस्ते हरते मनः' अत्र कटिशब्दो ग्राम्यः। अर्थगतो यथा—'अपुष्टदुष्क्रमग्राम्यव्याहताश्लीलकष्टताः'–इति साहित्यदर्पणे(७।५)। उदाहरणं तत्रैव—'स्वपिहि त्वं समीपे मे स्वपिम्येवाधुना प्रिय' अत्रार्थो ग्राम्यः। १४२

ग्राम्यधर्मः पुं. [ग्राम्यस्य इतरादेर्धर्म्मः] मैथुनम्; 'प्रमत्तो ग्राम्यधर्मेषु मन्दात्मा पापनिश्चयः। मम पुत्रः सुदुर्बुद्धिः पृथिवीं घातयिष्यति'—इति महाभारते (३।४९।४)। ८३८

ग्रावा [न्-] पुं. [ग्रसते इति ग्रः, ग्रस्+अन्येभ्योऽपीति डः। आवनति शब्दायते इति, आ+वन् शब्दे+वनिप्। ततो ग्रश्चासौ आवा चेति] प्रस्तरः; 'सर्वं एर्वात्विजो दृष्ट्वा सदस्याः सदिवौकसः। तैरर्द्यमानाः सुभृशं ग्रावभिर्नैकधाद्रवन्'—इति भागवते(४।५।१८)। पर्वतः (८०६); 'पृथ्वी तावत् त्रिकोणा विपिननदनदीग्रावरुद्धं तदर्द्धम्'—इत्युद्भटः। मेघः; दृढे त्रि.। १६८

ग्राहः पुं. [गृह्णातीति, ग्रह+'विभाषा ग्रहः' इति व्यवस्थितविभाषया ण, घञ् वा भावे] जलजन्तुविशेषः; जलहस्ती; अवहारः; 'भीषणैर्विकृतैरन्यैर्घोरैर्जलचरैस्तथा। उग्रैर्नित्यमनाधृष्यं कूर्मग्राहसमाकुलम्'—इति महाभारते (१।२१।५)। ग्रहणं; शिशुकः; आग्रहः; 'मूढग्राहेणात्मनो यत् पीडया क्रियते तपः—' इति भगवद्गीता (१७।१९)। 'मूढग्राहेणाविवेककृतेन दुराग्रहेण'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। ६५६

ग्रीवा स्त्री. [गीर्यतेऽनया, गॄ निगरणे+'शेवयह्वजिह्वाग्रीवा' इति वन्प्रत्ययेन निपातनात् साधुः] गलघाटादिसमुदिता; शिरोधिः; कन्धरा; कन्धिः; शिरोधरी; कन्धराशिरा। ५१६

ग्रीवालङ्करणम् क्ली. [ग्रीवाया अलङ्करणम्] कण्ठभूषा; ग्रैवेयकं; ग्रैवेयं; कण्ठभूषणम्। ५५८।

ग्रीष्मः पुं. [ग्रसते रसान् इति। ग्रसु अदने+'ग्रीष्मः' इति मक्, ग्रीभावः षुगागमश्च निपात्यते] ऋतु-

विशेषः; ज्येष्ठाषाढौ; उष्णकः; निदाघः; उष्णोपगमः; उष्णः; उष्मागमः; तपः; घर्मः; तापनः; उष्णागमः; उष्णकालः; 'ग्रीष्मे पञ्चतपास्तु स्याद्वर्षास्वभ्रावकाशिकः'—इति मनुः (६।२३)। 'ग्रीष्मोद्भवो भोगभवानुरक्तो वक्ता सुशीलो जलकेलिशीलः। विद्याधनैश्वर्ययशोमनोज्ञो धन्वी सुवेशः परदारचित्तः'—इति कोष्ठीप्रदीपे। ११६

ग्रैवेयकम् क्ली. [ग्रीवायां भवम्, 'कुलकुक्षिग्रीवाभ्यः श्वास्यलङ्कारेषु'—इति ढकञ्] कण्ठभूषा; ग्रैवेयं; कण्ठभूषणम्; 'नूपुरौ विमलौ तद्वद् ग्रैवेयकमनुत्तमम्'—इति मार्कण्डेयपुराणे (८२।२५)। ५५८

ग्लहः पुं. [ग्लह्, ग्रह् वा+'अक्षेषु ग्लहः' अक्षशब्देन देवनं लक्ष्यते, तत्र यत् पणरूपेण ग्राह्यं तत्र ग्लह इति निपात्यते] अक्षक्रीडासु पणः; 'दाँव' इति भाषा। 'पाञ्चालस्य द्रुपदस्यात्मजामिमां सभामध्ये यो व्यदेवीद् ग्लहेषु'—इति महाभारते (२।६७।६)। ७५९

ग्लानिः स्त्री. [ग्लायति अनेनास्मिन् वा। ग्लै+ 'वहिश्रिश्रुयुद्रुग्लाहात्वरिभ्यो नित्' इति नि] बलहीनता; 'यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत!' -इति भगवद्गीतायाम् (४।७)। रोगः; 'देहवैवर्ण्यदौर्गन्ध्यस्वेदक्लमग्लानिरिति वयोऽवस्थाश्च भवन्ति'—इति भागवते (५।२४।१३)। ६०१

घ

घटः पुं. [घटते मृदादिसंघातैः जलादिग्रहणाय। घट्+ पचाद्यच्] कलसः; 'यस्तु रज्जुं घटं कूपाद्धरेद्भिन्द्याच्च यः प्रपाम्। स दण्डं प्राप्नुयान्माषं तच्च तस्मिन् समाहरेत्'—इति मनुः (८।३१९)। समाधिभेदः (घटस्थवारिवत् निश्चलत्वात्तथात्वम्); कुम्भकम्; इभशिरः (आकृतिसादृश्यात्तथात्वम्); कूटकुटः; कुम्भराशिः; 'सिंहे वा यदि गोघटे गतनरः सर्वार्थसिद्धिं लभेत्'—इति समयप्रदीपः। द्रोणपरिमाणम्; 'चतुर्भिराढकैर्द्रोणः कलशोनल्वणोर्मलः। उन्मानश्च घटो राशिर्द्रोणपर्यायसंज्ञितः' —इति शार्ङ्गधरे पूर्वखण्डे प्रथमेऽध्याये। 'कंसश्चतुर्गुणो द्रोणः अर्मणोनल्वणं च तत्। स एव कलशः ख्यातो घट उन्मानमेवच'—इति चरके। योगावस्थाभेदः; 'आरम्भश्च घटश्चैव तथा परिचयोऽपि च। निष्पत्तिः सर्वयोगेषु स्यादवस्थाचतुष्टयम्'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् (४।६९)। ३१६

घटना स्त्री. [घट्+णिच्+युच् टाप् च] संघातीकरणं; समूहीकरणम्; 'करिणां घटना घटा'—इत्यमरः। योजना; मेलनम्; 'अघटनघटनापटीयसी माया'—इति मायालक्षणम्। 'शक्तिः काप्यपरीक्षितास्ति महतां स्वैरं दविष्ठान्यहो, यन्माहात्म्यवशेन यान्ति घटनां कार्याणि नियन्त्रणम्'—इति राजतरङ्गिण्याम्। २२१

घटयोनिः पुं. [घटः कुम्भः योनिः कारणम् उत्पत्तिस्थानं यस्य] अगस्त्यमुनिः; कुम्भसम्भवः; लोपामुद्रापतिः। ४१३

घटा स्त्री. [घट्+भावे षित्वादङ ततष्टाप्] करिणां घटना; हस्तिनां युद्धादावेकत्र संघातीकरणम्; 'तुरुष्कतुरगव्राताः क्षुब्धस्याब्धेरिवोर्मयः। तद्गजेन्द्रघटा वेलावनेषु दलशो ययुः'—इति कथासरित्सागरे (१९।१०९)। घटनं; (७९८) गोष्ठी; सभा; समूहः; 'यदगारघटाट्टकुट्टिमस्रवदिन्दूपलतुन्दिलापयाः'—इति श्रीहर्षः। २२१

घटीयन्त्रम् क्ली. [घटीनां यन्त्रम्] कूपाज्जलोत्तोलनार्थं रज्जुसहितघटः; जलोत्तोलनार्था चक्रारूढा घटीमाला; उद्घाटनम्, उद्घाटकः; 'तान्येव तत्र चक्राणि घटीयन्त्राणि चान्यतः'—इति मार्कण्डेयपुराणे (१२। २०)। [घटी क्षुद्रघटस्तदधस्तनार्द्धाकारं यन्त्रम्। यद्वा घटयाः दण्डरूपकालस्य ज्ञापकं यन्त्रम् कालपरिमाणज्ञापको यन्त्रविशेषः; 'घड़ी'—इति भाषा। ६८५

घण्टिका स्त्री. [घण्टा+अल्पार्थे कन् ततष्टापि अत इत्वं, घण्टिका क्षुद्रघण्टा तद्वत् आकृतिरस्त्यस्याः। अर्श आदित्वादच्] क्षुद्रघण्टा; लम्बिका; तालूर्ध्वसूक्ष्मजिह्वा; गलरोगविशेषः; 'तिलपिच्छिलगौल्यादिसेवनातिद्रवादपि। नवोदकेन कफजो जायते घण्टिकागदः' —इति हारीते। ५६०

घनः पुं. [घनति दीप्यते इति। घन् दीप्तौ+अच्] मेघः; 'ततः स्नेहाद्धरिहयं दृष्ट्वा रङ्गावलोकनम्। भास्करोऽप्यनयन्नाशं समीपोपगतान् घनान्'—इति महाभारते (१।१३७।२४)। शरीरम् (५१०); ओघः (६८६); दार्ढ्यं; विस्तारः; [हन्यते वध्यतेऽनेन। हन्+'मूर्तौ घनः'—इति अप् घनादेशश्च]

लोहमुद्गरः; 'धनुरपास्य सबाणधि शङ्करः प्रतिजघान घनैरिव मुष्टिभिः'—इति भारविः (१८।१)। कफः; अभ्रकं; सजातीयाङ्कत्रयस्य पूरणम्; 'समत्रिघातश्च घनः प्रदिष्टः स्थाप्यो घनोऽन्यस्य ततोऽन्त्यवर्गः। आदित्रिनिघ्नस्तत आदिवर्गस्त्र्यन्त्याहतोऽथादिघनश्च सर्वे'—इति लीलावती। वेदपाठविशेषः; 'जटामुक्तां विपर्यस्य घनमाहुर्मनीषिणः।' ५८

घनः त्रि. [हन्यते इति, हन्+अप् घनादेशश्च] निविडः; निरन्तरः; सान्द्रः; 'स तथेति विनेतुरुदारमतेः प्रतिगृह्य वचो विससर्ज मुनिम्। तदलब्धपदं हृदि शोकघने प्रतियातमिवान्तिकमस्य गुरोः'—इति रघुवंशे (८।९१)। दृढः; 'यच्चकार विवरं शिलाघने ताडकोरसि स रामसायकः'—इति रघुवंशे (११।१८)। पूर्णः 'किंस्विदापूर्यते व्योम जलधाराघनैर्घनैः'—इति महाभारते (१।१३६।२८)। सम्पुटः; निरवकाशः;' किं गाण्डीवस्फुरदुरुघनास्फालनक्रूरपाणिर्नासौ लीलानटनविलसन् मेखली सव्यसाची'—इति पञ्चतन्त्रे (३।२३६)। क्ली. [हन्यते ताड्यते यत् इति। हन्+'मूर्तौ घनः' इति अप् घनादेशश्च] कांस्यतालादिकं वाद्यं; कांस्यतालः; 'करताल' इति भाषा। मध्यमनृत्यं; लौहः; त्वचम्। ७१७

घनरसः पुं. [घनः सान्द्रो रसः, घनस्य मेघस्य रसो वा] जलं; कर्पूरं; पीलुपर्णी; सम्यक् सिद्धरसः; सान्द्रनिर्यासः; [घनो रसो यस्य] मोरटः; जले क्लीवलिङ्गोऽपि, यथा—'घनरसमन्धं क्षीरं घृतममृतं जीवनं भुवनम्'—इति रत्नकोषे। ६४८

घनसारः पुं. [घनः शुक्लमेघस्तद्वत् शुभ्रः सारो यस्य] कर्पूरम्; 'पीनस्तनोरुजघना घनसारदिग्धास्ता एवमार्द्रवसनाः सह संविशेयुः'—इति सुश्रुते। 'द्विक्कान्ताघनसारचन्दनरसासाराः श्रयन्तां मनः।' [घनो निविडः सारो यस्य] दक्षिणावर्तपारदः; वृक्षभेदः; [घनस्य मेघस्य सारः] जलम्। ५४५

घनाघनः पुं. [हन्तीति, हन्+पचाद्यच्, 'हन्तेर्घश्च' इति द्वित्वम्, आक् चाभ्यासस्य] इन्द्रः; वर्षुकमेघः; 'अम्भोजानि घनाघनव्यवहितोऽप्युल्लाघयत्यंशुमान् दूरस्थोऽपि पयोधरोऽतिशिशिरस्पर्शं करोत्यातपम्'— इति राजतरङ्गिण्याम् (४।३६५)। घातुकमत्तहस्ती; अन्योन्यघट्टनम्। ८२६

घनोपलः पुं. [घनस्य मेघस्य उपलः] करका; 'ओला' इति भाषा। ५९

घर्मः पुं. [घरति क्षरति स्वेदः अङ्गादनेनेति। घृ क्षरणे+'घर्मः इति करणे मन् प्रत्ययेन निपातनात् साधुः] आतपः; [घरति क्षरति शरीरादिनेति, घृ+ मन्] श्रमवारि; अङ्गजलं; निदाघः; स्वेदः; सिप्रः; स्रवणं; ग्रीष्मः; ऊष्माः; 'सरांसि सरितो वापि वनानि रुचिराणि च। चन्दनानि परार्ध्याणि स्रजः सकमलोत्पलाः। तालवृन्तानिलाहारांस्तथाशीतगृहाणि च। घर्मकले निषेवेत वासांसि सुलघूनि च'—इति सुश्रुते। ४०

घस्मरः त्रि. [घस्+'सृघस्यदः क्मरच्' इति क्मरच्] अद्मरः; भक्षकः; 'गौर्यो बृहत्यो निर्ह्रीका भद्रिकाः कम्बलावृताः। घस्मरा नष्टशौचाश्च प्राय इत्यनुशुश्रुमः'—इति महाभारते (८।४०।३९)। ३५०

घस्रः पुं. [घसति भक्षयति अन्धकारम्। घस्+रक्] दिनम्; 'रात्रिघस्रौ सुप्तिबोधावुन्मीलननिमीलने। तूष्णीम्भावमनोराज्य इव सृष्टिलयाविमौ'—इति पञ्चदश्याम् (६।१८५)। हिंस्रे त्रि.। क्ली. कुङ्कुमम्। १०६

घाटः पुं. [घटते सङ्गच्छते शिरोऽनेन देहे इत्यर्थः। घट्+करणे घञ्] घाटा; [घाटा अस्यास्तीति, 'अर्श आदित्वादच्] घाटाविशिष्टे त्रि.। ५२५

घाटा स्त्री. [घाटा विद्यतेऽस्मिन् इति घाटः; ततः टाप्] ग्रीवापश्चाद्भागः; अवटुः; कृकाटिका; शिरःपश्चात्सन्धिः; घाटः; कृकाटी; घाटिका; 'दोषास्तु दुष्टास्त्रय एवमन्यां सम्पीड्य घाटां सुरुजां सुतीव्राम्'—इति सुश्रुते। ५२५

घातकः त्रि. [हन्तीति, हन् ण्वुल्। णिति तान्तादेशे कुत्वम्] हननकर्ता; 'गौरीमाधवयोर्भर्ता राधिका शिवसन्निधौ। इन्दुः कुमुदहन्ता च सूर्यः कमलघातकः'—इति विदग्धमुखमण्डनम्। 'संस्कर्त्ता चोपहर्त्ता च खादकश्चेति घातकाः'—इति मनुः (५।५१)। ३७२

घातनम् क्ली. [हन्+णिच्+भावे ल्युट्] हननं; वधः; यज्ञार्थं पशुवधः; 'पशुवद्घातनं वा मे दहनं वा कटाग्निना'—इति महाभारते (२।४४।४०)। त्रि. [हन्ति मारयतीति, हन्+स्वार्थणिजन्तात् कर्तरि ल्यु] वधकर्ता। ४७७

घातनस्थानम् क्ली. — वधस्थानम्। ५९५

घातुकः त्रि. [हन्ति इति, हन्+'लषपतपदस्थाभूवृषहनकमगमशॄभ्य उकञ्'—इति उकञ्] हिंस्रः; क्रूरः; 'ततः किशोरा म्रियन्ते वत्सांश्च घातुको वृकः'—इति अथर्ववेदे (१२।४।७)। ३७२

घासः पुं. [अद्यतेऽसौ पशुभिरित्यर्थः। अदो घस्+कर्मणि घञ्] गवाद्यदनीयतृणविशेषः; यवसं; यवसः; जवसः; यवासम्; पञ्चतन्त्रे (४।५३)। १९१

घासिः पुं. [घसति भक्षयति हव्यमिति। घस्+'जनिघसिभ्यामिण्' इति इण्] घासः; अग्निः; 'यच्च पपौ यच्च घासिं जघास सर्वा ता ते अपि देवेष्वस्तु' —इति ऋग्वेदे (१।१६२।१४)। १९१

घुटिकः पुं. [घुट्+ठन्] गुल्फः; घुटिः; घुटः; चरणग्रन्थिः; घुण्टः; घुण्टकः। ५१५

घुटिका स्त्री. [घुटिक+टाप्] गुल्फः; घुटी; चरणग्रन्थिः; घुण्टः; घुण्टकः। ५१५

घुण्टकः पुं [घुण्ट+स्वार्थे कन्] गुल्फः। ५१५

घुसृणम् क्ली. [घष्यते, स्तूयते इति भावः। घुष्+बाहुलकाद् ऋणक्। पृषोदरादित्वात् साधुः। यद्वा घुंष्यते कान्तिविशिष्टं क्रियते शरीरमनेन। घुषि अलङ्करणे+ऋणक्]कुङ्कुमम्; 'घुसृणापिञ्जरतनुर्घर्घराघर्घरस्वना' —इति काशीखण्डे (२९।५७)। 'चन्दनं घुसृणोपेतं मृगनाभिसमायुतम्। न चोष्णं न च वा शीतं वर्षाकाले तदिष्यते'—इति भावप्रकाशे। ६१९

घृणा स्त्री. [घ्रियते सिच्यते हृदयमनया। घृ सेके+बाहुलकाद् नक्, स्त्रियां टाप्। दयारसेन हि हृदयं सिक्तमिवार्द्रं भवतीति तथात्वम्] करुणा; 'मन्दमस्यन्निषुलतां घृणया मुनिरेष वः। प्रणुदत्यागतावज्ञं जघनेषु पशूनिव'—इति किरातार्जुनीये (१५।१३)। [घ्रियते आच्छाद्यते गुणादिकमनयेति] (८००) जुगुप्सा; अर्तनम्; ऋतीया; ह्री; हृणीया; रीज्या; हृणिया; ह्लिणीया, ह्णीया; 'तां विलोक्य वनितावधे घृणां पत्रिणा सह मुमोच राघवः'—रघुवंशे (११।१७)। ७२४

घृणिः पु. [जघर्ति दीप्यते इति। घृ+'घृणिपृश्निपार्ष्णिचूर्णिभूर्णि' इति निप्रत्ययेन निपातनात् साधुः] किरणः; सूर्यः; [घरति सिञ्चति, घृ सेके+नि, गुणाभावश्च] जलम्; [जघर्ति दीप्यते] दीप्तिशालिनि त्रि.। 'तस्य त्यक्तस्वभावस्य घृणेर्मायावनौकसः'—इति भागवते (७।२।७)। ३८

घृतः पुं.– क्ली. [जघर्ति क्षरतीति, घृ+'अञ्जिघृसिभ्यः क्तः' इति क्त] पक्वनवनीतम्; आज्यं; हविः; सर्पिः; पवित्रं; नवनीतकम्; अमृतम्; अभिघारः; होम्यम्; आयुः; तैजसम्; आजम्। 'घृतोऽस्त्री चाजमाज्यं च सर्पिः स्यादमृतं हविः'—इति जटाधरः। 'स्मृतिबुद्ध्यग्निशुक्रौजःकफमेदोविवर्द्धनम्। वातपित्तविषोन्मादशोषालक्ष्मीज्वरापहम्। सर्वस्नेहोत्तमं शीतं मधुरं रसपाकयोः। सहस्रवीर्यं विधिभिर्घृतं कर्मसहस्रकृत्। मदापस्मारमूर्च्छायिशोफोन्मादगरज्वरान्। योनिकर्णशिरःशूलं घृतं जीर्णमपोहति'—इति चरके। 'पुराणं तिमिरश्वासपीनसज्वरकासनुत्। मूर्च्छाकुष्ठविषोन्मादग्रहापस्मारनाशनम्। एकादशशतं चैव वत्सरानुषितं घृतम्। रक्षोघ्नं कुम्भसर्पिः स्यात्परतस्तु महाघृतम्। पेयं महाघृतं भूतैः कफघ्नं पवनाधिकैः। बल्यं पवित्रं मेध्यं च विशेषात्तिमिरापहम्। सर्वभूतहरं चैव घृतमेतत् प्रशस्यते'—इति सुश्रुते। क्ली. सलिलं; जलं; त्रि. [जघर्ति दीप्यते, घरति सिञ्चतीति वा] दीप्तः; सेचकः। २७५

घृताची स्त्री. [घृतेन अमृतेन अञ्चति तृप्तिं गच्छतीति। घृत+अञ्च+क्विप्, नलोपे स्त्रियां ङीप्। सर्वथा मनुष्याहारवर्जितानां देवजातीनां ह्यमृतमयघृतभोजनं महाभारतपुराणादिप्रसिद्धम्] अप्सरोविशेषः; 'घृताचीप्रमुखा ब्रह्मन् ननृतुश्चाप्सरोगणाः'—इति विष्णुपुराणे। गायत्रीस्वरूपा महादेवी; 'घनारिमण्डला घूर्णा घृताची घनवेगिनी'—इति देवीभागवते (१२।६।४६)। ८८।

घृष्टिः पुं. [घर्षतीति, घृष्+कर्तरि क्तिच्] शूकरः; स्त्री. [घृष्यतेऽसौ, घृष्+कर्मणि क्तिच्] वाराही (कन्दः); [घृष्+भावे क्तिन्] घर्षणं; स्पर्द्धा; अपराजिता। २२६

घोटकः पुं.– स्त्री. [घोटते, गत्वा प्रत्यागच्छतीति। घुट् परिवर्तने, ण्वुल्] पशुविशेषः; पीतिः; तुरगः; तुरङ्गः; अश्वः; तुरङ्गमः; वाजी; वाहः; अर्वा; गन्धर्वः; हयः; सैन्धवः; सप्तिः; घोटः; पीती; पीथिः; तार्क्ष्यः; हरि.; वीतीः; मुद्गभोजी; वाराट;

जवनः; जितवः; जवी; वाहनश्रेष्ठः; श्रीभ्राता; अमृतसोदरः; मुद्गभुक्; शालिहोत्रः; लक्ष्मीपुत्रः; प्रकीर्णकः; वातायनः; श्रीपुत्रः; चामरीः; हेषी; शालिहोत्री; मरुद्रथः; वाजस्कन्धः; हरिद्राक्तः; एकशफः; किन्धी; ललामं; विमानकः; अत्यः; वह्निः; दधिक्रा; दधिक्रावा; एतग्वः; एतशः; पैद्वः; दौर्गहः; उच्चैःश्रवसः; आशुः; व्रध्नः; अरुषः; मांश्चत्वः; अव्ययः; श्येनासः; सुपर्णाः; पतङ्गाः; नरः; ह्वार्याणाम्; हंसास्यः; 'घोड़ा' इति भाषा। ४३६।

घोणा स्त्री. [घोणते गृह्णाति वस्तुगन्धम्। घुण्+अच् टाप् च। घोणतेऽनया इति करणे घञ् वा] अश्वनासिका; प्रोथः; 'नासाच्छिद्राक्षिमध्ये तु घोणाख्यः समुदाहृतः। घोणापार्श्वगतौ गण्डौ क्षीरिके च ततः परम्'—इति अश्ववैद्यके (२।७)। नासा (५२१); दीर्घघोणं महोरस्कं विकटोद्बद्धपिण्डिकम्'—इति महाभारते (१।१५६।३३)। ४४१

घोरम् त्रि. [घोरयति भयानकरसनिमित्तीभवतीति। घुर्+अच्। यद्वा हन्ति विनाशयति रुद्ररूपेण इति। 'हन्तेरच् घुरच्' इति अच् धातोर्घुरादेशश्च] भयानकम्; 'बहून् बर्षगणान् घोरान्नरकान् प्राप्य तत्क्षयात्। संसारान् प्रतिपद्यन्ते महापातकिनस्त्विमान्'—इति मनुः (१२।५४)। पुं. शिवः; क्ली. [हन्यते वध्यतेऽनेनेति] विषम्। ७०५

घोषः पुं. [घोषन्ति शब्दायन्ते गावो यस्मिन्। घुषिर् विशब्दने+'हलश्च' इति घञ्] ध्वनिः; [घुष्+भावे घञ्] 'तत्र भुक्त्वा पुनः किञ्चित् तूर्यघोषैः प्रहर्षितः। संविशेत्तु यथाकालमुत्तिष्ठेच्च गतक्लमः'—इति मनुः (७।२२५)। आभीरपल्ली (२६१); 'हैयङ्गवीनमादाय घोषवृद्धानुपस्थितान्। नामधेयानि पृच्छन्तौ वन्यानां मार्गशाखिनाम्।' [घोषिति शब्दायते इति, घुष्+कर्तरि अच्] गोपालः; घोषकलता; मेघशब्दः; मशकः; वर्णोच्चारणबाह्यप्रयत्नविशेषः; 'संवृतं मात्रिकं ज्ञेयं विवृतं तु द्विमात्रिकम्। घोषा वा संवृताः सर्वे अघोषा विवृताः स्मृताः'—इति शिक्षायाम्। कायस्थादीनां पद्धतिविशेषः; 'वसुवंशे च मुख्यौ द्वौ नाम्ना लक्षणपूषणौ। घोषेषु च समाख्यातश्चतुर्भुजमहाकृती' —इति कुलदीपिका। क्ली. [घोषति शब्दायते इति, घुष्+अच्] कांस्यम्। १३८

घोषवती स्त्री. [घोषो विद्यतेऽस्याः। घोष+मतुप्, मस्य वः। स्त्रियां ङीप्] वीणा; 'स बभूव शनै राजा सुखेष्वेकान्ततत्परः। सदा सिषेवे मृगयां वीणां घोषवतीं च ताम्।' दत्तां वासुकिना पूर्वं नक्तंदिनमवादयत्' —इति कथासरित्सागरे (११।३)। 'अङ्के घोषवती तस्य कण्ठे गीतश्रुतिस्तथा'—इति कथासरित्सागरे (१२।३२)। शब्दविशिष्टे त्रि.। 'त्वं वज्रमतुलं घोरं घोषवांस्त्वं बलाहकः'—इति महाभारते (१।२५।११)। ९६

घ्राणम् क्ली. [जिघ्रत्यनेनेति, घ्रा+करणे ल्युट्। यद्वा घ्रा+क्त, 'नुदविदोन्दत्राघ्रेति' निष्ठातस्य नो वा] नासिका; 'घ्राणकान्तमधुगन्धकर्षिणीः पानभूमिरचनाः प्रियासखः'—इति रघुवंशे (१९।११)। [घ्रा+भावे ल्युट्] आघ्राणम्; 'आलिलिङ्ग मुहुर्घ्राणं मूर्ध्नि तस्य चकार ह'—इति देवीभागवते (१।१४।२४)। घ्राते त्रि.। घ्रातः; शिङ्घितः। ५२१

च

चकितम् त्रि. [चक् भ्रान्तौ+क्त] भीतम्; 'दत्त्वा दिशि दिशि दृष्टिं याचकचकितोऽवगुण्ठनं कृत्वा। चौर इव कुटिलचारी पलायते विकटरथ्याभिः'—इति कलाविलासे (२।८)। क्ली. [भावे क्त] भयम् (३५४); नायिकालङ्कारविशेषः; यथा साहित्यदर्पणे (३।१२१) 'कुतोऽपि दयितस्याग्रे चकितं भयसम्भ्रमः।' 'प्रियाग्रे चकितं भीतेरस्थानेऽपि भयं महत्' —इत्युज्ज्वलनीलमणिः। स्त्री. छन्दोविशेषः; यथा छन्दोमञ्जर्याम्—'भात् समतनगैरष्टच्छेदे स्यादिह चकिता।' ३३४

चकोरः पुं.– स्त्री. [चकते चन्द्रकिरणैः तृप्यतीति। चक् तृप्तौ+'कठिचकिभ्यामोरन्' इति ओरन्] पक्षिविशेषः; चन्द्रिकापायी; कौमुदीजीवनः; चकोरकः; चकोरपक्षी; 'चाटकं शीतलं रुच्यं वृष्यं कापिञ्जलामिषम्। तद्वच्चकोरजं मांसं वृष्यं च बलपुष्टिदम्। वातश्लेष्माधिको ज्ञेयः शीतलः शुक्रवर्द्धनः। अश्मरीं हन्ति विशदो बलकृन्मांसलक्षणः। चकोरः शुकशारी च समदोषा गुणागुणैः। धार्तराष्ट्रचकोराणां दक्षाणां शिखिनामपि। चटकानां च यानि स्युरण्डानि च

हितानि च। रेतःक्षीणेषु कासेषु हृद्रोगेषु क्षतेषु च। मधुराण्यविपाकीनि सद्यो बलकराणि च'–इति हारीते। २५४

चक्रः पुं. [करोति अस्फुटशब्दम्। कृ+बाहुलकात् क, ततो निपातनाद् द्वित्वे साधुः] चक्रवाकपक्षी; क्ली. [क्रियतेऽनेनेति, कृ+घञर्थे क, कृञादीनामिति द्वित्वञ्च] रथाङ्गम् (४४७); 'पहिया' इति भाषा। 'यथाह्येकेन चक्रेण न रथस्य गतिर्भवेत्। तथा पुरुषकारेण विना दैवं न सिध्यति'—इति याज्ञवल्क्ये (१।३५१)। सैन्यम् (४५७); अस्त्रविशेषः (४७६); 'आधोरणानां गजसन्निपाते शिरांसि चक्रैर्निशितैः क्षुराग्रैः'—इति रघुवंशे (७।४६)। (६७१) जलावर्तः; पुटभेदः; समूहः; (६८७); व्रजः; राष्ट्रं; दम्भविशेषः; कुम्भकारोपकरणम्; 'मृद्दण्डचक्रसंयोगात् कुम्भकारो यथा घटम्। करोति तृणमृत्काष्ठैर्गृहं वा गृहकारकः'—इति याज्ञवल्क्यः (३।१४६)। भगवतः सुदर्शनचक्रम्; 'ततो भगवता तस्य शिरश्छिन्नमलङ्कृतम्। चक्रायुधेन चक्रेण पिबतोऽमृतमोजसा'—इति महाभारते (१।१९।६)। २४४

चक्रधारा स्त्री.— प्रधिः; नेमिः; 'पहिया का किनारा' इति भाषा। ४४७

चक्रमर्दकः पुं. [चक्रं दद्रुरोगविशेषं मृद्नातीति। मृद्+ण्वुल्] चक्रमर्दः; क्षुपविशेषः; एडगजः; अडगजः; गजाख्यः; मेषाह्वयः; एडहस्ती; व्यावर्तकः; चक्रगजः; चक्री; पुन्नाटः; पुन्नाडः; विमर्दकः; दद्रुघ्नः; तर्वटः; चक्राह्वः; शुकनाशनः; दृढबीजः; प्रपुन्नाडः; खर्जघ्नः; पद्माटः; उरणाख्यः; प्रपुन्नडः; प्रपनाडः; उरणाक्षः। [स्त्रियां तु कपि अत इत्वं च] राजमातृविशेषः; 'ललितादित्यभूर्भर्तुर्वल्लभा चक्रमर्दिका।' ६१९

चक्रवर्ती [न्] पुं. [चक्रं पद्माकारशुभचिह्नं करे वर्तते यस्य। वृत्+णिनि। यद्वा चक्रं पृथ्वीचक्रं तेन वर्तते इति। वृत्+णिनि] समुद्रपरिवृतायाः सर्वभूमेरीश्वरः; सार्वभौमः; 'जन्म यस्य पुरोर्वंशे युक्तरूपमिदं तव। पुत्रमेवं गुणोपेतं चक्रवर्तिनमाप्नुहि'—इति शाकुन्तले १ अङ्के। वास्तूकं; श्रेष्ठः; 'वाग्देवताचरितचित्रितचित्तसद्मा पद्मावतीचरणचारणचक्रवर्ती'—इति गीतगोविन्दे। 'चारणचक्रवर्ती नर्तकश्रेष्ठः'–इति तट्टीकायां चैतन्यदासः। यद्वा 'पद्मावती महालक्ष्मीः राधा तस्याश्चरणचारणे परिचर्यायां यच्चक्रं मण्डलं तत्र वर्तते' इति व्युत्पत्त्या वैष्णवसम्प्रदायिविशेषः। ४२२

चक्रवाकः पुं.– स्त्री. [चक्रइत्याख्यया उच्यतेऽसौ। वच्+कर्मणि घञ्, ततो 'न्यङ्क्वादीनाञ्च' इति कुत्वम्] पक्षिविशेषः; कोकः; चक्रः; रथाङ्गाह्वयनामकः; भूरिप्रेमा; द्वन्द्वचारी; सहायः; कान्तः; कामी; रात्रिविश्लेषगामी; रामावक्षोजोपमः; कामुकः। 'चक्रवाकास्तथान्ये च खगाः सन्त्यम्बुचारिणः'–इति चरकः। २४४

चक्रवालम् क्ली. [चक्रमिव वाडते वेष्टयतीति। वाड्+अच्, डस्य लत्वम्] मण्डलाकारेण परिणतं समूहमात्रं; मण्डलाकारो दिक्समूहः; मण्डलम्; 'हित्वा गृहं संसृतिचक्रवालं नृसिंहपादं भजतां कुतोऽभयम्'—इति भागवते (५।१८।१४)। पुं. [चक्रेण चक्राकारेण वलते लोकालोकौ परिवेष्ट्य विराजते इत्यर्थः। वल+बाहुलकात् ण। अस्य पर्वतस्य लोकालोकपरिवेष्टनकारितया विराजमानत्वात्तथात्वम्] लोकालोकपर्वतः; मनुष्यादीनां मण्डलाकारेण स्थितिः; 'एवं स कृष्णो गोपीनां चक्रवालैरलङ्कृतः। शारदीषु सचन्द्रासु निशासु मुमुदे सुखी'—इति हरिवंशे (७६।३५)। ६८७

चक्राङ्गः पुं.– स्त्री. [चक्रेण चक्राकारेण अङ्गति गच्छतीति। अङ्ग+अच्] हंसः; 'इदमूचुः स्म चक्राङ्गा वचः काकं विहङ्गमाः'—इति महाभारते (८।४१।२१)। रथः [चक्रमङ्गमस्येति]; चक्रवाकः; 'कलविङ्कं प्लवं हंसं चक्राङ्गं ग्राम्यकुक्कुटम्'—इति मनुः (५।१२)। २५१

चक्री [न्] पुं. [चक्रं फणा अस्त्यस्य इति] सर्पः; सूचकः; अजः; तैलिकभेदः; चक्रवर्ती; चक्रमर्दः; तिनिशः; व्यालनखः; काकः; खरः; [चक्रं घटादिनिर्माणकरणयन्त्रविशेषः, सोऽस्त्यस्य इति] कुलालः; 'स्नेहमयान् पीडयतः किं चक्रेणापि तैलकारस्य। चालयति पार्थिवानपि यः स कुलालः परं चक्री'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५९२)। [चक्रं सुदर्शनास्त्रं मनस्तत्त्वात्मकमिति यावत्, अस्यास्तीति। चक्र+इनि] विष्णुः; 'अरौद्रः कुण्डली चक्री विक्रम्यूर्जितशासनः'—इति महाभारते (१३।१४९।११०)। [चक्रं ग्रामसमूहः अधिकारितयास्त्यस्य इति। इनि] ग्रामजालिकः; [चक्रं चक्राकारचिह्नविशेषोऽस्त्यस्य] चक्रवाकः; चक्रविशिष्टे

त्रि.। चक्रयुक्तरथादियानारूढः; 'चक्रिणो दशमीस्थस्य रोगिणो भारिणः स्त्रियाः'—इति मनुः (२।१३८)। 'चक्रिणः चक्रयुक्तरथादियानारूढस्य'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। ६४०

चक्रीवान् [त्] पुं.- स्त्री. ['आसन्दीवदष्ठीवच्चक्रीवदिति' चक्रशब्दस्य चक्रीभावः, ततो निपातनात् साधुः] गर्दभः; माघे (५।८)। राजविशेषः। २८०

चक्षणम् क्ली. [चक्ष्यते कथ्यते मद्यपानाय मद्यपानेन सह वा। चक्ष्+ल्युट्। यद्वा चष्यते भक्ष्यते मद्यमनेनेति, चष्+ल्युट्, निपातनात् कान्तागमश्च] मद्यपानरोचकभक्ष्यद्रव्यम्; [चक्ष्+भावे ल्युट्] कथनं; दर्शनम्; 'स्तृणीत वर्हिरानुषग्घृतपृष्ठं मनीषिणः। यत्रामृतस्य चक्षणम्'—इति ऋग्वेदे (१।१३।५)। ३२८

चक्षाः [स्] क्ली.—दर्शनम्; 'इन्द्रो दीर्घाय चक्षस आ सूर्यं रोहयद्दिवि। वि गोभिरद्रिमैरयत्'—इति ऋग्वेदे (१।७।३) पुं. बृहस्पतिः; उपाध्यायः। ८१०

चक्षुः [स्] क्ली. [चष्टे पश्यत्यनेनेति। चक्ष्+'चक्षेः शिच्च' इति उसि, शित्वेनानार्धधातुकत्वात् ख्याञादेशाभावः] दर्शनेन्द्रियम्; लोचनं; नयनं; नेत्रम्; ईक्षणम्; अक्षि; दृक्; दृष्टिः; अम्बकं; दर्शनं; तपनं; विलोचनं; दृशा; वीक्षणं; प्रेक्षणं; दैवदीपः; देवदीपः; दृशिः; दृशी। 'पाणिभ्यां न स्पृशेच्चक्षुश्चक्षुषी नैकपाणिना। चक्षुः परहिताकाङ्क्षी न स्पृशेदेकपाणिना'—इति कर्मलोचने। ज्योतिः (८ १०); मेषशृङ्गीवृक्षः। ५१९

चक्षुष्यः त्रि. [चक्षुषे हितः। चक्षुष्+यत्] प्रियदर्शनः; 'धिया भाग्यानुगामिन्या चेष्टमानो न याचितम्। अभूत् सर्वस्य चक्षुष्यः स तु दुर्लभवर्द्धनः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (३।४९५)। चक्षुजः; 'चक्षुष्यः खलु महताम्परैरलङ्घ्यः'—इति माघे (८।५७)। 'चक्षुषि भवश्चक्षुष्यः प्रियोऽक्षिजश्च'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। चक्षुर्हितः; 'दक्षिणो मारुतः श्रेष्ठश्चक्षुष्यो बलवर्धनः'—इति सुश्रुते। क्ली. [चक्षुषे लोचनाय हितं, चक्षुस्+'शरीरावयवाद् यत्' इति यत्] प्रपौण्डरीकम्; 'प्रपौण्डरीकं चक्षुष्यं शीतं श्रुपुष्पपुण्डरी'—इति वैद्यकरत्नमाला। सौवीराञ्जनं; खर्परीतुत्थम्; पुं. केतकवृक्षः; पुण्डरीकवृक्षः; शोभाञ्जनवृक्षः; रसाञ्जनम्। ३६७

चञ्चरीकः पुं. [चरति पुनः पुनरिति। 'पर्फरीकादयश्च' इति यङ्लुगन्तेन साधुः] भ्रमरः; द्विरेफः; अलिः। २५५

चञ्चलम् त्रि. [चञ्चं गतिं लातीति। ला+क] अस्थिरं; चलनं; कम्पनं; कम्प्रं; चलं; लोलं; चलाचलं; तरलं; पारिप्लवं; परिप्लवं; चपलं; चटुलम्। 'एवं वत्सान् पालयन्तौ शोभमानौ महावनम्। चूर्णयन्तौ रमन्तौ स्म किशोराविव चञ्चलौ'—इति हरिवंशे (६४।७)। पुं. वायुः। ६९५

चञ्चुः स्त्री. [चञ्चति प्राप्नोति गृह्णाति भक्ष्यमनया। बाहुलकादु] पक्षिणामोष्ठः; त्रोटिः; चञ्चूः; त्रोटी; चञ्चुका; सूपाटिका; 'चोंच', इति भाषा। 'भ्रातश्चातक! पातकं किमपि ते सम्यङ्न जानीमहे। यत्तेऽस्मिन्न पतन्ति चञ्चुपुटके द्वित्राः पयोबिन्दवः'—इति चातकाष्टके। पत्रशाकविशेषः; विजला; चञ्चूः; कलभीः; चीरपत्रिका; चञ्चुरः; चञ्चुपत्रः; सुशाकः; क्षेत्रसम्भवः; 'चिञ्चश्चञ्चुश्चिञ्चुकी च दीर्घपत्रा स तिक्तिका। चञ्चुः शीता सरा रुच्या स्वाद्वी दोषत्रयापहा'—इति भावप्रकाशः। २४०

चञ्चूः स्त्री. [चञ्चुः 'ऊङुतः' इत्यस्य 'अप्राणि जातेश्चारज्ज्वादीनामुपसंख्यानम्' इति वार्तिकोक्तत्वा ऊङ्] चञ्चुः; चञ्चुका; त्रोटिः; पक्षिणामोष्ठः। २४०

चटकः पुं. [चटति भिनत्ति धान्यादिकं चञ्चुपुटेनेति। चट्भेदे+'नन्दि ग्रहीति' पचादित्वादच्, ततः स्वार्थे कन्] पक्षिविशेषः; कलविङ्कः; चित्रपृष्ठः; गृहनीडः; वृषायणः; कामुकः; नीलकण्ठकः; कालकण्ठकः; कामचारी; कलाविकलः। 'चटकाः श्लेष्मलाः स्निग्धा वातघ्नाः शुक्रलाः परम्। गुरूष्णस्निग्धमधुरा वर्गाश्चातो यथोत्तरम्'—इति वाग्भटे। 'चटका मधुराः स्निग्धा बलशुक्रविवर्धनाः। सन्निपातप्रशमनाः शमना मारुतस्य च'—इति चरकः। 'गौरैया' इति भाषा २४३

चटका स्त्री. [चटक+टाप्] चटकपत्नी; [चटकस्य चटकाया वा स्त्र्यपत्यम्। स्त्रियामपत्ये लुग्वक्तव्यः। तत्र टाबन्तात् तद्धिते लुप्ते 'लुक् तद्धितलुकि' इति टापो लुकि पुनष्टाप् स च जाति लक्षणङीपो बाधकः] चटकस्त्र्यपत्यं; पिप्पलीमूलं; श्यामापक्षी। २५३

चटिका स्त्री. [चटति भिनत्ति धान्यादिकं स्वचञ्चु-

पुटनेति] चटका; [चटति भिनत्ति रोगादिकं नाशयति, चट्+बाहुलकाद् इकन्] पिप्पलीमूलम्। २५३

चटुः पुं. [चटति शोकसन्तापादिकं भिनत्तीति। चट् भेदे+मृगय्वादयश्च' इति कु] प्रियवाक्यं, प्रियभाषणे क्लीवलिङ्गोऽपि; 'छायां निजस्त्रीचटुलालसानां मदेन किञ्चित् चटुलालसानाम्'—इति माघे (४।६)। उदरं; व्रतिनामासनभेदः। १४६

चटुलः त्रि. [चटतीति, चट्+बाहुलकादुलच्। यद्वा चटु+'सिध्मादिभ्यश्च' इति मत्वर्थे लच्] चञ्चलः; 'त्रासातिमात्रचटुलैः स्मरतः सुनेत्रैः प्रौढप्रियानयनविभ्रमचेष्टितानि'—इति रघुवंशे (९।५८)। सुन्दरः। ६९५

चण्डः त्रि. [चण्डते रुष्टो भवतीति । चडि+पचाद्यच्] तीक्ष्णताविशिष्टः; 'दहन्तमिव तीक्ष्णांशुं चण्डवायुसमीरितम्'—इति महाभारते। (१।३२।२३)। अत्यन्तकोपनः। पुं. [चणति चणयति वा, अम्लरसं ददातीत्यर्थः। चण्+'अमन्ताड्डः' इति ड] तिन्तिडीवृक्षः; [चण्डते कुप्यतीति। चडि+अच्] यमकिङ्करः; दैत्यविशेषः; कार्तिकेयः; 'शिशुः शीघ्रः शुचिश्चण्डो दीप्तवर्णः शुभाननः'—इति महाभारते (३।२३१।४)। ४०

चण्डा स्त्री. [चम् चण् वा+ड, चडि+अच् वा, ततष्टाप्] दुर्गा; चण्डवती; अष्टनायिकान्तर्गतनायिकाविशेषः; चण्डनायिका; 'चण्डा चण्डवती चण्डनायिकाप्यतिचण्डिका'—इति देवीपुराणे। 'उग्रचण्डा प्रचण्डा च चण्डोग्रा चण्डनायिका। चण्डा चण्डवती चैव चामुण्डा चण्डिका तथा। आभिः शक्तिभिरष्टाभिः सततं परिवेष्टिताम्। चिन्तयेत् सततं दुर्गां धर्मकामार्थमोक्षदाम्'—इति दुर्गाध्यानम्। १६

चण्डातकम् क्ली.–पुं. [चण्डां स्त्रियम् अतति सततं गच्छति प्राप्नोति। चण्डा+अत्+ण्वुल्] अर्द्धोरुकं; वरस्त्रीणामर्द्धोरुपर्यन्तं वासः। ५४७

चण्डालः पुं. [चण्डते कुप्यतीति। चडि कोपे+'पतिचण्डिभ्यामालञ्' इत्यालञ्। यद्वा चण्डं विकटं अलम् अलङ्कारो यस्य] वर्णसङ्करजातिविशेषः; प्लवः; मातङ्गः; दिवाकीर्तिः; जनङ्गमः; निषादः; श्वपचः; अन्तेवासी; चाण्डालः; पुक्कसः; जलङ्गमः; निशादः; श्वपक्; पुक्कशः; पुक्कषः; क्रूरकर्मा। [स्त्रियां ङीष्] तन्त्रोक्तशक्तिविशेषः। ५९८, ८१४

चण्डिलः पुं. [चण्डते कोपयुक्तो भवतीति। चडि कोपे+इलच्। चण्ड+अस्त्यर्थे इलच वा] नापितः; रुद्रः; वास्तूकम्। ५८९

चण्डी स्त्री. [चण्डि+'बह्वादिभ्यश्च' इति वा ङीष्] दुर्गा; चण्डिः; चण्डा; चण्डिका; 'चण्डीमामन्त्रये द्विद्वान् नात्र षष्ठी पुरस्क्रिया'—इति तिथितत्त्वे। हिंस्रा; कोपना; 'सा किलाश्वासिता चण्डी भर्त्रा तत् संश्रुतौ वरौ'—इति रघुवंशे (१२।५)। छन्दोविशेषः; 'नयुगलसयुगलगैरिति चण्डी'—इति छन्दोमञ्जर्याम्। १६

चतुःशालम् क्ली.–स्त्री. [चतसृणां शालानां समाहारः] परस्पराभिमुखगृहचतुष्टयं; चतुःशालकम्; 'तत्र गत्वा चतुःशालं गृहं परमसंवृतम्'—इति महाभारते (१।१४५।८)। २९२

चतुरः त्रि. [चत्यते याच्यते इति । चत्+'मन्दिवाशिमथिचतिचङ्क्यङ्किभ्य उरच्' इत्युरच्] कार्यक्षमः; निरालस्यः; दक्षः; पेसलः; पटुः; सूत्थानम्; उष्णः; पेशलः; पेषलः; निपुणः; 'चतुरो नैव मुह्येत मूर्खः सर्वत्र मुह्यति'—इति देवीभागवते (१।१७।४४)। उपभोगक्षमः; 'त्यजत मानमलं बत विग्रहैर्न पुनरैति गतं चतुरं वयः'—इति रघुवंशे (९।४७) 'चतुरम् उपभोगक्षमम्' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। नेत्रगोचरः; पुं. चक्रगण्डुः; हस्तिशाला। ३३५

चतुर्भुजः पुं. [चत्वारो भुजा यस्य] विष्णुः; 'विष्णुं प्रबोधयाम्यद्य शेषे सुप्तं जनार्दनम्। चतुर्भुजं महावीर्यं दुःखहा स भविष्यति'—इति देवीभागवते (१।७।५)। वटिकौषधविशेषः; 'चतुर्भुजो रसो नाम महेशेन प्रकाशितः। क्रमेण शीलितं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा'—इति वैद्यकम्। स्त्रियां गायत्रीरूपा महाशक्तिः; 'चतुर्भुजा चारुदन्ता चातुरी चरितप्रदा।' त्रि. चतुर्भुजविशिष्टः; 'तदा शान्ता भगवती प्रादुरास चतुर्भुजा। शङ्खचक्रगदापद्मवरायुधवरा शिवा'—इति देवीभागवते (१।१५।५६)। २२

चतुर्वक्त्रः पुं. [चत्वारि वक्त्राणि अस्य, वस्तुतस्तु चत्वारो वेदा एव वक्त्राणि मुखानीवास्य] चतुर्मुखः; ब्रह्मा। ७

चतुर्विधम् त्रि. [चतस्रः विधाः प्रकारा यस्य] भेद-

चतुष्टयवत्; चतुष्प्रकारकम्, यथा—चतुर्विधम् आयुधम्, चतुर्विधं वस्त्रम्, चतुर्विधं वाद्यम्। ४६२,५४८

चतुष्पथम् क्ली. [चतुर्णां पथां समाहारः। 'तद्धितार्थेति' समासे 'ऋक्पूरब्धू' रित्य, 'इदुदुपधस्येति' षत्वम्। यद्वा चत्वारः पन्थानो यत्र इति] एकत्र मिलितपथचतुष्टयं; शृङ्गाटकं; 'चौराहा' इति भाषा। 'मृदङ्गान् दैवतं विप्रं घृतं मधु चतुष्पथम्। प्रदक्षिणानि कुर्वीत प्रज्ञातांश्च वनस्पतीन्'—इति मनुः (४।३९)। २८९

चत्वरम् क्ली. [चत्यते स्वीक्रियते इति। चत्+'कृगृधृवृचतिभ्यः ष्वरच्' इति ष्वरच्] अङ्गनं; प्राङ्गणं; कुट्टिमं; स्थण्डिलं; होमार्थपरिष्कृता भूमिः। 'चबूतरा' –इति भाषा। चतसृणां रथ्यानां सङ्गमः; 'अनुरथ्यासु सर्वासु चत्वरेषु च कौरव। बलं बभूव राजेन्द्र! प्रभूतगजवाजिमत्'—इति महाभारते (३।१५।२०)। नानाजनपदेभ्यः समागतानामकिञ्चनानां वासस्थानम्; 'कृत्वा तांश्चणकान् पिष्टान् गृहित्वा जलकुम्भिकाम्। अतिष्ठं चत्वरे गत्वा छायायां नगराद्बहिः'—इति कथासरित्सागरे (६।४१)। ८१७

चन्दनः पुं.–क्ली. [चन्दयति आह्लादयति। चदि आह्लादे+णिच्+ल्यु] वृक्षविशेषः; गन्धसारः; मलयजः; भद्रश्रीः; श्रीखण्डं; महार्हं; श्वेतचन्दनं; गोशीर्षं; तिलपर्णं; मङ्गल्यं; मलयोद्भवं; गन्धराजं; सुगन्धं; सर्पावासं; शीतलं; गन्धाढ्यं; भोगिवल्लभं; पावनं; शीतगन्धः; तैलपर्णिकः; चन्द्रद्युतिः; भद्रश्रियं; हितं; हिमं; पटीरः; वर्णकः; भद्राश्रयः; सेव्यः; रौहिणः; ग्राम्यः; पीतसारः। 'स्वादे तिक्तं कषे पीतं छेदे रक्तं तनौ सितम्। ग्रन्थिकोटरसंयुक्तं चन्दनं श्रेष्ठमुच्यते'—इति भावप्रकाशः। वानरविशेषः; स्त्री. [चन्द्यते आह्लाद्यते अस्या अनया वा टाप्] भद्रकाली। ५४४

चन्द्रः पुं. ['चन्दयति आह्लादयति, चन्दति दीप्यति इति वा चन्द्+'स्फायितञ्चीति' रक्] देवताविशेषः; हिमांशुः; चन्द्रमाः; इन्दुः; कुमुदबान्धवः; विधुः; सुधांशुः; शुभ्रांशुः; ओषधीशः; निशापतिः; अब्जः; जैवातृकः; सोमः; ग्लौः; मृगाङ्कः; कलानिधिः; द्विजराजः; शशधरः; नक्षत्रेशः; क्षपाकरः; दोषाकरः; निशीथिनीनाथः; शर्वरीशः; एणाङ्कः; शीतरश्मिः; समुद्रनवनीतः; सारसः; श्वेतवाहनः; नक्षत्रनेमिः; उडुपः; सुधासूतिः; तिथिप्रणीः; अमितिः; चन्दिरः; चित्राटीरः; पक्षधरः; अजः; नभश्चमसः; राजा; रोहिणीशः; अत्रिनेत्रजः; पक्षजः; सिन्धुजन्मा; दशाश्वः; हरचूडामणिः; माः; तारापीडः; निशामणिः; मृगलाञ्छनः; दर्शविपत्; छायामृगधरः; ग्रहनेमिः; दाक्षायणीपतिः; लक्ष्मीसहजः; सुधाकरः; सुधाधारः; शीतभानुः। तमोहरः; तुषारकिरणः; हरिः; हिमद्युतिः; द्विजपतिः; विश्वप्सा; अमृतदीधितिः; हरिणाङ्कः; रोहिणीपतिः; सिन्धुनन्दनः; तमोनुत्; एणतिलकः; कुमुदेशः; क्षीरोदनन्दनः; कान्तः; कलावान्; सिप्रः; यामिनीपतिः; मृगपिप्लुः; सुधानिधिः; तुङ्गी; पक्षजन्मा; चन्दः; अब्धिनवनीतकः; पीयूषमहाः; शीतमरीचिः; शीतलः; त्रिनेत्रचूडामणिः; अत्रिनेत्रभूः; सुधाङ्गः; परिज्ञाः; वलक्षगुः; तुङ्गीपतिः; यज्वनाम्पतिः; पर्वधिः; क्लेदुः; जयन्तः; तपसः; खचमसः; विकसः; दशवाजी; श्वेतवाजी; अमृतसूः; कौमुदीपतिः; कुमुदिनीपतिः; भूपतिः; दक्षजापतिः; ओषधीपति; कलाभृत्; शशभृत्; एणभृत्; अत्रिदृग्जः; निशारत्नम्; निशाकरः; अमृतः; श्वेतद्युतिः। क्ली. स्वर्णम् (१७३); 'उतनः सुद्योत्मा जीराश्वो होता मन्द्रः शृणवच्चन्द्ररथः'—इति ऋग्वेदे (१।१४१।१२)। कर्पूरं; जलं; काम्पिल्लः; द्वीपविशेषः; विसर्गः; कमनीयः; मेचकः; बर्हचन्द्रक; रक्तरजतं; शोणमुक्ताफलं; योगोक्तेडा नाडी; 'बद्धपद्मासनो योगी प्राणं चन्द्रेण पूरयेत्'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम्। 'चन्द्रेण चन्द्रनाडचडया'—इति तट्टीका। भ्रूमध्यभागस्थसोममण्डलम्; 'चन्द्रात् स्रवति यः सारः स स्यादमरवारुणी'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम्। 'चन्द्रात् भ्रुवोरन्तर्वामभागस्थात् सोमात्'—इति तट्टीका। आह्लादजनकद्रव्ये त्रि.। ४२

चन्द्रम् क्ली. [चन्दति दीप्यते इति, चदि+रक्] स्वर्णं; चक्रं; वृत्तविशेषः; 'द्विजवरगणयुगमुपधाय परिकलय कर, मथनगणयुगलमिह गन्धयुगमपि वितर। फणिनृपतिभणितमिति चन्द्रमिदमिति शृणुत, सकलकविकुलहृदयमोदकरमवतनुत'—इति वृत्तग्रन्थे। १७३

चन्द्रकः पुं. [चन्द्र इव कायति प्रकाशते इति। चन्द्र+

कं+क] वर्हनेत्रं; मेचकः; 'मोरपंख का चाँद' इति भाषा। 'चन्द्रकचारुमयूरशिखण्डकमण्डलबलयितकेशम्' —इति गीतगोविन्दे (२।३)। नखः; मत्स्यविशेषः; चलत्पूर्णिमा; चन्द्रचञ्चला; चन्द्रिका; मण्डलम्; 'यां चन्द्रकैर्मदजलस्य महानदीनां नेत्रश्रियं विकसतो विदधुर्गजेन्द्राः'—इति माघे (५।४०)। 'चन्द्रकैश्चन्द्राकारैर्मण्डलैर्महानदीनाम्'—इति मल्लिनाथः। [चन्द्रशब्दात् स्वार्थे के] चन्द्रश्च। २४२

चन्द्रदाराः पुं. [चन्द्रस्य दाराः पत्न्यः] अश्विन्यादिनक्षत्राणि [बहुवचनः]। ५१

चन्द्रमाः [स्] पुं. [चन्द्रमानन्दं मिमीते, यद्वा चन्द्रं कर्पूरं सादृश्येन माति परिमातीति। चन्द्र+मा+'चन्द्रे मो डित्' इति असि स च डित्। चन्द्रं रजतम् अमृतं च, तदिव मीयते, चन्द्र इति वा मीयते] चन्द्रः; 'एकोऽपि कोऽपि सेव्यो यः क्षीणं क्षीणं पुनर्नवम्। अनुद्विग्नः करोत्येव सूर्यश्चन्द्रमसं यथा'—इति पञ्चतन्त्रे (३।६८)। ४२

चन्द्रशाला स्त्री. [चन्द्रेण शालते शोभते इति। चन्द्र+शाल्+अच् ततष्टाप्। चन्द्र इव शालते श्लाघते इति, उच्चस्थानस्थितत्वादेव तथात्वम्] प्रासादोपरिगृहं; शिरोगृहं; चन्द्रशालिका; वलभी; कूटागारम्; 'तस्यायमन्तर्हितसौधभाजः प्रसक्तसङ्गीतमृदङ्गघोषः। वियद्गतः पुष्पकचन्द्रशालाः क्षणं प्रतिश्रुन्मुखराः करोति'—इति रघुवंशे (१३।४०)। ३०४

चन्द्रहासः पुं. [चन्द्रस्येव शुक्लो हासो दीप्तिर्यस्य] खड्गः; रावणखड्गः। ४७२

चन्द्रातपः पुं. [चन्द्र इव आतपति शीतलं करोति छायादानेन। चन्द्र+आ+तप्+अच्। चन्द्रस्य आतपः रश्मिः] ज्योत्स्ना; चन्द्रिका; चन्दिमा; कौमुदी; 'चन्द्रातपमिव रसतामुपेतम्'—इति कादम्बर्याम्। आच्छादनविशेषः; उल्लोचः; वितानं; चन्द्रा; 'चँदोवा' इति भाषा। ४४

चन्द्रिका स्त्री. [चन्द्र आश्रयत्वेनास्त्यस्याः। 'अत इनिठनौ' इति ठन्] ज्योत्स्ना, चन्द्रिमा, कौमुदी, चन्द्रातपः; 'अन्वभुङ्क्त सुरतश्रमापहां मेघमुक्तविशदां स चन्द्रिकाम्'—इति रघुवंशे (१९।३९)। स्थूलैला; चन्द्रकमत्स्यः; चन्द्रभागानदी; कर्णस्फोटा; मल्लिका; श्वेतकण्टकारी; मेथिका; सूक्ष्मैला; चन्द्रशूरं; पीठस्थदेवीविशेषः; 'सह्याद्रावेकवीरा तु हरिश्चन्द्रे तु चन्द्रिका' —इति देवीभागवते (७।३०।६७)। छन्दोविशेषः; 'ननततगुरुभिश्चन्द्रिकाऽश्वर्तुभिः'—इति छन्दोमञ्जरी। वासपुष्पा; 'चन्द्रिका चर्महन्त्री च पशुमेहनकारिका। नन्दिनी कारवी भद्रा वासपुष्पा सुवासरा'—इति भावप्रकाशः। ४४

चन्द्रोदयः पुं. [चन्द्रस्य उदयः। चन्द्रस्य वस्त्रखण्डादिरचितचन्द्राकृतेरातपो यत्र] चन्द्रातपः; वितानम्; 'चँदोवा' इति भाषा। आकाशे चन्द्रस्य प्रकाशः; औषधविशेषः; मकरध्वजाख्यरससिन्दूरम्; 'वलीपलितनाशनस्तनुभृतां वयःस्तम्भनः समस्तगदखण्डनः प्रचुररोगपञ्चाननः। गृहेषु रसराडयं भवति यस्य चन्द्रोदयः स पञ्चशरदर्पितो मृगदृशां भवेद् दुर्लभः'—इति सारकौमुदी। ३१०

चपलः त्रि. [चोपति मन्दं मन्दं गच्छति। चुप्+ कल धातोरुकारस्याकारादेशश्च] तरलः; चञ्चलः; 'विचरति परितः कृष्णे राधायां रागचपलनयनायाम्। दशदिग्वेधविशुद्धं विशिखिं विदधाति विषमेषुः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५३०)। दोषमनिश्चित्य वधबन्धनादेः कर्ता; चिकुरः; विकलः। ६९५

चपलम् क्ली. [चपं सान्त्वनां लाति प्राप्नोतीति। ला+'आतोऽनुपसर्गे कः' इति क] शीघ्रं; क्षणिकं; पुं. पारदः; 'पारदो रसधातुश्च रसेन्द्रश्च महारसः। चपलः शिववीर्यं च रसः सूतः शिवाह्वयः'—इति भावप्रकाशः। मीनः; चोरकः, प्रस्तरविशेषः; क्षवः; मूषिकविशेषः; 'पूर्वमुक्ताःशुक्रविषा मूषिका ये समासतः। नामलक्षणभैषज्यैरष्टादश निबोध तान्। कुलिङ्गश्चाजितश्चैव चपलः कपिलस्तथा'—इति सुश्रुते। 'चपलेन भवेच्छर्दिमूर्च्छा च सह तृष्णया। स भद्रकाष्ठां सजटां क्षौद्रेण त्रिफलां लिहेत्'—इति च सुश्रुते। ६९७

चपला स्त्री. [चपल+टाप्] विद्युत्; तडित्; सौदामिनी; चञ्चला; 'किं पुत्रि! गण्डशैलभ्रमेण नवनीरदेषु निद्रासि। अनुभव चपलाविलासितगर्जितदेशान्तरभ्रान्तीः।' लक्ष्मीः; 'निलयः श्रियः सततमेतदिति प्रथितं यदेव जलजन्म तया। दिवसात्ययात्तदपि मुक्तमहो चपलाजनं प्रति न चोद्यमदः'—इति माघे (९।१६)। 'चपला चापलवती स्त्री कमला च'—इति तट्टीकायां

मल्लिनाथः। पुंश्चली; पिप्पली; 'पिप्पली मागधी कृष्णा वैदेही चपला कणा । उपकुल्योषणा शौण्डी कोला स्यात्तीक्ष्णतण्डुला'—इति भावप्रकाशः। जिह्वा; विजया; मदिरा; आर्याच्छन्दोविशेषः; 'उभयार्द्धयोर्जकारौ द्वितीयतुर्यौ गमध्यगौ यस्याः । चपलेति नाम तस्याः प्रकीर्तितं नागराजेन'—इति वृत्तरत्नाकरे। ६०

चमूः स्त्री. [चमति भक्षयति शत्रून् नाशयतीत्यर्थः । चम्+कृषिचमितनीति ऊ] सेनामात्रम्; 'पश्यैतां पाण्डुपुत्राणाम् आचार्य! महतीं चमूम्'–इति भगवद्गीतायाम्। सेनाविशेषः; तत्र ७२९ हस्तिनः, ७२९ रथाः, २१८७ अश्वाः, ३६४५ पदातयः=समुदायेन ७२९० द्विशतनवत्यधिकसप्तसहस्रम्। ४५७

चयः पुं. [चीयते इति, चि+'एरच्' इति कर्मणि अच्] समूहः; 'चयस्त्विषामित्यवधारितं पुरा'—इति माघे (१।३)। वप्रं; प्राकारादिमूलबद्धं; यदुपरि प्राकारो निरूप्यते सः; समाहृतिः; प्राकारः; 'शैलादभ्युच्छ्रयवता चयाट्टालकशोभिना'–इति महाभारते (३।१६०।३७)। पीठं; दोषाणां सञ्चयप्रकोपप्रशमादिषु प्रकारविशेषः; 'चयकोपशमान् दोषा विहाराहारसेवनैः । समानैर्यान्त्यकालेऽपि विपरीतैर्विपर्ययम्'—इति शार्ङ्गधरः। शोथः; 'कटुतैलान्वितैर्लेपात् सर्पनिर्मोकभस्मभिः । चयः शाम्यति गण्डस्य प्रकोपः स्फुटति द्रुतम्'—इति वैद्यके। ६८६

चरः पुं. [चरति स्वपरराष्ट्रस्य शुभाशुभज्ञानाय भ्राम्यतीति। चर्+अच्] राष्ट्रादेः शुभाशुभादिज्ञानार्थं सगोपनं नियुक्तः राजपुरुषः। परतत्त्वज्ञानार्थं भ्रमणकर्ता; यथार्हवर्णः; प्रणिधिः; अपसर्पः; चारः; स्पशः; गूढपुरुषः; अपसर्पकः; प्रतिष्कः; प्रतिष्कसः; गुप्तगतिः; मन्त्रगूढः; हितप्रणीः; उदस्थितः; भिक्षुवणिगादिवेशेन नित्यस्थायी; पञ्चस्वदेशपरदेशभ्रमणशीलः; 'विवस्वानिव तेजोभिर्नभस्वानिव वेगतः । राजा चरैर्जगत् सर्वं प्राप्नुयाल्लोकसम्मतैः'—इति भोजराजकृतयुक्तिकल्पतरुः। अक्षद्यूतभेदः; भौमः; चलः; खञ्जनपक्षी; कपर्दकः; मेषकर्कटतुलामकरलग्नानि; 'अस्थिरविभूतिमित्रं चलमटनं स्खलितनियममपि चरभे' इति दीपिका। 'चरलग्ने चरांशे वा स्थापनं च विसर्जनम्, –इति तिथितत्त्वे। जङ्गमे त्रि.। 'तस्य सर्वाणि भूतानि स्थावराणि चराणि च'—इति मनुः (७।१५)। 'चरः शरीरावयवाः स्वभावो धातवः क्रिया। लिङ्गं प्रमाणं संस्कारो मात्रा चास्मिन् परीक्ष्यते। चरोऽनूपजलाकाशधन्वाद्यो भक्षसंविधिः । जलजानूपजाश्चैव जलानूपचराश्च ये। गुरुभक्ष्याश्च ये सत्त्वाः सर्वे ते गुरवः स्मृताः'–इति चरके। ४२५

चरणम् पुं.– क्ली. [चरतीति, चर्+ ल्यु, चरत्यनेनेति करणे ल्युट् वा] अधमाङ्गं; पादः; पत्; अङ्घ्रिः; अंह्रिः; विक्रमः; पदः; आक्रमः; क्रमणः; चलनः; क्रमः; पदं; पात्। 'अङ्गुलीग्रन्थिभेदस्य च्छेदयेत् प्रथमे ग्रहे। द्वितीये हस्तचरणौ तृतीये वधमर्हति'—इति मनुः (९।२७७')। श्लोकचतुर्थभागः; 'शेषं गाथास्त्रिभिः षड्भिश्चरणैश्चोपलक्षिताः'—इति वृत्तरत्नाकरे। बहुवृचादिशाखा; 'न पृच्छेच्चरणं गोत्रं न च विद्यां कुलं न च। अतिथिं वैश्वदेवान्ते श्राद्धे च मनुरब्रवीत्'—इति पञ्चतन्त्रे (४।३)। 'सकृदाख्यातनिर्ग्राह्या गोत्रं च चरणैः सह'—इति महाभाष्यवचनम्। मूलं; गोत्रम्। ५११

चरणाभरणम् क्ली. [चरणस्य पादस्य आभरणं भूषणम्] नूपुरः। ५६१

चरणायुधः पुं. [चरण एवायुधम् अस्त्रविशेषो यस्य] कुक्कुटः; 'कुक्कुटः कृकवाकुः स्यात् कलयश्चरणायुधः। ताम्रचूडस्तथा दक्षो यामनादी शिखण्डिकः'— इति इति भावप्रकाशः। चरणास्त्रे त्रि.। 'तुण्डपक्षप्रहारेण जटायुश्चरणायुधः'—इति रामायणे। २४७

चरमः त्रि. [चरतीति, 'चरेश्च' इति अमच्] अन्तः; अन्तिमः, पश्चिमः; 'उत्तिष्ठेत् प्रथमं चास्य चरमं चैव संविशेत्'—इति मनुः (२।१९४)। ७०७

चरितम् क्ली. [चर्+भावे+क्त] चरित्रम्; 'कथितो वंशविस्तारो भवता सोमसूर्ययोः। राज्ञाञ्चोभयवंश्यानां चरितं परमाद्भुतम्'—इति भागवते (१०।१।१)। त्रि. आचरितम्; 'श्रुत्वा पूर्वं काव्यबीजं देवर्षेर्नारदादृषिः। लोकादन्विष्य भूयश्च चरितं चरितव्रतः'—इति रामायणे (१।३।१)। ३९६

चरित्रम् क्ली. [चर्+'अर्तिलूधूसूखनसहचर इत्रः' इति इत्र] स्वभावः; चरितं; चारित्रं; चरीत्रम्; 'अचिन्त्यं शीलगुप्तानां चरित्रं कुलयोषिताम्'—इति कथा-

सरित्सागरे। ३९६

चरुः पुं. [चरन्ति भक्षयन्ति देवा इमं, चर्यते भक्ष्यते अग्न्यादिभिर्देवैरिति वा, चरति होमादिकमस्मादित्येके। चर्+'भृमृशीति' उ] हव्यान्नपाकभाण्डं; हव्यान्नम् (४१६); 'ततश्च संस्कृते वह्नौ गोक्षीरेण चरुं पचेत्'—इति शारदातिलके। ३१४

चर्चा स्त्री. [चर्च्यते विचार्यते वेदवेदान्तादिशास्त्रैरसौ इति। चर्च्+णिच्+अङ] दुर्गा; [भावे अङ] लेपनम् (५४०); 'मृगमदकृतचर्चा पीतकौशेयवासाः'—इति छन्दोमञ्जरी। चिन्ता (७९४); चार्चिक्यं; विचारणा; गायत्रीरूपा महाशक्तिः; 'ज्ञानधातुमयी चर्चा चर्चिता चारुहासिनी'—इति देवीभागवते (१२।६।४६)। १७

चर्मम् क्ली. [चर्म साधनतयास्त्यस्य। अच्] अजिनं; त्वक्; असृग्धरा; फलकः; 'स्यन्दनाश्वैः समे युध्येदनूपे नौद्विपैस्तथा। वृक्षगुल्मावृते चापैरसिचर्मायुधैः स्थले'—इति मनुः (७।१९२)। 'ढाल' इति भाषा। ६३०

चर्म [न्] क्ली. [चर्+'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति मनिन्] त्वक्; असृग्धरा; कृत्तिः; अजिनं; देहचर्म; रक्ताधारः; रोमभूमिः; शरीरावरणम्; असृग्वरा; 'निर्भिन्नास्य चर्माणि लोकपालोऽनिलोऽविशत्'—इति भागवते (३।६।१६)। इन्द्रियविशेषः; शरीरावरकं शस्त्रं; फलकः; फलं; फरं; चर्मं; 'ढाल' इति भाषा। 'शरीरावरकं शस्त्रं चर्म इत्यभिधीयते। तत्पुनर्द्विविधं काष्ठचर्मसम्भवभेदतः'—इति युक्तिकल्पतरौ। 'चक्षूंषि चर्मन् शतचन्द्र छादय'—इति नारायणवर्म। ब्रह्मचारिधार्यकृष्णसारचर्म; 'कार्ष्णरौरववास्तानि चर्माणि ब्रह्मचारिणः'—इति मनुः (२।४१)। ६३०

चर्मकृत् पुं. [चर्म करोति, चर्मघटितं पादुकादिकमुत्पादयतीत्यर्थः। चर्म+कृ+क्विप्] चर्मकारः; पादूकृत्; पादुकृत्; चर्मार; चर्मरुः; पादुकाकारः; कुरटः; 'चमार, मोची' इत्यादि भाषा। 'चर्मकृत् कोऽपि न प्रादात् कुटीं क्षेत्रोपयोगिनीम्'—इति राजतरङ्गिण्याम्। ५९६

चर्मदण्डः पुं. [चर्मभिश्चर्मणा वा निर्मितो दण्डः] कशा; 'चाबुक' इति भाषा। 'चर्मदण्डाहतो विप्रः शशापातिरुषा च तम्'—इति शान्तिपर्वणि। ४४२

चर्मप्रसेवकः पुं. [चर्मणा प्रसीव्यते इति। षिवु तन्तुसन्ताने+'संज्ञायाम्' इति कर्मणि ण्वुल्, बाहुलकाद् वुन् वा] भस्त्रा; चर्मप्रसेविका; दृतिः। ७६४

चर्मप्रसेविका स्त्री. [चर्मप्रसेवक+टाप् अत इत्वञ्च] अग्निसन्दीपनार्थं चर्मनिर्मितयन्त्रं; भस्त्रा; 'भाथी' 'धौंकनी' इति भाषा। ७६४

चलन्नवाभ्रमाला स्त्री. [चलन्ती या नवानाम् अभ्राणां माला] मेघमाला; कादम्बिनी; नवजलदचञ्चल पङ्क्तिः। ५९

चलाचलः त्रि. [चलतीति, चल+अच्, 'चरिचलिपतिवदीनां वा द्वित्वमिति द्वित्वे अभ्यासस्य आगागमश्च] चञ्चलः; 'जन्मिनोऽस्य स्थितिं विद्वान् लक्ष्मीमिव चलाचलाम्'—इति किरातार्जुनीये (११।३०)। पुं. काकः। ६९५

चषकः पुं.– क्ली. [चषति भक्षयति पिबत्यनेनेत्यर्थः। चष्+'क्वुन् शिल्पिसंज्ञयोरपूर्वस्यापि' इति क्वुन्] गल्वर्कः; सरकः; अनुतर्षणं; मद्यपानपात्रम्; 'यत्पानपात्रं भूपानां तज्ज्ञेयं चषकं बुधैः'—इति युक्तिकल्पतरौ। सुरापात्रं; मधु; मद्यप्रभेदः। ३२७

चाटुः पुं – क्ली. [चटति मनस्तोषामोदं वाक्येनेति। चट्+'दृसनीति' ञुण्] प्रियवाक्यं; चटुः; प्रियप्रायं; मिथ्याप्रियवाक्यम्; 'प्रथमसमागमलज्जितया पटुचाटुशतैरनुकूलम्'—इति गीतगोविन्दे (२।१२)। चाटूक्त्यादौ त्रि.। 'उपनिन्ये च संगृह्य पुटकैश्चाटुसीत्कृतैः'—इति राजतरङ्गिण्याम्। १४६

चाण्डालः पुं. [चण्डति कुप्यति सततमिति। 'पतिचण्डिभ्यामालञ्' इति आलञ्। यद्वा चण्डाल एवेति, 'प्रज्ञादिभ्योऽण्'] चण्डालः; 'न संवसेच्च पतितैर्न चाण्डालैर्न पुक्कशैः'—इति मनुः (४।७९)। कर्मदोषतो ब्राह्मणानामपि पारिभाषिकचाण्डालत्वम्—'आह्वायका देवलका नक्षत्रग्रामयाजकाः। एते ब्राह्मणचाण्डाला महापथिकपञ्चमाः'—इति महाभारते (१२।७५)। ५९८

चातकः पुं. [चतते याचते जलमम्बुदमिति। चत् याचने+ण्वुल्] पक्षिविशेषः; स्तोककः; सारङ्गः; मेघजीवनः; तोककः; शारङ्गः; 'वामश्चायं नुदति मधुरं चातकस्ते सगर्वः'—इति मेघदूते (९)। २४८

चान्द्रमसायनः पुं. [चन्द्रमसोऽपत्यं पुमान्। चन्द्रमस्+फक्] बुधग्रहः; चान्द्रिः। ४६

चान्द्रमसायनिः पुं. ['तिकादिभ्यः फिञ्' इति फिञ्] बुधग्रहः; चान्द्रमसायनः; सौम्यः। ४६

चापः पुं.– क्ली. [चपस्य वंशविशेषस्य विकारः। 'अवयवे च प्राण्योषधिवृक्षेभ्यः' इत्यण्] धनुः; 'क्रमशस्ते पुनस्तस्य चापात् सममिवोद्ययुः'—इति रघुवंशे (१२।४७)। वृत्तक्षेत्रार्द्धम्; 'दलीकृतं चक्रमुशन्ति चापं कोदण्डखण्डं खलु तूर्यगोलम्'—इति सिद्धान्तशिरोमणौ। नवमराशिः; 'चापगते गृह्णीयात् कुङ्कुमशङ्खप्रवालकाचानि'—इति बृहत्संहितायाम्। ४६४

चामरम् पुं.– क्ली. [चमरी मृगविशेषस्तस्या इदम्। चमरी+अण्] चमरीपुच्छलोमनिर्मितव्यजनं; प्रकीर्णकं; चमरं; चामरा; चामरी; बालव्यजनं; रोम गुच्छकम्; 'गुणेषु रागो व्यसनेष्वनादरो रतिः सुभृत्येषु च यस्य भूपतेः। चिरं स भुङ्क्ते चलचामरांशुकां सितातपत्राभरणां नृपश्रियम्'—इति पञ्चतन्त्रे (३।२६६)। ४२३

चामीकरम् क्ली. [चमीकरः रत्नाकरविशेषः, तत्र भवमित्यण्] स्वर्णम्; 'ददृशुर्मुनयो देवा देवर्षिगणसेवितम्। शुद्धचामीकरप्रख्यं सर्वाभरणभूषितम्'—इति शिवपुराणे (२।१३)। धुस्तूरः। १७४

चामुण्डा स्त्री. [महासंग्रामे चण्डमुण्डाख्यौ द्वौ शुम्भनिशुम्भसेनाध्यक्षौ अनया शक्त्या निहतौ, अतः परितुष्टया भगवत्या कौशिक्या अस्याश्चामुण्डेति सञ्ज्ञा कृता] दुर्गा; मातृकाभेदः; चर्चिका; चर्ममुण्डा; मार्जारकर्णिका; कर्णमोटी; महागन्धा; भैरवी; कपालिनी; 'यस्माच्चण्डं च मुण्डं च गृहीत्वा त्वमुपागता। चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवि! भविष्यसि'—इति चण्डीपाठे। १७

चारः पुं. [चर्यते भक्ष्यते कोपद्वेषादिवशादिति। चर+कमणि घञ्, चरति वा] अपसर्पः; पियालवृक्षः; गतिः; बन्धः; कारागारं; गूढपुरुषः; चरः; 'नृपो निहन्याच्चारेण परराष्ट्रं विचक्षणः'—इति युक्तिकल्पतरौ। कापटिकपुरुषादयः; 'उपगृह्यास्पदश्चैव चारान् सम्यग्विधाय च' इति मनुः (७।१८४) 'चारांश्च कापटिकादीन्' इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। प्रचारः; 'निवृत्तचारः सहसा गतो रविः प्रवृत्तचारा रजनी ह्युपस्थिता'—इति रामायणे (२।६६।२६)। 'निवृत्तचारः निवृत्तकिरणप्रचारः, प्रवृत्तचारा प्रवृत्ततमःप्रचारा'—इति तट्टीकायां रामानुजः। वाणिज्यादिव्यवहारः; 'भृत्यर्वाणिज्यचारञ्च पुत्रैः सेवेत च द्विजान्।' सञ्चारः; प्रवृत्तिः; 'न स्त्री दुष्यति चारेण न विप्रो वेदकर्मणा।' 'चारेण रजःसञ्चारेण' इति टीकाकृन्नीलकण्ठः। क्ली. कृत्रिमविषम्। ४२५

चारणः पुं. [चारयति प्रचारयति नृत्यगीतादिविद्यां तज्जन्यकीर्तिं वा। चर्+णिच्+ल्यु] नटविशेषः; कुशीलवः; 'चारणाश्च सुपर्णाश्च पुरुषाश्चैव दाम्भिकाः। रक्षांसि च पिशाचाश्च तामसीषूत्तमा गतिः'–इति मनुः (१२।४४) 'चारणा नटादयः'–इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। गन्धर्वविशेषः; 'गन्धर्वाणां ततो लोकः परतः शतयोजनात्। देवानां गायनास्ते च चारणाः स्तुतिपाठकाः'—इति पाद्मे पातालखण्डम्। देवयोनिविशेषः; 'गन्धर्वविद्याधरचारणाप्सरःस्वरस्मृतीरसुरानीकवीर्यः'—इति भागवते (४।१६।१२)। चारपुरुषः; 'अन्तर्बहिश्च भूतानां पश्यन् कर्माणि चारणः। उदासीन इवाध्यक्षो वायुरात्मेव देहिनाम्'—इति भागवते (४।१६।१२)। ५९२

चारभटः पुं. [चारेषु चरेषु भटः। यद्वा चारे बुद्धिकौशलादिप्रचारे भटः] वीरः; 'कश्चुम्बति कुलपुरुषो वेश्याधरपल्लवं मनोज्ञमपि। चारभटचौरचेटकनटविटनिष्ठीवनशरावम्'—इति भर्तृहरिः (१।९१)। ३५४

चारित्रम् क्ली. [चरित्रमेव इति, स्वार्थे अण्] चरित्रम्; 'कुलाक्रोशकरं लोके धिक्! ते चारित्रमीदृशम्'—इति रामायणे (३।५९।९)। मरुद्गणानामन्यतमः; 'जयोनञ्चाद्भुतिञ्चैव चारित्रं बहुपन्नगम्'—इति हरिवंशे (१९६।५४)। [चरतीति, 'चरेर्वृत्ते' इति णित्रम्] वृत्तान्तम्। ३९६

चारुः त्रि. [चरति देवेषु गुरुत्वेन, चरति चित्ते इति वा। चर्+दृसनिजनिचरीति' ञुण्] मनोज्ञः; 'इति चटुलचाटुपटुचारुमुरवैरिणो राधिकामधिवचनजातम्'— इति गीतगोविन्दे (१०।९)। पुं. बृहस्पतिः; श्रीकृष्णस्य रुक्मिणीगर्भसम्भवपुत्राणामन्यतमः; 'चारुञ्च बलिनां श्रेष्ठं सुताञ्चाऽनता [illegible]'—इति हरिवंशे (११७।३९)।

चाषः पुं. [चाषयति भक्षयति कणादिकमिति । चष्+स्वार्थे णिच्+अच् । यद्वा चष्यते भक्ष्यतेऽसौ मांसाशिभिरिति । चष्+कर्मणि घञ्] स्वर्णचातकः; नीलकण्ठः, किकीदिविः; नीलाङ्गः; पुण्यदर्शनः। २४७

चासः पुं. [चाष+पृषोदरादित्वेन सत्वम्] चाषपक्षी; इक्षुः। २४७

चिकित्सकः पुं. [चिकित्सति रोगमपनयतीति । कित्+'गुप्तिज्किद्भ्यः सन्' इति स्वार्थे सन्+ण्वुल्] चिकित्साकर्ता; रोगहारी; अगदङ्कारः; भिषक्; वैद्यः; 'चिकित्सकानां सर्वेषां मिथ्या प्रचरतां दमः'—इति मनुः (९।२८४)। तस्य लक्षणं चाणक्ये—'आयुर्वेदकृताभ्यासः सर्वेषां प्रियदर्शनः। आर्यशीलगुणोपेत एष वैद्यो विधीयते।' ६१२

चिकित्सा स्त्री. [चिकित्सनमिति, कित् व्याधिप्रतीकारे+'गुप्तिज्किद्भ्यः सन्', ततः अप्रत्ययः] रोगप्रतीकारः; रुक्प्रतिक्रिया; उपचारः; उपचर्या; निग्रहः; वेदनानिष्ठा; क्रिया; उपक्रमः; शमः; चिकित्सितं; प्रतीकारः; भिषग्जितं; रोगप्रतिकारः; 'आसुरी मानुषी दैवी चिकित्सा सा त्रिधा मता'—इति वैद्यके। ६१२

चिकुरः पुं. [चि इत्यव्यक्तशब्दं कुरतीति । कुर् शब्दे+'इगुपधज्ञेति' क] केशः; 'चिकुरनिचये यत्कौटिल्यं विलोचनयोश्च या'–इति राजतरङ्गिण्याम् (८।३६७)। सर्पः; अयं हि ऐरावतकुलजातस्य सुमुखस्य पिता; 'एतस्य हि पिता नागश्चिकुरो नाम मातले! न चिरात् वैनतेयेन पञ्चत्वमुपपादितः'—इति महाभारते (५।१०३।२४)। पर्वतः; पक्षिभेदः; वृक्षविशेषः; गृहबभ्रुः; तरलः; त्रि. चपलः। [निपातनाद्दीर्घत्वे चिकूरः इत्यपि।] ५३०

चिता स्त्री. [चीयते श्मशानाग्निरस्यां, यद्वा चीयते उच्चीयतेऽसौ प्रेतस्य परलोकशर्मणे इति । चि+अधिकरणे वा कर्मणि क्त, ततष्टाप्] शवदाहाधारचुल्ली; चित्या; काष्ठमठी; चैत्यं; चिताचूडकं; चित्यं; चितिः; 'चिताग्नेरुद्वहन्नाज्जं पक्षाभ्यां तत्प्रवर्तते'—इति महाभारते (३।२१९।१७)। संहतिः। ६३८

चित्तम् क्ली. [चेतत्यनेनेति, चित्+करणे क्त] मनः; अनुसन्धानात्मिकान्तःकरणवृत्तिः; 'यत्तत् सत्त्वगुणं स्वच्छं स्वान्तं भगवतः पदम्। यदाहुर्वासुदेवाख्यं चित्तं तन्महदात्मकम्'—इति भागवते। ५३४

चित्यम् क्ली. [चीयते इति, चि+'चित्याग्निचित्ये च' इति कर्मणि य, निपातनात्तुगागमे साधुः। यद्वा क्यप् प्रत्यये पिति तुगागमः] चिता; चित्या; चैत्यं; चितिः; चिताचूडकं; काष्ठमठी। ६३८

चित्या स्त्री. [चीयतेऽग्निरस्यां प्रेतस्य । चि+य, निपातनात् साधुः, क्यप् वा] चिता; चित्यम्। ६३८

चित्रम् क्ली. [चित्र्यते इति, चित्र+कर्मणि अप्। यद्वा चीयते इति, 'अमिचिमिशमिभ्यः क्त्रः'। इति क्त्र] कर्बुरवर्णः; 'निसर्गचित्रोज्ज्वलसूक्ष्मपक्ष्मणा'—इति माघे (१।८)। तद्युक्ते त्रि.। अद्भुतम् (७४५); 'चित्रं संक्रीडमानास्ताः क्रीडनैर्विविधैस्तथा'—इति रामायणे (१।१०)। तिलकम्; आलेख्यम्; 'उत्तमाधमभावेन वर्तन्ते पटचित्रवत्'—इति पञ्चदश्याम् (६।५)। अलङ्कारविशेषः; 'तच्चित्रं यत्र वर्णानां खड्गाद्याकृतिहेतुता।' अष्टिसंज्ञकषोडशाक्षरावृत्तिच्छन्दोभेदः; 'चित्रसंज्ञमीरितं समानिकापदद्वयम्' इति छन्दोमञ्जर्याम्। 'विद्रुमारुणाधरोष्ठशोभिवेणुवाद्यहृष्ट,वल्लवीजनाङ्गसङ्गजातमुग्धकण्टकाङ्ग!, त्वां सदैव वासुदेव! पुण्यलभ्यपाद! देव! वन्यपुष्पचित्रकेश! संस्मरामि गोपवेश!' आकाशः; कुष्ठविशेषः; आश्चर्यान्वितः; त्रि.। 'चित्राः श्रोतुं कथास्तत्र परिवव्रुस्तपस्विनः'—इति महाभारते (१।१।३)। **पुं.** [चित्रयति पापपुण्ये विचार्य चित्रं करोति लिखतीत्यर्थः। चित्र+णिच्+अच्: यद्वा चीयन्ते उपचीयन्ते प्रेतलोका येन] यमविशेषः; 'वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय वै नमः'—इति तिथ्यादितत्त्वे। सर्पविशेषः; 'कृष्णश्च लोहितश्चैव पद्मश्चित्रश्च वीर्यवान्'—इति महाभारते (२।९।८)। एरण्डवृक्षः; अशोकवृक्षः; चित्रकवृक्षः; धृतराष्ट्रपुत्रभेदः; 'चित्रोपचित्रौ चित्राक्षश्चारुचित्रः शरासनः'—इति महाभारते (१।११७।४)। ७४१

चित्रकम् क्ली. [चित्र+स्वार्थे कन्, यद्वा चित्रमिव कायति। चित्र+कै+क] तिलकं; वृक्षविशेषः; 'त्रिफला चित्रकं चित्रं तथा कटुकरोहिणी'— इति गारुडे १८७ अध्याये। पुं. व्याघ्रः; व्याघ्रभेदः; चित्रकायः; उपव्याघ्रः; मृगान्तकः; शूरः; क्षुद्रशार्दूलः; चित्रव्याघ्रः; 'चीता' इति भाषा। वृक्ष-

विशेषः; अग्निः; शार्दूलः; चित्रः; पाचीकटुः; शिखी; कृशानुः; दहनः; व्यालः; ज्योतिष्कः; पालकः; अनलः; दारुणः; वह्निः; पावकः; शम्बरः; पाची; द्वीपी; चित्राङ्गः। 'चित्रकः कटुकः पाके वह्निकृत् पाचनो लघुः। रूक्षोष्णो ग्रहणीकुष्ठशोथार्शःकृमिकासनुत्। वातश्लेष्महरो ग्राही वातार्शःश्लेष्मपित्तहृत्। विचित्रं चैत्रकं शाकं काशमर्दविमर्दितम्। तप्ततैले सबाह्लीके पाचितं तत्रसम्भृतम्—इति शब्दार्थचिन्तामणिः। ओषधिविशेषः; 'पूतिकश्चित्रकः पाठा विडङ्गैलाहरेणवः'—इति सुश्रुते। एरण्डवृक्षः;[चित्र+ष्वुन्] चित्रकारः; मुचुकुन्दः; 'मुचुकुन्दः क्षत्रवृक्षश्चित्रकः प्रतिविष्णुकः'—इति भावप्रकाशः। ५४१

चित्रकायः पुं. [चित्रो नानावर्णयुक्तः कायो देहो यस्य] व्याघ्रः; चित्रव्याघ्रः। २२६

चित्रकृत् पुं. [चित्रं नानावर्णं करोतीति। कृ+क्विप्] चित्रकरः; चित्रकारः; रङ्गाजीवः; रङ्गजीवकः; वर्णी; वर्णाटः; वर्णसङ्करजातिविशेषः [चित्रमालेख्यं करोतीति]; तिनिशवृक्षः। ५९१

चित्रपुङ्खः पुं. [चित्रः पुङ्खो यस्य] शरः; बाणः। ४६६

चित्रभानुः पुं. [चित्रा नानावर्णा भानवो रश्मयो यस्य] सूर्यः; अग्निः (६२); 'चित्रभानुः सुरेशश्च अनलस्त्वं विभावसो!'—इति महाभारते (२।३१।४२)। चित्रकवृक्षः; अर्कवृक्षः; भैरवः; संवत्सरविशेषः; 'श्रेष्ठं चतुर्थस्य युगस्य पूर्वं यच्चित्रभानुं कथयन्ति वर्षम्'—इति बृहत्संहितायाम् (८।३५)। ३७

चित्रशिखण्डी [न्] पुं. [चित्रः शिखण्डः शिखा अस्त्यस्य। 'अत इनिठनौ' इति इनि। बहुत्वे प्रयुज्यते] सप्तर्षयः; 'मरीचिरङ्गिरा अत्रिः पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः। वशिष्ठश्चेति सप्तैते ज्ञेयाश्चित्रशिखण्डिनः'—इति भरतः। 'ये हि ते ऋषयः ख्याताः सप्त चित्रशिखण्डिनः। तैरेकमतिभिर्भूत्वा यत्प्रोक्तं शास्त्रमुत्तमम्। वेदैश्चतुर्भिः समितं कृतं मेरौ महागिरौ। आस्यैः सप्तभिरुद्गीर्णं लोकधर्ममनुत्तमम्। मरीचिरत्र्यङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः। वशिष्ठश्च महातेजास्ते हि चित्रशिखण्डिनः'—इति महाभारते (१२।३३५।२६-२८)। ५०

चित्रशिखण्डिप्रसूतः पुं. [चित्रशिखण्डिष्वन्यतमेनाङ्गिरसा प्रसूतः जातः] बृहस्पतिः; सुराचार्यः। ४७

चिद्रूपः त्रि. [चित् संज्ञानवत् सहानुभूतिमदिति यावत्, रूपं हृद्भावो यस्य] हृदयालुः; सहृदयः; [चिद् ज्ञानमेव रूपं यस्य] ज्ञानमयः; 'चिद्रूपे परमात्मनीति' योगशास्त्रम्। ३७३

चिन्ता स्त्री. [चिन्तनमिति। चिति चिन्तायाम्+'चिन्तिपूजिकथिकुम्बिचर्चश्च' इति अङ] चिन्तना; चिन्तनं; स्मृतिः; आध्यानम्; आध्या; ध्यानं; चिन्तितिः, चिन्तिया; 'चिता चिन्ता द्वयोर्मध्ये चिन्ता नाम गरीयसी। चिता दहति निर्जीवं चिन्ता हि जीवितं तथा।' दर्शनसम्भोगयोः प्रकारभावना; व्यभिचारिभावविशेषः; 'ध्यानं चिन्ता हितानाप्तेः शून्यताश्वासतापकृत्'—इति साहित्यदर्पणे (३।१७०)। ७९४

चिपिटः पुं. [चयतीति, चि+बाहुलकात् पिटच् स च कित्] भक्ष्यद्रव्यविशेषः; पृथुकः; चिपिटकः; चिपुटः; धान्यचमसः; चिपीटकः; 'चिउड़ा' इति भाषा। 'शालयः सतुषा आर्द्रा भ्रष्टा अस्फुटितास्ततः। कुट्टिताश्चिपिटाः प्रोक्तास्ते स्मृताः पृथुका अपि'—इति भावप्रकाशः। 'शालेया यावनालाद्याश्चिपिटाः पुष्टिवर्द्धनाः'—इति राजनिर्घण्टः। [नि नता नासिका विद्यतेऽस्य, 'इनच्पिटच्चिकचि च' इति पिटच् प्रकृतेश्चिरादेशश्च] नतनासिके त्रि.।' 'दिग्वक्त्रं चिपिटं चैव व्यङ्गजं सुरजन्तथा।' 'तुङ्गहीनं च चिपिटं व्यङ्गं चानर्थदर्शनम्'—इति विश्वकर्मप्रकाशे (१३।२,५)। चिपिटाकारमुखादौ; 'वक्रो ह्रस्वश्च चिपिटः सुखसौभाग्यभञ्जकः'—इति काशीखण्डे (३७।१४)। 'चिपिटः चिपिटाकाकारः'—इति तट्टीका। ५८५

चिपुटः पुं. [चिपिट+पृषोदरादित्वात् साधुः] चिपिटकः; चिपिटः। ५८५

चिबुकम् क्ली. [चि+मृगय्वादित्वात् कु, बुक्, चिबु+स्वार्थे कन्, अभिधानात् क्लीबत्वम्] अधराधोभागः; 'उत्तम्य चिबुकं वक्षस्युत्थाप्य पवनं शनैः'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् (१।४६)। ५२५, ८७३।

चिरजीवी [न्] पुं. [चिरं जीवतीति। चिरम्+जीव्+णिनि] काकः; विष्णुः; जीवकवृक्षः; शाल्मलिवृक्षः; 'अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनूमांश्च विभीषणः। कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः। सप्तैतान् संस्मरेत् प्रातः मार्कण्डेयमथाष्टमम्'—इति प्रातःकृत्ये। बहुकाल-

जीविनि त्रि.। 'अथ राज्ञो बभूवैवं वृद्धस्य चिरजीविनः' —इति रामायणे (२।१।३६)। २४५

चिरञ्जीवी [न्] पुं. [चिरं जीवतीति। चिरम्+जीव्+णिनि] काकः; विष्णुः; जीवकवृक्षः; शाल्मलिवृक्षः; चिरजीविनि त्रि.। २४५

चिरण्टी स्त्री. [चिरात् चिरेण वा अटति पितृगृहादिति। चिर+अट्+अच्, 'वयसि प्रथमे' इति ङीप्, ततः पृषोदरादित्वात् साधुः] द्वितीयवयाः स्त्री; युवती; स्ववासिनी; ऊढा अनूढा वा पितृगेहस्थिता कन्या; सुवासिनी। ४८४।

चिरम् अव्य. [चि+रमुक्] चिरार्थं; दीर्घकालार्थं; चिराय; चिरस्य; चिररात्राय; चिरात्; चिरेण; 'तथापि शस्त्रव्यवहारनिष्ठुरे विपक्षभावे चिरमस्य तस्थुषः'—इति रघुवंशे (३।६२)। ८७३

चिररात्रम् क्ली. [चिरा रात्रिरिति। योगविभागाद् अच् समासे] दीर्घकालः; 'चिररात्रोषिताः स्मेह ब्राह्मणस्य निवेशने'—इति महाभारते (१।१६८।३)। ८७३

चिररात्राय अव्य. [चिररात्रं अयते इति। चिरात्र+अय्+'कर्मण्यण्' इत्यण्] दीर्घकालः; 'हविर्यच्चिरत्राय यच्चानन्त्याय कल्पते। पितृभ्यो विधिवद्दत्तं तत्प्रवक्ष्याम्यशेषतः'—इति मनुः (३।२६६)। ८७३

चिरस्य अव्य. [चिरमस्यते इति। अस्+यत्, शकन्ध्वादित्वात साधुः] दीर्घकालः; 'चिरस्य खलु कृष्णेन संस्मृतोऽस्मि महात्मना'—इति हरिवंशे (१२६।२३)। ८७३

चिरात् अव्य. [चिरम् अततीति। चिर+अत्+क्विप्] चिरे; दीर्घकालः; 'भो भगिनीसुत! किमिति चिराद् दृष्टोऽसि'–इति पञ्चतन्त्रे। पुं. [चिरं चिरेण वा अत्ति। अद्+क्विप्] गरुडः। ८७३

चिराय अव्य. [चिरम् अयते। चिर+अय्+अण्] दीर्घकालः; 'पुरा धर्मो वर्तते नेह यावत् तावद् गच्छामः सुरलोकं चिराय'—इति महाभारते। ८७३

चिरेण अव्य. [चिरम्+इन] चिरम्; 'भावावबोधकलुषा दयितेव रात्रौ निद्रा चिरेण नयनाभिमुखी बभूव'—इति रघुवंशे (५।६४)। ८७३

चिर्भटी स्त्री. [चिरेण भटतीति,। चिर+भट्+अच्। गौरादित्वाद् ङीष्, पृषोदरादित्वात् साधुः] कर्कटी; 'अहो अविवेकोऽस्मद्भूपतेर्यः पुरीषोत्सर्गमाचरंश्चिभटीभक्षणं करोति'—इति पञ्चतन्त्रे (१।१६७)। २०९

चिलिचिमः पुं. [चिरिं हिंसां चिनोतीति। चिरि+चि+मक्। रस्य लत्वम्] मत्स्यविशेषः; नलमीनः; तलमीनः; चिलीचिमिः; चिलीचिमः; चिलिचीमः; चेलिचीमः; चिलीमः; चिलिमीनकः; चिलिचीमिः; कवलः; विलोटकः; चेङ्गमत्स्यः। ६५८

चिल्लः पुं. [चिल्लति हावभावेन उड्डीयते इति। चिल्ल्+अच्] पक्षिविशेषः; आतायी; शकुनिः; आतापी; खभ्रान्तिः; कण्ठनीडकः; चिरम्भणः; 'चील' इति भाषा। 'गृध्रः कङ्कः कपोतश्च उलूकः श्येन एव च। चिल्लश्च चर्मचिल्लश्च भासः पाण्डर एव च'—इति विष्णुधर्मोत्तरे। (६०७) [क्लिन्ने चक्षुषी अस्य, 'क्लिन्नस्य चिल् पिल् लश्चास्य चक्षुषी' इति चिलादेशो लप्रत्ययश्च] त्रि. क्लिन्ननेत्रयुक्तः; क्लिन्नचक्षुः। २५०

चिबुकम् क्ली. [चीव्+मृगय्वादित्वात् कु, ह्रस्वः, चिबु+स्वार्थे कन्, अभिधानात् क्लीवत्वम्] अधराधोभागः; 'ठोड़ी' इति भाषा। पुं. [चिबुरिव कायतीति। चिबु+कै+क] मुचुकुन्दवृक्षः। ५२५

चिह्नम् क्ली. [चिह्नयतेऽनेनेति। चिह्न लक्षणे+करणे घञ्] कलङ्कः; अङ्कः; लाञ्छनं; लक्ष्म; लक्षणं; लिङ्गं; लक्ष्मणः; अभिज्ञानम्; 'वैन्यस्य दक्षिणे हस्ते दृष्ट्वा चिह्नं गदाभृतः। पादयोररविन्दं च तं वै मेने हरेः कलाम्'—इति भागवते (४।१५।९)। पताका। ४५

चीरम् क्ली. [चिनोति आवृणोति वृक्षं कटिदेशादिकं वा। चि+'शुस्विचिमीनां दीर्घश्च' इति क्रन् दीर्घश्च] वस्त्रम्; वृक्षत्वक्; 'प्रागेव तु महाबुद्धिः सौमित्रिर्भ्रातृवत्सलः। पूर्वजस्यानुयात्रार्थं द्रुमचीरैरलङ्कृतः'—इति रामायणे (५।३१।२२)। जीर्णवस्त्रखण्डः; 'चीराणि किं पथि न सन्ति दिशन्ति भिक्षां, नैवाङ्घ्रिपाः परभृतः सरितोऽप्यशुष्यन्'—इति भागवते (२।२।५)। गोस्तनः; वस्त्रभेदः; 'चीरवासा द्विजोऽरण्ये चरेद् ब्रह्महणो व्रतम्' —इति मनुः (११।१०१)। रेखाभेदः; लेखनभेदः; चूडा; 'मुञ्जवज्जर्जरीभूता बहवस्तत्र पादपाः। चीराणीव व्युदस्तानि रेजुस्तत्र महावने'—इति महाभारते (३।११।४९)। सीसकम्। ५४८

चीरिल्लिः पुं.—सहामत्स्यः। ६६०

चीरी स्त्री. [चीरि+'कृदिकारादिति' वा ङीष्] झिल्ली; चीरिका; चीलिका; चील्लका; कच्छाटिका। २५६

चुचुकम् क्ली—चुचूकं, चूचुकं, कुचामनं, स्तनवृन्तम्। ३२६

चुण्टा स्त्री. [चुण्ट्यतेऽसाविति। चुण्ट् छेदे+घञ्। मृत्तिकाखननेन जायमानत्वात्तथात्वम्] कूपः। ६८४

चुण्टी स्त्री.—कूपः; उपकूपं; कूपसमीपे स्वल्पजलाधारः। ६८४

चुन्दी स्त्री. [चोदयति प्रेरयति घटयतीत्यर्थः; नायकादीनिति। चुद्+क। निपातनात् नुमागमः, ततः स्त्रियां ङीप्] कुट्टनी। ४९२

चुम्बकः पुं. [चुम्बति आकर्षति लौहमिति। चुम्ब्+ण्वुल्] कान्तलोहभेदः; कान्तपाषाणः; अयस्कान्तः; लोहकर्षकः; घटस्योर्ध्वावलम्बनं; त्रि. [चुम्बतीति, चुम्ब्+ण्वुल्] चुम्बनपरः; धूर्तः; बहुग्रन्थैकदेशज्ञः; पल्लवग्राहिविद्वान्। १६९

चुरी स्त्री. [चुर्+क, स्त्रियां ङीप्] उपकूपः; कूपसमीस्थाल्पजलाधारः। ६८४

चुल्लः त्रि. [क्लिन्ने चक्षुषी अस्य। 'चुल् चेति' क्लिन्नस्य चुलादेशो लप्रत्ययश्च] क्लिन्नचक्षुर्युक्तः; पुं. क्लिन्नचक्षुः। ६०७

चुल्लिः स्त्री. [चुल्ल्यते प्रज्वाल्यते अग्निरत्र। चुल्ल्+'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्, यद्वा चुद्यते प्रेर्यते अग्निर्यत्र। चुद्+बाहुलकात् लिक्] पाकार्थमग्निस्थानम्; अश्मन्तम्; उद्ध्मानम्; उद्धानम्; अधिश्रयणी; अन्तिका; अस्मन्तम्; उष्मानम्; उद्धारं, चुल्ली, आन्दिका; उद्धानिः। 'चूल्हा' इति भाषा। ३१३

चुल्ली स्त्री. [चुल्लि+'कृदिकारादक्तिनः इति' वा ङीष्] उद्धानं; चिता। ३१३

चूचुकम् क्ली.–पुं. [चूष्यते पीयते इति, चूष पाने+बाहुलकात् उक षस्य चत्वञ्च] चुचुकं; चुचूकं; कुचाननं; स्तनवृन्तम्; 'स्तनौ च विरलौ पीनौ समौ मे मग्नचूचुकौ'—इति रामायणे (६।२३।१३)। ५२६

चूचूकम् क्ली. [चुचुक+पृषोदरादित्वाद् दीर्घः] चुचुकं; कुचाग्रम्। ५२६

चूडा स्त्री. [चोलयति मस्तकाद्युपरि उन्नता भवतीति। चुल् समुच्छ्राये+भिदादित्वादङ ततो दीर्घस्ततो लस्य डत्वे साधुः] मयूरशिखा; (७९९) शिरोमध्यस्थशिखामात्रं; शिखा; केशपाशी; जूटिका; जुटिका; 'शिखा चूडा केशपाशी जूटिका जुटिकेत्यपि। शिरोमध्यबद्धचूडे भवेदेतत्तु पञ्चकम्'—इति शब्दरत्नावल्याम्। वलभी (वडभी); बाहुभूषणम्; अग्रम्; 'अस्ताचलचूडावलम्बिनि भगवति चन्द्रमसि'—इति हितोपदेशे। कूपः; दशसंस्कारान्तर्गतसंस्कारविशेषः; चूडाकरणम्; 'चूडा कार्या यथाकुलम्'—इति मलमासतत्त्वम्। 'अयुग्माब्दे तथा मासि चूडा भौमशनीतरे। अर्केन्दुकालशुद्धौ च जन्ममासेन्द्रभादृते' —इति संस्कारतत्त्वधृतज्योतिषवचनम्। शिरोभूषणं; मुकुटकिरीटादिकम्। २४२

चूडामणिः पुं. [चूडा शिरोभूषणं मुकुटकिरीटादिकं तत्र स्थितो मणिः। शाकपार्थिवादित्वात् समासः] शिरोरत्नम्; 'ततश्चूडामणिं निष्कमङ्गदे कुण्डलानि च।' [चूडायामग्रभागे मणिरिव यस्य] काकचिञ्चाफलं; योगविशेषः; स तु ग्रहणकाले एव भवति—'सूर्यग्रहः सूर्यवारे सोमे सोमग्रहस्तथा। चूडामणिरयं योगस्तत्रानन्तं फलं स्मृतम्। अन्यस्माद्ग्रहणात् कोटिगुणमत्र फलं लभेत्'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। शुभाशुभगणनाविशेषः; योग्यतोपाधिविशेषः। ५६४

चूतः पुं. [चूष्यते पीयते इति। चूष्+कर्मणि क्त, पृषोदरादित्वात् षलोपः; रसालत्वादेवास्य तथात्वम्] आम्रवृक्षः; चूतकः; 'परिचुम्बति संविश्य भ्रमरश्चूतमञ्जरीम्। नवसङ्गमसंहृष्टः कामी प्रणयिनीमिव'—इति रामायणे (३।७९।१७)। [चोतति क्षरति शोणितादिकमस्मादिति। चुत् क्षरणे+बाहुलकात् घञर्थे क दीर्घश्च] गुदद्वारं; च्यूतः। १९२

चूतकः पुं. [चूत एव। चूत+स्वार्थे कन्] कूपकः; आम्रः। ६८४

चूर्णः पुं. [चूर्ण्यते सम्पिष्यते इति। चूर्ण+कर्मणि घञ्] क्षोदः; चूर्णं; रजः; 'कन्याश्चन्दनचूर्णैश्च लाजैर्माल्यैश्च सर्वशः। अवाकिरञ्छान्तनवं तत्र गत्वा सहस्रशः' इति महाभारते (६।११८।३)। 'अभावे शालिचूर्णं वा'

इति सत्यव्रतविधाने। धूलिः; क्षारविशेषः; 'पर्णानि शीर्णवर्णानि सीदन्त्याकर्णलोचने ! चूर्णमानीयतां तूर्णं पूर्णचन्द्रनिभानने!' क्ली. सम्पेषणेन जातरजः; 'अत्यन्त-शुष्कं यद् द्रव्यं सुपिष्टं वस्त्रगालितम्। तत् स्याच्चूर्णं रजः क्षोदस्तन्मात्रा कर्षसम्मिता। चूर्णे गुडः समो देयः शर्करा द्विगुणा मता। चूर्णेषु भर्जितं हिङ्गु देयं नोत्क्लेद-कृद्भवेत्। लिहेच्चूर्णं द्रवैः सर्वं घृताद्यैर्द्विगुणोन्मितैः'—इति भावप्रकाशः। अवीरं; गन्धगुडा; वासयोगः; वासयुक्तिः; गन्धयुक्तिः; पटयुक्तिः; कुङ्कमादिरजः; 'अलकेषु चमूरेणुश्चूर्णप्रतिनिधीकृतः'—इति रघुवंशे (४।५४)। ४४३

चूलिका स्त्री. [चोलयति सन्निहितचर्ममांसराशिम् उन्नयतीति। चुल्+ण्वुल्+कपि अत इत्वञ्च, पृषोदरादित्वाद् दीर्घत्वे साधुः] हस्तिकर्णमूलं; गजकर्णमूलं; नाटकाङ्गविशेषः। २१७

चूषा स्त्री. [चूष्यते पीयते पृष्ठमांसेनादृश्यतां नीयते इति। चूष्+घञर्थे क] कक्ष्या; 'तंग' इति भाषा। २२१

चेटः पु. [चेटतीति, चिट् परप्रेष्ये+अच्] दासः; चेटकः; 'एतत्तस्य मुखाच्छ्रुत्वा राजचेटस्य दुर्मनाः।' स तु काव्ये शृङ्गारसहायः; 'शृङ्गारस्य सहाया विटचेटविदूषकाद्याः स्युः'—इति साहित्यदर्पणे (३।४६)। ३६५

चेटी स्त्री. [चेट+ङीप्] दासी। ४९२

चेडः पुं. [चेटति परप्रेष्यत्वं करोतीति। चिट्+अच्। टस्य डत्वञ्च] दासः; चेडकः; चेटः; चेटकः। ३६५

चेडी स्त्री. [चेड+ङीप्] दासी। ४९२

चेतः [स्] क्ली. [चेतत्यनेन इति। चित्+करणेऽसुन्] चित्तम्; 'ताभ्यां निर्विचिकित्सेऽर्थे चेतसः स्थापितस्य यत्'—इति पञ्चदश्याम् (१।५४)। ५३४

चेतनः पुं. [चेतति जानाति सर्वम् इति। चित्+कर्तरि ल्यु] प्राणी; 'रथादौ नियता चेष्टा चेतनेनाधितिष्ठते। न दृष्टा चेतनस्तेन प्राणादीनां प्रवर्तकः'—इति शब्दार्थचिन्तामणिः। मनुष्यः; आत्मा, यथा पञ्चदश्याम्—'चेतना चेतनभिदा कूटस्थात्मकृता नहि। किन्तु बुद्धिकृताभासकृतैवेत्यवगम्यताम्' (६।४५)। [चेतनं चैतन्यं विद्यतेऽस्य इति। 'अर्श आदिभ्योऽच्' इत्यच्] प्राणयुक्ते त्रि.। 'कामार्ता हि प्रकृतिकृपणाश्चेतनाचेतनेषु'—इति मेघदूते। १३४

चेलम् क्ली. [चेल्यते विस्तार्यते तन्तुभिरिति
चलने+कर्मणि घञ्। यद्वा चिल्यते परिधीय
इति। चिल्+कर्मणि घञ्] वस्त्रं; 'चेलचर्मा
च त्रिरात्रं स्यादभोजनम्'—इति मनुः (११।१
त्रि. अधमः (३३७)। ५४८

चेष्टा स्त्री. [चेष्ट्+भावे अङ टाप् च] कायिकव्या
'आकारमिङ्गितं चेष्टां भृत्येषु च चिकीर्षितम्'
मनुः (७।६७)। 'प्रवृत्तिरत्र चेष्टा ज्ञानेच्छाप्रयत
देहेऽभावस्योक्तप्रायत्वात् चेष्टायाश्च यत्नवान
नुमीयते'—इति सिद्धान्तमुक्तावली (५५)।

चैतन्यम् क्ली. [चेतनस्य भावः। ष्यञ्] सञ्ज्ञा;
पुं. वङ्गदेशे भगवदवतारविशेषः; चैतन्यदेवः।

चैतन्यम् क्ली. [चेतन एवेति। स्वार्थे भावे वा
चेतना; सञ्ज्ञा; 'चैतन्यं परमाणूनां प्रधा
नेष्यते। ज्ञानक्रिये जगत्कर्त्र्यौ दृश्येते चेतन
इति शब्दार्थचिन्तामणिः। 'मनश्चैतन्ययुक्तोऽस
स्नायुशिरायुतः। सप्तमे चाष्टमे चैव त्वङ्म
मानपि'—इति याज्ञवल्क्ये (३।८१)। प्रकृति

चैत्यम् क्ली. पुं. [चित्यस्य इदम्, 'तस्येदम्'
बुद्धस्मारकम्; बुद्धाण्डकं; देवायतनम्;
यज्ञस्थानं; केचित्तु मुखरहितं देवकुलसदृशं
सचित्यमचित्यमपीत्याहुः। मृदा देवकुलम्।
मणिमयाश्चैत्याश्चापि हिरण्मयाः'—इति
(२।३।१२)। चिता; पुं. [चैत्ये देवायत
तिष्ठतीति। चैत्य+अण्] बुद्धः; बिम्बः; उ
देवतरुः; देवावासः; करिभः; कुञ्जरः
पतन्ति चैत्याश्च ग्रामेषु नगरेषु च'—इति
(६।३।४०)। क्षेत्रज्ञः पुरुषः; 'अहंकारस्तयो
चैत्यस्ततोऽभवत्—इति भागवते (३।२६।६०

चैत्रः पुं. [चित्रानक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी यत्र सः
'विभाषा फाल्गुनीश्रवणाकार्तिकीचैत्रीभ्यः'
अण्] मासभेदः; मीनराशिस्थरविकः सौ
स्थरविप्रारब्धशुक्लप्रतिपदादिदर्शान्तश्चान्द्रः
मधुः; चैत्री; कालादिकः; चैत्रकः;
चैत्रमासः; 'चैत्रे मास्यथ माघे वा योऽ
व्रती। करोति नर्तनं भक्त्या वेत्रपाणिर्वि
मासं वाप्यर्द्धमासं वा दशसप्त दिनानि वा

युगं सोऽपि शिवलोके महीयते'—इति ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिखण्डम्। क्ली. [चीयन्ते जीवाः स्थानात् स्थानान्तरमनेनेति। चि+बाहुलकात् करणे त्रन्, ततः स्वार्थे अण्] मृतं; देवकुलं; यज्ञस्थानं; 'भीष्मेण धर्मतो राजन्! सर्वतः परिरक्षिते। बभूव रमणीयश्च चैत्ययूपशताङ्कितः'—इति महाभारते (१।१०९।१३)। ११४

चैत्ररथम् क्ली. [चित्ररथेन गन्धर्वेण निर्वृत्तम्, 'तेन निर्वृत्तम्' इत्यण्] कुवेरस्योपवनं; तत्तु चित्ररथ–गन्धर्वनिर्मितम्; 'एको ययौ चैत्ररथप्रदेशान् सौराज्यरम्यानपरो विदर्भान्'—इति रघुवंशे (५।६०)। पुं. कुरुपुत्रविशेषः; 'अविक्षितमभिष्वन्तं तथा चैत्ररथं मुनिम्। जनमेजयं च विख्यातं पुत्रांश्चास्यानुशुश्रुम'—इति महाभारते (१।९४।४९)। ८३

चोद्यम् क्ली. [चोदयति प्रेरयति चित्तं रसविशेषे अनेनेति। चुद्+णिच्+ण्यत्] अद्भुतं; प्रश्नः; 'सत्यं ध्यानं समाधानं चोद्यं वैराग्यमेव च। अस्तेयं ब्रह्मचर्यं च तथा संग्रहमेव च'—इति महाभारते (५।४३।३४)। त्रि. [चोदयितुं प्रेरयितुं योग्यः। 'अर्हे कृत्यतृचश्च' इति यत्] चोदनार्हः; प्रेरणयोग्यः; 'नीवारमूलेङ्गुदशाकवृत्तिः सुसंयतो चाग्निकार्येषु चोद्यः। वने वसन्नतिथिष्वप्रमत्तो धुरन्धरः पुण्यकृदेष तापसः'—इति महाभारते (५।३८।७)। ७४५

चोरः पुं.– स्त्री. [चोरयतीति, चुर+णिच्+पचाद्यच्] स्तेयकर्ता; चौरः; दस्युः; तस्करः; प्रतिरोधी; मलिम्लुचः; स्तेनः; ऐकागारिकः; स्तैन्यः; प्रच्छन्नजनः; मोषकः; पाटच्चरः; परास्कन्दी; कुम्भिलः; खनकः; शङ्कितवर्णः; खानिकः; प्रचुरपुरुषः; तृपुः; तक्का; रिम्बा; रिपुः; रिक्का; विहायाः; तायुः; वनर्गुः; हुरश्चित्; मूषीवान्; अघशंसः; वृकः। 'चोरेषु चौरबुद्धिस्ते साधुबुद्धिस्तु तापसे। स्वपरत्वं तवाप्यस्ति विदेहस्त्वं कथं नृप!'–इति देवीभागवते (१।१९।६)। पश्यतोहरः (३३९); कृष्णशटी; गन्धद्रव्यविशेषः; 'चोरकुङ्कुमरोचनाः' इत्यष्टगन्धकथने आगमः। ३३८

चौरः पुं.– स्त्री. [चोर एव, प्रज्ञादिभ्योऽण्, यद्वा चुरा शीलमस्य इति, 'छत्रादिभ्यो णः'] चोरः; 'चौरं वा तापसं वापि समानं मन्यते कथम्'—इति देवीभागवते (१।१६।५९)। पश्यतोहरः (३३९); असुरविशेषः; 'किरातीं चीरवसनां चौरसेनानमस्कृताम्'—इति हरिवंशे (१७६।१०) कविभेदः; 'कविरमरः कविरमरुः कविश्चौरो मयूरकः'—इत्युद्भटः। चोरपुष्पी; सुगन्धिद्रव्यविशेषः; शङ्कितः; खङ्गः; दुष्पत्रः; क्षेमकः; रिपुः; चपलः; कितवः; धूर्तः; पटुः; नीचः; निशाचरः; गणहासः; कोपनकः; चोरः; फलचोरकः; दुष्कुलः; ग्रन्थिलः; सुग्रन्थिः; पर्णचोरकः; ग्रन्थिपर्णः; ग्रन्थिदलः; ग्रन्थिपत्रः। ३३८

चौर्यम् क्ली. [चोरस्य कर्म भावो वा। 'गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च' इति ष्यञ्] चौरधर्मः; स्तैन्यं; स्तेयं; चौरिका; चौरी; चोरिका; 'चोरी' इति भाषा। 'सन्धिं छित्त्वा तु ये चौर्यं रात्रौ कुर्वन्ति तस्कराः। तेषां छित्त्वा नृपो हस्तौ तीक्ष्णशूले निवेशयेत्'–इति मनुः (९।२७६)। ३३९

छ

छगः पु.– स्त्री. [छं यज्ञादौ छेदनं गच्छति प्राप्नोतीति। छ+गम्+ड] छागः; छगलकः; छगलः; अजः। २७७

छगलकः पुं.–स्त्री. [छगल+स्वार्थे कन्] छागः; छगलः। २७७

छत्रम् क्ली. [छादयत्यनेनातपादिकमिति। छद्+'सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्' इति ष्ट्रन्] घर्मवृष्टिनिवारणार्थावरणभेदः; आतपत्रं; छायामित्रं; पटोटजं; आतपवारणं; राजछत्रं; 'छाता' इति भाषा। 'छत्रे कनकदण्डे तु रागभृङ्गमुदाहृतम्। नृपलक्ष्म भवेत्तत्तु यच्छत्रं पृथिवीभुजाम्'—इति शब्दरत्नावल्याम्। पुं [छद्+णिच्+ष्ट्रन् ह्रस्वश्च] मूलेन पत्रेण च वचाकारवृक्षः; अतिच्छत्रः; कटुः; भूततृणं; 'कुकुरमुत्ता' इति भाषा। ४२३

छत्रकः पुं. [छत्रमिव कायति इति। कै+क] अतिच्छत्रः; मत्स्यरङ्गपक्षी; ईश्वरगृहविशेषः। ८३१

छदः पुं. [छदति आच्छादयतीति। छद्+अच्] पत्रम्; 'ततो न्यग्रोधमासाद्य महान्तं हरितच्छदम्'—इति रामायणे (२।५५।६)। पक्षः (२३९); ग्रन्थिपर्णवृक्षः; तमालवृक्षः। १८५

छद्म [न्] क्ली. [छद्यते आव्रियते स्वरूपमनेनेति। छद्+'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति मनिन्] कपटः; व्याजः; 'तं कर्णमूलमागत्य रामे श्रीर्न्यस्यतामिति। कैकेयीशङ्कयेवाह पलितच्छद्मना जरा'––इति रघुवंशे

(१२।२)। शाठ्यम्; अपदेशः; स्वरूपाच्छादनम्। ७०९

छन्दः [स्] क्ली. [चन्दयति आह्लादयति, चन्द्यतेऽनेन वा। चदि आह्लादे+'चन्देरादेश्च छः' इति असुन् चस्य छश्च] वेदः; 'आसीन्महीक्षितामाद्यः प्रणवश्छन्दसामिव'—इति रघुवंशे (१।११)। स्वैराचारः; अभिलाषः; 'कामात्मकाश्छन्दसि कर्मयोगा एभिर्विमुक्तः परमश्नुवीत'–इति महाभारते(१२।२०१।१२)। नियतवर्णमात्रादिः शब्दगुम्फभेदः; पद्यम्। ९

छन्नः त्रि. [छद्+क्त] व्याप्तः; 'न हया न रथो वीर ! न यन्ता मम दारुकः। अदृश्यन्त शरैश्छन्नास्तथाहं सैनिकाश्च मे'—इति महाभारते (३।२०।२४)। छादितः; क्ली. रहः; निर्जनस्थानम्। ७०२

छलम् क्ली. [छो+वृषादित्वात् कलच्। यद्वा छल्+अच्] व्याजः; 'सा वै मदालसा पुत्रं बालमुत्तानशायिनम्। उल्लापनच्छलेनाह रुदमानमविस्वरम्'—इति मार्कण्डेये (२५।१०)। स्खलितं; शाठ्यम्; 'धर्मेण व्यवहारेण च्छलेनाचरितेन च। प्रयुक्तं साधयेदर्थं पञ्चमेन बलेन च'—इति मनुः (८।४९)। तात्पर्यान्तरेण प्रयुक्तस्य शब्दस्यार्थान्तरेण कथनम्; 'वचनविघातोऽर्थविकल्पोपपत्त्या च्छलम्'—इति अक्षपादसूत्रे। ७०९

छागः पुं.–स्त्री. [छायते छिद्यते देवबलये इति। छो+'छापूखडिभ्यः कित्' इति गन्] पशुविशेषः; वस्तः; छगलकः; अजः; स्तुभः; छगः; छगलः; छागलः; तभः; स्तभः; शुभः; लघुकामः; ऋष्यसदः; वर्करः; पर्णभोजनः; लम्बकर्णः; मेनादः; वुक्कः; अल्पायुः; शिवाप्रियः; अबुकः; मेध्यः; पशुः; पयस्वलः। 'छागलो वर्करश्छागो वस्तोऽजश्छेलकः शुभः। छागमांसं लघु स्निग्धं स्वादुपाकं त्रिदोषणुत्'–इति भावप्रकाशः। २७७

छात्रः पुं. [छत्रं गुरोर्दोषाणामावरणं तच्छीलमस्येति। 'छत्रादिभ्यो णः' इति ण] शिष्यः; 'भूभुजा दानशौण्डेन पैत्रिके स्थण्डिले कृतः। छात्राणामार्यदेश्यानां तेन विद्यार्थिनां मठः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (६।८७)। क्ली. वरटाच्छत्रसम्भवं मधु; 'वरटाः कपिलाः पीताः प्रायो हिमवतो वने। कुर्वन्ति छत्रकाकारं तज्जं छात्रं मधुस्मृतम्'—इति भावप्रकाशः। ४००

छान्दसः पुं. [छन्दो वेदं अधीते वेत्ति वा। छन्दस्+'तदधीते तद्वेद' इत्यण्] वेदाध्येता; [छन्द एवेति, स्वार्थे अण्] वेदः; 'मन्ये त्वां विषये वाचां स्नातमन्यत्र छान्दसात्'—इति भागवते (१।४।१३)। त्रि. [छन्दसो व्याख्यानं, तत्र भवः, 'छन्दसो यदणौ' इत्यण्। छन्दसोऽयम्, 'तस्येदम्' इत्यण्] वेदसम्बन्धी; वेदभवः; स्त्रियां तु ङीप्। 'छान्दसीभिरुदाराभिः श्रुतिभिः समलङ्कृतः'—इति हरिवंशे (२१५।७)। ३९५

छायातनयः पुं. [छायायाः सूर्यपत्न्यास्तनयः पुत्रः] शनिः; छायात्मजः; शनिग्रहः; छायासुतः। ४८

छिद्रम् क्ली. [छिद्यते भिद्यते यत्। छिदिर्+ 'स्फायितञ्चिवञ्चीति' रक्] भेदः; कुहरं; शुषिरं; विवरं; बिलं; निर्व्यथनं; रोकं, रन्ध्रं; श्वभ्रं; वपा; शुषिः; स्वभ्रं; शुषी; 'छेद' इति भाषा। 'ततो गच्छेत धर्मज्ञ ! हिमवत्सुतमर्बुदम्। पृथिव्यां यत्र वै छिद्रं पूर्वमासीत् युधिष्ठिर !'—इति महाभारते (३।८२।५३)। अवकाशः; नवमसंख्या; दूषणम्; 'बहुविघ्नश्च नृपते ! क्रतुरेष स्मृतो महान्। छिद्राण्यस्य तु वाञ्छन्ति यज्ञघ्ना ब्रह्मराक्षसाः'—इति महाभारते (२।१२।२९)। लग्नादष्टमस्थानम्; 'छिद्राख्यमष्टमं स्थानम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। ६२४

छुच्छुन्दरी स्त्री. [छुछुमित्यव्यक्तशब्दो दीर्यति निर्गच्छत्यस्याः। छुछुम्+दृ+'सर्वधातुभ्य इन्' ततः कृदिकारादिति ङीष्] जन्तुविशेषः; गन्धमूषा; चिक्कः; वेशमनकुलः; पुंवृषः; गन्धमूषिकः; गन्धमूषिका; सुगन्धिमूषिका; गन्धशुण्डिनी; शुण्डिमूषिका; गन्धाखुः; गन्धनकुलः; चुन्चुः; छुच्छुन्दरिः। 'अभ्यङ्गान्नाशयेत् क्षिप्रं गण्डमालां सुदारुणाम्। छुच्छुन्दर्या विपक्वन्तु क्षणात्तैलवरं ध्रुवम्'—इति वैद्यके। २३५

छेकः त्रि. [छयति वनवासादिदुःखं छिनत्ति नाशयतीति। छो छेदने+बाहुलकात् डेकन्] विदग्धः; गृहासक्तपक्षिमृगौ; गृह्यकः; नागरः; शब्दालङ्कारविशेषः; अनुप्रासभेदः; 'छेको व्यञ्जनसङ्घस्य सकृत्साम्यमनेकधा'—इति साहित्यदर्पणे (१०।४)। ३८५

छेदनम् क्ली. [छिद्+भावे ल्युट्] अस्त्रेण द्विधा करणं; वर्द्धनं; कर्तनं; कल्पनं; छेदः; 'फलदानां तु वृक्षाणां छेदने जप्यमृक्शतम्'—इति मनुः (११।१४२)। नाशः; अपनोदनम्; 'श्रुत्वैव तु महात्मानो मुनयोऽभ्य-

द्रवन् द्रुतम्। सनत्कुमारं धर्मज्ञं संशयच्छेदनाय वै'—इति महाभारते (३।१८५।२४)। भेदः; [छिनत्तीति। छिद्+यु] छेदके त्रि.। 'प्रच्छन्नो वा प्रकाशो वा योगो योऽरिं प्रबाधते। तद्वै शस्त्रं शस्त्रविदां न शस्त्रं छेदनं स्मृतम्'—इति महाभारते (२।५४।९)। 'ज्वलनार्कप्रभं घोरं छेदनं सोमहारिणाम्। घोररूपं तदत्यर्थं यन्त्रं देवैः सुनिर्मितम्'—इति महाभारते (२।५४।९)। ७२९

ज

जगच्चक्षुः [स्] पुं. [जगतां भुवनानां चक्षुरिव प्रकाशकत्वात्] सूर्यः; भानुः; 'इति काशीप्रभावज्ञो जगच्चक्षुस्तमोनुदः। कृत्वा द्वादशधात्मानं काशीपुर्यां व्यवस्थितः'—इति काशीखण्डे (४६।४४)। ३७

जगत् क्ली. [गच्छतीति, गम्+'द्युतिगमिजुहोतीनां द्वे च' इति क्विपि द्वित्वे च 'गमः क्वौ' इति मलोपे तुक्] विश्वं; जगती; लोकः; पिष्टपं; भुवनं, विष्टपं; संसारः; 'यदा स देवो जागर्ति तदेदं चेष्टते जगत्। यदा स्वपिति शान्तात्मा तदा सर्वं निमीलति'—इति मनुः (१।५२)। पुं. वायुः [गच्छति इतस्ततो वातीति]; महादेवः [गच्छन्त्यस्मिन् जीवा इति]; 'विमुक्तो मुक्ततेजाश्च श्रीमान् श्रीवर्द्धनो जगत्'—इति महाभारते (१३।१७।१५१)। जङ्गमे त्रि.। १३३

जगत्कर्ता [ऋ] पुं. [करोतीति, कृ+तृच्, ततो जगतः कर्ता कारकः] सृष्टिकर्ता; ब्रह्मा। ७

जगत्प्राणः पुं. [जगतः विश्वस्यजीवानां प्राणो जीवनम्] वायुः; समीरणः; सदागतिः; गन्धवहः; अनिलः; आशुगः; वातः; पवनः; मारुतः। ७५

जगती स्त्री. [गच्छति कार्यत्वात् नष्टा भवतीति। गम्+'वर्तमाने पृषद्बृहन्महज्जगच्छतृवच्च' इति ङीप्] पृथ्वी; 'तमायान्तं ततो देवी सर्वदैत्यजनेश्वरम्। जगत्यां पातयामास भित्त्वा शूलेन वक्षसि'—इति मार्कण्डेये (९।२२)। भुवनम् (७९४); 'स्वप्नेऽपि सागरं शुष्कं चन्द्रं च पतितं भुवि। उपरुद्धां च जगतीं तमसेव समावृताम्'—इति रामायणे (२।६९।११)। जनः; छन्दोविशेषः; द्वादशाक्षरा वृत्तिः; त्रिष्टुप् च जगती चैव तथातिजगती मता'—इति छन्दोमञ्जर्याम्। जम्बूद्वीपम्। १५९

जगद्विनाशः पुं. [जगतां विनाशो ध्वंसः अखिलकार्यनाशः इत्यर्थः, यस्मिन्] युगान्तः; प्रलयः। ११७

जगन्नाथः पुं. [जगतां नाथः ईश्वरः] विष्णुः; नारायणः; 'देवदेव! जगन्नाथ! भूतभव्यभवत्प्रभो! तपश्चरसि कस्मात्त्वं किं ध्यायसि जनार्दन'—इति देवीभागवते (१।४।३६)। पुरुषोत्तमक्षेत्रम्; 'आविर्बभूव भगवान् भूतभव्यभवत्प्रभुः। गत्वा देवं जगन्नाथं स्थापयिष्यति च प्रभो!।' देवविशेषः; 'शालग्रामो हरेर्मूर्तिर्जगन्नाथश्च भारतम्। कलेर्दशसहस्रान्ते ययौ त्यक्त्वा हरेः पदम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते। पण्डितविशेषः। अयं तैलङ्गदेशोद्भवः, एतद्विरचिता ग्रन्था यथा—रसगङ्गाधरः, यमुनावर्णनचम्पूः, रतिमन्मथनाटकं, वसुमतीपरिणयनाटकं, जगदाभरणकाव्यं, प्राणाभरणकाव्यं, पीयूषलहरी, अमृतलहरी, सुधालहरी, करुणालहरी, लक्ष्मीलहरी, भामिनीविलासः, मनोरमाकुचमर्दिनी, अश्वघाटीकाव्यम्, आसफविलासः। अमुना अन्तकाले कृतः श्लोको यथा 'केचिद् ब्रह्म निराकारं नराकारं च केचन। वयन्तु दीर्घयोगेन नीराकारमुपास्महे। २४

जगरः पुं. [जागर्ति संग्रामेऽनेनेति। जागृ+अप्। पृषोदरादित्वात् साधुः] कवचः; वारवाणः। ४५९

जग्धिः स्त्री. [अद् भक्षणे+क्तिन्, 'अदो जग्धिः' —इति जग्ध्यादेशः] भक्षणम्; 'अदत्त्वा तु य एतेभ्यः पूर्वं भुङ्क्तेऽविचक्षणः। स भुञ्जानो न जानाति श्वगृध्रैर्जग्धिमात्मनः'—इति मनुः (३।११५)। ३२५

जघनम् क्ली. [हन्यते इति, हन्+'हन्तेः शरीरावयवे द्वे च' इत्यच् द्वित्वं च, 'अभ्यासाच्च' इति कुत्वम्] स्त्रीकट्याः पुरोभागः; 'नाभिह्रदैः परिगृहीतरयाणि यत्र स्त्रीणां बृहज्जघनसेतुनिवारितानि'—इति माघे (५।२९)। कटिः; 'भगवान् द्विगुणं चक्रे जघनं विस्मितौ तदा। शीर्षे सन्दधतां तत्र जघने परमाद्भुते'—इति देवी भागवते (१।९।८१)। ५१२

जघनकूपकौ पुं. [जघनकूपे इव कायतः इति। कै+क] कुकुन्दरौ; कटिस्थक्षुद्रगर्तौ। (द्विवचनान्तोऽयं शब्दः) ५१३

जघन्यः त्रि. [कुटिलं हन्यते निन्द्यते इति। हन्+यङ्लुकः ... मात् अचो यत्। यद्वा जघनमिव, 'शाखादिभ्यो यत्'

–इति यत्] गर्हितः; 'तत्र द्यूतमभवन्नो जघन्यं तस्मिन् जिताः प्रव्रजिताश्च सर्वे'—इति महाभारते (३।३५।१३)। चरमः; 'उत्तमस्य पलं मात्रा त्रिभिरक्षैश्च मध्यमे। जघन्यस्य पलार्द्धेन स्नेहक्वाथ्यौषधेषु च'—इति वैद्यके। [जघने कटिदेशे भवं, दिगादित्वाद् यत्] क्ली. मेहनम्; पुं. शूद्रः; हीनजातिमात्रम्; 'उत्तमां सेवमानस्तु जघन्यो वधमर्हति।' 'हीनजातिरुत्कृष्टजातीयां कन्यामिच्छन्तीमनिच्छन्तीं वा गच्छन् जात्यपेक्षयाऽङ्गच्छेदनमारणात्मकं वधमर्हति'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। पृष्ठभागः; 'ततो जघन्यं सहितैः स्वमन्त्रिभिः पुरप्रधानैश्च तथैव सैनिकैः। जनेन धर्मज्ञतमेन धर्मवानुपोपविष्टो भरतस्तदाग्रजम्' —इति रामायणे (२।१०४।२९) 'जघन्यं जघनभागं पृष्ठभागमाश्रितः सन्'—इति तट्टीकायां रामानुजः। राजानुचरविशेषः; 'पञ्चापरे वामनको जघन्यः कुब्जोऽपरो मण्डलकोऽथ सामी। पूर्वोक्तभूपानुचरा भवन्ति सङ्कीर्णसंज्ञाः शृणु लक्षणैस्तान्।' 'मालव्यसेवी तु जघन्यनामा खण्डेन्दुतुल्यश्रवणः सुगन्धिः। शुक्रेण सारः पिशुनः कविश्च रूक्षच्छविः स्थूलकराङ्गुलीकः। क्रूरो धनी स्थूलमतिः प्रतीतस्ताम्रच्छविः स्यात्परिहासशीलः। उरोऽङ्घ्रिहस्तेष्वसिशक्तिपाशपरश्वधाङ्कश्च जघन्यनामा'—इति बृहत्संहितायाम्(६९। ३१—३४)। ७७०

जङ्घा स्त्री. [जङ्घन्यते कुटिलं गच्छतीति। हन्, यङ्लुगन्तात्+'अन्येभ्योऽपीति' ड] गुल्फोर्ध्वजान्वधोभागः; प्रसृता; टङ्का; टङ्कं; टक्किका; 'पिंडली' —इति भाषा। 'शत्रुर्निमज्जता ग्राह्यो जङ्घायां प्रपतिष्यता'—इति महाभारते (५।१३३।१९)। ५१५

जङ्घालः त्रि. [प्रशस्ता जङ्घास्त्यस्येति। जङ्घा+'सिध्मादिभ्यश्च' इति लच्। जङ्घाबलेनैव वेगस्य जननात्तयात्वम्] अतिवेगवान्; अतिजवः; 'जाह्नवीज्या जगन्माता जप्या जङ्घालवीचिका'—इति काशीखण्डे। (२९।६४)। हरिणः; एणः; कुरङ्गः; ऋष्यः; पृषतः; न्यङ्कुः; शम्बरः; राजीवः; मुण्डी; 'जङ्घालाः प्रायशः सर्वे पित्तश्लेष्महराः स्मृताः। किञ्चिद्वातकराश्चापि लघवो बलवर्धनाः'—इति भावप्रकाशः। ३५८

जटा स्त्री. [जटति परस्परं संलग्ना भवतीति। जट्+अच्। यद्वा जायते प्रादुर्भवतीति। जन+'जनेष्टन् लोपश्च'—इति टन् अन्त्यलोपश्च] मूलम्; 'यदि न समुद्धरन्ति यतयो हृदि कामजटा, दुरधिगमोऽसतां हृदि गतोऽस्मृतकण्ठमणिः'—इति भागवते। (५३२) व्रतिनां शिखा; लग्नकचः; शटा; जटिः; जटी; जूटः; जुटकं; शटं; कौटीरं; जूटकः; हस्तम्; 'नीलाः प्रसन्नाश्च जटाः सुगन्धा हिरण्यरज्जुग्रथिताः सुदीर्घाः' —इति महाभारते (३।११२।२)। जटामांसी; नलदं; वह्निनी; पेषी; मांसी; कृष्णजटा; जटी; किरातिनी; जटिला; लोमशा; तपस्विनी; भूतजटा; पेशी; क्रव्यादिः; पिशिता; पिशी; पेशिनी; हिंस्रा; मांसिनी; जटाला; नलदा; मेषी; तापसी; चक्रवर्तिनी; माता; अमृतजटा; जननी; जटावती; मृगभक्ष्या; जडामासी; मिसी; मिसिः; मिसी; मिषिका; मिषिः; सुगन्धिद्रव्यविशेषः। १८३

जटाबन्धः पुं. [जटानां बन्धः बन्धनम्] जटाजूटः; व्रतिनां यतीनां वा जटाकलापः। १४

जठरः पुं.– क्ली. [जायते गर्भो मलं वा अस्मिन्निति। जन्+'जनेररष्ठ च'—इति अर ठश्चान्तादेशः] उदरम्; 'पृष्ठतः सेवयेदर्कं जठरेण हुताशनम्। स्वामिनं सर्वभावेन परलोकममायया'—इति हितोपदेशे (२। ४४)। पुं. देशविशेषः; 'आग्नेय्यां दिशि कोशलकलिङ्गवङ्गोपवङ्गजठराङ्गाः'—इति बृहत्संहितायाम् (१४।८)। 'अत ऊर्ध्वं जनपदान् निबोध गदतो मम। 'जठराः कुकुराश्चैव सदशार्णाश्च भारत!'—इति महाभारते। पर्वतविशेषः; 'जठरदेवकूटौ मेरुं पूर्वेणाष्टादशयोजनसहस्रमुदगायतौ द्विसहस्रपृथुतुङ्गौ भवतः' —इति भागवते (५।१६।२७)। उदररोगविशेषः; 'राजी जन्म बलीनाशो जठरे जठरेषु तु'–इति वाग्भटः। 'कोष्ठादुपस्नेहवदम्भसारो निःसृत्य दुष्टोऽनिलवेगनुन्नः। त्वचः समुन्नम्य शनैः समन्ताद्विवर्धमानो जठरं करोति'—इति सुश्रुते। ५१५

जठरम् त्रि. [जटति एकत्री भवतीति। जट्+बाहुलकादर ठान्तादेशश्च] कठिनम्; 'इदानीम् अस्माकं जठरकमठपृष्ठकठिना, मनोवृत्तिस्तत् किं व्यसनिविमुखैव क्षपयसि'—इति शान्तिशतके(४।१३)। बद्धम्। ८२५

जडः त्रि. [जलति बुद्धिं कठोरीकरोति। जल् घातने+अच्] अप्रज्ञः; मूढः; 'अस्याः सर्गविधौ प्रजापतिरभूच्चन्द्रो नु कान्तिप्रदः, शृङ्गारैकरसः स्वयं नु मदनो मासो नु पुष्पाकरः। वेदाभ्यासजडः कथं नु विषयव्यावृत्तकौतूहलो निर्मातुं प्रभवेन्मनोहरमिदं रूपं पुराणो मुनिः।' मन्थरः (३८७); मूकः (६०९); 'नापृष्टः कस्यचिद् ब्रूयाद् न चान्यायेन पृच्छतः। जानन्नपि हि मेधावी जडवल्लोक आचरेत्'-इति मनुः (२।११०)। हिमग्रस्तः; शीतलः; 'परामृशन् हर्षजडेन पाणिना तदीयमङ्गं कुलिशव्रणाङ्कितम्'—इति रघुवंशे (३। ६८) 'हर्षजडेन हर्षशिशिरेण'-इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। वधिरः; 'उन्मत्तजडमूकाश्च ये च केचिन्निरिन्द्रियाः'—इति मनुः (२।११०)। 'अन्धो जडः पीठसर्पी सप्तत्या स्थविरश्च यः'—इति मनुः (८।३९४) 'अन्धो वधिरः पङ्गुः सम्पूर्णसप्ततिवर्षः'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। निष्पन्दः; 'जडीकृतस्त्र्यम्बकवीक्षणेन वज्रं मुमुक्षन्निव वज्रपाणिः'—इति रघुवंशे (२।४२)। मोहितः; 'अथ तं सवनाय दीक्षितः प्रणिधानाद् गुरुराश्रमस्थितः। अभिषङ्गजडं विजज्ञिवान् इति शिष्येण किलान्वबोधयत्'-इति रघुवंशे (८।७५)। ३३६

जडक्रियः त्रि. [जडस्य मोहितस्येव क्रिया कार्यं यस्य] दीर्घसूत्री; चिरक्रियः। ३८३

जतु क्ली. [जायते वृक्षादिभ्य इति। जन्+'फलिपाटिनमिमनिजनामिति' उ, तोऽन्तादेशश्च] वृक्षनिर्यासविशेषः; राक्षा; लाक्षा; यावः; अलक्तः; द्रुमामयः; रक्षा; रभसः; कीटजा; क्रिमिजा; जतुका; जन्तुका; गवाषिका; जतुकं; यावकः; रक्तः; अलक्तकः; पलङ्कषा; कृमिः; वरवर्णिनी। 'जिघ्रन् सोऽस्य वसागन्धं सर्पिर्जतुविमिश्रितम्'-इति महाभारते (१।१४।१३)। ५५५

जत्रु क्ली. [जायते बाहुरस्मात्। जन्+'अश्रुवादयश्च' इति रु, नकारस्य तकारश्च] जत्रुकं; स्कन्धसन्धिः। ५२३

जनः पुं. [जायते इति, जन्+अच्] लोकः; 'अथ प्रवाते तुमुले निशि सुप्ते जने तथा। तदुपादीपयद् भीमः शेते यत्र पुरोचनः'—इति महाभारते (१।१४९। ९)। महर्लोकादूर्ध्वलोकः; पामरः; असुरविशेषः; 'समुद्रान्तवासिनो जननाम्नोऽसुरान् अर्दितवान् जनार्दनः।' २८४

जनकः पुं. [जनयति इति, जन्+णिच्+ण्वुल] पिता; जनयिता; राजभेदः; स तु मिथिलाधिपतिः। 'एवं विदेहराजस्तु पूर्वको जनकोऽभवत्। मिथिर्नाम महावीर्यो येन सा मिथिलाभवत्'—इति रामायणम्। ऋषिविशेषः; वैद्यसन्देहभञ्जनग्रन्थस्य प्रणेता; 'चकार जनको योगी वैद्यसन्देहभञ्जनम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते (१।१६।१९)। शम्बरासुरस्य पुत्रविशेषः; 'श्रुत्वा तु शम्बराद्वाक्यं सुतास्ते शम्बरस्य च। सन्नद्धा निर्ययुर्हृष्टाः प्रद्युम्नवधकाम्यया। सेनस्कन्धोऽति सेनश्च सेनको जनकस्ततः'—इति हरिवंशे (१६१।४४)। उत्पादके त्रि.। 'जनकः सर्वरोगाणां दुर्वारो दारुणो ज्वरः'—इति ब्रह्मवैवर्ते (१।१६।२७)। ५०४

जनङ्गमः पुं. [जनेभ्यो गच्छतीति। 'गमश्च' इति खच् मुगागमश्च] चाण्डालः; 'अवधीज्जनङ्गम इवैष यदि हतवृषो वृषं ननु। स्पर्शमशुचिवपुरर्हति न प्रतिमाननान्नु नितरां नृपोचिताम्'—इति माघे (१५।३५)। ५९८

जननी स्त्री. [जनयतीति। जनि+बाहुलकादनि, कृदिकारादिति वा ङीष्। यद्वा 'कृत्यल्युटो बहुलमिति' ल्युट्, टित्वाद् ङीप्] माता; प्रसूः; 'निरतिशयं गरिमाणं तेन जनन्याः स्मरन्ति विद्वांसः। यत् कमपि वहति गर्भं महतामपि यो गुरुर्भवति'—इति पञ्चतन्त्रे (१।३६)। दया; जनीनामगन्धद्रव्यं; वृक्षनिर्यासविशेषः; 'लाख' इति भाषा। 'पर्पटी रञ्जना कृष्णा जतुका जननी जनी। जतुकृष्णाग्निसंस्पर्शा जतुकृच्चक्रवर्तिनी'—इति भावप्रकाशः। चर्मचटी; यूथिका; कटुका; मञ्जिष्ठा; अलक्तकः; जटामांसी। ५०४

जनपदः पुं. [जनस्य लोकस्य पदम् आश्रयस्थानं यत्र। जनः पदं वस्तु यस्येति वा] देशः; राष्ट्रम्; 'त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्। ग्रामं जनपदस्यार्थे आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत्'—इति चाणक्यशतके (३१)। जनः। २८४

जनवादः पुं. [जनेषु लोकेषु वादोऽपवादः] जनप्रवादः; लोकापवादः; कौलीनं; विगानं; वचनीयता; 'भस्मपरुषेऽपि गिरिशे स्नेहमयी त्वमुचितेन सुभगासि।

मोवस्त्वयि जनवादो यदोषधिप्रस्थदुहितेति'—इति आर्यासप्तशत्याम्। १४७

जनश्रुतिः स्त्री. [जनेभ्यः श्रुतिः श्रवणम्] सत्यमसत्यं वा लोकप्रवादः; किंवदन्ती; 'पुंसां दर्शय सुन्दरि! मुखेन्दुमीषत्त्रपामपाकृत्य। जायाजित इति रूढा जनश्रुतिर्मे यशो भवतु'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३६५)। १४७

जनार्दनः पुं. [समुद्रान्तर्वासिनो जनन्नाम्नोऽसुरान् अर्दितवान् जनार्दनः। जन+अर्द गतौ याचने च, नन्द्यादित्वात् ल्यु। किं वा जनैर्लोकैरर्द्यते याच्यते पुरुषार्थानसौ जनार्दनः। कर्मणि ल्युट्। किं वा जननं जनः भावे घञ्। अर्द हिंसायाम्। जनं जन्म अर्दयति हन्ति भक्तस्य मुक्तिदत्वादिति जनार्दनः। किं वा जनान् लोकान् अर्दति हररूपेण संहारकत्वादिति जनार्दनः। किं वा जनयति उत्पादयति लोकान् ब्रह्मरूपेण सृष्टिकर्तृत्वादिति जनः; जनेर्ण्यन्तात् पचाद्यच्। अर्दति हन्ति लोकान् हररूपेण संहारकारित्वादिति अर्दनः। जनश्चासौ अर्दनश्चेति जनार्दनः। किंवा जनान् लोकान् अर्दति गच्छति प्राप्नोति रक्षणार्थं पालकत्वादिति जनार्दनः] विष्णुः; 'सशङ्खचक्राब्जगदं जनार्दनमिहो नमः। उपेन्द्रं गदिनं साविपक्षशङ्ख! नमोऽस्तु ते'—इति पाद्मे। 'आरोग्यं भास्करादिच्छेद्धनमिच्छेद्धुताशनात्। ज्ञानं च शङ्करादिच्छेन्मुक्तिमिच्छेज्जनार्दनात्'—इति कर्मलोचनम्। २३

जनाश्रयः पुं. [जनानां लोकानाम् आश्रयः] मण्डपः। २९८

जनी स्त्री. [जायते सन्ततिर्यस्यामिति। जन्+'जनिघसिभ्यामिण्' इतीण्, 'जनिवध्योश्चे'ति वृद्धिनिषेधः। ततः 'कृदिकारादिति' ङीष्] वधूः; पुत्रवधूः; सीमन्तिनी; नारी; स्त्री; [जन्+भावे इण्] उत्पत्तिः; [जायते आरोग्यमनया, करणे इण्] ओषधिभित्; जतूका; रजनी; जतुकृत्; चक्रवर्तिनी; संस्पर्शा; जतुका; जनिः; जननी; 'लाख' इति भाषा। ५०४

जन्तुः पुं. [जायते उद्भवतीति। जन्+'कमिमनिजनीति' तु] प्राणी; 'एकः प्रजायते जन्तुरेक एव प्रलीयते। एकोऽनु भुङ्क्ते सुकृतमेक एव च दुष्कृतम्'—इति मनुः (४।२४०)। मनुष्येषु बहुवचनान्तः। 'विशां गोपा अस्य चरन्ति जन्तवो द्विपञ्च यदुत चतुष्पदक्तुभिः'—इति ऋग्वेदे (१।९४।५)। सोमकस्य राज्ञः पुत्रविशेषः; 'ततस्ता मातरः सर्वाः प्राक्रोशन् भृशदुःखिताः। प्रावार्य जन्तुं सहिताः स शब्दस्तुमुलोऽभवत्'—इति महाभारते (३।१२७)। ६२५

जन्म [न्] क्ली. [जायते इति, जन्+'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति मनिन्] उत्पत्तिः; जनुः; जननं; जनिः; उद्भवः; जन्मं; जनी; प्रभवः; भावः; भवः; सम्भवः; जनूः; प्रजननं; जातिः। 'शुभानामशुभानां च कर्मणा जन्म जायते। पुण्यक्षेत्रे च सर्वत्र नान्यत्र भुञ्जते जनाः'—इति ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिखण्डे। ८५०

जन्मम् क्ली. [जायते इति, जन् बाहुलकात् मन्] उत्पत्तिः; [अनन्तरं नाम्नीति मप्रत्यये जन्ममदन्तञ्च। जन्ममदन्तमपीत्युणादाविति] 'जन्मे पञ्चनवस्थिते कलहरिपुभयम्'—इति ज्योतिषे। ८५०

जन्यम् क्ली. [जन्यते इति, जनि+'तकिशसिचतियतिजनिभ्यो यद्वाच्यः' इति यत्] संग्रामः; 'तत्र जन्यं रघोर्घोरं पर्वतीयैर्गणैरभूत्'—इति रघुवंशे (४।७७)। हट्टः; परीवादः; पुं. [जायते जनयति वा, जन्+'भव्यगेयेति' कर्तरि यत्] जनकः; महादेवः; 'उग्रतेजा महातेजा जन्यो विजयकालवित्'—इति महाभारते (१३।१७।५६)। देहः; 'निवृत्तसर्वेन्द्रियवृत्ति विभ्रमः तुष्टाव जन्यं विसृजन् जनार्दनम्'—इति भागवते (१।९।३१)। [जनस्य जल्पः इत्यर्थे जन्+'मतजनहलादिति' यत्] जनजल्पः; त्रि. [जन्यते इति, जन्+णिच्+कर्मणि यत्] उत्पाद्यः; 'जनकस्य स्वभावो हि जन्ये तिष्ठति निश्चितम्। यथा श्रीकृष्णपादाङ्कं कालीयवंशमस्तके'—इति ब्रह्मवैवर्ते श्रीकृष्णजन्मखण्डम्। 'जन्यानां जनकः कालो जगतामाश्रयो मतः'—इति भाषापरिच्छेदे (४५)। जनयिता; [जनीं वधूं वहति प्रापयति वा, संज्ञायामिति साधुः] नवोढाज्ञातिः; नवोढाभृत्यः; वरस्य स्निग्धः, स तु जामातृवत्सलः; [जनाय हितः, यत्] जनहितः। ४५०

जपा स्त्री. [जपन्ति तान्त्रिका अनयेति। जप्+अप् ततष्टाप्] प्रतिका; हरिवल्लभा; जवापुष्पवृक्षः; ओड्राख्या; रक्तपुष्पी; अर्कप्रिया; रागपुष्पी; 'ओड्रपुष्पं जपा चाथ त्रिसन्धा सारणा सिता। जपा संग्राहिणी केश्या त्रिसन्ध्या कफवातजित्'—इति भावप्रकाशः। ७३८।

जपाकुसुमसंकासा स्त्री. [जपाकुसुम इव सम्यक् कासते शोभते। अच्, टाप्] लोहिनी; रक्तवर्णा। ७३८।

जम्पती पुं. [जाया च पतिश्च। राजदन्तादिगणे पाठात् जायाशब्दस्य जम्भावो निपात्यते] जायापती; दम्पती। द्विवचनान्तोऽयं शब्दः। १२०।

जम्बालः पुं. [जमु अदने+बाहुलकाद्वालन्। यद्वा जम्ब+भावे घञ्, जम्बं आलातीति, ला+क] पङ्कः, कर्दमः; 'अवद्यजम्बालगवेषणाय कृतोद्यमानां खलसैरिभाणाम्। कवीन्द्रवन्निर्जरनिर्झरिण्यां संजायते व्यर्थमनोरथत्वम्'—इति श्रीकण्ठचरिते (२।१०)। शैवालः; केतकवृक्षः। ६७८।

जम्बिरः पुं. [जम्बीर, निपातनाद् ह्रस्वः] जम्बीरः। १९४।

जम्बीरः पुं. [जम्यते भक्ष्यते इति, जमु+अदने, 'गम्भीरादयश्च' इति निपातनात् ईरन्प्रत्यये साधुः] फलवृक्षविशेषः; दन्तशठः; जम्भः; जम्भीरः; जम्भलः; जम्भी; रोचनकः; शोधी; जाड्यारिः; दन्तहर्षणः; गम्भीरः; जम्बिरः; दन्तकर्षणः; रेवतः; वक्त्रशोधी; दन्तहर्षकः। 'जम्बीरमुष्णं गुर्वम्लं वातश्लेष्मविबन्धनुत्। शूलं कासकफक्लेशच्छर्दितृष्णामदोषजित्। आस्यवैरस्यहृत्पीडावह्निमान्द्यकृमीन् हरेत्। स्वल्पजम्बीरिका तद्वत् तृष्णाच्छर्दिनिवारिणी'—इति भावप्रकाशः। मरुवकः; अर्जकः; सितार्जकः; क्षुद्रपत्रतुलसी; 'खरपर्णस्तु जम्बीरः प्रस्थपुष्पः फणिज्झकः—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। १९४।

जम्बुकः पुं. [जमतीति, जमु भक्षणे+'मृगय्वादयश्च' इति कुप्रत्यये निपातनात् साधुः। ततः स्वार्थे कन्] शृगालः; 'एवं तेषु प्रयातेषु जम्बुको हृष्टमानसः। खादति स्म तदा मांसमेकः सन्मन्त्रनिश्चयात्।' वरुणः; [जम्बुः इव कायतीति, कै+क] वृक्षविशेषः; त्रि. नीचः; श्योनाकप्रभेदः; सुवर्णकेतकी; 'केतकः सूचिकापुष्पो जम्बुकः क्रकचच्छदः। सुवर्णकेतकी त्वन्या लघुपुष्पा सुगन्धिनी'—इति भावप्रकाशः। २२९।

जयन्तः पुं. [जयतीति, जि+'तॄभूवहिवसीति' झच्] ऐन्द्रिः; इन्द्रपुत्रः; पाकशासनिः; जयदत्तः; 'उमावृषाङ्कौ शरजन्मना यथा यथा जयन्तेन शचीपुरन्दरौ। तथा नृपः सा च सुतेन मागधी नन्दस्तुस्तत्सदृशेन तत्समौ'—इति रघुवंशे (३।२३)। विष्णुः; 'अर्को वाजसनः शृङ्गी जयन्तः सर्वविज्जयी।' [अतिशयेनारीन् जयते जयहेतुरिति वा जयन्तः] शिवः; 'सावित्रश्च जयन्तश्च पिनाकी चापराजितः। एते रुद्राः समाख्याता एकादश गणेश्वराः'—इति मात्स्ये (५।३०)। चन्द्रः; चन्द्रमाः; भीमः (एतन्नाम तु छद्मना विराटगृहवासकाले जातम्); जयो जयन्तो विजयो जयत्सेनो जयद्बलः। इति गुह्यानि नामानि चक्रे तेषां युधिष्ठिरः'—इति महाभारते (४।५।३४)। उपेन्द्रः; 'मरुत्वांश्च जयन्तश्च मरुत्वत्या बभूवतुः। जयन्तो वासुदेवांश उपेन्द्र इति यं विदुः'—इति भागवते (६।६।८)। राज्ञो दशरथस्य मन्त्रिविशेषः; 'अष्टौ बभूवुर्वीरस्य तस्यामात्या यशस्विनः। शुचयश्चानुरक्ताश्च राजकृत्येषु नित्यशः। धृष्टिर्जयन्तो विजयः सुराष्ट्रो राष्ट्रवर्द्धनः। अकोपो धर्मपालश्च सुमन्त्रश्चाष्टमोऽर्थवित्'—इति रामायणे (१।७।२–३)। पर्वतविशेषः; 'ततश्च पर्वताः सप्त केशवं समुपस्थिताः। जयन्तो वैजयन्तश्च नीलो रजतपर्वतः। महामेरुः सकैलास इन्द्रकूटश्च नामतः'—इति हरिवंशे (१७०।१४)। ज्योतिषोक्तयात्रिकयोगविशेषः; 'यत्र स्वोच्चगतश्चन्द्रो लग्नादेकादशे स्थितः। जयन्तो नाम योगोऽयं शत्रुपक्षविनाशकृत्।' षोडशध्रुवकान्तर्गतध्रुवविशेषः; 'आदिताले जयन्तः स्यात् शृङ्गाररससंयुतः। रुद्रसंख्याक्षरपद आयुर्वृद्धिकरः परः'—इति सङ्गीतदामोदरः। ५५

जरत् त्रि. [जॄ+अतृन्] जीर्णं; पुरातनं; पुं. वृद्धः। ७११

जरद्गवः [जरंश्चासौ गौश्चेति। 'गोरतद्धितलुकि' इति टच्] जीर्णवृषः; वृद्धोक्षः; 'अकृत्वा पौरुषं या श्रीः किं तयापि सुभोग्यया। जरद्गवः समश्नाति दैवादुपगतं तृणम्'—इति पञ्चतन्त्रे। [जरन् क्षीयमाणो गौर्वृषरूपो धर्मः] धर्मरूपजीर्णवृषः; 'नैतस्येह यथास्माकं शश्वच्छास्त्रं जरद्गवः। अलसः क्षुत्परो मूर्खस्तेन पीवाञ्छुना सह'—इति महाभारते (१३।९३।६८)। गृध्रपक्षिविशेषः; 'अज्ञातकुलशीलस्य वासो देयो न कस्यचित्। मार्जारस्य हि दोषेण हतो गृध्रो जरद्गवः'—इति हितोपदेशे। २६५

जरा स्त्री. [जीर्यत्यनया। जॄ+'षिद्भिदादिभ्योऽङ्'

इत्यङ्, 'ऋदृशोऽङि' इति गुणः] वार्द्धक्यं; विस्रसा; वयःकृतश्लथमांसाद्यवस्थाभेदः; कालकन्या [जीर्यत्यनया जरा, जृष् वयोहानौ, षित्वादङ, इत्यमरटीकायां भरतः] 'कालकन्या जरा साक्षात् लोकस्तां नाभिनन्दति। स्वसारं जगृहे मृत्युः क्षयाय यवनेश्वरः'—इति भागवतम्। 'श्लक्ष्णीकृतं भृङ्गराजस्य चूर्णं तिलार्द्धकम् आमलकार्द्धकं च। सशर्करं भक्षयते गुडैर्वा न तस्य रोगो न जरा न मृत्युः।' 'या च भार्या विरूपाक्षी कश्मला कलहप्रिया। वचनोत्तरवक्त्री च सा जरा न जरा जरा'—इति चाणक्यः। क्षीरिकावृक्षः; राक्षसीविशेषः; 'अन्यस्यामपि भार्यायां शकले द्वे बृहद्रथात्। ते मात्रा बहिरुत्सृष्टे जरया चाभिसन्धिते'—इति भागवतम्। ५०३

जरायुः पुं. [जरामेतीति। जरा+इण्+'किञ्जरयोः श्रीणः' इति ञुण्] येन वेष्टितो गर्भः कुक्षौ तिष्ठति सः; गर्भवेष्टनचर्म; गर्भाशयः; उल्वं; कललः; 'या तु चर्माकृतिः सूक्ष्मा जरायुः सा निगद्यते'—इति महाभागवते भगवतीगीता। ५००।

जर्तिलः पुं. [जरन् यः तिलः; पृषोदरादित्वम्] वनोद्भवतिलः; 'श्यामाकास्त्वथ नीवारा जर्तिलाः सगवेधुकाः। तथा वेणुयवाः प्रोक्तास्तद्वन् मर्कटका मुने!'—इति विष्णुपुराणे (१।६।२५)। ५८३

जलम् क्ली. [जलति जीवयति लोकान्, जलति आच्छादयति भूम्यादीनिति वा। जल्+पचाद्यच्] पानीयं; पञ्चभूतान्तर्गतभूतविशेषः, आपः (स्त्रीलिङ्गबहुवचनान्तोऽयम्); वाः; वारि; सलिलं; कमलं; पयः; कीलालम्; अमृतं; जीवनं; भुवनं; वनं; कबन्धम्; उदकं; पाथः; पुष्करं; सर्वतोमुखम्, अम्भः; अर्णः; तोयं; नीरं; क्षीरम्; अम्बु; सम्बरं; मेघपुष्पं; घनरसः; आपः (सान्तक्लीबोऽयम्); सरिलं; सलं; जडं; कम्; अन्वं; कपन्वम्; उदं; दकं; नारं; शम्बरम्; अभ्रपुष्पं; घनरसं; घृतं; पीप्पलं; कुशं; विषं; काण्डं; सवरं; सरं; कृपीटं; चन्द्रोरसं; सदनं; कर्बुरं; व्योम; सम्बः; सरः; इरा; वाजं; तामरं; कम्बलं; स्यन्दनं; सम्बलं; जलपीथं; क्षरम्; ऋतम्; ऊर्जं; कोमलं; सोमम्। 'जलं चतुर्विधं प्राहुरन्तरीक्षोद्भवं बुधाः। धारं च कारकं चैव तौषारं हैममित्यपि'—इति राजनिर्घण्टः। गोकलनं; ह्रीवेरम्; 'जलं सकृष्णागुरुभृङ्गकेसरम्'—इति भावप्रकाशः। त्रि. [जलति आच्छादयति विनाशयति वा ज्ञानं बुद्धिप्रतिभां वेति। जल्+अच्] जडः; 'जाड्यविध्वंसनकरी जगद्योनिर्जलाविला'—इति काशीखण्डे (२९। ६६)। 'जलानां जडानामज्ञानानामित्यर्थः आविलेव कलुषितेव आवृतेवेति वा'—इति तट्टीका। ६८८।

जलचरः त्रि. [चरेष्टः] जलजन्तुः; जलचारी। ६५७।

जलचारी [न्] पुं. [जले चरतीति, चर्+णिनि] मत्स्यः; त्रि. जलचरः; 'ददृशुः सहिता रम्यं तडागं योजनायतम्। शरारिहंसकुररैराकीर्णं जलचारिभिः'—इति रामायणे (३।१५।६)। ६५७।

जलदः पु. [जलं ददातीति, दा+क] मुस्तकम्; 'अमृतानागर-सहचर-भद्रोत्कट-पञ्चमूल-जलदजलम्। शृतशीतं मधुयुक्तं निवारयति सूतिकातङ्कम्'—इति वैद्यके। मेघः; 'मार्गं तावत् शृणु कथयतस्त्वत्प्रयाणानुरूपं, सन्देशं मे तदनु जलद! श्रोष्यसि श्रोत्रपेयम्'—इति मेघदूते (१३)। शाकद्वीपान्तर्गतवर्षविशेषः; 'वर्षाणि तेषु कौरव्य! सप्तोक्तानि मनीषिभिः। महामेरुर्महाकाशो जलदः कुमुदोत्तरः'—इति महाभारते (६।११।२२)। ६२२

जलवाह्वयः पु.– मुस्तकम्; मेघाख्यम्। ६२२

जलद्रोणी स्त्री. – अवग्राहः; 'बाल्टी' 'डोल' इत्यादि भाषा। ७५४।

जलपद्धतिः स्त्री.– [जलस्य पद्धतिः मार्गः] प्रणाली; कुल्या। ६८५।

जलरङ्कुः पुं. [जले रङ्कुरिव] दात्यूहपक्षी; जलचरविशेषः। २४९

जलराशिः पु.– समुद्रः; जलधिः; अपांनिधिः। ६५२

जलवायसः पु. [जले वायसः काक इव, कृष्णवर्णत्वात्] मद्गुपक्षी। २५०

जलव्यालः पु. [जलस्थितो व्यालो हिंस्रजन्तुः] अलगर्दसर्पः; क्रूरकर्मा जलजन्तुः। ६४३।

जलशयनः पु. [जले क्षीरोदसलिले शेते इति। शी+ल्यु] विष्णुः; जलशयः; जलशायी। २२ 'जलमध्ये वराहं च जलशयनं च पावके'—इति पुराणे।

जलशूकम् क्ली.– पुं. [जले शूकं सूक्ष्माग्रमिव] शैवालं; जम्बालम्; 'जलशूकः स्वयं गुप्ता रजन्यौ बृहतीद्वयम्'—इति वाग्भटः। ६८३।

जलाधिदैवतम् क्ली. [जलस्याधिदैवतम् अधिष्ठात्री देवता] वरुणः; [जलम् अधिदैवतं यस्य] पूर्वाषाढा-नक्षत्रम्। ७४।

जलावतारः पुं. [जले अवतरन्ति अनेन। घञ्] जलाशय-सोपानमार्गः; तीर्थम्; 'स्नानार्थ घाट' इति भाषा। ८६२

जलोच्छ्वासः पुं. [जलानाम् उच्छ्वासः] जलाशयं परिपूर्य समधिकजलस्य सर्वतो वहनम्; समधिक-जलस्योपायैर्निष्कासनं; जलात्युपचये पुष्करिण्यादावु-पायेन जलनिष्कासनं; सेतुभङ्गादि भयेन जलाशया-दुपायैर्जलबहिष्करणं; पुष्करिण्यादौ जलप्रवेशार्थमुपायः; परीवाहः। ६७७

जलौकसः [स] पुं.–स्त्री. [जले ओको वासस्थानं येषाम्] जलौकाः। सान्तबहुवचनान्तोऽयम्। ६६१

जलौकसः पुं.– स्त्री. [जलमेव ओको वासस्थानं तदस्त्य-स्येति,अर्शआदित्वादच्] जलौकाःअकारान्तोऽयम्। ६६१

जलौकाः [स्] स्त्री. [जलमेव ओको वसतिस्थानं यस्याः] जलौका; 'जोंक' इति भाषा। 'गृह्णाति साधुरपरस्य गुणं न दोषं दोषान्वितो गुणिगुणं परिहाय दोषम्। बालः स्तनात् पिबति दुग्धमसृग्विहाय त्यक्त्वा पयो रुधिरमेव न किं जलौकाः।' जलवासिनि त्रि.। यथा महाभारते (१३।५०।१०) 'जलौकसा च सत्त्वानां बभूव प्रियदर्शनः।' ६६१

जलौका स्त्री. [जलमेव ओकं वसतिस्थान यस्याः] रक्तपा; जलौकसः; जलूका; जलाका; जलौकाः; जलोरगी; जलायुका; जलिका; जलामुका; जल-जन्तुका; वेणी; जलालोका; जलौकसी; जलौकसं; जलौकसा; रक्तपायिनी; रक्तसन्दंशिका; तीक्ष्णा; वमनी; जलजीवनी; रक्तपाना; बोधिनी; जल-सर्पिणी; जलसूचिः; जलाटनी; जलाका; जल-पटात्मिका; जलिका; जलालुका; 'जोंक' इति भाषा। 'सिराविषाणतुम्बैस्तु जलौकाभिः पदैस्तथा। अवगाढं यथापूर्वं निर्हरेद् दुष्टशोणितम्'—इति सुश्रुते। ६६१

जवः पुं. [जवनमिति, जु गतौ+'ऋदोरप्' इति अप्] वेगः; 'यस्य बाहुबले तुल्यः प्रभावे च पुरन्दरः। जवे वायुर्मुखे सोमः क्रोधे मृत्युः सनातनः'—इति महाभारते (३।१४१।२१)। वेगवति त्रि.। ४४३

जवनम् त्रि. [जु गतौ+भावे ल्युट्] वेगयुक्तम्; 'अपा-याज्जवनैरश्वैः शाम्बबाणप्रपीडितः'—इति महाभारते (३।१६।१६)। क्ली. वेगः; पुं. [जु+'जुचङ्क्रम्येति' युच् वेगः वेगयुक्ताश्वः; श्रीकारीमृगः; घोटकः; स्कन्दस्य सैनिकविशेषः; 'शृणु नामानि चाप्येषां येऽन्ये स्कन्दस्य सैनिकाः।' 'लोहाजवक्त्रो जवनः कुम्भवक्त्रश्च कुम्भकः' —इति महाभारते (९।४५।७२)। ३५८

जवनिका स्त्री. [जवनं वेगेन प्रतिरोधनमस्त्यस्याः। जवन+ठन् टाप् च] व्यवधायकवस्त्रं; प्रतिसीरा; तिरस्करिणी; तिरस्कारिणी; अन्तःपटः; पटी; चित्रा; काण्डपटः; जवनी; अपटी; 'कनात्' इति भाषा। 'समीरशिशिरः शिरःसु वसतां सतां जवनिका निकाम-सुखिनाम्'—इति माघे (४।५४)। ३०९।

जागरणम् क्ली. [जागृ+भावे ल्युट्] निद्राभावः; जागर्या; जागरा; जागरः; जाग्रिया; जागर्तिः; 'रात्रिजागरणात् श्रान्तः सौद्युम्निः समतीत्य तान्' —इति महाभारते (३।१२६।१२)। ६०३

जागरा, जागरः पुं.– स्त्री. [जागृ निद्राक्षये+भावे घञ् 'जाग्रोऽविचीति' गुणः] जागरणम्; 'प्रोञ्छति तवापराधं मानं मर्दयति निवृत्ति हरति। स्वकृतामिहन्ति शपथान् जागरदीर्घा निशा सुभग'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३६०)। पुं. कवचः [जागर्ति जीवति संग्रामस्थले ऽनेनेति। जागृ+करणे घञ्]। ६०३

जागर्या स्त्री. [जागृ+'जागर्तेरकारो वेति' यक्। 'जाग्रोऽविचीति' गुणः] जागरणम्। ६०३

जाग्रिया स्त्री. [जागृ+'जागर्तेरकारो वा' इति पक्षे शस्ततो रिङादेशः] जागरणम्। ६०३

जागुडम् क्ली. [जागुडे तदाख्यया प्रसिद्धे देशे भव-मित्यण्] कुङ्कुमं; देशविशेषः; 'अभिचैद्यमगाद्रथोऽपि शौरेरवनिं जागुडकुङ्कुमाभिताम्रैः'—इति माघे (२०।३)। [जागुडोऽभिजनोऽस्त्येत्यण्] तद्देशवासिनि त्रि.। 'जागुडान् रामठान् मुण्डान् स्त्रीराज्यानथ जङ्गनान्'—इति महाभारते (३।५१।२४)। ५४३

जाङ्गलम् क्ली. [जाङ्गलेषु स्थलजपशुविशेषेषु भवम्। जाङ्गल+अण्] मांसम्; पुं. [जङ्गले भवः, जङ्गल+ अण्] कपिञ्जलपक्षी; निर्वारिदेशः; 'स्वल्पोदकतृणो यस्तु प्रवातः प्रचुरातपः। स ज्ञेयो जाङ्गलो देशः बहु-

धान्यादिसंयुतः।' जङ्गलदेशोद्भवे त्रि.। स्थलजपशुविशेषः; 'हरिणैणकुरङ्गर्ष्यपृषतन्यङ्कुशम्बराः। राजीवोऽपि च मुण्डी चेत्याद्या जाङ्गलसंज्ञकाः'—इति राजवल्लभः। ६३१

जाङ्गुलिकः पुं. [जाङ्गुलो विषप्रधानः सर्पादिर्ग्राह्यतयास्त्यस्येति। जाङ्गुल+ठन्] व्यालग्राही; जाङ्गलिः। ६१३

जातम् क्ली. [जन्+कर्तरि क्त] समूहः; 'अन्याहुतिं हावयितुं सविप्राश्चिचीषयन्तोऽध्वरपात्रजातम्'—इति भट्टिः। व्यक्तं; [भावे क्तः] जन्म; पुं. पारिभाषिकपुत्रविशेषः; 'जातः पुत्रोऽनुजातश्च अतिजातस्तथैव च। अपजातश्च लोकेऽस्मिन् मन्तव्याः शास्त्रवेदिभिः। मातृतुल्यगुणो जातस्त्वनुजातः पितुः समः। अतिजातोऽधिकस्तस्मादपजातोऽधमाधमः'—इति पञ्चतन्त्रे (१।४४१–४४२)। उत्पन्ने त्रि.। 'कोऽर्थः पुत्रेण जातेन यो न विद्वान् न धार्मिकः। काणेन चक्षुषा किं वा चक्षुःपीडैव केवलम्'—इति हितोपदेशे (१।१४)। ६८७

जातरजाः [स्] स्त्री. [जातमुत्पन्नं रजः यस्याः] राका (कन्या); रजस्वला। ४८८

जातरूपम् क्ली. [जातं प्रशस्तं रूपं यस्य] स्वर्णम्; 'पुनश्च याचमानाय जातरूपमदात् प्रभुः'—इति भागवते (१।१७।३९)। धुस्तूरः; त्रि. उत्पन्नरूपः; 'न जातरूपच्छदजातरूपता द्विजस्य दृष्टेयमिति स्तुवन् मुहुः'—इति नैषधे (१।१२९)। १७३

जातवेदाः [स्] पुं. [विद्यते लभ्यते इति। विद् लाभे+असुन्। जातं वेदो धनं यस्मात्] अग्निः; 'पावनात् पावकश्चासि वहनाद्धव्यवाहनः। वेदास्त्वदर्थं जाता वै जातवेदास्ततो ह्यसि'—इति महाभारते (२।३१।४१)। चित्रकवृक्षः; [जाते जाते, सर्वप्रपञ्चस्य स्वस्मिन् अध्यस्ततया विद्यते यो जीवरूपः। यद्वा जातानि सर्वाणि कारणत्वेन विदन्ति यमिति। विद् ज्ञाने+असुन्] अन्तर्यामी परमेश्वरः; 'परोरजः सवितुर्जातवेदो देवस्य भर्गो मनसेदं जजान'—इति भागवते (५।७।१४) 'जातं वेदो धनं कर्मफलं यस्मात्, कर्मफलदमित्यर्थः'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। ६३

जातिः स्त्री. [जायतेऽस्यामिति। जन्+अधिकरणे क्तिन् वा। जन्+भावे क्तिन्] मालती; 'चमेली' इति भाषा 'जातिर्जाती च सुमना मालती राजपुत्रिका। चेतिका हृद्यगन्धा च सा पीता स्वर्णजातिका'—इति भावप्रकाशः। गोत्रं; जन्म; अश्मन्तिका; आमलकी; सामान्यं; तत्तु ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्रात्मकम्। छन्दः; जातीफलं; जातीकोषं; जातिफलं; जातिसस्यं; शालूकं; जातिसारं; 'जायफल'—इति भाषा। काम्पिल्लः; गोत्वादिः; 'आकृतिग्रहणाजातिर्लिङ्गानां च न सर्वभाक्। सकृदाख्यातनिर्ग्राह्या गोत्रं च चरणैः सह' —इति सिद्धान्तकौमुदी। २०५

जातिमात्रोपजीवी [न्] पुं. [जातिमात्रेण, ब्राह्मणत्वनाम्नैव, न तु कर्मणा, जीवति यः। णिनि] ब्राह्मणब्रुवः; निन्दितब्राह्मणः। ४०६

जाती स्त्री. [जन्+क्तिन् ततो वा ङीष्] जातीपुष्पं; सुमनाः; सुरभिगन्धा; सुरप्रिया; चेतकी; सुकुमारा; सन्ध्यापुष्पी; मनोहरा; राजपुत्री; मनोज्ञा; मालती; तैलभाविनी; जनेष्टा; हृद्यगन्धा। 'पुष्पेषु जाती नगरीषु काञ्ची'—इति उद्भटः। २०५

जात्यः त्रि. [जातौ भवः इति, यत्] कुलीनः; श्रेष्ठः; 'स्वजात्यानधितिष्ठामि नक्षत्राणीव चन्द्रमाः'—इति महाभारते (१३।१६।९)। कान्तः; 'अतीव स ज्ञायते ज्ञातिमध्ये महामणिर्जात्य इव प्रसन्नः'—इति महाभारते (५।३३।१२२)। ८३६

जानु क्ली. [जायते इति, जन्+'दृसनिजनिचरिचटिभ्यो ञुण्' इति ञुण्] ऊरुजङ्घयोर्मध्यभागः; ऊरुपर्व; अष्ठीवत्; अष्ठीवान्; चक्रिका; 'घोटू' इति भाषा। 'तस्य जानु ददौ भीमो जघ्ने चैनमरत्निना'—इति महाभारते (४।३२।३९)। ५१९

जाबालः पुं. [जवम् आलाति, क, जवालः अजः, तस्यायम्। अथवा जबालाया अपत्यं पुमानिति, अण्] अजाजीवः; मुनिविशेषः; जाबालिः; 'जाबालो याजलिः पैलः करथोऽगस्त्य एव च। एते वेदाङ्गवेदज्ञाः षोडश व्याधिनाशकाः'—इति ब्रह्मवैवर्ते (१।१६।१४)। उपनिषद्विशेषः; 'ब्रह्मकैवल्यजाबालश्वेताश्वो हंस आरुणिः'—इति मुक्तिकोपनिषदि। दर्शनशास्त्रविशेषः; 'अधीत्य कूटजाबालं शार्गलीं योनिमाप्नुयात्' —इति रामचन्द्रदत्तशापप्रकरणे। ३८१

जामाता [ऋ] पुं. [जायां माति मिमीते मिनोति

वा। 'नप्तृनेष्टृत्वष्टृहोतृपोतृभ्रातृजामातृ्रिति' निपातनात् साधुः] दुहितृपतिः; 'जामाता त्वभवत्तस्य कंसस्तस्मिन् हते युधि'—इति हरिवंशे (११६।२५)। सूर्यावर्तः; ब्रवः। ५०५

जामिः स्त्री. [जम्+इञ्। इन् निपातनात् साधुरित्येके] स्वसा; भगिनी; कुलस्त्री (७९२); 'शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम्'—इति मनुः (३।५७)। ५०७।

जामी स्त्री. [जामि+वा ङीष्] जामिः; 'जामीशप्तानि गहाणि निकृत्तानीव कृत्यया'—इति महाभारते (१३।४६।७)। ५०७

जामेयः पुं. [जाम्या अपत्यमिति, 'स्त्रीभ्यो ढक्'—इति ढक्] भागिनेयः; भगिनीसुतः; 'भानजा' इति भाषा। ५०७

जाम्बूनदम् क्ली. [जम्बूनद्यां भवमिति, अण्] स्वर्णं; धुस्तूरः; स्वर्णविशेषः; यथा भागवते—'मेरुमन्दरपर्वतस्थजम्बूफलानामत्युच्चनिपातनविशीर्णानाम् अनस्थिप्रायाणाम् इभकायनिभानां रसेन जम्बूनामनदी इलावृतं वहति। तस्या उभयोस्तीरयोर्मृत्तिका जम्बूसेनानुविध्यमाना वाय्वर्कसंयोगविपाकेन सदामरलोकाभरणं जाम्बूनदं नाम स्वर्णं भवति।' १७४

जाया स्त्री. [जायते पुत्ररूपेणात्मास्यामिति। जन्+यक् आत्वञ्च] भार्या; 'पतिर्भार्यां संप्रविश्य गर्भो भूत्वेह जायते। जायायास्तद्धि जायात्वं यदस्यां जायते पुनः'—इति मनुः (९।८)। ४९४

जायाजीवः पुं. [जाया आजीवः जीवनोपायो यस्य इति, जायया जीवतीति वा। जीव्+अच्। जायायाः सङ्गीतनर्तनादिना जीवनादस्य तथात्वम्] नटः; बकपक्षी; वेश्यापतिः। ५९२

जायापती पुं. [जाया च पतिश्चेति तौ] भार्यापती; दम्पती। नित्यद्विवचनान्तोऽयम्। १२०

जायुः पुं. [जयति रोगान् इति, जि+उण्] औषधं; [जयतीति] त्रि. जयशीलः। ६१३

जारः पुं. [जीर्यति स्त्रियाः सतीत्वमनेन। जॄ+करणे घञ्] उपपतिः; 'जारं चौरेत्यभिवदन् दाप्यः पञ्चशतं दमम्'—इति याज्ञवल्क्यः (२।३०)। जारयति नाशयति इति, जॄ+णिच्+अच्] हन्ता; 'यमो ह जातो यमो जनित्वं जारः कनीनां पतिर्जनीनाम्'—इति ऋग्वेदे (१।६६।४)। ३८४

जालम् क्ली. [जल्यते आच्छाद्यतेऽनेनेति। जल संवरणे+करणे घञ्। यद्वा जले क्षिप्यते इति, जल्+'शेषे' इत्यण्] गवाक्षः; 'प्रासादजालैर्जलवेणिरम्यां रेवां यदि प्रेक्षितुमस्ति कामः'—इति रघुवंशे(६।४३)। (५९४) आनायः; जालकं; सूत्रादिनिर्मितमत्स्यादिधारणोपायः; 'वंशावलम्बनं यद् यो विस्तारो गुणस्य यावनतिः। तज्जालस्य खलस्य च निजाङ्कसुप्तप्रणाशाय'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५५८)। समूहः (६८७); 'ततो धनुष्कर्षणमूढहस्तम् एकांशपर्यस्तशिरस्त्रजालम्'—इति रघुवंशे(७।६२)। दम्भः(८०४); क्षारकः; स तु अस्फुटकलिका कूष्माण्डादिक्षुद्रफल च। वंशलौहादिनिर्मितजालवद्द्रव्यविशेषः; 'अन्तर्निविष्टोज्ज्वलरत्नभासो गवाक्षजालैरभिनिष्पतन्त्यः'—इति भट्टिः। पुं. [जालयति शाखाप्रशाखादिभिः संवृणोतीति, जल् संवरणे+णिच्+'नन्दिग्रही' त्यच्] कदम्बवृक्षः। ३०४

जालकम् क्ली. [जल् संवरणे+भावे घञ्। जालेन ईषदावरणेन कायति प्रकाशते इति। जाल+कै+क। स्वार्थे कन् वा] कोरकः; पुं. गवाक्षः (३०४); अस्फुटकलिका; 'तामुत्थाप्य स्वजलकणिका शीतलेनानिलेन प्रत्याश्वस्तां सममभिनवैर्जालकैर्मालतीनाम्'—इति मेघदूते (९९)। कूष्माण्डादिक्षुद्रफलं; क्षारकः; दम्भः; कुलायः; आनायः; 'दृष्टिर्भृशं विह्वलति द्वितीयं पटलं गते। मक्षिकान् मशकान् केशान् जालकानि च पश्यति'—इति सुश्रुते। समूहः; 'बद्धं कर्णशिरीषरोधि वदने घर्माम्भसां जालकं, बन्धे स्रंसिनि चैकहस्तयमिताः पर्याकुला मूर्द्धजाः'—इति शाकुन्तले प्रथमाङ्के। वंशलौहादिनिर्मितजालाकृतिद्रव्यविशेषः; 'ततो यष्टिं शलाकाञ्च जालकं पञ्जरं तथा। बभञ्ज लुब्धको दीनां कपोतीं च मुमोच ताम्'—इति पञ्चतन्त्रे (३।१७।९)। क्ली.– स्त्री. मोचकफलं; पुं. [जालेन वंशलौहादिनिर्मितजालाकृतिद्रव्यविशेषेण कायतीति] गवाक्षः। १८६

जालिकः पुं. [जालेन जीवतीति। जाल+'वेतनादिभ्यो जीवति' इति ठन्। यद्वा जालेन चरतीति, 'पर्पादिभ्यः

ष्ठन्' इतिष्ठन्] मर्कटकः; मर्कटः; ऊर्णनाभः; लूता; ऐन्द्रजालिकः (३४९); कैवर्तः; (५९४) वागुरिकः; जालेन मृगबन्धनकर्ता; त्रि. ग्रामजाली; जालोपजीवी। २५६

जालिका स्त्री. [जालं जालवदाकृतिरस्ति अस्याः। जाल+'अत इनिठनौ' इति ठन्] भटानामश्मरचिताङ्गरक्षिणी; वस्त्रविशेषः; गिरिसारः; [जलमेवेति स्वार्थे अण्, ततो जालं सलिलम् उत्पत्तित्वेनास्त्यस्या इति, ठन्] जलौकाः; 'जोंक' इति भाषा। विधवा। ४५९

जाल्मः त्रि. [जालयति दूरीकरोति हिताहितज्ञानमिति। जल्+णिच्+बाहुलकात् म] मूर्खः; पामरः; 'क्षणं विश्रम्यतां जाल्म ! स्कन्धं ते यदि बाधति। न तथा बाधते स्कन्धं यथा बाधति बाधते।' क्रूरः; असमीक्ष्यकारी; 'त्वयि पूजनं जगति जाल्म ! कृतमिदमपाकृते गुणैः। हासकरमघटते नितरां शिरसीव कङ्कतमपेतमूर्धजे'—इति माघे (१५।३३)। ३३६

जाहकः पुं. [पुनः पुनः जहाति मूषकादिं भक्षणलीलार्थम् इति भावः। यङ्लुगन्तादोहाक् त्यागे इत्यस्माद् ल्यु] विडालविशेषः; गन्धमार्जारः; गात्रसङ्कोची; मण्डली; बहुरूपकः; कामरूपी; विरूपी; बिलवासः; बिलेशयजन्तुविशेषः; घोङ्घः; मार्जारः; खट्वा; कारुण्डिका। २३६

जाह्नवी स्त्री. [जह्नोरपत्यं स्त्री, जह्नु+अण्+ङीप्] गङ्गा; 'जानुद्वारा पुरा दत्वा जह्नुः संपीय कोपतः। तस्य कन्यास्वरूपा च जाह्नवी तेन कीर्तिता'—इति ब्रह्मवैवर्तखण्डे। ६७३

जिघत्सा स्त्री. [अत्तुमिच्छा। अद् भक्षणे+सन्+अ, 'लुङ्सनोर्घस्लृ' इति घस्लृ] क्षुधा; बुभुक्षा। ३६१

जिघत्सुः त्रि. [अत्तुमिच्छुः। अद्+सन्, घसादेशः, 'सनाशसभिक्ष उः'] क्षुधितः; बुभुक्षितः। ३६०

जिघांसुः पुं. [हन्तुमिच्छुः। हन्+सन्, 'सनाशंसभिक्ष उः'] शत्रुः; घातेप्सुः; हननेच्छी त्रि.। 'प्रशान्तचेष्टं ह[illegible] जिघांसुः'—इति भट्टिः। 'जिघांसवः क्रोधवशाः सुभीमा भीमं समन्तात् परिवव्रुरुग्राः'—इति महाभारते (३।१५४।१८)। ४५५

जितकाशी [न्] त्रि. [जितेन जयेन काशते इति। काश्+णिनि] जययुक्तः; जिताहवः; 'अनिरुद्धं रणे वासौ जितकाशी महाबलैः। वाचं प्रोवाच संक्रुद्धो गृह्यतां हन्यतामिति'—हरिवंशे (१७५।१४१)। ४७९

जिताहवः पुं. [जित आहवो युद्धं येन] जितकाशी; जययुक्तः। ४७९

जिनः पुं. [जयतीति। जि+'इण्षिञ्जीति' नक्] विष्णुः; बुद्धः (८५); अर्हन्; अतिवृद्धः; जित्वरे त्रि.। २५

जिनेन्द्रः पुं. [जिनानाम् इन्द्रः] बुद्धः; अर्हद्विशेषः। ८६

जिष्णुः पुं. [जयतीति, जि जये+'ग्लाजिस्थश्च ग्स्नुः' —इति ग्स्नु] विष्णुः; 'विष्णुर्विक्रमणाद्देवो जयनाज्जिष्णुरुच्यते। शाश्वतत्वादनन्तश्च गोविन्दो वेदनाद्गवाम्'—इति महाभारते (४।४२।२१)। इन्द्रः (५२); 'जयंश्च जिष्णुश्चामित्रा जयतामिन्द्रमेदिनौ' —इति अथर्ववेदे (११।९।१८)। अर्जुनः; 'अहं दुरापो दुर्द्धर्षो दमनः पाकशासनिः। तेन देवमनुष्येषु जिष्णुर्नामास्मि विश्रुतः'—इति महाभारते (४।४२।२१)। भौत्यस्य मनोः पुत्राणामन्यतमः; 'तरङ्गभीरुर्वर्ष्मश्च तरस्वानुग्र एव च। अभिमानी प्रवीरश्च जिष्णुः संक्रन्दनस्तथा। तेजस्वी सबलश्चैव भौत्यस्यैते मनोः सुताः'—इति हरिवंशे (७।८८)। जेतरि त्रि.। 'इति जित्वा दिशो जिष्णुर्न्यवर्तत रथोद्धतम्। रजो विश्रामयन् राज्ञां छत्रशून्येषु मौलिषु'—इति रघुवंशे (४।८५)। २५

जिह्मः त्रि. [जहाति परित्यजति सारल्यमिति। हा+'जहातेः सन्वदालोपश्च' इति मन्] मन्दः; कुटिलः (६९६); 'सक्रोधामर्षजिह्मभ्रूकषायीकृतलोचनाः'—इति महाभारते (१।१०२।१८)। क्ली. तगरवृक्षः। ३८७

जिह्मगः पुं. [जिह्मं कुटिलं वक्रमित्यर्थः, यथा स्यात् तथा गच्छतीति, गम्+ड] सर्पः; 'स लब्ध्वा दुर्लभां भार्यां पद्मकिञ्जल्कवर्चसम्। व्रतं चक्रे विनाशाय जिह्मगानां धृतव्रतः'—इति महाभारते (१।९।१९)। [जिह्मं मन्दं गच्छतीति] मन्दगे त्रि.। ६४१

जिह्वा स्त्री. [जयति रसमनयेति। जि+'शेवायह्वजिह्वाग्रीवाप्वामीवाः'—इति वन्प्रत्ययेन ह्वगागमे निपातनात् साधुः] अर्चिः; (५२१) रसज्ञानेन्द्रियं; रसज्ञा; रसना; रशना; रसनः; जिह्वः; रसालः; सुधास्रवा; रसिका; रसाङ्का; रसा; लोला; रसाला;

रसला; ललना। 'जिह्वे! कीर्तय केशवं मुररिपुं चेतो! भज श्रीधरं, पाणिद्वन्द्व! समर्चयाच्युतकथां श्रोत्रद्वय! त्वं शृणु। कृष्णं लोकय लोचनद्वय! हरेर्गच्छाङ्घ्रियुग्मालयं, जिघ्र घ्राण! मुकुन्दपादतुलसीं मूर्द्धन्नमाधोक्षजम्—इति मुकुन्दमालायाम्। ६७

जीमूतः पुं. [जीवनं जलं मूत्रयति स्रावयतीति। पृषोदरादित्वम्] मेघः; 'राजानमन्वयुः पश्चाज्जीमूता इव वार्षिकाः'—इति महाभारते (६।१९।३१)। [जयति आकाशमिति । जि+'जेर्मूट्चोदात्तः'—इति क्त, मूडागमो धातोर्दीर्घश्च] पर्वतः (७९५); 'जीमूतो द्रावणश्चैव मैनाकश्चन्द्रपर्वतः। आयतास्ते महाशैलाः समुद्रं दक्षिणं प्रति'—इति मत्स्यपुराणे (१२०।७५)। मुस्ता; देवताडवृक्षः; इन्द्रः; भृतिकरः; घोषकलता; 'वामार्गवमथेक्ष्वाकुं जीमूतं कृतवेधनम्'—इति चरके। सूर्यः; 'वरुणः सागरोऽश्रुंश्च जीमूतो जीवनोऽरिहा' —इति महाभारते (३।३।२२) । ऋषिविशेषः; 'जीमूतस्यात्र विप्रर्षेरुपतस्थे महात्मनः'—इति महाभारते (५।१११।२४)। मल्लविशेषः; 'ततस्तु वृत्रसङ्काशं भीमो मल्लं समाह्वयत्। जीमूतं नाम तं तत्र मल्लं विख्यातविक्रमम्'—इति महाभारते (४।१२।२२)। दशार्हस्य पौत्रः; 'दशार्हस्य सुतो व्योमा व्योम्नो जीमूत उच्यते'—इति हरिवंशे (३२।२५) । वपुष्मत्पुत्रः; 'शाल्मलस्येश्वराः सप्त सुतास्ते तु वपुष्मतः। श्वेतश्च हरितश्चैव जीमूतो रोहितस्तथा।' ऊनचत्वारिंशदक्षरवृत्तिविशेषः; छन्दोभेदः, यथा—'।।।, ।।।,ऽ।ऽ,ऽ।ऽ, ऽ।ऽ, ऽ।ऽ, ऽ।ऽ, ऽ।ऽ, ऽ।ऽ, ऽ।ऽ, ऽ।ऽ, ऽ।ऽ, ऽ।ऽ' ५८

जीरकः पुं. [जीर+संज्ञायां कन्] वणिग्द्रव्यविशेषः; जरणः; अजाजी; कणा; जीर्णः; जीरः; दीप्यः; जीरणः; अजाजिका; वह्निशिखः; मागधः; दीपकः; 'जीरा' इति भाषा। 'जीरको जरणेऽजाजी कणा स्याद्दीर्घजीरकः। कृष्णजीरः सुगन्धश्च तथैवोद्गारशोधनः'—इति भावप्रकाशः। ६१६

जीरणः पुं. [जीरकः पृषोदरादित्वात् कस्य णः] जीरकः; 'जीरा' इति भाषा। ६१६

जीर्णः त्रि. [जीर्यतीति, जॄ+'गत्यर्थाकर्मकश्लिषेति' कर्तरि क्त] पुरातनः; 'तत्याज देहं धर्मात्मा देही जीर्णमिवाम्बरम्'—इति देवीभागवते। 'वासांसि जीर्णानि यथा विहाय'—इति भगवद्गीतायाम्। वृद्धः; गतबहुवयाः; जराविशिष्टः; पक्वः; पाकविशिष्टः; 'जीर्णमन्नं प्रशंसीयात् भार्याञ्च गतयौवनाम्। रणात् प्रत्यागतं शूरं सस्यं च गृहमागतम्'—इति चाणक्यः (७९) । पुं. [जीर्यत्यनेनेति । जॄ+करणे क्त] जीरकः; वृक्षः; क्ली. [जीर्यति स्मेति, जॄष् वयोहानौ+गत्यर्थेति क्त, निष्ठातस्य नत्वम्] शैलजं; वयः प्रकारविशेषः; 'तद्वयो यथा स्थूलभेदेन त्रिविधम्। बालं मध्यं जीर्णमिति'—चरके। ५५०,७११

जीवः पुं. [जीवनमिति, जीव्+बाहुलकाद् भावे घञ्] असुधारणम्; 'त्वमेव चिन्तय सखि! नोत्तरं प्रतिभाति मे। स्वकार्ये मुह्यते लोको यथा जीवं लभाम्यहम्'—इति हरिवंशे (१७४।७३)। [जीवयति मन्त्रौषध्यादिना शिष्यान्] बृहस्पतिः; 'अस्माल्लिङ्गार्चनान्नित्यं जीवभूतोऽसि मे यतः। अतो जीव इति ख्यातिं त्रिषु लोकेषु यास्यसि'—इति काशीखण्डे (१७।४४)। [जीवतीति, जीव् प्राणधारणे+'इगुपधज्ञेति' क] प्राणी; 'अहस्तानि सहस्तानामपदानि चतुष्पदाम्। फल्गूनि तत्र महतां जीवो जीवस्य जीवनम्'—इति भागवते (१।१३।४४)। वृत्तिः; वृक्षविशेषः; महानिम्बवृक्षः; 'महानिम्बः स्मृतोद्रेका रम्यको विषमुष्टिकः। केशामुष्टिर्निम्बकश्च कार्मुको जीव इत्यपि'—इति भावप्रकाशः। कर्णः; क्षेत्रज्ञः; आत्माः; पुरुषः; पुद्गलः; अन्तर्यामीः; ईश्वरः; 'कर्मणा जीवरूपश्च सन्ततं तत्फलप्रदः। कर्मरूपश्च भगवान् श्रीकृष्णः प्रकृतेः परः'—इति ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिखण्डम्। [जीवयति लोकानन्तर्याम्यात्मकरूपेणेति। जीव्+णिच्+अच्] विष्णुः; 'जीवो विनयिता साक्षी मुकुन्दोऽमितविक्रमः'—इति महाभारते (१३।१४९।६९)। जीवनविशिष्टे त्रि.। 'मृते वा त्वयि जीवे वा यदा मोक्ष्यति वै जनः।' पुं.—क्ली. [जीव्+भावे घञ्] जीवितं; जीवनम्; 'जीवस्य तत्त्वजिज्ञासा नार्थो यश्चेह कर्मभिः'—इति भागवते (१।२।१०)। 'जीवस्य जीवनस्य च पुनर्द्धर्मानुष्ठानद्वारा कर्मभिर्य इह प्रसिद्धः स्वर्गादिः सोऽर्थो न भवति' —इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। ४७

जीवकः पुं. [जीवयति आरोग्यं करोतीति। जीव्+णिच्+ण्वुल्] जैनः; अष्टवर्गान्तगतौषधिविशेषः;

कूर्चशीर्षः; मधुरकः; शृङ्गः; ह्रस्वाङ्गः; जीवनः; दीर्घायुः; प्राणदः; जीव्यः; भृङ्गाह्वः; प्रियः; चिरञ्जीवी; मधुरः; मङ्गल्यः; कूर्चशीर्षकः; वृद्धिदः; आयुष्मान्; जीवदः; बलदः; 'जीवकर्षभकौ ज्ञेयौ हिमाद्रिशिखरोद्भवौ। रसोनकन्दवत्कन्दौ निःसारौ सूक्ष्मपत्रकौ।' 'जीवकः कूर्चकाकारः ऋषभो वृषशृङ्गवत्।' 'जीवकर्षभकस्थाने विदारीमूलम्'—इति भावप्रकाशः। प्राणकः; पीतशालः; क्षपणः; त्रि. '[जीवति प्रभुसेवावृत्या इति। जीव्+ण्वुल्] सेवकः; वृद्धयाशीः; जीवी; 'त्रैविद्यो ब्राह्मणो विद्वान् न चाध्ययनजीवकः।' अहितुण्डिकः। ३४५

जीवजीवः पुं. [जीवेन भक्ष्यक्षुद्रकीटादिना जीवतीति। जीव्+अच्। यद्वा जीवञ्जीव+पृषोदरादित्वात् साधुः] जीवञ्जीवपक्षी; चकोरपक्षी। २५४

जीवञ्जीवः पुं. [जीवं जीवयति विषदोषं नाशयतीति। 'कृत्यल्युटो बहुलमिति' बाहुलकात् खच्] चकोरपक्षी; अपरः पक्षिविशेषः; विषादिविकृतस्यान्नादेः परीक्षार्थमस्यावश्यकत्वं भवति। 'हंसः प्रस्खलति ग्लानिर्जीवञ्जीवस्य जायते। चकोरस्याक्षिवैराग्यं क्रौञ्चस्य स्यान्मदोदयः'—इति वाग्भटः। वृक्षविशेषः। २५४

जीवत्तोका स्त्री. [जीवत् तोकम् अपत्यम् अस्याः] जीवत्पुत्रिका; जीवसूः। ४८६

जीवत्पतिः स्त्री. [जीवन् पतिर्यस्याः] पतिवत्नी; सधवा। ४८६

जीवधनम् क्ली. [जीव एव धनमिति] गवादिकम्; पशुधनम्। ८१

जीवनम् क्ली. [जीव्यतेऽनेनेति। जीव्+करणे ल्युट्] वृत्तिः; जीविका; 'अहस्तानि सहस्तानामपदानि चतुष्पदाम्। फल्गूनि तत्र महतां जीवो जीवस्य जीवनम्' —इति भागवते (१।१३।४४)। 'जीवनं जीविकेति' तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। जलम्; 'यमुनाया इव तस्याः सखि ! मलिनं जीवनं मन्ये'—इति आर्यासप्तशत्याम् (४६३)। [जीव्+भावे ल्युट्] प्राणधारणम्; 'यावद्वायुः स्थितो देहे तावज्जीवनमुच्यते'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् (२।३)। 'प्राणान् हन्ति जगत्प्राणो जीवनं हन्ति जीवनम्। किमाश्चर्यं क्षारभूमौ प्राणदा यमदूतिका'—इत्युद्भटः। हैयङ्गवीनं; मज्जा; गङ्गा; 'जीवनं जीवनप्राणा जगज्ज्येष्ठा जगन्मयी'—इति काशीखण्डे' (२९।६५)। पुं. [जीवयति सेवनादिना। जीव्+कर्तरि ल्यु] जीवकौषधं; वातः; क्षुद्रफलकवृक्षः; पुत्रः; [सर्वान् प्राणरूपेण जीवयतीति। जीव्+णिच्+कर्तरि ल्यु] विष्णुः; 'वीरहा रक्षणः सन्तो जीवनः पर्यवस्थितः'—इति महाभारते (१३।१४९।११२)। शिवः; 'निर्जीवो जीवनो मन्त्रः शुभाङ्गो बहुकर्कशः' —इति महाभारते (१३।१७।१२१)। ५७०

जीवनीयम् क्ली. [जीव्यतेऽनेन अस्माद्वा। जीव्+करणे अपादाने वा अनीयर्] जलं; जीवनप्रदे त्रिः। 'गोक्षीरमनभिष्यन्दि स्निग्धं गुरु रसायनम्। जीवनीयं यथा वातपित्तघ्नं परमं स्मृतम्'—इति सुश्रुते (१।४५)। ६४८

जीवसूः स्त्री. [जीवं प्राणिनं सूते इति। सू+क्विप्] जीवत्तोका; जीवत्पुत्रिका; 'जीवसूर्वीरसूर्भद्रे ! बहुसौख्यगुणान्विता। सुभगा भागसम्पन्ना यज्ञपत्नी पतिव्रता।' ४८६

जीवस्थानम् क्ली. [जीवस्य जीवनस्य स्थानम्] मर्म; देहस्थकोमलाङ्गम्। ५२९

जीवा स्त्री. [जीवयतीति, जीव्+णिच्+अच् ततष्टाप्] जीवितम्; मौर्वी (४६४): 'निर्गुण इति मृत इति च द्वावेकार्थाभिधायिनौ विद्धि। पश्य धनुर्गुणशून्यं निर्जीवं तदिह शंसन्ति' —इति आर्यासप्तशत्याम्। 'निर्गता जीवा ज्या यस्मात् तत्, 'जीवा ज्या शिञ्जिनीत्यपि' इत्यभिधानात्'—इति तट्टीका। वचा; शिञ्जितं; भूमिः १३४।

जीवितम् क्ली. [जीव्+भावे क्त] जीवनम्। 'त्वं जीवितं त्वमसि मे हृदयं द्वितीयं त्वं कौमुदी नयनयोरमृतं त्वमङ्के। इत्यादिभिः प्रियशतैरनुरुध्य मुग्धां तामेव शान्तमथवा किमिहोत्तरेण'—इति उत्तररामचरिते ३ अङ्के। [कर्तरि क्त] जीवनयुक्ते त्रि.। 'कामं जीवति मे नाथ इति सा विजहौ शुचम्। प्राङ् मत्वा सत्यमस्यान्तं जीवितास्मीति लज्जिता'—इति रघुवंशे (१२।७५)। १३४

जुगुप्सा स्त्री. [गुपेर्निन्दायां सन्, भावे अ, ततष्टाप्] जुगुप्सनं; निन्दा; 'दोषेक्षणादिभिर्गर्हा जुगुप्सा विषयोद्भवा'—इति साहित्यदर्पणे (३।१७६)। ६१, १४८

जेता [ऋ.] त्रि. [जयतीति, जि+तृच्] जयशीलः; विष्णुः; जित्वरः; जैत्रः; 'जेतारं लोकपालानां स्वमुखैरर्चितेश्वरम्'–इति रघुवंशे (१२।८९) । विष्णुः; 'अनघो विजयो जेता विश्वयोनिः पुनर्वसुः'—इति महाभारते (१३।१४९।२९) । ४४६

जेमनम् क्ली. [जिमु अदने+भावे ल्युट्] भोजनं; भक्षणम् । ३२५

जैत्ररथः पुं. [जैत्रो जयशीलो रथो यस्य] जयशीलः; जिष्णुः; जित्वरः; जैत्रः । ४४६

जैनः पुं. [जिन एव, यद्वा जिनः उपास्यदेवतास्येति । जिन+अण्] जिनोपासकः । ३४५

जैनाश्रमः पुं.— वसतिः; जैनमठः । ८०७

जैवातृकः पुं. [जीवयति ओषधिप्रभृतीनीति । जीव्+णिच्+'आतृकन् वृद्धिश्च'—इति आतृकन् ईकारस्य वृद्धिश्च] चन्द्रः; चन्द्रमाः; कर्पूरः; पुत्रः; भेषजम् । त्रि. [जीवतीति, जीव्+आतृकन् वृद्धिश्च] दीर्घायुः (३८१); 'जैवातृक ! ननु श्रूयते पतिरस्या मिथिलायां प्रहारवर्मासीत्'—इति दशकुमारचरिते । कृशः । ४३

जोषम् क्ली. [जुष् प्रीतिसेवनयोः+भावे घञ्] सुखं; प्रीतिजनकव्यवहारः; 'का राधद्धोत्राश्विना वां को वां जोष उभयोः'—इति ऋग्वेदे (१।१२०।१) । 'जोषे प्रीतिजनके व्यवहारे'—इति दयानन्दभाष्यम् । १२३

जोषम् अव्य. [जुष्+बाहुलकात् अम्] तूष्णीम्; 'मैवमित्यब्रवीच्चैनं जोषमास्वेति भारत ।'—इति महाभारते (२।६८।१६) । सुखम् । ८८३

ज्ञः पुं. [जानातीति, ज्ञा+'इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः'—इति क] बुधः; पण्डितः; 'पशुः पशूनां दौर्बल्यात् कश्चिन्मध्ये वृकायते । ससत्त्वं वृकमासाद्य प्रकृतिं भजते पशुः । तद्वदज्ञो ज्ञमध्यस्थः कश्चित् मौखर्यसाधनः । स्थापयत्यात्पमात्मानमाप्तं त्वासाद्य भिद्यते'—इति चरके । महीसुतः; ब्रह्मा । ३३२

ज्ञातिः पुं. [जानाति छिद्रं कुलस्थितिञ्च । क्तिच्] सपिण्डादिः; सगोत्रः; बान्धवः; बन्धुः; स्वः; स्वजनः; अंशकः; गन्धः; दायादः; सकुल्यः; समानोदकः; 'यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्यादिकानि च । ज्ञातिद्रोहस्य पापस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिखण्डे । [ज्ञायते विद्यतेऽस्मादिति, ज्ञा+अपादाने क्तिन्] पिता । ५०९

ज्ञानम् क्ली. [ज्ञा+भावे ल्युट्] विशेषेण सामान्येन चावबोधः; 'मोक्षे धीर्ज्ञानमन्यत्र विज्ञानं शिल्पशास्त्रयोः'—इत्यमरः । विष्णुः; सर्वदर्शी विमुक्तात्मा सर्वज्ञो ज्ञानमुत्तमम्'—इति महाभारते (१३।१४९।६१) । 'ज्ञानं प्रकृष्टमजन्यमनवच्छिन्नं सर्वस्य साधकमिति ज्ञानमुत्तमं 'सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म' इति श्रुतेः'—इति तद्भाष्यम् । ८४८

ज्ञानी [न्] पुं. [ज्ञानमस्त्यस्येति, ज्ञान+'अत इनिठनौ' इति इनि] दैवज्ञः; ज्योतिषिकः; त्रि. सामान्यबोधयुक्तमात्रः; 'ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं किन्तु ते नहि केवलम् । यतो हि ज्ञानिनः सर्वे पशुपक्षिमृगादयः'—इति मार्कण्डेये (८१।३६) । ज्ञानयुक्तः; 'चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन । आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ'—इति भगवद्गीतायाम् । ४०३

ज्या स्त्री. [ज्या+'अन्येभ्योऽपीति' ड ततष्टाप्] वसुधा; पृथ्वी; पृथिवी । (४६४) धनुर्गुणः; मौर्वी; शिञ्जिनी; गुणः; शिञ्ज्या; जीवा; प्रत्यञ्चा; पतञ्चिका; गव्या; बाणासनः; द्रुणा; 'जग्राह बलमास्थाय ज्यया च युयुजे धनुः'—इति महाभारते (१।२२६।२०) । माता । १५६

ज्येष्ठः त्रि. [अयमेषामतिशयेन वृद्धः प्रशस्यो वा इति । वृद्ध वा प्रशस्य+इष्ठन् ततो ज्यादेशः] अग्रजः; 'दृढभक्तिरिति ज्येष्ठे राज्यतृष्णापराङ्मुखः'—इति रघुवंशे (१२।१९) । अधिकवयाः; अतिवृद्धः; श्रेष्ठः; 'ज्येष्ठं वर्णमनुप्राप्य तस्माद्रक्षेत वै द्विजः'—इति महाभारते (१३।१४३।७) । पुं. [ज्येष्ठा नक्षत्रयुक्ता पौर्णमासीत्यण्, ज्येष्ठी । सा अस्मिन् मासीति पुनरण्, संज्ञापूर्वस्य विधेरनित्यत्वान्न वृद्धिः] ज्येष्ठमासः । ५०६

ज्येष्ठा स्त्री. [ज्येष्ठ+टाप्] गृहगोधिका; अश्विन्यादिसप्तविंशतिनक्षत्रान्तर्गताष्टादशनक्षत्रम् । सा तु शूकरदन्ताकृतितारकत्रियात्मिका; 'सत्कीर्तिपुत्रैर्विविधैः समेतो वित्तान्वितोऽत्यन्तलसत्प्रतापः । श्रेष्ठप्रतिष्ठो विकलस्वभावो ज्येष्ठा भवेद्यस्य च जन्मकाले'—इति कोष्ठीप्रदीपः । 'कुर्वन्तश्चानुराधासु लभन्ते चक्रवर्तिताम् । आधिपत्यं च ज्येष्ठासु मूले चारोग्यमुत्तमम्'—इति

मार्कण्डेयपुराणे (३४।१३)। मध्यमाङ्गुलिः; गङ्गा; धीरादिनायिकाभेदः; तस्या लक्षणम्—'परिणीतत्वे सति भर्तुरधिकस्नेहा' इति रसमञ्जरी। अलक्ष्मीः; 'मां प्रणम्य पुनर्देवा ममन्थुः क्षीरसागरम्। तस्मिन् प्रमथ्यमाने तु मया देवैश्च भाविनि। जेष्ठा देवी समुत्पन्ना रक्तस्रग्वाससावृता। उत्पन्ना साब्रवीद्देवान् किं कर्तव्यं मयेति वै। तामब्रुवंस्तदा देवीं सर्वे देवगणा भृशम्। येषां गृहान्तरे नित्यं कलहः संप्रवर्तते। तत्ते स्थानं प्रयच्छामो वासस्तत्र शुभानने'—इति पाद्मे। २५७

ज्योतिरिङ्गणः पुं. [ज्योतिरिव इङ्गतीति। इगि गतौ+ल्यु] कीटविशेषः; खद्योतः; ध्वान्तोन्मेषः; तमोमणिः; दृष्टिबन्धुः; तमोज्योतिः; ज्योतिरिङ्गः; निमेषकः; ज्योतिर्बीजं; निमेषरुक् २५७

ज्योतिषिकः पुं. [ज्योतिर्ज्योतिःशास्त्रम् अधीते इति। ऋतूक्थादित्वात् ठक्, संज्ञापूर्वस्य विधेरनित्यत्वान् न वृद्धिः] ज्योतिषिकः; ज्योतिषी; ज्योतिषशास्त्रज्ञः। ४०३

ज्योतिः [स्] क्ली. [द्युत् दीप्तौ+'द्युतेरिसन्नादेश्च जः' इति इसन् दस्य च जः] नक्षत्रम्; 'ज्योतींष्य-ग्निञ्चामेध्यमशस्तञ्च नाभिवीक्षेत'—इति चरके। प्रकाशः; (६५); दृष्टिः (८१०); पुं. द्युत्+कर्तरि इसन्] अग्निः; 'तस्यान्तरेण नाभेस्तु ज्योतिःस्थानं ध्रुवं स्मृतम्। तदा धमति वातस्तु देहस्तेनास्य वर्द्धते' —इति सुश्रुते। सूर्यः; मेथिका; विष्णुः; 'स्वक्षः स्वङ्गः शतानन्दो नन्दिर्ज्योतिर्गणेश्वरः'—इति महाभारते (१३।१४९।७९)। ५१

ज्योत्स्ना स्त्री. [ज्योतिरस्त्यस्यामिति। 'ज्योत्स्नातमिस्रेति' निपातनात् नप्रत्यय उपधालोपश्च] चन्द्रज्योतिः; चन्द्रिका; कौमुदी; चन्द्रिमा; चान्द्री; कामवल्लभा; चन्द्रातपः; चन्द्रकान्ता; शीता; अमृततरङ्गिणी; 'चाँदनी' इति भाषा। 'पुराणपूर्णचन्द्रेण श्रुतिज्योत्स्नाः प्रकाशिताः'—इति महाभारते (१।१।८६)। ज्योत्स्नायुक्तरात्रिः; पटोलिका; श्वेतघोषा; दुर्गा; 'प्रभाप्रसादशीलत्वाज्ज्योत्स्ना चन्द्रार्कमालिनी'—इति देवीपुराणे ४५ अध्याये। 'रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः। ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः'—इति मार्कण्डेये देवीमाहात्म्ये। प्रभातकालः; 'ज्योत्स्ना समभवत् सापि प्राक्सन्ध्या याभिधीयते।' ४४

ज्यौतिषिकः पुं. [ज्योतिषं ज्योतिषशास्त्रमधीते वेद वा इति, ठक् वृद्धिश्च] दैवज्ञः; ज्योतिषी; ज्योतिषशास्त्रज्ञः। ४०३

ज्वलनः पुं. [ज्वलतीति, ज्वल् + 'जुचङ्क्रम्यदन्द्रम्यसृगृधिज्वलशुचलषपतपदः' इति युच्] अग्निः; 'यत्र त्रिनयननयनज्वलनज्वालावलीशलभवृत्तिः, जीवति मानसजन्मा शशिवदनावदनकान्तिपीयूषैः'—इति कलाविलासे (१।४)। चित्रकवृक्षः; क्ली. [ज्वल्+भावे ल्युट्] दहनम्। ६२

ज्वालः पुं.–स्त्री. [ज्वलतीति, ज्वल+'ज्वलितिकसन्तेभ्यो णः' इति ण, पक्षे स्त्रियां टाप्] अग्निशिखा; 'दीप्तो ज्वालैरनेकाभैरग्निरेषोऽथ वीर्यवान्'—इति महाभारते (३।२१८।३७)। दीप्तिप्रविशिष्टे त्रि.। ६५

ज्वाला स्त्री. [ज्वलतीति, ज्वल्+ण+टाप्] अग्निशिखा; ज्वालः; 'अभ्युद्यतोग्रश्च ज्वालामालाकुलैर्मुखैः'—इति विष्णुपुराणे। दाहः; ऋक्षस्य पत्नी; 'ऋक्षः खलु तक्षकदुहितरमुपयेमे ज्वालां नाम। तस्यां पुत्रं मतिनारं नामोत्पादयामास'—इति महाभारते (१।९५।२५)। ६५

झ

झञ्झानिलः पुं. [झञ्झाध्वनियुक्तोऽनिलः] प्रावृषेण्यवायुः; वर्षन्मेघवेगवद्वायुः; झञ्झावातः; झञ्झामरुत्। ७७

झञ्झावातः पुं. [झञ्झाध्वनियुक्तो वातः] प्रावृषिजवायुः; झञ्झानिलः; 'झञ्झावातः सवृष्टिकः'। 'झञ्झावातं रक्तवृष्टिं वात्यां च वृक्षपातनम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते गणपतिखण्डे ३५ अध्याये ७७।

झटिति अव्य. [झट् सङ्घाते+क्विप्, इण् गतौ+क्तिन्] द्रुतं; शीघ्रं; स्राक्; अञ्जसा; अह्नाय; सपदि; द्राक्; मङ्क्षु; 'तत्त्वविस्तृतिमात्रान्नानर्थः किन्तु विपर्ययात्। विपर्येतुं न कालोऽस्तिझटिति स्मरतः क्वचित्'—इति पञ्चदशी (७।१२५)। ६९७

झषः पुं. [झष्यते वध्यते भक्षणाय, झष्यते गृह्यते इति वा। झष्+'खनो घ च' इति अन्यतोऽपि घ] मत्स्यः; 'झषाणां मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्नवी'—इति

भगवद्गीता (१०।३१)। मकरः; मत्स्यविशेषः; 'लीनमीनझषग्राहां कृशां गिरिनदीमिव'—इति रामायणे (२।११४।४)। तापः; वनं; मीनराशिः; 'सार्द्धसप्तझषे मेषे वसुसार्द्धो घटे वृषे'—इति समयप्रदीपः। मकरराशिः। ६५७

झषकेतनः पुं. [झषो मकरो मीनो वा केतनं केतुरस्य] कन्दर्पः; कामदेवः। ३२

झावुकः पुं. [झा इति शब्दं वेति। झा+वी+मितद्र्वादित्वाड्डु, बत्वं बाहुलकेन,झाबुरेव, स्वार्थे कन्] वृक्षविशेषः; पिचुलः; झावुः; झावूः; 'झाऊ' इति भाषा। १९५

झिण्टी स्त्री. [झिमिति कृत्वा रटतीति। झिम्+रट्+अच् ङीष् च, पृषोदरादित्वात् साधुः] पुष्पवृक्षविशेषः; सैरीयकः; कण्टकुरण्टकः; सैरेयकः; झिण्टिका। २०५

झिरिका स्त्री. [झिरीति अव्यक्तशब्देन कायति शब्दायते इति। झिरि+कै+क टाप् च] झिल्ली; झिरी; झिञ्झी; वाद्यविशेषः। २५६

झिल्लिका स्त्री. [झिर् इत्यव्यक्तशब्दं लिशतीति। झिर्+लिश्+डि, रस्य लत्वे साधुः ततः स्वार्थे कन्] झिल्ली; 'झींगुर' इति भाषा। 'झिल्लिकाविरुतैर्दीर्घैं रुदतीव समन्ततः'–इति रामायणे (२।९६।११)। आतपस्य रुचिः; विलेपनमलं; झिल्लिकारावः; उद्वर्तनवस्त्ररुचिः; उद्वर्तनवस्त्रं; झिण्टी। २५६

झिल्लीका स्त्री. [झिल्ली+संज्ञायां कन् ततष्टाप्] झिल्लिका; झिल्ली। २५६

ट

टङ्कः पुं. [टकि+घञ्] दर्पः; प्रस्तरघटनोपकरणं; कोपः; कोषः; असिः; जङ्घा; ग्रावदारणः; 'यः क्षत्रदेहं परितक्ष्य टङ्कैस्तपोमयैर्ब्राह्मणमुच्चकार' —इति अनर्घराघवे (१।२२)। परिमाणविशेषः; स तु चतुर्माषकरूपश्चतुर्विंशतिरक्तिकारूपो वा। पुं.– क्ली. [टकि+घञ् अच् वा] दर्पः; टङ्कणः; खनित्रं; नीलकपित्थः; 'शीतं कषायं मधुरं टङ्कं मारुतकृद् गुरु'—इति सुश्रुते। ८२१

ड

डमरः पुं. [डेन भयेन मरो मृतिरिव यत्र] अस्त्रकलहः; डिम्बं; विप्लवः; डिम्बः; बिम्बः; डामरः; 'तल्लक्षणोऽस्थिकेतुः स तु रूक्षः क्षुद्भयावहः प्रोक्तः। स्निग्धस्तादृक् प्राच्यां शास्त्राख्यो डमरमरकाय'—इति गर्गः। परचक्रादिभयं; क्ली. भीत्या पलायनं; शृगालिका; विद्रवः; डिम्बः। १२७

डयनम् क्ली. [डीयते आकाशमार्गे गम्यतेऽनेनेति। डी+करणे ल्युट्] नभोगतिः; गगनगतिः। कर्णीरथः (४४५)। २४०

डिण्डिमः पुं. [डिण्डीति शब्दं मातीति। डिण्डि+मा+क] वाद्यप्रभेदः; डेङ्करी; माहेश्वरदण्डी; 'भेरीश्चाभ्यहनन् हृष्टा डिण्डिमांश्च सहस्रशः'—इति महाभारते (७।१९३।४४)। [डिण्डिम इव आकृतिरस्त्यस्येति, अर्श आदित्वादच्] कृष्णपाकफलः। ९७

डिण्डिरः पुं. [हिण्डिरः; पृषोदरादित्वात् हस्य डः] समुद्रफेनः; हिण्डीरः। ६६८

डिम्बः पुं. [डिबि नोदे+भावे घञ्] विप्लवः; भयध्वनिः; अण्डं; फुप्फुसः; प्लीहा; डिम्भः। १२७

डिम्भः त्रि. [डिम्भयति संहतो भवतीति। डिम्भ्+पचाद्यच्] शिशुः; 'शुभारम्भेऽदम्भे महितमतिडिम्भेङ्गितशतं, मणिस्तम्भे रम्भेक्षणसकुचकुम्भे परिणतम्' —इति रसिकरञ्जने। मूर्खः। ५०२

डुण्डुभः पुं. [डुण्डुः सन् भातीति। डुण्डु इत्यनुकरणशब्देन भाति वा, भा+क] सर्पविशेषः; राजिलः; दुण्डुभः; नागभृत्; डुण्डुः; 'एकदा स वने घोरं डुण्डुभं जरसान्वितम्। अपश्यद्दण्डमुद्यम्य हन्तुं तं समुपाययौ'—इतिदेवीभागवते (२।११।२८)। ६४३

त

तक्रम् क्ली. [तनक्ति सङ्कोचयति दुग्धम्, पादाम्बुदधिरूपेण परिणमयतीत्यर्थः। 'स्फायितञ्चीति'—रक् न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वं च] पादाम्बुसंयुतदधि; गोरसजं; घोलं; कालसेयं; विलोडितं; दण्डाहतम्; अरिष्टम्; अम्लम्; उदश्वित्; मथितं; द्रवः; 'न तक्रसेवी व्यथते कदाचित् न तक्रदग्धाः प्रभवन्ति रोगाः। यथा सुराणाममृतं सुखाय तथा नराणां भुवि तक्रमाहुः' —इति भावप्रकाशः। २७५

तक्षा [न्] पुं. [तक्षति तनूकरोतीति। तक्ष्+'कनिन् युवृषितक्षिराजीति' कनिन्] त्वष्टा; 'स्रस्ताङ्गसन्धौ

विगतांक्षपाटवे रुजा निकामं विकलीकृते रथे। आप्तेन तक्ष्णा भिषजेव तत्क्षणं प्रचक्रमे लङ्घनपूर्वकः क्रमः' —इति माघे (१२।२५)। ५८७

तटम् क्ली. [तटति उच्छ्रितं भवतीति। तट् उच्छ्राये+पचाद्यच्] पार्श्वप्रदेशः; 'गोकर्णे पुष्कराण्ये तथा हिमवतस्तटे'—इति महाभारते (१।३६।२)। क्षेत्रम्। १६६

तटः त्रि. [तटति उच्छ्रितो भवतीति। तट्+अच्] तीरं; तटी; 'कर्तव्यमार्गौ भ्राजेते ह्रदस्यास्य तटावुभौ'—इति हरिवंशे (६७५५)। पुं. महादेवः; 'नमस्तटाय तटचाय: तटानाम्पतये नमः'—इति महाभारते (१२।२८४।३६)। ६६७

तटिनी स्त्री. [तटमस्त्यस्या इति। तट+ 'अत इनिठनौ'—इति इनिस्ततो ङीप्] नदी; 'हृत्वा तटिनि ! तरङ्गैर्भ्रमितश्चक्रेषु नाशये निहितः। फलदलवल्कलरहितस्त्वयान्तरिक्षे तरुस्त्यक्तः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (६९२)। ६६५

तटी स्त्री. [तटति उच्छ्रिता भवतीति। तट्+अच्+ङीष्] तीरम्; 'मालयं च श्मशानं च नद्यादीनां तटी तथा'—इति साहित्यदर्पणे (३।८६)। ६६७

तडाकः, तडागः पुं.– क्ली. [तड् आघाते+'तडागादयश्च' इति आगप्रत्ययेन निपातनात् साधुः। तण्डचते आहन्यते ऊर्मिमालाभिरिति। तड्+'पिनाकादयश्च' इति कर्मणि आकप्रत्ययोऽपि] पद्मादियुक्तं सरः; पद्माकरः; तटाकः; तडगः; पञ्चशतधनुःपरिमाणजलाशयः; 'चतुर्दिक्षु पञ्चचत्वारिंशद्धस्तान्यूनतायां सहस्रद्वितयहस्तान्यूनत्वेन तडागः' कथ्यते। यन्त्रकूटकः। ६७६

तडित् स्त्री. [ताडयत्यभ्रमिति। तड् आघाते+'ताडेर्णिलुक् च' इति इतिप्रत्ययः णेर्लुक् च] विद्युत्; 'अथ नभस्य इव त्रिदशायुधं कनकपिङ्गतडिद्गुणसंयुतम्। धनुरधिज्यमनाधिरुपाददे नरवरो रवरोषितकेशरी'—इति रघुवंशे (९।५४)। ६०

तण्डकः पुं. [तण्डते आहन्तीति। तण्ड्+ण्वुल्] समासप्रायवाक्; खञ्जनपक्षी; फेनः; गृहदारु; तरुस्कन्धः; मायाबहुलके त्रि.। पुं.– क्ली. परिष्कारः। १४३

तण्डुः पुं. [ताडयति, तड् आघाते+ण्यन्तादुप्रत्ययः] शिवद्वारपालविशेषः; रुद्रानुचरः; रङ्गमञ्चे गायननिर्देशकः। १४, ८३६

तत्कालः पुं. [स चासौ कालश्चेति.] वर्तमानकालः; तदात्वम्; 'वर्षस्य वेश्मवसुभिः स किलादरेण तत्कालमेव समपूरयदुन्नतश्रीः'—इति कथासरित्सागरे (२।८३)। सहसा (८८४)। ११८

तत्कालधीः त्रि. [तस्मिन्काले कार्यकाले धीरुपस्थिता बुद्धिर्यस्य] प्रत्युत्पन्नमतिः; उपस्थितबुद्धिः। ३७६

तत्परः त्रि. [सः परोऽस्य। यद्वा तदेव परं सर्वोत्तममस्य] आसक्तः; 'एष साक्षाद्धरेरंशो जातो लोकरिरक्षया। इयं च तत्परा हि श्रीरनुजज्ञेऽनपायिनी'—इति भागवते (४।१५।६)। ३५२

तत्रभवान् [त्] त्रि. ['इतराभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति तच्छब्दात् प्रथमार्थे त्रल्। ततः सुप्सुपेति समासः] श्लाघ्यः; पूज्यः; (८६४) तत्त्वज्ञः; तत्ववेत्ता। १५५

तथा अव्य. [तेन प्रकारेण। तद्+'प्रकारवचने थाल्'] तेन प्रकारेण; 'स तैः पृष्टस्तथा सम्यगमितौजा महात्मभिः। प्रत्युवाचार्च्य तान् सर्वान् महर्षीन् श्रूयतामिति' —इति मनुः (१।४)। साम्यम्; 'यथा नदीनदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्। तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम्'—इति मनुः (६।९०)। अभ्युपगमः; पृष्टप्रतिवाक्यं; समुच्चयः; 'सपादलक्षं च तथा भारतं मुनिना कृतम्। इतिहास इति प्रोक्तं पञ्चमं वेदसम्मतम्'—इति देवीभागवते (१।२।२६)। निश्चयः; 'तं वेधा विदधे नूनं महाभूतसमाधिना। तथा हि सर्वे तस्यासन् परार्थैकफला गुणाः'—इति रघुवंशे (१।२९)। ७८०

तथागतः पुं. [यथा पुनरावृत्तिर्न भवति तथा तेन प्रकारेण गतः। यद्वा तथा सत्यं गतं ज्ञानं यस्य। सुप्सुपेति समासः] बुद्धः; 'यथा गतास्ते मुनयः शिवां गतिं तथा गतिं सोऽपि गतस्तथागतः'—इति सर्वदर्शनसङ्ग्रहे। 'तथा तेन प्रकारेणगतः।' पूर्वोक्तप्रकारेणागते त्रि.। 'ततो बभूव नगरे सुमहान् हर्षजः स्वनः। जनस्य संप्रहृष्टस्य नलं दृष्ट्वा तथागतम्'—इति महाभारते (३।७७।५)। ८५

तथ्यम् क्ली. [तथा साधु। तथा+'तत्र साधुः' इति यत्] सत्यम्; 'काणं वाप्यथवा खञ्जमन्यं वापि तथाविधम्। तथ्येनापि ब्रुवन् दाप्यो दण्डं कार्षापणावरम्'

—इति मनुः (८।२७४) । 'यदर्जुनगुणांस्तथ्यान् कीर्तयानं नराधम ! शूरद्वेषात् सुदुर्बुद्धे ! त्वं भर्त्सयसि मातुलम्'—इति महाभारते (७।१५७।३)। १४४

तदात्वम् क्ली. [तदा इत्यस्य भावः । तदा+'तस्य भावस्त्वतलौ'—इति त्व] तत्कालः; वर्तमानकालः। ११८

तद्गतम् त्रि. [तस्मिन्नेव गतम्] तत्परं,; तदासक्तम्। ५३४

तद्बलः पुं. [तस्मिन् लक्ष्ये एव बलं यस्य] बाणविशेषः। ४६७

तनयः पुं. [तनोति विस्तारयति कुलमिति । तन्+'बलिमलितनिभ्यः कयन्'—इति कयन्] पुत्रः; सुतः; 'शूद्रावेदी पतत्यत्रेरुतथ्यतनयस्य च'—इति मनुः (३।१६)। ४९७

तनया स्त्री. [तनोति कुलमिति । तन्+कयन्+टाप्] कन्या; 'स उत्तरस्य तनयामुपयेमे इरावतीम्'—इति भागवते (१।१६।२)। चक्रकुल्यालता। ५०५

तनुः स्त्री. [तनोति तन्यते इति वा । तन्+'भृमृशीतृचरीति' उ] शरीरम्; 'देवाः स्वर्गं परित्यज्य तत्त्रासान् मुनिसत्तम । विचेरुरवनौ सर्वे बिभ्राणा मानुषीं तनुम्'—इति विष्णुपुराणे (१।१७।५)। त्वक्; स्त्री। ५१०

तनुः त्रि. [तन्+'भृमृशीति']अल्पः; कृशः (७१७); 'वितरन्ती रसमन्तर्ममार्द्रभावं तनोषि तनुगात्रि!' इति आर्यासप्तशत्याम् (५२५)। विरलः;'तनुलोमकेशदशनां मृद्वङ्गीमुद्वहेत् स्त्रियम्'—इति मनुः(३।१०)। ६८८

तनुजः पुं. [तनोः शरीरात् जातः इति। जन्+'अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड] पुत्रः; तनूजः; 'स्वामी द्वेष्टि सुसेवितोऽपि सहसा प्रोज्झन्ति सद्बान्धवा, द्योतन्ते न गुणास्त्यजन्ति तनुजाः स्फारीभवन्त्यापदः। भार्या नोतमवंशजापि भजते नो यान्ति मित्राणि च, न्यायारोपितविक्रमानपि नरान् येषां न हि स्याद्धनम्।' ४९७

तनुत्राणम् क्ली. [त्रायतेऽनेनेति, त्रै+करणे ल्युट्, तनोः शरीरस्य त्राणम्] तनुत्रं; वर्म; 'इदं च मे तनुत्राणं प्रायच्छन्मघवान् प्रभुः'—इति महाभारते (३। १७४।४)। शरीररक्षणम्। ४५९

तनूः स्त्री. [तनु+ऊङ] शरीरं; देहः। ५१०

तनूजः पुं. [तन्वाः शरीरात् जातः इति, जन्+ड] पुत्रः; 'अवेहि गन्धर्वपतेस्तनूजं प्रियंवदं मां प्रियदर्शनस्य' —इति रघुवंशे (५।५३)। स्त्री. कन्या। ४९७

तन्तुः पुं. [तन्यते विस्तीर्यते इति, तनोति वा। तन्+'सितनिगमीति' तुन्] सूत्रम्; 'यस्मिन् नित्यं तते तन्तौ दृढे स्रगिव तिष्ठति'—इति महाभारते(१२।४७।२२)। ग्राहः; सन्ततिः; 'अन्तःस्थः सर्वभूतानामात्मा योगेश्वरो हरिः। स्वमाययावृणोद्गर्भं वैराट्याः कुरुतन्तवे' —इति भागवतम्। ८६५,८७०

तन्तुवायः पुं. [तन्तून् वयति विस्तारयति जालाकारेणेति। वे+'संज्ञायाञ्च' इत्यण्। 'कर्मण्यण्' वा] तन्त्रवायः; कौलिकः; 'जुलाहा' इति भाषा। 'तन्तुवायो दशपलं दद्यादेकपलाधिकम्'—इति मनुः (८।३९७)। लूता। ५९०

तन्त्रम् क्ली. [तनोति तन्यते इति वा, तन्+कर्त्रादौ यथायथं ष्ट्रन्। तत्रि कुटुम्बधारणे; घञ् वा] तन्तुः; मन्त्रः; सिद्धान्तः; परिच्छदः; प्रधानम्; 'कुटुम्बकृत्यं; कुलप्रतिष्ठादिकस्थितिः; 'सर्वानुपायानथस स्प्रधाय समुद्धरेत् स्वस्य कुलस्य तन्त्रम्'—इति महाभारते (१३।४८। ६)। ओषधिः; तन्त्रवायः; श्रुतिशाखाविशेषः; हेतुः; उभयार्थप्रयोजकम्; इतिकर्तव्यता; राष्ट्रं; परच्छन्दः; करणं; अर्थसाधकः; सैन्यं; स्वराष्ट्रचिन्ता; 'तन्त्रावापविदा योगैर्मण्डलान्यधितिष्ठता'—इति माघे (२।८८)। प्रबन्धः; शपथः; धनं; गृहं; वयनसाधनम्; 'तदापश्यत् स्त्रियौ तन्त्रे अधिरोप्य सुवेमे पटं वयन्तौ'—इति महाभारते (१।३।१४०)। कुलं; शास्त्रम्; 'अवैरज्ञमतन्त्रज्ञं बालचेष्टासमन्वितम् —इति देवीभागवते (२।११।१९)। व्यवहारः; नियमादिः; 'श्रुत्वा त्वं प्रतिपद्यस्व प्राज्ञः सह पुरोहितैः। आपद्धर्मार्थकुशलैर्लोकतन्त्रमवेक्ष्य च'—इति महाभारते (१।१०३।२६)। शिवोक्तशास्त्रं; तच्च चतुःषष्टिसंख्यकम्; 'चतुःषष्टिश्च तन्त्राणि यामलादीनि पार्वति! सफलानीह वाराहे! विष्णुक्रान्तासु भूमिषु। कल्पभेदेन तन्त्राणि कथितानि च यामि च। पाषण्डमोहनायैव विफलानीह सुन्दरि!'—इति महाविश्वसारतन्त्रम्। कालतन्त्रं; वासनाजालम्; 'तन्त्रं चेदं विश्वरूपे युवत्यौ वयतस्तन्तून् सततं वर्तयन्तौ'—इति

महाभारते (१।३।१४२)। 'तन्त्रं कालतन्त्रं विश्वोपादाननिमित्तादिकारणसमूहसम्बन्धम्'—इति दुर्घटार्थप्रकाशिन्यां विमलबोधः। 'इह तन्त्रं वासनाजालम्'—इति नीलकण्ठः। ८७०

तन्त्रवायः पुं. [तन्त्रेण वयतीति, वेञ् तन्तुसन्ताने+'ह्वावामश्च' इत्यण्] वर्णसङ्करजातिविशेषः; कुविन्दः;, तन्त्रवापः; तन्तुवापः; तन्तुवायः; 'जुलाहा' इति भाषा। 'ताम्रकुट्टाच्छङ्खकार्यां मणिकारश्च जायते। मणिकारात् ताम्रकुटयां मणिबन्धोऽप्यजायत। मणिबन्धान्मणिकार्यां तन्त्रवायश्च जायते'—इति पराशरपद्धतौ। लूता। ५९०

तन्त्रीः स्त्री. [तन्त्रयति मोहयति लोकानिति। तन्त्र+'अवितृस्तृतन्त्रिभ्य ईः' इति ई] वीणागुणः; 'नातन्त्री विद्यते वीणा नाचक्रो विद्यते रथः'—इति रामायणे (२।३९।२९)। वीणा; 'पादबद्धोऽक्षरसमस्तन्त्रीलयसमन्वितः। शोकार्तस्य प्रवृत्तो मे श्लोको भवतु नान्यथा'—इति रामायणे (१।२।१८)। गुडूची; देहशिरा; नदीविशेषः; युवतीभेदः; रज्जुः; 'न लङ्घयेद् वत्सतन्त्रीं न प्रधावेच्च वर्षति। न चोदके निरीक्षेत स्वं रूपमिति धारणा'—इति मनुः (४।३८)। ९६

तन्त्रीगणः पुं. [तन्त्रीणां रज्जूनां गणः समूहः] महारज्जुः; वरत्रा। ५९७

तपनः पुं. [तपतीति। तप्+कर्तरि ल्यु] सूर्यः; भानुः; 'सहस्ररश्मिरादित्यस्तपनस्त्वं गवां पतिः'—इति महाभारते (३।३।६२)। भल्लातकवृक्षः; अग्नघादिदाहात्मकनरकः; ग्रीष्मः; तापः; अर्कवृक्षः; क्षुद्राग्निमन्थवृक्षः; सूर्यकान्तमणिः; 'अनयनपथे प्रिये! न व्यथा यथा दृश्य एव दुष्प्रापे। म्लानैव केवलं निशि तपनशिला वासरे ज्वलति'—इति आर्यासप्तशत्याम् (२६)। अग्निविशेषः; 'ते जातवेदसः सर्वे कल्माषः कुसुमस्तथा। दहनः शोषणश्चैव तपनश्च महाबलः'—इति हरिवंशे (१७८।३१)। स्त्रीणां सत्त्वजे अलङ्कारविशेषे क्ली.। 'तपनं प्रियविच्छेदे स्मरावेशोत्थचेष्टितम्'—इति साहित्यदर्पणे (३।११६)। तत्रैव उदाहरणं यथा—'श्वासान्मुञ्चति भूतले विलुठति त्वन्मार्गमालोकते, दीर्घं रोदिति विक्षिपत्यत इतः क्षामां भुजावल्लरीम्। किञ्च प्राणसमान काङ्क्षितवती स्वप्नेऽपि ते सङ्गमं, निद्रां वाञ्छति न प्रयच्छति पुनर्दग्धो विधिस्तामपि।' ३५

तपनीयम् क्ली. [तप्+अनीयर्। वह्नौ शोधनीयपरीक्षणीयत्वादस्य तथात्वम्] स्वर्णं; तपनीयकं; सुवर्णम्; 'तस्मादधः किञ्चिदिवावतीर्णावसंस्पृशन्तौ तपनीयपीठम्'—इति रघुवंशे (१८।४१)। १७४

तपः [स्] क्ली. [तापयति तपति वा। तप् संतापे+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इति असुन्] माघमासः; माघे (६।६३)। देहक्लेशजनकं कर्म; 'उमेऽतिचपले पुत्रि! न क्षमं तावकं वपुः। सोढुं क्लेशस्वभावस्य तपसः सौम्यदर्शने'—इति मत्स्यपुराणे। तपस्या; जनलोकादूर्ध्वलोकः; चान्द्रायणादिव्रतं; धर्मः। पुं. [तपति तापयति वा, तप् सन्तापे+पचाद्यच्] ग्रीष्मः; 'तपेन वर्षाः शरदा हिमागमो वसन्तलक्ष्म्या शिशिरः समेत्य च। प्रसूनक्लृप्तिं दधतः सदर्तवः पुरेऽस्य वास्तव्यकुटुम्बितां ययुः'—इति माघे (१।६६)। ११४

तपस्यः पुं. [तपसि ग्रीष्मे साधुः। तपस्+'तत्र साधुः' इति यत्] फाल्गुनमासः; 'तत्र माघादयो द्वादशमासाः द्विमासिकमृतुं कृत्वा षडृतवो भवन्ति। ते शिशिरवसन्तग्रीष्मवर्षाशरद्धेमन्ताः। तेषां तपस्तपस्यौ शिशिरः।' 'तपः माघः, तपस्यः फाल्गुनः।' अर्जुनः; तामसस्य मनोः पुत्रविशेषः; 'द्युतिस्तपस्यः सुतपास्तपोमूलस्तपोशनः। तपोरतिरकल्माषस्तन्वी धन्वी परन्तपः। तामसस्य मनोरेते दशपुत्रा महाबलाः'—इति हरिवंशे (७।२४)। ११४

तपस्या स्त्री. [तपश्चरति, तस्य भावः। 'कर्मणो रोमन्थतपोभ्यां वर्तिचरोः' इति क्यङ् ततः 'अ प्रत्ययात्'—इति अ, ततष्टाप्] तपः; व्रतादानं; परिव्रज्या; नियमस्थितिः; व्रतचर्या। ७७६

तपस्वी [न्] पुं. [तपस्+अस्त्यर्थे विनि] मुनिः; नारदः; मत्स्यविशेषः; तपःकरः; चेष्टकः; चेष्टः; चाक्षुषस्य मनोः पुत्रविशेषः; 'ऊरुः पुरुः शतद्युम्नस्तपस्वी सत्यवान् कविः'—इति हरिवंशे (२।१९)। घृतकरञ्जवृक्षः। ३४४

तपस्वी [न्] त्रि. [तपोऽस्यास्तीति, तपस्+'तपःसहस्राभ्यां विनीनी'—इति विनि] तपोयुक्तः; तापसः;

पारिकाङ्क्षी; पारकाङ्क्षी; पारिकाङ्क्षकः; तपोधनः; 'न हिंस्याद् ब्राह्मणान् गाश्च सर्वांश्चैव तपस्विनः'—इति मनुः (४।१६२)। आनुकम्प्यः (७९३)। ४०९

तपः [स्] पुं. [तपत्यस्मिन्निति, तप्+असुन्] माघमासः; शिशिरकालः; 'तेषां तपस्तपस्यौ शिशिरः' इति सुश्रुते। ग्रीष्मः। ११४

तपात्ययः पुं. [तपस्य ग्रीष्मस्य अत्ययो यत्र] वर्षाकालः; 'तपात्यये वारिभिरुक्षिता नवैर्भुवा सहोष्माणममुञ्चदूर्ध्वगम्'—इति कुमारसम्भवे (५।२३)। ११६

तमः पुं. [ताम्यत्यनेनेति, तम्+संज्ञायां घ] राहुः; तमोगुणः। ४९

तमङ्गः पुं.—इन्द्रकोशः; मञ्चकः; इन्द्रकोषः; तमङ्गकः, मञ्चः; 'मचान' इति भाषा। २९४

तमः [स्] क्ली. [ताम्यत्यनेनेति, तम्+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इति असुन्] अन्धकारः; तमसं; निशाचर्मं; नीलपङ्कं; रजोबलं; दिवान्तकः; वियद्भूतिः; खलुक्; वृत्रः; रजोरसं; दिनान्तरम्; अन्धकम्; 'तमसा लोकमावृत्य नौगतामेव भारत'—इति महाभारते (१।१०५।१०)। पापं (६२७); राहुः (४९); 'निमिमील नरोत्तमप्रिया हृतचन्द्रा तमसेव कौमुदी'—इति रघुवंशे (८।३७)। शोकः; प्रकृतेर्गुणविशेषः; 'सत्त्वं रजस्तम इति दृश्यन्ते पुरुषे गुणाः'—इति गारुडे। ११०

तमस्विनी स्त्री. [तमो विद्यतेऽस्यामिति। विनि ङीप् च] रात्रिः; 'अदृश्यमानस्तस्याद्य तमस्विन्यामनिन्दिते!। नागो बिलमिवाक्रम्य पोथयिष्याम्यहं शिरः'—इति महाभारते (४।२१।३८)। हरिद्रा। १०७

तमा स्त्री. [तमोऽस्त्यस्यामिति। तम+अच् टाप् च] रात्रिः; तमालवृक्षः। १०७

तमालपत्रम् क्ली. [तमालस्य पत्रमिव वर्णोऽस्यास्तीति। अर्शआदित्वाद् अच्] तिलकं; तमालः; पत्रकम्; 'पत्रं तमालपत्रं च तथा स्यात् पत्रनामकम्'—इति भावप्रकाशः। तमालवृक्षः; तमालस्य पत्रम्; 'तमालपत्रास्तरणासु रन्तुं प्रसीद शश्वन्मलयस्थलीषु'—इति रघुवंशे (६।६४)। ५४१

तमिः स्त्री. [तम्यते ग्लायते च, तम्+सर्वधातुभ्य इन्' इतीन्] रात्रिः। १०७

तमिस्रम् क्ली. [तमोऽस्त्यत्र, 'ज्योत्स्नातमिस्रेति' निपातनात् साधुः। यद्वा तमिस्रा अस्त्याश्रयत्वेनास्य, अच्] अन्धकारम्; 'यदेतन्नर्तनागारं मत्स्यराजेन कारितम्। दिवात्र कन्या नृत्यन्ति रात्रौ यान्ति यथागृहम्। तमिस्रे तत्र गच्छेथा गन्धर्वास्तत्र जानते'—इति महाभारते (४।२१।१७)। क्रोधः; नरकविशेषः; 'अमङ्गलानां च तमिस्रमुल्वणं विपर्ययः केन तदेव कस्यचित्'—इति भागवते (४।७।४४)। ११०

तमिस्रा स्त्री. [तमोबहुत्वमस्ति अस्याम्। 'ज्योत्स्नातमिस्रेति' निपातनात् साधुः] अन्धकारवती रात्रिः; कृष्णपक्षनिशा; तमोयुक्तरात्रिमात्रम्; (११०) तमस्ततिः; अन्धकारसमूहः; 'सूर्ये तपत्यावरणाय दृष्टेः कल्पेत लोकस्य कथं तमिस्रा'—इति रघुवंशे (५।१३)। १०७

तमी स्त्री. [तमि+कृदिकारादिति वा ङीष्] रात्रिः; 'ददृशेऽपि भास्कररुचाह्नि न यः, स तमीं तमोभिरभिगम्य तताम्।' हरिद्रा। १०७

तमोघ्नः पुं. [तमोऽन्धकारं मोहमज्ञानं वा हन्तीति। हन्+टक्] वह्निः; सूर्यः; 'स देवशत्रूनिव देवराजः किरीटमाली व्यधमत् समन्तात्। यथा तमांस्यभ्युदितस्तमोघ्नः पूर्वप्रतिज्ञां समवाप्य वीरः'—इति महाभारते (७।१४४।१३६)। चन्द्रः; बुद्धः; केशवः; शम्भुः। ६४

तरः [स्] क्ली. [तॄ प्लवनतरणयोः+करणादौ यथायथम्; असुन्] बलं; वेगः (४४३); तीरं; प्लवगः। ७२३

तरक्षः पुं. [तरक्षु+पृषोदरादित्वात् अकारः] तरक्षुः; 'चीता' इति भाषा। 'शैलकूटैस्तरक्षर्क्षशार्दूलशाखामृगाध्यासितैः'—इति बृहत्संहिता (१२।६)। २२६

तरक्षुः पुं. [तरं बलं मार्गं वा क्षिणोति। क्षिणु हिंसायाम्+मितद्र्वादित्वात् डु] व्याघ्रविशेषः; तर्क्षुः; मृगादनः; तरक्षुकः। 'ततो मायां परां चक्रे देवशत्रुः प्रतापवान्। सिंहान् व्याघ्रान् वराहांश्च तरक्षूनृक्षवानरान्'—इति हरिवंशे (१६३।१४)। २२६

तरङ्गः पुं. [तरति प्लवते इति। तॄ+'तरत्यादिभ्यश्च' इति अङ्गच्] वायुना नद्यादिजलस्य तिर्यगूर्ध्वप्लवनम्; भङ्गः; ऊर्मिः; वीचिः; उर्मी; वीची, विचिः; लहरी; हली; विलिः; लहरिः; जललता; भृण्डिः; उत्कलिका;

ऊर्मिका; 'लहर' इति भाषा। वस्त्रं; हयादीनां समुत्फालः। ६५३

तरङ्गिणी स्त्री. [तरङ्गो वीचिरस्त्यस्या इति। तरङ्ग+'अत इनिठनौ' इति इनि] नदी; 'तरङ्गिणी वेणिरिवायता भुवः'—इति माघे। ६६५

तरणिः पुं. [तरति पापमनेनेति। तॄ+अनि] सूर्यः; 'इत्युक्त्वा तरणिः कुन्तीं तन्मनस्कां सुलज्जिताम्। भुक्त्वा जगाम देवेशो वरं दत्त्वाभिवाञ्छितम्'—इति देवीभागवते (३।६।२८)। अर्कवृक्षः; भेलकः; किरणः; नौका; तरिणी। ३५

तरपण्यम् क्ली. [तॄ+भावे अप्, तरस्तरणं तस्य पण्यम्] आतरः; 'नौका भाड़ा', 'उतराई' इत्यादि भाषा। ६७१

तरलः पुं. [तॄ+'वृषादिभ्यश्चित्' इति कलप्रत्ययश्चित्] हारमध्यमणिः; 'प्रकीर्णका विप्रकीर्णाश्च राजन्! प्रवालमुक्तातरलाश्च हाराः'—इति महाभारते (८।९४।१९)। हारः; तलं; जनपदविशेषः; तद्देशवासिनि बहुवचनान्तः-'वत्सान् कलिङ्गान् तरलानश्मकानृषिकानपि'—इति महाभारते (८।८।२०)। ५६४

तरलः त्रि. [तॄ+कलच्] चलः; 'आः स्वभावमधुरैरनुभावैस्तावकैरतितरां तरलाः स्मः'—इति नैषधे (५।२४)। षिङ्गः; भास्वरः; मध्यशून्यद्रव्यं; द्रवीभतः। ६९५

तरला स्त्री. [तॄ+कलच् टाप् च] यवागूः; सुरा; मधुमक्षिका। ३२०

तरलितम् त्रि. [तरलं तारल्यमस्य जातम्। तरल+इतच्। तरल इवाचरति तरलं करोतीति। तरल+क्विप्+णिच्+क्त] जाततारल्यं; प्रेङ्खोलितं; लुलितं; प्रेङ्खितं; द्रुतं; चलितं; कम्पितं; धूतं; वेल्लितम्; आन्दोलितम्; 'व्यालोलः केशपाशस्तरलितमलकैः स्वेदलोलौ कपोलौ'—इति गीतगोविन्दे (१२।१५)। ७४६

तरवारिः पुं. [तरं समागतविपक्षबलं वारयतीति। तर+वृ+णिच्+इन्] खड्गः; तलवारिः; 'ऋष्टिः खड्गस्तरवारिः शस्त्रो भद्रात्मजश्च सः। धाराविषो विशसनो न्युब्जखड्गः कटीतलः'—इति त्रिकाण्डशेषे। तत्परीक्षा—'अङ्गं रूपं तथा जातिर्नेत्रारिष्टे च भूमिका। ध्वनिर्मानमिति प्रोक्तं खड्गानामष्टकं शुभम्। दीर्घता लघुता चैव खरविस्तीर्णता तथा। दुर्भेद्यता सुघटता खड्गाना गुणसंग्रहः'—इति युक्तिकल्पतरौ भोजः 'तलवार' इति भाषा। ४७२

तरसम् क्ली. [तॄ+बाहुलकाद् असच्] मांसम्; 'तरसमयाः पूर्वोक्तभागाः'—इति कात्यायनश्रौतसूत्रे 'तरसमया मांसमयाः'—इति कर्कः। ६३१

तरिः स्त्री. [तरत्यनया इति। तॄ+'अच इः' —इति इ] नौका; 'साब्रवीद्दाशकन्यास्मि धर्मार्थं वाहये तरिम्' —इति महाभारते (१।१००।४८)। दशा; वस्त्रादिपेटकः। ६७२

तरीः स्त्री. [तरत्यनया इति। तॄ+'अवितृस्तृतन्त्रिभ्य ईः' इति ई] नौका; 'तरीषु तत्रत्यमफल्गुभाण्डम्' —इति माघे (३।७६)। गदा; वस्त्रादिपेटकः; धूमः; द्रोणी; दशा। ६७२

तरुः पुं. [तरति समुद्रादिकमनेनेति। तॄ+'भृमृशीतृचरीति' उ] वृक्षः; 'मुनिवनतरुच्छायां देव्या तया सह शिश्रिये'—इति रघुवंशे (३।७०)। १७७

तरुणः त्रि. [तरति प्लवते प्रमोदसलिले इति। तॄ+'त्रो रश्च लो वा' इति उनन्] नूतनः; 'तरुणं सर्षपशाकं नवौदनं पिच्छिलानि च दधीनि। स्वल्पव्ययेन सुन्दरि! ग्राम्यजनो मिष्टमश्नाति'—इति छन्दोमञ्जर्याम्। युवा (५०३); 'तरुणस्तस्य पुत्रोऽभूत्तिग्मतेजा महातपाः'–इति महाभारते (१।४०।२०)। पुं. [तॄ+उनन्] स्थूलजीरकः; एरण्डः। २७८

तरुषण्डः पुं. [सनोति, षणु दाने, 'ञमन्ताड् डः' इति ड, बाहुलकात्षत्वभावः। तरूणां षण्डः] तरुखण्डः; वृक्षसमूहः। २१२

तर्कः पुं. [तर्क्+भावे घञ्] ऊहः; वितर्कः (८७९); आकाङ्क्षा; व्यभिचारशङ्कानिवर्तकः; 'शुष्कतर्कं परित्यज्य आश्रयस्व श्रुतिं स्मृतिम्'—इति महाभारते (३।१९९।१०८)। हेतुशास्त्रं; मीमांसादि; 'आर्षं धर्मोपदेशं च वेदशास्त्राविरोधिना। यस्तर्केणानुसन्धत्ते स धर्मं वेद नेतरः'—इति मनुः (१२।१०६)। न्यायशास्त्रम्; 'यत्काव्यं मधुवर्षि धर्षितपरास्तर्केषु यस्योक्तयः'—इति नैषधे। ज्ञानम्; 'तं वै फलार्थिनं मन्ये भ्रातरं तर्कचक्षुषा'—इति महाभारते (१।१६८।१८)। १०

तर्णकः पुं. [तर्ण एव । स्वार्थे कन] सद्योजातवत्सः; तर्णः; वत्सः; 'बछड़ा', 'बछवा' इत्यादि भाषा। 'म्लानक्षीरां वरां पत्नीं रुद्धद्वारां निपात्यते। आलिङ्गयमानां क्रन्दद्भिस्तर्णकैरिव दारकैः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (५।४३६)। बालकः; 'मुनिविनियोगलूनप्ररूढमृदुशाद्वलानि बर्हीषि। गोकर्णतर्णकोऽयं तर्णोत्युपकण्ठकच्छेषु'—इति अनर्घराघवे (२।२३)। २६४

तर्दूः स्त्री. [तरति प्लवते इति। तृ+'त्रो दुक् च' इति ऊ द्रुगागमश्च] दारुहस्तकः; 'काठ की करछी' इति भाषा। ३१२

तर्पणम् क्ली. [तृप् प्रीणने+भावे ल्युट्] यज्ञकाष्ठं; [तृप्यन्ति पितरो येन। तृप्+करणे ल्युट्] देवर्षिपितृमनुष्याणां जलाञ्जलिदानेनतृप्तिसम्पादनम्; 'वसित्वा वसनं शुक्लं स्थले चास्तीर्णवर्हिषि। विधिज्ञास्तर्पणं कुर्युर्न पात्रे तु कदाचन'—इति गारुडे। तृप्तिः; प्रीणनम्; 'तत्राहूय तरोर्मूले वेतालं नृकलेवरे। पूजयित्वाकरोत्तस्य नृमांसबलितर्पणम्'—इति कथासरित्सागरे (२६।२३६)। देवतर्पणं यथा—'ब्रह्माणं तर्पयेत्पूर्वं विष्णुं रुद्रं प्रजापतिम्। देवा यक्षास्तथा नागा गन्धर्वाप्सरसोऽसुराः। क्रूराः सर्पाः सुपर्णाश्च तरवो जम्भकाः खगाः। विद्याधरा जलाधारास्तथैवाकाशगामिनः। निराहाराश्च ये जीवाः पापे धर्मे रताश्च ये। तेषामाप्यायनायैतद्दीयते सलिलं मया।' इदमुपवीतिना प्राङ्मुखेन देवतीर्थेन कार्यम्। मनुष्यतर्पणं यथा—'सनकश्च सनन्दश्च तृतीयश्च सनातनः। कपिलश्चासुरिश्चैव वोढुः पञ्चशिखस्तथा। सर्वे ते तृप्तिमायान्तु मद्दत्तेनाम्बुना सदा।' इदं निवीतिना मनुष्यतीर्थेन सामगेन प्रत्यङ्मुखेन कार्यम्। अन्यवेदिना उदङ्मुखेन कार्यम्। ततः ऋषितर्पणं प्राङ्मुखेन उपवीतिना देवतीर्थेन कार्यम्। ततो दिव्यपितृतर्पणं दक्षिणाभिमुखेन प्राचीनावीतिना सतिलजलेन पितृतीर्थेन कार्यम्। भीष्माष्टम्यां भीष्मतर्पणं तस्य मन्त्रो यथा—'वैयाघ्रपदगोत्राय साङ्कृत्यप्रवराय च। अपुत्राय ददाम्येतज्जलं भीष्माय वर्मणे।' प्रार्थनामन्त्रो यथा—'भीष्मः शान्तनवो वीरः सत्यवादी जितेन्द्रियः। आभिरद्भिरवाप्नोतु पुत्रपौत्रोचितां क्रियाम्।' यमतर्पणं नरकचतुर्दश्याम्—'यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च। वैवस्वताय कालाय सर्वभूतक्षयाय च। औदुम्बराय दध्नाय नीलाय परमेष्ठिने। वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय वै नमः।' ६९

तर्षः पुं. [तृष् पिपासायाम् +भावे घञ्] तृष्णा; पिपासा; तर्षणम्; 'लवणार्णवपानेन तर्षोत्कर्षमिवोद्वहन्। यत्प्रतापो रिपुस्त्रीणां सनेत्राम्भोऽभजन्मुखम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (३।४८०)। 'काश्मर्यशर्करायुक्तं चन्दनोशीरपद्मकम्। द्राक्षामधुकसंयुक्तं पित्ततर्षे जलं पिबेत्।' [तीर्यतेऽनेनेति, तृ प्लवनतरणयोः+'वृतृवदिहनीति' स] प्लवः; [तीर्यतेऽसौ इति कर्मणि स] समुद्रः; सूर्यः; अभिलाषः; तर्षणम्; 'तर्षच्छेदो न भवति पुरुषस्येह कल्मषात्। निवर्तते तदा तर्षः पापमन्तगतं यदा'—इति महाभारते (१२।२०४।६)। ३६३

तर्षितः त्रि. [तर्षोऽस्य जातः। तर्ष+तारकादित्वात् इतच्] तृषितः; 'राजा तद्यज्ञसदनं प्रविष्टो निशि तर्षितः। दृष्ट्वा शयानान् विप्रांस्तान् पपौ मन्त्रजलं स्वयम्'—इति भागवते (९।६।२७)। जाताभिलाषः; 'वशिष्ठः पुरतः कृत्वा दारान् दशरथस्य च। अभिचक्राम तं देशं रामदर्शनतर्षितः'—इति रामायणे (२।१०४।१)। ३६२

तर्षुलः त्रि.— तृषितः; पिपासितः। ३६२

तलः पुं. [तलतीति, तल् प्रतिष्ठायाम् +पचाद्यच्] तालवृक्षः; चपेटः; 'स मुष्टिं पातयामास हृदये दैत्यपुङ्गवः। देव्यास्तञ्चापि सा देवी तलेनोरस्यताडयत्'—इति मार्कण्डेये (९०।१६)। करतलाघातजन्यशब्दः; 'ततः प्रहसिताः सर्वे तेऽन्योन्यस्य तलान् ददुः'—इति महाभारते (३।२७७।२४)। त्सरुः; सव्यपाणिना तन्त्रीघातः; स्वभावः; आधारः; महादेवः; 'तलस्तालः करस्थाली ऊर्द्धसंहननो महान्'—इति महाभारते (१३।१७।१८८)। क्ली. [तलतीति, तल्+अच्] ज्याघातवारणः; 'ततः समुत्पेतुरुदायुधास्ते महीक्षितो बद्धतलाङ्गुलित्राः'—इति महाभारते (१।१९०।१५)। काननं; कार्यबीजं; गर्तः; पादतलस्य मध्यम्; 'रसामचष्टाङ्घ्रितलेऽथ पादयोर्महीं महीध्रान् पुरुषस्य जङ्घयोः। पतत्रिणो जानुनि विश्वमूर्तेरूर्वोर्गणं मारुतमिन्द्रसेनः'—इति भागवते (८।२०।२३)। हस्तस्य मध्यम्; 'स्पृष्ट्वैतानशुचिर्नित्यमद्भिः प्राणानुपस्पृशेत्। गात्राणि

चैव सर्वाणि नाभिं पाणितलेन तु'—इति मनुः (४।१४३)। १९२

तलवारिः पुं. [तलं हस्तप्रहारं वारयति। तल+वृ+णिच्, इन्] तरवारिः; खड्गः; असिः। ४७२

तलिनः त्रि. [तल+इनन्] विरलः; स्तोकः; स्वच्छः; दुर्बलः; क्ली. [तल्यते शयनार्थं गम्यतेऽत्र। तल्+'तलिपुलिभ्यां च' इति इनन्] शय्या। ७१७

तल्पम् क्ली.–पुं. [तल्यते शयनार्थं गम्यतेऽत्र। तल+'खष्पशिल्पशष्पवाष्परूपपर्पतल्पाः' —इति पप्रत्ययेन निपातनात् साधु] शय्या; 'स्रग्विणं तल्प आसीनमर्हयेत् प्रथमं गवा'–इति मनुः (३।३)। अट्टालिका; दाराः (८१०); (६७१) प्लवः; तल्ली। 'पितृव्यदारगमने भ्रातृभार्यागमे तथा। गुरुतल्पव्रतं कुर्यात् नान्या निष्कृतिरुच्यते'—इति संवर्तकसंहितायाम्। ३०७

तल्लः पुं. [तस्मिन् लीयते इति। ली+ड] जलाधारविशेषः; 'ताल' 'तलाब' इति भाषा। ६७५

तस्करः पुं. [तत्करोतीति, कृ+'दिवाविभे'त्यस्य 'किंयत्तद्बहुषु कृञोऽज्विधानम्' इति वार्त्तिकोक्तेरच्। ततः 'तद्बृहतोः करपत्योः' इति सुट्तलोपौ] चौरः; चोरः; पृक्काशाकः; मदनवृक्षः; कर्णः; 'व्यावृत्ता यत्परस्वेभ्यः श्रुतौ तस्करता स्थिता।' 'तस्करः कर्णचौरयोः' —इति कोषान्तरम्। ३३८

ताटङ्कः पुं. [ताडङ्क+पृषोदरादित्वात् साधुः] ताडङ्कः; कर्णभूषा; 'कान का बाला' इति भाषा। ५५६

ताडङ्कः पुं. [तालं तालपमिव अङ्क्यते लक्ष्यते इति। अङ्क+घञ् लस्य डत्वम्। शकन्ध्वादित्वात् साधुः] कर्णभूषा; कर्णदर्पणः; ताटङ्कः; कर्णिका; तालपत्रं; ताडपत्रं; कर्णमुकुरः; 'ताडङ्काङ्गदमेखलागुणरणन्मञ्जीरतां प्रापितां, कैराती वरदाभयोद्यतकरां देवीं त्रिनेत्रां भजे'—इति मनसाध्याने। ५५६

ताडपत्रम् क्ली. [तालस्य पत्रमिव। लस्य डत्वम्] ताडङ्कः; कर्णभूषा। ५५६

ताण्डवः पुं.–क्ली. [ताण्डेन मुनिना कृतं ताण्डं नृत्यशास्त्रं, तदस्यास्तीति। तण्डुना प्रोक्तमिति वा] नृत्यम्; 'पुंनृत्यं ताण्डवं प्राहुः स्त्रीनृत्यं लास्यमुच्यते' —इति शब्दार्थचिन्तामणिधृतवचनेन पुंनृत्यम्। तृणविशेषः; उद्धतनृत्यम्; 'प्रचण्डताण्डवाटोपे प्रक्षिप्ता येन दिग्गजाः। भवन्तु विघ्नभङ्गाय भवस्य चरणाम्बुजाः'—इतिमत्स्यपुराणे (१।१)। ९३

तातः पुं. [तनोति विस्तारयति गोत्रादिकमिति। तन्+'दुतनिभ्यां दीर्घश्च' इति क्त दीर्घश्च, अनुदात्तेति नलोपः] पिता; 'हा तातेति क्रन्दितमाकर्ण्य विषण्णस्तस्यान्विष्यन् वेतसगूढं प्रभवं सः। शल्यप्रोतं प्रेक्ष्य सकुम्भं मुनिपुत्रं तापादन्तःशल्य इवासीत् क्षितिपोऽपि' —इति रघुवंशे (९।७५)। अनुकम्प्यः; 'कच्चित्तेऽनामयं तात! भ्रष्टतेजा विभासि मे। अलभ्यमानोऽवज्ञातः किं वा तात! चिरोषितः'—इति भागवते (१।१४।३९)। पूज्ये त्रि.। 'तस्मान् मुच्ये यथा तात! संविधातुं तथार्हसि। इक्ष्वाकूणां दुरापेऽर्थे त्वदधीना हि सिद्धयः।' ५०४

तापसः त्रि. [तपः शीलमस्य, 'छत्रादिभ्यो णः'—इति ण] तपस्वी; 'तापसेष्वेव विप्रेषु यात्रिकं भैक्षमाहरेत्' इति मनुः (६।२७)। तपःसम्बन्धी; 'तापसं व्रतमाश्रित्य ततो गुहमुवाच ह'—इति रामायणे (२।५२।५)। पुं. दमनकवृक्षः; बकपक्षी; इक्षुविशेषः; 'कान्तारस्तापसेक्षुश्च काष्ठेक्षुः सूचिपत्रकः। इत्येता जातयः स्थौल्याद् गुणान् वक्ष्याम्यतः परम्। कान्तारतापसाविक्षू वंशकानुगुणौ मतौ'—इति सुश्रुते। क्ली. तमालपत्रं; 'तेजपात' इति भाषा। ४०९

तापिच्छः पुं. [तापिनं सन्तप्तं छदति आच्छादयतीति। तापिन्+छद्+अन्येष्वपीति ड, पृषोदरादित्वात् साधुः] तमालवृक्षः; 'अक्ष्णोर्निक्षिपदञ्जनं श्रवणयोस्तापिच्छगुच्छावलीम्'—इति गीतगोविन्दे (११।११)। क्ली. तापिच्छस्य पुष्पम् [फले लुगिति तद्धितलुक्। 'द्विहीनं प्रसवे सर्वं' मिति नपुंसकत्वम्] तापिच्छपुष्पम्; 'प्रफुल्लतापिच्छनिभैरभीषुभिः शुभैश्च सप्तच्छदपांशुपाण्डुभिः'—इति माघे (१।२२)। २०३

तामरसम् क्ली. [तामरे जले सस्तीति। 'सस्+ड। यद्वा काङ्क्षार्थात्तमेर्घञ्, रस आस्वादने, ण्यन्तादेरच्, तामं च तद्रसम्] पद्मम्; 'जाता तामरसोदरे भगवतो धातुः कृतार्था स्थितिः'—इति राजेन्द्रकर्णपूरे (५४)। सारसः; स्वर्णं; ताम्रं; द्वादशाक्षरच्छन्दोविशेषः। ६७९

ताम्बूलम् क्ली. [तम्+'खर्जिपिञ्जादिभ्य ऊरोलचौ' इति ऊलच् बुगागमो दीर्घश्च। ततस्ताम्बूलाय हितम्

इत्यणि पूगवाचकम्] क्रमुकं; नागवल्लीदलं; पर्णं; 'पान' इति भाषा। 'ताम्बूलं विधवास्त्रीणां यतीनां ब्रह्मचारिणाम्। तपस्विनां च विप्रेन्द्र! गोमांससदृशं ध्रुवम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते ब्रह्मखण्डम्। ५४५

ताम्बूली स्त्री. [ताम्बूल+गौरादित्वात् संज्ञायां वा ङीष्] ताम्बूलवल्ली; ताम्बूललता; नागवल्ली; पर्णलता; सप्तशिरा; सर्पलता; फणिवल्ली; भुजगलता; भक्ष्यपत्रा; ताम्बूलवल्लिका; पर्णवल्ली; ताम्बूलिः; नागिनी; नागवल्लरी; 'पान की बेल' इति भाषा। 'ताम्बूलवल्ली ताम्बूली नागिनी नागवल्लरी। ताम्बूलं विशदं रुच्यं तीक्ष्णोष्णं तुवरं सरम्। वश्यं तिक्तकटुक्षारं रक्तपित्तकरं लघु। बल्यं श्लेष्मास्यदौर्गन्ध्यमलवातश्रमापहम्'—इति भावप्रकाशे। 'ताम्बूलीश्च सहाम्लानि मालातिलकयुक्तिभिः'—इति कथासरित्सागरे (९।९१)। २००

ताम्रम् क्ली. [तम्यते आकाङ्क्ष्यते इति। तमु काङ्क्षायाम्+'अमितम्योदीर्घश्च' इति रक् उपधाया दीर्घश्च] तैजसधातुविशेषः; ताम्रकं; शुल्वं; म्लेच्छमुखं; द्व्यष्टं; वरिष्ठं; उडुम्बरं; द्विष्ठम्; उदम्बरम्; औदुम्बरम्; उदुम्बरं; औडुम्बरं; तपनेष्टम्; अम्बकम्; अरविन्दं; रविलोहं; रविप्रियं; रक्तं; नैपालिकं; रक्तधातु; मुनिपित्तलम्; अर्कं; सूर्याङ्गं; लोहितायसं; 'तामा' 'ताँबा' इत्यादि भाषा। 'शुक्रं यत्कार्तिकेयस्य पतितं धरणीतले। तस्मात् ताम्रं समुत्पन्नमिदमाहुः पुराविदः'—इति भावप्रकाशः। (७३३) शुल्वनिभः; अरुणवर्णः; तद्वति त्रि.। 'न विषं विषमित्याहुस्ताम्रं च विषमुच्यते। एको दोषो विषे त्वष्टौ दोषास्ताम्रे प्रकीर्तिताः'—इति वैद्यके। पुं. [ताम्रस्येव वर्णोऽस्त्यस्य। अच्, ताम्रवर्णत्वादस्य तथात्वम्] कुष्ठरोगविशेषः; द्वीपभेदः; 'द्वीपं ताम्राह्वयञ्चैव पर्वतं रामकं तथा'—इति महाभारते (२।३१।६५)। ३७०

ताम्रचूडः पुं.– स्त्री. [ताम्रा ताम्रवर्णा चूडा शिखा अस्य] कुक्कुटः; 'अपरेणाग्निदायादस्ताम्रचूडं भुजेन सः। महाकायमुपश्लिष्टं कुक्कुटं बलिनां वरम्'—इति महाभारते (३।२२४।२४)। ताम्रचूडस्य मांसेन पिबद्वा मद्यमुत्तमम्'—इति सुश्रुते। कुक्कुरद्रुः। २४७

तारः पुं.– क्ली. [तार्यते विस्तार्यते इति। तॄ+णिच्+घञ्] अत्युच्चशब्दः; 'नृणामुरसि मन्द्रस्तु द्वाविंशतिविधो ध्वनिः। स एव कण्ठमध्यः स्यात् तारः शिरसि गीयते।'—इति हेमचन्द्र टीका। शुद्धमौक्तिकः (७९८); क्ली. रूप्यम् (१७२); 'दग्धोत्तीर्णं सुशीतं यन्निर्मलं कुन्दसन्निभम्। गुरुस्निग्धकुमारं च तारमुत्तममिष्यते।' 'आयुः शुक्रं बलं हन्ति रोगसंघं करोति च। अशुद्धं चामृतन्तारं शुद्धमार्यमतो बुधैः'—इति वैद्यके। मुक्ता; 'हारं सुवर्णं सुमृतं च तारम्'—इति रसेन्द्रसारसंग्रहे। 'तारं मौक्तिकं तारशब्देन मौक्तिकमेवोच्यते न तु रजतम्' –इति तट्टीका। गौणसिद्धिभेदः; चक्षुस्तारा; तारकम्; 'तारे ज्योतिषि संयोज्य किञ्चिदुन्नमयेद् भ्रुवौ'—इति हठयोगप्रदीपिका। पुं. वानरविशेषः; मुक्ताविशुद्धिः; [तार्यंते उत्तार्यंते भवसागरादनेन; तॄ+णिच्+घञ्। यद्वा तारयति स्वोच्चारणजपादिभिर्लोकान्। तॄ+णिच्+अच्] प्रणवः; 'तारयेद् यद् भवाम्बोधेः स्वजपासक्तमानसम्। ततस्तार इति ख्यातो यस्तं ब्रह्मा व्यलोकयत्' —इति काशीखण्डे। 'तारश्रीपरशक्तिकामवसुधारूपानुगं यं विदुस्तस्मै स्तात्प्रणतिर्गणाधिपतये यो रागिणाभ्यर्थ्यते' —इति महागणपतिस्तोत्रे। तरणं; कूर्च्चबीजं; विष्णुः; 'अशोकस्तारणस्तारः शूरः शौरिर्जनेश्वरः'—इति महाभारते (१३।१४९।११७)। राक्षसविशेषः; 'युयुधे लक्ष्मणश्चापि तथैवेन्द्रजिता सह। विरूपाक्षेण सुग्रीवस्तारेण च निखर्वटः'—इति महाभारते (३।२८४।९)। दैत्यविशेषः; 'तारस्तु क्रोशविस्तारमायसं वायसध्वजम्' —इति हरिवंशे (४३।९)। महादेवः; 'काश्यां विश्वेश्वरोऽहं गिरिपतितनया सयुतो वामभागे, शुण्डादण्डेन दक्षे त्रिपथगतटिनीतीरशुद्धाम्बुभागे। मायाबीजं च कर्णे सुरमुनिसहिततो ध्यानयुक्तं वदामि प्रीत्या लोकस्य तस्मात् सुरमुनिगणकैरुच्यते तारनाम'—इति शब्दार्थचिन्तामणिः। त्रि. अत्युच्चशब्दविशिष्टः; स्फुरितकिरणः; निर्मलः; [तारं मुक्तास्त्यत्रेति अच्] मुक्ताविशिष्टः; 'उरसि निहितस्तारो हारः कृता जघने घने'—इति अमरुशतके। १४०

तारकम् क्ली. [तारमेव+स्वार्थे कन्] नक्षत्रं; चक्षुस्तारा; [तारेण कनीनिकया कायतीति, कै+क] चक्षुः; पुं. [तारयति दैत्यानिति, तॄ+णिच्+ण्वुल्]

द्वादशमन्वन्तरीयेन्द्रशत्रुरसुरविशेषः; 'ऋतधामा च तन्त्रेन्द्रस्तारको नाम तद्रिपुः। हरिर्नपुंसको भूत्वा घातयिष्यति शङ्कर!'—इति गारुडे। अपरोऽसुरविशेषः; 'तस्मात्तु स समुद्भूतो गुहो दिनकरप्रभः। स सप्तदिवसो बालो निजघ्ने तारकासुरम्'—इति गारुडे। [तारयतीति, तॄ+णिच्+ण्वुल] कर्णधारः; भेकलः; तरणोपायः; 'केचिदागमजालेन केचिन्निगमसङ्कुलैः। केचित्तर्केण मुह्यन्ति नैव जानन्ति तारकम्'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् (४।४०)। 'तारयतीति तारकस्तं तारकं तरणोपायं नैव जानन्ति'–इति तट्टीका। महादेवः; 'गर्भमांसशृगालाय तारकाय तराय च। नमो यज्ञाय यजिने हुताय प्रहुताय च'—इति महाभारते (१२।२८४।३५)। त्रातरि त्रि.। 'कथयति भगवान् इहान्तकाले भवभयकातरतारकं प्रबोधम्'—इति प्रबोधचन्द्रोदये (२।१३)। ५१

तारका स्त्री. [तरति तारयति वा, तॄ+णिच्+ण्वुल्, टाप्, 'तारका ज्योतिषि' इत्युक्त्या नेत्वम्] नक्षत्रम्; 'अप्-बिन्दवो यथाम्भोधौ यथा वा दिवि तारकाः। यथा वा वर्षतो धारा गङ्गायां सिकता यथा'—इति मार्कण्डेये (१५।७१)। कनीनिका; 'क्षत्रकोपदहनार्चिषं ततः सन्दधे दृशमुदग्रतारकाम्'—इति रघुवंशे (११।६९)। इन्द्रवारुणी। ५१

तारकारिः पुं. [तारकस्य तारकासुरस्य अरिः शत्रुः] कार्तिकेयः। १९

तारा स्त्री. [तारयतीति, तॄ+णिच्+अच्] नक्षत्रम्; 'चन्द्रादित्यौ ग्रहास्तारा नक्षत्राणि दिवौकसः'—इति महाभारते (१।२११।२६)। अक्षिमध्यं; बिम्बिनी; कनीनिका; तारका; [तारयति तापादिति, तॄ+णिच्+अच्+टाप्] बुद्धदेवताभेदः; बृहस्पतिभार्या; 'ततः कालेन कियता तारासूत सुतं शुभम्'—इति देवीभागवते (१।११।७५)। बालिभार्या, सा सुषेणवानरकन्या; 'हेममाली ततो बाली तारां ताराधिपाननाम्। उवाच वचनं वाग्मी तां वानरपतिः पतिः'—इति महाभारते (३।२७९।१८)। चीडा; मुक्ता; द्वितीयाशक्तिः; 'लीलया वाक्प्रदा चेति तेन लीलसरस्वती। तारकत्वात् सदा तारा सुखमोक्षप्रदायिनी। उग्रापत्तारिणी यस्मादुग्रतारा प्रकीर्तिता।' 'प्रत्यालीढपदार्पिताङ्घ्रिशवहृद्घोराट्टहासा परा; खड्गेन्दीवरकर्तृखर्परभुजा हूङ्कारबीजोद्भवा। खर्वा नीलविशालपिङ्गलजटाजूटैकनागैर्युता, जाड्यं न्यस्य कपालके त्रिजगतां हन्त्युग्रतारा स्वयम्'—इति ताराध्यानम्। ५१

तारापथः पुं. [ताराणां नक्षत्राणां पन्थाः। समासे अ] आकाशः; देशविशेषः; 'अङ्गदं चन्द्रकेतुं च लक्ष्मणोऽप्यात्मसम्भवौ। शासनात् रघुनाथस्य चक्रे तारापथेश्वरौ'—इति रघुवंशे (१५।९०)। १३७

तार्क्षः पुं. [तृक्ष एव, स्वार्थे अण्] विनतायां जातः कश्यपपुत्रविशेषः; 'तार्क्षश्चारिष्टनेमिश्च गरुडश्चामितध्वजः। अरुणश्चारुणिश्चैव वैनतेया व्यवस्थिताः'—इति महाभारते (१।१२३।७०)। कश्यपः; 'प्रमथ्य तरसा राज्ञः शाल्वादींश्चैद्यपक्षगान्। पश्यतां सर्वलोकानां तार्क्षपुत्रः सुधामिव'—इति भागवते। ३०

तार्क्ष्यः पुं. [तार्क्षस्य कश्यपस्य अपत्यम्। तार्क्ष+'गर्गादिभ्यो यञ्' इति यञ्] गरुडः; 'स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु' इति ऋग्वेदे (१।८९।६)। 'त्रस्तेन तार्क्ष्यात् किल कालियेन मणिं विसृष्टं यमुनौकसायः'—इति रघुवंशे (६।४९)। अश्वः (४३६); गरुडाग्रजः; तृक्षमुनेर्गोत्रापत्यम्; 'जग्मुश्चारिष्टनेम्नोऽथ तार्क्ष्यस्याश्रममञ्जसा'—इति महाभारते (३।१८४।८)। 'एवमुक्तस्तदा तार्क्ष्यः सर्वशास्त्रविदां वरः। विबुध्य सम्पदञ्चाग्र्यां ततद्वाक्यमिदमब्रवीत्'—इति महाभारते (१२।२८८।४)। शालवृक्षः; स्वर्णम्; अश्वकर्णवृक्षः; स्यन्दनं; क्षत्रियविशेषः; 'अम्बष्ठाः कौकुरास्तार्क्ष्यावस्त्रपाः पह्लवैः सह'—इति महाभारते (२।५१।१५)। महादेवः; 'गन्धर्वो ह्यदितिस्तार्क्ष्यः सुविज्ञेयः सुशारदः'—इति महाभारते (१३।१७।९७)। पर्वतविशेषः; पक्षिमात्रं; सर्पः। ३०

तालः पुं. [तलत्यत्र। तल्+'हलश्च' इति घञ्] गीतकालक्रियामानम्; 'अर्धमात्रं द्रुतं ज्ञेयम् एकमात्रं लघु स्मृतम्। द्विमात्रं तु गुरु ज्ञेयं त्रिमात्रं तु प्लुतं मतम्।' ताले चच्चत्पुटे ज्ञेयं गुरुद्वन्द्वं लघुः प्लुतः। गुरुर्लघुः प्लुतश्चैव भवेच्चारुपुटाभिधे।' (१९२) वृक्षविशेषः; तालद्रुमः; पत्री; दीर्घस्कन्धः; ध्वजद्रुमः; तृणराजः; मधुरसः; मदाढ्यः; दीर्घपादपः; चिरायुः; तरुराजः; दीर्घपत्रः; गुच्छपत्रः; आसवद्रुः; लेख्यपत्रः; महोन्नतः;

अङ्गुष्ठमध्यमाभ्यां सम्मितं (५३८); करतलं; करास्फालः; 'तालैः सिञ्जावलयसुभगैर्नर्तितः कान्तया मे, यामध्यास्ते दिवसविगमे नीलकण्ठः सुहृद्वः'—इति मेघदूते (७९)। कांस्यनिर्मितवाद्यभाण्डं; त्सरुः; महादेवः; 'तलस्तालः करस्थाली ऊर्द्धसंहननो महान्'—इति महाभारते (१३।१७।१२८)। क्ली. [तलत्यनेनेति, तल् प्रतिष्ठायाम्, 'हलश्च' इति घञ्] हरितालं; तालकम्, अस्य नामानि यथा—'हरितालं तालमालं मालं शैलूषभूषणम्। पिञ्जकं रोमहरणं तालकं ''तमित्यपि'—इति रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे। तालीशपत्रं; दुर्गासिंहासनं; [तालस्य विकारः; 'तालादिभ्योऽण्' इत्यस्य तालाद्धनुषि इति वार्तिकोक्त्या अण्] धनुः; [फले लुक्] तालफलम्; 'शिरोभिः प्रपतद्भिश्चाप्यन्तरीक्षान्महीतलम्। तालैरिव महाराज! वृन्ताद्भ्रष्टैरदृश्यत'— इति महाभारते (३।१०१।५)। ९४

तालध्वजः पुं. [तालो ध्वजे यस्य] बलदेवः; ताललक्ष्मा; तालाङ्कः; 'नातिदूरं ततो गत्वा नगं तालध्वजो बली। पुण्यं तीर्थवरं दृष्ट्वा विस्मयं परमं गतः'—इति महाभारते (९।५४।१०)। पर्वतविशेषः; 'शत्रुञ्जयो रैवतश्च सिद्धिक्षेत्रं सुतीर्थराट्। टङ्कः कपर्दी लौहित्यस्तालध्वजकदम्बकौ'—इति शत्रुञ्जयमाहात्म्ये (१।३५२)। २८

तालवृन्तम् क्ली. [तालस्य तालपत्रस्य वृन्तं कारणत्वेन अस्ति अस्य। अच्] व्यजनं, तालवृन्तकम्; 'ताड़ का पंखा' इति भाषा। 'परे ब्रह्मणि विज्ञाते समस्तैर्नियमैरलम्। तालवृन्तेन किं कार्यं लब्धे मलयमारुते।' पुं. सोमविशेषः; 'प्रतानवांस्तालवृन्तः करवीरोंऽशवानपि'—इति सुश्रुते। ३१०

तालु क्ली. [तरन्त्यनेन वर्णा इति। तॄ+'त्रोरश्च लः' इति ञुण्, रस्य लश्च] जिह्वेन्द्रियाधिष्ठानं; काकुदं; तालुकम्। ५२१

तिक्तः पुं. [तेजयतीति। तिज्+चुरादीनां णिजभावे गत्यर्थाकर्मकेति क्त] सुगन्धः; सुरभिः; 'नादातुमन्यकरिमुक्तमदाम्बुतिक्तं धूताङ्कुशेन न विहातुमपीच्छताम्भः'—इति माघे (५।३३)। षड्रसान्यतमः; [तिक्तस्तिक्तरसोऽस्यास्तीति, अर्श आदित्वात् अच्] कुटजवृक्षः; वरुणवृक्षः; रसविशेषः; 'तीता' इति भाषा। 'तिक्ताख्यो बत वातलोऽपि हि नृणां कुष्ठादिदोषापहः सोऽन्तः सर्वरुजापहो भ्रमहरो रुच्योऽपि संक्लेदहृत्। जिह्वास्फोटकनाशनोऽथ भवति क्षीणक्षतानां हितो वक्त्रोत्क्लान्तिहरः प्रकृष्टगुणधृक् निम्बादिकानां रसः'—इति हरीते। क्ली. पर्पटिकौषधिः; तिक्तरसयुक्ते त्रि.। ८१३

तिग्मम् क्ली. [तेजयति उत्तेजयतीति, तिज्+'युजिरुजितिजां कुश्च' इति मक्, कवर्गश्चान्तादेशः] तीक्ष्णं; खरं; तद्वति त्रि.। 'तिग्मवीर्यविषा ह्येते दन्दशूका महाबलाः'—इति महाभारते (१।२०।११)। वज्रं; पुं. क्षत्रियविशेषः; 'ततो मृदुस्तस्मात् तिग्मस्तिग्मात् बृहद्रथः'—इति विष्णुपुराणे (४।२१।३)। ४०

तिग्मांशुः पुं. [तिग्मास्तीक्ष्णाः अंशवः किरणाः यस्य] सूर्यः; 'धौम्योपदेशात् तिग्मांशुप्रसादादन्नसम्भवः'—इति महाभारते (१।२।१३९)। अग्निः; 'इदं वै सद्म तिग्मांशो वरुणस्य परायणम्'—इति महाभारते (१।२३३।१८)। तीक्ष्णकरणे त्रि.। ३५

तितिक्षा स्त्री. [तिज्+स्वार्थे सन्+'अ प्रत्ययात्' इति अ ततष्टाप्] क्षान्तिः; परापराधसहनम्; 'शमो दमस्तपः साम्यं तितिक्षोपरतिः श्रुतम्'—इति भागवते (१।१६।२६)। शीतोष्णादिद्वन्द्वसहिष्णुता; 'यमैरकामैर्नियमैश्चाप्यनिन्दया निरीहया द्वन्द्वतितिक्षया च'—इति भागवते (४।२२।२४)। ७२५

तिमिः पुं. [तिम्यतीति, तिम् क्लेदने+इन्, यद्वा ताम्यति आकाङ्क्षतीति, तमु काङ्क्षायाम्+'क्रमितमिशतिस्तम्भामत इच्च' इति इन्, अकारस्य इकारादेशश्च] मत्स्यः; मत्स्यविशेषः (६६०); तिमिर्महाकायः कश्चित्सामुद्रः मत्स्यः; 'अस्ति मत्स्यो तिमिर्नाम शतयोजनविस्तरः'—इति भरतः। 'ससत्त्वमादाय नदीमुखाम्भः संमीलयन्तो विवृताननत्वात्। अमी शिरोभिस्तिमयः सरन्ध्रैरूर्द्धं वितन्वन्ति जलप्रवाहान्'—इति रघुवंशे (१३।१०)। समुद्रः; राजविशेषः; 'नृपञ्जयस्ततो दूर्वतिमिस्तस्माज्जनिष्यति'—इति भागवते (९।२२।४२)। 'तिमिं पुत्रं ततो राज्ये न्यस्य स्वर्गं स्वयं गतः। मुनिवेदमितान् वर्षान्नवमासाधिकान् तिमिः। पालयित्वाखिलं राज्यं भुक्त्वा भोगमनुत्तमम्। पुत्रं

बृहद्रथ 'राज्ये सोऽभिषिच्य वन ययौ'—इति राजावल्याम् १ परिच्छेदे। ६५७

तिमिङ्गिलगिलः पुं. [तिमिङ्गिलमपि गिरतीति। तिमिङ्गिल+गॄ+क। तिमिङ्गिल=तिमिं गिरतीति, गॄ+क; रस्य लः। गिलेऽगिलस्येति मुम्] महामत्स्यविशेषः; तिमिङ्गिलाशनः; 'तिमिङ्गिलगिलोऽप्यस्ति तद्गिलोऽप्यस्ति राघव।' ६६०

तिमिरम् क्ली. [तिम्यतीति, तिम्+'इषिमदिमुदीति' किरच्] अन्धकारः; 'अतीववातस्तिमिरं बुभुक्षा चास्ति नित्यशः। भयानि च महान्त्यत्र अतो दुःखतरं वनम्'—इति रामायणे (२।२८।१८)। पुं. [तिम्यति क्लिद्यति चक्षुरनेन। तिम्+'इषिमदिमुदीति' किरच्] चक्षूरोगविशेषः; 'तिमिराख्यः स वै दोषश्चतुर्थं पटलं गतः। रुणद्धि सर्वतो दृष्टिं लिङ्गनाशमतः परम्'—इति माधवकरः। 'वदने कृष्णसर्पस्य निहितं मासमञ्जनम्। ततस्तस्मात् समुद्धृत्य सशुष्कं चूर्णयेद् बुधः। सुमनःक्षारकैः शुष्कैरर्द्धांशैः सैन्धवेन च। एतन्नित्याञ्जनं कार्यं तिमिरघ्नमनुत्तमम्'—इति चरके। 'कतकस्य फलं शङ्खं सैन्धवं त्र्युषणं वचा। फेनो रसाञ्जनं क्षौद्रं विडङ्गानि मनःशिला। एषां वर्त्तिर्हन्ति कासं तिमिरं पटलं तथा'—इति गारुडे (१९८ अध्याये)। ११०

तिमिररिपुः पुं. [तिमिरस्य अन्धकारस्य रिपुः शत्रुः] सूर्यः। ३६

तिरस्करिणी स्त्री. [तिरोऽन्तर्धानं करोतीति। तिरस्+कृ+'नन्दिग्रहीति' णिनि, संज्ञापूर्वकविधेरनित्यत्वात् वृद्ध्यभावः ततो ङीप्] व्यवधायकपटः; 'कनात'—इति भाषा। 'यत्रांशुकाक्षेपविलज्जितानां यदृच्छया किम्पुरुषाङ्गनानाम्। दरीगृहद्वारविलम्बिबिम्बास्तिरस्करिण्यो जलदा भवन्ति'—इति कुमारे (१।१४)। ३०९

तिरस्कारः पुं. [तिरस्+कृ+घञ्] अनादरः; तिरस्क्रिया। ७०४

तिरस्कारिणी स्त्री. [तिरोऽन्तर्धानं करोतीति। तिरस्+कृ+णिनि ङीप्] तिरस्करिणी; 'कनात' इति भाषा। ३०९

तिरोधानम् क्ली. [तिरस्+धा+भावे ल्युट्] अन्तर्धानम्; 'सिद्धान् विद्याधरांश्चैव तिरोधानेन सोऽसृजत्'—इति भागवते (३।२१।४४)। ७१९

तिर्यक् [च्] अव्य.—वक्रं; साचि; तिरः; 'तिर्यगूर्द्धं शरीरे च पातयित्वा शिरोधराम्'—इति रामायणे (२।२३।४)। तिरोऽर्थः; निरुद्धार्थः। ३००

तिलः पुं. [तिलति स्निह्यति तैलेन पूर्णीभवतीति। तिल्+'इगुपधज्ञेति' क] सस्यविशेषः; होमधान्यं; पवित्रः; पितृतर्पणः; पापघ्नः; पूतधान्यं; स्नेहफलः; स्नेहफलपूरफलः; 'कृष्णः पथ्यतमः सितोऽल्पगुणदः क्षीणाः किलान्ये तिलाः'—इति राजनिर्घण्टः। 'कृष्णः श्रेष्ठतमस्तेषु शुक्लो मध्यमः सितः। अन्ये हीनतराः प्रोक्तास्तज्ज्ञै रक्तादयस्तिलाः।' 'ब्राह्मणः प्रतिगृह्णीयाद् वृत्त्यर्थं साधुतस्तथा। अव्यश्वमपि मातङ्गतिललौहांश्च वर्जयेत्'—इति ब्रह्मपुराणे। ५८३

तिलकम् क्ली. [तिलति स्निह्यतीति, तिल्+'क्वुन् शिल्पिसञ्ज्ञयोः'—इति क्वुन्] क्लोम; कृष्णवर्णसौवर्चलं; सौवर्चलम्। (८१२) पुं. [तिल इव कायतीति, कै+क] पुष्पवृक्षविशेषः; विशेषकः; मुखमुण्डनकः; पुण्ड्रकः; पुण्ड्रः; स्थिरपुष्पी; छिन्नरुहः; दग्धरुहः; मृतजीवः; तरुणीकटाक्षकामः; वासन्तसुन्दरः; दुग्धरुहः; पुन्नागः; भालविभूषणसंज्ञः; रेठकः; क्षुरकः; श्रीमान्; पुरुषः; छत्रपुष्पकः; 'न खलु शोभयति स्म वनस्थलीं न तिलकस्तिलकः प्रमदामिव'—इति रघुवंशे (९।४१)। ध्रुवकभेदः; 'पञ्चविंशतिवर्णाङ्घ्रितिलको ध्रुवको भवेत्। इष्टश्चञ्चत्पुटे ताले रसे वीरेऽद्भुतेऽपि वा'—इति सङ्गीतदामोदरः। प्रधाने त्रि.। पुं.-क्ली. [तिलवत् तिलपुष्पवत् कायतीति। कै+क] चन्दनादिना ललाटादिद्वादशाङ्गकर्तव्यचिह्नविशेषः; तमालपत्रं; चित्रकं; विशेषकम्; 'विशेषको वा विशिशेष यस्याः श्रियं त्रिलोकीतिलकः स एव'—इति माघे (३।६३)। 'द्वादशाङ्गे ललाटादौ तिलकं हरिमन्दिरम्। स्नानान्ते वैष्णवः कुर्यात् प्रत्येकं कृष्णनामभिः। वामे वक्षसि नेत्रान्ते गण्डेंऽसे शङ्खचिह्नितम्। तथैव दक्षिणे कुर्याद्धरेश्चक्राङ्कितं मुने।' ५४१

तिलपिञ्जः पुं. [तिल+'तिलान्निष्फलात् पिञ्जपेजौ' इत्युक्तया पिञ्ज] निष्फलतिलवृक्षः; निष्फलतिलः। ५८३

तिलपेजः पुं. ['तिलान्निष्फलात् पिञ्जपेजौ' इति पेज] निष्फलतिलः। ५८३

तिलित्सः पुं. [तिल् गतौ, तेलनं तिलिः, कृष्यादित्वात् इक्। तिलिं गतिं त्सरति, त्सर छद्मगतौ, 'अन्येभ्यो-ऽपीति'ड] गोनससर्पः। ६४२

तिलोत्तमा स्त्री. [तिलैः तिलप्रमाणैः सर्वरत्नानामंशैरुत्तमा] स्वर्वेश्या; 'तिलं तिलं समानीय रत्नानां यद्विनिर्मिता। तिलोत्तमेति तत्तस्या नाम चक्रे पितामहः' —इति महाभारते (१।२११।१७)। ८८

तिल्यम् क्ली. [तिलानां भवनं क्षेत्रम्। तिल+'विभाषा तिलमाषोमाभङ्गाणुभ्यः' इति यत्] तिलक्षेत्रं; तैलीनं; [तिलाय हितम्, 'खलयवमासतिलवृषब्रह्मणश्च' इति यत्] तिलहिते त्रि.। १६३

तिष्यः पुं. [तुष्यन्त्यस्मिन्निति। तुष्+क्यप्, निपातनात् साधुः] पुष्यनक्षत्रम्; 'यदा सूर्यश्च चन्द्रश्च तथा तिष्यबृहस्पती। एकराशौ समेष्यन्ति प्रवत्स्यति तदा कृतम्।' [तिष्यः पुष्यनक्षत्रं पौर्णमास्यामस्त्यस्येति। अच्] पौषमासः; कलियुगं; क्लीवेऽपि, यथा— 'चत्वारि भारते वर्षे युगानि भरतर्षभ!। कृतं त्रेता द्वापरं च तिष्यञ्च कुरुवर्द्धन!'—इति महाभारते (६।१०।४)। ५१

तीक्ष्णः त्रि. [तिज् +'तिजेर्दीर्घश्च' इति क्स्न दीर्घश्च] तिग्मः; उग्रः; 'तीक्ष्णश्चैव मृदुश्च स्यात् कार्यं वीक्ष्य महीपतिः'—इति मनुः (७।१४०)। असह्यः; 'नमस्तीक्ष्णेषवे चायुधिने'—इति यजुः संहितायाम् (१६।३६)। 'तीक्ष्णाः असह्याः इषवः बाणाः यस्य, तस्मै नमः' इति तट्टीकायां महीधरः। आत्मत्यागी; निरालस्यः; सुबुद्धिः; योगी। क्ली. [तेजयति तेज्यतेऽनेन वा] लौहम् (१७१); 'कृष्णायसं काललोहं रुक्मं तत्तीक्ष्णमन्यथा'—इतिवैद्यकरत्नमाला। विषं; (६४६); खरं; युद्धं; मरणं; शस्त्रं; शीघ्रं; सामुद्रलवणं; मुष्ककः; चव्यकं; मरकं; तीक्ष्णवस्तूनि, यथा–प्रतिभा; हीरकं; कटाक्षः; दुर्वाक्यं; नखः; लवणं; रविकरः; पुं. यवक्षारः; 'यावशूको यवक्षारो यवशूको यवाग्रजः। क्षारस्तीक्ष्णस्तीक्ष्णरसो यवजो यवनालजः'—इति वैद्यकरत्नमाला। श्वेतकुशः; कुन्दुरुकः। तीक्ष्णगणो यथा—आश्लेषा, ज्येष्ठा, मूलम्। ४०

तीक्ष्णोपायः पुं. [तीक्ष्णश्चासौ उपायः] क्रूरोपायः; मर्मान्तिककर्म। ३७१

तीरम् क्ली. [तीरयति समापयति नद्यादिकमिति। तीर् +अच्] नदीकूलं; सायकः (४६७); गङ्गातीरम्; 'सार्द्धहस्तशतं यावद् गर्भतस्तीरमुच्यते। भाद्रकृष्णचतुर्दश्यां यावदाक्रमते जलम्। तावद् गर्भं विजानीयात् तदन्यत्तीरमुच्यते।'—इति प्रायश्चित्ततत्त्वम्। पुं. त्रपु.। ६६७

तीरी स्त्री. [तीर+ङीप्] सायकः; बाणः। ४७३

तीर्थम् क्ली. [तरति पापादिकं यस्मात्। तृ +'पातृतुदिवचीति' थक्] पुण्यस्थानादि; 'निपानादुद्धृतं पुण्यं ततः प्रस्रवणादिकम्। ततोऽपि सारसं पुण्यं ततो नादेयमुच्यते। तीर्थतोयं ततः पुण्यं गङ्गातोयं ततोऽधिकम्'—इति वह्निपुराणे। योनिः (८६२); जलसमीपस्थाररत्निमात्रस्थानम्; 'अरत्निमात्रं जलं त्यक्त्वा कुर्याच्छौचमनुद्धृते। पश्चाच्च शोधयेत्तीर्थमन्यथा न शुचिर्भवेत्'—इति आदित्यपुराणे। मन्त्रिप्रभृत्यष्टादशराष्ट्रसम्पत्; 'कच्चिदष्टादशान्येषु स्वपक्षे दश पञ्च च। त्रिभिस्त्रिभिरविज्ञातैर्वेत्सि तीर्थानि चारकैः'—इति महाभारते (२।५।३८)। यथा नीतिशास्त्रे—'मन्त्री पुरोहितश्चैव युवराजश्च भूपतिः। पञ्चमो द्वारपालश्च षष्ठोऽन्तर्वंशिकस्तथा। कारागाराधिकारी च द्रव्यसञ्चयकृत्तथा। कृत्याकृत्येषु चार्थानां नवमो विनियोजकः। प्रदेष्टा नगराध्यक्षः कार्यनिर्माणकृत्तथा। धर्माध्यक्षः सभाध्यक्षो दण्डपालस्त्रिपञ्चमः। षोडशो दुर्गपालश्च तथा राष्ट्रान्तपालकः। अटवीपालकान्तानि तीर्थान्यष्टादशैव तु'। चारान् विचारयेत्तीर्थे स्वात्मनश्च परस्य च। पाषण्डादीनविज्ञातानन्योऽन्यमितरेष्वपि। मन्त्रिणं युवराजं च हित्वा स्वेषु पुरोहितम्'—इत्येषां तीर्थशब्दवाच्यत्वं, तथा च हलायुधः—'योनौ जलावतारे च मन्त्राद्यष्टादशस्वपि। पुण्यक्षेत्रे तथा पात्रे तीर्थं स्याद् दर्शनेष्वपि'—इति तट्टीकायां नीलकण्ठः। पुण्यक्षेत्रं; पात्रम्; 'दूरादेव परीक्षेत ब्राह्मणं वेदपारगम्। तीर्थं तद्धव्यकव्यानां प्रदाने सोऽतिथिः स्मृतः'—इति मनुः (३।१३०)। दर्शनं; घट्टः; विप्रः; आगमः; निदानम्; अग्निः; पुण्यकालः; 'हिरण्यं गां महीं ग्रामान् हस्त्यश्वान् नृपतिर्वरान्। प्रादात् स्वन्नञ्च विप्रेभ्यः प्रजातीर्थे स तीर्थवित्'—इति भागवते

(१।१२।१४)। शास्त्रम्; अध्वरः; क्षेत्रम्; उपायः; 'वासुदेवेन तीर्थेन तात! गच्छस्व संशयम्।' 'तीर्थेन उपायेन' इति तट्टीकायां नीलकण्ठः। अवसरः; 'स तदा लब्धतीर्थोऽपि न बबाधे निरायुधम्। मानयन् स मृधे धर्मं विष्वक्सेनं प्रकोपनम्'—इति भागवते (३।१९।४)। नारीरजः; अवतारः; ऋषिजुष्टाम्बु; 'अकर्दममिदं तीर्थं भरद्वाज! निशामय। रमणीयं प्रसन्नाम्बु सन्मनुष्यमनो यथा'—इति रामायणे (१।२।४)। उपाध्यायः; 'शिक्षितो ह्यसि सारथ्ये तीर्थतः पुरुषर्षभ!'—इति महाभारते (४।४०।१९)। 'तीर्थतो गुरुतः' इति नीलकण्ठः। मन्त्री। ८५८

तीव्रः त्रि. [तीव् स्थौल्ये+बाहुलकात् रन्] अत्युष्णः; नितान्तः; 'तान् हत्वा गजकुलबद्धतीव्रवैरान् काकुत्स्थः कुटिलनखाग्रलग्नमुक्तान्'—इति रघुवंशे (९।६५)। कटुः; दुःसहः; 'हन्त विरह समन्ताज्जलयति दुर्वारतीव्रसंवेगः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (६९१)। तीक्ष्णम्; 'कृतकस्वापं मदीयश्वासध्वनिदत्तकर्ण! किं तीव्रैः। विध्यसि मां निश्वासैः स्मरः शरैः शब्दवेधीव'—इति आर्यासप्तशत्याम् (६९५)। पुं. शिवः; क्ली. [तिज् निशाने+बाहुलकात् रन्, दीर्घत्वं, जकारस्य वकारः] अतिशयः; तीरं; तीक्ष्णं; त्रपु; लोहम्। ४०

तीव्रता स्त्री.—अतिशयत्वं; वेगाधिक्यम्। ४७०

तु अव्य. [तुद् व्यथने, मितद्र्वादित्वाड्डु] भेदः; अवधारणं; समुच्चयः; 'उष्ट्रयानं समारुह्य खरयानं तु कामतः। स्नात्वा तु विप्रो दिग्वासाः प्राणायामेन शुध्यति'—इति मनुः (११।२०२)। पक्षान्तरं; नियोगः; प्रशंसा; विनिग्रहः; पादपूरणम्; 'अवगूर्य त्वब्दशतं सहस्रमभिहत्य च। जिघांसया ब्राह्मणस्य नरकं प्रतिपद्यते'—इति मनुः (११।२०७)। ८८१

तुक् [ज्] पुं तुञ्ज्यते जीव्यतेऽनेनेति। तुज्+क्विप्] अपत्यं; तोकः। ४९७

तुङ्गः त्रि. [तुजि हिंसायाम्+घञ्] उन्नतः; 'शिलाविभङ्गैर्मृगराजशावस्तुङ्गं नगोत्सङ्गमिवारुरोह'—इति रघुवंशे (६।३)। उग्रः; प्रधानं; प्रचुरः; 'तेषां सदश्वभूयिष्ठास्तुङ्गा द्रविणराशयः'—इति रघुवंशे (४।७०)। किञ्जल्के क्ली। पुं. पुन्नागवृक्षः; 'कुम्भीकः पुरुषस्तुङ्गः पुन्नागो रक्तकेशरः'—इति वैद्यकरत्नमाला। पर्वतः; बुधग्रहः; नारिकेलः; गण्डकः; योगभेदः; स तु ग्रहाणाम् उच्चराशिः; 'आदित्यमेषे वृषभे शशाङ्के कन्यागते ज्ञे च गुरौ कुलीरे। मीने च शुक्रे मकरे महीजे शनौ तुलायामिति तुङ्गगेहाः'— इति समयामृतम्। ७५१

तुच्छः त्रि. [तुद्+क्विप्, तेन तं वा छ्यतीति। छो+क] शून्यः; हीनः; 'किमेतैरात्मनस्तुच्छैः सह देहेन नश्वरैः!' अल्पः। ७७७

तुण्डम् क्ली. [तुण्डते निष्पीडयति अभ्यन्तरस्थद्रव्यमिति। तुण्ड्+पचाद्यच्] मुखं; चञ्चुः; 'आमिषं स तु विज्ञाय शीघ्रमभ्यद्रवत् खगम्। तुण्डयुद्धमथाकाशे तावुभौ समचक्रतुः'—इति देवी भागवते (२।१।२६)। पुं. महादेवः; 'नमस्तुण्डाय तुण्ड्याय नमस्तुटितुटाय च'—इति हरिवंशे। राक्षसविशेषः; 'तुण्डेन च नलस्तत्र पटुशः पनसेन च'—इति महाभारते (३।२८४।९)। ५१८

तुण्डिः स्त्री. [तुण्डते निष्पीडयति मध्यस्थद्रव्यमिति। तुण्ड्+'सर्वधातुभ्यो इन्' इतीन्] नाभिः; तुण्डिका; पुं. मुखं; चञ्चुः। ६७०

तुण्डिका स्त्री. [तुण्डिरेव। तुण्डि+स्वार्थे कन् टाप् च] बिम्बिका; तुण्डिकेरी; तुण्डिकेरिका; तुण्डकेरी; तुण्डिकेक्षी; तुण्डिकेरिः; 'तुष्टी रक्तफला बिम्बी तुण्डिकेरी च बिम्बिका'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। नाभिः। २०३

तुन्दम् क्ली. [तुदतीति। तुद्+'अब्दादयश्च' तुदेर्नुम्च इत्युक्तेर्नुम्, ततो दस्य लोपः] उदरं; जठरम्। ५१५

तुन्दिः स्त्री. [तुद्+इन्, बाहुलकात् नुम् च] नाभिः। ६७०

तुन्दिकः त्रि. [अतिशयितं तुन्दमुदरमस्त्यस्य। 'तुन्दादिभ्य इलच्च'–इति चकारात् ठन्] विशालजठरो जनः; तुन्दिलः; महोदरः। ६०८

तुन्दिभः त्रि. [तुन्दिर्वृद्धा नाभिरस्येति। तुन्दि+वलिवटेर्भः, इति भ] तुन्दिलः। ६०८

तुन्दिलः त्रि. [तुन्दं विशालमुदरमस्त्यस्येति। तुन्द+'तुन्दादिभ्य इलच्च' इतीलच्] विशालजठरो जनः; पिचिण्डिलः; बृहत्कुक्षिः; तुन्दिकः; तुन्दिभः; तुन्दी। ६०८

तुन्नः त्रि. [तुद्यते इति, तुद्+क्त] व्यथितः; 'स तुन्न इव तीक्ष्णेन प्रतोदेन हयोत्तमः। राजा प्रचोदितोऽभीक्ष्णं कैकेयीमिदमब्रवीत्' इति रामायणे (२।१४।२३)।

छिन्नः; द्विधाकृतः; पुं. नन्दीवृक्षः। ७६७

तुन्नवायः पुं. [तुन्नं छिन्नं वयतीति। तुन्न+वे+'ह्वावामश्च' इत्यण्] सौचिकः; 'दर्जी' इति भाषा। 'शैलूषतुन्नवायान्नं कृतघ्नस्यान्नमेव च'—इति मनुः(४।२१४)। ५९०

तुमुलम् क्ली. [तु सौत्रो धातुः+बाहुलकात् मुलक्] व्याकुलो रवः; रणसङ्कुलं; सङ्कीर्णयुद्धं; परस्परसम्बाधो रणसंघट्टः; 'तत्राभूत्तुमुलं युद्धं देवदानवसैन्ययोः'—इति देवीभागवते (५।४१।२८)। पुं. [तु+बाहुलकान्मुलक्] कलिवृक्षः। व्याकुलो रवः (रणः); इति त्रिकाण्डशेषः। प्रचण्डे उग्रे सङ्कुलमात्रे च त्रि.। 'एकस्य करुणाक्रन्दैः सैन्यस्यान्यस्य गर्जितैः। सरित्तरङ्गघोषैश्च बभूवुस्तुमुला दिशः'—इति राजतरङ्गिण्याम्। 'ववौ गन्धश्च तुमुलो दह्यतामनिशं तदा'—इति महाभारते (१।५३।१२)। १३९

तुम्बः पुं.—स्त्री. [तुम्बति नाशयत्यरुचिमिति। तुम्ब अर्दने +अच्] अलाबुः; तुम्बकः; तुम्बा; तुम्बिः। २०९

तुम्बा स्त्री. [तुम्ब+टाप्] अलाबुः; 'कुम्बावती समविडम्बा गलेन नवतुम्बाभवीणसविधा, शं बाहुलेयशशिबिम्बाभिराममुखसंम्बाधितस्तनभरा'—इति अम्बाष्टके। धेनुः। २०९

तुम्बिः स्त्री. [तुम्बति नाशयत्यरुचिमिति। तुबि अर्दने + 'सर्वधातुभ्य इन्' इतीन्] अलाबुः; तुम्बिका; तुम्बुकः। २०९

तुम्बी स्त्री. [तुम्बि+कृदिकारादिति वा ङीष्] अलाबुः; 'अलाबुः कथिता तुम्बी द्विधा दीर्घा च वर्तुला। मिष्टं तुम्बीफलं हृद्यं पित्तश्लेष्मापहं गुरु। वृष्यं रुचिकरं प्रोक्तं धातुपुष्टिविवर्धनम्'—इति भावप्रकाशः। 'अरे चेतोमीन! भ्रमणमधुना यौवनजले, त्यज त्वं स्वच्छन्दं युवतिजलधौ पश्यसि न किम्। तनूजालीजालं स्तनयुगलतुम्बीफलयुगं, मनोभूकैवर्तः क्षिपति परितस्त्वां प्रति मुहुः'—इति शान्तिशतके (३।१६)। कुलिकवृक्षः। २०९

तुरगः पुं. [तुर् वेगे+भावे घञर्थे क, तुरेण वेगेन गच्छतीति। गम्+अन्येष्वपीति ड] घोटकः; 'मृगा मृगैः सङ्गमनुव्रजन्ति गावश्च गोभिस्तुरगास्तुरङ्गैः'—इति पञ्चतन्त्रे (१।३१४)। 'ततः प्रहस्यापभयः पुरन्दरं पुनर्बभाषे तुरगस्य रक्षिता'—इति रघुवंशे (३।५१)। चित्तम्। ४३६

तुरङ्गः पुं.—स्त्री. [तुरेण वेगेन गच्छतीति। तुर+गम्+'गमेः सुपि वाच्यः' इत्युक्त्या खच्, 'खच्च डिद्वा वाच्यः' इति डित्, मुम्] घोटकः; 'मृगाः मृगैः सङ्गमनुव्रजन्ति गावश्च गोभिस्तुरगास्तुरङ्गैः'—इति पञ्चतन्त्रे (१।३१४)। चित्तम् ४३६

तुरङ्गस्कन्धः पुं. [तुरङ्गाणां स्कन्धः समूहः] अश्वसङ्घातः। ८११

तुराषाट् [ड्] पुं. [तुरं वेगवन्तं साहयति अभिभवतीति। तुर+सह्+णिच्+क्विप्। 'सहेः साडः सः' इति षत्वम्, 'अन्येषामपीति' पूर्वपदस्य दीर्घः] इन्द्रः 'तुराषाडपि तच्छ्रुत्वा क्रोधयुक्तो बभूव ह'—इति देवीभागवते (१।११।१६३)। ५३

तुरीयवर्णः पुं. [तुरीयश्चतुर्थो वर्णः] शूद्रः; अन्त्यजः। ३९२

तुलाकोटिः स्त्री. [तुलां सादृश्यं कोटयते इति। तुला + कुट्+इन्] नूपुरः; 'लीलाचलत्स्त्रीचरणारुणोत्पलस्खलत्तुलाकोटिनिनादकोमलः'—इति माघे (१२।४४)। [तुलया मानेन कुटतीति। कुट् कौटिल्ये +इन्] मानभेदः; अर्बुदः। ५६१

तुलाकोटी स्त्री. [कृदिकारादिति वा ङीष्] तुलाकोटिः। ५६२

तुल्यः त्रि. [तुलया सम्मितः। 'नौवयोधर्मेति' यत्] सादृश्ययुक्तः; समः; सदृशः; सदृक्षः; सदृक्; साधारणः; समानः; सधर्मः; सम्मितः; स्वरूपः; 'तुल्यार्थं तुल्यसामर्थ्यं मर्मज्ञं व्यवसायिनम्। अर्द्धराज्यहरं भृत्यं यो न हन्यात् स हन्यते'—इति पञ्चतन्त्रे (१।२१८)। उत्तरपदस्थास्तुल्यवाचकाः—निभः, सङ्काशः, नीकाशः, प्रतीकाशः, उपमा, भूतः;, रूपः, कल्पः, प्रभः। पुं. गन्धर्वविशेषः; 'गन्धर्वराजो बलवांस्तुल्यनामाभ्ययात्तदा'—इति महाभारते (१।१०१।७)। २५६

तुवरः पुं. क्ली. [तवति हिनस्ति रोगानिति। तु+बाहुलकात् ष्वरच् प्रत्ययेन साधुः] कषायरसः; त्रि. कषाययुक्तः; 'नातिसान्द्रद्रवं तक्रं स्वाद्वम्लं तुवरं रसे' —इति सुश्रुते (१।४५)। श्मश्रुहीनः। ७७१

तुवरी स्त्री. [तुवर+षित्त्वात् ङीष्] आढकी; 'तुवरी ग्राहिणी शीता लघ्वी कफविषास्रजित्। तीक्ष्णोष्णा

वह्निदा कण्डूकुष्ठकोष्ठक्रमिप्रणुत्'–इति भावप्रकाशः। 'आढकी तुवरी ज्ञेया'—इति वैद्यकरत्नमाला। वर्वरी; तुलसी; 'बर्वरी तुवरी तुङ्गी खरपुष्पाजगन्धिका'—इति भावप्रकाशः। सौराष्ट्रमृत्तिका; मृत्; सौराष्ट्री; मृत्स्ना; आसङ्गः; मसी; सुराष्ट्रजा; मृत्तालकं; काली; मृत्तिका; सुरमृत्तिका; स्तुत्या; काक्षी; सुजाता। ५८४

तुषाग्निः पुं. [तुषस्याग्निः] तुषानलः; कुकूलः। ८३०

तुषारः पुं. [तुष्यत्यनेन सस्यादिरिति। तुष् तुष्टौ+ 'तुषारादयश्च' इति आरन् स च कित्] हिमम्; 'विलीनपद्मः प्रपतत्तुषारो हेमन्तकालः समुपागतः प्रिये'—इति ऋतुसंहारे (४।१)। 'तुषाराम्बु हिमं रूक्षं स्याद्वातलमपित्तलम्। कफोरुस्तम्भकण्ठाग्निमेहगण्डादि-रोगनुत्'—इति; भावप्रकाशः। देशभेदः; तद्देशोद्भवे पुं. भूम्नि, 'तुषारान् बर्बरान् कारान् पह्लवान् पारदान् शकान्'— इति मात्स्ये (१२०।४५)। शीकरः; हिमभेदः; 'न यावदेतावुदपश्यदुत्थितौ जनस्तुषाराञ्जन-पर्वताविव'—इति माघे (१।१५)। कर्पूरभेदः; शीतले त्रि.। 'अपां हि तृप्ताय न वारिधारा स्वादुः सुगन्धिः स्वदते तुषारा'—इति नैषधे (३।९३)। ६५०

तुषोदकम् क्ली. [तुषादुत्थितमुदकम्] काञ्जिकं; काञ्जिकभेदः; 'तुषोदकं यवैरामैः सतुषैः शकलीकृतैः' —इति भावप्रकाशः (यवैरुदकसहितैः सन्धानवर्गोक्त-त्वात्)। 'तुषोदकं वातहरं प्रभेदि प्रकोपयेद्रक्तपित्तं सदैव। विपाचनं स्याज्जरणं क्रमिघ्नमजीर्णहन्तृ कटुकं विपाके'—इति हारीते। ३१८

तुहिनम् क्ली. [तोहति अर्दति, तुह्यतेऽनेनेति वा। तुह्+'वेपितुह्योर्ह्रस्वश्च' इति इनन्, गुणे कृते ह्रस्वश्च] हिमम्; 'सा श्यामा तन्वङ्गी दहता शीतोपचारतीव्रेण। विरहेण पाण्डिमानं नीता तुहिनेन दूर्वेव'—इति आर्या-सप्तशत्याम् (६३२)। चन्द्रतेजः; 'किं चन्दनैः सक-र्पूरैस्तुहिनैः शीतलैश्च किम्। सर्वे ते मित्र गात्रस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्'— इति पञ्चतन्त्रे (२।५९)। शीतले त्रि.। 'प्रसरतु शरत्त्रियामा जगन्ति धवलयतु धाम तुहिनांशोः। पञ्जरचकोरिकाणां कणिकाकल्पोऽपि न विशेषः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३६६)। ६५०

तूणः पुं.– स्त्री. [तूण्यते पूर्यते बाणैरिति। तूण् पूरणे+ घञ्] बाणाधारः; उपासङ्गः; तूणीरः; निषङ्गः; इषुधिः; तूणी; 'तूणखड्गवरः शूरो बद्धगोधाङ्गुलित्र-वान्'—इति महाभारते (३।१७।३)। ४६५

तूणी स्त्री. [तूण्यते पूर्यते बाणैरिति। तूण+कर्मणि घञ्, गौरादित्वाद् ङीष्] तूणः; 'तूणीमुखोद्धृतशरेव विशीर्णपङ्क्ति'—इति रघुवंशे (९।५६)। वेदना-विशेषः; रोगभेदः; 'अधो या वेदना याति वर्चोमूत्रा-शयोत्थिता। भिन्दन्तीव गुदोपस्थं सा तूणीत्युपदिश्यते' —इति सुश्रुते। ४६५

तूणीरः पुं. [तूण्यते पूर्यते बाणैरिति। तूण्+बाहुलकाद् ईरन्] तूणः; 'तस्य पार्थो धनुश्छित्वा तूणीरान् सन्निकृत्य च। त्वरमाणो द्विसप्तत्या सर्वमर्मस्वताडयत्'—इति महाभारते (७।२८।१६)। क्लीवलिङ्गोऽपि; 'तूणी-राण्यथ यन्त्राणि विचित्राणि धनूंषि च'—इति महा-भारते (६।५१।५१)। ४६५

तूर्णम् क्ली. [त्वर् संभ्रमे+क्त। पक्षे इडभावः, 'ज्वर-त्वरेति' ऊठ्, निष्ठातस्य नः] शीघ्रम्; 'तां दृष्ट्वा चपलापाङ्गीं समीपस्थां वराप्सराम्। पञ्चबाणपरी-ताङ्गस्तूर्णमासीद्धृतव्रतः'—इति देवीभागवते (१।१०। ३१)। तद्वति त्रि.। ३५३

तूर्णोदितम् त्रि. [तूर्णम् उदितम्] शीघ्रकथितं; निरस्तम्। १४२

तूलकम् क्ली. [तूल+स्वार्थे कन्] तूलः; कार्पासादि-तूलः; पिचुः; पिचुलः; पिचुतूलः; तूलापिचुः; पिचु-तूलम्। २०२

तूबरः पुं. [तु सौत्रो धातुः+बाहुलकात् ष्वरच् दीर्घश्च] काले अजातशृङ्गो गौः; अश्मश्रुपुरुषः; पुरुषव्यञ्जन-त्यक्तः; कषायरसः। २७८

तूष्णीम् अव्य. [तुष् तुष्टौ+बाहुलकात् नीम्, उपधा-वृद्धिश्च] मौनं; जोषम्; 'यत्किञ्चिद्दशवर्षाणि सन्निधौ प्रेक्षते धनी। भुज्यमानं परैस्तूष्णीं न स तल्लब्धुमर्हति'—इति मनुः (८।१४७)। ८०३

तृट् [ष्] स्त्री. [तृष्+क्विप्] इच्छा; तृष्णा; 'मृगाः प्रचण्डातपतापिता भृशं तृषा महत्या परिशुष्कतालवः' —इति ऋतुसंहारे (१।११)। पिपासा; कामकन्या। ३६३

तृणम् क्ली. [तृण्यते भक्ष्यते गवादिभिरिति । तृण्+घञ्, संज्ञापूर्वकत्वान् न गुणः । यद्वा तृह हिंसायाम्+'तृहेः क्नो हलोपश्च' इति क्न प्रत्ययो हकारलोपश्च] नडादि; अर्जुनं; त्रिणं; खटं; खेट्टं; हरितं; ताण्डवम्; 'अग्निचौरभयं रोगो राजपीडा धनक्षतिः। सङ्ग्रहे तृणकाष्ठानां कृते वस्वादिपञ्चके' —इति ज्योतिःसारसङ्ग्रहः। गन्धद्रव्यविशेषः; 'कुतृणं च सुगन्धं च तृणं शीतं सुशीतलम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। १९०

तृणधान्यम् क्ली. [तृणबहुलं धान्यम्] धान्यविशेषः; नीवारः; । 'तिन्नी धान' इति भाषा। ५८६

तृणराजः पुं. [तृणेषु राजते शोभते इति। तृण+राज्+अच्। तृणानां राजा वा, समासे टच्] तालवृक्षः; 'श्रीः श्रीफलेन राज्यं तृणराजेनाल्पसाम्यतो लब्धम्। कुचयोः सम्यक् साम्याद् गतो घटश्चक्रवर्तित्वम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५६७)। नारिकेलः। १९२

तृतीयाप्रकृतिः स्त्री. [तृतीया स्त्रीपुंसातिरिक्ता प्रकृतिः] तृतीया प्रकृतिः; षण्ढः। ४३०

तृतीया प्रकृतिः स्त्री. [इति व्यस्तरूपम्, समस्तपक्षे 'संज्ञापूरण्योश्च' इति न पुंवद्भावः] नपुंसकम्। ४३०

तृप्तिः स्त्री. [तृप् प्रीणने+भावे क्तिन्] भक्षणादिनाकाङ्क्षानिवृत्तिः; सौहित्यं; तर्पणं; प्रीणनम्; आसितम्भवम्; 'श्रुतान्यन्यानि सर्वज्ञ त्वन्मुखाब्धिःसृतानि च। नैव तृप्तिं व्रजामोऽद्य सुधापानेऽमरा यथा'—इति देवीभागवते (१।१।२०)। ३२६

तृषितः त्रि. [तृट् तृषा वा सञ्जातास्य। तारकादित्वाद् इतच्] तृष्णायुक्तः; तर्षितः; सतृट्; 'तृषितश्च परिश्रान्तः क्षुधितश्चोत्तरासुतः'—इति देवीभागवते (२।८।२०)। भावे क्तप्रत्यये तृषार्थे क्लीवम्। ३६२

तृष्णक् [ज्] त्रि. [तृष्यति आकाङ्क्षतीति। तृष्+'स्वपितृषोर्नजिङ्' इति नजिङ्] 'लुब्धः; तृषितः; असिञ्चन्नुत्सं गोतमाय तृष्णजे'—इति ऋग्वेदे (१।८५।११)। ३६३

तृष्णा स्त्री. [तृष्+'तृषिशुषिरादिभ्यः कित्' इति न, स च कित्] पानेच्छा; उदन्या; पिपासा; तृट्; तर्षः; तृषा; तर्पणम्। (३६४) अनात्मीयस्वीकारेच्छा; लिप्सा; 'तदुपस्थितमग्रहीदजः पितुराज्ञेति-न भोगतृष्णया'—इति रघुवंशे (८।२)। रोगविशेषः; 'वातात् पित्तात् कफात् तृष्णा सन्निपातात् द्रवक्षयात्। षष्ठी स्यादुपसर्गाच्च वातपित्ते तु कारणम्'—इति गारुडे। 'स्नेहाञ्जनस्वेदनधूमपानव्यायामनस्यातपदन्तकाष्ठम्। गुर्वन्नमम्लं लवणं कषायं कटु स्त्रियं दुष्टजलानि तीक्ष्णम्। एतानि सर्वाणि हिताभिलाषी तृष्णातुरो नैव भजेत् कदाचित्'—इति वैद्यकपथ्यापथ्यविधिग्रन्थे। ३६३

तेजः [स्] क्ली. [तेजयति तेज्यतेऽनेन वा। तिज् निशाने+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इति असुन्] दीप्तिः; 'अन्यदुच्छृङ्खलं सत्त्वमन्यच्छास्त्रनियन्त्रितम्। सामानाधिकरण्यं हि तेजस्तिमिरयोः कुतः'—इति माघे (२।६२)। पराक्रमः (७२३); 'न श्रेयः सततं तेजो न नित्यं श्रेयसी क्षमा। इति तात! विजानीहि द्वयमेतदसंशयम्'—इति महाभारते (३।२८।६)। प्रभावः; 'तस्मान्नूनं महावीर्याद् भार्गवाद् युद्धदुर्मदात्। तेजोवीर्यबलैर्भूयान् शिखण्डी द्रुपदात्मजः'—इति महाभारते (६।१४।४८)। रेतः; 'अथ नयनसमुत्थं ज्योतिरत्रेरिव द्यौः सुरसरिदिव तेजो वह्निनिष्ठ्यूतमैशम्' --इति रघुवंशे। सारः; 'रसादीनां शुक्रान्तानां धातूनां यत्परं तेजस्तत् खल्वोजस्तदेव बलमित्युच्यते स्वशास्त्रसिद्धान्तात्।' 'यत्परं तेजः इति यदुत्कृष्टं सारः' इत्यर्थः। शारीराग्निसम्भूतपदार्थविशेषः; 'तेजोऽप्याग्नेयं क्रमशः पच्यमानानां धातूनामभिनिर्वृत्तमन्तरस्थं स्नेहजातं वसाख्यं स्त्रीणां विशेषतो भवति। तेन मार्दवसौकुमार्यमृद्वल्परोमतोत्साहदृष्टिस्थितिपक्तिकान्तिदीप्तयो भवन्ति। तत्कषायतिक्तशीतरूक्षविष्टम्भिवेगविघातव्यवायव्यायामव्याधिकर्षणैश्च विक्रियते'—इति सुश्रुते। देहजकान्तिः; 'तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि। धामनामासि प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि'—इति यजुसंहिता (१।३१)। 'हे आज्य! त्वं तेजोऽसि शरीरकान्तिहेतुत्वात्तेजस्त्वम्'–इति तट्टीकायां महीधरः। नवनीतम्; अग्निः; सुवर्णं; मज्जा; पित्तम्; असहनम्; 'अधिक्षेपापमानादेः प्रयुक्तस्य परेण यत्। प्राणात्ययेऽप्यसहनं तत्तेजः समुदाहृतम्'—इति साहित्यदर्पणे (३।६४)। पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशाख्यपञ्चमहाभूतान्तर्गततृतीयमहाभूतम्। विष्णुः; 'ओजस्तेजो द्युतिधरः

प्रकाशात्मा प्रतापनः'—इति महाभारते (१३।१४९।४३)। शिवः; 'तेजोऽपहारी बलहा मुदितोऽर्थोऽजितोऽवरः'—इति महाभारते (१३।१७।५२)। ६५।

तेजितः त्रि. [तिज्+क्त] तीक्ष्णीकृतः; निशितः; क्षुतः; शाणितः; शान्तः; शाणादिमार्जितः; क्ष्णुतः; निशातः; शितः; शातः। ४७४

तैजसम् क्ली. [तेजसो विकारः। तेजस्+'तस्य विकारः' इत्यण्] धातुद्रव्यम्; 'तैजसानां मणीनां च सर्वस्याश्ममयस्य च'—इति मनुः (५।१११)। घृतं; तीर्थविशेषः; 'तैजसं नाम तत्तीर्थं यत्र पूर्वमपाम्पतिः। अभिषिक्तः सुरगणैर्वरुणो भरतर्षभ'—इति महाभारते (९।४६।१०३)। तेजःसम्बन्धिनि त्रि.। 'तैजसस्य धनुषः प्रवृत्तये तोयदानिव सहस्रलोचनः'—इति रघुवंशे (११।४३)। पुं. सूक्ष्मशरीरव्यष्टयुपहितचैतन्यम्; 'एतद्व्यष्टयुपहितं चैतन्यं तैजसो भवति तेजोमयान्तःकरणोपहितत्वात्' इति वेदान्तसारः। तैजसाहङ्कारविशेषः; 'सोऽहङ्कार इति प्रोक्तो विकुर्वन् समभूत् त्रिधा। वैकारिकस्तैजसश्च तामसश्चेति यद्भिदा'–इति भागवते (२।५।२४)। घोटकविशेषः; 'ये क्रोधशीला भृशवेगयुक्ता मुक्ता दिनात् क्रोशशतं व्रजन्ति। ते तैजसाः पुण्यवतां प्रदेशे भवन्ति पुण्यैरपि ते मिलन्ति' —इति भोजराजकृतयुक्तिकल्पतरौ। सुमतिपुत्रः; 'तैजसस्तत्सुतश्चापि प्रजापतिरमित्रजित्'—इति ब्रह्माण्डे ३६ अध्याये। १७६

तैलीनम् क्ली. [तिलानां भवनं क्षेत्रम्। तिल+'विभाषा तिलमाषेति' पक्षे खञ्] तिलक्षेत्रम्; 'तिलोद्भवोचितं यत्तु तिल्यं तैलीनमित्यपि'—इति शब्दरत्नावल्याम्। १६३

तोकम् क्ली. [तौति पूरयति गृहमिति। तु पूर्तौ +बाहुलकात् क] अपत्यं; पुत्रो दुहिता च; 'तोकं पुष्येम तनयं शतं हिमाः'—इति ऋग्वेदे (१।६४।१४)। शिशुः; बालकः; 'तोकेन जीवहरणं यदुलूकिकायास्त्रैमासिकस्य च पदा शकटोऽपवृत्तः'—इति भागवते (२।७।२७)। ४९७

तोत्त्रम् क्ली. [तुद्यते ताडयतेऽनेनेति। तुद्+दाम्नीशसयुयुजस्तुतुदेति' ष्ट्रन्] अश्वादिताडनदण्डः; प्राजनं; तोदनम्; गजस्य तोदनदण्डः; वैणुकं; वेणुकम्; 'न हि तत्पुरुषव्याघ्रो दुःखजं दर्शनं पितुः। मातुश्च सहितुं शक्तस्तोत्त्रैर्नुन्न इव द्विपः'—इति रामायणे (२।४०।४१)। ५७७

तोयम् क्ली. [तौति वर्द्धते वर्षासु। तवतेवृद्धिकर्मणः 'अघ्न्यादयश्च' इति यत्प्रत्ययो निपतितो द्रष्टव्यः। 'तुदति तोयम्' इति क्षीरस्वामी। तुदतेः पूर्ववत् यत्प्रत्यये निपातनाद् दकारलोपे गुणः] जलम्; 'तया ततमिदं तोयं तदाधारं च तिष्ठति'—इति देवीभागवते (१।९।२९)। पूर्वाषाढानक्षत्रं; जलदैवतत्वादस्य तथात्वम्। ६४८

तोयनिधिः पुं. [तोयानि निधीयन्तेऽत्र। नि+धा+कि, तोयानां निधिर्वा] समुद्रः; 'पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः'—इति कुमारसम्भवे (१।१)। ६५२

तोयाशयः पुं. [तोयस्य आशयः] जलाधारः; सरः। ६७०

तोरणः पुं.– क्ली. [तुतोर्त्ति त्वरया गच्छत्यनेनेति। तुर् त्वरणे+करणे ल्युट्] द्वाराग्रे निखातस्तम्भयोरुपरिनिबद्धं नानावस्त्ररत्नादिमयं धनुराकारं यल्लक्ष्यं तत्तोरणमिति बहवः। उपरि स्रगादियुक्तस्तम्भादिद्वयनिर्मितपुरादिबहिर्द्वारं; बन्धनमाला; वन्दनमाला; बहिर्द्वारम्; 'भासोज्ज्वलत्काञ्चनतोरणानां स्थानान्तरं स्वर्ग इवावभासे'—इति कुमारसम्भवे (७।३)। मूलद्वाराद् बाह्यद्वारं; पुं. महादेवः; 'तोरणस्तारणो वातः परिधीपतिखेचरः'—इति महाभारते (१३।१७।११७)। ३०१

त्यक्तम् त्रि. [त्यज्यते स्मेति। त्यज् त्यागे+क्त] कृतत्यागं; हीनं; विधुतं; समुज्झितं; धूतम्; उत्सृष्टं; विनाकृतं; विरहितं; निर्व्यूढम्; 'त्यक्तभोगस्य मे राजन्! वने वन्येन जीवतः। किं कार्यमनुयात्रेण त्यक्तसङ्गस्य सर्वतः'—इति रामायणे (२।३७।२)। ७१४

त्यक्ताग्निः पुं. [त्यक्तः अग्निः नित्यौपासनाग्निः येन] त्यक्ताग्निहोत्रः; वीरहा द्विजः। ४०४

त्रपा स्त्री.– पुं. [त्रप्यते इति, त्रप्+'षिद्भिदादिभ्योऽङ्' इत्यङ ततष्टाप्] लज्जा; ह्रीः; 'नष्टं वर्षवरैर्मनुष्यगणनाभावादपास्य त्रपामन्तः कञ्चुकिकञ्चुकस्य विशति त्रासादयं वामनः'—इति रत्नावल्याम्। [त्रपते

अनया अस्याः वा। करणे अपादाने वा अङ्] कुलटा; कुलं; कीर्तिः। ५६७

त्रपु क्ली. [त्रपते अग्निस्पर्शेन लज्जते इव । त्रप्+ 'शृस्वृस्निहित्रपीति' उ] रङ्गम्; 'कनकभूषणसंग्रहणोचितो यदि मणिस्त्रपुणि प्रतिबध्यते। न स विरौति न चाप्युपशोभते भवति योजयितुर्वचनीयता'— इति पञ्चतन्त्रे (१।८५)। सीसकम्। १७२

त्रपुः [स्] क्ली. [त्रपते वह्निं प्राप्य लज्जते इव। त्रप्+उणादित्वाद् उस्] रङ्गम्; 'भौमे त्रपुः शनौ लोहं राहावश्मानि कीर्तयेत्'—इति ग्रहभावप्रकाशे। १७२

त्रयी स्त्री. [त्रय+'टिड्ढेति ङीप्] ऋक्सामयजुर्वेदाः— एतन्त्रितयम्; 'त्रैविद्येभ्यस्त्रयीं विद्यां दण्डनीतिञ्च शाश्वतीम्। आन्वीक्षिकीं चात्मविद्यां वार्तारम्भांश्च लोकतः'—इति मनुः (७।४३)। पुरन्ध्री; सुमतिः; सोमराजीवृक्षः; दुर्गा; 'ऋग्यजुःसामभागेन साङ्गवेदगतापि वा। त्रयीति पठ्यते लोके दृष्टादृष्टार्थसाधिनी' —इति देवीपुराणे ४५ अध्याये। ८

त्रयीतनुः पुं. [त्रयी वेदाः एव तनुः शरीरं यस्य। 'त्रय्या विद्यया भगवन्तं त्रयीमयं सूर्यमात्मानं यजन्ते' इति भागवतवाक्याद् (५।२०।४) अस्य तथात्वम्] सूर्यः। ३७

त्रस्तः त्रि. [त्रस् भये+क्त] भीतः; 'प्रत्यञ्चायां विमुक्तायां मुक्ता कोटिस्तथोत्तरा। शब्दः समभवद् घोरस्तेन त्रस्ताः सुरास्तदा'—इति देवीभागवते (१।५। २६)। शीघ्रे क्ली.। 'सविरामं त्रितालं च एकं शून्यं तथापरे। शेषे त्रस्ते त्रितालं च देवसार इतीर्यते'—इति सङ्गीतदामोदरः। ३५४

त्रासः पुं. [त्रस्+भावे घञ्] भयम्; 'प्रणयचलितोऽपि सकपटकोपकटाक्षैर्भयाहितस्तम्भः। त्रासतरलो गृहीतः सहासरभसं प्रियः कण्ठे।' मणेर्दोषः (८०८)। ७२५

त्रिकटु क्ली. [त्रयाणां कटूनां शुण्ठीमरीचपिप्पलीनां समाहारः] मिश्रितशुण्ठीमरीचपिप्पल्यः; त्र्युषणं; व्योषं; कटुत्रयं; कटुत्रिकम्; 'विश्वोपकुल्या मरिचं त्रयं त्रिकटु कथ्यते। कटुत्रयं तु त्रिकटु त्र्युषणं व्योषमुच्यते। त्र्युषणं दीपनं हन्ति श्वासकासत्वगामयान्। गुल्ममेहकफस्थौल्यमेदःश्लीपदपीनसान्'—इति भावप्रकाशः। ६१७

त्रिकण्टकः पुं. [त्रीणि कण्टकानि यस्य] गोक्षुरकवृक्षः; 'त्रिकण्टः स्थलशृङ्गाटो गोकण्टोऽथ त्रिकण्टकः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। लघुगर्गमत्स्यः। २०१

त्रिकस्थानम् क्ली. [त्रयाणाम् अस्थिदेशानां समाहारः त्रिकं, तस्य स्थानम्] कटी; पृष्ठवंशाधोभागः। ५१२

त्रिकालदर्शी [न्] पुं. [त्रिकालं वर्तमानातीतभविष्यद्रूपं पश्यतीति। दृश्+णिनि] ऋषिः; योगसिद्धः; दैवज्ञः; भूतभविष्यद्वर्तमानवेत्तरि त्रि.। 'प्रध्वंसिन्यपि काले त्रिकालदर्शी कलौ भवति'—इति बृहत्संहितायाम् (२१।४)। ४१२

त्रिकालवित् पुं. [त्रीन् कालान् वेत्तीति। विद्+क्विप्] बुद्धः; त्रिकालज्ञे त्रि.। ८६

त्रितयम् क्ली. [त्रयः अवयवाः अस्य। त्रि+'संख्याया अवयवे तयप्' इति तयप्] त्रयम्; 'धर्मश्चार्थश्च कामश्च त्रितयं जीविते फलम्। एतत्त्रयमवाप्तव्यमधर्मपरिवर्जितम्'—इति महाभारते (१३।१११।१८)। त्रिप्रकारे त्रि.। 'त्रितयीमपि तां मुक्त्वा परस्परविरोधिनीम्। अखण्डं सच्चिदानन्दं महावाक्येन लक्ष्यते'—इति पञ्चदश्याम् (१।४६)। ९३,६१८

त्रिदशः पुं. [तृतीया यौवनाख्या दशा यस्य। त्रिशब्दस्यात्र त्रिभागवत् तृतीयार्थकता। यद्वा तिस्रः जन्मसत्त्वाविनाशाख्याः, न तु मर्त्यानामिव वृद्धिपरिणामक्षयाख्याः, दशाः यस्य। यद्वा त्रीन् तापान् दशति नाशयतीति। त्रि+दंश+मूलविभुजादित्वात् क, पृषोदरादित्वान्नलोपः। यद्वा त्र्यधिकास्त्रिरावृत्ताश्च दश (त्रयस्त्रिंशद्भेदा इत्यर्थः) अस्य। समासे डच्। शाकपार्थिवादित्वान्मध्यलोपः] देवः; 'न्यवसत् परमप्रीतो ब्रह्मा च त्रिदशैः सह'—इति महाभारते (३।८५।१९)। ते च अर्का द्वादश, रुद्रा एकादश, वसवोऽष्टौ, अश्विनौ द्वौ; समुदायेन त्रयस्त्रिंशत्। त्रिंशत्परिमिते त्रि.। 'ततः स कौरवो राजा विहृत्य त्रिदशा निशाः'—इति महाभारते (१।११३।२१)। ४

त्रिदशदीर्घिका स्त्री. [त्रिदशानां देवानां दीर्घिका] स्वर्गङ्गा। ६७३

त्रिदशाचार्यः पुं. [त्रिदशानां देवानाम् आचार्यः गुरुः] बृहस्पतिः। ४७

त्रिदशालयः पुं. [त्रिदशानां देवानाम् आलयः निवासस्थानम्] सुमेरुपर्वतः; स्वर्गः; 'गुरोश्च सकाशे तु दश वर्षशतानि सः। अनुज्ञातः कचो गन्तुमियेष त्रिदशालयम्'—इति महाभारते (१।७६।६६)। १३६

त्रिदशावासः पुं. [त्रिदशानां सुराणाम् आवासो वासस्थानम्] स्वर्गः। ३

त्रिदशाहारः पुं. [त्रिदशानां देवानाम् आहारः] सुधा; अमृतम्। १३३

त्रिदिवः पुं. [त्रयो ब्रह्मविष्णुरुद्रा दीव्यन्त्यत्रेति। त्रि+दिव्+'हलश्च' इति घञ्, संज्ञापूर्वकत्वान्न गुणः। यद्वा दीव्यन्तीति दिवाः, 'इगुपधज्ञेति' क, त्रयः सत्त्वरजस्तमोरूपाः दिवाः क्रीडकाः विलासकाः इत्यर्थः, यत्र। 'तृतीया द्यौस्त्रिदिवः. घञर्थे कविधानं, वृत्तिविषये संख्याशब्दस्य पूरणार्थत्वं त्रिभागवत्'—इति माघकाव्यस्य टीकायां मल्लिनाथः (१।२६)] स्वर्गः; 'रक्षणादार्यवृत्तानां कण्टकानां च शोधनात्। नरेन्द्रास्त्रिदिवं यान्ति प्रजापालनतत्पराः'—इति मनुः (९।२५३)। क्ली. आकाशः। ३

त्रिनयनः पुं. [त्रीणि चन्द्रसूर्याग्निरूपाणि नयनानि यस्य। 'क्षुभ्नादिषु च' इति निषेधान्न णत्वम्] शिवः; (त्रिणयनः) 'त्रिपुरघ्नं त्रिनयनं त्रिलोकेशं महौजसम्'—इति महाभारते (१४।८।२७)। नयनत्रये स्त्री.। लोचनत्रयविशिष्टे त्रि.। 'मुद्रामोक्षगुणं सुधाढ्यकलसं विद्यां च हस्ताम्बुजैर्बिभ्राणां विशदप्रभां त्रिनयनां वाग्देवतामाश्रये'—इति मातृकासरस्वतीध्याने। ११

त्रिपत्रकः पुं. [त्रीणि त्रीणि पत्राणि यस्य] पलाशवृक्षः; [त्रयाणां पत्राणां समाहारः। ततः कन्] तुलस्यादिपत्रत्रये क्ली.। 'तुलसीकुन्दमालूरपत्राण्याहुस्त्रिपत्रकम्'—इति देवीपुराणे। १९७

त्रिपथगा स्त्री. [त्रिपथे स्वर्गमर्त्यपातालमार्गे गच्छतीति। गम्+ड] गङ्गा; 'गङ्गा त्रिपथगा नाम दिव्या भागीरथीति च। त्रीन् पथो भावयन्तीति तस्मात् त्रिपथगा स्मृता'—इति रामायणे (१।४३।६)। ६७३

त्रिपिष्टपम् क्ली. [त्रिदशानां सुराणां पिष्टपं वासस्थानम्। पृषोदरादित्वाद् दशशब्दस्य लोपः। यद्वा मर्त्यपातालापेक्षया तृतीयं पिष्टपं भुवनम्। वृत्तौ त्रिशब्दस्य त्रिभागवत् पूरणार्थता] स्वर्गः; 'तत् त्रिपिष्टपसङ्काशमिन्द्रप्रस्थं व्यरोचत'—इति महाभारते (१।२०८।३५)। आकाशम्। ३

त्रिपिष्टपसत् [द्] पुं. [त्रिपिष्टपे स्वर्गे सीदतीति। त्रिपिष्टप+सद्+क्विप्] देवता। ४

त्रिपुरान्तकः पुं. [त्रिपुरस्य त्रिपुरासुरस्य अन्तकः] शिवः; 'लाङ्गलीशमथालोक्य ततस्तु त्रिपुरान्तकम्'—इति काशीखण्डे १०० अध्याये। 'आशुतोषो मित्रमध्ये शत्रूणां त्रिपुरान्तकः'—इति महालिङ्गेश्वरतन्त्रे शिवशतनामस्तोत्रे। ११

त्रिफला स्त्री. [त्रयाणां फलानां समाहारः। अजादित्वात् 'द्विगोः' इति न ङीप्] फलत्रयं; फलत्रिकं; मिलितसमभागहरीतकीविभीतकामलकीफलानि; 'त्रिफला कफपित्तघ्नी महाकुष्ठविनाशिनी। आयुष्या दीपनी चैव चक्षुष्या व्रणशोधिनी। वर्णप्रदायिनी घृष्ट्वा विषमज्वरनाशिनी। सर्वरोगप्रशमनी मेधास्मृतिकरी परा'—इति हारीते। 'त्रिफला कफपित्तघ्नी मेहकुष्ठहरा सरा। चक्षुष्या दीपनी रुच्या विषमज्वरनाशिनी'—इति भावप्रकाशः। ६१८

त्रियामा स्त्री. [त्रयो यामाः प्रहराः यस्याः। 'त्रियामां रजनीं प्राहुस्त्यक्त्वाद्यन्तचतुष्टयम्' इति वचनात् आद्यन्तयोरर्द्धयामयोश्चेष्टाकालत्वेन दिनप्रायत्वात् तथात्वम्] रात्रिः; 'स मत्तो बलिनां श्रेष्ठो रराजाघूर्णिताननः। शैशिरीषु त्रियामासु यथा खेदालसः शशी।' त्रिप्रहरान्विते त्रि.। 'त्रियामापि भृशार्तस्य सा रात्रिरभवत्तदा। तथा विलपतस्तस्य राज्ञो वर्षशतोपमा'—इति रामायणे (२।१०।१७)। हरिद्रा; यमुना; नीली; कृष्णत्रिवृत्। १०७

त्रिविष्टपम् क्ली. [तृतीयं विष्टपं भुवनम्] त्रिपिष्टपं; स्वर्गः; 'विहर त्वमयोध्यायां यथाशक्रस्त्रिविष्टपे'—इति रामायणे [२।१०८।९)। त्रिभुवनम्। ३

त्रिविष्टपसत् [द्] पुं. [त्रिविष्टपे स्वर्गे सीदतीति। सद्+क्विप्] त्रिपिष्टपसत्; देवः। ४

त्रुटिः स्त्री. [त्रुट्यते इति, त्रुट्+'इगुपधात् कित्' इति इन्, स च कित्] अल्पं; क्षुद्रैला; 'उत्कारिकां सर्पिषि नागराढ्यां पक्वां समूलैस्त्रुटिकोलपत्रैः'—इति सुश्रुते। 'वयस्था तीक्ष्णगन्धा च सूक्ष्मैला त्रिपुटा त्रुटिः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। संशयः; कालभेदः; क्षणद्वयात्मकः;

'अणुद्वौ परमाणू स्यात् त्रसरेणुस्त्रयः स्मृतः । जालार्करश्म्यवगतः खमेवानुपतन्नगात् । त्रसरेणुत्रिकं भुङ्क्ते यः कालः सा त्रुटिः स्मृता'—इति भागवते (३।११।५) । ६८८

त्रुटी स्त्री. [त्रुटि+'कृदिकारादक्तिनः' इति वा ङीष्] त्रुटिः । ६८८

त्रेता स्त्री. [त्रीन् भेदान् एति प्राप्नोतीति । यद्वा त्रित्वमिता, पृषोदरादित्वात् साधुः] दक्षिणाग्निः, गार्हपत्यः, आहवनीयः — एकोक्त्या इदमग्नित्रयम्; 'त्रिधा प्रणीतो ज्वलनो मुनिभिर्वेदपारगैः । अतस्त्रेतात्वमापन्नो यदेकस्त्रिविधः कृतः'—इति हरिवंशे (२०५।५) । द्वितीययुगम्; 'त्रिचत्वारिंशल्लक्षेण चित्वारिंशत्सहस्राधिकेन च । चतुर्युगं परिमितं नरमानक्रमेण च । द्विषट्लक्षपरिमितं षण्णवतिसहस्रकम् । त्रेतायुगं परिमितं कालविद्भिः प्रकीर्त्तितम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिखण्डम् । ७८९

त्रोटकी स्त्री.— रागिणीविशेषः । १०७

त्रोटिः स्त्री. [त्रोटयते भिद्यतेऽनयेति । त्रोटि+'अच इः' इति इ] चञ्चुः; कट्फलं; पक्षी; मीनभेदः ।२४०

त्रोटी स्त्री. [त्रोटि+कृदिकारादिति वा ङीष्] त्रोटिः; चञ्चुः । २४०

त्र्यूषणम् क्ली. [उष् दाहे, ल्युट्, उषणम् । त्रयाणाम् उषणानां समाहारः । पात्रादित्वात् स्त्रीत्वं न] यूषणं; मिलितशुण्ठीपिप्पलीमरिचम्; 'यमानी चित्रकं धान्यं त्र्युषणं जीरकं तथा'—इति गारुडे । ६१७

त्र्यूषणम् क्ली. [ऊष् दाहे, ल्युट् । त्रयाणां ऊषणानां पिप्पलीमरिचशुण्ठीनां समाहारः] त्र्यूषणं; 'पिप्पली मरिचं शुण्ठी त्रयमेतद्विमिश्रितम् । त्रिकटु त्र्यूषणं व्योषं कटुत्रयमथोच्यते'—इति वैद्यके । 'त्र्यूषणं दीपनं हन्ति श्वासकासत्वगामयान् । गुल्ममेहकफस्थौल्यमेदश्लीपदपीनसान्'—इति भावप्रकाशे । घृतविशेषः । 'त्र्यूषणां त्रिफलां द्राक्षां काश्मर्याणि परूषकम् । द्वे पाठे सरलं व्याघ्रीं स्वगुप्तां चित्रकं शटीम् । ब्राह्मीं तामलकीं मेदां काकनासां शतावरीम् । त्रिकण्टकां विदारीं च पिष्ट्वा कर्षसमं घृतात् । प्रस्थं चतुर्गुणं क्षीरं सिद्धं कासहरं पिबेत् । ज्वरगुल्मारुचिप्लीहशिरोहृत्पार्श्वशूलनुत् । कामलार्शोऽनिलाष्ठीलाक्षतशोषक्षयापहम् । त्र्यूषणं नाम विख्यातमेतद्घृतमनुत्तमम्'—इति चरके चिकित्सास्थाने । ६१७

त्वक् [च्] स्त्री. [त्वचति संवृणोति मेदशोणितादिकमिति । त्वच् संवरणे + क्विप् । यद्वा तनोति विस्तारयति, तन्+'तनोतेरनश्च वः' इति चिक् अनश्च व] वल्कलं; त्वचा; 'कण्डूयमानेन कटं कदाचिद् वन्यद्विपेनोन्मथिता त्वगस्य'—इति रघौ (२।३७) । (६३०) चर्म; असृग्धरा; असृग्वरा; त्वचं; छली; छल्ली; 'त्वचं स मेध्यां परिधाय रौरवीमशिक्षतास्त्रं पितुरेव मन्त्रवत् । न केवलं तद्गुरुरेकपार्थिवः क्षितावभूदेकधनुर्धरोऽपि सः'—इति रघुवंशे (३।३१) । इन्द्रियविशेषः; 'पूर्ववन्नित्यतायुक्तं देहव्यापि त्वगिन्द्रियम् । प्राणादिस्तु महावायुपर्यन्तो विषयो मतः ।' 'उद्भूतस्पर्शवद् द्रव्यं गोचरः सोऽपि च त्वचः । रूपान्यच्चक्षुषो योग्यं रूपमत्रापि कारणम् । द्रव्याध्यक्षे त्वचो योगो मनसाज्ञानकारणम्' — इति भाषापरिच्छेदः । त्वचं; 'दालचीनी' इति भाषा । कञ्चुकः; 'महतोऽप्येनसो मासात् त्वचेवाहिर्विमुच्यते' — इति मनुः (२।७९) । १८३

त्वक्सारः पुं. [त्वचि सारो यस्य] वंशः; 'बाँस' इति भाषा । 'चण्डालात् पाण्डुसोपाकस्त्वक्सारव्यवहारवान्' —इति मनुः (१०।३७) । वंशस्य त्वक्; 'अनुशस्त्राणि तु त्वक्सारस्फटिककाचकुरुविन्दजलौकाग्निक्षारनखगोजीशेफालिकाशाकपत्रकरीरबालाङ्गुलयः'—इति सुश्रुते (१।८) । गुडत्वक्; शोणवृक्षः; रन्ध्रवंशः । 'त्वक्साररन्ध्रपरिपूरितलब्धगीतिरस्मिन्नसौ मृदितपक्ष्मलरल्लकाङ्गः'—इति माघे (४।६१) । २०४

त्वचिसारः पुं. [त्वचि सारो यस्य । 'हलदन्तात् सप्तम्याः संज्ञायाम्' इति सप्तम्या अलुक्] वंशः; 'बाँस' इति भाषा । २०४

त्वरितम् क्ली. [त्वर्+क्त] शीघ्रम्; (३५३,३७०) [त्वरते स्मेति । त्वर्+'गत्यर्थाकर्मकेति' कर्तरि क्त । यद्वा त्वरा सञ्जातास्य । तारकादित्वाद् इतच्] तद्विशिष्टे त्रि. । 'बह्वन्तराययुक्तस्य धर्मस्य त्वरिता गतिः' —इति पञ्चतन्त्रे (३।१०२) । ६९७

त्वष्टा [ऋ] पुं. [त्वक्षति काष्ठादिकं शिल्पकार्यत्वात् । त्वक्षू तनूकरणे तृच्] विश्वकर्मा; 'त्वष्टुः सदाभ्यास-

गृहीतशिल्पविज्ञानसम्पत्प्रसवस्य सीमा'—इति माघे (३।३५)। काष्ठतट् (५८७); वर्णसङ्करजातिविशेषः; असुरभेदः—इति ऋग्वेदभाष्ये सायणः (३।४८।४)। इन्द्रः इति तत्रैव सायणः (१।११७।२२)। महादेवः; 'धाता शक्रश्च विष्णुश्च मित्रस्त्वष्टा ध्रुवो धरः'—इति महाभारते (१३।१७।१०३)। प्रजापतिविशेषः; 'त्वष्टा प्रजापतिर्ह्यासीत् देवश्रेष्ठो महातपाः। स पुत्रं वै त्रिशिरसमिन्द्रद्रोहात् किलासृजत्'—इति महाभारते (५।९।३)। विश्वकर्मणः पुत्रविशेषः; 'तस्य पुत्रास्तु चत्वारस्तेषां नामानि मे शृणु। अजैकपादहिर्बुध्न्यस्त्वष्टा रुद्रश्च बुद्धिमान्'—इति विष्णुपुराणे (१।१५।१२२)। [त्वेषति दीप्यतीति, त्विष् दीप्तौ+'नप्तृनेष्टृत्वष्टृहोत्रिति' तृच्, इतोऽत्वञ्च] आदित्यविशेषः; एकादशादित्यः; 'अदित्यां द्वादशादित्याः सम्भूता भुवनेश्वराः। ये राजन्नामतस्तांस्ते कीर्तयिष्यामि भारत! धाता मित्रोऽर्यमा शक्रो वरुणस्त्वंश एव च। भगो विवस्वान् पूषा च सविता दशमस्तथा। एकादशस्तथा त्वष्टा द्वादशो विष्णुरुच्यते' इति महाभारते (१।६५।१४-१५)। ८४

त्वाष्ट्रः पुं. [त्वष्टुरपत्यं पुमान्। अण्] वृत्रासुरः; 'उद्यमेन हतस्त्वाष्ट्रो नमुचिर्बल एव च'—इति देवीभागवते (५।५।४)। विश्वरूपः; 'वृतः पुरोहितस्त्वाष्ट्रो महेन्द्रायानुपृच्छते'—इति भागवते (६।८।३)। त्वष्टृसम्बन्धिनि त्रि.। 'ततोऽस्त्रं त्वाष्ट्रमादाय चिक्षेप प्रति दानवान्'—इति मार्कण्डेये (२१।८५)। 'अपमित्वा चरुं त्वाष्ट्रं त्वष्टारमयजद्विभुः'—इति भागवते (६।१४।२७)। चित्रानक्षत्रम्; 'घोरा श्रवणस्त्वाष्ट्रं वसुदैवं वारुणं चैव'—इति बृहत्संहितायाम् (७।११)। ८४६

त्विष् [ष्] स्त्री. [त्विष् दीप्तौ+सम्पदादित्वात् क्विप्] प्रभा; 'चयस्त्विषामित्यवधारितं पुरा ततः शरीरीति विभाविताकृतिम्'—इति माघे (१।३)। वाक्; व्यवसायः; जिगीषा; शोभा; 'अपश्यं द्वारकां चाहं महाराज! हतत्विषम्'—इति महाभारते (३।२०।२)। दीप्यमाने त्रि.। 'तव त्विषो जनिमन्रेजत द्यौरेजद् भूमिर्भियसा स्वस्य मन्योः।' 'हे इन्द्र त्विषो दीप्यमानस्य तव त्वदीये जनिमन् जन्मनि सति'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ६५

त्सरुः पुं. [त्सरति कौटिल्यं गच्छतीति+त्सर्+'भृमृशीतृचरित्सरीति' उ] खड्गमुष्टिः; मुष्टिः; तालतलः; 'ज्योत्स्नाभिसारसमुचितवेशे! व्याकोशमल्लिकोत्तंसे! विशसि मनो निशितेव स्मरस्य कुमुदत्सरुच्छुरिका'—इति आर्यासप्तशत्याम्। सर्पः; 'मा मां पद्येन रपसा विदत् त्सरुः'—इति ऋग्वेदे (५।५०।१) 'तथा त्सरुश्छद्मगामी जिह्मगः सर्प इत्यर्थः मां पद्येन पादभवेन रपसा रपि शब्दकर्मा शब्देन मा विदत् मा जानातु'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ४७३

द

दंशनम् क्ली. [दशतीव शरीरमिति। दंश्+ल्यु] वर्म; कवचम्; 'संनह्यध्वं सर्व एवेन्द्रकल्पा महान्ति चापानि च दंशनानि'—इति महाभारते (३।२६८।१८)। [दंश+भावे ल्युट्] दन्तादिना खण्डनम्; 'दंशनञ्चाहिभिः कृष्णैर्दाहश्च जतुवेश्मनि'—इति महाभारते (८।८३।३४)। ४५१

दंशितः त्रि. [दंशो वर्म सञ्जातोऽस्य, परिहितत्वादिति। दंश+तारकादित्वात् इतच्] वर्मितः; 'महता चक्रचक्रेण परराष्ट्रावमर्दिना। हस्त्यश्वरथपूर्णेन दंशितेन प्रतापवान्'—इति महाभारते (२।२९।२)। [दंश्यते इति, दंश्+णिच्+भावे क्त] दष्टः; भासमानः; 'वारणा यत्र सौवर्णाः पृष्ठे भासन्ति दंशिताः। सुपार्श्वं सुमहं चैव कस्यैतदनुरुत्तमम्'—इति महाभारते (७।४४।२)। 'दंशिताः भासमानाः'—इति तट्टीकायां नीलकण्ठः। ४६०

दंष्ट्रा स्त्री. [दश्यतेऽनयेति। दंश्+'दाम्नीशसेति' करणे ष्ट्रन्। यद्वा 'सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्' इति ष्ट्रन्। गौरादिपाठे पितामहीशब्दस्य पाठात् षितां ङीषोऽनित्यत्वात् टाप्] आशी; दन्तविशेषः; दंष्ट्रिका; 'दाढ़' इति भाषा। 'यस्यालीयत शल्कसीम्नि जलधिः पृष्ठे जगन्मण्डलम्, दंष्ट्रायां धरणी नखे दितिसुताधीशः पदे रोदसी'—इति साहित्यदर्पणे (१।३)। ६४२

दंष्ट्री [न्] पुं.- स्त्री. [प्रशस्ता दंष्ट्रा अस्त्यस्येति। दंष्ट्रा+'व्रीह्यादिभ्यश्च' इति इनि] शूकरः; सर्पः; 'बिलानि दंष्ट्रिणः सर्वे सानूनि मृगपक्षिणः। त्यजन्त्वस्म-

द्रूयाद्भीता गजाः सिंहा वनान्यपि'—इति रामायणे (२।३३।२३)। दंष्ट्राविशिष्टे त्रि.। 'दंष्ट्रिभिः शृङ्गिभिर्वापि हता म्लेच्छैश्च तस्करैः। ये स्वाम्यर्थे हता यान्ति राजन्! स्वर्गं न संशयः'—इति शुद्धितत्त्वे अग्निपुराणम्। २२६

दकम् क्लो. [उदक+पृषोदरादित्वात् साधुः] जलं; पानीयम्। ६४८

दक्षः त्रि. [दक्ष्, कर्तरि अच्] पटुः; चतुरः; 'सा भार्या या गृहे दक्षा सा भार्या या प्रजावती। सा भार्या या पतिप्राणा सा भार्या या पतिव्रता'—इति महाभारते (१।७४।३९)। समर्थः; 'बृहती इव सूनवे रोदसी गिरो होता मनुष्यो न दक्षः'—इति ऋग्वेदे (१।५९।४)। प्रवृद्धः; 'युवं दक्षं धृतव्रत मित्रावरुण दूलभम्'—इति ऋग्वेदे (१।१५।६) 'दक्षं प्रवृद्धम्' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। दक्षिणः; अपसव्यम्; 'प्राणायामं ततः कुर्यान्मूलेन प्रणवेन वा। मध्यमानामिकाभ्याञ्च दक्षहस्तस्य पार्वति'—इति महानिर्वाणे (३।४४)। पुं. [दक्षते सृष्टिप्रवृद्धये समर्थो भवतीति। दक्ष्+अच्] प्रजापतिविशेषः (८३५); 'शरीरानथ वक्ष्यामि मातृहीनान् प्रजापतेः। अङ्गुष्ठाद्दक्षिणाद्दक्षः प्रजापतिरजायत'—इति मत्स्यपुराणे (३।९)। ताम्रचूडः; 'धार्तराष्ट्रचकोराणां दक्षाणां शिखिनामपि। चटकानां च यानि स्युरण्डानि च हितानि च'—इति चरके। मुनिभेदः; 'कणादो गौतमः कण्वः पाणिनिः शाकटायनः। ग्रन्थं चकार यद्बुत्वा दक्षः कात्यायनः स्वयम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते। 'पराशरव्यासशङ्खलिखिता दक्षगोतमौ। शातातपो वशिष्ठश्च धर्मशास्त्रप्रयोजकाः।' हरवृषः; द्रुमभेदः; वह्निः; महेशः; 'धृतिमान् मतिमान् दक्षः सत्कृतश्च युगाधिपः'—इति महाभारते (१३।१७।११३)। विष्णोर्नामविशेषः; 'अक्रूरः पेशलो दक्षो दक्षिणः क्षमिणां वरः'—इति महाभारते (१३।१४९।१११)। बलम्; [दक्ष शैघ्र्ये, चकाराद् वृद्धौ, दक्ष गतिहिंसनयोः, दक्षतिरुत्साहार्थः। असुन्, शत्रुविजये क्षिप्री भवत्यनेन, हिंस्यन्ते वानेन शत्रवः, प्रोत्साहितो वा भवति शत्रुविजये। दक्ष इति सकारान्तं बलनाम, अकारान्तमपि, तस्यैव मर्यान्तरे द्रष्टव्यम्] 'स दक्षाणां दक्षपतिर्बभूव'—इति ऋग्वेदे (१।९५।६)। 'सोऽग्निर्दक्षाणां सर्वेषां बलानां दक्षपतिर्बलाधिपतिर्बभूव'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। गरुडस्य पुत्राणामन्यतमः; 'मेघहृत् कुमुदो दक्षः सर्पान्तः सोमभोजनः'—इति महाभारते (५।१०१।१२)। ३३५

दक्षाध्वरध्वंसकृत् पुं. [दक्षाध्वरस्य दक्षयज्ञस्य ध्वंसं नाशं करोतीति। कृ+क्विप् तुगागमश्च] शिवः; वीरभद्रः। ११

दक्षिणः त्रि. [दक्षते इति, दक्ष वृद्धौ+'द्रुदक्षिभ्यामिनन्' इति इनन्] सरलः; उदारः; 'दक्षिणां दक्षिणाचारो दिशं येनाजयत् प्रभुः'—इति महाभारते (४।५।२७)। अपसव्यम् (७५६); 'दाहिना' इति भाषा। 'ओङ्कारमुच्चरन् प्राज्ञो द्रविणं सक्तुमोदकम्। गृह्णीयाद्दक्षिणे हस्ते तदन्ते स्वस्ति कीर्तयेत्'—इत्यादित्यपुराणम्। दक्षिणोद्भूतः; दक्षिणदिग्भवः; 'स हि सर्वस्य लोकस्य युक्तदण्डतया मनः। आददे नातिशीतोष्णो नभस्वानिव दक्षिणः'—इति रघुवंशे (४।८)। दक्षिणदिक्स्थितः; 'दक्षिणेन मृतं शूद्रं पुरद्वारेण निर्हरेत्'—इति मनुः (५।९२)। परच्छन्दानुवर्ती; आरामः; 'दक्षिणः सरलावामपरच्छन्दानुवर्तिषु। वाच्यवद्दक्षिणावाटीयज्ञदानप्रतिष्ठयोः'—इति विश्वः। दक्षः; प्रदक्षिणः; 'शस्ताः कुर्वन्ति मां सव्यं दक्षिणं पशवोऽपरे। वाहांश्च पुरुषव्याघ्र! लक्षये रुदतो मम'—इति भागवते (१।१४।१३)। पुं. चतुर्धानायकान्तर्गतनायकविशेषः; 'एषु त्वनेकमहिलासु समरागो दक्षिणः कथितः'—इति साहित्यदर्पणे (३।४०)। क्ली. तन्त्रोक्ताचारविशेषः; 'सर्वेभ्यश्चोत्तमा वेदा वेदेभ्यो वैष्णवं महत्। वैष्णवादुत्तमं शैवं शैवाद्दक्षिणमुत्तमम्। दक्षिणादुत्तमं वामं वामात् सिद्धान्तमुत्तमम्। सिद्धान्तादुत्तमं कौलं कौलात् परतरं न हि'—इति कुलार्णवे ५ खण्डे। ३८५

दक्षिणस्थः पुं. [दक्षिणे भागे तिष्ठतीति। स्था+क] सारथिः; दक्षिणस्थिते त्रि.। ४४८

दक्षिणा स्त्री. [दक्षते इति, दक्ष वृद्धौ+'द्रुदक्षिभ्यामिनन्' इति इनन् ततष्टाप्] दक्षिणदिक्; अवाची; शामनी; यामी; वैवस्वती; 'दिग्दक्षिणा गन्धवहं मुखेन व्यलीकनिश्वासमिवोत्ससर्ज'—इति कुमारसम्भवे (३।२५)। प्रतिष्ठा; यज्ञादिसम्पादकतदन्तविहितदानम् (४१८); 'कृत्वा कर्म च तस्यैव तूर्णं दद्याच्च दक्षिणाम्। तत्कर्मफलमाप्नोति वेदैरुक्तमिदं

मुने !'—इति ब्रह्मवैवर्ते। नायिकाविशेषः; 'या गौरवं भयं प्रेम सद्भावं पूर्वनायके। न मुञ्चत्यन्यसक्तेऽपि सा ज्ञेया दक्षिणा बुधैः'—इति विष्णुपुराणटीकायां स्वामी। अव्य. ['दक्षिणादाच्' इति आच्] दक्षिणस्यां दिशि दक्षिणा दिग् वा। १०१

दक्षिणाशापतिः पुं. [दक्षिणाशाया दक्षिणस्या दिशः अधिपतिः] यमः; प्रेतराजः; पितृपतिः। ७२

दण्डः पुं.– क्ली. [दण्डयति अनेनेति। दण्ड्+घञ्। यद्वा दाम्यत्यनेनेति, दम्+'ञमन्तान् डः' इति ड] यति-ब्रह्मचारिधार्यलगुडाकारपदार्थः; 'दण्डाजिनकृता चिन्ता यथा तव वनेऽपि च। तथैव राज्यचिन्ता मे चिन्तयानस्य वा न वा'—इति देवीभागवते (१।१९। ३१)। लगुडः (४७६,७२६); 'यथा दण्डहतः सर्पो दण्डाकारः प्रजायते'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम्। 'पुनः सरीसृपव्यालविषाणिभ्यो भयापहम्। श्रमस्खलन-दोषघ्नं स्थविरे च प्रशस्यते। सत्त्वोत्साहबलस्थैर्य-धैर्यवीर्यविवर्धनम्। अवष्टम्भकरं चापि भयघ्नं दण्ड-धारणम्'—इति सुश्रुते। शरणागतरक्षणादि; 'शरणा-गतसंत्राणं भूतानामप्यहिंसनम्। बहिर्वेदि च यद्दानं दण्डमित्यभिधीयते'—इति मोक्षधर्मकथने। दण्डाकार-त्वात् छत्रादीनामङ्गविशेषः; 'युवराजनृपतिपत्न्याः सेनापतिदण्डनायकानाञ्च। दण्डोऽर्धपञ्चहस्तः सम-पञ्चकृतार्द्धविस्तारः'—इति बृहत्संहितायाम् (७३।४। ६)। चामरादीनामङ्गविशेषश्च; 'अध्यर्धहस्तप्रमितो-ऽस्य दण्डो हस्तोऽथवारत्निसमोऽथ वान्यः। काष्ठाच्छुभात् काञ्चनरूप्यगुप्तात् रत्नैर्विचित्रैश्च हिताय राज्ञाम्। यष्टयातपत्राङ्कुशवेत्रचापवितानकुन्तध्वजचामराणाम्। व्यापीततन्त्रीमधुकृष्णवर्णा वर्णक्रमेणैव हिताय दण्डाः'—इति बृहत्संहितायाम् (७३।३।४)। बाणनिक्षेप-कालीनस्थानविशेषे क्ली.। 'तिर्यग्भूतो भवेद्वामो दक्षि-णोऽपि भवेदृजुः। गुल्फौ पार्ष्णिग्रहौ चैव स्थितौ पञ्चा-ङ्गुलान्तरौ। स्थानं दण्डं भवेदेतद् द्वादशाङ्गुलमायतम्' —इति आग्नेय धनुर्वेदे। ४११

दण्डः पुं. [दण्डयत्यपराधिनमनेनेति। दण्ड्+घञ्। यद्वा दाम्यति शान्तं करोत्यनेन, दम्+ड, भावे घञ् वा] दमनम्; 'वाग्दण्डोऽयं मनोदण्डः कायदण्डस्तथैव च' —इति मनुः (१२।१०)। सैन्यं; कालावयवः; घटी; 'घड़ी' इति भाषा। 'षट् पलं पात्रनिर्माणं गभीरं चतुरङ्गुलम्। स्वर्णमाषैःकृतच्छिद्रं कुण्डैश्च चतुरङ्गुलैः। यावज्जलप्लुतं पात्रं तत्कालं दण्डमेव च'—इति ब्रह्मवै-वर्ते मानभेदः; 'हस्तैश्चतुर्भिर्भवतीह दण्डः'—इति लीलावती। चण्डांशोः पारिपार्श्विकः; 'ये च तेऽनुचराः सर्वे पादोपान्तं समाश्रिताः। माठरारुणदण्डाद्यास्तां-स्तान् वन्देऽशनिक्षुमान्'—इति महाभारते(३।३।६८)। यमः; अभिमानः; राज्ञां चतुर्थोपायः; साहसं; दमः; 'विनादण्डं कथं राज्यं करोति जनकः किल। धर्मे न वर्तते लोको दण्डश्चेन्न भवेद्यदि'—इति देवीभागवते (१।१७। ३)। [दण्ड इवाचरतीति, दण्ड्+क्विप् ततो भावे घञ्] ऊर्ध्वस्थितिः, व्यूहभेदः; 'मण्डलासंहतौ भागौ दण्डास्ते बहुधा शृणु। तिर्यग्वृत्तिस्तु दण्डः स्याद् भोगोऽ-न्या वृत्तिरेव च'—इति अग्निपुराणे। प्रकाण्डः; अश्वः; कोणः; मन्थानः; ग्रहभेदः; इक्ष्वाकुराजपुत्रः; 'धृष्टकश्चाम्बरीषश्च दण्डश्चेति सुतास्त्रयः। यश्चकार महात्मा वै दण्डकारण्यमुत्तमम्'–इति हरिवंशे(१०।२२)। नृपविशेषः; क्रोधहन्तुरसुरस्यांशेनावतीर्णः नृपभेदः; 'क्रोध हन्तेति यस्तस्य बभूवावरजोऽसुरः। दण्ड इत्यभि-विख्यातः स आसीन्नृपतिः क्षितौ'—इति महाभारते (१।६७।४६)। विष्णुः; 'धनुर्द्धरो धनुर्वेदो दण्डो दमयिता दमः'—इति महाभारते (१३।१४९।१०५)। महादेवः; 'शत्रुन्दमाय दण्डाय पर्णचीरपटाय च'—इति महाभारते (१२।२८४।१६)। हस्तिशुण्डः। ८२२

दण्डधरः पुं. [दण्डस्य धरः। दण्डं धारयति, धृञ् धारणे+पचाद्यचि णिलुक्] यमः; 'ब्रह्मदण्डकृतं दण्डं भुक्त्वा दण्डधराधिपः। अकाण्डदण्डस्रष्टाथ ययौ दण्ड धरान्तिकम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (४।६५९)। राजा; 'बलनिषूदनमर्थपतिं च तं श्रमनुदं मनदण्डधरा-न्वयम्'—इति रघुवंशे (९।३)। शासकः; 'एवमेत-न्मया कार्यं नाहं दण्डधरस्तव'—इति महाभारते (१२।२३।४३)। त्रि. लगुडधारकः; चतुर्थोपाय-युक्तः; 'अहं दण्डधरो राजा प्रजानामिव योजितः' इति भागवते (४।२१।२२)। ७२

दण्डासनः पुं.— बाणविशेषः। ४६७

दण्डाहतम् क्ली. [दण्डेन मथ्ना आहतम्] तक्रं; घोलम्; दण्डेन ताडिते त्रि.। २७५

दण्डी [न्] पुं. [दण्डोऽस्त्यस्येति। दण्ड+'अत इनिठनौ इति इनि] द्वाःस्थः; सूरिविशेषः। स तु कवीनामन्यतमः काव्यादर्शदशकुमारचरितावन्तिसुन्दरीत्रितयग्रन्थप्रणेता। शङ्कराचार्यसमकालीनोऽयम्। 'जाते जगति वाल्मीकौ कविरित्यभिधाभवत्। कवी इति ततो व्यासे कवयस्त्वयि दण्डिनि'—इति कालिदासः। 'स कथाभिरवन्तिषु प्रसिद्धान् विबुधान् बाणमयूरदण्डिमुख्यान्। शिथिलीकृतदुर्मताभिमानान् निजभाष्यश्रवणोत्सुकांश्चकार'—इति शङ्करविजये (१५।१४०)। दमनकवृक्षः; यमः; 'तं वृक्षमादाय रिपुप्रमाथी दण्डीव दण्डं पितृराज उग्रम्'—इति महाभारते (१।१९०।१७)। चतुर्थाश्रमी; 'स्थितायां यौवनयुतकान्तायां परमेश्वरि!। सर्वं हि विफलं तस्य यः कुर्याद्दण्डधारणम्। विद्येते पितरौ देवि! यः कुर्याद्दण्डधारणम्। सन्न्यासं विफलं तस्य रौरवाख्यं गमिष्यति। विद्यते बालभावेन यस्य कान्ता सुतस्तथा। संन्यासधारणं तस्य वृथा हि परमेश्वरि। स गुरुश्चापि शिष्यश्च रौरवाख्यं प्रपद्यते'—इति महानिर्वाणतन्त्रे १३ पटले। महादेवः; 'मुण्डो विरूपो विकृतो दण्डी कुण्डी विकुर्वणः।' योगाचार्यविशेषः; 'युगावर्तेषु सर्वेषु योगाचार्यच्छलेन तु। अवताराणि शर्वस्य शिष्यांश्च भगवन्! वद। महाकालश्च शूली च दण्डी मुण्डी स एव च'—इति शिवपुराणे। धृतराष्ट्रपुत्राणामेकतमः; 'निषङ्गी कवची दण्डी दण्डधारो धनुर्ग्रहः'—इति महाभारते। दण्डयुक्ते त्रि.। 'दण्डी मुण्डी कुशी चीरी घृताक्तो मेखलीकृतः'—इति महाभारते (१३।१४।३७४)। ४२४

दण्डोत्पलम् क्ली. [दण्डयुक्तमुत्पलमिव] वृक्षविशेषः; गोवन्दनी; गन्धवल्ली; सहदेवी; सहा; विश्वदेवा; दण्डोत्पला। १९९

दद्रुघ्नः पुं. [दद्रुं दद्रुरोगं हन्तीति। हन्+टक्] चक्रमर्दकः; 'वाकुची चाथ दद्रुघ्नः पिचुमर्दो हरीतकी। 'दद्रुघ्नपत्रं दोषघ्नमम्लं वातकफापहम्। कण्डूकासकृमिश्वासदद्रुकुष्ठप्रणुल्लघु'—इति भावप्रकाशः। ६१९

दद्रुणः त्रि. [दद्रुरस्त्यस्येति। दद्रु+'लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यः शनेलचः' इति न] दद्रुरोगी; दद्रूणः; दद्रुरोगविशिष्टः। ६१९

दद्रुरोगी [न्] त्रि. [दद्रुरोगोऽस्त्यस्येति, दद्रुरोग+इनि] दद्रुरोगविशिष्टः; दद्रुणः; दद्रूणः। ६०७

दद्रूघ्नः पुं. [दद्रूं हन्तीति। हन्+टक्] दद्रुघ्नः; चक्रमर्दकः। ६१९

दद्रूणः त्रि. [दद्रूरस्त्यस्येति। दद्रू+पामादित्वात् न] दद्रुणः; दद्रुरोगी। ६०७

दधि क्ली. [दधातीति। धा+भाषायां धाञ् 'कृसृगमिजनिनमिभ्यः' इत्युक्त्या कि; स च लिड्वत्] दुग्धपरिणतिः; क्षीरजं; मङ्गल्यं; विरलं; पयस्यं; 'दही' इति भाषा। 'हिक्काश्वासप्लीहार्शःस्वतिसारे भगन्दरे। शस्तं प्रोक्तं दधि ह्येषां लवणेन विमूर्च्छितम्' —इति हारीते। श्रीवासः; वसनं; धारणकर्तरि त्रि.। २७५,४१६

दधिमण्डः पुं. [दध्नः मण्डः] मस्तु; 'छाछ' इति भाषा। ३२१

दधिसक्तवः पुं. [दध्युपसिक्ताः सक्तवः] करम्भः; नित्यबहुवचनान्तोऽयम्। 'न पाणौ लवणं विद्वान् प्राश्नीयान्न च रात्रिषु। दधिसक्तून् न भुञ्जीत वृथामांसं च वर्जयेत्'—इति महाभारते (१३।१०४।९१)। ३२१

दधिसारम् क्ली. [दध्नः सारम्] नवनीतं; हैयङ्गवीनम्। २७४

दनुः स्त्री.—'कश्यपपत्नी; सा दक्षकन्या दानवमाता च; 'कश्यपस्य प्रवक्ष्यामि पत्नीभ्य पुत्रपौत्रकान्। अदितिर्दितिर्दनुश्चैव अरिष्टा सुरसा तथा'—इति मत्स्यपुराणे। दानवविशेषे पुं.। 'श्रियो मां मध्यमं पुत्रं दनुं नाम्ना च दानवम्'—इति रामायणे। ११९

दन्तः पुं. [दम्+'हसिमृग्रिणि' इति तन्] चर्वणसाधनास्थि; रदनः; दशनः; रद्ः; द्विजः; खरुः; 'दाँत' इति भाषा। 'हरितालं यवक्षारं पत्राङ्गं रक्तचन्दनम्। जातीं हिङ्गुलकं लाक्षां पक्वतैलेन पेषयेत्। हरीतकीकषायेण मृष्ट्वा दन्तान् प्रलेपयेत्। दन्ताः स्युर्लोहिताः पुंसः श्वेता रुद्र! न संशयः'—इति गारुडे। अद्रिकटकः; कुञ्जः; शैलशृङ्गम्। ५२७

दन्तच्छदः पुं. [दन्ताश्छाद्यन्तेऽनेनेति' छद् संवरणे+णिच्+'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ। 'छादेर्घेऽद्युपसर्गस्य' इति ह्रस्वः] ओष्ठः; 'दन्तच्छदैर्दन्तविघातचिह्नैः स्तनैश्च पाण्यग्रकृताभिलेखैः। संसूच्यते निर्दयमङ्ग-

नानां रतोपभोगो नवयौवनानाम्'—इति ऋतुसंहारे। ४२४

दन्तमूलम् क्ली.—दन्तमांसम्। 'मसूड़ा' इति भाषा। २२३

दन्तवासाः [स्] पुं. [दन्तस्य वासो वस्त्रमिवावरकत्वात्] ओष्ठः; 'अपि त्वदावर्जितवारिसम्भृतं प्रवालमासामनुबन्धि वीरुधाम्। चिरोज्झितालक्तकपाटलेन ते तुलां यदारोहति दन्तवाससा'—इति कुमारसम्भवे। (५।३४)। ५२४

दन्दशूकः पुं. [गर्हितं दशतीति। दंश्+यङ+'यजजपदशां यङः' इति ऊक] सर्पः; 'चक्षुःश्रवा दन्दशूको गूढपात्पन्नगोरगाः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। राक्षसः; हिंस्रे त्रि., 'इषुमति रघुसिंहे दन्दशूकान् जिघांसौ धनुररिभिरसह्यं मुष्टिपीडं दधाने'—इति भट्टिः (१।२६)। ६४०

दभ्रम् त्रि. [दभ्नोतीति, दम्भु दम्भने+'स्फायितञ्चीति' रक्] अल्पम्; ऋहन्; ह्रस्वः; निघृष्वः; मायुकः; प्रतिष्ठा; कृधु; वम्रकः; अर्भकः; क्षुल्लकः; 'असि दभ्रस्य चिद्वृधः'—इति ऋग्वेदे (१।८१।२)। पुं. समुद्रः। ६८८

दमनम् क्ली. [दम्+भावे ल्युट्] दण्डः; 'अत्युच्छ्रितस्य दमनमुचितं च श्रुतौ श्रुतम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते। पुं. [दाम्यतीति, दम्+ल्यु] पुष्पविशेषः; पुष्पचामरः; 'दोना' इति भाषा। 'दमनस्तु वरस्तिक्तो हृद्यो वृष्यः सुगन्धिकः। ग्रहणीविषकुष्ठास्रक्लेदकण्डूत्रिदोषजित्'—इति भावप्रकाशः। वीरः; उपशान्तः; कुन्दवृक्षः; ऋषिविशेषः; 'तमभ्यगच्छद् ब्रह्मर्षिर्दमनो नाम भारत! तं स भीमः प्रजाकामस्तोषयामास धर्मवित्'—इति महाभारते (३।५३।६)। भीमस्य पुत्रविशेषः; 'कन्यारत्नं कुमारांश्च त्रीनुदारान् महायशाः। दमयन्तीं दमं दान्तं दमनं च सुवर्चसम्'—इति महाभारते (३।५३।९)। विष्णुः; 'मरीचिर्दमनो हंसः सुपर्णो भुजगोत्तमः।' 'स्वाधिकारात् प्रमाद्यन्तीः प्रजा दमयितुं शीलं यस्य वैवस्वतादिरूपेण स दमनः' इति तद्भाष्ये शङ्कराचार्यः। महादेवः; 'महाप्रसादो दमनः शत्रुहा श्वेतपिङ्गलः'—इति महाभारते (१३।१७।१३६)। ८२२

दमुनाः [स्] पुं. [दाम्यतीति। अन्तर्भूतण्यर्थाद् दम्धातोः 'दमेरुनसिः' इति उनसि] अग्निः; शुक्राचार्यः। ६३

दमूनाः [स्] पुं. [दमुनस्+'अन्येषामपि दृश्यते' इति पक्षे दीर्घः। यद्वा दमेरूनसिरिति पठित्वा ऊनसिप्रत्ययः] अग्निः; त्रि. दमनीयः; 'अस्मे रयिं न स्वर्थं दमूनसं भगं दक्षं न पपृचासि धर्णसिम्'—इति ऋग्वेदे (१।१४१। ११)। दानमनाः; दान्तचित्तः; 'जुष्टो दमूना अतिथिर्दुरोण इमं नो यज्ञमुपयाहि विद्वान्'—इति ऋग्वेदे (५।४।५)। ६३

दम्पती पुं. [जाया च पतिश्च। राजदन्तादिगणे पाठात् जायाया दम्भावो वा निपात्यते] भार्यापती; जम्पती; जायापती; 'भुक्तवत्स्वथ विप्रेषु स्वेषु भृत्येषु चैव हि। भुञ्जीयातां ततः पश्चादवशिष्टन्तु दम्पती'—इति मनुः (३।११६)। १२०

दम्भः पुं. [दम्यते इति, दम्भु दम्भने+घञ्] कपटः; 'सुगुप्तस्यापि दम्भस्य ब्रह्माप्यन्तं न गच्छति'—इति पञ्चतन्त्रे (१।२२२)। अयं तु अधर्मात् मृषागर्भे संजातः; 'मृषाऽधर्मस्य भार्यासीद्दम्भं मायां च शत्रुहन्! असूत मिथुनं तत्तु निर्ऋतिर्जगृहेऽप्रजाः'—इति भागवते (४।८।२)। कल्कं; साटोपाहङ्कृतिः; 'आत्मसम्भाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः। यजन्ते नाम यज्ञैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम्'—इति गीतायाम् (१६।१७)। धर्मानुत्साहः; 'नास्तिक्यं वेदनिन्दां च देवतानां च कुत्सनम्। द्वेषं दम्भं च मानं च क्रोधं तैक्ष्ण्यं च वर्जयेत्'—इति मनुः (४।१६३)। महादेवः; 'दम्भो ह्यदम्भो वैदम्भो वश्यो वशकरः कलिः'—इति महाभारते (१३।१७।७८)। ७४०

दम्भोलिः पुं. [दम्भ्+भावे असुन्। दम्भसि प्रेरणे अलति पर्याप्नोतीति। दम्भस्+अल्+इन्.] वज्रम्। ५६

दम्यः पुं. [दम्यते इति, दम्+यत्] वत्सतरः; प्राप्तदमनकालो गौः; अनड्वान्; 'शकटं दम्यसंयुक्तं दत्तं भवति चैव हि'—इति महाभारते (१३।६६।४)। दमनीये त्रि.। २६४

दया स्त्री. [दय्+भिदाद्यङ ततष्टाप्] करुणा; 'यत्नादपि परक्लेशं हर्तुं या हृदि जायते। इच्छा भूमिसुरश्रेष्ठ! सा दया परिकीर्तिता'—इति पाद्मे। 'आत्मवत् सर्वभूतेषु यो हिताय शुभाय च। वर्तते सततं हृष्टः क्रिया ह्येषा दया स्मृता'—इति मत्स्यपुराणे। 'परे वा बन्धुवर्गे वा मित्रे द्वेष्टरि वा सदा। आत्मवद्वर्तितव्यं हि

दयैषा परिकीर्तिता'—इत्येकादशीतत्त्वम्। इयं हि शक्तीनामन्यतमा; 'श्रद्धा मेधा स्वधा स्वाहा क्षुधा निद्रा दया गतिः। संस्थिताः सर्वतः पार्श्वे महादेव्याः पृथक् पृथक्'—इति देवीभागवते (१।१५।६०)। ७२५

दयितम् त्रि. [दय्यते स्मेति। दय्+क्त] प्रियम्; 'दृष्टमदृष्टप्रायं दयितं कृत्वा प्रकाशितन्त्वनया। हृदयं करेण ताडितमथ मिथ्याव्यञ्जितत्रपया'—इति आर्यासप्तशत्याम् (२८८)। 'दयितजनविप्रयोगा वित्तवियोगाश्च केन सह्याः स्युः। यदि सुमहौषधकल्पो वयस्यजनसङ्गमो न स्यात्'—इति पञ्चतन्त्रे (२।१८९)। पुं. पतिः। ३६७

दयिता स्त्री. [दयित+टाप्] भार्या; पत्नी; 'निवर्त्य राजा दयितां दयालुः तां सौरभेयीं सुरभिर्यशोभिः'—इति रघुवंशे (२।३)। ४८२

दर अव्य. [दीर्यते इति, दॄ+अप्] ईषदर्थः; 'दरतरलेऽक्षिणि वक्षसि दरोन्नते नव मुखे च दरहसिते। आस्तां कुसुमं वीरः स्मरोऽधुना चित्रधनुषापि'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३००)। 'अक्षिणि नेत्रे ईषच्चञ्चले सति तवेषदुन्नमिते वक्षसि मुखे च किञ्चिद्धसितवति सति'—इति तट्टीका। ५८५

दरः पु.- क्ली. [दीर्यते वक्षोऽनेन। दॄ+'ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च' इति अप्] भयम्; 'दरनिद्राणस्यापि स्मरस्य शिल्पेन निर्गतासून् मे। मुग्धे! तव दृष्टिरसावर्जुनयन्त्रेषुरिव हन्ति'—इति आर्यासप्तशत्याम् (२९५)। गर्तः (६२४); शङ्खः; 'स उच्चकाशे धवलोदरो दरोऽप्युरुक्रमस्याधरशोणशोणिमा। दाध्मायमानः करकञ्जसम्पुटे यथाब्जखण्डे कलहंस उत्स्वनः'—इति भागवते (१।११।२)। कन्दरे पु.—स्त्री. [स्त्रियां ङीप्] 'ध्वनति पवनविद्धः पर्वतानां दरीषु, स्फुटति पटुनिनादः शुष्कवंशस्थलीषु'—इति ऋतुसंहारे (१।२५)। क्ली. शङ्खः; 'विष्णुं वन्दे दरकमलकौमोदकीचक्रपाणिम्'—इति क्रमदीपिका। ७२५

दरिः स्त्री. [दॄ+इन्] दरी; कन्दरा; पुं. तक्षककुलोत्पन्नसर्पः। १६७

दरितः त्रि. [दरो भयमस्य सञ्जातः। दर+तारकादित्वाद् इतच्] भीतः। ३५४

दरिद्रः पुं. [दरिद्राति दुर्गच्छतीति। दरिद्रा+अच्] निर्धनः; निस्वः; दुर्विधः; दीनः; दुर्गतः; कीकटः; दुस्थः; अस्तमितः; 'अनुपोष्य त्रिरात्राणि तीर्थान्यनभिगम्य च। अदत्वा हेमधेनूश्च दरिद्रो जायते नरः'—इति पाद्मे। 'दरिद्रो यस्त्वसन्तुष्टः कृपणो योऽजितेन्द्रियः'—इति भागवतम्। ३४८

दरी स्त्री. [दर्+स्त्रियां ङीप्] कन्दरा; गुहा। १६७

दरोदरम् पुं.-क्ली. [दरो भयं तज्जनकम् उदरं यस्य। प्रायशः सर्वग्रासकत्वादेवास्य तथात्वम्] दुरोदरं; द्यूतम्; 'आश्रित्य दुर्गं गिरिकन्दरोदरं क्रीडन्त्यमुस्मिन् सततं दरोदरम्।' ३८८

दर्दुरः पुं. [दृणाति कर्णौ शब्देनेति। दॄ+'मकुरदर्दुरौ' इति उरच्प्रत्ययेन निपातनात् साधुः] भेकः; 'भद्रं कृतं कृतं मौनं कोकिलैर्जलदागमे। दर्दुरा यत्र वक्तारस्तत्र मौनं हि शोभनम्'—इत्युद्भटः। मेघः; वाद्यभाण्डविशेषः; पर्वतविशेषः; 'स निविश्य यथाकामं तटेष्वालीनचन्दनौ। स्तनाविव दिशस्तस्याः शैलौ मलयदर्दुरौ'—इति रघुवंशे (४।५)। राक्षसः; अभ्रकधातुभेदः; 'पिनाकं दर्दुरं नागं वज्रञ्चेति चतुर्विधम्। दर्दुरं स्वग्निनिक्षिप्तं कुरुते दर्दुरध्वनिम्। गोलकान् बहुशः कृत्वा स स्यान्मृत्युप्रदायकः'—इति भावप्रकाशे। ६६२

दर्पः पुं. [दृप्यते इति, दृप्+भावे घञ्] अहङ्कृतिः; गर्वः; अहङ्कारः; अवलिप्तता; अभिमानः; ममता; मानः; चित्तोन्नतिः; स्मयः; 'प्राणाधिकाया राधाया अन्येषामपि का कथा। हत्वा दर्पं च सर्वेषां प्रसादं च चकार सः'—इति ब्रह्मवैवर्ते श्रीकृष्णजन्मखण्डे। उच्छृङ्खलत्वं; कस्तूरी; ऊष्मा। ७२२

दर्पकः पुं. [दर्पयति हर्षयति मोहयति वेति। दृप् हर्षमोहनयोः+णिच्+ण्वुल्] कामदेवः। ३३

दर्पणः पुं.- क्ली. [दर्पयति सन्दीपयतीति। दृप्+णिच्+'नन्दिग्रहीति' ल्यु] रूपदर्शनाधारः; मुकुरः; आदर्शः; आत्मदर्शः; नन्दरः; दर्शनं; प्रतिबिम्बातं; कर्कः; कर्करः; 'यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा शास्त्रं तस्य करोति किम्। लोचनाभ्यां विहीनस्य दर्पणः किं करिष्यति'—इति चाणक्ये (१०९)। पुं. पर्वतप्रभेदः; नदविशेषः; 'ततः पूर्वं महाराज! दर्पणो नाम पर्वतः। कुबेरो यत्र वसति धनपालैः समं सदा। यस्मिन्नास्ते मध्यभागे रोहिणो रोहिताकृतिः। यस्मिंल्लोहादिकं

स्पृष्टं स्वर्णतां याति तत्क्षणात्। यन्नातिदूरे स्रवति दर्पणो नाम वै नदः'—इति कालिकापुराणे ८१ अध्याये। क्ली. [दर्पयति सन्दीपयतीति। दृप्+णिच्+ल्यु] चक्षुः; [भावे ल्युट्] सन्दीपनम्। ५५५

दर्भः पुं. [दृणाति विदारयतीति। 'दृदलिभ्यां भः' इति भ] कुशः; उलपतृणं; काशः; 'कुशो दर्भस्तथा बर्हिः सूच्यग्रो यज्ञभूषणः। ततोऽन्यो दीर्घपत्रः स्यात् क्षुरपत्रस्तथैव च'—इति भावप्रकाशः। १९१

दर्विः स्त्री. [दृणाति विदारयत्यनेनेति। दृ+'वृदृभ्यां विन्' इति विन्] व्यञ्जनादिदारकः; कम्बिः; खजाका; दर्वी; कम्बी; खजाकजः; दर्विकः; दर्विका; दार्विका; 'कलछी, चमचा' इति भाषा। फणा। ३१२

दर्वी स्त्री. [दर्वि+वा ङीष्] दर्विः। ३१२

दर्वीकरः पुं. [दर्वीं फणां करोतीति। कृ+'कृञो हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु' इति ट, यद्वा दर्वी फणा कर इवास्य] सर्पः; 'दर्वीकरा मण्डलिनो राजिमन्तश्च पन्नगाः। तेषु दर्वीकरा ज्ञेया विंशतिः षट् च पन्नगाः'—इति सुश्रुते। खजाकाकारके त्रि.। ६४०

दर्शनम् क्ली. [दृश्यतेऽनेनेति। दृश्+करणे ल्युट्] चाक्षुषज्ञानं; निर्वर्णनं; निध्यानम्; आलोकनम्; ईक्षणं, निभालनम्; 'आहूत इव मे शीघ्रं दर्शनं याति चेतसि'—इति भागवते (१।६।३४)। पुण्यदर्शनानि; 'सुब्राह्मणानां तीर्थानां वैष्णवानां च दर्शने। देवताप्रतिमादर्शात् तीर्थस्नायी भवेन्नरः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। नयनं; स्वप्नः; बुद्धिः; धर्मः; उपलब्धिः; दर्पणः; [दृश्यते यथार्थतत्त्वमनेनेति], शास्त्रम्; इज्या; वर्णः; (८६२) शास्त्रं, तत्तु षड्विधम्—'द्वे न्याये द्वे च मीमांसे द्वे योगे' इति षड् विदुः।' ५६६

दलम् क्ली. [दलतीति, दल्+अच्] पत्रम्; 'हृत्वा तटिनि! तरङ्गैर्भ्रमितश्चक्रेषु नाशये निहितः। फलदलवल्कलरहितस्त्वयान्तरीक्षे तरुस्त्यक्तः'—इति आर्यासप्तशत्य म्(६९२)। उत्सेधः; खण्डम्; 'भार्या पुत्रश्च दासश्च शिष्यो भ्राता च सोदरः। प्राप्तापराधास्ताड्याः स्यू रज्ज्वा वेणुदलेन वा।' शस्त्रीच्छदः; अपद्रव्यं; घनं; तमालपत्रं; अर्द्धं; पुं. इक्ष्वाकुकुलोत्पन्नपरिक्षिन्नामराज्ञः पुत्रः,स च मण्डूकराजकन्यासम्भूतः। 'अथ कस्यचित् कालस्य तस्यां कुमारास्त्रयस्तस्य राज्ञः सम्बभूवुः। शलो, दलो, बलश्चेति'—इति महाभारते (३।१९२। ४४)। वृक्षविशेषः; 'वातपोतः पलाशः स्याद्वानप्रस्थश्च किंशुकः। राजादनो ब्रह्मवृक्षो हस्तिकर्णो दलोऽपरः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। १८५

दवः पुं. [दुनोति पीडयतीति। दु+अच्] वनाग्निः; 'दृष्ट्वा गता निर्वृतिमद्य सर्वे गजा दवार्ता इव गाङ्गमम्भः' —इति भागवते (८।६।१३)। वनम् (७९९); अग्निः; [दु उपतापे+'ऋदोरप्' इत्यप्] उपतापः। ७०

दवथुः पुं. [दवनमिति, टु दु उपतापे+'ट्वितोऽथुच्' इति भावे अथुच्] परितापः; 'दुरोदरघ्नी दावार्चिर्द्रवद्रव्यकशेवधिः। दीनसन्तापशमनी दात्री दवथुवैरिणी'—इति काशीखण्डे। [दूयतेऽनेनेति करणे अथुच्] चक्षुरादिदाहः। ६०१

दशनः पुं.—क्ली. [दश्यतेऽनेनेति। दंश्+ल्युट्, 'दहदशेति' निर्देशाद् अत्र अकित्यपि नलोपः] दन्तः; 'उवाच वाग्मी दशनप्रभाभिः संवर्द्धितोरःस्थलतारहारः'—इति रघुवंशे (५।५२)। क्ली. [दश्यते इव शरीरमनेनेति। दंश्+करणे ल्युट्, दहदशेति निर्देशात् क्वचिदकित्यपि नलोपः] कवचं; शिखरे पुं.। ५२७

दशबलः पुं. [दशसु दिक्षु बलं यस्य, यद्वा 'दानशीलक्षमावीर्यध्यानप्रज्ञाबलानि च। उपायः प्रनिधिज्ञानं दश बुद्धबलानि च' इति वचनात् दश बलान्यस्य] बुद्धः। ८५

दशा स्त्री. [दशतीव, दंश्+मूलविभुजादित्वात् क, जपजभदहदशेति निर्देशात् अकित्यपि नलोपः। यद्वा दश्यते इति, गुरोश्चेत्यङ ततष्टाप्] वर्तिः; वस्त्रान्ते बहुवचनान्तोऽयं शब्दः; 'वसनस्य दशा ग्राह्या शूद्रयोत्कृष्टवेदने'—इति मनुः (३।४४)। कर्मविपाकः (७९९); अवस्था; 'आपदि येनोपकृतं येन च हसितं दशासु विषमासु। उपकृत्य तयोरुभयोः पुनरपि जातं नरं मन्ये'—इति पञ्चतन्त्रे (१।३८१)। दीपवर्तिः; 'अहमस्य दशेव पश्य मां अविषह्यव्यसनेन धूमिताम्' —इति कुमारसम्भवे (४।३०)। चेतः; शरीरस्य दश दशाः—गर्भवासः १, जन्म २, बाल्यं ३, कौमारं ४, पौगण्डं ५, यौवनं ६, स्थाविर्यं ७, जरा ८, प्राणरोधः ९, नाशः १०। कामजदशदशाः; 'चक्षूरागस्तदनु मनसः सङ्गतिर्भावना च,व्यावृत्तिः स्यात्तदनु विषयग्रामतश्चेतसोऽपि। निद्राच्छेदस्तदनु तनुता निस्त्रपत्वं

ततोऽनून्मादो मूर्च्छा तदनु मरणं स्युर्दशाः प्रक्रमेण'—इत्यलङ्कारशास्त्रम् । वर्षाणां सूर्यादिग्रहभोग्याष्टभागविशेषाः; नाक्षत्रिकी दशा; 'षट् सूर्यस्य दशा ज्ञेयाः शशिनो दशपञ्च च । अष्टावङ्गारके प्रोक्ता बुधे सप्तदश स्मृताः । शनैश्चरे दश प्रोक्ता गुरोरेकोनविंशतिः । राहोर्द्वादशवर्षाणि भृगोरप्येकविंशतिः ।' युगभेदे दशाविशेषाः; 'सत्ये लग्नदशा चैव त्रेतायां हरगौरिका । द्वापरे योगिनी चैव कलौ नाक्षत्रिकी दशा'—इति समयामृतम् । दशधा दशा; योगिनी १, वार्षिकी २, नाक्षत्रिकी ३, लाग्निकी ४, मुकुन्दा ५, विंशोत्तरा ६, त्रिंशोत्तरा ७, पताकी ८, हरगौरी ९, दिनदशा १० । ५५१

दस्युः पुं. [दस्यति परस्वान् नाशयतीति । दस्+'यजिमनिशुन्धिदसिजनिभ्यो युच्' इति युच्, बाहुलकादनादेशाभावः] चौरः; 'विक्रोशन्त्यो यस्य राष्ट्राद्ध्रियन्ते दस्युभिः प्रजाः । संपश्यतः सभृत्यस्य मृतः स न तु जीवति'—इति मनुः (७।१४३) । रिपुः; 'यः शर्द्धते नानुददाति शृध्यां यो दस्यो र्हन्ता स जनास इन्द्रः'—इति ऋग्वेदे (२।१२।१०) । 'दस्योरुपक्षपयितुः शत्रोर्हन्ता घातकः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । महासाहसिकः; असुरः; 'कृतानीदस्य कर्त्वा चेतन्ते दस्युतर्हणा'—इति ऋग्वेदे (९।४७।२) । दस्युतर्हणा दस्यूनामसुराणां तर्हणा'—इति तद्भाष्ये सायणः । कर्मवर्जिते त्रि. । 'न वीलवे नमते न स्थिराय न शर्धते दस्यु जूताय स्तवान्'—इति ऋग्वेदे (६।२४।८) । 'शर्धते उत्सहमानाय दस्युजूताय कर्मवर्जितैः प्रेरिताय'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ३३८

दस्रः पुं. [दस्यति उत्क्षिपति पांशूनिति । दस उत्क्षेपे+स्फायितञ्चीति' रक् । दस्यति रोगान् क्षिपतीति] अश्विनीसुतः; 'नासत्यश्चैव दस्रश्च स्मृतौ द्वावश्विनीसुतौ'—इति हरिवंशे (९।५३) । खरः दर्शनीये त्रि. । यथा ऋग्वेदे (६।६९।७) 'इन्द्राविष्णू पिबतं मध्वो अस्य सोमस्य दस्रा जठरं पृणेथाम्', 'दस्रा हे दर्शनीयाविन्द्राविष्णू'—इति तद्भाष्ये सायणचार्यः । क्ली. [दंशयते तृणादीन् दशतीति, दसि दंशे+'स्फायिततञ्चिवञ्चि' इति रक्] शिशिरम् । ८४

दस्रौ पुं. [दस्यतः क्षिपतो रोगानिति । दस्+'स्फायितञ्चीति' रक्] अश्विनौ (द्विवचनान्तोऽयं शब्दः); 'दक्षादधीत्य दस्रौ वितनुतः संहितां स्वीयाम् । सकलचिकित्सकलोकप्रतिपत्तिविवृद्धये धन्याम् ।' देवासुररणे देवा दैत्यैर्ये सक्षताः कृताः । अक्षतास्ते कृताः सद्यो दस्राभ्यामद्भुतं महत् । वज्रिणोऽभूद्भुजस्तम्भः स दस्राभ्यां चिकित्सितः । सोमान्निपतितश्चन्द्रस्ताभ्यामेव सुखीकृतः'—इति भावप्रकाशे । ८४

दहनः पुं. [दहतीति, दह् भस्मीकरणे+ल्यु] अग्निः; 'धूमैरश्रु निपातय दह शिखया दहन ! मलिनयाङ्गारैः । जागरयिष्यति दुर्गतगृहिणी त्वां तदपि शिशिरनिशि'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३०४) । त्रिसंख्या; 'खत्रयाब्धिदहनाः कक्षा तु हिमदीधितेः'—इति सूर्यसिद्धान्ते । कृत्तिकानक्षत्रस्य अधिष्ठातृदेवत्वात् कृत्तिकानक्षत्रम्; 'दहनविधिशताख्या मैत्रभं सौम्यवारे'—इति ज्योतिषतत्त्वे । चित्रकः; भल्लातकः; दुष्टचेतसि त्रि. । [दह्यते कामाग्निना इति, दह्+ल्युट्] कपोतः; रुद्रविशेषः; 'दहनोऽथेश्वरश्चैव कपाली च महाद्युतिः । स्थाणुर्भगश्च भगवान् रुद्रा एकादश स्मृताः'—इति महाभारते (१।६६।३) । स्कन्दस्यानुचरविशेषः; 'दहतिं दहनं चैव प्रचण्डौ वीर्यसम्मतौ, अंशोऽप्युपाचरन् पञ्च ददौ स्कन्दाय धीमते'—महाभारते (९।४५।३३) । दाहकमात्रे त्रि. । 'त्राहि नः शरणापन्नांस्त्रैलोक्यदहनाद्विषात्'—इति भागवते(८।७।२१) । क्ली. [भावे ल्युट्] दाहः; भस्मीकरणं; 'जलन' इति भाषा । 'इतरो दहने स्वकर्मणां ववृते ज्ञानमयेन वह्निना'—इति रघुवंशे (८।२०) । ६२

दहनोपलः पुं. [दहनाय वह्न्युत्पादनाय य उपलः प्रस्तरखण्डः] सूर्यकान्तमणिः । १७६

दाक्षायणी स्त्री. [दक्षस्यापत्यं स्त्री. । दक्ष+फिञ् । गौरादित्वाद् ङीष्] दुर्गा; अश्विन्यादयो रेवत्यन्ताः सप्तविंशतिस्तारा: (५१); रोहिणीनक्षत्रं; दक्षकन्यामात्रम्; 'बुद्धिर्लज्जा वपुः शान्तिः सिद्धिः कीर्तिस्त्रयोदशी । पत्न्यर्थे प्रतिजग्राह धर्मो दाक्षायणीः प्रभुः'—इति मार्कण्डेये (५०।२१) । अदितिः; 'त्रयोदशानां पत्नीनां या तु दाक्षायणी वरा । मारीचः कश्यपस्तस्यामादित्यान् समजीजनत्'—इति महाभारते (१।७५।९) । कद्रुः; विनता; 'जग्मतुः

परया प्रीत्या परं पारं महोदधेः। कद्रुश्च विनता चैव दाक्षायण्यौ विहायस'—इति महाभारते (१।२२।५)। दन्तीवृक्षः। १६

दाक्षायणीरमणः पुं. [रमयतीति, रम्+ल्यु, दाक्षायणीनां रमणः] दाक्षायणीपतिः; चन्द्रः। ४३

दाण्डाजिनिकः त्रि. [दण्डाजिनेन शाठ्येन दम्भेन वा अर्थानन्विच्छतीति। दण्डाजिन+'अयःशूलदण्डाजिनाभ्यां ठक्ठञौ' इति ठञ्] दम्भी; कुहकः; पाषण्डी। ३४९

दातम् त्रि. [दीयते स्म इति। दाप् लवने+क्त] छिन्नं; दैप् शोधने, कर्तरि क्त] शुद्धम्। ५७७

दात्यूहः पुं.– स्त्री. [दाप् लवने+क्तिन्। दातिं मारणम् ऊहते इति। दाति+ऊह+अण्] यद्वा दो अवखण्डने+ क्तिन्, दितिं वहतीति। वह्+क+ ऊठ्, दित्यूहः। ततः स्वार्थे अण्, ततः 'देविकाशिंशपादित्यवाड्दीर्घसत्रश्रेयसामात्'—इति आत्वम्] पक्षिविशेषः; कालकण्ठकः; अत्यूहः; दात्यौहः; मासङ्गः; शितिकण्ठः; कचाटुरः; काकमद्गुः; 'दात्यूहो मरुतश्च नाशनकरो वृष्योऽतिशुक्रप्रदः; श्रेष्ठः सर्वगुणः श्रमोपशमनस्तुष्टिप्रदो वातहा'—इति हारीते। 'प्रावृट्काले सुखीभूत्वा को वा कुत्र न गच्छति। इति वदति दात्यूहः को वा को वा क्व वा क्व वा'—इत्युद्भटः। जलकाकः; चातकः; मेघः। २४९

दात्यौहः पुं.– स्त्री. [दित्यौह+स्वार्थे अण्। 'देविकाशिंशपे'त्यादिना आत्वम्] दात्यूहः। २४९

दात्रम् क्ली. [द्यति दाति वानेनेति। दो अवखण्डने, दाप् लवने वा+'दाम्नीशसेति' ष्ट्रन्। 'दादिभ्यश्छन्दसीति त्रन् वा] अस्त्रविशेषः; लवित्रं; खड्गीकं; 'हँसिया' इति भाषा। 'सशूर्पपिटकाः सर्वे सदात्राङ्कुशतोमराः'—इति महाभारते (५।१५४।७)। [भावे त्रन्] दानम्; 'तद् वा दात्रं महिकीर्तेन्यम्' इति ऋग्वेदे (१। ११६।६) 'तद्दात्रं दानं महि महदतिगम्भीरम्' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। दानकर्तरि त्रि.। 'सोमस्य दात्रमसि'–इति वाजसनेयसंहितायाम् (१०।६)। ५७७

दाधिकम् त्रि. [दध्नि दध्ना वा संस्कृतम्। दध्ना चरति। दधि+'चरति' इति ठक्। दध्ना उपसिक्तम्, 'व्यञ्जनैरुपसिक्ते' इति ठक् वा] दधिसंस्कृतवस्तु; औषधविशेषे क्ली.। 'बीजपूररसोपेतं सर्पिर्दधि चतुर्गुणम्। साधितं दाधिकं नाम गुल्महृत् प्लीहशूलजित्'—इति सुश्रुते। ३२२

दानम् क्ली. [दा दाने, दो अवखण्डने, दैप् शोधने, भावादौ ल्युट्] गजमदः; 'दानं ददत्यपि जलैः सहसाधिरूढे को विद्यमानगतिरासितुमुत्सहेत'—इति माघे (५।३७)। 'दीयते इति दानं धनं गजमदश्च' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। (४१९) देवब्राह्मणादिसम्प्रदानकद्रव्यमोचनं; त्यागः; विहापितम्; उत्सर्जनं; विसर्जनं; विश्राणनं; वितरणं; स्पर्शनं; प्रतिपादनं; प्रादेशनं; निर्वपणम्; अपवर्जनम्; अंहतिः; दायः; प्रदानं; ददनं; विश्रणनं; दत्तिः; अंहती; उत्सर्गः; अतिसर्जनं; स्पर्शः; विसर्गः; क्षणनं; प्रदेशनम्। सम्प्रदानस्वत्वापादकद्रव्यत्यागो दानम्; 'अर्थानामुदिते पात्रे श्रद्धया प्रतिपादनम्। दानमित्यभिनिर्दिष्टं व्याख्यानं तस्य वक्ष्यते।' 'दाता प्रतिग्रहीता च श्रद्धादेयं च धर्मयुक्। देशकालौ च दानानामङ्गान्येतानि षड्विदुः। मनसा पात्रमुद्दिश्य भूमौ तोयं विनिःक्षिपेत्। विद्यते सागरस्यान्तो दानस्यान्तो न विद्यते'—इति शुद्धितत्त्वम्। २१७

दानवः पुं. [दनोरपत्यं, दनु+'तस्यापत्यम्' इति अण्] असुरः; 'नि मायिनो दानवस्य माया अपादयत् पपिवान्त्सुतस्य'—इति ऋग्वेदे (२।११।१०)। 'चत्वारिंशद्दनोः पुत्राः ख्याताः सर्वत्र भारत! तेषां प्रथमजो राजा विप्रचित्तिर्महायशाः। शम्बरो नमुचिश्चैव पुलोमा चेति विश्रुतः। असिलोमा च केशी च दुर्जयश्चैव दानवः' —इति महाभारते (१।६५।२१-२२)। ५

दानशीलः त्रि. [दानं शीलं स्वभावो यस्य, यद्वा दानस्य शीलं सन्ततमनुष्ठानं यस्य] दाता; वदान्यः; वदन्यः; दानशौण्डः; बहुप्रदः; 'यत्फलं दानशीलस्य क्षमाशीलस्य यत्फलम्। यच्च मे फलमाधाने तेन संयुज्यतां भवान्' —इति महाभारते (५।१२२।५)। ३६६

दान्तः त्रि. [दाम्यतीति, दम्+कर्तरि क्त] तपःक्लेशसहः; 'क्लृप्तकेशनखश्मश्रुर्दान्तः शुक्लाम्बरः शुचिः' —इति मनुः (४।३५)। दमितः; 'तथैवाश्वतरीणां च दान्तानां वातरंहसाम्'—इति महाभारते (१। २२२।४६)। [दन्तेन निर्वृत्तम्। दन्त+तेन निर्वृत्तम्' इति अण्] दन्तनिर्मितम्; 'रुचिरैरासनैस्तीर्णैः काञ्चनै-

दारैरपि। अश्मसारमयैर्दान्तैः स्वास्तीर्णैः सोत्तरच्छदैः' —इति महाभारते (५।४६।५)। दाता; पुं. दमनकवृक्षः; शिक्षितवृक्षः; विदर्भराजपुत्रविशेषः; 'तस्मै प्रसन्नो दमनः सभार्याय वरं ददौ। कन्यारत्नं कुमारांश्च त्रीनुदारान् महायशाः। दमयन्तीं दमं दान्तं दमनं च सुवर्चसम्'—इति महाभारते (३।५३।८–९)। स्त्री. अप्सरोविशेषः; 'विद्युता प्रशमी दान्ता विद्योता रतिरेव च'—इति महाभारते (१३।१९।४५)। ३९९

दाम [न्] क्ली.–स्त्री. [दीयते इति। दाञ् दाने, दो अवखण्डने वा+'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति मनिन्] यत्रैकस्मिन् बहुप्रग्रहयुक्ते अनेकगावो बध्यन्ते तत्; सन्दानं; रज्जुः; 'गोप्याददे त्वयि कृतागसि दाम तावत् या ते दशाश्रुकलिलाञ्जनसम्भ्रमाक्षम्। वक्त्रं निलीय भयभावनया स्थितस्य सा मां विमोहयति भीरपि यद्बिभेति'—इति भागवते (१।८।३१)। माला; 'क्षणमलघुविलम्बिपिच्छदाम्नः शिखरशिखाः शिखिशेखरानमुष्य।' दातरि त्रि.। 'यः शम्मस्तुविशम्म ते रायो दामा मतीनाम्' इति ऋग्वेदे (६।४४।२)। 'रायो धनस्य दामा दाता भवति'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। २७७

दामनी स्त्री. [दामैव, दामन्+स्वार्थे प्रज्ञादित्वात् अण्, 'अन्' इति प्रकृतिभावः, 'टिड्ढेति' ङीप्] पशुबन्धनरज्जुः; पशुरज्जुः; 'कीलैरारोप्यमाणैश्च दामनीपाशपाशितैः'—इति हरिवंशे (६५।२४)। २७७

दामा स्त्री. [दामन्+'डाबुभाभ्यामन्यतरस्याम्' इति पक्षे डाप्] दाम; सन्दानं; पशुरज्जुः। २७७

दामोदरः पुं. [दमादिसाधनेनोदारा उत्कृष्टामतिर्या, तया गम्यते प्राप्यते इति दामोदरः। 'दाम्ना दामोदरं विदुः' इति भगवद्वचनाद् यशोदया दाम्नोदरे बद्ध इति वा दामोदरः। 'दामानि लोकनामानि तानि यस्योदरान्तरे। तेन दामोदरो देवः श्रीधरस्तु रमाश्रितः।' इति वा।' इति विष्णुसहस्रनामभाष्ये शङ्करः (५३)। 'देवानां स्वप्रकाशत्वाद् दमाद्दामोदरो विभुः।'] विष्णुः; श्रीकृष्णः; 'दामोदरो भ्रातरमुग्रवीर्यं हलायुधं वाक्यमिदं बभाषे'—इति महाभारते (१।१९०।१९)। 'दाम्ना चैवोदरे बद्ध्वा प्रत्यबन्धदुदूखले। यदि शक्तोऽसि गच्छेति तमुक्त्वा कर्म साकरोत्'—इति हरिवंशे (६३।१४)। 'स च तेनैव नाम्ना तु कृष्णो वै दामबन्धनात्। गोष्ठे दामोदर इति गोपीभिः परिगीयते'—इति हरिवंशे (६३।२६)। शालग्राममूर्तिविशेषः; 'स्थूलो दामोदरो ज्ञेयः सूक्ष्मचक्रो भवेत्तु सः। चक्रे तु मध्यदेशेऽस्य पूजितः सुखदः सदा'—इति पद्मपुराणे। भूतार्हद्विशेषः; कश्मीरस्य नृपविशेषः; 'गतिं प्रवीरसुलभां तस्मिन् सुक्षत्रिये गते। श्रीमान् दामोदरो नाम तत्सूनुरभृत क्षितिम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।६४)। २३

दायः पुं. [दीयते इति, दा दाने+घञ्, 'आतो युक् चिण्कृतोः' इति युक्] यौतुकादिदेयधनम्; 'दायन्तु विविधं तस्मै शृणु मे गदतोऽनघ!' यज्ञार्थं राजभिर्दत्तं महान्तं धनसञ्चयम्'—इति महाभारते (२।५१।१)। विभक्तव्यपितृद्रव्यम्; 'औरसो विभजन् दायं पित्र्यं पञ्चममेव वा'—इति मनुः (९।१६४)। विभागार्हधनमात्रम्; 'संवत्सरं प्रतीक्षेत द्विषन्तीं योषितं पतिः। ऊर्ध्वं संवत्सरात्त्वेनां दायं हृत्वा न संवसेत्–' इति मनुः (९।७७)। [भावे घञ्] दानम्; 'अस्वामिना कृतो यस्तु दायो विक्रय एव वा। अकृतः स तु विज्ञेयो व्यवहारे यथा स्थितिः'—इति मनुः (८।१९९)। कन्यादानकाले जामातृभ्यो व्रतभिक्षादौ ब्राह्मणादिभ्यश्च यद्द्रव्यं दीयते तत्; हरणं; सोल्लुण्ठभाषणं; स्थानं; [दो छेदे+घञ्] खण्डनं; लयः; [ददातीति, दा+'श्याद्व्यधेति' ण] दातरि त्रि.। ८४४

दायादः पुं. [आदत्ते इति। आ+दा+'आतश्चोपसर्गे' इति क। दायस्य आदः ग्राहकः] पुत्रः; 'पुरुणा तु कृतं वाक्यं मानितं च विशेषतः। कनीयान् मम दायादो धृता येन जरा मम'—इति महाभारते (१।८५।२)। सपिण्डः; स्त्री. दायादी=कन्या। ८३६

दाराः पुं. [दारयन्ति भ्रातृबन्धूनिति। दॄ+ 'दारजारौ कर्तरि णिलुक् च' इत्युक्त्या घञ् णिलुक् च] भार्या; 'आपदर्थे धनं रक्षेद् दारान् रक्षेद् धनैरपि। आत्मानं सततं रक्षेद् दारैरपि धनैरपि'—इति महाभारते (१।१५९।२७)। बहुवचनान्तोऽयं शब्दः। ४९४

दारा स्त्री. [दारयति ज्ञातिबन्धूनिति, दॄ+णिच्+ अच्+टाप्] दाराः; भार्या; 'अप्येकामात्मनो दारां नृणां स्वत्वगृहो यतः'—इति भागवते (७।१४।११)। ४९४

दारकः त्रि. [दारयतीति, दृ+णिच्+ण्वुल् । [दारयति नाशयति जनकस्य पितृणमिति । दृ+णिच्+ण्वुल्] बालकः; 'शर्मिष्ठां मातरञ्चैव तयाचक्षुश्च दारकाः' —इति महाभारते (१।८३।१६) । पुत्रः; 'कस्यैते दारका राजन् देवपुत्रोपमाः शुभाः । वर्चसा रूपतश्चैव सदृशा मे मतास्तव'—इति महाभारते (१।८३।१३) । दारुकः; ग्राम्यशूकरः; भेदकः त्रि. । 'अशेषदुर्नाम-करोगदारकं करोति वृद्धं सहसैव दारकम्'—इति वैद्यके । ५०३

दारदः पुं. [दरदे देशविशेषे भवः । दरद+अण्] दरद-देशोद्भवविषभेदः; पारदः; हिङ्गुलं; समुद्रः । ६४६

दारु क्ली.– पुं. [दीर्यते इति, दृ+'दृसनिजनीति' ञुण्] काष्ठम्; 'शणं तैलं घृतं चैव जतु दारूणि चैव हि । तस्मिन् वेश्मनि सर्वाणि निक्षिपेथाः समन्ततः'—इति महाभारते(१।१४५।११) । क्ली. दृ+ञुण्] देवदारु; पित्तलं; त्रि. शिल्पी; दारकः; दाता । ३००, ३०३

दारुणः त्रि. [दारयतीति, दृ+णिच्+'कृवृदारिभ्य उनन्' इति उनन्] भयहेतुः; 'हाहाकारो महानासीत् सम्प्रहारश्च दारुणः । उत्पपात ततः सिंहो नृपस्योपरि दारुणः'—इति देवीभागवते (५।४।२७) । कठोरः; 'दारुणं देहदमनं सर्वलोकभयङ्करम्'—इति देवीभागवते (१।४।५२) । पुं. चित्रकः; भयानकरसः; विष्णुः; 'सुधन्वा खण्ड-परशुर्दारुणो द्रविणप्रदः'—इति महाभारते (१३।१४९। ७४) । ७०५

दारुहस्तकः पुं. [हस्त इव प्रतिकृतिः । 'इवे प्रतिकृतौ' इति कन्, दारुणो हस्तकः] काष्ठनिर्मितहस्तः; तर्द्दूः ३१९

दार्वाघाटः पुं. [दारु काष्ठम् आहन्तीति । आ+हन्+ 'दारावाहनोऽणन्तस्य च टः संज्ञायाम्' इत्युक्त्या अण् टश्चान्तादेशः] सारसः; शतपत्रकपक्षी (७९५) ; 'दार्वा-घाटमुखश्चापि चासवक्त्राश्च भारत !'—इति महा-भारते (१७।७।१८) । २४४

दार्वाघातः पुं. [दारुणि आघातो यस्मात्] दार्वाघाट-पक्षी । ७९५

दावः पुं. [दुनोति उपतापयतीति । दु+'दुन्योरनुपसर्गे' इति ण] वनवह्निः; 'उत्सृज्य दमयन्तीं तु नलो राजा विशांपते ! ददर्श दावं दह्यन्तं महान्तं गहने वने'—इति महाभारते (३।६६।१) । वनम् (७९९); 'इदमिन्द्रः सदा दावं खाण्डवंपरिरक्षति'—इति महाभारते (१।२२४।६) । अग्निः; उपतापः । ७०

दाशार्हः पुं. [दाश् दाने+भावे घञ । दाशं दानमर्हतीति । अर्ह्+अच्] विष्णुः; 'विजयो जयः सत्यसन्धो दाशार्हः सात्वतां पतिः'—इति महाभारते (१३।१४९।६७) । दशार्हदेशजश्च । २२

दासः पुं. [दसतीति, दसि+'दंसेष्टटनौ न आत्' इति ट, नकारस्य चाकारः । दास्यते दीयते भृतिमूल्यादिकं यस्मै सः] भृत्यः; दासेरः; दासेयः; गोप्यकः; चेटकः; नियोज्यः; किङ्करः; प्रैष्यः; भुजिष्यः; परिचारकः; प्रेष्यः; प्रेषः; प्रैषः; परिकर्मा; परिचरः; सहायः; उपस्थाता; सेवकः; अभिसरः; अनुगः । धीवरः (५९४); शूद्रः; 'यो दासं वर्णमधरं गुहाकः'—इति ऋग्वेदे (२।१२।४) । ज्ञातात्मा; दानपात्रं; शूद्राणां नामान्तप्रयोज्यपद्धतिविशेषः; 'शर्मान्तं ब्राह्मणस्य स्याद वर्मान्तं क्षत्रियस्य च । गुप्तदासात्मकं नाम प्रशस्तं वैश्यशूद्रयोः'—इत्युद्वाहतत्त्वम् । ३६५

दासी स्त्री. [दासति ददात्यात्मानमिति । दास्+अच् । गौरादित्वाद् ङीष्] भुजिष्या; कर्मकरी; 'न गता च वधूस्तत्र प्रेष्या संप्रेषिता तया । तस्यां च विदुरो जातो दास्यां धर्मांशतः शुभः'—इति देवीभागवते(१।२०।७२) काकजङ्घा; नीलाम्लानः; नीलझिण्टी; पीतझिण्टी; वेदी; [दास+ङीप्] शूद्रपत्नी; कैवर्तपत्नी; नदीभेदः; 'सुरसां तमसां दासीं सामान्यां वरणामसीम्'—इति महाभारते (६।९।३१) । ४९२

दासीसुतः पुं. [दास्याः सुतः] दासीपुत्रः; गोप्यः । ५०१

दासेरकः पुं. [दास+ढ्रक्, दासेर+स्वार्थे कन्] उष्ट्रः; 'दासेरकः सपदि संवलितं निषादैर्विप्रं पुरा पतगराडिव निर्जगार'—इति माघे (५।६६) । दासीसुतः (३६५); जातिभेदः; 'दशार्णकाः प्रयागाश्च दासेरकगणैः सह'— इति महाभारते (६।४७।४६) । २८०

दिक् [श्] स्त्री. दिशति अवकाशं ददाति या । दिश्+ 'ऋत्विग्दधृगिति' क्विन्प्रत्ययेन साधुः] पूर्वपश्चिम-दक्षिणोत्तरादिरूपा; ककुर्; काष्ठा; आशा; हरित्; निदेशिनी; दिशा; गौः; आता; उपरा; आष्ठा; द्योमः । 'कृत्वैवमवधिं तस्मादिदं पूर्वञ्च पश्चिमम् ।

इति देशो निदिश्येत यया सा दिगिति स्मृता।' सा दशधा, यथा–पूर्वा १, आग्नेयी २, दक्षिणा ३, नैर्ऋती ४, पश्चिमा ५, वायवी ६, उत्तरा, ७, ऐशानी ८, ऊर्ध्वम् ९, अधः १०। १००

दिक्पालः पुं. [दिशः पालयतीति। दिश्+पालि+अण्] पूर्वादिदशदिगीशान्यतमः, यथा 'पूर्वस्यां दिशि इन्द्रः, अग्निकोणे वह्निः, दक्षिणस्यां दिशि यमः, नैर्ऋतकोणे निर्ऋतिः, पश्चिमस्यां दिशि वरुणः, वायुकोणे मरुत्, उत्तरस्यां दिशि कुबेरः, ईशानकोणे ईशः, ऊर्ध्वदिशि ब्रह्मा, अधोदिशि अनन्तः।' इति पुराणम्। यथा पद्मपुराणे—'यत्रार्चयन्ति विधिना दिक्पालादींस्तु कर्मिणः। तत्र प्रपूजयेदेनं विधिं भागवतं शुकम्।' १००

दिग्गजः पुं. [दिशो गजः] दिग्हस्ती। एते क्रमेण पूर्वाद्यष्टदिशां हस्तिनः; 'ऐरावतः पुण्डरीको वामनः कुमुदोऽञ्जनः। पुष्पदन्तः सार्वभौमः सुप्रतीकश्च दिग्गजाः'—इत्यमरः। १०४

दिग्वासाः [स्] पुं. [दिगेव वासो वस्त्रं यस्य] दिगम्बरः; क्षपणः; श्रमणः। शिवः; 'गणकर्ता गणपतिर्दिग्वासाः काम एव च'—इति महाभारते (१३।१७।४१)। नग्ने त्रि.। 'स्नात्वा तु विप्रो दिग्वासाः प्राणायामेन शुध्यति'—इति मनुः (११।२०२)। ३४५

दितिः स्त्री. [दो अवखण्डने+कर्तरि क्तिच्प्रत्ययः] दैत्यमाता; सा दक्षकन्या, 'अदितिर्दितिर्दनुः काला दनायुः सिंहिका तथा'—इति महाभारते(१।६५।१२)। इयं कश्यपपत्नी च। [दो+भावे क्तिन्] खण्डनं; पुं. राजविशेषः; त्रि. दाता। 'राये च नः स्वपत्याय देव दितिं च रास्वादितिमुरुष्य'—इति ऋग्वेदे(४।२।११) 'दितिं दातारं च रास्व देहि' इति तद्भाष्ये। ११९

दिधिषुः स्त्री. [दिधिं धैर्यं स्यतीति, षो+बाहुलकात् कु। यद्वा दिधिषूम् आत्मन इच्छतीति, 'सुप आत्मनः क्यच्', क्विप्, बाहुलकात् ह्रस्वः] द्विरूढा स्त्री; पुं. द्विरूढापतिः; गर्भाधानकर्ता; 'हस्तग्राभस्य दिधिषोस्तवेदं पत्युर्जनित्वमभिसंबभूय'—इति ऋग्वेदे (१०।१८।८)। 'दिधिषोगर्भस्य निधातुः' इति तद्भाष्ये। 'ब्राह्मणी वीक्ष्य दिधिषुं पुरुषादेन भक्षितम्। शोचन्त्यात्मानमुर्वीशमशपत् कुपिता सती'—इति भागवते (९।९।२५)। त्रि. धारकः; 'अश्वासो न ये ज्येष्ठास आशवो दिधिषवो न रथ्यः सुदानवः'— इति ऋग्वेदे (१०।७८।५)। 'तथा दिधिषवो न वसूनां धारका इव' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ४८५

दिधिषूः स्त्री. [दधाति पापं, यद्वा दिधिं धैर्यम् इन्द्रियदौर्बल्यात् स्यति त्यजतीति। दा वा सो+'अन्दूदृन्भूजम्ब्वति' कू प्रत्ययेन साधुः] द्विरूढा; वारद्वयविवाहिता स्त्री; दिधीषूः; पुनर्भूः; दिधिषुः; विवाहितायां कनिष्ठायां सत्याम् अविवाहिता ज्येष्ठा भगिनी; 'ज्येष्ठायां विद्यमानायां कन्यायामुह्यतेऽनुजा। सा चाग्रे दिधिषूर्ज्ञेया पूर्वा च दिधिषूः स्मृताः'—इत्युद्वाहतत्त्वे। त्रि. धारकः; 'दधन्नृतं धनयन्नस्य धीतिमादिदर्यो दिधिष्वो विभृत्राः'—इति ऋग्वेदे (१।७१।३)। ['दिधीषूः' इति दीर्घमध्योऽपि]। ४८५

दिनम् क्ली. [द्यति खण्डयति महाकालमिति। दो अवखण्डने+'बहुलमन्यत्रापि' इति इनच्] कालविशेषः; घस्रः; अहः; दिवसः; वासरः; भास्वरः; दिवा; वारः; अंशकः; द्यु; अंशकम्; 'दिनेषु गच्छत्सु नितान्तपीवरं तदीयमानीलमुखं स्तनद्वयम्'—रघुवंशे (३।८)। तत्तु मनुष्याणां षष्टिदण्डात्मकम्। पितॄणां गौणचान्द्रमासात्मकम्। देवासुराणां वत्सरात्मकम्। ब्रह्मणो द्विव्यद्विसहस्रयुगात्मकम्। मनुष्यमानेन ब्रह्मणो दिनस्य संख्या ८,६४०,०००,०००। सूर्यकिरणावच्छिन्नकालः; वस्तोः; द्युः; भानुः; वासरं; स्वसराणि; घ्रंसः; घर्मः; घृणः; दिवेदिवे; द्यविद्यवि; सिंहकन्यातुलावृश्चिककुम्भमीनलग्नानि; 'अजगोपतियुग्मश्च कर्किधन्विमृगास्तथा। निशासंज्ञाः स्मृताश्चैते शेषाश्चान्ये दिनात्मकाः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। १०६

दिनकरः पुं. [करोतीति, कृ+अच्। दिनस्य करः] सूर्यः; 'दिनकरपरितापात् क्षीणतोयाः समन्तात्, विदधति भयमुच्चैर्वीक्षमाणा वनान्ताः'—इति ऋतुसंहारे (१।२२)। १५

दिनकरात्मजा स्त्री. [दिनकरस्य सूर्यस्य आत्मजा कन्या] यमुना। ६७५

दिनप्रणीः पुं. [दिनं प्रणयतीति। प्र+नी+क्विप्] सूर्यः; अर्कवृक्षः सूर्यपर्यायत्वात्। ३५

दिनमणिः पुं. [दिनस्य मणिरिव] सूर्यः; 'दिनमणिमण्डलमण्डन! भवखण्डन! मुनिजनमानसहंस!

जय जयदेव हरे!'—इति गीतगोविन्दे (११।८)। अर्कवृक्षः; सूर्यपर्यायत्वात्। ३५

दिवसः पुं.– क्ली. [दीव्यन्त्यत्रेति। दिव्+'दिवः कित्' इति असच् स च कित्] दिनम्। 'द्राघयता दिवसानि त्वदीयविरहेण तीव्रतापेन। ग्रीष्मेणेव नलिन्या जीवनमल्पीकृतं तस्याः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (२७८)। १०६

दिवसमुखम् क्ली. [दिवसस्य दिनस्य मुखम्] प्रभातं; प्रातः। १०६

दिवस्पतिः पुं. [दिवः पतिः। अलुक्समासः] इन्द्रः; 'इन्द्राणीमानयिष्यामो यथेच्छसि दिवस्पते!'—इति महाभारते (५।१२।९)। ५४

दिवा अव्य. [दीव्यन्त्यत्र, बाहुलकात् काप्रत्ययः] दिनम्; 'क्षणं लवा मुहूर्ताश्च दिवा रात्रिस्तथैव च'—इति महाभारते (२।११।३४)। १०६

दिवा [न्] पुं. [दीव्यत्यस्मिन्निति। दिव्+'कनिन् युवृषीति' सूत्रे बहुलवचनात् केवलादपि कनिन्] दिनम्। १०६

दिवाकीर्तिः पुं. [दिवा दिवसे एव कीर्तिर्यस्य, रात्रौ क्षौरकर्मनिषेधात्] नापितः; चण्डालः (८।४)। 'रात्रौ न विचरेयुस्ते ग्रामेषु नगरेषु च। दिवा चरेयुः कार्यार्थं चिह्निता राजशासनैः'–इति मनुः (१०।५४)। 'दिवाकीर्तिमुदक्यां च पतितं सूतिकां तथा। शवन्तत्स्पृष्टिनं चैव स्पृष्ट्वा स्नानेन शुध्यति'—इति मनुः (५।८५)। 'दीक्षितो वा दिवाकीर्तिः पण्डितो वाप्यपण्डितः। तुल्यो मे मोक्षदीक्षायां सम्प्राप्य मणिकर्णिकाम्'—इति काशीखण्डे (७९।८७)। उलूकः। ५८९

दिवावसानम् क्ली. [दिवा दिनस्य अवसानम् अन्तः] दिनान्तः; सायम्। १०९

दिव्यम् त्रि. [दिवि भवम्; यत्] दिवि भवं; स्वर्ग्यम् 'दिव्यमालाम्बरधरा स्नाता भूषण भूषिता। पश्यतां सर्वदेवानां ययौ वक्षःस्थलं हरेः'—इति विष्णुपुराणे (१।९।१०४)। मनोज्ञः; पुं. [दिवे वने भवः; दिव्+यत्] यवः; गुग्गुलुः; भावविशेषः; 'शृणु भावत्रयं देवि! दिव्यवीरपशुक्रमात्। दिव्यस्तु देववत् प्रायो वीरश्चोद्धतमानसः। सत्यत्रेतार्द्धपर्यन्तं दिव्यभावविनिर्णयः। त्रेताद्वापरपर्यन्तं वीरभाव इतीरितम्। मद्यं मत्स्यं तथा मांसं मुद्रां मैथुनमेव च। श्मशानसाधनं भद्रे! चितासाधनमेव च। एतत्ते कथितं सर्वं दिव्यवीरमतं प्रिये! दिव्यवीरमतं नास्ति कलिकाले सुलोचने'—इति कालीविलासतन्त्रे। नायकभेदः; सात्वतस्य पुत्राणामन्यतमः; 'भजमानो भजिर्दिव्यो वृष्टिदेवावृधोऽन्धकः। सात्वतस्य सुताः सप्त महाभोजश्च मारिष!'—इति भागवते (९।२४।६)। क्ली. लवङ्गं; हरिचन्दनं; शपथः; गङ्गाजलादिस्पर्शपूर्वकशपथस्तत्र मिथ्या कथने दोषश्च। ८४०

दिष्टः पुं. [दिशतीति, दिश्+संज्ञायां क्त] कालः; वैवस्वतमनोः पुत्रविशेषः; 'नरिष्यन्तोऽथ नाभागः सप्तमं दिष्ट उच्यते'—इति भागवते (८।१३।२)। दारुहरिद्रा; क्ली. [दिशति इष्टानिष्टफलं ददातीति। दिश्+'क्तिच्क्तौ च संज्ञायाम्' इति क्त] भाग्यम्; 'ततस्ते निधनं प्राप्ताः सर्वे ससुतबान्धवाः। न दिष्टमत्यतिक्रान्तुं शक्यं बुद्ध्या बलेन वा'—इति महाभारते (१४।५३।१६)। [दिश्+कर्मणि क्त] त्रि. उपदिष्टः; कथितः; 'गाधेयदिष्टं विरसं रसन्तं, रामोऽपि मायाचनमस्त्रचञ्चुः'—इति भट्टिः (२।३२)। १०५

दिष्टान्तः पुं. [दिष्टस्य भाग्यस्य अन्तो यत्र] मरणम्; 'मोक्षयित्वा तु भुजगान् सर्पसत्राद् द्विजोत्तमः। जगाम काले धर्मात्मा दिष्टान्तं पुत्रपौत्रवान्'—इति महाभारते (१।५८।२७)। ६२८

दिष्ट्या अव्य. [दिशतीति, सम्पदादित्वाद् भावे क्विप्। दिशं देशनं स्त्यायति। स्त्यै+क्विप्, ष्टुत्वम्। संज्ञापूर्वकत्वात् जश्त्वं न। यद्वा दिशतीति, दिश्+'अघ्न्यादिभ्यश्चेति' यक् प्रत्ययेन साधुः] आनन्दः; भाग्येन; 'दिष्ट्याम्ब! ते कुक्षिगतः परः पुमान्'—इति भागवतम्। ८७२

दीक्षितः त्रि. [दीक्ष्+कर्तरि क्त। यद्वा दीक्षा सञ्जाता अस्येति, इतच्] सोमपानविशिष्टयागकर्ता; गुरुमुखाद् गृहीतमन्त्रः; 'अदीक्षिता ये कुर्वन्ति जपपूजादिकाः क्रियाः। न भवन्ति प्रिये! तेषां शिलायामुप्तबीजवत्। देवि! दीक्षाविहीनस्य न सिद्धिर्न च सद्गतिः। तस्मात् सर्वप्रयत्नेन गुरुणा दीक्षितो भवेत्। अदीक्षितोऽपि मरणे रौरवं नरकं व्रजेत्'—इति तन्त्रसारः। ४२०

दीदिविः पुं.– क्ली. [दीव्यन्त्यनेनेति। दिव्+'दिवो

द्वे दोर्घश्चाभ्यासस्य' इति क्विन् अभ्यासस्य दीर्घश्च] अन्नम् [दीव्यतीति, क्विन्] पुं. बृहस्पतिः; स्वर्गः; भक्ष्ये त्रि.। उदितः; पुनःपुनर्द्योतकः; 'राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिविम्'—इति ऋग्वेदे (१।१।८)। 'दीदिविं पौनःपुन्येन भृशं वा द्योतकम्'–इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ३१९

दीधितिः स्त्री. [दीधीते दीप्यते इति। दीधी+संज्ञायां क्तिच्, इट्, 'यीवर्णयोर्दीधीवेव्योः' इति अन्त्यस्य लोपः] किरणः; 'पुपोष वृद्धिं हरिदश्वदीधितेरनुप्रवेशादिव बालचन्द्रमाः'—इति रघुवंशे (३।२२)। ३८

दीप्तिः स्त्री. [दीप्+भावे क्तिन्] किरणः। ३८

दीप्तिः स्त्री. [दीप्+क्तिन्] दीपनं; प्रभा; रुक्; रुचिः; त्विट्; भा; भाः; छविः; द्युतिः; रोचिः; शोचिः; बाणवेगस्य तीव्रता (४७०); स्त्रीणामयत्नजगुणाः; 'कान्तिरेव वयोभोगदेशकालगुणादिभिः। उद्दीपितातिविस्तारं प्राप्ता चेद्दीप्तिरुच्यते'–इत्युज्ज्वलनीलमणिः। 'कान्तिरेवातिविस्तीर्णा दीप्तिरित्यभिधीयते'—इति साहित्यदर्पणे (३।१३१)। लाक्षा; कांस्यम्। ६३

दीर्घम् त्रि. [दृणातीति, दॄ विदारणे+बाहुलकाद् घञ्] आयतम्; 'दीर्घोच्छ्वासं समधिकतरोच्छ्वासिना दूरवर्ती, सङ्कल्पैस्ते विशति विधिना वैरिणा रुद्धमार्गः'—इति मेघदूते (१०३)। पुं. लताशालवृक्षः; 'ताक्ष्योऽश्वकर्णः कुशिको बल्यो दीर्घो लताद्रुमः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। इत्कटः; रामशरः; उष्ट्रः; पञ्चमषष्ठसप्तमाष्टमराशयः, यथा—'वृश्चिककन्यामृगपतिवणिजो दीर्घाः'—इति ज्योतिषतत्त्वम्। द्विमात्रवर्णः; यथा—आ, ई, ऊ, ॠ, ए, ऐ, ओ, औ। गुरुवर्णः। ७५१

दीर्घकालः पुं.—चिराय; चिररात्राय। ८७३

दीर्घदृष्टिः पुं. [दीर्घा दृष्टिर्दर्शनं यस्य] दीर्घदर्शी; दूरदर्शी। ३७६

दीर्घनिद्रा स्त्री. [दीर्घा निद्रेति नित्यकर्मधारयः] मृत्युः; महानिद्रा। 'सोऽद्य मत्कार्मुकाक्षेपविदीपितदिगन्तरैः। शरैर्विभिन्नसर्वाङ्गो दीर्घनिद्रां प्रवेक्ष्यति'—इति मार्कण्डेये (७।१३)। ६२८

दीर्घपृष्ठः पुं. [दीर्घम् आयतं पृष्ठं यस्य] सर्पः। ६४१

दीर्घसूत्रः त्रि. [दीर्घेण बहुकालेन सूत्रं कार्यारम्भो यस्य] चिरक्रियः; 'अदीर्घसूत्रश्च भवेत् सर्वकर्मसु पार्थिवः। दीर्घसूत्रस्य नृपतेः कर्महानिर्ध्रुवं भवेत्। रागे द्वेषे च कामे च द्रोहे पापे च कर्मणि। अप्रिये चैव कर्तव्ये दीर्घसूत्रश्च शस्यते'—इति मत्स्यपुराणम्। आयततन्तुकम्; 'मेखलागुणविलग्नमसूयां दीर्घसूत्रमकरोत् परिधानम्'—इति माघे (१०।६१)। क्ली. विस्तृते तन्तौ। ३८३

दीर्घसूत्री [न्] त्रि. [दीर्घसूत्रं बहुकालं व्याप्य कर्मारम्भोऽस्त्यस्येति। दीर्घसूत्र+इनि] दीर्घसूत्रः; 'विषादी दीर्घसूत्री च कर्ता तामस उच्यते'—इति भगवद्गीतायाम् (१८।२८)। ३८३

दीर्घिका स्त्री. [दीर्घेव। दीर्घा+संज्ञायां कन्। टापि अत इत्वम्] त्रिशतधनुःपरिमितजलाशयः; वापी; 'वनैरिदानीं महिषैस्तदम्भः शृङ्गाहतं क्रोशति दीर्घिकाणाम्'—इति रघुवंशे (१६।१३)। हिङ्गुपत्री। ६७६

दुःखम् क्ली. [दुर् दुष्टं खनतीति। खन्+ड। यद्वा दुःखयतीति। दुःख+पचाद्यच्] पीडा; बाधा; व्यथा; अमानस्यं; प्रसूतिजं; कष्टं; कृच्छ्रम्; आभीलम्; अर्तिः; आर्तिः; पीडनम्; आबाधा; बाधनम्; आमनस्यम्; आमानस्यं; विबाधनं; पीडितं; विहेठनम्; 'सुखं दुःखं च हर्षं च शोकं मङ्गलमालयम्। मया दत्तं च तत्त्वं च योगिनामपि दुर्लभम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते। संसारः; रोगः; 'भेकाभः पीड्यते दुःखैः शोणितक्षयसम्भवैः'—इति भावप्रकाशः, 'दुःखैः रोगैः' इति तट्टीका। दुःखदानि यथा—'पारतन्त्र्यम्, आधिः, व्याधिः, मानच्युतिः, शत्रुः, कुभार्या,नैःस्वम्,कुग्रामवासः, कुस्वामिसेवनम्, बहुकन्याः, वृद्धत्वम्, परगृहवासः, वर्षाप्रवासः, भार्याद्वयम्, कुभृत्यः, दुर्हलकरणकृषिः'–इति कविकल्पलता। तद्विशिष्टे त्रि., 'सुसुखा न च दुःखा सा न शीता न च घर्मदा'–इति हरिवंशे (२२९।४९)। ६२६

दुःखभावनम् क्ली. [दुःखस्य भावनम् अनुभावकम्] शोकः। ८७५

दुःस्थः त्रि. [दुर्दुःखेन दुष्टं वा तिष्ठतीति। स्था+क] मूर्खः; दुर्गतः; लुब्धः; दुःखेन तिष्ठति यः; 'त्वा दुःस्थमूनपदमात्मनि पौरुषेण, सम्पादयन् यदुषु रम्यमबिभ्रदङ्गम्'—इति भागवते (१।१६।३४)। ३४८

दुःस्फोटः पुं. [दुर्दुष्टं स्फोटयतीति। स्फोटि+अच्]

शस्त्रभेदः। ४७६

दुकूलम् क्ली. [दुष्टं कूलात आवृणोतीति। कूल्+'इगु-पधज्ञाप्रीकिरः कः' इति क। पृषोदरादित्वात् साधुः। यद्वा दु+'खजिपिञ्जादिभ्य उरोलचौ' इति ऊलच्। धातोः कुक् च] क्षौमवस्त्रम्; 'दुकूलवासाः स वधू-समीपं निन्ये विनीतैरवरोधरक्षैः'—इति रघुवंशे (७।१९)। सूक्ष्मवस्त्रम्। ५४९

दुगूलम् क्ली. [दुकूल+पृषोदरादित्वात् कस्य गः] दुकूलं; पट्टवस्त्रम्। ५४९

दुग्धम् क्ली. [दुह्यते स्मेति, दुह्+कर्मणि क्त] स्त्रीजाति-स्तननिःसृतद्रवद्रव्यविशेषः; क्षीरं; पीयूषम्; ऊधस्यं; स्तन्यं; पयः; अमृतं; बालजीवनम्; कत्तृणम्; 'कत्तृणं ध्यामकं दुग्धम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। त्रि. प्रपूरितः; कृतदोहः; 'तेनेयं गौर्महाराज! दुग्धा सस्यानि भारत!' [दुह्+भावे क्त] दोहने क्ली.। २७४

दुग्धिका स्त्री. [दुग्धं निर्यासो बहुलतया विद्यते यस्याः। दुग्ध+ठन्+टाप्] वृक्षविशेषः; स्वादुपर्णी; क्षीरावी; क्षीरिणी; दुग्धी; क्षीरी; क्षीरात्मिका; वृक्षभेदः; उत्तमा; युग्मफला; उत्तमफलिनी; गन्धिका। २०९

दुण्डुभः पुं. [द्रोडति मज्जतीति, द्रुड् मज्जने+'उभः कित् कुकिद्रुडिभ्यां कन्णुनौ रलोपश्च' इति उभ, णुन् रलोपश्च] डुण्डुभसर्पः। 'शरमीनां महारौद्रां प्रासशक्त्युग्रदुण्डुभाम्। शोणितौघवहां घोरां द्रौणिः प्रावर्तयन्नदीम्'— इति महाभारते (६।१५४।१७०)। ६४३

दुन्दमः पुं. [दुन्द इत्यव्यक्तशब्देन मणति शब्दायते इति। मण् शब्दे+ड] दुन्दुभिः। ९८

दुन्दुभिः पुं. [दुन्दु इत्यव्यक्तशब्देन भातीति। दुन्दु+भा+बाहुलकात् कि] बृहड्ढक्का; भेरी; आनकः; 'आकाशे दुन्दुभीनां च बभूव तुमुलः स्वनः'—इति महाभारते (१।१२३।४६)। वरुणः; दैत्यभेद; दानव-विशेषः; 'अभवन् दनुपुत्राश्च शतं तीव्रपराक्रमाः। शङ्कुकर्णौ विदारश्च गवेष्ठो दुन्दुभिस्तथा'—इति हरिवंशे (३।८१)। रक्षोभेदः; वाद्यभेदः; विषम्। कुकुरवंशीयस्य अन्धकस्य पुत्रः; 'अन्धकाद् दुन्दुभिस्त-स्मादविद्योतः पुनर्वसुः'—इति भागवते (९।२४।२०)। क्रौञ्चद्वीपाधिपतेर्द्युतिमतः पुत्राणामन्यतमः; क्रौञ्च-द्वीपस्य देशभेदः; 'मुनिश्च दुन्दुभिश्चैव सुता द्युतिमतस्तु वै। तेषां च नामभिर्देशाः क्रौञ्चद्वीपाश्रयाः स्मृताः'—इति ब्रह्माण्डे ३६ अध्याये। 'मुनेस्तु वै मुनिर्देशो दुन्दुभेर्दुन्दुभिः स्मृतः।' पर्वतविशेषः; 'स एव दुन्दुभिर्नाम श्यामपर्वतसन्निभः। शब्दमृत्यः पुरा तस्मिन् दुन्दुभि-स्ताडितः सुरैः'—इति मत्स्यपुराणे (१२१।१३)। असुरविशेषः; 'मायावी नाम तेजस्वी पूर्वजो दुन्दुभेः सुतः। तेन तस्य महद्वैरं बलिनः स्त्रीकृतं पुरा'—इति रामायणे (४।९।४)। स्त्री. अक्षः; पाशकः; अक्ष-बिन्दुत्रिकद्वयम्; बिन्द्वन्वितचतुष्पार्श्वस्वर्णशृङ्गादि-मयद्यूतोपकरणम्। ९८

दुराचारः पुं. [आचर्यते इति, भावे घञ्। दुर्दुष्टः आचारः इति प्रादिसमासः] विरुद्धाचरणम्; 'प्राप्ते कलियुगे घोरे नराः पुण्यविवर्जिताः। दुराचाररताः सर्वे सत्य-वार्तापराङ्मुखाः'—इति अध्यात्मरामायणे। त्रि. [दुष्ट आचारो यस्य] निन्दिताचारवान्; 'महापातक-युक्तस्त्वं दुराचारोऽतिगर्हितः'—इति देवीभागवते (१।११।१६)। ४०४

दुरितम् क्ली. [इण्+भावे क्त। दुष्टमितं गमनं नरकादि-दुर्गतिप्राप्तिर्यस्मात्] पापम्; 'दुरितैरपि कर्तुमात्मसात् प्रयतन्ते नृपसूनवो हि यत्'—इति रघुवंशे (८।२)। तद्वति त्रि.। ६२७

दुरोदरम् क्ली. [दुर्दुष्टमासमन्तादुदरं यस्य। दुष्टमुदरमस्य वा। पृषोदरादित्वात् साधुः] द्यूतभेदः; पाशकक्रीडा; 'व्यर्थं किं तनुषे दुरोदरमिदं न स्वापतेयं तव'—इति वक्रोक्तिपञ्चाशिका (२६)। पुं. द्यूतकृत्; 'दुरोदरा विहिता ये तु तत्र महात्मना धृतराष्ट्रेण राज्ञा'—इति महाभारते (२।५६।९)। पणः। ३८८

दुर्गतः त्रि. [दुर् दुरवस्थां गच्छति स्मेति। दुर्+गम् + 'गत्यर्थाकर्मकश्लिषेति' कर्तरि क्त] दरिद्रः; 'दुर्गतगृहिणी तनये करुणार्द्रा प्रियतमे च रागमयी। मुग्धा रताभियोगं न मन्यते न प्रतिक्षिपति'—इति आर्यासप्तशत्याम् (२९६)। ३४८

दुर्गतिः स्त्री. [दुष्टा क्लेशदायिनी गतिः] नरकः; 'कृत्वा यज्ञं विधानेन दत्त्वा पुण्यं मयार्जितम्। समुद्धर महाराज! पितरं दुर्गतिं गतम्'—इति देवीभागवते (३।१२।६८)।

दारिद्र्यम्; 'कथं भवान् दुर्गतिमीदृशीं गतो नरेन्द्र तद् ब्रूहि किमेतदीदृशम्'—इति महाभारते (१३।७०।८) ६२५

दुर्गमार्गः पुं. [दुःखेन गम्यते इति दुर्गः, दुर्गमः। स चासौ मार्गः] कान्तारम्। ८१६

दुर्गा स्त्री. [दुर्दुःखेन गम्यते प्राप्यतेऽसौ। गम्+'अन्यत्रापि दृश्यते' इति ड। दुर्दुःखेन गम्यतेऽस्यामिति वा। दुर्+गम्+'सुदुरोरधिकरणे' इत्युक्त्या ड+टाप्] हिमालयकन्या; उमा; कात्यायनी; गौरी; काली; हैमवती; ईश्वरी; शिवा; भवानी; रुद्राणी; शर्वाणी; सर्वमङ्गला; अपर्णा; पार्वती; मृडानी; चण्डिका; अम्बिका; नीली; अपराजिता; श्यामापक्षी; नववर्षाकुमारी; 'नववर्षा भवे दुर्गा सुभद्रा दशवार्षिकी'—इति देवीभागवते (३।२६।४३)। अस्याः पूजा फलमाह—'दुःखदारिद्र्यनाशाय संग्रामे विजयाय च। क्रूरशत्रुविनाशार्थं तथोग्रकर्मसाधने। दुर्गां च पूजयेद्भक्त्या परलोकसुखाय च'—इति देवीभागवते (३।२६।५०)। अस्याः पूजामन्त्रः—'दुर्गात् त्रायति भक्तं या सदा दुर्गार्तिनाशिनी। दुर्ज्ञेया सर्वदेवानां तां दुर्गां पूजयाम्यहम्'- इति देवीभागवते (३।२६।५०)। १६

दुर्जनः त्रि. [दुर्दुष्टो जनः। 'कुगतिप्रादयः' इति समासः] खलः 'दुर्जनः प्रियवादी च नैतद्विश्वासकारणम्। मधु तिष्ठति जिह्वाग्रे हृदये तु हलाहलम्।' 'दुर्जनः परिहर्तव्यो विद्ययालङ्कृतोऽपि सः। मणिना भूषितः सर्पः किमसौ न भयङ्करः'—इति चाणक्यशतके (२४।२५)। ३४६

दुर्दिनम् क्ली. [दुर्दुष्टं दिनम्] मेघाच्छन्नदिनम्; 'तुमुलं दुर्दिनं चासीत् सविद्युत्स्तनयित्नुमत्। तद्दुर्दिनतलं भित्त्वा नारदः प्रत्यदृश्यत'—इति हरिवंशे (१६७।१८)। घनान्धकारः; 'यत्रौषधिप्रकाशेन नक्तं दर्शितसञ्चराः। अनभिज्ञास्तमिस्राणां दुर्दिनेष्वभिसारिकाः'—इति कुमारे (६।४३)। वृष्टिः; 'घनान्धकारे वृष्टौ च दुर्दिनं कवयो विदुः।' 'द्विषां विषह्यः काकुत्स्थस्तत्र नाराचदुर्दिनम्। सन्मङ्गलस्नात इव प्रतिपेदे जयश्रियम्'—इति रघुवंशे (४।४१)। कुत्सितदिनम्; 'सुदिनं दुर्दिनं चैव सर्वं कर्मोद्भवे भवेत्। तत्कर्म तपसा साध्यं कर्मणा च शुभाशुभम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते। 'यदच्युतकथालापरसपीयूषवर्जितम्। तद्दिनं दुर्दिनं मन्ये मेघाच्छन्नं न दुर्दिनम्'—इत्युद्भटः। [दुर्दिनं वर्षः घनान्धकारो वा अस्त्यस्येति। अच्] वर्षयुक्ते घनान्धकारविशिष्टे च त्रि., यथा हरिवंशे (६७।६६)। 'सम्प्राप्ते दुर्दिने काले दुर्दिनं भाति वै नभः।' 'जीमूतैश्च दिशः सर्वाश्चक्रे तिमिरदुर्दिनाः'—इति महाभारते (८।९१।२३)। ५९

दुर्मुखः त्रि. [दुर्दुःखजनकं मुखं मुखनिःसृतवचनादिकं यस्य] अप्रियवादी; मुखरः; अबद्धमुखः। अप्रियदर्शनम्; 'चक्रे वसन्तकस्यापि रूपं दन्तुरदुर्मुखम्'—इति कथासरित्सागरे (१२।५२)। पुं. [दुर्निन्दितं मुखं यस्य] वानरविशेषः; 'अयुतेन वृतश्चैव सहस्रेण शतेन च। ततो यूथपतिर्वीरो दुर्मुखो नाम वानरः'—इति रामायणे (४।३९।३३)। नागभेदः; 'कुहरः पुष्पदंष्ट्रश्च दुर्मुखः सुमुखस्तथा'—इति हरिवंशे (३।११४) अश्वः; सर्पः; महिषासुरसेनापतिविशेषः; 'दुर्द्धरं दुर्मुखं चोभौ शरैर्निन्ये यमक्षयम्'—इति मार्कण्डेये (८३।१९)। नृपविशेषः; 'संग्रामजिद्दुर्मुखश्च उग्रसेनश्च वीर्यवान्'—इति महाभारते (२।४।२१)। धृतराष्ट्रस्य पुत्रविशेषः; दुर्मर्षणो दुर्मुखश्च दुष्कर्णः कर्ण एव च'—इति महाभारते (१।११७।३)। राक्षसविशेषः; 'रक्षःपतिस्तदवलोक्य निकुम्भकुम्भधूम्राक्षदुर्मुखसुरान्तनरान्तकादीन्'—इति भागवते (९।१०।१८)। यक्षविशेषः; गणपतेर्गणानामन्यतमः; 'षट्कोणास्त्रिषु षट्सु षड्गजमुखाः पाशाङ्कुशाभीरवान् बिभ्राणाः प्रमदासखाः पृथुमहाशोणाश्ममुञ्जत्विषः। आमोदः पुरतः प्रमोदसुमुखौ तं चाभितो दुर्मुखः, पश्चात्पार्श्वगतोऽस्य विघ्न इति यो यो विघ्नकर्तेति च'—इति महागणपतिस्तोत्रे। वर्षविशेषः; 'तुषधान्यक्षयो देवि ! सर्वसस्यमहार्घता। व्यवहाराश्च नश्यन्ति दुर्मुखे दुर्मुखाः प्रजाः'—इति भविष्यपुराणे। ३७७

दुर्विधः त्रि. [दुर्दुष्टा विधा यस्य] दरिद्रः; खलः; मूर्खः; 'शास्त्रेष्वन्येषु मुख्येषु विद्यमानेषु दुर्विधाः। बुद्धिमान्वीक्षिकीं प्राप्य निरर्थान् प्रवदन्ति ते'—इति रामायणे (२।१०९।३०)। ३४८

दुर्विनीतः पुं. [वि+नी+भावे क्त। दुर्दुष्टं विनीतं विनयो यस्य। यद्वा दुर्+वि+नी+क्त] अविनीताश्वः; शूकलः; अविनीतमात्रे त्रि। 'कुपुत्रोऽपि भवेत्पुंसां हृदयानन्द-

कारकः। दुर्विनीतः कुरूपोऽपि मूर्खोऽपि व्यसनी खलः'—इति पञ्चतन्त्रे (५।१७)। ४४०

दुंविनट्टः पुं. — रागिणीभेदः। १०६ अ

दुलिः स्त्री.[दोलतीति, दुल्+'इगुपधात् कित्' इति इन्] कमठी; कच्छपी; पुं. मुनिविशेषः। ६४६

दुली स्त्री. [दुल्+इन् वा ङीष्] दुलिः; कमठी; कूर्मी; कच्छपी। ६४६

दुश्चर्मा [न्] पुं. [दुष्टं चर्म यस्य] अप्रावृतमेढ्रः; द्विनग्नकः; चण्डः; शिपिविष्टः। यथा 'दुश्चर्मा गुरुतल्पगः'—इति स्मृतिः। चर्मरोगः। ८१७

दुश्च्यवनः पुं.[दुर्दुःखेन च्यवनं बहुकालानन्तरं पतनं यस्य। दुर्दुष्टश्च्यवनः शिवो यस्य। शिवेन अभिभूतत्वात् तथात्वम्। यद्वा दुःसहः च्यवनो मुनिः यस्य] इन्द्रः। अविचाल्ये त्रिः। 'युत्कारेण दुश्च्यवनेनधृष्णुना' इति ऋग्वेदे (१०। १०३।२)। ५२

दुष्कृतम् क्ली. [दुष्टं कृतम्] पापम्; 'गृहादर्था निवर्तन्ते श्मशानादपि बान्धवः। सुकृतं दुष्कृतं लोके गच्छन्तमनुगच्छति। तस्माद्वित्तं समासाद्य दैवाद्वा पौरुषादथ। दद्यात् सम्यग् द्विजातिभ्यः कीर्तनानि च कारयेत्'—इति वह्निपुराणे। ६२७

दुष्कृतिः स्त्री. [दुष्टा कृतिः। प्रादिसमासः] दुष्कर्म; पापं; दुष्कृतम्। ६२७

दुष्टगजः पुं. [दुष्टो गजः] व्यालः; मत्तहस्ती।२२५

दुहिता [ऋ] स्त्री. [दोग्धि विवाह दिकाले धनादिकमाकृष्य गृह्णातीति। यद्वा दोग्धि गाः इति, पुराकाले कन्यासु एव गोदोहनभारस्थितेस्तथात्वम्। दुह्+'नप्तृनेष्टृत्वष्टृहोतृपोतृभ्रातृजामातृमातृपितृदुहितृ' इति तृच्, निपातनाद् गुणाभावः] कन्या; तनुजा। ५०५

दूतिः स्त्री. [दूयते नायकादिवार्ताहरणादिना। दु+बाहुलकात् ति दीर्घश्च] दूती; 'प्रतिकृतिरचनाभ्यो दूतिसन्दर्शिताभ्यः समधिकतररूपाः शुद्धसन्तानकामैः'—इति रघुवंशे (१८।५३)। ४९१

दूती स्त्री. [दूति+'कृदिकारादक्तिनः' वा ङीष्, दूतशब्दाद् वा] दौत्यकर्मणि नियुक्ता स्त्री; स्त्रीपुंसोः सन्देशप्रापिका; सञ्चारिका; दूतिः; दूतीका; दूतिका; दौत्यव्यापार- पारङ्गमा। ४९१

दूरम् त्रि. [दुर्दुःखेनेयते प्राप्यते इति। दुर्+इण्+'दुरीणो लोपश्च' इति रक्, धातोर्लोपश्च] अनिकटम्; असन्निकृष्टं; विप्रकृष्टम्; अनासन्नम्; आके; पराके; पराचैः; आरे; परावतः। 'शरीरस्य गुणानां च दूरमत्यन्तमन्तरम्। शरीरं क्षणविध्वंसि कल्पान्तस्थायिनो गुणाः'—इति हितोपदेशे (१।४३)। ६९३

दूर्वा स्त्री. [दुर्वतेदुर्व्यते वा, दुर्व् हिंसायाम्+अच् घञ् वा। 'उपधायाञ्च' इति दीर्घः] घासविशेषः; शतपर्विका; सहस्रवीर्या; भार्गवी; रुहा; अनन्ता; तिक्तपर्वा; दुर्मरा; बहुवीर्या; हरिता; हरिताली; कच्छरुहा; 'कुशाकारेव दूर्वेयं संस्तीर्णेव च भूरियम्'—इति महाभारते (३।११०।१७)। १९१

दूष्यम् क्ली. [दूष्यते इति, दुष्+णिच्+'अचो यत्' इति यत्, 'दोषो णौ' इति उपधाया ऊत्वम्] वस्त्रगृहं; वस्त्रं; पूयम्; त्रि. दूषणीयः। 'स्त्रीरत्नं दुष्कुलाच्चापि विषादप्यमृतं पिबेत्। अदूष्या हि स्त्रियो रत्नमाप इत्येव धर्मतः'—इति महाभारते (१२।१६५।३२)। निन्द्यः। ४५१

दृक् [श्] स्त्री. [पश्यत्यनेनेति, दृश्+करणे क्विप्] चक्षुः; 'दृशा दग्धं मनसिजं जीवयन्ति दृशैव याः। विरूपाक्षस्य जयिनीस्ताः स्तुमो वामलोचनाः'—इति साहित्यदर्पणे। [भावे क्विप्] दर्शनं; बुद्धिः; 'तां नाध्यगच्छद् दृशमत्र सम्मतां प्रपञ्चनिर्माणविधिर्यया भवेत्'—इति भागवते (२।९।५)। त्रि. [पश्यतीति। दृश्+कर्तरि क्विन्] वीक्षकः; 'यथा सर्वदृशं सर्व आत्मानं येऽस्य हेतवः'—इति भागवते (४।२२।९)। ज्ञाता। ५१९

दृक्श्रुतिः पुं. [दृशौ एव श्रुती कर्णौ यस्य] सर्पः। ६४०

दृढः त्रि. [दृह्+क्त। निपातनात् साधुः] कठिनः; प्रगाढः (७१८); 'तदाकाशे श्रुतं ताभ्यां वाग्बीजं मनोहरम्। गृहीतं च ततस्ताभ्यां तस्याभ्यासो दृढः कृतः'—इति देवीभागवते। स्थूलः; अतिशयः; बलवान्; पुं. रूपकभेदः। 'दृढः प्रौढोऽथ खचरो विभवश्चतुरक्रमः। निशारुकः प्रतितालः कथिताः सप्तरूपकाः।' तल्लक्षणम्—'दृढाख्यः स्याल्लघुद्वन्द्वं ताले हंसलीलके। चतुर्दशाक्षरैर्युक्तः शृङ्गारे परिकीर्तितः'—इति सङ्गीतदामोदरः। त्रयोदशमनोः रौच्यस्य पुत्रविशेषः; 'सुनेत्रः क्षत्रवृद्धिश्च सुतपा निर्भयो दृढ। रौच्यस्यैते मनोः

पुत्रा अन्तरे तु त्रयोदशे'—इति हरिवंशे (७।८३)। ३४२

दृतिः पुं. [दृणातीति, दृ विदारणे+'दृणातेर्ह्रस्वश्च' इति ति ह्रस्वश्च] चर्मप्रसेविका; चर्मपुटकः; स्वल्लः; 'इन्द्रियाणां तु सर्वेषां यद्येकं क्षरतीन्द्रियम्। तेनास्य क्षरति प्रज्ञा दृतेः पात्रादिवोदकम्'–इति मनुः (२।९९)। मत्स्यः; गलकम्बलः; 'सवत्सां पीवरीं दत्त्वा दृतिकण्ठामलङ्कृताम्। वैश्वदेवमसंबाधं स्थानं श्रेष्ठं प्रपद्यते' —इति महाभारते (१३।७९।१८)। 'दृतिकण्ठां प्रलम्बगलकम्बलाम्'—इति तट्टीकायां नीलकण्ठः। मेघः; 'दिव्या आपो अभि यदेवमायन् दृतिं न शुष्कं सरसी शयानम्'—इति ऋग्वेदे (७।१०३।२)। ७६४

दृशत् [द्] स्त्री. [दृ विदारणे, 'दृणातेः षुग्ह्रस्वश्च' इत्यदि, पृषोदरादित्वात् साधुः] पाषाणः; निष्पेषणशिलापट्टम्। १६८

दृशिः, दृशी स्त्री. [दृश्यतेऽनयेति। दृश्+इन् स च कित्, वा ङीष्] चक्षुः; 'किं सम्भूतं रुचिरयोर्द्विज शृङ्गयोस्ते मध्ये कृशो वहसि यत्र दृशिः श्रिता मे'–इति भागवते (५।२।१२)। ५१९

दृष्टिः स्त्री. [पश्यत्यनेनेति। दृश्+करणे क्तिन्] चक्षुः; 'दृष्टा दृष्टिमधो ददाति कुरुते नालापमाभाषिता'—इति साहित्यदर्पणे (३।६८)। [दृश्+भावे क्तिन्] दर्शनम्(५६६); 'दृष्टिपूतं न्यसेत् पादं वस्त्रपूतं जलं पिबेत्'–इति मनुः (६।४६)। बुद्धिः; ग्रहाणां दृष्टिकथनम्; 'तृतीये दशमे चैव पाददृष्टिरुदाहृता। अर्द्धदृष्टिश्च नवमे पञ्चमे च प्रकीर्तिता। चतुर्थे चाष्टमे चैव पादोना परिकीर्तिता। सप्तमे परिपूर्णा च फलमेवं प्रकल्प्यते। तृतीयदशमावार्किः पश्यन् पूर्णफलप्रदः। त्रिकोणगान् गुरुश्चैव चतुर्थाष्टमगान् कुजः। सुतमदननवान्त्ये पूर्णदृष्टिः सुरारेर्युगलदशमराशौ दृष्टिमात्रात्रयार्हः। सहजरिपुचतुर्थेष्वष्टमे चार्द्धदृष्टिः स्थितिभवनमुपान्त्यं नैव दृश्यं हि राहोः। स्वस्थानं च द्वितीयं च षष्ठमेकादशं तथा। द्वादशाख्यं न पश्यन्तिशेषं पश्यन्ति ते ग्रहाः'—इति ज्योतिषतत्त्वे। ५१९

दृष्टिविक्षेपः पुं. [दृष्टेर्विक्षेपः] कटाक्षः। ५६७

देवः पुं. [दीव्यति आनन्देन क्रीडतीति। दिव्+अच्] देवता; 'देवानृषीन् मनुष्यांश्च पितॄन् गृह्याश्च देवताः। पूजयित्वा ततः पश्चाद् गृहस्थः शेषभुग् भवेत्'—इति मनुः (३।११७)। नाट्योक्तौ राजा। (१५५); मेघः; 'क्षेत्रे सुकृष्टे ह्युपिते च बीजे देवे च वर्षत्यृतुकालयुक्तम्'—इति महाभारते (३।२३५।२३)। इन्द्रः; पारदः; ब्राह्मणानामुपाधिभेदः; 'देवपूर्वं नराख्यं स्यात् शर्मवर्मादिसंयुतम्'—इति स्मृतिः। ऋत्विक्; 'ब्रह्मा देवानां पदवीः कवीनामृषिर्विप्राणां महिषो मृगाणाम्'—इति ऋग्वेदे (९।९६।६)। महादेवः; 'परश्वधायुधो देवः अनुकारी सुबान्धवः'—इति महाभारते (१३।१७।९८)। त्रि. दाता; द्योतयिता; दीपयिता; 'अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्'—इति ऋग्वेदे (१।१।१)। 'देवशब्दो दानदीपनद्योतनानामन्यतममर्थमाचष्टे, यज्ञस्य दाता दीपयिता द्योतयिता यमग्निरित्युक्तं भवति'—इति तद्भाष्ये सायणः। विष्णुः; 'उद्भवः क्षोभणो देवः श्रीगर्भः परमेश्वरः–' इति महाभारते (१३।१४९।५४)। ४

देवखातम् क्ली. [देवैः खातम्। अकृत्रिमत्वादस्य तथात्वम्] अखातं; देवखातकम्; 'नदीषु देवखातेषु तडागेषु सरःसु च। स्नानं समाचरेन्नित्यं गर्तप्रस्रवणेषु च'—इति मनुः (४।२०३)। ६७५

देवगान्धारी स्त्री.— श्रीरागस्य भार्या; 'गान्धारी देवगान्धारी मालवश्रीश्च सारवी। रामकिर्यपि रागिण्यः श्रीरागस्य प्रिया इमाः'—इति सङ्गीतदामोदरः। अस्या गानसमयः शिशिरर्तौ तृतीयप्रहरावधि-अर्धरात्रपर्यन्तम्। १०१ अ

देवगिरी स्त्री.— रागिणीविशेषः; वसन्तरागस्य भार्या। वसन्ते सदा गेया। अस्या गानसमयः हेमन्ते दिवा चतुर्थप्रहरावधि अर्धरात्रपर्यन्तम्। १०५ अ

देवचिकित्सकौ पुं. [देवानां चिकित्सकौ] अश्विनीकुमारौ। द्विवचनान्तोऽयं शब्दः। ८४

देवच्छन्दः पुं. [देवैश्छन्द्यते आकाङ्क्ष्यते इति। छन्द्+घञ्] हारभेदः; स शतयष्टिकः। अष्टोत्तरशतयष्टिकोऽयमिति भरतः, 'शतमष्टयुतं हारो देवच्छन्दो ह्यशीतिरेकयुता। अष्टाष्टकोऽर्द्धहारो रश्मिकलापश्च नवषट्कः'—इति बृहत्संहितायाम्। ५६२

देवता स्त्री. [देव एव, स्वार्थे तल्। देवं द्युतिं क्रीडां वा तनोति या] निर्जरः; देवः; त्रिदशः; विबुधः; सुरः;

सुपर्वा; सुमनाः; त्रिदिवेशः; दिवौकाः; आदितेयः; दिविषत्; लेखः; अदितिनन्दनः; आदित्यः; ऋभुः; अस्वप्नः; अमर्त्यः; अमृतान्धाः; बर्हिर्मुखः; क्रतुभुक्; दनुजद्विट्; द्युषत्; दौषत्; स्वर्गी; शोभः; निलिम्पः; मुचिरायः; स्थिरः; [देव+भावे तल्] देवत्वम्; 'मधुमन्मे परायणं मधुमत् पुनरायनम्। ता नो देवा देवतया युवं मधुमतस्कृतम्'—इति ऋग्वेदे (१०।२४।६)। 'हे देवा देवौ द्योतमानौ ता तौ युवं युवां नोऽस्मान् मधुमतः प्रीतियुक्तान् कृतम् कुरुतम्। केनेति उच्यते। देवतया देवत्वेन अणिमादिदेवतैश्वर्ययोगेनेत्यर्थः'–इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ४

देवतायतनम् क्ली. [देवतायाः आयतनं स्थानम्] देवालयः। ८३१

देवमातृकः त्रि. [देवो वृष्टिर्मातेव सस्योत्पादनेन पालकत्वात् जननीव यस्य। कप्] वृष्ट्यम्बुसम्पन्नव्रीहिपालितदेशः; 'कच्चिद्राष्ट्रे तडागानि पूर्णानि च बृहन्ति च। भागशो विनिविष्टानि न कृषिर्देवमातृका'—इति महाभारते (२।५।७८)। १६१

देवयुगम् क्ली. [देवानां युगम्] मानुषं युगचतुष्टयम्, एतद् महायुगशब्दवाच्यमपि। एतद् देवानां युगसहस्रद्वयम् ब्रह्मणो दिनं भवति; 'दैवे युगसहस्रे द्वे ब्राह्मः कल्पौ तु तौ नृणाम्'—इत्यमरः। 'चतुर्युगसहस्रेण ब्रह्मणो दिनमुच्यते।' ११५

देवयोनयः पुं.– स्त्री. बहुवचनान्तः [देवाः योनिरुत्पत्तिकारणं येषां ते] विद्याधराः, अप्सरसः, यक्षाः, राक्षसाः, गन्धर्वाः, किन्नराः, पिशाचाः, गुह्यकाः, सिद्धाः, भूतगणः। [देवानां योनिः] देवस्थानम् (८५९); 'अन्यथा हि कुरुश्रेष्ठ! देवयोनिरपांपतिः। कुशाग्रेणापि कौन्तेय! न प्रष्टव्यो महोदधिः'—इति महाभारते (३।११४।२८)। ८७

देवरः पुं. [दीव्यत्यनेनेति। दिवु क्रीडायाम+'अर्तिकमिभ्रमीति' अर] पत्युः कनिष्ठभ्राता; देवा; दवारः; देवानः; तुरागावः; देवल्ली। 'देवराद्वा सपिण्डाद्वा स्त्रिया सम्यङ् नियुक्तया। प्रजेप्सिताधिगन्तव्या सन्तानस्य परिक्षये'—इति मनुः (९।५९)। ८४१

देवरथः पुं. [देवानां रथः] देवाना विमानः स च पुष्पकादिः। ४४६

देववर्द्धकिः पुं [देवानां वर्द्धकिस्त्वष्टा] विश्वकर्मा। ८४

देवा [ऋ] पुं. [दीव्यत्यनेनेति, दिव्+'दिवेर्ऋः' इति ऋ] देवरः; 'ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवृषु'—इति ऋग्वेदे (१०।८५।४६)। रण्डापतिः। ८४०

देवाला स्त्री. [देवानपि आलाति स्वायत्तीकरोतीति। [आ+ला+क] रागिणीविशेषः। १०५ अ

देवाश्वः पुं. [देवस्य इन्द्रस्य अश्वः] इन्द्रघोटकः; उच्चैःश्रवाः। ६१

देवी स्त्री. [दीव्यतीति, दिव्+अच्+ङीप्] नाट्योक्तौ कृताभिषेका राजपत्नी; दुर्गा; 'देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्तया निःशेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्त्या'–इति मार्कण्डेये (८४।२)। मूर्वा; 'मूर्वा मधुरसादेवी मोरटा तेजनी स्रुवा'—इति भावप्रकाशे (१।१)। पृक्का; [देवानां पत्नी, ङीष्] सामान्यदेवपत्नी। 'देवीनां दक्षिणायने'—इति स्मृतिः। ब्राह्मणस्त्रीनामोपपदम्; यथा—'देव्यन्ता हि स्त्रियो मताः'—इत्युद्वाहतत्त्वम्। 'देव्यन्ताश्च स्त्रियः सर्वा दास्यन्ताः शूद्रयोनयः'—इति कर्मविपाके। आदित्यभक्ता; लिङ्गिनी; बन्ध्याकर्कोटकी; शालिपर्णी; महाद्रोणी; पाठा; नागरमुस्ता; मृगेर्वारुः; हरीतकी; अतसी; श्यामानाम पक्षिजातिः; उपनिषद्विशेषः; स तु अथर्ववेदान्तर्गतः; 'त्रिपुरातापनं देवो त्रिपुराकटभावना'—इति मुक्तिकोपनिषदि। ९८

देशः पुं. [दिश्यते निर्दिश्यते इति। दिश् अतिसर्जने+कर्मणि घञ्] भूगोलभागविशेषः; जनपदे; जनपदसमुदाये; जनपदैकदेशे; सजलनिर्जलस्थानमात्रे च। जाङ्गलः; अनूपः; जनपदः; नीवृत्; विषयः; उपवर्तनं; प्रदेशः; राष्ट्रम्। २८४

देशाख्या स्त्री.—रागिणीविशेषः। १०३ अ

देहः पुं.– क्ली. [देग्धि प्रतिदिनम्। दिह् उपचये+अच्] शरीरम्। ५१०

देहलिः पुं. [दिह्+भावे घञ्। देहो लेपस्तं लाति गृह्णातीति। देह+ला+बाहुलकात् कि] देहली, गृहावग्रहणी; द्वाराग्रस्थानम्। ३०२

देहली स्त्री. [देहं लेपं लातीति। देह+ला+'आतोऽनुपसर्गे कः' इति क। गौरादित्वाद् ङीष्] गृहावग्रहणी;

द्वारपिण्डिका; द्वाराग्रस्थानं; अध उडुम्बरं तत् शिलाया अधोदारुपाषाणो वा; 'शेषान् मासान् गमनदिवसस्थापितस्यावधेर्वा, विन्यस्यन्ती भुवि गणनया देहलीदत्तपुष्पैः'—इति मेघदूते (८७)। ३०२

दैतेयः पुं. [दितेरपत्यं पुमान्। दिति+'स्त्रीभ्यो ढक्' इति ढक्] दैत्यः; 'जय बाणं महाबाहो! दैतेयं देवपूजित! यदर्थमवतीर्णोऽसि तत्कर्म सफलीकुरु'—इति हरिवंशे (१८२।७६)। ५

दैत्यः पुं. [दितेरपत्यम्,' दित्यदित्यादित्यपत्युत्तरपदाण्ण्यः' इति ण्य] असुरः; 'तापसा यतयो विप्रा ये च वैमानिका गणाः। नक्षत्राणि च दैत्याश्च प्रथमा सात्विकी गतिः'—इति मनुः (१२।४८)। दितिसम्बन्धिनि त्रि.। ५

दैत्यगुरुः पुं. [दैत्यानां गुरुः] शुक्राचार्यः; 'आज्ञार्थमानास्पदभूतिवस्त्रशत्रुक्षयान् दैत्यगुरुस्तृतीये'—इति बृहत्संहितायाम् (१०४।३४)। ४८

दैत्यारिः पुं. [दैत्यानाम् असुराणाम् अरिः शत्रुः] विष्णुः; 'दैत्यारिः कमलाकपोलमकरीलेखाङ्कितोरःस्थलः, शेतेऽब्धावितरेषु जन्तुषु पुनः का नाम शान्तेः कथा'—इति प्रबोधचन्द्रोदये (२।२८)। देवता। २२

दैन्यम् क्ली. [दीनस्य भावः। दीन+ष्यञ्] दीनता; 'याच्ञादैन्यपराञ्चि यस्य कलहायन्ते मिथस्त्वं वृणु, त्वं वृणित्यभितो मुखानि स दशग्रीवः कथं कथ्यताम्'—इति मुरारिमिश्रः। कार्पण्यम्; अलङ्कारोक्तव्यभिचारिगुणभेदः; 'दौर्गत्याद्यैरनौजस्यं दैन्यं मलिनतादिकृत्'—साहित्यदर्पणे (३।१४१)। ८४६

दैवम् क्ली.–पुं. [देवात् नियतादागतम्। देव+अण्] भाग्यम्; 'दैवाधीनं जगत् सर्वं जन्मकर्मशुभाशुभम्। संयोगाश्च वियोगाश्च न च दैवात् परं बलम्। कृष्णायत्तञ्च तद्दैवं स दैवात् परतस्ततः। भजन्ति सततं सन्तः परमात्मानमीश्वरम्। दैवं वर्द्धयितुं शक्तः क्षयं कर्तुं स्वलीलया। न दैवबद्धस्तद्भक्तश्चाविनाशी च निर्गुणः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। 'नालसाः प्राप्नुवन्त्यर्थान्न च दैवपरायणाः। तस्मात् सदैव यत्नेन पौरुषे यत्नमाचरेत्'—इति मत्स्यपुराणे (१९५ अध्याये)। १२६

दैवतम् क्ली. [देवता एव। स्वार्थे अण्] देवता; 'आपृच्छे त्वां पुरिश्रेष्ठे! काकुत्स्थपरिपालिते। दैवतानि च यानि त्वां पालयन्त्यावसन्ति च'—इति रामायणे (२।५०।२)। ४

दैवपरः त्रि. [दैवमेव परं प्रधानं यस्य] दैवनिष्ठः; यद्भविष्यः; 'सार्द्धं न बलिभिः कुर्यान्न च न्यूनैर्न निन्दितैः। न सर्वशङ्किभिर्नित्यं न च दैवपरैर्नरैः'—कुर्वीत साधुभिर्मैत्रीं सदाचारावलम्बिभिः'—इति मार्कण्डेये (४३।८९)। ३७७

दोः [स्] पुं. [दाम्यत्यनेनेति। दमु उपशमे+'दमेर्डोसिः' इति डोसि] बाहुः; हस्तः; भुजः; 'दातव्येयमवश्यमेव दुहिता कस्मैचिदेनामसौ 'दोर्लीलामसृणीकृतत्रिभुवनो लङ्कापतिर्याचते'—इति अनर्घराघवे (२।४४)। ५२२

दोला स्त्री. [दोल्यते अस्यामिति। दोलि+घञ्+टाप्] उद्यानादिषु क्रीडार्थं काष्ठादिमयो हिन्दोलकः; बाह्यखट्वा; प्रेङ्खा; दोली; खट्वाला; दोलिका; प्रेङ्खः; हिन्दोला; 'द्विधेव हृदयं तस्य दुःखितस्याभवत् तदा। दोलेव मुहुरायाति याति चैव सभां प्रति'—इति महाभारते (३।६२।२०)। नीलिनी। ७६३

दोषः पुं. [दूष्यते इति, दुष् वैकृत्ये+णिच्+भावे घञ] दूषणम्; 'अदाता वंशदोषेण कर्मदोषाद्दरिद्रता। उन्मादो मातृदोषेण पितृदोषेण मूर्खता'—इति चाणक्यः (४८)। [दुष्यत्यनेनेति करणे घञ्] पापं; वातपित्तकफाः; 'नास्ति रोगो विना दोषैर्यस्मातस्माद्विचक्षणः। अनुक्तमपि दोषाणां लिङ्गैर्व्याधिमुपाचरेत्'—इति सुश्रुते। गोवत्सः; [दुष्यतेऽन्धकारेणेति। दुष्+घञ्] प्रदोषः; 'देवोऽपराह्णे मधुहोग्रधन्वा, सायं त्रिवामावतु माधवो माम्। दोषे हृषीकेश उतार्द्धरात्रे, निशीथ एकोऽवतु पद्मनाभः'—इति भागवते (४।८।१९)। काव्यगुणेतरः; स च रसाद्यपकर्षकः 'मुख्यार्थहतिर्दोषो रसश्च मुख्यस्तदाश्रयाद्वाच्यः।' ७७१

दोषग्राही [न्] त्रि. [दोषं गृह्णातीति। ग्रह्+णिनि] दोषग्रहणकर्ता; खलः; पुरोभागी; द्विजिह्वः; मत्सरी; 'विसृज्य शूर्पवद्दोषान् गुणान् गृह्णन्ति साधवः। दोषग्राही गुणत्यागी चालनीव हि दुर्जनः'—इत्युद्भटः। ३४६

दोषज्ञः त्रि. [दोषं जानातीति। दोष+ज्ञा+'आतोऽनुपसर्गे कः' इति,क] पण्डितः; 'अथ प्रदोषे दोषज्ञः संवेशाय विशांपतिम्। सूनुः सूनृतवाक् स्रष्टुः विससर्जोदितश्रियम्'—इति रघुवंशे (१।९३)। [दोषान् वातपित्तकफान् जानातीति,क] चिकित्सकः (६१२); दोषविषयकज्ञानयुक्तः। ३३२

दोषा स्त्री. [दुष्यतेऽन्धकारेणेति । दुष्+घञ्+टाप्] रात्रिः; 'दीपदशा कुलयुवतिर्वै दग्ध्येनैव मलिनतामेति। दोषा अपि भूषायै गणिकायाः शशिकलायाश्च'—इति आर्यासप्तशत्याम् [दाम्यत्यनेनेति । दम्+'दमेर्डोसिः' इति डोसि, टाप् वा] भुजः । १०७

दोषा अव्य. [दुष्यत्यत्रेति, दुष्+बाहुलकात् 'दिविदुषिभ्याञ्च' इति आ। 'स्वरादिनिपातमव्ययम्' इति स्वरादिपाठात् अव्ययत्वम्] नक्तम्; रजनी; रात्रिः; 'दोषापि नूनमहिमांशुरसौ किलेति, व्याकोशकोकनदतां दधते नलिन्यः!'—इति माघे (४।४६) । निशामुखम् । १०७

दोहदः पुं.– क्ली. [दोहमाकर्षं ददातीति । दा+क] गर्भिण्यभिलाषः; दौहृदं; श्रद्धा; लालसा; जातुजः; 'दोहदस्याप्रदानेन गर्भो दोषमवाप्नुयात् । वैरूप्यं मरणं वापि तस्मात् कार्यं प्रियं स्त्रियाः'—इति याज्ञवल्क्यसंहिता। (३।७९) । गर्भचिह्नं; पुष्पोद्गमकौषधम्; 'कुसुमं कृतदोहदस्त्वया, यदशोकोऽयमुदीरयिष्यति । अलकाभरणं कथं नु तत्, तवनेष्यामि निवापमाल्यताम्' —इति रघुवंशे (८।६२)। क्ली. [दोहमाकर्षणं ददातीति । दोह+दा+'आतोऽनुपसर्गे कः'–इति क] इच्छा। ४९८

दौर्मदम् क्ली. [दुर्धर्षो मदो येषां ते दुर्मदाः योद्धारः; तेषां कर्म] 'गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः' इति ष्यञ्] युद्धम्। ७६१

दौर्हृदम् क्ली. [दुर्हृदो भावः। युवादित्वाद् अण्। बाहुलकात् न द्विपदवृद्धिः] गर्भिणीच्छा; दोहदं; 'लब्धदौर्हृदा हि वीर्यवन्तं चिरायुषञ्च पुत्रं जनयति'—इति सुश्रुते। इच्छा; दूषितहृदयत्वम्; 'दुर्भाषिणो मन्युवशानुगस्य कामात्मनो दौर्हृदे भावितस्य'—इति महाभारते (५।२६।१४) । ४९८

दौवारिकः पुं. [द्वारि नियुक्तः । 'तत्र नियुक्तः' इति ठक्। ततः 'द्वारादीनाञ्च' इत्यैजागमश्च] द्वाररक्षकः; द्वाःस्थः; क्षत्ता; दण्डी; वेत्रधरः; प्रतीहारः; प्रतिहारः दर्शकः; द्वारी; वेतालः; द्वारपालः; द्वारपालकः; दौःसाधिकः; वर्तरूढः; गर्वाटः; दण्डपांशुलः; द्वाःस्थितः; वेत्रधारकः; वर्तरूकः; दण्डवासी; 'राजदौवारिकः श्रीमाञ्छूरस्यासीन्महोदयः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (५।२८) । ४२४

दौहित्रः पुं.– स्त्री. [दुहितृ+'अनृष्यानन्तर्ये बिदादिभ्योऽञ्' इति अञ्] दुहितुरपत्यम्; कुतुपः; दुहितृसुतः; 'त्रीणि श्राद्धे पवित्राणि दौहित्रः कुतुपस्तिलाः। दौहित्रं खड्गमित्याहुरपत्यं दुहितुस्तिलाः। कपिलाया घृतञ्चैव दौहित्रमिति चोच्यते'—इति मार्कण्डेयपुराणम्। ५०५

द्यावाभूमी स्त्री. [द्यौश्च भूमिश्चेति 'दिवो द्यावा' इति द्यावादेशः] स्वर्गपृथिव्यौ; स्वधे; पुरन्धी; धिषणे; रोदसी; क्षोणी; अम्भसी; नभसी; रजसी; सदसी; सद्मनी; घृतवती; बहुले; गभीरे; गम्भीरे; ओमण्यौ; चम्वौ; पार्श्वौ; मही; ऊर्वी; पृथ्वी; अदिति; अही; दूरे; अन्ते; अणारे; अरे; पारे। (द्विवचनान्तोऽयं शब्दः) 'को वस्त्राता वसवः को वरूता द्यावाभूमी अदिते त्रासीथां नः'—इति ऋग्वेदे (४।५५।१) । १२१

द्युः पुं. [द्यु अभिगमने, क्विप्, बाहुलकात् तुगभावः] दिनं; गगनं (१३७); स्वर्गः (३); अग्निः। १०६

द्युतिः स्त्री. [द्योततेऽनयेति । द्युत् दीप्तौ+'इगुपधात् कित्' इति इन् स च कित्] रश्मिः; किरणः; दीप्तिः (६५); शोभा; 'लोभोऽधरात् प्रीतिरुपर्यभूद्द्युतिर्नस्तः पशव्यः स्पर्शेन काम'—इति भागवते (८।५।४२)। पुं. चतुर्थस्य मनोः ऋषिविशेषः; 'चतुर्थस्य तु सावर्णेर्ऋषीन् सप्त निबोध मे। द्युतिर्वशिष्ठपुत्रश्च आत्रेयः सुतपास्तथा'—इति हरिवंशे (७।७५)। तामसस्य मनोः पुत्रविशेषः; 'पुत्रांश्चैव प्रवक्ष्यामि तामसस्य मनोर्नृप । द्युतिस्तपस्यः सुतपास्तपोमूलस्तपोशनः' —इति हरिवंशे (७।२३) । ३८

द्युपतिः पुं. [दिवः पति । 'दिव उत्' इत्युकारः] सूर्यः; द्युमणिः; [द्युनो स्वर्गस्य पतिः] इन्द्रः। ३६

द्युमणिः पुं. [दिवः गगनस्य मणिरिव] सूर्यः; द्युपतिः; 'रेणुर्दिशः खं द्युमणिञ्च छादयन् न्यवर्ततासृक्स्रुतिभिः परिप्लुतात्'—इति भागवते (८।१०।३८) । अर्कवृक्षः; परिशोधितताम्रम्; मारितं ताम्रं; 'विषमहौषधभागमधिकोषणा द्युमणिरक्तकमार्द्रकमर्दितम्'—इति भावप्रकाशः। ३६

द्युम्नम् क्ली. [द्युमग्निं मनति अभ्यसत्यस्मै इति। म्ना+क'धनमिच्छेत् हुताशनात्' इति वचनाद् धनकामानाम् अग्न्याराधनादस्य तथात्वम् दिवं। मनतीति वा] धनम्;

'अस्माकं द्युम्नमधि पञ्च कृष्टिपूच्चा स्वर्ण शुशुचीत दुष्टरम्'—इति ऋग्वेदे (२।२।१०)। [द्युं तेजो मनतीति] बलं (७२३); (बलाधायकत्वात्) अन्नं; 'वृष्टिं दिवः परि स्रव द्युम्नं पृथिव्या अधि'—इति ऋग्वेदे (९।०।८)। ८०

द्यूतः पुं.–क्ली. [देवनमिति । दिवु क्रीडायाम्+भावे क्त, ऊठ् च] पाशकादिक्रिया; अप्राणिकरणक्रिया; अक्षवतो; कैतवं; पणः; 'द्यूतक्रीडा तथा प्रोक्ता व्रतानि विविधानि च'—इति देवीभागवते (१।१०।५१)। 'द्यूतं समाह्वयं चैव राजा राष्ट्रान्निवर्तयेत्। राजान्तकरणावेतौ द्वौ दोषौ पृथिवीक्षिताम्। प्रकाशमेतत्तास्कर्यं यद्देवनसमाह्वयौ। तयोर्नित्यं प्रतीघाते नृपतिर्यत्नवान् भवेत्। अप्राणिभिर्यत् क्रियते तल्लोके द्यूतमुच्यते। प्राणिभिः क्रियते यस्तु स विज्ञेयः समाह्वयः। द्यूतं समाह्वयं चैव यः कुर्यात् कारयेत वा। तान् सर्वान् घातयेद्राजा शूद्रांश्च द्विजलिङ्गिनः। द्यूतमेतत् पुराकल्पे सृष्टं वैरकरं महत्। तस्माद्द्यूतं न सेवेत हास्यार्थमपि बुद्धिमान्'—इति मनुः (९।२२१।२२)। 'किं ते द्यूतेन राजेन्द्र! बहुदोषेण मानद!। देवने बहवो दोषास्तस्मात् तत्परिवर्जयेत्। श्रुतस्ते यदि वा दृष्टः पाण्डवो हि युधिष्ठिरः। स राज्यं सुमहत् स्फीतं भ्रातॄंश्च त्रिदशोपमान्। द्यूते हारितवान् सर्वं तस्माद् द्यूतं न रोचये'—इति महाभारते (४।६६।३३-३५)। ३८८

द्यूतकरः त्रि. [करोतीति, कृ+अच्, द्यूतस्य करः] द्यूतकर्ता; धार्तः; धूर्तः; अक्ष धूर्तः; अक्षदेवी; दुरोदरः; द्यूतकृत्; कितवः; कृष्णकोहलः। ३८८

द्यूतकारः त्रि. [द्यूतं कारयतीति। कृ+णिच्+अण्] द्यूतकारयिता; सभिकः; सभीकः; 'मुहुर्विघ्नितकर्माणं द्यूतकारं पराजितम्'—इति पञ्चतन्त्रे (१।४३१)। ३८८

द्यूतकारकः त्रि. [द्यूतं कारयतीति। द्यूत+कृ+णिच्++ण्वुल्] द्यूतकारयिता। ३८९

द्योतनम् क्लो. [द्युत्+भावे ल्युट्] दर्शनं; प्रकाशनं; [द्युत्+युच्] द्योतमाने त्रि.। 'विलोक्य द्योतनं चन्द्रं लक्ष्मणं शोचनोऽवदत्'—इति भट्टिः (७।१५)। पुं. [द्योतते इति। द्युत्+'बहुलमन्यत्रापि' इति युच्] दीपः। ५६६

द्यौः [ओ] स्त्री. [द्योतन्ते देवा यत्र। द्युत्+बाहुलकात् डो] स्वर्गः; 'आदित्यचन्द्रावनिलोऽनलश्च, द्यौर्भूमिरापो हृदयं यमश्च। अहश्च रात्रिश्च उभे च सन्ध्ये, धर्मश्च जानाति नरस्य वृत्तम्'—इति महाभारते (१।७४।२८)। आकाशं (१३७); पुं. अष्टवसूनामन्यतमः; 'पृथ्वादीनां वसूनां च मध्ये कोऽपि वसूत्तमः। द्यौर्नामा तस्य भार्या या नन्दिनीं गां ददर्श ह'—इति देवीभागवते (२।३।३५)। ३

द्रङ्गः त्रि. [द्रियन्ते इति द्राः, दृङ आदरे, बाहुलकात् क। द्रान् गच्छति, 'गमश्च' इति खच्, 'खच्च डिद् वा वाच्यः'] पुरी; 'तेन स्वनाम्ना भाण्डेषु द्रङ्गे सिन्धुरमुद्रणा।'—इति राजतरङ्गिण्याम् (८।२०११)। २८५

द्रप्सम् क्ली. [दृप्यन्त्यनेन, दृप् हर्षादौ, बाहुलकात् स, 'अनुदात्तस्य चेति' अम्] घनेतरदधि; सरः। २७५

द्रप्स्यम् क्ली. [तृप्यन्त्यनेनेति। तृप्+'अघ्न्यादयश्च' इति निपातनात् साधु] घनेतरदधि; द्रप्सं; द्राप्सं; त्रप्स्यं; शुक्रं; त्रि. द्रुतगमनशीलः; द्रुतहननशीलः; 'पवमानः सन्ततिः प्रघ्नतामिव मधुमान् द्रप्स्यः परिवारमर्षति'—इति ऋग्वेदे (९।६९।२)। २७५

द्रवः पुं. [द्रु+'ऋदोरप्' इति भावे अप्] परीहासः; पलायनं; 'ततो दैत्यद्रवकरं पौराणं शङ्खमुत्तमम्'—इति हरिवंशे (२११।१०)। रसः; गतिः; वेगः; 'तत्र शब्दगतिर्भूत्वा मारुतद्रवसम्भवः'—इति हरिवंशे (१९३।५)। द्रवत्वरूपो गुणविशेषः; 'गुरुणी द्वे रसवती द्वयोर्नैमित्तिको द्रवः'—इति भाषापरिच्छेदे (२८७)। आर्द्रे त्रि.। 'प्रसाधिका लम्बितमग्रपादम् आक्षिप्य काचित् द्रवरागमेव'—इति रघुवंशे (७।७)। ४३२

द्रविडी स्त्री.— रागिणीविशेषः। १०२ अ

द्रविणम् क्ली. [द्रवति गच्छति द्रूयते प्राप्यते वेति। द्रु+'द्रुदक्षिभ्यामिनन्' इति इनन्] धनम्; 'द्रविणं परिमितममितव्ययिनं जनमाकुलीकुरुते। क्षीणाञ्चलमिव पीनस्तनजघनायाः कुलीनायाः।' काञ्चनं; बलम्; 'एवमुक्ता तु पुत्रेण भूरिद्रविणतेजसा। माता सत्यवती भीष्ममुवाच तदनन्तरम्'—इति महाभारते (१।१०३।१९)। पुं. धरनाम्नो वसोः पुत्रविशेषः; 'धरस्य पुत्रो द्रविणो हुतहव्यवहस्तथा'—इति महाभारते १।६६।२१)। पृथोः पुत्रविशेषः; 'पुत्रानुत्पादयामास

पञ्चार्चिष्यात्मसम्मतान्। विजिताश्वं धूम्रकेशं हर्यक्षं द्रविणं वृकम्'—इति भागवते (४।२२।५४)। कुशद्वीपस्थितसीमागिरिभेदः; 'तेषां वर्षेषु सीमागिरयो नद्यश्चाभिज्ञाताः सप्त सप्तैव बभ्रुश्चतुः शृङ्गः कपिलश्चित्रकूटो देवानीक ऊर्द्धरोमा द्रविण इति'—इति भागवते (५।२०।१५)। क्रौञ्चद्वीपस्थवर्षपुरुषविशेषः; 'यासामम्भः पवित्रममलमुपयुञ्जानाः पुरुषर्षभद्रविणदेवकसंज्ञा वर्षपुरुषाः'—इति भागवते (५।२०।२२)। ८०

द्रव्यम् क्ली. [द्रोरिव। द्रु+'द्रव्यञ्च भव्ये' इति यत् प्रत्ययेन निपातनात् साधु] वित्तं; वस्तु; 'एकमेव दहत्यग्निर्नरं दुरुपसर्पिणम्। कुलं दहति राजाग्निः सपशुद्रव्यसञ्चयम्'—इति मनुः (७।९)। 'लिङ्गसंख्यान्वयित्वं द्रव्यत्वम्' इति शाब्दिकाः। पित्तलं; पृथिव्यादि; विलेपनं; क्लीवं; भेषजं; भव्यं; द्रोर्विकारः ['द्रोश्च' इति यत्] द्रुमविकारे त्रि.। द्रुमावयवः; जतु; विनयः; मद्यम्; 'सशब्दं न पिबेत् द्रव्यम्'—इति कुलार्णवतन्त्रम्। ८०

द्राक् अव्य. [द्रातीति, द्रा+बाहुलकात् कु] द्रुतम्; शीघ्रम्; 'आकस्मिकः पक्षपुटाहतायाः क्षितेस्तदा यः स्वन उच्चचार। द्रागन्यविन्यस्तदृशः स तस्याः सम्भ्रान्तमन्तःकरणं चकार'—इति नैषधे (३।२)। ६९७

द्राक्षा स्त्री. [द्राङ्क्षयते काङ्क्षयते इति। द्राक्षि काङ्क्षायाम् +घञ्। आगमशासनस्यानित्यत्वात् नुमभावः] फलविशेषः; मृद्वीका; गोस्तनी; स्वाद्वी; मधुरसा; चारुफला; कृष्णा; प्रियाला; तापसप्रिया; रसा; गुच्छफला; रसाला; अमृतफला; 'दाख, अंगूर' —इति भाषा। ९३

द्राग्भृतकम् क्ली. [द्राग् एव तत्कालमेव भृतमुदञ्चितम्, ततस्तादर्थ्ये क] तत्क्षणोद्धृतं तोयं; सद्यःपानीयम्। ६४९

द्रुः पुं. [द्रवति ऊर्द्धव गच्छतीति। द्रु+मितद्र्वादित्वात् डु] वृक्षः; 'आददीताथ षड्भागं द्रुमांसमधुसर्पिषाम्' —इति मनुः (७।१३१)। गतौ स्त्री.। १७७

द्रुघणः पुं. [द्रुर्वृक्षः हन्यन्तेऽनेनेति। हन्+'करणेऽयोविद्रुषु' इति अप् घनादेशश्च, 'पूर्वपदात् संज्ञायामगः' इति णत्वम्। द्रुममयो घनः इति वा] मुद्गरः; मुद्गराकारलौहमयास्त्रभेदः; परशुवल्लौहास्त्रम्; 'द्रुघणस्त्वायसाङ्गः स्यात् वक्रग्रीवो बृहच्छिराः। पञ्चाशदङ्गुलोत्सेधो मुष्टिसम्मितमण्डलः।' 'उन्नामनं प्रपातश्च स्फोटनं दारणं तथा। चत्वार्येतानि द्रुघणे बल्गितानि श्रितानि वै।' [द्रुः संसारवृक्षो हन्यतेऽनेनेति] ब्रह्मा; कुठारः; भूमिचम्पकः; (दन्त्यनान्तोऽपि)। ४७५

द्रुणा स्त्री. [द्रुणं धनुराश्रयत्वेनास्त्यस्याः। अच्+टाप्] ज्या। ४६४

द्रुणिः स्त्री. [द्रुणति जलादिकमिति। द्रुण गतौ+ 'इगुपधात् कित्' इति इन्] कच्छपी; कमठी; कूर्मी; द्रोणी। ६५६

द्रुणी स्त्री. [द्रुण्+इन् वा ङीष्] कच्छपी; दुली; कर्णजलौकाः; काष्ठाम्बुवाहिनी। ६५६

द्रुतम् त्रि. [द्रवति स्मेति। द्रु+गत्यर्थेति कर्तरि क्त] जातद्रवीभावघृतसुवर्णादि; अवदीर्णं; विलीनं; विद्रुतं; शीघ्रं; 'वाय्वीरिताभिः सुमनोहराभिर्द्रुताभिरत्यर्थसमुत्थिताभिः। गङ्गोर्मिभिर्भानुमतीभिरिद्धाः सहस्ररश्मिप्रतिमा भवन्ति'—इति महाभारते (१३।२६।८१)। विद्रावः; पलायितः; 'जग्राह स द्रुतवराहकुलस्य मार्गं सुव्यक्तमार्द्रपदपङ्क्तिभिरायताभिः'—इति रघुवंशे (९।५९)। २७६

द्रुतः पुं. [द्रवति स्म ऊर्ध्वमिति। द्रु+क्त] वृश्चिकः; द्रुमः; वृक्षः; क्ली. [द्रु+क्त] नृत्यविषयकशीघ्रगमनम्; ओघः; शीघ्रलयः; [नृत्यगीतादौ द्रवन्ति गच्छन्ति समुदायगतिप्रदर्शनार्थं करादयोऽत्र] 'द्रुतामध्ययने वृत्तिं प्रयोगार्थे तु मध्यमाम्। शिष्याणामुपरोधार्थे विलम्बितां समाचरेत्'—इति वेदव्यवस्था। क्षिप्रम्; 'अभ्याघातेषु मध्यस्थात् शिष्याच्चौरानिव द्रुतम्' —इति मनुः (९।२७२)। क्रियाविशेषणत्वाद्दस्य क्लीवता। ६४५

द्रुतम् अव्य.— झटिति; अञ्जसा; शीघ्रम्। ६९७

द्रुमः पुं. [समुदाये वृत्ताः शब्दा अवयवेष्वपि वर्तन्ते इति न्यायाद् द्रुः शाखा विद्यतेऽस्य। 'द्युद्रुभ्यां मः' इति म] वृक्षः; 'निर्भयं तु भवेद्यस्य राष्ट्रं बाहुबलाश्रितम्। तस्य तद्वर्द्धते नित्यं सिच्यमान इव द्रुमः'—इति मनुः (९।२५५)। पारिजातः; कुवेरः; किम्पुरुषेश्वरविशेषः; 'द्रुमः किम्पुरुषेशश्च उपास्ते धनदेश्वरम्'—इति महाभारते (२।१०।२८)। नृपविशेषः; 'यस्तु राजन्! शिबिर्नाम दैतेयः परिकीर्तितः।

द्रुम इत्यभिविख्यातः स आसीद्भुवि पार्थिवः'—इति महाभारते (१।६७।८)। रुक्मिणीगर्भजातः कृष्णस्य पुत्रविशेषः; 'चारुभद्रश्चारुगर्भः सुदंष्ट्रो द्रुम एव च'—इति हरिवंशे (१६०।६)। १७१

द्रुहणः पुं. [द्रुं संसारगतिं हन्तीति। हन्+अच्, 'पूर्वपदात् संज्ञायामगः'—इति णत्वम्] ब्रह्मा। ७

द्रुहिणः पुं. [द्रुह्यति दुष्टेभ्यः इति। द्रुह्+'बहुलमन्यत्रापि' इति इनन्, गुणाभावश्च] ब्रह्मा; 'द्रुहिणे सृष्टिशक्तिश्च हरौ पालनशक्तिता'—इति देवीभागवते (१।८।२८)। ७

द्रोणः पुं. [द्रोणः कलस उत्पत्तिस्थानत्वेनास्त्यस्य। द्रोण्+अच्] दग्धकाकः; द्रोणकाकः; वनकाकः; काकोलः; अरण्यवायसः; वनवासी; महाप्राणः; क्रूररावी; पलप्रियः; काकलः; 'के शवं पतितं दृष्ट्वा द्रोणो हर्षमुपागतः। रुदन्ति पाण्डवाः सर्वे हा हा के शव! के शव!!' द्रोणाचार्यः; अयं कुरुपाण्डवानाम आचार्यः अस्य पिता भरद्वाजः। वृश्चिकः; चतुःशतधनुःपरिमितजलाशयः; यथा—'शतेन धनुर्भिः पुष्करिणी। त्रिभिः शतैर्दीर्घिका। चतुर्भिर्द्रोणः। पञ्चभिस्तडागः। द्रोणाद्दशगुणा वापी'—इति जलाशयतत्त्वम्। मेघनायकः; 'त्रियुते शाकवर्षे तु चतुर्भिः शेषिते क्रमात्। आवर्तं विद्धि संवर्तं पुष्करं द्रोणमम्बुदम्। आवर्तो निर्जलो मेघः संवर्तश्च बहूदकः। पुष्करो दुष्करजलो द्रोणस्सस्यप्रपूरकः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। पुं.-क्ली. [द्रवतीति, द्रु गतौ+'कृवृजृषिद्रुपन्यनिस्वपिभ्यो नित्' इति न] आढकपरिमाणम्; आढकचतुष्टयम्; 'द्रोणस्तु खार्याः खलु षोडशांशः स्यादाढको द्रोणचतुर्थभागः'—इति लीलावती। (३२ सेर इति लौकिकमानम्;) घटः; कलसः; उन्मानं; ल्लवणः; अर्मणः; अरणीकाष्ठम्; 'क्रत्वा हि द्रोणे अज्यसेऽग्नेवाजी न कृत्व्यः'—इति ऋग्वेदे (६।२।८) 'हे अग्ने क्रत्वा कर्मणा मन्थनरूपेण द्रोणे द्रुमे काष्ठेऽरण्यां विद्यमानस्तमज्यसे हि'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। काष्ठनिर्मितकलशः; 'प्रो द्रोणे हरयः कर्माग्मन् पुनानास ऋज्यन्तो अभूवन्'—इति ऋग्वेदे (६।३७।२)। 'द्रोणे द्रोणकलशे ऋज्यन्त ऋजु गच्छन्तोऽभूवन्' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। द्रुममयरथः; 'आ ते वृषन् वृषणो द्रोणमस्थुः'—इति ऋग्वेदे (६।४४।२०)। 'द्रोणं द्रुममयं रथमस्थुः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। २४६

द्रोणदुग्धा स्त्री. [द्रोणपरिमितं दुग्धं यस्याः] द्रोणक्षीरा; द्रोणदुघा। २७१

द्रोणदुघा स्त्री. [द्रोणं दोग्धीति। दुह+'दुहः कब् घश्च' इति कप् घश्चान्तादेशः] द्रोणपरिमितदुग्धदात्री गौः; द्रोणक्षीरा; द्रोणमाना; द्रोणघा; पयस्विनी; द्रोणदुग्धा; द्रोणमानपयस्विनी। २७१

द्रोहः पुं. [द्रुह्+भावे घञ्] जिघांसा; अनिष्टचिन्तनम्; अपक्रिया; 'देवद्रोहाद् गुरोर्द्रोहः कोटिकोटिगुणाधिकः'—इति कूर्मपुराणे। छद्मबधः; 'पैशुन्यं साहसं द्रोहः ईर्ष्यासूयार्थदूषणम्। वाग्दण्डश्चापि पारुष्यं क्रोधजोऽपि गणोऽष्टकः'—इति मनुः (७।४०)। 'द्रोहश्छद्मवधः' इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। ७७१

द्वन्वम् क्ली. [द्वन्द्व+पृषोदरादित्वाद् वस्य लोपः] मिथुनम्। ७००

द्वन्द्वम् क्ली. [द्वौ द्वौ सहाभिव्यक्तौ। 'द्वन्द्वं रहस्यमर्यादावचनव्युत्क्रमणयज्ञपात्रप्रयोगाभिव्यक्तिषु'—इति द्विशब्दस्य द्विर्वचनं पूर्वपदस्याम्भावोऽत्वञ्चोत्तरपदस्य नपुंसकत्वं च निपात्यते] कलहः; 'शतं दद्यान्न विवदेदिति प्राज्ञस्य लक्षणम्। विना हेतुमपि द्वन्द्वमेतन्मूर्खस्य लक्षणम्'—इति हितोपदेशे (३।३२)। युग्मम् (७००); 'द्वन्द्वयुद्धञ्च पार्थेन कर्तुमिच्छाम्यहं प्रभो'—इति महाभारते (१।१३७।१५)। मिथुनं; 'परस्पराक्षिसादृश्यमदूरोज्झितवर्त्मसु। मृगद्वन्द्वेषु पश्यन्तौ स्यन्दनाबद्धदृष्टिषु'—इति रघौ (१।४०)। रहस्यं; शीतोष्णादि; 'सर्वर्तुनिर्वृतिकरे निवसन्नुपैति न द्वन्द्वदुःखमिह किञ्चिदकिञ्चनोऽपि'—इति माघे (४।६४)। क्ली. पुं. दुर्गम्। पुं. [द्वौ द्वौ सहाभिव्यक्तौ इति निपातनात् साधुः, चार्थे द्वन्द्व इति निर्देशात् पुंस्त्वम्] रोगविशेषः; समासभेदः; द्वन्द्वो द्विगुरपि चाहं मद्गृहे नित्यमव्ययीभावः।' ४५३

द्वाः [र्] स्त्री. [द्वारयतीति, द्वृ वरणे+णिच् बाहुलकात् क्विप्] द्वारं; 'द्वारि द्युनद्या ऋषभः कुरूणां मैत्रेयमासीनमगाधबोधम्'—इति भागवते (३।५।१)। उपायः; 'ज्ञानद्वारा भवेन्मुक्तिः' इति ज्ञानशास्त्रम्। ३००

द्वाःस्थः पुं. [द्वारि तिष्ठतीति । स्था+क] द्वारपालः; द्वाःस्थितः; 'ब्राह्मणैः क्षत्रबन्धुर्हि द्वारपालो निरूपितः। स कथं तद्गृहे द्वाःस्थः सभाण्डं भोक्तुमर्हति'—इति भागवते (१।१८।३४)। नन्दिकेश्वरः। ४२४

द्वादशात्मा [न्] पुं. [द्वादश आत्मानो मूर्तयो यस्य] सूर्यः; 'द्वादशात्मारविन्दाक्षः पिता माता पितामहः' —इति महाभारते (३।३।२६)। अर्कवृक्षः। ३७

द्वापरः पुं. [द्वयोर्विषययोः परस्तत्परः आसक्तः। पृषोदरादित्वात् साधुः] सन्देहः; [द्वौसत्यत्रेतायुगौ परौ श्रेष्ठौ यस्मात्] युगविशेषः; द्वापरयुगम्; 'अष्टौ शतसहस्राणि वर्षाणि मानुषाणि तु। चतुःषष्टिसहस्राणि वर्षाणां द्वापरं युगम्'—इति मत्स्यपुराणे। ७८९

द्वारम् क्ली. [द्वरति निर्गच्छति गृहाभ्यन्तरादनेनेति। द्वृ+घञ्] निर्गमनं; द्वाः; प्रतीहारः; वारकं; 'गृहिणां शुभदं द्वारं प्राकारस्य गृहस्य च। न मध्यदेशे कर्तव्यं किञ्चिन्न्यूनाधिकं शुभम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते। ३००

द्वारपालः त्रि. [द्वारं पालयतीति। द्वार+पालि+'कर्मण्यण्' इत्यण्] द्वास्थः; द्वाररक्षकः; प्रतीहारः; द्वाःस्थितः; दर्शकः; वेत्रधारकः; द्वौः साधिकः; वर्तरूकः; गर्वाटः; दण्डवासी; द्वारस्थः; क्षत्ता; द्वारपालकः; दौवारिकः; वेत्री; उत्सारकः; दण्डी। ४२४

द्वास्थः पुं. [द्वारि तिष्ठतीति। स्था+'सुपिस्थः' इति क, 'खर्परे शरि वा विसर्गलोपो वक्तव्यः' इति विसर्गस्य पाक्षिकलोपः] द्वारपालः। ४२४

द्विजः पुं. [द्विर्जात इति। जन्+'अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड] अण्डजः; स पक्षिसर्पमत्स्यादिः; 'ऐन्द्रिः किल नखैस्तस्या विददार स्तनौ द्विजः'—इति रघुवंशे (१२।२२)। संस्कृतब्राह्मणः (३९१); 'जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते'—इति स्मृतिः। सद्वृत्तब्राह्मणः; 'जात्या कुलेन वृत्तेन स्वाध्यायेन श्रुतेन च। एभिर्युक्तो हि यस्तिष्ठेन् नित्यं स द्विज उच्यते। 'न जातिर्न कुलं राजन्! न स्वाध्यायः श्रुतं न च। कारणानि द्विजत्वस्य वृत्तमेव तु कारणम्'—इति वह्निपुराणे। दन्तः (५२७); 'न च्छित्वा द्विजैर्भक्षयेत्—इति चरकः। तुम्बुरुवृक्षः; क्षत्रियः; वैश्यः; 'मातुर्यदग्रे जायन्ते द्वितीयं मौञ्जिबन्धनात्। ब्राह्मणक्षत्रियविशस्तस्मादेते द्विजाः स्मृताः'—इति याज्ञवल्क्यः (१।३९)। द्विजाते त्रि.। २३८

द्विजन्मा [न्] पुं. [द्वे जन्मनी यस्य] ब्राह्मणः; 'यतीनां भूषणं ज्ञानं सन्तोषो हि द्विजन्मनाम्'—इति देवीभागवते। दन्तः; पक्षी; क्षत्रियः; वैश्यः; त्रि. द्विवारजन्मयुक्तः। (द्वाभ्यां जायमानः) 'अभिद्विजन्मा त्रिवृदन्नमृज्यते। संवत्सरे वावृधे जग्धमी पुनः' —इति ऋग्वेदे (१।१४०) २। 'द्वाभ्यामरणीभ्यां जायमानत्वात् यद्वा मन्थनेनाधानसंस्कारेण चोत्पन्नत्वात् द्विजन्मत्वम्'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ३९१

द्वितयम् क्ली. [द्वौ अवयवौ अस्य। द्वि+'संख्याया अवयवे तयप्' इति तयप्] द्वयम्; 'अत ऊर्ध्वमङ्गारकोऽपि योजनलक्षद्वितय उपलभ्यमानस्त्रिभिस्त्रिभिः पक्षैरेकैकशो राशीन् द्वादशानुभुङ्क्ते'—इति भागवते (५।२२।१४)। द्विसंख्याविशिष्टे त्रि.। 'द्रुमसानुमतां किमन्तरं यदि वायौ द्वितयेऽपि ते चलाः'—इति रघौ (८।९०)। ७००

द्वितीयवयः [स्] त्रि. [द्वितीयं वयो यौवनमित्यर्थः, यस्य] तरुणः पुमान्; वधूटी स्त्री; युवकुलम्। ४०४

द्वितीया स्त्री. [द्वितीय+टाप्] गेहिनी; भार्या; तिथिविशेषः; सा चन्द्रस्य द्वितीयकलाक्रियारूपा। सा च अश्विनीकुमारयोर्जन्मतिथिः, 'निखिलगुणगभीरो दानशीलो दयालुः स्वकुलकुमुदचन्द्रः स्वच्छचित्तोऽतिशूरः। निजभुजबलगर्वाच्छादितारातिवर्गो भवति विपुलकीर्तिर्यो द्वितीयाप्रसूतः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। ८०२

द्वित्वम् क्ली. [द्वयोः भावः, 'तस्य भावस्त्वतलौ] युगं; युगलं; द्वन्द्वम्। २८३

द्विपः पु. [द्वाभ्यां मुखशुण्डाभ्यां पिबतीति। पा+क] हस्ती; 'तेजोमहद्भिस्तमसेव दीपैः द्विपैरसम्बाधमयाम्बभूवे'—इति माघे (३।६७)। पुं. नागकेशरः। २१४

द्विमुखः पुं. [द्वे मुखे यस्य] राजसर्पः। मुखद्वययुक्ते त्रि.। ६४३

द्विरदः पुं.– स्त्री. [द्वौ रदौ दन्तौ प्रधानतया यस्य] हस्ती; 'क्षोभयन्तं तथा सेनां द्विरदं नलिनीमिव। धनञ्जयं भूतगणाः साधु साध्वित्यपूजयन्'—इति महाभारते (७।२६।२७)। २१४

द्विरदकराग्रम् क्ली. [द्विरदस्य गजस्य कराग्रं शुण्डाग्रम्] पुष्करम्। ८५८

द्विरसनः पुं. [द्वे रसने जिह्वे यस्य] सर्पः। ६४०

द्विरेफः पुं.– स्त्री. [द्वौ रेफौ रकारवर्णौ यस्मिन्, भ्रमर-इति नाम्नि] भ्रमरः; 'निवेशयामास मधुद्विरेफान् नामाक्षराणीव मनोभवस्य'—इति कुमारे (३।२७)। वर्वरे त्रि.। २५५

द्विषन् [त्] त्रि. [द्वेष्टीति, द्विष्+'द्विषोऽमित्रे'—इति शतृ] शत्रुः; 'यियक्षमाणेनाहूतः पार्थेनाथ द्विषन् मुरम्' –इति माघे (२।१)। ४५६

द्विसीत्यम् त्रि. [द्विवारं सीतया सम्मितम्। द्विसीता+'नौवयोधर्मेति' यत्] वारद्वयकृष्टक्षेत्रं; द्विगुणाकृतं; द्वितीयाकृतं; शम्बाकृतं; सम्बाकृतं; द्विहल्यम्। ५७६

द्वीपः पुं.– क्ली. [द्विर्गता द्वयोर्दिशोर्वा गता आपो यत्र, काकाक्षिगोलकन्यायेन द्वयोरित्युक्तेऽपि चतुर्दिक्षु तत्सत्ता। 'ऋक्पूरब्धूरिति' अ, 'द्व्यन्तरुपसर्गेभ्योऽप ईत्' इति ईत्] वारिमध्यतटं; जलवेष्टितभूमिः; अन्तरीपम्; क्ली. [द्वी वर्णौ ईयते इति। इ गतौ+बाहुलकात् प] व्याघ्रचर्म। ६७०

द्वीपवती स्त्री. [द्वीपाः सन्त्यस्याः इति। द्वीप+मतुप्, मस्य वः, ङीप्] नदी; 'अलङ्कृतं द्वीपवत्या मालिन्या रम्यतीरया'—इति महाभारते (१।७०।२८)। भूमिः। ६६६

द्वीपी [न्] पुं. [द्वीपं कर्वुरचर्म अस्त्यस्येति। द्वीप+'अत इतिठनौ' इति ठन्] चित्रकः; व्याघ्रः; 'नानामृगगणैर्द्वीपितरक्ष्वृक्षगणैर्वृतः'–इति रामायणे (२।९४।७)। ३२६

द्वेषः पुं. [द्विष्+भावे घञ्] शत्रुता; वैरं; विरोधः; विद्वेषः; द्वेषणम्; 'नास्तिक्यं वेदनिन्दां च देवतानां च कुत्सनम्। द्वेषं दम्भं च मानं च क्रोधं तैक्ष्णं च वर्जयेत्' —इति मनुः (४।१६३)। ८१५

द्वेषी [न्] त्रि. [द्वेष्टि तच्छीलः। द्विष्+'संपृचानुरुधेति' घिनुण्] शत्रुः। ४५६

द्वेष्यः त्रि. [द्वेष्टुमर्हः, यत्] द्वेषविषयः; वि द्वेषार्हः; अक्षिगतः; 'सुखं वा यदि वा दुःखं द्वेष्यं वा यदि वा प्रियम्। यथावत् सर्वमाचक्ष्व श्रुत्वा धास्यामि यत् क्षमम्'—इति महाभारते (४।१६।१८)। [द्विष्यतेऽसाविति। द्विष्+ण्यत्] शत्रुः; 'द्वेष्योऽपि सम्मतः शिष्टस्तस्यार्तस्य यथौषधम्। त्याज्यो दुष्टः प्रियोऽप्यासीदङ्गुलीवोरगक्षता'—इति रघौ (१।२८)। ३६६

द्वैगुणिकः त्रि. [द्विगुणार्थं द्रव्यं द्विगुणं तत्प्रयच्छति, द्विगुणं ग्रहीतुमेकगुणं ददातीत्यर्थः। द्विगुण+'प्रयच्छति गर्ह्यम्' इति ठक्] वृद्ध्याजीवः; [द्विगुणं गृह्णाति यः इत्यर्थे ष्णिकप्रत्ययः]। ५७१

द्वैपायनः पुं. [द्वीपम् अयनम् उत्पत्तिस्थानं यस्य स। स्वार्थे प्रज्ञादित्वाद् वा अण्] व्यासः; 'एवं द्वैपायनो जज्ञे सत्यवत्यां पराशरात्। न्यस्तो द्वीपे स यद्बालस्तस्मास्माद्द्वैपायनःस्मृतः'—इति महाभारते (१।६३।८५) ह्रदविशेषः; 'आसाद्य च कुरुश्रेष्ठ! तदा द्वैपायनं ह्रदम्। स्तम्भितं धार्तराष्ट्रेण दृष्ट्वा तं सलिलाशयम्। वासुदेवमिदं वाक्यमब्रवीत् कुरुनन्दनः'—इति महाभारते (९।३१।२)। ४१३

ध

धनम् क्ली. [दधन्ति धान्यादिकमुत्पादयतीति। धनु धान्ये+अच्। यद्वा दधाति सुखमिति। धा+'कृपृवृजि-. मन्दिनिधाञः क्युः' इत्यत्र बाहुलकात् केवलादपि क्यु] द्रविणं; द्रव्यं; वित्तं; स्वापतेयं; रिक्थम्; ऋक्थं; वसु; हिरण्यं; द्युम्नम्; अर्थः; राः; विभवः; काञ्चनं; लक्ष्मीः; भोग्यं; सम्पत्; वृद्धिः; श्रीः; व्यवहार्यं; रैः; भोगः; स्वं; मघं; रेक्णः; वेदः; वरिवः; श्वात्रं; रत्नं; रयिः; क्षत्रं; भगः; मीलु; गयः; इन्द्रियं; रायः; राधः; भोजनं; तना; नृम्णं; बन्धुः, मेधाः; यशः; ब्रह्म; श्रवः; वृत्रं; वृतम्। 'धनैर्निष्कुलीनाः कुलीना भवन्ति; धनैरापदं मानवा निस्तरन्ति। धनेभ्यः परो नास्ति बन्धुर्हि लोके, धनान्यर्जयध्वं धनान्यर्जयध्वम्'—इत्युद्भटः। स्नेहपात्रं; गोधनम्; 'अनुजग्मुश्च गोपालाः कालयन्तो धनानि च'—इति हरिवंशे (७३।३३)। जीवनोपायः। ८०

धनञ्जयः पुं. [धनं जयति सम्पादयतीति। धन+जि+खच्+मुम्। 'धनमिच्छेद् हुताशनात्' इत्युक्तेरस्य तथात्वम्] अग्निः; चित्रकवृक्षः; [धनं जयति अरीन् निर्जित्य अर्जयतीति, जि+खच्+मुम् च] अर्जुनः; 'सर्वान् जनपदान् जित्वा वित्तमाश्रित्य केवलम्। मध्ये धनस्य तिष्ठामि तेनाहुर्मां धनञ्जयम्'—इति महा-

भारते (४।४२।१३)। नागभेदः; स तु जलाशयाधिपतिः। 'कम्बलाश्वतरौ नागौ धृतराष्ट्रबलाहकौ। मणिमान् कुण्डधारश्च कर्कोटकधनञ्जयौ'—इति महाभारते (२।९।९)। देहमारुतः; 'न जहाति मृतं चापि सर्वव्यापी धनञ्जयः'—इति सुबोधिनी। अर्जुनवृक्षः; गोत्रविशेषः; विष्णुः; षोडशद्वापरस्य व्यासः। ६४

धनदः पुं. [धनं दयते पालयतीति। देङ पालने+'आतोऽनुपसर्गे कः' इति क] कुबेरः; हिज्जलवृक्षः; [धनदः आश्रयित्वेनास्त्यस्येति, अच्] हिमवत एकदेशः; 'धनदं समतिक्रम्य हिमवन्तं च पर्वतम्'—इति महाभारते (१३।१९।१६)। [धनं ददातीति,क] दातरि त्रि.। 'उद्वेजयति भूतानि क्रूरवाक् धनदोऽपि सन्'—इति कामन्दकीयनीतिसारे (३।२३)। ७८

धनवान् [त्] त्रि. [धनमस्त्यस्येति। धन+मतुप्, मस्य व] धनविशिष्टः; धनी; 'नाराजके जनपदे धनवन्तः सुरक्षिताः। शेरते विवृतद्वाराः कृषिगोरक्षजीविनः'—इति रामायणे (२।६७।१९)। ३५८

धनाध्यक्षः पुं. [धनानामध्यक्षः] कुबेरः; धनाधिकृतः; कोषाध्यक्षः। ७८

धनाया स्त्री. [धनस्य गर्धः लिप्सा। 'अशनायोदन्यधनाया बुभुक्षापिपासागर्धेषु'—इति क्यजन्तो निपातितः, टाप् च] तृष्णा; धनलोभः। ३६४

धनिष्ठा स्त्री. [अतिशयेन धनवती। धन+इष्ठन्+टाप्] अश्विन्यादिसप्तविंशतिनक्षत्रान्तर्गतत्रयोविंशनक्षत्रं; श्रविष्ठा; वसुदैवता; भूतिः; निधानं; धनवती; 'आचारजातादरचारुशीलो, धनाधिशाली बलवान् दयालुः। यस्य प्रसूतौ च भवेद्धनिष्ठा, महत्प्रतिष्ठासहितो नरः स्यात्'—इति कोष्ठीप्रदीपः। ५१

धनुः पुं [धनतीति धन्+'भृमृशीतृचरीति' उ] चापः; 'धनुर्वंशविशुद्धोऽपि निर्गुणः किं करिष्यति'—इति हितोपदेशे। राशिविशेषः; पियालवृक्षः। ४६४

धनुः [स्) क्ली. [धनतीति, धन् शब्दे+'अर्तिपृवपीति' उसि, स च नित्] शरनिःक्षेपयन्त्रं; चापः; धन्व; शरासनं; कोदण्डं; कार्मुकम्; इष्वासः; स्थावरं; गुणी; शरावापः; तृणता; त्रिणता; शेषः; अस्त्रं; धनूः; तारकं; काण्डम्; आसनविशेषः; 'पादाङ्गुष्ठौ तु पाणिभ्यां गृहीत्वा श्रवणावधि। धनुराकर्षणं कुर्याद्धनुरासनमुच्यते'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम्(१।२५)। चतुर्हस्त परिमाणं; 'चतुर्विंशाङ्गुलो हस्तस्तच्चतुष्कं धनुः स्मृतम्'—इति जलाशयतत्त्वम्। मेषादिद्वादशराश्यन्तर्गतनवमराशिः; तौक्षिकः; 'बहुकलाकुशलः प्रबलो महान्, विमलताकलितः सरलोक्तिभाक्। शशधरे हि धनुर्धरगे नरो, धनकरो न करोति धनव्ययम्'—इति जातकचन्द्रिकायाम्। 'धनुर्लग्ने समुत्पन्नो नीतिमान् धनवान् सुखी। कुलमध्ये प्रधानश्च प्राज्ञः सर्वस्य पोषकः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। ४६४

धन्व [न्] क्ली. [धन्वते गम्यते दुर्गमादिस्थलेऽनेनेति। धन्व गतौ, सौत्रो धातुः+कनिन्] धनुः;[धन्वते गम्यतेऽत्र इति] स्थलम्। ४६४

धन्वम् क्ली. [धनतीति, धन् शब्दे+'उल्वादयश्च' इति वन्प्रत्ययेन निपातनात् साधु] धनुः; 'धनुर्धराय देवाय प्रियधन्वाय धन्विने। धन्वन्तराय धनुषे धन्वाचार्याय ते नमः'—इति महाभारते (७।२००।४३)। ४६४

धन्वा [न्] पुं. [धन्वति जलाभावं गच्छतीति। धन्व+'कनिन् युवृषीति' कनिन्] मरुदेशः; 'जनं न धन्वन्नभि सं यदापः सत्रा वावृधुर्द्वनानि यज्ञैः'—इति ऋग्वेदे (६।३४।४)। अन्तरिक्षं; लक्षणाद् उदकमपि; 'धन्वच्युत इषां न यामनि पुरुप्रैषा अहन्यो नैतशः'—इति ऋग्वेदे (१।१६८।५)। 'धन्वच्युत इत्यत्र धन्वन्शब्दोऽन्तरिक्षस्य वचनः, तेन तत्स्थमुदकं लक्ष्यते उदकस्राविणो मेघा इव' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। १५८

धमनिः स्त्री. [धम्यते इति, धम्+'अर्तिशृधृषमीति' अनि] धमनी; ग्रीवा; नाडी; 'यास्ते शतं धमनयोऽङ्गान्यनु विष्टिताः'—इति अथर्ववेदे (६।९०२)। प्रह्लादभ्रातुर्ह्लादस्य पत्नी; 'ह्लादस्य धमनिर्भार्यासूत वातापिरिल्वलम्'—इति भागवते (६।१८।१५)। वाक्; शब्दः; 'दूरे पारे बाणीं वर्धयन्त इन्द्रेषितां धमनिं पप्रथन्नि'—इति ऋग्वेदे (२।११।८)। ५१६

धमनी स्त्री. [धमनि+वा ङीष्] ग्रीवा; नाडी; 'दश विद्याद् धमन्योऽत्र पञ्चेन्द्रियगुणावहाः। याभिः सूक्ष्माः प्रजायन्ते धमन्योऽन्याः सहस्रशः'—इति महाभारते (१२।२१४।१७)। हट्टविलासिनी; हरिद्रा; पृश्निपर्णी; नलिका। ५१६

धम्मिल्लः पुं. [धमतीति, धम्+विच् । मिलतीति, मिल्+बाहुलकाल्लक् । ततः कर्मधारयः] संयताः कचाः; कुसुमगर्भो मौक्तिकपद्मरागलतिकादिना बहिः संयतो बद्धः केशकलापः; 'साकूतस्मितमाकुलाकुलगलद्धमिल्ल-मुल्लासितभ्रूवल्लीकमलीकदर्शितभुजाबालार्द्धहस्तस्तनम्' —इति गीतगोविन्दे (२।२१) । ५३०

धरः पुं. [धरति पृथिवीमिति । धृ+अच्] पर्वतः; 'उत्कं धरं द्रष्टुमवेक्ष्य शौरिम् उत्कन्धरं दारुक इत्युवाच' —इति माघे (४।१९) । कार्पासतूलकः; कूर्मराजः; वसुभेदः; 'आपो ध्रुवश्च सोमश्च धरश्चैवानिलानलौ । प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवो नामभिः स्मृताः'—इति हरिवंशे (३।३९) । महादेवः; 'धाता शक्रश्च विष्णुश्च मित्रस्त्वष्टा ध्रुवो धरः' —इति महाभारते (१३। १७।१०३) । विष्णुः; श्रीकृष्णः; 'सर्वशोकमयो नित्यः शास्ता धाता धरो ध्रुवः'—इति महाभारते (६।६३। ३३) । धारके त्रि. । यथा—काकपक्षधरः । १६५

धरणिः स्त्री. [धरति जीवादीनिति । धृ+'अर्तिसृधृ-धमीति' इनि] पृथिवी; 'ज्योतिर्धरणिवायुरहिते अन्धे जलैकार्णवे लोके'—इति महाभारते (१२। ३४२।४) । १५६

धरणिधरः पुं. [धरतीति, धृ+अच् । धरण्याः धरः] विष्णुः; कच्छपः; पर्वतः; शेषः । २२

धरणी स्त्री. [धरणि+वा ङीष्] पृथिवी; 'यदा तु भार्गवो रामस्तदाभूद्धरणी त्वियम्'—इति विष्णुपुराणे (१।९।१४१) । शाल्मलिवृक्षः; नाडी; कन्दविशेषः; धारणीया; धीरपत्री; मुकुन्दकः; कन्दालुः; वनकन्दः; कन्दाढ्यः; दण्डकन्दकः । १५६

धरा स्त्री. [धरति जीवसंघानिति । धृ+अच्, यद्वा ध्रियते शेषेण इति । धृ+अप्+टाप्] पृथिवी; 'धारणाच्च धरा प्रोक्ता पृथ्वी विस्तारयोगतः'—इति भागवते (३।१३।८) । गर्भाशयः; मेदः; नाडी; महादानविशेषः; 'अथातः सम्प्रवक्ष्यामि धरादानमनुत्तमम् । पापक्षयकरं नृणाममाङ्गल्यविनाशनम्'—इति मत्स्यपुराणे । १५६

धरात्मजः पुं. [धरायाः आत्मजः] मङ्गलग्रहः; भौमः; नरकासुरः । ४६

धराधारा स्त्री. [धराणां गिरिवृक्षादीनामाधारो यत्र] पृथिवी; भूमिः; १५७

धरित्री स्त्री. [धरति जीवजातमिति, ध्रियते शेषेण वा । धृ+'अशित्रादिभ्य इत्रोत्रौ' इति इत्र, गौरादित्वाद् ङीष्] पृथिवी; 'स्वमूर्तिलाभप्रकृतिं धरित्रीं लतेव सीता सहसा जगाम'—इति रघुवंशे (१४।५४) । १५६

धर्मः पुं.– क्ली. [धरति लोकान्, ध्रियते पुण्यात्मभिरिति वा । धृ+'अर्तिस्तुहुस्रिति' मन्] शुभादृष्टं; पुण्यं; श्रेयः; सुकृतं; वृषः; 'एक एव सुहृद्धर्मो निधनेऽप्यनुयाति यः । शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यत्तु गच्छति'—इति हितोपदेशे (१।५९) । स्वभावः (७८२); न्यायः; आचारः; उपमा; क्रतुः; 'कृत्वा प्रवर्ग्यं धर्माख्यं यथावद् द्विजसत्तमाः । चक्रुस्ते विधिवद्राजंस्तथैवाभिषवं द्विजाः' —इति महाभारते (१४।८८।२१) । अहिंसा; उपनिषत्; दानादिके क्ली. । 'प्राणायामस्तथा ध्यानं प्रत्याहारोऽथ धारणा । स्मरणं चैव योगेऽस्मिन् पञ्च धर्माः प्रकीर्तिताः'—इति योगसारे । पुं. धनुः; यमः; सोमपः; सत्सङ्गः; अर्हन्; देवताविशेषः; स ब्रह्मणो दक्षिणस्तनाज्जातः । 'अङ्गुष्ठाद्दक्षिणाद्दक्षः प्रजापतिरजायत । धर्मस्तनान्तादभवद् हृदयात् कुसुमायुधः'—इति मत्स्यपुराणे (३।१०) । द्रुह्युवंशीयनृपविशेषः; 'द्रुह्योस्तु तनयो बभ्रुः सेतुस्तस्यात्मजस्ततः । आरब्दस्तस्य गान्धारस्तस्य धर्मस्ततो धृतः' —इति भागवते (९।२३।१४) । १२५

धर्मचिन्ता स्त्री. [धर्मस्य चिन्ता भावना] पुण्यभावना; उपाधिः । ७७०

धर्मध्वजी [न्] त्रि. [धर्मो ध्वजश्चिह्नम् । स एवास्त्यस्येति । धर्मध्वज+इनि] जीविकार्थं जटादिधारी, न तु परमार्थतो धर्मानुष्ठानकारी; लिङ्गवृत्तिः; 'धर्मध्वजी सदालुब्धश्छाद्मिको लोकदम्भकः । वैडालव्रतिको ज्ञेयो हिंस्रः सर्वाभिसन्धकः'—इति मनुः (४।१९५) ४०५

धर्मराजः पुं. [धर्मेण राजते इति । धर्म+राज्+अच्] यमः । [धर्मश्चासौ राजा चेति समासे टच्] 'धर्मराजः प्रहृष्टात्मा सावित्रीमिदमब्रवीत्'—इति महाभारते (३।२९६।५४) । जिनः; नरपतिः; युधिष्ठिरः; 'अपृच्छद् धर्मराजो हि शरतल्पगतं पुरा'—इति हरिवंशे (१६।८) । धर्मप्रधाने त्रि. । 'धृत्या च ते

प्रीतमनाः सदाहं त्वं वा वरुणो धर्मराजो यमो वा'—इति महाभारते (१।५५।११)। ७२

धर्षणिः स्त्री. [कर्षतीति। कृष्+'कृषेरादेश्च धः'—इति अनि आदेश्च धः] बन्धकी; असती; वृषली। ४९६

धर्षणी स्त्री. [धर्षणि+कृदिकारादिति वा ङीष्] धर्षिणी, असती। ४९६

धर्षिणी स्त्री. [धर्षति हिनस्ति कुलमिति। धृष्+णिनि+ङीप्] असती; पुंश्चली। ४९६

धवः पुं. [धुनोति धवतीति वा। धु, धू वा+अच्] पतिः; स्वामी; 'मा विद्या च हरेः प्रोक्ता तस्या ईशो यतो भवान्। तस्मान्माधवनामासि धवः स्वामीति शब्दितः'—इति हरिवंशे।(८१२) वृक्षविशेषः; धुरन्धरः; शाकटाख्यः; दृढ़तरुः; गौरः; कषायः; मधुरत्वक्; शुष्कवृक्षः; पाण्डुतरुः; धवलः; पाण्डुरः। 'धवो घटो नन्दितरुः स्थिरो धौरो धुरन्धरः। धवः शीतप्रमेहार्शःपाण्डुपित्तकफापहः। मधुरस्तुवरस्तस्य फलं च मधुरं मनाक्'—इति भावप्रकाशः।[धुञ् कम्पने+'ऋदोरप्' इति भावे अप्] कम्पनम्; नरः; 'शौचविशिष्टयाप्यस्ति किञ्चित् कार्यं क्वचिन्मृदा। निर्धनेन धवेनेह न तु किञ्चित् प्रयोजनम्'—इति पञ्चतन्त्रे(२।१०९)। धूर्तः।४९७

धवलः पुं [धावतीति, धावु गतिशुद्धयोः+'धावतेर्बाहुलकाद् ह्रस्वत्वञ्च' इति कल ह्रस्वश्च] शुक्लः; धववृक्षः; चीनकर्पूरः; रागविशेषः; वृषश्रेष्ठः; त्रि. सुन्दरः; श्वेतगुणयुक्तः; 'धवलनखलक्ष्म दुर्बलमकलितनेपथ्यमलकपिहिताक्ष्याः'—इति आर्यासप्तशत्याम्(३०६), श्वेतमरिचे क्ली.। ७३२

धवलितः त्रि. [धवलः गुणः संजातः अस्य] शुक्लीकृतः। २९४

धाता [ऋ] पुं. [दधातीति, धा+तृच्] ब्रह्मा; 'धातारं तपसा प्रीतं ययाचे स हि राक्षसः। दैवात् सर्गादवध्यत्वं मर्त्येष्वास्थापराङ्मुखः'—इति रघौ (१०।४३)। विष्णुः; 'आधारनिलयो धाता पुष्पहासः प्रजागरः'—इति महाभारते (१३।१४९।११५)। 'संहारसमये सर्वाः प्रजा धयति पिबतीति धाता, धेट् पाने इति धातुः, इति शाङ्करभाष्यम्। महादेवः; 'धाता शक्रश्च विष्णुश्च मित्रस्त्वष्टा ध्रुवो धरः'—इति महाभारते (१३।१७।१०३)। भृगुमुनिपुत्रः; ऊनपञ्चाशद्वाय्वन्तर्गतवायुविशेषः; 'धाता दुर्गो धितिर्भीमस्त्वभियुक्तस्त्वपात् सहः। द्युतिर्वपुरनाप्योथवासः कामो जयो विराट्। इत्येकोनाश्च पञ्चाशन्मरुतः पूर्वसम्भवाः'—इति वह्निपुराणे। आदित्यविशेषः; 'अदित्यां द्वादशादित्याः सम्भूता भुवनेश्वराः। ये राजन्! नामतस्तांस्ते कीर्तयिष्यामि भारत! धाता मित्रोऽर्यमा शक्रो वरुणस्त्वंश एव च'—इति महाभारते (१।६५।१४-१५)। ब्रह्मणः पुत्रविशेषः; 'द्वौ पुत्रौ ब्रह्मणस्त्वन्यौ ययोस्तिष्ठति लक्षणम्। लोके धाता विधाता च यौ स्थितौ मनुना सह'—इति महाभारते (१।६६।५१)। धारकः; पालके त्रि.। ६

धातुः पुं. [धीयते सर्वमस्मिन्निति। धा+'सितनिगमीति' तुन्] अश्मविकृतिः; सा तु गैरिकमनःशिलादि; 'अकालसन्ध्यामिव धातुमत्ताम्'—इति कुमारे (१।४)। अस्थि (६३२); महाभूतानि (८५७); यथा—पृथिवी, जलम्, तेजः, वायुः, आकाशः। तद्गुणाः; यथा—गन्धः, रसः, रूपम्, स्पर्शः, शब्दः। इन्द्रियाणि; यथा—घ्राणम्, जिह्वा, चक्षुः, त्वक्, श्रोत्रम्। शरीरधारकवस्तूनि; यथा—कफः, वातः, पित्तम्। 'रसासृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जशुक्राणि धातवः। सप्त दूष्या मला मूत्रशकृत्स्वेदादयोऽपि च'—इति वाग्भटे। 'एते सप्त स्वयं स्थित्वा देहं दधति यन्नृणाम्। रसासृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जशुक्राणि धातवः।' शब्दमूलम्; तच्च साधु शब्दप्रकृतिः भू-पच्-पठ्प्रभृतिः। स्वर्णादिः; 'सुवर्णरूप्यमाणिक्यहरितालमनः शिलाः। गैरिकाञ्जनकासीससीसलोहाः सहिङ्गुलाः'—इति शब्दमाला। नवधातवः; 'हेमतारारनागाश्च ताम्रवङ्गे च तीक्ष्णकम्। कांस्यकं कान्तलोहश्च धातवो नव कीर्तिताः'—इति सुखबोधे। अष्ट धातवः; 'हिरण्यं रजतं कांस्यं ताम्रं सीसकमेव च। रङ्गमायसरैत्यञ्च धातवोऽष्टौ प्रकीर्तिताः'—इति दानसागरे। सप्त धातवः; 'स्वर्णं रूप्यं च ताम्रं च रङ्गं यशदमेव च। सीसं लौहं च सप्तैते धातवो गिरिसम्भवाः'—इति भावप्रकाशः। 'माक्षिकं तुत्थिकाभ्रे च नीलाञ्जनशिलालकाः। रसकश्चेति विज्ञेया एते सप्तोपधातवः।' 'स्तन्यं रजश्च नारीणां काले भवति गच्छति। शुद्धमांसभवः स्नेहो यः सा संकीर्त्यते वसा। स्वेदो दन्तास्तथा केशास्तथैवोजश्च सप्तमम्। इति धातुभवा ज्ञेया एते सप्तोपधातवः'—

इति सुखबोधः। १७०

धात्री स्त्री. [धीयते पीयते इति। धेट् पाने+'सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्' इति कर्मणि ष्ट्रन्। षित्वाद् ङीष्। स्तनदुग्ध-पानात्तथात्वम्। यद्वा दधाति धरतीति, धा+तृच्+ङीप्। दधाति धारयति सर्वमिति] क्षितिः; उपमाता (५०७); 'कुमाराः कृतसंस्कारास्ते धात्रीस्तनपायिनः। आनन्देनाग्रजेनेव समं ववृधिरे पितुः'–इति रघुवंशे (१०।७८)। आमलकीवृक्षः (६१८); अस्याः पर्यायाः–'धात्री कर्षफला तिष्या वयस्थामलकी शिवा'—इति वैद्यकरत्नमाला। माता; 'पुनर्धात्रीं पुनर्गर्भमोजस्तस्य प्रधावति। अष्टमे मास्यतो गर्भो जातः प्राणैर्विमुच्यते'—इति याज्ञवल्क्यसंहिता (३।८२)। गायत्रीस्वरूपिणी भगवती; 'धात्री धनुर्धरा धेनुर्धारिणी धर्मचारिणी'—इति देवीभागवते (१२।६।७८)। गङ्गा; 'धर्मोर्मि-वाहिनी धुर्या धात्री धात्रीविभूषणम्'–इति काशीखण्डे (२९।९२)। १५६

धाना स्त्री. [धीयते इति, धा+'धापवस्यज्यतिभ्यो नः' इति न, टाप्] भृष्टयवाः; धान्यकम्; 'धान्यकं धानकं धान्यं धाना धानेयकं तथा। कुनटी धेनुकाच्छत्रा कुस्तुम्बुरु वितुन्नकम्'—इति भावप्रकाशः। अभिनवः; अङ्कुरः; भिन्नः; चूर्णसक्तवः। ५८५

धानाः स्त्री. [धीयन्ते इति, धा+'धापवस्यज्यतिभ्यो नः' इति न, टाप्] भृष्टयवाः। बहुवचनान्तोऽयं शब्दः। 'प्रसेतामश्वा वि मुचेह शोणा दिवे दिवे सदृशीरद्धि धानाः'–इति वेदे। 'त्वन्तु सदृशीरेकरूपान् धाना भृष्टयवान् दिवे दिवे प्रतिदिवसमद्धि भक्षय' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। 'यवास्तु निस्तुषा भृष्टाः स्मृता धाना इति स्त्रियाम्। धानाः स्युर्दुजरा रूक्षास्तृट्प्रदा गुरवश्च ताः। तथा मेदःकफच्छर्दिनाशिन्यः सम्प्रकीर्तिताः'—इति राजनिर्घण्टः। 'धानासंज्ञास्तु ये भक्ष्याः प्रायस्ते लेखनात्मकाः। शुष्कत्वात्तर्पणा चैव विष्टम्भित्वाच्च दुर्जराः। विरूढधानाः शष्कुल्यो मधुक्रीडाः सपिण्डकाः। सूपाः पूपुलिकाद्याश्च गुरवः पैष्टिकाः परम्।' 'धाना पर्पटपूपाद्यास्तान् बुद्ध्वा निर्दिशेत्तथा'—इति चरकः। ५८५

धान्यम् क्ली. [धाने पोषणे साधु इति। धान+'तत्र साधुः' इति यत्। यद्वा दधातीति, धा+'दधातेर्यन् नुट् च' इति यन् नुट् च] सतुषतण्डुलादि; भोग्यं; भोगार्हम्; अन्नम्; अद्यं; जीवसाधनं; स्तम्बकरिः; व्रीहिः; 'धान' इति भाषा। 'विश्वं स देवः प्रति वारमग्ने धत्ते धान्यं पत्यते वसव्यैः'—इति ऋग्वेदे (६।१३।४)। धन्याकम्; 'धन्याकं धान्यकं धान्यं कुस्तुम्बुरु धनीयकम्। धन्या कुस्तुम्बुरी चान्या वेषलोग्ना वितुन्नकम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। परिपेलं; चतुस्तिलपरिमाणम्। ५८५

धान्यकम् क्ली. [धान्यमिव प्रतिकृतिः। 'इवे प्रतिकृतौ' इति कन्] धान्याकम्; 'धान्यकं चाजगन्धा च सुमुखा-श्चेति रोचनाः। सुगन्धा नाति कटुका दोषानुत्क्लेशयन्ति तु'—इति चरकः। [धान्यमेव, स्वार्थे कन्] धान्यं; पुं. क्षत्रियनृपतिविशेषः; 'राजन्याविच्छिटकुलोद्भूता-वुदयधान्यकौ'—इति राजतरङ्गिण्याम् (८।१०१५)। ६१७

धान्यकोष्ठकम् क्ली. [धान्याय धान्यरक्षणाय यत् कोष्ठकं गृहम्] धान्यरक्षार्थगृहम्। ३१२

धान्यशीर्षकम् क्ली. [धान्यस्य शीर्षकम् अग्रभागः] धान्यमञ्जरी। ५७९

धान्यशूकम् क्ली. [धान्यस्य शूकम्] किंशारुः; धान्य-शिखा। ५७९

धान्याकम् क्ली. [धान्यमकति सादृश्यत्वेन प्राप्नोतीति। अक् गतौ+अण्] धन्याकं; 'धनियाँ' इति भाषा। ६१७

धान्याम्लम् क्ली. [धान्याद् धान्यविकारात् जातम् अम्लम्] काञ्जिकम्; 'धान्याम्लं शालिचूर्णानां कोद्र-वादिकृतं भवेत्। धान्याम्लं धान्ययोनित्वात् प्रीणनं लघु दीपनम्। अरुचौ वातरोगेषु सर्वेष्वास्थापने हितम्'—इति भावप्रकाशः। 'धान्याम्लं भेदि तीक्ष्णोष्णं पित्तकृत् स्पर्शशीतलम्। भ्रमक्लमहरं रुच्यं दीपनं वस्तिशूलनुत्। शस्तमास्थापने हृद्यं लघुवातकफापहम्'—इति वाग्भटः। ३१८

धाम [न्] क्ली. [दधाति गृहस्थादिकं, धीयते द्रव्य-जातमस्मिन्निति वा। धा+'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति मनिन्] रश्मिः; 'पतत्यधो धाम विसारि सर्वतः किमेतदित्याकुलमीक्षितं जनैः'—इति माघे (१।२) गृहम् (२९१); 'भर्तुः कण्ठच्छविरितिगणैः सादरं वीक्ष्यमाणः। पुण्यं यायास्त्रिभुवनगुरोर्धाम चण्डी-श्वरस्य'—इति मेघदूते (३५)। त्विट् (७९८)।

देहः; प्रभावः; 'सहते न जनोऽप्यधःक्रियां किमु लोकाधिकधाम राजकम्'—इति किराते (२।४१)। स्थानम्; 'त्रिषु धामसु यद्भोग्यं भोक्ता भोगश्च यद्भवेत्। तेभ्यो विलक्षणः साक्षी चिन्मात्रोऽहं सदा शिवः'–इति पञ्चदश्याम् (७।२१४)। जन्म; विष्णुः; 'गुरुर्गुरुतरो धाम सत्यः सत्यपराक्रमः।' धाम ज्योतिः, नारायणः परं ज्योतिरिति मन्त्रवर्णात्। सलोकानामास्पदत्वाद् वा धाम। परं ब्रह्म परं धाम इति श्रुतेः' इति तद्भाष्यम्। ३९

धारा स्त्री. [धार्यन्ते अश्वा यया। धृ+णिच्+अङ, स्त्रियां टाप्] प्रवाहः; 'सहस्राक्षं शतधारमृषिभिः पावन कृतम्। तेन त्वामभिषिञ्चामि पावमान्यः पुनन्तु ते'–इति याज्ञवल्क्यः (१।२८०)। अश्वानां पञ्चधागतिः; 'अश्वानां तु गतिर्धारा विभिन्ना सा च पञ्चधा। आस्कन्दितं धोरितकं रेचितं वल्गितं प्लुतम्'—इति वैजयन्ती। सैन्याग्रिमस्कन्धः; घटादिच्छिद्रम्; सन्ततिः; 'उत्पपात ततो धारा वारिणो विमला शुभा'—इति महाभारते (६।११८।२४)। द्रवस्य प्रपातः; 'त्वया द्वादश वर्षाणि वसोर्धाराहुतं हविः। उपयुक्तं महाभाग! तेन त्वां ग्लानिराविशत्'—इति महाभारते (१।२२४।५९)। खड्गादेर्निशितमुखम्; 'ध्रुवं स नीलोत्पलपत्रधारया शमीलतां छेत्तुमृषिर्व्यवस्यति'—इति शाकुन्तले। उत्कर्षः; रथचक्रम्; 'आभाति वेला लवणाम्बुराशेर्धारानिबद्धेव कलङ्करेखा'—इति रघौ (१३।१५)। यशः; अतिवृष्टिः; 'पर्जन्यस्य यथा धारा यथा च दिवि तारकाः। सिकतारेणवो यद्वत् संख्यया परिवर्जिताः। गुणाः संख्यापरित्यक्तास्तद्वदस्य महात्मनः' इति पञ्चतन्त्रे (२।६२)। समूहः; घनासारवर्षणं; सदृशः; मालवदेशस्थपुरीविशेषः; तीर्थविशेषः; 'प्रदक्षिणमुपावृत्य गच्छेत भरतर्षभ! धारां नाम महाप्राज्ञ! सर्वपापप्रमोचनीम्। तत्र स्नात्वा नरव्याघ्र! न शोचति नराधिप!'–इति महाभारते (३।८४।२३)। ज्वरादिशान्त्यर्थं श्रीनृसिंहादिमूर्धनि जलधारापातनविधिः; 'तथा महाज्वरग्रस्ते धारां देवस्य मूर्द्धनि। सन्ततां नारसिंहस्य कुर्याद्वा कारयेत् द्विजैः'—इति नृसिंहपुराणे। ६६९

धाराग्रम् क्ली. [धारायाः अस्त्रतीक्ष्णभागस्य अग्रं कोटिः] बाणमुखम्; अस्त्रफलाग्रम्। ४६९

धाराधरः पुं. [धरतीति, धृ+अच्। धाराणां धरः] मेघः; 'रे धाराधर! धीरनीरनिकरैरेषा रसा नीरसा, शेषा पूषकरोत्करैरतिखरैरापूरि भूरि त्वया। एकान्तेन भवन्तमन्तरगतं स्वान्तेन सञ्चिन्तयन्, आश्चर्यं परिपीडितोऽभिरमते यच्चातकस्तृष्णया'—इति उत्तरचातकाष्टके (४)। खड्गः। ५८

धारासम्पातः पुं. [धाराणां सम्यक् पातो यत्र] महावृष्टिः; धारा; सम्पातः; आसारः; 'धारासम्पात आसारस्त्रितयं चापि कुत्रचित्'—इति शब्दरत्नावली। 'ततो देवि! परस्परं करितुरगरथपदातीनां निरन्तरशरनिकरधारासम्पातोपदर्शितदुर्दिनानां तेषामस्माकं च योधानां तुमुलः सम्प्रहारः प्रावर्तत'—इति प्रबोधचन्द्रोदये ५ अङ्के। ५९

धार्तराष्ट्रः पुं. [धृतराष्ट्रे भवः इति रामाश्रमी, 'धृतराष्ट्रः खगे सर्पे सुराज्ञि क्षत्रियान्तरे' इति हैमः] कृष्णवर्णचञ्चुचरणयुक्तहंसः; 'सत्पक्षा मधुरगिरः प्रसाधिताशा मदोद्धतारम्भाः। निपतन्ति धार्तराष्ट्राः कालवशान्मेदिनी पृष्ठे'–इति वेणीसंहारे (१।६)। सर्पविशेषः; धृतराष्ट्रपुत्रः; 'लाक्षागृहानलविषान्नसभाप्रवेशैः प्राणेषु वित्तनिवहेषु च नः प्रहृत्य। आकृष्टपाण्डववधूपरिधानकेशाः स्वस्था भवन्तु मयि जीवति धार्तराष्ट्राः'—इति वेणीसंहारे १ अङ्के। २५२

धिषणः पुं. [धृष्णोति प्रागल्भ्यं ददातीति। धृष्+'धृषेधिष च संज्ञायाम्' इति क्यु] बृहस्पतिः। ४७

धिषणा स्त्री. [धृष्णोत्यनयेति, धृष् प्रागल्भ्ये+क्यु धिषादेशश्च] बुद्धिः; 'विवेष यन्मा धिषणा जजान स्तवैः पुरा पार्यादिन्द्रमह्नः'–इति ऋग्वेदे (३।३२।१४)। स्तुतिः; 'तव त्यदिन्द्रियं बृहत्तव शुष्ममुतक्रतुम्। वज्रं शिशाति धिषणा वरेण्यम्'–इति ऋग्वेदे (८।१५।७)। 'धिषणा स्तुतिः' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। वाक्; 'क्षपां वस्ता जनिता सूर्यस्य विभक्ता भागं भागं धिषणेव वाजम्'—इति ऋग्वेदे (३।४९।४) 'धिषणेव। यथाढ्यानां वाक् अस्येदमिति विभागं करोति तद्वत्' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। प्रस्तरः; 'पवस्व धिषणाभ्यः'–इति ऋग्वेदे (९।५९।२) 'किञ्च धिषणाभ्यो ग्रावभ्यः पवस्व क्षर' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। धारयित्री;

द्यावापृथिव्योः द्विवचनान्तः; 'यं सुकृतं धिषणे विभ्वतष्टं घनं वृत्राणां जनयन्त देवाः'—इति ऋग्वेदे (३।४९।१) 'धिषणे देवमनुष्यादीनां धारयित्र्यौ। यद्वा प्रगल्भ्ये समर्थे स्वाश्रितान् रक्षितुमिति धिषणे द्यावापृथिव्यौ' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। हविर्द्धानस्य पत्नी; 'हविर्द्धानात् षडाग्नेयी धिषणा जनयत् सुतान्। प्राचीनबर्हिषं साङ्गं यमं शुक्रं बलं शुभम्।' इति मात्स्ये (४।४५)। क्ली. स्थानम्; 'तदा विकुण्ठधिषणात् तयोर्निपतमानयोः। हाहाकारो महानासीद्विमानाग्र्येषु पुत्रकाः'—इति भागवते (३।१६।३२) 'विकुण्ठस्य धिषणात् स्थानात्' इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। ३३४

धिष्ण्यः पुं. [धृष्णोति प्रगल्भो भवतीति। धृष्+ण्य, निपातनात् साधुः] शुक्राचार्यः; अग्निः। ४८

धिष्ण्यम् क्ली. [धृष्णोति प्रगल्भो भवतीति। धृष्+ 'सानसिवर्णसिपर्णसीति' ण्यप्रत्ययः निपातनाद् ऋकारस्य च इकारः] स्थानम्; 'द्यौरक्षिणी चक्षुरभूत् पतङ्गः पक्ष्माणि विष्णोरहनी उभे च। तद्भ्रूविजृम्भः परमेष्ठिधिष्ण्यमापोऽस्य तालू रस एव जिह्वा' —इति भागवते (२।१।३०)। 'परमेष्ठिधिष्ण्यं ब्रह्मपदम्'—इति तट्टीकायां स्वामी। गृहम् (२९१); 'स्वर्गे लोके श्ववतां नास्ति धिष्ण्यमिष्टापूर्तं क्रोधवशा हरन्ति'—इति महाभारते (१७।३।१०)। नक्षत्रम् (५१); 'सार्पेन्द्रपौष्ण्यधिष्ण्यानामन्त्याः पादाः भसन्धयः—इति सूर्यसिद्धान्ते (११।२१)। अग्निः; 'ये भक्षयन्तो न वसून्यानृधुर्यानग्नयो अन्वतप्यन्त धिष्ण्याः'—इति अथर्ववेदे (२।३५।१)। शक्तिः; उल्काभेदः; 'दिवि भुक्तशुभफलानां पततां रूपाणि यानि तान्युल्काः। धिष्ण्योल्काशनिविद्युत्तारा इति पञ्चधा भिन्नाः'—इति बृहत्संहितायाम् (३३।१)। प्राणाभिमानी देवः; 'अग्ने! दिवो अर्णमच्छा जिगास्यच्छा देवा ऊचिषे धिष्ण्या ये'—इति ऋग्वेदे (३।२२।३)। 'धियं बुद्ध्युपहितं देहम् उष्णन्ति उष्णीकुर्वन्तीति धिष्ण्याः प्राणाभिमानिनो देवाः' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ५१

धीः स्त्री. [ध्यै चिन्तायाम्+भावे क्विप् सम्प्रसारणं च] बुद्धिः; 'धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः। धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्'—इति मनुः (६।९२)। ३३४

धीमान् [त्] पुं. [धीरस्यास्तीति। धी+मतुप्] त्रि. पण्डितः; 'तस्य कर्मविवेकार्थं शेषाणामनुपूर्वशः। स्वायम्भुवो मनुर्धीमानिदं शास्त्रमकल्पयत्'—इति मनुः (१।१०२)। बृहस्पतिः; नरपुत्रस्य विराजपुत्रः; 'नरो गयस्य तनयः तत्पुत्रोऽभूत् विराट् ततः। तस्य पुत्रो महावीर्यो धीमांस्तस्मादजायत'—इति विष्णुपुराणे (२।१९)। पुरूरवसः उर्वशीगर्भजातपुत्रविशेषः; 'षट् सुता जज्ञिरेऽथैलादायुर्धीमानमावसुः। दृढायुश्च वनायुश्च शतायुश्चोर्वशीसुताः'—इति महाभारते (१।७५।२४)। ३३२

धीरः त्रि. [धियम् ईरयतीति। ईर्+अण्। यद्वा धियं रातीति। रा+क] पण्डितः; 'तथापरे चात्मसमाधियोगबलेन जित्वा प्रकृतिं बलिष्ठाम्। त्वामेव धीराः पुरुषं विशन्ति तेषां श्रमः स्यान्न तु सेवया ते'—इति भागवते (३।६।४५)। बलयुतः; धैर्यान्वितः; स्वैरः; मन्दः; 'देहे समीहे भवतो विधातुं धीरं समीरं नलिनीदलेन'—इति रसमञ्जर्याम्। विनीतः; गम्भीरः; 'अवोचदेनं गगनस्पृशा रघुः स्वरेण धीरेण निवर्तयन्निव'—इति रघौ (३।४४)। ३३२

धीवरः पुं. [दधाति मत्स्यानिति। धा+'छित्वरच्छत्वरधीवरपीवरेति' ष्वरच्प्रत्ययेन निपातनात् साधुः] कैवर्तः; 'यतो हि निम्नं भवति नयन्ति हि ततो जलम्। यतश्छिद्रं ततश्चापि नयन्ते धीवरा जलम्'—इति महाभारते (२।२०।१७)। ५९४

धुनिः स्त्री. [धुनोति वेतसादिनदीजातवृक्षादीनिति। धुञ् कम्पने+'बहुलवचनान् नि, स च कित्'] नदी; 'पयोदरन्तीरनुजोषमस्मै दिवे दिवे धुनयो यन्त्यर्थम्'—इति ऋग्वेदे (२।३०।२)। पुं. जलप्रतिरोधकोऽसुरविशेषः; 'त्वं धुनिरिन्द्र धुनिमतीर्ऋणोरपः सीरानस्रवन्तीः'—इति ऋग्वेदे (१।१७४।९)। 'हे इन्द्र त्वं धुनिः कम्पयिता शत्रूणामसि। अतो धुनिमतीः कम्पनतरङ्गवतीः अथवा धुनिर्नाम जलप्रतिकार्यसुरः स एव प्रतिबन्धकतया यासां तादृशीरपः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। [धूनयति कम्पयति शत्रूनिति] मरुद्विशेषः; 'उग्रश्च भीमश्च ध्वान्तश्च धुनिश्च'—इति यजुःसंहितायाम् (३९।७)। कम्पयितरि त्रि.। 'हिरण्यकेशो रजसोविसारेहिर्धुनिर्वात इव ध्रजीमान्'—इति ऋग्वेदे (१।७९।१)। ६६५

धुनी स्त्री. [धुनि+कृदिकारादिति वा ङीष्] नदी; 'स त्वं विचक्ष्य मृगचेष्टितमात्मनोऽन्तः चित्तं नियच्छ हृदि कर्णधुनीं च चित्ते'—इति भागवते (४।२९।५५)। ६६५

धुर्यः त्रि. [धुरं वहतीति। धुर्+'धुरो यड्ढकौ' इति यत्। 'न भकुर्च्छुराम्' इति न दीर्घः] धुरीणः; अनड्वान्; अश्वादिः; 'पुनरपि चान्योऽप्यश्वार्थी ब्राह्मण आगच्छत्। त्वरितोऽथ तस्मै अपनह्य वामं धुर्यमददद् अथ प्रायात्'—इति महाभारते (३।१९७।१२)। धुरन्धरः; 'तामेकतस्तव बिभर्ति गुरुर्विनिद्रस्तस्या भवानपरधुर्यपदावलम्बी'—इति रघौ (५।६६)। श्रेष्ठः; 'वैन्यस्तु धुर्यो महतां संस्थित्याध्यात्मशिक्षया'—इति भागवते (४।२२।४९)। २६५

धूः [र्] स्त्री. [धुर्वतीति। धुर्व्+क्विप्] यानमुखं; रथादेरग्रभागः; 'क्षणात् प्रांशुः क्षणाद्ध्रस्वः क्षणाच्च रथधूर्गतः'—इति महाभारते (१।१३६।२१)। भारः; 'तेन धूर्जगतो गुर्वी सचिवेषु निचिक्षिपे'—इति रघौ (१।३४)। चिन्ता; अग्रम्; 'अपांसुलानां धुरि कीर्तनीया'—इति रघौ (२।२)। हिंसके त्रि.। 'दशधुरो दशयुक्ता वहद्भ्यः'—इति ऋग्वेदे (१०।९४।७)। 'दशभिर्धुरो धूर्भिर्हिंसितृभिः तृतीयार्थे प्रथमा'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। २६५

धूमकेतुः पुं. [धूमः केतुश्चिह्नं यस्य] अग्निः; 'प्रभां समुत्सृजेदर्कौ धूमकेतुस्तथोष्मताम्'—इति महाभारते (१।१०३।१७)। उत्पातविशेषः; सधूमाभा तारका; 'भवल्लब्धवरोदीर्णस्तारकाख्यो महासुरः। उपप्लवाय लोकानां धूमकेतुरिवोत्थितः'—इति कुमारे (२।३२)। ग्रहभेदः; 'धूमकेतौ समुत्पन्ने ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः। ग्रहाणां सङ्करेचैव न कुर्यान्मङ्गलक्रियाम्। उल्कापाते च त्रिदिनं धूमे पञ्च दिनानि च। वज्रपाते दिनं चैकं वर्जयेत् सर्वकर्मसु'—इति गर्गवचनम्। ८४०

धूमध्वजः पुं. [धूमः ध्वजश्चिह्नं यस्य] अग्निः; 'कथमन्यथा धूमोपलम्भानन्तरं धूमध्वजे प्रेक्षावतां प्रवृत्तिरुपपद्येत'—इति चार्वाकदर्शने। ६२

धूमसंहतिः स्त्री. [धूमस्य संहतिः समूहः] धूमसमूहः। ६६

धूम्या स्त्री. [धूमानां समूहः इति। धूम+पाशादित्वाद् यः] धूमसमूहः। ६६

धूम्याटः पुं. [धूम्या इव अटतीति। अट्+अच्] पक्षिविशेषः; कुलिङ्गः; भृङ्गः। २४८

धूम्रः पुं. [धूमं धूमवर्णं रातीति। रा+क, पृषोदरादित्वात् साधुः] श्यामरक्तमिश्रितवर्णः; धूमलः; कृष्णलोहितः; तद्वति त्रि.। 'धूमधूम्रो वसागन्धो ज्वालाबभ्रुशिरोरुहः। क्रव्याद्गणपरीवारश्चिताग्निरिव जङ्गमः'-इति रघुवंशे (१५।१६)। तुरुष्कः; असुरविशेषः; 'समुद्रो रभसश्चण्डो धूम्रश्चैव महासुरः'—इति हरिवंशे (२३२।८)। स्कन्दस्य सैनिकविशेषः; 'शृणु नामानि वाप्येषां येऽस्य स्कन्दस्य सैनिकाः। धूम्रः श्वेतः कलिङ्गश्च सिद्धार्थो वरदस्तथा'—इति महाभारते (९।४५।६२)। ७३७

धूर्जटिः पु [धूर् भारभूता जटिर्यस्य। यद्वा जट् संघाते+इन्, धूर्गङ्गा जटिष्वस्येति। धुरस्त्रैलोक्यचिन्ताया जटिः संघातो यत्र वा] शिवः; 'क्रुद्धः सुदष्टौष्ठपुटः स धूर्जटिर्जटां तडिद्वह्निसटोग्ररोचिषम्'—इति भागवते (४।५।२)। १२

धूर्तः त्रि. [धूर्वति हिनस्तीति। धूर्व्+'हसिमृग्रिण्वामिदमिलूपूधूर्विभ्यस्तन्' इति तन्] वञ्चकः; मायी; विटः; 'प्रिया हि धूर्ता मम देविनः सदा, भवांश्च देवोपम! राज्यमर्हति'—इति महाभारते (४।६।१२)। 'नराणां नापितो धूर्तः पक्षिणां चैव वायसः। दंष्ट्रिणां च शृगालश्च श्वेतभिक्षुस्तपस्विनाम्'—इति पञ्चतन्त्रे (३।१३)। द्यूतकृत्; पुं. [धूर्वति, हन्तीति। धूर्व+तन्] धुस्तूरवृक्षः; चोरकः; खण्डलवणं; क्ली. विडलवणं; लौहकि म्। ३४९

धूलिः स्त्री. [धुवति धूयते वेति। धू+बाहुलकात् लि] पार्थिवचूर्णं; रेणुः; पांशुः; रजः; धूली; पांसुः; क्षितिकणः; क्षौद्रः; चूर्णम्, तूस्तं; महीद्रवः; वातकेतुः; नभःकेतुः; कणा; क्षितिकणा। 'श्मशानचक्रानिलधूलि धूम्रविकीर्णविद्योतजटाकलापः। भस्मावगुण्ठामलरुक्मदेहो देवस्त्रिभिः पश्यति देवरस्ते'–इति भागवते (३।१४।२४)। ४४३

धूली स्त्री. [धूलि+ङीष्] धूलिः। ४४३

धूसरः पुं. [धुनातीति, धू+'कृधूमदिभ्यः कित्' इति सरन् स च कित्] ईषत्पाण्डुवर्णः; तद्वति त्रि.; 'श्येनपक्षिपरिधूसरालकाः सान्ध्यमेघरुधिरार्द्रवाससः'—इति रघौ (११।६०)। उष्ट्रः; गर्दभः; कपोतः; तैलकारः;

धूसरवस्तूनि; यथा—लूता, धूलिः, करभः, गृहगोधिका, कपोतः, मूषिकः, रङ्कुम्, काककण्ठः, खरादिः। ७३७

धृष्टः त्रि. [धृष्+क्त] निर्लज्जः; धृष्णकः; वियातः; धृष्णुः; दधृक्; धर्षितः; प्रगल्भः; 'जनस्य गोप्तासि विकत्थमानो न शोभसे वृद्धसभासु धृष्टः'—इति भागवते (५।१२।७)। पुं. चतुर्विधपत्यन्तर्गतपतिविशेषः; चेदिवंशीयकुन्तेः पुत्रः; 'कुन्तेर्धृष्टः सुतो जज्ञे रणधृष्टः प्रतापवान्'—इति हरिवंशे (३६।२४)। सप्तममनोः पुत्रविशेषः; 'मनुर्विवस्वतः पुत्रः श्राद्धदेव इति श्रुतः। सप्तमो वर्तमानो यस्तदपत्यानि मे शृणु। इक्ष्वाकुर्नभगश्चैव धृष्टः शर्यातिरेव च'—इति भागवते (८।१३।२)। ३७१

धेनुः स्त्री. [धयति लेढि सुतान्, धीयते वत्सैरिति वा। धेट् पाने+'धेट इच्च' इति नु] नवप्रसूता गौः; नवसूतिका; नवप्रसूतिका; 'यास्तु पापविनाशिन्यः पठ्यन्ते दश धेनवः। तासां स्वरूपं वक्ष्यामि नामानि च धनाधिप'—इति मत्स्यपुराणे। २६९

धेनुका स्त्री. [धेनुरिव प्रतिकृतिः। धेनु+कन्+टाप्] हस्तिनी; [धेनुरेव, स्वार्थे कन्] गौः; 'इमां ते तरुणीं भार्यां त्वदाधिभिरभिप्लुताम्। कथं सन्धारयिष्यामि विवत्सामिव धेनुकाम्'—इति महाभारते (७।७६।१८)। ७९९

धोरणम् क्ली. [धोरति गच्छत्यनेनेति। धोर्+करणे ल्युट्] वाहनमात्रं; हस्त्यश्वरथदोलादि; अश्वप्रथमगतिः; धौरितकं; धौर्यं; धोरितम्। ४४९

धौतम् त्रि. [धाव्यते स्मेति, धाव्+कर्मणि क्त] मार्जितं; निर्णिक्तं; शोधितं; मृष्टं; क्षालितं; प्रक्षालितम्; 'धोया' इति भाषा। 'ईषद्धौतं स्त्रिया धौतं यद्धौतं रजकेन च। अधौतं तद्विजानीयाद्दशा दक्षिणपश्चिमे'—इति कर्मलोचनम्। क्ली. रूप्यम्। (४७४) निशितः; तेजितः। ४०८

धौतकौशेयम् क्ली. [धौतं क्षालितं कौशेयम्] पत्रोर्णम्; कौशेयमेव धौतं प्रक्षालितं पत्रोर्णाख्यं; वटलकुचादिपत्रेषु क्रिमिभिरूर्णायाः कृतत्वात् पत्रसम्बन्धिनी ऊर्णा अत्रेति पत्रोर्णम्। ५४९

धौरेयः पुं. [धुरं वहतीति, 'धुरो यड्ढकौ' इति ढक्] अनडुवान्; त्रि. रथलाङ्गलादिभारवोढा। २६५

ध्माकारः पुं. [ध्मा अग्निसंयोगस्तं करोतीति। ध्मा+कृ+अण्] लोहकारकः। ५८८

ध्रुवम् त्रि. [ध्रु गतिस्थैर्ये+बाहुलकात् क] सन्ततं; शाश्वतं; स्थिरं; निश्चितम्; 'यो ध्रुवाणि परित्यज्य अध्रुवाणि निषेवते। ध्रुवाणि तस्य नश्यन्ति अध्रुवं नष्टमेव हि'—इति चाणक्यशतके। पुं. [ध्रुवति स्थिरीभवतीति, ध्रु+बाहुलकात् क] शङ्कुः (६३); वटः; शिवः; 'धाता शक्रश्च विष्णुश्च मित्रस्त्वष्टा ध्रुवो धरः'—इति महाभारते (१३।१७।३०३)। विष्णुः; 'विश्वकर्मा मनुस्त्वष्टा स्थविष्ठः स्थविरो ध्रुवः'—इति महाभारते (१३।१४९।१९)। उत्तानपादजः; वसुभेदः; 'आपो ध्रुवश्च सोमश्च धरश्चैवानिलोऽनलः। प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ प्रकीर्तिताः'—इति मात्स्ये (५।२१)। योगभेदः; 'गण्डो वृद्धिर्ध्रुवश्चैव व्याघातो हर्षणस्तथा'—इति ज्योतिषे। तत्र जातफलम्; 'नरीनर्ति वाणी सदा वक्त्रपद्मे चरीकर्ति काव्यं बरीभर्ति बन्धून्। ध्रुवाख्ये प्रसूतिर्ध्रुवं वा तस्य कीर्तिर्दिगन्ते नितान्तं भवेच्चारुमूर्तिः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। स्थाणुः; शरारिपक्षी; ध्रुवकः; रोहिणीगर्भे वसुदेवाज्जातः पुत्रविशेषः; 'बलं गदं सारणं च दुर्मदं विपुलं ध्रुवम्। वसुदेवस्तु रोहिण्यां कृतादीनुदपादयत्'—इति भागवते (९।२४।४६)। पाण्डवपक्षीयः कश्चित् क्षत्रियवीरः; नहुषस्य पुत्रविशेषः; 'यतिं ययातिं संयातिम् आयातिम् अयतिं ध्रुवम्। नहुषो जनयामास षट् सुतान् प्रियवाससि'—इति महाभारते (१।७५।३०)। पुरुवंशीयरन्तिनावस्य पुत्रविशेषः; 'ऋतेयो रन्तिनावोऽभूत् त्रयस्तस्यात्मजा नृप! सुमतिर्ध्रुवो प्रतिरथः कण्वो प्रतिरथात्मजः'—इति भागवते (९।२०।६)। रोमावर्तविशेषः; 'द्वावुरस्यौ शिरस्यौ द्वौ द्वौ द्वौ रन्ध्रोपरन्ध्रयोः। एको भाले क्षपाने च दशावर्ता ध्रुवाः स्मृताः'—इति शब्दार्थचिन्तामणौ। यज्ञीयग्रहपात्रविशेषः; 'यजमानस्ततो ग्रहग्रहणमाध्रुवात्'—इति कात्यायनश्रौतसूत्रे (९।५।१७)। नासाग्रम्; 'अरुन्धतीं ध्रुवं चैव विष्णोस्त्रीणि पदानि च। आसन्नमृत्युर्नो पश्येच्चतुर्थं मातृमण्डलम्। अरुन्धती भवेज्जिह्वा ध्रुवो नासाग्रमुच्यते। विष्णोः पदानि भ्रूमध्ये नेत्रयोर्मातृमण्डलम्'—इति काशीखण्डे (१२।१३।१४)। ध्रुवगणः; यथा—उत्तरा-

फाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी। ताराविशेषः; 'मेरोरुभयतो मध्ये ध्रुवतारे नभःस्थिते। निरक्षदेशसंस्थानामुभये क्षितिमाश्रिते। भचक्रं ध्रुवयोर्बद्धमाक्षिप्तं प्रवहानिलैः। पर्येत्यजस्रं तन्नद्धा ग्रहकक्षा यथाक्रमम्'—इति सूर्यसिद्धान्ते। क्ली. [ध्रुवति स्थिरीभवतीति, ध्रु+'ध्रुवः कः' इत्यत्र बाहुलकाद् ध्रु स्थैर्ये अतोऽपि क] निश्चितम्; 'ध्रुवं स नीलोत्पलपत्रधारया शमीलतां छेत्तुमृषिर्व्यवस्यति'—इति शाकुन्तले। तर्कः; आकाशम्। १२५

ध्रुवकः पुं. [ध्रुव+स्वार्थे कन्] स्थाणुः; गीताङ्गविशेषः; 'उत्तमः षट्पदो ज्ञेयो मध्यमः पञ्चमः स्मृतः। कनिष्ठश्च चतुर्भिः स्याद् ध्रुवकोऽयं मयोदितः'—इति सङ्गीतदामोदरः। ४५१

ध्वजः पुं.–क्ली. [ध्वजति उच्छ्रितो भवतीति। ध्वज्+पचाद्यच्] पताका; 'किं तेन जातु जातेन मातुर्यौवनहारिणा। आरोहति न यः स्वस्य वंशस्याग्रे ध्वजो यथा'—इति पञ्चतन्त्रे (१।३२)। खट्वाङ्गं; मेढ्रम्; 'विदग्धैस्तु सिरास्नायुत्वङ्मांसैः क्षीयते ध्वजः'—इति सुश्रुतः। चिह्नम्; 'तं वव्रे वाहनं विष्णुर्गरुत्मन्तं महाबलम्। ध्वजं च चक्रे भगवानुपरि स्थास्यतीति तम्'—इति महाभारते (१।३३।१७)। गर्वः; दर्पः; पूर्वदिशो गृहं; पताकादण्डः; केतनम्; 'ततोऽर्जुनः सुशर्माणं विद्ध्वा सप्तभिराशुगैः। ध्वजं धनुश्चास्य तथा क्षुराभ्यां समकृन्तत'—इति महाभारते (७।२७।६)। पुं. [ध्वजोऽस्त्यस्येति। ध्वज+अर्श आदित्वादच्] शौण्डिकः; 'दशसूनासमं चक्रं दशचक्रसमो ध्वजः। दशध्वजसमो वेशो दशवेशसमो नृपः'—इति मनु (४।८५)। ४५८

ध्वजिनी स्त्री. [ध्वजोऽस्त्यस्याः। ध्वज+इनि+ङीप्] सेना; 'मत्स्यध्वजा वायुवशाद्विदीर्णैर्मुखैः प्रवृद्धध्वजिनीरजांसि। बभुः पिबन्तः परमार्थमत्स्याः पर्याविलानीव नवोदकानि'—इति रघुवंशे (७।४०)। ४५७

ध्वनिः पुं. [ध्वननमिति, ध्वन्+'खनिकष्यञ्ज्यसीति' इ] शब्दः; मृदङ्गादिशब्दः; 'शब्दो ध्वनिश्च वर्णश्च मृदङ्गादिभवो ध्वनिः। कण्ठसंयोगजन्मानो वर्णास्ते कादयो मताः'—इति भाषापरिच्छेदः। [ध्वन्यतेऽस्मिन्निति। ध्वन्+अधिकरणे इ] उत्तमकाव्यम्; 'इदमुत्तममतिशयिनि व्यङ्ग्ये वाच्याद् ध्वनिर्बुधैः कथितः'—इति काव्यप्रकाशः। 'वाच्यातिशयिनि व्यङ्ग्ये ध्वनिस्तत्काव्यमुत्तमम्'—इति साहित्यदर्पणे (४।१)। ५४०, १४३, १५१

ध्वाङ्क्षः पुं. [ध्वाङ्क्षति उच्चैः रौतीति। ध्वाक्षि घोरवासिते, अच्] काकः; 'शुष्कवृक्षस्थितो ध्वाङ्क्ष आदित्याभिमुखस्तथा। मयि चोदयते वामं चक्षुर्घोरमसंशयम्'—इति मृच्छकटिके ९ अङ्के। मत्स्यभक्षकपक्षी (८०७); तक्षकः; भिक्षुकः। ('ध्माङ्क्षः' इति केचित्।) २४५

ध्वाङ्क्षारातिः पुं. [ध्वाङ्क्षाणामरातिः शत्रुः] पेचकः; उलूकः। २४६

ध्वानः पुं. [ध्वन्+भावे घञ्] शब्दः; 'शशामाक्रन्दितध्वानो न च चौरो व्यभाव्यत'—इति राजतरङ्गिण्याम्। १३८

ध्वान्तम् क्ली. [ध्वन्+'क्षुब्धस्वान्तध्वान्तेति' क्त प्रत्ययेन निपातनात् साधुः] अन्धकारः; 'फणातपत्रायुतमूर्द्धरत्नद्युभिर्हतध्वान्तयुगान्ततोये'—इति भागवते (३।८।२४)। ११०

न

नःक्षुद्रः त्रि. [नसा नासिकया क्षुद्रः] क्षुद्रनासिकः। ६०७

नकुलः पुं. [नास्ति कुलं यस्य। 'नभ्राण्नपादिति' नञो न लोपादि] जन्तुविशेषः; पिङ्गलः; सर्पहा; बभ्रुः; सूचीवदनः; सर्पारिः; लोहिताननः; 'नेउला' इति भाषा। 'सत्त्वैः सत्त्वा हि जीवन्ति दुर्बलैर्बलवत्तराः। नकुलो मूषिकानत्ति बिडालो नकुलं तथा। बिडालमत्ति श्वा राजन्! श्वानं व्यालमृगस्तथा'—इति महाभारते (१२।१५।२०)। पाण्डुराजस्य चतुर्थपुत्रः, स माद्रीगर्भे अश्विनीकुमाराभ्यां जातः। पुत्रः; शिवः; 'युधिष्ठिरस्य या कन्या नकुलेन विवाहिता। पूजिता सहदेवेन सा कन्या वरदा भवेत्'—इति विदग्धमुखमण्डने। कुलरहिते त्रि.। ८१६

नक्तञ्चरः पुं. [नक्तं रात्रिं चरतीति। चर्+'चरेष्टः' इति ट] राक्षसः; गुग्गुलुः; चौरः; पेचकः; रात्रिचरमात्रे त्रि.। 'नक्तञ्चरेभ्यो भूतेभ्यो बलिमाकाशतो हरेत्'—इति मार्कण्डेयपुराणे (२९।२०)। ७३

नक्तमालः पुं. [नक्तं रात्रौ आ सम्यक्प्रकारेण अलति पर्याप्नोति । नक्तम्+आ+अल्+अच्] करञ्जवृक्षः; 'स नर्मदारोधसि सीकरार्द्रैर्मरुद्भिरानर्तितनक्तमाले'—इति रघुवंशे (५।४२) । १९८

नक्तमुखा स्त्री. [नक्तं नक्तव्रताङ्गं मुखम् आदिभागो यस्याः] रात्रिः । १०७

नक्रः पुं. [न क्रामति दूरस्थलमिति । न+क्रम्+'अन्येष्वपीति' ड । 'नभ्राडिति' नलोपो न] कुम्भीरः; 'नक्रः स्वस्थानमासाद्य गजेन्द्रमपि कर्षति । स एव प्रच्युतः स्थानात् शुनापि परिभूयते'—इति पञ्चतन्त्रे (३।४३) । मकरः; 'तथा चेन्नाचरेयं नयेत नक्रकेतनः क्षणेनैकेनाकीर्तनीयां दशां जनं चैनम्'—इति कादम्बर्याम् । ग्राहः; 'स तीरभूमौ विहितोपकार्यामानायिभिस्तामपकृष्टनक्राम्'—इति रघुवंशे (१६।५५) । क्ली. [नक्रवत् आकृतिरस्त्यस्येति, अच्] अग्रदारु; नासिका । ६५६

नक्षत्रम् क्ली. [न क्षरति क्षीयते वा । ष्ट्रन्प्रत्यये सति 'नभ्राण्नपादिति' निपातितः । न क्षत्रं वा, देवत्वात् क्षत्रियभिन्नत्वेन तथात्वम् । नक्षति शोभां गच्छति स्थानान्तरं गच्छति वा । णक्ष् गतौ+'अमिनक्षियजिवधिपतिभ्योऽत्रन्' इति अत्रन्] तारा; ऋक्षं; भं; तारका; उडु; तारकं; तारः । दाक्षायण्यः (क्रान्तिवृत्तस्थसप्तविंशतिनक्षत्राणि 'दाक्षायण्यः' इत्युच्यन्ते), तास्तु अश्विनी १, भरणी २. कृत्तिका ३, रोहिणी ४, मृगशिराः ५. आर्द्रा ६, पुनर्वसुः ७, पुष्यः ८, आश्लेषा ९, मघा १०, पूर्वाफाल्गुनी ११, उत्तराफाल्गुनी १२, हस्तः १३, चित्रा १४, स्वातिः १५, विशाखा १६, अनुराधा १७, ज्येष्ठा १८, मूलम् १९, पूर्वाषाढा २०, उत्तराषाढा २१, श्रवणः २२, धनिष्ठा २३, शतभिषा २४, पूर्वाभाद्रपदा २५, उत्तराभाद्रपदा २६, रेवती २७ । नक्षत्रचतुर्थभागबोधकानि चत्वारि नामाद्यक्षराणि यथा—चु चे चो ल १, लि लु ले लो २, अ इ उ ए ३, ओ व वि वु ४, वे वो क कि ५, कु घ ङ छ ६, के को ह हि ७, हु हे हो ड ८, डि डु डे डो ९, म मि मु मे १०, मो ट टि टु ११, टे टो प पि १२, पु ष ण ठ १३, पे पो र रि १४, रु रे रो त १५, ति तु ते तो १६, न नि नु ने १७, नो य यि यु १८, ये यो भ भि १९, भु ध फ ढ २०, भे भो ज जि २१, जु जे जो ख (अभिजित्), खि खु खे खो २२, ग गि गु गे २३, गो श शि शु २४, शे शो द दि २५, दु थ झ ञ २६, दे दो च चि २७ । 'ऋ-लृ-युक्तश्चाकारयुक्तेन ज्ञेयः । ह्रस्वेन दीर्घो ज्ञेयः । तालव्यशकारेण दन्त्यसकारो ज्ञेयः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । एतेषां लिङ्गज्ञानं च तन्त्रान्तरे—'हस्तस्वातिश्रवणा अक्लीवे मृगशिरो नपुंसि स्यात् । पुंसि पुनर्वसुपुष्यौ मूलं त्वस्त्री स्त्रियः शेषाः ।' वचनज्ञानं चैतेषां कर्मप्रदीपे—'आग्नेयाद्येऽथ सर्पाद्ये विशाखाद्ये तथैव च । आषाढाद्ये धनिष्ठाद्ये अश्विन्याद्ये तथैव च । द्वन्द्वान्येतानि बहुवद् ऋक्षाणां जुहुयात्सदा । द्वन्द्वद्वयं द्विवच्छेषमवशिष्टान्यथैकवत् ।' एवं चाद्याश्चतस्रः स्त्रियां बहुत्वे, मृगशिराः स्त्रीक्लीवयोरेकत्वे, आर्द्रा स्त्र्येकत्वे, पुनर्वसुपुष्यौ पुंस्येकत्वे, आश्लेषाद्ये स्त्रीबहुत्वे, फल्गुन्यौ स्त्रीद्वित्वे, हस्तो मिथुनैकत्वे, चित्रा स्त्र्येकत्वे, स्वातिर्मिथुनैकत्वे, विशाखाद्ये स्त्रीबहुत्वे, ज्येष्ठा स्त्र्येकत्वे, मूलमस्त्रियामेकत्वे, आषाढाद्वये स्त्रीबहुत्वे, श्रवणो मिथुनैकत्वे, धनिष्ठाद्ये स्त्रीबहुत्वे, भाद्रपदाद्वयं स्त्रीद्वित्वे, रेवती स्त्र्येकत्वे इति निष्कर्षः । मुकुटस्तु यदाह 'अश्विनी भरणी रोहिणी मृगशिर आर्द्रा पुष्याश्लेषा हस्त चित्रा स्वात्यनुराधा ज्येष्ठा मूलाषाढा श्रवण धनिष्ठा शतभिषग्रेवतीनामेकवचनान्तत्वम्, पुनर्वसु फल्गुनी विशाखा भाद्रपदानां द्विवचनान्तत्वम्, कृत्तिका मघयोर्बहुवचनान्तत्वम् । तत्रोक्तार्षवाक्यविरोधः स्पष्टएवेतिव्याख्यासुधायांदाधिमथः । ५१

नक्षत्रमाला स्त्री [नक्षत्रसंख्यिका माला] सप्तविंशति मौक्तिककृतहारः; 'सप्तविंशतिरूपाढ्यै रूपकै रूपरूपकैः । नृत्ये नक्षत्रमाला स्यान्मुक्तावलिरिवोज्ज्वला'—इति सङ्गीतदामोदरः । नक्षत्राणां माला समूहः; नक्षत्रश्रेणी; 'यावन्नक्षत्रमाला विरचति गगने भूषयन्तीह भासा; तावन्नक्षत्रभूतो विचरति सह तैर्ब्रह्मणोऽह्नोऽवशेषम्'—इति बृहत्संहितायाम् (१०५।१३) । ५६३

नखम् क्ली.-पुं. [न खम् इति, 'नभ्राण्नपादिति' निपातितः । यद्वा नह्यते इव शरीरे । णह् बन्धने+'नहेर्हलोपश्च' इति ख, हलोपश्च] अङ्गुलीकण्टकः; पुनर्भवः; कररुहः; नखरः; कामाङ्कुशः; करजः; पाणिजः; अङ्गुलीसम्भूतः; पुनर्नवः; कारग्रजः; करकण्टकः;

स्मराङ्कुशः; रतिरथः; करचन्द्रः; कराङ्कुशः। 'न नखैर्विलिखेद् भूमिं गां च सद्वेशयेन्नहि। न स्वाङ्गे नखवाद्यं वै कुर्यान्नाञ्जलिना पिबेत्'—इति कूर्मे। क्ली. [नखमिव आकृतिरस्त्यस्येति अच्] नखीनामगन्धद्रव्यं; शुक्तिः; शङ्खः; खुरः; कोलदलं; करजाख्यः; अश्वखुरः; नखः; व्याघ्रनखः; नखी; कररुहः; सिम्बी; शफः; चलः; कोशी; करजः; हनुः; नागहनुः; पाणिजः; बदरीपत्रः; रूप्यः; पण्यविलासिनी; सन्धिनालः; पाणिरुहः; व्याघ्रायुधं; चक्रकारकं; शङ्खनखः; नखरी। 'नखं व्याघ्रनखं व्याघ्रायुधं तच्चक्रकारकम्। नखं स्वल्पं नखी प्रोक्ता हनुर्हट्टविलासिनी। नखद्वयं ग्रहश्लेष्मवातास्रज्वरकुष्ठहृत्। लघूष्णं शुक्रलं वर्ण्यं स्वादुव्रणविषापहम्। अलक्ष्मीमुखदौर्गन्ध्यहृत्पाकरसयोः कटु'—इति भावप्रकाशः। पुं. [नह्यतेऽनेनेति, नह्+ख। हस्य लोपः] खण्डम्। ५११

नखरः पुं.—क्ली. [न खनति खन्यते वा। 'डडरेकवकाः।' नखं रातीति, रा+क वा] नखः; 'किं पुनरलङ्कृतस्त्वं सम्प्रति नखरक्षतैस्तस्याः'—इति साहित्यदर्पणे। अस्त्रविशेषः; 'सकम्पनर्ष्टिनखरा मुषलानि परश्वधाः'—इति महाभारते (७।२९।१७)। 'पादाताश्चाग्रतोऽगच्छन् धनुश्चर्मासिपाणयः। अनेकशतसाहस्रा नखरप्रासयोधिनः'—इति महाभारते (६।१८।१७)। ५११

नखरायुधः पुं. [नखरमेव आयुधं यस्य] सिंहः; व्याघ्रः; कुक्कुटः। २१४

नगः पुं. [न गच्छतीति, न+गम्+ड। यद्वा दह्यते इति, दह्+'दहेर्गोलोपो दश्च नः' इति ग धातोरन्त्यलोपो दस्य च नः] पर्वतः; 'नवे दुकूले च नगोपनीतं प्रत्यग्रहीत् सर्वममन्त्रवर्जम्'—इति कुमारे (७।७२)। वृक्षः (१७७); 'तं दग्ध्वा स नगं नागः कश्यपं पुनरब्रवीत्। कुरु यत्नं द्विजश्रेष्ठ! जीवयैनं वनस्पतिम्'—इति महाभारते (१।४३।६)। स्थावरमात्रम्; 'मुख्या नगा यतश्चोक्ता मुख्यसर्गस्ततस्त्वयम्'—इति विष्णुपुराणे (१।५।६) 'नगाः स्थावराः' इति तट्टीकायां स्वामी। १६५

नगरम् क्ली. [नगा इव प्रासादादयः सन्ति यत्र। 'नगपांसुपाण्डुभ्यश्च' इत्युक्तया र] बहुलोकवासस्थानं; पूः; पुरी; पुरिः; पुरं; नगरी; पत्तनं; पट्टनं; पट्टनी; पुटभेदनं; पटभेदनं; स्थानीयं; निगमः; कटकं; पट्टम्। 'स्थिरराशिगते भानौ चन्द्रे च स्थिरभोदये। शुद्धे काले दिने चैव नगरं कारयेन्नृपः।' 'दीर्घं वा चतुरस्रं वा नगरं कारयेन्नृपः। तत् त्र्यस्रं वर्तुलं वापि कदाचिदपि कारयेत्'—इति युक्तिकल्पतरुः। २८५

नगरी स्त्री. [नगर+ङीष्] नगरम्; 'प्रीत्या ददौ स कर्णाय मालिनीं नगरीमथ। अङ्गेषु नरशार्दूल! स राजासीत् सपत्नजित्'—इति महाभारते (१२।५।६)। २८५

नगौकाः [स्] पुं. [नगो वृक्षः पर्वतो वा ओक आश्रयस्थानं यस्य] पक्षी; सरभः; सिंहः; काकः; नगरवासिनि त्रि.। २३८

नग्ना स्त्री. [नग्न+टाप्] विवस्त्रा स्त्री; कोट्टवी; कोटवी; नग्निका; नग्नयोषित्; अनुद्भिन्नकुचा कन्या; 'ऋतुमत्यां तु तिष्ठन्त्यां स्वेच्छादानं तु दीयते। तस्मादुद्वाहयेद् नग्नां मनुः स्वायम्भुवोऽब्रवीत्'—इति पञ्चतन्त्रे (३।२१७)। ४८३

नग्नाटः पुं. [नग्नः सन् अटतीति। अट्+अच्] दिगम्बरः; नग्नाटकः। ३४५

नग्निका स्त्री. [नग्नैव, स्वार्थे कन्। टापि अत इत्वम्] विवस्त्रा स्त्री; कोट्टवी; कोटवी; कोटरी; अप्राप्तरजस्का; गौरी; अनागतार्तवा; गौरिका; अजातकुचकन्या; 'अव्यञ्जना भवेत्कन्या कुचहीना तु नग्निका' इति पञ्चतन्त्रे (३।२१३)। ४८४

नटः पुं. [नटति नृत्यतीति, नट्+अच्। यद्वा नमतीति, नम्+डट] नर्तकः; शैलाली; शैलूषः; जायाजीवः; कृशाश्वी; भरतः; सर्ववेशी; भरतपुत्रकः; धात्रीपुत्रः; रङ्गजीवः; रङ्गावतारकः। 'तं क्रीडसे निजविनिर्मितमोहजाले नाट्ये यथा विहरते स्वकृते नटो वै'—इति देवीभागवते (१।७।४२)। अशोकवृक्षः; किष्कुपर्वा; मदनफलम्; 'मदनश्छर्दनः पिण्डी नटः पिण्डीतकस्तथा। करहाटो मरुवकः शल्यको विषपुष्पकः'—इति भावप्रकाशः। अशोकः; 'अशोको हेमपुष्पश्च वञ्जुलस्ताम्रपल्लवः। कङ्केलिः पिण्डपुष्पश्च गन्धपुष्पो नटस्तथा'—इति भावप्रकाशः। वर्णसङ्करजातिविशेषः; 'शौचिक्यां शौण्डिकाज्जातो नटो वरुड एव च'—इति पराशरपद्धतौ। व्रात्यायां क्षत्रियाज्जातः; 'झल्लो

मल्लश्च राजन्यात् व्रात्यान्निच्छिविरेव च। नटश्च करणश्चैव खसो द्रविड एव च'—इति मनुः (१०।२२) श्रीरागस्य पुत्रः हनूमन्मते दीपकरागस्य रागिणी। ५९२

नटनारायणः पुं. [नटानां नारायण इव] रागविशेषः। १०० अ

नटी स्त्री. [नटति शोभते इति। नट्+अच्+ङीष्। नटति नृत्यतीति, नट्+अच्+ङीष् वा] नटपत्नी; 'जगुर्भद्राणि गन्धर्वा नटचश्च ननृतुर्जगुः'—इति भागवते (८।८।१२)। इयं हि पञ्चमकारपूज्यकुलनायिकान्तर्गता; 'नटी कापालिनी वेश्या रजकी नापिताङ्गना। ब्राह्मणी शूद्रकन्या च तथा गोपालकन्यका। मालाकारस्य कन्या च नव कन्याः प्रकीर्तिताः'—इति तन्त्रसारे। नलीनामगन्धद्रव्यं; वेश्या। ५९२

नटीसुतः पुं. [नटयाः सुतः पुत्रः] नाटेरः। ५०१

नड्वलः त्रि. [नडाः सन्त्यत्र। नड+'नडशादाद् ड्वलच्' इति ड्वलच्] नलबहुलदेशः; नड्वान्; 'यो नड्वलानीव गजः परेषां बलान्यमृद्नान्नलिनाभवक्त्रः'—इति रघुः (१८।५)। १५९

नतः त्रि. [नम्+क्त] कुटिलः; वक्रः; नम्रः (७६०); 'पतन्ति युगपत् सर्वे पादयोर्मूर्द्धभिर्नताः'—इति हरिवंशे (२०१।३९)। क्ली. तगरपादी; तगरमूलम्; 'कालानुशारिवावक्रं तगरं कुटिलं शठम्। महोरगं नतं जिह्मं दीनं तगरपादिकम्'—इति वैद्यकरत्नमाला। पुं. [नमति स्मेति, नम्+क्त] जन्मनाडिकाविशेषः; 'असकृत्कर्मणा येन यान्ति दृक्तुल्यतां दिवि। नतोन्नतौ ततः साध्यौ भावाः खेटबलानि षट्। दिनार्द्धान्तरिता जन्मनाडिका नतनाडिका। पूर्वापरार्द्धे जातस्य प्राक्पराख्या दिने भवेत्। रात्रेर्गतघटीशेषघटीदिनार्द्धसंयुता। परपूर्वाभिधा ज्ञेया रजन्यां नतनाडिका'—इति कोष्ठीप्रदीपः। ६९६

नदः पुं. [नदति प्रवाहवेगेन शब्दायते इति। णद्+अच्] पुंवाचकाकृत्रिमखातावच्छिन्नजलप्रवाहः। स च सिन्धुभैरवशोणदामोदरब्रह्मपुत्रादयः, पुनर्वहः; भिद्यः; उद्ध्यः; सरस्वान्; 'अष्टषष्टिस्तु तीर्थानि नदाश्च दशकोटयः'—इति पाद्मे। 'यथा नदीनदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्। तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम्'—इति मनुः (६।९०)। ६६६

नदी स्त्री. [नदतीति, नद्+अच्, पचादिगणे नदट् इति निर्देशात् टिड्ढेति ङीप्] अष्टसहस्रधनुरन्यूनव्याप्ततोया; सरित्; तरङ्गिणी; शैवलिनी; तटिनी; ह्रदिनी; धुनी; स्रोतस्वती; द्वीपवती; स्रवन्ती; निम्नगा; आपगा; ह्लादिनी; धुनिः; स्रोतस्विनी; स्रोतोवहा; सागरगामिनी; अपगा; निर्झरिणी; सरस्वती; समुद्रगा; कूलङ्कषा; कूलवती; शैवालिनी; सिन्धुः; समुद्रकान्ता; सागरगा; कृष्णा; रोधोवती; वाहिनी। 'धनुःसहस्राण्यष्टौ च गतिर्यासां न विद्यते। न ता नदीशब्दवहा गतास्ताः परिकीर्तिताः'—इति तिथितत्त्वम्। अस्या वैदिकपर्यायाः—'अवनयः; यह्वाः; स्वाः; सीराः; स्रोत्याः; एन्यः; धुनयः; रुजानाः; वक्षणाः; स्वादोअर्णाः; रोधचक्राः; हरितः; सरितः; अग्रुवः; नभन्वः; वभ्वः; हिरण्यवर्णाः; रोहितः; सस्रुतः; अर्णाः; सिन्धवः; कुल्याः; वर्यः; उर्व्यः; इरावत्यः; पार्वत्यः; स्रवन्त्यः; ऊर्जस्वत्यः; पयस्वत्यः; सरस्वत्यः; तरस्वत्यः; हरस्वत्यः; रोधस्वत्यः; भास्वत्यः; अजिराः; मातरः; नद्यः'—इति सप्तत्रिंशन्नदीनामानि वेदनिघण्टौ (१।१३)। ६६५

नदीमातृकः त्रि. [नदी मातेव पोषिका यस्य, कप्] नद्यम्बुसम्पन्नव्रीहिपालितदेशः। १६१

नद्धः त्रि. [नह्यते स्मेति, नह्+क्त] बद्धः; संयतः; 'दिव्यैश्च कवचैर्नद्धा दिव्यैश्चैवोच्छ्रितैर्ध्वजैः'—इति हरिवंशे (२३२।१७)। उद्वृत्तः। ३४०

नध्री स्त्री. [नह्यतेऽनया, नह्+दाम्नीति ष्ट्रन् ततो ङीप्] चर्मरज्जुः; 'अत्रापि धिग्जनुषि पुत्रकलत्रमित्र—नद्ध्रयावनद्धहृदयो न च तं स्मरामि'—इति प्रद्युम्नविजये चतुर्थाङ्के। ५९६

नद्यम्बुजीवनः पुं. [कुल्यादिरूपेण नद्यम्बुना जीवतीति, ल्यु] स देशः नदीमातृकः; नद्यम्बुसम्पन्नव्रीहिपालितदेशः। १६१

ननु अव्य. [न नुदति प्रेरयतीति। न+नुद्+मितद्र्वादित्वात् डु] प्रश्नार्थे; यथा—नन्वध्येष्यामहे। अवधारणे; 'उपपन्नं ननु शिवं सप्तस्वङ्गेषु यस्य मे। दैवीनां मानुषीणां च प्रतिहर्ता त्वमापदाम्'—इति रघुवंशे (१।६०)। पृच्छा; निश्चयः; 'लोको दैवं समालोक्य उदासीनो भवेन्ननु'—इति महाभारते (१३।६।२९)।

अनुज्ञा; 'ननु सन्दिशेति सुदृशोदितया त्रपया न किञ्चन किलाभिदधे'—इति माघे (९।६१) । अनुमतिः; अनुनयः; सान्त्वनम्; आमन्त्रणं; सम्बोधनम्; 'विधुरां ज्वलनातिसर्जनात् ननु मां प्रापय पत्युरन्तिकम्'—इति कुमारे (४।३२) । विनिग्रहः; अनुप्रश्नः; विरोधोक्तिः; परकृतिः; अधिकारः; सम्भ्रमः; आक्षेपः; प्रत्युक्तिः; वाक्यारम्भः; उत्प्रेक्षालङ्कारव्यञ्जकम्; 'मन्ये शङ्के ध्रुवं नूनं किं वा प्रायोनु वेद्मि च। ननु नाम हि जानामि उत्प्रेक्षाव्यञ्जकानि च।' ८८४

नन्दकः पुं. [नन्दयतीति, नन्द्+ण्वुल्] विष्णुखड्गः; 'रथाङ्गेनाथ शार्ङ्गेण गदया नन्दकेन च। प्रहरारुह्य गरुडं दृढो भूत्वा जनार्दन'—इति हरिवंशे (१२७। ४४) । भेकः; त्रि. हर्षकः; कुलपालकः; पुं. कृष्णपिता; आनन्दः; नन्दः; आनन्दकारकः; नागविशेषः; स्कन्दस्यानुचरविशेषः; धृतराष्ट्रस्य पुत्रविशेषः । २६

नन्दनम् क्ली. [नन्दयतीति, नन्द्+'नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः'इति ल्यु] इन्द्रवनम्; 'अभिज्ञाश्छेदपातानां क्रियन्ते नन्दनद्रुमाः'—इति कुमारे (२।४।१) । अष्टादशाक्षरवृत्तिविशेषः; आनन्दः; 'स्वस्ति वाच्यार्हतो विप्रान् प्रयाहि भरतर्षभ ! । दुर्हृदामप्रहर्षाय सुहृदां नन्दनाय च'—इति महाभारते (२।२५।६) । हर्षके त्रिः । 'पश्य दिव्यं सुरुचिरं भीम पुष्पनुत्तमम् । गन्धसंस्थानसम्पन्नं मनसो मम नन्दनम्'—इति महाभारते (३।१४६।५) । ५५

नन्दनः पुं.–स्त्री. [नन्दयतीति, नन्द+ल्यु] सुतः; 'अतीन्द्रियेष्वप्युपपन्नदर्शनो बभूव भावेषु दिलीपनन्दनः' —इति रघुवंशे (३।४१) । भेकः; विष्णुः; 'आनन्दो नन्दनो नन्दः'—इति महाभारते (१३।१४९।६९) । महादेवः; 'नन्दीश्वरश्च नन्दी च नन्दनो नन्दिवर्द्धनः' —इति महाभारते (१३।१७।७५) । वत्सरविशेषः; 'नन्दनोऽथ विजयो जयस्तथा मन्मथो परतश्च दुर्मुखः' —इति बृहत्संहितायाम् (८।३८) । जिनबलावशेषः; स्कन्दस्यानुचरविशेषः; 'बर्द्धनं नन्दनं चैव सर्वविद्याविशारदौ । स्कन्दाय ददतुः प्रीतावश्विनौ भरतर्षभ !' इति महाभारते (९।४५।३६) । विषविशेषः; 'अन्त्रपाचककर्तरीयसौरीयककरघाटकरम्भनन्दनवराटकानि सप्तत्वक्सारनिर्यासविषाणि'—इति सुश्रुते । पर्वतप्रभेदः; 'तीरे तु चन्द्रकुण्डस्य नन्दनो नाम वै गिरिः । तस्मिन् वसति शक्रस्तु कामाख्यासेवने रतः'—इति कालिकापुराणे । ४९७

नन्दिकेश्वरः पुं. [नन्दयति वपुःसौष्ठवगमनगायनतालादिना इति नन्दी, नन्दी एव नन्दिकः; । नन्दिकः ईश्वरश्च] शिवद्वारपालः; नन्दीः; शालङ्कायनः; ताण्डवतालिकः; नन्दीश्वरः; तण्डुः; नन्दिकेशः । 'ततो नन्दिं महादेवः प्राह गम्भीरया गिरा । नन्दिकेश्वर ! संयाहि यतो बाणो रणे स्थितः'—इति हरिवंशे (१८२। ८६) । उपपुराणविशेषः । १४

नन्द्यावर्तः पुं. [नन्दयतीति नन्दी, नन्दिजनक आवर्तो यत्र] धनिनां सद्मविशेषः; 'दक्षिणानुगतालिन्दत्रयं यत्पश्चिमामुखम् । पूजनीयोत्तरोच्छ्रायं नन्द्यावर्तं वदन्ति तत्'—इति भरतधृतसाञ्जः । मत्स्यभेदः (६५९); तगरद्रुमः (८१२) । ३०५

नपुंसकम् क्ली. [न स्त्री न पुमान् । 'नभ्राण्नपादिति' निपातनात् स्त्रीपुंसयोः पुंसक आदेशः] क्लीवम्; 'उभयोर्बीजसामान्ये जायते वै नपुंसकम्'—इति सुखबोधः । 'समवीर्यरजस्त्वेन नरः स्त्रीप्रकृतिर्भवेत् । नपुंसकमिति ख्यातं न स्त्री न पुरुषो वदेत् ।' 'समदोषबलेनापि प्रकृत्या विकृतेरपि । समो भवेदसृक् शुक्रो नपुंसकसमुद्भवः'—इति हारीतः । ४३०

नप्ता [ऋ] पुं. [न पतन्ति पितरो येनेति । पत्+'नप्तृनेष्टृत्वष्ट्रिति' तृच्प्रत्ययेन निपातनात् साधुः] कन्यापुत्रयोः पुत्रः; पौत्रः; सुतस्य सुतः; 'नाती' इति भाषा । 'कथं शुक्रस्य नप्तारं देवयान्याः सुतं प्रभो ! । ज्येष्ठं यदुमतिक्रम्य राज्यं पूरोः प्रदास्यति'—इति महाभारते (१।८५।२०) । ५०५

नभः [स्] क्ली. [नह्यते मेघैरिति । णह बन्धने+'नहेर्दिवि भश्च' इति असुन् भश्चान्तादेशः] श्रावणमासः; आकाशम् (१३७); 'नेक्षेतोद्यन्तमादित्यं नास्तं यान्तं कदाचन । नोपसृष्टं न वारिस्थं न मध्यं नभसो गतम्' —इति मनुः (४।३७) । पुं. [णभ् हिंसायाम्, पचाद्यच्] स्वारोचिषस्य मनोः पुत्रः; मन्वन्तरदेवविशेषः । ११४ ।

नभस्यः पुं. [नभसे मेघाय साधुः । नभस्+'तत्र साधुः' इति यत्] भाद्रपदमासः । 'नभो नभस्येऽथ निरीक्ष्य

मासि कामस्तदा तोयदवृन्दकीर्णम्'—इति हरिवंशे (१५२।१)। ११५

नभस्वान् [त्] पुं. [आकाशाद्वायुरिति श्रुतेः नभः उत्पत्तिकारणत्वेनास्त्यस्येति। नभस्+मतुप्, मस्य वः] वायुः; 'स हि सर्वस्य लोकस्य युक्तदण्डतया मनः। आददे नातिशीतोष्णो नभस्वानिव दक्षिणः'—इति रघुवंशे (४।८)। ७६

नमस्या स्त्री. [नमस्य+भावे अ, स्त्रियां टाप्] पूजा। ७७६

नम्रः त्रि. [नमतीति, णम्+'नमिकम्पीति' र] नतः। 'यन्नम्रं सरलञ्चापि यच्चापत्सु न सीदति। धनुर्मित्रं कलत्रं च दुर्लभं शुद्धवंशजम्'—इति पञ्चतन्त्रे (२।१८९)। ७६०

नयनम् क्ली. [नीयते दृष्टिविषयोऽनेनेति। नी+करणे ल्युट्] चक्षुः; 'नीलोत्पलाभनयनां पीनश्रोणिपयोधराम्'-इति मार्कण्डेये (१८।४०)। [णीञ् प्रापणे इत्यस्माद्भावे ल्युट् प्रत्ययः] प्रापणम्; आनयनम्; 'तत्त्वं हितं च देवेश! श्रूयतां वदतो मम। नयनं पारिजातस्य द्वारकां मम रोचते'—इति हरिवंशे (१२७।११)। ५१९

नयनजलम् क्ली. [नयनस्य नेत्रस्य जलं वारि] अस्रु; अश्रुः ५१९

नयनमध्यतारा स्त्री. [नयनस्य नेत्रस्य मध्ये तारा] कनीनिका। ५२०

नयनोपान्तः पुं. [नयनयोरुपान्तः प्रान्तभागः] अपाङ्गः। ५२०

नरः पुं. [नृणातीति, नॄ+अच्] मनुष्यः; 'बुद्धिमत्सु नराः श्रेष्ठा नरेषु ब्राह्मणाः स्मृताः'—इति मनुः (१।९६)। 'यदा कदापि दैत्येन्द्र! नार्यास्ते मरणं ध्रुवम्। न नरेभ्यो महाभाग! मृतिस्ते महिषासुर!' —इति देवीभागवते (५।२।१४)। विष्णुः; महादेवः; 'गान्धारश्च सुवासश्च तपःसक्तो रतिर्नरः'—इति महाभारते (१३।१७।११५)। अर्जुनः (नरमुनेरंशजातत्वादस्य तथात्वम्); शङ्कुः; हरेरंशभूतो धर्मपुत्रः ऋषिः; 'हरेरंशौ स्थितौ तत्र नरनारायणावृषी। पूर्णं वर्षसहस्रं तु चक्राते तप उत्तमम्'—इति देवीभागवते (४।५।१५)। देवयोनिविशेषः; 'नरकिन्नररक्षांसि वयःपशुमृगोरगान्'—इति विष्णुपुराणे (१।५।५८)। क्ली. [नृणाति प्रापयति आनन्दमिति, नॄ प्रापणे+अच्] रामकर्पूरतृणम्। ३३१

नरकः पुं. [नृणाति क्लेशं प्रापयतीति। नॄ+'कृञादिभ्यः संज्ञायां वुन्' इति वुन्] पापिनां यातनास्थानं; नारकः; निरयः; दुर्गतिः; 'पातालानां च सप्तानां लोकानां यदनन्तरम्। सुचिरं तानि कथ्यन्ते भवनानि चतुर्दश। अष्टाविंशति विख्यातास्ततो नरककोटयः। नरकाणामधस्तात्तु धूमः कालाग्निसम्भवः। तस्याधस्तादनन्ताख्यो रुद्रः सर्वमयो महान्। तदधो धर्मचक्रन्तु येनेदं धार्यते जगत्'—इति वह्निपुराणे। देवरात्रिप्रभेदः; [नरस्य मनुष्यस्य कं शिरो यत्र] दैत्यविशेषः; 'मानुषस्य शिरस्तत्र मृतस्य प्राप्य बालकः। स्वशिरस्तत्र विन्यस्य रुदंस्तस्थौ क्षणं तदा। नरस्य शीर्षे स्वशिरो निधाय स्थितवान् यतः। तस्मात्तस्य मुनिश्रेष्ठो नरक नाम वै व्यधात्'—इति कालीपुराणे। ६२५

नरदेवः पु. [नरो देव इव] राजा; 'रेतोधाः पुत्र उन्नयति नरदेव! यमक्षयात्'—इति हरिवंशे (३२।१२)। ४२१

नरवाहनः पुं. [नरो वाहनं यस्य। 'क्षुभ्नादिषु च' इति न णत्वम्] कुवेरः; 'विजयदुन्दुभितां ययुरर्णवा घनरवा नरवाहनसम्पदः'—इति रघुवंशे (९।११)। नृपतिविशेषः; 'सोऽनुगैः सह निर्द्रोहं जघान द्रोहशङ्कया। शूरं दार्वाभिसारेशं शर्वर्यां नरवाहनम्'—इति राजतरङ्गिण्याम्। पुरुषयानविशिष्टे त्रि.। 'जज्ञे धनपतिर्यत्र कुवेरो नरवाहनः'—इति महाभारते (३।८९। ५)। ७९

नरस्कन्धः पुं. [नराणां स्कन्धः, नर+स्कन्दिर् गतिशोषणयोः+कर्मणि घञ्। पृषोदरादिः] नरसमूहः; जनता। ८११

नरेन्द्रः पुं. [नर इन्द्र इव, नराणामिन्द्रो वा] राजा; 'रक्षणादार्यवृत्तानां कण्टकानां च शोधनात्। नरेन्द्रास्त्रिदिवं यान्ति प्रजापालनतत्पराः'—इति मनुः (९। २५३)। वार्तिकः; विषवैद्यः; 'सुनिग्रहा नरेन्द्रेण फणीन्द्रा इव शत्रवः'—इति माघे (२।८८)। वृक्षविशेषः; 'पूतीकार्कस्नुग्नरेन्द्रद्रुमाणां मूत्रैः पिष्टाः पल्लवाः सौमनाश्च'—इति सुश्रुतः। एकविंशत्यक्षर-

वृत्तिविशेषः; 'चामररत्नरज्जुवरपरिगतविप्रगणाहित-शोभः,पाणिविराजिपुष्पयुगविरचितकङ्कणसङ्गतगन्धः। चारुसुवर्णकुण्डलयुगलकृतरोचिरलङ्कृतवर्णः, पिङ्गल-पन्नगेश इति निगदति राजति वृत्तनरेन्द्रः'—इति चिन्तामणिः। ८४०

नर्तनस्थानम् क्ली. [नर्तस्य नृत्यस्य स्थानम्] रङ्ग-भूमिः; नृत्यशाला। ९७

नर्म [न्] क्ली. [नृ नये+'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति मनिन्] परीहासः; 'न नर्मयुक्तं वचनं हिनस्ति, न स्त्रीषु राजन्न विवाहकाले। प्राणात्यये सर्वधनापहारे, पञ्चानृतान्याहुरपातकानि'—इति महाभारते (१।८२।१७)। ४३२

नर्मदा स्त्री. [नर्म ददातीति। नर्म+दा+क, स्त्रियां टाप्] नदीविशेषः; रेवा; मेकलकन्या; सोमसुता; 'त्रिभिः सारस्वतं तोयं सप्तभिस्त्वथ यामुनम्। नार्मदं दशभि-र्मासैर्गाङ्गं वर्षेण जीर्यति। नर्मदा सरितां श्रेष्ठा रुद्रदेह-विनिःसृता। तारयेत् सर्वभूतानि स्थावराणि चराणि च' —इति मात्स्ये। पृक्का। ६७४

नलः पुं. [नल् बन्धने+पचाद्यच्] तृणविशेषः; धमनः; पोटगलः; नालः; नडः; कुक्षिरन्ध्रः; कीचकः; दीर्घवंशः; शून्यमध्यः; विभीषणः; छिद्रान्तः; मृदुपत्रः; वंशपत्रः; मृदुच्छदः; नालवंशः; 'नलः पोटगलः शून्यमध्यश्च धमनस्तथा। नलस्तु मधुरस्तिक्तः कषायः कफरक्तजित्। उष्णो हृद्वस्तियोन्यर्तिदाहपित्त-विसर्पहृत्' —इति भावप्रकाशः। सूर्यवंशीयनिषध-राजपुत्रः; 'अतिथिस्तु कुशाज्जज्ञे निषधस्तस्य चात्मजः। नलस्तु नैषधस्तस्मान्नभस्तस्मादजायत।' वीरसेन-राजपुत्रः; 'नलौ द्वावेव विख्यातौ वंशे कश्यपसम्भवे। वीरसेनात्मजश्चैव यश्चेक्ष्वाकुकुलोद्भवः'—इति हरि-वंशे (१५।३४)। चन्द्रवंशीयनिषधराजपुत्रः; अयं तु दमयन्तीपतिः। 'आसीद्राजा नलो नाम वीरसेनसुतो बली। उपपन्नो गुणैरिष्टै रूपवानश्वकोविदः'—इति महाभारते (३।५३।१)। (अयं वीरसेनस्तु सूर्यवंशीय-वीरसेनाद्भिन्नः।) वानरविशेषः; 'ततोऽब्रवीत् रघु-श्रेष्ठं सागरो विनयान्वितः। नलः सेतुं करोत्वस्मिन् जले मे विश्वकर्मणः'—इति अध्यात्मरामायणे। पितृ-देवः; दैत्यविशेषः; 'वंशयः शल्यश्च बलवान् नलश्चैव तथा बलः। वातापिर्नमुचिश्चैव इल्वलः स्वसृमस्तथा' —इति ब्रह्मपुराणे २ अध्याये। १५९

नलकम् क्ली. [नल इव प्रतिकृतिः। 'इवे प्रतिकृतौ' इति कन्] शाखास्थि; 'तरुणास्थीनि नम्यन्ते भज्यन्ते नलकानि तु'—इति सुश्रुते। ६३४

नलकूवरः पुं. [नलः कूवरो युगन्धरो यस्य] कुबेरपुत्रः; 'विलोकनकथापि मे न नलकूवरे न स्मरे, किमन्यदमृत-द्युतेरपि न दर्शनं प्रार्थये। अयं नयनगोचरं व्रजति चेद् दृशामुत्सवः, समग्ररमणीमनोमधुपमाधवः क्ष्माधवः'—इति राजेन्द्रकर्णपूरे (६९)। ८३

नलमीनः पुं. [नलाश्रयो मीनः] चिलचिममत्स्यः। 'नल-मीनः कफात्मकः'—इति हारीते। ६५८

नलसंयुतः त्रि. [नलैः संयुतः संकुलः] नड्वलः; नल-बहुलदेशः। १५९

नलिनम् क्ली. [नल्यते इति, नल् बन्धने+'बहुलमन्यत्रापि' इति इनच्] पद्मम्; 'यदास्य नाभ्यान्नलिनादहमासं महात्मनः। नाविदं यज्ञसम्भारान् पुरुषावयवादृते'—इति भागवते (२।६।२२)। नीलिका; जलम्; पुं. सारसपक्षी; कृष्णपाकफलः। ६७९

नलिनी स्त्री. [नलानि पद्मानि सन्त्यत्र। नल+'पुष्करा-दिभ्यो देशे' इति इनि, ङीप्] बिसिनी; पद्मिनी; 'रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं, भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पद्मजालम्। इत्थं विचिन्तयति कोषगते द्विरेफे, हा हन्त! हन्त! नलिनीं गज उज्जहार' —इति भ्रमराष्टके। पद्मयुक्तदेशः; [नलानां पद्मानां समूहः। 'खलादिभ्यः इनिर्वक्तव्यः' इत्युक्त्या इनि] पद्मसमूहः; पद्मलता; 'नलिनी स्यात् पङ्कजिनी बिशिनी च सरोजिनी। पद्मिनीति च पर्यायः पद्मषण्डे तदाकरे' —इति वैद्यकरत्नमालायाम्। व्योमनिम्नगा; 'त्रीणि प्राचीमभिमुखं प्रतीचीं त्रीण्य-थैव च। स्रोतांसि त्रिपथगायाः प्रत्यपद्यन्त सप्तधा। नलिनी ह्लादिनी चैव पावनी चैव प्राच्यगा'—इति मात्स्ये (१२०।४०)। कमलाकरः; नलिका; नारि-केलसुरा; वामनासिका; 'नलिनी नालिनी च प्राग्-द्वारावेकत्र निर्मिते'—इति भागवते (४।२५।४८)। 'नलिनी नालिनी च वामदक्षिणनासिके'–इति तट्टीकायां स्वामी। ६८२

नवः त्रि. [नूयते स्तूयते इति । णु स्तुतौ+'ऋदोरप्' इति अप्] नूतनः; 'न स्त्रीणामप्रियः कश्चित् प्रियो वापि न विद्यते। गावस्तृणमिवारण्ये प्रार्थयन्ति नवं नवम्'—इति हितोपदेशे (१।२३४)। तद्वैदिकपर्यायाः—नवं; नूतनं; नूतं; नव्यम्; इदा; इदानीम्, इति षट् नवनामानि वेदनिघण्टौ ३ अध्याये। ७११

नवतः पुं. [नूयते स्तूयते इति । णु+बाहुलकात् अतच्] कुथः; करिकम्बलः। ३०८

नवनीतम् क्ली. [नवं नीयतेऽनेनेति। नव+नी+क्त] गव्यविशेषः; नवोद्धृतं; सरजं; मन्थजं; हैयङ्गवीनं; दधिजं; सार; हैयङ्गवीनकं; 'माखन' इति भाषा। 'नवनीतं हितं गव्यं वृष्यं वर्णमलाग्निकृत्। संग्राहि वातपित्तासृक्क्षयार्शोऽर्दितकासहृत्। तद्धितं बालके वृद्धे विशेषादमृतं शिशोः'—इति भावप्रकाशः। 'नवनीतं नवं वृष्यं ग्राहि वर्णबलाग्निकृत्। चक्षुष्यं बृंहणं स्निग्धं ग्रहण्यर्शोविकारनुत्। क्षीरोत्थितं हिमं ग्राहि रक्तपित्ताक्षिरोगनुत्'—इति राजवल्लभः। २७४

नवप्रसूता स्त्री. [नवा चासौ प्रसूता कृतप्रसवा] जातनूतनप्रसवा गौः; संवोच्यते धेनुः; कृतनूतनप्रसूतिका स्त्रीजातिः। २६९

नवमल्लिका स्त्री. [नवा नूतना स्तुत्या वा मल्लिका] नवमालिका; 'रम्यं हर्म्यतलं नवाः सुनयना गुञ्जद्द्विरेफा लताः। प्रोन्मीलन्नवमल्लिकाः सुरभयो वाताः सचन्द्रा निशाः'—इति प्रबोधचन्द्रोदये। २०७

नवमालिका स्त्री. [नवा नूतना मालिका मल्लिकापुष्पम्] नवमल्लिकापुष्पं; ग्रैष्मी; अतिमोदा; ग्रीष्मोद्भवा; सप्तला; सुकुमारी; सुरभिः; शुचिमल्लिका; सुगन्धा; शिखरिणी; नवाली; भद्रवर्या; देवलता; गन्धनिलया; मालिका; नवमल्लिका; 'नेपाली कथिता तज्ज्ञैः सप्तला नवमालिका। वासन्ती शीतला लघ्वी तिक्ता दोषत्रयापजित्'—इति भावप्रकाशः। २०७

नवीनम् त्रि. [नवमेव। नव+'नवस्य न्वादेशो त्नप्तनप्खाश्च प्रत्यया वक्तव्याः' इत्युक्त्या ख न्वादेशश्च] नूतनम्; 'गदाधरविनिर्मिता विविधदुर्गतर्काटवी नवीनपदवीमुदं वितनुतां सतां धीमताम्'—इति गदाधरः। ७११

नव्यम् त्रि. [नूयते स्तूयते इति। णु स्तुतौ+'अचो यत्' इति यत्। यद्वा नवमेव। 'शाखादिभ्यो यत्' इति स्वार्थे यत्] नूतनम्; 'नव्या नव्या युवतयो भवन्तीर्महद्देवानामसुरत्वमेकम्'—इति ऋग्वेदे (३।५५।१६)। स्तुत्यम्; 'कया नो अग्न ऋतयन्नृतेन भुवो नवेदा उचथस्य नव्यः' —इति ऋग्वेदे। (५।१३।३)। क्ली. स्तुतिः; [णु स्तुतौ, भावे अप्, नवशब्दात् स्वार्थे यञि निष्पन्नः] पुं. [नूयते इति, नु+यत्] रक्तपुनर्नवा। ७११

नश्यत्प्रसूतिः स्त्री. [नश्यन्ती प्रसूतिः सन्ततिर्यस्याः] मृतवत्सा; भिन्दुः; मृतपुत्रिका; नश्यत्प्रसूतिका। ४८८

नष्टः त्रि. [नश्+क्त] अदर्शनविशिष्टः; तिरोहितः; 'नष्टं मृतमतिक्रान्तं नानुशोचन्ति पण्डिताः। पण्डितानां च मूर्खाणां विशेषोऽयं यतः स्मृतः' —इति पञ्चतन्त्रे (१।३७८)। अधमः; 'असन्तुष्टा द्विजा नष्टाः सन्तुष्टा इव पार्थिवाः। सलज्जा गणिका नष्टा निर्लज्जास्तु कुलस्त्रियः'—इति चाणक्यः (८०)। प्रचलितः; 'तृतीये तु मुहूर्ते सा नष्टा बाणपुरात् तदा। सखीप्रियं चिकीर्षन्ती पूजयन्ती तपोधनान्'—इति हरिवंशे (१७४।१२३)। पलायितः; 'नष्टं वर्षवरैर्मनुष्यगणनाभावादपास्य त्रपाम्'—इति रत्नावल्याम्। निष्फलः; 'नष्टं देवलके दत्तम् अप्रतिष्ठन्तु वार्द्धुषौ' —इति मनुः (३।१८०)। नाशाश्रयः; 'योगो नष्टः परन्तप'—इति श्रीभगवद्गीतायाम्। नाशे क्ली.। ४७९

नस्तितः पुं. [नस्ता सच्छिद्रनासिका संजाता अस्य। तारकादित्वादितच्] नासानिहितरज्जुर्बलीवर्दादिः; नस्योतः; नस्तोतः। २६७

नस्तोतः पुं. [वेञ् तन्तुसन्ताने+भावे क्त। नस्ते नासिकायाम् ऊतं वयनं यस्य] नस्तितः; नस्योतः; नासानिहितरज्जुर्बलीवर्दादिः। २६७

नस्योतः पुं. [नस्यया नासारज्ज्वा ऊतः] नस्तितः; 'मणिः सूत्र इव प्रोतो नस्योत इव गोवृषः'—इति महाभारते (३।३०।३६)। २६७

ना [ऋ] पुं. [नयति नीयते वा। णीञ् प्रापणे+'नयतेर्डिच्च' इति ऋप्रत्ययः स च डित्] पुरुषः; 'विधाय वैरं सामर्षे नरोऽरौ य उदासते। प्रक्षिप्योदर्चिषं कक्षे शेरते तेऽभिमारुतम्'—इति माघे (२।४२)। ३३१

नाकः पुं. [न कं सुखमिति अकं दुःखं, तन्नास्त्यत्रेति]

स्वर्गः; 'सन्तर्पणो नाकसदां वरेण्यः'—इति भट्टिः (१।४)। नभः; 'य एष दिवि धिष्ण्येन नाकं व्याप्नोति तेजसा'—इति महाभारते (१।१७२।६)। क्ली. अस्त्रजातिविशेषः; 'काकुदीकं शुकं नाकमक्षिसन्तर्जनं तथा। सन्तानं नर्तकं घोरमास्यमोदकमष्टमम्। एतैर्विद्धाः सर्वे एव मरणं यान्ति मानवाः'—इति महाभारते (५।९६।४०)। क्षत्रियजातिविशेषः; नव नाकास्तु भोक्ष्यन्ति पुरीं चम्पावतीं नृपाः'—इति वायुपुराणे। ३

नाकुः पुं. [नम्यतेऽनेनेति। णम्+'फलिपाटिनमिमनिजनां गुक् पटिनाकिधतश्च' इति उ, धातोर्नाकि, इकार उच्चारणार्थः] वल्मीकः; मुनिविशेषः; पर्वतः। ६४४

नागः पुं. [नगे भवः। नग+अण्। यद्वा दहत्यस्मात् विषाग्निनेति। दह्+'दहेर्गो लोपो दश्च नः' इति ग, अन्तलोपः दस्य नः। बाहुलकात् नकारस्य ना] पन्नगः; 'जगृहुश्च विषं नागाः क्षीरोदाच्च समुत्थितम्'—इति विष्णुपुराणे (१।९।९६)। हस्ती (७९७); 'भेजे भिन्नकटैर्नागैरन्यानुपरुरोधयैः'—इति रघुवंशे (४।८३)। क्रूरचारी; मेघः; नागकेशरः; पुन्नागः; नागदन्तकः; मुस्तकः; देहानिलप्रभेदः; 'उद्गारे नाग इत्युक्तो नीलजीमूतसन्निभः'—इति शारदातिलकटीका। उत्तरपदस्थिते श्रेष्ठवाचकः; सीसकम्; 'दृष्ट्वा भोगिसुतां रम्यां वासुकिस्तु मुमोच यत्। वीर्यं जातस्ततो नागः सर्वरोगापहो नृणाम्।' 'नागस्तु नागशततुल्यबलं ददाति, व्याधिं विनाशयति जीवनमातनोति। वह्निं प्रदीपयति कामबलं करोति, मृत्युं च नाशयति सन्ततसेवितः सः। पाकेन हीनौ किल वङ्गनागौ कुष्ठानि गुल्मांश्च तथातिकष्टान्। कण्डूं प्रमेहानिलपादशोथ—भगन्दरादीन् कुरुतः प्रयुक्तौ'—इति भावप्रकाशः। ताम्बूली; देशभेदः; पर्वतविशेषः; 'शङ्खकूटोऽथ ऋषभो हंसो नागस्तथापरः। कालञ्जराद्याश्च तथा उत्तरे केसराचलाः'—इति विष्णुपुराणे। [नगे गिरौ चन्दनादितरौ वा भवः। न गच्छतीति अगः, न अगः नागः इति वा] तक्षककर्कोटकप्रभृतिर्देवयोनिर्मनुष्याकारः फणालाङ्गूलयुक्तः; काद्रवेयः। ६४०

नागकेशरः पुं. [नागस्येव केशरोऽस्य] नागकेसरवृक्षः; 'नलशैलेयकं पृक्का पद्मकं नागकेशरम्'—इति हारीते। २०६

नागकेसरः पुं. [नागस्येव केसरो यस्य] पुष्पवृक्षविशेषः; चाम्पेयः; केसरः; काञ्चनाह्वयः; केशरः; नागकेशरः; 'नागपुष्पः स्मृतो नागः केसरो नागकेसरः। चाम्पेयो नागकिञ्जल्कः कथितः काञ्चनाह्वयः। नागपुष्पं कषायोष्णं रूक्षं लघ्वामपाचनम्। ज्वरकण्डूतृषास्वेदच्छर्दिहृल्लासनाशनम्। दौर्गन्ध्यकुष्ठवीसर्पकफपित्तविषापहम्।' 'त्वगेलापत्रकैस्तुल्यैस्त्रिसुगन्धिस्त्रिजातकम्। नागकेशरसंयुक्तं चतुर्जातकमुच्यते। तद्द्वयं रेचकं रूक्षं तीक्ष्णोष्णं मुखगन्धहृत्। लघु पित्ताग्निकृद्वर्ण्यं कफवातविषापहम्'—इति भावप्रकाशः। २०६

नागरम् क्ली. [नगरे भवम्। नगर+अण्] शुण्ठी; 'नागरं दीपनं वृष्यं ग्राहि हृद्यं विबन्धनुत्। रुच्यं लघु स्वादु पाकं स्निग्धोष्णं कफवातजित्'—इति वाग्भटे। 'शुण्ठीतकवचायुक्तं मरीचं नागरं तथा। चर्वित्वा च इमं सद्यो जिह्वया ज्वलनं लिहेत्'—इति गारुडे। मुस्ता; रतिबन्धः; पुं. नागैरदेशीयाक्षरम्; [नागरो विदग्धस्तद्वद्भावोऽस्त्यस्येति, अच्] देवरः; नागरङ्गः; त्रि. [नगरे भवः, 'तत्र भवः' इत्यण्] विदग्धः; 'नागरगीतिरिवासौ सामस्थित्यापि भूषिता सुतनुः। कस्तूरी च मृगोदरवासवसाद्विसतामेति'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३२३)। नगरोद्भवः; 'नागरा धृतराष्ट्रस्य सर्वे तत्र समाययुः'—इति देवीभागवते (२।६।६६)। नगरहितः; 'धनुर्वेदस्य सूत्रं वै यन्त्रसूत्रं च नागरम्'—इति महाभारते (२।५।१२२)। ६१५

नागलोकः पुं. [नागानां लोकः] पातालम्; 'रसातले स सदृशे नागलोकमिमं यथा'—इति हरिवंशे। (८२।८४)। ६२३

नागवल्ली स्त्री. [नाग इव दीर्घा वल्ली लता] नागवल्लिका; ताम्बूली; नागवल्लरी; ताम्बूलवल्ली; पर्णलता; सप्तशिरा; सर्पलता; फणिवल्ली; भुजगलता; भक्ष्यपत्रा; ताम्बूलवल्लिका; पर्णवल्ली; ताम्बूलिः; नागिनी। २००

नाटारः पुं. [नट्या नटस्य वा अपत्यम्। 'आरगुदीचाम्' इति आरक्] नट्या अपत्यं; नटीसुतः; नाटेयः; नाटेरः। ५०१

नाटेयः पुं. [नट्या अपत्यम्। नटी+ढक्] नटीसुतः; नाटारः; नाटेयः। ५०१

नाटेरः पुं. [नटचा अपत्यमिति । नटी+ढ्रक्] नटीसुतः; नाटेयः; नाटारः । ५०१

नाटचम् क्ली. [नटानां कार्यम् । नट+'छन्दोगौक्थिक-याज्ञिकबह्वृचनटाञ्ञ्यः' इति ञ्य] नृत्यगीतवाद्यं; तौर्यत्रिकम्; 'नाटचं तनोषि सगुणा विविधप्रकारं नो वेत्ति कोऽपि तव कृत्यविधानयोगम्'—इति देवीभागवते (१।७।३०) । नटानां समूहः । नाटचारम्भनक्षत्राणि, यथा—अनुराधा, धनिष्ठा, पुष्यः हस्तः, चित्रा, स्वाती, ज्येष्ठा, शतभिषा, रेवती । ९३

नाडिः स्त्री. [नाडयतीति, नड् भ्रंशे+णिच्+इन्] नाडी; नाडिका; षट्क्षणाः; साधारिका; घटिका; 'घड़ी' इति भाषा । १०५

नाडिन्धमः पुं. [नाडीं वंशनलीं धमतीति । ध्मा शब्दाग्निसंयोगयोः+'नाडीमुष्टचोश्च' इति खश्, 'पाघ्राध्मास्थेति' धमादेशः, 'खित्यनव्ययस्य' इति पूर्वपदस्य ह्रस्वः] स्वर्णकारः; [उच्चनीचाधिरोहणात् मुहुर्मुहुर्निश्वासैर्नाडीं धमति उपतापयतीति] श्वासकारके त्रि. । 'सत्त्वमेजर्यसिंहाढचान् स्तनन्धयसमत्विषौ । कथं नाडिन्धमान् मार्गानागतौ विषमोपलान्'—इति भट्टिः । ५८८

नाडी स्त्री. [नाडि+'कृदिकारादक्तिनः'इति वा ङीष्] षट्क्षणकालः; नाडिः । (८४६) कायनाडी; शिरा; धमनिः; सिरा; नाडिः; नालिः; नाली; धमनी; धरणी; धरा; तन्तुकी; जीवितज्ञा; सिंहा; नालं; व्रणान्तरं; गण्डदूर्वा; कुहनचर्या । 'आमाश्रये पुष्टिविवर्धनेन भवन्ति नाडचोऽग्रभुजाभिवृत्ताः । आहारमान्द्यादुपवासतो वा तथैव नाडचो भुजगाग्रमानाः' — इतिनाडीप्रकाशः । १०५

नाडीन्धमः पुं.— स्वर्णकारः । ५८८

नादः पुं. [णद् अव्यक्ते शब्दे+भावे घञ्] शब्दः; 'विभान्ति ते देववराः ससाध्याः प्रध्मातशङ्खस्वनसिंहनादाः'—इति हरिवंशे (२३५।५६) । अर्द्धचन्द्राकृतिवर्णः; अर्द्धेन्दुः; अर्द्धमात्रा; कलाराशिः; सदाशिवः; अनुच्चार्या; तुरीया; विश्वमातृकला; परा; ब्रह्मस्वरूपघोषविशेषः; मुनिविशेषः; अयं तु ईश्वरमुनेः पुत्रः, न्यायतत्त्वयोगरहस्ययोः प्रणेता, अस्य वासस्थानं दाक्षिणात्यप्रदेशः । १३८

नाना अव्य. [न+'विनञ्भ्यां नानाञौ न सह' इति नाञ् प्रत्ययः] अनेकार्थम्; 'बह्वीषु चैकजातानां नानास्त्रीषु निबोधत'—इति मनुः (९।१४८) । उभयार्थं; विनार्थम्; 'न नाना शम्भुना रामाद् वर्षणाघोऽक्षजो वरः'—इति मुग्धबोधे । ८८४

नापितः पुं. [न आप्नोति सरलतामिति । न+आप्+'नञ्याप इट् च' इति तन् इट् च] वर्णसङ्करजातिविशेषः; क्षुरी; मुण्डी; दिवाकीर्तिः; अन्तावसायी; छत्री; वात्सीसुतः; नखकुट्टः; ग्रामणीः; चन्द्रिलः; मुण्डः; भाण्डपुटः; 'नराणां नापितो धूर्तः पक्षिणां चैव वायसः । दंष्ट्रिणां च शृगालस्तु श्वेतभिक्षुस्तपस्विनाम्'—इति पञ्चतन्त्रे (३।७३) । ५८९

नाभिः पुं. [नह्यते बध्नाति विपक्षादीनिति । णह् बन्धने+'नहो भश्च' इति इञ् भश्चान्तादेशः] चक्रमध्यम्; 'अरैः सन्धार्यते नाभिर्नाभौ चाराः प्रतिष्ठिताः'—इति पञ्चतन्त्रे (१।९३) । क्षत्रियः; प्रियव्रतराजपौत्रः; अग्नीध्रस्य पुत्रः; 'तस्य पुत्रा बभूवुस्तु प्रजापतिसमा नव । ज्येष्ठो नाभिरिति ख्यातस्तस्य किंपुरुषोऽनुजः' —इति ब्रह्माण्डे । गोत्रं; प्रधानम्; 'सुतोऽभवत् पङ्कजनाभकल्पः कृत्स्नस्य नाभिर्नृपमण्डलस्य'—इति रघुवंशे (१८।२०) । महादेवः; 'नाभिर्नन्दिकरो भावः पुष्करः स्थपतिः स्थिरः'—इति महाभारते (१३।१७।९२) । पुं.–स्त्री. [णह् बन्धने+इञ् भश्चान्तादेशः] प्राण्यङ्गं; नाभी; तुन्दकूपी; उदरावर्तः; 'विष्णुनाभेः समुद्भूतो वेधाः कमलजस्ततः । विष्णुरेवेश इत्याहुर्लोके भागवता जनाः'–इतिपञ्चदश्याम् (६।११७) । कस्तूरिकामदे स्त्री. । ४४७

नाम अव्य. [नामयतीति, नामयते नाम्यतेऽनेन वा । नम्+णिच्+बाहुलकात् ड] उपगमः; अभ्युपगमः; सासूयोऽङ्गीकारः; 'एवं नामास्तु'; प्राकाश्यम्; 'हिमालयो नाम नगाधिराजः ।' हिमालयः प्रकाशोऽतिप्रसिद्धः इत्यर्थः । सम्भावनायाम्; 'इह नाम सीता भविष्यति ।' क्रोधः; 'ममापि नाम दशाननस्य परैरभिभवः ।' कुत्सनम्; 'को नामायं सवितुरुदये स्वापमेवं विधत्ते ।' विस्मयः; 'अन्धो नाम गिरिमारोहति ।' स्मरणं; विकल्पः । ८८६

नाम [न्] क्ली. [म्नायते अभ्यस्यते यत् तत् । म्ना अभ्यासे+'नामन्सीमन्व्योमन्निति' मनिन् प्रत्ययेन

निपातनात् साधु] संज्ञा; आख्या; आह्वा; अभिधानं; नामधेयम्; आह्वानं; लक्षणं; व्यपदेशः; आह्वयः; गोत्रम्; अभिख्या; लिङ्गम्; 'उणाद्यन्तं कृदन्तं च तद्धितान्तं समासजम्। शब्दानुकरणं चैव नाम पञ्चविधं स्मृतम्'-इति गोपीचन्द्रः। अव्यक्तनामानि—'आत्मनाम गुरोर्नाम नामातिकृपणस्य च। प्राणान्तेऽपि न वक्तव्यं ज्येष्ठपुत्रकलत्रयोः'—इति कर्मलोचनम्। १५२

नामधेयम् क्ली. [नामैव । नाम+'भागरूपनामभ्यो धेयः' इति धेय] नाम; संज्ञा; आख्या; आह्वा; अभिधानम्; आह्वानं; लक्षणं; व्यपदेशः; आह्वयः; गोत्रम्; अभिख्या। 'नामधेयं दशम्यां तु द्वादश्यां वास्य कारयेत्। पुण्ये तिथौ मुहूर्ते वा नक्षत्रे वा गुणान्विते'—इति मनुः (२।३०)। नामकरणं; नामकर्म। १५२

नायकः पुं. [नयति प्रापयतीति । नी+ण्वुल्] नेता। 'नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान् ब्रवीमि ते'—इति गीतायाम् (१।७)। हारमध्यमणिः (५६४); श्रेष्ठः; 'तमुपागतमालक्ष्य सर्वे सुरगणादयः। प्रणेमुः सहसोत्थाय ब्रह्मेन्द्रत्र्यक्षनायकाः'—इति भागवते (४।७।१९)। अग्रेसरिकः; सेनापतिः; 'वध्यमानं बलं दृष्ट्वा बहुशस्तैः पुरन्दरः। स्वसैन्यनायकार्थाय चिन्तामाप भृशं तदा'—इति महाभारते (३।२२२।४)। शृङ्गारसाधकः; अङ्गादिविकृत्या हासकारी विदूषकः। ३४३

नारकः त्रि. [नरके भवः, 'तत्र भवः' इत्यण्] नरकस्थप्राणी; 'अनुकम्पामिमामद्य नारकेष्विह कुर्वतः। तदेव शतसाहस्रं संख्यामुपगतं तव'—इति मार्कण्डेये (१५।७३)। पुं. [नरक एव, प्रज्ञाद्यण्] नरकः। ६२५

नाराचः पुं. [नारं नरसमूहम् आचामतीति । चमु अदने+'अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड] लौहमयबाणः; प्रक्ष्वेडनः; लोहनालः; 'सर्वलौहास्तु ये बाणा नाराचास्ते प्रकीर्तिताः। पञ्चभिः पृथुलैः पक्षैर्युक्ताः सिध्यन्ति कस्यचित्'—इति बृहच्छार्ङ्गधरे। दुर्दिनम्; अष्टादशाक्षरवृत्तिविशेषः; 'इह ननरचतुष्कसृष्टन्तु नाराचमाचक्षते'—इति छन्दोमञ्जरी। वैद्यकोक्तघृतविशेषः; नाराचघृतं; कृत्रिमघृतभेदः; 'स्नुक्क्षीरदन्तीत्रिफलाविडङ्गसिंहीत्रिवृच्चित्रकसूर्यकल्कैः। घृतं विपक्वं कुडवं प्रमाणं तोयेन तस्याक्षसमेन कर्षम्। पीतोष्णमम्भोऽनुपिबेद्विरेके पेयं रसं वा प्रपिबेद्विधिज्ञः। नाराचमेनं जठरामयानामुक्तं प्रयुक्तं प्रवदन्ति सन्तः'—इति नाराचघृतम्। ४६७

नारायणः पुं. [नराज्जाताः, आपो वै नरसूनवः इत्युक्तेः। नारा आप अयनं स्थानं यस्य। अय् गतौ+भावे ल्युट्। सर्वे गत्यर्थाः प्राप्त्यर्थाश्च इति नियमात् नारस्य ज्ञानस्य मुक्तेर्वा अयनं प्राप्तिर्यस्मात् इति वा। 'नराणां समूहो नारं तत्रायनं स्थानं यस्य, नारायणः। सर्वप्राणिबुद्धिगुहानिवासाच्छुद्धचैतन्यमित्यर्थः] विष्णुः; 'सारूप्यमुक्तिवचनो नारेति च विदुर्बुधाः। यो देवोऽप्ययनं तस्य स च नारायणः स्मृतः। नाराश्च कृतपापाश्चाप्ययनं गमनं स्मृतम्। यतो हि गमनं तेषां सोऽयं नारायणः स्मृतः। नारं च मोक्षण पुण्यम् अयनं ज्ञानमीप्सितम्। तयोर्ज्ञानं भवेद्यस्मात् सोऽयं नारायणः स्मृतः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। 'आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः। अयनं तस्य ताः पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः'—इति विष्णुपुराणे। 'नराज्जातानि तत्त्वानि नाराणीति विदुर्बुधाः। तान्येव चायनं तस्य तेन नारायणः स्मृतः।' 'यच्च किञ्चिज्जगत् सर्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि च। अन्तर्बहिश्च तत् सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः।' 'प्रकृतेः पर एवान्यः स नरः पञ्चविंशकः। तस्येमानि च भूतानि नाराणीति प्रचक्षते। तेषामप्ययनं यस्मात्तस्मान्नारायणः स्मृतः।' 'क्वचिन्मन्वन्तरे नरनामऋषेरपत्यतां गतः इति नारायणः' इत्यमरकोषस्य टीकायां भरतः। 'नराणामयनाच्चापि ततो नारायणः स्मृतः'—इति महाभारते (५।७०।१०)। अजामिलपुत्रः; 'कान्यकुब्जे द्विजः कश्चिद्दासीपतिरजामिलः। नाम्ना नष्टसदाचारो दास्याः संसर्गदूषितः। तस्य प्रवयसः पुत्रा दश तेषां तु योऽवमः। बालो नारायणो नाम्ना पित्रोश्च दयितो भृशम्'—इति भागवते (६।१)। सैन्यविशेषः; 'मत्संहननतुल्यानां गोपानामर्बुदं महत्। नारायणा इति ख्याताः सर्वे सङ्ग्रामयोधिनः'—इति महाभारते (५।७)। धर्मपुत्रर्षिविशेषः; 'धर्मस्य दक्षदुहितर्यजनिष्ट मूर्त्यां नारायणो नर इति स्वतपःप्रभावः'—इति भागवते (२।७।६)। यतिधर्मः; 'दण्डग्रहणमात्रेण नरो नारायणो भवेत्।' कृष्णयजुर्वेदान्तर्गतोपनिषद्विशेषः; 'गर्भो नारायणो हंसो बिन्दुर्नादशिरः शिखा'—इति मुक्तिकोपनिषदि।

चूर्णौषधविशेषः; तैलविशेषः। २४

नारी स्त्री. [नुर्नरस्य वा धर्म्या। नृ+'ऋतोऽञ्' इति अञ्। नर+'नराच्चेति वक्तव्यम्' इति अञ्। 'शार्ङ्ग-रवाद्यञोर्ङीन्' इति ङीन्] नुर्नरस्य वा धर्माचारोऽस्याम्; नुर्नरस्येयम्; नरधर्माचारयुक्ता; स्त्री; योषित्; अबला; योषा; सीमन्तिनी; वधूः; प्रतीपदर्शिनी; वामा; वनिता; महिला; प्रिया; रामा; जनिः; जनी; योषिता; जोषित्; जोषा; जोषिता; धनिका; महेलिका; महेला; शर्वरी; योषीत्; सिन्दूरतिलका; सुभ्रूः। 'मातृरक्तोत्तरा नारी।' 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः। यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः'—इति मनुः (३।५६)। त्र्यक्षरवृत्तिविशेषः; 'मो नारी। गोपानां नारीभिः श्लिष्टोऽव्यात् कृष्णो वः'—इति छन्दोमञ्जरी। ४८१

नालम् क्ली. [नलतीति, नल् बन्धने+'ज्वलितिकसन्तेभ्यो णः'—इति ण] उत्पलादिदण्डः; नाला; नाली; नालिका। 'कश्चित् कराभ्यामुपगूढनालम् आलोलपत्राभिहतद्विरेफम्। रजोभिरन्तः परिवेषबन्धि लीलारविन्दं भ्रमयाञ्चकार'—इति रघौ (६।१३)। [अर्द्धर्चादित्वात् पुंलिङ्गोऽपि] हरितालं; नले पुं.। ५७९

नावारोहः पुं. [नावम् आरोहयति, 'कर्मण्यण्'] नाविकः; नौचालकः; तरिवाहकः। ३९०

नाविकः पुं. [नावा तरतीति, नौ+'नौद्व्यचष्ठन्' इति ठन्। नौरस्त्यस्येति। 'व्रीह्यादिभ्यश्च' इति ठन् वा] कर्णधारः; 'भिन्ननौका यथा राजन्! द्वीपमासाद्य निर्वृताः। भवन्ति पुरुषव्याघ्र! नाविकाः कालपर्यये'—इति महाभारते (८।७७।१०,)। ३९०

नाव्यम् त्रि. [नावा तार्यम्। नौ+'नौवयोधर्मेति यत्] गभीरजलं; नौकागम्यदेशादि; 'मरुपृष्ठान्युदम्भांसि नाव्याः सुप्रतरा नदीः। विपिनानि प्रकाशानि शक्तिमत्त्वाच्चकार सः'—इति रघुवंशे (४।३१)। [नवस्य भावः, नव+ष्यञ्] नवत्वम्। ६४९

नाशः पुं. [णश्+भावे घञ्] निधनं; मृत्युः; 'पित्र्यादृणादनिर्मुक्तस्तेन तप्ये तपोधनाः। देहनाशे ध्रुवो नाशः पितॄणामेष निश्चयः'—इति महाभारते (१।१२०। १६)। पलायनम्; अनुपलम्भः; अदर्शनं; परिध्वस्तिः; जीवानां नाशहेतुः; 'संगात् संजायते कामः कामात् क्रोधोऽभिजायते। क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात् स्मृतिविभ्रमः। स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति'—इति भगवद्गीतायाम्। कुलनाशकारणम्–'अनृतात् पारदार्याच्च तथाऽभक्ष्यस्य भक्षणात्। अश्रौतधर्माचरणात् क्षिप्रं नश्यति वै कुलम्। अश्रोत्रिये वेदानाद् वृषलेषु तथैव च। विहिताचारहीनेषु क्षिप्रं नश्यति वै कुलम्।' ६२८

नासत्यौ पुं. [नास्ति असत्यं ययोस्तौ। 'नभ्राण्नपादिति' नञः प्रकृतिभावः] अश्विनीकुमारौ। नित्यद्विवचनान्तोऽयं शब्दः। 'आयुर्वेदं निरुद्वेगं तौ ययाचे शचीपतिः। नासत्यौ सत्यसन्धेन शक्रेण किल याचितौ। आयुर्वेदं यथाधीतं ददतुः शतमन्यवे। नासत्याभ्यामधीत्यैष आयुर्वेदं शतक्रतुः। अध्यापयामास बहूनात्रेयप्रमुखान् मुनीन्'—इति भावप्रकाशे। ८४

नासा स्त्री. [नासते शब्दायते इति। नास् शब्दे+'गुरोश्च ...'—इति अ, टाप् नास्यतेऽनयेति। नास्+करणे घञ् वा] नासिका; 'शुकनासः सुखी स्याच्च शुष्कनासेऽतिजीवनम्। छिन्नाग्ररूपनासः स्यादगम्यागमने रतः। दीर्घनासे च सौभाग्यं चौर आकुञ्चितेन्द्रियः। स्त्रीमृत्युश्चिपिटानास ऋजुर्भाग्यवतां भवेत्। अल्पच्छिद्रा सुपुटा च अवक्रा च नृपेश्वरे। क्रूरे दक्षिणवक्रा स्याद्धनिनां च क्षुतं सकृत्'—इति गरुडपुराणे। वासकवृक्षः; द्वारोपरिस्थितदारु। ५२१

नासिका स्त्री. [नासते शब्दायते इति। नास शब्दे+'ण्वुल् तृचौ' इति ण्वुल्। टापि अत इत्वम्] घ्राणेन्द्रियं; घ्राणं; गन्धवहा; घोणा; नासा; शिङ्घिणी; नासिक्यं; नस्या; गन्धनाली; गन्धबन्धा; नक्रा; 'श्रोत्रं त्वक् चक्षुषी जिह्वा नासिका चैव पञ्चमी। पायूपस्थं हस्तपादं वाक् चैव दशमी स्मृता'—इति मनुः (२।९०)। ५२१

नाहलः पुं. [नाहं पर्वतशिखरादिकं लाति आश्रयत्वेन गृह्णातीति। नाह+ला+क] म्लेच्छजातिविशेषः।५९९

निःशलाकः त्रि. [निर्गता शलाका यस्मात्, शलाकाया निर्गतो वा] रहः; निर्जनं; निर्मक्षिकम्। ७०८

निःशेषम् त्रि. [निष्क्रान्तं शेषात्, 'निरादयः' इति समासः] समस्तं; सम्पूर्णम्; 'उच्छिन्नसर्वसङ्कल्पो निःशेषाशेषचेष्टितः। स्वावगम्यो लयः कोऽपि जायते वागगोचरः'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् (४।३२)। शेषरहितम्। ७७०

निःशोध्यम् त्रि. [निर्गतं शोध्यं यस्मात् । शोध्यान्निर्गतमिति वा । 'निरादयः' इति समासः] शोधितं; मृष्टम् । ७७०

निःश्रेणिः स्त्री. [निर्निश्चिता श्रेणिः सोपानपङ्क्तिः यत्र] अधिरोहिणी; 'चक्रे त्रिदिवनिःश्रेणिः सरयूरनुयायिनाम्' —इति रघुवंशे (१५।१००) । खर्जूरीवृक्षः; घोटकविशेषः; 'उपर्युपरि यस्य स्युरावर्ता अलिके त्रयः । निःश्रेणिः स तु विज्ञेयो राष्ट्रवृद्धिकरः परः'—इति नकुलकृताश्वचिकित्सिते । ३०१

निःश्रेणी स्त्री. [निःश्रेणिः+कृदिकारादिति वा ङीष्] निःश्रयणी; निःश्रेणिः; निःश्रेणिका; अधिरोहिणी; निःश्रयिणी; 'सीढी' इति भाषा । ३०१

निःश्रेयसम् क्ली. [निश्चितं श्रेयः, 'अचतुरविचतुरेति' निपातनात् साधुः] मोक्षः; 'वेदाभ्यासस्तपोज्ञानमिन्द्रियाणां च संयमः । अहिंसा गुरुसेवा च निःश्रेयसकरं परम्'—इति मनुः (१२।८३) । शुभम्; 'इदं भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसम्मितम् । उत्तमश्लोकचरितं चकार भगवानृषिः । निःश्रेयसाय लोकस्य धन्यं स्वस्त्ययनं परम्'—इति भागवते (१।३।४०) । विद्या; अनुभावः; भक्तिः; पुं. [निर्निश्चितं श्रेयो मङ्गलं यस्मात्] शङ्करः । १२४

निःसरणम् क्ली. [निर्+सृ+ल्युट्] गेहादिमुखं; मरणम्; उपायः; निर्वाणं; निगमः; 'गर्भवासे महद्दुःखं दशमासनिवासनम् । तथा निःसरणे दुःखं योनियन्त्रेऽतिदारुणे'—इति देवीभागवते (४।२।२८) । २८९

निकरः पुं. [निकरोति व्याप्नोतीति । नि+कृ+अच्] समूहः; 'इत्यादिमुग्धबुद्धेरसमञ्जसवर्णनं रहः कृत्वा । गृह्णाति कनकनिकरं नृत्यंस्तत्तन्मनोरथैः पापः'—इति कलाविलासे (२।१६) । सारः; न्यायदेयधनं; निधिः । ६८६

निकषा स्त्री. [निकषति हिनस्तीति । कष् हिंसायाम्+पचाद्यच्+टाप्] राक्षसमाता; सा सुमालिकन्या विश्रवसो भार्या । ११९

निकषा अव्य. [नि+कष् गतौ+'आः समिण्निकषिभ्याम्' इति आ] निकटं; समीपम्; 'पयोधिमाबद्धचलज्जलाविलं विलङ्घ्य लङ्कां निकषा हनिष्यति'—इति माघे (१।६८) । मध्यम् । ८७९

निकायः पुं. [निचीयते इति, नि+चि+'सङ्घे चानौत्तराधर्ये' इति घञ् आदेश्च क] संहतानां समुच्चयः; 'नीरन्ध्रनिर्यत्सुमनोनिकायकाषायपट्टप्रणयादशोकः'—इति श्रीकण्ठचरिते (६।१८) । निलयः; 'एते मनूंस्तु सप्तान्यानसृजन् भूरितेजसः । देवान् देवनिकायांश्च महर्षीश्चामितौजसः'—इति मनुः (१।३६) । परमात्मा; लक्ष्यं; सधर्मिप्राणिसंहतिः; 'तथा देवनिकायानां सेन्द्राणां च दिवौकसाम्'—इति महाभारते (१।१२३।४५) । ६८६

निकाय्यः पुं. [निचीयतेऽस्मिन् धान्यादिकमिति । नि+चि+'पाय्यसांनाय्यनिकाय्येति' ण्यत्प्रत्ययेन निपातनात् साधुः] गृहम्; 'न प्रणाय्यो जनः कश्चिन्निकाय्यं तेऽधितिष्ठति । देवकार्यविघाताय धर्मद्रोही महोदये'—इति भट्टिः (६।६६) । २९१

निकारः पुं. [नि+कृ+घञ्] विप्रकारः; अपकारः; उत्कारः; धान्यस्योर्ध्वक्षेपणं; खलीकारः; धिक्कारः । ७०४

निकुञ्जम् पुं.– क्ली. [नितरां कौ पृथिव्यां जातम् इति । जन्+ड । पृषोदरादित्वान् मुमागमे साधु] कुञ्जम्; 'रचिते निकुञ्जपत्रैर्भिक्षुकपात्रे ददाति सावज्ञम् । पर्युषितमपि सुतीक्ष्णश्वासकदुष्णं वधूरन्नम्,—इति आर्यासप्तशत्याम् । १६७

निकुरम्बम् पुं.–क्ली. [निकुरतीति, नि+कुर्+बाहुलकात् अम्बच्] समूहः; 'आरक्तगण्डरुचिविद्रुमदण्डभाजो, यस्यास्ति फेननिकुरम्ब इवाट्टहासः'—इति श्रीकण्ठचरिते (१८।४०) । ६८६

निकृतः त्रि. [नि+कृ+क्त] प्रत्याख्यातः; निराकृतः; तिरस्कृतः; शठः; वञ्चितः; नीचः । ३८३

निकृतिः स्त्री. [नि कृ+क्तिन्] शाठ्यम्; 'न समयपरिरक्षणं क्षमन्ते निकृतिपरेषु परेषु भूरिधाम्नः'—इति किराते (१।४५) । दैन्यम्; भर्त्सनं; क्षेपः; शठः । ७४०

निकृष्टः त्रि. [नि+कृष्+क्त] अधमः; तुच्छः; जात्याचारादिनिन्दितः । ३३७

निकेतनम् क्ली. [निकेतति निवसत्यस्मिन्निति । नि+कित्+अधिकरणे ल्युट्] गृहम्; 'विसर्जिताय सा तेन गता शाल्वनिकेतनम् । उवाच तं वरारोहा राजानं मनसेप्सितम्'—इति देवीभागवते (१।२०।४२) । पलाण्डौ पुं. । २९१

निक्षेपः पुं. [नि+क्षिप्+घञ्] समर्पितवस्तु; उपनिधिः; न्यासः; 'स्वद्रव्यं यत्र विश्रम्भान्निक्षिपत्यविशङ्कितः। निक्षेपो नाम तत्प्रोक्तं व्यवहारपदं बुधैः। असंख्यातमविज्ञातं समुद्रं यन्निधीयते। तज्जानीयादुपनिधिं निक्षेपं गणितं विदुः। निक्षेपं वृद्धिशेषं च क्रयं विक्रयमेव च। याच्यमानो न चेद्दद्याद्वर्द्धते पञ्चकं शतम्'—इति मिताक्षरायां नारदः। क्षेपणं; त्यागः। ८२

निखिलम् त्रि. [निवृत्तं खिलं शेषो यस्मात्] समस्तं; सम्पूर्णम्; 'निखिलमलगणानां नाशकृत् कामकन्दम् प्रकटय भगवत्या नामयुक्तं पुराणम्'—इति देवीभागवते (१।२।४०)। ७१३

निगडः पुं.– क्ली. [निगलति बध्नातीति। नि+गल्+अच्, लस्य डत्वम्] हस्तिनां लोहमयपादबन्धोपकरणं; शृङ्खलः; अन्दूकः; हिञ्जीरः; अन्दुः; 'बद्धापराणि परितो निगडान्यलावीत् स्वातन्त्र्यमुज्ज्वलमवाप करेणुराजः'—इति माघे (५।४८)। २२३

निगदितः त्रि. [नि+गद् व्यक्तायां वाचि+क्त, इडागमः] भाषितः; कथितः; उक्तः। ४७५

निगमः पुं. [नितरां गच्छन्त्यत्र, 'गोचरसञ्चर' इति निपातितः] अध्वा; पुरी (२८५); वेदः (७९६); 'कथङ्कारं वाच्यः सकलनिगमागोचरगुणप्रभावः स्वं यस्मात् स्वयमपि न जानासि परमम्'—इति देवीभागवते (१।५।६)। वाणिजः; कटः; वणिक्पथः; हट्टः; निश्चयः; 'तस्या एव प्रतिज्ञाया हेतुभिर्दृष्टान्तोपनयनिगमैः स्थापना'—इति चरकः। उपदेशः; 'इमं स्वनिगमं ब्रह्मन्नवेत्य मदनुष्ठितम्। अदान्मे ज्ञानमैश्वर्यं स्वस्मिन भावं च केशवः'—इति भागवते (१।५।३९)। २६०

निगूहनम् क्ली. [निगुह्यते संव्रियते इति। नि+गुह्+ल्युट्] गोपनं; संवरणम्। ७७२

निग्रन्थनम् क्ली. [नि+ग्रथि कौटिल्ये+भावे ल्युट्] मारणं; हननं; विनाशनम्। ४७८

निघ्नः त्रि. [निहन्यते निगृह्यते इति। नि+हन्+घञर्थे क। नियम्यत्वादेवास्य तथात्वम्] अधीनः; आयत्तः; 'आश्वास्य रामावरजः सतीं ताम् आख्यातवाल्मीकिनिकेतमार्गः। निघ्नस्य मे भर्तृनिदेशरौक्ष्यं देवि! क्षमस्वेति बभूव नम्रः'—इति रघुवंशे (१४।५८)। अङ्कपूरणं; गुणनम्; 'पुनर्द्वादशनिघ्नाच्च लभ्यते यत्फलं बुधैः'—इति सूर्यसिद्धान्ते (३।२९)। सूर्यवंशीयनृपभेदः; 'अनरण्यसुतो निघ्नो निघ्नपुत्रौ बभूवतुः'—इति हरिवंशे (१५।२२)। ३४१

निचितम् त्रि. [निचीयतेमस्मेति। नि+चि+क्त] पूरितं; व्याप्तम्; 'पश्य नानाविधाकारैरग्निभिर्निचितां महीम्'—इति महाभारते (३।१२९।१४)। सञ्चितम्; 'वायुः प्रवृद्धो निचितं वनाशं नुदत्यधस्तादहिताशनस्य'—इति भावप्रकाशः। नदीभेदे स्त्री.। 'कौशिकीं त्रिदिवां कृत्यां निचितां रोहितारणीम्'—इति महाभारते (६।९।१८)। ७०२

निचुलः पुं. [निचोलति समुच्छ्रयतीति। नि+चुल्+'इगुपधज्ञेति' क] इज्जलवृक्षः; 'इज्जलो हिज्जलश्चापि निचुलश्चाम्बुजस्तथा'—इति भावप्रकाशे। वेतसवृक्षः; निचोलः। १९५

निचोलकः पुं. [निचोल इव कायतीति। निचोल+कै+क] भटादेश्चोलाकृतिसन्नाहः; कुर्पासः; वारवाणः; कञ्चुकः; कूर्पासः; कूर्पासकः; अर्द्धचोलकः; निचुलकं; निचोलकं; निचोलः; निचुलः; उत्तरच्छदः; प्रच्छदपटः। ५५२

नितम्बः पुं. [निभृतं तम्यते आकाङ्क्ष्यते पर्वतीयैः कामुकैरिति वा। तमु काङ्क्षायाम्+'उल्बादयश्चेति' साधुः। यद्वा नितम्बति पीडयति नायकचित्तमिति। नि+तम्ब हिंसायाम्+अच्] कटकः; 'गिरेर्नितम्बं मरुता विभिन्नं तोयावशेषेण हिमाभमभ्रम्'—इति भट्टिः (२।८)। कटिमात्रम् (५१२); 'तरुण्यालिङ्गितः कण्ठे नितम्बस्थानमाश्रितः। गुरूणां सन्निधानेऽपि कः कूजति मुहुर्मुहुः'—इति विदग्धमुखमण्डने। स्कन्धः; रोधः; स्त्रीकट्याः पश्चाद्भागः; 'विपुलतरनितम्बाभोगरुद्धे रमण्याः, शयितुमनधिगच्छन् जीवितेशोऽवकाशम्'—इति माघे (११।५)। १६६

नितम्बिनी स्त्री. [अतिशयितो नितम्बोऽस्त्यस्या इति। नितम्ब+'अत इनिठनौ' इति इनि, स्त्रियां ङीप्] स्त्रीमात्रम्; 'नितम्बिनीमिच्छसि मुक्तलज्जां कण्ठे स्वयंग्राहनिषक्तबाहुम्'—इति कुमारसम्भवे (३।७)। प्रशस्तनितम्बविशिष्टा; 'वैगुण्येऽपि हि महता विनिर्मितं भवति कर्म शोभायै। दुर्वहनितम्बमन्थरमपि हरति मनो

नितम्बिनीनृत्यम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५५४)। नितम्बविशिष्टे त्रि.। 'लोभ्यमाननयनः श्लथांशुकैः मेखलागुणपदैर्नितम्बिभिः'—इति रघौ (१९।२६)। ४८२

नितान्तम् क्ली. [नितास्यतीति, नि+तम्+कर्तरि क्त, 'अनुनासिकस्येति' दीर्घः] अतिशयः; 'केनाम्यसूयापदकाङ्क्षिणा ते नितान्तदीर्घैर्जनितातपोभिः'—इति कुमारसम्भवे (३।४)। तद्वति त्रि.। ७१८

नित्यम् क्ली. [नियमेन भवम्। नि+'त्यब् नेर्ध्रुव इति; वक्तव्यम्' इति त्यप्] निरन्तरक्रियावचनं; सततम्; अनारतम्; अश्रान्तं; सन्ततम्; अविरतम्; अनिशम्; अनवरतम्; अजस्रं; प्रसक्तम्; आसक्तम्; अलद्धम्। तद्वति त्रि.। (६९८) कालत्रयव्यापी, शाश्वतः; ध्रुवः; सदातनः; सनातनः; 'दमो दानं क्षमा बुद्धिर्ह्रीर्धृतिस्तेज उत्तमम्। नित्यान्यासन् महासत्त्वे शान्तनौ पुरुषर्षभे'—इति महाभारते (१।१००।२) पुं. समुद्रः। १२५

नित्यत्वम् क्ली. [नित्य+'तस्य भावस्त्वतलौ'] नित्यता सदा; सना; सर्वदा। ८८७

निदाघः पुं. [नितरां दह्यतेऽत्र अनेन वा। नि+दह्+घञ्। न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्] ग्रीष्मकालः; उष्णः; घर्मः; 'रावणावरजा तत्र राघवं मदनातुरा। अभिपेदे निदाघार्ता व्यालीव मलयद्रुमम्'—इति रघौ (१२।३२) ११६

निदानम् क्ली. [नि निश्चयो दीयतेऽनेनेति। नि+दा+करणे ल्युट्] आदिकारणम्; 'निदानमिक्ष्वाकुकुलस्य सन्ततेः सुदक्षिणा दौर्हृदलक्षणं दधौ'—इति रघौ (३।१)। रोगनिर्णयः; रोगलक्षणम्; आदानं; रोगहेतुः; 'निदानं पूर्वरूपाणि रूपाण्युपशयस्तथा। सम्प्राप्तिश्चेति विज्ञानं रोगाणां पञ्चधा स्मृतम्। निमित्तहेत्वायतनप्रत्ययोत्थानकारणैः। निदानमाहुः पर्यायैः प्राग्रूपं येन लक्ष्यते'—इति माधवकरः। अवसानम् (८२५); कारणं; वत्सदामादि; 'उदुश्रियाणामसृजन्निदानम्'—इति ऋग्वेदे (६।३२।२)। [नि+दो अवखण्डने+भावे ल्युट्] कारणक्षयः; [नि+दैप्शोधने+भावे ल्युट्] शुद्धिः; तपःफलयाचनं; पैलमुनिकृतचिकित्साग्रन्थविशेषः; 'पैलो निदानं करथस्तन्त्रं सर्वधरं परम्। द्वैधनिर्णयतन्त्रं च चकार कुम्भसम्भवः'—इति ब्रह्मवैवर्ते (१।१६।२१)। ६१२

निदिग्धिका स्त्री. [निदिग्धा+स्वार्थे संज्ञायां वा कन्। टापि अत इत्वम्] कण्टकारिका; 'अनाक्रान्ता स्पृही व्याघ्री भण्डाकी च निदिग्धिका। सिंही धामनिका क्षुद्रा बृहती कण्टकारिका'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। एला; निदिग्धा; 'कपित्थबृहतीबिल्वपटोलेषु निदिग्धिकाः'—इति सुश्रुते (३।१७)। ६१९

निधनः पुं.– क्ली. [नि+धा+ल्युट्] मरणं; वधतारा; सा तु जन्मनक्षत्रत् सप्तमी तारा; 'जन्म सम्पद्विपत् क्षेमः प्रत्यरिः साधको वधः। प्रत्यरौ लवणं दद्यान्निधने तिलकाञ्चनम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। [निवृत्तं धनं यस्य] धनहीने त्रि.। ६२८

निधिः पु. [निधीयतेऽत्रेति। नि+धा+कि] कुवेरस्य नवधा रत्नकोशः; शेवधिः; सेवधिः; 'पद्मोऽस्त्रियां महापद्मः शङ्खो मकरकच्छपौ। मुकुन्दकुन्दनीलाश्च वर्चोऽपि निधयो नव'—इति हारावली। नलिकानामगन्धद्रव्यं; समुद्रः; 'कन्यां सुकेशीं निधिकन्यकासमां मेने तदात्मानमनुत्तमं च'—इति देवीभागवते (३।२२। १०)। जीवकौषधिः; आधारः; चिरप्रनष्टस्वामिकभूजातधनविशेषः; अज्ञातस्वामिकचिरनिखातस्वर्णादि; 'राजा लब्ध्वा निधिं दद्यात् द्विजेभ्योऽर्द्धं द्विजः पुनः। विद्वानशेषमादद्यात् सर्वस्यासौ प्रभुर्यतः। इतरेण निधौ लब्धे राजा षष्ठांशमाहरेत्। अनिवेदितविज्ञातो दाप्यस्तं दण्डमेव च'—इति मिताक्षरा। 'ममायमिति यो ब्रूयान्निधिं सत्येन मानवः। तस्याददीत षड्भागं राजा द्वादशमेव वेति। अंशविकल्पस्तु वर्णकालाद्यपेक्षया वेदितव्यः'—इति मनुः। पौरववंशीय नृपविशेषः; 'बुभुजे पृथिवीमेनां दण्डपाणिर्महाबलः; राजासने ततः सोऽपि स्थापयित्वा निधिं सुतम्। स्मरन्नारायणं देवं तपसे स वनं ययौ। निधिस्तु विधिवद्राज्यं चकार नोतिपण्डितः'—इति राजावल्यां मत्स्यपुराणे। विष्णुः; 'सर्वः शर्वः शिवः स्थाणुर्भूतादिर्निधिरव्ययः।' 'प्रलयकालेऽस्मिन् सर्वं निधीयते इति निधिः' इति तद्भाष्ये शङ्करः। महादेवः; 'श्रुवहस्तः सुरूपश्च तेजस्तेजकरो निधिः'—इति महाभारते (१३।१७।४३)। ८२

निधुवनम् क्ली. [नितरां धुवनं हस्तपादादिकम्पनं यत्र] मैथुनम्; 'अनिमिषमविरामारागिणां सर्वरात्रं, नवनिधुवनलीलाः कौतुकेनातिवीक्ष्य। इदमुदवसितानाम-

स्फुटालोकसम्पत्, नयनमिव सनिद्रं घूर्णते दैपमर्चिः'— इति माघे (११।१८)। नर्म; केलिः; [नितरां धुवनं कम्पनम्] कम्पः। ५६९

निध्यानम् क्ली. [नि+ध्यै+ल्युट्] दर्शनं; सोत्कण्ठ-स्मरणम्। ५६६

निन्दा स्त्री. [निन्दनमिति, निदि+'गुरोश्च हलः' इति स्त्रियाम् अ, टाप्] अपवादः; निन्दनम्; अवर्णः; आक्षेपः; निर्वादः; परीवादः; कुत्सा; उपक्रोशः; जुगुप्सा; गर्हणं; गर्हा; कुत्सनं; परिवादः; जुगुप्सनम्; अपक्रोशः; भर्त्सनम्; अववादः; गर्हणा; धिक्क्रिया; 'गुरोर्यत्र परीवादो निन्दा वापि प्रवर्तते। कर्णौ तत्र पिधातव्यौ गन्तव्यं वा ततोऽन्यतः'—इति मनुः (२।२००)। 'वेदनिन्दारतान् मर्त्यान् देवनिन्दारतांस्तथा। द्विजनिन्दारतांश्चैव मनसापि न चिन्तयेत्। न चात्मानं प्रशंसेद्वा परनिन्दां च वर्जयेत्। वेदनिन्दां देवनिन्दां प्रयत्नेन विवर्जयेत्। यस्तु देवानृषींश्चैव वेदं वा निन्दति द्विजः। न तस्य निष्कृतिर्दृष्टा शास्त्रेष्विह मुनीश्वराः। । निन्दयेद्वै गुरुं देवं वेदं वा सोपबृंहणम्। कल्पकोटिशतं साग्रं रौरवे पच्यते नरः। तूष्णीमासीत निन्दायां न ब्रूयात् किञ्चिदुत्तरम्। कर्णौ पिधाय गन्तव्यं न चैनानवलोकयेत्। वर्जयेद्वै परेषान्तु गृहेषु गर्हणां बुधः। न निन्देद्योगिनः सिद्धान् व्रतिनो वा यतींस्तथा। देवतायतनं प्राज्ञो देवानामाकृतिं तथा'—इति कौर्मे। दुष्कृतिः; अपवादः। १४७

निपः पुं.—क्ली. [नियतं पिबत्यनेनेति। नि+पा+घञर्थे क] कलसः। कदम्बवृक्षे पुं.। ३१६

निपातः पुं. [नितरां पतनमिति। नि+पत्+घञ्] मृत्युः; 'सङ्करेषु निपातेषु तथापद्व्यसनेषु च'—इति महाभारते (५।१२२।९)। पतनम्; 'वने वा हर्म्ये वा समकर-निपातो हिमकरः'—इति आनन्दलहर्याम्। ८७२

निपानम् क्ली. [निपीयते अस्मिन्निति। नि+पा+अधिकरणे ल्युट्] निपानकं; कूपसमीपशिलादिनिबद्धपशुपानार्थकृतकूपोद्धृताम्बुस्थानम्; आहावः; गोदोहनपात्रं; जलाशयमात्रम्; 'परनिपानेषु न स्नानमाचरेत्'—इति विष्णुसंहितायाम्। ६८४

निभः पुं. [नियतं भातीति। नि+भा+क] व्याजः; त्रि. सदृशः; 'प्रबुद्धपुण्डरीकाक्षं बालातपनिभांशुकम्। दिवसं शारदमिव प्रारम्भमुखदर्शनम्'—इति रघुवंशे (१०।९)। प्रकाशः। ७०९

निभालनम् क्ली. [नि+भल्+णिच्+भावे ल्युट्] दर्शनम्; अवलोकनम्। ५६६

निमित्तम् क्ली. [नि+मिद्+क्त। संज्ञापूर्वकत्वान्न नत्वम्] लक्ष्यं; हेतुः; 'किं निमित्तं महाभाग! निःस्पृहस्य च मां प्रति। जातं ह्यागमनं ब्रूहि कार्यं तन्मुनिसत्तम!'—इति देवीभागवते (१।१९।५)। चिह्नं; शकुनः; 'निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव!'—इति श्रीभगवद्गीतायाम्। ४६८

निमिषः पुं. [निमिषतीति, नि+मिष्+'इगुपधेति' क] निमेषः; कालविशेषः; विष्णुः। ८६९

निमीलनम् क्ली. [निमीलत्यनेनेति। नि+मील्+करणे ल्युट्] मरणं; [नि+मील्+भावे ल्युट्] निमेषः; 'नयन-निमीलनमूलः सुचिरं स्नानार्द्रचूलजलसिक्तः। दम्भतरुः शुचिकुसुमः सुखशतशाखाशतैः फलितः'—इति कलाविलासे (१।४७)। कालविशेषः; 'तद्वदेव विमर्दार्द्ध-नाडिकाहीनसंयुते। निमीलनोन्मीलनाख्ये भवेतां सकलग्रहे'—इति सूर्यसिद्धान्ते (४।१७)। ६२८

निमेषः पुं. [नि+मिष्+भावे घञ्] पक्ष्मस्पन्दनकालः; निमिषः; दृष्टिनिमीलनम्; 'पलक मीचना' इति भाषा। पुंसो यावत्कालमकृत्रिमनेत्रविकाशानन्तरं पक्ष्माकुञ्चनं जायते स निमेषः; 'अक्षिपक्ष्मपरिक्षेपो निमेषः परिकीर्तितः। द्वौ निमेषौ त्रुटिर्नाम द्वे त्रुटी तु लवः स्मृतः'—इति अग्निपुराणे। पक्ष्मस्पन्दनम्; 'पपौ निमेषालसपक्ष्मपक्तिरुपोषिताभ्यामिव लोचनाभ्याम्'—इति रघौ (२।१८)। रोगविशेषः; 'नेत्रस्तम्भं निमेषं वा तृष्णां कासं प्रजागरम्। लभते दन्तचालं च तांस्तांश्चान्यानुपद्रवान्'—इति सुश्रुते। यक्षविशेषः; 'उलूकश्वसनाभ्यां च निमेषेण च पक्षिराट्। प्ररुजेन च सङ्ग्रामं चकार पुलिनेन च'—इति महाभारते (१।३२।१९)। ८६९

निम्नम् त्रि. [निकृष्टा म्ना अभ्यासः शीलमत्र। यद्वा निकृष्टं म्नातीति। म्ना+क] नीचं; गभीरं; गम्भीरं; गभीरकम्; 'क ईप्सितार्थस्थिरनिश्चयं मनः पयश्च निम्नाभिमुखं प्रतीपयेत्'—इति कुमारसम्भवे (५।५)। पुं. अनमित्रपुत्रः; 'शिनिस्तस्यानमित्रश्च

निम्नोऽभूदनमित्रतः। सत्राजितः प्रसेनश्च निम्नस्याथासतुः सुतौ'—इति भागवते (९।२४।१२)। ६२४

निम्नगा स्त्री [निम्नं गच्छतीति,निम्न+गम्+ड+टाप्] नदी। 'यादृग्गुणेन भर्त्रा स्त्री संयुज्येत यथाविधि। 'तादृग्गुणा सा भवति समुद्रेणेव निम्नगा'—इति मनुः (९।२२)। नीचगामिनि त्रि.। ६६५

नियतः त्रि. [नि+यम्+क्त] नियमे स्थितः; निश्चितः; 'कार्तिके शुक्लपक्षस्य द्वितीयायां नराधिप! पुष्पाहारो वर्षमेकं तत्रैव नियतात्मवान्'—इति भविष्यपुराणे। सेवापरः; 'प्रायच्छत मुनेस्तस्य वल्कलं नियतो गुरोः'—इति रामायणे (१।२।७)। नित्यः; 'अन्यथासिद्धिशून्यस्य नियता पूर्ववर्तिता। कारणत्वं भवेत्तस्य त्रैविध्यं परिकीर्तितम्'—इति भाषापरिच्छेदे। 'चन्द्रे लक्ष्मीः प्रभा सूर्ये गतिर्वायौ भुवि क्षमा। एतत्तु नियतं सर्वं त्वयि चानुत्तमं यशः।' [निपूर्वयम्धातोर्बन्धनार्थकत्वात्] बद्धः; संयुक्तः; आसक्तः; 'प्रतिज्ञामात्मनो रक्षन् सत्ये च नियतः सदा'—इति महाभारते (१।१३४।५९)। ७१०

नियतिः स्त्री. [नियम्यते आत्मा अनयेति। नि+यम्+करणे क्तिन्] भाग्यं; दैवम्; 'आसादितस्य तमसा नियतेर्नियोगाद् आकाङ्क्षतः पुनरपक्रमणेन कालम्'—इति माघे (४।३४)। नियमः; चतुर्दशधारिणीदेवयोषिद्गणानामन्यतमा। ८६

नियन्ता [ऋ] पुं. [नियच्छति अश्वादीनिति। नि+यम्+तृच्] सारथिः; 'स नियन्तृध्वजरथं विव्याध निशितैः शरैः'—इति महाभारते (७।१३।२२)। विष्णुः; 'अपराजितः सर्वसहो नियन्ता नियमो यमः'—इति महाभारते। त्रि. शास्ता; 'रेखामात्रमपि क्षुण्णादामनोर्वर्त्मनः परम्। न व्यतीयुः प्रजास्तस्य नियन्तुर्नेमिवृत्तयः'—इति रघौ (१।१७)। ४४८

नियमस्थितिः स्त्री. [नियमे व्रताचरणादौ स्थितिः] तपस्या; धर्मानुष्ठानम्। ७७६

निरन्तम् त्रि. [निर्नास्ति अन्तरं यस्मिन् यस्माद्वा] निबिडं; घनं; अनवकाशः; 'सज्जनयोः स्तनयोरिव निरन्तरं सङ्गतं भवति—' इति आर्यासप्तशत्याम् (४।३८)। अनवधिः; अपरिधानं; अनन्तर्धानम्; अभेदः; अतादर्थ्यम्; अच्छिद्रम्; 'शिलाशयान्तामनिकेतवासिनीं निरन्तरास्वन्तरवातवृष्टिषु'—इति कुमारसम्भवे (५।२५)। 'अविना, अबहिः, अनात्मीयम्, अनवसरः, अमध्यम्, अनन्तरात्मा' एते निरुपसर्गपूर्वकान्तरशब्दार्थाः। ७१७

निरयः पुं. [निकृष्टः अयो गमनं यत्र] नरकः; 'कथं च शक्तास्ते दातुं निरयस्थाः फलं पुनः'—इति हरिवंशे (१६।१६)। ६२५

निरर्थकम् त्रि. [निर्गतोऽर्थो यस्मात्। कप्] निष्फलं; मोघं; विफलम्; 'अयं तु साक्षाद्भगवांस्त्र्यधीशः, कूटस्थ आत्मा कलयावतीर्णः। यस्मिन्नविद्यारचितं निरर्थकं पश्यन्ति नानात्वमपि प्रतीतम्'—इति भागवते (४।१६।१९)। ७७४

निरवग्रहः पुं. [निर्गतोऽवग्रहः प्रतिबन्धो यस्मात्] स्वतन्त्रः; 'दुर्दमः कामचारी च स केशी निरवग्रहः'—इति हरिवंशे (८०।९)। वृष्टिप्रतिबन्धाभावः; महादेवः; 'नीलस्तथाङ्गलुब्धश्च शोभनो निरवग्रहः'—इति महाभारते (१३।१७।८२)। ३७९

निरसनम् क्ली. [निरस्यते क्षिप्यते इति। निर्+अस्+ल्युट्] वधः; निष्ठीवनं; निःसारणं; प्रत्याख्यानम्; 'स पितुर्विक्रियां दृष्ट्वा राज्यान्निरसनं च तत्। नियतो वर्तयामास प्रजाहितचिकीर्षया'—इति महाभारते (१४।४।१०)। ४७७

निरस्तः त्रि. [निर्+अस्+क्त] निराकरणविशिष्टः; प्रत्यादिष्टः; प्रत्याख्यातः; निराकृतः; निकृतः; विप्रकृतः; प्रतिक्षिप्तः; अपविद्धः; निष्ठ्यूतः; प्रेषितः; संत्यक्तः; प्रतिहतः; 'यत्र विद्वज्जनो नास्ति श्लाघ्यस्तत्राल्पधीरपि। निरस्तपादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते'—इति हितोपदेशे। 'आयान्ती वह्निकूटाभा सा निरस्ता महोल्कया'—इति मार्कण्डेयपुराणे (८९।२३)। १४२

निराकृतः त्रि. [निर्+आ+कृ+क्त] प्रत्याख्यातः; निरस्तः। ७०३

निराकृतिः स्त्री. [निर्+आ+कृ+क्तिन्] अस्वाध्यायः; अनाकारः; निरसनं; निराकरणम्; पुं. पञ्चमहायज्ञानुष्ठानरहितः; 'यक्ष्मी च पशुपालश्च परिवेत्ता निराकृतिः'—इति मनुः। निराकृतिः पञ्चमहायज्ञानुष्ठानरहितः; तथा च 'निराकर्तामरादीनां स विज्ञेयो निराकृतिः'—इति कुल्लूकभट्टः। रोहित-

मनुपुत्रः; 'दक्षपुत्रस्य पुत्रास्ते रोहितस्य प्रजापतेः। मनोः पुत्रो धृष्टकेतुः पञ्चहोत्रो निराकृतिः'—इति हरिवंशे (७।६३)। ४०५

निरामयः त्रि. [निर्गत आमयो व्याधिर्यस्मात्] रोगरहितः; वार्तः; कल्यः; नीरुजः; पटुः; उल्लाघः; लघुः; अगदः; निरातङ्कः; अनातङ्कः; आतङ्करहितः; 'निरामयाणां चित्रं तु भक्तमध्ये प्रकीर्तितम्'—इति सुश्रुते। उपद्रवादिशून्यः; 'इदं नगरमध्यासे रमणीयं निरामयम्। वसतेह प्रतिच्छन्ना ममागमनकाङ्क्षिणः'—इति महाभारते (१।१५७।११)। रोगनाशकः; 'किमौषधैः क्लिश्यसि मूढ दुर्मते! निरामयं कृष्णरसायनं पिब'—इति मुकुन्दमालायाम् (२१)। पुं. [निर्गतः आमयो यस्मात्] इडिक्कः; वनच्छगलः; शूकरः; नृपविशेषः; 'धृष्टकेतुर्बृहत्केतुर्दीप्तकेतुर्निरामयः'—इति महाभारते (१।१।२३४)। महादेवः; क्ली. कुशलम्; 'कुरूणां पाण्डवानां च प्रतिपत्स्व निरामयम्'—इति महाभारते (५।७८।८)। ३८०

निर्ऋतिः स्त्री. [निर्नियता ऋतिर्घृणा अशुभं वा यत्र] अलक्ष्मीः; 'अरुन्तुदं परुषं तीक्ष्णवाचं वाक्कण्टकैर्वितुदन्तं मनुष्यान्। विद्यादलक्ष्मीकतमं जनानां मुखे निबद्धां निर्ऋतिं वहन्तम्'—इति महाभारते (१।८७।९)। पापदेवता; 'दूतो निर्ऋत्या इदमाजगाम'—इति ऋग्वेदे (१०।१६५।१) 'निर्ऋत्याः पापदेवतायाः दूतोऽनुचरः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। त्रि. [निर्गता ऋतिरशुभं यस्मात्] निरुपद्रवः; दिक्पालविशेषः; स तु नैर्ऋत्यकोणाधिपतिः। राक्षसः; 'वेत्था हि निर्ऋतीनां वज्रहस्तपरिवृजम्'—इति ऋग्वेदे (८।२४।२४)। मृत्युः; 'स चिन्तयन्नित्थमथाशृणोद्यथा, मुनेः सुतोक्तो निर्ऋतिस्तक्षकाख्यः'—इति भागवते (१।१९।४)। ८६

निर्गुण्डी स्त्री. [निर्गतं गुण्डं वेष्टनं यस्याः। ङीष्] वृक्षविशेषः; सिन्दुकः; सिन्दुवारः; इन्द्रसुरिसः; इन्द्राणिका; सिन्धुकः; सिन्धुवारः; इन्द्रसुरसः; निर्गुण्ठी; इन्द्राणी; पौलोमी; शक्राणी; कासनाशिनी; विसुन्धकः; सिन्धकं; सुरसः; सिन्धुवारितः; सुरसा; सिन्धुवारकः; करहाटः; नीलशेफालिका; शेफालिका; शेफाली; नीलिका; मल्लिका; सुवहा; रजनीहासा; निशिपुष्पिका। २००

निर्ग्रन्थः पुं. [ग्रन्थेभ्यः श्रुत्यादिनियमेभ्यो निर्गतः] मुनिः; क्षपणः; नग्नकः; निस्वः; बालिशः; द्यूतकारः; त्रि. ग्रन्थेभ्यो निर्गतः; निवृत्तहृदयग्रन्थिः; 'आत्मारामाश्च मुनयो निर्ग्रन्था अप्युरुक्रमे'—इति भागवते (१।७।१०) 'निर्ग्रन्थाः ग्रन्थेभ्योनिर्गताः, यद्वा ग्रन्थिरेव ग्रन्थः निवृत्तः क्रोधाहङ्काररूपो ग्रन्थिर्येषां ते निवृत्तहृदयग्रन्थय इत्यर्थः'—इति तट्टीकायां स्वामी। ३४४

निर्ग्रन्थनम् क्ली. [निर्+ग्रथि.कौटिल्ये+भावे ल्युट्] वधः; मारणम्। ४७८

निर्जरः पुं. [जराया निष्क्रान्तः। 'निरादयः क्रान्ताद्यर्थे पञ्चम्याः'—इति समासः] देवः; 'विशन्तु निर्जराः सर्वे कुशलं कथयन्तु वः'—इति देवीभागवते (५।८।१८)। जरारहिते त्रि.। सुधायाम् क्ली.। ४

निर्झरः पुं. [निर्झृणाति जीर्णीभवति उच्चस्थानपतनादिति। निर्+झॄ+अच्] पर्वतावतीर्णजलप्रवाहः; स्रुतजलप्रवाहः; झरः; निर्झरी; पर्वताद्वेगेन पतज्जलं; झोराः; 'सरितो निर्झरांश्चैव ददर्शाद्भुतदर्शनान्'—इति महाभारते (३।६४।९)। 'शैलसानुस्रवद्वारिप्रवाहे निर्झरो झरः। स तु प्रस्रवणश्चापि तत्रत्यं नैर्झरं जलम्। मधुरं कटुपाकं च वातं स्यादतिपित्तलम्। नैर्झरं रुचिकृद्धीरं कफघ्नं दीपनं लघु'—इति भावप्रकाशः। सूर्यघोटकः; तुषानलः। १६६

निर्झरी स्त्री. [निर्+झॄ+अच्+ङीष्] निर्झरः; नदी। १६६

निर्झरिणी स्त्री. [निर्झर उत्पत्तिकारणत्वेनास्त्यस्या इति। इनि, ङीप्] नदी; 'सोऽपि तां वीक्ष्य लावण्यरसनिर्झरिणीं नृपः। यन्न प्राप परिष्वङ्गं तृषाक्रान्तो मुमूर्च्छ तत्'—इति कथासरित्सागरे (१७।७)। ६६५

निर्णिक्तम् त्रि. [निर्णिज्यते शुध्यते स्मेति, निर्+णिज्+क्त] अपनीतमलं; शोधितम्; 'जलदेवगृहञ्चैव श्मशानं गोद्विजालयम्। निर्णिक्तपादः प्रविशेन्नानिर्णिक्तः कदाचन'—इति चिन्तामणिधृतवचनम्। ४०८

निर्णेजकः पुं. [निर्णेनेक्ति निर्मलीकरोति वस्त्रमिति। निर्+णिजिर् शौचपोषणयोः +ण्वुल्] रजकः; 'कारुकान्नं प्रजां हन्ति बलं निर्णेजकस्य च। गणान्नं गणिकान्नं च लोकेभ्यः परिकृन्तति'—इति मनुः (४।२१९।१)। ५९३

निर्निमित्तम् त्रि. [निर्गतं निमित्तं प्रयोजकं प्रयोजनं वा यत्र] स्वाच्छन्द्यं; यदृच्छा। ७०४

निर्मन्थकाष्ठम् क्ली. [यज्ञार्थं निःशेषं मन्थनं निर्मन्थः, भावे घञ्। तस्य काष्ठं दारु] निर्मन्थदारु; अरणिः; यज्ञे अग्न्युत्थापनार्थं घर्षणीयकाष्ठम्। ४१५

निर्मोकः पुं. [नितरां मुच्यते इति। निर्+मुच्+घञ्] सर्पत्वक्; अहिकोषः; निर्ल्वयनी; कञ्चुकः; 'निजगात्रनिर्विशेषस्थापितमपि सारमखिलमादाय। निर्मोकं च भुजङ्गो मुञ्चति पुरुषं च वारवधूः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३२८)। त्वङ्मात्रम्; 'मृगनिर्मोकवसनाश्चीरवल्कलवाससः। निर्द्वन्द्वाः सत्पथं प्राप्ता बालखिल्यास्तपोधनाः'—इति महाभारते (१३।१४९।१०१)। [भावे घञ्] मोचनम्; आकाशः; सन्नाहः; सावर्णिमनोः पुत्रविशेषः; 'अष्टमेऽन्तर आयाते सावर्णिर्भविता मनुः। निर्मोकविरजस्काद्याः सावर्णितनया नृप!' —इति भागवते (८।१३।११)। ६४४

निर्याणम् क्ली. [निर्याति निर्गच्छति मदोऽनेनेति। निर्+या+करणे ल्युट्] गजापाङ्गदेशः; 'प्रत्यन्यदन्तिनिशिताङ्कुशदूरभिन्ननिर्याणनिर्यदसृजं चलितं निषादी' —इति माघे (५।४१)। मोक्षः; अध्वनिर्गमः; 'निर्याणं च रथेनाशु सहसा यत्कृतं त्वया'—इति महाभारते (१३।५५।६)। पशुपादबन्धनरज्जुः; 'निर्याणहस्तस्य पुरो दुधुक्षतः'—इति माघे (१२।४०)। २१७

निर्यामः पुं. [निर्यम्यतेऽनेनेति। निर्+यम्+घञ्] पोतवाहः। ६५५

निर्यासः पुं. [निर्+यस्+घञ्] क्वाथः; कषायः; वृक्षादिक्षीरं; वेष्टकः; 'लोहितान् वृक्षनिर्यासान् व्रश्चनप्रभवांस्तथा। शेलुं गव्यञ्च पेयूषं प्रयत्नेन विवर्जयेत्'—इति मनुः (५।६)। [अर्द्धर्चादित्वात् क्लीबेऽपि] स्वरसः; 'कदलीकन्दनिर्यासे तत्प्रसूनतुलां पचेत्। चतुर्भागावशेषेऽस्मिन् घृतप्रस्थं विपाचयेत्'—इति—वैद्यके। ८६१

निर्ल्वयनी स्त्री. [नितरां लीयते संलीनो भवति अहिरस्यामिति। निर्+ली+ल्युट्, पृषोदरादित्वात् वकारागमः] कञ्चुकः; सर्पत्वक्। ६४४

निर्वपणम् क्ली. [निर्+वप्+भावे ल्युट्] दानम्; 'अनग्नैवावृता कार्यं पिण्डनिर्वपणं सुतैः'—इति मनुः (३।२४८)। 'पिण्डदानम्; 'एवं निर्वपणं कृत्वा पिण्डांस्तांस्तदनन्तरम्। गां विप्रमजमग्निं वा प्राशयेदप्सु वा क्षिपेत्'—इति मनुः (३।२६०)। पिण्डः; 'तत्समाप्य यथोद्दिष्टं पूर्वकर्म समाहितः। दातुं निर्वपणं सम्यक् यथावदहमारभम्'—इति महाभारते (१३।८४।१४)। अन्नादिसंविभागः; 'रहूगणैतत् तपसा न याति न चेज्यया निर्वपणाद् गृहाद् वा'—इति भागवते (५।१२।१२)। ४१९

निर्वाणम् क्ली. [निर्+वा गतौ+क्त, तस्य नः] अपवर्गः; 'मुक्ताश्रयं यर्हि निर्विषयं विरक्तं निर्वाणमृच्छति मनः सहसा यथार्चिः—इति भागवते (३।२८।३५)। अस्तगमनं; निर्वृत्तिः; सङ्गमः; विश्रान्तिः; गजमज्जनम्; 'असह्यपीडं भगवन्नृणमन्त्यमवेहि मे। अरुन्तुदमिवालानमनिर्वाणस्य दन्तिनः'—इति रघौ (१।७१)। निश्चलं; शून्यं; विद्योपदेशनं; नाभिदेशे जप्यप्रणवपुटितमातृकापुटितमूलमन्त्रम्; 'कल्लुकां मूर्ध्नि संजप्य हृदि सेतुं विचिन्तयेत्। महासेतुं विशुद्धे तु षोडशारे समुद्धरेत्। मणिपूरे तु निर्वाणं महाकुण्डलिनीमधः। स्वाधिष्ठाने कामबीजं राकिणीमूर्ध्नि संस्थितम्'— इत्यागमतत्त्वविलासः। विष्णुः; 'त्रिसामा सामगः साम निर्वाणं भेषजं भिषक्'—इति महाभारते (१३।१४९।७५)। समाप्तिः; 'आरब्धकर्मनिर्वाणो न्यपतत् पाञ्चभौतिकः'—इति भागवते (१।६।२९)। त्रि. [निर्+वा+क्त, 'निर्वाणोऽवाते' इति निष्ठातस्य नः] मुक्तः; नष्टः; 'निर्वाणभूयिष्ठमथास्य वीर्यं सन्धुक्षयन्तीव वपुर्गुणेन'—इति कुमारे (३।५२)। निमग्नः; बाणशून्यः। १२४

निर्वादः पुं. [निर्वदनमिति। निर्+वद्+भावे घञ्] परीवादः; जनवादः; 'किमात्मनिर्वादकथामुपेक्षे जायामदोषामुत सन्त्यजामि'—इति रघौ (१४।३४)। अवज्ञा। [निर्निश्चितं वादः कथनम्] निश्चितवादः; वादाभावः। १४८

निर्वापणम् क्ली. [निर्+वप्+णिच्+ल्युट्] वधः; दानं; निर्वाणतासम्पादनम्; 'दीपनिर्वापणात् पुंसः कूष्माण्डच्छेदनात् स्त्रियः'—इति तिथितत्त्वे। [स्वार्थे णिच्] वपनम्; 'मया तावन्नीतिबीजनिर्वापणं कृतं, परतस्तद्दैवत पर्यायायत्तम्' इति पञ्चतन्त्रे। ४७८

निर्वासनम् क्ली. [निर्+वस्+णिच्+ल्युट्] वधः । नगरादेर्बहिष्करणम्; 'निर्वासनं च नगरात् प्रव्रज्या च परन्तप! । नानाविधानां दुःखानामभिज्ञास्मि जनार्दन ! '—इति महाभारते (५।९०।५८) । ४७८

निर्वीरा स्त्री. [निर्गतो वीरवत् पतिः पुत्रो वा यस्याः] अवीरा; पतिपुत्रविहीना । ४८६

निर्वेदः पुं. [निर्+विद्+घञ्] स्वावमाननम्; 'देवैर्युद्धं कृतं चोग्रं प्रह्लादस्तु पराजितः । निर्वेदं परमं प्राप्तो ज्ञात्वाधर्मं सनातनम्'—इति देवीभागवते (४। १०।३७) । 'निर्वेदः स्थायिभावोऽस्ति शान्तोऽपि नवमो रसः'—इति काव्यप्रकाशः । 'तत्त्वज्ञानापदीर्ष्यादेर्निर्वेदः स्वावमाननम्'—इति साहित्यदर्पणम् । परवैराग्यम्; 'ततः कदाचिन्निर्वेदान्निराकाराश्रितेन च । लोकतन्त्रं परित्यक्तं दुःखार्त्तेन भृशं मया'—इति मोक्षधर्मः । वैराग्यम्; 'तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च'—इति श्रीभगवद्गीतायाम् । [निर्गतो वेदो यस्मादिति] वेदरहिते त्रि. । ७५४

निर्वेशः पुं. [निर्+विश्+भावे घञ्] भोगः; भृतिः; 'भृतिर्वेतनं भोगः सुखं पालनमभ्यवहारो वा' इति भरतः । 'अयं हि कृतनिर्वेशो जन्मकोट्यंहसामपि । यद्व्याजहार विवशो नाम स्वस्त्ययनं हरेः'—इति भागवते (६।२।७) । वेतनं; मूर्च्छनं; विवाहः [निर्पूर्वकविश्धातुर्विवाहार्थः इति स्मृतिः] । ७५५

निर्व्यथनम् क्ली. [निर्+व्यथ्+भावे ल्युट्] छिद्रं; व्यथाभावः; निश्चयेन व्यथनम् । ६२४

निलयः पुं. [निलीयते अस्मिन्निति । नि+ली+'एरच्' इति अधिकरणे अच्] गृहम्; 'सञ्चारपूतानि दिगन्तराणि कृत्वा दिनान्ते निलयाय गन्तुम्'—इति रघुवंशे (२।१५) । आश्रयस्थानम्; 'तं भूतनिलयं देवं सुपर्णमुपधावत'—इति भागवते (८।१।११) । २९१

निवर्हणम् क्ली. [नियमेन वर्हणम्, वर्ह हिंसायाम्+भावे ल्युट्] मारणं; घातनं; वधः । ४७७

निवसनम् क्ली. [न्युष्यतेऽत्र,नि+वस्+अधिकरणे ल्युट्] गृहम्; अन्तरीयं (५४६); वस्त्रम्; [भावे ल्युट्] परिधारणम्; 'द्वितीयं च परीदधौ चीरमादाय मैथिली । चीरस्याकुशला देवी सम्यग्निवसने शुभा'—इति रामायणे (२।३७) । २९२

निवहः पुं. [नितरामुह्यते इति । नि+वह्+पुंसीति घ] समूहः; 'मुकुलं कुशलं सुजनं विहाय कुलकुशलशीलविकलेऽपि । आढ्ये कल्पतराविव नित्यं रज्यन्ति जननिवहाः'—इति पञ्चतन्त्रे (५।८७) । [नितरां वहतीति । नि+वह्+पचाद्यच्] सप्तवाय्वन्तर्गतवायुविशेषः; 'निवहो यत्र वातेशः केषाञ्चिन्न सुखप्रदः । न प्रचण्डो न च मृदुः प्रमादी च प्रभञ्जनः'—इति ज्योतिषम् । ६८६

निवापः पुं. [नितरामुप्यते इति । नि+वप्+घञ्] मृतोद्देश्यकदानं; पितृदानं; पितृतर्पणं; निवपनं; पितृदानकम्; 'अपशोकमनाः कुटुम्बिनीम् अनुगृह्णीष्व निवापदत्तिभिः'—इति रघुवंशे (८।८६) । दानमात्रम्; 'येभ्यो निवापाञ्जलयः पितॄणाम्'—इति रघौ (५।८) । [न्युप्यते बीजमस्मिन्निति] क्षेत्रम्; 'अवनिं प्रमदा गाश्च निवापं बहुवार्षिकम् । तत्ते विप्र ! प्रदास्यामि न तु वर्म सकुण्डलम्'—इति महाभारते (३। ३०९।६) । ६३९

निविडम् त्रि. [नितरां विडतीति । नि+विड् आक्रोशे+क] निरवकाशं; निरन्तरं; निविरीसं; घनं; सान्द्रं; नीरन्ध्रं; बहुलं; दृढं; गाढम्; अविरलम्; 'निविडघटितोरुयुगलां श्वासोत्तब्धस्तनार्पितव्यजनाम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३२०) । 'तस्यापरेष्वपि मृगेषु शरान् मुमुक्षोः कर्णान्तिमेत्य बिभिदे निबिडोऽपि मुष्टिः' इति रघुवंशे (९।५८) । नासिकाया नतम्; [नि+'नेर्विडज्विरीसचौ'—इति विडच्] अवटीटम्; 'तद्योगात् नासिका निविडा'–इति सिद्धान्तकौमुदी । ७१८

निविडीसम् त्रि. ['नेर्विडजविरीसचौ' इति विरीसच्, डरयोरेकत्वेन रस्य डः] निविरीसं; निरवकाशं; सघनम्; नासिकाया नतम् । ७१८

निविरीसम् त्रि. [नि नता नासिका यस्य । 'नेर्विडज् विरीसचौ'—इति विरीसच्] अवटीटः; निविडम्; 'उरुनिविरीसनितम्बभारखेदि'—इति माघे (७।२०) । ७१८

निवीतम् क्ली. [निवीयते स्मेति । नि+व्येञ् संवरणे+क्त, सम्प्रसारणम्] कण्ठलम्बितयज्ञसूत्रम्; 'उपवीतं भवेन्नित्यं निवीतं कण्ठसज्जनम्'—इति कूर्मपुराणम् । त्रि. आच्छादनवस्त्रं; प्रावृतम् । ४०७

निवृतम् त्रि. [निव्रियते आच्छाद्यते स्मेति । नि+वृ+क्त] परिवेष्टितं; निवीतं; प्रावृतम्; आच्छादनवस्त्रम्। ७१२

निवेशः पुं. [निविशत्यस्मिन्निति । नि+विश्+अधिकरणे घञ्] शिविरम्; 'तस्य सेनानिवेशोऽभूदध्यर्द्धमिव योजनम्'—इति महाभारते (५।८।२)। उद्वाहः; 'ततो निवेशाय तदा स विप्रः संशितव्रतः। महीञ्चचार दारार्थी न च दारानविन्दत'—इति महाभारते (१।१४।१)। निवेशनम्; 'निवेशार्थं गृहं दत्तमन्नपानादिकं तथा। सेवकं समनुज्ञाप्य परिचर्यार्थमेव च'—इति देवीभागवते (३।१९।४४)। ४५२

निवेशनम् क्ली. [निविशत्यस्मिन्निति । नि+विश्+अधिकरणे ल्युट्] गृहम्; 'स्त्रियोपसंयुतः सोऽथ प्राप्यायोध्यां सुदर्शनः। सम्मान्य सर्वलोकांश्च ययौ राजा निवेशनम्'—इति देवीभागवते (३।२४।४९)। २९१

निशरणम् क्ली. [नि+शृहिंसायाम्+णिच्+ल्युट्, संज्ञापूर्वकविधेरनित्यत्वात् क्वचिद् वृद्धिर्न] मारणं; वधः; घातनम्। ४७७

निशा स्त्री. [नितरां श्यति तनू करोति व्यापारानिति। नि+शो+क+टाप्] रात्रिः; रात्री; रक्षोजननी; शर्वरी; चक्रभेदिनी; घोरा; श्यामा; याम्या; दोषा; तुङ्गी; भौती; शताक्षी; वास्तवा; उषा; वासतेयी, तमा; निट्; 'सितेषु हर्म्येषु निशासु योषितां सुखप्रसुप्तानि मुखानि चन्द्रमाः। विलोक्य निर्यन्त्रणमुत्सुकश्चिरं निशाक्षये याति ह्रियैव पाण्डुताम्'—इति ऋतुसंहारे (१।९)। हरिद्रा; दारुहरिद्रा; 'हरिद्रा पीतिका गौरी काञ्चनी रजनी निशा। मेहघ्नी रञ्जनी पीता वर्णिनी रात्रिनामिका'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। मेषवृषमिथुनकर्कटधनुर्मकरलग्नानि; 'अजगोपतियुग्मश्च कर्किधन्विमृगास्तथा। निशासंज्ञाः स्मृताश्चैते शेषाश्चान्ये दिनात्मकाः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। १०७

निशाटनः पुं. [निशायाम् अटतीति । अट् गतौ+ल्यु] निशाटः; पेचकः; निशाचरे त्रि.। २४६

निशातः त्रि. [नि+शो तनूकरणे+क्त, 'शाच्छोरन्यतरस्याम्'—इति पक्षे इत्वाभावः] तीक्ष्णः; शाणितः। ४७४

निशान्तम् क्ली. [निशाम्यते विश्रम्यतेऽस्मिन्निति । नि+शम्+अधिकरणे क्त] गृहम्; 'तस्याः स राजोपपदं निशान्तं कामीव कान्ताहृदयं प्रविश्य'—इति रघौ (१६।४०)। [निशाया अन्तो यत्र] उषाः; 'न निशान्ते परिश्रान्तो ब्रह्माधीत्य पुनः स्वपेत्'—इति मनुः (४।९९)। शान्ते त्रि.। २९१

निशामनम् क्ली. [नि+शम्+णिच्+ल्युट्] दर्शनम् आलोचनं; श्रवणम्। ५६६

निशारणम् क्ली. [नि+शॄ हिंसायाम्+णिच्+ल्युट्] मारणम्; [निशाया रणम्] रात्रियुद्धम्। [निशाया रणः शब्दः] रात्रिशब्देऽर्थे पुं.। ४७७

निशितः त्रि. [नि+शो+क्त] शाणितः; तीक्ष्णीकृतः; 'तद्वाक्यसमकालं तु बीभत्सुर्निशितैः शरैः। अवार्यैः पञ्चभिर्ग्राहं मग्नमम्भस्यताडयत्'—इति महाभारते (१।१३४।९५)। ५७४

निशीथः पुं. [नितरां शेतेऽत्रेति । नि+शी+'निशीथगोपीथावगथाः' इति थक्प्रत्ययेन निपातनात् साधुः] अर्धरात्रः; 'निशीथदीपाः सहसा हतत्विषा बभूवुरालेख्यसमर्पिता इव'—इति रघौ (३।१५)। रात्रिमात्रम्; 'तन्त्रीसुगीतं मदनस्य दीपनं शुचौ निशीथेऽनुभवन्ति कामिनः'—इति ऋतुसंहारे (१।३)। १०९

निशीथिनी स्त्री. [निशीथोऽस्त्यस्या इति । इनि, ङीप्] रात्रिः; निशीथ्या; निषद्वरी; रात्री। १०७

निशीथिनीनाथः पुं. [निशीथिन्या नाथः] चन्द्रः; निशाकान्तः; निशामणिः; निशापतिः; निशाकरः; चन्द्रमाः। ४३

निशुम्भनम् क्ली. [नि+शुम्भ हिंसायाम्+भावे ल्युट्] मारणं; वधः। ४७७

निश्चयः पुं. [निश्चीयतेऽनेनेति, निस्+चि+'ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च' इति अप्] निःसंशयज्ञानं; निर्णयः; निर्णयनं; निचयः; 'देहोऽयं मम बन्धोऽयं न ममेति च मुक्तता। तथा धनं गृहं राज्यं न ममेति च निश्चयः'—इति भागवते (१।१९।३५)। अर्थालङ्कारविशेषः; 'अन्यन्निषिध्य प्रकृतस्थापनं निश्चयः पुनः'—इति साहित्यदर्पणे (१०।५६)। ८४८

निश्चितः त्रि. [निः शेषं चितः। निस्+चि+क्त] नियतः; पूर्णतया स्थितः; कृतनिश्चयः। ७१०

निश्चितम् क्ली. निर्धारितं; नूनम्। ८७९

निषङ्गः पुं. [नितरां सञ्जन्ति शरा यत्र । नि+सञ्ज्+

अधिकरणे घञ्] तूणीरः; 'ततो मृगेन्द्रस्य मृगेन्द्रगामी वधाय वध्यस्य शरं शरण्यः। जाताभिषङ्गो नृपतिर्निषङ्गादुद्धर्तुमैच्छत् प्रसभोद्धृतारिः'—इति रघुवंशे (२।३०)। सङ्गः। ४६५

निषद्वरः पुं. [निषीदन्ति विषण्णा भवन्ति जना अत्रेति। नि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु+'नौ सदेः' इति ष्वरच्,'सदिरप्रतेः'इति षत्वम्] कर्दमः; पङ्कः; जम्बालः। ६७८

निषादः पुं. [निषद्यते ग्रामसीमायाम्। यद्वा निषीदति पापमत्र। नि+सद्+कर्मणि अधिकरणे वा घञ्] चण्डालः; वेनशरीरोद्भवजातिविशेषः; धीवरविशेषः; [निषीदन्ति षड्जादयः स्वरा यत्र। नि+सद्+घञ्] सप्तस्वरान्तर्गतस्वरविशेषः; हस्तिस्वरतुल्यस्वरः; 'षड्जादयः षडेतेऽत्र स्वराः सर्वे मनोहराः। निषीदन्ति यतो लोके निषादस्तेन कथ्यते।' चतस्रः पञ्चमे षड्जे मध्यमे श्रुतयो मताः। ऋषभे धैवते तिस्रो द्वे गान्धारनिषादके'—इति सङ्गीतदामोदरः। ५९८

निषादी [न्] पुं. [निषीदत्यवश्यं हस्त्युपरि। नि+सद्+आवश्यके णिनि] हस्त्यारोहः; 'प्रत्यन्तदन्तिनिशिताङ्कुशदूरभिन्ननिर्याणनिर्यदसृजं चलितं निषादी'—इति माघे (५।४१)। उपविष्टे त्रि.। 'आतपात्ययसंक्षिप्तनीवारासु निषादिभिः। मृगैर्वर्तितरोमन्थमुटजाङ्गणभूमिषु'—इति रघौ (१।५२)। २२५

निषेधः पुं. [नि+सिध्+घञ्] प्रतिषेधः; निवृत्तिः; विधिविपरीतः; 'तिथीनां पूज्यता नाम कर्मानुष्ठानतो मता। निषेधस्तु निवृतात्मा कालमात्रमपेक्षते'—इति तिथितत्त्वम्। ८३४

निष्कः पुं.– क्ली. [निश्चयेन कायति शोभते इति। निस्+कै+आतश्चेति क] हेम; सुवर्णं; चतुःसुवर्णमुद्राः; 'धरणानि दश ज्ञेयः शतमानस्तु राजतः। चतुः सौवर्णिको निष्को विज्ञेयस्तु प्रमाणतः'—इति मनुः (८।१३७)। साष्टशतसुवर्णः; पलं; दीनारः; उरोभूषणं; वक्षोऽलङ्कारः; 'नामृष्टभोजी नादाता नाप्यनङ्गदनिष्कधृक्'—इति रामायणे (१।६।११)। स्वर्णकर्षः; स्वर्णपलं; कण्ठभूषा; माषकचतुष्टयम्: 'स्याच्चतुर्माषकैः शाणः स निष्कष्टङ्क एव च'—इति शार्ङ्गधरः। षोडशद्रम्यः; 'वराटकानां दशकद्वयं यत् सा काकिनी ताश्च पणश्चतस्रः। ते षोडश द्रम्य इहावगम्यो द्रम्यैस्तथा षोडशभिश्च निष्कः'—इति लीलावत्याम्। १७३

निष्कला स्त्री. [निर्गता कला यस्याः] विगतार्तवा; वृद्धा। ४८७

निष्कली स्त्री. [निष्कल+ङीष्] ऋतुहीना; निवृत्तरजस्का; विगतार्तवा; पुष्पहीना; निकल्का। ४८७

निष्काशः पुं. [निरतिशयं काशते शोभते प्रासादादाविति। निस्+काश्+अच्] प्रासादाद्युपस्थानं; तोरणगृहम्। १०६

निष्कासः पुं. [निश्चितं कासनं विकासः। निस्+कास्+घञ्] प्राकट्यं; प्रभातं; बहिष्कारः; बहिर्भावः। १०६

निष्कुटः क्ली.– पुं. [कुटात् गृहात् निष्क्रान्तः] कोटरः; वृक्षखातम्; गृहसमीपोपवनम् (८१६); 'परिखाश्चैव कौरव्य ! प्रतोलीर्निष्कुटानि च। न जात्वन्यः प्रपश्येत गुह्यमेतद्युधिष्ठिर !'—इति महाभारते (२।६९।५५)। क्षेत्रम्; 'इन्द्रकृष्टैर्वर्तयन्ति धान्यैर्ये च नदीमुखैः। समुद्रनिष्कुटे जाताः पारेसिन्धु च मानवाः'—इति महाभारते (२।५०।९)। कपाटः; पत्न्याटः; प्रमदवनम्। १८२

निष्टयः पुं. [वर्णाश्रमादिभ्यो निर्गतः। निस्+'अव्ययात् त्यप्' इत्यस्य 'निसो गते' इति त्यप, 'ह्रस्वात्तादौ तद्धिते' इति षत्वम्] म्लेच्छजातिविशेषः; चण्डालादिः। पुत्रः; 'यं मे निष्टयो यममात्यो निचखान'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (५।२३)। [ष्टैच स्त्यै शब्दसंघातयोः; नितरां स्त्यायति संघात रूपेण सह वर्तते इति निष्टयः। यद्वा निर्गत्य शरीरात् स्त्यायति विस्तीर्णो भवतीति निष्टयः पुत्रादिः। यद्वा निर्गतो वर्णाश्रमेभ्यो निष्टयश्चण्डालादिः। 'निसो गते' इति वार्तिकेन निस् उपसर्गाद् गतार्थे त्यप्। इति काशिकायाम्]। ५९९

निष्ठा स्त्री. [नितरां स्थितिः। नि+स्था+ आतश्चोपसर्गे' इति अङ्, 'उपसर्गादिति' षत्वं ततष्टाप्] क्लेशः; अवसानम्; अन्तः; व्यवस्था; उत्कर्षः; व्रतं; निष्पत्तिः; समाप्तिः; नाशः; 'यदा क्षितावेव चराचरस्य विदाम निष्ठां प्रभवं च नित्यम्'—इति भागवते (५।१२।९)। निर्वहणं; याच्ञा; क्तक्तवतू प्रत्ययौ ['क्तक्तवतू

निष्ठा' 'एतौ निष्ठासंज्ञौ स्तः' इति सिद्धान्तकौमुदी ।] धर्मादौ श्रद्धा; 'निष्ठया हि प्रतिष्ठा स्यादनिष्ठस्य कुतः कुलम् । शक्नोति नैष्ठिकः स्वीयं धर्मं त्रातुं न चेतरः।' 'एकस्य देवस्य विहाय मन्त्रम् एकं परश्चेद्व्रजतेऽपि तस्य। तदा भवेन् मृत्युरनैष्ठिकत्वात् निष्ठाविहीनस्य न कापि सिद्धिः'--इति भरतमल्लिकः । प्राप्यम्; 'भगवन्तं हरिं प्रायो न भजन्त्यात्मवित्तमाः । तेषामशान्तकामानां का निष्ठा विजितात्मनाम्'—इति श्रीधरः । [क्विप्] स्थितिः; 'जाते निष्ठामदवुर्गोषु वीरान्' इति ऋग्वेदे (३।३१।१०) 'निष्ठां पूर्वं यथास्थितिम्' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ८५३

निष्ठीवः पुं. [नि+ष्ठिव्+भावे घञ् । पृषोदरादित्वाद् दीर्घः] निष्ठीवनं; निष्ठ्यूतिः; श्लेष्मादीनां मुखेन वमनं; निष्ठेवः; निष्ठूतिः; निष्ठेवनं; निष्ठेवा; निष्ठेवम्। 'निष्ठीवः पार्श्वतो यायादेकस्याक्ष्णो निमीलनम्'--इति वाग्भटः । १४२

निष्ठुरम् त्रि. [नि+स्था+'मद्गुरादयश्चेति' उरच्] परुषं; कठिनम्; 'जज्ञे जनैर्मुकुलिताक्षमनाददाने संरब्धहस्तिपकनिष्ठुरचोदनाभिः'—इति माघे (५।४९) । १४०

निष्ठ्यूतिः स्त्री. [नि+ष्ठिव्+क्तिन् । 'च्छ्वोः शूडि'—त्यूठ्] निष्ठीवनम् । १४२

निष्ठेवः त्रि. [नि+ष्ठिव्+घञ्] निष्ठीवनम्। १४२

निष्णातः त्रि. [नितरां स्नाति स्मेति । नि+स्ना+क्त, 'निनदीभ्यां स्नातेः कौशले' इति षत्वम्] निपुणः; 'यस्तु कर्मसु निष्णातो धाष्टर्याच्छास्त्रवहिष्कृतः । स सत्सु पूजां नाप्नोति वधं चार्हति राजतः'—इति सुश्रुते। विज्ञः; पारंगतः; 'वैशम्पायन एवैको निष्णातो यजुषामुत'—इति भागवते (१।४।२१) । ३३५

निष्पावकः पुं. [निष्पाव एव। स्वार्थे कन्] श्वेतशिम्बी; 'निष्पावको वैषवलासशोफशुक्रान्तको रूक्षगुणो विदाही । कषायकः स्यान्मधुरो गुरुश्च स्तन्यास्रपित्तं च करोति वातम्'—इति हारीतः। ५८४

निस्तलम् त्रि. [निरस्तं तलम् अधःस्वरूपमस्येति] वर्तुलं, वृत्तम्; 'कण्ठस्य तस्याः स्तनबन्धुरस्य मुक्ताकलापस्य च निस्तलस्य'--इति कुमारे (१।४२)। चलं; नितरां तलं; तलम् । ७५३

निस्त्रिंशः पुं. [निर्गतस्त्रिंशतोऽङ्गुलिभ्य इति । 'निरादयः' इति समासः, 'संख्यायास्तत्पुरुषस्य डज् वाच्यः' इत्युक्त्या डच्] खड्गः; 'नकुलस्यैष निस्त्रिंशो गुरुभारसहो दृढः'—इति महाभारते (४।४१।२४) । त्रिंशच्छून्यः; निर्दये त्रि. । 'दत्तोऽस्याः प्रणयस्त्वयैव भवता चेयं चिरं लालिता, दैवादद्य किल त्वमेव कृतवानस्या नवं विप्रियम् । मन्युर्दुःसह एष यात्युपशमं नो शान्तवादैः स्फुटम्, हे निस्त्रिंश विमुक्तकण्ठकरुणं तावत् सखी रोदितु'—इति अमरुशतके (५) । ४७२

निहितम् त्रि. [नि+धा+क्त, 'दधातेर्हिः' इति हि.] स्थापितम्; 'धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां महाजनो येन गतः स पन्थाः'—इति महाभारते (३।३१२।११२) । ७४७

नीचः त्रि. [निकृष्टामीं लक्ष्मीं शोभां चिनोतीति । चि+'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति ड] हीनजातिकर्मा; वर्वरः; विवर्णः; पामरः; प्राकृतः; पृथग्जनः; निहीनः; अपसदः; जाल्मः; क्षुल्लकः; इतरः; अपशदः; खुल्लकः; हीनः; क्षुल्लः; क्षुण्णः; वेतकः । 'न प्राप्नोति सुखं किञ्चिन्नीचसङ्गान्महानपि । प्रेतसङ्गान्महादेवो नग्नो भस्मविभूषितः । स्वयं नेतुं न शक्नोति तदा नाययति ध्रुवम् । स्थिते गुणेऽपि नीचस्तु यत्नाद्दोषं प्रपद्यते। सतां श्रुत्वा गुणं नीचः श्रोतुमायाति बन्धुवत् । ततः समयमासाद्य प्रकाशयति तद्धसन् । मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम् । मनस्यन्यद्वचस्यन्यत् कर्मण्यन्यद्दुरात्मनाम्'--इति पाद्मे। 'बुद्धिश्च हीयते पुंसां नीचैः सह समागमात्। मध्यमे मध्यतां याति श्रेष्ठतां याति वित्तमे'--इति महाभारते शान्तिपर्वणि । अनुच्चः; वामनः; न्यङ्; खर्वः; ह्रस्वः; नीचकः; 'नीचरोम–नखश्मश्रुनिर्मलाङ्घ्रिमलायनः । स्नानशीलः ससुरगिः सुवेषोऽनुल्वणोज्ज्वलः । धारयेत् सततं रत्नसिद्धमन्त्रमहौषधीः'—इति वाग्भटः। निम्नः; 'शैत्यं नाम गुणस्तवैव सहजः स्वाभाविकी स्वच्छता, किं ब्रूमः शुचितां भवन्ति शुचयः स्पर्शेन यस्यापरे । किञ्चान्यत् कथयामि ते स्तुतिपदं त्वं जीविनां जीवनं,त्वञ्चेन्नीचपथेन गच्छसि पयः कस्त्वां निषेद्धुं क्षमः'—इति लक्ष्मणसेनः । चोरकनामगन्धद्रव्ये पुं. । ३४६

नीचकी स्त्री. ['निचिः कर्णशिरोदेशः', कन्, अण्, ङीप् ।

निष्ठा' 'एतौ निष्ठासंज्ञौ स्तः' इति सिद्धान्तकौमुदी ।] धर्मादौ श्रद्धा; 'निष्ठया हि प्रतिष्ठा स्यादनिष्ठस्य कुतः कुलम् । शक्नोति नैष्ठिकः स्वीयं धर्मं त्रातुं न चेतरः।' 'एकस्य देवस्य विहाय मन्त्रम् एकं परश्चेद्भजतेऽपि तस्य । तदा भवेन् मृत्युरनैष्ठिकत्वात् निष्ठाविहीनस्य न कापि सिद्धिः'--इति भरतमल्लिकः । प्राप्यम्; 'भगवन्तं हरिं प्रायो न भजन्त्यात्मवित्तमाः । तेषामशान्तकामानां का निष्ठा विजितात्मनाम्'—इति श्रीधरः । [क्विप्] स्थितिः; 'जाते निष्ठामदधुर्गोषु वीरान्' इति ऋग्वेदे (३।३१।१०) 'निष्ठां पूर्वं यथास्थितिम्' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ८५३

निष्ठीवः पुं. [नि+ष्ठिव्+भावे घञ् । पृषोदरादित्वाद् दीर्घः] निष्ठीवनं; निष्ठ्यूतिः; श्लेष्मादीनां मुखेन वमनं; निष्ठेवः; निष्ठूतिः; निष्ठेवनं; निष्ठेवा; निष्ठेवम् । 'निष्ठीवः पार्श्वतो यायादेकस्याक्ष्णो निमीलनम्'--इति वाग्भटः । १४२

निष्ठुरम् त्रि. [नि+स्था+'मद्गुरादयश्चेति' उरच्] परुषं; कठिनम्; 'जज्ञे जनैर्मुकुलिताक्षमनाददाने संरब्धहस्तिपकनिष्ठुरचोदनाभिः'—इति माघे (५।४९) । १४०

निष्ठ्यूतिः स्त्री. [नि+ष्ठिव्+क्तिन् । 'च्छ्वोः शूडि'—त्यूठ्] निष्ठीवनम् । १४२

निष्ठेवः त्रि. [नि+ष्ठिव्+घञ्] निष्ठीवनम् । १४२

निष्णातः त्रि. [नितरां स्नाति स्मेति । नि+स्ना+क्त, 'निनदीभ्यां स्नातेः कौशले' इति षत्वम्] निपुणः; 'यस्तु कर्मसु निष्णातो धाष्टर्याच्छास्त्रबहिष्कृतः । स सत्सु पूजां नाप्नोति वधं चार्हति राजतः'—इति सुश्रुते । विज्ञः; पारंगतः; 'वैशम्पायन एवैको निष्णातो यजुषामुत'—इति भागवते (१।४।२१) । ३३५

निष्पावकः पुं. [निष्पाव एव । स्वार्थे कन्] श्वेतशिम्बी; 'निष्पावको वैषवलासशोफशुक्रान्तको रूक्षगुणो विदाही । कषायकः स्यान्मधुरो गुरुश्च स्तन्यास्रपित्तं च करोति वातम्'—इति हारीतः । ५८४

निस्तलम् त्रि. [निरस्तं तलम् अधःस्वरूपमस्येति] वर्तुलं, वृत्तम्; 'कण्ठस्य तस्याः स्तनबन्धुरस्य मुक्ताकलापस्य च निस्तलस्य'--इति कुमारे (१।४२) । चलं; नितरां तलं; तलम् । ७५३

निस्त्रिंशः पुं. [निर्गतस्त्रिंशतोऽङ्गुलिभ्य इति । 'निरादयः' इति समासः, 'संख्यायास्तत्पुरुषस्य डज् वाच्यः' इत्युक्त्या डच्] खड्गः; 'नकुलस्यैष निस्त्रिंशो गुरुभारसहो दृढः'—इति महाभारते (४।४१।२४) । त्रिंशच्छून्यः; निर्दये त्रि. । 'दत्तोऽस्याः प्रणयस्त्वयैव भवता चेयं चिरं लालिता, दैवादद्य किल त्वमेव कृतवानस्या नवं विप्रियम् । मन्युर्दुःसह एष यात्युपशमं नो शान्तवादैः स्फुटम्, हे निस्त्रिंश विमुक्तकण्ठकरुणं तावत् सखी रोदितु'—इति अमरुशतके (५) । ४७२

निहितम् त्रि. [नि+धा+क्त, 'दधातेर्हिः' इति हि.] स्थापितम्; 'धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां महाजनो येन गतः स पन्थाः'—इति महाभारते (३।३१२।११२) । ७४७

नीचः त्रि. [निकृष्टामीं लक्ष्मीं शोभां चिनोतीति । चि+'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति ड] हीनजातिकर्मा; वर्वरः; विवर्णः; पामरः; प्राकृतः; पृथग्जनः; निहीनः; अपसदः; जाल्मः; क्षुल्लकः; इतरः; अपशदः; खुल्लकः; हीनः; क्षुल्लः; क्षुण्णः; वेतकः । 'न प्राप्नोति सुखं किञ्चिन्नीचसङ्गान्महानपि । प्रेतसङ्गान्महादेवो नग्नो भस्मविभूषितः । स्वयं नेतुं न शक्नोति तदा नाययति ध्रुवम् । स्थिते गुणेऽपि नीचस्तु यत्नाद्दोषं प्रपद्यते । सतां श्रुत्वा गुणं नीचः श्रोतुमायाति बन्धुवत् । ततः समयमासाद्य प्रकाशयति तद्धसन् । मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम् । मनस्यन्यद्वचस्यन्यत् कर्मण्यन्यद् दुरात्मनाम्'--इति पाद्मे । 'बुद्धिश्च हीयते पुंसां नीचैः सह समागमात् । मध्यमे मध्यतां याति श्रेष्ठतां याति वित्तमे'--इति महाभारते शान्तिपर्वणि । अनुच्चः; वामनः; न्यङ्; खर्वः; ह्रस्वः; नीचकः; 'नीचरोम-नखश्मश्रुनिर्मलाङ्घ्रिमलायनः । स्नानशीलः ससुरगिः सुवेषोऽनुल्वणोज्ज्वलः । धारयेत् सततं रत्नसिद्धमन्त्र-महौषधीः'—इति वाग्भटः । निम्नः; 'शैत्यं नाम गुणस्तवैव सहजः स्वाभाविकी स्वच्छता, किं ब्रूमः शुचितां भवन्ति शुचयः स्पर्शेन यस्यापरे । किञ्चान्यत् कथयामि ते स्तुतिपदं त्वं जीविनां जीवनं,त्वञ्चेन्नीचपथेन गच्छसि पयः कस्त्वां निषेद्धुं क्षमः'—इति लक्ष्मणसेनः । चोरकनामगन्धद्रव्ये पुं. । ३४६

नीचकी स्त्री. ['निचिः कर्णशिरोदेशः', कन्, अण्, ङीप् ।

पृषोदरादिः] गवां शिरोभागः; उत्तमगवीमांश्च । २६७

नीडः पुं.–क्ली. [नितराम् ईड्यते स्तूयते मुदृश्यत्वादिति । नि+ईड् स्तुतौ +घञ्] पक्षिवासस्थानं; कुलायः; 'मार्गन्ति यत्ते मुखपद्मनीडैः छन्दःसुपर्णैर्ऋषयो विविक्ते' —इति भागवते (३।५।३९) । स्थानं; रथ्यधिष्ठानस्थानम्; 'स भग्ननीडः परिवृत्तकूबरः पपात भूमौ हतवाजिरम्बरात्'—इति रामायणे (५।१८।३२) । २३८

नीडजः पुं. [नीडे जातः इति । नीड+जन्+ड] पक्षी; खगः । २३८

नीध्रम् क्ली. [नितरां ध्रियते इति । नि+धृ+मूलविभुजादित्वात् क] वलीकं; वनं; नेमिः; चन्द्रः; रेवतीनक्षत्रम् । ३०३

नीरम् क्ली. [नयति प्रापयति स्थानात् स्थानान्तरमिति । नी प्रापणे+'स्फायितञ्चीति' रक् । यद्वा 'अग्नेरापः' इति श्रुतेः निर्गतं रादग्नेरिति, 'अद्भ्योऽग्निब्रह्मणः क्षत्रम्' इति स्मृतेः निर्गतो रोऽग्नि र्यस्मादिति वा । 'ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः' इति रलोपे पूर्वदीर्घः] जलम्; 'छलयसि विक्रमणे बलिमद्भुतवामन पदनखनीरजनितजनपावन । केशव धृतवामनरूप जय जगदीश हरे'—इति गीतगोविन्दे (१।९) । रसः; नीरे अक्षेपणीयानि—'निष्ठीवासृक्शकृन्मूत्रविषाण्यप्सु न संक्षिपेत् ।' 'वाप्युद्भवन्तत् प्रवदन्ति धीरा नीरं समासेन निगद्यतेऽत्र । यत् श्रीमताञ्चैव महायतीनां बलप्रदं पथ्यतरं प्रदिष्टम्' । 'विण्मूत्रे तृणनीलिका विषयुतं तप्तं घनं फेनिलं, दन्त्यग्राह्यमनार्तवं हि सलिलं दुर्गन्धि वै गर्हितं । नानाजीवविमिश्रितं गुरुतरं पर्णौघपङ्काविलं, चन्द्रार्कांशुसुगोपितं न च पिबेन्नीरं सुदोषान्वितम्' —इति हारीतः । ६४८

नीलः पुं. [नीलतीति । नील्+अच्] नीलवर्णः । २०५

नीलः त्रि. [नीलं रूपम् अस्ति अस्येत्यत्र 'गुणवचनेभ्यो मतुपो लुगिष्टः' इति लुक्] कृष्णः; 'नीलं सत्त्वगुणोपेतं प्रादुरास महाद्युति'—इति देवीभागवते । नीलवर्णवस्तूनि यथा–शुकः; शैवालं, दूर्वा, बालतृणं, बुधः; वंशाङ्कुरः; इन्द्रनीलमणिः; सूर्याश्वादीनि । पुं. अजमीढस्य राज्ञः नीलिन्यां पत्न्यां जातः पुत्रः; 'अजमीढस्य नीलिनी नाम पत्नी तस्यां नीलसंज्ञः पुत्रोऽभवत्'—इति विष्णुपुराणे । माहिष्मतीवासी नृपति विशेषः; नागविशेषः; 'नीलानीलौ तथा नागौ कल्माषशवलौ तथा'—इति महाभारते (१।३५।७) । वटवृक्षः; मञ्जुघोषः; वानरान्तरः; नीलवर्णः; नीलौषधिः; निधिविशेषः; लाञ्छनं; मणिविशेषः; सौरिरत्नं; नीलाश्मा; नीलोत्पलं; तृणग्राही; महानीलः; सुनीलकः; 'माणिक्यमुक्ताफलविद्रुमाणि गारुत्मकं पुष्पकवज्रनीलम् । गोमेदवैदूर्यकमर्कतः स्युः रत्नान्यथो ज्ञस्य मुदे सुवर्णम्'—इति मुहूर्तचिन्तामणिः । पर्वतविशेषः; 'नीलः श्वेतश्च शृङ्गी च उत्तरे वर्षपर्वताः । लक्षप्रमाणौ द्वौ मध्यौ दशहीनास्तथापरे'–इति विष्णुपुराणे । क्ली. नीली; काचलवणं; तालीशपत्रं; विषं; सौवीराञ्जनम्; 'सुवीरकं पार्वतेयं सौवीरं नीलमञ्जनम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । तुत्थं; नृत्याङ्गाष्टोत्तरशतकरणान्तर्गतकरणविशेषः । ७३४

नीलकण्ठः पुं. [नीलः नीलवर्णः कण्ठो यस्य] ग्रामचटकः; पीतसारः; दात्यूहः; खञ्जरीटः; पीतशालवृक्षः; 'नीलकण्ठः पीतशालः पीतकः प्रियकोऽसनः'–इति वैद्यकरत्नमाला । शिवः; 'दधार भगवान् कण्ठे मन्त्रमूर्तिं महेश्वरः । तदा प्रभृति देवस्तु नीलकण्ठ इति श्रुतः' —इति महाभारते (१।१८।४४) । मयूरः; 'यामध्यास्ते दिवसविगमे नीलकण्ठः सुहृद्वः'—इति मेघदूते (७९) । २४३

नीलग्रीवः पुं. [नीला नीलवर्णा ग्रीवा यस्य] महादेवः; 'देवदेव महादेव नीलग्रीव जटाधर'—इति महाभारते (३।३९।७४) । नीलवर्णग्रीवायुक्ते त्रि. । १२

नीलङ्गुः पुं. [निलङ्गति गच्छतीति । नि+लगि गतौ+'खरुशङ्कुपीयुनीलङ्गलिगु' इति कु प्रत्ययेन निपातनात् पूर्वदीर्घे साधुः] क्रिमिभेदः; अतिक्षुद्रजन्तुमात्रं; शृगालः; भ्रमराली; प्रसूनम् । ६३६

नीललोहितः पुं. [नीलश्चासौ लोहितश्चेति । 'वर्णो वर्णेन' इति समासः । नीलः कण्ठे लोहितश्च केशेष्विति वा] शिवः; कुमारे (२।५७) । 'चैत्रे शिवोत्सवं कुर्यान्नृत्यगीतमहोत्सवैः । स्नात्वा त्रिसन्ध्यं रात्रौ च हविष्याशी जितेन्द्रियः । किमलभ्यं भगवति प्रसन्ने नीललोहिते । उपोष्य हुत्वा संक्रान्त्यां व्रतमेतत् समपर्येत्'—इति बृहद्धर्मपुराणे । कल्पविशेषः; नीलरक्तमिश्रितवर्णः । १३

नीलाम्बरः पुं. [नीलमम्बरं यस्येति] बलदेवः; राक्षसः; शनैश्चरः। क्ली. [नीलमम्बरमिव, नीलमम्बतीति वा । अवि+अरण्] तालीशपत्रं; [नीलं च तदम्बरं चेति] नीलवस्त्रंः; नीलवस्त्रयुक्ते त्रि.। २८

नीलिका स्त्री. [नीलक+टाप्। कपि अत इत्वम् । नीलीव, इवार्थे कन्, टाप्, पूर्वह्रस्वः] शैवालं; नीलसिन्दुवारः; नीलिनी; 'नीली तु नीलिनी तूली कालदोला च नीलिका । रञ्जनी श्रीफली तुच्छा ग्रामीणा मधुपर्णिका। क्लीतका कालकेशी च नीलपुष्पा च सा स्मृता'—इति भावप्रकाशः । शेभाफालिका; नेत्ररोगविशेषः; नीलिकाकाचरोगः; क्षुद्ररोगभेदः; 'क्रोधायासप्रकुपितो वायुः पित्तेन संयुतः। मुखमागत्य सहसा मण्डलं विसृजत्यतः । नीरुजं तनुकं श्यावं तं व्यङ्गमिति निर्दिशेत् । कृष्णमेवं गुणं गात्रे मुखे वा नीलिकां विदुः'—इति माधवकरः। ६८३

नीलीरागः पुं. [नीलीवद् गाढः सञ्जातो रागो यस्य] स्थिरप्रेमपुरुषः; स्थिरसौहृदः; नीलवर्णः; नायकनायिकयोः पूर्वरागविशेषः; 'नीली कुसुम्भमञ्जिष्ठाः पूर्वरागोऽपि च त्रिधा ।' 'न चातिशोभते यन्नापैति प्रेम मनोगतम् । नीलीरागः स विज्ञेयो यथा श्रीरामसीतयोः'—इति साहित्यदर्पणे। ३४७

नीलोत्पलम् क्ली. [नीलं नीलवर्णमुत्पलमिति] नीलवर्णोत्पलम्; उत्पलकं; कुवलयम्; इन्दीवरं; कन्दोत्थं; सौगन्धिकं; सुगन्धं; कुड्मलकम्; असितोत्पलम्; 'झषकुलोल्लङ्घनक्षुभितनीरजकुमुदकुवलयकह्लारनीलोत्पललोहितशतपत्रादिवनेषु'—इति भागवते (५।२४। १०)। नीलमणिः; नीलम्। ६८१

नीवारः पुं. [नि+वृ+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घत्वं च] तृणधान्यभेदः; अरण्यधान्यं, मुनिधान्यं, तृणोद्भवम्; अरण्यशालिः; 'प्रसाधिका तु नीवारस्तृणान्तमिति च स्मृतम्। नीवारः शीतलो ग्राही पित्तघ्नः कफवातकृत्' —इति भावप्रकाशः। 'नीवाराः शुककोटरार्भकमुखभ्रष्टास्तरूणामधः'—इति शाकुन्तले १ अङ्के। ५८४

नीविः, नीवी स्त्री. [निव्ययति, निवीयते वा। नि+व्येञ्+ 'नौ व्यो यलोपः पूर्वस्य च दीर्घः' इति इञ्, यलोपः; निशब्दस्य दीर्घत्वं च। ततः कृदिकारादिति वा ङीष्] कटीवस्त्रबन्धः; 'एकवस्त्रा त्वधोनीवी रोदमाना रजस्वला'—इति महाभारते (२।६३।१९)। 'नीवीं विस्रस्य परिहितवस्त्रस्य वामाङ्गग्रन्थिं मोचयित्वा आचमनमाह बौधायनः'–इति यजुर्वेदिश्राद्धतत्त्वम्। शूद्रस्य पित्रादिश्राद्धे मोटकबन्धनं; वस्त्रबन्धनमात्रं; राजपुत्रादेर्बन्धकः । (८२४) परिपणः; वणिजां मूलधनम्। ५४७

नीवृत् पुं. [नियतं वर्तते वसत्यत्र जनसमूहः इति । नि+वृत्+अधिकरणे क्विप्। 'नहिवृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु क्वौ' इति पूर्वपदस्य दीर्घः] जनपदः; देशः। २८४

नीव्रम् क्ली. [नितरां व्रियते इति । नि+वृ+बाहुलकात् कप्रत्ययेन साधुः] छदिप्रान्तभागः; वलीकं; पटलप्रान्तं; नीध्रम्; नेमिः; चन्द्रः; रेवतीनक्षत्रं; वनम्। ३०३

नीहारः पुं. [निर्ह्रियते इति, नि+हृ+घञ्। 'उपसर्गस्य घञीति' दीर्घत्वम्] घनीभूतशिशिरम्; अवश्यायः; तुषारः; तुहिन; हिमं; प्रालेयं; मिहिका; खजलं; निशाजलं; निहारः; महिका। 'खाण्डवं च वनं सर्वं पाण्डवो बहुभिः शरैः। प्राच्छादयदमेयात्मा नीहारेणेव चन्द्रमाः'—इति महाभारते (१।२२८।२)। ६५०

नु अव्य. [नौति नुदति वा। नु नुद् वा+यथायथं कर्तर्यादिषु मितद्र्वादित्वात् डु] प्रश्नः; 'कथं नु राजंस्तृषितः क्षुधितः श्रमकर्षितः'—इति महाभारते (३।६३।१२)। वितर्कः; 'निष्क पचामरशिखाश्च्युतकर्णभङ्गा धावन्ति वर्त्मनि तरन्ति नु वाजिनस्ते'—इति शाकुन्तले। अपमानः; हेतुः; अपदेशः; अतीतः; अनुनयः; विकल्पः; 'किं नु गर्हम्यथात्मानमथ भीष्मं दुरासदम्'—इति महाभारते (३।६३।१२)। पुं. अनुस्वारः; 'नुवौ पूर्वेण सम्बद्धौ मुन्यौ तु परगामिनौ'—इति दुर्गादासः। ८८०

नुतम् त्रि. [णु स्तुतौ+क्त] स्तुतम्; 'तं वेदशास्त्रपरिनिष्ठितशुद्धबुद्धिं चर्माम्बरं सुरमुनीन्द्रनुतं कवीन्द्रम्। कृष्णत्विषं कनकपिङ्गजटाकलापं व्यासं नमामि शिरसा तिलकं मुनीनाम्'—इति पुराणम्। १४५

नुतिः स्त्री. [णु स्तुतौ+भावे क्तिन्] स्तुतिः; 'परगुणनुतिभिः स्वान्गुणान् ख्यापयन्तः'—इति भर्तृहरिः। पूजा। १४५

नुत्तः त्रि. [नुद्+क्त, 'नुदविदेति' पाक्षिको नत्वाभावः] क्षिप्तः; नुन्नः; प्रेरितः। ७६७

नुन्नः त्रि. [नुद्+क्त, निष्ठातस्य पूर्वदस्य च नत्वम्] नुत्तः; 'प्रसह्य तेजोभिरसंख्यतां गतैरदस्त्वया नुन्नमनुत्तमं तमः'—इति माघे (१।२७)। ७६७

नूतः त्रि. [णू स्तवने+कर्मणि क्तप्रत्ययः] स्तुतः। १४५

नूतनः त्रि. [नव एव। 'नवस्य नूरादेशो त्नप्तनप्खाश्च प्रत्यया वक्तव्याः' इत्युक्तचा तनप् नवस्य नूरादेशश्च] अपुरातन; प्रत्यग्रः; अभिनवः; नव्यः; नवीनः; नवः; नूत्नः; सद्यस्कः; अजीर्णः; अभ्यग्रः; प्रतिनवः। 'प्रशमस्थितपूर्वपार्थिवं कुलमभ्युद्यतनूतनेश्वरम्'—इति रघौ (९।१५)। ७११

नूत्नः त्रि. [नव एव। नव+त्नप् नूरादेशश्च] नूतनः; 'न त इन्द्र सुमतयो न रायः संचक्षे पूर्वा उषसो न नूत्नाः'—इति ऋग्वेदे (७।१९।२०)। ७११

नूनम् अव्य. [नु ऊनयतीति, ऊन परिहाणे+अम्] तर्कः; ऊहः; यथा—'ओजसामपि खलु नूनमनूनम्।' अवधारणं; निश्चितं; यथा—'नूनं हन्ति स्म रावणम्' स्मरणं; वाक्यपूरणं; अर्थनिश्चयः; 'स्वर्गदं च तथा प्रोक्तं ज्ञानिनां मोक्षदं तथा। न भविष्यति तन्नूनमनया देवकन्यया'—इति देवीभागवते (१।१०।६६)। ८७९

नूपुरम् क्ली.-पुं. [नू+क्विप्, नुवि पुरति इति। पुर् अग्रगमने+'इगुपधेति' क] पादभूषणविशेषः; पादाङ्गदं; तुलाकोटिः; मञ्जीरः; हंसकः; पादकटकः; पदाङ्गदम्; 'नूपुरौ विमलौ तद्वद् ग्रैवेयकमनुत्तमम्' —इति मार्कण्डेये (८२।२५)। 'गुणवानपि मौखर्यात् पादे लुठति नूपुरः। हारस्तु मूकभावेन कण्ठवल्लभतां गतः'—इत्युद्भटः। ५६१

नृत्तम् क्ली. [नृत्+भावे क्त] नृत्यं; 'नाच' इति भाषा। 'नृत्तज्ञशस्यप्रवराङ्गनानां धनुष्करक्षत्रतपस्विनां च'—इति बृहत्संहितायाम् (५।७३)। ९३

नृत्यम् क्ली. [नृत्+'ऋदुपधाच्चाक्लृपिचृतेः'—इति क्यप्] तालमानरसाश्रयसविलासाङ्गविक्षेपः; ताण्डवं; नटनं; नाट्यं; लास्यं; नर्तनं; नृत्तं; नाटः; लासः; लास्यकं; नृतिः; 'देवरुच्या प्रतीतो यस्तालमानरसाश्रयः। सविलासोऽङ्गविक्षेपो नृत्यमित्युच्यते बुधैः'—इति सङ्गीतदामोदरः। ९३

नृपः पुं. [नॄन् नरान् पाति रक्षतीति। नृ+पा रक्षणे+'आतोऽनुपसर्गे कः' इति क] नरपतिः; 'अपुत्रस्य नृपः पुत्रो निर्धनस्य धनं नृपः। अमातुर्जननी राजा अतातस्य पिता नृपः। अभृत्यस्य नृपो भृत्यो नृप एव नृणां सखा। सर्वदेवमयो राजा तस्मात्त्वामर्थये नृप!'—इति कालिकापुराणे। ४२१

नृशंसः त्रि. [नॄन् नरान् शंसति हिनस्तीति। नृ+शंस् हिंसायाम्+'कर्मण्यण्' इत्यण्] क्रूरः; परद्रोही; 'ये नृशंसा दुरात्मानः प्राणिनां प्राणनाशकाः। उद्वेजनीया भूतानां व्याला इव भवन्ति ते'—इति पञ्चतन्त्रे (३।१४२)। ३७२

नेता [ऋ] पुं. [नयतीति, नी+तृच्] प्रभुः; 'आसन्नोषधयो नेतुर्नक्तमस्नेहदीपिकाः'—इति रघुवंशे (४।७५)। निम्बवृक्षः; प्रापके त्रि.; 'तिष्ठ त्वं स्थावर इव यावदेव नलः क्वचित्। इतो नेता हि तत्र त्वं शापान्मोक्ष्यसि यत्कृतात्'—इति महाभारते (३।६६।९)। ३४३

नेत्रम् क्ली. [नीयते नयति वानेनेति, 'दाम्नीशसेति' करणे ष्ट्रन्] चक्षुः; 'नाञ्जयन्तीं स्वके नेत्रे नचाभ्यक्तामनावृताम्। न पश्येत्प्रसवन्तीं च तेजस्कामो द्विजोत्तमः'—इति मनुः (४।४४)। वृक्षमूलं (८०९); जटा; अंशुकं; मन्थगुणः; 'मन्थानं मन्दरं कृत्वा तथा नेत्रं च वासुकिम्। देवा मथितुमारब्धाः समुद्रं निधिमम्भसाम्'—इति महाभारते (१।१८।१३)। नाडी; वस्तिशलाका; वृक्षमूलं; रथः; नेतरि त्रि.। 'नावं समुद्र इव बालनेत्रामारुह्य घोरे व्यसने निमज्जेत्'—इति महाभारते (२।६०।४)। ५१९

नेपथ्यम् क्ली. [नी+विच्+गुणः। नेः नेता तस्य पथ्यम्] वेशः; 'राजेन्द्रनेपथ्यविधानशोभा तस्योदितासीत् पुनरुक्तदोषा'—इति रघुवंशे (१४।९)। अलङ्कारः; रङ्गभूमिः; 'वाक्यस्यार्थतया यत्र पात्रं नैव प्रवेश्यते। नेपथ्यमिति प्राकाश्ये प्रयोज्यं तत्र नाटके'—इति भरतः। ५३९

नेमः पुं. [नयतीति, नी+'अर्तिस्तुसुहु' इति मन्] खण्डं; कालः; अवधिः; प्राकारः; कैतवम्; अर्द्धं; गर्तः; नाट्यादिः; अन्यः; सायं; मूलम्; ऊर्ध्वम्। ७१३

नेमिः स्त्री. [नयति चक्रमिति। नी+'नियो मिः' इति मि] चक्रपरिधिः; रथचक्रस्य भूमिस्पर्शिभागः; प्रधिः; नेमी; 'मनोऽभिरामाः शृण्वन्तौ रथनेमिस्वनोन्मुखैः।

षड्जसंवादिनीः केका द्विधा भिन्नाः शिखण्डिभिः'—इति रघौ (१।३९)। (६८४) कूपोपरिस्थपट्ट-प्रान्तभागः; प्रान्तभागः; 'अजयदेकरथेन स मेदिनी-मुदधिनेमिमधिज्यशरासनः'—इति रघुवंशे (९।१०)। भूमिस्थकूपपट्टः; कूपस्य समीपे रज्जुधारणार्थं त्रिदारुयन्त्रं; त्रिका; कूपनिकटसमानस्थानम्; 'नेमिर्नेमीतिका च स्यात् कूपान्तिकसमस्थले'—इति शब्दरत्नावली। पुं. जिनविशेषः; तिनिशवृक्षः; दैत्यविशेषः; 'हे विप्रचित्ते! हे राहो! हे नेमे! श्रूयतां वचः। मा युध्यत निवर्तध्वं न नः कालोऽयमर्थकृत्'—इति भागवते (९।२१।१९)। [नयति शत्रून् विनाशमिति] वज्रः। ४४७

नेमी स्त्री. [नेमि+वा ङीष्] नेमिः; तिनिशवृक्षः; 'स्यन्दनस्तिनिशो नेमी'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। ४४७, ६८४

नैकषेयः पुं. [निकषाया अपत्यमिति, निकषा+ढक्] निकषापुत्रः; राक्षसः। ७३

नैगमः पुं. [निगम एव। स्वार्थे अण्] वणिक्; 'एवं दशरथः प्रीतो ब्राह्मणा नैगमास्तथा'—इति रामायणे (१।७७।२३) 'नैगमा वणिजः' इति तट्टीकायां रामानुजः। ऋतिः (८१५); उपनिषत्; नागरः; नयः; 'तेषां प्रतिविघातार्थं प्रवक्ष्याम्यथ नैगमम्'—इति महाभारते (१२।१००।४)। निगमसम्बन्धिनि त्रि.। निगमशास्त्र-वेत्तरि त्रि.। 'द्विजेभ्यो बलमुख्येभ्यो नैगमेभ्यश्च नित्यशः'—इति महाभारते (१३।१६७।४)। ५७१

नैचिकी स्त्री. [नीचैश्चरतीति ठक्। यद्वा निचिः कर्ण-शिरो देशः, ततः स्वार्थे कन्, प्रशस्तं निचिकमस्याः; 'ज्योत्स्नादिभ्यः' इत्यण् ततो ङीप्] उत्तमा गौः। २७१

नैर्ऋतः पुं. [निर्ऋतेरपत्यम् इत्यण्] राक्षसः; 'तस्यापि निर्ऋतिर्भार्या नैर्ऋता येन राक्षसाः'—इति महाभारते (१।६६।५५)। पश्चिमदक्षिणकोणाधिपतिः (१००)।७३

नौः स्त्री. [नुद्यतेऽनयेति। नुद् प्रेरणे+'ग्लानुदिभ्यां डौः' इति डौ] नौका; तरिका; वारिरथः; तरणिः; तरणी; तरिः; तरी; तरण्डी; तरण्डः; पादालिन्दा; उत्प्लवाः; होडः; वाधूः; वार्वटः; वहित्रं; पोतः; वहनम्। 'ततः स प्रेषितो विद्वान् विदुरेण नरस्तदा। पार्थानां दर्शयामास मनोमारुतगामिनीम्। सर्ववातसहां नावं यन्त्रयुक्तां पताकिनीम्। शिवे भागीरथीतीरे नरै-र्विश्रम्भिभिः कृताम्'—इति महाभारते (१।१५०। ४–५)। ६४९

नौतार्यम् त्रि. [नावा नौकया तार्यं तरणीयम्] नाव्यं; नौकागम्यदेशादि। ६४९

नौदण्डः पुं. [नौकायाः परिचालनार्थं यो दण्डः] नौका-दण्डः; क्षेपणी। ६७२

न्यक्षम् क्ली. [नियतानि अक्षाणि यत्र यस्य वा] कार्त्स्न्यं; पुं. महिषः; जामदग्न्यः; निकृष्टे त्रि.। ७७०

न्यग्रोधः पुं. [न्यक् रुणद्धि इति। न्यग्+रुध्+अच्] वटवृक्षः। 'पनसोदुम्बराश्वत्थप्लक्षन्यग्रोधहिङ्गुभिः'—इति भागवते (४।६।१६)। व्यामपरिमाणं; शमीवृक्षः; विषपर्णी; मोहनाख्यौषधिः; उग्रसेननृपपुत्राणामन्यतमः; 'नवोग्र-सेनस्य सुतास्तेषां कंसस्तु पूर्वजः। न्यग्रोधश्च सुनामा च कल्कः शल्कः सुभूमिपः'—इति हरिवंशे (३७।३०)। १९६

न्यङ्कुः पुं. [नितराम् अञ्चति गच्छतीति। नि+अञ्चु गतौ+'नावञ्चेः' इति उ, 'न्यङ्क्वादीनाञ्च' इति कुत्वम्] मृगभेदः; 'न्यङ्कुभिश्च वराहैश्च रुरुभिश्च निषेवितम्'—इति हरिवंशे (१२१।४१)। मुनि-विशेषः। २३०

न्यञ्चितम् त्रि. [नि+अञ्च्+णिच्+क्त] अधःक्षिप्तम्। ७६८

न्यस्तम् त्रि. [नि+अस्+क्त] निहितं; स्थापितं; निसृष्टं; निक्षिप्तं; त्यक्तं; परिक्षिप्तं; निवृतं; परीतं; परिवेष्टितम्। ७४७

न्यायः पुं. [नियमेन ईयते इति। नि+इण्+'परिन्यो-र्नीणोर्द्यूताभ्रेषयोः' इति घञ्] उचितः; अभ्रेषः; कल्पः; देशरूपं; समञ्जसम्; [नीयन्ते प्राप्यन्ते विवक्षितार्था येनेति। नी+'अध्यायन्यायोद्यावसंहाराश्च' इति घञ् प्रत्ययेन निपातनात् साधुः] नीतिः; जयोपायः; भोगः; युक्तिः; प्रतिज्ञाहेतूदाहरणोपनयनिगमनात्मकपञ्चा-वयववाक्यम्; पञ्चाङ्गमधिकरणम्; 'न्यायविद्धर्म-तत्त्वज्ञः षडङ्गविदनुत्तमः'—इति महाभारते (२।५।३)। 'न्यायः पञ्चाङ्गमधिकरणम्' इति तट्टीका। षड्दर्श-नान्तर्गतदर्शनविशेषः; तर्कविद्या; आन्वीक्षिकी; तर्कशास्त्रम्; 'न्याय वैशेषिकादिः स्यात् तर्कविद्या प्रति-ष्ठिता। तस्यामान्वीक्षिकी ज्ञेया तत्रात्मज्ञानमुन्नयेत्'

—इति शब्दरत्नावल्याम् । विष्णुः; 'अग्रणीर्ग्रामणीः श्रीमान्न्यायो नेता समीरणः'—इति तस्य सहस्रनाममध्ये । ४२९

न्याय्यम् त्रि. [न्यायादनपेतम् । 'धर्मपथ्यर्थन्यायादनपेते' इति यत्] उचितं; न्याययुक्तम्; 'प्रिया न्याय्या वृत्तिर्मलिनमसुभङ्गेऽप्यसुकरम्'–इति नीतिशतके ।७२६

न्युब्जः त्रि. [न्युब्जन्त्यस्मिन्निति । नि+उब्ज्+घञ् । 'भुजन्युब्जौ पाण्युपतापयोः'इति साधुः । अर्श आद्यच्च] कुब्जः; अधोमुखः; रोगादिना वक्रगात्रः । ३८५

प

पक्कणः पुं.–क्ली. [पचति श्वादिनिकृष्टमांसमिति । पच्+क्विप् । पक् शवरः, तस्य कणः कलहशब्दः कोलाहलशब्दो वा यत्र, पचनं कलह एव यत्र वा] शवरालयः; भिल्लवसतिः; 'मध्येविन्ध्याटवि पुरा पक्कणस्थजनाग्रणीः । पल्लीपतिरभूदुग्रः पिङ्गाक्ष इति विश्रुतः ।' २६१

पक्वम् त्रि. [पच्यते स्म यत् इति । पच्+कर्मणि क्त, 'पचो वः' इति निष्ठातस्य वः] परिणतम्; 'अग्निपक्वाशनो वा स्यात् कालपक्वभुगेव वा'—इति मनुः (६।१७) । निष्ठां प्राप्तं, सुदृढमिति यावत्, यथा परिणता बुद्धिः । विनाशोन्मुखं; प्रत्यासन्नविनाशम्; अतिपक्वव्यञ्जनदशमूलादौ निष्पक्वं क्वथितं च । क्षीराज्यपाके शृतम । ईषत्पक्वे आपक्वम् । [भावे क्त] पाकः; परिणामः; क्ली. स्विन्नतण्डुलादि । २७६

पक्वशः पुं. [पक्वानि परिणतानि वन्यफलमूलादीनि श्यति, त्रोटयति खनति वा । पक्व+शो+ड] अन्त्यजातिः; पुक्कसः । ५९८

पक्षः पुं. [पक्ष्यते परिगृह्यते देवपितृकार्याय यः । यद्वा पक्ष्यते चन्द्रस्य पञ्चदशानां कलानामापूरणं क्षयो वा येन । पक्ष्+घञ् । यद्वा पणते इति, पण् स्तुत्यादौ, 'गृधिपण्योर्दकौ च' इति स, कश्चान्तादेशः] प्रतिपदादिपञ्चदशाहोरात्राः; 'शुक्लपक्षे तिथिर्ग्राह्या यस्यामभ्युदितो रविः । कृष्णपक्षे तिथिर्ग्राह्या यस्यामस्तमितो रविः' इति तिथ्यादितत्त्वे । (२३९) पक्षिणामवयवविशेषः; गरुत्; छदः; पत्रं; पतत्रं; तनूरुहं; 'पंख' इति भाषा । पार्श्वः (३८९); कचात् परे समूहार्थः; यथा केशपक्षः (५३१); (८४९) देहाङ्गं; मासार्द्धः; पतत्रं; गृहभित्तिः; परिग्रहः; समीपः; शरपक्षः; वाजः; सहायः; गृहं; महाकालः; शिवः [कालोपाधिभेदात् पक्षस्य तथात्वम्]; ऋतुः संवत्सरो मासः पक्षः संख्या समापनः'–इति महाभारते (१३।१७।१३९) । (तार्किकाणाम्) साध्यम्; सन्दिग्धः साध्यवान् पदार्थः । 'सिषाधयिषया शून्या सिद्धि र्यत्र न विद्यते । स पक्षस्तत्र वृत्तित्वज्ञानादनुमितिर्भवेत्'—इति भाषापरिच्छेदे । विरोधः; बलम्; 'यस्तीर्थानि निजे पक्षे परपक्षे विशेषतः । गुप्तैश्चरैर्नृपो वेत्ति न स दुर्गतिमाप्नुयात्'—इति पञ्चतन्त्रे (३।६६) । सखा; चुल्लीरन्ध्रं; राजकुञ्जरः; विहगः; वलयं; शुद्धः; वर्गः; पिच्छं; सजातीयवृन्दम्; 'भरतस्यापि वा पक्षं यो गृह्णीयाद् अचेतनः । तं पापमहमद्यैव प्रेषयामि यमक्षयम्'—इति रामायणे (२।१८।१३) । ५०

पक्षः [स्] क्ली. [पचतीति, 'पचिवचिभ्यां सुट् च' इति असुन् सुट् च] गरुत्; 'पक्षसी च स्मृतौ पक्षौ ।' २३८

पक्षतिः स्त्री. [पक्षस्य मूलम्, 'पक्षात्तिः' इति ति] पक्षमूलं; माघे (११।२६) । प्रतिपत्तिथिः; 'पक्षत्याद्यास्तु तिथयः क्रमात्पञ्चदश स्मृताः'—इति तिथितत्त्वे । २३९

पक्षमूलम् क्ली. [पक्षस्य मूलम्] पक्षतिः । २३९

पक्षिराजः पुं. [पक्षिणां राजा, प्रभुः] गरुडः । ११९

पक्षी [न्] पुं.–स्त्री. [पक्षौ विद्येते यस्य । पक्ष+इनि] विहङ्गमः; खगः; विहङ्गः; विहगः; विहायाः; शकुन्तिः; शकुनिः; शकुन्तः; शकुनः; द्विजः; पतत्री; पत्री, पतगः; पतन्; पत्ररथः; अण्डजः; नगौकाः; वाजी; विकिरः; विः; विष्किरः; पतत्रिः; नीडोद्भवः; गरुत्मान्; पिच्छन्; नभसंगमः; नाडीचरणः; कण्डाग्निः; पतङ्गः; अगौकाः; चञ्चुभृत्; छुरण्डः; सरण्डः; पिपतिषुः; पत्रवाहः; द्युगः । [पक्षाः कङ्कादीनां पत्राणि सन्त्यस्य । 'अत इनिठनौ' इति इनि] बाणः । २३८

पक्ष्म [न्] क्ली. [पक्ष्यते परिगृह्यते आतपतापादिकमनेन । पक्ष्+करणे मनिन्] अक्षिलोम; नेत्रच्छदरोम; 'यमावुतस्वित् तनयौ पृथायाः पार्थैर्वृतौ पक्ष्मभिरक्षिणीव' –इति भागवते (३।१।३९) । किञ्जल्कः; केशरः;

तन्त्वादेरणीयान्; सूत्रादेरत्यल्पभागः; गरुत्; पक्षः। ५२४

पङ्कः पुं.–क्ली. [पच्यते व्याप्यते क्लिद्यते वानेन। पच्+घञ्, कुत्वं च] कर्दमः; 'कङ्कणस्य तु लोभेन मग्नः पङ्के सुदुस्तरे। वृद्धव्याघ्रेण सम्प्राप्तः पथिकः संमृतो यथा'—इति हितोपदेशे (१।६२)। [पच्यते व्यक्तीक्रियते दुःखमनेन। पचि विस्तारे व्यक्तीकरणे च। पच् धातोरिदित्वात् नुम्, 'हलश्चेति' करणे घञ्, ततो घित्वात् चस्य कुत्वम्] पापम्; 'न्यङ्काकरे वपुषि कङ्कादिरक्तपुषि कङ्कादिपक्षिविषये, त्वं कामनामयसि किं कारणं हृदय! पङ्कारिमेहिगिरिजाम्'—इति अम्बाष्टके (६)। ६७८

पङ्कजम् क्ली. [पङ्के पङ्काद् वा जातम् इति। पङ्क+जन्+कर्तरि ड] पद्मम्; 'तिरश्चकार भ्रमराभिलीनयोः सुजातयोः पङ्कजकोषयोः श्रियम्'—इति रघुवंशे (३।८)। अयं हि योगरूढशब्दः; 'रूढा गवादयः प्रोक्ता यौगिकाः पाचकादयः। योगरूढाश्च विज्ञेयाः पङ्कजाद्या मनीषिभिः।' ६८०

पङ्क्तिः स्त्री. [पच्यते व्यक्तीक्रियते श्रेणीविशेषेणेति यावत्। पचि व्यक्तीकरणे+भावे क्तिन्, इदित्वान्नुम्। यद्वा पञ्चयति विस्तारयति जातिसंस्थानविशेषमिति। पचि विस्तारे+कर्तरि क्तिच्] सजातीयसंस्थानविशेषः; वीथी; आलिः; आवलिः; श्रेणी; वीथिः; आली; आवली; पङ्क्ती; श्रेणिः; सरणिः; सन्ततिः; विञ्जोली; पालिः; पाली; वीथिका; 'विलोक्या विशदा चैषां फलपङ्क्तिः सुभीषणा'—इति मार्कण्डेये (४३।४९)। पञ्चाक्षरपादच्छन्दोविशेषः; 'भगौ गिति पङ्क्तिः।' 'कृष्णसनाथा तर्णकपङ्क्तिः, यामुनकच्छे चारु चचार'—इति छन्दोमञ्जरी। पङ्क्तिच्छन्दस उत्पत्तिस्थानम्; 'मज्जायाः पङ्क्तिरुत्पन्ना बृहती प्राणतोऽभवत्'—इति भागवते (३।१२।४६)। [पञ्चकद्वयं परिमाणमस्य इति। 'पङ्क्तिविंशतित्रिंशदिति' निपातनात् प्रकृतेः पञ्चन्शब्दस्य टिलोपः तिप्रत्ययश्च] दशाक्षरपादच्छन्दः; दशसंख्या; 'तेन मन्त्रप्रयुक्तेन निमेषार्द्धादपातयत्। स रावणशिरःपङ्क्तिमज्ञातव्रणवेदनाम्'—इति रघुवंशे (१२।९९)। पृथिवी; गौरवं; पाकः। ७२१

पङ्गुः पुं. [खञ्जति गतिवैकल्यं प्राप्नोतीति। खजि गतिवैकल्ये, बाहुलकात् कु। 'खजयोः पगौ नुमागमश्च' इति पगौ नुमागमश्च। प्रतिपाद्यग्रहस्य कक्षाया अत्युच्चतया बहुकालेन राशिभागादिभोगान्मन्दगतित्वादस्य तथात्वम्] शनैश्चरः। ४८

पङ्गुः त्रि. [खजि गतिवैकल्ये। बाहुलकात् कु। खस्य पत्वे जस्य गादेशः, नुम् च] जङ्घावैकल्येन चलनाक्षमः; श्रोणः; जङ्घाहीनः; 'कच्चिदन्धांश्च मूकांश्च पङ्गून् व्यङ्गानबान्धवान्। पितेव पासि धर्मज्ञ! तथा प्रव्रजितानपि'—इति महाभारते (२।५।१२५)। परिव्राट्; 'भिक्षार्थं गमनं यस्य विण्मूत्रकरणाय च। योजनान्न परं याति सर्वथा पङ्गुरेव सः'—इति चिन्तामणौ। यानहरणेनैव लोकः पङ्गुर्भवति, यथा—'पुष्पापहृद्दरिद्रः स्यात्पङ्गुर्यानापहृन्नरः'—इति मार्कण्डेये (१५।३१)। ६१०

पज्जः पुं. [पद्भ्यां जातः। पद्+जन्+कर्तरि ड] शूद्रः; पदजातत्वमुक्तं यथा—'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः। ऊरू तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत'—इति श्रुतौ। ५८६

पञ्चजनः पुं. [पञ्चभिर्भूतैर्जन्यतेऽसौ। पञ्च+जन्+कर्मणि घञ्, 'जनिवध्योश्च' इति न वृद्धिः] पुरुषः; 'सद्भावश्रद्धादिका देव्यस्तेन श्रीशब्दलाञ्छिताः। पञ्च पञ्चजनेन्द्रेण पुरे तस्मिन् निवेशिताः'—इति राजतरङ्गिण्याम्। दैत्यविशेषः; 'संह्लादस्य कृतिर्भार्यासूत पञ्चजनं ततः'—इति भागवते (६।१८।१४)। अपरो दैत्यभेदः, यं श्रीकृष्णो हत्वा सान्दीपनिमुनये तस्य मृतं पुत्रं गुरुदक्षिणास्वरूपं ददौ; 'सान्दीपनेः सकृत् प्रोक्तं ब्रह्माधीत्य सविस्तरम्। तस्मै प्रादाद् वरं पुत्रं मृतं पञ्चजनोदरात्'—इति भागवते (३।३।२)। अस्यास्थ्ना पाञ्चजन्यनामा शङ्खो जातः स च कृष्णस्य, यथा–'पाञ्चजन्यं हृषीकेशो देवदत्तं धनञ्जयः'—इति भगवद्गीतायाम् (१।१५)। प्रजापतिः; 'एषा पञ्चजनस्याङ्ग! दुहिता वै प्रजापतेः। असिक्नी नाम पत्नीत्वे प्रजेश! प्रतिगृह्यताम्'—इति भागवते (६।४।५१)। सगरराजपुत्रः; 'केशिन्यसूत सगरादसमञ्जसमात्मजम्। राजा पञ्चजनो नाम बभूव स महाबलः'—इति हरिवंशे (१५।६)। गन्धर्वाः पितरो देवा असुरा रक्षांसि

च पञ्चजनपदवाच्यानि भवन्ति। ३३१

पञ्चजनीनः पुं. [पञ्चसु जनेषु व्यापृतः । 'दिक्संख्ये संज्ञायामिति' समासः। पञ्चजने हितम् । 'पञ्चजनादुपसङ्ख्यानमिति' ख] भण्डः; पञ्चजनसम्बन्धिनि पञ्चजन्याः प्रभौ च त्रि. । ३६८

पञ्चत्वम् क्ली. [पञ्चानां क्षित्यादिभूतानां भावः] मरणं; पञ्चानां भावः; 'पञ्चधा सम्भृतः कायो यदि पञ्चत्वमागतः। पञ्चभिः स्वशरीरोत्थैस्तत्र का परिदेवना।' 'मृत्यावपानं सोत्सर्गं तं पञ्चत्वे ह्यजोहवीत्' —इति भागवते (१।१५।४१) । ६२८

पञ्चशाखः पुं. [पञ्च शाखा इवाङ्गुलयो यस्य] हस्तः; पञ्चानां शाखानां समाहारे क्ली.। पञ्चशाखाविशिष्टे त्रि.। ५११

पञ्चाननः पुं. [पञ्च आननानि करचरणमुखरूपाणि, प्रहारकाले इति शेषः, यस्य । अथवा पचि विस्तारे, पञ्चं विस्तृतम् आननं यस्य] सिंहः; शिवः; अत्युग्रः; ज्योतिषोक्तसिंहराशिः; 'पञ्चाननगते भानौ पक्षयोरुभयोरपि । चतुर्थ्यामुदितश्चन्द्रो नेक्षितव्यः कदाचन' —इति स्मृतिः । रुद्राक्षविशेषः; तद्धारणे महच्छुभं भवति। २१४

पञ्चालिका स्त्री. [पञ्चभिर्वर्णैरलति इति । पञ्च+आ+अल् भूषणे+अच+टाप्] पुत्तली; पाञ्चालिका । ४९३

पञ्चेषुः पुं. [पञ्च इषवो बाणाः यस्य सः] पञ्चशरः; कन्दर्पः; कामदेवः; पञ्चबाणः; 'सम्मोहनोन्मादनौ च शोषणस्तापनस्तथा । स्तम्भनश्चेति कामस्य पञ्च बाणाः प्रकीर्तिताः। अरविन्दमशोकं च चूतं च नवमल्लिका। नीलोत्पलं च पञ्चैते पञ्चबाणस्य सायकाः।' ३२

पटः पुं.—क्ली.[पटयत्यनेन । पट् वेष्टने, घञर्थे क] शोभनवस्त्रं; सुचेलकः; 'यथा धौतो घट्टितश्च लाञ्छितो रञ्जितः पटः । चिदन्तर्यामिसूत्रात्मा विराट् चात्मा तथेर्यते'—इति पञ्चदशी (६।२) । चित्रपटः; पुं. प्रियालवृक्षः; पुरस्कृतः; क्ली. [पटतीति, पट्+पचाद्यच्] छदिः; चालम्। ५४८

पटकुटी स्त्री. [पटस्य पटनिर्मिता वा कुटी] वस्त्रवेश्म; केणिका; गुणलयनिका; पटमण्डपः; 'तम्बू' इति भाषा। ४५१

पटचौरः पुं. [पटानां, लक्षणया जीवनोपयोगिवस्तूनां चौरः] पाटच्चरः; तस्करः। ३४०

पटच्चरम् क्ली. [भूतपूर्वं पटत् । भूतपूर्वं चरट् । यद्वा पटदित्यव्यक्तं शब्दं चरतीति । पटत्+चर्+अच्] जीर्णवस्त्रं; [पटयते आवेष्टयते इति । पट्+बाहुलकाद् अत् । पटदिव चरति यः । चर्+अच्] चौरे पुं.। ५५०

पटमञ्जरी स्त्री.— रागिणीविशेषः। १०२ अ

पटलम् क्ली. [पटं विस्तृतं लाति। पट+ला+'आतोऽनुपेति' क । यद्वा पटतीति, पट+'कृषादिम्यश्चित्' इति कलच्] पटलप्रान्तं; वलीकं; नीध्रं; गृहचालिकान्तभागः; छदिः; नेत्ररोगः; पिटकः; परिच्छदः; तिलकः; 'अस्तमिते दिवसकरे तिमिरभरद्विरदसंसक्ता । सिन्दूरपटलपाटलकान्तिरिवाग्नेर्बभौ सन्ध्या'—इति कलाविलासे '(१।२५)। (६८७) समूहे क्ली., स्त्री. । 'यस्यानवद्याचरितं मनीषिणो गृणन्त्यविद्यापटलं बिभित्सवः। निरस्तसाम्यातिशयोऽपि यत् स्वयं पिशाचचर्यामचरद् गतिः सताम्'—इति भागवते (३।१४।२६)। दृष्टेरावरकम्; 'प्रथमे पटले दोषो यस्य दृष्टयां व्यवस्थितः। अव्यक्तानि सरूपाणि कदाचिदथ पश्यति'—इति माधवकरः। पुं.– स्त्री. [पाटयति दीप्यते यः । पट्+कलच्] ग्रन्थः; वृक्षः; वृन्तः। ३०३

पटलान्तम् क्ली. [पटलस्य अन्तम्] पटलप्रान्तं; छदिःप्रान्तभागः । ३०३

पटहः पुं.– क्ली. [पटेन हन्यते इति । पट+हन्+ड। पटत् इति शब्दं जहाति पटहः । पटत्+हा+ड, निपातनात् तलोपः] आनकवाद्यं; [पाटयति गमयति योधान् युद्धाय, उत्साहवर्द्धकत्वात्। पट् गतौ] युद्धे वाद्यमानढक्का; आडम्बरः; समारम्भः; हिंसनम्। ९७

पटुः त्रि. [पाटयतीति । पट् गतौ णयन्तः । 'फलिपाटीति' उ, पटादेशश्च] तीक्ष्णः; दक्षः; 'अनुभवन् नवदोलमृतूत्सवं पटुरपि प्रियकण्ठजिघृक्षया । अनयदासनरज्जुपरिग्रहे भुजलतां जडतामबलाजनः'—इति रघुवंशे (९।४६)। नीरोगः; स्फुटः; निष्ठुरः; धूर्तः; चतुरः; 'मधुरः; 'कुम्भपूरणभवः पटुरुच्चैरुच्चचार निनदोऽम्भसि तस्याः'—इति रघौ (९।७३)। ४०

पटोली स्त्री. [पटोल+जातित्वात् ङीष्] ज्योत्स्नी;

जाली; ज्योत्स्ना; पटोलिका; फलविशेषः। 'पटोली-मुस्तकाभ्यां च वासकेन च नाशयेत्'—इति गारुडे १९८ अध्याये। २०२

पट्टिशः, पट्टिसः पुं. [पट् गतौ+बाहुलकात् टिश(स)च्] अस्त्रविशेषः; 'परशुः पट्टिसो नाम स एव च परश्वधः' —इति भरतः। 'मुशुण्डिभिश्चक्रगदार्ष्टिपट्टिशैः शक्त्युल्मुकैः प्रासपरश्वधैरपि। निर्स्त्रिशभल्लैः परिघैः समुद्गरैः सभिन्दिपालैश्च शिरांसिचिच्छिदुः'—इति भागवते (९।१९।३६)। ४७६

पणः पुं. [पण्यतेऽनेन। पण् व्यवहारे+'नित्यं पणः परिमाणे' इति अप्। पणो ग्लहोऽस्त्यस्मिन्, पण+'अर्श आदिभ्योऽच्' इत्यच्] ग्लहः; 'प्रतिभूः शुको विपक्षे दण्डः शृङ्गारसंकथा गुरुषु। पुरुषायितं पणस्तद् बाले परिभाव्यतां दायः'—इति आर्यासप्तशती (३५४)। [पण्यते व्यवह्रियते इति, 'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ] मूल्यं; धनं; शौण्डिकः; विंशतिगण्डकः; कार्षापणः; 'यस्तु दोषवतीं कन्यामनाख्याय प्रयच्छति। तस्य कुर्यान्नृपो दण्डं स्वयं षण्णवतिं पणान्'—इति मनुः (८।२२४)। कार्षिकताम्रिकः; स तु पञ्चकृष्णलमाष-कारब्धताम्रकर्षकृतव्यवहारद्रव्यम्। पूर्वं हि ताम्ररक्तिकायाः कपर्दकः एको मूल्यमिति अशीतिवराटमूल्यः। लोके तूपचारात् कार्षापणवत् पणव्यपदेशो मूल्य एव। निर्वेशः; भृतिः; गृहं; [पणते अधिकारिभेदेन सुख-भोगादिकं व्यवहरति, साधकस्य सुकृतानुसारेण वैकुण्ठ-वासादिफलं प्रददातीत्यर्थः। पचाद्यच्। यद्वा पण्यते स्तूयते यः] विष्णुः; 'ऊर्द्ध्वगः सत्पथाचारः प्राणदः प्रणवः पणः'—इति महाभारते (१३।१४९।११५)। ७५९

पणवः पुं. [पणं स्तुतिं वातीति। पण+वा+क] गायन-पटहः; प्रणवः; पणवा; 'ततः शङ्खाश्च भेर्यश्च पण-वानकगोमुखाः। सहसैवाभ्यहन्यन्त स शब्दस्तुमुलोऽभवत्'—इति भगवद्गीता (१।१३)। 'पणवः पणवा च स्यात् प्रणवोऽप्यत्र वर्तते'—इति भरतद्विरूपकोशः। ९७

पण्डकः पुं. [पण्डते निष्फलत्वं प्राप्नोतीति। पडि गतौ+पचाद्यच्। यद्वा पण् व्यवहारे, 'अमन्ताड् डः' इति ड, स्वार्थे कन्] क्लीवं; नपुंसकं; निष्फले त्रि.। ४३०

पण्डितः पुं. [पण्डा वेदोज्ज्वला तत्त्वविषयिणी वा बुद्धिः, सा जाता अस्य। 'तदस्य संजातं तारकादिभ्य इतच्' इति इतच्। यद्वा पण्ड्यते तत्त्वज्ञानं प्राप्यतेऽस्मात्। गत्यर्थेति क्त] शास्त्रज्ञः; विद्वान्; विपश्चित्; दोषज्ञः; सन्; सुधीः; कोविदः; बुधः; धीरः; मनीषी; ज्ञः; प्राज्ञः; संख्यावान्; कविः; धीमान्; सूरिः; कृती; कृष्टिः; लब्धवर्णः; विचक्षणः; दूरदर्शी; दीर्घदर्शी; विशारदः; कवी; सूरी; विदग्धः; दूरदृक्; वेदी; वृद्धः; बुद्धः; विधानगः; प्रज्ञिलः; कृस्निः; विज्ञः; मेधावी; 'निषेवते प्रशस्तानि निन्दितानि न सेवते। अनास्तिकः श्रद्दधान एतत् पण्डितलक्षणम्'—इति चिन्तामणिः। 'पठकाः पाठकाश्चैव ये चान्ये शास्त्रचिन्तकाः। सर्वे व्यसनिनो मूर्खा यः क्रियावान् स पण्डितः'—इति महाभारते वनपर्वणि। 'विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि। शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः'—इति भगवद्गीता (५।१७)। सिह्लकः; महादेवः (सर्वज्ञत्वात्); 'न्यायनिर्वपणः पादः पण्डितो ह्यचलो-पमः'—इति महाभारते (१३।१७।१२४)। ३३२

पण्यविक्रयशाला स्त्री. [पण्यस्य व्यवहार्यद्रव्यस्य विक्रय-शाला] विपणिः; पण्यवीथिका। २९६

पण्याङ्गना स्त्री. [पणितुं क्रेतुं योग्या पण्या, सा चासौ अङ्गना] पण्यस्त्री; वेश्या; वारवधूः। ४९०.

पण्याजीवः पुं. [पण्येन आजीवतीति। पण्य+आ+जीव्+'इगुपधेति' क] वणिजः; क्रयविक्रयकर्ता। ५७१

पतगः पुं. [पतेन पक्षेण गच्छति। पत+गम्+ड] विहगः; पक्षी। २३७

पतङ्गः पुं. [पतति आकाशे गच्छति। पत्लृ गतौ, 'पतेरङ्गच् पक्षिणि' इत्यङ्गच्] सूर्यः; विहङ्गः। ३५

पतङ्गः पुं. [पतन् उत्प्लवन् गच्छति। पतत्+गम्+ड, पृषोरादित्वात् ङत्वम्] विहगः; शलभः। (२५७) २३७

पतत्रम् क्ली. [पत्+करणे अत्रन्] पक्षः; पक्षतिः; गरुत्; 'पंख' इति भाषा। २३९

पतत्रिन् पुं. [पतत्र+'अत इनिठनौ' इति इनि]-पक्षी; गरुत्मान्; पत्री। २३७

पतद्ग्राहतम् क्ली.-अनायासगृहीतं; स्वीकृतम्। ७८९

पतन् पुं. [पततीति, पत्लृ गतौ+शतृप्रत्ययः] खगः; द्विजः; पक्षी। २३७

पताका स्त्री. [पतति गगने उड्डीयते पत्यतेऽनया वा । पत्लृ गतौ+'बलाकादयश्च' इत्याकप्रत्ययः] वैजयन्ती, ध्वजः । ४५८

पताकिनी स्त्री. [पताकाः सन्ति यस्याम् । व्रीह्यादित्वादिनि, ङीप्] सेना; चमूः, ध्वजिनी । ४५७

पतिः पुं. [पा+डति] भर्त्ता; धवः; स्वामी; अधिपः । ४९७

पतिंवरा स्त्री. [पतिं वृणीते इति । पति+वृञ्+'संज्ञायां भृतृवृजि' इति खच् मुमागमश्च] स्वयंवरा; वर्या । ४८३

पतितः त्रि. [पत्लृ गतौ, भूते क्त] भ्रष्टः; प्रस्कन्नः; च्युतं; गलितं; पन्नः (७६७) । ४७९

पतिवत्नी स्त्री. [पतिः विद्यमानः अस्याः । मतुप्, 'अन्तर्वत्पतिवतोर्नुक् च' इति नुक् ङीप् च] सभर्तृका; जीवत्पतिका; सधवा । ४८६

पतिव्रता स्त्री. [पत्यौ व्रतं नियमः अस्याः, पतिर्व्रतमस्या वा । पतिशब्दः पतिसेवायां लाक्षणिकः] सुचरिता; सती; साध्वी । ४९५

पत्तनम् क्ली. [पतन्ति गच्छन्ति जना यस्मिन् । पत् गतौ+'वीपतिम्यां तनन्' इति तनन्] नगरम्; पुरम्; 'पुरग्रामव्रजोद्यानक्षेत्रारामाश्रमाकरान् । खेटखर्वटघोषांश्च ददहुः पत्तनानि च'—इति भागवते (७।२। १४) । महती पुरी; मृदङ्गः । २८५

पत्तिः पुं. [पद्यते विपक्षसेनां प्रति पद्भ्यां गच्छतीति । पद् गतौ+'पदिप्रथिभ्यां नित्' इति ति, स च नित्] पदातिकः; 'पत्तिः पदातिं रथिनं रथेशः तुरङ्गसादी तुरगाधिरूढम् । यन्ता गजस्याभ्यपतद् गजस्थं तुल्यप्रतिद्वन्द्वि बभूव युद्धम्'—इति रघुवंशे (७।३७) । [पद्यते विपक्षं प्राप्नोतीति, पद्+तिन्] वीरः; स्त्री. [पत् गतौ+भावे क्तिन्] गतिः । [पत्यते विपक्षो यया, पत्+करणे क्तिन्] सेनाविशेषः । 'एकेभैकरथा त्र्यश्वा पत्तिः पञ्चपदातिका'—इत्यमरः (२।८।८०) । ४५०

पत्नी स्त्री. [पत्युर्यज्ञे सम्बन्धो यया । 'पत्युर्नो यज्ञसंयोगे' इति नकारादेशः ङीप् च] शास्त्रविधिनोढा; पत्या उद्वाहविहितमन्त्रादिना ऊढा; पाणिगृहीती; द्वितीया; सहधर्मिणी; भार्या; जाया; दाराः; सधर्मिणी; धर्मचारिणी; दारः; गृहिणी; सहचरी; गृहाः; क्षेत्रं; वधूः; जनी; परिग्रहः; ऊढा; कलत्रम् । 'पत्नीमूलं गृहं पुंसां यदि छन्दोऽनुवर्तिनी । गृहाश्रमसमं नास्ति यदि भार्या वशानुगा'—इति दक्षसंहितायाम् । ४९४

पत्रम् क्ली. [पतति वृक्षात् । पत् गतौ+'सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्' इति ष्ट्रन्] वृक्षावयवविशेषः; पलाशं; छदनं; दलं; पर्णं; छदः; पात्रं; छादनं; बर्हं; बर्हणं; पत्रकम्; 'पत्राण्यपि सपुष्पाणि हरेः प्रीतिकराणि च । प्रवक्ष्यामि नृपश्रेष्ठ ! शृणुष्व गदतो मम'—इति नारसिंहे । पक्षिपक्षः; (२३९) वाहनं (४४९); क्षुरिका (४७३); तेजपत्रं; तमालपत्रं; पत्रकं; छदनं; दलं; पालाशम्; अंशुकं; वासः; तापसं; सुकुमारं; वस्त्रं; तमालकं; रामं; गोपनं; वसनं; तमालं; सुरनिर्गन्धं; शरपक्षः । लेखनाधारः; धातुमयपत्राकृति द्रव्यं; पत्री; लिपिः । १८५

पत्रपाली स्त्री. [पत्रवत् पालिरग्रभागो यस्याः । ङीप्] वाजः; बाणपक्षतिः; कर्तनी । ४६८

पत्ररथः पुं.– स्त्री. [पत्रं पक्षो रथो यानमिव यस्य] पक्षी; 'चित्रस्वनैः पत्ररथैर्विभ्रमद्भ्रमरश्रियम् । नलवेणुशरस्तम्बकुशकीचकगह्वरम्'—इति भागवते (१।६। १३) । २३७

पत्रवल्ली स्त्री. [पत्राणां रचितपत्राकृतीनां वल्ली लतेव] पत्रभङ्गः; 'गण्डेषु स्फुटरचनाब्जपत्रवल्ली–पर्याप्तं पयसि विभूषणं वधूनाम्'—इति माघे (८। ५९) । रुद्रजटा; पलाशीलता; पर्णलता । ५४२

पत्रशिरा स्त्री. [पत्रस्य शिरेव] पत्रभङ्गः; माढिः; पर्णनाडी । ७८३

पत्री [न्] पुं. [पतत्रं पक्षो विद्यतेऽस्य । पतत्र+इनि] पक्षी 'तं क्षुरप्रशकलीकृतं कृती पत्रिणां व्यभजदाश्रमाद्बहिः'—इति रघौ (११।२९) । बाणः (४६६); 'शंस किं गतिमनेन पत्रिणा हन्मि लोकमुत ते मखाजितम्'—इति रघौ (११।८४) । श्येनः; 'नभसि महसां ध्वान्तध्वाङ्क्षप्रमापणपत्रिणामिहविहरणैः श्येनम्पातां रवेरवधारयन्'—इति नैषधे (१९।१२) । [पत्राणि च्छदानि सन्त्यस्य, अत इनि] वृक्षः; रथी; पर्वतः; तालः; श्वेतकिणिही; गङ्गापत्री; पाची; पत्रविशिष्टे त्रि. । २३७

पथः पुं. [पथति गच्छति अत्र । पथ् गतौ+अधिकरणे क] पन्थाः; मार्गः । २६०

पथ्या स्त्री· [पथ्य+टाप्] हरीतकी; 'ततः सैन्धवपथ्याभ्यां चूर्णिताभ्यां प्रकर्षयेत्। पुनः सप्तदिने प्राप्ते रोममात्रं समुच्छिनेत्'—इति हठयोगदीपिकायाम्। (३।३५)। मृगेर्वारुः; चिर्भिटा; बन्ध्या कर्कोटकी; गङ्गा (संसाररोगस्य पथ्यस्वरूपत्वात् गङ्गापि पथ्यस्वरूपा); 'पद्मनाभपदार्घ्येण प्रसूता पद्ममालिनी। परर्द्धिदा पुष्टिकरी पथ्या पूर्तिः प्रभावती'—काशीखण्डे (२९।११२)। ६१८

पदगः पुं· [पदाभ्यां गच्छतीति। पद+गम्+'अन्येभ्योऽपि' इति ड] पदातिकः; पद्भ्यां गमनकर्तरि त्रि.। ४५०

पदविः स्त्री· [पद्यते गम्यतेऽनया। पद् गतौ+'पद्यटिभ्यामविः' इति अवि] पद्धतिः; पन्थाः। २६०

पदवी स्त्री· [पदवि+'कृदिकारान्तादक्तिनः' इति पक्षे ङीष्] पन्थाः; 'उत्सृष्टलीलागतिरागवाक्षादलक्तकाङ्कां पदवीं ततान'—इति रघौ (७।७)। पद्धतिः; 'अलं प्रयत्नेन तवात्र मा निधाः पदं पदव्यां सगरस्य सन्ततेः' —इति रघौ (३।५०)। पदम्; 'अथ तेन सिंहाय अमात्यपदवी प्रदत्ता, व्याघ्राय शय्यापालत्वमिति' पञ्चतन्त्रे (१।२५८)। २६०

पदातः पुं· [पदाभ्यामततीति। पद+अत्+अच्] पादातिकः; पदातिकः; पदातिः; पत्तिः; पतगः; पदाजिः; पद्गः; पदिकः; पादाविकः; पादात्; पदात्; पायिकः; शवरालिः। ४५०

पदातिः पुं· [पादाभ्यामतति गच्छतीति। 'पादे च' इति पाद+अत्+इण्, 'पादस्य पदाज्यातिगोपहतेषु' इति पदादेशः] पदातिकः; पत्तिः; पतगः; पादातिकः; पदातिः; पद्गः; पदिकः; पादात्; पादाविकः; पदात्, पायिकः; शवरालिः; 'गजानश्वान् रथांश्चैव पातयामास पाण्डवः। पदातींश्च रथांश्चैव न्यवधीदर्जुनाग्रजः' इति महाभारते (१।१३९।३१)। ४५०

पदातिकः पुं· [पदाति+स्वार्थे कन्] पदातिः; पदातः; पादातिकः। ४५०

पद्गः पुं· [पद्भ्यां गच्छतीति। पद्+गम्+'अन्येभ्योऽपीति' ड] पदातिकः; पदिकः; पदातिः; पदातः ४५०

पद्धतिः, पद्धती स्त्री· [पद्भ्यां हन्यते। पद+हन्+क्तिन्। 'हिमकाषिहतिषु च' इति पद्भावः, 'बह्वादिभ्यश्च' इति वा ङीष्] वर्त्म; पङ्क्तिः (५२९); पदवी; 'पथः श्रुतेर्दर्शयितार ईश्वरा मलीमसामाददते न पद्धतिम्' —इति रघौ (३।४६)। २६०

पद्मम् क्ली·– पुं· [पद्यते इति, पद् गतौ+'अर्तिस्तुसुहुसृिति' मन्। यद्वा पद्मा लक्ष्मीरस्त्यस्मिन्, 'अर्श आदिभ्योऽच्' इति अच्] पद्मकं; तच्च गजस्य मुखादिस्थो बिन्दुसमूहः; (६८०) पुष्पविशेषः; नलिनम्,; अरविन्दं,; महोत्पलं; सहस्रपत्रं; कमलं; शतपत्रं; कुशेशयं; पङ्केरुहं; तामरसं; सारसं; सरसीरुहं; विसप्रसूनं, राजीवं; पुष्करम्; अम्भोरुहं; पङ्कजम्; अम्भोजम्; अम्बुजं; सरसिजं; श्रीवासं; श्रीपर्णम्; इन्दिरालयं; वनजं; जलेजातम्; अब्जं; कञ्जं; नलं; नालीकं; नालिकम्; अम्लानं; पुटकम्; अब्जः; (८१२) पद्मकाष्ठौषधिः; वृक्षविशेषः; व्यूहविशेषः; 'यतश्च भयमाशङ्केत्ततो विस्तारयेद्दलम्। पद्मेन चैव व्यूहेन निविशेत सदा स्वयम्'—इति मनुः (७।१८८)। निधिभेदः; 'निधिप्रवरमुख्यौ च शङ्खपद्मौ धनेश्वरौ। सर्वान्निधीन् प्रगृह्याथ उपास्तां वै धनेश्वरम्'—इति महाभारते (२।१०।३६)। संख्यान्तरं; तच्च दशार्बुदम्; 'अयुतं प्रयुतं चैव पद्मं खर्वमथार्वुदम्'—इति महाभारते। दश शङ्खाः; पुष्करमूलं; सीसकं; कल्पविशेषः; 'पद्मावसाने प्रलये निशासुप्तोत्थितः प्रभुः। सत्त्वोद्रिक्तस्तदा ब्रह्मा शून्यं लोकमवैक्षत'—इति मार्कण्डेये (४७।३)। शरीरस्थषड्पद्मानि; पुं· [पद्यते इति, पद् गतौ+ 'अर्तिस्तुस्विति' मन्] दाशरथिः; नागविशेषः; 'कृष्णश्च लोहितश्चैव पद्मश्चित्रश्च वीर्यवान्'—इति महाभारते (२।९।८)। पद्मोत्तरात्मजः; स तु द्वादशजिनचक्रवर्त्यन्तर्गतचक्रवर्तिविशेषः। बलदेवः; षोडशरतिबन्धान्तर्गतप्रथमबन्धः; 'हस्ताभ्यां च समालिङ्ग्य नारीं पद्मासनोपरि। रमेद् गाढं समाकृष्य बन्धोऽयं पद्मसंज्ञकः'—इति रतिमञ्जरी। २१९

पद्मनाभः पुं· [पद्मं नाभौ यस्य। 'अच् प्रत्यन्ववपूर्वात् सामलोम्नः' इत्यत्र 'अच्' इति योगविभागाद् अच्। ब्रह्मोत्पत्तिकारणीभूतपद्मस्य नाभिजातत्वादस्य तथात्वम्] विष्णुः 'अप्रमेयो हृषीकेशः पद्मनाभोऽमरप्रभुः' —इति महाभारते (१३।१४९।१०)। शयने तस्य स्मरणीयत्वं, यथा—'औषधे चिन्तयेद्विष्णुं भोजने च जनार्दनम्। शयने पद्मनाभं च विवाहे च प्रजापतिम्'–

इति बृहन्नन्दिकेश्वरपुराणे। महादेवः (हृदयपद्मस्य नाभौ, नाभेरीषदुपरिभागे प्रकाशनात्); 'पद्मनाभो महागर्भश्चन्द्रवक्त्रोऽनिलोऽनलः'—इति महाभारते (१३। १७।१०५)। [पद्ममिव वर्तुलाकृतिः नाभिर्यस्य] धृतराष्ट्रपुत्राणामन्यतमः; 'ऊर्णनाभः पद्मनाभः तथा-नन्दोपनन्दकौ'—इति महाभारते (१।६१।९५)। नागविशेषः; 'कृताधिवासो धर्मात्मा तत्र चक्षुःश्रवा महान्। पद्मनाभो महानाभः पद्म इत्येव विश्रुतः'–इति महाभारते (१२।३५५।४)। भाविजिनविशेषः; स्तम्भनास्त्रविशेषः; 'पद्मनाभो महानाभः सुनाभो दुन्दुभिस्वनः'—इति रामायणे (१।३१।७)। २१

पद्मनाभिः पुं. [पद्मं नाभौ यस्य। अजिति योगविभागस्य असार्वत्रिकत्वान् न अच्] पद्मनाभः; विष्णुः। २१

पद्मभूः पुं. [पद्मं विष्णुनाभिभवकमलं भूरुत्पत्तिस्थानं यस्य। यद्वा पद्माद् भवतीति। पद्म+भू+क्विप्] ब्रह्मा; पद्मयोनिः। ६

पद्मरागः पुं. [पद्मस्येव रागो यस्य] रक्तमणिविशेषः; शोणरत्नं; लोहितकः; लोहितं; कुरुविन्दकं; 'माणिक' इति भाषा। 'सिंहले तु भवेद्रक्तं पद्मरागमनुत्तमम्। पीतं काणपुरोद्भूतं कुरुविन्दमिति स्मृतम्'—इति राजनिर्घण्टः। १७५

पद्मवासा स्त्री. [पद्मं वासो यस्याः] लक्ष्मीः। ३१

पद्मा स्त्री. [पद्मं वासस्थलत्वेनास्त्यस्याः। 'अर्श आदिभ्योऽच्' इति अच्, टाप्] लक्ष्मीः; 'छायामण्डललक्ष्येण तमदृश्या किल स्वयम्। पद्मा पद्मातपत्रेण भेजे साम्राज्यदीक्षितम्'—इति रघौ (४।५)। लवङ्गं; पद्मचारिणी; [पद्यते इति, 'अतिस्तुस्विति' मन्, टाप्] पद्मगी; मनसा; झञ्जिका; वृत्तार्हन्माता; कुसुम्भपुष्पं; वृहद्रथराजकन्या; कल्किदेवेन विवाहिता। ३१

पद्यः पुं. [पद्भ्यां जातः। पद+यत्] शूद्रः; 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः। ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत'—इति यजुषि। ५८६

पद्या स्त्री. [पादाय हिता, शरीरावयवत्वात् यत्। 'पद्यत्यतदर्थे' इति पद्भावः] पन्थाः; 'यदाशवः पद्याभिस्तित्रतो रजः पृथिव्याः सानी जङ्घनन्त पाणिभिः–' इति वेदे। पादौ विध्यन्ति पद्याः शर्कराः ['विध्यत्यधनुषा' इति यत्, 'पद्यत्यतदर्थे'—इति पदादेशः]; स्तुतिः। २६०

पन्नम् त्रि. [पद् गतौ+'गत्यर्थेति' कर्तरि क्त] च्युतं; गलितं; पतितः; पुं. [पन् स्तुतौ+कृवृजृषिद्रपनीति' न, स च नित्] अधोगमनम्। ७६७

पन्नगः पुं. [पन्नम् अधोगमनं पतितं वा गच्छतीति। गम् गतौ+'सर्वत्रपन्नयोरुपसंख्यानम्' इति ड। पद्भ्यां न गच्छतीति वा विग्रहः] सर्पः; 'पानासक्तं महात्मानं हिरण्यकशिपुं तदा। उपासाञ्चक्रिरे सर्वे सिद्धगन्धर्वपन्नगाः'—इति विष्णुपुराणे। ओषधिभेदः; पद्मकाष्ठम्। ६४०

पयः [स्] क्ली. [पय्यते पीयते वा। पय् गतौ, पी पाने वा+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इत्यसुन्] दुग्धम्; 'कुर्यादहरहः श्राद्धमन्नाद्येनोदकेन वा। पयोमूलफलैर्वापि पितृभ्यः प्रीतिमावहन्'—इति मनुः (३।८२)। जलम् (६४८); 'पयः पूर्वैः स्वनिश्वासैःकवोष्णमुपभुज्यते'—इति रघौ (१।६७)। २७४

परः पुं. [पृ+अच्] शत्रुः; अरिः; 'इतः परानर्भकहार्यशस्त्रान्, वैदर्भि! पश्यानुमता मयासि'—इति रघौ (६।६७)। ब्रह्मणः आयुः; 'त्रीणि कल्पशतानि स्युस्तथा षष्टिर्द्विजोत्तमाः। ब्रह्मणः कथितं वर्षं परारूयं तच्च तत्पदम्'—इति कौर्मे ५ अध्यायः। 'कालसंख्यां समासेन पूर्वार्द्धद्वयकल्पिताम्। स एव स्यात्परः कालस्तदन्ते परिपूज्यते।' 'निजेन तस्य मानेन चायुर्वर्षशतं स्मृतम्। तत्पराख्यं तदर्द्धं च परार्द्धमभिधीयते'—इति कौर्मे ५ अध्याये। शिवः; 'कपिशः कपिलः शुक्लः आयुश्चैव परोऽपरः'—इति महाभारते (१३।१७।९७)। ४५५

परः त्रि.–अन्यः; 'परान्नं च परस्वं च परशय्या परस्त्रियः। परवेश्मनि वासश्च शक्रादपि हरेच्छ्रियम्'—इति गरुडपुराणे। श्रेष्ठः (६८९); 'न पार्वत्याः परा साध्वी न गणेशात् परो वशी। न च विद्यासमो बन्धुर्नास्ति कश्चिद् गुरोः परः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। क्ली. [पृ+'ऋदोरप्' इति अप्] केवलं; मोक्षः; 'कैवल्यममृतं परम्' —इति मुक्तिपर्याये रत्नावली। ब्रह्म; ब्रह्मा; 'द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये परञ्चापरमेव च'—इति श्रुतौ। विष्णुः; 'प्रभूतस्त्रिककुब्धाम पवित्रं मङ्गलं परम्'—इति महाभारते (१३।१४९।२०)। ब्रह्मणः आयुः; 'एवं तु ब्रह्मणो वर्षमेकं वर्षशतं तु तत्। शतं हि तस्य वर्षाणां परमित्यभिधीयते'—इतिमार्कण्डेये (४६।४२)।

परम्, अव्य. नियोगः; क्षेपः; त्रि. अरिः; दूरः; उत्तरः; न्यायमते द्रव्यगुणकर्मवृत्तिसत्ता; 'सामान्यं द्विविधं प्रोक्तं परं चापरमेव च । द्रव्यादित्रिकवृत्तिस्तु सत्ता परतयोच्यते । परभिन्ना तु या जातिः सैवापरतयोच्यते । द्रव्यत्वादिकजातिस्तु परापरतयोच्यते । व्यापकत्वात् परापि स्यात् व्याप्यत्वादपरापि च'--इति भाषापरिच्छेदे। ६६७

परच्छन्दः त्रि. [परस्य छन्दो यत्र] पराधीनः; अन्यायत्तः; अस्वतन्त्रः; परतन्त्रः । ३४१

परजातः त्रि. [परेण जातः । परपुष्टत्वात्तथात्वम्] परैधितः; औदासीन्येन परपुष्टः; परस्माज्जातः; अन्येनोत्पन्नः; पुं. कोकिलः (एष हि काकेन पुष्टो भवतीति प्रसिद्धिः) । ३५१

परतन्त्रः त्रि. [परस्तन्त्रं प्रधानं यस्य] पराधीनः; 'परतन्त्रं कथं हेतुमात्मानमनुपश्यसि। कर्मणां हि महाभाग ! सूक्ष्मं ह्येतदतीन्द्रियम्'—इति महाभारते(१३।१।१५)। क्ली. [परस्य तन्त्रम्] परकीयशास्त्रं; [परं श्रेष्ठं तन्त्रमिति] उत्कृष्टशास्त्रम्ः; उत्तमपरिच्छदः । ३४१

परपिण्डादः त्रि. [परस्य पिण्डम् अन्नादिकम् अत्तीति । अद् भक्षणे+'कर्मण्यण्'इति अण्] परान्नोपजीवी । ३५१

परपुष्टः पुं. [परेण काकेन पुष्टः पालितः । डिम्बपोषणाक्षमया कोकिलया हि नीडस्थं काकडिम्बमपसार्य स्वडिम्बे तत्र स्थापिते काक्या निजडिम्बबुद्ध्या तत्परिपाल्यते इति प्रसिद्धेरस्य तथात्वम्] कोकिलः; परेण पोषिते त्रि. । २४३

परभागः पुं. [परस्य श्रेष्ठस्य भागः] गुणोत्कर्षः; 'आभाति लब्धपरभागतयाधरोष्ठे लीलास्मितं सदसनार्चिरिव त्वदीयम्'—इति रघौ (५।७०) । सुसम्पत्; उत्तरांशः । ७८६

परमात्मा [न्] पुं. [परमः केवलः आत्मा] परं ब्रह्म; आपोज्योतिः; चिदात्मा; 'परमात्मा परं ब्रह्म निर्गुणः प्रकृतेः परः। कारणं कारणानां च श्रीकृष्णो भगवान् स्वयम्'--इति ब्रह्मवैवर्ते । विष्णुः; 'पूतात्मा परमात्मा च मुक्तानां परमा गतिः'—इति महाभारते (१३।१४९।१५) । महादेवः; 'प्रीतात्मा परमात्मा च प्रयतात्मा प्रधानधृक्' —इति महाभारते (१३।१७।१३७) । ८४२

परमान्नम् क्ली. [देवपित्रन्नत्वात् परममुत्कृष्टमन्नम् । परमाणामुत्कृष्टानां देवादीनामन्नमिति वा] पायसम्; क्षीरिका; क्षैरेयी । ३२०

परमेश्वरः पुं. [परमश्चासौ ईश्वरश्चेति] शिवः; 'सहस्रारे महापद्मे त्रिकोणनिलयान्तरे । बिन्दुरूपे महेशानि! परमेश्वर ईरितः'–इति महालिङ्गार्चनतन्त्रे । विष्णुः; 'इदं तु द्वादशं प्रोक्तं पत्रं वै केशवस्य हि । द्वादशारं तथा चक्रं यन्नाभिद्विभुजं तथा। त्रिव्यूहन्त्वेकमूर्तिश्च तथोक्तः परमेश्वरः'—इति वामने ५ अध्यायः । ११

परमेष्ठी [न्] पुं. [परमे व्योम्नि चिदाकाशे ब्रह्मपदे वा तिष्ठतीति । स्था गतिनिवृत्तौ, 'परमे कित्' इति इनि स च कित्, 'हलदन्तात् सप्तम्याः संज्ञायाम्' इत्यलुक्, 'स्थास्थिन्स्थूणाम्' इति षत्वम् । परमे स्थाने अनावृत्तिलक्षणे तिष्ठतीति] ब्रह्मा; 'मन्वन्तराण्यसंख्यानि सर्गः संहार एव च । क्रीडन्निवैतत् कुरुते परमेष्ठी पुनः पुनः'—इति मनुः (१।८०) । विष्णुः; 'ऋतुः सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः'—इति महाभारते (१३।१४९।५८) । महादेवः; 'क्रियतां दर्शने यत्नो देवस्य परमेष्ठिनः । दर्शनात्तस्य कौन्तेय ! संसिद्धः सर्वमेष्यसि'—इति महाभारते (३।३७।५८) । जिनः; शालग्रामविशेषः; 'परमेष्ठी च शुक्लाभश्चक्रपद्मसमन्वितः। स वर्तुलस्तथा पीतःपृष्ठे च शुषिरं ध्रुवम्' इति पुराणे । गुरुविशेषः; 'आदौ सर्वत्र देवेशि! मन्त्रदः परमो गुरुः । परापरगुरुस्त्वं हि परमेष्ठी त्वहं गुरुः'—इति बृहन्नीलतन्त्रे । 'मन्त्रदाता गुरुः प्रोक्तो मन्त्रस्तु परमो गुरुः । परापरगुरुस्त्वं हि परमेष्ठी त्वहं गुरुः । परापरगुरुस्त्वं हि परमेष्ठिगुरुस्त्वहम्'—इति तन्त्रसारे। अजमीढपुत्रः; 'अजमीढो वरस्तेषां तस्मिन् वंशः प्रतिष्ठितः । षट् पुत्रान् सोऽप्यजनयत् तिसृषु स्त्रीषु भारत । ऋक्षं धूमिन्यथो नीली दुष्यन्तपरमेष्ठिनौ'—इति महाभारते (१।८४।३१) । परस्थानस्थिते त्रि.। 'अन्यजन्मनि जातोऽसौ चक्षुषः परमेष्ठिनः। चाक्षुषत्वमतस्तस्य जन्मन्यस्मिन्नपि द्विज।' —इति मार्कण्डेये (७६।२) । ६

परवशः त्रि. [परस्य परेषां वा वशः वशीभूतः] अन्यवशीभूतः; परायत्तः; पराधीनः; परच्छन्दः; परवान्; 'यद्यत्परवशं कर्म तत्तद्यत्नेन वर्जयेत् । यद्यदात्मवशन्तु

स्याततत् सेवेत यत्नतः'—इति मनुः (४।१५९)। ३४१

परवान् [त्] त्रि. [परः स्वामी अस्त्यस्य। 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति' मतुप्, मस्य व] पराधीनः; 'भवानपीदं परवानवैति महान् हि यत्नस्तव देवदारौ'—इति रघौ (२।५६)। ३४१

परशुः पुं. [परान् शत्रून् शृणाति हिनस्त्यनेनेति। शृ हिंसायाम्+'आङ्परयोः खनिशृभ्यां डिच्च' इति कु स च डित्] अस्त्रविशेषः; पर्शुः; परश्वधः; पश्वधः; स्वधितिः; कुठारः; 'ततः परशुहस्तं तमायान्तं दैत्यपुङ्गवम्। आहत्य देवीबाणौघैरपातयत भूतले'—इति मार्कण्डेये (८९।१४)। ४७४

परशुधरः पुं. [धरतीति धरः। धृ+अच्। ततः परशोर्धरः] गणेशः; (परशुशस्त्रप्रधानत्वादस्य तथात्वम्) परशुरामः; जामदग्न्यः; पर्शुरामः; परशुरामकः; भार्गवः; भृगुपतिः; भृगूलापतिः। १८

परश्वधः पुं. [पर+श्वि+'अन्येभ्योऽपीति' ड, ततः परश्वं दधातीति। आतोऽनुपेति' क] कुठारः; 'धारां शितां रामपरश्वधस्य सम्भावयत्युत्पलपत्रसाराम्'—इति रघुवंशे (६।४२)। ४७४

परस्परम् त्रि. ['सर्वनाम्नो द्वे वाच्ये समासवच्च बहुलम्', 'असमासवद्भावे पूर्वपदस्य सुपः सुर्वक्तव्यः।' कस्कादित्वात् विसर्जनीयस्य सः] अन्योऽन्यम्; इतरेतरम्; 'वनानि तोयानि च नेत्रकल्पैः पुष्पैः सरोजैश्च निलीनभृङ्गैः। परस्परां विस्मयवन्ति लक्ष्मीं आलोकयांचक्रुरिवादरेण'—इति भट्टिः (२।५)। ७२०

परस्वधः पुं. [परश्वध+निपातनात् सत्वम्] परश्वधः; कुठारः। ४७४

परस्वहरणम् क्ली. [परस्य अन्यस्य स्वं धनं, तस्य हरणम्] अभिहार; परवित्ताहरणम्। ८४३

पराक्रमः पुं. [पराक्रम्यतेऽनेन। परा+क्रम्+'हलश्च' इति घञ्। 'नोदात्तोपदेशस्य' इति न वृद्धिः] विक्रमः; द्रविणं; तरः; सहः; बलः; शौर्यं; स्थाम; शुष्म; शक्तिः; प्राणः; महः; शूष्म; सामर्थ्यम्; 'पराक्रमं च युद्धेषु जायते निर्भयः पुमान्'—इति देवीमाहात्म्ये (२।१३)। विक्रमः; 'यस्य मित्रगुणान् मित्राण्यमित्राश्च पराक्रमम्। कथयन्ति सदा सत्सु पुत्रवांस्तेन वै पिता'—इति मार्कण्डेये (२०।२५)। उद्योगः; निष्क्रान्तिः; विष्णुः; 'औषधं जगतः सेतुः सत्यधर्मः पराक्रमः'—इति महाभारते (१३।१४९।४४)। ७२३

परागः पुं. [परागच्छतीति। परा+गम्+अन्येभ्योऽपीति ड] पुष्पधूलिः; सुमनोरजः; कौसुमरेणुः; पुष्परेणुः; 'लिप्तं न मुखं नाङ्गं न पक्षती न चरणाः परागेण। अस्पृशतेव नलिन्या विदग्धमधुपेन मधु पीतम्'–इति आर्यासप्तशती (५०६)। धूलिः (८०९); 'प्रतापोऽग्रे ततः शब्दः परागस्तदनन्तरम्। ययौ पश्चाद्रथादीति चतुस्कन्धेव सा चमूः'—इति रघुवंशे (४।३०)। स्थानीयद्रव्यं; गिरिप्रभेदः; विख्यातिः; उपरागः; चन्दनं; स्वच्छन्दगमनम्। १८८

पराङ्मुखः त्रि. [पराक् प्रतिलोमगामि मुखं यस्य] विमुखः; पराचीनः; 'स्वधर्मो विजयस्तस्य नाहवे स्यात् पराङ्मुखः'—इति मनुः (१०।११९)। तन्त्रोक्तमन्त्रविशेषे पुं.। 'कामबीजं मुखे माया शिरस्यङ्कुशमेव च। असौ पराङ्मुखः प्रोक्तो मध्ये तु बिन्दुलाञ्छितः'—इति तन्त्रसारे। ७५७

पराचीनः त्रि. [पराञ्चतिं अनभिमुखीभवतीति। परा+अञ्चु+'ऋत्विग्दधृक्' इति क्विन्, ततः स्वार्थे 'विभाषाञ्चेरदिक् स्त्रियाम्' इति ख] पराङ्मुखः; विमुखः; विपरीतः; अपाचीनः; 'ज्ञानमेकं पराचीनैरिन्द्रियैर्ब्रह्म निर्गुणम्। अवभात्यर्थरूपेण भ्रान्त्या शब्दादिधर्मिणा'—इति भागवते (३।३२।२८)। ७५७

पराधीनः त्रि. [परस्य परेषां वा अधीनः] परवशः; परतन्त्रः; परवान्; नाथवान्; 'स्वाधीनवृत्तेः साफल्यं न पराधीनवृत्तिता। ये पराधीनकर्माणो जीवन्तोऽपि च ते मृताः'—इति गरुडपुराणे ११३ अध्याये। ३४१

परान्नः त्रि. [परान्नं नित्यमस्त्यस्य। 'अर्श आदिभ्योऽच्' इति अच्] परान्नोपजीवी; परपिण्डादः; परान्नभोजी; परजातः; परैधितः; क्ली. [परस्य अन्नम्] अन्यस्वामिकभक्तपिष्टकादि; परकर्तृकसस्यपाकजद्रव्यमात्रं; परस्पृष्टान्नम्; 'परान्नं परवासश्च नित्यं धर्मरतस्त्यजेत्'—इति स्मृतिः। 'कांस्यं मांसं मसूरं च चणकं कोरदूषकम्। शाकं मधु परान्नं च त्यजेदुपवसन् स्त्रियम्।' 'जिह्वा दग्धा परान्नेन करौ दग्धौ प्रतिग्रहात्। मनो दग्धं परस्त्रीभिः कथं सिद्धिर्वरानने!'—इति तन्त्रे। 'गुर्वन्नं

मातुलान्नं वा श्वशुरान्नं तथैव च । पितुः पुत्रस्य चैवान्नं न परान्नमिति स्मृतिः'—इत्येकादशीतत्त्वम् । ३५१

पराभवः पुं. [पराभूयते इति, पराभवनमित्यर्थः । परा+भू+भावे अप्] तिरस्कारः; न्यक्कारः; तिरस्क्रिया; परिभावः; विप्रकारः; परिभवः; अभिभवः; अत्याकारः; निकारः; विनाशः । ७०४

परायणम् त्रि. [परं केवलम् अयनम् आसक्तिस्थानम्] तत्परम्; अभीष्टं; नित्यप्रतिष्ठा; शाश्वतप्रतिष्ठा; 'पादच्छायासुखं भर्त्तुस्तादृशस्य महात्मनः । स हि नाथो जनस्यास्य स गतिः स परायणम्'—इति रामायणे (२।४८।१७) । आसङ्गवचनं; यथा–धर्मपरायणो धर्मासक्तः । आश्रयः; 'वर्तयंश्च शिलोञ्छाभ्यामग्निहोत्रपरायणः'—इति मनुः (४।१०) । ३५२

परायत्तम् त्रि. [परस्य परेषां वा आयत्तम्] पराधीनं; परवशं; परच्छन्दः । 'तत्रायत्तवशाधीनच्छन्दवन्तः परात् परे'—इति हेमचन्द्रः । ३४१

परार्द्ध्यः त्रि. [परार्द्धं परार्द्धसंख्यावत् प्रधानत्वम् अर्हतीति । परार्द्ध+यत् । यद्वा परस्मिन्नर्द्धे भवः, 'परावराधमोत्तमपूर्वाच्च'इति यत्] प्रधानम्; श्रेष्ठः; 'ताम्यस्तथाविधान् स्वप्नान् श्रुत्वा प्रीतो हि पार्थिवः । मेने परार्द्ध्यमात्मानं गुरुत्वेन जगद्गुरोः'—इति रघौ (१०।६४) । ६९०

परासुः त्रि. [परागताः प्रस्थिता असवः प्राणाः यस्य] मृतः; 'तौ दम्पती बहु विलप्य शिशोः प्रहर्त्रा शल्यं निखातमुदहारयतामुरस्तः । सोऽभूत् परासुरथ भूमिपतिं शशाप हस्तार्पितैर्नयनवारिभिरेव वृद्धः—इति रघौ (९।७८) । 'वाताष्ठीला तु हृदये यस्योर्ध्वमनुयायिनी । रुजान्नविद्वेषकरी स परासुरसंशयम्'—इति सुश्रुतः । ६२९

परास्कन्दी [न्] पुं. [परान् आस्कन्दितुं शीलमस्य । पर+आ+स्कन्द+णिनि] चौरः । ३३८

परिकरः पुं. [परिकीर्यते इति, कॄ विक्षेपे+'ॠदोरप्' इति अप् । यद्वा परिक्रियतेऽनेनेति, पुंसीति घ] परिवारः; पर्यङ्कः (४१०); समारम्भः; वृन्दः; प्रगाढगात्रिकाबन्धः; 'गाढं परिकरं बद्ध्वा शुल्कमादाय चाधिकम् । स्कन्धे भर्त्तारमादाय जगाम मृदुगामिनी'—इति मार्कण्डेये (१६।२५) । विवेकः; सहकारी; 'परिकरः सहकारी स च व्याप्तिपक्षधर्मतादिः ।' अलङ्कारविशेषः; 'उक्तिर्विशेषणैः साभिप्रायैः परिकरो मतः'—इति साहित्यदर्पणे (१०।७५) । ३०६

परिकूटम् क्ली. [परि सर्वतो भूषितं कूटम्] पुरद्वारकूटकं; हस्तिनखः; नगरद्वारकूटकम् । २८८

परिक्रमः पुं. [परिक्रमणम्, क्रमु पादविक्षेपे+भावे घञ्, 'नोदात्तोपदेशस्येति' उपधाया न वृद्धिः] क्रीडार्थं पद्भ्यां गमनम्; विहारः; प्रदक्षिणम्; 'शृणु भद्रे ! महापुण्यं पृथिव्यां सर्वतोदिशम् । परिक्रम्य यथाध्वानं प्रमाणगणितं शुभम् । भूत्वा परिक्रमे सम्यक् प्रमाणं योजनानि च'—इति वाराहपुराणे । ७२६

परिक्षिप्तम् त्रि. [परितः क्षिप्यते स्म इति । क्षिप्+क्त] परिखादिना वेष्टितं; निवृतम्; सर्वतोभावेन क्षेपयुक्तश्च । ७१२

परिखा स्त्री. [परितः खाता इति । परि+खन्+'अन्येष्वपीति' ड] राजधान्यादिवेटनखातं; खेयम्; 'भिन्द्याच्चैव तडागानि प्राकारपरिखास्तथा । समवस्कन्दयेच्चैनं रात्रौ वित्रासयेत्तथा'—इति मनुः (७।१९६) । 'प्रस्थे च परिखामानं शतहस्तं प्रशस्तकम् । परितः शिविराणां च गम्भीरं दशहस्तकम् । सङ्केतपूर्वकं चैव परिखाद्वारमीप्सितम् । शत्रोरगम्यं मित्रस्य गम्यमेव सुखेन च'—इति ब्रह्मवैवर्ते । ६७६

परिग्रहः पुं. [परिग्रहणमिति । परि+ग्रह्+'ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च' इति अप्] परिवारः; प्रतिग्रहः; 'कण्ठाश्लेषपरिग्रहे शिथिलता यन्नादराच्चुम्बसे, तत्ते धूर्त ! हृदि स्थिता प्रियतमा काचिन् ममेवापरा'–इति पञ्चतन्त्रे (४।७) । सैन्यपश्चाद्भागः; पत्नी; भार्या; 'समनुकम्प्य सपत्नपरिग्रहाननलकानलकानवमां पुरीम्'—इति रघौ (९।१४) । परिजनः; आदानम्; 'अनुभवन्नवदोलमृतूत्सवं पटुरपि प्रियकण्ठजिघृक्षया । अनयदासनरज्जुपरिग्रहे भुजलतां जलतामबलाजनः'—इति रघौ (९।४६) । स्वीकारः; 'लोके न भावी पितुरेव तुल्यः सम्भावितो मौलिपरिग्रहात् सः'—इति रघौ (१८।३८) । मूलं; कन्दः; शापः; शपथः; राहुवक्त्रस्थभास्करः; पुत्रदारादिभर्तव्यपरिमाणम्; 'प्रकल्प्य तस्य तैर्वृत्तिः स्वकुटुम्बाद् यथार्हतः । शक्तिं चावेक्ष्य दाक्ष्यं च भूतानां च परिग्रहम्'–इति मनुः (१०।१२४) । परिगृह्यतेऽनेनेति विग्रहे हस्तः; विष्णुः; 'ऋतुः

सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः'—इति महाभारते (१३।१४९।५८)। [शरणार्थिभिः परितो गृह्यते सर्वगतत्वात् परितो ज्ञायत इति वा। पुष्पादिभिर्भक्तैरर्चितं परिगृह्णाति इति वा परिग्रहः]; साधनम्; 'अजिनदण्डभृतं कुशमेखलां यतगिरं मृगशृङ्गपरिग्रहम्'—इति रघौ (९।२१)। ३०६

परिघः पुं. [परिहन्यतेऽनेनेति। परि+हन्+'परौ घः' इति अप्, घादेशश्च] लोहबद्धलगुडः; लोहमयलगुडः; लोहमुखलगुडः; परिघातनः; परिघातकः; अर्गलः (३००); 'बाहूनामुत्तमाङ्गानां कार्मुकाणां च भारत! गदानां परिघाणां च हस्तानाञ्चोरुभिः सह'—इति महाभारते (६।६७।२४)। परिघातः; परितो हननं; मुद्गरः; शूलः; कलसः; काचघटः; गोपुरं; सद्म; कार्त्तिकेयानुचरविशेषः;' परिघं च वटं चैव भीमं च सुमहाबलम्। दहतिं दहनं चैव प्रचण्डौ वीर्यसम्मतौ। अंशोऽप्यनुचरान् पञ्च ददौ स्कन्दाय धीमते'—इति महाभारते (९।४५।३३)। चण्डालविशेषः; 'लम्बकर्णो महावक्त्रो मलिनो घोरदर्शनः। परिघो नाम चण्डालः शस्त्रपाणिरदृश्यत'–इति महाभारते(१२।१३८।११४)। विष्कम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गत ऊनविंशतियोगः; 'वज्रोऽसृक् च व्यतीपातो वरीयान् परिघस्तथा'—इति ज्योतिषे। 'परिघस्य त्यजेदर्द्धं शुभकर्म ततः परम्।' अस्य अर्द्धांशं परित्यज्य शुभकर्म कुर्यात्। 'उत्पत्तिकाले परिघो यदि स्यात् नरस्तदा वंशकुठारकल्पः। असत्यसाक्षी क्षमया विहीनः स्वल्पानुभोक्ता विजितारिपक्षः' —इति कोष्ठीप्रदीपः। ४७५

परिघातनः पुं. [परितो घातनं यस्मात्] परिघास्त्रम्; सर्वतोभावेन हनने क्ली.। ४७५

परिचयः पुं. [परि समन्ताच् चयनं बोधो ज्ञानमित्यर्थः। परि+चि+अप्] विशेषेण ज्ञानं; संस्तवः; प्रणयः; 'न परिचयो मलिनात्मनां प्रसाधनम्'—इति माघे (७।६१)। अभ्यासः; 'हेतुः परिचयस्थैर्ये वक्तुर्गुणनिकैव सा'—इति माघे (२।७५)। नादस्य अवस्थाविशेषः; 'आरम्भश्च घटश्चैव तथा परिचयोऽपि च। निष्पत्तिः सर्वयोगेषु स्यादवस्थाचतुष्टयम्'—इति हठयोगदीपिकायाम् (४।६९)। ७७३

परिचर्या स्त्री. [परिचर्यते परिचरणमित्यर्थः। परि+चर्+'परिचर्यापरिसर्येति' शो यक् च निपात्यते] सेवा; वरिवस्या; शुश्रूषा; उपासनं; परिसर्या; उपासना; उपास्तिः; शुश्रूषणा; 'अथवा वार्द्धके प्राप्ते परिचर्यां करिष्यति। पुत्रः परमधर्मिष्ठः पुण्यार्थं कलविङ्कयोः' –इति देवीभागवते (१।४।११)। १२९

परिच्छदः पुं. [परिच्छाद्यतेऽनेनेति। परि+छद्+णिच्+'पुंसि संज्ञायाम्' इति घ; 'छादेर्घेऽद्व्युपसर्गस्य' इति उपधा ह्रस्वः] परिवारः; 'सहधर्मचारिणी मम परिच्छदः सुतनु नेह सन्देहः। न तु सुखयति तुहिनदिनच्छत्रच्छायेव सज्जन्ती'—इति आर्यासप्तशत्याम् (६७३)। मात्रा (७९६); हस्त्यश्ववस्त्रकम्बलाद्युपकरणम्; 'परिच्छदे नृपार्हेऽर्थे परिवर्होऽव्ययाः परे।' 'सेना परिच्छदस्तस्य द्वयमेवार्थसाधनम्। शास्त्रेष्वकुण्ठिता बुद्धिर्मौर्वी धनुषि चातता'—इति रघुवंशे (१।१९)। आच्छादनम्; 'पयःफेननिभाः शय्या दान्ता रुक्मपरिच्छदाः' –इति भागवते। ३०६

परिच्छन्दः पुं. [परिच्छन्द्यतेऽनेन। परि+छदि संवरणे+घञ्] परिच्छदः। ३०६

परिणतः त्रि. [परिणमति स्म। परि+नम्+क्त] तिर्यग्घातिगजः; 'सततमसुमतामगम्यरूपाः परिणतदिक्करिकास्तटीर्बिभर्ति'—इति माघे (४।२९)। पक्वं (८२५); सर्वतोभावेन नतं च। २२०

परिणयनम् पुं. [परि+नी+अप्+ल्युट्] परिणयः; विवाहः; उद्वाहः। ४९५

परिणाहः पुं. [परिणह्यतेऽनेन इति। परि+नह्+घञ्] विस्तारः; विशालता; 'अरत्नीनां सहस्रं च शतानि दश पञ्च च। परिणाहस्तु वृक्षस्य फलानां रसभेदिनाम्'—इति महाभारते (६।७।२२)। ७८६

परितः [स्] अव्य. [परि+'पर्यभिभ्याञ्च' इति तसिल्] सर्वतः; चतुर्दिगभिव्याप्तौ; 'पुरोपकण्ठोपवनाश्रयाणां कलापिनामुद्धतनृत्यहेतौ। प्रध्मातशङ्खे परितो दिगन्तांस्तूर्यस्वने मूर्च्छति मङ्गलार्थे'—इति रघुवंशे (६।९)। ८७४

परितापः पुं. [परि सर्वतोभावेन तप्यतेऽनेन। परि+तप्+घञ्] दुःखम्; 'स तु जनपरितापं तत्कृतं जानता ते, नरहर उपनीतः पञ्चतां पञ्चविंशः'–इति भागवते (७।८।५४)। नरकान्तरं; शोकः; 'एतया तत्त्वया बुद्धया संस्तभ्या-

त्मानमात्मना। व्याहृतेऽप्यभिषेके मे परितापो न विद्यते' —इति रामायणे (२।२२।२५)। ६०१

परिदेवनम् क्ली. [परि+दिव्+ल्युट्] शोकनिमित्तो विलापः; विलापः; परिदेवना; 'परिदेवनं च पाञ्चाल्या वासुदेवस्य सन्निधौ। आश्वासनं च कृष्णस्य दुःखार्त्तायाः प्रकीर्तितम्'—इति महाभारते (१।२।१४६)। अनुशोचनोक्तिः। ६३९

परिधानम् क्ली. [परिधीयते यत्। परि+धा+कर्मणि ल्युट्] परिधेयवस्त्रम्; अन्तरीयम्; उपसंव्यानम्; अधोंऽशुकम्; 'वरं वनं व्याघ्रगजादिसेवितं जलेन हीनं बहुकण्टकावृतम्। तृणानि शय्या परिधानवल्कलं न बन्धुमध्ये धनहीन जीवनम्'—इति पञ्चतन्त्रे (५।२२)। ५४६

परिधानांशुकग्रन्थिः [परिधानांशुकस्य परिधेयवस्त्रस्य ग्रन्थिः बन्धनप्रान्तः] उच्चय; नीवी। ४५७

परिधिः पुं. [परिधीयतेऽनेन। परि+धा+'उपसर्गे घोः किः' इति कि] परिवेशः; चन्द्रसूर्यसमीपमण्डलम्; 'अनृणत्वमुपेयिवान् बभौ परिधेर्मुक्त इवोष्णदीधितिः'—इति रघौ (८।३०)। (८०७) यज्ञियतरुशाखा; यज्ञियतरोः पलाशादेर्यज्ञपशुबन्धनार्थं या शाखा निखायते तस्याम्; 'खादिरं पालाशं वैकविंशतिदारुकमिध्वं करोति त्रयः परिधयः पालाशकाष्ठकाः खादिरौदुम्बरबिल्वरोहितकविकङ्कतानां ये वा यज्ञिया वृक्षाः आर्द्राः शुष्करसत्वच्काः' —इति आपस्तम्बः। भूगोलादेर्वेष्टनम्; 'व्यासेभनन्दाग्निहते विभक्ते खबाणसूर्यैः परिधिस्तु सूक्ष्मः'—इति लीलावती। क्ली. [परिधीयते यदिति। परि+धा+कर्मणि कि] परिधेयवस्त्रम्; 'मेघश्यामः कनकपरिधिः कर्णविद्योतविद्युन्मूर्द्ध्नि भ्राजद्विलुलितकचः स्रग्धरो रक्तनेत्रः'—इति भागवते (८।७।१७)। 'कनकं सुवर्णमिव पीतं परिधिः वस्त्रं यस्य'—इति तट्टीकायां श्रीधरः। ४१

परिपणम् क्ली. [परिपण्यते व्यवह्रियतेऽनेन। परि+पण्+'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ] मूलधनं; 'पूंजी' इति भाषा। ८०७

परिपन्थी [न्] त्रि. [परि सर्वतोभावेन दोषाख्यानं पन्थयितुं शीलमस्य। परि+पन्थ+णिनि] शत्रुः; रिपुः; वैरी; अरिः; 'इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ। तयोर्न वशमागच्छेत्तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ'—इति भगवद्गीतायाम् (३।३४)। प्रतिकूलाचारी; 'अपराधिनि चेत् क्रोधः क्रोधे क्रोधः कथं नहि। धर्मार्थकाममोक्षाणां चतुर्णां परिपन्थिनि।' ४५५

परिपाटिः स्त्री. [परिपाटनम्। परि+पट्+स्वार्थे णिच्+'अच इः'। यद्वा परिभागेभागेन पाटिः पाटनं गतिर्यस्याम्] आनुपूर्वी; आवृत्; अनुक्रमः; पर्यायः; आनुपूर्वं; परिपाटी; क्रमः; आनुपूर्वकम्। ७३९

परिपाटी स्त्री. [परिपाटि+ङीष्] क्रमः; आनुपूर्वी; परिपाटिः। ७३९

परिपूर्णता स्त्री. [परिपूर्णस्य भावः। परिपूर्ण+'तस्य भावस्त्वतलौ' इति तल्, ततः 'त्वान्तं क्लीबन्तलन्तं स्त्रियाम्' अतः स्त्रियां टाप्] परिपूर्णत्वं; सम्पूर्णता; आभोगः। ७५५

परिप्लवम् त्रि. [परिप्लवते इति, प्लु+अच्] चञ्चलम्; 'मत्कुणाविव पुरा परिप्लवौ सिन्धुनाथशयने निषेदुषः। गच्छतः स्म मधुकैटभौ विभोः यस्य नैन्द्रसुखविघ्नतां क्षणम्'—इति माघे (१४।६८)। पुं. राज्ञः सुखीनलस्य पुत्रः; 'सुनीथस्तस्य भविता नृचक्षुर्यत्सुखीनलः। परिप्लवः सुतस्तस्मान्मेधावी सुनयात्मजः'—इति भागवते (९।२२।४२)। ६९५

परिबर्हः पुं. [परिबर्ह्यतेऽनेन। बर्ह प्राधान्ये+घञ्] परिच्छदः; हस्त्यश्ववस्त्रकम्बलादि; नृपार्होऽर्थः; राजयोग्यद्रव्यं सितच्छत्रादि; निवेश्य गङ्गामनु तां महानदीं चमूं विधानैः परिबर्हशोभिनीम्। उवास रामस्य तदा महात्मनो विचिन्त्यमानो भरतो निवर्तनम्'—इति रामायणे (२।८३।२६)। ३०६

परिभवः पुं. [परि+भू+अप्] अनादरः; तिरस्कारः; अपमानम्; 'फलमस्योपहासस्य सद्यः प्राप्स्यसि पश्य माम्। मृग्याः परिभवो व्याघ्र्यामित्यवेहि त्वया कृतम्'—इति रघौ (१२।३७)। ७०४

परिभावः पुं. [परि+भू+'परौ भुवोऽवज्ञाने' इति घञ्] परिभवः; अनादरः। ७०४

परिमलः पुं. [परिमलते सुगन्धिपार्थिवकणान् धरतीति। मल् धारणे+अच्। 'क्षितावेव गन्धः' इति न्यायादस्य तथात्वम्] आमोदः; गन्धः; सौरभ्यं; सौरभं; सुरभिमाल्यगन्धादिधारणेनोत्पन्नो हृद्यो गन्धः; 'रति-

लुलितललितललनाक्लमजललववाहिनो मुहुर्यत्र ।
इलथकेशकुसुमपरिमलवासितदेहा वहन्त्यनिलाः'—इति कलाविलासे (१।५)। विमर्दोत्थजनमनोहरगन्धः; सुरतादिविमर्दोत्थविलेपनकुङ्कुमादिगन्धः; विमर्दनं (७६९); कुङ्कुमादिमर्दनं; पण्डितसमूहः। ७७

परिमाणम् क्ली. [परिमीयतेऽनेन । परि+मा+करणे ल्युट्] परिमितिव्यवहारासाधारणकारणं; 'माप' इति भाषा। ८०१

परिमोषी [न्] त्रि. [परिमुष्णातीति, परि+मुष्+णिनि] परिमोषणशीलः; चौरः; चोरः। ३३८

परिरम्भणम् क्ली. [परिरम्यते इति, परि+रभि+ल्युट्, 'रभेरशब्लिटोः' इति नुम्] परिरम्भः; परीरम्भः; आलिङ्गनं, क्रोडीकरणम्। ५६८

परिवर्तः पुं. [परिवर्त्तनमिति, परि+वृत्+भावे घञ्] युगान्तः; (८०१) हायनः; वर्षः। विनिमयः; परिवर्तनं; परिदानं; नैमेयः; व्यतिहारः; परावर्तः; वैमेयः; विमयः; 'हृष्यन्त्यृतुमुखं दृष्ट्वा नवं नवमिवागतम्। ऋतूनां परिवर्तेन प्राणिनां प्राणसंक्षयः' —इति रामायणे (२।१०५।२५)। कूर्मराजः; अपवर्तनं; ग्रन्थविच्छेदः; मृत्युपुत्रस्य दुःसहस्यौरसेन कलिकन्यानिर्माष्ठिगर्भजाताष्टपुत्रान्तर्गततृतीयपुत्रः। 'अष्टौ कुमाराः कन्याश्च तथाष्टावतिभीषणाः। दन्ताकृष्टिस्तथोक्तिश्च परिवर्तस्तथापरः'— इति मार्कण्डेये (५१।२)। ११७

परिवर्हः पुं. [परिवर्ह्यतेऽनेन । वर्ह प्राधान्ये+घञ्] परिच्छदः; परिबर्हः; हस्त्यश्ववस्त्रकम्बलादि; नृपार्होऽर्थः; राजयोग्यद्रव्यं सितच्छत्रादि; 'निवेश्य गङ्गामनु तां महानदीं चमूं विधानैः परिवर्हशोभिनीम्—' इति रामायणे (२।८३। २६)। ३०६

परिवादः पुं. [परि सर्वतो दोषोल्लेखेन वादः कथनम्। परि+वद्+भावे घञ्] अपवादः; 'नीचसंसर्गनिरताः परवित्तापहारकाः। परनिन्दापरद्रोहपरिवादपराः खलाः'—इति महानिर्वाणतन्त्रे (१।४२)। [परि+वद्+णिच्+करणे घञ्] वीणावादनवस्तु। १४८

परिवारः पुं. [परिव्रियतेऽनेन । परि+वृ+करणे घञ्] परिजनः; 'मनुष्यवाह्यं चतुरस्रयानमध्यास्य कन्या परिवारशोभि। विवेश मञ्चान्तरराजमार्गं पतिंवरा क्लृप्तविवाहवेषा'—इति रघौ (६।१०)। खड्गकोशः; खड्गकोषः; परिच्छदः। (जगङ्गो जङ्गमविशेषः परिजन इत्यर्थः; खड्गकोषोऽसिवाचकः; परिच्छदः शोभाजनकमुपकरणं छत्रचामरादिः सभ्यजनादिश्च। एषु परिवारः।) ३०६

परिवाहः पुं. [पर्यूह्यते तृणादिकं येन । परि+वह्+घञ्] परीवाहः; जलोच्छ्वासः; 'स विवेश पुरीं तया विना क्षणदापायशशाङ्कदर्शनः। परिवाहमिवावलोकयन् स्वशुचः पौरवधूमुखाश्रुषु'—इति रघौ (८।७४)। ६७७

परिवृढः त्रि. [परि सर्वतोभावेन वृंहति वर्द्धते इति । वृहि वृद्धौ+कर्तरि क्त । निपातनात् हकारलोपो निष्ठातस्य ढत्वञ्च] अधिपः; प्रभुः; 'जगत्परिवृढः प्रौढप्रीतिस्तं स फलार्थिनम्। कृत्वा प्रादुष्कृतवपुस्ततो भूयोऽभ्यभाषत'—इति राजतरङ्गिण्याम् (३।२८२)। ३०६

परिवृतः त्रि. [परि सर्वतोभावेन वृतः] आवृतः; वेष्टितः; 'व्यवहारान् नृपः पश्येत् सभ्यैः परिवृतोऽन्वहम्।'—इति मिताक्षरा। ७१२

परिवृत्तिः पुं. [परि+वृत्+भावे क्तिन्] परिवर्तनं; विनिमयः; वैमेयः; 'तस्य कालपरीमाणमकरोत् स पितामहः। भूतेषु परिवृत्तिञ्च पुनरावृत्तिमेव च'—इति महाभारते (१४।१८।२९)। अर्थालङ्कारविशेषः; 'परिवृत्तिविनिमयः समन्यूनाधिकैर्भवेत्'—इति साहित्यदर्पणे। [परिवर्जने वर्तते इति । परि+वृत्+क्तिच्] परिवित्तिः; परवेतृज्येष्ठः; कृतविवाहस्यानूढज्येष्ठभ्राता; 'दाराग्निहोत्रसंयोगं कुरुते योऽग्रजे स्थिते। परिवेत्ता स विज्ञेयः परिवृत्तिस्तु पूर्वजः'—इति मनुः (३।१७१)। ५७३

परिवेशः पुं. [परितो विश्यतेऽनेन । परि+विश्+घञ्] परिधिः; परिवेषः; 'वातेन मण्डलीभूताः सूर्याचन्द्रमसोः कराः। मालाभा व्योम्नि तनुते परिवेशः प्रकीर्तितः'—इति भरतधृतसाहसाङ्कः। वेष्टनम्। ४७

परिवेषः पुं. [परितो विष्यते व्याप्यतेऽनेन । विष् व्यापने+घञ्] परिधिः; 'सम्मूर्च्छिता रवीन्द्वोः किरणाः पवनेन मण्डलीभूताः। नानावर्णाकृतयस्तन्वभ्रे व्योम्नि परिवेषाः। ते रक्तनीलपाण्डुरकापोताभ्राभशबलहरिशुक्लाः। इन्द्रयमवरुणनिर्ऋतिश्वसनेशपितामहाग्निकृताः' —इति बृहत्संहितायाम्। परिवृतिः; परिवेषणम्। ४७

परिव्रज्या स्त्री. [परि+व्रज्+भावे क्यप्+स्त्रियां टाप्] तपस्या; इतस्ततो भ्रमणम्; । 'वासांसि मृतचेलानि भिन्नभाण्डेषु भोजनम्। कार्ष्णायसमलङ्कारः परिव्रज्या च नित्यशः'—इति मनुः (१०।५२)। 'लौहवलयादि चालङ्करणं सर्वदा च भ्रमणशीलत्वम्'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। ७७६

परिव्राजकः पुं. [परिव्राज+स्वार्थे कन् । परिव्रजतीति, परि+व्रज्+ण्वुल् वा] परिव्राट्; परिव्राजः; तपस्वी; 'स परिव्राजकच्छद्मा महाकायशिरोधरः । प्रतिपेदे स्वकं रूपं रावणो राक्षसाधिपः'—इति रामायणे (३।५५।२)। ४०९

परिषत् [द्] स्त्रीः [परितः सीदन्त्यस्याम् । परि+सद्+अधिकरणे क्विप् । 'सदिरप्रतेः' इति षत्वम्] सभा; 'यादृशी परिषत् सीते ! दूतश्चायं तथाविधः । ध्रुवमद्यैव राजा मां यौवराज्येऽभिषेक्ष्यति'—इति रामायणे (२।१३।१६)। ७४५

परिष्कन्दः त्रि. [परिष्कन्दतीति, परि+स्कन्दिर् गतिशोषणयोः+पचाद्यच् । 'परेश्च' इति षत्वम्] परिस्कन्दः; परपुष्टः। ३६९

परिष्कारः पुं. [परिष्क्रियतेऽनेन । परि+कृ+'सम्परिभ्यां करोतौ भूषणे' इति सुट् 'परिनिवीति' षत्वम्] अलङ्कारः; संस्कारः; शुद्धिः। ५४०

परिष्कृतः त्रि. [परिष्क्रियते स्म इति। परि+कृ+क्त, 'सम्परिभ्यामिति' सुट्, 'परिनिवीति' इति षत्वञ्च] आहितसंस्कारः, यथा—परिष्कृतभूमिः ; भूषितः; अलङ्कृतः; वेष्टितः। ४१५

परिष्टोमः पुं. [परितः स्तूयते नानावर्णवत्त्वादिति । स्तु+मन्। ततः षत्वम्। 'परेः स्तौति प्रति अनुपसर्गत्वात् न षः' इति वा] परिस्तोमः; आस्तरणं; प्रवेणी। ३०८

परिष्वङ्गः पुं [परिष्वञ्जनम् । परि+स्वञ्ज्+घञ् । 'परिनिवीति' षत्वम्] आलिङ्गनं; क्रोडीकरणं; परिरम्भः; परीरम्भः; 'अङ्गदप्रमुखानां च हरीणां रामदर्शनम् । हनूमतः परिष्वङ्गो राघवेण महात्मना' —इति रामायणे (१।४।८८)। ५६८

परिसरः पुं. [परिसरन्त्यत्र । परि+सृ+'पुंसीति' घ] पर्यन्तभूः; नदीनगरपर्वतादेरुपान्तभूमिः; 'मुक्ताजालैः स्तनपरिसरच्छिन्नसूत्रैश्च हारैः, नैशो मार्गः सवितुरुदये सूच्यते कामिनीनाम्'—इति मेघदूते (६९)। मृत्युः; विधिः। २५९

परिसर्पः पुं. [परि समन्तात् सर्पणम् । परि+सृप्+घञ्] परिक्रिया; परिजनादिना वेष्टनं; समन्तात् सर्पणं; सर्पविशेषः; 'गवेधुकः परिसर्पः खण्डफणः ककुदः पद्मो महापद्मः'—इति सुश्रुते कल्पस्थाने ४ अध्याये। तत्र दर्वीकराः। कुष्ठविशेषः; क्षुद्रकुष्ठान्यपि स्थूलारुष्कं महाकुष्ठमेककुष्ठं चर्मदलं विसर्पः परिसर्पः सिध्म विचर्चिका किटिमं पामा रकसा चेति'। ७२६

परिस्कन्दः पुं. [परिस्कन्दतीति, परि+स्कन्द्+अच् । 'परेश्च' इति पक्षे षत्वाभावः] प्रेष्यः; परिष्कन्दः; परपुष्टः; परेण प्रतिपालितः। ३६९

परिस्तोमः पुं. [परिस्तूयते प्रशस्यते नानावर्णवत्त्वात् । परि+स्तु+'अर्त्तिस्तुस्विति' मन्। यद्वा परिगतः स्तोमो अत्र, वर्णस्तोमत्वात्] गजपृष्ठस्थचित्रकम्बलः; आस्तरणम्; प्रवेणी। ३०८

परिस्पन्दः पुं. [परि+स्पन्द+अधिकरणे घञ्] परिवारः; परिकरः; कुसुमप्रकरादेः पत्रावल्यादेश्च रचना; [भावे घञ्] सर्वतो भावेन स्पन्दनं च; मर्दनम्; 'अहमेनं हनिष्यामि प्रेक्षन्त्यास्ते सुमध्यमे ! नायं प्रतिबलो भीरु ! राक्षसापसदो मम । सोढुं युधि परिस्पन्दमथवा सर्वराक्षसाः'। इति महाभारते (१।१५४।८)। ३०६

परिस्रुत् स्त्री. [परिस्रवतीति, परि+स्रु+क्विप्+तुक्] मदिरा; 'एमां परिस्रुतः कुम्भ आदध्नः कलशैरयुः' —इति अथर्ववेदे (३।१२।७)। सर्वतोभावेन क्षरिते त्रि.। 'त्वामापः परिस्रुतः परियन्ति स्वसेतवो नभन्तामन्यके समे'—इति ऋग्वेदे (८।३९।१०)। ३३०

परिस्रुतः त्रि. [परितः स्रूयते स्म। स्रु स्रवणे+'गत्यर्थेति' क्त] वारुणी; 'ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं पयः कीलालं परिस्रुतम्'—इति यजुर्वेदे (२।३४)। स्रवयुक्तः; सर्वतोभावेन क्षरितः। ३२९

परिस्रुता स्त्री. [परितः स्रूयते स्मेति। परि+स्रु+क्त, स्त्रियां टाप्। अन्नादिभ्यः क्षरणेन जातत्वात् तथात्वम्] वारुणी; मदिरा; । ३२९

परिहार्यः पुं. [परि+हृ+ण्यत्] पारिहार्यः; वलयः; परिहरणीये त्रि.। 'न परिहार्ये वस्तुनि पौरवाणां मनः प्रवर्त्तते'—इति शकुन्तलायाम् १ अङ्के। ५५७

परिहासः पुं. [परि+हस्+भावे घञ्] परिहसनं; परीहासः; क्रीडा; देवना; वर्करा; 'परिहासः केलिमुखः केलिर्देवननर्मणी'—इति त्रिकाण्डशेषः । 'परिहासविजल्पितं सखे! परमार्थेन न गृह्यतां वचः'—इति शकुन्तलायाम् २ अङ्के । ४३२

परिहृतः त्रि. [परितः सर्वतोभावेन हृतः । हृ+क्त] अस्वीकृतः; प्रतिक्षिप्तः; निरस्तः । ७०३

परीक्षकः त्रि. [परीक्षते अवधारयति प्रमाणेन । यथा वह्निना परीक्षकः स्वर्णस्य स्वर्णकारः । परि+ईक्ष्+ण्वुल्] निरूपकः; कारणिकः; 'परीक्षका यत्र न सन्ति देशे नार्घन्ति रत्नानि समुद्र जानि—आभीरदेशे किल चन्द्रकान्तं त्रिभिर्वराटैर्विपणन्ति गोपाः'—इति पञ्चतन्त्रे (१।८४) । ३८९

परीक्षणम् क्ली. [परि+ईक्ष्+ल्युट्] परीक्षा; राज्ञा धर्मकामार्थभयैरमात्यादेर्भावितत्त्वनिरूपण; 'भेदोपजापावुपधा धर्माद्यैर्यत् परीक्षणम्'—इत्यमरः । सर्वतोभावेन दर्शनं च । ७५७

परीणाहः, परिणाहः पुं. [परिणह्यतेऽनेन । परि+णह् बन्धने+घञ्, 'उपसर्गस्य घञीति' पाक्षिको दीर्घः] विशालता; दैर्घ्यम् । ७८६

परीभावः पुं. [परिभाव्यते इति । परि+भावि+घञ्, वैकल्पिकदीर्घश्च] परिभावः; अनादरः । ७०४

परीवर्तः पुं. [परि+वृत्+घञ्, 'उपसर्गस्य घञीति' दीर्घः] युगान्तः; परिवर्तनम्; प्रतिदानं; नैमेयः; निमयः; परिवर्तः; वैमेयः; विनिमयः; परिदानं; कूर्मराजः । ११७

परीवादः पुं. [परि+वद्+भावे घञ्, 'उपसर्गस्य घञीति' दीर्घः] दोषोल्लासः; कुत्सा; निन्दा; जुगुप्सा; गर्हा; गर्हणं; निन्दनं; कुत्सनं; परिवादः; जुगुप्सनम्; आक्षेपः; अवर्णः; निर्वादः; अपक्रोशः; भर्त्सनम्; उपक्रोशः; अपवादः; अववादः । 'परीवादस्तथ्यो भवति वितथो वापि महतां, तथाप्युच्चैर्धाम्नां हरति महिमानं जनरवः । तुलोत्तीर्णस्यापि प्रकटितहताशेष तमसो, रवेस्तादृक् तेजो नहि भवति कन्यां गतवतः।' वीणादिवादनं; येन काष्ठविशेषादिना वीणादिर्वाद्यते सः । १४८

परीवारः पुं. [परिव्रियतेऽनेनेति । परि+वृ+घञ्, उपसर्गस्य दीर्घः] परिकरः; खड्गकोशः; खड्गकोषः; जङ्गमः; 'धूमधूम्रो वसागन्धी ज्वालाबभ्रुशिरोरुहः । क्रव्याद्गणपरीवारश्चिताग्निरिव जङ्गमः' इति—रघौ (१५।१६) । परिच्छदः; 'परीवारः परिजने खड्गकोषे परिच्छदे'—इति कोषान्तरे । ३०६

परीवाहः पुं. [परितो वहत्यनेनेति । परि+वह्+'हलश्च' इति घञ् । 'उपसर्गस्य घञीति' दीर्घः] जलोच्छ्वासः; द्रवद्रव्यप्रवाहः; (अत्र जलशब्द उपलक्षणमात्रं ज्ञेयम्, द्रवद्रव्यस्य प्रवाहेऽप्यस्यार्थो बोद्धव्यः । 'रुधिरस्य परीवाहान् पूरयित्वा सरांसि च'—इति महाभारते (७।६९।१३) । राजयोग्यवस्तु । ६७७

परीवेशः पुं. [परितः विश्यते किरणैः यत्र । परि+विश् प्रवेशने+घञ्, 'उपसर्गस्येति' पाक्षिको दीर्घः] सूर्यचन्द्रादेरावरणमण्डलम् । ४७

परीवेषः पुं. [परि+विष्लृ व्याप्तौ, घञ् । पाक्षिको दीर्घः] उपसूर्यकं; मण्डलम् । ४७

परीष्टिः स्त्री. [परितः सेवया इष्यते आरोग्यं काम्यते । परि+इष्+'परेर्वा' इति पक्षे क्तिन्] परिचर्या; अन्वेषणा; प्राकाम्यम् । १२९

परीहासः पुं. [परि+हस्+घञ् । उपसर्गस्य दीर्घः] परीहसनं; द्रवः; केलिः; क्रीडा; लीला; नर्म; परिहासः; केलिमुखं; देवनम्; 'परीवादं न कुर्वीत परीहासं च पुत्रक !'—इति मार्कण्डेये (३४।८४) । ४३२

परुः पुं. [पिपर्तीति । पॄ पूर्तौ+बाहुलकाद् उ । पुंस्काण्डे रत्नकोषवचनात्पुंस्त्वम्] ग्रन्थिः; समुद्रः; स्वर्गलोकः; पर्वतः । १८९

परुः [स्] क्ली. [पॄ+'अर्तिपॄवपियजितनीति' उस्] ग्रन्थिः; 'काण्डात् काण्डात् प्ररोहन्ति परुषः (सः) परुषस्परि'—इति यजुषि (१३।२०) । १८९

परुषः त्रि. [पिपर्त्तीति, पॄ पूर्तौ+'पॄनहिकलिभ्य उषच्' इति उषच्] रूक्षः; 'अथ रात्र्यां व्यतीतायां राजा चण्डालतां गतः । नीलवस्त्रधरो नीलः परुषो ध्वस्तमूर्द्धजः' इति रामायणे (१।५८।१०)। निष्ठुरोक्तिः; मलिनः; 'भस्मपरुषेऽपि गिरिशे स्नेहमयी त्वमुचितेन सुभगासि'—इति आर्यासप्तशत्याम् (४१९) । 'भस्मपरुषेऽपि भस्ममलिनेऽपि'—इति तट्टीका । कर्बुरः; 'असितविचित्रनीलपरुषो जनघातकरः । खगमृगभैरवस्वररु-

तैश्च निशाद्यमुखे'—इति बृहत्संहिता (३।३९)। ७८३

परेतः त्रि. [परं लोकमितः] मृतः; 'अलक्तकाङ्कानि पदानि पादयोः, विकीर्णकेशासु परेतभूमिषु'—इति कुमारे (५।६८)। भूतान्तरे पुं.। ६२९

परेष्टुका स्त्री. [परैरिष्यते इति। इष्+बाहुलकात् तु, स्वार्थे कन्, स्त्रियां टाप्] बहुसूतिः; बहुप्रसूता गौः। २७२

परैधितः त्रि. [परैरेधितः संवर्द्धितः] औदासीन्येन परपुष्टः; परेण संवर्द्धितः; पराचितः; परिष्कन्दः; परजातः। कोकिले पुं.। ३५१

पर्जन्यः पुं. [पर्षति सिञ्चति वृष्टिं ददातीति। पृषु सेवने+'पर्जन्यः' इति निपातनात् षकारस्य जकारत्वे साधुः] इन्द्रः; 'अग्नी पर्जन्याववतं धियं मेऽस्मिन् हवे सुहवा सुष्टुतिं नः'—इति ऋग्वेदे (६।५२।१६)। शब्दायमानमेघः (८१८); मेघशब्दः; अगर्जन्नपि मेघः; 'यज्ञाद्भवति पर्जन्यः पर्जन्यादन्नसम्भवः'—इति भगवद्गीतायाम्। कश्यपपत्न्या मुनेः पुत्रविशेषः; स तु गन्धर्वविशेषः; 'तथा शालिशिरा राजन्! पर्जन्यश्च चतुर्दश। कलिः पञ्चदशस्त्वेषां नारदश्चैव षोडशः'—इति महाभारते (१।६५।५४)। विष्णुः [पर्जन्य इव सर्वकामप्रदानात्]; 'कुमुदः कुन्दरः कुन्दः पर्जन्यः पावनोऽनिलः'—इति महाभारते (१३।१४९।१००) 'पर्जन्यवदाध्यात्मिकादितापत्रयं शमयति सर्वान् कामानभिवर्षतीति पर्जन्यः'—इति शाङ्करभाष्ये। ५२

पर्णम् क्ली. [पिपर्तीति, पॄ+'धापॄवस्यज्यतिभ्यो नः' इति न। यद्वा पर्णयतीति। पर्ण हारित्ये+अच्] पत्रम्; 'स्वयं विशीर्णद्रुमपर्णवृत्तिता परा हि काष्ठा तपसस्तया पुनः। तदप्यपाकीर्णमतः प्रियंवदां वदन्त्यपर्णेति च तां पुराविदः'—इति कुमारे (५।२८)। ताम्बूलम्; अनिधाय मुखे पर्णं पूगं स्वादयते नरः। मतिभ्रंशो दरिद्रः स्यादन्ते न स्मरते हरिम्'—इति राजनिर्घण्टे। [पिपर्ति पालयति गगनपातादिति, पॄ+न] पक्षः; 'तदुत्सृष्टमभिप्रेक्ष्य तस्य पर्णमनुत्तमम्। हृष्टानि सर्वभूतानि नाम चक्रुर्गरुत्मतः। सुरूपं पत्रमालक्ष्य तस्य पर्णमनुत्तमम्'—इति महाभारते (१।३३।२४)। पुं. [पिपर्तीति, पॄ पालने+'धापॄवस्यज्यतिभ्यो नः' इति न] पलाशवृक्षः; 'अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता'—इति ऋग्वेदे (१०।९७।५)। १८५

पर्यङ्कः पुं. [परितोऽङ्कयते इति। परि+अकि लक्षणे+घञ्] शय्या; खट्वा; मञ्चः; मञ्चकः; पल्यङ्कः; पर्यस्तिका; परिकरः; अवसक्थिका; 'अथोपविष्टं राजानं पर्यङ्के ज्वलनप्रभे। उपप्लुतं यथा सोमं राहुणा रात्रिसंक्षये। उपगम्याब्रवीत् कर्णो दुर्योधनमिदं तदा'—इति महाभारते (३।२४६।८)। योगपट्टः (४१०); योगासनम्; 'पर्यङ्कबन्धस्थिरपूर्वकायमृज्वायतं सन्नमितोभयांसम्'—इति कुमारे (३।४५)। ३०७

पर्यनुयोगः पुं. [परितोऽनुयोगः पृच्छा। परि+अनु+युज्+भावे घञ्] उपालम्भः; जिज्ञासा; 'एतेनास्यापि पर्यनुयोगस्यानवकाशः'—इति दायभागः। १५४

पर्यन्तः पुं. [परिगतोऽन्तम्। प्रादिसमासः] अन्त्यसीमा; 'पर्यन्तो लभ्यते भूमेः समुद्रस्य गिरेरपि। न कथंचित् महीपस्य चित्तान्तः केनचित् क्वचित्'—इति पञ्चतन्त्रे (१।१४१)। समीपम्; 'पर्यन्तदेशं सरसेन देवी लिलेप सा लोहितचन्दनेन'—इति हरिवंशे (१२२।५३)। पार्श्वम्; 'पर्यन्तसञ्चारितचामरस्य कपोललोलोभयकाकपक्षात्। तस्याननादुच्चरितो विवादः चस्खाल वेलास्वपि नार्णवानाम्'—इति रघौ (१८।४३)। २५९

पर्यवस्थाता [ऋ] त्रि. [पर्यवतिष्ठते विपक्षस्थापनाय इति। परि+अव+स्था+तृच्] पर्यवस्थानकर्ता; विरोधी; द्वेषी; अरिः; 'अन्तकः पर्यवस्थाता जन्मिनः सन्ततापदः। इति त्याज्ये भवे भव्यो मुक्तावुत्तिष्ठते जनः'—इति किरातार्जुनीये (११।१३)। ४५६

पर्यस्तिका स्त्री. [परितः अस्यते क्षिप्यते शरीरमत्र। परि+अस् क्षेपणे+अधिकरणे क्तिन्, ततः स्वार्थे कन्] खट्वा। ४१०

पर्याणम् क्ली. [परितो याति गच्छत्यनेनेति। परि+या+ल्युट्। पृषोदरादित्वात् साधु] अश्वपल्ययनम्; 'आरोहणमन्यवाजिनां पर्याणादियुतस्य वाजिनः। उपवाह्यतुरङ्गमस्य वा कल्यस्यैव विपन्नशोभना'—इति बृहत्संहिता (९३।६)। ४४२

पर्याप्तम् क्ली. [परि+आप्+भावे क्त] उपसम्पन्नं; भृशं (७१९); यथेष्टं; तृप्तिः; शक्तिः; निवारणं; त्रि. प्राप्तः; शक्तिसम्पन्नः; 'पर्याप्तं त्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम्'—इति भगवद्गीता (१।१०)। 'पर्याप्तं समर्थं भाति'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। ३२६

पर्यायः पुं. [परि+इण् गतौ+'परावनुपात्यय इणः' इति घञ् । क्रमप्राप्तस्थानातिपातोऽनुपात्ययः] पर्ययणं; क्रमः; आनुपूर्वी; आवृत्; परिपाटी; अनुक्रमः; आनुपूर्व्यम्; आनुपूर्वम्; आनुपूर्वकं; परिपाटिः; 'पर्यायसेवामुत्सृज्य पुष्पसम्भारतत्पराः । उद्यानपालसामान्यमृतवस्तमुपासते'—इति कुमारे (२।३६) । प्रकारः; अवसरः; निर्माणं; द्रव्यधर्मः; क्रमेणैकार्थवाचकाः शब्दाः पर्यायाः–इति विजयरक्षितः । सम्पर्कविशेषः; येन सह यत्सम्पर्कः सम्बन्धस्तेन सह तत्पर्यायः । 'समानं कुलभावश्च दानादानन्तथैव च । तयोर्वंशसमानं हि पर्यायं च प्रचक्षते'—इति कुलदीपिका । अर्थालङ्कारविशेषः; 'क्वचिदेकमनेकस्मिन्ननेकञ्चैकगं क्रमात् । भवति क्रियते वा चेत् तदा पर्याय इष्यते '—इति साहित्यदर्पणे (१०।१०४) । ७३९

पर्याहारः पुं. [परितः धृत्वा आ समन्तात् ह्रियते नीयते । परि+आ+हृ+घञ्] शिरःस्कन्धादिवाह्यभरः; भारः । ७५८

पर्युदञ्चनम् क्ली. [पर्युदच्यते, परि परिमाणात्, उत् ऊर्ध्वमधिकमित्यर्थः, अच्यते संमान्यते इति । परि+उत्+अञ्च्+'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति ल्युट्] ऋणम्; उद्धारः । ५७२

पर्व [न्] क्ली. [पर्वतीति, पर्व् गतौ+बाहुलकात् कनिन् । यद्वा पिपर्तीति, पॄ+'स्नामदिपद्यर्तिपॄशकिभ्यो वनिप्' इति वनिप्] ग्रन्थिः; 'तथा वालखिल्या ऋषयोऽङ्गुष्ठपर्वमात्राः षष्टिसहस्राणि पुरतः सूर्यं सूक्तवाकाय नियुक्ताः संस्तुवन्ति'–इति भागवते (५।२१।१७) । प्रस्तावः; महः; लक्षणान्तरं; दर्शप्रतिपदोः सन्धिः; पूर्णिमाप्रतिपदोः सन्धिः; 'अकालजलदावली किरतु नाभ मुक्तावलीः, अपर्वणि विधुन्तुदस्तुदतु नाम शीतद्युतिम्'—इति साहित्यदर्पणे । विषुवत्प्रभृति; ग्रन्थविच्छेदः; 'आदिः सभावनविराटमथोद्यमश्च, भीष्मो गुरू रविजशल्यकसौप्तिकाश्च । स्त्रीपर्व शान्तिरनुशासनमश्वमेधव्यासाश्रमो मुषलयानदिवावरोहः'—इति महाभारते अष्ठादशपर्वाणि उक्तानि तट्टीकायाम् । क्षणः; भङ्गी; 'दिने दिने शैवलवन्त्यधस्तात् सोपानपर्वाणि विमुञ्चदम्भः'—इति रघुवंशे (१६।४६) । पञ्च पर्वाणि; 'चतुर्दश्यष्टमी चैव अमावस्याथ पूर्णिमा । पर्वाण्येतानि राजेन्द्र ! रविसंक्रान्तिरेव च । स्त्रीतैलमांससम्भोगी पर्वस्वेतेषु वै पुमान् । विण्मूत्रभोजनं नाम प्रयाति नरकं मृतः'—इति विष्णुपुराणे । १८९

पर्वतः पुं. [पर्वति पूरयतीति, पर्व् पूरणे+'भृमृदृशियजिपर्वीति' अतच् । यद्वा पर्वाणि भागाः सन्त्यत्र, 'पर्वमरुद्भ्याम् इति तप्] महीध्रः; शिखरी; क्ष्माभृत्; अहार्यः; धरः; अद्रिः; गोत्रः; गिरिः; ग्रावा; अचलः; शैलः; शिलोच्चयः; स्थावरः; सानुमान्; पृथुशेखरः; धरणीकीलकः; कुट्टारः; जीमूतः; धातुभृत्; भूधरः; स्थिरः; कुलीरः; कटकी; शृङ्गी; निर्झरी; अगः; नगः; दन्ती; धरणीध्रः; भूभृत्; क्षितिभृत्; अवनीधरः; कुधरः; धराधरः; प्रस्थवान्; वृक्षवान्; देवर्षिविशेषः; 'कश्यपान्नारदश्चैव पर्वतोऽरुन्धती तथा'—इत्यग्निपुराणम् । 'लोमशस्योपसंगृह्य पादौ द्वैपायनस्य च । नारदस्य च राजेन्द्र ! देवर्षेः पर्वतस्य च'—इति महाभारते (३।९३।२५) । मत्स्यविशेषः; वृक्षः; शाकभेदः; सन्न्यासिविशेषः; स तु शङ्कराचार्यशिष्यस्य मण्डनमिश्रस्य शिष्यविशेषः; 'वसेत् पर्वतमूलेषु प्रौढो यो ध्यानधारणात् । सारात्सारं विजानाति पर्वतः परिकीर्तितः'—इति प्राणतोषिण्यामवधूतप्रकरणे । १६५

पलम् क्ली. [पलतीति, पल्+अच्] आमिषं; पललं; मांसं; कर्षचतुष्टयं; तोलकचतुष्टयम्; अष्टतोलकं; साष्टरक्तिद्विमाषकतोलकत्रितयं; मुष्टिः; प्रकुञ्चः; चतुर्थिका; बिल्वं; षोडशिकाम्रम्; 'पलं तु लौकिकैर्मानैः साष्टरक्तिद्विमाषकम् । तोलकत्रितयं ज्ञेयं ज्योतिर्ज्ञैः स्मृति सम्मतम्'—इति तिथ्यादितत्त्वे । विघटिका; सा तु घटिकाषष्टिभागैकभागः षष्टिविपलश्च । पलदण्डयोः प्रमाणं तु—'दशगुर्वक्षरोच्चारकालः प्राणः षडात्मकैः । तैः पलं स्यात्तु तत्षष्ट्या दण्ड इत्यभिधीयते।' पुं. [पलतीति, पल्+अच्] पलालः; 'चण्डाश्च शौण्डाश्च महाशनाश्च, चौराश्च दुष्टाश्च पलाश्च वर्ज्याः'—इति महाभारते (३।२३३।१) । ६३१

पलगण्डः पुं. [पलं मांसं तद्वत् गण्डति भित्तौ मृदादिना लिम्पतीति । पल+गण्ड्+अच्] लेपकः । ५९१

पलङ्कषः पुं. [पलं कषतीति । कष् हिंसायाम्+अच् । 'तत्पुरुषे कृतीति' द्वितीयाया अलुक्] कणगुग्गुलुः; राक्षसः । ६२०

पललम् क्ली. [पलति पल्यतेऽनेन वा । पल् गतौ+'वृषादिभ्यश्चित्' इति कलच्] मांसम्; आमिषं; पलम्; 'मार्जारपललं विष्ठा हरितालं च भावितम् । छागमूत्रेण तल्लिप्तो मूषिको मूषिकान् हरेत्'—इति गारुडे १८१ अध्याये। पङ्कम्; 'दोषपङ्कनिमग्नं त्वामयशःपललावृतम् । सर्वथा मानुषो रामस्त्वामन्तमुपनेष्यति'—इति रामायणे (५।८७।२६) । तिलचूर्णम्; 'पललं तिलकल्कं स्यात्तिलचूर्णं च पिष्टकः । पललं मधुरं रुच्यं पित्तास्रबलपुष्टिदम्'—इति राजनिर्घण्टः । सैक्षवतिलचूर्णम्; 'पललं तु समाख्यातं सैक्षवं तिलपिष्टकम् । पललं मलकृद् वृष्यं वातघ्नं कफपित्तकृत् । बृंहणं गुरु वृष्यं च स्निग्धं मूत्रनिवर्तकम्'—इति वैद्यके । पुं. [पलतीति, यद्वा पलं मांसं लातीति । ला+क] राक्षसः । ६३१

पलाशम् क्ली. [पलं गतिं कम्पनमित्यर्थः, अश्नुते व्याप्नोतीति । पल+अश्+'कर्मण्यण्' इत्यण् । पलम् अश्नात्यत्रेति घञ् वा] पत्रम्; 'बृहच्छाल इवानूपे शाखापुष्पपलाशवान्'—इति महाभारते (३।३५।२५) । 'बालेन्दुवक्राण्यविकाशभावात् बभुः पलाशान्यतिलोहितानि । सद्यो वसन्तेव समागतानां नखक्षतानीव वनस्थलीनाम्'—इति कुमारे (३।२९) । (१९७) पुं. [पलाशानि पर्णानि सन्त्यस्य, 'अर्श आदिभ्योऽच्' इत्यच्] वृक्षविशेषः; ब्रह्मवृक्षः; स तु ब्रह्मणः स्वरूपः । 'अश्वत्थरूपो भगवान् विष्णुरेव न संशयः । रुद्ररूपो वटस्तद्वत् पलाशो ब्रह्मरूपधृक् । दर्शनस्पर्शसेवास्तु ते व पापहराः स्मृताः । दुःखापद्व्याधिदुष्टानां विनाशकारिणो ध्रुवम्'—इति पाद्मे । [पुले मांसे आशा यस्य] राक्षसः; हरितः; मगधदेशः; त्रि. निर्दयः । १८५

पलिक्नी स्त्री. [पलितमस्या अस्तीति । 'अर्श आदिभ्योऽच्' इत्यच्, 'असितपलितयोर्न' तथा 'छन्दसि क्नमेके' इत्युक्तेर्भाषायामपि तस्य क्न इत्यादेशो भवति । ततो नान्तत्वाद् ङीप्] बालगर्भिणी गौः; वृद्धा; पलिता । २७३

पलितम् क्ली. [पलि+भावे क्त । यद्वा फलनमिति, फल+'फलेरितजादेश्च पः' इति इतच्, फस्य पत्वम्] जरसा केशादौ शौक्ल्यं; केशपाकः; 'गृहस्थस्तु यदा पश्येद्वलीपलितमात्मनः । अपत्यस्यैव चापत्यं तदारण्यं समाश्रयेत्'--इति मनुः (६।२) । शैलजं; तापः; कर्दमः; [पल् गतौ+'लोष्टपलितौ' इति क्त प्रत्ययेन निपातनात् सिद्धम्] केशपाशः; पुं. [फलति वृद्धावस्थायां केशशौक्ल्यादिकं प्राप्नोतीति] वृद्धः । ५३२

पल्यङ्कः पुं. [परितोऽङ्कतेऽत्र इति । परि+अकि लक्षणे+घञ् । 'परेश्च घाङ्कयोः' इति रस्य ल] पर्यङ्कः; 'पल्यङ्कमग्र्यास्तरणं नानारत्नविभूषितम् । तमपीच्छति वैदेही प्रतिष्ठापयितुं त्वयि'—इति रामायणे (२।३२।९) । ३०७, ४१०

पल्ययनम् क्ली. [परितः अयति गच्छति अनेन । परि+अय् गतौ+करणे ल्युट्, रस्य लत्वम्] पर्याणं; 'घोडे की जीन' इति भाषा । ४४२

पल्लवः पुं.– क्ली. [पल्यते इति पल् । पल्+क्विप् । लूयते इति लवः । लू+'ऋदोरप्' इति अप् । ततः पल् चासौ लवश्चेति] नवपत्रस्तवकः; किसलयं; प्रवालं; नवपत्रं; वलं; किसलं; किशलं; किशलयं; विटपः; पत्रयौवनम्; 'अभिनयान् परिचेतुमिवोद्यता मलयमारुतकम्पितपल्लवा । अमदयत् सहकारलता मनः सकलिका कलिकामजितामपि,—इति रघौ (९।३३)। 'पर्वपत्रादिसङ्घाते शाखायाः पल्लवो मतः'—इति कोषान्तरम् । विस्तरः; वलं; शृङ्गारः; अलक्तरागः; वनं; वलयः; चापलः; देशविशेषः; तद्देशवासिषु पुं. भूम्नि । 'अपरान्ताश्च शूद्राश्च पल्लवाश्चर्म खण्डिकाः । गान्धारा गबलाश्चैव सिन्धुसौवीर मद्रकाः'—इति मार्कण्डेये (५७।३६) । १८५

पल्लवकः पुं. [पल्लवेन शृङ्गारेण कायतीति । पल्लव+कै+क] वेश्यापतिः; महामत्स्यविशेषः (६५९); [पल्लव इव कायतीति] मत्स्यविशेषः; [पल्लवैः किसलयैः कायतीति] अशोकवृक्षः । ३८२

पल्लवाङ्कुरः पुं. [पल्लवानां नूतनपत्राणाम् अङ्कुरः उद्गमः] प्रवालः; पल्लवाधारः; शाखा । १८४

पल्वलम् क्ली. – पुं. [पलति गच्छति पिबत्यस्मिन् वा । पल् गतौ, पा पाने वा+'सानसिवर्णसिपर्णसीति' निपातनाद् वलच्प्रत्ययेन सिद्धम्] अल्पसरः; लघुजलाशयः; 'पल्वलानि च सर्वाणि सर्वे चैव तृणोपलाः । स्थावरं जङ्गमं चैव निःशेषं कुरुते जगत्'—इति महाभारते (७।५१।९) । अल्पं सरः पल्वलं स्याद्यत्र चन्द्रक्षंगे रवौ । न तिष्ठति जलं किञ्चित्तत्रत्यं वारि पाल्वलम्'—इति भावप्रकाशः । ६७५

पवनः पुं. [पुनातीति, पू+'बहुलमन्यत्रापीति' युच्] वायुः; 'भूवायुरावह इह प्रवहस्तदूर्द्धः स्यादुद्वहस्तदनु संवहसंज्ञकश्च । अन्यः परोऽपि, सुवहः परिपूर्वकोऽस्माद् बाह्यः परावह इमे पवनाः प्रसिद्धाः'—इति सिद्धान्तशिरोमणौ । प्राणवायुः; 'अनेनैव विधानेन प्रयाति पवनो लयम् । ततो न जायते मृत्युर्जरारोगादिकं तथा'—इति हठयोगदीपिकायाम् । निष्पावः; उत्तममनुपुत्रविशेषः; 'तृतीय उत्तमो नाम प्रियव्रतसुतो मनुः । पवनः सृञ्जयो यज्ञहोत्राद्यास्तत्सुता नृप !'—इति भागवते (८।१।२३) । ७५

पवनाशनः पुं. [पवनो वायुरशनं भक्ष्यं यस्य] पवनाशः; सर्पः । ६४०

पवनाशनाशः पुं. [पवनाशस्य सर्पस्य नाशो यस्मात् । यद्वा पवनाशनं सर्पम् अश्नातीति । अश्+अण्] गरुडः; मयूरः; 'स्वयोनिभक्षध्वजसम्भवानां श्रुत्वा निनाद गिरिगह्वरेषु । तमोऽरिबिम्बप्रतिबिम्बधारी रुराव कान्ते ! पवनाशनाशः'—इति उत्तरचोरपञ्चाशिकायाम् । ३०

पवमानः पुं. [पवते शोधयतीति । पू पवने+'पूयजोः शानच्' इति शानच् 'आने मुक्' इति मुगागमः] वायुः; 'न खरो न च भूयसा मृदुः पवमानः पृथिवीरुहानिव । स पुरस्कृतमध्यमक्रमो नमयामास नृपाननुद्धरन्'—इति रघौ (८।९) । अग्नेः स्वाहायां जातः पुत्रः; 'यो सावग्निरभीमानी ब्रह्मणस्तनयोऽग्रजः । तस्मात् स्वाहासुतान् लेभे त्रीनुदारौजसो द्विज ! । पावकं पवमानं च शुचिञ्चापि जलाशिनम् । तेषां तु सन्ततावन्ये चत्वारिंशच्च पञ्च च'—इति मार्कण्डेये (५२।२७।२८) । निर्मथ्याग्निः; स च गार्हपत्याग्निः; 'अथ यः पवमानस्तु निर्मथ्योऽग्निः स उच्यते । स च वै गार्हपत्योऽग्निः प्रथमो ब्रह्मणः स्मृतः'—इति मात्स्ये ४८ अध्याये । ७५

पविः पुं. [पुनातीति । पूञ् पवने+'अच इः' इति इ] वज्रं; कुलिशम् । ५६

पवित्रः त्रि. [पू+इत्र] व्रतादिना शुद्धः; प्रयतः; पूतः; शुचिः; पवित्रितः; पुण्यः; पावनः; 'नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते'—इति भगवद्गीतायम् (४।३८) । [पूयतेऽनेन । पू+'पुवः संज्ञायाम्' इति इत्र] शुद्धद्रव्यं; कौशी हैमी वोर्मिका; पूतं; मेध्यं; शुद्धं; शुचि; पुण्यं; पूतिवत्; 'बल्यं पवित्रमायुष्यं सुमङ्गल्यं रसायनम्'—इति भावप्रकाशः [एतत्तु गव्यघृतगुणपरम्] । पुं. [पुनातीति । पू+कर्तरि इत्र] तिलवृक्षः; पुत्रजीववृक्षः; कार्तिकेयस्य नामान्तरम्; 'षष्ठीप्रियस्य धर्मात्मा पवित्रो मातृवत्सलः'—इति महाभारते (३।२३१।६) । (८०२) क्ली. [पूयतेऽनेनेति । पू+'पुवः संज्ञायाम्' इति इत्र] कुशम्; 'प्राक्कूलान् पर्युपासीनः पवित्रैश्चैव पावितः'—इति मनुः (२।७५) । वर्षणं; ताम्रं; पयः; घर्षणं; अर्घोपकरणं; यज्ञोपवीतं; घृतं; मधु; पार्वणश्राद्धादावर्घार्थं होमादावाज्यसंस्काराद्यर्थं च साग्रनिर्गर्भकुशान्तरवेष्टितप्रादेशमात्रकुशपत्रद्वयम्; 'अनन्तर्गर्भिणं साग्रं कौशं द्विदलमेव च । प्रादेशमात्रं विज्ञेयं पवित्रं यत्र कुत्रचित्'—इति श्राद्धतत्त्वम् । विष्णुः; 'प्रभूतस्त्रिककुद्धाम पवित्रं मङ्गलं परम्'—इति महाभारते (१२।१४९।२०) । महादेवः; 'पवित्रं च महांश्चैव नियमो नियमाश्रितः'—इति महाभारते (१२।१७।३५) । १३२

पशुः पुं. [अविशेषेण सर्वं पश्यतीति । दृशिर् प्रेक्षणे+'अजिदृशिकम्यमिपंसीति' कु, पश्यादेशश्च । यद्वा 'पश्यन्ति पार्श्वहस्ताभ्यां हिताहितम्'] जन्तुविशेषः; गवयप्रभृतयः; प्रमथः; देवः; प्राणिमात्रं; छगलः; यज्ञः; संसारिणामात्मा; यज्ञोदुम्बरः; साधकानां भावत्रयाणां प्रथमो भावः पशुभावः । अव्य. [दृश्यते इति । दृश्+भावे कु, पशि आदेशश्च] दर्शनम् । ४१७

पशुपतिः पुं. [पशूनां स्थावरजङ्गमानां प्राणिमात्रस्य वा पतिः स्वामी प्रभुः] शिवः; महादेवः; 'ब्रह्माद्याः स्थावरान्ताश्च पशवः परिकीर्तिताः । तेषां पतिर्महादेवः स्मृतः पशुपतिः श्रुतौ'—इति चिन्तामणिः । 'अहं च सर्वविद्यानां पतिराद्यः सनातनः । अहं वै पतिभावेन पशुमध्ये व्यवस्थितः । अतः पशुपतिर्नाम त्वं लोके ख्यातिमेष्यसि'—इति वराहपुराणे । 'नेपाले च पशुपतिः केदारे परमेश्वरः'—इति महालिङ्गेश्वरतन्त्रे । ११

पश्चात् अव्य. [अपरस्मिन् अपरस्मात् अपरो वा वसति आगतो रमणीयं वा । 'पश्चात्' इति अपरस्य पश्चभावः आतिश्च प्रत्ययोऽस्तातेर्विषये] चरमम्; 'प्रतापोऽग्रे ततः शब्दः परागस्तदनन्तरम् । ययौ पश्चाद्रथादीति चतुःस्कन्धेव सा चमूः'—इति रघौ (४।३०) ।

प्रतीची; अधिकारः। ७०७

पश्चात्तापः पुं. [अग्रतोऽकार्ये कृते पश्चात् चरमे तापः] चरमे शोकः; अनुशोचनम्; अनुतापः; विप्रतीसारः; 'उक्तेति परुषं वाक्यं पश्चातापसमन्वितः'—इति रामायणे (३।५१।३६)। ७१६

पश्चिमम् त्रि. [पश्चाद्भवम्। 'अग्रादिपश्चाड् डिमच्' इति डिमच्] पश्चाद्भवम्; 'तदात्मसम्भवं राज्ये मन्त्रिवृद्धाः समादधुः। स्मरन्तः पश्चिमामाज्ञां भर्तुः संग्राममयायिनः'—इति रघौ (१७।८)। स्त्री. [पश्चिम+टाप्] अस्ताचलावच्छिन्नदिक्; प्रतीची; वारुणी; प्रत्यक्; 'पश्चिमो मारुतस्तीक्ष्णः कफमेहविशोषणः। सद्यः प्राणहरो दुष्टः शोषकारी शरीरिणाम्' —इति राजनिर्घण्टः। ५२८

पश्यतोहरः त्रि. [पश्यन्तं जनमनादृत्य हरतीति। हृ हरणे+अच्। 'षष्ठी चानादरे' इति अनादरे षष्ठी। 'वाग्दिक्पश्यद्भ्यो युक्तिदण्डहरेषु' इति षष्ठ्या अलुक्] चौरः; स्वर्णकारः; 'यः पश्यतो हरेदर्थं स चौरः पश्यतोहरः'—इति हेमचन्द्रे (३।४६)। ३३९

पस्त्यम् क्ली. [अपस्त्यायन्ति सङ्घीभूय तिष्ठन्ति जीवा यत्र। अप+स्त्यै सङ्घातशब्दयोः+'आतश्चोपसर्गे' इति क, उपसर्गस्याकारलोपो निपातनात्] गृहम्; 'प्र पस्त्यमसुर हर्यतं गोराविष्कृधि हरये सूर्याय'—इति ऋग्वेदे (१०।९६।११)। २९१

पांशुः पुं. [पंशयति नाशयति आत्मानमिति। पशि नाशने+'अर्जिदृशिकमीति' कु, दीर्घश्च] धूलिः; पांसुः; 'कर्णश्रवेऽनिले रात्रौ दिवा पांशुसमूहने। एतौ वर्षास्वनध्यायावध्यायज्ञाः प्रचक्षते'—इति मनुः (४।१०२)। सस्यार्थचिरसञ्चितगोमयः; पर्पटः; कर्पूरविशेषः। ४४३

पांशुला स्त्री. [पांशवः दोषाः सन्त्यस्याः। पांशून् लाति वा, क। पांशुल+टाप्] कुलटा; असती; व्यभिचारिणी; भूमिः; केतकी; रजस्वला। ४९६

पांसुः पुं. [पंसयतीति, पसि नाशने+'अर्जिदृशिकमीति' कु, दीर्घश्च] धूलिः; 'अपरे पूरयन् कूपान् पांसुभिः श्वभ्रमायतम्। निम्नभागांस्तथैवाशु समांश्चक्रुः समन्ततः'—इति रामायणे (२।८०।९)। चिरसञ्चितगोमयः। ४४३

पाकः पुं. [पच्+भावे घञ्] पचनं; क्लेदनं; पक्वा; रन्धनंम्, 'भर्जनं तलनं स्वेदः पचनं क्वथनं तथा ताम्बूरं पुटपाकश्च पाकः सप्तविधो मतः'—इति पाकराजेश्वरः। शिशुः (५०२); परिणतिः; 'स्वकर्मफलपाकेन भर्तुस्तस्य महात्मनः। वियोजिताहं तद्धेतुरयमासीन् निशाचरः' —इति मार्कण्डेये (७०।३४)। जरसा केशस्य शौक्ल्यं; स्थाल्यादि; पेचकः; राष्ट्रादि; भङ्गः; भीतिः; दैत्यः; 'भो भो दानवदैतेया! द्विमूर्द्धन्! त्र्यक्ष! शम्बर!। शतबाहो! हयग्रीव! नमुचे! पाक! इल्वल!'—इति भागवते (७।२।४)। [पिबतीति, पा+'इणभीकापेति' कन्] पानकर्तरि त्रि.। १८०

पाकशासनः पुं. [शास्तीति। शास्+ल्यु, ततः पाकस्य तदाख्यया प्रसिद्धस्य असुरस्य शासनः शास्ता] इन्द्रः; 'पाकं जघान तीक्ष्णाग्रैर्मार्गणैः कङ्कवाससैः। तत्र नाम विभुर्लेभे शासनत्वाच्छरैर्दृढैः। पाकशासनतां शक्रः सर्वामरपतिर्विभुः'—इति वामनपुराणे। ५४

पाकस्थानम् क्ली. [पाकस्य स्थानम्] महानसं; रसवती। २९५

पाञ्चजन्यः पुं. [पञ्चजने दैत्यविशेषे भवः। 'पञ्चजनादुपसंख्यानम्'—इति ञ्य] विष्णुशङ्खः (पञ्चजनो नाम दैत्यः समुद्रे तिमिरूप आसीत् तदस्थिजत्वाद् वा); 'पाञ्चजन्यं हृषीकेशो देवद्त्तं धनञ्जयः। पौण्ड्रं दध्मौ महाशङ्खं भीमकर्मा वृकोदरः'—इति भगवद्गीतायाम् (१।१५)। [पञ्चभिः काश्यपवशिष्ठप्राणाङ्गिरसच्यवनैर्जनैर्निर्वृत्तः, इत्यर्थे ष्यञ्] अग्निः; हारीतमुनिवंशीयस्य दीर्घबुद्धेः पुत्रः। २६

पाञ्चालिका स्त्री. [पञ्चाली+स्वार्थे अण्, ततः कन्, ततष्टापि अत इत्वञ्च, पृषोदरादिः] पञ्चालिका; पुत्तली; पाञ्चालिका; पुत्रिका; शालभञ्जी। ४९३

पाञ्चालिका स्त्री. [पाञ्चाली+स्वार्थे कन् ततो ह्रस्वष्टाप् च] वस्त्रदन्तादिकृतपुत्तलिका; पुत्रिका; पञ्चालिका; शालभञ्जी; पाञ्चाली; शालभञ्जिका; पुत्तली; ···'वर्णैः शेषैः पुनर्द्वयोः। समस्तपञ्चषपदो बन्धः पाञ्चालिका मता'—इति साहित्यदर्पणे (९।५)। ४९३

पाटच्चरः पुं. [पाटयन् छिन्दन् चरतीति। चर+पचाद्यच्। पृषोदरादित्वात् साधुः] चौरः; 'मन्त्रिन्!

कुलिङ्गसाहसिकत्वं किलैतस्य पापपाटच्चरस्य'–इति प्रद्युम्नविजये ७ अङ्के। ३४०

पाटलः पुं. [पाटयतीति, पट्+णिच्, वृषादित्वात् कलच्] श्वेतरक्तवर्णः; तद्वर्णयुक्ते त्रि. । 'स पाटलायां गवि तस्थिवांसं धनुर्धरः केशरिणं ददर्श । अधित्यकायामिव धातुमत्यां लोध्रद्रुमं सानुमतः प्रफुल्लम्'–इति रघुवंशे (२।२९)। आशुधान्यम्; क्ली. [पाटलो वर्णोऽस्यास्तीति, पाटल+अर्श आदित्वादच्] पाटलीपुष्पं; सेवान्तिकाख्यपुष्पं; 'गुलाब का फूल' इति भाषा। 'पाटलाशोकवकुलैः कुन्दैः कुरुवकैरपि'—इति भागवते (४।६।१४)। ७३३

पाठीनः पुं. [पाठिं पृष्ठं नमयतीति। पाठि+नम्+णिच्+'अन्येभ्योऽपीति' ड, 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घः] मत्स्यविशेषः; सहस्रदंष्ट्रः; सहस्रदंष्ट्री; वोदालः; बदालकः; 'पाठीनः श्लेष्मलो वृष्यो निद्रालुः पिशिताशनः। दूषयेदम्लपित्तं तु कुष्ठरोगं करोत्यसौ'—इति सुश्रुते । पाठकः; गुग्गुलुद्रुमः । ६५८

पाणिः पुं. [पणायन्ते व्यवहरन्त्यनेनेति। पण्+'अशिपणायो रुडायलुकौ च' इति इण् आयप्रत्ययस्य लुक् च] भुजः; स च मणिबन्धयावद्ध्यङ्गुलिपर्यन्तभागः; पञ्चशाखः; शयः; समः; हस्तः; करः; कुलिः; भुजादलः; 'मृगनाभिसुगन्धां तां कृत्वा कान्तां मनोरमाम् । जग्राह दक्षिणे पाणौ मुनिर्मन्मथपीडितः'–-इति देवी भागवते (२।२।१९) । कुलिकवृक्षः; स्त्री. [पणायन्ते व्यवहरन्त्यस्यामिति] पण्यवीथी; हट्टः। ५११

पाणिग्रहणम् क्ली. [पाणेर्ग्रहणं यत्र] विवाहः; 'इति स्वसुर्भोजकुलप्रदीपः सम्पाद्य पाणिग्रहणं स राजा। महीपतीनां पृथगर्हणार्थं समादिदेशाधिकृतानधिश्रीः' —इति रघौ (७।२९)। ४९५

पाणिजः पुं. [पाणौ जातः इति। पाणि+जन्+'सप्तम्यां जनेर्डः' इति ड] नखः; करभूः। ५११

पाणिमुक्तम् क्ली. [पाणिभ्यां गृहीत्वा मुक्तं परित्यक्तम्] अस्त्रं; तच्चशक्तिचक्रपरिघादिरूपम्। 'यन्त्रमुक्ते पाणिमुक्ते विमुक्ते मुक्तधारिते । अस्त्राचार्यो निरुद्वेगः कुशलश्च विशिष्यते'–इति मात्स्ये (२०२।४०)। ४६३

पाणिमूलम् क्ली. [पाणेर्मूलम् पूर्वभागः] मणिबन्धः । ५३३

पाण्डरः पुं. [पण्डते मनोऽस्मिन्, पडि गतौ, बाहुलकाद् अर, दीर्घश्च] श्वेतवर्णः; [पाण्डरः शुक्लवर्णोऽस्त्यस्येति; अच्] मरुवकवृक्षः; पर्वतविशेषः; 'अञ्जनः कुक्कुटः कृष्णः; पाण्डरश्चाचलोत्तमः'—इति मार्कण्डेये (४४।१०)। ऐरावत कुलोत्पन्ननागविशेषः; 'पारावतः पारिजातः पाण्डरो हरिणः कृशः । विहङ्गः शरभो भेदः प्रमोदः संहतापनः। ऐरावतकुलादेते प्रविष्टा हव्यवाहनम्'—इति महाभारते (१।५७।११-१२)। पक्षिविशेषः; 'गृध्रः कङ्कः कपोतश्च उलूकः श्येन एव च। चिल्लश्च धर्मचिल्लश्च भासः पाण्डर एव च। गृहे यस्य पतन्त्येते गेहं तस्य विपद्यते'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। तद्वर्णविशिष्टे त्रि. । 'असिताम्बरसंवीतं पाण्डरं पाण्डरासनम्'—इति हरिवंशे (८।२।५०) । क्ली. [पाण्डरो वर्णोऽस्त्यस्येति, अच्] कन्दपुष्पं; गैरिकम्। ७३२

पाण्डुः पुं. [पडि गतौ+'मृगय्वादयश्च' इति कु प्रत्ययः निपातनात् धातोर्दीर्घश्च] शुक्लपीतमिश्रितवर्णः; हरिणः; पाण्डुरः; पाण्डरः; 'सितपीतसमायुक्तः पाण्डुवर्णः प्रकीर्तितः'—इति सुभूतिः। भेदोऽपि दृश्यते, यथा–'पाण्डुरस्तु रक्तपीतभागी प्रत्यूषचन्द्रवत् । पाण्डुस्तु पीतभागार्द्धः केतकीधूलिसन्निभः'—इति भरतः। तद्वति त्रि.। 'शरीर सादादसमग्रभूषणा मुखेन सालक्षत लोध्रपाण्डुना'—इति रघौ (३।२)। नृपतिविशेषः; स तु शन्तनुपुत्रविचित्रवीर्यस्य क्षेत्रे व्यासाज्जातः; नागभेदः; श्वेतहस्ती; सितवर्णः; रोगविशेषः; 'पाण्डुरोगाः स्मृताः पञ्च वातपित्तकफैस्त्रयः । चतुर्थः सन्निपातेन पञ्चमो भक्षणान्मृदः'—इति माधवकरः । स्त्री. [पडि+कु] माषपर्णी; पाण्डुवर्णस्त्री। ७३२

पाण्डुभूमः त्रि. [पाण्डुर्भूमिरत्र इति । 'कृष्णोदकपाण्डुसङ्ख्यापूर्वाया भूमेरजिष्यते' इत्युक्त्या अच् समासे] पाण्डुवर्णभूमियुक्तदेशः; 'पाण्डूदक् कृष्णतो भूमिः पाण्डूदक् कृष्णमृत्तिका'—इति हेमचन्द्रः। १६०

पाण्डुरः पुं. [पाण्डुरस्यास्तीति । पाण्डु+'नगपांशुपाण्डुभ्यश्च' इति र] श्वेतपीतमिश्रितवर्णः । तद्वति त्रि.। 'तत उच्चैःश्रवा नाम हयोऽभूच्चन्द्रपाण्डुरः । तस्मिन् बलिः स्पृहाञ्चक्रे नेन्द्र ईश्वरशिक्षया'—इति भागवते (८।८।३)। कामलारोगः; क्ली. (६०४) श्वित्ररोगः; कुष्ठरोगविशेषः। ७३२

पातकम् क्ली. [पातयति अधो गमयति दुष्क्रियाकारिणमिति । पत्+णिच्+ण्वुल्] नरकसाधनम्; अशुभं; दुष्कृतं; दुरितं; पापम्; एनः; पाप्मा; किल्विषं; कलुषं; किण्वं; कल्मषं; वृजिनं; तमः; अंहः; कल्कम्; अघं; पङ्कम्; 'ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुवङ्गनागमः । महान्ति पातकान्याहुः संसर्गश्चापि तैः सह' —इति मनुः (११।५५) । ६२७

पातालम् क्ली. [पतन्त्यस्मिन् दुष्क्रियावन्त इति । पत्+ 'पतिचण्डिभ्यामालञ्' इति आलञ् । पादस्य तले वर्तते इति, पृषोदरादित्वात् साधुरित्येके] भुवनविशेषः; अधोभुवनं; बलिसद्म; रसातलं; नागलोकः; अधः; उरगस्थानम्; 'अतलं नितलं चैव वितलं च गभस्तिमत् । तलं सुतलपाताले पातालानि तु सप्त वै'—इति शब्दरत्नावली । विवरं; वडवानलः; लग्नाच्चतुर्थस्थानम्; 'पातालं हिवुकं चैव सुहृदम्भश्चतुर्थकम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । पुं. [पतति जारणाद्यर्थं पारदादिकं यत्र । पत+आलञ्] औषधपाकार्थयन्त्रविशेषः । 'ऊर्द्धमापस्तले वह्निर्मध्ये तु रससङ्ग्रहः । पातालयन्त्रमेतद्धि शोधयेत् सूतकादिकम्'—इति वैद्यके । ६२३

पातालनिलयः पुं. [पाताले पातालं वा निलयो यस्य] दैत्यः; सर्पः । ५

पात्रम् क्ली. [पाति रक्षति क्रियामाधेयं वा । पिबन्त्यनेनेति वा । पा रक्षणे, पा पाने वा+'सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्' इति ष्ट्रन्] आधेयधारणवस्तु; अमत्रं; भाजनं; भाण्डं; कोशः; कोषः; पात्री; कोशी; कोषी; कोशिका; कोषिका; 'सकलगुणगणानामेकपात्रं पवित्रम् अखिलभुवनमातुर्नाटचवद्यद्विचित्रम्'-इति देवीभागवते (१।२।४०) । योग्यं; स्रुवादि; राजमन्त्री; तीरद्वयान्तरं; पर्णं; नाटचानुकर्ता; आढकपरिमाणम्; 'पात्रं तदेव विज्ञेयं चतुःप्रस्थमथाढकम्'—इति चरके । स्रुवादि (४१५); तीरद्वयान्तरम् (६६८); त्रि. नानागुणालङ्कृतो जनः; 'अपात्रः पात्रतां याति यत्र पात्रो न विद्यते ।' 'शुभे पात्रे ये गुणा गोप्रदाने तावान् दोषो ब्राह्मणस्वापहारे'--इति महाभारते (१३। ६९। २२) । ३२७

पाथम् क्ली.– जलं; पानीयम्; नीरम्; अम्बु । ६४८

पाथः [स्] क्ली. [पाति रक्षति जीवानिति । पा+'उदके थुट् च' इति असुन् थुट् च । पातेरेवोदके वाच्येऽसुन् तस्य थुडागमः] जलम्; 'खरसन्तापशमनी खनिः पीयूषपाथसाम्'—इति काशीखण्डे (२९।४९) । ६४८

पाथेयम् क्ली. [पथि साधुरिति, 'पथ्यतिथिवसतिस्वपतेर्ढञ्' इति ढञ्] पथि व्ययितव्यद्रव्यं; शम्बलं; सम्बलम्; 'लुण्ठिता तस्करैर्मार्गे वस्त्रमात्रा तथा कृता । पाथेयं च हृतं सर्वं बालपुत्रा निराश्रया'—इति देवीभागवते (३।२५।१२) । कन्याराशिः; 'क्रियताबुरिजितुमकुलीरलेयपाथेययूककौर्पाख्याः । तौक्षिक आकोकेरो हृद्रोगश्चान्त्यभंचेत्यम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । ३५८

पादः पुं. [पद्+करणे घञ्] मयूखः; किरणः; शैलप्रत्यन्तपर्वतः (१६७); वृक्षमूलं (१८३); (५११) [पद्यते गम्यतेऽनेन] पात्; पत्; अङ्घ्रिः; अंह्रिः; चरणः; मन्त्रश्लोकचतुर्थांशः; पादद्वारा पादाक्रमणादिनिषेधो यथा—'पादेन नाक्रमेत् पादमुच्छिष्टं नैव लङ्घयेत् । न संहताभ्यां पाणिभ्यां कण्डूयेदात्मनः शिरः' —इति कर्मलोचनम् । बुध्नः; तुरीयांशः; चतुर्थभागः; महाद्रिसमीपे क्षुद्रपर्वतः; 'उभयोर्विन्ध्यऋक्षयोः पादे नगयोस्तां महापुरीम्—इति हरिवंशे (९४।२७) । शिवः; 'न्यायनिर्वापणः पादः पण्डितो ह्यचलोपमः --इति महाभारते (१३।१७।१२४) । चिकित्सापादचतुष्टयम्, 'वैद्यो व्याध्युपसृष्टस्तु भेषजं परिचारकः । एते पादाश्चिकित्सायाः कर्मसाधनहेतवः'—चरके । ३९

पादकटकः पुं. [पादस्य कटक इवेति] नूपुरः; खशून्यहंसाकृतिचरणभूषणं; हंसकः । : ५६१

पादचारी [न्] पुं. [पादाभ्यां चरतीति । चर् गतौ+ णिनि] पदातिः; पद्भ्यां गमनशीले त्रि. । गिरिराट् पादचारीव पद्भ्यां निर्जरयन् महीम् । जग्रास स समासाद्य व्रजिनं सहवाहनम्'—भागवते (६।१२।२६)।४५०

पादपः पुं. [पादेन मूलेन पिबति रसानिति । पा+क] वृक्षः; 'यत्र विद्वज्जनो नास्ति श्लाघ्यस्तत्राल्पधीरपि । निरस्तपादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते'—इति हितोपदेशे (१।६३) । [पादौ पाति रक्षतीति । पा रक्षणे+क] पादपीठः । १७७

पादबन्धः पुं. [पादयोर्गोमहिष्यादीनां बन्धः यद् बन्धनम् । बन्धयत्यनेन, घञ्] गोमहिष्यादिबन्धनं; शृङ्खला; पादबन्धनद्रव्यम् । २२३

पादरक्षणम् क्ली. [पादयोः रक्षणं यस्मात्] पादुका; पादत्राणम् । ३११

पादवल्मीकः पुं. [पादे वल्मीक इव] रोगविशेषः; पाद-रोगभेदः; श्लीपदम् । ६०४

पादाग्रम् क्ली. [पादयोरग्रम्] चरणाग्रभागः; प्रपदम् । ५२९

पादातः पुं. [पादाभ्यामततीति । अत्+अच्] पादातिः; पादातिकः । 'पदातिपत्तिपादातपादातिकपदाजयः' —इत्यमरमाला । ४५०

पादातिः पुं. [पादाभ्यामततीति । अत्+इन्] पदातिः; पादातिकः । ४५०

पादातिकः पुं. [पादातिरेव, पादाति+स्वार्थे कन्] पदातिः; पादातिः । ४५०

पादावर्तः पुं. [पाद इव आवर्तते इति । पाद+आ+वृत्+अच्] अरघट्टकः; अरघट्टः । ६८५

पादाविकः पुं. [अव् रक्षणे+भावे घञ् । पादेव अवः रक्षणम् । तत्र पादावे, पादेन शरीरादिरक्षणे नियुक्तः । पादाव+'तत्र नियुक्तः' इति ठक्] पदातिः; पादा-तिकः; पादातिः; पादातः । ४५०

पादुका स्त्री. [पद्यते अनया, पद् गतौ+'णित्कशिप-पद्यर्तेः 'इत्यू; पादूः । पादूरेव, स्वार्थे कन् ततो ह्रस्वः] चर्मादिनिर्मितपादाच्छादनं; पादूः; उपानत्; पन्नद्धा; पादरक्षिका; प्राणिहिता; पन्नद्ध्री; पादरथी; कौषी । ३११

पादुकाकारः पुं. [पादुकां करोतीति । कृ+'कर्मण्यण्' इत्यण्] चर्मकारः; पादुकाकृत्; पादूकृत् । ५९६

पानम् क्ली. [पीयते खगादिभिर्यत्र । पा+अधिकरणे+ल्युट्] कुल्या; [पा पाने+भावे ल्युट्] पीतिः; द्रव-द्रव्यस्य गलाधः करणम्; 'पयः पानं भुजङ्गानां केवलं विषवर्द्धनम्'–इति हितोपदेशे । भाजनं; [पा रक्षणे+भावे ल्युट्] रक्षणं; [पीयते यदिति । कर्मणि ल्युट्] जलं; [पाति रक्षतीति । पा+ल्यु] रक्षाकर्तरि त्रि. । 'व्रतानि पानो अमृतस्य चारुण उभे नृचक्षा अनु पश्यते विशौ'—इति ऋग्वेदे (९।७०।४) । पायनम्; अस्त्र-शस्त्राणां तीक्ष्णाग्रतासम्पादनव्यापारभेदः । पुं. [पीयते यस्मादिति । पा+अपादाने ल्युट्] शौण्डिकः; निश्वासः । ६८५

पानगोष्ठी स्त्री. [पानस्य पानाय वा गोष्ठी] यत्र सम्भूय पीयते; मद्यपानचक्रम्; आपानं; पानगोष्ठिका । ३२८

पानीयम् क्ली. [पीयते यत् इति । पा+अनीयर्] जलं; पातव्ये रक्षणीये च त्रि. । पानार्हद्रव्यविशेषः; 'शरबत' इतिभाषा । ६४८

पानीयशाला स्त्री. [पानीयस्य जलस्य वितरणार्थं शाला गृहम्] जलावस्थानगृहं; प्रपा; पानीयशालिका । २९७

पान्थः त्रि. [पथि कुशलः, पन्थानं नित्यं गच्छतीति वा । 'पथो ण नित्यम्', 'पथः पन्थ च' इत्यनेन पन्थादेशे कृते ण] पथिकः; 'यथा निदाघसमये सूर्यांशुपरिपीडितः । पान्थो याति जल दृष्ट्वा त्वरितं तत्पिपासया'—इति हरिवंशे (४२।२) । अध्वनीनः; अध्वगः । ३५७

पापः त्रि. [पाति रक्षति अस्मादात्मानमिति । पा+'पानी-विषिभ्यः पः' इति प, तत अर्श आद्यच्] अधमः; निकृष्टः; 'पुण्यां योनिं पुण्यकृतो व्रजन्ति पापां योनिं पापकृतो व्रजन्ति । कीटाः पतङ्गाश्च भवन्ति पापा न मे विवक्षास्ति महानुभाव !'—इति महाभारते (१।९०।१९) । (६२७) अधर्मः; दुरदृष्टं; पङ्कं; पाप्मा; पापं; किल्विषं; कल्मषं; कलुषं; वृजिनम्; एनः; अघम्; अंहः; दुरितं; दुष्कृतं; पातकं; तूस्तं; कण्वं; शल्यं; पापकम्; 'अनुष्ठानं निषिद्धस्य त्यागो विहितकर्मणः । नृणां जनयतः पापं क्लेशशोकभयप्रदम्'—इति महा-निर्वाणतन्त्रे । 'प्राणाभिपातनं स्तैन्यं परदारमथापि च । त्रीणि पापानि कायेन सर्वतः परिवर्जयेत् ।' असत्प्रलापं पारुष्यं पैशुन्यमनृतं तथा । चत्वारि वाचा राजेन्द्र ! न जल्पेत न चिन्तयेत् । अनभिध्या परस्वेषु सर्वसत्त्वेषु सौहृदम् । कर्मणां फलमस्तीति त्रिविधं मनसा चरेत्' —इति शान्तिपर्वणि । अनिष्टं; वधः; 'तस्मान्न लक्ष्मणे रामः पापं किञ्चित् करिष्यति । रामस्तु भरते पापं कुर्यादिव न संशयः'—रामायणे (२।८।३२) । ३३७

पापर्द्धिः स्त्री. [पापानाम् ऋद्धिर्वृद्धिर्यत्र] मृगया; आखेटः; आखेटकः; 'अस्ति कस्मिंश्चिद्वनोद्देशे कश्चित् पुलिन्दः । स च पापर्द्धिं कर्तुं वनं प्रस्थितः'—इति पञ्चतन्त्रे (२।७८) । ४३५

पाप्मा [न्] पुं. [पा+'नामन्सीमन्निति' मनिन् पुगागमे निपातनात् साधुः,] पापम्; 'अनेन क्रमयोगेन परिव्रजति

यो द्विजः। स विधूयेह पाप्मानं परं ब्रह्माधिगच्छति'—इति मनुः (६।८५)। ६२७

पाम [न्] क्ली. [पा+मनिन्] विचर्चिका; 'सूक्ष्मा बह्वयः पीडकाः स्रावक्त्यः, पामेत्युक्ताः कण्डूमत्यः सदाहाः—' इति माधवकरः। ६०२

पामरः त्रि. [पाम पापादिदीरात्म्यमस्त्यस्येति। पामन्+'अश्मादिभ्यो रः'—इत्युक्त्या र। ततो नलोपे साधुः] नीचः; 'दूरात् पामरफूत्कृतैः श्रुतिपथप्राप्तैः प्रबुद्धस्त्वभूद्, धृष्टो निर्झरवारिभिः सहमनाः श्वभ्रे निमज्जन्निव'—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।३७८)। खलः; मूर्खः; दीनः; असहायः। ३४८

पामा [न्] स्त्री. [पामन्+'मनः' इति न ङीप्] कच्छूः; 'हरिद्रा हरितालं च दूर्वा गोमूत्रसैन्धवम्। अयं लेपो हन्ति दद्रुं पामानं वै गरं तथा।' 'माहिषं नवनीतं च सिन्दूरं च मरीचकम्। पामा विलेपिता नश्येत् बहुलापि वृषध्वज'—इति गारुडे। ६०२

पायसः पुं.— क्ली. [पयसा संस्कृतः, पयसो विकारः वा। तदर्थे अण्] परमान्नम्; 'अतप्ततण्डुलो धौतः परिभृष्टो घृतेन च। खण्डयुक्तेन दुग्धेन पाचितः पायसो भवेत्। पायसः कफकृद्बल्यो विष्टम्भी मधुरो गुरुः।' 'पितृनुद्दिश्य यो भक्त्या पायसं मधुसंयुतम्। गुडसर्पिस्तिलैः सार्धं गङ्गाम्भसि विनिः—क्षिपेत्। तृप्ता भवन्ति पितरस्तस्य वर्षशतं हरे!। यच्छन्ति विविधान् कामान् प्रतितुष्टाः पितामहाः'—इति स्कान्दे। ३२०

पायिकः पुं.— पदातिकः। ४५०

पायुः पुं. [पाति रक्षति शरीरं मलनिस्सारणेनेति। यद्वा पिबति वस्त्यौषधमनेनेति। पा+'कृवापाजीति' उण्, 'आतो युक् चिण्कृतोः' इति युक्] मलद्वारम्; अपानं; गुदं; च्युतिः; अधोमर्म; शकृद्द्वारं; त्रिवलीकं; वलिः; 'रजोंऽशैः पञ्चभिस्तेषां क्रमात् कर्मेन्द्रियाणि तु। वाक्पाणिपादपायूपस्थाभिधानानि जज्ञिरे'—इति पञ्चदशी (१।२१)। 'अवाग्गतिरपानश्च पायुरध्यात्ममुच्यते। अधिभूतं विसर्गश्च मित्रस्तत्राधिदैवतम्'—इति महाभारते। भरद्वाजपुत्रविशेषः; 'अश्वथः पायवेऽदात्'—इति ऋग्वेदे (६।४७।२४)। 'पायवे भरद्वाजपुत्रायैतत्संज्ञायास्मद्यात्रे चाश्वथोऽश्ववानेतत्संज्ञः प्रस्तोकोऽदात् दत्तवान्'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। पालके त्रि.। 'त्वं पायुर्दमे यस्तेऽविधत्'—इति ऋग्वेदे (२।१।७)। ५१३

पारम् क्ली. [पारयतीति, पार+पचाद्यच्] परतीरम्; नदीलङ्घनाद् गन्तव्यतीरम्; 'नादाब्धेस्तु परं पारं न जानाति सरस्वती। अद्यापि मज्जनभयात् तुम्बीं वहति वक्षसि'—इति सङ्गीतदर्पणे। पुं. [पूर्यतेऽनेनेति, पॄ+घञ्] पारदः; प्रान्तभागे पुं. क्ली.। ६६७

पारतन्त्र्यम् क्ली. [परतन्त्रस्य भावः। परतन्त्र+ष्यञ्] परतन्त्रता; पराधीनत्वम्; अन्यायत्तता; 'दोषाणां समवेतानां विकल्पेंऽशांशकल्पना। स्वातन्त्र्यपारतन्त्र्याभ्यां व्याधेः प्राधान्यमादिशेत्'—इति माधवकरः। ८५१

पारदः पुं. [जरामरणसङ्कटादिभ्यः पारं ददातीति। पार+दा+क] धातुविशेषः; रसराजः; रसनाथः; महारसः; रसः; महातेजः; रसलेहः; रसोत्तमः; सूतराट्; चपलः; जैत्रः; शिवबीजं; शिवः; अमृतं; रसेन्द्रः; लोकेशः; दुर्द्धरः; प्रभुः; रुद्रजः; हरतेजः; रसधातुः; अचिन्त्यजः; खेचरः; अमरः; देहदः; मृत्युनाशकः; सूतः; स्कन्दः; स्कन्दांशकः; देवः; दिव्यरसः; रसायनश्रेष्ठः; यशोदः; सूतकः; सिद्धधातुः; पारतः; हरबीजं; रजस्वलः; शिववीर्यं; शिवाह्वयः; 'पारा' इति भाषा। 'पारदः सकलरोगनाशकः षड्रसो निखिलयोगवाहकः। पञ्चभूतमय एष कीर्तितो देहलोहवरसिद्धिकारकः। मूर्च्छितो हरते व्याधीन् बद्धः खेचरसिद्धिदः। सर्वसिद्धिकरो लीनो निरुत्थो देहसिद्धिदः। विविधव्याधिभयोदयमरणजरासङ्कटेऽपि मर्त्येभ्यः। पारं ददाति यस्मात्तस्मादयं पारदः कथितः'—इति राजनिर्घण्टः। सगरराजकृतमुक्तकेशम्लेच्छजातिविशेषः; 'कैराता दरदा दर्वाः शूरा वैयामकास्तथा। औदुम्बरा दुर्विभागाः पारदाः सह बाह्लिकैः'—इति महाभारते (२।५१।१३)। ८६१

पारम्पर्यम् क्ली. [परम्पराया आगतम्। 'तत आगतः' इत्यण्। चतुर्वर्णादित्वात् ष्यञ्। परम्परा+स्वार्थे ष्यञ् वा] आम्नायः; कुलक्रमः; 'यस्मिन्देशे य आचारः पारम्पर्यक्रमागतः। तत्र तं नावमन्येत धर्मस्तत्रैव तादृशः'—इति विवादभङ्गार्णवः। ४०२

पारशवः पुं. [परशुरेव, स्वार्थे अण्] शस्त्रं, तत्तु लौहं; शूद्रायां विप्रतनयः, स तु निषादजातिः; 'ब्राह्मणाद्वैश्यकन्यायामम्बष्ठो नाम जायते। निषादः शूद्रकन्यायां

यः पारशव उच्यते । स पारयन्नेव शवस्तस्मात् पारशवः स्मृतः । स जीवन्नेव शवतुल्यः'—इति मनुकुल्लकभट्टौ । १७१

पारशीकः पुं. [पृषोदरादित्वात् सकारस्य शकारः] पारसीकः घोटकः । ४३९

पारसीकः पुं. [पारसीके देशे भवः । पारसीक+'कोपधाच्च' इत्यण्] पारसीकदेशोद्भवघोटकः; वनायुजः; परादनः; आवट्टजः; 'पारसीकास्ताजिकाभाः कोङ्कणाः केचिदुन्नताः'—इति अश्ववैद्यके (६।८) । देशविशेषः; पारसिकः; तद्देशोद्भवे त्रि. । 'पारसीकांस्ततो जेतुं प्रतस्थे स्थलवर्त्मना'—इति रघौ (४।६०) । ४३९

पारायणम् क्ली. [पारं समाप्तिम् अयते गच्छति प्राप्नोति] साकल्यवचनम् [पारमयन्ते समाप्ति प्राप्नुवन्ति येनेति. अय्+ल्युट् करणे] पुराणपाठः; 'वरयेद् ब्राह्मणं शान्तं पारायणकृते तदा'—इति देवीभागवते (३।२६।१७) । ४०१

पारावारः पुं. [पारावारं तटद्वयं, पारम् अवारं च वा अस्त्यस्येति अच्] समुद्रः; 'यदल्पं कीलालं कलयितुमशक्तः स तु नरः, कथं पारावाराकलनचतुरः स्यादृतमतिः'—इति देवीभागवते (१।५।५९) । क्ली. [पारं नद्यादिपरपारम् आवृणोतीति । आ+वृ+'कर्मण्यण्' इत्यण्] तटद्वयम् । ६५२

पाराशरी [न्] पुं. [पाराशर्येण (पराशरपुत्रव्यासेन) प्रोक्तं भिक्षुसूत्रमधीते इति । पाराशर्य+'पाराशर्यशिलालिभ्यां भिक्षुनटसूत्रयोः' इति णिनि] मस्करी; चतुर्थाश्रमी; [पराशरेण प्रोक्तं भिक्षुसूत्रम् इत्यर्थे अणि पाराशरं, तद्विद्यतेऽस्याध्ययनायेति] ४०९

पाराशर्यः पुं. [पराशरस्यापत्यम् । पराशर+'गर्गादिभ्यो यञ्' इति यञ्] व्यासः; 'पाराशर्य ! महाभाग ! यत्त्वं पृच्छसि मामिह'—इति देवीभागवते (१।४।३२) । ४१३

पारिजातकः पुं. [पारमस्यास्तीति पारी समुद्रस्तस्मात् जातः । समुद्रमन्थनकाले तद्गर्भजातत्वात् तथात्वम् । पारिजात+स्वार्थे कन् । यद्वा पारिणोऽद्रेर्जातः पारिजातः, स्वार्थे क । 'पारे जातो विष्णुपद्याः पारिजातेति शब्दितः ।' पारि पारं प्राप्तं जातं जन्म यस्य] देवतरुः; मन्दारः; पारिभद्रवृक्षः; सुरतरुः; 'पारिभद्रे तु मन्दारमन्दारः पारिजातकः'—इति हेमचन्द्रः । १३५

पारिपन्थिकः पुं. [परिपन्थं पन्थानं वर्जयित्वा व्याप्य वा तिष्ठति, परिपन्थं हन्तीति वा ।'परिपन्थञ्च तिष्ठति' —इति ठक्] चौरः; चोरः; तस्करः । ३३८

पारिप्लवम् त्रि. [परि+प्लु+अच् । ततः प्रज्ञाद्यण्] चञ्चलम् । 'तयोपचाराञ्जलिखिन्नहस्तया ननन्द पारिप्लवनेत्रया नृपः'—इति रघौ (३।११) । व्याकुलः; क्ली. तीर्थविशेषः; 'ततः पारिप्लवं गच्छेतीर्थं त्रैलोक्यविश्रुतम् । अग्निष्टोमातिरात्राभ्यां फलं प्राप्नोति भारत!' —इति महाभारते (३।८३।१२) । पुं. जलपक्षी; 'पारिप्लवशतैर्जुष्टा बर्हिक्रौञ्चनिनादिता । रमणीया नदी सौम्या मुनिसङ्घनिषेविता'—इति रामायणे (४।२७।२३) । पञ्चममन्वन्तरीयप्रकृतिविशेषः; 'देवाश्चाभूतरजसस्तथा प्रकृतयोऽपरे । पारिप्लवश्च रैभ्यश्च मनोरन्तरमुच्यते'—इति हरिवंशे (७।२७) । ६९५

पारिभद्रकः पुं. [परितो भद्रमस्मात् परिभद्रस्ततः प्रज्ञाद्यण्, पारिभद्रः । पारिभद्र एव+स्वार्थे कन्] वृक्षविशेषः; निम्बतरुः; मन्दारः; पारिजातकः; रक्तकुसुमः; कृमिघ्नः; बहुपुष्पः; रक्तकेसरः; देवदारुवृक्षः; 'पलाशैस्तिलकैश्चूतैश्चम्पकैः पारिभद्रकैः'—इति महाभारते (१।१२५।३) । निम्बवृक्षः; कुष्ठौषधे क्ली. । २००

पारियानिकः पुं. [परियानं प्रयोजनमस्य । परियान+ठञ्] अध्वरथः; परियातिकः । ४४५

पारिरक्षकः पुं. [परिरक्षति आत्मानमिति । परि+रक्ष्+ण्वुल्; ततः प्रज्ञाद्यण्] मस्करी; तापसः । ४०९

पारिरक्षिकः पुं. [परिरक्षया चरति, ठक्] पारिरक्षकः मस्करी, तापसः । ४०९

पार्थिवः पुं. [पृथिव्या ईश्वरः । पृथिवी+'तस्येश्वरः' इति अण्] राजा; 'तेषां तु समवेतानां मान्यौ स्नातकपार्थिवौ । राजस्नातकयोश्चैव स्नातको नृपमानभाक्' —इति मनुः (२।१३९) । वत्सरविशेषः; 'बहु शस्यानि जायन्ते सर्वदेशे सुलोचने । सौराष्ट्रलाटदेशे च पार्थिवे नात्र संशयः'—इति चिन्तामणौ । [पृथिव्या अयम् इत्यण्] शरावः; [पृथिव्या विकार इति, 'सर्वभूमिपृथिवीभ्यामणञौ' इत्यञ्] पृथिवीविकृतौ त्रि· । 'पार्थिवाद्दारुणो धूमस्तस्मादग्निस्त्रीयीमयः'—इति भागवते (१।२।२४) । [पृथिव्या निमित्तं संयोग उत्पातो वा]

पृथिवीसम्बन्धिनि त्रि. । 'मधुमत् पार्थिवं रजः' । ४२१

पार्वती स्त्री. [पर्वतो हिमाचलस्तस्य तदधिष्ठातृदेवस्येति भावः, अपत्यमिति । अण्+ङीप्] दुर्गा; उमा; गौरी; शिवा; भवानी; रुद्राणी; 'तिथिभेदे कल्पभेदे पर्वभेदप्रभेदतः । ख्याती तेषु च विख्याता पार्वती तेन कीर्तिता ।' 'महोत्सवविशेषश्च पर्वस्विति प्रकीर्तितम् । तस्याधिदेवी या सा च पार्वती परिकीर्तिता ।' 'पर्वतस्य सुता देवी साविर्भूता च पर्वते । पर्वताधिष्ठातृदेवी पार्वती तेन कीर्तिता'—इति प्रकृतिखण्डे दुर्गोपाख्याने ५४ अध्यायः । शल्लकी; गोपालपुत्रिका; द्रौपदी; जीवनी; सौराष्ट्रमृत्तिका; क्षुद्रपाषाणभेदा; धातकी; सैंहली । १५

पार्श्वः त्रि. [स्पृश्+श्वण् धातोः पृ आदेशश्च] समीपं; चक्रोपान्तं; [पर्शूनां समूहः, अण्] पर्शुगणः; पार्श्वास्थिसमूहः; अनृजुरुपायः । क्ली.–पुं. [स्पृश्यते इति, स्पृश्+'स्पृशेःश्वणशुनौ पृच' इति श्वण्, पृ आदेशश्च] कक्षाधोभागः । 'तिर्यक् प्रणिहिते नेत्रे तथा पार्श्वावपीडिते'—इति सुश्रुते । 'न मे दूरे किञ्चित् क्षणमपि न पार्श्वे रथजवात्'—इति शकुन्तलायाम् १ अङ्के । पुं. जिनः; 'श्रीलश्रीपार्श्वतीर्थेशो विश्वसेननृपालये । ब्रह्मीगर्भे जगन्नाथोऽवतरिष्यति मुक्तये'—इति पार्श्वनाथचरित्रे (१०।७१) । 'विश्वसेनपतेर्ब्रह्मायाः स गर्भेऽवतरिष्यति । श्रीपार्श्वनाथ एवाद्यतीर्थकर्ता जगद्गुरुः' —इति पार्श्वनाथचरित्रे (११।३९) । ६९३

पार्ष्णिः पुं. – स्त्री. [पृष्यते भूम्यादिकमनेनेति । पृष्+ 'घृणिपृश्निपार्ष्णिचूर्णिभूर्णि' इति निप्रत्ययेन निपातनात् साधुः] सैन्यपृष्ठम्; 'उशना तस्य जग्राह पार्ष्णिमाङ्गिरसस्तदा'—इति हरिवंशे (२५।३२) । पृष्ठं; जिगीषा; 'सैन्यपृष्ठे पुमान् पार्ष्णिः पश्चात्पदजिगीषयो'—इतिरत्नकोशः । गुल्फस्याधोभागः; पादग्रन्थ्यधरः; स्त्री. उन्मदस्त्री; कुन्ती । ८२७

पालाशः पुं. [पलाशस्य वर्ण इव वर्णोऽस्त्यत्रेति+अण्] हरिद्वर्णः; 'पालाशताम्रासितकर्बुराणाम्'—इति बृहत्संहितायाम् । तद्वर्णविशिष्टे पलाशवृक्षसम्बन्धिनि त्रि. । 'ब्राह्मणो बैल्वपालाशौ क्षत्रियो वटखादिरौ'—इति मनुः (२।४५) । ७३४

पालिः स्त्री. [पल्यते पाल्यते इति । पल् पालने+'बाहुलकात् शलतिपलतिभ्याञ्च' इति इण्] सेतुः; कर्णलताग्रम्; 'यस्य पालिद्वयमपि कर्णस्य न भवेदिह । कर्णपीठं समे मध्ये तस्य विद्धं विवर्द्धयेत्'—इति सुश्रुते । अश्रिः; पङ्क्तिः; 'विपुलपुलकपालिः स्फीतशीत्कारमन्तर्जनितजडिमकाकुव्याकुलं व्याहरन्ती'—इति गीतगोविन्दे (६।१०) । अङ्कप्रभेदः; छात्रादिदेयं; यूका; जातश्मश्रुस्त्री; प्रान्तः; 'भ्रूपल्लवं धनुरपाङ्गतरङ्गितानि बाणा गुणः श्रवणपालिरिति स्मरेण । तस्यामनङ्गजयजङ्गमदेवतायाम् अस्त्राणि निर्जितजगन्ति किमर्पितानि'—इति गीतगोविन्दे (३।१३) । कल्पितभोजनं; प्रशंसा; उत्सङ्गः; प्रस्थः । ६७६

पाली स्त्री. [पालि+कृदिकारादिति वा ङीष्] सेतुः; यूका; सश्मश्रुयोषित्; श्रेणी; स्थाली; भाषाविशेषः । ६७६

पावकः पुं. [पुनातीति, पू पवने+ण्वुल्] अग्निः; 'अपावनानि सर्वाणि वह्निसंसर्गतः क्वचित् । पावनानि भवन्त्येव तस्मात् स पावकः स्मृतः'—इति काशीखण्डे ९ अध्याये । वैद्युताग्निः; 'पावकः पवमानश्च शुचिरग्निश्च ते त्रयः । निर्मथ्यः पवमानः स्याद्वैद्युतः पावकः स्मृतः'—इति कौर्मे १२ अध्याये । सदाचारः; वह्निमन्थः; 'तेजोमन्थो हविर्मन्थो ज्योतिष्को पावकोऽरणिः । वह्निमन्थोऽग्निमन्थश्च मथनो गणिकारिका'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । चित्रकः; भल्लातकः; विडङ्गः; शोषयितृनरः; रक्तचित्रकः; कुसुम्भः; पवित्रकारके त्रि. । 'मिहः पावकाः प्रतता अभूवन्'—इति ऋग्वेदे (३।३१।२०) । ६२

पावनः त्रि. [पावयतीति, पू+णिच्+ल्यु] पवित्रः; रघौ (१९।५३) । पावयितरि पुं. । व्यासः; पावकः; 'पावनः सभ्योऽग्निर्यः शीतापनोदनाद्यर्थं बहुषु देशेष्वपि विधीयते'—इति ३।१८५ मनुश्लोकटीकायां कुल्लूकभट्टः । सिह्लकः; पीतभृङ्गराजः; विष्णुः; 'भूतभव्यभवन्नाथः पवनः पावनोऽनलः'—इति महाभारते (१३।१४९। ४५) । 'पावयतीति पावनः, भीषास्माद्वातः पवते, इति श्रुतेः—इति शङ्करभाष्यम् । सिद्धः; क्ली. [पावयत्यनेनेति, पू+णिच्+ल्युट्] जलं; कृच्छ्रं; गोमयं; रुद्राक्षं; कुष्ठं; चित्रकम्; अध्यासः; प्रायश्चित्तं; शुद्धिः; 'सा चेत् पुनः प्रदुष्येत्तु सदृशेनोपयन्त्रिता । कृच्छ्रं चान्द्रायणं चैव तदस्याः पावनं स्मृतम्'—इति

मनुः (११।१७७)। १३२

पाशः पुं. [पश्यते वध्यते ऽनेनेति । पश्+घञ्] कचान्ते समूहार्थः; 'श्लथशिरसिजपाशपातभारादिव नितरां नतिमद्भिरंसभागैः'– इति माघे (७।६२)। पक्ष्यादिबन्धनरज्ज्वादि (५९७); 'शकुनीनामिहार्थाय पाशं भूमावयोजयत् । कश्चिच्छाकुनिकस्तात! पूर्वेषामिति शुश्रुम'—इति महाभारते (५।६४।१)। कर्णान्ते शोभनार्थः; छात्राद्यन्ते निन्दार्थः; योगविशेषः; 'यदा राशिपञ्चके सर्वे ग्रहा भवन्ति तदा पाशाख्ययोगो भवति' — इति ज्योतिषे। पारिभाषिकपाशः; 'घृणा शङ्का भयं लज्जा जुगुप्सा चेति पञ्चमी । कुलं शीलं तथा जातिरष्टौ पाशाः प्रकीर्तिताः'—इति कुलार्णवे १ उल्लासे। स्वप्नेऽस्य दर्शनफलम्—'कार्पासभस्मास्थिकपालशूलं चक्रं च पाशं त्वथवा प्रपश्येत् । तस्यापदो रोगधनक्षयं वा रोगी मृतिं वा तनुतेऽतिकष्टम्'—इति हारीते। शस्त्रभेदः; 'पाशः सुसूक्ष्मावयवो लौहधातुस्त्रिकोणवान् । प्रादेशपरिधिः सीसमूलिकाभरणान्वितः' —इति वैशम्पायनधनुर्वेदोक्तपाशलक्षणम्। ५३१

पाशपाणिः पुं. [पाशः पाणौ यस्य] वरुणः । ७४

पाषाणः पुं. [पषति पीडयत्यनेनेति । पष् पीडने+बाहुलकात् आनच् 'पषेर्णिच्च' इति णित्] प्रस्तरः; ग्रावः; उपलः; अश्मा; शिला; दृषत्; दृशत्; पारावुकः; पारटीटः; मृन्मरुः; काचकः; 'गतेऽथ नारदे कंसः समाहूयाथ बालकम् । पाषाणे पोथयामास सुखं प्राप च मन्दधीः'—इति देवीभागवते (४।२१।५४)। पाषाणादिनिर्मितत्वाद् देवताप्रतिमादि; 'पूजा विना प्रतिष्ठां नास्ति न मन्त्रं विना प्रतिष्ठा च । तदुभयविप्रतिपन्नः पश्यतु गीर्वाणपाषाणम्'—इति आर्यासप्तशत्याम्। १६८

पाषाणसन्धिः पुं. [पाषाणस्य सन्धिः] गुहा; कन्दरा; कन्दरी। १६७

पिकः पुं. [अपिकायति शबदायते इति । अपि+कै+'आतश्चोपसर्गे'इति क । अपेरकारलोपः] कोकिलः; 'पिक ! विधुस्तव हन्ति समं तमः, त्वमपि चन्द्रविरोधिकुहूरवः। इति तयोरनिशं हि विरोधिता, कथमहो समता मम तापने'—इत्युद्भटः । २४३

पिङ्गः पुं. [पिजि वर्णे+अच् कुत्वं च] पिङ्गलवर्णः; तद्वति त्रि.। 'पद्मपत्राननः पिङ्गस्तेजसा प्रज्वलन्निव' —इति महाभारते (१।१२३।३२)। मूषकः। ७६३

पिङ्गलः पुं. [पिङ्गो वर्णोऽस्यास्तीति । पिङ्ग+'सिध्मादिभ्यश्च' इति लच्] नीलपीतमिश्रितवर्णः; कडारः; कपिलः; पिङ्गः; पिशङ्गः; कद्रुः; तद्वति त्रि.। नागभेदः; 'निष्ठानको हेमगुहो नहुषः पिङ्गलस्तथा' —इति महाभारते (१।३५।९)। रुद्रः; चण्डांशुपारिपार्श्विकः; निधिभेदः; कपिः; अग्निः; मुनिविशेषः; 'ब्रह्माभवत् शार्ङ्गरवो अध्वर्युश्चापि पिङ्गलः' —इति महाभारते (१।५३।६)। नकुलः । स्थावरविषविशेषः; क्षुद्रोलूकः; यक्षविशेषः; 'पिङ्गलो नाम यक्षेन्द्रो लोकस्यानन्ददायकः'—इति महाभारते (३। २३०।५१)। पर्वतविशेषः; प्रभवादिषष्टिवर्षान्तर्गतैकपञ्चाशत्तमवर्षः,पिङ्गलाचार्यकृतच्छन्दोग्रन्थविशेषः। ७३५, ७३६

पिचण्डः पुं. [अपिचण्डयतेऽनेनेति । अपि+चडि कोपे+घञ्, अपेरल्लोपः] उदरं; पशोरवयवविशेषः; पिचिण्डः। ५१५

पिचण्डिलः त्रि. [अतिशयितं पिचण्डमुदरमस्य । पिचण्ड+तुन्दादित्वात् इलच्] तुन्दिलः; 'स्वाहाकारैर्वषट्कारैः सुरा जाताः पिचण्डिलाः । रचिता गिरयस्तेन सदन्नानां पदे पदे'—इति काशीखण्डे (८७।१२२)। ६०८

पिचव्यः पुं. [पिचवे तूलाय साधुः। पिचु+यत्] कार्पासः। २०२

पिचिण्डः पुं.— उदरं; पशोरवयवविशेषः । ५१५

पिचिण्डिलः पुं. [अतिशयितः पिचिण्डः उदरमस्य । पिचिण्ड+तुन्दादित्वात् इलच्] बृहदुदरयुक्तः; पिचण्डिलः; बृहत्कुक्षिः; तुन्दी; तुन्दिकः; तुन्दिलः; उदरी; उदरिलः; 'पिचिण्डिलैः स्थूलवक्त्रैर्मेघगम्भीरनिस्वनैः' —इति काशीखण्डे। ६०८

पिचुः पुं. [पेचतीति । पिच् मर्दने+मृगय्वादित्वात् कु] कार्पासतूलः; 'अर्शो वीक्ष्य शलाकयोत्पीड्य पिचुवस्त्रयोरन्यतरेण प्रमृज्य क्षारं पातयेत्'—इति सुश्रुते (४।६)। कुष्ठभेदः; कर्षः; असुरविशषः; भैरवः; सस्यभेदः; चिकित्सोपयोगिपञ्चकर्मान्तर्गतक्रियाविशेषः; 'कामिन्यां पूतियोन्यां च कर्तव्यः स्वेदनो विधिः। क्रमः कार्यस्ततः स्नेहपिचुभिस्तर्पणं भवेत् । शल्लकीजिङ्गिनीजम्बुध-

वल्वक्पञ्चवल्कलैः । कषायैः साधितैः स्नेहः पिचुः स्याद्विप्लुतापहः'—इति वैद्यकचक्रपाणिसंग्रहे । २०२

पिचुमन्दः पुं. [पिचुं कुष्ठविशेषं मन्दयति नाशयतीति । मन्द्+अण्] निम्बवृक्षः; 'पश्यानुरूपमिन्दिरेण माकन्द शेखरो मुखरः । अपि च पिचुमन्दमुकुले मौकुलिकुलमाकुलं मिलति'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३४९)। १९६

पिचुमर्दः पुं. [पिचुं कुष्ठविशेषं मर्दयति मृद्नातीति वा। मृद्+अण्] निम्बवृक्षः; 'असतामुपकाराय दुर्जनानां विभूतयः । पिचुमर्दः फलाढ्योऽपि काकैरेवोपभुज्यते' —इति देवीभागवते (३।१०।१२) । 'कैटर्यः पिचुमर्दश्च निम्बोऽरिष्टो वरत्वचा। दद्रुघ्नो हिङ्गुनिर्यासः सर्वतोभद्र इत्यपि'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । १९६

पिचुलः पुं. [पिचुं लातीति । ला+क] झावुकः; इज्जलः; जलवायसः; तूलः । १९५

पिच्छम् क्ली. [पिच्छतीति, पिच्छ्+अच्] तनूरुहम्; मयूरपुच्छं; शिखण्डः; बर्हं; शिखिपुच्छं; शिखण्डकम्; 'तस्यारिबलभीमस्य ध्वजदण्डस्य लाच्छनम् । दर्पदीप्तः क्षुरप्रेण मायूरं पिच्छमच्छिनत्'—इति अनर्घराघवे (६।६५)। चूडा; पुं. लाङ्गूलम् । २३९

पिच्छिलम् त्रि. [पिच्छा भक्तसम्भूतमण्डम् अस्त्यस्येति । पिच्छादित्वात् इलच्] पङ्कः; भक्तमण्डयुक्तं; सरसव्यञ्जनादि; सूपादि; स्निग्धसूपादि; मण्डयुक्तभक्तं; जलयुक्तव्यञ्जनं; विजिलं; विजयिनं; विजिनं; विज्जलं; इज्जलं; लालसीकम्; 'तरुणं सर्षपशाकं नवौदनं पिच्छिलानि च दधीनि । अल्पव्ययेन सुन्दरि ! ग्राम्यजनोमिष्टमश्नाति'—इति छन्दोमञ्जर्याम् । पिच्छयुक्तः; स्निग्धसरसपदार्थविशेषः; 'काले वारिधराणामपतितया नैव शक्यते स्थातुम् । उत्कण्ठितासि तरले ! नहि नहि सखि पिच्छिलः पन्थाः'—इति साहित्यदर्पणे (१०।१५)। पुं. [पिच्छं चूडास्त्यस्येति, पिच्छादित्वात् इलच्] श्लेष्मान्तकवृक्षः । ६७८

पिञ्जरः पुं. [पिजि+अर] पीतरक्तवर्णः; अश्वभेदः; सुमेरुपश्चिमपार्श्वस्थपर्वतविशेषः; 'पिञ्जरोऽथ महाभद्रः सुरसः कपिलो मधुः'—इति मार्कण्डेये (५५।९)। पीते त्रि.। 'प्रियया कुङ्कुमपिञ्जरपाणिद्वययोजनाङ्कितं वासः। प्रहितं मां याचन्नाञ्जलिसहस्रकिरणाय शिक्षयति'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३९१)। क्ली. हरितालं; स्वर्णं; नागकेशरं; पंक्ष्यादिबन्धनगृहं; कायास्थिवृन्दम्। ७३७

पिटकः पुं. [पेटतीति, पिट्+क्वुन्] विस्फोटः; पिडकः; स्फोटकः; 'इति पिटकविभागः प्रोक्त आ मूर्द्धतोऽयं व्रणतिलकविभागोऽप्येवमेव प्रकल्प्यः । भवति मशकलक्ष्मावर्तजन्मापि तद्वन्निगदितफलकारि प्राणिनां देहसंस्थम्'—इति बृहत्संहितायाम् (५२।१०)। वंशवेत्रादिमयसमुद्गकः; पेटकः; पेटा; मञ्जूषा; पेटः; पेटिका; तरिः; तरी; मञ्जुषा; पेडिका; 'पिटारी, पिटारां'—इति भाषा। 'कुद्दालदात्रपिटकास्तद्वत् स्थाल्यादिभाजनम्'—इति मार्कण्डेये (५०।८६)। ६०४

पिठरः पुं. [पिठ्यते क्लिश्यतेऽनेनेति । पिठ+करन्] स्थाली; पिठरी; 'गृह्णीष्व पिठरं ताम्रं मया दत्तं नराधिप ! । यावत् वत्स्यति पाञ्चाली पात्रेणानेन सुव्रत !'—इति महाभारते (३।३।७२)। गृहभेदः; कुद्रङ्कः; उद्वाटः; 'विद्युज्ज्वालावलयितजलधरपिठरोदराद्धि निर्यान्ति'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५५२)। अग्निविशेषः; 'पिठरः पतगः स्वर्गश्चागाधो भ्राज एव च । स्वधाकाराश्रयाः पञ्च अयुध्यंस्तेऽपि चाग्नयः'—इति हरिवंशे (१७।३३)। दानवविशेषः; 'घटोदरो महापार्श्वः क्रथनः पिठरस्तथा'—इति महाभारते (२।९।१३)। क्ली. [पिठं रातीति, रा+क] मुस्ता; मन्थानदण्डः । ३१४

पिडकः पुं. [पीडयतीति,पीड्+ण्वुल् । निपातनात् साधुः] स्फोटकः; पिटकः । ६०४

पिडका स्त्री. [पीडयतीति, पीड्+ण्वुल्+टाप्] स्फोटकविशेषः; पिडिका । ६०४

पिण्डः पुं. –क्ली. [पिण्डते संहतो भवतीति । पिडि संहतौ+अच् । पिण्ड्यते राशीक्रियते इति, कर्मणि घञ् वा] देहमात्रम्; 'एकान्तविध्वंसिषु मद्विधानां पिण्डेष्वनास्था खलु भौतिकेषु'—इति रघुवंशे (२।५७)। वोलः; 'विद्वान् गोलः पिण्डकश्च पिण्डो वोलो रसो रसः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। बलं; सान्द्रं; देहैकदेशः; 'द्वौ चास्य पिण्डावधरेण कण्ठादजातरोमौ सुमनोहरौ च'—इति महाभारते (३।११२।३)। निवापः; पितृतर्पणम्; 'त्रींस्तु तस्माद्धविःशेषात् पिण्डान् कृत्वा

समाहितः । औदकेनैव विधिना निर्वपेद्दक्षिणामुखः' —इति मनुः (३।२१५)। गोलः; सिह्लकः; ओड्रपुष्पं; वृन्दं; कवलः; 'एकैकं ह्रासयेत् पिण्डं कृष्णे शुक्ले च वर्द्धयेत्'—इति मनुः (११।२१७)। गजकुम्भः; मदनवृक्षः; 'मदनच्छर्दनः पिण्डो नटः पिण्डीतकस्तथा। करहाटो मरुवकः शल्यको विषपुष्पकः'—इति भावप्रकाशः। किलाटः; 'किलाटः कूर्चिकापिण्डः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। अजीवनम्; अयः; श्राद्धशेषद्रव्यनिर्मितबिल्वफलाकारपित्र्युद्देश्यकदेयान्नम्। ५१०

पिण्डिका स्त्री. [पिण्डन्ते संहतानि भवन्ति, पिण्ड्यन्ते राशीक्रियन्ते वा अराणि यस्याम्। पिण्ड+घञ्। गौरादित्वाद् ङीष्। ततः कन्, ह्रस्वश्च] रथनाभिः; चक्रनाभिः; पिण्डिः; पिण्डी; सा रथचक्रमध्ये मण्डलाकारा यस्यां सर्वाणि काष्ठान्यासज्यन्ते। पिण्डम्; 'कांस्यपात्रे समुद्धृत्य परीक्षेत भिषग्वरः। शुद्धकर्मा स तल्लब्ध्वा श्वेतशाल्योदनस्य वा। पिण्डिका तत्र संक्षिप्ता नान्यथा भाति सा पुनः'—इति हारीते। पिचिण्डिका; सा जानुनोऽधो मांसलप्रदेशः। 'पक्वाशयशिरः शूलं वातवर्च्चोनिरोधनम्। पिण्डिकोद्वेष्टनाध्मानं पुरीषे स्याद्विधारिते'—इति चरकः। श्वेताम्लिः; पीठः; 'पिण्डिकालक्षणं वक्ष्ये यथावदनुपूर्वशः। पीठोच्छ्रायं यथावच्च भागान् षोडश कारयेत्'—इति मत्स्यपुराणे। लिङ्गपीठं; गौरीपट्टः; 'लिङ्गं पिण्डिकया सार्द्धं पञ्चगव्यैश्च शोधयेत्'—इति काशीखण्डे। ४४७

पिण्डीशूरः पुं. [पिण्ड्यां पिण्डव्यापारे भोजने एव शूरः अतिनिपुणः नान्यत्र कार्यादाविति भावः] स्वगेहमात्रे वसन् परद्वेषी; गेहेनर्दी; गेहेशूरः; 'राक्षसान् वटुयज्ञेषु पिण्डीशूरान्निरस्तवान्। यद्यसौ कूपमाण्डुकि ! तवैतावतिकः स्मयः'—इति भट्टिः (५।८५)। ३६७

पिता [ऋ] पुं. [पाति रक्षत्यपत्यं यः। पा रक्षणे+ 'नप्तृनेष्टृत्वष्टृहोतृपोतृभ्रातृजामातृमातृपितृदुहितृ' इति तृन्प्रत्ययेन निपातनात् साधुः] उत्पादकः; तातः; जनकः; प्रसविता; वप्ता; जनयिता; गुरुः; जन्मदः; जन्यः; जनिता; बीजी; वप्रः; 'अन्नदाता भयत्राता यस्य कन्या विवाहिता। जनिता चोपनेता च पञ्चैते पितरः स्मृताः'—इति चाणक्यः। 'कन्यादातान्नदाता च ज्ञानदाताभयप्रदः। जन्मदो मन्त्रदो ज्येष्ठभ्राता च पितरः स्मृताः'—इति ब्रह्मवैवर्त्ते। 'मान्यः पूज्यश्च सर्वेभ्यः सर्वेषां जनको भवेत्। अहो यस्य प्रसादेन सर्वान् पश्यति मानवः। जनको जन्मदाता च रक्षणाच्च पिता नृणाम्। ततो विस्तीर्णकरणात् कलया सा प्रजापतिः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। 'उपाध्यायः पिता ज्येष्ठो भ्राता चैव महीपतिः। मातुलः श्वशुरस्त्राता मातामहपितामहौ। बन्धुर्ज्येष्ठपितृव्यश्च पुंस्वेते गुरवः स्मृताः' —इति कौर्मे। ९९, ५०४

पितामहः पुं. [पितुः पितेति। 'पितृव्यमातुलमातामहपितामहाः' इत्यत्र 'मातृपितृभ्यां पितरि डामहच्' इति डामहच्। ब्रह्मणि तु पितुः पिता जनकस्यापि जनकः। पितृणां मरीच्यादीनां पितृगणानां पिता वा] ब्रह्मा; 'यस्मात् पितामहो जज्ञे प्रभुरेकः प्रजापतिः। ब्रह्मा सुरगुरुः स्थाणुर्मनुः कः परमेष्ठ्यथ'—इति महाभारते (१।१।३२)। शिवः; 'सदसद्व्यक्तमव्यक्तं पिता माता पितामहः'—इति महाभारते (१३।१७।१४९)। पितृपिता; आर्यकः; 'पिता यस्य तु वृत्तः स्याज्जीवेद्वापि पितामहः। पितुः स नाम संकीर्त्य कीर्तयेत् प्रपितामहम्' इति मनुः (३।२२१)। ७

पितृतर्पणम् क्ली. [तृप्यन्तेऽनेनेति। तृप्+करणे ल्युट्, पितृणां तर्पणमिति। यद्वा तृप्+भावे ल्युट्। पितृणां तर्पणं तृप्तिर्यस्मात्] निवापः; पितृतीर्थं; तत्तु तर्जन्यङ्गुष्ठयोर्मध्यम्। तिलः; पितृतीर्थेन पित्रुद्देश्यकजलदानम्। ६३९

पितृपतिः पुं. [पितृणां पतिः] यमः; 'त्वं ब्रह्मा हरिरजसंज्ञितस्त्वमिन्द्रो वित्तेशः पितृपतिरम्बुपतिः समीरः। सोमोऽग्निर्गगनमहीधरोऽब्धिसङ्घः किं स्तव्यं तव सकलात्मरूपधाम्नः'—इति मार्कण्डेये (१०४।३७)। ७१

पितृवनम् क्ली. [पितृणां वनमिव] श्मशानं; पितृकाननम्; 'सर्वे पितृवनं प्राप्ता स्वपन्ति विगतज्वराः। निर्मांसैरस्थिभूयिष्ठैर्गात्रैः स्नायुनिबन्धनैः'—इति महाभारते (११।४।१५)। ६३८

पित्तम् क्ली. [अपिदीयते प्रकृतावस्थया रक्ष्यते विकृतावस्थया नाश्यते वा शरीरं येनेति। अपि+दे पालने, दो च्छेदने वा+क्त, 'अच उपसर्गात्तः' इति तादेशः, अपेरल्लोपः] शरीरस्थधातुविशेषः; मायुः; पलज्वलः; तेजः; तिक्तधातुः; ऊष्मा; अग्निः; अनलः; 'पित्तं

च तिक्ताम्लरसं च सारकं तूष्णं द्रवं तीक्ष्णामेदं मधौ बहु। वर्षान्तिकाले भृशमर्धरात्रे मध्यन्दिने तप्युदिते च कुप्यति'—इति राजनिर्घण्टः। 'अभिमन्योस्ततस्तैस्तु घोरं युद्धमवर्तत। शरीरस्य यथा राजन्! वातपित्तकफैस्त्रिभिः'—इति महाभारते (६।४१।४१)। ६०५

पित्र्यम् त्रि. [पितरो देवता अस्य कव्यादेरिति । पितृ+'वाय्वृतुपित्रुषसो यत्' इति यत्। 'रीङृतः' इति रीङादेशश्च] पितृप्रियं; पितृसम्बन्धि; श्राद्धार्हम्; 'कफघ्नं खड्गिपिशितं कषायमनिलापहम्। पित्र्यं पवित्रमायुष्यं बद्धमूत्रं विरूक्षणम्'—इति सुश्रुते। (८४४) [पितुरिदं पितुरागतं वेति । पितृ+'पितुर्यत्' इति यत्। ततो रीङादेशः] पितृसम्बन्धी। क्ली. (पितृदेवताकदानीयत्वादस्य तथात्वम्) मधु; पितृतीर्थं; तत्तु तर्जन्यङ्गुष्ठान्तः। पुं. [पितुस्तुल्य इति, बाहुलकात् यत्। ततो रीङादेशः] ज्येष्ठभ्राता; [पितॄणां प्रिय इति, यत्] माघमासः। ११५

पिधानम् क्ली. [अपि+धा+ल्युट्, अपेरल्लोपः] उदञ्चनम्; आवरकं; छादनम्; 'युगपज्जघनोरः स्तनपिधानमधुरे! त्रपास्मितार्द्रमुखि! लोलाक्षि! नैष पवनो विरमति तव वसनपरिवर्ती'—इति आर्यासप्तशत्याम्। ३१६

पिनद्धः त्रि. [अपिनह्यते स्मेति। अपि+नह+क्त, अपेरल्लोपः] परिहितवस्त्रादि; आमुक्तः; प्रतिमुक्तः; अपिनद्धः; आच्छादितः; 'यदस्थिभिर्निर्मितवंशवंस्यस्थूणं त्वचा रोमनखैः पिनद्धम्'—इति भागवते (११।८।३२)। ७४७

पिनाकः पुं.–क्ली. [पाति रक्षति, पनाय्यते स्तूयते वा। पाल् रक्षणे, पन् स्तुतौ वा+'पिनाकादयश्च' इति आकप्रत्ययेन निपातनात् साधुः] शिवधनुः; अजगवम्; 'पिनाकमिव रुद्रस्य क्रुद्धस्याभिघ्नतः पशून्।'—इति महाभारते (६।६०।१८)। शूलं; शाङ्करशूलं; पांशुवर्षणम्। १४

पिनाकी [न्] पुं. [पिनाकोऽस्त्यस्येति। इनि] शिवः; 'कृत्वा च निश्चयं सर्वे पलायनपरायणाः। विहाय मथुरां रम्यां मानयन्तः; पिनाकिनम्'—इति हरिवंशे (३५।२०)। रुद्रभेदः; 'अजैकपादहिर्बुध्न्यो विरूपाक्षोऽथ रैवतः। हरश्च बहुरूपश्च त्र्यम्बकश्च सुरेश्वरः। सावित्रश्च जयन्तश्च पिनाकी चापराजितः'—इति मात्स्ये (५।२९।३०)। १२

पिपासा स्त्री. [पातुमिच्छेति, पा+सन्+अ+टाप्] पानेच्छा; तृष्णा; तर्षः; उपलासिकाः; तृट्; तृषा; उदन्या; 'स्वाभाविकाः क्षुत्पिपासाजरामृत्युनिद्राप्रभृतयः'—इति सुश्रुते। ३६३

पिपासितः त्रि. [पिपासा जातास्येति। पिपासा+इतच्] पिपासायुक्तः; तृषितः; 'नग्नो मुण्डः कपालेन भिक्षार्थी क्षुत्पिपासितः। अन्धः शत्रुकुलं गच्छेद्यः साक्ष्यमनृतं वदेत्'—इति मनुः (८।९३)। ३६२

पिपासुः त्रि. [पातुमिच्छुः। पा+सन्+उ] पानेच्छुः; तृषितः; तृष्णक्; 'भागार्थं तपसो धातुं तेषां सोमं तथाध्वरे। पिपासवो ययुर्देवाः शतक्रतुपुरोगमाः'—इति महाभारते (३।२२३।२५)। ३६२

पिप्पलः पुं. [पिप्पलं जलं सिच्यमानत्वेनास्त्यस्य मूलावच्छेदे इति। पिप्पल+'अर्श आदिभ्योऽच्'इत्यच्] अश्वत्थवृक्षः; 'वनराजीस्तु पश्येमाः पिप्पलानां मनोरमाः। लोध्राणां च शुभाः पार्थ! गौतमौकःसमीपजाः'—इति महाभारते (२।२१।८)। निरंशुकः; पक्षिभेदः; क्ली. [पीयते इति, पा+अलच्] जलम्; वस्त्रच्छेदभेदः। १९६

पिप्पली स्त्री. [पिपर्तीति, पृ+बाहुलकाद् अलच्। पृषोदरादित्वात् साधुः। गौरादित्वाद् ङीष्] वृक्षविशेषः; कृष्णा; उपकुल्या; वैदेही; मागधी; चपला; कणा; उषणा; शौण्डी; कोला; ऊषणा; पिप्पलिः; क्रकला; कटुबीजा; कोरङ्गी; तिक्ततण्डुला; श्यामा; दन्तफला; मगधोद्भवा; ऋष्यवन्तपर्वतान्निःसृतो नदीविशेषः; 'तमसा पिप्पली श्येनी तथा चित्रोत्पलापि च'—इति मात्स्ये (११३।२५)। ६१४

पिल्लः पुं. [क्लिन्ने चक्षुषी यस्येति। 'इनच्पिटच्चिकचि च' इत्यत्र 'क्लिन्नस्य चिल्पिल्लश्चास्य चक्षुषी' इति पिल्लादेशः] क्लेदयुक्तचक्षुः; तद्युक्ते त्रि.। चिल्लः; चुल्लः; 'ताम्रपात्रे गुहामूलं सिन्धूत्थमरिचान्वितम्। आरनालेन संघृष्टम् अञ्जनं पिल्लनाशनम्'—इति चक्रपाणिसंग्रहे। ६०७

पिशङ्गः पुं. [पिशतीति, पिश्+'विडादिभ्यः कित्' इत्यङ्गच्, स च कित्] पिङ्गलवर्णः; तद्वति त्रि.। 'तेऽरुणे-

भिर्वरमा पिशङ्गैः शुभे कं यान्ति रथ तूभिरश्वैः'—इति ऋग्वेदे (१।८८।२)। 'पिशङ्गमौञ्जीयुजमर्जुनच्छविं वसानमेणाजिनमञ्जनद्युति। सुवर्णसूत्राकलिताधराम्बरां विडम्बयन्तं शितिवाससस्तनुम्'–इति माघे (१।६)। नागभेदः; 'भैरवो मुण्डवेदाङ्गः पिशङ्गश्चोद्रपारकः' —इति महाभारते (१।५७।१६)। ७३६

पिशाचः पुं. [पिशितं मांसमश्नातीति। पिशित+अश्+'कर्मण्यण्' ततः 'पृषोदरादीनि यथोपदिष्टम्' इति शितभागस्य लोपः, अशभागस्य शाचादेशः] देवयोनिविशेषः; 'यक्षरक्षःपिशाचांश्च गन्धर्वाप्सरसोऽसुरान्'—इति मनुः (१।३७)। प्रेतः; 'अशौचान्ताद्द्वितीयेऽह्नि यस्य नोत्सृज्यते वृषः। पिशाचत्वं भवेत्तस्य दत्तैः श्राद्धशतैरपि'—इति शुद्धितत्त्वे। ८७

पिशितम् क्ली. [पिंशति अवयवीभवतीति। पिश्+'पिशेः किच्च' इति इतन् स च कित्। यद्वा पिश्यते स्मेति, क्त] मांसम्; 'हासोऽस्थिसन्दर्शनमक्षियुग्मम् अत्युज्ज्वलं तर्जनमङ्गनायाः। कुचादिपीनं पिशितं घनं तद् स्थानं रतेः किं नरकं न योषित्'—इति मार्कण्डेयपुराणे। ६३१

पिशिताशनः पुं. [पिशितं मांसम् अश्नाति यः सः] मांसभक्षकः; पिशिताशी। ११९

पिशुनः त्रि. [पिश्+उनन् स च कित्] अप्रकाशेनानुचितप्रबोधकः; परस्परभेदशीलः; दोषग्राही; पुरोभागी; द्विजिह्वः; मत्सरी; 'द्विजिह्वः सूचकः कर्णेजपः पिशुन इत्यपि। दुर्जनो दुर्विधो विश्वकद्रुश्च पिशुनः खलः'—इति जटाधरः। 'कर्णेजपः सूचकः स्यादनौचित्यप्रबोधके। परस्परं भेदशीले पिशुनो दुर्जनः खलः' —इति शब्दरत्नावली। 'अनुग्रहेण न तथा व्यथयति कटुकूजितैर्यथा पिशुनः। रुधिरादानादधिकं दुनोति कर्णे क्वणन् मशकः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५९)। क्रूरः; 'भ्रामरी गण्डमाली च श्वित्र्यथो पिशुनस्तथा।' —इति मनुः (३।१६१)। ३४६

पिहितम् त्रि. [अपिधीयते स्मेति। धा+क्त, 'दधातेर्हिः' इति ह्यादेशः, अपेरल्लोपः] आच्छादितं; संवीतं; रुद्धम्; आवृतं; संवृतं; छन्नं; स्थगितम्; अपवारितम्; अन्तर्हितं; तिरोहितम्; 'ध्वजेन पिहिताः सर्वा दिशो न प्रतिभान्ति मे। गाण्डीवस्य च शब्देन कर्णौ मे वधिरीकृतौ'—इति महाभारते (४।४४।१८)। ७४३

पीठम् त्रि. [पेठन्त्युपविशन्त्यस्मिन्निति। पिठ्+'हलश्च' इति घञ्, बाहुलकादिकारस्य दीर्घः। यद्वा पीयतेऽत्रेति। पीङ पाने+बाहुलकात् ठक्] उपवेशनाधारः; आसनम्; उपासनं; पीठी; विष्टरः; व्रतिनामासनं; कुशासनादि; वृषी; 'पीठं दत्त्वा साधवेऽभ्यागताय आनीयापः परिनिर्णिज्य पादौ। सुखं पृष्ट्वा प्रतिवेद्यात्मसंस्थां ततो दद्यादन्नमवेक्ष्य धीरः'—इति महाभारते (५।३८।२) ३१०

पीडा स्त्री. [पीडनमिति, पीड्+'षिद्भिदादिभ्योऽङ्' इति अङ्, ततष्टाप्] पीडनं; बाधा; व्यथा; दुःखम्; अमानस्यं; प्रसूतिजं; कष्टं; कृच्छ्रम्; आभीलम्; आबाधा; शूलं; रुक्; वेदना; आर्तिः; तोदः; रजा; 'यदावगच्छेदायत्यामाधिक्यं ध्रुवमात्मनः। तदात्वे चाल्पिकां पीडां तदा सन्धिं समाश्रयेत्'—इति मनुः (७।१६९)। कृपा; शिरोमाला; सरलद्रुः। ६२६

पीडितम् त्रि. [पीड्+क्त। यद्वा पीडास्य जातेति, तारकादित्वाद् इतच्] बाधितं; व्यथितं; दुःखितम्; आबाधितं; स्त्रीणां करणं; यन्त्रितं; मर्दितं; मन्त्रभेदः; 'सहस्राणाधिका मन्त्रा दण्डकाः पीडिताह्वयाः'—इति तन्त्रसारे। ७६७

पीतम् त्रि. [पीतो वर्णोऽस्यास्तीति, अच्] पीतवर्णयुक्तं; हारिद्रम्; 'ये त्विमे निशिताः पीताः पृथवो दीर्घवाससः। हेमशृङ्गास्त्रिपर्वाणो राज्ञ एते महाशराः'—इति महाभारते (४।४१।२०)। [पा+कर्मणि क्त] कृतपानम्; 'हालाहलमपि पीतं बहुशो भिक्षापि भक्षिता भवता। अनयोरवगतरसयोः कियदन्तरं वद योगिन्'! [पीतं पानमस्त्यस्येति, अच्। यद्वा पीतं नीरं क्षीरं वा येन इत्युत्तरपदलोपः। यथा—रघौ (२।१) 'अथ···वनाय पीत०'] ७३५

पीतरक्तम् त्रि. [पीतं रक्तञ्च, 'वर्णो वर्णेनेति' समासः] पिञ्जरः; क्ली. पुष्परागमणिः। ७३७

पीतवासाः [स्] पुं. [पीतं वासो वस्त्रं यस्य] श्रीकृष्णः; पीतवस्त्रयुक्ते त्रि.। 'यः स चक्रगदापाणिः पीतवासाः शितप्रभः'—इति महाभारते (१।६४।५३)। २१

पीतशालः पीतसालः पुं. [पीतः शालो वृक्षविशेषः] असनवृक्षः; 'पीतसालः परिमलो विमर्दी कासनस्तथा' —इति कालिकापुराणे। १९९

पीनः त्रि. [ओप्यायी वृद्धौ+क्त, 'ओदितश्च' इति निष्ठातस्य न] स्थूलः; 'वक्षःस्थलसुप्ते मम मुखमुपधातुं न मौलिमालभसे। पीनोत्तुङ्गस्तनभरदूरीभूतं रतश्रान्तौ'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५६१)। ३४२

पीनसः पुं. [पीनं स्थूलमपि जनं स्यति नाशयतीति। सो+क] नासिकारोगविशेषः; प्रतिश्यायः; अपीनसः; प्रतिश्याः; नासिकामयः; 'सर्वेषु सर्वकालं पीनसरोगेषु जातमात्रेषु। मरिचं गुडेन दध्ना भुञ्जीत नरः सुखं लभते'—इति भावप्रकाशः। 'पिप्पली त्रिफलाचूर्णं मधुसैन्धवसंयुतम् । सर्वरोगज्वरश्वासशोषपीनसहृद्भवेत्' —इति गारुडे। ६०५

पीनोध्नी क्ली. [पीनं स्थूलमूधोऽस्याः, 'बहुव्रीहेरूधसो ङीष्' इति ङीष्, 'ऊधसोऽनङ्'—इति उधोऽन्तस्य बहुव्रीहेरनङादेशः] पीवरस्तनी गौः। २७१

पीयूषम् क्ली. [पीयते इति, पीय सौत्रधातुः+'पीयेरूषन्' इति ऊषन्] अमृतम्; 'खरसन्तापशमनी खनिः पीयूषपाथसाम्'—इति काशीखण्डे (२९।४९)। दुग्धम् (२७४); 'पानीयं क्लमनाशनं श्रमहरं मूर्च्छापिपासापहं, तन्द्राच्छर्दिविबन्धहृद्बलकरं निद्राहरं तर्पणम्। हृद्यं गुप्तरसं ह्यजीर्णमशकं नित्यं हितं शीतलं, लघ्वच्छं रसकारणं तु विगते पीयूषवज्जीवनम्'—इति भावप्रकाशः। पुं.—क्ली. अभिनवं पयः; नवप्रसूताया गोः सप्तदिनाभ्यन्तरीणदुग्धम्; 'अथ पीयूषपेयूषे नवं सप्तदिनावधि'—इति शब्दार्णवः। 'आसप्तरात्रप्रभवं क्षीरं (पी) पेयूष उच्यते'—इति हारावली। १३३

पीयूषरुचिः पुं. [पीयूषं पीयूषमयी रुचिस्त्विड् यस्य] चन्द्रः; [पीयुषे अमृते रुचियस्य] अमृतप्रियः। ४३

पीलुः पुं. [पीलति प्रतिष्टम्नातीति। पील्+'मृगय्वादयश्च' इति कु] मतङ्गजः; कोङ्कणादिदेशे प्रसिद्धः फलवृक्षविशेषः; गुडफलः; श्रंसी; शीतसहः; धानी; विरेचनः; फलशाखी; श्यामः; करभवल्लभः; 'उष्ट्रवामीस्त्रिशतञ्च पुष्टाः पीलुशमीङ्गुदैः'—इति महाभारते (२। ५०।४।)। ८३३

पीव[न्] त्रि. [प्यायते इति, प्यै वृद्धौ+'प्याप्योः सम्प्रसारणं च' इति क्वनिप् सम्प्रसारणं च, 'हलः' इति दीर्घः] स्थूलम्; 'पीवानं श्मश्रुलं प्रेष्ठं मीढ्वांसं याभकोविदम्। स एकोऽजवृषस्तासां बह्वीनां रतिवर्द्धनः'—इति भागवते (९।१९।६)। ३४२

पीवरस्तनी स्त्री. [पीवरौ स्थूलौ स्तनौ यस्याः। 'स्वाङ्गोपसर्जनादिति' ङीष्] पीनोध्नी; स्थूलस्तनयुक्ता नारी; 'व्यपोहितुं लोचनतो मुखानिलैरपारयन्तं किल पुष्पजं रजः। पयोधरेणोरसि काचिदुन्मनाः प्रियञ्जघानोन्नतपीवरस्तनी'—इति किरातार्जुनीये (८।१९)। २७१

पुंश्चली स्त्री. [पुंसो भर्त्तुः सकाशात् चलति पुरुषान्तरं गच्छतीति। चल्+अच्। गौरादित्वाद् ङीष्] असती; धृष्टा; दुष्टा; धर्षिता; लङ्का; निशाचरी; त्रपारण्डा; 'अहो! को वेद भुवने दुर्ज्ञेयं पुंश्चलीमनः। पुंश्चल्यां यो हि विश्वस्तो विधिना स विडम्बितः'—इति ब्रह्मवैवर्ते (२३।२४।३२)। ४९६

पुङ्खः पुं.—क्ली. [पुमांसं खनतीति। खन्+ड] काण्डमूलम्; 'सक्ताङ्गुलिः सायकपुङ्ख एव चित्रार्पितारम्भ इवावतस्थे'—इति रघौ (२।३१)। मङ्गलाचारः। ४६८

पुच्छः पुं.—क्ली. [पुच्छतीति,पुच्छ प्रमादे+अच्] लाङ्गूलम्; 'खुरघातैस्तथा देवान् पुच्छस्य भ्रमणेन च। स जघान रुषाविष्टो महिषः परमाद्भुतः'—इति भागवते (५।७।१६)। पश्चाद्भागे पुं.। 'उल्का ज्वलन्ती सङ्ग्रामे पुच्छेनावृत्य सर्वशः'—इति महाभारते (७।६। २८)। क्ली. लोमवल्लाङ्गूलं; कलापः। ४४१

पुच्छमूलम् क्ली. [पुच्छस्य मूलम्] पुच्छाग्रम्। २१९

पुञ्जः पुं. [पिञ्ज्यते पिञ्जयतीति वा, पिजि+अच्। पृषोदरादित्वात् साधुः] समूहः; राशिः; 'गृहीतपक्षिपुञ्जश्च शवमाल्यैरलङ्कृतः'—इति मार्कण्डेये (८।८२)। ६८६

पुटभेदः पुं. [पुटं संश्लिष्टं भिनत्तीति। भिद्+'कर्मण्यण्' इत्यण्] नदीचक्रम्; 'प्रायेणैव हि मलिना मलिनानामाश्रयत्वमुपयान्ति। कालिन्दीपुटभेदः कालियपुटभेदनं भवति'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३९८)। पत्तनम्; आतोद्यं; नदीवक्रम्। ६७१

पुटभेदनम् क्ली. [पुटैरश्वखुरैर्भिद्यते इति। भिद्+कर्मणि ल्युट्] नगरम्; 'स हास्तिनपुरे रम्ये कुरूणां पुटभेदने। वसन् सागरपर्यन्तामन्वशासद्वसुन्धराम्'—इति महाभारते (१।१००।१२)। २८५

पुण्डरीकः पुं. [पुण्डरीकवद्वर्णोऽस्त्यस्येति, अच्] अग्निकोणस्थदिग्गजः; व्याघ्रः (२२६); कोषकारभेदः;

सहकारः गणधरः; गजज्वरः; राजिलसर्पः; दमनक वृक्षः; धान्यविशेषः; 'पुष्पाण्डकः पुण्डरीकस्तथा महिष-मस्तकः'—इति भावप्रकाशः। कमण्डलुः; श्वेतवर्णः; क्रौञ्चद्वीपस्थपर्वतविशेषः; 'देवावृतः परेणापि पुण्डरीको महान् गिरिः। एते रक्तमयाः सप्त क्रौञ्चद्वीपस्य पर्वताः'—इति मात्स्ये (१२११८१)। तीर्थविशेषः; 'शुक्लपक्षे दशम्यां च पुण्डरीकं समाविशत्। तत्र स्नात्वा नरो राजन्! पुण्डरीकफलं लभेत्'—इति महाभारते (३।८३।७६)। यज्ञविशेषः; 'अश्वमेधो राजसूयः पुण्डरीकोऽथ गोसवः। एतैरपि महायज्ञैरिष्टं ते भूरिदक्षिणैः'—इति महाभारते (३।३०।१७)। नागविशेषः; 'नागानामेकवंश्यानां यथा श्रेष्ठन्तु मे शृणु। द्वौ पद्मौ पुण्डरीकश्च पुष्पो मुद्गरपर्णकः'—इति महाभारते (५।१०३।१३)। रामचन्द्रवंशीयनृपविशेषः; 'तेन द्विपानामिव पुण्डरीको राज्ञामजय्योऽजनि पुण्डरीकः। शान्ते पितर्याहृतपुण्डरीका यं पुण्डरीकाक्षमिवश्रिता श्रीः'—इति रघौ (१८।८)। [पुण्डरीकाः सन्त्यत्रेति अच्] पुण्डरीकविशिष्टे त्रि.। 'पयोदस्तु ह्रदो नीलः सशुभः पुण्डरीकवान्। पुण्डरीकात् पयोदाच्च तस्माद् द्वे सम्प्रसूयताम्'—इति मात्स्ये (१२०।६८)। १०४

पुण्डरीकम् क्ली. [पुण्डति अन्यपुष्पाणां गर्वं चूर्णीकरोतीति। पुण्ड मर्दे+'पर्फरीकादयश्च' इति ईकन् प्रत्ययेन निपातनात् साधुः। 'पुणतेः पुण्डरीकम्' इत्युज्ज्वलदत्तः] शुक्लपद्मं; सिताम्भोजं; शतपत्रं; महापद्मं; सिताम्बुजं; 'पुण्डरीकातपत्रस्तं विकसत्काशचामरः। ऋतुर्विडम्बयामास न पुनः प्राप तच्छ्रियम्'—इति रघौ (४।१७)। पद्ममात्रं; श्वेतच्छत्रं; भेषजभेदः; सप्तमहाकुष्ठानामन्यतमः; 'सश्वेतं रक्तपर्यन्तं पुण्डरीकदलोपमम्। सोत्सेधं च सरागं च पुण्डरीकं तदुच्यते'—इति माधवकरः। ६८०

पुण्डरीकाक्षः पुं. [पुण्डरीकवदक्षिणी नेत्रे यस्य, समासान्तः षच्] विष्णुः; 'पुण्डरीकं परं धाम नित्यमक्षरमव्ययम्। तद्भावात् पुण्डरीकाक्षो दस्युत्रासाज्जनार्दनः'—इति महाभारते (५।७०।६)। 'अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा। यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः'—इति वामने। जलचरपक्षिविशेषः; 'उत्क्रोशः पुण्डरीकाक्षो मेघरावोऽम्बुकुक्कुटी'—इति चरके। क्ली. [पुण्डरीकवदक्षिणी यस्मात्, षच् समासे] पुण्डर्यम्। २४

पुण्ड्रम् क्ली. [पुण्डयन्ते गुडशर्करादयर्थं चूर्णीक्रियन्ते इति। पुडि मर्दे+'स्फायितञ्चीति' रक्] तिलकं; पुं. इक्षुभेदः; दैत्यविशेषः; अतिमुक्तकः; चित्रं; क्रिमिः; पुण्डरीकं; देशविशेषे पुं भूम्नि, यथा—'प्राग्ज्योतिषं च पुण्ड्राश्च विदेहास्ताम्रलिप्तकाः। शाम्बमागधगोनर्दाः प्राच्या जनपदाः स्मृताः'—इति मात्स्ये (११३।४५)। तिलकः वृक्षः; ह्रस्वप्लक्षः; अश्वदेहस्थचिह्नविशेषः; बलिराजस्य क्षेत्रजः पुत्रविशेषः। यन्नाम्नैव पुण्ड्रदेशो विख्यातः (महाभारते १।१०४।४७–५१)। ८५५

पुण्यम् क्ली. [पूयतेऽनेनेति। पू+'पूञो यण्णुग्घ्रस्वश्च' इति यत् णुगागमो ह्रस्वश्च] शुभादृष्टं; धर्मः; श्रेयः; सुकृतं; वृषः, 'पण्डितेनापि किं तेन समर्थेन च देहिनाम्। यत्पुण्यं भारमुद्वोढुमशक्तं पारलौकिकम्'—इति अग्निपुराणे। सुगन्धि; शोभनकर्म; त्रि. सुन्दरम्।(१३२) पावनं; पवित्रम्। १२५

पुण्यक्षेत्रम् क्ली. [पुण्यजनकं क्षेत्रम्। मध्यपदलोपी समासः] पुण्यभूमिः; तीर्थस्थानम्। ८६२

पुण्यजनः पुं. [पुण्यः विरुद्धलक्षणया पापी चासौ जनश्चेति] राक्षसः; यक्षः; 'सर्पैः पुण्यजनैश्चैव वीरुद्भिः पर्वतैस्तथा'—इति हरिवंशे (२।२६)। पुण्याश्रितो जनः; सज्जनः। ७९०

पुण्यजनेश्वरः पुं. [पुण्यजनानां यक्षाणाम् ईश्वरः प्रभुः] कुबेरः; 'समतया वसुवृष्टिविसर्जनैर्नियमनादसताञ्च नराधिपः। अनुययौ यमपुण्यजनेश्वरौ सवरुणावरुणाग्रसरं रुचा'—इति रघौ (९।६)। ७९

पुतौ पुं.— कटिप्रोथौ; कटिप्रान्तस्थमांसपिण्डौ। द्विवचनान्तोऽयं शब्दः। ५१३

पुत्रः पुं. [पुनाति पित्रादीनिति। पू+'पुवो ह्रस्वश्च' इति क्त्र, धातोर्ह्रस्वत्वञ्च। तकारद्वये तु पुन्नामनरकात् त्रायते इति। पुत्+त्रै+ड। पितॄन् पातीति व्युत्पत्या पृषोदरादित्वात् साधुः] पुंसन्तानः; पुन्नामनरकत्राता; आत्मजः; तनयः; सूनुः; सुतः; तनूजः; अपत्यं; दायादः; कुलधारकः; नन्दनः; आत्मजन्मा; द्वितीयः; प्रसूतिः; स्वजः; 'पुन्नाम्नो नरकाद्यस्मात् पितरं त्रायते

सुतः। तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः स्वयमेव स्वयम्भुवा'—इति महाभारते (१।७४।३७)। 'पुन्नाम्नो नरकाद् यस्मात् पितरं त्रायते सुतः। तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः पितॄन् यः पाति सर्वतः'—इति रामायणे (२।१०७।१२)। ४९७

पुत्रका स्त्री. [पुत्र+स्वार्थे संज्ञायां वा कन् + टाप्, 'सूतकापुत्रिकावृन्दारकाणां वेति वक्तव्यम्' इति ङीन्, इवर्णस्य पक्षेऽकारः] पुत्रिका; कन्या। ४९३

पुत्रवधूः स्त्री. [पुत्रस्य वधूः] स्नुषा; पुत्रपत्नी। ५०४

पुत्रिका स्त्री. [पुत्री+स्वार्थेकन्+टाप्। 'केऽणः'इति ह्रस्वः। पुत्री+'इवे प्रतिकृतौ' इति कन् ह्रस्वश्च] पुत्तलिका; यावतूलकः; पुत्रस्वरूपत्वेन कृता कन्या; 'अपुत्रोऽनेन विधिना सुतां कुर्वीत पुत्रिकाम्। यदपत्यं भवेदस्यां तन्मम स्यात् स्वधाकरम्'—इति मनुः(९।१२८) 'ताः सर्वास्त्वनवद्याङ्ग्यः कन्याः कमललोचनाः। पुत्रिकाः स्थापयामास नष्टपुत्रः प्रजापतिः'—इति महाभारते (१।६६।१२)। कन्या; आत्मजा; दुहिता; पुत्री; तनुजा; सुता; अपत्यं; पुत्रका; स्वजा; तनया; नन्दिनी। ४९३

पुत्री स्त्री. [पुत्र+'शार्ङ्गरवाद्यञोङीन्' इति ङीन्, यद्वा गौरादित्वाद् ङीष्] सुता; कन्या; वृक्षविशेषः। ५०५

पुनर्नवः पुं. [पुनरपि छिन्ने भूयोऽपि नवः] नखः। ५११

पुनर्भूः स्त्री. [पुनर्भवति जायात्वेनेति। भू+क्विप्] द्विरूढा; दिधिषूः; 'परपूर्वाः स्त्रियस्त्वन्याः सप्त प्रोक्ता यथाक्रमम्। पुनर्भूस्त्रिविधा तासां स्वैरिणी च चतुर्विधा। कन्यैवाक्षतयोनिर्या पाणिग्रहणदूषिता। पुनर्भूः प्रथमा प्रोक्ता पुनः संस्कारकर्मणा'—इति मिताक्षरा। पुनर्वारजाते त्रि.। ४८५

पुन्नागः पुं. [पुमान् नाग इव श्रेष्ठत्वात्] बृहत्पुष्पवृक्षविशेषः; पुरुषः; तुङ्गः; केशरः; देववल्लभ; कुम्भीकः; रक्तकेशरः; पुन्नामा; पाटलद्रुमः; रक्तपुष्पः; रक्तरेणुः; अरुणः; सितोत्पलः; जातीफलः; नरश्रेष्ठः; पाण्डुनागः। २०८

पुमान् [स्] पुं. [पाति रक्षतीति, पा+'पातेर्डुमसुन्' इति डुमसुन, डित्वात् टिलोपः] मनुष्यजातिपुरुषः; पञ्चजनः; पूरुषः; पुरुषः; ना; 'स्वदेशजातस्य जनस्य लोके गुणाधिके पुंसि भवत्यवज्ञा। निजाङ्गना यद्यपि रूपराशिस्तथापि पुंसां परदारचेष्टा'—इत्युद्भटः। मनुष्यजातिः; पुंल्लिङ्गमात्रश्च; कूटस्थपुरुषः; 'सदक्षरं ब्रह्म य ईश्वरः पुमान् गुणोर्मिसृष्टिस्थितिकालसंलयः। प्रधानबुद्ध्यादिजगत्प्रपञ्चं स नोऽस्तु विष्णुर्गतिभूतिमुक्तिदः' —इति विष्णुपुराणे। 'अक्षरमिति विकारं निराकरोति पुमान् कूटस्थः'——इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। ३११,३७०,३७२

पुरः पुं. [पिपर्तीति, पॄ+क] गुग्गुलुः; 'गुग्गुलुर्देवधूपश्च जटायुः कौशिकः पुरः। कुम्भोलूखलकं क्लीवे महिषाक्षः पलङ्कषः'--इति भावप्रकाशे। ६२०

पुरम् क्ली. – स्त्री. [पिपर्तीति, पॄ+मूलविभुजादित्वात् क। यद्वा पुरति अग्रे गच्छतीति। पुर+'इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः' --इति क] हट्टादिविशिष्टस्थानं; बहुग्रामीयव्यवहारस्थानं; पूः; पुरीः; नगरं; पत्तनं; स्थानीयं; कटकं; पट्टं; निगमः; पुटभेदनम्। २८५

पुरम् क्ली. [प्रियते पूर्यते इति। पॄ पूर्तौ+क] देहः; पलङ्कषः (६२०); कणगुग्गुलुः; गेहम्; पाटलिपुत्रम्; पुष्पादीनां दलावृत्तिः; नागरमुस्ता; चर्म; गृहोपरिगृहम्। ५१०

पुरः [स्] अव्य. [पूर्वस्मिन् पूर्वस्मात् पूर्वो वा, एवं पूर्वस्याः पूर्वस्यामित्यादि। पूर्व+'पूर्वाधरावराणामसिपुरधवश्चैषाम्' इति असि, तद्योगेन पुर इत्यादेशश्च] अग्रतः। ७०७

पुरद्वारम् क्ली. [पुरस्य द्वारम्] नगरद्वारं; गोपुरम्; 'दक्षिणेन मृतं शूद्रं पुरद्वारेण निर्हरेत्। पश्चिमोत्तरपूर्वैस्तु यथायोग्यं द्विजन्मनः'—इति मनुः (५।९२)। २८८

पुरन्दरः पुं. [अरीणां पुरो दारयतीति। दॄ+णिच्+'पूःसर्वयोर्दारिसहोः' इति खच्, 'वाचंयमपुरन्दरौ च' इति निपातितः] इन्द्रः; 'कालेयभयसन्त्रस्तो देवः साक्षात् पुरन्दरः। जगाम शरणं शीघ्रं तन्तु नारायणं प्रभुम्'—इति महाभारते (३।१०१।९)। [पुरं गेहं दारयतीति, दारि+खच्, निपातितः] चौरः; 'समांसमीना यदि पाकशाला समांसमीना दश धेनवः स्युः। पुरन्दरस्याविषयं यदि स्यात् पुरन्दरस्यापि पुरं न याचे' —इत्युद्भटः। ५३

पुरन्ध्रिः, पुरन्ध्री स्त्री. [स्वजनसहितं पुरं धारयतीति । धृञ्+खच् । गौरादित्वाद् ङीष् । पृषोदरादित्वाद् ह्रस्वो वा] स्त्रीमात्रं; पतिपुत्रदुहित्रादिमती; कुटुम्बिनी; 'तौ स्नातकैर्बन्धुमता च राज्ञा पुरन्ध्रिभिश्च क्रमशः प्रयुक्तम् । कन्याकुमारौ कनकासनस्थौ आर्द्राक्षतारोपणमन्वभूताम्'—इति रघौ (७।२८) । ४८१

पुरः [स्] अव्य. [पूर्वस्मिन् पूर्वस्मात् पूर्वो वा, एवं पूर्वस्याः पूर्वस्यामित्यादि । पूर्व+'पूर्वाधरावराणामसिपुरधवश्चैषाम्' इति असि, तद्योगेन पुर् इत्यादेशश्च] अग्रतः; 'अयि जीवितनाथ ! जीवसीत्यभिधायोत्थितया तया पुरः । ददृशे पुरुषाकृति क्षितौ हरकोपानलभस्म केवलम्'—इति कुमारे (४।३) । प्राच्यां दिशि; प्रथमे काले; 'उदेति पूर्वं कुसुमं ततः फलं घनोदयः प्राक् तदनन्तरं पयः । निमित्तनैमित्तिकयोरयं विधिस्तव प्रसादस्य पुरस्तु सम्पदः'—इति शाकुन्तले । 'पुरार्थे, अतीते'—इति भरतः । ७०७

पुरा अव्य. [पुरति अग्रे गच्छतीति । पुर+बाहुलकात् का] प्राक्; 'इदं सर्वं पुरा सृष्टेरेकमेवाद्वितीयकम् । सदेवासीन्नामरूपे नास्तामित्यारुणेर्वचः'—इति पञ्चदश्याम् (२।१४) । प्रबन्धः; वाक्यरचना; पुराणादिः; यथा—पुराविदः । चिरम्; चिरन्तनम्; पुराणमित्यर्थान्तरम् । अतीतं; भूतं; चिरातीतं; यथा—इतिहासः पुरावृत्तम् । निकटः; सन्निहितः; आगामिकम्; अनागतं; निकटागामिक; : भविष्यदासत्तिः; भीरुः । स्त्री. [पुरतीति, पुर+क+टाप्] पूर्वदिक्; सुगन्धिद्रव्यविशेषः; गन्धवती; दिव्या; गन्धाढ्या; गन्धमादनी; सुरभिः; भूरिगन्धा; कुटी; गन्धकुटी । ७०७

पुराणः त्रि. [पुरा पूर्वस्मिन् काले भव इति । पुरा+'सायंचिरंप्राह्णेप्रगेऽव्ययेभ्यष्ट्युट्युलौ तुट् च' इति-ट्यु, निपातनात् तुडभावः] पुरातनः; 'बभूवुर्हि पुरोडाशा भक्ष्याणां मृगपक्षिणाम् । पुराणेष्वपि यज्ञेषु ब्रह्मक्षत्रसवेषु च'—इति मनुः (५।२३) । पणः; शिवः; 'बलवांश्चोपशान्तिश्च पुराणः पुण्यचञ्चुरी'—इति महाभारते (१३।१७।१०६) । कार्षापणे पुं.– क्ली.; 'ते षोडश स्याद्धरणं पुराणं चैव राजतम् । कार्षापणस्तु विज्ञेयस्ताम्रिकः कार्षिकः पणः'—इति मनुः (८।१३८) । क्ली. [पुरा नीयते इति, नी+ड णत्वञ्च] व्यासादिमुनिप्रणीतवेदार्थवर्णितपञ्चलक्षणान्वितशास्त्रं; पञ्चलक्षणम् । ७११

पुरातनः त्रि. [पुरा पूर्वस्मिन् काले भवः । पुरा+'सायंचिरेति' ट्यु तुट् च] पूर्वकालभवः; पुराणः; प्रतनः; प्रत्नः; चिरन्तनः; चिरत्नः; 'नवं वस्त्रं नवं छत्रं नव्या स्त्री नूतनं गृहम् । सर्वत्र नूतनं शस्तं सेवकान्ने पुरातने'—इति नीतिशास्त्रे । पुं. पुराणः; प्रदिवः; प्रवयाः; सनेमिः; पूर्वम्; अह्नाय; विष्णुः; 'उत्तरो गोपतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यः पुरातनः'—इति महाभारते (१३।१४९।६६) । ७११

पुरिः स्त्री. [पूर्यते इति । पॄ+'कॄ गॄ शॄ पॄ कुटीति' इ, स च कित्] पुरी; नदी; शरीरम् । २८५

पुरी स्त्री [पुरि+वा ङीष्] नगरी; 'नृपावासः पुरी प्रोक्ता विशां पुरमपीष्यते'—इति श्रीधरः । २८५

पुरीतत् पुं.– क्ली. [पुरीं शरीरं तनोतीति । तनु विस्तारे +क्विप् । 'गमः क्वौ' इत्यत्र 'गमादीनामिति वक्तव्यम्' इति अनुनासिकलोपः तुगागमश्च । पुरिं तनोतीति वाक्ये 'नहिवृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु क्वौ' इति पूर्वपदस्य दीर्घः] अन्त्रम्; 'आँत' इति भाषा । ६३५

पुरीषम् क्ली. [पिपर्ति शरीरमिति । पॄ+'शॄपॄभ्यां किच्च' इति ईषन् स च कित्] विष्ठा; [पूरयति जगत् प्रलयकाले, पूर्यते अनेन तडागादि, पालकं वा, जगतः सस्योत्पत्तिहेतुत्वात्, प्रीणातेर्वा बाहुलकात् कीषन् प्रत्ययः । ईकारस्योकारादेशः स च पकारात् परो द्रष्टव्यः—इति तत्र देवराजयज्वा] उदकम्; 'यदक्रन्दः प्रथमं जायमान उद्यन् समुद्रादुत वा पुरीषात्' इति ऋग्वेदे (१।-१६३।१) 'पुरीषात् सर्वकामानां पूरकादुदकात्'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ६३७

पुरुः पुं. [पिपर्ति पूर्यते वेति । पॄ+'पॄभिदिव्यधिगृधिधृषिदृशिभ्यः' इति कु, 'उदोष्ठ्यपूर्वस्य' इति उत्वम्, 'उरण् रपरः' इति रपरत्वम्] प्रचुरः; 'स्फुरति तिमिरस्तोमः पङ्कप्रपञ्च इवोच्चकैः । पुरुसितंगरुच्चञ्चच्चञ्चूपुटस्फुटचुम्बितः'—इति नैषधे (१९।५) । पुं. देवलोकः; नृपभेदः; स च ययातेः कनिष्ठपुत्रः; परागः; दैत्यः; नदीभेदे त्रि. । राजविशेषः; 'सुकर्मा चेकितानश्च पुरुश्चामित्रकर्षणः'—इति महाभारते (३।४।२७) । चाक्षुषमनोः पुत्रभेदः; 'उरूपुरुशतद्युम्नप्रमुखाः सुमहा-

प्रकुर्वन्ति पूर्वरङ्गः स उच्यते'—इति साहित्यदर्पणे (६।१०)। ९५

पूर्वा स्त्री. [पूर्व+टाप्] पूर्वदिक्; प्राची; पुरा; माघोनी; ऐन्द्री; माघवती। 'पूर्वस्तु मधुरो वातः स्निग्धः कटुरसान्वितः। गुर्विदाहशमनो वातदः पित्तनाशनः'—इति राजनिर्घण्टः। पुं. पूर्वजाः; पूर्वपुरुषाः। बहुवचनान्तोऽयम्। 'मत्परं दुर्लभं मत्वा नूनमावर्जितं मया। पयः पूर्वैः स्वनिश्वासैः कवोष्णमुपभुज्यते'—इति रघौ (१।६७)। १०१

पूषा [न्] पुं. [पूषतीति। पूष् वृद्धौ+'श्वन् उक्षन् पूषन् प्लीहन्निति' कनिन् प्रत्ययान्तो निपात्यते] सूर्यः; 'आदित्यं भास्करं भानुं सवितारं दिवाकरम्। पूषाणमर्यमणञ्च स्वर्भानुं दीप्तदीधितिम्'—इति मार्कण्डेये (१०९।६४) द्वादशादित्यानामन्यतमः; 'धाता मित्रोऽर्यमा शक्रो वरुणस्त्वंश एव च। भगो विवस्वान् पूषा च सविता दशमस्तथा। एकादशस्तथा त्वष्टा द्वादशो विष्णुरुच्यते। जघन्यजस्तु सर्वेषामादित्यानां गुणाधिकः'—इति महाभारते (१।६५।१५-१६)। ३५

पृक्तम्, पृक्थम् क्ली. [पृच्यते स्म संबध्यते स्मेति। पृच् सम्पर्के+क्त। थकारान्ते पृषोदरादिः] धनं; रिक्थम्; सम्पर्कयुक्ते त्रि.। 'पृक्तस्तुषारैर्गिरिनिर्झराणाम् अनोकहाकम्पितपुष्पगन्धी'—इति रघौ (२।१३)। ८०

पृतना स्त्री. [प्रियते इति, पृङ् व्यायामे+बाहुलकात् तनन् गुणाभावश्च] सेना; सेनाभेदः; वाहिनीत्रयम् (२४३ गजाः, ७२९ अश्वाः, २४३ रथाः; १२१५ पदातिकाः समुदायेन २४३०); 'त्रयो गुल्मा गणो नाम वाहिनी तु गणास्त्रयः। स्मृतास्तिस्रस्तु वाहिन्यः पृतनेति विचक्षणैः'—इति महाभारते (१।२।२१)। [व्याप्रियन्तेऽत्र योद्धारः इति] संग्रामः; 'शूरा इवेद्युयुधयो न जग्मयः अवस्य वो न पृतनासु येतिरे'—इति ऋग्वेदे (१।८५।८)। 'पृतनासु संग्रामेषु येतिरे'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ४५७

पृतनाषाट् [साह्] पुं. [पृतनां सहते इति। सह+'छन्दसि सहः' इति ण्वि। सहेरिति षः] इन्द्रः। ५३

पृथक् अव्य. [प्रथयतीति, प्रथ् विक्षेपे+'प्रथः कित् सम्प्रसारणं च' इति अजि, कित् सम्प्रसारणं च धातोः] भिन्नं; विना; अन्तरेण; ऋते; हिरुक्; नाना; वर्जनम्; 'तेषामेतैः सितैः शस्त्रैर्मुहुर्विलपतां त्वचः। पृथक् कुर्वन्ति वै याम्याः शरीरादतिदारुणाः'—इति मार्कण्डेये (१४।६६)। ५३

पृथग्जनः पुं. [पृथक् सज्जनेभ्यो विभिन्नो जनः] नीचः; 'यत्किञ्चिदपि वर्षस्य दापयेत् करसंज्ञितम्। व्यवहारेण जीवन्तं राजा राष्ट्रे पृथग्जनम्'—इति मनुः (७।१३७)। मूर्खः; पापी; भिन्नलोकः। ३४८

पृथवी स्त्री. ['प्रथेः षिवन् संप्रसारणं च' इति कस्यचिन्मते षवन्, षित्वाद् ङीष्] पृथ्वी; भूमिः। १५६

पृथिविः स्त्रीः [पृथिवी+ङीषो वा ह्रस्वः] पृथिवी। १५६

पृथिवी स्त्री. [प्रथते विस्तारं यातीति। प्रथ्+'प्रथेः षिवन् संप्रसारणं च' इति षिवन् सम्प्रसारणं च, ङीष्] मर्त्याद्यधिष्ठानभूता; भूः; भूमिः; अचला; अनन्ता; रसा; विश्वम्भरा; स्थिरा; धरा; धरित्री; धरणी; क्षौणी; ज्या; काश्यपी; क्षितिः; सर्वसहा; वसुमती; वसुधा; उर्वी; वसुन्धरा; गोत्रा; कुः; पृथ्वी; क्ष्मा; अवनिः; मेदिनी; मही; भू; भूमी; धरणिः; क्षोणिः; क्षोणी; क्षौणिः; क्षमा; अवनी; महिः; रत्नगर्भा; सागराम्बरा; अब्धिमेखला; भूतधात्री; रत्नावती; देहिनी; पारा; विपुला; मध्यमलोकवर्त्मा; धरणीधरा; धारणी; महाकान्ता; जगद्वहा; गन्धवती; खण्डनी; गिरिकर्णिका; धारयित्री; धात्री; सागरमेखला; सहा; अचलकीला; गौः; अब्धिद्वीपा; द्विरा; इडा; इडिका; इला; इलिका; उदधिवस्त्रा; इरा; आदिमा; ईला; वरा; उर्वरा; आद्या; जगती; पृथुः; भुवनमाता; निश्चला; बीजमसूः; श्यामा; क्रोडकान्ता; खगवती; अदितिः; पृथवी अन्तरिक्षम्; 'स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम'—इति ऋग्वेदे (१०।१२१।१)। 'पृथिवीत्यन्तरिक्षनाम'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। १५६

पृथुः त्रि. [प्रथ्+कु सम्प्रसारणं च] महत्; 'उल्लसितभ्रूधनुषा तव पृथुना लोचनेन रुचिराङ्गि! अचला अपि न महान्तः के चञ्चलभावमानीताः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (११७)। निपुणः; स्त्री. [प्रथते विस्तारमेतीति] कृष्णजीरकः, कृष्णजीरः सुगन्धश्च तथैवोद्गारशोधनः। कालाजाजी तु सुषवी कालिका चोपकालिका। पृथ्वीका कारवी पृथ्वी पृथुः कृष्णोपकुञ्चिका। उप-

बलाः'—इति मार्कण्डेये (७६।५५)। पर्वतभेदः; 'पर्वतस्य पुरुर्नाम यत्र जातः पुरूरवाः'—इति महाभारते (३।९०।२२) शरीरम्; 'पुरुसंज्ञे शरीरेऽस्मिन् शयनात् पुरुषो हरिः'—इति शङ्करविजये। ६९९

पुरुजः त्रि. [पुरोः जातः। पुरु+जन्+ड] प्रचुरः; प्राज्यः। ७०१

पुरुषः पुं. [पुरति अग्रे गच्छतीति, पुर+'पुरः कुषन्' इति कुषन्] आत्मा; 'पुराण्यनेन सृष्टानि नृतिर्यगृषिदेवताः। शेते जीवेन रूपेण पुरेषु पुरुषो ह्यसौ' –इति भागवते। 'पुरुसंज्ञे शरीरेऽस्मिन् शयनात् पुरुषो हरिः। शकारस्य षकारोऽयं व्यत्ययेन प्रयुज्यते'—इति शङ्करविजये (१३ अध्याये)। (३३१) [पिपर्ति पूरयति बलं यः, पुर्षु शेते य इति वा] पुमान्; पूरुषः; ना; नरः; पञ्चजनः; अर्थाश्रयः; अधिकारी; कर्मार्हः; जनः; अर्थवान्; मनुष्यः; मानवः; मर्त्यः; मानुषः; मनुः; रसिकराजः; घनकामाधामा; मदनशायकाङ्क्षः; मन्मथशायकलक्ष्यः; साङ्ख्यतत्त्वज्ञः; पुन्नागपादपः; 'कुम्भीकः पुरुषस्तुङ्गः पुन्नागो रक्तकेशरः'–इति वैद्यकरत्नमालायाम्। विष्णुः; 'एवं पुराणः पुरुषो विष्णुर्वेदेषु पठ्यते। अचिन्त्यश्चाप्रमेयश्च गुणेभ्यश्च परस्तथा'—इति हरिवंशे (१२८।२०)। शिवः; 'याम्यायाव्यक्तरूपाय सद्वृते शङ्कराय च। क्षेम्याय हरिकेशाय स्थाणवे पुरुषाय च'—इति महाभारते (१४।८।१४)। जीवः; 'प्रकृतिः क्षरमित्युक्तं पुरुषोऽक्षर उच्यते। ताविमौ प्रेरयत्यन्यः स परः परमेश्वरः'—इति शिवपुराणे। दुर्गा; 'महानिति च योगेषु प्रधानश्चैव कथ्यते। त्रिगुणा व्यतिरिक्ता सा पुरुषश्चेति चोच्यते'—इति देवीपुराणे। अश्वस्थानकभेदः; 'पश्चिमेनाग्रपादेन भुवि स्थित्वाग्रपादयोः। उद्धर्वप्रेरणया स्थानमश्वानां पुरुषः स्मृतः'—इति माघे (५।५६) श्लोकटीकायां मल्लिनाथधृतवचनम्। मेषमिथुनसिंहतुलाधनुःकुम्भराशयः; 'क्रूरोऽथ सौम्यः पुरुषोऽङ्गना च ओजोऽथ युग्मं विषमः समश्च। चरस्थिरद्व्यात्मकनामधेया मेषादयोऽमी क्रमशः प्रदिष्टाः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। १३४

पुरुषोत्तमः पुं. [पुरुषेषु उत्तमः] विष्णुः; 'पुराणात् सदनाच्चापि ततोऽसौ पुरुषोत्तमः'—इति महाभारते (५।७०।१०)। 'हरिर्यथैकः पुरुषोत्तमः स्मृतः महेश्वरस्त्र्यम्बक एव नापरः। तथा विदुर्मां मुनयः शतक्रतुं द्वितीयगामी न हि शब्द एष नः'—इति रघौ (३।४९)। जिनराजविशेषः; सोमभूः; पुरुषेषु मध्ये उत्तमः; 'विशेषसमभावस्य पुरुषस्यानघस्य च। अरिमित्रेऽप्युदासीने ममो यस्य समं व्रजेत्। समो धर्मः समः स्वर्गः समो हि परमं तपः। यस्यैवं मानसं नित्यं स नरः पुरुषोत्तमः'—इति धर्मपुराणे। [पुरुषोत्तमो जगन्नाथोऽस्त्यत्रेति, अच्] उत्कलखण्डैकदेशः; 'गयायां मङ्गला प्रोक्ता विमला पुरुषोत्तमे'—इति देवीभागवते। ग्रन्थकर्तृविशेषः; स तु प्रयोगरत्नमालाव्याकरणस्य द्विरूपकोशाक्षरहारावलीकोषाणाम् अन्येषां च कतिपयग्रन्थानां प्रणेता। २५

पुरुहूतः पुं. [पुरु प्रचुरं हूतमाह्वानं यज्ञेषु यस्य। पुरु यथा स्यात्तथा हूयते यज्वभिरिति वा। यद्वा पुरूणि बहूनि हूतानि नामानि यस्य] इन्द्रः; 'पुरुहूतादयं जज्ञे कुन्त्यामेव धनञ्जयः'—इति महाभारते (१।१२६।२५)। प्रचुरनामविशिष्टे त्रि.। 'स विश्वकायः पुरुहूत ईशः सत्यः स्वयं ज्योतिरजः पुराणः'—इति भागवते (८।१।१३)। स्त्री. भगवती; सा तु पुष्करे पीठस्थाने विराजते। 'विश्वे विश्वेश्वरीं प्राहुः पुरुहूतां च पुष्करे'—इति देवीभागवते (७।३०।५९)। ५३

पुरोगः त्रि. [पुरोऽग्रे गच्छतीति। पुरस्+गम्+ड] प्रधानः; अग्रगामी; 'ज्याघातरेखे सुभुजो भुजाभ्यां बिभर्ति यश्चापभृतां पुरोगः'—इति रघौ (६।५५)। ६९०

पुरोधाः [स्] पुं. [पुरोऽग्रे दधाति मङ्गलमिति। पुरस्+धा+'पुरसि च' इति असि स च डित्] पुरोहितः; शान्त्यादिकर्ता; धर्मकर्मादिकारकः; 'स जातकर्मण्यखिले तपस्विना तपोवनादेत्य पुरोधसा कृते'—इति रघुः। ४२६

पुरोभागी [न्] त्रि. [पुरः पूर्वमेव भजते इति। पुरस्+भज्+णिनि] दोषमात्रदर्शी; दोषग्राही; 'कुपितोऽपि स यत्रैनां न्यवधीद्रागमोहितः। तेनेवागात् पुरोभागिवितर्कातङ्कपात्रताम्'–इति राजतरङ्गिण्याम् (८।८३)। ३४६

पुरोहितः पुं. [पुरो दृष्टादृष्टफलेषु कर्मसु धीयते आरोप्यते यः। यद्वा पुर आदावेव हितं मङ्गलं यस्मात्] शान्त्यादिकर्ता; पुरोधाः; धर्मकर्मादिकारकः; 'वेदवेदाङ्ग-

तत्त्वज्ञो जपहोमपरायणः। आशीर्वादवचोयुक्त एष राजपुरोहितः'—इति चाणक्यः। 'काणं व्यङ्गमपुत्रं वानभिज्ञमजितेन्द्रियम्। न ह्रस्वं व्याधितं वापि नृपः कुर्यात् पुरोहितम्'—इति कालिकापुराणम्। 'पुरोहितो हितो वेदस्मृतिज्ञः सत्यवाक् शुचिः। ब्रह्मण्यो विमलाचारः प्रतिकर्तापदामृजुः'—इति कविकल्पलता; 'दोषागन्तुजमृत्युभ्यो रसमन्त्रविशारदौ। रक्षेतां नृपतिं नित्यं यत्नाद्वैद्यपुरोहितौ। ब्रह्मा वेदाङ्गमष्टाङ्गमायुर्वेदमभाषत। पुरोहितमते तस्माद्वर्तते भिषगात्मवान्'—इति सुश्रुते। ४२६

पुलकः पुं. [पुल+स्वार्थे कन्] रोमाञ्चः; रोमोद्भेदः; त्वक्पुष्पं; त्वगङ्कुरः; 'प्रेमलघूकृतकेशवक्षोभविपुलपुलककुचकलसा। गोवर्द्धनगिरिगुरुतां मुग्धवधूर्निभृतमुपहसति'—इति आर्यासप्तशत्याम्। शरीरान्तर्बहिर्भवकीटः (६३६); तुच्छधान्यम्; 'पुलका इव धान्येषु पूतिका इव पक्षिषु। मशका इव मर्त्येषु येषां धर्मो न कारणम्'—इति पञ्चतन्त्रे (३।९९)। प्रस्तरविशेषः; 'पुण्येषु पर्वतवरेषु च निम्नगासु स्थानान्तरेषु च तथोत्तरदेशगत्वात्। संस्थापिताश्च नखरा भुजगैः प्रकाशं सम्पूज्य दानवपतिं प्रथिते प्रदेशे। दाशार्णवागदवमेकलकालगादौ गुञ्जाञ्जनक्षौद्रमृणालवर्णाः। गन्धर्ववह्निकदलीसदृशावभासा एते प्रशस्ताः पुलकाः प्रसूताः'—इति गारुडे। मणिदोषविशेषः; हरितालं; गजान्नपिण्डं; गन्धर्वविशेषः; असुराजी; गल्वर्कः; क्ली. [पुलतीति, पुल्+क ततः संज्ञायां कन्] कङ्कुष्ठं; तच्च पर्वतीयमृत्तिकाविशेषः। ६५१

पुलाकः पुं. [पोलति उच्छ्रितो भवतीति। पुल्+'बलाकादयश्च' इति आकप्रत्ययेन निपातनात् साधुः] भक्तसिक्थकं; भक्तगुलिका; क्षिप्रं, यथा-पुलाककारी। तुच्छधान्यम्; 'पुलाकाश्चैव धान्यानां जीर्णाश्चैव परिच्छदाः'—इति मनुः (१०।१२५)। संक्षेपः; अल्पत्वम्। ८२९

पुलिनम् क्ली. [पोलतीति। पुल् महत्त्वे+'तलिपुलिभ्याञ्च' इति इनन्, स च कित्] द्वीपं; तोयोत्थिततटम्; 'क्वचिन्मणिनिकाशोदां क्वचित् पुलिनशालिनीम्। क्वचित् सिद्धजनाकीर्णां पश्य मन्दाकिनीं नदीम्'—इति रामायणे (२।९५।९)। जलादचिरोत्थितं तटं; तत्क्षणतोयत्यक्तद्वीपं; क्रमेणोत्थितं तटं; जलमध्यस्थमुत्थितं तटं; यक्षविशेषे पुं.। 'उलूकश्वसनाभ्याञ्च निमिषेण च पक्षिराट्। प्ररुजेन च संग्रामं चकार पुलिनेन च'—इति महाभारते (१।३२।१९)। ६७०

पुलिन्दः पुं. [पुल् महत्त्वे+'कुणिपुल्योः किन्दच्' इति किन्दच्] चण्डालभेदः; स च म्लेच्छशब्दवाच्यः; पुलिन्दकः। ५९८

पुष्करम् क्ली. [पुष्णातीति, पुष् पुष्टौ+'पुषः कित्' इति करन् स च कित्] व्योम; 'मेघाः सूर्यशिलासमानरुचयो ह्यल्पस्रवाल्पस्वना, हंसालीकमलालिमण्डितजलः पद्माकरः शोभनः। तीव्रस्निग्धमयूखचन्द्रविमला स्वानन्दिनी कौमुदी, चित्राघर्मविपक्वतोयसुरसा स्यान्निर्मलं पुष्करम्'—इति हारीते। हस्तिशुण्डाग्रम् (२१९); 'आलोलपुष्करमुखोल्लसितैरभीक्ष्णम् उक्षाम्बभूवुरभितो वपुरम्बुवर्षैः'—इति माघे (५।३०)। पद्मम् (६७९); 'सखीवच्च विगाहस्व सीते! मन्दाकिनीं नदीम्। कमलान्यवमज्जन्ती पुष्कराणि च भामिनि!'—इति रामायणे (२।९५।१४)। (८५८) पद्मं; खड्गफलं; व्योम; वाद्यभाण्डमुखम्; 'नदद्भिः स्निग्धगम्भीरं तूर्यैराहतपुष्करैः'—इति रघौ (१७।११)। कुष्ठौषधम्; 'उक्तं पुष्करमूलं तु पौष्करं पुष्करं च तत्। पद्मपत्रं च काश्मीरं कुष्ठभेदमिमं जगुः'—इति भावप्रकाशः। जलम्; 'आपो वै पुष्करं प्राणोऽथर्वा प्राणो वा'—इति शतपथब्राह्मणे (६।४।२।२)। तीर्थभेदः; 'गोकर्णे पुष्करारण्ये तथा हिमवतस्तटे'—इति महाभारते (१।३६।३)। खड्गकोषः; काण्डं; द्वीपभेदः; पुं. [पुष्+'पुषः कित्' इति करन्, स च कित्] रोगविशेषः; नागविशेषः; सारसपक्षी (२४४); नृपभेदः; स तु नलराजभ्राता। अयं हि कलिसाहाय्येन अक्षद्यूते नलं विजित्य निषधाधिपोऽभवत्। 'स समाविश्य च नलं समीपं पुष्करस्य च। गत्वा पुष्करमाहेदमेहि दीव्य नलेन वै'—इति महाभारते (३।५९।४)। वरुणपुत्रः; पर्वतविशेषः; वाद्यविशेषः; 'प्रावाद्यन्त ततस्तत्र वेणुवीणादिदर्दुराः। पणवाः पुष्कराश्चैव मृदङ्गाः पटहानकाः'—इति मार्कण्डेये (१०६।६१)। सप्तद्वीपानां मध्ये द्वीपविशेषः; 'शाकद्वीपस्य विस्ताराद्विगुणेन समन्ततः। क्षीरार्णवं समावृत्य द्वीपः पुष्करसंज्ञितः'—

इति कौर्मे। पुष्करद्वीपराजा; पुष्करद्वीपरथः; 'लोकेश्वरः सोऽपि नृभिर्मुनीन्द्रैः देवैः सहेन्द्रैरथ ब्रह्मचारी । द्वीपे शुभे पुण्यजनैरुपेते उवास राजा स तु पुष्करस्थः। तेनैव नाम्ना स तु पुष्करोऽपि सदोच्यते देवगणैः ससिद्धैः। तेनैव थानेन तथाम्बुजेन बभूव नाम्ना तमथाह्वयन्ति'—इत्यग्निपुराणम् । ब्रह्मकृततीर्थविशेषः; रूपतीर्थं; मुखदर्शनं; मेघनायकविशेषः; 'त्रियुते शाकवर्षे तु चतुर्भिः शेषिते क्रमात् । आवर्तं विद्धि संवर्तं पुष्करं द्रोणमम्बुदम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वे। क्रूरवारभद्रातिथि-भग्नपादनक्षत्रघटिताशुभजनकयोगविशेषः; 'पुनर्वसूत्त-राषाढा कृत्तिकोत्तरफाल्गुनी। पूर्वभाद्रं विशाखा च रविभौमशनैश्चराः। द्वितीया सप्तमी चैव द्वादशी तिथिरेव च। एतेषामेकदा योगे भवतीति त्रिपुष्करः' १,३७

पुष्करिणी स्त्री. [पुष्करवत् आकृतिरस्त्यस्या इति । पुष्कर+इनि; ततो ङीप्। पुष्कराणि पद्मानि सन्त्यत्रेति वा] जलाशयः। शतधनुः परिमितसमचतुरस्रजलाधारः; खातं; जलकूपी; पौष्करिणी; 'कूपवापीपुष्करिण्यो दीर्घिका द्रोण एव च। तडागः सरसी चैव सागरश्चाष्टमो मतः। सद्भिर्जलाशयः कार्यो यत्नाद्याम्योत्तरायतः'—इति वायुपुराणे। स्थलपद्मिनी; पुष्करमूलम्। [पुष्करं शुण्डादण्डोऽस्त्यस्या इति, इनि] हस्तिनी; सरोजिनी। ६७५

पुष्कलम् क्ली. [पुष्यति पुष्टिं गच्छत्यनेनेति । पुष्+'कलंश्च' इति कलन् स च कित्] बहु; 'राजानो हि महात्मानो योनिकर्मविशोधिताः। उद्धरन्ति प्रजाः सर्वास्तप आस्थाय पुष्कलम्'—इति महाभारते (३।३। १०)। ७०१

पुष्पम् क्ली. [पुष्प्यति विकसति यः। पुष्प् विकसने+अच्] तरुलतादीनां प्रसवः; प्रसूनं; कुसुमं; सुमनसः; सूनं; प्रसवः; सुमनः; 'उपहार्याणि पुष्पाणि मम कर्म-परायणः। यो मामुपानयेद् भूमे मम कर्मपथे स्थितः। पुष्पाणि तत्र यावन्ति मम मूर्द्धनि धारयेत्। स कृत्वा पुष्कलं कर्म मम लोकाय गच्छति'—इति वराह-पुराणम्। घोटकलक्षणविशेषः; 'आगन्तवस्तुरङ्गस्य ये भवन्त्यन्यवर्णगाः। बिन्दवः पुष्पसंज्ञास्तु ते हिताहित-संज्ञकाः'—इति अश्ववैद्यके (३।८२)। स्त्रीरजः; 'स्त्रीणां पुष्पं हरत्यन्या प्रवृत्तं सा तु कन्यका'—इति मार्कण्डेये (५१।४२)। विकाशः; धनदस्य विमानं; नेत्ररोगविशेषः; 'हरीतकी वचा कुष्ठं पिप्पली मरिचानि च। विभीतकस्य मज्जा च शङ्खनाभिर्मनःशिला। सर्वमेतत् समं कृत्वा छागीक्षीरेण पेषयेत्। नाशयेत् तिमिरं कण्डूं पटलान्यर्बुदानि च। अधिकानि च मांसानि यश्च रात्रौ न पश्यति। अपि द्विवार्षिकं पुष्पं मासेनैकेन साधयेत्। वर्तिश्चन्द्रोदया नाम नृणां दृष्टि-प्रसादनी'—इति चक्रपाणिदत्तः। १८६

पुष्पकम् क्ली. [पुष्पमिव पुष्पैर्वा कायति प्रकाशते इति। पुष्प+कै+क। पुष्प+संज्ञायां कन् वा। पुष्पमिव प्रतिकृतिः। पुष्प+'इवे प्रतिकृतौ' इति कन्] धनदस्य विमानं; कुबेरविमानं; नेत्ररोगः; रत्नकङ्कणं; रसा-ञ्जनं; लोहकांस्यं; मृदङ्गारशकटी; कासीसं; [पुष्प+स्वार्थे कन्] पुष्पं; प्रसूनम्; 'सप्ताभिमन्त्रितं कृत्वा करवीरस्य पुष्पकम्। स्त्रीणामग्रे भ्रामयेच्च क्षणाद्वै सा वशा भवेत्'—इति गारुडे। पुं. निर्विषसर्पजातिभेदः; 'निर्विषास्तु गलगोली शूकपत्रोऽजगरो दिव्यको वर्षाहिकः पुष्पशकली ज्योतीरथः क्षीरिकः पुष्पकोऽतिपताकोऽन्धाहिको गौराहिको वृक्षेशयः'—इति सुश्रुते। पर्वतभेदः; 'स्वर्णशृङ्गी शातशृङ्गी पुष्पको मेघपर्वतः'—इति मार्कण्डेये (५५।१३)। प्रासादस्य मण्डपभेदः; 'अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मण्डपानां च लक्षणम्। मण्डपान् प्रवरान् वक्ष्ये प्रासादस्यानुरूपतः। विविधा मण्डपाः कार्याः श्रेष्ठमध्यकनीयसः। नामतस्तान् प्रवक्ष्यामि शृणुध्वं द्विजसत्तमाः। पुष्पकः पुष्पभद्रश्च सुवृत्तोऽमृतनन्दनः। कौशल्यो बुद्धिसंकीर्णो गजभद्रो जयावहः'—इति विश्व-कर्मप्रकाशे। ८३

पुष्पदन्तः पुं. [पुष्पमिव शुक्लो दन्तोऽस्य] वायुकोणस्थ-दिग्गजः; (१२०) द्विवचनान्ते चन्द्राकौं; सूर्यचन्द्रौ। विद्याधरविशेषः; जिनभेदः; नागभेदः; 'अणीं कृत्वैलपुत्रश्च पुष्पदन्तश्चत्र्यम्बकः'—इति महाभारते (७।२००।७०)। पार्वतीप्रदत्तः कार्तिकेयस्यानुचर-विशेषः; 'उन्मादं पुष्पदन्तं च शङ्कुकर्णं तथैव च। प्रददावग्निपुत्राय पार्वती शुभदर्शना'—इति महाभारते (९।४५।४९)। विष्णोरनुचरविशेषः; 'जयन्तः श्रुतदेवश्च पुष्पदन्तोऽथ सात्वतः'—इति भागवते

(८।२१।१७)। शिवगणभेदः; 'प्रसादवित्तकः शम्भोः पुष्पदन्तो गणोत्तमः। न्यषेधि च प्रवेशोऽस्य नन्दिना द्वारि तिष्ठता'—इति कथासरित्सागरे (१।४९)। गन्धर्वविशेषः; पुष्पदन्तकः; स च महिम्नः स्तोत्रस्य कर्ता। १०४

पुष्पधन्वा [न्]पुं. [पुष्पाणि धनुरस्येति। 'धनुषश्च' इति अनङादेशः] कामदेवः; पुष्पधनुः; पुष्पचापः; पुष्पशरः; पुष्पशरासनः; पुष्पकेतनः; 'सहचरमधुहस्तन्यस्तचूताङ्कुरास्त्रः, शतमखमुपतस्थे प्राञ्जलिः पुष्पधन्वा' –इति कुमारसम्भवे (२।६४)। ३३

पुष्पपत्रः पुं. [बाणस्य मुखाकारबोधनाय पुष्पपत्रादिशब्दाः उत्तरपदे प्रयुज्यन्ते, अतः पुष्पपत्रान्तादिबाणप्रभृति–बोधकाः शब्दाः तत्तद्विशेषवाचिनो भवन्ति इति भावः] बाणविशेषः। ४६९

पुष्परथः पुं. [पुष्पम् इव, तद्वत् कोमल स्पर्शः इत्यर्थः, रथः] क्रीडारथः; सुकुमाररथः। ४४६

पुष्परसः पुं. [पुष्पाणां रसः] मधु; मकरन्दः; 'पलं पलं चापि कटुत्रयं च तथा चतुर्जातफलं विचूर्ण्य। पलानि षट् पुष्परसस्य चापि विनिक्षिपेत्तत्र विमिश्रयेच्च'—इति भावप्रकाशे। ६२१

पुष्परसाह्वयम् क्ली. [पुष्परसः इत्याह्वयः आख्या यस्य] मधु। ६२१

पुष्पलकः पुं. [पुष्पं, तद्वत् तनुनिम्नस्थूलोर्ध्वम् आकारमित्यर्थः, लाति। पुष्प+ला+क, संज्ञायां कन्] कीलकः; शङ्कुः। ४५१

पुष्पलिक्षः पुं. [पुष्पाणि निक्षति चुम्बति। पुष्प+णिक्ष्+ 'कर्मण्यण्', पृषोदरादित्वात् नस्य लः] मधुकरः; मधुपः; भ्रमरः। २५५

पुष्पलिट् [ह्]पुं. [पुष्पं लेढीति। लिह्+क्विप्] भ्रमरः; भृङ्गः। २५५

पुष्पवती स्त्री. [पुष्पमस्त्यस्या इति। पुष्प+मतुप्; मस्य वः ततो ङीप्] रजस्वला; 'कालमेही भवेत् सोऽपि पुष्पवत्यांश्च धर्षणात्।' तीर्थविशेषः; 'पुष्पवत्यामुपस्पृश्य त्रिरात्रोपोषितो नरः। गोसहस्रफलं लब्ध्वा पुनाति स्वकुलं नृप!'–इति महाभारते (३।८५।१२)। पुष्पविशिष्टे त्रि.। 'पुष्पवद्भिः फलोपेतैश्छायावद्भिर्मनोरमैः'—इति रामायणे (२।९४।१०)। ४८८

पुष्पवन्तौ पुं. [पुष्प विकसने+भावे घञ्, पुष्पो विकासोऽस्त्यनयोरिति। पुष्प+मतुप्, मस्य वः] एकयोक्त्या चन्द्रसूर्यौ। द्विवचनान्तोऽयं शब्दः। १२०

पुष्पवाटी स्त्री. [पुष्पाणां वाटी] पुष्पोद्यानं; पुष्पवाटिका। 'वाटी पुष्पाद्वृक्षाच्चासौ क्षुद्रारामः प्रसेविका'—इति हैमः। २१३

पुष्पहीना स्त्री. [पुष्पेण हीना] निष्कला; निष्कली; रजःशून्या। पुं. उडुम्बरवृक्षः। ४८७

पुष्यः पुं. [पुष्यन्त्यस्मिन्नर्था इति। पुष्+'पुष्यसिध्यौ नक्षत्रे' इति क्यप्] अश्विन्यादिसप्तविंशतिनक्षत्रान्तर्गताष्टमनक्षत्रं; सिध्यः; तिष्यः; पुष्या; 'प्रसन्नगात्रः पितृमातृभक्तः स्वधर्मयुक्तोऽभिनयभियुक्तः। भवेन्मनुष्यः खलु पुष्यजन्मा सम्मानचामीकरवाहनाढ्यः'–इति कोष्ठीप्रदीपः। पौषमासः; कलियुगं; सूर्यवंशीयनृपविशेषः; 'तस्य प्रभानिर्जितपुष्परागं पौष्यां तिथौ पुष्यमसूत पत्नी। तस्मिन्नपुष्यन्नुदिते समग्रां पुष्टिं जनाः पुष्य इव द्वितीये'—इति रघौ (१८।३२)। [पुष्+ भावे क्यप्] पुष्टिः, 'त्रिः सप्त विष्पुलिङ्गका विषस्य पुष्यमक्षन्'—इति ऋग्वेदे (१।१९१।१२) 'विषस्यास्मदावरकस्य पुष्यं पोषमक्षन्'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ५१

पुष्यरथः पुं. [पुष्य इव रथः, पुष्ये यात्रोत्सवादौ रथो वा] यत् चक्रयानं युद्धार्थं न भवति, किन्तु यात्रोत्सवादौ सः; क्रीडार्थं चक्रयानम्; 'महारथः पुष्यरथं रथाङ्गी क्षिप्रं क्षपानाथ इवाधिरूढः'—इति माघे (३।२२)। ४४६

पुष्यलकः पुं. [पुष्यं पुष्टिं लकति लाकयति वा। पुष्य+ लक्+अच्] कीलः; क्षपणकः; गन्धमृगः; 'केशेषु चमरीं हन्ति सीम्नि पुष्यलको हतः'–इति व्याकरणान्तरम्। पाणिनीये 'पुष्कलकः' इति पाठः। ४५१

पुस्तकर्मा त्रि. [पुस्तं शोभाकरं कर्म यस्य] लेप्यादिशिल्पकर्मकर्ता। ५९१

पूगः पुं. [पूयतेऽनेनेति, पू+'छापूखडिभ्यः कित्'–इति गन् स च कित्] गुवाकः; समूहः (६८६); 'अनन्ततेजा गोविन्दः शत्रुपूगेषु निर्व्यथः। पुरुषः सनातनतमो यतः कृष्णस्ततो जयः'–इति महाभारते (६।२१।१४)। छन्दः; भावः; कण्टकिवृक्षः। २००

पूजा स्त्री. [पूजनमिति, पूज्+'चिन्तिपूजिकथिकुम्बि-

चर्चश्च' इति अङ ततष्टाप्] पूजनं; नमस्या; अपचितिः; सपर्या; अर्चा; अर्हणा; नुतिः; 'अपि रामे महाभागा मम माता यशस्विनी। वन्यैरुपाहरत् पूजां पूजार्हे सर्वदेहिनाम्'—इति रामायणे (१।५१।५)। १२८

पूजितः त्रि. [पूज्+क्त] अर्चितः; अञ्चितः; प्राप्तपूजः; 'निवृत्ते भरते धीमानत्रे रामस्तपोवनम्। प्रपेदे पूजितस्तस्मिन् दण्डकारण्यमीयिवान्'—इति भट्टिः (४।१)। ३८४

पूज्यः त्रि. [पूजयितुमर्हः, पूज्+'अर्हे कृत्यतृचश्च' इति यत्] पूजनीयः; पूजितव्यः; पूजिलः; प्रतीक्ष्यः; 'अहं हि पूर्वो वयसा भवद्भ्यस्तेनाभिवादं भवतां न युक्तम्। यो विद्यया तपसा जन्मना वा वृद्धः स पूज्यो भवेति द्विजानाम्। अष्टक उवाच-'अवादीश्चेद्वयसास्मि प्रवृद्ध इति वैराजाम्यधिकः कथञ्चित्। यो वै विद्वांस्तपसा स वृद्धः स एव पूज्यो भवति द्विजानाम्'—इति मात्स्ये ३९ अध्याये। ३८४

पूपः पुं. [पू+क्विप्। पुवं पवित्रं पाति रक्षतीति। पू+पा+क] पिष्टकः; 'मधु हृत्वा नरो दंशः पूपं हृत्वा पिपीलिकः'—इति मार्कण्डेये (१५।२४)। ३१९

पूपलिका स्त्री. [पूपं तदाकारं लातीति। पूप+ला+क+टाप्] पोलिका; पूपली; पूपिका; पूलिका; पूपः। ३१९

पूरः पुं. [पूरयतीति, पूर+क] जलसमूहः; अपां वेगः; 'महोदधेः पूर इवेन्दुदर्शनाद् गुरुः प्रहर्षः प्रबभूव नात्मनि' —इति रघौ (३।१७)। व्रणसंशुद्धिः; खाद्यविशेषः; प्राणायामादिकर्तुर्नासारन्ध्रेण बहिः पवनाकर्षणम्; 'प्राणस्य शोधयेन्मार्गं पूरकुम्भकरेचकैः। प्रतिकूलेन वा चित्तं यथास्थिरमचञ्चलम्'—इति भागवते (३।२८। ९)। बीजपूरः; 'बीजपूरो मातुलुङ्गः सुफलः फलपूरकः। लुङ्गुधः पूरकः पूरो बीजपूर्णोऽम्बुकेशरः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। क्ली. [पूरयति सुगन्धेनेति। पूर+क] दाहागुरु। ६६८

पूरुषः पुं [पुरति अग्रे गच्छतीति। पुर्+'पुरः कुषन्'—इति कुषन्। 'अन्येषामपि दृश्यते' दीर्घः] पुरुषः; पुमान्। ३३१

पूर्णः त्रि. [पूर्यते स्मेति। पॄ पूरी वा+क्त, 'वा दान्तशान्तपूर्णदस्तस्पष्टच्छन्नज्ञप्ताः'—इति इडभावो निपात्यते] पूरितः; सकलः; 'तदर्थस्य च पारोक्ष्यं यद्येवं किं ततः शृणु। पूर्णानन्दैकरूपेण प्रत्यग्बोधोऽवतिष्ठते'—इति पञ्चदश्याम्। शक्तः; स्वीयसुखेच्छावदन्यः; प्रधायाः पुत्रभेदः; 'सिद्धः पूर्णश्च बर्ही च पूर्णायुश्च महायशाः'—इति महाभारते (१।६५।४७)। नागभेदः; 'कोटिशो मानसः पूर्णः शलः पालो हलीमकः'—इति महाभारते (१।५७।५)। ७०२

पूर्णमासी स्त्री. [पूर्णो मासश्चान्द्रमासो यत्र। गौरादित्वात् ङीष्] पूर्णिमा; पूर्णमा; पौर्णमासी। तस्यां जातफलम्—'कन्दर्पतुल्यो युवतीप्रियश्च न्यायाप्तवित्तः सततं सहर्षः। शूरो बली शास्त्रविचारदक्षश्चेत्पूर्णिमा जन्मनि यस्य जन्तोः।' ११२

पूर्वः त्रि. [पूर्व् पूरणे निवासे वा+अच्] प्रथमः; 'यदैव पूर्वे जनने शरीरं सा दक्षरोषात् सुदती ससर्ज। तदा प्रभृत्येव विमुक्तसङ्गः पतिः पशूनामपरिग्रहोऽभूत्'—इति कुमारे (१।५३)। 'गुरोः कुले न भिक्षेत न ज्ञातिकुलबन्धुषु। अलाभे त्वन्यगेहानां पूर्वं पूर्वं विवर्जयेत्'—इति मनुः (२।१०४)। आदिः; 'ब्राह्मणः प्रणवं कुर्यादादावन्ते च सर्वदा। स्रवत्यनोङ्कृतं पूर्वं पुरस्ताच्च विशीर्यति'—इति मनुः (२।७४)। प्राग्दिग्देशकालाः; 'दक्षिणेन मृतं शूद्रं पुरद्वारेण निर्हरेत्। पश्चिमोत्तर पूर्वैस्तु यथायोगं द्विजन्मनः'—इति मनुः (५।९२)। समग्रम्; अग्रः; 'त्रिराचामेदपः पूर्वं द्विः प्रसृज्यात्ततो मुखम्। खानि चैव स्पृशेदद्भिरात्मानं शिर एव च'—इति मनुः (२।५०)। ७०७

पूर्वजः पुं. [पूर्वस्मिन् जातः इति। पूर्व+जन्+ड] ज्येष्ठभ्राता; पूर्वकालोत्पन्ने त्रि.। 'तामद्भिः परिषिच्यार्तां महर्षिरभिवाद्य च। मातरं पूर्वजः पुत्रो व्यासो वचनमब्रवीत्'—इति महाभारते (१।१०५।२६)। ५०६

पूर्वदिक्पतिः पुं. [पूर्वदिशः पतिरधिपतिः] इन्द्रः। ५३

पूर्वदेवः पुं. [पूर्वश्चासौ देवश्चेति। यद्वा पूर्वं देव इति सुप्सुपेति समासः] असुरः; नरनारायणावृषी, तत्र द्विवचनान्तोऽयम्। 'तेषां मनश्च तेजश्चाप्याददानाविवौजसा। पूर्वदेवौ व्यतिक्रान्तौ नरनारायणावृषी'—इति महाभारते (५।४९।५)। ५

पूर्वरङ्गः पुं. [पूर्वं रज्यतेऽस्मिन्निति। पूर्व+रञ्ज्+अधिकरणे घञ्] नाट्योपक्रमः; प्राक्संगीतं; गुणनिका; 'यन्नाट्यवस्तुनः पूर्वं रङ्गविघ्नोपशान्तये। कुशीलवाः

कुञ्ची च कुञ्ची च बृहज्जीरक इत्यपि'—इति भावप्रकाशः। त्वक्पर्णी; हिङ्गुपत्री; 'हिङ्गुपत्री तु कवरी पृथ्वीका पृथुका पृथुः'—इति भावप्रकाशः। अहिफेनः; पुं. [प्रथते विख्यातो भवतीति। प्रथ्+'प्रथिम्रदिभ्रस्जां सम्प्रसारणं सलोपश्च' इति कु, सम्प्रसारणं च] त्रेतायुगे सूर्यवंशीयपञ्चमनृपः; वेननृपस्य दक्षिणकरमथनाज्जातः; 'पृथुना प्रविभक्ता च शोभिता च वसुन्धरा। शस्यरत्नवती स्फीता पुरपत्तनशालिनी'—इति पाद्मोत्तरखण्डे। अरेणराजपुत्रः; 'अयोधस्तस्य पुत्रोऽभूत् ककुत्स्थो नाम वीर्यवान्। ककुत्स्थस्य अरेणाभूत्तस्य पुत्रः पृथुः स्मृतः'—इति अग्निपुराणे। अग्निः; प्रियव्रतवंशोद्भवस्य विभोः पुत्रः; 'भुवस्तस्मात् तथोद्गीथः प्रस्तारस्तत्सुतो विभुः। पृथुस्ततोऽभवन्नक्तो नक्तस्यापि गयः सुतः'—इति विष्णुपुराणे (२।१।३८)। तामसमन्वन्तरे ऋषिविशेषः; 'ज्योतिर्धामा पृथुः काव्यश्चैत्रोऽग्निर्वलकस्तथा। पीवरश्च तथा ब्रह्मन् ! सप्त सप्तर्षयोऽभवन्'—इति मार्कण्डेये (७४।५९)। ६९९

पृथुकः पुं.—क्ली. [पृथुरेव, संज्ञायां कन्। यद्वा प्रथते इति, प्रथ्+'अर्भकपृथुकेति' कुकन् सम्प्रसारणं च] चिपिटकः; 'द्विः स्विन्नमन्नं पृथुकं शुद्धं देशविशेषके। नात्यन्तशस्तं विप्राणां भक्षणे च निवेदने। अभक्ष्यं च यतीनां च विधवाब्रह्मचारिणाम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते। 'पृथुका गुरवो बल्याः कफविष्टम्भकारिणः'—इति वाग्भटे। चाक्षुषमन्वन्तरे देवगणभेदः; 'आद्या प्रसूता ऋभवः पृथुकाश्च दिवौकसः'—इति हरिवंशे (७।३२)। ५८५

पृथुकः त्रि. [प्रथते इति, प्रथ्+'अभकपृथुकपाका वयसि' इति कुकन् सम्प्रसारणं च। यद्वा पृथु यथा स्यात् तथा कायति शब्दायते इति, कै शब्दे+क] बालकः; 'प्रक्रीडितान् रेणुभिरेत्य तूर्णं निन्युर्जनन्यः पृथुकान् पथिभ्यः'—इति माघे (३।३०)। पृथुका=बालिका। ५०२

पृथुरोमा [न्] पुं. [पृथूनि रोमाणि लोमस्थानीयानि शल्कान्यस्येति] मत्स्यः; बृहल्लोमयुक्ते त्रि.। ६५७

पृथुलम् त्रि. [पृथु पृथुत्वमस्यास्तीति। पृथु+सिध्मादित्वाल् लच्। यद्वा पृथु लातीति, ला+क] महत्; 'श्रोणिषु प्रियकरः पृथुलासु स्पर्शमाप सकलेन तलेन'—इति माघे (१०।६५)। ६९९

पृथ्वी स्त्री. [पृथुः स्थूलत्वगुणयुक्ता। 'वोतो गुणवचनात्' इति ङीष्] पृथिवी; 'मधुकैटभयोर्मेदःसंयोगान् मेदिनी स्मृता। धारणाच्च धरा प्रोक्ता पृथ्वी विस्तारयोगतः'—इति देवीभागवते (३।१३।८)। 'पृथोर्दुहितृत्वस्वीकारादेतन्नाम, यथा—'दुहितृत्वमनुप्राप्ता देवी पृथ्वी तथोच्यते'—इति अग्निपुराणे। हिङ्गुपत्री; कृष्णजीरकः; 'कृष्णजीरः सुगन्धश्च तथैवोद्गारशोधनः। कालाजाजी तु सुषवी कालिका चोपकालिका। पृथ्वीका कारवी पृथ्वी पृथुः कृष्णोपकुञ्चिका। उपकुञ्ची च कुञ्ची च बृहज्जीरक इत्यपि'—इति भावप्रकाशः। वृत्तार्हन्माता; पुनर्नवा; स्थूलैला; सप्तदशाक्षरपादकश्छन्दोभेदः। १५६

पृदाकुः पुं. [पर्दते, इति, पर्द कुत्सिते शब्दे+पर्देर्नित् सम्प्रसारणमल्लोपश्च' इति काकु, रेफस्य सम्प्रसारणम् अल्लोपश्च] सर्पः; 'स भीमं सहसाभ्येत्य पृदाकुः कुपितो भृशम्। जग्राहाजगरो ग्राहो भुजयोरुभयोर्बलात्'—इति महाभारते (६।१७८।२७)। वृश्चिकः; व्याघ्रः; चित्रकः; कुञ्जरः; वृक्षः। ६४०

पृश्निः त्रि. [स्पृश्यते इति, स्पृश् संस्पर्शे+'घृणिपृश्नीति' नि, निपातनात् साधुः] अल्पतनुः; 'दक्षां पृश्निं बृहतीं विप्रकृष्टां शिवामृद्धां भगिनीं सुप्रसन्नाम्। विभावरीं सर्वभूतप्रतिष्ठां गङ्गां गता ये त्रिदिवं गतास्ते'—इति महाभारते (१३।२६।८६)। खर्वदुर्बलाल्पास्थिः; किरातः; शुक्लवर्णः; 'धेनुं च पृश्निं वृषभं सुरेतसम्'—इति ऋग्वेदे (१।१६०।३)। 'पृश्निं शुक्लवर्णां धेनुम्' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। प्राप्ततेजाः; 'आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः'—इति ऋग्वेदे (१०।१८९।१)। स्त्री. [स्पृशति द्रव्यजातं स्पृश्यते वा] रश्मिः; अन्नं; वेदाः; जलम्; अमृतं; सुतपोराजपत्नी; सैव जन्मान्तरे देवकी भूता। ६११

पृषत् क्ली. [पर्षति सिञ्चतीति। पृष् सेचने+'वर्तमाने पृषद्बृहन्महदिति' अतिप्रत्ययो गुणाभावश्च निपात्यते। शतृवदस्य कार्यं विज्ञेयम्] जलबिन्दुः; 'पृषदपरुषविषाणाग्रेण लुठति' इति भागवते ५ स्कन्धे ८ अध्यायः। 'पृषत् जलबिन्दुस्तद्वत् अपरुषेण मृदुना विषाणाग्रेण लुठति सङ्घट्टयति'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। इदं द्विवचनबहुवचनान्तमपि भवति। ६७७

पृषतः पुं. [पर्षतीति। पृष् सेचने+'पृषिरञ्जिभ्यां कित्'

इति अतच् स च कित्] श्वेतबिन्दुयुक्तमृगः; रङ्कुः; शवलपृष्ठकः; 'हरिणर्ष्यकुरङ्गकरालकृतमालशरभश्वादंष्ट्रपृषतचारुस्करमृगमातृकाप्रभृतयो जङ्घाला मृगाः। कषाया मधुरा लघवो वातपित्तहरास्तीक्ष्णा हृद्या वस्तिशोधनाश्च'—इति सुश्रुते । बिन्दुः (६७७); 'करीव सिक्तं पृषतैः पयोमुचां शुचिव्यपाये वनराजिपल्वलम्'—इति रघौ (३।३)। द्रुपदराजस्य पिता; 'भरद्वाजसखा चासीत् पृषतो नाम पार्थिवः। तस्यापि द्रुपदो नाम तदा समभवत् सुतः'—इति महाभारते (१।१३१।१७)। मण्डलिसर्पान्तर्गतसर्पविशेषः; 'आदर्शमण्डलः श्वेतमण्डलो रक्तमण्डलश्चित्रमण्डलः पृषतो रोध्रपुष्पः'—इति सुश्रुते। २३०

पृषत्कः पुं. [पृष्यते सिच्यते क्षिप्यते इति। पृष्+अति। ततः संज्ञायां कन्] बाणः; 'अप्यर्द्धभागे परबाणलूना धनुर्भृतां हस्तवतां पृषत्काः'—इति रघौ (७।४५)। ४६६

पृषदश्वः पुं. [पृषन् मृगविशेषोऽश्व इव वाहको यस्य] वायुः; 'स हि स्वसृत् पृषदश्वो युवा गणोऽया ईशानस्तवीषिभिरावृतः'—इति ऋग्वेदे (१।८७।४)। राजर्षिभेदः; 'व्यश्वः सदश्वो वध्र्यश्वः पृथुवेगः पृथुश्रवाः। पृषदश्वो वसुमनाः क्षुपश्च सुमहाबलः'—इति महाभारते (२।८।१२)। विरूपस्य पुत्रः; 'विरूपः केतुमान् शम्भुरम्बरीषसुतास्त्रयः । विरूपात् पृषदश्वोऽभूत् तत्पुत्रस्तु रथीतरः'—इति भागवते (९।६।१)। ७५

पृष्ठम् क्ली. [पृष्यते सिच्यते इति । पृष्+'तिथपृष्ठगूथयूथप्रोथाः' इति थक्प्रत्ययेन निपातनात् सिद्धम्] शरीरपश्चाद्भागः; 'न विगर्ह्यकथां कुर्याद् बहिर्माल्यं न धारयेत् । गवां च यानं पृष्ठेन सर्वथैव विगर्हितम्'—इति मनुः (४।७२)। चरममात्रं; स्तोत्रविशेषः; 'त्रिवृतस्तोमाद्रथन्तरं पृष्ठं निरमिमीत'—इति शतपथब्राह्मणे (८।१।१।५)। ५२८

पृष्ठग्रन्थिः पुं. [पृष्ठस्य ग्रन्थिः] गडुः। ६०४

पृष्ठवाह्यः पुं. [पृष्ठे वाह्यं वहनीयद्रव्यमस्य] भारवाहकवृषः; स्थौरी; पृष्ठ्यः। २६६

पृष्ठास्थि क्ली. [पृष्ठस्य अस्थि] पृष्ठवंशः। ८०३

पृष्णिः त्रि. [पृश्नि+पृषोदरादित्वात् साधुः] पृश्निः; अल्पतनुः; प्रश्नी; पार्ष्णिः। ६११

पेचकः पुं. [पचति पच्यते वा। पच्+'पचिमच्योरिच्च' इति वुन्, उपधाया इच्च] करिपुच्छमूलोपान्तः; पृष्ठाच्छादकमांसपिण्डविशेषः; पर्यङ्कः; यूकः; मेघः; पक्षिविशेषः; उलूकः; वायसारातिः; शक्राख्यः; दिवान्धः; वक्रनासिकः; हरिनेत्रः; दिवाभीतः; नखाशी; पीयुः; घर्घरः; काकभीरुः; नक्तचारी; निशाचरः; कौशिकः; रूपनाशनः; पेचः; रक्तनासिकः; भीरुकः। २१९

पेटकम् क्ली. [पेटतीति, पिट्+ण्वुल्] मण्डलं; समूहः, वंशवेत्रादिमयसमुद्गकप्रायः पिटकः; पेटा; मञ्जूषा। ६८७

पेटा स्त्री. [पिट्+अच्+टाप्] मञ्जूषा। ३१२

पेटाकः पुं. [पेटक+पृषोदरादित्वात् साधुः] पेटकम्; मञ्जूषिका। ६८७

पेलवम् त्रि. [पेलं कम्पनं वातीति। पेल+वा+क] कृशं; विरलं; कोमलम्; 'पदं सहेत भ्रमरस्य पेलवं शिरीषपुष्पं न पुनः पतत्रिणः'—इति कुमारे (५।४)। ७१७

पेशलः त्रि. [पिश् अवयवे+भावे घञ्। पेशं लातीति, ला+क। यद्वा पेशोऽस्यास्तीति, सिध्मादित्वात् लच्] सुन्दरः; 'युवतयः कुसुमं दधुराहितं तदलके दलकेसरपेशलम्'—इति रघौ (९।४०)। चारुः; 'महिषस्य वचः श्रुत्वा पेशलं मन्त्रिसत्तमः। जगाम तरसा कामं गजाश्वरथसंयुतः'—इति देवीभागवते (५।९।५९)। दक्षः; चतुरः; कोमलः; 'इदं शरीरं परिणामपेशलं पतत्यवश्यं श्लथसन्धिजर्जरम्। किमौषधैः क्लिश्यसि मूढ दुर्मते! निरामयं कृष्णरसायनं पिब'—इति मुकुन्दमालायाम् (२१)। धूर्तः; पुं. विष्णुः। ६०९

पेशी स्त्री. [पिश्+इन् वा ङीष्] अण्डम्; गर्भावेष्टनचर्ममयकोषः; 'धमनीस्रोतोऽवस्थितद्विवरपेशीप्रभृतिषु वा शरीरप्रदेशेषु'—इति सुश्रुते । सुपक्वकलिका; 'मधुकं बिल्वपेश्यश्च शर्करामधुसंयुताः । अतीसारं निहन्युश्च शालीषष्टिकयोः कणाः'—इति सुश्रुते । खड्गपिधानकं; मांसी; मांसपिण्डी; 'तां स मांसमयीं पेशीं ददर्श जपतां वरः।' नदीभेदः; पिशाचीविशेषः; राक्षसीविशेषः; वाद्यविशेषः; 'तथा भेर्यश्च पेश्यश्च क्रकचा गोविषाणिकाः। सहसैवाभ्यहन्यन्त स शब्दस्तुमुलोऽभवत्'—इति महाभारते (६।४२।४३)। २४०

पेशीकोशः पुं. [पेश्याः कोशः मांसकलिकापिण्डः] अण्डः; पक्षिगर्भः; देहस्थग्रन्थिविशेषः। २४०

पोगण्डः त्रि. [अपकृष्टः गण्डः एकदेशोऽस्य। पृषोदरादिः] अपोगण्डः; स्वभावतो न्यूनाधिकाङ्गः; ऊनविंशत्यङ्गुलीकैकविंशत्यङ्गुलीकादिजनः; विकलाङ्गः; विकलाङ्गकः; पुं. [पुनातीति, पू+विच्, पौः शुद्धो गण्डो यस्य] दशवर्षीयबालकः; 'रोगी वृद्धस्तु पोगण्डः कुर्वन्त्यन्यैर्व्रतं सदा'—इति ब्रह्मपुराणम्। ३८७

पोटा स्त्री. [पुटति स्त्रीपुरुषस्वरूपं संश्लिष्यतीति। पुट्+अच्+टाप्] स्त्रीपुंसलक्षणा; स्त्रीपुंसयोर्लक्षणं स्तनश्मश्र्वादिरूपं यस्यां सा। (४९२) वोटा; दासी। ४३०

पोतः पुं. [पुनाति इति, 'पू+हंसिमृग्रिण्वामिदमिलूपूधूर्विभ्यस्तन्' इति तन्] किशोरकः; पुं.- स्त्री. शिशुः (५०२); 'तत्रस्थात् स्वर्णमूलाख्याद् गिरेः संप्रेष्य राक्षसान्। आनाययत् पक्षिपोतं गरुडान्वयसम्भवम्'—इति कथासरित्सागरे (१२।१३३)। वस्त्रं (५४८); (६५५) समुद्रयानं; वहित्रम्; 'सम्प्राप्य मानुषभवं सकलाङ्गयुक्तं पोतं भवार्णवजलोत्तरणाय कामम्। सम्प्राप्य वाचकमहो न शृणोति मूढः सो वञ्चितोऽत्र विधिना सुहृदं पुराणम्'—इति देवीभागवते (१।३।४२)। 'पोतारूढास्ततः सर्वे पोतवाहरुपासिताः। अपारे दुस्तरेऽगाधे यान्ति वेगेन नित्यशः'—इति वाराहे। गृहस्थानं; वेश्मभूमिः; पोटः; दशवर्षीयहस्ती। ४४०

पोतवणिक् पुं. [पोतेन पोतस्य वा वणिक्] वहित्रेण वाणिज्यकर्ता; नौवाणिज्यकरः; सांयात्रिकः; समुद्रयानचारी। ६५५

पोताधानम् क्ली. [आधीयतेऽत्रेति, ल्युट्, आधानम्। पोतानाम् अण्डजमत्स्यानामाधानम्] क्षुद्राण्डमत्स्यसंघातः; बीजरूपा मत्स्यशिशवः। ६६१

पोत्रम् क्ली. [पूयतेऽनेनेति। पू+'हलसूकरयोः पुवः' इति ष्ट्रन्] लाङ्गलमुखाग्रं; शूकरमुखाग्रं; वज्रं; वहित्रं; पोतृनामर्त्विजः पात्रभेदः; 'मरुत ! पिबत ऋतुना पोत्राद्यज्ञं पुनीतन, यूयं हि ष्ठा सुदानवः'—इति ऋग्वेदे (१।१५।२)। 'पोत्रात् पोतृनामकस्य ऋत्विजः पात्रात् सोमं पिबत'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ८३२

पोत्री [न्] पुं. [पोत्रमस्यास्तीति, पोत्र+इनि] शूकरः; पोत्रविशिष्टे त्रि.। २२६

पौत्रः पुं. [पुत्रस्यापत्यम्। पुत्र+'अनृष्यानन्तर्ये विदादिभ्योऽञ्' इति अञ्] पुत्रस्य पुत्रः; नप्ता; 'नाती' इति भाषा। 'पुत्रेण लोकाञ्जयति पौत्रेणानन्त्यमश्नुते। अथ पुत्रस्य पौत्रेण ब्रध्नस्याप्नोति पिष्टपम्'—इति वशिष्ठहारीतवचनम्। ५०५

पौरः पुं. [पुरे वसति, शैषिकोऽण्] पुरोद्भूतः; नागरिकः; 'इति समगुणयोगप्रीतयस्तत्र पौराः, श्रवणकटु नृपाणामेकवाक्यं विवव्रुः'—इति रघौ (६।८५)। पुरुराजपुत्रः; 'शग्धी नो अस्य बद्धं पौरमाविथ धिय इन्द्र सिषासतः'—इति ऋग्वेदे (८।३।१२)। [पूरः पूरक एव, स्वार्थे अण्] उदरपूरके त्रि.। 'पृणन्तस्ते कुक्षी वर्द्धयन्त्वित्था सुतः पौर इन्द्रमाव'—इति ऋग्वेदे (२।११।११)। क्ली. [पुरे भवम्। पुर+'तत्र भवः' इत्यण्] रोहिषतृणं; 'रामकपूर' इति भाषा। 'कत्तृणं रौहिषं देवजग्ध सौगन्धिकं तथा। भूतीकं व्यासपौरं च श्यामकं धूमगन्धिकम्'—इति भावप्रकाशः। ८६४

पौरुषम् क्ली. [पुरुष+अण्] पुरुषस्य तेजः; पुरुषकारः; 'क्लीवा हि दैवमेवैकं प्रशंसन्ति न पौरुषम्। दैवं पुरुषकारेण घ्नन्ति शूराः सदोद्यमाः'—इत्यग्निपुराणम्। 'उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीर्दैवेन देयमिति कापुरुषा वदन्ति। दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्त्या यत्ने कृते यदि न सिध्यति कोऽत्र दोषः'—इति हितोपदेशः। त्रि. [पुरुषस्य कर्म। पुरुषस्य भावः] (८०५) ऊर्द्धविस्तृतदोःपाणिनृमाणम्; पुरुषपरिमाणम्; पुरुषवाह्यः; 'पणं यानं तरे दाप्यं पौरुषोऽर्धपणं तरे'—इति मनुः (८।४०४)। ७२३

पौरोगवः पुं.- स्त्री. [पुरोऽग्रे गौर्नेत्रं यस्येति। पुरोगु + ततः प्रज्ञाद्यण्] पाकशालाध्यक्षः; सूदाध्यक्षः; 'वृक्षाम्लसौवर्चलचुक्रपूर्णान् पौरोगवोक्तानुपजह्रुरेषाम्'—इति हरिवंशे (१४६।५८)। ४३१

पौर्णमासी स्त्री. [पूर्णो मासोऽस्यां वर्तते इति। 'पूर्णमासादण् वक्तव्यः' इत्यण्, ततो ङीप्] पूर्णिमा। ११२

पौलस्त्यः पुं. [पुलस्त्यस्यापत्यमिति। पुलस्त्य+गर्गादित्वाद् यञ्] कुबेरः; रावणः; 'मुमोच रक्षः पौलस्त्यं पुलस्त्येनानुयाचितः'—इति हरिवंशे (३३।३५)

विभोषणः। ७८

पौलोमी स्त्री. [पुलोम्नोऽपत्यमिति। पुलोमन्+अण। अनो लोपः] शची; इन्द्राणी। ५५

पौष्पम् त्रि. [पुष्पेण निर्वृत्तम्; पुष्पस्येदं वेति। पुष्प+अण्] पुष्पनिर्मितं; पुष्पसम्बन्धि; 'आसनं प्रथमं दद्यात् पौष्पं दारुजमेव वा। वास्त्रं वा चार्मणं कौशं मण्डलस्योत्तरे सृजेत्'—इति कालिकापुराणे। १८८

प्रकटम् त्रि. [प्रकटतीति, प्र+कट्+अच्] स्पष्टं; प्रदीप्तं; स्फुटं; उल्वणं; व्यक्तं; प्रव्यक्तम्, उद्रिक्तं; प्रकाशः; 'प्रकटाप्रकटा चेति लीला सेयं द्विधोच्यते'—इति भागवतामृतम्। 'जानन्ति ये न तव देवि! परं प्रभावं, ध्यायन्ति ते हरिहरावपि मन्दचित्ताः। ज्ञातं मयाद्य जननि! प्रकटं प्रमाणं, यद्विष्णुरप्यतितरां विवशोऽथ शेते'—इति देवीभागवते (१।७।३८)। ७५२

प्रकरः पुं. [प्रकिरतीति। प्र+कॄ+अच्] समूहः; [प्रकीर्यते इति। प्र+कॄ+'ऋदोरप्' इति अप्] विकीर्णकुसुमादिः; 'यत्राशयो लगति तत्रागजा वसतु कुत्रापि निस्तुलशुका, सुत्रामकालमुखसत्राशनप्रकरसुत्राणकारिचरणा। छत्रानिलातिरयपत्राभिरामगुणमित्रामरीसमवधूः, कुत्रासहन् मणिविचित्राकृतिः स्फुरितपुत्रादिदाननिपुणा'—इति अम्बाष्टके (३)। क्ली. [प्रकीर्यते इति, प्र+कॄ+कर्मणि अप्] अगुरु। ६८६

प्रकर्षः पुं. [प्र+कृष्+भावे घञ्] उत्कर्षः; 'गुणप्रकर्षेण जनोऽनुरज्यते जनानुरागप्रभवा हि सम्पदः—' इति काव्यप्रकाशे। 'बालोऽपि यौवनं प्राप्य मानुषेषु विशाम्पते! सर्वास्त्रेषु परं वीरः प्रकर्षमगमद्बली'—इति महाभारते (१।१५६।३४)। ८३७

प्रकाण्डः पुं, — क्ली. [प्रकृष्टः काण्डः इति, प्रादिसमासः] मूलादारभ्य शाखावधिवृक्षभागः; स्कन्धः; काण्डं; दण्डः; (३७८) शस्तः; प्रशस्तः; 'मतल्लिका मचर्चिका प्रकाण्डमुद्धतल्लजौ। प्रशस्तवाचकान्यमून्ययः शुभावहो विधिः'—इत्यमरः (१।४।२७)। [प्रकाण्ड+स्वार्थे कन प्रत्ययेन प्रशस्तार्थे] 'दण्डकामध्यवातां यौ वीर! रक्षःप्रकाण्डकौ। नृभ्यां संख्येऽक्रुषातां तौ सभृत्यौ भूमिवर्द्धनौ-' इति भट्टिः (५।६)। 'रक्षःप्रकाण्डकौ प्रशस्तौ राक्षसौ'—इति तट्टीकायां जयमङ्गलः। विटपः; कूर्परांशः (५३३)। १८२

प्रकामम् त्रि. [प्रगतं काममिति, प्रादिसमासः] यथेप्सितं; यथेच्छम्; 'चित्रमाल्याम्बरधरा सर्वाभरणभूषिता। कामं प्रकामं सेव त्वं मया सह विलासिनि!'—इति महाभारते (४।१३।२९)। ७१८

प्रकारः पुं. [प्रभेदकरणं प्रकृष्टकरणं वेति। प्र+कृ+घञ्] सादृश्यं; साम्यं; भेदः; 'अश्नाति वा न वाश्नाति भुङ्क्ते वा स्वेच्छयान्यथा। येन केन प्रकारेण क्षुधामपनिनीषति'—इति पञ्चदश्याम् (७।१४४)। ६९४

प्रकाशः पुं. [प्रकाशते इति, प्र+काश्+अच्] द्योतः; आतपः; 'निर्जगद्व्योमदृष्टञ्चेत् प्रकाशतमसी विना। क्व दृष्टं किञ्च ते पक्षे न प्रत्यक्षं वियत् खलु'—इति पञ्चदश्याम् (२।३८)। (६९४) समानः; सदृक्; (७५२) प्रदीप्तः; स्फुटं; स्पष्टं; प्रकटम्; उल्वणं; व्यक्तं; प्रव्यक्तम्; उद्रिक्तम्; प्रहासः; अतिप्रसिद्धः; क्ली. कांस्यं; दीप्तिः; 'पुनः प्रकाशमभवत् तमसा ग्रस्यते पुनः। भवत्यदर्शनो लोकः पुनरप्सु निमज्जति'—इति महाभारते (३।१७१।२७)। ६६

प्रकाशनम् क्ली. [प्रकाशीभावः। प्र+काशि+भावे घञ्] गन्धनं; प्रकटीकरणं; प्राकट्यं; शोभनम्। ८७०

प्रकीर्णकम् क्ली. [प्रकीर्यते यः, प्र+कॄ+क्त, प्रकीर्ण+स्वार्थे कन्] चामर; विस्तारः; ग्रन्थविच्छेदः; पापविशेषः; 'प्रकीर्णपातके ज्ञात्वा गुरुत्वमथ लाघवम्। प्रायश्चित्तं बुधः कुर्याद् ब्राह्मणानुमते सदा।' पुं. [प्रकीर्ण+संज्ञायां कन्] तुरङ्गमः; 'आरूढान् शिक्षितैर्योधैः शक्त्यृष्टिपाशयोधिभिः। विध्वस्तचामरकुथान् विप्रविद्धप्रकीर्णकान्'—इति महाभारते (७।३५।३७)। ४२३

प्रकृतिः स्त्री. [प्रक्रियते कार्यादिकमनयेति। प्र+कृ+क्तिन्] शिल्पी; (८६४) १—सत्त्वरजस्तमसां साम्यावस्था; प्रधानं; माया; शक्तिः; चैतन्यम्; 'सत्त्वं रजस्तमश्चैव गुणत्रयमुदाहृतम्। साम्यावस्थितिरेतेषां प्रकृतिः परिकीर्तिता'—इति मात्स्ये। २—पौराणां श्रेणयः; 'प्रणिपत्य ततस्तस्मै दत्तात्रेयाय सोऽर्जुनः। आनाय्य प्रकृतीः सम्यगभिषेकमगृह्णत'—इति मार्कण्डेये (१९।२०)। ३—अमात्यः; 'स्वाम्यमात्यौ पुरं राष्ट्रं कोषदण्डौ सुहृत्तथा। सप्त प्रकृतयो ह्येताः सप्ताङ्गं राज्यमुच्यते'— इति मनुः (९।२९४)। ४—कारणं; करणं; ५—कारु; ६—स्वरूपावस्था;

'स्वेदितो मर्दितश्चैव रज्जुभिः परिवेष्टितः। मुक्तो द्वादशभिर्वर्षैः श्वपुच्छः प्रकृतिं गतः।' स्वभावः; 'तत्र प्रकृतिरुच्यते स्वभावो यः स पुनराहारौषधिद्रव्याणां स्वाभाविको गुर्वादिगुणयोगः। तद्यथा–'माषमुद्गयोः शूकरैणयोश्च'—इति चरके। योनिः; लिङ्गं; स्वामी; सुहृत्; कोषः; राष्ट्रं; दुर्गं; बलं; धर्माध्यक्षादिसप्त प्रकृतयः; 'धर्माध्यक्षो धनाध्यक्षः कोषाध्यक्षश्च भूपतिः। दूतः पुरोधा दैवज्ञः सप्त प्रकृतयोऽभवन्।' शक्तिः; 'प्रधानं प्रकृतिः शक्तिर्नित्या चाविकृतिस्तथा। एतानि तस्या नामानि शिवमाश्रित्य या स्थिता'—इति शार्ङ्गधरः। योषित्; परमात्मा; पञ्च भूतानि; गुह्यं; जन्तुः; माता; प्रत्ययात् प्रथमः; एकविंशत्यक्षरपादच्छन्दोविशेषः। ५९३

प्रकृतिगुणः पुं. [प्रकृतेर्मायाशक्तेर्गुणः सत्त्वरजस्तमस्स्वन्यतमः। किन्त्वत्र व्यवहारात् सत्त्वमेवार्थः] सत्त्वम्। ८६८

प्रकोष्ठः पुं. [प्रकुष्यतेऽनेनेति । प्र+कुष् निष्कर्षे+ 'उषिकुषीति' स्थन्] गृहद्वारपिण्डकम्; 'ततः सन्ध्योपासनं कृत्वा तस्मात् प्रदेशात् कक्षान्तरं विविक्तप्रकोष्ठावकाशमन्यद् गत्वा गृहाभ्यन्तरे धृतशस्त्रो रहस्याभिधायिनां चराणां स्वव्यापारं शृणुयात्'—इति मानवे (७।२२३) श्लोकटीकायां कुल्लूकभट्टः। कफोणेरधो मणिबन्धपर्यन्तहस्तभागः (५३३); 'ततः प्रकोष्ठे हरिचन्दनाङ्किते प्रमथ्यमानार्णवधीरनादिनीम्। रघुः शशाङ्कार्द्धमुखेन पत्रिणा शरासनज्यामलुनाद्बिडौजसः'—इति रघौ (३।५९)। ३०४

प्रक्रयः पुं. [प्र+क्री+करणे अच्] वल्लूप्तिकः। ५७२

प्रक्षालितः त्रि. [प्र+क्षालि+क्त] धौतः; मार्जितः। ४०८

प्रक्षिप्तः त्रि. [प्र+क्षिप्+क्त] क्षिप्तः; त्यक्तः। ४०७

प्रक्ष्वेडनः पुं. [प्रक्ष्वेडतीति । प्र+क्ष्विड् अव्यक्तशब्दे, ल्यु] नाराचः; प्रक्ष्वेदनः; प्रक्ष्वेदना; प्रक्ष्वेडना। ४६७

प्रक्ष्वेडना स्त्री. [प्रक्ष्वेडन+टाप्। यद्वा प्रक्ष्वेडनम् अव्यक्तशब्दोऽस्त्यस्या इति। अच्+टाप्] नाराचः। ४६७

प्रक्ष्वेदनः पुं. [प्रक्ष्वेदतीति। प्र+क्ष्विद् अव्यक्तशब्दे, ल्यु] नाराचः। ४६७

प्रक्ष्वेदना स्त्री. [प्रक्ष्वेदन+टाप्] नाराच; प्रक्ष्वेडनः; प्रक्ष्वेडनः। ४६७

प्रख्यः त्रि. [प्रख्यातीति। प्र+ख्या प्रकथने+क] उत्तरपदे तुल्यार्थवाचकः; 'स्युरुत्तरपदे प्रख्यः प्रकारः प्रतिमो निभः'—इति हैमः। 'द्विपक्षगरुडप्रख्यैर्द्वारैः सौधैश्च शोभितम्। गुप्तमभ्रचयप्रख्यैर्गोपुरैर्मन्दरोपमैः'—इति महाभारते (१।२०७।३१)। श्रेष्ठः; 'ज्ञानमुत्पद्यते पुंसां क्षयात् पापस्य कर्मणः। यथादर्शतले प्रख्ये पश्यत्यात्मानमात्मनि'—इति महाभारते (१२।२०४।८) ६९४

प्रख्यातः त्रि. [प्र+ख्या+क्त] प्रकृष्टख्यातियुक्तः; विख्यातः; विश्रुतः; प्रसिद्धः। ३९५

प्रख्यातात् पितुरुत्पन्नः पुं.—प्रख्यातवप्तकः; विख्यातपितृकः; आमुष्यायणः; 'स्यादामुष्यायणोऽमुष्यपुत्रः प्रख्यातवप्तृकः'—इति हैमः (३।१६६)। ३९५

प्रगल्भः त्रि. [प्रगल्भते इति, प्र+गल्भ् धाष्ट्र्ये+ पचाद्यच्] प्रत्युत्पन्नमतिः; प्रतिभान्वितः; प्रकृष्टवक्ता; 'प्रज्ञा प्रगल्भं कुरुते मनुष्यं राजा कृशान् वै कुरुते मनुष्यान्'—इति महाभारते (१२।६०।५८)। ३८६

प्रगल्भता स्त्री. [प्रगल्भस्य भावः। प्रगल्भ+ तल्] प्रागल्भ्यम्; उत्साहः; अभियोगः; उद्यमः; प्रौढिः; उद्योगः; कियदेतिका; अध्यवसायः; ऊर्ज्जः; 'निःशङ्कत्वं प्रयोगेषु बुधैरुक्ता प्रगल्भता।' 'आर्याप्यरुन्धती तत्र व्यापारं कर्तुमर्हति। प्रायेणैवंविधे कार्ये पुरन्ध्रीणां प्रगल्भता'—इति कुमारे (६।३२)। ७७९

प्रगे अव्य. [प्रकर्षेण गीयतेऽत्रेति। प्र+गै+के] प्रातः; 'इत्थं रथाश्वेभनिषादिनाम्प्रगे गणो नृपाणामथ तोरणाद् बहिः। प्रस्थानकालक्षमवेशकल्पनाकृतक्षणक्षेपमुदैक्षताच्युतम्'—इति माघे (१२।१)। १११

प्रग्रहः पुं. [प्रगृह्यते इति, प्रगृह्णात्यनेनेति वा। प्र+ गृह+ 'प्रे वणिजाम्', 'रश्मौ च' इति घञ्। भावपक्षे 'ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च' इति अप्] रश्मिः; 'इन्दोः प्राच्यां भवति तरणेः प्रग्रहः किं प्रतीच्याम्'—इति गोलाध्याये (८)। वन्दी (७५९); नियमनम् (८०५); 'नहि मे मुच्यते कश्चित् कथञ्चित् प्रग्रहं गतः। गजो वा महिषो वापि षष्ठे काले नरोत्तम'—इति महाभारते (३।१७९।१६)। तुलासूत्रम्; अश्वादिरश्मिः; भुजः; सुवर्णालुमहीरुहः; कर्णिकार-

वृक्षः; 'आरेवतो राजवृक्षः प्रग्रहश्चतुरङ्गुलः । आरग्वधोऽथ सम्पाकः कृतमालः सुवर्णकः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । [प्र+ग्रह्+भावे अप्] इन्द्रियादीनां निग्रहः; 'व्यर्थो हि केवलं तस्य प्रग्रहो बाह्यगोचरः । तस्मात् सर्वप्रयत्नेन चित्तं रक्ष जनार्दन' —इति हरिवंशे (८।७८) । धारणम्; 'उद्धवोऽथ महाबुद्धिरुग्रसेनो महाबलः । अन्ये च यादवाः सर्वे कवचप्रग्रहे रताः'—इति हरिवंशे (२२।४) । अवलम्बनम्; 'नृपेष्वथ प्रनष्टेषु जगत्यप्रग्रहाः प्रजाः । क्षणेन निर्वृते चैवं हत्वा चान्योऽन्यमाहवे'—इति हरिवंशे (४१।१६९) । विष्णुः; 'प्रग्रहो निग्रहो व्यग्रोऽनैकशृङ्गो गदाग्रजः'—इति महाभारते (१३।१४९।९४) । प्रकृष्टाधिष्ठानादौ त्रि. । 'तामार्यगणसम्पूर्णां भरतः प्रग्रहां सभाम् । ददर्श बुद्धिसम्पन्नः पूर्णचन्द्रां निशामिव'—इति रामायणे (२।८२।१) 'प्रग्रहा प्रकृष्टैर्विशिष्टादिभिर्ग्रहोऽधिष्ठानं यस्यां सा'—इति तट्टीका । उद्यतबाहुः; 'एवमुक्तस्तु मुनिना प्राञ्जलिः प्रग्रहो नृपः । अभ्यवादयत प्राज्ञस्तमृषिं सत्यशालिनम्'—इति रामायणे (७।९५।१४) । ३९

प्रघणः पुं. [प्रविशद्भिर्जनैः पादैः प्रकर्षेण हन्यते इति । प्र+हन्+'अगारैकदेशे प्रघणः प्रघाणश्च' इति कर्मणि अप् नत्वं च] बहिर्द्वारप्रकोष्ठकं; प्रघाणः; अलिन्दः; आलिन्दः; ताम्रकुम्भः; लौहमुद्गरः; गृहाभ्यन्तरशय्यार्थपिण्डिका; 'प्रघाणप्रघणालिन्दा द्वारबाह्यप्रकोष्ठके । गृहाभ्यन्तरशय्यार्थपिण्डिकायामपि त्रयम्'—इति शब्दरत्नावली । २९९

प्रघाणः पुं. [प्रहण्यते इति, प्र+हन्+'अगारैकदेशे प्रघणः प्रघाणश्च'इति अप् पक्षे वृद्धिश्च] स्कन्धः; प्रघणः (२९९); 'नयति भगवानम्भोजस्यानिबन्धबान्धवः, किमपि मघवत्प्रासादस्य प्रघाणमुपघ्नताम् । अपसरदरिद्ध्वान्तप्रत्यग्वियत्पथमण्डली, लगनफलदश्रान्तस्वर्णाचलभ्रमविभ्रमः'—इति नैषधे (१९।११) । १८२

प्रघातः पुं. [प्रकर्षेण हन्यते यत्रेति । प्र+हन्+घञ्, 'हनस्तोऽचिण्णलोः'] युद्धम् । ४५४

प्रचलः त्रि. [प्रकर्षेण चलतीति । प्र+चल्+अच्] चपलः । ६९५

प्रचलाकः पुं. [प्रकर्षेण चलतीति । प्र+चल्+आकन्] शिखण्डः; शराघातः; भुजङ्गमः । २४२

प्रचलाकी [न्] पुं. [प्रचलाकः शिखण्डोऽस्यास्तीति । प्रचलाक+इनि] मयूरः; 'कूजत्कुञ्जकुटीरकौशिकघटाघूत्कारवत्कीचक, स्तम्बाडम्बरमूकमौकुलिकुलक्रौञ्चावतोऽयं गिरिः । एतस्मिन् प्रचलाकिनां प्रचलतामुद्वेजिताः कूजितैः, उद्वेल्लन्ति पुराणचन्दनतरुस्कन्धेषु कुम्भीनसाः'—इति उत्तररामचरिते २ अङ्के । २४१

प्रचुरम् त्रि. [प्रचोरतीति । प्र+चुर्+'इगुपधज्ञेति' क, यद्वा प्रगतञ्चुराया इति । प्रादिसमासः] प्रभूतं; प्राज्यम्; अदभ्र; बहुलं; बहु; अनेकं; पुरुहं; पुरु; भूयिष्ठं; स्फिरं; भूयः; भूरि; 'अहो नृजन्माखिलजन्मशोभनं किं जन्मभिस्त्वपरैरप्यमुष्मिन् । न यद् हृषीकेशयशः कृतात्मनाम् महात्मनां वः प्रचुरः समागमः'—इति भागवते (५।१३।२१) । ७०१

प्रचेताः [स] पुं. [प्रचेततीति, प्र+चित्+असुन्] वरुणः; 'हविषे दीर्घसत्रस्य सा चेदानीं प्रचेतसः । भुजङ्गपिहितद्वारं पातालमधितिष्ठति'—इति रघौ (१।८०) । मुनिविशेषः; 'मरीचिमत्र्यङ्गिरसौ पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् । प्रचेतसं वशिष्ठं च भृगुं नारदमेव च'—इति मनुः (१।३५) । [प्रकृष्टं चेतोऽस्य] प्रकृष्टहृदि त्रि. । प्राचीनबर्हिराजपुत्रः; 'प्राचीनबर्हिर्भगवान् सर्वशस्त्रभृतां वरः । समुद्रतनयायां वै दश पुत्रानजीजनत् । प्रचेतसस्ते विख्याता राजानः प्रथितौजसः'—इति कौर्मे । प्रकृष्टज्ञानयुक्ते त्रि. । 'देवाश्चित् ते असुर्यप्रचेतसो वृहस्पते यज्ञियं भागमानशुः'—इति ऋग्वेदे(२।२३।२) । 'हे वृहस्पते ! प्रचेतसः प्रकृष्टज्ञानास्ते त्वदीया देवाश्चिद् देवा अपि'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । ७४

प्रच्छदः पुं. [प्रच्छाद्यतेऽनेनेति । प्र+छद्+णिच्+करणे घ, 'छादेर्घेऽद्व्युपसर्गस्य' इति उपधाया ह्रस्वः] आच्छादनम्; 'प्रच्छदान्तगलिताश्रुबिन्दुभिः क्रोधभिन्नवलयैर्विवर्तनैः'—इति रघौ (१९।२२) । ३०८

प्रच्छन्नम् क्ली. [प्र+छद्+क्त] अन्तर्द्वारम्; आच्छन्ने त्रि. । 'प्रच्छन्ना हि महात्मानश्चरन्ति पृथिवीमिमाम्'—इति महाभारते (३।७१।३१) । ७०८

प्रच्छादनम् क्ली. [प्रच्छाद्यतेऽनेनेति । प्र+छद्+णिच्+ल्युट्] उत्तरीयवस्त्रं; प्रावरणं; संव्यानम्; उत्तरीयकं; नेत्रच्छदम्; 'प्रच्छादनं भवेद्वर्त्म चाक्षिकूटमतः परम्'—

इत्यश्ववैद्यके। 'वर्त्म नेत्रच्छदं प्रच्छादनं प्रच्छादनापरनामकं भवेत्। वर्त्म नेत्रच्छदेऽध्वनीऽत्यमरः' इति तट्टीका। [भावे ल्युट्] गोपनम्; 'आत्मप्रच्छादनार्थं वै बाहुवीर्यमुपाश्रितः। विप्ररूपं विधायेदं मन्ये मां प्रति युध्यसे'—इति महाभारते (१।१९।११७)। ५४६

प्रच्छादितम् त्रि. [प्र+छद्+णिच्+क्त] आच्छादितम्। ७८१

प्रजनः पुं. [प्रजायतेऽनेनेति। प्र+जन्+करणे घञ्, 'जनिवध्योश्च' इति न वृद्धिः] उपसरः; स्त्रीगव्यादिषु पुङ्गवादीनां प्रथमगर्भाधानाय मैथुनाभियोगः; स्त्रीगवीषु पुङ्गवानां प्रथमगमनं; मैथुनसाधनोपस्थेन्द्रियम्; 'वाच्यग्निं मित्रमुत्सर्गे प्रजने च प्रजापतिम्'—इति मनुः (१२।१२१)। [प्र+जन्+भावे घञ्] पुत्रोत्पादनम्; 'उपसर्जनं प्रधानस्य धर्मतो नोपपद्यते। पिता प्रधानं प्रजने तस्माद्धर्मेण तं भजेत्'—इति मनुः (९।१२१)। जनयितरि त्रि.। 'ईशो नगानां प्रजनः प्रजानां प्रसीदतां नः स महाविभूतिः'—इति भागवते (८।५।३४)। 'प्रजनश्चास्मि कन्दर्पः सर्पाणामस्मि वासुकिः'—इति भगवद्गीतायाम् (१०।२८)। २७२

प्रजा स्त्री. [प्रजाता इति। प्र+जन्+'उपसर्गे च संज्ञायाम्' इति ड] जनः; 'प्रजानां विनयाधानाद् रक्षणाद् भरणादपि। स पिता पितरस्तासां केवलं जन्महेतवः'—इति रघौ (१।२४)। सन्ततिः; पितृमातृगुणदोषेण प्रजा विभिन्ना भवति, यथा—'मातॄणां शीलदोषेण पितृशीलगुणेन च। विभिन्नास्तु प्रजाः सर्वा भवन्ति भवशीलिनाम्'—इति अग्निपुराणे। उत्पत्तिः; 'प्रजायै मृत्यवे त्वत्पुनर्मार्ताण्डमाभरत्'—इति ऋग्वेदे (१०।७२।९)। २८४

प्रजागरः पुं. [प्र+जागृ+'जागर्तेरः' इति भावे अ] प्रकर्षेण जागरणम्; 'देवतानां पितॄणां च घोरं कृत्वा प्रजागरम्। त्रेतायुगे चतुर्थांशे रावणस्तपसः क्षयात्। रामं दाशरथिं प्राप्य सगणः क्षयमीयिवान्'—इति अग्निपुराणे। विष्णुः; 'आधारनिलयो धाता पुष्पहासः प्रजागरः'—इति महाभारते (१३।१४९।११५)। 'नित्यबुद्धस्वरूपत्वात् प्रजागरः विष्णु'— इति तद्भाष्यम्। प्राणः; 'ते चण्डवेगानुचराः पुरञ्जनपुरं यदा। हर्तुमारेभिरे तत्र प्रत्यषेधत् प्रजागरः'—इति भागवते (४।२७।१५)। 'प्रजागरः प्राणः'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। ६०३

प्रजाता स्त्री. [प्रजातं प्रजननं सुतादीनामुत्पत्तिरित्यर्थः, तदस्या अस्तीति। अच्+टाप्] जातापत्या; प्रसूता; 'स्त्रीणामपप्रजातानां प्रजातानां तथाहितैः। दाहज्वरकरो घोरो जायते रक्तविद्रधिः'—इति सुश्रुते। अश्वविशेषे पुं.। 'प्रजाते वायव्यम्' इति कात्यायनश्रौतसूत्रे (२०।३।२०)। 'वडवायां कृतरेतःस्कन्दनः प्रजात इत्युच्यते'—इति तद्भाष्यम्। ५००

प्रजापतिः पुं. [प्रजानां पतिः] ब्रह्मा; 'यस्मात् पितामहो जज्ञे प्रभुरेकः प्रजापतिः। ब्रह्मा सुरगुरुः स्थाणुर्मनुः कः परमेष्ठ्यथ'—इति महाभारते (१।१।३२)। महीपालः (४२१); दक्षादिः; दक्षप्रजापतिः; इन्द्रः; 'अयमेव विधाता हि तथैवेन्द्रः प्रजापतिः'—इति महाभारते (३।१८५।१६)। जामाता; दिवाकरः; वह्निः; त्वष्टा, यथा वाजसनेयसंहितायाम् (१२।६१) 'तां विश्वैर्देवैर्ऋतुभिः संविदानः प्रजापतिर्विश्वकर्मा विमुञ्चतु।' दश प्रजापतयः; एकविंशति प्रजापतयः; मनुः; 'न तौ प्रति हि तान् धर्मान् मनुराह प्रजापतिः'—इति मनुः (१०।७९)। पिता; 'जनको जन्मदानाच्च रक्षणाच्च पिता नृणाम्। ततो विस्तीर्णकरणात् कलया स प्रजापतिः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। कीटभेदः। ७

प्रजावती स्त्री. [प्रजास्त्यस्याः इति। प्रजा+मतुप्, मस्य वः, स्त्रियां ङीप्] भ्रातृजाया; भ्रातृवधूः; ज्येष्ठभ्रातृपत्नी; 'प्रजावती दोहदशंसिनी ते तपोवनेषु स्पृहयालुरेव। स त्वं रथी तद्व्यपदेशनेयां प्रापय्य वाल्मीकिपदं त्यजैनाम्'—इति रघौ (१४।४५)। प्रियव्रतपत्नी; 'प्रियव्रतात् प्रजावत्यां वीरात् कन्या व्यजायत'—इति मार्कण्डेये (५३।१३)। सन्तानविशिष्टा; 'साम्प्रतं सर्गकर्तृत्वमादिष्टं ब्रह्मणा मम। सोऽहं पत्नीमभीप्सामि धन्यां दिव्यां प्रजावतीम्'—इति मार्कण्डेये (९७।१८)। ५०४

प्रज्ञा स्त्री. [प्र+ज्ञा+क, टाप्] बुद्धिः; मतिः; 'आकारसदृशप्रज्ञः प्रज्ञया सदृशागमः'—इति रघौ (१।१५)। एकाग्रता; 'तमेव धीरो विज्ञाय प्रज्ञां कुर्वीत ब्राह्मणः'—इति पञ्चदश्याम् (७।१०६)। प्राज्ञी; प्रकर्षेण जानाति या; सरस्वती, बुद्धिर्वैदिकपर्यायाः—'केतुः, केतः, चेतः, चित्तं, क्रतुः, असुः, धीः, शचीः, माया, वयुनम्, अभिख्या'

मानिनम्'—इति किराते (१३।४७)। १८७

हस्तः पुं. [हसति विकसतीति। हस् +'हसिमृग्रिण्वामीति' तन्] शरीरावयवविशेषः; पाणिः; समः; शयः; पञ्चशाखः; करः; भुजः; कुलिः; भुजादलः; 'हस्तावध्यात्ममित्याहुरध्यात्मविदुषो जनाः। अधिभूतं च कर्माणि शुक्रस्तत्राधिदैवतम्'—इति महाभारते। विस्तृतकरप्रकोष्ठः; स च चतुर्विंशत्यङ्गुलपरिमितः; 'यवानां तण्डुलैरेकमङ्गुलं चाष्टभिर्भवेत्। अदीर्घयोजितैर्हस्तश्चतुर्विंशतिरङ्गुलैः'—इति तिथ्यादितत्त्वे। 'यवोदरैरङ्गुलमष्टसंख्यैः, हस्तोऽङ्गुलैः षड्गुणितैश्चतुर्भिः। हस्तैश्चतुर्भिर्भवतीह दण्डः, क्रोशः सहस्रद्वितयेन तेषाम्'—इति लीलावती। 'हस्तदत्ताश्च ये स्नेहा लवणं व्यञ्जनानि च। दातारं नोपतिष्ठन्ते भोक्ता भुङ्क्ते तु किल्विषम्। तस्मादन्तरितं कृत्वा पर्णेनाथ तृणेन वा। प्रदद्यान्न तु हस्तेन नायसेन कदाचन'—इति वशिष्ठः। हस्तिशुण्डः; 'अग्रहस्तं विधुन्वंस्तु हस्ती हस्तमिवात्मनः'—इति रामायणे (२।२३।४)। हस्तनक्षत्रम्; 'प्रयाति श्रेष्ठतां सत्यं हस्ते श्राद्धप्रदो नरः'—इति मार्कण्डेये (३३।११)। (५३१) केशात्परे तत्समूहवाचकः; बहुत्वम्। ५११

हस्तबिम्बम् क्ली. [हस्तस्य बिम्बं यत्र] स्थासकः; स तु चन्दनादिना देहविलेपनविशेषः; करप्रतिबिम्बः। ५४०

हस्तसूत्रम् क्ली. [हस्तस्य सूत्रम्] कङ्कणं; प्रतिसरः; वलयम्; 'कटको वलयं पारिहार्यावापौ तु कङ्कणम्। हस्तसूत्रं प्रतिसर ऊर्मिका त्वङ्गुलीयकम्'—इति हेमचन्द्रः। विवाहादिकालिकमङ्गलार्थनिबद्धकरसूत्रम्; 'बबन्ध चास्राकुलदृष्टिरस्याः स्थानान्तरे कल्पितसन्निवेशम्। धात्र्यङ्गुलीभिः प्रतिसार्यमाणमूर्णामयं कौतुकहस्तसूत्रम्'—इति कुमारे (७।२५)। ५५८

हस्तिनखः पुं. [हस्तिनो नख इव] पूर्द्वारि यत् कूटं तत्; परिकूटम्; 'शनैरनीयन्त रयात् पतन्तो रथाः क्षितिं हस्तिनखादखेदैः। सयत्नसूतायतरश्मिभुग्नग्रीवाग्रसंसक्तयुगैस्तुरङ्गैः'—इति माघे (३।६८)। २८८

हस्तिनी स्त्री. [हस्तिनः स्त्री। ङीप्] गजपत्नी; करेणूः; करेणुः; रेणुका; करेणुका; धेनुका; वासिता; वासा; करिणी; विशा; कटम्भरा; पुष्करिणी; कचा; वशा; गणिका; गजयोषित्; इभी; पद्मिनी; मातङ्गी; चतुर्विधस्त्रीमध्ये स्त्रीविशेषः; 'स्थूलाधरा स्थूलनितम्बभागा स्थूलाङ्गुली स्थूलकुचा सुशीला। कामोत्सुका गाढरतिप्रिया च नितम्बखर्वा खलु हस्तिनी स्यात्'—इति रतिमञ्जरी। हट्टविलासिनी। २५५

हस्तिपकः पुं. [हस्तिप एव। कन्] गजारोहः; आधोरणः; हस्त्यारोहः; निषादी; 'जज्ञे जनैर्मुकुलिताक्षमनाददाने, संरब्धहस्तिपकनिष्ठुरचोदनाभिः। गम्भीरवेदिनि पुरः कवलं करीन्द्रे, मन्दोऽपि नाम न महानवगृह्यसाध्यः'—इति माघे (५।४९)। २२५

हस्त्यारोहः पुं. [हस्तिनमारोहतीति। हस्तिन्+आ+रुह्+क] हस्तिपकः। २२५

हाटकम् क्ली. [हटति शोभते इति। हट् दीप्तौ+ण्वुल्] स्वर्णं; सुवर्णम्; 'नवहाटकेष्टकचितं ददर्श सः क्षितिपस्य पस्त्यमथ तत्र संसदि'—इति माघे (१३।६३)। 'स्वर्णं सुवर्णं कनकं हिरण्यं हेम हाटकम्। तपनीयं च गाङ्गेयं कलधौतं च काञ्चनम्। चामीकरं शातकुम्भं तथा कार्तस्वरं च तत्। जाम्बूनदं जातरूपं महारजतमित्यपि'—इति भावप्रकाशः। धुस्तूरः; स्वर्णनिर्मिते त्रि.। १७३

हायनः पुं.–क्ली. [जहाति त्यजति, जिहीते प्राप्नोति वा भावानिति। हाक् त्यागे, हाङ गतौ वा+'हश्च व्रीहिकालयोः' इति ण्युट्] वत्सरः; अब्दः; शरत्; वर्षः; संवत्सरः; समा; 'अहं च तद्ब्रह्मकुले ऊषिवांस्तदपेक्षया। दिग्देशकालाव्युत्पन्नो बालकः पञ्चहायनः'—इति भागवते (१।६।८)। पुं. व्रीहिभेदः; अग्निशिखा। ११६

हारः पुं. [ह्रियते मनो येन। हृ+घञ्] मुक्तामाला; मुक्तावली; हारा; यष्टिः; यष्टी; लता; 'विमुच्य सा हारमहार्यनिश्चया विलोलयष्टि प्रविलुप्तचन्दनम्। बबन्ध बालारुणबभ्रु वल्कलं पयोधरोत्सेधविशीर्णसंहति'—इति कुमारे (५।८)। [ह्रियन्ते प्राणा यत्रेति] युद्धं; [हृ+भावे घञ्] हरणम्; 'हंस्युन्मार्गान् हिंसया वर्तमानान्, जन्मैतत्ते भारहाराय भूमेः'—इति भागवते (१०।६३।१७)। ५६२

हारहारा स्त्री.— कपिलद्राक्षा। १९३

हारहूरा स्त्री.— द्राक्षा; मृद्वीका; गोस्तनी; मृद्वी; स्वादुफला; मधुरसा; 'द्राक्षा स्वादुफला प्रोक्ता तथा मधुरसापि च। मृद्वीका हारहूरा च गोस्तनी चापि

कीर्तिता'—इति भावप्रकाशः । पुं. हारहूरः मद्यम् । १९३

हारिद्रः त्रि. [हरिद्रया रक्तः । हरिद्रा+'हरिद्रामहारजनाभ्यामञ् वक्तव्यः' इत्युक्त्या अञ्] हरिद्रारञ्जितः; हरिद्रावर्णः; पीतः; 'दूर्वाकाण्डश्यामे हारिद्रे वापि निर्दिशेन्मरकम्'—इति बृहत्संहितायाम् (५१५८) । विषभेदः; 'हरिद्रातुल्यमूलो यो हारिद्रः स उदाहृतः'—इति भावप्रकाशः । कदम्बवृक्षः । ७३५

हारी [न्] त्रि. [हारोऽस्त्यस्येति । इनि] मनोहरः; रुचिरः; सुन्दरः; 'तवास्मि गीतरागेण हारिणा प्रसभं हृतः । एष राजेव दुष्यन्तः सारङ्गेणातिरंहसा'—इति शाकुन्तले प्रस्तावनायाम् । हारविशिष्टः; हारयुक्तः; 'केयूरवान् कनककुण्डलवान् किरीटी हारी हिरण्मयवपुर्धृतशङ्खचक्रः'—इति नारायणध्याने । [हरतीति, हृ+णिनि] हरणकर्ता; 'ह्रियते वध्यमानोऽपि नरो हारिभिरिन्द्रियैः । विमूढसंज्ञो दुष्टाश्वैरुद्भ्रान्तैरिव सारथिः'—इति महाभारते (३।२।६५) । ६८९

हारीतः पुं. [हारि मनोहरम् इतं गमनं यस्य] पक्षिभेदः; 'हारीतो रक्तपित्तः स्याद्धरितोऽपि स कथ्यते ।' 'हारीतो रूक्ष उष्णश्च रक्तपित्तकफापहः । स्वेदस्वरकरः प्रोक्त ईषद्वातकरश्च सः'—इति भावप्रकाशः । आयुर्वेदकर्ता; 'अग्निवेशश्च भेलश्च जतूकर्णः पराशरः । हारीतः क्षारपाणिश्च जगृहुस्तन्मुनेर्वचः'—इति चरकः । मुनिभेदः; स च धर्मशास्त्रकर्ता; 'मन्वत्रिविष्णुहारीतयाज्ञवल्क्योशनोऽङ्गिराः । यमापस्तम्बसंवर्ताः कात्यायनबृहस्पती । पराशरव्यासशङ्खलिखिता दक्षगौतमौ । शातातपो वशिष्ठश्च धर्मशास्त्रप्रयोजकाः'—इति याज्ञवल्क्यः । अयं च पौराणिक आसीत्; 'त्रय्यारुणिः कश्यपश्च सावर्णिरकृतव्रणः । वैशम्पायनहारीतौ षड् वै पौराणिका इमे'—इति भागवते (१२।७।५) । कैतवम् । २५४

हालहलम् क्ली.— विषभेदः । ६४७

हालहालम् क्ली.— विषभेदः । ६४७

हाला स्त्री. [हल्यते कृष्यते इव चित्तमनयेति । हल्+घञ्+टाप्] मद्यं; मध्वासवः; शीधु; सुरा; मदिरा; 'मद्यं तु शीधु मैरेयमिरा च मदिरा सुरा । कादम्बरी वारुणी च हालापि बलवल्लभा'—इति भावप्रकाशः । तालादिनिर्यासमद्यम्; 'योषिदित्यभिललाष न हालां दुस्त्यजः खलु सुखादपि मानः'—इति माघे (१०।२१) । ३२९

हालाहलम् क्ली.–पुं. [हालामपि हलतीति । हाला+हल्+अच्] विषभेदः; हालहलं; हाहलं; हलाहलं; हाहालम्; 'हालाहलं हालहलं हाहलं च हलाहलम्'—इति रुद्रः । 'गोस्तनाभफलो गुच्छस्तालपत्रच्छदस्तथा । तेजसा यस्य दह्यन्ते समीपस्था द्रुमादयः । असौ हालाहलो ज्ञेयः किष्किन्धायां हिमालये । दक्षिणाब्धितटे देशे कोङ्कणेऽपि च जायते'—इति भावप्रकाशः । मद्यं; हालाहली; 'कालकूटेन्द्रवत्साख्यशृङ्गिहालहलादिकम्'—इति वाग्भटः । ६४७

हालाहलः पुं. [हालाहलमस्त्यस्येति । अच्] अञ्जनिका; कीटविशेषः; अञ्जलिका; कुटिलकीटकः । २५७

हावः पुं. [ह्वे+घञ्] स्त्रीणां शृङ्गारभावजाः क्रियाः; स्त्रीशृङ्गारचेष्टा; 'स्त्रीणां विलासविब्बोकविभ्रमा ललितं तथा । हेला लीलेत्यमी हावाः क्रियाः शृङ्गारभावजाः'—इत्यमरः 'युवानोऽनेन हूयन्ते नारीभिर्मदनानले । अतो निरुच्यते हावस्ते विलासादयो मताः । ग्रीवारेचकसंयुक्तो भ्रूनेत्रादिविकाशकृत् । भावादीषत्प्रकाशो यः स हाव इति कथ्यते'—इत्युज्ज्वलनीलमणिः । ८९

हासः पुं. [हस्+घञ्] हास्यं; हसः; हसनं; घर्घरः; हासिका; 'संरम्भं मैथिलीहासः क्षणसौम्यां निनाय ताम् । निवातस्तिमितां वेलां चन्द्रोदय इवोदधेः'—इति रघौ (१२।३६) । विकासः; 'बिम्बागतैस्तीरवनैः समृद्धिं निजां विलोक्यापहृतां पयोभिः । कूलानि सामर्षतयेव तेनुः सरोजलक्ष्मीं स्थलपद्महासैः'—इति भट्टिः (२।३) । ९१

हास्यम् क्ली. [हस्+ण्यत्] रसविशेषः; स च कौतुकोद्भवः; हासः; हसः; हसनं; घर्घरः; हासिका; 'विकृताकारवाग्वेशचेष्टादेः कुतुकाद्भवेत् । हास्यो हासस्थायिभावः श्वेतः प्रमथदैवतः । विकृताकारवाक्चेष्टं यदालोक्य हसेज्जनः । तदत्रालम्बनं प्राहुः तच्चेष्टोद्दीपनं मतम् । अनुभावोऽक्षिसङ्कोचवदनस्मेरतादिकः । निद्रालस्यावहित्थाद्या अत्र स्युर्व्यभिचारिणः । ज्येष्ठानां स्मितहसिते मध्यानां विहसितावहसिते च । नीचानामप-

इत्येकादश नामानि वेदनिघण्टौ। ३३४

प्रणतिः स्त्री. [प्रकृष्टं नमनमिति। प्र+णम्+भावे क्तिन्] प्रणामः; प्रणिपातः; नमस्कारः; अनुनयः; 'राघवोऽपि चरणौ तपोनिधेः क्षम्यतामिति वदन् समस्पृशत्। निर्जितेषु तरसा तरस्विनां शत्रुषु प्रणतिरेव कीर्तये'—इति रघौ (११।८९)। ७४९

प्रणयः पुं. [प्रणयनम् । प्र+णी+'एरच्' इति अच्] प्रेम; 'सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं हे कृष्ण! हे यादव! हे सखेति। अजानता महिमानं तवेदं मया प्रमादात् प्रणयेन वापि'—इति भगवद्गीतायाम् (११।४)। प्रीत्या प्रार्थनम्; प्रश्रयः; प्रसरः; सम्बन्धमाभाषणपूर्वमाहुर्वृत्तः स नौ सङ्गतयोर्वनान्ते। तद् भूतनाथानुग! नार्हसि त्वं सम्बन्धिनो मे प्रणयं विहन्तुम्'—इति रघौ (२।५८)। यात्रा; विश्रम्भः; निर्वाणः। ७७३

प्रणवः पुं. [प्रकर्षेण नूयते स्तूयते आत्मा स्वेष्टदेवता वानेनेति। प्र+णु स्तुतौ+'ऋदोरप्' इति अप्, 'उपसर्गादसमासेऽपि णोपदेशस्य' इति णत्वम्। यद्वा ब्रह्मविष्णुमहेशरूपत्वात् प्रणम्यते इति । प्र+णम्+कर्मणि घञ्, संज्ञापूर्वकत्वात् वृद्ध्यभावः, पृषोदरादित्वात् मस्य वः] ओङ्कारः; 'ओङ्कारः प्रणवस्तारो वेदादिर्वर्तुलो ध्रुवः। त्रैगुण्यं त्रिगुणो ब्रह्म सत्यो मन्त्रादिरव्ययः। ब्रह्मबीजं त्रितत्त्वं च पञ्चरश्मिस्त्रिदैवतः'—इति बीजवर्णाभिधानम्। 'ओङ्कारो वर्तुलस्तारो वामश्च हंसकारणम्। मन्त्राद्यः प्रणवः सत्यं बिन्दुशक्तिस्त्रिदैवतम्। सर्वबीजोत्पादकश्च पञ्चदेवो ध्रुवस्त्रिकः। सावित्री त्रिशिखो ब्रह्म त्रिगुणो गुणजीवकः। आदिबीजं वेदसारो वेदबीजमतः परम्। पञ्चरश्मिस्त्रिकूटे च त्रिभवे भवनाशनः। गायत्री बीजपञ्चांशौ मन्त्रविद्याप्रसूः प्रभुः। अक्षरं मातृकासूश्चानादिदैवतमोक्षदौ'—इति तन्त्रम्। ८

प्रणाय्यः त्रि. [प्रणीयते इति, प्र+णी+ण्यत्, 'प्रणाय्योऽसम्मतौ' इति साधुः] असम्मतः; 'न प्रणाय्यो जनः कश्चिन् निकाय्यं तेऽधितिष्ठति।'—इति भट्टिः (६।६६)। अभिलाषविवर्जितः; साधुः; प्रियः। ३६६

प्रणाली स्त्री. [प्रणाल+गौरादित्वाद् ङीष्] जलनिःसरणमार्गः; 'तद्वाक्यं करुणं राज्ञः श्रुत्वा दीनस्य भाषितम्। कौशल्या व्यसृजद्बाष्पं प्रणालीव नवोदकम्'—इति रामायणे (२।६२।१०)। ६८५

प्रणिधानम् क्ली. [प्रणिधीयतेऽनेनेति, प्र+नि+धा+ल्युट्] समाधिः; 'सोऽपश्यत् प्रणिधानेन सन्ततेः स्तम्भकारणाम्'—इति रघौ (१।७४)। प्रयत्नः; 'प्रणिधानेन धैर्येण रूपेण वयसा च मे। मनः प्रविष्टो देवर्षे! गुणकेश्याः पतिर्वरः'—इति महाभारते (५।१०३।२१)। प्रवेशनम्; 'बहुशः क्षता हीनशस्त्रप्रणिधानेनापविद्धा'—इति सुश्रुते। १२८

प्रणिधिः पुं. [प्रणिधीयते इति, प्र+नि+धा+कि] चरः; 'प्रणिधिं प्रेषयामास हयारिस्तु शचीपतिम्'—इति देवीभागवते (५।३।९)। प्रार्थनम्; अवधानं; बृहद्रथपुत्रः; 'बृहद्रथस्य प्रणिधिः कश्यपस्य बृहत्तरः। भानुरङ्गिरसो धीर! पुत्रो वर्चस्य सौरभः'—इति महाभारते (३।२२१-९।९)। ४२५

प्रणिपातः पुं. [प्र+नि+पत्+घञ्] प्रणामः; नमस्कारः; प्रणतिः; 'तस्याः सखीभ्यां प्रणिपातपूर्वं स्वहस्तलूनः शिशिरात्ययस्य। व्यकीर्यत त्र्यम्बकपादमूले पुष्पोच्चयः पल्लवभङ्गभिन्नः'—इति कुमारे (३।६१)। ७४९

प्रणीतः पुं. [प्रणीयते इति, प्र+णी+क्त] संस्कृतानलः; यज्ञे मन्त्रादिना संस्कृताग्निः; त्रि. [प्र+णी+क्त] उपसम्पन्नं; पाकेन रूपरसादिसम्पन्नव्यञ्जनादि; क्षिप्तं; विहितं; प्रवेशितं; कृतम्; स्त्री. [प्रणीत+टाप्] यज्ञपात्रविशेषः। ४१५

प्रततिः स्त्री. [प्रतनोतीति। प्र+तन्+क्तिच्] वल्ली; लता; विस्तृतिः। १८०

प्रतती स्त्री. [प्रतति+ङीष्] लता; प्रताननी; वल्ली; व्रततिः; प्रततिः; व्रतती। १८०

प्रतनः त्रि. [प्र+'नश्च पुराणे प्रात्' इति चकारात् तनप् प्रत्ययः] पुरातनः; जीर्णः; पुराणः। ७११

प्रतलः पुं. [प्रकृष्टं तलमस्य] विस्तृताङ्गुलिपाणिः; चपेटः; क्ली. [प्रकृष्टं तलम्] पातालभेदः। ५३७

प्रताननी स्त्री. [प्रतानो विस्तारोऽस्त्यस्या इति। प्रतान+इनि] विस्तृतलतादिः; प्रतानवती। १८०

प्रतापः पुं. [प्र+तप्+घञ्] पौरुषम्; 'समः समविभक्ताङ्गः स्निग्धवर्णः प्रतापवान्'–इति रामायणे (१।१।११)। 'प्रतापः स्मृतिमात्रेण रिपुहृदयविदारणक्षमं पौरुषम्'–इति तट्टीकायां रामानुजः। तापः; 'यथा प्रह्लादनाच्चन्द्रः प्रतापात् तपनो यथा। तथैव सोऽभू-

दन्वर्थो राजा प्रकृतिरञ्जनात्'—इति रघौ (४।१२)। कोषदण्डजतेजः; कोषो धनं, दण्डो दमः, तद्धेतुत्वात् सैन्यमपि दण्डः, ताभ्यां यत्तेजो जायते सः; प्रभावः; 'प्रतापयुक्तस्तेजस्वी नित्यं स्यात् पापकर्मसु'—इति मनुः (९।३१०)। तेजः; अर्कवृक्षः; युवराजस्य छत्रे क्ली.। 'नीलो दण्डश्च वस्त्रं च शिरः कुम्भस्तु कानकः। सौवर्णं युवराजस्य प्रतापं नाम विश्रुतम्'—इति भोजयुक्तिकल्पतरौ। ७२३

प्रतारणम् क्ली. [प्र+तृ+णिच्+भावे ल्युट्] प्रतारणा; वञ्चनं; व्यलीकं; अभिसन्धानम्; 'सूदे दामोदरीये यत्तस्यासीत् स्वकृतं पुरम्। सेतुना तेन तत्रैच्छत् कर्तुं सोऽम्भःप्रतारणम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।१५७)। ७४८

प्रतारणा स्त्री. [प्र+तृ+णिच्+युच्+टाप्] वञ्चना; कैतवम्; उपाधिः। ७४८

प्रति अव्य. [प्रथते इति। प्रथ् विख्यातौ+बाहुलकाड् डति] मुख्यसदृशः; यथा—प्रद्युम्नः केशवात् प्रति। व्याकरणे उपसर्गविशेषः; प्रतिनिधिः; वीप्सा; व्याप्तुमिच्छा; लक्षणं; चिह्नं; भागः; स्वीक्रियमाणोंऽशः; प्रतिदानं; स्तोकम्; अल्पं; क्षेपः; निश्चयः; व्यावृत्तिः; प्रशस्तिः; विरोधः; समाधिः; आभिमुख्यं; स्वभावः। ८८१

प्रतिकर्म [न्] क्ली. [प्रत्यङ्गं प्रतिख्यातं वा कर्म। शाकपार्थिवादिवत् समासः] प्रसाधनं; वेशः; 'आस्तीर्णतल्परचितावसथः क्षणेन वेश्याजनः कृतनवप्रतिकर्मकाम्यः'—इति माघे (५।२७)। प्रतीकारः; 'उषिताः स्मो वने वासं प्रतिकर्मचिकीर्षवः। कोपं नार्हसि नः कर्तुं सदा समरदुर्जय!'—इति महाभारते (४।५६।१८)। अङ्गसंस्कारः। ५३९

प्रतिकायः पुं. [प्रतिगतः कायो यत्र] प्रतिरूपकं; शरव्यम्। १३०

प्रतिकूलम् त्रि. [प्रतीपं कूलादिति] अननुकूलं; विपक्षः; प्रसव्यम्; अपसव्यम्; अपष्ठु; प्रतीपम्; 'राज्ञः कोषापहर्तृंश्च प्रतिकूलेषु च स्थितान्। घातयेद्विविधैर्दण्डैररीणाञ्चोपजापकान्'—इति मनुः (९।२७५)। ७४३

प्रतिकृतः त्रि. [प्रति+कृ+क्त] द्विरावृत्या कृतः। ७६५

प्रतिकृतिः स्त्री. [प्रकृष्टा कृतिः] प्रतिनिधिः; चित्रकृतिः; 'तेनाष्टौ परिगमिताः समाः कथञ्चिद् बालत्वादवितथसूनृतेन सूनोः। सादृश्यप्रतिकृतिदर्शनैः प्रियायाः स्वप्नेषु क्षणिकसमागमोत्सवैश्च'—इति रघौ (८।९२)। [प्रति+कृ+भावे क्तिन्] प्रतिकार; प्रतीकार; 'शृणुध्वं देवताः सर्वाः शत्रुप्रतिकृतिं पराम्। अवध्या दानवाः सर्वे ऋते शङ्करमव्ययम्'—इति हरिवंशे (२५७।२३)। प्रतिमा। १३०

प्रतिक्षणम् अव्य. [क्षणं क्षणं प्रति] पौनः पुन्यं; भूयः; असकृत्; 'प्रतिक्षणं सा कृतरोमविक्रियां व्रताय मौञ्जीं त्रिगुणां बभार याम्। अकारि तत्पूर्वनिबद्धया तया सरागमस्या रशनागुणास्पदम्'—इति कुमारे (५।१०)। ७२४

प्रतिक्षिप्तः त्रि. [प्रतिक्षिप्यते स्मेति। प्रति+क्षिप्+क्त] अधिक्षिप्तः; प्रत्याख्यातः; प्रत्यादिष्टः; निराकृतः; निरस्तः; अपविद्धः; परिहृतः; वारितः; प्रेषितः। ७०३

प्रतिग्रहः पुं. [प्रति ग्रहणमिति। प्रति+ग्रह्+'ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च' इति भावे अप्] सैन्यपृष्ठं; स्वीकरणम्; [प्रति गृह्णाति निष्ठीवनादिकमिति। प्रति+ग्रह्+'विभाषा ग्रहः' इति पक्षे अच्] पतद्ग्रहः; [प्रतिगृह्यते इति, प्रति+ग्रह्+अप्] द्विजेभ्यो विधिवद्देयम्; तद्ग्रहः; ग्रहभेदः; ब्राह्मणस्यार्थः प्रतिग्रहार्जितः। ७९२

प्रतिघः पुं. [प्रतिहन्त्यनेनेति। प्रति+हन्+क। न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्] क्रोधः; 'प्रतिघः कुतोऽपि समुपेत्य नरपतिगणं समाश्रयत्'—इति माघे (१५।५३)। प्रतिहननं; प्रतिघातः; मूर्च्छा। ३६२

प्रतिच्छन्दः [स्] क्ली. [छन्दोऽभिप्रायः, प्रतिगतं छन्दः इति प्रादिसमासः] प्रतिरूपम्, (अकारान्तोऽपि) १३०

प्रतिच्छन्दः पुं. [छन्दोऽभिप्रायः, प्रतिगतः छन्दम्] प्रतिरूपम्; 'रक्षःशिरःप्रतिच्छन्दैः स्थिरप्रणतिसूचकः। सनाथशिखरान् प्रादात् तस्मै रक्षः पतिर्ध्वजान्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (३।७७)। १३०

प्रतिच्छाया स्त्री. [प्रतिगता छायामिति] प्रतिकृतिः; मूर्तिसदृशमृच्छिलादिनिर्मितप्रतिरूपम्; 'माययास्य प्रतिच्छाया दृश्यते हि नटालये। देहार्द्धेन तु कौरव्य! सिषेवे च प्रभावतीम्'—इति हरिवंशे (१५१।३०)। १३०

प्रतिजागरः पुं. [प्रतिजागरणमिति। प्रति+जागृ+घञ्। 'जाग्रोऽवीति' गुणः] प्रत्यवेक्षणम्; अवेक्षा; 'जागरप्रतिनिधिः, प्रतिजागरः' इति शब्दद्वयं 'गृहमवेक्षस्व' इत्यादिनियोगस्यानुष्ठातरि। ७८२

प्रतिज्ञा स्त्री. [प्रतिज्ञायते इति । प्रति+ज्ञा+'आतश्चोपसर्गे' इति अङ+टाप्] आम्; प्रतिज्ञानम्; अङ्गीकारः; प्रतिश्रवः; ओम्; समाधिः; संवित्; आगूः; आश्रवः; संश्रवः; नियमः; अभ्युपगमः; बाढम्; आत्मा; सन्धा; सङ्गरः; संश्रावः; उररीकारः; श्रवः; 'पूर्वन्तु रामस्तमिहानुयुज्य श्रुत्वा च वाक्यं भरतस्य तस्य । चिकीर्षमाणो रघुनन्दनस्तां पितुः प्रतिज्ञां स बभूव तूष्णीम्'—इति रामायणे (२।१११०।४)। 'त्वयास्य दैत्याधिपते वाच्यं साम यतो फलम् । प्रतिज्ञा नावरोद्धव्या स्वल्पकेऽपि च वस्तुनि'—इत्यग्निपुराणे। ७१५

प्रतिनिधिः पुं. [प्रतिनिधीयते सदृशीक्रियते इति । प्रति+नि+धा+'उपसर्गे घोः किः' इति कि] प्रतिमा; सदृशः; 'सुतां तदीयां सुरभेः कृत्वा प्रतिनिधिं शुचिः । आराध्य सपत्नीकः प्रीता कामदुघा हि सा'—इति रघौ (१।८१)। १३०

प्रतिनिर्यातनम् क्ली. [प्रतीपं निर्यातनम् । प्रति+निर्+यत्+स्वार्थे णिच्, भावे ल्युट् । प्रादिसमासः] कृते परिकृतं; न्यासार्पणम् । ७६५

प्रतिपक्षः पुं. [प्रतिकूलः पक्षः इति । प्रादिसमासः] शत्रुः; वैरी; रिपुः; 'अन्योऽन्यं प्रतिपक्षसंहतिमिमां लोकस्थितिं बोधयन्, एष क्रीडति कूपयन्त्रघटिकान्यायप्रसक्तो विधिः । प्रतिवादी; सादृश्यम्; 'प्रतिबन्धिप्रतिनिधिप्रतिपक्षविडम्बकाः'—इति काव्यचन्द्रिका । ४५५

प्रतिपत् [द्] स्त्री. [प्रतिपद्यते उपक्रम्यतेऽनयेति । प्रति+पद्+करणे क्विप्] प्रतिपत्तिः; बुद्धिः; द्रगडवाद्यं; तिथिविशेषः; पक्षतिः; 'मणिकनकविभूषासंयुतश्चारुकान्तिः, निजकुलकमलोद्घाटमार्तण्डबिम्बः । प्रतिपदि शशिपूर्णो लब्धजन्मा प्रतापी, भवति विमलवेशश्चाकेशः प्रजेशः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । ८००

प्रतिपत्तिः स्त्री. [प्रतिपदनमिति । प्रति+पद्+क्तिन्] प्रागल्भ्यं; प्रगल्भता; बुद्धिः (८००); प्रवृत्तिः; 'मनस्विनीनां प्रतिपत्तिरीदृशी'—इति कुमारे (५।४२) । गौरवम्; 'सुभक्तो राजसु तथा कार्याणां प्रतिपत्तिमान्'—इति युक्तिकल्पतरौ । सम्प्राप्तिः; 'वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये । जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ'—इति रघौ (१।१) । प्रबोधः; 'चक्षुषांशेन रूपाणां प्रतिपत्तिर्यतो भवेत्'—इति भागवते (३।६।१४) । पदप्राप्तिः; फलशून्यकर्माङ्गं; 'देवतोद्देशेन यागादौ त्यक्तहविरादेरग्नौ निक्षेपः ।' ७७९

प्रतिपादनम् क्ली. [प्रति+पद्+णिच्+भावे ल्युट्] दानं; प्रतिपत्तिः; बोधनं; निष्पादनम्; 'त्रेता विमोक्षसमये द्वापरः प्रतिपादने'—इति महाभारते (१३।१४१।१४) । ७९३

प्रतिबन्धः पुं. [प्रति+बन्ध्+घञ्] कार्यप्रतिघातः; प्रतिष्टम्भः; 'स तपःप्रतिबन्धमन्युना प्रमुखाविष्कृतचारुविभ्रमाम् । अशपद्भव मानुषीति तां शमवेलाप्रलयोर्मिणा भुवि'—इति रघौ (८।८०) । ७६९

प्रतिबिम्बम् क्ली. [प्रतिगतं बिम्बमिति । 'कुगतिप्रादयः' इति समासः] प्रतिमा; प्रतिच्छाया; 'चिदानन्दमयब्रह्मप्रतिबिम्बसमन्विता । तमोरजःसत्त्वगुणा प्रकृतिर्द्विविधा च सा'—इति पञ्चदश्याम् (१।१५) । १३०

प्रतिभयम् त्रि. [भयम् प्रतिगतम्] भयङ्करम्; 'दिशश्च प्रदिशश्चैव बभूवुः शरसङ्कुलाः । तमसा पिहितं सर्वमासीत् प्रतिभयं महत्'—इति रामायणे (६।९०।३५) । भये क्ली. । ७०५

प्रतिभा स्त्री. [प्रतिभाति शोभते इति । प्रति+भा+क, टाप्] बुद्धिः; प्रत्युत्पन्नमतित्वं; नवनवोन्मेषशालिनी प्रज्ञा । 'प्रज्ञा नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा मता'—इति रुद्रः । 'सूक्ष्मं साधु समुद्दिष्टं नियतं ब्रह्मलक्षणम् । प्रतिभा त्वस्ति मे काचित् तां ब्रूयामनुमानतः'—इति महाभारते (१२।२५९।१) । [प्रति भाति इति । प्रति+भा+ 'आतश्चोपसर्गे इति अङ] दीप्तिः । ३३४

प्रतिभान्वितः त्रि. [प्रतिभया अन्वितः] प्रत्युत्पन्नमतियुक्तः; प्रगल्भः । ३७४

प्रतिभूः पुं. [प्रतिरूपः प्रतिनिधिर्वा भवतीति । प्रति+भू+'भुवः संज्ञान्तरयोः' इति क्विप् । 'धनिकाधमर्णयोरन्तरे यस्तिष्ठति विश्वासार्थं स प्रतिभूः' इति सिद्धान्तकौमुदी] लग्नकः; 'जामिन्' इति भाषा । 'यश्चैकः प्रतिभूः फलेषु कृतिनां यज्ञेषु यज्ञेश्वरो, विघ्नस्तोमतमःसमूहलपनः सोऽयं स्वयं श्रीहरिः'—इति प्रद्युम्नविजये १ अङ्के । ३८०

प्रतिमा स्त्री. [प्रतिमीयते अनयेति । प्रति+मा+करणे अङ+टाप्] मूर्तिसदृशमृच्छिलादिनिर्मितप्रतिरूपकं;

प्रतिमानं; प्रतिबिम्बं; प्रतियातना; प्रतिच्छाया; प्रतिकृतिः; अर्चा; प्रतिनिधिः; प्रतिच्छन्दः; प्रतिकायः; प्रतिरूपम्; 'गिरिपृष्ठे तु सा तस्मिन् स्थिता स्वसितलोचना। विभ्राजमाना शुशुभे प्रतिमेव हिरण्मयी'—इति महाभारते (१।१७२।२७)। अनुकृतिः (६९४); गजदन्तस्य बन्धः। १३१

प्रतिमानम् क्ली. [प्रतिमीयतेऽनेनेति । प्रति+मि मा वा+ल्युट्] प्रतिबिम्बं; (२१८) हस्तिललाटदेशः; गजदन्तयोर्मध्यभागः; वाहित्थस्याधो भागः; 'प्रतिमानेषु कुम्भेषु दन्तवेष्टेषु चापरे । निगृहीता भृशं नागाः प्रासतोमरशक्तिभिः'—इति महाभारते (८।२८।२९)। सादृश्यम्; 'वृष्णो वध्रिः प्रतिमानं बुभूषन् । पुरुत्रा वृत्रो अशयद्व्यस्तः'—इति ऋग्वेदे (१।३२।७)। 'प्रतिमानं सादृश्यम् इति'—तद्भाष्ये सायणाचार्यः। प्रतिनिधिः; 'नास्य शत्रुर्न प्रतिमानमस्ति'—इति ऋग्वेदे (६।१८।१२)। 'प्रतिमानं प्रतिनिधिर्नास्ति'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। दृष्टान्तः; 'यं साधुगाथासदसि रिपवोऽपि सुरा नृप ! प्रतिमानं प्रकुर्वन्ति किमुतान्ये भवादृशाः'—इति भागवते (७।४।३५)। 'उग्रायुधश्च विक्रान्तः प्रतमानं धनुष्मताम्'—इति महाभारते (९।२।२६)। धान्यादिपरिमाणनिर्द्धारार्थप्रस्थद्रोणादिकम्; 'तुलाधारणविद्वद्भिरभियुक्तस्तुलाश्रितः । प्रतिमानसमीभूतो रेखां कृत्वावतारितः'—इति याज्ञवल्क्यः (२।१००)। १३०

प्रतियत्नः पुं. [प्रतियत्यते इति । प्रति+यत् प्रयत्ने+ 'यजयाचयतविच्छप्रच्छरक्षो नङ्' इति नङ्] संस्कारः; 'सुगन्धितामप्रतियत्नपूर्वां बिभ्रन्ति यत्र प्रमदाय पुंसाम्'—इति माघे (३।५४)। 'यत्र पुरि न प्रतियत्नः संस्कारः पूर्वो यस्यास्ताम्' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। लिप्सा; वाञ्छा; वन्दी; उपग्रहः; निग्रहादिः; सतो गुणान्तराधानं; ग्रहणादिः; रचना; प्रतिग्रहः; 'प्रतियत्नस्तु संस्कारलिप्सोपग्रहणेषु च'—इति मेदिनी। प्रयत्नवति त्रि.। ८४३

प्रतियातना स्त्री. [प्रतियात्यते अनया इति। प्रति+ यत्+णिच्+'ण्यासश्रन्थो युच्' इति युच्] प्रतिमा; प्रतिरूपक; प्रतिबिम्बम्; 'अनिर्विदा या विदधे विधात्रा पृथ्वी पृथिव्या प्रतियातनेव'—इति माघे (३।३४)। तुल्ययातना। १३०

प्रतिरूपम् क्ली. [प्रतिगतं प्रतिकृतं वा रूपमिति। प्रादिसमासः] प्रतिमा; 'भवान् मे खलु भक्तानां सर्वेषां प्रतिरूपधृक्'—इति भागवते (७।१०।२१)। त्रि. [प्रतिगतं रूपमस्य] अनुरूपः; 'आत्मनः प्रतिरूपोऽसौ लब्धः पतिरिति स्थिते। विचित्रवीर्यं कल्याण्यौ पूजयामासतुः शुभे'—इति महाभारते (१।१०२।६)। पुं. दानवविशेषः; 'विश्वजित् प्रतिरूपश्च वृषाण्डो विष्करो मधुः'—इति महाभारते (१२।२२७।५१)। १३०

प्रतिरोधकः पुं. [प्रतिरुणद्धि प्रतिरुध्य चौर्यं करोतीति। प्रति+रुध्+ण्वुल्] चौरः; चोरः; तस्करः। ३३८

प्रतिलोमः त्रि. [प्रतिगतं लोम आनुकूल्यं यस्मादिति । 'अच प्रत्यन्ववपूर्वात्सामलोम्नः' इति समासान्तोऽच् प्रत्ययः] विलोमः; 'तावुभावप्यसंस्कार्याविति धर्मो व्यवस्थितः। वैगुण्याज्जन्मनः पूर्वं उत्तरः प्रतिलोमतः'—इति मानवे (९।६९)। वामः; 'बहूनि प्रतिलोमानि पुरा स कृतवान् मयि। कृष्णो नारद ! सोढानि म्रातेति स्म मयानघ !'—इति हरिवंशे (१२७।१४)। ७४३

प्रतिवत्सरम् क्ली.[वत्सरं वत्सरं प्रति। 'अव्ययं विभक्तीति' वीप्सार्थे समासः]। प्रतिसंवत्सरं; प्रतिवर्षम्। २७२

प्रतिविम्बम् क्ली. [प्रतिरूपं बिम्बमिति। 'कुगतिप्रादयः' इति समासः] प्रतिमा; प्रतिच्छाया; 'चिदानन्दमयब्रह्मप्रतिविम्बसमन्विता। तमोरजःसत्त्वगुणा प्रकृतिर्द्विविधा च सा'—इति पञ्चदश्याम् (१।१५)। १३०

प्रतिश्यायः पुं. [प्रतिक्षणं श्यायते इति। प्रति+श्यै+ 'श्याद्व्यधास्रुसंस्रतीति' ण] पीनसरोगः; प्रतिश्या; 'सर्वाणि रूपाणि तु सन्निपातात् स्युः पीनसे तीव्ररुजेऽतिदुःखे। सर्वोऽतिवृद्धोऽहितभोजनात्तु दुष्टप्रतिश्याय उपेक्षितः स्यात्'—इति चरके। ६०५

प्रतिश्रयः पुं. [प्रतिश्रीयते अस्मिन्निति । प्रति+श्रि+ अधिकरणे अच्] आश्रयः; ओकः; 'स सम्यक् पूजयित्वा तं विप्रं विप्रर्षभस्तदा। ददौ प्रतिश्रयन्तस्मै सदा सर्वातिथिव्रतः'—इति महाभारते (१।१६६।४)। निवासः; 'चण्डालश्वपचानान्तु बहिर्ग्रामात् प्रतिश्रयः'—इति मनुः (१०।५१)। 'प्रतिश्रयो निवासः'—इति तट्टीकायां मेधातिथिः। सभा; यज्ञशाला। २९७

प्रतिश्रवः पुं. [प्रति+श्रु+'ॠदोरप्' इति अप्] अङ्गी-

कारः; 'इति सोभीष्टसम्प्राप्तौ कारयित्वा प्रतिश्रवम्। दूरमुत्क्रान्तमर्यादः सङ्क्रमं तमयाचत'—इति राजतरङ्गिण्याम् (३।४२४)। ७१५

प्रतिसरः पुं. [प्रतिसरतीति, प्रति+सृ+अच्] कङ्कणं; करसूत्रं; मन्त्रभेदः; माल्यं; व्रणशुद्धिः; चमूपृष्ठं; प्रातः। पुं.– क्ली. मण्डनम्; आरक्षः; नियोज्ये त्रि.। ५५८

प्रतिसीरा स्त्री. [प्रतिसिनोति प्रतिबध्नातीति। प्रति+सि+'शुसिचिमिञां दीर्घश्च' इति क्रन् दीर्घश्च ततष्टाप्] जवनिका; व्यवधायकपटः। ३०९

प्रतिसूर्यः पुं. [प्रतिरूपः सूर्यस्य इति। प्रादिसमासः] कृकलासः; प्रतिसूर्यकः; 'प्रतिसूर्यः पिङ्गभासो बहुवर्णो महाशिराः'—इति सुश्रुते। उपसूर्यकमण्डलम्; 'प्रतिसूर्याणां माला दस्युभयातङ्कनृपहन्त्री'—इति बृहत्संहितायाम्। (३७।२) २३४

प्रतिहारः पुं. [प्रतिविषयं प्रत्येकं वा हरति स्वामिसमीपमानयतीति। प्रति+हृ+अण्] द्वारपालः; 'ज्ञातो हि प्रतिहारेण ज्ञानी कश्चिद् द्विजोत्तमः'—इति देवीभागवते (१।१७।३०)। [प्रति+हृ+अधिकरणे घञ्] द्वारम् (७८८); 'ततो नृपाणां श्रुतवृत्तवंशा पुंवत्प्रगल्भा प्रतिहाररक्षी। प्राक्सन्निकर्षं मगधेश्वरस्य नीत्वा कुमारीमवदत् सुनन्दा'—इति रघौ (६।२०)। [प्रतिरूपं हरतीति, हृ+अण्] मायाकारः; प्रतिहारकः; परमेष्ठिनः पुत्रः; 'परमेष्ठी ततस्तस्मात् प्रतिहारस्तदन्वयः'—इति विष्णुपुराणे (२।१।३७)। ४२४

प्रतीकः पुं. [प्रतीयते प्रत्येति वा इति। प्रति+इ+'अलीकादयश्चेति' ईकन् प्रत्ययेन साधुः] एकदेशः; अङ्गम्; अवयवः; 'वि सानुना पृथिवी सस्र उर्वी पृथु प्रतीकमध्येधे अग्निः'—इति ऋग्वेदे (७।३६।१)। 'तयाग्निः पृथु विस्तीर्णं प्रतीकं पृथिव्या अवयवम्'–इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। विलोमः; प्रतिकूले त्रि.। ७४४

प्रतीक्ष्यः त्रि. [प्रतीक्ष्यते इति। प्रति+ईक्ष्+ण्यत्] पूज्यः; 'भक्तिः प्रतीक्ष्येषु कुलोचिता ते पूर्वान् महाभाग तयातिशेषे। व्यतीतकालस्त्वहमभ्युपेतः त्वामर्थिभावादिति मे विषादः'—इति रघौ (५।१४)। प्रत्यवेक्षणीयः; 'प्रतीक्ष्यं तत्प्रतीक्ष्यायै पितृस्वस्रे प्रतिश्रुतम्'—इति माघे (२।१०८)। १४८

प्रतीची स्त्री. [प्रतिसायम् अञ्चति सूर्यमिति। अञ्चु गतिपूजनयोः + 'ऋत्विग्दधृक्स्रग्दिगुष्णिगञ्चुयुजिक्रुञ्चाञ्च' इति क्विन् तल्लोपो दीर्घश्च, 'उगितश्च' इति ङीप्] पश्चिमदिक्; 'येनासौ व्यजयत् कृत्स्नां प्रतीचीं दिशमाहवे। कलापो ह्येष तस्यासीन् माद्रीपुत्रस्य धीमतः'—इति महाभारते (४।४१।१८)। त्रि. पश्चिमाभिमुखी; प्रत्यङ्मुखी; 'विश्वानि देवी भुवनाभिचक्ष्या प्रतीची चक्षुरुर्विया विभाति। विश्वं जीवं चरसे बोधयन्ती विश्वस्य वाचमविदन् मनायोः'—इति ऋग्वेदे (१।९२।९)। 'भुवना भुवनानि भूतजातान्यभिचक्ष्याभिप्रकाश्य प्रकाशवन्ति कृत्वानन्तरं प्रतीची प्रत्यङ्मुखी सती'–इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। प्रतिनिवृत्तमुखी; 'अभ्रातेव पुंस इति प्रतीची गर्तारुगिव सनये धनानाम्'–इति ऋग्वेदे (१।१२४।७)। 'अभ्रातेव भ्रातृरहितेव पुंसः पित्रादीन् प्रतीची स्वकीयस्थानात् प्रतिनिवृत्तमुखी' –इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। १०१

प्रतीचीनम् त्रि. [प्रतीच्यां भवम्। प्रत्यच्+'विभाषाञ्चेरदिक् स्त्रियाम्' इति खः। अल्लोपो दीर्घश्च] प्रत्यक्; प्रतीच्यां भवं; पराङ्मुखम्; 'शूरस्येव युध्यतो अन्तमस्य प्रतीचीनं ददृशे विश्वमायत्'—इति ऋग्वेदे (३।५५।८)। 'विश्वं भूतजातं प्रतीचीनं पराङ्मुखं ददृशे'–इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। १०३

प्रतीपम् त्रि. [प्रतिकूला आपो यस्मिन्। 'ऋक्पूरब्धूःपथामानक्षे' इति अप्रत्ययः, 'द्व्यन्तरुपसर्गेभ्योऽप ईत्' इति ईत्] प्रतिकूलम्; 'क एनमत्रोपजुहाव जिह्मं दारयाः सुतं यद्बलिनैव पुष्टः। तस्मिन् प्रतीपः परकृत्य आस्ते निर्वास्यतामाशु पुराच्छ्वसानः'—इति भागवते (३।१।१४)। क्ली. अर्थालङ्कारभेदः; 'प्रसिद्धस्योपमानस्योपमेयत्वप्रकल्पनम्। निष्फलत्वाभिधानं वा प्रतीपमिति कथ्यते'–इति साहित्यदर्पणे। पुं. चन्द्रवंशीयऋक्षराजपुत्रः शान्तनुराजपिता च; 'प्रतीपः शान्तनुं पुत्रं यौवनस्थं ततोऽन्वशात्'—इति महाभारते (१।९७।२०)। ७४३

प्रतीपदर्शिनी स्त्री. [प्रतीपं प्रतिकूलं वामं वा पश्यतीति। दृश्+णिनि+ङीप्] स्त्रीमात्रम्। ४८२

प्रतीष्टः त्रि. [प्रतीत्य इष्टः, प्रति+इषु+क्त] स्वीकृतः; ओङ्कृतः। ७८१

प्रतीहारः पुं. [प्रतिह्रियते अत्रेति। प्रति+हृ+घञ्।

उपसर्गस्य दीर्घः] द्वारपालः; 'इङ्गिताकारतत्त्वज्ञो बलवान् प्रियदर्शनः। अप्रमादी सदा दक्षः प्रतीहारः स उच्यते'—इति चाणक्यः। 'प्रांशुः सुरूपो दक्षश्च प्रियवादी न चोद्धतः। चित्तग्राहश्च सर्वेषां प्रतीहारो विधीयते'—इति मात्स्ये। द्वारं (७८८); [प्रतिहरत्यनेनेति। करणे घञ्] सन्धिविशेषः; 'मयास्योपकृतं पूर्वमयञ्चोपकरिष्यति। इति यः क्रियते सन्धिः प्रतीहारः स उच्यते'—इति हारावली। ४२४

प्रतूर्णम् त्रि. [प्रकर्षेण त्वरते स्म। प्र+ञित्वरा संभ्रमे, 'गत्यर्थाकर्मके'ति कर्तरि क्त, 'रुष्यमत्वरसङ्घुषास्वनाम्' इति इडभावपक्षे 'ज्वरत्वरे' त्यूठ्, निष्ठानत्वम्] शीघ्रं; त्वरितं; तूर्णम्। ३५३

प्रतोदः पुं. [प्रतुद्यतेऽनेनेति। प्र+तुद्+करणे घञ्] अश्वादिताडनदण्डः; प्राजनं; प्रवयणं; तोत्रं; तोदनम्; 'चाबुक' इति भाषा। 'प्रकाल्येद्द्विशः सर्वाः प्रतोदेनेव सारथिः। प्रत्यमित्रश्रियं दीप्तां जिघृक्षुर्भरतर्षभ!'—इति महाभारते (२।५४।१)। ५७७

प्रतोली स्त्री. [प्रतुल्यते परिमीयते इति। प्र+तुल् परिमाणे +घञ्। गौरादित्वाद् ङीष्] रथ्या; विशिखा; 'बहुपांशुचयाश्चापि परिखापरिवारिताः। तत्रेन्द्रनीलप्रतिमाः प्रतोलीवरशोभिताः'—इति रामायणे (२।८०।१८)। अभ्यन्तरमार्गः; हट्टादिमध्यनिर्मितपथः; दुर्गनगरद्वारम्। २८९

प्रत्नः त्रि. [प्र+'नश्च पुराणे प्रात्' इति चकरात् त्नप्] पुरातनः; 'प्रत्नस्य विष्णो रूपं यत् सत्यस्यर्तस्य ब्रह्मणः। अमृतस्य च मृत्योश्च सूर्यमात्मानमीमहि'—इति भागवते (५।२०।५)। ७११

प्रत्यक् [च्] त्रि. [प्रत्यञ्चतीति। प्रति+अञ्च्+क्विन्] पश्चिमदिक्; पश्चिमदेशः; 'हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्यं यत्प्राग्विनशनादपि। प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः'—इति मनुः (२।२१)। पश्चिमकालः; प्रतिलोमम्; 'यः क्षेत्रवित्तपतया हृदि विष्वगाविः, प्रत्यक् चकास्ति भगवांस्तमवेहि सोऽस्मि'—इति भागवते (४।२२।३७)। प्रतिकूलम्; 'प्रत्यगूहुर्महानद्यः प्राङ्मुखाः सिन्धुसत्तमाः। विपरीता दिशः सर्वा न प्राज्ञायत किञ्चन'—इति महाभारते (५।८४।६)। १०३

प्रत्यक्षम् त्रि. [प्रतिगतम् अक्ष्णः इन्द्रियस्य। समासे अच्। यद्वा प्रत्यक्षमस्त्यस्येति। अर्श आदित्वाद् अच्] इन्द्रियग्राह्यम्; ऐन्द्रियकम्; साक्षात्; 'यत्पादपद्मनखरदृष्टये चात्मशुद्धये। न च दृष्टञ्च स्वप्नेऽपि प्रत्यक्षस्यापि का कथा'—इति ब्रह्मवैवर्ते (२।१।५२)। 'घ्राणजादिप्रभेदेन प्रत्यक्षं षड्विधं मतम्। घ्राणस्य गोचरो गन्धो गन्धत्वादिरपि स्मृतः'—इति भाषापरिच्छेदे। अनुभवविशेषः (८७५); अपरोक्षम्; 'फलं त्वनभिसन्धाय क्षेत्रिणां बीजिनान्तथा। प्रत्यक्षं क्षेत्रिणामर्थो बीजाद्योनिर्गरीयसी'—इति मनुः (९।५२)। ८७४

प्रत्यगाशापतिः पुं. [प्रत्यगाशायाः पश्चिमाया दिशः अधिपतिः] वरुणः। ७४

प्रत्यग्रः त्रि. [प्रतिगतः अग्रं श्रेष्ठं प्रथमदर्शनं वा] नूतनः; 'दासीनां निष्ककण्ठीनां मागधीनां शतं तथा। प्रत्यग्रवयसां ह्यद्य यो मे ब्रूयाद्धनञ्जयम्'—इति महाभारते (८।३८।१८)। शोधितः; पुं. उपरिचरस्य वसोः पुत्राणामन्यतमः; 'वसुस्तस्योपरिचरो बृहद्रथमुखास्ततः। कुशाम्बमत्स्यप्रत्यग्राश्चेदिपाद्याश्च चेदिपाः'—इति भागवते (९।२२।६)। ७६३

प्रत्यङ् [च्] त्रि. [प्रत्यञ्चतीति। प्रति+अञ्च्+क्विन्] पश्चिमदिक्; पश्चिमदेशः; पश्चिमकालः; [प्रतिपूर्वाञ्चधातोः कर्तरि क्विप् प्रत्ययेन निष्पन्नः] परावृत्तः; 'ऋतवः सर्वे पराञ्चः सर्वे प्रत्यञ्चः इति शतपथब्राह्मणे (१२।८।२।३५)। प्रतिगतः; अभिमुखः; 'प्रत्यङ् देवानां विशः प्रत्यङ्ङुदेषि मानुषान् प्रत्यङ् विश्वं स्वर्दृशे'—इति ऋग्वेदे (१।५०।५)। 'हे सूर्य त्वं देवानां विशो मरुन्नामकान् देवान्, मरुतो वै देवानां विश इति श्रुत्यन्तरात्, तान् मरुत्संज्ञकान् देवान् प्रत्यङ्ङुदेषि, तान् प्रतिगच्छन्नुदयं प्राप्नोषि। तेषामभिमुखं यथा भवति तथेत्यर्थः। तथा मानुषान् मनुष्यान् प्रत्यङ्ङुदेषि। तेऽपि यथा स्मदभिमुखमेव सूर्य उदेतीति मन्यन्ते। तथा विश्वं व्याप्तं स्वः स्वर्लोकं दृशे द्रष्टुं प्रत्यङ्ङुदेषि। यथा स्वर्लोकवासिनो जनाः सर्वेऽपि स्वस्वाभिमुख्येन सूर्यं पश्यन्तीति'—तद्भाष्ये सायणाचार्यः। अन्तर्यामी; 'प्रत्यञ्चमादिपुरुषमुपतस्थुः समाहिताः'—इति भागवते (६।९।२०)। १०३

प्रत्यनीकः पुं. [प्रतिगतः अनीकं युद्धमिति] शत्रुः; प्रतिपक्षः; विरोधी; 'यस्य यन्ता हृषीकेशो योद्धा यस्य

धनञ्जयः। रथस्य तस्य कः संख्ये प्रत्यनीको भवेद्रथः'—इति महाभारते (७।१०।३६)। 'अतीवायतयामास्तु क्षपा येष्वृतुषु स्मृताः। तेषु तत्प्रत्यनीकाढ्यं भुञ्जीत प्रातरेव तु'—इति सुश्रुते। क्ली. प्रतिपक्षसैन्यम्; 'ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः'—इति भगवद्गीतायाम् (११।३२)। अलङ्कारविशेषः; 'प्रतिपक्षमशक्तेन प्रतिकर्तुं तिरस्क्रिया। या तदीयस्य तत्स्तुत्यै प्रत्यनीकं तदुच्यते'—इति काव्यप्रकाशे। ४५६

प्रत्यन्तपर्वतः पुं. [प्रत्यन्तः सन्निकृष्टः पर्वतः] महापर्वतसमीपवर्तिक्षुद्रपर्वतः। १६७

प्रत्ययः पुं. [प्रति+इण्+भावकरणादौ यथायथम् अच्] विश्वासः। (८४८) शपथः; ज्ञानम्; 'जाग्रत्संस्कारसम्भूतः प्रत्ययो विषयान्वितः'—इति गारुडे २३६ अध्याये। हेतुः; 'अतिष्ठत् प्रत्ययापेक्षसन्ततिः स चिरं नृपः'—इति रघौ (१०।३)। विश्वासः; 'इत्थं रतेः किमपि भूतमदृश्यरूपं, मन्दीचकार मरणव्यवसायबुद्धिम्। तत्प्रत्ययाच्च कुसुमायुधबन्धुरेनाम्, आश्वासयत् सुचरितार्थपदैर्वचोभिः'—इति कुमारे (४।४५)। निश्चयः; 'यदि संशय एव स्याल् लिङ्गानामपि दर्शने। साक्षिप्रत्यय एव स्यात् सीमावादविनिर्णयः'—इति मनुः (८।२५३)। अधीनः; रन्ध्रं; शब्दः; प्रथितत्वम्; आचारः; स्वादुः; सहकारी; व्याकरणे प्रकृत्युत्तरजायमानः। (प्रत्याययन्तीति, सुप्तिङ्कृत्तद्धिताः प्रत्ययाः।) 'ता नराधिपसुता नृपात्मजैस्ते च ताभिरगमन् कृतार्थताम्। सोऽभवद्वरवधूसमागमः प्रत्ययप्रकृतियोगसन्निभः'—इति रघौ (११।५६)। ७८०

प्रत्यर्थी [न्] त्रि. [प्रतिकूलम् अर्थयते इति। प्रति+अर्थ+णिनि] शत्रुः; 'नेत्रे खञ्जनगञ्जने सरसिजप्रत्यर्थि पाणिद्वयं, वक्षोजौ करिकुम्भविभ्रमकरीमत्युन्नतिं गच्छतः'—इति साहित्यदर्पणे। पुं. प्रतिवादी; 'सभान्तः साक्षिणः प्राप्तानर्थिप्रत्यर्थिसन्निधौ। प्राड्विवाकोऽनुयुञ्जीत विधिनानेन सान्त्वयन्'—इति मनुः (८।७९)। अर्थिप्रतिपक्षः; 'प्रत्यर्थिनोऽग्रतो लेख्यं यथावेदितमर्थिना। समामासतदर्द्धाहर्नामजात्यादिचिह्नितम्।' 'अर्थ्यते इत्यर्थः साध्यः; सोऽस्यास्तीत्यर्थी तत्प्रतिपक्षः प्रत्यर्थी'—इति मिताक्षरा। ४५६

प्रत्यवसानम् क्ली. [प्रति+अव+सो+ल्युट्] भोजनम्, 'जग्धिः प्रत्यवसानं च भक्षणं भोजनाशने'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। ३२५

प्रत्यवायः पुं. [प्रत्यवाय्यते इति। प्रति+अव+अय् गतौ+घञ्] दुरदृष्टम्; 'क्षयं केचिदुपात्तस्य दुरितस्य प्रचक्षते। अनुत्पत्तिं तथा चान्ये प्रत्यवायस्य मन्वते'—इत्येकादशीतत्त्वे। पापम्। ८२४

प्रत्याकारः पुं. [प्रतिरूपः खड्गेन सदृश आकारो यस्य] खड्गकोषः। ४७३

प्रत्याख्यातः त्रि. [प्रति+आ+ख्या+क्त] दूरीकृतः; प्रत्यादिष्टः; निरस्तः; निराकृतः; निकृतः; विप्रकृतः; तिरस्कृतः; 'वीरेणाहं तथानेन त्वया वापि यशस्विनि! प्रत्याख्याता न जीवामि सत्यमेतद् ब्रवीमि ते'—इति महाभारते (१।१५६।८)। ७०३

प्रत्यादिष्टः त्रि. [प्रत्यादिश्यते स्मेति। प्रति+आ+दिश्+क्त] प्रत्यादेशविशिष्टः; निरस्तः; प्रत्याख्यातः; निराकृतः; निकृतः; विप्रकृतः। ७०३

प्रत्यारम्भः पुं. [प्रतिगतः आरम्भम्। प्रति+आ+रभि+भावे घञ्। 'रभेरशब्लिटोः' इति नुम्] मुहुः; पुनः। ८७६

प्रत्यासरः पुं. [प्रत्यास्रियते इति। प्रति+आ+सृ+ऋदोरप् इत्यप्] सैन्यपृष्ठम्। ८२७

प्रत्यासारः पुं. [प्रत्यास्रियते इति। प्रति+आ+सृ+घञ्] व्यूहस्य पश्चाद्भागः; व्यूहस्य पश्चाद्व्यूहान्तरं; व्यूहपार्ष्णिः। ८२७

प्रत्युत्पन्नमतिः त्रि. [प्रत्युत्पन्ना मतिर्यस्य] सूक्ष्मबुद्धियुक्तः; कुशाग्रीयमतिः; सूक्ष्मदर्शी; तत्कालधीः; प्रतिभान्वितः; 'प्रत्युत्पन्नमतिर्धीमान् व्यवसायी विशारदः। सत्यधर्मपरो यश्च स भिषक्पाद उच्यते'—इति सुश्रुते। ३७६

प्रत्युषः पुं. [प्रत्योषति विनाशयति अन्धकारमिति। प्रति+उष् दाहे+'इगुपधज्ञेति' क] प्रत्यूषः; प्रातः; 'प्रत्युषे च स्वगृहमभ्युपेत्य द्वारदेशस्थितोऽपि विविधपौरकृत्योत्सुकतया तामाहेति'—पञ्चतन्त्रे। १११

प्रत्युषः [स्] क्ली. [प्रत्योषति नाशयत्यन्धकारमिति। प्रति+उष्+'उषः कित्' इति असि, स च कित्] प्रत्यूषः; 'याति व्यक्तिं पुरस्तादरुणकिसलये प्रत्युषः पारिजातः'—इति सूर्यशतके। १११

प्रत्यूषः पुं. [प्रत्यूषति रुजति कामुकानिति। प्रति+ऊष्

रोगे+क] प्रभातम्; 'दीर्घीकुर्वन् पटु मदकलं कूजितं सारसानां, प्रत्यूषेषु स्फुटितकमलामोदमैत्रीकषायः'—इति मेघदूते (३३)। सूर्यः; वसुभेदः; 'वसवोऽष्टौ समाख्यातास्तेषां वक्ष्यामि विस्तरम्। आपो ध्रुवश्च सोमश्च धरश्चैवानिलोऽनलः। प्रत्यूषश्च प्रभावश्च वसवो नामभिः स्मृताः'—इति विष्णुपुराणे '(१।१५।-१११)। १११

प्रत्यूषः [स्] क्ली. [प्रति+ऊष्+असि] प्रभातम्; 'प्रत्यूषस्यापराह्णे तु जीर्णेऽन्ने च प्रकुप्यति'—इति सुश्रुते (१।२१)। १११

प्रत्यूहः पुं. [प्रत्यूहनमिति। प्रति+ऊह्+घञ्] विघ्नः; 'भर्तृशुश्रूषणादेव मया प्राप्तं महत् फलम्। सर्वकामफलावाप्त्या प्रत्यूहाः परिवर्तिताः'—इति मार्कण्डेये (१६।५५)। ४०१

प्रथमः त्रि. [प्रथते प्रसिद्धो भवतीति। प्रथ्+'प्रथेरमच्' इति अमच्] आदिमः; आदिः; पूर्वः; पौरस्त्यः; आद्यः; अग्रिमः; प्राक्; 'बाह्यार्थानिखिलांश्चित्तं त्याजयेत्प्रथमं नरः'—इति विष्णुपुराणे (१।११।५२)। प्रधानम्; 'राम इत्यभिरामेण वपुषा तस्य चोदितः। नामधेयं गुरुश्चक्रे जगत्प्रथममङ्गलम्'—इति रघौ (१०।६७)। ७०७

प्रदरः पुं. [प्र+दॄ विदारणे+'ॠदोरप्' इति भावादौ यथायथम् अप्] बाणः; भङ्गः; विदारः; नारीरुग्भेदः; असृग्दरं; तत्तु फलितयोन्या रक्तादिधातुक्षरणम्। 'घृततुल्या रुद्रलाक्षा पीता क्षीरेण वै सहा। प्रदरं हरते रोगं नात्र कार्या विचारणा'—इति गारुडे। ४६६

प्रदिक् [श्] [स्त्री. प्रगता दिग्भ्यः] विदिक्; 'ततो विभ्रान्तमनसो जनाः क्षुद्भयपीडिताः। गृहाणि सम्परित्यज्य बभ्रमुः प्रदिशो दिशः'—इति महाभारते (१।१७४।३९)। प्रकृष्टा दिक्; 'प्रदिशो विदिशश्चैव शरधारा समावृताः। अन्धकारीकृतं व्योम दिनेशो नैव दृश्यते'—इति हरिवंशे (१६३।८)। १०२

प्रदीपनः पुं. [प्रदीपयति। प्र+दीप्+णिच्+ल्यु] स्थावरविषभेदः; 'काकोलो गरलः क्ष्वेडो वत्सनाभः प्रदीपनः। शौक्लिकेयो ब्रह्मपुत्रो विषं स्याद् गरलो विषः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। 'वर्णतो लोहितो यः स्याद् दीप्तिमान् दहनप्रभः। महादाहकरः पूर्वैः कथितः स प्रदीपनः'—इति राजनिघंण्टः। प्रकाशके त्रि.। ६४६

प्रदेशः पुं. [प्रदिश्यते इति, प्र+दिश्+'हलश्च' इति घञ्, 'उपसर्गस्य घञ्यमनुष्ये बहुलम्' इति पाक्षिको दीर्घाभावः] देशमात्रम्; आस्थानम्; आस्था; भूः; अवकाशः; स्थितिः; पदं; तर्जन्यङ्गुष्ठसम्मितः, भित्तिः; संज्ञा; तन्त्रयुक्तिप्रकारविशेषः; 'प्रकृतस्यातिक्रान्तेन साधनं प्रदेशः।' १६०

प्रदेशनम् क्ली. [प्रदिश्यते अनेनेति। प्र+दिश्+करणे ल्युट्] नृपादेरुपढौकनं; प्राभृतम्; उपायनम्; उपग्राह्य। उपहारः; उपदा; 'भेंट, डाली' इति भाषा। देवताभ्यो भक्त्या मित्रादिभ्यश्च प्रीत्या यत् प्रशस्तं मोदकादि दीयते तत्; देवताब्राह्मणराजादिभ्यो यत् श्रद्धया दीयते तत्; उपायनादिचतुष्कं तुभ्यमिदं दीयते त्वयैतत् मम कार्यं साधनीयमिति यद्दीयते। ४१९

प्रदेशनी स्त्री. [प्रदिश्यते अनयेति। प्र+दिश्+करणे ल्युट्] तर्जनी। ५३८

प्रदेशिनी स्त्री. [प्रदिशतीति। प्र+दिश्+णिनि+ङीप्] तर्जनी; 'तेऽदर्शयन् प्रदेशिन्या तमेव नृपसत्तमम्। शर्मिष्ठां मातरं चैव तथाचख्युश्च दारकाः'—इति महाभारते (१।८३।१६)। 'स्वरङ्गुलैः पादाङ्गुष्ठप्रदेशिन्यौ द्व्यङ्गुलायते। प्रदेशिन्यास्तु मध्यमानामिका कनिष्ठिका यथोत्तरं पञ्चमभागहीनाः'—इति सुश्रुते ३५ अध्याये। ५३८

प्रदोषः पुं. [दोषा रात्रिः, प्रारम्भो दोषाया इति। प्रादिसमासः। प्रक्रान्ता दोषा रात्रिरत्रेति वा] रजनीमुखं; तत्तु रात्रेः प्रथमदण्डचतुष्टयम्; 'प्रदोषोऽस्तमयादूर्ध्वं घटिकाद्वयमिष्यते'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। 'वद प्रदोषे स्फुटचन्द्रतारका विभावरी यद्यरुणाय कल्पते'—इति कुमारे (५।४४)। दोषः; [प्रकृष्टो दोषो यस्येति] त्रि. दुष्टः; 'ये चान्ये कालयवनशाल्वरुक्मिद्रुमादयः। तमःस्वभावास्तेऽप्येनं प्रदोषमनुयायिनः'—इति माघे (२।९८)। 'ये राजानस्तमःस्वभावाः तमोगुणात्मकाः अतएव तेऽपि प्रदोषं प्रकृष्टदोषम्। 'प्रदोषो दुष्टरात्र्यांशाविति'—वैजयन्ती। इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। १०९

प्रद्युम्नः पुं. [प्रकृष्टं द्युम्नं बलं यस्य] कन्दर्पः; कामदेवः; 'एकदेवं चतुष्पादं चतुर्धा पुनरच्युतः। बिभेद वासुदेवोऽसौ प्रद्युम्नो हरिरव्ययः'—इति कौर्मे। 'अनिरुद्धः स्वयं

ब्रह्मा प्रद्युम्नः काम एव च । बलदेवः स्वयं शेषः कृष्णश्च प्रकृतेः परः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । नड्वलागर्भजातो मनोरपत्यभेदः; 'मनोरसूत महिषी विरजान् नड्वला सुतान्। पुरुं कुत्सं त्रितं द्युम्नं सत्यवन्तं धृतव्रतम्। अग्निष्टोममतीरात्रं प्रद्युम्नं शिबिमुल्मुकम्'-इति भागवते (४।१३।१५-१६)। ३२

प्रद्योतः पुं. [प्रकृष्टो द्योतः] रश्मिः; किरणः; यक्षभेदः; 'कशेरको गण्डकण्डुः प्रद्योतश्च महाबलः'—इति महाभारते (२।१०।१५)। ३८

प्रद्योतनः पुं. [प्रद्योतते इति, प्र+द्युत्+'अनुदात्तेतश्च हलादेः' इति युच्] सूर्यः; क्ली. [भावे ल्युट्] द्युतिः। ३५

प्रधनम् क्ली. [प्रदधातीति, प्र+धा+'कृपृवृजिमन्दिनिधाञः क्युः' इति बाहुलकात् क्यु, आतो लोपश्च]युद्धम्; 'वैरं भवति वित्तार्थं दारार्थं वा परस्परम्। एषणारहितौ कस्मात् चक्रतुः प्रधनं महत् '—इति देवी भागवते (४।७।५३)। दारणं; [प्रकृष्टं धनमस्येति] प्रभूतधनविशिष्टे त्रि.। ४५३

प्रधानम् क्ली. [प्रधत्ते सर्वमात्मनीति । प्र+धा+युच्] महामात्रः; 'प्रमाणानि च कुर्वीत तेषां धर्म्यान् यथोदितान्। रत्नैश्च पूजयेदेनं प्रधानपुरुषैः सह'—इति मनुः (७।२०२)। (६९०) त्रि. प्रशस्तं; प्रमुखं; प्रवेकम्; अनुत्तमम्; उत्तमं; मुख्यं; वर्यं; वरेण्यं; प्रवर्हम्; अनवराद्धर्यं; पराद्धर्यम्; अग्रं, प्राग्रहरं; प्राग्र्यम्; अग्र्यम्; अग्रीयम्; अग्रिमम्; 'उपसर्ज्जनं प्रधानस्य धर्मतो नोपपद्यते। पिता प्रधानं प्रजने तस्माद्धर्मेण तं भजेत्'—इति मनुः (९।१२१)। प्रकृतिः (८०२); 'सदक्षरं ब्रह्म य ईश्वरः पुमान्, गुणोर्मिसृष्टिस्थितिकालसंलयः । प्रधानबुद्धयादिजगत्प्रपञ्चसूः; स नोऽस्तु विष्णुर्गतिभूतिमुक्तिदः'—इति विष्णुपुराणे (१।१।२) पुं. [प्रधत्ते इति। प्र+धा+ल्यु] सेनापत्यादिः; 'महामात्रः प्रधानः स्यात्'—इति पुंस्काण्डे बोपालितः। राजर्षिभेदः;'प्रधानो नाम राजा च व्यक्तं ते श्रोत्रमागतः। कुले तस्य समुत्पन्नां सुलभां नाम विद्धि माम्—'इति महाभारते (१२।२३०।१८१)। ४२७

प्रधिः पुं. [प्रधीयते अनेनेति। प्र+धा+'उपसर्गे घोः किः' इति कि] चक्रधारा; नेमिः; 'मन्ये पर्यायधर्मोऽयं कालस्यात्यन्तगामिनः। चक्रे प्रधिरिवासक्तो नास्य शक्यं पलायितुम्'—इति महाभारते(५।५१।५८)। ४४७, ६८४

प्रपञ्चः पुं. [प्रपञ्च्यते इति, प्र+पचि व्यक्तीकरणे+घञ्] विस्तारः; आडम्बरः (८४१); विपर्यासः; विस्तरः; 'विपर्यासो वैपरीत्यं भ्रमो वा मायेति स्वामी' —इति भरतः। सञ्चयः; प्रतारणं; संसारः; 'पादुकापञ्चकस्तोत्रं पञ्चवक्त्राद्विनिर्गतम्। षडाम्नायफलोपेतं प्रपञ्चे चातिदुर्लभम्'—इति गुरुपादुकास्तोत्रम्। ७६६

प्रपदम् क्ली. [प्रारब्धं प्रगतं वा पदमिति। प्रादिसमासः] पादाग्रं; 'भूमौ विपरिवर्तेत तिष्ठेद्वा प्रपदैर्दिनम्। स्थानासनाभ्यां विहरेत् सवनेषूपयन्नपः'—इति मनुः (६।२२)। ५२९

प्रपा स्त्री. [प्रकर्षेण पिबन्त्यस्यामिति । प्र+पा+'आतश्चोपसर्गे' इत्यङ्, घञर्थे क वा] पानीयशालिका; पानीयशाला; 'यस्तु रज्जुं घटं कूपाद्धरेद्भिद्याच्च यः प्रपाम्। स दण्डं प्राप्नुयान्माषं तच्च तस्मिन् समाहरेत्' —इति मनुः (८।३१९)। यज्ञशाला; 'विश्वामित्रं पुरस्कृत्य शतानन्दं च धार्मिकम्। प्रपामध्ये तु विधिवद्वेदिं कृत्वा महातपाः'—इति रामायणे (१।७३।२०)। 'प्रपामध्ये यज्ञशालामध्ये'—इति तट्टीकायां रामानुजः। २९७

प्रपातः पुं. [प्रपतत्यस्मादिति । प्र+पत्+'अकर्तरि कारके संज्ञायाम्' इति घञ्] अभ्यवस्कन्दः; कूलं (६६७); निरवलम्बनपर्वतादिपार्श्वम्; यस्मात् पतने अवस्थानक्रियाविशेषो नास्ति; अतटः; भृगुः; 'मधु पश्यति मूढात्मा प्रपातं नैव पश्यति । करोति निन्दितं कर्म नरकान् न बिभेति च'—इति देवी भागवते (४।७।४९)। ४५२

प्रपुनाडः पुं. [पुंमासं नाडयतीति । नड् भ्रंशे+अण् । प्रकृष्टः पुन्नाडः इति प्रादिसमासः। पृषोदरादित्वात् साधुः] प्रपुन्नाडः; 'कफापहं शाकमुक्तं वरुणप्रपुनाडयोः। रूक्षं लघु च शीतं च वातपित्तप्रकोपणम्'—इति सुश्रुतः। ६१९

प्रपुनडः पुं. [प्रपुन्नाड+पृषोदरादित्वाद् ह्रस्वः] प्रपुन्नाडः। ६१९

प्रपुन्नाटः पुं. [पुमासं नाटयतीति । नट्+णिच्+अण्। प्रकृष्टः पुन्नाटः इति प्रादिसमासः] चक्रमर्दः। ६१९

प्रपुन्नाडः पुं. [पुमासं नाडयतीति। नड्+अण्, प्रकृष्टः

पुन्नाड इति प्रादिसमासः] चक्रमर्दकः ।

प्रपुन्नालः पुं. [प्रपुन्नाड+डस्य लत्वम्] प्रपुन्नाडः । ६१९

प्रबुद्धः त्रि. [प्र+बुध्+क्त] पण्डितः; प्रफुल्लः; 'प्रबुद्ध-पुण्डरीकाक्षं बालातपनिभांशुकम्। दिवसं शारदमिव प्रारम्भमुखदर्शनम्'—इति रघौ (१०।९)। जागरितः; 'प्रातस्तरां पतत्रिभ्यः प्रबुद्धः प्रणमन् रविम्'–इति भट्टिः (४।१४)। ३३२

प्रबोधकः पुं. [प्र+बुध् अवगमने, णिच्, ण्वुल्] मङ्गल-पाठकः। ४३५

प्रभञ्जनः पुं. [प्रकर्षेण भनक्ति वृक्षादीनिति। प्र+भञ्ज्+युच्] वायुः; पवनः; 'घटोत्कचसुतः श्रीमान् भिन्नाञ्जनचयोपमः। रुरोध द्रौणिमायान्तं प्रभञ्जनमिवाद्रिराट्'—इति महाभारते (७।१५४।७८)। मणि पुराधिपविशेषः 'राजा; प्रभञ्जनो नाम कुलेऽस्मिन् सम्बभूव ह। अपुत्रः प्रसवेनार्थी तपस्तेपे स उत्तमम्' —इति महाभारते (१।२१७।१९)। भञ्जनकर्तरि त्रि.।'प्रभञ्जनो यो लोकानां युगान्ते सर्वनाशनः'—इति हरिवंशे (२४५।१३) 'सा सलज्जा विहस्याह पुत्रं देहि सुरोत्तम। बलवन्तं महाकायं सर्वदर्पप्रभञ्जनम्'–इति --महाभारते (१।१२३।१२) ७५।

प्रभविष्णुता स्त्री. [प्रभविष्णुशब्दात् भावार्थे तल्प्रत्ययः] प्रभुत्वं; प्रभुता; प्रभावता; 'यद्यसाध्यानि दुःखानि च्छेत्तुं न प्रभविष्णुता। तन्महीपाल ! महतां महत्त्वस्य किमङ्कनम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (२।४७)। ७८५

प्रभा स्त्री. [प्रकर्षेण भातीति। प्र+भा+'आतश्चोपसर्गे' इति अङ। भावे अङ वा] दीप्तिः; रोचिः; द्युतिः; शोचिः; त्विषा; ओजः; भाः; रुचिः; विभा; आलोकः; प्रकाशः; तेजः; रुक्; 'व्यराजयत वैदेही वेश्म तत्सुविभूषिता। उदितांशुमतः काले खं प्रभेव विवस्वतः' —इति रामायणे (२।३९।१८)। 'रतीव रूपिणी किन्त्वमनङ्गाङ्गविहारिणी। अतीव भ्राजसे सुभ्रु! प्रभेवेन्दोरनुत्तमा'—इति महाभारते(४।१३।१७)। गोपीविशेषः; 'दृष्टस्त्वं प्रभया गोप्या युक्तो वृन्दावने वने। सद्यो मत्शब्दमात्रेण तिरोधानं कृतं त्वया। प्रभा देहं परित्यज्य जगाम सूर्यमण्डलम्। ततस्तस्याः शरीरे च तीव्रं तेजो बभूव ह'— इति ब्रह्मवैवर्ते (१।१५७।५७)+ दुर्गा; यमस्य भगिनी जाता यमुना तेन सा मता। प्रभा प्रसादशीलत्वात् ज्योत्स्ना चन्द्रार्कमालिनी। देवलोके तथेन्द्राणी ब्रह्मास्येषु सरस्वती। सूर्यबिम्बे प्रभा नाम मातॄणां वैष्णवी मता' —इति देवीभागवते (७।३०।८२)। सूर्यपत्नी; 'विवस्वान् कश्यपात् पूर्वमादित्यामभवत् पुरा। तस्य पत्नीत्रयन्तद्वत् संज्ञा राज्ञी प्रभा तथा। रेवतस्य सुता राज्ञी रेवन्तं सुषुवे सुतम्। प्रभा प्रभावं सुषुवे त्वाष्ट्री संज्ञा तथा मनुम्'—इति मात्स्ये (११।२३)। द्वादशाक्षर-वृत्तिविशेषः; 'वसुयुगविरतिर्ननौ रौ प्रभा'–इति वृत्त-रत्नाकरटीकायाम्। कुबेरपुरी; अप्सरोभेदः। ३८, ६५

प्रभाकरः पुं. [प्रभां करोतीति, कृ+'दिवाविभानिशाप्रभेति' ट] सूर्यः; 'कृशानुरपधूमत्वात् प्रसन्नत्वात् प्रभाकरः। रक्षोविप्रकृतावास्तामपविद्धशुचाविव' —इति रघौ (१०।७४)। अग्निः; चन्द्रः; 'तावतीत्य रथानीकं विमुक्तौ पुरुषर्षभौ। ददृशाते यथा राहोरास्यान्मुक्तौ प्रभाकरौ'—इति महाभारते। 'प्रभाकरौ चन्द्रसूर्यौ'–इति तट्टीकायाम्। समुद्रः; अर्कवृक्षः; अष्टममन्वन्तरे देवगणभेदः; 'तपस्तप्तश्च शक्रश्च द्युतिर्ज्योतिः प्रभाकरः'—इति मार्कण्डेयपुराणे (८०।६)। अत्रिवंशीयमुनिविशेषः; 'ऋषिर्जातोऽत्रिवंशे तु तासां भर्ता प्रभाकरः। भद्रायां जनयामास सुतसोमं यशस्विनम्'—इति हरिवंशे (३१।१०)। नागभेदः; 'कुठरः कुञ्जरश्चैव तथा नागः प्रभाकरः'—इति महाभारते (१।३५।१५)। मीमांसकप्रभेदः; तस्य मतं दर्शनशास्त्रादौ प्राभाकरमतमिति प्रसिद्धम्। क्ली. कुशद्वीपस्थवर्षभेदः; 'महिषं महिषस्यापि पुनश्चापि प्रभाकरम्'—इति मात्स्ये (१२१।६०)। ३६

प्रभातम् क्ली. [प्रकर्षेण भातुं प्रवृत्तमिति। प्र+भा+आदिकर्मणि क्त। यद्वा प्रकृष्टं भातं दीप्तिरत्रेति] प्रातःकालः; प्रत्यूषः; अहर्मुखं; कल्यम्; उषः; प्रत्युषः; प्रत्यूषः; दिनादिः; निशान्तं; व्युष्टं; प्रगे; प्राह्णं; गोसः; गोसङ्गः; ऊषः; ऊषकं; उषाः; ऊषा; विभातम्; 'प्रभाते यः स्मरेन्नित्यं दुर्गा दुर्गाक्षरद्वयम्। आपदस्तस्य नश्यन्ति तमः सूर्योदये यथा'—इति धर्मशास्त्रम्। 'वैद्यः पुरोहितो मन्त्री दैवज्ञोऽथ चतुर्थकः। प्रभातकाले द्रष्टव्यो नित्यं स्वश्रियमिच्छता'—इति राजवल्लभः। १११

प्रभावः पुं. [प्र+भू+भावे घञ्] शक्तिः; 'प्रभावतो यथा

धात्री लकुचस्य रसादिभिः। समापि कुरुते दोषत्रितयस्य विनाशनम्। क्वचित्तु केवलं द्रव्यं कर्म कुर्यात् प्रभावतः। ज्वरं हन्ति शिरोबद्धा सहदेवी जटा यथा' —इति भावप्रकाशः। कोषदण्डजतेजः; प्रतापः; 'कोषो धनं, दण्डो दमः, तद्धेतुत्वात् सैन्यमपि दण्डः, ताभ्यां यत्तेजो जायते स प्रतापः प्रभावश्च कथ्यते'—इति भरतः। तेजः; 'अद्य मेऽस्त्रप्रभावस्य प्रभावः प्रभविष्यति। राज्ञश्चाप्रभुतां कर्तुं प्रभुत्वं च तव प्रभो!'—इति रामायणे (२।२३।३८)। शान्तिः; प्रभागर्भजातः सूर्यपुत्रः; 'प्रभा प्रभावं सुषुवे'—इति मात्स्ये (११।३)। कलावत्यां जातः स्वरोचिषो मनोः पुत्रविशेषः; 'ततश्च जज्ञिरे तस्य त्रयः पुत्राः स्वरोचिषः। विजयो मेरुनन्दश्च प्रभावश्च महाबलः'—इति मार्कण्डेये (६६।५)। ८५५

प्रभावता स्त्री. [प्रभावस्य भावः। प्रभाव+तल्] प्रभुता; प्रभुत्वम्। ७८५

प्रभिन्नः पुं. [प्र+भिद्+क्त] क्षरन्मदहस्ती; गर्जितः; मत्तः; भ्रान्तः; मदकलः; 'ततो महामेघमहीधराभं प्रभिन्नमत्यङ्कुशमत्यसह्यम्। रामोपवाह्यं रुचिरं ददर्श शत्रुञ्जयं नागमुदग्रकायम्'—इति रामायणे (२।१५।४६)। 'यथा नलवनं क्रुद्धः प्रभिन्नः षष्टिहायनः। मृद्नीयात्तद्वदायस्तः पार्थोऽमृद्नाच्चमूं तव'—इति महाभारते (७।२७।२०)। प्रकृष्टभेदविशिष्टे त्रि.। 'प्रभिन्नवैदूर्यनिभैस्तृणाङ्कुरैः समाचिता प्रोत्थितकन्दलीदलैः'—इति ऋतुसंहारे (२।५)। २२०

प्रभुः त्रि. [प्रभवतीति, प्र+भू+'विप्रसंभ्यो ड्वसंज्ञायाम्' इति डु] अधिपतिः; स्वामी; ईश्वरः; पतिः; ईशिता, अधिभूः; नायकः; नेता; परिवृढः; अधिपः; पालकः; 'न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः। न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते'—इति भगवद्गीतायाम् (५।१४)। नित्यः; शक्तः; 'आत्मेश्वराणां न हि जातु विघ्नाः समाधिभेदप्रभवो भवन्ति'—इति कुमारे (३।४०)। श्रेष्ठः; 'वैशेष्यात् प्रकृतिश्रैष्ठ्यात् नियमस्य च धारणात्। संस्कारस्य विशेषाच्च वर्णानां ब्राह्मणः प्रभुः'—इति मनुः (१०।३)। पुं. विष्णुः; शिवः; 'हरश्च हरिणाक्षश्च सर्वभूतहरः प्रभुः'—इति महाभारते (१३।१७।३१)। पारदः; शब्दः। ३४३

प्रभुता स्त्री. [प्रभोर्भावः, प्रभु+तल्] प्रभुत्वम्; ऐश्वर्यम्। ७८५

प्रभूतम् त्रि. [प्र+भू+क्त] प्रचुरम्; 'तत्राभूदभिभूतप्रभूतमायानिकायशतधूर्तः। सकलकलानिलयानां धुर्यः श्रीमूलदेवाख्यः'—इति कलाविलासे (१।९)। उद्गतं; भूतम्; उन्नतम्। ७०१

प्रभ्रष्टकम् क्ली. [प्र+भ्रंश्+क्त, स्वार्थे कन्] शिखालम्बिमाल्यं; चूडातो लम्बमानमाल्यं; प्रभ्रष्टम्। ५५३

प्रमथः पुं. [प्रमथतीति, प्र+मथ्+अच्] शिवपारिषदः; 'षट्त्रिंशत्तु सहस्राणि प्रमथा द्विजसत्तमाः। तत्रैकत्र सहस्राणि भागे षोडश संस्थिताः'—इति कालिकापुराणे। घोटकः; धृतराष्ट्रपुत्राणामन्यतमः; 'प्रमथश्च प्रमाथी च दीर्घरोमश्च वीर्यवान्'—भारते (१।११७।१२)। १४

प्रमदः पुं. [प्र+मद्+'प्रमदसंमदौ हर्षे' इति अप्] हर्षः; 'तच्छ्रुत्वा मम राज्ञश्च विषादप्रमदौ द्वयोः। अभूतां मेघमालोक्य हंसचातकयोरिव'—इति कथासरित्सागरे (६।६२)। [प्रमाद्यत्यनेनेति। प्र+मद्+करणे अप्] धुस्तूरफलं; दानवविशेषः; 'प्रमदो मयः कुपयो हयग्रीवश्च वीर्यवान्'—इति हरिवंशे (३।८७)। वशिष्ठतनयानामन्यतमः; 'वसिष्ठतनयाः सप्त ऋषयः प्रमदादयः। सत्या वेदश्रुता भद्रा देवा इन्द्रस्तु सत्यजित्' —इति भागवते (८।१।२४)। [प्रमाद्यतीति। प्र+मद्+कर्तरि अच्] मत्ते त्रि.। 'प्रावृषि प्रमदबर्हिणेष्वभूत् कृत्रिमाद्रिषु विहारविभ्रमः'—इति रघौ (१९।३७)। १२३

प्रमदवनम् क्ली. [प्रमदानाम् उत्तमस्त्रीणां वनं काननम्। 'ङ्यापोरिति' ह्रस्वः] राज्ञोऽन्तःपुरोचितवनं; प्रमदाकाननं; प्रमदकाननं; प्रमदावनम्। २१३

प्रमदा स्त्री. [प्रमदयति पुरुषमिति। प्र+मद् हर्षे+णिच्+अच्। यद्वा प्रमदो हर्षोऽस्त्यस्या इति। अच्+टाप्] उत्तमयोषित्; 'नयनान्यरुणानि घूर्णयन् वचनानि स्खलयन् पदे पदे। असति त्वयि वारुणीमदः प्रमदानामधुना विडम्बना'—इति कुमारे (४।१२)। चतुर्दशाक्षरवृत्तिविशेषः; 'नजभजला गुरुश्च भवति प्रमदा'—इति वृत्तरत्नाकरटीकायाम्। ४८२

प्रमयः पुं. [प्र+मीङ हिंसायाम्+भावे अच्] वधः;

घातनम्; 'दृष्टं दृष्टं नृपोदन्तं बद्धा प्रमयमीयुषाम्। अर्वाक्कालभवैर्वार्ता यत्प्रबन्धेषु पूर्यते'—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।९)। ४७८

प्रमया स्त्री. [प्रमय+टाप्] हिंसा; मारणं; वधः। ४७८

प्रमादः पुं. [प्र+मद्+भावे घञ्] अनवधानम्; अनवधानता; 'लोभप्रमादविश्वासैः पुरुषो नश्यते त्रिभिः। तस्माल्लोभो न कर्तव्यः प्रमादो न न विश्वसेत्'—इति गारुडे नीतिसारे ११५ अध्यायः। ७५४

प्रमापणम् क्ली. [प्र+मी हिंसायाम्+स्वार्थे णिच्+भावे ल्युट्] मारणम्; 'अस्थिमतान्तु सत्त्वानां सहस्रस्य प्रमापणे। पूर्णे चानस्यनस्थ्नान्तु शूद्रहत्याव्रतञ्चरेत्' —इति मनुः (११।१४१)। ४७७

प्रमीतः त्रि. [प्र+मी हिंसायाम्+क्त] मृतः; यज्ञार्थहतपशुः। ६२९

प्रमुखः त्रि. [प्रकृष्टं मुखमाद्यं यस्य। प्रगतः मुखं मुख्यतां वा] प्रधानम्; 'ज्वलन्मणिशिखाश्चैनं वासुकिप्रमुखा निशि। स्थिरप्रदीपतामेत्य भुजङ्गाः पर्युपासते'—इति कुमारे (२।३८)। श्रेष्ठः; 'बलेषु प्रमुखो हस्ती न तथान्यो महीपतेः'—इति हितोपदेशे (३।१२४)। प्रथमः; 'नारदप्रमुखास्तस्यामन्तर्वेद्यां महात्मनः। समासीनाः शुशुभिरे सह राजर्षिभिस्तथा'—इति महाभारते (२।६।९)। मान्यः; पुं. [प्रकृष्टं मुखम् अग्रभागो यस्य] पुन्नागवृक्षः; समूहः; क्ली. [प्रकृष्टं मुखमारम्भः] तदात्वं; तत्कालः; सम्मुखम्; 'यानेव हत्वा न जिजीविषामस्तेऽवस्थिताः प्रमुखे धार्तराष्ट्राः' —इति भगवद्गीतायाम् (२।६)। ६९०

प्रमोदः पुं. [प्र+मुद् हर्षे+भावे घञ्] हर्षः; 'उत्पाद्य पुत्रजननप्रभवं प्रमोदं दत्वा पुनर्विरहजं किल दुःखभारम्। त्वं क्रीडसे सुललितैः खलु तैर्विहारैः नोचेत् कथं मम सुताप्तिरतिवृथा स्यात्'—इति भागवते (४।२४।५५)। आमोदः; गन्धविशेषः; 'अश्विनोरोषधीनां च घ्राणे मोदप्रमोदयोः'—इति भागवते (२।६।२)। 'मोदप्रमोदयोः' सामान्यविशेषगन्धयोः घ्राणेन्द्रियं परमायनम्'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। नागविशेषः; 'विहङ्गः शरभो मोदः प्रमोदः संहतापनः' —इति महाभारते (१।५७।११)। स्कन्दानुचरविशेषः; 'आनन्दश्च प्रमोदश्च स्वस्तिको ध्रुवकस्तथा'—इति महाभारते (९।४५।६३)। १२३

प्रयतः त्रि. [प्र+यम्+क्त। यद्वा प्रयतते धर्माद्यर्थमिति। प्र+यत्+अच्] पवित्रः; 'ब्रह्मचार्याहरेद्भैक्षं गृहेभ्यः प्रयतोऽन्वहम्'—इति मनुः (२।१८३)। नम्रः; 'वाल्मीकिरथ तं दृष्ट्वा सहसोत्थाय वाग्यतः। प्राञ्जलिः प्रयतो भूत्वा तस्थौ परमविस्मितः'—इति रामायणे (१।२।२४)। प्रयत्नविशिष्टः। ४०२

प्रयाणम् क्ली. [प्र+या+ल्युट्, णत्वम्] गमनं; प्रस्थानं; व्रज्या; अभिनिर्याणं; प्रयाणकम्; 'उद्घाटितनवद्वारे पञ्जरे विहगोऽनिलः। यत्तिष्ठति तदाश्चर्यं प्रयाणे विस्मयः कुतः'—इत्युद्भटः। 'नव द्वारे का पिञ्जरा, तामें पक्षी पौन। रहने में आश्चर्य है, गये अचम्भा कौन।' ४५२

प्रयोगः पुं. [प्र+युज्+भावकर्मादौ यथायथं घञ्] प्रयुक्तिः; 'प्रत्यब्रवीच्चैनमिषुप्रयोगे तत्पूर्वभङ्गे वितथप्रयत्नः'—इति रघौ (२।४२)। कार्मणं; वशीकरणं; निदर्शनम्; 'स्वयमात्मेति पर्यायस्तेन लोके तयोः सह। प्रयोगो नास्त्यतः स्वत्वमात्मत्वञ्चान्यवारकम्'—इति पञ्चदश्याम् (६।४३)। घोटकः; सामाद्युपायानुष्ठानम्; 'क्षणशयितविबुद्धाः कल्पयन्तः प्रयोगानुदधिमहति राज्ये काव्यवद्दुर्विगाहे'—इति माघे (११।६)। अभिनयः; 'स प्रयोगनिपुणः प्रयोक्तृभिः सञ्जघर्ष सह मित्रसन्निधौ'—इति रघौ (१९।३६)। वृद्धये ऋणदानं; स तु धनप्राप्त्युपायेषु अन्यतमः; 'सप्त वित्तागमा धर्म्या दायो लाभः क्रयो जयः। प्रयोगः कर्मयोगश्च सत्प्रतिग्रह एव च'—इति मनुः (१०।११५)। ८६६

प्रयोजनम् क्ली. [प्रयुज्यतेऽनेन इति, प्र+युज्+करणे ल्युट्] हेतुः; 'सर्वस्यैव हि शास्त्रस्य कर्मणो वापि कस्यचित्। यावत् प्रयोजनं नोक्तं तावत् केन प्रगृह्यते। सिद्धार्थं सिद्धसम्बन्धं श्रोतुं श्रोता प्रवर्तते। ग्रन्थादौ तेन वक्तव्यः सम्बन्धः सप्रयोजनः'—इति प्राञ्चः। [प्रयुज्यते इति, प्र+युज्+ल्युट्] कार्यम्; उद्देशः। ८६७

प्रलम्बघ्नः पुं. [प्रलम्बं दनुपुत्रं हन्तीति। हन्+क] बलरामः; प्रलम्बभित्। २८

प्रलापः पुं. [प्रलपनमिति। प्र+लप्+भावे घञ्] प्रलपनम्; अनर्थकवाक्यं; निष्प्रयोजनमुन्मत्तादिवचनं; रोगाणामुपसर्गः; 'मूर्छा प्रलापो वमथुः प्रसेकः सादनं भ्रमः। उपद्रवा भवन्त्येते मूतिश्च रसशोषतः'—इति

भावप्रकाशः । १५०

प्रवणः त्रि. [प्रवतेऽत्रेति । प्रु+अधिकरणे ल्युट्] प्रह्वः; 'धन्योऽहमतिपुण्योऽहं कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया । यत्तातो मामभिद्रष्टुं करोति प्रवणं मनः'—इति मार्कण्डेये (२३।८९) । क्रमनिम्नभूमिः; 'दक्षिणाप्रवणं चैव प्रयत्नेनोपपादयेत्'—इति मनुः (३।२०६) । उदरम्; आयतः; प्रगुणः; क्षणः; प्लुतः; स्निग्धः; क्षीणः; आसक्तः; 'प्रजास्ता ब्रह्मणा सृष्टाश्चातुर्वर्ण्यव्यवस्थितौ । सम्यक्श्रद्धासमाचारप्रवणा मुनिसत्तम ।'—इति विष्णुपुराणे । पुं.[प्रवन्ते गच्छन्ति जना अनेनेति, प्रुङ गतौ+करणे ल्युट्] चतुष्पथः । ३५२

प्रवयाः [स्] त्रि. [प्रगतं वयो यस्य] वृद्धः; 'नृपतिः प्रकृतीरवेक्षितुं व्यवहारासनमाददे युवा । परिचेतुमुपांशुधारणां कुशपूतं प्रवयास्तु विष्टरम्'—इति रघौ(८।१८)। पुराणः; 'अधा यो विश्वा भुवनानि मज्मनेशानकृतप्रवया अभ्यवर्धत'—इति ऋग्वेदे (२।१७।४) । ५०३

प्रवरम् त्रि. [प्रव्रियते इति । प्र+वृ+अप्] श्रेष्ठम्; 'एते षट् सदृशान् वर्णान् जनयन्ति स्वयोनिषु । मातृजात्यां प्रसूयन्ते प्रवरासु च योनिषु'—इति मनुः (१०।२७) । अगरु; गोत्रं; पुं. सन्ततिः; गोत्रप्रवर्तकमुनिव्यावर्तको मुनिगणः । तथा च जमदग्निगोत्रस्य प्रवराः जमदग्न्यौर्ववशिष्ठाः । भरद्वाजगोत्रस्य भरद्वाजाङ्गिरसबार्हस्पत्याः । विश्वामित्रगोत्रस्य विश्वामित्रमरीचिकौशिकाः —इति दिक् । ६९०

प्रवर्हः त्रि. [प्रवर्हति प्रवर्द्धते इति । प्र+वृह्+अच्] प्रधानं; श्रेष्ठः । ६९०

प्रवहणम् क्ली. [प्रोह्यते अनेनेति । प्र+वह्+करणे ल्युट्] कर्णीरथः; स्त्रीरत्नवहनार्थमुपरि वस्त्राच्छादितमनुष्यवाह्ययानविशेषः; 'प्रविश्य सप्रवहणश्चेटः'—इति मृच्छकटिकनाटके चतुर्थेऽङ्के । पोतः । (६५५) । ४४५

प्रवारणम् क्ली. [प्र+वृ+णिच्+ल्युट्] काम्यदानं; काम्यस्य कमनीयस्य वस्तुनो वरस्त्रीरत्नादिनो दानं; महादानं; प्रकर्षेण वार्यते संगृह्यते प्रवारणं]; [प्रकर्षेण वारणमिति] निषेधः । ७७३

प्रवालः पुं.– क्ली. [प्रवलतीति । प्र+वल् प्राणने+'ज्वलितिकसन्तेभ्यो णः' इति ण । यद्वा प्र+वल्+णिच्+अच्] किसलयः ; 'पुष्पं प्रवालोपहितं यदि स्यात्'—इति कुमारे (१।४४) । वीणादण्डः; रक्तवर्णरत्नविशेषः; विद्रुमः; अङ्गारकमणिः; अम्भोधिवल्लभः; भौमरत्नं; रक्ताङ्गः; रक्ताकारः; लतामणिः; 'शुद्धं दृढं घनं वृत्तं स्निग्धं गात्रसुरङ्गकम् । समं गुरु सिराहीनं प्रवालं धारयेत् शुभम् ।' 'गौरं रङ्गजलाक्रान्तं वक्रसूक्ष्मं सकोटरम् । रूक्षकृष्णं लघु श्वेतं प्रवालमशुभं त्यजेत्'—इति राजनिर्घण्टः । १८४

प्रवासनम् क्ली. [प्र+वस् छेदे+ल्युट्] वधः; [प्र+वास्+णिच्+ल्युट्] प्रवासना; 'सीताप्रवासनपटो ! करुणा कुतस्ते'—इति उत्तररामचरिते । ४७७

प्रवाहः पुं. [प्र+वह्+घञ्] जलस्रोतः; 'पूर्वं तदुत्पीडितवारिराशिः सरित्प्रवाहस्तटमुत्ससर्प'--इति रघौ (५।४६) । व्यवहारः; प्रकृष्टाश्वः; पुरीषादेर्निर्गमः; 'प्रवाहेण गुदभ्रंशे मूत्राघाते कटिग्रहे । मधुराम्लघृतं तैलं सर्पिर्वास्यात्नुवासनम्'—इति सुश्रुतः । प्रवृत्तिः; 'सत्त्वैकतानगतयो वचसां प्रवाहैः'—इति भागवते (७।९।८) । ६६९

प्रविदारणम् क्ली. [प्रविदारयन्त्यत्रेति । प्र+वि+दृ+णिच्+अधिकरणे ल्युट्] युद्धं; [प्र+वि+दृ+णिच्+भावे ल्युट्] अवदारणम्; आकीर्णं; [प्र+वि+दृ+णिच्+कर्तरि ल्यु] त्रि. प्रविदारकः । ४५३

प्रवीणः त्रि. [प्रकृष्टा संसाधिता वीणास्य । यद्वा प्रवीणयति वीणया प्रगायतीति । प्र+वीण्+णिच्+अच् । वीणया गायकस्य नैपुण्यप्रसिद्धेस्तत्तुल्यनैपुण्यात् तथात्वम्] प्रकृष्टं वेत्ति यः; निपुणः; अभिज्ञः; विज्ञः; निष्णातः; शिक्षितः; वैज्ञानिकः; कृतमुखः; कृती; कुशलः; 'विश्वावसुप्राग्रहरैः प्रवीणैः सङ्गीयमानत्रिपुरावदानः । अध्वानमध्वान्तविकारलङ्घ्यस्ततार ताराधिपखण्डधारी'--इति कुमारे (७।४८) । ३३५

प्रवृत्तिः स्त्री. [प्रवर्तते इति, प्र+वृत्+क्तिन्] उदन्तः; वार्ता; वृत्तान्तः; 'प्रत्यासन्ने नभसि दयिता जीवितालम्बनार्थी जीमूतेन स्वकुशलमयीं हारयिष्यन् प्रवृत्तिम्' —इति मेघदूते (४) । प्रवाहः; [प्रवर्तनमिति प्र+वृत्+क्तिन्] प्रवर्तनम्; 'ववृधे हि ततस्तस्य हृदि कामो महात्मनः । यथा शुक्लस्य पक्षस्य प्रवृत्तो चन्द्रमाः शनैः'—इति महाभारते (१२।३०।१६) । [प्रवर्तते व्याप्नोति प्रसिद्धत्वेनेति । प्र+वृत्+क्तिच्] यज्ञादिव्यापारः; 'असच्च सदसच्चैव यस्माद्विश्वं प्रवर्तते ।

सन्ततिश्च प्रवृत्तिश्च जन्ममृत्युपुनर्भवाः'—इति महाभारते (१।१।२५५)। 'सन्ततिर्ब्रह्मादिः । प्रवृत्तिर्यज्ञादिः'—इति तट्टीकायां नीलकण्ठः । अवन्त्यादिदेशः; हस्तिमदः; तार्किक मते यत्नविशेषः; 'प्रवृत्तिश्च निवृत्तिश्च तथा जीवनकारणम् । एवं प्रयत्नत्रैविध्यं तान्त्रिकैः परिदर्शितम् ।चिकीर्षा कृतिसाध्येष्टसाधनत्वमतिस्तथा। उपादानस्य चाध्यक्षः प्रवृत्तौ जनकं भवेत्'—इति भाषापरिच्छेदः । १४६

प्रवेकः त्रि. [प्रविच्यते पृथक् क्रियते इति । प्र+विच्+कर्मणि घञ्] उत्तमः; प्रधानम्; 'श्यामावदाताः शतपत्रलोचनाः पिशङ्गवस्त्राः सुवचः सुपेशसः । सर्वे चतुर्बाहव उन्मिषन्मणिप्रवेकनिष्काभरणाः सुवर्चसः' —इति भागवते (२।९।११) । ६८९

प्रवेणिः स्त्री. [प्रकर्षेण वीयते इति । प्र+वी गतौ+'वीज्याज्वरिभ्यो निः' इति नि, णत्वम् । यद्वा प्रवेणति सौन्दर्यं प्राप्नोतीति, प्र+वेण् गतौ+इन्] कुथः; वेणी। ३०८

प्रवेणी स्त्री. [प्रकर्षेण वीयते इति । प्र+वी गतौ+'वीज्याज्वरिभ्यो निः।' इति नि, णत्वम् । कृदिकारादिति पाक्षिको ङीष्] गजपृष्ठस्थचित्रकम्बलम्; 'अजिनानि प्रवेणीश्च स्रुक् स्रुवं च महीपतिः । कमण्डलूंश्च स्थालीश्च पिठराणि च भारत'—इति महाभारते (१५।२७।१३) वेणी; 'तत्र सौधगतः पश्यन् यमुनां चक्रवाकिनीम् । हेमभक्तिमतीं भूमेः प्रवेणीमिव पिप्रिये'—इति रघौ (१५।३०) । नदीविशेषः; 'प्रवेण्युत्तरमार्गे तु पुण्ये कण्वाश्रमे तथा । तापसानामरण्यानि कीर्तितानि यथा श्रुति'—इति महाभारते (३।८८।११) । ३०८

प्रवेशः पुं. [प्र+विश्+'हलश्च' इति भावे घञ्] अन्तर्विगाहनम्; 'निर्गमे च प्रवेशे च राजमार्गं समन्ततः प्रोत्सारितजनं गच्छेत् सम्यगाविष्कृतोन्नतिः'—इति कामन्दकीये नीतिसारे (७।३९) । १०६

प्रवेष्टः पुं. [प्रवेष्टते इति, वेष्ट् वेष्टने+अच्] बाहुः; भुजः; बाहुनीचभागः; हस्तिदन्तमांसं; गजपृष्ठतल्पनम् ५२२

प्रशंसा स्त्री. [प्र+शंस्+भावे अ, स्त्रियां टाप्] प्रशंसनं; वर्णना; ईडा; स्तवः; स्तोत्रं; स्तुतिः; नुतिः; श्लाघा; अर्थवादः; 'धर्मेप्सवस्तु धर्मज्ञाः सतां वृत्तिमनुष्ठिताः । मन्त्रवर्ज न दुष्यन्ति प्रशंसां प्राप्नुवन्ति च'—इति मनुः (१०।१२७)। 'न चात्मानं प्रशंसेद्वा परनिन्दां च वर्जयेत्। वेदनिन्दां देवनिन्दां प्रयत्नेन विवर्जयेत्' —इति कौर्मे १५ अध्याये। १४५

प्रशमनम् क्ली. [प्र+शम्+णिच्+ल्युट्] मारणं; वधः हिंसा। [प्र+शम्+ल्युट्] शमता; प्रशान्तिः; 'सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ! एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम्'—इति मार्कण्डेयपुराणे (९१। ३५) । प्रतिपादनं; दानम्; 'तैः सार्द्धं चिन्तयेन्नित्यं सामान्यं सन्धिविग्रहम् । स्थानं समुदयं गुप्तिं लब्धप्रशमनानि च'—इति मनुः (७।५६) । 'प्रशमनानि दानानि' इति तट्टीकायां कुल्लूक भट्टः । स्थिरीकरणम्; 'लब्धप्रशमनस्वस्थमथैनं समुपस्थिता । पार्थिवश्रीर्द्वितीयेव शरत्पङ्कजलक्षणा'—इति रघौ (४।१४) । 'प्रशमनेन स्थिरीकरणेन'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । ४७७

प्रशस्तम् त्रि. [प्रशस्यते स्मेति, प्र+शंस्+क्त] अतिश्रेष्ठम्; 'स त्वं प्रशस्ते महिते मदीये वसंश्चतुर्थोऽग्निरिवाग्न्यगारे'—इति रघौ (५।२५) । क्षेमं; प्रशंसनीयम् । ७८१

प्रश्नः पुं. [प्रच्छनमिति; प्रच्छ्+'यजयाचयतेति' नङ्। च्छ्वोः शूडिति' श । 'प्रश्नेचेति' ज्ञापकात् न सम्प्रसारणम्] जिज्ञासा; अनुयोगः; पृच्छा; 'साक्षिप्रश्नविधानं च धर्मं स्त्रीपुंसयोरपि'—इति मनुः (१।११५) । 'पृच्छा तन्त्राद्यथाम्नायं विधिना प्रश्न उच्यते'—इति चरकः । १५४

प्रष्ठौही स्त्री. [प्रष्ठवाह्+'वाहः' इति ङीष्] बालगर्भिणी; प्रथमगर्भवती गौः [प्रष्ठं प्रथमगर्भं वहति या सा । बाला सती गर्भिणी प्रथमगर्भेत्यर्थः] 'प्रष्ठौहीनां पीवरीणां च तावद् अग्र्या गृष्टयो धेनवः सुव्रताश्च'— इति महाभारते (१३।९३।३३) । २६९

प्रसक्तः त्रि. [प्र+सञ्ज्+क्त] आसक्तः; 'अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृताः । प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ'—इति भगवद्गीतायाम् (१६। १६) । नित्यम्; 'प्रसक्तवेगस्तु समीरणेन भिन्नस्वरः कासति शुष्कमेव'—इति माधवः । 'प्रसक्तवेगः सततकासवेगः'—इति तट्टीकायां विजयरक्षितः । तद्वति त्रि.। ३६४

सन्ततिश्च प्रवृत्तिश्च जन्ममृत्युपुनर्भवाः'—इति महाभारते (१।१।२५५)। 'सन्ततिर्ब्रह्मादिः। प्रवृत्तिर्यज्ञादिः'—इति तट्टीकायां नीलकण्ठः। अवन्त्यादिदेशः; हस्तिमदः; तार्किक मते यत्नविशेषः; 'प्रवृत्तिश्च निवृत्तिश्च तथा जीवनकारणम्। एवं प्रयत्नत्रैविध्यं तान्त्रिकैः परिदर्शितम्। चिकीर्षा कृतिसाध्येष्टसाधनत्वमतिस्तथा। उपादानस्य चाध्यक्षः प्रवृत्तौ जनकं भवेत्'—इति भाषापरिच्छेदः। १४६

प्रवेकः त्रि. [प्रविच्यते पृथक् क्रियते इति। प्र+विच्+कर्मणि घञ्] उत्तमः; प्रधानम्; 'श्यामावदाताः शतपत्रलोचनाः पिशङ्गवस्त्राः सुवचः सुपेशसः। सर्वे चतुर्बाहव उन्मिषन्मणिप्रवेकनिष्काभरणाः सुवर्चसः'—इति भागवते (२।९।११)। ६८९

प्रवेणिः स्त्री. [प्रकर्षेण वीयते इति। प्र+वी गतौ+'वीज्याज्वरिभ्यो निः' इति नि, णत्वम्। यद्वा प्रवेणति सौन्दर्यं प्राप्नोतीति, प्र+वेण् गतौ+इन्] कुथः; वेणी। ३०८

प्रवेणी स्त्री. [प्रकर्षेण वीयते इति। प्र+वी गतौ+'वीज्याज्वरिभ्यो निः।' इति नि, णत्वम्। कृदिकारादिति पाक्षिको ङीष्] गजपृष्ठस्थचित्रकम्बलम्; 'अजिनानि प्रवेणीश्च स्रुक् स्रुवं च महीपतिः। कमण्डलूंश्च स्थालीश्च पिठराणि च भारत'—इति महाभारते (१५।२७।१३) वेणी; 'तत्र सौधगतः पश्यन् यमुनां चक्रवाकिनीम्। हेमभक्तिमतीं भूमेः प्रवेणीमिव पिप्रिये'—इति रघौ (१५।३०)। नदीविशेषः; 'प्रवेण्युत्तरमार्गे तु पुण्ये कण्वाश्रमे तथा। तापसानामरण्यानि कीर्तितानि यथा श्रुति'—इति महाभारते (३।८८।११)। ३०८

प्रवेशः पुं. [प्र+विश्+'हलश्च' इति भावे घञ्] अन्तर्विगाहनम्; 'निर्गमे च प्रवेशे च राजमार्गं समन्ततः प्रोत्सारितजनं गच्छेत् सम्यगाविष्कृताकृतिः'—इति कामन्दकीये नीतिसारे (७।३९)। १०६

प्रवेष्टः पुं. [प्रवेष्टते इति, वेष्ट् वेष्टने+अच्] बाहुः; भुजः; बाहुनीचभागः; हस्तिदन्तमांसं; गजपृष्ठतल्पनम् ५२२

प्रशंसा स्त्री. [प्र+शंस्+भावे अ, स्त्रियां टाप्] प्रशंसनं; वर्णना; ईडा; स्तवः; स्तोत्रं; स्तुतिः; नुतिः; श्लाघा; अर्थवादः; 'धर्मेप्सवस्तु धर्मज्ञाः सतां वृत्तिमनुष्ठिताः। मन्त्रवर्जं न दुष्यन्ति प्रशंसां प्राप्नुवन्ति च'—इति मनुः (१०।१२७)। 'न चात्मानं प्रशंसेद्वा परनिन्दां च वर्जयेत्। वेदनिन्दां देवनिन्दां प्रयत्नेन विवर्जयेत्'—इति कौर्मे १५ अध्याये। १४५

प्रशमनम् क्ली. [प्र+शम्+णिच्+ल्युट्] मारणं; वधः हिंसा। [प्र+शम्+ल्युट्] शमता; प्रशान्तिः; 'सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि! एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम्'—इति मार्कण्डेयपुराणे (९१।३५)। प्रतिपादनं; दानम्; 'तैः सार्द्धं चिन्तयेन्नित्यं सामान्यं सन्धिविग्रहम्। स्थानं समुदयं गुप्तिं लब्धप्रशमनानि च'—इति मनुः (७।५६)। 'प्रशमनानि दानानि' इति तट्टीकायां कुल्लूक भट्टः। स्थिरीकरणम्; 'लब्धप्रशमनस्वस्थमथैनं समुपस्थिता। पार्थिवश्रीर्द्वितीयेव शरत्पङ्कजलक्षणा'—इति रघौ (४।१४)। 'प्रशमनेन स्थिरीकरणेन'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। ४७७

प्रशस्तम् त्रि. [प्रशस्यते स्मेति, प्र+शंस्+क्त] अतिश्रेष्ठम्; 'स त्वं प्रशस्ते महिते मदीये वसंश्चतुर्थोऽग्निरिवाग्न्यगारे'—इति रघौ (५।२५)। क्षेमं; प्रशंसनीयम्। ७८१

प्रश्नः पुं. [प्रच्छनमिति; प्रच्छ्+'यजयाचयतेति' नङ्। च्छ्वोः शूडिति' श। 'प्रश्नेचेति' ज्ञापकात् न सम्प्रसारणम्] जिज्ञासा; अनुयोगः; पृच्छा; 'साक्षिप्रश्नविधानं च धर्मं स्त्रीपुंसयोरपि'—इति मनुः (१।११५)। 'पृच्छा तन्त्राद्यथाम्नायं विधिना प्रश्न उच्यते'—इति चरकः। १५४

प्रष्ठौही स्त्री. [प्रष्ठवाह्+'वाहः' इति ङीष्] बालगर्भिणी; प्रथमगर्भवती गौः [प्रष्ठं प्रथमगर्भं वहति या-सा। बाला सती गर्भिणी प्रथमगर्भेत्यर्थः] 'प्रष्ठौहीनां पीवरीणां च तावद् अग्र्या गृष्टयो धेनवः सुव्रताश्च'—इति महाभारते (१३।९३।३३)। २६९

प्रसक्तः त्रि. [प्र+सञ्ज्+क्त] आसक्तः; 'अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृताः। प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ'—इति भगवद्गीतायाम् (१६।१६)। नित्यम्; 'प्रसक्तवेगस्तु समीरणेन भिन्नस्वरः कासति शुष्कमेव'—इति माधवः। 'प्रसक्तवेगः सततकासवेगः'—इति तट्टीकायां विजयरक्षितः। तद्वति त्रि.। ३६४

प्रसन्ना स्त्री. [प्रसन्न+टाप्] सुरा; मद्यविशेषः; प्रसन्नेरा; मदिरा; 'प्रसन्ना गुल्मवातार्शोविबन्धानाहनाशिनी । शूलप्रवाहिकाटोपकफवातार्शसां हिता'—इति राजवल्लभः । प्रसादविशिष्टा; 'सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये'—इति मार्कण्डेये (८१।४३) । ३२९

प्रसभम् त्रि. [प्रगता सभा सभाधिकारो यत्र] बलात्कारः; हठः; 'यस्मिन् विनिर्मितवति प्रसभं प्रकोपादत्युग्रनिग्रहनवानुभवोपदेशम्'—इति श्रीकण्ठचरिते (५। ४२) । ७५९

प्रसरः पुं. [प्र+सृ+भावादौ यथायथम् अप्] वेगः; 'इति विनयनम्रशिरसा तेन वचो युक्तमुक्तमवधार्य । तमुवाच मूलदेवः प्रीतिप्रसरैः प्रसारितौष्ठाग्रः'—इति कलाविलासे (१।२१) । प्रणयः (८१०); तन्तुव्रणविटपादेर्विसर्पणम् [प्रकर्षेण निकटे सरणं सर्पणं] विसर्पः; 'तिरस्क्रियन्ते कृमितन्तुजालैर्विच्छिन्नधूमप्रसरा गवाक्षाः'—इति रघौ (१६।२०) । समूहः; 'स्तननूतननखलेखालम्बी तव घर्मबिन्दुसन्दोहः । आभाति पट्टसूत्रे प्रविशन्निव मौक्तिकप्रसरः'—इति आर्यसप्तसत्यां (५८९) । प्रकृष्टसञ्चरणम्; अत ऊर्ध्वं प्रसरं वक्ष्यामः'—इति सुश्रुतः । युद्धं; नाराचः । ४४३

प्रसवः पुं. [प्र+सू+'ऋदोरप्' इत्यप्] कुसुमं; पुष्पम्; 'प्रसवैः सप्तपर्णानां मदगन्धिभिराहताः । असूययेव तन्नागाः सप्तधैव प्रसुस्रुवुः'—इति रघौ (४।२३) । गर्भमोचनं; प्रसूतिः; 'प्रतिः प्रतीतः प्रसवोन्मुखीं प्रियां ददर्श काले दिवमभ्रितामिव'—इति रघौ (३।१२) । गर्भग्रहणम्; 'यथाविध्यभिगम्यैनां शुक्लवस्त्रां शुचिव्रताम् । मिथो भजेताप्रसवात् सकृत्सकृदृतावृतौ'—इति मनुः (९।७०) । उत्पादः; फलं; जन्म; 'ज्ञाने मौनं क्षमा शक्तौ त्यागे श्लाघाविपर्ययः । गुणा गुणानुबन्धित्वात्तस्य सप्रसवा इव'—इति रघौ (१।२२) । 'सह प्रसवो जन्म येषां ते सप्रसवाः सोदरा इव'–इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । अपत्यम्; 'ऋषिदेवगणस्वधाभुजां, श्रुतयागप्रसवैः स पार्थिवः । अनृणत्वमुपेयिवान् बभौ, परिधेर्मुक्त इवोष्णदीधितिः'—इति रघौ (८।३०) । आज्ञा; 'मरुतां प्रसवेन जय'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (१०।२१) । 'हे धुर्य मरुतां देवानां प्रसवेनाज्ञया त्वं जय शत्रूनिति शेषः'—इति तद्भाष्ये महीधरः । १८६

प्रसवबन्धनम् क्ली. [प्रसवानां पुष्पफलानां बन्धनं यत्र] वृन्तम् । १८५

प्रसव्यम् त्रि. [प्रगतं सव्यादिति] प्रतिकूलं; प्रतिलोमं; प्रतीपं; प्रदक्षिणम्; 'प्रसव्यञ्चापि तञ्चक्रुर्ऋत्विजोऽग्निचितं नृपम्' । [प्र+सू+कर्मणि यत्] प्रसवनीयः । ७४३

प्रसादः पुं. [प्र+सद्+घञ्] अनुग्रहः; 'तस्याः प्रसन्नेन्दुमुखः प्रसादं, गुरुर्नृपाणां गुरवे निवेद्य । प्रहर्षचिह्नानुमितं प्रियायै, शशंस वाचा पुनरुक्तयेव'—इति रघौ (२।६८) । प्रसन्नता; नैर्मल्यम्; 'कल्पान्तवातसंक्षोभलङ्घिताशेषभूभृतः । स्थैर्यप्रसादमर्यादास्ता एव हि महोदधेः'—इति प्रबोधचन्द्रोदये । काव्यप्राणः; स्वास्थ्यं; प्रसक्तिः; वैदर्भीरीतियुक्तकाव्यगुणः; 'ओजः प्रसादमाधुर्यगुणत्रितयभेदतः । गौडवैदर्भपाञ्चाला रीतयः परिकीर्तिताः । व्यक्तार्थपदमग्राम्यं प्रसादः परिकीर्तितः' –इति काव्यचन्द्रिका । 'चित्तं व्याप्नोति यः क्षिप्रं शुष्केन्धनमिवानलः । सः प्रसादः समस्तेषु रसेषु रचनासु च'–इति साहित्यदर्पणे । देवनिवेदितद्रव्यं; गुरूणां भुक्तावशेषः । 'आसीत्तुङ्गध्वजो राजा प्रजापालनतत्परः । प्रसादं सत्यदेवस्य त्यक्त्वा दुःखमवाप सः'—इति स्कान्दे रेवाखण्डे सत्यनारायणव्रतकथा । ७७३

प्रसावना स्त्री. [प्र+सद्+णिच्+युच्+टाप्] सेवा; परिचर्या । १२९

प्रसाधनम् क्ली. [प्रसाध्यतेऽनेनेति । प्र+साध्+ल्युट्] वेशः; वेषः; 'अभ्यञ्जनं स्थापनं च गात्रोत्सादनमेव च । गुरुपत्न्या न कार्याणि केशानां च प्रसाधनम्'—इति मनुः (२।२१७) । कङ्कतिका; प्रकृष्टनिष्पत्तिः; [प्र+साध्+णिच्+ल्यु] प्रसाधयितरि त्रि. । 'यो यज्ञस्य प्रसाधनस्तन्तुर्देवेष्वाततः'–इति ऋग्वेदे (१०।५३।२) । ५३९

प्रसितम् त्रि. [प्र+सिञ्+क्त] आसक्तः; 'इति शत्रुषु चेन्द्रियेषु च, प्रतिषिद्धपरेषु जाग्रतौ । प्रसितावुदयापवर्गयोरुभयीं सिद्धिमुभाववापतुः'—इति रघौ (८।२३) । क्ली. पूयं; चन्द्रिका । ३६४

प्रसूता स्त्री. [प्रसूते स्म इति । प्र+सू+कर्तरि क्त] जातसन्ताना; जातापत्या; प्रजाता; प्रसूतिका; 'अकाले

च प्रसूता स्त्री स्नेहपानं विवर्जयेत्'—इति सुश्रुतः । 'श्रूयन्ते हि स्त्रियो बह्व्यो व्यभिचारव्यतिक्रमैः । प्रसूता देवसङ्काशान् पुत्रानमितविक्रमान्'—इति हरिवंशे (८४।१०१) । ५००

प्रसूतिः स्त्री. [प्रसूयते इति, प्र+सू+क्तिन्] सन्ततिः; 'कच्चिन्मृगीणामनघा प्रसूतिः'—इति रघौ (५।७) । तनयः; दुहिता; प्रसवः; 'कृष्णावचा चापि जलेन पिष्टा, सैरण्डतैला खलु नाभिलेपात् । सुखं प्रसूतिं कुरुतेऽङ्गनानां, निपीडितानां बहुभिः प्रमादैः ।' [प्र+सू+भावे क्तिन्] उद्भवः; 'आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः, सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्'—इति शाकुन्तले । कारकम्; 'न केवलानां पयसां प्रसूतिमवेहि मां कामदुघां प्रसन्नाम्'——इति रघौ (२।६३) । उत्पत्तिस्थानम्; 'त्वं सर्वस्य भुवनस्य प्रसूतिस्त्वमेवाग्ने ! भवसि प्रतिष्ठा'—इति महाभारते (१।२३३।१४) । दक्षपत्नी; सा तु सतीजननी; 'देवहूतिः कर्दमस्य प्रसूतिर्दक्षकामिनी'—इति ब्रह्मवैवर्ते (२।१।१२८) । २७२,४९७

प्रसूनकम् क्ली. [प्रसूयते स्मेति । प्र+सू+क्त, ओदित्वान्निष्ठातस्य न, संज्ञायां कन्] पुष्पं; कुसुमम् । १८६

प्रसृतः त्रि. [प्र+सृ+क्त] नियुक्तः; प्रसक्तः; प्रवृद्धः; प्रसारितः; 'न शशाक नियन्तुं च स व्यासः प्रसृतं मनः' —इति देवी भागवते (१।१४।५) । विनीतः; वेगितः; गतः । ३६४

प्रसृता स्त्री. [प्र+सृ+क्त+टाप्] जङ्घा । ५१५

प्रसृतिः स्त्री. [प्र+सृ+क्तिन्] आकुञ्चितपाणिः; 'देवानुग्रान् समभ्यर्च्य तत्स्नानोदकमाहरेत् । संश्राव्य पाययेत्तस्माज्जलात्स प्रसृतित्रयम्'—इति याज्ञवल्क्यः (२।११२) । प्रसतः; सन्ततिः; 'वर्द्धितानि प्रसृत्या वै विनताकुलकर्तृभिः'—इति महाभारते (५।१०१।३) । पलद्वयम्; 'पलाभ्यां प्रसृतिर्ज्ञेया'—इति शार्ङ्गधरः । ५३७

प्रस्कन्नः त्रि. [प्रकर्षेण स्कन्नः; प्र+स्कन्द्+क्त, 'रदाभ्यामिति' नत्वम्] पतितः; स्खलितः । ४७९

प्रस्तरः पुं. [प्रस्तृणाति आच्छादयति यः । प्र+स्तॄ+पचाद्यच्] शिला; ग्रावा; पाषाणः; उपलः; अश्मा; दृशत्; दृषत्; पारारुकः; पारटीटः; मन्मरः; काचकः; 'पत्थर' इति भाषा । (८१८) संस्तरः; पल्लवादिरचितशय्या; 'पल्लवाद्यैर्विरचिते शयनीये तु संस्तरः । प्रस्तरः प्रस्तिरश्चेति प्रस्तारोऽपि च कुत्रचित्'—इति शब्दरत्नावली । 'गोऽश्वोष्ट्रयानप्रासादप्रस्तरेषु कटेषु च । आसीत गुरुणा सार्द्धं शिलाफलकनौषु च'—इति मनुः (२।२०४) । मणिः । १६८

प्रस्तरघटनोपकरणम् क्ली. [प्रस्तराणां घटनायाः छेदभेदादेः उपकरणं साधनम्] टङ्कः; पाषाणदारणः । ८२१

प्रस्तावः पुं. [प्र+स्तु+'प्रेद्रुस्तुस्रुवः' इति घञ्] प्रस्तावना; उद्घातः; आरम्भः; अवसरः; प्रसङ्गस्तुतिः; प्रसङ्गः; 'प्रस्तावेनाधिकरणिकस्त्वा द्रष्टुमिच्छतीति' —मृच्छकटिके । प्रकरणम्; 'प्रस्तावदेशकालादेर्वैशिष्ट्यात् प्रतिभाजुषाम्'—इत्यस्यार्थे काव्यप्रकाशः । ७५१

प्रस्थः पुं.– क्ली. [प्र+स्था+क] अद्रेः समभूभागः; अद्रेरेकदेशः; स्नुः; सानुः; 'प्रस्थं हिमाद्रेर्मृगनाभिगन्धि किञ्चित् क्वणत्किन्नरमध्युवास'—इति कुमारे (१।५४)। उन्मितवस्तु; विस्तारः; 'दीर्घे प्रस्थे समानं च प्रकुर्यान्मन्दिरं बुधः'—इति ब्रह्मवैवर्ते १०३ अध्यायः । प्रकृष्टस्थितिविशिष्टे त्रि. [प्रकर्षेण तिष्ठतीति, प्र+स्था+'आतश्चोपसर्गे' इति क] यद्वा प्रतिष्ठतेऽस्मिन्ननेन वेति घञर्थे क] परिमाणविशेषः; स तु चतुःकुडवरूपः; आढकचतुर्थांशः; द्विशरावपरिमाणम्; 'बलिनो बहुदोषस्य वयःस्थस्य शरीरिणः । परं प्रमाणमिच्छन्ति प्रस्थं शोणितमोक्षणे'—इति सुश्रुतः । १६६

प्रस्थानम् क्ली. [प्र+स्था+ल्युट्] विजीगीषोः प्रयाणम्; 'सेनाभियोगं प्रस्थानं बलसंख्यां यथार्थतः । धीराणां च परिज्ञानं कृत्वा यातु त्वरान्वितः'—इति देवीभागवते (५।४।१२) । गमनमात्रम्; 'प्रस्थानं ते कुलिशकलनान्निश्चितं पण्डिताग्र्यैः'—इति पदाङ्कदूते । ४५२

प्रस्रवः पुं. [प्र+स्नु+भावे अप्] प्रस्रवणं; जलादेः निःसृत्य प्रवहणम् । १६६

प्रस्रवणम् क्ली. [प्रस्रवति जलमस्मादस्मिन् वा । प्र+स्रु+अपादाने अधिकरणे वा 'कृत्यल्युटो बहुलम्'इति ल्युट्] अजस्रं मन्दवेगेन जलस्रवणम्; उत्सः; जलप्रस्रावः; 'स्नानं समाचरेन्नित्यं गर्तप्रस्रवणेषु च'—इति मनुः (४।२०३) । [प्र+स्रु+भावे ल्युट्] प्रकर्षेण क्षरणं; यत्र स्थाने स्रुत्वा जलं गलति तत्; अविच्छेदेन

च प्रसूता स्त्री स्नेहपानं विवर्जयेत्'—इति सुश्रुतः । 'श्रूयन्ते हि स्त्रियो बह्व्यो व्यभिचारव्यतिक्रमैः । प्रसूता देवसङ्काशान् पुत्रानमितविक्रमान्'—इति हरिवंशे (८४।१०१)। ५००

प्रसूतिः स्त्री. [प्रसूयते इति, प्र+सू+क्तिन्] सन्ततिः; 'कच्चिन्मृगीणामनघा प्रसूतिः'—इति रघौ (५।७)। तनयः; दुहिता; प्रसवः; 'कृष्णावचा चापि जलेन पिष्टा, सैरण्डतैला खलु नाभिलेपात् । सुखं प्रसूतिं कुरुतेऽङ्गनानां, निपीडितानां बहुभिः प्रमादैः ।' [प्र+सू+भावे क्तिन्] उद्भवः; 'आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः, सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्'—इति शाकुन्तले । कारकम्; 'न केवलानां पयसां प्रसूतिमवेहि मां कामदुघां प्रसन्नाम्'——इति रघौ (२।६३)। उत्पत्तिस्थानम्; 'त्वं सर्वस्य भुवनस्य प्रसूतिस्त्वमेवाग्ने ! भवसि प्रतिष्ठा'—इति महाभारते (१।२३३।१४)। दक्षपत्नी; सा तु सतीजननी; 'देवहूतिः कर्दमस्य प्रसूतिर्दक्षकामिनी'—इति ब्रह्मवैवर्ते (२।१।१२८)। २७२,४९७

प्रसूनकम् क्ली. [प्रसूयते स्मेति । प्र+सू+क्त, ओदित्वान्निष्ठातस्य न, संज्ञायां कन्] पुष्पं; कुसुमम् । १८६

प्रसृतः त्रि. [प्र+सृ+क्त] नियुक्तः; प्रसक्तः; प्रवृद्धः; प्रसारितः; 'न शशाक नियन्तुं च स व्यासः प्रसृतं मनः' —इति देवी भागवते (१।१४।५)। विनीतः; वेगितः; गतः। ३६४

प्रसृता स्त्री. [प्र+सृ+क्त+टाप्] जङ्घा । ५१५

प्रसृतिः स्त्री. [प्र+सृ+क्तिन्] आकुञ्चितपाणिः; 'देवानृषीन् समभ्यर्च्य तत्स्नानोदकमाहरेत् । संश्राव्य पाययेत्तस्माज्जलात्स प्रसृतित्रयम्'—इति याज्ञवल्क्यः (२।११२)। प्रसतः; सन्ततिः; 'वर्द्धितानि प्रसृत्या वै विनताकुलकर्तृभिः'—इति महाभारते(५।१०१।३)। पलद्वयम्; 'पलाभ्यां प्रसृतिर्ज्ञेया'—इति शार्ङ्गधरः। ५३७

प्रस्कन्नः त्रि. [प्रकर्षेण स्कन्नः; प्र+स्कन्द्+क्त, 'रदाभ्यामिति' नत्वम्] पतितः; स्खलितः । ४७९

प्रस्तरः पुं. [प्रस्तृणाति आच्छादयति यः । प्र+स्तृ+पचाद्यच्] शिला; ग्रावा; पाषाणः; उपलः; अश्मा; दृशत्; दृषत्; पाराश्कः; पारटीटः; मन्मरः; काचकः; 'पत्थर' इति भाषा । (८१८) संस्तरः; पल्लवादिरचितशय्या; 'पल्लवाद्यैर्विरचिते शयनीये तु संस्तरः । प्रस्तरः प्रस्तिरश्चेति प्रस्तारोऽपि च कुत्रचित्'—इति शब्दरत्नावली । 'गोऽश्वोष्ट्रयानप्रासादप्रस्तरेषु कटेषु च । आसीत गुरुणा सार्द्धं शिलाफलकनौषु च'—इति मनुः (२।२०४)। मणिः । १६८

प्रस्तरघटनोपकरणम् क्ली. [प्रस्तराणां घटनायाः छेदभेदादेः उपकरणं साधनम्] टङ्कः; पाषाणदारणः। ८२१

प्रस्तावः पुं. [प्र+स्तु+'प्रेद्रुस्तुस्रुवः' इति घञ्] प्रस्तावना; उद्घातः; आरम्भः; अवसरः; प्रसङ्गस्तुतिः; प्रसङ्गः; 'प्रस्तावेनाधिकरणिकस्त्वा द्रष्टुमिच्छतीति' —मृच्छकटिके । प्रकरणम्; 'प्रस्तावदेशकालादेर्वैशिष्ट्यात् प्रतिभाजुषाम्'—इत्यस्यार्थे काव्यप्रकाशः । ७५१

प्रस्थः पुं.– क्ली. [प्र+स्था+क] अद्रेः समभूभागः; अद्रेरेकदेशः; स्नुः; सानुः; 'प्रस्थं हिमाद्रेर्मृगनाभिगन्धि किञ्चित् क्वणत्किन्नरमध्युवास'—इति कुमारे (१।५४)। उन्मितवस्तु; विस्तारः; 'दीर्घे प्रस्थे समानं च प्रकुर्यान्मन्दिरं बुधः'—इति ब्रह्मवैवर्ते १०३ अध्यायः । प्रकृष्टस्थितिविशिष्टे त्रि. [प्रकर्षेण तिष्ठतीति, प्र+स्था+'आतश्चोपसर्गे' इति क] यद्वा प्रतिष्ठतेऽस्मिन्ननेन वेति घञर्थे क] परिमाणविशेषः; स तु चतुःकुडवरूपः; आढकचतुर्थांशः; द्विशरावपरिमाणम्; 'बलिनो बहुदोषस्य वयःस्थस्य शरीरिणः । परं प्रमाणमिच्छन्ति प्रस्थं शोणितमोक्षणे'—इति सुश्रुतः । १६६

प्रस्थानम् क्ली. [प्र+स्था+ल्युट्] विजीगीषोः प्रयाणम्; 'सेनाभियोगं प्रस्थानं बलसंख्यां यथार्थतः । धीराणां च परिज्ञानं कृत्वा यातु त्वरान्वितः'—इति देवीभागवते (५।४।१२)। गमनमात्रम्; 'प्रस्थानं ते कुलिशकलमान्निश्चितं पण्डिताग्र्यैः'—इति पदाङ्कदूते । ४५२

प्रस्रवः पुं. [प्र+स्नु+भावे अप्] प्रस्रवणं; जलादेः निःसृत्य प्रवहणम् । १६६

प्रस्रवणम् क्ली. [प्रस्रवति जलमस्मादस्मिन् वा । प्र+स्रु+अपादाने अधिकरणे वा 'कृत्यल्युटो बहुलम्'इति ल्युट्] अजस्रं मन्दवेगेन जलस्रवणम्; उत्सः; जलप्रस्रावः; 'स्नानं समाचरेन्नित्यं गर्तप्रस्रवणेषु च'—इति मनुः (४।२०३)। [प्र+स्रु+भावे ल्युट्] प्रकर्षेण क्षरणं; यत्र स्थाने स्रुत्वा जलं गलति तत्; अविच्छेदेन

जलं यत्र स्थाने पतति यत्र निपत्य च बहुलीभवति तत्; गिरेरुपरि निर्झरादिप्रभवजलसङ्घातः; 'पुण्यं तीर्थवरं दृष्ट्वा विस्मयं परमं गतः। प्रभावं च सरस्वत्याः प्लक्षप्रस्रवणं बलः'—इति हरिवंशे (९।५४।११)। ६७७

प्रहतम् त्रि. [प्रहण्यते स्मेति, प्र+हन्+क्त] क्षुण्णं; घिततं; प्रकर्षेण गतं; प्रकर्षेण हिंसितम्; 'प्रहतरथनराश्वकुञ्जरं प्रतिभयदर्शनमुल्वणव्रणम्। तदहितहतमाभौ बलं पितृपतिराष्ट्रमिव प्रजाक्षये'—इति महाभारते (८।३०।६)। विताडितम्। 'इत्थं तयोः प्रहतयोर्गदयोर्नृवीरौ क्रुद्धौ स्वमुष्टिभिरयःस्पर्शैरपिष्टाम्' —इति भागवते (१०।७२।३८)। वादितम्; 'स स्वयं प्रहतपुष्करः कृती लोलमाल्यवलयो हरन् मनः। नर्तकीरभिनयातिलङ्घिनीः पार्श्ववर्तिषु गुरुष्वलज्जयत्' —इति रघौ (१९।१४)। ३५२

प्रहरः पुं. [प्रह्रियते ढक्कादिरस्मिन्निति। प्र+हृ+घ, अप् वा] वासरस्याष्टभागैकभागः; दिनस्याष्टमो भागः; यामः; 'पहर' इति भाषा। 'सङ्केतकं द्वितीयेऽस्मिन् प्रहरे पर्यकल्पयत्'—इति कथासरित्सागरे (४।३७)। १०६

प्रहरणम् क्ली. [प्रह्रियतेऽस्मिन्निति] युद्धम्; प्रह्रियतेऽनेनेति। प्र+हृ+करणे ल्युट्] अस्त्रम् (४६२); 'धनुःप्रहरणं श्रेष्ठमतीवात्र पितामह'—इति महाभारते (१२।१६६।२)। कर्णीरथः; 'पञ्चप्रहरणं सप्तवरूथं पञ्चविक्रमम्'—इति भागवते (४।२६।२)। [प्र+हृ+भावे ल्युट्] प्रहारः; 'याने प्रहरणे चैव तथैवाग्निषु भारत'—इति महाभारते (४।४।७)। ४५३

प्रहारः पुं. [प्रहरणमिति, प्र+हृ+घञ्] आघातः; 'करप्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक् कृतम्'—इति मार्कण्डेये। २२०

प्रहिः पुं. [प्रकर्षेण ह्रियतेऽत्रेति। प्र+हृ+'प्रहरतेः कूपे' इति इण्, स च डित्] कूपः। ६८४

प्रहेलिका स्त्री. [प्रहिलति अभिप्रायं सूचयतीति। प्र+हिल् अभिप्रायसूचने+क्वुन्, टापि अत इत्वम्] दुर्विज्ञानार्थप्रश्नः; कूटार्थभाषिता कथा; प्रह्लिका; प्रवह्लिका; प्रवह्लिः; प्रवह्ली; प्रहेलिः; प्रहेली; प्रश्नदूती; प्रवह्लीका; 'पहेली' इति भाषा। 'व्यक्तीकृत्य कमप्यर्थं स्वरूपार्थस्य गोपनात्। यत्र बाह्यान्तरावर्थौ कथ्येते सा प्रहेलिका। सा द्विधार्थी च शाब्दी च विख्याता प्रश्नशासने। आर्थी स्यादर्थविज्ञानात् शाब्दी शब्दस्य भङ्गतः।' आर्थी यथा—'तरुण्यालिङ्गितः कण्ठे नितम्बस्थलमाश्रितः। गुरूणां सन्निधानेऽपि कः कूजति मुहुर्मुहुः'—(पानीयकुम्भः)। शाब्दी यथा—'सदारिमध्यापि न वैरियुक्ता, नितान्तरक्ताप्यसितैव नित्यम्। यथोक्तवादिन्यपि नैव दूती का नाम कान्तेति निवेदयन्ति।' (सारिका)—इति विदग्धमुखमण्डनम्। १५२

प्रह्वः त्रि. [प्रह्वयते इति। प्र+ह्वे+'सर्वनीघृष्वरिष्वेति' वन्, आलोपश्च] आसक्तः; नम्रः; 'विभूषणप्रत्युपहारहस्तम्, उपस्थितं वीक्ष्य विशाम्पतिस्तत्। सौपर्णमस्त्रं प्रतिसञ्जहार प्रह्वेष्वनिर्बन्धरुषो हि सन्तः'—इति रघौ (१६।८०)। ३५२

प्रह्वलिका स्त्री. [प्रह्वलति विचारमूढतां नयति। प्र+ह्वल्+अच्, संज्ञार्थे क, टाप्] प्रहेलिका; प्रवह्लिका; प्रवह्लिः; प्रश्नदूती; प्रहेली। १५२

प्रांशुः त्रि. [प्रकृष्टाः अंशवोऽत्र] उन्नतः; उच्चः; तुङ्गः; उदग्रः। ७५१

प्राक् अव्य. [प्र+अञ्च् 'दिक्छब्देभ्यः सप्तमीपञ्चमीप्रथमाभ्यः' इति अस्ताति, 'अञ्चेर्लुगिति' अस्तातेर्लुक् 'लुक् तद्धितलुकि' इति स्त्रीप्रत्ययस्य लुक्] पूर्वम्; 'प्राङ्नाभिवर्द्धनात् पुंसो जातकर्म विधीयते'—इति मनुः (२।२९)। प्रभातम्; अवान्तरम्; अतीतम्; अग्रम्; क्रमप्राप्तिः; पूर्वदिक्; पूर्वदेशः; पूर्वकालः; प्राची दिग् प्राग् देशः कालो वा प्राक्। ७०७

प्राकारः पुं. [प्रक्रियते इति, प्र+कृ+घञ्। 'उपसर्गस्य घञीति' दीर्घः) वप्रोपरि अन्यत्र वा इष्टकादिरचितवेष्टनं, वरणः; सालः; शालः; वप्रः; 'प्राकाररोधसोर्वप्रः पितृकेदारयोरपि'—इति रत्नकोषः। 'ऊर्ध्वं विंशति हस्तेभ्यः प्राकारं न शुभप्रदम्। ऊर्ध्वं षोडशा हस्तेभ्यो नैव कुर्याद् गृहं गृही। प्रस्थे हस्तद्वयात् पूर्वं दीर्घे हस्तत्रयन्तथा। गृहिणां शुभदं द्वारं प्राकारस्य गृहस्य च। न मध्यदेशे कर्तव्यं किञ्चिन्न्यूनाधिके शुभम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते। २८८

प्राकाराग्रम् क्ली. [प्राकारस्य अग्रम्] कपिशीर्षम्। ७७८

प्राकृतः त्रि. [प्रकृष्टमकृतमकार्यं यस्य] नीचः; 'अश्रुपातं करोत्यद्य विवशः प्राकृतो यथा'—इति देवीभागवते

(१।१५।३१)। अविकारकः; 'वदन्ति षष्ठं चाजीर्णं प्राकृतं प्रतिवासरम्'—इति भावप्रकाशः। प्रकृति-सम्बन्धी; 'इत्युक्त्वासीद्धरिस्तूष्णीं भगवानात्ममायया। पित्रोः संपश्यतोः सद्यो बभूव प्राकृतः शिशुः'—इति भागवते। भाषाभेदे क्ली.। प्रलयविशेषे पुं.। ३४८

प्राग्भागः पुं. [प्राक् अग्रश्चासौ भागः] सन्मुखप्रदेशः; देहाग्रभागः; उत्सङ्गः। ५२८

प्राग्रम् क्ली. [प्रकृष्टं च तद् अग्रम्] ऊर्ध्वभागः; शिखरः; उत्तमाङ्गम्। १८१

प्राग्रहरः त्रि. [प्राग्रं प्रकृष्टमग्रं हरति। 'हरतेरनुद्यमनेऽच्'] श्रेष्ठः; 'तथेति तस्याः प्रणयं प्रतीतः प्रत्यग्रहीत्प्राग्रहरो रघूणाम्। पूरप्यभिव्यक्तमुखप्रसादा, शरीरबन्धेन तिरोब भूव'—इति रघुवंशे (१६।२३)। ६८९

प्राग्र्यम् त्रि. [प्रकर्षेणाग्रे भव इति। प्राग्र+यत्] श्रेष्ठः; 'कृत्वा हि सुमहत् कर्म हत्वा भीष्ममुखान् कुरून्। जयः प्राप्तो यशः प्राग्र्यं वैरं च प्रतियातितम्।'—इति महाभारते (९।५८।११)। ६८९

प्राघुणकः पुं. [प्राघोणते भ्राम्यतीति। प्र+आ+घुण्+क+स्वार्थे कन्। प्राघुण+संज्ञायां कन् वा] अतिथिः; प्राघुणः। ३५८

प्राघुणिकः पुं. [प्राघुण+स्वार्थे ठक्] अतिथिः; प्राघुणः। ३५८

प्राघूर्णकः पुं. [प्र+आ+घूर्णं भ्रमणे, ण्वुल्] अतिथिः। ३५८

प्राघूर्णिकः पुं. [प्र+आ+घूर्ण्+भावे घञ्। प्राघूर्णे भ्रमणे साधुः इति, ठञ्] अतिथिः; आगन्तुकः; आवेशिकः। ३५८

प्राङ् त्रि. [प्र+अञ्च्+क्विन, 'नाञ्चेः पूजायाम्' इति नलोपाभावः, तस्य कुत्वेन ङ] पूर्वदिक्; पूर्वदेशः; पूर्वकालः। १०३

प्राङ्गणम् क्ली. [प्रकृष्टमङ्गनमङ्गं यस्य। प्रकर्षेण अङ्गनं गमनं यत्र वा। णत्वम्] गृहभूमिः; अजिरम्; चत्वरम्; अङ्गनम्; 'आँगन' इति भाषा। 'प्रदोषसमये स्त्रीभिः पूज्यो जीमूतवाहनः। पुष्करिणीं विधायाथ प्राङ्गणे चतुरस्रिकाम्'—इति भविष्योत्तरे। 'अभद्रदं सूर्यवेधं प्राङ्गणं च तथैव च'—इति ब्रह्मवैवर्ते। २९९

प्राचिका स्त्री. [प्राञ्चति, प्र+अञ्चु गतौ+ण्वुल्, टापि इत्वम्] पक्षिविशेषः; श्येनस्तत्सदृशो वा। श्येनार्थे पुं। प्राजिकः; प्राजी। स्त्रीत्वे वनमक्षिकेत्येके। २५३

प्राची स्त्री. [प्रथमं अञ्चति सूर्यं प्राप्नोतीति। प्र+अञ्च्+ङीप्] पूर्वा दिक्। १०१

प्राचीनः त्रि. [प्रागेवेति, प्राक्+'विभाषाञ्चेरदिक्-स्त्रियाम्' इति ख, तस्येनादेशः] पूर्वदिग्देशकालभवः; प्राक्; 'प्राचीनाचलमौलेर्यथा शशी गगनमध्यमधि-वसति। त्वां सखि! पश्यामि तथा छायामिव संकुचन्ना-नाम्'—इति आर्य्यासप्तशत्याम् (३५१)। 'प्राची-नाग्रैः कुशैरासीदास्तृतं वसुधातलम्'—इति भागवते (४।२४।१०)। प्रागग्रम्; 'प्राचीनं बर्हिरोजसा सहस्र-वीरमस्तृणन्'—इति ऋग्वेदे (१।१८८।४)। 'प्राचीनं प्रागग्रम्'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। पुं. प्राचीरम्; आवेष्टकः; वृतिः। १०३

प्राचीनबर्हिः [स्] पुं. [प्राचीनः पूर्वः यज्ञेषु निरन्तर-मभिमुखः बर्हिः अग्निः यस्य] इन्द्रः; 'स ययौ प्रथमं प्राचीं तुल्यः प्राचीनबर्हिषा। अहितानिलोद्धूतैस्तर्ज-यन्निव केतुभिः'—इति रघौ (४।२८)। राजविशेषः; 'अत्रिवंशे समुत्पन्नो ब्रह्मयोनिः सनातनः। प्राचीन-बर्हिर्भगवांस्तस्मात् प्राचेतसो दश—इति महाभारते (१३।२०८।६)। ५२

प्राचीनावीतम् क्ली. [प्राचीनं प्रदक्षिणम् आवीयते स्मेति। आ+वी गत्यादौ+क्त। यद्वा प्राचीनं आवेतीति, 'गत्यर्थेति' क्त] श्राद्धादौ वामकरे बहिष्कृते सति दक्षिणस्कन्धार्पितयज्ञसूत्रम्; 'सव्यं बाहुं समुद्धृत्य दक्षिणे तु धृतं द्विजाः। प्राचीनावीतमित्युक्तं पित्र्ये कर्मणि योजयेत्'—इति कौर्मे। ४०१

प्राचेतसः पुं. [प्रचेतसोऽपत्यमिति। प्रचेतस्+अण्] वाल्मीकिमुनिः; 'अथ प्राचेतसोपज्ञं रामायणमितस्ततः। मैथिलेयौ कुशीलवौ जगदुर्गुरुचोदितौ'—इति रघौ (१५।६३)। विष्णुः; 'प्रजया तेजसा योगात् तस्मात् प्राचेतसः प्रभुः। विष्णुरेव महायोगी कर्मणा-मन्तरङ्गतः'—इति हरिवंशे (२०३। १४)। दक्षः; 'वीरिण्या सह सङ्गम्य दक्षः प्राचेतसो मुनिः। आत्म-तुल्यानजनयत् सहस्रं संशितव्रतान्'—इति महाभारते (१।७५।५)। ४१२

प्राजनम् क्ली. [प्रवीयतेऽनेनेति, प्र+अज्+ल्युट्। 'वा

यौ' इति पक्षे व्यभावः] तोदनं; प्रतोदः; तोत्रम् । ५५७

प्राजिता [ऋ] पुं. [प्राजतीति । प्र+अज्+तृच्, वीभावाभावः] सारथिः; प्रकृष्टगन्तरि त्रि. । ४४८

प्राज्ञः पुं. [प्रकर्षेण जानातीति । प्र+ज्ञा+क । ततः प्रज्ञ एव, स्वार्थे अण्] पण्डितः; 'पण्डिते च गुणाः सर्वे मूर्खे दोषा हि केवलम् । तस्मान्मूर्खसहस्रेषु प्राज्ञ एको विशिष्यते'—इत्युद्भटः । कल्किदेवस्य ज्येष्ठभ्राता; 'कल्किं दृष्ट्वा हरेरंशमाविर्भूतं च शम्भले । कवि प्राज्ञं सुमन्तं च पुरस्कृत्य महाप्रभम्'—इतिकल्किपुराणे २ अध्यायः । राजशुकः । [प्रकर्षेण अज्ञः] मूर्खः; त्रि. [प्रज्ञास्त्यस्येति-अच्, स्वार्थे अण्] पण्डितः; पौरेषु विनिवृत्तेषु विदुरः सर्वधर्मवित् । बोधयन् पाण्डवश्रेष्ठमिदं वचनमब्रवीत् । प्राज्ञः प्राज्ञं प्रलापज्ञः प्रलापज्ञमिदं वचः'—इति महाभारते (१।१४६।१९) । दक्षः; विज्ञः; 'नामधेयस्य ये केचिदभिवादं न जानते । तान् प्राज्ञोऽहमिति ब्रूयात् स्त्रियः सर्वास्तथैव च'—इति मनुः (२।१२३) । ३३२

प्राज्यम् त्रि. [प्रवीयते इति, प्र+अज्+ण्यत्, वीभावाभावः] प्रचुरम्; 'स्वागतं स्वानधीकारान् प्रभावैरवलम्ब्य वः । युगपद्युगबाहुभ्यः प्राप्तेभ्यः प्राज्यविक्रमाः'-इति कुमारे (२।१८) । [प्रभूतम् आज्यं घृतं यस्येति] प्रचुरघृतसम्पन्नः; [प्रकृष्टमाज्यम्] प्रकृष्टघृते क्ली. । ७०१

प्राड्विवाकः पु. [पृच्छतीति प्राट्, विविच्य वक्तीति विवाकः । ततः कर्मधारयः] व्यवहारद्रष्टा; अक्षदर्शकः; व्यवहारदर्शी; 'जज' इति भाषा । सत्यासत्यनिर्णेता; 'विवादानुगतं पृष्ट्वा पूर्ववाक्यं पयत्नतः । विचारयति येनासौ प्राड्विवाकस्ततः स्मृतः'-इति स्मृतिः । [अर्थिप्रत्यर्थिनौ पृच्छतीति प्राट्, तयोर्वचनं विरुद्धमविरुद्धं च सभ्यैः सह विविनक्ति विवेचयति वेति विवाकः । प्राट् चासौ विवाकश्चेति] 'विवादानुगतं पृष्ट्वा ससभ्यस्तत् प्रयत्नतः । विचारयति येनासौ प्राड्विवाकस्ततः स्मृतः'—इति मिताक्षरा । ४२९

प्राणः पुं. [प्राणिति जीवति बहुकालमिति । प्र+अन्+अच् । प्राणित्यनेनेति करणे घञ् वा] बलम्; 'बाहुप्राणेन शूराणां समाजोत्सवसन्निधौ'—इति हरिवंशे (८६।३६), ब्रह्मा; हृन्मारुतः; 'हृदि प्राणो गुदेऽपानः समानो नाभिसंस्थितः ।' बोलः; काव्ये जीवात्मा; अनिलः; पूरिते त्रि. । सूक्ष्मशरीरसमष्टयुपहितचैतन्यं; प्राग्गमनवान् नासाग्रस्थानवर्ती वायुः; 'प्राणिनां सर्वतो वायुश्चेष्टां वर्तयते पृथक् । प्राणनाच्चैव भूतानां प्राण इत्यभिधीयते'—इति महाभारते (१२।३२१।६५)। धातुः पुत्रः; 'आयतिर्नियतिश्चैव मेरोः कन्ये महात्मनः। भार्ये धातृविधात्रोस्ते. तयोर्जातौ सुतावुभौ । प्राणश्चैव मृकण्डुश्च पिता मम महायशाः'—इति मार्कण्डेये । धरपुत्रविशेषः; 'द्रविणो हव्यवाहश्च धरपुत्रावुभौ स्मृतौ । कल्याणिन्यां ततः प्राणो रमणः शिशिरोऽपि च । मनोहरा धरात् पुत्रानवापाथ हरेः सुता'—मात्स्ये (५।२३-२४) ७२३

प्राणाः पुं. [प्राणित्येभिरिति, प्र+अन्+करणे घञ्] असवः; 'प्राणा यथात्मनोऽभीष्टा भूतानामपि ते तथा। आत्मौपम्येन भूतानां दयां कुर्वन्ति साधवः'—इति हितोपदेशे (१।७३) । शरीरस्थपञ्चप्राणाः; 'प्राणोऽपानः समानश्चोदानव्यानौ च वायवः । शरीरस्था इमे'—इत्यमरः । 'हृदि प्राणो गुदेऽपानः समानो नाभिसंस्थितः । उदानः कण्ठदेशे च व्यानः सर्वशरीरगः' । बहुवचनान्तोऽयं शब्दः । १३४

प्राणाधिनाथः पुं. [प्राणानामधिनाथः] पतिः; जगत्पतिः; यमः । ४९७

प्राणिद्यूतम् क्ली. [प्राणिभिर्मेषादिभिः कृतं द्यूतमिति । मध्यपदलोपी समासः] पणपूर्वकमेषकुक्कुटादियुद्धं; समाह्वयः; साह्वयः । ७९०

प्राणी [न्] त्रि. [प्राणाः सन्त्यस्येति । प्राण+'अत इनिठनौ' इति इनि] प्राणविशिष्टः; मनुष्यादिः; चेतनः; जन्मी; जन्तुः; जन्युः; शरीरी; 'कर्मात्मनां च देवानां सोऽसृजत् प्राणिनां प्रभुः । साध्यानां च गणं सूक्ष्मं यज्ञं चैव सनातनम्'—इति मनुः (१।२२) । ८६३

प्रातः [र्] अव्य. [प्राततीति, प्र+अत्+'प्राततेररन्' इति अरन्] प्रभातं; प्रगे; सूर्योदयावधित्रिमुहूर्तकालः; 'प्रातः कालो मुहूर्तांस्त्रीन् सङ्गवस्तावदेव तु'—इति तिथ्यादितत्त्वम् । 'प्रयता प्रातरन्वेतु सायं प्रत्युद्व्रजेदपि'—इति रघौ (१।९०) । १११

प्रातिहारकः पुं. [प्रतिहारक एव । स्वार्थे अण्] प्रातिहारः; प्रातिहारिकः; मालाकारः; मालिकः । 'मायाकारः,

मायिकः'–इति अमरमतेऽर्थः । ५८९

प्रातिहारिकः पुं. [प्रतिहारः प्रतिहरणं प्रापणम् इत्यर्थः, तत् प्रयोजनमस्येति । प्रतिहार+'प्रयोजनम्' इति ठक्] प्रातिहारकः; प्रातिहारः; मालाकारः; मालिकः । ५८९

प्राथमकल्पिकः पुं. [प्रथमकल्पः आद्यारम्भः प्रयोजनं यस्य । 'प्रयोजनम्' इति ठक् । यद्वा प्रथमकल्पमधीते इति, 'विद्यालक्षणकल्पान्ताच्चेति वक्तव्यमिति' ठक्] शैक्षः; प्रथमारब्धवेदाध्ययनः; प्रथमं शिक्षणीयं कल्पं शास्त्रमधीते यः । ४००

प्रादुः [स्] अव्यः [प्रात्तीति, प्र+अद्+बाहुलकाददेर्प्युसिप्रत्ययः] प्राकाश्यं; प्रकाशः; सम्भाव्यं; नाम; स्फुटत्वं; आविः; यथा—प्रादुरासीत्, आविर्भूतः । 'ज्यानिनादमथ गृह्णती तयोः प्रादुरास बहुलक्षपाच्छविः । ताडका चलकपालकुण्डला कालिकेव निविडा बलाकिनी' —इति रघौ (११।१५) वृत्तिः । ८८१

प्रादेशः पुं. [प्रदिश्यते इति, प्र+दिश्+'हलश्च' इति घञ्, 'उपसर्गस्य घञि' इति दीर्घः] तर्जनीसहितविस्तृताङ्गुष्ठः; 'प्रमाणतो भीमसेनः प्रादेशेनाधिकोऽर्जुनात्'–इति महाभारते (५।५१।१९) । [प्रदेश एव, स्वार्थे अण्] देशमात्रम्; 'प्रादेशो देशमात्रे च तर्जन्यङ्गुष्ठसम्मिते'—इति मेदिनी । 'अङ्गुष्ठस्य प्रदेशिन्या व्यासः प्रादेश उच्यते'—इति देवीपुराणम् । ५३८

प्रादेशनम् क्ली. [प्र+आ+दिश्+ल्युट्] दानम् । ४१९

प्राध्वः त्रि. [प्रगतोऽध्वानमिति । 'उपसर्गादध्वनः' इति अच्] प्रह्वः; बन्धः; 'ततः शक्तिं गदां खड्गं धनुश्च भरतर्षभः । प्राध्वं कृत्वा नमश्चक्रे कुबेराय वृकोदरः'—इति महाभारते (३।१६२।३७) । बहुदूरगामिरथादिः; दूरपथः; अव्य. [प्राध्वनतीति । प्र+आ+ध्वन्+डम्] अनुकूलम्; 'सभाजने मे भुजमूर्ध्वबाहुः सव्येतरं प्राध्वमितः प्रयुङ्क्ते'—इति रघौ (१३।४३) । ८३९

प्रान्तरम् क्ली. [प्रकृष्टमन्तरमवकाशो व्यवधानं वा यत्र] दूरशून्योऽध्वा; छायातरुजलादिरहिते पथि प्रान्तरे; [दूरं शून्यो दूरशून्यः दूरश्चासौ शून्यश्चेति वा दूरशून्यो जलादिवर्जितत्वात् । ईदृक् योऽध्वा स प्रान्तरम् । प्रकृष्टमन्तरं व्यवधानमवकाशो वा अत्रेति] 'ह्रदे गर्ते प्रान्तरे च प्रासादात् पर्वतादपि । पतिष्यन्ति मरिष्यन्ति मनुजा मदविह्वलाः'—इति महानिर्वाणतन्त्रे (१।६४)। विपिनं; कोटरम् । २६१

प्रापणिकः पुं. [प्रापणाय्यते इति, प्र+आ+पण् व्यवहारे+'प्राङि पणिकषः' इति किकन्] पण्यविक्रयी; 'आढ्यादिव प्रापणिकादजस्रं जग्राह रत्नान्यमितानि लोकः'—इति माघे (४।११) । ५७१

प्राप्तः त्रि. [प्र+आप्+क्त] उचितः; युक्तः; न्याय्यः; औपयिकः; प्रस्थापितः; प्रणिहितः; लब्धः; विन्नः; भावितः; आसादितः; भूतः; उत्पन्नः; समुपस्थितः; 'एतस्मिन्नेनसि प्राप्ते वसित्वा गर्दभाजिनम् । सप्तागारांश्चरेद्भैक्ष्यं स्वकर्म परिकीर्तयन्'—इति मनुः (११।१२२)। ७४६

प्राप्तरूपः त्रि. [प्राप्तं रूपं येन] पण्डितः; मनोज्ञः; रूपवान् । ३३२

प्राभृतम् क्ली. [प्राभ्रियते स्मेति । प्र+आ+भृ+क्त] उपढौकनं; प्राभृतकं; कौशलिका; 'तं दत्तप्राभृतं दूतं स संमान्य व्यसर्जयत्'—इति कथासरित्सागरे (१७। १६४) । ४३४

प्रामाणिकः त्रि. [प्रमाणादागतः । प्रमाण+ठक्] शास्त्रसिद्धः; हैतुकः; मर्यादार्हः; शास्त्रज्ञः; परिच्छेदकः; प्रमाणकर्ता । ५३६

प्रायः पुं. [प्रकृष्टमयनमिति । प्र+अय्+घञ्, यद्वा प्र+इ+'एरच्' इत्यच्] मरणार्थमनशनम्; 'अहं वः प्रतिजानामि न गमिष्याम्यहं पुरीम् । इहैव प्रायमासिष्ये श्रेयो मरणमेव च'—इति रामायणे (४।५३।१२) । मरणं; तुल्यं; बाहुल्यम्; 'तस्कराः पण्डका मूर्खाः सुखप्राप्तधनास्तथा । लिङ्गिनश्छन्नकामाद्या आसां प्रायेण वल्लभाः'—इति साहित्यदर्पणे (३।१११) (आसां वेश्यानाम्) । वयः; पापं; तपः; क्ली. प्रवेशः; युद्धम्; 'उपज्येष्ठे वरूथे गभस्तौ प्राये प्राये जिगीवांसः स्याम'—इति ऋग्वेदे (२।१८।८) । 'किंच प्राये प्राये सोमपानार्थमिन्द्रस्य यज्ञशालायां प्रवेशे प्रवेशे जिगीवांसः शत्रूणां जेतारो भवेम । यद्वा प्राये प्राये प्रकर्षेण इयते गम्यते योद्धृभिरिति प्रायं युद्धम् । तस्मिन् युद्धे जिगीवांसः शत्रून् जितवन्तो भवेम'–इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । त्रि. गमकः; 'प्रक्षाल्य हस्तावाचम्य ज्ञातिप्रायं प्रकल्पयेत् । ज्ञातिभ्यः सत्कृतं दत्त्वा बान्धवानपि भोजयेत्'–इति मनुः (३।२६४) । 'तदनु हस्तौ प्रक्षाल्याचम्य

ज्ञातिप्रायमन्नं कुर्यात् । ज्ञातीन् प्रैति गच्छतीति ज्ञातिप्रायं कर्मण्यण् । ज्ञातीन् भोजयेदित्यर्थः'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । प्रायः [स्] अव्य. [प्र+अय् गतौ+असुन्] बाहुल्यम्; 'ततोऽहं शर्ववर्मा च ज्ञातवन्तौ क्रमेण ताम् । अत्रान्तरे स च प्रायः पर्यहीयत वासरः'—इति कथासरित्सागरे (६।१२३) । ७६०

प्रार्थनम् क्ली. [प्र+अर्थ्+ल्युट्] प्रकर्षेण याचनं; याच्ञा; अभिशस्तिः; याचना; अर्थना; प्रार्थना; 'युगक्षयकृता धर्माः प्रार्थनानि विकुर्वते । एतत् कलियुगं नाम अचिराद्यत् प्रवर्तते'—इति महाभारते (३।१४९।-३७) । ३६०

प्रार्थना स्त्री. [प्र+अर्थ्+णिच्+युच्] प्रकर्षेण याचनम्; 'सन्तो दिग् जलमाकाशं गोरन्नं प्रार्थना विषम् । श्राद्धस्य ब्राह्मणः कालः कथं वा यक्ष ! मन्यसे'— इति महाभारते (३।३१२।८१) । ३६०

प्रालम्बकम् क्ली. [प्रालम्बते इति, प्र+आ+लबि अवस्रंसने+अच्, प्रालम्ब+संज्ञायां कन्] कण्ठाद् ऋजुलम्बमानं माल्यं; प्रालम्बं; प्रालम्बिका; स्वर्णरचितललन्तिका; सुवर्णहारः । ५५३

प्रालेयम् क्ली. [प्रकर्षेण लीयन्ते लीना भवन्ति पदार्था अत्रेति । प्रलयो हिमालयस्तत आगतम् । प्रलय+अण् । 'केकयमित्रयुप्रलयानां यादेरियः' इति यस्येयादेशः] हिमम्; 'नरनारायणौ चैव चेरतुस्तप उत्तमम् । प्रालेयाद्रि समागत्य तीर्थे बदरिकाश्रमे'--इति देवीभागवते (४।५।१३) । ६५०

प्रालेयांशुः पुं. [प्रालेयानि हिमानि तद्वत् शीता वा अंशवो यस्य] चन्द्रः; 'इत्थं नारीर्घटयितुमलङ्कामिभिः काममासन्, प्रालेयांशोः सपदि रुचयः शान्तमानान्तरायाः'—इति माघे (९।८७) । ४२

प्रावरणम् क्ली. [प्रावृणोत्यनेन गात्रमिति । प्र+आ+वृ+करणे ल्युट्] उत्तरीयवस्त्रं; प्रच्छादनं; संव्यानम्; उत्तरीयकम्; 'बन्धकीपादमुद्राङ्कं चारुप्रावरणादि सः । गीरवार्हान् दुराचारैः सचिवान् पर्यधापयत्'--इति राजतरङ्गिण्याम् (४।६७४) । प्रकृष्टावरणम् । ५४६

प्रावृट् [ष्] स्त्री. [प्रकर्षेण आ सम्यक् प्रकारेण च वर्षतीति । प्र+आ+वृष्+क्विप् । प्रावर्षत्यत्रेति अधिकरणे क्विप् वा' । यद्वा वर्षणमिति वृट्, प्रकृष्टा वृडत्र । 'नहि वृतिवृषीति' पूर्वपदस्य दीर्घः] वर्षाकालः; श्रावणभाद्रमासौ; 'अभ्यास्य चाम्भःपृषतोक्षितानि, शैलेयगन्धीनि शिलातलानि । कलापिनां प्रावृषि पश्य नृत्यं, कान्तासु गोवर्द्धनकन्दरासु'--इति रघौ (६।५१) । ११३

प्रासः पुं. [प्रास्यते क्षिप्यते इति । प्र+अस्+'हलश्च इति घञ्] कुन्तास्त्रम्; प्रासकः; 'गदाभिरसिभिः प्रासैर्बाणैश्चानतपर्वभिः'— इति महाभारते (६।६७।-२,) । 'प्रासास्त्रन्तु चतुर्हस्तं दण्डबुध्नं क्षुराननम् ।' 'प्रासस्तु सप्तहस्तः स्यादौन्नत्येन तु वैणवः । लौहशीर्षस्तीक्ष्णपादः कौशेयस्तवकाञ्चितः । आकर्षश्च विकर्षश्च धूननं वेधनं तथा । चतस्र एता गतय उक्ताः प्रासं समाश्रिताः ।' ४७१

प्रासादः पुं. [प्रसीदन्त्यस्मिन्निति । प्र+सद्+'हलश्च' इत्यधिकरणे घञ् । 'उपसर्गस्य घञ्यमनुष्ये बहुलम्' इति उपसर्गस्य दीर्घः] देवगृहं; राजगृहम्; 'देवभूभुजां गृहम्'—इत्यमरः । 'इत्युक्त्वा सचिवान् राजा कल्पयित्वा सुरक्षकान् । कारयित्वाथ प्रासादं सप्तभूमिकमुत्तमम्'—इति देवीभागवते (२।९।४२) । २९३

प्रियः त्रि. [प्रीणातीति, प्री+'इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः' इति क] हृद्यः; 'सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात् सत्यमप्रियम् । प्रियं च नानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः'--इति महाभारते । 'न हि कस्य प्रियः को वा विप्रियो वा जगत्त्रये । काले कार्यवशात् सर्वे भवन्त्येवाप्रियाः प्रियाः'—इति श्रीकृष्णजन्मखण्डे ५ अध्याये । पुं. भर्त्ता; 'प्रणमति पश्यति चुम्बति संश्लिष्यति पुलकमुकुलितैरङ्गैः । प्रियसङ्गाय स्फुरितां वियोगिनी वामबाहुलताम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३४७) । जामाता; 'राजर्त्विक्स्नातकगुरून् प्रियश्वशुरमातुलान् । अर्हयेन्मधुपर्केण परिसंवत्सरात् पुनः'—इति मनुः (३।११९) । कार्तिकेयः; 'अमोघस्त्वनघो रौद्रः प्रियश्चन्द्राननस्तथा'—इति महाभारते (२।२३१।५) मृगविशेषः; ऋद्धिनामौषधम् । ६८९

प्रियङ्गुः स्त्री. [प्रियं गच्छतीति । प्रिय+गम्+मृगय्वादित्वात् कुप्रत्ययेन साधुः] सुगन्धिवृक्षविशेषः; श्यामा; महिलाह्वया; लता; गोवन्दनी; गुन्द्रा; **फलिनी; फली; विष्वक्सेना; गन्धफली**; कारम्भा;

प्रियकः; प्रियवल्ली; फलप्रिया; गौरी; वृत्ता; कङ्गुः; कङ्गुनी: भङ्गुरा; गौरवल्ली; शुभगा; पर्णभेदिनी; शुभा; पीता; मङ्गल्या; श्रेयसी; 'वामे चक्रगदाधरः स भगवान् क्रोडो प्रियङ्गोस्तले । हस्तोद्यच्छुकशालिमञ्जरिकया देव्या धरण्या सह'—इति महागणपतितोत्रे (१०)। कङ्गुः (५८२); राजिका; पिप्पली; कटुकी । १९३

प्रियवाक् त्रि. [प्रिया हृद्या वाक् वाणी यस्य] वदान्यः; कामधुक्; दानवीरः । ३६६

प्रियवाग्दानशीलः त्रि. [प्रियायाः वाचः दानस्य शीलम् अस्य] मनोऽभिलषितवचनमुच्चार्य तत्प्रपूरकः; वदान्यः; वाञ्छाप्रपूरकः । ३६६

प्रियं वाक्यम् क्ली. [प्रियं मनोज्ञं वाक्यम् उक्तिः] हृदयङ्गमं; चटु; चाटु । १४६

प्रीतिः स्त्री. [प्रीञ् तर्पणे+भावे क्तिन्] तृप्तिः; मुत्; प्रमदः; हर्षः; प्रमोदः; आमोदः; सम्मदः; आनन्दथुः; आनन्दः; शर्म; सातं; सुखं; कामपत्नी; विष्कम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतद्वितीययोगः; 'प्रसूतिकाले यदि प्रीतियोगो नरो ह्यरोगः सुखवान् विनोदी । रक्तानुरक्तो विदुषां प्रपन्नः सम्प्रार्थितो यच्छति वित्तमेव'—इति कोष्ठीप्रदीपः । प्रेम (७०६) । १२३

प्रेक्षा स्त्री. [प्रकर्षेण ईक्ष्यते ययेति । प्र+ईक्ष्+'गुरोश्च हलः' इति अ, टाप् । प्र+ईक्ष्+भावे अ टाप् वा] ईक्षणम्; 'यत्सेवया चरणपद्मपवित्ररेणुं, सद्यः क्षताखिलमलं प्रतिलब्धशीलम् । न श्रीर्विरक्तमपि मां विजहाति यस्याः प्रेक्षालवार्थ इतरे नियमान् वहन्ति'—इति भागवते (३।१६।७) । प्रज्ञा (३३४); 'सा तस्मै सर्वमाचष्ट यवक्रीभाषितं शुभा । प्रयुक्तं च यवक्रीतं प्रेक्षापूर्वं तयात्मनाम्—इति महाभारते (३।१३६।८) । नृत्येक्षणम्; 'प्रतिषिद्धापि चेद्या तु मद्यमभ्युदयेष्वपि । प्रेक्षासमाजं गच्छेद्वा सा दण्डचा कृष्णलानि षट्'—इति मनुः (९।८४) । शाखा; शोभा; 'प्रेक्षां क्षिपन्तं हरितोपलाद्रेः, सन्ध्याभ्रनीवेरुरुरुक्ममूर्ध्नः । रत्नोदधावोषधिसौमनस्यवनस्रजो वेणुभुजाङ्घ्रिपाङ्घ्रे !' —इति भागवते (३।८।२४) । 'हरितोपलाद्रेर्मरकतशिलामयपर्वतस्य प्रेक्षां शोभां क्षिपन्तं स्वलावण्यातिशयेन तिरस्कुर्वन्तम्'—इति तट्टीकायां स्वामी । ९५

प्रेङ्खा स्त्री. [प्रेङ्खयते गम्यतेऽनयेति । प्र+इखि गतौ+करणे घञ्+टाप्] दोला; प्रेङ्खोलनम् । ७६३

प्रेङ्खितम् त्रि. [प्र+इखि गतौ+क्त] कम्पितं; दोलितं; तरलितं; लुलितं; धुतं; चलितं; धूतं; वेल्लितम्; आन्दोलितम् । ७४६

प्रेङ्खोलनम् क्ली. [प्रेङ्खोल्यते चल्यतेऽनेनेति । प्रेङ्खोल+करणे ल्युट्] दोला; प्रेङ्खा; [भावे ल्युट्] कम्पनम्; 'विरेचनप्रेङ्खोलनाजीर्णगर्भशातनप्रभृतिभिर्विशेषैर्बन्धनान्मुच्यते गर्भः फलमिव वृन्तबन्धनादभिघातविशेषैः'-इति सुश्रुतः । ७६३

प्रेङ्खोलितम् त्रि. [प्रेङ्खोल+क्त] दोलितं; तरलितं; लुलितं; प्रेङ्खितं; धुतं; चलितं; कम्पितं; धूतं; वेल्लितम्; आन्दोलितम् । ७४६

प्रेतः पुं. [प्र+इ गतौ+क्त] नरकस्थप्राणी; भूतभेदः; मृतः (६२९); 'आचार्ये तु खलु प्रेते गुरुपुत्रे गुणान्विते । गुरुदारे सपिण्डे वा गुरुवद् वृत्तिमाचरेत्'—इति मनुः (२।२४७) । ६२५

प्रेतपतिः पुं. [प्रेतानां पतिः] यमः; प्रेताधिपः; प्रेतेशः; प्रेतेश्वरः, प्रेतराजः; 'दण्डः प्रेतपतेः शक्तिर्देवसेनापतेस्तथा । अन्येषां चैव देवानामायुधानि स विश्वकृत् । चकार तेजसा भानोर्भासुराण्यरिशान्तये '—मार्कण्डेये (१०८।४) । ७१

प्रेत्य अव्य. [प्र+इ+क्त्वा, ल्यप्] लोकान्तरम्; अमुत्र; 'श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुतिष्ठन् हि मानवः । इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम्'—इति मनुः (२।९) । ८७७

प्रेष्ठः त्रि. [अयमेषामतिशयेन प्रिय इति । प्रिय+इष्ठन्, प्रादेशः] अतिशयप्रियः; प्रेयान् । ६८९

प्रेष्यः त्रि. [प्र+ईष्+कर्मणि ण्यत्] दासः; सेवकः; 'प्रेष्यो ग्रामस्य राज्ञश्च कुनखी श्यावदन्तकः'—इति मनुः (३।१५३) । प्रेरणीयः । ३६९

प्रेष्या स्त्री. [प्र+इष्+ण्यत्+टाप्] दासी; सेविका; परिचारिका । ४९१

प्रैष्यः पुं. [प्र+इष्+कर्मणि ण्यत्, 'प्रादूहोढोढ्येषैष्येषु' इति वृद्धिः] प्रेष्यः । ३६९

प्रोक्षितम् त्रि. [प्र+उक्ष्+क्त] निहतं; सिक्तं; यज्ञार्थं मन्त्रैः संस्कृतमांसादि; 'भक्षयेत् प्रोक्षितं मांसं सकृद

प्रियकः; प्रियवल्ली; फलप्रिया; गौरी; वृत्ता; कङ्गुः; कङ्गुनी; भङ्गुरा; गौरवल्ली; शुभगा; पर्णभेदिनी; शुभा; पीता; मङ्गल्या; श्रेयसी; 'वामे चक्रगदाधरः स भगवान् क्रोडो प्रियङ्गोस्तले । हस्तोद्यच्छुकशालिमञ्जरिकया देव्या धरण्या सह'—इति महागणपतितोत्रे (१०)। कङ्गुः (५८२); राजिका; पिप्पली; कटुकी । १९३

प्रियवाक् त्रि. [प्रिया हृद्या वाक् वाणी यस्य] वदान्यः; कामधुक्; दानवीरः । ३६६

प्रियवाग्दानशीलः त्रि. [प्रियायाः वाचः दानस्य शीलम् अस्य] मनोऽभिलषितवचनमुच्चार्य तत्प्रपूरकः; वदान्यः; वाञ्छाप्रपूरकः । ३६६

प्रियं वाक्यम् क्ली. [प्रियं मनोज्ञं वाक्यम् उक्तिः] हृदयङ्गमं; चटु; चाटु । १४६

प्रीतिः स्त्री. [प्रीञ् तर्पणे+भावे क्तिन्] तृप्तिः; मुत्; प्रमदः; हर्षः; प्रमोदः; आमोदः; सम्मदः; आनन्दथुः; आनन्दः; शर्म; सातं; सुखं; कामपत्नी; विष्कम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतद्वितीययोगः; 'प्रसूतिकाले यदि प्रीतियोगो नरो ह्यरोगः सुखवान् विनोदी । रक्तानुरक्तो विदुषां प्रपन्नः सम्प्रार्थितो यच्छति वित्तमेव'—इति कोष्ठीप्रदीपः । प्रेम (७०६) । १२३

प्रेक्षा स्त्री. [प्रकर्षेण ईक्ष्यते ययेति । प्र+ईक्ष्+'गुरोश्च हलः' इति अ, टाप् । प्र+ईक्ष्+भावे अ टाप् वा] ईक्षणम्; 'यत्सेवया चरणपद्मपवित्ररेणुं, सद्यः क्षताखिलमलं प्रतिलब्धशीलम् । न श्रीर्विरक्तमपि मां विजहाति यस्याः प्रेक्षालवार्थं इतरे नियमान् वहन्ति'—इति भागवते (३।१६।७) । प्रज्ञा (३३४); 'सा तस्मै सर्वमाचष्ट यवक्रीभाषितं शुभा। प्रयुक्तं च यवक्रीतं प्रेक्षापूर्वं तयात्मनाम्—इति महाभारते (३।१३६।८)। नृत्येक्षणम्; 'प्रतिषिद्धापि चेद्या तु मद्यमभ्युदयेष्वपि । प्रेक्षासमाजं गच्छेद्वा सा दण्डया कृष्णलानि षट्'—इति मनुः (९।८४) । शाखा; शोभा; 'प्रेक्षां क्षिपन्तं हरितोपलाद्रेः, सन्ध्याभ्रनीवेरुरुरुक्ममूर्द्धनः । रत्नोदधावोषधिसौमनस्यवनस्रजो वेणुभुजाङ्घ्रिपाङ्घ्रेः !'—इति भागवते (३।८।२४) । 'हरितोपलाद्रेर्मरकतशिलामयपर्वतस्य प्रेक्षां शोभां क्षिपन्तं स्वलावण्यातिशयेन तिरस्कुर्वन्तम्'—इति तट्टीकायां स्वामी । ९५

प्रेङ्खा स्त्री. [प्रेङ्खयते गम्यतेऽनयेति । प्र+इखि गतौ+करणे घञ्+टाप्] दोला; प्रेङ्खोलनम् । ७६३

प्रेङ्खितम् त्रि. [प्र+इखि गतौ+क्त] कम्पितं; दोलितं; तरलितं; लुलितं; धुतं; चलितं; धूतं; वेल्लितम्; आन्दोलितम् । ७४६

प्रेङ्खोलनम् क्ली. [प्रेङ्खोल्यते चल्यतेऽनेनेति । प्रेङ्खोल+करणे ल्युट्] दोला; प्रेङ्खा; [भावे ल्युट्] कम्पनम्; 'विरेचनप्रेङ्खोलनाजीर्णगर्भशातनप्रभृतिभिर्विशेषैर्बन्धनान्मुच्यते गर्भः फलमिव वृन्तबन्धनादभिघातविशेषैः'-इति सुश्रुतः । ७६३

प्रेङ्खोलितम् त्रि. [प्रेङ्खोल+क्त] दोलितं; तरलितं; लुलितं; प्रेङ्खितं; धुतं; चलितं; कम्पितं; धूतं; वेल्लितम्; आन्दोलितम् । ७४६

प्रेतः पुं. [प्र+इ गतौ+क्त] नरकस्थप्राणी; भूतभेदः; मृतः (६२९); 'आचार्ये तु खलु प्रेते गुरुपुत्रे गुणान्विते । गुरुदारे सपिण्डे वा गुरुवद् वृत्तिमाचरेत्'—इति मनुः (२।२४७) । ६२५

प्रेतपतिः पुं. [प्रेतानां पतिः] यमः; प्रेताधिपः; प्रेतेशः; प्रेतेश्वरः, प्रेतराजः; 'दण्डः प्रेतपतेः शक्तिर्देवसेनापतेस्तथा। अन्येषां चैव देवानामायुधानि स विश्वकृत् । चकार तेजसा भानोर्भासुराण्यरिशान्तये'—मार्कण्डेये (१०८।४) । ७१

प्रेत्य अव्य. [प्र+इ+क्त्वा, ल्यप्] लोकान्तरम्; अमुत्र; 'श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुतिष्ठन् हि मानवः । इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम्'—इति मनुः (२।९) । ८७७

प्रेष्ठः त्रि. [अयमेषामतिशयेन प्रिय इति । प्रिय+इष्ठन्, प्रादेशः] अतिशयप्रियः; प्रेयान् । ६८९

प्रेष्यः त्रि. [प्र+ईष्+कर्मणि ण्यत्] दासः; सेवकः; 'प्रेष्यो ग्रामस्य राज्ञश्च कुनखी श्यावदन्तकः'—इति मनुः (३।१५३) । प्रेरणीयः । ३६९

प्रेष्या स्त्री. [प्र+इष्+ण्यत्+टाप्] दासी; सेविका; परिचारिका । ४९१

प्रैष्यः पुं. [प्र+इष्+कर्मणि ण्यत्, 'प्रादूहोढोढ्येषैष्येषु' इति वृद्धिः] प्रेष्यः । ३६९

प्रोक्षितम् त्रि. [प्र+उक्ष्+क्त] निहतं; सिक्तं; यज्ञार्थं मन्त्रैः संस्कृतमांसादि; 'भक्षयेत् प्रोक्षितं मांसं सकृद

ब्राह्मणकाम्यया। दैवे नियुक्तः श्राद्धे वा नियमे पुनः विवर्जयेत्'--इति महाभारते। 'आरण्याः सर्वदैवत्याः प्रोक्षिताः सर्वशो मृगाः। अगस्त्येन पुरा राजन्! मृगया येन पूज्यते'--इति तिथ्यादितत्त्वम्। ४१७

प्रोथः पुं.—क्ली. [प्रवते इति, प्रु गतौ+'तिथपृष्ठगूथयूथप्रोथाः' इति थक्, निपातनाद् गुणः। यद्वा प्रोथते इति, प्रोथ पर्याप्तौ+'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ] अश्वनासिका; 'रिरसयिषति भूयः शष्पमग्रे विकीर्णं पटुतरचपलौष्ठः प्रस्फुरत्प्रोथमश्वः'—इति माघे (११। ११)। शूकरनासिका; पुं. कटी; शाटकः; स्त्रीगर्भः; गर्तः; भीषणं; स्फिक्; अश्वमुखम्; त्रि. अध्वगः; प्रथितः; स्थापितः। ४४१

प्रोष्ठः पुं. [प्रकृष्ट ओष्ठोऽस्येति। 'ओत्वोष्ठयोः समासे वा' इति वा वृद्धिः] प्रोष्ठीमत्स्यः। ६५८

प्रोष्ठी स्त्री. पुं. [प्रकृष्ट ओष्ठो यस्याः। प्रोष्ठ + नासिकोदरोष्ठेति, जातेरिति वा ङीष्] मत्स्यभेदः; प्रोष्ठः; शफरी; शफरः; श्वेतकोलः। ६५८

प्रौढम् त्रि. [प्रोह्यते स्मेति। प्र+वह्+क्त। सम्प्रसारणम्, 'प्रादूहोढोढ्येषैष्येषु' इति वृद्धिः] वर्द्धितं; प्रवृद्धम्; एधितम्; 'त्वत्सम्पर्कात् पुलकितमिव प्रौढपुष्पैः कदम्बैः-इति मेघदूते (२७)। प्रगल्भः (३८६); 'श्वासातिमात्रचटुलैः स्मरतः सुनेत्रैः प्रौढप्रिया नयनविभ्रमचेष्टितानि'-इति रघौ (९।५८)। निपुणः; 'इङ्गितज्ञाः पुरप्रौढा एकारामाश्च सात्त्वताः'—इति भागवते (३।२।९)। प्रकर्षेण ऊढः। २६९, ४८३।

प्लवः पुं. [प्लु+'ऋदोरप्' इत्यप्] भेलः; उडुपः; तल्पः; तल्ली; [प्लूयतेऽनेनेति, करणे अप्] 'प्लवा ह्येते अदृढा यज्ञरूपा अष्टादशोक्तमवरं येषु कर्म। एतच्छ्रेयो येऽभिनन्दन्ति मूढा जरामृत्युं ते पुनरेवापि यन्ति'—इति मुण्डकोपनिषदि (१।२।७)। प्लवनम्; 'सागरानूपविपुलां प्रागुदक्प्लवशीतलाम्। सर्वतोदधिमध्यस्थामभेद्यां त्रिदशैरपि'—इति हरिवंशे (१२२।१०१)। [प्लवते सन्तरतीति। प्लु+अच्] भेकः; अविः; श्वपचः; कपिः; जलकाकः; 'प्लवानामिक्षुरसासवः'—इति सुश्रुते (१।४६)। कुलकः; प्रवणः; पर्कटीद्रुमः; कारण्डवविहगः; शब्दः; प्रतिगतिः; प्रेरणं; शत्रुः; जलान्तरं; पलवः; जलकुक्कुटः; 'कलविङ्कं प्लवं हंसं चक्राङ्गं ग्रामकुक्कुटम्। सारसं रज्जुवालं च दात्यूहं शुकसारिके'— इति मनुः (५।१२)। बकविशेषः; 'रथाङ्गहंसा नत्यूहाः प्लवाः कारण्डवाः परे। तथ पुंस्कोकिलाः क्रौञ्चा विसंज्ञा भेजिरे दिशः'—इति रामायणे (२।१०३।४३)। 'प्लवाः बकविशेषाः -इति तट्टीकायां रामानुजः। जलचरपक्षिमात्रम्; 'हंससारसकाचाक्षबकक्रौञ्चसरारिकाः। नन्दीमुखे सकादम्बा बलाकाद्याः प्लवाः स्मृताः। प्लवन्ते सलिले यस्मादेते तस्मात् प्लवाः स्मृताः।' ६७१

प्लवकः पुं. [प्लवते इवेति। प्लु+अच्। ततः स्वार्थे संज्ञायां वा कन्] चण्डालः; श्वपचः; भेकः (६६२); मण्डूकः; खड्गधारादिनर्तकः; केलकः; केकलः; नर्तुः; केलिकोषः; कलायनः; सन्तरणोपजीवी; 'गायन नर्तकाश्चैव प्लवका वादकास्तथा। कथका योधकाश्चैव राजन्नार्हन्ति केतनम्'—इति महाभारते (१३।२३।१५) वानरः; प्लक्षः। ५९८

प्लवगः पुं. [प्लवेन प्लुतगत्या गच्छतीति। गम्+'अन्येष्वपि दृश्यते' ति ड] भेकः; सूर्यसारथिः; प्लवपक्षी; शिरीषवृक्षः; वानरः (२३१); 'स सेतुं बन्धयामास प्लवगैर्लवणाम्भसि। रसातलादिवोन्मग्नं शेषं स्वप्नाय शार्ङ्गिणः'—इति रघौ (१२।७०)। ६६२

प्लवङ्गः पुं. [प्लवेन प्लुतगत्या गच्छतीति। गम्+'गमश्च इति खच्, 'खच्च डिद्वा वाच्यः' इति डित्, डित्वात् टेर्लोपः, मुमागमः] वानरः; 'प्लवङ्गा वृश्चिका दंशा मशकाश्चैव कानने। सरीसृपाश्च कीटाश्च मा भूवन् गहने तव'—इति रामायणे (२।२५।१८)। 'प्लवङ्गा वानराः'-इति तट्टीकायां रामानुजः। मृगः; प्लक्षवृक्षः। २३१

प्लवङ्गमः पुं. [प्लवेन गच्छतीति। प्लव+गम्+'गमश्च इति खच्, मुमागमः] वानरः; 'एष्यन्ति प्रेषितास्तत्र रामदूताः प्लवङ्गमाः। आख्येया राममहिषी त्वया तेभ्यो विहङ्गम!'—इति रामायणे (४।६२।११)। (६६२) भेकः; मण्डूकः;, वर्षाभूः; दर्दुरः। प्लुतगतियुक्ते त्रि। २३१

प्सा स्त्री. [प्सा+भावे क्विप्] भक्षणम्; अशनाया; बुभुक्षा; जिघत्सा; क्षुधा। ३६१

प्सातः त्रि. [प्सा+क्त] बुभुक्षितः; भक्षितम्। ३६०

फ

फटः पुं.–स्त्री. [स्फुट् विकसने+पचाद्यच्, पृषोदरादिः] फणा; फणं; फटा; फणः। ६४१

फटा स्त्री. [फट+स्त्रियां टाप्] फणा; फणं; फणः; फटः; फटी; 'निर्विषेणापि सर्पेण कर्तव्या महती फटा। विषं भवतु मा वास्तु फटाटोपो भयङ्करः'—इति पञ्चतन्त्रे (१।८३)। दम्भः; कितवः; 'स्यात्पवर्गद्वितीयादि फटायान्तु स्फटापि च'—इति भरतधृतशब्दभेदः। ६४१

फणः त्रि. [फणति विस्तृतिं गच्छतीति। फण्+अच्] सर्पस्य विस्तृतमस्तकं; फणा; फणं; फटा; फटः; स्फटः; स्फटा; दर्वी; भोगः; स्फुटः; स्फुटा; दर्विः; फटी; 'परिवादं ब्रुवाणे हि दुरात्मा वै महाजने। प्रकाशयति दोषांस्तु सर्पः फणमिवोच्छ्रितम्'—इति महाभारते (१२।११४।१५)। जत्रूर्ध्वस्थमर्मविशेषः; 'जत्रूर्ध्वं मर्माणि चतस्रो धमन्योऽष्टौ मातृकाः, द्वे कृकाटिके, द्वे विधुरे, द्वौ फणौ, द्वावपाङ्गौ, द्वावावर्तौ, द्वावुत्क्षेपौ, द्वौशङ्खावेका स्थपनी, पञ्च सीमन्ताश्चत्वारि शृङ्गाटकान्येकोऽधिपतिरिति'—इति सुश्रुते (३।६)। ६४१

फणभृत् पुं. [फणं बिभर्तीति। भृ+क्विप्+तुक्] फणवान्; फणकरः; फणाकरः; फणधरः; फणाधरः; फणाभरः; फणावान्; सर्पः; फणिः; फणी; 'व्याप्तव्योमतले मृगाङ्कधवले निर्धौतदिङ्मण्डले, देव! त्वद्यशसि प्रशान्ततमसि प्रौढे जगत्प्रेयसि। कैलासन्ति महीभृतः फणभृतः शेषन्ति पाथोधयः, क्षीरोदन्ति सुरद्विपन्ति करिणो हंसन्ति पुंस्कोकिलाः'—इति राजेन्द्रकर्णपूरे (४)। ६४०

फणा स्त्री. [फणति प्रसारसङ्कोचं गच्छतीति। फण् गतौ+अच्+टाप्] सर्पफटा; 'ज्वलति चलितेन्धनोऽग्निर्विप्रकृतः पन्नगः फणां कुरुते। तेजस्वी संक्षोभात् प्रायः प्रतिपद्यते तेजः'—इति अभिज्ञानशाकुन्तले। ६४१

फलम् क्ली. [फलतीति। फल् निष्पत्तौ, फला विशरणे वा+अच्] व्युष्टिः; लाभः; 'शान्तमिदमाश्रमपदं स्फुरति च बाहुः कुतः फलमिहास्य। अथवा भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र'—इति शाकुन्तले। सस्यम्; 'फलानि सर्वभक्ष्यांश्च प्रदद्याद्वै दलेषु च। फलानि सर्वभक्ष्यांश्च परिशुष्काणि यानि च। तानि दक्षिणपार्श्वे तु भुञ्जानस्योपकल्पयेत्'—इति सुश्रुतः। 'उदेति पूर्वं कुसुमं ततः फलं, घनोदयः प्राक् तदनन्तरं पयः'—इति शकुन्तलायाम्। फलकं; शारिफलकार्थे; 'वैदूर्यान् काञ्चनान् दान्तान् फलैर्ज्योतीरसैः सह। कृष्णाक्षान् लोहिताक्षांश्च निर्वर्त्स्यामि मनोरमान्'—इति महाभारते (४।१।२४)। हेतुकृतं; जातीफलं; त्रिफला; 'हरीतकी चामलकी विभीतकमिदं त्रयम्। त्रिफला फलमित्युक्तं तच्च ज्ञेयं फलत्रिकम्'—इति वैद्यकपरिभाषायाम्। कक्कोलं; बाणाग्रम्; आवर्तः; फालः; दानं; मुष्कः; 'अफलो भुज्यते मेषः सफलस्तु न भुज्यते'—इति रामायणे। प्रमेयभेदः; 'आत्मशरीरेन्द्रियार्थबुद्धिमनःप्रवृत्तिदोषप्रेत्यभावफलदुःखापवर्गास्तु प्रमेयम्'—इति गोतमसूत्रम्। जीवस्य कर्मफलभुक्तिः; 'जीवः कर्मफलं भुङ्क्ते आत्मा निर्लिप्त एव च। आत्मनः प्रतिबिम्बश्च देही जीवः स एव च'—इति ब्रह्मवैवर्ते। वेदादीनां प्रयोजनम्; 'स तं प्राह फलं ब्रूहि वेदस्य च धनस्य च। दारश्रुतस्य विप्रादेः स्वर्गापवर्गहेतवे।' 'अग्निहोत्रफला वेदा दत्तभुक्तफलं धनम्। रतिपुत्रफला दाराः शीलवृत्तफलं श्रुतम्'—इति वह्निपुराणे। प. कुटजवृक्षः। ७७६

फलकम् क्ली.–पुं. [फल+संज्ञायां कन्] चर्म; 'ढाल' इति भाषा। 'शार्ङ्गं बाणं कृपाणं फलकमरिगदे पद्मशङ्खौ सहस्रम्, बिभ्राणाः शस्त्रजालं मम ददतु हरेर्बाहवो मोहहानिम्'– इति विष्णुपादादिकेशान्तस्तोत्रे (३३)। पुं. अस्थिखण्डः; नागकेशरं; काष्ठादिफलकम्; 'पाण्डुलेख्येन फलके भूमौ वा प्रथमं लिखेत्। ऊनाधिकं तु संशोध्यं पश्चात् पत्रे निवेशयेत्'–इति व्यवहारतत्त्वे। 'भृकुटीकुटिलात्तस्या ललाटफलकाद्द्रुतम्। काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी'—इति मार्कण्डेये (८७।५)। रजकपट्टम्; 'शाल्मले फलके श्लक्ष्णे निज्याद्वासांसि नेजकः। न च वासांसि वासोभिर्निर्हरेन्न च वासयेत्'—इति मिताक्षरा। ४६०

फलवान् [त्] त्रि. [फलमस्यास्तीति। फल+मतुप्, मस्य व] फलयुक्तवृक्षः। फलिनः; फली; फलितः; 'अपुष्पाः फलवन्तो ये ते वनस्पतयः स्मृताः। पुष्पिणः फलिनश्चैव वृक्षास्तूभयतः स्मृताः'—इति मनुः (१।४७)। १७८

फलिनः त्रि. [फलानि सन्त्यस्येति। फल+'बहुलमन्यत्रापि' इति इनच्] फलवान्; पुं. पनसः; फलवान् वृक्षः। १७८

फलिनी स्त्री. [फलमस्या अस्तीति । इनि, ङीप्] प्रियङ्गुवृक्षः; 'प्रियङ्गुः फलिनी कान्ता लता च महिला ह्वया । गुन्द्रा गुन्द्रफला श्यामा विष्वक्सेनाङ्गना प्रिया'—इति भावप्रकाशे । अग्निशिखावृक्षः । १६३

फली [न्] त्रि. [फलमस्यातीति । फल+इनि] फलयुक्तवृक्षादिः; फलवान्; फलिनः; फलितः; स्त्री. [फलमस्त्यस्या इति । अर्शं आदित्वाद् अच् । स्त्रियां ङीप्] प्रियङ्गुवृक्षः; 'विश्वक्सेना प्रिया कान्ता प्रियङ्गुः फलिनी फली'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । [फलि+वा ङीष्] फलिमत्स्यः । १७८

फल्गु त्रि. [फल् निष्पत्तौ+'फलिपाटिनमिमनिजनाम्'—इत्यु, गुगागमश्च] असारम्; 'तरीषु तत्रत्यमफल्गु भाण्डं, सांयात्रिकानावपतोऽभ्यनन्दत्'—इति माघे (३।७६) । निरर्थकम्; 'न फल्गुवा यैः प्रतिबोधनीयो राजा तु वीरैरिति नीतिशास्त्रम्'—इति देवीभागवते (५।१५।३२) । सामान्यं; क्षुद्रम्; 'अहस्तानि सहस्तानामपदानि चतुष्पदाम् । फल्गूनि तत्र महतां जीवो जीवस्य जीवनम्'—इति भागवते (१।१३।४७) । स्त्री. गयास्थनदीभेदः; काकोदुम्बरिका; 'भद्रा मलपूः फल्गुः स्यात्काकोदुम्बरिका च सा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। रेणुभेदः; मिथ्यावाक्यं; वसन्तर्तुः; 'फागु', 'फाग' इति भाषा । ७७७

फाणितम् क्ली. [फण् गतौ+णिच्+क्त] अर्धावर्तितेक्षुरसः; 'फल्गुनीपूर्वसमये ब्राह्मणानामुपोषितः । भक्ष्यान् फाणितसंयुक्तान् दत्त्वा सौभाग्यमृच्छति'—इति महाभारते (१३।६४।२३) । 'इक्षो रसस्तु यः पक्वः किञ्चिद् गाढो बहुद्रवः । स एवेक्षुविकारेषु ख्यातः फाणितसंज्ञया'—इति भावप्रकाशः । 'शिराहर्षेऽञ्जनं कुर्यात् फाणितं मधुसंयुतम्'—इति वैद्यके । 'फाणितं सक्तवः सर्पिर्दधिमण्डोऽम्लकाञ्जिकम् । तर्पणं मूत्रकृच्छ्रघ्नमुदावर्तहरं पिबेत्'—इति चरकः । ३२४

फाण्टम् त्रि. [फण्यते स्मेति । फण गतौ+'क्षुब्धस्वान्तध्वान्तेति' निपातनात् साधु] अनायासकृतं; कषायभेदः; 'क्षिप्तोष्णतोये मृदितः फाण्ट इत्यभिधीयते ।' 'क्षुण्णद्रव्यपले सम्यक् जलमुष्णं विनिःक्षिपेत् । पात्रे चतुःपलमिति ततस्तु स्रावयेज्जलम् । सोऽयं चूर्णद्रवः फाण्टो भिषग्भिरभिधीयते'—इति वैद्यकपरिभाषा । 'स चौषधीभिः फाण्टाभिः स्नातवाद्भिः पावनैरपि'—ऋग्विधाने । ७७४

फालः पुं. [फल्यते विदार्यते क्षेत्रमनेनेति । फल्+करणे घञ्] लाङ्गलस्थभूमिविदारकलौहः; फल्यते विशीर्यते भूमिरनेन सः; कृषिकः; कृषकः; फलं; कृषिका; फालं; कुशिकं; क्ली. [फलाय सस्याय हितम्, फल+अण् । यद्वा फल्यते विदीर्यते भूमिरनेनेति, फल्+घञ्] हलोपकरणं; महादेवः; बलदेवः; कार्पासवस्त्रे त्रि. । नवविधदिव्यान्तर्गताष्टमदिव्यम्; 'आयसं द्वादशपलघटितं फालमुच्यते । अष्टाङ्गुलं भवेद् दीर्घं चतुरङ्गुलविस्तरम्'—इति दिव्यतत्त्वम् । ५७५

फेनः पुं. [स्फायते वर्द्धते इति । स्फाय्+'फेनमीनौ' इति नक् फेशब्दादेशश्च] हिण्डीरः; अब्धिकफः; हिण्डिरः; समुद्रकफः; जलहासः; फेनकः; 'पयः फेननिभा शय्या दान्ता रुक्मपरिच्छदाः'—इति पुराणम् । 'वानीरं गगनं फेनमूनञ्च' दन्त्यनान्वितम् । आहुर्गगनमिच्छन्ति केचिन्मूर्द्धन्यणाचितम्'—इति भरतसुखलेखने । अमरटीकायां रघुनाथचक्रवर्ती णान्तमप्याह, यथा—'हंसश्रेण्यो नदीतीरे निनदैः संप्रतीयिरे । यथा सारस्वता मन्त्रा अन्तरे फेण संगताः ।' 'मातङ्गनक्रैः सहसोत्पतद्भिर्भिन्नान् द्विधा पश्य समुद्रफेनान्'—इति रघौ (१३।११)। तरलद्रव्योपरि समुत्थितबुद्बुदाकारवस्तुमात्रम्; 'भोः फेनं पिबामि यमिमे वत्सा मातॄणां स्तनान् पिबन्त उद्गिरन्ति'—इति महाभारते (१।३।५२) । उशद्रथस्य पुत्रः, 'उशद्रथो महाराज फेनस्तस्य सुतोऽभवत्'—इति हरिवंशे (३१।२९) । ६६८

फेरः पुं. [फे इति शब्दं राति ददतीति । फे+रा+क] गोमायुः; शृगालः । २२९

फेरण्डः पुं. [फे इत्यव्यक्तशब्देन रण्डतीति । फे+रण्ड+अच्] शृगालः; क्रोष्टा । २२९

फेरवः पुं. [फे इति रवो यस्य] शृगालः; 'नृत्यतां तत्र तां रक्ते नदतां चोत्सवाय सः । शूराणां फेरवाणाञ्च भूतानाञ्चाभवद्रणः'—इति कथासरित्सागरे (४७।५३) । राक्षसः; त्रि. धूर्तः; हिंस्रः । २२९

फेरुः पुं. [फे इति शब्देन रौतीति । फे+रु शब्दे+मितद्र्वादित्वाड् डु] शृगालः; 'गृहेषु येष्वतिथयो नार्चिताः सलिलैरपि । यदि निर्यान्ति ते नूनं फेरुराजगृहोपमाः'—इति भागवते (८।१६।७) । २२९

फेलिका स्त्री. [फेलिरेव+स्वार्थेक न्, टाप्] उच्छिष्टं; भुक्तसमुज्झितं; फेली; फेलिः; फेला; फेलकः; फेलम् । ३२६

ब

बकः पुं. [बङ्कते कुटिलीभवतीति । वकि+अच् । पृषोदरादित्वाद् बत्वं नलोपश्च] पक्षिविशेषः; कह्वः; द्वारबलिभुक्; कक्षेरुः; शुक्लवायसः; दीर्घजङ्घः; बकोटः; गृहबलिप्रियः; निशैतः; शिखी; चन्द्रविहङ्गमः; तीर्थसेवी; तापसः; मीनघाती; मृषाध्यायी; निश्चलाङ्गः; दाम्भिकः; 'पश्य लक्ष्मण पम्पायां बकः परमधार्मिकः। शनैः शनैः पदं धत्ते जीवानां वधशङ्कया।' 'शरारिबककाकाश्च दात्यूहाः पवनापहाः'—इति रत्नावली। पुष्पवृक्षविशेषः; शिववल्ली; पाशुपतः; एकाष्ठीलः; वसुः; वृकः; एकाष्ठीला; वसुकः; वसूकः; बकपुष्पः; शिवमल्ली; काकशीर्षः; स्थूलपुष्पः; शिवप्रियः; काकनामा; वसहट्टः; स्वपूरकः; रक्तपुष्पः; मुनितरुः; अगस्तिः; वङ्गसेनकः; अगस्त्यः; शीघ्रपुष्पः; मुनिद्रुमः; व्रणारिः; दीर्घफलकः; वक्रपुष्पः; सुरप्रियः । 'बकः पाशुपतश्चैव शिवापीडश्च सुव्रतः। वसुकश्च शिवाङ्कश्च शिवेष्टः क्रमपूरकः। शिवमल्लिः शिवाह्लादः शाम्भवो रविसंमितः। बकोऽतिशिशिरस्तिक्तो मधुरो मधुगन्धकः। पित्तदाहकफश्वासश्रमहारी च दीपनः'—इति राजनिर्घण्टः । २५०

बकोटः पुं. [वकि+बाहुलकात् कोटच् प्रत्ययः] बकः । २५०

बत अव्य.- खेदः; निन्दा; विस्मयः; 'अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयम्'—इति गीतासु । ८७८

बदरः पुं. [बदति स्थिरीभवति, छिन्नेऽपि पुनः प्ररोहतीति । बद्+अर] कोलिवृक्षः । १९४

बदरिः स्त्री. [बद्+बाहुलकादरि] कोलिवृक्षः; बदरः; बदरवृक्षः । १९४

बदरी स्त्री. [बदर+गौरादित्वाद् ङीष्, बदरि+कृदिकारादिति पक्षे ङीष् वा] कोलिवृक्षः; सौवीरं; कर्कन्धुः; कोलं; फेनिलं; कुवलं; घोण्टा; अजाप्रिया; कुहा; कोलिः; विषमः; भयकण्टकः; सौवीरकः; गुडफलः; बालेष्टः; फलशैशिरः; दृढबीजः, 'तस्मिन् स आश्रमे व्यासो बदरीषण्डमण्डिते'—इति भागवते (१।७।३) । कार्पासी; कपिकच्छुः । १९४

बद्धम् त्रि. [बध्यते स्म इति । बन्ध+कर्मणि क्त] बन्धनयुक्तं; सन्दानितं; मूर्णम्; उद्धितं; सन्दितं; सितं; निगडितं; नद्धं; कीलितं; यन्त्रितं; संयतम्; 'वरुणेन यथा पाशैर्बद्ध एवाभिदृश्यते । तथा पापान्निगृह्णीयात् व्रतमेतद्धि वारुणम्'—इति मनुः (९।३०८) । (७४७) पिनद्धम्; आमुक्तम्; अपिनद्धम् । ३४०

बद्धभूमिकम् क्ली. [बद्धा भूमिका भूमिरचना यस्य] कुट्टिमं; बद्धभूः । २९४

बद्धमुष्टिकरः पुं. [बद्धमुष्टिश्चासौ करः] सप्रकोष्ठबद्धमुष्टिर्हस्तः; रत्निः; अरत्निभिन्नः । ५३६

बधिरः त्रि. [बध्नाति कर्णमिति । बन्ध्+'इषिमदिमुदीति' किरच्] श्रवणेन्द्रियरहितः; श्रुतिशक्तिहीनः; एडः; कल्लः; श्रवणापटुः; उच्चैःश्रवाः; 'एवं कर्मविशेषेण जायन्ते सद्विगर्हिताः । जडमूकान्धबधिरा विकृताकृतयस्तथा'—इति मनुः (११।५२) । ६०९

बन्दी स्त्री. [वन्द्यते इति, वदि+इन्+ङीष्, पृषोदरादित्वेन बः] प्रग्रहः; ग्रहकः; कारानिक्षिप्तः । ७५९

बन्धः पुं. [बन्ध्+'हलश्चेति' घञ्] बन्धनम्; आधिः; शरीरं; गृहादिवेष्टनं; षोडशप्रकाररतिबन्धाः; हठयोगप्रदीपोक्ता योगसाधकबन्धाः । ५३०

बन्धकी स्त्री. [बध्नाति मनः यत्र । बन्ध्+ण्वुल्, गौरादित्वाद् ङीष्] पुंश्चली; असती; कुलटा । ४९६

बन्धकीपुत्रः पुं.- असतीपुत्रः; पुंश्चलीसुतः । ५०१

बन्धनम् क्ली. [बन्ध्+भावे ल्युट् । बध्यतेऽस्मिन् इति, अधिकरणे ल्युट्] कारागारं; बन्धनस्थानम्; 'वसुदेवस्य देवक्यां जातो भोजेन्द्रबन्धने'—इति भागवते (३।२।२५) । बन्धनक्रिया; उद्दानं; कङ्कनं; बन्धः; संयमनम्; 'आपदामापतन्तीनां हितोऽप्यायाति हेतुताम्। मातृजङ्घा हि वत्सस्य स्तम्भीभवति बन्धने'—इति हितोपदेशे (१।९५) । वधः; हिंसा; रज्जुः [ध्यतेऽनयेति करणव्युत्पत्त्या]; पुं. [बन्ध+कर्तरि ल्यु] महादेवः; 'बन्धनो बन्धकर्ता च सुबन्धनविमोचनः' —इति महाभारते (१३।१७।१००)। बन्धनकर्तरि त्रि. । 'बन्धनस्त्वसुरेन्द्राणां युधि शत्रुविनाशनः'—इति महाभारते (१३।१७।६१) । ६२६

बन्धनग्रन्थिः पुं. [बन्धनाय ग्रन्थिः, बन्धनस्य रज्ज्वादेः

ग्रन्थिः संयमनार्थं ग्रन्थनम्] पाशः; गोलग्रन्थनयुता रज्जुः; गलग्राहिणी रज्जुः । ५९७

बन्धुः पुं. [बन्ध् बन्धने+'शृस्वृस्निहित्रपीति' उ] स्नेहेन मनो बध्नाति यः; सगोत्रः; बान्धवः; ज्ञातिः; स्वः; स्वजनः; दायादः; गोत्रः; 'आत्मपितृष्वसुः पुत्राः आत्ममातृष्वसुः सुताः । आत्ममातुलपुत्राश्च विज्ञेया ह्यात्मबान्धवाः । पितुः पितृष्वसुः पुत्राः पितुर्मातृष्वसुः सुताः । पितुर्मातुलपुत्राश्च विज्ञेयाः पितृबान्धवाः । मातुः पितृष्वसुः पुत्रा मातुर्मातृष्वसुः सुताः । मातुर्मातुलपुत्राश्च विज्ञेया मातृबान्धवाः'—इति मिताक्षरा । बन्धूकः; अभ्यर्च्यं बन्धुपुष्पमालयेति'—इति अशोक वधे (२९) । मित्रम्; 'बन्धुप्रीत्या भवनशिखिभिर्दत्तनृत्योपहारः'—इतिमेघदूते(३४) । भ्राता; 'अथानाथाः प्रकृतयो मातृबन्धुनिवासिनम् । मौलैरानाययामासुर्भरतं स्तम्भिताश्रुभिः'—इति रघौ (१२।१२) । ५०९

बन्धुकः पुं. [बन्ध्+उक । यद्वा बन्धुर्बन्धूकवृक्ष एव । बन्धु+स्वार्थे कन्] बन्धुकीपुत्रः; बन्धूकवृक्षः; बन्धुजीवः । ५०५

बन्धुकी स्त्री.— बन्धकी; पुंश्चली । ४९६

बन्धुकीपुत्रः पुं.— बन्धकीपुत्रः । ५०१

बन्धुजीवः पुं. [बन्धुरिव जीवयति रसादिनेति । बन्धु+जीव+अच्] बन्धूकवृक्षः; 'वीक्ष्य वेदिमथ रक्तबिन्दुभिर्बन्धुजीवपृथुभिःप्रदूषिताम्'–इति रघौ(११।२५) ।२०८

बन्धुरः त्रि. [बन्ध्+उर] नम्रं; रम्यम्; 'श्रेयः स्थेयः स देयान्मम विमलदृशो बन्धुरं सिन्धुरास्यः–इति महागणपतिस्तोत्रे (१५) । उन्नतानतम्; 'बध्नाति मे बन्धुरगात्रि चक्षुर्दृप्तः ककुद्मानिव चित्रकूटः'—इति रघौ (१३।४७) । क्ली. मुकुटं; रथबन्धनम्; 'अन्ये छत्रं वरूथं च बन्धुरं च तथापरे । गन्धर्वा बहुसाहस्रास्तिलशो व्यधमन् रथम्'—इति महाभारते (३।३२।३१) । 'द्वीपं द्विचक्रमेकाक्षं त्रिवेणुं पञ्चबन्धुरम् '—इति भागवते (४।२६।१) । पुं. स्त्रीचिह्नं; तिलकल्कं; बन्धूकः; बधिरः; हंसः; विडङ्गः; ऋषभौषधं; बकः; विहङ्गः । ७६०

बन्धूकः पुं. [बध्नाति सौन्दर्येण चित्तमिति । बन्ध्+'उलूकादयश्च' इति ऊक] पुष्पवृक्षविशेषः; रक्तकः; बन्धुजीवकः; बन्धुकः; बन्धुः; बन्धुलः; बन्धुजीवकः; बन्धुजीवः; बन्धूलिः; बन्धुरः; रक्तः; माध्याह्निकः; ओष्ठपुष्पः; अर्कवल्लभः; मध्यन्दिनः; रक्तपुष्पः; रागपुष्पः; हरिप्रियः; खधूपे क्ली. । 'बन्धूको बन्धुजीवे स्यात् खधूपे स्यान्नपुंसकम्—इति हेमचन्द्रः । २०८

बन्ध्यः त्रि. [बन्ध्+यक्] ऋतुप्राप्तावधिफलरहितवृक्षादिः; अफलः; अवकेशी; विफलः; निष्फलः; 'सिक्तं स्वयमिव स्नेहाद् बन्ध्यमाश्रमपादपम्'—इति रघौ (१।७०) । बन्धनीयः; [बन्ध्+कर्मणि यत्] 'अबन्ध्यं यश्च बध्नाति बद्धं यश्च प्रमुञ्चति'—इति याज्ञवल्क्ये (२।२४६) । पुं. निवर्तितवारिः सेतुः; 'सेतुश्च द्विविधो ज्ञेयः खेयो बन्ध्यस्तथैव च । तोयप्रवर्तनात् खेयो बन्ध्यः स्यात्तन्निवर्तनात् '—इति मिताक्षरा ७६० ।

बन्ध्या स्त्री. [बन्ध्+'अघ्न्यादयश्च' इति यक्] अपत्यशून्यगौः; वशा; बालाख्यगन्धद्रव्यम्; अप्रजस्त्री; 'रूपौदार्यवयोजन्मविद्यैश्वर्यश्रियादिभिः । सम्पन्नस्य गुणैः सर्वैश्चिन्ता बन्ध्यापतेरभूत्'— इति भागवते ६। १४।१२) । 'बन्ध्याष्टमेऽधिवेद्याब्दे दशमे तु मृतप्रजा।' –इति मनुः (९।८१)। वृषलीविशेषः; 'बन्ध्या च वृषली ज्ञेया वृषली च मृतप्रजा । अपरा वृषली ज्ञेया कुमारी य रजस्वला'—इति प्रायश्चितविवेकः । योनिरोगविशेषः; 'उदावर्ता तथा बन्ध्या विप्लुता च परिप्लुता । वातला योनिजो रोगो वातदोषेण पञ्चधा ।' 'बला सिता सातिबला मधूकं वटस्य शुङ्गं गजकेशरं च । एतन्मधुक्षीरघृतैर्निपीय बन्ध्या सुपुत्रं नियतं प्रसूते' —इति भावप्रकाशः । २६९

बभ्रुः त्रि. [बिभर्तीति, भृ+'कुभ्रश्च' इति कु, द्वित्वञ्च] पिङ्गलः; 'बबन्ध बालारुणबभ्रुवल्कलं पयोधरोत्सेधविशीर्णसंहतिः'—इति कुमारे (५।८) । 'धूमधूम्रो वसागन्धी ज्वालाबभ्रुशिरोरुहः'—इति रघौ(१५।१६)। ७३६

बभ्रुः पुं. [बिभर्ति भरति वा । भृ+'कुभ्रश्च' इति कु, द्वित्वञ्च] विष्णुः; 'रुद्रो बहुशिरा बभ्रुर्विश्वयोनिः शुचिश्रवाः'—इति महाभारते । नकुलः (८१६); 'सञ्जायते महावक्त्रो मूषिको बभ्रुसन्निभः'–इति मार्कण्डेये (१५।९) । अग्निः; विशालः; मुनिविशेषः; देशभेदः; शितावरशाकः; खलतिः; शिवः; 'शृङ्गी

शृङ्गप्रियो बभ्रू राजराजो निरामयः'— इति शिवसहस्रनामकथने। (१३।१४९।२६)। कपिलो वर्णः; तद्गुणयुक्ते त्रि.। 'नाक्रामेत्कामतश्छायां बभ्रुणो दीक्षितस्य च। इति मनुः (४।१३०)। लोमपादसुतः; 'रोमपादसुतो बभ्रुर्बभ्रोः कृतिरजायत'—इति भागवते (९।२।४७।) देवावृधसुतः; 'बभ्रुर्देवावृधसुतस्तयोः श्लोकौ पठन्त्यमू'—इति भागवते (९।२४।९)। ययातिपुत्रस्य द्रुह्योः सुतः; 'द्रुह्योश्च तनयो बभ्रुः सेतुस्तस्यात्मजस्ततः'— इति भागवते (९।२३।१४)। पञ्चगन्धर्वपतिषु अन्यतमः; 'तत्रगन्धर्वपतयः पञ्च सूर्य समप्रभाः। शैलूषो ग्रामणीः शिक्षः शुको बभ्रुस्तथैव च'—इति रामायणे (४।४१।४२)। विश्वामित्रपुत्रभेदः; 'अक्षीणश्च शकुन्तश्च बभ्रुः कालपथस्तथा'-–इति महाभारते (१३।४।५०)। विश्वगर्भस्य पुत्रः; स तु यादवानामन्यतमः; 'वसुर्बभ्रुः सुषेणश्च सभाक्षश्चैव वीर्यवान्। यदुप्रवीरा विख्याता लोकपाला इवापरे'-–इति हरिवंशे (९४।४८)। 'आलप्यालमिदं बभ्रोर्यत्स दारानपाहरत्'—इति माघे (२।४०)। स्त्री. कपिला गौः; 'खड्गमादाय तरसा प्रलीनोडुगणे निशि। अजानन्नहनन्बभ्रोः शिरः शार्दूलशङ्कया'—इति भागवते (९।२।६)। २३

बलः पुं. [बलते निरूपयति स्वेष्टमिति। बल्+अच्। बलदेवपक्षे नामैकदेशग्रहणाच्चापि सिध्यति भीमादिवत्] बलदेवः; 'पूष्णो ह्यपातयद् दन्तान् कलिङ्गस्य यथा बलः'—इति भागवते (४।५।१९)। 'रेवतीं नाम तनयां रेवतस्य महीपतेः। उपयेमे बलस्तस्यां जज्ञाते निशठोल्मकौ'-–इति विष्णुपुराणे (५।२५।१९)। काकः (८०९); 'गृध्राः श्येना बलाः कङ्का वायसाश्च सहस्रशः'—इति महाभारते (७।६।२५)। वरुणवृक्षः; वायुना प्रदत्तः कार्तिकेयानुचरभेदः; 'बलञ्चातिबलञ्चैव महावक्त्रौ महाबलौ। प्रददौ कार्तिकेयाय वायुर्भरतसत्तम'—इति महाभारते (९।४५।४२)। रामपुत्रस्य कुशस्यान्वये जातस्य पारियात्रस्य पुत्रविशेषः; 'देवानीकस्ततोऽनीहः पारियात्रोऽथ तत्सुतः। ततो बलः स्थलस्तस्माद्वज्रनाभोऽर्कसम्भवः'—इति भागवते (९।१२।२)। दनायुषः पुत्रविशेषः; 'दनायुषः पुनः पुत्राश्चत्वारोऽसुरपुङ्गवाः। विक्षयो बलवीरौ च वृत्रश्चैव महासुरः'—इति महाभारते (१।६५।३३)। मेघः; दैत्यविशेषः; 'आसीद् दैत्यो बलो नाम महाबलपराक्रमः। देवगन्धर्वयक्षाणां चन्द्रेन्द्रभयकारकः'-–इति देवीपुराणे। २९

बलम् क्ली. [बलते विपक्षान् हन्तीति। बल्+पचाद्यच्] सैन्यम्; 'अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम्। पर्याप्तन्त्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम्'—इति भगवद्गीतायाम् (१।१०)। शुक्रम् (६३८); 'धातूनां यत्परं तेजस्तत् खल्वोजस्तदेव बलमित्युच्यते'—इति सुश्रुतः। द्रविणं (७२३); तरः; सहः; शौर्यं; स्थाम; शुष्मं; शक्तिः; पराक्रमः; प्राणः; महः; शुष्म; ऊर्जः; 'पूजितं ह्यशनं नित्यं बलमूर्जञ्च यच्छति'—इति मनुः (२।५५)। गन्धरसः; रूपं; वपुः; 'कीदृशो वै प्रभावोऽस्य किं बलं कः पराक्रमः'—इति रामायणे (७।१।३३)। पल्लवं; रक्तः; [बलमस्यास्तीति। बल+अर्श आद्यच्] बलयुक्ते त्रि.। ४५७

बलक्षः पुं. [बलतेः क्विप्, बलम् अक्षत्यस्मिन्, घञ्। अबलक्षते इति वलक्षः, घञ्, अकारलोपः। अन्तःस्थादिरपि] धवलः; 'द्विरददन्तवलक्षमलक्षतस्फुरितभृङ्गमृगच्छविकेतकम्'—इति माघे (६।३४)। ७३२

बलजम् क्ली. [बलात् जातम् इति। बल+जन्+ड] पुरद्वारं; क्षेत्रं; सस्यं; युद्धं; धान्यराशिः; 'त्वं समीरण इव प्रतीक्षितः कर्षकेण बलजान् पुपूषता'—इति माघे (१४।७)। बलजन्ये त्रि.। ३००

बलदेवः पुं. [बलेन दीव्यतीति। बल+दिव्+अच्] बलरामः; बलभद्रः; प्रलम्बघ्नः; अच्युताग्रजः; रेवतीरमणः; रामः; कामपालः; हलायुधः; नीलाम्बरः; रौहिणेयः; तालाङ्कः; मुसली; हली; सङ्कर्षणः; सीरपाणिः; कालिन्दीभेदनः; बलः; रुक्मिदर्पः; मधुप्रियः; हलधरः; हलभृत्; हालभृत्; सौनन्दी; गुप्तवरः; संवर्तकः; बली; 'बलदेवं द्विबाहुं च शङ्खकुन्देन्दुसन्निभम्। वामे हलायुधधरं मुसलं दक्षिणे करे। हालालोलं नीलवस्त्रं हेलावन्तं स्मरेत् परम्।' 'शेषस्यांशश्च नागस्य बलदेवो महाबलः'—इति महाभारते (१।६७।१५१) वायुः। २८

बलभद्रः पुं. [बलं भद्रं श्रेष्ठमस्य, यद्वा बलमस्यास्तीति बलः, अर्श आद्यच्। बलो बलवानपि भद्रः सौम्यः] बल-

देवः; अनन्तः; बलशाली; लोध्रः; गवयः। २८

बलवान् [त्] त्रि. [बलमस्यास्तीति । बल+मतुप् मस्य वः] बलविशिष्टः; मांसलः; अंशलः; वीर्यवान्; बली; अंसलः; 'आकाशात्तु विकुर्वाणात् सर्वगन्धवहः शुचिः । बलवान् जायते वायुः स वै स्पर्शगुणो मतः' —इति मनुः (१।७६)। ३८१

बलसूदनः पुं. [बलं तन्नाम्ना प्रसिद्धमसुरं सूदयतीति । बल+सूद्+ल्यु] इन्द्रः; 'नोचेद्वज्रं गृहाणाशु युद्धाय बलसूदन !'—इति देवीभागवते (५।३।१३)। विष्णुः। ५२

बलाका स्त्री. [बलते इति, बल संवरणे, 'बलाकादयश्च' इति अक् । यद्वा बलेन अकतीति । बल+अक् कुटिलगतौ+पचाद्यच्] बकजातिविशेषः; विषकण्ठिका; विषकण्ठी; बलाकी; कारायिका; लिङ्गलिका; शुष्काङ्गा; दीर्घकन्धरा; घर्मान्ता; कामुकी; श्येना; मेघानन्दा; जलाश्रया; कामवती। २५०

बलाहकः पुं. [बलेन हीयते इति । बल+हा+क्वुन् । यद्वा वारीणां वाहकः] मेघः; 'बलाहकच्छेदविभक्तरागाम् अकालसन्ध्यामिव धातुमत्ताम्'—इति कुमारे (१।४)। मुस्तकः; पर्वतः; दैत्यविशेषः; नागविशेषः; 'कम्बलाश्वतरौ नागौ धृतराष्ट्रबलाहकौ'—इति महाभारते (२।९।९)। रमागर्भोद्भवः कल्किदेवपुत्रः; श्रीकृष्णरथाश्वविशेषः; 'स्यन्दनस्तु शतानन्दः सारथिश्चास्य दारुकः । तुरङ्गाः शैब्यसुग्रीवमेघपुष्पबलाहकाः' —इति त्रिकाण्डशेषः। जयद्रथस्य भ्रातृविशेषः; 'जयद्रथो नाम यदि श्रुतस्ते सौवीरराजः सुभगे ! स एषः । तस्यापरे भ्रातरोऽदीनसत्त्वा बलाहकानीकविदारणाद्याः'—इति महाभारते (२।२५४।१२)। नदविशेषः; स तु लवणसमुद्रगामी; 'बलाहकश्च ऋषभश्चक्रो मैनाक एव च । विनिविष्टाः प्रतिदिशं निमग्ना लवणाम्बुधिम्' —इति मात्स्ये (१२०।७२)। कुशद्वीपस्थपर्वतविशेषः; 'बलाहकस्तृतीयस्तु जात्यञ्जनमयो गिरिः'—इति मात्स्ये (१२१।५५)। तारापीडस्य राज्ञः स्वनामख्यातो बलाधिकारी; 'चन्द्रापीडमानेतुं राजा बलाधिकृतं बलाहकनामानमाहूय बृहत्तुरगबलददातिपरिवृतमतिप्रशस्तेऽहनि प्राहिणोत्'—इति कादम्बर्याम्। ५८

बलिः पुं. [बल्यते दीयते इति । बल् दाने+'सर्वधातुभ्य इन्' इतीन्] उपहारः; पूजासामग्री; 'ददतुस्तौ बलिं चैव निजगात्रासृगुक्षितम्'—इति मार्कण्डेये (९३।८)। (४३३) करः; राजग्राह्यो भागः; 'सांवत्सरिकमाप्तैश्च राष्ट्रादाहारयेद्बलिम्'—इति मनुः (७।८०)। 'राजा शक्तैरमात्यैर्वर्षग्राह्यं धान्यादिभागमानयेत्' —इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। चामरदण्डः; बलिवैश्वदेवात्मकपञ्चमहायज्ञान्तर्गतभूतयज्ञः। १२८

बलिपुष्टः पुं. [वैश्वदेवेन बलिना पुष्टः] काकः; परपिण्डादः। २४५

बलिभुक् [ज्] पुं. [बलिं वैश्वदेवबलिं गृहस्थदत्तद्रव्यं वा भुङ्क्ते इति। बलि+भुज्+क्विप्] काकः; 'अहो अधर्मः पालानां पीव्नां बलिभुजामिव'—इति भागवते (१।१८।३३)। २४५

बलिमुखः पुं. [बलिर्मुखे यस्य। यद्वा बलिश्चर्मसङ्कोचस्त द्युक्तं मुखं यस्य] वानरः। २३१

बलीमुखः पुं. [बलीयुक्तं मुखं यस्य] वानरः। २३१

बलीवर्दः पुं. [ईलंक्षीः, वर् वरणम्, । वर् ईप्सायां क्विप्। ईश्च वाश्च ईवरौ, तौ ददातीति ईवर्दः। बलमस्यास्तीति बली। ततो बली च ईवर्दश्च इति] वृषः; अनड्वान्; 'बलीवर्दसमारूढः शृणु तस्यापि यत्फलम् । नरके वसते घोरे गवां क्रोधे हि दारुणे। सलिलं च न गृह्णन्ति पितरस्तस्य देहिनः'—इति मात्स्ये। २६३

बहिर्योगः पुं. [बहिः बाह्यस्य योगः सम्बन्धः] बाह्येन संपर्कः; [एतदर्थे 'अन्तरं बहिर्योगोपसंव्यानयोः' इत्यन्तरस्य सर्वनामत्वे] अन्तरे गृहाः; बाह्याः; अवकाशः। ८७१

बहु त्रि. [बंहते इति। बहि वृद्धौ+'लङ्घिबंह्योर्नलोपश्च' इति कु नलोपश्च] त्र्यादिसंख्या; अनेकं; विपुलं; प्रभूतं; प्रचुरं; प्राज्यम्; अदभ्रं; बहुलं; पुरुहं; पुरु; भूयिष्ठं; स्फिरं; भूयः; भूरि; 'अल्पं वा बहु वा प्रेत्य दानस्यावाप्यते फलम्'—इति मनुः (७।८६)। 'एकोऽलुब्धस्तु साक्षी स्याद् बह्व्यः शुच्योऽपि न स्त्रियः'—इति मनुः (८।७७)। बहुमतं; बहुमानम्; 'रामस्तु जितकैलासमराति बह्वमन्यत'—इति रघौ (१२।८९)। ७०१

बहुत्वम् क्ली. [बहूनां भावः । बहुशब्दात् त्वप्रत्ययेन निष्पन्नम्] बहुता; 'बहुत्वान्नामधेयानि पन्नगानां तपोधन !'—इति महाभारते (१।३५।४)। ५३१

बहुरूपा स्त्री. [बहुरूपस्य शिवस्य स्त्री+टाप्] सप्ता-

विषो जिह्वाभेदः; दुर्गा; 'अरूपा परभावत्वाद्बहुरूपा क्रियात्मिका। जाता शैलेन्द्रगेहे सा शैलराजसुता ततः' —इति देवीपुराणे। ६८

बहुलः पुं. [बहूनन्र्थान् लातीति। बहु+ला+क] कृष्णपक्षः; बहुलेऽपि गते निशाकरस्तनुतां दुःखमनङ्ग! मोक्ष्यति'—इति कुमारे (४।१३)। अग्निः (६२); महादेवः; 'मन्थानो बहुलो वायुः सकलः सर्वलोचनः' —इति महाभारते (१३।१७।१२८)। त्रि. (३४२) स्थूलः; पीनः। प्रचुरः (७०१); 'नाधार्मिके वसेद् ग्रामे न व्याधिबहुले भृशम्'-इति मनुः (४।६०)। घनः (७१७); कृष्णवर्णः; क्ली. [बृहते वृद्धिं गच्छतीति, बृहि वृद्धौ, कुलच् नलोपश्च] आकाशं; सितमरीचम्। ५०

बहुलाः स्त्री. कृत्तिकानक्षत्रम्। भपुञ्जमयत्वेन नित्यबहुवचनान्तोऽयं शब्दः। ५०

बहुला स्त्री. [बहूनर्थान् लाति या। बहु+ला+क+टाप्] गौः; नीलिका; एला; 'एला स्थूला च बहुला पृथ्वीका त्रिपुटापि च। भद्रैला बृहदेला च चन्द्रबाला च निष्कुटिः' —इति भावप्रकाशः। देवीविशेषः; 'दृष्टा सा तेन मुनिना निःसृत्य रविमण्डलात्। बहुला ह्यागता तूर्णं प्रस्थं मानसभूभृतः। प्रत्यहं तत्र सावित्री गायत्री बहुला तथा। सरस्वती च द्रुपदा पञ्चैता मानसाचले'—इति कालिकापुराणे। नदीभेदः; 'चीनाश्चैव तुखाराश्च बहुला बाह्यतो नदाः'—इति मार्कण्डेये (५७।३९)। उत्तमराजपत्नी; 'बाभ्रव्यां बहुलां नाम उपयेमे स धर्मवित्। उत्तानपादतनयः शचीमिन्द्र इवोत्तमः'—इति मार्कण्डेये (५७।२९)। २६८

बहुव्ययी पुं. [बहु परिणाममविचार्य आयादधिकं व्ययते। वि+अय्+णिनि, ततः समासः] स्थूललक्षः; अपव्ययी। ३६५

बाढम् क्ली. [बाह् प्रयत्ने+क्त, 'क्षुब्धस्वान्तध्वान्तेति' निपातनात् साधुः] अतिशयः; 'बाढं मया सा नगरी दृष्टा विद्यार्थिना सता'—इति कथासरित्सागरे (२४। ६८)। सत्यम्; 'बाढमेषु दिवसेषु पार्थिवः कर्म साधयति पुत्रजन्मने'—इति रघौ (१९।५२)। प्रतिज्ञा। बाढमित्यव्ययमपीति वृद्धाः; 'बाढं त्रिषु दृढे क्लीवमनुमत्यामथ त्रिषु'—इति नानार्थरत्नमाला। ८३६

बाणः पुं. [बणनं बाणः शब्दस्तदस्यास्तीति। बाण+अच्] अस्त्रविशेषः; पृषत्कः; विशिखः; अजिह्मगः; खगः; आशुगः; कलम्बः; मार्गणः; शरः; पत्री; रोपः; इषुः; चित्रपुङ्खः; शायकः; वीरतरः; तूणक्ष्वेडः; काण्डः; विपर्षकः; शरुः; वाजी; पत्रवाहः; अस्त्रकण्टकः; लौहमयबाणः; प्रक्ष्वेडनः; लोहनालः; नाराचः। बलिराजस्य ज्येष्ठपुत्रः; 'बलेः पुत्रशतं त्वासीद्बाणज्येष्ठन्ततो द्विजाः। बाणः सहस्रबाहुः स्यात् सर्वास्त्रगुणसंयुतः'—इति मत्स्यपुराणे। गोस्तनः; केवलः; अग्निः; काण्डावयवः; भद्रमुञ्जः; पुं.- स्त्री. नीलझिण्टी; 'विकचबाणदलावलयोऽधिकं रुरुचिरे रुचिरेक्षणविभ्रमाः'—इति माघे (६।४६)। [बण्यते शब्द्यते इति, बण् शब्दे+'अकर्त्तरि च कारके संज्ञायाम्' इति घञ्, ङीष् च] वाक्; इक्ष्वाकुवंशीयोऽयोध्याराजः विकुक्षेः पुत्रः; 'इक्ष्वाकोस्तु सुतः श्रीमान् कुक्षिरित्येव विश्रुतः। कुक्षेरथात्मजः श्रीमान् विकुक्षिरुदपद्यत। विकुक्षेस्तु महातेजा बाणः पुत्रः प्रतापवान्। बाणस्य तु महातेजा अनरण्यः प्रतापवान्'—इति रामायणे (१।७०।२२-२३)। कादम्बरीहर्षचरितप्रणेता कविविशेषः; बाणभट्टः। ४४६

बाणमुक्तिः स्त्री. [बाणस्य मुक्तिः क्षेपणम्] व्यवच्छेदः; बाणमोक्षणम्। ४७०

बाणाश्रयः पुं. [बाणस्याश्रयः] तूणीरम्; उपासङ्गः; तूणं; तूणी; निषङ्गः; इषुधिः; कलापः। ४६५

बाणासनम् क्ली. [बाणस्य आसनम्] धनुः; शरासनम्। ४६४

बादरः पुं. [बदराया जातः, जातार्थे अण्] पिचव्यः; कर्पासः; तूलकः; पिचुः। २०२

बादरम् क्ली. [बदराया विकारः फलम्। 'फले लुक्' इत्यणो लुक्। बदरस्य तूलस्य विकारः, विकारार्थे पुनरण्] कार्पासवस्त्रम्। ५५०

बाधा स्त्री. [बाध्+घञ्+टाप्] पीडा; 'दुर्वृत्ताः सन्ति शतशो दानवाः पापयोनयः। तेभ्यो न स्याद् यथा बाधा मुनीनां त्वं तथा कुरु'—इति मार्कण्डेये (२२। ३)। निषेधः। ८३४

बान्धवः पुं. [बन्धुरेव। बन्धु+'प्रज्ञादिभ्यश्च' इति स्वार्थे अण्] ज्ञातिः; सुहृत्; 'नातिवर्षस्य कर्तव्या बान्धवैरुदकक्रिया'—इति मनुः (५।७०)। ५०९

बालः त्रि. [बलतीति । बल् प्राणने+'ज्वलितिकसन्तेभ्यो णः' इति ण] मूर्खः; 'अज्ञो भवति वै बालः पिता भवति मन्त्रदः । अज्ञं हि बालमित्याहुः पितेत्येव तु मन्त्रदम्' —इति मनुः (२।१५३) । 'वै शब्दोऽवधारणे, अज्ञ एव बालो भवति नत्वल्पवयाः'–इति तट्टीकायां कुल्लूक–भट्टः । (५०२) अर्भकः; माणवकः; बालकः; माणवः; किशोरः; वटुः; मुष्टिन्धयः; वटुकः; किशोरकः; पाकः; गर्भः; हितकः; पृथुकः; शिशुः; शावः; अर्भः; डिम्भकः; डिम्बः; षोडशवर्षपर्यन्तः; प्रथमवयस्कः; 'आषोडशाद्भवेद्बालस्तरुणस्तत उच्यते । वृद्धःस्यात्सप्तते-रूर्द्ध्वं वर्षीयान् नवतेः परम्'—इति स्मृतिः । 'अनाथ-बालवृद्धानां रक्षकाः सर्वदेवताः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । ३३६

बालः पुं. [बलति मस्तकं रक्षति संवृणोतीति वा । बल्+ण] शिरोभवाच्छादनविशेषः; चिकुरः; कचः; केशः; कुन्तलः; कुञ्जरः; शिरोरुहः; शिरसिरुट्; शिरोरुट्; शिरजः । घोटकशिशुः; किशोरः; अश्वबालधिः; करि-बालधिः । नारिकेलः । पञ्चवर्षीयहस्ती; 'पञ्चवर्षो गजो बालः स्यात्पोतो दशवर्षकः'—इति हेमचन्द्रः । 'यो लोकवीरसमितौ धनुरैशमुग्रं सीतास्वयंवरगृहे त्रिश-तोपनीतम् । आदाय बालगजलील इवेक्षुयष्टिः सज्यीकृतं नृप ! विकृष्य बभञ्ज मध्ये'--इति भागवते (९।१०।६) । मत्स्यविशेषः; पुच्छः; 'लज्जा तिरश्चां यदि चेतसि स्यादसंशयं पर्वतराजपुत्र्याः । तं केशपाशं प्रस-मीक्ष्य कुर्युर्बालप्रियत्वं शिथिलं चमर्यः'—इति कुमारे (१।४८) । ५३०

बालगर्भिणी स्त्री. [बाला प्रथमवयस्का चासौ गर्भिणी] प्रथमगर्भवती गौः; प्रष्ठौही; पलिक्नी; बालगर्भवती । २७३

बालतृणम् क्ली. [बालं नवजातं तृणम्] नवतृणं; शष्पम्; 'गङ्गायाः प्रपातस्तस्यान्ते समीपे विरूढानि जातानि शष्पाणि बालतृणानि यस्मिन् तत्'—इति रघौ (२।२६) । श्लोकटीकायां मल्लिनाथः । १९०

बालवायजम् क्ली. [बालवाये वैदूर्यप्रभवे देशविशेषे जातम् इति । जन्+ड] वैदूर्यम् । १७५

बालिशः त्रि. [बाड्+इन् । डस्य लत्वं, बालिं वृद्धिं श्यतीति । बालि+शो+आतोऽनुपेति क । बालिशाः शिशुवृत्तयः] मूर्खः; अज्ञः; 'अपाङ्क्त्यो यावतः पाङ्क्त्यान् भुञ्जानाननुपश्यति । तावतां न फलं तत्र दाता प्राप्नोति बालिशः'—इति मनुः (३।१७६) । 'बालिशोऽज्ञः' इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । शिशुः (८०६); 'बालिशा बत यूयं वा अधर्मे धर्ममानिनः'—इति भागवते (४।१४।२३) । ३३६

बालेयः पुं. [बलये उपकरणाय साधुः । बलि+'छदिरुप-धिबलेर्ढञ्' इति ढञ्] रासभः; 'एकच्छागं द्विबालेयं त्रिगवं पञ्चमाहिषम् । षडश्वं सप्तमातङ्गं गृहं यक्षाशु शोषय'—इति मार्कण्डेये (५०।८५) । [बलेः स्वनाम-ख्यातस्य दैत्यस्यापत्यं पुमान् । बलि+ढञ्] दैत्यविशेषः (बलिः विरोचनपुत्रस्तस्य बाणज्येष्ठं पुत्रशतं जातं, ते च बालेयनाम्ना विख्याताः); 'विरोचनस्य पुत्रस्तु बलिरेकः प्रतापवान् । बलेः पुत्रशतं जज्ञे राजानः सर्वं एव ते । तेषां प्रधानाश्चत्वारो विक्रान्ताः सुमहाबलाः । सहस्रबाहुर्ज्येष्ठश्च कन्ये द्वे च बलेः शुभे । बलेः पुत्रास्तु पौत्राश्च शतशोऽथ सहस्रशः । बालेयो नाम विख्यातो गणो विक्रान्तपौरुषः'--इति अग्निपुराणे । जनमेजय-वंशोद्भवस्य सुतपसो राज्ञः पुत्रो बलिस्तस्य पञ्च पुत्राश्च बालेयाः; 'फेनस्य सुतपा जज्ञे जज्ञे सुतपसो बलिः । जातो मानुषयोनौ तु स राजा काञ्चनेषुधिः । महायोगी स तु बलिर्बभूव नृपतिः पुरा । पुत्रानुत्पादयामास पञ्च वंशकरान् भुवि । अङ्गः प्रथमतो जज्ञे वङ्गः सुह्मस्तथैव च । पुण्ड्रः कलिङ्गश्च तथा बालेयं क्षत्रमुच्यते । बालेया ब्राह्मणाश्चैव तस्य वंशकरा भुवि । बलेस्तु ब्रह्मणा दत्ता वराः प्रीतेन भारत !'—इति हरिवंशे (३१।३०।३३) । अङ्गारवल्लरी; चाणक्यमूलकं; त्रि. [बालाय हितः; बाल+ढञ्] मृदुः; बालहितः । [बलये उपहाराय हितः । बलि+'छदिरुपधिबलेर्ढञ्' इति ढञ्] तण्डुलः; बालि योग्यः; 'पुष्पं फलञ्चार्तवमावहन्त्यो बीजं च बालेयम-कृष्टरोहि । विनोदयिष्यन्ति नवाभिषङ्गामुदारवाचो मुनिकन्यकास्त्वाम्'—इति रघौ (१४।७७) । वितुन्न-कनाम्नो वृक्षस्य त्वचि क्ली. । 'कुटन्नटं दासपुरं बालेयं परिपेलवम् । प्लवगोपुरगोनर्दकैवर्तीमुस्तकानि च । मुस्तावत् पेलवपुटं शुक्राभं स्याद्वितुन्नकम्'—इति भावप्रकाशः । २८०

बाहुः पुं.– स्त्री. [बाधते शत्रून् इति । बाध्+'अर्जिदृशि-कम्यमिपशिबाधामृजिपशितुग्धुग्दीर्घहकाराश्च' इति

कुप्रत्ययोऽन्तस्य हकारादेशश्च] कक्षाद्यङ्गुल्यग्रपर्यन्तावयवविशेषः; भुजः; प्रवेष्टः; दोः; दोषः; बाहः; 'ऋष्टयो वो मरुतो अंसयोरधि सह ओजो बाह्वोर्वो बलं हितम्'—इति ऋग्वेदे (५।५७।६) । कूर्परस्य ऊर्ध्वभागः; 'मुखं बाहू प्रबाहू च मनः सर्वेन्द्रियाणि च । रक्षत्वव्याहतैश्वर्यस्तव नारायणोऽव्ययः'—इति विष्णुपुराणे (५।५) । 'बाहू प्रबाहू च कूर्परस्य ऊर्द्ध्वाधोभागौ'—इति तट्टीकायाम् । ५२२

बाहुमूलम् क्ली. [बाह्वोर्मूलम्] कक्षः; 'बगल' इति भाषा । 'कापि कुन्तलसंव्यानसंयमव्यपदेशतः । बाहुमूलं स्तनौ नाभिपङ्कजं दर्शयेत् स्फुटम्'—इति साहित्यदर्पणे (३।१२३) । ५२५

बाहुलेयः पुं. [बहुलानां कृत्तिकादीनामपत्यं पुमान् । बहुला+ढक्] कार्तिकेयः । १९

बिडालः पुं. [वेडति विडयते वा, विड् आक्रोशे, 'तमिविशिविडि' इति कालन्] वृषदंशकः; मार्जारः । २३६

बिब्बोकः पुं. [विवानम्, वि+वा गतिगन्धनयोः, मृगय्वादित्वात् कु, विवुः । उच्यते समवैत्यत्र, उच् समवाये, घञर्थे क, 'ओक उचः के' इति निपातितः । विवोः ओकः स्थानम् । पृषोदरादिः] विव्वोकः; स्त्रीणां शृङ्गारचेष्टा । ८९

बिलम् क्ली. [विलति भिनत्ति विल्यते वा, विल् भेदने, 'इगुपधेति' क । वबयोरैक्यम्] विवरं; गर्तः । ६२४

बीजम् क्ली. [विशेषेण ईजते । वि+ईज् गतिकुत्सनयोः, अच् । बवयोरभेदाद् बः] प्रसवकारणं; शुक्रं; वीर्यम् । ६३८

बीजकोशः पुं. [बीजानां कोशः गुप्तिस्थानम् । बीज+कुश् निष्कर्षे+घञ्] वराटकः; कर्णिका; बीजकोषः । ६८२

बीजकोशी स्त्री. [गौरादित्वाद् ङीष्] शमी; शिम्बा । १८९

बीभत्सः त्रि. [बध् बन्धने, 'बधेश्चित्तविकारे' इति सन्, 'मान्बधदान्शान्भ्यो दीर्घश्चाभ्यासस्य, अ प्रत्ययः, टाप् । बीभत्सा घृणास्त्यत्र । अर्श आद्यच्] विकृतम्; शृङ्गाराद्यष्टरसान्तर्गतषष्ठरसः; 'जुगुप्सास्थायिभावस्तु बीभत्सः कथ्यते रसः'—इति साहित्यदर्पणे (३।२६३) । क्रूरः; 'यदाश्रौषं द्रोणपुत्रादिभिस्तैर्हतान् पञ्चालान् द्रौपदेयांश्च सुप्तान् । कृतं बीभत्समयशस्यञ्च कर्म तदा नाशंसे विजयाय सञ्जय'—इति महाभारते (१।१।२१०) । घृणात्मा; 'तथापि प्रणता भार्या तममन्यत दैवतम् । तं तथाप्यतिबीभत्सं सर्वश्रेष्ठममन्यत'—इति मार्कण्डेये (१६।१८) । विकृतिः; दुष्टैर्दोषैः पृथक् सर्वैर्बीभत्सालोकनादिभिः'—इति माधवकरः । पापी; पुं. [बीभत्स्यतेऽनेन । बध्+सन्+करणे घञ्] अर्जुनः । ९२

बुक्कम् त्रि. [बुक्कयति बुक्बुक् इत्यव्यक्तशब्दं करोतीति । बुक्क्+पचाद्यच्] वक्षोऽभ्यन्तरमांसविशेषः; अग्रमांसं; हृदयं; हृत् । पुं. [बुक्कयति शब्दायते इति, बुक्क्+अच्] छागः; समये पुं. – स्त्री. । ६३६

बुद्धः पुं. [बुध्यते स्म इति । बुध्+क्त । यद्वा भावे क्त, बुद्धं ज्ञानमस्यास्तीति, अर्श आद्यच्] भगवदवतारविशेषः; सर्वज्ञः; सुगतः; धर्मराजः; तथागतः; समन्तभद्रः; भगवान्; मारजित्; लोकजित्; जिनः; षडभिज्ञः; दशबलः; अद्वयवादी; विनायकः; मुनीन्द्रः; श्रीघनः; शास्ता; मुनिः; धर्मः; त्रिकालज्ञः; धातुः; बोधिसत्त्वः; महाबोधिः; आर्यः; पञ्चज्ञानः; दशार्हः; दशभूमिगः; चतुस्त्रिंशज्जातकज्ञः; दशपारमिताधरः; द्वादशाक्षः; त्रिकायः; संगुप्तः; दयाकूर्चः; स्वजित्; विज्ञानमातृकः; महामैत्रः; धर्मचक्रः; महामुनिः; असमः; खसमः; मैत्री; बलः; गुणाकरः; अकनिष्ठः; त्रिशरणः; बुधः; वक्री; वागाशनिः; जितारिः; अर्हणः; अर्हन्; महासुखः; महाबलः । पण्डितः; त्रि. बुधितः । ८५

बुद्धाण्डकम् क्ली. [बुद्धस्य अण्डकम् अण्डाकृति स्तूपादि] चैत्यः; मृतबौद्धस्मृतिस्थानम् । ८३१

बुद्धिः स्त्री. [बुध्यतेऽनयेति । बुध्+क्तिन्] निश्चयात्मिकान्तः करणवृत्तिः; सविकल्पकज्ञानं; मनीषा; धिषणा; धीः; प्रज्ञा; शेमुषी; मतिः; प्रेक्षा; उपलब्धिः; चित्; संवित्; प्रतिपत्; ज्ञप्तिः; चेतना; धारणा; प्रतिपत्तिः; मेधा; मननं; मनः; ज्ञानं; बोधः; हृल्लेखः; संख्या; प्रतिभा; आत्मजा; पण्डा; विज्ञानम्; 'बुद्धिर्विवेचनारूपा सा ज्ञानजननी श्रुतौ'—इति ब्रह्मवैवर्ते । ३३४

बुद्धिसहायः पुं. [बुद्धौ बुद्ध्या कृते कार्ये इति भाव,

सहायः] मन्त्री; मत्या: साहाय्यकर्ता; अमात्यः। ४२६

बुधः पुं. [बुध्यते यः । 'बुध्+इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः' इति क] नवग्रहान्तर्गतचतुर्थग्रहः; बृहस्पतिभार्या-तारागर्भे चन्द्राज्जातः; रौहिणेयः; सौम्यः; हेमा; वित्; ज्ञः; बोधनः; इन्दुपुत्रः । 'गुणी गुणज्ञः कुशलः क्रियादौ विलासशाली मतिमान् विनीतः । मृदुस्वभावः कमनीयमूर्तिर्बुधस्य वारे प्रभवो मनुष्यः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । पण्डितः; विद्वान्; विपश्चित्; दोषज्ञः; सन्; सुधीः; कोविदः; धीरः; मनीषी; ज्ञः; प्राज्ञः; संख्यावान्; कविः; धीमान्; सूरिः; कृती; कृष्टिः; लब्धवर्णः; विचक्षणः; दूरदर्शी; दीर्घदर्शी; विदग्धः; दूरदृक्; सूरी; वेदी; वृद्धः; बुद्धः; विधानगः; प्रज्ञिलः; व्यक्तः; प्राप्तरूपः; सुरूपः; अभिरूपः; बुधानः; कवितावेदी; वप्ता; विदितः। सूर्यवंशीयराजविशेषः; 'तस्मात् कृतिरथस्तस्य देवामीढस्ततो बुधः । बुधाच्च विबुधश्चैव तस्मान्महाधृतिस्ततः' —इत्यग्निपुराणे । वेगवतो राज्ञः पुत्रः; 'तत्सुतः केवलस्तस्मात् बन्धुमान् वेगवांस्ततः । बुधस्तस्या भवद् यस्य तृणबिन्दुर्महीपतिः'—इति भागवते (९।२।३०)। ४६

बुध्नः पुं. [बध्नातीति, बन्ध् बन्धने, 'बन्धेर्ब्रधिबुधी च' इति नक्, बुधादेशश्च] वृक्षमूलं; मूलदेशः; अग्रभागः; 'गृहस्य बुध्न आसीनास्ता इन्द्रो वज्रेणाधि तिष्ठतु' —इति अथर्ववेदे (२।१४।४)। शिवः; 'निवेश्य बुध्ने चरणं स्मितानना गृहं समारोढुमथोपचक्रमुः' —इति हरविलासे राजशेखरः । १८१

बुभुक्षा स्त्री. [भोक्तुमिच्छा । भुज पालनाभ्यवहारयोः +'धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा' इति सन् । ततः 'अ प्रत्ययात्' इत्य ततष्टाप्] क्षुधा; अशनाया; प्सा; जिघत्सा; क्षुत्; 'अतीववातस्तिमिरं बुभुक्षा चास्ति नित्यशः । भयानि च महान्त्यत्र ततो दुःखतरं वनम्'—इति रामायणे (२।२८।१८) । ३६१

बुभुक्षितः त्रि. [बुभुक्षा भोजनेच्छा सञ्जातास्य। बुभुक्षा+'तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच्'] क्षुधितः; क्षुद्वान्; प्सातः; जिघत्सुः । ३६१

बुसः पुं. [बुस् उत्सर्गे, क, पृषोदरादिः] कडङ्गरः। ५७८

बुसम् क्ली. [बुस्यते उत्सृज्यते यत् । बुस् उत्सर्गे+'इगुपधज्ञेति' क । पृषोदरादित्वात् षत्वम्] बुसं; तुच्छधान्यं; कडङ्गरः; बूषम् । ५७८

बुसम् क्ली. [बुस्यते तुच्छत्वादुत्सृज्यते इति । बुस् उत्सर्गे+'इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः' इति क] तुच्छधान्यं; कडङ्गरः; बुषं; बूषम्; उदकम्; 'आविः स्वः कृणुते गूहते बुसम्'—इति ऋग्वेदे (१०।२७।२४)। 'बुसमुदकम्' इति तट्टीकायां सायणाचार्यः। (बुसम् अमरमते क्लीबम्) ५७८

बेडा स्त्री. [विड्+घञ्,टाप्] तरी; नौः; मज्जिनी ।६७२

बोधिः पुं. [बुध्+'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्] पिप्पल-वृक्षः; 'पिप्पलो बोधिरश्वत्थश्चैत्यवृक्षो गजाशनः' —इति वैद्यकरत्नमालायाम्। समाधिभेदः; बोधः; ज्ञातरि त्रि.। १९६

ब्रध्नः पुं. [बन्ध् बन्धने, 'बन्धेर्ब्रधिबुधी च' इति नक्, ब्रधादेशश्च] सूर्यः; 'युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परितस्थुषः। रोचन्ते रोचना दिवि'—इति ऋग्वेदे (१।६।१)। ३७

ब्रध्नः पुं.— तण्डुः; शिवः; अर्कवृक्षः; दिनं; चतुर्दशमनो-र्भौत्यस्य पुत्रभेदः; 'गुरुर्गंभीरो ब्रध्नश्च भरतोऽनुग्रह-स्तथा। तेजस्वी सुबलश्चैव भौत्यस्यैते मनोः सुताः'— इति मार्कण्डेये (१००।३२)। रोगविशेषः; 'अभ्यभिष्य-न्दिगुर्वामिसेवनान्निचयं गतः । करोति ग्रन्थिवच्छोथं दोषो वङ्क्षणसन्धिषु। ज्वरशूलाङ्गसादाढ्यं तं ब्रध्नमिति निर्दिशेत्'—इति माधवकरः । ८३७

ब्रह्मचर्यम् क्ली. [ब्रह्मणे वेदार्थं चर्यम् आचरणीयम्] आश्रमविशेषः; 'स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम्। सङ्कल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिवृत्तिरेव च । एतन्मैथुन-मष्टाङ्गं प्रवदन्ति मनीषिणः । विपरीतं ब्रह्मचर्यमेत-देवाष्टलक्षणम् ।' यमभेदः; 'अहिंसासत्यास्तेयब्रह्म-चर्यापरिग्रहा यमाः'—इति पातञ्जले (२।३०) । 'ब्रह्मचर्याश्रमो नास्ति वानप्रस्थोऽपि न प्रिये! गार्हस्थो भैक्षुकश्चैव आश्रमौ द्वौ कलौ युगे'—इति महानिर्वा-णतन्त्रे। ३९७

ब्रह्मचारी [न्] पुं. [ब्रह्म ज्ञानं तपो वा चरतीति। ब्रह्म+चर्+आवश्यके णिनि] गाङ्गेयः; कार्त्तिकेयः; (३९४) प्रथमाश्रमी; उपनयनानन्तरं नियमं कृत्वा गुरोः सन्निधौ स्थित्वा साङ्गवेदाध्ययनं करोति यः; 'भिक्षा-चर्याथ शुश्रूषा गुरोः स्वाध्याय एव च। सन्ध्याकर्माग्नि-कार्यं च धर्मोऽयं ब्रह्मचारिणः'—इति गारुडे । गन्धर्व-

विशेषः; 'ब्रह्मचारी बहुगुणः सुवर्णश्चेति विश्रुतः । विश्वावसुर्भूमन्युश्च सुचन्द्रश्च शरुस्तथा'—इति महाभारते (१।१२३।५५)। २०

ब्रह्मण्यः पुं. [ब्रह्मणे हितः । ब्रह्मन्+'खलयवमाषतिलवृषब्रह्मणश्च' इति यत् । 'ये चाभावकर्मणोः' इत्यन् प्रकृत्या] ब्रह्मणे हितः; विष्णुः; 'ब्रह्मण्यो ब्रह्मकृद् ब्रह्मा ब्रह्म ब्रह्मविवर्द्धनः । ब्रह्मविद् ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मज्ञो ब्राह्मणप्रियः'—इति महाभारते (१३।१४९।८४)। 'ब्रह्मण्यो देवकीपुत्रो ब्रह्मण्यो मधुसूदनः । ब्रह्मण्यः पुण्डरीकाक्षो ब्रह्मण्यो विष्णुरच्युतः'—इत्याह्निकचन्द्रिका। ब्रह्मदारुवृक्षः; मुञ्जतृणं; तूलवृक्षः; शनैश्चरः; स्त्री. दुर्गा; 'वेदश्रुतिमहापुण्ये ब्रह्मण्ये जातवेदसि । जम्बूकटकचैत्येषु नित्यं सन्निहितालये'—इति महाभारते (६।२२।१६)। ब्रह्मणि साधौ त्रि.। ४०६

ब्रह्मणे हितम् त्रि.— ब्रह्मण्यम्। ४०६

ब्रह्मपुत्रः पुं. — विषभेदः । 'वर्णतः कपिलो यः स्यात्तथा भवति मारकः । ब्रह्मपुत्रः स विज्ञेयो जायते मलयाचले' —इति भावप्रकाशः। 'काकोलो गरलः क्ष्वेडो वत्सनाभः प्रदीपनः । शौक्लिकेयो ब्रह्मपुत्रो विषं स्याद् गरलो विषः' —इति वैद्यकरत्नमालायाम्। [ब्रह्मणः पुत्रः] सत्यंः; धर्मः; मरीच्यादिः; नारदः; वशिष्ठः; मनुः; 'मन्वन्तरे च दशमे ब्रह्मपुत्रस्य धीमतः । सुखासीना निरुद्धाश्च त्रिः प्रकाराः सुराः स्मृताः'—इति मार्कण्डेये (९४।११)। क्षेत्रभेदः; नदभेदः; अमोघानन्दनः; लौहित्यः; लोहितः; 'पृथिव्यां यानि तीर्थानि सरितः सागरादयः । सर्वे लौहित्यमायान्ति चैत्रे मासि सिताष्टमीम् । ब्रह्मपुत्र महाभाग शान्तनोः कुलनन्दन । अमोघगर्भसम्भूत ! पापं लौहित्य मे हर—इति तिथ्यादितत्त्वम्। ६४६

ब्रह्मबन्धुः पुं. [ब्रह्मणो बन्धुरिव] अधिक्षेपः; निन्दितब्राह्मणः; निर्देशः; अप्राह्मनामकब्राह्मणः; 'ब्रह्मबन्धोः सुता न त्वं बाले ! नैव तपस्विनः। सुता त्वं मम यो देवान् कर्तुमन्यान् समुत्सहे'—इति मार्कण्डेये (७५।६०)। 'वपनं द्रविणादानं स्थानान्निर्यापणं तथा। एष हि ब्रह्मबन्धूनां वधो नान्योऽस्ति दैहिकः'—इति भागवते १ स्कन्धे। ४०५

ब्रह्मवर्चसम् क्ली. [ब्रह्मणो वेदस्य तपसो वा वर्चस्तेजः। 'ब्रह्महस्तिभ्यां वर्चसः' इति अच्] ब्राह्मणस्य वृत्ताध्ययनर्द्धिः; वेदबोधितस्याचारस्य परिपालनं वृत्तं, व्रतग्रहणपूर्वकं गुरुमुखेन वेदाभ्यासोऽध्ययनं, तयोर्ऋद्धिस्तत्परिपालनकृतस्तेजस उपचयो ब्रह्मवर्चसं स्यात्। 'तपःस्वाध्यायजं यच्च तेजस्तु ब्रह्मवर्चसम्'—इति जटाधरः। 'ऋषयो दीर्घसन्ध्यत्वाद्दीर्घमायुरवाप्नुयुः। प्रज्ञां यशश्च कीर्तिं च ब्रह्मवर्चसमेव च'—इति मनुः (४।९४)। ३९७

ब्रह्मवृक्षः पुं. [तदाख्यया प्रसिद्धो वृक्षः। यद्वा ब्रह्मणे वेदकर्मार्थं यो वृक्षः] पलाशवृक्षः; किंशुकः; त्रिपत्रकः; उडुम्बरः; उदुम्बरवृक्षः। १९७

ब्रह्मसूत्रम् क्ली. [ब्रह्मणि वेदग्रहणकाले उपनयनसमये धृतं यत् सूत्रम्] यज्ञसूत्रं; पवित्रं; यज्ञोपवीतं; द्विजायनी; उपवीतं; सावित्रं; सावित्रीसूत्रं; ब्रह्मनिर्णयसूत्रम्; 'तस्योपनीयमानस्य सावित्रीं सवितात्रवीत्। बृहस्पतिर्ब्रह्मसूत्रं मेखलां कश्यपोऽददात्'—इति भागवते (८।१८।१४)। 'ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक्। ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः' —इति भगवद्गीतायाम् (१३।४)। ४०७

ब्रह्मा [न्] पुं. [बृंहति वर्द्धते यः। बृहि वृद्धौ+'बृंहेर्नोऽच्च' इति मनिन् नकारस्याकारश्च] सृष्टिकर्तृदेवताविशेषः; आत्मभूः; सुरज्येष्ठः; परमेष्ठी; पितामहः; हिरण्यगर्भः; लोकेशः; स्वयम्भूः; चतुराननः; धाता; अब्जयोनिः; द्रुहिणः; विरिञ्चिः; कमलासनः; स्रष्टा; प्रजापतिः; वेधाः; विधाता; विश्वसृट्; विधिः; द्रुघणः; विरिञ्चः; स्वयम्भुः; पद्मयोनिः; पद्मासनः; देवदेवः; पद्मगर्भः; गुणसागरः; वेदगर्भः; बहुरेताः; स्वभूः; सन्ध्यारामः; सुधावर्षी; कृपाद्वैतः; खसपर्णः; लोकनाथः; महावीर्यः; सरोजी; मञ्जुप्राणः; नाभिजन्मा; बहुरूपः; जटाधरः; सनत्; शतधृतिः; कञ्जजः; प्रभुः; चिन्तामणिः; पद्मपाणिः; पुराणगः; अष्टकर्णः; हंसरथः; सर्वकर्ता; चतुर्मुखः; कः; आः; शतपत्रनिवासः; स्वायम्भुवमनुपिता; मः; नाभिजन्मा; अण्डजः; पूर्वः; निधनः; कमलोद्भवः; सदानन्दः; रजोमूर्तिः; सत्यकः; हंसवाहनः। (१२४) मुक्तिः; मोक्षः। ऋत्विग्भेदः; विप्रः; अर्हदुपासकविशेषः; योगविशेषः; स तु विष्कम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतपञ्चविंशयोगः; 'नानाशास्त्राभ्यासंनीतकालो वर्णाचारैः संयुतश्चारुकीर्तिः। शान्तो दान्तो जायते चारुकर्मा

मूतौ यस्य ब्रह्मयोगप्रयोगः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । ६

ब्रह्माणी स्त्री. [ब्रह्माणमणति कीर्त्तयतीति । अण् शब्दे, कर्मण्यण्+ङीप् । यद्वा ब्रह्माणमानयति जीवयतीति । अन् प्राणने, ण्यन्तादस्मात् कर्मणि अणि कृते 'णेरनिटि' इति णिलोपः, 'टिड्ढेति' ङीप् , 'पूर्वपदादिति' णत्वञ्च] दुर्गा; 'ब्रह्माणी ब्रह्मजननाद् ब्रह्माक्षरपरा मता' —इति देवीपुराणे ४५ अध्याये। ब्रह्मणः पत्नी; 'ततः संजपतस्तस्य भित्वा देहमकल्पषम् । स्त्रीरूपमर्द्धमकरोदर्द्धं पुरुषरूपवत् । शतरूपा च सा ख्याता सावित्री च निगद्यते । सरस्वत्यथ गायत्री ब्रह्माणी च परन्तप '—इति मत्स्यपुराणे ३ अध्याये। 'हंसयुक्तविमानाग्रे साक्षसूत्रकमण्डलुः । आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी साभिधीयते ' —इति मार्कण्डेये पुराणे (८८।१४)। रेणुकानामगन्धद्रव्यं; राजरीतिः । १७

ब्राह्मम् क्ली. [ब्रह्मण इदम् । ब्रह्मन्+'तस्येदम्' इत्यण्, 'ब्राह्मोऽजातौ' 'नस्तद्धिते' इति टिलोपः] ब्रह्मसम्बन्धिनि त्रि.। 'ब्राह्मस्य तु क्षपाहस्य यत्प्रमाणं समासतः । एकैकशो युगानान्तु क्रमशस्तन्निबोधत'—इति मनुः (१।६८)। ब्रह्मतीर्थं; तत्तु अङ्गुष्ठस्य मूले वर्त्तते। 'अन्तर्जानु शुचौ देश उपविष्ट उदङ्मुखः। प्राग्वा ब्राह्मेण तीर्थेन द्विजो नित्यमुपस्पृशेत् । अङ्गुष्ठोत्तरतो रेखा या पाणेर्दक्षिणस्य च । एतद् ब्राह्ममिति ख्यातं तीर्थमाचमनाय वै'—इति आह्निकतत्त्वे। [ब्रह्मा देवतास्य इति, ब्रह्मन्+'सास्य देवता' इत्यण् । टिलोपः] ब्रह्मदेवताकमस्त्रादि; 'अमोघं सन्दधे चास्मै धनुष्येकधनुर्द्धरः । ब्राह्ममस्त्रं प्रियाशोकशल्यनिष्कर्षणौषधम्'—इति रघौ (१२।९७)। पुं. [ब्रह्मणोऽपत्यं पुमान् इति, ब्रह्मन्+'तस्यापत्यम्' इत्यण्, 'नस्तद्धिते' इति टिलोपः] नारदः । [ब्रह्मण इवायमिति, अण्] विवाहविशेषः; वरमाहूय यथाशक्त्यलङ्कृता कन्या यत्र दीयते सः; 'आच्छाद्य चार्चयित्वा च श्रुतशीलवते स्वयम् । आहूय दानं कन्याया ब्राह्मो धर्मः प्रकीर्तितः'—इत्युद्वाहतत्त्वम् । कालविशेषः; 'रात्रेश्च पश्चिमे यामे मुहूर्त्तो ब्राह्म उच्यते ।' 'ब्राह्मे मुहूर्त्ते बुध्येत धर्म्मार्थौ चानुचिन्तयेत्' —इति मनुः (४।९१)। ११५

ब्राह्मणः पुं. [ब्रह्मणः (विप्रस्य) अपत्यम्, ब्रह्म (वेदम्) अधीते, ब्रह्म (परमात्मानम्) जानाति वा। ततदर्थेषु यथायथमण्, 'अन्' इति प्रकृतिभावः] द्विजातिः; अग्रजन्मा; भूदेवः; वाडवः; विप्रः; द्विजः; सूत्रकण्ठः; ज्येष्ठवर्णः; अग्रजातकः; द्विजन्मा; वक्त्रजः; मैत्रः; वेदव्यासः; नयः; गुरुः; ब्रह्मा; षट्कर्मा, ; द्विजोत्तमः; 'ब्राह्मण्यां ब्राह्मणाज्जातो ब्राह्मणः स्यान्न संशयः । क्षत्रियायां तथैव स्याद्वैश्यायामपि चैव हि'—इति महाभारते अनुशासने (४७।२८)। विष्णुः; 'ब्रह्मविद् ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मज्ञो ब्राह्मणप्रियः' —इति महाभारते (१३।१४९।८४) । शिवः; 'गभस्तिर्ब्रह्मकृद् ब्रह्मा ब्रह्मविद् ब्राह्मणो गतिः'—इति महाभारते (१३।१७।१३२)। ब्रह्म जानातीति व्युत्पत्त्या परब्रह्मवेत्तरि त्रि. । ३९१

ब्राह्मणब्रुवः पुं. [ब्राह्मणश्चासौ ब्रुवः कुत्सितः । 'कुत्सितानि कुत्सनैः' इति समासः] दुर्ब्राह्मणः; द्विजाधम; [ब्राह्मणवंशोत्पन्नतया वेदोक्तकर्माकुर्वन्नपि आत्मानं ब्राह्मणं ब्रवीतीति । ब्राह्मण+ब्रू+क+बाहुलकाद् न वच्यादेशः] ब्राह्मणजातिमात्रोपजीवी; 'विप्रः संस्कारयुक्तो न नित्यं सन्ध्यादि कर्म यः । नैमित्तिकं च नो कुर्याद् ब्राह्मणब्रुव उच्यते । युक्तः स्यात्सर्वसंस्कारैर्द्विजस्तु नियमव्रतैः । कर्म किञ्चिन्न कुरुते वेदोक्तं ब्राह्मण ब्रुवः । गर्भाधानादिभिर्युक्तस्तथोपनयनेन च । न कर्मकृन्न चाधीते स ज्ञेयो ब्राह्मणब्रुवः । अध्यापयति नो शिष्यान्नाधीते वेदमुत्तमम् । गर्भाधानादिसंस्कारैर्युतः स्याद् ब्राह्मणब्रुवः'—इति पाद्मोत्तरखण्डे १०८ अध्यायः । ४०६

ब्राह्मी स्त्री. [ब्रह्मण इयम् । ब्रह्मन्+अण्, टिलोपः, स्त्रियां ङीप्] सरस्वती; दुर्गा; 'बृहदश्वशरीरं यदप्रमेयं प्रमाणतः । बृहद्विस्तीर्णमित्युक्तं ब्राह्मी देवी ततः स्मृता' —इति देवीपुराणे ४५ अध्याये । सप्तमातृकान्तर्गतमातृकाविशेषः; सा च ब्रह्मशक्तिः; शाकभेदः; सुरेष्टा; ब्रह्मकन्यका; मण्डूकमाता; मण्डूकी; सुरसा; मेध्या; वरा; वीरा; भारती; परमेष्ठिनी; दिव्या; मत्स्याक्षी; वयस्था; सोमवल्लरी; ब्राह्मीशाकः; सरस्वती; सौम्या; सुरश्रेष्ठा; सुवर्चला; कपोतवेगा; वैधात्री; दिव्यतेजा; महौषधी; स्वायम्भुवी; सौम्यलता; शारदा; 'वचा त्रिकटुकं चैव लवणं चूर्णमुत्तमम्। ब्राह्मीरसे भावितं च मधुसर्पिःसमन्वितम् । सप्ताहं भक्षितं कुर्यान्महैश्वर्यं मतिं पराम्'—इति गारुडे १९९ अध्याये ।

'ब्राह्मी कपोतवल्ली स्यात् सोमवल्ली सरस्वती'—इति भावप्रकाशः। फञ्जिका; पङ्कगडमत्स्यः; सोमलता; महाज्योतिष्मती; वाराहीकन्दः; हिलमोचिका; रोहिणीनक्षत्रम् [ब्रह्म+अण्+ङीप्।] ब्रह्माधिष्ठातृदेवताकत्वात् तथात्वम्]; सूर्यमूर्तिः; 'ब्राह्मी माहेश्वरी चैव वैष्णवी चैव ते तनुः। त्रिधा तस्य स्वरूपन्तु भानोर्भास्वान् प्रसीदतु'—इति मार्कण्डेये (१०९।७१)। त्रि. ब्रह्मप्राप्तियोग्या; 'स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः। महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः'—इति मनुः (२।२८)। ब्रह्मभवा; 'एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ! नैनां प्राप्य विमुह्यति'—इति भगवद्गीतायाम्। (२।७२)। ८

भ

भम् क्ली. [भातीति, भा दीप्तौ+बाहुलकाड् ड] नक्षत्रं; तारका; तारा; 'प्राग्गतित्वमतस्तेषां भगणैः प्रत्यहं गतिः। परिणाहवशाद्भिन्ना तद्वशाद्भानि भुञ्जते'--इति सूर्यसिद्धान्ते (१।२६)। ग्रहः; राशिः; 'राशिनामानि च क्षेत्रं भमृक्षं गृहनाम च'--इति ज्योतिस्तत्त्वम्। पुं. [भातीति, भा दीप्तौ+बाहुलकाद् ड] शुक्राचार्यः; भ्रमरः; भ्रान्तिः। ५१

भक्तम् क्ली. [भज्यते स्मेति, भज् सेवायाम्+कर्मणि क्त] अन्नम्; 'भक्तमन्नं तथान्धश्च क्वचित् कूरं च कीर्तितम्। ओदनोऽस्त्री स्त्रियां भिस्सा दीदिविः पुंसि भाषितः।' 'सुधौतांस्तण्डुलान् स्फीतांस्तोये पञ्चगुणे पचेत्। तद्भक्तं प्रसृतं चोष्णं विशदं गुणवन्मतम्। भक्तं वह्निकरं पथ्यं तर्पणं रोचनं लघु। अधौतमसृतं शीतं गुर्वरुच्यं कफप्रदम्'--इति भावप्रकाशः। त्रि. तत्परः; 'न त्वां दृष्ट्वा पुनरन्यां द्रष्टुं कल्याणि! रोचये। प्रसीद वशगोऽहन्ते भक्तं मां भज भाविनि'—इति महाभारते। पूज्यविषयकानुरागो भक्तिस्तद्वांश्च। ३१९

भक्तसिक्थम् पुं.-क्ली. [भक्तस्यान्नस्य सिक्थं मण्डः] अन्नाग्ररसः; मासरः; आचामः; निःस्रावः; पिच्छा; भक्तमण्डः। ८२९

भक्तिः स्त्री. [भज्यते इति, भज्+क्तिन्] सेवा; विभागः; गौणवृत्तिः; भङ्गी; अनुरागविशेषः; ईश्वरे परानुरक्तिः; उपासना; परमेश्वरविषये परमप्रेम; 'अन्याभिलाषिताशून्यं ज्ञानकर्माद्यनावृतम्। आनुकूल्येन कृष्णानुशीलनं भक्तिरुच्यते'–इति भक्तिरसामृतसिन्धौ। 'नाथ! योनिसहस्रेषु येषु येषु व्रजाम्यहम्। तेषु तेष्वच्युता भक्तिरच्युतास्तु सदा त्वयि। या प्रीतिरविवेकानां विषयेष्वनपायिनी। त्वामनुस्मरतः सा मे हृदयान्मापसर्पतु'—इति विष्णुपुराणे (१।२०।१८–१९)। श्रद्धा। १२९

भक्षकः त्रि. [भक्षयतीति, भक्ष्+'ण्वुल्तृचौ' इति ण्वुल्] खादकः; भक्षणतत्परः; घस्मरः; अद्मरः; 'भक्ष्य–भक्षकयोः प्रीतिर्विपत्तेः कारणं महत्। शृगालात् पाशबद्धोऽसौ मृगः काकेन रक्षितः'—इति हितोपदेशे (१।१३५)। ३५०

भक्षणम् क्ली. [भक्ष्+भावे ल्युट्] द्रवेतरद्रव्यगलाधःकरणं; न्यादः; स्वदनं; खादनम्; अशनं; निघसः; वल्भनम्; अभ्यवहारः; जग्धिः; जक्षणं; लेहः; प्रत्यवसानं; घसिः; आहारः; प्सानम्; अवष्वाणं; विष्वाणं; भोजनं; जेमनम्; अदनम्; 'शणशाकं वृथामांसं करेण मथितं दधि। तर्जन्या दन्तधावश्च सद्यो गोमांसभक्षणम्'--इति कर्मलोचने। ३२५

भगः पुं. [भज्यते इति, भज् सेवायाम्+'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ। 'खनो घ च' इति घित्करणाद् वा घ] रविः; क्लीबेऽव्ययम्; 'ज्ञानवैराग्ययोर्योनी भगमस्त्री तु भास्करे'—इति रुद्रः। भजनीये त्रि.। 'इन्द्रो भगो वाजदा अस्य गावः प्रजायन्ते दक्षिणा अस्य पूर्वी'—इति ऋग्वेदे (३।३६।५)। 'भगः सर्वैर्भजनीयः स इन्द्रः'–इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। द्वादशादित्यभेदः; 'धाता मित्रोऽर्यमा शक्रो वरुणस्त्वंश एव च। भगो विवस्वान् पूषा च सविता दशमस्तथा। एकादशस्तथा त्वष्टा द्वादशो विष्णुरुच्यते। जघन्यजस्तु सर्वेषामादित्यानां गुणाधिकः'—इति महाभारते (१।६५।१५-१६)। ऐश्वर्यादिषट्कम्; 'ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः। ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीङ्गना।' भोगास्पदत्वम्; 'प्रागल्भ्यं प्रश्रयः शीलं सह ओजो बलं भगः। गाम्भीर्यं स्थैर्यमास्तिक्यं कीर्तिर्मानोऽनहंकृतिः'—इति भागवते (१।१६।२९)। 'भगः भोगास्पदत्वम्'–इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। स्थूलमण्डलाभिमानी; 'विष्णोः स्थानं महेन्द्रस्य स्थानञ्चैव

विवस्वतः। सोमस्थानं भगस्थानं स्थानं कौवेरमेव च'--इति रामायणे (३।१२।१८)। 'भगः स्थूलमण्डलाभिमानी'-इति तट्टीकायां रामानुजः। ३५

भगम् क्ली.–पुं. [भज्यते अनेनास्मिन् वेति, एतदाश्रित्यैव कन्दर्पं सेवते इति भावः। भज् सेवायाम्+'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ] स्त्रीचिह्नं; योनिः; वराङ्गम्; उपस्थः; स्मरमन्दिरं; [भजन्त्यनेनेति भगो मेहनम्। भजन्त्यस्मिन्निति भगं योनिः] रतिगृहं; जन्मवर्त्म; अधरं; अवाच्यदेशः; प्रकृतिः; अपथं; स्मरकूपः; अप्रदेशः; प्रकूतिः; पुष्पी; संसारमार्गः; गुह्यं; स्मरागारं; स्मरध्वजं; रत्यङ्गं; रतिकुहरं; कलत्रं; अधः। 'ब्रह्मा बृहस्पतिर्विष्णुः सोमः सूर्यस्तथाश्विनौ। भगोऽथ मित्रावरुणौ वीरं ददतु मे सुतम्'—इति वाग्भटः। श्रीः; वीर्यम्; इच्छा; ज्ञानं; वैराग्यं; कीर्तिः; माहात्म्यम्; ऐश्वर्यम्। 'यद्वेनमुत्पथगतं द्विजवाक्यवज्रनिष्प्लुष्टपौरुषभगं निरये पतन्तम्'—इति भागवते (२।७।९)। 'निष्प्लुष्टं दग्धं पौरुषं भगमैश्वर्यं च यस्य' इति तट्टीकायां स्वामी। यत्नः; धर्मः; मोक्षः; पुंसां गुदमुष्कमध्यभागः; सौभाग्यम्; 'यस्य राष्ट्रे प्रजाः सर्वास्त्रस्यन्ते साध्वसाधुभिः। तस्य मत्तस्य नश्यन्ति कीर्तिरायुर्भगो गतिः'—इति भागवते (१।१७।१०)। 'भगो भाग्यम्'—इति तट्टीकायां स्वामी। कान्तिः; सूर्यः; शम्भुविशेषः; चन्द्रः; पूर्वाफाल्गुनीनक्षत्रम्; 'अक्षता माषयुक्ताश्च भगे सर्पिस्तदुत्तरे'—इति ज्योतिस्तत्त्वे। ५१४

भगवती स्त्री. [भगः 'ऐश्वर्यस्य समग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः। ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीङ्गना' इत्युक्तलक्षणं षडैश्वर्यमस्त्यस्या इति। भग+'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' इति मतुप्, मस्य वः। 'भूमनिन्दाप्रशंसासु नित्ययोगेऽतिशायने। संसर्गेऽस्तिविवक्षायां भवन्ति मतुबादयः'—इति काशिकोक्तेर्नित्ययोगेऽत्र मतुप् प्रत्ययः। ततः स्त्रियां ङीप्] गौरी; सा च प्रकृतिरूपिणी मायादेवी। 'ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा। बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति'--इति मार्कण्डेये (८१।४२)। सरस्वती; 'सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा'--इति पौराणिकाः। गङ्गा; 'भगवति ! भवलीलामौलिमाले तवाम्भःकणमणुपरिमाणं प्राणिनो ये स्पृशन्ति'—इति शङ्कराचार्यकृतगङ्गास्तोत्रे। १६

भगवान् [त्] त्रि. [भगः 'ऐश्वर्यस्य समग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः। ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीङ्गना' इत्युक्तलक्षणं षडैश्वर्यमस्त्यस्येति। भग+नित्ययोगे मतुप्, मस्य वः] पूज्यः; पुं बुद्धः; श्रीकृष्णः; 'भगवानपि ता रात्रीः शरदोत्फुल्लमल्लिकाः। वीक्ष्य रन्तुं मनश्चक्रे योगमायामुपाश्रितः'—इति भागवते। शिवः; 'निवेदनः सुखाजातः सुगन्धारो महाधनुः। गन्धपाली च भगवान् उत्थानः सर्वकर्मणाम्'—इति महाभारते (१३।१७।१२७)। १५५

भगिनी स्त्री. [भगं कल्याणं यत्नः इच्छा वा, पित्रादितो द्रव्यादाने विद्यतेऽस्या इति। इनि] स्वसा। [भगं योनिरस्या अस्तीति, भग+इनि+ङीप्] स्त्रीमात्रम्; 'परिगृह्या च वामाङ्गी भगिनी प्रकृतिर्नरी'—इति शब्दचन्द्रिका। ५०७

भगिनीपतिः पुं. [भगिन्याः पतिः] स्वसृभर्ता; आवुत्तः; भामः; भावुकः; भगिनीभर्ता। 'भगिनीपतिरावुत्तो भावो विद्वानथावुकः'—इति नाट्योक्तावमरः। १९

भग्नम् त्रि. [भञ्ज्+क्त। संघाद् विश्लिष्टत्वात् तथात्वम्] वक्रं; कुटिलं; पराजितं; त्रुटितं; चूर्णितम्; 'चिरकालोषितं जीर्णं कीटनिस्कुषितं धनुः। किं चित्रं यदि रामेण भग्नं क्षत्रियकान्तिके'—इति भट्टिः। क्ली. [भज्यते आमद्यते विश्लिष्यते इति, भञ्ज्+क्त] रोगविशेषः; 'लवणं कटुकं क्षारमम्लं मैथुनमातपम्। व्यायामं च न सेवेत भग्नो रूक्षान्नमेव च'--इत्यायुर्वेदः। ६९६

भग्नशृङ्गः त्रि. [भग्ने खण्डिते शृङ्गे यस्य] कूटः; त्रुटितविषाणः। २६७

भङ्गः पुं. [भज्यते इति, भञ्ज्+कर्मणि घञ्] तरङ्गः; वीचिः; पराजयः; [भञ्ज्+भावे घञ्] भेदः; रोगविशेषः; कौटिल्यं; भयं; विच्छित्तिः; रोगमात्रं; गमनं; जलनिर्गमः; नागभेदः; 'उच्छिखः शरभो भङ्गो बिल्वतेजा विरोहणः'—इति महाभारते (१।५७।९)। ६५३

भङ्गिः स्त्री. [भज्यते इति, भञ्ज्+इन्। न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्] व्याजः; छलनिभः; कल्लोलः; भङ्गः; [भङ्ग

करोतीति। भङ्ग+णिच्+इ] कौटिल्यभेदः; विन्यासः; विच्छेदः; 'यानादवातरददूरमहीतलेन मार्गेण भङ्गि-रचितस्फटिकेन रामः'—इति रघौ (१३।६९)। ७६२

भङ्गी स्त्री. [भङ्गि+कृदिकारादिति पक्षे ङीष्] भङ्गिः; 'जानामि मानमलसाङ्गि ! वचोविभङ्गीं भङ्गीशतं नयनयोरपि चातुरीञ्च । आभीरनन्दनमुखाम्बुजसङ्गशंसी वंशीरवो यदि न मामवशीकरोति'—इत्युद्भटः। ७६२

भङ्गुरः त्रि. [भज्यते स्वयमेवेति, भञ्ज्+'भञ्जभासमिदो घुरच्' इति कर्मकर्तरि घुरच्। घित्वात् कुत्वमिति काशिका] कुटिलः; स्वयं भञ्जनशीलः; 'कामान् कामयते काम्यैर्यदर्थमिह पूरुषः। स वै देहस्तु पारक्यो भङ्गुरो यात्युपैति च'—इति भागवते (७।७।४३)। ६९६

भङ्ग्यम् क्ली. [भङ्गाया भवनं क्षेत्रमिति। भङ्गा+'विभाषा तिलमाषोमाभङ्गाणुभ्यः' इति पक्षे यत्] भङ्गाक्षेत्रं; भाङ्गीनं; [भङ्गमर्हतीति। भङ्ग+दण्डादित्वाद्यत्] भङ्गार्हे त्रि.। १७३

भटः पुं. [भटयते भ्रियते इति। यद्वा भटतीति। भट् भृतौ+अच्] वीरः; 'पदे पदे सन्ति भटा रणोद्भटा न तेषु हिंसारस एष पूर्यते। धिगीदृशन्ते नृपते ! कुविक्रमं कृपाश्रये यः कृपणे पतत्रिणि'—इति नैषधे (१।१३२)। म्लेच्छभेदः (५९९); पामरविशेषः; रजनीचरः; वर्णसङ्करविशेषः; 'वर्द्धकाराद्भटो जातो नाटिक्यां वरवाहकः'—इति पराशरपद्धतिः। योद्धा; 'उष्ट्रैः केचिदिभैः केचिदपरे युयुधुः खरैः। केचिद् गौरमुखैर्ऋक्षैर्द्वीपिभिर्हरिभिर्भटाः'—इति भागवते (८।१०।९)। ३५४

भटित्रम् त्रि. [भटति भटयते वेति। भट्+'अशित्रादिभ्यः' इतीत्र] शूल्यं; क्ली. शूलपक्वमांसादि; 'कबाब' इति भाषा। वेतनमित्युणादिकोषः। ३२३

भट्टारकः त्रि. [भट्टं स्वाम्यम् ऋच्छति, कर्मण्यण्, भट्टार+संज्ञायां कन्] पूज्यः; 'प्रविष्टेषु ततः कोपात् पुरं शुभधरादिषु। भट्टारकमठं दृष्ट्वा भूयः पुत्रं व्यसर्जयत्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (६।२४०)। पुं. नाटयोक्तौ राजा; देवः; तपोधनः; सूर्यः। १५५

भट्टिनी स्त्री. [भट्टं स्वामित्वमस्या अस्तीति। भट्ट+इनि+ङीप्] नाटयोक्तौ अकृताभिषेका राजपत्नी। ब्राह्मणभार्या। ४८०

भद्रम् क्ली. [भन्दते इति, भदि कल्याणे+'ऋज्रेन्द्राग्रवज्रविप्रकुब्रचुब्रक्षुरखुरभद्रोग्रेति' रन्, नलोपश्च निपात्यते] मङ्गलं; भदाकः; श्रेयसं; 'किरीटमणिचित्रेषु मूर्द्धसु त्राणकारिषु। नाकृत्वा विद्विषां पादं पुरुषो भद्रमश्नुते'—इति कामन्दकीयनीतिसारे (१३।१२)। 'यजस्व वीर ! प्रविहि मनायतो भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये'—इति ऋग्वेदे (२।२६।२)। मुस्तं; काञ्चनं; क्ली.— स्त्री. करणविशेषः। १२२

भद्रः पुं. [भन्दते इति, भदि+रन् नलोपो निपातितश्च] करिजातिविशेषः; वृषभः (८०७); शिवः; खञ्जरीटः; कदम्बकः; नवशुक्लावलान्तर्गतजिनभेदः; रामचरः; सुमेरुः; स्नुही; चन्दनम्; 'श्रीखण्डं चन्दनं न स्त्री भद्रः श्रीस्तैलपर्णिकः। गन्धसारो मलयजस्तथा चन्द्रद्युतिश्च सः'—इति भावप्रकाशः। साध्यमौलिकानां पद्धतिविशेषः; 'विष्णुर्नागः खिलपिलगत इन्द्रो गुप्तः पालो भद्रः'—इति कुलाचार्यकारिका। वसुदेवस्य पुत्रभेदः; 'सुभद्रो भद्रबाहुश्च दुर्मदो भद्र एव च। पौरव्यास्तनया ह्येते भूताद्या द्वादशाभवन्'—इति भागवते (९।२४।४७)। सरोवरविशेषः; 'अरुणोदं मानसं च सितोदं भद्रसंज्ञितम्। तेषामुपरि च वारि सरांसि च वनानि च'—इति मत्स्यपुराणे (११२।४६)। तृतीयमनोरुत्तमस्यान्तरे देवगणभेदे बहुवचनान्तोऽयम्; 'वशिष्ठतनयाः सप्त ऋषयः प्रमदादयः। सत्या वेदश्रुता भद्रा देवा इन्द्रस्तु सत्यजित्'—इति भागवते (८।१।२४)। स्वायम्भुवमन्वन्तरे विष्णोर्दक्षिणागर्भजाततुषितनामकदेवगणभेदः; 'तां कामयानां भगवानुवाह यजुषां पतिः। तुष्टायां तोषमापन्नोऽजनयद्द्वादशात्मजान्। तोषः प्रतोषः सन्तोषो भद्रः शान्तिरिडस्पतिः। इध्मः कविर्विभुः स्वाह्नः सुदेवो रोचनो द्विषट्'—इति भागवते (४।१।६-७)। पर्वतविशेषः; 'अरक्षः शिखिरौतश्च सको वैदूर्यपर्वतः। कपिलः पिङ्गलो भद्रः सुरसश्च महाचलः'—इति ब्रह्माण्डपुराणे। एकादशद्वापरजातो महेश्वरस्य ऋषिमूर्त्यवतारविशेषः; 'एकादशे द्वापरे तु व्यासस्तु त्रिवृषो यदा। तदाप्यहं भविष्यामि गङ्गाद्वारे युगान्तिके। भद्रो नाम महातेजास्तत्रापि मम पुत्रकाः। भविष्यन्ति महा मानो सुवृता वेदपारगाः'—इति ब्रह्माण्डे २७

करोतीति। भङ्ग+णिच्+इ] कौटिल्यभेदः; विन्यासः; विच्छेदः; 'यानादवातरददूरमहीतलेन मार्गेण भङ्गिरचितस्फटिकेन रामः'—इति रघौ (१३।६९)। ७६२

भङ्गी स्त्री. [भङ्गि+कृदिकारादिति पक्षे ङीष्] भङ्गिः; 'जानामि मानमलसाङ्गि ! वचोविभङ्गीं भङ्गीशतं नयनयोरपि चातुरीञ्च । आभीरनन्दनमुखाम्बुजसङ्गशंसी वंशीरवो यदि न मामवशीकरोति'—इत्युद्भटः। ७६२

भङ्गुरः त्रि. [भज्यते स्वयमेवेति, भञ्ज्+'भञ्जभासमिदो घुरच्' इति कर्मकर्तरि घुरच्। घित्वात् कुत्वमिति काशिका] कुटिलः; स्वयं भञ्जनशीलः; 'कामान् कामयते काम्यैर्यदर्थमिह पूरुषः। स वै देहस्तु पारक्यो भङ्गुरो यात्युपैति च'—इति भागवते (७।७।४३)। ६९६

भङ्ग्यम् क्ली. [भङ्गाया भवनं क्षेत्रमिति। भङ्गा+'विभाषा तिलमाषोमाभङ्गाणुभ्यः' इति पक्षे यत्] भङ्गाक्षेत्रं; भाङ्गीनं; [भङ्गमर्हतीति। भङ्ग+दण्डादित्वाद्यत्] भङ्गार्हे त्रि.। १७३

भटः पुं. [भटयते भ्रियते इति। यद्वा भटतीति। भट् भृतौ+अच्] वीरः; 'पदे पदे सन्ति भटा रणोद्भटा न तेषु हिंसारस एष पूर्यते। धिगीदृशन्ते नृपते ! कुविक्रमं कृपाश्रये यः कृपणे पतत्रिणि'—इति नैषधे (१।१३२)। म्लेच्छभेदः (५९९); पामरविशेषः; रजनीचरः; वर्णसङ्करविशेषः; 'वर्द्धकाराद्भटो जातो नाटिक्यां वरवाहकः'—इति पराशरपद्धतिः। योद्धा; 'उष्ट्रैः केचिदिभैः केचिदपरे युयुधुः खरैः। केचिद् गौरमुखैर्ऋक्षैर्द्वीपिभिर्हरिभिर्भटाः'—इति भागवते(८।१०।९)। ३५४

भटित्रम् त्रि. [भटति भटयते वेति। भट्+'अशित्रादिभ्यः' इतीत्र] शूल्यं; क्ली. शूलपक्वमांसादि; 'कबाब' इति भाषा। वेतनमित्युणादिकोषः। ३२३

भट्टारकः त्रि. [भट्टं स्वाम्यम् ऋच्छति, कर्मण्यण्, भट्टार+संज्ञायां कन्] पूज्यः; 'प्रविष्टेषु ततः कोपात् पुरं शुभधरादिषु। भट्टारकमठं दष्ट्वा भूयः पुत्रं व्यसर्जयत्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (६।२४०)। पुं. नाट्योक्तौ राजा; देवः; तपोधनः; सूर्यः। १५५

भट्टिनी स्त्री. [भट्टं स्वामित्वमस्या अस्तीति। भट्ट+इनि+ङीप्] नाट्योक्तौ अकृताभिषेका राजपत्नी। ब्राह्मणभार्या। ४८०

भद्रम् क्ली. [भन्दते इति, भदि कल्याणे+'ऋज्रेन्द्राग्रवज्रविप्रकुब्रचुब्रक्षुरखुरभद्रोग्रेति' रन्, नलोपश्च निपात्यते] मङ्गलं; भद्राकः; श्रेयसं; 'किरीटमणिचित्रेषु मूर्द्धसु त्राणकारिषु। नाकृत्वा विद्विषां पादं पुरुषो भद्रमश्नुते'—इति कामन्दकीयनीतिसारे (१३।१२)। 'यजस्व वीर! प्रविहि मनायतो भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये'—इति ऋग्वेदे (२।२६।२)। मुस्तं; काञ्चनं; क्ली.— स्त्री. करणविशेषः। १२२

भद्रः पुं. [भन्दते इति, भदि+रन् नलोपो निपातितश्च] करिजातिविशेषः; वृषभः (८०७); शिवः; खञ्जरीटः; कदम्बकः; नवशुक्लावलान्तर्गतजिनभेदः; रामचरः; सुमेरुः; स्नुही; चन्दनम्; 'श्रीखण्डं चन्दनं न स्त्री भद्रः श्रीस्तैलपर्णिकः। गन्धसारो मलयजस्तथा चन्द्रद्युतिश्च सः'—इति भावप्रकाशः। साध्यमौलिकानां पद्धतिविशेषः; 'विष्णुनगिः खिलपिलगत इन्द्रो गुप्त; पालो भद्रः'—इति कुलाचार्यकारिका। वसुदेवस्य पुत्रभेदः; 'सुभद्रो भद्रबाहुश्च दुर्मदो भद्र एव च। पौरव्यास्तनया ह्येते भूताद्या द्वादशाभवन्'—इति भागवते (९।२४।४७)। सरोवरविशेषः; 'अरुणोदं मानसं च सितोदं भद्रसंज्ञितम्। तेषामुपरि च वारि सरांसि च वनानि च'—इति मत्स्यपुराणे (११२।४६)। तृतीयमनोरुत्तमस्यान्तरे देवगणभेदे बहुवचनान्तोऽयम्; 'वशिष्ठतनयाः सप्त ऋषयः प्रमदादयः। सत्या वेदश्रुता भद्रा देवा इन्द्रस्तु सत्यजित्'—इति भागवते (८।१।२४)। स्वायम्भुवमन्वन्तरे विष्णोर्दक्षिणागर्भजाततुषितनामकदेवगणभेदः; 'तां कामयानां भगवानुवाह यजुषां पतिः। तुष्टायां तोषमापन्नोऽजनयद्द्वादशात्मजान्। तोषः प्रतोषः सन्तोषो भद्रः शान्तिरिडस्पतिः। इध्मः कविर्विभुः स्वाह्नः सुदेवो रोचनो द्विषट्'—इति भागवते (४।१।६-७)। पर्वतविशेषः; 'अरक्षः शिखिरौतश्च सको वैदूर्यपर्वतः। कपिलः पिङ्गलो भद्रः सुरसश्च महाचलः'—इति ब्रह्माण्डपुराणे। एकादशद्वापरजातो महेश्वरस्य ऋषिमूर्त्यवतारविशेषः; 'एकादशे द्वापरे तु व्यासस्तु त्रिवृषो यदा। तदाप्यहं भविष्यामि गङ्गाद्वारे युगान्तिके। भद्रो नाम महातेजास्तत्रापि मम पुत्रकाः। भविष्यन्ति महा मानो सुवृता वेदपारगाः'—इति ब्रह्माण्डे २७

अध्याये। त्रि. श्रेष्ठः; साधुः; 'भद्र! करटक! अयं तावदस्मत्स्वामी पिङ्गलक उदकग्रहणार्थं यमुनाकच्छमवतीर्य स्थितः'—इति पञ्चतन्त्रे (१।२६)। २१५

भद्राकरणम् क्ली. [भद्र+डाच्। कृ+ल्युट्] क्षौरं; मुण्डनं; वपनम्। ७२१

भद्रासनम् क्ली. [भद्राय लोकहिताय आसनम्] नृपासनं; राजहैमसिंहासनं; योगिनामासनविशेषः; 'सीवन्याः पार्श्वयोर्न्यस्येद् गुल्फयुग्मं सुनिश्चलम्। भद्रासनं समुद्दिष्टं योगिभिः परिकल्पितम्'—इति तन्त्रसारे। ४२३

भयम् क्ली. [भी+'एरच्' इत्यत्र 'भयादीनामुपसंख्यानं नपुंसके क्तादिनिवृत्त्यर्थम्' इति अपादाने अच्] बिभेत्यस्मात् तत्; दरः; त्रासः; भीतिः; भीः; साध्वसं; उद्रासः; साधुसम्भवः; प्रतिभयम्; आतङ्कः; आशङ्का; भिया; 'रौद्रशक्त्या तु जनितं चित्तवैक्लव्यदं भयम्'—इति साहित्यदर्पणे ३ परिच्छेदे। कुब्जकपुष्पं; घोरे त्रि.। पुं. रोगः; निर्ऋतेः पुत्रभेदः; 'तस्यापि निर्ऋतिर्भार्या नैर्ऋता येन राक्षसाः। घोरास्तस्यास्त्रयः पुत्राः पापकर्मरताः सदा। भयो महाभयश्चैव मृत्युर्भूतान्तकस्तथा। न तस्य भार्या पुत्रो वा कश्चिदस्त्यन्तको हि सः'—इति महाभारते (१।६६।५५-५६)। द्रोणस्य वसोरभिमतिनामिकायां पत्न्यां जातः पुत्रभेदः; 'द्रोणस्याभिमतेः पत्न्या हर्षशोकभयादयः'—इति भागवते (६।६।११)। यवनराजविशेषः; 'ततो विहतसङ्कल्पा कन्यका यवनेश्वरम्। मयोपदिष्टमासाद्य वव्रे नाम्ना भयं पतिम्'—इति भागवते (४।२७।२३)। ७२५

भयद्रुतः त्रि. [द्रु+कर्तरि क्त। भयेन द्रुतः] भीत्या पलायितः; कान्दिशीकः। ४७९

भयानकः पुं. [बिभेत्यस्मादिति। भी+'आनकः शीङ्भियः' इति आनक] रसविशेषः; स तु शृङ्गाराद्यष्टरसान्तर्गतषष्ठरसः; 'भयानको भयस्थायिभावः कालाधिदैवतः। स्त्रीनीचप्रकृतिः कृष्णो मतस्तत्त्वविशारदैः। यस्मादुत्पद्यते भीतिस्तदत्रालम्बनं मतम्। चेष्टा घोरतरास्तस्य भवेदुद्दीपनं पुनः। अनुभावोऽत्र वैवर्ण्यं गद्गदस्वरभाषणम्। प्रलयस्वेदरोमाञ्चकम्पदिक्प्रेक्षणादयः। जुगुप्सावेगसंमोहसंत्रासग्लानिदीनताः। शङ्कापस्मारसंभ्रान्तिमृत्य्वाद्या व्यभिचारिणः'—इति साहित्यदर्पणे ३ परिच्छेदे। (७०५) त्रि. भयङ्करः; भयावहः; 'वक्त्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति दंष्ट्राकरालानि भयानकानि। केचिद्विलग्ना दशनान्तरेषु संदृश्यन्ते चूर्णितैरुत्तमाङ्गैः'—इति भगवद्गीतायाम् (११।२७)। ९२

भयावहः त्रि. [आवहतीति, आ+वह्+अच्। भयस्यावहः इति] भयङ्करः; भयानकः; 'श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात् स्वनुष्ठितात्। स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः'—इति भगवद्गीतायाम् (३।३५)। ७०५

भरतः पुं. [बिभर्ति स्वाङ्गमिति, बिभर्ति लोकानिति वा। भृ+'भृमृदृशियजीति' अतच्] नटः; शैलाली; चारणः; जायाजीवः; शैलूषः; कुशीलवः; कृशाश्वी; नाट्यशास्त्रकृन्मुनिविशेषः; स तु अलङ्कारादिशास्त्रस्य नाट्यसूत्रकर्ता। भरतस्य शिष्यः [तस्येदमित्यण्, अणो लुक्]; रामानुजः; शबरः; तन्तुवायः; क्षेत्रं; भरतात्मजः; दौष्यन्तिः; दुष्यन्तराजपुत्रः; शाकुन्तलेयः; शकुन्तलापुत्रः; सर्वदमनः; ऋषभदेवात् इन्द्रदत्तजयन्त्यां कन्यायां जातशतपुत्रान्तर्गतज्येष्ठपुत्रः। ५९२

भरद्वाजः पुं. [द्वाभ्यां जात इति। द्वि+जन्+ड, आत्वमार्षम्। भृ+अप्, भरः। भरश्चासौ द्वाजश्चेति कर्मधारयः] पक्षिविशेषः; व्याघ्राटः; भरद्वाजकः; मुनिविशेषः; स च उतथ्यपत्न्यां ममतायां बृहस्पतिवीर्याज्जातः; 'मूढे भर द्वाजमिमं भरद्वाजं बृहस्पते! या तौ यदुक्ता पितरौ भरद्वाजस्ततस्त्वयम्।' गोत्रभेदः; 'शाण्डिल्यः काश्यपश्चैव वात्स्यः सावर्णकस्तथा। भरद्वाजो गौतमश्च सौकालीनस्तथापरः'—इति मनुः। [भृ+शतृ, भरत्+वाजः] संम्रियमाणहविर्लक्षणान्ने यजमानादौ त्रि.। 'यदयातं दिवोदासाय वर्तिर्भरद्वाजायाश्विना हयन्ता'—इति ऋग्वेदे (१।११६।१८)। 'भरद्वाजाय संम्रियमाणहविर्लक्षणान्नाय यजमानाय'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। २४८

भरितः त्रि. [हरितः। पृषोदरादित्वाद् हस्य भ] पूर्णः; हरिद्वर्णः; पुष्टः; भारयुक्तः; [भरोऽस्य जात इत्यर्थे इतच् प्रत्ययेन निष्पन्नः।] ७०२

भरूटकम् क्ली. [भृ+बाहुलकाद् ऊट। संज्ञायां कन्] भृष्टामिषम्; भृष्टमांसम्। ३२३

भर्गः पुं. [भृज्यते कामादिरनेनेति। भृज्+'हलश्च' इति घञ्] शिवः; 'प्रत्युवाच ततो भर्गः पुरा दक्षप्रजापतेः। देवि! त्वञ्च तथान्याश्च बह्व्योऽजायन्त कन्यकाः।

स मह्यं भवतीं प्रादात् धर्मादिभ्योऽपराश्च ताः'—इति कथासरित्सागरे (१।३४)। वीतिहोत्रस्य पुत्रः; 'वीतिहोत्रोऽस्य भर्गोऽतो भार्गभूमिरभून्नृप!'—इति भागवते (९।१७।९)। 'आदित्यान्तर्गततेजः; 'आदित्यान्तर्गतं वर्चो भर्गाख्यं तन्मुमुक्षुभिः। जन्ममृत्युविनाशाय दुःखस्य त्रितयस्य च। ध्यानेन पुरुषो यश्च द्रष्टव्यः सूर्यमण्डले'—इत्याह्निकतत्त्वम्। १२

भर्ता [ऋ] पुं. [बिभर्ति पुष्णाति पालयति धारयतीति वा। भृ धारणपोषणयोः+'ण्वुल्तृचौ' इति तृच्] विवाहितायाः पतिः; 'भार्याया भरणाद्भर्ता पालनाच्च पतिः स्मृतः। अहं त्वां भरणं कृत्वा जात्यन्धं ससुतं तदा। नित्यकालं श्रमेणार्ता न भरेयं महातपः'—इति महाभारते (१।१०४।२८)। अधिपतिः; अधिपः; ईशः; नेता; परिवृढः; अधिभूः; पतिः; इन्द्रः; स्वामी; नाथः; आर्यः; प्रभुः; ईश्वरः; विभुः; ईशिता; इनः; नायकः; [प्रपञ्चाधिष्ठानवत्वेन भरणात्] विष्णुः; धातरि पोष्टरि च त्रि.। 'भर्त्ता वज्रस्य धृष्णोः पिता पुत्रमिव प्रियम्'—इति ऋग्वेदे (१०।२२।३)। ४९७

भर्तृदारकः पुं. [भर्त्रा ध्रियते इति। भर्तृ+दृ आदरे+कर्मणि घञ्, ततः स्वार्थे क। भर्तुः दारकः पुत्रो वा] नाट्योक्तौ युवराजः; कुमारः। ९८

भर्मम् क्ली. [भ्रियतेऽनेनेति। भृ+बाहुलकात् मन्] स्वर्णं; भृतिः; नाभिः। १७३

भर्म [न्] क्ली. [भरति भ्रियते वेति। भृञ्+'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति मनिन्] स्वर्णं; वेतनं; धुस्तूरं; नाभिः; भरणम्; 'हविष्यान्तमजरं स्वर्विदि दिविस्पृश्याहुतं जुष्टमग्नौ। तस्य भर्मणे भुवनाय देवा धर्मणे कं स्वधया पप्रथन्त'—इति ऋग्वेदे (१०।८८।१) 'भर्मणे भरणाय'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। १७३

भल्लः पुं. [भल्लते इति। भल्ल्+अच्] भल्लूकः; ऋक्षः; अच्छः; अच्छभल्लः; देशभेदः; 'ब्रह्मपुरदार्वडामरवनराज्यकिरातचीनकौणिन्दाः। भल्लापलोलजटासुरकुनठखसघोषकुचिकाख्याः'—इति बृहत्संहितायाम् (१४।३०)। पुं.—क्ली. [भल्लते हन्तीति। भल्ल्+अच्] शस्त्रभेदः; 'भाला' इति भाषा। 'स च शल्योद्धरणकः प्रोच्यते वैद्यकागमे। नाराचबाणशूलाद्यैर्भल्लैः कुन्तैश्च तोमरैः'—इति हारीतः। २२८

भल्लकः पुं. [भल्ल+स्वार्थे कन्] भल्लूकः; ऋक्षः; 'भालू' इति भाषा। पक्षिभेदः; 'काकगृध्रबकश्येनभासभल्लकबर्हिणः। हंससारसचक्राह्वकाकोलूकादयः खगाः।' २२८

भल्लुकः पुं. [भल्लूक+पृषोदरादित्वाद् ह्रस्वः] भालूकः; भल्लूकः; ऋक्षः। २२८

भल्लूकः पुं. [भल्लते इति। भल्ल्+'उलूकादयश्च' इति ऊकप्रत्ययेन साधुः] जन्तुविशेषः; ऋक्षः; भल्लः; सशल्यः; दुर्घोषः; भल्लुकः; पृष्ठदृष्टिः; द्राघिष्ठः; दीर्घकेशः; चिरायुः; दुश्चरः; दीर्घदर्शी; भालुकः; भालूकः; अच्छः; भाल्लूकः; भीलूकः; अच्छभल्लः; 'सिंहव्याघ्रगणाः क्रूरा मत्ताश्चैव महागजाः। द्वीपिनः खड्गभल्लूका ये चान्ये भीमदर्शनाः'—इति महाभारते (१२।११६।६)। कोशस्थप्राणिविशेषः; 'शङ्खशङ्खनखशुक्तिशम्बूकभल्लूकप्रभृतयः कोशस्थाः'—इति सुश्रुतः। कुक्कुरः; कुकुरः; श्योनाकप्रभेदः; 'श्योनाको भूतपुष्पश्च पूतिवृक्षो मुनिद्रुमः। दीर्घवृन्तश्च कट्वङ्गो भल्लूकष्टुण्टकोऽरणुः'—इति वैद्यकरत्नमाला। २२८

भवः पुं. [भवत्यस्मादिति। भू+अपादाने अप्] शिवः; रुद्रः; कपर्दी; महादेवः; 'तमब्रवीद् भवोऽसीति तद्यदस्य तन्नामाकरोत् पर्जन्यस्तद्रूपमभवत् पर्जन्यो वै भवः'—इति शतपथब्राह्मणे (६।१।३।१५)। 'भवाय जलमूर्तये नमः'—इति पार्थिवशिवलिङ्गपूज प्रयोगः। (८०६) [भवति उत्पद्यतेऽस्मिन्निति। भू+अधिकरणे अप्] संसारः; 'अनघस्त्वं तथैवेयं देवी सर्वभवारणिः'—इति मार्कण्डेये (१९।७)। सत्ता; प्राप्तिः; क्षेमः; 'को हि नाम भवेनार्थी साहसेन समाचरेत्'—इति महाभारते (१।२२१।२८)। जन्म; 'भवो जातिसहस्रेषु प्रियाप्रियविपर्ययः'—इति याज्ञवल्क्यः (३।१६४)। क्ली. [भवति भूयते वा। भू+अच् अप् वा] भव्यम्। ११

भवत् त्रि. [भाति दीप्यते इति। भा+डवतु प्रत्ययः] युष्मदर्थम्; तस्य लिङ्गत्रये रूपाणि—भवान्, भवती, भवत्। 'भवतां नाशयिष्यामि तत्क्षणात् परमापदः'—इति मार्कण्डेये (८५।५)। वर्तमानार्थम्; [अत्र भू धातोः शतृप्रत्ययेन निष्पन्नम्] तस्य लिङ्गत्रये रूपाणि—भवन्, भवन्ती, भवत्। 'चातुर्वर्ण्यं त्रयो लोकाश्चत्वारश्चाश्रमाः

पृथक्। भूतं भवद्भविष्यं च सर्वं वेदात् प्रसिध्यति'—इति मनुः (१२।९७)। १५५

भवनम् क्ली. [भवत्यस्मिन्निति। भू+अधिकरणे ल्युट्] गृहम्; 'स त्वप्सु तं घटं प्रास्य प्रविश्य भवनं स्वकम्'—इति मनुः (११।१८)। प्रासादः; 'देवराजस्य भवनं विविशाते सुपूजितौ'—इति महाभारते (३।५४।१३)। [भू+भावे ल्युट्] भावः; 'ननु प्रागसतो घटस्य भवनं दृश्यते'—इति तार्किकाः। २९१

भवानी स्त्री. [भवस्य पत्नी। भव+'इन्द्रवरुणभवशर्वेति' स्त्रियां ङीष्, आनुक् चागम इति] दुर्गा; पार्वती; भवस्य भार्या; 'रुद्रो भवः समाख्यातो भवः संसार-सागरः। भवः कामस्तथा सृष्टिर्भवानी परिकीर्तिता'—इति देवीपुराणे (५५ अध्याये)। 'भवानि ! त्वत्पाणि-ग्रहणपरिपाटीफलमिदम्।' १५

भवान्तरम् क्ली. [अन्यो भवः, सुप्सुपेति समासः] अमुत्र; लोकान्तरम्। ८७७

भविकम् क्ली. [भवः प्रभावः ऐश्वर्यादिकमित्यर्थः, उत्पाद्यत्वेनास्त्यस्येति ठन्] मङ्गलं; कुशलं; भावुकं; तद्वति त्रि.। १२२

भवितव्यता स्त्री. [भवितव्य+भावे तल्] भाग्यं; भागधेयं; विपाकः; 'तन्ममाचक्ष्व तावत् त्वं, कथयि-ष्याम्यहं च ते। यदस्तु कोऽन्यथा कर्तुं शक्तो हि भवि-तव्यताम्'—इति कथासरित्सागरे (२७।८६)। १२६

भव्यम् त्रि. [भवतीति, भू+कर्तरि 'भव्यगेयेति' निपातनात् वा यत्] शुभं; मङ्गलं; 'भग्नायां भव्ययाच्ञायां तस्मै विदुर ! चुक्रुधुः'—इति भागवते (४।१४।३०)। सत्यं; योग्यं; भावि; 'भूतभव्यभवन्नाथाः शृणु चैतत् त्रयं द्विज !'—इति मार्कण्डेये (७९।७)। श्रेष्ठम्; 'यत्पादपद्मभवाय भजन्ति भव्याः'—इति भागवते (१।१५।१७)। 'भव्याः श्रेष्ठाः'—इति तट्टीकायां स्वामी। प्रसन्नम्; 'स मे नाथो ह्यनाथस्य भव भव्येन चेतसा'—इति रामायणे (१।६२।७)। पुं. [भवति उत्पद्यते, भू+निपातनात् कर्तरि वा यत्] कर्मरङ्गवृक्षः; रसभेदे पुं.–क्ली.। [भवतीति भूयते इति वा। भू+'भव्यगेयेति' यत्। भव्यादयः शब्दाः कर्तरि वा निपात्यन्ते इति काशिका] क्ली. फलविशेषः; भवं; भविष्यं; भावनं; वक्त्रशोधनं; लोमफलम्; पिच्छिलबीजम्; 'भव्यं स्वादु कषायाम्लं हृद्यमास्य-विशोधनम्। तदेव पक्वं दोषघ्नं गुरु ग्राहि विषापहम्'—इति राजवल्लभः। अस्थि। १२२

भषकः पुं—स्त्री. [भषतीति, भष्+'क्वुन् शिल्पिसंज्ञयोर-पूर्वस्यापि' इति क्वुन्] कुक्कुरः; 'कूकुर' इति भाषा।२८१

भषणः पुं. [भष् कुक्कुरादिशब्दे। भष्+ल्यु] कुक्कुरः; भषः; कुकुरः; कुकुंरः; क्ली. बुक्कनं; कुक्कुरशब्दः; श्वरवः। २८१

भसितम् क्ली. [भस्+क्त] भस्म; 'चन्दनं वामदेवाख्ये हरितालं च पौरुषे। ईशाने भसितं केचिदालेपनमिती-दृशम्'—इति शिवपुराणे। ६९

भस्म [न्] क्ली. [बभस्तीति, भस् भर्त्सनदीप्त्योः+'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति मनिन्] दग्धकाष्ठादिविकारः; शिवाङ्गभूषणम्; 'शिवाङ्गभूषणं भस्म विभूतिर्भूतिरस्य तु'—इति शब्दरत्नावली। 'अम्भसा हेमरूप्यायः कांस्यं शुध्यति भस्मना। अम्लैस्ताम्रं च रैत्यं च पुनः पाकेन मृण्मयम्'—इति शुद्धितत्त्वम्। ६९

भा स्त्री. [भा दीप्तौ+'षिद्भिदादिभ्योऽङ्' इत्यङ्, टाप्] प्रभा; दीप्तिः; 'भायै दार्वाहारमिति'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (३०।१२)। ३८

भाः [स्] स्त्री. [भासते इति। भास् दीप्तौ+'भ्राज-भासधुर्विद्युतोर्जिपॄजुग्रावस्तुवः क्विप्'—इति क्विप्] दीप्तिः; 'अभूदु भा उ अंशवे हिरण्यं प्रति सूर्यः'—इति ऋग्वेदे (१।४६।१०)। पुं. सूर्यः; मयूखः; इच्छा। ३८

भागः पुं. [भज्यते इति, भज्+कर्मणि घञ्] अंशः; रूप्यार्द्धकः; भाग्यम्; एकदेशः; राशेस्त्रिंशभागैक-भागः; 'त्रिंशांशकस्तथा राशेर्भाग इत्यभिधीयते'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। [भज्+भावे घञ्] भजनम् [भगा-नाम् ऐश्वर्याणां समूहः इति, अण्] ऐश्वर्यसमूहः। ५२८

भागधेयम् क्ली. [भाग एव। भाग+'भागरूपनामभ्यो धेयः' इति धेय प्रत्ययः। अभिधानान्नपुंसकत्वम्] भाग्यं; भवितव्यता; विपाकः। १२६

भागधेयः पुं. [भागेन धीयते इति। धा+कर्मणि यत्] राजकरः; बलिः; दायादः। ४३३

भागार्हः त्रि. [भागम् अंशम् अर्हतीति। भाग+अर्ह्+अण्] भजनीयः; अंशयोग्यः; वितरणार्हः; दायः।८४४

भागार्हपित्र्यरिक्थम् क्ली. [भागार्हं पित्र्यं पितुरागतं

रिक्थं धनम्] दायः । ८४४

भागिनेयः पुं. [भगिन्या अपत्यम् । भगिनी+'स्त्रीभ्यो ढक्' इति ढक्] भगिनीपुत्रः; स्वस्रीयः; स्वस्रियः; 'ऋत्विक् पुत्रो गुरुर्भ्राता भागिनेयोऽथ विट्पतिः। एभिरेव हुतं यत्तु तद्धुतं स्वयमेव हि'—इति तिथ्यादितत्त्वम् । 'दौहित्रो भागिनेयश्च शूद्रैस्तु क्रियते सुतः। ब्राह्मणादित्रये नास्ति भागिनेयः सुतः क्वचित्'—इति दत्तकचन्द्रिकायाम् । ५०७

भागीरथी स्त्री. [भगीरथस्येयम् । भगीरथ+अण्+ङीप्] गङ्गा; 'भगीरथोऽनया स्तुत्या स्तुत्वा गङ्गां च नारद ! जगाम तां गृहीत्वा च यत्र नष्टाश्च सागराः । वैकुण्ठं ते ययुस्तूर्ण गङ्गायाः स्पर्शवायुना। भगीरथेन सानीता तेन भागीरथी स्मृता। इत्येवं कथितं सर्व गङ्गोपाख्यानमुत्तमम्। पुण्यदं मोक्षदं सारं किं भूयः श्रोतुमिच्छसि'—इति ब्रह्मवैवर्ते। ६७३

भाग्यम् क्ली. [भज्यतेऽनेन इति । भज्+'ऋहलोर्ण्यत्' इति ण्यत्। 'चजोः कु घिण्ण्यतोः' इति कुत्वम्] विपाकः; प्राक्तनशुभाशुभकर्म; दैवं; दिष्टं; भागधेयं; नियतिः; विधिः; भागः; भवितव्यता; प्राक्तनकर्म; फलोन्मुखीभूतपूर्वदैहिकशुभाशुभं कर्म; 'समुद्रमन्थने लेभे हरिर्लक्ष्मीं हरो विषम्। भाग्यं फलति सर्वत्र न विद्या न च पौरुषम्'—इति प्राञ्चः। उत्तराफाल्गुनीनक्षत्रम्; 'श्रवणानिलहस्तार्द्राभरणीभाग्योपगः सुतोऽर्कस्य। प्रचुरसलिलोपगूढां करोति धात्रीं यदि स्निग्धः'—इति बृहत्संहितायाम्। [भागो वृद्ध्यादिरस्मिन् दीयते इति। भाग+'भागाद्यच्च' इति यत्] भागिके त्रि.। [भागमर्हति । भाग+'दण्डादिभ्यो यत्' इति यत्] भागार्हम्; [भज+ण्यत्] भजनीयम्। १२६

भाङ्गीनम् त्रि. [भङ्गाया भवनं क्षेत्रम्। 'विभाषा तिलमाषोमाभङ्गाणुभ्यः' इति पक्षे खञ्] भङ्गाक्षेत्रं; भाङ्गयम्; 'एवं माष्यन्तु माषीणं कौद्रव्यं कोद्रवीणवत्। तथा भाङ्गयं च भाङ्गीनमुम्यमौमीनमित्यपि'—इति शब्दरत्नावल्याम्। १६३

भाजनम् क्ली. [भाज्यते इति, भाज् पृथक्करणे+ल्युट्] पात्रम्; 'राजतं भाजनं हृत्वा कपोतः सम्प्रजायते' –इति महाभारते. (१३।१११।१०२)। योग्यम्; 'तस्माज्जितात्मा राजा स्याद्युक्तदण्डो विशेषवित् । प्रजानुरागादेवं हि स भवेद्भाजनं श्रियः'—इति कथासरित्सागरे (३४।२०५) । 'यः संवादयते नित्यं योऽभिवादांस्तितिक्षति । यश्च तप्तो न तपति दृढं सोऽर्थस्य भाजनम्'—इति मत्स्यपुराणम्। आढकपरिमाणम् । ३२७

भाटकः पुं.–क्ली. [भटतीति,भट् भृतौ+ण्वुल्] व्यवहारार्थं दत्तशकटादिलभ्यधनम्; 'भाड़ा' इति भाषा । 'परभूमौ गृहं कृत्वा भाटयित्वा वसेत्तु यः । स तद् गृहीत्वा निर्गच्छेत् तृणकाष्ठेष्टकादिकम्। गृहवाप्यापणादीनि गृहीत्वा भाटकेन यः । स्वामिनो नार्पयेद्यावत्तावद्दाप्यः स भाटकम् ।' 'हस्त्यश्वगोखरोष्ट्रादीन् गृहीत्वा भाटकेन यः। स्वामिनो नार्पयेद्यावत् तावद्दाप्यः स भाटकम् ।' 'यो भाटयित्वा शकटं नीत्वा नान्यत्र गच्छति। भाटं न दद्याद्दाप्योऽसावनूढस्यापि भाटकम्।' ५७३

भाण्डागारः पुं. [भाण्डानां पात्रादीनामागारः] गृहविशेषः; मन्थरः; 'भाण्डागारायुधागारान् योधागारांश्च सर्वशः। अश्वागारान् गजागारान् बलाधिकरणानि च'—इति महाभारते (१२।६९।५४) । ७९७

भाण्डादिरतः पुं. [भाण्डादयो नटविदूषकादयः तेषु रतः] पञ्चजनीनः; भण्डोक्तिनृत्यादिष्वासक्तः। ३६८

भानुः पुं. [भाति चतुर्दशभुवनेषु स्वप्रभया दीप्यते इति। भा+'दाभाभ्यां नुः' इति नु] सूर्यः; 'अनन्तः कपिलो भानुः कामदः सर्वतोमुखः'—इति महाभारते (३।३।२४)। किरणः (३९); 'भद्रा ददृक्ष उर्विया विभास्युत्ते शोचिर्भानवो द्यामपप्तन्'–इति ऋग्वेदे (६।६४।२)। 'भानवो रश्मयः'–इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। अर्कवृक्षः; प्रभुः; राजा; वृत्तार्हत्पितृविशेषः; यादवविशेषः; 'कन्यां भानुमतीं नाम भानोर्दुहितरं नृप ! जहारात्मवधाकाङ्क्षी निकुम्भो नाम दानवः'—इति हरिवंशे (१४७।२)। विष्णुः; 'सर्वगः सर्वविद्भानुर्विष्वक्सेनो जनार्दनः'—इति महाभारते (३।३।२४)। प्राधायाः पुत्रभेदः; 'विश्वावसुश्च भानुश्च सुचन्द्रो दशमस्तथा। इत्येता देवगन्धर्वाः प्राधायाः परिकीर्तिताः'–इति महाभारते (१।६५।४८)। अङ्गिरःसृष्टस्तपसः पुत्रभेदः; 'तपसश्च मनुं पुत्रं भानुं चाप्यङ्गिराः सृजत्'–इति महाभारते (३।२२०।८)। स्त्री. [भातीति । भा+नु] भानुमती; दक्षकन्याभेदः; 'शृणुध्वं देव-

मातृणां प्रजाविस्तारमादितः। मरुत्वती वसुर्यामी लम्बा भानुररुन्धती'—इति मत्स्यपुराणे (५।१५)। ३६

भानुमान् [त्] पुं. [भानवः सन्त्यस्येति। भानु+मतुप्] सूर्यः; रविः; आदित्यः; 'अथोपनिन्ये गिरिशाय गौरी तपस्विने ताम्ररुचा करेण। विशोषितां भानुमतो मयूखैर्मन्दाकिनीपुष्करबीजमालाम्'—इति कुमारसम्भवे (३।६५)। कलिङ्गदेशजनृपतिविशेषः; 'भानुमांस्तु ततो भीमं शरवर्षेण दारयन्। ननाद बलवन्नादं नादयानो नभस्तलम्'—इति महाभारते (६।५४।३३)। केशिध्वजस्य पुत्रः; 'भानुमांस्तस्य पुत्रोऽभूच्छतद्युम्नस्तु तत्सुतः'—इति भागवते (९।१३।२१)। दीप्तियुक्ते त्रि.। 'चर्माण्यपि च गात्रेषु भानुमन्ति दृढानि च'—इति महाभारते (१।३०।४७)। ३६

भामिनी स्त्री. [भामते इति, भाम् क्रोधे+णिनि+ङीप्] स्त्रीमात्रम्; 'एकदा दानवेन्द्रस्य शर्मिष्ठा नाम कन्यका। सखीसहस्रसंयुक्ता गुरुपुत्री च भामिनी'—इति भागवते (९।१८।६)। कोपना स्त्री; तुनयनामकगन्धर्वस्य दुहिता; 'राजपुत्र! सुतेयं मे भामिनी नाम मानिनी। अभिशापादगस्त्यस्य विशालतनयाभवत्'—इति मार्कण्डेयपुराणे (१२८।७)। ४८१

भारः पुं. [भ्रियते इति, भृ भरणे+'अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्' इति घञ्] विंशतितुलापरिमाणं; तत्तु अष्टसहस्रतोलकात्मकम्। वीवधः; 'अविश्रामं वहेद्भारं शीतोष्णं च न विन्दति। ससन्तोषस्तथा नित्यं त्रीणि शिक्षेत गर्दभात्'—इति चाणक्यः। विष्णुः; गुरुत्वं; गुरुत्वगुणवद्वस्तु। ७५८

भारती स्त्री. [भृ+अतच्, प्रज्ञाद्यणि स्त्रियां ङीप्] सरस्वती; 'वीणापुस्तकरञ्जितहस्ते ! भगवति! भारति! देवि! नमस्ते'—इति कालिदासः। वचनम्; 'तमर्थमिव भारत्या सुतया योक्तुमर्हसि'—इति कुमारे (६।७९)। पक्षिभेदः; वृत्तिभेदः; 'शृङ्गारे कौशिकी वीरे सात्वत्यारभटी पुनः। रसे रौद्रे च बीभत्से वृत्तिः सर्वत्र भारती।' 'भारतीवृत्तिस्तु भारती, संस्कृतप्रायो वाग्व्यापारो नराश्रयः'–इति साहित्यदर्पणे ६ परिच्छेदः। ब्राह्मी; शङ्कराचार्यशिष्यतोटकस्य शिष्याणामन्यतमस्य उपाधिविशेषः; 'विद्याभारेण सम्पूर्णः सर्वभारं परित्यजेत्। दुःखभारं न जानाति भारती परिकीर्तितः—'इति प्राणतोषिण्यामवधूतप्रकरणे। नदीविशेषः; 'भारती सुप्रयोगा च कावेरी मुर्मुरा तथा'—इति महाभारते (३।२२१।२५)। ८

भारयष्टिः स्त्री. [भारस्य यष्टिः] भारवहनदण्डः; विहङ्गिका। ७५८

भार्गवः पुं. [भृगोरपत्यम्, तद्गोत्रापत्यमिति। भृगु+अण्] शुक्राचार्यः; 'तस्मिन्नियुक्ते विधिना योगक्षेमाय भार्गवे। अन्यमुत्पादयामास पुत्रं भृगुरनिन्दितम्'—इति महाभारते (१।६६।४५)। परशुरामः; धन्वी; गजः; भारतवर्षमध्ये प्राच्यदेशान्तर्गतदेशविशेषः; 'ब्रह्मोत्तराः प्रविजया भार्गवा ज्ञेयमर्दकाः'—इति मार्कण्डेयपुराणम्। कुलालः; 'गत्वा तु तां भार्गवकर्मशालां पार्थौ पृथां प्राप्य महानुभावौ'—इति महाभारते (१।१९२।१)। 'भृगुः-स्वघटवृत्तिः, जीविकार्थं भृगुणा व्यवहरतीति भार्गवः कुलालः'—इति तट्टीकायां नीलकण्ठः। मार्कण्डेयः; 'इत्युक्त्वा ते जग्मुराशु चत्वारोऽमिततेजसः। पृथिवीकाश्यपश्चाग्निः प्रकृष्टायुश्च भार्गवः'—इति महाभारते (१३।२२।१५)। शौनकः; 'तथेति चाब्रवीद्विष्णुर्ब्रह्मणा सह भार्गव!'—इति महाभारते (१।१७।६)। भृगुवंशीये त्रि.। 'शृणु रामस्य राजेन्द्र भार्गवस्य च धीमतः'—इति महाभारते (३।९९।४१७)। ४८

भार्या स्त्री. [भरणीया इति। भृ+'ऋहलोर्ण्यत्' इति ण्यत्, टाप्। यद्वा भया दीप्त्या आर्या] वेदविधानेनोढा; विधिपूर्वकविवाहिता; पत्नी; पाणिगृहीती; द्वितीया; सहधर्मिणी; जाया; दाराः; धर्मचारिणी; दारः; कलत्रं; कलत्रकम्; 'सा भार्या या गृहे दक्षा सा भार्या या प्रियंवदा। सा भार्या या पतिप्राणा सा भार्या या पतिव्रता'—इति गारुडे। ४९४

भालुकः पुं. [भलते हिनस्ति प्राणिनः इति। भल् हिंसायाम्+बाहुलकात् उक, ततः प्रज्ञाद्यण्] भल्लूकः; 'भालू' इति भाषा। 'भालूको भालुको भल्लोऽच्छभल्लोऽप्यच्छभल्लुकः'—इति कोषान्तरे। २२९

भालूकः पुं. [भलते हिनस्ति जीवानिति। भल्+'उलूकादयश्च' इति ऊक, ततः प्रज्ञाद्यण्] भल्लूकः; ऋक्षः; 'भालू' इति भाषा। २२८

भाल्लुकः पुं.– भल्लूकः; ऋक्षः; 'भालू' इति भाषा २२८

भावः पुं. [भावयति चिन्तयति पदार्थानिति। भू+

णिच्+पचाद्यच् । भवतीति । भू+'भवतेश्चेति वक्तव्यम्' इति काशिकोक्तेर्ण वा] मानसविकारः; सत्ता; 'नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः। उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः'—इति भगवद्गीतायाम् (२।१६)। नाट्योक्तौ विद्वान् (९८); स्वभावः; अभिप्रायः; 'तस्य धर्मार्थविदुषो भावमाज्ञाय सर्वशः। ब्राह्मणा बलमुख्याश्च पौरजानपदैः सह'—इति रामायणे (२।२।१९)। 'दानधर्मं निषेवेत नित्यपौष्टिकपौर्तिकम्। परितुष्टेन भावेन पात्रमासाद्य भक्तितः'—इति मनुः (४।२२७)। (८५०) चेष्टा; आत्मा; जन्म; चित्तं; अभिप्रायः। क्रिया; लीला; विभूतिः; बुधः; जन्तुः; पदार्थः; 'अतीन्द्रियेष्वप्युपपन्नदर्शनो बभूव भावेषु दिलीपनन्दनः'—इति रघौ (३।४१)। गौरवितः; अभिनयान्तरम्; विषयः; 'अवश्यम्भाविनो भावा भवन्ति महतामपि। नग्नत्वं नीलकण्ठस्य महाहिशयनं हरेः'—इति हितोपदेशे। पर्यालोचना; 'यदा भावेन भवति सर्वभावेषु निस्पृहः। तदा सुखमवाप्नोति प्रेत्य चेह च शाश्वतम्'—इति मनुः (६।८०)। प्रेम; 'इति मत्वा भजन्ते माम् बुधा भावसमन्विताः'—इति भगवद्गीतायाम् (१०।८)। धात्वर्थः; 'यस्य च भावेन भावलक्षणम्' 'यस्य क्रियया क्रियान्तरं लक्ष्यते'—इति सिद्धान्तकौमुदी। योनिः; उपदेशः; संसारः; नवग्रहाणां शयनादिद्वादशचेष्टाः; 'शयनं चोपवेशश्च नेत्रपाणिप्रकाशनम्। गमनं गमनेच्छा च सभायां वसतिस्तथा। आगमनं भोजनं च नृत्यलिप्सा च कौतुकम्। निद्रा ग्रहाणां भावाश्च द्वादशैते प्रकीर्तिताः'—इति ज्योतिषे। स्त्रीणां यौवनकाले स्वभावजाष्टाविंशत्यलङ्कारान्तर्गताङ्गजप्रथमालङ्कारः; 'यौवने सत्त्वजास्तासामष्टाविंशतिसंख्यकाः। अलङ्कारास्तत्र भावहावहेलास्त्रयोऽङ्गजाः। निर्विकारात्मके चित्ते भावः प्रथमविक्रिया'—इति साहित्यदर्पणे। 'सञ्चारिणः प्रधानानि देवादि विषया रतिः। उद्बुद्धमात्रः स्थायी च भाव इत्यभिधीयते'—इति साहित्यदर्पणे। भगवद्भावः; 'शुद्धसत्त्वविशेषात्मा प्रेमसूर्यांशुसाम्यभाक्। रुचिभिश्चित्तमासृण्यकृदसौ भाव उच्यते'—इति भक्तिरसामृतसिन्धुः। ९०

भावनम् क्ली. [भू+णिच्+ल्युट्] भव्यं; [भावे ल्युट् । भावना; 'सुखदुःखादिभिर्भावैर्भावस्तद्भावभावनम्'—इति साहित्यदर्पणे। [भावयतीति। भू+णिच्+ल्यु] उत्पादके त्रि.। 'दृष्ट्वैव च स राजानं शङ्करो लोकभावनः। उवाच परमप्रीतः श्वेतकिं नृपसत्तमम्'—इति महाभारते (१।२२४।४५)। ८७५

भावुकः त्रि. [भू+उकञ्] नाट्योक्तौ भगिनीपतिः। ९९

भावुकम् क्ली. [भवतीति, भू+'लषपतपदस्थाभूवृषेति' उकञ्] मङ्गलम्; 'शक्र! सर्वत्र कुशलमस्माकम्। अपि भावुकं वः सुराणाम्'—इति प्रद्युम्नविजये १ अङ्के। तद्वति त्रि.। त्रि. भवनाश्रयः। भवति यः [इति कर्तरि भूधातोर्निष्पन्नः]; रसविशेषभावनाचतुरः; 'निगमकल्पतरोर्गलितं फलं, शुकमुखादमृतद्रवसंयुतम्। पिबत भागवतं रसमालयं मुहुरहो रसिका भुवि भावुकाः'—इति भागवते (१।१।३)। १२२

भाषणम् क्ली. [भाष्+भावे ल्युट्] कथनम्; 'संलापो भाषणं मिथः'—इत्यमरः। 'हास्यलोभभयक्रोधप्रत्याख्याने निरन्तरम्। आलोच्य भाषणेनापि भाषयेत् सूनृतं व्रतम्'—इति सर्वदर्शनसंग्रहे आर्हतदर्शने। १५०

भाषा स्त्री. [भाष्यते शास्त्रव्यवहारादिना प्रयुज्यते इति। भाष्+'गुरोश्च हलः' इत्यप्रत्ययः। टाप्] वाग्देवता; ब्राह्मी; भारती; गीः; वाक्; वाणी; सरस्वती; व्याहारः; उक्तिः; लपितं; भाषितं; वचनं; वचः; वाक्यम्; 'संस्कृतैः प्राकृतैर्वाक्यैरर्थं शिष्यानुरूपतः। देशभाषाद्युपायैश्च बोधयेत् स गुरुः स्मृतः'—इति व्यवहारतत्त्वम्। ८

भाषा स्त्री.— रागिणीभेदः। १०४ अ

भासः पुं. [भास्यते इति, भास्+भावे घञ्] दीप्तिः; 'चन्द्रनक्षत्रभासैश्च वदनैश्चारुकुण्डलैः'—इति महाभारते (८।५८।३१)। [भासन्ते गावोऽत्र। भास्+अधिकरणे घञ्] गोष्ठं; [भासते दीप्यते इति। भास्+कर्तरि अच्] कुक्कुटः; गृध्रः; पर्वतप्रभेदः; 'हिमवान् पारियात्रश्च सह्यो विन्ध्यस्त्रिकूटवान्। श्वेतो नीलश्च भासश्च कोष्ठवांश्चैव पर्वतः'—इति महाभारते (१।१३४।७०)। स्वनामख्यातपक्षिविशेषः; शकुन्तः; 'कृत्रिमं भासमारोप्य वृक्षाग्रे शिल्पिभिः कृतम्। अभिज्ञानं कुमाराणां लक्ष्यभूतमुपादिशत्'—इति महाभारते (१।१३४।७०)। कविविशेषः; 'भासो हासः कविकल-

गुरुः कालिदासो विलासः ।' २४७

भास्करः पुं. [भाः करोतीति । भास्+कृ+'दिवाविभेति' ट] । सूर्यः; 'प्रतिगृह्योप्सितं दण्डमुपस्थाय च भास्करम् । प्रदक्षिणं परीत्याग्निं चरेद्भैक्षं यथाविधि'—इति मनुः (२।४८) । अग्निः; वीरः; अर्कवृक्षः; ब्रह्मसूत्रभाष्यकृद् भास्करभट्टः; भास्कराचार्यः; स च सिद्धान्तशिरोमण्यादिज्योतिर्ग्रन्थकर्ता । क्ली. सुवर्णम् । ३५

भास्वान् [त्] पुं. [भासः सन्त्यस्येति । भास्+'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' इति मतुप्, मस्य वः] सूर्यः; रविः; आदित्यः; इनः; 'यथा चाराधितो देव्या सोऽदित्या कश्यपेन च । आराधितेन चोक्तं यत् तेन देवेन भास्वता'—इति मार्कण्डेयपुराणे (१०१।१६) । अर्कवृक्षः; दीप्तिः; वीरः; दीप्तिविशिष्टे त्रि. । 'यं सर्वशैलाः परिकल्प्य वत्सं, मेरौ स्थिते दोग्धरि दोहदक्षे । भास्वन्ति रत्नानि महौषधींश्च पृथूपदिष्टां दुदुहुर्धरित्रीम्'—इति कुमारसम्भवे । (१।२) । प्रकाशकः; 'वायोरपि विकुर्वाणाद्विरोचिष्णु तमोनुदम् । ज्योतिरुत्पद्यते भास्वत्तद्रूपगुणमुच्यते'—इति मनुः (१।७७) । 'भास्वत् प्रकाशकम्'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । ३५

भिक्षुः पुं. [भिक्ष् याचने+'सनाशंसभिक्ष उः' इति उ] भिक्षणशीलः; ब्रह्मचर्याद्याश्रमचतुष्टयान्तर्गतचतुर्थाश्रमी; परिव्राट्; कर्मन्दी; पाराशरी; मस्करी; परिव्राजकः; पराशरी; व्रजकः; भिक्षुकः; 'भिक्षोर्धर्मं प्रवक्ष्यामि तन्निबोधत सत्तमाः । वनाद् गृहाद्वा कृत्वेष्टिं सर्ववेदसदक्षिणाम्'—इति गारुडे । 'चतुर्थश्चाश्रमो भिक्षोः प्रोच्यते यो मनीषिभिः । तस्य स्वरूपं गदतो मम श्रोतुं नृपार्हसि । पुत्रद्रव्यकलत्रेषु त्यक्तस्नेहो नराधिप ! चतुर्थमाश्रमस्थानं गच्छेन्निर्धूतमत्सरः'—इति विष्णुपुराणे । बुद्धभेदः; श्रावणीक्षुपः; कोकिलाक्षः । ४०९

भिक्षुकी स्त्री. [भिक्षुरेव, भिक्षु+स्वार्थे कन् । स्त्रियां ङीप् । यद्वा भिक्षते इति । भिक्ष+उक+स्त्रियां ङीप्] याचकी; भिक्षोपजीविनी स्त्री । ४८७

भित्तम् क्ली. [भिद्यते स्मेति । भिद्+क्त । 'भित्तं शकलम्' इति निष्ठातकारस्य नत्वाभावो निपात्यते] खण्डम् । ७१३

भित्तिः स्त्री. [भिद्यते इति । भिद्+क्तिन्] गृहादेर्मृदिष्टकादिमयी वृतिः । कूड्यं; भित्तिका; कुड्यं; कुड्यकम्; 'मानेनानेन विस्तारो भित्तीनान्तु विधीयते । पादे पञ्चगुणं कृत्वा भित्तीनामुच्छ्रयो भवेत्'—इति विश्वकर्मप्रकाशे । प्रभेदः; संविभागः; अवकाशः; प्रदेशः; 'अथोपरिष्टाद् भ्रमरैर्भ्रमद्भिः प्राक् सूचितान्तःसलिलप्रवेशः । निर्धौतदानामलगण्डभित्तिर्वन्यः सरित्तो गज उन्ममज्ज'—इति रघौ (५।४३) । ८४९

भिदकम् क्ली. [भिनत्तीति, भिद्+क्वुन्] वज्रं; पुं. खड्गः । ५६

भिदिरम् क्ली. [भिनत्ति विदारयतीति । भिद्+'इषिमदिमुदिखिदिच्छिदिभिदिमन्दीति' किरच्] वज्रं; भिदकं; भिदिः; भिदुः । ५६

भिदुरम् क्ली. [भिनत्तीति, भिद्+'विदिभिदिच्छिदेः कुरच्' इति कुरच्] वज्रं; भिदुः; भिदिरं; भिदिः; भिदकं; भिद्रः । ५६

भिद्यः पुं. [भिनत्ति कूलमिति । भिद्+'भिद्योद्ध्यौ नदे' इति क्यप् निपातितः] नदः; 'समुत्तरन्तावव्यथ्यौ नदान् भिद्योद्ध्यसन्निभान् । सिध्यतारामिव ख्यातां शवरीमापतुर्वने'—इति भट्टिः (६।५९) । ६६६

भिण्डिबालः पुं.— भिन्दिपालः; भिन्दिवालः; शस्त्रजातिभेदः; सृगः । ४७६

भिन्दिपालः पुं. [भिद्+इन् । भिन्दिं विदारणं पालयतीति । पालि+अण्] हस्तप्रमाणकाण्डः; नालिकास्त्रं; हस्तक्षेप्यलगुडः; सृगः; 'भिन्दिपालस्तु वक्राङ्गो नम्रशीर्षो बृहच्छिराः । हस्तमात्रोत्सेधयुक्तः करसम्मितमण्डलः'—इति. वैशम्पायनसंहितायाम् । ४७६

भिन्दिबालः पुं.–भिन्दिपालः; सृगः; शस्त्रजातिभेदः । ४७६

भिन्दुः स्त्री. [भिद्+मृगय्वादित्वात् कु बाहुलकान्नुम् च] नश्यत्प्रसूतिः; अजीवत्पुत्रिका स्त्री । ४८८

भिल्लः पुं. [भेलयति भिलतीति वा । भिल्+बाहुलकात् लक्] म्लेच्छजातिविशेषः; 'भील' इति भाषा । 'माला भिल्लाः किरातश्च सर्वेऽपि म्लेच्छजातयः'—इति हेमचन्द्रः । 'रजकश्चर्मकारश्च नटो वरुड एव च । कैवर्तमेदभिल्लाश्च सप्तैते अन्त्यजाः स्मृताः'—इति प्रायश्चित्ततत्त्वम् । 'पुलिन्दमेदभिल्लाश्च पुल्लो मल्लश्च धावकः । कुन्दकारो डोखलो वा मृतपो हस्तिपस्तथा । एते वै तीवराज्जाताः कन्यायां ब्राह्मणस्य च'—इति पराशर-

पद्धतिः। ५९९

भिषक् [ज्] पुं. [बिभेति रोगो यस्मादिति । ञिभी भये, +'भियः षुग् ह्रस्वश्च' इति अजि, षुगागमो ह्रस्वश्च] वैद्यः; आयुर्वेदी; दोषज्ञः; चिकित्सकः; 'अज्ञातौषधिमन्त्रस्तु यश्च व्याधेरतत्त्ववित्। रोगिभ्योऽर्थं समादत्ते स दण्डयश्चौरवद्भिषक्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। ६१२

भिस्सा स्त्री. [बभस्तीति, भस् दीप्तौ+बाहुलकात् स, 'छन्दसि बहुलमि'तीत्वम् । ब्राह्मणभिस्सेति भाष्यप्रयोगाल्लोकेऽपि । यद्वा भेदनमिति, भिद्+क्विप्, भिदं स्यतीति । सो+'आतोऽनुपसर्गे कः' इति क । पृषोदरादित्वात् साधुः] अन्नं; भक्तम्, अन्धः; कूरम्; ओदनः; दीदिविः; 'भक्तमन्नं तथान्धश्च क्वचित् कूरं च कीर्तितम्। ओदनोऽस्त्री स्त्रियां भिस्सा दीदिविः पुंसि भाषितः' —इति भावप्रकाशः । ३१९

भीतः त्रि. [भी भये+क्त] भययुक्तः; दरितः; चकितः; त्रस्तः; 'यस्तु भीतः परावृत्तः संग्रामे हन्यते परैः। भर्तुर्यद् दुष्कृतं किञ्चित् तत्सर्वं प्रतिपद्यते'—इति मनुः (७।९४)। भयं; भीतिः। ३५४

भीमः पुं. [बिभेत्यस्मादिति, भी+मक्] शिवः; महादेवः; 'भवं सर्वं तथेशानं तथा पशुपतिं प्रभुः। भीममुग्रं महादेवमुवाच स पितामहः'—इति मार्कण्डेये (५२।७)। भयानकरसः; 'भयानको भयस्थायिभावः कालाधिदैवतः । स्त्रीनीचप्रकृतिः कृष्णो मतस्तत्त्वविशारदैः' —इत्यमरटीकायां भरतः । विष्णुः; 'अतुलः शरभो भीमः समयज्ञो हविर्हरिः'—इति महाभारते। भीमसेनः; वीरवेणुः; वृकोदरः; बकजित्; कीचकजित्; मध्यमपाण्डवः; 'तस्माज्जज्ञे महाबाहुर्भीमो भीमपराक्रमः'—इति महाभारते (१।१२३।१३)। अम्लवेतसः; महादेवस्याष्टमूर्त्यन्तर्गताकाशमूर्तिः; 'भीमाय आकाशमूर्तये नमः' इति शिवपूजाप्रयोगः। गन्धर्वविशेषः; 'भीमश्चित्ररथश्चैव विख्यातः सर्वविद्वशी'—इति महाभारते (१।६५।४३)। पुरुवंशीयस्य ईलिनस्य पुत्रः; 'ईलिनो जनयामास दुष्यन्तप्रभृतीन् नृपान् । दुष्यन्तं शूरभीमौ च प्रवसुं वसुमेव च'—इति महाभारते (१।९४।१८)। १२

भीमम् त्रि. [बिभेत्यस्मादिति । भी+'भियः षुग्वा' इति मक्] भयहेतुः; भैरवं; दारुणं; भीषणं; भीष्मं; घोरं; भयानकं; भयङ्करं; प्रतिभयं; भयावहम्, आभीलम्; 'भीमकान्तैर्नृपगुणैः स बभूवोपजीविनाम्। अधृष्यश्चाभिगम्यश्च यादोरत्नैरिवार्णवः'—इति रघौ (१।१६)। ७०५

भीरुः त्रि. [बिभेतीति, भी भये+'भियः क्रुक्लुकनौ' इति क्रु] भयशीलः; त्रस्नुः; भीरुकः; भीलुकः; भीलुः; दरितः; चकितः; भीतः; त्रस्तः; कातरः । स्त्री. भयप्रकृतिका (४८१); 'सत्यं भीरु वदस्येतत् परिहासोऽथवा शुभे!, दिनमेकमहं मन्ये त्वया सार्द्धमिहासितम्'—इति विष्णुपुराणे (१।१५।३३)। शतावरी; 'बहुपुत्री वरा भीरुः शतमूली शतावरी। महापुरुषदन्ता च पीवरीन्दीवरी वरी'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । कण्टकारी; शतपादिका; अजा; छाया; स्त्री। पुं. शृगालः; व्याघ्रः; इक्षुभेदः । ३५४

भीषणः त्रि. [भीषयते इति। भी+णिच्+ततो नन्द्यादित्वात् ल्यु षुगागमश्च] दारुणः; भीष्मः; भयानकः; 'पर्णशालामथ क्षिप्रं विकृष्टासिः प्रविश्य सः । वैरूप्यपौनरुक्तेन भीषणां तामयोजयत्'—इति. रघौ (१२।४०)। गाढः; पुं. भयानकरसः; कुन्दुरुकः; कपोतः; हिन्तालः; शिवः; शल्लकी; भयोत्पादने क्ली.। 'व्यसनं भेदनं चैव शत्रूणां कारयेत्ततः। कर्षणं भीषणं चैव युद्धे चैव बलक्षयम्'—इति महाभारते (१५।७।४)। ७०५

भीष्मम् त्रि. [बिभेत्यस्मादिति। भी+'भियः षुग् वा' इति मक् षुगागमश्च] भयानकं; भयङ्करम्; 'सहोवाच भीष्मं बत भोः पुरुषान् वा'—इति शतपथब्राह्मणे (११।६।१।३)। 'भीष्मं भयङ्करम्'—इति तद्भाष्ये महीधरः। पुं भयानकरसः; शिवः; राक्षसः; गाङ्गेयः; स च शान्तनुराजचक्रवर्तिनो गङ्गायां भार्यायां जातः; भीष्मपितामहः । ७०५

भुक्तशेषम् त्रि. [आदौ भुक्तं पश्चात् शेषं परित्यक्तम्] भुक्तसमुज्झितं; फेला; पिण्डं; फेलिः; भुक्तोच्छिष्टं; विघसः । ३२६

भुक्तिः स्त्री. [भुज्+क्तिन्] भोजनं; भोगः; 'भुक्तिस्त्रिपुरुषी सिद्धचेदपरेषां न संक्षयः। अनिवृत्ते सपिण्डत्वे सकुल्यानां न सिद्धयति । आहर्ता शोधयेद्भुक्तिमागमञ्चापि संसदि । तत्सुतो भुक्तिमेवैकां पौत्रादिषु न

किञ्चन'—इति दायतत्त्वम् । रविभुक्तिः; भोगः; ग्रहादिभोगः; प्रमाणचतुष्टयान्तर्गतप्रमाणविशेषः; 'प्रमाणं लिखितं भुक्तिः साक्षिणश्चेति कीर्तितम् । एषामन्यतमाभावे दिव्यान्यतममुच्यते'—इति व्यवहारतत्त्वम् । रविभुक्तिर्यथा—'सार्द्धसप्त झषे मेषे वसुः सार्द्धे घटे वृषे । दशैव मकरे द्वन्द्वे पलानि प्रतिवासरम् । कुलीरसिंहप्रमदातुलालिकार्मुकेषु च । पलान्येकादश तथा रविभुक्ति प्रचक्षते'—इति ज्योतीरत्नमाला । ८२८

भुक्तोच्छिष्टम् त्रि. [भुक्ताद् उच्छिष्टम्] भुक्तसमुज्झितं; भुक्तशेषम् । ३२६

भुग्नः त्रि. [भुजो कौटिल्ये+क्त, 'ओदितश्च' इति निष्ठातस्य न] वक्रः; कुटिलः; नतः; 'साश्रुणी कलुषे रक्ते भुग्ने लुलितपक्ष्मणी । अक्षिणी पिण्डिकापार्श्वमूर्द्धपर्वास्थिरुग्भ्रमः'—इति वाग्भटः । 'पीने भटस्योरसि वीक्ष्य भुग्नांस्तनुत्वचः पाणिरुहान् सुमध्या'—इति भट्टिः (११।८) । रोगादिना कुटिलीकृतः; रुग्णः । ६९६

भुजः पुं.– स्त्री. [भुजति वक्रीभवतीति, भुज्+'इगुपधज्ञेति' क । यद्वा भुज्यतेऽनेनेति, भुज्+'हलश्चेति' घञ्, 'भुजन्युब्जौ पाण्युपतापयोः' इति घञि गुणाभावः, कुत्वाभावश्च निपात्यते] बाहुः; प्रवेष्टः; दोः; वाहुः; वाहा; भुजा; दोषः; दोषा; करः । 'भुजे भुजङ्गेन्द्रसमानसारे भूयः स भूमेर्धुरमाससञ्ज'—इति रघौ (२।७४) । हस्तिशुण्डः; 'नकुलस्तस्य नागस्य समीपपरिवर्तिनः । सविषाणं भुजं मूले खड्गेन निरकृन्तत'—इति महाभारते (३।२७०।२१) । ग्रहस्पष्टीकरणार्थं राशित्रयादूनकेन्द्रग्रहादिः; (राशित्रयादधिकनवपर्यन्तषडन्तरितावशेषः । नवराशिभ्योऽधिकं चेत् तदा द्वादशराशिभ्यः शोध्यश्च भुजः स्यात् ।') 'दोस्त्रिभोनं त्रिभोद्र्ध्वं विशोध्यं रसैश्चक्रतोऽङ्काधिकं स्याद्भुजोनं त्रिभम् । कोटिरेकैककं त्रित्रिभैः स्यात्पदं सूर्यमन्दोच्चमष्टाद्रयोंऽशा भवेत्'—इति ग्रहलाघवम् । क्षेत्रस्य परिमाणविशेषः; 'कोटिश्चतुष्टयं यत्र दोस्त्रयं तत्र का श्रुतिः । कोटिं दोः कर्णतः कोटिश्रुतिभ्यां च भुजं वद । इष्टो बाहुर्यः स्यात्तत्स्पर्द्धिन्यां दिशीतरो बाहुः । त्र्यस्रे चतुरस्रे वा सा कोटिः कीर्तिता तज्ज्ञैः । तत्कृत्योर्योगपदं कर्णः दोः कर्णवर्गयोर्विवरात् । मूलं कोटिः तच्छ्रुतिकृत्योरन्तरात् पदं बाहुः'—इति लीलावत्यां क्षेत्रव्यवहारः । ५२२

भुजगः पुं. [भुजः वक्रः सन् गच्छतीति । भुज+गम्+'अन्येष्वपि' इति ड, ततः टिलोपः] सर्पः; 'तस्मिन् हित्वा भुजगवलयं शम्भुना दत्तहस्ता, क्रीडाशैले यदि च विचरेत् पादचारेण गौरी'—इति मेघदूते (६२) । ६४०

भुजङ्गः पुं. [भुजः वक्रः सन् गच्छतीति । भुज+गम्+खच्, खित्वान्मुम्, 'खच्च डिद्वा वाच्यः' इति डित्वपक्षे टिलोपः] षिड्गः; वेश्यापतिः । (६४०) विषधरः; सर्पः; 'आक्रान्तपूर्वमिव मुक्तविषं भुजङ्गं प्रोवाच कोशलपतिः प्रथमापराद्धः'—इति रघौ (९।७९) । सीसम्; 'सीसं वध्रं च वप्रं च योगेष्टं नागनामकम्'—इति भावप्रकाशः । नागनामकं; नागः; भुजङ्गः; 'त्रिशङ्कुागा भुजङ्गस्य गन्धपाषाणपञ्चकम् । शुरतालकयोर्द्वौ द्वौ वङ्गस्यैकोऽञ्जनात् त्रयम् । अन्धमूषीकृतं ध्मातं पक्वं विमलमञ्जनम्'—इति वाग्भटः । ३८२

भुजङ्गमः पुं. [भुज् कौटिल्ये+'इगुपधेति' क, भुजः कुटिलीभवन् गच्छतीति । भुज+गम्+'गमेः सुपि वाच्यः' इति खच्, 'खच्च डिद्वा वाच्यः' इति डिदभावे टिलोपाभावः] सर्पः; 'आरूढमद्रीनुदधीन् वितीर्णं भुजङ्गमानां वसतिं प्रविष्टम्'—इति रघौ (६।७७) । सीसके क्ली. । ६४०

भुजमध्यम् क्ली. [भुजयोर्मध्यम्] उरः; वक्षः;—रघुवंशे (१३।७३) । ५२७

भुजशिखरम् क्ली. [भुजस्य शिखरम्] भुजशिरः; स्कन्धः । ५४२

भुजा स्त्री. [भुज+टाप्] बाहुः; करः; 'अविरतकुसुमावचायखेदान्निहितभुजालतयैकयोपकण्ठम्'—इति माघे (७।७१) । ५२२

भुजाग्रम् क्ली. [भुजस्य अग्रम्] भुजशिरः; स्कन्धः । ५२५

भुजिष्यः पुं. [भुङ्क्ते स्वाम्युच्छिष्टमिति, भुज्यते इति वा । भुज+'रुचिभुजिभ्यां किष्यन्' इति किष्यन्] दासः; किङ्करः; सेवकः; 'किमहो नृपाः सममभीभिरुपपतिसुतैर्नं पञ्चभिः । वध्यमभिहत भुजिष्यममुं सह चानया स्थविरराजकन्यया'—इति माघे (१५।६३) । रोगः; स्वतन्त्रः; हस्तसूत्रम् । ३६५

भुवनम् क्ली. [भवन्त्यस्मिन् भूतानीति । भू+'भूसूधूभ्रस्जिभ्यश्छन्दसि' इत्यत्र क्युन्] जगत्; 'गुणैर्वरं

भुवनहितच्छलेन यं सनातनः पितरमुपागमत् स्वयम्' —इति भट्टिः (१।१)। सलिलं (६४८); गगनं; जनः; भूतजातम्; 'युवं ह गर्भं जगतीषु धत्थो युवं विश्वेषु भुवनेष्वन्तः'—इति ऋग्वेदे (१।१५७।५)। 'यस्यामिदं विश्वं भुवनमाविवेश तस्यां नो देवः सविता धर्म साविषत्'—इति यजुःसंहितायाम् (९।५)। भावनम्; 'तस्य भर्मणे भुवनाय देवा धर्मणे कं स्वधया पप्रथन्त'—इति ऋग्वेदे (१०।८८।१)। पुं. मुनिविशेषः; 'नितम्भूर्भुवनो धौम्यः शतानन्दोऽकृतव्रणः'—महाभारते (१३।२६।८)। १३३

भूः स्त्री. [भवत्यस्यामिति, भू+अधिकरणे क्विप्] पृथिवी; 'न चैनं भुवि शक्नोति कश्चिदप्यभिवीक्षितुम्' —इति मनुः (७।४६)। 'भूर्भूमिः पृथिवी पृथ्वी मेदिनी वसुधावनिः। क्षितिरुर्वी मही क्षौणी क्ष्मा धरा कुर्वसुन्धरा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। स्थानमात्रम्; 'यच्छक्तयो वदतां वादिनां वै विवादसंवादभुवो भवन्ति' —इति भागवते (६।४।३१)। यज्ञाग्निः। १५६

भूच्छायम् क्ली.—स्त्री.[भुवश्छाया। 'विभाषा सेनासुराच्छायाशालानिशानाम्' इति तत्पुरुषे विभाषया नपुंसकत्वम्] अन्धकारः; पृथ्वीप्रतिबिम्बम्। ११०

भूतम् त्रि. [भू+क्त] प्राणी; जन्तुः 'धिया चक्रे वरेण्यो भूतानां गर्भमादधे'—इति ऋग्वेदे (३।२७।९)। 'भूतानां च चतुर्विधा योनिर्जराय्वण्डस्वेदोद्भिदः'—इति चरकः। क्ली. पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशपञ्चकम्; 'तावुभौ भूतसम्पृक्तौ महान् क्षेत्रज्ञ एव च। उच्चावचेषु भूतेषु स्थितं तं व्याप्य तिष्ठतः'—इति मनुः (१२।१४)। अतीतम्; 'भूतं भवद् भविष्यद् वा किं तत् स्याज् जगति प्रिये !, भवती यन्न जानीयादिति शर्वोऽप्युवाच ताम्' —इति कथासरित्सागरे (१।२४)। पुं. देवयोनिविशेषः; 'विक्षिपेज्जुहुयाच्चैवानलं मित्रं च कीर्तयेत्। भूतानां मातृभिः सार्द्धं बालकानां तु शान्तये'—इति मार्कण्डेयपुराणे (५१।५३)। कुमारः; योगीन्द्रः; कृष्णचतुर्दशी; भूतनाशकौषधम्; 'श्वेतापराजितामूलं पिष्टं तण्डुलवारिणा। तेन नस्यप्रदानं स्याद्भूतवृन्दस्य विद्रवम्। अगस्त्यपुष्पनस्यो वै समरीचश्च भूतहृत्। भुजङ्गवर्म वै हिङ्गु निम्बपत्राणि वै यवाः। गौरसर्षप एभिः स्याल्लेपो भूतहरः कृतः। गोरोचना मरीचानि पिप्पली सैन्धवं मधु। अञ्जनं कृतमेभिः स्याद् ग्रहभूतहरं शिवे। वचा त्रिकटुकं चैव करञ्जं देवदारु च। मञ्जिष्ठा त्रिफला श्वेता शिरीषो रजनीद्वयम्। प्रियङ्गुनिम्बत्रिकटुगोमूत्रेणावघर्षितम्। नस्यमालेपनञ्चैव स्नानमुद्वर्तनं तथा। अपस्मारविषोन्मादशोषालक्ष्मीज्वरापहम्। भूतेभ्यश्च भयं हन्ति राजद्वारे च शासनम्'—इति गारुडे (१९२।१९९ अध्यायः)। शम्भुगणः; वसुदेवस्य पौरवीगर्भजातद्वादशपुत्राणां ज्येष्ठतमः; 'पौरव्यास्तनया ह्येते भूताद्या द्वादशाभवन्'—इति भागवते (९।२४।४७)। क्ली. युक्तं; न्याय्यः; क्ष्मादिः; ऋतं; सत्यं; पिशाचादि; 'एषा घोरतमा वेला घोराणां घोरदर्शना। चरन्ति यस्यां भूतानि भूतेशानुचराणि ह'—इति भागवते (३।१४।२१)। जन्तुः; 'स्वाध्याये नित्ययुक्तः स्याद्दान्तो मैत्रः समाहितः। दाता नित्यमनादाता सर्वभूतानुकम्पकः'—इति मनुः (६।८)। स्थावरजङ्गमात्मकं द्रव्यम्; 'रक्षन् धर्मेण भूतानि राजा वध्यांश्च घातयन्। यजतेऽहरहर्यज्ञैः सहस्रशतदक्षिणैः'—इति मनुः (८।३०६)। वस्तुतत्त्वम् 'छलं निरस्य भूतेन व्यवहारान्नयेन्नृपः। भूतमप्यनुपन्यस्तं हीयते व्यवहारतः'—इति मिताक्षरायाम्। ८५९

भूतग्रामः पुं. [भूतानां ग्रामः समूहः] प्राणिसमूहः; जन्तुसमूहः। ८११

भूतधात्री स्त्री. [भूतानि धरतीति। भू+धृ+तृच्+ङीप्] पृथिवी; 'निष्पन्नशालीक्षुयवादिसस्यां भयैर्विमुक्तामुपशान्तवैराम्। संहृष्टलोकां कलिदोषमुक्तां क्षत्रं तदा शास्ति च भूतधात्रीम्'—इति बृहत्संहितायाम् (८।३०)। १५७

भूतिः स्त्री. [भवत्यनयेति। भू+'क्तिच्क्तौ च संज्ञायाम्' इति क्तिच्] भस्म; 'क्षणं क्षणोत्क्षिप्तगजेन्द्रकृत्तिना स्फुटोपमं भूतिसितेन शम्भुना'—इति माघे (१।४)। भरूटकम् (३२३); ऐश्वर्यं (८०९); महादेवस्य अणिमाद्यष्टप्रकारवैभवं; शम्भुधृतभस्म; सम्पत्तिः; उत्तरोत्तरवृद्धिः; 'यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम'—इति भगवद्गीतायाम्। हस्तिशृङ्गारः; गजमण्डनम्; 'रेवां द्रक्ष्यस्युपलविषमे विन्ध्यपादे विशीर्णाम्, भक्तिच्छेदैरिव विरचितां भूतिमङ्गे गजस्य'—इति मेघदूते

(१९)। जातिः; पितृगणभेदः; 'विश्वो विश्वभुगाराध्यो धर्मो धन्यः शुभाननः। भूतिदो भूतिकृद्भूतिः पितॄणां ये गणा नव'—इति मार्कण्डेयपुराणे (९६। ४३)। लक्ष्मीः; 'यस्तयोः पुरुषः साक्षाद्विष्णुर्यज्ञस्वरूपधृक्। या स्त्री सा दक्षिणा भूतेरंशभूतानपायिनी' —इति भागवते (४।१।४)। 'भूतेर्लक्ष्म्याः'—इति तट्टीकायां स्वामी। वृद्धिनामौषधं; रोहिषतृणं; भूतृणं; [भवनमिति, भू+भावे क्तिन्] उत्पत्तिः; सत्ता। ६९

भूतेशः पुं. [भूतानां प्राण्यादीनां प्रमथादीनां बालग्रहाणां च ईशः] शिवः; परमेश्वरः; महादेवः; 'म्लेच्छैः सञ्छादिते देशे स तदुच्छित्तये नृपः। तपःसन्तोषिताल्लेभे भूतेशात् सुकृती सुतम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।१०७)। विष्णुः; ब्रह्मा। ११

भूपतिः पुं. [भुवः पतिः] राजा; 'भूपुत्री यस्य पत्नी स तु भवति कथं भूपती रामचन्द्रः'—इति रामायणे केकयीवाक्यम्। ऋषभौषधं; वटुकभैरवः; 'भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मकः'—इति वटुकभैरवस्तोत्रे। ४२१

भूपतिवेश्म [न्] क्ली. [भूपतेः वेश्म] विच्छन्दकः; स्वस्तिकः; नन्द्यावर्तः; हर्म्यम्। ३०५

भूमिः स्त्री. [भवन्ति भूतान्यस्यामिति। भू+'भुवः कित्' इति मि, स च कित्] पृथिवी; पृथ्वी; 'भूर्भूमिः पृथिवी पृथ्वी मेदिनी वसुधावनिः। क्षितिरुर्वी मही क्षौणी क्ष्मा धरा कुर्वसुन्धरा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् (४१५)। यज्ञवेदी; परिष्कृता भूः; स्थानमात्रं; जिह्वा; योगिनामवस्थाविशेषः; 'निरुद्धे चेतसि पुरा सविकल्पसमाधिना। निर्विकल्पसमाधिस्तु भवेदत्र त्रिभूमिकः। व्युत्तिष्ठते स्वतन्त्राद्ये द्वितीये परबोधितः। अन्ते व्युत्तिष्ठते नैव सदा भवति तन्मयः। एवं प्राग्भूमिसिद्धावप्युत्तरोत्तरभूमये। विधेया भगवद्भक्तिस्तां विना सा न सिद्ध्यति।' १५६

भूमिदेवः पुं. [भूमौ देव इव, भूम्या देवो वा] ब्राह्मणः; विप्रः; द्विजः; 'अद्य क्रियाः कामदुघाः क्रतूनां सत्याशिषः सम्प्रति भूमिदेवाः। आसंसृतेरस्मि जगत्सु जातस्त्वय्यागते यद्बहुमानपात्रम्'—इति किराते (३।६)। ३९१

भूमिस्पृक् [श्] पुं. [भूमिं स्पृशतीति। भूमि+स्पृश्+'स्पृशोऽनुदके क्विन्' इति क्विन्] वैश्यः; मानुषः; मनुष्यः; चौरभेदः; चोरविशेषः; अन्धः; खञ्जः। ५७०

भूयः [स्] अव्य. [भुवे भावाय यस्यति यतते वा इति। भू+यस्+क्विप्] पुनरर्थम्; असकृत्; मुहुः। त्रि. [बहु+ईयसुन्, 'बहोर्लोपो भू च बहोः'] भूयान्(स्); बहुतरः; 'पञ्चानां त्रिषु वर्णेषु भूयांसि गुणवन्ति च' —इति मनुः (२।१३७)। ७२४

भूरि क्ली. [भवति भूयते वेति। भु+'अदिशदिभूशुभिभ्यः क्रिन्' इति क्रिन्] स्वर्णं; सुवर्णम्; अष्टापदम्। १७३

भूरिः त्रि. [भवतीति, भू+'अदिशदिभूशुभिभ्यः' इति क्रिन्] प्रचुरः; 'संयोवनायुवते शुचिदन् भूरि चिदन्नासमिदत्ति सद्यः'—इति ऋग्वेदे (७।४।२)। पुं. विष्णुः; ब्रह्मा; शिवः; वासवः; इन्द्रः; सोमदत्तस्य पुत्रभेदः; 'कौरव्यः सोमदत्तश्च पुत्राश्चास्य महारथाः। समवेतास्त्रयः शूरा भूरिर्भूरिश्रवाः शलः'—इति महाभारते (१।१८७। १४)। ७२४

भूरिमायः पुं.–स्त्री. [भूरिः माया यस्य] शृगालः; मृगधूर्तकः। २२९

भूषणम् क्ली. [भूष्यते अनेनेति। भूष्+करणे ल्युट्] अलङ्कारः; 'नक्षत्रभूषणं चन्द्रो नारीणां भूषणं पतिः' –इति चाणक्यः। पुं. [भूषयति भक्तवृन्दमिति, भूष्यतेऽनेनेति वा। भूष्+ल्यु वा ल्युट्] विष्णुः; 'भूशयो भूषणो भूतिर्विशोकः शोकनाशनः'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्। राजविशेषः; 'वसुदत्तादयश्चैते राजानोऽर्थरथा इमे। अङ्कुरी सुविशालश्च दण्डिभूषणसोमिलाः' —इति कथासरित्सागरे। कविविशेषः। ५३९,५४०

भूषा स्त्री. [भूष्+भावे अ, टाप् च] अलङ्क्रिया; 'दम्पत्योः पर्यदात् प्रीत्या भूषावासःपरिच्छदान्'—इति भागवते (३।२२।२२)। ८८५

भृकुटिः स्त्री. [कुट् कौटिल्ये+इन्, भ्रुवः कुटिः कौटिल्यम्। निपातनात् वा सम्प्रसारणम्] भ्रूकुटिः; भ्रुकुटिः; 'रचितभृकुटिबन्धं नन्दिना द्वारि रुद्धे'—इति भरतधृतहरविलासः। ७७९

भृकुटी स्त्री. [भृकुटि+कृदिकारादिति ङीष्] भ्रूकुटिः; भ्रुकुटिः; 'भृकुटीकुटिलाननौ'—इति मार्कण्डेयपुराणे देवीमाहात्म्ये। ७७९

भृगुः पुं [तपसा भृज्ज्यते, पञ्चतपादिभिर्वेति। भ्रस्ज्+

'प्रथिम्रदिभ्रस्जां सम्प्रसारणं सलोपश्च' इति कु, सम्प्रसारणं, सलोपः, न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वञ्च । यद्वा भृज्जतीति, क्विप्, भृक् ज्वाला तया सहोत्पन्न इति, उ] निरवलम्बनपर्वतादिपार्श्वः; प्रपातः; अतटः; दरत्; पतनस्थानं; जमदग्निः; सानुः; अरण्यकण्टकव्याप्तगिरिपार्श्वोच्चदेशः; शुक्रग्रहः; शिवः; मुनिविशेषः, अस्य भार्या कर्दममुनिकन्या, पुत्रौ धाता विधाता च, कन्या श्रीः । 'पुरुषा वपुषा युक्ताः स्वैः स्वैः प्रसवजैर्गुणैः । भृगित्येव भृगुः पूर्वमङ्गरेभ्योऽङ्गिराभवत् । अङ्गारसंश्रयाच्चैव कविरित्यपरोऽभवत् । सह ज्वालाभिरुत्पन्नो भृगुस्तस्माद्भृगुः स्मृतः'—इति महाभारते (१३।८५।१०५-१०६) । १६६

भृङ्गः पुं. [बिभर्त्यनुरागमिति । भृञ्+'भृञः कित् नुट् च' इति गन्,स च कित् नुट् च] कलिङ्गपक्षी; धूम्याटः; (२५५) भ्रमरः; षिङ्गः; भृङ्गराजः, भृङ्गारः; भृङ्गरोलः; 'भृङ्गराजः केशराजो भृङ्गः पत्तङ्गमार्कवम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । 'भृङ्गराजो भृङ्गरजो मार्कवो भृङ्ग एव च । अङ्गारकः केशराजो भृङ्गारः केशरञ्जनः'—इति भावप्रकाशः । २४८

भृङ्गारः पुं. [भृ+आरन्, नुम् गुक् च । अथवा भृङ्गं जलमियर्त्यनेनेति, भृङ्ग+ऋ+करणे घञ्] कनकालुका; गडुकः; गडुकः; स्वर्णघटितवारिपात्रं; 'जलझारी' इति भाषा । 'नाद्य पश्यामि ते छत्रं भृङ्गारमथवा पुनः —इति मार्कण्डेयपुराणे (८।२०३) । भृङ्गराजः; राज्ञोऽभिषेकपात्रम्; 'राज्ञोऽभिषेकपात्रं यद्भृङ्गार इति तन्मतम् । तदष्टधा तस्य मानमाकृतिश्चापि चाष्टधा'—इति युक्तिकल्पतरौ । क्ली. [डुभृञ् धारणपोषणयोः । भृ+'शृङ्गारभृङ्गारौ' इति आरन् निपातनात् नुम्, गुक् च] लवङ्गं; सुवर्णम् । ३१५

भृतिः स्त्री. [भ्रियते अनयेति । भृ+क्तिन्] वेतनं; मूल्यः; भरणं; भृतिर्वेतनं कृतकर्मणे दत्तं; सप्तविधदत्तान्तर्गतदत्तविशेषः; 'पण्यमूल्यं भृतिस्तुष्ट्या स्नेहात्प्रत्युपकारतः । स्त्रीशुल्कानुग्रहार्थं च दत्तं दानविदो विदुः' —इति मिताक्षरा । ७२८

भृत्या स्त्री. [भ्रियते अनया, भरणमिति वा । भृ+'संज्ञायां समजनिषदनिपतमनविदषुञ्शीङ्भृञिणः' इति क्यप् । स्त्रियां टाप्] वेतनं; भरणक्रिया; 'आसन्निषून् हृत्स्वसोमयो भूरय एषां भृत्यामृणधत्स जीवात्'—इति ऋग्वेदे (१।८४।१६) । ७२८

भृशम् क्ली. [भृश्यति प्राचुर्येण वर्तते इति । भृश्+क] अतिशयः; तद्वति त्रि. । 'भृशमाराधने यत्तः स्वाराध्यस्य मरुत्वतः'—इति भारविः (११।४६) । ७१८

भृशम् अव्य. [भृश्+क] प्रकर्षार्थः; मुहुरर्थः; शोभनम् । ७१८

भृष्टः त्रि. [भ्रस्ज् पाके+कर्मणि क्त] जलोपसेकं विना पक्वः; (३२३) क्ली. भूतिः; भरूटकम् । ५८५

भेकः पुं. [बिभेति इति । भी+'इण् भीकापाशल्यतीति' कन्] जन्तुविशेषः; मण्डूकः; वर्षाभूः; शालूरः; प्लवः; दर्दुरः; वृष्टिभूः; सालूरः; प्लवङ्गमः; व्यङ्गः; प्लवगः; शल्लः; नन्दनः; गूढवर्च्चाः; अजिह्वः; जिह्मामोहनः; नन्दकः; कृतालयः; रेकः; मण्डः; हरिः; लुलुकः; लूलकः; शालूकः; कटुरवः; मेघः; 'संवृणुतेऽद्रीनुदधिनिदाघनयो न भेकमपि'—इति आर्यासप्तशत्याम् (४५१) । ६६२

भेदः पुं. [भिद्+घञ्] विशेषः; (७८०) शत्रुवशीकरणोपायचतुष्टयान्तर्गततृतीयोपायः; उपजापः; परतो विश्लेष्य आत्मसात् करणं भेदः; 'भिन्ना हि शक्या रिपवः प्रभूताः स्वल्पेन सैन्येन निहन्तुमाजौ । सुसंहतानां हि ततस्तु भेदः कार्यो रिपूणां नयशास्त्रविद्भिः' —इति मात्स्ये । (८८१) अन्तरः; तु; द्वैधः; विदारणम्; 'पुरश्च पश्चाच्च यदा समर्थः तदाभियायान्महते फलाय । पुनः प्रसर्पन्नविशुद्धपृष्ठः प्राप्नोति तीव्रं खलु पार्ष्णिभेदम्'—इति कामन्दकीये (१५।१६) । विरेकः; 'काशे धूमस्तुषाणां बलवति मरुते स्वेदभेदोपवासा, वह्लेर्मान्द्ये च पिष्टं सपिशितमनिशं वारिपानं कफर्तौ' —इति हास्यार्णवनाटके । २२२

भेरिः स्त्री. [बिभ्यति शत्रवोऽस्या इति । भी+'वङ्क्रयादयश्च' इति क्रिन्,बाहुलकाद्गुणः] बृहड्ढक्का; आनकः; दुन्दुभिः; भेरी; आनकदुन्दुभिः; आनकदुन्दुभी; 'यतो भेरिवेणुवीणामृदङ्गतालपटहशङ्खकाहलादिभेदेन शब्दा अनेकविधाः'—इति पञ्चतन्त्रे प्रथमतन्त्रम् । ९८

भेरी स्त्री. [बिभ्यति शत्रवोऽस्या इति । भी+क्रिन् । कृदिकारादिति पक्षे ङीष्] दुन्दुभिः; भेरिः; 'भेरीशब्दमकृत्वा तु यस्तु मां प्रतिबोधयेत् । बधिरो जायते

(१९)। जातिः; पितृगणभेदः; 'विश्वो विश्वभुगाराध्यो धर्मो धन्यः शुभाननः। भूतिदो भूतिकृद्भूतिः पितॄणां ये गणा नव'—इति मार्कण्डेयपुराणे (९६। ४३)। लक्ष्मीः; 'यस्तयोः पुरुषः साक्षाद्विष्णुर्यज्ञ-स्वरूपधृक्। या स्त्री सा दक्षिणा भूतेरंशभूतानपायिनी' —इति भागवते (४।१।४)। 'भूतेर्लक्ष्म्याः'—इति तट्टीकायां स्वामी। वृद्धिनामौषधं; रोहिषतृणं; भूतृणं; [भवनमिति, भू+भावे क्तिन्] उत्पत्तिः; सत्ता। ६९

भूतेशः पुं. [भूतानां प्राण्यादीनां प्रमथादीनां बालग्रहाणां च ईशः] शिवः; परमेश्वरः; महादेवः; 'म्लेच्छैः सञ्छादिते देशे स तदुच्छित्तये नृपः। तपःसन्तोषिताल्लेभे भूतेशात् सुकृती सुतम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।१०७)। विष्णुः; ब्रह्मा। ११

भूपतिः पुं. [भुवः पतिः] राजा; 'भूपुत्री यस्य पत्नी स तु भवति कथं भूपती रामचन्द्रः'—इति रामायणे केकयीवाक्यम्। ऋषभौषधं; वटुकभैरवः; 'भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मकः'—इति वटुकभैरवस्तोत्रे। ४२१

भूपतिवेश्म [न्] क्ली. [भूपतेः वेश्म] विच्छन्दकः; स्वस्तिकः; नन्द्यावर्तः; हर्म्यम्। ३०५

भूमिः स्त्री. [भवन्ति भूतान्यस्यामिति। भू+'भुवः कित्' इति मि, स च कित्] पृथिवी; पृथ्वी; 'भूर्भूमिः पृथिवी पृथ्वी मेदिनी वसुधावनिः। क्षितिरुर्वी मही क्षौणी क्ष्मा धरा कुर्वसुन्धरा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् (४१५)। यज्ञवेदी; परिष्कृता भूः; स्थानमात्रं; जिह्वा; योगिनामवस्थाविशेषः; 'निरुद्धे चेतसि पुरा सविकल्पसमाधिना। निर्विकल्पसमाधिस्तु भवेदत्र त्रिभूमिकः। व्युत्तिष्ठते स्वतन्त्राद्ये द्वितीये परबोधितः। अन्ते व्युत्तिष्ठते नैव सदा भवति तन्मयः। एवं प्राग्भूमिसिद्धावप्युत्तरोत्तरभूमये। विधेया भगवद्भक्तिस्तां विना सा न सिद्ध्यति।' १५६

भूमिदेवः पुं. [भूमौ देव इव, भूम्या देवो वा] ब्राह्मणः; विप्रः; द्विजः; 'अद्य क्रियाः कामदुघाः क्रतूनां सत्याशिषः सम्प्रति भूमिदेवाः। आसंसृतेरस्मि जगत्सु जातस्त्वय्यागते यद्बहुमानपात्रम्'—इति किराते (३।६)। ३९१

भूमिस्पृक् [श्] पुं. [भूमिं स्पृशतीति। भूमि+स्पृश्+'स्पृशोऽनुदके क्विन्' इति क्विन्] वैश्यः; मानुषः; मनुष्यः; चौरभेदः; चोरविशेषः; अन्धः; खञ्जः। ५७०

भूयः [स्] अव्य. [भुवे भावाय यस्यति यतते वा इति। भू+यस्+क्विप्] पुनरर्थम्; असकृत्; मुहुः। त्रि. [बहु+ईयसुन्, 'बहोर्लोपो भू च बहोः'] भूयान्(स्); बहुतरः; 'पञ्चानां त्रिषु वर्णेषु भूयांसि गुणवन्ति च' —इति मनुः (२।१३७)। ७२४

भूरि क्ली. [भवति भूयते वेति। भु+'अदिशदिभूशुभिभ्यः क्रिन्' इति क्रिन्] स्वर्णं; सुवर्णम्; अष्टापदम्। १७३

भूरिः त्रि. [भवतीति, भू+'अदिशदिभूशुभिभ्यः' इति क्रिन्] प्रचुरः; 'संयोवनायुवते शुचिदन् भूरि चिदन्नासमिदत्ति सद्यः'—इति ऋग्वेदे (७।४।२)। पुं. विष्णुः; ब्रह्मा; शिवः; वासवः; इन्द्रः; सोमदत्तस्य पुत्रभेदः; 'कौरव्यः सोमदत्तश्च पुत्राश्चास्य महारथाः। समवेतास्त्रयः शूरा भूरिर्भूरिश्रवाः शलः'—इति महाभारते (१।१८७। १४)। ७२४

भूरिमायः पुं.–स्त्री. [भूरिः माया यस्य] शृगालः; मृगधूर्तकः। २२९

भूषणम् क्ली. [भूष्यते अनेनेति। भूष्+करणे ल्युट्] अलङ्कारः; 'नक्षत्रभूषणं चन्द्रो नारीणां भूषणं पतिः' —इति चाणक्यः। पुं. [भूषयति भक्तवृन्दमिति, भूष्यतेऽनेनेति वा। भूष्+ल्यु वा ल्युट्] विष्णुः; 'भूशयो भूषणो भूतिविशोकः शोकनाशनः'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्। राजविशेषः; 'वसुदत्तादयश्चैते राजानोऽर्थरथा इमे। अङ्कुरी सुविशालश्च दण्डिभूषणसोमिलाः' —इति कथासरित्सागरे। कविविशेषः। ५३९,५४०

भूषा स्त्री. [भूष्+भावे अ, टाप् च] अलङ्क्रिया; 'दम्पत्योः पर्यदात् प्रीत्या भूषावासःपरिच्छदान्'—इति भागवते (३।२२।२२)। ८८५

भृकुटिः स्त्री. [कुट् कौटिल्ये+इन्, भ्रुवः कुटिः कौटिल्यम्। निपातनात् वा सम्प्रसारणम्] भ्रूकुटिः; भ्रुकुटिः; 'रचितभृकुटिबन्धं नन्दिना द्वारि रुद्धे'—इति भरतधृतहरविलासः। ७७९

भृकुटी स्त्री. [भृकुटि+कृदिकारादिति ङीष्] भ्रूकुटिः; भ्रुकुटिः; 'भृकुटीकुटिलाननौ'—इति मार्कण्डेयपुराणे देवीमाहात्म्ये। ७७९

भृगुः पुं. [तपसा भृज्ज्यते, पञ्चतपादिभिर्वेति। भ्रस्ज्+

'प्रथिम्रदिभ्रस्जां सम्प्रसारणं सलोपश्च' इति कु, सम्प्रसारणं, सलोपः, न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वञ्च । यद्वा भृज्जतीति, क्विप्, भृक् ज्वाला तया सहोत्पन्न इति, उ] निरवलम्बनपर्वतादिपार्श्वः; प्रपातः; अतटः; दरत्; पतनस्थानं; जमदग्निः; सानुः; अरण्यकण्टकव्याप्तगिरिपार्श्वोच्चिदेशः; शुक्रग्रहः; शिवः; मुनिविशेषः, अस्य भार्या कर्दममुनिकन्या, पुत्रौ धाता विधाता च, कन्या श्रीः । 'पुरुषा वपुषा युक्ताः स्वैः स्वैः प्रसवजैर्गुणैः । भृगित्येव भृगुः पूर्वमङ्गरेभ्योऽङ्गिराभवत् । अङ्गारसंश्रयाच्चैव कविरित्यपरोऽभवत् । सह ज्वालाभिरुत्पन्नो भृगुस्तस्माद्भृगुः स्मृतः'—इति महाभारते (१३।८५।१०५-१०६) । १६६

भृङ्गः पुं. [बिभर्त्यनुरागमिति । भृञ्+'भृञः कित् नुट् च' इति गन्,स च कित् नुट् च] कलिङ्गपक्षी; धूम्याटः; (२५५) भ्रमरः; षिङ्गः; भृङ्गराजः, भृङ्गारः; भृङ्गरोलः; 'भृङ्गराजः केशराजो भृङ्गः पत्तङ्गमार्कवम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । 'भृङ्गराजो भृङ्गरजो मार्कवो भृङ्ग एव च । अङ्गारकः केशराजो भृङ्गारः केशरञ्जनः'—इति भावप्रकाशः । २४८

भृङ्गारः पुं. [भृ+आरन्, नुम् गुक् च । अथवा भृङ्गं जलमियर्त्यनेनेति, भृङ्ग+ऋ+करणे घञ्] कनकालुका; गुडुकः; गडुकः; स्वर्णघटितवारिपात्रं; 'जलझारी' इति भाषा। 'नाद्य पश्यामि ते छत्रं भृङ्गारमथवा पुनः—इति मार्कण्डेयपुराणे (८।२०३)। भृङ्गराजः; राज्ञोऽभिषेकपात्रम्; 'राज्ञोऽभिषेकपात्रं यद्भृङ्गार इति तन्मतम्। तदष्टधा तस्य मानमाकृतिश्चापि चाष्टधा'—इति युक्तिकल्पतरौ । क्ली. [डुभृञ् धारणपोषणयोः । भृ+'शृङ्गारभृङ्गारौ' इति आरन् निपातनात् नुम्, गुक् च] लवङ्गं; सुवर्णम् । ३१५

भृतिः स्त्री. [भ्रियते अनयेति । भृ+क्तिन्] वेतनं; मूल्यः; भरणं; भृतिर्वेतनं कृतकर्मणे दत्तं; सप्तविधदत्तान्तर्गतदत्तविशेषः; 'पण्यमूल्यं भृतिस्तुष्टया स्नेहात्प्रत्युपकारतः । स्त्रीशुल्कानुग्रहार्थं च दत्तं दानविदो विदुः' —इति मिताक्षरा। ७२८

भृत्या स्त्री. [भ्रियते अनया, भरणमिति वा । भृ+'संज्ञायां समजनिषदनिपतमनविदषुञ्शीङ्भृञिणः' इति क्यप् । स्त्रियां टाप्] वेतनं; भरणक्रिया; 'आसन्निषून् हृत्स्वसोमयो भूरय एषां भृत्यामृणधत्स जीवात्'—इति ऋग्वेदे (१।८४।१६) । ७२८

भृशम् क्ली. [भृश्यति प्राचुर्येण वर्तते इति । भृश्+क] अतिशयः; तद्वति त्रि. । 'भृशमाराधने यत्तः स्वाराध्यस्य मरुत्वतः'—इति भारविः (११।४६) । ७१८

भृशम् अव्य. [भृश्+क] प्रकर्षार्थः; मुहुरर्थः; शोभनम् । ७१८

भृष्टः त्रि. [भ्रस्ज् पाके+कर्मणि क्त] जलोपसेकं विना पक्वः; (३२३) क्ली. भूतिः; भरुटकम् । ५८५

भेकः पुं. [बिभेति इति । भी+'इण् भीकापाशल्यतीति' कन्] जन्तुविशेषः; मण्डूकः; वर्षाभूः; शालूरः; प्लवः; दर्दुरः; वृष्टिभूः; सालूरः; प्लवङ्गमः; व्यङ्गः; प्लवगः; शल्लः; नन्दनः; गूढवर्च्चाः; अजिह्वः; जिह्ममोहनः; नन्दकः; कृतालयः; रेकः; मण्डः; हरिः; लुलुकः; लूलकः; शालूकः; कटुरवः; मेघः; 'संवृणुतेऽद्रीनुदधिर्निदाघनघो न भेकमपि'—इति आर्यासप्तशत्याम् (४५१) । ६६२

भेदः पुं. [भिद्+घञ्] विशेषः; (७८०) शत्रुवशीकरणोपायचतुष्टयान्तर्गततृतीयोपायः; उपजापः; परतो विश्लेष्य आत्मसात् करणं भेदः; 'भिन्ना हि शक्या रिपवः प्रभूताः स्वल्पेन सैन्येन निहन्तुमाजौ । सुसंहतानां हि ततस्तु भेदः कार्यो रिपूणां नयशास्त्रविद्भिः' —इति मात्स्ये । (८८१) अन्तरः; तु; द्वैधः; विदारणम्; 'पुरश्च पश्चाच्च यदा समर्थः तदाभियायान्महते फलाय। पुनः प्रसर्पन्नविशुद्धपृष्ठः प्राप्नोति तीव्रं खलु पार्ष्णिभेदम्'—इति कामन्दकीये (१५।१६) । विरेकः; 'काशे धूमस्तुषाणां बलवति मरुते स्वेदभेदोपवासा, वह्नेर्मान्द्ये च पिष्टं सपिशितमनिशं वारिपानं कफतौ' —इति हास्यार्णवनाटके । २२२

भेरिः स्त्री. [बिभ्यति शत्रवोऽस्या इति । भी+'वङ्क्रयादयश्च' इति क्रिन्,बाहुलकाद्गुणः] बृहड्ढक्का; आनकः; दुन्दुभिः; भेरी; आनकदुन्दुभिः; आनकदुन्दुभी; 'यतो भेरिवेणुवीणामृदङ्गतालपटहशङ्खकाहलादिभेदेन शब्दा अनेकविधाः'—इति पञ्चतन्त्रे प्रथमतन्त्रम् । ९८

भेरी स्त्री. [बिभ्यति शत्रवोऽस्या इति । भी+क्रिन् । कृदिकारादिति पक्षे ङीष्] दुन्दुभिः; भेरिः; 'भेरीशब्दमकृत्वा तु यस्तु मां प्रतिबोधयेत् । बधिरो जायते

भूमे ! जन्मैकं च न संशयः । तस्य वक्ष्यामि सुश्रोणि प्रायश्चित्तं मम प्रियम् । किल्विषाद् येन मुच्येत भेरीताडनमोहितः'—इति वराहपुराणे। ९८

भेषजम् क्ली. [भिषजो वैद्यस्येदमित्यण् । निपातनादेत्वम् । यद्वा भेषं रोगं जयतीति । भेष+जि+ड] औषधम्; 'वीर्याधिकं भवति भेषजमन्नहीनं हन्यात्तदामयमसंशयमाशु चैव । तद्बालवृद्धयुवतीमृदुभिश्च पीतं ग्लानिं परां नयति चाशु बलक्षयं च ।' 'देवान् गुरूंस्तथा विप्रान् पूजयित्वा प्रणम्य च । आशिषश्च समादाय श्रद्धया भेषजं भजेत्'—इति चरकः । ६१३

भैरवम् त्रि. [भीरोरिदं त्रासकृत् । भीरु+अण्] भयानकं; भयङ्करं; भयावहम्; 'सव्येन च कटीदेशे गृह्य वाससि पाण्डवः । तद्रक्षो द्विगुणं चक्रे रुवन्तं भैरवं रवम्' —इति महाभारते (१।१६४।२७) । रागभेदः (१००अ.); पुं. [भीर्भयङ्करो रवो यस्य इति, भीरव+ +ततः स्वार्थे अण्] शङ्करः; भयानकरसः; नदविशेषः; शिवगणाधिपविशेषः; 'नन्दी भृङ्गी महाकालो वेतालो भैरवस्तथा । अङ्गं भूत्वा महेशस्य वीतभीतास्तपोधनाः । ये मानुषशरीरेण प्रापिरे तपसो बलात् । गणानामाधिपत्यन्तु ते जानन्ति हरं परम्'—इति कालिकापुराणे। अष्टभैरवाः—'आदौ महाभैरवं च संहारभैरवं तथा । असिताङ्गभैरवं च रुरुं भैरवमेव च । ततः कालं भैरवं च क्रोधभैरवमेव च । ताम्रचूडं चन्द्रचूडम् अन्ते च भैरवद्वयम् । एतान् सम्पूज्य मध्ये च नवशक्तीश्च पूजयेत्' —इति ब्रह्मवैवर्त्ते । नागभेदः; 'भैरवो मुण्डवेदाङ्गः पिशङ्गश्चोद्रपारकः'—इति महाभारते (१।५७।१६) । करवीरपुरराजचन्द्रशेखरपत्नीतारावतीगर्भे महादेवाज्जातपुत्रः; स च पुरा भृङ्गी बभूव । पार्वतीशापात् वानरमुखो भूत्वा भैरव इति नाम्ना ख्यातः । 'प्रविवेश ततो देवी स्वयं तारावतीतनौ । महादेवोऽपि तस्यान्तु कामार्थं समुपस्थितः । कामावसाने तस्यान्तु सद्यो जातं सुतद्वयम् । अभवन्नृपशार्दूल! तथा शाखामृगाननम् । ज्येष्ठो भैरवनामाभूद् भीरोः पुत्रो भयङ्करः । वेतालसदृशः कृष्णो वेतालोऽभूत्तथापरः'—इति कालिकापुराणे। ७०५

भैरवी स्त्री. [भैरव+ङीप्] चामुण्डा; चर्चा; चर्चिका; दुर्गा; 'चामुण्डा चर्चिका चर्ममुण्डा मार्जारकर्णिका । कर्णमोटी महागन्धा भैरवी च कपालिनी'—इति हेमचन्द्रः । रागिणीविशेषः (१०४ अ.); सा च भैरवरागस्य पत्नी; 'भैरवी कौशिकी चैव भाषा वेलावली तथा । बङ्गाली चेति रागिण्यो भैरवस्यैव वल्लभाः ।' मालवरागस्य पत्नी; 'धानसी मालसी चैव रामकीरी च सिन्धुडा । आशावरी भैरवी च मालवस्य प्रिया इमाः ।' 'सरोवरस्था स्फटिकस्य मन्दिरे सरोरुहैः शङ्करमर्चयन्ती । तालप्रयोगप्रतिबद्धगीतिः गौरीतनूर्नारद भैरवीयम् ।' 'विभाषा ललिता चैव कामोदी पठमञ्जरी । रामकीरी रामकेली वेलोयारी च गुर्ज्जरी । देशकारी च शुभगा पञ्चमी च गडा तुडी । भैरवी चाथ कौमारी रागिण्यो दश पञ्च च । एताः पूर्वाह्णकाले तु गीयन्ते गायनोत्तमैः' —इति सङ्गीतदामोदरः । १७

भैषज्यम् क्ली. [भेषजमेवेति, भेषज+'अनन्तावसथेतिहभेषजाञ् ञ्यः'—इति ञ्य] औषधम्; 'भैषज्यं भेषजं चायुर्द्रव्यमगदमौषधम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । 'तदेव युक्तं भैषज्यं यदारोग्याय कल्पते'—इति चरकः । ६१३

भोः [स्] अव्य. [भातीति, भा+बाहुलकाद् डोसि] सम्बोधनं; प्याट्; पाट्; अङ्ग; हे; है; हंहो; हुम्; हो; अरे; अये; अयि; 'भो भो विप्रेन्द्र ! बुध्यस्व बुद्धया बोध्यं बुधात्मक !'—इति मार्कण्डेये (३।५२) । प्रश्नः; विषादः । ८८३

भोक्ता [ऋ] पुं. [भुङ्क्ते जीवरूपेणेति । भुनक्ति पालयतीति वा । भुज्+तृच्] भर्त्ता; विष्णुः; 'भ्राजिष्णुर्भोजनं भोक्ता सहिष्णुर्जगदादिजः'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रे । त्रि. भोजनकर्ता; 'यज्ञेश्वरो हव्यसमस्तकव्यभोक्ताव्ययात्मा हरिरीश्वरोऽत्र'—इति श्राद्धप्रयोगतत्त्वम् । सुखादिभोगकर्त्ता; 'कर्ता च देही भोक्ता च आत्मा भोजयिता सदा । भोगो विभवभेदश्च निष्कृतिर्मुक्तिरेव च'—इति ब्रह्मवैवर्त्ते । ४९७

भोगः पुं. [भुज्यतेऽसौ इति । भुज्+घञ्] सर्पशरीरम्; 'लक्ष्यते स्म तदनन्तरं रविः बद्धभीमपरिवेशमण्डलः । वैनतेयशमितस्य भोगिनः भोगवेष्टित इव च्युतो मणिः' —इति रघुवंशे (११।५९) । सर्पस्य फटा; सुखं; स्त्र्यादिभृतिः ; पण्यस्त्रीणां भृतिर्भाडिः । आदिना हस्त्यश्वादिकर्मकराणां च भृतिः; धनम्; 'हिरण्यमुतभोगं ससान हत्वी दस्यून् प्रार्यं वर्णमावत्'—इति ऋग्वेदे

(३।३४।९)। 'हिरण्ययं सुवर्णमयं भोगं धनम्'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। गृहम्; (यथामुस्मिन्नेव मन्त्रे 'भोग शब्दव्याख्याने भुज्यतेऽस्मिन्निति भोगो गृहं वा ससान अर्थिभ्यो ददौ' इति सायणचार्यः।) पालनम्; अभ्यवहारः; सर्पः; देहः; मानं; पुण्यपापजननयोग्यकालः; 'अतीतानागतो भोगो नाडचः पञ्चदश स्मृतः।' इति तिथ्यादितत्त्वम्। पुरम्, 'नव यदस्य नवतिं च भोगान् साकं वज्रेण मघवा विवृश्चत्'—इति ऋग्वेदे (५।२९।६)। 'भोगान् पुराणि'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। भूम्यादीनां भोगः; 'तथारूढविवादस्य प्रेतस्य व्यवहारिणः। पुत्रेण सोऽर्थः संशोध्यो न तं भोगो निवर्तयेत्' —इति व्यवहारतत्त्वम्। विभवभेदः; 'कर्ता च देही भोक्ता च आत्मा भोजयिता सदा। भोगो विभवभेदश्च निष्कृतिर्मुक्तिरेव च'—इति ब्रह्मवैवर्ते। व्यूहभेदः; 'यदि स्याद्दण्डबाहुल्यं तदा चापः प्रकीर्तितः। मण्डलोऽसंहतो भोगो दण्डश्चेति मनीषिभिः। गोमूत्रिका हि सञ्चारी शकटो मकरस्तथा। भोगभेदाः समाख्यातास्तथा परिपतन्तकः। असंहतास्तु षड् व्यूहा भोगव्यूहाश्च पञ्चधा'—इति कामन्दकीयनीतिसारे। ६४२

भोगी [न्] पुं. [भोगोऽस्यास्तीति। भोग+इनि] सर्पः; 'एकार्णवे तु त्रैलोक्ये ब्रह्मा नारायणात्मकः। भोगिशय्यागतः शेते त्रैलोक्यग्रासबृंहितः'—इति विष्णुपुराणे (१।३।२३)। भोगयुक्तः; 'भवतालिङ्गि भुजङ्गी जातः किल भोगिचक्रवर्तित्वम्' —इति आर्यासप्तशत्याम् (४।२४)। ग्रामपात्रः; नृपः; नापितः; वैयावृत्तिकरः। ६४०

भोजनम् क्ली. [भुज्+'ल्युट् च' इति भावे ल्युट्] भक्षणं; कठिनद्रव्यस्य गलाधःकरणं; जग्धिः; जेमनं; लेपः; आहारः; निघसः; न्यादः; जमनं; विघसः; अभ्यवहारः; प्रत्यवसानम्, अशनं; स्वदनं; निगरः; 'भोजनाग्रे सदा पथ्यं जिह्वाकण्ठविशोधनम्। अग्निसन्दीपनं हृद्यं लवणार्द्रकभक्षणम्।' 'ततो भोजनवेलायां कुर्यान्मङ्गलदर्शनम्। तस्य प्रदक्षिणं नित्यमायुर्धर्मविवर्द्धनम्' —इति वैद्यके। 'पितृमातृसुहृद्वैद्यापापकृद्धंसवर्हिणाम्। सारसस्य चकोरस्य भोजने दृष्टिरुत्तमा। हीनदीनक्षुधार्तानां पापषण्डैणरोगिणाम्। कुक्कुटादिशुनां दृष्टिर्भोजने नैव शोभना।' भुजिक्रियाया वैदिकपर्यायाः— 'आवयति, भर्वति, बभस्ति, वेति, वेवेष्टि, अविष्यन्, वप्सति, भसथः, बब्धाम्, ह्वरति'—इति वेदनिघण्टौ २ अध्यायः। ३२५

भोजनत्यागः पुं. [भोजनस्य त्यागः] प्रायः; अनशनम्। उपवासः। ७५९

भोजनाच्छादौ पुं. [भोजनं च आच्छादश्च] ग्रासाच्छादनं; कशिपुः; भोजनाच्छादनम्; अशनवसनम्। १२१

भौमः पुं. [भूमेरपत्यम्, भूमि+शिवादित्वादण्] मङ्गलग्रहः; 'पश्यन् ग्रस्तं सौम्यो घृतमधुतैलक्षयाय राज्ञां च। भौमः समरविमर्दं शिखिकोपं तस्करभयं च'—इति बृहत्संहितायाम् (५।६०)। नरकराजः; 'तासां पुरवरं भौमोऽकारयन्मणिपर्वतम्'—इति हरिवंशे (१२०।१४)। [तस्येदमित्यण्] भूमिभवे त्रि.। 'भौमेन प्राविशद्भूमिं पार्वतेनाभवद्गिरिः। अन्तर्धानेन चास्त्रेण पुनरन्तर्हितोऽभवत्'—इति महाभारते (१।१३६।२०)। अम्बरः; रक्तपुनर्नवा। ४६

भ्रकुटिः स्त्री. [भ्रुवोः कुटिः कौटिल्यम्, 'भ्रकुंसादीनामकारो भवतीति वक्तव्यम्] भ्रुकुटिः। ७७९

भ्रमः पुं. [भ्रमु अनवस्थाने+भावे घञ्] भ्रमणम्; अप्रमा; 'एवं किलोल्का व्यसृजत् तं भ्रमाय वणिक्सुतम्' —इति कथासरित्सागरे (२७।४६)। मिथ्याज्ञानं; भ्रान्तिः; मिथ्यामतिः; अम्बुनिर्गमः; कुन्दः; 'अवन्तिनाथोऽयमुदग्रबाहुर्विशालवक्षास्तनुवृत्तमध्यः। आरोप्य चक्रभ्रममुष्णतेजास्त्वष्ट्रेव यत्नोल्लिखितो विभाति' —इति रघौ (६।३२)। 'चक्रभ्रमं चक्राकारशस्त्रोत्तेजनयन्त्रम्, भ्रमोऽम्बुनिर्गमे भ्रान्तौ कुन्दाख्ये शिल्पियन्त्रके' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। भ्रमणशीले त्रि.। 'अधभ्रमस्त उर्विया विभाति यातयमानो अधिसानुपृश्नेः' —इति ऋग्वेदे (६।६।४)। 'भ्रमो भ्रमणशीलो ज्वालासमूहः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। रोगविशेषः; 'मूर्च्छा पित्ततमःप्राया रजःपित्तानिलाद्भ्रमः। चक्रवद्भ्रमतो गात्रं भूमौ पतति सर्वदा। भ्रमरोग इति ज्ञेयो रजःपित्तानिलात्मकः'—इति माधवकरः। 'शतावरी बलामूलद्राक्षासिद्धं पयः पिबेत्। ससितं भ्रमनाशाय बीजं वाट्यालकस्य च। पिबेद्वा रालभाक्वाथं सघृतं भ्रमशान्तये। त्रिफलायाः प्रयोगो वा प्रयोगः पयसोऽपि वा'—इति चक्रपाणिसंग्रहः। ६६८

भ्रमरः पुं. [भ्रमति प्रतिकुसुममिति । 'अतिकमीत्यादिना' अर] कीटविशेषः; मधुव्रतः; मधुकरः; मधुलिट्; मधुपः; अली; द्विरेफः; पुष्पलिट्; भृङ्गः; षट्पदः; अलिः; कलालापः; शिलीमुखः; पुष्पन्धयः; मधुकृत्; द्विपः; भसरः; चञ्चरीकः; मुकाण्डी; मधुलोलुपः; इन्दिन्दिरः; मधुमारकः; मधुपरः; लम्बः; पुष्पकीटः; मधुसूदनः; भृङ्गराजः; मधुलेही; रेणुवासः; कामुकः; 'भ्रमरैः कुसुमानुसारिभिः'—इति रघौ (८।३८)। २५५

भ्रमरकः पुं. [भ्रमर इवेति, भ्रमर+'इवे प्रतिकृतौ' इति कन्] कुरुलः; ललाटस्थितचूर्णकुन्तलः; भ्रमरालक; ललाटलम्बितचूर्णकुन्तलः । [स्वार्थे कन्] भृङ्गः; बालमूषिकः; अम्बुभ्रमः । ५३१

भ्राता [ऋ] पुं. [भ्राजते इति, भ्राज्+'नप्तृनेष्टृत्वष्टृहोत्रिति' तृन् निपात्यते] एकगर्भजातः; सहोदरः; समानोदर्यः; सोदर्यः; सगर्भः; सहजः; सोदरः; 'भाई' इति भाषा। 'बिभृयाद्वेच्छतः सर्वान् ज्येष्ठो भ्राता यथा पिता। भ्राता शक्तः कनिष्ठो वा शक्तयपेक्षा कुले स्थितिः। कुटुम्बार्थेषु चोद्युक्तस्तत्कार्यं कुरुते तु यः। स भ्रातृभिर्बृंहणीयो ग्रासाच्छादनवाहनैः। अन्योन्यभेदो भ्रातृणां सुहृदां वा बलान्तकः। भवत्यानन्दकृद्देव! द्विषतां नात्र संशयः'—इति दायतत्त्वम्। ५०८

भ्रातृजः पुं. [भ्रातुः सहोदरात् जातः इति। जन्+'पञ्चम्यामजातौ' इति ड] भ्रातुरपत्यं; भ्रात्रीयः; भ्रातृव्यः; भ्रातृपुत्रः; भ्रातुष्पुत्रः । [स्त्रियां टाप्] भ्रातृजा; भ्रातुष्पुत्री। ५०६

भ्रातृपुत्रः पुं. [भ्रातुः पुत्रः] भातृजः; भ्रातृव्यः। ५०६

भ्रातृवधूः स्त्री. [भ्रातुः वधूः जाया] भ्रातृपत्नी; भ्रातृजाया; प्रजावती; भ्रातुर्जाया। ५०४

भ्रातृव्यः पुं. [भ्रातुरपत्यमिति। 'भ्रातुर्व्यच्च' इति व्यत्] भ्रातृपुत्रः; भ्रातुष्पुत्रः; भ्रात्रीयः; भ्रातृजः। 'जयराजानुजं राज्ञा यशोराजं निवेशितम्। तन्मतेनावचस्कन्द भ्रातृव्यं राजकाभिधः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (८।२८।४२)।(४५६)[भातृ+'व्यन् सपत्ने' इति व्यन्] शत्रुः; रिपुः; वैरी; 'भ्रातृव्यमेतं त्वमदभ्रवीर्यमुपेक्षयाव्यैधितमप्रमत्तः'—इति भागवते (५।११।१७)। 'तस्मात भ्रातृव्यं शत्रुम्'—इति तट्टीकायां स्वामी। ५०६

भ्रात्रीयः पुं. [भ्रातुरपत्यं पुमानिति । भ्रातृ+'भ्रातुर्व्यच्च' इत्यत्र 'चकाराच्छश्च' इति काशिकोक्तेः छ] भ्रातृपुत्रः; भ्रातृजः; भातृसम्बन्धिनि त्रि.। ५०६

भ्रान्तिः स्त्री. [भ्रम्+क्तिन्, 'अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति' इति दीर्घः] अनवस्थितिः; भ्रमणं; भ्रमः; मिथ्यामतिः; 'षाण्मासिके तु संप्राप्ते भ्रान्तिः संजायते यतः। धात्राक्षराणि सृष्टानि पत्रारूढान्यतः पुरा'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। 'युक्तिहीनप्रकाशत्वाद् भ्रान्तेर्नह्यस्ति लक्षणम्। यदि स्याल्लक्षणं किञ्चिद् भ्रान्तिरेव न सिध्यति'—इति तार्किकाः। ६९१

भ्रामकः पुं. [भ्रामयति, भ्रमं जनयतीति। भ्रम्+णिच्। 'ण्वुल् तृचौ' इति ण्वुल्] प्रस्तरभेदः; अयस्कान्तविशेषः; चुम्बकः; शृगालः; धूर्तः; सूर्यावर्तः। १६९

भ्राष्ट्रः पुं. [भृज्यते अत्रेति। भ्रस्ज्+'भ्रस्जिगमिनमिहनिविश्यशां वृद्धिश्च' इति ष्ट्रन्] यत्र कलायचणकादिकं भृज्यते सः; अम्बरीषः; 'रौद्रे चक्षुषि तज्जितस्तनुमनु भ्राष्ट्रं च यश्चिक्षिपे'—इति नैषधे (३।१२८) 'अनुभ्राष्ट्रं भर्जनपात्रसदृशेन'—इति तट्टीका। आकाशम्। ३१३

भ्रुकुटिः स्त्री. [भ्रुवः कुटिः कौटिल्यमिति षष्ठीसमासः। अभ्रुकुंसादीनामिति वा ह्रस्वः] क्रोधादिना भ्रुवः कौटिल्यं; भ्रूकुटी; भृकुटिः। ७७९

भ्रूः स्त्री. [भ्राम्यति नेत्रोपरि इति। भ्रम्+'भ्रमेश्च डूः' इति डू] दृग्भ्यामूर्द्ध्वभागः; चिल्लिका; नयनोर्द्ध्वभागरोमराजी; 'विशालोन्नता सुखिनि द्ररिद्रा विषमभ्रुवः। धनी दीर्घा संसक्तभ्रूबलिन्दून्नतसभ्रुवः। आढ्या निःस्वश्च खञ्जभ्रूर्मध्याश्च विनतभ्रुवः'—इति गारुडे ६६ अध्याये। ५२०

भ्रूकुटिः स्त्री. [भ्रुवः कुटिः कौटिल्यम्] क्रोधादिना भ्रुवः कौटिल्यं; भृकुटिः। ५२०

भ्रूणः पुं. [भ्रूण्यते आशास्यते इति। भ्रूण्+घञ्] स्त्रीगर्भः; क्लीबमपि। 'चत्तो इतश्चत्तामुतः सर्वाभ्रूणान्यारुषी'—इति ऋग्वेदे (१०।१५५।२)। बालकः। ४९९

भ्रूणः पुं. [ताद्धर्म्यात्ताच्छब्द्यमिति लक्षणया पुंलिङ्गस्य स्त्रियामपि प्रवृत्तेः] गर्भिणी। ८०९

म

मकरः पुं. [कृणातीति, कृ हिंसायाम्+अच्। ततः मनुष्याणां करः हिंसकः। यद्वा मुखं करोतीति। मुख+कृ+क। उभयत्रापि पृषोदरादित्वात् साधुः] जलजन्तु-

विशेषः; पादिनां गणान्तर्गतो जलजन्तुविशेषः; 'कुम्भी-रकूर्मनक्राश्च गोधामकरशङ्कवः । घण्टिकः शिशुमार-श्चेत्यादयः पादिनः स्मृताः'—इति भावप्रकाशः । 'मत्स्यानां मकरः श्रेष्ठो दीपनो वातनाशनः । रुचिप्रदः शुक्रकरो ग्राही चोष्णविकारहा । मूत्राश्मरीणां शमनो गुल्मातीसारनाशनः'—इति हारीतः । मेषादिद्वादश-राश्यन्तर्गतो दशमराशिः; आकोकेरः । रवियुक्तमकर-जातफलम्—'सदाटनो मित्रगणो विपक्षतां प्रयाति नूनं धनवर्जितः स्यात् । यद्युष्णरश्मिर्मकरोपगः स्यात् प्रसूति-काले स तु भाग्यहीनः ।' चन्द्रयुक्तमकरजातफलम्—'कलितशीतभयः किल गीतवित्तमरुषा सहितो मदनातुरः । निजकुलोत्तमवृत्तिकरः परं हिमकरे मकरे पुरुषो भवेत् ।' भौमयुक्तमकरजातफलम्—'पराक्रमप्राप्तवरः प्रतिष्ठः सदङ्गनाप्राप्तिवराङ्गनः स्यात् । श्रिया समेतो मकरे महीजे प्रसूतिकाले कुलपालकश्च ।' बुधस्थितमकरजात-फलम्—'रिपुभयेन युतः कुमतिर्नरः स्मरविहीननरः परकर्मठः । मकरगे सति शीतकरात्मजे व्यसनतः स नतः पुरुषो भवेत् ।' गुर्वाश्रितमकरजातफलम्—'न मनोरथ-सिद्धिमुपैति नरो वचसामधिपे मकरोपगते । भवयुक् कुमतिः परकर्मरतो बहुतोषयुतो मदनापहतः ।' शुक्राश्रित-मकरजातफलम्—'अतिरतिर्जनने त्वजने नृणां व्यय-भयं कृशता बहुचिन्तया । भृगुसुते मृगराशिगते सदा कविजने विजनेऽपि मतिर्भवेत् ।' शनिग्रहस्थितमकरजात-फलम्—'मकरोपगतः खलु भानुसुतः कृपया सहितो नृपमानयुतः । वरगन्धविभूषणभूषितगात्रः तरुणीरमणः पङ्कजनेत्रः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । व्यूहभेदः; 'यायाद्-व्यूहेन महता मकरेण पुरो भये'—इति कामन्दकीये नीतिसारे (१८।४८) । ६६०

मकरध्वजः पुं. [मकरेण चिह्नितो ध्वजो यस्य । मकरः ध्वजे यस्येति वा] मकरकेतनः; मीनकेतनः; कन्दर्पः; कामदेवः; 'शरीरिणा जैत्रशरेण यत्र निःशङ्कमूषे मकर-ध्वजेन'—इति माघे (३।६१) । रससिन्दूरविशेषः; चन्द्रोदयः । ३२

मकरन्दः पुं [मकरमपि अन्दति बध्नाति धारयतीति वा । मकर+अदि बन्धने+अण् ततः शकन्ध्वादित्वात् साधुः] पुष्परसः; मधु; 'प्रस्थानप्रणतिभिरङ्गुलीषु चक्रुर्मौ-लिस्रक्च्युतमकरन्दरेणुगौरम्'—इति रघौ (४।८८) । कुन्दपुष्पवृक्षः; किञ्जल्के बली. । १८८

मखः पुं. [मखन्ति गच्छन्ति देवा अत्रेति । मख् सर्पणे+ 'हलश्च' इति घञ् । संज्ञापूर्वकत्वान्न वृद्धिः । यद्वा पुंसीति घ] यज्ञः; 'कृत्वा तस्य मखं पूर्णं करिष्यामि तवापि वै' —इति भागवते (१।१९।२३) । ४१४

मघवा [न्] पुं. [मह्यते पूज्यते इति । मह् पूजायाम्+ 'श्वन्नुक्षन्पूषन्प्लीहन्निति' कनिन् । निपातनाद् हस्य घः अवुगागमश्च] इन्द्रः; 'दुदोह गां स यज्ञाय सस्याय मघवा दिवम् । सम्पद्विनिमयेनोभौ दधतुर्भुवनद्वयम्' —इति रघौ (१।२६) । जिनानां द्वादशचक्रवर्त्यन्तर्गत-चक्रवर्तिविशेषः; सप्तमद्वापरस्य व्यासः; 'मघवा सप्तमे प्राप्ते वशिष्ठस्त्वष्टमे स्मृतः'—इति देवीभागवते (१।३।२८) । ५२

मङ्क्षु अव्य. [मज्जतीति, मस्ज्+बाहुलकात् सु, 'मस्जि-नशोः' इति नुम्, 'स्कोः' इति सलोपः, अव्ययसंज्ञा] शीघ्रं; द्रुतम्; आशु; क्षिप्रम् । ६९६

मङ्कः पुं. [मङ्कति सर्पतीति । मकि+अच्] नौकाशिरः । ६७२

मङ्गलम् त्रि. [मङ्गति हितार्थं सर्पति, मङ्गति दुरदृष्ट-मनेनास्माद्वेति । मगि+'मङ्गेरलच्' इत्यलच्] भावुकं; भव्यं; कल्याणं; भविकं; शुभं; क्षेमं, प्रशस्तं; भद्रं; श्वः श्रेयसं; शिवम्; अरिष्टं; कुशलं; रिष्टं; मद्रं; शस्तम्; 'मङ्गलाय च लोकानां क्षेमाय च भवाय च' —इति भागवते (५।१४।३४) । 'कल्याणं मङ्गलं क्षेमं शातं शर्म शिवं शुभम्'—इति वैद्यकरत्न-मालायाम् । सर्वार्थरक्षणं; पुं. ग्रहविशेषः; अङ्गारकः; भौमः; कुजः; वक्रः; महीसुतः; वर्षार्चिः; लोहिताङ्गः; खोल्मुखः; ऋणान्तकः; आरः; क्रूरदृक्; आवनेयः; 'उग्रः प्रतापी क्षितिपालमन्त्री, रणप्रियो वक्रवचाः सरोषः । सत्यान्वितः शूरगणप्रणेता, कुजस्य वारे प्रभवो मनुष्यः'—इति कोष्ठीप्रदीपः १२२

मङ्गलपाठकः पुं. [पठतीति, पठ्+ण्वुल् । मङ्गलस्य पाठकः] वन्दी; 'आः पाप ! दुरात्मन् । वृथामङ्गल-पाठक !'—इति वेणीसंहारे ४३५

मङ्गल्यकः पुं. [मङ्गल्य+संज्ञायां कन्, यद्वा मङ्गलस्य मङ्गलग्रहस्य प्रियः इति यत्, ततः स्वार्थे कन्] मसूरः; मसूरकः; मङ्गल्यः; 'मङ्गल्यको मसूरः स्यान्म-

ङ्गल्या च मसूरिका'—इति भावप्रकाशः । ५८१

मङ्गिनी स्त्री. [मङ्गो नौशिरस्तदस्या अस्तीति । इनि, ङीप्] नौका । ६७२

मज्जा [न्] पुं. [मज्जति अस्थिष्विति । मस्ज्+'श्वन्, उक्षन्, पूषन्, प्लीहन्, क्लेदन्, स्नेहन्, मूर्द्धन्, मज्जन्निति' कनिन् निपात्यते] अस्थिमध्यस्थस्नेहविशेषः; कौशिकः; शुक्रकरः; अस्थिस्नेहः; अस्थिसम्भवः; अस्थिसारः; तेजः; बीजम्; अस्थिजं; जीवनं; देहसारः; 'अस्थि यत् स्वाग्निना पक्वं तस्य सारो द्रवो घनः । यः स्वेदवत् पृथग्भूतः स मज्जेत्यभिधीयते ।' 'स्थूलास्थिषु विशेषेण मज्जा त्वभ्यन्तरे स्थितः'—इति भावप्रकाशः । 'बलशुक्ररसश्लेष्ममेदोमज्जविवर्द्धनः । मज्जा विशेषतोऽस्थ्नाञ्च बलकृत् स्नेहने हितः'—इति चरकः । वृक्षादेरुत्तमस्थिरभागः; सारः; 'यस्य यस्य फलस्येह वीर्यं भवति यादृशम् । तस्य तस्यैव वीर्येण मज्जानमभिनिर्दिशेत्'—इति राजवल्लभः । ८५३

मज्जा स्त्री. [मज्जतीति, मस्ज्+अच्, अजादित्वात् टाप्] अस्थिसारः । ८५३

मञ्जरिः स्त्री. [मञ्जु मनोज्ञत्वम् ऋच्छति । मञ्जु+ऋ+'अच इः' इति इ, गुणे, मञ्जु+अरि, शकन्ध्वादित्वम्] वल्लरिः; मञ्जरी; वल्लरी; 'मञ्जरिर्मञ्जरी मञ्जिर्मञ्जरं त्रिषु वल्लरी । वल्लरं त्रिषु वल्लिश्च वल्लरिः पत्रनालिका'—इति हड्डचन्द्रः । लता; पङ्क्तिः; अङ्कुरः । १८५

मञ्जरी स्त्री. [मञ्जरि+कृदिकारादिति पक्षे ङीष्] मञ्जरिः; वल्लरी; मञ्जी; 'वापीकच्छे वासः कण्टकवृतयः सजागरा भ्रमराः । केतकविटप! किमेतैर्ननु वारयसि मञ्जरीगन्धम् ।' वल्लरीमञ्जर्योर्भेदः, यथा—अभिनवनिर्गता आयता सुकुमारा सुकुसुमा अकुसुमा च मञ्जरिः । यथा—चूतमञ्जरिः; कदलीमञ्जरिः । सैव पुरातनी वृद्धिं गता वल्लरिः । पुनश्चिरभूतापि यथा—तालमञ्जरिः, गुवाकमञ्जरिः । लता; 'निर्गते मञ्जरीकुञ्जादपश्यत् पुरतस्ततः । कन्ये नीलनिचोलिन्यौ स केचिच्चारुलोचने'—इति राजतरङ्गिण्याम् । तुलसी । १८५

मञ्जीरः पुं.– क्ली. [मञ्जति मधुरं शब्दायते इति । मञ्ज् ध्वनौ, सौत्रधातुः+बाहुलकाद् ईरन्] नूपुरः; 'मञ्जीरोऽस्त्री सनूपुरः'—इति रभसः । 'मुखरमधीरं त्यज मञ्जीरं रिपुमिव केलिषु लोलम्'—इति गीतगोविन्दे (५।११) । पुं. [मञ्ज्+ईरन्] मन्थानदण्डरज्जुबन्धनार्थस्तम्भः; विष्कम्भः; कुटरः । ५६१

मञ्जु त्रि. [मञ्जतीति, मञ्ज् ध्वनौ, सौत्रधातुः, 'मृगय्वादयश्च' इति कु] मनोज्ञं; प्रियं; मधुरं; मञ्जुलं; सुन्दरम्; 'त्यक्त्वा गेहं झटिति यमुनामञ्जुकुञ्जं जगाम'—इति पदाङ्कदूते । ६८९

मञ्जुकेशी [न्] पुं. [मञ्जवो मनोहराः केशाः सन्त्यस्य, इति] श्रीकृष्णः; सुन्दरकेशविशिष्टे त्रि. । २१

मञ्जुघोषा स्त्री. [मञ्जुर्मनोहरो घोषः शब्दो यस्याः सा] स्ववेंश्या; अप्सरोविशेषः । ८८

मञ्जुलः त्रि. [मञ्जु मञ्जुत्वमस्यास्तीति । मञ्जु+सिध्मादित्वाल् लच्] सुन्दरः; प्रियः; मधुरः; मञ्जुः; 'मञ्जुलं यौवनोद्भेदं प्राप श्रीरिव माधवे'—इति कालिकापुराणे । पुं. जलरङ्कपक्षी; क्ली. जलान्वलं; निकुञ्जं; शबलः; स्त्री. नदीभेदः; 'चित्रोपलां चित्ररथां मञ्जुलां वाहिनीं तथा'—इति महाभारते (६।९।३४) । ६८९

मञ्जुषा स्त्री. [मञ्जूषा+पृषोदरादित्वाद् ह्रस्वः] मञ्जूषा पेटा; 'पिटारी, पेंटी' इति भाषा । 'मञ्जुषापि च मञ्जूषा पेटा च पेटिकेऽत्यपि'—इति शब्दरत्नावली । ३१२

मञ्जूषा स्त्री. [मज्जति द्रव्यमस्मिन् । 'मस्जेर्नुम् च' इति मस्ज्+ऊषन् नुम् च, स चाचोऽन्त्यात् परः । ततो जश्त्वश्चुत्वे मध्यमस्य लोपात् साधुः] पिटकः; 'मञ्जूषायां सुतं कुन्ती मुञ्चन्ती वाक्यमब्रवीत्'—इति देवीभागवते (२।६।३३) । पाषाणः; मञ्जिष्ठा; 'मञ्जिष्ठा विकसा जिङ्गी समङ्गा कालमेषिका । मण्डूकपर्णी भण्डीरी भण्डी योजनवल्ल्यपि । रसायन्यरुणा काला रक्ताङ्गी रक्तयष्टिका । भण्डीतकी च गण्डीरी मञ्जूषा वस्त्ररञ्जिनी'—इति भावप्रकाशः । ३१२

मठः पुं. [मठन्ति वसन्ति यत्र । मठ् मदनिवासयोः, 'हलश्च' इति घञ्, संज्ञापूर्वकत्वान्न वृद्धिः । यद्वा कर्तरि णिजर्थकात् पचाद्यच्] व्रतिस्थानं; यतीनां स्थानं, छात्रादिनिलयः; छात्रशाला; गन्त्रीरथः । २९८

मणिः पुं.– स्त्री. [मण्+'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्] मुक्तादिकं; रत्नं; मणी; पाषाणभेदः; अश्मजातिः;

'रत्नं क्लीवे मणिः पुंसि स्त्रियामपि निगद्यते । तत्तु पाषाणभेदोऽस्ति मुक्तादि च तदुच्यते'—इति भावप्रकाशः । 'मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः'—इति रघौ (१।४) । अजायाः कण्ठस्थितस्तनः; लिङ्गाग्रम्; अलिञ्जरः; योन्यग्रभागः; नागभेदः; मणिबन्धः; मुनिभेदः; 'असितो देवलश्चैव जैगिषव्यश्च तत्त्ववित् । ऋषभो जितशत्रुश्च महावीर्यस्तथा मणिः'—इति महाभारते (२।११।२२) । १७६

मणिकम् क्ली. [मणिरेवेति, मणि+'यवादिभ्यः कन्' इति स्वार्थे कन्] अलिञ्जरः; गर्गरी; 'स तमादाय मणिके प्राक्षिपज्जलचारिणम्'—इति मात्स्ये (१।२१) । ३१७

मणिकारः पुं. [मणिं करोतीति । कृ+अण्] मणिनिर्मितालङ्कारादिकर्ता; वैकटिकः; न्यायचिन्तामणिग्रन्थकर्ता गङ्गेशोपाध्यायः । ५८८

मणितम् क्ली. [मण्+भावे क्त] मैथुनकालिकध्वनिः; रतकूजितं; 'सीत्कृतानि मणितं करुणोक्तिः स्निग्धमुक्तमलमर्थवचांसि'—इति माघे (१०।७५) । ५६९

मणिदोषः पुं. [मणेः दोषः] रत्नदुश्चिह्नं; रत्नावगुणः; स एव त्रासः । ८०८

मणिबन्धः पुं. [मणिर्बध्यते यत्र । अधिकरणे घञ्] प्रकोष्ठपाण्योः सन्धिस्थानं; करस्यादिभागः; मणिः; करग्रन्थिः; करग्रन्थिकः; 'मणिबन्धैर्निगूढैश्च सुश्लिष्टशुभसन्धिभिः । नृपाहीनैः करच्छेदैः सशब्दैर्धनवर्जिताः'—इति गारुडे ६५ अध्यायः । ५३३

मण्डनम् क्ली. [मण्ड्यते अनेन इति । मडि भूषायाम्+करणे ल्युट्] भूषणम्; 'किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्'—इति शाकुन्तले (१।४) । अलङ्करिष्णुनि त्रि. । 'चतुर्धा मण्डनं वासोभूषामाल्यानुलेपनैः'—इति महाभारते । ५३९

मण्डपः पुं.– क्ली. [मडि+भावे घञ्, मण्डः, मण्डं पाति, पा+क] जनविश्रामगृहं; जनाश्रयः; 'गङ्गातीरे शुभां भूमिं मापयित्वा द्विजोत्तमैः । कुर्वन्तु मण्डपं स्वस्थाः शतस्तम्भं मनोहरम्'—इति देवीभागवते (२।११।५०) । देवादिसमर्पितवेश्म; 'प्रदक्षिणायास्तु समस्त्वग्रतो मण्डपो भवेत् । तस्य चार्द्धेन कर्तव्यस्त्वग्रतो मुखमण्डपः'—इति विश्वकर्मप्रकाशे । [मण्डं पिबतीति । पा+क] मण्डपानकर्तरि त्रि. । २९८

मण्डलम् क्ली. [मण्डयति भूषयतीति । मडि+'कलस्तृपश्च' इति कल] चन्द्रसूर्ययोर्बहिर्वेष्टनं; चन्द्रसूर्ययोरुत्पातजरश्मिमण्डलं; परिवेशः; परिधिः; उपसूर्यकं; परिवेषः; चक्रवालम्; 'वातेन मण्डलीभूताः सूर्याचन्द्रमसोः कराः'—इति साहसाङ्कः । कोठरोगः; द्वादशराजकम्; 'उपेतः कोषदण्डाभ्यां सामात्यः सह मन्त्रिभिः । दुर्गस्थश्चिन्तयेत्साधु मण्डलं मण्डलाधिपः'—कामन्दकीये नीतिसारे । बिम्बः; देशः; गोलं; चक्रं; संघातः; नखाघातः; धन्विनां स्थानपञ्चकान्तर्गतस्थितिविशेषः; 'मण्डलाकारपादाभ्यां मण्डलं स्थानमीरितम्'—इति शब्दरत्नावली । व्याघ्रनखाख्यगन्धद्रव्यं; व्यूहविशेषः; 'तिर्यग्वृत्तिश्च दण्डः स्याद्भोगोऽन्वावृत्तिरेव च । मण्डलं सर्वतोवृत्तिः पृथग्वृत्तिरसंहतः'—इति भरतधृतकामन्दकीये । अस्य पुंस्त्वमपि, 'भीष्मेण धार्तराष्ट्राणां व्यूढः प्रत्यङ्मुखो ययौ । मण्डलः सुमहाव्यूहो दुर्भेद्योऽभिन्नघातिनाम्'—इति महाभारते (६।७८।२०) । ग्रहादीनां मण्डलसंस्थानं तत्परिमाणम्; 'सर्वेषां तु ग्रहाणां वै अधस्ताच्चरते रविः । रवेरूर्ध्वं स्थितः सोमः सोमान्नक्षत्रमण्डलम्'—इति देवीपुराणे । त्रि. बिम्बं (४४); पुं. [मण्डं लाति गृह्णातीति । मण्ड+ला+क] कुक्कुरः; सर्पविशेषः; देहस्याष्टप्रकारसन्ध्यन्तर्गतसन्धिविशेषः; 'कण्ठहृदयनेत्रक्लोमनाडीषु मण्डलाः'—इति सुश्रुतः । बिम्बं (५४२); संघातः (६८७) । ४१

मण्डली स्त्री. [मण्डलमस्त्यस्या इति । अर्श आद्यच्, गौरादित्वाद् ङीष्] गोलाकारेण समूहः; दूर्वा; गुडूची; 'गुडूची मधुपर्णी स्यादमृतामृतवल्लरी । छिन्ना च्छिन्नरुहा च्छिन्नोद्भवा वत्सादनीति च । जीवन्ती तन्त्रिका सोमा सोमवल्ली च कुण्डली । चक्रलक्षणिकाधीरा विशल्या च रसायनी । चन्द्रहासी वयस्था च मण्डली देवनिर्मिता'—इति भावप्रकाशः । पुं. **मण्डली** (न्) [मण्डल+इनि] सर्पः; विडालः; जाहकः; वटवृक्षः; गोनाशसर्पः । ७७

मण्डली [न्] पुं. [मण्डलं कुण्डलनं कुण्डलाकारेण शरीरवेष्टनमस्यास्तीति । मण्डल+इनि] जाहकः; गात्रसंकोची; विडालविशेषः; 'वनबिलाव' इति भाषा । सर्पः; विडालः; वटवृक्षः; गोनाशसर्पः । २३६

मण्डलाग्रः पुं. [मण्डले मण्डलाकारेण भ्रामणे अग्रम् अग्रभागो यस्य। तथा भ्रामणे अग्रभाग एव प्राधान्येन छेदको भवतीति तथात्वम्] कृपाणः; तलवारि; खड्गः । ४७२

मण्डलेश्वरः पुं. [मण्डलस्य ईश्वरः] एकजन्मा; भयापहः; मण्डलेशः; भूम्येकदेशाधिपः; एकदेशाधिपः; 'चतुर्योजनपर्यन्तमधिकारं नृपस्य च। यो राजा तच्छतगुणः स एव मण्डलेश्वरः।' [मण्डलस्य पुच्छस्य ईश्वरः] कुक्कुरः; [मण्डलस्य देहवलयस्य ईश्वरः] सर्पः। ४२२

मण्डूकः पुं. [मण्डयति भूषयति जलाशयमिति। मडि+'शलिमण्डिभ्यामूकण्' इति ऊकण्] भेकः; 'मण्डूकः प्लवगो भेको वर्षाभूर्दर्दुरो हरिः । मण्डूकः श्लेष्मलो नातिपित्तलो बलकारकः'-इति भावप्रकाशः। शोणकः; मुनिविशेषः; गाढतेजाः; बन्धविशेषे क्ली.। अश्वजातिभेदः; 'तत्र तित्तिरिकल्माषान् मण्डूकाख्यान् हयोत्तमान्'—इति महाभारते (२।२८।६) । ६६२

मतिः स्त्री. [मन्यतेऽनयेति । मन्+क्तिन्] बुद्धिः; मनीषा; धिषणा; 'मतिस्तु द्विविधा लोके युक्तायुक्तेति सर्वथा'—इति देवीभागवते (१।१७।२९)। इच्छा; स्मृतिः; आर्यं; शाकभेदः; 'विप्रेन्द्र! का प्रशंसेयं जन्म ते ब्रह्ममानसे। यस्य यत्र कुले जन्म तन्मतिस्तादृशी भवेत्'-इति ब्रह्मवैवर्ते। मतिकरौषधम्; 'पाठा द्वे जीरके कुष्ठमश्वगन्धाजमोदकम् । वचा त्रिकटुकं चैव लवणं चूर्णमुत्तमम्। ब्राह्मीरसैर्भावितं च सर्पिर्मधुसमन्वितम् । सप्ताहं भक्षितं कुर्यान्महैश्वर्यं मतिं पराम्'—इति गारुडे अध्याये १९८। ३३४

मतिमान् [त्] त्रि. [मतिरस्यास्तीति। मति+प्रशंसायां मतुप्] बुद्धिमान्; विचक्षणः; मेधावी; धीमान्; स्त्री. मतिमती । ३३३

मत्तः त्रि. [माद्यतीति, मद्+कर्तरि क्त, 'न ध्याख्येति' नत्वाभावः] मत्तताविशिष्टः; सुरापानेन विकलान्तःकरणः; शौण्डः; उत्कटः; क्षीवः; मदोद्धतः; 'ते पीत्वा मदिरां मत्ताः कृत्वा युद्धं परस्परम्'—इति देवीभागवते (२।८।४)। पुं. (२२०) क्षरन्मदहस्ती; प्रभिन्नः; गर्जितः; मतङ्गः; क्षरन्मदः; धुस्तूरः; कोकिलः; महिषः; हृष्टः। [मदी हर्षे, क्त] अविवेकी; 'बलान्मत्तो महाबलः'- इति रामायणे (१।४४।१०)। 'मत्तोऽविवेकी'—इति तट्टीकाकृद्रामानुजः। ३८६

मत्तकाशिनी, मत्तकासिनी स्त्री. [मत्तेव काशते भाति मत्तकाशिनी, तालव्यमध्या । मत्त इव क्षीव इव कसति गच्छति मत्तकासिनी। मत्त+कस् गतौ+ग्रहादित्वाण्णिनि, दन्त्यमध्यापि] उत्तमस्त्री; मुख्या नारी; वरारोहा; वरस्त्री; 'न तासां सदृशीं मन्ये त्वामहं मत्तकाशिनि!'—इति महाभारते (१।१७३।३९)। ४८९

मत्तवारणम् क्ली. [मत्तं वारयतीति। वृ+णिच्+ल्यु] प्राङ्गणावरणम्; अपाश्रयः; प्रासादवीथीनां वरण्डः; 'बरामदा' इति भाषा। 'दिव्यधराधरभूरिव राजति मत्तवारणोपेता'—इति कुट्टनीमते (९)। 'प्रासादवीथीनां वरण्डकः'—इति तट्टीका। प्रासादवीथीनां कुण्डवृक्षवृतिः; कुन्दवृक्षवृतिः; पूगचूर्णम्; पुं. [वार्यते संयम्यते शृङ्खलादिभिः इति वारणः। वृ+णिच् कर्मणि ल्युट्। मत्तश्चासौ वारणश्चेति] प्रक्लिन्नकटकुञ्जरः; मत्तहस्ती। ३०७

मत्सरी [न्] त्रि. [मत्सरोऽन्यशुभद्वेषोऽस्त्यस्येति! मत्सर+इनि] अन्यशुभद्वेष्टा; कर्णेजपः; दुर्जनः; पिशुनः; सूचकः; नीचः; द्विजिह्वः; खलः; 'परिभोक्ता कृमिर्भवति कीटो भवति मत्सरी'—इति मनुः (२।२०१)। ३४६

मत्स्यः पुं.—स्त्री. [माद्यन्ति लोका अनेनेति । मद्+'ऋतन्यञ्जीति' स्यन्] जलजन्तुविशेषः; पृथुरोमा; झषः; मीनः; वैसारिणः; अण्डजः; विसारः; शकली; शन्धली; झसः; आत्माशी; संवरः; मूकः; जलेशयः; कण्टकी; शल्की; मच्छः; अनिमिषः; शुङ्गी; ; 'मत्स्यो मीनो विकारश्च उषो वैसारिणोऽण्डजः। शकुलः पृथुरोमा च स सुदर्शन इत्यपि। रोहिताद्यास्तु ये जीवास्ते मत्स्याः परिकीर्तिताः। मत्स्याः स्निग्धोष्णमधुरा गुरवः कफपित्तलाः। वातघ्ना बृंहणा वृष्या रोचका बलवर्द्धनाः। मद्यव्यवायसक्तानां दीप्ताग्नीनां च पूजिताः'—इति भावप्रकाशः। पुं. मीनविशेषः; विराटदेशः; नारायणः; देशविशेषे बहुवचनान्तः। द्वादशराशिः; 'मत्स्यौ घटी नृमिथुनं सगदं सवीणम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। अष्टादशपुराणान्तर्गतपुराणविशेषः; 'पुण्यं पवित्रमायुष्य-

मिदानीं शृणुत द्विजाः । मात्स्यं पुराणमखिलं यज्जगाद गदाधरः'--इति मत्स्यपुराणे १ अध्यायः । दशावतारान्तर्गतप्रथमावतारः; 'एक एवाभवन्मत्स्यावतारः कल्प आदिमे । तस्य मन्त्रं प्रवक्ष्यामि भुक्तिमुक्तिप्रदायकम्'--इति मेरुतन्त्रे । ६५७

मत्स्यण्डी स्त्री. [मदं मधुररसं स्यन्दते इति । मत्+स्यन्द्+कर्मण्यण्, ङीप् । पृषोदरादिः] मत्स्यण्डिका; शर्कराविशेषः; खण्डविकारः; 'राब' इति भाषा । 'इक्षो रसो यः सम्पक्वो घनः किञ्चिद् द्रवान्वितः । मन्दं यत् स्यन्दते यस्मान्मत्स्यण्डीति निगद्यते । मत्स्यण्डी भेदिनी बल्या लघ्वी पित्तानिलापहा । मधुरा बृंहणी वृष्या रक्तदोषापहा स्मृता'—इति भावप्रकाशः । ३२४

मत्स्यबन्धनम् क्ली. [बन्धयति अनेन इति बन्धनम् । बन्धि+करणे ल्युट्, मत्स्यानां बन्धनम्] जालं; वडिशम् । ७६४

मत्स्यबन्धी [न्] पुं. [मत्स्यान् बन्धुं धर्तुं शीलमस्य । मत्स्य+बन्ध्+इनि] कैवर्तः; धीवरः; दाशः; जालिकः; 'अयान्वेद्युस्तैर्बकिङ्कराभैर्मत्स्यबन्धिभिः प्रभात आगत्य जालैराच्छादितो ह्रदः'—इति पञ्चतन्त्रे (५।२९) । ५९४

मत्स्यबन्धिनी स्त्री. [मत्स्यबन्धिन्+स्त्रियां ङीप्] मत्स्यधानी; मत्स्यरक्षार्थपात्रं; कुवेणी; मत्स्यकरण्डिका; खारयिका; कुवेणिः; कुवेणा; कुपिनी; कुपिनिः । ७६४

मत्स्यवेधनम् क्ली. [मत्स्यो विध्यतेऽनेनेति । मत्स्य+विध्+करणे ल्युट् । मत्स्यानां वेधनमिति वा] वडिशम् । ७६४

मत्स्यवेधनी स्त्री. [मत्स्यवेधन+ङीप्] वडिशं; मद्गुपक्षी । ७६४

मत्स्यसंघातः पुं. [मत्स्यानां बीजभूतमत्स्यशिशूनां संघातः समूहः] क्षुद्राण्डं; पोताधानम् । ६६१

मथितम् क्ली. [मथ्+क्त] निर्जलघोलं; तक्रं; 'ससरं निर्जलं घोलं मथितं सरवर्जितम्'—इति हारीतः । 'घोलं तु मथितं तक्रमुदश्विच्छच्छिकापि च । ससर निर्जलं घोलं मथितन्त्वसरोदकम् । तक्रं पादजलं प्रोक्तम् उदश्वित्त्वर्द्धवारिकम् । छच्छिका सारहीना स्यात् स्वच्छा प्रचुरवारिका'—इति भावप्रकाशः । २७५

मथुरा स्त्री. [मथ्यते पापराशिर्यया इति । मथ्+'मन्दिवाशोत्यादिना' उरच्] रागिणीभेदः; पुरीविशेषः; मधूपघ्नं; मधुपुरी; मधुरा; मथूरा; 'अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्च अवन्तिका । पुरी द्वारवती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः'—इति विष्णुपुराणे । १०५ अ

मदः पुं. [मदयतीति, मद्+अच्] हस्तिगण्डजलं; दानम्; 'मदसिक्तमुखैर्मृगाधिपः करिभिर्वर्तयते स्वयं हतैः'—इति किरातार्जुनीये (२।१८) । गर्वः (७२२); 'मदमानसमुद्धतं नृपं न वियुङ्क्ते नियमेन मूढता'—इति किरातार्जुनीये (२।४९) । [मद्यते इति । मद्+'मदोऽनुपसर्गे' इति अप्] हर्षः; आमोदः; 'उप नः सवनागहि सोमपाः पिब गोदा इद्रेवतो मदः'—इति ऋग्वेदे (१।४।२) 'मदो हर्षः' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः । रेतः; कस्तूरी; 'मृगनाभिर्मृगमदो मदः कस्तूरिकाण्डजः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । रोगविशेषः; 'स चाप्रवृद्धस्तरुणो मदसंज्ञां बिभर्त्ति च'—इति माधवः । मद्यं; क्षैव्यं, मत्ततेति यावत्; 'मृगयाक्षो दिवास्वप्नः परिवादः स्त्रियो मदः । तौर्यत्रिकं वृथाट्या च कामजो दशको गणः'—इति मनुः (७।४७) । नदः; कल्याणवस्तु; मदलक्षणम्—'अहं महात्मा धनवान् मत्तुल्यः कोऽस्ति भूतले । इति यज्जायते चित्तं मदः प्रोक्तः स कोविदैः'—इति पाद्मे । 'बुद्धेर्मोहः समभवदहङ्कारादभून्मदः'—इति मात्स्ये । दानवभेदः; 'असिलोमा सुकेशी च शठश्च बलको मदः'—इति हरिवंशे (३।८६) । २१७

मदनः पुं. [मदयतीति, मद्+णिच्, ल्यु] कामदेवः; अङ्गजः; 'मदनान्मदनाख्यस्त्वं शम्भोर्दर्पात् सदर्पकः । तथा कन्दर्पनाम्नापि लोके ख्यातो भविष्यसि'—इति कालिकापुराणे । योगाचार्यरूपः शिवस्यावतारविशेषः; श्रीकृष्ण उवाच—'युगावर्तेषु सर्वेषु योगाचार्यच्छलेन तु । अवताराणि शर्वस्य शिष्यांश्च भगवन्! वद ।' उपमन्युरुवाच 'श्वेतः सुतारो मदनः सुहोत्रः कङ्क एव च —' इति शिवपुराणे । [मदयति भक्तानां मनः । मद्+ल्यु । मनसि आनन्दजनकत्वादस्य तथात्वम्] महादेवः; 'उन्मादो मदनः कामो ह्यश्वत्थोऽर्ककरो यशः'—इति महाभारते (१३।१७।६९) । मत्तता; वरारोहाणां कामिनीनां भावविशेषः इति यावत् । 'सीधुपानेन चाल्पेन तुष्टाथ मदनेन च । विलासनैश्च विविधैः

प्रेक्षणीयतराभवत्'—इति महाभारते (३।४६।१३)। वसन्तः; धुस्तूरः। धुस्तूरार्थे पर्यायो यथा—'धत्तूर-धूर्तधत्तूरा उन्मत्तः कनकाह्वयः। देवता कितवस्तूरो महामोहः शिवप्रियः। मातुलो मदनश्चास्य फले मातुल-पुत्रकः'—इति भावप्रकाशः। सिक्थकं; वृक्षभेदः; पिचुकः; मुचुकुन्दः; कण्टकी; पिण्डीतकः; मरुवकः; श्वसनः; करहाटकः; शल्यः; 'मदनश्छर्दनः पिण्डो नटः पिण्डीतकस्तथा। करहाटो मरुवकः शल्यको विषपुष्पकः। मदनो मधुरस्तिक्तो वीर्योष्णो लेखनो लघुः'—इति भावप्रकाशः। भ्रमरः; माषः; खदिरवृक्षः; मङ्कोटवृक्षः; वकुलवृक्षः; वृक्षविशेषः; शल्यः; कैटर्यः; पिण्डः; धाराफलः; तगरः; करहाटः; पिण्डीतकः; श्वसनः; मरुवकः; आलिङ्गनविशेषः; मयनम्; 'मयनं तु मधूच्छिष्टं मधुशेषं च सिक्थकम्। मध्वाधारो मदनकं मधूषितमपि स्मृतम्। मदनं मृदु सुस्निग्धं भूतघ्नं व्रणरोपणम्। भग्नसन्धानकृद्वातकुष्ठ-वीसर्परक्तजित्'—इति भावप्रकाशः। मण्डलिसर्पान्तर्गत-सर्पविशेषः; 'शिशुको मदनः पालिहिरः इत्यादि'—इति सुश्रुतः। ३२

मदिरा स्त्री. [माद्यति अनया, मद्+किरच्, अजादित्वात् टाप्] मादकद्रव्यविशेषः; सुरा; हलिप्रिया; हाला; परिस्रुत्; वरुणात्मजा; गन्धोत्तमा; प्रसन्ना; इरा; कादम्बरी; परिस्रुता; कश्यं; मद्यं; मानिका; कपिशी; गन्धमादिनी; माधवी; कत्तोयं; मदः; कापिशायनं; वारुणी; मत्ता; सीता; चपला; कामिनी; प्रिया; मदगन्धा; माध्वीकं; मधु; सन्धानम्; आसवः; अमृता; वीरा; मेधावी; मदनी; सुप्रतिभा; मनोज्ञा; विधाता; मोदिनी; हली; गुणारिष्टं; सरकः; मधूलिका; मदोत्कटा; महानन्दा; सीधुः; मैरेयं; बलवल्लभा; कारणं; तत्त्वम्; मदिष्ठा; परिप्लुता; कल्पं; स्वादुरसाः; शुण्डा; हारहूरं; मार्द्वीकं; मदना; देवसृष्टा; कापिशम्; अब्धिजा। 'शराब' इति भाषा। [माद्यत्यनयेति। मद्+'इषिमदीति' किरच्] 'हिक्का-श्वास-प्रतिश्याय-कासवर्चोग्रहारुचौ। वम्यानाह-विबन्धेषु वातघ्नी मदिरा हिता'—इति चरकः। मत्तखञ्जनः; 'यदि मदिरायतनयनां तामधिकृत्य प्रहर-तीति'—इति शाकुन्तले (३।५)। वसुदेवपत्नी; 'पौरवी रोहिणी भद्रा मदिरा रोचना इला। देवकी-प्रमुखाश्चासन् पत्न्य आनकदुन्दुभेः'—इति भागवते (९।२४।४५)। ३२९

मदिष्ठा स्त्री. [मदोऽस्या अस्तीति। मद्+इनि। इयमति-शयेन मदिनीति। इष्ठन्; इनो लोपः] मदिरा। ३२९

मद्गुः पुं. [मज्जतीति। मस्ज्+'भृमृशीतृचरित्सरितनि-धनिमिमस्जिभ्य उः' इति उ, न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्, जश्त्वेन सस्य दः] पक्षिविशेषः; जलवायसः; पर्ण-मृगभेदः; 'मद्गुमूषिकवृक्षशायिकावकुशपूतिघासवानर-प्रभृतयः पर्णमृगाः'—इति सुश्रुतः। २५०

मद्गुरः पुं. [माद्यति जलं प्राप्य हृष्यतीति। मद्+'मद्गुरादयश्च'इति उरच्, निपातितश्च] मत्स्यविशेषः; मद्गुरकः; 'श्रमणो गौतमः श्यामको बत भो श्रमणो गौतमो मद्गुरच्छविः'—इति ललितविस्तरे (३२०।७)। 'मद्गुरो वातहृद्बल्यो वृष्यः कफकरो लघुः'—इति भावप्रकाशः। वर्णसङ्करजातिविशेषः; 'निषादं मद्गुरं सूते दाशं नावोपजीविनम्'—इति महाभारते (१३।-२५।८३)। 'मद्गून् मीनविशेषान् राति आदत्ते इति। रा+क, तम्-इति तट्टीकायां नीलकण्ठः। ६५९

मद्यम् क्ली. [माद्यति जनोऽनेन। मद्+'गदमदचरयमश्चा-नुपसर्गे' इति करणे यत्] सुरा; वारुणी; मदिरा; 'भिक्षो! मांसनिषेवणं प्रकुरुषे किं तेन मद्यं विना, मद्यं चापि तव प्रियं प्रियमहो वाराङ्गनाभिः सह। वेश्याप्यर्थरुचिः कुतस्तव धनं द्यूतेन चौर्येण वा, एता-वानपि सङ्ग्रहोऽस्ति भवतो नष्टस्य कान्या गतिः'—इति साहित्यदर्पणे। ३३०

मधुः पुं. [मन्+'फलिपाटि' इत्यु नस्य च धः] चैत्रमासः; 'रेजतुर्गतिवशात् प्रवर्तिनौ भास्करस्य मधुमाधवाविव'—इति रघौ (११।७)। मधुद्रुमः; वसन्तर्तुः; 'निवेशया-मास मधुर्द्विरेफान्नामाक्षराणीव मनोभवस्य'—इति कुमारसम्भवे (३।२७)। दैत्यभेदः; 'मधुश्च कुपितस्तत्र हरिणा सह संयुगे'—इति देवीभागवते (१।९।१५)। (इमं हत्वा विष्णुर्मधुसूदनोऽभूत्।) अशोकवृक्षः; यष्टि-मधु; असुरविशेषः; 'शत्रुघ्नश्च मधोः पुत्रं लवणं नाम राक्षसम्। हत्वा मधुवने चक्रे मथुरां नाम वै पुरीम्'—इति भागवते (९।११।१४)। स च शत्रुघ्नेन हतः, यस्य नाम्ना मथुरा मधुपुरीति ख्याता। ११४

मधु क्ली. [मन्यन्ते विशेषेण जानन्ति जना यस्मिन्। मन्+'फलिपाटिनमिमनिजनां गुक्पटिनाकिधतश्च' इति उ धश्चान्तादेशः] पुष्परसः; मकरन्दः; मरन्दः; मरन्दकः; (६३१) क्षुद्राभिर्मक्षिकाभिः कृतं; क्षौद्रं; माक्षिकं; माक्षीकं; कुसुमासवं; पुष्पासवं; पवित्रं; पित्र्यं; पुष्परसाह्वयं; माध्वीकं, सारघं; मक्षिकावान्तं; वरटीवान्तं; भृङ्गवान्तं; पुष्परसोद्भवम्; 'मधु पुष्परसं क्षौद्रं मकरन्दश्च माक्षिकम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। मद्यम् (३२९, ३३०); 'मधुमदवीतव्रीडा यथा यथा लपति सम्मुखं बाला'—इति आर्यासप्तशत्याम्। क्षीरं; जलं; रसभेदः; मधुररसः इति यावत्। स्त्री. जीवन्तीवृक्षः। १८८

मधुकम् क्ली. [मध्विवेति। मधु+'संज्ञायां च' इति कन्। यद्वा मधु मधुरं कायतीति। कै+क] त्रपु; (६१५) यष्टिमधुका; यष्टिमधु; 'यष्ट्याह्वं मधुकं यष्टि क्लीतकं मधुयष्टिका। यष्टिमधु स्थले जाता जलजातिरसा पुरा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। पुं. [मधु मधुरं कायतीति। कै+क] वन्दिभेदः; यष्ट्याह्वः; विहगान्तरम्। १७२

मधुकरः पुं. [करोति सञ्चिनोतीति। कृ+अच्। मधुनः करः] भ्रमरः; 'सर्वतः सारमाद यथात्ते मधुकरो बुधः'—इति भागवते (४।१८।२)। कामी; भृङ्गराजवृक्षः। २५५

मधुपः पुं. [मधु पिबतीति। मधु+पा+क] भ्रमरः; 'गव्यूतिमात्रमासन्ने देवीधामनि धैर्यवान्। धुन्वन् कराभ्यां मधुपान् धावति स्म स धीरधीः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (३।४०९)। [मधु जलं पातीति। पा+क] वारिरक्षके त्रि.। 'त्यं चिदर्णं मधुपं शयानमसिन्वं वव्रं मह्यादद्रुग्रः'—इति ऋग्वेदे (५।३२।८)। 'मधुपं मधुनोऽम्भसः पातारं पालयितारम्'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। मधुपानकर्तरि त्रि.। 'स्वसा यद्वां विश्वगूर्तीभराति वाजायेट्टे मधुपाविषे च'—इति ऋग्वेदे (१।१८०।२)। 'हे मधुपौ मधुरस्य सोमरसस्य पातारौ'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। २५५

मधुमक्षिका स्त्री. [मधुसञ्चायिका मक्षिका] कीटविशेषः; सरघा; क्षुद्रा। २५६

मधुमथनः पुं. [मधुं तन्नामानं दैत्यं मथ्नातीति। मन्थ्+ल्यु] विष्णुः; 'सर्वात्मनि निरन्तरं निर्वृतमनसः कथमुह वा एते मधुमथन! पुनः स्वार्थकुशला ह्यात्मप्रियसुहृदः साधवस्त्वच्चरणाम्बुजानुसेवां विसृजन्ति न यत्र पुनरयं संसारपर्यावर्तः'—इति भागवते (६।९।३९)। २२

मधुरः त्रि. [मधु माधुर्यमस्यास्तीति। 'ऊषसुषिमुष्कमधो रः' इति र] प्रियः; मधुररसविशिष्टः; स्वादुः; 'न धर्मशास्त्रं पठतीति कारणं न चापि वेदाध्ययनं दुरात्मनः। स्वभाव एवात्र तथातिरिच्यते यथा प्रकृत्या मधुरं गवां पयः'—इति हितोपदेशे (१।७९)। पुं. मिष्टरसः; गौल्यः; रसज्येष्ठः; गुल्यः; स्वादुः; मधूलकः; 'मधुरस्तु रसश्चिनोति केशान् वपुषः स्थैर्यबलौजोवीर्यदायी। अति सेवनतः प्रमेहशैत्यजडतामान्द्यमुखान् करोति दोषान्'—इति राजनिर्घण्टः। जीवकः; रक्तशिग्रुः; राजाम्रः; रक्तेक्षुः; गुडः; शालिः; बीजपूरविशेषः; 'बीजपूरोऽपरः प्रोक्तो मधुरो मधुकर्कटी'—इति भावप्रकाशः। स्कन्दस्य सैनिकभेदः; 'मधुरः सुप्रसादश्च किरीटी च महाबलः'—इति महाभारते (९।४५।६९)। ६८९

मधुरवाक् [च्] त्रि. [मधुरा कोमला वाक् वाणी यस्य] मधुरभाषी; श्लक्ष्णः; मृदुभाषी; प्रियवाक्। ३६५

मधुव्रतः पुं. [मधु मधुसञ्चयो व्रतं व्रतमिव सततानुशीलनीयं यस्य। यद्वा मधु व्रतयति नियतं भुङ्क्ते इति। मधु+व्रति+अण्] भ्रमरः; 'मालां मधुव्रतवरूथगिरोपजुष्टाम्'—इति भागवते (३।२८।२८)। [मध्वर्थं व्रतं कर्म यस्य] उदकार्थकर्मणि त्रि.। 'मधुनो द्यावापृथिवी मिमिक्षतां मधुश्चुता मधुदुघे मधुव्रते'—इति वेदे। 'मधुव्रते उदकार्थकर्माणौ'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। २५५

मधुसखः पुं. [मधोर्वसन्तस्य सखा। 'राजाहःसखिभ्यष्टच्' इति टच्] कामदेवः; मधुसारथिः; मधुसुहृत्। ३२

मधूच्छिष्टम् क्ली. [मधुनः उच्छिष्टमवशिष्टम्] मध्ववशिष्टं; सिक्थकं; शिक्थकं; शिक्थं; मधूत्थितं; 'मोम' इति भाषा। 'शैलेयकमांसीतगरकुष्ठरससैन्धवादिवल्लीजम्। मधुररसमधूच्छिष्टानि चोरकश्चेति जीवस्य'—इति बृहत्संहितायाम् (१६।२५)। ५५५

मधूत्थितम् क्ली. [मधुनः उत्थितम्] सिक्थकं; 'मोम' इति भाषा। ५५५

मध्यः पुं. –क्ली. [मन्+यक्। नस्य च ध] देहमध्यभागः;

मध्यमम्; अवलग्नं; विलग्नम्; 'दधाना बलिभं मध्यं कर्णजाहविलोचना'—इति भट्टिकाव्ये (४।१६)। (८५१, ८७१) मध्यभागमात्रम्; 'नेक्षेतोद्यन्तमादित्यं नास्तं यान्तं कदाचन। नोपसृष्टं न वारिस्थं न मध्यं नभसो गतम्'—इति मनुः (४।३७)। आयुष्कालस्य मध्यमावस्थाविशेषकालः; 'षोडशसप्तत्योरन्तरे मध्यं वयस्तस्य विकल्पो वृद्धिर्यौवनं सम्पूर्णता हानिरिति। तत्राविंशतेर्वृद्धिरात्रिंशतो यौवनमाचत्वारिंशतः सर्वधात्विन्द्रियबलवीर्यसम्पूर्णता। अत ऊर्द्ध्वमीषत् परिहानिर्यावत् सप्ततिरिति'—इति सुश्रुतः। पुं. ग्रहस्फुटसाधकाङ्कविशेषः; स च अहर्गणाज्जातदेशान्तरादिसंस्काररहिताङ्करूपग्रहः। त्रि. न्यायः; अन्तरः; अवमः; मध्यमः; 'उत्तमाधममध्यानि बुद्ध्वा कार्याणि पार्थिवः। उत्तमाधममध्येषु पुरुषेषु नियोजयेत्'—इति मात्स्ये ८९ अध्यायः। क्ली. दशान्त्यसंख्या; शतसागरसंख्या; 'मध्यं चैव परार्द्धं च सपरं चात्र पण्यताम्'—इति महाभारते। अवसानं; विरामः; मन्दत्वशीघ्रत्वोभयेतरत्वयुक्तनृत्यविषयकगमनविशेषः; लयविशेषः; मध्यमा वृत्तिः; 'विलम्बितं द्रुतं मध्यं तत्त्वमोघो घनं क्रमात्'—इति अमरे (२।६।७९।) ५१७

मध्यन्दिनः पुं. [दिनस्य मध्यम्। राजदन्तादित्वात् मध्यशब्दस्य पूर्वनिपातः। पृषोदरादित्वान्नकारागमः। मध्यन्दिनं पुष्पविकासकत्वेनास्यास्तीति। अच्] बन्धूकवृक्षः। मध्यमे त्रि.। मध्याह्ने क्ली.। 'मध्यन्दिनेऽर्द्धरात्रे च श्राद्धं भुक्त्वा च सामिषम्'—इति मनुः (४।१३१)। ७७५

मध्यमम् क्ली.-पुं. [मध्ये भवम्, मध्य+'मध्यान्मः' इति म] देहमध्यभागः; मध्यः; अवलग्नम्; विलग्नम्। ५१७

मध्यमः त्रि. [मध्ये भवः। मध्य+'मध्यान्मः' इति म] मध्यभवः; माध्यमं; मध्यमीयं; माध्यन्दिनम्; 'ततोऽर्द्धं मध्यमस्य स्यात् तुरीयन्तु यवीयसः'—इति मनुः (९।११२)। वयोमध्यसमयः; 'वयश्चतुर्विधं प्रोक्तं मध्यमाधममुत्तमम्। हीनं च हारीत! ह्यत्र तानि वक्ष्यामि साम्प्रतम्। पथि श्रान्तः श्रमक्षीणः बालश्रीः सुकुमारकः। एतेषां मध्यमा संज्ञा प्रोच्यते वैद्यकागमे। मध्यमः सप्ततिं यावत् परतो वृद्ध उच्यते'—इति हारीतः। ७७५

मध्यमः पुं. [मध्ये भवः। मध्य+म] मण्डलेश्वरः; माण्डलिकः; सप्तस्वराणां मध्ये पञ्चमस्वरः; मध्यदेशः; उपपतिविशेषः; ग्रहाणां सामयिकसंज्ञाविशेषः; 'द्युचरचक्रहतो दिनसञ्चयः क्वहहृतो भगणादिफलं ग्रहः। दशशिरःपुरमध्यमभास्करे क्षितिजसन्निधिगे सति मध्यमः'—इति सिद्धान्तशिरोमणिः। मृगभेदः; रागभेदः। ४२२

मध्यमा स्त्री. [मध्यम+टाप्] कर्णिका; अङ्गुलिभेदः; दृष्टरजस्का नारी; मध्यमिका; त्र्यक्षरच्छन्दः; हृदयोत्थितबुद्धियुतनादरूपवर्णः; 'पश्चात् पश्यन्त्यथ हृदयगो बुद्धियुङ्मध्यमाख्यः'—इति अलङ्कारकौस्तुभः। स्वीयाद्यन्तर्गतनायिकाभेदः; जम्बुभेदः; 'सूक्ष्मकृष्णफला जम्बुर्दीर्घपत्रा च मध्यमा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। ५३८

मध्यमीयम् त्रि. [मध्यमे भवं, मध्यमस्येदं, मध्यमाय हितं वेति। 'गहादिभ्यश्च' इति छ] मध्यमं; मध्यमसम्बन्धि। ७७५

मध्यरात्रः पुं. [मध्यं रात्रेः। 'पूर्वापराधरेति' समासः। 'अहःसर्वैकेति' समासान्तोऽच्, पुंस्त्वञ्च] निशीथः; अर्द्धरात्रः; 'उदके मध्यरात्रे च विण्मूत्रस्य विसर्जने। उच्छिष्टः श्राद्धभुक् चैव मनसापि न चिन्तयेत्'—इति मनुः (४।१०९)। १०९

मध्याङ्गुलिः स्त्री. [मध्या चासौ अङ्गुलिः] मध्या; मध्यमाङ्गुलिः; मध्यमा। ५३६

मध्वासवः पुं. [मधु मधूकपुष्परसस्तेन कृत आसवः] मधूकपुष्पकृतमद्यं; माधवकः; मधु; माध्वीकं; शीधु; सुरा; 'मुखप्रियः स्थिरमदो विज्ञेयोऽनिलनाशनः। मधु मध्वासवश्छेदी मेहकुष्ठविषापहः'—इति सुश्रुतः। ३३०

मनः [स्] क्ली. [मन्यते बुध्यतेऽनेनेति। मन्+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इति असुन्] चित्तं; चेतः; हृदयं; स्वान्तं; हृत्; मानसम्; अनङ्गकम्; अङ्गम्; 'मनो महान् मतिर्ब्रह्मा पूर्बुद्धिः ख्यातिरीश्वरः। प्रज्ञा संविच् चितिश्चैव स्मृतिश्च परिपठ्यते। पर्यायवाचकाः शब्दा मनसः परिकीर्तिताः'—इति महाभारते। 'सर्वे सान्ता अदन्ताश्चेति' प्रमाणात् अकारान्तमनशब्दोऽप्यस्ति, यथा—'मनस्थं मनमध्यस्थं मध्यस्थं मनवर्जितम्। मनसा मनमालोक्य स्वयं सिद्ध्यन्ति योगिनः'—इति

उत्तरगीतायाम् १३ अध्याये। 'वर्धितमनोत्साहः'—इति कादम्बरी। ५३४

मनसिजः पुं. [मनसि जात इति। जन्+ड, 'हलदन्तात् सप्तम्याः संज्ञायाम्' इत्यलुक्] कामदेवः; 'कामं प्रिया न सुलभा मनस्तु तद्भावदर्शनाश्वासि। अकृतार्थेऽपि मनसिजे रतिमुभयप्रार्थना कुरुते'—इति शाकुन्तले। मनोजाते त्रि.। ३२

मनसिशयः पुं. [मनसि शेते इति। शी+'अधिकरणे शेते' इति अच्, 'हलदन्तात् सप्तम्याः संज्ञायाम्' इत्यलुक्] कामदेवः। ३३

मनाक् अव्य. [मन्यते इति, मन् ज्ञाने। बाहुलकाद् आक् प्रत्ययः] अल्पम्; 'मरुधन्वमतिक्रम्य सौवीराभीरयोः परान्। आनर्तान् भार्गवोपागाच्छ्रान्तवाहो मनाग् विभुः'—इति भागवते (१।१०।३५)। मन्दः। ८८२

मनीषा स्त्री. [ईष्+अ, टाप्। मनसः ईषा गमनम्। 'शकन्ध्वादिषु पररूपं वाच्यम्' इत्युक्त्या साधुः] बुद्धिः; धिषणा; प्रज्ञा; मतिः; 'असमं क्षत्रमसमा मनीषा'—इति ऋग्वेदे (१।५४।८)। स्तुतिः; 'उत प्रजाभ्योऽविदो मनीषाम्'—इति ऋग्वेदे(५।८३।१०)। 'मनीषां स्तुतिमविद प्राप्तवानसि'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ३३४

मनीषी [न्] पुं. [मनीषा अस्त्यस्येति। मनीषा+व्रीह्यादित्वात् इनि] पण्डितः; 'यन्मूर्त्यवयवाः सूक्ष्मास्तस्येमान्याश्रयन्ति षट्। तस्माच्छरीरमित्याहुस्तस्य मूर्तिं मनीषिणः'—इति मनुः (१।१७)। बुद्धियुक्ते त्रि.। 'चत्वारि वाक् परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः'—इति ऋग्वेदे (१।१६४।४५)। 'मनीषिणो मेधाविनः' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ३३२

मनुजः पुं. [मनोर्जात इति। जन्+ड] मनुष्यः; मानुषः; 'स्वर्गापवर्गौ मानुष्यात् प्राप्नुवन्ति नरा मुने!। यथाभिरुचितं स्थानं तद्यान्ति मनुजा द्विज!'—इति विष्णुपुराणे (१।६।१०)। ३३१

मनुष्यः पुं. [मनोरपत्यमिति। मनु+'मनोर्जातावञ्यतौ षुक् च' इति यत् षुगागमश्च] मनोरपत्यं; मानुषः; मर्त्यः; मनुजः; मानवः; नरः; भूमिजः; द्विपदः; चेतनः; भूस्थः; मनुः; पञ्चजनः; पुरुषः; पूरुषः; पुमान्; ना; मर्णः; विट्; 'रक्षांसि च पिशाचाश्च मनुष्याश्च जरायुजाः'—इति मनुः (१।४३)। त्रि. स्तुतिकारकः; 'होता मनुष्यो न दक्षः'—इति ऋग्वेदे (१।५९।४) 'मनुष्यो लौकिको वन्दी दातारं प्रभुं बहुविषया स्तुत्या स्तौति'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। मनुष्यसम्बन्धी; 'प्रमिनती मनुष्या मनुष्या युगानि'—इति ऋग्वेदे (१।९२।११)। मनुष्यहितः; 'दशारित्रो मनुष्यः स्वर्षाः'—इति ऋग्वेदे (२।१८।१)। 'मनुष्यो मनुष्याणां हितः स्वर्षाः स्वर्गस्य दाता' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ३३१

मनुष्यधर्मा [न्] पुं. [मनुष्यस्येव धर्म आचारो यस्य। 'धर्मादनिच् केवलात्' इति समासान्तोऽनिच्] कुबेरः; धनदः; यक्षराट्। ७८

मनोभवः पुं. [मनसः मनसि वा भवतीति। भू+अच्। मनसः भवः उत्पत्तिर्यस्येति वा] कन्दर्पः; मनोजन्मा; मनोभूः; कामदेवः; 'ते तां दृष्ट्वाग्रतो दैत्याः साभिलाषा मनोभवम्। न शेकुरुद्धतं धैर्यान्मनसा वोढुमातुराः'—इति मार्कण्डेये (१८।४१)। मनोजन्ये त्रि.। 'दृश्यमाना विनार्थेन न दृश्यन्ते मनोभवाः। कर्मभिर्ध्यायतो नाना कर्माणि मनसोऽभवन्'—इति भागवते (६।१५।२४)। ३३

मनोरथः पुं. [मनसः रथ इव, मन एव रथोऽत्रेति वा] इच्छा; 'इतस्ततश्च वैदेहीमन्वेष्टुं भर्तृचोदिताः। कपयश्चेरुरार्तस्य रामस्येव मनोरथाः'—इति रघौ (१२।५९)। कविविशेषः; 'मनोरथः शङ्खदत्तश्चटकः सन्धिमांस्तथा। बभूवुः कवयस्तस्य वामनाद्याश्च मन्त्रिणः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (४।४९६)। ५३५

मनोहरम् त्रि. [हरतीति, हृ+अच्। मनसो हरमिति] मनोज्ञं; मनोहारि; 'स्त्रीणां सुखोद्यमक्रूरं विस्पष्टार्थं मनोहरम्'—इति मनुः (२।३३)। 'स ददर्श तदा तत्र होमधेनुं मनोहराम्'—इति मार्कण्डेये (११२।३)। कुन्दवृक्षे पुं.। सुवर्णे क्ली.। ६८९

मन्तुः पुं. [मन्यते इति, मन्+'कमिमनिजनिगाभायाहिभ्यश्च' इति तुन्] अपराधः; 'सतीव्रतैस्तीव्रमिमन्तु मन्तुमन्तर्वरं वज्रिणि मार्जितास्मि'—इति नैषधचरिते (६।११०)। मनुष्यः; प्रजापतिः; त्रि. ज्ञाता; 'य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः'—इति ऋग्वेदे (१०।६३।८)। 'मन्तवः सर्वस्य वेदितारः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ७४९

मन्त्रः पुं. [मन्त्र्यते गुप्तं परिभाष्यते इति। मंत्रि गुप्त-

भाषणे+घञ् । यद्वा मन्त्रयते गुप्तं भाषते इति, मन्त्रि+अच्] वेदभेदः; स च मन्त्रस्वरूपभागः; 'प्रनूनं ब्रह्मणस्पतिर्मन्त्रं वदत्युक्थम्'—इति ऋग्वेदे (६७।४।७४)। 'निषेकादिश्मशानान्तो मन्त्रैर्यस्तोदितो विधिः। तस्य शास्त्रेऽधिकारोऽस्मिन् ज्ञेयो नान्यस्य कस्यचित्'—इति मनुः (२।१६)। तन्त्राद्युक्तमन्त्रभागश्च; 'सुपरीक्षितमन्नाद्यमद्यान्मन्त्रैर्विषापहैः'—इति मनुः (७।२१७)। गुप्तवादः; स तु रहसि कर्तव्यावधारणं मन्त्रणेति ख्यातं; परामर्शः; मन्त्रणा; 'मन्त्रो योध इवाधीरः सर्वाङ्गैः संवृतैरपि। चिरं न सहते स्थातुं परेभ्यो भेदशङ्कया'—इति माघे (२।२९)। देवादीनां साधनम्; 'तन्मन्त्राद्यषडक्षीणं यत् तृतीयाद्यदगोचरम्। रहस्यालोचनं मन्त्रो रहश्छन्नमुपह्वरम्'—इति हेमचन्द्रः। 'मननात् त्रायते यस्मात्तस्मान्मन्त्रः प्रकीर्त्तितः। यथा ज्वरादिनाशकमन्त्रः; 'वानराकृतिमालिख्य खटिकाभिः पुन श्रृणु। गन्धपुष्पाक्षतैर्धूपैरर्चयेत् भिषजां वरम्। मन्त्रः—'ओम् ह्लां ह्लीं श्रीं सुग्रीवाय महाबलपराक्रमाय सूर्यपुत्राय अमिततेजसे ऐकाहिक-द्वयाहिक-त्र्याहिक चातुर्थिक-महाज्वर-भूतज्वर-भयज्वर-शोकज्वर-क्रोधज्वर-वेलाज्वरप्रभृतिज्वराणां दह दह हन हन पच पच अवतर अवतर किलि किलि वानरराज ज्वराणां बन्ध बन्ध ह्लां ह्लीं ह्रूँ फट् स्वाहा'—इति हारीतः। ८७०

मन्त्री [न्] पुं. [मन्त्रो गुप्तभाषणमस्यास्ति। मन्त्र+इनि। यद्वा मन्त्रयते इति, मन्त्र्+'नन्दिग्रहीति' णिनि] मन्त्रजातकर्तव्यनिश्चयकर्ता; धीसचिवः; अमात्यः; सचिवः; धीसखः; सामवायिकः; त्रि. बुद्धिमान्। 'मन्त्री भक्तः शुचिः शूरोऽनुक्तो बुद्धिमान् क्षमी। आन्वीक्षिक्यादिकुशलः परिच्छेदी सुदेशजः'—इति कविकल्पलता। 'बहुभिर्मन्त्रयेत् कामं राजा मन्त्रं पृथक् पृथक्। मन्त्रिणामपि नो कुर्यान्मन्त्री मन्त्रप्रकाशनम्। न क्वचित्कस्य विश्वासो भवतीह सदा नृणाम्। निश्चयश्च सदा मन्त्रे कार्य एकेन सूरिणा। भवेद्वा निश्चयावाप्तिः परबुद्धयानुजीवनात्। एकस्यैव महीभर्तुर्भूयः कार्यो विनिश्चयः'—इति मत्स्यपुराणे। ८६२

मन्थः पुं. [मथ्यतेऽनेन। मन्थ्+करणे घञ्]मन्थदण्डकः; 'रई' 'मथानी' इति भाषा। तत्पर्यायाः 'मन्थानदण्डः; वैशाखः; मन्थानः; मन्थाः; मन्थनः; करहर्षकः; भक्ताटः; तक्राटः; खजकः; 'आमथ्य मतिमन्थेन ज्ञानोदधिमनुत्तमम्। नवनीतं तथा दध्नो मलयाच्चन्दनं यथा'—इति महाभारते (१२।२४३।११)। [मथ्यते विलोड्यते इति, मन्थ्+कर्मणि घञ्] साक्तवः; 'सक्तुभिः सर्पिषाभ्यक्तैः शीतवारि परिप्लुतैः। नात्यच्छो नातिसान्द्रश्च मन्थ इत्यभिधीयते—इति राजनिर्घण्टः। पेयविशेषः; तस्य विधिः—'जले चतुष्पले शीते क्षुण्णं द्रव्यं पलं क्षिपेत्। मृत्पात्रे मन्थयेत् सम्यक् तस्माच्च द्विपलं पिबेत्। क्षुण्णं चूर्णीकृतं मन्थयेत् मृद्नीयात्'—इति भावप्रकाशः। [मथ्नाति स्वकरेण त्रिभुवनं पीडयतीति, मन्थ्+अच्] दिवाकरः; [मन्थ्+भावे घञ्] मारणं; नेत्रमलं; नेत्रामयः; अंशुः; कुन्थनं; विलोडनम्; इति मन्थधात्वर्थदर्शनात्। यथा—'अतिष्ठत् प्रत्ययापेक्षसन्ततिः स चिरं नृपः। प्राङ् मन्थादनभिव्यक्तरत्नोत्पत्तिरिवार्णवः'—इति रघौ (१०।३)। २७६

मन्थनी स्त्री. [मथ्यते अस्याम्। मन्थ्+अधिकरणे ल्युट्, ङीप्.] गर्गरी; मन्थनघटी; दधिमन्थनपात्रम्। ३१७

मन्थरः त्रि. [मन्थति पादाविति। मथि+अरन्] मन्दः; 'दत्ते सालसमन्थरं भुवि पदं निर्याति नान्तः पुरात्'—इति साहित्यदर्पणे (३।६८)। जडः; वक्रः; पृथुः; निश्चलः; 'राज्याभिषेकसलिलक्षालितमौलेः कथासु कृष्णस्य। गर्वभरमन्थराक्षी पश्यति पदपङ्कजं राधा'—इति आर्यासप्तशत्याम् (४८८)। नीचः; मन्दगामी; पुं. [मन्थ्+बाहुलकात् अरन्] कोषः; फलं; बाधः; मन्थानः; सूचकः; मन्दगामियोधा; कोपः; क्ली. कुसुम्भी। ३८७

मन्थाः [थिन्] पुं. [मन्थ्+'मन्थः' इति इनि स च कित्] मन्थानदण्डः; मन्थदण्डकः; वैशाखः; मन्थः; मन्थानः; करहर्षकः; मन्थनः; भक्ताटः; तक्राटः; खजकः। 'मुहुःप्रणुन्नेषु मथां विवर्तनैर्नदत्सु कुम्भेषु मृदङ्गमन्थरम्'—इति किरातार्जुनीये (४।१६)। मन्था स्त्री. [मथ्यते इति, मन्थ्+घञ् ततः स्त्रियां टाप्] मेथिका; 'वल्लरी चन्द्रिका मन्था मिश्रपुष्पा च कैरवी'—इति भावप्रकाशः। २७६

मन्थानः पुं. [मथ्यते अनेनेति। मन्थ्+बाहुलकात् आनच्] मन्थदण्डकः; मन्थः; मन्थनः; मन्थाः; वैशाखः; खजकः; 'मन्थानारणिसंयोगान्मन्थनाच्च समुद्भवः। पावकस्य यथा तद्वत् कथं मे स्यात् सुतोद्भवः'—

इति देवीभागवते (१।१०।२५)। आरग्वधः; (समुद्र-मन्थनदण्डकत्वादस्य तथात्वम्) मन्दरपर्वतः; 'प्रविवेशाथ पातालं मन्थानः पर्वतोत्तमः'—इति रामायणे (१।४५।२७)। महादेवः; 'मन्थानो बहुलो वायुः सकलः सर्वलोचनः'—इति महाभारते (१३।१७।१२८) २७६

मन्दः पुं. [मन्दते इति, मदि+अच्] हस्तिजातिविशेषः; शनिः; 'शुक्रेन्दुबुधजीवानां वाराः सर्वत्र शोभनाः। भानुभूसुतमन्दानां शुभकर्मसु केष्वपि'—इति ज्योतिषे। यमः; 'तत्र मन्दमिवालोक्य साभिप्रायः स मां नृपः। पप्रच्छ रे किमीदृक् त्वं सञ्जातः कथ्यतामिति'—इति कथासरित्सागरे (३२।१५५)। प्रलयः; जठरानलविशेषः; 'तीक्ष्णः पित्ताधिकत्वेन जायते जठराग्निकः। वातश्लेष्माधिकत्वेन जायते मन्दसंज्ञकः'—इति हारीतः। २१५

मन्दः त्रि. [मदि+अच्] मूर्खः; अल्पः; निर्भाग्यः; 'मन्दः कवियशःप्रार्थी गमिष्याम्युपहास्यताम्'—इति रघुवंशे (१।३)। (३८२) अतीक्ष्णः; कुण्ठः; अलसः (३८७); 'प्रायेणाल्पायुषः सभ्य! कलावस्मिन् युगे जनाः। मन्दाः सुमन्दमतयो मन्दभाग्या ह्युपद्रुताः'—इति भागवते (१।१।१०)। 'मन्दाः अलसाः'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। मन्दरतः; खलः। ३३६

मन्दाकिनी स्त्री. [मन्दाकानि स्रोतांसि सन्त्यस्याः इति। मन्दाक+िनि। यद्वा मन्दनाम्नः सरसः अकति गच्छतीति] स्वर्गगङ्गा; वियद्गङ्गा; स्वर्णदी; सुरदीर्घिका; स्वर्गङ्गा; देवभूतिः; स्वर्णपद्मा; सुरेश्वरी; 'मन्दाकिनीनन्दनयोर्विहारे देवे भवद्देवरि माधवे वा'—इति नैषधचरिते (६।८२)। 'प्रधानधारा या स्वर्गे सा च मन्दाकिनी स्मृता। योजनायुतविस्तीर्णा प्रस्थेन योजना स्मृता। क्षीरतुल्यजला शश्वदत्युत्तुङ्गतरङ्गिणी। वैकुण्ठाद् ब्रह्मलोकं च ततः स्वर्गं समागता'—इति ब्रह्मवैवर्ते। संक्रान्तिविशेषः; चित्रकूटस्थनदीविशेषः; 'ततो गिरिवरश्रेष्ठे चित्रकूटे विशाम्पते। मन्दाकिनीं समासाद्य सर्वपापप्रणाशिनीम्'—इति महाभारते (३।८५।५८)। द्वारकास्थनदीविशेषः; 'वैदूर्यपत्रैर्जलजैस्तथा मन्दाकिनी नदी। भाति पुष्करिणी रम्या पूर्वस्यां दिशि भारत!'—इति महाभारते हरिवंशपर्वणि (१५५।२२)। छन्दोविशेषः; 'न न र र घटिता तु मन्दाकिनी'—इति छन्दोमञ्जर्याम्। ६७३

मन्दाक्षम् क्ली. [मन्दे सङ्कुचिते अक्षिणी नेत्रे यस्मात्। 'अक्ष्णोऽदर्शनात्' इति समासान्तः अच्] लज्जा; ह्रीः; त्रपा; 'मन्दाक्षमन्दाक्षरमुद्रमुक्ता तस्यां समाकुञ्चितवाचि हंसः। तच्छंसिते किञ्चन संशयालुर्गिरा मुखाम्भोजमयं युयोज'—इति नैषधे (३।६१)। ५६७

मन्दारः पुं. [मन्द्यते स्तूयते प्रशस्यते वेति। मदि स्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु+'अङ्गिमदिमन्दिभ्य आरन्'—इति आरन्] स्वर्गीयपञ्चवृक्षान्तर्गतदेवतरुविशेषः; 'पञ्चैते देवतरवो मन्दारः पारिजातकः। सन्तानः कल्पवृक्षश्च पुंसि वा हरिचन्दनम्'—इत्यमरः। 'अन्तर्गतप्रार्थनमन्तिकस्थं जयन्तमुद्वीक्ष्य कृतस्मितेन। आमृष्टवक्षोहरिचन्दनाङ्का मन्दारमाला हरिणा पिनद्धा'—इत्यभिज्ञानशाकुन्तले ७ अङ्के। पारिभद्रवृक्षः (२००); 'पारिभद्रो निम्बतरुर्मन्दारः पारिजातकः'—इत्यमरः। अर्कवृक्षः; 'अर्काह्ववसुकास्फोतगणरूपविकीरणाः। मन्दारश्चार्कपर्णोऽत्र शुक्लेऽलर्कप्रतापसौ'—इत्यमरः। हस्तः; धूर्तः; तीर्थविशेषः। १३५

मन्दिरम् क्ली. [मन्द्यते सुप्यतेऽत्र, मन्द्यते स्तूयते इति वा। मदि स्वप्ने स्तुतौ च, 'इषिमदिमुदीति' किरच्] गृहम्; 'नगरं मन्दिरं पुरम्'—इति पुंनपुंसकयोः। स्त्री. मन्दिरा। देवगृहं; प्रासादस्थानम्; अश्वजानुपश्चिमभागः; 'अधरे च ततो जानु निर्दिष्टं शास्त्रकोविदैः। मन्दिरं पश्चिमो भागः कलाची जानुनोऽग्रिमः'—इति अश्ववैद्यके (२।२१)। पुं. (मदि+किरच्) समुद्रः। जानुपश्चाद्भागः। २९१

मन्दुरा स्त्री. [मन्दन्ते स्वपन्ति मोदन्ते वा अश्वा यत्र। मन्द्+'मन्दिवाशिमथीति' उरच्+स्त्रियां टाप्] वाजिशाला; अश्वशाला; 'घुड़साल' इति भाषा। 'उपाहरन्नश्वमजस्रचञ्चलैः क्षुराञ्चलैः क्षोभितमन्दुरोदरम्'—इति नैषधे (१।५७)। शयनीयार्थवस्तु। २९६

मन्द्रः पुं. [मन्द्यते बुध्यते अनेन। मदि+'स्फायितञ्चीति' रक्] गम्भीरध्वनिः; 'मन्द्रस्निग्धैर्ध्वनिभिरबला वेणिमोक्षोत्सुकानि'—इति मेघदूते (१००)। वाद्यविशेषः; मड्डुः; मृदङ्गकः; त्रि. हृष्टः; 'होता मन्द्रो वरेण्यः'—इति ऋग्वेदे (१।५।७)। 'मन्द्रो हृष्टः'—इति तद्भाष्ये

सायणाचार्यः। मादनशीलः; 'अग्ने! जुषस्व प्रतिहर्यतद्वचो मन्द्रस्वधावऋतजात सुक्रतो'–इति ऋग्वेदे (१।१४४।७)। 'मन्द्र! मादनशील!' इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। १४०

मन्मथः पुं. [मनो मथ्नाति विकरोतीति। मन्थ्+पचाद्यच्। पृषोदरादित्वात् साधुः] कामदेवः 'न मन्मथस्त्वं सहि नास्ति मूर्तिः'—इति नैषधे (८।२९)। 'मनो मथ्नाति सर्वेषां पञ्चबाणैश्च कामिनाम्। तन्नाम मन्मथस्तेन प्रवदन्ति मनीषिणः'—इति ब्रह्मवैवर्ते (१।४।७)। कपित्थवृक्षः। कामचिन्ता। ३२

मन्या स्त्री. [मन्यते ज्ञायते स्तम्भदुःखादिकमनया। मन्+करणे क्यप्, स्त्रियां टाप्] ग्रीवायाः पश्चाच् शिरा; मन्याका; गलपार्श्वशिरा; धमनिः; ग्रीवा; दोषास्तु दुष्टास्त्रय एव मन्यां संपीड्य घाटां सुरुजां सुतीव्राम्। कुर्वन्ति साक्षिभ्रुवशङ्खदेशे स्थितिं करोत्याशु विशेषतस्तु'—इति सुश्रुतः। ५१६

मन्युः पुं. [मन्यते ज्ञायतेऽसौ। मन्+'यजिमनिशुन्धिदसिजनिभ्यो युच्' इति युच्] शोकः; 'मन्युर्मन्ये ममास्तम्भीद्विषादोऽस्तभदुद्यतिम्'—इति भट्टिः (६।३०)। दैन्यं; क्रतुः; 'आविर्बभूवाभिमन्युः शतमन्युरिवापरः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।१७४)। क्रोधः; 'यः सन्वारयते मन्युं योऽतिवादांस्तितिक्षते। यश्च तप्तो न तपति दृढं सोऽर्थस्य भाजनम्'—इति महाभारते (१।७९।५)। अहङ्कारः; क्रोधाभिमानिदेवः; 'यस्ते मन्यो! विधद्वज्र सायक सह ओजः पुष्यति विश्वमानुषक्'—इति ऋग्वेदे (१०।८३।१)। वितथपुत्रः; 'वितथस्य सुतान् मन्योर्बृहत्क्षत्रो जयस्ततः'—इति भागवते (९।२१।१)। रुद्रदेवः; 'आज्ञप्त एव कुपितेन मन्युना स देवदेवं परिचक्रमे विभुम्'—इति भागवते (४।५।५)। ८४६

मयः पुं. [मयते द्रुतं गच्छतीति। मय्+पचाद्यच्] उष्ट्रः; दानवविशेषः; स तु दैत्यानां शिल्पी, अयं हि युधिष्ठिरस्य राज्ञः सभां विरचितवान्, तस्य सप्तापत्यानि। 'उपनीय बिन्दुसरसो मयेन या मणिदारुचारु किल वार्षपर्वणम्। विदधेऽवधूतसुरसद्मसम्पदं समुपासदत् सपदि संसदं स ताम्'—इति माघे (१३।५०)। 'मयस्य जाता हेमायां पुत्राः सप्त महाबलाः। मायावी दुन्दुभिश्चैव वृषश्च महिषस्तथा। बालिका वज्रकन्या च कन्या मन्दोदरी तथा'—इति वह्निपुराणे। सुखं; त्रि. गन्ता; 'हयोऽस्यत्योऽसि मयोऽस्यर्वासि'—इति यजुःसंहितायाम् (२२।१९) 'मयोऽसि मयते गच्छति मयः, मय् गतौ पचाद्यच्। यद्वा मय इति सुखनाम, सुखरूपोऽसि'–इति तद्भाष्ये महीधरः। २८०

मयुः पुं. [मय् गतौ+न्यङ्क्वादित्वात् कु। यद्वा मिनोति सुशब्दं करोतीति, मि+'भृमृशीतॄचरित्सरितनिधनिमिमस्जिभ्य उः' इति उ] किन्नरः; : मृगः; 'मयुं पशुं मेधमग्ने! जुषस्व तेन चिन्वानस्तन्मे निषीद'—इति यजुःसंहितायाम् (१३।४७)। 'मयुं पशुं तुरङ्गवदनं किम्पुरुषं पशुं मयुं कृष्णमृगं वा जुषस्व'-इति तद्भाष्ये महीधरः। ८२

मयूखः पुं. [मापयन् गगनं प्रमाणयन् ओखति गच्छतीति। पृषोदरादिः। यद्वा माति परिमातीव, मा+'माङ ऊखो मय च' इति ऊख मयादेशश्च] किरणः; 'व्यसृजच्छतधा राजन्! मयूखानिव भास्करः'—इति महाभारते (३।३९।४३)। दीप्तिः; ज्वाला; 'अथान्धकारं गिरिगह्वराणां दंष्ट्रामयूखैः शकलानि कुर्वन्। भूयः स भूतेश्वरपार्श्ववर्ती किञ्चिद्विहस्यार्थपतिं बभाषे'—इति रघौ (२।४६)। शोभा; कीलः; पर्वतः; 'दाधर्थ पृथिवीमभितो मयूखैः'—इति ऋग्वेदे (७।९९।३)। 'मयूखैः पर्वतैः'-इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ३९

मयूरः पुं. [मयुरिव रौति शब्दायते इति। मयु+रु+क। पृषोदरादित्वात् साधुः। यद्वा मिनाति हन्ति सर्पानिति, मी+'मीनातेरूरन्' इति ऊरन्] पक्षिविशेषः; बर्हिणः; बर्ही; नीलकण्ठः; भुजङ्गभुक्; शिखावलः; शिखी; केकी; मेघनादानुलासी; प्रचलाकी; चन्द्रकी; सितापाङ्गः; ध्वजी; मेघानन्दी; कलापी; शिखण्डी; चित्रपिच्छिकः; भुजगभोगी; मेघनादानुलासकः; 'हेमन्तकाले शिशिरे वसन्ते सेव्यं हि मायूरमुशन्ति मांसम्। उष्णो हि बर्ही विषभोजनैश्च वर्षाशरद्ग्रीष्ममुखष्वपथ्यः'—इति राजनिर्घण्टः। मयूरशिखाक्षुपः; खराश्वा; कारवी; दीपः; लोचमस्तकः; अपामार्गः; 'पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकमयूरवर्षाभूसिद्धं वा क्षीरं पिबेत्'—इति सुश्रुतः। असुरविशेषः; 'मयूर इति विख्यातः श्रीमान् यस्तु महासुरः। स विश्व इति विख्यातो बभूव पृथिवीपतिः'—इति महाभारते (१।६७।३६)। सुमेरोरुत्तरवर्ती पर्वतविशेषः; 'स्वर्णशृङ्गी शातशृङ्गी

पुष्पको मेघपर्वतः । विरजाक्षो वराहाद्रिर्मयूरो दारुधिस्तथा'—इति मार्कण्डेये (५५।१३) । कविविशेषः; मयूरभट्टः; अयं बाणभट्टस्य श्वसुरः उज्जयिन्यां वृद्धभोजमहीपतेः सभायामासीदिति मानतुङ्गाचार्यप्रणीतभक्तामराख्यस्तोत्रटीकाप्रारम्भे मेरुतुङ्गप्रणीतप्रबन्धचिन्तामणौ च समुपलभ्यते । प्रबन्धचिन्तामणौ बाणभट्टो मयूरस्य भगिनीपतिर्लिखितः । 'अहो प्रभावो वाग्देव्या यन्मातङ्गदिवाकरः । श्रीहर्षस्याभवत् सभ्यः समो बाणमयूरयोः'—इति शार्ङ्गधरपद्धत्यादिप्रसिद्धराजशेखरपद्येनापि बाणमयूरयोः समकालत्वं प्रतीयते । अयं हि कुष्ठरोगग्रस्तः सूर्यमारिराधयिषुः सूर्यशतकं नाम स्तोत्रग्रन्थं प्रणीय ततः सम्यक्निष्कृतिमवाप । सूर्यशतकस्यान्तिमः श्लोको यथा 'श्लोका लोकस्य भूत्यै शतमिति रचिताः श्रीमयूरेण भक्त्या, युक्तश्चैतान् पठेद् यः सकृदपि पुरुषः सर्वपापैर्विमुक्तः । आरोग्यं सत्कवित्वं मतिमतुलबलं कान्तिमायुः प्रकर्षं, विद्यामैश्वर्यमर्थं सुखमपि लभते सोऽत्र सूर्यप्रसादात् ।' २४१

मरकतम् क्ली. [मरकं मारिभयं तरन्त्यनेन । तन्+ड । यद्वा मरकं मरणं तनोतीति] हरिद्वर्णमणिविशेषः; गारुत्मतम्; अश्मगर्भं; हरिन्मणिः; मरक्तं; राजनीलं; गरुडाङ्कितं; रौहिणेयं; सौपर्णं; गरुडोद्गीर्णं; बुधरत्नम्; अश्मगर्भजं; गरलारिः; वापबोलं; गारुडं; गरुडोत्तीर्णं; वाप्रबालं; 'पन्ना' इति भाषा । 'स्वच्छं च गुरु सच्छायं स्निग्धं गात्रं च मार्दवसमेतम् । अव्यङ्गं बहुरङ्गं शृङ्गारी मरकतं शुभं बिभृयात् ।' 'शर्करिलकलिलरूक्षं मलिनं लघुहीनकान्ति कल्माषम् । त्रासयुतं विकृताङ्गं मरकतममरोऽपि नोपयुञ्जीत ।' १७५

मरक्तम् क्ली. [मरकत+पृषोदरादित्वात् साधु] मरकतमणिः । १७५

मरणम् क्ली. [म्रियतेऽनेनेति । मृ+करणे ल्युट् । भावे ल्युट्वा] विजातीयात्ममनःसंयोगध्वंसः; पञ्चता; कालधर्मः; दिष्टान्तः; प्रलयः; अत्ययः; अन्तः; नाशः; मृत्युः; निधनं; भूमिलाभः; निपातः; आत्ययिकं; मृतिः; कीर्तिशेषः; महानिद्रा; महापथगमः; संस्थानम्; 'मरणे यानि दुःखानि प्राप्नोति शृणु तान्यपि'—इति विष्णुपुराणे । 'मरणं प्राप्नुयात्तत्र शुक्रस्थानगते ज्वरे । शेफसः स्तब्धता मोक्षः शुक्रस्य तु विशेषतः'—इति माधवकरः । 'अपानः कर्षति प्राणं प्राणोऽपानं तु कर्षति । शङ्खिनी तु यदा भिन्ना तदैव मरणं ध्रुवम्'—इति वैद्यकम् । ६२८

मरिचम् क्ली. [म्रियते नश्यति श्लेष्मादिकमनेनेति । मृ+बाहुलकात् इच] कक्कोलं; कक्कोलकं; वर्तुलाकारकटुद्रव्यविशेषः; पवितं; श्यामं; कोलम्; ऊषणं; यवनेष्टं; वृत्तफलम्; शाकाङ्गं; धर्मपत्तनं; कटुकं; शिरोवृत्तं; वीरं; कफविरोधि; मृषं; सर्वहितं; कृष्णं; वेल्लजम्; 'पिप्पलीमरिचशृङ्गवेराणि त्रिकटुकम्'—इति सुश्रुतः । 'स्वादुपाक्यार्द्रमरिचं गुरुश्लेष्मप्रसेकि च । कटूष्णं लघु तच्छुष्कमवृष्यं कफवातजित् । नात्युष्णं नातिशीतं च वीर्यतो मरिचं सितम् । गुणवन्मरिचेभ्यश्च चक्षुष्यं च विशेषतः'—इति सुश्रुतः । 'मरिचं वेल्लजं कृष्णमूषणं धर्मपत्तनम् । मरिचं कटुकं तीक्ष्णं दीपनं कफवातजित्'—इति भावप्रकाशः । पुं. [म्रियते नश्यतीति, मृ+इच] मरुवकवृक्षः । ६१६

मरीचम् क्ली. [मृ+बाहुलकात् ईच्] वेल्लजं; कोलकं; कृष्णम्; 'मारीचोद्भ्रान्त हारीता मलयाद्रेरुपत्यकाः'—इति रघौ (४।४६) । 'मारीचेषु मरीचवनेषूद्भ्रान्ताः'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । ६१६

मरीचिः पुं.–स्त्री. [म्रियन्ते नश्यन्ति क्षुद्रजन्तवस्तमांसि वानेन । मृ+ईचि] किरणः; 'गर्भं दधत्यर्कमरीचयोऽस्माद् विवृद्धिमत्राश्नुवते वसूनि'—इति रघौ (१३।४) । 'मरीचीनसतो मेघान् मेघान् वाप्यसतोऽम्बरे । विद्युतो वा विना मेघैः पश्यन् मरणमृच्छति'—इति चरकः । षट्त्रसरेणुपरिमाणं; स्त्री. [म्रियन्ते इव देवा यद्दर्शनादिति । मृ+ईचि] अप्सरोविशेषः; 'मरीचिः शुचिका चैव विद्युद्वर्णा तिलोत्तमा । अम्बिका लक्षणा क्षेमा देवी रम्भा मनोरमा'—इति महाभारते (१।१२३।५९) । [म्रियन्ते वारिभ्रमेण जीवा यस्याः । मृ+अपादाने ईचि] मृगतृष्णा; मरीचिका; मृगतृष्णिका; मृगतृट्; मृगतृषा; 'वेश्याप्रेमणि सद्भावो यदस्मिन् बुध्यते त्वया । सत्यं भवति किं जातु जलं मरुमरीचिषु'—इति कथासरित्सागरे (५७।९१) । ३९

मरुः पुं. [म्रियतेऽस्मिन्निति । मृ+'भृमृशीति' उ] निर्जलदेशः; 'अदृश्या गच्छ भीरु त्वं सरस्वति! मरून्

प्रति'—इति महाभारते (१३।१५४।२७)। (८३८) दशेरकदेशः; धन्वा; 'शाल्वास्तु कारकुक्षीया मरवस्तु दशेरकाः'—इति हेमचन्द्रः। पर्वतः; 'तत्रापश्याम वै सर्वे मधु पीतममाक्षिकम्। मरुप्रपाते विषमे निविष्टं कुम्भसम्मितम्'—इति महाभारते (५।६४।१८)। मरुवकवृक्षः; निमिवंशीयहर्यश्वपुत्रः; 'तस्माद्बृहद्रथस्तस्य महावीर्यः सुवृत्पिता। सुधृतेर्धृष्टकेतुर्वै हर्यश्वोऽथ मरुस्ततः'—इति भागवते (९।१३।१५)। सूर्यवंशीयभाविराजविशेषः; 'मरो! त्वामभिषेक्ष्यामि निजायोध्यापुरेऽधुना। हत्वा म्लेच्छानधर्मिष्ठान प्रजाभूतविहिरकान्'—इति कल्किपुराणे। वसूनामन्यतमः; 'वासवानुगता देवी जनयामास वै सुतान्। मरुं वै प्रथमं देवं द्वितीयं ध्रुवमव्ययम्'—इति हरिवंशे (१९६।४७)। १५८,८३८

मरुतः पुं. [म्रियन्ते प्राणिनो यदभावादिति। मृ+बाहुलकात् उत] देवः; वायुः; 'तदेनां मुखमरुतेन विशदां करवाणि'—इति अभिज्ञानशाकुन्तले। घण्टापाटलिवृक्षः। ४

मरुत् पुं. [म्रियते प्राणी यस्याभावादिति। मृ+'मृग्रोरुतिः' इति उत्] वायुः; 'भृशतापभृता मया भवान् मरुदासादि तुषारसायकान्'—इति नैषधचरिते (२।५३)। देवः (४); 'मरुतां पश्यतां तस्य शिरांसि पतितान्यपि। मनो नातिविशश्वास पुनः सन्धानशङ्किनाम्'—इति रघौ (१२।१०१)। साध्यविशेषः; 'धर्माल्लक्ष्मपुद्भवः कामः साध्या साध्यान् व्यजायत। प्रभवं च्यवनं चैवमीशानं सुरभीं तथा। अरण्यं मरुतञ्चैव विश्वावसुबलध्रुवौ'—इति हरिवंशे (१९६।४५)। भ्रातृवत्सलदेवताविशेषः; 'भ्रातृणां प्रायणं भ्राता योऽनुतिष्ठति धर्मवित्। स पुण्यबन्धुः पुरुषो मरुद्भिः सह मोदते'—इति भागवते। 'प्रायणं प्रकृष्टं गमनं, पुण्यमेव बन्धुर्यस्य, मरुद्भिर्भ्रातृवत्सलैर्देवैः'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। मरुवकः; 'मरुदग्निप्रदो हृद्यस्तीक्ष्णोष्णपित्तलो लघुः। वृश्चिकादिविषश्लेष्मवातकुष्ठक्रिमिप्रणुत्। कटुपाकरसो रुच्यस्तिक्तो रूक्षः सुगन्धिकः'—इति भावप्रकाशः। हिरण्यं; ऋत्विक्; ग्रन्थिपर्णे क्ली.। पृक्कायां त्रि.। ७५

मरुत्वान् [त्] पुं. [मरुतो देवाः पालनीयत्वेन सन्त्यस्य इति। मरुत्+'मध्वादिभ्यश्च' इति मतुप्, मस्य वः। 'तसौ मत्वर्थे' इति भत्वे न तस्य दः] इन्द्रः; 'दिवं मरुत्वान् इव भोक्ष्यते भुवं दिगन्तविश्रान्तरथो हि तत्सुतः'—इति रघौ (३।४)। धर्मपुत्रदेवगणभेदः; 'धर्मस्य वसवः पुत्रा रुद्राश्चामिततेजसः। विश्वे देवाश्च साध्याश्च मरुत्वन्तश्च भारत!'—इति महाभारते (१२।२०७।२३)। [मरुज्जनकत्वेनास्त्यस्येति, मतुप्, मस्य वः] हनूमान्; वायुविशिष्टे त्रि.। सर्वोदाहरणं यथा—'बभौ मरुत्वान् विकृतः समुद्रो बभौ मरुत्वान् विकृतः समुद्रः। बभौ मरुत्वान् विकृतः समुद्रो बभौ मरुत्वान् विकृतः समुद्रः'—इति भट्टिः (१०।२९)। स्त्री. दक्षस्य प्रचेतसः कन्या; 'भानुर्लम्बा ककुद्यामिर्विश्वा साध्या मरुत्वती। वसुर्मुहूर्ता संकल्पा धर्मपत्न्यः सुतान् शृणु'—इति भागवते (६।६।४)। ५४

मरुद्वर्त्म क्ली. [मरुतां वायूनां देवानां वा वर्त्म पन्थाः] आकाशम्। १३७

मर्कटः पुं. [मर्कति गच्छति। मर्क्+'शकादिभ्योऽटन्' इति अटन्] ऊर्णनाभः; लूता; 'अयमुद्गृहीतवडिशः कर्कट इव मर्कटः पुरतः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३२२)। 'मर्कटो लूता' इति तट्टीका। वानरः; 'यमाय कृष्णो मनुष्यराजाय मर्कटः'—इति यजुःसंहितायाम् (२४।३०)। स्थावरविषभेदः; गलगण्डपक्षी। २५६

मर्कटकः पुं. [मर्कट+स्वार्थे संज्ञायां वा कन्] वानरः; लूता; ऊर्णनाभः; मत्स्यभेदः; दैत्यः; सस्यभेदः; 'श्यामाकास्त्वथ नीवारा जर्तिलाः सगवेधुकाः। तथा वेणुयवाः प्रोक्तास्तद्वन् मर्कटका मुने'—इति विष्णुपुराणे (१।६।२५)। २३१

मर्त्यः पुं. [म्रियन्तेऽत्रेति मर्तो भूलोकस्तत्र भवः। मर्त+यत्। यद्वा म्रियते इति, मृङ+'हसिमृग्रिण्' इति तन्, स्वार्थे यत्] मनुष्यः; नरः; पुरुषः; मानवः; मानुषः; मनुजः; 'गृहे च गृहलक्ष्मीश्च मर्त्यानां गृहिणां तथा'—इति ब्रह्मवैवर्ते (२।१।२६)। मध्यमलोकः; क्ली. शरीरम्; 'तस्यास्तद्योगविधुतमार्त्यं मर्त्यमभूत् सरित्'—इति भागवते (३।३३।३१)। ३३१

मर्म [न्] क्ली. [मृ+'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति मनिन्] जीवस्थानम्; 'सन्निपातः शिरास्नायुसन्धिमांसास्थिसम्भवः। मर्माणि तेषु तिष्ठन्ति प्राणाः खलु विशेषतः'

—इति भावप्रकाशः । स्वरूपं; तत्त्वम्; 'मृगया न विगीयते नृपैरपि धर्मागममर्मपारगैः । स्मरसुन्दर ! मां यदत्यजस्तव धर्मः सदयो दयोज्ज्वलः'—इति नैषधे (२।९)। सन्धिस्थानम् । ५२९

मर्मरः पुं. [मर्म तत्त्वं ममत्यव्यक्तशब्दं वा रातीति । रा+क] वस्त्रस्य पत्रस्य च ध्वनिः; शुष्कपर्णध्वनिः; वस्त्रध्वनिः; 'अभ्यभूयत वाहानां चरतां गात्रशिञ्जितैः। मर्मरः पवनोद्धूतराजतालीवनध्वनिः'—इति रघुवंशे (४।५६)। १५१

मर्यादा स्त्री. [मर्येति सीमार्थे अव्ययं, तत्र दीयते । म्रियन्तेऽत्रेति मर्या, तां ददातीति । मर्या+दा+अङ] सीमा; अवधिः; कूलम् (६५४); 'कल्पान्तवातसंक्षोभलङ्घिताशेषभूभृतः। स्थैर्यप्रसादमर्यादास्ता एव हि महोदधेः'—इति प्रबोधचन्द्रोदये (१।६)। न्याय्यपथस्थितिः; संस्था; धारणा; मर्यादायां स्थितो धर्मः शमश्चैवास्य लक्षणम्'—इति महाभारते (१५।२२।२५)। देवातिथेः पत्नी; 'देवातिथिः खलु वैदेहीमुपयेमे मर्यादां नाम'—इति महाभारते (१।९५।२३)। २५९

मर्षः पुं. [मृष् धातोर्भावे घञ् प्रत्ययेन निष्पन्नः] क्षान्तिः; क्षमा; मर्षणं; तितिक्षा; सहिष्णुता; 'अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहार्देन न विद्विषादरः'—इति किराते (१।३३)। ७२५

मलः पुं.– क्ली. [मृज्यते शोध्यते इति । मृज्+मृजेष्टिलोपश्च' इति अलच्, टिलोपश्च । यद्वा मलते धारयति व्याध्यादिदुर्गन्धमिति । मल्+अच्] विष्ठा; विट्; 'पूयं चिकित्सकस्यान्नं पुंश्चल्यास्त्वन्नमिन्द्रियम् । विष्ठा वार्द्धुषिकस्यान्नं शास्त्रविक्रयिणो मलम्'—इति मनुः (४।२२०)। 'विष्ठा मलमेकमेव च'—इति तद्भाष्ये मेधातिथिः । पापम्; 'पश्चिमान्तु समासीनो मलं हन्ति दिवाकृतम्'—इति मनुः (२।१०२)। 'दिवार्जितं पापं निहन्ति'-इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः । किट्टम्; 'छाया न मूर्च्छति मलोपहतप्रसादे शुद्धे तु दर्पणतले सुलभावकाशा' —इति शाकुन्तले । 'पापं किल्विषं, विट् विष्ठा, किट्टं कलङ्को मण्डूरादि, स्वेदादि च; एषु मलः ।' 'वसा शुक्रमसृङ्मज्जा मूत्र विट् कर्णविण्नखाः । श्लेष्माश्रु दूषिका स्वेदो द्वादशैते नृणां मलाः'—इति स्मृतिः । कर्पूर; वातपित्तकफाः; 'सर्वेषामेव रोगाणां निदानं कुपिता मलाः । तत्प्रकोपस्य तु प्रोक्तं विविधाहितसेवनम्' —इति माधवकरः । पारिभाषिकमलम्; 'क्षत्रियस्य मलं भैक्ष्यं ब्राह्मणस्याव्रतं मलम् । मलं पृथिव्या बाहीकाः स्त्रीणां मदश्रियो मलम्'—इति महाभारते (८।४५।२३)। ६३७

मलधारी [न्] पुं. [मलं धरति अवश्यं देहनखकेशादौ यः । मल+धृ+'आवश्यकाधमर्ण्ययोर्णिनि' इति णिनि] जीवकः; जैनः; आजीवः; निर्ग्रन्थः । ३४५

मलयजम् क्ली०– पुं. [मलये जातमिति । जन्+ड]चन्दनं; श्रीखण्डम्; 'हृदि विषलताहारो नायं भुजङ्गमनायकः, कुवलयदलश्रेणी कण्ठे न सा गरलद्युतिः । मलयजरजो नेदं भस्म प्रियारहिते मयि, प्रहर न हरभ्रान्त्यानङ्ग ! क्रुधाकिमु धावसि'—इति गीतगोविन्दे (३।११)। मलयजाते त्रि. । 'उत्पतद्भिरिवाकाशं वृक्षैर्मलयजैरपि'— —इति महाभारते (१।२७।६)। 'राहुं मलयजं शूद्रं पैठीनं द्वादशाङ्गुलम् । कृष्णं कृष्णाम्बरं सिंहासनं ध्यात्वा तथा ह्वयेत्'—इति ग्रहयज्ञतत्त्वे । ५४४

मलिनम् त्रि. [मलते धारयतीति । मल्+'बहुलमन्यत्रापि' इति इनच् । यद्वा 'मलशब्दादिनर्जीमसचौ प्रत्ययौ निपात्येते' इति काशिकोक्तया इनच्] मलयुक्तवस्तु; मलीमसं; कच्चरं; मलदूषितम्; 'परस्त्रीहरणे पापशङ्काभयविवर्जिताः । निर्धना मलिना दीना दरिद्राश्चिररोगिणः'—इति महानिर्वाणतन्त्रे (१।४३)। दूषितम्; 'परपट इव रजकीभिर्मलिनी भुक्तापि निर्दयं ताभिः । अर्थग्रहणेन विना जघन्य ! मुक्तोऽसि कुलटाभिः'— इति आर्यासप्तशत्याम् (४०२)। नित्यनैमित्तिकक्रियात्यागी; कृष्णं; निकृष्टं; 'द्युतिमग्रहीद् ग्रहगणो लघवः प्रकटीभवन्ति मलिनाश्रयतः'—इति माघे (९।२३)। 'मलिनाश्रयतः निकृष्टाश्रयणात्'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः । क्ली. [मलते धरति दोषमिति । मल्+इनच्] घोलं; दोषः; टङ्कणः । ७२७

मलिम्लुचः पुं. [मली सन् म्लोचतीति । मलिन्+म्लुच् गत्याम्+क] चौरः; चोरः; 'प्रहितः प्रधनाय माधवानहमाकारयितुं महीभृता । न परेषु महौजसश्छलादपकुर्वन्ति मलिम्लुचा इव'—इति माघे (१६।५२)। वायुः; पञ्चयज्ञपरिभ्रष्टः; अग्निः; मलमासः; अधिक-

मासः; अधिमासः; असंक्रान्तिमासः; नपुंसकमासः; 'तमतिक्रम्य तु रविर्यदा गच्छेत् कथञ्चन । आद्यो मलिम्लुचो ज्ञेयो द्वितीयः प्रकृतः स्मृतः'—इति मलमासतत्त्वम् । ३३८

मलीमसम् त्रि. [मलमस्यास्तीति । मल्+'ज्योत्स्नातमिस्रेति' ईमसच् प्रत्ययेन निपातितम्] मलिनम्; 'उपप्लुतं पातुमदो मदोद्धतैस्त्वमेव विश्वम्भर ! विश्वमीशिषे । ऋते रवेः क्षालयितुं क्षमेत कः क्षपातमस्काण्डमलीमसं नभः'—इति माघे (१।३८) । कृष्णवर्णः; 'मलीमसश्रीर्मधुपानसक्तो भेजे लताः पुष्पवतीः स्फुटं यः । स एव चैत्रेण बत द्विरेफः पुष्पेषुराज्ये विहितः पुरोधाः' —इति श्रीकण्ठचरिते (६।३८) । क्ली. लौहं; पुष्पकासीसम् । ७२७

मल्लारी स्त्री. [मल्लार+ङीप्] मेघरागस्य रागिणी; मल्लारिका; 'मल्लारी सपहीना स्याद् ग्रहांशन्यासधैवता । औडवा पौवरीयुक्ता वर्षासु सुखदा सदा'—इति सङ्गीतदर्पणे । 'ध नि रि ग म ध ।' 'गौरी कृशा कोकिलकण्ठनादा गीतच्छलेनात्मपतिं स्मरन्ती । आदाय वीणां मलिना रुदन्ती मल्लारिका यौवनदूनचित्ता'—इति सङ्गीतदर्पणे । वसन्तरागस्य रागिणी; 'आन्दोलिता च देशाख्या लोला प्रथममञ्जरी । मल्लारी चेति रागिण्यो वसन्तस्य सदानुगाः'—इति सङ्गीतदामोदरः । १०६ अ.

मल्लिकः पुं. [मल्यते धार्यतेऽसौ, मल्ल्+इन्, स्वार्थे कन्] मलिनचञ्चुचरणयुक्तहंसः; मलिनैः किञ्चिद्धूसरवर्णैरालोहितैश्चञ्चुचरणैरुपलक्षितः शुक्लहंसः; नृणामुपाधिविशेषः । २५२

मल्लिका स्त्री. [मल्लिरेवेति । मल्लि+स्वार्थे कन्, स्त्रियां टाप् । यद्वा मल्लिहंस इव, शुक्लत्वात् । मल्लि+इवार्थे कन्] पुष्पवृक्षविशेषः; 'मल्लिकामुकुले चण्डि ! भाति गुञ्जन्मधुव्रतः । प्रयाणे पञ्चबाणस्य शङ्खमापूरयन्निव'—इति काव्यादर्शे । तत्पर्यायाः—तृणशून्यं; भूपदी; शतभीरुः; तृणशून्या; शीतभीरुः; भद्रवल्ली; गोरी; वनचन्द्रिका; प्रिया; सौम्या; नारीष्टा; गिरिजा; सिता; मल्ली; मदयन्ती; चन्द्रिका; मोदिनी । मृत्पात्रभेदः (३१६); मत्स्यविशेषः; पानपात्रम् । २०६

मल्लिकाक्षः पुं. [मल्लिकापुष्पमिव अक्षिणी यस्येति । 'अक्ष्णोऽदर्शनात्' इति अच्] शुक्लवर्णवेष्टितचक्षुर्द्वययुक्तहयः; 'मल्लिकाक्षान् विरूपाक्षान् क्रौञ्चवर्णान् मनोजवान् । अश्वसैन्यं महाबाहुस्तदप्रतिमपौरुषः । निसूदयामास बली गदया भीमविक्रमः'—इति हरिवंशे (२४१।२५-२६)। मलिनचञ्चुचरणयुक्तहंसः; मल्लिकाख्यः । ४३८

मसुरः पुं. [मस्यते परिमीयतेऽसौ । मस्+'मसेश्च' इति उरन्] मसुरकलायः; मसूरः; व्रीहिभेदः; मङ्गल्यकः; व्रीहिकाञ्चनः; मसूरा; मसुरा; रागदालिः; मङ्गल्यः; पृथुबीजकः; शूरः; कल्याणबीजः; गुडबीजः; मसूरकः; मङ्गल्या; मसूरका । ५८१

मसूरः पुं. – स्त्री. [मस्यते परिमीयतेऽसौ । मस्+'मसेरूरन्' इति ऊरन्] व्रीहिभेदः; मङ्गल्यकः; मसुरः; व्रीहिकाञ्चनः; मसूरा; 'वस्त्राविककुतुपानां, मसूरगोधूमरालकयवानाम् । स्थलसम्भवौषधीनां कनकस्य च कीर्त्तितो मेषः'—इति बृहत्संहितायाम् (४१।२) । ५८१

मस्करः पुं. [मस्कते गच्छत्यनेनेति । मस्क्+बाहुलकादर । यद्वा मकर+'मस्करमस्करिणौ वेणुपरिव्राजकयोः' इति सुट् निपा यते, इति काशिका] वंशः; रन्ध्रवंशः । २०४

मस्करी [न्] पुं. [मस्कते इतस्ततो गच्छत्यनेनेति । मस्क्+बाहुलकादर । मस्करो दण्डः सोऽस्त्यस्येति । मस्कर+इनि । यद्वा मा कर्त्तुं कर्म निषेद्धुं शीलमस्य । 'मस्करमस्करिणौ वेणुपरिव्राजकयोः' इति इनि] भिक्षुः; तापसः; 'अधीयन्नात्मविद्विद्यां धारयन् मस्करिव्रतम् । वदन् बह्वङ्गुलिस्फोटं भ्रूक्षेपं च विलोकयन्'—इति भट्टिकाव्ये (५।६३) चन्द्रः । ४०९

मस्तकः पुं.– क्ली. [मस्यते परिमीयते । मस्+'इष्मशिभ्यां तकन्' इत्यत्र 'बाहुलकात् मस्यतेरपि तकन्'] प्रधानाङ्गम्; उत्तमाङ्गं; शिरः; शीर्षं; मूर्द्धा; मुण्डं; शिरः; वराङ्गं; कं; पुण्ड्रं ; मौलिः; कपालं; केशभूः; मस्तम्; 'बिभ्रत् क्लेशमवाप्नोति सोऽप्येवं शिरसा शिलाम् । क्षुत्क्षामोऽहर्निशं भारपीडाव्यथितमस्तकः'—इति मार्कण्डेयपुराणे (१४।७८) । ५१८

मस्तकस्नेहः पुं. [मस्तकस्य स्नेहः] शिरोमज्जा; मस्तिष्कं; गोर्दं; गोदं; मस्तुलुङ्गकः; 'मगज' इति भाषा। 'गोदन्तु मस्तकस्नेहो मस्तिष्को मस्तुलुङ्गकः'—इति हेमचन्द्रः (३।२०९) । ६३५

मस्तिष्कम् क्ली. [मस्तं मस्तकम् इष्यति स्वाधारत्वेन प्राप्नोतीति । मस्त+इष् गतौ+क । पृषोदरादित्वात् साधुः] गोर्दं; गोदं; मस्तकस्नेहः; मस्तुलुङ्गकः; मस्तुलुङ्गः; 'मगज' इति भाषा। 'यक्ष्मं शीर्षण्यं मस्तिष्काज्जि ह्वाया विवृहामि ते'—ऋग्वेदे (१०।१६३।१)। ६३५

मस्तु क्ली. [मस्यति परिणमतीति, मस्+'सितनिगमिमसिसच्यविधाञ् क्रुशिभ्यस्तुन्' इति तुन्] दधिभवमण्डं; दधिजलं; द्विगुणवारियुतं दधि; 'उष्णाम्लं रुचिपित्तदं श्रमहरं बल्यं कषायं सरं, 'भुक्तिच्छन्दकरं तृषोदरगदप्लीहार्शसां नाशनम् । स्रोतः शुद्धिकरं कफानिलहरं विष्टम्भशूलापहं, पाण्डुश्वासविकारगुल्मशमनं मस्तु प्रशस्तं लघु'—इति राजनिर्घण्टः । 'मस्तु क्लमहरं स्वल्पं लघु भुक्ताभिलाषकृत् । स्रोतोविशोधनं ह्लादि कफतृष्णाविलापहम् । अवृष्यं प्रीणनं शीघ्रं भिनत्ति मलसंग्रहम्'—इति भावप्रकाशः । ३२१

महः पुं. [मह्यते पूज्यतेऽस्मिन्निति । मह+'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ । मह्+अच्] उत्सवः; 'न खलु-दूरगतोऽप्यति वर्तते महमसाविति बन्धुतयोदितैः'—इति माघे (६।१९)। [मह्यते पूज्यते इति] तेजः; यज्ञः; 'तस्मात् प्रावृषि राजानः सर्वे शक्रं मुदा युताः । महैः सुरेशमर्चन्ति वयमन्ये च मानवाः'—इति हरिवंशे (७१।१८)। महिषः; त्रि· महत्; बृहत्; विशालं; विस्तीर्णम् । 'महे वृणते नान्यं त्वत्'—इति ऋग्वेदे (१०।९१।८)। 'महे महति'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ७६३

महः [स्] क्ली. [मह्यते पूज्यतेऽस्मिन्निति । मह्+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इति असुन्] उत्सवः; [मह्यते पूज्यते इति । मह्+असुन्] तेजः; 'अन्तरायतिमिरोपशान्तये शान्तपावनमचिन्त्यवैभवम् । तं नरं वपुषि कुञ्जरं मुखे मन्महे किमपि तुन्दिलं महः'—इति रघुटीकारम्भे मल्लिनाथः। [मह्यन्ते पूज्यन्ते देवादयोऽस्मिन्निति । मह्+असुन्] यज्ञः; जलम्; उदकं; पूज्यमाने त्रि.। 'जिह्वा मे भद्रं वाङ्महो मनो मन्युः स्वराड् भामः'—इति यजुःसंहितायाम् (२०।६)। 'वाक् वागिन्द्रियं महः पूज्यमानास्तु'—इति तद्भाष्ये महीधरः। महत्; 'महो राये तमु त्वा समिधीमहि'—इति ऋग्वेदे (८।२३।१६)। 'महो महते राये धनाय'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। ६९९

महत् त्रि. [मह्यते पूज्यते ऽसा इति । मह्+'वर्तमाने पृषद्बृहन्महज्जगच्छतृवच्च' इति अति निपात्यते] बृहत्; विशालं; विशङ्कटं; पृथु; पृथुलं; वड्रम्; उरु; विपुलं; पुलं; विस्तीर्णम्; 'तस्मिन् रामशरोत्कृत्ते बले महति रक्षसाम्'—इति रघौ (१२।४०)। पुं. प्रकृतेराद्यो विकारः; 'स वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः; प्रकृतेर्महान् महतोऽहङ्कारः'—इति सांख्यसूत्रम् (१।६१)। 'शङ्खे तैले तथा मांसे वैद्ये ज्योतिषिके द्विजे। यात्रायां पथि निद्रायां महच्छब्दो न दीयते ।' (दीयते चेदमङ्गलवाचकः) —इति भट्टिप्रथमसर्गीयचतुर्थश्लोकटीकायां भरतः । क्ली. राज्यम्; 'अथ यदि महज्जिगमिषेदमावास्यायां दीक्षितः पौर्णमास्यां रात्रौ' —इति छान्दोग्योपनिषदि (५।२।४)। ब्रह्म; श्रुतेन श्रोत्रियो भवति तपसा विन्दते महत्'—इति महाभारते (३।३१२।४४)। उदकं; जलम् । ६९९

महत्त्वम् क्ली. [महत्+त्व] महतो भावः; श्रेष्ठत्वम्; 'जनश्च शूद्रोऽपि महत्त्वमीयात्'—इति रामायणे (१।१।१०१)। 'महत्त्वं श्रैष्ठ्यम्'- इति तट्टीका। ६५३

महाकालः पुं. [महांश्चासौ कालश्चेति] लताविशेषः; उरुकालः; किम्पाकः; काकमर्दकः; काकमर्दः; देवदालिका; दाला; दालिका; जलङ्गः; घोषकाकृतिः; 'अन्तर्मलिनदेहेन बहिराह्लादकारिणा । महाकालफलेनेव कः खलेन न वञ्चितः'—इत्युद्भटः । विष्णुस्वरूपाखण्डदण्डायमानसमयः; 'कालो घटवान् महाकालत्वात्'—इति न्यायव्याप्तिसिद्धान्तलक्षणे । महादेवः; शिवः; महेशः; शङ्करः; उमापतिः; 'कलनात् सर्वभूतानां महाकालः प्रकीर्तितः । महाकालस्य कलनात् त्वमाद्या कालिका परा'—इति महानिर्वाणतन्त्रे (४।३१)। प्रमथगणविशेषः; उज्जयिनीस्थः शिवलिङ्गविशेषः; 'अस्तीहोज्जयिनी नाम नगरी भूषणं भुवः । हसन्तीव सुधाधौतैः प्रासादैरमरावतीम् । यस्यां वसति विश्वेशो महाकालवपुः स्वयम् । शिथिलीकृतकैलासनिवासव्यसनो हरः'—इति कथासरित्सागरे (११।३१-३२)। तीर्थविशेषः; 'महाकालं ततो गच्छेन्नियतो नियताशनः । कोटितीर्थमुपस्पृश्य हयमेधफलं लभेत्'

(८२।१-२)। देवगणभेदः; 'अपामुपस्थे महिषा अगृभ्णात् विशो राजानमुपतस्थुर्ऋग्मियम्'—इति निरुक्ते (७।२६)। 'महिषा माध्यमिका देवगणाः अथवा महिषाः त एव महान्तः'–इति तट्टीकायां दुर्गाचार्यः। कुशद्वीपस्थपर्वतविशेषः; 'षष्ठस्तु पर्वतस्तत्र महिषो मेषसन्निभः'—इति मात्स्ये (१२१।५९)। अग्निविशेषः; 'तस्मिन् सोऽग्निर्निवसति महिषो नाम योऽप्सुजः'—इति मात्स्ये (१२१।६०)। कुशद्वीपस्य वर्षविशेषः; 'महिषं महिषस्यापि पुनश्चापि प्रभाकरम्' —इति मात्स्ये (१२१।६८)। कृताभिषेको भूपालः; 'कृपाभिषेके भूपाले लुलाये महिषः स्मृतः'—इति रुद्रः। देशभेदः; 'भरणीपूर्वं मण्डलमृक्षचतुष्कं सुभिक्षकरमाद्यम्। वङ्गाङ्गमहिषवाह्लिककलिङ्गदेशेषु भयजननम्'—इति बृहत्संहितायाम् (९।१०)। अनुह्लादस्य पुत्रभेदः; 'अनुह्लादस्य सूर्यायां वास्कलो महिषस्तथा'—इति भागवते (६।१८।१६)। साध्यापुत्रः; 'महिषं च तनूजं च विज्ञातमनसावपि'—इति हरिवंशे (१९६। ५५)। २२७

महिषाक्षः पुं. [महिषस्य अक्षीवेति। 'अक्ष्णोऽदर्शनात्' इति समासान्तोऽच्] गुग्गुलुः; महिषाक्षकः; पुरः; देवधूपः; 'जटायुः कालनिर्यासः कौशिको गुग्गुलुः पुरः। देवधूपः सर्वसहो महिषाक्षः पलङ्कषा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। 'महिषाक्षो महानीलो गजेन्द्राणां हिताबुभौ। विशेषेण मनुष्याणां कनकः परिकीर्तितः। कदाचिन्महिषाक्षश्च यतः कैश्चिन्नृणामपि'—इति भावप्रकाशः। ६२०

महिषी स्त्री. [महिषस्य कृताभिषेकस्य नृपस्य पत्नी। 'पुंयोगादाख्यायाम्' इति ङीष्] कृताभिषेका राजपत्नी; 'इत्थं व्रतं धारयतः प्रजार्थं समं महिष्या महनीयकीर्तेः। सप्त व्यतीयुस्त्रिगुणानि तस्य दिनानि दीनोद्धरणोचितस्य'—इति रघौ (२।२५)। सैरिन्ध्री; ओषधिभेदः; महिषयोषित्; मन्दगमना; महाक्षीरा; पयस्विनी; लुलायकान्ता; कलुषा; तुरङ्गद्विषणी; 'नवनीतं महिष्यास्तु वातश्लेष्मकरं गुरु। दाहपित्तश्रमहरं मेदःशुक्रविवर्द्धनम्'—इति भावप्रकाशः। 'महिषीणां गुरुतरं गव्याच्छीततरं पयः। स्नेहान्नूनमनिद्राय हितमत्यग्नये च तत्'—इति चरकः। ४८०

मही स्त्री. [मह्यते इति। मह्+अच्, गौरादिभ्यश्च' इति ङीष्। यद्वा महि+कृदिकारादिति ङीष्] पृथिवी; 'उत्तिष्ठतस्तस्य जलार्द्रकुक्षेर्महावराहस्य महीं विधार्य। विधुन्वतो वेदमयं शरीरं रोमान्तरस्था मुनयो जुषन्ति' —इति विष्णुपुराणे। नदीविशेषः; सा च मालवदेशे वर्तते; 'महीजलं तु सुस्वादु बल्यं पित्तहरं गुरु'—इति राजनिर्घण्टः। गौः; हिलमोचिका; लोकः; 'तिस्रो महीरुपरास्तस्थुः'—इति ऋग्वेदे (३।५६।२)। 'महीः लोकाः'—इति तद्भाष्ये सायणः। १५६

महीभृत् पुं. [महीं बिभर्ति धरतीति। मही+भृ+क्विप्, 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' इति तुगागमश्च] पर्वतः; 'महीभृतः पुत्रवतोऽपि दृष्टिस्तस्मिन्नपत्ये न जगाम तृप्तिम्। अनन्तपुष्पस्य मधोर्हि चूते द्विरेफमालाः सविशेषसङ्गाः'—इति कुमारसम्भवे (१।२७)। [महीं बिभर्ति पालयतीति। भृ+क्विप्] राजा; 'ये ममानुगता नित्यं प्रसादधनभोजनैः। अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य कुर्वन्त्यन्यमहीभृताम्'—इति मार्कण्डेयपुराणे (८१।१३)। २११

महेच्छः पुं. [महती इच्छा यस्य। ह्रस्वश्च सामासिकः] महाशयः; महोत्साहः; महोद्योगः; महामनाः; उदात्तः; उदीर्णः; महात्मा; उदारः; 'प्रत्यन्तधनिमहेच्छव्यवसायपराक्रमोपेताः'—इति बृहत्संहितायाम् (१६।३८)। ३५५

महोक्षः पुं. [महान् उक्षा। 'अचतुरविचतुरेति' समासान्तः अच् निपातितश्च] बृहद्वृषः; वृषभः; वृषः; पुङ्गवः; बली; गोनाथः; ऋषभः; गोप्रियः; उक्षा; गोपतिः। 'महोक्षः स त्वया दृष्टः संस्तवश्च कृतो यदि। तदिहानय तं युक्त्या तावत् पश्यामि कीदृशः'—इति कथासरित्सागरे (६०।६६)। २६५

महोत्पलम् क्ली. [महच्च तद् उत्पलं च] पद्मं; कमलं; महापद्मं; सारसपक्षी। ६७९

महोत्साहः त्रि. [महान् उत्साहो यस्य] अतिशयोत्साहयुक्तः; महोद्यमः; विष्णुः; 'अतीन्द्रियो महामायो महोत्साहो महाबलः'—इति महाभारते (१३।१४९।३१)। पुं. [महान् उत्साहो यस्य] राज्याङ्गप्राप्तराजपुरुषः; 'सम्पन्नस्तु प्रकृतिभिर्महोत्साहः कृतश्रमः'—इति शब्दमाला। अतिशयोद्यमः। ३५५

महोदयम् क्ली. [महान् उदय उन्नतिर्यस्मिन्] पुरविशेषः;

कान्यकुब्जं; कन्याकुब्जं; गाधिपुरं; कौशं, कुशस्थलं; पुं. [महान् उदयः समुन्नतिर्यस्मिन्] कान्यकुब्जदेशः; अपवर्गः; [महान् उदय उत्कर्षो यस्य] स्वामी; [महान् उदयः फलं यस्मिन् यस्माद्वा] महाफले त्रि.। 'अपि यत्सुकरं कर्म तदप्येकेन दुष्करम् । विशेषतोऽसहायेन किन्तु राज्यं महोदयम्'—इति मनुः (७।५५)। 'महोदयं महाफलम्'-इति तट्टीकायां कुल्लूक भट्टः।२८७

महोद्यमः त्रि. [महान् उद्यमो यस्य] महोत्साहः; 'अथ निर्जित्य दायादाँल्लब्ध्वा लक्ष्मीं क्षितीश्वरः । जिष्णुर्दिग्विजयं कर्तुं श्रीमानासीन्महोद्यमः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (५।१४१)। महानुद्यमः; अतिशयोद्योगे पुं.। ३५५

महोद्योगः त्रि. [महान् उद्योगो यस्य] महोत्साहः। ३५५

महौषधम् क्ली. [महत् औषधम्] शुण्ठी; विश्वभेषजं; नागरम्; 'शुण्ठी विश्वा च विश्वं च नागरं विश्वभेषजम् । ऊषणं कटुभद्रं च शृङ्गवेरं महौषधम्'—इति भावप्रकाशः । भूम्याहुल्यं; लशुनः; 'लशुनस्तु रसोनः स्यादुग्रगन्धो महौषधम् । अरिष्टो म्लेच्छकन्दश्च यवनेष्टो रसोनकः'—इति भावप्रकाशः । वाराहीकन्दः; वत्सनाभः; पिप्पली; अतिविषा; महाभेषजम्; 'स्वभर्तुं न् प्रेयं तेषां च महासत्वान्महौषधैः । चिकित्सां कारयामासुर्नोत्तस्थुश्च तदन्तिकात्'—इति कथासरित्सागरे (६६।३९)। ६१५

मा स्त्री. [माति परिमाति अदृष्टं धनदानाय । मा+क्विप् । यद्वा मा+क, ततष्टाप्] लक्ष्मीः; माता; 'मारमा सुषमा चारुरुचा मारवधूत्तमा । मात्तधूर्ततमावासा सा वामा मेऽस्तु मा रमा'—इति साहित्यदर्पणे (१०)। मानम् । अव्य. [मा+क्विप्] वारणं; निवारणम्; 'मा निषाद ! प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः'—इति रामायणे (१।२।१५)। विकल्पः; त्रि. [अस्मद्+द्वितीयैकवचने 'त्वामौ द्वितीयायाः' इति मामित्यस्य स्थाने विकल्पेन मादेशः] मदीया कर्मता; 'सिन्धोः पुत्र्यां रोषिता किं त्वमाद्ये ! कस्मादेनां प्रेक्षसे नाथहीनाम् । क्षन्तव्यस्ते स्वांशजातापराधो व्युत्थाप्यैनं मोदितां मा कुरुष्व'—इति देवी भागवते (१।५।६६)। ३१

मांसम् क्ली. [मन्यते इति । मन् ज्ञाने+'मनेर्दीर्घश्च' इति स दीर्घश्च] रक्तजधातुविशेषः; पिशितं; तरसं; पललं; क्रव्यम्; आमिषं; पलम्; अस्रजं; जाङ्गलं; कीरम्; 'वयस्थं निर्विषं सद्योहतं मांसं प्रशस्यते । मृतञ्च व्याधितं व्युष्टं वृद्धं बालं विषैर्हतम् । अगोचरहतं व्यालसूदितं मांसमुत्सृजेत्'—इति राजनिर्घण्टः । 'मांसं वातहरं सर्वं बृंहणं बलपुष्टिकृत् । प्रीणनं गुरु हृद्यञ्च मधुरं रसपाकयोः'—इति भावप्रकाशः । पुं. कालः; कीटः; वर्णसङ्करजातिविशेषः; 'चतुरो मागधी सूते क्रूरान्मायोपजीविनः । मांसं स्वादुकरं क्षौद्रं सौगन्धमिति विश्रुतम्'—इति महाभारते (१३।४८।२२)। ६३१

मांसविक्रयी [न्] त्रि. [मांसविक्रयोऽस्यास्तीति । मांसविक्रयेण जीवति वेति, इनि] आमिषविक्रयकर्ता; वैतंसिकः; कौटिकः; मांसिकः; शौनिकः; कौटकिकः; 'चिकित्सकान् देवलकान् मांसविक्रयिणस्तथा । विपणेन च जीवन्तो वर्ज्याः स्युर्हव्यकव्ययोः'—इति मनुः (३।१५१)। ५९

मांसादी [न्] त्रि. [मांसम् अत्ति इति । मांस+अद्+णिनि] शौष्कलः; मांसभक्षः; मांसभक्षकः । ३५१

माक्षिकम् क्ली. [मक्षिकाभिः कृतम् । मक्षिका+'संज्ञायाम्' इति ठक्] मधु; नीलवर्णमध्यममक्षिकाकृततैलवर्णमधु; धातुविशेषः; 'माक्षिकं द्विविधं प्रोक्तं हेमाह्वं तारमाक्षिकम् । भिन्नवर्णविशेषत्वाद्रसवीर्यादिकं पृथक् । तारपादादिके तारमाक्षिकञ्च प्रशस्यते । देहे हेमाभकं शस्तं रोगहृद्बलपुष्टिदम्'—इति राजनिर्घण्टः । उपधातुविशेषः; 'माक्षिकं तुत्थिताभ्रे च नीलाञ्जनशिलालकाः। रसकं चेति विज्ञेया एते सप्तोपधातवः'—इति सुखबोधे। ६२१

माक्षीकम् क्ली. [मक्षिकाभिः कृतमित्यण् । निपातनाद्दीर्घत्वम्] मधु; धातुविशेषः; 'माक्षीकधातुमधुपारदलोहचूर्णं, पथ्याशिलाजतुविडङ्गघृतानि योऽद्यात् । सैकोनविंशतिरहानि जरान्वितोऽपि सोऽशीतिकोऽपि रमयत्यबलां युवेव'—इति कथासरित्सागरे (७६।३)। ६२१

मागधः पुं. [मगधस्य तद्वंशस्यापत्यम् । 'द्व्यच्मगधकलिङ्गसूरमसादण्' इति अण्] वंशक्रमेण महत्त्ववेदिराजाग्रस्तुतिकारी; मधुकः; वन्दी; स्तुतिपाठकः; 'तस्मिन्नेव महायज्ञे जज्ञे प्राज्ञोऽथ मागधः। प्रोक्तौ तदा

मुनिवरैस्तावुभौ सूतमागधौ । स्तूयतामेष नृपतिः पृथुर्वैन्यः प्रतापवान्'—इति विष्णुपुराणे । वर्णसङ्कर-जातिविशेषः; स तु क्षत्रियायां वैश्याज्जातः; 'भाट' इति भाषा । [मगधेषु भवो मागधः] जरासन्धराजः; 'मागधो न च हन्तव्यो भूयः कर्ता बलोद्यमम्'—इति भागवते १० स्कन्धः । शुक्लजीरकः; मगधदेशोद्भवे त्रि. । 'अन्ध्राश्च बहवो राजन्नन्तर्गिर्यास्तथैव च । बहिर्गिर्या-ङ्गमलदा मागधा मालववाज्जटाः'—इति महाभारते (६।९।४९) । ४३५

मागधी स्त्री. [मगधे जाता । मगध+अण्+ङीष्] मालती; जातिः; यूथिका; (६१४) कृष्णा; उपकुल्या; वैदेही; पिप्पली; कणा; मागधा; मागधिका; 'पिप्पली च पलाशौण्डी वैदेही मागधी कणा । कृष्णोपकुल्या मगधी कोला स्यात्तिक्ततण्डुला'—इति वैद्यकरत्नमालायाम् । त्रुटिः; शर्करा; भाषाविशेषः; 'अत्रोक्ता मागधी भाषा राजान्तःपुरचारिणाम्'—इति साहित्यदर्पणे । तद्देश-भवे त्रि. । 'अनश्वा खलु मागधीमुपयेमे अमृतांनाम तस्यामस्य जज्ञे परीक्षित्'—इति महाभारते (१।९५ ४१) । २०५

माञ्जिष्ठम् क्ली. [मञ्जिष्ठया रक्तम् । 'तेन रक्तं रागात्' इत्यण्] लोहितवर्णः; 'कल्माषबभ्रुकपिल-विचित्रमाञ्जिष्ठहरितशवलाभाः'—इति बृहत्संहिता-याम् (३०।१२) । तद्वति त्रि. । ७३३

माठी स्त्री. [मठ्यते न्युस्यते देहः अस्याम् । मठ्+घञ्, ङीप्] कवचः; वारवाणः; दंशनम् । ४५९

माढिः स्त्री. [महति अनया, मह्+'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति क्तिन्] पत्रशिरा; पत्रभङ्गिः; देशभेदः; दन्तभेदः; दैन्यप्रकाशनं; दीनता; 'माढिर्दैन्यं पत्रशिरार्चामूढ-स्तन्द्रिते जडे'—इति हेमचन्द्रः । ७८३

माणवकः पुं. [अल्पो मानवः, 'अल्पे' इति कन्, 'ब्राह्मण-माणव' इति निपातनाण्णत्वम्] बालकः; स च षोडश-वर्षपर्यन्तः; प्रथमवयस्कः; 'एष ते स्थानमैश्वर्यं श्रियं तेजो यशः श्रुतम् । दास्यत्याच्छिद्य शक्राय माया-माणवको हरिः'—इति भागवते (८।१९।३२) । [माणवको बालः स इव] हारभेदः (५६२); स तु विंशतियष्टिकः, किन्तु बृहत्संहितामते षोडशयष्टिको हारः । 'द्वात्रिंशता गुच्छो विंशत्या कीर्तितोऽर्द्धगुच्छाख्यः । षोडशभिर्माणवको द्वादशभिश्चार्द्धमाणवकः'—इति बृहत्संहितायाम् (८१।३३) । कुपुरुषः; वटुः । ५०२

माणिबन्धम् क्ली. [मणिबन्धे गिरौ भवम् । मणिबन्ध+अण्] सैन्धवलवणम् । ६१४

माणिमन्थम् क्ली. [मणिमन्थगिरौ भवम् । मणिमन्थ+अण्] सिन्धुजलवणम्; 'सैन्धवोऽस्त्री शीतशिवं माणि-मन्थं च सिन्धुजम्'—इति भावप्रकाशः । ६१४

मातङ्गः पुं. [मतङ्गस्येदम्, मतङ्गस्यापत्यं पुमान् वा । मतङ्ग+अण्] हस्ती; 'विन्ध्यपर्वतजैर्मत्तैः पूर्णाहैम-वतैरपि । मदान्वितैरतिबलैर्मातङ्गैः पर्वतोपमैः'—इति रामायणे (१।६।२३) । श्वपचः (५९८); 'सुदूर-मन्वगायातं कार्याय कृतसंविदम् । सख्या दुर्गपिशाचेन मातङ्गपतिना युतम्'—इति कथासरित्सागरे (७३।२) । अश्वत्थवृक्षः; किरातजातिविशेषः; अर्हदुपासकविशेषः । २१४

मातरिश्वा पुं. [मातरि अन्तरिक्षे श्वयति वर्द्धते इति । यद्वा मातरि जनन्यां श्वयति वर्द्धते (दितिजठरे सप्त-सप्तकमरुतामुत्पत्तेः) । मातृ+ङि+श्वि+'श्वन्—उक्षन्निति' कनिन्, सप्तम्या अलुक्, धातोरिकारलो-पश्च निपातितः] वायुः; 'आन्यं दिवो मातरिश्वा ज-भारामन्थादन्यं परिश्येनो अद्रेः'—इति ऋग्वेदे (१।९३।६) । 'मातरिश्वा वायुः'–इति तद्भाष्ये सायणा-चार्यः । [मातर्यन्तरिक्षे श्वसितिति चेष्टते इति । श्वस्+कनिन्] अग्निभेदः; 'तनूनपादुच्यते गर्भम् आसुरो नरा शंसो भवति यद्विजायते । मातरिश्वा यदमिमीत मातरि-वातस्य सर्गो अभवत् सरीमणि'—इति ऋग्वेदे (३।२९।-११) । 'यदाग्निररणीषु गर्भरूपतया वर्तते तदा तनून-पान्नामको भवति, यदान्तरिक्षे विद्योतते तदा मातरिश्व-नामको भवति'—इति तद्भाष्ये सायणचार्यः । ७६

मातलिः पुं. [मतं लातीति । ला+क । पृषोदरादित्वात् साधुः । मतलस्यापत्यं पुमानिति वा, मतल+'अत इञ्' इतीञ्] इन्द्रसारथिः; शक्रसारथिः; 'मतस्त्रिलोक-राजस्य मातलिर्नाम सारथिः । तस्यैकैव कुले कन्या रूपतो लोकविश्रुता'—इति महाभारते (५।९७।११) । ६१

माता [ऋ] स्त्री. [मान्यते पूज्यते या सा । मान् पूजायाम्, 'नप्तृनेष्टृत्वष्टृहोतृपोतृभ्रातृजामातृमातृपितृदुहितृ'— इति

तृच् निपात्यते। स्वस्रादित्वाट्टाप् न] सप्त दे - मातरः; 'ब्राह्मी च वैष्णवी चैन्द्री रौद्री वाराहिकं तथा। कौवेरी चैव कौमारी मातरः सप्त कीर्तिताः'— इत्यमरटीकायां भरतः। (५०४) जनयित्री; प्रसूः; जननी; सवित्री; जनिः; जनी; जनित्री; अक्का; अम्बा; अम्बिका; अम्बालिका; मातृका। 'जनको जन्मदातृत्वात् पालनाच्च पिता स्मृतः। गरीयान् जन्मदातुश्च योऽन्नदाता पिता मुने! विनाश्नाम्नश्वरो देहो न नित्यः पितुरुद्भवः। तयोः शतगुणे माता पूज्या मान्या च वन्दिता। गर्भधारणपोषाभ्यां सा च ताभ्यां गरीयसी'— इति ब्रह्मवैवर्ते। 'स गुर्व्यः क्रियाः कृत्वा वेदमस्मै प्रयच्छति। उपनीय ददद्वेदमाचार्यः स प्रकीर्तितः। एकादश उपाध्याया ऋत्विग् यज्ञकृदुच्यते। एते मान्या यथापूर्वमेभ्यो माता गरीयसी'—इति गारुडे। 'गुरूणामपि सर्वेषां पूज्याः पञ्च विशेषतः। तेषामाद्यास्त्रयः श्रेष्ठास्तेषां माता सुपूजिता'—इति कौर्मे। १७

माता स्त्री. [मान्यते पूज्यते इति। मान् पूजायाम्+ तन् ततष्टापि निपातनात् साधुः] जननी; 'विश्वेश्वरीं विश्वमातां चण्डिकां प्रणमाम्यहम्—' इति शिवरहस्ये दुर्गास्तवदर्शनाद् आबन्तोऽप्यं शब्दः। ५०४

मातृमुखः पुं. [माता एव मुखः उपदेशकः, न तु गुर्वादिः, यस्य सः] जडः; अज्ञः; मातृशासितः; मूर्खः। ३७७

मातृशासितः पुं. [मात्रा शासितः। स्नेहाधिकत्वात् केवलं मात्रैव शासितः, न तु पित्राचार्यादिभिरिति भावः] मूर्खः। ३३६

मात्रा स्त्री. [मीयते अनया। मा+'हुयामाश्रुभसिभ्यस्त्रन्' इति त्रन्, टाप्] अल्पः। (७९६) परिच्छदः; हस्त्यश्वादिः; परिमाणम्; 'किं हस्तिमात्रोऽङ्कुशः।' 'अङ्गुलमेकं भवति मात्राः'—इति बृहत्संहितायाम् (५८।२)। कर्णभूषा; वित्तम्; अक्षरावयवः; छन्दसां ह्रस्वदीर्घादिप्रभेदः; 'यस्याः पादे प्रथमे द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेऽपि'—इति श्रुतबोधे। कालविशेषः; 'कालेन यावता पाणिः पर्येति जानुमण्डले। सा मात्रा कविभिः प्रोक्ता ह्रस्वदीर्घप्लुते मता।' वाम जानुनि तद्धस्तभ्रमणं यावता भवेत्। कालेन मात्रा सा ज्ञेया मुनिभिर्वेदपारगैः'—इति तन्त्रसारः। इन्द्रियवृत्तिः; 'मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय! शीतोष्णसुखदुःखदाः। आगमापायिनो नित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत!'— इति भगवद्गीता। 'मीयन्ते आभिर्विषया, मात्रा इन्द्रियवृत्तयः'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। 'इन्द्रियम्' इति पूर्वोक्तश्लोकटीकायां मधुसूदनसरस्वती। अंशः; 'न योषिद्भ्यः पृथग्दद्यादवसानदिनादृते। स्वभर्तृपिण्डमात्राभ्यस्तृप्तिरासां यतः स्मृता'—इति श्राद्धतत्त्वम्। शिलोच्चयः; 'प्र मात्राभी रिरिचे' इति ऋग्वेदे (३।४६।३)। 'मात्राभिः, मीयन्ते परिच्छिद्यन्ते इति मात्राः शिलोच्चयाः'—इति तद्भाष्ये सायणाचार्यः। शक्तिः; 'का मात्रा समुद्रस्य यो मम प्रसूतिं दूषयिष्यति'— इति पञ्चतन्त्रे (१।३५९)। अवयवः; 'चन्द्रवित्तेशयोश्चैव मात्रा नि त्य शाश्वतीः'—इति मनुः (७।४)। 'मात्रा अवयवाः'—इति तट्टीकायां मेधातिथिः। रूपम्; 'तस्य मात्रा गुणः शब्दः'—इति भागवते (२।५।२५)। 'मात्रा सूक्ष्मं रूपम्'—इति तट्टीकायां स्वामी। ६८८

माधवः पुं. [मधोर्वसन्तस्यायम्, मधूनि मधुमन्ति कुसुमानि अस्मिन् वा। मधु+'मधोर्ञ च' इति ञ] वैशाखमासः; 'स तेन सख्या सहितो जगामाम्रवणं वनम्। पत्नीभिः स समं रन्तुं माधवे मासि पार्थिवः'—इति मार्कण्डेये (११७।२७)। [यदुपुत्रस्य मधोरपत्यं पुमान्। मधु+ अण्। यद्वा मा लक्ष्मीस्तस्याः धवः। माया विद्याया धव इति] विष्णुः; 'मा च ब्रह्मस्वरूपा या मूलप्रकृतिरीश्वरी। नारायणीति विख्याता विष्णुमाया सनातनी। महालक्ष्मीस्वरूपा च वेदमाता सरस्वती। राधा वसुन्धरा गङ्गा तासां स्वामी च माधवः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। मधु+ स्वार्थे अण्। वसन्तः; 'मधुमाधवौ वसन्तः'—इति सुश्रुते (१।१९।९)। 'माधवप्रथमे मासि नभस्यप्रथमे पुनः'—इति चरकः। मधुकवृक्षः; कृष्णमुद्गः; भौत्यमन्वन्तरीयसप्तर्षीणामन्यतम ऋषिविशेषः; 'अग्नीध्रश्चाग्निबाहुश्च शुक्तिर्मुक्तोऽथ माधवः। शुक्रोऽजितश्च सप्तैते तदा सप्तर्षयः स्मृताः'—इति मार्कण्डेये (१००।३१)। सायणाचार्यस्य भ्राता। यथा सायणकृतधातुवृत्तौ; 'इति पूर्वदक्षिण— पश्चिमसमुद्राधीश्वरकम्बराजसुतसङ्गमराजमहामन्त्रिणः मायणपुत्रेण माधवसहोदरेण सायणाचार्येण विरचिता माधवीया धातुवृत्तिः।' ११४

माधवकः पुं. [मधु मधुकपुष्पं तेन कृतः संधितः। 'कुलालादिभ्यो वुञ्'] आसवः; मधु; माध्वीकं; मध्वासवः। ३२९

माधवी स्त्री. [मधौ साधु पुष्यति । मधु+'कालात् साधुपुष्प्यत्पच्यमानेषु' इत्यण्, ङीप्] पुष्पलताविशेषः; अतिमुक्तः; पुण्ड्रकः; वासन्ती; लता; अतिमुक्तकः; माधविका; माधवीलता; चन्द्रवल्ली; सुगन्धा; भ्रमरोत्सवा; भृङ्गप्रिया; भद्रलता; भूमिमण्डपभूषणा; वसन्तदूती; लतामाधवी; 'आम्रैर्नीपैर्मधूकैश्च माधवीमण्डपावृताम्'—इति देवीभागवते (१।१२।७) । 'माधवी स्यात्तु वासन्ती पुण्ड्रको मण्डकोऽपि च । अतिमुक्तो विमुक्तं च कामुको भ्रमरोत्सवः । माधवी मधुरा शीता लघ्वी दोषत्रयापहा'—इति भावप्रकाशः । मिसिः; मधुशर्करा; कुट्टनी; [मधुनो विकार इत्यण्, ङीप्] मदिरा; 'अस्ति मे शयनं दिव्यं त्वदर्थमुपकल्पितम् । एहि तत्र मया सार्द्धं पिबस्व मधुमाधवीम्'—इति महाभारते (४।१५।३) । [माधवस्येयमित्यण् ङीप् । तत्प्रियत्वात्तथात्वम्] तुलसी; [मधौ वसन्ते सेव्यार्चनीयेति अण्] दुर्गा । माधवस्य पत्नी; मधुवंशजा कन्या; 'जनमेजयः खल्वनन्तां नामोपयेमे माधवीं तस्यामस्य जज्ञे प्राचिन्वान्'—इति महाभारते (१।९५।१२) ।

माधवीलता स्त्री. [माधव्याख्या लता] पुष्पलताविशेषः; वासन्ती; लता । २०८

माध्वीकम् क्ली. [माध्वी+स्वार्थे कन्] मधूकपुष्पकृतमद्यं; मध्वासवः; माधवकः; मधु; मकरन्दः; पुष्परसः; 'धयतु नलिने माध्वीकं वा न वाभिनवागतः, कुमुदमकरन्दौघैः कुक्षिम्भरिर्भ्रमरोत्करः । इह तु लिहते रात्रीतर्षं रथाङ्गविहङ्गमा, मधु निजवधूकवक्त्राम्भोजेऽधुनाऽधरनामकम्'–इति नैषधे (१९।३३) । 'माध्वीकं मकरन्दम्'––इति तट्टीकायां नारायणः । 'मधुमाक्षीकमाध्वीकक्षौद्रसारघ्यमीरितम् । मक्षिकावरटीभृङ्गवातपुष्परसोद्भवम्'—इति भावप्रकाशः । ३३०

मानः पुं. [मन्यते बुध्यतेऽनेन इति । मन्+घञ्] चित्तसमुन्नतिः; 'द्वेषं दम्भं च मान च क्रोधं तैक्ष्ण्यं च वर्जयेत्'—इति मनुः (४।१६३) । आत्मनि पूज्यताबुद्धिः; अनुरक्तयोर्दम्पत्योर्भावविशेषः; 'दम्पत्योर्भाव एकत्र सतोरप्यनुरक्तयोः । स्वाभीष्टाश्लेषवीक्षादिनिरोधी मान उच्यते'–इत्युज्ज्वलनीलमणिः । पूज्यत्वम्; 'अधमाः कलिमिच्छन्ति सन्धिमिच्छन्ति मध्यमाः । उत्तमा मानमिच्छन्ति मानो हि महतां धनम् । मानो हि मूलमर्थस्य माने म्लाने धनेन किम् । प्रभ्रष्टमानदर्पस्य किं धनेन किमायुषा । अधमा धनमिच्छन्ति धनमानौ हि मध्यमाः । उत्तमा मानमिच्छन्ति मानो हि महतां धनम्'—इति गारुडे । ग्रहः; परिच्छेदके त्रि. । 'बृहन्तं मानं वरुण स्वधावः सहस्रद्वारं जगमा गृहन्ते'—इति ऋग्वेदे (७।८८।५) । 'मान्त्यस्मिन् सर्वाणि भूतानि इति मानं सर्वस्य भूतजातस्य परिच्छेदकमित्यर्थः' इति तद्भाष्ये सायणः । पुं. मन्त्रः; 'अवोचाम निवचनान्यस्मिन्मानस्य सूनुः सहंसाने अग्नौ'—इति ऋग्वेदे (१।१८९।८) । 'मीयत इति मानो मन्त्रः तस्य सूनुरग्निः मन्त्रेणोत्पद्यमानत्वात्, सप्तम्यर्थे प्रथमा'—इति तद्भाष्ये सायणः । निर्मिता; 'यं ते श्येनश्चारुमवृकं पदाभरदरुणं मानमन्धसः'—इति ऋग्वेदे (१०।१४४।५) । 'मानं यागद्वारा निर्मातारम्'—इति तद्भाष्ये सायणः । (८०५) क्ली. [मीयतेऽनेनेति । मा+करणे ल्युट्] परिमाणं; यौतवं; द्रुवयं; पाय्यं; पौतवम्; अङ्गुल्यां हस्तादि; प्रस्थेन द्रोणादि; प्रमाणम् । ७२२

मानवः पुं. [मनोरपत्यं मनोर्गोत्रापत्यं वा पुमान् । मनु+अण्] मनोरपत्यम्; मनुष्यः; 'मनोर्वंशो मानवानां ततोऽयं प्रथितोऽभवत् । ब्रह्मक्षत्रादयस्तस्मान्मनोर्जातास्तु मानवाः'—इति महाभारते (१।७५।१२) बालः; [मनुना प्रोक्तम् । मनु+अण्] उपपुराणविशेषः; 'सनत्कुमारं प्रथमं नारसिंहं ततः परम् । नारदीयं शिवं चैव दौर्वाससमनुत्तमम् । कापिलं मानवं चैव तथा चौशनसं स्मृतम्'—इति देवीभागवते (१।३।१३) ३३१

मानसम् क्ली. [मन एव । मनस्+'प्रज्ञादिभ्यश्च' इति स्वार्थे अण्] मनः; 'यज्ञदानतपांसीह परत्र च न भूतये । भवन्ति तस्य यस्यार्तपरित्राणे न मानसम्'— इति मार्कण्डेये (१५।६१) । 'परापरत्वं संख्याद्याः पञ्च वेगश्च मानसे'—इति भाषापरिच्छेदः । [मनसि भवो जातो वा । मनस्+अण्] मनोभवे त्रि. । 'सङ्कल्पः कर्म मानसम्'–इत्यमरः । 'विषयेष्वतिसंरागो मानसो मल उच्यते'—इत्येकादशीतत्त्वम् । 'अनूढानङ्गपीडेव ममेयं मानसी व्यथा'—इति प्राञ्चः । मानसतापः; 'कामक्रोधभयद्वेषलोभमोहविषादजः । शोकासूयावमानेर्ष्यामात्सर्यादिभयं तथा । मानसोऽपि द्विजश्रेष्ठ ! तापो भवति नैकधा'—इति विष्णुपुराणे । [मनसा सङ्कल्पेन

कृतमित्यण्] सरोवरविशेषः; मानससरोवरम् । 'कैलासपर्वते राम ! मनसा निर्मितं परम् । ब्रह्मणा नरशार्दूल ! तेनेदं मानसं सरः । तस्मात् सुस्राव सरसः सायोध्यामुपगूहते । सरित् प्रवृत्ता सरयूः पुण्या ब्रह्मसरश्च्युता'—इति रामायणे । पुं. नागविशेषः; 'अमाहठः कामठकः सुषेणो मानसो व्ययः'—इति महाभारते (१।५७।१६) । शाल्मलीद्वीपस्य वर्षविशेषः; 'श्वेतश्च हरितश्चैव जीमूतो रोहितस्तथा । वैद्युतो मानसश्चैव केतुमान् सप्तमस्तथा'—इति मात्स्ये (५३।२३) । पुष्करद्वीपस्थपर्वतविशेषः; 'द्वीपार्द्धस्य परिक्षिप्तः पश्चिमे मानसो गिरिः'—इति मात्स्ये । ५३४

मानसौकाः [स्] पुं. [मानसं सर ओको वासस्थानं यस्य] हंसः; 'वयं हंसाश्चरामेमां पृथिवीं मानसौकसः' —इति महाभारते (८।४१।१३) । २५१

मानुषः पुं. [मनोर्जातः । मनु+'मनोर्जातावञ्यतौ षुक् च' इत्यञ्, षुगागमश्च] मनुष्यः; 'चिकित्सकानां सर्वेषां मिथ्या प्रचरतां दमः । अमानुषेषु प्रथमो मानुषेषु तु मध्यमः'—इति मनुः (९।२८४) । [मनुष्यस्येदम्, अण्] मनुष्यसम्बन्धिनि त्रि. । 'अकृत्वा मानुषं कर्म यो दैवमनुवर्तते । वृथा श्राम्यति सम्प्राप्य पतिं क्लीवमिवाङ्गना'—इति महाभारते (१३।६।२०) । ३३१

मान्द्यम् क्ली. [मन्दस्य भावः कर्म वा । मन्द+'पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्' इति यक्] रोगः; मन्दता; 'विश्वस्ते च ततस्तस्मिन् पुरोधसि चकार सः । मान्द्यमल्पतराहारकृशीकृततनुर्मृषा'—इति कथासरित्सागरे (२४।१३५) । ६००

मापत्यः पुं. [मा विद्यतेऽपत्यमस्य] कामदेवः; मदनः; मन्मथः । ३४

माया स्त्री. [मीयते अपरोक्षवत् प्रदर्श्यतेऽनया इति । मा+'माच्छाससिसूभ्यो यः' इति य, टाप्] इन्द्रजालादिः; शाम्बरी; इन्द्रजालिः; कुहकं; कुसृतिः; शाम्बरिः; साम्बरी [माति विश्वमस्यां,शकन्ध्वादिः । मयस्य दैत्यस्य इयं, तेन प्राङ्निर्मितत्वात्]; बुद्धिः; [मिमीते जानाति संख्यात्यनयेति । मा+य+टाप्] कृपा; दम्भः; शठता; 'माया तु शठता शाठ्यं कुसृतिर्निकृतिश्च सा'—इति हेमचन्द्रः । प्रज्ञा; 'अधारयत् पृथिवीं विश्वधायसमस्तभ्नान् मायया द्यामवस्रसः'—इति ऋग्वेदे (२।१७।५) 'मायया प्रज्ञया'—इति तद्भाष्ये सायणः । राज्ञां क्षुद्रोपायविशेषः; 'मायोपेक्षेन्द्रजालानि क्षुद्रोपाया इमे त्रयः'—इति हेमचन्द्रः । लक्ष्मीः; बुद्धमाता; दुर्गा; 'दुर्गे शिवेऽभये माये नारायणि सनातनि । जये मे मङ्गलं देहि नमस्ते सर्वमङ्गले ! राजन् ! श्रीवचनो माश्च याश्च प्रापणवाचकः । तं प्रापयति या नित्यं सा माया परिकीर्तिता'—इति ब्रह्मवैवर्ते । 'विचित्रकार्यकारणा अचिन्तितफलप्रदा । स्वप्नेन्द्रजालवल्लोके माया तेन प्रकीर्तिता'—इति देवीपुराणे । शक्तिः; सामर्थ्यम्; 'दासानामिन्द्रो मायया'—इति ऋग्वेदे (४।३।२१) । 'मायया स्वकीयया शक्त्या'—इति तद्भाष्ये सायणः । ७४०

मायावी [न्] पुं. [भूयसी माया कापट्यमस्त्यस्येति । माया+'अस्मायामेधास्रजो विनिः' इति विनि] मायाकारः; व्यंसकः; मायी; मायिकः; ऐन्द्रजालिकः; 'मायावी दानवः सोऽथ मुनिरूपं समास्थितः । स प्राह राजपुत्रं तं पूर्ववैरमनुस्मरन्'—इति मार्कण्डेये (२२।७) विडालः; मोहनशक्तियुक्तः परमात्मा; 'स्वतश्चिदन्तर्यामी तु मायावी सूक्ष्मसृष्टितः । सूत्रात्मा स्थूलसृष्टचैव विराडित्युच्यते परः'—इति पञ्चदश्याम (६।४) । ३४९

मायिकः पुं. [माया अस्त्यस्य । माया+'व्रीह्यादिभ्यश्च' इति ठन्] मायाकारः; मायावी; मायी; 'यन्मायामोहितश्चाहं सदा वर्ते परा मनः । परवान् दारुपाञ्चाली मायिकस्य यथा वशे'—इति देवीभागवते (४।१९।१४) । मायाविशिष्टे त्रि. । मायाफले क्ली. । ३४९

मायी [न्] पुं. [मायाऽस्त्यस्य । माया+'व्रीह्यादिभ्यश्च' इति इनि] मायाकारः; धूर्तः; वञ्चकः; व्यंसकः; कुहकः; दाण्डाजिनिकः; जालिकः; मायायुक्ते त्रि. । 'यज्वभिः सम्भृतं हव्यं विततेष्वध्वरेषु सः । जातवेदोमुखान् मायी मिषतामाच्छिनत्ति नः'—इति कुमारे (२।४६) । मायोपाधिकः; परमेश्वरः; 'मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम्'—इति पञ्चदश्याम् (६।१२३) । ३४९

मायुः पुं. [मिनोति प्रक्षिपति देहे उष्माणमिति । मि प्रक्षेपणे+'कृवापाजिमिस्वदिसाध्यशूभ्य उण्' इति उण्, 'मीनातिमिनोतिदीङां ल्यपि च' इत्यात्वम्, 'आतो युक्

चिण्कृतोः' इति युक्] पित्तं; शब्दः; 'सृक्काणं घर्ममभिवावशाना मिमाति मायुं पयते पयोभिः'—इति ऋग्वेदे (१।१६४।२८)। 'मायुं शब्दं मिमाति निर्मीति करोति'—इति तद्भाष्ये सायणः। वाक्। ६०५

मारः पुं. [म्रियन्ते प्राणिनो ऽनेन । मृ+घञ्] कामदेवः; मदनः; मन्मथः; 'अनुममार न मार ! कथं नु सा, रतिरतिप्रथितापि पतिव्रता । विरहिणीशतघातनपातकी दयितयापि तयापि किमुज्झितः'—इति नैषधे (४।७९)। [मृ+भावे घञ्] मृतिः; 'क्षुन्मारकृद्घटनिभः खण्डो नृपहा विदीधितिर्भयदः'—इति बृहत्संहितायाम् (३।३१)। विघ्नः; [मृ+णिच्+घञ्] मारणं; धुस्तूरः। ३२

मारजित् पुं. [मारं कामदेवं जितवान् । जि+क्विप् तुगागमः] बुद्धः; शौद्धोदनिः; मायादेवीसुतः; समन्तभद्रः। ८५

मारणम् क्ली. [मार्यते इति, मृ+णिच्+भावे ल्युट्] वधः; हिंसा; 'यावन्ति पशुरोमाणि तावत्कृत्वो ह मारणम् । वृथापशुघ्नः प्राप्नोति प्रेत्य जन्मनि जन्मनि' —इति मनुः (५।३८)। अभिचारविशेषः; 'एवन्तु मारणं देवि ! विशेषात् कथयामि ते। सान्तं वह्निसमायुक्तं वामनेत्रविभूषितम्'—इति योगिनीतन्त्रे। ४७७

मारिषः पुं. [मर्षति दोषानिति । मृष्+अच् । निपातनात् सिद्धः । यद्वा मा रिष्यति हिनस्ति कञ्चिदपीति, मा+रिष्+क] नाट्योक्तौ श्रेष्ठः; 'साहाय्यं ते करिष्यामि मन्त्रशक्त्या महामते । भविता यदि संग्रामस्तव चेन्द्रेण मारिष !'—इति देवीभागवते (१।११।६५)। 'दार्यमाणां चमूं दृष्ट्वा भगदत्तेन मारिष !'—इति महाभारते (७।२६।१२)। तण्डुलीयशाकविशेषः; कन्धरः; मार्षिकः; 'मारिषो वाष्पको मार्षः श्वेतो रक्तश्च स स्मृतः । मारिषो मधुरः शीतो विष्टम्भी पित्तनुद् गुरुः । वातश्लेष्मकरो रक्तपित्तनुद्विषमाग्निजित् । रक्तमार्षो गुरुर्नाति सक्षारो मधुरः सरः । श्लेष्मलः कटुकः पाके स्वल्पदोष उदीरितः'—इति भावप्रकाशः। ९९

मारुतः पुं. [मरुदेव, मरुत्+'प्रज्ञादिभ्यश्च' इति स्वार्थेऽण्] वायुः; 'अतिथिं चाननुज्ञाप्य मारुते वाति वा भृशम् । रुधिरे च स्रुते गात्राच्छस्त्रेण च परिक्षते । सामध्वनावृग्यजुषी नाधीयीत कदाचन'—इति मनुः (४।१२२-१२३)। जनपदविशेषः; 'मारुता धेनुकाश्चैव तङ्गणाः परतङ्गणाः। बाह्लीकास्तित्तिराश्चैव चोलाः पाण्ड्याश्च भारत !, एते जनपदा राजन् ! दक्षिणं पक्षमाश्रिताः' —इति महाभारते (६।४७।४९-५०)। अग्निभेदः; 'अग्निस्तु मारुतो नाम गर्भाधाने विधीयते'—इति गृह्यसंग्रहपरिशिष्टे (१।२)। मरुत्सम्बन्धिनि त्रि.। 'रासि क्षयं रासि मित्र मम्मे रासि शर्ध इन्द्र मारुतं नः' —इति ऋग्वेदे (२।११।१४)। 'मारुतं मरुतां देवविशां सम्बन्धि'—इति तद्भाष्ये सायणः। ७५

मार्गः पुं. [मार्ग्यते संस्क्रियते पादेन, मृग्यते गमनायान्विष्यते इति वा । मार्ग् वा मृग्+घञ्] पन्थाः; 'त्रिंशद्धनूंषि विस्तीर्णो देशमार्गस्तु तैः कृतः । विंशद्धनुर्ग्राममार्गः सीमामार्गो दशैव तु'—इति देवीपुराणे। 'एका बालानभिज्ञा च मार्गाणामतथोचिता। क्षुत्पिपासापरीताङ्गी दुष्करं यदि जीवति'—इति महाभारते (३।६७।१७)। (८०७) अन्वेषणं; मार्गणम्। गुदं; पायुः; तनुह्लदः; अपानं; मृगमदः; [मृगस्येदम्, मृग+अण्] मृगसम्बन्धिनि त्रि.। 'मार्गाद्विक्रान्तजङ्घालं सदा वनचरं सुतम्।' तद्वर्ज्यं सलिलं तात ! सदव पितृकर्मणि । मार्गमाविकमौष्ट्रं च सर्वमैकशफं च यत्'—इति मार्कण्डेये (३२।१७)। [मृगो मृगशिरास्तद्युक्ता पौर्णमास्यत्र । मृग+अण्] मार्गशीर्षमासः; मृगशिरोनक्षत्रं; विष्णुः; 'विक्षरो रोहितो मार्गो हेतुर्दामोदरः सहः'—इति महाभारते (१३।१४९।५३) २६०

मार्गणः पुं. [मार्गयति लक्ष्यमिति । मार्ग्+ल्यु] शरः; बाणः; 'ते सर्वे दृढधन्वानः संयुगेष्वपलायिनः । बहुधा भीष्ममानर्च्छुर्मार्गणैः कृतमार्गणैः'—इति महाभारते (६।११५।४४)। [मार्गयति धनार्थं दातारमिति । मार्ग्+ल्यु] मार्गणकः; याचकः; क्ली. [मार्ग्यते अन्विष्यत इति । मार्ग्+भावे ल्युट्] अन्वेषणं; संवीक्षणं; विचयनं; मृगणा; मृगः; याच्ञा; प्रणयः; [मार्गयतीति, मार्ग्+ल्यु] याचके त्रि.। ४६६

मार्गणकः पुं. [मार्गण+स्वार्थे कन्] अर्थी; याचकः। ३५९

मार्जारः पुं. [मृज्+'कञ्जिमृजिभ्यां चित्' इति आरन्, चित्। 'मृजेर्वृद्धिः'] ओतुः; विडालः; वृषदंशकः;

आखुभुक्; मार्जारकः; 'मार्जारः किल दुष्टात्मा निश्चेष्टः सर्वकर्मसु'--इति महाभारते (५।१५९।१६)। खट्वासः; पारिभाषिकमार्जारः; 'दम्भार्थं जपते यश्च तप्यते यजते तथा। न परत्रार्थमुद्युक्तो मार्जारः परिकीर्तितः'—इति वामनपुराणे। २३६

मार्तण्डः पुं. [मृतश्चासौ अण्डश्च, तत्र भवतीति। 'तत्र भवः' इति अण्, शकन्ध्वादिः] सूर्यः; 'अनिष्पन्नेषु, गात्रेषु पुत्रं दृष्ट्वा पिताब्रवीत्। आर्तस्त्वं भव माण्डेति मार्तण्डस्तेन स स्मृतः'। 'मार्तण्डस्य रवेर्भार्या तनया विश्वकर्मणः। संज्ञा नाम महाभाग! तस्यां भानुरजीजनत्'—इति मार्कण्डेये (७७।१)। अर्कवृक्षः; शूकरः। ३५

मार्ष्टिः स्त्री. [मृज्+क्तिन्, 'मृजेर्वृद्धिः' इति वृद्धिश्च] मार्जनं; समालम्भनं; चर्चा; तैलम्रक्षणम्; 'तैलमल्पं यदङ्गेषु न भवेत् बाहुसङ्गतम्। सा मार्ष्टिः पृथगम्यङ्गो मस्तकादौ प्रकीर्तितः'—इत्याह्निकतत्त्वम्। ५४०

मालः पुं. [मातीति। मा+रन्। रस्य लत्वम्] जातिविशेषः; म्लेच्छजातिः; 'माला भिल्लाः किराताश्च सर्वेऽपि म्लेच्छजातयः। तत्रेमे कुरुपाञ्चालाः शाल्वा माद्रेयजाङ्गलाः। शूरसेनाः पुलिन्दाश्च योधा मालास्तथैव च'—इति महाभारते (६।९।३९)। जनः; देशविशेषः; स वङ्गदेशेऽपि मालभूमित्वेन ख्यातः;। विष्णुः; 'मां लक्ष्मीं लातीति मालो विष्णुः तम् अततीति मालती'—इति मालतीशब्दटीकायां भरतः। क्ली. [माति मानहेतुर्भवतीति। मा+'ऋज्रेन्द्राग्रवज्रेत्यादिना' रन्। पृषोदरादित्वाद्रस्य लत्वम्] क्षेत्रम्, 'सद्यः सीरोत्कषणसुरभि क्षेत्रमारुह्य मालं, किञ्चित्पश्चाद्व्रज लघुगतिर्भूय एवोत्तरेण'—इति मेघदूते (१६)। कपटं; वनं; हरितालम्; 'हरितालं तालमालं मालं शैलूषभूषणम्। पिञ्जकं रोमहरणं तालकं पातमित्यपि'—इति वैद्यकरसेन्द्रसारसङ्ग्रहः। ४९९

मालती स्त्री. [मलते शोभां धारयतीति। मल्+'भृदृशियजीत्यादि' इत्यत्र बाहुलकाद् मलतेरतच्। गौरादिनिपातनादुपधाया दीर्घत्वम्। ङीष्] पुष्पलताविशेषः; सुमना ; जातिः; सुमनाः; जाती; मागधी; यूथिका; 'ज्वलयति मदनाग्निं मालतीनां रजोभिः'—इति माघे (११।१८)। 'जातिर्जाती च सुमना मालती राजपुत्रिका। चेतिका हृद्यगन्धा च सा पीता स्वर्णजातिका'—इति भावप्रकाशः। युवती; काचमाली; विशल्या; चन्द्रिका; चन्द्रिमा; कौमुदी; ज्योत्स्ना; निशा; रात्रिः; नदीविशेषः; सुवर्चला; 'चणको मालती क्षौमी रुद्रपत्नी सुवर्चला'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। २०५

मालवः पुं. [मालः उन्नतक्षेत्रमस्त्यत्र। माल+'केशाद्वोऽन्यतरस्याम्' इत्यत्र 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति काशिकोक्तेः व प्रत्ययः] रागविशेषः; भैरवरागः; 'आदौ मालवरागेन्द्रस्ततो मल्लारसंज्ञितः। श्रीरागस्तस्य पश्चाद्वै वसन्तस्तदनन्तरम्। हिल्लोलश्चाथ कर्णाट एते रागाः प्रकीर्तिताः।' 'नितम्बिनीचुम्बितवक्त्रपद्मः शुकद्युतिः कुण्डलवान् प्रमत्तः। सङ्गीतशालां प्रविशन् प्रदोषे मालाधरो मालवरागराजः'—इति सङ्गीदामोदरः। अवन्तिदेशः; 'अङ्गा वङ्गा मद्गुरका अन्तर्गिरिबहिर्गिरी। सुह्योत्तराः प्रविलया मार्गवागेयमालवाः'—इति मात्स्ये (११३।४४)। [मालवेषु जात इत्यण्] तद्देशजे त्रि.। अश्वपते राज्ञो मालव्यां जातः पुत्रगणः; 'पितुश्च ते पुत्रशतं भविता तव मातरि। मालव्यां मालवा नाम शाश्वताः पुत्रपौत्रिणः। भ्रातरस्ते भविष्यन्ति क्षत्रियास्त्रिदशोपमाः'—इति महाभारते (३।२९६।५८)। स्त्री. नदीविशेषः; 'हिरण्वती वितस्ता च तथा प्लक्षवती नदी। वेदस्मृतिर्वेदवती मालवाथाश्वत्यपि'—इति महाभारते (१३।१६५।२५)। १०१ अ

मालवकौशिका स्त्री.— रागिणीभेदः। १०१ अ

माला स्त्री. [माति मानहेतुर्भवतीति। मा+'ऋज्रेन्द्राग्रवज्रे'ति रन्, रस्य लत्वम्, टाप च्। यद्वा मां शोभां लाति इति, ला+क, टाप्] मूर्ध्नि न्यस्तपुष्पदाम; माल्यं; स्रक्; मालिका; मालाका; मालका; गणनिका; गुणान्तिका; 'माला तु त्रिविधा देवि! वर्णाक्षपर्वभेदतः'—इति मत्स्यसूक्तवचनम्। श्रेणिः; श्रेणी; राजिः; लेखा; तती; वीची; आली; आवलिः; पङ्क्तिः; धारणी। ५५२

मालाकरः पुं. [करोति रचयति इति करः, मालायाः करः। पचाद्यच्] मालाकारः; मालिकः। ५८९

मालाकारः पुं. [मालां करोतीति। कृ+अण्] वर्णसङ्करजातिविशेषः; मालिकः; मालाकरः; पुष्पाजीवी;

वनार्चकः; पुष्पलावः; पुष्पलावकः; 'माली' इति भाषा। 'न पर्युषितदोषोऽस्ति तुलसीबिल्वचम्पके। जलजे बकुलेऽगस्त्ये मालाकारगृहेषु च'—इति मेरुतन्त्रे। 'हस्ते नापितचाक्रिकचौरभिषक्सूचिकद्वीपग्राहाः। बन्धक्यः कौशलका मालाकाराश्च पीडयन्ते'—इति बृहत्संहितायाम् (१०।९)। [स्त्रियां ङीप्] 'भिक्षुणिका प्रव्रजिता दासी धात्री कुमारिका रजिका। मालाकारी दुष्टाङ्गना सखी नापिती दूत्यः'—इति बृहत्संहितायाम् (७८।९)। ५८९

मालिकः पुं. [मालास्य पण्यम्। माला+'तदस्य पण्यम्' इति ठक्। यद्वा मालाग्रथनं शिल्पमस्येति। 'शिल्पम्' इति ठक्] मालाकारः; माली [माला पण्यत्वेनास्त्यस्य। माला+'व्रीह्यादिभ्यश्च' इति इनि] 'निदाघे पुष्पताम्बूली पर्णाद्यत्रातिशीतले। न्यस्यद्भिर्मालिकैर्दत्तात् सा जीवेद्भ्राटकादिति'—इति; राजतरङ्गिण्याम् (६।१९)। पक्षिभेदः; रञ्जकः। ५८९

मालूरः पुं. [मां परेषां वृक्षान्तराणां श्रियं प्रभावं लुनातीति। मा+लू+बाहुलकात् र] बिल्ववृक्षः; श्रीफलः; 'स वारनारीकुचसञ्चितोपमं ददर्श मालूरफलं पचेलिमम्'—इति नैषधे (१।९४)। 'बिल्वो महाकपित्थाख्यः श्रीफलो गोहरीतकी। पूतिवातोऽथ माङ्गल्यो मालूरश्च महाफलम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। 'बिल्वः शाण्डिल्यशैलूषौ मालूरश्रीफलावपि'—इति भावप्रकाशः। १९४

माल्यम् क्ली. [मालैव। माला+चतुर्वर्णादित्वात् ष्यञ्] मूर्द्धि न्यस्तपुष्पदाम; माला; स्रक्; मालिका; मालाका; मालका; गणनिका; गुणान्तिका; पुष्पस्रक्; 'वृष्यं सौगन्ध्यमायुष्यं काम्यं पुष्टिबलप्रदम्। सौमनस्यमलक्ष्मीघ्नं गन्धमाल्यनिषेवणम्'—इति चरकः। 'गन्धमाल्यैरलङ्कारैस्तुष्टा हृष्टाश्च नित्यशः। गन्धमाल्यप्रदा ये तु दाननिश्चयतत्पराः। धर्मज्ञाः सत्यशीलाश्च सर्वदुःखविवर्जिताः। सुचिरं दैवतैः सार्द्धं क्रीडन्ति हि महामुने'—इति वह्निपुराणम्। ५५२

माषीणम्, माष्यम् क्ली. [माषाणां भवनं क्षेत्रम्। माष+'विभाषा तिलमाषोमाभङ्गाणुभ्यः' इति यत्, पक्षे खञ्] माषक्षेत्रम्; 'तिल्यतैलीनवन्माषोमाणुभङ्गा द्विरूपता'—इत्यमरः। 'यथा तिलस्य क्षेत्रं तिल्यं तैलीनं च भवति तथा माषादीनामपि द्विरूपता द्वैरूप्यं भवति,—इति तट्टीकायां भरतः। १६३

मासः पुं. [मस् परिमाणे+भावे घञ्। मस्यते परिमीयते असावनेनेति वा। मस्+घञ्] शुक्लकृष्णपक्षद्वयात्मकः कालः; त्रिंशदहोरात्रः; 'चक्रवत् परिवर्तेत सूर्यः कालवशाद्यतः। अतः सांवत्सरं श्राद्धं कर्तव्यं मासचिह्नितम्। मासचिह्नं तु कर्त्तव्यं पौषमाघाद्यमेव हि। यतस्तत्र विधानेन स मासः परिकीर्तितः'—इति लघुहारीतः। कार्तिकादिद्वादशसंज्ञकः; 'अन्त्योपान्त्यौ त्रिभौ ज्ञेयौ फाल्गुनश्च त्रिभो मतः। शेषा मासा द्विभा ज्ञेयाः कृत्तिकादिव्यवस्थया।' 'चान्द्रः शुक्लादिदर्शान्तः सावनस्त्रिंशता दिनैः। एकराशौ रविर्यावत् कालं मासः स भास्करः'—इति ब्रह्मसिद्धान्ते। 'नाडीषष्ट्या तु नाक्षत्रमहोरात्रं प्रचक्षते। तत्त्रिंशता भवेन्मासः सावनोऽर्कोदयैस्तथा'—इति सूर्यसिद्धान्ते। मासपरिमाणं; 'मासा' इति भाषा। ११३

मासार्द्धम् क्ली. [मासस्य अर्द्धम्] पक्षः; पञ्चदश दिनानि। ८४९

माहिषः त्रि. [महिष्या अयम्। अण्] महिषसम्बन्धी; 'माहिषं च शरच्चन्द्रचन्द्रिकाधवलं दधि'—कालिदासः। ७६४

माहेयी स्त्री. [मह्याः सुरभ्याः अपत्यमिति। मही+'नद्यादिभ्यो ढक्' इति ढक्। स्त्रियां ङीप्] गौः; सुरभिः; सौरभेयी; 'सर्वश्वेतेव माहेयी वने जाता त्रिहायणी। उपातिष्ठत पाञ्चाली वासितेव महावृषम्'—इति महाभारते (४।१६।१०)। 'सुरभिः सौरभेयी च माहेयी गौरुदाहृता'—इति भावप्रकाशः। २६८

मितम्पचः त्रि. [मितं परिमितं पचतीति। मित+पच्+'मितनखे च' इति खश्, 'अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम्' इति मुम् च] कृपणः; परिमितपाककर्ता। ३४७

मित्रः पुं. [मेद्यति स्निह्यति, मिद्+'अमिचिमिदिशसिभ्यः क्त्रः' इति क्त्र] सूर्यः; भानुः; रविः; 'स्वस्ति मित्रः सहादित्यैः स्वस्ति रुद्रा दिशन्तु ते'—इति रामायणे (२।२५।२२)। द्वादशादित्यानामन्यतमः; 'धाता मित्रोऽर्यमा शक्रो वरुणस्त्वंश एव च'—इति महाभारते (१।६५।१५)। मरुतामन्यतमः; 'मरुत्वती मरुत्वन्तो देवानजनयत् सुतान्। अग्निश्चक्षुर्हविर्ज्योतिः सावित्रो

मित्र एव च'–इति हरिवंशे (१९६।५२)। वशिष्ठस्य ऊर्ज्जा-गर्भजातः पुत्रभेदः; 'चित्रकेतुः सुरीचिश्च विरजा मित्र एव च। उल्बणो वसुभृद्यानो द्युमान् शक्त्यादयोऽपरे'–इति भागवते (४।१।३७) (४२८) क्ली. बन्धुः; सखा; सुहृत्। 'न कश्चित् कस्यचिन्मित्रं न कश्चित् कस्यचिद्रिपुः। व्यवहारेण जायन्ते मित्राणि रिपवस्तथा।' 'सा श्रीर्या न मदं कुर्यात् स सुखी तृष्णयोज्झितः। तन्मित्रं यस्य विश्वासः पुरुषः स जितेन्द्रियः'—इति गारुडे (१३।१४।१५)। 'यस्य मित्रेण सम्भाषो यस्य मित्रेण संस्थितिः। यस्य मित्रेण संलापस्ततो नास्तीह पुण्यवान्'–इति हितोपदेशः। [मिनोति मानं करोति इति] शत्रोः परम्; 'राजा शत्रुरिति ख्यात एकार्थाभिनिवेशतः। भूम्यैकान्तरितो राजा स मित्रं मित्रकार्यतः'—इति शब्दरत्नावली। ३७

मिथः [स्] अव्य. [मेथति इति, मेथृ सङ्गमे, असुन्, पृषोदरादित्वाद् ह्रस्वः] अन्योऽन्यं; परस्परम्; रहः; 'व्यवहारी मिथस्तेषां विवाहः सदृशैः सह'—इति मनुः (१०।५३)। ७२०

मिथिला स्त्री. [मथ्यन्ते शत्रवो यस्याम्। मथ्+'मिथिलादयश्च' इति इलच् अकारस्येत्वं निपात्यते] नगरीविशेषः; जनकराजपुरी; विदेहा; 'ततः कोषं समादाय वाहनानि च भूरिशः। पाण्डुना मिथिलां गत्वा विदेहाः समरे जिताः'—इति महाभारते (१।११३।२८)। 'जन्मना जनकः सोऽभूद्वैदेहस्तु विदेहजः। मिथिलो मथनाज्जातो मिथिला येन निर्मिता'—इति भागवते। 'निमेः पुत्रस्तु तत्रैव मिथिर्नाम महान् स्मृतः। प्रथमं भुजबलैर्येन तैरहूतस्य पार्श्वतः। निर्मितं स्वीयनाम्ना च मिथिलापुरमुत्तमम्। पुरीजननसामर्थ्यात् जनकः स च कीर्तितः'—इति भविष्यपुराणम्। २८७

मिथुनम् क्ली. [मेथतीति, मिथ्+'क्षुधिपिशिमिथः कित्' इति उनन्, किद्भावाद् गुणाभावश्च] स्त्रीपुंसयोर्युग्मं; द्वन्द्वम्; 'मा निषाद! प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः। यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्'—इति रामायणे (१।२।१५)। युगलम्; मेषादिद्वादशराश्यन्तर्गततृतीयराशिः; जितुमः; 'मिथुनोदयसंजातो मानी स्वजनवत्सलः। त्यागी भोगी धनी कामी दीर्घसूत्रोऽरिमर्दनः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। ७००

मिथ्या अव्य. [मथते इति, मन्थ् विलोडने, मेथते हिनस्ति वेति। मथ् वा मेथ्+क्यप्। निपातनात् साधु] असत्यं; मृषा; वितथः; अनृतम्; 'पृष्टास्तु साक्ष्ये प्रवदन्ति येऽन्यथा भवन्ति मिथ्यापतिता नरेन्द्र!' एकार्थतायान्तु समाहितायां मिथ्या वदन्तं ह्यनृतं हिनस्ति'–इति मात्स्ये ३१ अध्यायः। १४४

मिथ्याचर्या स्त्री. [मिथ्या चरणम्, 'गदमदचरयमश्च' इति यत्, टाप्] ईर्षा; ईर्ष्या; कुहना; दम्भः; कुक्कुटिः; मिथ्याचार; कपटाचारः। ७४०

मिषम् क्ली. [मिष्+क] छलम्; 'प्रियासु बालासु रतक्षमासु च द्विपत्रितं पल्लवितं च बिभ्रतम्। स्मरार्जितं रागमहीरुहाङ्कुरं मिषेण चञ्च्वाश्चरणद्वयस्य च'—इति नैषधे (१।११८)। पुं. स्पर्द्धनम्; 'इति ध्यायन्मिषं कृत्वा तदैवास्फुटया गिरा। निर्गत्यैव विरक्तात्मा धनदेवान्ति कं ययौ'—इति कथासरित्सागरे (६४।१२५)। ७०९

मिष्टान्नम् क्ली. [मिष्टमन्नम्] मधुरद्रव्यम्; 'मिष्टान्नपानदाताथ सततं श्रद्धयान्वितः। देवपूजापरो नित्यं न प्रेतो जायते मृतः'—इत्यग्निपुराणम्। ३२१

मिहिका स्त्री. [मेहति स्निह्यतीति। मिह्+संज्ञायां क्वुन्+टाप्, अत इत्वम्] नीहारः; 'विशति युवतित्यागे रात्रीमुचं मिहिकारुचम्। दिनमणिमणिं तापे चिताग्निजाच्च यियासति'—इति नैषधे (१९।३५)। ६५०

मिहिरः पुं. [मेहति सिञ्चति मेघजलेन भूमिमिति। 'मिह् + 'इषिमदिमुदिखिदिच्छिदिभिदिमन्दिचन्दितिमिमिहीति' किरच्] सूर्यः; 'भवतिमिरासवपानमदाद् भवति विलोहितविग्रहकात्। मिहिर! बिभासि यतः सुतरां त्रिभुवनभावनभानिकरैः'–इति मार्कण्डेये (१०७।७)। अर्कवृक्षः; वृद्धः; मेघः; वायुः; चन्द्रः; विक्रमादित्यभूपस्य नवरत्नान्तर्गतरत्नविशेषः; वराहमिहिरः; 'धन्वन्तरिक्षपणकामरसिंहशङ्कुवेतालभट्ट—घटकर्परकालिदासाः। ख्यातो वराहमिहिरो नृपतेः सभायां रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य'—इति नवरत्नम्। ३६

मीनः पुं. [मीयते हिंस्यते हिनस्ति वा इति। मी हिंसायाम् +'फेनमीनौ' इति नक् निपातितश्च] मत्स्यः; झषः; जलचरः; 'दुर्भगो बत लोकोऽयं यदवो नितरामपि।

ये संवसन्तो न विदुर्हरिं मीन इवोडुपम्'—इति भागवते (३।२।८) । मेषादिद्वादशराश्यन्तर्गतान्तिमराशिः; अन्त्यभम्; 'मीनलग्ने समुत्पन्नो रत्नकाञ्चनपूरितः। अज्ञरोमा महाप्राज्ञो दीर्घकालपरीक्षकः'—इति कोष्ठीप्रदीपकः। मत्स्यावतारः। ६५७

मीमांसा स्त्री. [मान् पूजायाम्+'मान्बधदान्शान्भ्यो दीर्घश्चाभ्यासस्य' इति जिज्ञासायां सन्, अ, टाप्। अभ्यासस्येकारस्य दीर्घश्च] षड्दर्शनान्तर्गतदर्शनशास्त्रविशेषः; जैमिनीयं; विचारणा। १०

मुकुटम् क्ली. [मङ्क्ते मण्डयति, मकि + उटन्, नलोपश्चेति न्यासः। बाहुलकाद् धातोरत उः] शिरोभूषणभेदः; किरीटं; मौलिः; कोटीरम्; उष्णीषं; मकुटं; मौलीकः; शेखरम्; अवतंसः; वतंसः; उत्तंसः; उष्णीषकं; कौटीरकम्; 'मुकुटश्चापतत्तस्य काञ्चनो वज्रभूषितः'—इति हरिवंशे (८६।७७)। 'रजांसि मुकुटाग्न्येषामुत्थितानि व्यधर्षयन्'—इति महाभारते (१।३०।३८)। [स्त्रियां टाप्] मुकुटा; मातृगणविशेषः। 'कालेहिका वामनिका मुकुटा चैव भारत'—इति महाभारते (९।४६।२३)। [ङीप्] मुकुटी; अङ्गुलिमोटनम्। ५६५

मुकुन्दः पुं. [मुकुं मुक्तिं ददाति। मुकुं+दा+क,पृषोदरादित्वम्] विष्णुः; 'मुकुमव्ययमान्तञ्च निर्वाणमोक्षवाचकम्। तद्ददाति च यो देवो मुकुन्दस्तेन कीर्तितः। मुकुं भक्तिरसप्रेमवचनं वेदसम्मतम्। यस्तद्ददाति विप्रेभ्यो मुकुन्दस्तेन कीर्तितः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। निधिविशेषः; 'यत्र पद्ममहापद्मौ तथा मकरकच्छपौ। मुकुन्दो नन्दकश्चैव नीलः शङ्खोऽष्टमो निधिः'—इति मार्कण्डेयपुराणे (६८।५)। पारदः; रत्नभेदः; कुन्दुरुः; 'कुन्दुरुस्तु मुकुन्दः स्यात् सुगन्धः कुन्द इत्यपि'—इति भावप्रकाशः। २१

मुकुरः पुं. [मक्+'मकुरदर्दुरौ' इति उरच्, बाहुलकादकारस्थाने उकारः, मुञ्चति ज्योतिरिति वा] दर्पणः; आदर्शः; 'कुरु करे गुरुमेकमयोघनं बहिरितो मुकुरं च कुरुष्व मे'—इति नैषधे (४।५९)। बकुलद्रुमः; कुलालदण्डः; मल्लिकापुष्पवृक्षः; 'मुकुरकुसुमभृङ्गानातपत्रध्वजं वा दधि फलमथ नौकामन्नताम्बूलवस्त्रम्। कमलकलशशङ्खं भूषणं काञ्चनं वा भवति सकलसिद्ध्यै श्रेयसे रोगिणां च'—इति हारीतः। कुलवृक्षः; कोरकः। ५५५

मुकुलः पुं.– क्ली. [मुञ्चति कलिकात्वम्। मुच्+घुलक्, इति भरतः। मुचेरलः कत्वमुत्वञ्चेति कत्वे अकारस्योत्वे मुकुलः, इति रायः] कुड्मलः; मकुलः; पौटकोरकः; ईषद्विकसितकलिका; 'उपहितं शिशिरापगमश्रिया, मुकुलजालमशोभत किंशुके'—इति रघौ (९।२१) शरीरम्; आत्मा; राजपुरुषविशेषः; 'इत्थं लब्धजया राज्ञी तत्क्षणान्न्यग्रहीद्रुषा। यशोधरं शुभधरं मुकुलं च सबान्धवम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (६।२५३)। १८६

मुक्ता स्त्री. [मुच्यते स्म। मोच्यते निःसार्यते इति वा। मुच्+क्त+टाप्] रत्नविशेषः; मौक्तिकं; सौम्या; शौक्तिकेयं; तारं; तारा; भौतिकं; तौतिकम्; अम्भःसारं; शीतलं; नीरजं; नक्षत्रं; इन्दुरत्नं; लक्ष्मीः; मुक्ताफलं; बिन्दुफलं; मुक्तिका; शौक्तेयकं; शुक्तिमणिः; शशिप्रभं; स्वच्छं; हिमं; हिमबलं; सुधांशुभं; सुधांशुरत्नं; लक्षं; शशिप्रियं; हैमवतं; भूरुहं; शौक्तिकं; शुक्तिबीजं; हारी; 'स्वेदयेद्दोलिकायन्त्रे जयन्त्याः स्वरसेन च। मणिमुक्ताप्रवालानि यामैकं शोधनं भवेत्'—इति वैद्यकरसेन्द्रसारसंग्रहः। 'रेवत्यश्विधनिष्ठासु हस्तादिषु च पञ्चसु। शङ्खविद्रुममुक्तानां परिधानं प्रशस्यते'—इति समयप्रदीपः। रास्ना। ६६४

मुक्तागुणः पुं. [मुक्तायाः गुणः वैशिष्ट्यम्। मुक्ताफले तरलत्वगुणविशेषः, सोऽस्त्यस्येति अच् वा] मुक्तारत्नं; श्रेष्ठमौक्तिकं; तारः। मुक्तामाला। ७९८

मुक्तामुक्तः त्रि. [मुक्तश्च अमुक्तश्चेति विशेषणयोर्द्वन्द्वः] क्षिप्ताक्षिप्तः। अस्य प्रयोगः अस्त्रे शस्त्रे च प्रायो वर्तते, यथा यष्ट्यादि। ४६३

मुक्तास्फोटः पुं. [मुक्तानां स्फोटः विकाशोऽत्र] शुक्तिः; मुक्तावरणम्। ६६४

मुक्तास्फोटा स्त्री. [मुक्तास्फोट+टाप्] शुक्तिः; मुक्ताशिम्बी। ६६४

मुक्तिः स्त्री. [मुच्+भावे क्तिन्] आत्यन्तिकदुःखनिवृत्तिः; नित्यसुखावाप्तिः; (शरीरेन्द्रियाभ्याम् आत्मनो मुक्तत्वं मुक्तिः); मोक्षः; कैवल्यं; निर्वाणं; श्रेयः; निःश्रेयसम्; अमृतम्; अपवर्गः; अपुनर्भवः;

स्थिरः; अक्षरम्; 'मुक्तिस्तु द्विविधा साध्वि ! श्रुत्युक्ता सर्वसम्मता। निर्वाणपददात्री च हरिभक्तिप्रदा नृणाम्। हरिभक्तिस्वरूपाञ्च मुक्तिं वाञ्छन्ति वैष्णवाः। अन्ये निर्वाणरूपां च मुक्तिमिच्छन्ति साधवः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। 'मुक्तिमिच्छसि रे तात! विषयान् विषवत् त्यज। क्षमार्जवदयातोषसत्यं पीयूषवद्भज'—इति अष्टावक्रसंहितायाम् (१।२)। १२४

मुखम् क्ली. [खनति विदारयति अन्नादिकमनेन, खन्यते विधात्रा सुखमनेनेति वा। खन्+'डित्खनेर्मुट् चोदात्तः' इति करणे अच्, स च डित् मुडागमश्च] निःसरणं; गृहस्य निष्क्रमणप्रवेशनवर्त्म; गृहादिद्वारप्रवेशः; हट्टमण्डपादेः प्रवेशनिर्गमः; गृहाङ्गणादिनिःसरणपथः। अग्रभागः (४६९); 'तस्मात् सर्वप्रयत्नेन प्रबोधयितुमीश्वरीम्। ब्रह्मद्वारमुखे सुप्ते मुद्राभ्यासं समाचरेत्'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् (३।५)। (५१८) शरीरावयवविशेषः; वक्त्रम्; आस्यं; वदनं; तुण्डम्, आननं; लपनम्; 'मुखं विमुच्य श्वसितस्य धारया वृथैव नासापथधावनश्रमः।' 'ओष्ठौ च दन्तमूलानि दन्ता जिह्वा च तालु च। गलो गलादि सकलं सप्ताङ्गं मुखमुच्यते'—इति भावप्रकाशः। प्रारम्भः; 'अथेप्सितं भर्तुरुपस्थितोदयं सखीजनोद्वीक्षणकौमुदीमुखम्। निदानमिक्ष्वाकुकुलस्य सन्ततेः, सुदक्षिणा दौर्हृदलक्षणं दधौ'—इति रघुवंशे (३।१)। 'कौमुद्याः मुखं प्रारम्भम्' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। उपायः; सन्धिविशेषः; 'मुखं बीजसमुत्पत्तिर्नानार्थरससम्भवा। अङ्गानि द्वादशैतस्य बीजारम्भसमन्वयात्' —इति दशरूपके (१।२३)। नाटकादेः शब्दः; आद्यम्; 'अचक्षुर्विषयं प्रायाद् यथार्कः क्षणदामुखे'—इति रामायणे (२।५०।७)। प्रधानम्; 'राजा मुखं मनुष्याणां नदीनां सागरो मुखम्। नक्षत्राणां मुखं चन्द्र आदित्यस्तेजसां मुखम्। पर्वतानां मुखं मेरुर्गरुडः पततां मुखम्। सदेवकेषु लोकेषु भगवान् केशवो मुखम्' —इति महाभारते (२।३८।२७-२९)। द्वारम्; 'लिपेर्यथावद् ग्रहणेन वाङ्मयं नदीमुखेनेव समुद्रमाविशत्' —इति रघुवंशे (३।२८)। 'नद्या मुखं द्वारम्' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। 'मुखं तु वदने मुख्यारम्भे द्वाराभ्युपाययोः'—इति वैजयन्तीकोषः। पुं. डहुः; 'लकुचो लिकुचो नुत्तः खगववत्रो मुखो डहुः'—इति शब्दचन्द्रिका। २८९

मुखण्डी स्त्री. [खण्डयतीति खण्डी, अच्, ङीप्। मुक्ता सती खण्डी। मुखं खण्डयति वा। पृषोदरादिः] मुखभञ्जिका; शस्त्रजातिः; शस्त्रविशेषः। ४७६

मुखपूरणम् क्ली. [मुखं पूर्यते अनेनेति। मुख+पूर्+करणे ल्युट्] गण्डूषः। ७८५

मुखरः त्रि. [मुखम् अस्यास्तीति। मुख+'ऊषसुषिमुष्कमधो रः'—इत्यत्र 'रप्रकरणे खमुखकुञ्जेभ्य उपसंख्यानम्' इति काशिकोक्त्या र। निन्दितं मुखमस्यास्तीति वा] अप्रियवादी; दुर्मुखः; अबद्धमुखः; 'एका भार्या प्रकृतिमुखरा चञ्चला च द्वितीया'—इत्युद्भटः। शब्दायमानः; 'त्वां सूचयिष्यति तु माल्यसमुद्भवोऽयं गन्धश्च भीरु ! मुखराणि च नूपुराणि'—इति मृच्छकटिके १ अङ्के। अग्रयायी; 'यदि कार्ये विपत्तिः स्यान्मुखरस्तत्र हन्यते'—इति हितोपदेशे। पुं. [मुख+र] काकः; शङ्खः। ३७७

मुख्यः त्रि. [मुखे आदौ भवः। यत्। व्रीहिभिर्यजेतेत्यादिव उत्कृष्टत्वाद् मुखमिव मुख्यः, 'शाखादिभ्यो यः' इति इवार्थे य] श्रेष्ठः; अग्र्य; प्रधानः; प्रमुखः; 'प्रधानमुत्तमं रग्यं श्रेष्ठं मुख्यमनुत्तमम्। वरं वरेण्यं प्रमुखं परार्द्धं प्रवरं तथा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। 'मुख्या नाम पुरस्ताद् द्वास्तयापणबहूदनौ'—इति भागवते (४।२५।४९)। पुं. प्रथमः कल्पः; यागादिषु शास्त्रोक्तः प्रथमः कल्पो मुख्यः स्यात्। ६९०

मुञ्जः पुं. [मुञ्ज्यते मृज्यते अनेन। मुञ्ज्+करणे अच्] तृणविशेषः; मौञ्जीतृणाख्य; ब्राह्मण्यः; तेजनाह्वयः; वानीरकः; मुञ्जनकः; शीरी; दर्भाह्वयः; दूरमूलः; दृढतृणः; दृढमूलः; बहुप्रजः; रञ्जनः; शत्रुभङ्गः। 'बाण, मूंज' इति भाषा। 'मुञ्जो मुञ्जातको बाणः स्थूलदर्भः सुमेधसः। मुञ्जद्वयं तु मधुरं तुवरं शिशिरं तथा।' दाहतृष्णाविसर्पास्रमूत्रवस्त्यक्षिरोगजित्। दोषत्रयहरं वृष्यं मेखलासूपयुज्यते'—इति भावप्रकाशः। शरः उपनयनकाले मुञ्जमेखलाधारणविधिः—'अथैनं माणवकम् आचार्यस्त्रिप्रदक्षिणं त्रिवृतं मुञ्जमेखलां परिधापयन् मन्त्रद्वयं वाचयति'—इति दशकर्मपद्धतिः। १९१

मुण्डम् क्ली. [मुण्ड्यन्ते उप्यन्ते केशा अस्मात्। यद्वा

मुण्डते मज्जतीति । मुण्ड्+अच्] शिरः; 'अङ्गं गलितं पलितं मुण्डं दन्तविहीनं जातं तुण्डम् । करधृतकम्पितशोभितदण्डं तदपि न मुञ्चत्याशा पिण्डम्'—इति मोहमुद्गरे (१५)। उपनिद्षविशेषः; 'ईशकेनकठप्रश्नमुण्डमाण्डूक्यतित्तिरि । छान्दोग्यं बृहदारण्यमैतरेयं तथा दश ।' बोलं; मुण्डायसं; पुं. [मुण्डन मुण्डः केशापनयनम्, मुडि खण्डने, भावे घञ् । ततः अर्श आद्यच्] बलिराजस्य सैनिकदैत्यविशेषः; 'एकाक्ष एकपान्मुण्डो विद्युदक्षश्चतुर्भुजः'—इति भविष्यपर्वणि हरिवंशे (२३२।५)। शुम्भसेनापतिदैत्यभेदः; 'हे चण्ड ! हे मुण्ड ! बलैर्बहुलैः परिवारितौ'—इति मार्कण्डेयपुराणे (८७।२८)। [मुण्डमेवावयवत्वेनास्त्यस्य । अच्] राहुग्रहः; [मुण्डं मुण्डनं जीविकात्वेनास्त्यस्य । अच्] नापितः; [मुण्ड स्कन्धावच्छेदे खण्डनमस्त्यस्य+अच्] स्थाणुवृक्षः; पुं.–क्ली. [मुण्ड्+अच्] मूर्द्धा । ५१८

मुण्डनम् क्ली. [मुण्ड्+ल्युट्] केशच्छेदनं; भद्राकरणं; वपनं; परिवापनं; क्षौरम्, 'भ्रातुरस्य हितं वाक्यं शृणु धर्मज्ञसत्तम !, दण्ड एव हि राजेन्द्र ! क्षत्रधर्मो न मुण्डनम्'—इति महाभारते (१२।२३।४६)। ७२१

मुण्डा स्त्री. [मुण्ड+स्त्रियां टाप्] मुण्डिता स्त्री; श्रमणा; भिक्षुकी; मुण्डीरिका । ४८७

मुत् [द्] स्त्री. [मोदनमिति, मुद्+भावे क्विप्] हर्षः; मुदा; सुखम्; आनन्दथुः, 'उवाच धात्र्या प्रथमोदितं वचो ययौ तदीयामवलम्ब्य चाङ्गुलिम् । अभूच्च नम्रः प्रणिपातशिक्षया पितुर्मुदं तेन ततान सोऽर्भकः'—इति रघुवंशे (३।२५)। १२३

मुद्गः पुं. [मोदते अनेन इति । मुद्+'मुदिग्रोर्गग्गौ' इति गक्] शमीधान्यभेदः; सूपश्रेष्ठः; वर्णार्हः; रसोत्तमः; भुक्तिप्रदः; हयानन्दः; सुफलः; वाजिभोजनः; 'प्रधाना हरितास्तत्र वनमुद्गास्तु मुद्गवत् । कृष्णमुद्गा महामुद्गा गौरा हरितपीतकाः । श्वेता रक्ताश्च निर्दिष्टा लघवः पूर्वपूर्ववत्'—इति राजवल्लभे । १६२

मुद्गरः पुं. [मुद्+गॄ+अच्] अस्त्रविशेषः; द्रुघणः; घनः; द्रुघनः; प्रघणः; 'मुद्गरः कारकास्त्रयोः'—इति हेमचन्द्रः । 'पादपाविद्धपरिघः शिलानिष्पिष्टमुद्गरः' —इति रघौ (१२।७३)। मुद्गरकः; कर्मारवृक्षः; पुष्पवृक्षविशेष; गन्धसारः; सप्तपत्रः; अतिगन्धः; गन्धराजः; विटप्रियः; प्रियः; जनेष्टः; मृगेष्टः । ४७५

मुधा अव्य. [मुह्यतीति, मुह्+बाहुलकात् का । पृषोदरादित्वात् हस्य धः] व्यर्थकम्; 'मुधा ज्ञानं मुधा वृत्तं मुधा सेवा मुधा श्रमः । एवं यो युक्तधर्मः स्यात्सोऽमुत्रात्यन्तमश्नुते'—इति महाभारते (१४।३७।४)। ७६०

मुनिः पुं. [मनुते जानाति यः इति । मन्+'मनेरुच्च' इति इन्+अत उच्च] मौनव्रती; वाचंयमः; मौनी; व्रती; ऋषिः; शापास्त्रः; सत्यवाक्; 'फलेन मूलेन च वारिभूरुहां मुनेरिवेत्थं मम यस्य वृत्तयः'—इति नैषधे (१।१३३)। 'दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः । वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते'—इति भगवद्गीता । वङ्गसेनतरुः; जिनः; प्रियालवृक्षः; पलाशवृक्षः; दमनकवृक्षः; स्त्री. दक्षकन्या; 'मरीचेः कश्यपः पुत्रः कश्यपात्तु इमाः प्रजाः । प्रजज्ञिरे महाभागा दक्षकन्यास्त्रयोदश । अदितिर्दितिर्दनुः काला दनायुः सिंहिका तथा । क्रोधा प्राधा च विश्वा च विनता कपिला मुनिः'—इति महाभारते (१।६५।११-१२)। अष्टवस्वन्तर्गतस्य आपनामकस्य वसोः पुत्रे पुं.। आपस्य पुत्रो वैतण्डचः श्रमः श्रान्तो मुनिस्तथा'—इति हरिवंशे भविष्यपर्वणि (३।४०)। क्रौञ्चद्वीपस्य देशविशेषः; 'क्रौञ्चस्य कुशलो देशो वामनस्य मनोऽनुगः । मनोऽनुगात् परे चोष्णस्तृतीयोऽपि स उच्यते । उष्णात् परे पावनकः पावनादन्धकारकः । अन्धकारकदेशात्तु मुनिदेशस्तथापरः'—इति मत्स्यपुराणे (१२१।८३-८५)। द्युतिमतः पुत्राणामन्यतमः; 'तथा द्युतिमतः सप्त पुत्रास्ताश्च निबोध मे । मुनिश्च दुन्दुभिश्चैव, सप्तमः परिकीर्तितः'—इति मार्कण्डेये (५३।२२)। कुरुपुत्रभेदः; 'अविक्षितमभिष्वस्तं तथा चैत्ररथं मुनिम्' —इति महाभारते (१।९४।४९)। ३४४,४१२

मुरजः पुं. [मुरात् संवेष्टनाज् जातः असौ । मुर+जन्+ड] मृदङ्गः; 'मुरजपणवमेघघोषवद् दशरथवेश्म बभूव यत्पुरा । विलपितपरिदेवनाकुलं व्यसनगतं तदभूत् सुदुःखितम्'—इति रामायणे (२।३९।४१)। ९७

मुरारिः पुं. [मुरस्य अरिः शत्रुः] मुररिपुः; श्रीकृष्णः; विष्णुः; 'मुरः क्लेशे च सन्तापे कर्मभोगे च कार्मणाम् । दैत्यभेदेऽप्यरिस्तेषां मुरारिस्तेन कीर्तितः'—इति

ब्रह्मवैवर्ते। 'कोऽसौ मुरारिर्देवर्षे ! देवो यक्षो नु किं नरः। दैत्यो वा राक्षसो वापि पार्थिवो वा तदुच्यताम्।' 'योऽसौ रजःसत्वमायागुणवांश्च तमोमयः। निर्गुणः सर्वगो व्यापी मुरारिर्मधुसूदनः'—इति वामने। अनर्घराघवग्रन्थकर्ता; 'अस्ति मौद्गल्यगोत्रसमुद्भूतस्य महाकवेर्भट्टश्रीवर्धमानात्मजस्य तन्तुमतीहृदयनन्दनस्य मुरारिनामधेयस्य कवेः कृतिरनर्घराघवं नाम नाटकं तत्प्रयुञ्जानाः सामाजिकानुपास्महे'—इति तत्कृतनाटकगद्यम्। २१

मुशलिका स्त्री. [मुस्+'वृषादिभ्यश्चित्' इति कलश्चित् स्यात्, टाप्। ततः संज्ञायां कन्, अकारस्येत्वम्, पृषोदरादित्वात् शत्वम्] मुसली; गृहगोधिका; पल्ली; तालमूली; सुवहा; तालपत्रिका; गोधापदी; हेमपुष्पी; भूताली; दीर्घकन्दिका; मुषली; तालिका; तालमूलिका; अर्शोघ्नी। २३४

मुशली, मुसली [न्] पुं. [मुसलं प्रहरणत्वेनास्यास्तीति। मुसल+इनि, पूर्ववत् शत्वम्] बलदेवः; बलरामः; बलभद्रः; मुष्टिकान्तकः। २८

मुष्कः पुं. [मुष्णाति वीर्यमिति। मुष्+'सृवृभूशषिमुषिभ्यः कक्' इति कक्] अण्डकोशः; 'स्थानाच्च्युतममुक्तं हि मुष्कयोरन्तरेऽनिलः'—इति वाग्भटे। मोक्षकवृक्षः; संघातः; तस्करः; मांसल। ५२३

मुष्टिः पुं.–स्त्री. [मुष्+क्तिच्] त्सरुः; 'परिघैरायसैस्तीक्ष्णैः सन्निकर्षे च मुष्टिभिः। निघ्नतां समरेऽन्योन्यं शब्दो दिवमिवास्पृशत्'—इति महाभारते (१।१९। १७)। (५२३,५३७) सङ्ग्राहः; बद्धपाणिः; सम्पिण्डिताङ्गुलिपाणिः; मुस्तुः; मुचुटी; मुष्टिका; 'मुट्ठी' इति भाषा। ४७३

मुष्टिकः पुं. [मुष्टिः प्रयोजनमस्य। मुष्टि+कन्] स्वर्णकारः; नाडिन्धमः; कलादः; सुवर्णकारः; [मुष्णाति परवीर्यमिति। मुष्+क्तिच्। संज्ञायां कन्] कंसराजमल्लविशेषः; 'नागं कुवलयापीडं चाणूरं मुष्टिकं तथा'—इति हरिवंशे (४१।१६०)। ५८८

मुस्तकः पुं. [मुस्तयति संहतीकरोति रुधिरमिति। मुस्त+क, ततः संज्ञायां स्वार्थे वा कन्] तृणमूलविशेषः; कुरुविन्दः; मेघनामा; मुस्ता; मुस्तः; राजकसेरुः; मेघाख्यं; गाङ्गेयं; भद्रमुस्तकम्; अभ्रनामकः; श्रीभद्रा; भद्रकः; भद्रा; 'मुस्तकं न स्त्रियां मुस्तं त्रिषु वारिदनामकः। कुरुविन्दश्च स ख्यातोऽपरः कोरकसेरुकः। भद्रमुस्तश्च गुन्द्रा च तथा नागरमुस्तकः। मुस्तं कटु हिमं ग्राहि तिक्तं दीपनपाचनम्। कषायं कफपित्तास्रतृड्ज्वरारुचिजन्तुहृत्'—इति भावप्रकाशः। पुं. स्थावरविषविशेषः; 'चत्वारि वत्सनामानि मुस्तके द्वे प्रकीर्तिते' —इति सुश्रुतः। ६२२

मुहुः [स्] अव्य. [मुह्+'मुहेः किच्च' इति उसि किच्च] पुनः पुनः; असकृत्; वारं वारम्; प्रतिक्षणम्; अभीक्ष्णं; भूयः; 'स्वस्वप्नमापरोक्षेण दृष्ट्वा पश्यन् स्वजागरम्। चिन्तयेदप्रमत्तः सन्नुभावनुदिनं मुहुः'—इति पञ्चदश्याम् (७।१७१)। ७२४

मुहुर्दृष्टः त्रि. [मुहुः दृष्टः] अवगीतः। अवगीतशब्दोऽत्रावलोक्यताम्। ७५५

मुहुर्भाषा स्त्री. [मुहुः भाषा भाषणम्] पुनः पुनः कथनम्; अनुलापः; मुहुर्वचः। १५०

मूकः त्रि. ['मू' इति कायति। मू+का+क] वाक्यरहितः; अवाक्; जडः; कडः; 'गर्भो वातप्रकोपेण दौहृदे चावमानिते। भवेत्कुब्जः कुणिः पङ्गुर्मूको मिण्मिण एव च'—इति सुश्रुते। 'आवृत्य वायुः संकफो धमनीः शब्दवाहिनीः। नरान् करोत्यक्रियकान् मूकमिण्मिण गद्गदान्'–इति सुश्रुतः। पुं. [मव्यते बध्यते जालिकैरिति। मव्+कक्+ऊठ्] मत्स्यः; दैत्यः; दानवभेदः; 'स सन्निकर्षमागत्य पार्थस्याक्लिष्टकर्मणः। मूकं नाम दनोः पुत्रं ददर्शाद्भुतदर्शनम्'—इति महाभारते (३।३९।७)। दीनः; तक्षकपुत्रः; 'शिली शलकरो मूकः सुकुमारः प्रवेपनः। मुद्गरः शिशुरोमा च सुरोमा च महाहनुः। एते तक्षकजा नागाः प्रविष्टा हव्यवाहनम्'—इति महाभारते (१।५७।१०)। ६०९

मूढः त्रि. [मुह्+क्त, ढत्वधत्वलोपदीर्घाः] मूर्खः; मातृशासितः; बालः; जडः; 'अन्योन्याध्यासरूपेण कूटस्थाभासयोर्वपुः। एकीभूयभवेन्मुख्यस्तत्र मूढैः प्रयुज्यते' —इति पञ्चदश्याम् (७।१०)। तन्द्रितः। ३३६

मूर्खः त्रि. [मुह्+ख, मूरादेशः] मुह्यति यः; अज्ञः; मूढः; यथाजातः; वैधेयः; बालिशः; 'मित्रं स्वच्छतया रिपुं नयबलैर्लुब्धं धनैरीश्वरं, कार्येण द्विजमादरेण युवतीं प्रेम्णा गुणैर्बान्धवान्। अत्युग्रं स्तुतिभिर्गुरुं प्रणतिभिर्मूर्खं

कथाभिर्बुधं, विद्याभी रसिकं रसेन सकलं शीलेन कुर्याद्वशम्'—इति नवरत्नानि। 'पयःपानं भुजङ्गानां केवलं विषवर्द्धनम्। उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये' —इति हितोपदेशः। ३३६

मूर्च्छा स्त्री. ['मूर्च्छनम्, मूर्च्छा मोहसमुच्छ्राययोः+ 'गुरोश्च हलः' इति अ, टाप्] संमोहः; कश्मलं; मोहः; मूर्च्छनं; मूर्च्छायः; 'संज्ञोपघातो मूर्च्छायो मूर्च्छा स्यान्मूर्च्छनं तथा। कश्मलं प्रलयो मोहः संन्यासस्तु मृतोपमः' —इति कोषान्तरम्। 'नीलं वा यदि वा कृष्णमाकाशमथवारुणम्। पश्यंस्तमः प्रविशति शीघ्रं च प्रतिबुध्यते। वेपथुश्चाङ्गमर्दश्च प्रपीडा हृदयस्य च। कार्श्यं श्यावारुणा छाया मूर्च्छाये वातसम्भवे।' 'सेकावगाहा मणयः सहाराः शीताः प्रदेया व्यजनानिलाश्च। शीतानि पानानि च गन्धवन्ति सर्वासु मूर्च्छास्वनिवारितानि।' 'सिद्धानि वर्गे मधुरे पयांसि सदाडिमा जाङ्गलजा रसाश्च। तथा यवा लोहितशालयश्च मूर्च्छासु पथ्याः ससतीनमुद्गाः।' 'कोलमज्जोषणोशीरं केशरं शीतवारिणा। पीतं मूर्च्छां जयेल्लीढा कृष्णा वा मधुसंयुता।' 'ताम्बूलं पत्रशाकानि दन्तघर्षणमातपम्। विरुद्धान्यन्नपानानि व्यवायं स्वेदनं कटुम्। तृड्निद्रयोर्वेगरोधं तक्रं मूर्च्छामयी त्यजेत्' —इति वैद्यके। ८३९

मूर्तिः स्त्री. [मूर्च्छ्+क्तिन्, 'राल्लोपः', 'न ध्याख्येति' न तकारस्य नत्वम्] शरीरम्; तनुः; देहः; गात्रं; कायः; कलेवरम्; 'खं सन्निवेशयेत् खेषु चेष्टनस्पर्शनेऽनिलम्। पक्तिदृष्ट्योः परं तेजः स्नेहेऽपो गाञ्च मूर्तिषु' —इति मनुः (१२।१२०)। काठिन्यं; प्रतिमा; स्वरूपः; 'आचार्यो ब्रह्मणो मूर्तिः पिता मूर्तिः प्रजापतेः। दयाया भगिनी मूर्तिर्धर्मस्यात्मातिथिः स्वयम्। अग्नेरभ्यागतो मूर्तिः सर्वभूतानि चात्मनः'—इति भागवते (६।७।२९-३०)। ब्रह्मसावर्णिपुत्रविशेषः; 'तत्सुता भूरिषेणाद्या हविष्मत्प्रमुखा द्विजाः। सुवासना विरुद्धाद्या जयो मूर्तिस्तदा द्विजाः'—इति भागवते (८।१३। २१-२२)। ५१०

मूर्द्धजः पुं. [मूर्द्धिन जातः। जन्+ड] केशः; 'बहुमूलविषमकपिलाः स्थूलस्फुटिताग्रपरुषह्रस्वाश्च। अतिकुटिलाश्चातिघनाश्च मूर्द्धजा वित्तहीनानाम्'—इति बृहत्संहितायाम् (६८।८२)। मूर्द्धिन जाते त्रि.। ५३०

मूर्धपिण्डः पुं. [मूर्ध्नि जातः पिण्डः, तदाकारः शीर्षभागः] करिकुम्भः; हस्तिशिरोऽर्धभागः, (तच्छिरसो भागद्वयं कुम्भद्वयरूपेण कथ्यते)। २१६

मूर्धवेष्टनम् क्ली. [मूर्द्ध्नः वेष्टनम्] उष्णीषः। ७९६

मूर्द्धा [न्] पुं. [मूर्वति बध्नाति यत्रेति। मुर्व+'श्वन्नुक्षन्पूषन्' इति कनिन्, उकारस्य दीर्घः वकारस्य धकारः] मस्तकः; शिरः; 'लौहे पात्रे तण्डुलान् कोद्रवाणां शुक्ले पक्वांल्लोहचूर्णेन साकम्। पिष्टान् सूक्ष्मं मूर्ध्नि शुक्लाम्लकेशे, दत्त्वा तिष्ठेद्वेष्टयित्वार्कपत्रैः'—इति बृहत्संहितायाम् (७२।२)। 'मूर्द्धा मूर्द्धा शिरोदेशे पुंसि स्यातामिमौ समौ'—इत्युणादिकोषः। 'दृष्ट्वा वेणीं कृतां मूर्ध्नि कज्जलं लोचने तथा। असिं गृहीत्वा तरसा छेत्स्यहं नान्यथा सुखम्'—इति देवीभागवते (२।७।२८)। ५१९

मूर्द्धाभिषिक्तः पुं. [मूर्धन्यभिषिक्तो मूर्धाभिषिक्तः। राज्यारोहणसमये प्रथमं क्षत्रियो मूर्द्धन्यभिषिच्यते] क्षत्रियः; राजा; 'राज्ञो मूर्धाभिषिक्तस्य वधो ब्रह्मवधाद्गुरुः। तीर्थसंसेवया चांहो जह्यङ्गाच्युतचेतनः'—इति भागवते (९।१५।४१)। वर्णसङ्करविशेषः; स तु विप्रात् क्षत्रियायां जातः; मूर्द्धावसिक्तः; प्रधानः; मन्त्री। ४२१

मूलम् क्ली. [मवते बध्नाति वृक्षादिकमिति। मू+'मूशक्यविभ्यः क्लः' इति क्ल] शिफा; ब्रध्नः; अङ्घ्रिनामकः; कन्दः; बुध्नः; जटा; पादः; 'भक्ष्यं भोज्यं च विविधं मूलानि च फलानि च। हृद्यानि चैव मांसानि पानानि सुरभीणि च'—इति मनुः (३।२२७)। आद्यम्; 'कुतोमूलमिदं दुःखं ज्ञातुमिच्छामि तत्त्वतः। विदित्वाप्यपकर्षेयं शक्यं चेदपकर्षितुम्'—इति महाभारते (१।१६१।१)। नक्षत्रविशेषः; 'कुर्वन्तश्चानुराधासु लभन्ते चक्रवर्तिताम्। आधिपत्यं च ज्येष्ठासु मूले चारोग्यमुत्तमम्—इति मार्कण्डेये (३३।१३)। निकुञ्जः; अन्तिकम्; 'जगादोच्चैः प्रयाहीति मूलं शुम्भनिशुम्भयोः' —इति मार्कण्डेये (८६।६)। मूलवित्तं; मूलधनम्; 'अथ मूलमनाहार्यं प्रकाशक्रयशोधितः। अदण्ड्यो मुच्यते राज्ञा नाष्टिको लभते धनम्'—इति मनुः (८।२०२)। निजं; चरणम्; 'त्रेधा मूलं यातुधानस्य वृश्च'—इति

ऋग्वेदे (१०।८७।१०)। 'मूलं पादम्'—इति तद्भाष्ये सायणः। टीकार्हग्रन्थः; पुष्करमूलं; शूरणं; पिप्पलीमूलं; कारणम्; 'धर्मस्य ब्राह्मणो मूलमग्रं राजन्य उच्यते'—इति मनुः (११।८४) 'मूलं कारणम्' —इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। त्रि. [मूलतीति। मूल् प्रतिष्ठायाम्+क] अश्विन्यादिसप्तविंशतिनक्षत्रान्तर्गतोनविंशनक्षत्रम्; 'मूलमाद्ये शिफायां च निकटे भे तु वा स्त्रियाम्'-इति शब्दरत्नावली। 'मूलं विरुद्धावयवं समूलं कुलं दहत्येव वदन्ति सन्तः। चेदन्यथात पुरुषाविशेषात् सौभाग्यमायुश्च कुलानुवृद्धिः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। १८३

मूलीकर्म [न्] क्ली. [अमूलः विमुखः मूलः विश्वस्तः क्रियते यत्र। मूल+च्वि+कृ+मनिन्] संवननं; कार्मणं; वशीकरणम्। ७१६

मूल्यम् क्ली. [मूलेन आनम्यते अभिभूयते, मूलेन समं वा इति। मूल+'नौवयोधर्मेत्यादिना' यत्। मूल्यते अर्प्यते इदम्] कर्मण्या; विधा; भृत्या; भृतिः; भर्म; वेतनं; भरण्यं; भरणं; निर्वेशः; पणः; 'मूल्येन यः कर्म करोति स भृतकः'—इति मिताक्षरायाम्। त्रि. [मूलं रोपणमर्हतीति। मूल+यत्] प्रतिष्ठायोग्यः; रोपणयोग्यः; इति मूलधात्वर्थदर्शनात्। [मूलतः उत्पाटनं येषाम् इति। 'मूलमस्याबर्हि' इति यत्] मूलत उत्पाटनयोग्ये मुद्गादौ। ७२८

मूषकः पुं. – क्ली. [मूष+स्वार्थे कन्] उन्दुरुः; आखुः; वृषः; उन्दरः; खनकः; 'रजसाभ्यवकीर्णानि परित्यक्तानि दैवतैः। मूषकैः परिधावद्भिरुद्धूलैरावृतानि च'——इति रामायणे (२।३३।१९)। २३५

मूषिकः पुं. [मुष्णाति द्रव्याणीति। मुष्+'मुषेर्दीर्घश्च' इति किकन् दीर्घश्च] जन्तुविशेषः; उन्दुरुः; आखुः; मूषः; मूषीकः; उन्दूरुः; बभ्रुः; वृषः; आखनिकः; वृशः; मूषकः; पिङ्गः; उन्दुरुकः; नखी; खनकः; बिलकारी; धान्यारिः; बहुप्रजः; 'मूषिको मधुरः स्निग्धो व्यवायी बलवर्धनः'—इति राजवल्लभः। जनपदविशेषः; 'द्रविडाः केरलाः प्राच्या मूषिका वनवासिका'—इति महाभारते (६।९।५८)। २३५

मृगः पुं. [मृगयते अन्वेषयति तृणादिकम्, मृग्+इगुपधत्वात् कर्तरि क] चन्द्रहृदयलाञ्छनं; हस्तिविशेषः (२१५); (२३०) [मृग्यते अन्विष्यतेऽसौ व्याधैः] पशुविशेषः; कुरङ्गः; वातायुः; हरिणः; अजिनयोनिः; सारङ्गः; चारुलोचनः; जिनयोनिः; कुरङ्गमः; ऋष्यः; ऋश्यः; रिष्यः; रिश्यः; एणः; एणकः; 'सम्बरो रोहितो न्यङ्कुकुरङ्गसुदृशो रुरुः। एणश्च हरिणश्चेति मृगा नवविधा मताः'—'समूरू रोहितो न्यङ्कुः सम्बरो बभ्रुणो रुरुः। शशोणहरिणाश्चेति मृगा नवविधा मताः। हरिणश्चापि विज्ञेयः पञ्चभेदोऽत्र भैरव!, ऋष्यः खड्गो रुरुश्चैव पृषतश्च मृगस्तथा। एते बलिप्रदाने च चर्मदाने च कीर्तिताः'—इति कालिकापुराणे। पशुमात्रम्; 'आरण्यानां च सर्वेषां मृगाणां माहिषं विना'—इति मनुः। (५।९); 'मृगशब्दोऽत्र नहिषपर्युदासात् पशुमात्रपरः'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। नक्षत्रभेदः; 'अश्विनीमृगमूलाश्च पुष्या पुनर्वसुस्तथा'—इति इन्द्रजालतन्त्रे। अन्वेषणम्; 'जनस्थाने भ्रान्तं कनकमृगतृष्णान्धितधिया, वचो वैदेहीति प्रतिपदमुदश्रु प्रलपितम्। कृता लङ्काभर्तुर्वदनपरिपाटीषु घटना, मयाप्तं रामत्वं कुशलवसुता न त्वधिगता'—इति साहित्यदर्पणे (४।१७)। कनकस्य सुवर्णस्य मृगे अन्वेषणे, पक्षे कनकमृगे हेमहरिणे या तृष्णा इत्यर्थः। याच्ञा; मार्गशीर्षमासः; यज्ञविशेषः; मृगनाभिः; मकरराशिः; 'मृगकर्कटसंक्रान्तौ द्वे तूदग्दक्षिणायने। विषुवती तुलामेषे गोलमध्ये तथापराः' —इति तिथ्यादितत्त्वम्। चतुर्विधपुरुषमध्ये पुरुषविशेषः; 'वदति मधुरवाणीं दीर्घनेत्रोऽतिभीरुश्चपलमतिसुदेहः शीघ्रवेगो मृगोऽयम्।' 'शशके पद्मिनी तुष्टा मृगे तुष्टा च चित्रिणी' —इति रतिमञ्जरी। अन्वेष्टा; 'मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः'—इति ऋग्वेदे (१।१५४।२)। 'मृगः अन्वेष्टा'—इति तद्भाष्ये सायणः। ४४

मृगजालिका स्त्री. [मृगाणां जालिका] मृगबन्धनार्थजालं; वागुरा; मृगबन्धनी। ५९७

मृगदंशः पुं. [मृगान् पशून् दशति। मृग+दंश्+ण्वुल्] कुक्कुरः; कुकुरः; मृगदंशकः; मृगारिः; मृगारातिः; सारमेयः; कौलेयकः; भषणः; शालावृकः। २८१

मृगधूर्तकः पुं. [मृगेषु पशुषु धूर्तः, वञ्चकत्वात्। मृगधूर्त+स्वार्थे कन्] शृगालः; मृगधूर्तः। २२९

मृगनाभिः पुं. [मृगस्य नाभिः। तदभ्यन्तरे जातत्वात्

तथात्वम्] कस्तूरी; मृगनाभिजा; 'मृगनाभिर्मृगमदः कथितस्तु सहस्रभित् । कस्तूरिका च कस्तूरी वेधमुख्या च सा स्मृता'। 'मृगनाभिर्मृगमदो मदः कस्तूरिकाण्डजः' —इति वैद्यकरत्नमालायाम् । ५४४

मृगपतिः पुं. [मृगाणां पशूनां पतिः, यथेष्टं भक्षणरक्षणादौ स्वामी] सिंहः; 'यल्लीलां मृगपतिराददेऽनवद्यामादातुं स्वजनमनांस्युदारवीर्यः'—इति भागवते (५।२५।१०)। 'मृगपतिः सिंहः'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी । कामप्रदश्रेष्ठः, यथा तत्रैव टीकायाम् 'मृग्यन्त इति मृगाः कामप्रदास्तेषां पतिर्मुख्यः ।' २१४

मृगमदः पुं. [मृगाः माद्यन्ति अनेनेति । मृग+मद्+अप्] कस्तूरी; मृगनाभिजा; 'मृगमदकृतचर्चापीतकौषेयवासा रुचिरशिखिशिखण्डा बद्धधम्मिल्लपाशा'—इति छन्दोमञ्जर्याम् (२।१५।४) । ५४४

मृगया स्त्री. [मृग्यन्ते पशवोऽस्यामिति । मृग्+णिच्, 'इच्छा' इत्यत्र 'परिचर्यापरिसर्यामृगयाटाट्यानामुपसंख्यानम्' इति शे यकि णिलोपः] वनेषु राज्ञां मृगहननक्रिया; [मृग्यन्ते अन्विष्यन्तेऽस्याम्] आच्छोदनं; मृगव्यं; आखेटः; 'शिकार' इति भाषा। 'चचार मृगयां तत्र दृप्त आत्तेषुकामुकः । विहाय जायामतदर्हां मृगव्यसनलालसः'–इति भागवते ४ स्कन्धे २६ अध्यायः । ४३५

मृगयुः पुं. [मृगं यातीति । मृग+या+'मृगय्वादयश्च' इति कु निपात्यते] व्याधः; लुब्धकः; वागुरिकः; मृगवित् (ध) ; 'मृगयुमिव मृगोऽथ दक्षिणेर्मा दिशमिव दाहवतीं मरावुदन्यन्'—इति भट्टिकाव्ये (४।४४)। ५९६

मृगरिपुः पुं. [मृगाणां पशूनां रिपुः शत्रुः] सिंहः; मृगारिः; पशुपतिः; मृगपतिः। २१४

मृगव्यम् क्ली. [मृगान् विध्यति अत्र इति । व्यध्+'अन्येष्वपि दृश्यते' इति काशिकोक्त्या अधिकरणे ड] मृगया; आखेटः; 'कदाचिद्राजपुत्रोऽसौ मृगव्यमचरद्वने'—इति मार्कण्डेये (१२७।१)। ४३४

मृगाङ्कः पुं. [मृगः अङ्के यस्य] चन्द्रः; 'विनिद्रपत्रालिगतालिकैतवान् मृगाङ्कचूडामणिवर्जनार्जितम्'—इति नैषधचरिते (१।७८)। कर्पूरः; वायुः; मृगचिह्नं; चन्द्रे तच्चिह्नकारणं यथा–'लोकच्छायामयं लक्ष्म तवाङ्के शशसंस्थितम्। न विदुः सोमदेवापि ये च नक्षत्रयोगिनः'–इति महाभारते हरिवंशः । यक्ष्मरोगस्य औषधविशेषः; 'स्याद्रसेन समं हेम मौक्तिकं द्विगुणं भवेत् । गन्धकस्तु समस्तेन रसपादस्तु टङ्कणः । सर्वं तद्गोलकं कृत्वा काञ्जिकेन विशोषयेत् । भाण्डे लवणपूर्णेऽथ पचेद्यामचतुष्टयम् । मृगाङ्कसंज्ञको ज्ञेयो रोगराजनिकृन्तनः।' 'रसस्य भस्मनो हेम पिष्टीकृत्य प्रयोजयेत् । गुञ्जाचतुष्टयञ्चाज्यमरिचैर्भक्षयेन्नरः'—इति मधुमती । 'रसभस्म हेमभस्म तुल्यं गुञ्जाद्वयं द्वयम्। दोषं बुद्धवानुपानेन मृगाङ्कोऽयं क्षयापहः' ।—इति वैद्यकरसेन्द्रसारसङ्ग्रहः । ४३

मृगारिः पुं. [मृगाणां पशूनाम् अरिः वैरी] मृगादनः; क्षुद्रव्याघ्रः; तरक्षुः; तर्क्षुः; तरूक्षुः; तरक्षकः; व्याघ्रः; 'चीता, बाघ' इति भाषा। सिंहः; कुक्कुरः; कुकुरः; वृक्षविशेषः; रक्तशिग्रुः। २२६

मृडः पुं. [मृडति हृष्यतीति, मृड्+इगुपधत्वात् कर्तरि क] शिवः; महादेवः; 'प्राङ् निषण्णं मृडं दृष्ट्वा नामृष्यत्तदनादृतः'—इति भागवते (४।२।७)। १३

मृडा स्त्री. [मृड+जात्यर्थे टाप्] दुर्गा; शिवा। १५

मृडानी स्त्री. [मृडस्य पत्नी । 'इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्रमृडेति' ङीष् आनुक् च] मृडा; मृडपत्नी; शिवा; पार्वती; हैमवती; अम्बिका । १५

मृणालम् क्ली.– पुं. [मृण्यते हिंस्यते भक्षणाद्यर्थं यत् । मृण् + 'तमिविशिविडिमृणिकुलिकपिपलिपञ्चिभ्यः' इति कालन्] पङ्कजादीनां नालं; बिसं; बिशं; पद्मनालं; मृणाली; मृणालिनी; पद्मतन्तुः; बिसिनी; नलिनीरुहम्; 'मदर्थसन्देशमृणालमन्थरः प्रियः कियद्दूर इति त्वयोदिते'—इति नैषधे (१।१३७) । शालूकविशेषः; 'पद्मादिकन्दः; शालूकं करहाटश्च कथ्यते । मृणालं मूलं भिष्माण्डं लज्जाशूकं च कथ्यते ।' 'मृणालं शीतलं वृष्यं पित्तदाहास्रजिद्गुरु । दुर्जरं स्वादुपाकं च स्तन्यानिलकफप्रदम्। सङ्ग्राहि मधुरं रूक्षं शालूकमपि तद्गुणम्'—इति भावप्रकाशः । क्ली. [मृण्+कालन्] वीरणमूलम्; 'मृणालमभयं सेव्यं लामज्जकमुशीरकम्' —इति वैद्यकरत्नमालायाम् । 'स्यादुशीरं मृणालं च सेव्यं लामज्जकं तथा'—इति गारुडे। ६२८

मृत् [द्] स्त्री. [मृद्नाति प्रलये चूर्णतया स्वकारणे लीयत इति । मृद्+कर्तरि क्विप्] मृत्तिका; 'कषाया

मारुतं पित्तमुषरा मधुरा कफम् । कोपयेन्मृद्रसादींश्च रौक्ष्याद्भुक्तञ्च रूक्षयेत् । पूरयत्यविपक्वैव स्रोतांसि निरुणद्धयपि । इन्द्रियाणां बलं हत्वा तेजो वीर्यौजसी तथा। पाण्डुरोगं करोत्याशु बलवर्णाग्निनाशनम्'—इति माधवकरः । तुवरी। १५९

मृतः त्रि. [मृ+क्त] गतप्राणः; परासुः; प्राप्तपञ्चत्वः; परेतः; प्रेतः; संस्थितः; प्रमीतः; 'मरा' इति भाषा। 'धर्मः प्रव्रजितस्तपः प्रवसितं सत्यं च दूरे गतम्, पृथ्वी मन्दफला जनाः कपटिनो लौल्ये स्थिता ब्राह्मणाः । मर्त्याः स्त्रीवशगाः स्त्रियश्च चपला नीचा जना उन्नता, हा कष्टं ! खलु जीवितं कलियुगे धन्या नरा ये मृताः' —इति गारुडे ११५ अध्यायः । 'चतुर्थं तु मद्रे मूढो भग्नदार्विव निष्क्रियः । कार्याकार्यविभागाज्ञो मृतादप्यपरो मृतः'—इति माधवकरः । 'उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गच्छ त्वं वद मौनं समाचर । ये पराधीनतां यान्ति तेऽपि जीवन्ति के मृताः'—इत्युद्भटः । याचितवस्तु; क्ली. याचितं [याचनवृत्तिर्मरणमिव दुःखजनकत्वाद् मृतं, भावे कर्मणि वा क्त]; मृत्युः । ६२९

मृतस्नानम् क्ली. [मृतमुद्दिश्य स्नानम्] मृतोद्देशेन स्नानम्; अपस्नानम् । ६३९

मृत्तिका स्त्री. [मृदेव इति । मृद्+'मृदस्तिकन्' इति स्वार्थे तिकन्, स्त्रियां टाप्] मृत्; मृदा; मृत्तिः; तुवरी; 'मिट्टी' इति भाषा । 'मृत्तिकादनशीलस्य कुप्यत्यन्यतमो मलः । कषाया मारुतं पित्तं उषरा मधुरा कफम्' —इति माधवकरः । १५९

मृत्युः पुं.– क्ली. [म्रियते अस्मादिति । मृ+'भुजिमृङ्भ्यां युक्त्युकौ' इति त्युक्] प्राणवियोगः; पञ्चता; कालधर्मः; दिष्टान्तः; प्रलयः; अत्ययः; अन्तः; नाशः; मरणं; निधनं; पञ्चत्वं; मृतं; मृतिः; नैधनं; संस्था; कालः; परलोकगमः; परलोकगमनं; दीर्घनिद्रा; निमीलनम्; अस्तम्; अवसानं; भूमिलाभः; निपातः; विलयः; आत्ययिकम्; अप्ययः। 'क्षीणस्य यस्य क्षुत्तृष्णे हृद्यैर्मिष्टैर्हितैस्तथा । न शाम्यतोऽन्नपानैश्च तस्य मृत्युरुपस्थितः । प्रवाहिका शिरःशूलं कोष्ठशूलं च दारुणम् । पिपासा बलहानिश्च तस्य मृत्युरुपस्थितः'—इति सुश्रुतः। पुं. यमः; मारकः (कंसः); 'प्रत्यर्प्य मृत्यवे पुत्रान् मोचये कृपणामिमाम् । सुता मे यदि जायेरन् मृत्युर्वा न म्रियेत चेत्'—इति भागवते (१०।१।४९) । ६२८

मृत्सा स्त्री. [प्रशस्ता मृत् इति। मृत्+'सस्नौ प्रशंसायाम्' इति स+टाप्] प्रशस्तमृत्तिका । १५९

मृत्स्ना स्त्री. [प्रशस्ता मृत् इति । मृत्+स्न+टाप्] प्रशस्तमृत्तिका; 'त्वमादिरन्तो जगतोऽस्य मध्यं घटस्य मृत्स्नेव परः परस्मात्'—इति भागवते (८।६।१०) । काक्षी; 'सौराष्ट्री पार्वती मृत्स्ना काक्षी च पङ्कपर्पटी' —इति वैद्यकरत्नमालायाम् । १५९

मृदङ्गः पुं. [मृद्यते आहन्यते असौ इति । मृद्+'विद्यादिभ्यः कित्' इति अङ्गच् स च कित् । यद्वा मृत् अङ्गमस्येत्यमरटीकायां रघुनाथः] वाद्यविशेषः; मुरजः; 'रजनिविरतिशंसी कामिनीनां भविष्यद्विरहविहितनिद्राभङ्गमुच्चैर्मृदङ्गः'—इति माघे (११।२)। पटहः; घोषः; वंशः । ९७

मृद्भाण्डम् क्ली. [मृदः भाण्डम् बृहत्पात्रम्] उष्ट्रिका; मृत्पात्रम् । ७९०

मृद्वीका स्त्री. [मृदु+बाहुलकात् ईकन्, टाप्] द्राक्षा; कपिलद्राक्षा; मृद्वी; गोस्तनी; गोस्तना; हारहूरा; 'जम्बूवेतसवानीरकदम्बोदुम्बरार्जुनाः । बीजपूरकमृद्वीकालकुचाश्च सदाडिमाः'—इति बृहत्संहितायाम् (५५।१०) । १९३

मृधम् क्ली. [मर्धते क्लिद्यतीति । मृध्+क] युद्धम्; 'अपयाते ततो देवे कृष्णे चैव महात्मनि । पुनश्चावर्तत मृधं परेषां लोमहर्षणम्'—इति हरिवंशे (१८२।१)। ४५३

मृषा अव्य.— मृषा; वृथा; मिथ्या । १४४

मृषा अव्य. [मृष्यत इति । मृष्+का] मिथ्या; 'मृषामृषं सादिबले कुतूहलान्नलस्य नासीरगते वितेनतुः'—इति नैषधचरिते (१।६८) । वृथा । १४४

मेकलकन्यका स्त्री. [मेकलः मेखलायुक्तः तन्नामा वा विन्ध्यपर्वतः तस्य कन्यका। तस्य नितम्बदेशान् निःसृतेत्यर्थः] नर्मदानदी; मेकलाद्रिजा; मेखलाद्रिजा। ६७४

मेखलकन्यका स्त्री. [मेखलस्य मेखलोपलक्षितस्य विन्ध्य गिरेःकन्यकेव प्रसूता] नर्मदा। ६७४

मेखला स्त्री. [मीयते प्रक्षिप्यते कायमध्यभागे इति। मि+संज्ञायां खल, गुणश्च, स्त्रियां टाप्] स्त्रीकटयाभरणं; काञ्ची; सप्तकी; रसना; सारसनं;

काञ्चिः; रशना; कक्षा; रसनं; रशनं; कक्ष्या; सप्तका; सारशनं; कलापः; 'करधनी' इति भाषा। कटिदेशः (८२४) स्त्रीकट्यां; वस्त्रग्रन्थनम्; अष्ट यष्टिका; 'एकयष्टिर्भवेत् काञ्ची मेखला त्वष्टयष्टिका। रसना षोडश ज्ञेया कलापः पञ्चविंशकः।' खड्गादि-निबन्धनं; शिक्कनिका; चर्मरज्वादि; मुष्टिदार्ढ्यार्थम् उपर्यधो लौहबन्धः; शैलनितम्बः; नर्मदानदी; पृश्निपर्णी; उपनयनकाले धारणीयमुञ्जनिर्मितसूत्रत्रयम्; 'अथैनं माणवकमाचार्यस्त्रिः प्रदक्षिणं त्रिवृत्तमुञ्ज-मेखलां परिधापयन् मन्त्रद्वयं वाचयति'—इति दशकर्म-पद्धतिः। 'गर्भाष्टमेऽष्टमे वाब्दे स्वसूत्रोक्तविधानतः। दण्डी च मेखली सूत्री कृष्णाजिनधरो मुनिः। मौञ्जी त्रिवृत्समा श्लक्ष्णा कार्या विप्रस्य मेखला। मौञ्ज्यभावे कुशेनाहुर्ग्रन्थिनैकेन च त्रिभिः'—इति कौर्मे। होम-कुण्डोपरि मृद्घटितवेष्टनविशेषः; 'यावान् कुण्डस्य विस्तारः खननं तावदिष्यते। हस्तैके मेखलास्तिस्रो-वेदाग्निनयनाङ्गुलाः। कुण्डे द्विहस्ते ता ज्ञेया रसवेदगुणा-ङ्गुलाः। चतुर्हस्ते तु कुण्डे ता वसुतर्कयुगाङ्गुलाः'—इति वशिष्ठपञ्चरात्रे। यज्ञवेष्टनसूत्रम्; 'हरुजुर्यज्ञपात्राणि तथैकेऽग्नीननाशयन्। कुण्डेष्वमूत्रयन् केचिद्बिभिदुर्वेदि-मेखलाः'—इति भागवते (४।५।१५)। 'मेखलाः सीमासूत्राणि'–इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। ५६०

मेघः पुं. [मेहतीति। मिह्+अच्, 'न्यङ्क्वादीनाञ्च' इति कुत्वम्। मेहति सिञ्चति यः] अभ्रं; वारिवाहः; स्तनयित्नुः; बलाहकः; धाराधरः; जलधरः; तडित्वान्; वारिदः; अम्बुभृत्; घनः; जीमूतः; मुदिरः; जलमुक्; धूमयोनिः; अभ्रं; पयोधरः; अम्भोधरः; व्योमधूमः; घनाघनः; वायुदारुः; नभश्चरः; कन्धरः; कन्धः; नीरदः; गगनध्वजः; वारिमुक्; वार्मुक्; वनमुक्; अब्दः; पर्जन्यः; नभोगजः; मदयित्नुः; कदः; कन्दः; गवेडुः; गदामरः; खतमालः; वातरथः; श्वेत-नीलः; नागः; जलकरङ्कः; पेचकः; भेकः; दर्दुरः; अम्बुदः; तोयदः; अम्बुवाहः; पाथोदः; गदाम्बरः; गाडवः; वारिमसिः। तद्वैदिकपर्यायाः—अद्रिः; ग्रावा; गोत्रः; बलः; अश्नः; पुरुभोजाः; बलिशानः; अश्मा; पर्वतः; गिरिः; व्रजः; चरुः वराहः; शम्बरः; रौहिणः; रैवतः; फलिगः; उपरः; उपलः; चमसः; अहिः; हृतिः; ओदनः; वृषन्धिः; वृत्रः; असुरः; कोशः। 'आवर्तो निर्जलो मेघः सम्वर्तश्च बहूदकः। पुष्करो दुष्करजलो द्रोणः सस्यप्रपूरकः' —इति ज्योतिस्तत्त्वम्। षड्रागान्तर्गतरागविशेषः; 'भैरवोऽथ वसन्तश्च नटो नारायणस्तथा। श्रीरागो मेघ-रागश्च षडेते पुरुषाह्वयाः।' 'ललिता मालसी गौडी नाटी देवकिरी तथा। मेघरागस्य रागिण्यो भवन्तीमाः सुमध्यमाः'–इति सङ्गीतशास्त्रम्। मुस्तकः; राक्षसः। ५८

मेघतिमिरम् क्ली. [मेघेन तिमिरम् अन्धकारो यत्र] मेघाच्छन्नदिनं; दुर्दिनम्। ५९

मेघपुष्पम् क्ली. [मेघस्य पुष्पमिव] जलं; पानीयं; नीरं; सलिलं; पिण्डाभ्रं; नदीजलम्। पुं. [मेघ इव पुष्प्यति प्रकाशते इति। पुष्प विकशने+अच्] शक्रहयः; श्रीकृष्णाश्वः; 'तं मन्ये मेघपुष्पस्य जवेन सदृशं हयम्' —इति महाभारते (४।४३।२१)। ६४८

मेघरागः पुं. [मेघनामको रागः] षड्रागान्तर्गतराग-विशेषः। १०० अ

मेघवह्निः पुं. [मेघस्य मेघजन्यो वा वह्निः] मेघज्योतिः; वज्राग्निः; इरम्मदः। ७०

मेघवाहनः पुं. [मेघो वाहनमस्य] इन्द्रः; 'अविलम्बि-तैलविलपाणिपल्लवः श्रयति स्म मेघमिव मेघवाहनः' इति माघे (१३।१८)। ५४

मेचकः पुं. [मचति वर्णान्तरेण मिश्रीभवतीति। मच्+ 'कुलादिभ्यः संज्ञायां वुन्' इति वुन्। ततः 'पचिमच्यो-रिच्च' इति इत्वे लघूपधगुणः] मयूरचन्द्रकः; धूमः; मेघः; शोभाञ्जनः; श्यामलः। २४२

मेचकम् त्रि. [मेचकः कृष्णनीलमिश्रितः वर्णः अस्ति अस्य। अर्श आद्यच्] श्यामलगुणयुक्तः; कृष्णनीलः; 'मेचकः कृष्णनीलः स्यादतसीपुष्पसन्निभः'—इति शब्दार्णवः। क्ली. श्रोतोऽञ्जनम्; अन्धकारः; नीलाञ्जनम्; 'मेचकं मर्दनाञ्जनपिण्डवदीषत् कृष्णरूक्षम्'—इति माधवकरः। ७३४

मेढ्रः पुं. [मिह् सेचने+ष्ट्रन्] शिश्नः; मेषः; 'मेढो मेढ्रो हुडो मेष उरभ्र उरणोऽपि च'—इति भावप्रकाशः। ५१४

मेथिः, मेठिः पुं. [मेथन्ते पशवोऽत्रेति। मेथृ सङ्गमे+ 'सर्वधातुभ्यः' इति इन्। ठयुक्ते पृषोदरादिः] खले पशु-

बन्धनार्थन्यस्तदारु; मेधिः; 'मेठिभूतस्तु वै सर्वान्' वायुपाशैर्नियन्त्रितान्। आकल्पं तत्पदं तिष्ठन् भ्रामयन् ज्योतिषां गणान्'—काशीखण्डे (२१।८०)। 'मेधिर्मेथिः खलेवाली खले गोबन्धदारु यत्'—इति हेमचन्द्रः। स्त्री. मेथिका; मेथिनी; मेथी; दीपनी; बहुपत्रिका; बोधिनी; गन्धबीजा; ज्योतिः; गन्धफला; वल्लरी; चन्द्रिका; मन्था; मिश्रपुष्पा; कैरवी; कुञ्चिका; बहुपर्णी; पीतबीजा; 'मेथी' इति भाषा। 'मेथिका मेथिनी मेथिर्दीपनी बहुपत्रिका। बोधिनी बहुबीजा च ज्योतिर्गन्धफला तथा। वल्लरी चन्द्रिका मन्था मिश्रपुष्पा च कैरवी। कुञ्चिका बहुपर्णी च पीतबीजा मुनिच्छदा। मेथिका वातशमनी श्लेष्मघ्नी ज्वरनाशिनी। ततः स्वल्पगुणा वन्या वाजिनां सा तु पूजिता'-इति भावप्रकाशः। ५७८

मेदः [स्] क्ली. [मेद्यति स्निह्यतीति । मिद्+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इति असुन्] मांसप्रभवधातुविशेषः; वपाः; वसा; मेदः; 'यन्मांसं स्वाग्निना पक्वं तन्मेद इति कथ्यते। तदतीव गुरु स्निग्धं बलकार्यतिबृंहणम्।' 'मेदो हि सर्वभूतानामुदरेष्वस्थिषु स्थितम्। अतएवोदरे वृद्धिः प्रायो मेदस्विनो भवेत्'—इति भावप्रकाशः। रोगविशेषः; 'अव्यायामदिवास्वप्नश्लेष्मलाहारसेविनः। मधुरोऽन्नरसः प्रायः स्नेहान्मेदो विवर्द्धयेत्'—इति सुश्रुतः। पुं. [मेद्यति स्निह्यतीति। मिद्+अच्] वपा; वसा; मांसप्रभवधातुविशेषः; 'तृष्णाकण्डुकृमिहरो मलघ्नो मेदकुष्ठहा'—इति भरतधृतशालिहोत्रः। म्लेच्छजातिविशेषः; अलम्बुषा; ऐरावतकुलजो नागविशेषः; 'विहङ्गः शरभो मेदः प्रमोदः संहतापनः। ऐरावतकुलादेते प्रविष्टा हव्यवाहनम्'—इति महाभारते (१।५७।११)। ६३५

मेदिनी स्त्री. [मेदोऽस्या अस्तीति। मेद+इनि। ङीष्] पृथिवी; [मेदो विद्यतेऽस्यामिति, सान्तान्मेदः शब्दादिन्, सलोपश्च निपात्यते इति परे। स्वमते मेदःसामानार्थोऽदन्तो मेदशब्दोऽस्ति] 'मधुकैटभयोर्मेदःसंयोगान्मेदिनी स्मृता। धारणाच्च धरा प्रोक्ता पृथ्वी विस्तारयोगतः'। गतप्राणौ तदा जातौ दानवौ मधुकैटभौ। सागरः सकलो व्याप्तस्तदा वै मेदसा तयोः। मेदिनीति ततो जातं नाम पृथ्व्याः समन्ततः। अभक्ष्या मृत्तिका तेन कारणेन मुनीश्वराः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। मेदा; ओषधिभेदः; मेदोद्भवा; जीवनी; श्रेष्ठा; मणिच्छिद्रा; विभावरी; वसा; स्वल्पपर्णिका; मेदःसारा; स्नेहवती; मधुरा; स्निग्धा; मेधा; द्रवा; साध्वी; शल्यदा; बहुरन्ध्रिका; पुरुषदन्तिका; काश्मरी। १५६

मेधा स्त्री. [मेधते सङ्गच्छते अस्यामिति। मेध्+'षिद्भिदादिभ्योऽङ्' इत्यङ+टाप्] धारणावती बुद्धिः; 'नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन। यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूं स्वाम्'—इति मुण्डकोपनिषदि (३।२)। 'शङ्खपुष्पी वचा सोमा ब्राह्मी ब्रह्मसुवर्चला। अभया च गुडूची च अटरूषकवाकुची। एतैरक्षसमैर्भागैर्घृतं प्रस्थं विपाचयेत्। कण्टकार्या रसप्रस्थं बृहत्या च समन्वितम्। एतद् ब्राह्मीघृतं नाम स्मृतिमेधाकरं परम्'—इति गारुडे। दक्षप्रजापतिकन्याविशेषः; 'कीर्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा पुष्टिः श्रद्धा क्रिया मतिः'—इति वह्निपुराणे। धनम्। ३३४

मेधावी [न्] पुं. [मेधास्त्यस्येति। मेधा+'अस्मायामेधास्रजो विनिः' इति विनि] पण्डितः; विशारदः; शुकपक्षी; मदिरा; व्याडिः; कस्यचिद् ब्राह्मणस्य पुत्रः; 'द्विजातेः कस्यचित् पार्थ! स्वाध्यायनिरतस्य वै। बभूव पुत्रो मेधावी मेधावी नाम नामतः'–इति महाभारते (१२।१७५।३)। मेधायुक्ते त्रि.। 'स तु मेधाविनौ दृष्ट्वा वेदेषु परिनिष्ठितौ। वेदोपबृंहणार्थाय तावग्राहयत प्रभुः'—इति रामायणे (१।४।६)। ३३३

मेधिः पुं. [मेध्यते खले स्थाप्यते इति। मेध्+'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्] खले पशुबन्धनार्थन्यस्तदारु; खले धान्यमर्दनस्थानमध्ये पशुबन्धननिमित्तं निहितं यद्दारु तत्; मेथिः; खलेवाली; 'मेधिर्मेथिः खलेवाली खले गोबन्धदारु यत्'—इति हेमचन्द्रः। ५७८

मेध्यम् त्रि. [मेध्यते इति, मेध्+'ऋहलोर्ण्यत्' इति ण्यत्। यद्वा मेधामर्हतीति। मेधा+दण्डादित्वाद् यत्] पवित्रम्; 'ज्ञानेन मेध्यमखिलममेध्यं ज्ञानतो भवेत्। ब्रह्मज्ञाने समुत्पन्ने मेध्यामेध्यं न विद्यते'—इति चिन्तामणौ। 'पूतं मेध्यं पवित्रं स्याद्वीध्रं प्रयतनिर्मलम्। निशोध्यं शोधितं मृष्टं निर्णिक्तमनवस्करम्'—इति शब्दरत्नावली। नित्यमेध्यम्; 'नित्यं शुद्धः कारुहस्तः पण्ये यच्च प्रसारितम्। ब्रह्मचारिगतं भैक्ष्यं नित्यमेध्य-

मिति स्थितिः'—इति मनुः (५।१२९)। शुचिः; 'तत्तादृक् तृणपूलकोपनयनक्लेशाच्चिरद्वेषिभि, र्मेध्या वत्सतरी विहस्य वटुभिः सोल्लुण्ठमालभ्यते'—इति अनर्घराघवे (२।१४)। मेधाजनकः; 'मण्डूकपर्ण्याः स्वरसः प्रयोज्यः, क्षीरेण यष्टीमधुकस्य चूर्णम्। रसो गुडूच्यास्तु समूलपुष्पः कल्कः प्रयोज्यः खलु शङ्खपुष्प्याः। आयुःप्रदान्यामयनाशनानि बलाग्निवर्णस्वरवर्द्धनानि। मेध्या विशेषेण च शङ्खपुष्पी'—इति चरकः। पुं. [मेधायै हितः। मेधा+'उगवादिभ्यो यत्' इति यत्] खदिरः; यवः; छागः। १३२

मेनका स्त्री. [मन्यते इति। मन्+'मनेराशिषि च' इति वुन्। ततः 'नशिमन्योरलिट्येत्वं वक्तव्यम्' इत्युक्त्या अकारस्य एत्वम्] स्ववेश्या; तस्याः कन्या शकुन्तला; 'विश्वामित्रात्मजैवाहं त्यक्ता मेनकया वने। वेदैतद्भगवान् कण्वो वीर! किं करवाम ते'—इति भागवते (९।२०।१३)। [मेनैव, मेना+स्वार्थे कन्] उमामाता। ८८

मेनकात्मजा स्त्री. [मेनकाया आत्मजा] दुर्गा; पार्वती; शकुन्तला; 'नेमां हिंस्युर्वने बालां क्रव्यादा मांसगृद्धिनः। पर्यरक्षन्त तां तत्र शकुन्ता मेनकात्मजाम्'—इति महाभारते (१।७२।११)। १६

मेरुः पुं. [मि+'मिपीभ्यां रुः' इति रु] पर्वतविशेषः; सुमेरुः; हेमाद्रिः; रत्नसानुः; सुरालयः; [मिनोति क्षिपति ज्योतींषि, उच्चत्वात्] 'देवर्षिगन्धर्वयुतः प्रथमो मेरुरुच्यते। प्रागायतः ससौवर्ण उदयो नाम पर्वतः'—इति मात्स्ये। १३५,१३६

मेषः पुं. [मिषति अन्योऽन्यं स्पर्द्धते इति। मिष् स्पर्द्धायाम्+अच्] पशुविशेषः; मेढ्रः; उरभ्रः; उरणः; ऊर्णायुः; वृष्णिः; एडकः; भेडः; हुडः; शृङ्गिणः; अविः; लोमशः; बली; रोमशः; भेडुः; भेडकः; मेण्टः; हुलुः; मेण्टकः; हुडुः; संफलः; 'मेषेण सूपकाराणां कलहो यत्र वर्तते। स भविष्यत्यसन्दिग्धं वानराणां भयावहः'—इति पञ्चतन्त्रे (५।६२)। लग्नविशेषः; औषधविशेषः; 'मेषस्य पुष्पैर्मधुकेन संयुतं तदञ्जनं सर्वकृते प्रयोजयेत्। क्रियाश्च सर्वाः क्षतजोद्भवे हिताः क्रमः परिम्लायिनि चापि पित्तहृत्'—इति सुश्रुतः। राशिविशेषः; 'मेषलग्ने समुत्पन्नश्चण्डो मानी धनी शुभः। क्रोधी स्वजनहन्ता च विक्रमी परवत्सलः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। 'मेषे दिनेशे पुरुषः सुवेशः सत्साहसः स्यान्नृपतेः समानः। बुद्धया युतः पित्तकृता च पीडा वक्त्रोद्भवा वा सततं महौजाः' २७९

मेहनम् क्ली. [मेहति सिञ्चति मूत्ररेतसीति। मिह् सेचने+ल्यु] शिश्नः; 'मेहनाद्वनं कारणाल्लीम'–इति ऋग्वेदे (१०।१६३।५)। 'मेहनात् मेढ्रात्'—इति तद्भाष्ये सायणः। मूत्रम्; 'वस्तवद्विलपन् यश्च भूमौ पतति स्रस्तमुष्कस्तब्धमेढ्रो भग्नग्रीवः प्रणष्टमेहनश्च मनुष्यः'—इति सुश्रुतः। [भावे ल्युट् प्रत्यये मूत्रोत्सर्गश्च] पुं. [मेहति सिञ्चति रसमिति। मिह्+ल्यु] मुष्ककवृक्षः। ५१४

मैत्रम् क्ली. [मित्रादागतमिति। मित्र+अण्] मित्रता; मैत्री; मित्रभावः; विट्त्यागः। ७०६

मैत्रावरुणः पुं. [मित्रश्च वरुणश्चेति। 'देवताद्वन्द्वे च' इत्यनङ् ततः 'देवताद्वन्द्वे च' इति मित्रस्य वृद्धिः। 'दीर्घाच्च वरुणस्य' इति वरुणस्य न वृद्धिः। तयोरपत्यमिति। अण्] वाल्मीकिः; अगस्त्यः; 'न वर्षं मैत्रावरुणं ब्रह्मज्यमभिवर्षति'—इति अथर्ववेदे (५।१९।१५)। 'उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठोर्वश्या ब्रह्मन् मनसोऽधिजातः। द्रप्सं स्कन्नं ब्रह्मणा दैव्ये न विश्वे देवा पुष्करे त्वाददन्त'—इति ऋग्वेदे (७।३३।११)। ४१२

मैत्रावरुणिः पुं. [मित्रावरुणयोरपत्यमिति। मित्रावरुण+'अत इञ्' इति इञ्] अगस्त्यः; 'तेऽभिगम्य महात्मानं मैत्रावरुणिमच्युतम्। आश्रमस्थं तपोराशिं कर्मभिः स्वैरभिष्टुवन्'—इति महाभारते (३।१०३।१४)। ४१२

मैत्री स्त्री. [मैत्र+ङीप्। यद्वा मित्र+भावे ष्यञ्+ङीप्। ततः 'हलस्तद्धितस्य' इति यलोपः] मित्रस्य भावः; मित्रस्य कर्म; मित्रता; 'विद्विष्टपतितोन्मत्तबहुवैरातिकीटकैः। बन्धकीबन्धकीभर्तृक्षुद्रानृतकथैः सह। तथातिव्ययशीलैश्च परीवादरतैः शठैः। बुधो मैत्रीं न कुर्वीत नैकः पन्थानमाश्रयेत्'—इति विष्णुपुराणे। ७०६

मैथुनम् क्ली. [मिथुने सम्भवतीति। मिथुन+'सम्भूते' इति अण्। मिथुनस्येदमित्यण् वा] सङ्गतं; सम्बन्धः; 'सङ्गतिः सङ्गमो दा संयोगो विवाहः'—इति कलिङ्गः। रतं; ग्राम्यधर्मः; सुरतम्; अभिमानितं; घर्षितं;

सम्प्रयोगः; अनारतम्; अब्रह्मचर्यकम्; उपसृष्टं; त्रिभद्रं; क्रीडारत्नं; महासुखं; व्यवायः; निधुवनं; 'ऋतुस्नाता तु या नारी स्वप्ने मैथुनमावहेत्' —इति सुश्रुतः। अग्न्याधानम्; 'असपिण्डा च या मातुरसगोत्रा च या पितुः। सा प्रशस्ता द्विजातीनां दारकर्मणि मैथुने'--इति मनुशातातपौ। परस्त्र्यादिगमने दण्डः। ८३८

मैरेयम् पुं.- क्ली. [मारं कामं जनयतीति। मार+ढक्। निपातनात् साधुः। मिरायां देशभेदे ओषधिविशेषे वा भवम्। नद्यादित्वाड् ढक् इति वा] मद्यविशेषः; 'तीक्ष्णः कषायो मदकृद् दुर्नामकफगुल्महृत्। कृमिमेदोऽनिलहरो मैरेयो मधुरो गुरुः'—इति सुश्रुतः। 'मद्यं तु सीधुर्मैरेयमिरा च मदिरा सुरा। कादम्बरी वारुणी च हालापि बलवल्लभा'—इति भावप्रकाशः। 'सीधुरिक्षुरसैः पक्वैरपक्वैरासवो भवेत्। मैरेयं धातकीपुष्पगुडधानाम्लसंहितम्'—इति माधवः। ३३०

मोक्षः पुं. [मोक्ष् असने+भावे घञ्। मोक्ष्यते दुःखमनेन। मोक्ष्+करणे घञ्] मुक्तिः; 'न मोक्षो नभसः पृष्ठे न पाताले न भूतले। सर्वाशासंक्षये चेतःक्षयो मोक्ष इति श्रुतेः'—इति सांख्यसारे (२।७।२५)। पाटलिवृक्षः (८१२); मोचनम्; 'ताभ्यो मोक्षस्तव यदि सखे! घर्मलब्धस्य न स्यात्, क्रीडालोलाः श्रवणपरुषैर्गर्जितैर्भीषयेस्ताः'--इति मेघदूते (६१)। मृत्युः; विश्लेषः; 'जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये। ते ब्रह्म तद्विदुः कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलम्'—इति भगवद्गीतायाम् (७।१९)। 'मोक्षाय विश्लेषणार्थम्'— इति तट्टीकायामानन्दगिरिः। आत्मस्वरूपदर्शनं; निरसनं; पतनम्; 'मदोद्धताः प्रत्यनिलं विचेरुर्वनस्थलीर्मर्मरपत्रमोक्षाः' —इति कुमारसम्भवे (३।३१)। 'मर्मरपत्रमोक्षाः जीर्णपर्णपाताः'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। १२४

मोघम् त्रि. [मुह्यतेऽस्मिन्निति। मुह्+घञ्। न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्] निरर्थकं; मुधा; विफलम्; 'यदन्यगोषु वृषभो वत्सानां जनयेच्छतम्। गोमिनामेव ते वत्सा मोघं स्कन्दितमार्षभम्'—इति मनुः (९।५०)। प्रेतभूतपिशाचाश्च रक्षांसि विविधानि च। मरणाभिमुखं नित्यमुपसर्पन्ति मानवम्। तानि भेषजवीर्याणि प्रतिघ्नन्ति जिघांसया। तस्मान् मोघाः क्रियाः सर्वा भवन्त्येव गतायुषः'--इति सुश्रुतः। हीनम्; 'सज्जन एव हि विद्या शोभायै भवति दुर्जने मोघा'—इति आर्यासप्तशत्याम् (६७०)। पुं. [मुह्यत्यस्मिन्। मुह्+घञ्। कुत्वम्] प्राचीरम्। ७६०

मोचा स्त्री. [मुञ्चति त्वचमिति। मुच्+अच्+टाप्] कदलीवृक्षः; 'कदली वारणा मोचाम्बुसारांशुमतीफला' —इति भावप्रकाशः। शाल्मलिवृक्षः; 'शाल्मलिस्तु भवेन्मोचा पिच्छिला पूरणीति च। रक्तपुष्पा स्थिरायुश्च कण्टकाढ्या च तूलिनी'—इति भावप्रकाशः। नीलीवृक्षः। १९२

मोटकी स्त्री. [मोटक+ङीष्] रागिणीविशेषः। १०६ अ

मोहः पुं. [मोहनमिति। मुह्+भावे घञ्] अविद्या; मौढ्यं; मूर्च्छा; 'संज्ञावहासु नाडीसु पिहितास्वनिलादिभिः। तमोऽभ्युपैति सहसा सुखदुःखव्यपोहकृत्। सुखदुःखव्यपोहाच्च नरः पतति काष्ठवत्। मोहो मूर्च्छेति तां प्राहुः षड्विधा सा प्रकीर्तिता'—इति सुश्रुतः। दुःखं; देहादिषु आत्मबुद्धिः; 'बुद्धेर्मोहः समभवदहङ्कारादभून्मदः। प्रमोदश्चाभवत् कण्ठान्मृत्युर्लोचनतो नृप!'—इति मात्स्ये २ अध्यायः। 'मम माता मम पिता ममेयं गृहिणी गृहम्। एतदन्यं ममत्वं यत् स मोह इति कीर्तितः'—इति पाद्मे। धर्मविमूढत्वम्; 'अकामतः कृतं पापं वेदाभ्यासेन नश्यति। कामतस्तु कृतं मोहात् प्रायश्चित्तैः पृथग्विधैः'—इति प्रायश्चित्तविवेकः। ८३९

मोहनम् क्ली. [मुह्यतेऽनेनेति। मुह्+ल्युट्] सुरतं; मैथुनम्; 'प्रविश्य गर्भमत्येको भुक्त्वा मोहयतेऽपराम्। जायन्ते मोहनात् तस्याः सर्पमण्डूककच्छपाः'—इति मार्कण्डेये (५१।७७)। नगरभेदः; 'मोहनं पत्तनं चैव त्रिपुरां कोशलां तथा। एतान् सर्वान् विनिर्जित्य करमादाय सर्वशः'—इति महाभारते (२।२५३।९)। पुं. [मोहयतीति। मुह्+णिच्+ल्यु] धुस्तूरवृक्षः; कामदेवस्य पञ्चबाणान्तर्गतबाणविशेषः; 'कामस्यैव जगज्जैत्रमोहनास्त्राधिदैवतम्। तद्रूपहृतचित्ताभूत् समाधिस्थेव तत्क्षणम्'—इति कथासरित्सागरे (७१।१३२)। नृपविशेषः; 'वीक्ष्य प्रलम्बं निहतं मोहनो नाम भूपतिः। सन्निपत्याट्टहासं तं ताडयामास सायकैः' —इति कथासरित्सागरे (४७।६१)। मोहकारके त्रि.।

'यदग्रे चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः। निद्रालस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतम्'—इति भगवद्गीतायाम् (१८।३९)। 'अत्र मोहनं मोहकरम्'—इति तट्टीकायामानन्दगिरिः। ५६९

मौकुलिः पुं [मुकुलं मृतस्य देहं पेश्यण्डादिकं वा अर्हति। 'अत इञ्।' मुकुं मुक्तिं लातीति मुकुलः बलिपिण्डः, तदत्ति वा] काकः; मौद्गलिः; 'कूजत्कुञ्जकुटीरकौशिकघटाघूत्कारवत्कीचकस्तम्बाडम्बरमूकमौकुलिकुलः क्रौञ्चावतोऽयं गिरिः। एतस्मिन् प्रचलाकिनां प्रचलतामुद्वेजिताः कूजितैरुद्वेल्लन्ति पुराणचन्दनतरुस्कन्धेषु कुम्भीनसाः'—इति उत्तररामचरिते २ अङ्के। २४६

मौक्तिकम् क्ली. [मुक्तैव, मुक्ता+'विनयादिभ्यष्ठक्' इति ठक्] मुक्ता; शौक्तिकेयः; 'मौक्तिकं शौक्तिकं मुक्ता तथा मुक्ताफलं च तत्। अभावे मौक्तिकस्यापि मुक्ताशुक्तिं प्रयोजयेत्'—इति भावप्रकाशः; 'शैले शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे। साधवो नहि सर्वत्र चन्दनं न वने वने'—इति चाणक्यः। ६६४

मौढ्यम् क्ली. [मूढस्य भावः कर्म वा। मूढ+'गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च' इति ष्यञ्] मोहः; 'यो मां सर्वेषु भूतेषु सन्तमात्मानमीश्वरम्। हित्वार्चां भजते मौढ्याद्भस्मन्येव जुहोति सः'—इति भागवते (३।२९।२२)। पुं. मूढस्यापत्यम्; [मूढ+'कुर्वादिभ्यो ण्यः' इति ण्य] मूढपुत्रः। ८३९

मौद्गीनम् क्ली. [मुद्गानां भवनं क्षेत्रमिति। मुद्ग+'धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ्' इति खञ्] मुद्गभवोचितक्षेत्रम्। १६२

मौनम् क्ली. [मुनेर्भावः इति। मुनि+अण्] शब्दप्रयोगराहित्यम्; अभाषणं; तूष्णीं; तूष्णीकाम्; 'ज्ञाने मौनं क्षमा शक्तौ त्यागे श्लाघाविपर्ययः। गुणा गुणानुबन्धित्वात्तस्य सप्रसवा इव'—इति रघुवंशे (१।२२)। 'उच्चारे मैथुने चैव प्रस्रावे दन्तधावने। स्नाने भोजनकाले च षट्सु मौनं समाचरेत्'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। ८८३

मौर्वी स्त्री. [मूर्वाया विकारः। मूर्वा+'अवयवे च प्राण्यौषधिवृक्षेभ्यः' इति अण्+ङीप्] धनुर्गुणः; ज्या, 'शास्त्रेष्वकुण्ठिता बुद्धिर्मौर्वी धनुषि चातता'—इति रघौ (१।१९)। अजश्रृङ्गी; मूर्वामयी; 'मौञ्जी त्रिवृत्समा श्लक्ष्णाकार्या विप्रस्य मेखला। क्षत्रियस्य तु मौर्वी ज्या वैश्यस्य शणतान्तवी'—इति मनुः (२।४२)। ४६४

मौलिः पुं.-स्त्री. [मूलस्यादूरे भवः। मूल+सुतङ्गमादित्वाद् इञ्] मस्तकम्; 'भालनयनेऽग्निरिन्दुर्मौलौ गात्रे भुजङ्गमणिदीपाः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (४२४)। चूडा; 'एवमुक्त्वा स वामेन पदा मौलिमुपास्पृशत्। शिरश्च राजसिंहस्य पादेन समलोडयत्'—इति महाभारते (९।५९।५)। किरीटम्; 'इयं च सा मया मौलिरुद्धृता वरुणलयात्'—इति हरिवंशे (९७।३०)। संयतकेशः; 'स चापकोटीनिहितैकबाहुः शिरस्त्रनिष्कर्षणभिन्नमौलिः। ललाटबद्धश्रमवारिबिन्दुर्भीतां प्रियामेत्य वचो बभाषे'—इति रघौ (७।६६)। प्रधानः; 'मौलयस्ते महाकायाः शाकपीतकरम्भकाः'—इति मार्कण्डेये (५९।१४)। ५१८

मौहूर्त्तिकः पुं. [मुहूर्तं तद्बोधकं शास्त्रमधीते वेद वा। मुहूर्त+'क्रतूक्थादिसूत्रान्ताट् ठक्' इति ठक्] ज्योतिर्वेत्ता; सांवत्सरः; ज्योतिषिकः; ज्यौतिषिकः; ज्ञानी, ज्योतिषी, दैवज्ञः; 'ततो मौहूर्तिकादेशादन्येद्युर्वरकन्यका। सा मया परिणीताभून्मिलिताखिलबन्धुना'—इति कथासरित्सागरे (२२।१३३)। दक्षकन्यामुहूर्तोद्भवदेवगणविशेषः; 'मौहूर्तिका देवगणा मुहूर्तायाश्च जज्ञिरे'—इति भागवते (६।६।९)। मुहूर्तोद्भवे त्रि.। 'मौहूर्तिकाद्यस्य समागमाच्च मे दुस्तर्कमूलोऽपहतोऽविवेकः'—इति भागवते (५।१३।२२)। ४३०

म्लानम् त्रि. [म्लै हर्षक्षये+'संयोगादेरातो धातोर्यण्वतः'। इति निष्ठातस्य न] मलिनं; कच्चरं; कश्मलं; मलीमसम्; 'मलिनं कच्चरं म्लानं कश्मलं च मलीमसम्'—इति हेमचन्द्रः। 'स चिन्तयामास तदा किं न्वेषा गजगामिनी। निश्वासपवनम्लाना गिरावत्र वरूथिनी'—इति मार्कण्डेये (६२।१६)। दुर्बलम्; 'अन्तेषु शूनं परिहीणमध्यं म्लानन्तथान्तेषु च मध्यशूनम्'—इति माधवः। [म्लै+भावे क्त] ग्लानिः; 'रथ्यावसर्पणस्नानक्षुत्पानम्लानकर्मसु। आचामेच्च यथान्यायं वासो विपरिवाय च'—इति मार्कण्डेये (३५।२४)। ७२७

म्लिष्टम् क्ली. [म्लेच्छ+क्त+'क्षुब्धस्वान्तध्वान्तलग्नम्लिष्टविरिब्धेत्यादिना' निपातितम्] अविस्पष्टं; अस्पष्टवाक्यं; त्रि. अव्यक्तवाक्; म्लानः। १४१

म्लेच्छः पुं. [म्लेच्छयति वा म्लेच्छति असंस्कृतं वदतीति। म्लेच्छ+अच्] किरातशबरपुलिन्दादिजातिः; पामरभेदः; पापरक्तः; अपभाषणम्। ५९९

य

यकृत् क्ली. [यज्+'शकेर्ऋतिन्' इत्यत्र 'बाहुलकाद् यजेः कश्च' इति ऋतन् जस्य च कः] कुक्षेर्दक्षिणभागस्थमांसखण्डं; कालखण्डं; कालखञ्जं; कालेयं; कालकं; करण्डा; महास्नायुः; 'यक्ष्मं मतस्नाभ्यां यक्तः प्लाशिभ्यो विवृहामि ते'—इति ऋग्वेदे (१०।१६३।३)। 'यक्नः हृदयसमीपे वर्तमानः कालमांसविशेषो यकृत् तस्माद्'–इति तद्भाष्ये सायणः। रोगविशेषः; 'प्लीहोद्दिष्टाः क्रियाः सर्वा यकृत्यपि समाचरेत्। कार्यं च दक्षिणे बाहौ तत्र शोणितमोक्षणम्। क्षारं च विडकृष्णाभ्यां पूतिकस्याम्बुनिस्रुतम्। पिबेत् प्रातर्यथावह्नि यकृत्प्लीहप्रशान्तये'—इति भावप्रकाशः। ६६५

यक्षः पुं. [यक्ष्यते पूज्यते इति। यक्ष्+घञ्। यद्वा ई लक्ष्मीमक्ष्णोतीति। यक्ष्+अण्] गुह्यकमात्रं; गुह्यकेश्वरः; धनरक्षकः; 'आजग्मुर्यक्षनिकराः कुबेरवरकिङ्कराः। शैलजप्रस्तरकरा अञ्जनाकारमूर्तयः। विकृताकारवदनाः पिङ्गालाक्षा महोदराः। स्फटिकारक्तकेशाश्च दीर्घस्कन्धाश्च केचन'--इति ब्रह्मवैवर्ते। इन्द्रगृहम्। ७९, ८७।

यजमानः पुं. [यजतीति, यज्+शानच्] अध्वरे आदेष्टा; व्रती; यष्टा; यजिः; दीक्षितः; 'नाहं तथापि यजमानहविर्विताने श्च्योतद्घृतप्लुतमदन् हुतभुङ्मुखेन'—इति भागवते (३।१६।८)। ४२०

यज्ञः पुं. [इज्यते हविर्दीयतेऽत्र। इज्यन्ते देवता अत्र वा। यज्+'यजयाचयतविच्छप्रच्छरक्षो नङ्' इति नङ्] यागः; सवः; अध्वरः; सप्ततन्तुः; मखः; क्रतुः; इष्टिः; इष्टं; वितानं; मन्युः; आहवः; सवनं; हवः; अभिषवः; होमः; हवनं; महः; 'अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम्। होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनम्'—इति गारुडे। ४१४

यज्ञान्तः पुं. [यज्ञस्य अन्तोऽवसानं यस्मिन्] अवभृथः; यागान्तस्नानम्; विष्णुः; 'यज्ञान्तकृद् यज्ञगुह्यमन्नमन्नाद एव च'—इति महाभारते (१३।१४९।११८)। ४१७

यज्वा [न्] पुं. [यज्+'सुयजोर्ङ्वनिप्' इति ङ्वनिप्] विधिना इष्टवान्; वेदविधानेन कृतयागः; 'राजा स यज्वा विबुधव्रजत्रा कृत्वाध्वराज्योपमयैव राज्यम्। भुङ्क्ते श्रितश्रोत्रियसात्कृतश्रीः पूर्वं त्वहो शेषमशेषमन्त्यम्'--इति नैषधचरिते (३।२४)। ४२०

यतम् [यमनं नियमनमिति। यम्+भावे क्त] गजस्य चालनार्थपादकर्मभेदः; हस्तिपकेन स्वपादसङ्केतद्वारा गजचालनम्। २२२

यतिः पुं. [यतते चेष्टते मोक्षार्थमिति। यत्+'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्] निर्जितेन्द्रियग्रामः; यती; भिक्षुः; संन्यासिकः; कर्मन्दी; रक्तवसनः; परिव्राजकः; तापसः; पाराशरी; परिकाङ्क्षी; मस्करी; पारिरक्षकः; 'अष्टौ मासान् विहारस्य यतीनां संयतात्मनाम्। एकत्र चतुरो मासानब्दं वा निवसेत् पुनः। अविमुक्ते प्रविष्ठानां विहारस्तु न विद्यते। यतिभिर्मोक्षकामैश्च अविमुक्तं निषेव्यते'—इति मात्स्ये। निकारः; विरतिः; ब्रह्मणः पुत्रविशेषः; 'सनकाद्या नारदश्च ऋभुर्हंसोऽरुणिर्यतिः। नैते गृहान् ब्रह्मसुता ह्यावसन्नूर्ध्वरेतसः'—इति श्रीमद्भागवते (४।८।१)। नहुषपुत्रः; 'यतिं ययातिं संयातिमायातिमयतिं ध्रुवम्। नहुषो जनयामास षट् सुतान् प्रियवाससि'—इति महाभारते (१।७५।३०)। विश्वामित्रपुत्रः; 'आराणिर्नाचिकं चैव चाम्पेयोज्जयनौ तथा। नवतन्तुर्बकनखः समनो यतिरेव च'—इति महाभारते (१३।४।५७)। त्रि. कर्मसूपरतोऽयष्टा; 'येनायतिभ्यो भृगवे धने हिते येन प्रस्कण्वमाविथ'—इति ऋग्वेदे (८।३।९)। 'येन सुवीपेण यतिभ्यः कर्मसूपरतेभ्योऽयष्टृभ्यो जनेभ्यः सकाशात् धनमाहृत्य भृगवे महर्षये प्रयच्छसि'–इति तद्भाष्ये सायणः। स्त्री. [यम्यते रसनात्रेति। यम्+'स्त्रियां क्तिन्' इति क्तिन्, 'अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामिति' मकारलोपः] पाठविच्छेदः; जिह्वेष्टविश्रामस्थानम्; 'यतिर्जिह्वेष्टविश्रामस्थानं कविभिरुच्यते। सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वाच्या निजेच्छया। क्वचिच्छन्दस्यास्ते यतिरभिहिता पूर्व-

कृतिभिः, पदान्ते सा शोभां व्रजति पदमध्ये त्यजति च। पुनस्तत्रैवासौ स्वरविहितसन्धिः श्रयति तां, यथा कृष्णः पुष्णात्वतुलमहिमा मां करुणया। श्वेतमाण्डव्य मुख्यास्तु नेच्छन्ति मुनयो यतिम्। इत्याह भट्टः स्वग्रन्थे गुरुर्मे पुरुषोत्तमः'—इति छन्दोमञ्जरी (१।१६-१८)। [यम्यते इति। यम्+क्तिन्। यतते चेष्टते व्रतादिरक्षार्थं वा। यत्+'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्] विधवा; रागः; सन्धिः; वाद्याङ्गप्रबन्धविशेषः; 'यतिरोढाप्यवच्छेदो गजरो रूपकं ध्रुवम्। गणपः सारिगोणी च नादश्च कथितं तथा। प्रहरणं वृन्दनं च प्रबन्धा द्वादश स्मृताः। यथा दं थातः इत्येकताल्यां यतिः।' इति सङ्गीतदामोदरः। सा त्रिविधा, यथा—'चतुर्विधं पदं तालं त्रिप्रकारं लयत्रयम्। यतित्रयं तथा तोद्यं मया दत्तं चतुर्विधम्'—इति मार्कण्डेयपुराणे (२३।५३)। ३४४, ३९४

यथाकामी [न्] त्रि. [यथा कामयते इति। यथा+कामि+णिनि। यद्वा काममनतिक्रम्य प्रवृत्तिरस्यास्तीति। यथाकाम+'अत इनिठनाविति' इनि] स्वेच्छाचारी; स्वरुचिः; स्वच्छन्दः; स्वैरी; अपावृतः; स्वतन्त्रः; निरवग्रहः; निर्यन्त्रणः; 'यथाकामी भवेद्वापि स्त्रीणां वरमनुस्मरन्। स्वदारनिरतश्चैव स्त्रियो रक्ष्या यतः स्मृताः'—इति याज्ञवल्क्यसंहितायाम् (१।८१)। ३७९

यथातथम् अव्य. [तथानतिक्रम्य वर्तते इति। अनतिवृत्तौ अव्ययीभावः, 'अव्ययीभावश्च' इति नपुंसकत्वम्, 'ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य' इति ह्रस्वः। 'नाव्ययीभावादतोऽम्त्वपञ्चम्याः' इति प्रथमाविभक्तेरमादेशः] यथार्थम्; 'येन स्वधाम्न्यमी भावा रजसत्त्वतमोमयाः। गुणनामक्रियारूपैर्विभाव्यन्ते यथातथम्'—इति श्रीमद्भागवते (६।१।४१)। १४४

यथार्थवर्णः पुं. [यथार्थं यथावृत्तं वर्णयति। यथार्थ+वर्ण्+अच्] चरः; सन्देशहरः; दूतः। ४२५

यथार्हवर्णः पुं. [यथार्हं यथायोग्यं वर्णयति। यथार्ह+वर्ण्+अच्] चरः। यथायोग्यमक्षरं जातिश्च। ५२४

यथाविधि अव्य. [विधिम् अनतिक्रम्य वर्तते इति] विध्यनुसारं; सविधि। ३९८

यथोद्गतः त्रि. [उद्गतम् उत्पत्तिम् अनतिक्रम्य वर्तते इति यथोद्गतम्, तदस्यास्तीत्यच्] मूढः; मूर्खः। ३३६

यदृच्छा त्रि. [ऋच्छनम् ऋच्छा, ऋच्छ्+'गुरोश्च हलः' इत्य। या चासौ ऋच्छा, विशेषणसमासः] स्वातन्त्र्यं; स्वैरिता; स्वरिता; स्वतन्त्रता; स्वाधीनता; 'यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम्। सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ! लभन्ते युद्धमीदृशम्'—इति गीतायाम् (२।३२)। ७७४

यद्भविष्यः पुं. [यत् किमप्यनिश्चितं भविष्यम् आयतिरस्य] दैवपरः; भाग्यवादी। ३७७

यद्वदः पुं. [यत् किंचिदप्यसम्बद्धं वदति। यद्+वद्+अच्, बाहुलकात्खच् वा] अनुत्तरः; उत्तरदानाशक्तः। ३७७

यन्त्रमुक्तम् क्ली. [मुच्यते इति मुक्तम्, वर्तमाने क्त। यन्त्रेण मुक्तम्] अस्त्रभेदः; यन्त्रक्षेप्यशरादिः। ४६२

यमः पुं. [यमयति नियमयति जीवानां फलाफलमिति। यम्+अच्] दक्षिणदिक्पालः; धर्मराजः; पितृपतिः; समवर्ती; परेतराट्; कृतान्तः; यमुनाभ्राता; शमनः; यमराट्; कालः; दण्डधरः; श्राद्धदेवः; वैवस्वतः; अन्तकः; धर्मः; धर्मराट्; जीवितेशः; महिषध्वजः; औडम्बरः; दण्डधारः; कीनाशः; दध्नः; महिषवाहनः; शीर्णपादः; भीमशासनः; कङ्कः; हरिः; कर्मकरः। 'यां काञ्चित् सरितं प्राप्य कृष्णपक्षे चतुर्दशीम्। यमुनायां विशेषेण नियतस्तर्पयेद्यमान्। यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च। वैवस्वताय कालाय सर्वभूतक्षयाय च। औडम्बराय दध्नाय नीलाय परमेष्ठिने। वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय वै नमः। एकैकस्य तिलैर्मिश्रांस्त्रीस्त्रीन् दद्यात् जलाञ्जलीन्। संवत्सरकृतं पापं तत्क्षणादेव नश्यति'—इति तिथ्यादितत्त्वे। (७००) त्रि. यमलः; युग्मं; शरीरसाधनापेक्षनित्यकर्म; उपायान्तरनिरपेक्षं शरीरमात्रसाध्यं नित्यं यावज्जीवमवश्यकार्यं यत्कर्म सत्यास्तेयादि तद्यमः। 'अहिंसा सत्यवचनं ब्रह्मचर्यमकल्कता। अस्तेयमिति पञ्चैते यमाश्चैव व्रतानि च'—इति मनुः। अष्टाङ्गयोगान्तर्गताङ्गविशेषः; 'ब्रह्मचर्यं दया क्षान्तिर्ध्यानं सत्यमकल्कता। अहिंसास्तेयमाधुर्यं दमश्चैते यमाः स्मृताः'—इति गारुडे १०९ अध्यायः। 'अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यापरिग्रहौ। यमाः पञ्चाथ नियमाः शौचं द्विविधमीरितम्'—इति गारुडे २३० अध्यायः। 'अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः'—इति पातञ्जले

साधनपादे (३०)। [यच्छति नियच्छति इन्द्रियग्राममनेनेति। यम्+घञ्] संयमः; 'वियामो वियमो यामो यमः संयामसंयमौ'—इत्यमरः। काकः; शनिः; विष्णुः, यथा महाभारते (१३।१४९।३०)। 'अतीन्द्रः संग्रहः सर्गो धृतात्मा नियमो यमः।' 'अन्तर्यच्छतीति यमः' —इति तद्भाष्ये शङ्कराचार्यः। त्रि. [यच्छति एकत्र गर्भाशये निरतो भवतीति, यम्+अच्] यमजः; 'बहिर्वर्णेषु चारित्राद्यमयोः पूर्वजन्मतः। तस्य जातस्य यमयोः पश्यन्ति प्रथमं मुखम्। सन्तानः पितरश्चैव तस्मिन् ज्येष्ठं प्रतिष्ठितम्।' ७२, १००

यमलम् क्ली. [यमं मिलितं लातीति, यम+ला+क] युग्मं; त्रि. यमजः; यमः; एककालीनैकगर्भजातसन्तानद्वयम्; 'सुमित्रातनयौ जातौ यमलौ द्वौ मनोहरौ। ते जाता वै किशोराश्च धनुर्बाणधराः किल'—इति देवीभागवते (३।२८।५)। ७००

यमुना स्त्री. [यमयतीति। यमि+'अजियमिशीङ्भ्यश्च' इति उनन्+टाप्। यच्छति उपरमति गङ्गायामिति वा] नदीविशेषः; कालिन्दी; सूर्यतनया; शमनस्वसा; तपनतनूजा; कलिन्दकन्या; यमस्वसा; श्यामा; तापी; कलिन्दनन्दिनी; यमनी; यमी; कलिन्दशैलजा; सूर्यसुता। 'सावर्णिर्मेरुपृष्ठे तु तपो घोरं चकार ह। अद्यापि भविता लोके मनुः सावर्णिकेऽन्तरे। भ्राता शनैश्चरश्चास्य ग्रहणं स तु लब्धवान्। तयोर्यवीयसी या तु यमस्वसा यशस्विनी। अभवत् सा सरिच्छ्रेष्ठा यमुना लोकपावनी'—इति वह्निपुराणे। दुर्गा; 'सर्वाणि हृदयस्थानि मङ्गलानि शुभानि च। ददाति चेप्सितान् लोके तेन सा सर्वमङ्गला। सङ्गमाद् गमनाद्गङ्गा लोके देवी विभाव्यते। यमस्य भगिनी जाता यमुना तेन सा मता'—इति देवीपुराणे। ६७४

यवः पुं. [यूयते अम्भसा इति। यु मिश्रणे+अप्] शूकधान्यविशेषः; सितशूकः; शितशूकः; मेध्यः; दिव्यः; अक्षतः; कञ्चुकी; धान्यराजः; तीक्ष्णशूकः; तुरगप्रियः; सक्तुः; महेष्टः; पवित्रधान्यं; युवकः। 'यवः कषायमधुरो बहुवातशकृद्गुरुः। रूक्षः स्थैर्यकरः शीतो मूत्रमेदकफापहः'—इति राजवल्लभः। परिमाणविशेषः; स तु चतुर्धान्यमानरूपः; षट्सर्षपपरिमाणात्मकः; 'जालान्तरगते भानौ यच्चाणु दृश्यते रजः। तैश्चतुर्भिर्भवेल्लिक्षा लिक्षाषड्भिश्च सर्षपः। षट्सर्षपैर्यवस्त्वेको गुञ्जैका तु यवैस्त्रिभिः'—इति शब्दचन्द्रिका। अङ्गुलिस्थयवाकाररेखाविशेषः; 'तर्जनीमूलसम्पृक्तौ यवौ पुत्रार्थदौ क्रमात्। मध्यमायां यदि यवो दृश्यते च सुशोभनः। तदान्यसञ्चितं द्रव्यं प्राप्नोत्यङ्गुष्ठके यवे। यस्यापि चक्रमङ्गुष्ठे यवपूर्णं च दृश्यते। तदा पितामहादीनाम् अर्जितं लभते धनम्'—इति सामुद्रिके। पूर्वपक्षः; 'एकत्रिंशतास्तु बत प्रजा असृज्यन्त यवाश्चायवाश्चाधिपतय आसन्'—यजुःसंहितायाम् (१४।३१)। 'यवाः पूर्वपक्षाः अथवा अपरपक्षाः' इति तट्टीकायां महीधरः। ५८६

यवसम् क्ली. [यौतीति, यु+'वहियुभ्यां णित्' इत्यसच्। संज्ञापूर्वकत्वान्न वृद्धिः] तृणं; घासः; 'तत्स्यादायुधसम्पन्नं धनधान्येन वाहनैः। ब्राह्मणैः शिल्पिभिर्यन्त्रैर्यवसेनोदकेन च'—इति मनुः (७।७५)। १९१

यवागूः स्त्री. [यूयते मिश्र्यते इति। यु+'सृयुवचिभ्योऽन्युजागूजक्नुचः' इति आगूच्] षड्गुणजलपक्वघनद्रवद्रव्यविशेषः; उष्णिका; श्राणा; विलेपी; तरला; 'यवागूः षड्गुणजले सिद्धा स्यात् कृशरा घना। यवागूर्ग्राहिणी बल्या तर्पणी वातनाशिनी'—इति शार्ङ्गधरः। ३२०

यव्यम् त्रि. [यवानां भवनं क्षेत्रम्। यव+'यवयवकषष्टिकाद् यत्' इति यत्] यवादिभवनोचितक्षेत्रम्; यवक्यं; यवोचितं; यवकोचितं; [यवेभ्यो हितम्। यव+'खलयवमाषतिलवृषब्रह्मणश्च' इति यत्] यवहितः; पुं. [वेभ्यो हितः] मासः; 'यव्यद्वयं श्रावणादि सर्वा नद्यो रजस्वलाः। तासु स्नानं न कुर्वीत वर्जयित्वा समुद्रगाः'—इति प्रायश्चित्ततत्त्वे गङ्गामाहात्म्यम्। स्त्री. नदीभेदः; 'वार्णत्वा यव्याभिर्वर्द्धन्ति शूरब्रह्माणि'—इति ऋग्वेदे 'यव्याभिः नदीभिः, अवनयः यव्याः इति नदीनामसु पाठात्'—इति तद्भाष्ये सायणः। १६३

यशः [स्] क्ली. [अश्नुते व्याप्नोतीति। अश्+'अशेर्देवने युट् च' इत्यसुन्, युट् च] सुख्यातिः; कीर्तिः; समज्ञा; समाख्या; कीर्तना; अभिख्यानम्; आज्ञा; समज्या; 'दानादिप्रभवा कीर्तिः शौर्यादिप्रभवं यशः'—इति माधवी। अन्नम्; 'वयं स्याम यशसो जनेषु'—इति ऋग्वेदे (४।५२।११)। 'यशसः कीर्तेरन्नस्य वा'—इति

तद्भाष्ये सायणः। त्रि. यशस्वी; 'त्वमिन्द्र यशा अस्यृजीषी शवसस्पते'—इति ऋग्वेदे (८।७९।५)। 'त्वं यशाः यशस्विन्नसि भवसि-इति तद्भाष्ये सायणः। १५३

यष्टा [ऋ] पुं. [यजते इति, यज्+तृच्, 'व्रश्चेति' षत्वम्] यजमानः; यज्ञकर्ता। 'स दानशीलो यष्टा च यज्ञानामवनीपतिः'—इति मार्कण्डेये (१२०।२)। ४२०

यष्टिः पुं.- स्त्री. [यजते सङ्गच्छते। यज्+ति] शस्त्रभेदः; दण्डः; लगुडः; 'यष्टिं ये तु प्रयच्छन्ति नेत्रहीने सुदुर्बले। तेषां तु विपुलः पुंसां सन्तानो मोहवर्जितः'—इति वह्निपुराणे। तन्तुः; हारलता; हारावलिः; 'क्वचित्प्रभालेपिभिरिन्द्रनीलैः मुक्तामयी यष्टिरिवानुविद्धा। अन्यत्र माला सितपङ्कजानाम् इन्दीवरैरुत्खचितान्तरेव' —इति रघौ (१३।५४)। 'यष्टिः हारावलिः'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। भार्गी; मधुका; स्त्री शाखा; 'चूतयष्टिरिवाभ्यासे मधौ परभृतोन्मुखी'—इति कुमारे (६।२)। 'चूतयष्टिः चूतशाखा इव'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। यष्टिमधु; 'यष्टचाह्वं मधुकं यष्टिः क्लीतकं मधुयष्टिका। यष्टिमधु स्थले जाता जलजातिरसा पुरा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। पुं. [इज्यते इति। यज्+बाहुलकात् ति] ध्वजदण्डः; भुजदण्डः। ७२६

यष्टिमधु क्ली. [यष्टयां मधु माधुर्यमस्य] यष्टिमधुका; क्लीतकं; यष्टीमधु; मधुकं; मधुमुष्टिका; यष्टचाह्वं; यष्टिः; यष्टचाह्वं मधुकं यष्टिः क्लीतकं मधुयष्टिका। यष्टिमधु स्थले जाता जलजातिरसा पुरा'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। ६१५

यागः पुं. [इज्यते इति, यज्+घञ्] यज्ञः; 'स्वल्पेनैव तु द्रव्येण महापुण्यं यथा भवेत्। तदहं श्रोतुमिच्छामि ग्रहयागं सुरेश्वर!। ४१४

याचकः पुं. [याचते इति। याच्+ण्वुल्] याच्ञाकर्ता; वनीयकः; याचनकः; मार्गणः; अर्थी; वनीपकः; भिक्षुकः; भिक्षाकरः। 'तृणादपि लघुस्तूलस्तूलादपि च याचकः। वायुना किं न नीतोऽसौ किञ्चित्प्रार्थनशङ्कया।' 'कुब्जस्य कीटघातस्य वातान्निष्कासितस्य च। शिखरे वसतस्तस्य वरं जन्म न याचितम्। जगत्पतिर्हि याचित्वा विष्णुर्वामनतां गतः। कोऽन्योऽधिकतरस्तस्य योऽर्थी याति न लाघवम्'—इति गारुडे नीतिसारे ११५ अध्यायः। ३५९

याचना स्त्री. [याच्+स्वार्थे णिच्+युच्, टाप्] याच्ञा; याचनम्; अर्थना; भिक्षा; अर्दना; अभिशस्तिः; 'नयस्व मां साधु कुरुष्व याचनाम्'—इति रामायणे (२।२७।२३)। ३६०

याच्ञा स्त्री. [याचनमिति। याच्+'यजयाचयतविच्छप्रच्छरक्षो नङ्' इति नङ] याचनम्; अभिशस्तिः; याचना; अर्थना; भिक्षा; अर्दना; लालसा; ईमहे; यामि; मन्महे; दद्धि; शग्धि; पूर्द्धि; मिमिड्ढि; मिमीहि; रिरिड्ढि; रिरीहि; पीपरत्; यन्तारः; यन्धि; इषुध्यति; मदेमहि; मनामहे; मायते। 'ज्यायान्गुणैरवरजोऽप्यदितेः सुतानां लोकान् विचक्रम इमान् यदथाधियज्ञः। क्ष्मां वामनेन जगृहे त्रिपदच्छलेन याच्ञामृते पथि चरन् प्रभुभिर्न चाल्यः'—इति भागवते (२।७।१७)। ३६०

यातम् क्ली. [या+क्त] निषादिनामङ्कुशद्वारा गजनियमनम्; अङ्कुशेन हस्तिचालनम्; अङ्कुशवारणम्; 'अपष्टं त्वङ्कुशस्याग्रं यातमङ्कुशवारणम्। निषादिनां पादकर्म यातं वीतं तु तद् द्वयम्' —इति हैमः। २२२

यातना स्त्री. [यत्+णिच्+'ण्यासश्रन्थो युच्' इति युच् +टाप्] गाढवेदना; कारणा; तीव्रवेदना; अतिव्यथा; 'हिरण्यकशिपुः पुत्रं प्रह्लादं केशवप्रियम्। जिघांसुरकरोन्नानायातना मृत्युहेतवे'--इति भागवते (७।१।४१)। नरकरुजा। ६२६

याता [ऋ] स्त्री. [यततेऽन्योऽन्यभेदायेति। यत्+'तृन्' इति तृन्] पतिभ्रातृपत्नी; 'स्वामी निश्वसितेऽप्यसूयति मनोजिघ्रः सपत्नीजनः, श्वश्रूरिङ्गितदैवतं नयनयोरीहालिहो यातरः'—इति साहित्यदर्पणे (३।७८)। [या+तृच्] गमनकर्तरि त्रि.। 'उल्का शुभदा पुरतो दिवाकरविनिःसृता यातुः'—इति बृहत्संहितायाम् (३३।१३)। सारथ्यादिः; 'यानस्य चैव यातुश्च यानस्वामिन एव च। दशातिवर्तनान्याहुः शेषे दण्डो विधीयते'—इति मनुः (८।२९०)। 'यातुः सारथ्यादेः' इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। हन्ता; 'अहेर्यातारं कमपश्य इन्द्र'—इति ऋग्वेदे (१।३२।१४)। ५०८

यातु क्ली.-पुं. [सर्वेषामन्तं यातीति। या+'कमिमनिजनीति' तु] राक्षसः; 'यातु यातुप्रवीराणां प्रणम्य चरणानसौ।' 'न यातव इन्द्र जूजुवुर्नो न'—इति ऋग्वेदे

(७।२१।५)। 'यातवो राक्षसाः'—इति तद्भाष्ये सायणः। पुं. कालः; अध्वगः; वायुः; स्त्री. यातना; 'मानो रक्ष आवेशीदाघृणीवसो मा यातुर्यातु मावताम्'—इति ऋग्वेदे (८।४९।२०)। 'यातुर्यातना पीडा' इति तद्भाष्ये सायणः। कर्मनाशकरी हिंसा; 'नाहं यातुं सहसा न द्वयेन ऋतं शपाम्यरुषस्य वृष्णः'—इति ऋग्वेदे (५।१२।२)। 'यातुं कर्मणां नाशकरीं हिंसाम्'—इति तद्भाष्ये सायणः। त्रि. [यातीति। या+'कमिमनीति' तु] गन्ता। [क्रियापदं चेत्] गच्छतु। ७३

यातुधानः पुं. [यातूनि रक्षांसि दधाति पुष्णातीति। यातु+धा+'बहुलमन्यत्रापीति' युच्। स्वजातिपोषकत्वात्तथात्वम्] राक्षसः; 'दाक्षिण्यदिष्टां कृतमार्त्विजीनैस्तद्यातुधानैश्चिचिते प्रसर्पत्'—इति भट्टिकाव्ये (२।२९)। ७३

यात्यः पुं. [यत् निकारोपस्कारयोः, णिच्, यातयितुं यातनामनुभवितुं योग्यः। कर्मणि यत्] प्रेतः; त्रि. यतितव्यं; यतनीयम्। ६२५

यात्रा स्त्री. [या+'हुयामाश्रुभसिम्यस्त्रन्' इति त्रन्+टाप्] विजिगीषोः प्रयाणं; व्रज्या; अभिनिर्याणं; प्रस्थानं; गमनं; गमः, प्रस्थितिः; यानं; प्राणनं; यापनम्; 'यात्रामात्रं त्वहरहर्दैवादुपनयत्युत'—इति भागवते (१०।८६।१५)। उत्सवः; 'यात्रामुपवने द्रष्टुं जगाम सखिभिः सह'—इति कथासरित्सागरे (१०।८७)। व्यवहारः; 'शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः'—इति भगवद्गीतायाम् (३।८) 'शरीरयात्रा देहव्यवहारः'—इति तट्टीकायां नीलकण्ठः। उपायः। ४५२

यादः [स्] क्ली. [यान्ति वेगेनेति। या+असुन्, बाहुलकाद् दुगागमश्च] जलजन्तुः; 'अनन्तश्चास्मि नागानां वरुणो यादसामहम्'—इति भगवद्गीतायाम् (१०।२९)। जलम्। ६५६

यादसांनाथः पुं. [यादसां जलजन्तूनां नाथः पतिः। षष्ठ्या अलुक्] यादसां पतिः; यादःपतिः; वरुणः; 'अश्विनौ वसवस्त्वष्टा कुवेरो यादसां पतिः'—इति देवीभागवते (३।९।३५)। समुद्रः। ७४

यानम् क्ली. [यान्त्यनेनेति। या+ल्युट्] हस्त्यश्वरथदोलादि; वाहनं; युग्यं; पत्रं; धोरणं; विमानं; चङ्कुरं; यापनं; गतिमित्रकम्; 'शिल्पेन व्यवहारेण शूद्रापत्यैश्च केवलैः। गोभिरश्वैश्च यानैश्च कृष्या राजोपसेवया। अयाज्ययाजनैश्चैव नास्तिक्येन च कर्मणाम्। कुल्यान्याशु विनश्यन्ति यानि हीनानि मन्त्रतः'—इति मनुः (३।६४-६५)। फलप्राप्तिहेतौ त्रि.। 'तनूनपात् पथ ऋतस्य यानान् मध्वा समञ्जन् स्वदया सुजिह्वः'—इति ऋग्वेदे (१०।११०।२)। 'यानान् फलप्राप्तिहेतून् पथो मार्गान्' इति तद्भाष्ये सायणः। [या+भावे ल्युट्] गतिः; 'यानं खरोष्ट्रमार्जारकपिशार्दूलशूकरैः। यस्य प्रेतैः शृगालैर्वा स मृत्योर्वर्तते मुखे'—इति वाग्भटः। ४४९

याप्ययानम् क्ली. [याप्य, अधमं यानं वाहनम्] शिविका। ४५०

यामः पुं. [याति याप्यते वा। या+'अर्तिस्तुसुहुसृधृक्षिक्षुभायावापदियक्षिनीभ्यो मन्' इति मन्। यम्+घञ् वा] दिवारात्र्योश्चतुर्थभागैकभागः; प्रहरः; 'उत्थाय पश्चिमे यामे कृतशौचः समाहितः। हुताग्निर्ब्राह्मणांश्चार्च्य प्रविशेत् स शुभां सभाम्'—इति मनुः (७।१४५)। संयमः; गमनम्; 'उषो ये ते प्र यामेषु युञ्जते'—इति ऋग्वेदे (१।४८।४)। 'यामेषु गमनेषु' इति तद्भाष्ये सायणः। गमनसाधनः; 'कुवित्सदेवीः सनयो नवो वा यामो बभूयादुषसो वो अद्य'—इति ऋग्वेदे (४।५१।४)। 'यामो गमनसाधनः स रथः'—इति तद्भाष्ये सायणः। देवगणभेदः; 'यज्ञस्य दक्षिणायान्तु पुत्रा द्वादश जज्ञिरे। यामा इति समाख्याता देवाः स्वायम्भुवेऽन्तरे'—इति मार्कण्डेयपुराणे (१५।१८)। १०६

यामिनी स्त्री. [यामाः सन्त्यस्याम्। याम+इनि+ङीप्] रात्रिः; यामिका; तमी; तमा; तमिस्रा; तमस्विनी; बिभावरी; नक्तमुखा; शर्वरी; क्षपा; त्रियामा; क्षणदा; निशीथिनी; निशा; दोषा; रजनी; 'ततः शयनमाविश्य प्रसुप्तो मधुसूदनः। याममात्रार्द्धशेषायां यामिन्यां प्रत्यबुध्यत'—इति महाभारते (१२।५३।१)। हरिद्रा; कश्यपपत्नी; 'तार्क्ष्यस्य विनता कद्रुः पतङ्गी यामिनीति च। पतङ्गचसूत पतगान् यामिनी शलभानथ'—इति भागवते (६।६।२१)। प्रह्लादस्य द्वितीया तनया; 'प्रह्लादो यामिनीं नाम द्वितीयां तनयां ददौ'—इति कथासरित्सागरे (४६।२२)। १०७

याम्या त्रि. [यमस्येयं, यमो देवतास्या इति वा। यम+

'यमाच्चेति वक्तव्यम्' इति वार्तिकोक्त्या ण्य+टाप्] दक्षिणदिक्; 'प्रगृह्य तु महीपालो जलपूरितमञ्जलिम्। दिशं याम्यामभिमुखो रुदन् वचनमब्रवीत्'—इति रामायणे (२।१०३।२६)। यमसम्बन्धिनि त्रि; 'कथयिष्ये सभां याम्यां युधिष्ठिर! निबोध ताम्। वैवस्वतस्य यां पार्थ! विश्वकर्मा चकार ह'—इति महाभारते (२।८।१)। क्ली.– स्त्री. भरणीनक्षत्रं; पुं. [यामी दिग् निवासोऽस्य। यामी+यत्] अगस्त्यमुनिः; चन्दनवृक्षः; (यमस्यायमिति, यम+ण्य] यमदूतः; 'कृष्यपाणस्य याम्यैश्च नरकेषु च पात्यतः। पुनश्च गर्भो जन्माथ मरण नरकस्तथा'—इति मार्कण्डेये (११।३०)। १०१

यायजूकः पुं. [पुनः पुनः यजति। यज्+यङ, 'यजजपदशां यङः' इति ऊक] पुनः पुनर्यागकर्ता; इज्याशीलः; 'या गतिः सर्वभूतानां तां गतिं ते पिता गतः। राजा महात्मा तेजस्वी यायजूकः सतां गतिः'—इति रामायणे (२।७२।१५)। ४२०

यावकः पुं. [यव एव यावः, स इवेति इवार्थे कन्। यद्वा याव एव। याव+'यावादिभ्यः कन्' इति स्वार्थे कन्] अलक्तकः; 'इह सनियमयोः सुरापगायामुषसि सयावकसव्यपादलेखा। कथयति शिवयोः शरीरयोगं विषमपदा पदवी विवर्तनेषु'—इति किराते (५-३९)। यावान्नं; कुल्मासः; कुल्माषः; 'यवकः स्यात्तु कुल्माषः कुल्मासो यावकोऽपि च। बोरवाख्ये षष्टिके वा कुल्ये कश्मीरदेशजे। शालिधान्येषु चत्वार इति केचित् प्रचक्षते'—इति शब्दरत्नावली। यावान्नम्; 'सङ्करापात्रकृत्यासु मासं शोधनमैन्दवम्। मलिनीकरणीयेषु तप्तः स्याद्यवकैस्त्र्यहम्'—इति मनुः (११।१२६)। ५५५

युक्तम् त्रि. [युज्यते स्म इति, युज्+क्त] न्याय्यं; तत्तु न्यायागतद्रव्यादिकम्; 'जन्म यस्य पुरोर्वंशे युक्तरूपमिदं तव। पुत्रमेवं गुणोपेतं चक्रवर्तिनमाप्नुहि'—इति शाकुन्तले १ अङ्के। अपृथग्भूतं; मिलितम्; 'शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं, न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि। अतस्त्वामाराध्यां हरिहरविरिञ्च्यादिभिरपि, प्रणन्तुं स्तोतुं वा कथमकृतपुण्यः प्रभवति।' स्त्री. [युक्त+टाप्] वृक्षविशेषः; क्ली. [युज्+क्त] हस्तचतुष्टयम्; पुं. [युज्यते स्म योगेनेति, युज्+क्त] अभ्यस्तयोगी; 'योगजो द्विविधः प्रोक्तो युक्तयुञ्जानभेदतः। युक्तस्य सर्वदा भानं चिन्तासहकृतोऽपरः'—इति भाषापरिच्छेदे (६६)। 'ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः। युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकाञ्चनः'—इति भगवद्गीतायाम् (६।८)। रैवतमनोः पुत्रः; 'अथ पुत्रानिमांस्तस्य निबोध गदतो मम। धृतिमानव्ययो युक्तस्तत्त्वदर्शी निरुत्सुकः'—इति हरिवंशे (७।२८)। ७४६

युगम् क्ली. [युज्यते इति। युज्+घञ्, कुत्वम्, संज्ञापूर्वकत्वाद् न गुणः] युग्मम्; 'उपनेतुमुन्नतिमतेव दिवं कुचयोर्युगेन तरसा कलिताम्। रभसोत्थितामुपगतः सहसा परिरभ्य कश्चन वधूमरुधत्'—इति माघे (९।७२)। कृतादिकालचतुष्टयं; सत्यत्रेताद्वापरकलिरूपान्यतमम्; 'परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्। धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे'—इति भगवद्गीतायाम् (४।८)। वृद्धिनामौषधं; हस्तचतुष्कम्; 'द्वे वितस्ती तथा हस्तो ब्राह्मतीर्थादिवेष्टयन्। चतुर्हस्तं धनुर्दण्डो नाडिका युगमेव च'—इति मार्कण्डेये (४९।३६)। पुं. [युयेज्ते वलीवर्दौ अस्मिन्निति। युज्+घञ्। युजेर्घञन्तस्य निपातनादगुणत्वम् इति काशिका] रथहलाद्यङ्गम्; 'नावेव नः पारयतं युगेव नभ्येव न उपधीव प्रधीव'—इति ऋग्वेदे (२।३९।४)। 'युगा इव यथा रथस्य युगे नभ्या इव' इति तद्भाष्ये सायणः। 'तस्यैकदा वणिज्यार्थं गच्छतो मथुरां पुरीम्। भारवोढा युगं कर्षन् भारेण युगभग्नतः'—इति कथासरित्सागरे (६०।१२)। ७००

युगकीलकः पुं. [युगस्य कीलकः] युगकाष्ठस्य कीलकः; शम्या। ५७५

युगन्धरः पुं. [युगं धारयतीति। युग+धारि+'संज्ञायां भृतृवृजिधारिसहितपिदमः' इति खच्, 'अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम्' इति मुम्] यत्र रथस्य युगकाष्ठमासज्यते तत्; (रथस्याश्वा यत्र बध्यन्ते तद्युगकाष्ठं, तद्युगं धरति युगन्धरः) कूवरः; पर्वतविशेषः। 'निषधो माल्यवान् विन्ध्यो हेमकूटो युगन्धरः'—इति शब्दरत्नावली। तूणिपुत्रः; स च सात्यकेः पौत्रः; 'तूणेर्युगन्धरः पुत्र इति वंशः समाप्यते'—इति हरिवंश (१६०।३१)। ४४७

युगलम् क्ली. [युज्यते परस्परं सङ्गच्छते इति। युज्+

वृषादिभ्यः कलच्, न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्] युग्मम्, 'पस्पर्श पादयुगलमाह चोत्सङ्गलालिताम् ।'—इति भागवते (४।२६।२०) । ७००

युगान्तः पुं. [युगानामन्तो यत्र । युगानामन्तो वा] प्रलयः; 'उद्वर्तयन् दस्युसंघान् समेतान् प्रवर्तयन् युगमन्यद्युगान्ते । यदा धक्ष्याम्यग्निवत् कौरवेयांस्तदा तप्ता धार्तराष्ट्रः सपुत्रः'—इति महाभारते (५।४८।६५) । युगशेषः । ११७

युग्मम् क्ली. [युज्यते इति । युज्+'युजिरुचितिजां कुश्च' इति मक्] द्वयं; द्वन्द्वं; युगलं; युगम्; 'पादुकोपानहञ्चैव युगान्यत्र सहस्रशः'—इति रामायणे (२।९१।७६) । 'क्रूरोऽथ सौम्यः पुरुषोऽङ्गना च ओजोऽथ युग्मं विषयः समश्च । चरस्थिरद्वयात्मकनामधेया मेषादयोऽमी क्रमशः प्रदिष्टाः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । द्वितीया; मेलनम्; 'युग्माग्निकृतभूतानि षण्मुन्योर्वसुरन्ध्रयोः । रुद्रेण द्वादशी युक्ता चतुर्दश्याथ पूर्णिमा । प्रतिपदाप्यमावास्या तिथ्योर्युग्मं महाफलम् । एतद्व्यस्तं महाघोरं हन्ति पुण्यं पुराकृतम् । द्वयविशिष्टे त्रि. । 'युग्मासु पुत्रा जायन्ते स्त्रियोऽयुग्मासु रात्रिषु । तस्माद् युग्मासु पुत्रार्थी संविशेदार्तवे स्त्रियम्'—इति मनुः (३।४८) । ७००

युग्यम् क्ली. [युगाय हितम् । युग+'उगवादिभ्यो यत्' इति यत् । युगमर्हतीति वा, दण्डादित्वाद् यत् । यद्वा युज्यते इति, युज्+'युग्यं च पत्रे' इति क्यबन्तो निपातितः] वाहनं; यानम्; 'हिरण्यस्य सुवर्णस्य यानयुग्यस्य वाससाम् । आविष्टः कलिना द्यूते जीयते स्म नलस्तदा'—इति महाभारते (३।५९।९) । 'यत्रापवर्तते युग्यं वैगुण्यात् प्राजकस्य तु । तत्र स्वामी भवेद्दण्ड्यो हिंसायां द्विशतं दमम्'—इति मनुः (८।२९३) । वाच्यलिङ्गेऽपि दृश्यते, यथा 'युग्यो गौः । युग्योऽश्वः । युग्यो हस्ती'—इति काशिका (३।१।१२१) । पुं. [युगं वहतीति, युग+'तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम्' इति यत् प्रत्ययः] युगवोढा । ४४९

युत् [ध्] स्त्री. [योधनमिति, युध्+क्विप्] युद्धं; त्रि. युद्धकर्ता । 'इति ब्रुवाणावन्योऽन्यं धर्मजिज्ञासया नृप ! युयुधाते महावीर्याविन्द्रवृत्रौ युधां पती'—इति भागवते (६।१२।२३) । ४५३

युद्धम् क्ली. [युध्यते इति । युध्+भावे क्त] योधनम्; आयोधनं; जन्यं; प्रधनं; प्रविदारणं; मृधम्; आस्कन्दनं; संख्यं; समीकं; साम्परायिकं; समरम्; अनीकं; रणः; कलहः; विग्रहः; सम्प्रहारः; अभिसम्पातः; कलिः; संस्फोटः; संयुगः; अभ्यामर्दः; समाघातः; सङ्ग्रामः; अभ्यागमः; आहवः; समुदायः; संयत्; समितिः; आजिः; समित्; युत्; संरावः; आनाहः; सम्परायकः; विदारः; दारणं; संवित्; सम्परायः; तीक्ष्णम्; अम्बरीषं; बलजम्; आनर्तः; अभिमरः; समुदयः; 'लड़ाई' इति भाषा । 'धर्मलाभोऽर्थलाभश्च यशोलाभस्तथैव च । यः शूरो वध्यते युद्धे विमृदन् परवाहिनीम्'—इति वह्निपुराणे । ४५३

ययुः पुं. [यातीति, या+'यो द्वे च' इति कु, द्वित्वं च । पृषोदरादित्वादभ्यासस्य उत्वम्] अश्वः; घोटकः; 'ययुरश्वोऽश्वमेधीयः ।' ४३६

युवतिः स्त्री. [युवन्+'यूनस्तिः' इति ति] प्राप्तयौवना; युवती; तरुणी; 'शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने, भर्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः । भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भोगेष्वनुत्सेकिनी, यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः'—इति अभिज्ञानशाकुन्तले ४ अङ्के । स्त्रीसामान्यम्; 'प्रमदा चेति विज्ञेया युवतिश्च तथा स्मृता'—इति भागुरिः । ४८२

युवती स्त्री. [यु+शतृ+ङीप्, इति सिद्धान्तकौमुदी (४।१।७७) । कृदिति ङीष्] प्राप्तयौवना; युवतिः; यूनी; तरुणी; तलुनी; दिक्करी; धनिका; धनीका; मध्यमा; दृष्टरजाः; मध्यमिका; ईश्वरी; वर्या; वयस्था; योग्या; 'आषोडशाद्भवेद्बाला तरुणी त्रिंशता मता । पञ्चपञ्चाशतः प्रौढा वृद्धा भवति तत्परम् ।' 'बाला तु प्राणदा प्रोक्ता युवती प्राणहारिणी । प्रौढा करोति वृद्धत्वं वृद्धा मरणमादिशेत् । निदाघशरदोर्बाला प्रौढा वर्षावसन्तयोः । हेमन्ते शिशिरे योग्या न वृद्धा क्वापि शस्यते ।' स्त्रीसामान्यम्; 'प्रमदा चेति विज्ञेया युवतिश्च तथा स्मृतिः'—इति भागुरिः । प्राप्तयौवना; हरिद्रा । ४८२

युवा [न्] त्रि. [यौतीति, यु+'कनिन् युवृषितक्षिराजिधन्विद्युप्रतिदिवः' इति कनिन्] तरुणः; 'ऊर्ध्वं प्राणा

ह्युत्क्रामन्ति यूनः स्थविर आयति । प्रत्युत्थानाभिवादाभ्यां पुनस्तान् प्रतिपद्यते'—इति मनुः (२।१२०)। श्रेष्ठः; निसर्गबलशाली। ५०३

युवा [न्] पुं. [यौतीति, यु+कनिन्] यौवनावस्थाविशिष्टः; षोडशवर्षात् त्रिंशद्वर्षपर्यन्तवयस्कः; षोडशवर्षात् सप्ततिवर्षपर्यन्तः; वयस्थः; तरुणः; वयःस्थः; तलुनः; गर्भरूपः; बेटकः; 'आषोडशाद्भवेद्बालस्तरुणस्तत उच्यते। वृद्धः स्यात्सप्ततेरूर्ध्वं वर्षीयान् नवतेः परम्'—इति भरतघृतस्मृतिः। 'आषोडशाद्भवेद्बालः पञ्चत्रिंशद् युवा नरः'—इति हारीतः। ५०३

यूथम् क्ली. [यु मिश्रणे+'तिथपृष्ठगूथयूथप्रोथाः' इति थक् प्रत्ययेन निपातितम्] सजातीयसमूहः; 'तत्र कुञ्जरयूथानि मृगयूथानि चैव हि। विचरन्ति वनान्तेषु तानि द्रक्ष्यसि राघव!'—इति रामायणे (२।५४।४१)। ६८६

यूथिका स्त्री. [यूथं पुष्पवृन्दमस्या अस्तीति। यूथ+ठन्+टाप्] पाठा; अम्लानकः; गणिका; अम्बष्ठा; मागधी; हेमपुष्पिका; यूथी; प्रहसन्ती; शिखण्डिनी; वासन्ती; बालपुष्पिका; बहुगन्धा; भृङ्गानन्दा; पुष्पविशेषः; 'पटोलशेलूसुनिषण्णयूथिका। वटातिमुक्ताङ्कुरमिन्दुवारजम्'—इति सुश्रुतः। 'विश्रान्तः सन् व्रजवननदीतीरजातानि सिञ्चन्, उद्यानानां नवजलकणैर्यूथिकाजालकानि'—इति मेघदूते (१।२८)। २०५

योक्त्रम् क्ली. [युज्यतेऽनेनेति। युज्+'दाम्नीशसयुयुजस्तुतुदेति' ष्ट्रन्] युगेन सह ईषा लाङ्गलदण्ड आबध्यते अनेन तत्; आबन्धः; योत्रम्; 'स त्वं न इन्द्र धियमानो अर्कैर्हरीणां; वृषन् यो त्रमश्रेः'—इति ऋग्वेदे (५।३३।२)। 'योक्त्रं नियोजनरज्जुम् अश्वः आश्रयसि'—इति तद्भाष्ये सायणः। मन्थनरज्जुः; 'ततो निश्चित्य मथनं योक्त्रं कृत्वा तु वासुकिम्। मन्थानं मन्दरं कृत्वा ममन्थुरमितौजसः'—इति रामयणे (१।४५।१८)। ५७५

योग्यता स्त्री. [योग्यस्य भावः। योग्य+तल्+टाप्] क्षमता; 'तथान्यानप्ययोग्यानि योग्यतां यान्ति कालतः। योग्यान्ययोग्यतां यान्ति कालवश्या हि योग्यता'—ति मार्कण्डेये (११३।९)। शाब्दबोधकारणविशेषः; र पदार्थानां परस्परसम्बन्धे बाधाभावः। न्यायमते र्ये तत्पदार्थवत्ता; 'पदार्थे तत्र तद्वत्ता योग्यता ता'—इति भाषापरिच्छेदः। २६४

योग्या स्त्री. [योग्य+टाप्] अभ्यासः; 'अपरः प्रणिधानयोग्यया मरुतः पञ्चशरीरगोचरान्'—इति रघौ (८।१९)। 'अपरो रघुः प्रणिधानयोग्यया समाध्यभ्यासेन'—इति मल्लिनाथः। अर्कयोषित्; शस्त्राभ्यासः; खुरली; श्रमः; अभ्यासः; 'एवमादिषु मेधावी योग्यार्हेषु यथाविधि। द्रव्येषु योग्यां कुर्वाणो न प्रमुह्यति कर्मसु। तस्मात् कौशलमन्विच्छन् शस्त्ररक्षाग्निकर्मसु। यस्य यत्रेह साधर्म्यं तत्र योग्यां समाचरेत्'—इति सुश्रुतः। युवती; 'निदाघशरदोर्बाला प्रौढा वर्षावसन्तयोः। हेमन्ते शिशिरे योग्या न वृद्धा क्वापि शस्यते।' 'योग्या युवती'—इति राजवल्लभः। ४७०

योग्यारथः पुं. [योग्यायै युद्धाभ्यासाय रथः] वैनयिकः; युद्धगतिशिक्षको रथः। ४४५

योनिः पुं. – स्त्री. [यौति संयोजयतीति। यु+'वहिश्रिश्रुयुद्रुग्लाहात्वरिभ्यो नित्' इति नि] भगं; वराङ्गम्; उपस्थः; स्मरमन्दिरं; रतिगृहं; जन्मवर्त्म; अधरम्; अवाच्यदेशः; प्रकृतिः; अपथं; स्मरकूपकः; अप्रदेशः; प्रकूतिः; पुष्पी; संसारमार्गकः; संसारमार्गः; गुह्यं; स्मरागारं; स्मरध्वजं; रत्यङ्गं; रतिकुहरं; कलत्रम्; अधः; रतिमन्दिरं; स्मरगृहं; कन्दर्पकूपः; कन्दर्पसम्बाधः; कन्दर्पसन्धिः; स्त्रीचिह्नम्; आकरः; कारणम्; 'ऋषयो राक्षसीमाहुर्वाचमुन्मत्तदृप्तयोः। सा योनिः सर्ववैराणां सा हि लोकस्य निर्ऋतिः'—इति उत्तररामचरिते। जलं; कुशद्वीपस्थनदीविशेषः; 'धूतपापा नदी नाम योनिश्चैव पुनः स्मृता। सीता द्वितीया विज्ञेया सा चैव हि निशा स्मृता'—इति मार्कण्डेये (१२१।७१)। तन्त्रशास्त्रविशेषः; 'सनत्कुमारकं तन्त्रं योनितन्त्रं प्रकीर्तितम्। तन्त्रान्तरं च देवेशि! नवरत्नेश्वरं तथा'—इति महासिद्धिसारस्वते। प्राणिनामुत्पत्तिस्थानम्; 'जलजा नव लक्षाणि स्थावरा लक्षविंशतिः। कृमयो रुद्रसङ्ख्याकाः पक्षिणां दशलक्षकम्। त्रिंशल्लक्षाणि पशवश्चतुर्लक्षाणि मानुषाः। सर्वयोनिं परित्यज्य ब्रह्मयोनिं ततोऽभ्यगात्'—इति बृहद्विष्णुपुराणम्। ५१४

योषा स्त्री. [यौति मिश्रीभवतीति। यु मिश्रणे+बाहुलकात् स। स्त्रियां टाप्] नारी; योषित्; योषिता; 'स्त्री वधूरबला नारी प्रिया रामा जनिर्जनी। योषा

योषिद्योषिता च जोषिज्जोषा च जोषिता'—इति शब्दरत्नावली। ४८१

योषित् स्त्री. [योषति पुमांसं, युष्यते पुभिरिति वा। युष्+'हृसुरुहियुषिभ्य इतिः' इति इति] नारी; स्त्री; 'गच्छन्तीनां रमणवसतिं योषितां तत्र नक्तं, रुद्धालोके नरपतिपथे सूचिभेद्यैस्तमोभिः'—इति मेघदूते (१।३९)। 'तं प्रेक्ष्य भरतं श्रेष्ठं शत्रुघ्नो वाक्यमब्रवीत्। अवध्याः सर्वभूतानां योषितः क्षम्यतामिति'—इति वह्निपुराणे। ४८१

र

रंहः [स्] क्ली. [रमते येन इति। रम्+'रमेर्हुक्च' इति असुन् हुगागमश्च धातोः। रहि गतौ वा+'अहिरहिभ्यामसुन्' इति। 'अंहोरंहः' इति धातुप्रदीपः] वेगः; 'अलं महीपाल! तव श्रमेण प्रयुक्तमप्यस्त्रमितो वृथा स्यात्। न पादपोन्मूलनशक्तिरंहः शिलोच्चये मूर्च्छति मारुतस्य'—इति रघुवंशे (२।३४)। महादेवः; 'हरिनेत्राय मुण्डाय कृशायोत्तरणाय च। भास्वराय सुतीर्थाय देवदेवाय रंहसे'—इति महाभारते (१४।८।-१५)। विष्णुः; 'नमस्कृत्य सुरेशाय तस्मै देवाय रंहसे। प्रयाताः प्राग्दिशं पुण्यां विपुलं कश्यपाश्रमम्'—इति महाभारते हरिवंशपर्वणि (२५२।१८)। ४४३

रक्तम् क्ली. [रज्यते अङ्गमनेनेति । रञ्ज्+क्त] शरीरस्थसप्तधात्वन्तर्गतधातुविशेषः; रुधिरम्; असृक्; लोहितम्; अस्त्रं; क्षतजं; शोणितं; पलङ्कारं; रोहितम्; रङ्गकम्; कीलालम्; अङ्गजं; रौधिरं; स्वजं; त्वग्जं; शोणं; लोहं; चर्मजम्; 'यदा रसो यकृद्याति तत्र रञ्जकपित्ततः। रागं पाकं च सम्प्राप्य जीवस्याधार उत्तमः। रक्तं सर्वशरीरस्थं स भवेद् रक्तसंज्ञकः। स्निग्धं गुरु चलं स्वादु विदग्धं पित्तवद्भवेत्'—इति वाग्भटः। कुङ्कुमम्; ताम्रं; 'रक्तं वरिष्ठं म्लेच्छास्यं ताम्रं शुल्वमुडुम्बरम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। प्राचीनामलकं; पद्मकम्; 'रक्तं कोकनदं पद्ममल्पमन्यदलोहितम्'—इति रत्नमाला। सिन्दूरं; हिङ्गुलम्; 'रक्तं मर्कटशीर्षं च हिङ्गुलं दरदो रसः'—इति रत्नमाला। रक्तचन्दनभेदः; 'पतङ्गं रञ्जनं रक्तं पत्राङ्गं च कुचन्दनम्'—इति रत्नमाला। पुं. लोहितवर्णः; कुसुम्भः; हिज्जलः; बन्धूकः; 'बन्धूको बन्धुजीवश्च रक्तो माध्याह्निकोऽपि च'—इति भावप्रकाशः। ६२२

रक्तः त्रि. [रञ्ज् करणे+क्त] लोहितः; अनुरक्तः; नील्यादिरञ्जितः; क्रीडारतः। ७३३

रक्तशालिः पुं. [रक्तवर्णः शालिः] रक्तवर्णधान्यविशेषः; ताम्रशालिः; शोणशालिः; लोहितः; 'रक्तशालिर्वरस्तेषु बल्यो वर्ण्यस्त्रिदोषजित्। चक्षुष्यो मूत्रलः स्वर्यः शुक्रलस्तृड् ज्वरापहः। विषव्रणश्वासकासदाहनुद्वह्निपुष्टिदः'—इति भावप्रकाशः। ५८०

रक्तश्यामः त्रि. [विशेषणसमासः] धूम्रः; धूमलः। ७३७

रक्तहंसा स्त्री. [रक्ता वशीभूता हंसा अत्र] रागिणीविशेषः। १०४ अ

रक्ता स्त्री. [रक्त+टाप्] सप्तार्चिषो जिह्वाभेदः; गुञ्जा; 'रक्ता सा काकचिञ्चीस्यात् काकानन्ती च रक्तिका। काकादनी काकपीलुः सा स्मृता काकवल्लरी'—इति भावप्रकाशः। लाक्षा; मञ्जिष्ठा; उष्ट्रकाण्डी। ६८

रक्ताक्षः पुं. [रक्ते लोहिते अक्षिणी अस्य। 'अक्ष्णोऽदर्शनात्' इति अच्] महिषः; पारावतः; चकोरः; क्रूरः; सारसः; अब्दविशेषः; 'रक्ताक्षमब्दं कथितं तृतीयं यस्मिन् भयं दंष्ट्रिकृतं गदाश्च'—इति बृहत्संहितायाम् (८।५१)। रक्तवर्णचक्षुर्युक्ते त्रि.। 'कथमिन्दीवरश्यामो रक्ताक्षः प्रियदर्शः। सुखभागी न दुःखार्हो शयितो भुवि राघवः'—इति रामायणे (२।८८।१९) 'न श्रीस्त्यजति रक्ताक्षं नार्थः कनकपिङ्गलम्। न दीर्घबाहुमैश्वर्यं न सौख्यं प्रहसन्मुखम्'—इति ज्योतिःसागरे। २२७

रक्षः [स्] क्ली. [रक्षत्यस्मादिति । रक्ष्+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इति असुन्] राक्षसः; 'दृष्ट्वा तु विकलान् व्यङ्गाननाथान् रोगिणस्तथा। दया न जायते यस्य स रक्ष इति मे मतिः'—इत्याग्नेये। मनुरुवाच—'रक्षोघ्नानि विषघ्नानि यानि धार्याणि भूभुजा। अगदानि समाचक्ष्व तानि धर्मभृतांवर!' मत्स्य उवाच—'पत्रिका रोहिणी चैव रक्तमाला महौषधी। तथामलकवन्दारं या च चित्रपटोलिका। काकोली क्षीरकाकोली पीलुपर्णी तथैव च। केशिनी वृश्चिकाली च महानागा

शतावरी। तथा गरुडवेगा च स्थले कुमुदिनी तथा। स्थले चोत्पलिनी या च महाभूमिलता च या। उन्मादिनी सोमराजो सर्वरत्नानि पार्थिव ! विशेषान्मरकतान्यत्र कीटपक्षविशेषतः। जीवजाताश्च मणयः सर्वे धार्या विशेषतः। रक्षोघ्नाश्च यशस्याश्च कृत्यावेताल-नाशनाः' —इति मात्स्ये १९२ अध्यायः। ७३

रक्षिवर्गः पुं. [रक्षिणां वर्गः समूहः] राजाङ्गरक्षक-गणः; अनीकस्थः। ४३३

रङ्कुः पुं. [रमते इति। रम्+बाहुलकात् कु] मृगविशेषः स तु शबलपृष्ठहरिणः। २३०

रङ्गः पुं. [रञ्ज्+घञ्] नाट्यस्थानम्; 'इयं रङ्गप्रवेशेन कलानाञ्चोपशिक्षया। वञ्चनापण्डितत्वेन स्वरनैपुण्य-माश्रिता'–इति मृच्छकटिकप्रकरणे १। लक्षणया नाट्य-स्थानस्थितो जनः; सूत्रधारः—'आर्ये ! साधु गीतम्। अहो रागापहृतचित्तवृत्तिरालिखित इव विभाति सर्वतो रङ्गः। तदिदानीं कतमं प्रयोगमाश्रित्यैनमाराधयामः'— इति अभिज्ञानशाकुन्तले, १ प्रस्तावनायाम्। राजमार्गः; 'अवतार्य तदा रङ्गे तां भार्यां नृपसत्तमः'—इति देवीभागवते। टङ्कणः; खादिरसारः; रागः; 'वासो यथा रङ्गवशं प्रयाति तथा स तेषां वशमभ्युपैति'— इति महाभारते(५।३६।११)। नृत्यम्; 'रङ्गोपजीवी कैवर्तः कुण्डाशी गरदस्तथा। सूचीमाहिषकश्चैव पर्व-कारी च यो द्विजः'—इति विष्णुपुराणे (२।२६।२०)। [रजति आसज्जति मल्लोऽत्र। रञ्ज्+अधिकरणे घञ्]। रणभूमिः; 'वृष्णीनां परदेवतेति विदितो रङ्गं गतः साग्रजः—इति भागवते (१०।४३।१७)। क्ली.– पुं. [रङ्गतीति। रङ्ग्+अच्। रज्यते अस्मिन्। रञ्ज्+अधिकरणे घञ् वा] धातुविशेषः; त्रपुः; त्रपुषम्; आपूषं; वङ्गं; मधुरं; हिमं; कुरूप्यं; पिच्चटं; पूतिगन्धं; 'राँगा' इति भाषा। 'श्वेतं मृदु लघु स्वच्छं स्निग्धमुष्णसहं हिमम्। सूत्रपत्रकरं कान्तं त्रपु श्रेष्ठमुदाहृतम्। क्षुरकं मिश्रकं चापि द्विविधं वङ्गमुच्यते। उत्तमं क्षुरकं तत्र मिश्रकं त्वहितं मतम्'— इति राजनिघण्टः। ९७

रङ्गाजीवः पुं. [रङ्गो हरितालादिस्तेनाजीवतीति। रङ्ग+जीव्+अण्। यद्वा रङ्ग आजीवोऽस्य] चित्रकरः; नटः। ५९१

रचना स्त्री. [रच्यते इति, रच्+णिच्+'ण्यासश्रन्थो युच्' इति युच्] निर्मितिः; कृतिः; सन्दर्भः; गुम्फः; स्रन्थनं; श्रन्थनं; ग्रन्थनं; रचनं; निर्माणम्; 'असा-धारणचमत्कारकारिणी रचना हि निर्मितिः'—इत्य-लङ्कारकौस्तुभे १ किरणः। कुसुमप्रकारादेः पत्रावल्या-देश्च रचनं; परिस्पन्दः; परिष्यन्दः; 'भूषाणामर्द्ध-रचना वृथा विश्वगवेक्षणम्। रहस्याख्यानमीषच्च विक्षेपो दयितान्तिके'—इति साहित्यदर्पणे (३।१४९)। यथाक्रमेण स्थापनं; निवेशः; स्थितिः; 'शृणु व्यूहस्य रचनामर्जुनस्य यथागतः'—इति महाभारते (८।४६।-१०)। उद्यमः; 'दैवाहतार्थरचना ऋषयोऽपि देव ! युष्मत्प्रसङ्गविमुखा इह संसरन्ति'—इति भागवते (३।९।१०)। 'दैवेनाहताः सर्वतः प्रतिहताः अर्थानां रचनाः अर्थार्थोद्यमाः येषाम्'—इति तट्टीकायां श्रीधर-स्वामी। [रचयतीति, रचि+ल्यु+टाप्] विश्वकर्मणो भार्या; 'त्वष्टुर्दैत्यात्मजा भार्या रचना नाम कन्यका। सन्निवेशस्तयोर्जज्ञे विश्वरूपश्च वीर्यवान्।' ७३०, ७९५।

रजः [स्] क्ली. [रज्यते रजतीति वा। रञ्ज्+'भूर-ञ्जिभ्यां कित्' इत्यसुन्] रेणुः; धूलिः; 'पादाहतं यदुत्थाय मूर्द्धानमधिरोहति। स्वस्थादेवापमानेऽपि देहिनस्तद्वरं रजः'–इति माघे (२।४६)। 'आयुष्कामो न सेवेत तथा सम्मार्जनीरजः। तथाश्वरथधान्यानां गवां चैव रजः शुभम्। अशुभं च विजानीयात् खरोष्ट्राजाविकेषु च। गवां रजो धान्यरजः पुत्रस्याङ्गभवं रजः। एतद्रजो महाशस्तं महापातकनाशनम्। अजारजः खररजो यत्तु सम्मार्जनीरजः। एतद्रजो महापापं महाकिल्विष-कारणम्'—इति गारुडे ११४ अध्यायः। रजः; उदकम्; 'वियत्तिरोघसणमच्युतं रजोतिष्ठिपो दिव आतासु बर्हणा'—इति ऋग्वेदे (१।५६।५) 'रज उदकम्'—इति तद्भाष्ये सायणः। भुवनम्; 'असूर्त्ते सूर्त्ते रजसि निषत्ते ये भूतानि समकृण्वन्निमानि'—इति ऋग्वेदे। 'रजसि लोके'—इति तद्भाष्ये सायणः। ज्योतिः; 'वीन्द्र यासि दिव्यानि रोचना विपार्थिवानि रजसा पुरुष्टुत'—इति ऋग्वेदे (१०।३२।२)। रजसा आत्मीयेन ज्योतिषा विद्युल्लक्षणेन, यद्वा रजः शब्दाच्छस आकारः पार्थिवान् लोकान्—इति तद्भाष्ये सायणः। स्त्रीणां मासि मासि योनिनिःसृतरक्तं; पुष्पम्;

आर्तवम्; ऋतुः; कुसुम; रजम्; 'मासि मासि रजः स्त्रीणां रसजं स्रवति त्र्यहम्। वत्सराद् द्वादशादूर्ध्वं याति पञ्चाशतः क्षयम्'—इति वाग्भटः। प्रकृतेर्गुणविशेषः; तत्तु रागद्वेषात्मकं दुःखहेतुः। रजोऽदन्तः पुँल्लिङ्गोऽपि। 'रजोऽयं रजसा सार्द्धं स्त्रीपुष्पगुणधूलिषु।' दुःखजनकगुणः; तस्य धर्मः—कामः, क्रोधः, लोभः, मानः, दर्पश्च। 'काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः। महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम्'—इति भगवद्गीतायाम्। परागः; 'पद्मकोशरजो दिक्षु विक्षिप्तवनोत्सवम्'—इति भागवते (४।२४।२२)। ५४३

रजः पुं. [रञ्जयतीति। रञ्ज्+अच्। निपातनान्नलोपः] रेणुः; धूलिः; 'अर्घाः पादरजोपमाः'—इति उज्ज्वलदत्तः (४।२१६)। गुणभेदः; आर्तवं; स्कन्दस्य सेनाविशेषः; 'दण्डबाहुः सुबाहुश्च रजः कोकिलकस्तथा'—इति महाभारते (९।४५।७१)। विरजपुत्रः; 'त्वष्टा त्वष्टुश्च विरजो रजस्तस्याप्यभूत्सुतः'—इति विष्णुपुराणे (१।१०।१३)। परागः; 'पद्मपुष्परजोन्मिश्रो वृक्षान्तरविनिःसृतः। निश्वास इव सीताया वायुर्वाति मनोरमः'—इति रामायणे (३।७९।२९)। क्ली. रजम् [रञ्जयतीति, रञ्ज्+अच्। निपातनात् सिद्धम्] स्त्रीकुसुमम्। ४४३,५४३

रजकः पुं. [रजति निर्णेजनेन श्वेतिमानमापादयति वस्त्रादीनामिति। रञ्ज्+'नृतिखनिरञ्जिभ्यः परिगणनं कर्तव्यम्' इति ष्वुन्] वर्णसङ्करजातिविशेषः; स च तीवरपत्न्यां धीवराज्जातः; निर्णेजकः; शौचेयः; कर्मकीलकः; धावकः; रजोहरः; 'वासांसि फलकैः श्लक्ष्णैर्निर्णिज्याद्रजकः शनैः। अतोऽन्यथा हि कुर्वीत दण्ड्यः स्याद्रुक्ममाषकम्'—इति मात्स्ये २०१ अध्यायः। 'रजके चैव शैलूषे वेणुचर्मोपजीविनि। एतेषां यस्तु भुञ्जीत द्विजश्चान्द्रायणं चरेत्'—इति प्रायश्चित्तविवेकः। अंशुकः; रजकी; रजकपत्नी। ५९३

रजतम् क्ली. [रजति प्रियं भवति, रज्यते इति वा। रञ्ज्+'पृषिरञ्जिभ्यां कित्' इति अतच्, कित्कार्यं च] रूप्यं; हारः (७९३); हस्तिदन्तः; धवलः; शोणितं; ह्रदः; शैलः; पर्वतप्रभेदः; स तु शाकद्वीपस्थ एव। 'रत्नमालान्तरमयः शाल्मलश्चान्तरालकृत्। तस्या परेण रजतो महानस्तो गिरिः स्मृतः'—इति मात्स्ये (१२१।१४)। स्वर्णं; शुक्लवर्णविशिष्टे त्रि.। 'सौवर्णं राजतं ताम्रं पितॄणां पात्रमुच्यते। रजतस्य कथा वापि दर्शनं दानमेव वा। राजतैर्भाजनैरेषामथवा रजतान्वितैः। वार्यपि श्रद्धया दत्तमक्षयायोपकल्पते। यथार्घ्यपिण्डभोज्यादौ पितॄणां राजतं मतम्। शिवनेत्रोद्भवं तस्माद्दत्तं तत्पितृवल्लभम्। अमङ्गलं तद्यत्नेन देवकार्येषु वर्जितम्'—इति मात्स्ये १७ अध्यायः। १७२

रजनिः स्त्री. [रजन्ति लोका यत्र। रञ्ज्+बाहुलकादनि] रात्रिः; रजनी; निशा; निशीथिनी। १०७

रजनिकरः पुं. [रजनिं करोतीति। रजनि+कृ+ट] चन्द्रः; चन्द्रमाः। ४३

रजनी स्त्री. [रजनि+कृदिकारादिति ङीष्] रात्रिः; 'सा व्युष्ट्वा रजनीं तत्र पितुर्वेश्मनि भाविनी। विश्वाच्या मातरं राजन्! इदं वचनमब्रवीत्'—इति महाभारते (३।६९।२८)। हरिद्रा; 'हरिद्रा पीतिका गौरी काञ्चनी रजनी निशा। मेहघ्नी रञ्जनी पीता वर्णिनी रात्रिनामिका'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। 'अस्याः सुराधीशदिशः पुरासीत् यदम्बरं पीतमिदं रजन्या। चन्द्रांशुचूर्णव्यतिचुम्बितेन तेनाधुना नूनमलोहितापि'—इति नैषधे (२२।४९)। जतुका; 'दन्त्यमृताश्वत्थरजनीसुवर्णपुष्पाग्निमन्थाश्च'—इति बृहत्संहितायाम् (४४।९)। नीलिनी; शाल्मलीद्वीपस्थनदीभेदः; 'अनुमती सिनीवाली सरस्वती कुहू रजनी नन्दा राकेति'—इति भागवते (५।२०।१०)। १०७

रजनीकरः पुं. [रजनीं करोतीति। रजनी+कृ+ट] चन्द्रः; चन्द्रमाः; 'हित्वा गृहान् सुतान् भोगान् वैदर्भी मदिरेक्षणा। अन्वधावत पाण्ड्येशं ज्योत्स्नेव रजनीकरम्'—इति भागवते (४।२८।३४)। ४३

रजनीमुखम् क्ली. [रजन्या मुखम्] प्रदोषः; 'ततः शशाङ्कधवले सञ्जाते रजनीमुखे। पाणिनालम्ब्य भूपालं शय्यावेश्म विवेश सा'—इति राजतरङ्गिण्याम् (४।४३३)। १०९

रजस्वला स्त्री. [रजोऽस्त्यस्याः। 'रजःकृष्यासुतीति वलच्+टाप्] रजोयुक्ता; स्त्रीधर्मिणी; अवी; आत्रेयी; मलिनी; पुष्पवती; ऋतुमती; उदक्या; दुरिः; पुष्पहासा; वली; पुष्पिता; अवीरा; विफली; निष्फली; म्लाना; पांशुला; 'रजस्वला तु संस्पृष्टा ब्राह्मण्या ब्राह्मणी यदि। एकरात्रं निराहारा पञ्च-

गव्येन शुध्यति । रजस्वला तु संस्पृष्टा राजन्या ब्राह्मणी तु या । त्रिरात्रेण विशुद्धिः स्यात् व्याघ्रस्य वचनं यथा । रजस्वला तु संस्पृष्टा वैश्यया ब्राह्मणी च या । पञ्चरात्रं निराहारा पञ्चगव्येन शुध्यति । रजस्वला तु संस्पृष्टा शूद्रया ब्राह्मणी यदि । षड्रात्रेण विशुद्धयेत्तु ब्राह्मणी कामचारतः । अकामतश्चरेदर्द्धं ब्राह्मणी सर्वजातिषु' —इति काश्यपः । 'प्रथमे दिवसे कान्तां यो हि गच्छेद्रजस्वलाम् । ब्रह्महत्याचतुर्थांशं लभते नात्र संशयः । स पुमान्नहि कर्मार्हो दैवे पित्र्ये च कर्मणि । अधमः स च सर्वेषां निन्दितश्चायशस्करः । द्वितीयदिवसे नारीं यो व्रजेच्च रजस्वलाम् । कामतः परिपूर्णां च ब्रह्महत्यां लभेद् ध्रुवम् । आजीवनं नाधिकारी पितृविप्रसुरार्चने । अमनुष्योऽयशस्यः स्यादित्याङ्गिरसभाषितम् । तृतीयदिवसे जायां यो हि गच्छेद्रजस्वलाम् । स मूढो ब्रह्महत्यां च लभते नात्र संशयः । पूर्ववत् पतितः सोऽपि न चार्हः सर्वकर्मसु । असत्पुत्रा चतुर्थेऽह्नि न गच्छेत्तां विचक्षणः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । रजोयुक्ते त्रि. । ४८८

रजोहरणधारी [न्] पुं. [रजसो मलस्य हरणं यस्मात् तत् रजोहरणं शुभ्रवस्त्रं, तद्धारयति । व्यधिकरणबहुव्रीहौ कर्मण्यण्] श्वेतवासाः; सिताम्बरः । ३४४

रज्जुः स्त्री. [सृज्यते रच्यते इति । सृज्+'सृजेरसुश्च' इति उ, असुगागमश्च, धातुसकारलोपश्च । आगमसकारस्य जश्त्वम् दकारः, तस्यापि चुत्वम् जकारः । अप्राणिजातेश्चारज्वादीनामिति कथनात् न ऊङ्] बन्धनसाधनवस्तु; शुल्लं; वराटकः; घटी; गुणः; शुल्ला; शुल्वं; शुल्वः; शुल्वा; शुल्वी; सुष्मं; वराटः; वटाकरः; वटीगुणः; 'कार्पासकीटजीर्णानां द्विशफैकशफस्य च । पक्षिगन्धौषधीनां च रज्ज्वाश्चैव त्र्यहं पयः'—इति मनुः (११।१६९) । वेणी; प्रत्यङ्गविशेषः; 'रज्जवः सेवन्यः संघाताः'—इति सुश्रुते शारीरस्थाने ५ अध्याये । ५९७

रणम् क्ली.– पुं. [रणन्ति शब्दायन्तेऽत्रेति । रण्+'ग्रहे' इत्यत्र 'वशिरण्योरुपसंख्यानम्' इति काशिकोक्त्या अप्] युद्धम्; 'न कूटैरायुधैर्हन्याद्युध्यमानो रणे रिपून् । न कर्णिभिर्नापि दिग्धैर्नाग्निज्वलिततेजनैः'—इति मनुः (७।९०) । रमणम्; 'शाचिगो शाचि पूजनाय रणाय ते सुतः'—इति ऋग्वेदे (८।१७।१२) । 'रणाय रमणाय'—इति तद्भाष्ये सायणः । रमणीये त्रि. । 'एकस्यावन्त्यो रावतं रणाय वशमश्विनासनये सहस्रा'—इति ऋग्वेदे (१।११६।२१) 'रणाय रमणीयाय'—इति तद्भाष्ये सायणः । पुं. [रण्+अप्] शब्दः; कणः; गतिः । ४५३

रणरणकः पुं.— उत्कण्ठा; औत्सुक्यम् 'अयं सैवेयं रणरणकदायिनी चित्रदर्शनाद्विरहभावना देव्याः स्वप्नोद्वेगं करोति'—इति उत्तररामचरिते प्रथमाङ्के । ७४२

रतकूजितम् क्ली. [रतस्य कूजितम्] मैथुनकालिकध्वनिः; मणितम् । ५६९

रतार्थिनी स्त्री. [रतमर्थयते इति । रत+अर्थ्+णिनि+ङीप्] मैथुनाभिलाषिणी । ४८५

रतिः स्त्री. [रम्यतेऽनया इति । रम्+क्तिन्] कामदेवपत्नी; 'मनो मथ्नाति सर्वेषां पञ्चबाणेन कामिनाम् । तन्नाम मन्मथस्तेन प्रवदन्ति मनीषिणः । तस्य पुंसो वामपार्श्वात् कामस्य कामिनी वरा । बभूवातीव ललिता सर्वेषां मोहकारिणी । रतिर्बभूव सर्वेषां तां दृष्ट्वा सस्मितां सतीम् । रतीति तेन तन्नाम प्रवदन्ति मनीषिणः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । निधुवनम् (५६९); अनुरागः; 'नोत्पादयेद् यदि रतिं श्रम एव हि केवलम्' —इति भागवते (१।२।८) । रतम्; 'कामिनीं प्रथमयौवनान्वितां मन्दवल्गुमृदुपीडितस्वनाम् । उत्स्तनीं समवलम्ब्य या रतिः सा न धातृभवनेऽस्ति मे मतिः'—इति बृहत्संहितायाम् (७४।१८) । गुह्यम्; अप्सरोविशेषः; 'विद्युता प्रशमी दान्ता विद्योता रतिरेव च । एताश्चान्याश्च वै बह्व्यः प्रनृत्ताप्सरसः शुभाः'—इति महाभारते (१३।१९।४५) । प्रीतिः; 'तेषां केतुरिव ज्येष्ठो रामो रतिकरः पितुः'—इति रामायणे (१।१८।२४) । 'रतिः प्रीतिः'—इति तट्टीकायां रामानुजः । ३४

रतिपतिः पुं. [रत्याः पतिः] कामदेवः; रतिप्रियः; रतिरमणः; 'पश्चात्पिप्पलमाश्रितो रतिपतिर्देवस्य रत्योत्पले, बिभ्रत्या सममैक्षवं धनुरिषून् पौष्पान् वहन् पञ्च च'—इति महागणपतिस्तोत्रे (१०) । देशविशेषस्थस्त्रीणां स्थानविशेषे तस्याविर्भावो यथा—'वाचि श्रीमथुरीणां जनकजनपदस्थायिनीनां कटाक्षे, दन्ते गौडाङ्गनानां सुललितजघने चोत्कलप्रेयसीनाम् । तैलङ्गीनां नितम्बे

सजलवनरुचौ केरलीकेशपाश, कार्णाटीनां कटौ च स्फुरति रतपतिर्गुर्जरीणां स्तनेषु'—इति साहित्यदर्पणम्। ३२

रतिप्रियः पुं. [रतेः प्रियः] कामदेवः; सुरतप्रियः; स्त्री. शक्तिविशेषः; 'गोदावर्यां त्रिसन्ध्या तु गङ्गाद्वारे रतिप्रिया'—इति देवीभागवते (७।३०।६८)। ३२

रत्नम् क्ली. [रमयति हर्षयतीति। रम्+णिच्+'रमेस्त च' इति न, तकारश्चान्तादेशः] अश्मजातिः; मुक्तादि; मणिः; 'न रत्नमन्विष्यति मृग्यते हि तत्'—इति कुमारे (५।४५)। स्वजातिश्रेष्ठः; 'स्त्रीरत्नमतिचार्वङ्गी द्योतयन्ती दिशस्त्विषा'—इति मार्कण्डेये (८५।४५)। 'जातौ जातौ यदुत्कृष्टं तद्रत्नमिह कथ्यते।' माणिक्यं; वज्रम्। १७६

रत्नगर्भा स्त्री. [रत्नानि गर्भे मध्येऽस्याः] पृथिवी (उपचाराद् गुणवत्पुत्रवती)। १५७

रत्नप्रभा स्त्री. [रत्नानां प्रभात्र] रत्नसूः; रत्नसूतिः; भूमिः; जिनानां नरकविशेषः; 'रत्नशर्कराबालुकापङ्कधूमतमप्रभाः। महातमप्रभा वेत्यधोऽधो नरकभूमयः'—इति हेमचन्द्रः। १५७

रत्नसानुः पुं. [रत्नानि सानौ प्रस्थे यस्य] सुमेरुपर्वतः। १३६

रत्नसूतिः स्त्री. [रत्नानां सूतिः उत्पत्तिर्यत्र] पृथिवी। १५७

रत्नाकरः पुं. [रत्नानामाकरः उत्पत्तिस्थानम्] समुद्रः; 'दुर्गं समाश्रित्य महोर्मिमन्तं रत्नाकरं वरुणस्यालयं स्म'—इति महाभारते (३।१०१।२३)। रत्नोत्पत्तिस्थानं; कविविशेषः; 'मा स्म सन्तु हि चत्वारः प्रायो रत्नाकरा इमे। इतीव स कृतो धात्रा कविरत्नाकरोऽपरः'—इति राजशेखरः ६५२

रत्निः पुं. [ऋच्छति प्राप्नोत्यनेनेति। ऋ+'ऋतन्यञ्जीति' कत्नि] बद्धमुष्टिहस्तः; स्त्रीपुंसयोः रत्यरत्नी; 'अष्टरत्निर्महाबाहुर्व्यूढोरस्कः सुदुर्जयः'—इति महाभारते (८।७२।२७)। ५३६

रथः पुं. [रम्यतेऽनेनात्र वा, रम्+'हनिकुषिनीरमिकाशिभ्यः क्थन्' इति क्थन् अनुनासिकलोपश्च] चक्रविशिष्टयुद्धार्थयानं; शताङ्गः; स्यन्दनः; स्यन्दनमात्रम्; 'हस्त्यश्वरथदोलाद्यैर्भ्रमणं वातकोपनम्। स्थिरीकरणमङ्गानां बल्यं वह्निविवर्द्धनम्'—इति राजवल्लभः। कायः; 'आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव च'—इति उपनिषदि। चरणः; वेतसवृक्षः; 'वेतसो नम्रकः प्रोक्तो वानीरो वञ्जुलस्तथा। अभ्रपुष्पश्च विदुलो रथः शीतश्च कीर्तितः'—इति भावप्रकाशः। तिनिशवृक्षः। ४४४

रथकरः पुं. [करोतीति। कृ+अच्। रथस्य करः] रथकारः; वर्धकिः। ५८७

रथकारः पुं. [रथं करोतीति, कृ+अण्] रथनिर्माणकर्ता; स तु करणीगर्भे माहिष्याज्जातः; तक्षा; वर्द्धकिः; त्वष्टा; काष्ठतट्; सूत्रधारः; वर्द्धकयः; रथकरः; काष्ठतक्षकः। ५८७

रथगोपनम् क्ली. [रथस्य गोपनं शस्त्रादिभ्यो रक्षार्थमावरणम्] रथगुप्तिः; वरूथः; रथसंवृतिः। ४४९

रथाङ्गः पुं. [रथस्य अङ्गं चक्रं यस्य नाम्नीति शेषः] कोकः; चक्रः; रथाह्वयः; रथनामकः; चक्रवाकपक्षी; रथनामा; 'विरहतरलजिह्वा वह्वा ह्वयन्त्यतिविह्वलामिह सहचरीं नामग्राहं रथाङ्गविहङ्गमाः'—इति नैषधे (१९।३५)। क्ली. चक्रं; सुदर्शनचक्रं; रथावयवमात्रम्। २४४

रथाङ्गपाणिः पुं. [रथाङ्गं सुदर्शनचक्रं पाणौ यस्य] विष्णुः; 'स वेद धातुः पदवीं परस्य दुरन्तवीर्यस्य रथाङ्गपाणेः'—इति भागवते (१।३।३८)। २२

रथी [न्] पुं. [रथोऽस्यास्तीति। रथ+इनि] रथस्वामी; राजादिः; रथिकः; रथिनः; रथारोही; रथिरः; साराक्षः; स्यन्दनारोहः; 'पत्तिः पदाति रथिनं रथेशस्तुरङ्गसादी तुरगाधिरूढम्'—इति रघौ (७।३७)। ३९०

रथ्या स्त्री. [रथानां समूहः। रथ+'खलगोरथात्' इति यत्] अभ्यन्तरमार्गः; प्रतोली; विशिखा; आवर्तनी; रथसमूहः; रथकटचा; रथकडचा; [रथाय हिता, रथ+'रथाद्यत्' इति यत्। यद्वा रथं वहतीति, 'तद् वहतीति' यत्] पन्थाः; 'पानागारेषु रथ्यासु सर्वतीर्थेषु चाप्यथ। चत्वरेषु च कूपेषु पर्वतेषु वनेषु च'—इति महाभारते (१।१४०।६०)। चत्वरम्। २८९

रदः पुं. [रदतीति। रद् विलेखने+पचादित्वाद् अच्] दन्तः; 'भ्रमसि- प्रकटयसि रदं करं प्रसारयसि तृणमपि श्वयसि। धिङ्मानं तव कुञ्जर! जीवं न जुहोषि

जठराग्नौ'—इति आर्यासप्तशत्याम्। विलेखनम्। ५२७

रदनः पुं. [रद्यतेऽनेनेति। रद्+करणे ल्युट्। रदतीति, रद्+ल्यु वा] दन्तः; 'रदनैः पन्नगरिपुं करेण शिरसा तथा। ऐरावतो गजपतिराजघान नवंस्तथा'—इति हरिवंशे (१३०।८७)। [रद्+भावे ल्युट्] उत्खनने क्ली.। ५२७

रदी [न्] पुं. [रदनौ प्रशस्तदन्तावस्य स इति। रद+इनि] रदनी; हस्ती; दन्ती। २१४

रन्ध्रम् क्ली. [रन्धयति हिनस्त्यनेनेति। रध्+बाहुलकाद् रक्,नुम्] छिद्रम्; 'नासानयनकर्णानां द्वे द्वे रन्ध्रे प्रकीर्तिते मेहनापानवक्त्राणाम् एकैकं रन्ध्रमुच्यते। दशमम् मस्तके प्रोक्तं रन्ध्राणीति नृणां विदुः। स्त्रीणान्त्रीण्यधिकानि स्युः स्तनयोर्गर्भवर्त्मनः। सूक्ष्मच्छिद्राणि चान्यानि मतानि त्वचि जन्मिनाम्'—इति शार्ङ्गधरे। दूषणम्; 'रन्ध्रान्वेषणदक्षाणां द्विषामामिषतां ययौ'—इति रघौ (१२।११)। योनिः; रन्ध्रागतमथाश्वानां शिखोद्भेदश्च वर्हिणाम्। नेत्ररोगः कोकिलस्य ज्वरः प्रोक्तो महात्मना'—इति महाभारते (१२।२८२।५३)। ६२४

रमणः पुं. [रमते रमयतीति वा। रम्+णिच् वा, ल्यु] पतिः; 'वचनीयमिदं व्यवस्थितं रमण! त्वामनुयामि यद्यपि'—इति कुमारे (४।२१)। [रमयति स्त्रीपुरुषाणामन्तःकरणमिति। रम्+णिच्+ल्यु] कामदेवः; गर्दभः; वृषणः; महारिष्टः; धरवसुपुत्राणामन्यतमः; 'कल्याणिन्यां ततः प्राणो रमणः शिशिरोऽपि च। मनोहरा धरात् पुत्रानवापाथ हरेः सुता'—इति मात्स्ये (५।२६)। रमणीये त्रि.। 'रमणं। विहरन्तीनां रमणैःसिद्धयोषिताम्'-इति भागवते (४।६।१०)। क्ली. [रमयतीति, रम्+णिच्+ल्य] पटोलमूलं; जघनं; [रम्+भावे ल्युट्] ममनम्; अब्रह्मचर्यकं; ग्राम्यधर्मः; सुरतं; रतं; सम्प्रयोगः; निधुवनं; मैथुनं; रतिः; उपसृष्टं; धर्षितं; क्रीडारत्नं; महासुखं; त्रिभद्रं; योगमिथुनम्; अभिमानितम्; 'विकचकमलगन्धैरन्धयन् भृङ्गमालाः, सुरभितमकरन्दं मन्दमावाति वातः। प्रमदमदनमाद्यद्यौवनोद्दामरामाः, रमणरभसखेदस्वेदविच्छेददक्षः'—इति माघे (११।१९)। क्रीडनं; रत्युत्पादनम्; 'रामेति लोकरमणाद्बलं बलवदुच्छ्रयात्'—इति भागवते (१०।२।१३) 'लोकस्य रमणाद् रत्युत्पादनात्'—इति तट्टीकायां स्वामी। वनविशेषः; 'भाति चैत्रवनं चैव नन्दनं च वनं महत्। रमणं भावनं चैव वेणुमद्वै समन्ततः'—इति हरिवंशे (१५५।२१)। ४९७

रमणा स्त्री. [संज्ञाविशेषे टाप्] स्त्री; रमणी; पीठस्थशक्तिविशेषः; 'रमणा रामतीर्थे तु यमुनायां मृगावती' इति देवीभागवते (७।३०।६७)। ४८२

रमणी स्त्री. [रमतेऽस्यामिति। रम्+ल्युट्+ङीप्] नारी; उत्कृष्टस्त्रीविशेषः; या वपुर्गुणोपचारेण सौभाग्येन कान्तं रमयति सा; सुन्दरी; 'रथेन रमणीयुक्त प्रजानां दत्तकौतुकः'—इति कथासरित्सागरे (५२।२१४)। बालाख्यवृक्षः; 'बाला च रमणी रामा बन्ध्या कामकलापि च'—इति शब्दचन्द्रिका। ४८२

रम्भः पुं. [रम्भते रागमूर्च्छनादिकमनेनेति। रभि+कर्मणि घञ्] वैणवः; लगुडः; दण्डः; यष्टिः; वेणुः; [रम्भते उद्यमशीलो भवति निरन्तरमुदरभरणायेति भावः, रभि+अच्] वानरविशेषः; महिषासुरपिता; 'आराधितो महादेवो रम्भेण सुरवैरिणा। चिरेण स च सुप्रीतस्तपसा तस्य शङ्करः'—इति कालिकापुराणे ५९ अध्यायः। रक्तबीजः; 'दनोः पुत्रौ महाराज! विख्यातौ क्षितिमण्डले। रम्भश्चैव करम्भश्च द्वावास्तां दानवोत्तमौ'—इति देवीभागवते (५।२।१७)। ७२६

रम्भा स्त्री. [रभि+अच्+टाप्] अप्सरोविशेषः; 'अरुणा रक्षिता चैव रम्भा तद्वन्मनोरमा'—इति महाभारते (१।६५।५०)। कदली (१९२); 'तरुमूरुयुगेन सुन्दरी किमु रम्भां परिणाहिना परम्'—इति नैषधे (२।३७)। गौरी; सा तु पीठस्थ शक्तीनामन्यतमा; 'गौरी प्रोक्ता कान्यकुब्जे रम्भा तु मलयाचले'—इति देवीभागवते (७।३०।५८)। गोध्वनिः; वेश्या। ८८

रयः पुं. [रयते अनेनेति। रय्+'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ। रीणात्यनेनेति वा, री गतौ +घ प्रत्ययेन साधुरिति] वेगः; प्रवाहः (६६९); 'प्रवाहः पुनरोघः स्याद्वेणी धारा रयश्च सः'—इति हेमचन्द्रः। 'कथमन्तं न गच्छेम वृक्षस्येव नदीरयाः'—इति महाभारते (२।१७।६)। पुरूरवसः पुत्रभेदः; 'ऐलस्य चोर्वशीगर्भात् षडासन्नात्मजा नृप!, आयुः श्रुतायुः सत्यायू रयोऽथ विजयो जयः'—इति भागवते (९।१५।१)। ४४३

रल्लकः पुं. [रमणं रत्, क्विप्यनुनासिकलोपे, रत् इच्छा,

तां लाति, क रल्लस्ततः स्वार्थे कन्] कम्बलः; पक्ष्म; मृगविशेषः। ५५१

रवः पुं. [रूयते इति, रु शब्दे+भावे अप्] शब्दः; 'धनुरधिज्यमनाधिरुपाददे नरवरो रवरोषितकेशरी'—इति रघौ (९।५४)। १३८

रवणः पुं. [रौतीति। रु+'सुयुरुवृञो युच्' इति युच्] उष्ट्रः, 'उत्पातुमिच्छन् विधृतः पुरो बलान्निधीयमाने भरभाजि यन्त्रके। अर्द्धोज्झितोद्गारविझर्झरस्वरः स्वनाम निन्ये रवणः स्फुटार्थताम्'—इति माघे (१२।९)। कोकिलः; क्ली. कांस्यं; [रु+भावे ल्युट्] रवः; त्रि. शब्दनः; तीक्ष्णः; भण्डकः; चञ्चलः। २००

रविः पुं. [रूयते स्तूयते इति। रु+'अव इः' इति इ] सूर्यः; 'माषमामिषमांसं च मसूरं निम्बपत्रकम्। भक्षयेद्यो रवेर्वारे सप्तजन्मन्यपुत्रकः। आर्द्रकं मधु मत्स्यं च भक्षयेद्यो रवेर्दिने। सप्तजन्म भवेद्रोगी जन्म जन्म दरिद्रता। निम्बं मांसं मसूरं च बिल्वकाञ्जिकमार्द्रकम्। भक्षयेद्यो रवेर्वारे सप्तजन्मन्यपुत्रकः'—इति कर्मलोचने। 'अवतीमांश्च त्रीँल् लोकांस्तस्मात् सूर्यः परिभ्रमात्। अचिरात्तु प्रकाशेत अवनात् स रविः स्मृतः'—इति मात्स्ये १०१ अध्यायः। पर्वतः (८३९); अर्कवृक्षः। ३५

रशना, रसना स्त्री. [रसयति स्वादयतीति, नन्द्यादित्वाल् ल्यु, पृषोदरादित्वात् शत्वम्] जिह्वा; 'रशना काञ्चिजिह्वयोः'—इति धरणिः। [अश्नुते व्याप्नोतीति, अशू व्याप्तौ+'अशे रश् च' इति युच् धातो रशादेशश्च] काञ्ची (५६०); 'इयमप्रतिबोधशायिनीं रशना त्वां प्रथमा रहः सखी'—इति रघौ (८।५८)। रज्जुः; 'होता यक्षद्वनस्पतिमभि हि पिष्टतमया रभिष्ठया रशनयाधित'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (२१।४६)। 'रशनया रज्ज्वा कृत्वा अधित धृतवान् पशून् इति शेषः' इति तद्भाष्ये महीधरः। अङ्गुलयः, अत्र सदा बहुवचनप्रयोगो भवति। ५२१

रश्मिः पुं. [अश्नुते व्याप्नोतीति। अशू व्याप्तौ+'अश्नोतेरश्च' इति मि, धातो रशादेशश्च] किरणः; 'मक्षिका विप्रुषश्छाया गौरश्वः सूर्यरश्मयः। रजो भूर्वायुरग्निश्च स्पर्शे मेध्यानि निर्दिशेत्'—इति मनुः (५।१३३)। प्रभा (६५); वल्गा (४४२); कुशा; (५७५) योक्त्रम्, आबन्धः; पक्ष्म; अश्वरज्जुः; 'यत्र मन्थां विबध्नते रश्मीन् यमित वा इव'—इति ऋग्वेदे (१।२८।४)। 'रश्मीन् अश्वबन्धनार्थान् प्रग्रहान्'—इति तद्भाष्ये सायणः। ३८

रसः पुं. [रसतीति, रस्+पचाद्यच्। यद्वा रस्यते इति। रस् आस्वादने+'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ] विषम्; 'ये मन्त्रेषु रसेषु च प्रणिहितास्तैरेव ते घातिताः'—इति मुद्राराक्षसे २ अङ्के। शृङ्गारादिनवष्वन्यतमः (८६१); 'शृङ्गारवीरबीभत्सरौद्रहास्यभयानकाः। करुणाद्भुतशान्ताश्च नव नाट्ये रसाः स्मृताः'—इति रत्नकोषः। 'रौद्रोऽद्भुतश्च शृङ्गारो हास्यवीरौ दया तथा। भयानकश्च बीभत्सः शान्तः सप्रेमभक्तिकः'—इति प्राचीनः। 'शृङ्गारहास्यकरुणरौद्रवीरभयानकाः। बीभत्साद्भुतसंज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृताः।' कट्वम्लमधुरलवणतिक्तकषायाः; पारदः; 'रसेन्द्रः पारदः सूतः सूतराजश्च सूतकः। शिवतेजो रसः सप्त नामान्येवं रसस्य तु।' 'शिवबीजं रसः सूतः पारदश्च रसेन्द्रकः। एतानि रसनामानि तथान्यानि यथा शिवे।' रागः; 'कविता कोमलवनिता रसयति रसिकं रसेन मिलिता। सा यदि दुर्जनहस्ते पतिता प्रतिपदभग्ना संशयमग्ना'—इत्युद्भटः। द्रवः; निर्यासः; वीर्यं; गुणः; गन्धरसः; 'विद्वान् गोलः पिण्डकश्च पिण्डो बोलो रसो रसः।' विषं; घृतादि; जलम्; 'प्रजानामेव भूत्यर्थं स ताभ्यो बलिमग्रहीत्। सहस्रगुणमुत्स्रष्टुमादत्ते हि रसं रविः'—इति रघुवंशे (१।१८)। शिरालसः; 'कपिनामा कपितैलं कृत्रिमं कपिलश्चलः। तुरुष्को मुक्तिमुक्तश्च पिण्डातैः सिह्लको रसः।' हिङ्गुलम्; 'रक्तं मर्कटशीर्षं च हिङ्गुलं दरदो रसः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। ६४६

रसज्ञा स्त्री. [रसं जानातीति। ज्ञा+क+टाप्] जिह्वा; गङ्गा; रसवेत्तरि त्रि.। 'यो हेमकुम्भस्तननिःसृतानां स्कन्दस्य मातुः पयसां रसज्ञः'—इति रघौ (२।३६)। ५२१

रसना स्त्री. [रस्+युच्+टाप्] जिह्वा; 'घ्राणं च तत्पादसरोजसौरभे श्रीमत्तुलस्या रसनां तदर्पिते'—इति भागवते (९।४।१९)। न्यायमते रसनेन्द्रियग्राह्यो रसो रसत्वादिसहितः; 'रसस्तु रसनाग्राह्यो मधुरादिरनेकधा। सहकारी रसज्ञाया नित्यतादि च पूर्ववत्। घ्राणस्य

गोचरो गन्धो गन्धत्वादिरपि स्मृतः । तथा रसो रसज्ञायास्तथा शब्दोऽपि च श्रुतः'—इति भाषापरिच्छेदः । 'तथारस इति रसत्वादिसहित इत्यर्थः'—इति सिद्धान्तमुक्तावली । रास्ना; 'रास्ना युक्तरसा रस्या सुवहा रसना रसा । एलापर्णी च सुरसा सुगन्धा श्रेयसी तथा' —इति भावप्रकाशः । गन्धभद्रा; काञ्ची (५६०); 'कस्याश्चिदासीद्रसना तदानीम् अङ्गुष्ठमूलार्पितसूत्रशेषा'—इति रघौ (७।१०) । रज्जुः । ५२१

रसवती स्त्री. [रसो विविधखाद्यरसो विद्यतेऽस्यामिति । रस+'रसादिभ्यश्च' इति मतुप्, मस्य वत्वम्] महानसं; पाकस्थानम्; 'यथा धूमाद्वह्नित्वसामान्यविशेषः पर्वते अनुमीयते तस्य च वह्नित्वसामान्यविशेषस्य स्वलक्षणो वह्निविशेषो दृष्टो रसवत्याम्'—इति सांख्यतत्त्वकौमुद्याम् । रसविशिष्टे त्रि. । 'रोषोऽपि रसवतीनां न कर्कशो वा चिरानुबन्धी वा'—इति आर्यासप्तशती (४९८) । २९५

रसा स्त्री. [माधुर्यादिरूपो विविधो रसोऽस्त्यस्यामिति । 'अर्श आदिभ्योऽच्' इति अच् । रसति शब्दायते इति वा । रस+अच्+टाप्] पृथिवी; जिह्वा । रसना; 'रास्ना युक्तरसा रस्या सुवहा रसना रसा । एलापर्णी च सुरसा सुगन्धा श्रेयसी तथा'—इति भावप्रकाशः । पाठा; 'पाठाम्बष्ठाम्बष्ठकी च प्राचीना पापचेलिका । एकाष्ठीला रसा प्रोक्ता पाठिका वरतिक्तिका'—इति भावप्रकाशः । शल्लकी; 'शल्लकी गजभक्ष्या च सुवहा सुरभी रसा । महेरुणा कुन्दुरुकी वल्लकी च बहुस्रवा' —इति भावप्रकाशः । कङ्गुः; द्राक्षा; काकोली; रसातलम्; 'रसा दिशश्च प्रतिनेदिरे जनाः पेतुः क्षितौ वज्रनिपातशङ्कया'—इति भागवते (१०।६।१२) । 'सृजतो मे क्षितिर्वार्भिः प्लाव्यमाना रसां गता' —इति भागवते (३।१३।१६) । 'रसां रसातलं गता' इति तट्टीकायां स्वामिपादाः । नदी; 'याभी रसां क्षोदसोद्रः पिपिणथुः'—इति ऋग्वेदे (१।११२।१२) । 'रसां नदीम्'—इति तद्भाष्ये सायणः । १५६

रसातलम् क्ली. [रसायाः तलं निम्नभागस्थलोकविशेषः] पातालम्; 'जग्राह वेदानखिलान् रसातलगतो हरिः' —इति महाभारते (१२।३४७।५६) । पातालभेदः; 'अतलं वितलं चैव नितलं च तलातलम् । महातलं च सुतलं सप्तमं च रसातलम् । पातालभेदाः सप्तैव नामतः कीर्तिता अमी । तत्र पातालमेकैकं दशसाहस्रयोजनम्' —इति शब्दमाला । ६२३

रहः [स्] अव्य. –क्ली. [रमन्तेऽस्मिन् । रम्+'देशे ह च' इति असुन्प्रत्ययः हकारश्चान्तादेशः] रतिः; (७०८) निर्जनं; विविक्तः; विजनः; छन्नः; निःशलाकः; रहः; उपांशुः; 'तदाननं मृत्सुरभि क्षितीश्वरो रहस्युपाघ्राय न तृप्तिमाययौ'—इति रघौ (३।३) । तत्त्वम्; गुह्यम्; 'रहो निधुवनेऽपि स्याद्रहो गुह्ये नपुंसकम्'—इति रभसः । 'देशादन्यत्र रहोऽव्ययं शब्दान्तरं वास्ति सुरतवाचकम्'—इत्युज्ज्वलः (४।२१४) । ५६९

रहस्यम् क्ली. [रहसि भवम् । यत्] वेदान्तः; उपनिषत्; तथा च मनुस्मृतिः (२।१६५) । ९

रहस्यम् त्रि. [रहसि भवम् । रहस्+दिगादित्वाद् यत्] गोपनीयं; रहसि भवम्; 'न सर्वशस्त्रैः क्रीडेत स्वानि खानि न संस्पृशेत् । रोमाणि च रहस्यानि नाशिष्टेन सदा व्रजेत्'—इति कौर्मे १५ अध्यायः । ७०८

रहितम् त्रि. [रह्+क्त] वर्जितम्; 'जातसूतकमादौ च अन्ते च मृतसूतकम् । गुरोस्तद्रहितं कृत्वा जपकर्म समाचरेत्'—इति तन्त्रसारः । 'दिग्घ्नोऽब्दश्चाखिवरहितो जन्मर्क्षाढ्यो भशेषितः । भं भवेदब्दवेशोऽत्र योगेऽप्येवं विचिन्तयेत्'—इति जातकपद्धतिः । ४८६

राः [ऐ] पुं. [रा दाने+'रातेर्डैः' इति डै] धनम्; 'आत्मानमनु ये चेह ये रायः पशवो गृहाः'—इति भागवते (३।२५।३८) । स्वर्णं (१७३); शब्दः; स्त्री. श्रीः; 'स चत्तयदुषसः, सूर्येण चित्रामस्य केतवो रामविन्दन्' —इति ऋग्वेदे (१०।१११।७) । 'चित्रां नानावर्णां रां रायं श्रियमविन्दन् अलभन्त'-इति तद्भाष्ये सायणः । ८०

राका स्त्री. [रायते दीयते देवेभ्य हविर्यस्याम् । रा दाने+'कृदाधारार्चिकलिभ्यः कः' इति क, बहुलवचनादेव न ह्रस्वः] सम्पूर्णेन्दुतिथिः; पूर्णिमा; 'राकामहं सुहवां सुष्टुतीहुवे शृणोतु नः सुभगा बोधतु त्मना'—इति ऋग्वेदे (२।३२।४) । 'सम्पूर्णचन्द्रा पौर्णमासी राका' —इति सायणाचार्यः । नवजातरजाः स्त्री (४८८); नदीविशेषः; 'तेषु वर्षाद्रयो नद्यश्च सप्तैवाभिज्ञाताः

सुरसः शतशृङ्गो वामदेवः कुन्दः कुमुदः पुष्पावर्षः सहस्रश्रुतिरिति। अनुमती सिनीवाली सरस्वती कुहू रजनी नन्दा राकेति—इति भागवते (५।२०।१०)। कच्छूरोगः; राक्षसीविशेषः; सा च खरस्य शूर्पणखायाश्च जननी। 'मालिनी जनयामास पुत्रमेकं विभीषणम्। राकायां मिथुनं जज्ञे खरः शूर्पणखा तथा'—इति महाभारते (३।२७४।८)। ११२

राक्षसः पुं. [रक्षन्त्यस्माद् रक्षः, रक्ष एव राक्षसः] कौणपः; क्रव्यात्, क्रव्यादः; अस्रपः; आशरः; रात्रिञ्चरः; रात्रिचरः; कर्बुरः; निकषात्मजः; यातुधानः; पुण्यजनः; नैऋतः; यातु; रक्षः; सन्ध्याबलः; क्षपाटः; रजनीचरः; कीलापाः; नृचक्षाः; नक्तञ्चरः; पलाशी; पलाशः; भूतः; नीलाम्बरः; कल्माषः; कटप्रूः; अगिरः; कीलालपाः; नरधिष्मणः; 'रजो मात्रात्मिकामेव ततोऽन्यां जगृहे तनुम्। ततः क्षुद्ब्रह्मणो जाता जज्ञे कोपाश्रयात्ततः। क्षुत्क्षामानन्धाकारांश्च सोऽसृजद्भगवांस्ततः। विरूपाः श्मश्रुला जातास्तेऽभ्यधावन्त तं प्रभुम्। नैवं भो रक्ष्यतामेष तैरुक्तं राक्षसास्तु ते'—इति वह्निपुराणम्। अष्टप्रकारविवाहान्तर्गतविवाहविशेषः; 'आसुरो द्रविणादानाद्गान्धर्वः समयान्मिथः। राक्षसो युद्धहरणात् पैशाचः कन्यकाच्छलात्'—इत्युद्वाहतत्त्वम्। 'हत्वा च्छित्त्वा च भित्त्वा च क्रोशन्तीं रुदतीं गृहात्। प्रसह्य कन्याहरणं राक्षसो विधिरुच्यते'—इति मनुः (३।३३)। अब्दविशेषे पुं.-क्ली.। 'इन्द्राग्निदैवं दशमं युगं यत् तत्राद्यमब्दं परिधाविसंज्ञम्। प्रमाद्यथानन्दमतः परं यत् स्याद्राक्षसं चानलसंज्ञितञ्च'—इति बृहत्संहितायाम् (८।४५)। रक्षः सम्बन्धिनि त्रि.। ७३,८७

रागः पुं. [रञ्जनमिति, रज्यतेऽनेनेति वा। रञ्ज्+भावे करणे वा घञ्, 'घञि च भावकरणयोः' इति नलोपः] प्रीतिः; 'वीतरागभयक्रोधस्थितधीर्मुनिरुच्यते'—इति भगवद्गीताश्लोकटीकायां श्रीधरस्वामी। 'सुखमप्यधिकं चित्ते सुखत्वेनैव रज्यते। यतस्तु प्रणयोत्कर्षात् स राग इति कीर्त्यते'—इत्युज्ज्वलनीलमणिः। मात्सर्यं; लोहितादिः; 'रागेण बालारुणकोमलेन चूतप्रवालोष्ठमलं चकार'—इति कुमारे (३।३०)। अनुरागः; 'तानवमेत्य छिन्नः परोपहितरागमदनसङ्घटितः। कर्ण इव कामिनीनां न शोभते निर्भरः प्रेमा'—इति आर्यासप्तशत्याम् (२७०)। गान्धारादिः; नृपः; चन्द्रः; सूर्यः; लाक्षादिः; 'तमिमं कुरु दक्षिणेतरं चरणं निर्मितरागमेहि मे'—इति कुमारे (४।१९)। रक्तिमत्विट्; रञ्जनम्; अभिमतविषयाभिलाषः; स तु पञ्चक्लेशान्तर्गतः, यथा—'अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः पञ्च क्लेशाः।' 'रागोऽभिमतविषयाभिलाषः' इति शिशुपालवधटीकायां मल्लिनाथः (४।५६)। 'सुखानुशयी रागः'—इति पतञ्जलिः। गानशास्त्रीयरागाः। भरतमते हनूमत्मते च रागः षड्विधः— भैरवः, कौशिक, हिन्दोलः, दीपकः, श्रीरागः, मेघः। किन्तु कल्लिनाथसोमेश्वरमते षड्रागा इमे—श्री रागः, वसन्तः; भैरवः, पञ्चमः, मेघः, नटनारायणः। ८६१

राजधानी स्त्री. [धीयतेऽस्यामिति। धा+अधिकरणे ल्युट्+ङीप्। राज्ञां धानी नगरी] राजधानिका; कोट्टः; राजधानकं; स्कन्धावारः; राजधानं; राजपुरम्। २८६

राजन्यः पुं. [राज्ञोऽपत्यमिति। राजन्+'राजश्वशुराद् यत्' इति यत्] क्षत्रियः; 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः। ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत'—इति ऋग्वेदे (१०।९०।१२)। राजपुत्रः; [राजति दीप्यते इति। राज्+'राजेरन्यः' इति अन्य] अग्निः; क्षीरिकावृक्षः। ४२१

राजयक्ष्मा [न्] पुं. [राज्ञश्चन्द्रस्य क्षयकारको यक्ष्मा, राजा चासौ यक्ष्मा चेति वा] क्षयरोगः; यक्ष्मा; रोगविशेषः; क्षयः; शोषः; रोगराट्; 'मा वेदि यदसावेको जेतव्यश्चेदिराडिति। राजयक्ष्मेव रोगाणां समूहः स महीभृताम्'—इति माघे (२।९६)। 'अनेकरोगानुगतो बहुरोगपुरःसरः। राजयक्ष्मा क्षयः शोषो रोगराडिति च स्मृतः। नक्षत्राणां द्विजानां च राज्ञोऽभूद् यदयं पुरा। यच्च राजा च यक्ष्मा च राजयक्ष्मा ततो मतः'—इति वाग्भटः। ६०२

राजराजः पुं. [राज्ञामपि राजा धनाधिपत्वात्। 'राजाहःसखिभ्यष्टच्' इति टच्] कुबेरः; 'इत्युक्त्वा सपदि हितं प्रियं प्रियार्हे धाम स्वं गतवति राजराजभृत्ये। सोत्कण्ठं किमपि पृथासुतः प्रदध्यौ सन्धत्ते भृशमरतिं हि सद्वियोगः'—इति किराते (५।५१)। सार्वभौमः; 'प्रयाणमिति च श्रुत्वा राजराजस्य योषितः। हित्वा यानानि यानार्हा ब्राह्मणं पर्यवारयन्'—इति रामायणे

(२।९२।१४)। सुधाकरः। ७९

राजवाह्यः पुं. [राज्ञां वाह्यः] राजवाहकहस्ती; उपवाह्यः; विजयकुञ्जरः; राजवहनीये त्रि.। २२४

राजसर्पः पुं. [सर्पाणां राजा। राजदन्तादित्वात् परनिपातः] सर्पविशेषः; भुजङ्गभोजी; सर्पभुक्। ६४३

राजसर्षपः पुं. [सर्षपाणां राजा, श्रेष्ठत्वात्, परनिपातः] सर्षपविशेषः; कृष्णिका; राजिका; सूरी; मुष्टकः; व्यष्टकः; क्षवः; क्षुताभिजननः; क्षुधाभिजननः; कृष्णा; तीक्ष्णफला; राजी; कृष्णसर्षपाख्या; आसुरी; 'राई' इति भाषा। 'त्रसरेणवोऽष्टौ विज्ञेया लिक्षैका परिमाणतः। ता राजसर्षपस्तिस्रस्ते त्रयो गौरसर्षपः' —इति मनुः (८।१३३)। 'अष्टौ त्रसरेणवो लिक्षैका परिमाणेन ज्ञेया तास्तिस्रो लिक्षा राजसर्षपो ज्ञेयः। ते राजसर्षपास्त्रयो गौरसर्षपो ज्ञेयः'—इति तट्टीकायां कुल्लूकभट्टः। ५८१

राजसूयम् क्ली. — पुं. [राजा लतात्मकः सोमः सूयतेऽत्र। राजन्+सु+अधिकरणे क्यप्। राज्ञा सोतव्यः राज्ञा वा इह सूयते,'राजसूयसूर्येति' निपातनाद् दीर्घः] राजकर्तव्ययज्ञविशेषः; नृपाध्वरः; क्रतुराजः; क्रतूत्तमः; 'यक्षन्ति च नरव्याघ्रा निर्जित्य पृथिवीमिमाम्। राजसूयाश्वमेधाद्यैः क्रतुभिर्भूरिदक्षिणैः।' ४२२

राजहंसः पुं. [हंसानां राजा श्रेष्ठत्वात्। राजदन्तादित्वात् परनिपातः] चञ्चुचरणलोहितश्वेतवर्णहंसः; 'सा राजहंसैरिव सन्नताङ्गी गतेषु लीलाञ्चितविक्रमेषु। व्यनीयत प्रत्युपदेशलुब्धैरादित्सुभिर्नूपुरशिञ्जितानि' —इति कुमारे (१।३४)। कदम्बः; कलहंसः; नृपोत्तमः। २५२

राजा [न्] पुं. [राजते शोभते इति। राज्+'कनिन् युवृषितक्षिराजीति' कनिन्] चन्द्रः; चन्द्रमाः; नृपतिः (४२१); 'यथा प्रह्लादनाच् चन्द्रः प्रतापात् तपनो यथा। तथैव सोऽभूदन्वर्थो राजा प्रकृतिरञ्जनात्' —इति रघौ (४।१२)। प्रभुः; क्षत्रियः; 'शर्मवद्ब्राह्मणस्य स्याद् राज्ञो रक्षासमन्वितम्। वैश्यस्य पुष्टिसंयुक्तं शूद्रस्य प्रेष्यसंयुतम्'—इति मनुः (२।३२)। यक्षः; इन्द्रः; उत्तरपदे चेत् श्रेष्ठार्थवाचकः। अथ नृपतेः पर्यायाः—राट्; पार्थिवः; क्ष्माभृत्; नृपः; भूपः; महीक्षित्; नरपतिः; पार्थः; नृपतिः; भूपालः; भूभृत्; महीपतिः; नाभिः; नाराट्; भूमीन्द्रः; नरेन्द्रः; नायकाधिपः; प्रजेश्वरः; भूमिपः; इनः; दण्डधरः; अवनीपतिः; स्कन्दः; स्कन्धः; भूभुक्; अर्थपतिः। अस्य व्युत्पत्तिः। 'महता राजराज्येन पृथुर्वैन्यः प्रतापवान्। सोऽभिषिक्तो महातेजा विधिवद्धर्मकोविदैः। पित्रापरञ्जितास्तस्य प्रजास्तेनानुरञ्जिताः। अनुरागात्ततस्तस्य नाम राजेत्यभाषत'—इति विष्णुपुराणे १ अंशे १३ अध्यायः। 'रागी राजसिकं स्वर्ग्यं कुरुते कर्म रागतः। रागान्धाश्च राजसिकास्तेन राजा प्रकीर्तितः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। ४२

राजिः स्त्री. [राजते इति, राज्+'वसिवपियजिराजीति' इञ्] राजी; राजसर्षपः; 'राई' इति भाषा। श्रेणी (७२१); 'उल्लसति रोमराजिः स्तनशम्भोर्गरललेखेव'—इति आर्यासप्तशत्याम् (६९३)। रेखा; 'कलायपुष्पवर्णास्तु श्वेतलोहितराजयः। रथसेनं हयश्रेष्ठाः समूहुर्युद्धदुर्मदम्'—इति महाभारते (७।२२। ६२)। पुं. आयुपुत्रविशेषः; स तु ऐलपौत्रः; 'नहुषं वृद्धशर्माणं राजिं गयमनेनसम्। स्वर्भानवीसुतानेतानायोः पुत्रान् प्रचक्षते'—इति महाभारते (१।७५। २५)। ५८१

राजिका स्त्री. [राजते या, राज्+ण्वुल्, टापि अत इत्वम्] राजसर्षपः; कृष्णसर्षपः; क्षवः; क्षुधाभिजननः; कृष्णिका; आसुरी; क्षुताभिजननः; क्षुत्करी; रक्तवर्णसर्षपः; राजी; रक्तिका; रक्तसर्षपः; तीक्ष्णगन्धा; मधूलिका; क्षवकः; क्षुतकः; क्षवः; 'राजी तु राजिका तीक्ष्णगन्धा क्षुज्जनिकासुरी। क्षवः क्षुताभिजनकः कृमिकः कृष्णसर्षपः। राजिका कफपित्तघ्नी तीक्ष्णोष्णा रक्तपित्तकृत्। किञ्चिद्रूक्षाग्निदा कण्डूकुष्ठकोठकृमीन् हरेत्। अतितीक्ष्णा विशेषेण तद्वत् कृष्णापि राजिका'—इति भावप्रकाशः। ५८१

राजिलः पुं. [राजी रेखास्त्यस्येति। राजि+सिध्मादित्वाल् लच्। यद्वा राजिं लातीति। ला+क] डुण्डुभसर्पः; डुण्डुभः; 'किं महोरगविसर्पिविक्रमो राजिलेषु गरुडः प्रवर्तते'—इति रघौ (११।२७)। ६४३

राजी स्त्री. [राजि+कृदिकारादिति ङीष्] निश्छिद्रपङ्क्तिः; श्रेणिः; 'राजीवराजीवशलोलभृङ्गमुष्णन्तमुष्णन्ततिभिस्तरूणाम्'—इति माघे (४।९०)। राजिका (५८१); 'राई' इति भाषा। 'राजी तु

राजिका तीक्ष्णगन्धा क्षुर्ज्जनिकासुरी । क्षवः क्षुताभिजनकः कृमिकः कृष्णसर्षपः'—इति भावप्रकाशः । ७२१

राजीवः पुं. [राजी अस्त्यस्येति । राजी+व] बृहन्मीनभेदः; 'पाठीनरोहितावाद्यौ नियुक्तौ हव्यकव्ययोः । राजीवान् सिंहतुण्डांश्च सशल्कांश्चैव सर्वशः'—इति मनुः (५।१६) । हरिणभेदः; 'राजीवस्तु मृगो ज्ञेयो राजीभिः परितो वृतः'—इति भावप्रकाशः । हस्ती; सारसपक्षी; राजोपजीविनि त्रि. । ६५९

राजीवम् क्ली. [राजी दलश्रेणिरस्यास्तीति । राजी+ 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इत्युक्तया व] पद्मं; कमलम्; 'उत्तानपाणिद्वयसन्निवेशात् प्रफुल्लराजीवमिवाङ्कमध्ये' —इति कुमारे (३।४५) । ६८०

राज्ञी स्त्री. [राज्ञः पत्नी । राजन्+ङीप् । यद्वा राजते इति । राज+कनिन्, ततः स्त्रियां ङीप्] राजपत्नी; 'रानी' इति भाषा । 'तयोर्जगृहतुः पादान् राजा राज्ञी च मागधी । तौ गुरुर्गुरुपत्नी च प्रीत्या प्रतिननन्दतुः' —इति रघौ (१।५७) । सूर्यपत्नी; 'विवस्वान् कश्यपात् पूर्वमदित्यामभवत् पुरा । तस्य पत्नीत्रयं तद्वत् संज्ञा राज्ञी प्रभा तथा । रेवतस्य सुता राज्ञी रेवन्तं सुषुवे सुतम् । प्रभा प्रभावं सुषुवे त्वाष्ट्री संज्ञा तथा मनुम् । यमश्च यमुना चैव यमलौ तु बभूवतुः'—इति मात्स्ये । कांस्यं; नीली; प्रतीची दिक्; 'तस्य प्राची दिक् जुहूर्नाम सहमाना नाम दक्षिणा राज्ञी नाम प्रतीची सुभूता नामोदीचीति'—इति छान्दोग्योपनिषदि (३।१५।२) । 'तथा राज्ञी नाम प्रतीची पश्चिमा दिक् राज्ञी राज्ञा वरुणेनाधिष्ठिता सन्ध्यारागयोगाद्वा' —इति शङ्करभाष्यम् । ९८

राट् [ज्] पुं. [राजते शोभते इति । राज् दीप्तौ, क्विप्, व्रश्चेति षत्वम्] राजा; नृपः । ४२१

राढा स्त्री. [रह्+औणादिकः क्तप्रत्ययः, बाहुलकादिडभावः, ढत्वधत्वष्टुत्वलोपदीर्घटापः] शोभा; सूक्ष्मः; पुरीविशेषः; 'गौडं राष्ट्रमनुत्तमं निरुपमा तत्रापि राढा पुरी, भूरिश्रेष्ठिकनामधाम परमं तत्रोत्तमो नः पिता' —इति प्रबोधचन्द्रोदये । ५६५

रात्रम् क्ली.—रात्रिः; 'क्षेत्रप्रतिग्रहे चैव ग्रहसूतकयोस्तथा । त्रीणि रात्राण्युपोषित्वा तेन पापाद्विमुच्यते' —इति महाभारते (१३।१३६।११) । ज्ञानम्; 'रात्रं च ज्ञानवचनं ज्ञानं पञ्चविधं स्मृतम् । तेनेदं पञ्चरात्रं च प्रवदन्ति मनीषिणः'—इति नारदपञ्चरात्रे । (क्वाचित्कोऽयम्, वृत्तिविषये समासान्तेन प्रयोगात् ।) १०८

रात्रिः स्त्री. [राति ददाति कर्मभ्योऽवसरं निद्रादिसुखं वा । रा दाने+'राशदिभ्यां त्रिप्' इति त्रिप्] एतद्द्वीपावच्छिन्नसूर्यकिरणानवच्छिन्नकालः; शर्वरी; निशा; निशीथिनी; त्रियामा; क्षणदा; क्षपा; विभावरी; तमस्विनी; रजनी; यामिनी; तमी; श्यामा; घोरा; याम्या; तुङ्गी; नक्तं; दोषा; वासतेयी; तमा; क्षमा; शताक्षी; क्षणिनी; निशिथ्या; चक्रभेदिनी; शार्वरी; शय्या; वासुरा; निषद्वरी; वसतिः; वायुरोषा; निशीथः; निट्; यामवती; तारा; भूषा; ज्योतिष्मती; तारकिणी; काली; कलापिनी; 'यदा दिक्षु च अष्टासु मेरोर्भूगोलकोद्भवा । छाया भवेत्तदा रात्रिः स्याच्च तद्विरहाद्दिनम्'—इति वह्निपुराणे । हरिद्रा; क्रौञ्चद्वीपस्थ नदीविशेषः । १०८

रात्री स्त्री. [रात्रि+कृदिकारादिति ङीष्] निशा; रात्रिः; 'रात्री व्यख्यद् आयती पुरुत्रा देव्यक्षभिः' —इति ऋग्वेदे (१०।१२७।१) । हरिद्रा । १०८

राद्धान्तः पुं. [राद्धः सिद्धः अन्तो निर्णयो यस्मात्] कृतान्तः; सिद्धान्तः; समयः; 'अथेदमर्थं पृच्छामो भवन्तं बहुवित्तमम् । समस्ततन्त्रराद्धान्ते भवान् भागवततत्त्ववित्'—इति भागवते (१२।११।१) । १०

रामः पुं. [रमते इति, रम् क्रीडायाम्+'ज्वलितिकसन्तेभ्यो णः' इति ण । रमन्ते योगिनोऽस्मिन्निति वा । हलश्चेति घञ्] बलदेवः; स च अनन्तदेवो विष्णोरंशः, यदुवंशीयवसुदेवपुत्रत्वेन द्वापरयुगान्ते कंसादिवधार्थमवतीर्णः । 'निशम्य प्रेष्ठमायान्तं वसुदेवो महामनाः । अक्रूरश्चोग्रसेनश्च रामश्चाद्भुतविक्रमः'—इति भागवते (१।११।१७) । परशुरामः; स तु विष्णोरंशः, जमदग्निमुनेः पुत्रत्वेन त्रेतायुगादाववतीर्णः एकविंशतिवारान् पृथिवीं निःक्षत्रियामकरोत् । असौ एव समन्तपञ्चके पञ्च क्षत्रियशोणितह्रदान् विधा पितॄन् सन्तर्पयामास । 'अघोरश्चाथ बाणश्च महाकालौ प्रकीर्तितौ । भार्गवो राघवो गोपस्त्रयो रामाः प्रकीर्तिताः' —इति वह्निपुराणम् । राघवः; श्रीरामचन्द्रः; स च पूर्णब्रह्मस्वरूपः अयोध्याधिपतिदशरथराजतनयत्वेन

त्रेतायुगशेषे रावणादिवधार्थमवतीर्णः । 'रा शब्दो विश्ववचनो मश्चापीश्वरवाचकः । विश्वानामीश्वरो यो हि तेन रामः प्रकीर्तितः । रमते रमया सार्द्धं तेन रामं विदुर्बुधाः । रमाणां रमणस्थानं रामं रामविदो विदुः । रा चेति लक्ष्मीवचनो मश्चापीश्वरवाचकः । लक्ष्मीपतिं गतिं रामं प्रवदन्ति मनीषिणः । दिव्य-नाम्नां सहस्रस्य स्मरणे यत्फलं लभेत् । तत्फलं लभते नूनं रामोच्चारणमात्रतः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । वरुणः; घोटकः; पशुभेदः । २९

रामः त्रि. [रमते इति, रम्+ण । रम्यतेऽनेनेति, रम्+घञ् वा] असितः; (८०८) सितः; शुक्लः । मनोज्ञः; 'गावः प्रभूतपयसो नयनाभिरामा रामारतैरविरतं रमयन्ति रामान्'—इति बृहत्संहितायाम् (१९।५) । क्ली. [रम्यतेऽनेनेति । रम्+घञ्] वास्तूकं; कुष्ठं; तमालपत्रं; नैशं तमः; 'सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठन् रुशद्भिर्वर्णैरभिराममस्थात्'—इति ऋग्वेदे (१०।३।३) 'रामं कृष्णवर्णं शार्वरं तमः अभ्यस्थात्सायं होमकाले अभिभूय तिष्ठति'—इति तद्भाष्ये सायणः । ७३४

रामकरी स्त्री.—रामकली रागिणी; रामकिरी । १०२अ

रामकिरी स्त्री.–रामकली रागिणी; रामकरी । 'षड्ज-ग्रहांशकन्यासा पूर्णा रामकिरी मता । मूर्च्छना प्रथमा ज्ञेया करुणे सा प्रयुज्यते । रिधत्यक्ताथवा प्रोक्ता कैश्चित् पञ्चमवर्जिता । त्रिविधा सा समुद्दिष्टा सम्पूर्णा षाडवौडवा । 'हेमप्रभा भासुरभूषणा च नीलं निचोलं वपुषा वहन्ती । कान्ते समीपे कमनीयकण्ठा मानोन्नता रामकिरी मतेयम्'—इति सङ्गीतदर्पणे । १०२अ

रामा स्त्री. [रमते रमयतीति वा । रम्+ज्वलादित्वात् ण, टाप् । रमतेऽनयेति करणे घञ् वा] योषा; सुन्दरी, 'स च्छिन्नबन्धद्रुतयुग्यशून्यं भग्नाक्षपर्यन्तरथं क्षणेन । रामापरित्राणविहस्तयोधं सेनानिवेशं तुमुलं चकार'—इति रघौ (५।४९) । उत्कृष्टस्त्रीविशेषः; गीतकलाभी रमते सा रामा; 'विभज्य नवधात्मानं मानवीं सुरतो-त्सुकाम् । रामां निरमयन् रेमे वर्षपूगान् मुहूर्तवत्'—इति भागवते (३।२३।४३) । हिङ्गु; नदी; हिङ्गुलं; श्वेतकण्टकारी; गृहकन्या; अशोकः; आरामशीतला; गोरोचना; बाला; गैरिकम् । ४८१

राशिः पुं. [रशते इति, रश् शब्दे+इण् । यद्वा अश्नुते व्याप्नोतीति, अशू व्याप्तौ+'अशिपणायोरुडायलुकौ च' इति इण् रुडागमश्च] धान्यादिसमूहः; पुञ्जः; उत्करः; कूटं; समुच्चयः; समाहारः; 'न खलु न खलु बाणः सन्निपात्योऽयमस्मिन् मृदुनि मृगशरीरे तूलराशा-विवाग्निः'—इति शकुन्तलायाम् । ज्योतिश्चक्रस्य द्वा-दशांशः; 'मेषवृषमिथुनकर्कटसिंहाः कन्या तुलाथ वृश्चि-कभम् । धनुरथ मकरः कुम्भो मीन इति च राशयः कथिताः ।' ६८६

रासभः पुं. [रासते शब्दायते इति । रास्+'रासिवल्लि-भ्याञ्च' इति अभच्] गर्दभः; खरः; बालेयः; चक्रीवान्; 'पद्भ्याञ्चाश्वान् समातङ्गान् रासभान् शशकान् मृगान् । उष्ट्रानश्वतरांश्चैव नानारूपाश्च जातयः'—इति मार्कण्डेये (४८।२६) । अश्वतरः; 'खच्चर' इति भाषा । 'स त्वं रासभयुक्तेन स्यन्दनेनाशु-गामिना । वारणावतमद्यैव यथा यासि तथा कुरु'—इति महाभारते (१।१४५।७) । २८०

राहुः पुं. [रह् त्यागे+बहुलवचनाद् उण्] ग्रहविशेषः; तमः; स्वर्भानुः; सैंहिकेयः; विधुन्तुदः; अस्रपिशाचः; ग्रहकल्लोलः; सैंहिकः; उपप्लवः; शीर्षकः; उपरागः; सिंहिकासूनुः; कृष्णवर्णः; कबन्धः; अगुः; असुरः; 'सिंहिकायामथोत्पन्ना विप्रचित्तेश्चतुर्दश । शम्बः शम्ब-लगात्रश्च व्यङ्गः शाल्वस्तथैव च । इल्वलो नमुचिश्चैव वातापी हसृपो जिकः । हरकल्पकलिनाभौ भौमश्च नरकस्तथा । राहुर्ज्येष्ठश्च तेषां वै चन्द्रसूर्यप्रमर्दनः । इत्येते सिंहिकापुत्रा देवैरपि दुरासदाः । दारुणाभिजना क्रूराः सर्वे ब्रह्मद्विषस्तु ते । दशान्यानि सहस्राणि सैंहिकेयो गणः स्मृतः । निहतो जामदग्न्येन भार्गवेण बलीयसा । स्वर्भानोस्तु प्रभा कन्या पुलोम्नस्तु शची सुता'—इति वह्निपुराणे । ४९

राहुसंस्पर्शः पुं. [राहोः संस्पर्शो यत्र] राहुग्रसनः; राहु-ग्रासः; राहुदर्शनः; राहुपीडा: राहुसूतकः; उपरागः; उपप्लवः । ४१

राहुस्पर्शः पुं. [राहोः स्पर्शो यत्र] उपरागः; उपप्लवः; राहुग्रासः; । ४१

रिक्तम् त्रि. [रिच्+क्त] शून्यं; रिक्तकम्; 'भाण्ड-पूर्णानि यानानि तार्यं दाप्यानि सारतः । रिक्तभाण्डानि यत्किञ्चित् पुमांसश्चापरिच्छदाः'—इति मनुः (८।

४०५)। निर्धनं; क्ली. वनं; शून्यम्। ७७७

रिक्थम् क्ली. [रिङ्क्ते बहिर्गच्छति नश्यतीति। रिच्+'पातृतुदिवचिरिचिसिचिभ्यस्थक्' इति थक्] धनम्; ऋक्थं; पृक्थम्; 'बालदायादिकं रिक्थं तावद् राजानुपालयेत्। यावत् स स्यात् समावृत्तो यावच्चातीतशैशवः' –इति मनुः (८।२१)। ८०

रिपुः पुं. [अनिष्टं रपतीति। रप् व्यक्तायां वाचि+'रपेरिच्चोपधायाः' इति कु, इकारश्चोपधायाः] शत्रुः; 'न कश्चित् कस्यचिन्मित्रं न कश्चित् कस्यचिद्रिपुः। कारणादेव जायन्ते मित्राणि रिपवस्तथा'—इति हितोपदेशे। ४५५

रिष्टम् क्ली. [रिष्+क्त] पापम्; अशुभम्; अमङ्गलम्; 'स्थालीपिधाने यत्राग्निर्दत्तो दर्वीफलेन वा। गृहे तत्र हि रिष्टानामशेषाणां समाश्रयः—इति मार्कण्डेये। अभावः; नाशः; शुभस्या भावः; पुं. खड्गः; फेनिलः; रक्तशिग्रुः। ८०४

रिष्टतातिः त्रि. [रिष्टं कल्याणं करोति। रिष्ट+'शिवशमरिष्टस्य करे' इति बाहुलकात् रिष्टादपि लोकेऽपि तातिल्] क्षेमङ्करः; क्षेमकरः; क्षेमकारः; शिवतातिः; शिवङ्करः। ३४०

रिष्टिः पुं. [रेषति हिनस्तीति। रिष्+क्तिच्] खड्गः; निस्त्रिंशः; करवालः; कौक्षेयकः; कृपाणः; असिः; चन्द्रहासः; तरवारिः; तलवारिः; मण्डलाग्रः। ४७२

रीढा स्त्री. [रिह् निन्दायाम्+औणादिकः क्त] हेला; अवहेलना; अवज्ञा; अवलीढा। ७१५

रीतिः स्त्री. [री+क्तिच् क्तिन् वा] आरकूटः; कांस्यं; सौराष्ट्रिकम्; 'पित्तलं त्वारकूटं स्यादरो रीतिश्च कथ्यते। राजरीतिर्ब्रह्मरीतिः कपिला पिङ्गलापि च। रीतिरप्युपधातुः स्यात्ताम्रस्य यशदस्य च। पित्तलस्य गुणा ज्ञेयाः स्वयोनिसदृशा जनैः। संयोजप्रभावेण तस्याप्यन्ये गुणाः स्मृताः'—इति भावप्रकाशः। प्रचारः; स्यन्दः; लोहकिट्टं; दग्धवर्णादिमलं; सीमा; स्रवणं; गतिः; स्वभावः; रूपं; लक्षणं; भावः; आत्मा; प्रकृतिः; सहजः; रूपतत्त्वं; धर्मः; सर्गः; निसर्गः; शीलं; सतत्त्वं; संसिद्धिः। 'निशान्तक्लिष्टचक्रा ह्नरीतिहृद्यो रसक्रमः'—इति कथासरित्सागरे (१४।६२)। स्तुतिः; 'महीव रीतिः शवसासरत् पृथक्'—इति ऋग्वेदे (२।२४।१४)। 'महीव रीतिः महती स्तुतिरिव' इति तद्भाष्ये सायणः। काव्यपदसंघटनाप्रकारः; गौडीवैदर्भीपाञ्चालीलाटीरूपः। १७०

रुक्मम् क्ली. [रोचते शोभते इति। रुच्+'युजिरुचितिजां कुश्च' इति मक् कवर्गश्चान्तादेशः] काञ्चनम्; 'रुक्मनिष्कसहस्रे द्वे षोडशाश्वशतानि च। सत्कृत्य केकयीपुत्रं कैकेयो धनमादिशत्'—इति रामायणे (२।७०।२१)। धुस्तूरं; लोहम्; 'कृष्णायसं काललोहं रुक्मं तत्तीक्ष्णमप्यथ'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। नागकेशरं; वर्णे पुं.। दीप्तिशीले त्रि.। 'दिवि रुक्म इवोपरि'–इति ऋग्वेदे (५।६१।१२)। 'दिवि द्युलोके रुक्मो रोचमान आदित्य इव'–इति तद्भाष्ये सायणः। स्वर्णालङ्कारः—माघे (१५।७८)। १७३

रुक् [च्] स्त्री. [रुच्+भावे क्विप्] गभस्तिः; रश्मिः; किरणः; (६५) अर्चिः; कीला; ज्वाला; वर्चः; तेजः; त्विषः; ज्योतिः; हेतिः; द्युतिः; शिखा; प्रभा; 'क्षिपति योऽनुवनं विततां बृहद्बृहतिकामिव रौचनिकीं रुचम्'इति किराते(५।४५)। शोभा; 'दधद्भिरभितस्तटौ विकचवारिजाम्बूनदैर्विनोदितदिनक्लमाः कृतरुचश्च जाम्बूनदैः' —इति माघे (४।६६)। इच्छा; 'नाना बुद्धिरुचो लोके मनुष्यान्नूनमिच्छसि। ग्रहीतुं स्वगुणैः सर्वांस्तेनासि हरिणः कृशः—इति महाभारते(१३।१२४।२८)। तेजः; 'अनुययौ यमपुण्यजनेश्वरौ सवरुणावरुणाग्रसरं रुचा' —इति रघौ (९।६) ३८

रुक्[ज्]स्त्री. [रुज्+क्विप्]रोगः; व्याधिः; आकल्यं; गदः; मान्द्यम्; अपाटवम्; आमः; आमयः; उपतापः; रुजा; 'दोषस्य दृष्ट्वा गुरुलाघवं यथा भिषक् चिकित्सेत रुजां निदानवित्'—इति भागवते (६।१।८)। रुजति पीडयतीति, पीडादायके त्रि.। 'प्रयान्तं देवकीपुत्रं परवीररुजो दश। महारथा महाबाहुमन्वयुः शस्त्रपाणयः'–इति महाभारते (५।८४।१)। ६००

रुचकः पुं.– क्ली. [रोचतेऽनेनेति। रुच्+'बहुलमन्यत्रापि' —इति क्वुन्] सौवर्चलम्; 'सौवर्चलं स्याद्रुचकमन्यपाकं च तन्मतम्।' 'रुचकं रोचनम्भेदि दीपनं पाचनं परम्। सुस्नेहं वातनुन्नातिपित्तलं विशदं लघु। उद्गारशुद्धिदं सूक्ष्मं विबन्धानाहशूलजित्'—इति भावप्रकाशः। सर्जिकाक्षारम्; अश्वाभरणं; माल्यं; माङ्गल्य-

द्रव्यम् 'हारेण च महार्हेण रुचकेन च भूषितम्'—इति भागवते (३।२३।३१) 'रुचकेन मङ्गलद्रव्येण' इति तट्टीकायां श्रीधरः। उत्कटः; स्वाद्यरसः; रोचना; विहङ्गः; लवणं; दक्षिणदिक्; 'प्राक्पश्चिमावलिन्दावन्तगतौ तदवधिस्थितौ शेषौ। रुचके द्वारं न शुभदमुत्तरतोऽन्यानि शस्तानि'—इति बृहत्संहितायां (५३।३५)। मातुलुङ्गकं; [रोचते इति, रुच्+क्वुन्] पुं. बीजपूरः; निष्कः; दन्तः; कपोतः; 'जीवेन भवति हंसः सौरेण शशः कुजेन रुचकश्च' —इति बृहत्संहितायम् (६९।२)। पर्वतविशेषः; 'त्रिकूटः शिशिरश्चैव पतङ्गो रुचकस्तथा'—इति विष्णुपुराणे (२।२।२६)। स्तम्भः; 'समचतुरस्रो रुचको वज्रोऽष्टाश्रिर्द्विवज्रको द्विगुणः'—इति बृहत्संहितायाम् (५३।२८)। ६१७

रुचिः स्त्री. [रुच्यते इति। रुच्+'इगुपधात् कित्' इति इन्, स च कित्] किरणः; बुभुक्षा; शोभा; 'लक्ष्मीविनोदयति येन दिगन्तलम्बी, सोऽपि त्वदाननरुचिं विजहाति चन्द्रः'—इति रघौ (५।६७)। (७१०) स्पृहा; इच्छा; कामना; ईप्सा; आशंसा; अभिष्वङ्गः; अनुरागः; आसक्तिः; रुचा; 'रुचिकरमपि नार्थवद्बभूव स्तिमितसमाधिशुचौ पृथातनूजे'—इति किराते (१०।६२)। 'अम्लो रुचिकरो हृद्यः प्रीणनो वह्निदीपनः'—इति वैद्यकराजवल्लभे। अभिलाषः; गभस्तिः; गोरोचना; आलिङ्गनविशेषः; पुं. [रोचते शोभते इति। रुच्+इन् स च कित्] प्रजापतिविशेषः; स च रौच्यमनुपिता, 'रुचिः प्रजापतिः पूर्वं निर्ममो निरहङ्कृतिः। यत्रास्तमितशायी च चचार पृथिवीमिमाम्'—इति मार्कण्डेयपुराणे। ३८

रुचिरः त्रि. [रुच्+किरच्] सुन्दरः; 'उल्लसितभ्रूधनुषा तव पृथुना लोचनेन रुचिराङ्गि !, अचला अपि न महान्तः के चञ्चलभावमानीताः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (११७)। मिष्टम्। ६८९

रुच्यः पुं. [रुच्+क्यप्] पतिः; कान्तः; कमिता; वरयिता; भर्ता; भोक्ता; धवः; अभीकः; वरः; अभिकः; रमणः; प्राणाधिनाथ; अनुगः; कतकवृक्षः; शालिधान्यं; सुन्दरे त्रि.। रुचिकरः; 'पक्वं वर्णकरं रुच्यं मांसशुक्रबलप्रदम्। पित्तावरोधि वातघ्नं हृद्यं गुर्वनुलोमनम्'—इति वैद्यकराजवल्लभे। क्ली. [रोचते इति, रुच्+राजसूयसूर्यमृषोद्येति' क्यप्] सौवर्चलम्। ४९७

रुजा स्त्री. [रुज्+क, टाप्] रोगः; व्याधिः; आकल्यं; गदः; मान्द्यम्; अपाटवम्; आमः; आमयः; उपतापः; रुक्; भङ्गः; पीडा; 'निपातात् तव शस्त्राणां शरीरे या भवद्रुजा। तया ते मानुषं कर्म व्यपोढं भृगुनन्दन'—इति महाभारते (८।३४।१४९)। मेषी; कुष्ठम्। ६००

रुण्डः पुं. [रुण्डति इति, प्रतिहन्ति इत्यर्थः। पचाद्यच्] कबन्धः; छिन्नपादहस्तः; 'तेनारोप्य स्थलं पृष्टः स रुण्डः पुरुषोऽभ्यधात्। निकृत्तहस्तचरणो नद्यां क्षिप्तोऽस्मि शत्रुभिः'—इति कथासरित्सागरे (६५।११)। ६३०

रुदितम् क्ली. [रुद्+क्त] क्रन्दनं; तद्वति त्रि.। 'केशकीटावपतितं क्षुतं श्वभिरवेक्षितम्। रुदितं चावधूतं च तं भागं रक्षसां विदुः'—इति महाभारते (१३।२३।६)। ६३९

रुद्रः पुं. [रोदयतीति, रुद्+णिच्+'रोदेर्णिलुक् च' इति रक् णेश्च लुक्] शिवः; महादेवः; शङ्करः; उमापतिः; 'त्रिजटश्चीरवासाश्च रुद्रः सेनापतिर्विभुः'—इति महाभारते (२३।१७।४६)। आदित्यपत्रवृक्षः; गणदेवताविशेषः; अयम् अग्निमूर्तिः; 'अजैकपादहिर्ब्रध्नो विरूपाक्षः सुरेश्वरः। जयन्तो बहुरूपश्च त्र्यम्बकोऽप्यपराजितः। वैवस्वतश्च सावित्रो हरो रुद्रा इमे स्मृताः'—इति जटाधरः। कर्मपुत्रविशेषः; 'तस्य पुत्रास्तु चत्वारस्तेषां नामानि मे शृणु। अजैकपादहिर्ब्रध्नस्त्वष्टा रुद्रश्च बुद्धिमान्'—इति विष्णुपुराणे (१।१५।१२२)। कविविशेषः; स च विद्याविलासपुत्रः भावविलासप्रणेता। कविरयं मानसिंहपुत्रस्य भावसिंहमहीपतेः समये बभूव। 'अन्यापदेशविनिवेशविदग्धबुद्धिश्रीभावसिंहनरसिंहनियोगयोगात्। सम्पादितो विविधभावविकासभाजां प्रीत्यै भृशं भवतु भावविलास एषः। सद्गुणानां समुद्रेण रुद्रेण ग्रथिता गुणैः। कण्ठस्था श्लोकमालेयं केषां न कुरुते श्रियम्। विद्याविलासपुत्रस्य न्यायवाचस्पतेरियम्। काव्यालापविदग्धानां मुदं निर्मातु निर्मितिः'—इति भावविलासे (१३४-१३६)। (६९९) त्रि. बृहत्; उरु; गुरु; विस्तीर्णं; पुरु; पृथु; पृथुल; महत्; विशालं; व्यूढं; विपुलं; वरिष्ठम्। ११

रुद्राणी स्त्री. [रुद्रस्य पत्नी। 'इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्रेति' ङीष् आनुक् च] दुर्गा; पार्वती; अपर्णा; शिवा;

भवानी; 'रुद्रस्येयं तु रुद्राणी रौद्रं हन्ति करोति या'—इति देवीपुराणे ४५ अध्यायः। रुद्रजटा। १५

रुधिरम् क्ली. [रुणद्धि रुध्यते इति वा। रुध्+'इषिमदिमुदीति' किरच्] शरीरस्थरसभवधातुः; रक्तम्; अस्रं; त्वग्जं; कीलालं; क्षतजं; शोणितं; लोहितम्; असृक्; शोणं; लोहं; चर्मजं; 'तद्विशुद्धं हि रुधिरं बलवर्णसुखायुषा। युनक्ति प्राणिनं प्राणः शोणितं ह्यनुवर्तते।' 'बलदोषप्रमाणाद्वा विशुद्ध्या रुधिरस्य वा। रुधिरं स्रावयेज्जन्तोराशयं प्रसमीक्ष्य वा'—इति चरकः। 'रुधिरे च स्रुते गात्राच्छस्त्रेण च परिक्षते। सामध्वनावृग्यजुषी नाधीयीत कदाचन'—इति मनुः (४।१२२)। 'देहस्यरुधिरं मूलं रुधिरेणव धार्यते। तस्माद्यत्नेन संरक्ष्यं रक्तं जीव इति स्थितिः'—इति सुश्रुते। कुङ्कुमम्; 'राममन्मथशरेण ताडिता दुःसहेन हृदये निशाचरी। गन्धवद्रुधिरचन्दनोक्षिता जीवितेशवसतिं जगाम सा'—इति रघौ (११।२०)। पुं. [रुध्+किरच्] मङ्गलग्रहः। ६३२

रुमा स्त्री.— विशिष्टलवणाकरः; सुग्रीवभार्या। १६९

रुरुः पुं. [रौतीति, रु+'रुशातिभ्यां क्रुन्' इति क्रुन्] मृगविशेषः; हरिणभेदः; 'रुरून् कृष्णमृगांश्चैव मेध्यांश्चान्यान् वनेचरान्। बाणैरुन्मथ्य विविधैर्ब्राह्मणेभ्यो न्यवेदयत्'—इति महाभारते (३।५०।७)। दैत्यभेदः; 'एकानंशे शिवे दुर्गे नारायणि सरस्वति। भद्रकालि महालक्ष्मि सिद्धिरुरुविदारिणि।' क्रूरसत्त्वविशेषः; 'इह लोकेऽमुना ये तु हिंसिता जन्तवः पुरा। त एव रुरवो भूत्वा परत्रपीडयन्ति तम्। तस्माद्रौरव मित्याहुः पुराणज्ञा मनीषिणः। रुरुः सर्पादतिक्रूरो जन्तुरुक्तः पुरातनैः'—इति देवीभागवते (८।२२।१०-११)। मुनिविशेषः; स तु च्यवनस्य पौत्रः। अयमेव निजायुषोऽर्द्धं दत्वा प्रियां जीवयामास। अस्य विवरणं देवीभागवते २ स्कन्धे ८ अध्याये तथा महाभारते पर्वणि ५ अध्यायमारभ्य द्रष्टव्यम्। २३०

रूपम् क्ली. [रूयते कीर्त्यते, रौतीति वा। रु+'स्वष्पशिल्पशष्पेति' प दीर्घश्च। रूपयतीति। रूप्+अच् वा] पशुः; मृगः; स्वभावः; सौन्दर्यं; नामकं; शब्दः; ग्रन्थावृत्तिः; नाटकादिः; श्लोकः; आकारः; 'तदध्यास्योद्वहेद्भार्यां सवर्णां लक्षणान्विताम्। कुले महति सम्भूतां हृद्यां रूपगुणान्विताम्'—इति मनुः (१।७७)। स्वरूपम्; 'देशं रूपं च कालं च व्यवहारविधौ स्थितः'—मनुः (८।४५)। शुक्लादिः; नाणकम्; 'अङ्गान्यभूषितान्येव केनचिद्भूषणादिना। येन भूषितवद्भान्ति तद्रूपमिति कथ्यते'—इत्युज्ज्वलनीलमणिः। ८१६

रूपाजीवा स्त्री. [रूपेण सौन्दर्येण आजीवतीति। रूप+आ+जीव्+अच्+टाप्] वेश्या; गणिका; पण्याङ्गना; क्षुद्रा; 'रूपाजीवाश्च वादिन्यो वणिजश्च महाधनाः। शोभयन्तु कुमारस्य वाहिनीः सुप्रसारिताः'—इति रामायणे (२।३६।३)। ४९०

रूप्यम् क्ली. [आहतं रूपम् अस्यास्तीति। रूप+'रूपादाहतप्रशंसयोर्यप्' इति यप्] धातुविशेषः; शुभ्रं; वसुश्रेष्ठं; रुचिरं; चन्द्रलोहकं; श्वेतकं; महाशुभ्रं; रजतं; तप्तरूपक; चन्द्रभूतिः; सितं; तारं; कलधूतम्; इन्द्रलोहकं; रौप्यं; धौतं; सौधं; चन्द्रहासं; खर्जूरं; दुर्वर्णं; श्वेतं; रङ्गबीजं; राजरङ्गं; लोहराजकं; कलधौतम्; 'सुवर्णस्य मलं रूप्यं रूप्यस्यापि मलं त्रपु। ज्ञेयं त्रपुमलं सीसं सीसस्यापि मलं मलम्'—इति महाभारते (५।३९।७९)। आहतस्वर्णरजतं; त्रि. [प्रशस्तं रूपम् अस्यास्तीति। रूप+'रूपादाहतप्रशंसयोर्यप्' इति यप्] सुन्दरं; क्ली. उपमेयम्; 'तत्र हि तिमिरांशुकयो रूप्यरूपकभावो द्वयोरावरकत्वेनस्फुटमिति'—इति साहित्यदर्पणे। पुं. प्रत्ययविशेषः; स च तत आगत इत्येतस्मिन्विषये 'हेतुमनुष्येभ्योऽन्यतरस्यां रूप्यः' इति सूत्रेण हेतुमनुष्यवाचकात् पाक्षिको भवति। यथा—समादागतं समरूप्यम्, देवदत्तरूप्यम्। १७२

रूषितम् त्रि. [रूष्+क्त] गुण्डितं; छुरितम्; 'यः सुखेनोपधानेषु शेते चन्दनरूषितः। वीज्यमानो महार्हाभिः स्त्रीभिर्मम सुतोत्तमः'—इति रामायणे (२।४२।१५)। ७६८

रेखा स्त्री. [लिख्यते इति। लिख् विलेखने+'षिद्भिदादिभ्योऽङ्' इति भिदादित्वाद् अङ+टाप्। रलयोरैक्याल् लस्य रत्वम्] उल्लेखस्त्वत्र दण्डाकारलिपिविशेषः; लेखा; 'यावती यावती रेखा ग्रहाणामष्टवर्गके। तावतीं द्विगुणीकृत्य अष्टाभिः परिशोधयेत्। अष्टोपरि भवेद्रेखा अष्टाभ्यन्तरबिन्दवः। यत्र रेखा न बिन्दुश्च तत्समं परिकीर्तितम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। 'ललाटे यस्य

दृश्यन्ते तिस्रो रेखाः समाहिताः। सुखी पुत्रसमायुक्तः स षष्टिं जीवते नरः। चत्वारिंशच्च वर्षाणि द्विरेखादर्शनान्नरः। विंशत्यब्दमेकरेख आकर्णान्ता शतायुषः। आकर्णान्तरिता रेखास्तिस्रश्च स्युः शतायुषः। सप्तत्या मूर्द्धिन रेखा तु षष्ट्यायुस्तिसृभिर्भवेत्। व्यक्ताव्यक्ताभी रेखाभिर्विंशत्यब्दायुरेव हि। चत्वारिंशच्च वर्षाणि हीनरेखस्तु जीवति। भिन्नाभिश्चैव रेखाभिरपमृत्युर्नरस्य हि। त्रिशूलं पट्टिशं वापि ललाटे यस्य दृश्यते। धनपुत्रसमायुक्तः स जीवेत् शरदः शतम्। कुलरेखा तु प्रथमा अङ्गुष्ठादनुवर्तते। मध्यमायाः करे रेखा आयुरेखा अतः परम्। कनिष्ठिकां समाश्रित्य आयूरेखां समादिशेत्। अच्छिन्ना वाविभक्ता वा स जीवेच्छरदः शतम्। यस्य पाणितले रेखा आयुस्तस्य प्रकाशयत्। शतं वर्षाणि जीवेच्च भोगी रुद्र! न संशयः। कनिष्ठिकां समाश्रित्य मध्यमायामुपागता। षष्टिवर्षायुषं कुर्याद् आयूरेखा तु मानवम्—इति गारुडे ६३ अध्यायः। 'धनाङ्गुलिश्च सघनस्त्रिस्रो रेखाश्च यस्य वै। नृपतेः करतलगा मणिबन्धे समुत्थिता। युगमीनाङ्कितकरो भवेत् सत्रप्रदो नरः। वज्राकारश्च धनिनां मत्स्यपुच्छनिभो बुधे। शङ्खातपत्रशिविकागजपद्मोपमा नृपे। कुम्भाङ्कुशपताकाभा मृणालाभा निरीश्वरे। चक्रासितोमरधनुःकुन्ताभा नृपतेः करे। उदूखलाभा यज्ञाढ्ये वेदीभाश्चाग्निहोत्रिणि। वापीदेवकुलाभाश्च त्रिकोणाभाश्च धार्मिके। अङ्गुष्ठमूलगा रेखाः पुत्राः सूक्ष्माश्च कारिकाः। प्रदेशिनीगता रेखा कनिष्ठामूलगामिनी। शतायुषं च कुरुते छिन्नया तरुतो भयम्। निःस्वाश्च बहुरेखाः स्युर्निर्द्रव्याश्चिबुकैः कृशैः'—इति गारुडे ६६ अध्यायः। अल्पकं; छद्म; आभोगः; उल्लेखः। ५४१

रेणुः पुं.– स्त्री. [रिणातीति। री गतिरेषणयोः+'अजिवृरीभ्यो निच्च' इति णु.] धूलिः; 'मानुषीकरणरेणुरस्ति ते, पादयोरिति कथा प्रथीयसी। क्षालयामि तव पादपङ्कजं, नाथ! दारुदृशदोस्तु का भिदा।' पुं. [री+णु] पर्पटः; रेणुका; पांशुः; 'दिनकराभिमुखा रणरेणवो रुरुधिरे रुधिरेण सुरद्विषाम्'—इति रघौ (९।२३)। विडङ्गः; 'जन्तुघ्नं भस्मकं रेणुः क्रिमिघ्नं चित्रतण्डुलम्। क्रिमिशत्रुः विडङ्गश्च गर्दभं तच्च केवलम्'—इति वद्यकरत्नमालायाम्। ४४३

रेतः [स्] क्ली. [रीयते क्षरतीति। री क्षरणे+'सुरीभ्यां तुट् च' इति असुन्, तस्य तुट् च] शुक्रं; वीर्यं; बलं; बीजम्; इन्द्रियं; रेतनं; रेत्रम्; 'स्त्रीणां रजोमयं रेतो बीजाढ्यमिन्द्रियं नरे। तस्मात् संयोगतः पुत्रो जायते गर्भसम्भवः। प्रथमेऽहनि रेतश्च संयोगात् कललञ्च यत्'—इति हारीतः। 'मातापित्रोर्बीजदोषादशुभैश्चावृतात्मनः। गर्भस्थस्य यदा दोषाः प्राप्य रेतोवहाः शिराः। शोषयन्त्याशु तन्नाशाद्रेतश्चाप्युपहन्यते। तत्र सम्पूर्णसर्वाङ्गः स भवत्यपुमान् पुमान्। एते त्वसाध्या व्याख्याताः सन्निपातसमुच्छ्रयात्'—इति चरकः। 'न वामहस्तेनोद्धृत्य पिबेद्वक्त्रेण वा जलम्। नोत्तरेदनुपस्पृश्य नाप्सु रेतः समुत्सृजेत्'—इति कौर्मे। पारदं; जलम्; 'वृष्टिलक्षणानाम् अपां देवानां रेतस्त्वाद्रेत उच्यते। तथाचोपनिषत्–'देवानां रेतो वर्षमिति'–इति तट्टीकायां देवराजयज्वा। यथा—ऋग्वेदे (६।७०।२) 'अस्ते रेतः सिञ्चतं यन्मनुर्हितम्।' ६३८

रेपः त्रि. [रेप्यते निन्द्यते इति। रेप्+घञ्] अधमः; निन्दितः; क्रूरः; कृपणः। ३३७

रेफाः [स्] त्रि. [रिफतीति। रिफ्+असुन्] अधमः; क्रूरः; दुष्टः; कृपणः। ३३७

रेवतीरमणः पुं. [रेवत्या रमणः पतिः] रेवतीशः; रेवतीपतिः; बलदेवः; बलरामः; कामपालः; हलायुधः; बलभद्रः। २९

रेवा स्त्री. [रेवते उत्प्लुत्य गच्छतीति। रेव्+अच्+टाप्] नर्मदानदी; 'रेवां द्रक्ष्यस्युपलविषमे विन्ध्यपादे विशीर्णाम्'—इति मेघदूते (२०)। ६७४

रोकम् क्ली. [रोचतेऽत्रेति। रुच्+घञ्। न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्] छिद्रं; नौका; चलं; पुं. क्रयभेदः; दीप्तिः; 'दिवश्चिदाते रुचयन्त रोकाः'—इति ऋग्वेदे (३।६।७)। 'ते रोकास्त्वदीया दीप्तयः'—इति तद्भाष्ये सायणः। ६२४

रोगः पुं. [रुज्यतेऽनेनेति। रोजनमिति वा। रुज्+घञ्। यद्वा रुजतीति। रुज्+'पदरुजविशस्पृशो घञ्' इति कर्तरि घञ्] देहभङ्गकारकः; रुक्; रुजा; उपतापः; व्याधिः; गदः; आमयः; अपाटवः; आमः; आतङ्कः; भयः; उपघातः; भङ्गः; अर्तिः; तमोविकारः; ग्लानिः; क्षयः; अनार्जवः; मृत्युभृत्यः; अमः; मान्द्यम्;

आकल्पम्; 'रोगस्तु दोषवैषम्यं दोषसाम्यमरोगता। रोगा दुःखस्य दातारो ज्वरप्रभृतयो हि ते'—इति वाग्भटः। कुष्ठौषधम्। ६००

रोगितः त्रि. [रोगः संजातः अस्य। इतच्] रोगयुक्तः; व्याधितः; विकृतः; ग्लानः; म्लानः; मन्दः; आतुरः; अभ्यान्तः; अभ्यमितः; रुग्णः; सामयः; अपटुः; आमयावी; ग्लास्नुः। २८२

रोचिः [स्] क्ली. [रोचतेऽनेनेति। रुच्+बाहुलकात् इसिन्] किरणः; अंशुः; प्रभा; 'रथाङ्गपाणेः पटलेन रोचिषामृषित्विषः संवलिता विरेजिरे'—इति माघे (१।२१)। ३८

रोदः [स्] क्ली. [रुद्+असुन्] स्वर्गः; भूमिः; 'एते पृष्ठानि रोदसोर्विप्रयन्तो व्यानशुः'—इति ऋग्वेदे (९।२२।५)। [द्वि. व.] रोदस्यौ, द्यावाभूमी। रोदसी स्त्री.। 'द्यावापृथिव्यौ रोदस्यौ; रोदसी रोदसीति च।' 'प्रसूरस्त्वापि भूद्यावौ रोदस्यौ रोदसी च ते-' इत्यमरः। 'रोदस्च रोदसी चापि दिवि भूमौ पृथक् पृथक्। सह प्रयोगेऽप्यनयो रोदः स्यादपि रोदसी'—इति विश्वः। 'रोदसी रोदसा सार्द्धं पृथ्वीस्वर्गे दिवि क्षितौ'—इत्यजयः। १२१।

रोधः पुं. [रुणद्धि जलमिति। रुध्+पचाद्यच्] नदीतीरं; [रुध्+घञ्] रोधनम्; 'अहं वैश्यकुले जातो जन्मन्यस्मात्तु सप्तमे। समतीते गवां रोधं निपाने कृतवान् पुरा'—इति मार्कण्डेये (१३।१)। ६६७

रोधः [स्] क्ली. [रुणद्धि वार्यादिकमिति। रुध्+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इति असुन्] नदीतीरम्; 'स नर्मदारोधसि सीकरार्द्रैर्मरुद्भिरानर्तितनक्तमाले। निवेशयामास विलङ्घिताध्वा क्लान्तं रजोधूसरकेतु सैन्यम्'—इति रघौ (५।४२)। ६६७

रोधवक्रा स्त्री. [रोधेन वक्रा] नदी; 'निम्नगा रोधवक्रा च स्रवन्ती सिन्धुरापगा'—इति भागुरिः। ६६६

रोधोवक्रा स्त्री. [रोधसा वक्रा] नदी। ६६६

रोधोवती स्त्री. [रोधोऽस्त्यस्या इति। रोधस्+मतुप्+ङीप्] नदी। ६६६

रोपः पुं. [रुप्यतेऽनेनेति। रुप् विमोहे+घञ्] बाणः; [रुप्+णिच्+घञ्] रोपणं; जननं; प्रादुर्भावः; 'एता जात्यस्तु वृक्षाणां तेषां रोपे गुणास्त्विमे'—इति महाभारते (१३।५८।२४)। ४६६

रोम [न्] क्ली. [रौतीति, रु+'नामन्सीमन्व्योमन्रोमन्निति' मनिन् प्रत्ययेन साधु] शरीरजाताङ्कुरः; लोम; अङ्गजं; त्वग्जं; चर्मजं; तनूरुहम्; 'अल्परोमयुता श्रेष्ठा जङ्घा हस्तिकरोपमा। रोमैकैकं कूपके स्यान्नृपाणां तु महात्मनाम्। द्वे द्वे रोमे पण्डितानां श्रोत्रियाणां तथैव च। रोमत्रयं दरिद्राणां रोगी निर्मांसजानुकः'—इति गारुडे ६६ अध्यायः। न सर्पशस्त्रैः क्रीडेत स्वानि खानि न संस्पृशेत्। रोमाणि च रहस्यानि नाशिष्टेन सदा व्रजेत्'—इति कौर्मे। जनपदविशेषः; तद्देशवासिनि पुं. भूम्नि। 'वानायवो दशाः पार्श्वाः रोमाणः कुशबिन्दवः'—इति महाभारते (६।९।५५)। रोमं; क्ली. जलं; लोम; 'द्वौ चास्य पिण्डावधरेण कण्ठादजातरोमौ सुमनोहरौ च'—इति महाभारते (३।११२।३)। जनपदविशेषः। ५२४

रोमविकारः पुं. [रोम्णां विकारः] रोमाञ्चः; रोमविक्रिया; रोमोद्गमः; रोमोद्भेदः; रोमहर्षः; रोमहर्षणम्। ६५१

रोमहर्षः पुं. [रोम्णां हर्षः] रोमाञ्चः; 'वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते'—इति गीतायाम् (१।२९)। ६५१

रोमाञ्चः पुं. [रोम्णाम् अञ्चः उद्गमः] रोमहर्षणम्; 'स्तम्भः स्वेदोऽथ रोमाञ्चः स्वरभङ्गोऽथ वेपथुः। वैवर्ण्यमश्रु प्रलय इत्यष्टौ सात्त्विकाः स्मृताः।' 'हर्षाद्भुतभयादिभ्यो रोमाञ्चो रोमविक्रिया'—इति साहित्यदर्पणे (३।१६६)। ६५१

रोमोद्गमः पुं. [रोम्णामुद्गमः] रोमाञ्चः; रोमहर्षणम्; 'रोमोद्गमः प्रादुरभूदुमायाः स्विन्नाङ्गुलिः पुङ्गवकेतुरासीत्। वृत्तिस्तयोः पाणिसमागमेन समं विभक्तेव मनोभवस्य'—इति कुमारे (७।७७)। ६५१

रोमोद्भेदः पुं. [रोम्णामुद्भेदः] रोमाञ्चः; रोमविक्रिया; रोमविकारः; 'स्फुरद्रोमोद्भेदस्तरलतरताराकुलदृशो, भयोत्कम्पोत्तुङ्गस्तनयुगभरासङ्गसुभगः'—इति प्रबोधचन्द्रोदये १ अङ्के। ६५१

रोषः पुं. [रुष्+घञ्] क्रोधः; कोपः; 'मुञ्चसि किं मानवतीं व्यवसायाद् द्विगुणमन्युवेगेति। स्नेहभवः पयसाग्निः सान्त्वेन च रोष उन्मिषति'—इति आर्यासप्तशत्याम् (४४९)। ३६२

रोषणः त्रि. [रोषति तच्छीलः । रुष्+'क्रुधमण्डार्थेभ्यश्च' इति युच्] कोपनः; क्रोधनः; क्रोधी; अमर्षणः; 'न धर्मः क्रोधशीलस्य नार्थं चाप्नोति रोषणः। नालं सुखाय कामाप्तिः कोपेनाविष्टचेतसाम्'—इति मार्कण्डेये (११२।१५)। पारदः; हेमघर्षणोपलः; ऊषरभूमिः। ३६१

रोहणद्रुमः पुं. [रोहणः शुभ्रः स चासौ द्रुमः] चन्दनवृक्षः; मलयजं; श्रीखण्डम्। ५४४

रोहिणी स्त्री. [रुह्+इनन्, गौरादित्वाद् ङीष्] स्त्रीगवी; 'प्रीत्या नियुक्ताँल्लिहती: स्तनन्धयान्निगृह्य पारीमुभयेन जानुनोः। वर्द्धिष्णुधाराध्वनि रोहिणीः पयः चिरं निदध्यौ दुहतः स गोदुहः'—इति माघे (१२।४०)। तडित्; कटुम्भरा; सोमवल्कः; 'कट्फलः सोमवल्काख्यः सोमवृक्षश्च रोहिणी'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। महाश्वेता; 'कटभी किनिही श्वेता महाश्वेता च रोहिणी' —इति वैद्यकरत्नमालायाम्। [रोहितवर्णविशिष्टा स्त्री, रोहित+'वर्णादनुदात्तोपपधात्तो नः' इति ङीप् तस्य नत्वं च] लोहिता; जिनानां विद्यादेवीविशेषः; काश्मरी; हरीतकी; मञ्जिष्ठा; कपिलवर्णा वर्तुलाकारा विरेचने प्रशस्ता हरीतकी; बलदेवमाता; सा वसुदेवभार्या; कश्यपपत्नीसुरभ्यंशजाता; 'देवकी रोहिणी चेमे वसुदेवस्य धीमतः। रोहिणी सुरभिर्देवी अदितिर्देवकी ह्यभूत्'—इति महाभारते हरिवंशः। सुरभिकन्या; 'दक्षस्य तनया याभूत् सुरभिर्नाम नामतः। गवां माता महाभागा सर्वलोकोपकारिणी। तस्यां तु तनया जज्ञे कश्यपात्तु प्रजापतेः। नाम्ना सा रोहिणी शुभ्रा सर्वकामदुघा नृणाम्। तस्यां जज्ञे शूरसेनाद्वसोरिति तपोज्वलात्। कामधेनुरिति ख्याता सर्वलक्षणसंयुता'—इति कालिकापुराणे। नववर्षीया कन्या; 'अष्टवर्षा भवेद् गौरी नववर्षा तु रोहिणी। दशमे कन्यका प्रोक्ता अत ऊर्द्ध्वं रजस्वला।' पञ्चवर्षाकुमारी; 'रोहिणी पञ्चवर्षा च षड्वर्षा कालिका स्मृता'—इति देवीभागवते (३।२६।४२)। 'रोहिणीं रोगनाशाय पूजयेद्विधिवन्नरः।' पूजामन्त्रोऽस्याः— 'रोहयन्ती च बीजानि प्राग्जन्मसञ्चितानि वै। या देवी सर्वभूतानां रोहिणीं पूजयाम्यहम्'—इति देवीभागवते (३।२६।५६)। हिरण्यकशिपुकन्या; 'कन्या सा रोहिणी नाम हिरण्यकशिपोः सुता'—इति महाभारते (३।२२०।१८)। [रोहिणि+पक्षे ङीष्] अश्विन्यादिसप्तविंशतिनक्षत्रान्तर्गतचतुर्थनक्षत्रम्; रोहिणिः; ब्राह्मी। 'स्याद्धर्मकार्ये कुशलः कुलीनः सुचारुदेहो विलसत्कलेवरः। स्मराग्निनाकुलिताखिलाशयो यो रोहिणीजः स धनी स मानी'—इति कोष्ठीप्रदीपः। गलरोगविशेषः; 'रोहिणी पञ्चधा प्रोक्ता कण्ठशालूक एव च। अधिजिह्वश्च वलयोऽलासनामैरवृन्दकः। ततो वृन्दः शतघ्नी च गिलायुः कण्ठविद्रधिः। गलौघः प्रस्वरघ्नश्च मांसतालस्तथैव च। विदाही कण्ठदेशे तु रोगा अष्टादश स्मृताः। गलेऽनिलः पित्तकफौ च मूर्च्छितौ, प्रदूष्य मासं च तथैव शोणितम्। गलोपसंरोधकरैस्तथाङ्कुरैर्निहन्त्यसून् व्याधिरियं हि रोहिणी'—इति भावप्रकाशः। स्थूले त्रि.। 'नैव ह्रस्वा न महती न कृशा नापि रोहिणी। नीलकुञ्चितकेशी च तया दीव्याम्यहं त्वया'—इति महाभारते (२।६१।३३)। २६८

रोहिणीवल्लभः पुं. [रोहिण्या वल्लभः] रोहिणीपतिः; रोहिणीरमणः; रोहिणीशः; रोहिणीप्रियः; चन्द्रः; चन्द्रमाः; वसुदेवः। ४२

रोहितम् क्ली. [रुह्+'रुहे रश्च लो वा' इति इतन्] ऋजुशक्रशरासनम्; 'विद्युतोऽशनिमेघांश्च रोहितेन्द्रधनूंषि च। उल्कानिर्घातकेतूंश्च ज्योतींष्युच्चावचानि च'—इति मनुः (१।३८)। कुङ्कुमं; रक्तम्। ५७

रोहितः पुं. [रोहतीति। रुह्+'रुहे रश्च लो वा' इति इतन्] मीनविशेषः; महामत्स्यभेदः; 'रोहितो मारुतहरो नात्यर्थं पित्तकोपनः'—इति सुश्रुतः। 'रोहितो दीपनीयश्च लघुपाको महाबलः'—इति चरकः। 'वातघ्नो नहि पित्तकृद्बलकरः स्याद्रोहितः सर्वदा'—इति हारीतः। स्वनामख्यातो हरिश्चन्द्रस्य नृपतेः पुत्रः; रोहिताश्वः; 'राजा पुत्रमुखं दृष्ट्वा सुखमाप महत्तरम्। नामास्य रोहितश्चेति चकार विधिपूर्वकम्।' मृगभेदः; रोहितकवृक्षः; रोहीतवृक्षः; अग्निघोटकः (रोहन्ति आरोहन्ति रथं वहन्त्यादिवमिति); 'यदयुक्था अरुषा रोहिता रथे'—इति ऋग्वेदे (१।९४।१०)। रोहिता लोहितवर्णौ, रोहित इत्यग्नेरश्वस्याख्या, रोहितोऽग्नेरितिदर्शनाद्, रोहितेन त्वाग्निर्देवतां गमयन्त्विति मन्त्रवर्णाच्च'— इति तद्भाष्ये सायणः। रक्तवर्णः; रक्तवर्णविशिष्टे

त्रि.। 'नमो रोहिताय स्थपतये वृक्षाणां पतये नमः'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (१६।१९)। ६५९

रोहिताश्वः पुं. [रोहितः अश्वो यस्य] अग्निः; वह्निः। ६४

रौद्रम् क्ली.–पुं. [रुद्रस्येदमिति। रुद्र+अण्] सूर्यतेजः; घर्मः; प्रकाशः; द्योतः; आतपः, सप्त रौद्राः—'जठरः पिङ्गलो रौद्रो घोराख्यः कालसंज्ञितः। अग्निनामा हतो रौद्रः सप्त रौद्राः प्रकीर्तिताः।' ४०

रौद्रः पुं. [रुद्रो देवतास्य। रुद्र+अण्] नवरसभेदः; 'रौद्रः क्रोधस्थायिभावो रक्तो रुद्राधिदैवतः। आलम्बनं रिपुस्तत्र तच्चेष्टोद्दीपनं मतम्।' हेमन्तऋतुः; यमः; कार्तिकेयः; 'आग्नेयः कृत्तिकापुत्रो रौद्रो गाङ्गेय इत्यपि। श्रूयते भगवान् देवः सर्वदेवमयो गुहः'—इति महाभारते (१।१३८।१३)। त्रि. [रुद्र+अण्] तीव्रः; 'ज्वरस्त्रिपादस्त्रिशिराः षड्भुजो नवलोचनः। भस्मप्रहरणो रौद्रः कालान्तकयमोपमः'—इति हरिवंशः। भीषणः; 'तस्य ते तद्वचः श्रुत्वा रौद्रं लोमप्रहर्षणम्। प्रचक्रुर्बहुलां पूजां कुत्सन्तो धृतराष्ट्रजम्'—इति महाभारते (२।६४।५०)। रुद्रसम्बन्धी। ९२

रौहिणेयः पुं. [रोहिण्या अपत्यमिति। रोहिणी+'शुभ्रादिभ्यश्च' इति ढक्] बलदेवः; बलरामः; बलभद्रः; 'तत्रोपविष्टं पृथुदीर्घबाहुं ददर्श कृष्णः सहरौहिणेयः'—इति महाभारते (१।१९२।१९)। (५६) बुधग्रहः; सौम्यः; रोहिणीसुतः; रोहिणीभवः। पुरुषोत्तमस्थतीर्थपञ्चकान्यतमः; 'मार्कण्डेये वटे कृष्णे रौहिणेये महोदधौ। इन्द्रद्युम्नसरः स्नात्वा पुनर्जन्म न विद्यते'—इति तीर्थतत्त्वे। त्रि. गोवत्सः; क्ली. मरकतमणिः। २९

ल

लक्षणम् क्ली. [लक्ष्यते ज्ञायतेऽनेनेति। लक्ष्+ल्युट्। यद्वा 'लक्षेरट् च' इति नप्रत्ययस्तस्याडागमश्च] चिह्नम्; 'अव्याक्षेपो भविष्यन्त्याः कार्यसिद्धेर्हि लक्षणम्'—इति रघौ (१०।६)। नाम; 'सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम्। एतद्विद्यात् समासेन लक्षणं सुखदुःखयोः'—इति मनुः (४।१६०)। दर्शनं; पुं. [लक्ष्+'लक्षेरट् च' इति न तस्याडागमश्च। लक्षणमस्त्यस्येति अच् वा] सौमित्रिः; रामभ्राता लक्ष्मणः; 'लक्षणानुगतो यश्च सर्वभूतहिते रतः। चतुर्दश वने तप्त्वा तपो वर्षाणि राघवः'—इति हरिवंशे (४१।१२९)। सारसपक्षी; असाधारणधर्मः। ४५

लक्षणा स्त्री. [लक्षण+टाप्] सारसी; हंसी; अप्सरोविशेषः; 'अम्बिका लक्षणा क्षेमा देवी रम्भा मनोरमा'—इति महाभारते (१।१२३।५९)। शक्यसम्बन्धः; 'लक्षणा शक्यसम्बन्धस्तात्पर्यानुपपत्तितः'—इति भाषापरिच्छेदः। २४४

लक्ष्म [न्] क्ली. [लक्षयत्यनेन, लक्ष्यते इति वा। लक्ष्+मनिन्] चिह्नम्; 'सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं, मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति। इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी, किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्'—इति शाकुन्तले १ अङ्के। प्रधानम्। ४५

लक्ष्मणा स्त्री. [लक्ष्मीरस्त्यस्याः। पामादित्वान्न अ च, टाप्। लक्ष्मणमस्त्यस्या इति वा। अर्श आदित्वाद् अच्+टाप्] सारसी; ओषधिभेदः; लक्ष्मणाकन्दः; पुत्रकन्दा; पुत्रदा; नागिनी; नागाह्वा; नागपत्री; तुलिनी; मञ्जिका; अस्रबिन्दुच्छदा; पुच्छदा; 'पुत्रकाकाररक्ताल्पबिन्दुभिर्लाञ्छिता सदा। लक्ष्मणा पुत्रजननी वस्तगन्धाकृतिर्भवेत्'—इति भावप्रकाशः। मद्राधिपतिकन्या; 'सुतां च मद्राधिपतेर्लक्ष्मणां लक्षणैर्युताम्। स्वयंवरे जहारैकः स सुपर्णः सुधामिव'—इति भागवते (१०।५८।५७)। दुर्योधनकन्या; सा तु श्रीकृष्णपुत्रेण साम्बेन विवाहिता; 'दुर्योधनसुतां राजन् लक्ष्मणां समितिञ्जयः। स्वयंवरस्थामहरत् साम्बो जाम्बवतीसुतः'—इति भागवते (१०।६८।११)। २४४

लक्ष्मीः स्त्री. [लक्षयति पश्यति उद्योगिनमिति। लक्षि+'लक्षेर्मुट् च' इति ई प्रत्ययो मुडागमश्च] विष्णुपत्नी; पद्मालया; पद्मा; कमला; श्रीः; हरिप्रिया; इन्दिरा; लोकमाता; मा; क्षीराब्धितनया; रमा; जलधिजा; भार्गवी; हरिवल्लभा; दुग्धाब्धितनया; क्षीरसागरसुता; 'नित्यं छेदस्तृणानां क्षितिनखलिखनं पादयोरल्पशौचम्, एकाङ्गे तैलहीनं वसनमलिनता बन्धनं मूर्द्धजानाम्। द्वे सन्ध्ये चापि निद्रा विवसनशयनं ग्रासहासातिरेकः, स्वाङ्गे पीठे च वाद्यं हरति धनपतेः केशवस्यापि लक्ष्मीम्।' शोभा (८१३); दुर्गा;

'स्तुतिः सिद्धिरिति ख्याता श्रिया संश्रयणाच्च वा। लक्ष्मीर्वा ललना वापि क्रमात् सा कान्तिरुच्यते'—इति देवीपुराणे ५५ अध्यायः। सम्पत्तिः; ऋद्ध्यौषधिः; वृद्धिनामौषधिः; फलिनीवृक्षः; सीता; वीरयोषित्; स्थलपद्मिनी; हरिद्रा; शमी; द्रव्यं; मुक्ता; मोक्षप्राप्तिः; शोभा; 'कपालनेत्रान्तरलब्धमार्गैर्ज्योतिःप्ररोहैरुदितैः शिरस्तः। मृणालसूत्राधिकसौकुमार्यां बालस्य लक्ष्मीं ग्लपयन्तमिन्दोः'—इति कुमारे (३।४९) ३१

लक्ष्यम् क्ली. [लक्ष्यते यदिति, लक्ष्+ण्यत्] शरवेधस्थानं; लक्षं; शरव्यं; प्रतिकायः; वेध्यं; वेधम्; 'कामस्तु बाणावसरं प्रतीक्ष्य पतङ्गवद्वह्निमुखं विविक्षुः। उमासमक्षं हरबद्धलक्ष्यः शरासनज्यां मुहुराममर्श'—इति कुमारे (३।६४)। त्रि. लक्षणया बोध्यः; [लक्ष्यते इति, लक्ष्+ण्यत्] दर्शनीयः; इति लक्षधात्वर्थदर्शनात्। व्याजः; 'रोमाञ्चलक्ष्येण स गात्रयष्टिं भित्त्वा निराक्रामदरालकेश्याः'—इति रघौ (६।८१)। अनुमेयः; 'इति द्विजातौ प्रतिकूलवादिनि प्रवेपमानाधरलक्ष्यकोपया'—इति कुमारे (५।८४)। 'छायामण्डललक्ष्येण तमदृश्या किल स्वयम्। पद्मा पद्मातपत्रेण भेजे साम्राज्यदीक्षितम्'—इति रघौ (४।५)। ४६८

लगुडः पुं. [लगति सङ्गं करोति। लगे सङ्गे, बाहुलकादुडच्] दण्डः; वंशादिमयो दण्डः; लोहमयोऽस्त्रभेदः; लोहमयी यष्टिः; 'लट्ठ' 'लाठी' इति भाषा। 'लगुडः सूक्ष्मपादः स्यात् पृथ्वंशः स्थूलशीर्षकः। लौहबद्धाग्रभागश्च ह्रस्वदेहः सुपीवरः। दण्डाकारो दृढाङ्गश्च तथा हस्तद्वयोन्नतः। उत्थानं पातनं चैव पेषणं पोथनं तथा। चतस्रो गतयस्तस्य पञ्चमी नेह विद्यते'—इति शुक्रनीतौ। ७२६

लग्नः पुं. [लग्+क्त, निपातनात् साधुः। यद्वा लस्ज्+क्तः। 'ओलस्जी, लस्जेरोदनुबन्धबलादिडभावे नत्वम्] मत्तगजः; प्रभिन्नः; स्तुतिपाठकः; प्रातर्गेयः; स्तुतिव्रतः; सूतः; त्रि. सक्तः; लज्जितः; क्ली. [लगति फले इति, लगे सङ्गे+'क्षुब्धस्वान्तध्वान्तलग्नेति' निपातनात् साधु] राशीनामुदयः; अहोरात्रमध्ये द्वादशराशयः उदयन्ति। २२०

लग्नकः पुं. [लग्न एव+स्वार्थे कन्] प्रतिभूः; 'जामिन' इति यवनभाषा। ३८०

लघु क्ली. [लङ्घ्यते अनेनेति। लङ्घ्+'लङ्घिबंह्योर्नलोपश्च' इति कु धातोर्नलोपश्च] शीघ्रं; क्षिप्रं; झटिति; 'यावदेव तु सुप्तास्तावदेव वयं लघु। रथमारुह्य गच्छामः पन्थानमकुतोभयम्'—इति रामायणे (२।४६।२१)। कृष्णागुरु; लामज्जकम्; 'लामज्जकं सुनालं स्यादमृणालं लयं लघु। इष्टकापथकं सेव्यं नलदं चावदातकम्'—इति भावप्रकाशः। हस्ताश्विनीपुष्यनक्षत्राणि; 'लघुहस्ताश्विनपुष्याः पण्यरतिज्ञानभूषणकलासु। शिल्पौषधयानादिषु सिद्धिकराणि प्रदिष्टानि'—इति बृहत्संहितायाम् (९८।९)। कालपरिमाणविशेषः; 'क्षणान् पञ्च विदुः काष्ठां लघु ता दश पञ्च च। लघूनि वै समाम्नाता दश पञ्च च नाडिकाः।' पुं. प्राणायामविशेषः; 'लघुमध्योत्तरीयाख्यः प्राणायामस्त्रिधोदितः। तस्य प्रमाणं वक्ष्यामि तदलर्क शृणुष्व मे। लघुर्द्वादशमात्रस्तु द्विगुणः स तु मध्यमः। त्रिगुणाभिस्तु मात्राभिरुत्तमः परिकीर्तितः'—इति मार्कण्डेये (३९।१३-१४)। स्त्री. पृक्कानामौषधिः; 'पृक्कासृग् ब्राह्मणी देवी मरुन्माला लता लघुः। समुद्रान्ता वधूः कोटिवर्षा लङ्कोपिकेत्यपि'—इति भावप्रकाशः। त्रि. अगुरुः; 'तृणादपि लघुस्तूलस्तूलादपि च भिक्षुकः। न नीतो वायुना कस्मादर्थप्रार्थनशङ्कया'—इति उद्भटः। मनोज्ञः; इष्टः; 'नाम्भसां कमलशोभिनां तथा शाखिनां च न परिश्रमच्छिदाम्। दर्शनेन लघुना यथा तयोः प्रीतिमापुरुभयोस्तपस्विनः'—इति रघौ (११।१२)। निःसारः; 'श्रुत्वा रामः प्रियोदन्तं मेने तत्सङ्गमोत्सुकः। महार्णवपरिक्षेपं लङ्कायाः परिखालघुम्'—इति रघौ (१२।६६)। ह्रस्वः; 'ह्रस्वो लघुः, दीर्घो गुरुः। 'मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो भादिगुरुः पुनरादिलघुर्यः। जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः। गुरुरेको गकारस्तु लकारो लघुरेककः'—इति छन्दोमञ्जरी। ६६७

लघुहस्तः त्रि. [लघुः क्षिप्रकारी हस्तो यस्य] शीघ्रवेधी; 'स राजपुत्रश्छित्त्वैव रक्षसस्तस्य तच्छिरः। भूयः खड्गप्रहारेण लघुहस्तो द्विधाकरोत्'—इति कथासरित्सागरे (४२।१३३)। 'तत्त्वाधिगतशास्त्रार्थो दृष्टकर्मा स्वयं कृती। लघुहस्तः शुचिः शूरः सज्जोपस्करभेषजः। प्रत्युत्पन्नमतिर्धीमान् व्यवसायी विशारदः। सत्यधर्मपरो यश्च स भिषक्पाद उच्यते'—इति सुश्रुतः। ४७१

लज्जा स्त्री. [लज्जनमिति, लस्ज् व्रीडने+'गुरोश्च हलः' इति अ, टाप्] अन्तःकरणवृत्तिविशेषः; अकर्तव्ये कर्मणि परज्ञानभयम्; मन्दाक्षं; ह्रीः; त्रपा; व्रीडा; 'लाज' इति भाषा। अपत्रपा; मन्दास्यं; लज्या; व्रीडः; व्रीडनम्; 'लज्जा तिरश्चां यदि चेतसि स्यादसंशयं पर्वतराजपुत्र्याः। तं केशपाशं प्रसमीक्ष्य कुर्युर्बालप्रियत्वं शिथिलं चमर्यः'—इति कुमारे (१।४८)। लज्जालुः; क्षुपविशेषः; रक्तपादी; शमीपत्रा; स्पृक्का; खदिरपत्रिका; सङ्कोचिनी; समङ्गी; नमस्कारी; प्रसारिणी; सप्तपर्णी; खदिरी; गण्डमालिका; लज्जिरी; स्पर्शलज्जा, अस्ररोधिनी; रक्तमूला; ताम्रमूला; स्वगुप्ता; अञ्जविकारिका; महाभीता; वशिनी; महौषधिः। ५६७

लञ्चा स्त्री. [लुञ्च्यते या, लुञ्च् अपनयने, 'गुरोश्च हलः' इत्य, टाप्, पृषोदरादित्वादत्वम्] उपदा; प्राभृतम्; उपग्राह्यम्; उपायनं; उत्कोचः; उपादानम्; उपचारः; आमिषम्। ४३४

लता स्त्री. [लतति वेष्टयते यान्यमिति। लत्+पचाद्यच्, टाप्] शाखादिरहिता गुडूच्यादिः; वल्ली; व्रततिः; वल्लिः; वेल्लिः; प्रततिः; लतिका; सा शाखापत्रसमायुक्ता चेत्प्रतानिनी; वीरुत्; गुल्मिनी; उलपः। 'अलावुश्चापि कुष्माण्डं मायाम्बुश्च सुकामुकः। खर्जुरी कर्कटी चापि शिविरे मङ्गलप्रदा। वास्तूकं कारवेल्लश्च वार्ताकुश्च शुभप्रदाः। लताफलं च शुभदं सर्वं सर्वत्र निश्चितम्'—इति विष्णुपुराणे। (२०८) अतिमुक्तकः; वासन्ती; माधवी; शाखा; प्रियङ्गुः; 'प्रियङ्गुः फलिनी कान्ता लता च महिलाह्वया। गुन्द्रा गुन्द्रफला श्यामा विष्वक्सेनाङ्गनाप्रिया'—इति भावप्रकाशः। पृक्का; 'तस्करोच्चारकश्चण्डो देवी पृक्का लता लघुः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। अशनपर्णी; ज्योतिष्मती; 'ज्योतिष्मती स्यात्कटभी ज्योतिष्का कङ्गिनीति च। पारावतपदी पण्या लता प्रोक्ता ककुन्दनी'—इति भावप्रकाशः। लताकस्तूरिका; माधवी; दूर्वा; कैवर्तिका; सारिवा; बृहती; 'भण्टाकी बृहती सिंही वार्ताकी राष्ट्रिकाकुली। प्रसहा रक्तपाका च लता बृहतिका परा।' नारी; 'नग्नां परलतां पश्यन् अयुतं यस्तु साधकः। प्रजपेत् स भवेत् शीघ्रं विद्याया वल्लभः स्वयम्'—इति तन्त्रसारे। 'नवा लता गन्धवहेन चुम्बिता करम्बिताङ्गी मकरन्दशीकरैः। दृशानृपेण स्मितशोभिकुड्मला दरादराभ्यां दरकम्पिनी पपे।' 'नवा नवीना लता माधवीलता, पक्षे नवा रम्या लता स्त्री' इति तट्टीका। अप्सरोविशेषः; 'अहञ्च सौरभेयी च समीची बुद्बुदा लता। यौगपद्येन तं विप्रमभ्यगच्छाम भारत!'—इति महाभारते (१।२१७।२०)। १८०

लतोद्गमः पुं. [लता इव उद्गमः] अवरोहः। १८४

लपनम् क्ली. [लप्यतेऽनेनेति, लप्+करणे ल्युट्] मुखं; भावे ल्युट् भाषणं [लपधात्वर्थदर्शनात्]; सम्भाषणम्; 'प्रकटयति रागमधिकं लपनमिदं वक्रिमाणमावहति। प्रीणयति च प्रतिपदं दूति! शुकस्येव दयितस्य'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३८१)। 'शुकस्येव दयितस्य लपनं सम्भाषणम् पक्षे वदनम्'—इति तट्टीका। ५१८

लब्धवर्णः पुं. [लब्धा वर्णा यशांसि येन] पण्डितः; 'कृच्छ्रलब्धमपि लब्धवर्णभाक् तं दिदेश मुनये सलक्ष्मणम्'—इति रघौ (११।२)। ३३२

लब्धिः स्त्री. [लभ्+क्तिन्] दायः; प्राप्यः; भजनफलम्। ८४४

लम्पटः पुं. [लम्बते इति, लबि+'शकादिभ्योऽटन्' इत्यटन्, पृषोदरादित्वात् पत्वम्] आसक्तः; लोलुभः; लोलुपः; लोलः; लालसः; 'यथैहिकामुष्मिककामलम्पटः सुतेषु दारेषु धनेषु चिन्तयन्। शङ्केत विद्वान् कुकलेवरात्ययाद् यस्तस्य यत्नः श्रम एव केवलम्'—इति भागवते (५।१९।१४)। षिङ्गः; लम्पाकः; 'अथैतराब्रवीन्मैवं यद्यपि स्त्रीषु लम्पटः। तथापि न स दुःखेऽस्मिन्नीदृशः स्यात्तथाविधः'—इति कथासरित्सागरे (४७।१०१)। ३५३

लम्बितः त्रि. [लम्ब्+क्त] स्रंसितः; शब्दितः; निष्पन्नः; 'त्वदधरचुम्बनलम्बितकज्जलमुज्ज्वलय प्रियलोचने'—इति गीतगोविन्दे (१२।१८)। ५५३

लम्बोदरः पुं. [लम्बमुदरं यस्य] हेरम्बः; आखुरथः। गणपतिः; गजवदनः; परशुधरः; एकदन्तः; एकदंष्ट्रः; विनायकः; विघ्नराजः; गणेशः; 'गतिगञ्जितवरयुवतिः करी कपोली करोतु मदमलिनौ। मुखबन्धमात्रसिन्धुर लम्बोदर किं मदं वहसि'—इति आर्यासप्तशत्याम् (१९८)। नृपविशेषः; भागवते (१२।१।२२)। औदरिके त्रि.। 'ततो लम्बोदरेणेत्य पुंसारोपितबाहुकः। सम्पादितः स यावत्तद्वनं केशरिणी कृते'—इति कथा-

सरित्सागरे (७०।१०२)। १८
लयः पुं. [ली+अच्] तौर्यत्रिकस्य साम्यं; विनाशः; प्रलयः; अखण्डवस्त्ववलम्बनेन चित्तवृत्तेर्निद्रा; 'चत्वारिंशदिमे प्रोक्ता लया लयविशारदैः। लयेन वश्यो भगवान् लये लीनो जनार्दनः'—इतिसंगीतदामोदरः। ९४
ललना स्त्री. [ललति ईप्सति कामानिति। लल्+ल्यु+टाप्] कामिनी; 'रतिलुलितललितललनाक्लमजललववाहिनो मुहुर्यत्र। श्लथकेशकुसुमपरिमलवासितदेहा वहन्त्यनिलाः'—इति कलाविलासे (१।५)। नारीभेदः; लालिनी; जिह्वा। ४८२
ललाटम् क्ली. [ललम् ईप्सामटति ज्ञापयतीति। लल्+अट्+अण्] अवयवविशेषः; अलिकं; गोधिः; महाशङ्खः; शङ्खः; भालः; कपालकः; अलीकं; ललाटकम्; 'कपाल' इति भाषा। 'उन्नतैर्विपुलैः शङ्खैर्ललाटैर्विषमैस्तथा। निर्द्धना धनवन्तश्च अर्द्धेन्दुसदृशैर्नराः। आचार्याः शुक्तिविशालैः शिरालैः पापकारिणः। उन्नताभिः शिराभिस्तु स्वस्तिकाभिर्धनेश्वराः। निम्नैर्ललाटैर्वधार्हाः क्रूरकर्मरतास्तथा। संवृतैश्च ललाटैश्च कृपणा उन्नतैर्नृपाः। ललाटोपसृतास्तिस्रो रेखाः स्युः शतवर्षिणाम्। नृपत्वं स्याच्चतसृभिरायुः पञ्चनवत्यथ। अरेखेणायुर्नवतिर्विच्छिन्नाभिश्च पुंश्चलाः। केशान्तोपगताभिश्च अशीत्यायुर्नरो भवेत्। पञ्चभिः सप्तभिः षड्भिः पञ्चाशद्बहुभिस्तथा। चत्वारिंशाच्च वक्राभिस्त्रिंशद्भ्रूलग्नगामिभिः। विंशतिर्वामवक्राभिरायुः क्षुद्राभिरल्पकम्। न पृथु बालेन्दुनिभे भ्रुवौ चाथ ललाटकम्। शुभमर्द्धेन्दुसंस्थानमतुङ्गं स्यादलोमशम्'—इति गारुडे ६५ अध्याये। 'मस्तकोदरपृष्ठनाभिललाटनासाचिबुकवस्तिग्रीवा इत्येता एकैकाः'—इति सुश्रुते। ५२५
ललाटपट्टः पुं. [ललाटः पट्ट इव फलक इव, यद्वा ललाट एव पट्टः] ललाटपट्टिका। ५४१
ललाटिका स्त्री. [ललाटे भवोऽलङ्कारः। 'कर्णललाटात् कनलङ्कारे' इति कन्] ललाटस्थचन्दनं; शङ्खचर्चा; तिलकः; 'तदा प्रभृत्युन्मदना पितुर्गृहे ललाटिकाचन्दनधूसरालका। न जातु बाला लभते स्म निर्वृतिं तुषारसङ्घातशिलातलेष्वपि'—इति कुमारे (५।५५)। स्वर्णादिरचितललाटाभरणम्; पत्रपाश्या; 'टीका' इति भाषा। ५४१
ललाम [न्] क्ली. [लड्+अम्+कनिन्] ललामम्; यथाह रुद्रः—'प्रधानध्वजशृङ्गेषु पुण्ड्रवालधिलक्ष्मसु। भूषावाजिप्रभावेषु ललामं स्याल्ललाम च।' प्रधाने; रघौ (५।६४)। 'तत्र स्वयंवरसमाहृतराजलोकं, कन्याललाम कमनीयमजस्य लिप्सोः।' ८५५
ललामम् पुं.—क्ली. [लड् विलासे+क्विप्, तम् अमति प्राप्नोतीति। अम् गतौ+अण्, डस्य लत्वम्] भूषा; 'पौरस्तव श्रीललनाललामं द्रष्टास्फुरत्कुन्तलमण्डितानाम्'—इति भागवते (३।१४।४८)। लाङ्गूलं; पुच्छं; लूमं; बालहस्तः; बालधिः; लङ्गूलं; लाङ्गुलं; लुलामः; अवालः; लञ्जः; पिच्छः; बालः। प्रधानम्; 'प्रधानध्वजशृङ्गेषु पुण्ड्रबालधिलक्ष्मसु। भूषावाजिप्रभावेषु ललामं स्यात् ललाम च'—इति रुद्रः। शृङ्गं; प्रभावः; पुण्ड्रं; ध्वजः; लक्ष्म; चिह्नं; तुरङ्गः। अश्वललाटे अन्यवर्णचिह्नं; गवादीनां ललाटचिह्नम्; अश्वस्य भूषा; पुरुषः; 'ललामोऽस्त्री ललामापि प्रभावे पुरुषे ध्वजे। श्रेष्ठभूषापुण्ड्रशृङ्गपुच्छचिह्नाश्वलिङ्गिषु'—इति यादवः (वैजयन्तीकोशः)। त्रि. रम्यः; श्रेष्ठः; 'ललामैर्हरिभिर्युक्तः सर्वशब्दसहैर्युधि। राज्ञां मध्ये महेष्वासः शान्तभीरम्यवर्तत'—इति महाभारते (७।२२।१३)। ८५५
ललामकम् क्ली. [ललाटपर्यन्तमागतं ललामकं, ललामं तिलकमिव इति इवार्थे क] पुरोन्यस्तमाल्यं; तदेव माल्यं पुरः संमुखभागे न्यस्तम्। ५५३
ललितम् क्ली. [लल्+क्त] शृङ्गारभावजक्रियाविशेषः; सुकुमारविधानेन भ्रूनेत्रादिक्रियासचिवकरचरणाङ्गविन्यासो ललितम्; 'सुकुमाराङ्गविन्यासे मसृणा ललितं भवेत्।' 'सुभ्रूभङ्गं करकिशलयावर्तनैरापतन्ती, सा लिम्पन्ती ललितललिता लोचनस्याञ्जनेन। विन्यस्यन्ती चरणकमले लीलया स्वैरयाते, निःशङ्का च-प्रथमवयसा नर्तिता पङ्कजाक्षी।' 'भ्रूनेत्रादिक्रियाशालिसुकुमारविधानतः। हस्तपादाङ्गविन्यासस्तरुण्या ललितं विदुः।' 'अनाचार्योपदिष्टं स्याल्ललितं रतिचेष्टितम्।' 'विन्यासभङ्गिरङ्गाणां भ्रूविलासमनोहरा। सुकुमारा भवेद्यत्र ललितं तदुदीरितम्।' [लल् ईप्सायाम्, भावे क्त। लड् विलासे इत्यस्य डलयोरेकत्वेन डस्य लत्वं वा। इति भरतः] माघे (९।७९) किराते (१०।५२)। पुं.

[लल्यते ईप्स्यते इति। लल्+कर्मणि क्त] रागविशेषः; 'प्रफुल्लसप्तच्छदमाल्यधारी युवातिगौरोऽलसलोचनश्रीः। विनिःसरन् वासगृहात् प्रभाते विलासिवेशो ललितः प्रदिष्टः।' 'प्रातर्गेयास्तु देशागो ललितः पटमञ्जरी। विभाषा भैरवी चैव कामोदो गोण्डकीर्यपि'—इति सङ्गीतदामोदरः। त्रि. सुन्दरः; 'अथ तस्य विवाह-कौतुकं ललितं बिभ्रत एव पार्थिवः'—इति रघौ (८।१)। ईप्सितः; चलितः। ८९

लवः पुं. [लवनमिति। लू+अप्] लेशः; 'वक्रेतराग्रैरल-कैस्तरुण्यश्चूर्णारुणान् वारिलवान् वमन्ति'—इति रघौ (१६।६६)। विनाशः; छेदनं; रामपुत्रः; कालभेदः; 'अष्टादशनिमेषास्तु काष्ठा काष्ठाद्वयं लवः'—इति हेमचन्द्रः। 'तुलयाम लवेनापि न स्वर्गं नापुनर्भवम्। भगवत्सङ्गिसङ्गस्य मर्त्यानां किमुताशिषः'—इति भागवते (१।१८।१३)। लावनामपक्षी; किञ्जल्कः; पक्षः; गोपुच्छलोम; 'स तौ कुशलवोन्मृष्टगर्भक्लेदौ तदाख्यया। कविः कुशलवावेव चकार किल नामतः'—इति रघौ (१५।३२)। ६८८

लवणम् क्ली. [लुनाति जाड्यमिति। लू+नन्द्यादित्वात् ल्यु। नन्द्यादिगणे णत्वपाठाद् णत्वम्] क्षाररसयुक्त-द्रव्यम्; 'सामुद्रं यत्तु लवणम् अक्षीवं वसिरं च तत्। सैन्धवोऽस्त्री शीतशिवं माणिमन्थं च सिन्धुजे। रौमकं वसुकं पाक्यं विडं च कृतके द्वयम्।' 'सौवर्चलेऽक्ष रुचके' इत्यमरः। 'चक्षुष्यं सैन्धवं हृद्यं रुच्यं लघ्वग्निदीपनम्। स्निग्धं समधुरं वृष्यं शीतं दोषघ्नमुत्तमम्। सामुद्रं मधुरं पाके नात्युष्णमविदाहि च। भेदनं स्निग्धमीषच्च शूलघ्नं नातिपित्तलम्। सक्षारं दीपनं रूक्षं शूलहृद्रोग-नाशनम्। रोचनं तीक्ष्णमुष्णं च विडं वातानुलोमनम्। लघु सौवर्चलं पाके वीर्योष्णं विशदं कटु। गुल्मशूल-विबन्धघ्नं हृद्यं सुरभि रोचनम्। रोमकं तीक्ष्णमत्युष्णं व्यवायि कटुपाकि च। वातघ्नं लघु विस्यन्दि सूक्ष्मं विड्भेदि मूत्रलम्। लघु तीक्ष्णोष्णमुत्क्लेदि सूक्ष्मं वातानुलोमनम्। सतिक्तं कटु सक्षारं विद्याल्लवण-मौद्भिदम्। कफवातक्रिमिहरं लेखनं पित्तकोपनम्। दीपनं पाचनं भेदि लवणं गुटिकाह्वयम्। ऊषःसूतं बालुकेलं शैलमूलाकरोद्भवम्। लवणं कटुकं छेदि विहितं कटु रोच्यते'—इति सुश्रुतः। [लू+भावे ल्युट्] छेदनम्; 'लवोऽभिलावो लवने'—इत्यमरः। खड्गयुद्ध-प्रकारविशेषः; 'आहितं चित्रकं क्षिप्तं कुद्रवं लवन धृतम्'—इति हरिवंशे। पुं. [लुनातीति। लू+ल्यु] सिन्धुभेदः; 'लवणेन समुद्रेण समन्तात् परिवारितः'—इति महाभारते (६।५।१५)। राक्षसविशेषः; रघौ (१५।२)। रसविशेषः; 'कटुतीक्ष्णोष्णलवणक्षारा-म्लादिभिरुल्वणैः। मातृभुक्तैरुपस्पृष्टः सर्वाङ्गोत्थित-वेदनः'—इति भागवते (३।३१।७)। पृथिव्यग्नि-गुणबाहुल्याल्लवणः; पटुः, 'लवणो रुचिकृद्रसोऽग्नि-दायी पचनः स्वादुकरश्च सारकश्च। रसितो नितरां जरां च पित्तं शितिमानं च ददाति कुष्ठकारी'—इति राजनिर्घण्टः। 'लवणः शोधनो रुच्यः पाचनः कफपित्तदः। पुंस्त्ववातहरः कायशैथिल्यमृदुताकरः। सोऽतियुक्तोऽक्षि-पाकास्रपित्तकुष्ठक्षयापकृत्'—इति राजवल्लभः। त्रि. लवणरसयुक्तः; 'मधुरस्त्वविदग्धः स्याद्विदग्धो लवणः स्मृतः'—इति सुश्रुतः। लावण्ययुक्तः। ३२२

लवणाकरः पुं. [लवणस्य आकरः खनिः] रुमा। १६९

लवणोत्तमम् क्ली. [लवणेषु उत्तमम्] सैन्धवम्। ६१४

लवणोदकः पुं. [लवणम् उदकं जलं यस्य] लवणसमुद्रः। ३२२

लवित्रम् क्ली. [लूयतेऽनेनेति। लू+'अर्तिलूधूसूखनसहचर इत्रः' इति इत्र] दात्रम्। ५७७

लहरिः, लहरी स्त्री. [सर्वतोऽक्तिन्नर्थादिति पाक्षिको ङीष्] महातरङ्गः; उल्लोलः; कल्लोलः; 'सरित इव यस्य गेहे शुष्यन्ति विशालगोत्रजा नार्यः। क्षारास्वेव स तृप्यति जलनिधिलहरिषु जलद इव'—इति आर्या-सप्तशत्याम् (६१४)। ६५३

लाक्षा स्त्री. [लक्ष्यतेऽनयेति। लक्ष्+'गुरोश्च हलः' इति अ, टाप्। यद्वा बाहुलकात् राजतेरपि स। कपिलि-कादित्वाद् वा लत्वम्, इत्युज्ज्वलः] रक्तवर्णवृक्ष-निर्यासविशेषः; राक्षा; जतु; यावः; अलक्तः; द्रुमामयः; खदिरिका; रक्ता; रङ्गमाता; पलङ्कषा; क्रिमिहा; द्रुमव्याधिः; अलक्तकः; पलाशी; मुद्रिणी; दीप्तिः; जन्तुका; गन्धमादिनी; नीला; द्रवरसा; पित्तारिः; 'लाक्षा वर्ण्या हिमा बल्या स्निग्धा च तुवरा लघुः। अनुष्णा कफपित्तास्लहिक्काकासज्वरप्रणुत्। व्रणोरःक्षतवीसर्पक्रिमिकुष्ठगदापहा। अलक्तको गुणै-

स्तद्विशेषाद्वयङ्ग्यनाशनः'–इति भावप्रकाशः। शतपत्री; सेवन्ती; 'गुलाब' इति भाषा। 'शतपत्री तरुण्युक्ता कर्णिका चारुकेशरा। महाकुमारी गन्धाढ्या लाक्षा कृष्णातिमङ्गला'—इति भावप्रकाशः। ५५५

लाङ्गलम् क्ली. [लङ्गतीति, लगि गतौ+बाहुलकात् कलच् वृद्धिश्च धातोः, इति उणादिवृत्तौ उज्ज्वलदत्तः] भूमिकर्षणयन्त्रविशेषः; हलं; गोदारणं; सीरः; हलः; हालं; हालः; शीरः; 'लाङ्गलं पवीरवत्सुशेव सोमपित्सरु'—इति यजुः संहितायाम् (१२।७१)। लिङ्गम्; पुष्पविशेषः; तालवृक्षः; गृहदारु। ५७५

लाङ्गलपद्धतिः स्त्री. [लाङ्गलस्य पद्धतिः] लाङ्गलरेखा; शीता; सीता। ५७६

लाङ्गूलम् क्ली. [लगि+'खर्जिपिञ्जादिभ्य ऊरोलचौ' इति ऊलच्, बाहुलकाद् वृद्धिश्च] पशुपश्चाद्वर्ति-लम्बमानलोमाग्रावयवविशेषः; पुच्छं; लूम; बाल-हस्तः; बालधिः; लङ्गूलं; लाङ्गुलं; लुलामः; अवालः; लञ्जः; पिच्छः; बालः। 'लाङ्गूलविक्षेपविसर्पिशोभै-रितस्ततश्चन्द्रमरीचिगौरैः। यस्यार्थयुक्तं गिरिराजशब्दं कुर्वन्ति बालव्यजनैश्चमर्यः'—इति कुमारे (१।१३)। 'लाङ्गूलेनोद्धृतं तोयं मूर्ध्ना गृह्णाति यो नरः। सर्वतीर्थफलं प्राप्य सर्वपापैः प्रमुच्यते'—इति वराह-पुराणे गोलाङ्गूलजलमाहात्म्यम्। शेफः; कुशूलः। ४४१

लाजाः पुं. भूम्नि [लज्यन्ते ये ते। लज्+घञ्] भृष्ट-धान्यम्; अक्षतं; लाजा; अक्षताः; 'एते च व्रीहयो भृष्टास्ते लाजा इति संज्ञिताः। यवादयश्च ये भृष्टास्ते धानाः परितीर्तिताः। लाजाश्च यवधानाश्च तर्पणाः पित्तनाशनाः। गोधूमयावनालोत्थाः किञ्चिदुष्णाश्च दीपनाः। तृष्णातीसारशमनो धातुसाम्यकरः परः। मन्दाग्निविषमाग्नीनां बालस्थविरयोषिताम्। देयश्च सुकुमाराणां लाजमण्डः सुसंस्कृतः'—इति राजनिर्घण्टः। लाजा स्त्री.; अक्षतम्; 'पैत्तिकं शर्करालाजामधुकैः सारिवायुतैः'—इति सुश्रुते (४।१६)। क्ली. [लाज्+अच्] उशीरं; भृष्टधान्यम्; 'येषां स्युस्तण्डुलास्तानि धान्यानि सतुषाणि च। भृष्टानि स्फुटितान्याहुर्लाजानीति मनीषिणः। लाजाः स्युर्मधुराः शीता लघवो दीपनाश्च ते। स्वल्पमूत्रमला रूक्षा बल्याः पित्तकफच्छिदः। छर्दयतीसारदाहास्रमेहमेदस्तृषापहाः'—इति भाव-प्रकाशः। पुं. आर्द्रतण्डुलः। ५८५

लाञ्छनम् क्ली. [लाञ्छ्+ल्युट्] चिह्नम्; 'दिवापि निष्ठ्यूतमरीचिभासा बालादनाविष्कृतलाञ्छनेन। चन्द्रेण नित्यं प्रतिभिन्नमौलेश्चूडामणेः किं ग्रहणं हरस्य'—इति कुमारे (७।३५)। नाम; पुं. [लाञ्छतीति। लाञ्छ्+ल्यु] रागीधान्यं; लाञ्छनी। ४५

लालसः पुं. [लस्+यङ, ततः 'अ प्रत्ययात्' इति अ] लोलुभः; लोलुपः; लोलः; लम्पटः। ३५३

लालसा पुं. – स्त्री. [लस्+यङ, ततः 'अ प्रत्ययात्' इति अ+टाप्] दोहदं; दौहृदं; श्रद्धा; 'दोहदं दौहृदं श्रद्धा लालसा सूतिमासि तु'—इति हेमचन्द्रः। ४९८ महाभिलाषः; औत्सुक्यं; याच्ञा; लोलः, लोलुपे त्रि.। 'छायां निजस्त्रीचटुलालसानां मदेन किञ्चिच् चटुलालसानाम्। कुर्वाणमुत्पिञ्जरजातपत्रैर्विहङ्ग-मानां जलजातपत्रैः'—इति माघे (४।६)। 'तस्मिन् मुहूर्ते पुरसुन्दरीणां ईशानसन्दर्शनलालसानाम्'—इति कुमारे (७।५६)। ४९८

लास्यम् क्ली. [लस्+'ऋहलोर्ण्यत्' इति ण्यत्] नृत्यं; लास्यकं; तौर्यत्रिकम्। भावाश्रयं नृत्यं। तालल्याश्रयं नृत्तम्। 'पुंनृत्यं ताण्डवं प्राहुः स्त्रीनृत्यं लास्यमुच्यते'—इति सङ्गीतनारायणे नारदसंहिता। 'सम्भोगस्नेह-चातुर्यैर्हावलास्यमनोहरैः। राजानं रमयामास तथा रेमे तथैव सः'—इति महाभारते (१।९८।१०)। पुं. [लास्यमस्त्यस्येति। लास्य+अच्] नर्तकः; लास्या स्त्री.; [लास्यमस्त्यस्या इति, लास्य+अच्+टाप्] नर्तकी। ९३

लिङ्गम् क्ली. [लिङ्ग्यते अनेन इति। लिङ्ग्+घञ्। अभिधानात् क्लीवत्वम्] शेफः; शिश्नः; स्मरस्तम्भः; उपस्थः; मदनाङ्कुशः; कन्दर्पमुषलः; मेहनं; शेफः (स्)। मेढ्रम्; लाङ्गुः; ध्वजः; रागलता; व्यङ्गः; लाङ्गूलं; साधनं; सेफः; कामाङ्कुशः। चिह्नम्; 'येन लिङ्गेन यो देशो युक्तः समुपलक्ष्यते। तेनैव नाम्ना तं देशं वाच्यमाहुर्मनीषिणः'—इति महाभारते (१।२।१२)। अनुमानं; साङ्ख्योक्तप्रकृतिः; 'तत्र जरामरणकृतं दुःखं प्राप्नोति चेतनः पुरुषः। लिङ्गस्याविनिवृत्तेस्तस्माद्दुःखं स्वभावेन'—इति सांख्यकारिकायाम् (५५)। शिव-मूर्तिविशेषः; व्याप्यं; व्यक्तं; पुंस्त्वादिः। 'एका लिङ्गे

गुदे तिस्रस्तथैकत्र करे दश । उभयोः सप्त दातव्या मृदः शुद्धिमभीप्सता'—इति मनुः (५।१३६)। सामर्थ्यम्; 'यावतामेव धातूनां लिङ्गं रूढिगतं भवेत्। अर्थश्चैवाभिधेयस्तु तावद्भिर्गुणविग्रहः'—इति तिथ्यादितत्त्वे। पुराणविशेषः; 'एकादशसहस्राणि लिङ्गाख्यं चातिविस्तृतम्'—इति देवीभागवते (१।३।१०)। हेतुः; 'लिङ्गज्ञानजन्यं लिङ्गिज्ञानमनुमितिः'—इति तर्ककौमुद्याम्। 'ज्ञायमानं लिङ्गं तु करणं न हि'—इति भाषापरिच्छेदः। सूक्ष्मशरीरम्; 'बुद्धिकर्मेन्द्रियप्राणपञ्चकैर्मनसा धिया। शरीरं सप्तदशभिः सूक्ष्मं तल्लिङ्गमुच्यते'—इति पञ्चदश्याम् (१।२३)। ८६६

लिङ्गवृत्तिः पुं. [लिङ्गं बाह्यलक्षणमेव वृत्तिर्जीवनोपायो यस्य] धर्मध्वजी; जीविकार्थं जटादिचिह्नधारी; 'जीविकादिनिमित्तं तु यो बिभर्ति जटादिकम्। धर्मध्वजी लिङ्गवृत्तिर्द्वयं तत्र निगद्यते'—इति शब्दरत्नावली। ४०५

लिङ्गी [न्] पुं. [लिङ्गमस्त्यस्येति। इनि] तपस्वी; मुनिः; यतिः; व्रती; हस्ती; त्रि. धर्मध्वजी; लिङ्गवृत्तिः जीविकार्थजटादिचिह्नधारी; 'अलिङ्गी लिङ्गवेशेन यो लिङ्गमुपजीवति। स लिङ्गिनां हरेदेनस्तिर्यग्योनौ च गच्छति'—इति कौर्मे. १५ अध्यायः। वासनाश्रयः; 'तेनास्य तादृशं राजन् लिङ्गिनो देहसम्भवम्। श्रद्धत्स्वाननुभूतोऽर्थो न मनः स्प्रष्टुमिच्छति'—इति भागवते (४।२९।६५)। ३४४

लिपिः स्त्री. [लिप्+'इगुपधात् कित्' इति इन्। स च कित्] लिखितवर्णः, लिखितम्; अक्षरसंस्थानं; लिविः; लेखनम्; अक्षरविन्यासः; लिपी; लिवी; अक्षररचना; लिपिका; 'अयं दरिद्रो भवितेति वैधसीं लिपिं ललाटेऽर्थिजनस्य जाग्रतीम्। मृषा न चक्रेऽल्पितकल्पपादपः प्रणीय दारिद्र्यदरिद्रतां नृपः'—इति नैषधे (१।१५)। 'मुद्रालिपिः शिल्पलिपिर्लिपिर्लेखनिसम्भवा। गुण्डिकाघुणसम्भूता लिपयः पञ्चधा स्मृताः'—इति वाराहीतन्त्रे। ७२८

लिपिकरः पुं. [लिपिं करोतीति। लिपि+कृ+'दिवाविभानिशेति' ट] लेखकः; लिपिकारः। ५८६

लिपिकारः पुं. [लिपिं करोतीति। कृ+अण्] लेखकः; लिपिकरः। ५८६

लिपिसंख्या स्त्री. [लिपेः वर्णमालायाः संख्या वर्णनं यत्र] ग्रन्थः। ८४४

लिपी स्त्री. [लिपि+कृदिकारादिति ङीष्] लिपिः; लिपिका; अक्षररचना; लेखनं; लिखनम्; अक्षरविन्यासः। ७२८

लिप्सा स्त्री. [लब्धुमिच्छा। लभ्+सन्+अ+टाप्] इच्छा; तृष्णा; अभिलाषा; आशा; धनाया; गर्धना; 'लिप्सां चक्रे प्रसेनात्तु मणिरत्ने स्यमन्तके। गोविन्दो न च तं लेभे शक्तोऽपि न जहार ह'—इति हरिवंशे (३८।२६)। ३६४

लिप्सुः त्रि. [लभ्+सन्+उ] लब्धुमिच्छुः; गृध्नुः; गर्द्धनः; तृष्णक्; लुब्धः; अभिलाषुकः; लोलुपः; लोलुभः; 'सोऽप्युपायनलोभात्तत् श्रद्दधे कल्पितायतिः। उपप्रदानं लिप्सूनामेकं ह्याकर्षणौषधम्'—इति कथासरित्सागरे (२४।११९)। ३६३

लिबिः, लिविः स्त्री. [लिप्+इन्, बाहुलकात् पस्य बत्वम्] लिपिः; लिपिका। ७२८

लिबिकरः, लिविकरः पुं. [लिबिं करोतीति। कृ+'दिवाविभानिशेति' ट] लिपिकरः; लिपिकारः। ५८६

लिबिङ्करः, लिविङ्करः पुं. [लिपिं करोतीति। कृ+ट, बाहुलकाद् द्वितीयाया अलुक्] लिपिकारः; लिपिकरः। ५८६

लिबी स्त्री. [लिबि+कृदिकारादिति ङीष्] लिपिः। ७२८

लीला स्त्री. [लयनमिति, ली+सम्पदादित्वात् क्विप्। लियं लातीति, ली+ला+क] शृङ्गारभावचेष्टा; केलिः; विलासः; खेला; 'अथाख्याहि हरेर्धीमन्नवतारकथाः शुभाः। लीला विदधतः स्वैरमीश्वरस्यात्ममायया'—इति भागवते (१।१।१८)। 'अलब्धप्रियसमागमया स्वचित्तविनोदार्थं प्रियस्य या। वेशगतिदृष्टिहसितभणितैरनुकृतिः क्रियते सा लीला।' ८९

लुप्तपदम् त्रि. [लुप्तं रहितं पदं शब्दः यस्मात्] ग्रस्तं; न्यूनपदकं वाक्यं; त्रुटितं वाक्यम्। १४२

लुब्धः त्रि. [लुभ्+क्त] आकाङ्क्षी; गृध्नुः; गर्धनः; अभिलाषुकः; तृष्णक्; 'लुब्धो यशसि नत्वर्थे भीतः पापान्न शत्रुतः। मूर्खः परापवादेषु न च शास्त्रेषु योऽभवत्'—इति कथासरित्सागरे। ३६३

लुब्धकः पुं. [लुब्ध एव। स्वार्थे कन्] मृगयुः; मगद्युः;

व्याधः; वागुरिकः; 'अस्माकमीदृशं मांसं ददते लुब्धका इति'—इति कथासरित्सागरे (८।२४)। ५९६

लुलापः पुं. [लुल्यते इति, लुल् विमर्दने+भिदादित्वाद् अङ। लुलाम् आप्नोतीति। लुला+आप्+अण्] महिषः; सैरिभः; रक्ताक्षः; कासरः; घोटकारिः; रजस्वलः; पीनस्कन्धः; कृष्णकायः; यमवाहनः; 'लुलापं खड्गेन छिन्धि छिन्धि'–इति दुर्गाभक्तितरङ्गिण्याम्। 'महिषो घोटकारिः स्यात्कासरश्च रजस्वलः। पीनस्कन्धः कृष्णकायो लुलापो यमवाहनः'—इति भावप्रकाशः। २२७

लुलायः पुं. [लुल्, घञर्थे क, तमयते, अच्] महिषः; सैरिभः; रक्ताक्षः; कासरः; घोटकारिः; रजस्वलः; पीनस्कन्धः; कृष्णकायः; यमवाहनः। २२७

लुलितः त्रि. [लुल्+क्त] प्रेङ्खोलितः; तरलितः; आन्दोलितः; प्रेङ्खितः; 'हत्वा रथाश्वांश्चिच्छेद शिरो लुलितकुण्डलम्'—इति कथासरित्सागरे (३७।७०)। 'प्रेङ्खोलितस्तरलितो लुलितान्दोलितावपि'—इति कोषान्तरे। विकीर्णः; 'युधितुरगरजोविधूम्रविष्वक् कचलुलितश्रमवार्यलङ्कृतास्ये'—इति भागवते (१।९।३४)। व्याप्तः; 'न स्म विभ्राजते देवी शोकाश्रुलुलितानना।' ग्लानः; 'प्रातर्निद्राति यथा यथात्मजा लुलितनिःसहैरङ्गैः। जामातरि मुदितमनास्तथा तथा सादरा श्वश्रूः'—इति आर्यासप्तशत्याम्। उन्मूलितः; 'विशीर्णबाह्वङ्घ्रिशिरोरुहोऽपतत् यथा नगेन्द्रो लुलितो नभस्वता'—इति भागवते (३।१९।२४)। खण्डितः; 'कित्वन्तकासिलुलितात् पततां विमानात्'—इति भागवते (४।९।१०)। विध्वस्तः; 'येऽस्मत्पितुः कुपितहासविजृम्भितभ्रूविस्फूर्जितेन लुलिताः स तु ते निरस्तः'—इति भागवते (७।९।२३)। ७४६

लूता स्त्री. [लुनातीति। लू+बाहुलकात् तन् गुणाभावश्च] कीटविशेषः; तन्तुवायः; ऊर्णनाभः; मर्कटकः; लूतिका; ऊर्णनाभिः; शनकः; कृमिः; जालिकः; तन्त्रवायः; 'लूतातन्तुनिरुद्धद्वारः शून्यालयः पतत्पतगः। पथिके तस्मिन्नञ्चलपिहितमुखो रोदितीव सखि'—इति आर्यासप्तशत्याम्। पिपीलिका; रोगविशेषः; मर्मव्रणः; वृक्का; 'यस्माल्लूनतृणं प्राप्ता मुनेः प्रस्वेदबिन्दवः। तेभ्यो जातास्ततो लूता इति ख्यातास्तु षोडश'—इति सुश्रुतः। 'रजनीयुग्मपत्राङ्गमञ्जिष्ठानागकेशरैः। शीताम्बुपिष्टैरालेपः सद्यो लूतां विनाशयेत्'—इति भावप्रकाशः। 'रोध्रं सेव्यं पद्मकं पद्मरेणुः कालीयाख्यं चन्दनं यच्च रक्तम्। कान्ता पुष्पं दुग्धिनीका मृणालं लूताः सर्वा घ्नन्ति सर्वक्रियाभिः'—इति वाग्भटः। २५३

लूनः त्रि. [लूयते स्मेति। लू+क्त, 'ल्वादिभ्यः' इति निष्ठातस्य नः] छिन्नः; दातः; 'दैवेन वैरिणा संख्ये लूनबाहुवनः कृतः'–इति कथासरित्सागरे (२७।१४३)। उपचितः; 'तस्याः सखीभ्यां प्रणिपातपूर्वं स्वहस्तलूनः शिशिरात्ययस्य। व्यकीर्यत त्र्यम्बकपादमूले पुष्पोच्चयः पल्लवभङ्गभिन्नः'—इति कुमारे (३।६१)। ५५७

लूमम् क्ली. [लूयते इति, लू+बाहुलकाद् मक्] लाङ्गूलं; पुच्छम्। ४४१

लेखः पुं. [लिख्यते इति, लिख्+घञ्] देवः; सुरः; देवता; लेख्यः; 'व्रजन्ति विद्याधरसुन्दरीणाम् अनङ्गलेखक्रिययोपयोगम्'–इति कुमारे (१।७)। ४

लेखकः पुं. [लिखतीति। लिख्+ण्वुल्] लेखनकर्ता; लिपिकरः; अक्षरचणः; अक्षरचुञ्चुः; वोलकः; करकः; मसीपण्यः; करप्रणीः; वर्णी; 'श्रुत्वैतत्प्राह विघ्नेशो यदि मे लेखनी क्षणम्। लिखतो नावतिष्ठेत तदा स्यां लेखको ह्यहम्। व्यासोऽप्युवाच तं देवमबुद्ध्वा मा लिख क्वचित्। ओमित्युक्त्वा गणेशोऽपि बभूव किल लेखकः'–इति महाभारते (१।१।७८-७९)। 'सकृदुक्तगृहीतार्थो लघुहस्तो जिताक्षरः। सर्वशास्त्रसमालोकी प्रकृष्टो नाम लेखकः'—इति चाणक्यसंग्रहः। ५८६

लेखा स्त्री. [लिख्यते इति, लिख्+बाहुलकात् अप्+टाप्] पङ्क्तिः; रेखा; लिपिः। ५४२

लेपकः पुं. [लिम्पतीति। लिप्+ण्वुल्] जातिविशेषः; पलगण्डः; लेपी; लेप्यकृत्; लेपनकर्तरि त्रि.। ५९१

लेप्यम् त्रि. [लिप्+कर्मणि ण्यत्] लेपनीयं; लेप्तव्यम्; 'शैली दारुमयी लौही लेप्या लेख्या च सैकती। मनोमयी मणिमयी प्रतिमाष्टविधा स्मृता'—इति भागवते (११।२७।१२)। ५९१

लेप्यमयी स्त्री. [लेप्य+मयट्+ङीप्] काष्ठादिघटितपुत्तलिका; पुत्रिका; पाञ्चालिका; अञ्जलिकारिका। ४९३

लेशः पुं. [लिश्+घञ्] कणः; सूक्ष्मम्; 'एष ते राजधर्माणां लेशः समनुवर्णितः'—इति महाभारते (१२। ५८।२४)। ६८८

लेष्टुः पुं. [लिश्यते इति। लिश्+बाहुलकात् तुन्] लोष्टम्; मृत्पिण्डखण्डः। ५७६

लोकः पुं. [लोक्यते इति, लोक्+घञ्] भुवनं; विष्टपं; जगत्, 'भूर्भुवः स्वर्महश्चैव जनश्च तप एव च। सत्यलोकश्च सप्तैते लोकास्तु परिकीर्तिताः'—इत्यग्निपुराणम्। (२८४) जनः; प्रजा; मनुष्यः। १३३

लोकपालः पुं. [लोकान् पालयतीति। लोक+पाल्+णिच्+अण्] राजा; 'उत्तमो लोकपालोऽयमिति लक्ष्म प्रशस्तिषु। यः प्राप्तवान् विना यज्ञं चक्षमे न पशुक्षयम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।३४९)। दिक्पालः; 'इन्द्रो वह्निः पितृपतिर्निरृतिर्वरुणोऽनिलः। धनदः शङ्करश्चैव लोकपालाः पुरातनाः'—इति वह्निपुराणम्। 'सोमाग्न्यर्कानिलेन्द्राणां वित्ताप्पत्योर्यमस्य च। अष्टानां लोकपालानां वपुर्धारयते नृपः'—इति मनुः (५।९६)। ४२१

लोचनम् क्ली. [लोचतेऽनेनेति। लोच्+ल्युट्] चक्षुः; नेत्रं; नयनम्; 'वक्रान्तैः पद्मपत्राभैर्लोचनैः सुखभागिनः। मार्जारलोचनैः पापो महात्मा मधुपिङ्गलैः। क्रूराः केकरनेत्राश्च हरिणाक्षाः सकल्मषाः। जिह्मैश्च लोचनैः क्रूराः सेनान्यो गजलोचनाः। गम्भीराक्षा ईश्वराः स्युर्मन्त्रिणः स्थूलचक्षुषः। नीलोत्पलाक्षा विद्वांसः सोभाग्यं श्यावचक्षुषाम्। स्यात्कृष्णतारकाक्षाणामक्ष्णामुत्पाटनं किल। मण्डलाक्षाश्च पापाः स्युर्निःस्वाः स्युर्दीर्घलोचनाः। दृक् स्निग्धा विपुला भोगे अल्पायुर्नाभिरुन्नता। विशालोन्नताः सुखिनो दरिद्रा विषमभ्रुवः'—इति गारुडे ६५ अध्यायः। ५१९

लोतम् क्ली. [लुनातीति, लू+'हसिमृग्रिण्विति' तन्] अपहृतद्रव्यं; स्तेयधनं; लोप्त्रं; लोप्त्री; लोत्रं; लुम्पं; पुं. नेत्राम्बु; चिह्नं; लवणम्; अश्रुपातः। ३३९

लोत्रम् क्ली. [लुनातीति, लू+'सर्वधातुभ्यष्ट्रन्' इति ष्ट्रन्। यद्वा ला+'अशित्रादिभ्य इत्रोत्रौ' इति उत्र] लोतं; स्तेयधनं; लोप्त्रं; लोप्त्री; लुम्पं; नेत्रजलम्। ३३९

लोपामुद्रापतिः पुं. [लोपामुद्रायाः पतिः भर्ता] अगस्त्यमुनिः; अगस्तिः; घटयोनिः; लोपापतिः। ४१३

लोप्त्रम् क्ली. [लुप्+ष्ट्रन्] स्तेयधनं; लोतम्; अपहृतं द्रव्यम्; 'ते तस्यावसथे लोप्त्रं दस्यवः कुरुसत्तम! निधाय च भयाल्लीनास्तत्रैवानागते बले'—इति महाभारते (१।१०७।५)। ३३९

लोप्त्री स्त्री. [लोप्त्र+षित्वाद् ङीष्] लोप्त्रं; स्तेयधनं; लोतम्; अपहृतं द्रव्यम्। ३३९

लोलः त्रि. [लोडतीति। लुड् विलोडने+अच्, डलयोरैक्यम्] साकाङ्क्षः; लोलुभः; लोलुपः; लालसः; लम्पटः; 'ह्रीयन्त्रणामानशिरे मनोज्ञामन्योऽन्यलोलानि विलोचनानि'—इति रघौ (७।२३)। (६९५) चञ्चलः; चपलः; चटुलः; प्रचलः; तरलः; परिप्लवः; अधीरः; पारिप्लवः; चलाचलः; 'पल्लवोपमितिसाम्यसपक्षं दष्टवत्यधरबिम्बमभीष्टे। पर्यकूजि सरुजेव तरुण्यास्तारलोलवलयेन करेण'—इति साहित्यदर्पणे (३।१४१)। पुं. तामसमनुः। ३५३

लोलुपः त्रि. [गर्हितं लुम्पतीति। लुप्+यङ+अच्] अतिलुब्धः; 'तथापि वाचालतला युनक्ति मां मिथस्त्वदाभाषणलोलुपं मनः'—इति माघे (१।४०)। ३५३

लोलुभः त्रि. [भृशं लुभ्यतीति। लुभ्+यङ+अच्] लोलुपः; 'स्त्रियोऽपीच्छन्ति पुंभावं यं दृष्ट्वा रूपलोलुभाः। तस्यास्ते को भवेन्नार्थी तुल्यरूपः स किं पुनः'—इति कथासरित्सागरे (११७।४६)। ३५३

लोष्टः पुं.–क्ली. [लोष्टयते इति। लोष्ट्+घञ्। यद्वा लूयते इति, लू+'लोष्टपलितौ' इति क्त प्रत्ययेन निपातितः] मृत्तिकाखण्डं; लोष्टुः; दलिः; 'अहौ वा हारे वा बलवति रिपौ वा सुहृदि वा मणौ, वा लोष्टे वा कुसुमशयने वा दृषदि वा। तृणे वा स्त्रैणे वा मम समदृशोयान्तु दिवसाः, क्वचित्पुण्येऽरण्ये शिव शिव शिवेति प्रलपतः'—इति वेतालपञ्चविंशत्याम्। क्ली. [लोष्टते इति, लोष्ट्+अच्] लौहमलं; लेष्टुः। ५७६

लोष्टकः पुं. [लोष्ट+संज्ञायां कन्] लोष्टः; लोष्टुः; दलिः; मृत्तिकाखण्डं; 'ढेला' इति भाषा। ५७६

लोष्टघ्नः पुं. [लोष्टं हन्तीति। लोष्ट+हन्+टक्] लेष्टुभेदनः; कोटिशः। ७५६

लोष्टभेदनः पुं. [भिनत्तीति। भिद्+ल्यु। लोष्टस्य भेदनः] लोष्टभङ्गसाधनमुद्गरः; लेष्टुभेदनः; लोष्टघ्नः; लेष्टुघ्नः; कोटिशः; कोटीशः; 'हेंगा'

इति भाषा । ५७६

लोष्टुः पुं. [मृगय्वादित्वात् साधुः] लोष्टः । ५७६

लोहः पुं.-क्ली. [लूयतेऽनेनेति । लू+बाहुलकात् ह । रोहति रुह्यते वा, अच् वा घञ्, कपिलकादित्वाल् लत्वम्] लोहं; जोङ्गकं; सर्वतैजसं; रुधिरं; मुण्डं; मुण्डायसं; दृषत्सारं; शिलात्मजम्; अश्मजं; कृषि-लोहम्; आरं; कृष्णायसं; तीक्ष्णं; शस्त्रायसं; शस्त्रं; पिण्डं; पिण्डायसं; शठम्; आयसं; निशितं; तीव्रं; खड्गं, मुण्डनम्; अयः; चित्रायसं; चीनजम् । क्ली. अगुरु; 'अगुरुप्रवरं लोहं राजार्हं योगजं तथा । वंशिकं क्रिमिजं वापि क्रिमिजग्धमनार्यकम्'—इति भावप्रकाशः । रक्तवर्णः त्रि. । पुं. छागः; पार्वत्यजातिविशेषः । १७१

लोहकारः पुं. [लोहं लोहमयं शस्त्रादि करोतीति । लोह+कृ+अण्] लौहकारकः; ध्माकारः; लोहकारकः; व्योकारः; लौहकारः; अयस्कारः; कर्मकारः; कर्मारः; वर्णसङ्करजातिविशेषः । ५८८

लोहलः त्रि. [लोहमिव लातीति । लोह+ला+क] अव्यक्तवाक्; 'हकला' इति भाषा । लोहग्राहकः; पुं. [लोहं लातीति, ला+क] शृङ्खलाचार्यः । ३८७

लोहितम् क्ली. [रुह्यते इति । रुह्+'रुहेरश्च लो वा' इति इतन्, रस्य लत्वम्] रुधिरम्; 'नाप्सु मूत्रं पुरीषं वा ष्ठीवनं वा समुत्सृजेत् । अमेध्यलिप्तमन्यद्वा लोहितं वा विषाणि वा'—इति मनुः (४।५६) । रक्तगोशीर्षं; कुङ्कुमं; रक्तचन्दनं; पतङ्गं; हरिचन्दनं; तृण-कुङ्कुमं; युद्धं; सरोवरविशेषः; माणिक्यं; लोहितकः; 'माणिक्यं पद्मरागः स्याच्छोणरत्नं च लोहितम्'—इति भावप्रकाशः । पुं. [रुह्+इतन् । रस्य ल] नदविशेषः; सागरविशेषः; 'ततो रक्तजलं भीमं लोहितं नाम सागरम् । गत्वा प्रेक्षत ताञ्चैव बृहतीं कूटशाल्मलीम्'—इति रामायणे (४।४०।३९) । भौमः; 'मध्येन यदि मघानां गतागतं लोहितः करोति ततः । पाण्ड्यो नृपो विनश्यति शस्त्रोद्योगाद्भयमवृष्टिः'—इति बृहत्संहिता-याम् (६।८) । रक्तवर्णः; रोहितमत्स्यः; मृगविशेषः; सर्पः; 'वासुकिस्तक्षकश्चैव नागश्चैरावणस्तथा । कृष्णश्च लोहितश्चैव पद्मश्चित्रश्च वीर्यवान्'—इति महाभारते (२।९।८) । सुरान्तरः; मसूरः; रक्तालुः; रक्त-शालिः; 'षष्टिका यवगोधूमा लोहिता ये च शालयः । मुद्गाढकी मसूराश्च धान्येषु प्रवराः स्मृताः'—इति सुश्रुते (१।४६) । बलभेदः; पर्वतविशेषः; कुशद्वीपस्थ-वर्षविशेषः । त्रि. रक्तवर्णयुक्तः (७३३); 'लोहितान् वृक्षनिर्यासान् व्रश्चनप्रभवांस्तथा । शेलुं गव्यं च पेयूषं प्रयत्नेन विवर्जयेत्'—इति मनुः (५।६) । ६३२

लोहितचन्दनम् क्ली. [लोहितं चन्दनमिव] कुङ्कुमं; रक्त-चन्दनम्; 'परिश्रमलैं लोहितचन्दनोचितः पदातिरन्त-र्गिरिरेणुरूषितः'—इति किरातार्जुनीये (१।३४) । ५४३

लोहिताङ्गः पुं. [लोहितमङ्गं यस्य] मङ्गलग्रहः; 'वामे च दक्षिणे चैव स्थितौ शुक्रबृहस्पती । शनैश्चरो लोहि-ताङ्गो लोहितार्कसमद्युतिः'—इति हरिवंशे (२२८।१२) । कम्पिल्लकः । ४६

लोहिनी स्त्री. [लोहिता+'वर्णादनुदात्तादिति' ङीप् तकारस्य नकारादेशश्च] रक्तवर्णा स्त्री; 'रोहिणी रोहिता रक्ता लोहिनी लोहिता च सा'—इति जटाधरः । ७३८

लौल्यम् क्ली. [लोलस्य भावः, ष्यञ्] चञ्चलता; चञ्चलत्वम् । ३९९

व

वंशः पुं. [वमति उद्गिरति पुरुषान्, वन्यते इति वा । यद्वा वष्टि उश्यते इति वा, वश् कान्तौ+अच् घञ् वा, ततो नुम्] पुत्रपौत्रादिः; सन्ततिः; गोत्रं; जननं; कुलम्; अभिजनः; अन्वयः; अन्ववायः; सन्तानः; निधनं; जातिः; 'क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः । तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्'—इति रघौ (१।२) । (२०४) तृणजातिविशेषः; त्वक्सारः; कर्मारः; त्वचिसारः; तृणध्वजः; शत-पर्वा; यवफलः; वेणुः; मस्करः; तेजनः; किष्कुपर्वा; वम्भः; तृणकेतुकः; कण्टालुः; कण्टकी; महाबलः; दृढग्रन्थिः; दृढपत्रः; धनुर्द्रुमः; धानुष्यः; दृढकाण्डः; 'बाँस' इति भाषा । 'ध्वनति पवनविद्धः पर्वतानां दरीषु स्फुटति पटुनिनादः शुष्कवंशस्थलीषु । प्रसरति तृणमध्ये लब्धवृद्धिः क्षणेन क्षपयति मृगयूथं प्रान्तलग्नो दवाग्निः'—इति ऋतुसंहारे । (८०३) पृष्ठास्थि; पृष्ठावयवः;

भागवते (११।८।३३)। पुत्रः; 'नृपस्य वंशः सुमतिर्भूतज्योतिस्ततो वसुः'—इति भागवते (९।२।१७)। गृहोर्ध्वकाष्ठम्; 'वंशः पृष्ठास्थ्नि गेहोर्ध्वकाष्ठे वेणौ गणे कुले'—इति केशवः। पृष्ठावयवः; 'यदस्थिभिर्निर्मितवंशवंश्यस्थूणं त्वचा रोमनखैः पिनद्धम्'—इति भागवते (११।८।३३)। वर्गः; 'उत्थापितः संयति रेणुरश्वैः सान्द्रीकृतः स्यन्दनवंशचक्रैः'—इति रघौ (७।३९)। वाद्ययन्त्रविशेषः; 'बंसी' इति भाषा। मुरली; 'स कीचकैर्मारुतपूर्णरन्ध्रैः कूजद्भिरापादितवंशकृत्यम्। शुश्राव कुञ्जेषु यशः स्वमुच्चैरुद्गीयमानं वनदेवताभिः'—इति रघौ (२।१२)। वंशशर्करा; वंशलोचना; वंशरोचना; वंसकः; इक्षुभेदः; सालवृक्षः; प्राधागर्भसम्भूताप्सरोविशेषे स्त्री.। 'अनवद्यां मनुं वंशामसुरां मार्गणप्रियाम्। अनूपां सुभगां भासीमिति प्राधा व्यजायत'—इति महाभारते (१।६५।४६)। ३९६

वंशाङ्कुरः पुं. [वंशस्य अङ्कुरः] करीरं; वंशाग्रं; यवफलाङ्कुरः। ८२८

वकः पुं. [वङ्कते इति, वकि कौटिल्ये, अच्, अनित्यत्वान्न नुम्। वक्ति वा, अच्, न्यङ्क्वादिः] वकोटः; बकः; बकोटः। २५०

वकुलः पुं. [वङ्कते इति, वकि कौटिल्ये गत्यर्थो वा, बाहुलकादुलच्, आगमशास्त्रानित्यत्वेन नुम् न] मौलिश्रीति ख्यातः; केशरः; केसरः; बकुलः। २०६

वकोटः पुं.– वकः; बकः; बकोटः। २५०

वक्त्रम् क्ली. [वक्ति अनेनेति। वच्+'गुधृवीपचिवचियमिसदिक्षदिभ्यस्त्रः' इति त्र] मुखं; तुण्डं; वदनं; लपनम्; आस्यम्; आननम्; 'धर्मोपदेशं दर्पेण विप्राणामस्य कुर्वतः। तप्तमासेचयेत्तैलं वक्त्रे श्रोत्रे च पार्थिवः'—इति मनुः (८।२७२)। तगरमूलं; वस्त्रभेदः; छन्दोविशेषः; 'भवत्यर्द्धसमं वक्त्रं विषमं च कदाचन। तयोर्द्वयोरुपान्तेऽत्रच्छन्दस्तदधुनोच्यते। वक्त्रं युग्म्यां मगौ स्यातामब्धेर्योऽनुष्टुभिः ख्यातम्।' 'वक्त्राम्भोजं सदा स्मेरं चक्षुर्नीलोत्पलं फुल्लम्। वल्लवीनां सुरारातेश्वेतोभृङ्गं जहारोच्चैः'—इति छन्दोमञ्जरी। ५१८

वक्रः पुं. [वञ्चतीति, वञ्च गतौ+'स्फायितञ्चिवञ्चीति' रक्, न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्] अङ्गारकः; कुजः; भौमः; लोहिताङ्गः; धरात्मजः; मङ्गलग्रहः। शनैश्चरः; रुद्रः; त्रिपुरासुरः; पर्पटः; वक्रगतिविशिष्टग्रहः; करूषदेशीयनृपतिभेदः; 'तमेव च महाराज! शिष्यवत् समुपस्थितः। वक्रः करूषाधिपतिर्मायायोधी महाबलः'—इति महाभारते (२।१४।११)। ४६

वक्रः त्रि. [वङ्कते इति, वकि कौटिल्ये+रन्। पृषोदरादित्वान् नलोपः। यद्वा वञ्चि+रक्] अनृजुः; अरालं; वृजिनं; जिह्मम्; ऊर्मिमत्; कुञ्चितं; नतम्; आविद्धं; कुटिलं; भुग्नं; वेल्लितं; वङ्कुरं; वेङ्कुः; विनतम्; उन्दुरम्; अवनतः; आनतः; भङ्गुरः; 'स वै तथा वक्र एवाभ्य जायदष्टावक्रः प्रथितो वै महर्षिः'— इति महाभारते (३।१३२।१२)। क्ली. वङ्कः; नदीवङ्कः; पुटभेदः; तगरपादिकम्; 'कालानुशारिवा वक्रं तगरं कुटिलं शठम्। महोरगं नतं जिह्मं दीनं तगरपादिकम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। त्रि. क्रूरः। ६९६

वक्रसंस्थम् त्रि. [वक्रा तिर्यक् संस्था स्थितिः समाप्तिर्वा यस्य] जिह्मसंस्थं; तिर्यगास्तीर्णं; गृहाद्याच्छादनम्। ३०३

वक्षः [स्] क्ली. [उच्यतेऽनेनेति। वच्+'पचिवचिभ्यां सुट् च' इति असुन्, सुट्। वक्षतेरसुन् वा] अङ्गविशेषः; स तु हृदयोपरि कण्ठादधोभागः; क्रोडं; भुजान्तरम्; उरः; वत्सम्; अङ्कः; उत्सङ्गः; वक्षणं; गणपीठकम्; 'अथ वक्षश्च वत्सं स्यादुरो वक्षस्थले त्रयम्'—इति शब्दरत्नावली। 'अन्नवान् समवक्षाः स्यात्पीनैर्वक्षोभिरूर्जितः। वक्षोभिर्विषमैर्निःस्वः शस्त्रेण निधनं तथा'—इति गारुडे ६६ अध्यायः। पुं. [वहतीति, वह्+असुन् सुट् च] अनड्वान्। ५२७

वक्षोरुहः पुं. [वक्षसि रोहतीति। वक्षस्+रुह्+क] वक्षोजः; स्तनः; उरसिजः; पयोधरः; कुचः; 'मा शबरतरुणि! पीवरवक्षोरुहयोर्भरेण भज गर्वम्। निर्मोकैरपि शोभा ययोर्भुजङ्गीभिरुन्मुक्तैः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (४४६)। ५२६

वङ्क्षणः पुं. [वक्षति संहतो भवतीति। वक्ष् सङ्घाते+ल्यु। पृषोदरादित्वात् नुम्] ऊरुसन्धिः; 'चतुर्दशास्थ्नां सङ्घाताः, तेषां त्रयो गुल्फजानुवङ्क्षणेषु'—इति सुश्रुते। ५२६

वङ्गम् क्ली. [वङ्गतीति, वगि गतौ+अच्] धातुविशेषः; त्रपुः; स्वर्णजं; नागजीवनं; मृद्वङ्गं; रङ्गं; गुरुपत्रं;

पिच्चटं; चक्रसंज्ञं; तमरं; नागजं; कस्तीरम्; आलीनकं; सिंहलं; स्ववेतं; नागं; त्रपु; 'सिंहो यथा हस्तिगणं निहन्ति तथैव वङ्गोऽखिलमेहवर्गम्। देहस्य सौख्यं प्रबलेन्द्रियत्वं नरस्य पुष्टिं विदधाति नूनम्'—इति भावप्रकाशः। सीसकं; देशविशेषे पुं. भूम्नि, एकवचनान्तोऽपि। 'अङ्गस्याङ्गोऽभवद्देशो वङ्गो वङ्गस्य च स्मृतः।' 'रत्नाकरं समारम्य ब्रह्मपुत्रान्तगं शिवे!, वङ्गदेशो मयाः प्रोक्तः सर्वसिद्धिप्रदर्शकः'—इति शक्तिसङ्गमतन्त्रे ७ पटलः। पुं. चन्द्रवंशीयबलिराजपुत्रः; 'बलेः सुतपसो जज्ञे अङ्गवङ्गकलिङ्गकाः। सुह्मपौण्ड्राश्च वालेया अनपानस्तथाङ्गतः—' इति गारुडे १४४ अध्यायः। १७२

वङ्गुला स्त्री.— रागिणीविशेषः; वङ्गाली। १०५ अ

वचः [स्] क्ली. [उच्यते इति, वच्+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इति असुन्] उक्तिः; वाक्यम्; 'इति प्रगल्भं पुरुषाधिराजो मृगाधिराजस्य वचो निशम्य। प्रत्याहतास्त्रो गिरिशप्रभावादात्मन्यवज्ञां शिथिलीचकार'—इति रघौ (२।४१)। १३९

वचनीयता स्त्री. [वचनीयस्य भावः। वचनीय+तल्] लोकापवादः; जनप्रवादः; कौलीनं; विगानम्; 'जनप्रवादः कौलीनं विगानं वचनीयता'—इति हेमचन्द्रः (२।१८४)। 'कामं नीचमिदं वदन्ति पुरुषाः स्वप्ने च यद्वर्द्धते, विश्वस्तेषु च वञ्चनापरिभवश्चौर्यं न शौर्यं हि तत्। स्वाधीना वचनीयतापि हि वरं बद्धो न सेवाञ्जलिः, मार्गो ह्येष नरेन्द्रसौप्तिकवधे पूर्वं कृतो द्रौणिना'—इति मृच्छकटिके तृतीयाङ्के। वचनीयं; निन्दा। १४७

वज्रम् पुं.-क्ली. [वजतीति, वज् गतौ+'ऋज्रेन्द्राग्रवज्रविप्रेति' रन्प्रत्ययेन निपातितः] इन्द्रस्यास्त्रविशेषः; ह्लादिनी; कुलिशं; भिदुरं; पविः; शतकोटिः; स्वरुः; शम्बः; दम्भोलिः; अशनिः; कुलीशं; मिदिरं; भिदुः; स्वरुः; सम्बः; संवः; अशनी; वज्राशनिः; जम्भारिः; त्रिदशायुधं; शतधारं; शतारम्; आपोत्रम्; अक्षजं; गिरिकण्टकः; गौः; अभ्रोत्थं; मेघभूतिः; गिरिज्वरः; जाम्बविः; दम्भः; भिद्रः; अम्बुजम्; 'अहन्नहिं पर्व्वते शिश्रियाणां त्वष्टास्मै वज्रं स्वर्यं ततक्ष'-इति ऋग्वेदे (१।३२।२)। रत्नविशेषः; इन्द्रायुधं; हीरं; भिदुरं; कुलिशं; पविः; अभेद्यम्; अशिरं; रत्नं; दृढं; भार्गवकं; षट्कोणं; बहुधारं; शतकोटिः; हीरकः। 'हीरकः पुंसि वज्रोऽस्त्री चन्द्रो मणिवरश्च सः। स तु श्वेतः स्मृतो विप्रो लोहितः क्षत्रियो मतः। पीतो वैश्योऽसितः शूद्रश्चतुर्वर्णात्मकश्च सः। रसायनो मतो विप्रः सर्वसिद्धिप्रदायकः। क्षत्रियो व्याधिविध्वंसी जरामृत्युहरः परः। वैश्यो धनप्रदः प्रोक्तस्तथा देहस्य दार्ढ्यकृत्। शूद्रो नाशयति व्याधीन् वयस्तम्भं करोति च'—इति भावप्रकाशः। अभ्रविशेषः; पुं. [वज्+रन्] कोकिलाक्षवृक्षः; श्वेतकुशः; सेहुण्डवृक्षः; श्रीकृष्णप्रपौत्रः; 'अनिरुद्धात् सुभद्रायां वज्रो नाम नृपोऽभवत्। प्रतिबाहुर्वज्रसुतश्चारुस्तस्य सुतोऽभवत्'—इति गारुडे १४४ अध्यायः। विश्वामित्रपुत्रभेदः; 'वल्गुजङ्घश्च भगवान् गालवश्च महानृषिः। रुचिर्वज्रस्तथाख्यातः सालङ्कायन एव च'—इति महाभारते (१३।४।५१)। 'विश्वामित्रात्मजाः सर्वे मुनयो ब्रह्मवादिनः'—इति महाभारते (१३।४।५९)। विष्कम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतपञ्चदशयोगः; 'गुणी गुणज्ञो बलवान् महौजाः सद्रत्नवस्त्रादिपरीक्षकः स्यात्। वज्राभिधाने यदि चेत् प्रसूतो वज्रोपमः स्वाद्रिपुकामिनीनाम्'—इति कोष्ठीप्रदीपः। ५६

वज्रज्वाला स्त्री. [वज्रस्य ज्वाला] वज्राग्निः, 'वज्रज्वालान्तरमधः शाल्मलश्चान्तरालकृत्'—इति मात्स्ये (१२१।१४)। ५७

वज्रधरः पुं. [धरतीति। धृ+अच्। वज्रस्य धरः] इन्द्रः; वज्रपाणिः; वज्री; 'अरुन्धती वा सुभगा वशिष्ठं लोपामुद्रा वापि यथा ह्यगस्त्यम्। नलस्य वा दमयन्ती यथाभूद् यथा शची वज्रधरस्य चैव'—इति महाभारते (३।११३।२२)। जिनविशेषः; वल्लापुराधिपतिराजविशेषः; 'उपरागे नवे सज्जे पार्वतीयास्त्रयो नृपाः। चाम्पेयी जासटो वज्रधरो वल्लापुराधिपः'—इति राजतरङ्गिण्याम्। ५२

वज्रनिर्घोषः पुं. [वज्रस्य निर्घोषः] स्फूर्जथुः; वज्रनिष्पेषः; वज्रजनितशब्दः। ५७

वज्रनिष्पेषः पुं. [वज्राणां निष्पेषः सङ्घर्षध्वनिः] वज्रनिर्घोषः; स्फूर्जथुः; वज्रजनितशब्दः। ५७

वञ्चनम् क्ली. [वञ्च्+भावे ल्युट्] अतिसन्धानं;

व्यलीकं; प्रतारणं; वञ्चना; प्रतारणा; 'वञ्चनं चापमानं च मतिमान्न प्रकाशयेत्'—इति चाणक्यः। ७४८

वञ्जुलः पुं. [वजतीति, वज् गतौ+बाहुलकाद् उलच् नुम् च] वेतसवृक्षः; वञ्जुलप्रियः; 'वेतसो नम्रकः प्रोक्तो वानीरो वञ्जुलस्तथा। अभ्रपुष्पश्च विदुलो ह्यथ शीतश्च कीर्तितः'—इति भावप्रकाशः। पक्षि-विशेषः (२५४); तिनिशवृक्षः; 'तिनिशः स्यन्दनो नेमी रथद्रुर्वञ्जुलस्तथा'—इति भावप्रकाशः। अशोक-वृक्षः; वञ्जुलद्रुमः; स्थलपद्मवृक्षः। २०१

वटः [वटति वेष्टयति मूलेन वृक्षान्तरमिति। वट्+ पचाद्यच्] वृक्षविशेषः; न्यग्रोधः; बहुपात्; वृक्षनाथः; यमप्रियः; रक्तफलः; शृङ्गी; कर्मजः; ध्रुवः; क्षीरी; वैश्रवणावासः; भाण्डीरः; जटालः; रोहिणः; अवरोही; विटपी; स्कन्धरुहः; मण्डली; महाच्छायः; भृङ्गी; यक्षावासः; यक्षतरुः; पादरोहणः; नीलः; शिफारुहः; बहुपादः; वनस्पतिः; 'वटः शीतो गुरुर्ग्राही कफपित्तव्रणापहः। वर्ण्यो विसर्पदाहघ्नः कषायो योनि-दोषहृत्'—इति भावप्रकाशः। (५९७) त्रि. [वटतीति, वट्+अच्] गुणः; शुल्वा; रज्जुः; वराटः; तन्त्रीगणः। पुं. कपर्दः; गोलः; भक्ष्यं; वटकः; पिष्टकविशेषः; 'बड़ा' इति भाषा। क्ली. व्रजमण्डलाभ्यन्तरीणवट-संज्ञकषोडश वनानि। १९६

वटुः पुं. [वटतीति, वट्+'कटिवटिभ्याञ्च' इति उ] माणवकः; 'वटुः पुनर्माणवको भिक्षास्य ग्रासमात्रकम्'—इति हेमचन्द्रः। ब्रह्मचारी; 'वटुर्वर्णी ब्रह्मचारी'—इति शब्दरत्नावली। 'तस्माद् ब्रुवन्तु सर्वत्र वटुरेष धनुर्महत्। आरोपयतु शीघ्रं वै तथेत्यूचुर्द्विजर्षभाः'—इति महाभारते (१।१८९।१५)। कुटन्नटवृक्षः; 'मण्डूकपर्णः श्योनाकः शुकनासः कुटन्नटः। ऋक्षो वटुर्दीर्घवृन्तो दीर्घवृन्तक इत्यपि'—इति शब्दरत्नावली। बालकः; 'बालको माणवो बालः किशोरो वटुरित्यपि'—इति शब्दरत्नावली। ५०२

वडवा स्त्री. [बलं सामर्थ्यमधिकमस्याः। 'अन्येभ्योऽपीति' ड। बलं वाति, क वा। बद-डलानामैक्यात् वडौ] अश्वा; वामी; वाजिनी; द्विजयोषित्; दासी। ४४०

वडवानलः पुं. [वडवारूपः अनलः। तथारूपस्य समुद्रे पुराणेषु श्रुतत्वात्] और्वः; समुद्रवह्निः; वाडवः। ७०

वडवामुखः पुं. [वडवाया इव मुखं यस्य] वडवाग्निः; और्वः; समुद्रवह्निः; वाडवः। (६२३) पातालं; वैरोचननिकेतनम्; अधोभुवनं; नागलोकः; रसातलम्। ७०

वडिशम् क्ली. [बलिनः मत्स्यान् श्यति। बलिन्+शो+ क। ऐक्याद् वत्वडत्वे] मत्स्यबन्धनं; वलिशं; बडिशं; बलिशम्। ७६४

वणिक् [ज्] पुं. [पणते, पण व्यवहारे+'पणतेरिज्यादेश्च वः' इतीज् वत्वं च] पण्याजीवः; प्रापणिकः; वणिजकः; नैगमः; वैदेहः। ५७१

वणिज्यम् क्ली., वणिज्या स्त्री. [वणिजां कर्म, वणिज्+ 'दूतवणिग्भ्यां च' इति येति काशिका। वणिजि साधु रिति यत् वा। स्त्रीत्वबादिमाधवमते टाप्] वाणिज्यं; वणिक्कर्म। ७६१

वत अव्य. [वन् याचन, वन्यते स्मेति, क्त, अनुनासिक-लोपः] निन्दा; विस्मयः; 'अहो वत महच्चित्रम्।' खेदः; अनुकम्पा; 'क्व वत हरिणकानां जीवितञ्चाति-लोलं, क्व च निशितनिपाता वज्रसाराः शरास्ते'—इति शकुन्तलायाम् १ अङ्के। ८७८

वत्सः पुं. [वदतीति, वद्+'वृतृवदिहनिकमिकषिभ्यः सः' इति स] गोशिशुः; शकृत्करिः; तर्णकः; दोग्धा; दोषकः; दोषः; रौहिणेयः; बाहुलेयः; तन्तुभः; तर्णभः; कचः; 'बाछा' 'बछड़ा' इति भाषा। कुमारे (१।२)। वर्षः (८०८); पुत्रादिः; 'न वत्स! नृपतेर्धिष्ण्यं भवानारोढुमर्हति। न गृहीतो मया यत्त्वं कुक्षावपि नृपात्मज!'—इति भागवते (४।८।११)। दिवोदासपुत्रः; 'तत्पुत्रः केतुमालस्य जज्ञे भीमरथस्ततः। दिवोदासो द्युमांस्तस्मात् प्रतर्दन इति स्मृतः। स एव शत्रुजिद् वत्स ऋतध्वज इतीरितः। तथा कुवलयाश्वेति प्रोक्तोऽलर्कादयस्ततः'—इति भागवते (९।१७।५-६)। देशभेदः; 'अस्ति वत्स इति ख्यातो देशो दर्पोपशान्तये। स्वर्गस्य निर्मितो धात्रा प्रतिमल्ल इव क्षितौ'—इति कथासरित्सागरे (९।४)। २६४

वत्सम् क्ली. [वदतीति, वद् व्यक्तायां वाचि+'वृतृवदि-हनिकमिकषिभ्यः सः' इति स] वक्षः; भुजमध्यं; उरः; हृदयस्थानम्। ५२७

वत्सकामा स्त्री. [वत्सं कामयते इति। वत्स+कम्+अच्+टाप्] वत्सला; वत्साभिलाषिणी गौः; पुत्रादिकामा स्त्री। २७०

वत्सतरः पुं. [प्रथमवया वत्सः। 'वत्सोक्षाश्वर्षभेभ्यश्चेति' ष्टरच्] प्राप्तदमनकालो गौः; दम्यः; दुर्दान्तः; गडिः; रघौ (३।३२)। २६०

वत्सनाभः क्ली.– पुं. [वत्सान् नभ्यति हिनस्तीति। नभ् हिंसायाम्+'कर्मण्यण्' इत्यण्] विषवृक्षविशेषः; अमृतं; विषम्; उग्रं; महौषधं; गरलं; मारणं; नागः; स्तोककं; प्राणहारकं; स्थावरादि; 'सिन्दुवारसदृक्पत्रो वत्सनाभ्याकृतिस्तथा। यत्पार्श्वे न तरोर्वृद्धिर्वत्सनाभः स भाषितः'—इति भावप्रकाशः। 'चत्वारि वत्सनाभानि मुस्तके द्वे प्रकीर्तिते।' 'ग्रीवास्तम्भो वत्सनाभे पीतविण्मूत्रनेत्रता'—इति सुश्रुते। ६४७

वत्सला स्त्री. [वत्से कामोऽस्त्यस्या इति, लच्। यद्वा वत्सं लातीति, ला+क] वत्सकामा गौः; 'साहं गौरिव सिंहेन विवत्सा वत्सला कृता। कैकेय्या पुरुषव्याघ्र बालवत्सेव गौर्बलात्'—इति रामायणे (२।४३।१८)। २७०

वत्सादनी स्त्री. [वत्सैरद्यते प्रियत्वादिति। अद्+ल्युट्+ङीप्] अमृता; गुडूची। ६१५

वदनम् क्ली. [वदन्त्यनेनेति। वद्+करणे ल्युट्] तुण्डं; वक्त्रं; लपनं; मुखम्; आस्यम्; 'दर्शनविनीतमाना गृहिणो हर्षोल्लसत्कपोलतलम्। चुम्बननिषेधमिषतो वदनं पिदधाति पाणिभ्याम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (२७६)। अग्रभागः; 'श्रीण्यन्यानि (यन्त्राणि) जाम्बववदनानि त्रीण्यङ्कुशवदनानि षड्वाग्निकर्मस्वभिप्रेतानि'—इति सुश्रुते। [वद्+भावे ल्युट्] कथनम्। ५१८

वदान्यः त्रि. [वदति सर्वेभ्य एव दास्यामीति मनोहरवाक्यम्। वद्+'वदेरान्यः' इति आन्य] वल्गुवाक्; बहुप्रदः; 'गतो वदान्यान्तरमित्ययं मे माभूत् परीवादनवावतारः'—इति रघौ (५।२४)। ऋषिविशेषः; 'निवेष्टुकामस्तु पुरा अष्टावक्रो महातपाः। ऋषेरथ वदान्यस्य वव्रे कन्यां महात्मनः'—इति महाभारते (१३।१९।११)। ३६६

वधः पुं. [हननमिति। हन्+अप्, वधादेशः] प्राणवियोगफलकव्यापारः; प्रमापणं; निबर्हणं; निकारणं; निशारणं; प्रवासनं; परासनं; निसूदनं; निहंसनं; निर्वासनं; संज्ञपनं; निर्ग्रन्थनम्; अपासनं, निस्तर्हणं; निहननं; क्षणनं; परिवर्जनं; निर्वापणं; विशसनं; मारणं; प्रतिघातनम्; उद्वासनं; प्रमथनं; क्रथनम्; उज्जासनम्; आलम्भः; पिञ्जः; विशरः; घातः; उन्मन्थः; हिंसा;. घातनं; विदारणं; पिञ्जकं; पातः; परिघः; परिघातनं; कदनं; निवारणं; समाघातः; निर्ग्रन्थनं; मारिः; मारी; उत्पातः; मारकः; मरकः; मारः; सङ्घातः। ३२२

वधुटी स्त्री.— वधूटी; युवतिः। ४८४

वधूः स्त्री. [उह्यते पितृगेहात् पतिगृहम्। वह्+'वहो धश्च' इत्यू] स्त्री; नारी; (४९४) दाराः; क्षेत्रं; कलत्रं; भार्या; सहचरी; सधर्मचारिणी; पत्नी; जाया; गृहिणी; गृहम्। (५०४) स्नुषा; जनी; पुत्रवधूः। ४८२

वधूटी स्त्री. [वधूट+'वयस्यचरमे इति वाच्यम्' इति ङीप्। वधूटचिरण्टशब्दौ यौवनवाचिनौ] चिरण्टी; द्वितीयवयस्का स्त्री। ४८४

वध्रम् क्ली. [बध्नाति अनेन, बध्+'स्फायितञ्चीति' बाहुलकात् रक् वत्वं च] वध्री; नद्ध्री; वर्ध्री; वर्ध्रम्। ५९६

वध्री स्त्री. [बध्+बाहुलकाद् रकि ङीष्] नद्ध्री; वर्ध्री; वर्ध; वधिका। ५९६

वनम् क्लीं.– स्त्री. [वनतीति, वन्+पचाद्यच्] बहुवृक्षयुक्तस्थानम्; अटवी; अरण्यं; विपिनं; गहनं; काननं; दावः; दवः; अटविः; भीरुकं; झाटं; गुहिनं; शत्रं; समजं; प्रान्तरं; विक्तं; कान्तारम्; 'परस्त्रियं योऽभिवदेत्तीर्थेऽरण्ये वनेऽपि वा। नदीनां वापि सम्भेदे स संग्रहणमाप्नुयात्'—इति मनुः (८।३५६)। 'कालो मधुः कुपित एष च पुष्पधन्वा धीरा वहन्ति रतिखेदहराः समीराः। केलीवनीयमपि वञ्जुलकुञ्जमञ्जुर्दूरे पतिः कथय किं करणीयमद्य'—इति साहित्यदर्पणे। क्ली. [वन्यते सेव्यते इति। वन्+'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' इति घ, इति निघण्टौ देवराजयज्वा] जलम् (६४८); 'नमयति स्म स केवलमुन्नतं वनमुचे नमुचेररये शिरः'—इति रघौ (९।२२)। निवासः; आलयः; चमसः; 'अध्वर्यवः कर्तनाः श्रुष्टिमस्मै वने निपूतं वन उन्नयध्वम्'—इति

ऋग्वेदे (२।१४।९) 'वने सम्भजनीये वने उदके निपूतमाप्यायनेन शोधितं सोममुन्नयध्वमूर्द्ध्वं नयत। यद्वा वने तद्विकारे चमसे निपूतं दशापवित्रेण शोधितं सोमं वने चमसे उन्नयध्वम्'—इति तद्भाष्ये सायणः। प्रस्रवणं; रश्मिः; 'अबुध्ने राजा वरुणो वनस्य'—इति ऋग्वेदे (१।२४।७०)। पुं. शङ्कराचार्यशिष्यस्य हस्तामलकस्य शिष्याणामुपाधिविशेषः; 'सुरम्ये निर्झरे देशे वने वासं करोति यः। आशापाशविनिर्मुक्तो वननामा स उच्यते'—इति प्राणतोषिण्यामवधूतप्रकरणे। २१०

वनचरः पुं. [वने चरति यः] व्याघ्रादिः; निल्लः; किरातः। २३३

वनमाली [न्] पुं. ['आजानुलम्बिनी माला सर्वर्तुकुसुमोज्वला। मध्ये स्थूलकदम्बाढ्या वनमालेति कीर्तिता।' सा वनमाला अस्त्यस्येति। इनि] श्रीकृष्णः; नारायणः; 'कमलयामलया वनमालिनं गिरिजया गिरिशञ्च निशा विधुम्। सुविवृता परियोजयतो विधेश्चतुरता ह्यनुरूपसमागमे'—इति प्रद्युम्नविजये ३ अङ्के। २४

वनराजिः, वनराजी स्त्री. [वनस्य राजिः पङ्क्तिः] वनावली; अरण्यानी। २११

वनवह्निः पुं. [वनस्य वनोद्भवो वा वह्निः] दावानलः; वडवामुखः; वनहुताशनः; वनाग्निः; वनोपप्लवः; 'फणारत्नप्रभाजालजटिलं वनवह्निना। गृहीतमिव तेजोग्रहेतिहस्तेन मूर्द्धनि'—इति कथासरित्सागरे (५६। ३४३)। ७०

वनस्पतिः पुं. [वनस्य पतिः। पारस्करादित्वात् सुट्] वृक्षमात्रम्; 'कथं नु शाखास्तिष्ठेरंश्छिन्नमूले वनस्पतौ'—इति महाभारते (१।१४१।१६)। विना पुष्पं फलिद्रुमः। (१७९); 'अपुष्पाः फलवन्तो ये ते वनस्पतयः स्मृताः'—इति मनुः (१।४७)। स्थालीवृक्षः; 'नन्दीवृक्षोऽश्वत्थभेदः प्ररोही गजपादपः। स्थालीवृक्षः क्षयतरुः क्षीरी च स्याद्वनस्पतिः'—इति भावप्रकाशे। १७७

वनायुजः पु. [वनायौ देशे जातः इति। जन्+ड] वानायुजः; वनायुदेशोद्भवघोटकः। ४३९

वनाश्रयः पुं. [वनमेव आश्रयो यस्य] द्रोणकाकः; काकोलः; मौकलिः; मौकुलिः; द्रोणः; कृष्णकाकः। अरण्याश्रयिणि त्रि.। 'सीदिष्यत्यखिलो लोकस्त्वयि भूप! वनाश्रये'—इति मार्कण्डेये (१०९।४३)। २४६

वनिता स्त्री. [वन्+क्त+टाप्] स्त्रीसामान्यम्; 'वशिष्ठधेनोरनुयायिनं तमावर्तमानं वनिता वनान्तात्। पपौ निमेषालसपक्ष्मपङ्क्तिरुपोषिताभ्यामिव लोचनाभ्याम्'—इति रघौ (२।१९)। जातरागस्त्री। ४८२

वनीयकः त्रि. [वनिं याचनमिच्छतीति। क्यच्+ण्वुल्] अर्थी; मार्गणकः; याचकः; वनीकः। ३५९

वनौकाः [स्] पुं. [वनमेव ओको गृहं यस्य] वलीमुखः; मर्कटकः; मर्कटः; प्लवङ्गमः; प्लवगः; प्लवङ्गः; हरिः; कपिः; कीशः; शाखामृगः; वानरः; वनरः; वनवासिनि त्रि.। 'धर्मोऽग्निः कश्यपः शक्रो मुनयो ये वनौकसः। चरन्ति दक्षिणीकृत्य भ्रमन्तो यत्सतारकाः'—इति भागवते (४।९।२१)। २३१

वन्दनमाला स्त्री. [वन्दनार्था माला यत्र सा] वन्दनमालिका; तोरणं; [वन्दनार्था माला इति कर्मधारये] रम्भास्तम्भचतुष्टयवेष्टिताम्रपत्ररचितमाला; 'कुर्याद्वन्दनमालां यो रम्भास्तम्भैः सुशोभनैः। चूतवृक्षोद्भवैः पत्रजर्गिरे चक्रपाणिनः। युगानि पत्रसंख्यानां स्वर्गे तस्योत्सवो भवेत्। पूज्यते वासवाद्यैश्च क्रीडते चाप्सरोवृतः'—इति हरिभक्तिविलासे १३ विलासः। ३०१

वन्दना स्त्री. [वन्द्+'घट्टिवन्दिविदिभ्यश्चेति वाच्यम्' इत्युक्तया युच्, टाप्] नमस्या; वन्दनी; स्तुतिः; समीची; होमभस्मना तिलकम्; 'ऐशान्यामाहरेद्भस्म स्रुचा वाथ स्रुवेण वा। वन्दनां कारयेत्तेन शिरःकण्ठांसकेषु च। कश्यपस्येति मन्त्रेण यथानुक्रमयोगतः'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। ७७६

वन्दिः स्त्री. [वन्दते स्तौति नृपादिकं स्वमुक्त्यर्थमिति। वदि+'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्] कृतबन्धनमनुष्यगवादिः; प्रग्रहः; उपग्रहः; वन्दी; वन्दी; वन्दिका; सोपानकः; ग्लहः; 'वन्द्यक्षैः कैतवैश्चौर्यैर्गर्हितां वृत्तिमास्थितः'—इति भागवते (६।१।२२)। पु. स्तुतिपाठकः; 'सूतमागधवन्दीनामेकैकस्य सहस्रिकम्'—इति हरिवंशे (११२।५०)। ७५९

वन्दी स्त्री. [वन्दि+'कृदिकारादक्तिनः' इति ङीष्] वन्दिः; वन्दिः; वन्दी; 'कैदी' इति भाषा। ७५९

वन्दी [न्] पुं. [वन्दते स्तौति नृपादीनिति। वदि स्तुतौ+णिनि] राजादेर्यात्रादौ वीर्यादिस्तुतिकारकः; स्तुति-

पाठकः; मागधः; मगधः; 'परिकल्पितसान्निध्या काले काले च वन्दिषु। स्तुत्यं स्तुतिभिरर्थ्याभिरुपतस्थे सरस्वती'—इति रघौ (४।६)। भृत्यः; 'ओमित्याे देशमादाय न वा तं सुरवन्दिनः। उर्वशीमप्सरः श्रेष्ठां पुरस्कृत्य दिवं ययुः'—इति भागवते (१२।४।१५)। 'सुरवन्दिनो देवभृत्याः' इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। ४३५

वपनम् क्ली. [वप्+भावे ल्युट्] वपः; केशमुण्डनं; क्षौरं; भद्राकरणं; मुण्डनम्; 'शूद्राणां मासिकं कार्यं वपनं न्यायवर्तिनाम्'—इति मनुः (५।१४०)। बीजाधानम्। ७२१

वपा स्त्री. [उप्यतेऽत्रेति। वप्+भिदाद्यङ्+टाप्] छिद्रम्, 'अथ वल्मीकवपा सुषिरा व्यध्वे निहिता भवति'—इति शतपथब्राह्मणे (६।३।३।५)। मेदः (६३५); 'पतत्रिणस्तस्य वपामुद्धृत्य नियतेन्द्रियः। ऋत्विक् परमसम्पन्नः स्नपयामास शास्त्रतः'—इति रामायणे (१।१४।३६)। ६२४

वपुः [स्] क्ली. [उप्यन्ते देहान्तरभोगसाधनबीजीभूतानि कर्माण्यत्रेति। वप्+'अर्तिपृवपियजीति' उसि] शरीरम्; 'एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं नवं वयः कान्तमिदं वपुश्च'—इति रघौ (२।४७)। प्रशस्ताकृतिः; अंशः; 'अष्टानां लोकपालानां वपुर्धारयते नृपः'—इति मनुः (५।९६)। 'वपुस्तेजोंऽशः' इति तट्टीकायां मेधातिथिः। स्त्री. दक्षकन्या; धर्मराजपत्नी; 'बुद्धिर्लज्जा वपुः शान्तिः सिद्धिः कीर्तिस्त्रयोदशी। पत्न्यर्थं प्रतिजग्राह धर्मो दाक्षायणीः प्रभुः'—इति मार्कण्डेये (५०।२१)। ५२८

वप्ता [ऋ] पुं. [वपति बीजमिति। वप्+तृच्] जनकः; तातः; पिता; कविः; नापितः; 'यदा ते वातो अनुवाति शोचिर्वप्तेव श्मश्रु वपसि प्रभूम'—इति ऋग्वेदे (१८।१४२।४) 'यथा वप्ता नापितो वपति मुण्डयति तथा भूम भूमिं प्रवपसि प्रकर्षेण मुण्डयसि'–इति तद्भाष्ये सायणः। त्रि. [वपतीति। वप् बीजोप्तौ+तृच्] वापकः; कर्षकः; 'यथेरिणे बीजमुप्त्वा न वप्ता लभते फलम्। तथानृचे हविर्दत्त्वा न दाता लभते फलम्'—इति मनुः (३।१४२)। ५०४

वप्रम् क्ली.–पुं. [उप्यतेऽत्रेति। वप्+'वृधिवपिभ्यां रन्' इति रन्] दुर्गनगरे परिखाया उद्धृतमृत्तिकास्तूपबद्धे, यदुपरि प्राकारो निवेश्यते तत्; चयः; मृत्तिकास्तूपः; 'लग्नं जघने तस्याः सुविशाले कलितकरिकरक्रीडे। वप्रे सक्तं द्विपमिव शृङ्गारस्तां विभूषयति'—इति आर्यासप्तशत्याम्। (५०५)। (५७४)[वपति बीजमत्र] केदारः क्षेत्रं; निष्कुटः; वनजं; वाजिका; पाटीरः; 'शालीक्षुमत्यपि धरा धरणीधराभवाराधरोजितपयःपरिपूर्णवप्रा'—इति बृहत्संहितायाम् (१९।१६)। पर्वतसानुः (८१०); 'नानारत्नज्योतिषां सन्निपातैश्छन्नेष्वन्तः सानुवप्रान्तरेषु'—इति किराते (५।३६)। रेणुः; तटः; 'तत्पूर्वं प्रतिविदधे सुरापगाया वप्रान्तस्खलितविवर्तनं पयोभिः'—इति किराते (७।११)। २८८

वमथुः पुं. [वमनमिति। वम्+'ट्वितोऽथुच्' इति अथुच्] हस्तिशुण्डनिर्गतजलकणः; करशीकरः; 'रजनिवमथुप्रालेयाम्भःकणक्रमसंभृतैः, कुशकिशलयस्याच्छैरग्रेशयैरुदबिन्दुभिः'—इति नैषधे (१९।६)। वमिः; प्रच्छर्दिका; 'दौर्बल्यश्वासकाशज्वरवमथुमदाः पाण्डुतादाहमूर्च्छाः'—इति सुश्रुतः। २१६

वम्रः पुं. [वमति उद्गिरति आर्द्रमृदमिति। वम्+बाहुलकाद् र] वम्री उपदेहिका; पिपीलिका। ६४५

वम्री स्त्री. [स्त्रीत्वे ङीष्] वम्रः; पिपीलिका; उपदेहिका। ६४५

वम्रीकूटम् क्ली.–पुं. [वम्रीकृतं कूटम्] नाकुः; वल्मीकः; वामलूरः। ६४४

वयः [स्] क्ली. [वयते, वेति, अजतीति वा। वय् गतौ, वी गतौ, अज् गतौ वा+असुन् अजतेर्वीभावः] पक्षी; 'ततः स्वच्छन्दतोऽन्यानि वयांसि वयसोऽसृजन्'—इति विष्णुपुराणे। बाल्यादिः; 'तुल्यशीलवयोयुक्तां तुल्याभिजनसंयुताम्। नवधोऽर्हति वैदर्भी तं चेयमसितेक्षणा'—इति महाभारते (३।६८।२३)। अन्नम्; 'वयं ते वय इन्द्र विद्धि षुणः प्रभरामहे वाजयुर्नरयम्'—इति ऋग्वेदे (२।२०।१)। यौवनम्; 'बाल्यं वृद्धिर्वयो रूपं चक्षुस्त्वक् श्रोत्ररेतसी। दशकेन निवर्तन्ते मनः सर्वेन्द्रियाणि च'—इति महाभारते। २३७

वयस्यः पुं. [वयसा तुल्यः। वयस्+'नौवयोधर्मेति' यत्] समानवयस्कः; स्निग्धः; सवयाः; मित्रं; सखा; सुहृत्; 'बहुयोषिति लाक्षारुणशिरसि वयस्येन दयित

उपहसिते। तत्कालकलितलज्जा पिशुनयति सखीषु सौभाग्यम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (४०३)। ४२८

वयस्या स्त्री. [वयस्य+टाप्] आली; सखी; 'अत्यर्थं सा च दृष्ट्वा त्वां जायते मदनातुरा। तां भजस्व वयस्यां मे ततः क्षेममवाप्स्यसि'—इति कथासरित्सागरे (१०।१४५)। इष्टका; 'एकया न विंशतिर्वयस्यास्ता एकचत्वारिंशद्द्वितीया चितिः'—इति शतपथब्राह्मणे (१०।४।३।१५)। तथा च वाजसनेयसंहिताभाष्ये (१४।९) 'वयस्यासंज्ञका इष्टका उपदधात्येकोनविंशतिमन्त्रैः' इत्यर्थः। ४८७

वरः पुं. [वृ+अप्] पतिः; वरणं; वृतिः; 'तपोभिरिष्यते यस्तु देवेभ्यः स वरो मतः'—इति भरतः। जामाता; 'प्रमुदितवरपक्षमेकतस्तत् क्षितिपतिमण्डलमन्यतो वितानम्'—इति रघौ (६-८६)। षिङ्गः; गुग्गुलुः; निग्रहः; 'न यो वराय मरुतामिव स्वनः सेनेव सृष्टा दिव्या यथाशनिः'—इति ऋग्वेदे (१।१४३।५)। 'योऽग्निर्वराय वरणाय निग्रहाय शक्तो न भवति'—इति तद्भाष्ये सायणः। त्रि. श्रेष्ठः (६८९); 'राजासनं राजच्छत्रं वराश्वा वरवारणाः। यस्य पुण्यानि तस्यैते मत्वैतत् शाम्य पुत्रक'—इति विष्णुपुराणे (१।११।१८)। क्ली. [व्रियते इति, वृ+कर्मणि अप्] कुङ्कुमं; मनाक्प्रियम्; 'वरं प्राणास्त्याज्या न च शिशुविनाशेष्वभिरति, वरं मौनं कार्यं न च वचनमुक्तं यदनृतम्। वरं क्लीवं भाव्यं न च परकलत्राभिगमनं, वरं भिक्षाशित्वं न च परधनानां हि हरणम्'—इति वामनपुराणे। त्वचम्; आर्द्रकम्; अव्य. मनाक्प्रियम्; 'मनागिष्टे वरं क्लीवं केचिदाहुस्तदव्ययम्'—इति मेदिनी। ४९७

वरटा स्त्री. [वरट+टाप्] हंसी; वरला; वारला; हंसकान्ता; वरटी; 'मदेकपुत्रा जननी जरातुरा नवप्रसूतिर्वरटा तपस्विनी'—इति नैषधे (१।१३५)। कुसुम्भबीजम्; 'वरटा मधुरा स्निग्धा रक्तपित्तकफापहा। कषाया शीतला गुर्वी स्याद्वृष्यानिलापहा'—इति भावप्रकाशः। पुं. [वरति सेवते सरोवरमिति। वृ सेवायाम्, 'शकादिभ्योऽटन्' इति अटन्] हंसः; कीटविशेषः; गन्धोली; वरला; वरली; क्षुद्रा; क्रूरा; क्षुद्रवर्णा। २५१

वरटी स्त्री. [वरट+जातौ ङीष्] हंसी; गन्धोली; 'सूक्ष्मतुण्डोच्चिटिङ्गवरटीशतपदीशूकवलभिकाभृङ्गी भ्रमराः शूकतुण्डविषाः'—इति सुश्रुतः। २५१

वरणः पुं. [व्रियते अनेन, वृणोतीति वा। वृ+'सुयुरुवृञो युच्' इति युच्] संक्रमः; प्राकारः; वरणवृक्षः; 'इह सिन्धवश्च वरणावरणाः करिणां मुदे सनलदानलदाः'—इति किराते (५।२५)। उष्ट्रः; क्ली. [वृ+भावे ल्युट्] कन्यादिवरणम्; 'न च विप्रेष्वधीकारो विद्यते वरणं प्रति। स्वयंवरः क्षत्रियाणामितीयं प्रथिता श्रुतिः'—इति महाभारते (१।१९०।७)। वेष्टनं; पूजनादि। ६७१

वरत्रा स्त्री. [व्रियतेऽनयेति। वृ+'वृञश्चित्' इति अत्रन्+टाप्] हस्तिकक्षरज्जुः; चूषा; कक्ष्या; कक्षा; चर्मरज्जुः; नद्ध्री; वद्ध्री; वर्ध्री, वार्ध्री; 'यथायुगं वरत्रया नह्यति धरुणायकम्'—इति ऋग्वेदे (१०।६०।८)। २२१

वरयिता [ऋ] पुं. [वृ+णिच्+तृच्] भर्ता; कान्तः; कमिता; पतिः; भोक्ता; धवः; रुच्यः; अभीकः; वरः; अभिकः; रमणः; प्राणाधिनाथः; अनुगः। वरणकारयिता। ४९७

वरला स्त्री. [वृ+अलच्+टाप्] हंसी; वरटा; वरली। २५१

वरली स्त्री. [वरल+ङीष्] वरटा; हंसी; हंसकान्ता। २५१

वरस्त्री स्त्री.— मुख्या नारी; वरारोहा; वराङ्गना; मत्तकासिनी; मत्तकाशिनी। ४९८

वराङ्गम् क्ली. [वरमङ्गानाम्] भगः; योनिः; उपस्थः; स्मरमन्दिरं; मस्तकं; गुह्यं; गुडत्वक्; श्रेष्ठावयवः [वराण्यङ्गान्यस्य]; तद्युक्ते त्रि.। चोचम्; 'त्वक्पत्रं च वराङ्गं स्याद् भृङ्गं चोचं तथोत्कटम्'—इति भावप्रकाशः। पुं. [वराणि स्थूलान्यङ्गानि यस्य] हस्ती; विष्णुः; 'सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्। ५१४

वराटः पुं. [वरं मन्दमटतीति। वर+अट्+कर्मणि अण्] रज्जुः; शुल्वा; 'रज्जुः शुल्वा वराटो ना'—इति रत्नकोषः। (६६४) कपर्दकः; कपर्दः; वराटकः; वराटिका। ५९७

वरारोहा स्त्री. [वर आरोहो नितम्बो यस्याः] उत्तमा

स्त्री; 'यदा तु वैदिको दीक्षा दीक्षा पौराणिकी तथा। न स्यास्यति वरारोहे ! तदैव प्रबलः कलिः'—इति विश्वः। कटिः। ४८९

वराहः पुं. [वरान् आहन्ति। हन्+ड] पशुविशेषः; वाराहः; शूकरः; घृष्टिः; कोलः; पोत्री; किरिः; किटिः; दंष्ट्री; घोणी; स्तब्धरोमा; क्रोडः; भूदारः; किरः; मुस्तादः; मुखलाङ्गलः; स्थूलनासिकः; दन्तायुधः; वक्रनक्रः; दीर्घतरः; आखनिकः; भूक्षित्; बहुसूः। 'भुक्त्वा वाराहमासं तु यस्तु मामुपसर्पति । वराहो दशवर्षाणि भूत्वा वै चरते वनम्'–इत्येकादशीतत्त्वम्। विष्णोरवतारविशेषः; 'वराहपर्वतो नाम यः पुरा हरिनिर्मितः। स एव भूतो भगवानाजगामापुरान्तिकम्'—इति वह्निपुराणम्। विष्णुः; मानभेदः; पर्वतभेदः; मुस्ता; शिशुमारः; वाराहीकन्दः; अष्टादशद्वीपान्तर्गतक्षुद्रद्वीपविशेषः; 'गन्धर्वो वरुणः सौम्यो वराहः कङ्क एव च। कुमुदश्च कसेरुश्च नागो भद्रारकस्तथा। चन्द्रेन्द्रमलयाः शङ्खयवाङ्कगभस्तिमान् । ताम्राकुश्च कुमारी च तत्र द्वीपा दशाष्टभिः'—इति शब्दमाला। कृष्णपिण्डीरः; 'वराहः कृष्णपिण्डीरः कृष्णपिण्डीतकस्तु सः'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। २२६

वरिवस्या स्त्री. [वरिवसः पूजायाः करणम्। वरिवस्+'नमोवरिवश्चित्रङः क्यच्' इति क्यच्, 'अ प्रत्ययात्' इत्य, टाप्] शुश्रूषा; परिचर्या; उपासना; परीष्टिः; सेवा; भक्तिः; उपास्तिः; प्रसादना; आराधना; उपचारः। १२९

वरिष्ठः त्रि. [अयमेषामतिशयेन वर उरुर्वा। अतिशायने इष्ठन्, प्रियस्थिरेति वरादेशः] वरतमः; 'हत्वा स्वरिक्थस्पृध आततायिनो युधिष्ठिरो धर्मभृतां वरिष्ठः'–इति भागवते (१।१०।१)। उरुतमः; 'यत्नी वरिष्ठे वृहती विमिण्वनु वद्धोक्षापप्रयानेभिरेवैः'—इति ऋग्वेदे (४।५६।१)। वत्सः; पुं. [वर+इष्ठन्] तित्तिरिपक्षी; नारङ्गवृक्षः; चाक्षुषमनुपुत्रः; 'वरिष्ठो नाम भगवांश्चाक्षुषस्य मनोः सुतः'—इति महाभारते (१३।१८।२०)। धर्मसावर्णिमन्वन्तरस्य ऋषिविशेषः; 'हविष्मांश्च वरिष्ठश्च ऋष्टिरन्यस्तथारुणिः। निश्चरश्चानघश्चैव दिष्टिश्चान्यो महामुनिः। सप्तर्षयोऽन्तरे तस्मिन्नग्निदेवश्च सप्तमः'—इति मार्कण्डेये (९४।१९)। दैत्यविशेषः; 'वरिष्ठश्च गविष्ठश्च भूतलोन्मथनो विभुः। सुप्रसादः किरीटी च सूचीवक्त्रो महासुरः'—इति हरिवंशे (२३२।१३)। स्त्री. [वरिष्ठ+टाप्] आदित्यभक्ता। ६९९

वरुणः पुं. [वृणोति सर्वं, व्रियते अन्यैरिति वा। वृ+'कृवृदारिभ्य उनन्' इति उनन्] प्रचेताः; पाशी; यादसांपतिः; अप्पतिः; यादःपतिः; अपांपतिः; जम्बुकः; मेघनादः; जलेश्वरः; परञ्जयः; दैत्यदेवः; जीवनावासः; नन्दपालः; वारिलोमः; कुण्डली; रामः; सुखाशः। वृक्षविशेषः; सेतुः; तिक्तशाकः; कुमारकः; श्मरीघ्नः; वराणः; सेतुकः; शिखिमण्डनः; श्वेतवृक्षः; श्वेतद्रुमः; साधुवृक्षः; तमालः; मारुतापहः; जलं; सूर्यः; 'धाता मित्रोऽर्यमा शक्रो वरुणस्त्वंश एव च। भगो विवस्वान् पूषा च सविता दशमस्तथा'—इति महाभारते (१।६५।१५)। मुनिगर्भजातकश्यपपुत्रविशेषः; महाभारते (१।६५।४२)। ७४

वरूथः पुं. [व्रियते रथोऽनेनेति। वृ वरणे+'जृवृभ्र्स्यामूथन्' इति ऊथन्] परप्रहरणाभिघातरक्षार्थं रथस्य सन्नाहवद्यदावरणकादिद्रव्यं तत्; रथगुप्तिः; रथसंवृतिः; 'उरगध्वजदुर्द्धर्षं सुवरूथं स्वपस्करम्'—इति रामायणे (६।५७।२६)। ग्रामविशेषः; 'तोरणं दक्षिणार्द्धेन जम्बूप्रस्थं समागतम्। वरूथं च ययौ सम्यक् ग्रामं दशरथात्मजः'—इति रामायणे (२।७१।११) क्ली. तनुत्राणं; चर्म; गृहम्; 'भवा वरूथं गृणते विभावो भवा मघवन् मघवद्भ्यः शर्म'—इति ऋग्वेदे (१।५८।९)। सैन्यम्; 'तेऽनीकपा रघुपतेरभिपत्य सर्वे द्वन्द्वं वरूथमिभपत्तिरथाश्वयोधैः। जघ्नुर्द्रुमैर्गिरिगदेषुभिरङ्गदाद्याः सीताभिमर्षहतमङ्गलरावणेशान्'—इति भागवते (९।१९।२०)। ४४९

वरूथिनी स्त्री. [वरूथं तनुत्राणादिकमस्त्यस्या इति। वरूथ+इनि+ङीप्] सेना; पृतना; ध्वजिनी; पताकिनी; वाहिनी; बलं; सैन्यं; चक्रः; चमूः; अनीकिनी; अनीकम्; 'तस्य जातु मरुतः प्रतीपगावर्त्मसु ध्वजतरुप्रमाथिनः। चिक्लिशुर्भृशतया वरूथिनीमुत्तटा इव नदीरयाः स्थलीम्'—इति रघौ (११।५८)। ४५७

वरेण्यः त्रि. [वृ+एण्य] प्रधानः; श्रेष्ठः; वरः; 'पुण्यो महाब्रह्मसमूहजुष्टः सन्तर्पणो नाकसदां वरेण्यः'—इति भट्टिः (१।४) वरणीयः; 'संस्कारपूतेन वरं वरेण्यं वधूं सुखग्राह्यनिबन्धनेन'—इति कुमारे (७।९०)। पुं. पितृगणानामन्यतमः; 'वरो वरेण्यो वरदो पुष्टिदस्तुष्टिदस्तथा'—इति मार्कण्डेये (९६।४५)। भृगुपुत्रविशेषः; 'भृगोस्तु पुत्राः सप्तासन् सर्वे तुल्या भृगोर्गुणैः। च्यवनो वज्रशीर्षश्च शुचिरौर्वस्तथैव च। शुक्रो वरेण्यश्च विभुः सवनश्चेति सप्त ते'—इति महाभारते (१३।८५।१२९)। महादेवः; 'वरो वराहो वरदो वरेण्यः सुमहास्वनः'—इति शिवसहस्रनामकीर्तने (१३।१७।१३६)। क्ली. [व्रियते लोकैरिति। वृ+'वृञ एण्यः' इति एण्य] कुङ्कुमम्। ६८९

वर्करः पुं. [वृक्यते गृह्यते इति। वृक् आदाने+बहुलवचनात् अर] युवपशुः; तरुणपशुः; मेषशावकः; छागः; परिहासः; 'कान्तः केलिरुचिर्युवा सहृदयस्तादृक् पतिः कातरे, किन्नो वर्करकर्करैः प्रियशतैराक्रम्य विक्रीयते'—इति अमरुशतके (७)। २७८

वर्कराटः पुं. [वर्करं परिहासम् अटति गच्छतीति। अट्+अच्] कटाक्षः।

वर्गः पुं. [वृज्यते इति, वृजी वर्जने + घञ्] स्वजातीयसमूहः; 'व्रताय तेनानुचरेण धेनोर्न्यषेधि शेषोऽप्यनुयायिवर्गः' — इति रघौ (२।४)। समानधर्मिभिः प्राणिभिरप्राणिभिश्चोपलक्षितं वृन्दम्; यथा–कवर्गः ग्रन्थपरिच्छेदः; 'सर्गो वर्गपरिच्छेदोद्घाताध्यायाङ्कसंग्रहाः। उच्छ्वासः परिवर्तश्च पटलः काण्डमस्त्रियाम्। स्थानं प्रकरणं पर्वाह्निकं च ग्रन्थसन्धयः'—इति त्रिकाण्डशेषः। समानाङ्कद्वयस्य गुणनं; कृतिः; स्त्री. अप्सरोविशेषः; 'अप्सरास्मि महाबाहो देवारण्यविहारिणी। इष्टा धनपतेर्नित्यं वर्गा नाम महाबल!'—इति महाभारते (१।२१७।१५)। ५०८

वर्चः [स्] क्ली. [वर्चते इति, वर्च+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इति असुन्] तेजः; 'अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्च्चः सुवीर्यम्'—इति ऋग्वेदे (९।६६।२१)। 'वर्चः तेजः' इति तद्भाष्ये सायणः। (६३७) विष्ठा; वर्चस्कः। 'शूलाविष्टः सक्तमूत्रोऽन्त्रकूजी स्रस्तापानः सन्नकटघूरुजङ्घः। वर्चो मुञ्चत्यल्पमल्पं सफेनं रूक्षं श्यावं सानिलं मारुतेन'—इति सुश्रुतः। रूपम्; अन्नम्; 'अग्ने सहस्व पृतना अभियातीरपास्य। दुष्टरस्तरन्नरातीर्वर्च्चोधायज्ञवाहसे'—इति ऋग्वेदे (३।२४।१)। 'वर्च्चोधाः अन्नं देहि'—इति तद्भाष्ये सायणः। ६५

वर्चस्कः पुं.–क्ली. [वर्चस्+स्वार्थे कन्] विष्ठा; वर्चः; उच्चारः; अवस्करः; शकृत्; गूथः; कीटः; विट्; पुरीषः; शमलः; मलः। दीप्तिः; 'देविकायामुपस्पृश्य तथा सुन्दरिका ह्रदे। अश्विन्यां रूपवर्चस्कं प्रेत्य वै लभते नरः'—इति महाभारते (१३।२५।१९)। ६३७

वर्जनम् क्ली. [वृज्+ल्युट्] मारणं; घातनं; निशरणं; निवर्हणं; सूदनं; हिंसा; त्यागः। ४७७

वर्णम् क्ली. [वर्णयतीति, वर्ण्+अच्] कुङ्कुमं; घुसृणम्। ५४३

वर्णः पुं. [व्रियते इति, वृ+'कृवृजृषिद्रुजुपन्यनिस्वतिभ्यो नित्' इति न, स च नित्] शुक्लादिः; ब्राह्मणादिः; शोभा; अक्षरः; व्रतं; गीतक्रमः; स्तुतिः; वेषः। ८६०

वर्णनम् क्ली. [वर्ण स्तुतौ विस्तारे रञ्जनादौ+ल्युट्] वर्णना; स्तवनम्; 'इत्थं निशम्य दमघोषसुतः स्वपीठादुत्थाय कृष्णगुरुवर्णनजातमन्युः। उत्क्षिप्य बाहुमिदमाह सदस्यमर्षी संश्रावयन् भगवते परुषाण्यभीतः'—इति भागवते (१०।७४।३०)। विस्तरणं; शुक्लादिवर्णयोजनं; दीपनम्। १५०

वर्णना स्त्री. [वर्ण+णिच्+युच्+टाप्] गुणकथनम्; इडा; स्तवः; स्तोत्रं; स्तुतिः; नुतिः, श्लाघा; प्रशंसा; अर्थवादः, 'विदग्धा अपि वर्ण्यन्ते विटवर्णनया स्त्रियः'—इति कथासरित्सागरे (३२।१६६)। १४५

वर्णपुष्पम् क्ली. [वर्णवन्ति नानावर्णानि पुष्पाणि यस्य] कुरण्टकः; पुष्पविशेषः। २०७

वर्णिनी स्त्री. [वर्णोऽस्त्यस्या इति। वर्ण+इनि+ङीप्] वनिता; स्त्री; हरिद्रा। ४८१

वर्णी [न्] पुं.] वर्णः प्रशस्तिः अस्यास्ति। वर्णा अक्षराणि लेख्यत्वेन सन्त्यस्येति वा। वर्ण+'वर्णाद् ब्रह्मचारिणि' इति इनि] ब्रह्मचारी, 'वर्णी स्याल्लेखके चित्रकरेऽपि ब्रह्मचारिणि'—इति मेदिनी। लेखकः; [वर्णाः नीलपीतादयः लेख्यत्वेन सन्त्यस्येति इनि] चित्रकरः; 'अङ्गारकुशमुञ्जानां पलाशशरवर्णिनाम्। यवसेन्धनदिग्धानां कारयेत च सञ्चयान्'—इति महाभारते

(१२।६९।५७)। वर्णविशिष्टे त्रि.। [वर्णोत्तरपदात् तु 'धर्मशीलवर्णान्ताच्च' इति इनि स्यात्] 'याजनाध्यापने शुद्धे विशुद्धाच्च प्रतिग्रहः। वृत्तित्रयमिदं प्राहुर्मुनयो ज्येष्ठवर्णिनः'—इति कामन्दकीये नीतिसारे (२।१९)। ज्येष्ठवर्णिनो ब्राह्मणस्येत्यर्थः। ३९४

वर्तनम् क्ली. [वर्ततेऽनेनेति। वृत्+करणे ल्युट्] वृत्तिः; साधारणवर्तुलं; क्ली.– स्त्री. तूलनाला; तर्कुपीठः; जीवनं; पुं. [वृत्+युच्] वामनः; वर्तिष्णौ त्रि.। ७८७

वर्तनिः स्त्री. [वर्ततेऽनयेति। वृत्+'वृतेश्च' इति अनि] पन्थाः; पुं. पूर्वदेशः। २६०

वर्तनी स्त्री. [वर्तनि+कृदिकारादिति पक्षे ङीष्] पन्थाः; पेषणम्। २६०

वर्तमानः त्रि. [वर्तते इति, वृत्+शानच्, मुक्] तत्कालवृत्तः; अद्यतनः; अधुनातनः; उपस्थितः; 'प्रवृत्तोपरतश्चैव वृत्ताविरत एव च। नित्यप्रवृत्तः सामीप्यो वर्तमानश्चतुर्विधः।' पुं. प्रयोगाधिकरणीभूतकालः। ८८०

वर्तिः स्त्री. [वर्ततेऽनया इति। वृत्+'हृपिषिरुहिवृतिविदिच्छिदिकीर्तिभ्यश्च' इति इन्] वस्तिः; दशा; सिचः; भेषजनिर्माणं; नयनाञ्जनं; लेखः; गात्रानुलेपनी; दीपदशा; 'यथा प्रदीपो घृतवर्तिमश्नन् शिखाः सधूमा भजति ह्यन्यदा स्वम्'—इति भागवते (५।११।८)। दीपः; वर्तिविशेषः। 'कतकस्य फलं शङ्खः सैन्धवं त्र्यूषणं वचा। फेनो रसाञ्जनं क्षौद्रं विडङ्गानि मनःशिला। एषां वर्तिर्हन्ति कासं तिमिरं पटलं तथा'—इति गारुडे। [वर्ततेऽनयेति, वृत्+'वृतेश्छन्दसि' इति इ। बाहुलकात् लोकेऽपि] योगकर्मद्रव्यम्। ५५१

वर्तुलम् त्रि. [वर्तते इति, वृत्+बाहुलकात् उलच्] गोलवस्तु; निस्तलं; वृत्तं; मण्डलायितम्। 'वृत्तानि बाहुनारङ्गस्कन्धवम्मिल्लमोदकाः। रथाङ्गलावककुत्कुम्भिकुम्भाण्डकादयः। कर्णपाशभुजापाशाकृष्टचापघटाननम्। मुद्रिकापरिखायोगपट्टहारस्रगादयः'—इति कविकल्पलतायाम्। क्ली. गृञ्जनं; पुं. कलायविशेषः; 'कलायस्य त्रयो भेदास्त्रिपुटो वर्तुलोऽङ्कुटी'—इति शब्दमाला। ७५३

वर्त्म [न्] क्ली. [वर्ततेऽनेनास्मिन् वेति। वृत्+मनिन्] पन्थाः; वर्तनिः; वर्तनी; अध्वा; पद्धतिः; एकपदी; सरणिः; मार्गः; 'गोमातरो यच्छुभयन्ते अञ्जिभिस्तनूषु शुभ्रा दधिरे विरुक्मतः। बाधन्ते विश्वमभिमातिनमपवर्त्मान्येषामनुरीयते घृतम्'—इति ऋग्वेदे (१।८५।३)। 'वर्त्मानि मार्गाननुसृत्य'—इति तद्भाष्ये सायणः। 'पुरस्कृता वर्त्मनि पार्थिवेन प्रत्युद्गता पार्थिवधर्मपत्न्या। तदन्तरे सा विरराज धेनुर्दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या'—इति रघौ (२।२०)। (७९२) नेत्रच्छदः; नयनच्छदः। 'सितासितं च तन्मध्ये नेत्रयोर्मण्डलं हि तत्। प्रच्छादनं भवेद्वर्त्म चाक्षिकूटमतः परम्'—इति अश्ववैद्यके (२।१०)। २६०

वर्धकम् क्ली. [वर्धते इति, वृध्+णिच्+ण्वुल्] कल्पनं; कर्तनं; छेदनं; पुं. ब्राह्मणयष्टिका; [वर्द्धयतीति, वर्ध पूरणे छेदने च, ण्वुल्] पूरके छेदके च त्रि.। ७२९

वर्द्धकिः पुं. [वर्द्धते छिद्यते इति। वृध्+अच्। वर्द्ध कषतीति। कष् हिंसायाम्+बाहुलकात् डि] त्वष्टा; तक्षा; रथकारः; वर्धकी; 'बढ़ई' इति भाषा। 'कर्मान्तिकान् शिल्पकरान् वर्धकीन् खनकानपि। गणकान् शिल्पिनश्चैव तथैव नटनर्तकान्'—इति रामायणे (१।१३।७)। ५८७

वर्धकी [न्] पुं. [वर्द्धको वर्धोऽस्ति अस्येति। वर्धक+इनि] त्वष्टा; वर्द्धकिः; तक्षा; सूत्रधारः; रथकारः; रथकरः; काष्ठतट्; काष्ठतक्षकः; 'अरभङ्गे बलभेदो नेम्या नाशो बलस्य विज्ञेयः। अर्थक्षयोऽक्षभङ्गे तथाणिभङ्गे च वर्धकिनः'—इति बृहत्संहितायाम् (४३।२२)। ५८७

वर्धनी स्त्री. [वर्धयति अवस्करमिति। वर्ध+'अनुदात्तेतश्च' इति युच्] सम्मार्जनी; घटी (३१७); गलन्तिका; कर्करी; सनालपात्रविशेषः; 'आलुः स्त्री कर्करी पारी वर्धनी च गलन्तिका'—इति जटाधरः। 'प्रतिष्ठा यस्य देवस्य तदाख्यं कलसं न्यसेत्। ऐशान्यां पूजयेद्याम्ये अस्त्रेणैव च वर्द्धनीम्। कलसं वर्द्धनीं चैव ग्रहान् वास्तोष्पतिं तथा। आसने तानि सर्वाणि प्रणवाद्यं जपेद् गुरुः'—इति गारुडे। ३०२

वर्धमानः पुं. [वर्धते इति, वृध् वृद्धौ+शानच्] धनिनां गृहविशेषः; स्वस्तिकः; नन्द्यावर्तादिः; 'द्वारालिन्दोऽन्तगतः प्रदक्षिणोऽन्यः शुभस्ततश्चान्यः। तद्वच्च वर्धमाने द्वारं तु न दक्षिणं कार्यम्'—इति बृहत्संहितायाम् (५३।)३३। (३१५) शरावः; शालाजिरः; वर्ध-

मानकः; 'तथा गाः कपिला दोग्ध्रीः सवत्साः पाण्डुनन्दनः। हेमशृङ्गी रूप्यखुरा दत्त्वा चक्रे प्रदक्षिणम्। स्वस्तिकान् वर्धमानांश्च नन्द्यावर्तांश्च काञ्चनान्'—इति महाभारते (७।८०।१९)। एरण्डवृक्षः; 'शुक्ल एरण्ड आमण्डश्चित्रो गन्धर्वहस्तकः। पञ्चाङ्गुलो वर्धमानो दीर्घदण्डोऽप्यदण्डकः। वातारिस्तरुणश्चापि रूबूकश्च निगद्यते' —इति भावप्रकाशः। पशुभेदः; विष्णुः; 'वर्धनो वर्धमानश्च विविक्तः श्रुतिसागरः'—इति महाभारते (१३।१४९।४१)। जिनविशेषः; वीरः; चरमतीर्थकृत्; महावीरः; देवाप्यः; अज्ञातनन्दनः; देशविशेषः; 'प्राच्यां मागधशोणौ च वारेन्द्रीगौडराढकाः। वर्धमानतमोलिप्तप्राग्ज्योतिषोदयाद्रयः'—इति ज्योतिषतत्त्वे कूर्मचक्रम्। भद्राश्ववर्षस्य कुलपर्वतविशेषः; 'विशालः कम्बलः कृष्णो जयन्तो हरिपर्वतः। विशोको वर्धमानश्च सप्तैते कुलपर्वताः'—इति मार्कण्डेये (५९।१२)। वृद्धिविशिष्टे त्रि.। ३०५

वर्ध्री स्त्री. [वर्धते इति। वृध्+अच्, वर्द्ध+गौरादित्वाद् ङीष्] चर्मरज्जुः; नद्ध्री; वद्ध्री; वरत्रा; वर्धिका। ५९६

वर्म्म [न्] क्ली. [वृणोति आच्छादयति शरीरमिति। वृ+मनिन्] तनुत्रं; सन्नाहः; कवचः; तनुत्राणम्; उरश्छदः; जगरः; कङ्कटः; माठी; दंशनः; जालिका; 'अभ्यभूयत वाहानां चरतां गात्रशिञ्जितैः। वर्म्मभिः पवनोद्धूतराजतालीवनध्वनिः'—इति रघौ (४।५६)। गृहम्; 'छिन्नभिन्नकृमिखातकण्टकिप्लुष्टरूक्षकुटिलैर्नसत्कुजैः। क्रूरपक्षिकृतनिन्द्यनामभिः शुष्कशीर्णबहुपर्णवर्मभिः'—इति बृहत्संहितायाम् (५१।३)। पुं. क्षत्रियस्य पद्धतिः; 'शर्मान्तं ब्राह्मणस्य स्याद्वर्मान्तं क्षत्रियस्य च। गुप्तदासान्तकं नाम प्रशस्तं वैश्यशूद्रयोः'—इति शातातपवचनम्। ४५९

वर्मितः त्रि. [वर्म करोतीति। वर्म+णिच्, वर्मि+कर्मणि क्त। वर्म सञ्जातमस्येति। इतच् वा] वर्मयुक्तः; कृतसन्नाहः; सन्नद्धः; सज्जः; दंशितः; व्यूढकङ्कटः; ऊढकङ्कटः; ; 'वाजिनां वर्मिताङ्गानां क्रुद्धस्य मम सायकाः। अद्य भित्त्वा प्रवेक्ष्यन्ति शरीराणि मखेरिताः'—इति रामायणे (२।९१।१५)। ४६०

वर्यम् त्रि. [वर्यते प्रार्थ्यते इति। वर ईप्सायाम्+'अचो यत्' इति यत्] प्रधानं; वरेण्यं; वरः; 'यथा धर्मादयश्चार्था मुनिवर्यानुकीर्तिताः। न तथा वासुदेवस्य महिमा ह्यनुवर्णितः'—इति भागवते (१।५।९)। श्रेष्ठम्; 'माहेन्द्रं नगमभितः करेणुवर्याः पर्यन्तस्थितजलदा दिवः पतन्तः'—इति किराते (७।२०)। पुं. कामदेवः। ६८९

वर्या स्त्री. [व्रियते इति, वृ+'अवद्यपण्यवर्येति' अप्रतिबन्धे यत्] पतिंवरा कन्या। ४८३

वर्वरः पुं. [वृणोति दोषानिति। वृ+ष्वरच्] पामरः; नीचजातिविशेषः; केशः; चक्रलः; देशविशेषः; तद्देशवासिनि पुं. भूम्नि। 'काम्बोजा दरदाश्चैव वर्वरा हर्षवर्धनाः'—इति मार्कण्डेये (५७।३८)। फञ्जिका; वृक्षविशेषः; सुमुखः; गरघ्नः; कृष्णवर्वरकः; मुकन्दजः; गन्धपत्रः; पूतिगन्धः; सुवाहकः; क्ली. हिङ्गुलं; पीतचन्दनं; बोलम्। ३४८

वर्षः पुं.–क्ली. [वृष्यते इति, वृषु सेचने+'अज्विधौ भयादीनामुपसंख्यान'मित्यच्। यद्वा व्रियते प्रार्थ्यते इति, वृ+'वृतुवदिहनिकमिकषिभ्यः सः' इति स] वत्सरः; हायनः; अब्दः; संवत्सरः; समा; 'वर्षे वर्षेऽश्वमेधेन यो यजेत शतं समाः। मांसानि च न खादेद्यस्तयोः पुण्यफलं समम्'—इति मनुः (५।५३)। वृष्टिः; 'विद्युत्स्तनितवर्षेषु महोल्कानां च संप्लवे। आकालिकमनध्यायमेतेषु मनुरब्रवीत्'—इति मनुः (४।१०३)। जम्बुद्वीपः; [वर्षतीति, वृष्+पचाद्यच्]· मेघः; वर्षके त्रि.। 'नमाम्यभीक्ष्णं नमनीयपादं सरोजमल्पीयसि कामवर्षम्'—इति भागवते (३।२१।२०)। ११६

वर्षधरः पुं. [वर्षस्य पूरकस्य धरः आश्रयकर्ता] क्लीवः; नपुंसकः; मेघः। ४३०

वर्षवरः पुं. [वरतीति, वर आवरणे+अच्। वर्षस्य रेतोवर्षणस्य वरः आवरकः] षण्ढः; क्लीवः; 'नष्टं वर्षवरैर्मनुष्यगणनाभावादपास्य त्रपामन्तः कञ्चुकिकञ्चुकस्य विशति त्रासादयं वामनः'—इति रत्नावल्याम् २ अङ्के। ४३०

वर्षाः स्त्री. बहुवचनान्तः [वर्ष+अर्श आदित्वात् अच्, टाप्] वर्षर्तुः; प्रावृट्; तपात्ययः। ११६

वर्षाभूः स्त्री. [वर्षासु भवतीति। वर्षा+भू+क्विप्] भेकी; वर्षाम्वी; भेकवधूः; पुनर्नवा; 'तिलपर्णिकावर्षाभूचित्रमूलकपोतिकालशुनपलाण्डुकलायप्रभृतीनि' –

इति सुश्रुतः। वर्षाभवे त्रि.। पुं. भेकः; 'मण्डूकः प्लवगो भेको वर्षाभूर्दर्दुरो हरिः'—इति भावप्रकाशः। इन्द्रगोपः; भूलता। ६६२

वर्षुकाम्बुदः पुं. [वर्षुकश्चासौ अम्बुदश्चेति कर्मधारयः] वर्षणशीलमेघः; वर्षुकाब्दः; घनाघनः। ८२६

वर्ष्म [न्] क्ली. [वर्षति वृष्यते वेति। वृष्+मनिन्] शरीरं; वर्ष्मम्; 'ददर्श च समीपेऽस्य पिशाचानां शतैर्वृतम्। काणभूतिं पिशाचं तं वर्ष्मणा शालसन्निभम्'—इति कथासरित्सागरे (२।५)। प्रमाणम्; (प्रमाण-मत्रोन्नतिः) 'अयापश्यदृषीन् ह्रस्वान् अङ्गुष्ठोदर-वर्ष्मणः। पलालवृन्तिकामेकां वहतः संहतान् पथि'—इति महाभारते (१।३१।८)। इयत्ता; अतिसुन्दरा-कृतिः; उन्नते स्थिरे च त्रि.। 'सरोरुवद्वृषभस्तिग्मश्रृङ्गो वर्ष्मन्तस्थौ वरिमन्ना पृथिव्याः'—इति ऋग्वेदे (१०।२८।२)। 'वर्ष्मन् शब्द उन्नतवचनः स्थिरवचनो वा'—इति तद्भाष्ये सायणः। वर्षीयान्; 'ॐ नमो भगवते-ऽकूपाराय सर्वसत्त्वगुणविशेषणाय नमोऽनुपलक्षितस्थानाय नमो वर्ष्मणे नमो भूम्ने नमोऽवस्थानाय नमस्ते'—इति भागवते (५।१८।३०)। 'वर्ष्मणे वर्षीयसे'—इति तट्टीकायां श्रीधरः। ५१०

वर्ष्मम् क्ली. – शरीरं; कायः; देहम्। ५१०

वर्हम् क्ली.– पुं. [वर्हयति दीप्यते इति। वर्ह्+अच्। वर्हतीति वा, वृह् वृद्धौ+अच्] पत्रम्; 'विलासिनी-विभ्रमदन्तपत्रमापाण्डुरं केतकवर्हमन्यः। प्रियानितम्बो-चितसन्निवेशैर्विपाटयामास युवा नखाग्रैः'—इति रघौ (६।१७)। मयूरपिच्छम् (२४२); 'यथा वर्हाणि चित्राणि बिभर्ति भुजगाशनः। तथा बहुविधं राजा रूपं कुर्वीत धर्मवित्'—इति महाभारते (१२।१२०।४)। ग्रन्थिपर्णं; परीवारः। १८५

वर्हिणः पुं. [वर्हमस्त्यस्येति। वर्ह+'फलवर्हाभ्यामिनच्' इति इनच्। यद्वा 'बहुलमन्यत्रापि' इत्यनेन सिद्धः। पृषोदरादित्वेन वकारादिः] मयूरः; केकी; शिखी; शिखण्डी; प्रचलाकी; कलापी; सर्पाशनः; शिखावलः; श्यामकण्ठः; 'छुच्छुन्दरिः शुभान् गन्धान् पत्रशाकं तु वर्हिणः। श्वावित् कृतान्नं विविधमकृतान्नं तु शल्यकः'—इति मनुः (१२।६५)। क्ली. तगरम्; 'कालानुसार्यं तगरं कुटिलं मधुरं मतम्। अपरं पिण्डतगरं दण्डहस्ती च वर्हिणम्'—इति भावप्रकाशः। २४१

वर्हिणवाहनः पुं. [वर्हिणो मयूरो वाहनं यानं यस्य] मयूरवाहनः; कार्त्तिकेयः; कुमारः। २०

वलक्षः त्रि. [बलं क्षायत्यस्मात्। वल+क्षै+क। यद्वा अवलक्ष्यते, घञ्, भागुरिनतेनाकारलोपः] गौरः; श्वेतः; सितः; शुभ्रः; धवलः; अर्जुनः; माघे (६।३४)। ७३२

वलभिः, वलभी स्त्री. [वल् संवरणे, बाहुलकादभच् इत्वं च। वलभि+कृदिकारादिति वा ङीष्] वडभी; 'हर्म्य-प्रासादवलभीष्वन्विष्यन् सोऽभ्रमन्निशि'—इति कथा-सरित्सागरे (८७।१२)। पुरीविशेषः; 'काव्यमिदं विहितं मया वलभ्यां, श्रीधरसेननरेन्द्रपालितायाम्। कीर्तिरतो भवतान्नृपस्य तस्य, क्षेमकरः क्षितिपो यतः प्रजानाम्'—इति भट्टिः (२३।३५)। ३०३

वलयः पुं.– क्ली. [वलते आवृणोति हस्तादिकमिति। वल्+ 'वलिमलितनिभ्यः कयन्' इति कयन्] स्वर्णादिरचित-प्रकोष्ठाभरणम्; आवापकः; परिहार्यः; कटकः; पारिहार्यः; शङ्खकः; कम्बुः; कुण्डलम्; 'सहेमसूत्रैर्म-णिभिः केयूरैर्वलयैरपि'—इति रामायणे (२।३२।५)। मण्डलम्; 'अश्रान्तः सकलं भूमेर्वलयं तुरगोत्तमः। समर्थः क्रान्तुमर्केण तवायं प्रतिपादितः'—इति मार्कण्डेये (२०।४९)। अस्थिविशेषः; 'कपालरुचकतरुणवलय-नलकसंज्ञानि। पाणिपादपार्श्वपृष्ठोरःसु वलयानि'—इति सुश्रुतः। वैद्यकोक्ताग्निकर्मविशेषः; 'तत्र रोगाधि-ष्ठानभेदादग्निकर्म चतुर्धा भिद्यते। तद्यथा वलयबिन्दु-लेखाप्रतिसारणानीति, दहनविशेषाः'—इति सुश्रुतः। वेष्टनम्; 'सवेलावप्रवलयां परिखीकृतसागराम्। अनन्यशासनामुर्वीं शशासैकपुरीमिव'—इति रघौ (१।३०)। पुं. [वलयवदाकृतिरस्त्यस्येति। अर्श आदित्वात् अच्] अष्टादशगलरोगान्तर्गतगलरोगविशेषः; 'बलास एवायतमुन्नतं च शोथं करोत्यन्नगतिं निवार्य। त सर्वथैवाप्रतिवार्यवीर्यं विवर्जनीयं वलयं वदन्ति'—इति भावप्रकाशः। वेला; कङ्कणं; दण्डव्यूहविशेषः; 'सुखाख्यो वलयश्चैव दण्डभेदाः सुदुर्जयः'—इति कामन्द-कीये नीतिसारे (१९।४५)। ५५७

वलयितम् त्रि. [वलयवत् कृतमिति। वलय+तत्करो-तीति णिच्, ततः क्त। यद्वा वलयं तदाकृतिर्जातमस्येति। वलय+इतच्] वेष्टितं; निवृतं; परिवृतं; परिक्षिप्तम्;

'नीलनलिनमिव पीतपरागपटलभरवलयितमूलम्'—इति गीतगोविन्दे (११।२६)। 'इन्धनमालावलयितबाहुः परधनहरणे साक्षाद् राहुः। रण्डायौवनभञ्जनवीरः कीर्तनपतने मल्लशरीरः'—इति वैरागिमङ्गले। ७१२

वलीकः पुं.– क्ली. [वलते आवृणोति भित्त्यादिकम्। 'अलीकादयश्च' इति साधुः] नीध्रं; पटलान्तम्। ३०३

वल्कम् क्ली. [वलते इति, वल संवरणे+'शूकवल्कोल्काः' इति कप्रत्ययान्तो निपातितः] वल्कलः; 'गुणवत्सुतरोपितश्रियः परिणामे हि दिलीपवंशजाः। पदवीं तरुवल्कवाससां प्रयताः संयमिनां प्रपेदिरे'—इति रघौ (८।११)। शल्कः; खण्डं; पुं. पट्टिकालोध्रः। १८३

वल्कलः पुं.– क्ली. [वलतेसंवृणोतीति, वल्+बाहुलकात् कलन्] वृक्षत्वक्; त्वक्; वल्कं; त्वचा; त्वचं; चोचं; चोलकं; शल्कं; छल्लकं; छल्लिः; छल्ली; चीतकम्; 'तौ तु पूर्वेण कालेन तपोयुक्तौ बभूवतुः। क्षुत्पिपासापरिश्रान्तौ जटावल्कलधारिणौ'—इति महाभारते (१।१५६।२)। क्ली. त्वचम्; 'दालचीनी' इति भाषा। १८३

वल्गा स्त्री. [वल्ग्यतेऽश्वोऽनयेति। वल्ग्+करणे घञ्+टाप्] दन्तालिका; अवक्षेपणी; रश्मिः; कुशा; 'लगाम' इति भाषा। 'वल्गान्मध्येऽश्ववाराणां नृत्यते वाग्रवाजिना। वल्गाङ्केनोद्वहल्लम्बं शिरसा वामपाणिना' —इति राजतरङ्गिण्याम् (५।३४७)। ४४२

वल्गुः त्रि. [वलते इति, वल् संवरणे संचरणे च+'वलेर्गुक् च' इति उ प्रत्ययः गुगागमश्च धातोः] सुन्दरः; 'तद्वल्गुना युगपदुन्मिषितेन तावत् सद्यः परस्परतुलामधिरोहतां द्वे। पस्पन्दमानपरुषेतरतारमन्तः चक्षुस्तव प्रचलितभ्रमरं च पद्मम्'—इति रघौ (५।६८)। पुं छागः। ४४२

वल्भनम् क्ली. [वल्भ भक्षणे+भावे ल्युट्] भक्षणम्। ३२५

वल्मिकः पुं.– क्ली. [पृषोदरादित्वेन ह्रस्वमध्यः] वल्मीकः; वाल्मीकिः; वल्मीकूटं; वामलूरः। ६४४

वल्मीकः पुं.– क्ली. [वलते इति, वल् संवरणे+'अलीकादयश्च' इत्यत्र वलतेर्मुडागमश्चेति उज्ज्वलदत्तोक्त्या कीकनन्तो निपातितः] उपदीकाकीटकृतमृत्तिकास्तूपः; वामलूरः; नाकुः; वल्मिकः; वाल्मीकः; वाल्मिकिः; वाल्मीकिः; पुगलकः; शक्रमूर्द्धा; कृमिशैलकः; 'वल्मीकाग्रात् प्रभवति धनुःखण्डमाखण्डलस्य'—इति मेघदूते (१५)। पुं. [वल्मीकः उपदीकाकृतमृत्तिकास्तूपः उत्पत्तिकारणत्वेनास्त्यस्येति, अच्] वाल्मीकिमुनिः; रोगविशेषः; 'क्षौद्रसर्षपवल्मीकमृत्तिकासंयुतं भिषक्। गाढमुत्सादनं कुर्यादूरुस्तम्भे प्रलेपनम्।' 'शस्त्रेणोत्कृत्य वल्मीकं क्षाराग्निभ्यां प्रसाधयेत्। विधानेनार्वुदोक्तेन शोधयित्वा च रोपयेत्'—इति भावप्रकाशः। ६४४

वल्मीकिः पुं.– वल्मीकः; वामलूरः। ६४४

वल्लः पुं. [वल्लते संवृणोतीति। वल्ल्+अच्] निष्पावकः। गुञ्जात्रयपरिमाणम्; 'वल्लस्त्रिगुञ्जो धरणञ्च तेऽष्टौ'—इति लीलावती। द्विगुञ्जा; 'विषटङ्कवलिम्लेच्छदन्तीबीजं क्रमाद् बहु। दन्त्यम्बुमर्दितं यामं रसस्त्रिपुरभैरवः। वल्लं व्योषेण चार्द्रस्य रसे च सितया सह'—इति रसेन्द्रसारसंग्रहः। सार्द्धगुञ्जा; 'गोधूमद्वितयोन्मिता तु कथिता गुञ्जा तथा सार्द्धया। वल्लो वल्लचतुष्टयेन भिषजां माषा मतस्तच्चतुः'—इति राजनिर्घण्टः। ५८४

वल्लकी स्त्री. [वल्लते इति। वल्ल्+क्वुन्, गौरादित्वाद् ङीष्] घोषवती; वीणा; विपञ्ची; परिवादिनी; माघे (१।९)। सल्लकीवृक्षः; 'वल्लकी गजभक्ष्या च सुवहा सुरभीरसा। महेरुणा कुन्दुरुकी सल्लकी च बहुस्रवा'—इति भावप्रकाशः। ९६

वल्लभः त्रि. [वल्ल् संवरणे+'रासिवल्लिभ्यां च' इति अभच्] दयितः; चक्षुष्यः; सुभगः; प्रियः; 'पुत्रेभ्यश्च नमस्कुर्याद् वल्लभेभ्यश्च भूपतेः'—इति कामन्दकीयनीतिसारे (५।१९)। अध्यक्षः; गवाध्यक्षः; पुं. दयितः; सल्लक्षणतुरङ्गमः; जह्नुवंशीयवलाकाश्वस्य पुत्रः; स च कुशिकस्य पिता। 'वल्लभस्तस्य तनयः साक्षाद्धर्म इवापरः। कुशिकस्तस्य तनयः सहस्राक्षसमद्युतिः'—इति महाभारते (१३।४।५)। ३६७

वल्लरम् क्ली. [वल्लते इति, वल्ल्+अरन्] मञ्जरिः; कृष्णागुरुः; गहनं; कुञ्जम्। १८५

वल्लरिः, वल्लरी स्त्री. [वल्ल+क्विप्। वल्लं संवरणं ऋच्छतीति। ऋ+'अच इः', कृदिकारादिति वा ङीष्] मञ्जरी; 'अनपायिनि संश्रयद्रुमे गजभग्ने पतनाय वल्लरी'—इति कुमारे (४।३१)। चित्रमूलं; मेथिका; 'मेथिका मिथिनिर्मेथिर्दीपनी बहुपुत्रिका। बोधिनी बहुबीजा च जातिगन्धफला तथा। वल्लरी चैत्र कामन्था

मिश्रपुष्पा च करवी। कुञ्चिका बहुपर्णी च पित्त-जिद्वायुनुद्द्विधा'—इति भावप्रकाशः। १८५

वल्लवः त्रि. [वल्लमानन्दं वातीति। वल्ल+वा+क] आरालिकः; सूपकारः; सूदः; बल्लवः। ४३१

वल्लवः पुं. [वल्ल् प्रीतौ सौत्रः+ततो घञ्, वल्लं प्रीतिं वातीति, वा+क] गोपः; आभीरः; महाशूद्रः; गोपालः; बल्लवः; 'द्रुततरकरदक्षाः क्षिप्तवैशाखशैले, दधति दधनि क्षीरानारवान् वारिणीव। शशिनमिव सुरौघाः सारमुद्धर्तुमेते, कलसिमुदधिगुर्वीं वल्लवा लोडयन्ति'—इति माघे (११।८)। भीमसेनः; विराट-नगरे छद्मवासकाले एवास्य एतन्नाम आसीत्। 'पौरोगवो ब्रुवाणोऽहं वल्लवो नाम नामतः। उपस्थास्यामि राजानं विराटमिति मे मतिः'—इति महाभारते (४।२।१)। ५८७

वल्लिः स्त्री. [वल्लते संवृणोति वृक्षादीनिति। वल्ल्+'सर्वधातुभ्य इन्' इतीन्] लता; प्रतानिनी; वल्ली; प्रततिः; व्रततिः; 'वल्लिर्वेष्टयते वृक्षं सर्वतश्चैव गच्छति'—इति महाभारते (१२।१८४।१३)। पृथिवी। १८०

वल्ली स्त्री. [वल्लि+ङीष्] लता; सा च भूमिप्रसारा वर्षमात्रस्थायिनी कूष्माण्डाद्या। 'विदारीसारिवारजनी-गुडूच्योऽजशृङ्गी चेति वल्लीसंज्ञाः'—इति सुश्रुतः। अजमोदा; कर्वतिका; चव्यम्। १८०

बल्वजः पुं. [वल्वे पर्वते जातः इति। वल्व+जन्+ड] तृणविशेषः; मौञ्जीपत्रा; बल्वजः; उलपः; दृढपत्री; तृणक्षुः; तृणवल्वजा; दृढतृणा; पानीयाश्रा; दृढक्षुरा; 'मुञ्जालाभे तु कर्तव्याः कुशाश्मान्तकवल्वजैः। त्रिवृता ग्रन्थिनैकेन त्रिभिः पञ्चभिरेव वा'—इति मनुः (२।४३)। १९१

वशा स्त्री. [वष्टि कामयते, वश् कान्तौ+अच्+टाप्। 'वशिरण्योरुपसंख्यानम्' इति अप् वा] करिणी; हस्तिनी; 'असिञ्चयत् स ताभिश्च वशाभिरिव वारणः' —इति कथासरित्सागरे (६।११०)। बन्ध्या (२६९); 'वन्ध्याऽपुत्रासु चैवं स्याद्रक्षणं निष्कुलासु च। पतिव्रतासु च स्त्रीषु विधवास्वातुरासु च'—इति मनुः (८।२८)। (४८२) योषा; युवती; सुता; स्त्रीगवी; बन्ध्या-गवी; 'त्वं नो असि भारताग्ने वशाभिरुक्षभिः'—इति ऋग्वेदे (२।७।५)। 'वशाभिर्वन्ध्याभिर्गोभिः'—इति तद्भाष्ये सायणः। वशीभूता; 'सप्तभिर्मन्त्रितं कृत्वा करवीरस्य पुष्पकम्। स्त्रीणामग्रे भ्रामयेच्च क्षणाद्वै सा वशा भवेत्'—इति गारुडे १८३ अध्याये। २२५

वशीकरणम् क्ली. [वश्+कृ+भावे ल्युट्। अभूततद्भावे च्वि] मणिमन्त्रौषधैरायत्तीकरणं; वशक्रिया; संवदनं; मूलीकर्म; कार्मणं; संवननम्। ७१६

वषट्कृतम् त्रि. [वषडिति मन्त्रेण कृतम्] हुतम्; 'अग्नौ हुतं तु यद्धव्यं तत् स्यात्त्रिषु वषट्कृतम्'—इति शब्दरत्नावली। ४१७

वष्कयणी, वष्कयिणी स्त्री. [वष्कय एकहायनो वत्सः तेन नीयते इति। नी+क्विप्। गौरादित्वाद् ङीष्] चिरप्रसूता गौः; प्रौढवत्सा गौः। २६९

वसतिः स्त्री. [वस् निवासे+'वहिवस्यर्तिभ्यश्चित्' इति भावाधिकरणादौ अति] यामिनी; निशा; रात्रिः; जैनाश्रमः (८०७); वासः; 'धीरं वारिधरस्य वारि किरतः श्रुत्वा निशीथे ध्वनिं, दीर्घोच्छ्वासमुदश्रुणा विरहिणीं बालां चिरं ध्यायता। अध्वन्येन विमुक्त-कण्ठकरुणं रात्रौ तथा क्रन्दितं, ग्रामीणैर्व्रजतो जनस्य वसतिर्ग्रामे निषिद्धा यथा'—इति अमरुशतके (११)। निकेतनम्; 'रजनीतिमिरावगुण्ठिते पुरमार्गे घनशब्द-विक्लवाः। वसतिं प्रिय! कामिनां प्रियाः त्वदृते प्रापयितुं क ईश्वरः'—इति कुमारे (४।११)। १०८

वसती स्त्री. [वसति+कृदिकारादिति ङीष्] यामिनी; रात्रिः; वासः; निकेतनम्। १०८

वसन्तः पुं. [वसन्त्यत्र मदनोत्सवा इति। वस्+'तॄभूवहि-वसिभासिसाधिगडिमण्डिजिनन्दिभ्यश्च' इति झच्] ऋतुविशेषः; चैत्रवैशाखमासद्वयात्मकः; पुष्पसमयः; सुरभिः; मधुः; माधवः; फल्गुः; ऋतुराजः; पुष्पमासः; पिकानन्दः; कान्तः; कामसखः; 'द्रुमाः सपुष्पाः सलिलं सपद्मं, स्त्रियः सकामाः पवनः सुगन्धिः। सुखाः प्रदोषा दिवसाश्च रम्याः सर्वं प्रिये! चारुतरं वसन्ते'—इति ऋतुसंहारे (६।२)। अतिसारः; षड्रागान्तर्गत-द्वितीयरागः; 'रागाः षडेव तु प्रोक्ता रागिण्यस्त्रिंशदेव तु। भैरवोऽथ वसन्तश्च नटनारायणस्तथा।' ११३

वसन्तजा स्त्री. [वसन्ते वसन्तकाले जाता इति। वसन्त+जन्+ड] रागिणीभेदः; वासन्तीलता; वसन्त-कालोद्भवे त्रि.। १०२ अ

वसन्तसखः पुं. [वसन्तस्य सखा । 'राजाहःसखिभ्यष्टच्' इति टच्] कामदेवः।
वसा स्त्री. [वसति वस्ते वा । वस् निवासे, वस् आच्छादने वा+अच् । स्त्रियां टाप्] मांसप्रभवधातुविशेषः; मेदः; वपा; 'शुद्धमांसस्य यः स्नेहः सा वसा परिकीर्तिता'—इति सुश्रुतः। मांसरोहिणी । ६३५
वसुः पुं. [वसतीति, वस्+उ] रश्मिः; किरणः; अनलः (६२); क्ली. [वसत्यनेनेति, वस्+'शृस्वृस्निहीति'उ] धनम् (८०); 'बलमार्तभयोपशान्तये विदुषां सत्कृतये बहुश्रुतम् । वसु तस्य विभोर्न केवलं गुणवत्तापि परप्रयोजनम्'—इति रघौ (८।३१) । रत्नं (१७६); (८५०) अग्निः; अनलः; वनं; रश्मिः; रत्नं; गणदेवताविशेषः; त्रिदशविशेषः; 'धरो ध्रुवश्च सोमश्च विष्णुश्चैवानिलोऽनलः । प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ क्रमात् स्मृताः'—इति भरतः। 'आपो ध्रुवश्च सोमश्च धरश्चैवानिलोऽनलः। प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ प्रकीर्तिताः'—इति महाभारते। क्ली. वृद्धौषधं; श्यामं; हाटकं; जलं; पुं. वकवृक्षः; योक्त्रं; राजा; धनाधिपः; साधुः; पीतमुद्गः; वृक्षः; पुष्करिणी; शिवः; सूर्यः; विष्णुः; 'वसुप्रदो वासुदेवो वसुर्वसुमना हरिः'—इति महाभारते (१३।१४९।८७) । 'वसन्ति भूतान्यत्र, एतेषु स्वयमपीति वसुः'—इति तत्र शङ्करभाष्यम्। अष्टसंख्या; 'युग्मानि कृतभूतानि षण्मनोर्वसुरन्ध्रयोः'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। वकुलः; बृहद्बोलसरी; 'शिवमल्ली पाशुपत एकाष्ठीलो वुको वसुः'—इति भावप्रकाशः। स्त्री. [वस्+उ] दीप्तिः; वृद्धौषधं; दक्षस्य कन्याविशेषः; सा तु धर्मस्य पत्नीनामन्यतमा; त्रि. मधुरं; शुष्कम् । ३९
वसुदेवः पुं. [वसुना धनेन दीव्यतीति । वसु+दिव्+अच्] श्रीकृष्णजनकः; आनकदुन्दुभिः; शूरः; कृष्णपिता; 'कश्यपो वसुदेवश्च देवमाता च देवकी। पूर्वपुण्यफलेनैव संप्राप श्रीहरिं सुतम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते। कलियुगराजविशेषस्य देवभूतेरमात्यः; 'शुङ्गं हत्वा देवभूतिं कण्वोऽमात्यस्तु कामिनम्। स्वयं करिष्यते राज्यं वसुदेवो महामतिः'—इति भागवते (१२।१।१८) । [वसवो देवता यस्य] धनिष्ठानक्षत्रे क्ली.। वसुदेवता; 'घोरा श्रवणस्त्वाष्ट्रं वसुदेवं वारुणं चैव'—इति वराहसंहितायाम् (७।११) । २७
वसुधा स्त्री. [वसूनि रत्नानि दधाति धारयतीति। वसु+धा+क] पृथ्वी; पृथिवी; 'राज्ये सारं वसुधा वसुधायां पुरं पुरे सौधम्। सौधे तल्पं तल्पे वराङ्गना सर्वस्वम्'—इति साहित्यदर्पणे । [वसु धनं दधाति दत्ते इति। धा+क्विप्] धनदातरि त्रि. । 'वसुश्चेतिष्ठो वसुधातमश्च'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (२७।१५) । 'वसुधातमः वसूनां धनानां दातृतमः क्विबन्तात् तमप्'—इति तद्भाष्ये महीधरः । १५६
वसुन्धरा स्त्री. [वसूनि धारयतीति। वसु+धृ+'संज्ञायां भृतृवृजिधारिसहितपिदमः' इति खच्, 'खचि ह्रस्वः' इति ह्रस्वः, 'अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम्' इति मुम्] पृथिवी; पृथ्वी; भूमिः; 'निरीक्ष्य तं तदा देवी पातालतलमागतम्। तुष्टाव प्रणता भूत्वा भक्तिनम्रा वसुन्धरा'—इति विष्णुपुराणे (१।४।११) । श्वफल्कस्य कन्या; 'विश्रुता शाम्बमहिषी कन्या चास्य वसुन्धरा। रूपयौवन सम्पन्नासर्वसत्त्वमनोहरा'—इति हरिवंशे (३८।५३)। पुं. प्लक्षद्वीपस्य वर्षपुरुषभेदः; 'प्लक्षवर्षपुरुषाः श्रुतिधरवीर्यधरवसुन्धरेषुन्धरसंज्ञा भगवन्तं वेदमयं सोममात्मानं वेदेन यजन्ते'—इति भागवते (५।२०।११)। १५७
वसुमती स्त्री. [वसूनि धनरत्नानि सन्त्यस्या इति। वसु+मतुप्+ङीप्] पृथिवी; 'तदलं तदपायचिन्तया विपदुत्पत्तिमतामुपस्थिता। वसुधेयमवेक्ष्यतां त्वया वसुमत्या हि नृपाः कलत्रिणः'—इति रघौ (८।८३) । १५६
वस्कयनी स्त्री. [वस्कयः एकहायनो वत्सः तेन नीयते इति। वस्कय+नी+क्विप्+ङीष्] चिरप्रसूता गौः; वष्कयणी; 'वस्कयन्यास्त्रिदोषघ्नं तर्पणं बलकृत् पयः'—इति भावप्रकाशः। २६९
वस्तः पुं. [वस्त्यते यज्ञार्थं वध्यते इति। वस्त+कर्मणि घञ्] छागः; बस्तः; छगलः; छगः; बर्करः; 'यस्य वस्तसमो गन्धो गात्रे शवसमोऽपि वा। तस्यार्द्धमासिकं ज्ञेयं योगिनो नृप ! जीवितम्'—इति मार्कण्डेय (४३।१२) । २७७
वस्तिः स्त्री. ['वस्+वसेस्तिः' इति ति] वस्त्रस्य दशा; अमरमते बहुवचनान्तोऽयम् पुंस्यपि; 'स्त्रियां बहुत्वे वस्त्रस्य दशाः स्युर्वस्तयो द्वयोः'—इत्यमरः

(२।६।११४) । पु.—स्त्री. [वसति मूत्रादिकमत्र वस्+'वसेस्तिः' इति ति] नाभेरधोभागः; [वस्ते आच्छादयति मूत्राशयपुटम्] मूत्राशयपुटः । ५५१

वस्त्रम् क्ली. [वस्यते आच्छाद्यतेऽनेनेति । वस् आच्छादने+'सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्' इति ष्ट्रन्] परिधानाद्युपयुक्त-कार्पासादिनिर्मितवस्तु; आच्छादनं; वासः; चेलं; वसनम्; अंशुकं; सिचयः; प्रोतः; लक्तकः; कर्पटः; शाटकः; कशिपु; वासनं; द्विचयं; प्रोतं; छादं; वासम्; 'सूर्ये चाल्पधनं व्रणः शशिदिने क्लेशः सदा भूमिजे, वस्त्राणां बहुता बुधे सुरगुरौ विद्यागमः सम्पदः । नानाभोगयुतः प्रमोदशयनं दिव्याङ्गना भार्गवे, शौरे स्युः खलु रोगशोककलहा वस्त्रे धृते नूतने'—इति कर्मलोचनम् । ५४८

वस्त्रस्यान्तः पुं.—वस्त्रान्तः; अञ्चलः; वस्त्राञ्चलः । ५५०

वहः पुं. [वहति युगमनेनेति । वह्+'गोचरसञ्चरेति' घ प्रत्ययेन साधुः] वृषस्कन्धप्रदेशः; 'यस्य बाहू समौ दीर्घौ ज्याघातकठिनत्वचौ । दक्षिणे चैव सव्ये च गवामिव वहः कृतः'—इति महाभारते (४।२।२१) । [वहतीति । वह्+अच्] घोटकः; वायुः; पन्थाः; नदः; वाहके त्रि. । 'आकाशात्तु विकुर्वाणात् सर्व-गन्धवहः शुचिः'— इति मनुः (१।७६) । २६७

वह्निः पुं. [वहति धरति हव्यं देवार्थमिति । वह्+'वहिश्रिश्रुयुद्रुग्लाहात्वरिभ्यो नित्' इति नि] अग्निः; जातवेदाः; अनलः; 'जृम्भकोद्दीपकश्चैव विभ्रमभ्रमशोभनाः । आवसथ्याहव-नीयौ दक्षिणाग्निस्तथैव च । अन्वाहार्यो गार्हपत्य इत्येते दश वह्नयः ।' चित्रकः; भल्लातकः; 'मञ्जिष्ठाक्षौ वासको देवदारु पथ्यावह्नी व्योषधात्रीविडङ्गम्'—इति सुश्रुतः । निम्बूकः; रेफः; दैत्यविशेषः; 'बाणः कार्तस्वरो वह्निर्विश्वदंष्ट्रोऽथनैर्ऋतिः'—इति महाभारते (१२।-२२७।५०) । तुर्वसुपुत्रः; 'तुर्वसोस्तु सुतो वह्निर्गोभानु-स्तस्य चात्मजः'—इति हरिवंशे (३२।११७) । कुकुरपुत्रः; 'कुकुरस्य सुतो वह्निर्विलोमा तनयस्ततः'—इति भागवते (९।२४।१९) । मित्रविन्दागर्भजातः कृष्णस्यपुत्रविशेषः; 'महांशः पावनो वह्निर्मित्रविन्दा-त्मजाः क्षुधिः'—इति भागवते (१०।६१।१६) । ६२

वह्निरेताः [स्] पुं. [वह्नौ रेतो यस्य । अग्निनिषिक्त-वीर्यत्वादेवास्य तथात्वम्] शिवः; स्वर्णम् । १२

वा अव्य. [वा+क्विप्] विकल्पः; 'धर्मार्थौ यत्र न स्यातां शुश्रूषा वापि तद्विधा । तत्र विद्या न वप्तव्या शुभं बीजमिवोषरे'—इति मनुः (२।११२) । उपमा; इवार्थे; 'व्योमपश्चिमकलास्थितेन्दु वा, पङ्कशेषमिव घर्मपल्वलम्'—इति रघौ (१९।५१) । वितर्कः; 'किं ते हिडिम्ब एतैर्वा सुखसुप्तैः प्रबोधितैः । मामा-सादय दुर्बुद्धे तरसा त्वं नराशन !'—इति महाभारते (१।१५४।२३) । पादपूरणम्; 'देवासुरगणान् वापि सगन्धर्वोरगान् भुवि । यैरमित्रान् प्रसह्याजौ वशीकृत्य जयिष्यसि'—इति रामायणे (१।२५।३) । समुच्चयः; एवार्थः; 'सुता न यूयं किमु तस्य राज्ञः सुयोधनं वा न गुणैरतीताः'—इति किराते (३।१३) । ८७३

वाः क्ली. [वारयतीति, वृञ्+णिच्+क्विप्] जलं; सलिलं; नीरम्; 'गन्धर्वपालिभिरनुद्रुत आविशद् वाः श्रान्तो गजीभिरिभराडिव भिन्नसेतुः'—इति भागवते (१०।३३।२२) । ६४८

वाक् [च्] स्त्री. [उच्यतेऽसौ,अनयावेति । वच्+'क्विब् वचिप्रच्छीति' क्विप्, दीर्घोऽसम्प्रसारणं च] सरस्वती; गीः; वाणी; 'प्रणम्य वाचं निःशेषपदार्थोद्योतदीपिकाम् । बृहत्कथायाः सारस्य संग्रहं रचयाम्यहम्'—इति कथा-सरित्सागरे (१।३) । वाक्यम्; वचनम्; 'अहिंसयैव भूतानां कार्यं श्रेयोऽनुशासनम् । वाक् चैव मधुरा श्लक्ष्णा प्रयोज्या धर्ममिच्छता'—इति मनुः (२।१५९) । ८

वाक्यम् क्ली. [उच्यते इति, वच्+ण्यत्, 'चजोः कु घिण्ण्यतोः' इति कुत्वं, शब्दसंज्ञात्वात् 'वचोऽशब्द-संज्ञायाम्' इति निषेधो न] पदसमुदायः; तिङन्तचयः; सुबन्तचयः; कारकान्विता क्रिया; 'न हिंस्यात् सर्व-भूतानि नानृतं च वदेत् क्वचित् । नाहितं नाप्रियं वाक्यं न स्तेनः स्यात्कदाचन ।' १४१

वागुरा स्त्री. [वातीति, वा गतिबन्धनयोः+'मद्गुराद-यश्च' इति उरच् प्रत्ययेन गुगागमेन च साधुः] मृगबन्धनार्थजालविशेषः; मृगबन्धनी; मृगजालिका । ५९७

वागुरिकः पुं. [वागुरया चरतीति । वागुरा+'चरति' इति ठक्] व्याधः; वागुरया मृगादीन् बध्नाति यः; मृगयुः; लुब्धकः; 'श्वगणिवागुरिकैः प्रथमास्थितं व्यप-गतानलदस्यु विवेश सः'—इति रघौ (९।५३) । ५९६

वागुसः पुं.– महामत्स्यविशेषः। ६५९

वाचंयमः पुं. [वाचो वाक्याद् यच्छति विरमतीति। वाच्+यम् उपरमे+'वाचि यमो व्रते' इति खच्। 'वाचंयमपुरन्दरौ च' इति अमन्तत्वं निपात्यते] मुनिः; मौनव्रती; 'वाचंयमोऽप्रसाहः स यदि स्त्रियं पश्येत् समृद्धं कर्मेति विद्यात्'–इति छान्दोग्ये (५।२।८)। ४१२

वाचस्पतिः पुं. [वाचः पतिः, 'षष्ठ्याः पतिपुत्रेति' षष्ठ्या अलुक्, विसर्गस्य सः] वचसाम्पतिः; बृहस्पतिः; 'वाचस्पतिरुवाचेदं प्राञ्जलिर्जलजासनम्'—इति कुमारे (२।३०)। शब्दप्रतिपालके त्रि.। 'वाचस्पते निषेधे मान्यथा मदवरं वदान्'—इति ऋग्वेदे (१०।१६६।३) 'हे वाचस्पते वाचः शब्दस्य पालयितर्देव'—इति तद्भाष्ये सायणः। ४७

वाजः पुं. [वजति अनेन। वज् गतौ+'हलश्चेति' घञ्, निष्ठायां सेट्त्वान्न कुत्वम्] पिच्छं; पक्षः; वेगः (४४३); (४६८) शरपक्षः; पत्रपाली; 'विचित्रवाजैर्निशितैः शिलीमुखैः'—इति भागवते (१०।५९।१६)। निस्वनः; मुनिः; क्ली. घृतम्; 'वाचस्पतिर्वाजं नः स्वदतु'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (९।१)। यज्ञः; अन्नम्; 'यो देवो देवतमो जायमानो महो वाजेभिर्महद्भिश्च शुष्मैः'—इति ऋग्वेदे (४।२२।३)। 'वाजेभिरन्नैः'–इति तद्भाष्ये सायणः। वारि; संग्रामः; 'अस्मभ्यं चर्षणीसहं सस्निं वाजेषु दुष्टुरम्'—इति ऋग्वेदे (५।३५।१)। बलम्; 'वनेषु व्यन्तरिक्षं ततान वाजमर्वत्सु पय उस्रियासु'—इति ऋग्वेदे(५।८५।२)। २३९

वाजिनी स्त्री. [वाजो वेगः अस्ति अस्याः। वाज+इनि, ङीप्] घोटकी; वडवा; वामी; प्रसूका; आर्तवी; अश्वगन्धा; उषा। ४४०

वाजिशाला स्त्री. [वाजिनां शाला गृहम्] घोटकगृहं; मन्दुरा; 'अस्तबल' 'घुड़साल' इति भाषा। २९६

वाजी [न्] पुं. [वाजः पक्षो वेगो वास्त्यस्येति। वाज+इनि] पक्षी; (४३६) घोटकः; 'शतैस्तमक्ष्णामनिमेषवृत्तिभिर्हरिं विदित्वा हरिभिश्च वाजिभिः'–इति रघौ (३।४३)। [वाजः पक्षोऽस्त्यस्येति] बाणः; वासकः; [वजति गच्छतीति, वज्+णिनि] त्रि. चलनवान्; 'वाजी वहन्वाजिनं जातवेदो देवानां वक्षिप्रियमासधस्थम्'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (२९।१)। 'वजति वाजी, वज् गतौ, चलनवान्'—इति तद्भाष्ये महीधरः। [वाजमन्नमस्यास्तीति] अन्नवान्; 'तमीमहे नमसा वाजिनं बृहत्'–इति ऋग्वेदे (३।२।१४)। 'वाजिनम् अन्नवन्तम्' —इति तद्भाष्ये सायणः। [वाजः पक्षोऽस्त्यस्येति] पक्षविशिष्टः; 'मुष्णंस्तेज उपानीतस्तार्क्ष्येण स्तोत्रवाजिना'—इति भागवते (४।७।१६)। २३८

वाञ्छा स्त्री. [वाञ्छनमिति, वाछि इच्छायाम्, गुरोश्चेत्य, टाप्] आत्मवृत्तिगुणविशेषः; इच्छा; काङ्क्षा; स्पृहा; ईहा; तृट्; लिप्सा; मनोरथः; कामः; अभिलाषः; तर्षः; आकाङ्क्षा; कान्तिः; अग्रचयः; दोहदः; अभिलाषः; अभिलाषा; रुक्; रुचिः; मतिः; दोहलं; छन्दः। 'सन्दिदेश च यद्यस्ति वाञ्छा मच्छिष्यतां प्रति। त्वत्पुत्र्यास्तदिहैवैषा भवता प्रेष्यतामिति'— इति कथासरित्सागरे (११।२७)। ७१०

वाञ्छितम् त्रि. [वाञ्छ्+क्त] अभिलषितम्; 'अविच्छेदं पठेद्धीमान् ध्यात्वा देवीं सरस्वतीम्। शुक्लाम्बरधरां देवीं शुक्लाभरणभूषिताम्। वाञ्छितं फलमाप्नोति स लोके नात्र संशयः। इति ब्रह्मा स्वयं प्राह सरस्वत्याः स्तवं शुभम्'—इति तन्त्रसारः। ५३५

वाञ्छितोऽर्थः पुं.— मनोरथः। ५३५

वाटः पुं. [वट्यते वेष्टयते इति। वट्+घञ्] आवेष्टकः; वृतिः; मार्गः; वृतिस्थानम्; 'मुखं निःसरणे वाटे प्राचीनावेष्टकौ वृतिः'—इति हेमचन्द्रः। वास्तु; मण्डपः; 'छत्रं सदण्डं सजलं कमण्डलुं विवेश बिभ्रद्धयमेधवाटम्'—इति भागवते (८।१८।२३)। ['वटस्येदमिति, वट्+अण्] वटसम्बन्धिनि त्रि.। 'ब्राह्मणो बैल्वपालाशौ क्षत्रियो वाटखादिरौ। पैलव्यौदुम्बुरौ वैश्यो दण्डानर्हन्ति धर्मतः'—इति मनुः (२।४५)। क्ली. वरण्डः; गात्रभेदः; 'वाटः पथि वृतौ वाटं वरण्डे गात्रभेदयोः'—इति हैमः। २९०

वाडवः पुं. [वडवाया अपत्यं, वडवानां समूहो वा, अण्] वडवानलः; और्वः; समुद्रवह्निः; वडवाग्निः; (३९१) ब्राह्मणः; विप्रः। ७०

वाडवेयः पुं. [वडवा+ढक्] अनड्वान्; वृषभः; वृषः; ऋषभः; बलीवर्दः। २६३

वाढम् अव्य. [वह्+क्त, ढत्वादयः] अवश्यं; भृशम्। ८३६

वाणः पुं. [वण् शब्दे+घञ्] नीला झिण्टी; नीलझिण्टी। २०५

वाणिज्यम् क्ली. [वणिजां कर्म, ब्राह्मणादित्वात् ष्यञ्, वृद्धिः] वणिज्यं; वणिज्या। ७६१

वाणिनी स्त्री. [वण् शब्दे+णिनि+ङीप्] विदग्धा; मत्ता; मत्तस्त्री। 'यस्मिन् महीं शासति वाणिनीनां निद्रां विहारार्थपथे गतानाम्। वातोऽपि नास्रंसय-दंशुकानि कोलम्बयेदाहरणाय हस्तम्'—इति रघौ (६।७५)। नर्तकी; षोडशाक्षरच्छन्दोविशेषः; 'नज-भजरैर्यदा भवति वाणिनी गयुक्तैः।' ४८९

वाणी स्त्री. [वण् शब्दे, इञ्, वाणि+ङीप्] सरस्वती; वाक्; वचनम्; 'चक्षुःपूतं न्यसेत् पादं वस्त्रपूतं पिबेज्जलम्। सत्यपूतां वदेद्वाणीं बुद्धिपूतं च चिन्तयेत्'—इति मार्कण्डेये (४१।४)। वपनम्। ८

वातः पुं. [वातीति, वा+क्त] पञ्चभूतान्तर्गतचतुर्थ-भूतम्; गन्धवहः; वायुः; पवमानः; महाबलः; पवनः; स्पर्शनः; गन्धवाहः; मरुत्; आशुगः; श्वसनः; मातरिश्वाः; नभस्वान्; मारुतः; अनिलः; समीरणः; जगत्प्राणः; समीरः; सदागतिः; जीवनः; पृषदश्वः; तरस्वी; प्रभञ्जनः; प्रधावनः; अनवस्थानः; धूननः; मोटनः; खगः; रोगभेदः; 'पलद्वयं सैन्धवं च शुण्ठी चित्रकपञ्चकम्। पञ्चप्रस्थं त्वारनालं तैलप्रस्थं पचेत्ततः। ग्रहगृह्यप्लवप्लीहसर्ववातविकारनुत्'—इति गारुडे। ७५

वातकी [न्] त्रि. [वातोऽतिशयितोऽस्त्यस्येति। वात+'वातातीसाराभ्यां कुक् च' इति इनि, कुक् च] वात-रोगी; वातव्याधियुक्तः। ६०६

वातप्रमीः पुं.–स्त्री. [वातं प्रमिमीते वाताभिमुखं गच्छ-तीति। वात+प्र+मा माने+'वातप्रमीः' इति ईप्रत्ययेन साधुः] वातमृगः; हरिणभेदः; वातायुः; हरिणः; नकुलः; अश्वः; वायुवद्वेगगामिनि त्रि.। 'सिन्धोरिव प्राध्वणे शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः'—इति ऋग्वेदे (४।५८।७)। २३०

वातरोगी [न्] त्रि. [वातरोगोऽस्त्यस्येति। वातरोग+इनि] वातरोगयुक्तः; वातकी; वातसहः। ६०६

वातसहः त्रि. [वातं वातजनितरोगं सहते। वात+सह्+अच्] अत्यन्तवायुयुक्तः; वातरोगी; वातकी; 'वातासहो वातसहो वातूलो वातुलोऽपि च'—इति शब्दरत्नावली। ६०६

वातायनम् क्ली. [वातस्य अयनं गमनागमनमार्गः] गवाक्षः; 'लीलागारस्य बहिः सखीषु चरणातिथौ मयि प्रियया। प्रकटीकृतः प्रसादो दत्त्वा वातायने व्यजनम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५१०)। पुं. [वातस्येव अयनं गतिर्यस्य] घोटकः। ३०४

वात्या स्त्री. [वातानां समूहः। वात+'पाशादिभ्यो यः' इति य] वातसमूहः; 'आसञ्जिनी च वाताली स्याद्वात्या वातमण्डली'—इति त्रिकाण्डशेषः। 'ववौ वायुः सुदुस्पर्शः फेत्कारानीरयन् मुहुः। उन्मूलयन्नगपतीन् वात्यानीको रजोध्वजः'—इति भागवते (३।१७।५)। ७७

वादनदण्डः पुं. [वादनस्य वाद्यस्य दण्डः यष्टिका] वाद्य-यष्टिका; कोणः। ९८

वाद्यम् क्ली. [वद्+णिच्+कर्मणि यत्] वादयन्ति ध्वनयन्ति यत्; वादित्रम्; आतोद्यम्; 'ततं वीणादिकं वाद्यमानद्धं मुरजादिकम्। वंश्यादिकं तु शुषिरं कांस्य-तालादिकं घनम्'—इत्यमरः। ९३

वाद्यभाण्डमुखम् क्ली. [वाद्यभाण्डानां मृदङ्गभेरी-दुन्दुभ्यादीनां मुखम् ऊर्ध्वभागः] पुष्करः; वादित्र-वक्त्रम्। ८५८

वाध्रीणसः पुं.– खड्गी; गण्डकः। २२७

वाध्रीनसः पुं.–वाध्रीणसः; खड्गी; गण्डकः। २२७

वानम् त्रि. [वै शोषणे+क्त। ओदितश्चेति नत्वम्] शुष्कफलं; शुष्कम्। [वनस्येदमिति, वन+अण्] वनसम्बन्धि; क्ली. [वा+ल्युट्] स्यूतिकर्म; कटः; गतिः; सुरुङ्गा; सौरभः; गोक्षीरजं; तवक्षीरं; जल-सप्लुतवातोर्मिः। १८९

वानप्रस्थः पुं. [वनप्रस्थे भवः, अण्] वैखानसः; तृतीया-श्रमः; पुत्रमुत्पाद्य वनवासं कृत्वा अकृष्टपच्यफलादि भक्षयित्वा ईश्वराराधनं करोति यः सः; मधूकवृक्षः; 'मधूको गुडपुष्पः स्यान्मधुपुष्पो मधुश्रवः। वानप्रस्थो मधुष्ठीलो जलजेत्रमधूलकः'—इति भावप्रकाशः। पलाश-वृक्षः; 'वातपोथः पलाशः स्याद्वानप्रस्थश्च किंशुकः। राजादनो ब्रह्मवृक्षो हस्तिकर्णो दलोऽपरः'—इति वैद्यक-रत्नमालायाम्। ३९४

वानरः पुं.– स्त्री. [वा विकल्पितो नरः; यद्वा वानं वने

भवं फलादिकं रातीति। वान+रा+क] पशुविशेषः; कपिः; प्लवङ्गः; प्लवगः; शाखामृगः; वलीमुखः; मर्कटः; कीशः; वनौकाः; मर्कः; प्लवः; प्रवङ्गः; प्रवगः; प्लवङ्गमः; प्रवङ्गमः; गोलाङ्गूलः; कपित्यास्यः; दधिशोणः; हरिः; तरुमृगः; नगाटनः; झम्पी; झम्पारुः; कलिप्रियः; किखिः; शालावृकः। 'हत्वा हंसं बलाकां च बकं बर्हिणमेव च। वानरं श्येनभासौ च स्पर्शयेद् ब्राह्मणाय गाम्'—इति मनुः (११।१३६)। २३१

वानस्पत्यः पुं. [वनस्पतौ भवः। वनस्पति+'दित्यदित्यादित्येति' ण्य] पुष्पजातफलवद्वृक्षः; स तु आम्रजम्ब्वादिः। वनस्पतीनां समूहः; वनस्पतिसमूहे क्ली.। वनस्पतिजाते त्रि.। 'अद्रिरसि वानस्पत्यः'–इति वाजसनेयसंहितायाम् (१।१४)। 'हे उदूखल त्वं यद्यपि वानस्पत्यः दारुमयस्तथापि दृढत्वाद् अद्रिरसि'–इति तद्भाष्ये महीधरः। 'तस्य सप्तसु यज्ञेषु सर्वमासीद्धिरण्मयम्। वानस्पत्यं च भौमं च यद् द्रव्यं नियतं मखे। चषालयूपचमसाः स्थाल्यः पात्र्यः स्रुचः स्रुवाः'—इति महाभारते (३।१२१।४)। १७९

वानीरः पुं. [वायति शुष्यति इति वै+क्विप्। वा शुष्यत् नीरं यस्मात्।] वेतसवृक्षः; वञ्जुलः; वृत्तपुष्पः; शाखालः; जलवेतसः; व्याधिघातः; परिव्याधः; नादेयः; जलसम्भवः; शीतः; विदुलः; वेतसः। २०१

वापिः स्त्री. [उप्यते पद्मादिकमस्यामिति। वप्+'वसिवपियजिराजिव्रजीति' इञ्] वापी; दीर्घिका। ६८४

वापी स्त्री. [वापि+कृदिकारादिति ङीष्] आहावः; दीर्घिका; कूपः। [उप्यते पद्मादिकम् अस्याम्] 'वाप्यां वापिरपि स्मृता'—इति द्विरूपकोषः। 'यो वापीमथवा कूपं देशे वारिविवर्जिते। खानयेत् स दिवं याति विन्दौ विन्दौ शतं समाः'—इति वायुपुराणे। ६८४

वामः त्रि. [वमति वम्यते वेति। वम् उद्गिरणे+'ज्वलितिकसन्तेभ्यो णः' इति ण, मित्संज्ञायां वा इत्यनुवृत्तेर्न वृद्धिबाधनम्। यद्वा वातीति। वा गतिगन्धनयोः+'अर्तिस्तुसुहुसृधृक्षिक्षुभायावापदीति' मन्] चारुः; सुषमः; सव्यः (७५६); 'भालं वह्निशिखाङ्कितं दधदधिश्रोत्रं वहन् सम्भृत-क्रीडत्कुण्डलिजृम्भितं जलधिजच्छायाच्छकण्ठच्छविः। वक्षो बिभ्रदहीनकञ्चुकचितं यद्वाङ्गनार्द्धस्य वो, भागः पुङ्गवलक्षणोऽस्तु यशसे वामोऽथवा दक्षिणः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।२)। (८०८) प्रतिकूलम्; प्रतीपः; विरुद्धः; 'दुःखेनोपार्ज्यन्ते पाल्यन्ते प्रत्यहं च लाल्यन्ते। वामाः स्त्रियो विमूढैरुपभुञ्जाना सुखं विगुणम्'—इति वैराग्यशतके (५३)। वल्गुः; सुन्दरः; 'स दक्षिणं तूणमुखेन वामं व्यापारयन् हस्तमलक्ष्यताजौ। आकर्णकृष्टा सकृदस्य योद्धुः मौर्वीव बाणान् सुषुवे रिपुघ्नान्'—इति रघौ (७।५७)। अधमः; वननीयः; 'अभि नो नर्यं वसु वीरं प्रयतदक्षिणं वामं गृहपतिं नय'—इति ऋग्वेदे (६।५३।२) 'वामं वननीयम्'–इति तद्भाष्ये सायणः। सायणः। वननीयं याचनीयं, वनु याचने इत्यस्य प्रयोगो ज्ञातव्यः। पुं. [वातीति। वा गतिगन्धनयोः+मन्] हरः; शिवः; महादेवः; 'प्रजापतेस्ते श्वशुरस्य साम्प्रतं निर्यापितो यज्ञमहोत्सवः किल। वयं च तत्राभिसराम वाम ! ते यद्यर्थितामी विबुधा व्रजन्ति'—इति भागवते (४।३।८)। कामदेवः; पयोधरः; श्रीकृष्णस्य भद्रागर्भोत्पन्नः पुत्रविशेषः; संग्रामजित् बृहत्सेनः शूरप्रहरणोऽरिजित्। जयः सुभद्रो भद्राया वाम आयुश्च सत्यकः'—इति भागवते (१०।६१।१७)। क्ली. धनं; वास्तूकम्। ६८९

वामदेवः पुं. [वामः श्रेष्ठः सुन्दरः, फणिकपालादिना विपरीतो वा देवः] शिवः; शङ्करः; महादेवः; उमापतिः; 'वामदेवश्च वामश्च प्राग्दक्षिणश्च वामनः'–इति महाभारते (१३।१७।७०)। ऋषिप्रभेदः; मुनिविशेषः; 'आगामिप्रतिबन्धश्च वामदेवे समीरितः। एकेन जन्मना क्षीणो भरतस्य त्रिजन्मभिः'—इति पञ्चदश्याम् (९।४५)। १२

वामनः पुं. [वामयति वमति वा मदमिति। वम्+णिच्+ल्यु] दक्षिणदिग्गजः; कुमुदाञ्जनः; 'तदुपरिष्टाच्चतसृष्वाशास्वात्मयोनिनाखिलजगद्गुरुणाविनिवेशिता ये द्विरदतपयः ऋषभः पुष्करचूडो वामनोऽपराजित इति सकललोकस्थितिहेतवः'—इति भागवते (५।२०।३९)। ह्रस्वः; रघौ (१९।५१)। 'प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव वामनः'—इति रघौ (१।३)। अङ्कोटवृक्षः; हरिः; 'उपेन्द्रो वामनः प्रांशुरमोघः शुचिरूर्जितः'—इति महाभारते (१३।१४९।३०)। शिवः;

'वामदेवश्च वामश्च प्राग्दक्षश्च वामनः'—इति महाभारते (१३।१७।८०)। अश्वभेदः; 'एकेनाङ्गेन हीनेन भिन्नेन च विशेषतः। यमजं वाजिनं विन्द्याद्वामनं वामनाकृतिम्'—इति अश्ववैद्यके (३।१५३)। दनोः पुत्रभेदः; 'अयोमुखः शम्बरश्च कपिलो वामनस्तथा'—इति हरिवंशे (३।८२)। भुजङ्गभेदः; 'कालियो मणिनागश्च नागश्चापूरणस्तथा। नागस्तथा पिञ्जरक एलापत्रोऽथ वामनः'—इति महाभारते (१।३५।६)। गरुडवंशीयपक्षिविशेषः; 'पङ्कजिद्वज्रनिष्कुम्भो वैनतेयोऽथ वामनः। वातवेगो दिशाचक्षुर्निमिषोऽनिमिषस्तथा—इति महाभारते (५।१०१।१०)। हिरण्यगर्भस्य सुतभेदः; 'गार्गः पृथुस्तथैवाग्रयो जान्यो वामन एव च'—इति हरिवंशे (२५३।६)। क्रौञ्चद्वीपस्य पर्वतविशेषः; 'क्रौञ्चद्वीपे महाराज! क्रौञ्चो नाम महागिरिः। क्रौञ्चात्परो वामनको वामनादन्धकारकः। अन्धकारात्परो राजन् मैनाकः पर्वतोत्तमः। मैनाकात्परतो राजन्! गोविन्दो गिरिरुत्तमः'—इति महाभारते (६।१२।१७-१८)। तीर्थभेदः; 'ततस्तु वामनं कृत्वा सर्वपापप्रमोचनम्'—इति महाभारते (३।८४।१२२)। महापुराणान्यतमः; 'अयुतं वामनाख्यं च वायव्यं षट् शतानि च। चतुर्विंशतिसंख्यातः सहस्राणि तु शौनक!'—इति देवीभागवते (१।३।७)। विष्णोः पञ्चमावतारः; 'मत्स्यः कूर्मो वराहश्च नरसिंहश्च वामनः। रामो रामश्च कृष्णश्च क्रमाद् द्वौ बुद्धकल्किनौ।' 'वामनो बुद्धिदो दाता द्रव्यस्थो वामनः स्वयम्। वामनं च प्रतिग्राही तेन मे वामने रतिः। वामनः प्रतिगृह्णाति वामनोऽपि ददाति च। वामनस्तारको द्वाभ्यां तेनेदं वामने नमः—इति श्रीहरिभक्तिविलासे १५ विलासः। १०४

वामनः त्रि. [वामयतीति। वम्+णिच्+ल्यु] अतिक्षुद्रः; न्यङ्; नीचः; खर्वः; ह्रस्वः; अनुच्चः; अनायतः; 'विधिस्तुषारर्तुदिनानि कर्तुं कर्तुं विनिर्माति तदन्तभिन्नैः। ज्योत्स्नीर्न चेत् तत्प्रतिमा इमा वा कथं कथं तानि च वामनानि'—इति नैषधे (२२।५७)। ६११

वामनेत्रा स्त्री. [वामे सुन्दरे अराले वा नेत्रे यस्याः] नारी; वामलोचना; वामा; अङ्गना; वामाक्षी; **क्ली.** [वर्णन्यासे वामं नेत्रं स्पृश्यं येन] दीर्घेकारः; 'ईस्त्रिमूर्तिर्महामाया लोलाक्षी वामलोचनम्'—इति वर्णाभिधानम्। 'ईशो वैश्वानरस्थः शशधरविलसद्वामनेत्रेण युक्तो, बीजन्ते द्वन्द्वमन्यद्विगलितचिकुरे कालिके ये जपन्ति'—इति श्यामास्तोत्रम्। ४८१

वामलूरः पुं. [वामं यथा तथा लुनातीति। वाम+लू+बाहुलकाद् रक्] वम्रीकूटः; नाकुः; वल्मीकः; 'जटाटवीकोटरान्तः कृतनीडाण्डजाश्च ये। प्ररूढवामलूराङ्गाः स्नायुनद्धास्थिसञ्चयाः'—इति काशीखण्डे (२२।१९)। ६४४

वामा स्त्री. [वमति सौन्दर्यम् इति। वम्+ज्वलादित्वाद् ण+टाप्। यद्वा वमति प्रतिकूलमेवार्थं कथयति। यद्वा वामः कामोऽस्त्यस्या इति। 'अर्श आदिभ्योऽच्' इत्यच्] सामान्या स्त्री; 'श्लिष्यति कामपि चुम्बति कामपि कामपि रमयति वामाम्। पश्यति सस्मितचारुपरामपरामनुगच्छति रामाम्'—इति गीतगोविन्दे (१।४६)। दुर्गा; 'वामं विरुद्धरूपं तु विपरीतं तु गीयते। वामेन सुखदा देवी वामा तेन मता बुधैः'—इति देवीपुराणे ४५ अध्यायः। लक्ष्मीः; सरस्वती। ४८१

वामी स्त्री. [वमति गर्भम्। वम्+'ज्वलितिकषन्तेभ्यो णः' इति ण, गौरादित्वाद् ङीष्। 'अनाचमिकमिवमीनाम्' इति न 'नोदात्तेति' वृद्धिबाधकता] अर्वती; वडवा; वाजिनी; 'अथोष्ट्रवामीशतवाहितार्थं प्रजेश्वरं प्रीतमना महर्षिः'—इति रघौ (५।३२)। शृगाली; रासभी; करभी। ४४०

वायसः पुं. [वयते इति। वय् गतौ+'वयश्च' इति असच् स च णित्] अरिष्टः; करटः; कागः; काकः; बलिपुष्टः; सकृत्प्रजः; एकदृक्; बलिभुक्; ध्वाङ्क्षः; चिरञ्जीवी; अगरुवृक्षः; श्रीवासः; वायससम्बन्धिनि त्रि.। 'स काकं पञ्जरे बद्ध्वा विषयं क्षेमदर्शिनः। सर्वं पर्यचरद्युक्तः प्रवृत्त्यर्थी पुनः पुनः। अर्धाध्वं वायसीं विद्यां शंसन्ति मम वायसाः। अनागतमतीतं च यच्च सम्प्रति वर्तते'—इति महाभारते (१२।८२।७-८)। २४५

वायुः पुं. [वातीति, वा गतिगन्धनयोः+'कृवापाजिमिस्वदिसाध्यशूभ्य उण्' इति उण्, 'आतो युक् चिण्कृतोः' इति युक्] उत्तरपश्चिमदिक्कोणाधिपतिः; पञ्चभूतान्तर्गतभूतभेदः; श्वसनः; स्पर्शनः; मातरिश्वा; सदागतिः; पृषदश्वः; गन्धवहः; गन्धवाहः; अनिलः;

आशुगः; समीरः; मारुतः; मरुत्; जगत्प्राणः; समीरणः; नभस्वान्; वातः; पवनः; पवमानः; प्रभञ्जनः; अजगत्प्राणः; खश्वासः; वाहः; धूलिध्वजः; फणिप्रियः; वातिः; नभःप्राणः; भोगिकान्तः; स्वकम्पनः; अक्षतिः; कम्पलक्ष्मा; शसीनिः; आवकः; हरिः; वासः; सुखाशः; मृगवाहनः; सारः; चञ्चलः; विहगः; प्रकम्पनः; नभःस्वरः; निश्वासकः; स्तनूनः; पृषतांपतिः; 'वायोरनियमस्पर्शो वादस्थानं स्वतन्त्रता। बलं शैघ्रं च मोक्षश्च कर्म चेष्टात्मता भवः'—इति महाभारते। असुरविशेषः; 'दीर्घजिह्वोऽर्कनयनो मृदुचापो मृदुप्रियः। वायुर्मरिष्टो नमुचिः शम्बरो विजयो महान्'—इति हरिवंशे (२।८५)। ७५

वायुसखः पुं. [वायोः सखा, 'राजाहःसखिभ्यष्टच्' इति टच्] अग्निः; वह्निः। ६२

वायुसखा [खि] पुं. [वायुः सखा यस्येति विग्रहे समासान्ताभावपक्षे टजभावात् 'अनङ् सौ' इति अनङादेशः] अग्निः; वह्निः; अनलः। ६२

वारः पुं. [वारयति व्रियते वेति। वृ+णिच्+अच्। वृ+घञ् वा] समूहः; (७५०) अवसरः; क्षणः; 'एकैकश्चापि पुरुषस्तत्प्रयच्छति भोजनम्। स वारो बहुभिर्वर्षैर्भवत्यसुतरो नरैः'—इति महाभारते (१।१६।७)। सूर्यादिवासरः; द्वारः; हरः; कुब्जवृक्षः; बालः; 'वि यो भरिभ्रदोषधीषु जिह्वा मत्यो न रथ्यो दोधवीति वारान्'—इति ऋग्वेदे (२।४।४)। वरणीये त्रि.। ६८७

वारणः पुं. [वारयति परबलमिति । वृ+णिच्+ल्यु] हस्ती; करी; गजः; 'इयं च तेऽन्या पुरतो विडम्बना, यदूढया वारणराजहार्यया। विलोक्य वृद्धोक्षमधिष्ठितं त्वया, महाजनः स्मेरमुखो भविष्यति'—इति कुमारे (५।७०)। वारबाणः; कञ्चुकः; कवचः; बाणवारः; 'वारणा यस्य सौवर्णाः पृष्ठे भासन्ति दंशिताः। सुपार्श्व सुग्रहं चैव कस्यैतद्धनुरुत्तमम्'—इति महाभारते (४।४०।२)। [वारि जले रणति चरतीति। वार्+रण्+अच्] जलजाते त्रि.। 'ततो वैभाण्डकिस्तस्य वारणं शक्रवारणम्। अवतारयामास महीं मन्त्रैर्वाहनमुत्तमम्'—इति हरिवंशे (३१।४८)। 'वारि जले रणति चरतीति वारणः समुद्रोद्भवः'–इति तट्टीकायां नीलकण्ठः। २१४

वारमुख्या स्त्री. [वारे वेश्यासमूहे मुख्या श्रेष्ठा] जनैः सत्कृता वेश्या; 'वारमुख्याश्च शतशो यानैस्तद्दर्शनोत्सुकाः'—इति भागवते (१।११।२०)। ४९०

वारयिता पुं. [वारयति दुर्नीतिरिति। वृ+णिच्, तृच्] पतिः। ४९७

वारला स्त्री. [वारं लातीति। वार+ला+क] वरटा; वरला; हंसकान्ता; हंसी। २५१

वारवाणः पुं.– क्ली. [वारं वारणीयं वाणं यस्मात्] वारबाणः; कञ्चुकः; कवचः (७९५); 'पीनकुचतटनिपीडदलद्वारबाणमुरसा लिलिङ्गिरे'—इति माघे (१५।८४)। ५५२

वारस्त्री स्त्री. [वारस्य जनसमूहस्य स्त्री.। यद्वा वारे अवसरे सति यस्य कस्यापि स्त्री] वेश्या; गणिका; रूपाजीवा; पण्याङ्गना; क्षुद्रा; वारमुख्या; वाराङ्गना; वारमारी; वारवाणिः; वारवाणी; वारविलासिनी; वारसुन्दरी; वारवनिता। ४९०

वाराणसी स्त्री. [वरणा च असी च, तयोर्नद्योरदूरे भवा। 'अदूरभवश्च' इत्यण्+ङीप्। पृषोदरादित्वात् साधुः] मोक्षदपुरीविशेषः; वारणसी; काशी; शिवपुरी; जित्वरी; तपःस्थली; वरणसी; तीर्थराजी; काशिका; 'वरणासी च नद्यौ द्वे पुण्ये पापहरे उभे। तयोरन्तर्गता या तु सैषा वाराणसी स्मृता।' २८७

वारि क्ली. [वारयति तृषामिति। वृ+णिच्+'वसिवपियजिराजिव्रजिसदिहनिवाशिवादिवारिभ्य इञ्' इति इञ्] जलम्; 'न कुर्वीत वृथा चेष्टां न वार्यञ्जलिना पिबेत्। नोत्सङ्गे भक्षयेत्भक्ष्यान् न जातु स्यात्कुतूहली'—इति मनुः (४।६३)। ६४८

वारिः स्त्री. [वारयतीति, वारि+इञ्] गजबन्धनभूमिः; 'संहारविक्षेपलघुक्रियेण, हस्तेन तीराभिमुखः सशब्दम्। बभौ स भिन्दन् बृहतस्तरङ्गान् वार्यर्गलाभङ्ग इव प्रवृत्तः'—इति रघौ (५।४५)। वाक्; सरस्वती; गजबन्धनी; वन्दिः; वरणीये त्रि.। 'बहुभ्य आ सङ्गतेभ्य एष मे देवेषु वसु वार्यायक्ष्यते'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (२१।६१)। 'एषोऽग्निर्मे मह्यं देवेषु वारि वरीतुं योग्यं वारि वरणीयं वसु धनमायक्ष्यते'—इति तद्भाष्ये महीधरः। २२३

वारी स्त्री. [दार्यतेऽनयेति। वृ+णिच्+'वसिवपिवजि-

राजिव्रजिसदिहनिराशिवादिवारिभ्य इञ्' इति इञ्, वा ङीष्] गजबन्धनी; रघुवंशे (४।४५)। कलसी। २२३

वारुणी स्त्री. [वरुणस्येयम्। 'तस्येदम्' इत्यण्+ङीप्] पश्चिमदिक्; 'वद विधुन्तुदमालि मदीरितैस्त्यजसि किं द्विजराजधिया विधुम्। किमु दिवं पुनरेति यदीदृशः पतित एष निषेव्य हि वारुणीम्'—इति नैषधे (४।६०)। सुरा (३३०); 'अज्ञानाद्वारुणीं पीत्वा संस्कारेणैव शुध्यति। मतिपूर्वमनिर्देश्यं प्राणान्तिकमिति स्थितिः'–इति मनुः (११।१४७)। मदिराधिष्ठात्री देवी; 'किमेतदिति सिद्धानां दिवि चिन्तयतां ततः। बभूव वारुणी देवी मद्यघूर्णितलोचना'—इति विष्णुपुराणे (१।९।९३)। 'वारुणी मद्याधिष्ठात्री देवी'—इति तट्टीकाया श्रीधरस्वामी। वरुणपत्नी; वारुणीवल्लभ-शब्ददर्शनात्। 'यस्यामास्ते स वरुणो वारुण्या च समन्वितः। दिव्यरत्नाम्बरधरो दिव्याभरणभूषितः'–इति महाभारते (२।९।६)। नदीविशेषः; 'पूर्वेण वारुणीं तीर्त्वा कुरुक्षेत्रे सरस्वतीम्। सरांसि च प्रफुल्लानि नदीश्च विमलोदकाः—इति रामायणे (२।७०।१२)। विद्याविशेषः; 'आनन्देन जातानि जीवन्ति आनन्दं प्रत्यभिसंविशन्तीति सैषा भार्गवी वारुणी विद्या'—इति तैत्तिरीयोपनिषदि (३।६)। अश्वानां छायाविशेषः; 'शुद्धस्फटिकसङ्काशा सुस्निग्धा चैव वारुणी'–इति अश्ववैद्यके। शतभिषानक्षत्रं; गण्डदूर्वा; इन्द्रवारुणी; दूर्वा; शतभिषानक्षत्रयुक्तचैत्रकृष्णत्रयोदशी; 'वारुणेन समायुक्ता मधौ कृष्णा त्रयोदशी। गङ्गायां यदि लभ्येत कोटिसूर्यग्रहैः समा। शनिवारसमायुक्ता सा महावारुणी स्मृता। शुभयोगसमायुक्ता शनौ शतभिषा यदि। महामहेति विख्याता त्रिकोटिकुलमुद्धरेत्।' १०१

वार्तः त्रि. [वृत्तिराहारः अस्त्यस्येति। 'प्रज्ञाश्रद्धार्चावृत्तिभ्यो णः' इति ण] निरामयः; वृत्तिशाली; क्ली. असारम्; आरोग्यम्। ३८०

वार्ता स्त्री. [वृत्तिरस्याम् अस्तीति। 'प्रज्ञाश्रद्धार्चावृत्तिभ्यो णः' इति ण+टाप्] उदन्तः; 'यावद्वित्तोपार्जनसक्तः तावन्निजपरिवारो रक्तः। तदनु च जरया जर्जरदेहे वार्तां कोऽपि न पृच्छति गेहे'—इति मोहमुद्गरे (८)। वृत्तिः (५७०); जनश्रुतिः; वार्तिङ्गणः; वार्ताकुः; वार्ताकः; वार्ताकी; हिङ्गुली; सिंही; भण्टाकी; दुष्प्रधर्षिणी; शाकविल्वः; राजकूष्माण्डः; वार्तिकः; वातिगमः; वृन्ताकः; वङ्गणः; अङ्गणः; कण्टवृन्ताकी; कण्टालुः; कण्टपत्रिका; निद्रालुः; मांसकफना; वृन्ताकी; महोटिका; चित्रफला; कण्टकिनी; महती; कट्फला; मिश्रवर्णफला; नीलफला; रक्तफला; शाकश्रेष्ठा; वृन्तफला; नृपप्रियफला; 'बैंगन, भंटा, भाँटा' इति भाषा। दुर्गा; 'पश्वादिपालनाद्देवी कृषिकर्मान्तिकारणात्। वर्तनाद्धारणाद्वापि वार्ता सा एव गीयते'—इति देवीपुराणे ४५ अध्यायः। कृष्णादि; 'वैश्यस्तु कृतसंस्कारः कृत्वा दारपरिग्रहम्। वार्तायां नित्ययुक्तः स्यात्पशूनां चैव रक्षणे'—इति मनुः (९।३२६)। 'कृषिवाणिज्यगोरक्षाः कुसीदं तुर्यमुच्यते। वार्ता चतुर्विधा तत्र वयं गोवृत्तयोऽनिशम्'—इति भागवते (१०।२४।२१)। १४६

वार्तिकः पुं. [वृत्तिं वेदेति। वृत्ति+उक्थादित्वात् ठक्] चरः; 'दुर्गतो वार्तिकजनो लोभात्कि नाम नाचरेत्'—इति कथासरित्सागरे (३४।७६)। प्रवृत्तिज्ञः; [वार्ता कृष्यादिस्तत्र साधुः, ठक्] वैश्यः। [वार्ते आरोग्ये साधुरिति। ठक्] वर्तिकपक्षी; वार्ताकी; [वृत्तौ साधुरिति, वृत्ति+'कथादिभ्यष्ठक्' इति ठक्] सूत्रवृत्तिनिपुणे त्रि.। क्ली. [वृत्तिर्ग्रन्थसूत्रवृतिः। तत्र साधुः। वृत्ति+'कथादिभ्यष्ठक्' इति ठक्] उक्तानुक्तदुरुक्तार्थव्यक्तीकारकग्रन्थः; 'उक्तानुक्तदुरुक्तार्थचिन्ताकारि तु वार्तिकम्'—इति हेमचन्द्रः। ८४०

वार्धुषिकः पुं. [वृद्ध्यर्थं द्रव्यं वृद्धिः तां प्रयच्छतीति। 'प्रयच्छति गर्ह्यम्' इति ठक्, 'वृद्धेर्वृधुषिभावो वक्तव्यः' इति वृधुषिभावः] वृद्धिजीवी; लभ्यभुक्; कुसीदकः; वृद्ध्याजीवः; वार्धुषिः; कुसीदः; कुसीदिकः; 'समर्घं धान्यमादाय महार्घं यः प्रयच्छति। स वै वार्धुषिको नाम हव्यकव्यबहिष्कृतः'—इति स्मृतिः। ५७१

वालः पुं.– केशः, बालः; कचः; चिकुरः; शिरसिजः; शिरोरुहः। ५३०

वालकः पुं.– क्ली. [वलते, वल् संवरणे, ण्वुल्] ह्रीवेरः; गन्धयुक्तद्रव्यविशेषः; 'त्वक्कुष्ठरेणुनलिकास्पृक्कारसतगरवालकैस्तुल्यैः। केशरपत्रविमिश्रैर्नरपतियोग्यं शिरःस्नानम्'—इति बृहत्संहितायाम् (७७।५)। पारि-

हार्यः; अङ्गुरीयके त्रि.। पुं. बालकः। ६२२

वालधिः पुं. [वालाः केशा धीयन्ते अत्र। 'कर्मण्यधिकरणे च' इति कि] बालधिः; बालहस्तः; केशवल्लाङ्गूलम्। ४४१

वालहस्तः पुं. [वालानां हस्तः समूहः;, वालाः हस्त इव वा, दंशादिवारकत्वात्] बालधिः। ४४१

वालुका स्त्री. [बल् प्राणने, बाहुलकादुण्, संज्ञायां कन्, टाप् च। पृषोदरादित्वेन वत्वम्] सिकता; बालुका। ६७०

वालुकी स्त्री. [वालुक+ङीष्] बालुकी; कर्कटी। २०९

वाल्मीकः पुं. [वल्मीके भवः स्थित इत्यर्थः। 'तत्र भवः' इत्यण्] वाल्मीकिः। ४१२

वाल्मीकिः पुं. [वल्मीके भवः, 'अत इञ्' इतीञ्] मैत्रावरुणः। ४१२

वाशिता स्त्री. [वाश्+क्त+टाप्] वाशिता; स्त्रीमात्रं; करिणी। ४०१

वाष्पः पुं. [ओवै शोषणे, यद्वा बाधते इति, बाधृ लोडने+'खष्पशिल्पशष्पवाष्परूपपर्पतल्पाः' इति पप्रत्यये धस्य षत्वं निपातनात्] उष्मा; 'तस्याप्रतिद्वन्द्वभवाद्विषादात् सद्यो विमुक्तं मुखमावभासे। निश्वासवाष्पापगमात् प्रपन्नः प्रसादमात्मीयमिवात्मदर्शः'—इति रघौ (७।६८)। अश्रुः (५।१९); 'प्राङ्गण एव कदा मां श्लिष्यन्ती मन्युकम्पिकुचकलसा। अंशनिषण्णमुखी सा स्नपयति वाष्पेण मम पृष्ठम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३९४)। ६७

वासः [स्] क्ली. [वस्यतेऽनेनेति। वस् आच्छादने+'वसेर्णित्' इत्यसुन् स च णित्] वस्त्रम्; 'उपानहौ च वासश्च धृतमन्यैर्न धारयेत्'—इति मनुः (४।६६)। पत्रकम्। ५४८

वासतेयी स्त्री. [वसतौ साधुरिति। वसति+'पथ्यतिथिवसतिस्वपतेर्ढञ्' इति ढञ्, ङीप्] रात्रिः; रजनी; निशा; वसतिसाधुमात्रे त्रि.। 'वनेषु वासतेयेषु निवसन् पर्णसंस्तरः। शय्योत्थाय मृगान् विध्यन्नातिथेयो विचक्रमे'—इति भट्टिः (४।८)। १०८

वासना स्त्री. [वासयति कर्मणा योजयति जीवमनांसीति] वस्+णिच्+युच्+टाप्] स्मृतिहेतुः; संस्कारः; भावना; देहात्मबुद्धिजन्यमिथ्यासंस्कारः; दुर्गा; 'वसत्यदृष्टा सर्वेषु भूतेष्वन्तर्हिताय च। धातुर्वस निवासेति वासना तेन सा स्मृता'—इति देवीपुराणे ४५ अध्यायः। अर्कस्य भार्या; 'अर्कस्य वासना भार्या पुत्रास्तर्षादयः स्मृताः'—इति भागवते (६।६।१३)। ज्ञानं; प्रत्याशा; 'शाब्दस्य हि ब्रह्मण एष पन्था यन्नामभिर्ध्यायति धीरपार्थैः'—इति भागवते (२।२।२)। ७८०

वासन्तिकः त्रि. [वसन्तमधीते वेद वा इति। वसन्त+'वसन्तादिभ्यष्ठक्' इति ठक्] विदूषको; केलिकिलः; वैहासिकः; 'वासन्तिकः केलिकिलो वैहासिकः विदूषकः'—इति हेमचन्द्रः। [वसन्तस्येदमिति। 'वसन्ताच्च' इति ठञ्] वसन्तसम्बन्धिनि त्रि.। 'सप्रणवशिरस्त्रिपदां सावित्रीं ग्रैष्मवासन्तिकान् मासानधीयानमप्यसमवेतरूपं ग्राहयामास'—इति भागवते (५।९।५)। ४३२

वासन्ती स्त्री. [वसन्तस्येयमिति। वसन्त+अण्+ङीष्] माधवी; पुष्पलताविशेषः; प्रहसन्ती; वसन्तजा; महाजातिः; शीतसहा; मधुबहुला; वसन्तदूती; यूथी; 'मालतीमल्लिकापद्मकरवीराश्च पुष्पिताः। केतक्यः सिन्धुवाराश्च वासन्त्यश्च सुपुष्पिताः'—इति रामायणे (४।१।७७)। पाटला; कामोत्सवः; चैत्रावलिः; चैत्रावली; मधूत्सवः; सुवसन्तः; काममहः; कर्दनी; गणिकारी; नवमल्लिका; नवमालिका; 'नेपाली कथिता तज्ज्ञैः सप्तला नवमालिका। वासन्ती शीतला लघ्वी तिक्ता दोषत्रयास्रजित्'—इति भावप्रकाशः। चतुर्दशाक्षरवृत्तिविशेषः। २०८

वासरः पुं.–क्ली. [वासयतीति, वस्+णिच्]+'अर्तिकमिभ्रमिचमिदेविवासिभ्यश्चित्' इति अर] दिवसः; वाश्रः; 'प्रवृत्ते चावयोर्वादे प्रयाताः सप्त वासराः'—इति कथासरित्सागरे (४।२३)। पुं. नागप्रभेदः; सर्पविशेषः। १०६

वासवः पुं. [वसुरेव। प्रज्ञाद्यण्] इन्द्रः; मघवा; 'सहस्राक्षनियोगात् स पार्थः शक्रासनं गतः। अध्यक्रामदमेयात्मा द्वितीय इव वासवः'—इति महाभारते (३।४३।२२)। क्ली. धनिष्ठानक्षत्रम्। ५२

वासा स्त्री. [वासयतीति, वस्+णिच्+अच्+टाप्] वासकः; वृक्षविशेषः; वैद्यमाता; सिंही; वासिका; वृषः; अटरुषः; सिंहास्यः; वाजिदन्तकः; वाशा; वाशिका; वृशः; अटरूषः; वाशकः; वासः; वाजी; वैद्यसिंही; मातृसिंही; वासका; सिंहपर्णी; सिंहिका;

भिषङ्माता; वसादनी; सिंहमुखी; कण्ठीरवी; शितकर्णी; वाजिदन्ती; नासा; पञ्चमुखी; सिंहपत्री; मृगेन्द्राणी; 'वासको वासिका वासा भिषङ्माता सिंहिका। सिंहास्यो वाजिदन्तः स्यादाटरुषोऽटरूषकः। आटरूषो वृषो नाम्ना सिंहपर्णश्च स स्मृतः। वासको वासकृत् सर्वः कफपित्ताम्लनाशनः। तिक्तस्तुवरको हृद्यो लघुः शीतस्तृडर्तिहृत्। श्वासकासज्वरच्छर्दिमोहकुष्ठ-क्षयापहः'—इति भावप्रकाशः। 'वासायां विद्यमानायामाशायां जीवितस्य च। रक्तपित्ती क्षयी कासी किमर्थमवसीदति'—इति वैद्यके। १९८

वासागारम् क्ली. [वासाय वासस्य वा अगारम्] वासगृहं; भोगगृहं; कन्याटः; पल्याटः; निष्कुटः। २९५

वासिता स्त्री. [वासयतीति, वस् निवासे +णिच्+क्त+टाप्] स्त्रीमात्रं; करिणी; हस्तिनी। ४८१

वासुदेवः पुं. [वसुदेवस्यापत्यमिति। वसुदेव+'ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च' इति अण्। यद्वा सर्वत्रासौ वसत्यात्मरूपेण विश्वम्भरत्वादिति। वस्+बाहुलकाद् उण् वासुः। वासुश्चासौ देवश्चेति कर्मधारयः] श्रीकृष्णः; वसुदेवभूः; सव्यः; सुभद्रः; वासुभद्रः; षडङ्गजित्; षड्बिन्दुः; प्रश्निश्रृङ्गः; प्रश्निभद्रः; गदाग्रजः; मार्जः; बभ्रुः; लोहिताक्षः; परमाण्वङ्गकः; 'सर्वत्रासौ समस्तं च वसत्यत्रेति वैयतः। ततः स वासुदेवेति विद्वद्भिः परिगीयते।' 'सर्वाणि तत्र भूतानि वसन्ति परमात्मनि। भूतेष्वपि च सर्वात्मा वासुदेवस्ततः स्मृतः। खाण्डिक्यजनकायाह पृष्टः केशिध्वजः पुरा। नामव्याख्यामनन्तस्य वासुदेवस्य तत्त्वतः। भूतेषु वसते सोऽन्तर्वसन्त्यत्र च तानि सत्। धाता विधाता जगतां वासुदेवस्ततः प्रभुः'—इति विष्णुपुराणे। २३

वास्तुः पुं.–क्ली. [वसन्ति प्राणिनो यत्र। वस् निवासे+'वसेरगारे णिच्च' इति तुन्, स च णित्] गृहकरणयोग्यभूमिः; वेश्मभूः; पोतः; वाटी; वाटिका; गृहपोतकः; 'वास्तु संक्षेपतो वक्ष्ये गृहादौ विघ्ननाशनम्। ईशानकोणादारभ्य ह्येकाशीतिपदे त्यजेत्'—इति मात्स्ये। क्ली. शाकविशेषः; वास्तुकं; वास्तूः; वसुकं; वस्तूकं; हिलमोचिका; शाकराजः; राजशाकः; चक्रवर्ती; 'बथुआ' इति भाषा। २९१

वास्तु क्ली. ['अगारे णिच्च' इति वसेस्तुन्] गेहं; गृहम्। २९२

वास्तोष्पतिः पुं. [वास्तोर्गृहक्षेत्रस्य पतिरधिष्ठाता। 'वास्तोष्पतिगृहमेधाच्छ च' इति निपातनाद् अलुक् षत्वञ्च। यद्वा वास्त्वन्तरिक्षं तस्य पतिः पाता विभुत्वेन] इन्द्रः; देवतामात्रम्; 'वास्तोष्पतीनां च गृहैर्वलभीभिश्च निर्मितम्। चातुर्वर्ण्यजनाकीर्णं यदुदेवगृहोल्लसत्'—इति भागवते (१०।५०।५३)। 'किञ्च नगरगृहादौ वास्तोष्पतीनां देवानां च गृहैर्वलभीभिश्चन्द्रमालिकाभिश्च निर्मितम्'—इति तट्टीकायां स्वामी। गृहपालयितरि त्रि.। 'वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान् स्वावेशो अनमीवो भवा नः'—इति ऋग्वेदे (७।५४।१)। 'हे वास्तोष्पते गृहस्य पालयितर्देव त्वम् अस्मान् त्वदीयान् स्तोतृनिति प्रतिजानीहि'—इति तद्भाष्ये सायणः। ५२

वाहः पुं. [उह्यतेऽनेनेति। वह्+करणे घञ्] घोटकः; अश्वः; 'इत्याज्ञप्तः सुमन्त्रोऽपि रथं वाहैरयोजयत्'—इति अध्यात्मरामायणे (२।५।५६)। परिमाणविशेषः; 'पलं प्रकुञ्चकं मुष्टिः कुडवस्तच्चतुष्टयम्। चत्वारः कुडवाः प्रस्थः चतुःप्रस्थमथाढकम्। अष्टाढको भवेद्द्रोणो द्विद्रोणः सूर्प उच्यते। सार्द्धसूर्पो भवेत्खारी द्वे खार्यौ गोण्युदाहृता। तामेव भारं जानीयात् वाहो भारचतुष्टयम्'—इति भरतः। 'चतुराढको द्रोणः, षोडशद्रोणा खारी, विंशतिद्रोणः कुम्भः; दशकुम्भो वाहः'—इति स्वामी। भुजः; वृषः; वायुः; प्रवाहः; 'यत्रार्चिराज्यधूमादिमार्गाविव समागतौ। गङ्गायमुनयोर्वाहौ भातः सुगतये नृणाम्'—इति कथासरित्सागरे (९३।८१)। वाहनं; यानम्; 'तच्छ्रुत्वा तत्र भेकानां राजा वाहसमुत्सुकः। जलादुत्तीर्य तत्पृष्ठमारोहद् गतभीर्मुदा'—इति कथासरित्सागरे (६२।१५७)। ४३६

वाहनम् क्ली. [वहत्यनेनेति। वह्+करणे ल्युट्। 'वाहनमाहितात्' इत्यत्र 'वहतेर्ल्युटि वृद्धिरिहैव सूत्रे निपातनात्] हस्त्यश्वरथदोलादि; यानं; युग्यं; पत्रं; धोरणम्; 'पूर्ववृत्तकथितैः पुराविदः, सानुजः पितृसखस्य राघवः। उह्यमान इव वाहनोचितः, पादचारमपि न व्यभावयत्'—इति रघौ (११।१०)। [वाहयतीति, वह्+स्वार्थे णिच्+ल्यु] वाहके त्रि.। 'स वाहनानां नागानां शीकराम्बुमहाभरैः। शूकरप्रेयसीपृष्ठे स्वयं चक्रे कृषिं नृपः। नागानां वाहना मेघाः शूकरप्रेयसी क्षितिः।

विष्णोः शूकररूपस्य सा हि प्रियतमोच्यते। तस्यां मेघाम्बुभिर्धान्यमुत्पन्नं चेत्किमद्भुतम्'—इति कथासरित्सागरे (१२४।२२०-२२२)। ४४९

वाहसः पुं. [उह्यते इति। वह्+'वहियुभ्यां णित्' इति असच्, स च णित्] अजगरः; सर्पविशेषः; 'त्वाष्ट्राः प्रतिश्रुत्कायै वाहसः'—इति तैत्तिरीयसंहितायाम् (५।५।१४।१)। वारिनिर्याणं; सुनिषण्णकम्। ६४२

वाहिनी स्त्री. [वाहा वाहनानि घोटकादीनि सन्त्यस्यामिति। वाह्+इनि+ङीप्] सेना; 'लक्ष्मणानुचरमेव राघवं नेतुमैच्छदृषिरित्यसौ नृपः। आशिषं प्रयुयुजे न. वाहिनीं सा हि रक्षणविधौ तयोः क्षमा'—इति रघौ (११।६)। [वाहः प्रवाहोऽस्त्यस्या इति] नदी; 'उत्तिष्ठत प्रबुध्यध्वं भद्रमस्तु हि वः सदा। नावः समुपकर्षध्वं तारयिष्याम वाहिनीम्'—इति रामायणे (२।८९।९)। सेनाभेदः; 'एको रथो गजश्चैको नराः पञ्च पदातयः। त्रयश्च तुरगास्तज्ज्ञैः पत्तिरित्यभिधीयते। पत्तिं तु त्रिगुणामेतामाहुः सेनामुखं बुधाः। त्रीणि सेनामुखान्येको गुल्म इत्यभिधीयते। त्रयो गुल्मा गणो नाम वाहिनी तु गणास्त्रयः। स्मृतास्तिस्रस्तु वाहिन्यः पृतनेति विचक्षणैः'—इति महाभारते (१।२।१९-२१)। प्रवाहशीला; 'यमुना च नदी जज्ञे कलिन्दान्तरवाहिनी' —इति मार्कण्डेये (७८।२९)। ४५७

वाहिनीपतिः पुं. [वाहिन्याः सेनायाः पतिः] सेनापतिः; 'प्रवादेनेह मत्स्यानां राजा नाम्नायमुच्यते। अहमेव हि मत्स्यानां राजा वै वाहिनीपतिः'—इति महाभारते (४।२१।९)। [वाहिन्या नद्याः पतिः] समुद्रः। ४३३

वाह्लिकः, वाह्लीकः पुं.– वाह्लिकदेशजातघोटकः; देशविशेषः; वाह्लिकदेशः; कम्बोजः; गन्धर्वविशेषः; प्रतीपपुत्रविशेषः; 'प्रतीपः खलु शैब्यामुपयेमे सुनन्दां नाम तस्यां पुत्रानुत्पादयामास देवापिं शान्तनुं वाह्लीकं चेति'—इति महाभारते (१।९५।४४)। क्ली. कुङ्कुमं; हिङ्गु; तद्देशजाते त्रि.। 'पृष्ठ्यानामपि चाश्वानां वाह्लिकानां जनार्दनः। ददौ शतसहस्राणि कन्याधनमनुत्तमम्'—इति महाभारते (१।२२२।४९)। ४३९

विः पुं.– स्त्री. [वाति गच्छतीति। वा+'वातेर्डिच्च' इति इण्, स च डित्] पक्षी; शकुनः; खगः; अण्डजः; 'के यूय स्थल एव सम्प्रति वयं प्रश्नो विशेषाश्रयः, किं ब्रूते विहगः स वा फणिपतिर्यत्रास्ति सुप्तो हरिः'—इति साहित्यदर्पणे (१०)। अव्य. निग्रहः; पादपूरणं; निश्चयः; असहनं; हेतुः; अव्याप्तिः; विनियोगः; ईषदर्थः; परिभवः; शुद्धम्; अवलम्बनं; विज्ञानं; विशेषः; गतिः; आलम्भः; पालनम्; उपसर्गविशेषः। २३८

विकटः त्रि. [वि+'सम्प्रोदश्च कटच्' इति कटच्] विशालः; 'उत्तरीयविनयात्त्रपमाणा, रुन्धती किल तदीक्षणमार्गम्। आवरिष्ट विकटेन विवोढुर्वक्षसैव कुचमण्डलमन्या'—इति माघे (१०।४२)। श्रेष्ठः (७९४); विकरालः; सुन्दरः; दन्तुरः; 'करालैर्विकटैः कृष्णैः पुरुषैरुद्यतायुधैः। पाषाणैस्ताडितः स्वप्ने सद्यो मृत्युं लभेन्नरः'—इति मार्कण्डेये (४३।२०)। विकृतः; पुं. [विकटति पूयरक्तादिकं वर्षतीति। वि+कट्+पचाद्यच्] विस्फोटकः; साकुरुण्डवृक्षः; धृतराष्ट्रस्य पुत्रविशेषः; 'दुर्मदो दुष्प्रहर्षश्च विवित्सुर्विकटः समः' —इति महाभारते (१।६७।९६)। ७५३

विकत्थनम् क्ली. [विकत्थ्यते इति। वि+कत्थ् श्लाघायाम्+भावे ल्युट्] स्तुतिः; मिथ्याश्लाघा; 'श्लाघा प्रशंसार्थवादः सा तु मिथ्याविकत्थनम्'—इति हेमचन्द्रः। 'शय्यासनाटनविकत्थनभोजनादिष्वैकाह्वयस्य ऋतवानिति विप्रलब्धः'—इति भागवते (१।१५।१९)। [विकत्थते आत्मानमिति। वि+कत्थ्+ल्यु] आत्मश्लाघाकारिणि त्रि.। 'असूयितारं द्वेष्टारं प्रवक्तारं विकत्थनम्। भीमसेननियोगात्ते हन्ताहं कर्णमाहवे' —इति महाभारते (२।७३।३२)। स्त्री. [वि+कत्थ्+णिच्+युच्+टाप्] आत्मश्लाघा; 'शाम्भवोक्तापि शाक्तानां न प्रशस्ता विकत्थना। शरदीयघनध्वानैर्वचोभिः किं भवादृशाम्'—इति विख्यातविजयनाटके (२)। १४५

विकर्तनः पुं. [विशेषेण कर्तनं यस्य। विश्वकर्मयन्त्रखातत्वादस्य तथात्वम्] सूर्यः; भानुः; रविः; आदित्यः; सविता; अर्कवृक्षः। ३५

विकलपाणिकः पुं. [विकलः स्वभावहीनः पाणिर्यस्य,कन्] कुणिः; स्वभावहीनपाणियुक्तः। ६१०

विकलाङ्गः त्रि. [विकलानि अङ्गानि यस्य] स्वभावतो

न्यूनाङ्गः; अपोगण्डः; पोगण्डः; अङ्गहीनकः; 'जनयामास पुत्रौ द्वावरुणं गरुडं तथा। विकलाङ्गोऽरुणस्तत्र भास्करस्य पुरःसरः'—इति महाभारते (१।३१।३४)। ३८७

विकल्पः पुं. [विरुद्धं कल्पनमिति । वि+कॢप्+घञ्] भ्रान्तिः; 'विकल्पोपहतस्त्वं वै दूरदेशमुपागतः। न मे विकल्पसन्देहो निर्विकल्पोऽस्मि सर्वथा'—इति देवीभागवते (१।१९।३२)। कल्पनम्; 'तत्रापि प्रियव्रतरथचरणपरिखातैः सप्तभिः सप्त सिन्धव उपक्लृप्ताः। यत एतस्याः सप्तद्वीपविशेषविकल्पस्त्वया भगवन् खलु सूचितः'—इति भागवते (५।१६।२)। संशयः; 'रात्रिन्दिवविभागेषु यथादिष्टं महीक्षिताम्। तत्सिषेवे नियोगेन स विकल्पपराङ्मुखः'—इति रघौ (१७।४९)। नानाविधः; 'प्रच्छन्नं वा प्रकाशं वा तन्निषेवेत यो नरः। तस्य दण्डविकल्पः स्यात्तथेष्टं नृपतेस्तथा'—इति मनुः (९।२२९)। विविधकल्पः; 'स्मृतिशास्त्रे विकल्पस्तु आकाङ्क्षापूरणे सति'—इति भविष्ये। देवता; 'वैकारिको विकल्पानां प्रधानमनुशायिनाम्'—इति भागवते (१०।८५।११)। 'विकल्पा देवास्तेषां कारणम्'—इति तट्टीकायां स्वामी। ६९१

विकारः पुं. [वि+कृ+घञ्] प्रकृतेरन्यथाभावः; परिणामः; विकृतिः; विक्रिया; विकृत्या; 'अपि शयनसखिभ्यो दत्तवाचं कथञ्चित्, प्रमथमुखविकारैर्हासयामास गूढम्'—इति कुमारे (७।९५)। प्रकृतिविकृतिः; 'शब्दः स्पर्शश्च रूपं च रसो गन्धस्तथैव च। प्रकृतिश्च विकारश्च यच्चान्यत् कारणं महत्'—इति हरिवंशे (२४९।३५)। रोगः; 'विकारो धातुवैषम्यं साम्यं प्रकृतिरुच्यते। सुखसंज्ञकमारोग्यं विकारो दुःखमेव च'—इति चरकः। मत्स्यः; 'मत्स्यो मीनो विकारश्च झषो वैशारिणोऽण्डजः। शकुलो पृथुरोमा च स सुदर्शन इत्यपि। रोहिताद्यास्तु ये जीवास्ते मत्स्याः परिकीर्तिताः'—इति भावप्रकाशः। ९०

विकाशः पुं. [वि+काशृ दीप्तौ+घञ्] स्फुटीभावः; विकाशनम्; 'विकाशः केषाञ्चित् नयनविषमैर्विद्युदुदयैः, परेषामुद्भूतिः श्रवणकटुभिर्दीर्घरसितैः। न चेष्टा काप्यन्योपकृतिपरिहीना जलमुचो, जडो वर्षादन्यं गणयति गुणं नास्य तु घनः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (४।१५८)। रहः; विजनः; 'विकाशो विजने स्फुटे'—इत्यजयः। १८७

विकिरः पुं. [विकिरति मृत्तिकादीन् भोजनार्थमिति। वि+कॄ विक्षेपे+इगुपधेति क] पक्षी; 'पक्षी खगो विहङ्गश्च विहगश्च विहङ्गमः। शकुनिर्विः पतत्री च विष्किरो विकिरोऽण्डजः'—इति भावप्रकाशः। कूपः; [विकीर्य्यते इति। वि+कॄ+घञर्थे क] पूजाकालिकविघ्नोत्सारणार्थक्षेपणीयतण्डुलादिः; 'लाजचन्दनसिद्धार्थभस्मदूर्वाकुशाक्षताः। विकिरा इति सन्दिष्टाः सर्वविघ्नौघनाशकाः'—इति तन्त्रसारः। अग्निदग्धादीनां पिण्डम्; 'असंस्कृतप्रमीतानां योगिनां कुलयोषिताम्। उच्छिष्टं भागधेयं स्याद्दर्भेषु विकिरश्च यः'—इति मनुः (३।२४५)। 'पिण्डनिर्वापरहितं यत्तु श्राद्धं विधीयते। स्वधावाचनलोपोऽत्र विकिरस्तु न लुप्यते'—इति श्राद्धतत्त्वम्। 'ये वा दग्धाः कुले बालाः क्रियायोग्या ह्यसंस्कृताः। विपन्नास्तेऽन्नविकिरसम्मार्जनजलाशिनः'—इति मार्कण्डेये (३१।१२)। जलविशेषे क्ली.। 'नद्यादिनिकटे भूमिर्या भवेद्वालुकामयी। उद्भाव्यते ततो यत्तु तज्जलं विकिरं विदुः। विकिरं शीतलं स्वच्छं निर्दोषं लघु च स्मृतम्। तुवरं स्वादु पित्तघ्नं मनाक् कफकरं स्मृतम्'—इति चिन्तामणिः। २३८

विकृतिः स्त्री. [वि+कृ+क्तिन्] विकारः; विकृतम्; 'यथाप्रदेशं भुजगेश्वराणां करिष्यतामाभरणान्तरत्वम्। शरीरमात्रं विकृतिं प्रपेदे तथैव तस्थुः फणरत्नशोभाः'—इति कुमारे (७।३४)। रोगः; डिम्बः; मद्यादिः; सांख्योक्तविकृतिः; 'मूलप्रकृतिरविकृतिर्महदाद्याः प्रकृतिविकृतयः सप्त। षोडशकस्तु विकारो न प्रकृतिर्न विकृतिः पुरुषः'—इति सांख्यकारिकायाम् (३)। ३२४

विक्रमः पुं. [वि+क्रम्+भावे घञ्। विशेषेण क्रामतीति। वि+क्रम्+कर्तरि अच्] पराक्रमः; विष्णुः; 'ईश्वरो विक्रमी धन्वी मेधावी विक्रमः क्रमः'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रे। शौर्यातिशयः; अतिशक्तिता; 'अन्योऽन्यदर्शनप्राप्तविक्रमावसरं चिरात्। रामरावणयोर्युद्धं चरितार्थमिवाभवत्'—इति रघौ (१२।८७)। कान्तिमात्रं; पादविक्षेपः; 'आजानुबाहुः सुशिराः सुललाटः सुविक्रमः'—इति रामायणे (१।१।१०)। विक्रमादित्यराजा; साहसाङ्कः; शकारिः; संवत्कर्ता;

उज्जयिनीदेशाधिपतिभेदः; 'धन्वन्तरिक्षपणकामरसिंह-शङ्कुवेतालभट्टघटकर्परकालिदासाः । ख्यातो वराहमिहिरो नृपतेः सभायां रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य' —इति नवरत्नश्लोकः । चरणः; शक्तिः; स्थितिः; 'सम्प्लवः सर्वभूतानां विक्रमः प्रतिसङ्क्रमः । इष्टापूर्तस्य काम्यानां त्रिवर्गस्य च यो विधिः'—इति भागवते (२।८।२०) । 'विक्रमः स्थितिः प्रतिसंक्रमो महाप्रलयः' —इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी । प्रभवादिषष्टिसंवत्सरान्तर्गतचतुर्दशवर्षम्; 'जायन्ते सर्वसस्यानि मेदिनी निरुपद्रवा । लवणं मधु गव्यं च महार्घ्यं विक्रमे प्रिये' —इति ज्योतिस्तत्त्वम् । कविविशेषः; 'तद्दुःखाच्च प्रचुरकवितुः कालिदासस्य काव्यादन्त्यं पादं सुरचितवान् मेघदूताद् गृहीत्वा । श्रीमन्नेमेश्चरितविशदं साङ्गणस्याङ्गजन्मा चक्रे काव्यं बुधजनमनःप्रीतये विक्रमाख्यः'—इति नेमिदूते । वत्सीपुत्रः; 'तस्य तस्यां सुनन्दायां पुत्रा द्वादश जज्ञिरे । प्रांशुः प्रवीरः शूरश्च सुचक्रो विक्रमः क्रमः'—इति मार्कण्डेये (११७।१) । ७२३

विक्रमहीनः त्रि. [विक्रमेण पराक्रमेण हीनः रहितः] पराक्रमरहितः; क्लीवः । ८२०

विक्रान्तः पुं. [वि+क्रम् + क्त] शूरः; वीरः; सिंहः; मदालसागर्भजातऋतध्वजपुत्रः; 'मदालसायाः सञ्जज्ञे पुत्रः प्रथमजस्ततः । तस्य चक्रे पिता नाम विक्रान्त इति धीमतः'—इति मार्कण्डेये (२५।८) । हिरण्याक्षपुत्रविशेषः; 'हिरण्याक्षसुताः पञ्च विद्वांसः सुमहाबलाः । झर्झरः शकुनिश्चैव भूतसन्तापनस्तथा । महानाभश्च विक्रान्तः कालनाभस्तथैव च'—इति हरिवंशे (३।७८-७९) । क्ली. वैक्रान्तमणिः; त्रि. शूरः; वीरः; 'विक्रान्तैर्नयशालिभिः सुसचिवैः श्रीवंकनासादिभिः' —इति मुद्राराक्षसे (१) । ३५४

विक्रुष्टम् त्रि. [वि+क्रुश्+क्त] निष्ठुरं; कठोरम् । १४०

विक्लवः त्रि. [विक्लवते इति । वि+क्लु+पचाद्यच्] विह्वलः; 'नूनं सहायेन वियोगविक्लवा पुरः पुरश्रीरपि निर्ययौ तदा'—इति माघे (१२।६३) । क्ली. दुःखं; 'किमिदानीमिदं देवि ! करोति हृदि विक्लवम्' —इति रामायणे (२।४४।२५) । ३८३

विक्षिप्तः त्रि. [वि+क्षिप्+क्त] त्यक्तः; 'वायुविक्षिप्तकुसुमैस्तथान्यैरपि पादपैः'—इति महाभारते (१।२७।७) । कम्पितः; 'सव्रीडस्मितविक्षिप्तभ्रूविलासावलोकनैः । दैत्ययूथपचेतः सु काममुद्दीपयन् मुहुः'—इति भागवते (८।८।४६) । क्ली. चित्तवृत्तिविशेषः; 'क्षिप्तं मूढं विक्षिप्तमेकाग्रनिरुद्धमितिचित्तभूमयः। क्षिप्ताद्विशिष्टं विक्षिप्तमिति मणिप्रभा'—इति पातञ्जलभाष्ये ५५३

विगतनासिकः त्रि. [विगता विशेषेण गता नासिका यस्य] विग्रः; गतनासिकः । ६१०

विगानम् क्ली. [विरुद्धं गानं परस्य] वचनीयता; निन्दा । १४७

विग्रः त्रि. [विगता नासिकास्य । 'वेर्ग्रो वक्तव्यः' इत्युक्त्या नासिकाया ग्रः] गतनासिकः; विगतनासिकः; त्रि. [विविधं गृह्णात्यर्थानिति, विपूर्वाद् गृहेः 'अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड] मेधावी; 'परेहि विग्रमस्तृतमिन्द्रं पृच्छाषि पश्चितम्'—इति ऋग्वेदे (१।४।४) । ६१०

विग्रहः पुं. [विविधं सुखदुःखादिकं गृह्णातीति । वि+ग्रह्+अच् । यद्वा विविधैर्दुःखादिभिर्गृह्यते इति । वि+ग्रह्+'ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च' इति अप्] युद्धम्; 'सन्धिं च विग्रहं चैव यानमासनमेव च । द्वधीभावं संश्रयं च षड्गुणांश्चिन्तयेत् सदा'—इति मनुः (७।१६०) । शरीरम्; 'विग्रहेण मदनस्य चारुणा सोऽभवत् प्रतिनिधिर्न कर्मणा'—इति रघौ (११।१३) । वाक्यभेदः (८०५); विस्तरः; स तु समासार्थबोधकवाक्यं; विरोधमात्रम्; 'त्यजत मानमलं बत विग्रहैर्न पुनरेति गतं चतुरं वयः । परभृताभिरितीव निवेदिते स्मरमते रमते स्म बधूजनः'—इति रघौ (९।४७) । विभागः; 'मासेन तु शिरो द्वाभ्यां बाह्वङ्घ्र्याद्यङ्गविग्रहः । नखलोमास्थिमर्माणि लिङ्गच्छिद्रोद्भवस्त्रिभिः'—इति भागवते (३।३१।३) । [वीनां पक्षिणां ग्रहो ग्रहणमिति वाक्ये] विहङ्गग्रहणम्; 'नो सन्ध्या हितमत्सरा तव तनौ वत्स्याम्यहं सन्धिना, न प्रीतासि वरोरु ! चेत्कथय तत्प्रस्तौमि किं विग्रहम् । कार्यं तेन न किञ्चिदस्ति शठ ! मे वीनां ग्रहेणेति वो, दिश्यासुः प्रतिबद्धकेलिशिवयोः श्रेयांसि वक्रोक्तयः' —इति वक्रोक्तिपञ्चाशिकायाम् (४) । ५१०

विग्रहः पुं. – क्ली. [विगृह्यन्ते शत्रवो यस्मिन् । वि+ग्रह्+अप्] युद्धं; संग्रामः; रणः; आयोधनम्; 'यदा प्रहृष्टा मन्येत सर्वास्ताः प्रकृतीर्भृशम् । अत्युच्छितं तथात्मानं

तदा कुर्वीत विग्रहम्' —इति मनुः (७।१७०)। 'सन्धिं च विग्रहं चैव यानमासनमेव च। द्वैधीभावं संश्रयं च षड्गुणांश्चिन्तयेत् सदा'—इति मनुः (७।१६०) ४५४

विघसः पुं. [वि+अद्+अप्] भोजनशेषः; दवपित्रतिथिगुर्वादिभुक्तस्य शेषः; 'विघसाशी भवेन्नित्यं नित्यं वामृतभोजनः। विघसो भुक्तशेषं तु यज्ञशेषं तथामृतम्' —इति मनुः (३।२८५)। आहारः; 'अयि वनप्रिय ! विस्मृत एव किं बलिभुजो विघसो भवताधुना। यदनयैव कुहूरिति विद्यया न पततश्चरणौ धरणौ तव'-इत्युद्भटः। क्ली. सिक्थं; सिक्थकं; मधूच्छिष्टं; 'मोम' इति भाषा। ३२६

विघ्नः पुं. [विहन्यते अनेनेति। वि+हन्+'घञर्थे कविधानम्' इत्युक्त्या क] व्याघातः; अन्तरायः; प्रत्यूहः; व्यवायः; 'प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः, प्रारभ्य विघ्ननिहता विरमन्ति मध्याः। विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः प्रारब्धमुत्तमगुणा न परित्यजन्ति' —इति मुद्राराक्षसे। कृष्णपाकफला। ४०१

विघ्नराजः पुं. [विघ्नानां राजा, तेषां निवारणादिशासनकर्मणि समर्थः। 'राजाहःसखिभ्यष्टच्' इति टच्] गणेशः; विघ्नविनायकः; विघ्ननायकः; विघ्नेश्वरः; विघ्ननाशकः; विघ्ननाशनः; विघ्नहारी; विघ्नेशः; विघ्नेशानः। १८

विचकिलः पुं. [विकच+इलच्, पृषोदरादित्वाद् वर्णविपर्ययः] मल्लीप्रभेदः; मल्लिकाभेदः; मल्लीविशेषः; मल्लिकाविशेषः; मदनकवृक्षः; मदनपादपः; मदनवृक्षः; 'कुन्दः कन्दलितव्ययं विचकिलः कम्पाकुलं केतकः। सातङ्कं मदनः सदैन्यमलसं मुक्तोऽतिमुक्तद्रुमः'—इति राजेन्द्रकर्णपूरे (७०)। २०६

विचक्षणः पुं. [विशेषेण चष्टे धर्मादिमुपदिशतीति। वि+चक्ष्+'अनुदात्तेतश्च हलादेः' इति कर्तरि युच्] पण्डितः; 'ततो यथावद् विहिताध्वराय, तस्मै स्मयावेशविवर्जिताय। वर्णाश्रमाणां गुरवे सवर्णी, विचक्षणः प्रस्तुतमाचचक्षे'—इति रघुवंशे (५।१९)। निपुणे त्रि.। 'विचक्षणोऽस्यर्हति वेदितुं विभो अनन्तपारस्य निवृत्तितः सुखम्'—इति भागवते (१।५।१६)। नानार्थदर्शी; 'विचक्षणः प्रथयन्नापृणन्नुर्वजीजनत् सविता सुम्नमुक्थ्यम्'—इति ऋग्वेदे (४।५३।२)। 'विचक्षणः विविधद्रष्टा'—इति तद्भाष्ये सायणः। २०६

विचारणा स्त्री. [वि+चर्+णिच्+युच्+टाप्] मीमांसाशास्त्रम्; विचारः; 'जीवो ब्रह्म सदैवाहं नात्र कार्या विचारणा। भेदबुद्धिस्तु संसारे वर्तमाना प्रवर्तते' —इति देवीभागवते (१।१८।४२)। १०

विचिकित्सा स्त्री. [विचिकित्सनमिति। वि+कित्+सन्+अ+टाप्] संशयः; सन्देहः; 'तुभ्यं मद्विचिकित्सायामात्मा मे दर्शितोऽबहिः। नालेन सलिले मूलं पुष्करस्य विचिन्वतः'—इति भागवते (३।९।३६)। ६९१

विच्छन्दकः पुं. [विशिष्टं छन्दोऽभिप्रायोऽत्र। किं वा विशिष्टेच्छया छन्द्यते निर्मीयते। घञ्, क] धनिनां सद्मभेदः; विच्छर्दकः; आढ्यसद्मप्रभेदः; जनेश्वरगृहं; विच्छन्दः; 'उपर्युपरि यद् गेहं तद्विच्छन्दकसंज्ञकम्'—इति भरतः। ३०५

विच्छर्दकः पुं. — विच्छन्दकः; विच्छन्दः; ईश्वरगृहम्। ३०५

विजनः त्रि. [विगतो जनो यस्मात्] निर्जनः; विविक्तः; छन्नः; निःशलाकः; रहः; उपांशु; 'ततो भीमो वनं घोरं प्रविश्य विजनं महत्। न्यग्रोधं विपुलच्छायं रमणीयं ददर्श ह'—इति महाभारते (१।१५२।१५)। ७०८

विजपिलम् क्ली. — पिच्छलं; पिच्छिलं; पङ्कः; शादः; निषद्वरः; जम्बालः; कर्दमः; इचिकिलम्। ६७८

विजाता स्त्री. [विशेषेण जातः पुत्रो यस्याः] जातापत्या; प्रजाता; प्रसूतिका; प्रसूता; 'विजाता च प्रजाता च जातापत्या प्रसूतिका'—इति हेमचन्द्रः। ५००

विजृम्भितः त्रि. [वि+जृम्भ्+क्त] विकस्वरः; उन्मीलितः; उन्मिषितः; स्मितः; उन्निद्रः; हसितः; उद्बुद्धः; व्याकोशः; 'तदादिराजस्य यशो विजृम्भितं गुणैरशेषैर्गुणवत्सभाजितम्'—इति भागवते (१०।२१।८)। व्याप्तः; 'आवृण्वतो लोचनमार्गमाजौ रजोऽन्धकारस्य विजृम्भितस्य'—इति रघौ (७।४२)। [विजृम्भा सञ्जाता अस्येति, तारकादित्वादितच्] जृम्भायुक्तः; 'सशरं सधनुष्कं च दृढात्मानं विजृम्भितम्। ततो ननाद भूतात्मा स्निग्धगम्भीरनिःस्वनः'- -इति हरिवंशे (१८।१६)। क्ली. चेष्टा; 'अथागत्य समाख्यातं तत्सख्या ग्रन्थिबन्धनम्। उद्गाढमुपकेशाया नवानङ्गविजृम्भितम्'—इति कथासरित्सागरे (४।१३)। १८७

विटः पुं. [वेटतीति, विट्+क] षिङ्गः; पल्लवकः; पल्लविकः; भुजङ्गः; वेश्यापतिः; कामुकः; विदग्धः; नागरः; भविलः; छिदुरः; व्यलीकः; षट्प्रज्ञः; कामकेलिः; विदूषकः; पीठकेलिः; पीठमर्दः । 'सतामयं सारभृतां निसर्गो यदर्थवाणीश्रुतिचेतसामपि । प्रतिक्षणं नव्यवदच्युतस्य यत् स्त्रिया विटानामिव साधु वार्ता' —इति भागवते (१०।१३।२) । कामुकानुचरः; धूर्तः; कामतन्त्रकलाकोविदः; पर्वतप्रभेदः; लवणभेदः; खदिरविशेषः; मूषिकः; नारङ्गवृक्षः । ३८२

विटङ्कः पुं.– क्ली. [विशेषेण टङ्क्यते सौधादिषु इति । वि+टङ्क बन्धने+घञ्] कपोतपालिका; कपोतपाली; विटङ्ककः; 'रतान्तरे यत्र गृहान्तरेषु वितर्दिनिर्यूहविटङ्कनीडः । रुतानि शृण्वन् वयसां गणोऽन्तेवासित्वमाप स्फुटमङ्गनानाम्'—इति माघे (३।५५) । सुन्दरे त्रि. । 'देवाववक्षत गृहीतगदौ परार्द्ध्यकेयूरकुण्डलकिरीटविटङ्कवेशौ'—इति भागवते (३।१५।२७) । ३०३

विटङ्ककः पुं.– क्ली. [विटङ्क एव । स्वार्थे कन्] विटङ्कः; कपोतपाली; कपोतपालिका । ३०३

विटपः पुं.–क्ली. [वेटति शब्दायते इति । विट्+'विटपपिष्टपविशिपोलपाः' इति कपन् प्रत्ययेन साधुः] वृक्षः; तरुः; द्रुमः; पादपः । (१८१) शाखापल्लवसमुदायः; विस्तारः; स्तम्बः । (१९०) वीरुत्; शाखा; 'बाहुभिर्विटपाकारैर्दिव्याभरणभूषितैः । आविर्भूतमपां मध्ये पारिजातमिवापरम्'—इति रघौ (१०।११) । पल्लवः; 'तरुविटपलताग्रालिङ्गनव्याकुलेन दिशि दिशि परिदग्धा भूमयः पावकेन'—ऋतुसंहारे (१।२४) । क्ली. मुष्कवङ्क्षणान्तरम्; 'विटपं तु महावीज्यमन्तरामुष्कवङ्क्षणम्'—इति हेमचन्द्रः । 'वङ्क्षणवृषणयोरन्तरे विटपं नाम तत्र षाण्ढ्यमल्पशुक्रता वा भवति'—इति सुश्रुते (३।६) । पुं. [विट्पुन् पातीति, पा+क] विटाधिपः; पारदारिकश्रेष्ठः; आदित्यपत्रः । १७७

विटपी [न्] [विटपः शाखादिरस्त्यस्येति । विटप+इनि] वृक्षः; 'यूथपते तव कश्चिन्नहि मानस्यानुरूप इह विटपी । प्रेरय दिनं निदाघद्राघीयः क्व खलु ते च्छाया' —इति आर्यासप्तशत्याम् (४८६) । वटः; विटपयुक्ते त्रि. । 'अङ्कुरं कृतवांस्तत्र ततः पर्णद्वयान्वितम् । पलाशिनं शाखिनं च तथा विटपिनं पुनः'—इति महाभारते (१४३।१०) । १७७

विट् [श्] पुं. [विश्+क्विप्] मनुजः; मनुष्यः; (५७०) अर्यः; भूमिस्पृक्; वैश्यः; ऊरव्यः । ३३१

विट् [ष्] स्त्री. [विष् व्याप्तौ+क्विप्] विष्ठाः कन्या; व्याप्ते त्रि. । ६३७

विडालः पुं. [विड् आक्रोशे+'तमिविशिविडीति' कालन्] पशुविशेषः; ओतुः; मार्जारः; वृषदंशकः; आखुभुक्; विरालः; विलालः; दीप्ताक्षः; नक्तञ्चरी; जाहकः; विडारकः त्रिशङ्कुः; जिह्वापः; मेनादः; सूचकः; मूषिकारातिः; शालावृकः; मायावी; दीप्तलोचनः; विडालकः । 'बिडालकाकाखूच्छिष्टं जग्ध्वा श्वनकुलस्य च । केशकीटावपन्नं च पिबेद् ब्रह्मसुवर्चलाम्'—इति मनुः (११।१६०) । नेत्रपिण्डः; नेत्रौषधविशेषः । २३६

विडोजाः [स्] पुं. [विष् व्याप्तौ+क्विप्, विट् व्यापकं ओजो यस्य] इन्द्रः । ५४

बिडौजाः [स्] पुं. [विडम् आक्रोशि. शत्रुद्वेषमसहिष्णु ओजो यस्य] इन्द्रः; 'रघुः शशाङ्कार्द्धमुखेन पत्रिणा शरासनज्यामलुनाद्बिडौजसः'—इति रघौ (३।५९) । ५४

वितथम् त्रि. [विगतं तथा यस्मात् । 'अच्' इति योगविभागात् समासान्तोऽच्] मिथ्या; वितथ्यम्; असत्यं; मृषा; अनृतम्; अलीकम्; 'अवाक्शिरास्तमस्यन्धे किल्विषी नरकं व्रजेत् । यः प्रश्नं वितथं ब्रूयात् पृष्टः सन् धर्मनिश्चये'—इति मनुः (८।९४) । निष्फलः; व्यर्थः; 'तस्यैवं वितथे वंशे तदर्थं यजतः सुतम् । मरुत्सोमेन मरुतो भरद्वाजमुपाददुः'—इति भागवते (९।२०।३५) । पुं. भरद्वाजपुत्रः; स च दौष्यन्तेर्भरतस्य पौत्रः; 'ततोऽथ वितथो नाम भरद्वाजात् सुतोऽभवत् । पौत्रेऽथ वितथे जाते भरतस्तु दिवं ययौ । वितथञ्चाभिषिच्याथ भरद्वाजो वनं ययौ'—इति हरिवंशे (३२।१८।१९) । १४४

वितथ्यम् त्रि. [विगतं तथ्यं यस्मात्] असत्यं; मिथ्या; मृषा; अलीकम्; अनृतं; वितथम् । १४४

वितरणम् क्ली. [वि+तॄ+भावे ल्युट्] दानं; विश्राणनं; विहापितम्; अंहतिः; अपवर्जनं; निर्वपणं; स्पर्शनम्; उत्सर्गः; प्रदेशनम्; 'वित्तेन किं वितरणं यदि नास्ति तस्य ।' ४१९

वितर्कः पुं. [वि+तर्क्+घञ्] संशयः; सन्देहः; शङ्का; 'यौ तौ कुमाराविव कार्तिकेयौ द्वावश्विनेयाविति मे वितर्कः'—इति महाभारते (१।१९०।२३) । ऊहः; तर्कः; 'सरस्वत्यास्तटे राजन् ऋषयः सत्रमासत। वितर्कः समभूत्तेषां त्रिष्वधीशेषु को महान्'—इति भागवते (१०।८९।१) । ज्ञानसूचकः; वितर्कणम् । ६९१

वितर्दिका स्त्री. [वितर्दिरेव । स्वार्थे कन्] वितर्दी; वितर्धी; वेदिका; वितर्दिः; वितर्धिः; 'क्षेमराजाभिधानेन डामरेशेन सोऽन्वितः। शिलां वितर्दिकातुल्यामध्यास्त स्वप्रमध्यगाम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (८।२६८५) । २९९

वितस्तिः पुं.–स्त्री. [वि+तसु उपक्षेपे+'वौ तसेः' इति ति] विस्तृतसकनिष्ठाङ्गुष्ठः; द्वादशाङ्गुलः; 'द्वे वितस्ती तथा हस्तो ब्राह्मतीर्थादिवेष्टनम्'—इति मार्कण्डेये (४९।३८) । ५३८

वितानम् क्ली. [वितन्यते यत् । वि+तन्+घञ्] चन्द्रातपः; उल्लोचः; कदकः; 'वितानसहितं तत्र भेजे पैतृकमासनम्। चूडामणिभिरुद्घृष्टपादपीठं महीक्षिताम्' —इति रघौ (१७।२८) । पुं.–क्ली. [वि+तन्+घञ्] (४१४) क्रतुः; यज्ञः; 'सोमपायिनि भविष्यते मया वाञ्छितोत्तमवितानयाजिना'—इति माघे (१४।१०) । समूहः (६८६); 'नवकनकपिशङ्गं वासराणां विधातुः, ककुभि कुलिशपाणेर्भाति भासां वितानम्'—इति माघे (११।४३) । विस्तारः (४४८); 'यज्ञस्य च वितानानि योगस्य च पथं प्रभो। नैष्कर्म्यस्य च साङ्ख्यस्य तन्त्रं वा भगवत्स्मृतम्' —इति भागवते (३।७।३१) । त्रि. शून्यः; 'बृहत्तुलैरप्यतुलैर्वितानं मालापिनद्धैरपि चावितानैः' —इति माघे (३।५०) । क्ली. अवसरः; क्षणः; पुं. वृत्तिविशेषः; पुं.–क्ली. व्रणबन्धनविशेषः; 'तत्र कोशदामस्वस्तिकानुवेल्लितप्रतोलीमण्डलस्थगिकायमकरवद्धाचीनविबन्धवितानगोफणाः पञ्चाङ्गी चेति चतुर्दश बन्धविशेषाः'—इति सुश्रुते (१।१८) । त्रि. तुच्छः; 'गगनमश्वखुरोद्धतरेणुभिर्नृसविता च वितानमिवाकरोत्'—इति रघौ (९।५०) । मन्दः । ३१०

वित्तम् क्ली. [विद्+क्त, 'वित्तो भोगप्रत्यययोः' इति साधु] धनम्; 'अनृतं तु वदन् दण्ड्यः स्ववित्तस्यांशमष्टमम्। तस्यैव वा निधानस्य संख्ययाल्पीयसीं कलाम्' —इति मनुः (८।३६) । त्रि. विचारितः; विज्ञातः; लब्धः; विख्यातः । ८०

विदग्धः त्रि. [वि+दह्+क्त] छेकः; कुशलः; नागरः; 'विदग्धाया विदग्धेन सङ्गमो गुणवान् भवेत्'–इति देवीभागवते (९) । निपुणः; 'लिप्तं न मुखं नाङ्गं न पक्षती चरणाः परागेण। अस्पृशतेव नलिन्या विदग्धमधुपेन मधु पीतम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५०६) । पण्डितः; विशेषेण दग्धः; 'शोफयोरुपनाहं तु कुर्यादामविदग्धयोः। अविदग्धः शमं याति विदग्धः पाकमेति च' —इति सुश्रुते (४।१) । ३८५

विदिक् [श्] स्त्री. [दिग्भ्यां विगता] दिशोर्मध्यम्; अग्निनिर्ऋतिवाय्वीशानकोणचतुष्टयम्; अपदिशं; प्रदिक्; विदिशं; प्रदिशं; कोणः; 'सा दिशो विदिशो देवी रोदसी चान्तरं तयोः। धावन्ती तत्रतत्रैनं ददर्शानुद्यतायुधम्'—इति भागवते (४।१७।१६) । १०२

विदुलः पुं. [विशेषेण दोलयतीति । वि+दुल्+क] वेतसः; अम्बुवेतसः; जलवेतसः; गन्धरसः । २०१

विदेहा स्त्री. [विदेहानां निवासः । 'सोऽस्य निवासः' इत्यण्, 'जनपदे लुक्' इति लुक्,स्त्रीत्वे टाप्] जनकान्वयभूमिः; विदेहनृपस्य भूमिः; मिथिला; विदेहनगरी । २८७

विद्याधरः पुं. [विद्यां मन्त्रादिकं धरति, पचादित्वादच्] पुष्पदन्तादिः; कामरूपी खेचरः; देवयोनिविशेषः; 'तस्मिन् क्षणे पालयितुः प्रजानामुत्पश्यतः सिंहनिपातमुग्रम् । अवाङ्मुखस्योपरि पुष्पवृष्टिः पपात विद्याधरहस्तमुक्ता'—इति रघौ (२।६०) । 'लोकेऽस्मिन् गणशस्तानि मन्त्रविद्याविचारिणाम् । विद्याधरास्तथान्येऽपि विद्याबलसमन्विताः'—इति वह्निपुराणे । षोडशरतिबन्धान्तर्गतचरमबन्धः; 'नार्या ऊरुयुगं धृत्वा कराभ्यां ताडयेत् पुनः। कामयेन्निर्भरं कामी बन्धो विद्याधरो मतः'—इति रतिमञ्जर्याम् । ८७

विद्युत् स्त्री. [विशेषेण द्योतते इति तच्छीला वा । वि+द्युत्+'भ्राजभासेति' क्विप्] विद्योतते या; शम्पा; शतह्रदा; ह्रादिनी; ऐरावती; क्षणप्रभा; तडित्; सौदामिनी; चञ्चला; चपला; वीपा; सौदाम्नी; चिलमीलिका; सर्जूः; अचिरप्रभा; सौदामनी;

अस्थिरा; मेघप्रभा; अशनिः; चटुला; अचिररोचिः; राधा; नीलाञ्जना; 'अरिष्टनेमिपत्नीनामपत्यानीह षोडश । बहुपुत्रस्य विदुषश्चतस्रो विद्युतः स्मृताः'—इति विष्णुपुराणे। 'वाताय कपिला विद्युदातपाय हि लोहिता। पीता वर्षाय विज्ञेया दुर्भिक्षायासिता भवेत्।' सन्ध्या; त्रि. [विगता द्युत् कान्तिर्यस्य] निष्प्रभः; [विशिष्टा द्युत् दीप्तिर्यस्येति] विशेषेण दीप्तिशाली; 'हस्काराद्विद्युतस्पर्यतो जाता अवन्तु नः'—इति ऋग्वेदे (१।२३।१२)। 'हस्कारात् दीप्तिकारात् विद्युतो विशेषेण दीप्यमानात्'—इति तद्भाष्ये सायणः । ६०

विद्वान् [स्] पुं. [वेत्तीति, विद्+शतृ, 'विदेः शतुर्वसुः' इति शतुर्वसुरादेशः] आत्मवित्; प्राज्ञः; पण्डितः; 'ब्राह्मणेषु तु विद्वांसो विद्वत्सु कृतबुद्धयः । कृतबुद्धिषु कर्तारः कर्तृषु ब्रह्मवेदिनः'—इति मनुः (१।९७)। ३३२

विधवा स्त्री. [विगतो विशेषेण गतो धवो भर्त्ता यस्याः] मृतभर्तृका; विश्वस्ता; जालिका; रण्डा; यतिनी; यतिः; 'ताम्बूलाभ्यञ्जनं चैव कांस्यपात्रे च भोजनम् । यतिश्च ब्रह्मचारी च विधवा च विवर्जयेत्'—इति प्रचेताः । ४८७

विधिः पुं. [विदधाति विश्वमिति । विपूर्वकाद् धाञ्-धातोः 'उपसर्गे घोः किः' इति कि प्रत्ययः] ब्रह्मा; वेधाः; 'विधिर्विधत्ते विधुना बधूनां किमानन काञ्चन-सञ्चकेन'—इति नैषधे (२२।४७) । विष्णुः (२५); (८६) भाग्यं; नियतिः; [विधीयेते सुखदुःखे अनेनेति। वि+धा+कि] 'राज्यनाशं सुहृत्त्यागो भार्यातनय-विक्रयः । हरिश्चन्द्रस्य राजर्षेः किं विधे ! न कृतं त्वया' —इति मार्कण्डेये (८।१८२) । (८३६) कालः; समयः, कल्पः; नियोगः; क्रमः; विधानं; विधिवाक्यम्; 'यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः । न स सिद्धि-मवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्'—इति गीतायाम् (१६।२३) । प्रकारः; कर्म; 'तस्मात्सूर्यः शशाङ्कस्य क्षयवृद्धिविधेर्विभुः'—इति देवीपुराणे । गजान्नं; वैद्यः; यागोपदेशकग्रन्थः; षड्विधसूत्रलक्षणान्तर्गतसूत्रविशेषः; 'संज्ञा च परिभाषा च विधिर्नियम एव च । अतिदेशोऽधि-कारश्च षड्विधं सूत्रलक्षणम् ।' ६

विधुः पुं. [विध्यति विरहिणं विध्यते राहुणेति वा । व्यध् ताडने+'पृभिदिव्यधीति' कु] चन्द्रः; चन्द्रमाः; सोमः; 'पिक ! विधुस्तव हन्ति समं तमस्त्वमपि चन्द्र-विरोधिकुहूरवः । तदुभयोरनिशं हि विरोधिता कथमहो समता मम तापने ।' [विध्यति असुरानिति] विष्णुः; कर्पूरः; ब्रह्मा; राक्षसः; आयुधः; वायुः; कर्तरि त्रि. । 'विधुं दद्राणं समने बहूनां युवानं सन्तं पलितो जगार' —इति ऋग्वेदे (१०।५५।५) । 'विधुं विधातारं सर्वस्य युद्धादेः कर्तारं, विपूर्वो दधातिः करोत्यर्थे'—इति तद्भाष्ये सायणः । ४३

विधुन्तुदः पुं. [विधुं तुदति पीडयतीति । विधु+तुद्+'विध्वरुसोस्तुदः' इति खश्, मुम्] स्वर्भानुः; सैंहिकेयः; तमः; राहुः; 'नीतिरापदि यद्गम्यः परस्त-न्मानिनो ह्रियै । विधुर्विधुन्तुदस्येव पूर्णस्तस्योत्सवाय सः'—इति माघे (२।६१) । ४९

विधुरम् क्ली. [विगता धूर्भारो यस्मात् । समासे अ] प्रत्यवायः; प्रविश्लेषः; विश्लेषः; 'विधुरं प्रत्यवाये स्यात्कष्टविश्लेषयोरपि'—इति यादवकृतवैजयन्ती-कोषः । कैवल्यं; कष्टम्; 'विधुरं किमतः परं परै-रवगीतां गमिते दशामिमाम् । अवसीदति यत्सुरैरपि त्वयि सम्भावितवृत्ति पौरुषम्'—इति किराते (२।७) । त्रि. [विगता धूः कार्यभारो यस्मात्, ऋक्पूरित्य] विकलः; 'तदिदं क्रियतामनन्तरं भवता बन्धुजनप्रयोजनम् । विधुरां ज्वलनातिसर्जनान्ननु मां प्रापय पत्युरन्तिकम्' —इति कुमारे (४।३२) । ८२४

विनता स्त्री. — गरुडमाता; सा तु दक्षप्रजापतेः कन्या; कश्यपपत्नी; 'क्रोधा प्राधा च विश्वा च विनता कपिला मुनिः । कद्रूश्च मनुजव्याघ्र ! दक्षकन्यैव भारत'—इति महाभारते (१।६५।१२) । पिडिकाभेदः; 'महती पिडिका नीला पिडका विनता स्मृता'—इति सुश्रुते (२।६) । ११९

विना अव्य. [वि+'विनञ्भ्यां नानाञौ न सह' इति ना] वर्जनं; पृथक्; अन्तरेण; ऋते; हिरुक्; नाना; व्यति-रेकः; 'विना वातं विना वर्षं विद्युत्प्रपतनं विना । बिना हस्तिकृतान्दोषान् केनेमौ पातितौ द्रुमौ'—इति काशि-कोक्त्या । 'शशाम वृष्ट्यापि विना दवाग्निः'—इति रघुवंशे (२।१४) । 'चित्रं यथाश्रयमृते स्थाण्वादिभ्यो विना यथा च्छाया । तद्वद्विना विशेषैर्न तिष्ठति निराश्रयं

लिङ्गम्'—इति सांख्यकारिकायाम् (४१)। ८७६

विनायकः पुं. [विशिष्टो नायकः] हेरम्बः; लम्बोदरः; आखुरथः; एकदंष्ट्रः; एकदन्तः; विघ्नराजः; विघ्नेशः; गणेशः; गणपतिः; 'अस्तीह प्रमदोद्याने तरुमण्डलमध्यगः। दृष्टप्रभावो वरदो देवदेवो विनायकः'—इति कथासरित्सागरे (३०।५५)। बुद्धः; गरुडः; विघ्नः; 'राक्षसाश्च पिशाचाश्च भूतानि च विनायकाः'—इति हरिवंशे (१८१।६५)। गुरुः। १८

विनिमयः पुं. [वि+नि+मी+अप्] परिवृत्तिः; वैमेयः; परिदानं; प्रतिदानम्; 'दुदोह गां स यज्ञाय सस्याय मघवा दिवम्। सम्पद्विनिमयेनोभौ दधतुर्भुवनद्वयम्' —इति रघौ (१।२६)। बन्धकः; 'विक्रयैर्गां विनिमयैर्दत्वा गोमांसखादके। व्रतं चान्द्रायणं कुर्याद्विधे साक्षाद्वधी भवेत्'—इति गोभिलः। ४७३

विनोदः पुं. [वि+नुद्+घञ्] कौतूहल्यं; कौतूहलं; कौतुकं; कुतूहलम्; 'बाधते तं च नैकटयात् सर्वं स मगधेश्वरः। तन्तत्र रक्षाहेतोश्च विनोदायतनस्य ताम्' —इति कथासरित्सागरे (१५।१२५)। क्रीडा; 'नैतावता त्र्यधिपतेर्बत विश्वभर्तुस्तेजः क्षतं तव न तस्य स ते विनोदः'—इति भागवते (३।१६।२४)। अपनयनम्; 'विनोदमिच्छन्नथ दर्पजन्मनो रणेन कण्ड्वास्त्रिदशैः समं पुनः'—इति माघे (१।४८)। प्रमोदः; 'काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम्। व्यसनेन च मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा'—इति हितोपदेशे। आलिङ्गनविशेषः; 'नायको नायिकाया दक्षिणपादं वामपादं वा स्वमध्यदेशे स्वदक्षिणपादं वामपादं वा नायिकामध्यदेशे निधाय वक्षसि वक्षः ओष्ठे ओष्ठं दत्वा यदाश्लिषति तत्'—इति कामशास्त्रम्। राजगृहविशेषः; 'दीर्घे त्रयो राजहस्ताः प्रसरे द्वौ प्रतिष्ठितौ। विनोद एव द्वाराणि त्रिशत्कोष्ठद्वयं भवेत्' —इति युक्तिकल्पतरुः। 'द्वादशैतान् गृहान् वक्ष्ये तेषां लक्षणमग्रतः। सुनन्दः सर्वतोभद्रो भव्यो नान्दीमुखस्तथा। विनोदश्च विलासश्च विजयो विमलस्तथा। रङ्गः केलिर्जयो वीरो द्वादशैते प्रकीर्तिताः'—इति भविष्योत्तरपुराणे। ७२०

बिन्दुः पुं. [बिदि अवयवे+बाहुलकादु। पृषोदरादित्वाद् वकारादित्वम्] बिन्दुः; पृषत्; पृषतः; विप्रुट्; पृषन्ति; विप्लुट्; जलकणः; 'जलबिन्दुप्रपातेन क्रमशः पूर्यते घटः। स हेतुः सर्वशास्त्रस्य धर्मस्य च धनस्य च'—इति पञ्चतन्त्रे। दन्तक्षतविशेषः; भ्रुवोर्मध्यम्; रूपकार्थप्रकृतिः; अनुस्वारः; 'शिवो वह्निसमायुक्तो वामाक्षिबिन्दुभूषितः। एकाक्षरो महामन्त्रः श्रीसूर्यस्य प्रकीर्तितः'—इति सूर्यकवचम्। त्रि. [वेत्ति तच्छीलः। विद् ज्ञाने+'विन्दुरिच्छुः' इति उ प्रत्ययो नुमागमश्च निपात्यते] ज्ञाता; दाता; वेदितव्यः। ६७७

बिन्दुजालकम् क्ली. [बिन्दूनां जालकम्] गजस्य मुखादिस्थो बिन्दुसमूहः; पद्मकं; पद्मम्, पद्मी=हस्ती। बिन्दुजालं; बिन्दुसमूहः। २१९

विपक्वम् त्रि. [विशेषेण अपाचि इति। वि+पच्+कर्मणि क्त, 'पचो वः' इति वत्वम्] कृतपाकम्; अग्नौ संस्कृतं कालपक्वं च। ३२३

विपक्षः पुं. [विरुद्धः पक्षो यस्य] शत्रुः; रिपुः; वैरी; अरिः; अमित्रम्; 'तत्र वंशा विभज्यन्तां विपक्षः पक्ष एव च। पुत्राणां हि तयो राज्ञो भविता विग्रहो महान्' —इति हरिवंशे (५३।५४)। 'इन्दोरगतयः पद्मे सूर्यस्य कुमुदेंऽशवः। गुणास्तस्य विपक्षेऽपि गुणिनो लेभिरेऽन्तरम्'—इति रघौ (१७।७५)। न्यायमते साध्याभाववत्पक्षः; 'यः सपक्षे विपक्षे च भवेत्साधारणस्तु सः' —इति भाषापरिच्छेदे (७३)। 'सपक्षविपक्षवृत्तिः साधारणः। सपक्षः साध्यवान्। विपक्षः साध्याभाववान्' —इति मुक्तावली। विकल्पः; पक्षः; उक्ताकरणम्; 'प्रतिभूः शुको विपक्षे दण्डः शृङ्गारसंकथा गुरुषु'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३५४)। त्रि. [विगतः पक्षो यस्य] पक्षहीनः। ४५५

विपञ्ची स्त्री. [वि+पञ्च्+अच्। स्त्रियां गौरादित्वाद् ङीष्] विपञ्चिका; घोषवती; वीणा; परिवादिनी; वल्लकी; 'अहं ह्येतद्विजानामि तन्त्रीझङ्कारलक्षणैः। इत्युक्त्वा गुणशर्माङ्कात्तां विपञ्चीं मुमोच सः'—इति कथासरित्सागरे (४९।२०)। ९६

विपणिः पुं.– स्त्री. [विपण्यतेऽस्यामिति। वि+पण्+'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्] पण्यविक्रयशाला; हट्टः; हट्टमण्डपः; हट्टमध्यस्थपण्यविक्रयवीथी; पण्यवीथिका; आपणः; पण्यवीथी; पण्यं; निषद्या; वणिक्पथं; विपणं; वीथी; 'बाजार' इति भाषा। 'निषद्या

विपणिः पण्यवीथिका त्वापणिस्तथा। पण्यविक्रयशालायां भवेदेतच्चतुष्टयम्'—इति शब्दरत्नावली। 'विपणिः पण्यवीथ्यां च भवेदापणपण्ययोः'—इति मेदिनी। 'विपण्यापणपण्याना नानाजनशतैर्वृ तः'—इति महाभारते (९।३५।३०)। बाणिज्यम्; 'विद्या शिल्पं भृतिः सेवा गोरक्ष्यं विपणिः कृषिः। धृतिर्भैक्ष्यं कुसीदं च दश जीवनहेतवः'—इत्ति मनुः (१०।११६)। २९६

विपणी स्त्री. [विपणि+वा ङीष्] हट्टः; 'ययौ भोजनमूल्यार्थी विपणीमात्तमूलकः'—इति कथासरित्सागरे (२०।६५)। २९६

विपरीतः त्रि. [वि+परि+इ+क्त] विपर्ययः; प्रतिसव्यः; प्रतिकूलः; अपसव्यः; अपष्ठुः; विलोमकः; प्रसव्यं; पराचीनं; प्रतीपम्; 'मत्तो जातः कलञ्जाशी विपरीतानि भाषसे। सत्यं ब्रवीषि पितृवत् त्वत्तो जातः कलञ्जभुक्'—इति शङ्करदिग्विजये। मुमूर्षुः; 'स च न प्रतिजग्राह रावणः कालचोदितः। उच्यमानं हितं वाक्यं विपरीत इवौषधम्'—इति रामायणे (६।१७।१५)। षोडशरतिबन्धान्तर्गतदशमबन्धः; 'पादमेकमूरौ कृत्वा द्वितीयं कटिसंस्थितम्। नारीषु रमते कामी विपरीतस्तु बन्धकः'—इति रतिमञ्जरी। 'पादमेकमूरौ कृत्वा द्वितीयं स्कन्धसंस्थितम्। कामिन्याः कामयेत्कामी बन्धः स्याद्विपरीतकः'—इति स्मरदीपिका। ७५७

विपर्ययः पुं. [वि+परि+इ+'एरच्' इत्यच्] व्यतिक्रमः; व्यत्यासः; विपर्यासः; व्यत्ययः; विपर्यायः; 'विपर्ययो वा किं न स्याद् गतिर्धातुर्दुरत्यया। उपस्थितो निवर्तेत निवृत्तः पुनरापतेत्'—इति भागवते (१०।१।५०)। ७२९

विपर्यासः पुं. [वि+परि+अस्+घञ्] व्यत्ययः; विपर्यायः; वैपरीत्यं; विपर्ययः; विपरीतता; विपरीतत्वम्; 'पुरा यत्र स्रोतः पुलिनमधुना तत्र सरितां, विपर्यासं यातो घनविरलभावः क्षितिरुहाम्। बहोर्दृष्टं कालादपरमिव मन्ये बनमिदं, निवेशः शैलानां तदिदमिति बुद्धिं द्रढयति'—उत्तररामचरिते (२)। अप्रमात्मकबुद्धिभेदः; 'तच्छून्ये तन्मतिर्या स्यादप्रमा सा निरूपिता। तत्प्रपञ्चो विपर्यासः संशयोऽपि प्रकीर्तितः। आद्यो देहे ह्यात्मबुद्धिः शङ्खादौ पीततामतिः'—इति भाषापरिच्छेदे। 'आद्यो विपर्यासः'—इति मुक्तावली। ७२९

विपश्चित् त्रि. [विशेषं पश्यति, विप्रकृष्टं चेतति चिनोति चिन्तयति वा। पृषोदरादित्वात् साधुः] पण्डितः; 'सर्वेषां तु विशिष्टेन ब्राह्मणेन विपश्चिता'—इति मनुः (७।५८)। ३३२

विपाकः पुं. [वि+पच्+भावे कर्मणि वा घञ्] फलमात्रं; भागधेयं; भाग्यं; भवितव्यता; 'जरासन्धवधः कृष्ण भूर्यर्थायोपकल्पते। प्रायः पाकविपाकेन तव चाभिमतः क्रतुः'—इति भागवते (१०।७१।१०)। चरमोत्कर्षः; 'स वै धिया योगविपाकतीव्रया हृत्पद्मकोषे स्फुरितं तडित्प्रभम्'—इति भागवते (४।९।२)। पचनम्; 'तावदुभयोरपि रोधसोर्या मृत्तिका तद्रसेनानुविध्यमाना वाय्वर्कसंयोगविपाकेन सदामरलोकाभरणं जाम्बूनदं नाम सुवर्णं भवति'—इति भागवते (५।१६।२०)। स्वेदः; कर्मणो विसदृक्फलं; परिणामः; दुर्गतिः; स्वादुः; जातिः; आयुः; भोगः; 'जाठरेणाग्निना योगाद् यदुदेति रसान्तरम्। रसानां परिणामान्ते स विपाक इति स्मृतः'—इति सुश्रुतः। 'श्लेष्मकृन्मधुरः पाको वातपित्तहरो मतः। अम्लस्तु कुरुते पित्तं वातश्लेष्मगदापहः। कटुः करोति पचनं कफं पित्तं च नाशयेत्। विशेष एष रसतो विपाकानां निदर्शितः'—इति भावप्रकाशः। १२६

विपिनम् क्ली. [वेपन्ते जना यत्रेति। 'वेपितुह्योर्ह्रस्वश्च' इति इनन्, ह्रस्वत्वं च] वनं; काननम्; अरण्यम्; 'यच्चिन्तितं तदिह दूरतरं प्रयाति, यच्चेतसा न गणितं तदिहाभ्युपैति। प्रातर्भवामि वसुधाधिपचक्रवर्ती, सोऽहं व्रजामि विपिने जटिलस्तपस्वी'—इति महानाटके। भीतिप्रदे त्रि.। 'स एकदा तु मृगयां विचरन् विपिने वने। यदृच्छयाश्रमपदं जमदग्नेरुपाविशत्'—इति भागवते (९।१५।२३)। २१०

विपुलः त्रि. [विशेषेण पोलतीति। वि+पुल् महत्त्वे+क] बृहत्; विशालः; 'विपुलेन सागरशयस्य कुक्षिणा'—इति साहित्यदर्पणे (१०)। अगाधं; पुं. [वि+पुल्+क] मेरुपश्चिमभूधरः; 'विपुलः पश्चिमे पार्श्वे सुपार्श्वश्चोत्तरे स्मृतः'—इति विष्णुपुराणे (२।३।१७)। 'विपुले विपुला देवी कल्याणी मलयाचले'—इति देवीभागवते (७।३०।६६)। सुमेरुः; हिमाचलः; वसुदेव-

पुत्रः; 'बलं गदं सारणं च दुर्मदं विपुलं ध्रुवम्। वसुदेवस्तु रोहिण्यां कृतादीनुदपादयत्'—इति भागवते (९।२४।४६)। ६९९

विपुला स्त्री. [वि+पुल् महत्वे+क। ततः स्त्रियां टाप्] पृथिवी; पृथ्वी; भूमिः; आर्याच्छन्दोभेदः; 'पथ्या विपुला चपला मुखचपला जघनचपला च। गीत्युपगीत्युद्गीतय आर्यागीतिश्च नवधार्या। संलङ्घ्य गणत्रयमादिमं सकलयोर्द्वयोर्भवति पादः। यस्यास्तां पिङ्गलनागो विपुलामिति समाख्याति।' 'पुंसां कलिकालव्यालहतानां वास्त्युपहतिरल्पापि। वीर्यविपुला मुखे चेदस्याद् गोविन्दाख्यमन्त्रकला'—इति छन्दोमञ्जरी। विपुलपर्वतस्था देवी; 'विपुले विपुलादेवी कल्याणी मलयाचले'—इति देवीभागवते (७।३०।६६)। १५६

विप्रः पुं. [उप्यते धर्मबीजमत्र, वप्+'ऋज्रेन्द्राग्रवज्रेति' निपातनात् रप्रत्ययेन साधुः] ब्राह्मणः; [विशेषेण प्राति पूरयति षट् कर्माणि, वि+प्रा पूर्तौ इत्यस्मात् कप्रत्ययः] 'जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते। विद्यया याति विप्रत्वं त्रिभिः श्रोत्रियलक्षणम्'—इति प्रायश्चित्तविवेकः। अश्वत्थः; त्रि. मेधावी; 'निषुसीद गणपते गणेषु त्वामाहुर्विप्रतमं कवीनाम्'—इति ऋग्वेदे (१०।११२।९)। 'विप्रतमम् अतिशयेन मेधाविनम्'—इति तद्भाष्ये सायणः। स्तवकर्ता; 'विप्रस्य वा यजमानस्य वा गृहम्'—इति ऋग्वेदे (१०।४०।१४) 'विप्रस्य मेधाविनः स्तोतुर्वा'—इति तद्भाष्ये सायणः। ३९१

विप्रकारः पुं. [वि+प्र+कृ+भावे घञ्] उपमर्दः; अपकारः; निकारः; 'तेषां तु विप्रकारेषु तेषु तेषु महामतिः। मोक्षणे प्रतिकारे च विदुरोऽत्रहितोऽभवत्'—इति महाभारते (१।६२।१४)। खलीकारः; तिरस्कारः; विविधप्रकारः; 'स बाधते प्रजाः सर्वा विप्रकारैर्महाबलः। ततो नस्त्रातु भगवान्नान्यस्त्राता हि विद्यते'—इति महाभारते (३।२७५।३)। ७६९

विप्रकृष्टः त्रि. [वि+प्र+कृष्+क्त] दूरः; विप्रकृष्टकः; आरात्; व्यवहितः; परः। ६९३

विप्रतिसारः पुं. [वि+प्रति+सृ+घञ्] विप्रतीसारः; पश्चात्तापः; अनुतापः; अनुशयः; 'प्रापि चेतसि स विप्रतिसारे सुभ्रुवामवसरः सरकेण'—इति माघे (१०।२०)। कौकृत्यं; रोषः। ७१६

विप्रतीसारः पुं.– अनुतापः; अनुशयः; कौकृत्यं; रोषः। ७१६

विप्रलब्धः त्रि. [वि+प्र+लभ्+क्त] निकृतः; विप्रकृतः; तिरस्कृतः; वञ्चितः; 'दशार्णराजो राजंस्त्वामिदं वचनमब्रवीत्। अभिषङ्गात् प्रकुपितो विप्रलब्धस्त्वयानघ'—इति महाभारते (५।१९१।२१)। ३८३

विप्रलम्भः पुं. [वि+प्र+लभ्+घञ्+नुम्] विसंवादः; विप्रलापः; 'विप्रलम्भोऽयमत्यन्तं यदि स्युरफलाः क्रियाः'—इति महाभारते (३।३१।२७)। वञ्चनम्; 'ततो दशार्णाधिपतेः प्रेष्याः सर्वा न्यवेदयन्। विप्रलब्धं यथा वृत्तं स च चुक्रोध पार्थिवः'—इति महाभारते (५।१९१।१६)। विप्रयोगः; विच्छेदः; शृङ्गाररसभेदः; 'नामान्येतानि शृङ्गारे कैशिकः शुचिरुज्ज्वलः। सम्भोगो विप्रलम्भश्च तस्य भेदद्वयं भवेत्'—इति शब्दरत्नावल्याम्। शृङ्गाराङ्गविशेषः; 'यूनोरयुक्तयोर्भावो युक्तयोर्वाथ यो मिथः। अभीष्टालिङ्गनादीनामनवाप्तौ प्रहृष्यते। स विप्रलम्भो विज्ञेयः सम्भोगोन्नतिकारकः'—इत्युज्ज्वलनीलमणिः। ७४८

विप्रलापः पुं. [वि+प्र+लप्+घञ्] विरोधोक्तिः; परवचनविरोधिवचनम्; अन्योऽन्यविवदनमिति यावत्। [विरुद्धः प्रलापः, घञ्] 'स धर्मराजस्य वचो निशम्य रूक्षाक्षरं विप्रलापापविद्धम्'—इति महाभारते (६।८२।२५)। अनर्थकवाक्यम्; 'सत्यं श्रेयः पाण्डवविप्रलापं तुल्यञ्चान्नं सहभोज्यं सहायैः'—इति महाभारते (३।५।२१)। ७४८

विप्रियम् पुं.– क्ली. [विरुद्धं प्रीणातीति। वि+प्री+क] अपराधः; मन्तुः; व्यलीकम्; आगः; 'यन्नस्त्वं कर्मसन्धानां साधूनां गृहमेधिनाम्। कृतवानसि दुर्मर्ष विप्रियं तव मर्षितम्'—इति भागवते (६।५।४२)। अप्रियं त्रि.। 'पिण्डं पितॄणां व्युच्छिद्येत्तत्तेषां विप्रियं भवेत्'—इति महाभारते (१।१६०।८)। ७४९

विप्रुट् [ष्] स्त्री. [विशेषेण प्रोषति दहति पापानि। वि+प्रुष्+क्विप्] बिन्दुः; पृषतः; पृषता; जलबिन्दुः; 'मक्षिका विप्रुषश्छाया गौरश्वः सूर्यरश्मयः। रजो भूर्वायुरग्निश्च स्पर्शे मेध्यानि निर्दिशेत्'—इति मनुः।

विप्लवः पुं. [वि+प्लु+अप्] राष्ट्राद्युपद्रवः; डिम्बः; डमरः; 'सर्वां मडवराज्योर्वीं वीरः शमितविप्लवाम्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (८।१०४१)। परचक्रादिभयम्; अस्त्रकलहः; क्लेशः; उपद्रवः; 'विप्लवोऽभूद्दुःखितानां दुःसहः करुणात्मनाम्'—इति भागवते (४।२६।९)। विनाशः; 'संमन्त्र्य कौतुकात् पापास्तद्भार्याशीलविप्लवम्। चिकीर्षवो ययुः शीघ्रं ताम्रलिप्तीमलक्षिताः'—इति कथासरित्सागरे (१३।८२)। [विप्लवते इति, अच्] जलोपर्यवस्थितः; 'वणिजो नावि भग्नायामगाधे विप्लवा इव'—इति महाभारते (९।३।५)। १२७

विप्लुट् [ष्] स्त्री. [विशेषेण प्लोषतीति। वि+प्लुष्+क्विप्] विप्रुट्; बिन्दुः। ६१७

विबुधः पुं. [विशेषेण बुध्यते इति। वि+बुध्+क] देवः; सुरः; देवता; 'गन्धर्वा गुह्यका यक्षा विबुधानुचराश्च ये'—इति मनुः (१२।४७)। पण्डितः; 'ब्रवीमि विबुधः खेदं जनानां निह्नुते कथम्।' चन्द्रः; चन्द्रमाः। ४

विभवः पुं. [वि विशेषो भवति, पचाद्यच्। विशिष्टो भवत्यनेन वा, 'ऋदोरप्'] धनं; द्युम्नं; द्रव्यम्; 'न जीर्णमलवद्वासा भवेच्च विभवे सति'—इति मनुः (४।३४)। मोक्षः; ऐश्वर्यम्; 'भवता हरे स वृजिनोऽवसादितो नरसिंह नाथ विभवाय नो भव'—इति भागवते (७।८।५५)। प्रभवादिषष्टिसंवत्सरान्तर्गतद्वितीयसंवत्सरः; 'सुभिक्षं क्षेममारोग्यं सर्वे व्याधिविवर्जिताः। प्रशान्ता मानवास्तत्र बहुसस्या वसुन्धरा। हृष्टास्तुष्टा जनाः सर्वे विभवे च वरानने!'—इति भविष्यपुराणे।८०

विभववान् त्रि — धनवान्; आढ्यः; सम्पत्तिशाली; ऐश्वर्यवान्। २१३

विभा स्त्री. [विशेषेण भातीति। वि+भा+क्विप्] किरणः; प्रकाशः; शोभा; 'कमलेव मतिर्मतिरिव कमला तनुरिव विभा विभेव तनुः। धरणीव धृतिर्धृतिरिव धरणी सततं विभाति बत यस्य तव'—इति साहित्यदर्पणे (१०।६६७)। प्रकाशके त्रि.। 'यदुष औच्छः प्रथमा विभानाम्'—इति ऋग्वेदे (१०।५५।४) 'विभानां विभासकानां ग्रहनक्षत्रादीनाम्'—इति तद्भाष्ये सायणः।

३८

विभागः पुं. [वि+भज्+घञ्] भागः; अंशः; 'विभागोऽर्थस्य पित्र्यस्य पुत्रैर्यत्र प्रकल्प्यते। दायभाग इति प्रोक्तं तद्विवादपदं बुधैः'—इति नारदवचनम्। चतुर्विंशतिगुणावान्तरगुणविशेषः; 'शब्दाहेतुर्द्वितीयः स्याद् विभागोऽपि त्रिधा भवेत्। एककर्मोद्भवस्त्वाद्यो द्वयकर्मोद्भवः परः। विभागजस्तृतीयः स्यात्तृतीयोऽपि द्विधा भवेत्। हेतुमात्रविभागोत्थहेत्वहेतुविभागजः'—इति भाषापरिच्छेदः। ७९३

विभातम् क्ली. [वि+भा+क्त] कल्यम्; उषः; प्रत्यूषः; प्रगे; प्रभातः; विभाति। १११

विभावरी स्त्री. [विभाति नक्षत्रादिभिः, वि+भा+'अन्येभ्योऽपीति' क्वनिप्, 'वनो र च' इति ङीब्रत्वे] रात्रिः; यामिनी; निशा; निशीथिनी; शर्वरी; 'प्रभातायां विभावर्यां यथास्थानस्थितो नृपः। आकार्यतां मातृगुप्त इति क्षत्तारमादिशत्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (३।२०७)। मन्दारविद्याधरकन्या; 'मन्दारविद्याधरजा सखी मम विभावरी'—इति मार्कण्डेये (६३।१४)। सुमेरूत्तरस्था पुरी; 'उत्तरतः सौम्यां विभावरीं नाम'—इति भागवते (७५।२११७)। हरिद्रा; कुट्टनी; वक्रयोषित्; विवादवस्त्रमुण्डी; मौखर्यनिरतस्त्री; मुखरस्त्री; मेदावृक्षः। १०७

विभावसुः पुं. [विभा प्रभा एव वसु समृद्धिर्यस्य] अग्निः; वह्निः; अनलः; 'निबद्धां धूमजालेन प्रभामिव विभावसोः'—इति महाभारते (३।६८।७)। अर्कवृक्षः; चित्रकवृक्षः; चन्द्रः; हारभेदः; सूर्यः; 'वर्द्धनः कुरुवंशस्य विभावसुसमद्युतिः'—इति महाभारते (१।८६।७)। वसुपुत्रविशेषः; 'वसवोऽष्टौ वसोः पुत्रास्तेषां नामानि मे शृणु। द्रोणः प्राणो ध्रुवोऽर्कोऽग्निर्दोषो वास्तुर्विभावसुः। विभावसोरसूतोषा व्युष्टं रोचिषमातपम्'—इति भागवते (६।६।१०)। मुरासुरपुत्रः; 'ताम्रोऽन्तरिक्षः श्रवणो विभावसुः वसुर्नभस्वानरुणश्च सप्तमः'—इति भागवते (१०।५९।१२)। दनुपुत्रोऽसुरविशेषः; 'त्रिमूर्द्धा शम्बरोऽरिष्टो हयग्रीवो विभावसुः'—इति भागवते (६।६।३०)। ६३

विभीतः त्रि. [विगतं भीतं रोगभयमस्मात्। यद्वा विशिष्टं भीतं यस्मात्, भूतकल्योराश्रयत्वात्] वृक्षविशेषः; विभीतकः; विभीतकी; अक्षः; तुषः; कर्षफलः; भूतवासः; कलिद्रुमः; कल्पवृक्षः; संवर्तः; तैलफलः;

भूतावासः; संवर्तकः; वासन्तः; कलिवृक्षः; कलिरक्षः; वहेडुकः; हार्यः; विषघ्नः; अनिलघ्नः; कासघ्नः; 'प्रियालतालखर्जूरहरीतकविभीतकैः'–इति महाभारते (३।६४।५)। 'विभीतं भेदि तीक्ष्णोष्णं वैस्वर्यक्रिमिनाशनम्। चक्षुष्यं स्वादुपाकं च कषायं कफपित्तनुत्'—इति राजवल्लभः। ६१८

विभूषणम् क्ली. [विशेषेण भूषयत्यनेनेति। वि+भूष्+णिच्+ल्युट्] आभरणम्; 'अस्ति पाटलिपुत्राख्यं पुरं पृथ्वीविभूषणम्'—इति कथासरित्सागरे (१७।६४)। ५५७

विभूषा स्त्री. [वि+भूष् भूषणे+'गुरोश्च हलः' इत्य, स्त्रियां टाप्] राढा; शोभा; अभिख्या; सुषमा, 'ततः प्रबुद्धः शुचिरिष्टदेवः श्रीमद्विभूषोज्वलितः प्रहृष्टः'–इति कामन्दकीये (१५।४६)। आभरणम्; 'मानग्रहगुरुकोपादनुदयितात्येव रोचते मह्यम्। काञ्चनमयी विभूषा दाहाञ्चितशुद्धभावेव'—इति आर्यासप्तशत्याम् (४५९)। ५६५

विभ्रमः पुं. [वि+भ्रम्+घञ्] हावभेदः; स तु स्त्रीणां शृङ्गारभावजक्रियाभेदः; 'स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु'—इति मेघदूते (२९)। (६९१) भ्रान्तिः; शङ्का; सन्देहः; संशयः; विकल्पः; वितर्कः; विचिकित्सा; 'तमत्रिर्भगवानैक्षत् त्वरमाणं विहायसा। आमुक्तमिव पाषण्डं योऽधर्मे धर्मविभ्रमः'—इति भागवते (४।२१।१२)। शोभा (८१३); 'ललाटे शूलमुद्राङ्के जराशुक्लाः शिरोरुहाः। तस्य शम्भुभ्रमासङ्गिगङ्गाम्भोविभ्रमं दधुः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (३।३६७)। 'ज्याकृष्टिबद्धखटकामुखपाणिपृष्ठे प्रेङ्खन्नखांशुचयसंवलितोऽम्बिकायाः। त्वां पातु मञ्जरितपल्लवकर्णपूरलोभभ्रमद्भ्रमरविभ्रमभृत्कटाक्षः'—इति अमरुशतके (१)। संशयः; 'पूरयन् बहुनादाभिर्वाहिनीभिर्भुवस्तलम्। कुर्वन्नकाण्डनिर्मेघवर्षासमयविभ्रमम्'—इति कथासरित्सागरे (१९।३५)। भ्रमणं; विकारविशेषः; 'तीव्रार्तिरपि नाजीर्णी पिबेच्छूलघ्नमौषधम्। आमसन्नोऽनलो नालं पक्तुं दोषौषधाशनम्। निहन्यादपि चैतेषां विभ्रमः सहसातुरम्। जीर्णाशने तु भैषज्यं युञ्ज्यात् स्तब्धगुरूदरे'—इति वाग्भटः। मदरागहर्षजनितविपर्यासः; वस्त्राभरणमाल्यानामकारणतः खण्डनं माननं च; 'क्रोधः स्मितं च कुसुमाभरणादियाञ्चा, तद्वर्जनं च सहसैव विमण्डनं च। आक्षिप्य कान्तवचनं लपनं सखीभिर्निष्कारणोत्थितगतं वद विभ्रमं तत्।' 'चित्तवृत्त्यनवस्थानं शृङ्गाराद्विभ्रमो भवेत्।' 'विभ्रमस्त्वरया काले भूषास्थानविपर्ययः।' योषितां यौवनजो विकारः; 'वल्लभप्राप्तिवेलायां मदनावेशसंभ्रमात्। विभ्रमो हारमाल्यादिभूषास्थानविपर्ययः'—इत्युज्ज्वलनीलमणिः। ८९

विमलम् त्रि. [विगतो मलो यस्मात्] निर्मलं; वीध्रं; प्रयतं; शुचि; मेध्यं; पवित्रं; पुण्यं; पावनं; विशदम्; उज्ज्वलम्; अनाविलम्; 'प्रस्नविष्यन्ति तोयानि विमलानि महीधराः। विदर्शयन्तो विविधान् भूयश्चित्रांश्च निर्झरान्'—इति रामायणे (२।४८।१४)। चारु; 'रुचिधाम्नि भर्तरि भृशं विमलाः परलोकमभ्युपगते विविशुः'—इति माघे (९।१३)। क्ली. तारहेमद्विधाकृतम्; उपरसविशेषः; निर्मलं; स्वच्छम्; अमलं; स्वच्छधातुकम्; 'मूत्रारनालतैलेषु गोदुग्धे कदलीरसे। कौलत्थे कोद्रवक्वाथे माक्षिकं विमलं तथा। मुहुः शूरणकन्दस्थं स्वेदयेद्वरवर्णिनि !, क्षाराम्ललवणैश्चैव तैलसर्पिःसमन्वितम्। पुटत्रयं प्रदातव्यं ततस्तु शोधितं भवेत्। जम्बीरस्य रसे स्विन्नो मेषशृङ्गीरसैस्तथा। रम्भातोयेन वा पाच्यं घस्रं विमलशुद्धये'–इति वैद्यकरसेन्द्रसारसंग्रहः। पुं. [विगतो मलः पापं यस्मात्] अर्हन्; सुद्युम्नपुत्रः; 'तस्योत्कलो गयो राजन् विमलश्च त्रयः सुताः'—इति भागवते (९।१।४१)। १३२

विमानम् पुं.– क्ली. [विगतं मानमुपमा यस्य] देवरथः; व्योमयानं; देवयानम्; 'भुवनालोकनप्रीतिः स्वर्गिभिर्नानुभूयते। खिलीभूते विमानानां तदापातभयात् पथि'—इति कुमारे (२।४५)। सार्वभौमगृहं; सप्तभूमिगृहम्; 'सर्वरत्नसमाकीर्णां विमानग्रहशोभिताम्'–इति रामायणे (१।५।१६)। 'विमानोऽस्त्री देवयाने सप्तभूमौ च सद्मनि'—इति कोषान्तरम्। घोटकः; यानमात्रं; त्रि. परिच्छेदकम्; 'सोमापूषणा रजसो विमानं सप्तचक्रं रथमविश्वमिन्वम्'—इति ऋग्वेदे (२।४०।३)। 'विमानं परिच्छेदकं सर्वमानमित्यर्थः'—इति तद्भाष्ये सायणः। साधनम्; 'पिता यज्ञानामसुरो विपश्चितां विमानमग्निर्वयुनं च वाघताम्'—इति ऋग्वेदे (३।३।४)।

'विमानं विमीयतेऽनेन फलमिति विमानं यज्ञादिकर्मसाधनम्' इति तद्भाष्ये सायणः। [विगतो मानो यस्येति] अवज्ञातः; 'कर्हिस्मचित् क्षुद्ररसान् विचिन्वंस्तन्मक्षिकाभिर्व्यथितो विमानः। तत्रातिकृच्छ्रं प्रतिलब्धमानो बलाद्विलुम्पन्त्यथ तांस्ततोऽन्ये'–इति भागवते (५।१३।१०)। ८३

विम्बः पुं.– क्ली. [वी+'उल्वादयश्च' इति वन् प्रत्ययेन निपातनात् साधुः] मण्डलमात्रं; बिम्बम्; 'नितम्बविम्बैः सुदुकूलमेखलैः स्तनैः सहाराभरणैः सचन्दनैः। शिरोरुहैः स्नानकषायवासितैः स्त्रियो निदाघं शमयन्ति कामिनाम्'—इति ऋतुसंहारे (१।४)। 'आत्मानमालोक्य च शोभमानमादर्शविम्बे स्तिमितायताक्षी। हरोपयाने त्वरिता बभूव स्त्रीणां प्रियालोकफलो हि वेशः'—इति कुमारे (७।२७)। सूर्यचन्द्रमण्डलम्; 'असौ त्वदन्यो न सनातनः पुमान्, भवान् न देवात्पुरुषोत्तमात् परः। स एव भिन्नस्त्वमनादिमायया द्विधेव विम्बं सलिले विवस्वतः'—इति प्रबोधचन्द्रोदये ६ अङ्के। 'ईषत्सहासममलं परिपूर्णचन्द्रविम्बानुकारि कनकोत्तमकान्तिकान्तम्'—इति मार्कण्डेये (८४।११)। पुं. कृकलासः; क्ली. प्रतिविम्बं; कमण्डलुः; मूर्तिः; 'प्रदर्शयतिप्ततपसामवितृप्तदृशां नृणाम्। आदायान्तर्दधाद् यस्तु स्वविम्बं लोकलोचनम्'—इति भागवते (३।२।११)। 'मेघवाहनभूभर्तृपत्न्या भिन्नाख्यया कृते। विहारेऽपि तया बुद्धविम्बं साधु निवेशितम्'— इति राजतरङ्गिण्याम् (३।४६६)। विम्बिकाफलं; तुण्डिकेरी; रक्तफला; विम्बिका; पीलुपर्णी; ओष्ठी; विम्बी; विम्बा; विम्बकं; विम्बजा; 'विम्बं रक्तफला तुम्बी तुण्डिकेरी च विम्बिका। ओष्ठोपमफला प्रोक्ता पीलुपर्णी च कथ्यते। विम्बीफलं स्वादु शीतं गुरु पित्तास्रवातजित्। स्तम्भनं लेखनं रुच्यं विबन्धाध्मानकारकम्'—इति भावप्रकाशः। ४४

विम्बा स्त्री. [विम्बं फलमस्त्यस्यामिति। विम्ब+अच्+टाप्] विम्बिका। २०३

विम्बी स्त्री. [जिम्ब+गौरादित्वाद् ङीष्] बिम्बिका; बिम्बं; पीलुपर्णी; ओष्ठी, तुण्डिका; 'काकादनीं चित्रफलां विम्बीं गुञ्जाश्च धारयेत्'—इति सुश्रुतः। २०३

वियत् क्ली. [वियच्छति न विरमतीति। वि+यम्+'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति क्विप्, 'क्वौ च गमादीनामिति' मलोपे तुक्] आकाशम्; 'तर्ह्येव तन्नाभिसरःसरोजमात्मानमम्भः श्वसनं वियच्च। ददर्श देवो जगतो विधाता नातः परं लोकविसर्गदृष्टिः'—इति भागवते (३।८।३३)। द्यावापृथिव्यौ; अत्र द्विवचनस्य प्रयोगः; 'द्यावापृथिवी सहास्ताम्। ते वियती अब्रूताम्'—इति तैत्तिरीयब्राह्मणे (१।१।३।२)। 'तयोर्वियत्योर्योऽन्तरेणाकाश आसीत् तदन्तरिक्षमभवत्'—इति शतपथब्राह्मणे (७।१।२।२३)। त्रि. [वि+या+शतृ] गमनशीलः; 'कुटुम्बपोषाय वियन्निजायुर्न बुध्यतेऽर्थं विहतं प्रमत्तः'—इति भागवते (७।६।१४)। 'वियद्वित्तस्य ददतो लब्धं लब्धं बुभूषतः। निष्किञ्चनस्य धीरस्य सकुटुम्बस्य सीदतः। व्यतीयुरष्टचत्वारिंशदहान्यपिबतः किल'—इति भागवते (९।२१।३)। 'वियद्वित्तस्य वियतो गगनादिव उद्यमं विनैव दैवादुपस्थितं वित्तं भोग्यं यस्य। यद्वा वियत् व्ययं प्राप्नुवद्वित्तं भोग्यं यस्य'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। १३७

वियराडी स्त्री.—रागिणीविशेषः। १०३ अ

वियातः त्रि. [विरुद्धं निन्दनीयं यातं यस्य] निर्लज्जः; धृष्टः। ३७१

वियुतार्थकम् त्रि. [वियुतः च्युतः अर्थः यस्मात्] अबद्धम्; आसत्तिहीनवाक्यम्। १४१

वियोगः पुं. [वि+युज्+घञ्] विच्छेदः; विप्रलम्भः; विप्रयोगः; विरहः; 'यस्य योगं न वाञ्छन्ति वियोगभयकातराः। भजन्ति चरणाम्भोजं मुनयो हरिमेधसः'—इति भागवते (९।१३।९)। ७४२

विरञ्चः पुं. [विशदं रचयति, वि+रच्+अच्, पृषोदरादित्वान्नुम्] ब्रह्मा; स्रष्टा; वेधाः। ७

विरञ्चिः पुं. [वि+रच्+णिच्+'अच इः', नुम्] ब्रह्मा; विधाता। ७

विरलेतरः त्रि. [विरलादितरः] निरन्तरः; घनः; सान्द्रः; सघनः। ७१७

विरहः पुं. [वि+रह् त्यागे+घ] विच्छेदः; विप्रलम्भः; विप्रयोगः; वियोगः; 'सङ्गमविरहविकल्पे वरमिह विरहो न सङ्गमस्तस्याः। सङ्गे सैव तथैका त्रिभुवनमपि तन्मयं विरहे'—इति साहित्यदर्पणे (१०)। 'पानं दुर्जनसंसर्गः पत्या च विरहोऽटनम्। स्वप्नोऽन्यगेहे वासश्च नारीणां

दूषणानि षट्'—इति मनुः (९।१३)। ७४२

विरागार्हः त्रि. [विरागम् अर्हतीति। विराग+अर्ह्+अच्] विरागयोग्यः; वैरङ्गिकः। ७४२

विरिञ्चः पुं. [वि+रच्+पृषोदरादित्वात् साधुः] ब्रह्मा; विरिञ्चिः; विरिञ्चनः; विधाता; सृष्टिकर्ता; कमलासनः। ६

विरिञ्चिः पुं. [वि+रच्+णिच्+इ प्रत्ययः, निपातनात् नुम् इत्वं च। ब्रह्मा; शिवः; विष्णुः। ६

विरूक्षणम् क्ली. [वि+रूक्ष् पारुष्ये+भावे ल्युट्] शापः; आक्रोशः। १४९

विरूपाक्षः पुं. [विरूपे अक्षिणी यस्य। 'सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात् षच्' इति षच्] शिवः; शङ्करः; महादेवः; उमापतिः; 'दृशा दग्धं मनसिजं जीवयन्ति दृशैव याः। विरूपाक्षस्य जयिनीस्ताः स्तुमो वामलोचनाः'—इति साहित्यदर्पणे (१०)। रुद्रभेदः; तस्य पुरी सुमेरोर्नैर्ऋत्यकोणे वर्तते; 'तथा चतुर्थे दिग्भागे नैर्ऋताधिपतेः सुता। नाम्ना कृष्णावती नाम वीरूपाक्षस्य धीमतः'—इति वाराहे, रुद्रगीता। विरूपे त्रि.। 'वपुर्विरूपाक्षमलक्ष्यजन्मता दिगम्बरत्वेन निवेदितं वसु'—इति कुमारे (५।७२)। १३

विरोकः पुं. [वि+रुच्+घञ्। कुत्वम्] सूर्यकिरणः; प्रातः; 'पूर्वो ऋतस्य संदृशश्चकानः संदूतो अद्यौ दुषको विरोके'—इति ऋग्वेदे (३।५।२)। 'विरोके विरोचने प्रातःकाले'—इति तद्भाष्ये सायणः। क्ली. छिद्रम्; 'नासाविरोकपवनोल्लमितं तनीयो रोमाञ्चतामिव जगाम रजः पृथिव्याः'—इति माघे (५।५४)। ३९

विरोचनः पुं. [विशेषेण रोचते इति। वि+रुच्+'अनुदात्तेतश्च हलादेः' इति युच्] सूर्यः; आदित्यः; भानुः; रविः; मार्तण्डः; दिवाकरः; दिनकरः; प्रभाकरः; विभाकरः; 'दिवाकरः सप्तसप्तिर्धामकेशी विरोचनः'—इति महाभारते (३।३।६३)। अर्कवृक्षः; प्रह्लादतनयः; बलिराजपिता; (माघे १४-७५)। 'प्रह्लादस्य त्रयः पुत्राः ख्याताः सर्वत्र भारत। विरोचनश्च कुम्भश्च निकुम्भश्चेति भारत'—इति महाभारते (३।३।६३)। अग्निः; चन्द्रः; चन्द्रमाः; 'तासां तद्वचनं श्रुत्वा दक्षः सोममथाब्रवीत्। समं वर्तस्व भार्यासु मा त्वां शप्स्ये विरोचन!'—इति महाभारते (९।३५।५३)। रोहितकवृक्षः; श्योनाकप्रभेदः; घृतकरञ्जः; त्रि. दीप्तिशाली; 'तेजसाभ्यधिकौ सूर्यात् सर्वलोकविरोचनात्'—इति महाभारते (१२।३४३।३४)। ३६

विरोधी [न्] पुं. [विरुणद्धीति। वि+रुध्+णिनि] शत्रुः; 'सर्वान् परित्यजेदर्थान् स्वाध्यायस्य विरोधिनः'—इति मनुः (४।१७)। [विरोधोऽस्त्यस्मिन्निति। विरोध+इनि] प्रभवादिषष्टिसंवत्सरान्तर्गतत्रयोविंशवर्षम्; 'अनग्निप्रबला लोका धान्यौषधिप्रपीडनम्। जायते मानुषे कष्टं विरोधिनि न संशयः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। विरोधविशिष्टे त्रि.। 'विरोधिसत्त्वोज्झितपूर्वमत्सरं द्रुमैरभीष्टप्रसवार्चितातिथि'—इति कुमारे (५।१७)। ४५५

विलग्नम् क्ली. [विशेषेण लग्नम्] मध्यः; अवलग्नं; मध्यमः; कटः; कटिः; 'मध्योऽवलग्नं विलग्नं मध्यमोऽथ कटः कटिः'—इति हेमचन्द्रः। जन्मलग्नम्; 'गोचरे वा विलग्ने वा ये ग्रहा रिष्टसूचकाः। पूजयेत् तान् प्रयत्नेन पूजिताः स्युः शुभावहाः।' मेषादिलग्नमात्रम्; 'शुभग्रहार्कवारे च मृदुक्षिप्रध्रुवेषु च। शुभराशिविलग्ने च शुभं शान्तिकपौष्टिकम्'—इति दीपिका। संलग्ने त्रि.। 'विलग्नं न स्त्रियां मन्ये त्रिषु स्याल्लग्नमात्रके'—इति मेदिनी। ५१७

विलापः पुं. [वि+लप्+घञ्] अनुशोचनोक्तिः; परिदेवनं; क्रन्दनादः; 'क्रन्दनादो विलापः स्यात्परिदेवनमित्यपि'—इति शब्दरत्नावली। 'विलापो दुःखजं वचः'-इत्युज्ज्वलनीलमणिः। 'उन्मदमदनमनोरथपथिकवधूजननजनितविलापे। अलिकुलसङ्कुलकुसुमसमूहनिराकुलवकुलकलापे'—इति गीतगोविन्दे (१।२९)। ६३९

विलालः पुं. [डलयोरेकत्वस्मरणात्] बिडालः; यन्त्रम्। २३६

विलासः पुं. [वि+लस्+घञ्] हावभेदः; स्त्रीशृङ्गारचेष्टा; 'लतासु तन्वीषु विलासचेष्टितं विलोलदृष्टं हरिणाङ्गनासु च'—इति कुमारे (५।१५)। लीला; क्रीडा; 'तैर्दर्शनीयावयवैरुदारविलासहासेक्षितवामसूक्तैः'—इति भागवते (३।२५।३५)। ८९

विलीनः त्रि. [वि+ली+क्त, 'स्वादय ओदितः' इत्युक्तेः 'ओदितश्च' इति नत्वम्] प्राप्तद्रवीभावघृतादिः; विद्रुतः; द्रुतः; विश्लिष्टः; विशेषेण लीनः; 'करादस्य

भ्रष्टे ननु शिखरिणी दृश्यति शिशोर्विलीनाः स्मः सत्यं नियतमवधेयं तदखिलैः। इति त्रस्यद्गोपानुचितनिभृतालापजनितस्मितं बिभ्रद्देवो जगदवतु गोवर्धनधरः'—इति छन्दोमञ्जरी। २७६

विलेपनम् क्ली. [विलिप्यन्तेऽङ्गान्यनेनेति। वि+लिप्+ल्युट्] अङ्गरागः; गात्रानुलेपनयोग्यं पिष्टं घृष्टं वा सुगन्धिद्रव्यम्; गात्रानुलेपनी; वर्तिः; वर्णकम्; 'द्वे गात्रानुलेपनयोग्ये वर्तितविलेपने। वर्णकादिद्वयं घृष्टचन्दनादिविलेपने।' कुङ्कुमादिलेपनं; समालम्भः। ५४५

विलेपनी स्त्री. [विलिप्यतेऽसाविति। वि+लिप्+कर्मणि करणे वा ल्युट्। स्त्रियां ङीष्] यवागूः; सुवेशा स्त्री।३२०

विलेपिका स्त्री. [विलिप्यतेऽसाविति। वि+लिप्+कर्मणि घञ्, स्त्रियां ङीष्, विलेपी+क टाप् च] विलेपी; यवागूः; विलेप्यः; उष्णिका; श्राणं; तरला; 'अन्नं पञ्चगुणे साध्यं चतुर्गुणे विलेपिका। मण्डश्चतुर्दशगुणे यवागूः षड्गुणेऽम्भसि'—इति वैद्यकोक्तो भेदः। ३२०

विल्वः पुं. [विल् संवरणे, वा बिल् भेदने+'उल्वादयश्चेति' साधुः] फलवृक्षविशेषः; शाण्डिल्यः; शैलूषः; मालूरः; श्रीफलः; महाकपित्थः; गोहरीतकी; पूतिवातः; अतिमङ्गल्यः; महाफलः; शल्यः; हृद्यगन्धः; शालाटुः; कर्कटाह्वः; शैलपत्रः; शिवेष्टः; पत्रश्रेष्ठः; त्रिपत्रः; गन्धपत्रः; लक्ष्मीफलः; गन्धफलः; दुरारोहः; त्रिशाखपत्रः; त्रिशिखः; शिवद्रुमः; सदाफलः; सत्यफलः; सुभूतिकः; समीरसारः। 'काञ्जिके संस्थितं विल्वमग्निसंदीपनं परम्'—इति वैद्यकम्। 'विल्वं बालं कषायोष्णं पाचनं वह्निदीपनम्। संग्राहि तिक्तकटुकं तीक्ष्णं वातकफापहम्। पक्वं सुगन्धि मधुरं दुर्जरं ग्राहि दोषलम्। फलेषु परिपक्वेषु यो गुणः समुदाहृतः। विल्वादन्यत्र स ज्ञेयो विल्वमामं गुणोत्तरम्। कफवातामपित्तघ्नी ग्राहिणी विल्वपेषिका'—इति राजवल्लभः। १९४

विवक्षितः त्रि. [वच् धातोः सनि क्त प्रत्ययेन निष्पन्नोऽयम्] वक्तुमिष्टः; शक्यार्थः; शोभनः। ८०२

विवधः पुं. [विविधो वधो हननं गमनं वा यत्र] पर्याहारः; वीवधः; भारः; मार्गः; पन्थाः; व्रीहितृणादेः पर्याहरणं; उपरितो बद्धशिक्यस्कन्धवाह्यकाष्ठम्। ७५८

विवरम् क्ली. [विवृणोतीति, वि+वृ+पचाद्यच्] छिद्रं; बिलम्; 'यच्चकार विवरं शिलाघने ताडकोरसि स रामसायकः। अप्रविष्टविषयस्य रक्षसां द्वारतामगमदन्तकस्य तत्'—इति रघौ (११।१८)। दोषः; 'एकाग्रः स्यादविवृतो नित्यं विवरदर्शकः। राजन् राज्यं सपत्नेषु नित्योद्विग्नः समाचरेत्'—इति महाभारते (१।१४१।१७)। अवकाशः; 'विशेषबुद्धेर्विवरं मनाक् च पश्याम यत्र व्यवहारतोऽन्यत्'—इति भागवते (५।१०।१२)। ६२४

विवरणम् क्ली. [वि+वृ+ल्युट्] व्याख्या; स्पष्टीकरणम्। ४००

विवर्णः त्रि. [विकृतो वर्णो यस्य] मूढः; मन्दः; मूर्खः; मातृशासितः; मलिनः; 'विवर्णवदनं दृष्ट्वा तं प्रस्विन्नममर्षणम्। आह दुःखाभिसन्तप्ता किमिदानीमिदं प्रभो'—इति रामायणे (२।२६।८)। पुं. [विरुद्धो वर्णः] नीचः; 'भैक्षचर्या विवर्णेषु जघन्या वृत्तिरिष्यते'—इति मार्कण्डेये (४१।१०)। ३३६

विवस्वान् [त्] पुं. [विशेषेण वस्ते आच्छादयतीति। वि+वस्+क्विप्। विवस्तेजोऽस्यास्तीति, विवस्+मतुप्, मस्य वः, 'तसौ मत्वर्थे' इति भत्वादुत्वाभावः] सूर्यः; 'भवति दीप्तिरदीपितकन्दरा तिमिरसंवलितेव विवस्वतः'—इति किराते (५।४८)। देवता (८१४); अर्कवृक्षः; अरुणः; वैवस्वतमनुः; मनुष्यः; त्रि. परिचरणशीलः; 'देवेभ्यो दाशद्धविषा विवस्वते'—इति ऋग्वेदे (१०।६५।६)। 'हविषा अन्नेन देवान् विवस्वते परिचरते'—इति तद्भाष्ये सायणः।३५

विवाहः पुं. [विशिष्टं वहनम्। वि+वह्+घञ्] दारपरिग्रहः, उपयमः; परिणयः; उद्वाहः; उपयामः; पाणिपीडनं; दारकर्म; करग्रहः; पाणिग्रहणं; निवेशः। 'ब्राह्मो विवाह आहूय दीयते शक्त्यलङ्कृता। तज्जः पुनात्युभयतः पुरुषानेकविंशतिम्। यज्ञस्थायर्त्विजे दैवमादायार्षन्तु गोयुगम्। चतुर्दशप्रथमजः पुनात्युत्तरजश्च षट्। इत्युक्त्वा चरतां धर्मं सह या दीयतेऽर्थिने। सकायः पावयेत्तज्जः षड् वश्यांश्च सहात्मना। आसुरो द्रविणादानात् गान्धर्वः समयान्मिथः। राक्षसो युद्धहरणात् पैशाचः कन्यकाच्छलात्'—इति याज्ञवल्क्यः। ४९५

विद् [श्] पुं. [विश्+क्विप्] मनुजः; मनुष्यः; मानुषः; मर्त्यः; मानवः; 'अथ प्रदोषे दोषज्ञः संवेशाय विशां पतिम्।

सूनुः सूनृतवाक् स्रष्टुर्विससर्जोदितश्रियम्'—इति रघौ (१।९३)। (५७०) वैश्यः; ऊरव्यः; अर्यः; भूमिस्पृक्; 'गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम्। गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भाच्च द्वादशे विशः'—इति मनुः (२।३६)। प्रवेशः। ३३१

विशङ्कटः त्रि. [वि+'वेः शालच्छङ्कटचौ' इति शङ्कटच्] विशालः; 'विशङ्कटो वक्षसि बाणपाणिः सम्पन्नतालद्वयसः पुरस्तात्'—इति भट्टिः (२।५०)। भयानकः; मांसासृङ्मत्तवेतालतालवाद्यविशङ्कटः। अभून्नृत्यत्कबन्धोऽसौ भूतप्रीत्यै रणोत्सवः'—इति कथासरित्सागरे। ७५३

विशदः त्रि. [वि+शद्+अच्] विमलः; शुचिः; मेध्यः; पवित्रः; पुण्यः; पावनः; वीध्रः; उज्ज्वलः; अनाविलः; 'प्रसादसुमुखे तस्मिन् चन्द्रे च विशदप्रभे। तदा चक्षुष्मतां प्रीतिरासीत् समरसा द्वयोः'—इति रघौ (४।१८)। (७५२) प्रकटः; स्पष्टः; प्रकाशः; स्फुटः; व्यक्तः; 'विशदोच्छ्वसितेन मेदिनी कथयामास कृतार्थतामिव'—इति रघौ (८।३)। शुक्लगुणयुक्तः; उज्ज्वलः; 'स्वच्छाम्भःस्नपनविधौतमङ्गमोष्ठस्ताम्बूलद्युतिविशदो विलासिनीनाम्। वासश्च प्रतनु विविक्तमस्त्वितीयानाकल्पो यदि कुसुमेषुणा न शून्यः'—इति माघे (८।७०)। श्वेतवर्णः; जयद्रथपुत्रः; 'बृहत्कायस्ततस्तस्य पुत्र आसीज्जयद्रथः। तत्सुतो विशदस्तस्य स्येनजित् समजायत'—इति भागवते (९।२१।२३)। १३२

विशसनम् क्ली. [वि+शस् हिंसायाम्+ल्युट्] मारणम्; 'तस्मिन् विशसने घोरे चक्रलाङ्गलसम्प्लवे। दारुणानि प्रवृत्तानि रक्षांस्यौत्पातिकानि च'—इति हरिवंशे (९९।४३)। नरकविशेषः; 'प्राणरोधो विशसनं लालाभक्षः सारमेयादनमरीचिरयःपानमिति'—भागवते (५।२६।७)। विनाशकारिणि त्रि.। 'यमदण्डोपमां गुर्वीमिन्द्राशनिसमस्वनाम्। अपश्याम महाराज! रौद्रीं विशसनीं गदाम्'—इति महाभारते (६।५९।६०)। पुं. [विशसति हिनस्तीति, वि+शस् हिंसायाम्+ल्यु] खड्गः; 'असिविशसनः खड्गस्तीक्ष्णधारो दुरासदः। श्रीगर्भो विजयश्चैव धर्मपालस्तथैव च'—इति महाभारते (१२।१६६।८४)। ४७७

विशाखः पुं. [विशेषेण शाखति, शाखृ व्याप्ती+पचाद्यच्। विशाखायां जातो वा, 'श्रविष्ठाफल्गुनीति' जातार्थाणो लुक्] कार्तिकेयः; 'प्रभुर्नेता विशाखश्च नैगमेयः सुदुश्चरः'—इति महाभारते (३।२३१।७)। धन्विनां वितस्त्यन्तरेण पादसंस्थानम्; याचकः; पुनर्नवा; [विगता शाखा यस्य] त्रि. शाखाविहीनः; 'कबन्धोऽवस्थितः संख्ये विशाख इव पादपः'—इति हरिवंशे (४८।५२)। १९

विशायः पुं. [वि+शी+'व्युपयोः शेतेः पर्याये' इति घञ्] प्रहरिकादीनां क्रमेण शयनं; उपशायः; 'उपशायो विशायश्च पर्यायशयनार्थकौ'—इति अमरे। ७३९

विशारदः त्रि. [विशिष्टः शारदः, प्रादिसमासः। विशिष्टा शारदा यस्य वा] विद्वान्; 'दूतं चैव प्रकुर्वीत सर्वशास्त्रविशारदम्'—इति मनुः (७।६३)। प्रगल्भः; प्रसिद्धः; श्रेष्ठः; पुं. वकुलवृक्षः। ३३३

विशालः त्रि. [वि+'वेः शालच्छङ्कटचौ' इति शालच्। यद्वा विश् प्रवेशने, 'तमिविशिविडीति' कालन्] बृहत्; 'अवन्तिनाथोऽयमुदग्रबाहुर्विशालवक्षास्तनुवृत्तमध्यः'—इति रघौ (६।३२)। [विगतः शालः स्तम्भो यस्य] स्तम्भरहितः; 'गृहैर्विशालैरपि भूरिशालैः।' पुं. [विश्+कालन्] मृगभेदः; पक्षिभेदः; नृपभेदः; वृक्षभेद; वृक्षविशेषः।(७५३) विशङ्कटः; करालः; विकटः। ६९९

विशालता स्त्री. [विशालस्य भावः। विशाल+तल्] विशालत्वं; पार्श्वविस्तारः; परिणाहः; 'उन्नतमीषच्छृङ्गं नौसंस्थाने विशालता चोक्ता'—इति बृहत्संहितायाम् (४।८)। ७८६

विशिखः पुं. [विशिष्टा शिखा यस्य] शरः; बाणः; 'सन्दधे विशिखं भूमेः क्रुद्धस्त्रिपुरहा यथा'—इति भागवते (७।१७।१३)। शरवृक्षः; तोमरः; त्रि. [विगता शिखा यस्य] शिखारहितः; 'विशिखोऽनुपवीती च कृतं कर्म न तत्कृतम्'—इति स्मृतिः। ४६६

विशिखा स्त्री. [वि शेते, 'शीङः किद् ह्रस्वश्च' इति ख, टाप्] रथ्या; प्रतोली; [विशिखान्तराण्यतिपपात सपदि जवनैः स वाजिभिः'—इति माघे (१५।१७)। खनित्री; नालिका। २८९

विशेषः पुं. [वि+शिष्+घञ्] प्रभेदः; 'प्रजनार्थं महाभागाः पूजार्हा गृहदीप्तयः। स्त्रियः श्रियश्च गहेषु न

विशेषोऽस्ति कश्चन'—इति मनुः (९।२६)। प्रकारः; व्यक्तिः; तिलकः; सप्तपदार्थान्तर्गतपदार्थविशेषः; 'द्रव्यं गुणस्तथा कर्म सामान्यं सविशेषकम्। समवायस्तथाभावः पदार्थाः सप्त कीर्तिताः'—इति भाषापरिच्छेदः। अलङ्कारप्रभेदः; 'विशेषः ख्यातमाधारं विनाप्याधेयवर्णनम्। गते सूर्येऽपि दीपस्थास्तमश्छिन्दन्ति तत्कराः। विशेषः सोऽपि यद्येकं वस्त्वनेकत्र वर्ण्यते। अन्तर्बहिः पुरः पश्चात् सर्वदिश्यपि सैव मे। किञ्चिदारम्भतोऽशक्यवस्त्वन्तरकृतिश्च सः। त्वां पश्यता मया लब्धं कल्पवृक्षनिरीक्षणम्'—इति चन्द्रालोकः। पृथिवी; 'विशेषस्तु विकुर्वाणादम्भसो गन्धवानभूत्'—इति भागवते (२।५।२९)। 'विकारैः सहितो युक्तैर्विशेषादिभिरावृतः'—इति भागवते (३।११।४०)। त्रि. अतिशयितः; 'शशाम वृष्ट्यापि विना दवाग्निरासीद्विशेषा फलपुष्पवृद्धिः'—इति रघौ (२।१४)। १६९, ३०५

विशेषकः पुं.–क्ली. [विशेष एव। स्वार्थे कन्] ललाटकृततिलकः; तमालपत्रं; चित्रकं; पुण्ड्रम्; 'विशेषको वा विशिशेष यस्याः श्रियं त्रिलोकीतिलकः स एव'—इति माघे (३।६३)। पुं. तिलकवृक्षः; क्ली. पद्यविशेषः; 'द्वाभ्यान्तु युग्मकं प्रोक्तं त्रिभिः श्लोकैर्विशेषकम्। कलापकं चतुर्भिः स्यात् तदूर्ध्वं कुलकं स्मृतम्।' विशेषयितरि त्रि.। ५४१

विशेषणम् क्ली. [विशिष्यतेऽनेनेति। वि+शिष्+ल्युट्] विशेष्यधर्मः; विशेष्यगुणः; अप्रधानं; शेषः। ८८१

विश्रब्धः त्रि. [वि+श्रम्भ्+क्त] स्थिरः; अनुद्धटः; शान्तः; विश्वस्तः; 'विश्रब्धभृत्यः शृङ्गारनामा चाप्यब्रवीत् प्रभोः। तं दृष्ट्वांस्तृतीयेऽह्नि शयनेऽवगणं स्थितम्'–इति राजतरङ्गिण्याम् (८।२१२१)। अत्यर्थः; गाढः; निर्विशङ्कः; 'नियुज्यमानो विश्रब्धः किं न कुर्यामहं प्रियम्'—इति रामायणे (२।१९।५)। ३७०

विश्रम्भः पुं. [वि+श्रम्भ्+घञ्] विश्वासः; 'नित्यं पर्यचरत् प्रीत्या भवानीव भवं प्रभुम्। विश्रम्भेणात्मशौचेन गौरवेण दमेन च'—इति भागवते (३।२३।२)। केलिकलहः; प्रणयः; वधः। ७६९

विश्राणनम् क्ली. [वि+श्रण्+णिच्+ल्युट्] दानम्; 'कथं नु शक्योऽनुनयो महर्षेर्विश्राणनाच्चान्यपयस्विनीनाम्'—इति रघौ (२।५५)। ४१९

विश्लेषः पुं. [वि+श्लिष्+घञ्] विधुरः; अयोगः; 'सैषा स्थली यत्र विचिन्वता त्वां भ्रष्टं मया नूपुरमेकमुर्व्याम्। अदृश्यत त्वच्चरणारविन्दविश्लेषदुःखादिव बद्धमौनम्'—इति रघौ (१३।२३)। ८२४

विश्वः त्रि. [विश्+क्वन्] सकलं; सर्वं; समग्रं; समस्तं; कृत्स्नं; निखिलम्; अखिलम्; 'यस्तु विश्वस्य जगतो बुद्धिमाक्रम्य तिष्ठति। तं प्राहुरध्यात्मविदो विश्वजिन्नाम पावकम्'—इति महाभारते (३।२१८।१६)। बहुः; पुं. गणदेवताविशेषः; 'वसुसत्यौ क्रतुदक्षौ कालकामौ धृतिः कुरुः। पुरूरवा माद्रवाश्च विश्वेदेवाः प्रकीर्तिताः'–इति भरतः। नागरः; स्थूलशरीरव्यष्ट्युपहितचैतन्यं; परिमाणविशेषः; 'गुञ्जापणवतिस्तोलो दशघ्नं तद्भवेत् पलम्। विश्वा विंशपलं प्रोक्तं दिव्यं कोटिगुणं हि तत्। सैव कोटिगुणा ब्राह्मी विश्वाः सस्यादिसम्भवाः'—इति ज्योतिष्मती। क्ली. [विशति स्वकारणमिति। विश् प्रवेशने+'अशूप्रषिलटिफणीति' क्वन्] जगत्; संसारः; 'विश्वं वै ब्रह्म तन्मात्रं संस्थितं विष्णुमायया। ईश्वरेण परिच्छिन्नं कालेनाव्यक्तमूर्तिना'–इति भागवते (३।१०।१२)। बोलं; शुण्ठी; 'विश्वं महौषधं शुण्ठी नागरं विश्वभेषजम्'—इति वैद्यकरत्नमालायाम्। 'शुण्ठी विश्वा च विश्वं च नागरं विश्वभेषजम्। ऊषणं कटुभद्रं च शृङ्गवेरं महौषधम्'—इति भावप्रकाशः। ७१३

विश्वकद्रुः पुं. [विश्वकं सर्वं द्रवति। द्रु गतौ, मितद्र्वादित्वाड् डु। विश्वं कन्दति, कदि आह्वाने, 'जत्र्वादित्वेन साधुः] मृगयाकुशलकुक्कुरः; मृगव्यकुशलकुर्कुरः; ध्वानः; त्रि. खलः। २८२

विश्वकर्मा [न्] पुं. [विश्वेषु विश्व वा कर्म यस्य] देवशिल्पी; त्वष्टा; विश्वकृत्; देववर्द्धकिः; 'दृष्ट्वा च विश्वकर्माणं व्यादिदेश पितामहः'—इति महाभारते (१।२१२।१०)। मुनिभेदः; 'विश्वकर्मा प्रभासस्य पुत्रः शिल्पप्रजापतिः। प्रासादभवनोद्यानप्रतिमाभूषणादिषु। तडागारामकूपेषु स्मृतः सोऽमरवर्द्धकिः'—इति मात्स्ये ५ अध्यायः। चेतनाधातुः; सूर्यः। ८४

विश्वकृत् पुं. [विश्वं कृतवान् इति। विश्व+कृ+क्विप्] विश्वकर्मा; 'त्रिषु लोकेषु यत्किञ्चित् भूतं स्थावरजङ्गमम्। समानयद्दर्शनीयं तत्तदत्र स विश्वकृत्'—

इति महाभारते (१।२१२।१३)। ब्रह्मा; 'निवेदितोऽथाङ्गिरसा सोमं निर्भर्त्स्य विश्वकृत्। तारां स्वभर्त्रे प्रायच्छदन्तर्वत्नीमवैत्पतिः'— इति भागवते (९।१४।८)। ८४

विश्वभेषजम् क्ली. [विश्वेषां भेषजम्] शुण्ठी; नागरं; महौषधं; विश्वा; विश्वम्; 'विश्वभेषजमृद्वीकाचित्रकैर्मूत्रभावितैः'—इति सुश्रुतः। 'सस्नेहं दीपनं वृष्यमुष्णं वातकफापहम्। विपाके मधुरं हृद्यं रोचनं विश्वभेषजम्' —इति चरकः। ६१५

विश्वम्भरा स्त्री. [विश्वं बिभर्तीति। भृ+खच्, मुम्, टाप्] पृथिवी; पृथ्वी; 'विश्वम्भरा तद्धरणाच्चानन्तानन्तरूपतः। पृथिवी पृथुकन्यात्वाद्विस्तृतत्वान्महामुने'—इति ब्रह्मवैवर्ते। 'विश्वम्भरा भगवती भवतीमसूत राजा प्रजापतिसमो जनकः पिता ते'—इति उत्तररामचरिते १ अङ्के। १५६

विश्वरूपः पुं. [विश्वमेव रूपं यस्य] विष्णुः; अच्युतः; महादेवः; 'विश्वे देवाश्च यत्तस्मि विश्वरूपस्ततः स्मृतः'—इति महाभारते (७।२००।१२४)। त्वष्टृपुत्रः; 'त्वष्टुश्चाप्यात्मजः पुत्रो विश्वरूपो महायशाः'—इति विष्णुपुराणे (१।१५।१२२)। त्रि. सर्वरूपः— 'स सर्वनामा स च विश्वरूपः प्रसीदतामनिरुक्तात्मशक्तिः'—इति भागवते (६।४।२८)। २१

विश्वस्ता स्त्री. [विफलं श्वसिति स्म। वि+श्वस्+क्त, आगमस्य प्रायिकत्वान्नेट्] विधवा; 'स्तनयुगमुक्ताभरणाः कण्टककलिताङ्गयष्टयो देव। त्वयि कुपितेऽपि विश्वस्ताः प्रागेव रिपुस्त्रियो जाताः'—इति साहित्यदर्पणे १० परिच्छेदे। विश्वासकर्तरि त्रि.। ४८७

विश्वा स्त्री. [विश्व+टाप्] विश्वभेषजं; शुण्ठी; नागरं; महौषधं; [विश्+क्वन्+स्त्रियां टाप्] अतिविषा; शतावरी; विश्वस्था; पिप्पली; दक्षकन्याविशेषः; 'क्रोधा प्राधा च विश्वा च वनिता कपिला मुनिः'—इति महाभारते (१।६५।१२)। ६१५

विश्वासः पुं. [वि+श्वस्+घञ्] प्रत्ययः; विश्रम्भः; आश्वासः; आश्रमः; 'लोभप्रमादविश्वासैः पुरुषो नश्यति त्रिभिः। तस्माल्लोभो न कर्त्तव्यः प्रमादो न न विश्वसेत्। सा श्रीर्या न मदं कुर्यात् स सुखी तृष्णयोज्झितः। तन्मित्रं यस्य विश्वासः पुरुषः स जितेन्द्रियः'—इति गारुडे। 'यस्य यावांश्च विश्वासस्तस्य सिद्धिश्च तावती। एतावानिति कृष्णस्य प्रभावः परिमीयते'—इति गारुडे। 'न विश्वसेदविश्वस्ते विश्वस्ते नातिविश्वसेत्। विश्वासाद्भयमुत्पन्नं मूलादपि निकृन्तति'—इति गारुडे। 'नखिनां च नदीनां च शृङ्गिणां शस्त्रपाणिनाम्। विश्वासो नैव कर्तव्यः स्त्रीषु राजकुलेषु च। न विश्वसेदविश्वस्ते मित्रे चापि न विश्वसेत्। कदाचित् कुपितं मित्रं गुप्तदोषं प्रकाशयेत्'—इति चाणक्यः। ७६९

विषम् क्ली.– पुं. [विष्+क] क्ष्वेडः; गरलम्; आहेयम्; अमृतं; गरदं; कालकूटं; कलाकूलं; हारिद्रं; रक्तशृङ्गिकं; नीलं; गरं; घोरं; हालाहलं; हलाहलं; शृङ्गी; भूगरं; जाङ्गलं; तीक्ष्णं; रसः; रसायनं; गरः; जङ्गुलं; जाङ्गुलं; काकोलः; वत्सनाभः; प्रदीपनः; शौल्किकेयः; ब्रह्मपुत्रः। 'पुंसि क्लीबे च काकोलकालकूटहलाहलाः। सौराष्ट्रिकः शौल्किकेयो ब्रह्मपुत्रः प्रदीपनः। दारदो वत्सनाभश्च विषभेदा अमी नव'—इति पातालवर्गे अमरः। 'विषः क्ष्वेडो रसस्तीक्ष्णं गरलोऽथ हलाहलः। वत्सनाभः कालकूटो ब्रह्मपुत्रः प्रदीपनः। सौराष्ट्रिकः शौल्किकेयः काकोली दारदोऽपि च। अहिच्छत्रो मेषशृङ्गकुष्ठवालूकनन्दनाः। कैराटको हैमवतो मर्कटः करवीरकः। सर्षपो मूलको गौरार्द्रकः सक्तुककर्दमौ। अङ्कोल्लसारः कालिङ्गः शृङ्गिको मधुसिक्थकः। इन्द्रो लाङ्गलिको विस्फुलिङ्गपिङ्गलगौतमाः। मुस्तको दालवश्चेति स्थावरा विषजातयः'—इति हेमचन्द्रः। क्ली. [विष् सेचने+क] जलं; पद्मकेशरं; वोलं; वत्सनाभः; सामान्यविषम्; 'न विषं विषमित्याहुर्ब्रह्मस्वं विषमुच्यते। देवस्वं चापि यत्नेन सदा परिहरेत्ततः'—इति कौर्मे। 'दुरधीता विषं विद्या अजीर्णे भोजनं विषम्। विषं गोष्ठी दरिद्रस्य वृद्धस्य तरुणी विषम्। विषं चङ्क्रमणं रात्रौ विषं राज्ञोऽनुकूलता। विषं स्त्रियोऽप्यन्यहृदो विषं व्याधिरवीक्षितः'—इति चाणक्यः। ६४१, ६४६

विषधरः पुं. [विषं धरतीति। धृ+अच्, विषस्य धरो वा] सर्पः; 'कालियविषधरगञ्जनजनरञ्जन'—इति गीतगोविन्दे। स्त्रियां विषधरी; 'धावद्घोरविभावरीविषधरी भोगस्य भीमो मणिः।' ६४०

विषभिषक् [ज्] पुं. [विषस्य भिषक्] विषवैद्यः; जाङ्गुलिकः; जाङ्गलिकः; नरेन्द्रः; कौशिकः; कथाप्रसङ्गः; चक्राटः; व्यालग्राही; जाङ्गुलिः; जाङ्गलिः; आहितुण्डिकः; व्यालग्राहः; गारुडिकः; विषघ्नमन्त्रवेत्ता; विषवैद्यचिकित्सकः; 'ओझा' इति भाषा । ६१३

विषमायुधः पुं. [विषमाणि अयुग्मानि आयुधानि यस्य । तस्य पञ्चबाणत्वात्तथात्वम् । यद्वा विषमम् अत्युग्रम् असह्यम् इत्यर्थः, आयुधं यस्य] कामदेवः; पञ्चशरः; विषमेषुः । ३३

विषमोन्नतः त्रि. [विषमश्चासौ उन्नतश्च] गोलाकारः; वर्तुलः; स्यपुटः; विषमोन्नतावनतदृषदाद्याकुलः । ७५३

विषयः पुं. [विसीयन्ते अत्र, वि+षिञ् बन्धने, 'एरच्', 'परिनिवीति' षत्वम् । विसिन्वन्ति विषयिणं स्वेन रूपेण निरूपणीयं कुर्वन्ति । वि+षि+कर्तरि अच् वा] देशः; 'यञ्चकार विवरं शिलाघने ताडकोरसि स रामसायकः । अप्रविष्टविषयस्य रक्षसां द्वारतामभवदन्तकस्य तत्'—इति रघौ (११।१८) । चक्षुरादिग्राह्यः; शब्दस्पर्शरूपरसगन्धरूपः; गोचरः; इन्द्रियार्थः; अव्यक्तः; शुक्रः; जनपदः; कान्तादिः; नियामकः; 'विशब्दो हि विशेषार्थः सिनोतेर्बन्ध उच्यते । विशेषेण सिनोतीति विषयोऽतो नियामकः'—इति भट्टकारिका । आरोपाश्रयः; 'सारोपान्या तु यत्रोक्तौ विषयी विषयस्तथा । विषय्यन्तः कृतेऽन्यस्मिन् सा स्यात् साध्यवसानिका ।' २८४

विषयग्रामः पुं. [विषयाणां ग्रामः सङ्घः] इन्द्रियसमूहः; करणग्रामः । ८८१

विषाणम् पुं.–क्ली. [व्यस्ति, वि+अस्, 'ताच्छील्यवयोवचनेति' चानश्, 'श्नसोरल्लोपः', 'उपसर्गप्रादुरिति' षत्वम्] हस्तिदन्तः; 'न जातु वैनायकमेकमुद्धृतं विषाणमद्यापि पुनः प्ररोहति'—इति माघे (१।६०) । पशुश्रृङ्गम् (२६७); 'क्षिपसि शुकं वृषदंशकवदने मृगमर्पयसि मृगादनरदने । वितरसि तुरगं महिषविषाणे निदधच्चेतो भोगविताने'—इति साहित्यदर्पणे (१०) । कोलदन्तः; वराहदन्तः; विशेषेण मददातरि त्रि. । 'विषाणं परिपानमन्ति ते'—इति ऋग्वेदे (५।४४।११) । 'विषाणं विशेषेण मदस्य दातारम्'-इति तद्भाष्ये सायणः । २१७

विष्कम्भः पुं. [विष्कम्नाति रुणद्धीति । वि+ष्कम्भ्+अच्] प्रतिबन्धः; रूपकाङ्गप्रभेदः; योगिनां बन्धभेदः; वृक्षः; अर्गला; विस्तारः; 'उच्छ्रायोऽङ्गुलतुल्यो द्वारस्यार्द्धेन विष्कम्भः'—इति बृहत्संहितायाम् (५३।२४) । सप्तविंशतियोगान्तर्गतप्रथमयोगः । शुभकर्मणि तस्य पञ्च दण्डास्त्याज्याः, यथा—'त्यजादौ पञ्च विष्कम्भे सप्त शूले च नाडिकाः । गण्डव्याघातयोः षट् च नव हर्षणवज्रयोः । वैधृतिव्यतिपातौ च समस्तौ परिवर्जयेत्'—इति सत्कृत्यमुक्तावली । 'विष्कम्भयोगो यदि जन्मकाले कार्ये स्वतन्त्रो मनुजस्तदानीम् । सुहृत्कलत्रात्मजसौख्यमुग्रं गृहस्य निर्माणविधौ समर्थः'—इति कोष्ठीप्रदीपः । ७६९

विष्किरः पुं. [विकिरतीति । वि+कॄ विक्षेपे+'इगुपधेति' क । 'विष्किरः शकुनिर्विकिरो वा' इति सुट्, 'परिनिविभ्यः' इति षत्वम्] पक्षी; तित्तिरिमयूरकुक्कुटादयः । 'लावाद्या वैष्किरो वर्गः प्रतुदा जाङ्गला मृगाः । लघवः शीतमधुरा सकषाया हिता नृणाम्'—इति राजवल्लभः । 'वर्तकालावविकिरकपिञ्जलकतित्तिराः । कलिङ्गकुक्कुटाद्याश्च विष्किराः समुदाहृताः । विकीर्य भक्षयन्त्येते यस्मात्तस्माद्धि विष्किराः ।' 'विष्किरा मधुराः शीताः कषायाः कटुपाकिनः । बल्या वृष्यास्त्रिदोषघ्नाः पथ्यास्ते लघवः स्मृताः'—इति भावप्रकाशः । २३८

विष्टपम् क्ली.– पुं. ['विटपविष्टपविशिपोलपाः' इति विश् धातोः कपन् प्रत्ययेन साधु] भुवनं; पिष्टपं; पिष्टपः; 'बाणभिन्नहृदया निपेतुषी सा स्वकाननभुवं न केवलाम् । विष्टपत्रयपराजयस्थिरां रावणश्रियमपि व्यकम्पयत्'—इति रघौ (११।१९) । १३३

विष्टम्भः पुं. [वि+स्तम्भ्+अच्] प्रतिबन्धः; विष्कम्भः; 'स वृष्टिविष्टम्भग्रहोपशमनः'—इति भागवते (५।२२।१२) । रोगविशेषः; स तु आनाहरोगः । त्रि. विशेषेण स्तम्भयिता 'दिवो विष्टम्भ उपमो विचक्षणः'—इति ऋग्वेदे (९।८६।२५) । ७६९

विष्टरः पुं. [विस्तीर्यते इति । वि+स्तॄ+अप्, 'वृक्षासनयोर्विष्टरः'—इति निपातनात् षत्वम्] वृक्षः; अंह्रिपः; अङ्घ्रिपः; क्षितिरुहः; शिखरी; शाखी; शालः; वनस्पतिः; अगः; विटपः; विटपी; कुठः; कुटः; अद्रिः; कुजः; तरुः; अनोकहः; द्रुः; नगः; द्रुमः; पादपः । (३१०) पीठम्; आसनं; कुशासनादिग्रहः;

'काञ्ची गुणोल्लसच्छ्रोणिं हृदयाम्भोजविष्टरम्। दर्शनीयतमं शान्तं मनोनयनवर्द्धनम्'—इति भागवते (३।२८।१६)। दर्भमुष्टिः; 'ऊर्द्ध्वकेशो भवेद् ब्रह्मा लम्बकेशस्तु विष्टरः। दक्षिणावर्तको ब्रह्मा वामावर्तस्तु विष्टरः। 'दर्भसंख्या न विहिता विष्टरास्तरणेष्वपि।' 'पञ्चाशद्भिर्भवेद् ब्रह्मा तदर्द्धेन तु विष्टरः'—इति छन्दोगपरिशिष्टम्। १७७

विष्टरश्रवाः [स्] पुं. [विष्टराविव दर्भमुष्टीव श्रवसी कर्णौ श्रवः यशो वा यस्येति। विष्टरेऽश्वत्थवृक्षे श्रूयते नित्यं तत्र वसतीति। असुन्नन्तः] विष्णुः; अच्युतः; 'उत्पाटय वृक्षं दैत्येन्द्रः शतशाखं महाशिखम्। तेन तं पोथयामास विष्टरस्रवसं प्रभुम्'—इति हरिवंशे भविष्यपर्वणि (५१।१७)। २४

विष्ठा स्त्री. [विविधप्रकारेण तिष्ठति उदरे इति। वि+स्था+क। उपसर्गादिति षः] पुरीषम्; उच्चारः; अवस्करः; शमलं; शकृत्; गूथं; वर्च्चस्कं; विट्; वर्च्चः; अमेध्यं; दूर्यं; कल्लं; मलं; किट्टं; पूतिकम्। 'गुरोर्हितं प्रकर्तव्यं वाङ्मनःकायकर्मभिः। अहिताचरणादेव विष्ठायां जायते क्रिमिः'—इति कृष्णानन्दीयतन्त्रसारे। ६३७

विष्णुः पुं. [वेवेष्टि व्याप्नोति विश्वं यः। विष्लृ व्याप्तौ, 'विषेः किच्च' इति नु। वेषति सिञ्चति आप्यायते विश्वमिति वा। विष्णाति वियुनक्ति भक्तान् मायापसारेण संसारादिति वा। विशति सर्वभूतानि, विशन्ति सर्वभूतानि यत्र वा। 'यस्माद्विश्वमिदं सर्वं तस्य शक्त्या महात्मनः। तस्मादेवोच्यते विष्णुर्विशधातोः प्रवेशनात्'—इति विष्णुपुराणे। 'बृहत्वाद्विष्णुरुच्यते'—इति महाभारते (५।७०।३) च] नारायणः; कृष्णः; वैकुण्ठः; विष्टरश्रवाः; दामोदरः; हृषीकेशः; केशवः; माधवः; स्वभूः; दैत्यारिः; पुण्डरीकाक्षः; गोविन्दः; गरुडध्वजः; पीताम्बरः; अच्युतः; शार्ङ्गी; विष्वक्सेनः; जनार्दनः; उपेन्द्रः; इन्द्रावरजः; चक्रपाणिः; चतुर्भुजः; पद्मनाभः; मधुरिपुः; वासुदेवः; त्रिविक्रमः; देवकीनन्दनः; शौरिः; श्रीपतिः; पुरुषोत्तमः; वनमाली; बलिध्वंसी; कंसारातिः; अधोक्षजः; विश्वम्भरः; कैटभजित्; विधुः; श्रीवत्सलाञ्छनः; पुराणपुरुषः; वृष्णिः; शतधामा; गदाग्रजः; एकश्रृङ्गः; जगन्नाथः; विश्वरूपः; सनातनः; मुकुन्दः; राहुभेदी; वामनः; शिवकीर्तनः; श्रीनिवासः; अजः; वासुः। २१

विष्णुपदम् क्ली. [विष्णोः पदम्] आकाशम्; 'वसुन्धरा विष्णुपदं द्वितीयम्, अध्यारुरोहेव रजश्छलेन'—इति रघुवंशे (१६।२८)। क्षीरोदः; पद्मं; तीर्थविशेषः; 'तत्र विष्णुपदे स्नात्वा अर्चयित्वा च वामनम्। सर्वपापविशुद्धात्मा विष्णुलोकं स गच्छति'—इति महाभारते (७।८३।९५)। कैलासपर्वतस्य स्थानविशेषः; 'अत्र विष्णुपदं नाम क्रमता विष्णुना कृतम्'—इति महाभारते (५।१११।२२)। पर्वतविशेषः; 'तेन चित्ररथेनाथ तदा विष्णुपदे गिरौ'—इति हरिवंशे (३१।४३)। विष्णोः स्थानम्; 'अपुण्यपुण्योपरमे क्षीणाशेषाप्तिहेतवः। यत्र गत्वा न शोचन्ति तद्विष्णोः परमं पदम्। धर्मध्रुवाद्यास्तिष्ठन्ति यत्र ते लोकसाक्षिणः। तत्सार्ष्टचोत्पन्नयोगेद्धास्तद्विष्णोः परमं पदम्। यत्रैतदोतं प्रोतं च यद्भूतं सचराचरम्। भाव्यं च विश्वं मैत्रेय तद्विष्णोः परमं पदम्। दिवीव चक्षुराततं विततं तन्महात्मनाम्। विवेकज्ञानवृद्धं च तद्विविष्णोः परं पदम्'—इति विष्णुपुराणे। १३७

विष्णुपदी स्त्री. [विष्णोः पदं स्थानं यस्याः। गौरादित्वाद् ङीष्] गङ्गा; भागीरथी; सुरसरित्; जाह्नवी; मन्दाकिनी; त्रिपथगा; सरिद्वरा; त्रिदशदीर्घिका; सुरदीर्घिका; वियद्गङ्गा; 'इति व्यवच्छिद्य स पाण्डवेयः प्रायोपवेशं प्रति विष्णुपद्याम्। दध्यौ मुकुन्दाङ्घ्रिमनन्यभावो मुनिव्रतो मुक्तसमस्तसङ्गः'—इति भागवते (१।१९।७)। ६७३

विष्वक् अव्य. [विषु साम्येनाञ्चति। 'ऋत्विगिति' क्विन्] परितः; सर्वतः; समन्तात्; समन्ततः; 'कृतान्त इव लोकानां युगान्तसमये यथा। विष्वग्विवर्द्धमानं तमिषुमात्रं दिने दिने'—इति भागवते (६।९।१३)। क्ली. विषुवम्; विष्वम् अञ्चति इत्यर्थे त्रि.। 'युधि तुरगरजोविधूम्रविष्वक्कचलुलितश्रमवार्यलङ्कृतास्ये'—इति भागवते (१।९।३४)। ८७४

विष्वक्सेनः पुं. [विष्वक्, उगित्त्वान्ङीप्, विषूची सेना यस्य। चर्त्वस्यासिद्धत्वाद् गान्तत्वेन गकारव्यवधनान्न षः] विष्णुः; जनार्दनः; अच्युतः; 'साम्यमाप कमलासखविष्वक्सेनसेवितयुगान्तपयोधेः'—इति माघे

(१०।५५) । विष्णोर्निर्माल्यधारी; 'निर्माल्यधारी विष्णोस्तु विष्वक्सेनश्चतुर्भुजः'—इति कालिकापुराणे। त्रयोदशमनुः; 'तलश्च मेरुसावर्णः ब्रह्मसूनुर्मनुः स्मृतः। ऋतुश्च ऋतुधामा च विष्वक्सेनो मनुस्तथा'—इति मात्स्ये। २१

विसम् क्ली. [विस्यति, विस् प्रेरणे, 'इगुपधेति' क] मृणालम्; 'नवविसकिसलयकवलनकषायकलहंसकलरवो यत्र। कमलवनेषु प्रसरति लक्ष्म्या इव नूपुरारावः'— इति कलाविलासे (६)। ६८२

विसंवादः पुं. [वि+सम्+वद्+घञ्] विप्रलम्भः; विप्रलापः; 'अद्रोहमविसंवादं प्रवर्तन्ते तदाश्रयाः'— इति महाभारते (१२।२५०।११)। ७४८

विसकण्ठिका स्त्री. [विससदृशः शुभ्रः कण्ठः यस्या इति। बहुव्रीहौ कन्, टापि अत इत्वम्] बलाका; विसकण्ठी। २५०

विसप्रसूनम् क्ली. [विसस्य प्रसूनं पुष्पम्] कमलं; विसकुसुमं; पद्मं; विसपुष्पम्; अम्बुजम्। ६७९

विसरः पु. [विसरतीति। वि+सृ+पचाद्यच्] समूहः; प्रसरः। ६८६

विसर्गः पुं. [वि+सृज्+घञ्] मोक्षः; मुक्तिः; मलनिर्गमः; वर्चः; दानम्; 'आदानं हि विसर्गाय सतां जलमुचामिव'—इति रघुवंशे (४।८६)। त्यागः; 'नानाशस्त्रविसर्गैस्तैर्वध्यमानः समन्ततः'—इति महाभारते (१।३२।१३)। विसर्जनीयः; 'अः सर्गो रसना वक्त्रं विसर्गश्च द्विबिन्दुकः। नादोऽर्द्धेन्दुरर्द्धमात्रा कला राशी सदाशिवः। अनुच्चार्या तुरीया च विश्वमातृकला परा'—इति बीजाभिधानम्। सूर्यस्यायनभेदः; विसृष्टः; विशेषसृष्टिः; 'पुरुषानुगृहीतनामेतेषां वासनामयः। विसर्गोऽयं समाहारो बीजाद्बीजं चराचरम्—इति भागवतम्। ८३५

विसारः पुं. [विशेषेण सरतीति। सृ गतौ+'व्याधिमत्स्यबलेस्विति वक्तव्यम्' इत्युक्त्या घञ्] मत्स्यः; मीनः; झषः। ६५७

विसिनी स्त्री. [विसमस्त्यस्या इति। विस+'पुष्करादिभ्यश्च' इति इनि, ङीप्] पद्मिनी; नलिनी; मृणालम्। ६८२

विस्तरः पुं. [वि+स्तॄ+'प्रथने वावशब्दे' इति घञ्प्रतिषेधे 'ऋदोरप्' इत्यप्] आयामः; विस्तारः; 'प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे'—इति गीतायाम् (१०।१९)। शब्दस्य विस्तृतिः; 'सुविस्तरतरा वाचो भाष्यभूता भवन्तु मे'—इति माघे (२।२४)। वेदाङ्गम्; 'सान्दीपनेः सकृत्प्रोक्तं ब्रह्माधीत्य सविस्तरम्'—इति भागवते (३।३।२)। प्रणयः; पीठः; समूहः; त्रि. बहुः; 'अपेक्षितं परित्यज्य नीरसं वस्तु विस्तरम्। यदा सन्दर्शयेच्छेषमामुखानन्तरं तदा'—इति साहित्यदर्पणे (६।३१४)। ७६६

विस्तारः पुं. [वि+स्तॄ+'प्रथने वावशब्दे' इति घञ्] विटपः; (७६६) विस्तीर्णता; विग्रहः; व्यासः; 'वंशावलम्बनं यद्यो विस्तारो गुणस्य यावनतिः। तज्जालस्य खलस्य च निजाङ्कसुप्तप्रणाशाय'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५५८)। स्तम्बः। १८१

विस्तीर्णः त्रि. [वि+स्तॄ+क्त, 'रदाभ्यामिति' न] विपुलम्; 'विस्तृतं विकटं वड्रं विशालं विपुलं पृथु'—इति जटाधरः। 'पर्णानि स्वर्णवर्णानि विस्तीर्णाकर्णलोचने। तूर्णमानीयतां चूर्णं पूर्णचन्द्रनिभानने'— इत्युद्भटः। ६९९

विस्फारः पुं. [वि+स्फुर्+घञ्। 'स्फुरतिस्फुलत्योर्घञि' इत्यात्वम्] धनुर्गुणशब्दः; धनुर्ध्वनिः; विष्फारः; 'विस्फारस्तस्य धनुषो यन्त्रस्येव तदा बभौ'—इति महाभारते (३।२७९।३६)। विस्तृतिः; 'विस्फारश्चेतसो यस्तु स विस्मय उदाहृतः'—इति साहित्यदर्पणे (३।२०७)। १५१

विस्फुलिङ्गः पुं. [विशिष्टः स्फुलिङ्गः] विषविशेषः; विषभेदः। अग्निकणा। ६४७

विस्मयः पुं. [वि+स्मि+'एरच्' इत्यच्] स्थायिभावः; 'विविधेषु पदार्थेषु लोकसीमातिवर्तिषु। विस्फारश्चेतसो यस्तु स विस्मय उदाहृतः'—इति साहित्यदर्पणम्। (७४५) चित्रम्; अद्भुतम्; आश्चर्यं; चोद्यम्; अहो; ही; 'अद्भुतो विस्मयस्थायिभावो गन्धर्वदैवतः। पीतवर्णो वस्तु लोकातिगमालम्बनं मतम्'—इति भावरसयोः पर्यायत्वमद्भुतस्य विस्मयस्थायिभावात्मकत्वात्'— इति भरतः। दर्पः; 'यज्ञोऽनृतेन क्षरति तपः क्षरति विस्मयात्'—इति मनुः (४।२३७)। सन्देहः; [विगतः स्मयो गर्वो यस्येति] नष्टगर्वे त्रि.। 'तं वीरमारादभि-

पद्य विस्मयः शयिस्यसे वीरशये स्वभिर्वृतः'—इति भागवते (३।१७।३०)। ९१

विस्रम् क्ली. [विस् प्रेरणे, 'स्फायितञ्चीति' बाहुलकाद् रक्। विस् उत्सर्गे इत्यतो वा] आमगन्धः; इदं चिताधूमादिगन्धे अपक्वमांसगन्धे च। 'समाश्लिष्यञ्च धावित्वा सिञ्चन् धाराश्रुभिः स तम्। मीनोदरदरीवासविस्रं प्रक्षालयन्निव'—इति कथासरित्सागरे (७४।१९६)। तद्विशिष्टे त्रि.। 'अहमेनं न शक्नोमि ग्रहीतुं विस्रपिच्छलम्'—इति कथासरित्सागरे (८२।७)। ६३१

विस्रब्धः त्रि. [वि+स्रम्भु विश्वासे+कर्तरि भावे वा क्त] विश्रब्धः; विश्वस्तः; 'विस्रब्धं परिचुम्ब्य जातपुलकामालोक्य गण्डस्थलीम्।' ३७०

विस्रम्भः पुं. [वि+स्रम्भ्+घञ्] विश्वासः; 'विस्रम्भादुरसि निपत्य लब्धनिद्राम्'—इति उत्तररामचरिते १। प्रणयः; परिचयः शृङ्गारप्रार्थना च; 'परिचयप्रार्थनयोः प्रणयः परिकीर्तितः'—इत्यमरमाला। क्रीडापारतन्त्र्यम्; 'विजनेऽपि वने सीता वासं प्राप्य गृहेष्विव। विस्रम्भं लभतेऽभीता रामे विन्यस्तमानसा'—इति रामायणे (२।६०।७)। केलिकलहः; वधः। ७६९

विस्रसा स्त्री. [विस्रंसतेऽनया। स्रंसु अधःपतने, भिदाद्यङ्, टाप्] जरा; वार्धकम्। ५०३

विहगः पुं. [विहायसा गच्छतीति। विहायस्+गम्+ 'अन्तात्यन्ताध्वेति' ड, 'डे च विहायसो विहादेशो वक्तव्यः' विहायः शब्दस्य विहादेशः] पक्षी; 'सुपर्णवत्सा विहगाश्चरं वाऽचरमेव च'—इति भागवते (४।१८। २४)। बाणः; 'अयोमुखैश्च विहगैर्द्रावयिष्ये महारथान्'—इति महाभारते (७।१९३।४०)। सूर्यः; चन्द्रः; ग्रहः। २३७

विहङ्गः पुं. [विहायसा गच्छतीति। 'गमश्चेति' खच्, 'विहायसो विह च' इति विहादेशः, 'खच्च डिद्वा वक्तव्यः' इति डिच्च] पक्षी; 'सेकान्ते मुनिकन्याभिस्तत्क्षणोज्झितवृक्षकम्। विश्वासाय विहङ्गानामालवालाम्बुपायिनाम्' इति रघौ (१।५१)। बाणः। 'त्वत्प्रेरितैर्लोहिताङ्गैर्विहङ्गैः'—इति महाभारते (८। ६६।३५)। मेघः; चन्द्रः; सूर्यः; नागविशेषः; 'विहङ्गःशरभो मेदः प्रमोदः संहतोपमः'—इति महाभारते (१।५७।११)। २३७

विहङ्गमः पुं. [विहायसा गच्छतीति। 'खच्प्रकरणे गमेः सुप्युपसंख्यानम्' इति काशिकोक्त्या खच्, पक्षे डित्वाभावः, 'विहायसो विह च' इति विहादेशः] पक्षी; 'आक्रम्य रत्नान्यहरत्कामरूपी विहङ्गमः'—इति महाभारते (३।२७४।३९)। सूर्यः; 'छन्दोभिरश्वरूपैश्च सकृद्युक्तैर्विहङ्गमम्'—इति मार्कण्डेये (१०९।१७)। २३७

विहङ्गमा स्त्री. [विहायसि स्कन्धलम्बमानत्वेनाधरे गच्छति। विहङ्गम+टाप्] भारयष्टिः; विहङ्गिका। ७५८

विहङ्गराजः पुं. [विहङ्गानां राजा। 'राजाहःसखिभ्यष्टच्'] गरुडः; 'विहङ्गराजाङ्गरुहैरिवायतैर्हिरण्मयोर्वीरुहवल्लितन्तुभिः'—इति माघे (१।७)। ३०

विहङ्गिका स्त्री. [विहङ्ग+संज्ञायां कन्, टाप्, इत्वम्] भारयष्टिः; विहङ्गमा। ७५८

विहस्तः त्रि. [व्यग्रौ हस्तौ यस्य] व्याकुलः; 'रामापरित्राणविहस्तयोधं सेनानिवेशं तुमुलं चकार'—इति रघौ (५।४९)। पण्डितः; 'नानायुधविहस्तानां त्वरितानां प्रधावताम्। क्ष्वेडितोत्कुष्टनिनदैर्गजबृंहितनिस्वनैः'—इति हरिवंशे (२३७।२८)। [विगतौ हस्तौ यस्य] विकरः; हस्तरहितः; हस्तहीनः; 'विगतरथविहस्तन्यस्तशस्त्रप्रमत्तस्खलितगतिभयार्तान् नैव जातु प्रहर्ता'—इति विख्यातविजये २ अङ्के। पण्डे पुं.। ३८२

विहापितम् क्ली. [वि+हा+णिच्+क्त] विश्राणनं; विश्रणनम्; अंहतिः; अपवर्जनं; वितरणं; निर्वपणं; स्पर्शनम्; उत्सर्गः; प्रदेशनं; दानम्। ४१९

विहायः [स्] क्ली. – पुं. [विशेषेण हाययति गमयति विमानादीन्। हय् गतौ, ण्यन्तादसुन्। विजहाति भुवम् वा] आकाशः; 'कान्तायते स्पर्शसुखेन वारि वारीयते स्वच्छतया विहायः'—इति साहित्यदर्पणे (१०)। पुं. पक्षी (२३७); त्रि. महान्; 'विहायसस्तेभिरिन्द्रम्' इति निरुक्ते (४।१५) 'विहायसो महान्तः'—इति यास्कः। 'तद्वाजी वाजम्भरो विहायाः'—इति ऋग्वेदे (४।११।४)। 'विहायाः महान्'—इति तद्भाष्ये सायणः। १३७

विहायसम् क्ली – पुं.—आकाशः; 'आतिष्ठस्व रथं राजन् विक्रमस्य विहायसम्'—इति महाभारते (१।९३।१४)।

पुं. पक्षी (२३७)। १३७

विहायसा अव्य.— आकाशः। १३७

विहारः पुं. [वि+हृ+घञ्] क्रीडार्थं पद्भ्यां गमनं; परिक्रमः; 'यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि विहारशय्यासन-भोजनेषु'—इति गीतायाम् (११।४२)। भ्रमणं; स्कन्धः; लीला; प्रक्षालनाद्वारिविहारकाले'—इति रघौ (६।४८)। सुगतालयः; बिन्दुरेखकपक्षी; वैजयन्तः। ७२६

विह्वलः त्रि. [वि+ह्वल्+अच्] भयादिनाभिभूतः; स्वाङ्गधारणाशक्तः; विक्लवः; 'क्षणमात्रसखीं सुजातयोः स्तनयोस्तामवलोक्य विह्वला। निमिमील नरोत्तमप्रिया हृतचन्द्रा तमसेव कौमुदी'—इति रघौ (८।३७)। विलीनम्। ३८६

वीकाशः पुं. [विकशनमिति। वि+कश्+घञ्। 'इकः काशे' इति वेरुपसर्गस्य दीर्घः] प्रकाशः; स्फुटः; रहः। ८३७

वीङ्खा स्त्री. [वीङ्खनमिति। वि+इङ्ख्+'गुरोश्च हलः' इति अ, टाप्] गतिः; विहारः; परिसर्पः; परिक्रमः; गतिभेदः; नर्तनम्; अश्वगतिभेदः; सन्धिः। ७२६

वीचिः पुं.–स्त्री. [वयति जलं तटे वर्द्धयतीति। वे+'वेञो डिच्च' इति ईचि, स च डित्] तरङ्गः; 'सरसीष्वरविन्दानां वीचिविक्षोभशीतलम्। आमोदमुपजिघ्रन्तो स्वनिःश्वासानुकारिणम्'—इति रघुवंशे (१।४३)। स्वल्पतरङ्गः; अवकाशः; सुखम्; अल्पः; किरणः। ६५३

वीची स्त्री. [वीचि+कृदिकारादिति ङीष्] वीचिः; 'सरःषु नलिनीच्छत्रनिरस्तरविरश्मिषु। हंसांसाक्षिप्त-कह्लारवीचीविमलवारिषु' — इति बृहत्संहितायाम् (५६।४)। ६५३

वीणा स्त्री. [वेति दृष्टिमात्रमपगच्छतीति। वी गतौ, 'रास्नासास्नास्थूणावीणाः' इति न, निपातनाद् गुणाभावो णत्वं च। वेति श्रोतुश्चित्तं व्याप्नोतीति। वी व्याप्तौ+न] वाद्यविशेषः; वल्लकी; विपञ्ची; सप्ततन्त्रीयुक्ता परिवादिनी; ध्वनिमाला; वङ्गमल्ली; विपञ्चिका; घोषवती; कण्ठकूणिका; 'सप्तर्षयः सप्त चाप्यर्हणानि सप्ततन्त्री प्रथिता चैव वीणा'—इति महाभारते (९।१३४।१४)। विद्युत्। ९६

वीतम् क्ली. [वेति स्म, वी+क्त] हस्तिपकपादसंकेतेनाङ्कुशेन च गजप्रेरणं; यतयाते; निषादिपादाङ्कुशकर्म; 'निर्धूतवीतमपि बालकमुल्ललन्तं यन्ता क्रमेण परिसान्त्वनतर्जनाभिः'—इति माघे (५।४७)। असारहस्त्यश्वं, युद्धाक्षममित्यर्थः। सांख्योक्तानुमानविशेषः; 'प्रथमं तावद् द्विविधं वीतमवीतं च। अन्वयमुखेन प्रवर्तमानं विधायकं वीतम्।' त्रि. कमनीयः; 'तं शश्वतीषु मातृषु वन आ वीतमश्रितम्'—इति ऋग्वेदे (४।७।६)। 'वीतं कान्तम्'—इति तद्भाष्ये सायणः। त्रि. [विशेषेण एति स्म। वि+इण्+क्त] शान्तः; गतः; 'स मृण्मये वीतहिरण्मयत्वात् पात्रे निधायार्घ्यमनर्घ्यशीलः'—इति रघौ (५।२)। २२२

वीतरागः पुं. [वीतो गतो रागो विषयवासना यस्य] जिनेन्द्रः; अर्हन्; केवली; त्रिकालवित्; बुद्धः; त्रि. विगतरागः; 'दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः। वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते'—इति भगवद्गीतायाम्। 'वीतरागश्च पुत्रस्ते परमात्मा भविष्यति। महेश्वरप्रसादेन नैतद्वचनमन्यथा'—इति महाभारते (१२।३४९।४७)। ८६

वीतिहोत्रः पुं. [वी गतिकान्त्यसनखादनेषु+कर्मणि क्तिन्। वीतिः पुरोडाशादिः हूयते अस्मिन्निति। 'हुयामाश्रुभसिभ्यस्त्रन्' इति त्रन्। अथवा वीतये पानाय होत्रं हव्यं यस्य] अग्निः; वह्निः; अनलः; सूर्यः; 'अस्मिंस्तु वीतिमारूढे वीतिहोत्रसमे नृपे'—इति राजतरङ्गिण्याम् (७।३७७)। प्रियव्रतपुत्रान्यतमः; भागवते (५।१।२५)। राजविशेषः; 'रक्षोवाहान् वीतिहोत्रान् त्रिगर्तान् मार्तिकावतान्'—इति महाभारते (७।६८।१०)। हैहयवंशीयराजविशेषः; 'तेषां कुले महाराज हैहयानां महात्मनाम्। वीतिहोत्रः सुजातश्च भोजास्त्वावन्तयः स्मृताः'—इति हरिवंशे (३३।५०)। त्रि. प्राप्तयज्ञः; 'कस्मै देवा आवहानाशु होमको मंसते वीतिहोत्रः सुदेवः'—इति ऋग्वेदे (१।८४।१८)। 'वीतिहोत्रः प्राप्तयज्ञः। वीतिहोत्रः, वी गत्यादिषु अस्मात् कर्मणि मन्त्रे वृषेत्यादिना क्तिन् स चोदात्तः। होत्रं होमः, हुयामाश्रुभसिभ्यस्त्रन् इति त्रन् प्रत्ययः। वीतिः प्राप्तो होमो येन, बहुव्रीहौ पूर्वपदप्रकृतिस्वरत्वम्'—इति तद्भाष्ये सायणः। कान्तयज्ञः; 'नूनं देवेभ्यो

विदधाति रत्नमथाभजद्वीतिहोत्रं स्वस्तौ'—इति ऋग्वेदे (२।३८।१) 'वीतिहोत्रं कान्तयज्ञं यजमानं स्वस्तौ अविनाशे क्षेमे आ अभजद्भागिनं करोतु'–इति तद्भाष्ये सायणः। ६४

वीथिः स्त्री. [विध्यतेऽनया। विध्+'इगुपधात् किदि'तीन्, बाहुलकाद्दीर्घः] वीथी; 'पङ्क्तिवर्त्मगृहाङ्गेषु वीथिर्वीथी च वीथिका'—इति रत्नकोषः। 'तद्विना नगरं कुत्र पवित्राः सुलभा भुवि। सुभगाः सिन्धुसम्भेदाः क्रीडावसथवीथिषु'—इति राजतरङ्गिण्याम् (३।३६२)। वर्त्म; 'चिरं खलु खिलीभूताः कृतज्ञत्वस्य वीथयः। धीर त्वयैव न त्वासु सञ्चारो यदि दर्श्यते'—इति राजतरङ्गिण्याम् (३।३०७)। ७२१

वीथी स्त्री. [वीथि+वा ङीष्] पङ्क्तिः; आली; श्रेणी; आवली; वीथिः; राजी; गृहाङ्गम्; 'तावप्युभौ सुवचनौ जग्मतुर्माल्यकारणात्। वीथीं माल्यापणानां वै गन्धाघ्रातौ द्विपाविव'—इति हरिवंशे (८३।१८)। नाट्यरूपकः; वर्त्म; 'वीथीं कुर्वन् महाबाहुर्द्रावयन् मम वाहिनीम्। नृत्यन्निव गदापाणिर्युगान्तं दर्शयिष्यति'—इति महाभारते (५।५१।३२)। ७२१

वीध्रः त्रि. [वि+इन्ध्+क्रन्] विमलः; शुचिः; मेघ्यः; पवित्रः; पुण्यं; पावनं; क्ली. [विशेषेण इन्धते दीप्यते इति। वि+इन्ध्+'वाविन्धेः' इति क्रन्] नभः; 'वीध्रे सूर्यमिव सर्पन्तं मा पिशाचं तिरस्करः'—इति अथर्ववेदे (४।२०।७)। वायुः; अग्निः। १३२

वीरः पुं. [वीरयतीति, वीर विक्रान्तौ+पचाद्यच्। यद्वा विशेषेण ईरयति दूरीकरोति शत्रून्। वि+ईर्+इगुपधात् क। यद्वा अजति क्षिपति शत्रून्। अज्+'स्फायितञ्चीत्यादिना' रक्, अजेर्वी] शृङ्गाराद्यष्टरसान्तर्गतरसविशेषः; उत्साहवर्द्धनः; 'उत्तमप्रकृतिर्वीर उत्साहस्थायिभावकः। महेन्द्रदैवतो हेमवर्णोऽयं समुदाहृतः'। (३५४) शौर्यविशिष्टः; शूरः; विक्रान्तः; गण्डीरः; तरस्वी; 'मृगराजो वृकश्चैव बुद्धिमानपि मूषिकः। निर्जिता यत्त्वया वीरास्तस्माद्वीरतरो भवान्'–इति महाभारते (१।१४१।४५)। 'वीरान्मा नो रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमि त्वा हवामहे'–इति ऋग्वेदे (१।११४।८)। पतिः; पुत्रः; 'वीरैः स्याम सधमादः'–इति ऋग्वेदे (५।२०।४)। 'वीरैः पुत्रैश्च सधमादः सह माद्यन्तः स्याम तथा कुरु'—इति तद्भाष्ये सायणः। 'न चालपेज्जनद्विष्टां वीरहीनां तथा स्त्रियम्। गृहादुच्छिष्टविण्मूत्रपादाम्भांसि क्षिपेद्बहिः'–इति मार्कण्डेये (३५।३१)। 'अवीरा निष्पतिसुता'—इत्यमरः। दनायुदैत्यपुत्रः; 'दनायुषः पुनः पुत्राश्चत्वारोऽसुरपुङ्गवाः। विक्षरो बलवीरौ च वृत्रश्चैव महासुरः'—इति महाभारते (१।६५।३३)। जिनः; नटः; विष्णुः; 'वीरोऽनन्तो धनञ्जयः'—इति विष्णुसहस्रनाम। तान्त्रिकभावविशेषः; 'तत्रैवं त्रिविधो भावो दिव्यवीरपशुक्रमः। दिव्यवीरैकजः प्रोक्तः सर्वसिद्धिप्रदायकः'—इति रुद्रयामले ११ पटलः। तण्डुलीयः; वराहकन्दः; लताकरञ्जः; करवीरः; अर्जुनः; यज्ञाग्निः; उत्तरः; सुभटः; वीराचारविशिष्टः; 'कुलाचाररतो वीरः कुलसङ्गी सदा भवेत्'—इत्युत्पत्तितन्त्रम्। त्रि. श्रेष्ठः; कर्मठः; 'इमं धा वीरो अमृतं वीरं कृण्वीत मर्त्यः'–इति ऋग्वेदे (८।२३।१९)। 'वीरः कर्मणि समर्थः इति तद्भाष्ये सायणः। 'कर्ता वीराय सुष्वय उ लोकं दाता वसु स्तुवते कीरये चित्'—इति ऋग्वेदे (६।२३।३)। 'वीराय यज्ञादिकर्मसु दक्षाय'—इति तद्भाष्ये सायणः। प्रेरयिता; 'इदा हि वो विधते रत्नमस्तीदा वीराय दाशुष उषासः'—इति ऋग्वेदे (६।६५।४)। 'वीराय प्रेरयित्रे'—इति तद्भाष्ये सायणः। विक्रान्तः; समर्थः; 'असौ य एषि वीरको गृहं गृहं विचाकशत्'—इति ऋग्वेदे (८।८०।२)। 'वीरको वीरः समर्थस्त्वम्'—इति तद्भाष्ये सायणः। अपकृष्टदेशविशेषवासी; 'कारस्करान् माहिषकान् कालिङ्गान् केरलांस्तथा। कर्कोटकान् वीरकांश्च दुर्द्धर्मांश्च विवर्जयेत्'—इति महाभारते (८।४४।४२)। चाक्षुषमन्वन्तरीयमुन्यन्यतमः; 'मुनयस्तत्र वै राजन् हर्यस्मद्वीरकादयः'—इति भागवते (८।५।८)। ९२

वीरणम् क्ली. [विं पक्षिणमीरयति। वि+ईर्+ल्यु] उशीरतृणं; कटायनं; वीरतरं; वीरभद्रम्; 'स्याद्वीरणं वीरतरु वीरं च बहुमूलकम्। वीरणं पाचनं शीतं स्तम्भनं लघु तिक्तकम्'—इति भावप्रकाशः। पुं. प्रजापतिविशेषः; 'सनत्कुमारादपि च वीरणो वै प्रजापतिः। कृतादौ कुरुशार्दूल ! धर्ममेतदधीतवान्'–इति महाभारते (१२।३४८।४१)। 'वीरणस्यात्मजायान्तु चक्षुर्मनुमजीजनत्'—इति मात्स्ये (४।४०)। ६२२

वीरणीमूलम् क्ली.– उशीरम्; अभयं; नलदं; लामज्जकम्; अमृणालम्। ६२२

वीरहा [न्] पुं. [वीरमग्निं हतवान्। वीर+हन्+क्विप्] नष्टाग्निब्राह्मणः; त्यक्ताग्निद्विजः; विष्णुः; 'वीरहा माधवो मधुः'—इति विष्णुसहस्रनाम। वीरहन्तरि त्रि.। ४०४

वीरुत् [ध्] स्त्री. [विशेषेण रुणद्धि वृक्षानन्यान्। वि+रुध्+क्विप्, 'अन्येषामपीति'दीर्घः। अथवा विरोहतीति वीरुत्। 'विपूर्वस्य रुहेः क्विपि धकारो विधीयते' इति काशिका] विस्तृता लता; गुल्मिनी; उलपः; वीरुधा; प्रताना; कक्षः; 'अभिभूय विभूतिमार्तवीं मधुगन्धातिशयेन वीरुधाम्'—इति रघुवंशे (८।३६)। ओषधिः; 'वियो वीरुत् सुरोधन्महित्वोत प्रजा उत प्रसूष्वन्तः'—इति ऋग्वेदे (१।६७।५) 'वीरुत्सु ओषधीषु'–इति तद्भाष्ये सायणः। वृक्षमात्रे पुं.। 'यानि पश्यति वै ब्रह्मन् मूलानीहास्य वीरुधः। एते नस्तन्तवस्तात कालेन परिभक्षिताः'—महाभारते (१।४५।२४)। 'सोमं नमस्य राजानं यो जज्ञे वीरुधां पतिम्'—इति ऋग्वेदे (९।११३।२)। 'वीरुधां वनस्पतीनामिति'—इति तद्भाष्ये सायणः। लतानां वीरुधां च कथञ्चिद्भेदमाह 'वनस्पत्योषधिलता त्वक्सारो वीरुधो द्रुमाः'—इति भागवते (३।१०।१९)। 'ये पुष्पं विना फलन्ति ते वनस्पतयः, ओषधयः फलपाकान्ताः, लता आरोहणापेक्षाः, त्वक्सारा वेण्वादयः, लता एव काठिन्येनारोहणानपेक्षा वीरुधः, ये पुष्पैः फलन्ति ते द्रुमाः'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। १९०

वीरुधा स्त्री. [विशेषेण रुणद्धीति। वि+रुध्+'इगुपधादिति' क, ततः स्त्रियां टाप्।] वीरुत्; उलपः; 'वष्टि भागुरिरल्लोपम् अवाप्योरुपसर्गयोः। टापं चापि हलन्तानां क्षुधा वाचा निशा गिरा।' १९०

वीर्यम् क्ली. [वीरे साधु, 'तत्र साधुः' इति यत्। यद्वा वीर्यतेऽनेनेति, वीर विक्रान्तौ+'अचो यत्' इति यत्। यद्वा वीरस्य भावः, यत्] चरमधातुः; शुक्रं; तेजः; रेतः; बीजम्; इन्द्रियं; बलम्; 'भूतप्रभावातिशयो द्रव्ये पाके रसे स्थितः। चिन्त्याचिन्त्यक्रियाहेतुर्वीर्यं धन्वन्तरेर्मतम्।' अतिशयशक्तिभागुत्साहः; प्रभावः; 'अग्निः सनोति वीर्याणि विद्वान् सनोति वाजममृताय पूषन्'—इति ऋग्वेदे (३।२५।२)। 'वीर्याणि पशुपुत्रादिसम्पद्रूपाणि सामर्थ्यानि'—इति तद्भाष्ये सायणः। 'ज्ञानवैराग्यवीर्याणां नहि कश्चिद्व्यपाश्रयः'— इति भागवते (६।१७।३१)। शरीरसामर्थ्यम्; 'स इद्राजा प्रतिजन्यानि विश्वाशुष्मेण तस्थावभि वीर्येण'—इति ऋग्वेदे (४।५०।७)। 'वीर्येण शरीरसामर्थ्येन'—इति तद्भाष्ये सायणः। शक्तिः; 'न ब्राह्मणोऽवेदयेत किञ्चिद्राजनि धर्मवित्। स्ववीर्येणैव तान् शिष्यान् मानवानपकारिणः'—इति मनुः (११।३१)। 'स्ववीर्याद्राजवीर्याच्च स्ववीर्यं बलवत्तरम्। तस्मात् स्वेनैव वीर्येण निगृह्णीयादरीन् द्विजः।' मनःशक्तिः; 'कृत्वा वत्सं सुरगणा इन्द्रं सोममदूदुहन्। हिरण्मयेन पात्रेण वीर्यमोजो बलं पयः'—इति भागवते (४।१८।१५)। तेजः; चेतः; दीप्तिः। ६३८

वीवधः पुं. [विविधो वधो हननं गमनं वा अनेन। 'प्रादिभ्यो धातुजस्य वाच्यो वा चोत्तरपदलोपः' इति समासे अन्येषामपीति दीर्घः] विवधः; भारः; पर्याहारः; [परितः आह्रियतेऽसौ] धान्यतण्डुलादिः; 'निरुद्धवीवधासारप्रसारा गा इव व्रजम्। उपरुन्धन्तु दाशार्हाः पुरीं माहिष्मतीं द्विषः'—इति माघे (२।६४)। मार्गः; पन्थाः। ७५८

वृंहितम् क्ली. [वृंहि+क्त] हस्तिगर्जनं; करिगर्जितं; वारणध्वनिः; 'शङ्खदुन्दुभिघोषैश्च वारणानां च वृंहितैः। नेमिघोषै रथानां च दीर्यतीव वसुन्धरा'—इति महाभारते (६।१८।२)। १५१

वृकः पुं. [वृणोतीति, वृञ्+'सृवृभृशुषिमुषिभ्यः कक्' इति कक्] कुक्कुरप्रमाणहरिणघ्नजन्तुविशेषः; कोकः; ईहामृगः; वत्सादनः; विरुक्; गोवत्सादी; छागभोजी; छागलान्त्री; जनाशनः; अरण्यश्वः; 'श्वा शृगालो वृको व्याघ्रो मार्जारः शशशल्लकौ'—इति भागवते (३।१०।२३)। ककः; पीतकः; बकवृक्षः; शृगालः; 'अजाविके तु संरुद्धे वृकैः पाले त्वनायति। यां प्रसह्य वृको हन्यात् पाले तत्किल्बिषं भवेत्'—इति मनुः (८।२३५)। 'वृकैः शृगालप्रभृतिभिः'—इति तट्टीकायां मेधातिथिः। क्षत्रियः; अनेकधूपः; सरलद्रवः; तस्करः; [वृक् आदाने+क] वज्रः। २२८

वृक्षः पुं. [व्रश्च् छेदने+'स्नुव्रश्चिकृत्यृषिभ्यः कित्' इति

वीरणीमूलम् क्ली.– उशीरम्; अभयं; नलदं; लामज्जकम्; अमृणालम्। ६२२

वीरहा [न्] पुं. [वीरमग्निं हतवान्। वीर+हन्+क्विप्] नष्टाग्निब्राह्मणः; त्यक्ताग्निद्विजः; विष्णुः; 'वीरहा माधवो मधुः'—इति विष्णुसहस्रनाम। वीरहन्तरि त्रि.। ४०४

वीरुत् [ध्] स्त्री. [विशेषेण रुणद्धि वृक्षानन्यान्। वि+रुध्+क्विप्, 'अन्येषामपीति' दीर्घः। अथवा विरोहतीति वीरुत्। 'विपूर्वस्य रुहेः क्विपि धकारो विधीयते' इति काशिका] विस्तृता लता; गुल्मिनी; उलपः; वीरुधा; प्रताना; कक्षः; 'अभिभूय विभूतिमार्तवीं मधुगन्धातिशयेन वीरुधाम्'—इति रघुवंशे (८।३६)। ओषधिः; 'वियो वीरुत् सुरोधन्महित्वोत प्रजा उत प्रसूष्वन्तः'—इति ऋग्वेदे (१।६७।५) 'वीरुत्सु ओषधीषु'–इति तद्भाष्ये सायणः। वृक्षमात्रे पुं.। 'यानि पश्यति वै ब्रह्मन् मूलानीहास्य वीरुधः। एते नस्तन्तवस्तात कालेन परिभक्षिताः'—महाभारते (१।४५।२४)। 'सोमं नमस्य राजानं यो जज्ञे वीरुधां पतिम्'—इति ऋग्वेदे (९।११३।२)। 'वीरुधां वनस्पतीनामिति'—इति तद्भाष्ये सायणः। लतानां वीरुधां च कथञ्चिद्भेदमाह 'वनस्पत्योषधिलता त्वक्सारो वीरुधो द्रुमाः'—इति भागवते (३।१०।१९)। 'ये पुष्पं विना फलन्ति ते वनस्पतयः, ओषधयः फलपाकान्ताः, लता आरोहणापेक्षाः, त्वक्सारा वेण्वादयः, लता एव काठिन्येनारोहणानपेक्षा वीरुधः, ये पुष्पैः फलन्ति ते द्रुमाः'—इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। १९०

वीरुधा स्त्री. [विशेषेण रुणद्धीति। वि+रुध्+'इगुपधादिति' क, ततः स्त्रियां टाप्।] वीरुत्; उलपः; 'वष्टि भागुरिरल्लोपम् अवाप्योरुपसर्गयोः। टापं चापि हलन्तानां क्षुधा वाचा निशा गिरा।' १९०

वीर्यम् क्ली. [वीरे साधु, 'तत्र साधुः' इति यत्। यद्वा वीर्यतेऽनेनेति, वीर विक्रान्तौ+'अचो यत्' इति यत्। यद्वा वीरस्य भावः, यत्] चरमधातुः; शुक्रं; तेजः; रेतः; बीजम्; इन्द्रियं; बलम्; 'भूतप्रभावातिशयो द्रव्ये पाके रसे स्थितः। चिन्त्याचिन्त्यक्रियाहेतुर्वीर्यं धन्वन्तरेर्मतम्।' अतिशयशक्तिभागुत्साहः; प्रभावः; 'अग्निः सनोति वीर्याणि विद्वान् सनोति वाजममृताय पूषन्'—इति ऋग्वेदे (३।२५।२)। 'वीर्याणि पशुपुत्रादिसम्पद्रूपाणि सामर्थ्यानि'—इति तद्भाष्ये सायणः। 'ज्ञानवैराग्यवीर्याणां नहि कश्चिद्व्यपाश्रयः'— इति भागवते (६।१७।३१)। शरीरसामर्थ्यम्; 'स इद्राजा प्रतिजन्यानि विश्वाशुष्मेण तस्थावभि वीर्येण'—इति ऋग्वेदे (४।५०।७)। 'वीर्येण शरीरसामर्थ्येन'—इति तद्भाष्ये सायणः। शक्तिः; 'न ब्राह्मणोऽवेदयेत किञ्चिद्राजनि धर्मवित्। स्ववीर्येणैव तान् शिष्यान् मानवानपकारिणः'—इति मनुः (११।३१)। 'स्ववीर्याद्राजवीर्याच्च स्ववीर्यं बलवत्तरम्। तस्मात् स्वेनैव वीर्येण निगृह्णीयादरीन् द्विजः।' मनःशक्तिः; 'कृत्वा वत्सं सुरगणा इन्द्रं सोममदूदुहन्। हिरण्मयेन पात्रेण वीर्यमोजो बलं पयः'—इति भागवते (४।१८।१५)। तेजः; चेतः; दीप्तिः। ६३८

वीवधः पुं. [विविधो वधो हननं गमनं वा अनेन। 'प्रादिभ्यो धातुजस्य वाच्यो वा चोत्तरपदलोपः' इति समासे अन्येषामपीति दीर्घः] विवधः; भारः; पर्याहारः; [परितः आह्रियतेऽसौ] धान्यतण्डुलादिः; 'निरुद्धवीवधासारप्रसारा गा इव व्रजम्। उपरुन्धन्तु दाशार्हाः पुरीं माहिष्मतीं द्विषः'—इति माघे (२।६४)। मार्गः; पन्थाः। ७५८

वृंहितम् क्ली. [वृहि+क्त] हस्तिगर्जनं; करिगर्जितं; वारणध्वनिः; 'शङ्खदुन्दुभिघोषैश्च वारणानां च वृंहितैः। नेमिघोषै रथानां च दीर्यतीव वसुन्धरा'—इति महाभारते (६।१८।२)। १५१

वृकः पुं. [वृणोतीति, वृञ्+'सृवृभूशुषिमुषिभ्यः कक्' इति कक्] कुक्कुरप्रमाणहरिणघ्नजन्तुविशेषः; कोकः; ईहामृगः; वत्सादनः; विरुक्; गोवत्सादी; छागभोजी; छागलान्त्री; जनाशनः; अरण्यश्वः; 'श्वा शृगालो वृको व्याघ्रो मार्जारः शशशल्लकौ'—इति भागवते (३।१०।२३)। ककः; पोतकः; वकवृक्षः; शृगालः; 'अजाविके तु संरुद्धे वृकैः पाले त्वनायति। यां प्रसह्य वृको हन्यात् पाले तत्किल्बिषं भवेत्'—इति मनुः (८।२३५)। 'वृकैः शृगालप्रभृतिभिः'—इति तट्टीकायां मेधातिथिः। क्षत्रियः; अनेकधूपः; सरलद्रवः; तस्करः; [वृक् आदाने+क] वज्रः। २२८

वृक्षः पुं. [व्रश्च् छेदने+'स्नुव्रश्चिकृत्यृषिभ्यः कित्' इति

स, स च कित्। वृक्ष वरणे अतोऽच्यावृणोतीति वृक्ष इति वा सिद्धे प्रपञ्चार्थं व्रश्चिग्रहणम्] स्थावरयोनिविशेषः; महीरुहः; शाखी; विटपी; पादपः; तरुः; अनोकहः; कुटः; सालः; पलाशी; द्रुः; द्रुमः; आगमः; अगच्छः; विष्टरः; महीरुट्; कुचिः; स्थिरः; कारस्करः; नगः; अगः; कुटारः; विटपः; कुजः; वनस्पतिः; अद्रिः; शिखरी; कुठः; कुञ्जः; क्षितिरुहः; अङ्घ्रिपः; भूरुहः; भूजः; महीजः; धरणीरुहः; क्षितिजः; शालः; 'वृक्षगुल्मलतावल्ल्यस्त्वक्सारास्तृणजातयः। षडेते वृक्षजातीयास्तासां रोपे फलं शृणु। यः पुमान् रोपये-द्वृक्षान् छायापुष्पफलोपगान्। सर्वसत्त्वोपयोगाय स याति परमां गतिम्'—इति पाद्मे। १७७

वृक्षोत्पलः पुं.—कर्णिकारः। १९९

वृजनम् क्ली. [वृज्+'कृपृवृजीति' क्यु] पापम्; आकाशं; निराकरणं; संग्रामः; 'त्वं शुष्णं वृजने पक्षे'—इति ऋग्वेदे (१।६३।३)। 'वृजन इत्यादीनि त्रीणि संग्राम-नामानि अत्र पूर्वे विशेषणे वृजने वर्जनयुक्ते संग्रामे हि वीराः पुरुषा वर्ज्यन्ते हिंस्यन्ते'–इति तद्भाष्ये सायणः। बलम्; 'विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम्'—इति ऋग्वेदे (१।१६६।१५)। 'वृजनं बलम्'–इति तद्भाष्ये सायणः। प्राणिजातम्; 'जरयन्ती वृजनं पद्वदीयते'—इति ऋग्वेदे (१।४८।५)। 'वृजनं गमनशीलं जङ्गमं प्राणिजातं जरयन्ती। वृजी वर्जने, वर्ज्यते इति वृजनं प्राणिजातं, कृपृवृजिमन्दिनिधाञ्भ्यः क्युरिति क्यु प्रत्ययः, कित्त्वा-ल्लघूपधगुणाभावः, योरनादेशे प्रत्ययस्वरः'–इति तद्भाष्ये सायणः। पुं. [वृज्+क्यु] केशः; त्रि. कुटिलः; बाधकः; 'तमानूनं वृजनमन्यथा चिच्छूरो'—इति ऋग्वेदे (६।३५।५) 'वृजनं बाधकम्'–इति तद्भाष्ये सायणः। ६२७

वृजिनम् क्ली. [वृजी वर्जने+'वृजेः किच्च' इति इनच् स च कित्] पापम्; 'तन्नः प्रसीद वृजिनार्दन तेऽङ्घ्रि-मूलम्'—इति भागवते (१०।२९।३८)। दुःखम्; 'वृजिनं नार्हति प्राप्तुं पूज्यं वन्द्यमभीक्ष्णशः'—इति भागवते (१।७।४६)। रक्तचर्म; भुग्नं; त्रि. पाप-विशिष्टम्; 'वृजिनां गतिमाप्नोति श्रेयसोऽप्युपहन्ति च' —इति महाभारते (२।२२।४)। पुं. केशः (७९७); त्रि. कुटिलः (६९६); 'असमने अध्वनि वृजिने पथि श्येनाँ इव श्रवस्यतः'—इति ऋग्वेदे (६।४६।१३)। 'वृजिने कुटिले पथि'–इति तद्भाष्ये सायणः। ६२७

वृतिः स्त्री. [वृ+क्तिन्] वेष्टनं; वरः; वाटः; आवेष्टकः; 'न हि च्छायादानैः पथिकजनसन्तापहरणं, फलैर्वा पुष्पैर्वा न सुरमनुजप्रीणनमपि। अरे रे मन्दारद्रुम ! सहज-मेतत् त्वनुचितं, वृतीभूतो रक्षस्यपरमपरेषां फलमपि'—इत्युद्भटः। प्रार्थनाविशेषः; वरणं; गोपनम्। २९०

वृत्तम् क्ली. [वृत्+क्त] आचारः; 'अनेन विप्रो वृत्तेन वर्तयन् वेदशास्त्रवित्। व्यपेतकल्मषो नित्यं ब्रह्मलोके महीयते'—इति मनुः (४।२६०)। चरित्रम्; 'तत्र तस्थुर्निजान् भर्तॄन् ध्यायन्त्यः क्लिष्टवृत्तयः। आपद्यपि सतीवृत्तं किं मुञ्चन्ति कुलस्त्रियः'–इति कथासरित्सागरे (३।१४)। पद्यम्; 'पद्यं चतुष्पदी तच्च वृत्तं जातिरिति द्विधा। वृत्तमक्षरसंख्यातं जातिर्मात्राकृता भवेत्। सममर्द्धसमं वृत्तं विषमञ्चेति तत् त्रिधा'—इति छन्दो-मञ्जर्याम्। वृत्तिः; वेदबोधितस्याचारस्य परिपालनं; वार्ता; 'न मार्गवृत्तमेतन्मे वाच्यं पितृगृहे त्वया'—इति कथासरित्सागरे (५८।११६)। ३९७

वृत्तः त्रि. [वृत्+क्त] वर्तुलः; 'स्तनौ व्यञ्जितकैशोरौ समवृत्तौ निरन्तरौ'—इति भागवते (४।२५।२४)। कृतावरणः; अधीतः; मृतः; निष्पन्नः; 'स वृत्तचूड-श्चलकाकपक्षकैरमात्यपुत्रैः सवयोभिरन्वितः'—इति रघौ (३।२८)। जातः; 'सम्बन्धमाभाषणपूर्वमाहुर्वृत्तः स नौ सङ्गतयोर्वनान्ते'—इति रघौ (२।५८)। पुं. कूर्मः; नागविशेषः; 'वृत्तसंवर्तकौ नागौ द्वौ च पद्मा-विति श्रुतौ'—इति महाभारते (१।३५।१०)। ७५३

वृत्तान्तः पुं. [वृत्तः अनुवर्तनीयः अन्तः समाप्तिर्यस्य] संवादः; वार्ता; प्रवृत्तिः; उदन्तः; श्रुतिः; उदन्तकः; 'सर्वमाजन्म वृत्तान्तं विस्तरादिदमब्रवीत्'—इति कथा-सरित्सागरे (२।२९)। प्रक्रिया; कार्त्स्न्यं; वार्ता-प्रभेदः; प्रस्तावः; 'न ब्राह्मणक्षत्रिययोरापद्यपि हि तिष्ठतोः। कस्मिंश्चिदपि वृत्तान्ते शूद्रा भार्योपदिश्यते' —इति मनुः (३।१४)। 'वृत्तान्ते इतिहासाख्याने' –इति तट्टीकायां कुल्लूकमेधातिथी। अवसरः; भावः; एकान्तवाचकः। १४६

वृत्तिः स्त्री. [वृत्+क्तिन्] जीवनम्; आजीवः; वार्ता; जीविका; 'एषोदिता गृहस्थस्य वृत्तिर्विप्रस्य शाश्वती'

—इति मनुः (४।२५९)। विवरणम्; 'सूत्रस्यार्थविवरणं वृत्तिः'—इति कातन्त्रे। प्रवर्तनम्; 'उत्पक्ष्मणोर्नयनयोरुपरुद्धवृत्तिं वाष्पं कुरु स्थिरतया विरतानुबन्धम्' —इति शाकुन्तले (४)। विधृतिः; कौशिक्यादिवृत्तयः। 'शृङ्गारे कौशिकी वीरे सात्वत्यारभटी पुनः। रसे रौद्रे च बीभत्से वृत्तिः सर्वत्र भारती। चतस्रो वृत्तयो ह्येताः सर्वनाट्यस्य मातृकाः'—इति साहित्यदर्पणे (६)। व्यवहारः; 'गुरोर्गुरौ सन्निहिते गुरुवद्वृत्तिमाचरेत्' —इति मनुः (२।२०५)। [वर्ततेऽस्मिन्निति व्युत्पत्त्या] आधेयः; 'सिषाधयिषया शून्या सिद्धिर्यत्र न विद्यते। स पक्षस्तत्र वृत्तित्वज्ञानादनुमितिर्भवेत्' —इति भाषापरिच्छेदे। चित्तस्यावस्थाविशेषः; 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'—इति पातञ्जले (२)। व्यापारः; 'अर्थसन्निकृष्टस्य इन्द्रियस्य वृत्तौ सत्यां तमोऽभिभवे यः सत्त्वसमुद्रेकः'—इति सांख्यतत्त्वकौमुद्याम्। युक्तार्थः; 'कारकप्रतियोगिभ्यां यद्यदन्यदपेक्षते। अपेर्बहुलवाचित्वाद्वृत्तिस्तत्र तु नेष्यते'—इति कातन्त्रे। ५७०

वृत्रः पुं. [वृत्+'स्फायितञ्चिवञ्चीति' रक्] दानवविशेषः; त्वाष्ट्रः; स तु त्वष्टृपुत्रः इन्द्रेण हतः; 'तथा वृत्रवधे प्राप्ते साहाय्यार्थं वृतो मया'—इति हरिवंशे (१२७।१७)। मेघः; 'इन्द्रो अस्मा अरदद्वज्रबाहुरपाहन् वृत्रं परिधिं नदीनाम्'–इति ऋग्वेदे (३।३३।६)। 'वृत्रं वृणोति आकाशमिति वृत्रो मेघस्तं मेघमपाहन् जघान'–इति तद्भाष्ये सायणः। पर्वतविशेषः; इन्द्रः; शब्दः; अन्धकारः; शत्रुः; 'इन्द्रेण युजा तरुषेम वृत्रम्' इति ऋग्वेदे (७।४८।२) 'वृत्रं शत्रुम्'—इति तद्भाष्ये सायणः। ८४६

वृत्रारिः पुं. [वृत्रस्य वृत्रासुरस्य अरिः शत्रुः] वृत्रद्विट्; वृत्रहा; इन्द्रः। ५२

वृथा अव्य. [वृणीते, वृञ् संभक्तौ+बाहुलकात् थाक्] निरर्थकः; मुधा; व्यर्थकम्; अविधिः; 'अदण्डपाशिको ग्राम अदासीकं च यद् गृहम्। अनाज्यभोजनं यच्च वृथा तदिति मे मतिः'—इति वह्निपुराणे। 'वृथा वृष्टिः समुद्रस्य तृप्तस्य भोजनं वृथा। वृथा दानं समृद्धस्य नीचस्य सुकृतं वृथा'—इति गारुडे। 'वृथारेता वृथामांसो वृथावादी वृथामतिः। निन्दको द्विजदेवानां स प्रेतो जायते नरः'—इति वह्निपुराणे। ७८४

वृथाभिनिवेशः पुं. [वृथा निःसारः अभिनिवेशः आग्रहः] आहोपुरुषिका। ७८४

वृद्धः त्रि. [वृध् वृद्धौ+क्त। 'यस्य विभाषा' इति नेट्] पण्डितः; विद्वान्; (५०३) गतयौवनः; प्रवृद्धः; प्रवयाः; स्थविरः; जीनः; जीर्णः; जरन्; यातयामः; जर्जरः; पलितः; पुं. वृद्धदारकः; क्ली. शैलजनामगन्धद्रव्यम्। ३३२

वृद्धश्रवाः [स्] पुं. [वृद्धात् बृहस्पतेः शृणोतीति। वृद्ध+श्रु+असुन्। 'वृद्धेभ्यः शृणोतीति वृद्धश्रवाः', 'वृद्धं प्रभूतं श्रवः श्रवणं स्तोत्रं हविर्लक्षणमन्नं वा यस्य'–इति ऋग्भाष्ये सायणः (१।८९।६)। 'वृद्धं श्रवो धनं कीर्तिर्वा यस्य' इति वेददीपे महीधरः (१०।९)] इन्द्रः; पुरन्दरः। ५२

वृद्धिः स्त्री. [वृध्+क्तिन्] कलान्तरं; 'सूद' इति भाषा। अभ्युदयः; समृद्धिः; 'अथ तत्र पाण्डुतनयेन सदसि विहितं मधुद्विषः। मानमसहत न चेदिपतिः परमवृद्धिमत्सरि मनो हि मानिनाम्'—इति माघे (१५।१)। अष्टवर्गान्तर्गतौषधिविशेषः; योग्या; ऋद्धिः; सिद्धिः; लक्ष्मीः; पुष्टदा; वृद्धिदात्री; मङ्गल्या; श्रीः; सम्पत्; आशीः; जनेष्टा; भूतिः; मुत्; सुखं; जीवभद्रा; 'ऋद्धिर्वृद्धिश्च मधुरा सुस्निग्धा तिक्तशीतला। रुचिमेधाकरी श्लेष्मकुष्ठक्रिमिहरा परा। प्रयोगेष्वनयोरेकं यथालाभं प्रयोजयेत्। तत्र यद्दातुमिष्टिः स्याद्द्वयमप्यत्र योजयेत्' —इति राजनिर्घण्टः। नीतिवेदिनां क्षयादित्रिवर्गान्तर्गतवर्गविशेषः; वर्द्धनं; स्फातिः; 'एष सर्वाणि भूतानि पञ्चभिर्व्याप्य मूर्तिभिः। जन्मवृद्धिक्षयैर्नित्यं संसारयति चक्रवत्'—इति मनुः (१२।१२४)। विष्कम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतैकादशयोगः; 'प्रसूतिकाले यदि वृद्धियोगो नरः सुभोगो विनयान्वितश्च। धनप्रयोगग्रहणेषु दक्षो विचक्षणः स्यात् क्रयविक्रयाभ्याम्'—इति कोष्ठीप्रदीपः। कुरण्डरोगः; हर्षः; समूहः; शैलेयं; धनम्। ५७२

वृद्धिजीवनम् क्ली. [वृद्धया जीवनम्] कुषीदं; कुसीदं; कुशीदं; वृद्धिजीविका। ५७२

वृद्धिजीविका स्त्री. [वृद्धया जीविका] ऋणदानजीविका; अर्थप्रयोगः; कुषीदं; कलाम्बिका। ५७२

वृद्धोक्षः पुं. [वृद्धश्चासौ उक्षा चेति। 'अचतुरेत्यादि' ना

अच् प्रत्ययः] वृद्धवृषः; जरद्गवः; 'विलोक्य वृद्धोक्षमधिष्ठितं त्वया महाजनः स्मेरमुखो भविष्यति'—इति कुमारे (५।७०)। २६५

वृद्धयाजीवः त्रि. [वृद्धया आजीवतीति । वृद्धि+आ+जीव्+अच्] वृद्धयुपजीवी; वार्द्धुषिः; वार्द्धुषिकः; कुषीदः; कुषीदिकः; साधुः। ५७१

वृन्तम् क्ली. [वृणोति पुष्पादिकम् । वृञ् वरणे+'अञ्जिधृषीति' बाहुलकात् क्त, नुम् च] फलपुष्पपत्रादिर्येन धार्यते तत्; प्रसवबन्धनम्; 'वृन्तश्लथं हरति पुष्पमनोकहानाम्'—इति रघुवंशे (५।६९)। घटीधारा; (५२६) कुचाग्रं; कुचमुखं; चूचुकः; शिखा। १८५

वृन्दम् क्ली. [वृञ्+'अब्दादयश्चेति' दन्, नुम्, गुणाभावश्च निपात्यते] समूहः; 'भृत्या त्वया कुटिलकुन्तलवृन्दजुष्टम्'—इति भागवते (३।२८।३०)। पुं. दशार्बुदः; शतकोटिः; महार्बुदः। ६८६

वृन्दारकः पुं. [वृन्दमस्यास्तीति, वृन्द+'शृङ्गवृन्दाभ्यामारकन् वक्तव्यः' इत्युक्त्या आरकन्] देवता; 'अपि वृन्दारका यूयं न जानीथ शरीरिणाम्'—इति भागवते (६।१०।३०)। यूथपाता; 'वृन्दारकः सुरे श्रेष्ठे मनोज्ञे यूथपातरि'—इति व्याडिः। त्रि. [वृन्दार+स्वार्थे कन्] मनोज्ञः; 'युवा वृन्दारकः शूरो विकर्णः पुरुषर्षभः'—इति महाभारते (११।१९।५)। श्रेष्ठः; 'वृन्दारकौ रूपिमुख्यौ'—इत्यमरः। ४

वृश्चिकः पुं. [व्रश्चू छेदने+'वृश्चिकृष्योः किकन्' इति किकन्] कीटविशेषः; अलिः; द्रोणः; वृश्चनः; द्रुणः; पृदाकुः; अरुणः; अली; 'जीरकस्य कृतः कल्को घृतसैन्धवसंयुतः। मुखोष्णो मधुना लेपाद्वृश्चिकस्य विषं हरेत्। गन्धमाघ्राय मृदितसूर्यावर्तदलस्य तु। वृश्चिकेन नरो विद्धः क्षणाद्भवति निर्विषः'—इति भावप्रकाशः। मेषादिद्वादशराश्यन्तर्गताष्टमराशिः; 'वृश्चिकोदयसंजातः शौर्यवानतिदुष्टधीः। भवेद्विज्ञानसम्पन्नो विग्रही सुभगः सुधीः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। ओषधिभेदः; हालिकः; हालः; मदनवृक्षः; कर्कटः; गोमयकीटः; आग्रहायणमासः। ६४५

वृश्चिकलाङ्गूलम् क्ली. [वृश्चिकस्य लाङ्गूलम्] अलम्; वृश्चिक पुच्छं; 'बिच्छू का डंक' इति भाषा। ६४५

वृषः पुं. [वर्षति सिञ्चति रेत इति। वृष सेचने+क। वर्षति कामान् इति वा। वृष्+क] धर्मः; पुण्यं; श्रेयः; सुकृतम्; 'वृषो हि भगवान् धर्मस्तस्य यः कुरुते ह्यलम्। वृषलं तं विदुर्देवास्तस्माद्धर्मं न लोपयेत्'—इति मनुः (८।१६)। (२३५) मूषिकः; आखुः; उन्दुरः; खनकः; मूषकः। (२६३) पुरुषगवः; पुङ्गवः; उक्षा; भद्रः; वलीवर्दः; ऋषभः; वृषभः; अनड्वान्; सौरभेयः; गौः; शृङ्गी; ककुद्मान्; शिखी; गन्धमैथुनः; 'ये शुक्लाः शुचयः शुद्धा भृशं भारवहा अपि। बह्वाशिनः स्वल्परोषास्ते वृषाः सात्त्विका मताः। व्यक्ताव्यक्तरुषः शुद्धा दृढा भारवहाः शुभाः। बह्वाशिनो बहुबलास्ते वृषा राजसा मताः। विवर्णा विकृताङ्गाश्च निर्बला स्वल्पभोजिनः। अपवित्रा बृहद्रोषास्ते वृषास्तामसा मताः,—इति वात्स्यः। मेषादिद्वादशराश्यन्तर्गतद्वितीयराशिः; तावुरिः; 'स्थिरमतिं सुमतिं कमनीयतां कुशलतां हि नृणामुपभोगताम्। वृषगतो हिमगर्भः शमादिशेत् सुकृतिनः कृतिनश्च सुखान्यपि।' 'वृषलग्ने भवेज्जातो गुरुभक्तः प्रियंवदः। गुणी कृती धनी लुब्धः शूरः सर्वजनप्रियः' —इति कोष्ठीप्रदीपः। चतुर्विधपुरुषमध्ये पुरुषविशेषः; 'पद्मिनी चित्रणी चैव शङ्खिनी हस्तिनी तथा। शशो मृगो वृषोऽश्वश्च स्त्रीपुंसोर्जातिलक्षणम्'—इति रतिमञ्जरी। 'बहुगुणबहुबन्धः शीघ्रकामो नताङ्गः, सकलरुचिरदेहः सत्यवादी वृषोऽयम्'—इति रतिमञ्जरी। एकादशमन्वन्तरीयेन्द्रः; 'एकैकस्त्रिशकस्तेषां गणाश्चेन्द्रस्य वै वृषः। दशग्रीवो रिपुस्तस्य स्त्रीरूपी घातयिष्यति'—इति गारुडे। शृङ्गी; उत्तरपदस्थश्चेत् श्रेष्ठः; 'शारदं वर्षणं यद्वत् सहेद्वीरो गवांपतिः। तद्वद्यदुवृषः सेहे बाणवर्षमरिन्दमः'—इति हरिवंशे (१४१।३८)। शुक्लः; वास्तुस्थानभेदः; वासकः; श्रीकृष्णः; शत्रुः; कामः; कामदेवः; मदनः; बलवान्; ऋषभौषधं; पतिः; 'स्ववृषं या परित्यज्य परवृषे वृषायते। वृषली सा हि विज्ञेया न शूद्री वृषली भवेत्'—इति काशीखण्डे। १२५

वृषणः पुं. [वर्षति वंशबीजम्। वृष्+बाहुलकात् क्यु, युचि संज्ञापूर्वकत्वेन गुणाभावः] अण्डकोषः; मुष्कः; 'स्थूललिङ्गो दरिद्रः स्याद् दुःख्येकवृषणी भवेत्। विषम स्त्रीचञ्चलो वै नृपः स्याद्वृषणे समे। प्रलम्बवृषणोऽल्पायुर्निर्द्रव्यो मणिभिर्भवेत्।' 'जलान्त एकवृषणो

वृषणाभ्यां चलः स्त्रियाम् । समाभ्यां क्षितिपः प्रोक्तः प्रलम्बेन शताब्दवान्—इति गारुडे ।' ५२३

वृषदंशः पुं. [वृषं मूषिकं दशतीति । वृष+दंश्+पचाद्यच्] विडालः; ओतुः; मार्जारः । २३६

वृषदंशकः पुं. [वृषं मूषकं दशतीति । वृष+दंश्+ण्वुल्] विडालः; ओतुः; मार्जारः; वृषदंशः; आखुभुक् । २३६

वृषभः पुं. [वृष् सेचने+'ऋषिवृषिभ्यां कित्' इति अभच् स च कित्] उक्षः; अनड्वान्; बलीवर्दः; ककुद्मान्; वृषः; ऋषभः; सौरभेयः; गौः; वाडवेयः; शाक्वरः; 'यदन्यगोषु वृषभो वत्सानां जनयेच्छतम्' —इति मनुः (९।५०) । श्रेष्ठः; 'सृञ्जयैः सह कैकेयैर्वृष्णीनां वृषभेण च'—इति महाभारते (३।३३।८७) । वैदर्भीरीतिभेदः; आदिजिनः; कर्णरन्ध्रं; ऋषभनामौषधम्; चतुर्विधपुरुषान्तर्गतपुरुषविशेषः; 'शशके पद्मिनी तुष्टा चित्रिणी रमते मृगम् । वृषभे शङ्खिनी तुष्टा हस्तिनी रमते हयम्'—इति रतिमञ्जरी । २६३

वृषलः पुं. [वृषं धर्मं लुनाति छिनत्तीति । वृष+लूञ् छेदने+'अन्येभ्योऽपीति' ड] अपशूद्रः; 'नाज्ञातेन समं गच्छेन्नैको न वृषलैः सह'—इति मनुः (४।१४०) । 'वृषो हि भगवान् धर्मस्तस्य यः कुरुते ह्यलम् । वृषलं तं विदुर्देवास्तस्माद्धर्मं न लोपयेत्'–इति मनुः (८।१६) । चन्द्रगुप्तराजः; वाजी; अधार्मिकः । ५८६

वृषस्यन्ती स्त्री. [वृषं नरं शुक्रं वा इच्छति मैथुनाय । वृष+'सुप आत्मनः क्यच्' इति क्यच्, 'अश्वक्षीरेति' सुगागमः । ततः 'लटः शतृशानचाविति' शतृ, 'उगितश्च' इति ङीप्] रतार्थिनी; कामुकी; वृषेण लब्धुमिच्छन्ती गौः; 'लक्ष्मणं सा वृषस्यन्ती महोक्षं गौरिवागमत् । मन्मथायुधसम्पातव्यथ्यमानमतिः पुनः'—इति भट्टिः । ४८५

वृषा स्त्री. — मूषिकपर्णी; कपिकच्छूः; वासा; अटरूषकः; वासकः । १९८

वृषा [न्] पुं. [वर्षतीति, वृष् सेचने+'कनिन् युवृषितक्षीति' कनिन्] इन्द्रः; मघवा; पुरन्दरः; शचीपतिः; 'प्राजापत्यापनीतं तद् अन्नं प्रत्यग्रहीन्नृपः । वृषेव पयसां सारमाविष्कृतमुदन्वता'—इति रघौ (१०।५२) । कर्णः; वेदनाज्ञानं; दुःखं; वृषः; वृषभः; 'वृषा न क्रुद्धः पतयद् रजःसु'—इति ऋग्वेदे (१०।४३।८) । 'रजःसु लोकेषु वृषा न यथा वृषभः क्रुद्धः सन् प्रतिवृषभवधाय पतयद् गच्छति'—इति तद्भाष्ये सायणः । घोटकः; वाजी; अश्वः; 'आवां रथो रोदसी बर्द्धमानो हिरण्ययो वृषभिर्यात्वश्वैः'—इति ऋग्वेदे (७।६९।१) । 'हे अश्विनौ वां रथो वृषभिः युवभिरश्वैर्युक्तः सन्नायातु' इति तद्भाष्ये सायणः । पिता; 'वृषा जजान वृषणं रणाय' —इति ऋग्वेदे (७।२०।५) 'वृषा सेक्ता पिता कश्यपो वृषणं कामानां वर्षितारमिन्द्रम्'–इति तद्भाष्ये सायणः । त्रि. वर्षकः; 'ब्रह्मणस्पतिर्वृषभिर्वराहैः'—इति ऋग्वेदे (१०।६७।७) । 'वृषभिर्वर्षितृभिर्वराहैर्वराहारैः'— इति तद्भाष्ये सायणः । ५२

वृषाकपिः पुं. [वृषः धर्मः कपिस्तद्वद्वश्यो यस्येति । 'अन्येषामपीति' दीर्घः । वृषं न कम्पयति वृषेण आकम्पयति दैत्यानिति वा । वृषः कामपूरकश्चासौ आकपिश्च वा] विष्णुः; कृष्णः; 'ततो विभुः प्रवरवराहरूपधृक् वृषाकपिः प्रसभमथैकदंष्ट्रया'—इति हरिवंशे (२१६।४७) । शिवः; 'वृषाकपिश्च शम्भुश्च कपर्दी रैवतस्तथा'—इति हरिवंशे (३।५२) । अग्निः; इन्द्रः; वृषा; 'एवं सञ्चोदितो विप्रैर्मरुत्वानहनद्रिपुम् । ब्रह्महत्या हते तस्मिन्नाससाद वृषाकपिम्'—इति भागवते (६।१३।१०) । सूर्यः; 'त्वं हंसः सविता भानुरंशुमाली वृषाकपिः'—इति महाभारते (३।३।६१) । २२

वृषाङ्कः पुं. [वृषोऽङ्को ध्वजचिह्नं यस्य] शिवः; 'पीते गरे वृषाङ्केण प्रीतास्तेऽमरदानवाः'—इति भागवते (८।८।१) । साधुः; भल्लातकः; षण्डः । १२

वृषी स्त्री. [वर्षति सुखम्, इगुपधत्वात् क, ङीष् । ब्रुवन्तः सीदन्त्यत्रेति पृषोदरादिर्वा] व्रतिनां कुशादिमयासनम्; 'शिष्यो ददौ वृषीं तस्मै गुरुणा नोदितस्तदा'—इति देवीभागवते (५।३२।३०) । पुं. मयूरः; [वृष+णिनि] वृषवान् । ४११

वृष्टिः स्त्री. [वृष्+क्तिन्] मेघाज्जलबिन्दुपतनं; वर्षं; गोघृतं; परामृतं; वर्षणम्; 'अमृतादित्रये यत्र भवन्ति सर्वखेचराः । तदा वृष्टिः क्रमाज्ज्ञेया धृत्यर्कवसुवासरैः' —इति स्वरोदयः । 'ब्रुवन्तु परमार्थं च किमिन्द्राद्वृष्टिरेव च । सूर्याद्धि जायते तोयं तोयात् सस्यानि शाखिनः'

वृषणाभ्यां चलः स्त्रियाम् । समाभ्यां क्षितिपः प्रोक्तः प्रलम्बेन शताब्दवान्—इति गारुडे ।' ५२३

वृषदंशः पुं. [वृषं मूषिकं दशतीति । वृष+दंश्+पचाद्यच्] विडालः; ओतुः; मार्जारः । २३६

वृषदंशकः पुं. [वृषं मूषकं दशतीति । वृष+दंश्+ण्वुल्] विडालः; ओतुः; मार्जारः; वृषदंशः; आखुभुक् । २३६

वृषभः पुं. [वृष् सेचने+'ऋषिवृषिभ्यां कित्' इति अभच् स च कित्] उक्षः; अनड्वान्; वलीवर्दः; ककुद्मान्; वृषः; ऋषभः; सौरभेयः; गौः; वाडवेयः; शाक्वरः; 'यदन्यगोषु वृषभो वत्सानां जनयेच्छतम्' —इति मनुः (९।५०) । श्रेष्ठः; 'सृञ्जयैः सह कैकेयैर्वृष्णीनां वृषभेण च'—इति महाभारते (३।३३।८७) । वैदर्भीरीतिभेदः; आदिजिनः; कर्णरन्ध्रं; ऋषभनामौषधम्; चतुर्विधपुरुषान्तर्गतपुरुषविशेषः; 'शशके पद्मिनी तुष्टा चित्रिणी रमते मृगम् । वृषभे शङ्खिनी तुष्टा हस्तिनी रमते हयम्'—इति रतिमञ्जरी । २६३

वृषलः पुं. [वृषं धर्मं लुनाति छिनत्तीति । वृष+लूञ् छेदने+'अन्येभ्योऽपीति' ड] अपशूद्रः; 'नाज्ञातेन समं गच्छेन्नैको न वृषलैः सह'—इति मनुः (४।१४०) । 'वृषो हि भगवान् धर्मस्तस्य यः कुरुते ह्यलम् । वृषलं तं विदुर्देवास्तस्माद्धर्मं न लोपयेत्'–इति मनुः (८।१६) । चन्द्रगुप्तराजः; वाजी; अधार्मिकः । ५८६

वृषस्यन्ती स्त्री. [वृषं नरं शुक्रं वा इच्छति मैथुनाय । वृष+'सुप आत्मनः क्यच्' इति क्यच्, 'अश्वक्षीरेति' सुगागमः । ततः 'लटः शतृशानचाविति' शतृ, 'उगितश्च' इति ङीप्] रतार्थिनी; कामुकी; वृषेण लब्धुमिच्छन्ती गौः; 'लक्ष्मणं सा वृषस्यन्ती महोक्षं गौरिवागमत् । मन्मथायुधसम्पातव्यथ्यमानमतिः पुनः'—इति भट्टिः । ४८५

वृषा स्त्री. — मूषिकपर्णी; कपिकच्छूः; वासा; अटरूषकः; वासकः । १९८

वृषा [न्] पुं. [वर्षतीति, वृष् सेचने+'कनिन् युवृषितक्षीति' कनिन्] इन्द्रः; मघवा; पुरन्दरः; शचीपतिः; 'प्राजापत्योपनीतं तद् अन्नं प्रत्यग्रहीन्नृपः । वृषेव पयसां सारमाविष्कृतमुदन्वता'—इति रघौ (१०।५२) । कर्णः; वेदनाज्ञानं; दुःखं; वृषः; वृषभः; 'वृषा न क्रुद्धः पतयद् रजःसु'—इति ऋग्वेदे (१०।४३।८) । 'रजःसु लोकेषु वृषा न यथा वृषभः क्रुद्धः सन् प्रतिवृषभवधाय पतयद् गच्छति'—इति तद्भाष्ये सायणः । घोटकः; वाजी; अश्वः; 'आवां रथो रोदसी बद्धमानो हिरण्ययो वृषभिर्यात्वश्वैः'—इति ऋग्वेदे (७।६९।१) । 'हे अश्विनौ वां रथो वृषभिः युवभिरश्वैर्युक्तः सन्नायातु' इति तद्भाष्ये सायणः । पिता; 'वृषा जजान वृषणं रणाय' —इति ऋग्वेदे (७।२०।५) 'वृषा सेक्ता पिता कश्यपो वृषणं कामानां वर्षितारमिन्द्रम्'–इति तद्भाष्ये सायणः । त्रि. वर्षकः; 'ब्रह्मणस्पतिर्वृषभिर्वराहैः'—इति ऋग्वेदे (१०।६७।७) । 'वृषभिर्वर्षितृभिर्वराहैर्वराहारैः'— इति तद्भाष्ये सायणः । ५२

वृषाकपिः पुं. [वृषः धर्मः कपिस्तद्वद्वश्यो यस्येति । 'अन्येषामपीति' दीर्घः । वृषं न कम्पयति वृषेण आकम्पयति दैत्यानिति वा । वृषः कामपूरकश्चासौ आकपिश्च वा] विष्णुः; कृष्णः; 'ततो विभुः प्रवरवराहरूपधृक् वृषाकपिः प्रसभमथैकदंष्ट्रया'—इति हरिवंशे (२१६।४७) । शिवः; 'वृषाकपिश्च शम्भुश्च कपर्दी रैवतस्तथा'—इति हरिवंशे (३।५२) । अग्निः; इन्द्रः; वृषा; 'एवं सञ्चोदितो विप्रैर्मरुत्वानहनद्रिपुम् । ब्रह्महत्या हते तस्मिन्नाससाद वृषाकपिम्'—इति भागवते (६।१३।१०) । सूर्यः; 'त्वं हंसः सविता भानुरंशुमाली वृषाकपिः'—इति महाभारते (३।३।६१) । २२

वृषाङ्कः पुं. [वृषोऽङ्को ध्वजचिह्नं यस्य] शिवः; 'पीते गरे वृषाङ्केण प्रीतास्तेऽमरदानवाः'—इति भागवते (८।८।१) । साधुः; भल्लातकः; षण्डः । १२

वृषी स्त्री. [वर्षति सुखम्, इगुपधत्वात् क, ङीष् । ब्रुवन्तः सीदन्त्यत्रेति पृषोदरादिर्वा] व्रतिनां कुशादिमयासनम्; 'शिष्यो ददौ वृषीं तस्मै गुरुणा नोदितस्तदा'—इति देवीभागवते (५।३२।३०) । पुं. मयूरः; [वृष+णिनि] वृषवान् । ४११

वृष्टिः स्त्री. [वृष्+क्तिन्] मेघाज्जलबिन्दुपतनं; वर्षं; गोघृतं; परामृतं; वर्षणम्; 'अमृतादित्रये यत्र भवन्ति सर्वखेचराः । तदा वृष्टिः क्षमाज्ञेया धृत्यर्कवसुवासरैः' —इति स्वरोदयः । 'ब्रुवन्तु परमार्थं च किमिन्द्राद्वृष्टिरेव च । सूर्याद्धि जायते तोयं तोयात् सस्यानि शाखिनः'

—इति ब्रह्मवैवर्ते। १६१

वृष्णिः पुं. [वृष्+'सृवृषिभ्यां कित्' इति नि, स च कित्] किरणः; मयूखः; सूर्यकिरणः; अंशुः; (२७९) मेषः; अविः; ऊर्णायुः; उरभ्रः; हुडुः; उरणः; मेढ्रः; मेण्ढः। मेधः; यादवः; 'यथा हि सर्वास्वापत्सु पासि वृष्णीनरिन्दम तथा ते पाण्डवा रक्ष्याः पाह्यस्मान्महतो भयात्'—इति महाभारते (५।७२।४)। कृष्णः; इन्द्रः; अग्निः; वायुः। ३९

वृहत्, बृहत् त्रि. [बृह् वृद्धौ+'वर्तमाने पृषद्बृहन्महज्जगच्छतृवच्च' इति अतिप्रत्ययेन निपातनात् साधु, पृषोदरादित्वाद् वत्वम्] महत्; 'वृहत्सहायः कार्यान्तं क्षोदीयानपि गच्छति। सम्भूयाम्भोधिमभ्येति महानद्या नगापगा'—इति माघे (२।१०)। ६९९

वृहतिका स्त्री. [वृहती+'बृहत्या आच्छादने' इति स्वार्थे कन्] उत्तरीयवस्त्रं; वैकक्षं; बृहतिका; वृहती लता; क्षुद्रवार्ताकी। ४०९

वृहत्कुक्षिः त्रि. [वृहन् कुक्षिर्यस्य] तुन्दिलः; बृहत्कुक्षिः; पिचण्डिलः। ६०८

वृहद्भानुः पुं. [वृहन्तो भानवो रश्मयो यस्य] अग्निः; वह्निः; 'तपसश्च मनुं पुत्रं भानुञ्चाप्यङ्गिराः सृजत्। बृहद्भानुं तु तं प्राहुर्ब्राह्मणा वेदपारगाः'—इति महाभारते (३।२२०।८)। चित्रकवृक्षः; सत्यभामापुत्रः; 'चन्द्रभानुर्बृहद्भानुरतिभानुस्तथाष्टमः'—इति भागवते (१।६१।१०)। सत्रायणपुत्रः; 'सत्रायणस्य तनयो वृहद्भानुस्तदा हरिः'—इति भागवते (८।१३।३५)। पृथुलाक्षस्य पुत्रः; 'चतुरङ्गो रोमपादात् पृथुलाक्षश्च तत्सुतः। वृहद्रथो वृहत्कर्मो वृहद्भानुश्च तत्सुताः'—इति भागवते (९।२३।११)। वृहद्रश्मिविशिष्टे त्रि.। 'वृहद्भानो यविष्ठ्य'—इति ऋग्वेदे (१।३६।१५)। 'हे अग्ने हे वृहद्भानो वृहन्तो भानवो यस्य तादृश'——इति तद्भाष्ये सायणः। ६४

वृहस्पतिः पुं. [वृहतां वाचां पतिः। 'पारस्करेति' सुट् निपात्यते] अङ्गिरसः पुत्रः; बृहस्पतिः; सुराचार्यः; गीष्पतिः; धिषणः; गुरुः; जीवः; आङ्गिरसः; वाचस्पतिः; चित्रशिखण्डिजः; उतथ्यानुजः; गोविन्दः; चारुः; द्वादशरश्मिः; गिरीशः; दिदिवः; पूर्वफल्गुनीभवः; सुरगुरुः; वाक्पतिः; वचसांपतिः; इन्द्रेज्यः; देवेज्यः; इज्यः; वृहताम्पतिः; वागीशः; चक्षाः; दीदिविः; द्वादशकरः; प्राक्फाल्गुनः; गीरथः; स च शिवस्य गुरुपुत्रः धर्मशास्त्रप्रयोजकः; 'कृष्णस्य वरपुत्रोऽयं स्वयमेव वृहस्पतिः। अतो हेतोः सुरगुरुर्गुरुपुत्रः शिवस्य च'—इति ब्रह्मवैवर्ते। वारविशेषः; 'नृपेन्द्रमन्त्री नृपलब्धकामो विद्याविनोदो चतुरः प्रगल्भः। आचार्यपूज्यो मधुरस्वभावो वारे भवेद्देवगुरोर्मनुष्यः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। नवग्रहमध्ये पञ्चमग्रहः; पुरोहितः; त्रि. मन्त्रपालकः; 'वृहस्पतिं यः सुभृतं बिभर्ति'—इति ऋग्वेदे (४।५८।७)। ४७

वृहस्पतिसवः पुं. [वृहस्पतेः सवः] यज्ञविशेषः। ४१८

वेगः पुं. [विज्+घञ्] जवः; रहः; तरः; रयः; स्यदः; 'मृत्तोयैः शुध्यते शोध्यं नदी वेगेन शुध्यति'—इति मनुः (५।१०८)। प्रवाहः; ओघः; वेणी; धारा; रेतः; मूत्रविष्ठादिनिर्गमप्रवृत्तिः; तार्किकसंस्कारविशेषः; 'स्पर्शादयोऽष्टौ वेगाख्यसंस्कारो मरुतो गुणाः। अष्टौ स्पर्शादयो रूपं द्रवो वेगश्च तेजसि। स्पर्शादयोऽष्टौ वेगश्च द्रवत्वं च गुरुत्वकम्। रूपं रसस्तथा स्नेहो वारिण्येते चतुर्दश'—इति भाषापरिच्छेदः। 'ततोऽभिपद्याभ्यहनन्महासुरो रुषा नृसिंहं गदयोरुवेगया'—इति भागवते (७।८।२५)। ४४३

वेगी [न्] त्रि. [वेगोऽस्यास्तीति। वेग+इनि] वेगवान्; जङ्घाकारिकः; जाङ्घिकः; तरस्वी; त्वरितः; प्रजवी; जवनः; जवः; 'अश्वाश्च वेगिनः सन्ति रथा वायुजवा मम'—इति हरिवंशे भविष्यपर्वणि (२०।१४)। श्येनपक्षी। ३५८

वेचा स्त्री. [विच् पृथग्भावे+घञ्+टाप्] मूल्यं; वेतनम्। ७२८

वेणिः स्त्री. [वी+'वीज्याज्वरिभ्यो निः' इति नि। पृषोदरादित्वाद् णत्वम्] प्रोषितभर्तृकादिधार्यकेशरचनाविशेषः; विरहिणीबद्धकचः; प्रवेणिः; वेणी; प्रवेणी; वेणिका; केशबन्धनविशेषः; 'तत्र नित्यविहितोपहूतिषु प्रोषितेषु पतिषु द्युयोषिताम्। गुम्फिताः शिरसि वेणयोऽभवन्नप्रफुल्लसुरपादपस्रजः'—इति माघे (१४।३०)। (६६९) ओघः; प्रवाहः; धारा; स्रोतः; रयः। जलसमूहः, यथा प्रयागे गङ्गायमुनासरस्वतीमेलनं त्रिवेणी। ५३०

वेणी स्त्री. [वेणि+वा ङीष्] प्रवेणी; वेणिः; प्रवेणिः; वेणिका; केशबन्धनभेदः; 'तस्यात्मा शितिकण्ठस्य सेनापत्यमुपेत्य वः । मोक्ष्यते सुरवन्दीनां वेणीर्वीर्यविभूतिभिः'—इति कुमारे (२।६१)। (६६९) ओघः; प्रवाहः; धारा; स्रोतः; रयः; देवताडवृक्षः; मेषी; नदीविशेषः; 'कृष्णावेण्योस्तटायस्माच्छिवविष्णुगणैः पुरा। वणिक्शरीरात् कलहा निरस्ताः कथितास्त्वया' —इति पाद्मोत्तरखण्डे। जलसमूहः; प्रयागे गङ्गायमुनासरस्वतीमेलनं त्रिवेणी। ५३०

वेणुः पुं. [अज्+'अजिवृरीभ्यो निच्च' इति णु स च नित्। अजेर्वीभावो गुणश्च] त्वचिसारः; वंशः; त्वक्सारः; मस्करः; 'बांस' इति भाषा। 'तं तु देशमतिक्रम्य शैलोदा नाम निम्नगा। उभयोस्तीरयोस्तस्याः कीचका नाम वेणवः'—इति रामायणे (४।४३।१७)। नृपविशेषः; वंशी। २०४

वेतनम् क्ली. [वी+'वीपतिभ्यां तनन्' इति तनन्] कर्मदक्षिणा; कर्मण्या; विधा; भृत्या; भृतिः; भर्म, भरण्यं; भरणं; मूल्यं; निर्वेशः; पणः; विष्टिः; वेचा; 'पणो देयोऽवकृष्टस्य षडुत्कृष्टस्य वेतनम्'—इति मनुः (७।१२६)। जीवनोपायः; आजीवः; जीवनं; वार्ता; जीविका; वृत्तिः; रूप्यम्। ७२८

वेतसः पुं. [वे+'वेञस्तुट् च' इति असच् तुडागमश्च। वेति जलप्लवतां गच्छति इति वेतसः] लताविशेषः; रथः; अभ्रपुष्पः; विदुलः; शीतः; वानीरः; वञ्जुलः; प्रियः; गन्धपुष्पः; रथाभ्रः; वेतसी; निचुलः; दीर्घपत्रकः; कलमः; मञ्जरीनम्रः; सुषेणः; गन्धपुष्पकः; 'वेतसो नम्रकः प्रोक्तो वानीरो रञ्जनस्तथा । अभ्रपुष्पं च विदुलो रथः शीतश्च कीर्तितः। वेतसः शीतलो दाहशोथार्शोयोनिरुग्व्रणान् । हन्ति वीसर्पकृच्छ्रास्रपित्ताश्मरिकफानिलान्'—इति भावप्रकाशः। जलजाताग्निः; 'हिरण्ययो वेतसो मध्य आसाम्'—इति ऋग्वेदे (४।५८।५)। 'वेतसोऽप्सम्भवोऽग्निः'—इति तद्भाष्ये सायणः। २०१

वेतसी स्त्री.—वेतसः; वेत्रलता; 'रेवारोधसि वेतसीतरुतले चेतः समुत्कण्ठते'—इति साहित्यदर्पणे (१)। २०१

वेत्रधरः पुं. [वेत्रस्य धरः] द्वाःस्थः; द्वास्थः; दौवारिकः; क्षत्ता; वेत्री; द्वारपालकः; दण्डी; वेत्रधारकः; द्वारपालः। यष्टिधारके त्रि.। ४२४

वेत्रासनम् क्ली. [वेत्रस्य आसनम्] वेत्रनिर्मितासनम्; आसन्दी। ३११

वेदः पुं. [विद्+घञ्] ब्रह्ममुखनिर्गतधर्मज्ञापकशास्त्रं; श्रुतिः; आम्नायः; आगमः; छन्दः; ब्रह्म; निगमः; प्रवचनं; स्वाध्यायः; विष्णुः; 'वेदो वेदविदव्यङ्गो वेदाङ्गो वेदवित् कविः'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्। वृत्तं; यज्ञाङ्गं; वित्तम्। ९

वेदनम्, वेदना क्ली.–स्त्री. [विद्+ल्युट्। पक्षे 'घट्टिवन्दिविदिभ्य उपसंख्यानम्' इति युच्] आबाधा; दुःखम्; अर्तिः; पीडा; व्यथा; (८१९) संवित्तिः; संवेदः; अनुभवः; ज्ञानं; विवाहः; 'पाणिग्रहणसंस्कारः सवर्णासूपदिश्यते । असवर्णास्वयं ज्ञेयो विधिरुद्वाहकर्मणि। शरः क्षत्रियया ग्राह्यः प्रतोदो वैश्यकन्यया। वसनस्य दशा ग्राह्या शूद्रयोत्कृष्टवेदने'—इति मानवे ३ अध्यायः। ६२६

वेदान्तः पुं. [वेदानाम् अन्तः] उपनिषत्; रहस्यम्; उत्तरमीमांसा; ब्रह्मविद्या; शास्त्रविशेषः। ९

वेदिः स्त्री. [विद्यते पुण्यमस्यामिति। विद्+'दृपिपिरुहिवृतिविदीति' इन्] परिष्कृता भूमिः; 'वीक्ष्य वेदिमथरक्तबिन्दुभिः'—इति रघौ (११।२५)। अङ्गुलिमुद्रा; गृहोपकरणविशेषः; 'वैदूर्यवज्रामलनीलविद्रुमैर्मुक्ताहरिद्भिर्वलभीषु वेदिषु'–इति भागवते (१०।४१।२१)। पुं. [वेत्तीति, विद्+इन्] पण्डितः। ५१५

वेदिका स्त्री. [वेदिरेव, स्वार्थे कन्] मङ्गलकर्मार्थं निर्मितवेदिः; परिष्कृता भूमिः; वितर्दिः; वितर्दी; वेदिः; वेदी; वितर्दिका; 'स देवदारुद्रुमवेदिकायां शार्दूलचर्मव्यवधानवत्याम्'—इति कुमारे (३।४४)। (८२३) अङ्गुलिमुद्रा; वेदिः। २९८

वेदी स्त्री. [वेदि+कृदिकारादिति वा ङीष्] वेदिः; सरस्वती। ५१५

वेधाः [स्] पुं. [विदधातीति, वि+धा+'विधाञो वेध च' इति असि वेधादेशश्च सोपसर्गधातोः] ब्रह्मा; 'तं वेधा विदधे नूनं महाभूतसमाधिना । तथाहि सर्वे तस्यासन् परार्थैकफला गुणाः'—इति रघौ (१।२९)। विष्णुः (२५); सूर्यः; पण्डितः; श्वेतार्कवृक्षः; शिवः; 'नमस्ते शितिकण्ठाय नीलग्रीवाय वेधसे'—इति हरिवंशे

भविष्यपर्वणि (१५।१२)। अनन्तपुत्रः; 'अनन्तस्य च पुत्रोऽभूद् वेधो नाम महाप्रभुः। आनर्तविषये तेन पुरी कुशस्थली कृता'—इति वह्निपुराणे। प्रजापतिर्दक्षादिः; 'परतोऽपि परश्चापि विधाता वेधसामपि'—इति कुमारे (२।१४)। त्रि. मेधावी; विविधकर्ता; 'आवेधसं नीलपृष्ठं बृहन्तम्'—इति ऋग्वेदे (५।४३।१२)। 'कीदृशं देवं वेधसं विविधकर्तारम्'—इति तद्भाष्ये सायणः। ६

वेध्यम् क्ली. [विध्+ण्यत्] लक्ष्यं; शरव्यं; निमित्तम्; 'प्राणो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म वेध्यमनुत्तमम्। अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत् तन्मयो भवेत्'—इति मार्कण्डेये (४२।७)। वेधनीये त्रि.। 'षट्कर्णोत्पत्तिमाशङ्क्य भानोः शुद्धया समेऽपि च। कर्णौ वेध्यौ न दोषः स्यादन्यथा मरणं भवेत्'—इति मलमासतत्त्वम्। ४६८

वेपथुः पुं. [वेपनमिति। वेप्+'ट्वितोऽथुच्' इति अथुच्] कम्पः; 'वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते'—इति भगवद्गीतायाम् (१।२९)। ६०१

वेला स्त्री. [वेल्यतेऽनयेति। वेल्+'गुरोश्च हलः' इत्य, ततष्टाप्] वारिवृद्धिः; समुद्रजलविकारः; 'संरम्भं मैथिलीहासः क्षणसौम्यां निनाय ताम्। निवातस्तिमितां वेलां चन्द्रोदय इवोदधेः'—इति रघौ (१२।३६)। कालः; समयः; क्षणः; वारः; अवसरः; प्रस्तावः; प्रक्रमः; अन्तरम्; 'अक्षिपक्ष्मपरिक्षेपो निमेषः परिकीर्तितः। द्वौ निमेषौ त्रुटिर्नाम द्वे त्रुटी तु लवः स्मृतः। द्विलवः क्षण इत्युक्तः काष्ठा प्रोक्ता दश क्षणाः। दश काष्ठाः कला नाम तत्षष्ट्या स्याच्च नाडिका। घटिके द्वे मुहूर्तः स्यात्तैस्त्रिंशत्या दिवानिशम्। चतुर्विंशतिवेलाभिरहोरात्रं प्रचक्षते। सूर्योदयाद्धि विज्ञेयो मुहूर्तानां क्रमः सदा। पश्चिमादर्द्धरात्रादि होराणां विद्यते क्रमः। ज्ञेयं पित्र्यमहोरात्रं पक्षौ कृष्णसितासितौ। त्रिंशता च दिनैर्मासो द्विमास ऋतुरुच्यते। भवेद्दिव्यमहोरात्रं षड्भिरुत्तरदक्षिणौ। वर्षं द्वादशभिर्मासैर्मलमासस्त्रयोदशः'—इति वह्निपुराणे। मर्यादा; 'धिगस्तु नष्टः खलु भारतानां धर्मस्तथा क्षत्रविदां च वृत्तम्। यत्र ह्यतीतां कुरुधर्मवेलां प्रेक्षन्ति सर्वे कुरवः सभायाम्'—इति महाभारते (२।६३।३९)। समुद्रकूलम्; 'स वेलावप्रवलयां परिखीकृतसागराम्। अनन्यशासनामुर्वीं शशासैकपुरीमिव'—इति रघौ (१।३०)। अक्लिष्टमरणं; रागः; ईश्वरस्य भोजनं; रोगः; वाक्; बुधस्त्री; दन्तमांसम्। ६५४

वेलाउली स्त्री.— रागिणीविशेषः। १०५ अ

वेलावनम् क्ली. [वेलायां समुद्रतटे यद् वनम्] सागरतटीयं वनं; समुद्रकूले काष्ठविशेषः। ६५४

वेल्लजम् क्ली. [वेल्लं चलनं जायते, जनयतीत्यर्थः। वेल्ल+जन्+'अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड] मरिचम्; ऊषणम्; ऊषणा। ६१६

वेल्लितः त्रि. [वेल्ल्+क्त] वक्रः; वृजिनः; भङ्गुरः; आविद्धः; नतः; जिह्मः; भग्नः; अरालः; कुटिलः; व्याकुञ्चितः; ऊर्मिमान्; कम्पितः। क्ली. गमनम्। ६९६

वेशः पुं. [विशन्ति नयनमनांस्यत्रेति। विश्+अधिकरणे घञ्। यद्वा विशति अङ्गमिति, 'पदरुजविशस्पृशो घञ्' इति घञ्] अलङ्काररचनादिकृतशोभा; आकल्पः; नेपथ्यं; प्रतिकर्म; प्रसाधनं; वेषः। 'नरदेवोऽसि वेशेन नटवत् कर्मणा द्विजः'—इति भागवते (१।१७।५)। [विशन्ति कामुका यत्रेति। अधिकरणे घञ्] वेश्यागृहं; गृहमात्रं; वस्त्रगृहम्; 'शकटापणवेशाश्च यानयुग्यं च सर्वशः। तत्संगृह्य ययौ राजा ये चापि परिचारकाः'—इति महाभारते (५।१५१।५३)। प्रवेशः [विश् धात्वर्थदर्शनात्]; पण्यस्त्रिया भृतिः; 'न राज्ञः प्रतिगृह्णीयादराजन्यप्रसूततः। सूनाचक्रध्वजवतां वेशेनैव च जीवताम्। दशसूनासमं चक्रं दशचक्रसमो ध्वजः। दशध्वजसमो वेशो दशवेशसमो नृपः'—इति मनुः (४।८४।८५)। ५३९

वेशन्तः पुं. [विशन्त्यत्र भेकादयः इति। विश्+'जृविशिभ्यां झच्' इति झच्] पल्वलः; तल्लः; क्षुद्रसरोवरः। अग्निः; वह्निः। ६७५

वेशवारः पुं. [वेशनं वेशः, वेशं वृणुते। वेश+वृ+घञ्] उपस्करः; वेसवारः; 'मसाला' इति भाषा। ३२१

वेश्म [न्] क्ली. [विशन्त्यत्रेति। विश्+मनिन्] गृहं; गेहम्; 'अद्वारेण च नातीयाद् ग्रामं वा वेश्म वावृतम्'—इति मनुः (४।७३)। २९१

वेश्या स्त्री. [वेशमर्हति, वेशेन दीव्यत्याचरति, वेशेन पण्ययोगेन जीवति वा। वेश+'दिगादिभ्यो यत्']

स्त्रीविशेषः; वारस्त्री; गणिका; रूपाजीवा; वेश्या; क्षुद्रा; शालभञ्जिका; झर्झरा; शूला; वारविलासिनी; वारवाणिः; भण्डहासिनी; भञ्जिका; बन्धुरा; कुम्भा; कामरेखा; वर्वटी; साधारणस्त्री; पण्याङ्गना; पणाङ्गना; भुजिष्या; वारवधूः; भोग्या; स्मरवीथिका; 'पतिव्रता चैकपत्नी द्वितीये कुलटा स्मृता । तृतीये वृषली ज्ञेया चतुर्थे पुंश्चली स्मृता । वेश्या च पञ्चमे षष्ठे युङ्गी च सप्तमेऽष्टमे । तत ऊर्ध्वं महावेश्या सास्पृश्या सर्वजातिषु'—इति ब्रह्मवैवर्ते । ४९०

वेश्यापतिः पुं. [वेश्यायाः पतिः] भुजङ्गः; विटः; पल्लवकः; पल्लविकः । ३८२

वेषः पुं. [वेवेष्टि व्याप्नोति अङ्गं वेषः । पचादित्वादच् । मूर्द्धन्यान्तः । विशन्ति नयनमनांस्यत्रेत्याधारे घञि वेशस्तालव्यान्तश्च] नेपथ्यं; वेशः; आकल्पः; मण्डनं; प्रतिकर्म; प्रसाधनं; भूषणम्; अलङ्कारः; नेपथ्याभरणम्; 'विनीतवेषाभरणः पश्येत्कार्याणि कार्यिणाम्' —इति मनुः (८।२) । वेश्याजनसमाश्रयः; वेश्यजनाश्रयः; वेश्यालयः; वेशः; वेश्याश्रयः; पुरं; वेश्यम् । ५३९

वेषवारः पुं. [विष्लृ व्याप्तौ, वेषणं वेषः, घञ् । वेषं व्यञ्जनाविलतां वृणुते, वेष+वृ+घञ्] वेशवारः; वेसवारः; उपस्करः; धन्याकसर्षपादिपिष्टः । ३२१

वेष्टितः त्रि. [वेष्ट्+क्त] निवृतः; परिवृतः; वलयितः; परिक्षिप्तः; संवीतं; रुद्धम्; आवृतं; नदीप्राचीरादिना कृतवेष्टनम् । ७१२

वेसरः पुं. [वेसं राति, वेगेन सरति वा । पृषोदरादित्वात् साधुः] अश्वतरः; वेशरः; 'तूर्णं प्रणेत्रा कृतनादमुच्चकैः प्रणोदितं वेसरयुग्यमध्वनि'—इति माघे (१२।१९) । ४५०

वेसवारः पुं. [विस् प्रेरणे, वेसं वृणुते । घञ्] धन्याकसर्षपादिपिष्टः; उपस्करः; वेषवारः; वेशवारः; 'मुद्गादिवेसवाराणां पूर्णा विष्टम्भिनो मताः । वेसवारैः सपिशितैः सम्पूर्णा गुरुबृंहणाः'—इति सुश्रुते । व्यञ्जनविशेषः; 'निरस्थि पिशितं पिष्टं सिद्धं गुडघृतान्वितम् । कृष्णामरिचसंयुक्तं वेसवार इति स्मृतम् ।' 'वेसवारो गुरुः स्निग्धो बलोपचयवर्धनः'—इति राजवल्लभः । 'हिङ्ग्वार्द्रकमरीचजीरकहरिद्राधन्याकाः क्रमेण द्विगुणपरिमाणेनैकत्रीकृताः'—इति पाकराजेश्वरे पाकपरिभाषा । ३२१

वेहत् स्त्री. [विशेषेण हन्ति गर्भमिति । वि+हन्+'संश्चत्तृपद्वेहत्' इति अति प्रत्ययेन निपातनात् साधुः] गर्भोपघातिनी गौः; वृषभोपगता; अनृतौ वृषोपगमनादिवशात् यस्या गर्भपातो भवति सा । 'वशा च मे ऋषभश्च मे वेहच्च मेऽनड्वांश्च मे'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (१८।२७) । २६९

वैकक्षम् क्ली. [विशिष्टः कक्षः येन विकक्षम् उरस्तत्र भवम् । विकक्ष+अण्] उत्तरासङ्गः; बृहतिका; वैकक्षकम् उरसि तिर्यग् उपवीतवत् कण्ठात् क्षिप्तमाल्यम्; तिर्यग्वक्षोलम्बिमाल्यम् । ४१०

वैकक्षकम् क्ली. [वैकक्षमेव । स्वार्थे कन्] तिर्यग्वक्षोलम्बिमाल्यं; वैकक्षम्; उरसि तिर्यग् यज्ञोपवीतवत् कण्ठात् क्षिप्तमाल्यम् । ५५३

वैकटिकः, वैकतिकः पुं. [विकटे छेदनमाजनदन्तुरवर्तुलादिकर्मणि साधुः । विकट+ठक्] मणिकारः । ५८८

वैकुण्ठः पुं. [विकुण्ठाया अपत्यम् इति । शिवादित्वाद् अण् । विगता कुण्ठा यस्माद् वा, प्रज्ञाद्यण्] कृष्णः; जनार्दनः; विष्णुः; 'चाक्षुषस्यान्तरे देवो वैकुण्ठः पुरुषोत्तमः । विकुण्ठायामसौ जज्ञे वैकुण्ठे दैवतैः सह'—इति विष्णुपुराणम् । इन्द्रः; सितार्जकः; तत्रस्थदेवगणे पुं. भूम्नि । 'पत्नी विकुण्ठा शुभ्रस्य वैकुण्ठैः सुरसत्तमैः । तयोः स्वकलया जज्ञे वैकुण्ठो भगवान् स्वयम्'—इति भागवते (८।५।४) । २२

वैखानसः पुं. [विखनसं ब्रह्माणं वेत्ति तपसा । विखनस्+'तदधीते तद्वेद' इत्यण्, अनुशतिकादेराकृतिगणत्वादुभयपदवृद्धिः] वानप्रस्थः; 'वानप्रस्थो वैखानसोऽग्रहः' —इति त्रिकाण्डशेषः । 'वैखानसा ये मुनयो मिताहारा जितव्रताः । तेऽपि मुह्यन्ति संसारे जानन्तोऽपि ह्यसत्यताम्' —इति देवीभागवते (१।१९।१७) । [वैखानसस्येदमित्यर्थेऽणि] वैखानससम्बन्धिनि त्रि. । 'वैखानसं किमनया व्रतमाप्रदानाद् व्यापारोधि मदनस्य निषेवितव्यम्'—इति शाकुन्तले । ३९४

वैजननः पुं.–क्ली. [विजायतेऽस्मिन्निति । वि+जन्+अधिकरणे ल्युट्, ततः स्वार्थे अण्] प्रसवमासः; सूतिमासः; 'अथ वैजनने मासि सा देवी दिव्यलक्षणम् । निर्दग्धस्या-

न्वयतरोरङ्कुरं सुषुवे सुतम्'–इति राजतरङ्गिण्याम् ।४९९

वैजयन्ती स्त्री. [विशेषेण जयति शत्रुमिति । जि अभिभवे+'तॄभूवहि' इति झच्, 'तस्येदम्' इत्यण्, ङीप्] पताका; वैजयन्तिका; केतुः; केतनः; ध्वजः । ४५८

वैणवः पुं. [वेणोरवयवो विकारो वा । वेणु+'बिल्वादिभ्योऽण्' इत्यण्] उपनयने वेणुदण्डः; राम्भः; वेणुः; 'भेरीमृदङ्गनिनदैः शङ्खवैणवनिस्वनैः'—इति महाभारते (५।९०।१६) । क्ली. [वेणोरिदम् । वेणु+अण्] वेणुफलं; वेणुसम्बन्धिनि त्रि. । 'ब्रह्मशापोपसृष्टानां कृष्णमायावृतात्मनाम् । स्पर्द्धाक्रोधः क्षयं निन्ये वैणवोऽग्निर्यथा वनम्'—इति भागवते (११।३०।२४) । ७२६

वैतंसिकः त्रि. [वीतंसो मृगपक्ष्यादिबन्धनोपायस्तेन चरतीति । वीतंस+'चरति' इति ठक्] मांसविक्रेता; कौटिकः; मांसिकः; कौटकिकः; सौनिकः । ५९५

वैतालिकः पुं. [विविधेन मङ्गलगीतवाद्यादिकृततालशब्देन चरतीति । विताल+ठक्] बोधकरः; प्रबोधकः; मागधः; बन्दिः; सूतः; मङ्गलपाठकः; निशान्ते बोधकारकः; निशान्तं निवेदयन्तो ये नृपं बोधयन्ति जागरयन्ति ते बोधकराः । 'वैतालिकाः स्फुटपदप्रकटार्थमुच्चैर्भोगावलीः कलगिरोऽत्रसरेषु पेठुः'—इति माघे (५।६७) खेट्टितालः; 'वैतालिकः पुमान् खेट्टिताले बोधकरे त्रिषु'—इति मेदिनी । 'वैतालिकः खड्गताले (खेट्टिताले) मङ्गलपाठकेऽपि च'–इति हैमः, वेतालसम्बन्धिनि त्रि. । ४३५

वैदूर्यम् क्ली. [विदूरात् प्रभवतीति । विदूर+'विदूराञ्ञ्यः' इति ञ्य] मणिविशेषः; स तु कृष्णपीतवर्णः । बालवायजं; केतुरत्नं; कैतवं; प्रावृष्यम्; अभ्ररोहं; खराब्दाङ्कुरं; विदूररत्नं; विदूरजम्; 'मुक्ताविद्रुमवज्रेन्द्रवैदूर्यस्फटिकादिकम् । मणिरत्नं सरं शीतं कषायं स्वादु लेखनम् । चक्षुष्यं धारणात्तच्च पापालक्ष्मीविनाशनम्'—इति राजवल्लभः । १७५

वैदेहः पुं. [विदेहस्यापत्यमिति । विदेह+अण्] वणिक्; पण्याजीवः; प्रापणिकः; नैगमः; वैदेहकः; निमिराजपुत्रः; वर्णसङ्करजातिविशेषः; 'वैश्यान्मागधवैदेहौ राजविप्राङ्गनासुतौ'—इति मनुः (१०।११) । ५७१

वैदेही स्त्री. [विदेहेषु भवा, विदेहस्यापत्यं स्त्री वा । विदेह+अण्+ङीप्] कोल्या; उपकुल्या; मागधा; मागधी; पिप्पली; कणा; वणिक्स्त्री; वणिक्पत्नी; वैदेहपत्नीं; 'आहिण्डिको निषादेन वैदेह्यामेव जायते' —इति मनुः (१०।३७) । रोचना; सीता; 'रामोऽपि सह वैदेह्या वने वन्येन वर्तयन् । चचार सानुजः शान्तो वृद्धेक्ष्वाकुव्रतं युवा'—इति रघौ (१२।२०) । 'वैदेहि ! याहि कलसोद्भवधर्मपत्नीं तस्याः पुरः कथय पूर्वकथाः समस्ताः । पृष्टापि मा वद पयोनिधिबन्धनं मे सेयं पुनश्चुलुकिताम्बुनिधेः कलत्रम्'—इत्युद्भटः । त्रि. विदेहदेशोत्पन्नमात्रम्; 'देवातिथिः खलु वैदेहीमुपयेमे मर्यादां नाम तस्यामस्य जज्ञे अरिहो नाम'—इति महाभारते (१।९५।२३) । ६१४

वैद्यः पुं. [विद्यां वेदेति । विद्या+'तदधीते तद्वेद' इति अण्] आयुर्वेदवेत्ता; स चाम्बष्ठजातिश्चिकित्सावृत्तिश्च; रोगहारी; अगदङ्कारः; भिषक्; चिकित्सकः; स्रष्टा; विधिः; विद्वान्; आयुर्वेदी; दोषज्ञः; 'वैद्योऽश्विनीकुमारेण जातश्च विप्रयोषिति । वैद्यवीर्येण शूद्रायां बभूवुर्बहवो जनाः—इति ब्रह्मवैवर्ते । पण्डितः; 'नाविद्यानां तु वैद्येन देयं विद्याधनं क्वचित् । समविद्याधिकानां तु देयं वैद्येन तद्धनम्'—इति कात्यायनः । 'वैद्येन विदुषा' —इति दायतत्त्वम् । वासकवृक्षः; त्रि. वेदसम्बन्धी यः [वेदशब्दाद् उगवादित्वाद् यति स्वार्थेऽणि च निष्पन्नमेतत्]। ६१२

वैधेयः त्रि. [विधिं पद्धतिमेवानुसृत्य व्यवहरति । विधि+ढक् । यद्वा, विधेये कर्तव्ये अनभिज्ञः । विधेय+अण् । यद्वा, विरुद्धं धेयमस्य, ततः स्वार्थे अण् । पद्धतिमाश्रित्य क्रियाकारित्वाद् युक्तायुक्तविवेकशून्यत्वाच्च तथात्वमस्य] मूर्खः; 'पुंश्चली जाल्मवैधेयबालका द्रोग्धृनिर्भरा। समभूदप्रवेशार्हा राजपर्षन्मनस्विनाम्'–इतिराजतरङ्गिण्याम् (६।१५९)। विधिसम्बन्धी; विधेयसम्बन्धी । ३३६

वैनतेयः पुं. [विनतायाः अपत्यमिति । विनता+'स्त्रीभ्यो ढक्' इति ढक्] गरुडः; विहङ्गराजः; गरुत्मान्; तार्क्ष्यः; 'समानीयामृतं मात्रे वैनतेयः समर्पयत्'—इति देवीभागवते (२।१२।२९) । अरुणः; विनतापत्यमात्रम्; 'तार्क्ष्यश्चारिष्टनेमिश्च तथैव गरुडारुणौ । आरुणिर्वारुणिश्चैव वैनतेयाः प्रकीर्तिताः'—इति महाभारते (१।६५।४०) । ३०

वैनयिकः पुं. [विनयः शिक्षाभ्यासः प्रयोजनमस्य, ठञ् । 'विनयादिभ्यष्ठक्' इति स्वार्थे वा ठक्] शस्त्राभ्यासरथः;

योग्यारथः; विनयसम्बन्धिनि त्रि.। 'सर्वं वैनयिकं कृत्वा विनयज्ञो बृहस्पतिम्। दक्षिणानन्तरो भूत्वा प्रणम्य विधिपूर्वकम्। विधिं पप्रच्छ राज्यस्य सर्वलोकहिते रतः'—इति महाभारते (१२।६८।४)। ४४५

वैपरीत्यम् क्ली. [विपरीतस्य भावः। विपरीत+ष्यञ्] व्यत्यासः; विपर्यासः; विपर्ययः; व्यत्ययः; 'स्वभाववैपरीत्यं तु प्रकृतेश्च विपर्ययः'—इति मार्कण्डेये (४३।३४)। ७२९

वैमेयः पुं. [विमायनं विमेयः, डुमिञ् प्रक्षेपणे+'एरच्' इत्यच्, स्वार्थेऽण्] परिवृत्तिः; विनिमयः; द्रव्यव्यवहरणम्। ५७३

वैरङ्गिकः त्रि. [विरङ्गं नित्यमर्हतीति। 'छेदादिभ्यो नित्यम्' इति ठञ्] विरागार्हः। ३६९

वैरी [न्] पुं. [वैरमस्यास्तीति+इनि] अरिः; रिपुः; शत्रुः; अमित्रम्; 'वैरिणं नोपसेवेत सहायं चैव वैरिणः'—इति मनुः (४।१३३)। वीरसम्बन्धिनि त्रि.। ४५६

वैरोचननिकेतनम् क्ली. [वैरोचनस्य बलेः निकेतनम्] बलिसद्म; पातालम्। ६२३

वैरोचनिनिकेतनम् क्ली. [विरोचनस्यापत्यम् वैरोचनिः तस्य निकेतनम्] पातालम्; अधोभुवनं; वडवामुखं; नागलोकः; रसातलम्। ६२३

वैवस्वतः पुं. [विवस्वतोऽपत्यमिति। विवस्वत्+अण्] यमः; कृतान्तः; यमुनाभ्राता; कालः; 'एवं शशः सप्ततिहायनोऽयं वैवस्वतस्यालयमभ्युपैति'—इति बृहत्संहितायाम् (६९।२३)। 'वैवस्वतं संगमनं जनानां यमं राजानं हविषादुवस्य'—इति ऋग्वेदे(१०।१४।१)। 'वैवस्वतं विवस्वतः सूर्यस्य पुत्रम्'—इति तद्भाष्ये सायणः। रुद्रविशेषः; शनिः; सप्तमो मनुः; 'वैवस्वतो मनुर्नाम माननीयो मनीषिणाम्'—इति रघौ (१।११)। ७१

वैशाखः पुं. [विशाखा प्रयोजनमस्य। विशाखा+'विशाखाषाढादिति' अण्] मन्थानदण्डः; मन्था; मन्थः; मन्थानः; खजकः; 'द्रुततरकरदक्षाः क्षिप्तवैशाखशैले'—इति माघे (११।८)। [वैशाखी पौर्णमासी अस्मिन्, 'सास्मिन् पौर्णमासीति' इति अण्] द्वादशमासान्तर्गतद्वितीयमासः; माधवः; राधः; 'विशाखातारकायुक्ता वैशाखी पूर्णिमा भवेत्। सा वैशाखी यत्र मासे स वैशाखः प्रकीर्तितः'—इति शब्दरत्नावली। 'पुमान् विनीतो द्विजदेवभक्तो धर्मस्य कर्ता सुजनस्य भर्ता। गुणाभिरामोऽथ जगत्प्रियः स्याद् वैशाखमासे खलु जन्म यस्य'—कोष्ठीप्रद्वीपः। क्ली. [विशाख एव। स्वार्थे अण्] धनुर्विदां संस्थानभेदः; 'स्थानान्यालीढवैशाखप्रत्यालीढानि मण्डलम्। समपादं च'—इति हेमचन्द्रः। पुरविशेषः; 'वैशाखाख्ये पुरे राज्ञः पुत्रावावां द्विमातृकौ'—इति कथासरित्सागरे (६७।५)। २७६

वैश्यः पुं. [विशति कृष्यादौ, विश्+क्विप्, ततः स्वार्थे ष्यञ्] ब्रह्मोरुदेशजाततृतीयवर्णः; ऊरव्यः; ऊरुजः; अर्यः; भूमिस्पृक्; विट्; द्विजः; भूमिजीवी; व्यवहर्ता; वार्तिकः; बणिकः; पणिकः; 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः। ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत'—इति ऋग्वेदे (१०।९।१२)। वैश्यसम्बन्धिनि त्रि.। 'क्षात्राणि वैश्यानि च सेवमानः शौद्राणि कर्माणि च ब्राह्मणः सन्। अस्मिँल्लोके निन्दितो मन्दचेताः परे च लोके निरयं प्रयाति'—इति महाभारते (१२।६२।४) ५७०

वैश्रवणः पुं. [विश्रवसो मुनेरपत्यम्। विश्रवस्+'शिवादिभ्योऽण्' इत्यत्र विश्रवणरवणावादेशौ निपात्येते, अण् च] कुबेरः; ऐलविलः; पौलस्त्यः; धनदः; 'तपसा निर्मिता राजन् स्वयं वैश्रवणेन सा'—इति महाभारते (२।१०।२) शिवः; 'धन्वन्तरिर्धूमकेतुः स्कन्दो वैश्रवणस्तथा' इति महाभारते (१३।१७।१०३)। रावणः। ७८

वैश्वानरः पुं. [विश्वे नरः अस्येति। 'नरे संज्ञायाम्' इति दीर्घः, विश्वानरस्यापत्यम्+'ऋष्यन्धकेति' अण्] अग्निः; वह्निः; 'अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः। प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम्'—इति भगवद्गीतायाम् (१५।१४)। चित्रकवृक्षः। ६२

वैसारिणः पुं. [विशेषेण सरतीति विसारी मत्स्यः, स एव। 'विसारिणो मत्स्ये' इति अण्] मत्स्यः।६५७

वैहासिकः पुं. [विहास+ठक्] विहासं करोति यः; वासन्तिकः; केलिकिलः; विदूषकः; प्रहासी; प्रीतिदः; दूरारूढस्तिमिरजलधेर्वाडवश्चित्रभानुर्भानुस्ताम्यद्वनरुहवनीकेलिवैहासिकोऽयम्'—इति नैषधे (१९।६४)। ४३२

वोटा स्त्री. [पोटयति कार्यव्यापृता सती भाषते । पुट्+अच्, वत्वे पृषोदरादिः] पोटा; चेटी; दासी; कुट्टिहारिका; कुटहारिका; 'पोटा वोटा च चेटी च दासी च कुट (ट्टि) हारिका' –इति हेमचन्द्रः । ४९२

व्यंसकः पुं. [वि+अंस्+ण्वुल्] दाण्डाजिनिकः; कुहकः; कापटिकः; जालिकः; कौसृतिकः; धूर्तः; मायावी; मायिकः; मायी । ३४९

व्यक्तः त्रि. [वि+अञ्ज् व्यक्त्यादौ+क्त] प्राज्ञः; पण्डितः; स्फुटः; 'विभावेनानुभावेन व्यक्तः सञ्चारिणा तथा । रसतामेति रत्यादिः स्थायिभावः सचेतसाम्'—इति साहित्यदर्पणे (३।१) । पुं. विष्णुः; 'व्यक्तो वायुरधोक्षजः'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रे । ३३३

व्यजनम् क्ली. [व्यजत्यनेनेति । वि+अज्+ल्युट्, 'वा यौ' इति पक्षे वीभावो नास्ति] तालवृन्तकं; तालवृन्तं; व्यजः; 'स चन्दनाम्बुव्यजनोद्भवानिलैः सहारयष्टिस्तनमण्डलार्पणैः । सवल्लकीकाकलिगीतनिस्वनैः प्रबुध्यते सुप्त इवाद्य मन्मथः'—इति ऋतुसंहारे (१।८) । ३१०

व्यञ्जनम् क्ली. [व्यज्यते भक्ष्यते अन्नादि संयोज्यतेऽनेनेति । वि+अञ्ज्+ल्युट्] अन्नोपकरणं, तत्तु सूपशाकादि; तेमनं; निष्ठानं; तेमः; मिष्टान्नम्; 'व्यञ्जनं शाकमत्स्याख्यं हृद्यं वृष्यं च पुष्टिदम् । द्रव्येण येन येनेह व्यञ्जनं मत्स्यमांसयोः । तस्य तस्य तयोश्चैतद् गुणदोषैर्विभावयेत्'—इति वल्लभः । चिह्नं; व्यञ्जना; 'अवाच्यत्वादिकं तस्य वक्ष्ये व्यञ्जनरूपणे'–इति साहित्यदर्पणे (३।५९) । श्मश्रु; 'कुत एष परित्यक्तुं सुतं शक्ष्याम्यहं स्वयम् । बालमप्राप्तवयसमजातव्यञ्जनाकृतिम्'—इति महाभारते (१।१५८।-३४) । अवयवः; दिनम्; उपस्थः; स्त्रीपुंसयोरशुद्धदेशः । अर्द्धमात्रकं; ककारादिक्षकारान्तवर्णाः; 'सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यञ्जनसंहतेः । क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते'—इति साहित्यदर्पणे (१०।६४०) । ३२१

व्यतिरेकः पुं. [वि+अति+रिच्+घञ्] विना; पृथक्; अन्तरेण; ऋते; अभावः; 'न पतिव्यतिरेकेण सुस्त्रीणामपरा गतिः'—इति कथासरित्सागरे (३९।१६६) । अलङ्कारविशेषः; 'व्यतिरेको विशेषश्चेदुपमानोपमेययोः । शैला इवोन्नताः सन्तः किन्तु प्रकृतिकोमलाः'–इति चन्द्रालोकः । 'उपमानाद्यदन्यस्य व्यतिरेकः स एव सः'—इति काव्यप्रकाशः (१०) । ८७६

व्यत्ययः पुं. [व्यत्ययनमिति । वि+अति+इ+'एरच्' इत्यच्] व्यतिक्रमः; व्यत्यासः; विपर्यासः; विपर्ययः; वैपरीत्यम्; 'परावरेषां स्थानानां कालेन व्यत्ययो महान्'—इति भागवते (७।१०।४४) । ७२९

व्यत्यासः पुं. [व्यत्यसनमिति । वि+अति+अस्+घञ्] विपर्ययः; व्यत्ययः; वैपरीत्यम्; विपर्यासः; व्यतिक्रमः । 'मात्रासि वञ्चिता भद्रे ! चरुव्यत्यासहेतुना । भविष्यति हि पुत्रस्ते क्रूरकर्मातिदारुणः'—इति हरिवंशे (२७।२९) । ७२९

व्यथकः त्रि. [व्यथयति पीडयतीति । व्यथ्+णिच्+ण्वुल्] व्यथाकारी; अरुन्तुदः; 'अव्युत्थानं व्यथकस्तु स्यान्मर्मस्पृगरुन्तुदः'—इति हेमचन्द्रः । 'परिणामसुखे गरीयसि व्यथकेऽस्मिन् वचसि क्षतौजसाम् । अतिवीर्यवतीव भेषजे बहुरल्पीयसि दृश्यते गुणः'—इति किराते (२।४) । ३७१

व्यथा स्त्री. [व्यथ्+अङ+टाप्] आबाधा; वेदना; दुःखम्; अर्तिः; पीडा; 'स्नेहं दयां तथा सौख्यं यदि वा जानकीमपि । आराधनाय लोकानां मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा' इति उत्तररामचरिते । ६२६

व्यपदेशः पुं. [वि+अप्+दिश+घञ्] कैतवं; कपटः; कूटः; व्याजः; छद्म; उपधिः; छलं; मिषः; निभः; 'कापि कुन्तलसंव्यानसंयमव्यपदेशतः । बाहुमूलं स्तनौ नाभिपङ्कजं दर्शयेत् स्फुटम्'—इति साहित्यदर्पणे (३।१५५) । नाम; वाक्यविशेषः; 'व्याजेनात्माभिलाषोक्तिर्व्यपदेश इतीर्यते'–इत्युज्ज्वलनीलमणिः । ७०९

व्यलीकम् क्ली. [विशेषेण अलतीति । वि+अल्+'अलीकादयश्च' इति कीकन् प्रत्ययेन निपातनात् साधु] अपराधः; 'सुदृशः सरसव्यलीकतप्तस्तरसा श्लिष्टवतः सयौवनोष्मा'—इति माघे (९।८५) । (७४८) प्रतारणा; वञ्चनम्; अतिसन्धानम्; पीडार्थः; गतिविपर्ययः; कामजापराधः; 'कृत्यं नैव विजानाति परेणापकृतं क्वचित् । कृत्यं च संस्मरेदेतदसत्यं च न जल्पति । व्यलीकेषु निवृत्तो यः पर्येति कृतनिश्चयः । नित्यं च धृतिमान् किञ्चित् परोक्षेऽपि

न च क्षिपेत्। ऋतुकालेऽभिगच्छेत अपत्यार्थं स्वकां स्त्रियम्। ईदृशास्तु नरा भद्रे मम कर्मपरायणाः'—इति वाराहे। अप्रियम्; 'न हि तेन मम भ्रात्रा सुसूक्ष्ममपि किञ्चन। व्यलीकं कृतपूर्वं वै प्राज्ञेनामितबुद्धिना'—इति महाभारते (३।६।९)। अकार्यं; वैलक्ष्यम्; 'यस्मिन्ननैश्वर्यकृतव्यलीकः पराभवं प्राप्त इवान्तकोऽपि। धुन्वन्धनुः कस्य रणे न कुर्यान् मनो भयैकप्रवणं स भीष्मः'—इति किराते (३।१९)। दुःखम्; 'दिग् दक्षिणा गन्धवहं मुखेन व्यलीकनिश्वासमिवोत्ससर्ज'—कुमारे (३।२५)। तद्वति त्रि.। 'यद्युत्तमश्लोक भवान् ममेरितं वचो व्यलीकं सुरवर्य मन्यते। करोम्यृतं तन्न भवेत् प्रलम्भनं पदं तृतीयं कुरु शीर्ष्णि मे निजम्'—इति भागवते (८।२२।२)। पुं. [वि+अल् पर्याप्तौ+कीकन्] नागरः; षिङ्गः; षट्प्रज्ञः; कामकेलिः; विदूषकः; पीठकेलिः; पीठमर्दः; भङ्गिलः; छिदुरः; विटः। ७४९

व्यवच्छेदः पुं. [वि+अव+छिद्+घञ्] बाणमुक्तिः; पृथक्त्वं; विरामः; निवृत्तिः; 'जीवस्य न व्यवच्छेदः स्याच्चेत्तत्तत्प्रतिक्रिया'—इति भागवते (४।२९।३२)। ४७०

व्यवधानम् क्ली. [वि+अव+धा+ल्युट्] आच्छादनं; तिरोधानम्; अन्तर्द्धिः; अपवारणं; छदनं; व्यवधा; अन्तर्द्धा; पिधानं; स्थगनं; व्यवधिः; अपिधानम्; 'दृष्टिं विमानव्यवधानमुक्तां पुनः सहस्रार्चिषि सन्निधत्ते'—इति रघौ (१३।४४)। भेदः; 'परात्मनोर्यद् व्यवधानकं पुरस्तात् स्वप्ने यथा पुरुषस्तद्विनाशे'—इति भागवते (४। २२।२७)। विच्छेदः; 'वपुरन्वलिप्तपरिरम्भसुखव्यवधानभीरुकतया न वधूः'—इति माघे (९।५१)। समाप्तिः; 'यावदन्यं न विन्देत व्यवधानेन कर्मणाम्'—इति भागवते (४।२९।७७)। ७१९

व्यवस्था स्त्री. [वि+अव+स्था+'आतश्चोपसर्गे' इत्यङ्, ततष्टाप्] शास्त्रनिरूपितविधिः; संस्था; 'दीर्घकालं ब्रह्मचर्यं धारणं च कमण्डलोः। देवरेण सुतोत्पत्तिर्दत्तकन्या प्रदीयते। एतानि लोकगुप्त्यर्थं कलेरादौ महात्मभिः। निर्वर्तितानि कर्माणि व्यवस्था पूर्वकं बुधैः'—इति पुराणम्। स्थितिः (८३७); नियमः; 'एवं कृतगृहारक्षो महारत्नानि शङ्करः। उत्पाद्य भगवांस्तत्र व्यवस्थामादिदेश सः'—इति कथासरित्सागरे (१०९।७१)। निष्ठा (८५३)। ८१९

व्यवस्थानम् क्ली. [वि+अव+स्था+ल्युट्] व्यवस्थितिः; 'चातुर्वर्ण्यव्यवस्थानं यस्मिन्देशे न विद्यते। तं म्लेच्छदेशं जानीयादार्यावर्तस्ततः परम्'—इति भरतः। पुं. विष्णुः; 'व्यवसायो व्यवस्थानः संस्थानः स्थानदो ध्रुवः'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रे। ८३९

व्यवहितम् त्रि. [वि+अव+धा+क्त] विप्रकृष्टं; परं; दूरम्; आरात्; व्यवधानविशिष्टः; 'कर्तृकर्मव्यवहितामसाक्षाद्धारयत् क्रियाम्। उपकुर्वत् क्रियासिद्धौ शास्त्रेऽधिकरणं मतम्'—इति वैयाकरणभूषणम्। ६९३

व्यवायः पुं. [विशेषेण अवायनम् अवरोधनम्, वा अधः संश्लेषणम्। वि+अव+इ+घञ्] विघ्नः; अन्तरायः; प्रत्यूहः; (८१५) मैथुनं; सुरतम्; 'व्यायामञ्च व्यवायञ्च स्नानं चंक्रमणं तथा। ज्वरमुक्तो न सेवेत यावन्न बलवान् भवेत्'—इति वैद्यके। 'अड्भ्यासव्यवायेऽपि'—इति पाणिनिः (६।१।१३६)। अन्तर्द्धानम्; शुद्धिः; परिणामः; 'पश्यन्ति युक्ता मनसा मनीषिणो गुणव्यवायेऽप्यगुणं विपश्चितः'—इति भागवते] (८।६।११)। ४०१

व्याकुञ्चितम् त्रि. [विशेषेण आ समन्तात् कुञ्चितम्। वि+आ+कुञ्च् कौटिल्ये, क्त, संज्ञापूर्वकत्वान् न नलोपः] वक्रं; वृजिनं; भङ्गुरम्; आविद्धं; वेल्लितं; नतं; जिह्मं; भग्नम्; अरालं; कुटिलम्; ऊर्मिमत्। ६९६

व्याकुलः त्रि. [विशेषेण आकुलः] शोकादिभिरितिकर्तव्यताशून्यः; विहस्तः; 'रुरोद सा शोकवती वाष्पव्याकुललोचना'—इति महाभारते (५।१७७। २५)। उपद्रुतः; 'एते चांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्। इन्द्रारिव्याकुलं लोकं मृडयन्ति युगे युगे'—इति भागवते (१।३।२८)। ३८२

व्याकृतिः स्त्री. [विशिष्टा आकृतिः। वि+आ+कृङ् शब्दे+क्तिन्] भङ्गिः; मुखादिभावः। ७६२

व्याकोशः त्रि. [व्यावृत्तः कोशः सङ्कोचोऽस्मात्। 'प्रादिभ्यः' इति समासः] विकसितः; 'दोषापि नूनमहिमांशुरसौ किलेति व्याकोशकोकनदतां दधते नलिन्यः'—इति माघे (४।४६)। [भावे घञ्] प्रस्फुटनम्; 'पद्म-

व्याकोशं भास्करं बालचन्द्रं, वापीविस्तीर्णं स्वस्तिकं पूर्णकुम्भम्। तत्कस्मिन् देशे दर्शयाम्यात्मशिल्पं, दृष्ट्वा श्वो यद्विस्मयं यान्ति पौराः'—इति मृच्छकटिके ३ अङ्के। १८७

व्याकोषः त्रि. [कुष् निष्कर्षे+भावे घञ्, वि+आ+कोषः, प्रादिसमासः। व्याकुष्णाति मुकुलीभावाद्बहिर्निःसरतीति। वि+आ+कुष्+अच् वा] प्रफुल्लः; उन्मीलितः; उन्मिषितः; स्मितः; उन्निद्रः; विजृम्भितः; हसितः; उद्बुद्धः; 'तं पद्मनिकराकारं पद्मपत्रनिभेक्षणम्। व्याकोषपद्माभिमुखो नलो विव्याध सायकैः'—इति महाभारते (७।३०।२२)। १८७

व्याख्या स्त्री. [व्याख्यानमिति। वि+आ+ख्या+'आतश्चोपसर्गे' इत्यङ, ततष्टाप्] विवरणम्; 'न शिष्याननुबध्नीत ग्रन्थान्नैवाभ्यसेद्बहून्। न व्याख्यामुपयुञ्जीत नारम्भानारभेत् क्वचित्'—इति भागवते (७।१३।८)। ग्रन्थः; 'शुभ्रां स्वच्छविलेपमाल्यवसनां शीतांशुखण्डोज्ज्वलां, व्याख्यामक्षगुणं सुधाढ्यकलसं विद्याञ्च हस्ताम्बुजैः। बिभ्राणां कमलासनां कुचलतां वाग्देवतां सस्मितां, वन्दे वाग्विभवप्रदां त्रिनयनां सौभाग्यसम्पत्करीम्।' ४००

व्याघ्रः पुं. [व्याजिघ्रतीति। वि+आ+घ्रा+क] जन्तुविशेषः; शार्दूलः; द्वीपी; पृदाकुः; वानश्वः; चित्रकः; पुण्डरीकः; हिंस्रपशुः; व्याडः; हिंस्रकः; हिंसारुः; श्वापदः; पञ्चनखः; व्यालः; गुहाशयः; तीक्ष्णदंष्ट्रः; भीरुः; नखायुधः; स तु कश्यपभार्यादंष्ट्रासन्तानः; 'दंष्ट्रा त्वजनयत् पुत्रान् व्याघ्रसिंहांश्च भाविनी। द्वीपिनश्च सुतास्तस्या व्यालाद्याश्चामिषप्रियाः'—इति वह्निपुराणे। नरादिशब्दोत्तरस्थः श्रेष्ठार्थवाचकः; 'किन्नु दुःखतरं शक्यं मया द्रष्टुमतः परम्। योऽहमद्य नरव्याघ्रान् सुप्तान् पश्यामि भूतले'—इति महाभारते (१।१५२।२९)। रक्तैरण्डः; करञ्जः। २२६

व्याघ्राटः पुं. [व्याघ्र इव अटतीति। अट् गतौ+पचाद्यच्] भरद्वाजपक्षी। २४८

व्याघ्री स्त्री. [व्याघ्र+ङीष्] कण्टकारी; कण्टकारिका; निदिग्धिका; व्याघ्रपत्नी; 'व्याघ्रीव तिष्ठति जरा परितर्जयन्ती'—इति भर्तृहरिः (३।१०९)। 'मृग्याः परिभवो व्याघ्र्यामित्यवेहि त्वया कृतम्'—इति रघौ (१२।३७)। ६१९

व्याजः पुं. [व्यजति यथार्थव्यवहारादपगच्छत्यनेनेति। वि+अज्+घञ्। घञि वीभावो नास्ति] कपटः; कैतवं; कूटं; छद्म; उपधिः; छलं; मिषं; निभं; व्यपदेशः। ७०९

व्याधः पुं. [विध्यति मृगादीन्। व्यध्+'स्याद्व्यधेति' ण] मृगहिंस्रकजातिः; मृगवधाजीवः; मृगयुः; लुब्धकः; मृगावित्; द्रोहाटः; मृगजीवनः; बलपांशुनः; 'विद्धा मृगी व्याधशिलीमुखेन मृगोऽपि तत्कातरवीक्षणेन। असून् परित्यज्य गतव्यथा सा मृगस्य जीवावधिराधिरासीत्'—इत्युद्भटः। दुष्टः; 'व्याधस्याप्यनुकम्प्यानां स्त्रीणां देवः सतीपतिः'—इति भागवते (३।१४।३४)। ५९६

व्याधामः पुं. [धम् ध्वाने सौत्रः, भावे घञ्। विशिष्टः आसमन्ताद् धामः यस्य] वज्रं; पविः; अशनिः; शतधारः; कुलिशं; दम्भोलिः; गौः; भिदुरं; व्याधावः; स्वरुः; इन्द्रप्रहरणं; शम्बः। ५६

व्याधिः पुं. [विविधा आधयोऽस्मात्। यद्वा वि+आ+धा+'उपसर्गे घोः किः' इति कि] रोगः; रुक्; आकल्यः; गदः; मान्द्यम्; अपाटवम्; आमः; आमयः; आतङ्कः; उपतापः; रुजा; 'द्विविधो जायते व्याधिः शारीरो मानसस्तथा। परस्परं तयोर्जन्म निर्द्वन्द्वं नोपलभ्यते'—इति महाभारते (१२।१६।८)। कुष्ठं; कामव्यथासन्तापजन्यकृशता। ६००

व्यापादनम् क्ली. [वि+आ+पद्+णिच्+ल्युट्] मारणम्; 'अतीते च दिने बालामात्मव्यापादनोद्यताम्। सुरभिः प्राह नायं त्वां प्राप्स्यते दानवाधमः'—इति मार्कण्डेये (२१।३२)। परानिष्टचिन्तनम्। ४७८

व्याप्तम् त्रि. [वि+आप्+क्त] सम्पूर्णम्; पूर्णम्; आचितं; छन्नं; पूरितं; भरितं; निचितम्; 'द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि व्याप्तं त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः'—इति भगवद्गीतायाम् (११।२०)। ख्यातं; समाक्रान्तं; स्थागितम्; 'व्याप्तं प्रणिहिते समे।' ७०२

व्यामः पुं. [विशेषेण आम्यतेऽनेनेति। वि+आ+अम् गतौ+घञ्] तिर्यक् पार्श्वे ततयोः सहस्तयोर्बाह्वोरन्तरम्; व्यामनं; मानविशेषः; 'व्यामव्यायामन्यग्रोधास्तिर्यग्बाहू प्रसारितौ'—इति हेमचन्द्रः। 'ततो भीमो महाबाहुरारुज्य तरसा द्रुमम्। दश व्याममयो-

द्विद्वं निष्पत्रमकरोत् तदा'—इति महाभारते (३।११।३९)। ८०५

व्यालः पुं. [विशेषेण आसमन्ताद् अलतीति। वि+आ+अल् पर्याप्तौ+अच्] दुष्टगजः; 'व्यालद्विपा यन्तृभिरुन्मदिष्णवः कथञ्चिदारादपथेन निन्यिरे'—इति माघे (१२।२८)। (६४०) सर्पः; अहिः; अर्थव्ययसहः (८३२); हिंस्रपशुः; श्वापदः; 'पशवश्च मृगाश्चैव व्यालाश्चोभयतोदतः। रक्षांसि च पिशाचाश्च मनुष्याश्च जरायुजाः'—इति मनुः (१।४३)। चित्रकः; व्याघ्रः; राजा; त्रि. [वि+आ+अल्+अच्] शठः; धूर्तः। २२५

व्यालग्राहः पुं. [व्यालं गृह्णातीति। व्याल+ग्रह्+अण्] व्यालग्राही; 'व्यालग्राहानुञ्छवृत्तीनन्यांश्च वनचारिणः'—इति मनुः (८।२६०)। ६१०

व्यालग्राही [न्] पुं. [व्यालं गृह्णातीति। व्याल+ग्रह्+णिनि] भिक्षार्थं सर्पधारी; सर्पखेलकः; अहितुण्डिकः; जाङ्गुलिः; जाङ्गुलिः; आहितुण्डिकः; व्यालग्राहः; गारुडिकः; विषवैद्यः। ६१३

व्यासः पुं. [व्यस्यति वेदानिति। वि+अस्+बाहुलकात् ण] मुनिविशेषः; वेदव्यासः; माठरः; द्वैपायनः; पाराशर्यः; कानीनः; बादरायणः; कृष्णद्वैपायनः; सत्यभारतः; पाराशरिः; सात्यवतः; बादरायणिः; सत्यवतीसुतः; सत्यरतः; पाराशरः; सात्यवतेयः; स च सत्यवत्यां कन्याकाले पराशराज्जातः; 'यो व्यस्य वेदांश्चतुरस्तपसा भगवानृषिः। लोके व्यासत्वमापेदे कार्ष्ण्यात् कृष्णत्वमेव च'—इति महाभारते (१।१०५।१४)। (७६६) [वि+अस्+घञ्] विस्तारः; प्रपञ्चः; विस्तरः; 'विस्तीर्यैतन् महज्ज्ञानमृषिः संक्षिप्य चाब्रवीत्। इष्टं हि विदुषां लोके समासव्यासधारणम्'—इति महाभारते (१।१।५१)। 'समासः संक्षेपः व्यासो विस्तरः'—इति तट्टीका। मानभेदः; पाठकब्राह्मणः; 'विस्पष्टमद्रुतं शान्तं स्पष्टाक्षरपदं तथा। कलस्वरसमायुक्तं रसभावसमन्वितम्। बुध्यमानः सदर्थं वै ग्रन्थार्थं कृत्स्नशो नृप। ब्राह्मणादिषु सर्वेषु ग्रन्थार्थञ्चार्पयेन्नृप। य एवं वाचयेद् ब्रह्मन् स विप्रो व्यास उच्यते'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। गोलस्य मध्यरेखा; 'व्यासे भनन्दाग्निहते विभक्ते, खबाणसूर्यैः परिधिस्तु सूक्ष्मः। द्वाविंशतिघ्ने विहृतेऽथ शैलैः स्थूलोऽथवा स्याद्व्यवहारयोग्यः। विष्कम्भमानं किल यत्र सप्त तत्र प्रमाणं परिधे प्रचक्ष्व। द्वाविंशतिर्यत् परिधिप्रमाणं तद्व्याससंख्यां च सखे विचिन्त्य'—इति लीलावती। ४१०

व्याहरणम् क्ली. [वि+आ+हृ+ल्युट्] उक्तिः; व्याहारः; कथनं; भाषितम्। १५३

व्याहारः पुं. [वि+आ+हृ+घञ्] उक्तिः; लपनं; वाक्यम्; 'श्वभिरस्थिशवावयवप्रवेशनं मन्दिरेषु मरकाय। पशुशस्त्रव्याहारे नृपमृत्युर्मुनिवचश्चेदम्'—इति बृहत्संहितायाम् (४६।७१)। १३८

व्युत्थानम् क्ली. [वि+उत्+स्था+ल्युट्] स्वातन्त्र्यकृत्यं; स्वतन्त्रवृत्तिः; व्युत्थितिः; विरोधाचरणम्; 'एवं ते द्रविडाभीरा पुण्ड्राश्च शवरैः सह। वृषलत्वं परिगता व्युत्थानात् क्षत्रधर्मिणः'—इति महाभारते (१४।२९।१६)। प्रतिरोधनं; समाधिपारणं; नृत्यभेदः; विशेषेणोत्थानं; चित्तस्यावस्थाविशेषः। ७७८

व्युत्पन्नः त्रि. [वि+उत्+पद्+क्त] प्रहतः; क्षुण्णः; संस्कृतः; व्युत्पत्तियुक्तः; विशेषेणोत्पन्नः, ३५२

व्युष्टम् पुं.– क्ली. [वि+वस्+क्त] प्रभातं; कल्यम्; उषः; प्रत्यूषं; प्रगे; विभातम्; अहर्मुखं; दिवसमुखं; गोसर्गः; प्रातः; 'व्युष्टं प्रयाणं च वियोगवेदनाविदूननारीकमभूत् समन्तदा'—इति माघे (१२।४)। फलं (७७७); दिनं; पर्युषितं; पुं. दोषायाः पुत्रः; 'प्रदोषो निशिथो व्युष्ट इति दोषासुतास्त्रयः। व्युष्टः सुतं पुष्करिण्यां सर्वतेजसमादधे'—इति भागवते (४।१३।१४)। त्रि. [वि+वस्+क्त] उषितः; 'सा व्युष्टा रजनीं तत्र पितुर्वेश्म विभाविनी'—इति महाभारते (३।६९।२८)। दग्धः। १११

व्युष्टिः स्त्री. [वि+वस्+क्तिन्] फलं; व्युष्टम्; 'महतस्तपसो व्युष्ट्या पश्यन्नोकौ परावरौ'—इति महाभारते (१२।२२८।४)। समृद्धिः; स्तुतिः; प्रकाशः; 'व्युष्टिषु शवसा शश्वतीनाम्'—इति ऋग्वेदे (१।१७१।५)। 'व्युष्टिषु सतीषु प्रकाशेषु सत्सु'—इति सायणः। ७७७

व्यूढः त्रि. [विशेषेण उह्यते स्म। वि+वह्+क्त] बृहन्; उरुः; गुरुः; विस्तीर्णः; पुरुः; पृथुः; पृथुलः; महान्; विशालः; विपुलः; रुद्रः; वरिष्ठः; 'व्यूढोरस्को वृषस्कन्धः शालप्रांशुर्महाभुजः। आत्मकर्मक्षमं देहं क्षात्रो

धर्म इवाश्रितः'—इति रघौ (१।१३)। विन्यस्तः; संहतः; व्यूहरचनयाधिष्ठितः; 'दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा। आचार्यमुपसङ्गम्य राजा वचनमब्रवीत्'—इति भगवद्गीतायाम् (१।२)। ६९९

व्यूहः पुं. [वि+ऊह्+घञ्] समूहः; निकरः; उत्करः; (७९५) निर्माणं; रचना। तर्कः; देहः; यः सात्वतैः समविभूतय आत्मवद्भिः व्यूहैर्ऽर्चितः सवनशः स्वरतिक्रमाय'—इति भागवते (११।६।१०)। सैन्यम्; परिणामः; लिङ्गम्; यावद्बुद्धिमनोऽक्षार्थगुणव्यूहो ह्यनादिमान्'—इति भागवते (४।२९।७०)। युद्धार्थसेनारचना; बलविन्यासः; 'समग्रस्य तु सैन्यस्य विन्यासस्थानभेदतः। स व्यूह इति विख्यातो युद्धेषु पृथिवीभुजाम्'—इति शब्दरत्नावली। ६८७

व्योम [न्] क्ली. [व्ययति, व्येञ् संवरणे+'नामन् सीमन्' इत्यादिना मन्नन्तं निपातितम्] आकाशः; गगनं; नभः; वियत्; विष्णुपदम्; 'रजोभिः स्यन्दनोद्धूतैर्गजैश्च घनसन्निभैः। भुवस्तलमिव व्योम कुर्वन् व्योमेव भूतलम्'—इति रघौ (४।२९)। जलं; पानीयं; भास्करस्यार्चनाश्रयः; सूर्यमन्दिरम्; अभ्रकम्। १३७

व्योमकेशः पुं. [व्योम एव केशा यस्य, विराण्मूर्तित्वादस्य तथात्वम्। व्योम्नि केशाः यस्य वा। कैलासशिखरस्थत्वात्] शिवः; महादेवः; शङ्करः; उमापतिः; रुद्रः; 'सूर्याचन्द्रमसौ लोके प्रकाशन्ते रुचश्च याः। ते केशसंज्ञितास्त्र्यक्ष व्योमकेश इति स्मृतः'—इति महाभारते (७।२००।१२९)। १२

व्योमकेशी [न्] पुं. [गङ्गाधारणकाले व्योमव्यापिनः केशा अस्य सन्तीति। मध्यपदलोपिसमासे व्योमकेशशब्दात् इन् प्रत्ययेन निष्पन्नः] महादेवः; शिवः; शङ्करः। १२

व्योषम् क्ली. [विशेषेण ओषतीति। उष् दाहे+पचाद्यच्] त्रिकटु; त्र्युषणम्; 'व्योषं त्रिजातकं मुस्ता विडङ्गामलके तथा'—इति सुश्रुते (१।४४)। ६१७

व्रजः पुं. [व्रजन्ति सङ्घीभूय यान्त्यत्र। व्रज् गतौ+'गोचरसंचरेति' घ प्रत्ययेन निपातनात् साधुः] गोष्ठम्; 'निरुद्धवीवधासारप्रसारा गा इव व्रजम्। उपरुन्धन्तु दाशार्हाः पुरीं माहिष्मतीं द्विषः'—इति माघे (२।६४)। समूहः (६८६); 'ततः प्रतापः सुमहान् शब्दश्चैव विभावसोः। प्रादुरासीत् तदा तेन बुबुधे स जनव्रजः'—इति महाभारते (१।१४९।१२)। पन्थाः; मेघः; अग्रवणमथुरयोश्चतुष्पार्श्ववर्तिदेशः; 'व्रजमण्डलभूगोलं शेषनागफणं वरम्। कुमुदाख्यं महाश्रेष्ठं सर्वेषां मध्यसंस्थितम्'—इति मात्स्ये। २६२

व्रज्या स्त्री. [व्रजनमिति। व्रज् गतौ+'व्रजयजोर्भावे क्यप्' इति क्यप्] अटया; गतिः; पर्यटनं; जिगीषोः प्रयाणं; गमनं; वर्गः; रङ्गः; सजातीयानामेकत्र सन्निवेशः; 'कोषः शोकसमूहस्तु स्यादन्योऽन्यानपेक्षकः। व्रज्याक्रमेण रचितः स एवातिमनोहरः'—इति साहित्यदर्पणे। ७७६

व्रणः पुं.—क्ली. [व्रणयति गात्रमिति। व्रण गात्रविचूर्णने +पचादित्वाद् अच्] क्षतम्; ईर्मम्; अरुः; ईर्मः; 'व्रणो द्विधा परिज्ञेयो दोषजागन्तुभेदतः। दोषजो दुष्टदोषैः स्यादन्यः शस्त्रादिसम्भवः। स्तब्धः कठिनसंस्पर्शो मन्दस्रावो महारुजः। तुद्यते स्फुटितश्यावो व्रणो मारुतसम्भवः।' तृष्णामोहज्वरक्लेददाहदुःखावदारणैः। व्रणं पित्तकृतं विद्यात् स्रावैर्गन्धैश्च पूतिकैः।' ६३०

व्रतम् क्ली.—पुं. [व्रियते इति,वृञ् वरणे+बाहुलकाद् अतच् स च कित्] पुण्यजनकोपवासादि; नियमः; पुण्यकं; नियामः; संयमः; निष्ठा; वर्णम्; 'अभुक्त्वा प्रातराहारं स्नात्वा चैव समाहितः। सूर्यादिदेवताभ्यश्च निवेद्य व्रतमाचरेत्। ब्रह्मचर्यं तथा शौचं सत्यमामिषवर्जनम्। व्रतेष्वेतानि चत्वारि वरिष्ठानीति निश्चयः'—इति देवलः। ८५३, ८६०

व्रततिः स्त्री. [प्र+तन् विस्तारे+क्तिच्, पृषोदरादित्वात् पस्य व] लता; प्रताननी; वल्ली; प्रततिः; 'अपि वृश्च पुराणवद् व्रततेरिवपुष्पितमोजो दासस्य दम्भय'—इति ऋग्वेदे (८।४०।६)। 'व्रततेरिव यथा लताया पुष्पितं निर्गतां शाखा वृश्चति'—इति तद्भाष्ये सायणः। विस्तारः। १८०

व्रतती स्त्री. [व्रतति+पक्षे ङीष्] लता; प्रताननी; वल्ली; प्रततिः; 'अपश्यता दाशरथी जनन्यौ छेदादिवोपघ्नतरोर्व्रतत्यौ'—इति रघौ (१४।१)। विस्तारः। १८०

व्रतादानम् क्ली. [व्रतस्य त्यागरूपस्य आदान ग्रहणम्] परिव्रज्या; यतिवृत्तिः। ७७७

व्रती [न्] पुं. [व्रतमस्यास्तीति । व्रत+इनि] ब्रह्मचारी; तपस्वी; संयतः; शान्तः; मुनिः; लिङ्गी; यतिः; पाराशरी; भिक्षुः; मस्करी; तापसः; कर्मन्दी; पारिरक्षिकः; परिव्राजकः; 'भैक्षेण वर्तयेन्नित्यं नैकान्नादी भवेद् व्रती। भैक्षेण व्रतिनो वृत्तिरुपवाससमा स्मृता'—इति मनुः (२।१८८)। यजमानः (४२०); व्रतविशिष्टे त्रि.। 'तिथ्यन्ते चोत्सवान्ते वा व्रती कुर्वीत पारणम्'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। ३४४, ४०९

व्रातः पुं. [व्रत्यते इति, 'मुण्डमिश्रेति' व्रतशब्दाण्णिचि भावे घञ्। व्रतिनां संघ इव समूहः इत्यर्थे अण् वा] समूहः; निकरः; 'नानारण्यमृगव्रातैरनाबाधे मुनिव्रतैः। आहूतं मन्यते पान्थो यत्र कोकिलकूजितैः'—इति भागवते (४।२५।१९)। व्याधादिः; मनुष्यः; क्ली. शरीरायासजीविकर्म। ६८६

व्रात्यः पुं. [व्रातः शरीरायासजीवी व्याधादिः स इव। 'शाखादिभ्यो यत्' इति यत्] दशसंस्काररहितः; षोडशवर्षादूर्ध्वम् अकृतव्रतबन्धो भ्रष्टगायत्रीकः; संस्कारहीनः; सावित्रीहीनः; वाग्दुष्टः; परुषोक्तिकः; 'अथ व्रात्यविधिं देवि! प्रायश्चित्तं तु यद्भवेत्। तत् शृणुष्व महेशानि! सर्ववर्णे विशेषतः'—इति मत्स्यसूक्ते। ४०४

व्रीडः पुं. [व्रीड्+भावे घञ्] लज्जा; अपत्रपा; त्रपा; मन्दाक्षम्; 'न नूनमारूढरुषा शरीरमनेन दग्धं कुसुमायुधस्य। व्रीडादमुं देवमुदीक्ष्य मन्ये सन्न्यस्तदेहः स्वयमेव कामः'—इति कुमारे (७।६७)। ५६७

व्रीडा स्त्री. [व्रीड्+'गुरोश्च हलः' इत्य, टाप्] लज्जा; त्रपा; 'अथ मन्दाक्षमन्दास्यं लज्जा लज्या च ह्रीस्त्रपा। व्रीडो व्रीडा व्रीडन च लज्जापर्याय ईरितः'—इति शब्दरत्नावली। 'प्रातरुपागत्य मृषा वदतः सखि नास्य विद्यते व्रीडा। मुखलग्नयापि योऽयं न लज्जते दग्धकालिकया'—इति आर्यासप्तशत्याम् (३५७)। ५६७

व्रीहिः पुं. [वर्हति वृद्धिं गच्छतीति। वृह् वृद्धौ+'इगुपधात् कित्' इति इन्। पृषोदरादित्वात् साधुः] धान्यमात्रम्; आशुधान्यम्; 'यथोक्तवस्त्वसम्पत्तौ ग्राह्यं तदनुकारि यत्। यवानामिव गोधूमा व्रीहीणामिव शालयः'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। ५७९

व्रैहेयम् क्ली. [व्रीहीणां भवनं क्षेत्रम्। व्रीहि+'व्रीहिशाल्योर्ढक्' इति ढक्] आशुधान्योपयुक्तभूम्यादिः; शालेयः। १६२

श

शम् क्ली. [शमयति आधिव्याध्यादीन्। शमु उपशमे+णिच्+'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति विच्] सुखं; प्रमोदः; प्रमदः; हर्षः; प्रीतिः; उत्कर्षः; उद्धवः; सम्मदः; मुत्; आनन्दः; शर्म; जोषम्; 'न च हर्म्ये वने शं मे दीर्घिकायां न पर्वते'—इति देवीभागवते (३।१८।७)। अव्य. कल्याणम्; 'यः कीर्तौ भवतो वतो नृपगुणैर्यः शन्तनुः शन्तनुः—इति राजेन्द्रकर्णपूरे (५१)। सुखं; शास्त्रं; शुभम्; पुं. शिवः; शस्त्रम्। १२३

शकटः पुं.– क्ली. [शक्नोति भारं वोढुमिति। शक्+'शकादिभ्योऽटन्' इति अटन्] यानविशेषः; अनः; अक्षः; शताङ्गः; 'गाड़ी' इति भाषा। श्रीकृष्णवध्यासुरविशेषः। द्विसहस्रपलपरिमाणं; भारः; आचितः; शाकटीनः; शलाटः; 'शकटः शाकिनी गावो यानमस्कन्दनं वनम्। अनूपः पर्वतो राजा दुर्भिक्षे नव वृत्तयः'—इति भरतः। तिनिसवृक्षः; व्यूहविशेषः; 'दण्डव्यूहेन तन्मार्गं यायात्तु शकटेन वा'—इति मनुः (७।१८७)। (शकटाकृतित्वात्) रोहिणीनक्षत्रम्; 'रोहिणीशकटमध्यसंस्थिते चन्द्रमस्यशरणीकृता जनाः। क्वापि यान्ति शिशुयाचिताशनाः सूर्यतप्तपिठराम्बुपायिनः'—इति बृहत्संहितायाम् (२४।३०)। ४४४

शकलम् क्ली. [शक्नोतीति, शक्+'शकिशम्योर्नित्' इति कल] शिरसोऽस्थि; कपालं; करोटिः; करोटी; त्वक्; खण्डम्, 'अयान्धकारं गिरिगह्वराणां दंष्ट्रामयूखैः शकलानि कुर्वन्'—इति रघौ (२।४६)। रागवस्तु; वल्कलं; शल्कं; मत्स्यत्वक्। ६३३

शकलः पुं.–क्ली. [शक्+कल] खण्ड; भित्तम्; 'भित्तं शकलखण्डे वा पुंस्यर्द्धोऽर्द्धं समेंऽशके'—इत्यमरः। ७१३

शकली [न्] पुं. [शकलं शल्कमस्यास्तीति+इनि] मत्स्यः; मीनः; झषः; वैसारिणः; विसारः; पृथुरोमा; जलचरविशेषः; तिमिः; अनिमिषः; शल्को। ६५७

शकुनः पुं. [शक्+'शकेरुनोन्तोन्त्युनयः' इति उन] पक्षिमात्रम्; 'तं वने विजने गर्भं सिंहव्याघ्रसमाकुले। दृष्ट्वा शयानं शकुनाः समन्तात् पर्यवारयन्'—इति

महाभारते (१।७२।१०)। पक्षिविशेषः; गृध्रः; कश्यपपत्नीताम्रायाः श्येनगृध्रादयः पुत्राः; विप्रभेदः; गीतविशेषः; स तु उत्सवादिषु मङ्गलार्थगेयः। शुभशंसी; क्ली. [शक्नोति शुभाशुभं विज्ञातुमनेनेति] शुभशंसि निमित्तं; फललक्षणं; 'सगुन' इति भाषा। २३८

शकुनिः पुं. [शक्नोति उन्नेतुमात्मानमिति। शक्+'शकेरुनोन्तोन्त्युनयः' इति उनि] पक्षिमात्रं; विहगः; 'क्रव्यादान् शकुनीन् सर्वांस्तथा ग्रामनिवासिनः। अनिर्दिष्टांश्चैकशफांष्टिट्टिभं च विवर्जयेत्'—इति मनुः (५।११)। (२५०) आतायी; आतापी; चिल्लपक्षी; सौबलः; स तु कौरवमातुलः। अयं हि दुर्योधनमन्त्री द्यूते पाण्डवान् जित्वा वनं प्रेषयामास। कौरवयुद्धे च स सहदेवेन निहतः। बवाद्येकादशकरणान्तर्गताष्टमकरणम्; 'परजनधनहर्ता वञ्चकः क्रूरचेष्टः, करधृतकरबालो व्याहतस्वामिपक्षः। अतिशयपरदारासक्तचित्तः सरोषो, भवति शकुनिजन्मा मानवः शीघ्रकर्मा'—इति कोष्ठीप्रदीपः। दुःसहपुत्रः; 'दुःसहस्याभवद् भार्या निर्माष्टिर्नाम नामतः। जाता कलेस्तु पाप्मायाम् ऋतौ चण्डालदर्शनात्। तयोरपत्यान्यभवन् जगद्व्यापीनि षोडश। अष्टौ कुमाराः कन्याश्च तथाष्टावति भीषणाः। दन्ताकृष्टिस्तथोक्तिश्च परिवर्तस्तथा परः। अङ्गधुक् शकुनिश्चैव गण्डप्रान्तरतिस्तथा।' तस्य पञ्च पुत्राः; 'श्येनकाककपोतांश्च गृध्रोलूकौ च वै सुतान्। अवाप शकुनिः पञ्च जगृहुस्तान् सुरासुराः'—इति मार्कण्डेये। विकुक्षिपुत्रः; 'वैवस्वतमनोरासीदिक्ष्वाकुः पृथिवीपतिः। तस्य पुत्रशतं चासीद्विकुक्षिर्ज्येष्ठ उच्यते। सोऽयोध्याधिपतिर्वीरस्तस्य पञ्चदश स्मृताः। शकुनिप्रमुखाः पुत्रा रक्षिता रोमहर्षिताः'—इति वह्निपुराणे। २३७

शकुन्तः पुं. [शक्नोति उत्पतितुमिति। शक्+'शकेरुनोन्तोन्त्युनयः' इति उन्त] पक्षी; विहगः; पक्षिमात्रम्; 'नेमां हिंस्युर्वने बालां क्रव्यादा मांसगृद्धिनः। पर्यरक्षन्त तां तत्र शकुन्ता मेनकात्मजाम्'—इति महाभारते (१।७२।११)। भासपक्षी (२४७); कीटभेदः। २३७

शकुन्तिः पुं. [शक्नोति उत्पतितुमिति। शक्+उन्ति] पक्षिमात्रम्; 'अवक्रन्द दक्षिणतो गृहाणां सुमङ्गलो भद्रवादी शकुन्ते!'—इति ऋग्वेदे (२।४२।३)। भासपक्षी (२४७)। २३७

शकुलः पुं. [शक्नोति गन्तुं वेगेनेति। शक्+'मद्गुरादयश्च' इति उरच्। रस्य लः] मत्स्यविशेषः; महामत्स्यभेदः; शकुली; 'नातिगाधे जलाधारे सुहृदः शकुलास्त्रयः। प्रभूतमत्स्ये कौन्तेय! बभूवुः सहचारिणः'—इति महाभारते (१२।१३७।३)। ६५९

शकुली स्त्री. [शकुल+ङीष्] शकुलः। ६५९

शकृत् क्ली. [शक्नोति सर्तुमिति। शक्+'शकेर्ऋतिन्' इति ऋतिन्] विष्ठा; 'स दृष्ट्वा त्रस्तहृदयः शकृन्मूत्रं विमुञ्चति'—इति भागवते (३।३०।१९)। ६३७

शक्तः त्रि. [शक्+क्त] शक्तिविशिष्टः; समर्थः; सहः; क्षमः; प्रभुः; उष्णः; 'भ्रातॄणां यस्तु नेहेत धनं शक्तः स्वकर्मणा। न निर्भाज्यः स्वकादंशात् किञ्चिद्दत्वोपजीवनम्'—इति मनुः (९।२०७)। प्रियंवदः। ३८६

शक्तिः स्त्री. [शक्यते जेतुमनया। शक्+क्तिन्] अस्त्रभेदः; 'कासूः; शर्वलानामास्त्रम्; [भावे क्तिन्] कायजननसामर्थ्यम्; 'या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।' सामर्थ्यमात्रं; द्रविणं; तरः; सहः; बलं; शौर्यं; स्यामः; शुष्मं; पराक्रमः; प्राणः; शुष्म; सहम्; ऊर्जः; गौरी; लक्ष्मीः। ४६३

शक्तिपाणिः पुं. [शक्तिरस्त्रविशेषः पाणौ हस्ते यस्य] कार्त्तिकेयः; शक्तिभृत्; अग्निभूः; स्कन्दः। १९

शक्रः पुं. [शक्नोति दैत्यान् नाशयितुम्। शक्+'स्फायितञ्चीति' रक्] इन्द्रः; 'धनुर्भृतामग्रत एव रक्षिणां जहार शक्रः किल गूढविग्रहः'—इति रघौ (३।३९)। कुटजवृक्षः; अर्जुनवृक्षः; ज्येष्ठानक्षत्रम्; 'शक्रो निर्ऋतिस्तोयं विश्वविरिञ्ची हरिर्वसुर्वरुणः। अजपादोऽहिर्बुध्नः पूषा चेतीश्वरा भानाम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। समर्थे त्रि.। 'विश्वानि शक्रो नर्याणि विद्वानपो रिरेच सखिभिर्निकामैः'—इति ऋग्वेदे (४।१६।६)। 'विद्वान् जानन् शक्रः समर्थ इन्द्रः'—इति तद्भाष्ये सायणः। ५४

शक्रक्रीडाचलः पुं. [शक्रस्य क्रीडाचलः क्रीडापर्वतः] सुमेरुपर्वतः। १३६

शक्रशरासनम् क्ली. [शक्रस्य इन्द्रस्य शरासनं धनुः] इन्द्रधनुः। ५७

शक्रसारथिः पुं. [शक्रस्य इन्द्रस्य सारथिः सूतः] मातलिः।

शङ्करः पुं. [शं कल्याणं सुखं वा करोतीति। शम्+कृ+ 'शमिधातोः संज्ञायाम्' इति अच्] शिवः; महादेवः; शम्भुः; 'सदा ध्यानाच्च भक्तानां पवनं यश्निरामयम्। भूतनाथत्वमप्यस्मात्तेनाहं शङ्करः स्मृतः'—इति स्कन्दपुराणम्। शिवावतारविशेषः; शङ्कराचार्यः; 'एवंप्रकारैः किल कल्मषघ्नैः शिवावतारस्य शुभैश्चरित्रैः। द्वात्रिंशदस्योज्ज्वलकीर्तिराशेः समा व्यतीयुः किल शङ्करस्य'—इति माधवीयसंक्षेपशङ्करविजये। मङ्गलकारके त्रि.। क्षेमङ्करोऽरिष्टतातिः स्यान्मद्रङ्करशङ्करौ'—इति त्रिकाण्डशेषः। 'हिरण्यगर्भं भद्रं ते लोकानां शङ्करो भव' —इति महाभारते (३।२२८।६)। ११

शङ्का स्त्री. [शङ्क्+अ, स्त्रियां टाप्] वितर्कः; सन्देहः; संशयः; अरेकः; विभ्रमः; विचिकित्सा; विकल्पः; भ्रान्तिः; भागवते (८।२।६)। त्रासः; 'शङ्काभिः सर्वमाक्रान्तमन्नं पानं च भूतले। प्रवृत्तिः कुत्र कर्तव्या जीवितव्यं कथं नु वा'—इति हितोपदेशे। वितर्कः; 'यत्र सङ्गीतसन्नादैर्नदद्गुहममर्षया। अभिगर्जन्ति हरयः श्लाघिनः परशङ्कया'—इति भागवते (८।२।६)। ६९१

शङ्कितः त्रि. [शङ्का जाता अस्य। शङ्का+इतच्] दरितः; चकितः; भीतः; त्रस्तः; भीरुः; कातरः; क्षुभितः; 'अशङ्क्यमपि शङ्केत नित्यं शङ्केत शङ्कितान्।' वितर्कितः; पुं. चोरकनामगन्धद्रव्यम्। ३५५

शङ्कुः पुं. [शङ्क्यते लक्ष्यतेऽस्मादिति। शङ्क्+'खरुशङ्कुपीयुनीलङ्गुलिगु' इति कु प्रत्ययेन निपातितः] ध्रुवकः; शिवकः; पुष्पलकः; पुष्यलकः; कीलकः; स्थाणुः; मत्स्यविशेषः; शल्यास्त्रं; संख्याविशेषः; दशलक्ष्यकोटिः; कीलः; 'निक्षेप्योऽयोमयः शङ्कुर्ज्वलन्नास्ये दशाङ्गुलः'—इति मनुः (८।२७१)। ईशः; कलुषः; पत्राशिराजाल; मेढ्ः; राक्षसः; नखीनामगन्धद्रव्यं; दीपसूर्ययोश्छायापरिमाणार्थं काष्ठादिनिर्मितः क्रमेण सूक्ष्माग्रद्वादशाङ्गुलपरिमितः कीलकः; 'अर्काङ्गुला तु सूक्ष्मग्रा काष्ठी द्व्यङ्गुलमूलिका। शङ्कुसंज्ञा भवेत्त्वेव तच्छाया परिकल्पयेत्। मध्याह्नहीनैरादित्ययुक्तैश्छायाङ्गुलैर्हरेत्। षट्पूरितदिवाखण्ड लब्धं दण्डादिकं भवेत्। पूर्वाह्णच्छाययातीतं पराह्णच्छाययैष्यकम्। शून्यैकरामबाणेभदिशोरुद्राः क्रमोत्क्रमैः॥ (०।१।३।५।८।१०।११) (११।१०।८।५।३।१।०) आषाढादिषु मासेषु च्छाया माध्याह्निकी मता। अयनांशाजमासान्ते व्युत्क्रमेणादितो बुधैः। संख्योक्तान्यदिने भागहारे वृद्धीतरे तथा'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। नरविशेषः; जनमेजयस्य पुत्रः; 'भवतो वपुष्टमायां द्वौ पुत्रौ जज्ञाते शतानीकः शङ्कुश्च'—इति महाभारते (१।९५।८६)। उग्रसेनस्य पुत्रविशेषः; 'कंसः सुनामा न्यग्रोधः कङ्कः शङ्कुः सुहुस्तथा। राष्ट्रपालोऽथ धृष्टिश्च तुष्टिमानौग्रसेनयः'—इति भागवते (९।२४।२४)। ४५१

शङ्कुमत् त्रि. [शङ्कवः सन्त्यस्य। मतुप्] कीलमयम्। ८३०

शङ्कुमद्गर्तम् क्ली. [शङ्कुमत् दन्तुरितशूलितं गर्तं गह्वरम्] कुकूलम्। ८३०

शङ्खः पुं.–क्ली. [शाम्यति अशुभमस्मादिति। शम्+'शमेः खः' इति ख] समुद्रभवजन्तुविशेषः; कम्बुः; कम्बोजः; अब्जः; जलजः; अर्णोभवः; पावनध्वनिः; अन्तः; कुटिलः; महानादः; श्वेतः; पूतः; मुखरः; दीर्घनादः; बहुनादः; हरिप्रियः। 'कम्बुशङ्खनखाश्चापि शुक्तिशम्बूककर्कटाः। जीवा एवं विधाश्चान्ये कोषस्थाः परिकीर्तिताः। कोषस्था मधुराः स्निग्धाः पित्तवातहरा हिमाः। बृंहणा बहुवर्चस्का वृष्याश्च बलवर्द्धनाः'—इति भावप्रकाशः। रत्नविशेषः; क्षीरोदकूलेऽपि सुराष्ट्रदेशे तदन्यतोऽपि प्रभवन्ति शङ्खाः। अरुष्कवर्णाः शशिशुभ्रभासः सुसूक्ष्मवक्त्रा गुरवो महान्तः, —इति युक्तिकल्पतरुः। रणवाद्यविशेषः; 'भक्ततूर्यं गन्धतूर्यं रणतूर्यं महास्वनः। संग्रामपटहः शङ्खस्तथा चाभयडिण्डिमः। महाद्वन्द्वी नृपाभीरुर्भीरुः कोलाहलोऽपि च। युद्धवाद्यस्य पर्यायाश्चान्ये भेदाः शलादयः'—इति शब्दरत्नावली। ललाटास्थि; 'तत्र भ्रूगण्डशङ्खललाटाक्षिपुटौष्ठदन्तवेष्टकक्षाकुक्षिवङ्क्षणेषु तिर्यक्छेद उक्तः' —इति सुश्रुते (१।५)। निधिविशेषः; 'निधिप्रवरमुख्यौ च शङ्खपद्मौ धनेश्वरौ'—इति महाभारते (२।१०।३६)। नखीनामगन्धद्रव्यम्; 'मनःशिलाश्र्यूषणशङ्खमाक्षिकैः ससिन्धुकासीसरसाञ्जनैः क्रियाः'—इति सुश्रुते (६।१७)। कर्णसमीपास्थि; 'कर्णौ शङ्खौ भ्रुवौ दण्डवेष्टावोष्ठौ ककुन्दरे'—इति याज्ञवल्क्यः। अष्टनागनायकान्तर्गतनागविशेषः। 'अनन्तो वासुकिः पद्मो महापद्मश्च तक्षकः। कुलीरः कर्कटः

शङ्खो ह्यष्टौ नागाः प्रकीर्तिताः'—इति मनसापूजापद्धतौ। हस्तिदन्तमध्यं; दशनिखर्वसंख्या; लक्षकोटिः; 'एकं दश शतं चैव सहस्रमयुतं तथा। लक्षं च नियुतं चैव कोटिरर्बुदमेव च। वृन्दं खर्वो निखर्वश्च शङ्खपद्मौ च सागरः। अन्त्यं मध्यं परार्द्धं च दशवृद्धया यथाक्रमम्' —इति ब्रह्माण्डपुराणे। तथाहि—

१ एकम्।
१० दश।
१०० शतम्।
१००० सहस्रम्।
१०००० अयुतम्।
१००००० लक्षम्।
१०००००० नियुतम्।
१००००००० कोटिः।
१०००००००० अर्बुदम्।
१००००००००० वृन्दम्।
१०००००००००० खर्वः।
१००००००००००० निखर्वः।
१०००००००००००० शङ्खम्।
१००००००००००००० पद्मम्।
१०००००००००००००० सागरः।

धर्मशास्त्रप्रयोजकमुनिविशेषः; 'मन्वत्रिविष्णुहारीतयाज्ञवल्क्योशनोऽङ्गिराः। यमापस्तम्बसंवर्ताः कात्यायनबृहस्पती। पराशरव्यासशङ्खलिखिता दक्षगोतमौ। शातातपो वशिष्ठश्च धर्मशास्त्रप्रयोजकाः—इति याज्ञवल्क्यवचनम्। ६६४

शचिः स्त्री. [शच् व्यक्तायां वाचि+'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्] इन्द्रपत्नी; पुलोमजा; शची; इन्द्राणी; सची; सचिः; पूतक्रतायी; पौलोमी; माहेन्द्री; जयवाहिनी; ऐन्द्री; शतावरी। ५५

शची स्त्री. [शचि+'कृदिकारादिति' ङीष्] इन्द्रपत्नी; पुलोमजा; इन्द्राणी; शचिः; सची; सचिः; पूतक्रतायी; पौलोमी; माहेन्द्री; ऐन्द्री; जयवाहिनी; शतावरी; 'उमावृषाङ्कौ शरजन्मना यथा यथा जयन्तेन शचीपुरन्दरौ। तथा नृपः सा च सुतेन मागधी ननन्दतुस्तत्सदृशेन तत्समौ'—इति रघौ (३।१३)। शतमूली; स्त्रीकरणान्तरं; विष्टिकरणं; कर्म; 'न किरस्य शचीनां नियन्ता सूनृतानाम्'—इति ऋग्वेदे (८।३२।१५)। प्रज्ञा; वाक्। ५५

शतधारम् क्ली. [शतं धाराः कोणाः यस्य] वज्रं; पविः; अशनिः; कुलिशं; दम्भोलिः; गौः; भिदुरं; व्याधामः; स्वरुः; इन्द्रप्रहरणम्; शतधारायुक्ते त्रि.। 'वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः वित्रमसि सहस्रधारम्। वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा काम धुक्ष्व'—इति यजुः संहितायाम्। ५६

शतपत्रम् क्ली. [शतं पत्राणि यस्य] पद्मं; कमलं; सहस्रपत्र; पङ्कजम्; 'इमामसितकेशान्तां शतपत्रायतेक्षणाम्'—इति महाभारते (३।६०।२०)। ६७९

शतपत्रः पुं. [शतं पत्राणि पक्षाः यस्य] दार्वाघाटपक्षी; शतपत्रकः; मयूरः; सारसः; राजकीरः; 'मयूरैः शतपत्रैश्च जीवञ्जीवककोकिलैः'—इति महाभारते (३।१०८।८)। ७९५

शतमखः पुं. [शतं मखाः यज्ञाः यस्य] इन्द्रः; शतमन्युः; शतक्रतुः; पुरन्दरः; 'सहचरमधुहस्तन्यस्तचूताङ्कुरास्त्रः, शतमखमुपतस्थे प्राञ्जलिः पुष्पधन्वा'—इति कुमारे (२।६४)। ५२

शतमूलिका स्त्री. [शतं मूलानि यस्याः, ततः स्वार्थे कन्] शतमूली; ओषधिविशेषः; बहुसुता; अभीरुः; इन्दीवरी; वरी; ऋष्यप्रोक्ता; भीरुपत्नी; नारायणी; शतावरी; अहेरुः; रङ्गिणी; शटी; द्वीपिशत्रुः; ऋष्यगता; शतपदी; पीवरी; धीवरी; वृष्या; दिव्या; दीपिका; दरकण्ठिका; सूक्ष्मपत्रा; सुपत्रा; बहुमूला; शताह्वया; स्वादुरसा; शताह्वा; लघुपर्णिका; आत्मगुप्ता; जटा; मूला; शतवीर्या; महौषधी; मधुरा; शतमूला; केशिका; शतपत्रिका; विश्वस्था; वैष्णवी; पार्ष्णी; वासुदेवप्रियङ्करी; दुर्मना; तैलवल्ली। ६१९

शतयष्टिः पुं. [शतं यष्टयो गुच्छा यस्य] शतलतिकहारः; देवच्छन्दः; देवच्छदः; शतयष्टिकः। ५६२

शतह्रदा स्त्री. [शतं ह्रदा अर्वीषि यस्याः। यद्वा शतं ह्रादाः शब्दाः यस्याः, निपातनाद् ह्रस्वः] शम्पा; चपला; क्षणिका; ह्रादिनी; तडित्; विद्युत्; सौदमिनी; अचिरांशुः; ऐरावती; सौदामनी। 'समुद्रमेघः स रराज राजन् शतह्रदास्त्रीप्रभयाभिरामः'—

इति हरिवंशे (१४६।४८)। वज्रम्। दक्षकन्याविशेषः। 'ददौ च राहुपुत्राय द्वौ तडिच्च शतह्रदा। ययोः पुत्राश्च विद्वांसश्चतस्रो विद्युतः शुभाः'—इति वह्नि-पुराणे। ६०

शताङ्गः पुं. [शतम् अङ्गानि अवयवा यस्य] रथः; अनः; शकटः; तिनिसवृक्षः; युद्धरथः; दानवविशेषः; 'करालो ज्वालजिह्वश्च शताङ्गः शतलोचनः'—इति हरिवंशे (२३२।६)। शतावयवविशिष्टे त्रि.। 'शताङ्गानि तु तुर्य्याणि वादकाः समवादयन्'—इति महाभारते (१।१८९।२२)। ४४४

शतानन्दः पुं. [शतं बहुलाः आनन्दा यस्य] ब्रह्मा; विधाता; विरञ्चिः; मुनिभेदः; स तु जनकराज-पुरोहितः। देवकीनन्दनः; गौतममुनिः; विष्णुरथः; गोतममुनिपुत्रः; विष्णुः; 'स्वक्षः स्वङ्गः शतानन्दो नन्दिर्ज्योतिर्गणेश्वरः'—इति महाभारते (१३।१४९।७९)। ६

शत्रुः पुं. [शातयति इति, शद्लृ शातने+णिच्+'रुशा-दिभ्यां क्रुन्' इति क्रुन्] रिपुः; वैरीः; सपत्नः; अरिः; द्विषः; द्वेषणः; दुर्हृदः; द्विट्; विपक्षः; अहितः; अमित्रः; दस्युः; शात्रवः; अभिघाती; परः; अरातिः; प्रत्यर्थी; परिपन्थी; वृषः; प्रतिपक्षः; द्विषन्; घातकः; द्वेषी; विद्विषः; हिंसकः; विद्विट्; अप्रियः; अभियातिः; अहितः; दौर्हृदः; स्वदेशादनन्तरोऽ-व्यवहितं कविषयाभिनिवेशिराजः; 'विषयानन्तरो राजा शत्रुर्मित्रमतः परम्।' ४५६

शनैश्चरः पुं. [कक्षादीर्घत्वात् शनैर्मन्दंमन्दं चरतीति। चर् गतौ+पचाद्यच्] शनिः; सौरिः; नीलवासाः; मन्दः; छायात्मजः; पातङ्गिः; ग्रहनायकः; छायासुतः; भास्करिः; नीलाम्बरः; आरः; क्रोडः; वक्रः; कोलः; सप्ताशुः; पङ्गुः; कालः; सूर्यपुत्रः; असितः; शौरिः; छायातनयः; 'नीलाञ्जनचयप्रख्यं सूर्यपुत्रं महाग्रहम्। छायाया गर्भसम्भूतं वन्दे भक्त्या शनैश्चरम्। व्यासे-नोक्तमिदं स्तोत्रं यः पठेत् प्रयतो नरः। दिवा वा यदि वा रात्रौ शान्तिस्तस्य न संशयः'—इति व्यासभाषित-स्तोत्रम्। ४८

शपथः पुं. [शप् आक्रोशे+'शीङ्शपिरुशमीति' अथ] शपनं; शपः; सत्यं; समयः; शापः; प्रत्ययः; अभिषङ्गः; गालिः; 'वृथा तु शपथं कृत्वा कीटस्य वधसंयुतम्। अनृतेन च युज्येत वधेन च तथा नरः। तस्मान्न शपथं कुर्यान्नरो मिथ्यावधेप्सितम्'—इति व्यवहारतत्त्वम्। ८४८

शफः पुं.—क्ली. [शम्+अच्, पृषोदरादित्वान् मस्य फ] गवादीनां खुरः; 'हेमश्रृङ्गा शफै रौप्यैः सुशीला वस्त्र-संयुता। सकांस्यपात्रा दातव्या क्षीरिणी गौः सदक्षिणा'—इति याज्ञवल्क्यः (१।२०४)। वृक्षमूलम्। ४४१

शफरः पुं.—स्त्री. [शफं राति, शफ+रा+क, स्त्रियां ङीष्] मत्स्यविशेषः; 'कैवर्तकर्कशकरात् शफरश्च्युतोऽपि जाले पुनर्निपतितः करुणो विपाकः।' 'अगाधजलसञ्चारी विकारी न च रोहितः। गण्डूषजलमात्रेण शफरी फर्फरायते'—इत्युद्भटः। ६५८

शबरः पुं. [शवति, शव् गतौ+बाहुलकादर, यद्वा शवं राति गृह्णातीति, शव+रा+क। पृषोदरादित्वान्मध्ये बकारः] शवरः; अन्त्यजातिः। ५९९

शबरालयः पुं. [शबरस्य आलयः] पक्वणः; शक्कणः; शवरालयः। २६१

शबलः पुं. [शप् आक्रोशे+'शपेर्बश्च' इति कल, बश्चान्ता-देशः] कर्बुरवर्णः; तद्वति त्रि.। 'अङ्कश्च मलपङ्केन संछन्नं शबलस्तनम्'—इति भागवते (३।२३।२४)। ७३६

शब्दः पुं. [शब्द्+भावे घञ्। यद्वा शप् आक्रोशे+'शाशपिभ्यां ददनौ' इति दन्, पकारस्य बकारः] श्रोत्रग्राह्यगुणपदार्थविशेषः; निनादः; निनदः; ध्वनिः; ध्वानः; रवः; स्वनः; स्वानः; निर्घोषः; निर्ह्रादः; नादः; निस्वानः; निस्वनः; आरवः; आरावः; संरावः; विरावः; संरवः; रावः; घोषः; 'शब्दो ध्वनिश्च वर्णश्च मृदङ्गादिभवो ध्वनिः। सर्वः शब्दो नभोवृत्तिः श्रोत्रोत्पन्नस्तु गृह्यते'—इति भाषापरिच्छेदः। १३८

शब्दग्रामः पुं. [शब्दानां ग्रामः] शब्दसमूहः; शब्द-सङ्घातः। ८११

शमः पुं. [शम्यते इति, शम्+'हलश्चेति' घञ्, 'नोदात्तो-पदेशेति' वृद्ध्यभावः] शान्तरसस्य स्थायिभावः; 'शान्तः शमः स्थायिभावः उत्तमप्रकृतिर्मतः'—इति साहित्य-दर्पणे (३।३३८)। शान्तिः; 'विरागशैलमथितात् तस्य चित्तमहोदधेः। प्रकोपकालकूटस्य पश्चात् शमसुधो-

दयात्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (४।३८१)। मोक्षः; पाणिः; उपचारः; अन्तरिन्द्रियनिग्रहः; अन्तःकरण-संयमः; 'बुद्धिर्ज्ञानमसंमोहः क्षमा सत्यं दमः शमः'—इति भगवद्गीतायाम् (१०।४)। विक्षेपककर्मोपरमः; बाह्येन्द्रियनिग्रहः; 'सत्यं शौचं दया मौनं बुद्धिर्ह्रीः श्रीर्यशः क्षमा। शमो दमो भगश्चेति यत्सङ्गाद्याति संक्षयम्'—इति भागवते (३।३२।३३)। सर्वकर्म-निवृत्तिः; 'योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते'—इति भगवद्गीतायाम् (६।३)। 'शमः उपरमः सर्व-कर्मभ्यो निवृत्तिः'—इति तट्टीकायां शङ्करभाष्यम्। निवृत्तिः; 'अभवन्निर्मलं व्योम देवीकृत्यैः सह क्रमात्। साकं भूपालशोकेन दुर्भिक्षं च शमं ययौ'—इति राज-तरङ्गिण्याम् (२।५६)। ९१

शमनः पुं. [शमयति पापिनां कर्म आलोचयतीति। कर्तरि ल्यु] यमः; समवर्ती; प्रेतपतिः; पितृपतिः; कीनाशः; वैवस्वतः; कृतान्तः; कालिन्दीसोदरः, कालः; अन्तकः धर्मराजः; दण्डधरः; हरिः; दक्षिणाशापतिः; श्राद्ध-देवः; प्रेतराट्; मृगभेदः; कलायः; क्ली. [शम्+ल्युट्] यज्ञार्थपशुहननं; शान्तिः; 'वातस्य शमनं कोपनं वा'—इति काशिका। चर्वणं; हिंसा; प्रति संहारः; 'निमेषकाष्ठादिमयः कालरूपःक्षयात्मकः। प्रसीद स्वेच्छया रूपं स्वतेजः शमनं कुरु'—इति मार्कण्डेये (७८।१३)। निवारकः; 'दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि! शीलम्'—इति मार्कण्डेये देवीमाहात्म्ये। ७१

शमलम् क्ली. [शम्+'शाकशम्योर्नित्' इति कल] वर्चः; उच्चारः; वर्चस्कः; अवस्करः; शकृत्; गूथः; कीटः; विट्; विष्ठा; पुरीषः; मलम्; पापम्, 'ऊचे ययात्मशमलं गुणसङ्गपङ्कम्'—इति भागवते (२।७।३)। ६३७

शमिः स्त्री. [शम्+'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन् प्रत्ययः] शिम्बा। १८९

शमी स्त्री. [शम्+इन्, वा ङीष्] बीजकोशी; शिम्बा; वृक्षविशेषः; शक्तुफला; शिवा; शक्तुफली; शान्ता; तुङ्गा; कचरिपुफला; केशमथनी; ईशानी; लक्ष्मीः; तपनतनया; इष्टा; शुभकरी; हविर्गन्धा; मेध्या; दुरितदमनी; शक्तुफलिका; समुद्रा; मङ्गल्या; सुरभिः; पापशमनी; भद्रा; शङ्करी; केशहन्त्री; शिवाफला; सुपत्रा; सुखदा; 'शमी शक्तुफला तुङ्गा केशहन्त्री शिवाफला। मङ्गल्या च तथा लक्ष्मीः शमीरः स्वल्पिका स्मृता। शमी तिक्ता कटुः शीता कषाया रेचनी लघुः। कम्पकासश्रमश्वासकुष्ठार्शः कृमिजित् स्मृता'—इति भावप्रकाशः। वागुजिः; कर्म; 'ईजे यज्ञेभिः शशमे शमीभिः'—इति ऋग्वेदे (६।२।२) 'शमीभिः कर्मभिः कृच्छ्रचान्द्रायणादिभिः'—इति तद्भाष्ये सायणः। १८९

शम्पा स्त्री. [शं सुखं पिबति, भयङ्करत्वात्। 'आतोऽनुपेति' क। 'शम्बा इति पक्षे शम्बयति नायनं तेजः'–इति स्वामी] चपला; क्षणिका; शतह्रदा; ह्रादिनी; तडित्; विद्युत्; सौदामिनी; अचिरांशुः; ऐरावती; सौदामनी; सौदाम्नी। ६०

शम्बः पुं. [शम्ब् सम्बन्धने, शम्बयति शत्रून्। अच्। शम्+'शमेर्वन्' इति वन् वा। यद्वा शमस्त्यस्येति, शम्+'कशंभ्यां वभयुस्तितुतयसः' इति व] वज्रं; पविः; अशनिः; शतधारं; कुलिशं; दम्भोलिः; गौः; भिदुरं; व्याघामः; स्वरुः; इन्द्रप्रहरणम्; 'उग्रो यः शम्बः पुरुहूत तेन'—इति ऋग्वेदे (१०।४२।७) 'शम्ब इति वज्रनाम'—इति तद्भाष्ये सायणः। मुसलाग्रस्थलोह-मण्डलकं; लौहकाञ्ची; अनुलोमकर्षणं; दरिद्रः; भाग्यवति त्रि.। ५६

शम्बरः पुं. [शम्ब्+अरच्] वातप्रमी; कृष्णसारः; न्यङ्कुः; रङ्कुः; एणः; कुरङ्गः; हरिणः; मृगः; सारङ्गः; ऋष्यः; पृषतः; रुरुः; मृगभेदः; दैत्य-विशेषः; 'अरन्धयो तिथिग्वाय शम्बरम्'—इति ऋग्वेदे (१।५१।६) 'शम्बरम् एतन्नामानमसुरम्' इति तद्भाष्ये सायणः। 'शम्बरो नमुचिश्चैव पुलोमा चेति विश्रुतः। असिलोमा च केशी च दुर्जयश्चैव दानवः'—इति महा-भारते (१।६५।२२)। मत्स्यविशेषः; शैवविशेषः; जिनभेदः; युद्धं; श्रेष्ठः; चित्रकवृक्षः; लोध्रः; अर्जुन-वृक्षः; वाराहीकन्दः; क्ली. सलिलं; जलं; पानीयं; व्रतं; वित्तं; चित्रं; बौद्धव्रतविशेषः; मेघः ; 'अददं मन्युना शम्बराणि'—इति ऋग्वेदे (२।२४।२) 'शम्ब-राणिमेघनामैतन् मेघान् व्यददः वर्षणार्थं विदारितवान्'–इति तद्भाष्ये सायणः। २३०

शम्बरसूदनः पुं. [शम्बरं सूदयतीति। शम्बर+सूद्+

ल्यु] शम्बरारिः; शमान्तकः; कामदेवः; मदनः; मन्मथः; मारः । ३२

शम्बलः पुं.– क्ली. [शम्बयत्यनेन, शाब् सम्बन्धने बाहुलकादलच्] सम्बलं; पाथेयं; कूलं; तीरं; तटं; मत्सरः । ३५८

शम्बली स्त्री.— कुट्टिनी; चुन्दी; शम्भली । ४९२

शम्बाकृतम् त्रि. [शम्ब+'कृञो द्वितीयतृतीयशम्ब-बीजात्कृषौ' इति डाच्] द्विवारकृष्टक्षेत्रं; द्विगुणाकृतं; द्वितीयाकृतं; द्विहल्यं, द्विसीत्यम् । ५७६

शम्बुकः पुं. [शम्बु+स्वार्थे कन्] सुम्बुकः; शम्बुः; जलजन्तुविशेषः; 'शम्बूकः शुम्बुको ज्ञेयः पूर्वः कान्तस्तु सर्वदा । ककारेण विना शेषो दृश्यते ग्रन्थविस्तरे'— इति हट्टचन्द्रः । ६६४

शम्बूकः पुं.– स्त्री. [शम्+'उलूकादयश्चेति' ऊक, वुगागमश्च निपात्यते] जलजन्तुविशेषः; जलशुक्तिः; शम्बुका; शम्बुकः; शम्बुक्कः; शाम्बुकः; शम्बुः; शाम्बुक्कः; जलडिम्बः; दुश्चरः; पङ्कमण्डूकः; कपर्दी; वराटः; क्षुल्लकः; क्षुद्रशङ्खः; शङ्खः; पुं. गजकुम्भान्तभागः; घोङ्गः; शूद्रतापसः; 'दत्ताभये त्वयि यमादपि दण्डधारे, सञ्जीवितः शिशुरयं मम चेयमृद्धिः । शम्बूक एष शिरसा चरणौ नतस्ते, सत्सङ्गजानि निधनान्यपि तारयन्ति'—इति उत्तरचरिते । दैत्यविशेषः । ६६४

शम्भली स्त्री. [शम्भं कल्याणयुक्तं नायकादिकं लाति गृह्णातीति । शम्भ+ला+क । गौरादित्वाद् ङीष्] कुट्टिनी; कुट्टनी; शम्बली । ४९२

शम्भुः पुं. [शं मङ्गलं भवत्यस्मादिति, शं भवति भावयतीत्यर्थः, इति वा । शम्+'मितद्र्वादिभ्य उपसंख्यानम्' इत्युक्त्या डु] ब्रह्मा; सृष्टिकर्ता; 'तामुवाच महाराज भूमिं भूमिपतिः प्रभुः । प्रभवः सर्वभूतानामीशः शम्भुः प्रजापतिः'—इति महाभारते (१।६४।४५) । (११) शिवः; महादेवः; शङ्करः; 'एतद्भगवतः शम्भोः कर्मदक्षाध्वरद्रुहः । श्रुतं भागवतात् शिष्यादुद्धवान्मे बृहस्पतेः'—इति भागवते (४।७।५७) । विष्णुः । (२५); 'त्रिचक्षुः शम्भुरेकस्त्वं विभुर्दामोदरोऽपि च'— इति महाभारते (१२।४३।७) । एकादशरुद्राणामन्यतमः; 'हरश्च बहुरूपश्च त्र्यम्बकश्चापराजितः । वृषाकपिश्च शम्भुश्च कपर्दी रैवतस्तथा । मृगव्याधश्च शर्वश्च कपाली च महामुने । एकादशैते प्रथिता रुद्रास्त्रिभुवनेश्वराः'—इति विष्णुपुराणे (१।५।१२३-१२४) । बुद्धः; सिद्धः; श्वेतार्कः; अग्निः; 'शम्भुमग्निमथ प्राहुर्ब्राह्मणा वेदपारगाः । आवसथ्यं द्विजाः प्राहुर्दीप्तमग्निं महाप्रभम्'—इति महाभारते (३।२२०।५) । सुखस्य भावयितरि त्रि. । 'मनुष्वच्छम्भू आगतम्'— इति ऋग्वेदे (१।४६।१३) । 'हे शम्भू सुखस्य भावयितारौ'—इति तद्भाष्ये सायणः । ७

शम्या स्त्री. [शम्यतेऽनयेति । शम्+यत्+टाप्] युगकीलकः; 'उद्व ऊर्मिः शम्या हन्त्वापो योक्त्राणि मुञ्चत'—इति ऋग्वेदे (३।३३।१३) । दक्षिणहस्तगृहीततालविशेषः; दण्डयष्टिः; 'शम्यापातास्त्रयो वापि त्रिगुणो नगरस्य तु'—इति मनुः (८।२३७) । ५७५

शयः पुं. [शेते सर्वमस्मिन्निति, प्रायो वस्तुनः कराधीनत्वात् । शी+पुंसीति घ] पाणिः; पञ्चशाखः; करः; हस्तः; शय्या; सर्पः; निद्रा; पणः । ५११

शयनम् क्ली. [शी+ल्युट्] पर्यङ्कः; पल्यङ्कः; शय्या; तल्पं; तलिनः; शयनीयकं; तिलमः; 'आसनानि च दिव्यानि यानानि शयनानि च । विधातव्यानि पाण्डूनां यथा तुष्येत वै पिता'—इति महाभारते (१।१४५।१४) । निद्रा; मैथुनम् । ३०७

शयनस्थानम् क्ली. [शयनस्य स्थानम्] वासागारं; शयनागारं; शयनगृहम् । २९५

शयनासनम् क्ली. [शयनाय आसनम्] औशीरम् । [शयनं च आसनं च शयनासने युग्मे औशीरशब्दवाच्ये इति स्वामी । शयनपीठमिति सुभूतिः] । १२१

शयानकः पुं. [शी+शानच्+ततः कन् । यद्वा 'आनकः शीङ्भियः' इति आनक] कृकलासः; सरटः; प्रतिसूर्यः; सर्पः । २३४

शयुः पुं. [शेते इति, शी+उ] अजगरः; वाहसः; शयुनः; ऋषिविशेषः; 'याभिर्नरा शयवे याभिरत्रये'—इति ऋग्वेदे (१।११२।१६) 'हे नरा नेतारावश्विनौ पुरा पूर्वस्मिन् काले शयवे एतत्संज्ञकाय ऋषये'—इति तद्भाष्यम् । शयाने त्रि. । 'कस्ते मातरं विधवामचक्रत् शयुं कस्त्वामजिघांसच्चरन्तम्'—इति ऋग्वेदे (४। १८।१२) 'कस्त्वत्तोऽन्यः शयुं शयानं चरन्तं जाग्रतं वा

त्वाम् अजिघांसत्'—इति तद्भाष्ये सायणः। ६४२

शय्या स्त्री. [शी शयने+'संज्ञायां समजेति' क्यप्] शीयते यत्र सा; शयनीयं; शयनं; तल्पं; शयनीयकं; शयः; पर्यङ्कः; पल्यङ्कः; तलिनं; तलिमम्; 'सुखशय्यासनं सेव्यं निद्रापुष्टिधृतिप्रदम्। श्रमानिलहरं शस्तं विपरीतमतोऽन्यथा। भूशय्यानिलपित्तघ्नी बृंहणी शुक्रवर्धिनी। खट्वा तु वातला प्रोक्ता पट्टी रूक्षोऽतिवातलः—इति राजवल्लभः। 'भूशय्या वातलातीव रूक्षा पित्तास्रनाशिनी। सुशय्याशयनं हृद्यं पुष्टिनिद्राधृतिप्रदम्। श्रमानिलहरं वृष्यं विपरीतमतोऽन्यथा'—इति भावप्रकाशः। ३०७

शरः पुं. [शृणात्यनेनेति। शॄ हिंसायाम्+'ऋदोरप्' इति अप्] तृणविशेषः; इषुः; काण्डः; बाणः; मुञ्जः; तेजनः; गुन्द्रकः; उत्कटः; शायकः; क्षुरः; इक्षुप्रः; क्षुरिकापत्रः; विशिखः; 'मूंज' इति भाषा। 'आचार्यः कलसाज्जातो द्रोणः शस्त्रभृतांवरः। गौतमस्यान्ववाये च शरस्तम्बाच्च गौतमः'—इति महाभारते (१।१३८। १५)। बाणः (४६६); 'तव मन्त्रकृतो मन्त्रैर्दूरात् प्रशमितारिभिः। प्रत्यादिश्यन्त इव मे दृष्टलक्ष्यभिदः शराः'—इति रघौ (१।६१)। दध्यग्रभागः (दुग्धशरः=सन्तानिका) दधिसारः; दधिस्नेहः; कट्टरम्; उशीरः; महापिण्डीतरुः; हिंसा [शृधात्वर्थदर्शनात्]; ज्योतिषोक्तपञ्चसंख्या; 'वेदखाग्निशराः शुद्धैरिषुबाणाग्निसायकाः'—इति साहित्यदर्पणे (४।२६४)। १९१

शरजन्मा [न्] पुं. [शरे शरवणे जन्म यस्य] शरजः; शरोद्भवः; शरभवः; कार्त्तिकेयः; शम्भुतनयः; शम्भुनन्दनः; शरभूः; 'उमावृषाङ्कौ शरजन्मना यथा, यथा जयन्तेन शचीपुरन्दरौ। तथा नृपः सा च सुतेन मागधी ननन्दतुस्तत्सदृशेन तत्समौ'—इति रघौ (३।२३)। २०

शरणम् क्ली. [शृणाति दुःखमनेनेति। शॄ+ल्युट्] अगारं; गृहम्; 'ततोऽम्बिकायां प्रथमं नियुक्तः सत्यवागृषिः। दीप्यमानेषु दीपेषु शरणं प्रविवेश ह'—इति महाभारते (१।१०६।४)। रक्षिता; 'त्यज संसारमसारं भज शरणं पार्वतीरमणम्। विश्वसिहि श्रुतिशिखरं विश्वमिदं तव निदेशकरम्'—इति वैराग्यशतके (९१)। रक्षणं; वधः; घातः। २९२

शरत् [द्] स्त्री. [शॄ हिंसायाम्+'शृद्भसोऽदिः' इति अदि] वत्सरः; हायनः; अब्दः; वर्षः; संवत्सरः; समाः; 'पृथिवीं शासतस्तस्य पाकशासनतेजसः। किञ्चिदूनमनूनर्द्धेः शरदामयुतं ययौ'—इति रघौ (१०।१)। ऋतुविशेषः; आश्विन कार्तिकमासद्वयात्मकः; आश्वयुजकार्तिकमासद्वयात्मकः; शारदा; कालप्रभातः; कालप्रभातं; वर्षावसानम्; मेघान्तः; प्रावृडत्ययः; 'सरितः कुर्वती गाधाः पथश्चाश्यानकर्दमान्। यात्रायै चोदयामास तं शक्तेः प्रथमं शरत्'—इति रघौ (४।२४)। 'नरः शरत्संज्ञकलब्धजन्मा भवेत्सुकर्मा मनुजस्तरस्वी। शुचिः सुशीलो गुणवान् सुमानी धनान्वितो राजकुलप्रपन्नः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। ११६

शरदा स्त्री. [शरत्+टाप्] शरदृतुः; वत्सरः। ११३

शरव्यम् क्ली. [शरवे हिंस्राय बाणशिक्षायै वा साधु। शरु+'उगवादिभ्यो यत्' इति यत्। यद्वा शरान् व्ययति, शर+व्ये+ड] लक्ष्यं; वेध्यं; निमित्तम्; 'विदधति जनतामनः शरव्यव्यधपटुमन्मथचापनादशङ्काम्'—इति माघे (७।२४)। ४६८

शराटिः स्त्री. [शरं जलम् अटति प्राप्नोतीति। शर+अट्+इन्] शरालिपक्षी; शराडिः; शरातिः; शरारिः; आटिः। २४९

शराडिः स्त्री. [शर+अड् उद्यमे+इन्] शरालिपक्षी; आतिः; आडिः; आटिः; आडी। २४९

शरातिः स्त्री. [शरं जलम् अततीति। शर+अत्+इन्] शरालिपक्षी। २४९

शरारिः पुं. [शरं जलम् ऋच्छतीति, शर+ऋ गतौ+'अच इः' इति इ] शरालिपक्षी; आटिः; आतिः; शराडिः; शरातिः; शरालिका; शराली; आडिः; आडीः; शराडी; आडिका; शराटिः। 'प्रफुल्लनीलोत्पलशोभितानि शरारिकादम्बविघट्टितानि। प्रसन्नतोयानि सशैवलानि सरांसि चेतांसि हरन्ति यूनाम्'—इति ऋतुसंहारे (४।९)। २४९

शरारुः त्रि. [शृणातीति, शॄ+'शॄवन्द्योरारुः'—इति आरु] हिंस्रः; घातकः; नृशंसः; क्रूरकर्मकृत्। ३७२

शरालिः स्त्री. [शर+अल् भूषणे+इन्] शरारिपक्षी; शरालिका; शराली। २४९

शराली स्त्री.— शरारिपक्षी; आटिः: आडिः; आडी; शराडी। २४९

शरावः पुं.– क्ली. [शरं जलम् अवति रक्षति। शर+अव् रक्षणे+अण्] मृत्पात्रविशेषः; वर्द्धमानकः; मार्तिकः; सरावः; शालाजिरम्; पार्थिवं; मृत्कांस्यम्; 'उदितोऽपि तुहिनगहने गगनप्रान्ते न दीप्यते तपनः। कठिनघृतपूरपूर्णे शरावशिरसि प्रदीप इव'—इति आर्यासप्तशत्याम् (१२६)। कुडवद्वयपरिमाणं; चतःषष्टितोलकात्मकं; मानिका। ३१५

शरीरम् क्ली. [शीर्यते रोगादिना यत्। शॄ+'कॄशॄपॄकटिपटिशौटिभ्य ईरन्' इति ईरन्] कलेवरं; गात्रं; वपुः; संहननं; वर्ष्म; विग्रहः; कायः; देहः; मूर्तिः; तनुः; तनूः; क्षेत्रं; पुरं; घनः; अङ्गं; पिण्डं; भूतात्मा; स्वर्गलोकेशः; स्कन्धः; पञ्जरः; कुलं; बलम्; आत्मा; स्कन्वः; इन्द्रियायतनं; भूः; मूर्तिमत्; करणं; वेरं; सञ्चरः; बन्धः; पुद्गलं; व्याधिमन्दिरम्; 'शरीरे भस्मसाद्भूते प्रतिबिम्बः स चात्मनः। जीवस्तत्रान्तरीक्षस्थ उवाच विनयं विभुम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते। शरीराम्रम्; 'शरीरमापः सोमश्च विविधं चान्नमुच्यते। प्राणो ह्यग्निस्तथादित्यस्त्रिभोक्ता एव एव तु'—इति गारुडे। ५१०

शर्म [न्] क्ली. [शॄ+'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति मनिन्] सुखम्; 'तस्मा अग्निर्भारतः शर्म यं सत्'—इति ऋग्वेदे (४।३५।४)। 'शर्म सुखम्' इति तद्भाष्ये सायणः। 'स्वामिभक्तस्तदेतस्य शर्मोपायमिमं शृणु'—इति कथासरित्सागरे (७८।४९)। तद्वति त्रि.। गृहम्; 'स नः शर्माणि वीतयेऽग्निर्यच्छतु शन्तमा'—इति ऋग्वेदे (३।१३।४)। 'शर्माणि, शर्मशब्दो गृहवाची, छाया शर्मेति तन्नामसु पाठात्'—इति तद्भाष्ये सायणः। पुं. ब्राह्मणस्योपाधिविशेषः; 'ततश्च नाम कुर्वीत पितैव दशमेऽहनि। देवपूर्वं नराख्यं हि शर्मवर्मादिसंयुतम्। शर्मेति ब्राह्मणस्योक्तं वर्मेति क्षत्रसंश्रयम्। गुप्तदासात्मकं नाम प्रशस्तं वैश्यशूद्रयोः'—इति विष्णुपुराणे (२।१०।८९)। (दशमेऽहनि अतीते इति शेषः)। १२३

शर्वः पुं. [शृणाति सर्वाः प्रजाः संहरति प्रलये, संहारयति वा भक्तानां पापानि। शॄ+'कॄगॄशॄदॄभ्यो वः' इति व] शिवः; महादेवः; शङ्करः; शम्भुः; रुद्रः; उमापतिः; 'कतिचिदवनिपालः शर्वरीः शर्वकल्पः'—इति रघुवंशे (११।९३)। विष्णुः; 'शर्वः सर्वः शिवः स्थाणुर्भूतादिर्निधिरव्ययः'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रे। ११

शर्वरी स्त्री. [शृणाति चेष्टामिति। शॄ+'कॄगॄशॄवृचतिभ्यः ष्वरच्' इति ष्वरच्, षित्वात् ङीष्] रात्रिः। 'अतिस्कन्दन्ति शर्वरीः'—इति ऋग्वेदे (५।५२।३)। योषित्; हरिद्रा; सन्ध्या। १०७

शर्वाणी स्त्री. [शर्वस्य शिवस्य भार्या। 'इन्द्रवरुणभवेति' ङीष्] पार्वती; उमा; शिवा; भवानी; दुर्गा; सर्वाणी; 'निपत्य पादयोस्ताभ्यां जयया सह बोधता। शापान्तं प्रति शर्वाणी शनैर्वचनमब्रवीत्'—इति कथासरित्सागरे (१।५८)। १५

शलम् क्ली.– पुं. [शल्+'ज्वलितिकसन्तेभ्यो णः' इति णस्याभावपक्षे पचाद्यच्] सूची; शल्लकीरोम; शलली; पुं. शललं; भृङ्गी; क्षेत्रभेदः; ब्रह्मा; कुन्तास्त्रम्; उष्ट्रः; वासुकिवंशीयसर्पविशेषः; 'कोटिशो मानसः पूर्णः शलः पालो हलीमकः'—इति महाभारते (१।५७।५)। शन्तनुराजपुत्रः; 'शलश्च शन्तनोरासीद् गङ्गायां भीष्म आत्मवान्'—इति भागवते (९।२२।१८)। शल्यराजः; 'नप्तृत्रिगर्तशलसैन्धववाह्लिकाद्यैः'—इति भागवते (१।१५।१६)। कंसामात्यः; 'ततो मुष्टिकचाणूरशलतोशलकादिकान्'—इति भागवते (१०।३६।२१)। २३३

शललः पुं. [वृषादित्वात्कलच्] शल्लकः; शल्लकीजन्तुः; श्वावित्; शलका; शल्यः; ककचपादः; छेदारः; शल्यकः; शल्यमृगः; वज्रशल्यः; बिलेशयः। २३३

शललम् क्ली. [शल् चलनसंवरणयोः+वृषादित्वात् कलच्] शलं; शल्लकीलोम; शललकण्टकः। २३३

शलली स्त्री. [शलल+गौरादित्वाज्जातित्वाद्वा ङीष्] शली; स्वल्पशल्यकः; श्वावित्; शलम्। २३३

शलाका स्त्री. [शल्+'बलाकादयश्च' इति आक। स्त्रियां टाप्] शल्यं; मदनवृक्षः; शारिका; शल्लकी; छत्रादिकाष्ठी; 'अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया। चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः'—इति गुरुगीतायाम्। शरः; आलेख्यकूर्चिका; अस्थि। ८३४

शलाटुः त्रि.— अपक्वफलम्; 'मदनशलाटुचूर्णान्येवं वा वकुलरम्यकोपयुक्तानि मधुलवणयुक्तानि'—इति सुश्रुते (१।४३)। पुं. मूलविशेषः; बिल्वः। १८९

शल्कली [न्] पुं. [शल्कलमस्यास्तीति। शल्कल+इनि] मत्स्यः; मीनः; झषः; ६५७

शल्की [न्] पुं. [शल्कमस्यास्तीति। शल्क+इनि] शल्कली; मत्स्यः; मीनः; झषः; वैसारिणः; विसारः; पृथुरोमाः; जलचरविशेषः; तिमिः; अनिमिषः। ६५७

शल्यम् क्ली.–पुं. [शलति चलतीति। शल्+'सानसिवर्णसिपर्णसीति' य] शलाका; आयुधं; शस्त्रविशेषः; शङ्कुः; दीर्घायुधं; शलः; कुन्तः; विषाङ्कुरः; क्ली. क्ष्वेडः; इषुः; 'शल्यप्रोतं प्रेक्ष्य सकुम्भं मुनिपुत्रं, तापादन्तःशल्य इवासीत् क्षितिपोऽपि'—इति रघौ (९।७५)। तोमरं; वंशकम्बिका; दुःसहं; दुर्वाक्यं; पापम्; अस्थि। पुं. [शल् गतौ+य] मदनवृक्षः; श्वावित्; 'वृका वराहा महिषर्क्षशल्या गोपुच्छशालावृकमर्कटाश्च'—इति भागवते (८।२।२२)। नृपभेदः; स तु युधिष्ठिरमातुलः। अयं हि दुर्योधनेन कापट्यात् वशीकृतः कुरुपाण्डवयुद्धे दुर्योधनपक्षं समाश्रयत्। 'मद्रराजं च राजानमायान्तं पाण्डवान् प्रति। उपहारैर्वञ्चयित्वा वर्त्मन्येव सुयोधनः। वरदं तं वरं वव्रे साहाय्यं क्रियतां मम। शल्यस्तस्मै प्रतिश्रुत्य जगामोद्दिश्य पाण्डवान्'—इति महाभारते (१।२।२१६)। ८३४

शल्लकः पुं. [शल्ल एव, स्वार्थे कन्] शल्लकीजन्तुः; श्वावित्; शलका; शल्यः; क्रकचपादः; छेदारः; शल्यकः; शल्यमृगः; वज्रशल्यः; बिलेशयः। 'भक्ष्याः पञ्चनखाः सर्वे गोधाकच्छपशल्लकाः। शशाश्च मत्स्येष्वपि हि सिंहतुण्डकरोहिताः'—इति याज्ञवल्क्यः (१।१७७)। शोणवृक्षः; क्ली. त्वक्। २३३

शल्लकी स्त्री.– पशुविशेषः; श्वावित्; शलका; शल्यः; क्रकचपादः; छेदारः; शल्यकः; शल्यमृगः; वज्रशल्य; बिलेशयः; वृक्षविशेषः; गजभक्ष्या; सुवहा; सुरभिः; रसा; महेरणा; कुन्दुरुकी; ह्लादिनी; गजभक्षा; सुरभी; महेरुणा; महारणा; सुरभीरसा; शिल्लकी; सिल्लकी; सिल्लभूमिका; अश्वसूत्री; कुन्ती; 'क्रोशमात्रं ततो गत्वा नीलं प्रेक्ष्य च काननम्। शल्लकीबदरीमिश्रं रान् वन्यैश्च यामुनैः। स पन्थाश्चित्रकूटस्य गतस्य बहुशो मया'—इति रामायणे (२।५५।९)। २३३

शवः पुं.– क्ली. [शवति दर्शनेन चित्तं विकरोतीति। शव् गतौ (विकारे)+अच्] मृतशरीरं; कुणपः; क्षितिवर्धनः; मृतकः; 'शवे स्पृष्टेऽपराधस्य एष ते कथितो विधिः'—इति वाराहे। क्ली. [शवति गच्छतीति, शव्+अच्] जलम्। ६२९

शशाङ्कः पुं. [शशोऽङ्कश्चिह्नं अङ्के क्रोडे वा यस्य] शशभृत्; शशधरः; इन्दुः; चन्द्रः; चन्द्रमाः; शशी; 'स जनैर्ददृशे तत्र शिखरे ज्वलितौषधौ। शशाङ्क इव पूर्वाद्रेरुदयस्थो विदूषकः'—इति कथासरित्सागरे (१८।३९५)। ४२

शशिशेखरः पुं. [शशी शेखरः शिरोभूषणं यस्य] शिवः; शङ्करः; महादेवः; उमापतिः; 'तस्याः स्तुतिवचो हृष्टस्तामङ्कमधिरोप्य सः। किं ते प्रियं करोमीति बभाषे शशिशेखरः'—इति कथासरित्सागरे (१।२२)। बुद्धभेदः; हेरम्बः; हेरुकः; चक्रसम्बरः; देवः; वज्रकपाली; निशुम्भी; वज्रटीकः। ११

शश्वत् अव्य. [शश्+बाहुलकात् वत्] पुनः पुनः; सततं; सन्ततम्; अनिशं; नित्यम्; अजस्रम्; अश्रान्तम्; अविरतम्; अनवरतम्; अनारतम्; असक्तम्; 'क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति'—इति भगवद्गीतायाम् (९।३१)। ६९८

शष्पम् क्ली. [शस्यते, शस् हिंसायाम्+'खष्पशिल्पशष्पवाष्परूपपर्पतल्पाः' इति निपात्यते] बालतृणम्; 'गङ्गाप्रपातान्तविरूढशष्पं गौरीगुरोर्गह्वरमाविवेश'—इति रघुवंशे (२।२६)। १९०

शस्त्रम् क्ली. [शस्यते हिंस्यते अनेन। शस् हिंसायाम्+'अमिचिमिदिशसिभ्यः क्त्रः' इति क्त्र। यद्वा 'दाम्नीशसयुयुजेति' ष्ट्रन्] लोहम्; (४६२) अस्त्रं; हेतिः; प्रहरणम्; आयुधम्; 'अस्त्रे शस्त्रं प्रहरणमुद्घातो हेतिरायुधः'—इति शब्दरत्नावली। पुं. खड्गः; 'रिष्टिः खड्गस्तरवारिः शस्त्रो भद्रात्मजश्च सः'—इति त्रिकाण्डशेषः। वैदिकस्तुतिवाक्यम्। १७१

शस्त्राजीवः त्रि. [शस्त्रेण आजीवतीति। शस्त्र+आ+जीव्+अच्] असिजीवी; काण्डपृष्ठः; आयुधीयः; आयुधिकः; काण्डस्पृष्टः; काण्डपृष्टः; शस्त्रधारणजीवकः;

शस्त्रोपजीवी । ४०५

शस्त्रिका स्त्री. [शस्+ष्ट्रन्+टाप्] छुरिकाः; असिपुत्रिका; असिधेनुः; शस्त्री । ४७३

शस्पम् क्ली.— बालतृणं; प्रतिभाहानिः । १९०

शाकम् क्ली.– पुं. [शक्यते भोक्तुमिति, शक्+घञ्] पत्रपुष्पादि; शिग्रुः; सिग्रुः; 'पत्रं पुष्पं फलं नालं कन्दं संस्वेदजं तथा । शाकं षड्विधमुद्दिष्टं गुरु विद्याद् यथोत्तरम् ।' 'प्रायः शाकानि सर्वाणि विष्टम्भीनि गुरूणि च । रूक्षाणि बहुवर्चांसि सृष्टविण्मारुतानि च ।' 'शाकं भिनत्ति वपुरस्थि निहन्ति नेत्रं, वर्णं विनाशयति रक्तमथापि शुक्रम् । प्रज्ञाक्षयं च कुरुते पलितं च नूनं, हन्ति स्मृतिं गतिमिति प्रवदन्ति तज्ज्ञाः । शाकेषु सर्वे निवसन्ति रोगाः सहेतवो देहविनाशनाय । तस्माद् बुधः शाकविवर्जनं च कुर्यात्तथाम्लेषु स एव दोषः'—इति भावप्रकाशः । 'सर्वशाकमचाक्षुष्यमलक्ष्म्यमैथुनम् । ऋते पटोलवास्तूककाकमाचीपुनर्नवाः'—इति राजवल्लभः । पुं. वृक्षविशेषः; शाकवृक्षः; शाकाख्यः; खरपत्रः; अर्जुनोपमः; क्रकचपत्रः; शरपत्रः; अतिपत्रः; अहिरुहः; श्रेष्ठकाष्ठः; स्थिरसारः; गृहद्रुमः; 'साखू' इति भाषा । शक्तिः; शिरीषवृक्षः; नृपभेदः; द्वीपविशेषः; कर्म; 'शचीवतस्ते पुरुशाक शाका गवामिव श्रुतयः सञ्चरणीः'—इति ऋग्वेदे (६।२४।४) । 'हे पुरुशाक बहुकर्मन्निन्द्रशचीवतः प्रज्ञावतस्ते त्वदीयाः शाकाः शक्तयः कर्माणि वा'—इति तद्भाष्ये सायणः । समर्थे त्रि. । 'सन्ता इन्द्रो असृजदस्य शाकैर्यदि सोमासः सुषुता अमन्दन्'—इति ऋग्वेदे (५।३०।१०) । 'शाकैः शक्तैर्मरुद्भिः सह' इति–तद्भाष्ये सायणः । १६०

शाकशाकटम् क्ली. [शाकानां भवनं क्षेत्रम् । शाक+'भवने क्षेत्रे शाकटशाकिनौ' इत्युक्त्या शाकट] शाकक्षेत्रं; शाकशाकिनम् । १६४

शाकशाकिनम् क्ली. [शाकानां भवनं क्षेत्रम् । शाक+शाकिन] शाकक्षेत्रं; शाकशाकटम् । १६४

शाक्करः पुं. [शक्कर एव, स्वार्थे अण् । यद्वा शङ्करं वहति इत्यर्थे अण्, पृषोदरादिः] अनड्वान्; वृषः; वृषभः । २६३

शाक्यः पुं. [शकोऽभिजनोऽस्येति । शक+'शण्डिकादिभ्यो ञ्यः'—इति ञ्य । यद्वा शाके शाकवृक्षच्छाये भवः स्थितः । दिगादित्वाद् यत्] बुद्धः; शाक्यमुनिः; खजित्; श्वेतकेतुः; धर्मकेतुः; महामुनिः; पञ्चज्ञानः; सर्वदर्शी; महाबोधिः; महाबलः; बहुसूक्ष्मः; त्रिमूर्तिः; सिद्धार्थः; शकः; शाक्यसिंहः; 'शाकवृक्षप्रतिच्छन्नं वासं यस्मात् प्रचक्रिरे । तस्मादिक्ष्वाकुवंश्यास्ते भुवि शाक्या इति श्रुताः'—इति भरतः । ८५

शाक्वरः पुं. [शाङ्कर+पृषोदरादित्वेन वर्णविकारः । शक्लकरि+इत्यस्य विकृतिर्वा] शाक्करः; उक्षा; अनड्वान्; बलीवर्दः; ककुद्मान्; वृषभः; वृषः; ऋषभः; सौरभेयः; वाडवेयः । २६३

शाखा स्त्री. [शाखति गगनं व्याप्नोतीति । शाख्+अच्+टाप्] वृक्षाङ्गविशेषः; लता; लङ्का; शिखा; 'डाल' इति भाषा । पक्षान्तरं; बाहुः; वेदभागः; 'यत्नेन भोजयेच्छ्राद्धे बह्वृचं वेदपारगम् । शाखान्तगमथवाध्वर्युं छन्दोगन्तु समाप्तिकम्'—इति मनुः (३। १४५) । ग्रन्थभेदः; अन्तिकः; प्रकारः; 'बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवशायिनाम्'—इति भगवद्गीतायाम् (२।४१) । ८०७

शाखानगरम् क्ली. [शाखेव नगरम्] मूलनगरादन्यत् पुरम्; अभिष्यन्दिरमणम्; उपनगरं; शाखापुरम्; 'आरम्य मूलनगरादपरं नगरं हि यत् । तदभिष्यन्दिरमणं शाखानगरमित्यपि'—इति शब्दरत्नावली । २८६

शाखामृगः पुं. [शाखाया मृगः] बलीमुखः; मर्कटः; मर्कटकः; वनौकाः; प्लवङ्गमः; प्लवगः; प्लवङ्गः; हरिः; कपिः; कीशः; वानरः । 'मुक्ताफलाय करिणं हरिणं पलाय सिंहं निहन्ति भुजविक्रमसूचनाय । का नीतिरीतिरियती रघुवंशवीर ! शाखामृगे जरति यस्तव बाणमोक्षः'—इत्युद्भटः । २३१

शाखास्थि क्ली. [शाखारूपम् अस्थि] नलकम्; उपास्थि । ६३४

शाखी [न्] पुं. [शाखास्त्यस्येति । शाखा+इनि] वृक्षः; द्रुमः; तरुः; पादपः; 'सीताया हृदि यच्छिरीषकुसुमप्राये पफालोच्चकैः, पौलस्त्यस्य नितान्तकुण्ठकुलिशे वज्राधिके वक्षसि । आपुङ्खं निममज्ज मन्मथशरस्तत्रैव जानीमहे, कः शाखी सखि ! यस्य पुष्पमभवत् पुष्पायुधस्यायुधम्'—इत्युद्भटः । वेदः; तुरुष्काख्यजनः; राजभेदः । १७७

शाड्वलः त्रि. [शाड+ड्वलच्] शाद्वलः; हरितः । १५९

शातः त्रि. [शो+क्त] दुर्बलः; क्षामः; कृशः; क्षीणः; पेलवः; तलिनः; निशितः; धुस्तूरः; क्ली. सुखं; तद्वति त्रि. । विनाशः; 'पाणिप्राप्तं पाणिदाहं नखशातं करोति च'—इति सुश्रुते (४।१) । ७१७

शातकुम्भम् क्ली. [शतकुम्भे पर्वते भवम् । शतकुम्भ+अण्] काञ्चनम्; 'द्रुतशातकुम्भनिभमंशुमतो वपुरर्द्धमग्नवपुषः पयसि'—इति माघे (९।९) । धुस्तूरः; पुं. करवीरवृक्षः । १७३

शातकौम्भम् क्ली. [अनुशतिकादेराकृतिगणत्वाद् उभयपदवृद्धिः] स्वर्णं; सुवर्णनिर्मिते त्रि. । 'शतं च शातकौम्भानां कुम्भानामग्निवर्चसाम्'—इति रामायणे (२।३।११) । १७३

शात्रवः पुं. [शत्रुरेव, स्वार्थे अण्] शत्रुः; 'तत्र नाभवदसौ महाहवे शात्रवादिव पराङ्मुखोऽर्थिनः'—इति माघे (१४।४४) । क्ली. [शत्रोर्भावः समूहो वा, शत्रु+अण्] शत्रुभावः; शत्रुसंहतिः; शत्रुसम्बन्धिनि त्रि. । 'ताम्बूलीनां दलैस्तत्र रचितापानभूमयः । नारिकेलासवं योधाः शात्रवं च यशः पपुर्यशः'-इति रघौ (४।४२) । ४५६

शाद्वलः त्रि. [शाद+'नडशादाद् ड्वलच्' इति ड्वलच्] नवतृणबहुलदेशः; [शादो नवतृणं विद्यतेऽत्र] हरितः; 'शाद्वलेषु यदा शिष्ये क्लान्ते वनगोचरा । कुथास्तरणयुक्तेषु किं स्यात्सुखतरं ततः'—इति रामायणे (२।३०।१४) । १५९

शादः पुं. [शो तनूकरणे+'शाशपिभ्यां ददनौ' इति द] कर्दमः; पिच्छिलः; विजपिलं; पङ्कः; निषद्वरः; जम्बालः; इचकिलः । (८००) शष्पं; शस्पं; बालतृणम् । ६७८

शान्तः पुं. [शम्+क्त, 'वा दान्तशान्तेति' निपातितः] रसभेदः; 'न यत्र दुःखं न सुखं न चिन्ता न द्वेषरागौ न च काचिदिच्छा । रसः स शान्तः कथितो मुनीन्द्रैः सर्वेषु भावेषु समप्रमाणः ।' अभियुक्तः; शान्तम्; अव्य. वारणं; त्रि. उपशमं प्रापितः; प्राप्तोपशमः; शमितः; श्रान्तः; जितेन्द्रियः; शमान्वितः । (३४४) तपस्वी; संयतः; मुनिः; लिङ्गी; यतिः; व्रती; श्रान्तः (३९९); सन्नः (७६७) । ९२

शापः पुं. [शपनमिति, शप्+घञ्] आक्रोशः; अकरणिः; अजीवनिः; अजननिः; अवग्रहः; निग्रहः; अभिसम्पातः; शपनं; शपथः । मिथ्यानिरसनम्; 'संमोचितः सत्त्ववता त्वयाहं शापाच्चिरप्रार्थितदर्शनेन'—इति रघौ (५।५६) । उपद्रवः; 'उवास रजनीं तत्र ताडकाया वने सुखम् । मुक्तशापं वनं तच्च तस्मिन्नेव तदाहनि । रमणीयं विबभ्राज यथा चैत्ररथं वनम्'—इति रामायणे (१।२६।३५) । 'मुक्तशापं अपगतोपद्रवम्' इति तट्टीका । जलम्; उदकम्; 'प्रतीपं शापं नद्यो वहन्ति'—इति ऋग्वेदे (१०।२८।४) । 'नद्यो गङ्गाद्याः सरितः प्रतीपं प्रतिकूलं शापम् उदकं वहन्ति' –इति तद्भाष्ये सायणः । १४९

शाम्बरी स्त्री. [शम्बरस्य दैत्यविशेषस्य इयं कृतिः । अण्, ङीप्] शम्बरदत्यनिर्मितमाया; इन्द्रजालादिमाया; कुसृतिः; निकृतिः; माया; पथकल्पना । ७४०

शारः त्रि. [शॄ+घञ्] कर्बुरवर्णः; करंवः; कवरः; सम्पृक्तः; खचितः; पुं. [शीर्यतेऽनेन शृणाति वा । शॄ+'शॄवायुवर्णनिवृत्तेषु' इत्युक्त्वा घञ्] वायुः; अक्षोपकरणं; हिंसनं; कर्बुरवर्णः; कुशे स्त्री. । ७४१

शारदः त्रि. [शरदि भवः । शरद्+'सन्धिवेलाद्यृतुनक्षत्रेभ्योऽण्' इति अण्] शालीनः; अधृष्टः; नूतनः; अप्रतिभः; शरज्जातः; 'वासन्तशारदैर्मेध्यैर्मुन्यन्नैः स्वयमाहृतैः'—इति मनुः (६।११) । पुं. कासः; वकुलः; हरिन्मुद्गः; वत्सरः; पीतमुद्गः; रोगः; क्ली. श्वेतकमलम्; 'शारदोत्पलपत्राक्ष्या शारदोत्पलगन्धया । शारदोत्पलसेविन्या रूपेण श्रीसमानया'—इति महाभारते (२।६१।३४) । सस्यम् । ३७५

शार्ङ्गम् क्ली. [शृङ्गस्य विकारः । शृङ्ग+'तस्य विकारः' इति अण्] विष्णुधनुः; विष्णुचापः; धनुर्मात्रम्; 'शार्ङ्गकूजितविज्ञेयप्रतियोधे रजस्यभूत्'—इति रघौ (४।६२) । आर्द्रकं; शृङ्गसम्बन्धिनि त्रि. । २६

शार्ङ्गी [न्] पुं. [शार्ङ्गमस्यास्तीति । शार्ङ्ग+इनि] विष्णुः; 'स सेतुं बन्धयामास प्लवगैर्लवणाम्भसि । रसातलादिवोन्मग्नं शेषं स्वप्नाय शार्ङ्गिणः'—इति रघौ (१२।७०) । धन्विमात्रं; शिवः; महादेवः; शङ्करः; शम्भुः । २१

शार्दूलः पुं. [शॄ हिंसायाम्+'स्वर्जिपिञ्जादिभ्य ऊरोलचौ'

इति ऊलच् प्रत्ययेन साधुः] व्याघ्रः; द्वीपी; पुण्डरीकः; तरक्षुः; चित्रकायः; मृगारिः; उत्तरपदे श्रेष्ठार्थवाचकः; राक्षसः; पशुभेदः; सरभः; शरभः; पक्षिविशेषः; चित्रकः। २२६

शालः पुं. [शल्यते प्रशस्यते इति, शल्+घञ्] वृक्षमात्रं; द्रुमः; तरुः; पादपः; अंह्रिपः; अङ्घ्रिपः; (२८८) प्राकारः; वप्रः। मत्स्यभेदः (६५९); (८१२) वृक्षविशेषः; सर्जः; कार्श्यः; अश्वकर्णकः; सस्यसम्बरः; शङ्कुवृक्षः; नदभेदः। शालनृपः; शालिवाहनराजः। ११७

शाला स्त्री. [शो+'बाहुलकात् श्यतेरपि कालन्' इति कालन्] वृक्षस्य स्कन्धशाखा; (२९१) गृहं; गेहम्; 'धूपामोदितशालायां जुष्टायां माल्यदीपकैः'—इति भागवते (८।९।१६)। गृहैकदेशः। १८२

शालाजिरः पुं – क्ली. [शालानां चतुर्दिग्गृहाणाम् अजिरमिव, वर्तुलविस्तृतसाधर्म्यात्] शरावः; सरावः; वर्धमानः। ३१५

शालावृकः पुं. [शालायां गृहे वृक इव] कुक्कुरः; कुकुर; कुकुरः; कौलेयकः; सारमेयः; भषणः; श्वा; शुनकः; मृगदंशः; वानरः; शृगालः; मृगः; विडालः। २८१

शालिः पुं. [शृणातीति, शृ+बाहुलकाद् इञ्, रस्य लत्वम्] षष्टिकादिधान्यं; मधुरः; रुच्यः; व्रीहिश्रेष्ठः; नृप प्रियः; धान्योत्तमः; कैदारः; सुकुमारकः; कलमादिधान्यम्; 'राजान्नषष्टिकसितेतररक्तमण्डस्थूलाणुगन्धतिरियादिकशालिसंज्ञाः। व्रीहिस्तथेति दशधा भुवि शालयः स्युः, तेषां क्रमेण गुणनामगणं ब्रवीमि'—इति राजनिर्घण्टः। गन्धमार्जारः; पक्षी। १६२, ५८८

शाली [न्] त्रि. [शालास्यास्तीति+इनि] श्रेयान्; श्लाघ्यः; 'दयालुः शालिनीमाह शुक्लाभिव्याहृतं स्मरन्' –इति भागवते (३।२४।१)। शालाविशिष्टः; पदान्ते युक्तवाचकः; 'चन्दनचर्चितनीलकलेवरपीतवसनवनमाली। केलिचलन्मणिकुण्डलमण्डितगण्डयुगस्मितशाली'—इति जयदेवः। शाली स्त्री.; कृष्णजीरकः। ३७५

शालीनः त्रि. [शालाप्रवेशनमर्हतीति। शाला+'शालीनकौपीने अधृष्टाकार्ययोः' इति खञ्] अधृष्टः; शारदः। ३७५

शालूकः पुं. [शल्यते शलति वा। शल् चलनसंवरणयोः+ 'शलिमण्डिभ्यामूकण्' इत्यूकण्, वृद्धिः] भेकः; क्ली. कुमुदादिमूलम्। ६८२

शालूरः पुं. [शलते प्लवते गच्छतीति। शल्+'खर्जिपिञ्जादिभ्य ऊरोलचौ' इति ऊर] भेकः; मण्डूकः; वर्षाभूः; दर्दुरः; हरिः; प्लवकः; प्लवङ्गमः; प्लवगः; शालुरः; शालूकः; सालूरः। ६६२

शालेयम् त्रि. [शालीनां क्षेत्रम्। शालि+'व्रीहिशाल्योर्ढक्' इति ढक्] शाल्युद्भवक्षेत्रं; व्रैहेयं; शालासम्बन्धि; शालसम्बन्धि; पुं. मधुरिका; स्त्री. [शालेय+टाप्] मिश्रेया। १६२

शावः पुं. [शव्यते प्राप्यते इति। शव् गतौ+घञ्] शिशुः; बालः; पाकः; अर्भकः; पोतः; पृथुकः; डिम्भः; शावकः; 'शिलाविभङ्गैर्मृगराजशावः तुङ्गं नगोत्सङ्गमिवारुरोह'—इति रघौ (६।३)। त्रि. [शवस्यायम्, शव+अण्] शवसम्बन्धिनि; 'ग्रहणे शावमाशौचं विमुक्तौ सौतिकं स्मृतम्। तयोः सम्पत्तिमात्रेण उपस्पृश्य क्रियाक्रमः'—इति ब्रह्माण्डपुराणे। ५०२

शाश्वतम् त्रि. [शश्वद्भवम्। शश्वत्+अण्] नित्यं; सनातनं; ध्रुवम्; अनश्वरम्; 'मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः। यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्'—इति रामायणे (१।२।१५)। 'शाश्वतं देवपूजादि विप्रदानं च शाश्वतम्। शाश्वतं सगुणा विद्या सुहृन्मित्रं च शाश्वतम्'—इति गारुडे। पुं. वेदव्यासः; शिवः; 'प्रवृत्तिश्च निवृत्तिश्च नियतः शाश्वतो ध्रुवः'– इति महाभारते (१३।१७।३२)। १२५

शास्त्रम् क्ली. [शिष्यते अनेन। शास्+'सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्' इति ष्ट्रन्] ग्रन्थः; 'पुराणं सर्वशास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणा स्मृतम्—' इति मात्स्ये ३ अध्याये। निदेशः। ८४४

शास्त्रवित् [द्] त्रि. [शास्त्रं वेत्तीति। विद्+'सत्सूद्विषेति' क्विप्] शास्त्रदर्शी; शास्त्रज्ञः; अन्तर्वाणिः; शास्त्री; शास्त्रचणः; शास्त्रचारणः। ३९९

शिक्यम् क्ली. [स्रंस्+'स्रंसेः शि कुट् किच्च' इति यत् स च कित्, कुडागमः शिरादेशश्च] द्रव्यरक्षार्थरज्जुमयाधारविशेषः; काचः; शिक्या; शिक्; 'छीका' इति भाषा। 'हस्ताग्राह्ये रचयति विधिं पीठकोलूखलाद्यैश्छिद्रं ह्यन्तर्निहितवयुनः शिक्यभाण्डेषु तद्वित्'—

इति भागवते (१०।८।३०)। ७५८

शिक्यितम् त्रि. [शिक्ये स्थापितमित्यर्थे प्रातिपदिकाद् धात्वर्थे णिच्, ततः क्त] शिक्यस्थापितवस्तु; काचितम्। ७६८

शिक्षितः त्रि. [शिक्ष्+क्त] चतुरः; क्षेत्रज्ञः; कृतहस्तः; कृतमुखः; कृतकर्मा; दक्षः; कुशलः; अभिज्ञः; निष्णातः; विज्ञः; प्रवीणः। (४७१) कृतपुङ्खः; शिक्षायुक्तः; 'आपरितोषाद्विदुषां न साधु मन्ये प्रयोगविज्ञानम्। बलवदपि शिक्षितानामात्मन्यप्रत्ययं चेतः'—इत्यभिज्ञानशकुन्तलायाम् १ अङ्कः। ३३५

शिक्षितायुधः त्रि. [शिक्षितानि अभ्यस्तानि आयुधानि येन] सहस्तः। ३७३

शिखण्डः पुं.—क्ली. [शिखामभति, शिखा+अम्+'अमन्ताड् डः; इति ड, शकन्ध्वादित्वात् पररूपम्] मयूरपुच्छः; प्रचलाकः; कलापः; बर्हः; 'शिखण्डोऽस्त्री पिच्छबर्हे शिखिपुच्छशिखण्डके'—इति शब्दरत्नावली। चूडा। २४२

शिखण्डकः पुं. [शिखण्ड इव+कन्] काकपक्षः; शिखाण्डकः; [शिरसि खण्डते शिखण्डकः पृषोदरादिः] 'तौ पितुर्नयनजेन वारिणा किञ्चिदुक्षितशिखण्डकावुभौ। धन्विनौ तमृषिमन्वगच्छतां पौरदृष्टिकृतमार्गतोरणौ'—इति रघौ (११।५)। मयूरपुच्छे क्ली.। ५३२

शिखण्डिका स्त्री.— काकपक्षः; शिखा; 'चूडा केशी केशपाशी शिखा शिखण्डिका समाः'—इति हेमचन्द्रः। ५३२

शिखण्डी [न्] पुं. [शिखण्डोऽस्त्यस्य, इनि] केकी; शिखी; प्रचलाकी; बर्हिणः; कलापी; सर्पाशनः; मयूरः; शिखावलः; श्यामकण्ठः; 'षड्जसंवादिनीः केका द्विधाभिन्नाः शिखण्डिभिः'—इति रघौ (१।३९)। कुक्कुटः; बाणः; मयूरपुच्छः; स्वर्णयूथिका; विष्णुः; 'शिखण्डी नहुषो वृषः'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्। गाङ्गेयारिः; द्रुपदराजपुत्रः; गुञ्जा; शिवः; 'जटी चर्मी शिखण्डी च सर्वाङ्गः सर्वभावनः'—इति महाभारते (१३।१७।३१) ।२४१

शिखरम् क्ली. [शिखास्यास्तीति। 'वुञ्छण्कठजिति' अश्मादित्वाद् र, ह्रस्वश्च] पर्वताग्रं; कूटं; शृङ्गं; शैलाग्रदेशकम्; 'विदारयन् गिरिशिखराणि पत्रिभिः'—इति महाभारते (१।१९।२८)। १६६

शिखरः पुं.—क्ली. [शिखास्त्यस्येति। शिखा + र, ह्रस्वश्च] वृक्षाग्रं; शिरः; अग्रं; शिरं; प्राग्रं; पर्वतशृङ्गं; पुलकः; कक्षः; पक्वदाडिमबीजाभमाणिक्यं; सकलाग्रं; कोटिः। १८१

शिखरी [न्] पुं. [शिखरोऽस्यास्तीति। शिखर+इनि पर्वतः; 'वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम्'—इति गीतायाम्। (१०।२३)। (१७७) वृक्षः; द्रुमः; पादपः; अंह्रिपः; अङ्घ्रिपः; तरुः। कोयष्टिः (२४९); अपामार्गः; कोट्टः; वन्दाकः; कर्कटशृङ्गी; कुन्दुरुकः; यावनालः; कोटिविशिष्टे त्रि.। 'दन्तैः शुक्लैः शिखरिभिः सिंहसंहननो महान्'—इति महाभारते (१।७४।४)। १६५

शिखा स्त्री. [शी+'शीङो ह्रस्वश्च' इति ख, ह्रस्वो गुणाभावश्च, स्त्रियां टाप्] अग्निज्वाला; ज्वालः; कीलः; अर्चिः; हेतिः; शिखा; 'विदिद्युते वाडवजातवेदसः शिखाभिराश्लिष्ट इवाम्भसां निधिः'—इति माघे (१।२०)। (५३२) शिरोमध्यस्थकेशः; चूडा; केशपाशी; जुटिका; जूटिका; केशी; शिखण्डिका। 'गायत्र्या तु शिखां बद्ध्वा नैरृत्यां ब्रह्मरन्ध्रतः। जुटिकां च ततो बद्ध्वा ततः कर्म समारभेत्।' (५६२) कुचमुखं; चूचुकं; वृन्तं; चूडामात्रं (७९९); (२४२) मयूरशिखा; शाखा; बर्हिचूडा; 'रन्ध्रागतमथाश्वानां शिखोद्भेदश्च बर्हिणाम्'—इति महाभारते (१३।२८२।५३)। लाङ्गलिकी; अग्रमात्रम्; 'सटाशिखोद्धूतशिवाम्बुबिन्दुभिः'—इति भागवते (३।१३।४४)। चूडामात्रं; प्रपदं; प्रधानं; शिफा; घृणिः; 'स्फुरद्रजःशिखाजालं धात्रा मोहतमोऽप्यहम्'—इति कथासरित्सागरे (२१।८५)। स्मरज्वरः। ६५

शिखावलः पुं. [शिखा विद्यतेऽस्य। शिखा+'दन्तशिखात् संज्ञायाम्' इति वलच्] मयूरः; केकी; शिखी; शिखण्डी; प्रचलाकी; बर्हिणः; कलापी; सर्पाशनः; श्यामकण्ठः; त्रि. शिखावलं नगरं, शिखावला स्थूणा; [शिखा+वलच्+टाप्] मयूरशिखा। २४१

शिखी [न्] पुं. [शिखास्यास्तीति, शिखा+'व्रीह्यादिभ्यश्च' इति इनि] केतुः; आर्द्रालुब्धकः; वह्निः

(६२); मयूरः (२४१); 'शिखिपत्रनिभः सलिलं न करोति द्वादशाब्दानि'–इति बृहत्संहितायाम् (३।२८)। ४९

शितिः त्रि. [शतिः सौत्रो धातुः+'क्रमितमिशतिस्तम्भामत इच्च' इति इन्, स च कित्, अत इकारश्च] असितः; कृष्णः; कालः; नीलः; मेचकः; श्यामलः; श्यामः; रामः; 'शितितारकानुमितताम्रनयनमरुणीकृतं क्रुधा'–इति माघे (१५।४८)। शुक्लः; भूर्जवृक्षे पुं.। 'शितिस्त्रिषु सिते कृष्णे भूर्जे सारेऽपि च द्वयोः—' इति शब्दरत्नवाली। ७३४

शिथिलः त्रि. [श्रथ्+'अजिरशिशिरशिथिलेति' किरच् प्रत्ययेन साधुः] श्लथः; 'शिथिलावयवो यर्हि गन्धर्वैर्हृतपौरुषः'—इति भागवते (४।२८।१५)। क्ली. मन्दबन्धनं; मन्थरत्वं; संयोगविशेषः; 'प्रचयः शिथिलाख्यो यः संयोगस्तेन जन्यते'—इति भाषापरिच्छेदः। ७७७

शिपविष्टः पुं.– शिपिविष्टः; शिवः; शम्भुः; शङ्करः; महादेवः; महेश्वरः। १३

शिपिविष्टः पुं. [शिपिषु रश्मिषु पशुषु वा विष्टः प्रविष्टः] महेश्वरः; शिवः; शिपविष्टः; (६०८) खलतिः; ऐन्द्रलुप्तिकः; (८१७) दुश्चर्मा; कुष्ठी; विष्णुः; 'नैकरूपी बृहद्रूपः शिपिविष्टः प्रकाशनः'—इति विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्। पशुप्रविष्ट त्रि.। 'पुरोडाशं निरवपन् शिपिविष्टाय विष्णवे'—इति भागवते (४।१३।३५)। १३

शिफः पुं. [शेते, शीङ्+बाहुलकात् फक्, ह्रस्वश्च] शिफा; जटा; मूलम्। १८३

शिफा स्त्री.— वृक्षाणां जटाकारमूलं; जटा; मूलं; नदी; 'हते ते स्यातां प्रवणे शिफायाः'—इति ऋग्वेदे (१।१०४।३)। 'शिफायाः शिफा नाम नदी तस्याः'—इति तद्भाष्ये सायणः। मांसिका; माता; शतपुष्पा; हरिद्रा; पद्मकन्दः। लता; 'शिफाविदलरज्ज्वादेविदध्यान्नृपतिर्दमम्'—इति मनुः (९।२३०)। १८३

शिम्बा स्त्री. [शिनोति, शिञ् निशाने, 'उल्बादयश्च' इति साधुः, टाप्] शिम्बिः; शिम्बिका; बीजकोशी; फली; कलायादित्वक्; समी, सिम्बा; सिम्बी; शिम्बी; शमी; सिम्बिका; शमिः। १८९

शिम्बिः स्त्री.— शिम्बा; एरका। १८९

शिरः [स्] क्ली. [श्रि+'श्रयतेः स्वाङ्गे शिरः किच्च' इत्यसुन्, स च कित्, धातोः शिरादेशश्च] शिखरम्; 'यथा वज्रेण वै दीर्णं पर्वतस्य महच्छिरः'—इति महाभारते (४।२३।२)। (५१८) मस्तकम्; 'शिरः सपुष्पं चरणौ सुपूजितौ'—इति लक्ष्मीचरित्रे। मस्तकरोगनाशकौषधम्; 'शिरोरोगहरं लेपात् गुञ्जामूलं सकाञ्जिकम्'–इति गारुडे। प्रधानम्; 'योगाय सांख्यशिरसे प्रकृतीश्वराय'—इति भागवते (५।१४।४५)। सेनाग्रम्। १८१

शिरसिजः पुं. [शिरसि जातः इति। जन्+ड] केशः; बालः; शिरसिरुहः; शिरजः; शिरोरुहः; शिरोरुट् (ह्); 'श्लथशिरसिजपाशपातभारादिव नितरां नतिमद्भिरंसभागैः'—इति माघे (७।६२)। ५३०

शिरा स्त्री. [शिञ् निशाने, 'बहुलमन्यत्रापि' इति रक्, टाप्] नाडी; धमनिः; स्नसा; स्नायुः। ६३४

शिरोगृहम् क्ली. [शिरसो गृहम्] अट्टालिकोपरिगृहं; चन्द्रशाला। ३०४

शिरोधरम् क्ली.— ग्रीवा; 'दीक्षानुजन्मोपसदः शिरोधरम्'—इति भागवते (३।१३।३७)। ५१६

शिरोधरा स्त्री. [शिरसो धरा] ग्रीवा; धमनिः; मन्या; शिरोधिः; कन्धरा; 'सङ्गीतवद्रोदनवदुन्नमय्य शिरोधराम्। व्यमुञ्चन् विविधा वाचो ग्रामसिंहास्ततस्ततः'–इति भागवते (३।१७।१०)। ५१६

शिरोरुहः पुं. [शिरसि रोहतीति। रुह्+क] केशः; बालः; 'चीरवासा व्रतक्षामा वेणीभूतशिरोरुहा'—इति भागवते (४।२८।४४)। ५३०

शिला स्त्री. [शिलति, शिल् उञ्छे, इगुपधत्वात्क, टाप्] उपला; पाषाणः; 'गोऽश्वोष्ट्रयानप्रासादस्रस्तरेषु कटेषु च। आसीत गुरुणा सार्द्धं शिलाफलकनौषु च'—इति मनुः (२।२०४)। द्वाराधःस्थितदारु; स्तम्भशीर्षं; मनःशिला; कर्पूरः। १६८

शिलीन्ध्रम् क्ली. [शिलीं धरति। धृ+क, पृषोदरादित्वान् नुम्] छत्रकः; शिलीन्ध्रकं; गोमयछत्रिका; पुं. वृक्षविशेषः। क्ली. कदलीपुष्पम्; 'नवकदम्बरजोरुणिताम्बरैरधिपुरन्ध्रिशिलीन्ध्रसुगन्धिभिः'—इति माघे (६।३२)। करका; त्रिपुटा; पु. मत्स्यविशेषः; चित्रफलकमत्स्यः। ८३१

शिलीमुखः पुं. [शिलीव मुखं यस्य] भ्रमरः; मधुकरः; मधुपः; द्विरेफः; 'कटेषु करिणां पेतुः पुन्नागेभ्यः शिलीमुखाः'—इति रघौ (४।५७)। बाणः (४६६); 'कस्यायं शायको दीर्घः शिलीपृष्ठः शिलीमुखः'—इति महाभारते (४।४०।११)। जडीभूतः; युद्धम्। २५५

शिलोच्चयः पुं. [शिलाया उच्चयो यत्र] पर्वतः; शैलः; गिरिः; 'न पादपोन्मूलनशक्तिरंहः शिलोच्चये मूर्च्छति मारुतस्य'—इति रघौ (२।२७)। १६५

शिल्पशाला स्त्री.— क्ली. [शिल्पानां शाला] आवेशनं; शिल्पिशाला; शिल्पशालम्। २९६

शिल्पिशाला स्त्री.—क्ली. [शिल्पिनां शाला] शिल्पशाला; स्वर्णकारादीनां कर्मगृहम्; आवेशनं; शिल्पशालं; शिल्पिशालं; 'कारखाना' इति भाषा। २९६

शिल्पी [न्] त्रि. [शिल्पं क्रियाकौशलमस्यास्तीति, इनि] शिल्पकर्ता; कारुः; शिल्पकारः; शिल्पविद्याव्यवसायी; शिल्पकारी। ५९३

शिवः पुं. [शी+'सर्वनिघृष्वेति' वन् प्रत्ययेन निपातनात् साधुः। शिवं कल्याणं विद्यतेऽस्य, श्यति अशुभमिति वा। शेरतेऽवतिष्ठन्ते अणिमादयोऽष्टौ सिद्धयः अस्मिन् इति वा] शम्भुः; ईशः; पशुपतिः; शूली; महेश्वरः; ईश्वरः; शर्वः; ईशानः; शङ्करः; चन्द्रशेखरः; भूतेशः; खण्डपरशुः; गिरीशः; गिरिशः; मृडः; मृत्युञ्जयः; कृत्तिवासाः; पिनाकी; प्रमथाधिपः; उग्रः; कपर्दी; श्रीकण्ठः; शितिकण्ठः; कपालभृत्; वामदेवः; महादेवः; विरूपाक्षः; त्रिलोचनः; कृशानुरेताः; सर्वज्ञः; धूर्जटिः; नीललोहितः; हरः; स्मरहरः; भर्गः; त्र्यम्बकः; त्रिपुरान्तकः; गङ्गाधरः; अन्धकरिपुः; क्रतुध्वंसी; वृषध्वजः; व्योमकेशः; भवः; भीमः; स्थाणुः; रुद्रः; उमापतिः; वृषपर्वा; रेरिहाणः; भगाली; पांशुचन्दनः; दिगम्बरः; अट्टहासः; कालञ्जरः; पुरद्विट्; वृषाकपिः; महाकालः; वराकः; नन्दिवर्द्धनः। मोक्षः; कीलग्रहः; वालुकं; गुग्गुलः; वेदः; पुण्डरीकद्रुमः; कृष्णधुस्तूरः; पारदः; देवः; लिङ्गः; विष्कुम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतविंशतितमयोगः; महेशभक्तः श्रुतिपारदृश्वा जितेन्द्रियश्चारुतनुर्महात्मा । शिवाभिधानः खलु योगराजः प्रसूतिकाले यदि मानवानाम्'—इति कोष्ठीप्रदीपः। क्ली. मङ्गलम् (११२); 'उपपन्नं ननु शिवं सप्तस्वङ्गेषु यस्य मे। दैवीनां मानुषीणां च प्रतिहर्ता त्वमापदाम्।' सुखं; जलं; सैन्धवं; समुद्रलवणं; श्वेतटङ्कणं; मङ्गलवति त्रि.। 'तत्र रम्ये शिवे देशे कौरवस्य निवेशनम्'--इति महाभारते (१।२०८।३६)। ११

शिवकः पुं. [संज्ञायां कन्] कीलकः; ध्रुवकः; शङ्कुः; पुष्पलकः। ४५१

शिवकरः त्रि. [शिवस्य करः] मङ्गलकारकः; कल्याणकारी; पुं. चतुर्विंशतिभूतार्हदन्तर्गतजिनविशेषः। ३४०

शिवङ्करः त्रि. [शिवं करोतीति। 'क्षेमप्रियमद्रेऽण् च' इति बाहुलकात् खच्, मुम्] मङ्गलकर्ता; क्षेमङ्करः; अरिष्टतातिः; शिवतातिः; कल्याणकारी। पुं. बालग्रहविशेषः; 'संघट्टनः संकुचनः काष्ठभूतः शिवङ्करः'—इति हरिवंशे (१६६।७५)। ३४०

शिवतातिः स्त्री. ['शिवशमरिष्टस्य करे' इति तातिल्] कल्याणकारिणी; [भावेऽपि तातिल्विधानात्] शिवत्वम्। ३४०

शिवा स्त्री. [शिव+टाप्] दुर्गा; उमा; भगवती; चण्डी; भवानी; शर्वाणी। (२२७) गोमायुः; भूरिमायः; शृगालः; जम्बूकः; फेरण्डः; फेरवः; फेरुः; क्रोष्टा; मृगधूर्तकः। (६१८) धात्री; आमलकी; मुक्तिः; 'शिवा मुक्तिः समाख्याता योगिनां मोक्षगामिनी। शिवाय यां जयेद्देवीं शिवा लोके ततः स्मृता'—इति देवीपुराणे। 'शिवा कल्याणरूपा च शिवदा च शिवप्रिया। प्रिये दातरि वा शब्दः शिवा तेन प्रकीर्त्तिता'—इति ब्रह्मवैवर्त्ते। शमीवृक्षः; हरीतकी; तामलकी; बुद्धशक्तिविशेषः; द्वाविंशजिनमाता; हरिद्रा; दूर्वा; गोरोचना। १६

शिबिका स्त्री. [शिवं सुखं करोतीति। शिव+णिच्+ण्वुल्+टाप्] यानविशेषः; याप्ययानं; शिबीरथः; 'डोली, पालकी' इति भाषा। ४५०

शिविपिष्टः पुं. — महादेवः; शिपिविष्टः; शिपविष्टः; शिवः। १३

शिबिरम् क्ली. [शेरते राजबलान्यत्र। शी स्वप्ने+बाहुलकात् किरच्] निवेशः; 'शिबिरं तु निवेशे च क्लीबं तु युद्धवेश्मनि'—इत्युणादिकोषः। आगन्तुकसैन्यवासः; कटकः; नृपस्य मूलस्थानम्। ४५२

शिशिरः त्रि. [शश् प्लुतगतौ+किरच् प्रत्ययेन साधुः]

शीतगुणयुक्तः; 'शीतं गुणे तद्वदर्थाः सुषीमः शिशिरो जडः। तुषारः शीतलः शीतो हिमः सप्तान्यलिङ्गकाः'—इत्यमरः। 'आनन्दजः शोकजमश्रु बाष्पस्तयोरशीतं शिशिरो बिभेद'—इति रघौ (१४।३)। पुं.–क्ली. ऋतु-विशेषः; माघफाल्गुनमासद्वयात्मकः; कम्पनः; शीतः; हिमकूटः; कोटनः; कोडवः। 'मिष्टान्नभोजी मधुर-प्रणादी कलत्रवित्तादियुतः क्षुधार्तः। क्रोधी सुधीश्चारु-कलेवरश्च यस्य प्रसूतिः शिशिराभिधाने'—इति कोष्ठीप्रदीपः। पुं. हिमः; विष्णुः; 'शब्दातिगः शब्दसहः शिशिरः शर्वरीकरः'—इति महाभारते (१३।१४९।११०)। ६५०

शिशुः पुं. [श्यतीति, शो+'शः कित् सन्वच्च' इति उ] बालकः; पोतः; पाकः; अर्भकः; डिम्भः; पृथुकः; शावकः; शावः; अर्भः; शिशुकः; पोतकः; भिष्टकः; गर्भः; 'चतुर्थाद्वत्सराद्ध्र्वं यावदष्टौ समा वयः। शिशोर्व्रतं प्रकुर्वन्ति गुरुसम्बन्धिबान्धवाः'—इति ब्रह्मपुराणवचनम्। ५०२

शिश्नः पुं.–क्ली. [शशतीति, शश्+बाहुलकात् नक्, पृषोदरादिः] शेफः; स्मरस्तम्भः; शिश्नं; उपस्थः; मदनाङ्कुशः; कन्दर्पमुषलः; मेहनं; शेफः [स्]; मेढ्ः; लाङ्गुः; ध्वजः; रागलता; व्यङ्गः; लाङ्गूलं; साधनं; सेफः; कामाङ्कुशः; लिङ्गम्। ५१४

शिश्विदानः त्रि. [श्वेतितुमिच्छतीति। श्वित्+सन्+'श्वितेर्दश्च' इति आनच्, सनो लुक्, तकारस्य दकारः] पापकर्मा; कृष्णकर्मा; दुराचारी; 'खाङ्गिक! छिद्यतां छिद्यताम् एष क्षुद्रः शिश्विदानः'—इति प्रद्युम्नविजये ७ अङ्के। अकृष्णकर्मा; शुक्लकर्मा; 'शिश्विदानः कृष्णकर्मा शुक्लकर्मेति कस्यचित्'—इति जटाधरः। ४४०

शिष्यः त्रि. [शिष्यतेऽसाविति। शास्+'एतिस्तुशास्वृदृजुषः क्यप्' इति क्यप्, 'शास इदङ्हलोः'—इति इः, 'शासिवसीति' ष] उपदेश्यः; छात्रः; अन्तेवासी; अन्तेसत्; अन्तेषदः; 'छात्रान्तेवासिशिष्यान्तेषद एकार्थका इमे'—इति जटाधरः। 'वाङ्मनः कायवसुभिर्गुरुशुश्रूषणे रतः। एतादृशगुणोपेतः शिष्यो भवति नारद। देवताचार्य-शुश्रूषुर्मनोवाक्कायकर्मभिः। शुद्धभावो महोत्साहो बोद्धा शिष्य इति स्मृतः'—इति दीक्षातत्त्वम्। ४००

शीघ्रवेधी [न्] पुं. [शीघ्रं विध्यतीति, शीघ्र+व्यध् ताडने+णिनि, 'ग्रहिज्या' इति सम्प्रसारणम्] क्षिप्रशर-वेधकर्ता; लघुहस्तः। ४७१

शीतः पुं. [श्यै+क्त] वेतसवृक्षः; बहुवारकवृक्षः; अशन-पर्णी; पर्पटः; निम्बः; कर्पूरः; हिमऋतुः; त्रि. शीतलः; 'शीतस्तत्र सुखी वायुः सुगन्धो जीवनः शुचिः। सर्वरत्नविचित्रा च भूमिः पुष्पविभूषिता'—इति महा-भारते (३।१६८।५०) अलसः; क्वथितः। २०१

शीतकः पुं. [शीत+स्वार्थे कन्] सुस्थितः; दीर्घसूत्री; शीतकालः; अशनपर्णी; वृश्चिकः; देशविशेषः; 'माणहल-हूणकोहलशीतकमाण्डव्यभूतपुराः'—इति बृहत्संहिता-याम्। ३८७

शीतांशुः पुं. [शीताः अंशवः यस्य] शीतरश्मिः; शीत-मरीचिः; इन्दुः; शीतमयूखः; शीतभानुः; शीतकिरणः; शीतकरः; चन्द्रः; चन्द्रमाः। ८५६

शीधुः पुं.– क्ली. [शेतेऽनेनेति। शी+'शीङो धुग्लग्वलञ्-वालनः' इति धुक्] पक्वेक्षुरसकृतमद्यम्। ३२९

शीनम् त्रि. [श्यै गतौ+क्त, 'द्रवमूर्तिस्पर्शयोः श्यः' इति सम्प्रसारणम्, 'श्योऽस्पर्शे' इति न] घनीभूतघृतादि; पुं मूर्खः; अजगरः। २७६

शीर्षम् क्ली. ['कुमारशीर्षयोः' इति ज्ञापकात् शिरः-शब्दस्य शीर्षादेशः] मस्तकम्; 'शीर्षाणां वै सहस्रं तु विहितं शार्ङ्गधन्वना। सहस्रं चैव कायानां वहन् सङ्कर्षणस्तदा'—इति हरिवंशे (१७८।६)। कृष्णा-गरुः। ५१८

शीलम् क्ली. [शीलयतीति। शील समाधाने, ण्यन्ता-दच्। यद्वा शीङ् स्वप्ने, 'शीङो धुग्लग्वलञ्वालनः' इति लक्, अर्द्धर्चादित्वात् पुंल्लिङ्गमपि] चरित्रं; चरितं; चारित्रं; चारित्र्यं; स्वभावः; सद्वृत्तम्। 'साध्वीनान्तु स्थितानान्तु शीले सत्ये श्रुते स्थिते। स्त्रीणां पवित्रं परमं पतिरेको विशिष्यते'—इति रामायणे (२।३९।२४)। ब्रह्मण्यतादित्रयोदशविधधर्ममूलं; राग-द्वेषवर्जनम्; 'वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम्। आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव'—इति मानवे २ः अध्यायः। शीलं ब्रह्मण्यतादिरूपम्; रागद्वेषपरित्यागः; पुं. [शीलमस्यास्ति, अच्] अजगरसर्पः; ३९६

शुकः पुं. [शुभ् दीप्तौ+'शुकवल्कोल्काः' इति निपातनात्

क प्रत्ययेन साधुः] पक्षिविशेषः; कीरः; वक्रतुण्डः; मेधावी; दाडिमप्रियः; रक्ततुण्डः; वक्रचञ्चुः; चिमिः; चिमिकः; शूकः; प्रियदर्शनः; मञ्जुपाठकः। 'वामः पठन् राजशुकः प्रयाणे शुभं भवेद्दक्षिणतः प्रवेशे। वनेचराः काष्ठशुकाः प्रयातुः स्युः सिद्धिदाः संमुखमापतन्तः'—इति वसन्तराजशाकुने ८ वर्गः। व्यासपुत्रः; 'पराशरकुलोत्पन्नः शुको नाम महायशाः। व्यासादरण्यां सम्भूतो विधूमोऽग्निरिव ज्वलन्। स तस्यां पितृकन्यायां पीवर्यां जनयिष्यति। कृष्णं गौरं प्रभुं शम्भुं तथा भूरिश्रुतं जयम्। कन्यां कीर्तिमतीं षष्ठीं योगिनीं योगमातरम्। ब्रह्मदत्तस्य जननीं गृहिणीमनुहस्य च'—इति विष्णुपुराणे (४।१९)। रावणमन्त्री, शिरीषवृक्षः; वृक्षविशेषः। २४८

शुक्तम् क्ली. [शोकति याति मनः यस्मिन्। शुक्+क्त] द्रवद्रव्यविशेषः; धान्याम्लः; आरनालः; सन्धानम्; काञ्जिकं; सौवीरं; अभिषवः; अवन्तिसोमं; तुषोदकम्; 'कन्दमूलफलादीनि सस्नेहलवणानि च। यत्र द्रव्येऽभिषूयन्ते तच्छुक्तमभिधीयते।' त्रि. निष्ठुरं; पूतम्; अम्लं; श्लिष्टं; निर्जनं; स्त्री. [शुक्त+टाप्] चुक्रिका। ३१८

शुक्तिः स्त्री. [शुच्+क्तिन्] जलजन्तुविशेषः; मुक्तास्फोटः; शुक्तिका; मुक्तिप्रसूः; महाशुक्तिः; तौतिकः; मौक्तिकप्रसवा; मौक्तिकशुक्तिः; मुक्तामाता; कपालखण्डं; शङ्खः; शङ्खनखः; नखी; अश्वावर्तः; अर्शोरोगः; चक्षूरोगविशेषः; कर्षद्वयपरिमाणं; चतुस्तोलकपरिमाणम्; अष्टमिका। ६६४

शुक्रः पुं. [शोचन्त्यस्मिन्+शुच् शोके, 'ऋज्रेन्द्रेति' रक् कत्वं च] ग्रहविशषः; दैत्यगुरुः; काव्यः; उशनाः; भार्गवः; कविः; सितः; आस्फुजित्; शतपर्वेशः; भृगुसुतः; भृगुः; षोडशार्चिः; मघाभूः; श्वेतः; श्वेतरथः; षोडशांशुः; वारविशेषः; अग्निः; चित्रकवृक्षः; ज्येष्ठमासः; विष्कुम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतचतुर्विंशयोगः; 'हास्यो विवादे विजयी सभायां सद्गन्धमाल्याम्बररत्नयुक्तः। जितेन्द्रियः स्यान्मनुजो महौजाः शुक्राभिधाने जननं हि यस्य'—इति कोष्ठीप्रदीपः। ४८

शुक्रम् क्ली. [शुच् शोके, शोचयत्यनेन+'ऋज्रेन्द्राग्रवज्रेति' रन् प्रत्ययेन साधु] मज्जजातधातुः; पुंस्त्वं; रेतः; बीजं; वीर्यं; पौरुषं; तेजः; इन्द्रियम्; अन्नविकारः; मज्जारसः; रोहणं; बलम्; 'रसाद्रक्तं ततो मांसं मांसान्मेदः प्रजायते। मेदसोऽस्थि ततो मज्जा मज्जात् शुक्रस्य सम्भवः।' 'शुक्रं शोष्यं सितं स्निग्धं बलपुष्टिकरं स्मृतम्। गर्भबीजं वपुःसारो जीवस्याश्रय उत्तमः'—इति भावप्रकाशः। नेत्ररोगविशेषः; शुक्लं; चक्षुःशुक्लभागजरोगः। ६३८

शुक्रशिष्यः पुं. [शुक्रस्य शिष्यः] असुरः; दानवः; दैत्यः; दैतेयः; सुरशत्रुः; पूर्वदेवः; पातालनिलयः। बहुत्वे प्रयुज्यते। ५

शुक्लः पुं. [शुच्+रन्। रस्य लः] वर्णविशेषः; शुभ्रः; शुचिः; श्वेतः; विशदः; श्येतः; पाण्डुरः; अवदातः; सितः; गौरः; वलक्षः; धवलः; अर्जुनः; श्वेता; श्येता; श्येनी; विषदः; सिता; अवलक्षः; शितिः; पाण्डुः; रामः; खरुः; शक्रयोगः; श्वेतैरण्डः; शुक्लपक्षः; शुक्लकः; 'तत्र पक्षावुभौ मासे शुक्लकृष्णौ क्रमेण हि। चन्द्रवृद्धिकरः शुक्लः कृष्णश्चन्द्रक्षयात्मकः'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। शुक्लगुणयुक्ते त्रि.। क्ली. रजतं; नवनीतम्; अक्षिरोगविशेषः; शुक्रं; चक्षुःशुक्लभागजरोगः; 'प्रस्तारिशुक्लक्षतजाधिमांससाग्वर्मसंज्ञाः खलु पञ्च रोगाः।' 'सुश्वेतं मृदुशुक्लाभं शुक्लं तद्वर्द्धते चिरात्'—इति वैद्यके। ८०८

शुचिः पुं. [शुचिं करोतीति णिचि+'इगुपधात् कित्' इति इन्, स च कित्] अग्निः; वह्निः; अनलः; पावकः; 'पावकः पवमानश्च शुचिरित्यग्नयः पुरा। वशिष्ठशापादुत्पन्नाः पुनर्योगगतिं गताः'—इति भागवते (४।२४।४)। चित्रकवृक्षः; आषाढमासः; शुक्लवर्णः; शृङ्गाररसः; ग्रीष्मः; शुद्धमन्त्री; ज्येष्ठमासः; सौराग्निः। 'पावकः पवमानश्च शुचिरग्निश्च ते त्रयः। निर्मथ्यः पवमानः स्याद् वैद्युतः पावकः स्मृतः। यश्चासौ तपते सूर्यः शुचिरग्निस्त्वसौ स्मृतः। तेषां तु सन्ततावन्ये चत्वारिंशत्तु पञ्च च। पावकः पवमानश्च शुचिस्तेषां पिता च यः। एते चैकोनपञ्चाशद्वह्नयः परिकीर्तिताः'—इति कौर्मे। कार्तिकेयः; चन्द्रः; शुक्रः; ब्राह्मणः; सूर्यः; 'तपनस्तापनश्चैव शुचिः सप्ताश्ववाहनः'—इति साम्बपुराणे। अन्धकस्य पुत्रविशेषः; 'कुकुरो भजमानश्च शुचिः कम्बलबर्हिषः'—इति भागवते (९।२४।१९)। स्त्री.

[शुच्+इन्] कश्यपपत्न्यास्ताम्राया: सुता; 'षट् सुताश्च महासत्त्वास्ता म्राया: परिकीर्तिताः। शुकी श्येनी च भाषा च सुग्रीवी शुचिगृध्रिके'—इति गारुडे ६ अध्यायः। ६२

शुचिः त्रि. [शुच्+इन्] शुक्लगुणविशिष्टः; शुद्धः; 'क्रीडावसाने ते सर्वे शुचिवस्त्राः स्वलङ्कृताः'—इति महाभारते (१।१२०।४९)। अनुपहतः; परस्वर्णस्पर्शे हस्तप्रक्षालनाद् यथा भवति सः; 'दैवात् परस्त्रियं दृष्ट्वा विरमेद् यो हरिं स्मरन्। स्पृष्ट्वा परसुवर्णं च हस्तप्रक्षालनात् शुचिः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। निरपराधी; 'अहो धिक् धृतराष्ट्रस्य बुद्धिर्नास्ति समञ्जसी। यः शुचीन् पाण्डुदायादान् दाहयामास शत्रुवत्'—इति महाभारते (१।१४९।१४)। शुद्धान्तःकरणः; 'वृद्धांश्च नित्यं सेवेत विप्रान् वेदविदो शुचीन्। वृद्धसेवी हि सततं रक्षोभिरपि पूज्यते'—इति मनुः (७।३८)। ८०८

शुण्ठिः स्त्री. [शुठि शोषणे+इन्] शुण्ठी; 'तस्मिन् गतार्द्रभावे वीतरसे शुण्ठिशकल इव परुषे। अपि भूतिभाजि मलिने नागरशब्दो विडम्बाय'— इति आर्यासप्तशत्याम् (२७१)। ६१५

शुण्ठी स्त्री. [शुण्ठि+वा ङीष्] शुष्कार्द्रकं; महौषधं; विश्वं; नागरं; विश्वभेषजं; शुण्ठिः; विश्वा; महौषधी; इन्द्रभेषजं; भेषजं; विश्वौषधं; कटुग्रन्थिः; कटुभद्रं; कटूष्णं; सौपर्णं; शृङ्गवेरं; कफारिः; चान्द्रकं; शोषणं; नागराह्वं; 'सोंठ' इति भाषा। 'शुण्ठी रुच्यामवातघ्नी पाचनी कटुका लघुः। स्निग्धोष्णा मधुरा पाके कफवातविबन्धनुत्। वृष्या स्वर्या च निःश्वासशूलकासहृदामयान्। हन्ति श्लीपद शोथार्श-आनाहोदरमारुतान्। आग्नेयगुणभूयिष्ठा तोयांशं परिशोषयेत्। संगृह्णन्ति मलं तत्तु ग्राहि शुण्ठ्यादयो यथा। विबन्धभेदिनी या तु सा कथं ग्राहिणी भवेत्। शक्तिर्विबन्धभेदे स्याद्यतो न मलपातने'—इति भावप्रकाशः। 'शुण्ठी तु कफवातघ्नी सस्नेहा लघुदीपनी। विपाके मधुरा वृष्या हृद्योष्णा कटुरोचनी'—इति राजवल्लभः। ६१५

शुण्ठ्यम् क्ली.— शुण्ठी। ६१५

शुण्डा स्त्री. [शुन् गतौ+नमन्ताड्ड+टाप्] सुरा; शीधुः; मद्यपानगृहम्; अम्बुहस्तिनी; वेश्या। (८०६) हस्तिहस्तः; कुञ्जरकरः; 'सूंड' इति भाषा। नलिनी; कुट्टनी; कुट्टिनी। ३२९

शुद्धान्तः पुं. [शुद्धः अन्तो यस्य। शुद्धा रक्षकाः अन्ते यस्य इति वा] राजयोषित्; 'शुद्धान्तसंभोगनितान्ततुष्टे, न नैषधे कार्यमिदं निगाद्यम्। अपां हि तृप्ताय न वारिधारा स्वादुः सुगन्धिः स्वदते तुषारा'—इति नैषधे (३।९३)। अन्तःपुरम् (४८०); 'विधिप्रयुक्तसत्कारैः स्वयं मार्गस्य दर्शकः। स तैराक्रमयामास शुद्धान्तं शुद्धकर्म्मणि'—इति कुमारे (६।५२)। अशौचान्तः। ३१३

शुनकः पुं. [शुनति इतस्ततो गच्छतीति। शुन् गतौ+ 'क्वुन् शिल्पिसंज्ञयोरपूर्वस्यापि' इति क्वुन्] कुक्कुरः; कुकुरः; 'भिन्नभाण्डं च खट्वां च कुक्कुटं शुनकं तथा। अप्रशस्तानि सर्वाणि यश्च वृक्षो गृहेरुहः'—इति महाभारते (१३।१२७।१६)। ऋषिविशेषः; 'असितो देवलः सत्यः सर्पमाली महाशिराः। अर्कावसुः सुमित्रश्च मैत्रेयः शुनको बलिः'—इति महाभारते (२।४।१०)। २८१

शुनकी स्त्री. [शुनक+ङीष्] सरमा; शुनी; कुक्कुरी। २८२

शुभम् क्ली. [शोभते इति, शुभ दीप्तौ+क] मङ्गलम्; 'अहो मूर्खोऽयमशुभं शुभमित्यभिनन्दति'—इति कथासरित्सागरे (१२४।११२)। पद्मकाष्ठम्; उदकम्। पुं. विष्कुम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतत्रयोविंशयोगः; 'शुभप्रसूतः शुभकृन्नराणां शुभोदयेष्टो विदुषां समाजे। करोति नित्यं शुभकर्म धीमान् शोभाधिकः शोभनवेशधारी'—इति कोष्ठीप्रदीपे। १२२

शुभः त्रि. [शुभमस्यास्तीति। अर्श आद्यच्] क्षेमशाली; श्वःश्रेयसं; कल्याणं; श्वोवसीयं; शिवं; भद्रं; भविकं; भावुकं; श्रेयं; भव्यं; मङ्गलं; (६८९) मनोहरं; सुन्दरं; खसञ्चारिपुरम्। १२२

शुभंयुः त्रि. [शुभमस्यास्तीति। शुभम्+'अहंशुभमोर्युस्' इति युस्] शुभसंयुतः; मङ्गलान्वितः; मङ्गलयुक्तः; शुभान्वितः; 'अधिकं शुशुभे शुभंयुना द्वितयेन द्वयमेव सङ्गतम्'—इति रघौ (८।६)। ३७८

शुभ्रः त्रि. [शुभ्+रक्] शुक्लगुणयुक्तः; गौरः; श्वेतः; सितः; वलक्षः; धवलः; अर्जुनः; 'पपौ वशिष्ठेन कृताभ्यनुज्ञः शुभ्रं यशो मूर्तमिवातितृष्णः'—इति रघौ (२।६९)। उद्दीप्तः; पुं. शुक्लवर्णः; चन्दनं; क्ली. अभ्रकं; गुडलवणं; रौप्यं; कासीसम्। ७३२

शुल्कम् पुं.–क्ली. [शुल्क्+घञ्] घट्टादिदेयं; पथिदेयं; करः; 'योऽरक्षन् बलिमादत्ते करं शुल्कं च पार्थिवः। प्रतिभागं च दण्डं च स सद्यो नरकं व्रजेत्'—इति मनुः (८।३०७)। स्त्रीधनं; वरादर्थग्रहणम्; 'न कन्यायाः पिता विद्वान् गृह्णीयात् शुल्कमण्वपि। गृह्णन् शुल्कं हि लोभेन स्यान्नरोऽपत्यविक्रयी'—इति मनुः (३।५१)। पणः; 'इत्युक्तो धनुरायम्य शुल्कावासं महाबलः। भ्राता भीमेन सहितस्तस्थौ गिरिरिवाचलः'—इति महाभारते (१।१९१।४)। ८२८

शुल्लम्, शुल्ला क्ली.–स्त्री.— रज्जुः; 'रज्जुः शुल्ला वराटो ना' इति रत्नकोशः। ताम्रम्। ५९७

शुल्वम् क्ली. [शुल्वयत्यनेनेति। शुल्व् माने+घञ्। यद्वा शुच् शोके+'उल्वादयश्च' इति वन् प्रत्ययेन निपातनात् साधु] ताम्रं; यज्ञकर्म; आचारः; जलसन्निधिः; रज्जुः; 'गृह्णीत यद्यदुपबन्धममुष्य माता शुल्वं सुतस्य न तु तत्तदमुष्य माति'—इति भागवते (२।७।३०)। १७०

शुल्वा स्त्री.— शुल्वी; वराटः; रज्जुः; वटः; तन्त्रीगणः। ५९७

शुश्रूषा स्त्री. [श्रु+सन् 'अ प्रत्ययात्' इति अ] उपासनं; वरिवस्या; परिचर्या; उपासना; परीष्टिः; सेवा; भक्तिः; उपास्तिः; प्रसादना; आराधना; उपचारः; शुश्रूषणम्; 'धर्मार्थौ यत्र न स्यातां शुश्रूषा वापि तद्विधा। तत्र विद्या न वप्तव्या शुभं बीजमिवोषरे'—इति मनुः (२।११२)। कथनं; श्रोतुमिच्छा; 'शुश्रूषा श्रवणं चैव ग्रहणं धारणं तथा। ऊहोऽपोहोऽर्थविज्ञानं तत्त्वज्ञानं च धीगुणाः'—इति कामन्दकीये (४।२२)। १२९

शुषिरम् क्ली. [शुष् शोषणे, 'इषिमदिमुदि'—इति किरच्। यद्वा शुषिश्छिद्रमस्यास्तीति। शुषि+'ऊषशुषिमुष्कमधो रः' इति र] विवरं; रन्ध्रं; गर्तं; विलं; वंश्यादिवाद्यं; सरन्ध्रे त्रि.। आकाशः; पुं. मूषिकः; अग्निः; स्त्री. [शुषिर+टाप्] नदी; नलीनामगन्धद्रव्यम्। ६२४

शुष्कपत्रम् क्ली. [शुष्क पत्रम्] स्नेहरहितदलं; शुष्कपर्णः; आतपादिशोषितपटशाकम्; 'शुष्कपत्रं पयोमिश्रं पित्तश्लेष्मज्वरापहम्।' 'तत् शुष्कपत्रं जलदोषनाशनं विशेषतः पित्तकफज्वरापहम्। जलं च तस्यापि च पित्तहारकं सुरोचनं व्यञ्जनयोगकारकम्'—इति राजवल्लभः। १५१

शुष्कपर्णम् क्ली.— शुष्कपत्रम्। १५१

शुष्कफलम् क्ली.— निस्नेहफलं, स्नेहरहितफलम्। १८९

शुष्मम् क्ली. [शुष्यत्यनेनेति। शुष् शोषणे+'अविसिविसिशुषिभ्यः कित्' इति मन्, स च कित्] तेजः; पराक्रमः; पुं. सूर्यः; अग्निः; वायुः; पक्षी; अर्चिः; 'शुष्मोऽर्चिषि हुताशने'—इति शुभाङ्कः। ७२३

शुष्म [न्] क्ली. [शुष्+मनिन्। संज्ञापूर्वकत्वात् न गुणः] तेजः; शौर्यम्। ७२३

शूकः पुं.–क्ली. [शो तनूकरणे+'उलूकादयश्च' इति ऊक प्रत्ययेन साधुः] अनुक्रोशः; कृपा; दया; करुणा; घृणा; श्लक्ष्णतीक्ष्णाग्रं; किंशारुः; शुङ्गा; कोशी; सविषाल्पडुण्डुभादिजलमलोद्भवजन्तुः; शूकप्रधानलिङ्गवृद्धिकरयोगः; 'अक्रमाच्छेफसो वृद्धिं योऽभिवाञ्छति मूढधीः। व्याधयस्तस्य जायन्ते दश चाष्टौ च शूकजाः'। ७२४

शूकरः पुं. [शूकं तद्वल्लोम रातीति। शूक+रा+क] पशुविशेषः; वराहः; स्तब्धरोमा; रोमशः; किरिः; चक्रदंष्ट्रः; किटिः; दंष्ट्री; क्रोडः; दन्तायुधः; बली; पृथुस्कन्धः; पोत्री; घोणी; भेदनः; कोलः; पोत्रायुधः; शूरः; बहुपत्यः; रदायुधः; 'गच्छ शूकर भद्रं ते वद सिंहो मया हतः। पण्डिता एव जानन्ति सिंहशूकरयोर्बलम्।' २२६

शूकलः पुं. [शूकवत् क्लेशं लाति ददातीति। शूक+ला+क] दुर्विनीताश्वः; दुर्वृत्तघोटकः; शूलकः। ४४०

शूद्रः पुं. [शोचतीति, शुच् शोके+'शुचेर्दश्च' इति रक् दश्चान्तादेशो धातोर्दीर्घश्च] चतुर्वर्णान्तर्गतचतुर्थवर्णः; अवरवर्णः; वृषलः; जघन्यजः; दासः; पादजः; अन्त्यजन्मा; जघन्यः; द्विजसेवकः; पद्यः; अन्त्यवर्णः; पज्जः; चतुर्थः; द्विजदासः; उपासकः; 'विप्राणामर्चनं नित्यं शूद्रधर्मो विधीयते। तद्द्वेषी तद्धनग्राही शूद्रश्चाण्डलतां व्रजेत्।' ३९२, ५८६

शून्यम् त्रि. [शूना+यत्। यद्वा शुने हितम्। श्वन्+'शुनः सम्प्रसारणं वा च दीर्घत्वम्' इत्युक्त्या यत् सम्प्रसारणं दीर्घत्वं च] निर्जनं; वितानम्; 'केन संविद्रते नान्यस्त्वत्तो बान्धववत्सलः। विरौमि शून्यं

प्रोर्णोमि कथं मन्युसमुद्भवम्'–इति भट्टिः (१८।२९)। अतिशयेन ऊनः; अभावविशिष्टः; असम्पूर्णः; वशिकः; तुच्छः; अङ्केषु बिन्दुः; रिक्तकः; शून्यम्; 'अविद्या-जीवनं शून्यं दिक् शून्या चेदबान्धवा। पुत्रहीनं गृहं शून्यं सर्वशून्या दरिद्रता'––इति चाणक्यः। ८४८

शूरः पुं. [शूरयति विक्रामतीति। शूर+अच्। यद्वा शवति वीर्यं प्राप्नोतीति। शु+'शुसिचिमिनां दीर्घश्च'–इति क्रन् दीर्घश्च] वीरः; विक्रान्तः; भटः; चारभटः; 'शूराश्च कृतविद्याश्च सन्तश्च सुखिनोऽभवन्'––इति महाभारते (१।१०९।४)। यादवः; श्रीकृष्णस्य पिता-महः; 'शूरो विदूरथादासीत् भजमानस्तु तत्सुतः'—इति भागवते (९।२४।२६)। सूर्यः; सिंहः; शूकरः; चित्रकः; सालः; लकुचः; मसूरः। ३५४

शूर्पकारातिः पुं. [शूर्पकस्तन्नामासुरः अरातिर्यस्य] कामदेवः। ३३

शूलः पुं.– क्ली. [शूलति लोकानिति। शूल् रोगे+अच्] भाजनविशेषः; रोगविशेषः; अस्त्रविशेषः; मृत्युः; केतनः; विष्कम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतनवमयोगः। 'भीतो दरिद्रो दयिताप्रियश्च शूलोद्भवः शूल इव स्वबन्धोः। विद्यामगम्यां रहितोऽथ शूली करोति लोके न हितं कदाचित्'—इति कोष्ठीप्रदीपः। सुतीक्ष्णः; अयःकीलः; 'ततस्ते शूल आरोप्य तं मुनिं रक्षिणस्तदा। प्रतिजग्मुर्महीपालं धनान्यादाय तान्यथ'—इति महा-भारते (१।१०७।१२)। व्यथा; विक्रेतव्यम्; 'अट्टशूला जनपदाः शिवशूलाश्चतुष्पथाः। प्रमदाः केशशूलिन्यो भविष्यन्ति कलौ युगे'—इति महाभारते। ३२३

शूलकः पुं. [शूल इव, दुर्विनीतत्वात्, कन्] दुर्वृत्तघोटकः; दुर्विनीताश्वः; 'विनीतस्तु साधुवाहो दुर्विनीतस्तु शूलकः' —इति हेमचन्द्रः। ४४०

शूली [न्] पुं. [शूलमस्यास्तीति। शूल+इनि] शिवः; शङ्करः; महादेवः; 'ततो गृध्रवटं गच्छेत् स्थानं देवस्य शूलिनः'—इति महाभारते (३।८४।८४)। शशः, त्रि. शूलास्त्रधारकः; शूलरोगयुक्तः; 'वर्जयेद्द्विदलं शूली कुष्ठी मांसं क्षयी स्त्रियम्'—इति वैद्यके। ११

शूल्यम् त्रि. [शूलेन संस्कृतम्। शूल+'शूलोखाद् यत्' इति यत्] शूलाकृतं; भटित्रं; 'कबाब' इति भाषा। वासितारं; शूलिकम्; 'कालखण्डादिमांसानि ग्रथितानि शलाकया। घृतं सलवणं दत्त्वा निर्धूमे दहने पचेत्। तत्तु शूल्यमिति प्रोक्तं पाककर्मविचक्षणैः।' 'शूल्यं बल्यं सुधातुल्यं रुच्यं वह्निकरं लघु। कफवातहरं वृष्यं किञ्चित् पित्तहरं हि तत्—इति भावप्रकाशः। ३२३

शृकालः पुं.— शृगालः। २२९

शृगालः पुं. [सृजति मायामिति। सृज्+कालन्, पृषोदरा-दित्वात् साधुः] पशुविशेषः; शिवा; भूरिमायः; गोमायुः; मृगधूर्तकः; वञ्चकः; क्रोष्टुः; फेरुः; फेरवः; जम्बुकः; सृगालः; जम्बूकः; मूत्रमत्तः; कुरवः; घोरवासनः; वनश्वा; फेरः; श्वधूर्तः; शालावृकः; गोमी; कटस्वादकः; शिवालुः; फेरण्डः; व्याघ्रनायकः; दैत्यभेदः; वासुदेवः; निष्ठुरः; खलः; भीरुः। २२९

शृङ्खलः त्रि. [शृङ्गात् प्राधान्यात् खल्यते अनेन। पृषो-दरादित्वात् साधुः] हस्त्यादीनां लौहमयपादबन्धोप-करणम्; अन्दुकः; निगडः; शृङ्खला; हिञ्जरिः; 'शय्यां जहत्युभयपक्षविनीतनिद्राः, स्तम्बेरमा मुखर-शृङ्खलकर्षिणस्ते'—इति रघौ (५।७२)। लौहरज्जुः; बन्धनं; पुंस्कट्याभरणम्। २२३

शृङ्खलकः पुं. [शृङ्खलं बन्धनमस्य। 'शृङ्खलमस्य बन्धनं करभे' इति कन्] दासेरकः; क्रमेलकः; उष्ट्रः; मयः; रवणः; करभः; 'तीव्रोत्थितास्तावदसह्यरंहसो विशृङ्खलं शृङ्खलकाः प्रतस्थिरे'––इति माघे (१२।७)। पला-यननिषेधाय पादेषु दारुमयपाशलक्षितकरभः; शृङ्खलः [शृङ्खल+स्वार्थे कन्]। २८०

शृङ्खला स्त्री. — निगडः; पुंस्कटीवस्त्रबन्धः। २२३

शृङ्गम् क्ली. [शॄ हिंसायाम्+'शृणातेर्ह्रस्वश्च' इति गन् धातोर्ह्रस्वत्वं कित्वं नुट् च प्रत्ययस्य] पर्वतोपरिभागः; कूटं; कूटः; शिखरं; दन्तः; प्राग्भारः; शैलाग्रम्; 'एतद् गिरेर्माल्यवतः पुरस्तादाविर्भवत्यम्बरलेखि शृङ्गम्' —इति रघौ (१३।२६)। सानुः; प्रभुत्वं; चिह्नं; क्रीडाजलयन्त्रम्; 'वर्णोदकैः काञ्चनशृङ्गमुक्तैस्तमाय-ताक्ष्यः प्रणयादसिञ्चन्'—इति रघौ (१६।७०)। विषाणम् (२६७); 'वन्यैरिदानीं महिषैस्तदम्भः शृङ्गा-हतं क्रोशति दीर्घिकाणाम्'—इति रघौ (१६।१२)। उत्कर्षः; 'शृङ्गं स दृप्तविनयाधिकृतः परेषामत्युच्छ्रितं न ममृषे न तु दीर्घमायुः'—इति रघौ (९।६२)। ऊर्ध्वम्; 'विमानशृङ्गाण्यवगाहमानः शशंस सेवावसरं

सुरेभ्यः'—इति कुमारे (७।४०)। तीक्ष्णं; पङ्कजं; कोटिः; 'अथ सललितयोषिद् भ्रूलताचारुशृङ्गं, रतिवलयपदाङ्के चापमासज्य कण्ठे'-इति कुमारे (२।६४)। स्तनम्; 'किं सम्भृतं रुचिरयोर्द्विज शृङ्गयोस्ते। मध्ये कृशो वहसि तत्र दृशिः श्रिता मे'—इति भागवते (५।२।११)। 'शृङ्गयोः स्तनयोः किं सम्भृतं किं पूर्णमस्ति मनोहरं किञ्चिदस्ति इत्येतावत् जानामि'——इति तट्टीकायां स्वामी। महिषादिशृङ्गनिर्मितवाद्यविशेषः; 'क्वचिद्वनाशाय मनो दधद्व्रजात्, प्रातः समुत्थाय वयस्यवत्सपान्। प्रबोधयन् शृङ्गरवेण चारुणा, विनिर्गतो वत्सपुरःसरो हरिः'—इति भागवते। कामोद्रेकः; 'शृङ्गं हि मन्मथोद्भेदस्तदागमनहेतुकः। उत्तमप्रकृतिप्रायो रसः शृङ्गार उच्यते'—इति साहित्यदर्पणे (३।२१०)। १६६

भृङ्गवेरम् क्ली. [शृङ्गस्येव वेरं शरीरं यस्य] आर्द्रकं; शृङ्गवेरकं; शुण्ठी; 'पिप्पलीमरीचशृङ्गवेराणि त्रिकटुकम्'—इति सुश्रुते (१।३८)। गुहनिषादपुरम्; 'मारुते ! गच्छ शीघ्रं त्वमयोध्यां भरतं प्रति। जानीहि कुशलः कश्चिज् जनो नृपतिमन्दिरे। शृङ्गवेरपुरं गत्वा ब्रूहि मित्रं गुहं मम। जानकीलक्ष्मणोपेतमागतं मां निवेदय'—इत्यध्यात्मरामायणे। पुं. कूर्चशीर्षकवृक्षः; मुनिभेदः। ६१६

भृङ्गाटकम् क्ली. [शृङ्गाटमेव, स्वार्थे कन्] शृङ्गाटं; चतुष्पथं; संस्थानम्; 'तां शून्यशृङ्गाटकवेश्मरथ्यां रजोऽरुणद्वारकपाटयन्त्राम्'—इति रामायणे (२।७१।४५)। जलजलताफलविशेषः; जलसूचिः; संघाटिका; वारिकंटकः; शृङ्गाटः; वारिकुब्जकः; क्षीरशुक्लः; जलण्टकः; शृङ्गटकः; शृङ्गरुहः; जलवल्ली; जलाशयः; शृङ्गकन्दः; शृङ्गमूलः; विषाणी; खाद्यविशेषः; 'समोसा' इति भाषा। 'शुद्धमांसं तनूकृत्य कर्तितं स्वेदितं जले। लवङ्गं हिङ्गुसहितं लवणार्द्रकसंयुतम्। एलाजीरकधन्याकनिम्बूरससमन्वितम्। घृते सगन्धे तद्भृष्टं पूरणं प्रोच्यते बुधैः। शृङ्गाटकं समितया कृतं पूरणपूरितम्। पुनः सर्पिषि संभृष्टं मांसं शृङ्गाटकं वदेत्। मांसं शृङ्गाटकं रुच्यं बृंहणं बलकृद्गुरु। वातपित्तहरं वृष्यं कफघ्नं वीर्यवर्द्धनम्'—इति भावप्रकाशः। पुं. [शृङ्गाट एव, स्वार्थे कन्] जलकण्टकः। २८९

भृङ्गारः पुं. [शृङ्गं कामोद्रेकमृच्छतीति। शृङ्ग+ऋ गतौ+'कर्मण्यण्' इत्यण्। यद्वा शॄ हिंसायाम्+'भृङ्गारशृङ्गारौ'। इति आरन् प्रत्ययेन साधुः] नाट्यरसः; 'पुंसः स्त्रियां स्त्रियाः पुंसि संयोगं प्रति या स्पृहा। स शृङ्गार इति ख्यातो रतिक्रीडादिकारणम्'—इति भरतः। 'शृङ्गं हि मन्मथोद्भेदस्तदागमनहेतुकः। उत्तमप्रकृतिप्रायो रसः शृङ्गार इष्यते'—इति साहित्यदर्पणम्। सुरतं; मैथुनं; गजभूषणम्। ९२

भृङ्गारचेष्टा स्त्री. — हावभावभेदः। ८९

भृङ्गारयोनिः पुं. [शृङ्गारे योनिरुत्पत्तिर्यस्य] मदनः; मन्मथः; कामदेवः। ३१

भृङ्गिः स्त्री.— मत्स्यविशेषः; शृङ्गी; 'मद्गुरस्य प्रिया शृङ्गी शृङ्गिरित्यपि कुत्रचित्। स्यादप्रिया मद्गुरसीति च नामद्वयं क्वचित्'—इति शब्दरत्नावली। ६५९

भृङ्गिकम् क्ली.— विषभेदः। ६४७

भृङ्गी स्त्री. [शृङ्गि+वा ङीष्] महामत्स्यविशेषः; मद्गुरी; मद्गुरसी; शृङ्गिः; अतिविषा; ऋषभौषधंः; कर्कटशृङ्गी; प्लक्षः; वटः; विषम्; अलङ्कारसुवर्णं; 'स्त्री शृङ्गी मण्डनस्वर्णे'--इति रत्नकोषः। पुं. शृङ्ग+इनि] हस्ती; वृक्षः; पर्वतः; 'रुरोध रामं शृङ्गीव टङ्कच्छिन्नमनःशिलः'—इति रघौ (१२।८०)। ऋषिविशेषः; स तु शमीकपुत्रः। अभिमन्युजः परीक्षिद् अनेनाभिशप्तः। शृङ्गयुक्ते त्रि.। 'महिषाः शृङ्गिणीरौद्रा न ते द्रुह्यन्तु पुत्रक'—इति रामायणे (२।२५।२०)। ६५९

भृतम् त्रि. [श्रा पाके+क्त, 'शृतं पाके' इति शृभावः] [पक्वं; श्राणं; पक्वक्षीराज्यपयासि; 'शृतमन्नं विवर्जयेत्'—इति भरतः। क्वथितम्। २७६

शेखरः पुं. [शिखि गतौ+बाहुलकाद् अरप्रत्ययेन साधुः] शिखावस्थितमाल्यम्; , आपीडः; उत्तंसः; अवतंसः; 'शिखाविन्यस्तमालायामापीडः शेखरोऽपि च'—इति शब्दरत्नावली। 'नवकरनिकरेण स्पष्टबन्धूकसूनस्तवकरचितमेते शेखरं बिभ्रतीव'--इति माघे (१६।४६)। शिरोभूषणमात्रम्; 'बभूव भस्मैव सिताङ्गरागः कपालमेवामलशेखरश्रीः'—इति कुमारे (७।३२)। गीतस्य ध्रुवविशेषः; 'द्वादशाक्षरपादः स्यात् स चाल्पशुभकृत् प्रभोः। हंसके च रसे वीरे गीयते शेखरो ध्रुवः'—

इति सङ्गीतदामोदरः। 'लघुर्गुरुर्भवेद्यत्र स भवेल्लघुशेखरः'— इति सङ्गीतदामोदरः। शृङ्गम्; 'ततोऽस्तगिरिशेखरं व्रजति वासरेशे शनैः, सखीं पुनरुपागमप्रणयिनीं समापृच्छ्य ताम्। क्षणं जनितविस्मया गगनमार्गमुत्पत्य सा, जगाम वसतिं निजां प्रसभमेव सोमप्रजा'— इति कथासरित्सागरे (२८।१८९)। ५५४

शेपः पुं. [शी+बाहुलकात् प] शेफः; शिश्नः; लिङ्गं; शेवः; मेढ्रम्। ५१४

शेफः पुं. [शी+बाहुलकात् फ] शिश्नः; शेवः; शेपः; मेढ्रः; लिङ्गम्; 'विकटाः काललम्बौष्ठा बृहच्छेफाण्डपिण्डकाः'— इति महाभारते (१०।७।३८)। ५१४

शेफः [स्] क्ली. [शेते रेतःपातानन्तरमिति। शी+'वृञ्शीङ्भ्यां स्वरूपाङ्गयोः पुट् च' इति असुन्। अत्र केचित् फ चेति पठन्ति, इत्यतः फ] शिश्नः; शेवः; शेफश्शेपसी शेफशेपौ शेवश्चेति पञ्च रूपाणि भवन्ति। 'ऋजुवृत्तशेफसो लघुशिरालशिश्नाश्च धनवन्तः'— इति बृहत्संहितायाम् (६८।८)। ५१४

शेमुषी स्त्री. [शेते इति शेः मोहः, शी+विच्, तं मुष्णातीति। शे+मुष् स्तेये+मूलविभुजादित्वात् क। गौरादित्वाद् ङीष्] प्रेक्षा; प्रज्ञा; प्रतिभा; धीः; धिषणा; मनीषा; बुद्धिः; मतिः; मेधा; संख्या; संवित्तिः; उपलब्धिः; 'स्विन्नस्य हि विपर्येति तत्त्वज्ञस्यापि शेमुषी'— इति राजतरङ्गिण्याम्। (३।२०६)। ३३४

शेलुः पुं. [शेलतीति, शेल् गतौ+उ] बहुवारकवृक्षः; श्लेष्मातकः; श्लेष्मातः; श्लेष्मान्तकः; बहुवारः; पिच्छिलः; द्विजकुत्सितः; शीतफलः; शीतः; शाकटः; कर्बुदारकः; भूतद्रुमः; गन्धपुष्पः; 'लसोडा' इति भाषा। शेलुफलानि; 'शेलुं गव्यं च पेयूषं प्रयत्नेन विवर्जयेत्'— इति मनुः (५।६)। १९७

शेवः पुं. [शेते रेतःपातानन्तरमिति। शी+'इण्शीङ्भ्यां वन्' इति वन्] मेढ्रं; शेपः; लिङ्गं; शिश्नः; अहिः; उन्नते त्रि.। क्ली. सुखं; त्रि. सुखकरम्; 'मित्रं न शेवं दिव्याय जन्मने'— इति ऋग्वेदे (१।५८।६)। 'मित्रं न शेवं यथा सखा सुखकरो भवति तद्वत् सुखकरमित्यर्थः'— इति तद्भाष्ये सायणः। ५१४

शेवधिः पुं. [शेवं सुखं धीयतेऽस्मिन्निति। शेव+धा+कि] निधिः; 'विद्या ब्राह्मणमेत्याह शेवधिस्तेऽस्मि रक्ष माम्। असूयकाय मां मादास्तथा स्यां वीर्यवत्तमा'— इति मनुः (२।११४)। 'विद्या ह वै ब्राह्मणमाजगाम गोपायस्व मां शेवधिष्टेऽहमस्मि। असूयकायानृजवेऽनृताय मा मां ब्रूया वीर्यवती यथा स्याम्'— इति श्रुतिः। ८२

शेवलम् क्ली.— शैवालम्। ६८३

शेवालम् क्ली. [शेते जले इति। शी+'शीङो धुग्लक्वलञ्वालनः' इति वालन्] शैवालं; शेवलम्; 'शङ्के पङ्के पतति यतते बालशेवालमूले, कूले लोलः किमपि कुरुते कर्म वैकुण्ठकूर्मः'— इति राजेन्द्रकर्णपूरे (२५)। ६८३

शैक्षः पुं. [शिक्षामधीते इति। शिक्षा+अण्] प्राथमकल्पिकः; प्रथमारब्धवेदाध्ययनः; [शिक्षणं शिक्षा, प्रथमोपदेशः। तत्साहचर्याद् ग्रन्थोऽपि शिक्षा, तामधीयते शैक्षाः। शिक्षा शीलमस्येति, 'छत्रादिभ्यो णः' इति ण] शिक्षाशीले त्रि.। ४००

शैलः पुं. [शिलाः सन्त्यत्रेति। शिला+ज्योत्स्नादित्वादण्] पर्वतः; 'ततो गौरीगुरुं शैलमारुरोहाश्वसाधनः। वर्द्धयन्निव तत्कूटानुद्धूतैर्धातुरेणुभिः'— इति रघौ (४।७१)। शिलासम्बन्धिनि त्रि.। 'शैली दारुमयी लौही लेप्या लेख्या च सैकती। मनोमयी दारुमयी प्रतिमाष्टविधा स्मृता'— इति भागवते (११।२७।१२)। क्ली. [शिलायां भवम्, शिला+अण्] शैलेयं; तार्क्ष्यशैलं; शिलाजंतु। १६५

शैलाली [न्] पुं. [शिलालिना प्रोक्तं नटसूत्रमधीते इति। शिलालि+'पाराशर्यशिलालिभ्यां भिक्षुनटसूत्रयोः' इति णिनि] शैलूषः; कुशीलवः; चारणः; कृशाश्वी; जायाजीवः; भरतः; नटः; 'अथोपपत्तिं छलनापरोऽपरामवाप्य शैलूष इवैष भूमिकाम्'— इति माघे (१।६९)। बिल्ववृक्षः; धूर्तः; तालधारकः। ५९२

शैवलः पुं. [शी+वलच्] शैवालः; शेवः; शेवलं; शैवालम्। ६८३

शैवलिनी स्त्री. [शैवलमस्या अस्तीति। इनि] नदी। ६६५

शैवालः पुं.— क्ली. [शी+बाहुलकाद् बालन्] जलजद्रव्यविशेषः; जलनीली; शैवलः; शेपालं; शेवलं; शीवलं; शेपालः; जलनीलिका; जलनीलः; सैवालः; सैवालं; शेवालं; वारिचामरं; शैवलं; सलिलकुन्तलं; हट-

पर्णी; अम्बुतालम्; अरकः; जलकेशः; कावारं; जलजम्। ६८३

शोकः पुं. [शुच्+घञ्] चित्तविकलता; इष्टवियोगानुचिन्तनम्; बन्ध्वादिवियोगजनिता मनःपीडा; मन्युः; शुक्; शुचा; निशमः; शोचनं; खेदः। ९१

शोचनम् क्ली. [शुच्+ल्युट्] शोकः; खेदः। ८७५

शोचिः [स्] क्ली. [शुच्यत्यनेनेति । शुच् पूतीभावे, 'अर्चिशुचिहुसृपीति' इसि] प्रभा; किरणः; 'तद्विश्वगुर्वधिकृतं भुवनैकवन्द्यं दिव्यं विचित्रविबुधाग्र्यविमानशोचिः'—इति भागवते (३।१५।२६)। ३८

शोणः पुं. [शोण् वर्णे+अच्] लोहिताश्वः; रक्ताश्वः; (६७४) नदविशेषः; हिरण्यबाहुः; हिरण्यवाहः; स तु अमरकण्टकदेशाद् निर्गम्य पाटलिपुत्रे गङ्गायां मिलितः। (७३३) रक्तोत्पलतुल्यवर्णः; कोकनदच्छविः; रक्तोत्पलनिभः; रक्तोत्पलाभः; 'स उच्चकाशे धवलोदरोदरोऽप्युरुक्रमस्याधरशोणशोणिमा'—इति भागवते (१।११।२)। अग्निः; रक्तेक्षुः; श्योनाकः; समुद्रविशेषः; रक्तसागर; श्योनाकप्रभेदः; त्रि. कोकनदच्छायः; रक्तवर्णः; 'न्यस्ताक्षरा धातुरसेन यत्र भूर्जत्वचः कुञ्जरबिन्दुशोणाः'—इति कुमारे (१।७)। क्ली. [शोणतीति, शोण् वर्णे+पचाद्यच्] सिन्दूरं; रुधिरम्। ४३७

शोणाश्मा [न्] पुं. [शोणः रक्तवर्णः अश्मा उपलः] शोणरत्नं; पद्मरागमणिः; शोणोपलः; माणिक्यम्। १७५

शोणितम् क्ली. [शोण् वर्णे+क्त । शोण+जातार्थे इतच् वा] क्षतजं; लोहितम्; अस्रं; रुधिरम्; असृक्; रक्तं; 'शोणितं यावतः पांशून् संगृह्णाति महीतले। तावन्त्यब्दसहस्राणि तत्कर्ता नरके वसेत्'—इति मनुः (११।२०८)। कुङ्कुमं; त्रि. रक्तवर्णः। ६३२

शोथः पुं. [शवतीति, शु गतौ+बाहुलकात् थन्, इत्युणादिवृत्तौ उज्ज्वलः] रोगविशेषः; शोफः; श्वयथुः; शोथकः; 'रक्तपित्तकफान्वायुर्दुष्टो दुष्टान् बहिः शिराः। नीत्वा रुद्धगतिस्तैर्हि कुर्यात् त्वङ्मांससंश्रयम्। उत्सेधं संहतं शोथं तमाहुर्निचयादतः'—इति वैद्यके। 'स्नेहोष्ममर्दनाद्यैर्यः प्रशाम्येत् स च वातिकः। यश्चाप्यरुणवर्णः स्यात् शोथो नक्तं प्रशाम्यति'—इति चरकः। ६०२

शोफः पुं. [शु गतौ । बाहुलकात् फ] शोथः; श्वयथुः; 'तद्दुष्टं शोणितमनिर्ह्रियमाणः कण्डूशोफरागदाहपाकवेदना जनयेत्'—इति सुश्रुते (१।१४)। ६०२

शोभनः त्रि. [शोभते इति । शुभ्+ल्यु] विवक्षितः; सुन्दरः; वक्तुमिष्टः; पुं. [शुभ्+ल्यु] ग्रहः; विष्कम्भादिसप्तविंशतियोगान्तर्गतपञ्चमयोगः; 'स्याच्छोभनः शोभनयोगजन्मा दक्षो विपक्षप्रतिलब्धवित्तः। सुदन्तुरश्चारुवपुः सुधीरः संमानयुक्तो मनुजः प्रवीणः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। क्ली. पद्मं; शुभम्; 'अहो बतैषां किमकारि शोभनं प्रसन्न एषां स्विदुत स्वयं हरिः'—इति भागवते (५।१९।२१)। ८०२

शोभा स्त्री. [शोभन्तेऽनया । शुभ्+करणे घञ्+टाप्] दीप्तिः; कान्तिः; द्युतिः; छविः; द्युती; छवी; अभिख्या; शुभा; भाः; श्रीः; भासा; भा; सुषमा; छाया; विभा; दृक्प्रिया; भानं; भातिः; कमा; रमा; 'सा शोभा रूपभोगाद्यैर्यत् स्यादङ्गविभूषणम्। शोभैव कान्तिराख्याता मन्मथाप्यायनोज्ज्वला'—इत्युज्ज्वलनीलमणिः। गोपीविशेषः; 'दृष्टस्त्वं शोभया गोप्या युक्तश्चन्दनकानने। सद्यो मच्छब्दमात्रेण तिरोधानं कृतं त्वया। शोभा देहं परित्यज्य जगाम चन्द्रमण्डलम्। ततस्तस्याः शरीरं च स्निग्धं तेजो बभूव ह'—इति ब्रह्मवैवर्ते। हरिद्रा; गोरोचना। ५६५

शोषः पुं. [शुष्+भावे घञ्। शुष्यत्यनेनेति । शुष्+करणे घञ्] राजयक्ष्मा; क्षयः; यक्ष्मरोगः; 'वचा त्रिकटुकं चैव करञ्जं देवदारु च। मञ्जिष्ठा त्रिफला श्वेता शिरीषो रजनीद्वयम्। प्रियङ्गुनिम्बत्रिकटु गोमूत्रेणावघर्षितम्। नस्यमालेपनं चैव स्नानमुद्वर्तनं तथा। अपस्मारविषोन्मादशोषालक्ष्मीज्वरापहम्। भूतेभ्यश्च भयं हन्ति राजद्वारे च शासनम्'—इति गारुडे। शोषणं; रसाकर्षणं; रसादानं; स्नेहरहितीकरणम्। ६०२

शौक्तिकेयम् क्ली. [शुक्तिकायां भवमिति । शुक्तिका+ढक्] मुक्ता; मौक्तिकं; शौक्तेयम्। ६६४

शौण्डिकः पुं. [शुण्डा पण्यमस्य । शुण्डा+'तदस्य पण्यम्' इति ठक्] जातिविशेषः; मण्डहारकः; शुण्डारः; शौण्डी; शुण्डकः; ध्वजः; पानः; पणः; कल्पपालः; कल्यपालः; सुराजीवी; वारिवासः; पानवणिक्; ध्वजी; आसुतीवलः; 'ततो गान्धिककन्यायां कैवतदिव

शौण्डिकः । कैवर्तस्य च कन्यायां शोण्डिकादेव शांचिकः' —इति पराशरपद्धतिः । 'श्ववतां शौण्डिकानां च चेलनिर्णेजकस्य च । रञ्जकस्य नृशंसस्य यस्य चोपपतिर्गृहे' —इति मनुः । (४।२१६) । एषां गृहे नाद्याद् इत्यर्थः । शुण्डिकादागते त्रि. ['शुण्डिकादिभ्योऽण्' इत्यण्] । ५६३

शौद्धोदनिः पुं. [शुद्धोदनस्यापत्यं पुमानिति । शुद्धोदन+ 'अत इञ्' इति इञ्] शाक्यवंशावतीर्णबुद्धमुनिविशेषः; दशबलः; बुद्धः; शाक्यः; तथागतः; सुगतः; मारजित्; अद्वयवादी; समन्तभद्रः; जिनः; सिद्धार्थः । ८५

शौनिकः पुं. [शूना प्राणिवधस्थानं प्रयोजनमस्य । शूना+ ठक्] मांसविक्रयकर्ता; वैतंसिकः; कौटिकः; मांसिकः; 'वैतंसिकः कौटिकश्च मांसिकः शौनिकः समाः'—इति हेमचन्द्रः । मृगया । ५९५

शौरिः पुं. [शूरस्यापत्यमिति । शूर+इञ्] विष्णुः; अच्युतः; 'तनीयांसं पांशुं तव चरणपङ्केरुहभवं, विरिञ्चिः सञ्चिन्वन् विरचयति लोकानविकलम् । वहत्येनं शौरिः कथमपि सहस्रेण शिरसां, हरः संक्षुभ्यैनं भजति भसितोद्धूननविधिम्'—इति आनन्दलहर्याम् । (४८) शनैश्चरग्रहः; असितः; क्रोडः; पङ्गुः; छायातनयः; शूरवंशीयमात्रे; वसुदेवः; 'क्वचित् कुरूणां परमः सुहृन्नो भामः स आस्ते सुखमङ्ग शौरिः'—इति भागवते (३। १।२६) । बलदेवः; 'ततोऽभ्ययाद्भीमबलो रौहिणेयं महाबलम् । सर्वं चागमने हेतुं स तस्मै संन्यवेदयत् । प्रत्युवाच ततः शौरिर्धार्तराष्ट्रमिदं वचः'—इति महाभारते (५।७।२५) । कृष्णः; 'अथ दूरागतान् शौरिः कौरवान् विरहातुरान् । संनिवर्त्य दृढं स्निग्धान् प्रायात् स्वनगरीं प्रियैः'—इति भागवते (१।१०।३३) । २१

शौर्यम् क्ली. [शूरस्य भावः कर्म वा । शूर+ष्यञ्] आरभटी; गुणभेदः; शक्तिः; 'सत्त्वेन वीर्येण पराक्रमेण धैर्येण शौर्येण च तेजसा च'—इति रामायणे (६।१५।३) । ८६५

शौल्किकेयः पुं. [शुल्किको देशभेदस्तत्र भवः, ढञ्] विषभेदः । ६४६

शौष्कलः त्रि. [शुष्कलीमत्तीति । शुष्कली+अण्] आमिषाशी; शाष्कुलः; मांसाशी; शाष्कलः; मांसादी; 'शुष्कली शुष्कमांसे स्यान्मांसमात्रेऽपि दृश्यते ।' शौश्कलः; [शुष्कं मांसं लाति इति शुष्कलः, प्रज्ञादित्वात् अण्] । ३५१

श्मशानम् क्लीं. [श्मनां शवानां शानं शयनं यत्र, यद्वा शवानां शयनमिति । 'पृषोदरादीनि यथोपदिष्टम्' इति शवशब्दस्य श्मादेशः शयनशब्दस्यापि शानशब्द आदेशः] शवदाहस्थानं; पितृवनं; शतानकं; रुद्राक्रीडः; दाहसरः; अन्तशय्या; पितृकाननम्; 'श्मशब्देन शवः प्रोक्तः शानं शयनमुच्यते । निर्वचन्ति श्मशानार्थं मुने शब्दार्थकोविदाः । महान्त्यपि च भूतानि प्रलये समुपस्थिते । शेरतेऽत्र शवा भूत्वा श्मशानं तु ततो भवेत् ।' 'उत्सवे व्यसने चैव दुर्भिक्षे शत्रुविग्रहे । राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः'—इति चाणक्यः (१७) । ६३८

श्मश्रु स्त्री.– क्ली. [श्म मुखं श्रयति आश्रयतीति । श्म+ श्रि+'श्मनि श्रयतेर्डुन्' इति डुन्] पुंमुखे वर्द्धितलोम; मुखगतबालः; 'निम्नं वक्त्रमपुत्राणां कृपणानां च ह्रस्वकम् । सम्पूर्णं भोगिनां कान्तं श्मश्रुस्निग्धं शुभं मृदु । संहतं चास्फुटिताग्रं रक्तश्मश्रुश्च चौरकः । रक्ताल्पपरुषश्मश्रुकर्णाः स्युः पापमृत्यवः' — इति गारुडे ६६ अध्यायः । ५२४

श्यामः त्रि. [श्यायते मनो यस्मात् । श्यै+मक्] कृष्णगुणविशिष्टः; असितः; शितिः; कृष्णः; कालः; नीलः; मेचकः; श्यामलः; रामः; 'यत्र श्यामो लोहिताक्षो दण्डश्चरति पापहा । प्रजास्तत्र न मुह्यन्ति नेता चेत् साधु पश्यति' —इति मनुः (७।२५) । हरिद्गुणविशिष्टः; पुं. [श्यै+मक्] मेघः; वृद्धदारकः; कोकिलः; कृष्णवर्णः; हरिद्वर्णः; धुस्तूरः; पीलुवृक्षः; श्यामाकः; दमनकवृक्षः; गन्धतृणं ; प्रयागस्य वटः; 'त्वया पुरस्तादुपयाचितो यः सोऽयं वटः श्याम इति प्रतीतः । राशिर्मणीनामिव गारुडानां सपद्मरागः फलितो विभाति'—इति रघौ (१३। ५३) । ७३४

श्यामकः पुं. [श्यामं वर्णम् अकतीति । अक् गतौ+ क, शकन्ध्वादित्वात् साधुः] श्यामाकः; कङ्गुः; तृणधान्यभेदः; श्यामः; त्रिबीजः; अविप्रियः; सुकुमारः; राजधान्यं; तृणबीजोत्तमः; शूरस्य पुत्रविशेषः; स तु वसुदेवस्य भ्राता; भागवते (९।२४।२९) । ५८४

श्यामकण्ठः पुं. [श्यामः कण्ठो यस्य] केकी; शिखी; शिखण्डी; प्रचलाकी; वर्हिणः; कलापी; सर्पाशनः: मयूरः; शिखावलः; शिवः; पक्षिविशेषः । २४१

श्यामलः पुं. [श्यामः वर्णः अस्त्यस्येति । श्याम+'सिध्मादिभ्यश्च' इति लच्] कृष्णवर्णः; कृष्णगुणवति त्रि. । 'जयतु जयतु मेघश्यामलः कोमलाङ्गो जयतु जयतु पृथ्वी भारनाशो मुकुन्दः'—इति मुकुन्दमालायाम् (२) । पुं. पिप्पलः । ७३४

श्यामा स्त्री. [श्यामो वर्णोऽस्त्यस्या इति, अच्+टाप्] रात्रिः; निशा; (१९३) प्रियङ्गुः; फलिनी; फली; लताविशेषः ; शारिवौषधि; अप्रसूताङ्गना; वागुजिः; यमुना; नीलिका; कृष्णत्रिवृतिका; गुग्गुलुः; सोमलता; गुन्द्रा; कृष्णा; अम्बिका; गुडूची; कस्तूरी; वटपत्री; वन्दा; पिप्पली; नीलपुनर्नवा; हरिद्रा; नीलदूर्वा; तुलसी; गौः; पद्मबीजं; स्त्री; छाया; कृष्णसारिवा; शिशपा; नारीविशेषः; 'योषिद्वृन्दारिका तस्य दयिता हंसनादिनी । दूर्वाकाण्डमिव श्यामा न्यग्रोधपरिमण्डला,'—इति भट्टिः (५।१८) । 'शीते सुखोष्णसर्वाङ्गी ग्रीष्मे च सुखशीतला । तप्तकाञ्चनवर्णाभा सा स्त्री श्यामेति कथ्यते ।' पक्षिविशेषः; वाराही; शकुनी; कुमारी; दुर्गा; देवी, चटका; कृष्णा; पोतकी; पाण्डविका; वामा; कालिका; शितिसिम्बिनी । १०८

श्यामाकः पुं. [श्यामं श्यामवर्णमकतीति । श्याम+अक् गतौ+अण्] तृणधान्यभेदः; श्यामकः; श्यामः; त्रिबीजः; अविप्रियः; सुकुमारः; राजधान्यं; तृणबीजोत्तमः; 'श्यामाकः शोषणो रूक्षो वातलः कफपित्तकृत्' —इति भावप्रकाशः । ५८४

श्यालः पुं. [श्यायते नर्मार्थं प्राप्यतेऽसौ इति । श्यै+बाहुलकात् कालन्] पत्नीभ्राता; वाक्कीरः; श्यालिकः; श्वशुर्यः; आत्मवीरः; श्यालकः; 'साला' इति भाषा । 'आचार्यपत्नीपुत्रोपाध्यायमातुलश्वशुरश्वशुर्यसहाध्यायिशिष्येष्वेकरात्रेणेति'—इति शुद्धितत्त्वम् । भगिनीपतिः; 'भग्नी पुत्रो भागिनेयो भ्रातृपुत्रश्च भ्रातृजः । श्यालस्तु भगिनीकान्तो भगिनीपतिरेवच ।' ८४०

श्यावः पुं. [श्यै+बाहुलकाद् व] कपिशः; कृष्णपीतमिश्रवर्णः; तद्युक्ते त्रि. । 'श्यावतनुः स्फुटितः स्फुरणो वा कुत्सरामयचौरभयाय'– बृहत्संहितायाम् (४।२९) । ७३५

श्येनः पुं. [श्यै गतौ+'श्यास्त्याहृञविभ्य इनच्' इति इनच्] पक्षिविशेषः; शशादनः; पत्री; कपोतारिः; पतङ्गीरुः; घातिपक्षी; ग्राहकः; मारकः; शशादः; क्रव्यादः; क्रूरः; वेगी; खगान्तकः ; करगः; नीलपिच्छः; लम्बकर्णः; रणप्रियः; रणपक्षी; पिच्छबाणः; स्थूलनीलः; भयङ्करः; शशघातकः; प्राजिकः; 'प्रदक्षिणीकृत्य नरं व्रजन्तो यात्रासु वामेन गताः प्रवेशे। श्येनाः प्रशस्ताः प्रकृतस्वरास्ते शान्ताः प्रदीप्ता विततस्वरास्ते । श्येनो नृणां दक्षिणवामपृष्ठभागेषु भार्यैः स्थितिमादधाति । तिष्ठन् पुरस्तान्मृतये करोति युद्धे जयं छत्ररथध्वजस्थः'—इति वसन्तराजशाकुने । पाण्डुरवर्णः । २५३

श्येनी स्त्री. [श्येन+ङीष्] श्वेतवर्णा; कुमुदपत्राभा; श्येनपत्नी; सा तु कश्यपाद् दक्षकन्यायां ताम्रायां समुत्पन्ना; 'ताम्रा च सुषुवे श्येनीप्रमुखाः कन्यका द्विज । यासां प्रसूताः खगमाः श्येनभासशुकादयः'—इति मार्कण्डेये (१०४।८) । ७३८

श्रद्धा स्त्री. [श्रद्धानमिति । श्रत्+धा+'षिद्भिदादिभ्योऽङ्' इत्यङ+टाप्] स्पृहा; दोहदः; दौहृदः; दौर्हृदः; लालसा; 'चिच्छेद जीविते श्रद्धां धर्मे यशसि चात्मनः' —इति रामायणे (२।३८।२) । (७८०) संप्रत्ययः; प्रत्ययः; आदरः; शुद्धिः; शास्त्रार्थे दृढप्रत्ययः; 'प्रत्ययो धर्मकार्येषु यथा श्रद्धेत्युदाहृता । नास्ति ह्यश्रद्धधानस्य धर्मकृत्ये प्रयोजनम्'—इति स्मृतिः । 'बभौ च सा तेन सतां मतेन श्रद्धेव साक्षाद्विधिनोपपन्ना'—इति रघौ (२।१६) । चेतसः प्रसादः । ४९८

श्रन्थनम् क्ली. [श्रन्थ्+भावे ल्युट्] ग्रन्थनं; गुम्फः; सन्दर्भः; रचना; 'सन्दर्भो रचना गुम्फः श्रन्थनं ग्रन्थनं समाः'—इति हेमचन्द्रः । ७३०

श्रमणः पुं. [श्राम्यति तपस्यतीति । श्रम्+ल्यु] यतिविशेषः; स तु बौद्धसंन्यासी; रजोहरणधारी; श्वेतवासाः; सिताम्बरः; नग्नाटः; दिग्वासाः; क्षपणः; क्षपणकः; यतिः; 'मुक्तिर्मोक्षोऽपवर्गोऽथ मुमुक्षुः श्रमणो यतिः । वाचंयमो व्रती साधुरनागार ऋषिर्मुनिः । निर्ग्रन्थो भिक्षुरस्य स्युस्तपोयोगशमादयः'—इति हेमचन्द्रः । 'तापसा भुञ्जते चापि श्रमणाश्चैव भुञ्जते'—इति

रामायणे (१।१४।१२)। निन्द्यजीविनि त्रि.। ३४५
श्रमणा स्त्री. [श्रमण+स्त्रियां टाप्] श्रमणी; भिक्षुकी; मुण्डा; सुदर्शना; मांसी; मुण्डीरी; शबरीभेदः। ४८७
श्रमणी स्त्री. [श्रमण+ङीष्] श्रमणा; भिक्षुकी; मुण्डा। ४८७
श्रमस्थानम् क्ली. [श्रमस्य व्यायामस्य स्थानं, श्रमस्य शस्त्राभ्यासस्य वा] खलूरिका। ४७०
श्रवः पुं. [श्रूयतेऽनेनेति। श्रु+'ऋदोरप्' इत्यप्] कर्णः; 'तुमुलप्रोल्लसच्छब्दपिहितान्यरवश्रवः। चचाल स बलाम्भोधिस्तयोर्गम्भीरभीषणः'—इति कथासरित्सागरे (१०३।१५८)। [श्रु+भावे अप्] श्रवणम्; 'सुप्तसर्प इव दण्डघट्टनाद् रोषितोऽस्मि तव विक्रमश्रवात्'—इति रघौ (११।७१)। [श्रूयते इति, कर्मणि अप्] शब्दः; 'नमो वन्याय च कक्ष्याय च नमः श्रवाय च प्रतिश्रवाय च'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (१६। ३४)। ५१६
श्रवः [स्] पुं – क्ली. [श्रूयतेऽनेनेति। श्रु+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इत्यसुन्] कर्णः; अन्नम्; 'अधिश्रवांसि धेहि नस्तनूषु'—इति ऋग्वेदे (३।१९।५)। धनं; यशः; 'श्रवः सुश्रवसः पुण्यं सर्वदेहकयाश्रयम्'—इति भागवते (४।१७।६)। शब्दः; 'गन्धाकृतिस्पर्शरसश्रवांसि विसर्गरत्यर्त्यभिजल्पशिल्पाः'—इति भागवते (५।११।९)। ५१६
श्रवणः पुं.– क्ली. [श्रूयतेऽनेनेति। श्रु+करणे ल्युट्] कर्णः; श्रोत्रं; श्रुतिः; श्रवः; 'न स्त्रियां श्रवणः कर्णः'—इति हेममाली। श्रुतिः; कर्णेन्द्रियज्ञानं; 'समक्षदर्शनात् साक्ष्यं श्रवणाच्चैव सिध्यति'—इति मनुः (९।७४)। नीतिशास्त्रोक्तधीगुणानामन्यतमम्; 'शुश्रूषा श्रवणं चैव ग्रहणं धारणं तथा। ऊहोऽपोहोऽर्थविज्ञानं तत्त्वज्ञानं च धीगुणाः'—इति कामन्दकीये (४।२२)। श्रवणनक्षत्रम्, 'अमार्कपाते श्रवणं यदि स्यात्'—इति स्मृतिः] ५१६
श्रविष्ठा स्त्री. [श्रवणमिति श्रवः, सोऽस्या अस्तीति, मतुप्। अतिशयेन श्रववती, 'अतिशायने तमबिष्ठनौ' इति इष्ठन्, 'विन्मतोर्लुगिति' मतुपो लुक्] धनिष्ठानक्षत्रम्; 'श्रविष्ठायां तथा पृष्ठं शालिभक्तं च दोहदे। पुष्ये मुखं पूजयेत दोहदे घृतपायसम्'—इति वामनपुराणे। श्रवणः; श्रवणा; अश्विन्याद्यन्तर्गतद्वाविंशतिनक्षत्रम्। ५१
श्राणम् त्रि. [श्रा+क्त] पक्वं; घृतदुग्धजलभिन्नपक्वद्रव्यम्। २७६
श्राणा स्त्री. [श्रायते स्मेति, श्रा+क्त+टाप्] यवागूः; ऊष्णिका; तरला; विलेपिका। ३२०
श्राद्धदेवः पुं. [श्राद्धस्य देवः] श्राद्धदेवता; यमः; 'श्राद्धदेवेन कथितं विश्वामित्रस्य चेष्टितम्'—इति मार्कण्डेये (८।१५६)। मनुभेदः; स तु विवस्वतः संज्ञायां पत्न्यां जातः; 'मनुर्वैवस्वतो ज्येष्ठः श्राद्धदेवः प्रजापतिः। ततो यमो यमी चैव यमलौ सम्बभूवतुः'—इति मार्कण्डेये (१०६।४)। ७२
श्रान्तः पुं. [श्रम्+क्त] शान्तः; निवृत्तेन्द्रियलौल्यः; जितेन्द्रियः; श्रमयुक्ते त्रि.। [श्रम् तपःखेदयोः+ इत्यस्मात् क्त प्रत्ययेन निष्पन्नः] 'सखि मत्प्राणनाथं तु साधयन्ती निरन्तरम्। अतिश्रान्तासि सद्भावस्नेहयोरियमौचिती'—इति काव्यचन्द्रिका। ३९९
श्रीः स्त्री. [हरिं श्रयतीति। श्रि+'क्विब्वचिप्रच्छीति' क्विप्, दीर्घश्च] लक्ष्मीः; कमला; पद्मा; पद्मवासा; हरिप्रिया; क्षीरोदतनया; मा; इन्दिरा; लोकमाता; 'श्रियं च देवदेवस्य पत्नी नारायणस्य या'—इति विष्णुपुराणे (१।८।१३)। शोभा (८१३); 'एवमादिभिराकीर्णः श्रियं पुष्यन्नयं गिरिः'—इति रामायणे (२।९४।१०)। लवङ्गं; वेशरचना; सरस्वती; सरलवृक्षः; त्रिवर्गः; विधा; उपकरणं; विभूतिः; मतिः; अधिकारः; प्रभा; कीर्तिः; वृद्धिः; सिद्धिः; वृत्तार्हन्माता; कमलं; बिल्ववृक्षः; वृद्धिनामौषधं; सम्पत्तिः; 'न दातुं नोपभोक्तुं वा शक्नोति कृपणः श्रियम्।' देवादिनाम्नः पूर्वं श्रीशब्दप्रयोगः कर्तव्यः। यथा—'देवं गुरुं गुरुस्थानं क्षेत्रं क्षेत्राधिदेवताम्। सिद्धं सिद्धाधिकारांश्च श्रीपूर्वं समुदीरयेत्।' एकाक्षरच्छन्दोविशेषः; पुं. [श्रि+क्विप् दीर्घश्च] रागविशेषः; षड्रागान्तर्गतपञ्चमरागः। ३१
श्रीकण्ठः पुं. [श्रीः शोभा कण्ठे यस्य] शिवः; कुरुजाङ्गलदेशः; स तु हस्तिनापुरस्य उत्तरपश्चिमे वर्तते। पक्षिविशेषः; 'स्त्री संज्ञा भासभषककपिश्रीकर्णछिक्कराः। शिखिश्रीकण्ठपिप्पीकरुरुश्येनाश्च दक्षिणाः'—इति बृहत्संहितायाम् (८६।३०)। श्रीकण्ठपदलाञ्छनः; पुं.

[श्रीकण्ठ इति पदं लाञ्छनं यस्य] भवभूतिः । स तु मालतीमाधवादिनाटककर्ता। यथा—'अस्ति खलु तत्रभवान् काश्यपः श्रीकण्ठपदलाञ्छनो भवभूतिर्नाम'—इति उत्तरचरिते प्रस्तावनायाम्। ११

श्रीकण्ठसखः पुं. [श्रीकण्ठस्य शिवस्य सखा। 'राजाहःसखिभ्यष्टच्'] कुबेरः; ऐलविलः; पौलस्त्यः; वैश्रवणः; किन्नरेश्वरः; धनदः; श्रीदः; यक्षः; मनुष्यधर्मा; धनाध्यक्षः; उत्तराशापतिः; नरवाहनः; गुह्यकः; राजराजः; धनी; पुण्यजनेश्वरः। ७८

श्रीखण्डः पुं.– क्ली. [श्रियः शोभायाः खण्ड इव यत्र] चन्दनं: मलयजं; रोहणद्रुमः; 'तद्युक्तं विपरीतकारिणि तव श्रीखण्डचर्चाविषम्। शीतांशुस्तपनो हिमं हुतवहः क्रीडामुदो यातनाः'—इति गीतगोविन्दे (९।१०)। ५४४

श्रीदः पुं. [श्रियं ददातीति । श्री+दा+क] श्रीकण्ठसखः; कुबेरः; शोभादातरि त्रि.। विष्णुः; सहस्रनामस्तोत्रे। ७८

श्रीधरः पुं. [धरतीति, धृ+अच्, श्रिया धरः] विष्णुः; 'मा भैर्मन्दमनो विचिन्त्य बहुधा यामीश्चिरं यातनाः, नामी नः प्रभवन्ति पापरिपवः स्वामी ननु श्रीधरः । आलस्यं व्यपनीय भक्तिसुलभं ध्यायस्व नारायणं, लोकस्य व्यसनापनोदनकरो दासस्य किं न क्षमः'—इति मुकुन्दमालायाम् (९)। २३

श्रीनन्दनः पुं. [श्रियः नन्दनः] कामदेवः; लक्ष्मीपुत्रः; धनिकः; आनन्दकर्दमादयः। ३२

श्रीपतिः पुं. [श्रियः पतिः] विष्णुः; अच्युतः; गोविन्दः; जनार्दनः; 'सेव्यः श्रीपतिरेव सर्वजगतामेकान्ततः साक्षिणः। प्रह्लादश्च विभीषणश्च करिराट् पाञ्चाल्यहल्या ध्रुवः'—इति मुकुन्दमालायाम् (१६)। पृथिवीनाथः। २१

श्रीफलः पुं. [श्रीयुक्तं फलमस्य] बिल्ववृक्षः; मालूरः; राजादनी। १९४

श्रीरागः पुं.—षड् रागाणां मध्ये तृतीयरागः; 'गान्धारी देवगान्धारी मालवश्रीश्च सारवी ।रामकीर्यपि रागिण्यः श्रीरागस्य प्रिया इमाः'–इति सङ्गीतदामोदरः। १०१ अ.

श्रीवत्सः पुं. [श्रीयुक्तं वत्सं वक्षो यस्य] विष्णुः; गोविन्दः; श्रीकृष्णः; जनार्दनः; विष्णुचिह्नविशेषः (२७); स तु वक्षस्य शुक्लवर्णदक्षिणावर्तलोमावली। 'प्रभानुलिप्तश्रीवत्सं लक्ष्मीविभ्रमदर्पणम्। कौस्तुभाख्यमपां सारं बिभ्राणं बृहतोरसा'—इति रघौ (१०।१०)। अर्हतां ध्वजः; सुरुङ्गाभेदः। २४

श्रीवत्साङ्कः पुं. [श्रीवत्सः अङ्कश्चिह्नं यस्य] विष्णुः; श्रीवराहः; जनार्दनः; 'लब्धवराः क्षीरोदं गत्वा ते तुष्टुवुः सुराः सेन्द्राः। श्रीवत्साङ्कं कौस्तुभमणिकिरणोद्भासितोरस्कम्'—इति बृहत्संहितायाम् (४३।३)। २१

श्रीवृक्षः पुं. [श्रीप्रदः श्रीप्रियो वा वृक्षः। शाकपार्थिवादिवत् समासः] अश्वत्थवृक्षः; पिप्पलः; बोधिद्रुमः; अश्वस्य ह्रदावर्तः (४३८); श्रीवृक्षकः; माघे (५।५६)। बिल्ववृक्षः; 'इषे मास्यसिते पक्षे नवम्यामार्द्रयोगतः। श्रीवृक्षे बोधयामि त्वां यावत् पूजां करोम्यहम्'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। विष्णोर्वक्षःस्थलस्थशुभावर्तविशेषः; 'वक्षः श्रीवृक्षकान्तं मधुकरनिकरश्यामलं शार्ङ्गपाणेः। संसाराध्वश्रमार्तैरुपवनमिव यत् सेवितं तत्प्रपद्ये'—इति विष्णुपादादिकेशान्तवर्णनस्तोत्रे (२८)। १९६

श्रीवृक्षकी पुं. [श्रीवृक्षकः तन्नामकरोमचिह्नं विद्यते अस्य] ह्रदावर्ताश्वः। ४३८

श्रुतिः स्त्री. [श्रूयतेऽनयेति। श्रु+'श्रुयजिस्तुभ्यः करणे' इत्युक्त्या करणे क्तिन्। श्रूयते गुरूपदेशाद् या वा] वेदः; आम्नायः; स्वाध्यायः; निगमः; छन्दः; आगमः; 'श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः'—इति मनुः (२।१०)। (५१६) कर्णः; श्रोत्रं; श्रवः; श्रवणम्; 'करौ हरेर्मन्दिरमार्जनादिषु श्रुतिं चकाराच्युतसत्कथोदये'—इति भागवते (९।४।१८)। श्रुतीन्द्रियग्राह्यः शब्दः; घ्राणस्य गोचरो गन्धो गन्धत्वादिरपि स्मृतः। तथा रसो रसज्ञायास्तथा शब्दोऽपि च श्रुतेः'—इति भाषापरिच्छेदः। [श्रु+भावे क्तिन्] श्रोत्रकर्म; 'यन्नामश्रुतिमात्रेण पुमान् भवति निर्मलः। तस्य तीर्थपदः किं वा दासानामवशिष्यते'—इति भागवते (९।१५।१६)। वार्ता; 'व्यावृत्ता यत्परस्वेभ्यः श्रुतौ तस्करता स्थिता'—इति रघौ (१।२७)। श्रवणनक्षत्रं; षड्जाद्यारम्भिका; 'रणद्भिराघट्टनया नभस्वतः पृथक्विभिन्नश्रुतिमण्डलैः स्वरैः'—इति माघे (१।१०)। ९

श्रेणिः पुं.– स्त्री. [श्रयति श्रीयते वा। श्रि+'वहिश्रिश्रु-

युद्विति' नि] निश्छिद्रपङ्क्तिः; पङ्क्तिः; श्रेणी; विञ्जोली; वीथी; आलिः; पालिः; आवलिः; वीथिः; वीथिका; राजी; राजिः; रेखा; लेखा; 'न षट्पद-श्रेणिभिरेव पङ्कजं सशैवलासङ्गमपि प्रकाशते';—इति कुमारे (५।९)। समानशिल्पिसंहतिः; सेकपात्रम्। ७२१

श्रेणी स्त्री. [श्रेणि+कृदिकारादिति ङीष्] श्रेणिः; 'श्रेणीबन्धाद्वितन्वद्भिरस्तम्भां तोरणस्रजम् । सारसैः कलनिर्ह्रादैः क्वचिदुन्नमिताननौ'—इति रघौ (१।४१)। ७२१

श्रेयः [स्] क्ली. [इदमनयोरतिशयेन प्रशस्यम्। प्रशस्य+ईयसुन्, 'प्रशस्यस्य श्रः' इति श्र] शुभं; शिवं; भद्रं; कल्याणं; 'प्रतिबध्नाति हि श्रेयः पूज्यपूजाव्यतिक्रमः' —इति रघौ (१।७९)। शाली (३७५); श्रेष्ठः; 'प्रतिग्रहाच्छिलः श्रेयांस्ततोऽप्युञ्छः प्रशस्यते'—इति मनुः। (१०।११२)। (१२५) धर्मं; पुण्यं; सुकृतं; वृषम्। मुक्तिः; चतुर्वर्ग एव श्रेयः। 'धर्मार्थाविच्यते श्रेयः कामार्थौ धर्म एव च। अर्थ एवेह वा श्रेयस्त्रिवर्ग इति तु स्थितिः'—इति मनुः (२।२२४)। १२२

श्रेष्ठः त्रि. [प्रशस्य+इष्ठन्] प्रशस्तः; प्रेष्ठः; अनुत्तमः; वरं; वरः; श्रेयान्; पुष्कलः; सत्तमः; अतिशोभनः; मुख्यः; वरेण्यः; प्रमुखः; अग्रः; अग्रहरः; उत्तमः; प्रग्रहः; अनुत्तमः; अग्रीयः; प्रवेकः; अग्र्यः; अग्रियः; अनवरः; अग्रिमः; प्राग्रः; प्राग्रहरः; प्रवर्हः; वृद्धः; ज्येष्ठः; क्ली. गोदुग्धं; पुं. कुबेरः; नृपः; द्विजः; विष्णुः; महादेवः; 'विश्वरूपः स्वयं श्रेष्ठो बलवीरो बलो गणः' —इति महाभारते (१३।१७।४०)। ६८९

श्रोणः पुं. [श्रोणतीति, श्रोण् संघाते+अच्] पङ्गुः; खञ्जः। ६१०

श्रोणिः स्त्री. [श्रोण् सङ्घाते+इन्। यद्वा श्रु श्रवणे+'वहिश्रिश्रुद्रुविति' नि] कटिः; 'फुल्लतीरद्रुमोत्तंसाः सङ्गमश्रोणिमण्डलाः। पुलिनाभ्युन्नतोरस्या हंसहासाश्च निम्नगाः'—इति बृहत्संहितायाम् (५६।७)। पन्थाः। ५१२

श्रोत्रम् क्ली. [श्रूयतेऽनेनेति। श्रु+'हुयामाश्रुभसिभ्यस्त्रन्' इति त्रन्] कर्णम्; श्रुतिः; श्रवः; श्रवणं; 'इत्युद्गताः पौरवधूमुखेभ्यः शृण्वन्कथाः श्रोत्रसुखाः कुमारः' —इति रघौ (७।१६)। श्रोत्रियता। ५१६

श्रोत्रियः पुं. [छन्दोऽधीते इति। छन्दस्+'श्रोत्रियश्छन्दोऽधीते' इति घन् प्रत्ययेन साधुः] वेदाध्येतृब्राह्मणः; छान्दसः; अनूचानः; सर्ववेदः; 'जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते। विद्याभ्यासी भवेद्विप्रः श्रोत्रियस्त्रिभिरेव हि'—इति पाद्मे। 'एकां शाखां सकल्पां वा षड्भिरङ्गैरधीत्य च। षट्कर्मनिरतो विप्रः श्रोत्रियो नाम धर्मवित्'—इति दानकमलाकरः। ३९५

श्लक्ष्णम् त्रि. [श्लिष् आलिङ्गने+'श्लिषेरच्चोपधायाः' इति क्स्न, अकारश्चोपधायाः] मधुरवाक्; अल्पं (६८८); मनोहरं; श्लक्ष्णकम्; 'अहिंसयैव भूतानां कार्यं श्रेयोऽनुशासनम्। वाक् चैव मधुरा श्लक्ष्णा प्रयोज्या भूतिमिच्छता'—इति मनुः (२।१५९)। ३६५

श्लथः त्रि. [श्लथयतीति। श्लथ्+अच्] शिथिलः; प्रश्लथः; 'शिथिलः प्रश्लथः श्लथः'—इति जटाधरः। 'श्लथशिरसिजपातभारादिव नितरां नतिमद्भिरंसभागैः' —इति माघे (७।६२)। दुर्बलः। ७७७

श्लाघा स्त्री. [श्लाघ् कत्थने+अ+टाप्] अर्थवादः; प्रशंसा; स्तोत्रम्; ईडा; स्तुतिः; नुतिः; विकत्थनं; स्तवः; वर्णना; 'ज्ञाने मौनं क्षमा शक्तौ त्यागे श्लाघाविपर्ययः। गुणा गुणानुबन्धित्वात् तस्य सप्रसवा इव'—इति रघौ (१।२२)। परिचर्या; अभिलाषः। १४५

श्लीपदम् क्ली. [श्रीयुक्तं वृद्धिमत् पदमत्रेति। पृषोदरादित्वात् साधु] स्फीतपादादि; पादवल्मीकं; 'लङ्घनालेपनस्वेदरेचनं रक्तमोक्षणैः। प्रायः श्लेष्महरैरुष्णैः श्लीपदं समुपाचरेत्'। 'धत्तूरैरण्डनिर्गुण्डीवर्षाभूशिग्रुसर्षपैः। प्रलेपः श्लीपदं हन्ति चिरोत्थमपि दारुणम्।' ६०४

श्लेषः पुं. [श्लिष्+घञ्] संयोगः; सन्धिः; दाहः; आलिङ्गनं; शब्दालङ्कारविशेषः; 'वाच्यभेदेन भिन्ना यद्युगपद्भाषणस्पृशः। श्लिष्यन्ति शब्दाः श्लेषोऽसावक्षरादिभिरष्टधा।' २८९

श्लेष्मणः त्रि. [श्लेष्मा अस्त्यस्येति। श्लेष्मन्+'लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यः शनेलचः' इति न] कफी; श्लेष्मलः; श्लेष्मयुक्तः। ६०६

श्लेष्मलः त्रि. [श्लेष्मास्त्यस्येति। श्लेष्मन्+'सिध्मादिभ्यश्च' इति लच्] श्लेष्मयुक्तः; श्लेष्मणः; कफी; पुं. [श्लेष्मन्+लच्] वृक्षविशेषः। ६०६

श्लेष्मा [न्] पुं. [श्लिष्+'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति

मनिन्] कफः; श्लेष्मकः । ६०५

श्लेष्मातकः पुं. [श्लेष्मात एव+स्वार्थे कन् । श्लेष्माणमततीति, श्लेष्म + अत् + अच्] बहुवारकवृक्षः ; श्लेष्मातः; शेलुः; बहुवारः; पिच्छिलः; द्विजकुत्सितः, 'वर्जयेन्मधु मांसं च भौमानि कवकानि च । भूस्तृणं शिग्रुकं चैव श्लेष्मातकफलानि च ।' १९७

श्लेष्मान्तकः पुं. [श्लेष्मणा स्वसेवनजनितकफेन अन्तयति नाशयति । श्लेष्म+अन्त+णिच्+ण्वुल] वृक्षविशेषः; श्लेष्मातकः; बहुवारः; पिच्छिलः; द्विजकुत्सितः; शेलुः; शीतफलः; शीतः; शाकटः; कर्बुदारकः; भूतद्रुमः; गन्धपुष्पः । १९७

श्लोकः पुं. [श्लोक्यते इति । श्लोक् संघाते+घञ्] कीर्तिः; यशः; अभिख्या; समाख्या; 'पुण्यश्लोको नलो राजा ।' यशः; [श्रु श्रवणे, 'इग्भीकापाशल्यतिमर्चिभ्यः कन्' इति कन् प्रत्ययो बाहुलकाद्भवति, गुणः, कपिलकादित्वाल्लत्वम् । श्रूयते इति श्लोकः । यद्वा श्लोक् संघाते, 'पुंसि संज्ञायां घः', श्लोक्यते पद्यरूपेण संहन्यते कविभिः श्लोकः] श्लोकनामकारणम्—'मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः । यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् । तस्येत्थं ब्रुवतश्चिन्ता बभूव हृदि वीक्षतः । शोकार्तेनास्य शकुनेः किमिदं व्याहृतं मया । चिन्तयन् स महाप्राज्ञश्चकार मतिमान् मतिम् । शिष्यं चैवाब्रवीद्वाक्यमिदं स मुनिपुङ्गवः । पादबन्धोऽक्षरसमस्तन्त्रीलयसमन्वितः । शोकार्तस्य प्रवृत्तो मे श्लोको भवतु नान्यथा'—इति वाल्मीकीयरामायणे बालकाण्डे २ स्वर्गः । १५३

श्वःश्रेयसम् क्ली. [श्वः आगामिदिने श्रेयो यत्र । 'श्वसो वसीयःश्रेयसः' इति अच्] कल्याणं; श्वोवसीयसं; श्वोवसीयं; शिवं; शुभं; भविकं; भावुकं; श्रेयः; भव्यं; भद्रं; मङ्गलम्; 'श्वःश्रेयसमवाप्तासि भ्रातृभ्यां प्रत्यभाणि सा'—इति भट्टिः (४।३८)। युक्ते त्रि. । १२२

श्वदंष्ट्रा स्त्री. [शुनो दंष्ट्रेव, कण्टकावृतत्वात्] गोक्षुरः; स्थलशृङ्गाटः; त्रिकण्टकः; श्वदंष्ट्रकः; गोक्षुरकः; 'पिप्पल्यादीनां श्वदंष्ट्रावसुकासवः कूष्माण्डादीनां दार्वीकरासवः'—इति सुश्रुते (१।४६) । २०१

श्वपचः पुं. [श्वानं पचतीति । श्वन्+पच्+अच्] चण्डालः; चाण्डालः; अन्त्यावसायी 'चाण्डालः श्वपचः क्षत्ता मृतो वैदेहकस्तथा । मागधायोगवौ चैव सप्तैतेऽन्त्यावसायिनः ।' ५९८

श्वपाकः पुं. [शुनां पाकः कार्यत्वेन यस्य] चण्डालः; श्वपचः; श्वपक्; 'क्षत्तुर्जातस्तथोग्रायां श्वपाक इति कीर्त्यते'—इति मनुः (१० अध्यायः) । ५९८

श्वभ्रम् क्ली. [श्वभ्रयते यदिति । श्वभ्र् गत्याम्+कर्मणि घञ्] छिद्रम्; अगाधं; गर्तं; शुषिरं; वपा; बिलं; विवरम्; अन्तरः; अवटुः; निव्यथनं; रन्ध्रं; रोकं; कुहरम्; 'पततो यस्य वै गर्ते स्वप्ने द्वारं पिधीयते । न चोत्तिष्ठति यः श्वभ्रात् तदन्तं तस्य जीवितम्'—इति मार्कण्डेये (४३।२९) । ६२४

श्वयथुः पुं. [श्वि गतिवृद्ध्योः+'ट्वितोऽथुच्' इति अथुच्] शोथः; शोफः; श्वयः; श्वयनम्; 'श्वयथुश्वसोन्मादज्वरकासभवा वणिक्पीडा'—इति बृहत्संहितायाम् (३२।१०) । ६०२

श्वयनम् क्ली.— श्वयः; शोफः; शोथः; श्वयथुः । ६०२

श्वशुर्यः पुं. [श्वशुरस्यापत्यमिति । श्वशुर+'राजश्वशुराद्यत्' इति यत्] श्यालः; 'ददौ वैदेहदेशे च राज्यं गोपालकाय सः । सत्कारहेतोर्नृपतिः श्वशुर्यायानुगच्छते'—इति कथासरित्सागरे (१९।५७) । देवरः । ८४०

श्वसनः पुं. [श्वसितीति । श्वस्+ल्यु] वायुः; पवनः; मरुत्; अनिलः; मारुतः; 'इन्द्रयमवरुणनिर्ऋतिश्वसनेशपितामहाग्निकृताः'—इति बृहत्संहितायाम् (३४।२) । मदनवृक्षः; क्ली. [श्वस्+ल्युट्] श्वसितं; निश्वासः; 'श्वसनचलितपल्लवाधरोष्ठे नवनिहितेर्ष्यमिवावधूनयन्ती'—इतिकिराते (१०।३४) । स्पर्शनम्; 'घ्राणेन गन्धं रसनेन वै रसं रूपं च दृष्ट्या श्वसनं त्वचैव'—इति भागवते (२।२।२९) । ७५

श्वा [न्] पुं. [श्वयति गच्छतीति । श्वि गतौ+'श्वन्नुक्षन्पूषन्निति' कनिन् प्रत्ययेन साधुः] कुक्कुरः; कुर्कुरः; कुकुरः; कौलेयकः; सारमेयः; भषणः; श्वानः; शुनकः; मृगदंशः; शालावृकः; 'कुक्कुरः श्वा च भषकः शुनको मृगदंशकः । कौलेयको रन्तिदेवः सारमेयो रतव्रणः ।' 'कुक्कुरो दीर्घसुरतः श्वानो ग्राममृगोऽपि च । वक्रपुच्छः शयालुः स्यात् शरत्काम्यरतत्रपः । औषधादियोगितः श्वा स्यादलर्कोऽप्यलर्ककः । मृगयाकुशलः श्वा तु विश्वकद्रुः पुमानयम्'—इति शब्दरत्नावली । २८१

श्वापदः पुं [शुन इव पद यस्य । 'शुनो दन्तदंष्ट्राकर्णकुन्दवराहपुच्छपदेषु' इत्युक्त्या दीर्घः] हिंस्रपशुः; व्याघ्रादिवनचरपशुः; 'श्वापदो द्विखुरो हस्ती वानरः पक्षिपञ्चमः । औदकाः पशवः षष्ठाः सप्तमास्तु सरीसृपाः'— इति विष्णुपुराणे (१।५।५१) । व्याघ्रः । २३३

श्वावित् [ध्] पुं. [श्वानं विध्यतीति । श्वन्+व्यध्+क्विप्, 'नहिवृतीति' दीर्घः] शल्यः; शल्ली; शललः; शल्लकः; शल्लकी । २३३

श्वित्रम् क्ली. [श्वेतते इति । श्विता वर्णे+'स्फायितञ्चिवञ्चीति' रक्] श्वेतकुष्ठं; कुष्ठं; श्वेतं; श्वेत्रम्; 'शपतोरसकृद्विष्णुं यद्ब्रह्म परमव्ययम् । श्वित्रं न जातं जिह्वायां नान्धं विविशतुस्तमः'—इति भागवते (७।१।१८) । 'कुष्ठैकसम्भवं श्वित्रं किलासं चारुणं भवेत् । निर्दिष्टमपरिस्त्रावि त्रिधातूद्भवसंश्रयम् ।' 'अरुणं रक्तगे वाते ताम्रं पित्ते पलङ्गते । श्वेतं श्लेष्मणि मेदःस्थे श्वित्रं कुष्ठं परं परम्'—इति चरकः । ६०४

श्वेतः त्रि. [श्वेतो वर्णोऽस्यास्तीति । श्वेत+अर्श आद्यच्] शुक्लवर्णयुक्तः; 'ललाटोदयमाभुग्नं पल्लवस्निग्धपाटला । बिभ्रती श्वेतरोमाङ्कं सन्ध्येव शशिनं नवम्' -इति रघौ (१।८३) । पुं. [श्वेतते इति । श्वित् + पचाद्यच्] शुक्लवर्णः; द्वीपविशेषः; 'क्षीरोदधेर्योत्तरतो हि द्वीपः श्वेतः स नाम्ना प्रथितो विशालः'—इति महाभारते (१२।३३५।८) । पर्वतभेदः । स तु जम्बूद्वीपपर्वतानामन्यतमः; 'हिमवान् हेमकूटश्च ऋषभो मेरुरेव च । नीलः श्वेतस्तथा शृङ्गी सप्तास्मिन् वर्षपर्वताः'–इति मार्कण्डेये (५४।९) । कपर्दकः; शुक्रग्रहः; श्वेताभ्रः; शङ्खः; जीवकः; शिवावतारविशेषः; राजविशेषः; नागविशेषः; (७९१) क्ली. रूप्यं; श्वेतकं; रजतम् । ७३२

श्वेतच्छदः पुं. [श्वेतः छदो यस्य] हंसः; चक्राङ्गः; मानसौकाः; श्वेतगरुत्; श्वेतगरुतः; गन्धपत्रः । २५१

श्वेतरोचिः [स्] पुं. [श्वेतं रोचिर्यस्य] चन्द्रः; चन्द्रमाः; इन्दुः; सोमः । ४२

श्वेतवासाः [स्] पुं. [श्वेतं वासो यस्य] शुक्लवस्त्रधारिसंन्यासी; जैनयतिः; रजोहरणधारी; सिताम्बरः; परिहितशुक्लवसने त्रि. । ३४४

श्वोवसीयः [स्] क्ली. [वसुशब्दः प्रशस्तवाची, तत ईयसुनि वसीयः । श्वःशब्द उत्तरपदार्थप्रशंसामाशीर्विषयतामाह । मयूरव्यंसकादित्वात् समासः । 'अनित्यत्वेन श्वसो वसीयःश्रेयसः' इति नाच्] कल्याणं; शिवं; भद्रं; मङ्गलं; शुभम् । १२२

श्वोवसीयसम् क्ली. [श्वोवसीयस्+'श्वसो वसीयःश्रेयसः' इति अच्] कल्याणम्; 'श्वःश्रेयसं शुभशिवे कल्याणं श्वोवसीयसं श्रेयः । क्षेमं भावुकभविककुशलमङ्गलभद्रमद्रशस्तानि'— इति हेमचन्द्रः । तद्वति त्रि. । १२२

ष

षट्कम् क्ली.— षट्संख्यासंहतिः । २८३

षट्कर्मा [न्] पुं. [षट् कर्माणि यजनादीनि यस्य] यागादिभिर्युतो ब्राह्मणः; 'इज्याध्ययनदानानि याजनाध्यापने तथा । प्रतिग्रहश्चं तैर्युक्तः षट्कर्मा विप्र उच्यते ।' ३८१

षट्चरणः पुं. [षट् चरणा यस्य] भ्रमरः; मधुकरः; मधुपः; मधुव्रतः; शिलीमुखः; भृङ्गः; पुष्पलिट्; इन्दिन्दिरः; अलिः; चञ्चरीकः; अली; द्विरेफः; 'षट्चरणकीटजुष्टं परागघुणपूर्णमायुधं त्यक्त्वा । त्वां मुष्टिमेयमध्यामधुना शक्ति स्मरो वहति'—इति आर्यासप्तशत्याम् (५८७) । यूका; षट्पादः । २५५

षड्गवम् क्ली. [षट् गावो यत्र । समासे अच्] पशुषट्कसंख्या; त्रि. गोषट्कयुक्तहलादि; 'अष्टागवं धर्म्यंहलं षड्गवं जीविकार्थिनाम् । चतुर्गवं नृशंसानां द्विगवं ब्रह्मघातिनाम्'—इत्याह्निकतत्त्वम् । प्रत्ययविशेषः; स तु 'प्रकृत्यर्थस्य षट्त्वे षड्गवच्' इति वार्तिकोक्त्या भवति । 'पशुभ्यो गोयुगं युग्मे परं षट्त्वे तु षड्गवम्' —इति हेमचन्द्रः । 'अन्यं तस्मै वरं दद्यां सौवर्णं हस्तिषड्गवम् ।' 'षण्णां गवां समाहारः' इति द्विगुसमासनिष्पन्नम् । तत्र क्ली. । २८३

षड्जः पुं. [षड्भ्यः स्थानेभ्यः जातः इति । षष्+जन्+ड] तन्त्रीकण्ठोत्थितस्वरविशेषः; 'नासां कण्ठमुरस्तालु जिह्वां दन्तांश्च संश्रितः । षड्भ्यः संजायते यस्मात् तस्मात् षड्ज इति स्मृतः । 'षड्जं रौति मयूरो हि गावो नर्दन्ति चर्षभम् । अजा विरौति गान्धारं क्रौञ्चो नदति मध्यमम्'—इति भरतः । ८६३

षड्दशनः पुं. [षड् दशना रदना यस्य] षड्दन्तः; षड्दन्तवद्वृषभादिः । २६७

षण्डः पुं. [षणु दाने+'अमन्ताड् डः' इति ड । बहुलवचनात् सत्वाभावः] षण्ढः; शण्डः; शण्ढः; क्लीवं; समूहः (८११); 'नता निश्चलमूर्द्धानो बभूवुस्ते महोरगाः । सायाह्ने कदलीषण्डे कम्पितास्तस्य वायुना'—इति हरिवंशे (३३।३२) । पुं.– क्ली. [षणु दाने+ड] अब्जादिकदम्बं; पद्मकुमुदादिसमूहः; 'कलरवमुपगीते षट्पदौघेन धत्तः कुमुदकमलषण्डे तुल्यरूपामवस्थाम्' —इति माघे (११।१५) । चिह्नम्; 'यानि रूपाणि जगृहे इन्द्रो हयजिहीर्षया । तानि पापस्य षण्डानि लिङ्गं षण्डमिहोच्यते'—इति भागवते (४।१९।२३) । ४३०

षण्ढः पुं. [शाम्यति शिश्नाभावात् । शम्+'शमेर्ढः' इति ढप्रत्ययेन साधुः] नपुंसकः; क्लीवं; वर्षवरः; षण्डः; पण्डकः; उभयव्यञ्जनः; पोटा; तृतीयाप्रकृतिः; षण्डकः । ४३०

षण्ढतिलः पुं. [षण्ढः निष्फलः तिलः] तिलपिञ्जः; तिलपेजः; अरण्यतिलः । ८८३

षण्मुखः पुं. [षड् मुखानि यस्य] कार्त्तिकेयः; षडाननः; षड्वदनः; षड्वक्त्रः; अग्निभूः; 'त्वं क्रीडसे षण्मुख ! कुक्कुटेन यथेष्टनानाविध कामरूपी'—इति महाभारते (३।२३१।१६) । १९

षष्टिक्यम् त्रि. [षष्टिकानां भवनं क्षेत्रम् । षष्टिक+'यवयवकषष्टिकाद् यत्' इति यत्] षष्टिकधान्योपयुक्तक्षेत्रादि; षष्टिकक्षेत्रम् । १६३

षोडन् [त्] पुं. [षड् दन्ता अस्य । 'पृषोदरादीनि यथोपदिष्टम्' इति 'षष उत्वं दतृदशधासूत्तरपदादेः ष्टुत्वञ्च] षड्दन्तयुक्तवृषः । २६७

स

संयत् पुं.–स्त्री. [संयम्यतेऽत्रेति । सम्+यम्+क्विप् 'गमादीनाम्' इत्युक्त्या मलोपः, तुक्] युद्धं; रणं; 'उत्थापितः संयति रेणुरश्वैः सान्द्रीकृतः स्यन्दनवंशचक्रैः' — इति रघौ (७।३९) । ४५३

संयतः त्रि. [सम्+यम्+क्त] बद्धः; नद्धः; 'मायामिव परिभ्रष्टां हरिणीमिव संयताम्'—इति रामायणे (१।१०।२५) । कृतसंयमः; 'यो यः कश्चित्तीर्थयात्रान्तु गच्छेत्, सुसंयतः स च पूर्वं गृहे स्वे । कृतोपवासः शुचिरप्रमत्तः, सम्पूजयेद्भक्तिनम्रो गणेशम्'—इति प्रायश्चित्ततत्त्वम् । ३४०

संयतः पुं.— तपस्वी; शान्तः; मुनिः; लिङ्गी; यतिः; व्रती । ३४४

संयमः पुं. [सम्+यम्+'यमः समुपनिविषु च' इति अप्] व्रताद्यङ्गपूर्वदिनकर्तव्याचारः; वियामः; वियमः; यामः; यमः; संयामः; संयमनं; नियमः; बन्धनम्; 'कापि कुन्तल्पंव्यानसंयमव्यपदेशतः । बाहुमूलं स्तनौ नाभिपङ्कजं दर्शयेत् स्फुटम्'—इति साहित्यदर्पणे (३।१५५) । सङ्कोचः; 'मयि दृष्टे सदा यस्मात् कुरुषे नेत्रसंयमम् । तस्माज्जनिष्यते मूढे प्रजासंयमनं यमम्'—इति मार्कण्डेये (७७।४) । ३९७

संयुगः पुं.– क्ली. [सम्+युजिर् योगे+घञ् । उक्थादिषु युगशब्दस्य पाठान्निपातनादगुणत्वम् । 'विशेषोऽसौ निपातनमिष्यते कालविशेषे रथाद्युपकरणे च'—इति वृत्तिः । सङ्गता रथयुगा यस्मिन् वा] युद्धं; संग्रामः; समरः; रणम्; आयोधनं; संगरं; अनयस्यानुपायस्य संयुगे परमः क्षयः । संशयो जायते साम्याद् जयश्च न भवेद् द्वयोः'—इति महाभारते (२।१७।५) । ४५३

संयोगः पुं. [सम्+युज्+घञ्] मेलनं; न्यायमते गुणपदार्थः; 'अप्राप्तयोस्तु या प्राप्तिः सैव संयोग ईरितः' —इति भाषापरिच्छेदः । उदयात्पूर्वं दशम्याः शेषः; 'उदयात्प्राग्दशम्यास्तु शेषः संयोग उच्यते । उपरिष्टात् प्रवेशस्तु तस्मात् तां परिवर्जयेत्'—इति तिथ्यादितत्त्वम् । सम्बन्धमात्रम् । ६०६

संरम्भः पुं. [सम्+रभ्+घञ्+नुम्] दर्पः; मदः; अवलेपः; मानः; गर्वः; अहङ्कारः; आवेशः; संवेगः; सम्भ्रमः; आटोपः; 'न संरम्भेण सिध्यन्ति सर्वार्थाः सान्त्वया यथा'—इति भागवते (८।६।२४) । क्रोधः; 'ताडयित्वा तृणेनापि संरम्भान्मतिपूर्वकम् । एकविंशतिमाजातीः पापयोनिषु जायते'—इति मनुः (४।१६६) । वेगः; 'संयम्य मन्युसंरम्भं मानयन्तो मुनेर्वचः । उपगीयमानानुचरैर्ययुः सर्वे त्रिविष्टपम्'—इति भागवते (८।६।२४) । उत्साहः; 'कार्यारम्भेषु संरम्भः स्थेय उत्साह इष्यते'—इति साहित्यदर्पणे ३ परिच्छेदे । ७२२

संलापः पुं. [सम्+लप्+घञ्] मिथोभाषणं; परस्परभाषणम्; अन्योऽन्यं प्रीतिभाषणम्; उक्तिप्रत्युक्तिभावेन विरोधरहितमन्योऽन्यभाषणं; रहसि भाषणं;

समन्ताल्लपनम्; उक्तिप्रत्युक्तिमद्वाक्यम्। १५०

संवत्सरः पुं. [संवसन्ति ऋतवो यत्र। सम्+वस् निवासे+ 'संपूर्वाच्चित्' इति त्सरन्] हायनः; शरत्; समाः; वत्सरः; संवत्; वर्षः; 'अधुना विक्रमादित्यराजवत्सरः; 'संवत्सरे तथा दानं तिलस्य च महाफलम्। परिपूर्वे तथा दानं यवानां च द्विजोत्तमाः। इदापूर्वेऽन्नवस्त्राणां धान्यानां चानुपूर्वके। उदासंवत्सरे दानं रजतस्य महाफलम्। ज्योतिर्विदस्त्विज्यमध्यात्प्रभवादेश्च सम्भवम्। ऊचुस्तद्वत्समाद्यादिवर्षाणामपि सम्भवम्'—इति मलमासतत्त्वम्। ११६

संवननम् क्ली. [सम्+वन्+ल्युट्] मूलीकर्म; कार्मणं; वशीकरणं; संवदनम्; 'हृदयानुप्रवेशो हि प्रभोः संवननं महत्'—इति कथासरित्सागरे (३४।१६९)। ७१६

संवर्तः पुं. [सम्+वृत्+घञ्] परिवर्तः; क्षयः; युगान्तः; जगद्विनाशः; कल्पान्तः; समसुप्तिः; संहारः; महाप्रलयः; प्रलयः; 'दहन्निव दिशो दिग्भिः संवर्ताग्निरिवोत्थितः'—इति भागवते (८।१५।२६)। (८०१) परिवर्तः; हायनः; वर्षः; संवत्; संवत्सरः। मुनिविशेषः; अयं हि धर्मशास्त्रप्रयोजकानामन्यतमः। 'ऋत्विक् तस्य तु संवर्तो बभूवाङ्गिरसः सुतः। भ्राता बृहस्पतेर्विप्र महात्मा तपसां निधिः'—इति मार्कण्डेये (१३०।११)। कर्षफलवृक्षः; मेघः; 'शुश्रुवे सुमहान् शब्दः संवर्तनिनदो यथा'—इति हरिवंशे (१२०।९०)। मेघनायकविशेषः; 'त्रियुते शकवर्षे तु चतुर्भिः शेषिते क्रमात्। आवर्तं विद्धि संवर्तं पुष्करं द्रोणमम्बुदम्। आवर्तो निर्जलो मेघः संवर्तश्च बहूदकः। पुष्करो दुष्करजलो द्रोणः सस्यप्रपूरकः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। ११७

संवसथः पुं. [संवसत्यत्रेति। सम्+वस्+'उपसर्गे वसेः'—इति अथ] ग्रामः; ग्रामधानः; खेटकः।

संवाहकः त्रि. [संवाहयतीति। सम्+वह्+णिच्+ण्वुल्] अङ्गमर्दी; संवाहः; अङ्गविमर्दकः; अङ्गमर्दकारकः; अङ्गमर्दकः; अङ्गमर्दः; 'प्रसाधका भोजकाश्च गात्रसंवाहका अपि। जलताम्बूलकुसुमगन्धभूषणदायकाः। कर्तव्याश्च सदा ह्येते ये चान्येऽभ्यासवर्तिनः'—इति कामन्दकीयनीतिसारे (१२।४५)। ५९०

संवित्तिः स्त्री. [सम्+विद्+क्तिन्] प्रेक्षा; प्रज्ञा; प्रतिभा; धीः; धिषणा; शेमुषी; मनीषा; बुद्धिः; मतिः; मेधा; संख्या; उपलब्धिः; 'छायां विनिर्धूय तमीमयीन्तां तत्त्वस्य संवित्तिरिवाप विद्याम्'—इति किराते (१६।३२)। प्रतिपत्तिः; जनस्याविवादः; चेतना; अनुभवः; 'श्वस्त्वया सुखसंवित्तिः स्मरणीयाधुनातनी। इति स्वप्नोपमान् मत्वा कामान् मागास्तदङ्गताम्'—इति किराते (११।३४)। ३३४

संवीतः त्रि. [सम्+व्ये+क्त] अपवारितः; पिहितः; संवृतः; स्थगितः; (७८१) आवृतः; संवृतः; प्रच्छादितः; 'तिरस्कृत्योच्चरेत् काष्ठलोष्टपत्रतृणादिना। नियम्य प्रयतो वाचं संवीताङ्गोऽवगुण्ठितः'—इति मनुः (४।४९)। ७४३

संवृतः पुं. [सम् + वृ + क्तप्रत्ययेन निष्पन्नः] आवृतः; अपवारितः; पिहितः; संवीतः; स्थगितः। ७४३

संवेगः पुं. [सम्+विज्+घञ्, 'चजोः कु'] दर्पः; मदः; अवलेपः; मानः; गर्वः; अहङ्कारः; आवेशः; संरम्भः; संभ्रमः; आटोपः; भयादिजनितत्वरा; 'अथ सभ्याः सभामध्ये समुच्छ्रितकरास्तदा। ऊचुरुद्विग्नमनसः संवेगात्सर्व एव हि'—इति महाभारते (२।७२।१४)। सम्यग्वेगः; 'अभग्नशमसंवेगलब्धसिद्धिर्नराधिपः। श्रीपर्वतादावद्यापि भव्यानामेति दृक्पथम्'—इति राजतरङ्गिण्याम्। (४।३९०)। ७२२

संवेद्यः पुं. [सम्यक् वेत्तुं लब्धुं योग्यः नदीयुग्मेन] सम्भेदः; नदीसङ्गमः; सिन्धुनद्योः सङ्गमः। ६६९

संवेशनम् क्ली. [सम्+विश्+ल्युट्] रतिक्रिया; निधुवनं; सम्प्रयोगः; रहः; रतिः; सुरतम्; मोहनं; मैथुनम्; उपवेशनम्; 'शीतोष्णवातवर्षेषु वृष इवानावृताङ्गः पीनः संहननाङ्गः स्थण्डिलसंवेशनामर्दनामज्जनरजसा महामणिरिव...विचचार'—इति भागवते (५।९।१०)। ५६९

संव्यानम् क्ली. [संवीयतेऽनेनेति + सम् + व्ये+ल्युट्] उत्तरीयवस्त्रम्; 'विपाण्डुसंव्यानमिवानिलोद्धतं निरुन्धतीः सप्तपलाशजं रजः'—इति किराते (४।२८)। वस्त्रम्। ५४६

संशयः पुं. [सम्+शी+अच्] सन्देहः; शङ्का; विचिकित्सा; वितर्कः; आरेकः; विभ्रमः; विकल्पः; भ्रान्तिः।

'स संशयो भवेद्या धीरेकत्राभावभावयोः । साधारणादि-धर्मस्य ज्ञानं संशयकारणम्'–इति भाषापरिच्छेदः । ६९१

संशितम् त्रि. [सम्+ शिञ् निशाने, शो तनूकरणे वा +क्त] सम्यक् सम्पादितं; सुनिश्चितम्; व्रतविषयक-यत्नवत्; अतितीक्ष्णम् । ४०२

संश्रवः पुं. [सम्+श्रु+अप्] अङ्गीकारः; आगूः; सङ्गरः; सन्धा; प्रतिश्रवः; प्रतिज्ञा; 'अथ भीमः सुहृन्मध्ये ;बाहुशब्दं तदाकरोत् । संश्रवे धृतराष्ट्रस्य गान्धार्या-श्चाप्यमर्षणः'—इति महाभारते (१५।३।६) । ७१५

संश्लेषः पुं. [सम्+श्लिष्+घञ्] मेलनं; सन्धिः; 'अनन्त-रैश्च संश्लेषमभ्येत्य तदनन्तरम् । तेषामन्यतमैर्भृत्यैः समाक्रम्यानयद्वशम्'—इति मार्कण्डेये (३७।१५) । आलिङ्गनम्; 'संश्लेषं च परस्त्रीभिर्दस्युरेतानि वर्जयेत्' —इति महाभारते (१२।१३३।१७) । ८३५

संसत् [द्] स्त्री. [संसीदन्त्यस्यामिति । सम्+सद्+क्विप्] सभा; परिषद्; सदः; समाजः; गोष्ठी; आस्थानी; 'तदद्भुतं संसदि रात्रिवृत्तंप्रातर्द्विजेभ्यो नृपतिः शशंस'—इति रघौ (१६।२४) । ७४५

संसर्गः पुं. [सम्+सृज्+घञ्] सम्बन्धः; स च समवायादिः। संसृष्टः; 'ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः । महान्ति पातकान्याहुः संसर्गश्चापि तैः सह'—इति मनुः । ८४५

संसारः पुं. [संसरत्यस्मादिति । सम्+सृ गतौ+घञ्] भवः; संसरणं; दुःखलोकः; कष्टकारकः; संसृतिः; 'भोक्तारमक्षरं शुद्धं सर्वत्र समवस्थितम् । तस्मादज्ञान-मूलोऽयं संसारः सर्वदेहिनाम्'—इति कौर्मे । 'पितृ-मातृसुहृद्भ्रातृकलत्रादिकृतेन च । हृष्टोऽसकृत्तथा दैन्यमश्रुपूर्णाननो गतः । एवं संसारचक्रेऽस्मिन् भ्रमता तात सङ्कटे । ज्ञानमेतन्मया प्राप्तं मोक्षसम्प्राप्तिकारणम्' —इति मार्कण्डेये । मिथ्याज्ञानजन्यवासना; मिथ्या-धीप्रभवा वासना; स्वादृष्टोपनिबद्धशरीरपरिग्रहः । ८०६

संसारी [न्] पुं. [संसारोऽस्त्यस्येति+इनि] संसार-विशिष्टप्राणी; शरीरी; चेतनः । १३४

संसिद्धः त्रि. [सम्+सिध्+क्त] परमसिद्धः; विशेषेण सिद्धः । ३२२

संसिद्धिः स्त्री. [सम्+सिध्+क्तिन्] साधनं; सम्यक्-सिद्धिः; प्रकृतिः; स्वभावः; मदोग्रा; परमा सिद्धिः; मोक्षः; 'मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम् । नाप्नु-वन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः'—इति भगव-द्गीतायाम् (८।१५) । फलम्; 'अतः पुंभिर्द्विजश्रेष्ठा वर्णाश्रमविभागशः । स्वनुष्ठितस्य धर्मस्य संसिद्धि-र्हरितोषणम्'—इति भागवते (१।२।१३) । ८६६

संस्कारः पुं. [सम्+कृ+घञ् । 'संपरिभ्यां करोतौ भूषणे' इति सुट्] वासना; प्रतियत्नः; अनुभवः; मानसकर्म; गुणविशेषः; पृथिव्यादिचतुःपदार्थगुणः; 'संस्कारभेदो वेगोऽथ स्थितिस्थापकभावने । मूर्तमात्रे तु वेगः स्यात् कर्मजो वेगजः क्वचित् । स्थितिस्थापक-संस्कारः क्षितौ केचिच्चतुर्ष्वपि । अतीन्द्रियः स विज्ञेयः क्वचित् स्पन्देऽपि कारणम् । भावनाख्यस्तु संस्कारो जीववृत्तिरतीन्द्रियः । उपेक्षानात्मकस्तस्य निश्चयः कारणं भवेत् । स्मरणे प्रत्यभिज्ञायामप्यसौ हेतुरुच्यते' —इति भाषापरिच्छेदे । शुद्धिः; अदृष्टविशेषजनक-कर्म । ७८०

संस्कारहीनः पुं. [संस्कारेण हीनः रहितः] संस्कार-वर्जितः; व्रात्यः; उपनयनसंस्कारहीनः; संस्काररहितः; असंस्कृतः । ४०४

संस्कृतः त्रि. [सम्+कृ+क्त, सुट्] व्युत्पन्नः; प्रहृतः; क्षुण्णः; प्रशस्तः (७८१); कृत्रिमः; पक्वः; शस्तः; भूषितः; शोधितः; 'पुराणमुत्तमं पुण्यं श्रीमद्भागवताभि-धम् । अष्टादशसहस्राणि श्लोकास्तत्र तु संस्कृताः' —इति देवी भागवते (१।२।११) । क्ली. लक्षणो-पेतं; पाणिन्यादिकृतव्याकरणमुपगतो लक्षणोपेतः साधुशब्दः; देववाणी; गीर्वाणवाणी । ३५२

संस्कृता भूमिः स्त्री.— स्थण्डिलः; यज्ञवेदिका; मण्डपः । ७६२

संस्तरः पुं. [संस्तीर्यते इति । सम्+स्तॄ+अप्] यागः; यज्ञः; क्रतुः; स्तोमः; सप्ततन्तुः; मखः; अध्वरः; वितानः; बर्हिः; सवः; सत्रः; प्रस्तरः (८१८); शय्या; पल्लवादिरचितशय्या; 'नवपल्लवसंस्तरेऽपि ते मृदु दूयेत यदङ्गमर्पितम् । तदिदं विषहिष्यते कथं वद वामोरु ! चिताविरोहणम्'—इति रघौ (८।५१) । ४१४

संस्तवः पुं. [सम्+स्तु+अप्] परिचयः; 'विहाय वाञ्छा-मुदिते मदात्ययादरक्तकण्ठस्य रुते शिखण्डिनः । श्रुति

श्रयत्युन्मदहंसनिःस्वनं गुणाः प्रियत्वेऽधिकृता न संस्तवः' —इति किराते (४।२५)। सम्यक्स्तुतिः; 'इति मे छिन्नसन्देहा मुनयः सनकादयः। सभाजयित्वा परया भक्त्यागृणत संस्तवैः'—इति भागवते (११।१३।४१)। ७७३

संस्त्यायः पुं. [सम्+स्त्यै+घञ्, आतो युक्] गृहं; गेहम्; अगारं; संवातः; सन्निवेशः; संस्थानं; विस्तृतिः। २९१

संस्था स्त्री. [संतिष्ठतेऽनयेति। सम्+स्था+अङ] निधनः; नाशः; मृत्युः; मरणं; पञ्चत्वम्; अत्ययः; कालः; दिष्टान्तः; निमीलनं; दीर्घनिद्रा; व्यवस्था (८१९); 'सर्वेषां तु स नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक्। वेदशब्देभ्य एवादौ पृथक् संस्थाश्च निर्ममे'—इति मनुः (१।२१)। न्यायपथस्थितिः; [सन्तिष्ठतेऽनया, सम्यगवस्थानं वा] मर्यादा; 'अपि शक्तः परिहर्तुं ययातिशापं हरिर्हते कंसे। राजासनं न भेजे पुरातनीं पालयेत् संस्थाम्' —इति उपदेशशतके (९०)। प्रतिज्ञा; 'तस्य वीक्ष्य ललितं वपुः शिशोः पार्थिवः प्रथितवंशजन्मनः। स्वं विचिन्त्य च धनुर्दुरानमं पीडितो दुहितृशुल्कसंस्थया' —इति रघौ (११।३८)। स्थितिः; सादृश्यं; व्यक्तिः; क्रतुभेदः; 'दीक्षायाः पशुसंस्थायाः सौत्रामण्याश्च सत्तमाः। अन्यत्र दीक्षितस्यापि नान्नमश्नन् हि दुष्यति'—इति भागवते (१०।२३।८)। समाप्तिः; प्रलयचतुष्टयम्; 'नैमित्तिकः प्राकृतिको नित्य आत्यन्तिको लयः। संस्थेति कविभिः प्रोक्तश्चतुर्धास्य स्वभावतः'—इति पुराणम्। ६२८

संस्थानम् क्ली. [सम्+स्था+ल्युट्] चतुष्पथः; आकृतिः; मृत्युः; चिह्नं; सम्यक्स्थितिः; व्यवस्था; 'लोकसंस्थानविज्ञान आत्मनः परिखिद्यतः। तमाहागाधया वाचा कश्मलं शमयन्निव'—इति भागवते (३।९।२७)। सन्निवेशः; 'भर्तारं लङ्घयेद् या तु स्त्री ज्ञातिगुणदर्पिता। तां श्वभिः खादयेद्राजा संस्थाने बहुसंस्थिते'—इति मनुः (८।३७१)। २८९

संस्थितः त्रि. [सम्+स्था+क्त] परासुः; उपसम्पन्नः; प्रमीतः; मृतः; 'संस्थितस्यानपत्यस्य सगोत्रात्पुत्रमाहरेत्। यत्र यद्रिक्थजातं स्यात् तत्तस्मिन् प्रतिपादयेत्' —इति मनुः (९।१९०)। सम्यक्स्थितिविशिष्टः; 'इदं तु पञ्चदशमं पुराणं कौर्ममुत्तमम्। चतुर्धा संस्थितं पुण्यं संहितानां प्रभेदतः'—इति कौर्मे (१।२१)। ६२९

संस्फेटः पुं. [सम्+स्फिट् अनादरे+अधिकरणे घञ्] युद्धं; समरः। ४५३

संस्फोटः पुं. [संस्फोटत्यत्रेति। सम्+स्फुट् भेदने+घञ्] युद्धं; संस्फोटिः; संस्फेटः; रणं; सङ्ग्रामम्; आयोधनं; संगरः; आजिः। ४५३

संस्फोटिः स्त्री.—युद्धं; संस्फोटः। ४५३

संस्मरणम् क्ली. [सम्+स्मृ+ल्युट्] संस्मृतिः; संस्कारजन्यज्ञानम्; 'ध्यायेन्नारायणं नित्यं स्नानादिषु च कर्मसु। तद्विष्णोरिति मन्त्रेण स्नायादप्सु पुनः पुनः। गायत्री वैष्णवी ह्येषा विष्णोः संस्मरणाय वै'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। ८८३

संहतिः स्त्री. [सम्+हन्+क्तिन्] समूहः; 'अल्पानामपि वस्तूनां संहतिः कार्यसाधिका। तृणैर्गुणत्वमापन्नैर्बध्यन्ते मत्तदन्तिनः'—इति हितोपदेशे। ६८६

संहननम् क्ली. [संहन्यते इति। सम्+हन्+ल्युट्] शरीरं; गात्रं; देहं; कलेवरम्; 'आग्नीध्रसुतास्ते मातुरनुग्रहादौत्पत्तिकेनैव संहननबलोपेताः पित्रा विभक्ता आत्मतुल्यनामभिर्यथाविभागं जम्बूद्वीपवर्षाणि बुभुजुः'—इति भागवते (५।२।२१)। सम्यग्घातनं; शक्तिः; कठिने त्रि.। 'शीतोष्णवातवर्षेषु वृष इवानावृताङ्गः पीनः संहननाङ्गः विचचार'—इति भागवते (५।९।१०)। 'संहन्यन्ते निविडीभवन्ति अङ्गानि यस्य। कठिनावयव इत्यर्थः'—इति तट्टीकायां स्वामी। ५१०

संहर्षः पुं. [सम्+हृष्+घञ्] स्पर्द्धा; 'संहर्षाद्धारयन् क्रोधं धन्वी स्रग्वी रथस्थितः। समरे नाशयेत् शत्रूनमोघो नाम पावकः'—इति महाभारते (३।२१८।२४)। प्रमोदः; वायुः; लोमहर्षः; 'दाहसंहर्षताम्रत्वशोथनिस्तोदगौरवैः'—इति सुश्रुते (६।६)। ७८६

संहारः पुं. [संह्रियतेऽनेनेति। सम्+हृ+'अध्यायन्यायेति' घञन्तः साधुः] संवर्तः; परिवर्तः; क्षयः; युगान्तः; कल्पान्तः; जगद्विनाशः; समसुप्तिः; महाप्रलयः; प्रलयः; 'मन्वन्तराण्यसंख्यानि सर्गः संहार एव च। क्रीडन्निवैतत् कुरुते परमेष्ठी पुनः पुनः'—इति मनुः (१।८०)। नरकविशेषः; संक्षेपः; संहरणम्; 'संमोहनं नाम सखे! ममास्त्रं प्रयोगसंहारविभक्तमन्त्रम्'—इति रघौ (५।

५७) । ११७

सकलम् त्रि. [कलया सह वर्तमानम्] समुदायः; समं सर्वं; विश्वम्; अशेषं; कृत्स्नं; समस्तं; निखिलम्; अखिलं; निःशेषं; समग्रं; पूर्णम्; अखण्डम्; अमूलकम्; अनन्तम्; 'द्वाभिः प्रविश्य सुभृशं प्रार्दयन् सकलां पुरीम् ।' [कला प्रकृतिस्तया सह वर्तते इति] सगुणम्; 'निष्कलं सकलं ब्रह्म निर्गुणं गुणगोचरम्' —इति महाभारते (१३।१६।८) । ७१३

सकृत् अव्य. [एक+'एकस्य सकृच्च' इति सुच् सकृदादेशश्च । संयोगान्तस्येति सुचो लोपः] एकवारम्; 'सकृदंशो निपतति सकृत् कन्या प्रदीयते । सकृदाह ददानीति त्रीण्येतानि सकृत् सकृत्'—इति महाभारते । सह । २७३

सकृत्प्रजः पुं. [सकृद् एकवारमेका प्रजा यस्य] अरिष्टः; करटः; काकः; कागः; बलिपुष्टः; एकदृक्; बलिभुक्; ध्वाङ्क्षः; चिरञ्जीवी; वायसः; जातैकमात्रापत्ये त्रि. । २४५

सकृत्प्रसूता स्त्री. [सकृद् एकवारं प्रसूता] सकृत्प्रसूतिका; गृष्टिः; एकमात्रप्रसूता स्त्री । २७३

सक्थि [न्] क्ली. [सज्यते इति । सञ्ज् सङ्गे+'असिसञ्जिभ्यां क्थिन्' इति क्थिन्] ऊरुः; 'नृणां पदे स्थिता लक्ष्मीर्निलयं संप्रयच्छति । सक्थ्नोश्च संस्थिता वस्त्र तथा नानाविधं वसु'—इति मार्कण्डेये (१८।४९) । शकटावयवविशेषः । ५१५

सखा [इ] पुं. [समानः ख्यायते इति । समान+ख्या+'समाने ख्यः स चोदात्तः' इति इञ्,टिलोपयलोपौ,समानस्य सभावश्च] मित्रं; सुहृत्; वयस्यः; सवयाः; स्निग्धः; सहचरः; आक्रन्दः; 'सखा गरीयान् शत्रुश्च कृत्रिमस्तौ हि कार्यतः । स्यातामामित्रौ मित्रे च सहजप्राकृतावपि' —इति माघे (२।३६) । सौहार्दयुक्तः; सहायः; 'गुरुतल्पव्रतं कुर्याद् रेतः सिक्त्वा स्वयोनिषु । सख्युः पुत्रस्य च स्त्रीषु कुमारीष्वन्त्यजासु च'—इति प्रायश्चित्ततत्त्वम् । ४२८

सखी स्त्री. ['सख्यशिश्वीति भाषायाम्' इति ङीष्] सहचरी; आलिः; वयस्या; सध्रीची; आली; 'अथेप्सित भर्तुरुपस्थितोदयं सखीजनोद्वीक्षणकौमुदीमुखम् । निदानमिक्ष्वाकुकुलस्य सन्ततेः सुदक्षिणा दौर्हृदलक्षणं दधौ'—इति रघौ (३) । ४८७

सख्यम् क्ली. [सख्युर्भावः कर्म वा । सखि+यत्] सखित्वं; सखिता; मित्रता; सौहृदं; सौहार्दं; साप्तपदीनं; मैत्रं; जर्यं; सङ्गतं; स्नेहः; मैत्री; प्रीतिः; अजर्यं; सभाजनम्; 'वधनिर्धूतशापस्य कबन्धस्योपदेशतः । मुमूर्च्छ सख्यं रामस्य समानव्यसने हरौ'—इति रघौ (१३।५७) । ७०६

सगर्भः पुं. [समानो गर्भो यस्य, समानस्य सः] सहोदरः; सगर्भ्यः; समानोदर्यः; सोदर्यः; सोदरः; त्रि. अभ्यन्तरितसूक्ष्मपत्रादियुक्तः; 'दर्भान्सगर्भानादाय नव सप्त च पञ्च वा । साग्रान्समूलानच्छिन्नान् द्विजो दक्षिणपाणिना । अन्वारब्धेन सव्येन तर्पयेत् षड् विनायकान्'—इति काशीखण्डे । गर्भविशिष्टः; 'अनलोऽपि सगर्भोऽभूत तेन वीर्येण धूर्जटेः'—इति कथासरित्सागरे (२०।८४) । ५०८

सगर्भ्यः पुं. [समाने गर्भे भवः । 'सगर्भसयूथसनुताद्यत्' इति यत्] सहोदरः; सगर्भः; सोदर्यः; सोदरः; 'अनु त्वा माता मन्यतामनु पितानु भ्राता सगर्भ्योऽनु सखा सयूथ्यः'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (४।२०) । ५०८

सगोत्रः पुं. [समानं गोत्रमस्य । 'ज्योतिर्जनपदरात्रीति' समानस्य सः] ज्ञातिः; आत्मीयः; स्वजनः; बन्धुः; आप्तः; बान्धवः; सनाभिः; सपिण्डः । 'सगोत्रबान्धवज्ञातिबन्धुस्वस्वजनाः समाः'—इत्यमरः । 'संस्थितस्यानपत्यस्य सगोत्रात्पुत्रमाहरेत्'—इति मनुः (९।१९०) । क्ली. [समानं गोत्रमिति । समानस्य सः] कुलं; वंशः; गोत्रम्; 'कुलं गोत्रं सगोत्रं च तुल्यगोत्रे निगद्यते' —इति शब्दरत्नावली । ५०९

सङ्कटम् त्रि [सम्+'सम्प्रोदश्च कटच्' इति कटच्] संबाधः; अल्पावकाशे वर्त्मादौ; [सम्यक् कटति आवृणोति सङ्कटम्, अच्, वाच्यलिङ्गता च] दुःखे क्ली. । 'सर्वाबाधासु घोरासु वेदनाभ्यर्दितोऽपि वा । स्मरन्ममैतच्चरितं नरो मुच्येत सङ्कटात्'—इति देवीमाहात्म्ये । 'सङ्कटं दुःखमुत्तरार्द्धमुत्तरान्वयि'—इति तट्टीकायां नागोजिभट्टः । ८२७

सङ्कथा स्त्री. [सम्यक् कथा] अन्योऽन्यसङ्गीतिः; परस्परभाषणम्; 'उल्लापः काकुवागन्योऽन्योक्तिः संलाप-

सङ्कथे'—इति हेमचन्द्रः। 'पृथा भ्रातॄन् स्वसुर्वीक्ष्य तत्पुत्रान् पितरावपि। भ्रातृपत्नीर्मुकुन्दं च जहौ सङ्कथया शुचः'—इति भागवते (१०।८२।१७)। सम्यक्कथनं; सम्यग्भाषणं; सङ्कथनम्। ७७९

सङ्करः पुं. [सङ्कीर्यते इति। सम्+कॄ विक्षेपे+अप्] सम्मार्जन्याक्षिप्तधूल्यादिः; अवकरः; सङ्कारः; अग्निचटत्कारः; मिश्रितत्वम्; 'भेदाख्यानाय न द्वन्द्वो नैकशेषो न सङ्करः'— इत्यमरः। परस्परात्यन्ताभावसमानाधिकरणयोरेकाधिकरण्यम्; यथा—मूर्तत्वं मनसि वर्तते भूतत्वं नास्ति, आकाशे भूतत्वं वर्तते मूर्तत्वं नास्ति, पृथिव्यां भूतत्वं वर्तते मूर्तत्वं चास्तीति जातिसाङ्कर्यम्। 'व्यक्तेरभेदस्तुल्यत्वं सङ्करोऽथानवस्थितिः। रूपहानिरसम्बन्धो जातिबाधकसंग्रहः'—इति सिद्धान्तमुक्तावली। वर्णसङ्करजातिः; 'वक्ष्ये सङ्करजात्यादि गृहस्थादिविधिं परम्। विप्रान्मूर्द्धाविसिक्तो हि क्षत्रियायां विशः स्त्रियाम्। जातोऽम्बष्ठस्तु शूद्रायां निषादः पार्षतोऽपि वा। माहिष्योग्रौ प्रजायेते विट्शूद्राङ्गनयोर्नृपात्। वैश्यां शूद्राच्च राजन्यां माहिष्योग्रौ सुतौ स्मृतौ। शूद्रायां करणो वैश्याद् विद्वान् एष विधिः स्मृतः। ब्राह्मण्यां क्षत्रियात् सूतो वैश्याद्वैदेहकस्तथा। शूद्राज्जातस्तु चाण्डालः सर्वधर्मबहिष्कृतः। क्षत्रिया मागधं वैश्यात् शूद्रात् क्षत्तारमेव च। शूद्रादायोगवं वैश्या जनयामास वै सुतम्। माहिष्येण करण्यां तु रथकारः प्रजायते। असंस्तुतास्च विज्ञेयाः प्रातिलोमानुलोमजाः। जात्युत्कर्षाद् द्विजो ज्ञेयः सप्तमे पञ्चमेऽपि वा। व्यत्यये कर्मणां साम्ये पूर्ववच्चोत्तरावरम्'—इति गारुडे। ३०२

सङ्कर्षणः पुं. [सम्यक् कर्षतीति। सम्+कृष्+ल्यु] बलदेवः; बलभद्रः; मुसली; नीलाम्बरः; प्रलम्बघ्नः; सीरी; सात्वतः; तालध्वजः; एककुण्डलः; अनन्तः; रौहिणेयः; कालिन्दीकर्षणः; बलः; रेवतीरमणः; रामः; कामपालः; हलायुधः; बलरामः; 'कर्षणेनास्य गर्भस्य स्वगर्भाच्चावितस्य वै। सङ्कर्षणो नाम शुभे तव पुत्रो भविष्यति'—इति हरिवंशे (५९।६)। [सम्यक् कर्षणं यस्य माययेति शेषः] 'गर्भसङ्कर्षणात् तं वै प्राहुः सङ्कर्षणं भुवि'—इति भागवते (१०।२।१३)। क्ली सम्यक् प्रकारेण कर्षणम्; आकर्षणम्; एकीकरणं; 'तस्य मूलदेशे त्रिंशद्योजनसहस्रान्तरे आस्ते या वै कला भगवतस्तामसी समाख्याता अनन्त इति सात्वतीया द्रष्टृदृश्ययोः सङ्कर्षणम् अहमित्यभिमानलक्षणं यं सङ्कर्षण इत्याचक्षते'—इति भागवते (५।२५।१)। २९

सङ्कल्पः पुं. [सम्+कृप्+भावे घञ्। गुणे कृते रस्य लः] मानसं कर्म; 'मनसा सङ्कल्पयति, वाचा अभिलपति, कर्मणा चोपपादयति'—इति हारीतः। 'सङ्कल्पेन विना राजन् यत्किञ्चित्कुरुते नरः। फलं चाल्पाल्पकं तस्य धर्मस्यार्द्धक्षयो भवेत्'—इति भविष्यपुराणे। ७७३

सङ्कल्पजन्मा [न्] पुं. [सङ्कल्पाद् जन्म यस्य] सङ्कल्पजः; सङ्कल्पभवः; सङ्कल्पयोनिः; कामदेवः; मदनः; मन्मथः; प्रद्युम्नः; 'दग्धोऽपि कामः सङ्कल्पजन्मा शर्वेण निर्मितः'—इति कथासरित्सागरे (४९।२३८)। ३२

सङ्कारः पुं. [सङ्कीर्यते इति। सम्+कॄ विक्षेपे+घञ्] अवकरः; सङ्करः; सम्मार्जन्याक्षिप्तधूल्यादिः; अग्निचटत्कारः। ३०२

सङ्काशः त्रि. [सम्यक् काशते प्रकाशते इति। सम्+काश्+पचाद्यच्] सदृशः; 'आजगाम ततो देवो धर्मो मन्त्रबलात् ततः। विमाने सूर्यसङ्काशे कुन्ती यत्र जपस्थिता'—इति महाभारते (१।१२३।३)। अन्तिकम्। ७३८

सङ्कुलम् त्रि. [सम्+कुल् संस्त्याने+क] जनादिभिर्निरवकाशम्, शङ्कुलं; सङ्कीर्णम्; आकीर्णं; कलिलं; गहनम्; आचितं; निचितं; व्याप्तं; छन्नं; कीर्णम्; आकुलं; भरितं; पूर्णम्; 'ततः सेनामुपादाय पाण्डुर्नानाविधध्वजाम्। प्रभूतहस्त्यश्वयुतां पदातिरथसङ्कुलाम्'—इति महाभारते (१।११३।२६)। क्ली. युद्धम्, 'ततो बलेन महता गजानीकेन चाप्यथ। उभयोरन्तरं ताभ्यां सङ्कुलं समपद्यत'—इति हरिवंशे (९१।९५)। परस्परपराहतवाक्यं; क्लिष्टं; द्वे पूर्वापरविरुद्धे वाक्ये; यथा—'यावज्जीवमहं मौनी ब्रह्मचारी पिता मम। माता च मम बन्ध्या स्यात् स्मरामोऽनुपमो भवान्।' यद्वा 'यावज्जीवमहं मौनी ब्रह्मचारी च मे पिता। माता तु मम बन्ध्यैव पुत्रहीनः पितामहः।' सङ्कीर्णता; 'एतस्मिन् सङ्कुले तात वर्तमाने भयङ्करे। अति-

भाराद्वसुमती योजनानां शतं गता'—इति महाभारते (३।१४२।३८)। ७०२

सङ्केतः पुं. [सङ्केत्यते अत्र । सम्+कित्+घञ् । सङ्केत इति चौरादिकाद् वा] स्वाभिप्राय व्यञ्जकचेष्टाविशेषः; प्रज्ञप्तिः; परिभाषा; शैली; समयः; आकारः; 'सङ्केतप्रियशङ्कया निजपतिं प्रावोचदध्वश्रमम्'—इति रससंग्रहः। 'सङ्केतकालमनसं विटं ज्ञात्वा विदग्धया। हसन्नेत्रार्पिताकूतं लीलापद्मं निमीलितम्'—इति साहित्यदर्पणे। ८२२

सङ्केतकः पुं. [सङ्केत+कन्] समयः; सङ्केतः। ८३९

सङ्क्रन्दनः पुं. [सङ्क्रन्दयति असुरानिति। सम्+क्रन्द्+णिच्+ल्यु] इन्द्रः; भौत्यस्य मनोः पुत्रविशेषः; 'स्त्रोमानी च प्रतीरश्च विष्णुः सङ्क्रन्दनस्तथा। तेजस्वी सुबलश्चैव भौत्यस्यैते मनोः सुताः।' क्ली. [सम्+क्रन्द्+भावे ल्युट्] रोदनम्; 'दिष्टया नैनं महाराज दारुणं भरतक्षयम्। कुरु सङ्क्रन्दनं घोरं युगान्तमनुपश्यसि'—इति महाभारते (११।२३।४)। [सङ्क्रन्दयति शत्रूनिति] शत्रुतापके त्रि.। 'तस्य-मौर्वीमपाकर्षत् शूरः सङ्क्रन्दनो युधि। कुले नास्ति समो रूपे यस्येति नकुलः स्मृतः'—इति महाभारते (४।५।२६)। ५२

सङ्क्षेपः पुं. [सम्+क्षिप्+घञ्] स्तोकेन भूयसोऽभिधानं; स्वल्पम्। ७६६

सङ्ख्यम् क्ली. [सम्यक् ख्यायतेऽत्रेति। सम्+ख्या+बाहुलकात् क] युद्धम्; 'एवमुक्त्वार्जुनः सङ्ख्ये रथोपस्थ उपाविशत्'-इति भगवद्गीतायाम् (१।४६)। सङ्ख्येपे त्रि.। ४५३

सङ्ख्या स्त्री. [सङ्ख्यायतेऽनयेति। सम्+ख्या+अङ+टाप्] प्रेक्षा; प्रज्ञा; प्रतिभा; धीः; धिषणा; शेमुषी; मनीषा; बुद्धिः; मतिः; मेधा; संवित्तिः; उपलब्धिः; विचारणा; यो वेत्ति सङ्ख्यां निकृतौ विधिज्ञश्चेष्टास्वखिन्नः कितवोऽक्षजासु। महामतिर्यश्च जानाति द्यूतं स वै सर्वं सहते प्रक्रियासु'-इति महाभारते (२।५७।७)। एकत्वादिः; सङ्ख्येये त्रि.। सङ्ख्यानम्; 'विपणो विक्रयः सङ्ख्याः सङ्ख्येये ह्यादशत्रिषु। विंशत्याद्याः सदैकत्वे सर्वाः सङ्ख्येयसङ्ख्ययोः। सङ्ख्यार्थे द्विबहुत्वे स्तस्तासु चानवतेः स्त्रियः। पङ्क्तेः शतसहस्रादि क्रमाद्दशगुणोत्तरम्'—इत्यमरः। ३३४

सङ्ख्यावान् पुं. [सङ्ख्या बुद्धिरस्त्यस्येति। मतुप्, मस्य व] पण्डितः; बुद्धिमान्; बुधः; सुधीः; कृती; कृष्टिः; कविः; व्यक्तः; विशारदः; विचक्षणः; मेधावी; मतिमान्। ३३३

सङ्गतम् क्ली. [सम्+गम्+क्त] सख्यं; साप्तपदीनं; सौहार्दं; सौहृदं; स्नेहः; मैत्री; प्रीतिः; अजर्यं; सभाजनं; मित्रता; सखित्वं; सखिता; 'यतः सतां सन्नतगात्रि! सङ्गतं मनीषिभिः साप्तपदीनमुच्यते'—इति कुमारे (५।३९)। युक्तियुक्तवाक्यं; हृदयङ्गमं; पुं. मौर्यवंशीयनृपतिविशेषः; 'सुयशा भविता तस्य सङ्गतः सुयशः सुतः'—इति भागवते (१२।१।१३)। ७०६

सङ्गतिः स्त्री. [सम्+गम्+क्तिन्] सङ्गमः; साङ्गः; मेलनं; समितिः; सम्भेदः; नद्यादिमेलकः; ज्ञानं; मेलनम्; 'क्षणमिह सज्जनसङ्गतिरेका भवति भवार्णवतरणे नौका'—इति मोहमुद्गरे (६)। युक्तिः; 'त्वमद्य भव नो राजा राजपुत्र महायशाः। सङ्गत्या नापराध्नोति राज्यमेतदनायकम्'—इति रामायणे (२।७९।३)। ८२१

सङ्गमः पुं.-क्ली. [सम्+गम्+'ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च' इति अप्] सम्भेदः; नद्यादिमेलकः; सङ्गः; 'सङ्गमविरहविकल्पे वरमिह विरहो न सङ्गमस्तस्याः। सङ्गे सैव तथैका त्रिभुवनमपि तन्मयं विरहे'—इति साहित्यदर्पणे। स्त्रीपुंसोर्मिथुनीभावः। ८२१

सङ्गरः पुं. [संगृणन्ति शब्दायन्ते वीरा यत्र। सम्+गॄ शब्दे+अप्] युद्धं; सङ्कटे हि परीक्ष्यन्ते प्राज्ञाः शूराश्च सङ्गरे'—इति कथासरित्सागरे (३१।९३)। (७१५) आगूः, सन्धा, प्रतिश्रवः, संश्रवः, प्रतिज्ञा। आपत्; अङ्गीकारः; 'तथेति तस्या वितथं प्रतीतः प्रत्यग्रहीत् सङ्गरमग्रजन्मा'—इति रघौ (५।२६)। संवित्; क्रियाकारः; विषं; क्लीं. [सङ्गीर्यते इति, सम्+गॄ+अप्] शमीवृक्षफलम्। ४५३

सङ्गीतम् क्ली. [सम्+गै+क्त] प्रेक्षणार्थं नृत्यगीतवाद्यं; 'गीतवाद्यनृत्यत्रयं नाट्यं तौर्यत्रिकं च तत्। सङ्गीतं प्रेक्षणार्थेऽस्मिन् शास्त्रोक्ते नाट्यधर्मिका'—इति हेमचन्द्रः। नृत्यगीतवाद्यस्य शास्त्रम्। ९५

सङ्गीतिः स्त्री. [सम्+गै+'स्थागापापचो भावे' इति

क्तिन्] आलापः; सङ्कथा; परस्परभाषणं; सङ्गीतम्। ७७९

सङ्ग्रहः पुं. [सम्+ग्रह्+अप्] संक्षेपः; समाहृतिः; 'कोशेनाश्रयणीयत्वमिति तस्यार्थसङ्ग्रहः। अम्बुगर्भो हि जीमूतश्चातकैरभिनन्द्यते'—इति रघौ (१७।६०)। [संक्षेपेण गृह्यन्ते नानास्थाने विप्रकीर्णा अर्था बुध्यन्तेऽनेनेति सङ्ग्रहः। सम्+ग्रह् उपादाने+अप्] लक्षसङ्ख्यो व्याकरणग्रन्थः; 'विस्तरेणोपदिष्टानामर्थानां सूत्रभाष्ययोः। निबन्धो यः समासेन सङ्ग्रहं तं विदुर्बुधाः।' ग्रन्थविशेषः; 'चतुष्पादं धनुर्वेदं शास्त्रग्रामं ससङ्ग्रहम्। अचिरेणैव कालेन गुरुस्तावभ्यशिक्षयत्'—इति हरिवंशे (८९।७)। बृहत्; उत्तुङ्गः; ग्रहणम्; 'नूनं मत्तः परं वंश्याः पिण्डविच्छेददर्शिनः। न प्रकामभुजः श्राद्धे स्वधासंग्रहतत्पराः'—इति रघौ (१।६६)। मुष्टिः; स्वीकारः; महोद्योगः। ७६६

सङ्ग्रामः पुं. [सङ्ग्राम+णिच्+भावे घञ्] युद्धं; समरः; रणम्; 'न निवर्तेत सङ्ग्रामात् क्षात्रं धर्ममनुस्मरन्'—इति मनुः (७।८७)। ४५३

सङ्ग्राहः पुं. [सङ्ग्रहणमिति। सम्+ग्रह्+'समि मुष्टौ' इति घञ्] मुष्टिः; सङ्ग्रहः। ५२३

सङ्घः पुं. [सम्+हन्+'सङ्घोद्घौ गणप्रशंसयोः'—इति अप् टिलोपो घत्वञ्च निपात्यते] समूहः; सजातीयविजातीयजन्तुवृन्दः; 'तत्रापि तपसि श्रेष्ठे वर्तमानः स वीर्यवान्। सिद्धचारणसङ्घानां बभूव प्रियदर्शनः'—इति महाभारते (१।१२०।१)। ६८६

सङ्घातः पुं. [सम्+हन्+घञ्, 'हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु' इति घत्वं, हनस्तः] समूहः; 'न जातु बाला लभते स्म निर्वृतिं तुषारसङ्घातशिलातलेष्वपि'—इति कुमारे (५।५५)। नरकभेदः; हननं; निविडसंयोगः; 'द्रवः सङ्घातकठिनः स्थूलः सूक्ष्मो लघुर्गुरुः। व्यक्तो व्यक्तेतरश्चासि प्राकाम्यं ते विभूतिषु'—इति कुमारे (२।११)। कफः; नाटके गतिविशेषः। ६८६

सचिः स्त्री. [सच् समवाये+'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्] शची; इन्द्राणी; इन्द्रपत्नी। ५५

सचिवः पुं. [सच् समवाये+इन्। तथा सचि वातीति, वा+क] मन्त्री; सहायः; बुद्धिसहायः; अमात्यः; 'इत्युक्त्वा सचिवान् राजा कल्पयित्वा सुरक्षकान्। कारयित्वाथ प्रासादं सप्तभूमिकमुत्तमम्। आरुरोहोत्तरासूनुः सचिवैः सह तत्क्षणम्'—इति देवीभागवते (२।९।४२)। कृष्णधत्तूरकः। ४२६

सची स्त्री. [सचि+कृदिकारादिति ङीष्] शची; इन्द्राणी; इन्द्रपत्नी। ५५

सज्जनः पुं. [सन् चासौ जनश्चेति] सत्कुलोद्भवः; महाकुलः; कुलीनः; आर्यः; सभ्यः; साधुः; कुलजः; सभ्यः; साधुजः; 'निजाचारग्राहिणो ये कुर्वन्तो वेदसम्मतम्। पापाभिलाषरहिताः सज्जनास्ते प्रकीर्तिताः'—इति पाद्मे। 'नलिनीदलगतजलवत्तरलं तद्वज्जीवनमतिशयचपलम्। क्षणमिह सज्जनसङ्गतिरेका भवति भवार्णवतरणे नौका'—इति मोहमुद्गरः। ३७२

सज्जितः त्रि. [षस्ज् गतौ+क्त] सन्नद्धः; वर्मितः; भूषितः; कृतसज्जः। २२१

सञ्चयः पुं. [सञ्चीयते इति। सम्+चि+'एरच्' इत्यच्] समूहः; निकरः; निकायः; उत्करः; 'तस्यौ संसेवमानस्तं राजानं स तदाश्रितः। भुञ्जानश्च सहान्यैस्तैर्ब्राह्मणैर्ग्रामसञ्चयम्'—इति कथासरित्सागरे (१८।१२८)। सङ्ग्रहः; सञ्चयनं; 'शक्तेनापि हि शूद्रेण न कार्यो धनसञ्चयः। शूद्रो हि धनमासाद्य ब्राह्मणानेव बाधते'—इत्याह्निकाचारतत्त्वम्। ६८६

सञ्चारिका स्त्री. [सञ्चारयति नायकयोर्वार्तामिति। सम्+चर्+णिच्+ण्वुल्] दूती; युगलं; कुट्टनी; घ्राणम्। ४९१

सञ्जवनम् क्ली. [सञ्जवन्ति संमिलन्त्यत्रेति। सम्+जु गतौ+अधिकरणे ल्युट्] अन्योन्याभिमुखगृहचतुष्टयम्; चतुःशालं; संयमनं; चतुःशाली; सञ्जीवनं; शाला; निलयः; चतुःशालकम्; 'तस्मिन् सुविहिताः सर्वे रुक्मदण्डाः पताकिनः। सदने वासुदेवस्य मार्गसञ्जवनध्वजाः'—इति हरिवंशे (१५५।५६)। २९२

सञ्जीवनम् क्ली. [सञ्जीव्यतेऽस्मिन्निति। सम्+जीव्+अधिकरणे ल्युट्] सञ्जवनम् [सम्+जीव्+भावे ल्युट्] सम्यक्प्रकारेण प्राणधारणम्; 'व्यामोहोद्दलनौषधं मुनिमनोवृत्तिप्रवृत्यौषधं, दैत्यानर्थकरौषधं त्रिजगतां सञ्जीवनैकौषधम्। भक्तात्तिप्रशमौषधं भवभयप्रध्वंसि दिव्यौषधं, श्रेयः प्राप्तिकरौषधं पिब मनः श्रीकृष्णनामौषधम्'—इति मुकुन्दमालायाम् (३०)।

नरकविशेषः; 'नरकं कालसूत्रं च महानरकमेव च। सञ्जीवनं महावीचिं तपनं सम्प्रतापनम्'—इति मनुः (४।८९)। २९२

सञ्ज्ञपनम् (संज्ञपनम्) क्ली. [सम्+ज्ञा+णिच्+ल्युट्] मारणं; हिंसा; 'दृष्ट्वा संज्ञपनं योगं पशूनां स पतिर्मखे'—इति भागवते (४।५।२२)। विज्ञापनम्। ४७८

सञ्ज्ञा (संज्ञा) स्त्री. [सम्+ज्ञा+अङ] आख्या; अभिधा; आह्वानं; नाम; नामधेयम्; 'लोकसंव्यवहारार्थं याः संज्ञाः प्रथिता भुवि। ता म्रूष्यसुवर्णानां ताः प्रवक्ष्याम्यशेषतः'—इति मनुः (८।१३१)। (८२२) सङ्केतः; हस्ताद्यैरर्थसूचना; हस्तभ्रूलोचनादिभिः प्रयोजनस्य ज्ञापना; 'मुखार्पितैकाङ्गुलिसंज्ञयैव मा चापलायेति गणान् व्यनैषीत्'—इति कुमारे (३।४१)। चैतन्यं; चेतना; 'रतिखेदसमुत्पन्ना निद्रा संज्ञाविपर्ययः'— इति कुमारे (६।४४)। बुद्धिः; ज्ञानम्; 'गुरोर्नाधिगतः संज्ञां परीक्षन्भगवान्स्वराट्। ध्यायन् धिया सुरैर्युक्तः शर्म नालभतात्मनः'—इति भागवते (६।७।१७)। 'नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान् ब्रवीमि ते'—इति भगवद्गीतायाम् (१।७)। गायत्री; सूर्यपत्नी; 'मार्तण्डस्य रवेर्भार्या तनया विश्वकर्मणः। संज्ञा नाम महाभागा तस्यां भानुरजीजनत्'—इति मार्कण्डेये (७७।१)। १५२

सटम् क्ली. [सटतीति। सट् अवयवे+अच्] जटा; 'जटा जटिर्जटी जूटो जुटकं तु सटं सटा। कौटीरं जूटकं हस्तं शिखायां व्रतिनामपि'—इति शब्दरत्नावली। ५३२

सटा स्त्री. [सट् अवयवे+अच्] जटा; सटः; 'जटा जटिर्जटी जूटो जुटकं तु सटं सटा'—इति शब्दरत्नावली। केशरः; 'तं वाहनादवनतोत्तरकायमीषद् विध्यन्तमुद्धृतसटाः प्रतिहन्तुमीयुः'—इति रघौ (९।६०)। शिखा; 'क्रुद्धः सुदष्टौष्ठपुटः स धूर्जटिर्जटां तडिद्वह्निसटोग्ररोचिषम्'—इति भागवते (४।५।२)। ५३२

सण्डः पुं.— षण्डः; समूहः। ४३०

सत् त्रि. [अस्तीति। अस्+शतृ] सूरिः; प्राज्ञः; पण्डितः; धीरः; सत्यम्; अभ्यर्हितं; प्रशस्तं; विद्यमानम्; 'दुर्जनः परिहर्तव्यो विद्ययालङ्कृतोऽपि सन्। मणिना भूषितः सर्पः किमसौ न भयङ्करः'—इति हितोपदेशे। साधुः; 'रामं नमति सानन्दं धर्मानभिनिविश्य सन्'—इति मुग्धबोधे। क्ली. ब्रह्म; 'ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः। ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा'—इति भगवद्गीतायाम्। 'सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत्प्रयुज्यते। प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते।' 'यतो विद्यमानजन्मनि उत्कृष्टचरिते च सदित्येतत्प्रयुज्यते अतो यज्ञादौ कर्मणि प्रथमतः सच्छब्दः प्रयुज्यते' इति भगवद्गीताव्याख्या। ३३२

सततम् क्ली. [सन्तन्यते स्मेति। सम्+तन्+क्त। 'समो वा हिततत्तयोरिति' पक्षे मलोपः] निरन्तरक्रिया; तद्वति त्रि.। अव्य. सन्ततम्; अनिशं; नित्यम्; अजस्रं; शश्वत्; अश्रान्तम्; अविरतम्; अनवरतम्; अनारतम्; असक्तम्। ६९८

सती स्त्री. [अस्तीति। अस्+शतृ, उगित्वाद् ङीप्] साध्वी; पतिव्रता; सुचरिता; 'सती सती योगविसृष्टदेहा तां जन्मने शैलवधूं प्रपेदे'—इति कुमारे (१।२१)। दुर्गा; सौराष्ट्रमृत्तिका; दानम्; अवसानं; सावित्री; विद्यमाना; 'तथा समक्षं दहता मनोभवं पिनाकिना भग्नमनोरथा सती। निनिन्द रूपं हृदयेन पार्वती प्रियेषु सौभाग्यफला हि चारुता'—इति कुमारे (५।१)। ४९५

सत्तमः त्रि. [अयमेषामतिशयेन सन्। सत्+तमप्] उत्तमः; 'तद्भेदानपि वक्ष्यामि शृणु देवर्षिसत्तम'—इति देवीभागवते (११।१६।३)। ६९०

सत्ता स्त्री. [सतो भावः। सत्+तल्] विद्यमानता; 'यद्यपि पापस्य कार्यानन्वितत्वेन तत्सत्तायामप्रामाण्यं प्रतिभाति'—इति प्रायश्चित्ततत्त्वम्। साधुता; भावः; जातिविशेषः। ८५०

सत्रम् क्ली. [सतः साधून् त्रायते इति। सत्+त्रै+क। यद्वा सीदन्ति सज्जना यत्र। सद् गतौ+'गुधृवीपचिवचीति' त्र] अरण्यम्; अटवी; कान्तारं; काननं; वनं; विपिनं; गहनम्; 'अयमेव मृगव्यसत्रकामः' इति किराते (१३।९)। (४१४) यागः; यज्ञः; क्रतुः; स्तोमः; सप्ततन्तुः; मखः; अध्वरः; वितानः; संस्तरः; बर्हिः; सवः; 'अभयस्य हि यो दाता सम्पूज्यः सततं नृपः। सत्रं हि वर्द्धते तस्य सदैवाभयदक्षिणम्'—इति

मनुः (८।३०३)। सदादानम्; आच्छादनं; धनं; गृहं; दानं; सरोवरं; कैतवम्; 'सत्त्रेण नूनं छन्नं हि चरन्तं पार्थमर्जुनम्। उत्तरः सारथिं कृत्वा निर्यातो नगराद् बहिः'—इति महाभारते (४।३६।३८)। यागविशेषः; 'नैमिषेऽनिमिषक्षेत्रे ऋषयः शौनकादयः। सत्त्रं स्वर्गाय लोकाय सहस्रसममासत। कलिमागतमाज्ञाय क्षेत्रेऽस्मिन् वैष्णवे वयम्। आसीना दीर्घसत्त्रेण कथायां सक्षणा हरेः' —इति भागवते (१।१)। सदक्षिणं सततान्नदानम्; 'नालपेज्जनविद्विष्टान् वीरहीनां तथा स्त्रियम्। देवतापितृसच्छास्त्रयज्ञसत्त्रादिनिन्दकैः। कृत्वा तु स्पर्शनालाप शुद्ध्येतार्कावलोकनात्'-इति मार्कण्डेये। 'सत्त्रं सदक्षिणं सततान्नदानम्'—इति तट्टीका। २१०

सत्त्रम् अव्य.— सह; सत्त्रा; साकम्। ८७७

सत्त्रशाला स्त्री. [सत्त्रस्य शाला] अन्नादिदानगृहं; प्रतिश्रवः; 'ततः सा सत्त्रशालान्तः प्रविवेश वणिक्सुता। अन्वगाद् राजपुत्रोऽपि स तां गुप्तमवेक्षितुम्'—इति कथासरित्सागरे (२१।७४)। २९७

सत्त्रा अव्य.— सह; समं; सत्त्रम्। ८७७

सत्त्वम् क्ली. [सतो भावः। सत्+त्व] प्रकृतेर्गुणविशेषः, अत्र सत्त्वं प्रकाशकज्ञानं सुखहेतुः। सत्त्वं द्वितकारमिति। 'सत्त्वं रजस्तमश्चैव त्रीन् विद्यादात्मनो गुणान्। यैर्व्याप्येमान् स्थितो भावान् महान् सर्वानशेषतः'— इति मनुः (१२।२४)। सत्ता; विद्यमानता; स्थाम; बलं; 'शशंस तुल्यसत्त्वानां सैन्यघोषेऽप्यसम्भ्रमम्। गुहाशयानां सिंहानां परिवृत्यावलोकितम्'— इति रघौ (४।७२)। भूतः; पिशाचादिः; 'अद्य नूनं दशरथः सत्त्वमाविश्य भाषते। न हि राजा प्रियं पुत्रं विवासयितुमर्हति'--इति रामायणे (२।३३।१०)। द्रव्यं; व्यवसायः; असुः; 'ततो भूतोपसृष्टेव वेपमाना पुनः पुनः। धरण्यां गतसत्त्वेव कौशल्या सूतमब्रवीत्'— इति रामायणे (२।६०।१)। स्वभावः; 'सत्त्वविहितमतुलभुजयोर्बलमस्य पश्यत मृधेऽधिकुप्यतः'— इति किराते (१२।२९)। आत्मा; चित्तं; रसः; आयुः; कुबेरः; धनम्; आत्मता; पुं.- क्ली. [सत्त्वमस्त्यस्येति। अर्श आदित्वादच्] जन्तुः; 'रक्षापदेशान्मुनिहोमधेनोर्वन्यान् विनेष्यन्निव दुष्टसत्त्वान—इति रघौ (३।८)। ८६८

सत्वरम् अव्य.- क्ली. [सह त्वरया वर्तते इति] शीघ्रं; द्राक्; चपलं; लघु; मङ्क्षु; स्राक्; तूर्णं; त्वरितम्; आशु; अरम्; अह्नाय; क्षिप्रं; द्रुतम्; अञ्जसा; झटिति; 'राजा सत्वरमाहूय व्यापृतं वित्तसञ्चये। उवाच देशकालज्ञो निश्चितं सर्वतः शुचिः'—इति रामायणे (२।३९।१४)। तद्वति त्रि.। 'त्रिंशद्वर्षो वहेत् कन्यां हृद्यां द्वादशवार्षिकीम्। त्र्यष्टवर्षोऽष्टवर्षां वा धर्मे सीदति सत्वरः'—इति मनुः (९।९४)। ६९७

सदनम् क्ली. [सीदन्त्यत्रेति। सद्+अधिकरणे ल्युट्] गृहं; गेहम्; 'तिष्ठ मा मा गमः पुत्र: यमस्य सदनं प्रति। श्वो मया सह गन्तासि जनन्या च समेधितः'—इति रामायणे (२।६४।३६)। जलम्। २९१

सदः [स्] स्त्री- क्ली. [सीदन्त्यस्यामिति। सद्+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इति असुन्] सभा; समाजः; संसत्; आस्थानी; परिषत्; गोष्ठी; 'विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः। यशसि चाभिरुचिर्व्यसनं श्रुतौ प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम्'—इति हितोपदेशे। ७४५

सदा अव्य. [सर्व+'सर्वैकान्य' इति दा, 'सर्वस्य सोऽन्यतरेति' सादेशः] सर्वकालः; सर्वदा; नित्यत्वं; सना; 'परोपकारनियतः सदा भव महाजन !'— इति विष्णुपुराणम्। ८८७

सदागतिः पुं. [सदा सर्वदा गतिर्यस्य] पवनः; श्वसनः; वायुः; मरुत्; अनिलः; मारुतः; जगत्प्राणः; पृषदश्वः; पवमानः; प्रभञ्जनः; स्पर्शनः; वातः; नभस्वान्; मातरिश्वा; समीरः; समीरणः; गन्धवहः; गन्धवाहः; हरिः; महाबलः; 'एवमुक्तस्तया शक्रः सन्दिदेश सदागतिम्। प्रातिष्ठत तदा काले मेनका वायुना सह'— इति महाभारते (१।७२।१)। सूर्यः; निर्वाणं; मोक्षः; मुक्तिः; सदीश्वरः; सर्वदागमनशीले त्रि.। 'चतुर्विंशतिपर्व त्वा षण्णाभि द्वादशप्रधि। तत्त्रिषष्टिशतारं वै चक्रं पातु सदागतिः—इति महाभारते (३।१३३।२५)। ७६

सदृक् [श्] त्रि. [समान इव दृश्यतेऽसौ। समान+दृश्+'समानान्ययोश्चेति वक्तव्यम्' इत्युक्त्या क्विन्, 'दृग्दृशवतुषु' इति समानस्य सः] तुल्यः; सदृक्षः; समानः; सदृशः; प्रख्यः; प्रकाशः; प्रतिमः; प्रकारः; समं; सन्निभम्; 'न त्वया सदृगन्योऽस्ति त्रैलोक्येऽपि

धनुर्धरः'—इति कथासरित्सागरे (३९।८९)। ६९४
सदृक्षः त्रि. [समान इव दृश्यते इति। समान+दृश्+क्स। समानस्य सादेशः] सदृशः; समः; सदृक्; समानः; 'कच्चिद्धरेः सौम्य सुतः सदृक्ष आस्तेऽग्रणी रथिनां साधु साम्बः'—इति भागवते (३।१।२९)। ६९४
सदृशः त्रि. [समान इव दृश्यतेऽसौ। समान+दृश्+कञ्। 'दृग्दृशवतुषु' इति समानस्य सः] समानः; सदृक्; 'आकारसदृशप्रज्ञः प्रज्ञया सदृशागमः। आगमैः सदृशारम्भ आरम्भसदृशोदयः'—इति रघौ (१।१५)। उचितः। 'तुल्यः समानः सदृक्षः सरूपः सदृशः समः। साधारणसधर्माणौ सवर्णः सन्निभः सदृक्'—इति हेमचन्द्रः। ६९४
सद्म [न्] क्ली. [सीदन्त्यत्रेति। सद्+मनिन्] गृहं; गेहं; भवनम्; आलयः; 'न केवलं सद्मनि मागधीपतेः पथि व्यजृम्भन्त दिवौकसामपि'—इति रघौ (३।१९)। जलं; [साद्यन्ते अवसाद्यन्ते प्राणिनो यत्रेति] सङ्ग्रामः। २९१
सद्यः [स्] अव्य. [समाने अहनि इति। 'सद्यः परुत्परार्यै-षम' इति द्यस् प्रत्ययः समानस्य सभावश्च निपात्यते] तत्क्षणं; सपदि; तत्कालम्। ७५२
सद्यस्कः त्रि. [सद्यः कायतीति। सद्यस्+कै+क] प्रत्यग्रः; नूतनः; नवीनः; 'नवनीतं पुनः सद्यस्कं लघु सुकुमारं मधुरमिति'—सुश्रुते। ७६३
सधर्मचारिणी स्त्री. [सह धर्मं चरतीति। सह+धर्म+चर्+णिनि, 'वोपसर्जनस्य' इति सहस्य सः] पत्नी; जाया; गृहिणी; गृहाः; दाराः; दारा; क्षेत्रं; कलत्रं; भार्या; सहचरी; वधूः; सधर्मिणी; गृहणी; पाणिगृहीती; 'एतन्मे संशयं सर्वं वक्तुमर्हसि वै प्रभो। सधर्मचारिणी चाहं भक्ता चेति वृषध्वज'—इति महाभारते (१३।१५०।४८)। ४९४
सना अव्य.—नित्यं; नित्यत्वं; सनात्; 'सना पुराणमध्येम्यारात्'—इति ऋग्वेदे (३।५४।९)। ८८७
सनातनः त्रि. [सना भवः। 'सायञ्चिरमिति' टयुटयुलौ तुट् च] नित्यं; ध्रुवं; शाश्वतं; सुनिश्चलः; 'एषोऽनुपस्कृतः प्रोक्तो योधधर्मः सनातनः। अस्माद्धर्मान्न च्यवेत क्षत्रियो घ्नन् रणे रिपून्'—इति मनुः (७।९८)। (२५) पुं. विष्णुः; शिवः; ब्रह्मा; पितृणामतिथिः; दिव्यमनुष्यः; 'सनत्कुमारो धर्मश्च सनकश्च सनातनः। सनन्दश्चापि सूर्यश्च येऽन्ये वा ब्रह्मणः सुताः। विचक्षणा न यद्वक्तुं के वान्ये जडबुद्धयः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। वैष्णवराजः। १२५
सनाभिः पुं. [समानो नाभिर्गोत्रमस्य। 'ज्योतिर्जनपदेति' समानस्य सः] सपिण्डः; ज्ञातिः; आत्मीयः; स्वजनः; बन्धुः; आत्मा; बान्धवः; सगोत्रः; त्रि. [समानो नाभिर्यस्येति। समानस्य सः] तुल्यः; स्नेहयुक्तः। ५०९
सनिष्ठीवम् क्ली. [नि+ष्ठिवु निरसने+घञ्, संज्ञापूर्वकत्वान्न गुणः। निष्ठीवेन सह वर्तमानम्] सनिष्ठेवम्; अम्बूकृतम्; सथूत्कारवचनम्। १४२
सनिष्ठेवम् क्ली. [निष्ठेवो मुखवारिबिन्दुः तेन सह वर्तते इति। निपूर्वष्ठिवेर्घञ्, गुणः] अम्बूकृतम्। १४२
सनीडः त्रि. [नीडस्य वासस्थानस्य समीपमिति। प्रादिसमासः] निकटम्; 'सम्पत्य तत्सनीडेऽसौ तं वृत्तान्तमशिश्रवत्'—इति भट्टिः (५।३१)। नीडयुक्तः। ६९२
सन्तः पुं. [सच्छब्दस्य प्रथमाबहुवचनान्तरूपम्] 'तं सन्तः श्रोतुमर्हन्ति सदसद्व्यक्तिहेतवः। हेम्नः संलक्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धिः श्यामिकापि वा'—इति रघौ (१।१०)। ३९८
सन्ततम् क्ली. [सम्+तन्+क्त। 'समो वा हिततत्योः' इति पक्षे मलोपाभावः] सततं; तद्वति त्रि.। अव्य. सततम्; अनिशं; नित्यम्; अजस्रं; शश्वत्; अश्रान्तम्; अविरतम्; अनवरतम्; अनारतम्; असक्तम्। ६९८
सन्ततिः स्त्री. [सम्+तन्+क्तिन्] पुत्रः; (कन्या;) सूनुः; आत्मजः; तनुजः; प्रसूतिः; सुतः; तुक्; तोकं; तनयः; नन्दनः; अपत्यम्। 'सन्तत्या पितृऋणं तु शोधयित्वा परिव्रजेत्'—इति स्मृतिः। गोत्रम्; 'सन्ततिः शुद्धवंश्या हि परत्रेह च शर्मणे'—इति रघौ (१।६९)। पङ्क्तिः; 'तच्छ्रुत्वा नेत्रयुगलात् स तत्याजाश्रुसन्ततिम्'—इति कथासरित्सागरे (११।५१)। विस्तारः; 'विदधाद् यज्ञसन्तत्यै वेदमेकं चतुर्विधम्'—इति भागवते (१।४।१९)। परम्पराभवः। ४९७
सन्तमसम् क्ली. [समन्तात् तमः। 'अवसमन्धेभ्यस्तमसः' इति अच्] विष्वक्तमः; व्यापकान्धकारः; अवतमसः;

अन्धतमसः; 'अवधार्य कार्यगुरुतामभवन्न भयाय सान्द्रतमसन्तमसम्'–इति माघे (९।२२)। मोहः; महामोहः; 'ममापि किं नो दयसे दयाधन त्वदङ्घ्रिमग्नं यदि वेत्थ मे मनः। निमज्जयन् सन्तमसे पराशयं विधिस्तु वाच्यः क्व तवागसः कथा'—इति नैषधे ९ सर्गः। ११०

सन्तानः पुं. [सन्तनोति विस्तारयति पत्रपुष्पादीनिति। सम्+तन् विस्तारे+'तनोतेरुपसंख्यानम्' इत्युक्त्या ण] कल्पवृक्षः; [सन्तन्यते इति। सम्+तन्+घञ्] वंशः; विस्तारः; 'तयोरुत्पादयापत्यं सन्तानाय कुलस्य नः। मन्नियोगान्महाबाहो धर्मं कर्तुमिहार्हसि'—इति महाभारते (१।१०३।१०)। अपत्यं; तुक्; तोकं; तनयः; तोक्म; तक्म; शेषः; अप्नः; गयः; जाः; यहुः; सूनुः; नपात्; प्रजा; बीजं; क्ली. अस्त्रविशेषे। 'सन्तानं नर्तकं घोरमास्यमोदकमष्टमम्। एतैर्विद्धाः सर्व एव मरणं यान्ति मानवाः'—महाभारते (५।९६।४०)। १३५

सन्दर्भः पुं. [सम्+दृभ् ग्रन्थे+घञ्] श्रन्थनं; ग्रन्थनं; गुम्फः; रचना; 'कविसमरसिंहनादः स्वरानुवादः सुखैकसंवादः। विद्वद्विनोदकन्दः सन्दर्भोऽयं मया सृष्टः'–इति आर्यासप्तशत्याम्। प्रबन्धः; ग्रन्थनम्; 'सन्दर्भो रचना गुम्फः श्रन्थनं ग्रन्थनं समाः'—इति हेमचन्द्रः। 'गूढार्थस्य प्रकाशश्च सारोक्तिः श्रेष्ठता तथा। नानार्थवत्त्वं वेद्यत्वं सन्दर्भः कथ्यते बुधैः'—इति सन्दर्भकारिका ७३०

सन्दानम् क्ली. [संदीयते इति, सम्+दाण्+ल्युट्। संपूर्वो दाण् बन्धने वर्तते] दामनी; दाम; पशुबन्धनं; रज्जुः। २७७

सन्देहः पुं. [सम्+दिह्+घञ्] एकधर्मिकविरुद्धभावाभावप्रकारकं ज्ञानं; विचिकित्सा; संशयः; द्वापरः; शङ्का; वितर्कः; आरेकः; विभ्रमः; विकल्पः; भ्रान्तिः; 'तान् समीक्ष्य ततः सर्वान् निर्विशेषाकृतीन् स्थितान्। सन्देहादथ वैदर्भी नाभ्यजानान्नलं नृपम्'—इति महाभारते (३।५७।११)। ६९१

सन्दोहः पुं. [सम्+दुह्+घञ्] समूहः; सङ्घः; समुदायः; उत्करः; 'स्तननूतननखलेखालम्बी तव घर्मबिन्दुसन्दोहः। आभाति पट्टसूत्रे प्रविशन्निव मौक्तिकप्रसरः'–इति आर्यासप्तशत्याम् (५८९)। ६८६

सन्धा स्त्री. [सम्+धा+अङ] प्रतिज्ञा; आगूः; सङ्गरः; प्रतिश्रवः; 'गङ्गां निषादाहृतनौनिवेषस्ततार सन्धामिव सत्यसन्धः'—इति रघौ (१४।५२)। (८१८) अवधिः; सीमा; स्थितिः; सन्धानं; सन्ध्या; 'सन्ध्या द्विजमैत्री पितृप्रसूः'—इति वाचस्पतिः। ७१५

सन्धानम् क्ली. [सन्धीयते यदिति। सम्+धा+ल्युट्] मद्यसज्जीकरणम्; अभिषवः; सन्धानी; सन्धिका; धान्याम्लम्; आरनालं; काञ्जिकं; सौवीरः; अवन्तिसोमः; तुषोदकं; शुक्तं; सङ्घट्टनम्; 'मुखेन सा पद्मसुगन्धिना निशि प्रवेपमानाधरपत्रशोभिना। तुषारवृष्टिक्षतपद्मसम्पदां सरोजसन्धानमिवाकरोदपाम्'—इति कुमारे (५।२७)। मदिरा; अवदंशः; सौराष्ट्रं; धनुषि बाणयोजनम्; 'तदाशु कृतसन्धानं प्रतिसंहर शायकम्। आर्तत्राणाय वः शस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि'—इत्यभिज्ञानशाकुन्तले १ अङ्कः। अन्वेषणं; सन्धिः; 'एवं कृते तु सन्धाने वृत्रः प्रमुदितोऽभवत्। यत्तः समभवच्चापि शक्रो हर्षसमन्वितः'—इति महाभारते (५।१०।३३)। [सन्दधातीति। सम्+धा+ल्यु] धारके त्रि.। 'मधु तु मधुरं कषायानुरसं....हृद्यं सन्धानं शोधनं रोपणमिति'—इति सुश्रुते (१।४५)। ३१८

सन्धिः पुं. [सन्धानमिति। सम्+धा+कि] सुरुङ्गा; (८३५) संश्लेषः; रन्ध्रं; राजादीनां षड्गुणान्तर्गतगुणविशेषः; ऐक्यम्; एकता; 'मेल' इति भाषा। 'पणबद्धो भवेत् सन्धिः स्वयं हीनस्तमाचरेत्। मर्यादोल्लङ्घनं नास्ति यदि शत्रोरिति स्थितिः। मर्यादोल्लङ्घनं यत्र शत्रौ संशयितं भवेत्। न तं संशयितं कुर्यादित्युवाच बृहस्पतिः। बलवद्भिगृहीतः सन् नृपोऽनन्यप्रतिश्रयः। आपन्नः सन्धिभावेन विदध्यात्कालयापनाम्। ये च दैवेनोपहता राष्ट्रं येषां च दुर्गतम्। बहवो रिपवो येषां तेषां सन्धिर्विधीयते। दुर्मन्त्रो भिन्नमन्त्रश्च नीचधर्मरतश्च यः। एतैः सन्धिं न कुर्वीत विशेषात् पूर्वपीडितैः। सन्धिं हि तादृशैः कुर्वन् प्राणैरपि हि हीयते'—इति भोजयुक्तिकल्पतरुः। संयोगः; श्लेषः; 'तडागान्युदपानानि वाप्यः प्रस्रवणानि च। सीमासन्धिषु कार्याणि देवतायतनानि च'—इति मनुः (८।२४९)। भगं; सङ्घट्टनं; रूपकाणां मुखाद्यङ्गं; सावकाशः; भेदः; साधनम्; 'तस्य सावरणदृष्टसन्धयः काम्यवस्तुषु नरेषु सक्तिनः। वल्लभाभिरुपसृत्य चक्रिरे सामिभुक्त-

विषया: समागमा:'–इति रघौ (१९।१६)। अक्षरद्वयस्य मेलनम्; 'सन्धिमात्रं न जानासि मा शब्दोदकशब्दयोः। न च प्रकरणं वेत्सि मूर्खस्त्वं कथमीदृशः'—इति कथासरित्सागरे (६।११७)। 'सन्धिरेकपदे नित्यो नित्यो धातूपसर्गयोः। सूत्रेषु च भवेन्नित्यः स चान्यत्र विभाषया' —इति प्राञ्चः। ७७१

सन्ध्या स्त्री. [सम् सम्यक् ध्यायत्यस्यामिति। सम्+ध्यै चिन्तायाम्+'आतश्चोपसर्गे' इत्यङ। यद्वा सन्दधातीति। सम्+धा+'अघ्न्यादयश्च' इति यक् प्रत्ययेन निपातितः] कालविशेषः; दिवारात्रिसम्बन्धिदण्डद्वयरूपः; पितृप्रसूः; सन्धा; द्विजमैत्री; सायं; दिनान्तं; निशादि; दिवसात्ययः; सायाह्नः; विकालः; ब्रह्मभूतिः; सायः; 'कालस्य तिस्रो भार्याश्च सन्ध्यारात्रिदिनानि च। याभिर्विना विधात्रा च संख्या कर्तुं न शक्यते'—इति ब्रह्मवैवर्ते। रात्रेराद्यन्तदण्डचतुष्टयात्मककालः; 'रवेस्तु मण्डलाद्धस्तात् सायं सन्ध्या त्रिनाडिका। तथैवार्द्धोदयात्पूर्वं प्रातः सन्ध्या त्रिनाडिका।' 'त्रियामां रजनीं प्राहुस्त्यक्त्वाद्यन्तचतुष्टयम्। नाडीनां तदुभे सन्ध्ये दिवसाद्यन्तसंज्ञिते'—इति प्रायश्चित्ततत्त्वम्। 'समुद्रे हिमवत्पार्श्वे नद्यामस्यां च दुर्मते। रात्रावहनि सन्ध्यायां कस्य गुप्तः परिग्रहः'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। त्रिसन्ध्याकालिकोपासना; तत्कालोपास्या देवता; सन्ध्योपासनम्; प्रातःसन्ध्या; मध्याह्नसन्ध्या; सायंसन्ध्या ; 'अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि सन्ध्योपासनिकं विधिम्। अनर्हः कर्मणां विप्रः सन्ध्याहीनो यतः स्मृतः।' 'एतत्सन्ध्यात्रयं प्रोक्तं ब्राह्मण्यं यदधिष्ठितम्। यस्य नास्त्यादरस्तत्र न स ब्राह्मण उच्यते।' 'सर्वावस्थोऽपि यो विप्रः सन्ध्योपासनतत्परः। ब्राह्मण्याच्च न हीयेत अन्त्यजन्मगतोऽपि सन्'—इति याज्ञवल्क्यः। 'यावज्जीवनपर्यन्तं यस्त्रिसन्ध्यं करोति च। स च सूर्यसमो विप्रस्तेजसा तपसा सदा'—इति कौर्मे। नदीविशेषः; युगसन्धिः; चिन्ता; संश्रवः; सीमा; सन्धानं; कुसुमविशेषः। १०६

सन्नः त्रि. [सद्+क्त] शान्तः; अवसन्नः; 'कश्मलाभिहिता सन्ना बभौ सा रावणोरसि।' पुं. पियालवृक्षः। ७६७

सन्नद्धः त्रि. [सम्+नह्+क्त] वर्मितः; कवचितः; दंशितः; कृतसन्नाहः; 'सन्नद्धो रथमास्थाय शरं धनुरुपाददे'—इति भागवते (७।१०।६६)। व्यूढः; व्यूहविन्यासयुक्तः; आततायी; वधोद्यतः; मन्त्रादिसंयुतः; आबद्धः; 'कुसुममिव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम्'—इति शाकुन्तले १ अङ्के। सञ्जातः; 'पुराणपत्रापगमादनन्तरं लतेव सन्नद्धमनोज्ञपल्लवा'—इति रघौ (३।७)। ४६०

सन्नाहः पुं. [संनह्यतेऽसौ इति। सम्+नह्+घञ्] अङ्गत्राणं; वर्म; कङ्कटः; जगरः; कवचं; दंशः; तनुत्रं; माठी; उरश्छदः; तनुत्राणं; दंशनं; जालिका; 'पृथक् काञ्चनसन्नाहान् रथेष्वश्वानयोजयत्'—इति महाभारते (४।३०।१७)। उद्योगः; 'ततो रामशरान् दृष्ट्वा विमानेषु गृहेषु च। सन्नाहो राक्षसेन्द्राणां तुमुलः समपद्यत'—इति रामायणे (६।७५।४७)। ४५९

सन्नाह्यः पुं. [संनह्यते इति, सम्+नह्+ण्यत्] समरोचितगजः; युद्धयोग्यहस्ती; 'राजवाह्यस्तूपवाह्यः सन्नाह्यः समरोचितः'—इति हेमचन्द्रः। २२४

सन्निकर्षः पुं. [सम्+नि+कृष्+घञ्] सान्निध्यं; पार्श्वं; समीपं; सविधं; समीपाभ्यासं; सवेशः; अन्तिकं; सदेशः; अभ्यग्रं; सनीडं; सन्निधानम्; उपान्तं; निकटम्; उपकण्ठं; सन्निकृष्टं; समर्यादम्; अभ्यर्णम्; आसन्नः; सन्निधिः; 'स्त्रीसन्निकर्षं परिहर्तुमिच्छन् अन्तर्दधे भूतपतिः सभूतः'—इति कुमारे (३।७४)। विषयेन्द्रियसम्बन्धः; ज्ञानस्य कारणम्। ६९२

सन्निकृष्टः त्रि. [सम्+नि+कृष्+क्त] सन्निकर्षविशिष्टः; निकटः; सन्निधं; सन्निधानं; समीपः; समीपम्। ६९२

सन्निधम् क्ली. [सम्+नि+धा+क] सन्निधानं; निकटं; समीपम्। ६९२

सन्निधानम् क्ली. [सम्+नि+धा+ल्युट्] निकटं; समीपम्; 'श्रेयो मुहूर्तं तव सन्निधानं ममैव कृत्स्नादपि जीवलोकात्'—इति रामायणे (२।२१।५३)। [सम्यक् निधीयतेऽस्मिन्निति] आश्रयः; 'आवर्तः संशयानामविनयभवनं पत्तनं साहसानाम्, दोषाणां सन्निधानं कपटशतमयं क्षेत्रमप्रत्ययानाम्। दुस्त्याज्यं यन्महद्भिः सुरनरवृषभैः सर्वमायाकरण्डं, स्त्रीरूपं केन लोके विषममृतमयं धर्मनाशाय सृष्टम्'—इति शान्तिशतकम्।

अवस्थानम्; 'यस्मिन् गेहे च लिखितमेतत् तिष्ठति नित्यदा। सन्निधानं कृते श्राद्धे तत्रास्माकं भविष्यति'—इति मार्कण्डेये (९७।३५)। ६९२

सन्निधिः पुं. [सम्+नि+धा+कि] सन्निकर्षः; समीपं; निकटम्; 'हीनान्नवस्त्रवेशः स्यात् सर्वदा गुरुसन्निधौ'—इति मनुः (२।१९४)। इन्द्रियगोचरः; अवस्थानम्; 'गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति। कावेरि नर्मदे सिन्धो जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु'—इति जलशुद्धिप्रकरणे। ६९२

सन्निभः त्रि. [सम्यक् निभातीति। सम्+नि+भा+क] सदृशः; 'भगवान् यज्ञपुरुषो जगर्जागेन्द्रसन्निभः'—इति भागवते (३।१३।३२)। ६९४

सन्निवेशः पुं. [संनिविशन्ते अत्रेति। सम्+नि+विश्+घञ्] संस्थानम्; 'उत्तानपाणिद्वयसन्निवेशात् प्रफुल्लराजीवमिवाङ्कमध्ये'—इति कुमारे (३।४५)। पत्तनादिषु दिगादिपरिच्छिन्नप्रदेशः; पूर्वदिगाद्यवच्छिन्नगृहम्; पुरादेर्बहिर्विहरणभूमिः; स्वाम्यादयः; निकर्षणम्; 'नगरादिबहिः स्वैरविहारचारुभूमिषु। तत्र द्वयं निगदितं सन्निवेशो निकर्षणम्'—इति शब्दरत्नावली। 'अशून्यतीरां मुनिसन्निवेशैस्तमोऽपहन्त्रीं तमसां वगाह्य'—इति रघौ (१४।७६)। ७७८

सन्न्यासः पुं. [सम्+नि+अस्+घञ्] प्रायः; भोजनत्यागः; अनशनम्; जटामांसी; काम्यकर्मणां न्यासः; 'काम्यानां कर्मणां न्यासं सन्न्यासं कवयो विदुः। सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणाः'—इति भगवद्गीतायाम् १८ अध्याये। 'सन्न्यासः कर्मणां न्यासः कृतानामकृतैः सह। कुशलाकुशलाभ्यां तु प्रहाणं न्यास उच्यते'—इति मात्स्ये। चतुर्थाश्रमः; 'अश्वालम्भं गवालम्भं सन्न्यासं पलपैतृकम्। देवरेण सुतोत्पत्तिं कलौ पञ्च विवर्जयेत्'—इति कलौ संन्यासनिषेधकं क्षत्रियवैश्यविषयकमिति मलमासतत्त्वम्। ७६०

सपत्राकरणम् क्ली. [सपत्रशब्दात् कृञो योगे 'सपत्रनिष्पत्रादतिव्यथने'—इति डाच्] परस्यातिपीडनं; सपत्राकृतिः; निष्पत्राकृतिः; अत्यन्तपीडनम्। ७६५

सपत्नः पुं. [सह पतति एकार्थे इति। सह+पत्+न, सहस्य सः] शत्रुः; 'संरक्ष तात मन्त्रांश्च सपत्नांश्च ममोद्धर। निपुणेनाभ्युपायेन यद् ब्रवीमि तथा कुरु'—इति महाभारते (१।१४५।५)। ४५६

सपदि अव्य. [सह पद्यते इति, पद् गतौ+इन्, सहस्य सः] द्रुतं; तत्क्षणम्; 'सपदि मुकुलिताक्षीं रुद्रसंरम्भभीत्या, दुहितरमनुकम्प्यामद्रिरादाय दोर्याम्। सुरगज इव बिभ्रत् पद्मिनीं दन्तलग्नां, प्रतिपथगतिरासीद् वेगदीर्घीकृताङ्गः'—इति कुमारे (३।७६)। ७५२

सपर्या स्त्री. [सपर पूजायाम्+'कण्ड्वादिभ्यो यक्' इति यक्, 'अ प्रत्ययात्' इति अ, टाप्] पूजा; अर्चा; 'तमर्घ्यमर्घ्यादिकयादिपूरुषः सपर्यया साधु स पर्यपूपुजत्'—इति माघे (१।१४)। १२८

सपिण्डः पुं. [समानः पिण्डो मूलपुरुषो निवापो वा यस्य] समानस्य सः सप्तपुरुषान्तर्गतज्ञातिः; सनाभिः; सगोत्रः; आत्मीयः; स्वजनः; 'पञ्चमात् सप्तमादूर्ध्वं मातृतः पितृतः क्रमात्। सपिण्डता निवर्तेत सर्ववर्णेष्वयं विधिः'—इत्युद्वाहतत्त्वम्। ५०९

सपीतिः स्त्री. [पा पाने+क्तिन्, 'घुमास्थागेति' ईत्वम्। सह एकत्र पीतिः पानं, सहस्य सः] सहपानकं; तुल्यपानं; सहपीतिः; आत्मीयजनैः सह मिलित्वैककालपानम्; 'सग्धिश्च मे सपीतिश्च मे कृषिश्च मे......यज्ञेन कल्पताम्'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (१८।९)। ३२८

सप्तकी स्त्री. [सप्तभिः स्वरैरिव कायति शब्दायते इति। सप्त+कै+क, गौरादित्वाद् ङीष्] काञ्ची; मेखला; रसना। ५६०

सप्ततन्तुः पुं. [सप्तभिर्भूरादिभिर्महाव्याहृतिभिरग्निजिह्वाभिर्वा तन्यते इति। तनु विस्तारे+'सितनिगमीति' तुन्। सप्त तन्तवः संस्था यस्येति वा] यागः; यज्ञः; क्रतुः; स्तोमः; मखः; वितानः; संस्तरः; बर्हिः; सवः; सत्रम्। 'सप्ततन्तुमधिगन्तुमिच्छतः कुर्वनुग्रहमनुज्ञया मम। मूलतामुपगते खलु त्वयि प्रापि धर्ममयवृक्षता मया'—इति माघे (१४।६)। ४१४

सप्तला स्त्री. [सप्त पत्राणि मनोबुद्धीन्द्रियाणि वा लातीति। सप्त+ला+क] नवमालिका; नवमल्लिका; चर्मकषा; गुञ्जा; पाटला। २०७

सप्तविंशतिमौक्तिका स्त्री. [सप्तविंशतिः मौक्तिकानि यस्यां सा] नक्षत्रमाला। ४६२

सप्तार्चिः [स्] पुं. [सप्त अर्चींसि यस्य] अग्निः; वह्निः; अनलः; 'सप्तसामोपगीतं त्वां सप्तार्णवजलेशयम्।

सप्तार्चिर्मुखमाचक्षुः सप्तलोकैकसंश्रयम्'—इति रघौ (१०।२१)। चित्रकवृक्षः; शनिग्रहः; क्रूरचक्षुषि त्रि.। ६२

सप्ताश्वः पुं. [सप्त अश्वा यस्य] सूर्यः; अर्कवृक्षः; 'आ सूर्यो यातु सप्ताश्वः क्षेत्रं यदस्योर्विया दीर्घयाथे'—इति ऋग्वेदे (५।४५।९)। 'सूर्यः सर्वस्य प्रेरको देवः सप्ताश्वः सर्पणस्वभावाश्वोपेतः सप्तसंख्याकाश्वो वा आयातु अस्मदभिमुखमागच्छतु'—इति तद्भाष्ये सायणः। ३६

सप्तिः पुं. [षप् समवाये+'सपिनसिवसिपदिभ्यस्तिप्।' सपति सङ्ग्रामेषु सहसा समवैति। सर्पति, सृपि गतौ, अस्माद्वा तिप्रत्यये गुणे च रेफलोपे बाहुलकात् साधुः] अश्वः; अर्वा; गन्धर्वः; वाजी; तुरङ्गमः; तुरगः; तार्क्ष्यः; हरितः; तुरङ्गः; ययुः; घोटकः; हयः; वाहः। ४३६

सभा स्त्री. [सह भान्ति शोभन्ते यत्रेति। सह+भा दीप्तौ+भिदादित्वाद् अधिकरणे अङ, सहस्य सः] सह भान्ति अत्र; समज्या; परिषत्; गोष्ठी; समितिः; संसत्; आस्थानी; आस्थानं; सदः; समाजः; पर्षत्; 'यस्मिन् देशे निषीदन्ति विप्रा वेदविदस्त्रयः। राज्ञश्चाधिकृतो विद्वान् ब्राह्मणस्तां सभां विदुः'—इति मनुः। सामाजिकः; द्यूतगृहं; समूहः; गृहम्। ७४५,८२१

सभाजनम् क्ली. [सभाज प्रीतिदर्शनयोः+णिच्+ल्युट्] मैत्री; मित्रता; सख्यं; सखिता; गमनागमनादिसमये सुहृदादेःआलिङ्गनारोग्यप्रश्नस्वागतादिनानन्दोत्पादनम्; आनन्दनम्, आप्रच्छनं; गमनसमये सुहृदमालिङ्ग्य गमनानुज्ञाग्रहणम्; आगतस्य वा स्वागतारोग्यादिपृच्छा; 'सभाजने मे भुजमूर्ध्वबाहुः सव्येतरं प्राध्वमितः प्रयुङ्क्ते'—इति रघौ (१३।४३)। [सभाजयतीति, सभाज प्रीतौ+ल्यु] प्रीतिदायके त्रि.। 'प्रभूतनागाश्वरथं सभाजनं समृद्धियुक्तं बहुपानभोजनम्। मनोहरं काञ्चनचित्रभूषणं गृहं महत् शोभयतामियं मम'—इति महाभारते (४।१३।१०)। ७०६

सभिकः पुं. [सभा द्यूतसभा आश्रयत्वेनास्त्यस्येति। सभा+व्रीह्यादित्वात् ठन्] सभीकः; द्यूतकारकः; दुरोदरम्; 'दुरोदरं च निर्ग्रन्थद्यूतकारकलग्नकाः। सभिकः प्रतिभूश्चेति'—इति जटाधरः। ३८८

सभीकः पुं.—द्यूतकारकः; सभिकः; 'ग्लहे शतिकवृद्धेस्तु सभीकः पञ्चकं शतम्। गृह्णीयाद्धूर्तकितवादितराद्दशकं शतम्'—इति याज्ञवल्क्यः (२।२०२)। ३८८

समम् अव्य.—सहितम्; 'साकं तु साकं सत्रा समं सह' इत्यमरः। 'विद्ययैव समं कामं मर्तव्यं ब्रह्मवादिना। आपद्यपि हि घोरायां नत्वेनामिरिणे वपेत्'—इति मनुः (२।११३)। त्रि. [समतीति, सम् वैक्लव्ये+पचाद्यच्] सर्वं; (सर्वनामसंज्ञम्) 'नमः समस्तात् पूर्वस्मा अन्तरस्मा अमेधसाम्'—इति मुग्धबोधे। समानम्; 'समायैषु परायैषां मुक्तयेऽर्थान्तिराय च'—इति मुग्धबोधे। साधुः; पुं. राशिविशेषाणां संज्ञाविशेषः; 'क्रूरोऽथ सौम्यः पुरुषोऽङ्गना च, ओजोऽथ युग्मं विषमः समश्च। चरस्थिरद्वयात्मकनामधेया, मेषादयोऽमी क्रमशः प्रदिष्टाः'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। मानस्य प्रकारविशेषः; वर्गमूलानयनार्थम् अङ्कोपरि दत्तऋजुरेखाविशेषः; 'त्यक्त्वान्त्याद्विषमात् कृतिं द्विगुणयेन्मूलं समे तद्धृते। त्यक्त्वा लब्धकृतिं तदाद्यविषमाल्लब्धं द्विनिघ्नं न्यसेत्'—इति लीलावती। ८७७

समग्रः त्रि. [समं समकालमेव गृह्णातीति। सम+ग्रह+ड] सकलं; सर्वं; समस्तं; कृत्स्नं; विश्वं; निखिलम्; अखिलम्; 'चतुर्दश हि वर्षाणि समग्राण्युष्य कानने। भ्रात्रा सह मया चैव पुनः प्रत्यागमिष्यति'—इति रामायणे (२।५२।८४)। पूर्णः; 'अवेक्षमाणस्तस्याश्च हिडिम्बो मानुषं वपुः। स्रग्दामपूरितशिखं समग्रेन्दुनिभाननम्'—महाभारते (१।१५३।१३)। ७१३

समन्ततः [स्] अव्यः [समन्त+आद्यादित्वात् तसि] चतुर्दिगभिव्याप्तः; परितः; सर्वतः; विश्वक्; समन्तात्; 'स्त्रियश्च सर्वा रुरुदुः समन्ततः पुरं तदासीत् पुनरेव सङ्कुलम्'—इति रामायणे (२।५७।३४)। ८७४

समयः पुं. [सम्यगेतीति। सम्+इण् गतौ+पचाद्यच्] सिद्धान्तः; कृतान्तः; राद्धान्तः; कालः (८६९); 'समयः समवर्तत इवैष यत्र मां समनन्दयत् सुमुखि! गौतमार्पितः। अयमागृहीतकमनीयकङ्कणस्तव मूर्तिमानिव महोत्सवः करः'—इति उत्तरचरिते १ अङ्के। शपथः; संवित्; क्रियाकारः; निर्देशः; सङ्केतः; आचारः; 'ऋषीणां समये नित्यं ये चरन्ति युधिष्ठिर!, निश्चिताः सर्वधर्मज्ञास्तान् देवान् ब्राह्मणान् विदुः'

—इति महाभारते (१३।९०।५०)। भाषा; 'देशाचारान् समयान् जातिधर्मान् बुभूषते यः सः परावरज्ञः' —इति महाभारते (५।३३।११६)। व्यवहारः; 'न तैः समयमन्विच्छेत् पुरुषो धर्ममाचरन्'—इति मनुः (१०।५३)। सम्पत्; नियमः; 'अतो भजिष्ये समयेन साध्वीं, यावत्तेजो बिभृयादात्मनो मे'—इति भागवते (३।२२।१८)। अवसरः। १०

समया अव्य. [समयनमिति । सम्+इण् गतौ+'आः समिण्निकषिभ्याम्' इति आ प्रत्ययः] निकटं; निकषा; हिरुक्; सामीप्यम्; 'कुटजानि वीक्ष्य शिखिभिः शिखरीन्द्रं समयावनौ घनमदभ्रमराणि। गगनं च गीतनिनदस्य गिरोच्चैः समया वनौघनमदभ्रमराणि'—इति माघे (६।७३)। मध्यः; 'समया निकटे मध्ये मध्ये च निकषान्तिके। हिरुङ् मध्ये विनार्थे च'—इति रुद्रः। कालविज्ञापनम्। ८७९

समरः पुं.– क्ली. [सम्यग् अरणं प्रापणमिति। सम्+ऋ गतौ+अप्। यद्वा सम्यक् ऋच्छत्यत्रेति। 'मन्दरकन्दरशीकरेति' बाहुलकाद् अरप्रत्ययेन साधुः] युद्धं; संग्रामः; संख्यं; रणम्; 'इतराण्यपि रक्षांसि पेतुर्वानरकोटिषु। रजांसि समरोत्थानि तच्छोणितनदीष्विव'—इति रघौ (१२।८२)। ४५३

समरोचितम् त्रि.— युद्धयोग्यम्। २२४

समर्यादः त्रि. [मर्यादया सह वर्तमानः] समीपः; निकटः। ६९२

समवर्ती [न्] पुं. [समं वर्तते इति। सम्+वृत्+णिनि] यमः; शमनः; प्रेतपतिः; पितृपतिः; कीनाशः; वैवस्वतः; कृतान्तः; कालः; कालिन्दीसोदरः; अन्तकः; धर्मराजः; दण्डधरः; हरिः; दक्षिणाशापतिः; श्राद्धदेवः; यमुनाभ्राता; 'शासितारं च पापानां पितृणां समवर्तिनम्। असृजत्सर्वभूतात्मा निधिपं च धनेश्वरम्' —इति महाभारते (१२।२०७।३५)। तुल्यवर्तनशीले त्रि.। ७१

समवायः पुं. [समवाय्यते इति। सम्+अव+अय्+घञ्] समूहः; 'अनध्यायो रुद्यमाने समवाये जनस्य च' —इति मनुः (४।१०८)। सम्बन्धविशेषः; 'घटादीनां कपालादौ द्रव्येषु गुणकर्मणोः। तेषु जातेश्च सम्बन्धः समवायः प्रकीर्तितः'—इति भाषापरिच्छेदः। 'अवयवावयविनोर्गुणगुणिनोः क्रियाक्रियावतोर्जातिव्यक्त्योर्नित्यद्रव्यविशेषयोश्च यः सम्बन्धः स समवायः'—इति सिद्धान्तमुक्तावली। ६८६

समसुप्तिः पुं. [समेषां सर्वेषां सुप्तिर्यत्र] कल्पान्तः; महाप्रलयः; स्त्री. [समा सुप्तिरिति] तुल्यशयनम्। ११७

समस्तम् त्रि. [सम्+अस्+क्त] सम्पूर्णं; समं; सर्वं; विश्वम्; अशेषं; कृत्स्नं; निखिलम्; अखिलं; निःशेषं; समग्रं; सकलं; पूर्णम्; अखण्डम्; अनूनकम्; अनन्तम्; अन्यूनम्; अनूनम्; 'सूक्तान्यशेषाणि शटाकलापो घ्राणं समस्तानि हवींषि देव'—इति विष्णुपुराणे (१।४।३३)। ७१३

समा स्त्री. [सम् वैक्लव्ये+पचाद्यच्, ततष्टाप्] वत्सरः; हायनः; अब्दः; शरत्; वर्षः; संवत्सरः; [समति विकलयति भावान्। समा नित्यबहुवचनान्ता स्त्रियामिति वामनादयः। 'समां समां विजायते' इत्येकत्वेऽपि दृश्यते। अतएव समाः इति बहुवचनं तथा समेति एकवचनमपि] 'मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः। यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्'—इति रामायणे (१।२।१५)। ११६

समांसमीना स्त्री. [समां समां विजायते इति। 'समां समां विजायते' इति ख] प्रतिवर्षप्रसूतगवी। २७२

समाख्या स्त्री. [समाख्यायतेऽनयेति। सम्+आ+ख्या+अङ्] कीर्तिः; श्लोकः; यशः; अभिख्या; संज्ञा; 'सपिण्डीकरणसमाख्यासिद्ध्यर्थं सुतरां तत्र तथा चरणम्' —इति तिथ्यादितत्त्वम्। १५३

समाघातः पुं. [समाहन्यतेऽनेनेति। सम्+आ+हन्+घञ्] युद्धं; रणः; समरः; आयोधनम्; 'संस्फेटस्तु समाघातः क्रुद्धसत्वरयोर्द्वयोः'—इति साहित्यदर्पणे (६।४२१)। वधः। ४५४

समाजः पुं. [संवीयतेऽत्रेति। सम्+अज्+घञ्, 'अजेर्व्यघञपोः' इति वीभावो न। 'अजिव्रज्योश्च' इति कुत्वनिषेधः] पशुभिन्नानां सङ्घः; सङ्घातः; उत्करः; हस्ती; (७४५) सभा; संसत्; आस्थानी; परिषत्; सदः; 'धर्मव्यतिक्रमो ह्यस्य समाजस्य ध्रुवं भवेत्। यत्राधर्मः समुत्तिष्ठेन्न स्थेयं तत्र कर्हिचित्'—इति भागवते। ६८६

समाधानम् क्ली. [सम्+आ+धा+ल्युट्] ब्रह्मणि मनःस्थिरीकरणं; चित्तैकाग्र्यम्; अवधानं; प्रणिधानं; समाधिः; 'स्वधिष्ण्यानामेकदेशे मनसा प्राणधारणा। वैकुण्ठलीलाभिध्यानं समाधानं तथात्मनः'—इति भागवते (३।२८।६)। १२८

समाधिः पुं. [समाधीयतेऽस्मिन् मनो जनैरिति। सम्+आ+धा+'उपसर्गे घोः किः' इति कि] प्रणिधानं; समाधानं; चित्तैकाग्रता; ब्रह्मणि मनःस्थिरीकरणं; समर्थनं; नीवाकः; नियमः; 'अयाचितारण्यनिवासमात्मनः फलोदयान्ताय तपः समाधये'—इति कुमारे (५।६)। ध्यानं; काव्यगुणविशेषः; अर्थालङ्कारविशेषः; 'समाधिः सुकरे कार्ये दैवाद्वस्त्वन्तरागमात्' —इति साहित्यदर्पणे (१०।७४०)।] समाधीयतेऽनेनेति करणे कि] कारणसामग्री; 'तं वेधा विदधे नूनं महाभूतसमाधिना। तथाहि सर्वे तस्यासन् परार्थैकफला गुणाः'—इति रघौ (१।२९)। इन्द्रियनिरोधनम्; 'नित्यं शुद्धं बुद्धियुक्तं सत्यमानन्दमद्वयम्। तुरीयमक्षरं ब्रह्म अहमस्मि परं पदम्। अहं ब्रह्मेत्यवस्थानं समाधिरिति गीयते'—इति गारुडे ४४ अध्याये। 'द्वादशध्यानपर्यन्तं मनो ब्रह्मणि यो नरः। तुष्टे तु संयतो मुक्तः समाधिः सोऽभिधीयते। ध्येयमेव हि सर्वत्र ध्याता तल्लयतां गतः। पश्यति द्वैतरहितं समाधिः सोऽभिधीयते'—इति गारुडे २४० अध्याये। 'तस्यैव कल्पनाहीनं स्वरूपग्रहणं हि तत्। मनसा ध्याननिष्पाद्यं समाधिः सोऽभिधीयते'—इति विष्णुपुराणे (६।७।९०)। 'इमं गुणसमाहारमनात्मत्वेन पश्यतः। अन्तः शीतलता यस्य समाधिरिति कथ्यते'—इति योगवाशिष्ठे। योगाङ्गविशेषः; स्वनामख्यातवैश्यविशेषः; अयं हि महामायामाराध्य परं ज्ञानमलभत्। अस्य विशेषवृत्तान्तस्तु देवीमाहात्म्ये द्रष्टव्यः। १२८

समानम् त्रि. [समानितीति सम्यक्प्रकारेण प्राणितीति। सम्+आ+अन्+ल्यु। यद्वा समानं मानमस्य, 'समानस्य च्छन्दसीति' स] समं; सदृशः; तुल्यः; सन्निभः;। 'भुजे भुजङ्गेन्द्रसमानसारे भूयः स भूमेर्धुरमाससञ्ज' —इति रघौ। सत्; एकम्; 'नोपगच्छेत् प्रमत्तोऽपि स्त्रियमार्तवदर्शने। समानशयने चैव न शयीत तया सह'—इति मनुः (४।४०)। [मानेन सह वर्तमानम्] गर्वसहितम्; 'स्थैर्यं समानमहरन्मधुमानिनीनां रोमोत्सवो मम यदङ्घ्रिविटङ्कितायाः'—इति भागवते (१।१६।३६)। पुं. [समन्तादनित्यनेनेति। सम्+अन्+घञ्] नाभिसंस्थितवायुः; शरीरस्थवायुविशेषः; 'हृदि प्राणो गुदेऽपानः समानो नाभिसंस्थितः।' वर्णभेदः। ६९४

समानोदर्यः पुं. [समाने उदरे शयितः। 'समानोदरे शयित ओ चोदात्तः' इति यत्। 'विभाषोदरे' इति पक्षे सादेशो न] सहोदरः; सोदर्यः; सगर्भः; सोदरः। ५०८

समाप्तिः स्त्री. [सम्+आप्+क्तिन्] अवसानम्; अन्तः; 'सद्यः प्रवालोद्गमचारुपत्रे नीते समाप्तिं नवचूतबाणे। निवेशयामास मधुर्द्विरेफान् नामाक्षराणीव मनोभवस्य'—इति कुमारे (३।२७)। समर्थनं; परिप्राप्तिः। ८८७

समालम्भनम् क्ली. [सम्+आ+लम्भ्+ल्युट्] कुङ्कुमादिविलेपनं; विच्छित्तिः; कषायः; समालम्भः; विलेपनं; चर्चा; मार्ष्टिः; 'समालम्भनमादाय गोरोचनमनःशिलाम्। आजग्मुस्तत्र मुदिता वराः कन्याश्च षोडश'—इति रामायणे (४।२६।२८)। सम्यङ्मारणं; सम्यक्स्पर्शनम्। ५४०

समासः पुं. [सम्+अस्+घञ्] समाहारः; संक्षेपः; सङ्ग्रहः; 'सर्वेषां तु विदित्वैषां समासेन चिकीर्षितम्। स्थापयेत् तत्र तद्वंश्यं कुर्याच्च समयक्रियाम्'—इति मनुः (७।२०२)। समर्थनम्; ऐकपद्यम्। ७६६

समाहारः क्ली. [सम्+आ+हृ+घञ्] समाहरणं; समासः; संक्षेपः; सङ्ग्रहः; समुच्चयः; बहूनां भिन्नानां बाह्यव्यापारेण बुद्ध्या वा राशीकरणम्; 'समासस्तु समाहारः संक्षेपः संग्रहोऽपि च'—इति हेमचन्द्रः। 'समाहारः स्वरितः'—इत्यष्टाध्यायी। ७६६

समाह्वयः पुं. [समाहूयतेऽत्रेति। सम्+आ+ह्वे+पुंसीति घ। बाहुलकात् नात्वम्] सङ्गरः; युद्धं; सम्परायः; समाघातः; संज्ञा (८१९); आह्वानं; द्यूतं; सङ्गरम्; 'द्यूतं समाह्वयं चैव राजा राष्ट्रान्निवारयेत्। राज्यान्तकरणावेतौ द्वौ दोषौ पृथिवीक्षिताम्। प्रकाशमेतत्तास्कर्यं यद्देवनसमाह्वयौ। तयोर्नित्यं प्रतीघाते नृपतिर्यत्नवान् भवेत्। अप्राणिभिर्यत् क्रियते तल्लोके द्यूतमुच्यते। प्राणिभिः क्रियते यस्तु स विज्ञेयः समाह्वयः।

द्यूतं समाह्वयं चैव यः कुर्यात् कारयेत वा। तान्सर्वान् घातयेद्राजा शूद्रांश्च द्विजलिङ्गिनः'—इति मनुः (९।२२१-२२४)। ४५०

समित् स्त्री. [समीयतेऽत्रेति । सम्+इग्+क्विप्] युद्धं; रणः; 'पाण्ड्यश्च राजा समितीन्द्रकल्पो युधि प्रवीरैर्बहुभिः समेतः'— महाभारते (५।२२।२३)। ४५३

समित् [ध्] स्त्री. [समिध्यतेऽनयेति । सम्+इन्ध्+क्विप्, तुक्] इन्धनम्; एधम्; इध्मम्; एधः; समिन्धनम्; अग्निसन्दीपनार्थतृणकाष्ठादिः; 'अर्कः पलाशः खदिरस्त्वपामार्गोऽथ पिप्पलः। उडुम्बरः शमी दूर्वाः कुशाश्च समिधः क्रमात्'—इति याज्ञवल्क्यः। 'प्रादेशमात्राः सशिखाः सवल्काश्च पलाशिनीः। समिधः कल्पयेत् प्राज्ञः सर्वकर्मसु सर्वदा'—इति मत्स्यपुराणे। 'नित्यं स्नात्वा शुचिः कुर्याद् देवर्षिपितृतर्पणम्। देवताभ्यर्चनं चैव समिदाधानमेव च'—मनुः (२।१७६)। ६९

समितिः स्त्री. [संयन्त्यस्यामिति । सम्+इण्+क्तिन्] युद्धम्; 'ये वा मृधे समितिशालिन आत्तचापाः, काम्बोजमत्स्यकुरुसृञ्जयकैकयाद्याः'—इति भागवते (२।७।३४)। (८२१) सङ्गतिः; सङ्गः; सन्निपातः; 'प्रवृत्तिलक्षणे निष्ठा पुमान् यर्हि गृहाश्रमे। स्वधर्मे चानुतिष्ठेत गुणानां समितिर्हि सा'—इति भागवते (११।२५।१८)। साम्यं; सभा; 'प्रभाते राजसमितौ सञ्जयो यत्र वा विभोः। ऐकात्म्यं वासुदेवस्य प्रोक्तवानर्जुनस्य च'–इतिमहाभारते (१।२।२२४)। ४५३

समीकम् क्ली. [सम्+'अलीकादयश्चेति' ईक] युद्धं, रणः; 'तमिन्नरो वि ह्वयन्ते समीके रिरिक्वांसस्तन्वः कृण्वतत्राम्'— इति ऋग्वेदे (४।२४।३)। ४५३

समीचीनम् क्ली. [सम्यगेव, सम्यक्+'विभाषाञ्चेरदिक् स्त्रियाम्' इति ख] यथार्थं; सत्यं; सम्यक्; ऋतं; तथ्यं; यथातथं; यथास्थितं; सद्भूतं; तद्वति त्रि.। 'समीचीनं वचो ब्रह्मन् सर्वज्ञस्य तवानघ। तमो विशीर्यते मह्यं हरेः कथयतः कथाम्'—इति भागवते (२।४।५)। १४४

समीपः त्रि. [सङ्गता आपो यत्र। 'ऋक्पूरब्धूःपथामानक्षे' इति अ; 'द्व्यन्तरुपसर्गेभ्योऽप ईत्' इति ईत्] निकटः; 'अपां समीपे नियतो नैत्यिकं विधिमास्थितः। सावित्रीमप्यधीयीत गत्वारण्यं समाहितः'–इति मनुः (२।१०४)। ६९२

समीरः पुं. [सम्यगीर्ते गच्छतीति। सम्+ईर् गतौ कम्पने च+क] वायुः; पवनः; समीरणः; 'समीरशिशिरः शिरःसु वसतां सतां जवनिका निकामसुखिनाम्'—इति माघे (४।५४)। ७६

समीरणः पुं. [समीरयतीति। सम्+ईर्+ल्यु] पवनः; श्वसनः; वायुः; मरुत्; अनिलः; मारुतः; जगत्प्राणः; पृषदश्वः; पवमानः; प्रभञ्जनः; स्पर्शनः; वातः; नभस्वान्; मातरिश्वा; समीरः; समिरः; सदागतिः; गन्धवहः; हरिः; महाबलः; 'यः पूरयन् कीचकरन्ध्रभागान् दरीमुखोत्थेन समीरणेन। उद्गास्यतामिच्छति किन्नराणां तानप्रदायित्वमिवोपगन्तुम्'—इति कुमारे (१।८)। मरुवकः; पथिकः; क्ली. [सम्+ईर्+ल्युट्] प्रेरणम्; 'शराभिघाताच्च रुषा च राजन् त्वया च भासास्त्रसमीरणाच्च'–इति महाभारते (८।८४।२३)। प्रेरके त्रि.। 'सोऽपिबत् पाण्डुराभ्राभस्तत्कालं ज्ञातिभिर्वृतः। वनान्तरगतो रामः पानं मदसमीरणम्।' ७६

समुखः त्रि. [मुखेन सह वर्तमानः] वाग्मी; वावदूकः। ३७४

समुच्छ्रयः पुं. [सम्+उत्+श्रि+अच्] उत्सेधः; समुच्छ्रायः; आरोहः; 'कनकयूपसमुच्छ्रयशोभिनो वितमसा तमसासरयूतटाः'—इति रघौ (९।२०)। विरोधः। १८१

समुदयः पुं. [सम्+उत्+इण्+अच्] युद्धं; संग्रामः; समरः; रणः; 'द्रोणः पाञ्चालपुत्रेण समागम्य महारणे। महासमुदयं चक्रे शरैः सन्नतपर्वभिः'—इति महाभारते (६।११३।४४)। (६८६) सार्थः; यूथं; समूहः; 'तमुपाजग्मतुस्तौ च सेनासमुदयान्वितौ। तं विज्ञायैव सम्बन्धं मुदा दुहितृवत्सलौ'—इति कथासरित्सागरे (१०।१९६)। समुद्गमः; दिवसः; लग्नम्। ४५३

समुद्गः पुं. [समुद्गच्छतीति। सम्+उद्+गम्+अन्येष्वपीति ड] सम्पुटकः; सम्पुटः; समुद्गकः; 'शुक्लांश्चन्दनकल्कांश्च समुद्गेष्ववतिष्ठतः'—इति रामायणे (२।९१।७५)। [मुद्गेन सह वर्तमानः] मुद्गसहितः। ७६४

समुद्रः पुं. [चन्द्रोदयाद् आपः सम्यगुन्दन्ति क्लिद्यन्ति अत्र। चन्द्रोदयात् सदुन्दयति वा। उन्दी क्लेदने+

'स्फायितञ्ची'ति रक्। 'अनिदितामिति' नलोपः। मुद्रा मर्यादा तया सह वर्तते इति वा। सम्यगुद्गतो रोऽग्निरत्र। मुदं रान्ति ददति इति डे, मुद्राणि रत्नादीनि तैः सहः वर्तते इति वा] अब्धिः; अकूपारः; पारावारः; सरित्पतिः; उदन्वान्; उदधिः; सिन्धुः; सरस्वान्; सागरः; अर्णवः; रत्नाकरः; जलनिधिः; यादःपतिः; अपांपतिः; महाकच्छः; नदीकान्तः; तरीयः; द्वीपवान्; जलेन्द्रः; मन्थिरः; क्षौणीप्राचीरं; मकरालयः; सरिताम्पतिः; जलधिः; नीरनिधिः; नीरधिः; अम्बुधिः; पाथोनिधिः; पाथोधिः; यादसाम्पतिः; नदीनः; इन्द्रजनकः; तिमिकोषः; वारांनिधिः; वारिनिधिः; वार्द्धिः; वारिधिः; तोयनिधिः; कीलालधिः; धरणीपूरः; क्षीराब्धिः; धरणिप्लवः; वाङ्कः; कचङ्गलः; पेरुः; मितद्रुः; वाहिनीपतिः; गङ्गाधरः; दारदः; तिमिः; प्राणभास्वान्ः ऊर्मिमाली; महाशयः; अम्भोनिधिः; अम्भोधिः; तरिषः; कूलङ्कषः; तारिषः; वारिराशिः; शैलशिविरं; पराकुवः; तरन्तः; महीप्राचीरं; पयोधिः; सरिन्नाथः; अम्भोराशिः; धुनीनाथः; नित्यः; कन्धिः; अपांनाथः; 'अपां चैव समुन्नेन स समुद्र इति स्मृतः'—इति वायुपुराणम्। 'सामुद्रमुदकं क्षारं सर्वदोषप्रकोपणम्'—इति राजवल्लभः। मुद्रायुक्ते त्रि.। 'हृदि कामो भ्रुवोः क्रोधो लोभश्चाधरदच्छदात्। आस्याद्वाक् सिन्धवो मेढ्राद् निर्ऋतिः पायोरघाश्रयः'—इति भागवते (३।१२।१३)। ६५२

समुद्रकान्ता स्त्री. [समुद्रस्य कान्ता] नदी; सिन्धुः; स्रवन्ती; तटिनी; तरङ्गिणी; धुनी; निर्झरिणी; निम्नगा; कूलङ्कषा; शैवलिनी; सरस्वती; ह्रदिनी; आपगा; स्रोतः; स्रोतस्विनी; कर्षूः; कुल्या; द्वीपवती; सरित्; समुद्रगा; पृक्का। ६६५

समुद्ररमणा स्त्री. [समुद्रो रमण इव यस्याः] पृथ्वी; समुद्ररसना। १५६

समुद्ररसना स्त्री. [समुद्रः रसनेव यस्याः] समुद्रमेखला; पृथ्वी; समुद्ररमणा; समुद्राम्बरा। १५६

समुद्रवसना स्त्री.—समुद्ररसना; समुद्रमेखला; समुद्ररमणा; समुद्राम्बरा; समुद्रान्ता; पृथ्वी; पृथिवी; भूमिः; अचला। १५६

समुद्रवह्निः पुं. [समुद्रस्य वह्निः] वाडवानलः; और्वः; वाडवः; बडवानलः; बडवामुखः। ७०

समुन्नद्धः त्रि. [सम्+उत्+नह्+क्त] अतिगर्वितः; गर्वितः; पण्डितम्मन्यः; प्रभुः; समुद्धतः; ऊर्ध्वबद्धः। ३८३

समूहः पुं. [समूह्यते इति। सम्+ऊह्+घञ्] अनेकः; निवहः; व्यूहः; सन्दोहः; विसरः; व्रजः; स्तोमः; ओघः; निकरः; व्रातः; वारः; सङ्घातः; सञ्चयः; समुदायः; समुदयः; समवायः; चयः; गणः; संहतिः; वृन्दं; निकुरम्बं; कदम्बकं; पूगः; सन्नयः; स्कन्धः; निचयः; जालम्; अग्रं; पटलं; काण्डं; मण्डलं; चक्रं; विस्तरः; उत्करः; समुच्चयः; आकरः; प्रकरः; सङ्घः; प्रचयः; जातम्; 'एवं दण्डविधिं कुर्याद्धार्मिकः पृथिवीपतिः। ग्रामजातिसमूहेषु समयव्यभिचारिणाम्'—इति मनुः(८।२२१)। ६८६

समृद्धः त्रि. [सम्+ऋधु वृद्धौ+क्त] समृद्धियुक्तः; अधिकर्द्धिः; सम्पत्तिशाली; आढ्यः; धनवान्; इनः; ईशः; धनी; ईश्वरः; 'संहृष्टमनुजोपेतां समृद्धविपणापणाम्'—इति रामायणे (२।१४।२७)। पुं. नागविशेषः; महाभारते (१।५७।१७)। ३५६

सम्पत्तिः स्त्री. [सम्+पद्+क्तिन्] विभवोत्कर्षः; श्रीः; लक्ष्मीः; सम्पत्; सम्पद्; ऋद्धिः; भूतिः; 'तदैव च ददौ तस्मै सुतां क्लेशविवर्द्धिताम्। निजां शिवाय सम्पत्तिमिव मूढत्वहारिताम्'—इति कथासरित्सागरे (२४।१६१)। ३९७

सम्परायः पुं. [सम्यक् परे काले ईयते इति। सम्+पर+इण्+घञ्] युद्धं; सम्परायकं; साम्परायिकं; योधनं; समरः; कलहः; संग्रामः; रणः; आयोधनं; जन्यं; प्रधनं; प्रविदारणं; मृधं; संख्यम्। आपत्; उत्तरकालः। ४५४

सम्पिण्डिताङ्गुलिः स्त्री. [सम्पिण्डिताः संकुचिताः अङ्गुलयः यत्र] मुष्टिः। ५३७

सम्पुटः पुं. [सम्+पुट्+क] सम्पुटकः; आधारविशेषः; समुद्गः; समुद्गकः; कुरुवकपुष्पं; पेटा; एकजातीयोभयमध्यवर्ती; 'सकामः सम्पुटो जप्यो निष्कामः संपुटं विना'—इति तन्त्रसारः। 'केवलां मातृकां कृत्वा मातृका तारसम्पुटा। मातृकापुटितं तारं न्यसेत् साधकसत्तमः'—इति तन्त्रसारः। रतिबन्धविशेषः; 'सम्प्रसार्योभयोः

पादौ शय्यागतकपोलकः । भगलिङ्गस्य संयोगाद् रमते सम्पुटो हि सः'—इति रतिमञ्जरी । ७६४

सम्पृक्तः त्रि. [सम्+पृच्+क्त] मिश्रितः; करम्बः; कवरः; मिश्रः; खचितः । ७४१

सम्प्रदायः पुं. [सम्प्रदीयतेऽनेन पारंपर्योपदेशः । सम्+प्र+दा+घञ्, 'आतो युक् चिण्कृतोः' इति युक्] गुरुपरम्परागतसदुपदेशः; शिष्टपरम्परावतीर्णोपदेशः; आम्नायः; पारम्पर्यः; गुरुक्रमः; 'सम्प्रदायविगमादुपेयुषी रेषनाशमविनाशिविग्रहः । स्मर्तुमप्रतिहतस्मृतिः श्रुतीर्दत्त इत्यभवदत्रिगोत्रजः'–इति माघे (१४।७९) । गुरुपरम्परागतसदुपदिष्टव्यक्तिसमूहः; 'सम्प्रदायानुरोधेन पौर्वापर्यानुसारतः । श्रीभागवतभावार्थदीपिकेयं प्रतन्यते'—इति श्रीधरस्वामी । ४०२

सम्प्रयोगः पुं. [सम्+प्र+युज्+घञ्] निधुवनं; संवेशनं; रहः; रतिः; रतं; सुरतं; मोहनम्; अन्वितिः; सम्बन्धः; 'उष्णत्वमग्न्यातपसम्प्रयोगात् शैत्यं हि यत् सा प्रकृतिर्जलस्य'—इति रघौ (५।५४) । कार्मणं; वशीकरणादिकर्म; अर्थिते त्रि. । ५६९

सम्प्रश्नः पं. [सम्यक् पृच्छनम् । सम्+पृच्छ्+नङ] हुं; सम्पृच्छा । ८७६

सम्प्रहर्षः पुं. [सम्यक् प्रकृष्टो हर्षः] हन्त; आनन्दथुः । ८७५

सम्प्रहारः पुं. [सम्यक् प्रकारेण प्रह्रियतेऽत्रेति । सम्+प्र+हृ+घञ्] युद्धं; सङ्ग्रामः; रणः; समरः; 'व्यश्वौ गदाव्यायतसम्प्रहारौ भग्नायुधौ बाहुविमर्दनिष्ठौ'—इति रघौ (७।५२) । गमनं; हननम् । ४५३

सम्बन्धः पुं. [सम्बध्यते इति । सम्+बन्ध्+घञ्] सम्बन्धकः; 'सिद्धार्थं सिद्धसम्बन्धं श्रोतुं श्रोता प्रवर्तते । ग्रन्थादौ तेन वक्तव्यः सम्बन्धः सप्रयोजनः ।' योनिजसम्पर्कः; 'सम्बन्धो येषु येषां यः सर्वजातिषु सर्वतः । तं त्वां ब्रवीमि वेदोक्तं ब्रह्मणा कथितं पुरा । सम्बन्धस्त्रिविधः पुंसां विप्रेन्द ! जगतीतले । विद्याजो योनिजश्चैव प्रीतिजश्च प्रकीर्त्तितः । मित्रं तु प्रीतिजं ज्ञेयं स सम्बन्धः सुदुर्लभः । मित्रमाता मित्रभार्या मातृतुल्या न संशयः'—इति ब्रह्मवैवर्ते ब्रह्मखण्डे । समृद्धिः; न्यायः; सख्यं; संसर्गः; त्रि. शक्तः; हितः । ८६८

सम्बाधः पुं. [सम्यग् बाधा यत्र] सङ्कटः; 'संसक्तैर्विपुलतया मिथो नितम्बैः सम्बाधं बृहदपि तद् बभूव वर्त्म'–इति माघे (८।२) । भगं; भयम्; 'व्यायामसहमत्यर्थं तृणराजसमं महत् । सर्वायुधमहामात्रं शत्रुसम्बाधकारकम्'–इति महाभारते (४।३८।७) । नरकवर्त्म । ८२७

सम्भवः पुं. [सम्+भू+अप्] उत्पत्तिः; 'महता प्रियेण निर्मितमप्रियमपि सुभग ! सह्यतां याति । सुतसम्भवेन यौवनविनाशनं न खलु खेदाय'—इति आर्यासप्तशत्याम् । (४५८) । हेतुः; मेलकः; आधेयस्य आधारानतिरिक्तत्वम्; सङ्केतः; अपायः; वर्तमानकल्पीयाहंङ्कदः । ८८१

सम्भाव्यः त्रि. [सम्भवितुं योग्यः । सम्+भू+'ओरावश्यके' इति ण्यत्] किल; संभवनीयता । ८७४

सम्भेदः पुं. [सम्+भिद्+घञ्] सिन्धुनद्योः सङ्गमः; 'परस्त्रियं योऽभिवदेत् तीर्थेऽरण्ये वनेऽपि वा । नदीनां वापि सम्भेदे स संग्रहणमाप्नुयात्'—इति मनुः (८।३५६) । नदीमात्रसङ्गमः; 'नदः शोणो गङ्गा तपनतनयेति स्फुटमिमम्, त्रयाणां तीर्थानामुपनयसि सम्भेदमनघे'—सौन्दर्यलहरी । स्फुटनम्; 'कौष्यं गतिक्षयोऽङ्गानां सम्भेदः क्षतसर्पणम्'—इति सुश्रुते (२।५) । मेलनम् । ६६९

सम्भोगः पुं. [सम्+भुज्+घञ्] रतिः; सुरतम्; 'रत्युन्मादसमारम्भाः साक्षात्कारकरा मम । आत्मप्रदानसम्भोगान्मामुद्धतुं त्वमर्हसि'—इति महाभारते (४।१३।२८) । भुक्तिः; भोगः; 'सम्भोगो दृश्यते यत्र न दृश्येतागमः क्वचित् । आगमः कारणं तत्र न सम्भोग इति स्थितिः'—इति मनुः (८।२००) । जिनशासनं; हर्षः; केलिनागरः; शृङ्गारभेदः; 'दर्शनस्पर्शनादीनि निषेवेते विलासिनौ । यत्रानुरक्तावन्योऽन्यं सम्भोगः समुदाहृतः'—इति साहित्यदर्पणे ३ परिच्छेदे । ८२८

सम्भ्रमः पुं. [सम्+भ्रम्+घञ्] दर्पः; मदः; अवलेपः; मानः; गर्वः; अहङ्कारः; आवेशः; संवेगः; संरम्भः; आटोपः; भयादिजनितत्वरा; आवेगः; प्रवेगः; त्वरा; त्वरिः; 'वीक्ष्य वेदिमथ रक्तबिन्दुभिर्बन्धुजीवपृथुभिः प्रदूषिताम् । सम्भ्रमोऽभवदपोढकर्मणाम् ऋत्विजां च्युतविकङ्कतस्रुचाम्'—इति रघौ (११।२५) । आदरः; महाभ्रमः; सूत्रम्; भयम्; 'सम्भ्रमस्त्याज्यतामेष

सर्वैर्बालिकृते महान्'–इति रामायणे (४।२।१४)। ७२२

सम्मदः पुं. [सम्+मद्+'प्रमदसंमदौ हर्षे' इति अप्] हर्षः; प्रमोदः; प्रमदः; प्रीतिः; उत्कर्षः; उद्धवः; मुत्; आनन्दः; शर्म; जोषः; शं; सुखम्; 'मदसम्मदपीडाद्यैर्वैस्वर्यं गद्गदं विदुः'–इति साहित्यदर्पणे (३।१६७)। मत्स्यविशेषः; 'बह्वृचश्च सौभरिर्नाम महर्षिरन्तर्जले द्वादशाब्दकालमुवास। तत्र चान्तर्जले मत्स्यः सम्मदो नामातिबहुप्रजोऽतिप्रमाणो मीनाधिपतिरासीत्'—इति विष्णुपुराणे (४।२।१९)। तद्वति त्रि.। १२३

सम्मर्दः पुं. [संमृद्यतेऽत्रेति। सम्+मृद्+घञ्] युद्धं; समरः; संग्रामः; 'जवे प्रहारे सम्मर्दे सर्वं एवातिमानुषाः। सर्वैर्जिता महीपाला दिग्जये भरतर्षभ'—इति महाभारते (५।१६८।१०)। परस्परविमर्दः (७६९); परिमलः; 'यद्गोप्रतरकल्पोऽभूत् संमर्दस्तत्र मज्जताम्। अतस्तदाख्यया तीर्थं पावनं भुवि पप्रथे'—इति रघौ (१५।१०१)। ४५४

सम्मार्जनी स्त्री. [संमृज्यते संशुद्ध्यतेऽनयेति। सम्+मृज्+ल्युट्+ङीप्] धूल्यादिमार्जनसाधनी; शोधनी; ऊहनी; समूहनी; बहुकरी; वर्द्धनी। ३०२

सम्यक् [च्] त्रि.–अव्य. [सम्+अञ्च्+ऋत्विगादिना क्विन्। 'समः समि' इति सम्यादेशः] सत्यवचनम्; ऋतं; सत्यं; समीचीनं; तथ्यं; यथायथम्; [अर्थेन सह समञ्चति सङ्गच्छते] मनोज्ञः; सङ्गतः; 'तन्तुं ततं संवयन्ती समीची यज्ञस्य पेशः सुदुघे पयस्वती'—इति ऋग्वेदे (२।३।६)। १४४

सम्राट् [ज्] पुं. [सम्यक् राजते इति। सम्+राज्+क्विप्। 'मो राजि समः क्वौ' इति समो मकारस्य मादेशस्तेन नानुस्वारः] चक्रवर्त्ती; सार्वभौमः; येन राजसूयेन इष्टम्, यो मण्डलस्येश्वरः, आज्ञया राज्ञः शास्ति यः, (राजसूयश्चक्रवर्तिसाध्यो यागविशेषः। तेन येन इष्टं यागः कृतः। यो मण्डलस्य द्वादशराजमण्डलस्य ईश्वरः। यश्च राज्ञो नृपान् आज्ञया शास्ति भृत्यवद्व्यापारेषु नियोजयति स सम्राडुच्यते।) केचित्तु समुच्चयेन त्रीण्येतान्याहुः। राजसूययाजी यः स सम्राट् चतुरब्धिसीमावच्छिन्नाया भूमेर्य ईश्वरः सोऽपि। यश्च कियत्परिमाणाया भूमेः पतीनाज्ञया शास्ति सोऽपि। [इह परत्र च सम्यक् राजते इति क्विप्] 'आस्वादवद्भिः कवलैस्तृणानां कण्डूयनैर्दंशनिवारणैश्च। अव्याहतैः स्वैरगतैः स तस्याः सम्राट् समाराधनतत्परोऽभूत्'–इति रघौ (२।५)। ४२२

सरः [स्] क्ली. [सरतीति। सृ+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इति असुन्] सरोवरः; तडागः; 'तथैव वनदुर्गेषु पुष्पितद्रुमसानुषु। सरःसु रमणीयेषु पद्मोत्पलयुतेषु च'—इति महाभारते (१।१५६।२४)। नीरं; जलम्; 'सरो नीरे तडागे च'—इति रुद्रः। ६७५

सरम् क्ली. [सरतीति। सृ+अच्] सरोवरः; जलं; पुं. दध्यग्रं; गतिः; बाणः; लवणः; निर्झरे पुं.–स्त्री.। त्रि. सारकः; भेदकः;। ८१२

सरकः पुं.–क्ली. [सरतीति। सृ+वुन्] शीधुपात्रं; गल्वर्कः; अनुतर्षः; चषकः; शीधुपानम्; इक्षुशीधु; अच्छिन्नाध्वगपङ्क्तिः; मद्यपरिवेषणम्; 'प्राप्तायां निशि पप्रच्छ निजं परिजनं च सः। किमद्य रात्रिपर्याप्तिमस्ति नः सरकं न वा'—इति कथासरित्सागरे (५४। १९९)। क्ली. [सरमेव+स्वार्थे कन्] सरोवरः; आकाशं; त्रि. [सुष्ठु सरतीति। सृ+'प्रसृल्वः समभिहारे वुन्' इति वुन्] गतिशीलः। ३२७

सरघा स्त्री. [सरं मधुविशेषं हन्तीति। सर+हन्+ड। घत्वनिपातनात् साधुः] मधुमक्षिका; क्षुद्रा; 'भल्लापवर्जितैस्तेषां शिरोभिः श्मश्रुलैर्महीम्। तस्तार सरघाव्याप्तैः सक्षौद्रपटलैरिव'—इति रघौ (४।६३)। २५६

सरटः पुं. [सरतीति। सृ गतौ+शकादित्वादटन्] कृकलासः; प्रतिसूर्यः; शयानकः; प्रतिसूर्यकः; 'गिरगिट' इति भाषा।॰ 'पल्ल्याः प्रपाते च फलं सरटस्य प्ररोहणे। शीर्षे राजश्रियोऽवाप्तिर्भाले चैश्वर्यं मेव च।' वातः। २३४

सरणिः स्त्री. [सरन्त्यनयेति। सृ गतौ+'अर्तिसृधृधमीति' अनि] पन्थाः; अध्वा; पद्धतिः; एकपदी; वर्त्म; वर्तनी; अयनं; पदवी; मार्गः; पद्या; निगमः; मृतिः; 'सरलां सरणिं त्यक्त्वा जीवितस्पृहया समम्। गुहा तेन ततः सान्द्रतमोभीमा व्यगाह्यत'– इति राजतरङ्गिण्याम् (३।४०१)। पङ्क्तिः; प्रसारिणी; सरणा; सरणी। २६०

सरणी स्त्री. [सरणि+वा ङीष्] पन्थाः; मार्गः; अध्वा; पदविः; सृतिः; पङ्क्तिः; प्रसारिणी; सरणिः; सरणा। २६०

सरमा स्त्री. [सृ+बाहुलकाद् अम । यद्वा रमया शोभया सह वर्तमाना] कुक्कुरी; कुर्कुरी; कुकुरी; शुनकी; श्वानी; सारमेयी; शुनी; देवशुनी; देवकुक्कुरी; राक्षसीभेदः; सा च विभीषणपत्नी, इयं लङ्कावाससमये सीतायाः प्रणयिनी आसीत् । कश्यपपत्नीविशेषः; दक्षपुत्री; 'गोलाङ्गूलश्चकोरश्च चैत्यापत्यं तथैव च । अपत्यं सरमायाश्च गणो वै भ्रमरादयः'—इति वह्निपुराणे। २८२

सरलः त्रि. [सरतीति । सृ+'वृषादिभ्यश्चित्' इति कलच् । बाहुलकाद् गुणः] अवक्रः; ऋजुः; दक्षिणः; 'आदिश्यानाययामास गणकान् सरलाशयः'—इति कथासरित्सागरे। उदारः; पुं. वृक्षविशेषः; पीतद्रुः; पूतिकाष्ठं; धूपवृक्षकः; पीतदारुः; भद्रदारुः; मनोज्ञः; पीतः; स्निग्धदारुसंज्ञः; स्निग्धः; मरिचपत्रकः; पीतवृक्षः; सुरभिदारुः; 'सरलः पीतवक्षः स्यात् तथा सुरभिदारुकः । सरलो मधुकस्तिक्तः कटुपाकरसो लघुः । स्निग्धोष्णः कर्णकण्ठाक्षिरोगरक्षाकरः स्मृतः । कफानिलस्वेदयूककामलाक्षिव्रणापहः'—इति भावप्रकाशः । बुद्धः; अग्निः। ३८५

सरव्यम् क्ली. [सरं रागं व्ययतीति । सर+व्ये+ड] लक्ष्यं; वेध्यं; निमित्तं; शरव्यम्। ४६८ -

सरसम् क्ली. [रसेन जलेन सह वर्तमानम्] सरोवरः; रसयुक्ते त्रि.। 'कविता कोमलवनिता आयाता सुखदायिका। बलादानीयमाना सा सरसा विरसा भवेत्' —इत्युद्भटः। ६७५

सरसी स्त्री. [सृ+असुन्। गौरादित्वाद् ङीष्] सरोवरः; सरः; 'सरसीष्वरविन्दानां वीचिविक्षोभशीतलम् । आमोदमुपजिघ्रन्तौ स्वनिःश्वासानुकारिणम्'—इति रघौ (१।४३)। ६७५

सरस्वती स्त्री. [सरो नीरं ज्ञानं वा तद्वद् रसो वास्त्यस्या इति। सरस्+मतुप्, मस्य वः। 'तसौ मत्वर्थे' इति भत्वान्न पदकार्यम्] वाणी; 'उच्चचार पुरस्तस्य गूढरूपा सरस्वती' —इति रघौ (१५।४६)। नदी (६६५); 'ते तया तैश्च सा वीरैः पतिभिः सह पञ्चभिः। बभूव परमप्रीता नागैरिव सरस्वती'—इति महाभारते (१।२१४।३)। स्त्रीरत्नं; गौः; नदीभेदः; मनुपत्नी; ज्योतिष्मती; ब्राह्मी; सोमलता; बुद्धशक्तिविशेषः; दुर्गा; 'स्वराः स्वरणशीलत्वाद् गेयाख्याः सप्त कीर्तिताः। अति प्रापणदाने वा तेन देवी सरस्वती'—इति देवीपुराणे। वाग्देवता; ब्राह्मी; भारती; भाषा; गीः; वाक्; वाणी; इरा; शारदा; गिरा; गिरादेवी; गीर्देवी; ईश्वरी; वाचा; वचसामीशा; वाग्देवी; वर्णमातृका; गौः; श्रीः; वाक्येश्वरी; अन्त्यसन्ध्येश्वरी; सायंसन्ध्यादेवता; 'आदौ सरस्वतीपूजा श्रीकृष्णेन विनिर्मिता। यत्प्रसादान्मुनिश्रेष्ठ मूर्खो भवति पण्डितः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। ८

सरस्वान् [त्] पुं. [सरो नीरमस्त्यस्येति । मतुप्, 'तसौ मत्वर्थे' इति भत्वान्न पदकार्यम्] रत्नाकरः; उदधिः; उदन्वान्; सरित्पतिः; अकूपारः; पारावारः; तोयनिधिः; अर्णवः; जलराशिः; सागरः; समुद्रः; नदः; रसिके त्रि.। ६५२

सरित् स्त्री. [सरतीति, सृ गतौ+'हृसृरुहियुषिभ्यः इति' इति इति] नदी; 'सरितो मार्गवाहिन्यस्तथा-संस्तत्र पातिते'—इति देवीमाहात्म्ये। सूत्रं; दुर्गा; 'क्रियाकारणरूपत्वात् सरणाच्च सरिन्मता। सङ्गमाद् गमनाद् गङ्गा लोके देवी विभाव्यते'—इति देवीपुराणे। ६६६

सरित्पतिः पुं. [सरितां पतिः] सरितां नाथः; सरितांम्पतिः; सरिन्नाथः; समुद्रः; सागरः। ६५२

सरिद्वरा स्त्री. [सरित्सु वरा श्रेष्ठा] सरितांवरा; भागीरथी; सुरसरित्; विष्णुपदी; जाह्नवी; गङ्गा; मन्दाकिनी; त्रिपथगा; त्रिदशदीर्घिका; 'महाभिषं तु तं दृष्ट्वा नदी धैर्यच्युतं नृपम्। तमेव मनसा ध्यायन्त्युपावर्तत्सरिद्वरा'—इति महाभारते (१।९६।८)। नदीश्रेष्ठे त्रि.। 'सा तमग्निसमं विप्रमनुचिन्त्य सरिद्वरा। शतधा विद्रुता यस्माच्छतद्रुरिति विश्रुता'—इति महाभारते (१।७८।९)। ६७२

सरीसृपः पुं. [कुटिलं सर्पतीति । सृप्+'नित्यं कौटिल्ये गतौ' इति यङ्लुकि पचाद्यच्] अहिः; सर्पः; भुजगः; उरगः; भुजङ्गमः; 'वनं च दोषबहुलं बहुव्यालसरीसृपम्। परिक्लेशश्च वो मन्ये ध्रुवं तत्र भविष्यति' —इति महाभारते (३।२।३)। जङ्गमे त्रि.। 'पातु

न शेकुर्द्विपदश्चतुष्पदः सरीसृपं स्थाणु यदत्र दृश्यते'—इति भागवते (५।१८।२७)। ६४०

सरोजम् क्ली. [सरसि जातमिति । सरस्+जन्+ड] पद्मं; कमलं; सरोरुहम् । ६९७

सरोरुहम् क्ली. [सरसि रोहतीति । सरस्+रुह्+क्विप्] पद्मं; कमलं; सरोजम् । ६७९

सर्जः पुं. [सृजति निर्यासादीनिति । सृज्+अच्] सर्जकः; शालवृक्षः; सालः; सर्जरसः; पीतशालः; 'कदम्बसर्जार्जुननीपकेतकीर्विकम्पयंस्तत्कुसुमाधिवासितः । ससीकराम्भोधरसङ्गशीतलः समीरणः कं न करोति सोत्सुकम्'—इति ऋतुसंहारे (२।१७)। १९५

सर्पः पुं. [सृप्यते इति, सृप्+घञ् । सर्पति इतस्ततो गच्छति, सृप्+अच्] हिंस्रजन्तुविशेषः; पृदाकुः; भुजगः; भुजङ्गः; अहिः; भुजङ्गमः; आशीविषः; विषधरः; चक्री; व्यालः; सरीसृपः; कुण्डली; गूढपात्; चक्षुःश्रवाः; काकोदरः; फणी; दर्वीकरः; दीर्घपृष्ठः; दन्दशूकः; बिलेशयः; उरगः; पन्नगः; भोगी; जिह्मगः; पवनाशनः; बिलेशयः; कुम्भीनसः; द्विरसनः; भेकभुक्; श्वसनोत्सुकः; फणाधरः; फणावान्; फणवान्; फणाकरः; फणकरः; समकोलः; व्याडः; दष्ट्री; विषास्यः; गोकर्णः; उरङ्गमः; गूढपादः; बिलवासी; दर्विभृत्; हरिः; प्रचलाकी; द्विजिह्वः; जलरुण्डः; कञ्चुकी; चिकुरः; भुजः । 'अप्रियेणास्य तान् दृष्ट्वा केशाः शीर्यन्त वेधसः । हीनाः स्वशिरसो भूयः समारोहन् ततः शिरः । सर्पणात्तेऽभवन् सर्पा हीनत्वादहयः स्मृताः'—इति वह्निपुराणे । नागकेशरः; गमनं; श्मश्रुधारी म्लेच्छजातिविशेषः । पुरा अयं क्षत्रिय आसीत्, सगरराजेन अस्य वेदयागादौ अनधिकारित्वं कृत्वा वेशान्यत्वं धर्मनाशश्च कृतः । ६४०

सर्पभुक् [ज्] पुं. [सर्पं भुङ्क्ते इति । सर्प+भुज्+क्विप्] राजसर्पः; भुजङ्गभोजी; सर्पविशेषः; मयूरः; सर्पभक्षके त्रि. । ६४३

सर्पाशनः पुं. [सर्पमश्नातीति । सर्प+अश्+ल्यु] मयूरः; सर्पारातिः; सर्पारिः; केकी; शिखी; शिखण्डी; प्रचलाकी; बर्हिणः; कलापी; शिखावलः; श्यामकण्ठः; गरुडः । २४१

सर्पिः [ष्] क्ली. [सर्पतीति, सृप् गतौ+'अर्चिशुचिहुसृपीति' इसि] घृतम्; आज्यम्; आघारः; अपि नः स कुले जायाद् यो नो दद्यात् त्रयोदशीम् । पायसं मधुसर्पिर्भ्यां प्राक्छाये कुञ्जरस्य च'—इति मनुः (३।२७४)। उदकं; जलं; पानीयम् । २७५

सर्वः त्रि. [सृ+वन्] सम्पूर्णः; समग्रं; सकलं; समस्तं, कृत्स्नं; विश्वं; निखिलम्; अखिलम्; 'सर्वरत्नमयो मेरुः सर्वाश्चर्यमयं नभः । सर्वतीर्थमयी गङ्गा सर्ववेदमयो हरिः'—इति वह्निपुराणे । पुं. शिवः; विष्णुः; 'असतश्च सतश्चैव सर्वस्य प्रभवाव्ययः । सर्वस्य सर्वदा ज्ञानात् सर्वमेतं प्रचक्षते'—इति विष्णुपुराणम् । ७१३

सर्वंसहा स्त्री. [सर्वं सहते इति । सर्व+सह्+ 'पूःसर्वयोर्दारिसहोः' इति खच्, अरुर्द्विषदिति मुम्] वसुमती; पृथिवी; पृथ्वी; 'ऊढामुनातिवाहय पृष्ठे लग्नापि कालमचलापि । सर्वंसहे कठोरत्वचः किमङ्केन कमठस्य'—इति आर्यासप्तशत्याम् (१३९)। राज्ञि पुं.। सर्वक्लेशादिसहे त्रि. । 'कामं सन्तु दृढं कठोरहृदयो रामोऽस्मि सर्वसहो, वैदेही तु कथं भविष्यति हहा हा देवि धीरा भव'—इति साहित्यदर्पणे (२।२०)। १५६

सर्वगः पुं. [सर्वं गच्छतीति । सर्व+गम्+ड] शिवः; 'प्रभवः सर्वगो वायुरर्यमा सविता रविः'—इति महाभारते (१३।१७।१०४)। ब्रह्मा; आत्मा; भीमस्य पुत्रः; 'भीमोऽपि काश्यां बलधरां नामोपयेमे वीर्यशुल्कां तस्यां सर्वगं नामोत्पादयामास'—इति महाभारते (१।९५।७७)। सर्वत्रगामिनि त्रि.। 'करणैरन्वितस्यापि पूर्वज्ञानं कथञ्चन । वेत्ति सर्वगतां कस्मात् सर्वगोऽपि न वेदनाम्'—इति याज्ञवल्क्यः (३।१३०)। क्ली. जलम् । ११

सर्वज्ञः पुं. [सर्वं जानातीति । सर्व+ज्ञा+क] शिवः; 'सुवर्णरेताः सर्वज्ञः सुबीजो बीजवाहनः'—इति महाभारते (१३।१७।३९)। सुगतः; बुद्धः; विष्णुः; 'सर्वदर्शीविमुक्तात्मा सर्वज्ञो ज्ञानमुत्तमम्'—इति महाभारते (१३।१४९।६१)। सकलज्ञातरि त्रि.। 'सर्वज्ञस्त्वमविज्ञातः सर्वयोनिस्त्वमात्मभूः'—इति रघौ (१०।२०)। ११

सर्वतः [स्] अव्य. [सर्व+तसिल्] परितः; विष्वक्; समन्तात्; समन्ततः; चतुर्दिगभिव्याप्तिः; 'सर्वतः प्रतिगृह्णीयान्मध्वथाभयदक्षिणाम्'—इति मनुः (४।२४७)।

'भ्रमति गवययूथः सर्वतस्तोयमिच्छन्, शरभकुलमजिह्मं प्रोद्धरत्यम्बु कूपात्'—इति ऋतुसंहारे (१।२३)। ८७४

सर्वभक्षः त्रि. [सर्वान् भक्षयतीति। भक्ष्+अण्] सर्वभक्षणकर्ता; सर्वान्नीनः; 'इति श्रुत्वा पुलोमाया भृगुः परममन्युमान्। शशापाग्निमतिक्रुद्धः सर्वभक्षो भविष्यसि'—इति महाभारते (१।६।१४)। ३५१

सर्ववेदाः [स्] पुं. [सर्वं धनं वेदयति निवेदयति ऋत्विग्भ्य इति। विद्+णिच्+असुन्] सर्वस्वदक्षिणयागो येनेष्टः सः; सर्वस्वं दक्षिणा यत्र स सर्वस्वदक्षिणो विश्वजिन्नाम यागः स येनेष्टः सम्पादितः स सर्ववेदा उच्यते। सर्वस्वं वेदयति लम्भयति ऋत्विजे इति सर्ववेदाः। ३९५

सर्वसन्नहनम् क्ली.–पुं. [सर्वेषां सन्नहनं यत्र] सर्वसन्नाहः; चतुरङ्गसैन्यसन्नाहः; सर्वाभिसारः; सर्वौघः। ४६१

सर्वसन्नाहः पुं. [सर्वेषां सन्नाहो यत्र] सर्वात्मा; सर्वसन्नहनम्। ८०१

सर्वसस्या स्त्री. [सर्वाणि सस्यानि जायन्ते यत्र] उर्वरा भूमिः; उर्वरक्षेत्रम्। १५८

सर्वस्वम् क्ली. [सर्वं स्वम्] समुदायधनम्; 'गुरवे दक्षिणां दद्यात् प्रत्यक्षाय शिवात्मने। सर्वस्वं वा तदर्द्धं वा तदर्द्धं वा तदाज्ञया'—इति तन्त्रसारः। ५१८

सर्वाणी स्त्री. [सर्वस्य पत्नी। सर्व+'इन्द्रवरुणभवसर्वेति' ङीष् आनुगागमश्च] दुर्गा; अपर्णा; पार्वती; शर्वाणी; 'सर्वान्मोक्षं प्रापयति जन्ममृत्युजरादिकम्। चराचरांश्च विश्वस्थान् सर्वाणी तेन कीर्तिता'—इति ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिखण्डे। १५

सर्वात्मा [न्] पुं.—सर्वरूपः; सर्वाधिवासी; सर्वसन्नाहः। ८०१

सर्वान्नीनः त्रि. [सर्वान्नानि भक्षयतीति। सर्वान्न+'अनुपदसर्वान्नायानयमिति' ख] सर्वान्नभोजी; सर्वेषामन्नभक्षकः; सर्वप्रकारान्नभक्षकः; सर्वभक्षः। ३५१

सर्वाभिसारः पुं. [सर्वेषामभिसारो यत्र] चतुरङ्गसैन्यवाहः; सर्वौघः। ४६१

सर्वायसः त्रि.—लौहकृतः। ४६७

सर्षपः पुं. [सरतीति। सृ गतौ+'सर्तेरपः षुक् च' इति अप, षुगागमश्च] सिद्धार्थः; सस्यविशेषः; तन्तुभः; कदम्बकः; सरिषपः; तन्तुकः; कटुस्नेहः; शर्षपः; राजक्षवकः; 'सर्षपः कटुकस्नेहस्तन्तुभश्च कदम्बकः। गौरस्तु सर्षपः प्राज्ञैः सिद्धार्थ इति कथ्यते। सर्षपस्तु रसे पाके कटुहृद्यः सतिक्तकः'—इति भावप्रकाशः। स्थावरविषभेदः; षड्लिक्षापरिमाणम्; 'जालान्तरगते भानौ यच्चाणुर्दृश्यते रजः। तैश्चतुर्भिर्भवेल्लिक्षा लिक्षाषड्भिश्च सर्षपः'—इति शब्दचन्द्रिका। ५८१

सलिलम् क्ली. [सलति गच्छतीति। सल् गतौ+'सलिकल्यनीति' इलच्] जलं; नीरं; पानीयम्; उत्तराषाढानक्षत्रम्। ६४८

सल्लकी स्त्री. [सत्कृत्य लक्यते खाद्यते राजभिरिति। सत्+लक्+क्वुन्। गौरादित्वाद् ङीष्] वृक्षविशेषः; गजप्रिया; गजभक्ष्या; सुवहा; सुरभी; रसा; महेरणा; कुन्दुरुकी; ह्लादिनी; गजभक्षा; सुरभिः; सुरभीरसा; महेरुणा; शल्लकी; सिल्लकी; शिल्लकी; ह्लादिनी। १९९

सवः पुं. [सूयते सोमोऽत्रेति। सू+अप्] यज्ञः; यागः; क्रतुः; स्तोमः; सप्ततन्तुः; मखः; अध्वरः; वितानः; संस्तरः; बर्हिः; सत्रः; 'राजसूयाश्वमेधाद्यैः सोऽयजद् बहुभिः सवैः'—इति महाभारते (१।९४।२५)। सन्तानः; सूर्यः; चन्द्रः; अज्ञे त्रि.। 'सविता त्वा सवानां सुवताम्'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (९।३९)। 'सविता सवानां प्रसवानामज्ञानामाधिपत्ये हे यजमान त्वा त्वां सुवतां प्रेरयतु'—इति तद्भाष्यम्। ४१४

सवनम् क्ली. [सु अभिषवे+ल्युट्] यज्ञस्नानम्; आप्लवनं; स्नानं; सूत्या; अभिषवः; 'प्रविवेश गामिव कृशस्य नियमसवनाय गच्छतः। तस्य पदविनमितो हिमवान् गुरुतां नयन्ति हि गुणा न संहतिः'—इति किराते (१२।१०)। सोमसन्धानं; सोमपानम्; अध्वरम्; 'अथ तं सवनाय दीक्षितः प्रणिधानाद् गुरुराश्रमस्थितः। अभिषङ्गजडं विजज्ञिवान् इति शिष्येण किलान्वबोधयत्'—इति रघौ (८।७५)। सोममर्दलनं; प्रसवः; [सु+युच्] पुं. चन्द्रः; [वनेन सह वर्तमानमिति विग्रहे] वनविशिष्टे त्रि.। 'अथ पर्वतराजानं तमनन्तो महाबलः। उज्जहार बलाद् ब्रह्मन् सवनं सवनौकसम्'—इति महाभारते (१।१८।८)। ४०८

सविता [ऋ] पुं. [सूते लोकादीनिति। सू+तृच्] सूर्यः; 'विजित्य नेत्रप्रतिघातिनीं प्रभामनन्यदृष्टिः

सवितारमैक्षत'—इति कुमारे (५।२०)। 'धीशब्द-वाच्यं ब्रह्माणं प्रचोदयति सर्वदा। सृष्ट्यर्थं भगवान् विष्णुः सविता स तु कीर्तितः। सर्वलोकप्रसवनात् सविता स तु कीर्त्यते। यतस्तद्देवता देवी सावित्री-त्युच्यते ततः'—इति वह्निपुराणे। अर्कवृक्षः; शिवः; इन्द्रः; ब्रह्मा। ३५

सवित्री स्त्री. [सूते या। सू+तृच्+ङीप्] माता; 'तया दुहित्रा सुतरां सवित्री स्फुरत्प्रभामण्डलया चकाशे'—इति कुमारे (१।२४)। गौः। ५०४

सविध: त्रि. [समाना विधास्येति] निकटं; समीपं; सनीडः; सनीलः; 'अग्रे सविधमागत्य राज्ञस्तस्योपविष्ट-वान्'—इति कथासरित्सागरे (५३।३०)। समान-प्रकारः; 'आसां मुहूर्त एकस्मिन् नानागारेषु योषिताम्। सविधं जगृहे पाणीननुरूपः स्वमायया'—इति भागवते (३।३।८)। ६९३

सवेशम् त्रि. [वेशेन सह वर्तमानम्] निकटं; समीपं; पार्श्वं; वेशान्वितः। ६९२

सव्यः त्रि. [सू प्रेरणे+'माच्छाससिसूभ्यो यः' इति य] वामः; 'उद्धृते दक्षिणे पाणावुपवीत्युच्यते द्विजः। सव्ये प्राचीन आवीती निवीती कण्ठसज्जने'—इति मनुः (२।६३)। दक्षिणः; 'एकेन सव्यपाणिना विशिखमुत्खाय किमाह रावणः। साधु रे मनुष्यडिम्भ साधु'—इति अनर्घराघवे (६।७०) 'सव्यपाणिना दक्षिणहस्तेन' इति तट्टीका। प्रतिकूलः। पुं. [सूते विश्वमिति, सू प्रसवे+'माच्छाससिसूभ्यो यः'—इति य] विष्णुः। ७५६

सव्येष्ठः पुं. [सव्ये तिष्ठतीति, । सव्य+स्था+क। 'स्थास्थिन्स्थूणाम्' इत्युक्त्या षत्वम्। हलदन्तादि-त्यलुक्] सारथिः; सूतः। ४४९

सव्येष्ठा [ऋ] पुं. [सव्ये तिष्ठतीति, सव्य+स्था+ 'सव्ये स्वश्छन्दसि' इति छन्दसि ऋ, स च डित्। 'स्थास्थिन्स्थूणाम्' इति षत्वम्, सप्तम्या अलुक्] सारथिः; सूतः। ४४९

ससीम [न्] त्रि. [सीम्ना सह वर्तते इति] समीपं, निकटम्। ६९२

सस्यम् क्ली. [सस् स्वप्ने+'माच्छाससिसूभ्यो यः' इति य] धान्यं; सीत्यं; शस्यं; व्रीहिः; 'धान्यस्तु सस्यं सीत्यं च व्रीहिस्तम्बकरिश्च तत्'—इति हेमचन्द्रः। वृक्षादीनां फलम्; 'स्रंसनं सीसकं सस्यं स्रस्तं सास्ना च साघ्वसम्'—इति भरतः। शस्त्रं; गुणः; 'जीर्णमन्नं प्रशंसीयात् भार्यां च गतयौवनाम्। रणात् प्रत्यागतं शूरं सस्यं च गृहमागतम्'—इति चाणक्यः। ५७४

सह अव्य. [सहते, सह्+पचाद्यच्] सहितं; साकं; सार्द्धं; सत्रं; समं; सजूः; 'यत्र त्वेते परिध्वंसा जायन्ते वर्णदूषकाः। राष्ट्रिकैः सह तद्राष्ट्रं क्षिप्रमेव विनश्यति'—इति मनुः (१०।६१)। साकल्यं; विद्य-मानं; सादृश्यं; यौगपद्यं; समृद्धिः; सम्बन्धः; सामर्थ्यं; क्ली. [सहते इति, सह्+अच्] पांशुलवणं; (११४) पुं. आग्रहायणमासः; मार्गशीर्षः; 'सहश्च सहस्यश्च हैमन्तिकावृतू'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (१४।२७)। महादेवः; शिवः; शङ्करः; उमापतिः; क्षमे त्रि.। 'गदापरिघशक्तीनां सहाः परिघबाहवः। त एरकाभिर्निहताः पश्य कालस्य पर्ययम्'—इति महा-भारते (१६।८।१०)। पुं.— क्ली. बलम्। ८७७

सहः [स्] क्ली. [सहते इति, सह्+'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इति असुन्] बलं; ज्योतिः; 'सदयं बुभुजे महाभुजः सहसोद्वेगमियं व्रजेदिति। अचिरोपनतां स मेदिनीं नवपाणिग्रहणां वधूमिव'—इति रघौ (८।७)। ७२३

सहकारः पुं. [सह युगपत् कारयति विक्षेपयति सौगन्ध्य-मिति। सह+कृ+णिच्+अच्] अतिसौरभाम्रः; चूतः; च्यूतः; आम्रः; 'मन्दोत्कण्ठाः कृतास्तेन गुणाधिक-तया गुरौ। फलेन सहकारस्य पुष्पोद्गम इव प्रजाः'—इति रघौ (४।९)। १९२

सहचरी स्त्री. [सह चरति या, सह+चर्+अच्। पचादिषु चरतेष्टित्करणाद् ङीप्] पीतझिण्टी; (४९४) पत्नी; भार्या; जाया; गृहिणी; 'लक्ष्यीकृतस्य हरिणस्य हरिप्रभावः, प्रेक्ष्य स्थितां सहचरीं व्यवधाय देहम्। आकर्णकृष्टमपि कामितया स धन्वी, बाणं कृपामृदुमनाः प्रतिसञ्जहार'—इति रघौ (९।५७)। सखी; आलिः; वयस्या; सध्रीची। २०५

सहदेवा स्त्री. [सह दीव्यतीति, सह+दिव्+अच्+टाप्] दण्डोत्पलः; कर्णिकारवृक्षविशेषः; बला; शारि-वौषधिः; अर्हन्माता; देवककन्यान्यतमा; सा तु वसुदेवपत्नी; 'शान्तिदेवोपदेवा च श्रीदेवा देवरक्षिता।

सहदेवा देवकी च वसुदेव उवाह ताः'—इति भागवते (९।२४।२३)। पुं. पाण्डवविशेषः; स च पाण्डुराजस्य पञ्चमपुत्रः; माद्रीगर्भे अश्विनीकुमाराभ्यां जातः; जरासन्धसुतः; स युधिष्ठिराश्वमेधकाले मगधेषु राजासीत्। हर्यश्वनसुतः; 'हर्यश्वनसुतो राजा सहदेवः प्रतापवान्। सहदेवस्य धर्मात्मा नदीन इति विश्रुतः'—इति हरिवंशे (२९।३)। सोमदत्तपुत्रः; 'सोमदत्तस्य दायादः सहदेवो महायशाः। सहदेवसुतश्चापि सोमको नाम पार्थिवः'—इति हरिवंशे (३२।८०)। देवैः सह वर्तमाने त्रि.। 'श्रूयतां ब्रह्मर्षयो मे सहदेवाः सहाग्नयः। साधूनां ब्रुवतो वृत्तं नाज्ञानान्न च मत्सरात्'—इति भागवते (४।२।८)। १९९

सहपानकम् क्ली. [सह मिलित्वा पानम्, सहपान+स्वार्थे कन्] सपीतिः; आत्मीयजनैः सहैककालपानं; तुल्यपानं; सहपीतिः; एकत्र मद्यसेवनम्। ३२८

सहसा अव्य. [सह मर्षणे+असाप्रत्ययः] हठात्; अतर्कितः; अकस्मात्; 'सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्। वृणते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः'—इति किराते (२।३०)। हास्ययुक्ते त्रि.। 'प्रियतमेन यया सरुषा स्थितं न सहसा सहसा परिरभ्य तम्। श्लथयितुं क्षणमक्षमतां गता न सहसा सहसा कृतवेपथुः'—इति माघे (६।५७)। ८८४

सहस्तः त्रि. [हस्तैः कृतशस्त्राभ्यासैरिति लक्षणया, सह वर्तमानः] शिक्षितायुधः। ३१३

सहस्यः पुं. [सहसि बले साधुः। 'तत्र साधुरिति' यत्] पौषमासः; 'निनाय सात्यन्तहिमोत्किरानिलाः सहस्यरात्रीरुदवासतत्परा'—इति कुमारे (५।२६)। ११४

सहस्रकिरणः पुं. [सहस्रं किरणानि यस्य] सहस्रांशुः; सहस्ररश्मिः; सहस्रकरः; सहस्रदीधितिः; सहस्रधामा; सहस्रपादः; सहस्रमरीचिः; सूर्यः; भानुः; रविः; भास्कर; प्रभाकरः; दिनकरः; दिवाकरः; 'राशौ राशौ यस्मिन् शिशिरमयूखः सहस्रकिरणो वा'—इति बृहत्संहितायाम् (४२।१३)। ३५

सहस्रदंष्ट्रः पुं. [सहस्रं दंष्ट्राः यस्य] पाठीनमत्स्यः; 'रोहितपाठीनपाटलाराजीववर्मिगोमत्स्यकृष्णमत्स्यवागुञ्जारमुरलसहस्रदंष्ट्रप्रभृतयो नादेयाः'—इति सुश्रुते (१।४६)। ६५८

सहस्रनयनः पुं. [सहस्रं नयनानि यस्य] सहस्रनेत्रः; इन्द्रः; 'केयं सहस्रनयनप्रेक्षणीया किमप्सराः। वनश्रीरथवा पुष्पलग्नाप्रकरपल्लवा'—इति कथासरित्सागरे (१०१।२२७)। त्रि. 'किम्वात्र बहुभिः सूक्तैर्हेतुवादैः पुरन्दर। सहस्रनयनं दृष्ट्वा त्वामेव सुरसत्तम'—इति महाभारते (१३।१४।२०४)। ५२

सहस्रपत्रम् क्ली. [सहस्रं पत्राणि यस्य] पद्मं; कमलम्; 'तासां मुखैरासवगन्धगर्भैर्व्याप्तान्तराः सान्द्रकुतूहलानाम्। विलोलनेत्रभ्रमरैर्गवाक्षाः सहस्रपत्राभरणा इवासन्'—इति रघौ (७।११)। ६७९

सहाः [स्] पुं. [सहते इति। सह्+असुन्] आग्रहायणमासः; मार्गशीर्षः ११४

सहायः पुं. [सह अयते इति। सह+अय्+अच्] अनुकूलः; अनुप्लवः; अनुचरः; अभिसरः; अनुजीवः; सेवकः; अनुगः; 'अध्यात्मरतिरासीनो निरपेक्षो निरामिषः। आत्मनैव सहायेन सुखार्थी विचरेदिह'—इति मनुः (६।४९)। 'सद्वृत्ताश्च तथा पुष्टाः सततं प्रतिमानिताः। राज्ञा सहायाः कर्तव्याः पृथिवीं जेतुमिच्छता'—इति मात्स्ये (२१५।७४)। ४२८

सहिष्णुता स्त्री. [सहिष्णोर्भावः। सहिष्णु+तल्] सहिष्णोर्भावः; तितिक्षा; क्षमा; क्षान्तिः; मर्षः; सहिष्णुत्वम्; 'श्रमक्लमपिपासोष्णशीतादीनां सहिष्णुता'—इति सुश्रुते (४।२४)। ७२५

सहृदयः त्रि. [हृदयेन अन्तःकरणेन सह वर्तमानः] चिद्रूपः; प्रशस्तमनाः; 'कुरु साधुप्रदानं मे बाले सहृदया ह्यसि'—इति रामायणे (२।१३।२२)। काव्यमर्मज्ञः ३७३।

सांयात्रिकः पुं. [संयात्रा द्वीपान्तरगमनं, सा प्रयोजनमस्येति। संयात्रा+'तदस्य प्रयोजनम्' इति ठञ्] पोतवणिक्; 'सिद्धिः सांयात्रिकाणां तु वेला त्वं सागरस्य च'—इति हरिवंशे (५८।१४)। ६५५

सांवत्सरः पुं. [संवत्सरं तज्ज्ञानोपयोगि शास्त्रं वेत्ति अधीते वा। संवत्सर+अण्] गणकः; दैवज्ञः; ज्योतिषिकः; ज्यौतिषिकः; ज्योतिषी; ज्यौतिषी; मौहूर्तिकः सांवत्सरिकः। 'मुहूर्तं तिथिनक्षत्रमृतवश्चायने तथा। सर्वाण्येवाकुलानि स्युर्न स्यात्सांवत्सरो यदि। तस्माद्राज्ञाभिगन्तव्यो विद्वान् सांवत्सरोऽग्रणीः। जय यशः

श्रियं भोगान् श्रेयश्च समभीप्सता'—इति बृहत्संहितायाम् (२।१०-११)। फले पर्वणि च क्ली. । [संवत्सरस्येदमिति+अण्] संवत्सरसम्बन्धिनि त्रि. । 'स सांवत्सरदीक्षायां दीक्षितः षट्पुरालये । आवर्त्ताया शुभे तीरे सुनद्या मुनिजुष्टया'—इति हरिवंशे (१४०।३) । ४०३

साकम् अव्य. [सह+अक्+'आभीक्ष्ण्ये णमुल्', सहस्य सः] सहार्थे; सार्धं; समं; सत्रा; 'अहं जनन्या गुरुभिश्च साकम् आसाद्य लक्ष्मीमवसं चिराय'—इति कथासरित्सागरे (४।१३६) । ८७८

साकल्यवचनम् क्ली. [साकल्येन सामस्त्येन वचनम् उच्चारणम्] पारायणं; साद्यन्तपाठः । ४०१

साक्षात् अव्य. [सह अक्ष्णा साक्षं, तमतति, क्विप्] प्रत्यक्षं; स्वयंदृष्टिः; 'साक्षाद् दृष्टोऽसि न पुनर्विद्मस्त्वां वयमञ्जसा । प्रसीद कथयात्मानं न धियां पथि वर्तसे'—इति कुमारे (६।२२) । तुल्यः; सदृशः । ८७४

सागरः पुं. [सगरस्य राज्ञोऽयमिति । सगर+अण् । यद्वा न गरः मृत्युः येन स अगरः अमृतं स्यमन्तमणिर्वा, तेन सह वर्तमानः] समुद्रः; अकूपारः; अब्धिः; सरित्पतिः; 'लवणः क्षीरसंज्ञश्च घृतोदो दधिसंज्ञकः । सुरोदेक्षुरसोदौ च स्वादूदः सप्तमो भवेत् । चत्वारः सागराः ख्याताः पुष्करिण्यश्च ताः स्मृताः ।' [सगरस्यापत्यं पुमानिति । सगर+अण्] सगरपुत्रः; 'वध्यमानास्ततो लोकाः सागरैर्मन्दबुद्धिभिः । ब्रह्माणं शरणं जग्मुः सहिताः सर्वदैवतैः'—इति महाभारते (३।१०७।७) । मृगविशेषः; दशपद्मसंख्या; 'वृन्दः खर्वो निखर्वश्च शङ्खपद्मौ च सागरः'—इति ब्रह्माण्डपुराणम् । [सागरस्येदमिति] सागरसम्बन्धिनि त्रि. । 'आधत्स्व सरितां नाथ त्यक्त्वेमां सागरीं तनुम्'—इति हरिवंशे (५३।३८) । ६५२

सातिसारः त्रि. [अतिसारेण सह वर्तमानः] अतिसाररोगयुक्तः; अतिसारकी । ६०६

सातीनः पुं. [सति जीवे इनः, सप्तम्यलुक्, सतीन एव । स्वार्थिकोऽण्] कलायः; खण्डिकः; सातीनकः; सातीलकः; सतीलक; सतीनः; सतीनकः; 'मटर' इति भाषा । ५८२

सात्यवतेयः पुं. [सत्यवत्याः मत्स्यगन्धायाः अपत्यं पुमान् । स्त्रीभ्यो ढक्] पाराशर्यः; पाराशरिः; पाराशरः; द्वैपायनः; व्यासः; सात्यवतः; वेदव्यासः; माठरः; कानीनः; बादरायणः; कृष्णद्वैपायनः; सत्यभारतः; बादरायणिः; सत्यरतः; सत्यवतीसुतः । ४१३

सात्वतः पुं. [सात्वतस्यापत्यं पुमानिति+अञ्] बलदेवः; बलभद्रः; 'ततस्तत्र महाबाहुः शयानः शयने शुभे । आपगानां वनानां च कथयामास सात्वते'—इति महाभारते (१।२१९।१२) । यादवमात्रे; 'अर्थलुब्धान् न वः पार्थो मन्यते सात्वतान् सदा । स्वयंवरमनाधृष्यं मन्यते चापि पाण्डवः'—इति महाभारते (१।२२२।३)। [सत्त्वमेव सात्त्वं, तत् तनोतीति, तन्+ड] विष्णुः । [सच्छब्देन सत्त्वमूर्तिर्भगवान् स उपास्यतया विद्यतेऽस्येति, मतुप्, ततः स्वार्थे अण्] विष्णुभक्तविशेषः; 'सत्त्वं सत्त्वाश्रयं सत्त्वगुणं सेवेत केशवम् । योऽनन्यत्वेन मनसा सात्त्वतः समुदाहृतः । विहाय काम्यकर्मादीन् भजेदेकाकिनं हरिम् । सत्त्वं सत्त्वगुणोपेतो भक्त्या तं सात्त्वतं विदुः । मुकुन्दपादसेवायां तन्नामश्रवणेऽपि च । कीर्तने च रतो भक्तो नाम्नः स्यात्स्मरणे हरेः । वन्दनार्चनयोर्भक्तिरनिशं दास्यसख्ययोः । रतिरात्मार्पणे यस्य दृढानन्तस्य सात्त्वतः'—इति पाद्मोत्तरे ९९ अध्यायः । यदुवंशीयसत्वतराजपुत्रः; 'अनोस्तु पुरुकुत्सोऽभूदंशुस्तस्य तु रिक्थभाक् । अथांशोः सत्वतो नाम विष्णुभक्तः प्रतापवान् । महात्मा दाननिरतो धनुर्वेदविदां वरः । स नारदस्य वचनाद्वासुदेवार्चनान्वितः । शास्त्रं प्रवर्तयामास कुण्डगोलादिभिः श्रुतम् । तस्य नाम्ना तु विख्यातं सात्वतं नाम शोभनम् । प्रवर्तते महाशास्त्रं कुण्डादीनां हितावहम् । सात्त्वतस्तस्य पुत्रोऽभूत् सर्वशास्त्रविशारदः । पुण्यश्लोको महाराजस्तेन चैतत् प्रकीर्तितम् । सात्त्वतः सत्त्वसम्पन्नः कौशल्यान् सुषुवे सुतान् । अन्धकं वैमहं भोजं विष्णुं देवावृधं नृपम्'—इति कौर्मे । वर्णसङ्करजातिविशेषः; 'वैश्याज् जायते व्रात्यात् सुधन्वाचार्य एव च । कारूषश्च विजन्मा च मैत्रः सात्वत एव च'—इति मनुः (१०।२३) । २८

सादी [न्] पुं. [सद् गतौ+णिनि] अश्वारूढः; अश्वारोहः; 'पूर्वं प्रहर्ता न जघान भूयः प्रतिप्रहाराक्षममश्वसादी'—इति रघौ (७।४७) । गजारोहः; रथारोहः ।

साधनम् क्ली. [साध्+करणे भावे च ल्युट्] उपकरणं; करणकारकविशेषः; तृतीयाविभक्तिः; द्रविणं; धनं; द्रव्यं; लिङ्गं; मेढ्रं; यातना; सेनाङ्गं; संसिद्धिः। कारणं; हेतुः; 'औषधान्यगदो विद्या दैवी च विविधा स्थितिः। तपसैव प्रसिध्यन्ति तपस्तेषां हि साधनम्'—इति मनुः (११।२३८)। मारणम्; 'अथो शरस्तेन मदर्थमुज्झितः फलं च तस्य प्रतिकायसाधनम्। अविक्षते तत्र मयात्मसात् कृते कृतार्थता नन्वधिका चमूपतेः'—इति किराते (१४।१७)। मृतसंस्कारः; अग्निदानं; गतिः; गमनं; द्रव्यं; धनम्; अर्थदापनम् [अर्थस्य धनभूम्यादेर्दापनम्]; निर्वर्तनं; निष्पादनम्; 'वार्षिकं सञ्जहारेन्द्रो धनुर्जैत्रं रघुर्दधौ। प्रजार्थसाधने तौ हि पर्यायोद्यतकार्मुकौ'—इति रघौ (४।१६)। उपकरणं; सामग्री, यथा युद्धोपकरणहस्त्यश्वादिः। 'रम्यः प्रदोषसमयः स्फुटचन्द्रभासः, पुंस्कोकिलस्य विरुतं पवनः सुगन्धिः। मत्तालियूथविरुतं निशि शीधुपानं, सर्वं हि साधनमिदं कुसुमायुधस्य'—इति ऋतुसंहारे (६।३४)। अनुव्रज्या; अनुगमनं; सैन्यं; सिद्धौषधिः; उपायः; 'तपोभिः प्राप्यतेऽभीष्टं नासाध्यं हि तपस्यतः। दुर्भगत्वं वृथा लोको वहते सति साधने'—इति मत्स्यपुराणम्। मैत्रम्; ऊधः; सिद्धिः; कारकम्; प्रमाणं; व्याप्यम्; 'अनुमा त्वनुमानं स्याद् व्याप्यं लिङ्गं च साधनम्'—इति त्रिकाण्डशेषः। मोहनं; जवः; साधना; 'शशाप पार्वती दृष्टा स्त्रीस्वभावाच्च चापलात्। सर्वेषां साधनेनैव क्षन्तुमर्हन्ति साधवः'—इति ब्रह्मवैवर्ते। मन्त्रसिद्धिकरणम्; 'मत्स्यं मांसं च मद्यं च मुद्रा मैथुनमेव च। दिव्यानां चैव वीराणां साधनं भवसाधनम्'—इति मुण्डमालातन्त्रम्। ८६६

साधुः त्रि. [साध्नोति परकार्यमिति। साध्+उण्] सज्जनः; आर्यः; चारुः (६८९); 'न किञ्चिद्वचनं राजन्नब्रवीत् साध्वसाधु वा'—इति महाभारते (१।१०७।८)। वार्धुषिकः; पुं. उत्तमकुलोद्भवः; महाकुलः; कुलीनः; आर्यः; सभ्यः; सज्जनः; कुलजः; साधुजः; कुलकः; कुलिकः; कुल्यः; कौलेयकः; जिनः; मुनिः; 'न प्रहृष्यति सम्माने नावमानेन कुप्यति। न क्रुद्धः परुषं ब्रूयादेतत् साधोस्तु लक्षणम्'—इति गारुडे (११३।४२)। 'त्यक्तात्मसुखभोगेच्छाः सर्वसत्त्वसुखैषिणः। भवन्ति परदुःखेन साधवो नित्यदुःखिताः। परदुःखातुरा नित्यं स्वसुखानि महान्त्यपि। नापेक्षन्ते महात्मानः सर्वभूतहिते रताः। परार्थमुद्यताः सन्तः सन्तः किं किं न कुर्वते। आत्मानं पीडयित्वापि साधुः सुखयते परम्। ह्लादयन्नाश्रितान् वृक्षो दुःखं च सहते स्वयम्'—इति वह्निपुराणे। ३७२

साध्वसम् क्ली. [अस्यतीति असम्, अच्, साधूनामसम्] आतङ्कः; भयम्; आशङ्का; दरः; त्रासः; 'अन्तकालेऽपि पुरुष आगते गतसाध्वसः। छिन्द्यादसङ्गशस्त्रेण स्पृहां देहेऽनु ये च तम्'—इति भागवते (२।१।१५)। [स्यति नाशयतीति। सो+'स्यतेर्धुक्' इति असच्, धुक् च] प्रतिभा; भाणिकाङ्कविशेषः। ७२५

साध्वी स्त्री. [साधु+ङीष्] सती; पतिव्रता; सुचरिता; सुचरित्रा; 'आर्तार्ते मुदिता हृष्टे प्रोषिते मलिना कृशा। मृते म्रियेत या पत्यौ साध्वी ज्ञेया पतिव्रता'—इति हारीतः। 'साध्वीनामेव नारीणामग्निप्रपतनादृते। नान्यो धर्मो हि विज्ञेयो मृते भर्तरि कर्हिचित्'—इति शुद्धितत्त्वम्। 'साध्वी स्त्री मातृतुल्या च सर्वथा हितकारिणी। असाध्वी वैरितुल्या च शश्वत् सन्तापदायिका'—इति ब्रह्मवैवर्ते। ४९५

सानुः पुं–क्ली. [सन्यते सेव्यते मुनिप्रभृतिभिरिति। षण् संभक्तौ+'दृसनिजनीति' ञुण्] पर्वतस्थसमभूभागः; स्नुः; प्रस्थः; 'भवांस्तु सह वैदेह्या गिरिसानुषु रंस्यते। अहं सर्वं करिष्यामि जाग्रतः स्वपतश्च ते'—इति रामायणे (२।३१।२७)। वनं; वात्या; मार्गः; अग्रं; कोविदः; अर्कः; पल्लवः। १६६

सानुनयः त्रि.– अनुनयसहितः; विनीतः; नम्रः। ८२२

सानुमान् [त्] पुं. [सानुर्विद्यतेऽस्येति। सानु+मतुप्] पर्वतः; अचलः; शिलोच्चयः; शैलः; क्षितिधरः; गिरिः; गोत्रः; अहार्यः; नगः; शिखरी; धरः; अद्रिः; कुध्रः; अगः। 'न पृथग्जनवच्छुचो वशं वशिनामुत्तम! गन्तुमर्हसि। द्रुमसानुमतां किमन्तरं यदि वायौ द्वितयेऽपि ते चलाः'—इति रघौ (८।९०)। त्रि. 'आपगाश्च महानूपाः सानुमन्तश्च पर्वताः'—इति रामायणे (२।४८।१०)। १६५

सान्त्वम् क्ली. [सान्त्व सामप्रयोगे+घञ्] अत्यर्थमधुरं; तत्तु कर्णमनःप्रीतिजनकं वाक्यं; सान्त्वनं; सान्त्वना;

'कानि सान्त्वानि गोविन्दः सूतपुत्रे प्रयुक्तवान्'—इति महाभारते (५।१४०।२)। (७८०) साम; तच्च प्रियवादार्थप्रदानसम्बन्धादिभिः क्रोधोपशमनम्; 'चतुर्थोपायसाध्ये तु रिपौ सान्त्वमपक्रिया। स्वेद्यमामज्वरं प्राज्ञः कोऽम्भसा परिषिञ्चति'—इति माघे (२।५४)। दाक्षिण्यम्। १४१

सान्त्वनम् क्ली. [सान्त्व्+ल्युट्] प्रियकरणं; प्रणतिः अनुनयः; प्रणिपातः; सान्त्वना; प्रणयः; 'नास्य देयो ह्यनुनयो नायमर्हति सान्त्वनम्। लोकवृद्धतरे कृष्णे योऽर्हणां नाभिमन्यते'—इति महाभारते (२।३८।६)। ७४१

सान्दृष्टिकम् क्ली. [सन्दृष्टौ प्रत्यक्षे भवम्। सन्दृष्टि+ठञ्] सद्यःफलं; तात्कालिकपरिणामः; दृष्टपरिकल्पनान्यायः,यथा 'पितामहदौहित्राभावे प्रपितामहप्रपितामह्योः क्रमेणाधिकारः। प्रपितामहपिण्डस्य धनिभोग्यत्वात् पूर्वोक्तसान्दृष्टिकन्यायसिद्धत्वाच्च।' ११८

सान्द्रम् त्रि. [अ रेण निविडबन्धनेन सह वर्तते इति] निरन्तरं; घनं; बहुलं; विरलेतरं; निविडं; निविरीशं; दृढं; गाढम्; 'उच्चैर्महारजतराजिविराजितासौ दुर्वर्णभित्तिरिह सान्द्रसुधासवर्णा'—इति माघे (४।२८)। मृदुः; स्निग्धः; मनोज्ञः। ७१७

साप्तपदीनम् क्ली. [सप्तभिः पदैः सुबन्ततिङन्तैः चरणन्यासैर्वा अवाप्यते इति। 'साप्तपदीनं सख्यम्' इति खञ् प्रत्ययेन साधु] सख्यं; सौहार्दं; सौहृदं; स्नेहः; मैत्री; प्रीतिः; अजर्यं; सभाजनं; सङ्गतं; सखिता; मित्रता; 'प्रयुक्तसत्कारविशेषमात्मना न मां परं सम्प्रतिपत्तुमर्हसि। यतः सतां सन्नतगात्रि ! सङ्गतं मनीषिभिः साप्तपदीनमुच्यते'—इति कुमारे (५।३९)। सप्तपदसम्बन्धिनि त्रि.। ७०६

साम [न्] क्ली. [स्यति छिनत्ति दुःखं गेयत्वात्। स्यति दुःखयति दुरध्येयत्वादिति वा। षो अन्तकर्मणि+ 'सातिभ्यां मनिन्मनिणौ' इति मनिन्। स्यति विरोधमिति, सान्त्व साम सान्त्वने इत्यस्मान् मनिन् वा। शमयति विरोधमिति शाम नान्तं तालव्यादि च] शत्रुवशीकरणोपायविशेषः; प्रियवादार्थप्रदानसम्बन्धादिभिः क्रोधोपशमनम्; 'ये शुद्धवंशा ऋजवः प्रतीता धर्मे स्थिताः सत्यपरा विनीताः। ते सामसाध्याः पुरुषाः प्रदिष्टा मानोन्नता ये सततं च राजन्'—इति मात्स्ये। प्रियवाक्यादिना सान्त्वनम्; 'सामपूर्वमुवाचासौ तं क्षत्ता संस्थितं मुनिम्। गच्छतां यत्र ते कार्यं यथेष्टं द्विजसत्तम !'—इति देवीभागवते (१।१७।३१)। वेदविशेषः; चतुर्वेदान्तर्गततृतीयवेदः; 'सामध्वनावृग्यजुषी नाधीयीत कदाचन। वेदस्याधीत्य वाप्यन्तमारण्यकमधीत्य च। ऋग्वेदो देवदैवत्यो यजुर्वेदस्तु मानुषः। सामवेदः स्मृतः पित्र्यस्तस्मात्तस्याशुचिर्ध्वनिः'—इति मानवे (४।१२३)। ७८०

सामि अव्य. [साम सान्त्वप्रयोगे, णिच्+'अच इः'] अर्द्धम्; निन्दा। ७१३

सामीप्यम् क्ली. [समीपस्य भावः। समीप+चतुर्वर्णादित्वात् ष्यञ्] समीपत्वं; नैकट्यं; समीपता; निकटता; समया; निकषा; आधारभेदः; 'सामीप्याश्लेषविषयैर्व्याप्त्याधारश्चतुर्विधः'—इति कारके मुग्धबोधव्याकरणम्। ८७९

सामोद्भवः पुं. [साम्नो वेदभेदात् सान्त्ववचनैर्वा उद्भवो यस्य] सामजः; हस्ती; मातङ्गः; द्विरदः; द्विपः; करी; गजः; स्तम्बेरमः; अनेकपः; कुम्भी; कुञ्जरः; वारणः; इभः; रदी; सिन्धुरः; माघे (१२।११)। २१४

साम्परायिकः पुं. [सम्परायाय विपदे प्रभवतीति। सम्पराय+'तस्मै प्रभवति सन्तापादिभ्यः' इति ठञ्] युद्धरथः; क्ली. युद्धं; [सम्पराये उत्तरकाले हितम्। सम्पराय+ठक्] पारलौकिके त्रि.। 'प्रभुः प्रथमकल्पस्य योऽनुकल्पेन वर्तते। न साम्परायिकं तस्य दुर्म्मतेर्विद्यते फलम्'—इति मनुः (११।३०)। [सम्पराय युद्धमर्हतीति। 'तदर्हतीति' ठक्] युद्धार्हे त्रि.। 'पित्रा संवर्द्धितो नित्यं कृतास्त्रः साम्परायिकः। तस्य दण्डवतो दण्डः स्वदेहान्न व्यशिष्यत'—इति रघौ (१७।६२)। ४४६

साम्प्रतम् अव्य. [सम् च प्रति च द्वयोः समाहारः, ततः प्रज्ञाद्यण्] वर्तमानम्; इदानीम्; 'समुद्गतस्वेदचिताङ्गसन्धयो विमुच्य वासांसि गुरूणि साम्प्रतम्। स्तनेषु तन्वंशुकमुन्नतस्तना निवेशयन्ते प्रमदाः सयौवनाः।' [सम्प्रति भवं साम्प्रतम्, अण्] इदानीन्तने त्रि.। 'वैवस्वतेऽन्तरे चास्मिन् साम्प्रते समुपस्थिते। वैन्यात् प्रभृति राजेन्द्र सर्वस्यैतस्य सम्भवः'—इति हरिवंशे (६।१६)।

'मनोर्वैवस्वतस्यैते वर्तन्ते साम्प्रतेऽन्तरे। इक्ष्वाकुप्रमुखाश्चैव दश पुत्रा महात्मनः'—इति हरिवंशे (७।३७)। 'तस्य ते कीर्तयिष्यामि मनोर्वैवस्वतस्य ह। विसर्गं भरतश्रेष्ठ साम्प्रतस्य महाद्युतेः'—इति हरिवंशे (७।३७)। युक्तम्; 'इतः स दैत्यः प्राप्तश्रीर्नेत एवार्हति क्षयम्। विषवृक्षोऽपि संवर्द्ध्य स्वयं छेत्तुमसाम्प्रतम्'—इति कुमारे (२।५५)। ८८०

साम्यम् क्ली. [समस्य भावः। सम+ष्यञ्] लयः; समता; तुल्यत्वम्; 'चाण्डालान्त्यस्त्रियो गत्वा भुक्त्वा च प्रतिगृह्य च। पतत्यज्ञानतो विप्रो ज्ञानात् साम्यं तु गच्छति'—इति प्रायश्चित्ततत्त्वम्। साम्यन्त्वेकस्यानत्वम्। साम्यावस्थापन्ने त्रि.। 'नमः शान्ताय घोराय मूढाय गुणधर्मिणे। निर्विशेषाय साम्याय नमो ज्ञानघनाय च'—इति भागवते (८।३।१२)। ९४

साम्यावस्था स्त्री.—तुल्यदशा; त्रैगुण्यम्। ८६४

सायः पुं. [स्यति दिनम्। षोऽन्तकर्मणि+'स्याद्व्यधेति' ण] दिनान्तः; दिवावसानम्; 'दिनान्ते पुंसि सायः स्यात् सायाह्ने सायमव्ययम्'—इति शब्दार्णवः। १०९

सायम् अव्य. [स्यति समापयति दिनमिति। षो+बाहुलकाद् णम् युगागमश्च] सायाह्नः; सन्ध्या; सायंकालः; सायंसन्ध्यासमयः; 'स दुष्प्रापयशाः प्रापदाश्रमं श्रान्तवाहनः। सायं संयमिनस्तस्य महर्षेर्महिषीसखः'—इति रघौ (१।४८)। १०९

सायकः पुं. [स्यति छिनत्तीति। षो+ण्वुल्+युक्] शायकः; बाणः; 'अभेद्ये कवचे दिव्ये तूणी चाक्षय्यसायकौ'—इति रामायणे (२।३१।३०)। खड्गः; तलवारिः; तरवारिः; 'कस्य पाञ्चनखे कोषे सायको हेमविग्रहः। प्रमाणरूपसम्पन्नः पीत आकाशसन्निभः'—इति महाभारते (४।४८।१४)। पञ्चमसंख्या; 'सङ्करेण त्रिरूपेण संसृष्टया चैकरूपया। वेदखाग्निशराः शुद्धैरिषुबाणाग्निसायकाः'—इति साहित्यदर्पणे (४।२६४)। ४६६

सारम् क्ली.—पुं. [सार दौर्बल्ये+अच्। सृ गतौ+घञ् वा] धनं; वित्तं; हिरण्यं; विभवः; द्रव्यं; रिक्थं; पृक्थम्; 'परस्परेण विज्ञातस्तेषूपायनपाणिषु। राज्ञा हिमवतः सारो राज्ञः सारो हिमाद्रिणा'—इति रघौ (४।७९)। जलं; न्याय्यं; लौहं; विपिनं; [सरात् जातम्। सर+अण्] नवनीतम्; 'क्षीरशेषं च तन्मध्यं शीतं सारमुपाहरेत्'—इति उत्तरतन्त्रे (२६)। अमृतम्; 'धर्मादयः किमगुणेन च काङ्क्षितेन सारंजुषां चरणयोरुपगायतां नः'—इति भागवते (७।६।२५)। सारवस्तूनि—'सारं रसानां तु घृतं घृतसारं हुतं च यत्। हुतस्य सारं स्वर्गं च स्वर्गात् सारं तु योषितः। अतो राजन् प्रदेयाः स्युः स्त्रियः स्वर्गमभीप्सता। तथैवेह सुखं ताभिः सह राज्यं नृपोत्तम'—इति वह्निपुराणे। 'असारे खलु संसारे सारमेतच्चतुष्टयम्। काश्यां वासः सतां सङ्गो गङ्गाम्भः शम्भुसेवनम्'—इति पुराणे। ८०

सारः पुं. [सृ+'सृ स्थिरे' इति घञ्] मज्जा; (८५३) त्रि. वरः; श्रेष्ठः; 'सर्वसारो यथा कृष्णो व्रतानां पुण्यकं तथा'—इति ब्रह्मवैवर्ते। पुं. बलं; स्थाम; सामर्थ्यं; 'तरस्व भीम मा क्रीड जहि रक्षो विभीषणम्। पुरा विकुरुते मायां भुजयोः सारमर्पय'—इति महाभारते (१।१५५।२३)। धनम्; 'परस्परेण विज्ञातस्तेषूपायनपाणिषु। राज्ञा हिमवतः सारो राज्ञः सारो हिमाद्रिणा'—इति रघौ (४।७९)। शुक्रं; वीर्यं; स्थिरांशः; 'प्रभानुलिप्तश्रीवत्सं लक्ष्मीविभ्रमदर्पणम्। कौस्तुभाख्यमपां सारं बिभ्राणं बृहतोरसा'—इति रघु. (१०।१०)। वज्रक्षारं; वायुः; रोगः; पाशकः; दध्युत्तरम्; अर्थालङ्कारविशेषः; 'उत्त .त्तरमुत्कर्षो वस्तुनः सार उच्यते'—इति साहित्यदर्पणे। 'राज्ये सारं वसुधा वसुधायामपि पुरं पुरे सौधम्। सौधे तल्पं तल्पे वराङ्गना सर्वस्वम्।' १८३

सारघम् क्ली. [सरघाभिर्मधुमक्षिकाभिः कृतमिति। सरघा+अण्] माक्षिकं; क्षौद्रं; मधु; पुष्परसः; 'पीत्वा मुकुन्दमुखसारघमक्षिभृङ्गैस्तापं जहुर्विरहजं व्रजयोषितोऽह्नि'—इति भागवते (१०।१६।४३)। ६२१

सारङ्गः पुं. [सरतीति, सृ गतौ, 'सृवृञोर्वृद्धिश्च' इति अङ्गच्, वृद्धिश्च] हरिणः; मृगः; कुरङ्गः; 'गोमायुसारङ्गगणाश्च सम्यग् नायासिषुर्भीममरासिषुश्च'—इति भट्टिः (३।२६)। चातकपक्षी (२४८); 'उष्णमन्तर्दधे सद्यः स्निग्धा ददृशिरे घनाः। ततो जहृषिरे सर्वे भेकसारङ्गबर्हिणः'—इति रामायणे (२।६३।१६)। मतङ्गजः; पक्षिभेदः; भृङ्गः; 'नानुद्वेष्टि कलिं सम्राट् सारङ्ग इव सारभुक्। कुशलान्याशु सिध्यन्ति नेतराणि कृतानि यत्'

संस्कृतम्; 'सर्पिष्कं दाधिकं सर्पिर्दधिभ्यां संस्कृतं क्रमात्'—इति हेमचन्द्रः। ३२२

सार्वभौमः पुं. [सर्वभूमौ विदितः। 'तत्र विदित इति च' 'तस्येश्वरः' इति वा अण्] उत्तरदिग्गजः; (४२२) सम्राट्; सर्वभूमीश्वरः चक्रवर्ती; एकजन्मा; नृपाग्रणीः; 'भरतस्य च वीरस्य सार्वभौमस्य पार्थिव !, ध्रुवं प्राप्स्यति दुष्प्रापान् लोकांस्तीर्थपरिप्लुतः'—इति महाभारते (३।९३।) । विदूरथपुत्रः; 'परीक्षिदनपत्योऽभूत् सुरथो नाम जाह्नवः। ततो विदूरथस्तस्मात् सार्वभौमस्ततोऽभवत्'–इति भागवते (९।२२)। पुरुवंशीयाहंयातिपुत्रः 'अहंयातिः खलु कृतवीर्यदुहितरमुपयेमे भानुमतीं ना। तस्यामस्य जज्ञे सार्वभौमः। सार्वभौमः खलु जित्वाजहार कैकेयीं सुनन्दां नाम तामुपयेमे'—इति महाभारते (१।९५।१५-१६)। १०४

सालः पुं. [शल्यते इति शल् गतौ+घञ्, सत्वे पृषोदरादिः] वृक्षविशेषः; [सारोऽस्यत्रेति, अच्, रस्य लः] सर्जः; सर्जरसः; कलः; कलमोद्भवः; वल्लीवृक्षः; चौरपर्णः; रालकार्यः; अजकर्णः वस्तकर्णः; कषायी; ललनः; गन्धवृक्षकः; वंशः; शनिर्यासः; दिव्यसारः; सुरेष्टकः; शूरः; अग्निवल्लभः प्रक्षधूपः; सिद्धिकः; 'सालस्तु सर्जकार्याश्वकर्णकाः यसम्बरः। अश्वकर्णः कषायः स्याद् व्रणस्वेदकफक्रिम्। व्रध्नविद्रधिवाधिर्ययोनिकर्णगदान् हरेत्'—इति वप्रकाशः। शालमत्स्यः; वृक्षमात्रं; प्राकारः; रा। १९५

सास्ना स्त्री. [षस् स्ने+'रास्नासास्नास्थूणावीणाः' इति नप्रत्ययेन साधुः] लकम्बलः; 'रोमन्थमन्थरचलद्गुरुसास्नमासांचक्रे स्लिदलसेक्षणमौक्तिकेण' — इति माघे (५।६२)। २

सिंहः पुं. [सिञ्चति पशुषु इति। सिच्+'सिचेः संज्ञायां हनुमौ कश्चति क, अन्त्यादेशो हकारः, नुम् च। पृषोदरादित्वा अन्तविपर्यये हिनस्तीति सिंह इत्यपि भवति] मृगेन्द्रः पञ्चास्यः; हर्यक्षः; केशरी; हरिः; पारीन्द्रः; पिङ्गलः; कण्ठीरवः; पञ्चशिखः; शैलाटः; विक्रमः; सटाङ्कः; मृगराट्; मृगराजः; मरुत्प्लवशी; लग्नौकाः; करिदारकः; महावीरः; श्वेतपिङ्गजमोचनः; मृगारिः; इभारिः; नखरायुधः; महानामृगपतिः; पञ्चमुखः; नखी; मानी; क्रव्यादः; मृगाधिपः; शूरः; विक्रान्तः; द्विरदान्तकः; बहुबलः; दीप्तः; बली; विक्रमी; दीप्तपिङ्गलः; 'सिंहो बली द्विरदकुञ्जरमांसभोजी, संवत्सरेण कुरुते रतिमेकवारम्। पारावतः खलु शिलाकणमात्रभोजी, कामी भवेदनुदिनं वद कोऽत्र हेतुः।' पदान्ते श्रेष्ठार्थवाचकः; 'क्व यास्यसि महाराज ! हित्वेमं दुःखितं जनम्। हीनं पुरुषसिंहेन रामेणाक्लिष्टकर्मणा।' अर्हतां ध्वजः; रक्तशिग्रुः; 'तुत्थालकटुकाव्योषसिंहाकंहयमारकाः'—इति सुश्रुते (४।९)। मेषादिद्वादशराश्यन्तर्गतपञ्चमराशिः; लेयः; मेषादिद्वादशलग्नान्तर्गतपञ्चमलग्नम्; 'सिंहलग्ने समुद्भूतो भोगी शत्रुविमर्दनः। स्वल्पोदरोऽल्पपुत्रश्च सोत्साही गजविक्रमः'—इति-कोष्ठीप्रदीपः। २१४

सिंहध्वनिः पुं. [सिंहस्य ध्वनिः] सिंहशब्दः; सिंहनादः; 'तुषारसंघातशिलाः खुराग्रैः समुल्लिखन् दर्पकलः ककुद्मान्। दृष्टः कथञ्चिद् गवयैर्विविग्नैरसोढसिंहध्वनिरुन्नदन्'—इति कुमारसम्भवम्। ७८५

सिंहनादः पुं. [सिंहस्येव नादः] योधानां रणोत्साहजरवः; क्ष्वेडा; गजयूथदर्शनात् तद्भङ्गाय यथा सिंहस्य नादस्तथा परबलभङ्गाय स्वोत्साहविवृद्धये च यो रावः सः; [सिंहस्येव नादः सिंहनादः] 'कविसमरसिंहनादः स्वरानुनादः सुधैकसंवादः। विद्वद्विनोदकन्दः सन्दर्भोऽयं मया सृष्टः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (७००)। सिंहशब्दः; सिंहध्वनिः; महादेवः; शिवः; शङ्करः; शम्भुः। ७८५

सिंहासनम् क्ली. [सिंहखचितमासनम्] स्वर्णमयराजासनं; राज्ञो वरासनम्; 'राज्ञो वरासनं नाम श्रीसिंहासनमुच्यते।' 'शुभे मुहूर्ते शुभमासवर्षे सुवारवेलातिथिचन्द्रयोगे। काले निरुत्पातनिरीतिभावे सिंहासनावस्थविधिं वदन्ति'–इति युक्तिकल्पतरुः। चतूराजीक्रीडायां जयविशेषः; 'अन्यद्राजपदं राजा यदा यातो युधिष्ठिर। तदा सिंहासनं तस्य भण्यते नृपसत्तम। राजा च नृपतिं हत्वा कुर्यात् सिंहासनं यदा। द्विगुणं वाहयेत् पण्यमन्यथैकगुणं भवेत्। मित्रसिंहासनं पार्थ यदा रोहति भूपतिः। तदा सिंहासनं नाम सर्वं नयति तद्बलम्। यदा सिंहासनं कर्तुं राजा षष्ठपदाश्रितः। तदा घातेन हन्तव्यो बलेनापि सुरक्षितः'–इति तिथ्यादितत्त्वम्। योगासनविशेषः; 'गुल्फौ च वृषणस्याधः सीवन्याः पार्श्वयोः क्षिपेत्।

–इति भागवते (१।१८।७)। छत्रं; राजहंसः; चित्र-मृगः; 'आक्रीडन्तो वहन्ति स्म सारङ्गशबला हयाः'—इति महाभारते (७।२२।२१)। वाद्यभेदः; अंशुकं; नानावर्णः; मयूरः; कामदेवः; धनुः; केशः; स्वर्णम्; आभरणं; पद्मं; शङ्खः; चन्दनं; कर्पूरं; पुष्पं; कोकिलः; मेघः; पृथिवी; रात्रिः; दीप्तिः; सिंहः; त्रि. शबलः; 'शारङ्गश्चातके ख्यातः शबले हरिणेऽपि च'—इत्यजयः (अत एव सारङ्गो दन्त्यादिस्तालव्यादिश्च)। २३०

सारणिः स्त्री. [सृ+णिच्+अनि] क्षुद्रनदी; प्रसारिणी; पानम्। ६८५

सारणी स्त्री. [सारणि+वा ङीष्] प्रसारिणी; स्वल्पनदी; पानम्; 'आलबालवलयेषु भूरुहां मांसलस्तिमितमन्तरान्तरा। केरलीचिकुरभङ्गिभङ्गुरं सारणीषु पुनरम्बु दृश्यते'—इति अनर्घराघवे। ६८५

सारथिः पुं. [सरत्यश्वानिति। सृ+अन्तर्भावितण्यर्थः+'सर्तेर्णिच्च' इति अथिन्] रथादिघोटकनियोगकर्ता; नियन्ता प्राजिता; यन्ता; सूतः; क्षत्ता; सव्येष्ठा; दक्षिणस्थः; रथकुटुम्बी; सादी; सव्येष्ठः; नियामकः; चातुरिकः; प्रवेता; रथनागरः; [सरथस्यापत्यं सारथिः, बाह्वादित्वादिञ्] 'निमित्तशकुनज्ञानो हयशिक्षाविशारदः। हयायुर्वेदतत्त्वज्ञो भूरिभागविशेषवित्। स्वामिभक्तो महोत्साहः सर्वेषां च प्रियंवदः। शूरश्च कृतविद्यश्च सारथिः परिकीर्तितः'—इति मात्स्ये (२१५।२०-२१)। समुद्रः। ४४८

सारमेयः पुं. [सरमाया अपत्यं पुमानिति, ढक्] कुक्कुरः; कुर्कुरः; कुकुरः; श्वानः; कौलेयकः; भषणः; शुनकः; 'अन्योऽन्यस्यावलुम्पन्ति सारमेया इवामिषम्। राजानो भरतश्रेष्ठ भोक्तुकामा वसुन्धराम्'—इति महाभारते (६।९।७३)। २८१

सारशनम् क्ली. [सारमुत्कृष्टं सनं रचना यस्य। सार+षणु+घ, शत्वे पृषोदरादिः] मेखला; काञ्ची; सारसनम्। ५६०

सारसः पुं.– स्त्री. [सरसि भवः+अण्] पक्षिविशेष; पुष्कराह्वः; गोनर्दः; नाङकुरः; लक्ष्मणः; लक्षणः; सरसीकः; सरोत्सवः; रसिकः; कामी; दार्वाघाटः; पुष्कराख्यः; 'इष्टार्थसिद्धिः सकलासु दिक्षु स्यात्सारसद्वन्द्वविलोकनेन। श्रुत्वास्य पृष्ठे निनदं न गच्छेत् सिध्यत्यभीष्टं गृह एव यस्मात्। वामेन योषित्कुललाभकारी शब्दे तथाग्रे नृपतेर्थलभ्यैः। यः सारसाभ्यां युगपद्विरावः कृतोऽचिरेण क्रमतोऽपि वामः। स वेदितव्यः कथितार्थकारी क्रौञ्चद्वयस्याप्ययमेव वर्गः'—इति वसन्तराजशाकुने सारसवर्गः। २४४

सारसनम् क्ली. [सारं सनोति ददातीति। षणु दाने+अच्। सह अरसनेन स्वल्पध्वनिना वा] सप्तकी; काञ्ची; मेखला; रसना; रशना; कटिसूत्रं; सारशनम्। ५६०

सारसी स्त्री. [सारस+जातौ ङीष्] सारसपत्नी; लक्ष्मणा; लक्षणा; 'हंसगद्गदभाषिण्यो दुःखशोकप्रमोहिताः। सारस्य इव रासन्त्यः पतिताः पश्य माधव!'—इति महाभारते (११।१८।१४)। २४४

सारिफलकः पुं. [सारीणां पाशकानां फलकः पट्टः] आकर्षः; खेलनाधारः। ८४५

सार्थः पुं. [सरतीति, सृ+'सर्तेर्णिच्च' इति थन् स च णित्] समूहमात्रं; निकरः; निकायः; उत्करः; 'पश्चिमे शर्वरीभागे नप्तृकोलूकपिङ्गलाः। सर्व एव विपर्यस्ता ग्राह्याः सार्थेषु योषिताम्'—इति बृहत्संहितायाम् (८६।४९)। जन्तुसङ्घः; वणिक्समूहः; 'वापीष्विव स्रवन्तीषु वनेषूपवनेष्विव। सार्थाः स्वैरं स्वकीयेषु चेरुर्वेश्मस्विवाद्रिषु'—इति रघौ (१७।६४)। त्रि. [अर्थेन सह वर्तमानः] अर्थयुक्तः; सार्थकः; 'सार्थः प्रवसतो मित्रं भार्या मित्रं गृहे सतः। आतुरस्य भिषङ्‌ मित्रं दानं मित्रं मरिष्यतः'—इति शुद्धितत्त्वम्। ६८६

सार्द्धम् अव्य.– सहितं; साकं; समं; सत्रा; सहार्थम्; 'सुशर्मा भ्रातृभिः सार्द्धं युद्धार्थी पृष्ठतोऽन्वयात्'—इति महाभारते (७।२७।२)। त्रि. [अर्द्धेन सह वर्तमानम्] अर्द्धयुक्तम्; 'मुनिभिर्द्विरशनं प्रोक्तं विप्राणां मर्त्यवासिनां नित्यम्। अहनि च तथा तमस्विन्यां सार्द्धप्रहरयामान्तः'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। 'गतेऽब्दे द्वितये सार्द्धे पञ्चपक्षे दिनद्वये। दिवसस्याष्टमे भागे पतत्येकोऽधिमासकः'—इति मलमासतत्त्वम्। ८७७

सार्पिषः त्रि. [सर्पिषः अयम्, सर्पिषा संस्कृतो वा। सर्पिष्+अण्] सर्पिःसम्बन्धी; सर्पिःसंस्कृतवस्तु; घृतमिश्रम्। ३२२

सार्पिष्कम् त्रि. [सर्पिष्+'संस्कृतम्' इति ठक्] सर्पिषा

संस्कृतम्; 'सार्पिष्कं दाधिकं सर्पिर्दधिभ्यां संस्कृतं क्रमात्'—इति हेमचन्द्रः। ३२२

सार्वभौमः पुं. [सर्वभूमौ विदितः। 'तत्र विदित इति च' 'तस्येश्वरः' इति वा अण्] उत्तरदिग्गजः; (४२२) सम्राट्; सर्वभूमीश्वरः चक्रवर्ती; एकजन्मा; नृपाग्रणीः; 'भरतस्य च वीरस्य सार्वभौमस्य पार्थिव !, ध्रुवं प्राप्स्यति दुष्प्रापन् लोकांस्तीर्थपरिप्लुतः'—इति महाभारते (३।९३।) । विदूरथपुत्रः; 'परीक्षिदनपत्योऽभूत् सुरथो नाम जाह्नवः। ततो विदूरथस्तस्मात् सार्वभौमस्ततोऽभवत्'–इति भागवते (९।२२)। पुरुवंशीयाहंयातिपुत्रः 'अहंयातिः खलु कृतवीर्यदुहितरमुपयेमे भानुमतीं नाम। तस्यामस्य जज्ञे सार्वभौमः। सार्वभौमः खलु जित्वजहार कैकेयीं सुनन्दां नाम तामुपयेमे'—इति महाभते (१।९५।१५-१६)। १०४

सालः पुं. [शल्यते इति शल् गतौ+घञ्, सत्वे पृषोदरादिः] वृक्षविशेषः; [सारोऽस्यत्रेति, अच्, रस्य लः] सर्जः; सर्जरसः; कलः; कलत्रोद्भवः; वल्लीवृक्षः; चौरपर्णः; रालकार्यः; अजकर्णव वस्तकर्णः; कषायी; ललनः; गन्धवृक्षकः; वंशः; शनिर्यासः; दिव्यसारः; सुरेष्टकः; शूरः; अग्निवल्लभः प्रक्षधूपः; सिद्धिकः; 'सालस्तु सर्जकार्यश्वकर्णकाः यसम्बरः। अश्वकर्णः कषायः स्याद् व्रणस्वेदकफक्रिम्। व्रघ्नविद्रधिवाधिर्ययोनिकर्णगदान् हरेत्'—इति वप्रकाशः। शालमत्स्यः; वृक्षमात्रं; प्राकारः; रा। १९५

सास्ना स्त्री. [षस् स्नेः+'रास्नासास्नास्थूणावीणाः' इति नप्रत्ययेन साधुः] कम्बलः; 'रोमन्थमन्थरचलद्गुरुसास्नमासांचक्रे स्फिदलसेक्षणमौक्षिकेण' — इति माघे (५।६२)। २

सिंहः पुं. [सिञ्चति पशुषु इति। सिच्+'सिचेः संज्ञायां हनुमौ कश्चति क, अन्त्यादेशो हकारः, नुम् च। पृषोदरादित्वा अन्तविपर्यये हिनस्तीति सिंह इत्यपि भवति] मृगेन्द्रः पञ्चास्यः; हर्यक्षः; केशरी; हरिः; पारीन्द्रः; पिङ्गलः; कण्ठीरवः; पञ्चशिखः; शैलाटः; विक्रमः; सटाङ्कः; मृगराट्; मृगराजः; मरुत्प्लवशी; लग्नौकाः; करिदारकः; महावीरः; श्वेतपिङ्गजमोचनः; मृगारिः; इभारिः; नखरायुधः; महानामृगपतिः; पञ्चमुखः; नखी; मानी; क्रव्यादः; मृगाधिपः; शूरः; विक्रान्तः; द्विरदान्तकः; बहुबलः; दीप्तः; बली; विक्रमी; दीप्तपिङ्गलः; 'सिंहो बली द्विरदकुञ्जरमांसभोजी, संवत्सरेण कुरुते रतिमेकवारम्। पारावतः खलु शिलाकणमात्रभोजी, कामी भवेदनुदिनं वद कोऽत्र हेतुः।' पदान्ते श्रेष्ठार्थवाचकः; 'क्व यास्यसि महाराज ! हित्वेमं दुःखितं जनम्। हीनं पुरुषसिंहेन रामेणाक्लिष्टकर्मणा।' अर्हतां ध्वजः; रक्तशिग्रुः; 'तुत्थालकटुकाव्योषसिंहार्कहयमारकाः'—इति सुश्रुते (४।९)। मेषादिद्वादशराश्यन्तर्गतपञ्चमराशिः; लेयः; मेषादिद्वादशलग्नान्तर्गतपञ्चमलग्नम्; 'सिंहलग्ने समुद्भूतो भोगी शत्रुविमर्दनः। स्वल्पोदरोऽल्पपुत्रश्च सोत्साही गजविक्रमः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। २१४

सिंहध्वनिः पुं. [सिंहस्य ध्वनिः] सिंहशब्दः; सिंहनादः; 'तुषारसंघातशिलाः खुराग्रैः समुल्लिखन् दर्पकलः ककुद्मान्। दृष्टः कथञ्चिद् गवयैर्विविग्नैरसोढसिंहध्वनिरुन्ननाद'—इति कुमारसम्भवम्। ७८५

सिंहनादः पुं. [सिंहस्येव नादः] योधानां रणोत्साहजरवः; क्ष्वेडा; गजयूथदर्शनात् तद्भङ्गाय यथा सिंहस्य नादस्तथा परबलभङ्गाय स्वोत्साहविवृद्धये च यो रावः सः; [सिंहस्येव नादः सिंहनादः] 'कविसमरसिंहनादः स्वरानुनादः सुधैकसंवादः। विद्वद्विनोदकन्दः सन्दर्भोऽयं मया सृष्टः'—इति आर्यासप्तशत्याम् (७००)। सिंहशब्दः; सिंहध्वनिः; महादेवः; शिवः; शङ्करः; शम्भुः। ७८५

सिंहासनम् क्ली. [सिंहखचितमासनम्] स्वर्णमयराजासनं; राज्ञो वरासनम्; 'राज्ञो वरासनं नाम श्रीसिंहासनमुच्यते।' 'शुभे मुहूर्ते शुभमासवर्षे सुवारवेलातिथिचन्द्रयोगे। काले निरुत्पातनिरीतिभावे सिंहासनावस्थविधिं वदन्ति'–इति युक्तिकल्पतरुः। चतूराजीक्रीडायां जयविशेषः; 'अन्यद्राजपदं राजा यदा यातो युधिष्ठिर। तदा सिंहासनं तस्य भण्यते नृपसत्तम। राजा च नृपतिं हत्वा कुर्यात् सिंहासनं यदा। द्विगुणं वाहयेत् पण्यमन्यथैकगुणं भवेत्। मित्रसिंहासनं पार्थ यदा रोहति भूपतिः। तदा सिंहासनं नाम सर्वं नयति तद्बलम्। यदा सिंहासनं कर्तुं राजा षष्ठपदाश्रितः। तदा घातेन हन्तव्यो बलेनापि सुरक्षितः'–इति तिथ्यादितत्त्वम्। योगासनविशेषः; 'गुल्फौ च वृषणस्याधः सीवन्याः पार्श्वयोः क्षिपेत्।

दक्षिणे सव्यगुल्फं तु दक्षगुल्फं तु सव्यके । हस्तौ च जान्वोः संस्थाप्य स्वाङ्गुलीः सम्प्रसार्य च । व्यात्तवक्त्रो निरीक्षेत नासाग्रं सुसमाहितः । सिंहासनं भवेदेतत् पूजितं योगिभिः सदा । बन्धत्रयस्य सन्धानं कुरुते चासनोत्तमम्'—इति हठप्रदीपे । पुं. [सिंहस्य आसनम् उपवेशनमिव आसनं यत्र] षोडशरतिबन्धान्तर्गतचतुर्दशबन्धः; 'स्वजङ्घाद्वय-बाहू च कृत्वा योषापदद्वयम् । स्तनौ धृत्वा रमेत् कामी बन्धः सिंहासनो मतः'—इति रतिमञ्जरी । ४२३

सिक् स्त्री. [सिञ्चति शोभाम् । क्विप्] वर्तिः; वस्तिः; दशा; वस्त्रतटम् । ५५१

सिकता स्त्री. [सिक् सेचने+बाहुलकाद् अतच्] बालुका; सिकतिलः; बालुकायुक्तभूमिः । ६७०

सिकताः स्त्री. भूम्नि [सिक्+अतच्] बालुका; 'सिकता वपन् सव्यसाची राजानमनुगच्छति । असक्ताः सिकता-स्तस्य यथा सम्प्रति भारत । असक्तं शरवर्षाणि तथा मोक्ष्यति शत्रुषु'—महाभारते (२।७६।१६) । ६७०

सिक्थकम् क्ली. [सिञ्चति सिच्यते वा, षिच् क्षरणे+ 'पातृतुदिवचि' इति थक्, स्वार्थे कन्] मधूच्छिष्टम्; पुं. भक्तपुलाकः; 'सिक्थकै रहितो मण्डः पेया सिक्थ-समन्विता । यवागू बहुसिक्था स्याद्विलेपी विरलद्रवा' —इति वैद्यके । 'दन्तैर्नगा गोह्ययाश्च लोम्ना हेम्ना भूपाः सिक्थकेन द्विजाद्याः । तद्वद्देशा वर्णमासा दिशश्च शेषद्रव्याण्यात्मरूपस्थितानि'—इति बृहत्संहितायाम् (२६।८) । ५५५

सिक्थितम् त्रि. [शिक्यं धृतम्, प्रातिपदिकाण्णिच्, क्त] काचितम् । ७६८

सिङ्घिनी, सिङ्घिणी स्त्री.— नासिका; नासा; घ्राणं; घोणा । ५२१

सिचयः पुं. [सिचं सिञ्चनमेति प्राप्नोतीति । सिच्+ इण्+अच्] वस्त्रम्, 'भूषाभोगिफणारत्नरोचिःसिचय-चारवे । नमः प्रलीनमुक्ताय हरकल्पमहीरुहे'—इति राजतरङ्गिण्याम् । जीर्णवस्त्रम् । ५४८

सिञ्जिनी स्त्री.— बाणासनं; द्रुणा; मौर्वी; ज्या; गुणा; जीवा; शिञ्जिनी; धनुर्गुणः । (५६१) नूपुरः; शिञ्जिनी; पादकटकः । ४६४

सितः त्रि. [सितः शुक्लवर्णोऽस्यास्तीति+अच्] शुक्ल-वर्णयुक्तः; गौरः; श्वेतः; शुभ्रः; वलक्षः; धवल; अर्जुनः; 'सितं सितिम्ना सुतरां मुनेर्वपुर्विसारिभिः सौधमिवाथ लम्भयन्'—इति माघे (१।२५) । [सो+ क्त] समाप्तः; निबद्धः; गतः । क्ली. रौप्यं; मूलकं; चन्दनं; शुक्लचन्दनम् । 'सितं मलयजं शीतं गोशीर्षं-सितचन्दनम्'—इति गारुडे। पुं. शुक्लवर्णः; शुक्रा-चार्यः; शरः । ७३२

सिताम्बरः पुं. [सितमम्बरं यस्य] श्वेतवस्त्रपरिहितव्रती; रजोहरणधारी; श्वेतवासाः; नग्नाटः; दिग्वासः; क्षपणः; श्रमणः; शुक्लवस्त्रधारियिनि त्रि. । ३४४

सिताम्बुजम् क्ली. [सितम् अम्जम्] पुण्डरीकं; श्वेत-कमलम् । ६८०

सिताम्भोजम् क्ली. [सितम् म्भोजम्] श्वेतपद्मम् । ६००

सितेतरौ [सितश्च इतरश्च] कृष्णशुक्लौ [द्वि. व.]; 'नानालक्षणवेषाभ्यां कृष्णरामविरेजतुः । स्वलङ्कृतौ बालगजौ पर्वणीव सितेतरौ'-इति भागवते (१०। ४१।४१) । पुं. [सितेतरः] श्यामशालिः; कुलत्थः; त्रि. सितेतरः=कृष्णः; शुक्लेतरवर्णः; कृष्णः; 'नीवीमतिक्रम्य सितेत्स्य तन्मेखलामध्यमणे-रिवार्चिः'—इति कुमारे (१।) । २५२

सितेतरगतिः पुं. [सितेतरा कृष्णगतिरस्य] वह्निः; अग्निः । ६२

सिद्धः पुं. [सिध्+क्त] देवनविशेषः; स तु अणि-मादिगुणोपेतो विश्वावसुप्रभृ; 'उद्वेजिता वृष्टि-भिराश्रयन्ते शृङ्गाणि यस्यवन्ति सिद्धाः'—इति कुमारे (१।५) । व्यासादिः; वहारः; कृष्णधुस्तूरः; गुडः; विस्कम्भादिसप्तविंशोगान्तर्गतैकविंशयोगः; 'जितेन्द्रियः सर्वकलानिधानौरोऽतिशूरो मधुरो विनीतः । सत्योपपन्नः कृतभोगो यस्य प्रसूतौ किल सिद्धयोगः'—इति कोष्ठीप्रदी क्ली. सैन्धवलवणं; त्रि. प्रसिद्धः; 'एवं तौ लोकसिद्धाः क्रीडाभिश्चेरतुर्वने' —इति भागवते (१०।१८।१। नित्यः; निष्पन्नः; 'सिद्धार्थः खलु सौमित्रिर्यश्चन्द्रोपमम् । मुखं पश्यति रामस्य राजीवाक्षं महाद्यु—इति रामायणे (२।९८।८) । मुक्तः; 'अहो व सिद्धोऽसि यस्य ते मतिरीदृशी'--इति भाग (६।१२।१९) । पक्वम्; 'पर्युसितं पुनः सिद्धमन्यत्र हिरण्योदक-

स्पर्शात्'—इति श्राद्धतत्त्वम् । मन्त्रसिद्धिविशिष्टः; 'सम्यगनुष्ठितो मन्त्रो यदि सिद्धो न जायते । पुनस्तेनैव कर्तव्यस्ततः सिद्धो भवेद् ध्रुवम्'—इति तन्त्रसारः । सिद्धिविशिष्टः; 'चतुस्त्रिंशद्विधः सिद्धः सर्वकर्मोपकारकः । तमुपैति स्वयं सिद्धं सर्वसाधनकारणम्' —इति ब्रह्मवैवर्ते । ८७

सिद्धान्तः पुं. [सिद्धःवादिप्रतिवादिभ्यां निर्णीतः अन्तः अर्थः यस्य] पूर्वपक्षं निरस्य सिद्धपक्षस्थापनं; राद्धान्तः; कृतान्तः; समयः । १०

सिद्धार्थः पुं. [सिद्धोऽर्थो यस्य] शाक्यसिंहः; शौद्धोदनिः; दशबलः; बुद्धः; शक्यः; तथागतः; सुगतः; मारजित्; अद्वयवादी; समन्तभद्रः; जिनः । (५८१) [सिद्धोऽर्थो यस्मात्] श्वेतसर्षपः; गौरसर्षपः; 'ध्रुवाय पथि दृष्टाय तत्र तत्र पुरस्त्रियः । सिद्धार्थाक्षतदध्यम्बु दूर्वां पुष्पफलानि च । उपजह्रुः प्रयुञ्जाना वात्सल्यादाशिषः सतीः'—इति भागवते (४।९।५८) । वृत्तार्हत्पिता; वटीवृक्षः; प्रसिद्धः; 'सिद्धार्थं सिद्धसम्बन्धं श्रोतुं श्रोता प्रवर्तते । ग्रन्थौ तेन वक्तव्यः सम्बन्धः सप्रयोजनः' —इति व्याकरणका । ८५

सिध्म [न्] क्ली. सिध्+मन् स च कित्] किलासरोगः; 'क्षुद्रकुष्ठान स्थूलारुष्कं महाकुष्ठमेककुष्ठञ्चर्मदलं विसर्पः परिः सिध्म विचर्चिका किटिमं पामा रकसा चेति'—सु (२।५) । ६०२

सिध्मम् क्ली. [सि-बाहुलकात् मक्] किलासरोगः; सप्तमहाकुष्ठान्तर्गष्ठरोगविशेषः; 'श्वेतं ताम्रं तनु च यद्रजो घृष्टमुञ्चति । प्रायश्चोरसि तत् सिध्ममलावुकुसुमोपमम्-इति माधवकरः । ६०२

सिध्मलः त्रि. [सि अस्यास्तीति । सिध्म+'सिध्मादिभ्यश्च' इति ल] किलासी; 'विश्वेभ्यो भूतेभ्यः सिध्मलं भूत्यै रणमभूत्यै इति'—वाजसनेयसंहितायाम् (३०।१९) ६०६

सिनीवाली स्त्री. सी शुक्ला बाला चन्द्रकला अस्यामिति । यद्वा सिनकलया चन्द्रकलया वल्यते मिश्रयते या । वल् मिश्रणे । ततो ङीष्] दृष्टेन्दुकलामावास्या; सा शीयुक्तामावास्या; 'पौर्णमास्यां सिनीवाल्यां द्वा श्रवणेऽथवा'—इति भागवते (४।१२।४८) । ११२

सिन्दुवारः पुं. [सिन्धुं गजमदं वारयति तिक्तत्वात् । सिन्धु+वृ+अण् । पाक्षिको धस्य दः] वृक्षविशेषः; सिन्दुकः; इन्द्रसुरिसः; निर्गुण्डी; इन्द्राणिका; सिन्धुकः; सिन्धुवारकः; इन्द्राणी; पौलोमी; शक्राणी; कासनाशिनी; श्वेतपुष्पः; सिन्दुवारकः; स्थिरसाधनकः; अनन्तः; सिद्धकः; अर्थसिद्धकः; [स्यन्दं वारयति सिन्दुवारः । केचित्तु सिन्धुं समुद्रमपि वारयति शोषयति तीक्ष्णरसत्वेन कफघ्नत्वात्, सिन्धुकसिन्धुवारौ तवर्गचतुर्थवन्तावित्याहुः] 'सिन्धुकः स्मृतिदस्तिक्तः कषायः कटुको लघुः । केश्यो नेत्रहितो हन्ति शूलशोथाममारुतान् । कृमिकुष्ठारुचिश्लेष्मव्रणान् नीलापि तद्विधा । सिन्धुवारदलं तत्तु वातश्लेष्महरं लघु'—इति भावप्रकाशः । २००

सिन्धुः स्त्री. [स्यन्दते इति । स्यन्द्+उ, सम्प्रसारणं, दस्य धश्च] सरित्; नदी; 'अन्तः समुद्रा गिरयश्च सर्वेऽस्मात् स्यन्दन्ते सिन्धवः सर्वरूपाः । अतश्च सर्वा ओषधयो रसाश्च येनैष भूतैस्तिष्ठते ह्यन्तरात्मा'—इति मुण्डकोपनिषदि (२।१।९) । नदीविशेषः (८३८); 'शतद्रोविपाशायुजः सिन्धुनद्याः, सुशीतं लघु स्वादु सर्वामयघ्नम् । जलं निर्मलं दीपनं पाचनं च, प्रदत्ते बलं बुद्धिमेधायुषं च'—इति राजनिघण्टः । पुं. [स्यन्दते इति । स्यन्दू प्रस्रवणे+'स्यन्देः सम्प्रसारणं धश्च' इति उ, धकारादेशः सम्प्रसारणं च] समुद्रः; 'तावत्त्रिभुवनं सद्यः कल्पान्तैधितसिन्धवः । प्लावयन्त्युत्कटाटोपचण्डवातेरितोर्मयः'—इति भागवते (३।११।३१) । वमथुः; गजमदः; सिन्धुवारवृक्षः; श्वेतटङ्कणं; देशविशेषः; 'युधाजितश्च सन्देशात् स देशं सिन्धुनामकम् । ददौ दत्तप्रभावाय भरताय भृतप्रजः'—इति रघौ (१५।८७) । नदविशेषः; 'विनीताध्वश्रमास्तस्य सिन्धुतीरविचेष्टनैः । दुधुवुर्वाजिनः स्कन्धाल्लग्नकुङ्कुमकेशरान्'—इति रघौ (४।६७) । रागविशेषः; स च मालकोशरागपुत्रः; 'माधवः शोभनः सिन्धुर्मारुमेवाडकुन्तलाः । कलिङ्गः सोमसंयुक्तः कौशिकस्य सुता इमे ।' ६६५

सिन्धुपारजः पुं. [सिन्धुपारे तदाख्यनदप्रान्तदेशे जातः । जनेर्डः] सैन्धवः । ४३९

सिन्धुमन्थजम् क्ली. [सिन्धुमन्थाज् जातम् इति । जन्+

ड] सैन्धवं; सिन्धुलवणम् । ४३९

सिन्धुरः पुं. [सिन्धुं मदं राति ददातीति । सिन्धु+रा+क] हस्ती; गजः; 'गतिगञ्जितवरयुवतिः करी कपोलौ करोतु मदमलिनौ । मुखबन्धमात्रसिन्धुरलम्बोदर किं मदं वहसि'—इति आर्यासप्तशत्याम् (१९८) । २१४

सिन्धुवारः पुं. [सिन्धुमपि वृणोति गत्येति । सिन्धु+वृ+अण् । सिन्धुं मदजलमपि वारयति तिरस्करोति तिक्तरसेन । सिन्धु+वृ+णिच्+अण्] सिन्दुवारवृक्षः; सिन्धुवारकः; 'विसुन्धुकः सिन्धुवारः सिन्धुकं सुरसोऽपि च । तथेन्द्रसुरसस्त्विन्द्रसुरिसः सिन्धुवारितः । निर्गुण्डीन्द्राणिकेन्द्राणी सुरसा सिन्धुवारकः'—इति शब्दरत्नावली । 'सिन्धुवारो विषश्लेष्मव्रणकुष्ठक्षयापहः'—इति राजवल्लभः । २००

सिन्धूत्थम् क्ली. [सिन्धु+उद्+स्था+'सुपि स्थः' इति क] सिन्धूपलं; माणिमन्थं; माणिबन्धं; सैन्धवं; लवणोत्तमं; सिन्धुलवणम् । ६१३

सीकरः पुं. [शीक्यतेऽनेनेति । शीकृ सेचने+बाहुलकाद् अरन् । पृषोदरादित्वात् सः] वातप्रेरितजलकणाः; शीकरः; वातास्तवारि; अम्बुकणाः; 'स नर्मदारोधसि सीकरार्द्रैर्मरुद्भिरानर्तितनक्तमाले । निवेशयामास विलङ्घिताध्वा क्लान्त रजोधूसरकेतु सैन्यम्'—इति रघौ (५।४२) । ५९

सीता स्त्री. [सिनोतीति, षिञ् बन्धने+बाहुलकात् क्त दीर्घश्च । लाङ्गलरेखया सिनोति खनति भूमिम्, षिञ् बन्धने क्त, निपातनाद्दीर्घः । सीता दन्त्यसादिः, शेते भुवि इति शीता, तालव्यशादिश्च] लाङ्गलपद्धतिः; 'न वेद्मि स प्रार्थितदुर्लभः कदा, सखीभिरस्त्रोतरमोक्षिताभिमाम् । तपःकृशामभ्युपपत्स्यते सखीं, वृषेव सीतां तदवग्रहक्षताम्'—इति कुमारे (५।६१) । जनकराजनन्दिनी ; सा तु श्रीरामपत्नी; वैदेही; मैथिली; जानकी; धरणीसुता; भूमिसम्भवा; 'अथ मे कृषतः क्षेत्रं लाङ्गलादुत्थिता ततः । क्षेत्रं शोधयता लब्धा नाम्ना सीतेति विश्रुता'–इति रामायणे (२।६।१३) । लक्ष्मीः; उमा; सस्याधिदेवता; स्वर्गङ्गा; मदिरा; गङ्गास्रोतः; 'गङ्गायां तु भद्रसोमा महाभद्राथ पाटला । तस्याः स्रोतसि सीता च वङ्क्षुर्भद्रा च कीर्तिता । तद्भेदेऽलकनन्दापि शारिणी त्वल्पनिम्नगा'—इति शब्दमाला । नदीविशेषः; 'गङ्गां शतद्रुं सीतां च यमुनामथ कौशिकीम् । एताश्चान्याश्च सरितः पृथिव्यां या नरोत्तम । परिक्रामन् प्रपश्यामि तस्य कुक्षौ महात्मनः'—इति महाभारते (३।१८८।१००) । ५७६

सीत्यम् क्ली. [सीतया निर्वृत्तमिति । सीता+यत्] सस्यं; शस्यं; धान्यं; त्रि. [सीतया समितम् । सीता+'नौवयोधर्मेति' यत्] कृष्टक्षेत्रादि । ५७४

सीमन्तः पुं. [सीम्नोऽन्तः, शकन्ध्वादित्वात् साधुः] केशेषु वर्त्म; केशवेषः; स्त्रीकेशाध्यपद्धतिः; 'अपश्यन्त तथा चैनमाकाशे नागमुत्तमम् सीमन्तमिव कुर्वाणं नभसः पद्मवर्चसम्'—इति महाभारते (१।४४।२) । सीमन्तोन्नयनसंस्कारः; 'गर्भाधानतौ पुंसः सवनं स्पन्दनात् पुरा । षष्ठेऽष्टमे वा सीमन्त प्रसवे जातकर्म च' —इति याज्ञवल्क्यः । प्रत्यङ्गविशेषः; 'चतुर्दशैव सीमन्ताः ये चास्थिसंघातवद्गणनीया यतस्तैर्युक्ता अस्थिसंघाताः । ये ह्युक्ताः व्रातास्तु खल्वष्टादशैकेषाम्'—इति सुश्रुते (३।५) ५२९

सीमन्तिनी स्त्री. [सीमन्तोऽस्या स्तीति । इनि+ङीप्] नारी; अङ्गना; सुन्दरी; अबल स्त्री; 'मास्म सीमन्तिनी काचिज् जनयेत् पुत्रमीदृ । सौमित्रे ! योऽहमम्बाया दद्मि शोकमनन्तकं—इति रामायणे ।३५।२१) । ४८१

सीमा [न्], सीमा स्त्री. [सी इति, सि+'नामन्सीमन्व्योमन्निति' मनिन् प्रत्य साधुः, 'डाबुभाभ्यामन्यतरस्याम्'—इति पाक्षि डाप्] ग्रामादीनामवधारितान्तभागः; मर्यादा; आः; आघाटः । २५९

सीरः पुं. [सिनोति सीयते इति वसि बन्धने+'शुसिचिमिञां दीर्घश्च' इति क्रन् दीर्घः] हलः; लाङ्गलः; शीरः; 'सद्यः सीरोत्कषणसुरभिक्षेत्रमारुह्य मालं, किञ्चित्पश्चाद् व्रज लघुगतिर्भूय एवोत्तरेण'— इति मेघदूते (१६) । सूर्यः; अर्कवृक्ष५७५

सीरी [न्] पुं. [सीरोऽस्यास्ती इनि] बलदेवः; बलरामः; बलभद्रः । २८

सीसकम् क्ली. [सीसमेव, स्वार्थे] धातुविशेषः; नागं; योगेष्टं; वप्रं; सीसं; सीस; गण्डूपदभवम्; सिन्दूरकारणं; वर्द्धं; स्वर्णारि; नेष्टं; सुवर्णकं; वध्रं, पिच्चटं; सुवर्णारि; त्रपु; त्रपुध्रकं; महाबलं;

यवनेष्टकं; बहुमलं; चीनं; पिष्टं; जडं; भुजङ्गमम्; उरगं; कुरङ्गं; परिपिष्टकं; मृदुकृष्णायसं; पद्मं; तारशुद्धि; शिरावृत्तं; वयोवङ्गं; चीनपिष्टम्। १७२

सीसपत्रम् क्ली.– सीसपत्रकं; सीसं; सीसकम्। १७२

सुकृतम् क्ली. [सु+कृ+क्त] पुण्यं; धर्मः; श्रेयः; वृषः; सुकृतिः; 'अथ ते मुनयो दिव्याः प्रेक्ष्य हैमवतं पुरम्। स्वर्गाभिसन्धिसुकृतं वञ्चनामिव मेनिरे'—इति कुमारे (६।४७)। शुभं; सुविहिते त्रि.। 'क्रियमाणे कर्मणीदं दैवे पित्र्येऽथ मानुषे। यत्र यत्रानुकीर्त्येत तत्तेषां सुकृतं विदुः'—इति भागवते (८।२३।३१)। 'सुकृतं दुष्कृतं लोके गच्छन्तमनुगच्छति। तस्माद्वित्तं समासाद्य दैवाद्वा पौरुषादथ। दद्यात् सम्यग् द्विजातिभ्यः कीर्तनानि च कारयेत्'—इति वह्निपुराणे। १२५

सुकेशी स्त्री. [शोभनाः केशा यस्याः, ङीष्] स्वर्गवेश्याभेदः; अप्सरोविशेषः; 'मनोहरा सुकेशी च सुमुखी हासिनी प्रभा। एताश्चान्याश्च वै बह्वयः प्रनृत्ताप्सरसः शुभाः'—इति महाभारते (१३।१९।४५)। सुकेशा; सुन्दरकेशयुक्ता; शोभनकेशयुक्ते त्रि.। 'सुभ्रूः सुकेशी सुश्रोणी सुकुचा सुद्विजानना। सा विवेशाश्रमपदं वीरसेनसुतप्रिया'—महाभारते (३।६४।६४)। ८८

सुखम् क्ली. [सुखयतीति। सुख्+अच्] आत्मगुणविशेषः; मनसो धर्मः; मुत्; प्रीतिः; प्रमदः; हर्षः; प्रमोदः; आमोदः; संमदः; आनन्दथुः; आनन्दः; शर्म; शातं; मदः; भोगः; रभसः; निर्वृतिः; धृतिः; वीचिः; संमोदः; मोदः; नन्दथुः; नन्दः; मुदा; सौख्यम्; उपजोषम्; आनन्दं; जोषम्; 'सुखं तु जगतामेव काम्यं धर्मेण जन्यते। अधर्मजन्यं दुःखं स्यात्प्रतिकूलं सचेतसाम्। मनोग्राह्यं सुखं दुःखमिच्छा द्वेषो मतिः कृतिः' —इति भाषापरिच्छेदः। १२३

सुगतः पुं. [सु शोभनं गतं गमनं ज्ञानं वा अस्येति] शौद्धोदनिः; दशबलः; बुद्धः; शाक्यः; तथागतः; मारजित्; अद्वयवादी; समन्तभद्रः; जिनः; सिद्धार्थः; शाक्यसिंहः; 'तेनाभिपूज्य सुगतान् भासयामास तत्र सा'—इति कथासरित्सागरे (२९।४०)। सुन्दरगमनविशिष्टे त्रि.। ८५

सुगन्धिता स्त्री. [सुगन्धेर्भावः। सुगन्धि+तल्+टाप्] सौगन्ध्यं; सौरभम्; आमोदः; परिमलः; सौरभ्यं; सुगन्धिः; 'सुगन्धितामप्रतियत्नपूर्वां बिभ्रन्ति यत्र प्रमदाय पुंसाम्। मधूनि वक्त्राणि च कामिनीनामामोदकर्मव्यतिहारमीयुः'—इति माघे (३।५४)। ७७

सुचरिता स्त्री. [शोभनं चरितं यस्याः] सती; साध्वी; पतिव्रता; सुचरित्रा। ४९५

सुचरित्रा स्त्री. [शोभनं सुन्दरं चरित्रं यस्याः] सती; साध्वी; पतिव्रता; सुचरिता। ४९५

सुतः पुं. [सूयते स्मेति। सु+क्त] पुत्रः; सूनुः; सन्ततिः; आत्मजः; तनुजः; प्रसूतिः; तुकः; तोकं; तनयः; नन्दनः; अपत्यम्; 'शीलं संभजते पुत्रो मातुस्तातस्य वै सुता। यथाशीला भवेन्माता तथाशीलो भवेत्सुतः'—इति वह्निपुराणे। पार्थिवः; राजा; उत्पन्ने त्रि.। ४९७

सुत्रामा [न्] पुं. [सु+त्रै+मनिन्। सुष्ठु त्रायते भुवनम्] इन्द्रः; 'यत्राशयो लगति तत्रागजा वसतु कुत्रापि निस्तुलशुका। सुत्रामकालमुखसत्राशनप्रकरसुत्राणकारिचरणा'—इति अम्बाष्टके (३)। त्रि. 'इन्द्राय सुत्राम्णे पच्यस्व'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (१०।३१)। 'सुष्ठु त्रायते इति सुत्रामा तस्मै सुत्राम्णे शोभनत्राणकर्त्रे सुत्रातव्याय वा इन्द्राय पच्यस्व' इति तद्भाष्यम्। ५३

सुदर्शनः पुं.– क्ली. [शोभनं दर्शनमस्येति] विष्णुचक्रं; क्ली. [सुष्ठु दृश्यते इति। सु+दृश्+ल्युट्। शोभनं दर्शनमस्येति वा] इन्द्रनगरम्। २६

सुधा स्त्री. [सुखेन धीयते पीयते इति। सु+धेट् पाने+ 'आतश्चोपसर्गे' इत्यङ, टाप्] अमृतं; पीयूषं; पेयूषं; त्रिदशाहारः; 'न पश्चात्तेऽपि मन्यन्ते सुधामपि सुरोपमाः'—इति रामायणे (२।६१।१३)। लेपनद्रव्यम्; 'सेनासुधाक्षालितसौधसम्पदां पुरां बहूनां परभागमाप सा'—इति माघे (१२।६२)। मूर्वी; स्नुही; 'सेहुण्डः सिंहतुण्डः स्याद्वज्री वज्रद्रुमोऽपि च। सुधा समन्तदुग्धा च स्नुक् स्त्रियां स्यात् स्नुही गुडा'—इति भावप्रकाशः। गङ्गा; इष्टका; विद्युत्; रसः; तोयम्; 'रसायनमिवर्षीणां देवानाममृतं यथा। सुधेवोत्तमनागानां भैषज्यमिदमस्तु ते'—इति सुश्रुते। धात्री; हरीतकी; मधु; शालपर्णी। १३३

सुधीः पुं. [सुष्ठु ध्यायतीति, सु+ध्यै+क्विप्] पण्डितः; बुधः; स्त्री. [शोभना धीः] सुन्दरबुद्धिः; सुष्ठुधीः; [शोभना धीर्यस्य] शोभनबुद्धियुक्ते त्रि.। 'मात्रातिमात्रं शुभयैव बुद्धया चिरं सुधीरभ्यधिकं समाधात्'

—इति भट्टिः । ३३३

सुनासीरः पुं. [सुष्ठु नासीरम् अग्रगामिसैन्यं यस्य] इन्द्रः; शुनाशीरः; सुनाशीरः; 'ततो मीढ्वांसमामन्त्र्य सुनासीराः सहर्षिभिः । भूयस्तद्देवयजनं समीढ्वद्वेधसो ययुः'—इति भागवते (४।७।७) । ५३

सुनिश्चितः त्रि. [सुष्ठु निश्चितः] सुन्दरनिश्चयविषयीभूतः; संशितः । ४०२

सुन्दरः त्रि. [सुष्ठु उनत्ति आर्द्रीकरोति चित्तमिति । सु+उन्दी क्लेदने+अर । शकन्ध्वादित्वात् साधुः] मनोहरं; रुचिरं; चारु; सुषमं; साधु; शोभनं; कान्तं; मनोरमं; रुच्यं; मनोज्ञं; मञ्जु; मञ्जुलं; मनोहारि; सौम्यं; भद्रकं; रमणीयं; रामणीयकं; बन्धूरं; बन्धुरं; पेशलं; पेसलं; वामं; रामम्; अभिरामं; नन्दितं; सुमनः; वल्गु; हारि; स्वरूपम्; अभिरूपं; दिव्यम् । पुं. [सु+उन्द्+अर] कामदेवः; वृक्षविशेषः; 'जम्बुबब्बोलखदिरसिन्धुवाराश्च सुन्दरः । एषामन्यतमाङ्गारं निर्मलाम्बुनि भावयेद्'—इति सुखबोधः । ६८९

सुन्दरी स्त्री. [सुन्दर+गौरादित्वाद् ङीष्] अङ्गना; स्त्री; अवला; नारीभेदः; रूपलावण्यसम्पन्ना स्त्री; तरुभेदः; हरिद्रा; त्रिपुरसुन्दरी; 'अङ्गुष्ठानामिकायोगाद् वामहस्तस्य पार्वति । तर्पयेत् सुन्दरीं देवीं समुद्राञ्च सवाहनाम्'—इति तन्त्रसारः । योगिनीविशेषः; 'तावन्मन्त्रं जपेद्विद्वान् यावदायाति सुन्दरी । ज्ञात्वा दृढं साधकेन्द्रं निशीथे याति निश्चितम्'—इति तन्त्रसारे । ४८१

सुपर्णः पुं. [सुष्ठु पर्णं पक्षो यस्य] विहङ्गराजः; गरुडः; सुपर्णकः; गरुत्मान्; तार्क्ष्यः; सुपर्णीतनयः; वैनतेयः; पवनाशनाशः; सुरेन्द्रजित्; कश्यपनन्दनः; 'उह्यन्ते स्म सुपर्णेन वेगाकृष्टपयोमुचा'—इति रघौ (१०।६१) । स्वर्णचूडपक्षी; कृतमालकवृक्षः; पक्षिमात्रम्; 'नागान् सर्पान् सुपर्णांश्च पितृणां च पृथग्गणान्'—इति मनुः (१।३७) । विष्णुः; शोभनवर्णविशिष्टे त्रि. । ३०

सुपर्णकेतुः पुं. [सुपर्णः गरुडः केतौ ध्वजे यस्य सः] विष्णुः; गरुडध्वजः । २२

सुपर्वा [न्] पुं. [सुष्ठु पर्व उत्सवो यस्य] देवता; अमरः; सुरः; बाणः; वंशः; पर्वं; धूमः; स्त्री. श्वेतदूर्वा; सुन्दरपर्वविशिष्टा । ४

सुप्रतीकः पुं. [शोभनाः प्रतीकाः अङ्गानि यस्य] ईशानदिग्गजः; 'मदपुटनिनदद्भिर्बोधितो राजहंसैः सुरगज इव गाङ्गं सैकतं सुप्रतीकः'—इति रघौ (५।७५) । शिवः; कामदेवः; साधुः; 'एवं धार्ष्ट्यान्युशति कुरुते मेहनादीनि वास्तौ, स्तेयोपायैर्विरचितकृतिः सुप्रतीको यथास्ते'—इति भागवते (१०।८।३१) । [शोभनः सुन्दरः प्रतीकः अङ्गम्] शोभनाङ्गं; तद्युक्ते त्रि. । 'भगवान् भागवतवात्सल्यतया सुप्रतीक आत्मानमपराजितं निजजनाभिप्रेतार्थं विधित्सया गृहीतहृदयः'—इति भागवते (५।३।२८) । १०४

सुप्रभा स्त्री. [सुष्ठु प्रभा यस्याः] अग्निजिह्वाविशेषः; सप्तार्चिषो जिह्वाभेदः; 'सुप्रभा पद्मरागाभा वारुण्यां दिशि संस्थिता'—इति तन्त्रसारः । शोभनदीप्तिः; वाकुची । ६८

सुभगः त्रि. [सुन्दरः भगः श्रीर्यस्य] सुदृश्यः; चक्षुष्यः; वल्लभः; दयितः; प्रियः; 'केवलोऽपि सुभगो नवाम्बुदः किं पुनस्त्रिदशचापलाञ्छितः'—इति रघौ (११।८०) । ३६७

सुमनाः [स्] पुं. [शोभनं मनो यस्य] देवता; पण्डितः; पूतिकरञ्जः; निम्बः; महाकरञ्जः; गोधूमः; शोभनचित्ते त्रि. । 'ततस्ते ब्राह्मणाः सर्वे बकं दाल्भ्यमपूजयन् । युधिष्ठिरे स्तूयमाने भूयः सुमनसोऽभवन्'—इति महाभारते (३।२६।२१) । स्त्री. [सुष्ठु मनो यस्याः] पुष्पं; (१८६) मालती; जाती; शतपत्री; 'स्त्रियां सुमनसो भूम्नि पुष्पे जातौ च भेदतः । विदुष्यपि यदा दृष्टस्तदा भेदेन शिष्यते'—इति व्याडिः । 'सुमनाः पुष्पमालत्योः स्त्रियां ना धीरदेवयोः'—इति मेदिनी । ४

सुमेधाः [स्] त्रि. [सुष्ठु मेधा यस्य] सुधीः; प्राज्ञः; सुबुद्धिः; 'इमे अङ्गिरसः सत्रमासतेऽद्य सुमेधसः'—इति भागवते (९।४।३) । ज्योतिष्मती । ६२०

सुमेरुः पुं. [सुष्ठु मिनोति क्षिपति ज्योतींषि इति । सु+मि+'मिपीभ्यां रुः' इति रु] पर्वतप्रभेदः; मेरुः; हेमाद्रिः; रत्नसानुः; सुरालयः; अमराद्रिः; भूस्वर्गः; शक्रक्रीडाचलः; हेमपर्वतः; त्रिदशालयः । १३६

सुरः पुं. [सुष्ठु राति ददात्यभीष्टमिति । सु+रा+क । यद्वा सुरति शोभते इति, षुर् प्रसवैश्वर्ययोः +'इगुपधेति' क । यद्वा सुनोतीति, षु अभिषवे+'सुसूधाग्-

गृधिभ्यः क्रन्' इति क्रन्] देवः; देवता; अमरः; 'चुकोप तस्मै स भृशं सुरश्रियः प्रसह्य केशव्यपरोपणादिव'—इति रघौ (३।५६)। सूर्यः; पण्डितः; स्वरः; 'लक्षणानि सुरास्तोमा निरुक्तं सुरपङ्क्तयः'—इति महाभारते (१३।८५।८१)। ४

सुरङ्गः पुं. [सुष्ठु रङ्गो यस्मात्] गर्तविशेषः; सन्धिः; नागरङ्गः; क्ली. हिङ्गुलं; पत्राङ्गम्। ७७१

सुरङ्गा स्त्री. [सु बहु रज्यतेऽस्यां रजसा। सु+रञ्ज रागे,'हलश्चेति' घञ्, 'चजोरिति' कुत्वम्, टाप्] तिर्यग्भूखातः; सन्धिः; कैवर्तिका। ७७१

सुरज्येष्ठः पुं. [सुरेषु ज्येष्ठः] ब्रह्मा; पितामहः। ६

सुरतम् क्ली. [सुष्ठु रतं रमणं यत्र] निधुवनं; मैथुनं; 'भवन्ति यत्रौषधयो रजन्यामतैलपूराः सुरतप्रदीपाः' —इति कुमारे (१।१०)। 'सुरते सात्त्विका भावाः सीत्काराः कुड्मलाक्षता। काञ्चीकङ्कणमञ्जीररवाधरनखक्षतिः'—इति कविकल्पलता। दयालौ त्रि.। क्रीडायुक्तः। ५६९

सुरतरुः पुं. [सुराणां देवानां तरुः वृक्षः] मन्दारः; पारिजातः; पारिजातकः; हरिचन्दनः; कल्पवृक्षः; सन्तानः; सुरपादपः। १३५

सुरपतिः पुं. [सुराणां पतिः] सुरेन्द्रः; सुरेशः; सुरेश्वरः; सुरोत्तमः; मघवा; इन्द्रः। ५२

सुरपर्णिका स्त्री. [सुरपर्णी+संज्ञायां कन्] पुन्नागः; वृक्षविशेषः। २०८

सुरपर्वतः पुं. [सुराणां पर्वतः] मेरुः; सुमेरुः; हेमाद्रिः। १३५

सुरभिः स्त्री. [सुष्ठु रभते रम्भते वा। सु+रभ्+इन्] गौः; अघ्न्या; माहेयी; बहुला; सौरभेयी; उस्रा; अर्जुनी; रोहिणी; अनडुही; अनड्वाही; शल्लकी; मातृभेदः; मुरा; रुद्रजटा; वनमालिका; तुलसी; पाची; पृथिवी; गौः; गोमाता; 'सुतां तदीयां सुरभेः कृत्वा प्रतिनिधिं शुचिः। आराधय सपत्नीकः प्रीता कामदुघा हि सा'—इति रघौ (१।८१)। 'गवामधिष्ठातृदेवी गवामाद्या गवां प्रसूः। गवां प्रधाना सुरभिः गोलोके सा समुद्भवा'—इति ब्रह्मवैवर्ते। २६८

सुरभिः त्रि. [सुष्ठु रभन्ते अत्र, सु+रभ्+इन्] श्रेष्ठः; सुगन्धिः; 'उपवेश्य तु तान् विप्रानासनेष्वजुगुप्सितान्। गन्धमाल्यैः सुरभिभिरर्चयेद्दैवपूर्वकम्'—इति मनुः (३।२०९)। धीरः; विख्यातः; कान्तः; 'निवर्त्य राजा दयितां दयालुस्तां सौरभेयीं सुरभिर्यशोभिः। पयोधरीभूतचतुःसमुद्रां जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्' —इति रघुः (२।२)। पुं. सुगन्धिः; चम्पकः; वसन्तर्तुः; जातीफलवृक्षः; शमीवृक्षः; कदम्बवृक्षः; कणगुग्गुलुः; गन्धतृणं; वकुलवृक्षः; रालः; सर्जरसः; चैत्रमासः; धीरः; पन्धफलः; क्ली. स्वर्णं; गन्धाश्मा; सुन्दरः; साधुगन्धः। ८००

सुरशत्रुः पुं. [सुराणां शत्रुः] सुरवैरी; असुरः; सुरविद्विट्; दानवः; दैत्यः; दैतेयः; पूर्वदेवः; शुक्रशिष्यः; पातालनिलयः; सुरारिः; सुरद्विट्। ५

सुरसद्म [न्] क्ली. [सुराणां सद्म] स्वर्गः; सुरलोकः; स्वः; स्वर्गलोकः सुरालयः; त्रिदशावासः; त्रिविष्टपं; त्रिदिवं; द्यौः; नाकः; अमर्त्यभुवनं; देवगृहम्; 'एत मोक्षं प्रयातेति वदन्त्यामिव दूरतः। वाताक्षिप्तसमुत्क्षिप्तैः सुरसद्मध्वजांशुकैः'—इति कथासरित्सागरे (९३।८३)। ३

सुरसरित् स्त्री. [सुराणां देवानां सरित् नदी] गङ्गा; सुरसिन्धुः; सुरापगा; सुरेश्वरी; सुरदीर्घिका; सुरनदी; सुरनिम्नगा; 'सुरसरिदिव तेजो वह्निनिष्ठ्यूतमैशम्'—इति रघौ (२।७५)। ३७३

सुरा स्त्री. [सु अभिषवे+क्रन् स्त्रियां टाप्। यद्वा सुष्ठु रायन्त्यनयेति। सु+रै शब्दे+'आतश्चोपसर्गे' इत्यङ, टाप्] मध्वासवः; शीधुः; प्रसन्ना; परिस्रुता; मदिरा; मदिष्ठा; कादम्बरी, स्वादुरसा; शुण्डा; गन्धोत्तमा; माधवकः; हाला; कल्यः; कश्यः; मद्यं; मैरेयं; कापिशायनं; माध्वीकम्; आसवः; परिस्रुत्; वारुणी; मधु; 'कृशानां सक्तमूत्राणां ग्रहण्यर्शोविकारिणाम्। सुरा प्रशस्ता वातघ्नी स्तन्यरक्तक्षयेषु च'—इति राजवल्लभः। 'सुरापाने विकलता स्खलनं वचने गतौ। लज्जामानच्युतिः प्रेमाधिक्यं रक्ताक्षता भ्रमः'—इति कविकल्पलता। ३२९

सुरुङ्गा स्त्री. [सुष्ठु रुज्यते भज्यते। सु+रुजो भङ्गे, घञ्, कुत्वं, नुमि पृषोदरादिः] सुरङ्गा; सन्धिला; सन्धिः; 'सेंध, सुरङ्ग' इति भाषा। 'ज्ञात्वा तु तद् गृहं सर्वमादीप्तं पाण्डुनन्दनाः। सुरुङ्गां विविशुस्तूर्णं मात्रा

सार्द्धमरिन्दमाः'—इति महाभारते (१।१४९।११)। ७७१

सुरेन्द्रजित् पुं. [सुरेन्द्रं देवराजं जितवानिति । सुरेन्द्र+जि+क्विप्, तुगागमश्च] विहङ्गराजः; गरुडः; गरुत्मान्; तार्क्ष्यः; सुपर्णीतनयः; सुपर्णः; वैनतेयः; पवनाशनाशः; कश्यपनन्दनः; इन्द्रजित्; सौपर्णेयः । ३०

सुवर्णम् क्ली. [शोभनो वर्णो यस्य] धातुविशेषः; स्वर्णं; कनकं; हिरण्यं; हेम; हाटकं; तपनीयं; शातकुम्भं; गाङ्गेयं; भर्मं; कर्वुरं; चामीकरं; जातरूपं; महारजतं; काञ्चनं; रुक्मं; कार्तस्वरं; जाम्बूनदम्; अष्टापदं; शातकौम्भं; कर्बुरं; कर्चुरं; रुग्मं; भद्रं; भूरि; पिञ्जरं; द्रविणं; गैरिकं; चाम्पेयं; भरुः; चन्द्रः; कलधौतम्; अभ्रकम्; अग्निबीजं; लोहवरम्; उद्धारकं; स्पर्शमणिप्रभवं; मुख्यधातु; उज्ज्वलं; कल्याणं; मनोहरम्; अग्निवीर्यम्; अग्निः; भास्करं; पिञ्जाननम्; अपिञ्जरं; तेजः; दीप्तम्; अग्निभं; दीप्तकं; मङ्गल्यं; सौमञ्जकं; भृङ्गारं; जाम्बवम्; आग्नेयं; निष्कम्; अग्निशिखम्; 'सुवर्णं शीतलं वृष्यं बल्यं गुरु रसायनम्। स्वादु तिक्तं च तुवरं पाके च स्वादु पिच्छिलम्। पवित्रं बृंहणं नेत्र्यं मेधास्मृतिमतिप्रदम् । हृद्यमायुष्करं कान्तिवाग्विशुद्धिस्थिरत्वकृत् । विषद्वयक्षयोन्मादत्रिदोषज्वरशोषजित् । बलं सवीर्यं हरते नराणां रोगव्रजं पोषयतीह काये। असौख्यकार्येव सदा सुवर्णमशुद्धमेतन्मरणं च कुर्यात् । असम्यङ्मारितं स्वर्णं बलं वीर्यं च नाशयेत् । करोति रोगान्मृत्युं च तद्धन्याद्यत्नतस्ततः'—इति भावप्रकाशः। हरिचन्दनं; स्वर्णगैरिकं; धनं; नागकेशरं; पुं.– क्ली. [सुष्ठु वर्णोऽस्य] हेम्नोऽक्षः; स अशीतिरक्तिकापरिमितस्वर्णः; विस्तः; कर्षपरिमाणम्; 'विद्यात् कर्षं तथा चापि सुवर्णं कवलग्रहम्'—इति गारुडे । पुं. [शोभनो वर्णो यस्य] स्वर्णकर्षः; यज्ञविशेषः; धुस्तूरः; कणगुग्गुलुः; सुष्ठुवर्णे त्रि.। 'वाससां सम्प्रदानेन स्वदारनिरतो नरः। सुवर्णश्च सुवेशश्च भवतीत्यनुशुश्रुमः'—इति महाभारते (१३।६८।३३)। १७३

सुवर्णकारः पुं. [सुवर्णं स्वर्णभूषणादिकं करोतीति । सुवर्ण+कृ+अण्] स्वर्णकारः; नाडिन्धमः; कलादः; मुष्टिकः; सुवर्णकृत्; सुवर्णकर्ता। ५८८

सुवासिनी स्त्री. [सुखेन वसतीति । सु+वस्+णिनि, ङीप्] किञ्चित्प्रौढा; 'सुवासिन्यां चिरण्टी स्याद् द्वितीयवयसि स्त्रियाम्'—इति रुद्रः। चिरिण्टी। ४८३

सुषमम् त्रि. [सुष्ठु समं सर्वं यस्मात्। 'सुविनिर्दुर्भ्यः सुपिसूतिसमाः' इति षत्वम्] शोभनं; सौम्यं; चारुः समम्। ६८९

सुषमा स्त्री. [सु शोभनं समं सर्वं यस्याः] परमा शोभा; 'जय जय महाराज प्राभातिकीं सुषमामिमां सफलयतमां दानादक्षणोर्दरालसपक्ष्मणोः'–इति नैषधे (१९।२)। ५६५

सुहृत् पुं. [सु शोभनं हृत् हृदयं यस्य] मित्रं; सखा; वयस्यः; स्निग्धः; 'सुहृदां हितकामानां यः शृणोति न भाषितम्। विपत्सन्निहिता तस्य स नरः शत्रुनन्दनः।' लग्नाच्चतुर्थस्थानम्; 'पातालं हिबुकं चैव सुहृदम्भश्चतुर्थकम्'—इति ज्योतिस्तत्त्वम्। 'शशिजः सुहृद्गृहगतः करोति चातुर्य्यहास्य धनवन्तं वचसामधिपः'—इति कोष्ठीप्रदीपः। महादेवः; महाभारते (१३।१७।९९)। ४२८

सूक्ष्मः त्रि. [सूच्+स्मन्] लेशः; लवः; श्लक्ष्णः; क्षुद्रः; दभ्रः; कणः; अणुः; किञ्चित्; मात्रं; तनु; स्तोकं; ह्रस्वः; अल्पं; त्रुटिः; 'अल्पे स्तोके क्षुल्लसूक्ष्मे क्षुल्लकं च कृशं तनु। दभ्रं खुल्लं खुल्लकं च स्त्रियां मात्रा त्रुटी कणा। पुमानणुर्लवो लेशः कणोऽपि च निगद्यते'—इति शब्दरत्नावली। क्ली. कैतवम्; अध्यात्मम्; 'तस्यार्थसूक्ष्माभिनिविष्टदृष्टेरन्तर्गतोऽर्थो रजसा तनीयान्'–इति भागवते (३।१८।१४)। अलङ्कारविशेषः; 'सूक्ष्मं पराशयाभिज्ञे त्वरसाकूतचेष्टितम्। मयि पश्यति सा केशैः सीमन्तमणिमावृणोत्'—इति चन्द्रालोकः। पुं. कतक वृक्षः। ६८८

सूक्ष्मदर्शी [न्] त्रि. [सूक्ष्मं पश्यतीति। सूक्ष्म+ दृश्+णिनि] सूक्ष्मदृष्टिः; कुशाग्रीयमतिः; अतिशयबुद्धिमान्; तत्कालधीः; प्रत्युत्पन्नमतिः; दूरदर्शी; 'न विदुर्यस्य भवनमादित्याः सूक्ष्मदर्शिनः। स कथं नरमात्रेण शक्यो ज्ञातुं सतां गतिः'—इति महाभारते (१३।१४।२३)। ३७३

सूचनम् क्ली. [सूच्+ल्युट्] गन्धनं; ज्ञापन सूचना; 'भङ्गिसूचनविधौ विशारदो नारदो मुनिरदर्शनं ययौ'—इति कथासरित्सागरे (१५।१४८)। ८७०

सूचना स्त्री. [सूच्+णिच्+युच्+टाप्] गन्धनं; सूचनं;

ज्ञापनम्; 'यत्र स्यादङ्क एकस्मिन्नङ्कानां सूचनाखिला। तदङ्कमुखमित्याहुर्बीजार्थख्यापकं च तत्'—इति साहित्यदर्पणे (६।३१२)। व्यधनं; दृष्टिः; अभिनयः। ८७०

सूचिकः पुं. [सूच्या जीवति यः] सौचिकः; सौचिः; तुन्नवायः; सूत्रभित्। ५९०

सूची स्त्री. [सीव्यतेऽनया। षिवु+'सिवेष्टेरू च' इति चट्, टेरूत्वं च] शललं; शलं; सीवनद्रव्यं; 'सूई' इति भाषा। 'यावद्धि सूच्यास्तीक्ष्णाया विध्येदग्रेण मारिष। तावदप्यपरित्याज्यं भूमेर्नः पाण्डवान् प्रति'—इति महाभारते(५।५८।१८)। आङ्गिकाभिनयविशेषः; अङ्गद्वारा चेष्टाकरणं; दृष्टिः; केतकीपुष्पं; व्यूहविशेषः; 'वराहमकराभ्यां वा सूच्या वा गरुडेन वा'--इति मनुः (७।१८७)। २३३

सूच्यम् त्रि. [सूच्+यत्] सूचनायोग्यं; सूचनार्हम्। ९४

सूतः पुं. [षू प्रेरणे ऐश्वर्ये प्रसवे च+क्त] प्रबोधकः; मागधः; वन्दिः; वैतालिकः; मङ्गलपाठकः; वन्दी; 'सूतात्मजाः सवयसः प्रथितप्रबोधं प्राबोधयन्नुषसि वाग्भिरुदारवाचः'—इति रघौ (५।६५)। पारदः; 'हतो हन्ति जराव्याधिं मूर्च्छितो व्याधिघातकः। बद्धः खेचरतां धत्ते कोऽन्यः सूतात् कृपाकरः'—इति वैद्यकरसेन्द्रसारसंग्रहः। सूर्यः; पुराणवक्ता; 'सूतः सूत्यां समुत्पन्नः सौत्येऽहनि पुराणवित्। तेषां यज्ञे पुनस्त्वेवमुत्पन्नौ सूतमागधौ'—इति वह्निपुराणे। ४३५

सूतः पुं.— सव्येष्ठः; सव्येष्ठा; सारथिः; नियन्ता; प्राजिता; यन्ता; क्षत्ता; दक्षिणस्थः; रथकुटुम्बी; सादी; नियामकः; चातुरिकः; प्रवेता; रथनागरः; 'स पूर्वतः पर्वतपक्षशातनं ददर्श देवं नरदेवसम्भवः। पुनः पुनः सूतनिषिद्धचापलं हरन्तमश्वं रथरश्मिसंयतम्'—इति रघौ (३।४२)। त्वष्टा; क्षत्रियाद् ब्राह्मणीसुतः; 'क्षत्रियाद् विप्रकन्यायां सूतो भवति जातितः'—इति मनुः (१०।११)। अश्वसारथ्यमेवैतेषां जीविका। 'सूतानामश्वसारथ्यमम्बष्ठानां चिकित्सितम्'—इति मनुः (१०।४७)। पुं.– क्ली. [सू+क्त] पारदः; 'रसोनकरसैः सूतो नागवल्लीदलोत्थितैः। त्रिफलायास्तथा क्वाथै रसो मर्द्यः प्रयत्नतः। ततस्तेभ्यः पृथक्कृत्वा सूतं प्रक्षाल्य काञ्जिकैः। सर्वदोषविनिर्मुक्तं योजयेद्रसकर्मसु'—इति वैद्यकरसेन्द्रसारसंग्रहः। त्रि. प्रसूतः; प्रेरितः। ४४९

सूतिकाभवनम् क्ली. [सूतिकाया भवनम्] प्रसवगृहं; सूतिकागारं; सूतिकागृहं; प्रसवालयः; अरिष्टं; सूतकागृहं; सूतीगृहं; सूतिगृहं; सूतिकागेहं; सूतिकावासः; अरिष्टगेहम्। ४९९

सूतिमासः पुं. [सूतेः प्रसवस्य मासः] प्रसवमासः; वैजननः; सूतीमासः; 'सूतिमासो वैजननो नवमो दशमोऽपि च'--इति जटाधरः। ४९९

सूत्रम् क्ली. [सूत्र्यतेऽनेनेति। सूत्र ग्रन्थने+णिच्+'एरच्' इत्यच्। यद्वा षिवु तन्तुसन्ताने+'षिविमुच्योष्टेरू च' इति ष्ट्रन् टेरू च] वस्त्रारम्भकं; तन्तुः; सूत्रतन्तुः; 'अथवा कृतवाग्द्वारे वंशेऽस्मिन्पूर्वसूरिभिः। मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः'—इति रघौ (१।४)। यज्ञसूत्रम्; 'ब्राह्मण्यचिह्नमेतावत् केवलं सूत्रधारणम्'–इति महानिर्वाणे (१।४८)। शास्त्रादिसूचनाग्रन्थः; 'स्वल्पाक्षरमसन्दिग्धं सारवद्विश्वतोमुखम्। अस्तोभमनवद्यं च सूत्रं सूत्रविदो विदुः।' कारणं; निमित्तम्; 'त्वमेव धर्मार्थदुघाभिपत्तये दक्षेण सूत्रेण ससर्जिथाध्वरम्'—इति भागवते (४।६।४३)। ५४९

सूदः पुं. [सूदयति रसानिति। सूद् क्षरणे+णिच्+अच्] आरालिकः; सूपकारः, वल्लवः; पाककर्त्ता; आसन्धिकः; औदनिकः; गुणः; पाचकः; पाकुकः; भक्ष्यङ्कारः; 'तं दृष्ट्वा नित्यमुद्युक्तमिष्वस्त्रं प्रति फाल्गुनम्। आहूय वचनं द्रोणो रहः सूदमभाषत'—इति महाभारते (१।१३४।२१)। सूपः; सारथ्यम्; अपराधः; लोध्रः; पापम्; 'भक्ष्यं भोज्यं च पेयं च चोष्यं लेह्यमथापि वा। उपाकृतं नरैस्तत्र कुशलैः सूदकर्मणि'—इति महाभारते(१।१२८।३४)। ४३१

सूदनम् क्ली. [सूद्+ल्युट्] हननं; मारणं; हिंसा; 'वैष्णवास्त्रं प्रयच्छास्मै वधार्थं शम्बरस्य च। अभेद्यं कवचं तस्य प्रयच्छासुरसूदने'—इति हरिवंशे (१६३।४२)। अङ्गीकरणं; निःक्षेपणं; तद्वति त्रि। 'तत्र दिव्यं धनुर्दृष्ट्वा नरस्य भगवानपि। चिन्तयामास तच्चक्रं विष्णुर्दानवसूदनम्'—इति महाभारते (१।१९।२०)। ४७७

सूदाध्यक्षः पुं. [सूदानां सूपकाराणामध्यक्षः] पौरोगवः; पुरोगमः; पाकशालाध्यक्षः; 'अनाहार्यः शुचिर्दक्ष-

श्चिकित्सितविदांवरः। सूदशास्त्रविशेषज्ञः सूदाध्यक्षः प्रशस्यते'--इति मात्स्ये। ४३१

सूना स्त्री. [सूयते स्मेति। सूङ्+क्त+टाप्। सुञ् अभिषवे+'सुञो दीर्घश्च' इति न, दीर्घश्च धातोः] वधस्थानं; घातनस्थानं; गलशुण्डिका; मृगादिमांसविक्रयः; मृगपक्षिवधस्थानम्; 'अभ्यर्थितस्तदा तस्मै स्थानानि कलये ददौ। द्यूतं पानं स्त्रियः सूना यत्राधर्मश्चतुर्विधः'—इति भागवते (१।१७।३८)। जाता। ५९५

सूनुः पुं. [सूयते इति। सू+'सुवः कित्' इति नु, स च कित्] सन्ततिः; आत्मजः; तनुजः; पुत्रः; प्रसूतिः; सुतः; तुकः; तोकः; तनयः; नन्दनः; अपत्यम्, 'सूनुः सुनृतवाक् स्रष्टुर्विससर्जोर्जितश्रियम्'—इति रघुः (१।९५)। अनुजः; सूर्यः; अर्कवृक्षः। ४९७

सूनुः, सूनूः स्त्री. [सू+नु, वा ऊङ्] कन्या। ४९७

सूनृतम् क्ली. [सुनृत्यत्यनेनेति। सु+नृत्+घञर्थे क। उपसर्गस्य दीर्घः] सत्यप्रियवाक्यम्; 'भाषते सूनृतं स्निग्धमनुरक्ता नितम्बिनी'—इति साहित्यदर्पणे (३।१५।५)। मङ्गलं; तद्वति त्रि.। 'प्रणम्य मूर्ध्नावहितः कृताञ्जलिर्नत्वा गिरा सूनृतयान्वपृच्छत्'—भागवते (१।१९।३१)। १४१

सूपकारः पुं. [सूपं व्यञ्जनविशेषं करोतीति। सूप+कृ+अण्] पाककर्त्ता; वल्लवः; आरालिकः; आन्धसिकः; सूदः; औदनिकः; गुणः; पाचकः; पाकुकः; भक्ष्यङ्कारः; 'इङ्गिताकारतत्त्वज्ञो बलवान् मिष्टपाचकः। शूरश्च कठिनश्चैव सूपकारः स उच्यते'—इति चाणक्यः। ४३१

सूरः पुं. [सुते जगदिति। सू+'सुसूधाञ्गृधिभ्यः क्रन्' इति क्रन्] सूर्यः; 'सूरादश्वं वसवो निरतष्ट'--इति ऋग्वेदे (१।१६३।२)। अर्कवृक्षः; वृत्ताहंत्तिपविशेषः; पण्डितः। ३५

सूरता स्त्री.— अचण्डी गौः; विनम्रा धेनुः। २७०

सूरिः पुं. [सूते सद्वाक्यानीति। सू+'सूङः क्रिः' इति क्रि] पण्डितः; प्राज्ञः; 'जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्, तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत् सूरयः'—इति भागवते (१।१।१)। यादवः; सूर्यः। ३१२

सूरी [न्] पुं. [सूरः सूर्यः उपास्यतया अस्त्यस्येति। सूर+इनि] पण्डितः; प्राज्ञः; धीरः; अभिरूपः। ३३२

सूर्मी स्त्री. [शोभना ऊर्मिः विद्यते यस्याम्। ङीष्] शूर्मी; शूर्म्मिः; शूर्मिका; लौहप्रतिमा; लोहमयी मूर्तिः। १३१

सूर्यः पुं. [सरति आकाशे, सुवति कर्मणि लोकं प्रेरयति वा। सृ गतौ, सू प्रेरणे वा+'राजसूयसूर्यमृषोद्येति' क्यप् प्रत्ययेन साधुः] ग्रहविशेषः; सूरः; अर्यमा; आदित्यः; द्वादशात्मा; दिवाकरः; भास्करः; अहस्करः; ब्रध्नः; प्रभाकरः; विभाकरः; भास्वान्; विवस्वान्; सप्ताश्वः; हरिदश्वः; उष्णरश्मिः; विकर्तनः; अर्कः; मार्तण्डः; मिहिरः; अरुणः; पूषा; द्युमणिः; तरणिः; मित्रः; चित्रभानुः; विरोचनः; विभावसुः; ग्रहपतिः; त्विषाम्पतिः; अहःपतिः; भानुः; हंसः; सहस्रांशुः; तपनः सविता; रविः; शूरः; भगः; वृध्नः; पद्मिनीवल्लभः; हरिः; दिनमणिः; चण्डांशुः; सप्तसप्तिः; गभस्तिमान्; अंशुमाली; काश्यपेयः; खगः; भानुमान्; लोकलोचनः; पद्मबन्धुः; ज्योतिष्मान्; अव्ययः; तापनः; चित्ररथः; खमणिः; दिवामणिः; गभस्तिहस्तः; हेलिः; पतङ्गः; अर्चिः; दिनप्रणीः; वेदोदयः; कालकृतः; ग्रहराजः; तमोनुदः; रसाधारः; प्रतिदिवा; ज्योतिःपीथः; इनः; कर्मसाक्षी; त्रयीतपः; प्रद्योतनः; खद्योतः; लोकबान्धवः; पद्मिनीकान्तः; अंशुहस्तः; पद्मपाणिः; हिरण्यरेताः; पीतः; अद्रिः; अगः; हरिवाहनः; अम्बरीषः; धामनिधिः; हिमारातिः; गोपतिः; कुञ्जारः; प्लवगः; सूनुः; तमोपहः; गभस्तिः। ३५

सूर्यकान्तः पुं. [सूर्यः कान्तो यस्य। सूर्यस्य कान्तः प्रियो वा] स्फटिकः; सूर्यमणिः; सूर्याश्मा; दहनोपलः; तपनमणिः; तापनः; रविकान्तः; दीप्तोपलः; अग्निगर्भः; ज्वलनाश्मा; अर्कोपलः; 'ज्योतिरिन्धननिपाति भास्करात् सूर्यकान्त इव ताडकान्तकः'—इति रघौ (११।२१)। पुष्पवृक्षविशेषः; सूर्यमणिः; पुष्परक्तः; पचत्पुटः। १७६

सृक्क [न्] क्ली. [सृजति लालादीनिति। सृज्+बाहुलकात् कनिन्] सृक्कणी (द्विवचने ङीबन्ते च); ओष्ठयोः प्रान्तभागः; ओष्ठप्रान्तभागः; 'महासृक्कायवोभितो नृसिंहनखाग्रवत्'—इति [illegible]।

'भयात्संस्तम्भितभुजः सृक्कणी लेलिहन्मुहुः—इति महाभारते (३।१२५।२)। ५२०

सृक्कम् क्ली.— सृक्कणी; सृक्व; सृक्किणी; सृक्कि; सृक्वं; सृक्वणी; सृक्विणी; सृक्वि; ओष्ठपर्यन्तभागः; 'जन्तवश्चात्र मूर्च्छन्ति सृक्कस्योभयतो मुखात्'—इति सुश्रुते (२।१६)। 'सृक्के द्वे चैव विज्ञेये चत्वारिंशच्च वक्त्रजाः।' ५२०

सृक्वम् क्ली.— ओष्ठप्रान्तभागः; सृक्कम्। ५२०

सृक्व [न्] क्ली. [सृजति लालादीनिति। सृज्+वनिप्] ओष्ठप्रान्तभागः; 'प्रान्तावोष्ठस्य सृक्वणी'—इत्यमरः। 'स्मितस्य सम्भावय सृक्वणा कणान्'–इति नैषधे। ५२०

सृक्वि क्ली.— ओष्ठप्रान्तभागः; सृक्कम्। ५२०

सृणिः स्त्री. [सृ+नि, णत्वञ्च] अङ्कुशः; 'आरक्षमग्नमवमत्य सृणिं सिताग्रमेकः पलायत जवेन कृतार्तनादः'—इति माघे (५।५)। पुं. [सरतीति। सृ+ 'सृविषिभ्यां कित्' इति नि, स च कित् णत्वं च] शत्रुः। २२४

सृणी स्त्री. [सृणि+कृदिकारादिति ङीष्] अङ्कुशः। २२४

सेतुः पुं. [सिनोति बध्नाति जलमिति। सिञ् बन्धने+ 'सितनिगमिमसीति' तुन्] वरुणः; वरुणवृक्षः; सेतुकः; 'वरुणो वराणः सेतुस्तिक्तशाकोऽग्निदीपनः। वरुणः पित्तलो मेदः श्लेष्मकृच्छ्राश्ममारुतान्। निहन्ति गुल्मवातास्रक्रिमींश्चोष्णोऽग्निदीपनः। कषायो मधुरस्तिक्तः कटुको रूक्षको लघुः'—इति भावप्रकाशः। क्षेत्रादेरालिः; आली; पूरणः; पिण्डलः; पङ्कारः; जङ्गालः; सञ्चरः; पिण्डिलः; धरणः; 'सेतुप्रदानादिन्द्रस्य लोकमाप्नोति मानवः। प्रपाप्रदानाद्वरुणलोकमाप्नोत्यसंशयम्। संक्रमाणां तु यः कर्ता स स्वर्गं तरते नरः। स्वर्गलोके च निवसेदिष्टकासेतुकृत् सदा'–इति मठादिप्रतिष्ठातत्त्वम्। प्रणवः; 'मन्त्राणां प्रणवः सेतुस्तत्सेतुः प्रणवः स्मृतः। स्रवत्यनोङ्कृतं पूर्वं परस्ताच्च विशीर्यते। नमस्कारो महामन्त्रो देव इत्युच्यते सुरैः। द्विजातीनामयं मन्त्रः शूद्राणां सर्वकर्मणि। अकारं चाप्युकारं च मकारं च प्रजापतिः। वेदत्रयात् समुद्धृत्य प्रणवं निर्ममे पुरा। स उदात्तो द्विजातीनां राज्ञां स्यादनुदात्तकः। स्वरितश्चोरुजातानां मनसापि तथा स्मरेत्। चतुर्दशस्वरो योऽसौ सेतुरीकारसंज्ञकः। स चानुस्वारचन्द्राभ्यां शूद्राणां सेतुरुच्यते। निःसेतुश्च यथा तोयं क्षणान्निम्नं प्रसर्पति। मन्त्रस्तथैव निःसेतुः क्षणात् क्षरति यज्वनाम्। तस्मात् सर्वेषु मन्त्रेषु चतुर्वर्णा द्विजातयः। पार्श्वयोः सेतुमादाय जपकर्म समारभेत्। शूद्राणामादिसेतुर्वा द्विसेतुर्वा यथेच्छतः। द्वे सेतू वः समाख्याताः सर्वदैव द्विजातयः'—इति कालिकापुराणे। ६७१

सेना स्त्री. [सिनोति शत्रूनिति। षिञ् बन्धने+'कृवृजृषीति' न, स च नित्+टाप्] चतुरङ्गबलं; ध्वजिनी; वाहिनी; पृतना; अनीकिनी; चमूः; वरूथिनी; बलं; सैन्यं; चक्रम्; अनीकं; वाहना; पूतना; गुल्मिनी; वरचक्षुः; 'सेना परिच्छदस्तस्य द्वयमेवार्थसाधनम्। शास्त्रेष्वकुण्ठिता बुद्धिर्मौर्वी धनुषि चातता'—इति रघौ (१।१९)। ४५७

सेनाङ्गम् क्ली. [सेनाया अङ्गम्] हस्त्यश्वरथपदातीनां समूहः; 'हस्त्यश्वरथपादातं सेनाङ्गं स्याच्चतुष्टयम्'—इत्यमरः। 'सेनाङ्गेषु नृपाणां गृहतरुशैलेषु चापि दशानाम्'—इति बृहत्संहितायाम् (११।४२)। ८६६

सेनानीः पुं. [सेनां नयतीति। सेना+नी+'सत्सूद्विषेति' क्विप्] कार्तिकेयः; अग्निभूः; गुहः; स्कन्दः; सेनापतिः; 'अथैनमद्रेस्तनया शुशोच सेनान्यमालीढमिवासुरास्त्रैः'—इति रघौ (२।३७)। वाहिनीपतिः (४।३३); 'स तु कामाग्निसंतप्तः सुदेष्णामभिगम्य वै। प्रहसन्निव सेनानीरिदं वचनमब्रवीत्'—इति महाभारते (४।२।६)। १९

सेवकः त्रि. [सेवते इति, षेवृ सेवने+ण्वुल्] अनुचरः; अनुगः; अनुजीवी; भृत्यः; 'पूर्वेण सलिलपूर्णां करोति वसुधां समागतो दैत्यः। पश्चात् कर्षकसेवकबीजविनाशाय निर्दिष्टः'—इति बृहत्संहितायाम् (५।३४)। आश्रयिता; 'दृढव्रतः सत्यसन्धो ब्रह्मण्यो वृद्धसेवकः। शरण्यः सर्वभूतानां मानदो दीनवत्सलः'—इति भागवते (४।१६।१६)। पुं. [सेवते इति, सेव्+ण्वुल्] प्रसेवकः। ४२८

सेवा स्त्री. [षेवृ सेवने+'गुरोश्च हलः' इत्य, टाप्] वरिवस्या; परिचर्या; शुश्रूषा; उपासना; परीष्टिः; भक्तिः; उपास्तिः; प्रसादना; आराधना; उपचारः; सेवनं; श्ववृत्तिः; 'सत्यानृतं च वाणिज्यं तेन चैवापि

जीव्यते। सेवा श्ववृत्तिराख्याता तस्मात् तां परिवर्जयेत्'-इति मनुः (४।६)। उपभोगः; आश्रयणम्; 'वेदाभ्यासस्तपो ज्ञानमिन्द्रियाणां च संयमः। अहिंसा गुरुसेवा च निःश्रेयसकरं परम्'—इति मनुः (१२।८७)। १२९

सैंहिकेयः पुं. [सिंहिकाया अपत्यं पुमानिति। सिंहिका+ढक्] सैंहिकः; राहुः; स्वर्भानुः; तमः; विधुन्तुदः; 'ध्रियते यावदेकोऽपि रिपुस्तावत् कुतः सुखम्। पुरः क्लिश्नाति सोमं हि सैंहिकेयोऽसुरद्विषाम्'—इति माघे (२।३५)। ४९

सैकतम् क्ली. [सिकताः सन्त्यत्रेति। सिकता+अण्] बालुकामयतटं; पुलिनं; द्वीपम्; 'मन्दाकिनी सैकतवेदिकाभिः सा कन्दुकैः कृत्रिमपुत्रकैश्च। रेमे मुहुर्मध्यगता सखीनां क्रीडारसं निर्विशतीव बाल्ये'—इति कुमारे (१।२९)। त्रि. सिकतामयः; सिकतिलः; सिकतावान्; 'शैली दारुमयी लौही लेप्या लेख्या च सैकती। मनोमयी मणिमयी प्रतिमाष्टविधा स्मृता'—इति भागवते (११।२८।१२)। ६७०

सैंधवी स्त्री.— रागिणीविशेषः। १०६ अ

सैन्धवः पुं. [सिन्धुरभिजनोऽस्येति। सिन्धु+'सिन्धुतक्षशिलादिभ्योऽणञौ' इति अण्] घोटकविशेषः; सिन्धुपारजः; स तु सिन्धोरदूरभवः; 'स एकदा महाराज! विचरन् मृगयां वने। वृतः कतिपयामात्यैरश्वमारुह्य सैन्धवम्'—इति भागवते (९।१।२३)। सिन्धुदेशाधिपतिः जयद्रथः; 'यदा द्रोणः कृतवर्मा कृपश्च कर्णो द्रौणिर्मद्रराजश्च शूरः। अमर्षयन् सैन्धवं वध्यमानं तदा नाशंसे विजयाय सञ्जय'—इति महाभारते (१।१।१९६)। सिन्धुदेशोत्पन्नमात्रे त्रि.। 'हारहूणांश्च चीनांश्च तुखारान् सैन्धवांस्तथा'—इति महाभारते (३।५१।२४)। ४३९

सैन्धवम् क्ली.-पुं. [सिन्धौ समुद्रतीरे सिन्धुदेशे वा भवम्। सिन्धु+'अणवौ च' इति अण्] लवणविशेषः; स तु सिन्धुनद्युपलक्षितदेशोद्भवः; शीतशिवं; माणिमन्थं; सिन्धुजं; वशिरं; सिन्धुदेशजं; माणिबन्धं; शितशिवं; नादेयं; शिवं; सिद्धं; शिवात्मजं; पथ्यम्; 'सैन्धवं लवणं वृष्यं चक्षुष्यं दीपनं रुचि। पूतं स्वादु त्रिदोषघ्नं व्रणदोषविबन्धजित्। सैन्धवं द्विविधं ज्ञेयं सितं रक्तमिति क्रमात्। रसवीर्यविपाकेषु गुणाढ्यं कथितं सितम्'—इति राजनिर्घण्टः। ६१४

सैन्यम् क्ली. [सेना एव, चतुर्वर्णादित्वात् ष्यञ्] सेना; पृतना; ध्वजिनी; पताकिनी; वाहिनी; बलं; चक्रं; चमूः; वरूथिनी; अनीकिनी; अनीकम्; 'हतशेषं ततः सैन्यं दृष्ट्वा चण्डं निपातितम्। मुण्डं च सुमहावीर्यं दिशो भेजे भयातुरम्'—मार्कण्डेये (८७।२१)। ४५७

सैन्यः पुं. [सेनां समवैतीति। सेना+'सेनाया वा' इति ण्य] सेनासमवेतः; 'सेना यत्र तत्र ये समवेता एकदेशीभूतास्ते सैन्याः सैनिकाश्च'–इति भरतः। 'सैन्यं क्लीबे बलेंऽशे ना समवेते तु वाच्यवत्'—इति मेदिनी। ४५७

सैरन्ध्री स्त्री. [स्वैरं स्वातन्त्र्यं धरति। स्वैर+धृ+मूलविभुजादित्वात् क, पृषोदरादित्वात् साधुः। गौरादित्वाद् ङीष्] गन्धकारिका; सैरिन्ध्री; अन्यवेश्मस्था स्वतन्त्रा शिल्पजीविनी; 'सैरन्ध्रीमभिजानीष्व सुनन्दे देवरूपिणीम्। वयसा तुल्यतां प्राप्ता सखी तव भवत्वियम्'—इति महाभारते (३।६५।५१)। द्रौपदी; वर्णसङ्करसम्भूतस्त्री; 'अगम्यागमनाच्चैव जायते वर्णसङ्करः। बाह्यानामनुजायन्ते सैरन्ध्र्यां मागधेषु च। प्रसाधनोपचारज्ञमदासन्दासजीवनम्'—इति महाभारते (१२।४८।१९)। ४९२

सैरिन्ध्री स्त्री [स्वैरं स्वाच्छन्द्यं धरतीति। स्वैर+धृ+मूलविभुजादित्वात् क। पृषोदरादित्वात् साधुः, गौरादित्वाद् ङीष्] गन्धकारिका; सैरन्ध्री; परवेश्मस्था स्ववशा शिल्पकारिका; सैरन्धी; सैरन्धिः; 'वासश्च परिधायैकं कृष्णं सुमलिनं महत्। कृत्वा वेशं हि सैरिन्ध्र्याः कृष्णा च व्यचरत् तदा'—इति महाभारते (४।८।२)। वर्णसङ्करसम्भूतस्त्री; महल्लिका; द्रौपदी; 'यथा सैरिन्ध्रीदोषेण न ते राजन्निदं पुरम्। विनाशमेति वै क्षिप्रं तथा नीतिर्विधीयताम्'—इति महाभारते (४।२३।५)। ४९२

सैरिभः पुं. [सीरे लाङ्गलवहने इभ इव। शकन्ध्वादित्वात् साधुः। ततः स्वार्थे अण्] महिषः; रक्ताक्षः; कासरः; लुलायः; लुलापः; स्वर्गः। २२७

सोत्प्रासम् क्ली. [उत्प्रासेन आधिक्येन सह वर्तमानम्] सोल्लुण्ठं; सोल्लुण्ठनं; स्तुतिपूर्वकदुर्वादः; व्यङ्ग्योक्तिः; प्रियावाक्यम्; 'सोल्लुण्ठनं तु सोत्प्रासं चटु चाटु प्रियोदितम्'—इति शब्दरत्नावली। पुं. सशब्दहास्यम्;

अट्टहासः; महाहासः; प्रहासः; 'सोत्प्रास आच्छुरित-कमवच्छुरितकं तथा। अट्टहासो महाहासो हासः प्रहास इत्यपि'—इति शब्दरत्नावली। १४९

सोत्प्रासहसितम् क्ली. [उत्प्रासेन सहितं यद् हसितम्] उपहसितम्। ७३१

सोदरः पुं. [सह समानम् उदरं यस्य। 'सहस्य सः'] समानोदर्यः; सोदर्यः; सगर्भः; सहोदरः; 'भार्या पुत्रश्च दासश्च शिष्यो भ्राता च सोदरः। प्राप्तापराधास्ताड्याः स्यू रज्वा वेणुदलेन वा'—इति मनुः (८।२२९)। स्त्री. सोदरा; सहोदरा भगिनी। ५०८

सोदर्यः पुं. [समाने उदरे शयितः। सोदर+'सोदराद् यः' इति य] सहोदरः; सोदरः; समानोदर्यः; सगर्भः; 'स हत्वा लवणं वीरस्तदा मेने महौजसम्। भ्रातुः सोदर्यमात्मानमिन्द्रजिद्वधशोभिनः'—इति रघौ (१५। २६)। ५०८

सोपहासः त्रि.— सोल्लुण्ठः; सोत्प्रासं; सोल्लुण्ठनं; प्रियावाक्यं; व्यङ्ग्योक्तिः; स्तुतिपूर्वकदुर्वाक्यम्। १४९

सोपानम् क्ली. [उपानमुपरि गमनं तेन सह विद्यमानम्] आरोहणं; निःश्रेणिः; निःश्रेणी; निःश्रयणी; निःश्रयिणी; अधिरोहिणी; निश्रेयिणी; 'आरोहणं च सोपानं पैठा इति समाह्वये। सोपाने काष्ठघटिते निःश्रेणिस्त्वधिरोहिणी। निःश्रेणी स्यान्निःश्रयणी तथा निःश्रेयिणीत्यपि'—इति शब्दरत्नावली। 'मध्येन सा वेदिविलग्नमध्या बलित्रयं चारु बभार बाला। आरोहणार्थं नवयौवनेन कामस्य सोपानमिव प्रयुक्तम्'—इति कुमारे (१।२९)। ३०१

सोमः पुं. [सूते अमृतमिति। षू प्रसवे+'अर्तिस्तुसुहुसृति' मन्] चन्द्रः; चन्द्रमाः; इन्दुः; कुमुदबान्धवः; 'द्विजानां वीरुधां चैव नक्षत्रग्रहयोस्तथा। यज्ञानां तपसां चैव सोमं राज्येऽभ्यषेचयत्'—इति हरिवंशे (४।२)। कर्पूरः; वानरः; कुबेरः; यमः; वायुः; वसुभेदः; 'आपो ध्रुवश्च सोमश्च धरश्चैवानिलोऽनलः। प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ कीर्तिताः'—इति मात्स्ये (५।२१)। जलं; सोमलतौषधिः; 'ब्रह्मादयोऽसृजन् पूर्वममृतं सोमसंज्ञितम्। जरामृत्युविनाशाय विधानं तस्य वक्ष्यते'—इति सुश्रुते। 'सोमनामौषधिराजः पञ्चदशपर्णः स सोम इव हीयते वर्द्धते च'—इति चरकः। शिवः; दीधितिः; दिव्यौषधिः; सोमलतारसः; 'मुन्यन्नानि पयः सोमो मांसं यच्चानुपस्कृतम्। अक्षारलवणं चैव प्रकृत्या हविरुच्यते'—इति मनुः (३।२५७)। अमृतं; पर्वतविशेषः। ४२

सोमपः पुं. [सोमं पिबतीति। सोम+पा+क] यागे पीतसोमलतारसः; सोमपीती; सोमपाः; 'त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते'—इति गीतायाम् (९।२०)। ३९१

सोमपाः पुं. [सोमं पिबतीति। सोम+पा+क्विप्] यागे सोमलतारसपानकर्ता; सोमरसपानशीले त्रि.। 'तत्श्रद्धयाक्रान्तमतिः पितृदेवव्रतः पुमान्। गत्वा चान्द्रमसं लोकं सोमपाः पुनरेष्यति'—इति भागवते (३।३२।३)। ३९१

सोल्लुण्ठः त्रि. [उल्लुण्ठेन सह वर्तमानः] सोल्लुण्ठनः; सोत्प्रासः; सोपहासः; स्तुतिपूर्वकदुर्वादः; व्यङ्ग्योक्तिः; 'दुर्वादः स्यादुपालम्भस्तत्र यः स्तुतिपूर्वकः। सोल्लुण्ठस्तु सनिन्दस्तु यस्तत्र परिभाषणम्'—इति जटाधरः। १४९

सौगन्धिकम् क्ली. [सुगन्धोऽस्त्यस्येति। सुगन्ध+ठन् ततः स्वार्थे अण्] कह्लारं; श्वेतपुष्पवृक्षविशेषः; कत्तृणं; सौगन्धम्; 'सौगन्धिकं च सौगन्धं रामकर्पूरके तृणे'—इति शब्दरत्नावली। 'कत्तृणं रौहिषं देवजग्धं सौगन्धिकं तथा। भूतिकं व्यामपौरं च श्यामकं धूमगन्धिकम्'—इति भावप्रकाशः। पद्मरागमणिः; नीलोत्पलम्; 'इन्दीवरं कुवलयं पद्मं नीलोत्पलं स्मृतम्। सौगन्धिकं शतदलमब्जं कमलमुच्यते'—इति गारुडे। 'अपश्यत्तत्र पाञ्चाली सौगन्धिकमनुत्तमम्। अनिलोढमितो नूनं सा बहूनि परीप्सति'—इति महाभारते (३।१५४। २)। पुं. गन्धकः; सुगन्धव्यवहारी; 'गन्धी' इति भाषा। श्लेष्मनिमित्तकक्रिमिविशेषः; 'तेषां त्रिविधानां श्लेष्मनिमित्तानां क्रिमीणां नामानि अन्नादा उदरादा हृदयादाश्चुरवो दर्भपुष्पाः सौगन्धिका महागुदाश्च'—इति चरकः। ६८१

सौचिकः पुं. [सूच्या जीवतीति। सूची शिल्पम् अस्य वा। सूची+ठक्] सूचीकर्मोपजीवी; तुन्नवायः; सूचिकः; सौचिः; सूत्रभित्; 'दर्जी' इति भाषा। ५९०

सौदामनी स्त्री. [सुदामा मेघः पर्वतो वा तेन एकदिक्।

सुदामन्+'तेनैकदिक्' इति अण्] विद्युत्; शम्पा; चपला; क्षणिका; शतह्लदा; ह्लादिनी; तडित्; सौदामिनी; सौदाम्नी; अचिरांशुः; ऐरावती; [सुदामा ऐरावतः तस्य स्त्री ऐरावती, सौदामनी] 'खेऽभ्रं जगाम काञ्चनसरसमसौदामनीलताधामास्तम् । कुवलयमयमिव सरजः सरसमसौदामनीलताधामास्तम्'—इति हरिप्रबोधयमकात् । अप्सरोभेदः; विद्युद्भेदः; 'एवं कृष्णमतेर्ब्रह्मन्नासक्तस्यामलात्मनः। कालः प्रादुरभूत् काले तडित् सौदामनी यथा'—इति भागवते (१।६। २८)। ६०

सौदामिनी स्त्री.— विद्युत्; सौदाम्नी; सौदामनी; ऐरावती; 'नष्टं धनुर्बलभिदो जलदोदरेषु सौदामिनी स्फुरति नाद्य वियत्पताका'–इति ऋतुसंहारे (३।१२)। तडिद्भेदः; 'तत्र स्म राजते भैमी सर्वाभरणभूषिता। सखीमध्येऽनवद्याङ्गी विद्युत् सौदामिनी यथा'—इति महाभारते (३।५३।१२)। अप्सरोभेदः; देशविशेषः।६०

सौनिकः पुं. [सूनया पश्वादिवधेन चरतीति। सूना+ठक्] पशुपक्षिमांसविक्रयकर्ता; वैतंसिकः; मांसिकः; कौटिकः; शौनिकः; 'दश सूनासहस्राणि यो वाहयति सौनिकः। तेन तुल्यः स्मृतो राजा घोरस्तस्य प्रतिग्रहः'—इति मनुः (४।८६)। ५९५

सौप्तिकम् क्ली. [सुप्तौ सुप्तिकाले भवम्। सुप्ति+ठञ्] रात्रियुद्धं; निशारणं; रात्रिमारणम्; अवस्कन्दः; प्रपातः; 'अहन्तु कदनं कृत्वा शत्रूणामद्य सौप्तिके। ततो विश्रमिता चैव स्वप्ता च विगतज्वरः'—इति महाभारते (१०।४।३३)। महाभारतीयपर्वविशेषः; 'आदिः सभावनविराटमथोद्यमश्च भीष्मो गुरू रविजमद्रजसौप्तिकं च। स्त्रीपर्व शान्तिरनुशासनमश्वमेधव्यासाश्रमो मुषलयानदिवावरोहः'—इति महाभारतटीका। सुप्तसम्बन्धिनि त्रि.। ४५२

सौम्यः पुं. [सोमस्य चन्द्रस्य अपत्यं पुमान्। सोम+ष्यञ्] बुधग्रहः; रौहिणेयः; चान्द्रमसायनः; चान्द्रमसायनिः; 'पश्यन् ग्रस्तं सौम्यो घृतमधुतैलक्षयाय राज्ञां च'—इति बृहत्संहितायाम् (५।६०)। [सोम इव सोम्यः, ततः प्रज्ञाद्यण्] विप्रः; उडुम्बरवृक्षः; वृषकर्कटकन्यावृश्चिकमकरमीनराशयः; 'क्रूरोऽथ सौम्यः पुरुषोऽङ्गना च ओजोऽथ युग्मं विषमः समश्च। चरस्थिरद्व्यात्मकनामधेया मेषादयोऽमी क्रमशः प्रदिष्टाः'—इति ज्योतिस्तत्त्वे। भूखण्डविशेषः; 'गन्धर्वो वरुणः सौम्यो बहवः कङ्क एव च। कुमुदश्च कसेरुश्च नागो भद्रारकस्तथा। चन्द्रेन्द्रमलयाशङ्खयवाङ्कगभस्तिमान्। ताम्राकुश्च कुमारी च तत्र द्वीपदशाष्टभिः'—इति शब्दमाला। सौम्यकृच्छ्रव्रतम्; 'प्राजापत्यः सान्तपनः शिशुकृच्छ्रः पराककः। अतिकृच्छ्रः पर्णकृच्छ्रः सौम्यः कृच्छ्रातिकृच्छ्रकः। 'सौम्यः सौम्यकृच्छ्रः' इति प्रायश्चित्ततत्त्वम्। पितृगणविशेषः; 'अग्निदग्धानग्निदग्धान् काव्यान् वर्हिषदस्तथा। अग्निष्वात्तांश्च सौम्यांश्च विप्राणामेव निर्दिशेत्'—इति मनुः (३।१९९)। त्रि. [सोमो देवतास्य, सोम+'सोमाद् टच्यण्' इति टच्यण्] सोमदैवतः; अनुग्रः; मनोज्ञः; 'संरम्भं मैथिलीहासः क्षणसौम्यां निनाय ताम्। निवातस्तिमितां वेलां चन्द्रोदय इवोदधेः।' भक्तः; 'नमस्तस्मै भगवते वासुदेवाय वेधसे। पपुर्ज्ञानमयं सौम्या यन्मुखाम्बुरुहासवम्'—इति भागवते (२।४। २३)। भास्वरः। (६८९) त्रि. साधुः; चारुः। ४६

सौरभेयः पुं. [सुरभेरपत्यमिति। सुरभि+ढक्] उक्षा; अनड्वान्; बलीवर्दः; ककुद्मान्; वृषभः; वृषः; ऋषभः; गौः; वाडवेयः; शाक्वरः; 'मा सौरभेयात्र शुचो व्येतु ते वृषलाद् भयम्'–इति भागवते (१।१७।९)। सुरभिसम्बन्धिनि त्रि.। २६३

सौरभेयी स्त्री. [सुरभेरपत्यं स्त्री। सुरभि+ढक्+ङीप्] अघ्न्या; गौः; माहेयी; सुरभिः; बहुला; सौरभी; उस्रा; अर्जुनी; रोहिणी; अनडुही; अनड्वाही; 'निवर्त्य राजा दयितां दयालुस्तां सौरभेयीं सुरभिर्यशोभिः। पयोधरीभूतचतुःसमुद्रां जुगोप गोरूपधरामिवोर्वीम्।' सुरभिसम्बन्धिनि त्रि.। अप्सरोविशेषः; 'विश्वाची सहजन्या च प्रम्लोचा उर्वशी इरा। वर्गा च सौरभेयी च समीची बुद्बुदा लता'—इति महाभारते (२।१०।११)। २६८

सौरभ्यम् क्ली. [सुरभेर्भावः। सुरभि+ष्यञ्] सौगन्ध्यम्; आमोदः; परिमलः; सुगन्धिता; सौगन्धिः; 'गुणविधृता सखि तिष्ठसि तथैव देहेन किन्तु हृदयं ते। हृतममुना मालायाः समीरणेनेव सौरभ्यम्'—इति आर्यासप्तशत्याम् (२१३)। गुणगौरवम्। ७७

सौराष्ट्रकः पुं. [सुराष्ट्र एव+अण्, सौराष्ट्र+संज्ञायां

कन्] कांस्यं; सौराष्ट्रं; देशविशेषः। १७०

सौराष्ट्रिकम् पुं — क्ली. [सुराष्ट्रे देशे भवम्। अध्यात्मादित्वात् ठञ्] विषभेदः; 'विषं तु गरलं क्ष्वेडस्तस्य भेदानुदाहरे। वत्सनाभः स हारिद्रः सक्तुकश्च प्रदीपनः। सौराष्ट्रिकः शृङ्गिकश्च कालकूटस्तथैव च। हलाहलो ब्रह्मपुत्रो विषभेदा अमी नव। सुराष्ट्रविषये यः स्यात् स सौराष्ट्रिक उच्यते'—इति भावप्रकाशः। सौराष्ट्रदेशसम्बन्धिनि त्रि.। ६४६

सौवर्चलम् क्ली. [सुवर्चले देशे भवम्। सुवर्चल+अण्] सुवर्चलदेशभवलवणम्; अक्षं; रुचकं; कृष्णलवणं; तिलकं; हृद्यगन्धकं; रुच्यं; कौद्रविकम्; 'सौवर्चलं लघु क्षारं कटूष्णं गुल्मशूलनुत्। ऊर्ध्ववातामशूलार्तिविबन्धारोचकान् जयेत्'—इति राजनिर्घण्टः। 'सौवर्चलं स्याद्रुचकमक्ष्यं पाक्यं च तन्मतम्। रुचकं रोचनं भेदि दीपनं पाचनं परम्। सस्नेहवातनुन्नातिपित्तलं विशदं लघु। उद्‌गारशुद्धिदं सूक्ष्मं विबन्धानाहशूलहृत्'—इति भावप्रकाशः। सर्जिकाक्षारः; सुवर्चलासम्बन्धिनि त्रि.। ६१७

सौवस्तिकः पुं. [स्वस्ति, तत्करणे साधु। स्वस्ति+ठक्] पुरोधाः; पुरोहितः; स्वस्तिसम्बन्धिनि त्रि.। ४२६

सौविदः पुं. [सुष्ठु वेत्तीति। सु+विद्+क। ततः प्रज्ञाद्यण्] अन्तःपुररक्षकः; सौविदल्लः; कञ्चुकी; स्थापत्यः; स्थपतिः; सुविदः; सौविदल्लकः; महल्लरक्षकः। ४२७

सौवीरम् क्ली. [सुष्ठु वीरा यत्र, ततः स्वार्थे अण्] धान्याम्लम्; आरनालं; सन्धानं; काञ्जिकम्; अभिषवम्; अवन्तिसोमं; तुषोदकं; शुक्तम्; 'सौवीरं तु यवैरामैः पक्वैर्वा निस्तुषैः कृतम्। गोधूमैरपि सौवीरमाचार्याः केचिदूचिरे। सौवीरं तु ग्रहण्यर्शःकफघ्नं भेदि दीपनम्। उदावर्ताङ्गमर्दास्थिशूलानाहेषु शस्यते'—इति भावप्रकाशः। बदरम्; 'सौवीरं बदरं महत्'—इति रत्नमाला। सौवीराञ्जनम्; 'सुवीरकं पार्वतेयं सौवीरं नीलमञ्जनम्'—इति रत्नमाला। स्रोतोऽञ्जनं; पुं. देशविशेषः। 'सौवीरराजः शैब्यश्च पाण्ड्यश्च बलिनां वरः'—इति हरिवंशे (९०।१९)। ३१८

सौष्ठवम् क्ली. [सुष्ठु भावः। सुष्ठु+'प्राणभृज्जातिवयोवचनोद्गात्रादिभ्योऽञ्' इत्यञ्] प्रशंसनम्; अवष्टम्भः; 'आयुःक्षेत्राण्युपचयो लक्षणं रूपसौष्ठवम्'—हरिवंशे (४०।३४)। आतिशय्यम्; 'तुल्येष्वस्त्रप्रयोगेषु लाघवे सौष्ठवेषु च। सर्वेषामेव शिष्याणां बभूवाभ्यधिकोऽर्जुनः'–इति महाभारते (१।१३४।१४)। नाटकाङ्गविशेषः। ७५९

सौहार्दम् क्ली. [सुहृदः सुहृदयस्य वा भावः कर्म वा। सुहृद् वा सुहृदय+'हायनान्तयुवादिभ्योऽण्' इत्यण्। हृदयस्य हृदादेशः। 'हृद्भगसिन्ध्वन्ते पूर्वपदस्य च' इति उभयपदवृद्धिः] सुहृदो भावः; सख्यं; सौहृदं; साप्तपदीनं; मैत्री; अजर्यं; सङ्गतं; सखिता; मित्रता; स्नेहः; प्रीतिः; सौहृद्यं; सभाजनं; संगतम्; 'सौहार्द्रे चानुरागे च वेत्थ मे भक्तिमुत्तमाम्। न मामर्हसि धर्मज्ञ! त्यक्तुं भक्तामनागसम्'—इति महाभारते (१।७७।११)। पुं. [सुहृदः मित्रस्य अपत्यं पुमान्, सुहृद्+अण्] मित्रपुत्रः। ७०६

सौहार्द्यम् क्ली. [सुहृदयस्य भावः। सुहृदय+ष्यञ्। 'वा शोकष्यञ्रोगेषु' इति हृदयस्य हृदादेशः] सौहार्दं; मैत्री; सख्यं; स्नेहः। ७०६

सौहित्यम् क्ली. [सुहितस्य भावः कर्म वा। सुहित+'पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्' इति यक्] तृप्तिः; 'अहेरिव गणाद्भीतः सौहित्यान्नरकादिव। कुणपादिव च स्त्रीभ्यस्तं देवा ब्राह्मणं विदुः'—इति महाभारते (१२।२४४।१३)। ३२६

सौहृदम् क्ली. [सुहृदः कर्म भावो वा। सुहृद्+अण्] सख्यं; सौहार्दं; मैत्री; सखित्वं; सखिता; मित्रता; 'तद् भुज्यते यद् द्विजभुक्तशेषं स बुद्धिमान् यो न करोति पापम्। तत् सौहृदं यत्क्रियते परोक्षे दम्भैर्विना यः क्रियते स धर्मः'—इति गारुडे। ७०६

सौहृद्यम् क्ली.— सुहृदयता; स्नेहः; मैत्री; सख्यं; सौहार्दं; सखिता। ७०६

स्कन्दः पुं. [स्कन्दते उत्प्लुत्य गच्छति, स्कन्दति शोषयति दैत्यान् वा। स्कन्द्+अच्] कार्त्तिकेयः; स्वामी; अग्निभूः; गुहः; षडाननः; 'किमर्थमेषकः क्रौञ्चो भिन्नः स्कन्देन सुव्रत। एतन्मे विस्तराद् ब्रह्मन् कथयस्वामितद्युते!'—इति कालिकापुराणे। महादेवः; नृपतिः; शरीरं; पारदः; नदीतटं; पण्डितः; बालकस्य

ग्रहविशेषः; 'स्कन्दो विशाखो मेषाख्यः श्वग्रहः पितृ-संज्ञितः। ×××× स्कन्दार्त्तस्तेन वैकल्यं मरणं वा भवेद् ध्रुवम्'—इति वाग्भटः। १९

स्कन्धः पुं. [स्कन्द्यतेऽसौ इति। स्कन्द्+घञ्। पृषोदरादित्वात् साधुः। स्कन्द्+असुन्, धश्चान्तादेशो वा] अवयवविशेषः; भुजशिरः; अंसः; दोः शिखरम्; 'यथा हि पुरुषो भारं शिरसा गुरुमुद्वहन्। तं स्कन्धेन स आधत्ते तथा सर्वाः प्रतिक्रियाः'—इति भागवते (४।२९।३३) । (१८२) तरोर्मूलादिशाखापर्यन्तं; प्रकाण्डः; काण्डं; दण्डः; प्रधाणः; 'खर्जूरीस्कन्धनद्धानां मदोद्गारसुगन्धिषु। कटेषु करिणां पेतुः पुन्नागेभ्यः शिलीमुखाः'—इति रघौ (४।५७) । समूहः (८११); नृपतिः; सम्परायः; कायः; 'सूक्ष्मयोनीनि भूतानि तर्कगम्यानि कानिचित्। पक्ष्मणोऽपि निपातेन येषां स्यात् स्कन्धपर्ययः'—इति महाभारते (१२।१५।२६) । भद्रादिः; छन्दोभेदः; विज्ञानादिपञ्च; 'सर्वकार्यशरीरेषु मुक्त्वाङ्गस्कन्धपञ्चकम्। सौगतानामिवात्मान्यो नास्ति मन्त्रो महीभृताम्'—इति माघे (२।२८) । 'रूपवेदनाविज्ञानसंज्ञासंस्काराः पञ्च स्कन्धाः। तत्र विषयप्रपञ्चो रूपस्कन्धः। तज्ज्ञानप्रपञ्चो वेदनास्कन्धः। आलयविज्ञानसन्ताने विज्ञानस्कन्धः। नामप्रपञ्चः संज्ञास्कन्धः। वासनाप्रपञ्च संस्कारस्कन्धः। एवं पञ्चधा परिवर्तमानो ज्ञानसन्तान एवात्मा इति बौद्धाः'—इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। व्यूहः; 'प्रतापोऽग्रे ततः शब्दः परागस्तदनन्तरम्। ययौ पश्चाद्रथादीति चतुःस्कन्धेव सा चमूः'—इति रघौ (४।३०) । पन्थाः; 'तथाब्रवीन्महासेनं महादेवो बृहद्वचः। सप्तमं मारुतस्कन्धं रक्ष नित्यमतन्द्रितः'—इति महाभारते (३।२३०।५५) । ग्रन्थपरिच्छेदः; 'स्कन्धैर्द्वादशभिः प्रोक्तं श्रीमद्भागवतं प्रभो। शुकस्तच्छ्रावयामास महाराजं परीक्षितम्'—इति पाद्मे। १८२

स्कन्धदेशः पुं. [स्कन्धस्य देशः] स्कन्धमात्रम्; अवयवविशेषः; भुजशिरः; अंसः; स्कन्धः; दोः शिखरं; 'कन्धा' इति भाषा। 'त्रिपुरारिः स्कन्धदेशे कण्ठे कामाङ्गनाशनः'—इति माहेश्वरकवचम्। गजस्य स्कन्धः; यत्र हस्तिपक उपविशति। आसनम्। २६७

स्कन्धवाहकः पुं. [स्कन्धेन वहतीति। स्कन्ध+वह्+ण्वुल्] शकटादिवाहकवृषः; स्कन्धवाहः; स्कन्धिकः। २६६

स्कन्धशाखा स्त्री. [स्कन्धस्य शाखा] वृक्षस्य मुख्यशाखा; शाला; 'यथा हि स्कन्धशाखानां तरोर्मूलावसेचनम्। एवमाराधनं विष्णोः सर्वेषामात्मनश्च हि'—इति भागवते (८।५।४९) । १८२

स्कन्धावारः पुं. [स्कन्धेन सैन्यसमूहेन व्यूहेन नृपतिना वा आव्रियते इति। स्कन्ध+आ+वृ+घञ्] राजधानी; 'ते तु दृष्ट्वा परं तच्च स्कन्धावारं च पाण्डवाः। कुम्भकारस्य शालायां निवासं चक्रिरे तदा'—इति महाभारते (१।१८५।६) । कटकः; सैन्यस्थितिः; 'एतस्मिन्नन्तरे चक्रुः स्कन्धावारनिवेशनम्'—इति रामायणे (६।४२।२२) । २८०

स्कन्धिकः पुं. [स्कन्धेन वहतीति। स्कन्ध+ठक्] स्कन्धवाहकवृषः; स्कन्धवाहः; स्कन्धवाहकः। २६६

स्तनः पुं. [स्तन्यते शब्द्यते कामुकैः, स्तनयति कथयति वक्षःशोभामिति वा। स्तन् शब्दे+घञ्] अवयवविशेषः; कुचः; कूचः; उरोजः; वक्षोजः; पयोधरः; वक्षोरुहः; उरसिजः; चूचुकम्; 'अरोमशौ स्तनौ पीनौ घनावविषमौ शुभौ। कठिनावरोममुरो मृदुग्रीवा च कम्बुभा'—इति गारुडे (५६।९५) । ५२६

स्तनयित्नुः पुं. [स्तनयतीति। स्तन् शब्दे+'स्तनिहृषिपुषीति' इत्नुच्, 'अयामन्तेति' अयादेशः] अभ्रम्; अब्दः; घनः; मेघः; पयोधरः; धाराधरः; धूमयोनिः; जीमूतः; बलाहकः; 'किमव्यक्तेऽसि निनदे कुतस्त्येऽपि त्वमीदृशी। स्तनयित्नोर्मयूरीव चकितोत्कण्ठिता स्थिता'—इति उत्तररामचरिते ३ अङ्के। मुस्तकः; मेघध्वनिः; विद्युत्; मृत्युः; रोगः। ५८

स्तन्यम् क्ली. [स्तने भवम्। स्तन+'शरीरावयवाच्च' इति यत्] ऊधस्यं; क्षीरं; दुग्धं; पयः; पीयूषम्; 'स नन्दिनीस्तन्यमनिन्दितात्मा सद्वत्सलो वत्सहुतावशेषम्। पपौ वशिष्ठेन कृताभ्यनुज्ञः शुभ्रं यशो मूर्तमिवातितृष्णः'—इति रघौ (२।६९) । [स्तनाय हितमिति, 'शरीरावयवाद् यत्'—इति यत्] स्तनहिते त्रि.। २७५

स्तब्धत्वम् क्ली.— स्तम्भः; जडीभावः; स्तब्धता; निष्प्रतिभता; जडत्वं; जाड्यम्। ८३४

स्तभः पुं. [स्तम्भु रोधनार्थः सौत्रः, ततः क] अजः

बस्तः; छागः; छगलः; छगलकः; छगः; स्तुनकः। २७७

स्तम्बः पुं. [तिष्ठतीति । स्था+'स्थः स्तोऽम्बजवकौ' इति अम्बच् स्तादेशश्च] प्रकाण्डरहितवृक्षः; गुल्मः; उलपः; स तु झिण्टिकादिः। तृणादिः; गुच्छः; गुत्सः; विटपः; काण्डम्; 'आरण्यकोपात्तफलप्रसूतिः स्तम्बेन नीवार इवावशिष्टः'—इति रघौ (५।१५)। १९०

स्तम्बकरिः पुं. [स्तम्बं करोतीति। स्तम्ब+कृ+'स्तम्बशकृतोरिन्' इति इन्] धान्यं; व्रीहिः; 'पुंसि स्तम्बकरिर्धान्यं व्रीहिर्ना धान्यमात्रके'—इति शब्दरत्नावली। ५७९

स्तम्बेरमः पुं. [स्तम्बे रमते इति। स्तम्ब+रम्+'स्तम्बकर्णयो रमिजपोः' इत्यच्, 'तत्पुरुषे कृति बहुलम्' इति सप्तम्या अलुक्] मातङ्गः; द्विरदः; द्विपः; करी; गजः; अनेकपः; कुम्भी; कुञ्जरः; वारणः; इभः; रदी; सामोद्भवः; सिन्धुरः; हस्ती; 'शय्यां जहत्युभयपक्षविनीतनिद्राः, स्तम्बेरमा मुखरशृङ्खलकर्षिणस्ते'—इति रघौ (५।७२)। २१४

स्तम्भः पुं. [स्तम्नातीति । स्तम्भु+पचाद्यच्] स्थूणा; आलानम्; 'खूंटा' इति भाषा। स्तब्धत्वं; जडीभावः; निष्प्रतिभता; जाड्यं; जडत्वम्; 'स्तम्भं महान्तमुचितं सहसा मुमोच, दानं ददावतितरां सहसाग्रहस्तः। बद्धापराणि परितो निगडान्यलावीत्, स्वातन्त्र्यमुज्ज्वलमवाप करेणुराजः'—इति माघे (५।४८)। 'महान्तं स्तम्भम् आलानं जाड्यं च सहसा मुमोच। स्तम्भः स्थूणजडत्वयोः इति विश्वः'—इति तट्टीका। ८३४

स्तम्भतीर्थी स्त्री.— रागिणीभेदः। १०३ अ

स्तवः पुं. [स्तूयतेऽनेनेति, स्तु+'ऋदोरप्' इत्यप्] प्रशंसा; स्तोत्रं; नुतिः; स्तुतिः; स्तवनं; वर्णः; अर्थवादः; ईडा; विकत्थनं; श्लाघा; वर्णना; 'तुष्टाव च तमीशानं मारीचः कश्यपस्तदा। वेदोक्तैः स्वकृतैश्चैव स्तवैः स्तुत्यं जगद्गुरुम्'—इति हरिवंशे (१२९।२८)। १४५

स्तवकः पुं. [तिष्ठतीति । स्था+'स्थः स्तोऽम्बजवकौ' इति अवक, धातोश्च स्तादेशः] गुच्छकः; गुच्छः; गुत्सः; गुत्सकः; 'पुष्पादिस्तवके गुच्छो मुक्ताहारकलापयोः'—इति रन्तिदेवः। 'स्याद् गुच्छः स्तवके स्तम्बे हारभेदकलापयोः'—इति मेदिनी। 'स्तवके हारभेदे च गुत्सः स्तम्बे च कीर्तितः'—इति रुद्रः। 'गुत्सः स्यात् स्तवके स्तम्बे हारभिद्ग्रन्थिपर्णयोः'—इति मेदिनी। मुकुरः कुड्मलश्चापि स्तवको गुत्सकाविति' इति हड्डः। [स्तूयते इति, ष्टुञ् स्तुतौ, अप्, स्तवः+स्वार्थे क] स्तुतिः; ग्रन्थपरिच्छेदः; समूहः; स्तवकारके त्रि.। १८८

स्तुतिः स्त्री. [स्तु+क्तिन्] अर्थवादः; प्रशंसा; स्तोत्रं; ईडा; नुतिः; विकत्थनं; स्तवः; श्लाघा; वर्णना; 'इतः स्तुतिः का खलु चन्द्रिकाया यदब्धिमप्युत्तरलीकरोति'—इति नैषधे (३।११६)। दुर्गा; 'स्तुतिः सिद्धिरिति ख्याता श्रियाः संश्रयणाच्च सा। लक्ष्मीर्वा ललना वापि क्रमात् सा कान्तिरुच्यते'—इति देवीपुराणे ४५ अध्याये। १४५

स्तेनः पुं. [स्तेनयतीति, स्तेन्+पचाद्यच्] ऐकागारिकः; तस्करः; दस्युः; प्रतिरोधकः; परास्कन्दी; चौरः; चोरः; मलिम्लुचः; स्तेन्यः; परिमोषी; पारिपन्थिकः; तृप्नुः; तक्का; रिम्वा; रिपुः; रिक्का; स्त्येनः; रिहायाः; तायुः; वनर्गुः; हुरश्चित्; मुषीवान्; अघशंसः; वृकः। 'स्तेनस्यातः प्रवक्ष्यामि विधिं दण्डविनिर्णये। परमं यत्नमातिष्ठेत् स्तेनानां निग्रहे नृपः। स्तेनानां निग्रहादस्य यशो राष्ट्रं च वर्द्धते। अन्नादे भ्रूणहा मार्ष्टि पत्यौ भार्यापचारिणी। गुरौ शिष्यश्च याज्यश्च स्तेनो राजनि किल्बिषम्। यस्तु तान्युपक्लृप्तानि द्रव्याणि स्तेनयेन्नरः। तमाद्यं दण्डयेद्राजा यश्चाग्निं चौरयेद् गृहात्। येन येन यथाङ्गेन स्तेनो नृषु विचेष्टते। तत्तदेव हरेत्तस्य प्रत्यादेशाय पार्थिवः'—इति मानवे ८ अध्यायः। देवायानिवेद्यान्नादिभोक्ता; 'इष्टान् भोगान् हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः। तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः।' ३३८

स्तेयम् क्ली. [स्तेनस्य भावः कर्म वा। स्तेन+'स्तेनाद्यन्नलोपश्च' इति यत् नलोपश्च] चौर्यं; चौरस्य भावः तस्य कर्म च; स्तैनं; स्तैन्यम्; 'प्रत्यक्षं वा परोक्षं वा रात्रौ वा यदि वा दिवा। यत्परद्रव्यहरणं स्तेयं तत्परिकीर्तितम्'—इति प्रायश्चित्तविवेके। ३३९

स्तैनम् क्ली. [स्तेनस्य चौरस्य भावः कर्म वा। स्तेन+अण्] चौर्यम्। ३३९

स्तैन्यम् क्ली. [स्तेनस्य भावः कर्म वा। स्तेन+ष्यञ्]

चौर्यं; महाभारते (३।२७२।७)। ३३९

स्तोकम् त्रि. [ष्टुच्+घञ्] अल्पं; सूक्ष्मं; लेशः; लवः; श्लक्ष्णः; क्षुद्रः; दभ्रः; कणः; अणुः; किञ्चित्; मात्रं; तनु; ह्रस्वं; त्रुटिः; 'सञ्जयैवंगते प्राणांस्त्यक्तुमिच्छामि मा चिरम्। स्तोकं ह्यपि न पश्यामि फलं जीवितधारणे'—इति महाभारते (१।१।२१८)। पुं. [ष्टुच् प्रसादे+घञ्] चातकपक्षी; स्तोककः; बिन्दुः; कणा; 'वृष्ट्यावरुद्धैरभवन् स्रोतःखातानि निम्नगाः। ये पुरस्तादपां स्तोका आपन्नाः पृथिवीतले' —इति मार्कण्डेये (४९।५९)। 'एवं गृहेष्वभिरतो विषयान् विविधैः सुखैः। सेवमानो न चातुष्यदाज्यस्तोकैरिवानलः'—इति भागवते (९।६।४८)। ६८८

स्तोत्रम् क्ली. [स्तूयतेऽनेनेति। स्तु+'दाम्नीशसयुयुजेति' ष्ट्रन्] अर्थवादः; प्रशंसा; स्तुतिः; ईडा; नुतिः; विकत्थनं; स्तवः; श्लाघा; वर्णना; 'अत्र वो वर्णयिष्यामि विधिं मन्वन्तरस्य तु। ऋचो यजूंषि सामानि यथावत् प्रति दैवतम्। विधिहोत्रं तथा स्तोत्रं विधिस्तोत्रं तथैव च। तथैवाभिजनस्तोत्रं स्तोत्रमेतच्चतुष्टयम्। मन्वन्तरेषु सर्वेषु यथा भेदाद्भवन्ति ये। प्रवर्तयन्ति तेषां वै ब्रह्मस्तोत्रं पुनः पुनः'—इति मात्स्ये।१४५

स्तोमः पुं. [स्तु+मन्] यागः; यज्ञः; क्रतुः; सप्ततन्तुः; मखः; अध्वरः; वितानः; संस्तरः; वर्हिः; सवः; सत्रं; (६८७) निकरः; निकायः; समूहः; 'ऋषीणामुग्रतपसां यमुनातीरवासिनाम्। लवणत्रासितः स्तोमस्त्रातारं त्वामुपस्थितः'—इति उत्तरचरिते १ अङ्के। स्तवः; क्ली. मस्तकं; धनं; सस्यं; लोहाग्रदण्डः; वक्रे त्रि.। ४१४

स्त्यानः त्रि. [स्त्यै शब्दसंघातयोः, स्त्यायति स्म, क्त] शीनः; संहतः; संहतिकर्ता; ध्वनिकर्ता; क्ली. स्निग्धं; प्रतिध्वानं; घनत्वम्; 'दधति कुहरभाजामत्र भल्लूकयूनामनुरसितगुरूणि स्त्यानमम्बूकृतानि'—इति उत्तररामचरिते २ अङ्के। २७६

स्त्री स्त्री. [स्त्यायति गर्भो यस्यामिति। स्त्यै+'स्त्यायतेर्ड्रट्' इति ड्रट्, डित्वाट् टिलोपः, टित्त्वान् ङीप्] स्तनयोन्यादिमती; योषित्; अबला; योषा; नारी; सीमन्तिनी; वधूः; प्रतीपदर्शिनी; वामा; वनिता; महिला; प्रिया; रामा; जनिः; जनी; योषिता; जोषित्; जोषा; जोषिता; वनिका; महेला; महेलिका; शर्वरी; सिन्दूरतिलका; सुभ्रूः; सुनयना; वामदृक्; अङ्गना; ललना; कान्ता; पुरन्ध्री; वरवर्णिनी; सुतनुः; तन्वी; तनुः; कामिनी; तन्वङ्गी; रमणी; कुरङ्गनयना; भीरुः; भाविनी; विलासिनी; नितम्बिनी; मत्तकासिनी; सुनेत्रा; प्रमदा; सुन्दरी; अञ्चितभ्रूः; ललिता; वासिता; भामिनी; वरारोहा; नताङ्गी; त्रिनता; वरा; श्यामा; चारुवर्द्धना। 'रहःस्थलनियुक्तश्च न दृश्यः स्त्रीयुतः पुमान्। स्त्रीसंसक्तं च पुरुषं यः पश्यति नराधमः। करोति रसभङ्गं वा कालसूत्रं व्रजेद् ध्रुवम्। तत्र तिष्ठति पापीयान् यावच्चन्द्रदिवाकरौ। विशेषतश्च पितरं गुरुं वा भूमिपं द्विज। रहःसु रतिसंसक्तं न हि पश्येद्विचक्षणः। कामतः कोपतो वापि यः पश्येत्सुरतोन्मुखम्। स्त्रीविच्छेदो भवेत्तस्य ध्रुवं सप्तसु जन्मसु। श्रोणीं वक्षःस्थलं वक्त्रं यः पश्यति परस्त्रियाः। कामतो वापि मूढश्च पण्डो भवति निश्चितम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते (४२।१०।१४)। 'विद्याघातो ह्यनभ्यासः स्त्रीणां घातः कुचेलता। व्याधीनां भोजनं जीर्णं शस्त्रैर्घातः प्रगल्भता। दुर्जनाः शिल्पिनो दासा दुष्टाश्च पटहाः स्त्रियः। ताडिता मार्दवं यान्ति न ते सत्कारभाजनम्'—गारुडे १०९ अध्याये। पत्नी; स्त्रीलिङ्गः। ४८१

स्त्रीधनम् क्ली. [स्त्रिया धनम्] स्त्रीस्वत्वास्पदीभूतधनं; शुल्कम्; 'अध्यग्न्यध्यावाहनिकं भर्तृदायं तथैव च। भ्रातृदत्तं पितृभ्यां च षड्विधं स्त्रीधनं स्मृतम्' —इति दायभागधृतनारदवचनम्। 'प्राप्तं शिल्पैस्तु यद्वित्तं प्रीत्या चैव यदन्यतः। भर्तुः स्वाम्यं भवेत्तत्र शेषं तु स्त्रीधनं स्मृतम्'—इति कात्यायनः। ८२८

स्त्रीपुंसौ पुं. [स्त्री च पुमांश्च, 'अचतुरविचतुरेति' अच्] स्त्रीपुंसयोर्युग्मं; मिथुनं; द्वन्द्वम्; (द्विवचनान्तोऽयम्) 'एवोदिता लोकयात्रा नित्यं स्त्रीपुंसयोः शुभा'—इति मनुः (९।२५)। ७००

स्थगितम् त्रि. [स्थग्+क्त] तिरोहितं; संवीतं; रुद्धम्; आवृतं; संवृतं; पिहितं; छन्नम्; अपवारितम्; अन्तर्हितं; तिरोधानम्; 'उद्ढवृक्षः स्थगितैकदिङ्मुखो विकृष्टविस्फारितचापमण्डलः'—इति किराते (१४। ३१)। ७४३

स्थण्डिलम् क्ली. [तिष्ठत्यस्मिन्निति । स्था+'मिथिलादयश्चेति' निपातनाद् इलच्] चत्वरं; यज्ञार्थं परिष्कृताऽनिम्नोन्नता विस्तृता भूमिः; संस्कृता भूमिः; 'यज्ञे परिष्कृतस्थाने स्यातां स्थण्डिलचत्वरे' —इति शब्दरत्नावली । 'तस्मात् सम्यक्परीक्ष्यैवं कर्तव्यं शुभवेदिकम् । हस्तमात्रं स्थण्डिलं वा संक्षिप्ते होमकर्मणि'—वशिष्ठसंहितायाम् । ७६२

स्थपतिः पुं. [तिष्ठन्त्यस्मिन्निति, स्था+क, स्थः स्थानम्, तं पातीति, पा+बाहुलकाद् अति] गीष्पतीष्टियज्वा; बृहस्पतिसवननामयज्ञकर्ता; कारुभेदः; 'वास्तुविद्याविधानज्ञो लघुहस्तो जितश्रमः । दीर्घदर्शी च शूरश्च स्थपतिः परिकीर्तितः'—इति मात्स्ये । कञ्चुकी; कुबेरः; अधीशः; 'स तु रामस्य वचनं निशम्य प्रतिगृह्य च । स्थपतिस्तूर्णमाहूय सचिवानिदमब्रवीत्'—इति रामायणे (२।५२।५) । त्रि. [तिष्ठन्ति स्वधर्मे इति स्थाः सन्तस्तेषां पतिः] सत्तमः । ४१८

स्थपुटम् त्रि.— विषमोन्नतं; विषमसञ्चारजीवी; निम्नोन्नतस्थानगतः । ७५३

स्थलम् क्ली.– स्त्री. [स्थल्यते स्थीयतेऽत्र, स्थल् स्थाने+अच्] जलशून्याकृत्रिमभूभागः; स्थली; 'स्यन्दनाश्वैः समे युध्येदनूपे नौद्विपैस्तथा । वृक्षगुल्मावृते चापैरसिचर्मायुधैः स्थले'—इति मनुः (७।१९२) । 'यज्ञो यजमानाय वर्षति स्थलयोदकं परिगृह्णन्ति'—इति तैत्तिरीयसंहितायाम् (१।६।१०।५) । क्ली. स्थानमात्रम्; 'उवाच वाग्मी दशनप्रभाभिः संवर्द्धितोरःस्थलतारहारः'—इति रघौ (५।५२) । वस्त्रगृहम्; 'पटवासः पटमयं दूष्यं वस्त्रगृहं स्थलम्'—इति त्रिकाण्डशेषः । १५८

स्थलशृङ्गाटः पुं. [स्थलजातः शृङ्गाटः] गोक्षुरवृक्षः; स्थलशृङ्गाटकः; गोक्षुरकः; श्वदंष्ट्रा; श्वदंष्ट्रकः; त्रिकण्टकः । २०१

स्थला स्त्री. [स्थल+टाप्] जलशून्या कृत्रिमभूमिः; स्थलम् । १५८

स्थली स्त्री. [स्थल+'जानपदकुण्डगोणस्थल' इति अकृत्रिमार्थे ङीष्] जलशून्याकृत्रिमा भूमिः; स्थलम्; 'सैषा स्थली यत्र विचिन्वता त्वां भ्रष्टं मया नूपुरमेकमुर्व्याम् । अदृश्यत त्वच्चरणारविन्दविश्लेषदुःखादिव बद्धमौनम्'—इति रघुवंशे (१३।२३) । १५८

स्थविरः त्रि. [तिष्ठति सुचिरम् । स्था+'अजिरशिशिरेति किरच्] वृद्धः; यातयामः; प्रवयाः; 'ऊर्ध्वं प्राणा ह्युत्क्रामन्ति यूनः स्थविर आयति । प्रत्युत्थानाभिवादाभ्यां पुनस्तान् प्रतिपद्यते'—इति मनुः (२।१२०) । भिक्षुः; अचलः; पुं. ब्रह्मा; क्ली. शैलेयम् । ५०३

स्थाणुः पुं. [तिष्ठतीति । स्था+'स्थो णुः' इति णु] शिवः; शम्भुः; शङ्करः; रुद्रः; महादेवः; उमापतिः; 'समुत्तिष्ठञ्जलात्तस्मात् प्रजास्ताः सृष्टवानहम् । ततोऽहं ताः प्रजा दृष्ट्वा रहिता एव तेजसा । क्रोधेन महता युक्तो लिङ्गमुत्पाट्य चाक्षिपम् । उत्क्षिप्तं सरसो मध्ये ऊर्ध्वमेव यदा स्थितम् । तदा प्रभृति लोकेषु स्थाणुरित्येव विश्रुतम्'—इति वामने । कीलः (७९७); ब्रह्मा; 'यस्मात् पितामहो जज्ञे प्रभुरेकः प्रजापतिः । ब्रह्मा सुरगुरुः स्थाणुर्मनुः कः परमेष्ठयथ'—इति महाभारते (१।१।३२) । जीवकगन्धद्रव्यम्; 'जीवके जीवनो जीवो निधिः स्थाणुः प्रकीर्तितः'—इति शब्दचन्द्रिका । पुं.- क्ली. निःशाखवृक्षः; ध्रुवः; शङ्कुः; अशाखवृक्षः; 'छायायामातपे चैव समदर्शी महातपाः । ध्यानं कृत्वा तथैकान्ते स्थितः स्थाणुरिवाचलः'—इति देवीभागवते (१।१७।५३) । अस्त्रभेदः; त्रि. स्थिरः; 'अव्ययं च व्ययं चैव यदिदं स्थाणु जङ्गमम् । तत् ससर्ज तदा ब्रह्मा भगवानादिकृद्विभुः'—इति विष्णुपुराणे (१।५।५८) । ११

स्थानम् क्ली. [स्था+ल्युट्] गृहं; गेहम्; अयनं (७६२); नीतिवेदिनां त्रिवर्गान्तर्गतवर्गविशेषः; सादृश्यम्; अवकाशः; स्थितिः; 'स्थानासनाभ्यां विहरेत् सवनेषूपयन्नपः'—इति मनुः (६।२२) । सन्निवेशः; वसतिः; 'स्थानं प्रधानं न बलं प्रधानं स्थानस्थितः कापुरुषोऽपि सिंहः ।' ग्रन्थसन्धिः; भाजनं, निकटम्; 'त्वामत्र कृत्तिकास्थाने कथयामासुरीश्वर । सर्वे धर्मादयो देवा धर्माधर्मस्य साक्षिणः'—इति ब्रह्मवैवर्ते । २९१

स्थानकम् क्ली. [स्थानमिव, कन् । स्थाने कं जलं यत्रेति वा] आलवालं; नगरं; फेनं; [स्थानमेव । स्वार्थे कन्] 'तत्स्थानकं ब्राह्ममभीप्समानैर्गङ्गा सदैवात्मवशैरुपास्या'—इति महाभारते (१३।२६।९४) । १८४

स्थानस्थः पुं. ['सुपि स्थः' इति क] गृहवासी । ३६८

स्थानीयम् क्ली. [स्थानाय हितमिति । स्थान+छ] नगरं; पत्तनं; पुरम्; अधिष्ठानं, निगमं; पुटभेदनं; नगरी; द्रङ्गः; पूः; पुरी; स्थानसम्बन्धिनि त्रि.। २८५

स्थापत्यः पुं. [स्थपतिरेव । स्थपति+ष्यञ्] अन्तःपुररक्षकः; सौविदः; सौविदल्लः; कञ्चुकी; क्ली. स्थपतेर्भावः कर्म वा। ४२७

स्थाम [न्] क्ली. [तिष्ठत्यनेनेति । स्था+'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इति मनिन्] सामर्थ्यं; प्राणः; बलं; द्युम्नं; द्युम्नम्; ओजः; शुष्म; तरः; सहः; प्रतापः; पौरुषं; तेजः; विक्रमः; पराक्रमः। ७२३

स्थायिभावः पुं. [स्थायी भावः] रसस्य त्रिधाभावान्तर्गतभावविशेषः; 'सञ्चारिणः प्रधानानि देवादिविषया रतिः । उद्बुद्धमात्रः स्थायी च भाव इत्यभिधीयते । न भावहीनोऽस्ति रसो न भावो रसवर्जितः । परस्परकृता सिद्धिरनयो रसभावयोः।' ९१

स्थालम् क्ली. [तिष्ठत्यस्मिन् अन्नादिकमिति । स्था+'स्थाचतिमृजेरिति' आलच्] हेमादिकृतभोजनपात्रं; [स्थलति तिष्ठति अन्नादिकमत्र, स्थल् स्थाने+घञ्] अस्थिविशेषः; 'स्थालैः सह चतुःषष्टिर्दण्डा वै विंशतिर्नखाः'—इति याज्ञवल्क्यः । 'स्थालानि दन्तमूलप्रदेशस्थान्यस्थीनि'—इति तत्र मिताक्षरा। ३२७

स्थाली स्त्री. [तिष्ठन्त्यत्रान्नादीनि । स्था+आलच्, गौरादित्वाद् ङीष्] पाकपात्रविशेषः; पिठरः; उखा; कुण्डं; पिठरी; स्थालं; उषा; कुण्डी; कुण्डा; कुण्डधका; पाकः; पातिली; 'पूरयित्वाग्निना स्थालीं गन्धर्वाश्च तमब्रुवन् । अनेनेष्ट्वा च लोकान्नः प्राप्स्यसि त्व नराधिप'—इति हरिवंशे (२६।४०)। पाटलावृक्षः। ३१४

स्थासकः पुं. [तिष्ठति, स्था+बाहुलकात् स, स्वार्थे कन्] चार्चिक्यं; हस्तबिम्बं; चन्दनादिना देहविलेपनविशेषः; जलादेर्बुद्बुदम् —माघे (१८।५)। ५४०

स्थितः त्रि. [स्था+क्त] ऊर्द्ध्वः; ऊर्ध्वन्दमः; कृतप्रतिज्ञः; प्रतिज्ञातवान्; 'पक्षीन्द्रवचनं श्रुत्वा दानवेन्द्रोऽब्रवीदिदम्। स्थितोऽस्मि समये तस्य अनन्तस्य महात्मनः' —इति हरिवंशे (२५५।९५)। निश्चलः; वर्तमानः; गतिनिवृत्तिविशिष्टः; 'स्थितः स्थितामुच्चलितः प्रयातां निषेदुषीमासनबन्धधीरः । जलाभिलाषी जलमाददानां छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्'—इति रघौ (२।६)। क्ली. [स्था+भावे क्त] अवस्थानं; कुलमर्यादा; 'साध्वीनां तु स्थितानां तु शीले सत्ये श्रुते स्थिते। स्त्रीणां पवित्रं परमं पतिरेको विशिष्यते'—इति रामायणे (२।३९।२४)। ३८६

स्थितिः स्त्री. [स्था+क्तिन्] स्थानं; व्यवस्था; न्याय्यपथस्थितिः; संस्था; मर्यादा; धारणा; संस्थितिः; 'स मानसीं मेरुसखः पितॄणां कन्यां कुलस्य स्थितये स्थितिज्ञः । मेनां मुनीनामपि माननीयामात्मानुरूपां विधिनोपयेमे'—इति कुमारे (१।१८)। अवस्थानम्; आस्था; आसना; 'प्रस्थितायां प्रतिष्ठेथाः स्थितायां स्थितिमाचरेः'—इति रघुवंशे (१।८९)। सीमा; नियमः; 'श्येनः कपोतानत्तीति स्थितिरेषा सनातनी। मा राजन् सारमज्ञात्वा कदलीस्कन्धमासजः'—इति महाभारते (३।१३१।२०)। ८३७

स्थिरः त्रि. [स्था+किरच्] विश्रब्धः; विस्रब्धः; कठिनः; निश्चलः; 'अभ्रच्छाया खलैः प्रीतिः परनारीषु सङ्गतिः । पञ्चैते अस्थिरा भावा यौवनानि धनानि च। अस्थिरं जीवितं लोके अस्थिरं धनयौवनम्। अस्थिरं पुत्रदाराद्यं धर्मः कीर्तिर्यशः स्थिरम्'—इति गारुडे (११५।२५-२६)। ३७०

स्थिरप्रेम त्रि.— स्थिरसौहृदम्; अचलमैत्री। ३७४

स्थिरा स्त्री. [स्था+किरच्+टाप्] पृथिवी; पृथ्वी; भूः; भूमिः; अचला; शालपर्णी; काकोली; शाल्मलिवृक्षः; स्थैर्ययुक्ता स्त्री। १५६

स्थुलम् क्ली. [स्थूल्यते, स्थूल परिबृंहणे, घञ्, पृषोदरादित्वेन ह्रस्वः] दूष्यं; पटकुटी; वस्त्रवेश्म; केणिका; 'शुक्लैः सतारैर्मुकुलीकृतैः स्थुलैः'—इति माघे (१२।४)। ४५१

स्थूणा स्त्री. [तिष्ठतीति । स्था+'रास्नासास्नास्थूणावीणाः' इति नप्रत्ययेन साधुः] शूर्मी; लौहप्रतिमा; लोहमयी मूर्तिः; सूर्मी; गृहस्तम्भः; 'वृद्धोऽन्धः पतिरेष मञ्चकगतः स्थूणावशेषं गृहं, कालोऽभ्यर्णजलागमः कुशलिनी वत्सस्य वार्तापि नो। यत्नात् सञ्चिततैलबिन्दुघटिका भग्नेति पर्याकुला, दृष्ट्वा गर्भभरालसां निजवधूं श्वश्रूश्चिरं रोदिति'—इति साहित्यदर्पणे (३।१७२)। १३१

स्थूरी [न्] पुं. [सादृश्येन स्थूरो वृषोऽस्यातीति, इनि] खरवृषभवत् पृष्ठेन भारवाहकोऽश्वः; स्थौरी; स्थूरी; पृष्ठवाह्यवृषभः । २६६

स्थूलम् त्रि. [स्थूलयतीति, स्थूल्+अच्] उपचितावयवं; पीनं; पीवं; पीवरं; 'मोटा' इति भाषा। 'द्रवः सङ्घातकठिनः स्थूलः सूक्ष्मो लघुर्गुरुः । व्यक्तो व्यक्तेतरश्चासि प्राकाम्यं ते विभूतिषु'—इति कुमारे (२।११)। जडः; 'न यः संसत्सु कथयेद् ग्रन्थार्थं स्थूलबुद्धिमान् । स कथं मन्दविज्ञानो ग्रन्थं वक्ष्यति निर्णयात्'—इति महाभारते (१२।३०५।१६) । (४५१) क्ली. दूष्यं; पटकुटी; गुणलयनी; केणिका —माघे (१२।४) । कूटं; समूहः; पुं. विष्णुः; महाभारते (१३।१४९।१०३) । कन्दविशेषः; रक्तलशुनः; 'स्थूलशूरणमाणकप्रभृतयः कन्दा ईषत्कषायाः कटुका रूक्षा विष्टम्भिनो गुरवः कफवातलाः पित्तहराश्च ।' 'माणकं स्वादु शीतं च गुरु चापिप्रकीर्तितम्। स्थूलकन्दस्तु नात्युष्णः शूरणो गुदकीलहा'—इति सुश्रुतः। ३४२

स्थूललक्षः त्रि. [स्थूलं प्रचुरं लक्षयति दानार्थमिति । स्थूल+लक्ष्+अण्] बहुप्रदः; बहुव्ययी; 'महोत्साहः स्थूललक्षः कृतज्ञो वृद्धसेवकः । विनीतः सत्त्वसम्पन्नः कुलीनः सत्यवाक् शुचिः'—इति याज्ञवल्क्यः । ३६५

स्थूललक्ष्यः त्रि. [स्थूलं प्रचुरं वस्तु लक्ष्यमस्य] बहुप्रदः; बहुव्ययी; 'अकत्थनो मानयिता स्थूललक्ष्यः प्रियंवदः । सुहृदश्चान्नपानेन विविधेनाभिवर्षति'—इति महाभारते (३।४५।११) । ३६५

स्थूलोच्चयः पुं. [स्थूलानामुच्चयो यत्र] गजानां मध्यमगतिः; हस्तिमध्यमगतिः; 'स्थूलोच्चयेनागमदन्तिकागतां गजोऽप्रयाताग्रकरः करेणुकाम्'—इति माघे (१२।१६) । असाकल्यं; वरण्डः; हस्तिदन्तरन्ध्रं; गण्डोपलः। २२२

स्थेयः पुं. [विवादनिर्णयार्थं स्थातुं योग्यः । स्था+यत्] विवादपक्षस्य निर्णेता; प्राड्विवाकः; अक्षदृक्; 'कार्तान्तिको भिषक् सभ्यो गुरुर्मन्त्री पुरोहितः । दूतः स्थेयो लेखको वा न तदाभूदपण्डितः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (६।१३)। पुरोहितः; स्थिरतरे त्रि.। क्ली. [स्था+भावे यत्] स्थातव्यम्; 'बलिनः सन्निकर्षे तु न स्थेयं पण्डितेन वै। अपक्रामेद्धि कालज्ञः समर्थो युद्धमावहेत्'—इति हरिवंशे (९५।७) । ४२९

स्नसा स्त्री. — स्नायुः; शिरा; नाडी; धमनी। ६३४

स्नातकः पुं. [स्नात एव । स्नात+'यावादिभ्यः कन्' इति स्वार्थे कन्] आप्लुतव्रती; ब्रह्मचर्यं त्यक्त्वा यो गृहस्थाश्रमं गतः सः; समाप्तवेदाध्ययनो यः स्नानशीलः आश्रमानन्तरं न गतः । ३९४

स्नानम् क्ली. [स्ना+ल्युट्] मज्जनम्; अवगाहनम्; आप्लावः; आप्लवः; अभिषेकः; उपस्पर्शनं; सवनं; सर्जनम्; 'स्नानं पवित्रमायुष्यं श्रमस्वेदमलापहम्। शरीरबलसन्धानं केश्यमोजस्करं परम्। उष्णाम्बुनाधःकायस्य परिषेको बलावहः। तेनैव तूत्तमाङ्गस्य बलकृत् केशचक्षुषोः । स्नानं वचाघनैरिष्टं श्लेष्मघ्नं तिमिरापहम्। विनिहन्ति शिरःस्नानं तृष्णाताल्वास्यशोषणम्। मलोष्णपीडकाकण्डूं शिरोरोगांश्च पैत्तिकान्। मधुकामलकैः स्नानं पित्तघ्नं तिमिरापहम्। स्नानं कृष्णतिलैश्चापि चक्षुष्यमनिलापहम्। अस्नातस्य शरीरस्थं उष्मा सर्वाङ्गगोचरः । स्नानेनैकत्वमायाति तेन दीप्यति पावकः । स्नानमर्दितनेत्रास्यकर्णरोगातिसारिषु । आध्मानपीनसाजीर्णभुक्तवत्सु च गर्हितम् । दौर्गन्ध्यं गौरवं कण्डूं कच्छुं मलमरोचकम् । स्वेदं बीभत्सतां हन्ति शरीरपरिमार्जनम्'—इति राजवल्लभः। ४०८

स्नायुः स्त्री. [स्ना+बाहुलकात् उण्, 'आतो युक् चिण्कृतोः' इति युक्] वायुवाहिनी नाडी; वस्नसा; स्नसा; नसा; शिरा; 'शिराशतानि सप्तैव नवस्नायुशतानि च' —इति याज्ञवल्क्यः (३।१००) । ६३४

स्निग्धः पुं. [स्निह्यति स्मेति । स्निह्+अकर्मकत्वात् कर्तरि क्त] वयस्यः; मित्रं; सखा; सुहृत्; रक्तैरण्डः; सरलवृक्षः; क्ली. शिक्थकं; त्रि. स्नेहयुक्तः; अरूक्षः; चिक्कणं; मसृणम्; आमृष्टं; चिक्वं; चिक्वणम्; 'स्निग्धं तु वत्सलो वत्सः स्नेहयुक्तजने भवेत्'—इति शब्दरत्नावली। ४२८

स्नुषा स्त्री. [स्नौति मनो यस्यामिति । स्नु प्रस्रवणे+'स्नुव्रश्चिकृत्यृषिभ्यः कित्' इति स, स च कित्] जनी; पुत्रवधूः; वधूः; 'स किलाश्रममन्त्यमाश्रितो निवसन्नावसथे पुराद्बहिः । समुपास्यत पुत्रभोग्यया स्नुषयेवाविकृतेन्द्रियः श्रिया'-इति रघौ (८।१४)। स्नुहीवृक्षः;

स्थूरी [न्] पुं. [सादृश्येन स्थूरो वृषोऽस्यातीति, इनि] खरवृषभवत् पृष्ठेन भारवाहकोऽश्वः; स्थौरी; स्थूरी; पृष्ठवाह्यवृषभः । २६६

स्थूलम् त्रि. [स्थूलयतीति, स्थूल्+अच्] उपचितावयवं; पीनं; पीवं; पीवरं; 'मोटा' इति भाषा । 'द्रवः सङ्घातकठिनः स्थूलः सूक्ष्मो लघुर्गुरुः । व्यक्तो व्यक्तेतरश्चासि प्राकाम्यं ते विभूतिषु'—इति कुमारे (२।११) । जडः; 'न यः संसत्सु कथयेद् ग्रन्थार्थं स्थूलबुद्धिमान् । स कथं मन्दविज्ञानो ग्रन्थं वक्ष्यति निर्णयात्'—इति महाभारते (१२।३०५।१६) । (४५१) क्ली. दूष्यं; पटकुटी; गुणलयनी; केणिका —माघे (१२।४) । कूटं; समूहः; पुं. विष्णुः; महाभारते (१३।१४९।१०३) । कन्दविशेषः; रक्तलशुनः; 'स्थूलशूरणमाणकप्रभृतयः कन्दा ईषत्कषायाः कटुका रूक्षा विष्टम्भिनो गुरवः कफवातलाः पित्तहराश्च ।' 'माणकं स्वादु शीतं च गुरु चापिप्रकीर्तितम् । स्थूलकन्दस्तु नात्युष्णः शूरणो गुदकीलहा'—इति सुश्रुतः । ३४२

स्थूललक्षः त्रि. [स्थूलं प्रचुरं लक्षयति दानार्थमिति । स्थूल+लक्ष्+अण्] बहुप्रदः; बहुव्ययी; 'महोत्साहः स्थूललक्षः कृतज्ञो वृद्धसेवकः । विनीतः सत्त्वसम्पन्नः कुलीनः सत्यवाक् शुचिः'—इति याज्ञवल्क्यः । ३६५

स्थूललक्ष्यः त्रि. [स्थूलं प्रचुरं वस्तु लक्ष्यमस्य] बहुप्रदः; बहुव्ययी; 'अकत्थनो मानयिता स्थूललक्ष्यः प्रियंवदः । सुहृदश्चान्नपानेन विविधेनाभिवर्षति'—इति महाभारते (३।४५।११) । ३६५

स्थूलोच्चयः पुं. [स्थूलानामुच्चयो यत्र] गजानां मध्यमगतिः; हस्तिमध्यमगतिः; 'स्थूलोच्चयेनागमदन्तिकागतां गजोऽप्रयाताग्रकरः करेणुकाम्'—इति माघे (१२।१६) । असाकल्यं; वरण्डः; हस्तिदन्तरन्ध्रं; गण्डोपलः । २२२

स्थेयः पुं. [विवादनिर्णयार्थं स्थातुं योग्यः । स्था+यत्] विवादपक्षस्य निर्णेता; प्राड्विवाकः; अक्षदृक्; 'कार्तान्तिको भिषक् सभ्यो गुरुर्मन्त्री पुरोहितः । दूतः स्थेयो लेखको वा न तदाभूदपण्डितः'—इति राजतरङ्गिण्याम् (६।१३) । पुरोहितः; स्थिरतरे त्रि. । क्ली. [स्था+भावे यत्] स्थातव्यम्; 'बलिनः सन्निकर्षे तु न स्थेयं पण्डितेन वै । अपक्रामेद्धि कालज्ञः समर्थो युद्धमावहेत्'—इति हरिवंशे (९५।७) । ४२९

स्नसा स्त्री. — स्नायुः; शिरा; नाडी; धमनी । ६३४

स्नातकः पुं. [स्नात एव । स्नात+'यावादिभ्यः कन्' इति स्वार्थे कन्] आप्लुतव्रती; ब्रह्मचर्यं त्यक्त्वा यो गृहस्थाश्रमं गतः सः; समाप्तवेदाध्ययनो यः स्नानशीलः आश्रमानन्तरं न गतः । ३९४

स्नानम् क्ली. [स्ना+ल्युट्] मज्जनम्; अवगाहनम्; आप्लावः; आप्लवः; अभिषेकः; उपस्पर्शनं; सवनं; सर्जनम्; 'स्नानं पवित्रमायुष्यं श्रमस्वेदमलापहम् । शरीरबलसन्धानं केश्यमोजस्करं परम् । उष्णाम्बुनाधःकायस्य परिषेको बलावहः । तेनैव तूत्तमाङ्गस्य बलकृत् केशचक्षुषोः । स्नानं वचाघनैरिष्टं श्लेष्मघ्नं तिमिरापहम् । विनिहन्ति शिरःस्नानं तृष्णाताल्वास्यशोषणम् । मलोष्णपीडकाकण्डूं शिरोरोगांश्च पैत्तिकान् । मधुकामलकैः स्नानं पित्तघ्नं तिमिरापहम् । स्नानं कृष्णतिलैश्चापि चक्षुष्यमनिलापहम् । अस्नातस्य शरीरस्य उष्मा सर्वाङ्गगोचरः । स्नानेनैकत्वमायाति तेन दीप्यति पावकः । स्नानमर्दितनेत्रास्यकर्णरोगातिसारिषु । आध्मानपीनसाजीर्णभुक्तवत्सु च गर्हितम् । दौर्गन्ध्यं गौरवं कण्डूं कच्छुं मलमरोचकम् । स्वेदं बीभत्सतां हन्ति शरीरपरिमार्जनम्'—इति राजवल्लभः । ४०८

स्नायुः स्त्री. [स्ना+बाहुलकात् उण्, 'आतो युक् चिण्कृतोः' इति युक्] वायुवाहिनी नाडी; वस्नसा; स्नसा; नसा; शिरा; 'शिराशतानि सप्तैव नवस्नायुशतानि च' —इति याज्ञवल्क्यः (३।१००) । ६३४

स्निग्धः पुं. [स्निह्यति स्मेति । स्निह्+अकर्मकत्वात् कर्तरि क्त] वयस्यः; मित्रं; सखा; सुहृत्; रक्तैरण्डः; सरलवृक्षः; क्ली. शिक्थकं; त्रि. स्नेहयुक्तः; अरूक्षः; चिक्कणं; मसृणम्; आमृष्टं; चिक्वं; चिक्वणम्; 'स्निग्धं तु वत्सलो वत्सः स्नेहयुक्तजने भवेत्'—इति शब्दरत्नावली । ४२८

स्नुषा स्त्री. [स्नौति मनो यस्यामिति । स्नु प्रस्रवणे+'स्नुव्रश्चिकृत्यृषिभ्यः कित्' इति स, स च कित्] जनी; पुत्रवधूः; वधूः; 'स किलाश्रममन्त्यमाश्रितो निवसन्नावसथे पुराद्बहिः । समुपास्यत पुत्रभोग्यया स्नुषयेवाविकृतेन्द्रियः श्रिया'–इति रघौ (८।१४) । स्नुहीवृक्षः;

स्नुहा; स्नुहिः । ५०४

स्नुही स्त्री. [स्नुह+टाप्] स्नुहीवृक्षः; साहुण्डः; व्रजद्रुः; स्नुक्; गुडा; समन्तदुग्धा; सिहुण्डः; शीहुण्डः; वज्रः; स्नुहिः; गुडी; गुडः; वज्री; सुधा; वज्रकण्टकः; कृष्णसारः । १९७

स्नेहः पुं. [स्निह्+घञ्] सख्यं; सखिता; साप्तपदीनं; सौहार्द्यं; सौहार्दं; सौहृदं; मैत्री; मित्रता; प्रेमा; 'दर्शने स्पर्शने वापि श्रवणे भाषणेऽपि वा। यत्र द्रवत्यन्तरङ्गं स स्नेह इति कथ्यते। यत्र स्नेहो भयं तत्र स्नेहो दुःखस्य भाजनम् । स्नेहमूलानि दुःखानि तस्मिंस्त्यक्ते महत्सुखम्'—इति गारुडे (११३।५९)। तैलादिरसभेदः; 'मृदु व्यवहितं तेजो भोक्तुमर्थान् प्रकल्पते । प्रदीपः स्नेहमादत्ते दशयाभ्यन्तरस्थया'—इति माघे (२।८५) । ७०६

स्पन्दनः पुं. [स्पन्द्+ल्युट्] वृक्षविशेषः; क्ली. प्रस्फुरणम्; ईषत्कम्पनम्; 'गर्भाधानमृतौ पुंसः सवनं स्पन्दनात् पुरा। षष्ठेऽष्टमे वा सीमन्तो मास्येते जातकर्म च' —इति याज्ञवल्क्यः (१।११) । ८१२

स्पर्धा स्त्री. [स्पर्ध्+भिदादित्वादङ+टाप्] संहर्षः; 'महानदीभिर्बह्वीभिः स्पर्द्धयेव सहस्रशः । अभिसार्यमाणमनिशं ददृशाते महार्णवम्'—इति महाभारते (१।२१।१७)। क्रमसमुन्नतिः; साम्यम्। ७८६

स्पर्शनः पुं. [स्पृशतीति । स्पृश्+ल्यु] पवनः; श्वसनः; वायुः; मरुत्; अनिलः; मारुतः; जगत्प्राणः; समीरणः; पृषदश्वः; गन्धवहः; पवमानः; प्रभञ्जनः; वातः; नभस्वान्; मातरिश्वा; समीरः; सदागतिः; हरिः; महाबलः । ७५

स्पर्शनम् क्ली. [स्पृश्+ल्युट्] विश्राणनं; विश्रणनं; विहापितम्; अंहतिः; अपवर्जनं; वितरणं; निर्वपणम्; उत्सर्गः; प्रदेशनं; दानं; स्पर्शः; 'तस्मिन्न्यस्तधियः पार्थाः सहेरन् विरहं कथम् । दर्शनस्पर्शनालापशयनासनभोजनैः'—इति भागवते (१।१०।१२)। सम्बन्धः; 'तद्रक्ष कल्याणपरम्पराणां भोक्तारमूर्जस्वलमात्मदेहम् । महीतलस्पर्शनमात्रभिन्नमृद्धं हि राज्यं पदमैन्द्रमाहुः' —इति रघुवंशे (२।५०) । ४१९

स्पशः पुं. [स्पशतीति । स्पश्+पचाद्यच्] अपसर्पः; चरः; चारः; प्रणिधिः; गूढपुरुषः; यथार्हवर्णः; मन्त्रज्ञः; हेरकः; 'वयन्तु यदि दाहस्य बिभ्यतः प्रद्रवेमहि। स्पशैर्नो घातयेत् सर्वान् राज्यलुब्धः सुयोधनः' —इति महाभारते (१।१४७।२५) । युद्धम् (८१८); अभिसारः; प्राणनिरपेक्षो यो द्रव्यार्थं व्यालं हस्तिनं वा योधयति सः । ४२५

स्पष्टम् त्रि. [स्पश्यते स्मेति । स्पश्+णिच्+क्त । 'वा दान्तशान्तेति' साधुः] व्यक्तं; स्फुटं; प्रव्यक्तम्; उल्वणम्; उद्रिक्तं; प्रकटम्; 'भोः सूत हे मागध सौम्य वन्दिँल्लोकेऽधुनास्पष्टगुणस्य मे स्यात् । किमाश्रयो मे स्तव एष योज्यतां मा मय्यभूवन् वितथा गिरो वः' —इति भागवते (४।१५।२२) । ७५२

स्पष्टेतरः त्रि. [स्पष्टादितरः] अव्यक्तः; अस्पष्टः; गूढः । ८४२

स्पृहा स्त्री. [स्पृह्+अङ+टाप्] इच्छा; वाञ्छा; काङ्क्षा; कामना; ईप्सा; रुचिः; आशंसा; आकाङ्क्षा; 'तपो धनं ब्राह्मणानां तपः कल्पतरुस्तथा। तपस्या कामधेनुश्च सन्ततं तपसि स्पृहा। ऐश्वर्ये क्षत्रियाणां च वाणिज्यं च तथा विशाम् । शूद्राणां विप्रसेवायां स्पृहा वेदेष्वनिन्दिता। क्षत्रियाणां च तपसि स्पृहातीव प्रशंसिता। ब्राह्मणानां विवादेषु स्पृहातीव विनिन्दिता । क्षत्रियाणां रणो धर्मो रणे मृत्युर्न गर्हितः । रणे स्पृहा ब्राह्मणानां लोके वेदे विडम्बना । तपोधनानां विप्राणां वाग्बलानां युगे युगे । शान्तिस्वस्त्ययनं कर्म विप्रधर्मो न सङ्करः'—इति ब्रह्मवैवर्ते गणपतिखण्डे (३५।७३।८५) । ७१०

स्फटिकः पुं. [स्फट् विकसने+बाहुलकाद् इकन्] सूर्यकान्तमणिः; स्फाटिकं; स्फाटकं; भासुरः; स्फाटिकोपलः; शालिपिष्टं; धौतशिलं; सितोपलः; विमलमणिः; निर्मलोपलः; स्वच्छः; स्वच्छमणिः; अमररत्नं; निस्तुषरत्नं; शिवप्रियः; 'मुक्ताविद्रुमवज्रेन्द्रवैदूर्यस्फटिकादिकम् । मणिरत्नं शरं शीतं कषायं स्वादु लेखनम् । चक्षुष्यं धारणात् तच्च पापालक्ष्मीविनाशनम्' —इति राजवल्लभः । १७६

स्फाटिकम् क्ली. [स्फटिकमेव । स्वार्थे अण्] स्फटिकं; –महाभारते (२।५५।१)। स्फटिकसम्बन्धिनि त्रि.। महाभारते (१।६३।१३) । १७६

स्फिक् [ज्] स्त्री. [स्फायी वृद्धौ, बाहुलकाद् डिक् डिज् वा] कटिप्रोथः (द्विवचनान्ते स्फिचौ स्फिजौ वा) । ५११

स्फुटम् त्रि. [स्फुटति, स्फुट् विकसने+क] प्रकटं; स्पष्टं; विकसितम् । ७५२

स्फुर्जथुः पुं. [स्फूर्जतीति, स्फूर्ज् वज्रनिर्घोषे+अथुच्, ह्रस्वः] वज्रपातजनितशब्दः; वज्रनिष्पेषः; स्फूर्जथुः; वज्रनिर्घोषः । ५७

स्फुलिङ्गः त्रि. [स्फुल्+इङ्गच् । यद्वा स्फु इति करणेन लिङ्गतीति । स्फु+लिगि+अच्] अग्निकणः; स्फलिङ्गः; स्फुलिङ्गा; स्फुलिङ्गम्; 'बलाहकादुच्चरतः सुभीमान् विद्युत्स्फुलिङ्गानिव घोररूपान्'—इति महाभारते (५।४८।५४) । ६७

स्फुलिङ्गिनी स्त्री. [स्फुलिङ्गोऽस्या अस्तीति । इनि, ङीप्] अग्निसप्तजिह्वान्तर्गतजिह्वाविशेषः; 'काली कराली च मनोजवा च सुलोहिता या च सुधूम्रवर्णा । स्फुलिङ्गिनी विश्वरूपी च देवी लोलायमाना इति सप्त जिह्वाः'—इति मुण्डकोपनिषदि (१।२।४) । ६७

स्फूर्जथुः पुं. [स्फूर्जनम्, स्फूर्ज् वज्रनिर्घोषे+अथुच्] वज्रपतनजनितशब्दः; वज्रनिष्पेषः; स्फुर्जथुः; विस्फूर्जथुः; वज्रनिर्घोषः । ५७

स्फोटकः पुं. [स्फुटतीति, स्फुट्+ण्वुल्] रोगविशेषः; पिटकः; गण्डः; स्फोटः; विस्फोटः; भेदकपरीहासकयोस्त्रि. । ६०४

स्म अव्य.— संस्मरणम्; श्लोकपादपूरणम्; 'यद्येतदशुभं कर्म न स्म मे कथयेः स्वयम् । फलेत मूर्द्धा स्म ते राजन् सद्यः शतसहस्रधा'—इति रामायणे (२।६४।२२) । एतद्योगे अतीतकाले लट्लकारो भवति, 'लट् स्मे', 'यजति स्म युधिष्ठिरः, हन्ति स्म रावणं रामः'—इति सिद्धान्तकौमुदी । ८८३

स्मरः पुं. [स्मारयति उत्कण्ठयतीति । स्मृ+णिच्+अच्] कामदेवः; प्रद्युम्नः; मदनः; मन्मथः; मारः; कामपालः; अङ्गजः; 'स्मरसि स्मर ! मेखलागुणैरुत गोत्रस्खलितेषु बन्धनम् । च्युतकेशरदूषितेक्षणान्यवतंसोत्पलताडनानि वा'—इति कुमारे (४।८) । [स्मृ+अप्] स्मरणम् । ३२

स्मरकूपकः पुं. [स्मरस्य कूप इव, कन्] भगं; स्त्रीयोनिः; स्मरकूपिका; स्मरगृहं; स्मरध्वजं; स्मरमन्दिरम् । ५१४

स्मरकूपिका स्त्री. [स्मरकूप+टाप्] भगं; स्त्रीयोनिः । ५१४

स्मरमन्दिरम् क्ली. [स्मरस्य कामदेवस्य मन्दिरं गृहम्] योनिः; भगं; स्मरकूपकः; उपस्थः; वराङ्गं; स्मरागारम् । ५१४

स्मितम् क्ली. [स्मिङ ईषद्धसने+क्त] ईषद्धास्यम्; 'विलज्जमानेव नता दिव्याभरणभूषिता । स्मितपूर्वमिदं वाक्यं भीमसेनमथाब्रवीत्'—इति महाभारते (१।१५३।२२) । त्रि. विकसितः (१८७); 'स्मितसरोरुहनेत्रसरोजलामतिसिताङ्गविहङ्गहसद्दिवम्'—इति माघे (६।५४) । ५६७

स्यदः पुं. [स्यन्द्+घञ् । 'स्यदो जवे' इति निपातनात् साधुः] वेगः; रंहः; तरः; प्रसरः; रयः; जवः; वाजः । ४४३

स्यन्दनः पुं. [स्यन्दते चलतीति । स्यन्द्+'बहुलमन्यत्रापि' इति युच्] रथः; चक्रयुक्तयुद्धप्रयोजनयानम्; 'स्निग्धगम्भीरनिर्घोषमेकं स्यन्दनमास्थितौ । प्रावृषेण्यं पयोवाहं विद्युदैरावताविव'—इति रघौ (१।३६) । तिनिशवृक्षः; वृत्तार्हद्विशेषः; वायुः; त्रि. शीघ्रः; स्यन्दकः; 'ग्रहैः परिवृतं चन्द्रमवतीर्णमिवाम्बरात् । रूपोपमानमन्येषाममृतस्यन्दनं दृशोः'—इति कथासरित्सागरे (१०३।६२) । क्ली. [स्यन्द्+ल्युट्] क्षरणं; जलं; गमनम् । ४८४

स्यन्दनारोहः पुं. [स्यन्दनमारोहतीति । स्यन्दन+आ+रुह्+अण्] रथस्थितयोद्धा; रथी । ३९०

स्रक् [ज्] स्त्री. [सृजति शोभामिति । सृज्यते इति वा । सृज्+ऋत्विगादिना कर्तरि कर्मणि वा क्विन्] माल्यं; माला; मूर्ध्नि न्यस्तपुष्पदाम; 'उपानहौ च वासश्च धृतमन्यैर्न धारयेत् । उपवीतमलङ्कारं स्रजं करकमेव च'—इति मनुः (४।६६) । ५५२

स्रवद्गर्भा स्त्री. [स्रवन् गर्भो यस्याः] दैववशात् पतितगर्भा गौः; अवतोका; पतितगर्भामात्रम् । २७०

स्रवन्ती स्त्री. [स्रु+शतृ+ङीप्] नदी; निम्नगा; आपगा; 'उपस्पृशेत् स्रवन्त्यां वा सूक्तं वाब्दैवतं जपेत्'—इति मनुः (११।१३३) । गुल्मस्थानम्; ओषधिभेदः; क्षरणविशिष्टे त्रि. । यथा स्रवन्, स्रवन्ती, स्रवत् । ६६५

स्रष्टा [ऋ] पुं. [सृजतीति । सृज्+तृच्] ब्रह्मा; विधिः; विधाता; विरञ्चिः; विरिञ्चिः; प्रजापतिः;

भवनं; दिवानम्; 'मनोऽनुकूलाः प्रमदा रूपवत्यः स्वलङ्कृताः। वासः प्रासादपृष्ठेषु स्वर्गः स्याच्छुभकर्मणः'—इति गारुडे (१०९।४४)। 'मनःप्रीतिकरः स्वर्गो नरकस्तद्विपर्ययः। नरकस्वर्गसंज्ञे वै पापपुण्ये द्विजोत्तमाः'—इति ब्रह्मपुराणे १९ अध्यायः। ३

स्वर्गौकाः [स्] पुं. [स्वर्ग ओको वासस्थानं यस्य] देवः; देवता; अमरः; विबुधः; सुरः; अदितिनन्दनः; स्वर्गी; 'अनर्घ्यमर्घ्येण तमद्रिनाथः स्वर्गौकसामर्चितमर्चयित्वा। आराधनायास्य सखीसमेतां समादिदेश प्रयतां तनूजाम्'—इति कुमारे (११५८)। ४

स्वर्णम् क्ली. [सुष्ठु अर्णो वर्णो यस्य] सुवर्णम्; अष्टापदम्; 'सुवर्णं तिक्तमधुरं कषायं गुरु लेखनम्। हृद्यं रसायनं बल्यं चक्षुष्यं कान्तिदं शुचि। आयुर्मेधावयःस्थैर्यवाग्विशुद्धिद्युतिप्रदम्। क्षयोन्मादगदार्त्तानां शमनं परमुच्यते'—इति राजवल्लभः। १७३

स्वर्णपुष्पी स्त्री. [स्वर्णवत् पीतं पुष्पं यस्याः। ङीष्] आरग्वधः; कृतमालः; स्वर्णकेतकी; हरिद्रावर्णकेतकीपुष्पं; हेमकेतकी; कनकप्रसवा; हैमी; छिन्नरुहा; विष्ठारुहा; कामखड्गदला। १९८

स्वर्भानुः पुं. [स्वराकाशे भातीति। स्वर्+भा+'दाभाभ्यां नुः' इति नु] राहुः; सैंहिकेयः; तमः; विधुन्तुदः; अस्रपिशाचः; ग्रहकल्लोलः; सैंहिकः; उपप्लवः; शीर्षकः; उपरागः; सिंहिकासूनुः; कृष्णवर्णः; कबन्धः; अगुः; असुरः; 'तुल्येऽपराधे स्वर्भानुर्भानुमन्तं चिरेण यत्। हिमांशुमाशु ग्रसते तन्म्रदिम्नः स्फुटं फलम्'—इति माघे (२।४९)। सत्यभामागर्भजातः श्रीकृष्णपुत्रविशेषः; 'भानुः सुभानुः स्वर्भानुः प्रभानुर्भानुमांस्तथा। चन्द्रभानुर्बृहद्भानुरतिभानुस्तथाष्टमः। श्रीभानुः प्रतिभानुश्च सत्यभामात्मजा दश'—इति भागवते (१०।६१।११)। ४९

स्वल्पशरीरः त्रि.– पृश्निः; अल्पतनुः; किरातः। ६११

स्वसा [ऋ] स्त्री. [सुष्ठु अस्यते क्षिप्यते इति। सु+अस्+'सुञ्यसेऋन्' इति ऋन्] भगिनिः; भगिनी; जामिः; भग्नी; 'मातरं वा स्वसारं वा मातुलां भगिनी निजाम्। भिक्षेत भिक्षां प्रथमं या चैनं नावमानयेत्' —इति मनुः (२।५०)। ५०७

स्वस्ति अव्य. [सु+अस्+'सावसेः' इति ति, बहुलवचनात् न भूभावः] आशीः; क्षेमम्; आशीर्वादः; मङ्गलादि; पुण्यादि; 'स्वस्ति मङ्गलाशीर्वादपापनिर्णेजनादिषु'—इति भागुरिः। 'स्वस्ति प्राप्नुहि कौन्तेय काम्यकं पुनराश्रमम्'–इति महाभारते (३।१६६।१३)। दानस्वीकारमन्त्रः; 'स्वाहाग्नये स्वधा पित्रे स्वस्ति धात्रे नमः सते'—इति मुग्धबोधव्याकरणम्। ८८७

स्वस्तिकः पुं.– क्ली. [स्वस्ति क्षेमं कायति कथयतीति। स्वस्ति+कै+क] आढ्यानां गृहविशेषः; वर्धमानः; नन्द्यावर्तः; 'स्वस्तिकं प्राङ्मुखं यत्स्यादनिन्द्यानुगतं भवेत्। तत्पार्श्वानुगतौ चान्यौ तत्पर्यन्तगतोऽपरः'—इति सान्न्यः। शतावरीशाकः; 'शितिवारः शितिवरः स्वस्तिकः सुनिषण्णकः। श्रीवारकः सूचिपत्रः पर्णकः कुक्कुटः शिखा'—इति राजनिर्घण्टः। योगाङ्गासनम्; मङ्गलद्रव्यं; तत्तु तण्डुलचूर्णनिर्मितत्रिकोणाकाराधिवासद्रव्यं; चतुष्पथः; पिष्टकविकारः; रततालिकः; जिनानां चतुर्विंशतिचिह्नान्तर्गतचिह्नविशेषः "卐" इत्याकारः; 'वृषो गजोऽश्वः प्लवगः क्रौञ्चोऽब्जं स्वस्तिकः शशी। मकरः श्रीवत्सः खड्गी महिषः सूकरस्तथा। श्येनो वज्रं मृगश्छागो नद्यावर्तो घटोऽपि वा। कूर्मो नीलोत्पलं शङ्खः फणी सिंहोऽर्हतां ध्वजाः'—इति हेमचन्द्रः। रसोनकः; सर्पफणास्थितनीलरेखाविशेषः; 'शिरोभिः पृथुभिर्नागा व्यक्तस्वस्तिकलक्षणैः। वमन्तः पावकं घोरं ददंशुर्दशनैः शिलाः'—इति रामायणे (१।१९५)। ३०५

स्वस्रीयः पुं. [स्वसुरपत्यं पुमानिति। स्वसृ+'स्वसुश्छः' इति छ] भागिनेयः; स्वस्रेयः; जामेयः; भगिनीसुतः; 'मातामहं मातुलं च स्वस्रीयं श्वशुरं गुरुम्। दौहित्रं विट्पतिं बन्धुमृत्विग्याज्यौ च भोजयेत्'—इति मनुः (३।१४८)। ५०७

स्वस्रेयः पुं. ['स्त्रीभ्यो ढक्'] स्वस्रीयः। ५०७

स्वाच्छन्द्यम् क्ली. [स्वच्छन्द+ष्यञ्। स्वच्छन्दस्य भावः] स्वच्छन्दता; यदृच्छा; स्वातन्त्र्यं; स्वतन्त्रता; स्वाधीनता; स्वैरता; स्वैरिता; 'ज्ञातिभ्यो द्रविणं दत्त्वा कन्यायै चैव शक्तितः। कन्याप्रदानं स्वाच्छन्द्यादासुरो धर्मं उच्यते'—इति मनुः (३।३१)। ७७४

स्वादुरसा स्त्री. [स्वादुः रसो यस्याः] मध्वासवः; शीधु; सुरा; मदिरा; काकोली; आम्रातकफलं; शतावरी; द्राक्षा। १२९

स्वाध्यायः पुं. [अध्ययनम् अध्यायः । अधि+इङ+'इङश्च' इति घञ् । सुष्ठु आवृत्य अध्यायः वेदाध्ययनं यस्येति वा] वेदः; श्रुतिः; आम्नायः; छन्दः; आगमः; आवृत्य वेदाध्ययनं; जपः; जापः; 'स्वाध्यायो जप इत्युक्तो वेदाध्ययनकर्मणि'—इति शब्दरत्नावली । ९

स्वानः पुं. [स्वननमिति, स्वन् शब्दे+'स्वनहसोर्वा' इति घञ्] शब्दः; ह्रादः; नादः; ध्वानः; स्वरः; स्वनिः; स्वनः; रवः; घोषः; 'या बिभर्त्ति कलवल्लकीगुणस्वानमानमतिकालिमाऽलया। नात्र कान्तमुपगीतया तया स्वानमानमतिकाऽलिमालया'—इति माघे (४।५७) । १३८

स्वान्तम् क्ली. [स्वन्यते स्मेति । स्वन्+क्त । 'क्षुब्धस्वान्तध्वान्तेति' वृद्धिः अनिट्कत्वं च निपात्यते] चेतः; चित्तं; मनः; हृदयं; मानसम्; 'तस्यालिम्पत शोकाग्निः स्वान्तं काष्ठमिव ज्वलन् । अलिप्तेवानिलः शीतो वने तं न त्वजिह्लयत्'—इति भट्टिः (६।२२) । गह्वरं; स्वस्य अन्ते पुं.– क्ली. । 'यो ह्यात्ममायाविभवं च पर्यगाद् यथा नभः स्वान्तमथापरे कुतः'—इति भागवते (२।६।३४) । शब्दिते त्रि. । ५३४

स्वापतेयम् क्ली. [स्वपतेरागतम्, ढञ् । यद्वा स्वपतौ धनस्वामिनि साधु । स्वपति+'पथ्यतिथिवसतिस्वपतेर्ढञ्' इति ढञ्, स्वागतादित्वान्नैजागमः] द्युम्नं; द्युम्नं; द्रव्यं; द्रविणं; राः; सारम्; अर्थः; स्वम्; ऋ (रि) क्थं; पृक्थं; वित्तं; धनं; हिरण्यं; वसु; विभवः; 'स्वापतेयमधिगम्य धर्मतः पर्यपालयमवीवृधं च यत् । तीर्थगामि करवै विधानतस्तज्जुषस्व जुहवानि चानले'—इति माघे (१४।९) । ८०

स्वापदः पुं. [श्वापद+पृषोदरादित्वात् साधुः] श्वापदः; व्याघ्रादिवनचरपशुः । २३३

स्वामी [न्] पुं. [स्वमस्यास्तीति, 'स्व+स्वामिन्नैश्वर्ये' इति आमिन्] गौरीपुत्रः; षण्मुखः; शक्तिपाणिः; क्रौञ्चारातिः; कार्तिकेयः; विशाखः; स्कन्दः; तारकारिः; कुमारः; सेनानीः; अग्निभूः; बाहुलेयः; गाङ्गेयः; ब्रह्मचारी; गुहः; बर्हिणवाहनः; महासेनः; महातेजाः; शरजन्मा; राजा; 'स्वाम्यमात्यः सुहृत्कोषो राष्ट्रदुर्गबलानि च । राज्याङ्गानि प्रकृतयः पौराणां श्रेणयोऽपि च'—इत्यमरः । विभुः; हरः; हरिः; गुरुः; भर्ता; वात्स्यायनमुनिः; गरुडः; अतीतकल्पीयार्हद्भेदः; परमहंसः, यथा श्रीधरस्वामिप्रभृतयः । १९

स्वामी [न्] त्रि. [स्वमस्यास्तीति । स्व+'स्वामिन्नैश्वर्ये' इति आमिन् प्रत्ययेन निपातितः] अधिपतिः; ईश्वरः; पतिः; ईशिता; अधिभूः; नायकः; नेता; प्रभुः; परिवृढः; अधिपः; अवमतिः; ईशः; आर्यः; पालकः । ३४३

स्वाराट् [ज्] पुं. [स्वः स्वर्गे राजते इति । स्वर्+राज्+क्विप्] सुरपतिः; इन्द्रः । ५३

स्वाहा स्त्री. [सुष्ठु आहूयन्ते देवा अनयेति । सु+आ+ह्वे+डा] अग्निभार्या; सा दक्षकन्या; अग्नायी; हुतभुक्प्रिया; अनलप्रिया; वह्निवधूः; ठिठः; 'स्वाहा देवहविर्दाने प्रशस्ता सर्वकर्मसु । पिण्डदाने स्वधा शस्ता दक्षिणा सर्वतो वरा ।' 'ॐ ह्रीं श्रीं वह्निजातायै देव्यै स्वाहेत्यनेन च । यः पूजयेच्च तां देवीं सर्वेष्टं लभते ध्रुवम्'—इति ब्रह्मवैवर्ते । बौद्धशक्तिविशेषः; तारा; महाश्रीः; ओङ्कारी; श्रीः; मनोरमा; तारिणी; जया; अनन्ता; शिवा; लोकेश्वरात्मजा; खदूरवासिनी; भद्रा; वैश्या; नीलसरस्वती; शङ्खिनी; महातारा; वसुधारा; धनन्ददा; त्रिलोचना; लोचनास्या । अव्य. देवहविर्दानमन्त्रः; श्रौषट्; वौषट्; वषट्; स्वधा; 'त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका'—इति देवीमाहात्म्ये (१।५४) । ६६

स्वाहापतिः पुं. [स्वाहायाः पतिः भर्ता] स्वाहाप्रियः; अग्निः । ६२

स्वाहाप्रियः पुं. [स्वाहायाः प्रियः] अग्निः; वह्निः; अनलः; पावकः । ६२

स्वित् अव्य.— प्रश्नः; 'किं ब्राह्मणा वै श्रेयांसो दितिजाः स्विद् विरोचन'–इति महाभारते (५।३५।८) । वितर्कः; 'अद्रेः शृङ्गं हरति पवनः किं स्विदित्युन्मुखीभिर्दृष्टोच्छ्रायश्चकितचकितं मुग्धसिद्धाङ्गनाभिः'—इति मेघदूते (१४) । पादपूरणे; 'स्वित् प्रश्ने च वितर्के च तथैव पादपूरणे'—इति मेदिनी । ८८०

स्वेदनिका स्त्री. [स्वेदनमस्त्यस्या इति । ठन्] कन्दुः; स्वेदनी; लौहमयपात्रं; भर्जनपात्रं; भर्जनशाला । ३११

स्वैरः त्रि. [स्वेन स्वातन्त्र्येण ईर्त्ते इति । ईर् गतौ+अच्, 'स्वादीरेरिणोः' इत्युक्त्या वृद्धिः] मन्दः; 'अथोत्तरः कुसुमैर्मन्त्रैर्माल्यैश्च विविधैस्तथा । आकीर्यमाणः संहृष्टो

नगरं स्वैरमागमत्'—इति महाभारते (४।६६।४९)। स्वच्छन्दः; 'अव्याहतैः स्वैरगतैः स तस्याः सम्राट् समाराधनतत्परोऽभूत्'—इति रघौ (२।५)। वृथालापः; 'नैवान्यथेदं भविता पितरेवं ब्रवीमि ते। नाहं मृषा ब्रवीम्येव स्वैरेष्वपि कुतः शपन्'—इति महाभारते (१।४२।२)। ८३३

स्वैरिणी स्त्री. [स्वेनव ईरितुं शीलमस्याः। स्व+ईर्+णिनि, ङीप्। स्वादीरेरिणोरिति वृद्धिः] व्यभिचारिणी; सा तु चतुःपुरुषगामिनी; पांशुला; बन्धकी; असती; पुंश्चली; इत्वरी; धर्षिणी; कुलटा; अविनीता; अभिसारिका; 'पाण्डुस्तु पुनरेवैनां पुत्रलोभान्महायशाः। वक्तुमैच्छद्धर्मपत्नीं कुन्ती त्वेनमथाब्रवीत्। नातश्चतुर्थं प्रसवमापत्स्वपि वदन्त्युत। अतः परं स्वैरिणी स्याद्बन्धकी पञ्चमे भवेत्'—महाभारते (१।१२३।७३-७४)। ४९६

ह

हंसः पुं. [हन्ति सुन्दरं गच्छति। हन् हिंसागत्योः+ 'वृतृवदिहनीति' स] भानुः; रविः; आदित्यः; अंशुः; सूर्यः; 'त्वं हंसः सविता भानुरंशुमाली वृषाकपिः'—इति महाभारते (३।३।६१)। (२५१) पक्षिविशेषः; श्वेतगरुत्; चक्राङ्गः; मानसौकाः; कलकण्ठः; सितच्छदः; सितपक्षः; सरःकाकः; पुरुदंशकः; धवलपक्षः; मानसालयः; 'स्निग्धं हिमं गुरु वृष्यं मांसं जलपक्षिणां तु वातघ्नम्। तेष्वपि च हंसमांसं वृष्यतमं तिमिरहरं च'—इति राजनिर्घण्टः। निर्लोभनृपः; विष्णुः; 'शुचिश्रवा हृषीकेशो घृतार्चिर्हंस उच्यते'—इति महाभारते (३।३।६१)। परमात्मा; मत्सरः; योगिभेदः; मन्त्रभेदः; गुरुः; पर्वतः; तुरङ्गमप्रभेदः; शिवः; विशुद्धः; अग्रतः स्थितः; श्रेष्ठः; गोविशेषः; 'सितवर्णः पिङ्गाक्षस्ताम्रविषाणेक्षणो महावक्त्रः। हंसो नाम शुभफलो यूथस्य विवर्द्धनः प्रोक्तः'—इति बृहत्संहितायाम् (६१।१७)। जरासन्धनृपतेः सेनापतिविशेषः; 'स तु सेनापतिं राजा सस्मार भरतर्षभ!, कौशिकं चित्रसेनं च तस्मिन् युद्ध उपस्थिते। ययोस्ते नामनी राजन्! हंसेति डिम्भकेति च। पूर्वं संकथिते पुंभिर्नृलोके लोकसत्कृते'—इति महाभारते (२।२२।३१-३२)। मेरोरुत्तरस्थपर्वतविशेषः; 'शङ्खकूटोऽथ ऋषभो हंसो नागस्तथा परः। कालञ्जराद्याश्च तथा उत्तरे केशराचलाः'—इति विष्णुपुराणे (२।२।२८)। ३७

हंसकः पुं. [हंस इव कायति, मधुरध्वनित्वात्] पादकटकः; सिञ्जिनी; तुलाकोटिः; नूपुरं; मञ्जीरः; स्त्रीचरणाभरणम्; 'पादाङ्गदं तुलाकोटिर्मञ्जीरो नूपुरोऽस्त्रियाम्। हंसकः पादकटकः किङ्किणी क्षुद्रघण्टिका'—इत्यमरः (२।६।१०९)। हंसः; राजहंसः [हंस+स्वार्थे कन्] मरालः; 'सरित इव सविभ्रमप्रयातप्रणदितहंसकभूषणा विरेजुः'—इति माघे (७।२३)। ५६१

हंसकान्ता स्त्री. [हंसस्य कान्ता पत्नी] हंसभार्या; चक्राङ्गी; वरटा; चक्राकी; वरटी; सरःकाकी; हंसिका; वारला; हंसयोषित्; वरला; मराली; मञ्जुगमना; मृदुगामिनी। २५१

हंसपादम् क्ली.–पुं. [हंसस्य पाद इव वर्णो यस्य] हिङ्गुलं; कुरुविन्दम्; 'हिङ्गुलं दरदं म्लेच्छमिङ्गुलं चूर्णपारदम्। दरदस्त्रिविधः प्रोक्तश्चर्मारः शुकतुण्डकः। हंसपादस्तृतीयः स्यात् गुणवानुत्तरोत्तरम्। चर्मारः शुक्लवर्णः स्यात् सपीतः शुकतुण्डकः। जवाकुसुमसङ्काशो हंसपादो महोत्तमः'—इति भावप्रकाशः। पुं. हंसचरणः। ६२१

हंहो अव्य.— सम्बोधनम्; आमन्त्रणम्; आह्वानम्; 'तां गामृपिः स्यूमरश्मिः प्रविश्य यतिमब्रवीत्। हंहो वेदा यदि मता धर्माः केनापरे मताः'—इति महाभारते (१२।२६७।९)। दर्पः; दम्भः; प्रश्नः। ८८३

हठः पुं. [हठ्+पुंसीति घ] प्रसभः; बलात्कारः; प्रस्नी; हठयोगः; 'अशेषतापतप्तानां समाश्रयमठो हठः। अशेषयोगयुक्तानामाधारकमठो हठः'—इति हठयोगप्रदीपिकायाम् (१।१०)। ७५९

हतकः पुं. [हत इव+कन्] आक्षेपः; नीचलोकः; 'देव अजातशत्रो अद्यापि दुर्योधनहतकः'—इति साहित्यदर्पणे (६।३९५)। ३७८

हनुः पुं.–स्त्री. [हन्ति कठिनद्रव्यादिकमिति। हन्+ 'शृस्वृस्निहीति' उ स च नित्] कपोलद्वयपरमुखभागः; यत्र जम्भाख्या दन्ता जायन्ते। गण्डः; गल्लः; कपोलः; क्ली. श्मश्रु; जानु; गुदं; स्त्री. [हन्ति पुरुषमिति। हन्+ड] हट्टविलासिनी; रोगः; अस्त्रं; मृत्युः। ५२२

हन्त अव्य.— विषादः; शोचनं; खेदः; 'रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातम्, भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पद्मजालम्। इत्थं विचिन्तयति कोषगते द्विरेफे, हा हन्त! हन्त!! नलिनीं गज उज्जहार'–इति भ्रमराष्टके (८)। 'काचमूल्येन विक्रीतो हन्त! चिन्तामणिर्मया'—इति रामायणे। हर्षः; सम्प्रहर्षः; अनुकम्पा; दया; 'हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः। प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ! नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे'––इति गीतायाम् (१०।१९)। वाक्यारम्भः; अर्तिः; वादः; सम्भ्रमः। ८७५

हयः पुं. [हयति गच्छतीति। हय्+अच्] तुरगः; घोटकः; अश्वः; 'हयायुर्वेदमाख्यास्ये हयैः सर्वार्थरक्षणम्। काकुटी कृष्णजिह्वश्च कृष्णाख्यः कृष्णतालुकः'—इति हयायुर्वेदः। ४३६

हयमारः पुं. [हयं मारयतीति। हय+मृ+णिच्+ण्वुल्] हयमारकः; करवीरः; वृक्षविशेषः; हयारिः। १९४

हरः पुं. [हरति पापानीति। हृ+अच्] शिवः; शङ्करः; शम्भुः; महादेवः; 'स सेनां महतीं कर्षन् पूर्वसागरगामिनीम्। बभौ हरजटाभ्रष्टां गङ्गामिव भगीरथः'—इति रघौ (४।३२)। अग्निः; गर्दभः; हरणं; त्रि. हरणकर्ता; 'एते वयं न्यासहरा रसौकसां गतह्रियो गदया द्रावितास्ते'—इति भागवते (३।१८।११)। ११

हरिः पुं. [हरति पापानीति। हृ+'हृपिषिरुहीति' इन्] सूर्यः; विष्णुः (२३); 'हरिरिव युगदीर्घैर्दोर्भिरंशैस्तदीयैः पतिरवनिपतीनां तैश्चकाशे चतुर्भिः'—इति रघौ (१०।८६)। (५२) सुरपतिः; इन्द्रः; 'यन्ता हरेः सपदि संहृतकार्मुकज्यमापृच्छ्य राघवमनुष्ठितदेवकार्यम्'—इति रघौ (१२।१०३)। (७२) धर्मराजः; यमः। (७६) पवनः; वायुः। (२१४) मृगपतिः; सिंहः; 'स न्यस्तशस्त्रो हरये स्वदेहमुपानयत् पिण्डमिवामिषस्य'—इति रघौ (२।५९)। (२३१) कपिः; वानरः। (६६२) मण्डूकः; भेकः। (७३५) पिङ्गलवर्णः; कद्रुः; कडारः; पिङ्गलः; कपिलः। (८३६) अर्कः; आदित्यः; सूर्यः। मर्कटः; कपिः; वानरः। मण्डूकः; भेकः। वासवः; इन्द्र; विष्णुः; वायुः; पवनः। तुरङ्गः; घोटकः; अश्वः; 'ततः स हरिभिर्युक्तं जाम्बूनदपरिष्कृतम्। मेघनादिनमारुह्य श्रिया परमया ज्वलन्'—इति महाभारते (३।१६६।५)। सिंहः; मृगारिः; रघौ (२।५९)। शीतांशुः; चन्द्रः; चन्द्रमाः; यमः; धर्मराजः; अन्तकः; शुकपक्षी; सर्पः; शिवः; ब्रह्मा; किरणः; वर्षविशेषः; मयूरः; कोकिलः; हंसः; अग्निः; भर्तृहरिः; हरिद्वर्णः; त्रि. [हरति नेत्रदुःखमिति। हृ+इन्] पिङ्गलवर्णः; हरिद्वर्णः; 'शनैस्तमक्षणामनिमेषवृत्तिभिर्हरिं विदित्वा हरिभिश्च वाजिभिः। अवोचदेनं गगनस्पृशा रघुः स्वरेण धीरेण निवर्तयन्निव'–इति रघौ (३।४३)। पीतवर्णः। ३५

हरिचन्दनम् पुं.– क्ली. [हरेरिन्द्रस्य प्रियं चन्दनम्] देवतरुविशेषः; सुरतरुभेदः; 'पञ्चैते देवतरवो मन्दारः पारिजातकः। सन्तानः कल्पवृक्षश्च पुंसि वा हरिचन्दनम्'—इत्यमरः। चन्दनविशेषः; तैलपर्णिकं; गोशीर्षं; सुरार्हं; हरिगन्धं; दिव्यम्; इन्द्रचन्दनं; दिविजं; महागन्धं; नन्दनजं; लोहितजम्; 'हरिचन्दनं तु दिव्यं हिमं तदिह दुर्वहं मनुजैः। पित्ताटोपविलोपि वमथुभ्रमशोषमान्द्यमेदोहृत्'—इति राजनिर्घण्टः। पीतचन्दनम्, 'कालीयकं तु कालीयं पीताभं हरिचन्दनम्। हरिप्रियं कालसारं तथा कालानुसार्यकम्'—इति भावप्रकाशः। चन्दनविशेषः; 'घृष्टं च तुलसीकाष्ठं कर्पूरागुरुयोगतः। अथवा केशरैर्योज्यं हरिचन्दनमुच्यते'—इति पाद्मे। क्ली. [हरिचन्दनं तद्वद्वर्णोऽस्त्यस्येति+अच्] ज्योत्स्ना; कुङ्कुमं; पद्मकेशरं; कान्ताङ्गम्। १३५

हरिणः पुं. [हरति मनः, ह्रियते गीतादिना वा। हृ+'शास्त्याहृञविम्य इनच्' इति इनच्] पशुविशेषः; मृगः; कुरङ्गः; वातायुः; अजिनयोनिः; सारङ्गः; चलनः; पृषत्; भीरुहृदयः; मयुः; चारुलोचनः; जिनयोनिः; कुरङ्गमः; ऋष्यः; ऋश्यः; रिष्यः; रिश्यः; एणः; एणकः; कृष्णतारः; सुलोचनः; पृषतः; 'हरिणः शीतलो बद्धविण्मूत्रो दीपनो लघुः। रसे पाके च मधुरः सुगन्धिः सन्निपातहा। एणः कषायो मधुरः पित्तासृक्कफनाशनः। संग्राही रोचनो हृद्यो बलकृज्ज्वरनाशनः'—इति राजवल्लभः। शुक्लवर्णः; विष्णुः; सूर्यः; हंसः; शिवः; 'आषाढश्च सुषाढश्च ध्रुवोऽथ हरिणो हरः'—इति महाभारते (१३।१७अ-११९)। ऐरावतवंशोद्भूतनागविशेषः; 'पारावतः पारिजातः पाण्डरो हरिणः कृशः। विहङ्गः शरभो मेदः

प्रमोदः संहतापनः। ऐरावतकुलादेते प्रविष्टा हव्यवाहनम्'—इति महाभारते (१।५७।११)। पाण्डुवर्णः; (७३२) त्रि. पाण्डुरः; पाण्डुः; पाण्डरः; अवदातः; 'स भोगान् विविधान् भुञ्जन् रत्नानि विविधानि च। कथितो धृतराष्ट्रस्य विवर्णो हरिणः कृशः'—इति महाभारते (१।१।१३५)। २३०

हरिणी स्त्री. [हरिण+ङीष्] हिरण्मयी प्रतिमा; स्वर्णप्रतिमा; सुवर्णमूर्तिः; (७३४) पालाशः; हरित्; हरिता [हरित+ङीष् तस्य न]; शुकाभा (७३८); चित्रिणी; नारीभेदः; मृगी; 'धनुर्भृतोऽप्यस्य दयार्द्रभावमाख्यातमन्तःकरणैर्विशङ्कैः। विलोकयन्त्यो वपुरापुरक्ष्णां प्रकामविस्तारफलं हरिण्यः'—इति रघौ (२।११)। वृत्तविशेषः; 'नसमरला गः षड्वेदैर्हयैर्हरिणी मता।' स्वर्णयूथी; तरुणी; वरस्त्री; सुराङ्गनाभेदः; 'चरतः किल दुश्चरं तपस्तृणविन्दोः परिशङ्कितः पुरा। प्रजिघाय समाधिभेदिनीं हरिरस्मै हरिणीं सुराङ्गनाम्'—इति रघौ (८।७९)। १३५

हरित् स्त्री. [हृ+इति] आशा; ककुप्; ककुभा; काष्ठा; दिशा; दिक्; 'ततार विद्याः पवनातिपातिभिर्दिशो हरिद्भिर्हरितामिवेश्वरः'—इति रघौ (३।३०)। हरिद्रा; पुं. नीलपीतमिश्रितवर्णः; पालाशः; हरितः; श्यामः; अश्वविशेषः; सूर्याश्वः; 'उत्पाटय मेरुशृङ्गाणि क्षुण्णानि हरितां खुरैः। आक्रीडपर्वतास्तेन कल्पिताः स्वेषु वेश्मसु'—इति कुमारे (२।४३)। मुद्गः; सिंहः; सूर्यः; विष्णुः; हरिद्वर्णविशिष्टे त्रि.। पुं.–क्ली. तृणम्। (४३६) पुं. [हरति नयनमनांसीति। हृ+'हृसृरुहियुषिभ्य इतिः' इति इति] तुरगः; घोटकः; अश्वः। १००

हरितः त्रि. [हृ+इतच्] हरिद्वर्णयुक्तः; शाद्वलः; 'परिसरविषयेषु लीढमुक्ताः हरिततृणोद्गमशङ्कया मृगीभिः'—इति किराते (५।३८)। १५९, ७३४

हरितालो स्त्री. [हरिताल+ङीष्। हरिता आली पङ्क्तिर्वा] दूर्वा; हरितालिका; आकाशरेखा; खड्गलता; पार्वती; तन्निमित्तकतृतीयाव्रतं; सौरभाद्रपदीयनक्षत्रविशेषयुक्ता चतुर्थी; 'भाद्रे मासि सिते पक्षे वसुदैवतसंयुता। हरिताली चतुर्थी स्यात् शर्वाणीप्रीतिदा सदा। भाद्रे मासि सिते पक्षे चतुर्थ्याख्याभियोगतः। ददाति किल्विषं घोरं दृष्टचन्द्रो न संशयः। करचित्रानलर्क्षेषु हरौ सूर्ये चतुर्थिका। हरिताली समाख्याता रुद्राणीप्रीतिदा सदा'—इति राजमार्तण्डः। १९१

हरिदश्वः पुं. [हरितः अश्वाः यस्य] सूर्यः; 'पुपोष वृद्धिं हरिदश्वदीधितेरनुप्रवेशादिव बालचन्द्रमाः'—इति रघौ (३।२२)। अर्कवृक्षः। ३६

हरिद्रारागः त्रि. [हरिद्राया राग इव रागो यस्य। अचिरस्थायित्वादेवास्य तथात्वम्] अस्थिरसौहृदः; क्षणमात्रानुरागी; हरिद्रारागकः। ३७५

हरिन्मणिः पुं. [हरिद्वर्णो मणिः] अश्मगर्भः; मरकतमणिः; 'हरिन्मणिश्यामतृणाभिरामैर्गृहाणि नीध्रैरिव यत्र रेजुः'—इति माघे (३।४९)। १७५

हरिप्रिया स्त्री. [हरेः प्रिया] लक्ष्मीः; श्रीः; कमला; पद्मा; पद्मवासा; क्षीरोदतनया; मा; हरिवल्लभा; इन्दिरा; तुलसी; द्वादशीतिथिः; पृथिवी। ३१

हरिवान् [त्] पुं. [हरिः हरिद्वर्णोऽश्वोऽस्त्यस्येति। मतुप्, 'छन्दसीरः' इति मस्य व] मघवा; मरुत्वान्; शचीपतिः; इन्द्रः; हरिविशिष्टे त्रि.। 'जुषाणे बर्हिर्हरिवान्न इन्द्रः प्राचीनं सीदत्प्रदिशा पृथिव्याः'—इति वाजसनेयसंहितायाम् (२०।३९)। ५४

हरिहयः पुं. [हरिः हयो यस्य] मघवा; हरिवान्; इन्द्रः; 'द्वितीयस्तु ततस्तेषां श्रीमान् हरिहयोपमः। अपराजित इत्येव स बभूव नराधिपः'—इति महाभारते (१।६७।५०)। सूर्यः; कार्तिकेयः; गणेशः। ५२

हरीतकी स्त्री. [हरिम् पीतवर्णफलमिता प्राप्ता इति हरीता, ततः संज्ञायां कन्, गौरादित्वाद् ङीष्] वृक्षविशेषः; अभया; अव्यथा; पथ्या; वयःस्था; पूतना; अमृता; हैमवती; चेतकी; श्रेयसी; शिवा; सुधा; कायस्था; कन्या; रसायनफला; विजया; जया; चेतनकी; रोहिणी; प्रपथ्या; जीवप्रिया; जीवनिका; भिषग्वरा; जीवन्ती; प्राणदा; जीव्या; देवी; दिव्या; 'उन्मीलिनी बुद्धिबलेन्द्रियाणां निर्मूलिनी पित्तकफानिलानाम्। विस्रंसिनी मूत्रशकृन्मलानां हरीतकी स्यात् सह भोजनेन।' 'अन्नपानकृतान् दोषान् वातपित्तकफोद्भवान्। हरीतकी हरत्याशु भुक्तस्योपरि योजिता। लवणेन कफं हन्ति पित्तं हन्ति सशर्करा। घृतेन वातजान् रोगान् सर्वरोगान् गुडान्विता'—इति भाव-

प्रकाशः । ६१८

हर्म्यम् क्ली. [हरति जनमनांसीति । हृ+अघ्न्यादित्वाद् यत् मुट् च] धनिनां वासः; धनवतां गृहम्; 'हर्म्यं चाक्लेदि भूमिर्नभसि च शयनं शीकरोष्णप्रहीणे'—इति वैद्यके । २९३

हर्यक्षः पुं. [हरि पिङ्गलं अक्षि यस्य । षच्] हरिः; मृगपतिः; पञ्चाननः; केसरी; मृगारिः; सिंहः; कुबेरः; पिङ्गलनेत्रे त्रि. । 'तथैवाबद्धकवचं कनकोज्ज्वलकुण्डलम् । हर्यक्षं वृषभस्कन्धं यथास्य पितरं तथा'—इति महाभारते (३।३०७।५) । २१४

हर्षः पुं. [हृष् तुष्टौ+घञ्] इष्टश्रवणजन्यसुखम्; आह्लादः; मुत्; प्रीतिः; प्रमदः; प्रमोदः; आमोदः; सम्मदः; आनन्दथुः; आनन्दः; शर्म; शातं; सुखं; मुदा; मुदिता; आनन्दिः; नन्दिः; सातं; सौख्यम्; 'मुत् प्रीतिः प्रमदामोदसम्मोदमोदसम्मदाः । प्रमोदो हर्ष इत्येव हर्षपर्याय ईरिताः । आनन्दो नन्दथुर्नन्दः सुखमानन्दथुर्मुदा । सौख्यं शर्मोपजोषः स्यादानन्दं जोषमित्यपि । मुदादिजोषपर्यन्तमेकपर्याय इत्यपि'—इति शब्दरत्नावली । रोमाञ्चः; 'हृष्येते हर्षयुतौ भवतः हर्षश्च रोमाञ्चप्रायः'—इति विजपरक्षितः । १२३

हलम् क्ली. [हलति विलिखति भूमिमिति । हल्+अच्] लाङ्गलं; गोदारणं; सीरः; कुन्तलः; 'पूर्वाग्नियाम्यफणिपित्र्यशिवान्यभेषु रिक्ताष्टमीविगतचन्द्रतिथिं विहाय । द्व्यङ्गालिगोसमुदये विकुजार्किवारे शस्तेन्दुयोगकरणेषु हलप्रवाहः'—इति दीपिकायाम् । 'हलं तु लाङ्गलं गोदारणं च सीरकुन्तलौ'—इति जटाधरः । ५७५

हलमुखम् क्ली. [हलस्य मुखं विदारणसाधनम्] पोत्रं; हलस्य तीक्ष्णाग्रलोहावयवः । ८३२

हलायुधः पुं. [हलमायुधं यस्य] हलधरः; हलभृत्; बलदेवः; बलरामः; बलभद्रः; रेवतीरमणः; रामः; कामपालः; 'ततस्ते तद्वचः श्रुत्वा ग्राह्यरूपं हलायुधात् । तूष्णींभूतास्ततः सर्वे साधु साध्विति चाब्रुवन्'—इति महाभारते (१।२२१।२३) । २९

हलाहलः पुं. [हलमिव आ समन्तात् सर्वाङ्गेषु हलति कर्षतीति । हल+आ+हल्+अच्] विषभेदः; 'समौ कञ्चुकनिर्मोकौ क्ष्वेडस्तु गरलं विषम् । पुंसि क्लीबे च काकोलकालकूटहलाहलाः'—इत्यमरः । 'हालाहलं हलाहलं हाहलं च हलाहलम्'—इति रुद्रः । 'मधु तिष्ठति वाचि योषितां हृदये हालाहलमेव केवलम् । अतएव निपीयतेऽधरो हृदयं मुष्टिभिरेव ताड्यते'—इति कुलचरितेऽश्वघोषः । मूलजविषभेदः; 'सङ्कोचं मर्कटं शृङ्गिविषं हलाहलं तथा । एवमादीनि चान्यानि मूलजानि स्थिराणि च'—इति चरकः । पुं. [हलाहलोऽस्यास्तीति, अच्] ब्रह्मसर्पः; अञ्जना; बुद्धविशेषः । ६४७

हविः [स्] क्ली. [हूयतेऽनेनेति । हु+'अर्चिशुचिहुसृपीति' इसि] हवनीयद्रव्यं; सान्नाय्यं; घृतम्; 'न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति । हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्द्धते'—इति महाभारते (१।८५।११) । जलं; विष्णुः; महाभारते (१३।१४९।५२) । शिवः; महाभारते (१३।१७।१०२) । ४१६

हव्यपाकः पुं. [हव्याय पाको यस्य] चरुः । ४१६

हव्यवाहः पुं. [हव्यं वहतीति । हव्य+वह्+अण्] अग्निः; अनलः; हव्यवाहनः; हव्याशः; हुताशनः; हव्याशनः; हसनीमणिः; 'एतच्छ्रुत्वा हुतवहाद्भगवान् सर्वलोकभृत् । हव्यवाहमिदं वाक्यमुवाच प्रहसन्निव'—इति महाभारते (१।२२४।५८) । ६२

हसन्तिका स्त्री. [हसतीति, हस्+शतृ+ङीप्, हसन्ती+कन्+टाप्] हसनी; हसन्ती; अङ्गारधानी; अङ्गारधानिका; अङ्गारशकटी । ३१४

हसन्ती स्त्री. [हसतीति । हस्+शतृ+ङीप्] अङ्गारधानिका; हसन्तिका; मल्लिकाविशेषः; शाकिनीभेदः; हास्यं कुर्वती; 'अस्तीहोज्जयिनी नाम नगरी भूषणं भुवः । हसन्तीव सुधाधौतैः प्रासादैरमरावतीम्'—इति कथासरित्सागरे (११।३१) । ३१४

हसितः त्रि. [हस्+क्त] विकसितः; कृतहासः; क्ली. हास्यम्; 'हसितं शुभदमकम्पं सनिमीलितलोचनं च पापस्य । दुष्टस्य हसितमसकृत् सोन्मादस्यासकृत् प्रान्ते'—इति बृहत्संहितायाम् (६८।७४) । कामदेवधनुः; हास्यकरणम्; 'अथ कर्मगतिं चित्रां दृष्ट्वास्य हसितं मया'—इति कथासरित्सागरे (५९।१५९) । परिहासः; 'कीर्तितानि हसितेऽपि तानि यं व्रीडयन्ति चरितानि

हसितं तथातिहसितं च षड्भेदाः। ईषद्विकासि नयनं स्मितं स्यात् स्पन्दिताधरम्। किञ्चिल्लक्ष्यद्विजं तत्र हसितं कथितं बुधैः। मधुरस्वरं विहसितं सांसशिरःकम्पमवहसितम्। अपहसितं सास्राक्षं विक्षिप्ताङ्गं भवत्यतिहसितम्'—इति साहित्यदर्पणे। ९२

हि अव्य.— विशेषः; हेतुः; 'असंशयं क्षत्रपरिग्रहक्षमा यदार्यमस्यामभिलाषि मे मनः। सतां हि सन्देहपदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तःकरणप्रवृत्तयः'–इति शाकुन्तले १ अङ्के। अवधारणं; पादपूरणं; प्रश्नः; 'नाभिवादयसे माद्य न च मामभिभाषसे। किञ्च शेषे तु भूमौ त्वं वत्स! किं कुपितो ह्यसि?।' हेत्वपदेशः; सम्भ्रमः; असूया; शोकः। ८८१

हिंसा स्त्री. [हिंसनमिति। हिंस्+अ+टाप्] घातः; मारणं; चौर्यादिकर्म (८१०); 'हिंसा चौर्यादिकर्म च'–इत्यमरः। 'हिंसा चैव न कर्तव्या वैधहिंसा तु राजसी। ब्राह्मणैः सा न कर्तव्या यतस्ते सात्त्विका मताः।' ४७५

हिंस्रः त्रि. [हिनस्तीति। हिंस् + 'नमिकम्पीति' र] हिंसाशीलः; शरारुः; घातुकः; हिंसकः; हन्ता; शार्वरः; 'कृपा कार्या सतां शश्वदहिंस्रेषु च जन्तुषु। हिंसायां न हि दोषश्च हिंस्राणां च व्रजेश्वर'--इति ब्रह्मवैवर्ते। पुं. घोरः; भीमसेनः; हरः। ३७२

हिंस्रपशुः पुं. [हिंस्रः पशुः] हिंसकजन्तुः; व्याडः; हिंस्रकः; शिविः; श्वापदः; व्यालः। ८३२

हिङ्गु क्ली.–पुं. [हिनोति प्रहिणोति गन्धम्। हि गतिवृद्धयोः+मृगय्वादित्वात् साधु] मूलविशेषनिर्यासः; स तु पारस्यखोरासानमुलतानादिदेशे भवति। सहस्रवेधि; जतुकं; वाह्लीकं; रामठं; वाह्लिकं; जन्तुघ्नं; पिण्याकं; बाह्ली; सहस्रवेधी; गृहिणी; मधुरा; सूपधूपनं; जतु; केशरम्; उग्रगन्धं; भूतारिः; जन्तुनाशनं; सूपाङ्गं; रक्षोघ्नम्; उग्रवीर्यम्; अगूढगन्धं; जरणं; भेदनं; दीप्तम्; 'रामठं हिङ्गुरुच्यते'—इति गारुडे २०८ अध्याये। 'हिङ्गूष्णं पाचनं रुच्यं तीक्ष्णं वातवलासहृत्। रसे पाके च कटुकं स्निग्धं च वह्निदीपनम्। शूलगुल्मोदरानाहकृमिघ्नं पित्तवर्द्धनम्'– इति भावप्रकाशः। 'हिङ्गु तीक्ष्णं कटुरसं शूलाजीर्णविबन्धनुत्। लघूष्णं पाचनं स्निग्धं दीपनं कफवातजित्'—इति राजवल्लभः। वंशपत्री; काकादनी; 'हिङ्गु काकादनी मता'—इति गारुडे २०८ अध्याये। ६१७

हिङ्गुलः पुं.– क्ली. [हिङ्गुं तद्वर्णं लातीति। हिङ्गु+ला+क] रागद्रव्यविशेषः; हिङ्गुलुः; हिङ्गुलं; रक्तं; मर्कटशीर्षं; दरदः; रसः; हंसपादः; कुरुविन्दः; हिङ्गुलिः; रक्तपारदः; बर्बरं; सुरङ्गं; सुपरं; रञ्जनं; दरदं; म्लेच्छं; चित्राङ्गं; चूर्णपारदं; चर्मारकं; मणिरागं; रसोद्भवं; रञ्जकं; रसगर्भम्; 'हिङ्गुलं दरदं म्लेच्छं चित्रासं चूर्णपारदम्। दरदस्त्रिविधः प्रोक्तश्चर्मारः शुकतुण्डकः। हंसपादस्तृतीयः स्याद् गुणवानुत्तरोत्तरः। चर्मारः शुक्लवर्णः स्यात् सपीतः शुकतुण्डकः। जवाकुसुमसङ्काशो हंसपादो महोत्तमः। तिक्तं कषायं कटु हिङ्गुलं स्यान्नेत्रामयघ्नं कफपित्तहारि। हृल्लासकुष्ठज्वरकामलांश्च प्लीहामवातौ च गरं निहन्ति। ऊर्ध्वपातनयुक्त्या तु डमरुयन्त्रपाचितम्। हिङ्गुलं तस्य सूतं तु शुद्धमेव न शोधयेत्'—इति भावप्रकाशः। ६२१

हिङ्गुलिः पुं. [हिङ्गु इव वर्णं लातीति। ला+कि] हिङ्गुलः। ६२१

हिङ्गुलुः पुं.–क्ली.— हिङ्गुलः; 'हिङ्गुले हिङ्गुलुर्याति दरदः शुकतुण्डकः। रसगन्धकसम्भूतो हिङ्गुलो दैत्यरक्तकः'—इति वैद्यकरसेन्द्रसारसङ्ग्रहः। ६२१

हिञ्जीरः पुं.– हस्तिपादबन्धः; निगडः; शृङ्खलः; अन्दुकः; 'बिन्दुजालं पुनः पद्मं शृङ्खलो निगडोऽन्दुकः। हिञ्जीरश्च पादपाशो वारिस्तु गजबन्धभूः'—इति हेमचन्द्रः। २२३

हिण्डिरः पुं.— हिण्डीरः; फेनः। ६६८

हिण्डीरः पुं. [हिण्डते इतस्ततो गच्छतीति। हिण्ड्+ईरन्] समुद्रफेनः; 'एतद्विभाति चरमाचलचूडचुम्बि हिण्डीरपिण्डरुचि शीतमरीचिबिम्बम्। उज्ज्वालितस्य रजनीं मदनानलस्य धूमं दधत्प्रकटलाञ्छनकैतवेन' —इति साहित्यदर्पणे (१०।६८३)। वार्ताकुः; पुरुषः; रुचकं; क्ली. दाडिमम्। ६६८

हितम् त्रि. [हि गतिवृद्धयोः, डुधाञ् धारणपोषणयोः वा+क्त] पथ्यं; गतं; धृतम्; इष्टसाधनं; मङ्गलम्; 'गच्छतस्तिष्ठतो वापि जाग्रतः स्वपतो न यत्। सर्वसत्त्वहितार्थाय तत् पशोरिव चेष्टितम्। अहितहितविचारशून्यबुद्धेः श्रुतिसमयैर्बहुभिर्विवर्जितस्य। उदरभरणमात्रतुष्टबुद्धेः पुरुषपशोः पशोश्च को विशेषः' —इति गारुडे ११५ अध्यायः। मित्रम्; 'हितसमरिपु-

संज्ञा ये निसर्गे निरुक्ता, अधिहितहितमध्यास्तेऽपि तत्कालमित्रे:'—इति ज्योतिस्तत्त्वम् । ४०६

हिमम् क्ली. [हन्+मक्, हन्तेर्हि च] आकाशवाष्पः; अवश्यायः; नीहारः; तुषारः; तुहिनं; प्रालेयं; मिहिका; इन्द्राग्निधूमः; खवाष्पः; रजनीजलम्; 'अथवा मृदु वस्तु हिंसितुं मृदुनैवारभते प्रजान्तकः । हिमसेकविपत्तिरत्र मे नलिनी पूर्वनिदर्शनं मता'—इति रघौ (८।४५) । शीतं; कर्पूरः; 'पुंसि क्लीवे च कर्पूरः सिताभ्रो हिमबालुकः । घनसारश्चन्द्रसंज्ञः हिमनामापि स स्मृतः'—इति भावप्रकाशः । त्रि. शीतगुणविशिष्टः; शीतलवस्तु; सुषीमः; शिशिरः; जडः; तुषारः; शीतलः; शीतः; 'अपराह्णे हिमाभिरद्भिः परिषिक्तगात्रः शालीनां षष्टिकानां च पयसा शर्करामधुरेणौदनमश्नीयात्'—इति सुश्रुतः । पुं. चन्दनवृक्षः; चन्द्रः; चन्द्रमाः; कर्पूरः; हेमन्तर्तुः; 'हिमशिशिरवसन्तग्रीष्मवर्षाशरत्सु स्तनतपनवनाम्भोहर्म्यगोक्षीरपानैः । सुखमनुभव राजंस्तद्द्विषो यान्तु नाशं दिवसकमललज्जाशर्वरीरेणुपङ्काः'—इति ऋतुसंहारः । हिमालयपर्वतः । ६५०

हिमसङ्घातः स्त्री. [हिमानां सङ्घातः संहतिः] हिमसमूहः ६५०

हिमसंहतिः स्त्री. [हिमानां संहतिः] हिमसमूहः; हिमानी; महद्धिमम्; 'बरफ' इति भाषा । ६५०

हिमानी स्त्री. [महद्धिममिति । 'हिमारण्ययोर्महत्त्वे' इत्युक्त्या ङीष् आनुक् च] हिमसंहतिः; महद्धिमम्; 'हिमान्यां बौद्धबाधाय पतन्त्यां प्रतिवत्सरम् । शीते दार्वाभिमारादौ षण्मासान् पार्थिवोऽवसत्'—इति राजतरङ्गिण्याम् (१।१९०) । यावनालशर्करा । ६५०

हिरण्मयः त्रि. [हिरण्य+मयट्, यलोपश्च] सुवर्णमयः; स्वर्णमयः; 'हिरण्मयी शाल्मलतेव जङ्गमा च्युता दिवः स्थास्नुरिवाचिरप्रभा'—इति भट्टिः (२।४७) । पुं. ब्रह्मा; क्ली. भारतवर्षादिनववर्षान्तर्गतवर्षविशेषः । १३१

हिरण्यम् क्ली. [हर्यति दीप्यते इति । हर्य गतिकान्त्योः+'हर्यतेः कन्यन् हिर च' इति कन्यन् हिरादेशश्च धातोः] धनं; वित्तं; (१७४) सुवर्णं; हेम; चन्द्रं; रुक्मम्; अयः; पेशः; कृशनं; लोहं; कनकं; काञ्चनं; भर्मं; अमृतं; मरुत्; दत्रं; जातरूपम् । धुस्तूरं; रेतः; द्रव्यं; वराटः; अक्षयम्; अकुप्यं; मानभेदः; रजतं; पुं. गुग्गुलुविशेषः; 'महिषाक्षो महानीलः कुमुदः पद्म इत्यपि । हिरण्यः पञ्चमो ज्ञेयो गुग्गुलोः पञ्च जातयः'—इति भावप्रकाशः । ८०

हिरण्यगर्भः पुं. [हिरण्यं हेममयाण्डं गर्भं उत्पत्तिस्थानमस्य] ब्रह्मा; षोडशमहादानान्तर्गतद्वितीयमहादानं; विष्णुः; सूक्ष्मशरीरसमष्टयुपहितचैतन्यं; प्राणात्मा; सूत्रात्मा । ६

हिरण्यरेताः [स्] पुं. [हिरण्यं रेतो यस्य] अग्निः; वह्निः; 'विभावसुश्चित्रभानुर्महात्मा हिरण्यरेता हुतभुक् कृष्णवर्त्मा'—इति महाभारते (१।५५।१०) । चित्रकवृक्षः; सूर्यः; शिवः । ६४

हिरण्यवाहः पुं. [हिरण्यं वहतीति । हिरण्य+वह्+अण्] शोणनदः; शिवः; शङ्करः; शम्भुः; महादेवः; उमापतिः । ६७२

हिरण्या स्त्री. — सप्तार्चिषो जिह्वाभेदः । ६८

हीनः त्रि. [ओहाक् त्यागे+क्त, 'ओदितश्च' इति नत्वम्, 'घुमास्थागापाजहातीति' ईत्वम्] गर्ह्यः; अधमः; कदर्यः; कीनाशः; किम्पचानः; मितम्पचः; कृपणः; क्षुल्लकः; क्लीवः; क्षुद्रः; 'आसनावसथौ शय्यामनुव्रज्यामुपासनम् । उत्तमेषूत्तमं कुर्याद् हीने हीनं समे समम्'—इति मनुः (३।१०७) । प्रतिवादिविशेषः; 'अन्यवादी क्रियाद्वेषी नोपस्थायी निरुत्तरः । आहूतप्रपलायी च हीनः पञ्चविधः स्मृतः'—इति व्यवहारतत्त्वम् । ऊनः; 'तया हीनं विधातर्मां कथं पश्यन्न दूयसे । सिक्तं स्वयमिव स्नेहाद् बन्ध्यमाश्रमपादपम्'—इति रघौ (१।७०) । ३४७

हीनवादी [न्] त्रि. [हीनं वदतीति । हीन+वद्+णिनि] वाक्यवर्जितः; अधरः; विरुद्धार्थवादी; 'पूर्ववादं परित्यज्य योऽन्यमालम्बते पुनः । वादसंक्रमणाज्ज्ञेयो हीनवादी स वै नरः'—इति नारदः । 'हीनवादी दण्ड्यो भवति न प्रकृतादर्थाद्धीयते'—इति मिताक्षरा । ३६४

हुडः पुं. [होडतीति । हुड्+क] मेषः; अविः; ऊर्णायुः; उरभ्रः; उरणः; वृष्णिः; मेण्ढः; लगुडः; सैन्याश्रयस्थानं; रथोपरि विण्मूत्रत्यागशृङ्गम् । २७९

हुतम् त्रि. [हु+क्त] अग्नौ प्रक्षिप्तं घृतादि; वष

कृतम्; 'अहमग्निरहं हुतम्'–इति गीतायाम् (९।१६)। तर्पितम्; 'प्रदक्षिणीकृत्य हुतं हुताशमनन्तरं भर्तुररुन्धतीञ्च'—इति रघौ (२।७१)। होमे क्ली.। ४१७

हुतवहः पुं. [वहतीति, वह्+अच्, हुतस्य वहः] अग्निः; वह्निः; हुताशः; हुतभुक्; अनलः; पावकः; 'एतच्छ्रुत्वा हुतवहाद् भगवान् सर्वलोककृत्। हव्यवाहमिदं वाक्यमुवाच प्रहसन्निव'—इति महाभारते (१।२२४।५८)। ६२

हुताशनः पुं. [हुतम् आहुतिद्रव्यम् अशनमस्य] अग्निः; हुतवहः; 'लक्षहोमे तु वह्निः स्यात् कोटिहोमे हुताशनः। पूर्णाहुत्यां मृडो नाम शान्तिके वरदः सदा'—इति तिथ्यादितत्त्वम्। 'आरोग्यं भास्करादिच्छेद्धनमिच्छेद्धुताशनात्। ज्ञानं तु शङ्करादिच्छेन्मुक्तिमिच्छेज्जनार्दनात्' –इति मत्स्यपुराणम्। शिवः; वटिकौषधविशेषः; 'एकद्विकं द्वादशभागयुक्तं योज्यं विषं टङ्कणभूषणं च। हुताशनो नाम हुताशनस्य करोति वृद्धिं कफजिन्नराणाम्' —इति वैद्यकरसेन्द्रसारसंग्रहे। ६४

हृच्छयः पुं. [हृदि शेते इति। हृद्+शी+'अधिकरणे शेतेः' इति अच्] कामदेवः; मदनः; मन्मथः; मारः; प्रद्युम्नः; 'तत्प्रसीद न मामार्तां विसर्जयितुमर्हसि। हृच्छयेन च सन्तप्तां भक्तां च भज मानद !'—इति महाभारते (३।४६।४२)। हृदयशायिनि त्रि.। 'जगत्पतिरनिर्देश्यः सर्वगः सर्वभावनः। हृच्छयः सर्वभूतानां ज्येष्ठो रुद्रादपि प्रभुः'—इति महाभारते (१३।८५।१७)। पुं. कामः; 'सकृद्यद्दर्शितं रूपमेतत्कामाय तेऽनघ !, मत्कामः शनकैः साधुः सर्वान् मुञ्चति हृच्छयान्'—इत भागवते (१।६।७)। 'हृच्छयान् कामान्' इति तट्टीकायां श्रीधरः। ३२

हृदयम् क्ली. [ह्रियते विषयैरिति। हृ+'वृह्रोः षुक्दुकौ च' इति कयन् दुक् च] हृत्; हृदयं; चेतः; चित्तं; मनः; स्वान्तं; मानसम्; 'चित्तं तु चेतो हृदयं स्वान्तं हृन्मानसं मनः'—इत्यमरः। 'उरस्यपि च बुक्कायां हृदयं मानसेऽपि च'—इति त्रिकाण्डशेषः। बुक्कं; वक्षः। ५३४

हृदयङ्गमम् क्ली. [हृदयं गच्छतीति। हृदय+गम्+खच् मुम् च] सङ्गतं; युक्तियुक्तवाक्यं; हृद्यार्थं; त्रि. मनोहरः; 'इति तेभ्यः स्तुतीः श्रुत्वा यथार्था हृदयङ्गमाः। प्रसादाभिमुखो वेधाः प्रत्युवाच दिवौकसः'—इति कुमारे (२।१६)। 'हृदयङ्गमाः मनोहराः' इति तट्टीकायां मल्लिनाथः। १४६

हृदयस्थानम् क्ली. [हृदयस्य स्थानम्] वक्षःस्थलं; क्रोडम्; उरः; वक्षः; वत्सं; भुजान्तरं; भुजमध्यं; वत्सः। ५२७

हृद्यः त्रि. [हृदयस्य प्रिय इति। हृदय+'हृदयस्य हृल्लेखयदण्लासेषु' इति यत् हृदादेशश्च] मनोहरः; मनोज्ञः; रुचिरः; पुं. वशकृद्वेदमन्त्रः; क्ली. गुडत्वक्; त्रि. हृज्जः; हृद्धितः; हृत्प्रियः; 'भक्ष्यं भोज्यं च विविधं मूलानि च फलानि च। हृद्यानि चैव मांसानि पानानि सुरभीणि च'—इति मनुः (३।२२७)। ६८९

हृद्यार्थम् क्ली.— हृदयङ्गमं; युक्तियुक्तवाक्यम्। १४६

हृल्लेखः पुं. [हृदयं लिखतीति, अण्। 'हृदयस्य हृल्लेखेति' हृदादेशः] औत्सुक्यं; ज्ञानं; तर्कः। ७४२

हृल्लेखा स्त्री. [हृल्लेख+अजादित्वात् टाप्] औत्सुक्यम्; आयल्लकम्; उत्कण्ठा; उत्कलिका; अरतिः; रणरणकम्। ७४२

हृषीकम् क्ली. [हृष्यत्यनेनेति। हृष्+'अनिहृषिभ्यां किच्च' इति ईकन् स च कित्] इन्द्रियं; स्रोतः; करणम्; 'न भारती मेऽङ्ग मृषोपलक्ष्यते न वै क्वचिन्मे मनसो मृषा गतिः। न मे हृषीकाणि पतन्त्यसत्पथे यन्मे हृदौत्कण्ठ्यवता धृतो हरिः'—इति भागवते (२।६।३२)। ५३५

हृषीकेशः पुं. [हृषीकाणाम् ईशः] विष्णुः; कृष्णः; अच्युतः; 'हृषीकाणि नियम्याहं यतः प्रत्यक्षतां गतः। हृषीकेश इति ख्यातो नाम्ना तत्रैव संस्थितः'—इति वाराहे। २३

हेतिः स्त्री. [हिनोति इति, हि+क्तिन् निपातनं च] अर्चिः; सूर्यकिरणः; [हन्यतेऽनयेति। हन्+'ऊतियूतिजूतिसातिहेतिकीर्तयश्च' इति क्तिन् निपातनं च] अस्त्रम् (४६२); 'दैत्यस्त्रीगण्डलेखानां मदरागविलोपिभिः। हेतिभिश्चेतनावद्भिरुदीरितजयस्वनम्' —इति रघौ (१०।१२)। अग्निशिखा; शिखा; तेजोमात्रं; साधनम्; 'सध्र्यङ् नियम्य यतयो यमकर्तहेतिं जह्युः स्वराडिव निपानखनित्रमिन्द्रः'—इति भागवते (२।७।४७)। 'कर्ता भेदः तन्निरासोऽकर्तः तत्र हेतिं साधनं जह्युः' इति तट्टीकायां श्रीधरस्वामी। पुं. असुरविशेषः;

'पुलोमा वृषपर्वा च प्रहेतिर्हेतिरुत्कलः । दैतेया दानवा यक्षा रक्षांसि च सहस्रशः'—भागवते (६।१०।२०)। ६५

हेतुः पुं. [हिनोति व्याप्नोति कार्यमिति । हि+'कमिमनिजनिगाभायाहिभ्यश्च' इति तु] कारणम्; निमित्तम्; 'प्रत्यहं देशदृष्टैश्च शास्त्रदृष्टैश्च हेतुभिः । अष्टादशसु मार्गेषु निबद्धानि थक् पृथक्'—इति मनुः (८।३) । तैजसधातुविशेषः; 'यसदं रङ्गसदृशं रीति हेतुश्च तन्मतम्'—इति भावप्रकाशः। ८४८,८७८,८८१

हेमम् क्ली. [हि+मन्] सुवर्णं; स्वर्णम्। १७३

हेमः पुं. [हि+मन्] कृष्णवर्णाश्वः; माषकपरिमाणं; बुधः; ययातिवंशजरुषद्रथपुत्रः; 'तितिक्षो रुषद्रथः पुत्रोऽभूत् तता हेमः हेमात् सुतपाः'—इति विष्णुपुराणे (४।१८।१)। ४३७

हेम [न्] क्ली. [हिनोति वर्द्धते स्फुटति वेति । हि+मनिन्] स्वर्णम्; 'हेम्नः संलक्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धिः श्यामिकापि वा'—इति रघौ (१।१०) । धुस्तूरं; केशरं; हिमः। १७३

हेमन्तः पुं.– क्ली. [हन्ति लोकान् शैत्येनेति । हन्+'हन्तेर्मुट् हि च' इति झच्, हिरादेशः मुडागमो गुणश्च] ऋतुविशेषः; स तु आग्रहायणपौषमासात्मकः; हेमनः; उष्मसहः ; शरदन्तः ; हिमागमः; 'हेमन्ते शिशिरे चैव पुण्याग्निं यः प्रयच्छति। सर्वलोकप्रतापार्थं स पुण्यां गतिमाप्नुयात्'—इति वह्निपुराणे। 'हेमन्ते दिनलघुता शीतयवस्तम्बमरुवकहिमानि'–इति कविकल्पलता। ११३

हेमपर्वतः पुं. [हेममयः पर्वतः] सुमेरुगिरिः; शक्रक्रीडाचलः; मेरुः; सुमेरुः; रत्नसानुः; हेमाद्रिः; त्रिदशालयः ; हेमाङ्गः ; हेमगिरिः। १३६

हेमपुष्पः पुं. [हेमवर्णं पुष्पं यस्य] नागकेसरः; नागकेशरः; हेमपुष्पकः ; चम्पकवृक्षः; 'चाम्पेयश्चम्पकः प्रोक्तो हेमपुष्पश्च स स्मृतः'—इति शब्दचन्द्रिका। अशोकवृक्षः ; 'अशोको हेमपुष्पश्च वञ्जुलस्ताम्रपल्लवः। कङ्केलिः पिण्डपुष्पश्च गन्धपुष्पो नटस्तथा' —इति भावप्रकाशे पूर्वखण्डम्। २०६

हेमाद्रिः पुं. [हेममयोऽद्रिः] सुमेरुपर्वतः ; हेमगिरिः ; हेमपर्वतः ; क्षत्रियराजविशेषः ; स च चिन्तामणिकामधेनुकल्पद्रुमनामकस्मृतिसङ्ग्रहकारकः। १३६

हेरकः पुं. [हेडति वेष्टते, हेड्+ण्वुल्, डस्य रः] हेरिकः; चरः ; स्पशः; गूढपुरुषः । ४२५

हेरम्बः पुं. [हे रणे शिवसमीपे वा रम्बते इति । रबि शब्दे+पचाद्यच्] गणेशः ; लम्बोदरः ; आखुरथः; गणपतिः; गजवदनः ; परशुधरः ; एकदंष्ट्रः ; एकदन्तः; विघ्नराजः; विनायकः। महिषः; शौर्यगर्वितः; बुद्धविशेषः; हेरुकः; चक्रसम्बरः; देवः; वज्रकपाली; निशुम्भः; शशिशेखरः; वज्रटीकः; मन्त्रविशेषः; हेरम्बमन्त्रः; 'पञ्चान्तको बिन्दुयुक्तो वामकर्णविभूषितः। तारादिहृदयान्तोऽयं हेरम्बमनुरीरितः। चतुर्वर्णात्मको नृणां चतुर्वर्गफलप्रदः'—इति तन्त्रसारः। १८

हेरिकः पुं. [हि+इक्, रुट् च] अपसर्पः; चरः; चारः; प्रणिधिः; गूढपुरुषः; यथार्थवर्णः; मन्त्रज्ञः; स्पशः। ४२५

हेला स्त्री. [हिल्+घञ्+टाप्] स्त्रीणां शृङ्गारभावजक्रियाविशेषः; (७१५) अवज्ञा; अवहेला; हेलनं; रीढा; अवलीढा; अवहेलना; 'स्वल्पं पुष्पं शुभं गन्धं हेलया सम्प्रयच्छति। स्पर्शं वाप्यथवा शब्दं रसं रूपमथापि वा'—इति मार्कण्डेयपुराणे (१४।२९)। (८०५) प्रस्तावः; सुरते प्रौढेच्छा; हेलिः; 'प्रौढेच्छा यातिरूढानां नारीणां सुरतोत्सवे। शृङ्गारशास्त्रतत्त्वज्ञैर्हेला सा परिकीर्तिता। स एव हेलासुव्यक्तः शृङ्गाररससूचकः।' 'देहात्मकं भवेत् सत्त्वं सत्त्वाद्भावः समुत्थितः। भावात् समुत्थितो हावो हावाद्धेला समुत्थिता।' 'हेलिः पुंसि रवौ हेलिर्हेलायामपि योषिति'–इति हट्टः। 'हाव एव भवेद्धेला व्यक्तः शृङ्गारसूचकः'—इत्युज्ज्वलनीलमणिः। ८९

हेषः पुं. [भावे घञ्] हेषा; अश्वरवः। १५१

हेषा स्त्री. [हेष्+भावे अ] अश्वानां निस्वनः; ह्रेषा; ह्लेषा; ह्रेषितं; हेषितम्। १५१

हैमम् त्रि. [हिमे भवम् । अण्] हेमजातम्; आकुञ्चिताग्राङ्गुलिना ततोऽन्यः किञ्चित् समावर्जितनेत्रशोभः। तिर्यग् विसंसर्पिनखप्रभेण पादेन हैमं विलिलेख पीठम्'—इति रघौ (६।१५)। क्ली. प्रातर्हिमोद्भवजलं; हिमभवे त्रि.। 'लब्धान्तरा सावरणेऽपि गेहे योगप्रभावो न च लक्ष्यते ते। बिभर्पि चाकारमनिर्वृतानां मृणालिनी हैममिवोपरागम्'—इति रघौ (१६।७)। पुं. भूनिम्बः; हेम्नो विकारः; शिवः; 'हैमो हेमकरो यज्ञः सर्वधारी धरोत्तमः'—इति महाभारते (१३।१७।६३)। पर्वतविशेषः; 'कैलासं मन्दरं हैमं सर्वाननुच-

चार ह। तानतीत्य महाशैलान् कैरातं स्थानमुत्तमम्'—इति महाभारते (१३।१९।५४)। ४२३

हैमवती स्त्री. [हिमवतोऽपत्यं स्त्री। अण्, ङीप्] पार्वती; शिवा; भवानी; अपर्णा; उमा; दुर्गा; मृडानी; चण्डिका; अम्बिका; 'उमाभिधानां पुरतो देवीं हैमवतीं शिवाम्'—इति देवीभागवते (१२।८।५७)। हरीतकी; स्वर्णक्षीरी; 'कटुपर्णी हैमवती हेमक्षीरी हिमावती। हेमाह्वा पीतदुग्धा च तन्मलज्वोकमुच्यते'—इति भावप्रकाशः। श्वेतवचा; 'षड्ग्रन्थ्युग्रा वचा प्रोक्ता श्वेता हैमवतीति च'—इति गारुडे। [हिमवतः प्रभवति प्रकाशते प्रथमं दृश्यते इति, 'प्रभवति' इत्यण्] गङ्गा; 'एवमुक्तः प्रत्युवाच राजा हैमवतीं तदा। पितामहा मे वरदे ! कपिलेन महानदि !, अन्वेषमाणास्तुरगं नीता वैवस्वतक्षयम्'—इति महाभारते (३।१०८।१६)। [हिमवति भवा इति, अण्] रेणुका; कपिलद्राक्षा; अतसी। १५

हैयङ्गवीनम् क्ली. [ह्यो गोदोहस्य विकारः इति, 'हैयङ्गवीनं संज्ञायाम्' इति खञ् हियङ्ग्वादेशश्च] सद्यो गोदोहोद्भवं घृतम्; नवनीतं; दधिसारं; सरजं; मन्थजं; कलम्बुटम्; 'हैयङ्गवीनं क्षीराणि दधि वा किमजीजनन्। गोधनं सर्वमेवेदं नीरोगं प्रतिपद्यते'—इति हरिवंशे। २७४

ह्यस्तनम् त्रि. [ह्यो भवम्, ह्यस्+'ऐषमोह्यःश्वसोऽन्यतरस्याम्' इति पक्षे ट्युट्युलौ] ह्योभवं; ह्यः; कल्यः; ह्यस्त्यः; गतदिवसीयः; 'ह्यस्तनेन च कोपेन शक्तिं वै प्राहिणोन्मयि'—इति महाभारते (८।१८६।४)। ८०९

ह्यस्तनदिनम् क्ली.—ह्यः; गतदिनम्। ८०९

ह्रदः पुं. [ह्रादते इति, ह्राद् अव्यक्तशब्दे+अच्, पृषोदरादित्वाद् ह्रस्वः] अगाधजलाशयः; तोयाशयः; 'ह्रदवारि वह्निजननं मधुरं कफवातहारि पथ्यं च'—इति राजनिघंण्टः। किरणः। ६१०

ह्रदिनी स्त्री. [ह्रदोऽस्यामस्तीति, ह्रद+इनि+ङीप्] नदी; आपगा; निम्नगा; 'तच्छ्रद्धयेति विषवीर्यविलोलजिह्वमुच्चाटयिष्यदुरगं विहरन् ह्रदिन्याम्'—इति भागवते (२।७।२८)। ६६५

ह्रस्वः त्रि. [ह्रस्+वन्] क्षुद्रवस्तुमात्रं; वामनः; न्यङ; नीचः; खर्वः; नीचैः; अनुच्चः; ऋहन्; निघृष्वः; माषुकः; प्रतिष्ठा; कृधु; बभ्रकः; दभ्रम्, अर्भकः; क्षुल्लकः; अल्पः। पुं.—स्त्री. प्रकृतपुरुषप्रमाणान्न्यूनमनुष्यः; खर्वः; वामनः; वामनी; नीचकः; नीचः; अकर्तनः; एकमात्रवर्णे पुं.। 'एकमात्रो भवेद्ध्रस्वो द्विमात्रो दीर्घ उच्यते। त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यञ्जनं चार्द्धमात्रकम्'—इति शिक्षा। मेषवृषकुम्भमीनराशयः, यथा—'ह्रस्वास्तिमिगोऽविघटाः'—इति ज्योतिस्त वम्। ६८८

ह्लादः पुं. [ह्लाद्+घञ्] शब्दः; नादः; स्वानः; ध्वानः; स्वरः; रवः; घोषः; 'ह्लादेन गजघण्टानां शङ्खानां निनदेन च'—इति महाभारते (७।८०।२९)। हिरण्यकशिपुपुत्रः; 'हिरण्यकशिपोः पुत्राश्चत्वारः सुमहाबलाः। प्रह्लादः पूर्वजस्तेषामनुह्लादस्तथैव च। संह्लादश्चैव ह्लादश्च ह्लादपुत्रान् शृणुष्व तान्। ह्लादस्य पुत्रौ द्वावास्तां हिण्डिभो मूक एव च'—इति वह्निपुराणे। १३८

ह्लादिनी स्त्री. [ह्लादते शब्दायते इति। ह्लाद्+णिनि, ङीप्] विद्युत्; महाभारते (९।११।२६)। वज्रं; नदी; शल्लकी। ६०

ह्रीः स्त्री. [ह्री लज्जायाम्+सम्पदादित्वात् क्विप्] लज्जा; अपत्रपा; व्रीडा; त्रपा; मन्दाक्षम्; 'नाहं तात ! करिष्यामि पृथिव्याः परिपालनम्। नापैति ह्रीर्मे मनसो राज्येऽन्यं त्वं नियोजय'—इति मार्कण्डेये (१२९।२२)। ५६७

ह्रीवेरम् क्ली. [ह्रियै लज्जायै वेरमङ्गमस्य, क्षुद्रत्वात्] वालकं; जलं; ह्रुवेरम्; 'ह्रीवेरं छर्दिहृल्लासतृष्णातीसारनाशनम्'—इति राजवल्लभः। ६२२

ह्रीवेलम् क्ली. [ह्रीवेर+पृषोदरादित्वाद् रस्य लः] ह्रीवेलकं; ह्रीवेरं; वालकम्। ६२२

ह्रेषा स्त्री. [ह्रेषणम्, ह्रेषृ शब्दे+'गुरोश्च हलः' इत्य, टाप्] ह्रेषितं; हेषितं; हेषः; ह्लेषा; अश्वनादः। १५१

ह्लादिनी स्त्री. [ह्लादते शब्दायते इति। ह्लाद्+णिनि, ङीप्] विद्युत्; शम्पा; चपला; क्षणिका; शतह्रदा; तडित्; सौदामिनी 'ह्लादिन्य इव मेघेभ्यः शल्यस्य न्यपतन् शराः'—इति महाभारते (९।११।२६)। वज्रं; नदी; शल्लकी; श्रीकृष्णशक्तिभेदः; राधा। ६०